ॐ

जदिवसहाइरिय-विरइदा

तिलोयपण्णत्ती

[पढमो महाधियारो]

[1]अट्ठविहकम्मवियला णिट्ठियकज्जा पणट्ठसंसारा । दिट्ठसयलत्थसारा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ १
घणघाइकम्ममहणा तिहुवणवरभव्वकमलमत्तंडा । अरिहा [2]अणंतणाणे अणुवमसोक्खा जयंतु जए ॥ २
पंचमहव्वयतुंगा तक्कालियसपरसमयसुदधारा । णाणागुणगणभरिया आइरिया मम पसीदंतु[3] ॥ ३
अण्णाणघोरतिमिरे[4] दुरंततीरम्हि हिंडमाणाणं । भवियाणुज्जोययरा[5] उवज्झया वरमदिं देंतु[6] ॥ ४
थिरधरियसीलमाला[7] ववगयराया जसोहपडहत्था । बहुविणयभूसियंगा सुहाइं साहू पयच्छंतु ॥ ५
एवं वरपंचगुरू तियरणसुद्धेण णमंसिऊणाहं । भव्वजणाण पदीवं वोच्छामि तिलोयपण्णत्तिं ॥ ६

जो आठ प्रकार के कर्मोंसे विकल अर्थात् रहित हैं, करने योग्य कार्योंको कर चुके हैं अर्थात् कृतकृत्य हैं, जिनका जन्म-मरण रूप संसार नष्ट हो चुका है, और जिन्होंने सम्पूर्ण पदार्थोंके सारको देख लिया है अर्थात् जो सर्वज्ञ हैं, ऐसे सिद्ध परमेष्ठी मेरे लिये सिद्धि प्रदान करें ॥ १ ॥

जो प्रबल घातिया कर्मोंका मथन करनेवाले हैं, तीन लोकके उत्कृष्ट भव्य जीवरूपी कमलों के विकसित करनेमें मार्तण्ड अर्थात् सूर्य के समान हैं, अनंतज्ञानी हैं, और अनुपम सुखका अनुभव करनेवाले हैं, ऐसे अरिहन्त भगवान् जगमें जयवन्त होवें ॥ २ ॥

जो श्रेष्ठ पांच महाव्रतों से उन्नत हैं, तत्कालीन स्वसमय और परसमयरूप श्रुतके धारण करनेवाले हैं, और नाना गुणोंके समूहसे भरपूर हैं, ऐसे आचार्य महाराज मुझपर प्रसन्न होवें ॥ ३ ॥

दुर्गम है तीर जिसका ऐसे अज्ञानरूपी घोर अन्धकारमें भटकते हुए भव्य जीवोंको ज्ञान-रूपी प्रकाश प्रदान करनेवाले उपाध्याय परमेष्ठी मुझे उत्कृष्ट बुद्धि प्रदान करें ॥ ४ ॥

शीलव्रतोंकी मालाको दृढ़तापूर्वक धारण करनेवाले, रागसे रहित, अपने यश के समूहसे परिपूर्ण और विविध प्रकारके विनयसे विभूषित शरीरवाले साधु परमेष्ठी मुझे सुख प्रदान करें ॥ ५ ॥

इस प्रकार मैं तीन करण अर्थात् मन, वचन और कायकी शुद्धिपूर्वक पांचों परमेष्ठियोंको नमस्कार करके भव्य जनोंके लिये दीपकके समान लोकके स्वरूपको दिखलानेवाले इस 'त्रिलोकप्रज्ञप्ति' ग्रन्थको कहता हूं ॥ ६ ॥

---

१ ब ओं नमः सिद्धेभ्यः, द ओं नमः सिद्धेभ्यः २ [अणंतणाणा]. ३ द पसीयंतु. ४ द °तिमिरं, ब °तिमिर- ५ द °शुक्कोवयरा. ६ द दिंतु. ७ ब सिलामाला.

मंगलकारणहेदू सत्थस्स पमाणणामकत्तारा । पढमं चिय कहिदव्वा पुसा आइरियपरिभासा ॥ ७
पुण्णं पूदपवित्ता पसत्थसिवभद्दखेमकल्लाणा । सुहसोक्खादी सव्वे णिद्दिट्ठा मंगलस्स पज्जाया ॥ ८
गालयदि विणासयदे घादेदि दहेदि हंति सोधयदे । विद्धंसेदि मलाइं जम्हा तम्हा य मंगलं भणिदं ॥ ९
दोण्णि वियप्पा होंति हु मलस्स इमं दव्वभावभेएहि । दव्वमलं दुविहप्पं बाहिरमब्भंतरं चेय ॥ १०
[1]सेदमलरेणुकद्दमपहुदी बाहिरमलं समुद्दिट्ठं । पुणु[2] दिढजीवपदेसे णिबंधरूवाइ पयडिठिदिआई[3] ॥ ११
[4]अणुभागपदेसाइं चउहिं पत्तेक्कभेजमाणं तु । णाणावरणप्पहुदीअट्ठविहं कम्ममखिलपावरयं ॥ १२
अब्भंतरदव्वमलं जीवपदेसे [5]णिबद्धमिदि हेदो । भावमलं णादव्वं अणाणदंसणादिपरिणामो ॥ १३
अहवा बहुभेयगयं णाणावरणादिदव्वभावमलभेदा । ताइं गालेइ पुढं जदो तदो मंगलं भणिदं ॥ १४
अहवा मंगं सोक्खं लादि हु गेण्हेदि मंगलं तम्हा । एदेण कज्जसिद्धिं मंगइ गच्छेदि[6] गंथकत्तारो ॥ १५
पुव्वं आइरिएहिं मंगलपुव्वं च वाचिदं भणिदं[7] । तं लादि हु आदत्ते जदो तदो मंगलं पवरं ॥ १६

शास्त्रके मङ्गल, कारण, हेतु, प्रमाण, नाम और कर्ता, इन छह अधिकारोंका वर्णन शास्त्र-व्याख्यानसे पूर्व ही करना चाहिये; यह आचार्योंकी परिभाषा या पद्धति है ॥ ७ ॥

पुण्य, पूत, पवित्र, प्रशस्त, शिव, भद्र, क्षेम, कल्याण, शुभ, और सौख्य, इत्यादिक सब मङ्गलके ही पर्याय अर्थात् समानार्थक शब्द कहे गये है ॥ ८ ॥

क्योंकि यह मलोंको गलाता है, विनष्ट करता है, घातता है, दहन करता है, हनता है, शुद्ध करता है और विध्वंस करता है, इसीलिये इसे ' मङ्गल ' कहा गया है ॥ ९ ॥

द्रव्य और भावके भेदसे इस मलके दो भेद है। इनमेंसे द्रव्यमल भी दो प्रकारका है; एक बाह्य द्रव्यमल, और दूसरा आभ्यन्तर द्रव्यमल ॥ १० ॥

स्वेद, मल, रेणु (धूलि), कर्दम (कीचड़), इत्यादिक बाह्य द्रव्यमल कहा गया है। और दृढ़रूपसे जीवके प्रदेशोंमें एक क्षेत्रावगाहरूप बंधको प्राप्त, तथा प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश, इन चार बन्धके भेदोंसे हर एक भेदको प्राप्त होनेवाला ऐसा ज्ञानावरणादि आठ प्रकारका सम्पूर्ण कर्मरूपी पापरज चूंकि जीवके प्रदेशोंमें सम्बद्ध है, इस हेतुसे वह (ज्ञानावरणादि कर्मरज) आभ्यन्तर द्रव्यमल है। अज्ञान, अदर्शन इत्यादिक जीवके परिणामोंको भावमल समझना चाहिये ॥ ११–१३ ॥

अथवा, ज्ञानावरणादिक द्रव्यमलके और ज्ञानावरणादिक भावमलके भेदसे मलके अनेक भेद है; उन्हे चूंकि यह पृथक् गलाता है, अर्थात् नष्ट करता है, इसीलिये यह ' मंगल ' कहा गया है ॥ १४ ॥

अथवा, चूंकि यह मंगको अर्थात् सुखको लाता है, इसलिये भी इसे ' मगल ' समझना चाहिये। इसीके द्वारा ग्रंथकर्ता अपने कार्यकी सिद्धिपर पहुंच जाता है ॥ १५ ॥

पूर्वमे आचार्योंद्वारा मङ्गलपूर्वक ही शास्त्रका पठन-पाठन हुआ है। उसीको निश्चयसे लाता है, अर्थात् ग्रहण कराता है, इसीलिये यह मंगल श्रेष्ठ है ॥ १६ ॥

१ द सीदजलरेणु°. २ द पुण. ३ ब ठिदिआइं. ४ द अणुभावपदेसाई. ५ ब णिबंधमिदि. ६ द गत्थेदिसिगध°, ब मंगलगत्थेदि. ७ द वाचियं मणियं.

पावं मलं ति भण्णइ उवचारसरूवएण जीवाणं । तं गालेदि विणासं णेदि त्ति भणंति मंगलं केई ॥ १७
णामणिट्ठावणा दो दव्वखेत्ताणि कालभावा य । इय छब्भेयं भणियं मंगलमाणंदसंजणणं ॥ १८
अरहाणं सिद्धाणं आइरियउवज्झयाइसाहूणं । णामाइं णाममंगलमुद्दिट्ठं वीयरायेहिं ॥ १९
ठावणमंगलमेदं अकट्टिमाकट्टिमाणि जिणबिंबा । सूरिउवज्झयसाहूदेहाणि हु दव्वमंगलयं ॥ २०
गुणपरिणदामणं परिणिक्कमणं केवलस्स णाणस्स । उप्पत्ती इयपहुदी बहुभेयं खेत्तमंगलयं ॥ २१
एदस्स उदाहरणं पावागगरुज्जयंतचंपादी । आउट्ठहत्थपहुदी पणुवीसब्भहियपणसयधणूणि ॥ २२
देहभवट्ठिदकेवलणाणावट्ठ[1]गयणदेसो वा । 'सेढिघणमेत्तअप्पप्पदेसगदलोयपूरणापुण्णा[2]' ॥ २३
विस्माणं[3] लोयाणं होदि पदेसा वि मंगलं खेत्तं । जस्सिं काले केवलणाणादिमंगलं परिणमति ॥ २४
परिणिक्कमणं केवलणाणुब्भवणिव्वुदिप्पवेसादी । पावमलगालणादो पण्णत्तं कालमंगलं एदं ॥ २५

जीवोंके पापको उपचारसे मल कहा जाता है। उसे यह मंगल गलाता है, विनाशको प्राप्त करता है, इस कारण भी कोई कोई आचार्य इसे मंगल कहते हैं ॥ १७ ॥

आनन्दको उत्पन्न करनेवाला यह मंगल नाम और स्थापना ये दो, तथा द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव (ये चार), इस प्रकार छह भेदरूप कहा गया है ॥ १८ ॥

वीतराग भगवान्‌ने अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु, इनके नामोंको नाममंगल कहा है ॥ १९ ॥

जिन भगवान्‌के जो अकृत्रिम और कृत्रिम प्रतिबिम्ब हैं, वे सब स्थापनामंगल हैं। तथा आचार्य, उपाध्याय और साधुके शरीर द्रव्यमंगल है ॥ २० ॥

गुणपरिणत आसनक्षेत्र, अर्थात् जहांपर योगासन, वीरासन आदि विविध आसनोंसे तदनुकूल ध्यानाभ्यास आदि अनेक गुण प्राप्त किये गये हों ऐसा क्षेत्र, परिनिष्क्रमण अर्थात् दीक्षाका क्षेत्र, केवलज्ञानोत्पत्ति-क्षेत्र, इत्यादिरूपसे क्षेत्रमंगल बहुत प्रकारका है ॥ २१ ॥

इस क्षेत्रमंगलके उदाहरण पावानगर, ऊर्जयन्त (गिरनार पर्वत) और चम्पापुर आदि हैं। अथवा, साढ़े तीन हाथसे लेकर पांचसौ पच्चीस धनुषप्रमाण शरीरमें स्थित और केवलज्ञानसे व्याप्त आकाश-प्रदेशोंको क्षेत्रमंगल समझना चाहिये। अथवा, जगश्रेणिके घनमात्र अर्थात् लोकप्रमाण आत्माके प्रदेशोंसे लोकपूरणसमुद्घात द्वारा पूरित सभी (ऊर्ध्व, अधो व तिर्यक्) लोकोंके प्रदेश भी क्षेत्रमंगल हैं।

जिस कालमें जीव केवलज्ञानादिरूप मंगलमय पर्यायको प्राप्त करता है उसको, तथा परिनिष्क्रमण अर्थात् दीक्षाकाल, केवलज्ञानके उद्भवका काल, और निवृति अर्थात् मोक्षके प्रवेशका काल, यह सब पापरूपी मलके गलनेका कारण होनेसे कालमंगल कहा गया है ॥ २२–२५ ॥

१ ब उवज्झायाइ°. २ द सेढिघणमित्तअप्पपदेसजद. ३ ब °पूरणं पुण्ण. ४ द ब विण्णासं.

एवं अणेयभेयं हवेदि तं कालमंगलं पवरं । जिणमहिमासंबंधं णंदीसरदीवपहुदीओ ॥ २६
मंगलपज्जाएहिं उवलक्खियजीवदव्वमेत्तं च । भावं मंगलमेदं पढियं[1] सत्थादिमज्झयंतेसु ॥ २७
पुव्विल्लाइरिएहिं उत्तो सत्थाण मंगलं जो सो[2] । आइम्मि मज्झअवसाणे य सुणियमेण कायव्वो ॥ २८
पढमे मंगलवयणे सिस्सा सत्थस्स पारगा होंति । मज्झिमए णीविग्घं विज्जा विज्जाफलं चरिमे ॥ २९
णासदि विग्घं भेददि यंहो दुट्ठा सुरा[3] ण लंबंति । इट्ठो अत्थो[4] लब्भइ जिणणामग्गहणमेत्तेण ॥ ३०
सत्थादिमज्झअवसाणएसु जिणथोत्तमंगलुच्चारो । णासइ णिस्सेसाइं विग्घाइं रवि व्व तिमिराइं ॥ ३१

। इदि मंगलं गदं ।

विविहवियप्पं लोगं बहुभेयप्पमाणदो[5] भव्वा । जाणंति त्ति णिमित्तं कहिदं गंथावतारस्स ॥ ३२
केवलणाणदिवायरकिरणकलावादु यत्थअवदारो[6] । [7]गणधरदेवें गंथुप्पत्ति हु सो हवे संजादो[8] ॥ ३३

इसप्रकार जिनमहिमासे सम्बन्ध रखनेवाला वह श्रेष्ठ कालमंगल अनेक भेदरूप है, जैसे नन्दीश्वर द्वीपसंबंधी पर्व आदि ॥ २६ ॥

वर्तमानमें मंगलरूप पर्यायोंसे परिणत जो शुद्ध जीवद्रव्य है वह भावमंगल है । ऐसे अनेक भेदरूप यह मंगल शास्त्रके आदि, मध्य और अन्तमें पढ़ा गया है ॥ २७ ॥

पूर्वकालीन आचार्योंने जो शास्त्रोंका मंगल कहा है उस मंगलको नियमसे शास्त्रोंके आदि, मध्य और अन्तमें करना ही चाहिये ॥ २८ ॥

शास्त्रके आदिमें मंगलके पढ़नेपर शिष्यलोग शास्त्रके पारगामी होते हैं, मध्यमें मङ्गलके करनेपर निर्विघ्न विद्याकी प्राप्ति होती है, और अन्तमें मंगलके करनेपर विद्याका फल प्राप्त होता है ॥ २९ ॥

जिनभगवान्‌के नामके ग्रहण करनेमात्रसे विघ्न नष्ट हो जाते हैं, पाप खण्डित होता है, दुष्ट देव लांघते नहीं, अर्थात् किसी प्रकारका उपद्रव नहीं करते, और इष्ट अर्थकी प्राप्ति होती है ॥३०॥

शास्त्रके आदि, मध्य और अन्तमें किया गया जिनस्तोत्ररूप मङ्गलका उच्चारण सम्पूर्ण विघ्नोंको उसीप्रकार नष्ट करदेता है जिसप्रकार सूर्य अंधकारको ॥ ३१ ॥

इसप्रकार मंगलका कथन समाप्त हुआ ।

नाना भेदरूप लोकको भव्य जीव अनेक प्रकारके प्रमाणोंसे जान जांय, यह इस त्रिलोकप्रज्ञप्तिरूप ग्रन्थके अवतारका निमित्त कहा गया है ॥ ३२ ॥

केवलज्ञानरूपी सूर्यकी किरणोंके समूहसे श्रुतके अर्थका अवतार हुआ, तथा गणधरदेवकेद्वारा ग्रंथकी उत्पत्ति हुई । इस प्रकार कल्याणकारी श्रुतकी उत्पत्ति हुई ॥ ३३ ॥

---

१ द पच्चियपच्चादि, ब पच्चियसत्थादि°. २ द ब सट्ठाणमंगलघोसो. ३ द दुट्ठासुत्ताण, ब दुट्ठासुवाण. ४ द ब लद्धो. ५ ब भेयपमाणदो. ६ द अवहारो, ब अवहारे. ७ द गणधरदेवें. ८ द सोहंति संजादो, ब सोहंति सो जादो.

छहव्वणवपयत्थे सुदणाणंदुमणिकिरणसत्तीए । देक्खंतु भव्वजीवा अण्णाणतमेण संछण्णा ॥ ३४

। णिमित्तं गदं ।

दुविहो हवेदि हेदू तिलोयपण्णत्तिगंथयज्झयणे[1] । जिणवरवयणुद्दिट्ठो पच्चक्खपरोक्खभेएहिं ॥ ३५
सक्खापच्चक्खपरंपच्चक्खा दोण्णि होदि[2] पच्चक्खा । अण्णाणस्स विणासं णाणदिवायरस्स उप्पत्ती ॥ ३६
देवमणुस्सादीहिं संततमब्भच्चणप्पयाराणि । पडिसमयमसंखेज्जयगुणसेढिकम्मणिज्जरणं ॥ ३७
इय सक्खापच्चक्खं पच्चक्खपरंपरं च णादव्वं । सिस्सपडिसिस्सपहुदीहिं सददमब्भच्चणपयारं ॥ ३८
दोभेदं च परोक्खं अभुदयसोक्खाइं मोक्खसोक्खाइं । सादादिविविहसुपरत्थकम्मतिव्वाणुभागउदएहिं[3] ॥ ३९
इंदपडिंददिगिंदयतेत्तीसामरसमाणपहुदिसुहं[4] । राजाहिराजमहराजअद्धमंडलिमंडलथाणं ॥ ४०
महमंडलियाणं अद्धचक्किचक्कहरितित्थयरसोक्खं । अट्ठारसमेत्ताणं सामी सेणाण[5] भत्तिजुत्ताणं ॥ ४१
वररयणमउडधारी सेवयमाणाण वत्ति तह अट्ठं[6] । देंता हवेदि राजा जितसत्तू समरसंघट्टे ॥ ४२

अज्ञानरूप अँधेरेमे आच्छन्न हुए भव्य जीव श्रुतज्ञानरूपी द्युमणि अर्थात् सूर्यकी किरणोंकी शक्तिसे छह द्रव्य और नौ पदार्थोंको देखें, अर्थात् जानें, (यही ग्रंथके अवतारका निमित्त है) ॥ ३४ ॥

इसप्रकार निमित्तका कथन समाप्त हुआ ।

त्रिलोकप्रज्ञप्ति ग्रन्थके अध्ययनमें, जिनेन्द्र देवके वचनोंसे उपदिष्ट हेतु, प्रत्यक्ष और परोक्षके भेदसे दो प्रकारका है ॥ ३५ ॥

प्रत्यक्ष हेतु साक्षात् प्रत्यक्ष और परंपरा प्रत्यक्षके भेदसे दो प्रकारका है। अज्ञानका विनाश, ज्ञानरूपी दिवाकरकी उत्पत्ति, देव और मनुष्यादिकोंकेद्वारा निरन्तर कीजानेवाली विविध प्रकारकी अभ्यर्चना अर्थात् पूजा, और प्रत्येक समयमें असंख्यात गुणश्रेणीरूपसे होनेवाली कर्मोंकी निर्जरा, इसे साक्षात् प्रत्यक्षहेतु समझना चाहिये। और शिष्य प्रतिशिष्य आदिके द्वारा निरंतर अनेक प्रकारसे कीजानेवाली पूजाको परंपरा प्रत्यक्षहेतु जानना चाहिये ॥ ३६–३८ ॥

परोक्ष हेतु भी दो प्रकारका है, एक अभ्युदय सुख और दूसरा मोक्षसुख। सातावेदनीय आदि विविध प्रकारके सुप्रशस्त कर्मोंके तीव्र अनुभागके उदयसे प्राप्त हुआ इन्द्र, प्रतीन्द्र, दिगिन्द्र (लोकपाल) त्रायस्त्रिंश व सामानिक आदि देवोंका सुख; तथा राजा, अधिराज, महाराज, अर्धमण्डलीक, मण्डलीक, महामण्डलीक, अर्धचक्री (नारायण-प्रतिनारायण), चक्रधारी (चक्रवर्ती) और तीर्थंकर, इनका सुख अभ्युदयसुख है। जो भक्तियुक्त अठारह प्रकारकी सेनाओंका स्वामी है, उत्कृष्ट रत्नोंके मुकुटको धारण करनेवाला है, सेवकजनोंको वृत्ति (भूमि आदि) तथा अर्थ (धन) प्रदानकरनेवाला है, और समरके संघर्षमें शत्रुओंको जीत चुका है, वह राजा है ॥ ३९–४२ ॥

---

१ ब गंथयज्झयणो. २ [होंति] ३ [सुपसत्थ°] ४ ब तेत्तीससायरपमाण°. ५ द ब सामी-सेणेण. ६ द वंति दह अट्ठं, ब वंति दह अट्ठं.

करितुरयरहाहिवई सेणवइपदत्तिसेट्ठिदंडवई । सुद्दक्खत्तियवइसा हवंति तह महयरा पवरा ॥ ४३
गणरायमंतितलवरपुरोहियामत्तया महामत्ता । बहुविहपइण्णया य अट्ठारस होंति सेणीओ[1] ॥ ४४
पंचसयरायसामी अहिराजो होदि कित्तिभरिददिसो । रायाण जो सहस्सं पालइ सो होदि महराजो ॥ ४५
दुसहस्समउडबद्धभुवसहो[2] तत्थ अद्धमंडलिओ । चउराजसहस्साणं अहिणाओ होइ मंडलिओ[3] ॥ ४६
महमंडलिओ णामो अट्ठसहस्साण अहिवई ताणं । रायाणं अद्धचक्की सामी सोलससहस्समेत्ताणं ॥ ४७
छक्खंडभरहणाहो बत्तीससहस्समउडबद्धपहुदीओ । होदि हु सयलचक्की तित्थयरो सयलभुवणवई ॥ ४८

। अब्भुदयसोक्खं गदं ।

सोक्खं तित्थयराणं कप्पातीदाण तह य इंदियादीदं । अतिसयमादसमुत्थं णिस्सेयसमणुवमं पवरं ॥ ४९

। मोक्खसोक्खं गदं ।

सुदणाणभावणाए णाणंसतंडकिरणउज्जोओ । आदं चंदुज्जलं चरित्तं चित्तं हवेदि भव्वाणं ॥ ५०

हस्ति, तुरंग (घोड़ा) और रथ, इनके अधिपति, सेनापति, पदाति (पादचारी सेना), श्रेष्ठि (सेठ), दण्डपति, शूद्र, क्षत्रिय, वैश्य, महत्तर, प्रवर अर्थात् ब्राह्मण, राजराज, मन्त्री, तलवर (कोतवाल), पुरोहित, अमात्य और महामात्य व बहुत प्रकारके प्रकीर्णक, ऐसी अठारह प्रकारकी श्रेणियां हैं ॥ ४३-४४ ॥

जो पांचसौ राजाओंका स्वामी हो वह अधिराज है । उसकी कीर्ति सारी दिशाओंमें फैली रहती है। जो एक हजार राजाओंका पालन करता हो वह महाराज है ॥ ४५ ॥

जो दो हजार मुकुटबद्ध भूपोंमें वृषभ अर्थात् प्रधान हो (उनका स्वामी हो) वह अर्धमण्डलीक कहलाता है। जो चार हजार राजाओंका अधिनाथ हो, वह मण्डलीक कहलाता है ॥ ४६ ॥

जो आठ हजार राजाओंका अधिपति हो, उसका नाम महामण्डलीक है। सोलह हजार राजाओंका स्वामी अर्धचक्री कहलाता है ॥ ४७ ॥

जो छह खण्डरूप भरतक्षेत्रका स्वामी हो और बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजाओंका तेजस्वी अधिपति हो वह सकलचक्री होता है; व तीर्थंकर समस्त लोकोंका अधिपति कहलाता है ॥ ४८ ॥

इसप्रकार अभ्युदय-सुखका कथन हुआ ।

तीर्थंकर (अरिहन्त), और कल्पातीत अर्थात् सिद्ध, इनके अतीन्द्रिय, अतिशयरूप आत्मोत्पन्न, अनुपम और श्रेष्ठ सुखको निश्रेयस-सुख कहते हैं ॥ ४९ ॥

इसप्रकार मोक्षसुखका कथन हुआ ।

श्रुतज्ञान की भावनासे भव्यजीवोंका आत्मा ज्ञानरूपी सूर्य की किरणोंसे उद्योतरूप अर्थात् प्रकाशमान होता है, और उनका चरित्र और चित्त चन्द्रमाके समान उज्वल होता है ॥ ५० ॥

---

१ द ब सेणेओ. २ द ब बद्धासेवसहो. ३ द ब मंडलियं.

कण्णधराधरधीरं मूढत्तयविरहिदं हयट्ठमलं[1] । जायदि पवयणपढणे सम्मद्दंसणमणुवमाणं ॥ ५१
सुरखेयरमणुवाणं लब्भंति सुहाइं आरिसब्भासा[2] । तत्तो णिव्वाणसुहं णिण्णासिदघादु णट्ठमलं ॥ ५२

[हेदु गदं]

विविहत्थेहिं अणंतं संखेज्जं अक्खराण गणणाए । एदं पमाणमुद्दिदं सिस्साणं मइविकासयरं ॥ ५३

। पमाणं गदं ।

भव्वाण जेण एसा तेलोक्कपयासणे परमदीवा[3] । तेण गुणणाममुद्दिदं तिलोयपण्णत्ति णामेण ॥ ५४

। णाम गदं ।

कत्तारो दुवियप्पो णादव्वो अत्थगंथभेदेहिं । दव्वादिचउपयारेहिं भासिमो अत्थकत्तारं[4] ॥ ५५
सेदरजाइमलेणं रत्तच्छिकडक्खबाणमोक्खेहिं । इयपहुदिदेहदोसेहिं संततमदूसिदसरीरो ॥ ५६
आदिमसंहणणजुदो समचउरस्संगचारुसंठाणो । दिव्ववरगंधधारी पमाणठिदरोमणखरूवो ॥ ५७

प्रवचन अर्थात् परमागमके पढ़नेपर सुमेरुपर्वतके समान निश्चल; लोकमूढ़ता, देवमूढ़ता, गुरुमूढ़ता, इन तीन मूढ़ताओंसे रहित, और शंका-कांक्षा आदि आठ दोषोंसे विमुक्त अनुपम सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति होती है ॥ ५१ ॥

आर्ष वचनोंके अभ्याससे देव, विद्याधर तथा मनुष्योंके सुखोंकी प्राप्ति होती है, और अन्तमें नोकर्ममलसे विहीन, तथा द्रव्यकर्म और उनसे सम्बन्ध रखनेवाले भावकर्मोंसे भी रहित, इसप्रकार त्रिविध मलवर्जित मोक्षसुखकी भी प्राप्ति होती है ॥ ५२ ॥

इसप्रकार हेतुका कथन हुआ ।

श्रुत विविध प्रकारके अर्थोंकी अपेक्षा अनन्त है, और अक्षरोंकी गणनाकी अपेक्षा संख्यात है । इसप्रकार शिष्योंकी बुद्धिको विकसित करनेवाला श्रुतप्रमाण कहा गया है ॥ ५३ ॥

इसप्रकार प्रमाणका वर्णन हुआ ।

क्योंकि यह शास्त्र भव्यजीवोंके लिये तीनों लोकोंके स्वरूपके प्रकाशित करनेमें दीपके समान है, इसीलिये ' त्रिलोकप्रज्ञप्ति ' नामसे इसका यह गुणनाम कहा गया है ॥ ५४ ॥

इसप्रकार नामका कथन हुआ ।

अर्थकर्ता और ग्रन्थकर्ताके भेदसे कर्ता दो प्रकारके समझना चाहिये । इनमेंसे द्रव्यादिक चार प्रकारसे अर्थकर्ताका निरूपण करते हैं ॥ ५५ ॥

जिनका शरीर पसीना, रज (धूली) आदि मलसे तथा लाल नेत्र और परको दुख पहुंचानेवाले कटाक्ष-बाणोंका छोड़ना इत्यादि शरीरसम्बन्धी दूषणोंसे सदा अदूषित है, जो आदिके अर्थात् वज्रर्षभनाराच संहननसे युक्त हैं, समचतुरस्रसंस्थानरूप सुन्दर आकृतिसे शोभायमान हैं, दिव्य और उत्कृष्ट

१ द ब हयग्गमलं. २ द ब आरिसंभासा. ३ द परमदीवं. ४ ब अत्थकत्तारो.

णिम्भूसणायुधंबरभीदी सोम्माणणादिदिव्वतणू । अट्ठब्भहियसहस्सप्पमाणवरलक्खणोपेदो ॥ ५८
चउविहउवसग्गेहिं णिच्चविमुक्को कसायपरिहीणो । छुहपहुदिपरिसहेहिं परिचत्तो रायदोसेहिं ॥ ५९
जोयणपमाणसंठिदतिरियामरमणुवगिवहपडिबोहो । मिदुमधुरगभीरतराविसदविसयसयलभासाहिं[1] ॥ ६०
अट्ठरस महाभासा खुल्लयभासा वि सत्तसयसंखा । अक्खरअणक्खरप्पय सण्णीजीवाण सयलभासाओ ॥ ६१
एदासिं भासाणं तालुवदंतोट्ठकंठवावारं । परिहरिय एक्ककालं भव्वजणाणंदकरभासो ॥ ६२
भावणवेंतरजोइसियकप्पवासेहिं केसवबलेहिं । विज्जाहरेहिं चक्किप्पमुहेहिं णरेहिं तिरिएहिं ॥ ६३
एदेहिं अण्णेहिं विरचिदचरणारविंदजुगपूजो । दिट्ठसयलट्ठसारो महवीरो अत्थकत्तारो ॥ ६४
सुरसेयरमणहरणे गुणणामे पंचसेलणयरम्मि[2] । विउलम्मि पव्वदवरे वीरजिणो अट्ठकत्तारो ॥ ६५
चउरस्सो पुव्वाए रिसिसेलो[3] दाहिणाए वेभारो । णइरिदिदिसाए विउलो दोण्णि तिकोणट्ठिदायारा ॥ ६६
चावसरिच्छो छिण्णो वरुणाणिलसोमदिसविभागेसु । ईसाणाए पडू वण्णा सव्वे कुसग्गपरियरणा ॥ ६७

सुगन्धिके धारक हैं, जिनके रोम और नख प्रमाणसे स्थित हैं अर्थात् वृद्धिसे रहित है, जो भूषण, आयुध, वस्त्र और भीतिसे रहित व सुन्दर मुखादिकसे शोभायमान दिव्य देहसे विभूषित हैं, शरीरके उत्तम एक हजार आठ लक्षणोसे युक्त हैं; देव, मनुष्य, तिर्यंच और अचेतनकृत चार प्रकारके उपसर्गोसे सदा विमुक्त हैं, कषायोंसे रहित हैं, क्षुधादिक बाईस परीषहों व राग-द्वेषसे परित्यक्त हैं; मृदु, मधुर, अति गम्भीर और विषयको विशद करनेवाली भाषाओंसे एक योजनप्रमाण समवसरण-सभामें स्थित तिर्यंच, देव और मनुष्योंके समूहको प्रतिबोधित करनेवाले है, संज्ञी जीवोंकी अक्षर और अनक्षररूप अठारह महाभाषा तथा सातसौ छोटी भाषाओंमें परिणत हुई और तालु, दन्त, ओठ तथा कण्ठके हलन-चलनरूप व्यापारसे रहित होकर एकही समयमें भव्यजनोंको आनन्द करनेवाली भाषा (दिव्यध्वनि) के स्वामी हैं, भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवों के द्वारा तथा नारायण, बलभद्र, विद्याधर और चक्रवर्ती आदि प्रमुख मनुष्य, तिर्यंच और अन्य भी ऋषि-महर्षियोंसे जिनके चरणारविन्दयुगलकी पूजा की गयी है, और जिन्होंने सम्पूर्ण पदार्थोंके सारको देख लिया है, ऐसे महावीर भगवान् (द्रव्यकी अपेक्षा) अर्थागमके कर्ता हैं ॥ ५६–६४ ॥

देव और विद्याधरोंके मनको मोहित करनेवाले और सार्थक नामसे प्रसिद्ध पंचशैल (पांच पहाड़ोंसे सुशोभित) नगर अर्थात् राजगृही नगरीमें, पर्वतोंमें श्रेष्ठ विपुलाचल पर्वतपर श्रीवीरजिनेंद्र (क्षेत्र की अपेक्षा) अर्थ-शास्त्रके कर्ता हुए ॥ ६५ ॥

राजगृह नगरके पूर्वमें चतुष्कोण ऋषिशैल, दक्षिणमें वैभार और नैऋत्य दिशामें विपुलाचल पर्वत हैं। ये दोनों, वैभार और विपुलाचल, पर्वत त्रिकोण आकृतिसे युक्त हैं ॥ ६६ ॥

पश्चिम, वायव्य और सोम (उत्तर) दिशामें फैला हुआ धनुषके आकार छिन्ननामका पर्वत है, और ईशान दिशामें पाण्डु नामका पर्वत है। उपर्युक्त पांचों ही पर्वत कुशसमूहसे वेष्टित हैं ॥ ६७ ॥

१ ब क्सिदयसमसयल°. २ द °णययम्मि. ३ द ब सिरिसेलो.

एत्थावसप्पिणीए चउत्थकालस्स चरिमभागम्मि । तेत्तीसवाससअट्ठमासपण्णरसदिवससेसम्मि ॥ ६८
वासस्स पढममासे सावणणामम्मि बहुलपडिवाए । अभिजीणक्खत्तम्मि य उप्पत्ती धम्मतित्थस्स ॥ ६९
सावणबहुले पाडिवरुद्दमुहुत्ते[1] सुहोदये[2] रविणो । अभिजस्स पढमजोए जुगस्स आदी[3] इमस्स पुढं ॥ ७०
णाणावरणप्पहुदिअणिच्छयववहारपायअतिसयए । संजादेण अणंतेणाणेणं दंसणसुहेहिं ॥ ७१
विरिएण तहा खाइयसम्मत्तेणं पि दाणलाहेहिं । भोगोपभोगणिच्छयववहारेहिं च [5]परिपुण्णो ॥ ७२
दंसणमोहे णट्ठे घादित्तिदए चरित्तमोहम्मि । सम्मत्तणागदंसणवीरियचरियाइ होंति खइयाइं ॥ ७३
जादे अणंतणाणे णट्ठे छदुमट्ठिदियम्मि[6] णाणम्मि । णवविहपदत्थसारा दिव्वझुणी कहइ सुत्तत्थं ॥ ७४
अण्णेहिं अणंतेहिं गुणेहिं जुत्तो विसुद्धचारित्तो । भवभयभंजणदच्छो महवीरो अत्थकत्तारो ॥ ७५
महवीरभासियत्थो तस्सिं खेत्तम्मि तत्थ काले य । खाओवसमविवड्ढिदचउरमलमईहिं[4] पुण्णेण ॥ ७६
लोयालोयाण तहा जीवाजीवाण विविहविसयेसु । संदेहणासणत्थं उवगदसिरिवीरचलणमूलेण ॥ ७७

यहां अवसर्पिणीके चतुर्थ कालके अन्तिम भागमें तेतीस वर्ष, आठ माह और पन्द्रह दिन शेष रहनेपर वर्षके श्रावणनामक प्रथम महिनेमें, कृष्ण पक्षकी प्रतिपदाके दिन अभिजित् नक्षत्रके उदित रहनेपर धर्मतीर्थकी उत्पत्ति हुई ॥ ६८-६९ ॥

श्रावणकृष्णा पड़िवाके दिन रुद्रमुहूर्तके रहते हुए सूर्यका शुभ उदय होनेपर अभिजित् नक्षत्रके प्रथम योगमें इस युग का प्रारंभ हुआ, यह स्पष्ट है ॥ ७० ॥

ज्ञानावरणादि चार घातिया कर्मोंके निश्चय और व्यवहाररूप विनाशके कारणोंकी प्रकर्षता होनेपर उत्पन्न हुए अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख और अनन्तवीर्य, इन चार अनन्तचतुष्टय, तथा क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकदान, क्षायिकलाभ, क्षायिकभोग और क्षायिकउपभोग, इसप्रकार नव लब्धियोंके निश्चय एवं व्यवहारस्वरूपोंसे परिपूर्ण हुए ॥ ७१-७२ ॥

दर्शनमोह, तीन घातिया (ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय) और चारित्रमोहके नष्ट होनेपर क्रमसे सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य और चारित्र, ये पांच क्षायिक भाव प्राप्त होते है ॥ ७३ ॥

अनन्तज्ञान अर्थात् केवलज्ञानकी उत्पत्ति और छद्मस्थ अवस्थामें रहनेवाले मति, श्रुत, अवधि तथा मनःपर्ययरूप चार ज्ञानोंका अभाव होनेपर नौ प्रकारके पदार्थोंके सारको विषय करनेवाली दिव्यध्वनि सूत्रार्थको कहती है ॥ ७४ ॥

इसके अतिरिक्त और भी अनन्त गुणोंसे युक्त, विशुद्ध चारित्रके धारक और संसारके भयको नष्ट करनेमें दक्ष श्रीमहावीर प्रभु (भावकी अपेक्षा) अर्थकर्ता है ॥ ७५ ॥

भगवान् महावीरके द्वारा उपदिष्ट पदार्थस्वरूप, उसी क्षेत्र और उसी कालमें, ज्ञानावरणके विशेष क्षयोपशमसे वृद्धिको प्राप्त निर्मल चार बुद्धियों (कोष्ठ, बीज, संभिन्न-श्रोतृ और पदानुसारी) से परिपूर्ण, लोक, अलोक और जीवाजीवादि विविध विषयोंमें उत्पन्न हुए संदेहको नष्ट करनेके लिये श्रीवीर-

१ द ब मुहुपहुत्ते. २ ब सुहोदिए. ३ द आदीइ विमस्स. ४ ब परपुण्णो. ५ द ब चदुमट्ठिदिदम्मि. ६ ब चउउर°.

विमले गोदमगोत्ते जादेणं [1]इंदभूदिणामेण । चउवेदपारगेणं सिस्सेण[2] विसुद्धसीलेण ॥ ७८
भावसुदपज्जएहिं परिणदमइणा[3] अ बारसंगाणं । चोद्दसपुव्वाण तहा एक्कमुहुत्तेण विरचणा विहिदा[4] ॥ ७९
इय मूलतंतकत्ता सिरिवीरो इंदभूदिविप्पवरो । उवतंते कत्तारो अणुतंते सेसआइरिया ॥ ८०
णिण्णट्ठरायदोसा महेसिणो [5]दिव्वछक्कत्तारो । किं कारणं पभणिदा कहिदुं सुत्तस्स पामण्णं[6] ॥ ८१
जो ण पमाणणयेहिं णिक्खेवेणं णिरक्खदे अत्थं । तस्साजुत्तं जुत्तं जुत्तमजुत्तं च पडिहादि ॥ ८२
णाणं होदि पमाणं णओ वि णादुस्स हिदयभावत्थो[7] । णिक्खेओ वि उवाओ जुत्तीए अत्थपडिगहणं ॥ ८३
इय णायं अवहारिय आइरियपरंपरागदं मणसा । पुव्वाइरियाणाणुसरणमं तिरयणणिमित्तं ॥ ८४
मंगलपहुदिच्छक्कं वक्खाणिय विविहगंथजुत्तीहिं । जिणवरमुहणिक्कंतं गणहरदेवेहिं गथितपदमालं ॥ ८५
सासदपदभावण्णं पवाहरूवत्तणेण दोसेहिं । णिस्सेसेहिं विमुक्कं आइरियअणुक्कमागावं ॥ ८६
भव्वजणाणंदयरं वोच्छामि अहं तिलोयपण्णत्तिं । णिब्भरभत्तिपसादिदवरगुरुचलणाणुभावेण ॥ ८७

भगवान्‌के चरण-मूलकी शरणमें आये हुए, निर्मल गौतम गोत्रमें उत्पन्न हुए, प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग, इन चार वेदोंमें, अथवा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, इन चारों वेदोंमें पारंगत, विशुद्ध शीलके धारक, भावश्रुतरूप पर्यायसे बुद्धिकी परिपक्वताको प्राप्त, ऐसे इन्द्रभूतिनामक शिष्य अर्थात् गौतम गणधरद्वारा एक मुहूर्तमें बारह अंग और चौदह पूर्वोंकी रचना-रूपसे ग्रथित किया गया ॥ ७६–७९ ॥

इसप्रकार श्रीवीरभगवान् मूलतंत्रकर्ता, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ इन्द्रभूति गणधर उपतंत्र-कर्ता, और शेष आचार्य अनुतंत्र-कर्ता हैं ॥ ८० ॥

गणधरदेव राग-द्वेषसे रहित होते हुए द्रव्यश्रुतके कर्ता हैं, यह कथन यहां किस कारणसे किया गया है ? सूत्रकी प्रमाणताका कथन करनेके लिये ॥ ८१ ॥

जो नय और प्रमाण तथा निक्षेपसे अर्थका निरीक्षण नहीं करता है, उसको अयुक्त पदार्थ युक्त और युक्त पदार्थ अयुक्त ही प्रतीत होता है ॥ ८२ ॥

सम्यग्ज्ञानको प्रमाण और ज्ञाताके हृदयके अभिप्रायको नय कहते हैं। निक्षेप उपायस्वरूप है। युक्तिसे अर्थका प्रतिग्रहण करना चाहिये ॥ ८३ ॥

इसप्रकार आचार्यपरंपरासे ज्ञात हुए न्यायको मनसे अवधारण करके पूर्व आचार्योंके आचारका अनुसरण करना रत्नत्रयका कारण है ॥ ८४ ॥

विविध ग्रंथ और युक्तियोंसे मंगलादि छह अर्थात् मंगल, कारण, हेतु, प्रमाण, नाम और कर्ता, इनका व्याख्यान करके जिनेन्द्र भगवान् के मुखसे निकले हुए, गणधरदेवोंद्वारा पदोंकी, अर्थात् शब्दरचनारूप, मालामें गूंथे गये, प्रवाहरूपसे शाश्वतपद अर्थात् अनन्तकालीनता को प्राप्त, सम्पूर्ण दोषोंसे रहित, और आचार्यपरंपरासे आये हुए तथा भव्यजनों को आनन्ददायक 'त्रिलोकप्रज्ञप्ति' शास्त्रको मैं अतिशय भक्तिद्वारा प्रसादित उत्कृष्ट गुरुके चरणोंके प्रभावसे कहता हूं ॥ ८५–८७ ॥

१ ब वंदभूदि°. २ ब मिस्सेण. ३ [परिणदमइणा य]. ४ [विहिदा]. ५ [दव्वसुत्तं] ६ ब सामण्णं. ७ ब णउ वि णादुसहहिदयभावत्थो.

सामण्णजगसरूवं तम्मि ठियं णारयाण लोयं च । भावणणरतिरियाणं वेंतरजोइसियकप्पवासीणं ॥ ८८
सिद्धाणं लोगो त्ति य [1]अहियारे पयदविट्ठणवभेए । तम्मि णिबद्धे जीवे पसिद्धवरवण्णणासहिए ॥ ८९
वोच्छामि [2]लयलईए भव्वजणाणंदपसरसंजणणं[3] । जिणमुहकमलविणिग्गयतिलोयपण्णत्तिणामाए ॥ ९०
जगसेढिघणपमाणो लोयायासो सपंचदव्वट्ठिदी[4] । एस अणंताणंतालोयावासस्स बहुमज्झे ॥ ९१

≡ १६ ख ख ख[5] ।

जीवा पोग्गलधम्माधम्मा कालो इमाणि दव्वाणि । सव्वं लोयायासं[6] आपूरुव[7] पंच चिट्ठंति[8] ॥ ९२
एत्तो सेढिस्स घणप्पमाणाण णिण्णयं परिभासा उच्चदे–
पल्लसमुद्दे उवमं अंगुलयं सूइपदरघणणामं । जगसेढिलोयपदरो अ लोओ अट्ठप्पमाणाणि ॥ ९३

प० १ । सा० २ । सू० ३ । प्र० ४ । घ० ५ । ज० ६ । लोकप्र० ७ । लोय० ८ ।

ववहारुद्धारद्धा तियपल्ला पढमयम्मि संखाओ । विदिए दीवसमुद्दा तदिए मिज्जेदि कम्मठिदी ॥ ९४

.....

सामान्य जगत्का स्वरूप, उसमें स्थित नारकियोंका लोक, भवनवासी, मनुष्य, तिर्यंच, व्यन्तर, ज्योतिषी, कल्पवासी और सिद्धोंका लोक, इस प्रकार प्रकृतमें उपलब्ध भेदरूप नौ अधिकारों, तथा उस उस लोकमें निबद्ध जीवोंको, नयविशेषोंका आश्रय लेकर उत्कृष्ट वर्णनासे युक्त, भव्यजनोंको आनन्दके प्रसारका उत्पादक और जिनभगवान्के मुखरूपी कमलसे निकले हुए इस त्रिलोकप्रज्ञप्तिनामक ग्रंथकेद्वारा कहता हूं ॥ ८८–९० ॥

अनन्तानन्त अलोकाकाशके बहुमध्यभागमें स्थित, जीवादि पांच द्रव्योंसे व्याप्त और जगश्रेणिके घनप्रमाण यह लोकाकाश है ॥ ९१ ॥

≡ १६ ख ख ख ।

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल, ये पांचों द्रव्य सम्पूर्ण लोकाकाशको व्याप्त कर स्थित हैं ॥ ९२ ॥

अब यहांसे आगे श्रेणिके घनप्रमाण लोकका निर्णय करनेके लिये परिभाषाएं अर्थात् पल्योपमादिका स्वरूप कहते हैं—

पल्योपम, सागरोपम, सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगश्रेणि, लोकप्रतर और लोक, ये आठ उपमाप्रमाणके भेद हैं ॥ ९३ ॥

प. १ । सा. २ । सू. ३ । प्र. ४ । घ. ५ । ज. ६ । लोक प्र. ७ । लो. ८ ॥

व्यवहारपल्य, उद्धारपल्य, और अद्धापल्य, ये पल्यके तीन भेद हैं । इनमें प्रथम पल्यसे संख्या, द्वितीयसे द्वीप-समुद्रादिक और तृतीयसे कर्मोंकी स्थितिका प्रमाण लगाया जाता है ॥ ९४ ॥

.....

१ द अहिआरो. २ ब लयं = नयविशेषम्, द वोच्छामि सयलईए. ३ ब जणाणंदए सरसं. ४ [दव्वट्ठिदो]. ५ द ख ख ख ×२. ६ द ब लोयायासो. ७ द आउवट्टिदिआपूरय. ८ द ब चरंति.

खंदं सयलसमत्थं तस्स य अद्धं भणंति देसो त्ति । अद्धद्धं च पदेसो अविभागी होदि परमाणू ॥ ९५
सत्थेण [1]सुतिक्खेण छेत्तुं भेत्तुं च जं किरस्सक्कं । जलयणलादिहिं णासं ण एदि सो[2] होदि परमाणू ॥ ९६
एयरसवण्णगंधं दो फासा सद्दकारणमसद्दं । खंदंतरिदं दव्वं तं परमाणुं भणंति बुधा ॥ ९७
अंतादिमज्झहीणं अपदेसं इंदिएहिं ण हु गेज्झं । जं दव्वं अविभत्तं तं परमाणुं कहंति जिणा ॥ ९८
पूरंति गलंति जदो पूरणगलणेहि पोग्गला तेण । परमाणु चिय जादा इय दिट्ठं दिट्ठिवादम्हि ॥ ९९
वण्णरसगंधफासे पूरणगलणाइ सव्वकालम्हि । खंदं पिव कुमणाणा परमाणू पुग्गला तम्हा[3] ॥ १००
आदेसमुत्तमुत्तो धादुचउक्कस्स कारणं जादो । सो णेओ परमाणू परिणामगुणो य खंदस्स[4] ॥ १०१
परमाणूहिं अणंताणंतेहिं बहुविहेहि दव्वेहिं । उवसण्णासण्णो त्ति य सो खंदो होदि णामेण ॥ १०२

सर्वप्रकारसे समर्थ, अर्थात् सर्वांशपूर्ण स्कंध कहलाता है। उसके अर्धभागको देश और आधेके आधे भागको प्रदेश कहते हैं। स्कंधके अविभागी अर्थात् जिसके और विभाग न होसकें ऐसे अंशको परमाणु कहते हैं ॥ ९५ ॥

जो अत्यन्त तीक्ष्ण शस्त्रसे भी छेदा या भेदा नहीं जा सकता, तथा जल और अग्नि आदिके द्वारा नाशको भी प्राप्त नहीं होता, वह परमाणु है ॥ ९६ ॥

जिसमें पांच रसोंमेंसे एक रस, पांच वर्णोंमेंसे एक वर्ण, दो गंधोंमेंसे एक गंध, और स्निग्ध-रूक्षमेंसे एक तथा शीत-उष्णमेंसे एक ऐसे दो स्पर्श, इसप्रकार कुल पांच गुण हों, और जो स्वयं शब्दरूप न होकर भी शब्दका कारण हो एवं स्कन्धके अन्तर्गत हो, ऐसे द्रव्यको पण्डित जन परमाणु कहते हैं ॥ ९७ ॥

जो द्रव्य अन्त, आदि एवं मध्यसे विहीन हो, प्रदेशोंसे रहित अर्थात् एक प्रदेशी हो, इन्द्रिय द्वारा ग्रहण नहीं किया जासकता हो और विभागरहित हो, उसे जिन भगवान् परमाणु कहते हैं ॥ ९८ ॥

क्योंकि स्कन्धोंके समान परमाणु भी पूरते हैं और गलते हैं, इसीलिये पूरण-गलन क्रियाओंके रहने से वे भी पुद्गल के अंतर्गत हैं, ऐसा दृष्टिवाद अंगमें निर्दिष्ट है ॥ ९९ ॥

परमाणु स्कन्धकी तरह सब कालमें वर्ण, रस, गन्ध और स्पर्श, इन गुणोंमें पूरण-गलन को किया करते हैं, इसलिये वे पुद्गल ही हैं ॥ १०० ॥

जो नयविशेषकी अपेक्षा कथंचित् मूर्त व कथंचित् अमूर्त है, चार धातुरूप स्कन्धका कारण है, और परिणमनस्वभावी है, उसे परमाणु जानना चाहिये ॥ १०१ ॥

नानाप्रकारके अनन्तानन्त परमाणु-द्रव्योंसे उपसन्नासन्न नामसे प्रसिद्ध एक स्कंध उत्पन्न होता है ॥ १०२ ॥

---

१ ब सुतिक्खेण य छेत्तुं च जं किरस्सका. २ द ब सा. ३ तस्स. ४ पञ्चा. ८५

उवसण्णासण्णो वि य गुणिदो अट्ठेहि होदि णामेण । सण्णासण्णो त्ति तदो दु हदि खंधो पमाणट्ठं ॥ १०३
अट्ठट्ठ गुणिदेहिं सण्णासण्णेहिं होदि तुडिरेणू । तित्तियमेत्तहदेहिं तुडिरेणूहिं पि तसरेणू ॥ १०४
तसरेणू रथरेणू उत्तमभोगावणीए वालग्गं । मज्झिमभोगखिदीए वालं पि जहण्णभोगखिदिवालं ॥ १०५
कम्ममहीए वालं लिक्खं जूवं जवं च अंगुलयं । इगिउत्तरा य भणिदा पुव्वेहिं अट्ठगुणिदेहिं ॥ १०६
तिविधप्पमंगुलं तं उच्छेहपमाणअप्पअंगुलयं । पारेभामाणिप्पण्णं होदि हु उदिमेहसूचिअंगुलयं ॥ १०७
तं चिय पंच सयाइं अवसप्पिणिपढमभरहचक्किस्स । अंगुल[1] एक्कं चेव य तं तु पमाणंगुलं णाम ॥ १०८
जस्सि जस्सि काले भरहेरावदमहीसु[2] जे मणुवा । तस्सि तस्सि ताणं अंगुलमादंगुलं णाम ॥ १०९
[3]उस्सेहअंगुलेणं सुराण णरतिरियणारयाणं च । उरसेहंगुलमाणं चउदेवणिकेदणयराणिं[4] ॥ ११०
दीवोदहिसेलाणं वेदीण णदीण कुंडजगदीणं । वस्साण[5] च पमाणं होदि पमाणंगुलेणेव ॥ १११
भिंगारकलसदप्पणवेणुपडहजुगाण सयणसगदाणं[6] । हलमुसलसत्तितोमरसिंहासणबाणणालिअक्खाणं ॥ ११२
चामरदुंदुहिपीढच्छत्ताणं णरणिवासणगराणं । उज्जाणपहुदियाणं संखा आदंगुलं णेया ॥ ११३

उवसन्नासन्नको भी आठसे गुणित करनेपर सन्नासन्न नामका स्कंध होता है अर्थात् आठ उवसन्नासन्नोंका एक सन्नासन्न नामका स्कंध होता है । आठसे गुणित सन्नासन्नों अर्थात् आठ सन्नासन्नोंसे एक त्रुटिरेणु, और इतने ही [आठ] त्रुटिरेणुओंसे एक त्रसरेणु होता है । इसप्रकार पूर्वपूर्व स्कन्धोंसे आठ आठ गुणे क्रमशः रथरेणु, उत्तम भोगभूमिका बालाग्र, मध्यमभोगभूमिका बालाग्र, जघन्यभोगभूमिका बालाग्र, कर्मभूमिका बालाग्र, लीक, जूं, जौ और अंगुल, ये उत्तरोत्तर स्कंध कहे गये हैं ॥ १०३–१०६ ॥

अंगुल तीन प्रकारका है– उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुल और आत्मांगुल । इनमेंसे जो अंगुल उपर्युक्त परिभाषासे सिद्ध किया गया है, वह उत्सेध सूच्यंगुल है ॥ १०७ ॥

पांचसौ उत्सेधांगुलप्रमाण अवसर्पिणी कालके प्रथम भरत चक्रवर्तीका एक अंगुल होता है, और इसीका नाम प्रमाणांगुल है ॥ १०८ ॥

जिस जिस कालमें भरत और ऐरावत क्षेत्रमें जो जो मनुष्य हुआ करते हैं, उस उस कालमें उन्हीं मनुष्योंके अंगुलका नाम आत्मांगुल है ॥ १०९ ॥

उत्सेधांगुलसे देव, मनुष्य, तिर्यंच एवं नारकियोंके शरीरकी ऊंचाईका प्रमाण, और चारों प्रकारके देवोंके निवासस्थान व नगरादिका प्रमाण जाना जाता है ॥ ११० ॥

द्वीप, समुद्र, कुलाचल, वेदी, नदी, कुंड या सरोवर जगती और भरतादिक क्षेत्र इन सबका प्रमाण प्रमाणांगुलसे ही हुआ करता है ॥ १११ ॥

झारी, कलश, दर्पण, वेणु, भेरी, युग, शय्या, शकट (गाड़ी), हल, मूसल, शक्ति, तोमर, सिंहासन, बाण, नालि, अक्ष, चामर, दुंदुभि, पीठ, छत्र, मनुष्योंके निवासस्थान व नगर और उद्यानादिकोंकी संख्या आत्मांगुलसे समझना चाहिये ॥ ११२–११३ ॥

---

१ [अंगुलमेक्कं]. २ ब °महीस. ३ ब उस्सेहअंगुलो णं. ४ ब °णिकेदणणयराणिं. ५ द ब वंसाणं. ६ [°सगडाणं].

छहिं अंगुलेहि पादो वेदादेहिं विहत्थिणामा य । दोण्णि विहत्थी हत्थो वेहत्थेहिं हवे रिक्कू ॥ ११४
वेरिक्कूहिं दंडो दंडसमा [1]जुगधणूणि मुसलं वा । तस्स तहा णाली वा दोदंडसहस्सयं कोसं ॥ ११५
चउकोसेहिं जोयण तं चिय [2]वित्थारगत्तसमवट्टं । तत्तियमेत्तं घणफलमाणेज्जं करणकुसलेहिं ॥ ११६
समवट्टवासवग्गे दहगुणिदे करणिपरिधओ होदि । वित्थारतुरिमभागे परिधिहदे तस्स खेत्तफलं ॥ ११७
उणवीसजोयणेसुं चउवीसेहिं तहावहरिदेसु । तिविहवियप्पे पल्ले घणखेत्तफला[3] हु [4]पत्तेकं ॥ ११८

१९/२४

उत्तमभोगखिदीए उप्पण्णविजुगलरोमकोडीओ । एक्कादिसत्तदिवसावहिम्मि खंडेत्तु संगहियं ॥ ११९
अट्ठहिं तेहिं रोमग्गेहिं णिरंतरं पढमं । अच्छंतं णवियूणं भरियव्वं जाव भूमिसमं ॥ १२०
दंडपमाणंगुलए डरसेहंगुल जवं च जूवं च । लिक्खं तह कादूणं बालग्गं कम्मभूमीए ॥ १२१
[5]अवरमज्झिमउत्तमभोगखिदीणं च बालअग्गाइं । [6]एक्केक्कमट्ठधण.हदरोमा ववहारपल्लस्स ॥ १२२

छह अंगुलोंका पाद, दो पादोंका वितस्ति, दो वितस्तियोंका हाथ, दो हाथका रिक्कू, दो रिक्कुओंका दण्ड, दण्डके बराबर अर्थात् चार हाथप्रमाण ही धनुष, मूसल, तथा नाली, और दो हजार दण्ड या धनुषका एक क्रोश होता है ॥ ११४–११५ ॥

चार क्रोशका एक योजन होता है। उतने ही अर्थात् एक योजन विस्तार वाले गोल गड्ढेका गणितशास्त्रमें निपुण पुरुषोंको घनफल ले आना चाहिये ॥ ११६ ॥

समान गोलक्षेत्रके व्यासके वर्गको दशसे गुणा करके जो गुणनफल प्राप्त हो उसका वर्गमूल निकालनेपर परिधिका प्रमाण निकलता है। तथा विस्तार अर्थात् व्यासके चौथे भागसे परिधिको गुणाकरनेपर उसका क्षेत्रफल निकलता है ॥ ११७ ॥

तथा उन्नीस योजनोंको चौबीससे विभक्त करनेपर तीन प्रकारके पल्योंमेंसे प्रत्येकका घन क्षेत्रफल होता है ॥ ११८ ॥

उदाहरण—१ योजन व्यासवाले गोल क्षेत्रका घनफल—

$१\times१\times१०=१०$; $\sqrt{१०}=\frac{१९}{६}$ परिधि; $\frac{१९}{६}\times\frac{१}{४}=\frac{१९}{२४}$ क्षेत्रफल; $\frac{१९}{२४}\times१=\frac{१९}{२४}$ घनफल.

उत्तम भोगभूमिमें एक दिनसे लेकर सात दिनतकके उत्पन्न हुए मेढ़ेके करोड़ों रोमोंके अविभागी खण्ड करके उन खण्डित रोमाग्रोंसे उस एक योजन विस्तारवाले प्रथम पल्यको (गड्ढेको) पृथिवीके बराबर अत्यन्त सघन भरना चाहिये ॥ ११९–१२० ॥

ऊपर जो $\frac{१९}{२४}$ प्रमाण घनफल आया है उसके दण्ड करके प्रमाणांगुल करलेना चाहिये। पुनः प्रमाणांगुलोंके उत्सेधांगुल करना चाहिये। पुनः जौ, जूं, लीख, कर्मभूमिके बालाग्र, जघन्य भोगभूमिके बालाग्र, मध्यम भोगभूमिके बालाग्र, उत्तम भोगभूमिके बालाग्र, इनकी अपेक्षा प्रत्येकको आठके घनसे गुणाकरनेपर व्यवहारपल्यके रोमोंकी संख्या निकल आती है ॥ १२१-१२२ ॥

१ द जुगधणूणि. २ ब वित्थारं. ३ [घणखेत्तफलं]. ४ ब पत्तेका. ५ ब अवरमज्झिम° ६ द एक्कि°

९०।९६।५००।८।८।८।८।८।८।८।८।
९०।९६।५००।८।८।८।८।८।८।८।८।
९०।९६।५००।८।८।८।८।८।८।८।८।

। पल्ल[1] रोमस्स ।

[2]अट्ठरसं [3]संताणे[4] सुण्णाणिं दोणवेक्कदोएक्का[5] । पण्णवचउक्कसत्ता सगसत्ता एक्कतियसुण्णा ॥ १२३
दोअट्ठसुण्णतिअणहतियच्छदोण्णिपणचउतिण्णि य[6] । [7]एक्कचउक्काणिं ते अंक कमेण[8] पल्लस्स ॥ १२४

४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००० ।

एक्केक्कं रोमग्गं वस्ससदे पेलिदम्हि सो पल्लो । रित्तो होदि स कालो उद्धारणिमित्तववहारो ॥ १२५

। ववहारपल्लं ।

ववहाररोमरासिं पत्तेक्कमसंखकोडिवस्साणं । समयसमं छेत्तूणं विदिए पल्लम्हि भरिदम्हि ॥ १२६
समयं पडि एक्केक्कं[9] वालग्गं पेलिदम्हि सो पल्लो । रित्तो होदि स कालो उद्धारं णाम पल्लं तु ॥ १२७

। उद्धारपल्लं ।

$\frac{१९}{३\frac{१}{४}}$ × ४ × ४ × ४ × २००० × २००० × २००० × ४ × ४ × ४ × २४ × २४ × २४ × ५०० × ५०० × ५०० × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ × ८ =४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४९५१२१९२०००००००००००००००००.

अन्तमें १८ शून्य, दो, नौ, एक, दो, एक, पांच, नौ, चार, सात, सात, सात, एक, तीन, शून्य, दो, आठ, शून्य, तीन, शून्य, तीन, छह, दो, पांच, चार, तीन, एक, और चार, ये क्रमसे पल्यके अंक हैं ॥ १२३–१२४ ॥

सौ सौ वर्षमें एक एक रोम-खण्डके निकालनेपर जितने समयमें वह गड्ढा खाली हो, उतने कालको व्यवहारपल्योपम कहते हैं । वह व्यवहारपल्य उद्धारपल्यका निमित्त है ॥ १२५ ॥

व्यवहारपल्य समाप्त हुआ ।

व्यवहारपल्यकी रोमराशिमेंसे प्रत्येक रोमखण्डको, असंख्यात करोड़ वर्षोंके जितने समय हों उतने खण्ड करके, उनसे दूसरे पल्यको भरकर पुनः एक एक समयमें एक एक रोम-खण्डको निकाले । इस प्रकार जितने समयमें वह दूसरा पल्य खाली होजाय उतने कालको उद्धारपल्योपम समझना चाहिये ॥ १२६–१२७ ॥

उद्धारपल्य समाप्त हुआ ।

---

१ [पल्लं]. २ द अट्ठरसंताणे. ३ [अंतेणं]. ४ द दोणविक्क°. ५ द तियच्छंचपदोण्णिपणचउण्णिति. ६ द ए एक्क°. ७ [अंका कमेण]. ८ ब पडियेकेकं.

एदेण पल्लेण दीवसमुद्दाण होदि परिमाणं । उद्धारेोमरासिं [1]छेत्तूणसंखवाससमयसमं ॥ १२८
पुव्वं व विरविदेणं तद्दियं अद्धारपल्लणिप्पत्ती । णारयतिरियणरसुराण[2] विण्णेया कम्मट्ठिदी तम्हि ॥ १२९
। अद्धारपल्लं । एव पल्ल समत्तं ।
एदाणं पल्लाणं दहप्पमाणाउ कोडिकोडीओ । सागरउवमस्स पुढं एक्कस्स हवेज्ज परिमाणं ॥ १३०
। सागरोपमं समत्तं ।
अद्धारपल्लछेदो तस्सासंखेयभागमेत्ते य । पल्लघणंगुलवग्गिदसंवग्गिदयम्हि सूइजगसेढी ॥ १३१
सू. २। जग. —।
तं वग्गे पदरंगुलपदराहृ घणे घणंगुलं लोगो । जगसेढीए सत्तमभागो रज्जू पभासंते ॥ १३२
४ । = । ६ । ≡ ।
। एवं परिभासा गदा ।

इस उद्धारपल्यमें द्वीप और समुद्रोंका प्रमाण जाना जाता है । उद्धारपल्यकी रोमराशिमेंसे प्रत्येक रोमखण्डके असंख्यात वर्षोंके समयप्रमाण खण्ड करके तीसरे गड्ढेके भरनेपर और पहिलेके समान एक एक समयमें एक एक रोमखण्डको निकालनेपर जितने समयमें वह गड्ढा रिक्त हो जाय उतने कालको अद्धापल्योपम कहते है । इस अद्धा पल्यसे नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और देवोंकी आयु तथा कर्मोंकी स्थितिका प्रमाण जानना चाहिये ॥ १२८--१२९ ॥

इस प्रकार पल्य समाप्त हुआ ।

इन दशकोड़ाकोड़ी पल्योंका जितना प्रमाण हो उतना पृथक् पृथक् एक सागरोपमका प्रमाण होता है । अर्थात् दश कोड़ाकोड़ी व्यवहार पल्योंका एक व्यवहारसागरोपम, दश कोड़ा-कोड़ी उद्धारपल्योंका एक उद्धारसागरोपम और दश कोड़ाकोड़ी अद्धापल्योंका एक अद्धासागरोपम होता है ॥ १३० ॥ सागरोपम समाप्त हुआ ।

अद्धापल्यके जितने अर्धच्छेद हों, उतनी जगह पल्यको रखकर परस्परमें गुणाकरने पर जो राशि उत्पन्न हो उसे सूच्यंगुल, और अद्धापल्यकी अर्धच्छेद राशिके असंख्यात वें भागप्रमाण घनां-गुलको रखकर उनके परस्पर गुणाकरनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसे जगश्रेणी कहते हैं, ॥ १३१ ॥

जगश्रे. — सू. अं. २

उद्धार पल्य समाप्त हुआ ।

उपर्युक्त सूच्यङ्गुलका वर्ग करनेपर प्रतरांगुल और जगश्रेणी का वर्ग करनेपर जगप्रतर होता है । इसी प्रकार सूच्यंगुलका घन करनेपर घनांगुल और जगश्रेणीका घन करनेपर लोकका प्रमाण होता हैं । जगश्रेणीके सातवें भाग प्रमाण राजूका प्रमाण कहा जाता है ॥ १३२ ॥

प्र. अं. ४; ज. प्र. =; घ. अं. ६; घ. लो. ≡ ।

इसप्रकार परिभाषा समाप्त हुई ।

१ द छेत्तूण संख°. २ द णराण सुराण.

आदिणिहणेण हीणो पगदिसरूवेण एस संजादो। जीवाजीवसमिद्धो सव्वण्हावलोइओ[1] लोओ ॥ १३३
धम्माधम्मणिबद्धा गदिरागदी जीवपोग्गलाणं च। जेत्तियमेत्ताआसे[3] लोयाआसो स णादव्वो ॥ १३४
लोयायासट्ठाणं सयंपहाणं सदव्वछक्कं हु। सव्वमलोयायासं तं सव्वंसं[4] हवे णियमा ॥ १३५
सयलो एस य लोओ णिप्पण्णो सेढिविंदमाणेण। तिवियप्पो[5] णादव्वो हेट्ठिममज्झिल्लउड्ढभेएण ॥ १३६
हेट्ठिमलोयायारो वेत्तासणसण्णिहो सहावेण। मज्झिमलोयायारो उब्भियमुरवद्धसारिच्छो ॥ १३७

▽ △

उवरिमलोयाआरो उब्भियमुरवेण होइ सरिसत्तो। संठाणो एदाणं लोयाणं एण्हिं साहेमि ॥ १३८

संदिट्ठी-वादरं।



तंमज्झे मुहमेक्कं भूमि जहा होदि सत्त रज्जूओ। तह छिंदिदम्मि मज्झे हेट्ठिमलोयस्स आयारो ॥ १३९
दोपक्खखेत्तमेत्तं उद्धलयंतं पुण ट्ठवेदूणं। विविरीदेणं मेलिदे वासुच्छेहा सत्त रज्जूओ ॥ १४०

.....

सर्वज्ञ भगवान्‌से अवलोकित यह लोक आदि और अन्तसे रहित अर्थात् अनाद्यनन्त है, स्वभावसे ही उत्पन्न हुआ है, और जीव एवं अजीव द्रव्योंसे व्याप्त है ॥ १३३ ॥

जितने आकाशमें धर्म और अधर्म द्रव्यके निमित्तसे होनेवाली जीव और पुद्गलोंकी गति एवं स्थिति हो, उसे लोकाकाश समझना चाहिये ॥ १३४ ॥

छह द्रव्योंसे सहित यह लोकाकाशस्थान निश्चय ही स्वयंप्रधान है। इसकी सब दिशाओंमें नियमसे सब अलोकाकाश स्थित है ॥ १३५ ॥

श्रेणीवृंदके मानसे अर्थात् जगश्रेणीके घनप्रमाणसे निष्पन्न हुआ यह सम्पूर्ण लोक अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोकके भेदसे तीन प्रकारका है ॥ १३६ ॥

इनमेंसे अधोलोकका आकार स्वभावसे वेत्रासनके सदृश, और मध्यलोकका आकार खड़े किए हुए मृदंगके ऊर्ध्वभागके समान है ॥ १३७ ॥

ऊर्ध्वलोकका आकार खड़े किये हुए मृदंगके सदृश है। अब इन तीनों लोकोंके आकारको कहते हैं ॥ १३८ ॥

उस सम्पूर्ण लोकके बीचमेंसे जिसप्रकार मुख एक राजु और भूमि सात राजु हो, इसप्रकार मध्यमें छेदनेपर अधोलोकका आकार होता है ॥ १३९ ॥

दोनों ओर फैले हुए क्षेत्रको उठाकर अलग रखदे, फिर विपरीतक्रमसे मिलानेपर विस्तार और उत्सेध सात सात राजु होता है ॥ १४० ॥

.....

१ द सव्वणहावअवलो, ब सव्वणहावलोयवो. २ द ब गदिरागदि. ३ द ब मेत्ताआसो. ४ ब तं संवासं. ५ द तिव्वियप्पो. ६ द उच्चइयतं.

मज्झम्मि पंच रज्जू कमसो हेट्ठोवरिम्हि इगि रज्जू । सग रज्जू उच्छेहो होदि जहा तह य वेत्तूणं ॥ १४१
हेट्ठोवरिदं मेलिदखेत्तायारं तु चरिमलोयस्स । एदे पुव्विल्लस्स य खेत्तोवरि ठावए पयदं ॥ १४२
उब्भियदिवड्ढमुरवधजोवमाणो य तस्स आयारो । एक्कपदे सगवहलो[1] चोद्दसरज्जूदवो तस्स ॥ १४३
तस्स य एक्कम्मि दए वासो पुव्वावरेण भूमिमुहे । सत्तेक्कपंचएक्का रज्जूवो मज्झहाणिचयं ॥ १४४
खेत्तंठियचउरंसं सरिसट्ठाणं अहो घेत्तूणं । तमणुज्झोभयपक्खे विवरीयकमेण मेलिज्जो ॥ १४५
पुव्वंजिय अवसेसे खेत्ते गहिऊण पदरपरिमाणं । पुव्वं पिव कादूणं बहलं बहलम्मि मेलिज्जो ॥ १४६
एवमवसेसखेत्तं जाव समप्पेदि[2] ताव घेत्तव्वं । एक्केक्कपदरमाणं एक्केक्कपदेसबहलेणं ॥ १४७
एदेण पयारेणं णिप्पण्णतिलोयखेत्तदीहत्तं । वासउदयं भणामो णिस्संदं[3] दिट्ठिवादादो ॥ १४८
सेढिपमाणायामं भागेसु दक्खिणुत्तरेसु पुढं । पुव्वावरेसु वासं भूमिमुहे सत्त येक्कपंचेक्का ॥ १४९

—।—।—१।—५।—१।

जिस प्रकार मध्यमें पांच राजु, नीचे और ऊपर क्रमसे एक राजु और उंचाई सात राजु हो, इसप्रकार खण्डित करनेपर नीचे और ऊपर मिले हुए क्षेत्रका आकार अन्तिम लोक अर्थात् ऊर्ध्वलोकका आकार होता है। इसको पूर्वोक्त क्षेत्र अर्थात् अधोलोकके ऊपर रखनेपर प्रकृतमें खड़े किये हुए ध्वजयुक्त डेढ़ मृदंगके सदृश उस सम्पूर्ण लोकका आकार होता है। इसको एकत्र करनेपर उस लोकका बाहल्य सात राजु और उंचाई चौदह राजु होती है ॥ १४१–१४३ ॥

इस लोककी भूमि और मुखका व्यास पूर्व-पश्चिमकी अपेक्षा एक ओर क्रमशः सात, एक, पांच और एक राजुमात्र है, तथा मध्यमें हानि-वृद्धि है ॥ १४४ ॥

आकाशमें स्थित चारों सदृश आकारवाले खण्डोंको ग्रहण करके उन्हें विचारपूर्वक उभय पक्षमें विपरीत क्रमसे मिलाना चाहिये। इसीप्रकार अवशेष क्षेत्रोंको ग्रहण करके और पूर्वके समान ही प्रतरप्रमाण करके बाहल्यको बाहल्यमें मिलादे। इस क्रमसे जबतक अवशिष्ट क्षेत्र समाप्त न हो जाय, तबतक एक एक प्रदेश बाहल्यरूप एक एक प्रतरप्रमाणको ग्रहण करना चाहिये ॥ १४५–१४७ ॥

इसप्रकारसे सिद्ध हुए त्रिलोकरूप क्षेत्रकी मुटाई, चौड़ाई और उंचाईका हम वैसा ही वर्णन करते हैं जैसा कि दृष्टिवाद अंगमें निकला है ॥ १४८ ॥

दक्षिण और उत्तर भागमें लोकका आयाम जगश्रेणीप्रमाण अर्थात् सात राजु है, पूर्व और पश्चिम भागमें भूमि तथा मुखका व्यास क्रमसे सात, एक, पांच और एक राजु है। तात्पर्य यह है कि लोककी मुटाई सर्वत्र सात राजु है, और विस्तार क्रमशः अधोलोकके नीचे सात राजु, मध्यलोकमें एक राजु, ब्रह्मस्वर्गपर पांच राजु और लोकके अन्तमें एक राजु है ॥ १४९ ॥

राजु. ७ । ७ । १ । ५ । १ ।

१ द ब उब्भियदिवड्ढमुरवद्ध°. २ द ब सव्वहलो. ३ ब अ. ४ [एवं चिय]. ५ द ब समं पेरि. ६ द ब णिस्सदं.

चोद्दसरज्जुपमाणो उच्छेहो होदि सयललोगस्स । अद्धमुरजस्सुदयो समंगमुरवोदयसरिच्छो ॥ १५०

१४ ।—।—।

हेट्ठिममज्झिमउवरिमलोउच्छेहो कमेण रज्जूवो । सत्त य जोयणलक्खं जोयणलक्खूणसगरज्जू ॥ १५१

७ । जो. १००००० । ७ रिण जो. ९००००० ।

इह रयणसक्करावालुपंकधूमतममहातमादिपहा । पुरवद्धम्मि महीओ सत्त च्चिय रज्जुअन्तरिया ॥ १५२

घम्मावंसामेघाअंजणरिट्ठाणउब्भमघवीओ । माघविया इय ताणं पुढवीणं गोत्तणामाणि ॥ १५३

मज्झिमअगस्स हेट्ठिमभागादो णिग्गदो पढमरज्जू । सक्करपहपुढवीए हेट्ठिमभागम्मि णिट्ठादि ॥ १५४

१ ।

तत्तो दोद्दरज्जू वालुवपहहेट्ठि समप्पेदि । तह य तइज्जा रज्जू पंकपहहेट्ठस्स भागम्मि ॥ १५५

२ । ३ ।

सम्पूर्ण लोककी उंचाई चौदह राजुप्रमाण है । अर्ध मृदंगकी उंचाई सम्पूर्ण मृदंगकी उंचाईके सदृश है अर्थात् अर्ध मृदंगसदृश अधोलोक जैसे सात राजु ऊंचा है, उसीप्रकार पूर्ण मृदंगके सदृश ऊर्ध्वलोक भी सात ही राजु ऊंचा है ॥ १५० ॥

क्रमसे अधोलोककी उंचाई सात राजु, मध्यलोककी उंचाई एक लाख योजन और ऊर्ध्वलोककी उंचाई एक लाख योजन कम सात राजु है ॥ १५१ ॥

अ. लो. ७ रा. । म. लो. १००००० यो. । ऊ. लो. रा. ७ ऋण १००००० यो. ।

इन तीनों लोकोंमेंसे अर्धमृदंगाकार अधोलोकमें रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और महातमःप्रभा, ये सात पृथिवियां एक एक राजुके अन्तरालसे हैं ॥ १५२ ॥

विशेषार्थ—ऊपर प्रत्येक पृथिवीके मध्यका अन्तर जो एक राजु कहा है, वह सामान्य कथन है । विशेषरूपसे विचार करनेपर पहली और दूसरी पृथिवीकी मुटाई एक राजुमें शामिल है, अतएव इन दोनों पृथिवियोंका अन्तर दो लाख बारह हजार योजन कम एक राजु होगा । इसी-प्रकार आगे भी पृथिवियोंकी मुटाई प्रत्येक राजुमें शामिल है, अतएव मुटाईका जहां जितना प्रमाण है, उतना उतना कम एक राजु वहां अन्तर जानना चाहिये ।

घर्मा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मघवी, और माघवी, ये इन उपर्युक्त पृथिवियोंके गोत्र-नाम हैं ॥ १५३ ॥

मध्यलोकके अधोभागसे प्रारम्भ होकर पहिला राजु शर्कराप्रभा पृथिवीके अधोभागमें समाप्त होता है ॥ १५४ ॥

रा. १.

इसके आगे दूसरा राजु प्रारम्भ होकर बालुकाप्रभाके अधोभागमें समाप्त होता है, तथा तीसरा राजु पंकप्रभाके अधोभागमें समाप्त होता है ॥ १५५ ॥

रा. २ । ३ ।

---

१ ब सामग्ग°. २ ब गात्त°. ३ द ब सक्करसेह.

धूमप्पहाए हेट्ठिमभागम्मि समप्पदे तुरियरज्जू । तह पंचमिया रज्जू तमप्पहाहेट्ठिमपएसे ॥ १५६

$\frac{}{\text{उ}}$ ४ । $\frac{}{\text{उ}}$ ५ ।

महतमहेट्ठिमयंते छट्ठी हि समप्पदे रज्जू । तत्तो सत्तमरज्जू लोयस्स तलम्मि णिट्ठादि ॥ १५७

$\frac{}{\text{उ}}$ ६ । $\frac{}{\text{उ}}$ ७ ।

मज्झिमलोगस्स उवरिमभागादु दिवड्ढरज्जुपरिमाणं । इगिजोयणलक्खूणं सोहम्मविमाणधयदंडे ॥ १५८

$\frac{}{१४}$ ३ । रि. यो. १००००० ।[1]

तत्तादि दिवड्ढरज्जू माहिंदसणक्कुमारउवरिम्मि । णिट्ठादि अद्धरज्जू बंभुत्तरउड्ढभागम्मि ॥ १५९

$\frac{}{१४}$ २ । $\frac{}{१४}$ ।

अद्धसादि अद्धरज्जू कविट्ठस्सोवरिट्ठभागम्मि । स चिय महसुक्कोवरि सहसारोवरि ण स चेय ॥ १६०

$\frac{}{१४}$ । $\frac{}{१४}$ । $\frac{}{१४}$ ।

तत्तो य अद्धरज्जू आणदकप्पस्स उवरिमपएसे । स य आरणस्स कप्पस्स[2] उवरिमभागम्मि गेविज्जं[3] ॥ १६१

इसके अनन्तर चौथा राजु धूमप्रभाके अधोभागमें और पांचवां राजु तमःप्रभाके अधोभागमें समाप्त होता है ॥ १५६ ॥

रा. ४ । ५ ।

पूर्वोक्त क्रमसे छठवां राजु महातमःप्रभाके अन्तमें समाप्त होता है, और इसके आगे सातवां राजु लोकके तलभागमें समाप्त होता है ॥ १५७ ॥

रा. ६ । ७ ।

मध्यलोकके ऊपरी भागसे सौधर्म विमानके ध्वजदण्डतक एक लाख योजन कम डेढ़ राजुप्रमाण उंचाई है ॥ १५८ ॥

रा. १$\frac{१}{२}$ ऋण — १००००० यो. ।

इसके आगे डेढ़ राजु माहेन्द्र और सानत्कुमार स्वर्गके ऊपरी भागमें समाप्त होता है । अनन्तर आधा राजु ब्रह्मोत्तर स्वर्गके ऊपरी भागमें पूर्ण होता है ॥ १५९ ॥

रा. १$\frac{१}{२}$ । $\frac{१}{२}$ ।

इसके पश्चात् आधा राजु कापिष्टके ऊपरी भागमें, आधा राजु महाशुक्रके ऊपरी भागमें, और आधा राजु सहस्रारके ऊपरी भागमें समाप्त होता है ॥ १६० ॥

रा. $\frac{१}{२}$ । $\frac{१}{२}$ । $\frac{१}{२}$ ।

इसके अनन्तर अर्ध राजु आनत स्वर्गके ऊपरी भागमें और अर्ध राजु आरण स्वर्गके ऊपरी

---

१ ब छट्ठीहि. २ द ब लक्खोणं. ३ द ब $\frac{}{१४}$ ३ । $\frac{}{१४}$ ३ । ४ ब अद्धरज्जूवमुत्तर°. ५ द ब कप्पं सो ६ ब गेवज्जं.

तत्तो उवरिमभागे णवाणुत्तरओ होंति एक्करज्जूओ । एवं उवरिमलोए रज्जुविभागो समुद्दिट्ठं ॥ १६२

१/१४ । १/१४ । १/१४ २ ।

णियणियचरिमिंदयधयदंडग्गं कप्पभूमिअवसाणं । कप्पादीदमहीए विच्छेदो लोयविच्छेदो ॥१६३

सेढीए सत्तंसो हेट्ठिमलोयस्स होदि मुहवासो । भूमीवासो सेढीमेत्तायवसाणउच्छेहो ॥ १६४

१/७ । — । — ।

मुहभूमिसमासमद्धिय गुणिदं पुण तह य वेदेण । घणवणिदं णादव्वं वेत्तासणसण्णिए खेत्ते ॥ १६५

हेट्ठिमलोए लोओ चउगुणिसगहिदो विंदफलं[1] । तस्सद्धे सयलजुगो दोगुणिदो सत्तपरिभागो[2] ॥ १६६

१/७ ४ । १/७ २ ।

छेत्तूणं तसणालिं अण्णत्थं ठाविदूण विंदफलं । आणेज्ज तप्पमाणं उणवण्णेहिं विभत्तलोयसमं ॥ १६७

.....

भागमें पूर्ण होता है । बाद एक राजुकी उंचाईमें नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमान हैं । इसप्रकार ऊर्ध्वलोकमें राजुका विभाग कहा गया है ॥ १६१–१६२ ॥

रा. १/१ । १/१ । १ ।

अपने अपने अन्तिम इन्द्रक विमानसम्बन्धी ध्वजदण्डके अग्रभागतक उन उन स्वर्गोंका अन्त समझना चाहिये । और लोकका जो अन्त है वही कल्पातीत भूमिका भी अन्त है ॥ १६३ ॥

अधोलोकके मुखका विस्तार जगश्रेणीका सातवां भाग, भूमिका विस्तार जगश्रेणीप्रमाण, और अधोलोकके अन्ततक उंचाई भी जगश्रेणीप्रमाण ही है ॥ १६४ ॥

रा. १ । १/७ । ७ ।

मुख और भूमिके योगको आधा करके पुनः उंचाईसे गुणा करनेपर वेत्रासनसदृश लोक (अधोलोक) का क्षेत्र-फल जानना चाहिये ॥ १६५ ॥

१ + ७ ÷ २ × ७ = २८ रा० क्षे. फ.

लोकको चारसे गुणाकरके उसमें सातका भागदेनेपर अधोलोकके घनफलका प्रमाण निकलता है, और सम्पूर्ण लोकको दोसे गुणाकर प्राप्त गुणनफलमें सातका भाग देनेपर अधोलोकसम्बंधी आधे क्षेत्रका घनफल होता है ॥ १६६ ॥

३४३ × ४ ÷ ७ = १९६ रा. अ. लो. का घ. फ.

३४३ × २ ÷ ७ = ९८ रा. अर्द्ध अ. लो. का घ. फ.

अधोलोकमेंसे त्रसनालीको छेदकर और उसे अन्यत्र रखकर उसका घनफल निकालना चाहिये । इस घनफलका प्रमाण, लोकके प्रमाणमें उनंचासका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना होता है ॥ १६७ ॥

रा. ७ × १ × १ = ७ अ. लो. त्र. ना. का घ. फ. = ३४३ ÷ ४९ = ७ ।

.....

१ द्र मेत्ता अ उच्छेहो. २ द्र ब समासमद्धिय. ३ द्र सगहिदो य विंद. ४ ब तस्सद्धे सयलजुदागो, द्र ब सत्तपरिभागो.

सगवीसगुणिदलोओ उगवण्णहिदो अ सेससंखिदिसंखा । तसखित्ते सम्मिलिदे चउगुणिदो सगहिदो लोओ ॥ १६८

$\equiv$ २७ । $\equiv$ ४ ।[1]
४९ ७

मुरजायारं उड्ढं खेत्तं छेत्तूण मेलिदं सयलं । पुव्वावरेण जायदि वेत्तासणसरिससंठाणं[2] ॥ १६९

सेढीए सत्तमभागो उवरिमलोयस्स होदि मुहवासो । पणगुणिदो तब्भूमी उस्सेहो तस्स इगिसेढी ॥ १७०

$\frac{१}{७}$ । $\frac{५}{७}$ ।

तियगुणिदो सत्तहिदो उवरिमलोयस्स घणफलं लोओ । तस्सद्धे खेत्तफलं तिउणो चोद्दसहिदो लोओ ॥ १७१

$\equiv$ ३ । $\equiv$ ३ ।
७ १४

छेत्तूणं तसणालिं अण्णत्थं ठाविऊण विंदफलं । आणेज्ज तं पमाणं उगवण्णेहिं विभत्तलोयसमं ॥ १७२

$\equiv$ १ ।
४९

लोकको सत्ताईससे गुणा कर उसमें उनंचासका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना त्रसनालीको छोड़ शेष अधोलोकका घनफल समझना चाहिये। और लोकप्रमाणको चारसे गुणा कर उसमें सातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना त्रसनालीसे युक्त पूर्ण अधोलोकका घनफल समझना चाहिये ॥ १६८ ॥

३४३ × २७ ÷ ४९ = १८९ त्रसनाली छोड़ शेष अ. लो. का घ. फ.

३४३ × ४ ÷ ७ = १९६ पूर्ण अ. लो. का घनफल ।

मृदंगके आकार जो सम्पूर्ण ऊर्ध्वलोक है, उसे छेदकर मिलादेनेपर पूर्व-पश्चिमसे वेत्रासनके सदृश अधोलोकका आकार बन जाता है ॥ १६९ ॥

ऊर्ध्वलोकके मुखका व्यास जगश्रेणीका सातवां भाग है, और इससे पांचगुणा (५ राजु) उसकी भूमिका व्यास, तथा उंचाई एक जगश्रेणी है ॥ १७० ॥

रा. १ । ५ । ७ ।

लोकको तीनसे गुणा करके उसमें सातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना ऊर्ध्वलोकका घनफल है, और लोकको तीनसे गुणाकरके उसमें चौदहका भाग देनेपर लब्धराशिप्रमाण ऊर्ध्वलोक-सम्बन्धी आधे क्षेत्रका फल (घनफल) होता है ॥ १७१ ॥

३४३×३÷७=१४७ ऊ. लो. घ. फ.

३४३×३÷१४=७३$\frac{१}{२}$ अर्द्ध ऊ. लो. घ. फ.

ऊर्ध्वलोकसे त्रसनालीको छेदकर और उसे अलग रखकर उसका घनफल निकाले। इस घनफलका प्रमाण उनंचाससे विभक्त लोकके बराबर होगा ॥ १७२ ॥

३४३ ÷ ४९ = ७ अ. लो. त्र. ना. घ. फ.

१ द $\frac{२७}{४९}$ । $\frac{४}{७}$ ।. २ द ब °संठाणा. ३ द तस्सणालिं. ४ द ब अण्णद्धं. ५ द विंदुफलं.

विंसदिगुणिदो लोओ उजवण्णहिदो य सेससिदिसंखा । तससेसे सत्तिमलिदे लोओ तिगुणो व सत्तहिदो ॥ १७३

$\equiv$ २० । $\equiv$ ३ ।
४९ ७

घणफलमुवरिमहेट्ठिमलोयाणं मेलिदम्मि सेढिघणं । वित्थररुद्धबोहत्थं वोच्छं णाणाविधप्पे वि ॥ १७४
सेवियसत्तमभागो हेट्ठिमलोयस्स होदि मुहवासो । भूवित्थारो सेढी सेढि त्ति य तस्स उच्छेहो ॥ १७५

१ । — । — ।
७

भूमिय मुहं विसोहिय उच्छेहहिदं मुहाउ भूमीदो । सव्वेसु कखेत्तेसुं पत्तेक्कं वड्ढिहाणीओ ॥ १७६
तक्खयवड्ढिपमाणं णियणियउदयाहदं जहिच्छाए । हीणब्भहिए संते वासाणि हवंति भूमुहाहिंतो ॥ १७७

$\frac{१}{४९}$ ६ । ३

लोकको बीससे गुणाकरके उसमें उनंचासका भाग देनेपर त्रसनालीको छोड़ बाकी ऊर्ध्व-लोकका घनफल निकल आता है । लोकको तिगुणा कर उसमे सातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना त्रसनालीयुक्त पूर्ण ऊर्ध्वलोकका घनफल है ॥ १७३ ॥

३४३ × २० ÷ ४९ = १४० त्रसनालीसे रहित ऊ. लो. का घ. फ.

३४३ × ३ ÷ ७ = १४७ त्रसनालीयुक्त ऊ. लो. का घनफल.

ऊर्ध्व और अधोलोकके घनफलको मिलादेनेपर वह श्रेणीके घनप्रमाण (लोक) होता है । अब विस्तारमें अनुराग रखनेवाले शिष्योंको समझानेकेलिये अनेक विकल्पोद्वारा भी इसका कथन करता हूं ॥ १७४ ॥

ऊ. घ. १४७ + अ. घ. १९६ = ३४३ (७ × ७ × ७ = ३४३ श्रे. घ.)

अधोलोकके मुखका व्यास श्रेणीका सातवां भाग अर्थात् एक राजु, और भूमिका विस्तार श्रेणीप्रमाण (७ रा.) है, तथा उसकी उंचाई भी श्रेणीमात्र ही है ॥ १७५ ॥

रा. १ । ७ । ७ ।

भूमिके प्रमाणमेंसे मुखका प्रमाण घटाकर शेषमें उंचाईके प्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना, सब भूमियोंमेंसे प्रत्येक पृथिवीक्षेत्रकी, मुखकी अपेक्षा वृद्धि और भूमिकी अपेक्षा हानिका प्रमाण निकलता है ॥ १७६ ॥

७ − १ ÷ ७ = $\frac{६}{७}$ वृद्धि और हानि का प्रमाण ।

विवक्षित स्थानमें अपनी अपनी उंचाईसे उस वृद्धि और क्षयके प्रमाणको ($\frac{६}{७}$) गुणा करके जो गुणनफल प्राप्त हो, उसको भूमिके प्रमाणमेंसे घटानेपर अथवा मुखके प्रमाणमें जोड़देनेपर उक्त स्थानमें व्यासका प्रमाण निकलता है॥ १७७ ॥

विशेषार्थ—कल्पना कीजिये कि यदि हमें भूमिकी अपेक्षा चतुर्थ स्थानके व्यासका प्रमाण निकालना है, तो हानिका प्रमाण जो छह बटे सात ($\frac{६}{७}$) है, उसे उक्त स्थानकी उंचाईसे (३ रा.)

१ द ब वित्थररुहि°. २ द ब ससे. ३ द ब $\frac{१}{४९}$ ६.

उणवण्णभजिदसेढी अट्ठसु ठाणेसु[1] ठाविदूण कमे । वासद्धं गुणगारा सत्तादिछक्कवड्ढिगदा ॥ १७८

$\frac{७}{४९}$ । $\frac{१३}{४९}$ । $\frac{१९}{४९}$ । $\frac{२५}{४९}$ । $\frac{३१}{४९}$ । $\frac{३७}{४९}$ । $\frac{४३}{४९}$ । $\frac{४९}{४९}$ ।

सत्तघणहरिदलोयं सत्तसु ठाणेसु ठाविदूण कमे । विंदफले गुणयारा दसपभवा छक्कवड्ढिगदा ॥ १७९

$\equiv$ १० । $\equiv$ १६ । $\equiv$ २२ । $\equiv$ २८ । $\equiv$ ३४ । $\equiv$ ४० । $\equiv$ ४६ ।

३४३ ३४३ ३४३ ३४३ ३४३ ३४३ ३४३

गुणाकर प्राप्त हुए गुणन-फलको भूमिके प्रमाणमेंसे घटा देना चाहिये। इस रीतिसे चतुर्थ स्थानका व्यास निकल आवेगा। इसीप्रकार मुखकी अपेक्षा चतुर्थ स्थानके व्यासको निकालनेके लिये वृद्धिके प्रमाण ($\frac{६}{७}$) को उक्त स्थानकी उंचाई (४ राजु) से गुणाकरके प्राप्त हुए गुणन-फलको मुखमें जोड़ देनेपर विवक्षित स्थानके व्यासका प्रमाण निकल आवेगा।

उदाहरण—$\frac{६}{७} \times ३ = \frac{१८}{७}$; भू. $\frac{४९}{७} - \frac{१८}{७} = \frac{३१}{७}$ भूमिकी अपेक्षा चतुर्थ स्थानका व्यास।

$\frac{६}{७} \times ४ = \frac{२४}{७}$; $\frac{२४}{७}$ + मु. $\frac{७}{७} = \frac{३१}{७}$ मुखकी अपेक्षा चतुर्थ स्थानका व्यास।

श्रेणीमें उनंचासका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे क्रमसे आठ जगह रखकर व्यासके निमित्त गुणा करनेकेलिये आदिमें गुणकार सात है। पुनः इसके आगे क्रमसे छह छह गुणकारकी वृद्धि होती गई है ॥ १७८ ॥

श्रेणीप्रमाण रा. ७; $\frac{७}{४९} \times ७$; $\frac{७}{४९} \times १३$; $\frac{७}{४९} \times १९$; $\frac{७}{४९} \times २५$; $\frac{७}{४९} \times ३१$; $\frac{७}{४९} \times ३७$; $\frac{७}{४९} \times ४३$; $\frac{७}{४९}$ ४९.

सातके घन अर्थात् तीनसौ तेतालीससे भाजित लोकको क्रमसे सात जगह रखकर अधोलोकके सात क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येक क्षेत्रके घनफलको निकालनेकेलिये आदिमें गुणकार दश और फिर इसके आगे क्रमसे छह छहकी वृद्धि होती गई है ॥ १७९ ॥

लो. प्र. ३४३; $३४३ \div ७^३ = १$; १×१०; १×१६; १×२२; १×२८; १×३४; १×४०; १×४६.

विशेषार्थ—मुख और भूमिको जोड़कर उसे आधा करनेपर प्राप्त हुए प्रमाणको विवक्षित क्षेत्रकी उंचाई और मुटाईसे गुणा करनेपर विषम क्षेत्रका घनफल निकलता है। इस नियमके अनुसार उपर्युक्त सात पृथिवियोंका घन-फल निम्नप्रकार है—

प्र. पृथिवीक्षेत्रका घ. फ.—मु. $\frac{७}{७}$ + भू. $\frac{१३}{७}$ + २ × १ × ७ = $\frac{१४०}{१४}$ = १० रा.

द्वि. पृ. क्षे. ,, ,, $\frac{१३}{७} + \frac{१९}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{२३४}{१४} = १६$ रा.

तृ. ,, ,, ,, ,, $\frac{१९}{७} + \frac{२५}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{३०८}{१४} = २२$ रा.

च. ,, ,, ,, ,, $\frac{२५}{७} + \frac{३१}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{३९२}{१४} = २८$ रा.

पं. ,, ,, ,, ,, $\frac{३१}{७} + \frac{३७}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{४७६}{१४} = ३४$ रा.

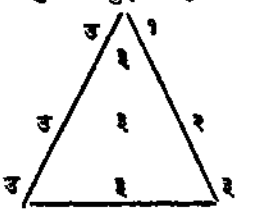
ष. ,, ,, ,, ,, $\frac{३७}{७} + \frac{४३}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{५६०}{१४} = ४०$ रा.

स. ,, ,, ,, ,, $\frac{४३}{७} + \frac{४९}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{६४४}{१४} = ४६$ रा.

कुल योग १९६ रा.

१ ब उणवण्णभाजिद° २ द ठाणेण. ३ ब वासद्धं गुणआए.

उदओ हवेदि पुव्वावरेहि लोयंतउभयपासेसु । तिदुहगिरज्जुपवेसे सेढी दुतिभागतिदसेढीओ[1] ॥ १८०



भुजपडिभुजमिलिदद्धं विंदफलं वासमुदयवेदहदं । एक्कायत्तबाहू वासद्धहदा य वेदहदा ॥ १८१

वादालहरिदलोओ विंदफलं चोद्दसावहिदलोओ । तब्भंतरखेत्ताणं पणहदलोओ दुदालहिदो ॥ १८२

$$\frac{\equiv}{४२}\ \Big|\ \frac{\equiv}{१४}\ \Big|\ \frac{\equiv ५}{४२}$$

एदं खेत्तपमाणं मेलिय सयलं पि दुगुणिदं कादुं । मज्झिमखेत्ते मिलिदे चउगुणिदो सगहिदो[2] लोओ ॥ १८३

$$\frac{\equiv ४}{७}$$

[3]

पूर्व और पश्चिमसे लोकके अन्तके दोनों पार्श्वभागोंमें तीन, दो और एक राजु प्रवेश करनेपर उंचाई क्रमसे एक जगश्रेणी, श्रेणीके तीन भागोंमेंसे दो भाग, और श्रेणीके तीन भागोंमेंसे एक भागमात्र है ॥ १८० ॥

(१) भुजा और प्रतिभुजाको मिलाकर आधा करनेपर जो व्यास हो, उसे उंचाई और मुटाईसे गुणा करना चाहिये। ऐसा करनेसे त्रिकोण क्षेत्रका घनफल निकल आता है।

(२) एक लम्बे बाहुको व्यासके आधेसे गुणा करके पुनः मुटाईसे गुणा करनेपर एक लंबे बाहुयुक्त क्षेत्रके घनफलका प्रमाण आता है ॥ १८१ ॥

लोकमें ब्यालीसका भाग देनेसे, चौदहका भाग देनेसे, और लोकको पांचसे गुणा करके उसमें ब्यालीसका भाग देनेसे क्रमशः उन तीनों अभ्यन्तर क्षेत्रोंका घनफल निकलता है ॥ १८२ ॥

३४३ ÷ ४२ = $८\frac{१}{६}$ प्र. अ. क्षेत्रका घ. फ.; ३४३ ÷ १४ = $२४\frac{१}{२}$ द्वि. अ. क्षेत्रका घ. फ.; ३४३ × ५ ÷ ४२ = $४०\frac{५}{६}$ तृ. अ. क्षेत्रका घ. फ.।

इस समस्त घनफलको मिलाकर और उसे दुगुणा करके इसमें मध्यम क्षेत्रके घनफलको जोड़ देनेपर चारसे गुणित और सातसे भाजित लोकके बराबर संपूर्ण अधोलोकके घनफलका प्रमाण निकल आता है ॥ १८३ ॥

$८\frac{१}{६} + २४\frac{१}{२} + ४०\frac{५}{६} = ७३\frac{१}{२}$; $७३\frac{१}{२} \times २ = १४७$; १४७ + ४९ = १९६ पूर्ण अ. लो. का घनफल; बराबर ३४३ × ४ ÷ ७ रा.

---

१ [दुतिभागतिदियसेढीओ]. २ द् ब चउगुणिदे सगहिदे. ३ ब $\frac{\equiv ४}{७}\ \Big|\ \frac{७}{\equiv}\ \Big|\ ७.$

रज्जुस्स सत्तभागो तियछद्दुपंचेक्कचउसगेहिं हदा । खुल्लयभुजाण रुंदा वंसादी थंभबाहिरए ॥ १८४

$\frac{३}{४९}$ । $\frac{६}{४९}$ । $\frac{२}{४९}$ । $\frac{५}{४९}$ । $\frac{१}{४९}$ । $\frac{४}{४९}$ । $\frac{७}{४९}$ ।

लोयंते रज्जुघणा पंच घिय अद्धभागसंजुत्ता । सत्तमखिदिपज्जंता अड्ढाइज्जा हवंति फुडं ॥ १८५

$\equiv \frac{११}{३४३।२}$ | $\equiv \frac{५}{३४३।२}$ |

उभयेसिं परिमाणं बाहिम्मि अब्भंतरम्मि रज्जुघणा । छट्ठक्खिदिपेरंता तेरस दोरूवपरिहत्ता ॥ १८६

$\equiv \frac{१३}{३४३।२}$ |

बाहिरछब्भाएसुं[1] भवणीदेसुं हवेदि अवसेसं[2] । सतिभागछक्कमेत्तं तं चिय अब्भंतरं खेत्तं ॥ १८७

$\equiv \frac{१}{३४३।६}$ | $\equiv \frac{३८}{३४३।६}$ |[4]

आहुट्ठं रज्जुघणं धूमपहाए समासमुद्दिट्ठं । पंकाए चरिमंते इगिरज्जुघणा तिभागूणं ॥ १८८

$\equiv \frac{७}{३४३।२}$ | $\equiv \frac{२}{३४३।३}$ |

राजुके सातवें भागको तीन, छह, दो, पांच, एक, चार और सातसे गुणा करनेपर वंशा आदिकमें स्तम्भोंके बाहिर छोटी भुजाओंके विस्तारका प्रमाण निकलता है ॥ १८४ ॥

$\frac{३}{७}$; $\frac{६}{७}$; $\frac{२}{७}$; $\frac{५}{७}$; $\frac{१}{७}$; $\frac{४}{७}$; $\frac{७}{७}$ रा.

लोकके अन्ततक अर्ध भाग सहित पांच घनराजु और सातवीं पृथिवीतक ढाई घनराजुप्रमाण घनफल होता है ॥ १८५ ॥

$\frac{७}{७} + \frac{५}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{११}{२}$ घनराजु; $\frac{४}{७}+\frac{१}{७}\div२\times१\times७=\frac{५}{२}$ घ. रा.

छठवीं पृथिवीतक बाह्य और आभ्यन्तर दोनों क्षेत्रोंका मिश्र घनफल दोसे विभक्त तेरह घनराजुप्रमाण है ॥ १८६ ॥

$\frac{६}{७} + \frac{५}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{१३}{२}$ घ. रा.

छठवीं पृथिवीतक जो बाह्य क्षेत्रका घनफल एक बटे छह ($\frac{१}{६}$) घनराजु होता है, उसे उपर्युक्त दोनों क्षेत्रोंके जोड़रूप घनफल ($\frac{१३}{२}$ घ. रा.) मेंसे घटा देनेपर शेष एक त्रिभाग ($\frac{१}{३}$) सहित छह घनराजुप्रमाण आभ्यन्तर क्षेत्रका घनफल समझना चाहिये ॥ १८७ ॥

$\frac{१}{७} \div २ \times \frac{१}{३} \times ७ = \frac{१}{६}$ घ. रा. बाह्य क्षेत्रका घनफल; $\frac{१३}{२} - \frac{१}{६} = \frac{३८}{६}$ घ. रा. अभ्यन्तर क्षेत्रका घनफल ।

धूमप्रभापर्यन्त घनफलका जोड़ साढ़े तीन घनराजु बतलाया गया है। और पंकप्रभाके अन्तिम भागतक एक त्रिभाग ($\frac{१}{३}$) कम एक घनराजु प्रमाण घनफल है ॥ १८८ ॥

$\frac{५}{७} + \frac{१}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{३}{२}$ घ. रा.; $\frac{२}{७} \div २ \times \frac{१}{३} \times ७ = \frac{१}{३}$ घ. रा. बाह्य क्षेत्रका घनफल ।

---

१ द ब चउसगहि. २ द ब बाहिरब्भासेसुं. ३ द ब अवसेसुं. ४ द ब $\equiv \frac{६}{३४३ / \frac{१}{३}}$.

रज्जुघणा सत्त छिय छब्भागूणा चउत्थपुढवीए । अब्भंतरम्मि भागे खेत्तफलस्स प्पमाणमिदं ॥ १८९

$$\equiv \frac{४१}{३४३} \Big| \frac{६}{}$$

रज्जुघणद्धं णवहदसदतेदियेखिदीए दुइजभूमीए । होदि दिवड्ढाए दो मेलिय दुगुणं घणो कुज्जा ॥ १९०

$$\equiv \frac{९}{१४३} \Big| \frac{२}{} \quad \equiv \frac{३}{३४३} \Big| \frac{२}{}$$

दुगुणिदे $\equiv \frac{६३}{३४३}$ ।

तेत्तीसब्भहियसयं सव्वच्छेत्ताण[2] सव्वरज्जुयाण । ते ते सव्वे मिलिदा दोण्णि सया होंति चउहीणा ॥ १९१

$$\equiv \frac{१३३}{३४३} \Big| \text{मिलिदे} \quad \equiv \frac{१९६}{३४३} \Big|$$

एक्केक्करज्जुमेत्ता उवरिमलोयस्स होंति मुहवासा । हेट्ठोवरि भूवासा पण रज्जू सेढिअद्धमुच्छेहो ॥ १९२

उ । उ । भू । उ ५ । ३½ । ३½ ।

चतुर्थ पृथिवीपर्यन्त अभ्यन्तर भागमें घनफलका प्रमाण एक बटे छह ($\frac{१}{६}$) कम सात घनराजु है ॥ १८९ ॥

$\frac{७}{७} + \frac{१}{७} \div २ \times १ \times ७ - \frac{२}{७} = \frac{४१}{६}$ घ. रा. आभ्यन्तर क्षेत्रका घ. फ.

अर्ध ($\frac{१}{२}$) घनराजुको नौसे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो, उतना तीसरी पृथिवी-पर्यन्त क्षेत्रके घनफलका प्रमाण है, और दूसरी पृथिवीपर्यन्त क्षेत्रका घनफल डेढ़ घनराजुप्रमाण है। इस सब घनफलको जोड़कर दोनों तरफके घनफलको लानेकेलिये उसे दुगुणा करना चाहिये ॥ १९० ॥

$\frac{६}{७} + \frac{३}{७} \div २ \times १ \times ७ = ९$ घ. रा.; $\frac{३}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{३}{२}$ घ. रा.

योग— $१\frac{१}{२} + ५ + १\frac{१}{६} + ३\frac{५}{६} + ७ + ३\frac{१}{२} + ४\frac{१}{६} + ९ + ३\frac{१}{२} = १४\frac{९}{६}$; $१४\frac{९}{६} \times २ = ३१\frac{५}{६} = ६३$ घनराजु।

उपर्युक्त घनफलको दुगुणा करनेपर दोनों (पूर्व-पश्चिम) तरफका कुल घनफल त्रेसठ घनराजुप्रमाण होता है। इसमें सब अर्थात् पूर्ण एक राजुप्रमाण विस्तारवाले समस्त (१९) क्षेत्रोंका घनफल जो एकसौ तेतीस घनराजु है, उसे जोड़ देनेपर चार कम दोसौ अर्थात् एकसौ छ्यानवै घनराजुप्रमाण कुल अधोलोकका घनफल होता है ॥ १९१ ॥

६३ + १३३ = १९६ घनराजु।

ऊर्ध्वलोकके नीचे व ऊपर मुखका विस्तार एक एक राजु, भूमिका विस्तार पांच राजु, और उंचाई (मुखसे भूमितक) जगश्रेणीके अर्द्धभाग अर्थात् साढ़े तीन राजुमात्र है ॥ १९२ ॥

ऊपर व नीचे मुख १; भूमि ५; उत्सेध— भूमिसे नीचे ३½; ऊपर ३½ राजु।

---

१ द ब तदीय. २ ब तेत्तीसब्भहियछेत्ताण; द तेत्तीसब्भहियसयं सयछेत्ताण.

भूमीए मुहं सोहिय उच्छेहहिदं मुहादु भूमीदो । खयवड्ढीण पमाणं मदरूवं सत्तपविहत्तं[1] ॥ १९३

तक्खयवड्ढिपमाणं णियणियउदयाहदं जइच्छाए । हीणब्भहिए संते वासाणि हवंति भूमुहाहिंतो ॥ १९४
अट्ठगुणिदेगसेढी उणवण्णहिदम्मि होदि जं लद्धं । स च्चेय वड्ढिहाणी उवरिमलोयस्स वासाणं ॥ १९५
रज्जूए सत्तभागं दससु ट्ठाणेसु ठाविदूण तदो । सत्तोगवीसहगितीसपंचतीसेक्कतीसेहिं ॥ १९६
सत्ताहियवीसेणं तेवीसेहिं तहोणवीसेण । पण्णरस वि सत्तेहिं तम्मि हदे उवरि वासाणि ॥ १९७
७/४९ । १९/४९ । ३१/४९ । ३५/४९ । ३१/४९ । २७/४९ । २३/४९ । १९/४९ । १५/४९ । ७/४९ ।

भूमिमेंसे मुखके प्रमाणको घटाकर शेषमें उंचाईका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना प्रत्येक राजुपर मुखकी अपेक्षा वृद्धि और भूमिकी अपेक्षा हानिका प्रमाण होता है। यह प्रमाण सातसे विभक्त आठ अंकमात्र अर्थात् आठ बटे सात होता है ॥ १९३ ॥

भूमि ५; मुख १; ५ − १ = ४; ४ ÷ ७/२ = ८/७ प्रत्येक राजुपर क्षय और वृद्धिका प्रमाण।

उस क्षय और वृद्धिके प्रमाणको इच्छानुसार अपनी अपनी उंचाईसे गुणा करनेपर जो कुछ गुणनफल प्राप्त हो उसे भूमिमेंसे कम करने अथवा मुखमें जोड़ देनेपर विवक्षित स्थानमें व्यासका प्रमाण निकलता है ॥ १९४ ॥

उदाहरण—सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पका विस्तार—

उंचाई राजु ३; (३ × ८/७) + १ = ३१/७ = ४३/७ राजु। अथवा; भूमिसे कल्पकी नीचाई राजु ३/२; ५ − (३/२ × ८/७) = ३१/७ = ४३/७ राजु।

श्रेणीको आठसे गुणा करके उसमें उनंचासका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना ऊर्ध्व लोकके व्यासकी वृद्धि और हानिका प्रमाण है ॥ १९५ ॥

७ × ८ = ५६; ५६ ÷ ४९ = ८/७ क्ष. वृ. का प्रमाण.

राजुके सातवें भागको क्रमसे दश स्थानोंमें रखकर उसको सात, उन्नीस, इकतीस, पैंतीस, इकतीस, सत्ताईस, तेईस, उन्नीस, पन्द्रह और सातसे गुणा करनेपर ऊपरके क्षेत्रोंका व्यास निकलता है ॥ १९६–१९७ ॥

दश उपरिम क्षेत्रोंके अधोभागमें विस्तारका क्रम—

उदाहरण—(१) सौ. ई. १/७ × ७ = १ राजु; (२) सा. मा. १/७ × १९ = १९/७ = २५/७ रा.; (३) ब्रह्म. ब्रह्मो. १/७ × ३१ = ३१/७ = ४३/७ रा.; (४) लां. का. १/७ × ३५ = ३५/७ = ५ रा.; (५) शु. म. १/७ × ३१ = ३१/७ = ४३/७ रा.; (६) श. स. १/७ × २७ = २७/७ = ३६/७ रा.; (७) आ. प्रा. १/७ × २३ = २३/७ = ३३/७ रा.; (८) आ. अ. १/७ × १९ = १९/७ = २५/७ रा.; (९) ग्रैवेयकादिक १/७ × १५ = १५/७ = २१/७ रा.; (१०) लोकान्तमें १/७ × ७ = १ रा.

१ ब सत्तपहिहत्थं; द सत्तपविहत्थं. २ ब सव्वे य. ३ द सत्तादिय°; ब सत्तादिविसेहि.

उणदालं पण्णत्तरि तेत्तीसं तेत्तियं च उणतीसं । पणवीसमेकवीसं सत्तरसं तह य बावीसं ॥ १९८
एदाणि य पत्तेक्कं घणरज्जूए दलेण गुणिदाणि । मेरुतलादो उवरिं उवरिं जायंति विंदफलं ॥ १९९

≡ ३९ / ३४३ । २	≡ ७५ / ३४३ । २	≡ ३३ / ३४३ । २	≡ ३३ / ३४३ । २	≡ २९ / ३४३ । २	≡ २५ / ३४३ । २	≡ २१ / ३४३ । २	≡ १७ / ३४३ । २	≡ २२ / ३४३ । २

थंभुच्छेहा[2] पुव्वावरभाए बम्हकप्पपणिधीसु । एक्कदुरज्जुपवेसे हेट्ठोवरिं चउदुगाहिदे[3] सेढी ॥ २००

$\frac{-}{४} \mid \frac{-}{२}$

छप्पणहरिदो लोओ[4] ठाणेसुं दोसु ठविय गुणिदव्वो । एक्कतिएहिं एदं थंभंतरिदाणं विंदफलं ॥ २०१
एदं विय,[5]
विंदफलं संमेलिय चउगुणिदं होदि तस्स कादूण । मज्झिमखेत्ते मिलिदे तियगुणिदो सगहिदो लोओ ॥ २०२

उनतालीस, पचहत्तर, तेतीस, फिर तेतीस, उनतीस, पचीस, इक्कीस, सत्तरह और बाईस, इनमेंसे प्रत्येकको घनराजुके अर्धभागसे गुणा करनेपर मेरु-तलसे ऊपर ऊपर क्रमसे घनफलका प्रमाण आता है ॥ १९८–१९९ ॥

उदाहरण—' मुहभूमिजोगदले ' इत्यादि नियमके अनुसार सौधर्मादिकका घनफल इसप्रकार है—

[१] $\frac{१}{७}^{९} + \frac{७}{७} \div २ \times \frac{३}{२} \times ७ = \frac{३९}{२} = १९\frac{१}{२}$ रा.

[२] $\frac{३}{७}^{१} + \frac{१}{७}^{९} \div २ \times \frac{३}{२} \times ७ = \frac{७५}{२} = ३७\frac{१}{२}$ रा.

[३] $\frac{३}{७}^{१} + \frac{३}{७}^{५} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{३३}{२} = १६\frac{१}{२}$ रा.

[४] $\frac{३}{७}^{५} + \frac{३}{७}^{१} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{३३}{२} = १६\frac{१}{२}$ रा.

[५] $\frac{३}{७}^{१} + \frac{२}{७}^{७} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{२९}{२} = १४\frac{१}{२}$ रा.

[६] $\frac{२}{७}^{७} + \frac{२}{७}^{३} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{२५}{२} = १२\frac{१}{२}$ रा.

[७] $\frac{२}{७}^{३} + \frac{१}{७}^{९} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{२१}{२} = १०\frac{१}{२}$ रा.

[८] $\frac{१}{७}^{९} + \frac{१}{७}^{५} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{१७}{२} = ८\frac{१}{२}$ रा.

[९] $\frac{१}{७}^{५} + \frac{७}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{७७}{७} = ११$ रा.

योग $\frac{३९}{२} + \frac{७५}{२} + \frac{३३}{२} + \frac{३३}{२} + \frac{२९}{२} + \frac{२५}{२} + \frac{२१}{२} + \frac{१७}{२} + \frac{२२}{२} = १४७$ रा. कुल।

ब्रह्मस्वर्गके समीप पूर्व-पश्चिम भागमें एक और दो राजु प्रवेश करनेपर क्रमसे नीचे-ऊपर चार और दोसे भाजित जगश्रेणीप्रमाण उंचाई है ॥ २०० ॥

स्तम्भोत्सेध—१ रा. के प्रवेशमें $\frac{७}{४}$ रा.; २ रा. के प्रवेशमें $\frac{७}{२}$ रा.।

छप्पनसे भाजित लोकको दो जगह रखकर उसे क्रमसे एक और तीनसे गुणा करनेपर उपर्युक्त अभ्यन्तर क्षेत्रोंका घनफल निकलता है ॥ २०१ ॥

$३४३ \div ५६ \times १ = ६\frac{१}{८}$; $३४३ \div ५६ \times ३ = १८\frac{३}{८}$ घ. फ.

इस घनफलको मिलाकर और उसको चारसे गुणाकर उसमें मध्यक्षेत्रके घनफलको मिलादेनेपर पूर्ण ऊर्ध्वलोकका घनफल होता है। यह घनफल तीनसे गुणित और सातसे भाजित लोकके प्रमाण है ॥ २०२ ॥

---

१ ब पणुवीस. २ द थंभुच्छेहो. ३ द चउदगहिदे, ब चउदगहिदे. ४ द ब °हरिदलोउ. ५ द ब रविय. ६ द ब पदत्थं भत्तरिदाण. ७ द ब एदव्विय.

$$\left|\frac{\equiv}{५६}^{१}\right| \frac{\equiv}{५६}^{३} \left| \frac{\equiv}{७}^{३}\right|^{१}$$

सोहम्मीसाणोवरि छ च्चेय रज्जूउ सत्तपविभत्ता । खुल्लयभुजस्स रुंदं इगिपासे होदि लोयस्स ॥ २०३

$$\frac{-}{४२}^{६}|$$

माहिंदउवरिमंते[2] रज्जूओ पंच होंति सत्तहिदा । उणवण्णहिदस्सेढी[3] सत्तगुणा बम्हपणधीए ॥ २०४

$$\frac{-}{४९}^{५}| \frac{-}{४९}^{७}|$$

कापिट्ठउवरिमंते रज्जूओ पंच होंति सत्तहिदा । सुक्कस्स उवरिमंते सत्तहिदा तिगुणिदो रज्जू ॥ २०५

$$\frac{-}{४९}^{५}| \frac{-}{४९}^{३}|$$

सहसारउवरिमंते सगहिदरज्जू य खुल्लभुजरुंदं । पाणदउवरिमचरिमे छ रज्जूओ हवंति सत्तहिदा ॥ २०६

$$\frac{-}{४९}^{१}| \frac{-}{४९}^{६}|$$

पणिधीसु आरणच्चुदकप्पाणं चरिमइंदयधयाणं । खुल्लयभुजस्स रुंदं चउ रज्जूओ हवंति सत्तहिदा ॥ २०७

$$\frac{-}{४९}^{४}|$$

सोहम्मे दलमुत्तं[4] पण रज्जूओ हवंति तिण्णि बहिं । तम्मिस्सपुव्वसेसं तेसीदी[5] अट्ठपविहत्ता[6] ॥ २०८

$६\frac{१}{८} + १८\frac{३}{८} = २४\frac{१}{२}$; $२४\frac{१}{२} \times ४ = ९८$; $९८ + ४९ = १४७$ रा. बराबर $३४३ \times ३ \div ७$ रा.

सौधर्म और ईशान स्वर्गके ऊपर लोकके एक पार्श्वभागमें छोटी भुजाका विस्तार सातसे विभक्त छह राजुप्रमाण है ॥ २०३ ॥ ($\frac{६}{७}$)

माहेन्द्र स्वर्गके ऊपर अन्तमें सातसे भाजित पांच राजु और ब्रह्मस्वर्गके पास उनंचाससे भाजित और सातसे गुणित जगश्रेणीप्रमाण छोटी भुजाका विस्तार है ॥ २०४ ॥

मा. कल्प रा. $\frac{५}{७}$; ब्र. कल्प. ज. श्रे. $\frac{१}{४९} \times ७ = \frac{७}{४९} =$ रा. १.

कापिष्ठ स्वर्गके ऊपर अन्तमें सातसे भाजित पांच राजु, और शुक्रके ऊपर अन्तमें सातसे भाजित और तीनसे गुणित राजुप्रमाण छोटी भुजाका विस्तार है ॥ २०५ ॥

का. रा. $\frac{५}{७}$; शु. रा. $\frac{३}{७}$ ।

सहस्रारके ऊपर अन्तमें सातसे भाजित एक राजुप्रमाण और प्राणतके ऊपर अन्तमें सातसे भाजित छह राजुप्रमाण छोटी भुजाका विस्तार है ॥ २०६ ॥ स. रा. $\frac{१}{७}$; प्रा. रा. $\frac{६}{७}$ ।

आरण और अच्युत स्वर्गके पास अन्तिम इन्द्रक विमानके ध्वज-दण्डके समीप छोटी भुजाका विस्तार सातसे भाजित चार राजुप्रमाण है ॥ २०७ ॥ आ. अ. रा. $\frac{४}{७}$.

सौधर्मयुगलतक त्रिकोण क्षेत्रका घनफल अर्ध राजुसे कम पांच घनराजुप्रमाण है । (सनत्कुमारयुगलतक बाह्य और आभ्यन्तर दोनों क्षेत्रोंका मिश्र घनफल साढ़े तेरह घनराजुप्रमाण है ।) इस मिश्र घनफलमेंसे बाह्य त्रिकोण क्षेत्रका घनफल ($\frac{२५}{८}$) कम करदेनेपर शेष आठसे भाजित तेरासी घनराजुप्रमाण अभ्यन्तर क्षेत्रका घनफल होता है ॥ २०८ ॥

१ द ब $\frac{\equiv}{६}|\frac{१}{२}|\frac{\equiv}{७}^{१}$ । २ द ब मेलं. ३ द उणवण्णहिदा रज्जू. ४ द ब दलजुत्ता. ५ द ब तेसिं इदि. ६ ब पविहत्था.

$$\equiv \frac{९}{३४३।२} \Big| \equiv \frac{२५}{३४३।८} \Big| \equiv \frac{८३}{३४३।८} \Big|$$

बम्हुत्तरहेट्ठुवरिं रज्जुघणा तिण्णि होंति पत्तेक्कं । लंतवकप्पम्मि दुगं रज्जुघणो[1] सुक्ककप्पम्मि ॥ २०९

$$\equiv \frac{३}{३४३} \Big| \equiv \frac{३}{३४३} \Big| \equiv \frac{२}{३४३} \Big| \equiv \frac{१}{३४३} \Big|$$

अट्ठाणउदिविहत्तो लोओ सदरस्स उभयविंदफलं । तस्स य बाहिरभागे रज्जुघणो अट्ठमो भंसो ॥ २१०

$$[1]\equiv \frac{७}{३४३।२} \Big| \equiv \frac{१}{३४३।८} \Big|$$

तम्मिस्ससुक्कसेसे हवेदि अब्भंतरम्मि विंदफलं । सत्तावीसेहि हदं रज्जूघणमाणमट्ठहियं ॥ २११

$$\equiv \frac{२७}{३४३।८} \Big|$$

रज्जुघणा ठाणदुगे अट्ठाहज्जेहिं दोहि गुणिदव्वा । सव्वं मेलिय दुगुणिय तस्सिं ठावेज्ज जुत्तेण ॥ २१२

$\frac{६}{७} \div २ \times \frac{३}{४} \times ७ = \frac{९}{४}$ घ. फ. (सौधर्म.); $\frac{५}{७} \div २ \times \frac{५}{४} \times ७ = \frac{१५}{८}$ सन. क. तक बा. क्षे. का घ. फ.; $\frac{१२}{७} + \frac{६}{७} \div २ \times \frac{३}{४} \times ७ = \frac{२७}{४}$ बा. और आ. क्षेत्रका मिश्र घनफल; $\frac{२७}{४} - \frac{१५}{८} = \frac{४३}{८}$ आ. क्षे. का. घ. फ.

ब्रह्मोत्तर स्वर्गके नीचे और ऊपर प्रत्येक क्षेत्रका घनफल तीन घनराजुप्रमाण है। लांतव स्वर्गतक दो घनराजु, और शुक्र कल्पतक एक घनराजुप्रमाण घनफल है ॥ २०९ ॥

ब्रह्मोत्तर कल्पके नीचे व ऊपर बा. क्षे. का घ. फ. – $\frac{७}{७} + \frac{५}{७} \div २ \times \frac{३}{४} \times ७ = ३$ घ. राजु; लां. का. बा. क्षे. का. घ. फ. – $\frac{५}{७} + \frac{३}{७} \div २ \times \frac{१}{४} \times ७ = २$ घ. रा.; शु. क. बा. क्षे. का. घ. फ. – $\frac{३}{७} + \frac{१}{७} \div २ \times \frac{१}{४} \times ७ = १$ घ. रा.।

शतार स्वर्गतक उभय अर्थात् आभ्यन्तर और बाह्य क्षेत्रका मिश्र घनफल अट्ठानबैसे भाजित लोकके प्रमाण है। तथा इसके बाह्य क्षेत्रका घनफल घनराजुका अष्टमांश है ॥ २१० ॥

$\frac{८}{७} + \frac{६}{७} \div २ \times \frac{१}{४} \times ७ = \frac{७}{४} = ३४३ \div ९८$ घ. रा. श. कल्पके उभय क्षेत्रका घनफल.

$\frac{१}{७} \div २ \times \frac{१}{४} \times ७ = \frac{१}{८}$ बाह्य क्षेत्रका घनफल।

उपर्युक्त उभय क्षेत्रके घनफलमेंसे बाह्य क्षेत्रके घनफलको घटा देनेपर जो शेष रहे उतना आभ्यन्तर क्षेत्रका घनफल होता है। वह सत्ताईससे गुणित और आठसे भाजित घनराजुके प्रमाण है ॥ २११ ॥

$\frac{७}{४} - \frac{१}{८} = \frac{२७}{८} = ३\frac{३}{८}$ घ. रा. श. कल्पके आभ्यन्तर क्षेत्रका घनफल।

घनराजुको क्रमशः ढाई और दोसे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो, उतना शेष दो स्थानोंके घनफलका प्रमाण है। इस सब घनफलको जोड़कर और उसे दुगुणा कर संयुक्तरूपसे रखना चाहिये ॥ २१२ ॥

---

१ द ब रज्जुघणा. २ द $\frac{\equiv}{\equiv}$, ब $\frac{\equiv}{\equiv}$.

$$\equiv \frac{५}{३४३}\Big|\ \equiv \frac{२}{३४३}\Big|\ \equiv \frac{७०}{३४३}\Big|$$

पत्ता दलरज्जूणं घणरज्जूओ हवंति अडवीसं । एक्कोणवण्णगुणिदा मज्झिमखेत्तम्मि रज्जुघणा ॥ २१३

$$\equiv \frac{२८}{३४३}\Big|\ \equiv \frac{४९}{३४३}\Big|$$

पुव्ववण्णिदेक्खिदीणं रज्जूए घणा सत्तरी होंति । एदे तिण्णि वि रासी सत्तत्तालुत्तरसयं मेलिदा ॥ २१४

$$\equiv \frac{७०}{३४३}\Big|\ \equiv \frac{१४७}{३४३}\Big|^{२}$$

अट्ठविहं सव्वजगं सामण्णं तह य दोण्णि चउरस्सं । जवमुरअं जवमज्झं मंदरदूसाइगिरिगडयं ॥ २१५

सामण्णं सेढिघणं आयदचोरस्स वेदकोडिभुजा । सेढी सेढीअद्धं दुगुणिदसेढी कमा होंति ॥ २१६

$$\text{।—।—।} \quad ७ \mid ७ \mid^{४}$$

$\frac{६}{७} + \frac{४}{७} \div २ \times \frac{१}{२} \times ७ = \frac{५}{२}$ घ. रा. आनत कल्पके ऊपरका घ. फ.

$\frac{४}{७} \div २ \times १ \times ७ = \frac{४}{२}$ घ. रा. आरण कल्पके उपरिम क्षेत्रका घ. फ.

सब घनफलका योग—$\frac{०}{२} + \frac{२५}{८} + \frac{८२}{८} + \frac{६}{२} + \frac{६}{२} + \frac{४}{२} + \frac{२}{२} + \frac{१}{८} + \frac{२७}{८} + \frac{५}{२} + \frac{४}{२} = \frac{२८०}{८}$; $\frac{२८०}{८} \times २ = \frac{२८०}{४} = ७०$ घ. रा.

इसके अतिरिक्त दल (अर्ध) राजुओंका घनफल अट्ठाईस घनराजु और मध्यम क्षेत्र (त्रसनाली) का घनफल उनंचाससे गुणित एक घनराजुप्रमाण अर्थात् उनंचास घनराजुप्रमाण है ॥२१३॥

दल राजुओंका घ. फ.—दलराजु $८ = \frac{८}{२}$; $\frac{८}{२} \times ७ = २८$ घ. रा.; मध्य क्षेत्रका घ. फ.—$१ \times ७ \times ७ = ४९$ घ. रा.

पूर्वमें वर्णित इन पृथिवियोंका घनफल सत्तर घनराजुप्रमाण होता है। इसप्रकार इन तीनों राशियोंका योग एकसौ सैंतालीस घनराजु है, जो सम्पूर्ण ऊर्ध्वलोकका घनफल समझना चाहिये ॥ २१४ ॥

दल रा. घ. फ. २८ + म. क्षे. घ. फ. ४९ + पूर्वोक्त क्षेत्रोंका घ. फ. ७० = १४७ घ. राजु कुल ऊ. लो. का घ. फ.।

सम्पूर्ण लोक सामान्य, दो चतुरस्र अर्थात् ऊर्ध्वायत और तिर्यगायत चतुरस्र, यवमुरज, यवमध्य, मन्दर, दूष्य और गिरिकटक, इसप्रकार आठ भेदरूप है ॥ २१५ ॥

सामान्य लोक जगश्रेणीके घनमात्र है। आयत चतुरस्र क्षेत्रके वेध, कोटि और भुजा, ये तीनों क्रमसे जगश्रेणी, जगश्रेणीका अर्द्धभाग अर्थात् साढे तीन राजु, और जगश्रेणीसे दुगुणा अर्थात् चौदह राजुप्रमाण है ॥ २१६ ॥

सामान्य लोक = ७ × ७ × ७; आयत च. का वेध ७ रा.; कोटि $\frac{७}{२} = ३\frac{१}{२}$, रा.; भुजा $७ \times २ = १४$ रा.।

१ द ब पुव्वण्णिद. २ द $\equiv \frac{७८}{३४३}\Big|\ \equiv \frac{}{३४३}\Big|$ ३ ब तह दोण्णि. ४ [≡ । — । ७ । — २].

सुक्कंतिमवेदेसुं पणवीसं सुरवलिंदिए बिंदुफलं । तं पंचवीसहदं जवमुरवखेत्तम्हि जवखेत्तं ॥ २१७

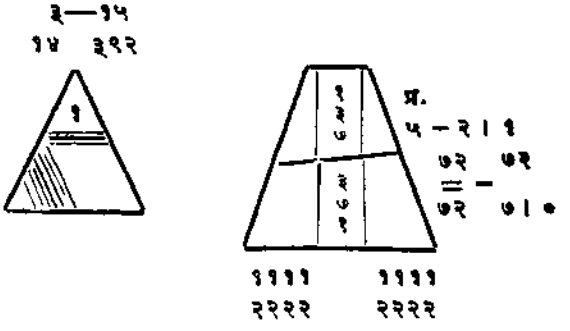
$\equiv \frac{२५}{७०} \Big| \equiv \frac{५}{१४}$

पढदो णवेहि लोगो चोद्दसभजिदो य मुरवविंदफलं । सेढिस्स य घणमाणं उभयं पि हवेदि जवमुरवे ॥ २१८

घणफलमेक्कम्मि जवे पंचत्तीसद्धभाजिदो[1] लोगो । तं पणतीसद्धहदं[2] सेढिघणं होदि जवखेत्ते ॥ २१९

$\equiv \frac{१५}{३५} \Big| \equiv$

अट्ठतिछद्दुगतीसेहिं[3] तियतेवीसेहि गुणिदरज्जूओ । तियतियदुच्छद्दुच्छभजिदमंदरखेत्तफलं[4] ॥ २२०



लोकको सत्तरसे भाजित कर लब्ध राशिको पच्चीससे गुणित करनेपर यवमुरजक्षेत्रमें यवका प्रमाण आता है (इस गाथामें पूर्वार्ध भाग अप्रकृत है, और प्रकृत भाग छूटा हुआ प्रतीत होता है) ॥ २१७ ॥

नौसे गुणित लोकमें चौदहका भाग देनेपर मुरजक्षेत्रका घनफल आता है। इन दोनोंके घनफलको जोड़नेसे जगश्रेणीके घनरूप सम्पूर्ण यवमुरजक्षेत्रका घनफल होता है ॥ २१८ ॥

३४३ ÷ ७० × २५ = १२२$\frac{१}{२}$ यवका घ. फ.; ३४३ × ९ ÷ १४ = २२०$\frac{१}{२}$ मुरज क्षे. का घ. फ.; १२२$\frac{१}{२}$ + २२०$\frac{१}{२}$ = ३४३ घनराजु सम्पूर्ण य. मु. क्षेत्रका घ. फ. = ७ × ७ × ७ घनराजु।

यवमध्य क्षेत्रमें एक यवका घनफल पैंतीसके आधे सादे सत्तरहसे भाजित लोकप्रमाण है। इसको पैंतीसके आधे सादे सत्तरहसे गुणा करनेपर जगश्रेणीके घनप्रमाण सम्पूर्ण यवमध्य क्षेत्रका घनफल निकलता है ॥ २१९ ॥

३४३ ÷ $\frac{३५}{२}$ = १९$\frac{३}{७}$ एक यवका घनफल; १९$\frac{३}{७}$ × $\frac{३५}{२}$ = ३४३ घनराजु सम्पूर्ण य. म. क्षेत्रका घ. फ. = ७ × ७ × ७ घ. रा.

चार, दो, तीन, इकतीस, तीन और तेईससे गुणित, तथा क्रमसे तीन, तीन, दो, छह, दो और छहसे भाजित राजुप्रमाण मन्दरक्षेत्रकी उंचाई है ॥ २२० ॥

मन्दराकार लोककी उंचाईका क्रम राजुओंमें—$\frac{४}{३}$; $\frac{२}{३}$; $\frac{३}{२}$; $\frac{३१}{६}$; $\frac{३}{२}$; $\frac{२१}{६}$.

१ द ब पंचतीसदुभाजिदो. २ द ब तप्पणतीसं दुहदं. ३ द ब चदुतियगितीसहिं. ४ [तियतियदुच्छदुच्छ. भजिदा रज्जूओ मंदरस्स खेत्तफलं].

पण्णरसहदा रज्जू छप्पण्णहिदा तडाण वित्थारो । पत्तेकंतकरणे खंडिदखेत्तेण चूलिया सिद्धा ॥ २२१

$\frac{७}{३९२} \times \frac{१५}{६} = \frac{१५}{५६}$ रा.

पणदालहदा रज्जू छप्पण्णहिदा हवेदि भूवासो । उदओ दिवड्ढरज्जू भूमितिभागेण मुहवासो ॥ २२२

भूमीए मुहं सोहिय[1] उदयहिदे भूमुहादु हाणिचया । छक्केक्कुमुहरज्जू[2] उस्सेहा दुगुणसेढीए ॥ २२३

तक्खयवड्ढिविमाणं चोद्दसभजिदाइ पंचरूवाणिं । णियणियउदए पहदं आणेज्जं तस्स[3] तस्स खिदिवासं ॥ २२४

मेरुसरिच्छम्मि जगे सत्तट्ठाणेसु ठविय उड्ढुड्ढं । रज्जूओ रुंदट्ठे वोच्छं[4] गुणयारहाराणि ॥ २२५

छव्वीसब्भहियसयं सोलसएक्कारसादिरित्तसया । इगिवीसेहि[5] विहत्ता तिसु ठाणेसु हवंति हेट्ठादो ॥ २२६

$\frac{-१२६}{१४७}$ | $\frac{-११६}{१४७}$ | $\frac{-१११}{१४७}$ |

पन्द्रहसे गुणित और छप्पनसे भाजित राजुप्रमाण चूलिकाके प्रत्येक तटोंका विस्तार है। उस प्रत्येक अंतवर्ती करणाकार अर्थात् त्रिकोण खण्डित क्षेत्रसे चूलिका सिद्ध होती है ॥ २२१ ॥

$\frac{७}{३९२} \times \frac{१५}{६} = \frac{१५}{५६}$ राजु.

चूलिकाकी भूमिका विस्तार पैंतालीससे गुणित और छप्पनसे भाजित एक राजुप्रमाण ($\frac{४५}{५६}$ राजु) है। उसी चूलिकाकी उंचाई डेढ़ राजु ($१\frac{१}{२}$) और मुखविस्तार भूमिके विस्तारका तीसरा भाग अर्थात् तृतीयांश ($\frac{१५}{५६}$) है ॥ २२२ ॥

भूमिमेंसे मुखको घटाकर शेषमें उंचाईका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण होता है। यहां भूमिका प्रमाण छह राजु, मुखका प्रमाण एक राजु, और उंचाईका प्रमाण दुगुणित श्रेणी अर्थात् चौदह राजु है ॥ २२३ ॥

उदाहरण— ६ − १ ÷ १४ = $\frac{५}{१४}$ हा. वृ. का प्रमाण प्रत्येक राजुपर।

हानि और वृद्धिका वह प्रमाण चौदहसे भाजित पांच, अर्थात् एक राजुके चौदह भागोंमेंसे पांच भागमात्र है । इस क्षयवृद्धिके प्रमाणको अपनी अपनी उंचाईसे गुणा करके विवक्षित पृथिवीके (क्षेत्रके) विस्तारको ले आना चाहिये ॥ २२४ ॥

मेरुके सदृश लोकमें, ऊपर ऊपर सात स्थानोंमें राजुको रखकर विस्तारको लानेकोलिये गुणकार और भागहारोंको कहता हूं ॥ २२५ ॥

नीचेसे तीन स्थानोंमें इक्कीससे विभक्त एकसौ छब्बीस, एकसौ सोलह और एकसौ ग्यारह गुणकार है ॥ २२६ ॥

$\frac{७ \times १२६}{१४७} = \frac{१२६}{२१}; \frac{७ \times ११६}{१४७} = \frac{११६}{२१}; \frac{७ \times १११}{१४७} = \frac{१११}{२१}$.

१ द मुहवासो, ब मुहसोही. २ द कुमह. ३ द ब अणेज्जयत्तस्स. ४ द रुंदे वोच्छं, ब रुंदे दो वोच्छं. ५ ब इगवीसे वि°, द इगवीसे वि तहत्था तिसु ठाणेसु ठविय हवंति.

एक्कोणचउसयाइं दुसयाचउदालदुसयमेक्कोणं । चउसीदी चउठाणे होदि हु चउसीदिपविहत्ता ॥ २२७

$$\frac{-३९९}{५८८} \quad \frac{-२४४}{५८८} \quad \frac{-१९९}{५८८} \quad \frac{-८४}{५८८}$$

मंदरसरिसम्मि अगे सत्तसु ठाणेसु ठविय रज्जुघणं । हेट्ठादु घणफलस्स य वोच्छं गुणगारहाराणि ॥ २२८

चउसीदिचउसयाणं सत्तावीसाधिया य दोण्णि सया । एक्कोणचउसयाइं वीससहस्सा विहीणसगसट्ठी ॥ २२९

एक्कोणं दोण्णिसया पणसट्ठिसयाइं णवजुदाणिं पि । पंचत्तालं एदे गुणगारा सत्तठाणेसु ॥ २३०

णव णव अट्ठ य बारसवग्गो अट्ठ[1] सयं च चउदालं । अट्ठं एदे कमसो हारा सत्तेसु ठाणेसु ॥ २३१

$$\frac{\equiv ४८४}{३४३ । ९} \quad \frac{\equiv २२७}{३४३ । ९} \quad \frac{\equiv ३९९}{३४३ । ८} \quad \frac{\equiv १९९३३}{३४३ । १४४} \quad \frac{\equiv १९९}{३४३ । ८} \quad \frac{\equiv ६५०९}{३४३ । १४४} \quad \frac{\equiv ४५}{३४३ । ८}$$

सत्तहिददुगुणलोगो विदफलं बाहिरुभयबाहाणं । पणभजिदुगुणं लोगो वूसस्सब्भंतरोभयभुजाणं ॥ २३२

इसके आगे चार स्थानोंमें क्रमसे चौरासीसे विभक्त एक कम चारसौ (३९९), दोसौ चवालीस, एक कम दोसौ (१९९) और चौरासी, ये चार गुणकार हैं ॥ २२७ ॥

$\frac{७\times३९९}{५८८} = \frac{३९९}{८४}$; $\frac{७\times२४४}{५८८} = \frac{२४४}{८४}$; $\frac{७\times१९९}{५८८} = \frac{१९९}{८४}$; $\frac{७\times८४}{५८८} = \frac{८४}{८४}$.

मन्दरके सदृश लोकमें घनफल लानेकेलिये नीचेसे सात स्थानोंमें घनराजुको रखकर गुणकार और भागहारोंको कहते हैं ॥ २२८ ॥

चारसौ चौरासी, दोसौ सत्ताईस, एक कम चारसौ अर्थात् तीनसौ निन्यानबे, सड़सठ कम बीस हजार, एक कम दोसौ, नौ अधिक पैंसठसौ और पैंतालीस, ये क्रमसे सात स्थानोंमें सात गुणकार हैं ॥ २२९–२३० ॥

नौ, नौ, आठ, बारहका वर्ग, आठ, एकसौ चवालीस और आठ, ये क्रमसे सात स्थानोंमें सात भागहार हैं ॥ २३१ ॥

$\frac{३४३\times४८४}{३४३\times९} = \frac{४८४}{९}$; $\frac{३४३\times२२७}{३४३\times९} = \frac{२२७}{९}$; $\frac{३४३\times३९९}{३४३\times८} = \frac{३९९}{८}$;
$\frac{३४३\times१९९३३}{३४३\times१४४} = \frac{१९९३३}{१४४}$; $\frac{३४३\times१९९}{३४३\times८} = \frac{१९९}{८}$; $\frac{३४३\times६५०९}{३४३\times१४४} = \frac{६५०९}{१४४}$;
$\frac{३४३\times४५}{३४३\times८} = \frac{४५}{८}$ घ. रा. ।

योग— $\frac{४८४}{९} + \frac{२२७}{९} + \frac{३९९}{८} + \frac{१९९३३}{१४४} + \frac{१९९}{८} + \frac{६५०९}{१४४} + \frac{४५}{८}$
$= \frac{४९३९२}{१४४} = ३४३$ घनराजु ।

दूष्यक्षेत्रकी बाहरी दोनों भुजाओंका घनफल सातसे भाजित और दोसे गुणित लोकप्रमाण होता है । तथा भीतरी दोनों भुजाओंका घनफल पांचसे भाजित और दोसे गुणित लोकप्रमाण है ॥ २३२ ॥

उदाहरण—आ. उभय बाहुओंका घ. फ.— ३४३ ÷ ७ × २ = ९८ रा.; अभ्यं. उ. बाहुओंका घ. फ.— ३४३÷५×२=१३७$\frac{२}{५}$ रा.

---

१ द ब अट्ठ बारसवग्गो णवणवअट्ठय.

तस्साहं लहुबाहुं छग्गुणकोओ अ पणतीसहिदो[1] । विंदफलं जवखेत्ते लोअंसे सत्तहिं[2] पविहत्तो ॥ २३३
तं पणतीसप्पहदं सेढिघणं घणफलं च तम्मिस्सं । सत्तहिदो होदि अधो[3] चउगुणिदो लोयखिदी एदे ॥ २३४
सामण्णे विंदफलं भुजकोडिसेढिचउरज्जूओ तइज्जए[4] वेदो । बहुजवमज्झे मुरवे[5] जवमुरयं होदि णियमेण ॥ २३५
तम्मि जवे विंदफलं चोद्दसभजिदो य तिगुणो[6] लोओ । मुरवम्हीविंदफलं चोद्दसभजिदो य पणगुणो लोओ ॥ २३६
घणफलमेदम्मि जवे लोओ वावालभाजिदो होदि । तं चउवीसप्पहदं सत्तहिदो चउगुणो लोगो ॥ २३७
रज्जूओ तेभागं[7] बारसभागो तहेव सत्तगुणो । तेदालं[8] रज्जूओ बारसभजिदा हवंति जइवुट्ठं ॥ २३८

इसी क्षेत्रमें उसके लघु बाहुका घनफल छहसे गुणित और पैंतीससे भाजित लोकप्रमाण, तथा यवक्षेत्रका घनफल सातसे विभक्त लोकप्रमाण है ॥ २३३ ॥

लघु बाहुका घ.फ.—३४३×६÷३५=५८$\frac{4}{5}$ रा.; यवक्षेत्रका घ. फ.—३४३÷७=४९ रा.; दूष्यक्षेत्रका समस्त घनफल— ९८ + १३७$\frac{1}{2}$ + ५८$\frac{4}{5}$ + ४९ = ३४३ रा.

इसको पैंतीससे गुणा करनेपर श्रेणिके घनप्रमाण कुल गिरिकटक क्षेत्रका मिश्र घनफल होता है।

इस उपर्युक्त लोकक्षेत्रमें सातका भाग देकर लब्ध राशिको चारसे गुणा करनेपर सामान्य अधोलोकका घनफल होता है। आयतचतुरस्र क्षेत्रमें भुजा श्रेणीप्रमाण सात राजु, कोटि चार राजु और इतना ही (सात राजु) वेध भी है। बहुतसे यवोंयुक्त मुरजक्षेत्रमें यवक्षेत्र और मुरजक्षेत्र दोनों ही नियमसे होते है। उस यवमुरजक्षेत्रमें यवाकार क्षेत्रका घनफल चौदहसे भाजित और तीनसे गुणित लोकप्रमाण तथा मुरजक्षेत्रका घनफल चौदहसे भाजित और पांचसे गुणित लोकप्रमाण है ॥ २३४ - २३६ ॥

उदाहरण— (१) (एक गिरिकटकका घ. फ. ग. ९$\frac{4}{5}$ होता है) ९$\frac{4}{5}$ × ३५ = ३४३ रा. समस्त गिरिकटकका घनफल। (२) सामान्य अधोलोकका घनफल ३४३ ÷ ७ × ४ = १९६ रा. (३) आयतचतुरस्र अधोलोकमे—भुजा ७ रा.; कोटि ४ रा. और वेध ७ राजु है— ७ × ४ × ७ = १९६ रा. घ. फ.। (४) यवमुरजाकार अधोलोकमें यवक्षेत्रका घ. फ.— ३४३ ÷ १४ × ३ = ७३$\frac{1}{2}$ रा.; मुरजक्षेत्रका घ. फ.— ३४३ ÷ १४ × ५ = १२२$\frac{1}{2}$ रा.; १२२$\frac{1}{2}$ + ७३$\frac{1}{2}$ = १९६ रा. समस्त यवमुरजक्षेत्रका घ. फ.।

यवाकार क्षेत्रमें एक यवका घनफल ब्यालीससे भाजित लोकप्रमाण है। उसको चौबीससे गुणा करनेपर सातसे भाजित और चारसे गुणित लोकप्रमाण समस्त यवमध्य क्षेत्रका घनफल निकलता है ॥ २३७ ॥

३४३ + ४२ = ८$\frac{1}{6}$ राजु एक यवका घ. फ.; ८$\frac{1}{6}$ × २४ = ३४३ ÷ ७ × ४ = १९६ रा. य. म. का घ. फ.

मन्दरके सदृश आयामवाले क्षेत्रमें ऊपर ऊपर उंचाई क्रमसे एक राजुके चार भागोंमेंसे

---

१ द तग्गुणलोओ अप्पट्ठिसहिदाओ, ब तग्गुणलोओ अ पट्ठिसहिदाओ. २ द ब सत्तो वि. ३ द सधो, ब सद्धो. ४ द ब पुव्वजवमुरयं. ५ द पणगुणो. ६ द ब तेदालं. ७ द तेलंतं, ब तेलंभं.

सत्तहदवारसंसो दिवड्डगुणभेदा हवेह रज्जू य । मंदरसरिसावासे उच्छेहो होइ खेत्तम्मि ॥ २३९
अट्ठत्तीसविहत्ता सेढी मंदरसमम्मि तडवासे[1] । चउसडकरणक्खंडिदखेत्तेणं चूलिया होदि ॥ २४०
अट्ठावीसविहत्ता सेढी चूलीव होदि मुहरुंदं । तस्सिगुणं भूवासं सेढी बारसहिदा तदुच्छेहो ॥ २४१
अट्ठाणवदिविहत्तं सत्तट्ठाणेसु सेढिं उड्डुड्डं । ठविदूण वासहेदुं गुणगारं वत्तइस्सामि ॥ २४२
अज्जवडदी बाणउदी उणणवदी तह कमेण बासीदी । उणदालं बत्तीसं चोद्दस इय होंति गुणगारा ॥ २४३
हेट्ठादो रज्जुवमा सत्तट्ठाणेसु ठविय उड्डुड्डे । विंदफलजाणणट्ठं[4] गुणगारं वत्तइस्सामि ॥ २४४
गुणगारा पणणवदी एक्कासीदेहिं[5] दुसयं तियधियदुसया पणसहस्सा ॥ २४५
अडवीसं उणहत्तरि उणवण्णं उवरि उवरि हारा य । चउ चउवग्गं बारं अडदालं तिचउक्कचउवीसं ॥ २४६

तीन भाग, बारह भागोंमेंसे सात भाग, बारहसे भाजित तेतालीस राजु, राजुके बारह भागोंमेंसे सात भाग और डेढ़ राजुमात्र है ॥ २३८–२३९ ॥

$\frac{1}{2}\left(\frac{2}{3}+\frac{1}{3}\right)+\frac{7}{12}+\frac{43}{12}+\frac{7}{12}+\frac{3}{2}=\frac{84}{12}=७$ राजु ।

मन्दरसदृश क्षेत्रमें तटभागके विस्तारमेंसे अट्ठाईससे विभक्त जगश्रेणीप्रमाण चार तटवर्ती करणाकार खण्डित क्षेत्रोंसे चूलिका होती है ॥ २४० ॥ $\frac{7}{64}=\frac{1}{8}$ राजु प्रत्येक खण्डित क्षेत्रका प्रमाण।

इस चूलिकाके मुखका विस्तार अट्ठाईससे विभक्त जगश्रेणीप्रमाण, भूमिका विस्तार इससे तिगुणा और उंचाई बारहसे भाजित जगश्रेणीमात्र है ॥ २४१ ॥

चूलिकाका मुख $\frac{7}{28}$; भूमि $\frac{21}{28}$ ($\frac{7}{28}\times 3$); उंचाई $\frac{7}{12}$ रा. ।

अट्ठानबैसे विभक्त जगश्रेणीको ऊपर ऊपर सात स्थानोंमें रखकर विस्तारको लानेके हेतु गुणकारको कहता हूं ॥ २४२ ॥

अट्ठानबै, बानबै, नवासी, व्यासी, उनतालीस, बत्तीस और चौदह, ये क्रमसे उक्त सात स्थानोंमें सात गुणकार हैं ॥ २४३ ॥

पूर्वोक्त उंचाईके क्रमसे विस्तारका प्रमाण— $\frac{7}{98}\times ९८$; $\frac{7}{98}\times ९२$; $\frac{7}{98}\times ८९$; $\frac{7}{98}\times ८२$; $\frac{7}{98}\times ३९$; $\frac{7}{98}\times ३२$; $\frac{7}{98}\times १४$.

नीचेसे ऊपर ऊपर सात स्थानोंमें घनराजुको रखकर घनफल जाननेके लिये गुणकारको कहता हूं ॥ २४४ ॥

उक्त सात स्थानोंमें पंचानबै, एकसौ इक्यासी, दोसौ सतासी, पांच हजार दोसौ तीन, अट्ठाईस, उनहत्तर और उनंचास, ये सात गुणकार, तथा चार, चारका वर्ग (१६), बारह, अड़तालीस, तीन, चार और चौबीस, ये सात भागहार हैं ॥ २४५–२४६ ॥

पूर्वोक्त उंचाईके क्रमसे घनफलका प्रमाण— $\frac{95}{2}+\frac{181}{12}+\frac{287}{12}+\frac{391}{28}+\frac{49}{2}+\frac{19}{3}+\frac{43}{24}=१९६$ रा.

---

१ ब वारससो. २ द ब तलवासे. ३ द ब चउतदकारणखंडिदखेत्तेणं. ४ द ठविदूण वासहेदुं, ब ठविदूण वासहेदुं. ५ द ब एक्कासेदेहि. ६ द ब सगसीतेदि दुस्सं तियधियदुसेया.

चोद्दसभजिदो तिहदो[1] होदि विंदफलं बाहिरुभयबाहूणं । लोओ पंचविहत्तो[2] दूसस्सब्भंतरोभयभुजाणं ॥ २४७
तस्साहं[3], कहुबाहू तिगुणियलोओ य पंचतीसहिदो । विंदफलं जवखेत्ते चोद्दसभजिदो हवे लोगो ॥ २४८
एक्कस्सि गिरिगडए[4] चउसीदीभाजिदो हवे लोगो । तं अट्ठतालपहदं विंदफलं तम्मि खेत्तम्मि ॥ २४९
एवं अट्ठवियप्पो हेट्ठिमलोओ य[5] वण्णिदो एसो । एण्हिं उवरिमलोयं अट्ठपयारो[6] णिरूवेमो ॥ २५०
सामण्णे विंदफलं सत्तहिदो होइ तिगुणिदो[7] लोगो । विदिए वेदभुजाए[8] सेढी कोडी तिरज्जूओ ॥ २५१
तादेए मुखकोडीओ[9] सेढी वेदो[10] वि तिण्णि रज्जूओ। बहुजवमज्झे मुरये[11] जवमुरयं होदि तक्खेत्तं ॥ २५२
तम्मि जवे विंदफलं लोगो सत्तेहि भाजिदो होदि । मुरयम्मि य विंदफलं सत्तहिदो दुगुणिदो लोगो ॥ २५३

दूष्यक्षेत्रमें चौदहसे भाजित और तीनसे गुणित लोकप्रमाण बाह्य उभय बाहुओंका और पांचसे विभक्त लोकप्रमाण आभ्यन्तर दोनों बाहुओंका घनफल है ॥ २४७ ॥

इसी क्षेत्रमें लघु बाहुओंका घनफल तीनसे गुणित और पैंतीससे भाजित लोकप्रमाण तथा यवक्षेत्रका घनफल चौदहसे भाजित लोकप्रमाण है ॥ २४८ ॥

दूष्यक्षेत्रमें—३४३ ÷ १४ × ३ = ७३$\frac{1}{2}$ बाह्य बाहुओंका घ. फ.; ३४३ ÷५ =६८$\frac{3}{5}$ अभ्यन्तर बाहुओंका घ. फ.; ३४३ × ३ ÷ ३५ = २९$\frac{3}{5}$ लघु बाहुओंका घ. फ.; ३४३ ÷ १४ = २४$\frac{1}{2}$ यवक्षेत्रका घ. फ.; ७३$\frac{1}{2}$ + ६८$\frac{3}{5}$ + २९$\frac{3}{5}$ + २४$\frac{1}{2}$ = १९६ रा. अधोलोकसंबंधी कुल दूष्यक्षेत्रका घनफल.

एक गिरिकटक क्षेत्रका घनफल चौरासीसे भाजित लोकप्रमाण है। इसको अड़तालीससे गुणा करनेपर कुल गिरिकटक क्षेत्रका घनफल होता है ॥ २४९ ॥

३४३÷८४=४$\frac{1}{2}$ एक गिरिकटका घ. फ.; ४$\frac{1}{2}$×४८=१९६ सम्पूर्ण गि. का घ. फ.

इसप्रकार आठ भेदरूप इस अधोलोकका वर्णन किया जाचुका है। अब यहांसे आगे आठ प्रकारके ऊर्ध्वलोकका निरूपण करते हैं ॥ २५० ॥

सामान्य ऊर्ध्वलोकका घनफल सातसे भाजित और तीनसे गुणित लोकके प्रमाण अर्थात् एकसौ सैंतालीस राजुमात्र है। ३४३ ÷ ७ × ३ = १४७ रा. सामान्य ऊ. लोकका घ. फ.

द्वितीय ऊर्ध्वायतचतुरस्र क्षेत्रमें वेध और भुजा जगश्रेणीप्रमाण, तथा कोटि तीन राजुमात्र हैं ॥ २५१ ॥ ७ × ७ × ३ =१४७ ऊ. आयत क्षे. का घनफल।

तीसरे तिर्यगायत चतुरस्र क्षेत्रमें भुजा और कोटि श्रेणीप्रमाण, तथा वेध तीन राजुमात्र है। बहुतसे यवोंयुक्त मुरजक्षेत्रमें वह क्षेत्र यव और मुरजरूप होता है। इसमेंसे यवक्षेत्रका घनफल सातसे भाजित लोकप्रमाण और मुरजक्षेत्रका घनफल सातसे भाजित और दोसे गुणित लोकके प्रमाण है ॥ २५२–२५३ ॥

---

१ द ब वियदि. २ द ब विहत. ३ द ब सत्तारं. ४ द ब गिरिविडए. ५ द ब वियप्पा हेट्ठिमलोउए. ६ [अट्ठपयारं]. ७ द ब तिगुणिदा. ८ द ब भुजाले. ९ द ब मुविकोडीओ. १० [वेधो]. ११ द ब मुरयं.

घणफलमेक्कम्मि जवे अट्ठावीसेहिं भाजिदो लोओ । तं बारसेहि गुणिदं जवखेत्ते होदि विंदफलं ॥ २५४
तिहिदो दुगुणिदरज्जू तियभजिदा चउहिदा तिगुणरज्जू । एक्कतीसं च रज्जू बारसभजिदा हवंति उड्ढहुं ॥ २५५
चउहिदतिगुणिदरज्जू तेवीसं ताओ बारपविहत्ता । मंदरसरिसायारे[1] उस्सेहो उड्ढखेत्तम्मि ॥ २५६
अट्ठाणवदिविहत्ता तिगुणा सेढी तदाण[2] वित्थारो[3] । चउतडकरणक्खंडिदखेत्तेणं[4] चूलिया होदि ॥ २५७
तिण्णि तडा[5] भूवासो ताण तिभागेण होदि मुहरुंदं । तच्चूलियए उदओ चउभजिदा तिगुणिदा रज्जू ॥ २५८
सत्तट्ठाणे रज्जू उड्ढहुं एक्कवीसपविभत्तं । ठविदूण वासहेदुं गुणगारं तेसु साहेमि ॥ २५९
पंचुत्तरएक्कसयं सत्ताणउदी तियधियणउदीओ । चउसीदी तेवण्णा चउदालं एक्कवीस गुणगारा ॥ २६०

७×७×३ = १४७ ति. आयत क्षे. का घ. फ.; यवमुरजमें– ३४३ ÷ ७ = ४९ य. क्षे. घ. फ.; ३४३ ÷ ७ × २ = ९८ मु. क्षे. का घ. फ.; ४९ + ९८ = १४७ समस्त य. मु. क्षेत्रका घ. फ.

यवमध्यक्षेत्रमें एक यवका घनफल अट्ठाईससे भाजित लोकप्रमाण है। इसको बारहसे गुणा करनेपर सम्पूर्ण यवमध्यक्षेत्रका घनफल निकलता है ॥ २५४ ॥

३४३ ÷ २८ = १२$\frac{१}{४}$ एक यवका घनफल.; १२$\frac{१}{४}$ × १२ = १४७ रा. सम्पूर्ण य. म. क्षे. का घ. फ.

मन्दरसदृश आकारवाले ऊर्ध्वक्षेत्रमें ऊपर ऊपर उंचाई क्रमसे तीनसे भाजित दो राजु, तीनसे भाजित एक राजु, चारसे भाजित तीन राजु, बारहसे भाजित इकतीस राजु, चारसे भाजित तीन राजु और बारहसे भाजित तेईस राजुमात्र है ॥ २५५–२५६ ॥

$\frac{२}{३} + \frac{१}{३} + \frac{३}{४} + \frac{३१}{१२} + \frac{३}{४} + \frac{२३}{१२} = \frac{८४}{१२} = ७$ राजु ।

अट्ठानबैसे विभक्त और तीनसे गुणित जगश्रेणीप्रमाण तटोंका विस्तार है। ऐसे चार तटवर्ती करणाकार खण्डित क्षेत्रोंसे चूलिका होती है ॥ २५७ ॥

प्रत्येक तटका विस्तार $\frac{७}{९८} \times ३ = \frac{२१}{९८} = \frac{३}{१४}$ रा.

उस चूलिकाकी भूमिका विस्तार तीन तटोंके प्रमाण, मुखका विस्तार इसका तीसरा भाग, तथा उंचाई चारसे भाजित और तीनसे गुणित राजुमात्र है ॥ २५८ ॥

भूमिविस्तार– $\frac{३}{१४} \times ३ = \frac{९}{१४}$; मुखविस्तार– $\frac{९}{१४} \div ३ = \frac{३}{१४}$; उंचाई $\frac{३}{४}$ राजु.

सात स्थानोंमें ऊपर ऊपर इक्कीससे विभक्त राजुको रखकर उनमें विस्तारके निमित्तभूत गुणकारको कहता हूं ॥ २५९ ॥

एकसौ पांच, सत्तानबै, तेरानबै, चौरासी, तिरेपन, चवालीस और इक्कीस, ये उपर्युक्त सात स्थानोंमें सात गुणकार हैं। ॥ २६० ॥ $\frac{१०५}{२१}$; $\frac{९७}{२१}$; $\frac{९३}{२१}$; $\frac{८४}{२१}$; $\frac{५३}{२१}$; $\frac{४४}{२१}$; $\frac{२१}{२१}$ रा.

१ द ॰सरिसायारो. २ द ब तदाण. ३ द विहत्ता रिरे तिण्णि गुणा. ४ द चउतदकारणखंडिद, ब चउदत्तकारणखंडिद. ५ द ब तदा. ६ ब पंचुत्तं एक्क॰.

अट्ठण्हं रज्जुणं सत्तसु ठाणेसु ठविय हेट्ठादो । विंदफलजाणणट्ठं वोच्छं गुणगारहारात्रि ॥ २६१
दुसदाणिं दुसट्ठाणिं पंचाणउदी य एक्कवीसं च । सत्तत्तालजुदाणिं वादवलयाणि एक्करसं ॥ २६२
पण्णवदिय तिचउदसलक्खाणि णव इच्च इच्चंति गुणगारा । हारा णव णव एक्कं बाहत्तरि इगि चिहत्तरी चउरो ॥ २६३
चोद्दसभजिदो तिउणो विंदफलं बाहिरोभयभुजाणं । लोओ दुगुणो चोद्दसहिदो य अब्भंतरम्मि दूसस्स ॥ २६४
तस्स य जवखेत्ताणं लोओ चोद्दसहिदो दु विंदफलं । एत्तो गिरिगडखंडं[1] वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ २६५
छप्पण्णहिदो लोओ एक्कस्सि गिरिगडम्मि विंदफलं । तं चउवीसप्पहदं सत्तहिदो तिगुणिदो लोगो ॥ २६६
अट्ठविहप्पं साहिय सामण्णं हेट्ठदो दु होदि जयं । एण्हिं साहेमि पुढं संठाणं वादवलयाणं ॥ २६७

सात स्थानोंमें नीचेसे ऊपर ऊपर घनराजुको रखकर घनफल जाननेके लिये गुणकार और भागहारोंको कहता हूं ॥ २६१ ॥

इन सात स्थानोंमें क्रमसे दोसौ दो, पंचानवै, इक्कीस, ब्यालीससौ सैंतालीस, ग्यारह, चौदहसौ पंचानवै और नौ, ये सात गुणकार हैं । तथा भागहार यहां नौ, नौ, एक, बहत्तर, एक, बहत्तर, और चार हैं ॥ २६२–२६३ ॥

$\frac{२०२}{९} + \frac{९५}{९} + \frac{२१}{१} + \frac{४२४७}{७२} + \frac{११}{१} + \frac{१४९५}{७२} + \frac{९}{४} = १४७$ राजु मन्दर-क्षेत्रका घनफल.

दूष्यक्षेत्रकी बाहिरी उभय भुजाओंका घनफल चौदहसे भाजित और तीनसे गुणित लोक-प्रमाण; तथा अभ्यन्तर दोनों भुजाओंका घनफल चौदहसे भाजित और दोसे गुणित लोकप्रमाण है ॥ २६४ ॥

दूष्यक्षेत्रमें– ३४३ ÷ १४ × ३ = ७३½ बा. उ. भु. घ. फ.; ३४३ ÷ १४ × २ = ४९ अ. क्षे. घ. फ.

इस दूष्यक्षेत्रके यवक्षेत्रोंका घनफल चौदहसे भाजित लोकप्रमाण है । अब यहांसे आगे अनुक्रमसे गिरिकटक खण्डको कहता हूं ॥ २६५ ॥

३४३ ÷ १४ = २४½ दूष्यक्षेत्रके य. क्षे. का घ. फ.; ७३½ + ४९ + २४½ = १४७ सम्पूर्ण दूष्यक्षेत्रका घनफल.

एक गिरिकटका घनफल छप्पनसे भाजित लोकप्रमाण है । इसको चौबीससे गुणा करनेपर सातसे भाजित और तीनसे गुणित लोकप्रमाण सम्पूर्ण गिरिकटक क्षेत्रका घनफल आता है ॥ २६६ ॥

३४३ ÷ ५६ = ६½ एक गि. क. का घनफल.; ६½ × २४ = १४७ रा. (३४३ ÷ ७ × ३) सम्पूर्ण गि. क्षे. घ. फ.

सामान्य, अधः और ऊर्ध्वके भेदसे जो तीन प्रकारका जग अर्थात् लोक है, उसको आठ प्रकारसे कहकर अब वातवलयोंके पृथक् पृथक् आकारको कहता हूं ॥ २६७ ॥

---

१ द ब गिरिविडखंडं.

गोमुत्तमुग्गवण्णा घणोदधी तह घणाणिलो वाऊ । तणुवादो बहुवण्णो णियरुक्खस्स तया व वलयत्तिदयं ॥ २६८
पढमो लोयाधारो घणोवही इह घणाणिलो तत्तो । तप्परदो तणुवादो अंतम्मि णहं णिजाधारं ॥ २६९
जोयणवीससहस्सा बहलं तम्मारुदाण पत्तेक्कं । अट्ठखिदीणं हेट्ठे लोयतले उवरि जाव इगिरज्जू ॥ २७०
२०००० । २०००० । २०००० ।
सगपणचउजोयणयं सत्तमणारयम्मि[1] पुहविपणधीए[2] । पंचचउतियपमाणं तिरीयलेत्तस्स पणिधीए ॥ २७१
७ । ५ । ४ । ५ । ४ । ३ ।
सगपंचचउसमाणा पणिधीए होंति बम्हकप्पस्स । पणचउतियजोयणया उवरिमलोयस्स अंतम्मि ॥ २७२
७ । ५ । ४ । ५ । ४ । ३ ।
कोसदुगमेक्ककोसं किंचूणेक्कं च लोयसिहरम्मि । ऊणपमाणं दंडा चउस्सया पंचवीसजुदा ॥ २७३
को २ । को १ । दंड १५७५ ।

गोमूत्रके समान वर्णवाला घनोदधि, मूंगके समान वर्णवाला घनवात, तथा अनेक वर्णवाला तनुवात, इसप्रकारके ये तीनों वातवलय वृक्षकी त्वचाके समान (लोकको घेरे हुए) हैं ॥ २६८ ॥

इनमेंसे प्रथम घनोदधिवातवलय लोकका आधारभूत है। इसके पश्चात् घनवातवलय, उसके पश्चात् तनुवातवलय और फिर अन्तमें निजाधार आकाश है ॥ २६९ ॥

आठ पृथिवियोंके नीचे लोकके तलभागमें एक राजुकी उंचाईतक इन वायुमण्डलोंमेंसे प्रत्येककी मुटाई बीस हजार योजनप्रमाण है ॥ २७० ॥

घ. उ. २०००० + घ. २०००० + त. २०००० = ६०००० यो. लोकके तलभागमें एक राजु ऊपर तक वातवलयोंकी मुटाई ।

सातवें नरकमें पृथिवीके पार्श्वभागमें क्रमसे इन तीनों वातवलयोंकी मुटाई सात, पांच और चार, तथा इसके ऊपर तिर्यग्लोक (मध्यलोक) के पार्श्वभागमें पांच, चार और तीन योजनप्रमाण है ॥ २७१ ॥

सातवीं पृथिवीके पास तीनों वातवलयोंकी मुटाई— घ. उ. ७ + घ. ५ + त. ४ = १६ योजन; मध्यलोकके पास घ. उ. ५ + घ. ४ + त. ३ = १२ योजन ।

इसके आगे तीनों वायुओंकी मुटाई ब्रह्मस्वर्गके पार्श्वभागमें क्रमसे सात, पांच और चार योजनप्रमाण, तथा ऊर्ध्वलोकके अन्तमें (पार्श्वभागमें) पांच, चार और तीन योजनप्रमाण है ॥ २७२ ॥ ब्रह्मस्वर्गके पास यो. ७, ५, ४; लोकके अंतमें यो. ५, ४, ३.

लोकके शिखरपर उक्त तीनों वातवलयोंका बाहल्य क्रमशः दो कोस, एक कोस और कुछ कम एक कोस है। यहां तनुवातवलयकी मुटाई जो एक कोससे कुछ कम बतलाई है, उस कमीका प्रमाण चारसौ पच्चीस धनुष है ॥ २७३ ॥

लोकशिखरपर घनोदधिवातकी मुटाई को. २; घन. वा. को. १; त. वा. ४२५ धनुष कम को. १ (धनुष १५७५) ।

१ द सत्तमणयंमि, ब सत्तमसारयम्मि. २ द पणधीए, ब पणधीए.

तिरियक्खेत्तप्पणिधिं गदस्स पवणत्तयस्स बहलत्तं । मेलिय सत्तमपुढवीपणिधीगयमरुदबहलम्मि ॥ २७४
तं सोधिदूण तत्तो भजिदव्वं छप्पमाणरज्जूहिं । लद्धं पडिप्पदेसं जायंते हाणिवड्ढीओ ॥ २७५

१२ । ४ । ६ ।[1]

अट्ठछचउदुगदेयं तालं तालट्ठतीसछत्तीसं[2] । तियभजिदा हेट्ठादो मरुबहलं सयलपासेसु ॥ २७६

४८	४६	४४	४२	४०	३८	३६
३	३	३	३	३	३	३

उडुजुगे खलु वड्ढी हाणिसेढीभजिदअट्ठजोयणयं । एदं इच्छप्पहदं सोहिय मेलिज्ज भूमिमुहे ॥ २७७
मेरुतलादो उवरिं कप्पाणं सिद्धखेत्तपणिधीए । चउसीदी छण्णउदी अडजुदसय बारसुत्तरं च सयं ॥ २७८

.....

तिर्यक्क्षेत्रके पार्श्वभागमें स्थित तीनों वायुओंके बाहल्यको मिलाकर जो योगफल प्राप्त हो, उसको सातवीं पृथिवीके पार्श्वभागमें स्थित वायुओंके बाहल्यमेंसे घटा कर शेषमें छह प्रमाण राजुओंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सातवीं पृथिवीसे लेकर मध्यलोकतक प्रत्येक प्रदेश-क्रमसे एक राजुपर वायुकी हानि और वृद्धि होती है ॥ २७४–२७५ ॥

७ वीं पृ. के पास वातवलयोंका बाहल्य ७ + ५ + ४ = १६; ५ + ४ + ३ = १२; १६ − १२ ÷ ६ = $\frac{४}{६}$ प्रतिप्रदेशक्रमसे एक राजुपर होनेवाली हानिवृद्धिका प्रमाण ।

अड़तालीस, छयालीस, चवालीस, ब्यालीस, चालीस, अड़तीस और छत्तीसमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना क्रमसे नीचेसे लेकर सब पार्श्वभागोंमें (सात पृथिवियोंके पा. भा. में) वातवलयोंका बाहल्य है ॥ २७६ ॥

सात पृथिवियोंके पार्श्वभागमें स्थित वातवलयोंका बाहल्य — सप्तम पृ. $४\frac{८}{३}$; षष्ठ पृ. $४\frac{६}{३}$; पंचम पृ. $४\frac{४}{३}$; च. पृ. $४\frac{२}{३}$; तृ. पृ. $४\frac{०}{३}$; द्वि. पृ. $३\frac{८}{३}$; प्र. पृ. $३\frac{६}{३}$ यो. ।

ऊर्ध्वलोकमें निश्चयसे एक जगश्रेणीसे भाजित आठ योजनप्रमाण वृद्धि है । इस वृद्धि-प्रमाणको इच्छासे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो, उसको भूमिमेंसे कम कर देना चाहिये और मुखमें मिला देना चाहिये । (ऐसा करनेसे ऊर्ध्वलोकमें अभीष्ट स्थानके वायुमण्डलोंकी मुटाईका प्रमाण निकल आता है) ॥ २७७ ॥

उदाहरण— भूमिकी अपेक्षा सान० माहेन्द्र कल्पके पास वातवलयोंकी मुटाई— १६ − ($\frac{८}{७}$ × $\frac{३}{२}$) = $१५\frac{३}{७}$ यो.; अथवा १२ + ($\frac{८}{७}$ × $\frac{३}{२}$) = $१५\frac{३}{७}$ यो. मुखकी अपेक्षा ।

मेरुतलसे ऊपर कल्पों तथा सिद्धक्षेत्रके पार्श्वभागमें चौरासी, छयानबै, एकसौ आठ, एकसौ बारह और फिर इसके आगे सात स्थानोंमें उक्त एकसौ बारहमेंसे (११२) उत्तरोत्तर चार

---

१ द ब सट्ठमपोढवी°. २ द १२४१० ।. ३ द ब °देयं तालं तालं तालट्ठतीस°.
४ [डुजुगे]. ५ द जोयणसया. ६ द ब °सयबारबारसुत्तरं.

एत्तो चउचउहीणं सत्तसु ठाणेसु ठविय पत्तेक्कं । सत्तविहत्ते होदि हु भारुदवलयाण बहलत्तं ॥ २७९

८४	९६	१०८	११२	१०८	१०४	१००	९६	९२	८८	८४
७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७

तीसं इगिदालदलं कोसा तियभाजिदा य उणवण्णा । सत्तमखिदिपणिधीए बम्हजुगे वाउबहलत्तं ॥ २८०

घ	घ	तनु
३०	४१	४९
	२	३

दोछब्बारसभागब्भहिओ कोसो कमेण वाउघणं । लोयउवरिम्मि एवं लोयविभायम्मि पण्णत्तं ॥ २८१

पाठांतरं[1]

१	१	१
१	१	१
२	६	१२

वादवरुद्धखेत्ते विंदफलं तह य अट्ठपुढवीए । सुद्धायासखिदीणं लवमेत्तं वत्तइस्सामो ॥ २८२

संपहि लोगपेरंतट्ठिदवादवलयरुद्धखेत्ताणं[5] आणयणविधाणं उच्चदे—लोगस्स तले तिण्णिवादाणं बहलं वादेक्कस्स य वीससहस्सा य जोयणमेत्तं । तं सव्वमेगट्ठं कदे सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्लं जगपदरं होदि ।

चार कम संख्याको रखकर प्रत्येकमें सातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना वातवलयोंकी मुटाईका प्रमाण है ॥ २७८–२७९ ॥

ऊर्ध्वलोकमें वातवलयोंका बाहल्य— [१] मेरुतलसे ऊपर सौ. ई. के अधोभागमें $\frac{८४}{७}$; [२] सौ. ई. के उपरिभागमें $\frac{९६}{७}$; [३] सा. मा. $\frac{१०८}{७}$; [४] ब्र. ब्रह्मो. $\frac{११२}{७}$; [५] लां. का. $\frac{१०८}{७}$; [६] शु. महा. $\frac{१०४}{७}$; [७] श. स. $\frac{१००}{७}$; [८] आ. प्रा. $\frac{९६}{७}$; [९] आ. अ. $\frac{९२}{७}$; [१०] ग्रैवेयकादि $\frac{८८}{७}$; [११] सिद्धक्षेत्र $\frac{८४}{७}$ ।

सातवीं पृथिवी और ब्रह्मयुगलके पार्श्वभागमें तीनों वायुओंकी मुटाई क्रमसे तीस, इकतालीसके आधे और तीनसे भाजित उनंचास कोस है ॥ २८० ॥ घ. उ. ३०; घ. $\frac{४१}{२}$; तनु $\frac{४९}{३}$ कोस।

लोकके ऊपर अर्थात् लोकशिखरपर तीनों वातवलयोंकी मुटाई क्रमसे दूसरे भागसे अधिक एक कोस, छठवें भागसे अधिक एक कोस और बारहवें भागसे अधिक एक कोस है, ऐसा 'लोकविभागमें' कहा गया है ॥ २८१ ॥ पाठान्तर ॥ घ. उ. $१\frac{१}{२}$; घ. $१\frac{१}{६}$; तनु. $१\frac{१}{१२}$ कोस।

यहां वायुसे रोके गये क्षेत्र, आठों पृथिवियों और शुद्ध आकाशप्रदेशके घनफलको लवमात्र अर्थात् संक्षेपमें कहते हैं ॥ २८२ ॥

अब लोकपर्यन्तमें स्थित वातवलयोंसे रोके गये क्षेत्रोंके निकालनेके विधानको कहते हैं—लोकके नीचे तीनों वायुओंमेंसे प्रत्येक वायुका बाहल्य बीस हजार योजनप्रमाण है। इन तीनों वायुओंके बाहल्यको इकट्ठा करनेपर साठ हजार योजन बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

---

१ द ब प्रत्योः 'पाठांतरं' इति पदं २८०–२८१ गाथयोर्मध्ये उपलभ्यते । २ ब १, द प्रतौ संदृष्टिर्नास्ति. ३ द वादरुद्धं खेत्ते, ब वादवरुद्धं खेत्ते. ४ द ब खिदिणं. ५ द ब वादवलयरुंधखित्ताणं. ६ द ब याणयण. ७ द तिण्ण. ८ द तं सव्वमेगट्ठं कदेगसट्ठि, ब तेसमेगट्ठं कदे वासट्ठि.

णवरि दोसु वि पासेसु सट्ठिजोयणसहस्सरज्जुरुंदपरिहाणिखेत्तेणं ऊणं एदमजोवदूणं सट्ठिसहस्सबाहल्लं जगपदरमिदि संकप्पिय तप्फलेदूण पुधं ठवेदव्वं[1]। = ६०००० । पुणो एगरज्जुस्सेधेण सत्तरज्जुआयामेण सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्लेण दोसु पासेसुं ठिदवादखेत्तं बुद्धीए पुधं करिय जगपदरपमाणेण णिवदे वीससहस्सा-धिकलक्खजोयणबाहल्लस्स सत्तभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = ११००००/७ । तं पुव्विल्लखेत्तस्सुवरि ठिदे चालीस-जोयणसहस्साहियपंचण्हं लक्खाणं सत्तभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = ५४००००/७ । पुणो अवरासु दोसु दिसासु एगरज्जुस्सेधेण तले सत्तरज्जुआयामेण मुहे सत्तभागाहियछरज्जुरुंदत्तेण सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्लेण ठिदवाद-खेत्ते[2] जगपदरपमाणेण कदे वीसजोयणसहस्साहियपंचपंचासजोयणलक्खाणं तेदालीसतिसदभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = ५५२०००० / ३४३ । एदे पुव्विल्लखेत्तस्सुवरिं पक्खित्ते एगूणवीसलक्खअसीदिसहस्सजोयणाहियतिण्हं कोडीणं तेदालीसतिसदभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = ३१९८०००० / ३४३ । पुणो सत्तरज्जुविक्खंभतेरहरज्जु-आयामसोलहबारह [–सोलहबारह–] जोयणबाहल्लेण दोसु वि पासेसु ठिदवादखेत्ते जगपदरपमाणेण कदे १०

यहां विशेषता सिर्फ इतनी है कि लोकके दोनों ही अन्तों अर्थात् पूर्व-पश्चिमके अन्तिम भागोंमें साठ हजार योजनकी उंचाईतक क्षेत्र यद्यपि हानिरूप है, फिर भी उसे न जोड़कर 'साठ हजार योजन बाहल्यवाला जगप्रतर है' इसप्रकार संकल्पपूर्वक उसको छेदकर पृथक् स्थापित करना चाहिये। यो. ६०००० × ४९/७.

अनन्तर एक राजु उत्सेध, सात राजु आयाम और साठ हजार योजन बाहल्यवाले वातवलयकी अपेक्षा दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित वातक्षेत्रको बुद्धिसे अलग करके जगप्रतरप्रमाणसे सम्बद्ध करनेपर सातसे भाजित एक लाख बीस हजार योजन बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है। $\frac{१२०००० \times ४९}{७}$ ।

इसको पूर्वोक्त क्षेत्रके ऊपर स्थापित करनेपर पांच लाख चालीस हजार योजनके सातवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है। $\left(\frac{६०००० \times ७}{१}\right) + \frac{१२०००}{७} = \frac{५४०००० \times ४९}{७}$

इसके आगे इतर दो दिशाओं अर्थात् दक्षिण और उत्तरकी अपेक्षा एक राजु उत्सेधरूप, तलभागमें सात राजु आयामरूप, मुखमें सातवें भागसे अधिक छह राजु विस्ताररूप और साठ हजार योजन बाहल्यरूप वायुमण्डलकी अपेक्षा स्थित वातक्षेत्रके जगप्रतरप्रमाणसे करनेपर पचवन लाख बीस हजार योजनके तीनसौ तेतालीसवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{४९}{७} + \frac{४९}{७} \div \frac{२}{१} \times \frac{२}{१} \times ६०००० = \frac{५५२०००० \times ४९}{७ \times ४९} = \frac{५५२०००० \times ४९}{३४३}$$

इस उपर्युक्त घनफलके प्रमाणको पूर्वोक्त क्षेत्रके ऊपर रखनेपर तीन करोड़ उन्नीस लाख अस्सी हजार योजनके तीनसौ तेतालीसवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है॥

$$\frac{५४०००० \times ४९}{७} + \frac{५५२०००० \times ४९}{३४३} = \frac{३१९८०००० \times ४९}{३४३}$$

इसके अनन्तर सात राजु विष्कंभ, तेरह राजु आयाम तथा सोलह, बारह, (सोलह एवं बारह) योजन बाहल्यरूप अर्थात् सातवीं पृथिवीके पार्श्वभागमें सोलह, मध्यलोकके पार्श्वभागमें बारह,

१ द ब परिहाणिखेत्तेण, [परिहीणखेत्तेण]. २ द ब पुधं ति वत्तं. ३ द इमि पुधकरिय, ब इमि पुधकरिय. ४ द ब ठिदवादखेत्तेण. ५ एवं पुव्विल्लं. ६ द सोलस.

चउसट्ठिसदजोयणऊणअट्ठारहसहस्सजोयणाणं तेदालीसत्तिसदभागबाहल्लं जगपदरमुप्पज्जदि। = $१७८३१\frac{}{३४३}$ ।
पुणो सत्तभागाहियछरज्जुमूलविक्खंभेण छरज्जुउच्छेहेण एकरज्जुमुहेण सोलहबारहजोयणबाहल्लेण दोसु वि पासेसु ठिदवादक्खेत्तं जगपदरपमाणेण कदे बादालीसजोयणसदस्स[1] तेदालीसत्तिसदभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $४२००\frac{३}{३४३}$ । पुणो एगपंचएगरज्जुविक्खंभेण सत्तरज्जुउच्छेहेण बारहसोलहबारहजोयणबाहल्लेण उवरिमदोसु वि पासेसु ठिदवादक्खेत्तं जगपदरपमाणेण कदे अट्ठासीदिसमहियपंचजोयणसदाणं एगूणसट्ठिभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $५८८\frac{}{४९}$ । उवरि रज्जूविक्खंभेण सत्तरज्जुआयामेण किंचूणजोयणबाहल्लेण ठिदवादक्खेत्तं जगपदरपमाणेण कदे विउत्तरतिसदाणं बेसहस्सबिसदचालीसभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $३०३\frac{}{२१४०}$ । एदं सव्वमेगत्थ मेलाविदे चउवीसकोडिसमहियसहस्सकोडीओ एगूणवीसलक्खतेसीदिसहस्स-

ब्रह्मस्वर्गके पार्श्वभागमें सोलह, और सिद्धलोकके पार्श्वभागमें बारह योजन बाहल्यरूप वातवलयकी अपेक्षा दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित वातक्षेत्रको जगप्रतरप्रमाणसे करनेपर एकसौ चौंसठ योजन कम अठारह हजार योजनके तीनसौ तेतालीसवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$१३ \times ७ \times १४ \times २ = २५४८ = \frac{१७८३१ \times ४९}{३४३}$$

पुनः सातवें भागसे अधिक छह राजु मूलमें विस्ताररूप, छह राजु उत्सेधरूप, मुखमें एक राजु विस्ताररूप और सोलह-बारह योजन बाहल्यरूप (सातवीं पृथिवी और मध्यलोकके पार्श्वभागमें) वातवलयकी अपेक्षा दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित वातक्षेत्रको जगप्रतरप्रमाणसे करनेपर ब्यालीससौ योजनके तीनसौ तेतालीसवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{४३}{७} + \frac{७}{७} \div \frac{२}{६} \times \frac{२}{६} \times १४ \times ६ = \frac{४२०० \times ४९}{७ \times ४९} = \frac{४२०० \times ४९}{३४३}$$

अनन्तर एक, पांच, व एक राजु विष्कंभरूप (क्रमसे मध्यलोक, ब्रह्मस्वर्ग और सिद्धक्षेत्रके पार्श्वभागमें), सात राजु उत्सेधरूप, और क्रमशः मध्यलोक, ब्रह्मस्वर्ग एवं सिद्धलोकके पार्श्वभागमें बारह, सोलह, और बारह योजन बाहल्यरूप वातवलयकी अपेक्षा ऊपर दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित वातक्षेत्रको जगप्रतरप्रमाणसे करनेपर पांचसौ अठासी योजनके एक कम पचासवें अर्थात् उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$५ + १ \div २ \times ७ \times २ \times १४ = \frac{५८८}{४९} \times ४९$$

ऊपर एक राजु विस्ताररूप, सात राजु आयामरूप और कुछ कम एक योजन बाहल्यरूप वातवलयकी अपेक्षा स्थित वातक्षेत्रको जगप्रतरप्रमाणसे करनेपर तीनसौ तीन योजनके दो हजार दोसौ चालीसवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$१ \times ७ \times \frac{३०३}{२१४०} \div \frac{७}{६} = \frac{३०३}{३४३} \times ४९$$

इस सबको इकट्ठा करके मिला देनेपर एक हजार चौबीस करोड़, उन्नीस लाख, तेरासी

१ द ब सदा. २ द जोयणलक्खतेदालीससदभागहिबाहल्लं. ३ ब ४२०००. ४ द जगदपदर°. ५ ब सव्वमेगं पयमेलाविदे, द सव्वमेगं पमेलाविदे.

चउसदसत्तासीदिजोयणाणं णवसहस्ससत्तसयसट्ठिरूवाहियलक्खाए अवहिदेगभागबाहल्लं जगपदरं होदि। $= \frac{१०२४१९८३४८७}{१०९७६०}$।

पुणो अट्ठण्हं पुढवीणं हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं वत्तइस्सामो–

तत्थ पढमपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं एक्करज्जुविक्खंभसत्तरज्जुदीहा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्लं एसा अप्पणो बाहल्लस्स सत्तमभागबाहल्लं जगपदरं होदि। $= \frac{६००००}{७}$। बिदियपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं सत्तभागूणबेरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला असीदिसहस्साहियसत्तण्हं लक्खाणं एगूणवण्णासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। $= \frac{७८०००० }{४९}$। तदियपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं बेसत्तमभागहीणतिण्णिरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला चालीससहस्साधियएक्कारसलक्खजोयणाणं एगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। $= \frac{११४०००० }{४९}$। चउत्थपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं तिण्णिसत्तमभागूणचत्तारिरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा

हजार, चारसौ सतासी योजनोंमें एक लाख नौ हजार सातसौ साठका भाग देनेपर लब्ध एक भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{११९८०००० }{३४३} + \frac{१७८३६ }{३४३} + \frac{४२०० }{३४३} + \frac{५८८ }{४९} + \frac{३०३ }{२४०} = \frac{१०२४१९८३४८७ }{१०९७६०} \times ४९$$

अब आठों पृथिवियोंके अधस्तन भागमें वायुसे अवरुद्ध क्षेत्रका घनफल कहते हैं—

इन आठों पृथिवियोंमेंसे प्रथम पृथिवीके अधस्तन भागमें अवरुद्ध वायुके क्षेत्रका घनफल कहते हैं—एक राजु विष्कंभ, सात राजु लंबाई और साठ हजार योजन बाहल्यवाला प्रथम पृथिवीका वातरुद्ध क्षेत्र है। इसका घनफल अपने बाहल्य अर्थात् साठ हजार योजनके सातवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है। $\frac{१ \times ७ \times ६०००० \times ४९ }{४९} = \frac{४९ \times ६०००० }{७}$

दूसरी पृथिवीके अधस्तन भागमें वातरुद्धक्षेत्रके घनफलको कहते हैं—सातवें भाग कम दो राजु विष्कम्भवाला, सात राजु आयत और साठ हजार योजन बाहल्यवाला द्वितीय पृथिवीका वातरुद्ध क्षेत्र है। उसका घनफल सात लाख अस्सी हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{१}{७} \times \frac{१}{७} \times \frac{६०००० }{१} = \frac{७ \times ७८०००० \times ७ }{७ \times ७} = \frac{७८०००० \times ४९ }{४९}$$

तीसरी पृथिवीके अधस्तन भागमें वातरुद्ध क्षेत्रके घनफलको कहते हैं—दो बटे सात भाग ($\frac{२}{७}$) कम तीन राजु विष्कम्भयुक्त, सात राजु लंबा और साठ हजार योजन बाहल्यवाला तृतीय पृथिवीका वातरुद्ध क्षेत्र है। इसका घनफल ग्यारह लाख चालीस हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{७}{१} \times \frac{१}{७} \times \frac{६०००० }{१} = \frac{७ \times ११४०००० \times ७ }{७ \times ७} = \frac{११४०००० \times ४९ }{४९}$$

चौथी पृथिवीके अधस्तन भागमें वातरुद्ध क्षेत्रके घनफलको कहते हैं—चतुर्थ पृथिवीका वातावरुद्ध क्षेत्र तीन बटे सात भाग ($\frac{३}{७}$) कम चार राजु विस्तारवाला, सात राजु लंबा, और साठ

सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला पण्णरसलक्खजोयणाणं एगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $१५०००००/४९$। पंचमपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं चत्तारिसत्तमभागूणपंचरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला सट्ठिसहस्साहियअट्ठारसलक्खाणं एगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $१८६०००० / ४९$। छट्ठपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं पंचसत्तमभागूणछरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला वीससहस्साहियबावीसलक्खाणमेगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $२२२०००० / ४९$। सत्तमपुढवीए हेट्ठिमभागावरुद्धवादखेत्तघणफलं छसत्तमभागूणसत्तरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला सीदिसहस्साधियपंचवीसलक्खाण एगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $२५८०००० / ४९$। अट्ठमपुढवीए हेट्ठिमभागवादावरुद्धखेत्तघणफलं सत्तरज्जुआयदा एगरज्जुविक्खंभा

हजार योजन मोटा है। इसका घनफल पन्द्रह लाख योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{२}{७} \times ७ \times ६०००० = \frac{७ \times १५०००००}{७ \times ७} \times ७ = \frac{१५०००००}{४९} \times ४९$$

पांचवीं पृथिवीके अधस्तन भागमें अवरुद्ध वातक्षेत्रके घनफलको कहते हैं— पांचवीं पृथिवीके अधोभागमें वातावरुद्ध क्षेत्र चार बटे सात भाग ($\frac{४}{७}$) कम पांच राजु विस्तारसे युक्त, सात राजु लम्बा और साठ हजार योजन मोटा है। इसका घनफल अठारह लाख साठ हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{३}{७} \times ७ \times ६०००० = \frac{७ \times १८६०००० \times ७}{७ \times ७} = \frac{१८६०००० \times ४९}{४९}$$

छठी पृथिवीके अधस्तन भागमें वातावरुद्ध क्षेत्रके घनफलको कहते हैं— पांच बटे सात भाग ($\frac{५}{७}$) कम छह राजु विस्तारवाला, सात राजु लंबा और साठ हजार योजन बाहल्यवाला छठी पृथिवीके नीचे वातरुद्ध क्षेत्र है; इसका घनफल बाईस लाख बीस हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{५}{७} \times ७ \times ६०००० = \frac{७ \times २२२०००० \times ७}{७ \times ७} = \frac{२२२०००० \times ४९}{४९}$$

सातवीं पृथिवीके अधोभागमें वातरुद्ध क्षेत्रके घनफलको कहते हैं— सातवीं पृथिवीके नीचे वातावरुद्ध क्षेत्र छह बटे सात भाग ($\frac{६}{७}$) कम सात राजु विस्तारवाला, सात राजु लंबा और साठ हजार योजन मोटा है। इसका घनफल पच्चीस लाख अस्सी हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{६}{७} \times ७ \times ६०००० = \frac{७ \times २५८०००० \times ७}{७ \times ७} = \frac{२५८०००० \times ४९}{४९}$$

अष्टम पृथिवीके अधस्तन भागमें वातावरुद्ध क्षेत्रके घनफलको कहते हैं—अष्टम पृथिवीके अधस्तन भागमें वातावरुद्ध क्षेत्र सात राजु लंबा, एक राजु विस्तारयुक्त और साठ हजार योजन

---

१ द्र भागूणछरज्जु°. २ द्र हेट्ठिमभागा°.

सट्ठिजोयणसहस्सबाहल्ला एसा अप्पणो बाहल्लस्स[1] सत्तभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $६००००/७$। एवं सव्वमेगट्ठ मेलाविदे[2] येत्तियं होदि— = $१०९२०००००/४९$।

॥ एवं वादावरुद्धखेत्तघणफलं समत्तं ॥

संपहि अट्ठण्हं पुढवीणं पत्तेक्कं विंदफलं थोरूवएण वत्तइस्सामो—

तत्थ पढमपुढवीए एगरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुदीहा वीससहस्सूणबेजोयणलक्खबाहल्ला एसा ५ अप्पणो बाहल्लस्स सत्तमभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $१८००००/७$। बिदियपुढवीए सत्तमभागूणबेरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा बत्तीसजोयणसहस्सबाहल्ला सोलससहस्साहियचदुण्हं[3] लक्खाणमेगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $४१६०००/४९$। तदियपुढवीए बेसत्तमभागहीणतिण्णिरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा अट्ठावीसजोयणसहस्सबाहल्ला बत्तीससहस्साहियपंचलक्खजोयणाणं एगूणवंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि। = $५३२०००/४९$। चउत्थपुढवीए तिण्णिसत्तमभागूणचत्तारिरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा चउदीस- १०

बाहल्यवाला है। इसका घनफल अपने बाहल्यके सातवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$१ \times ७ \times \frac{६००००\times ७}{७} = \frac{६००००\times ४९}{७}$$

इस सबको इकट्ठा मिलानेपर निम्नप्रकार कुल घनफल होता है—

$$\frac{४२०००}{४९} + \frac{७८०००}{४९} + \frac{११४०००}{४९} + \frac{१५००००}{४९} + \frac{१८६०००}{४९}$$
$$+ \frac{२२२०००}{४९} + \frac{२५८०००}{४९} + \frac{४२०००}{४९} = \frac{१०९२०००००\times ४९}{४९}$$

इसप्रकार वातावरुद्ध क्षेत्रके घनफलका वर्णन समाप्त हुआ।

अब आठ पृथिवियोंमेंसे प्रत्येक पृथिवीके घनफलको संक्षेपमें कहते हैं—इनमेंसे प्रथम पृथिवी एक राजु विस्तृत, सात राजु लंबी, और बीस हजार कम दो लाख, अर्थात् एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है। इसका घनफल अपने बाहल्य (१८०००० यो.) के सातवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$१ \times ७ \times १८०००० = \frac{७\times १८००००\times ७}{७} = \frac{१८००००\times ४९}{७}$$

दूसरी पृथिवी सातवें भाग कम दो राजु विस्तारवाली, सात राजु आयत और बत्तीस हजार योजन मोटी है। इसका घनफल चार लाख सोलह हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{१३}{७} \times \frac{७}{१} \times \frac{३२०००}{१} = \frac{७\times ४१६०००\times ७}{७\times ७} = \frac{४१६०००\times ४९}{४९}$$

तीसरी पृथिवी दो बटे सात भाग ($\frac{२}{७}$) कम तीन राजु विस्तारवाली, सात राजु आयत, और अट्ठाईस हजार योजन मोटी है। इसका घनफल पांच लाख बत्तीस हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है।

$$\frac{१९}{७} \times \frac{७}{१} \times \frac{२८०००}{१} = \frac{७\times ५३२०००\times ७}{७\times ७} = \frac{५३२०००\times ४९}{४९}$$

चतुर्थ पृथिवी तीन बटे सातभाग ($\frac{३}{७}$) कम चार राजु विस्तारवाली, सात राजु लंबी,

---

१ द ब बाहल्लं से. २ द ब सव्वमेगं पमेलाविदे. ३ ब चउण्हं. ४ द लक्खाण एगूण°.

जोयणसहस्सबाहल्ला छजोयणलक्खाणं एगूणसंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = $\frac{६०००००}{४९}$ । पंचमपुढवीए चत्तारिसत्तभागूणपंचरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा वीसजोयणसहस्सबाहल्ला वीससहस्साहिय छण्णं लक्खाणमेगूणसंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = $\frac{६२०००००}{४९}$ । छट्ठमपुढवीए पंचसत्तभागूणछरज्जुविक्खंभा सत्तरज्जुआयदा सोलसजोयणसहस्सबाहल्ला बाणउदिसहस्साहियपंचण्हं लक्खाणमेगूणसंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = $\frac{५९२०००}{४९}$ । सत्तमपुढवीए छसत्तमभागूणसत्तरज्जुविक्खंभा ५ सत्तरज्जुआयदा अट्ठजोयणसहस्सबाहल्ला चउदालसहस्साहियतिण्णं लक्खाणमेगूणसंचासभागबाहल्लं जगपदरं होदि । = $\frac{३४४०००}{४९}$ । अट्ठमपुढवीए सत्तरज्जुआयदा एक्करज्जुरुंदा अट्ठजोयणबाहल्ला सत्तमभागाहियेयजोयणबाहल्लं जगपदरं होदि । = $\frac{८}{७}$ ।

और चौबीस हजार योजन मोटी है । इसका घनफल छह लाख योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है ।

$$\frac{२५}{७} \times \frac{७}{१} \times \frac{२४०००}{१} = \frac{७ \times ६०००००}{७ \times ७} \times ७ = \frac{६०००००}{४९} \times ४९$$

पांचवीं पृथिवी चार बटे सात भाग ($\frac{४}{७}$) कम पांच राजु विस्तारयुक्त, सात राजु लंबी, और बीस हजार योजन मोटी है । इसका घनफल छह लाख बीस हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है ।

$$\frac{३१}{७} \times \frac{१}{७} \times \frac{२००००}{१} = \frac{७ \times ६२०००० \times ७}{७ \times ७} = \frac{६२०००० \times ४९}{४९}$$

छठी पृथिवी पांच बटे सात भाग ($\frac{५}{७}$) कम छह राजु विस्तारवाली, सात राजु आयत, और सोलह हजार योजन बाहल्यवाली है । इसका घनफल पांच लाख बानवे हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है ।

$$\frac{३७}{७} \times \frac{७}{१} \times \frac{१६०००}{१} = \frac{७ \times ५९२०००}{७ \times ७} \times ७ = \frac{५९२०००}{४९} \times ४९$$

सातवीं पृथिवी छह बटे सात भाग ($\frac{६}{७}$) कम सात राजु विस्तारवाली, सात राजु आयत, और आठ हजार योजन बाहल्यवाली है । इसका घनफल तीन लाख चवालीस हजार योजनके उनंचासवें भाग बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है ।

$$\frac{४३}{७} \times \frac{७}{१} \times \frac{८०००}{१} = \frac{७ \times ३४४०००}{७ \times ७} \times ७ = \frac{३४४०००}{४९} \times ४९$$

आठवीं पृथिवी सात राजु आयत, एक राजु विस्तारवाली और आठ योजन मोटी है । इसका घनफल सातवें भागसहित एक योजन बाहल्यप्रमाण जगप्रतर होता है ।

$$७ \times १ \times ८ = \frac{७ \times ८ \times ७}{७} = \frac{८}{७} \times ४९$$

---

१ द ससत्तमाणू°. २ द एगरज्जु°. ३ द अट्ठसहस्सजोयण°. ४ द भागाहियेयेयजो°.

एदाणि सव्वमेलिदे एत्तियं होदि— $= ४३६४०५६ \frac{}{४९}$ ।

एदेहिं दोहिं खेत्ताणं घिंदफलं संमेलिय सयललोयम्मि अवणीदे अवसेसं सुद्धायासपमाणं होदि । तस्स ठवणा—



केवलणाणतिणेत्तं चोत्तीसादिसयभूदिसंपण्णं । णाभेयजिणं तिहुवणणमंसणिज्जं णमंसामि ॥ २८३

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए सामण्णजगसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम

पढमो महाधियारो सम्मत्तो ॥ १ ॥

इस सबको मिलानेपर निम्नप्रकार प्रमाण होता है—

$$\frac{१२६०००० }{४९} + \frac{४१६००० }{४९} + \frac{५३२००० }{४९} + \frac{६००००० }{४९} + \frac{६२००००}{४९} + \frac{५५२०००}{४९} + \frac{३४४०००}{४९} + \frac{८}{७} = \frac{४३६४०५६ \times ४९}{४९}$$

उपर्युक्त इन दोनों क्षेत्रोंके (वातावरुद्धक्षेत्र और आठ भूमियोंके) घनफलको मिलाकर उसे सम्पूर्ण लोकमेंसे घटा देनेपर अवशिष्ट शुद्ध आकाशका प्रमाण होता है । उसकी स्थापना यह है—(देखो मूल पाठ ?)

केवलज्ञानरूपी तीसरे नेत्रके धारक, चौंतीस अतिशयरूपी विभूतिसे सम्पन्न, और तीनों लोकोंकेद्वारा नमस्करणीय, ऐसे नाभेय जिन अर्थात् ऋषभ जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूं ॥ २८३ ॥

इसप्रकार आचार्यपरंपरागत त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें सामान्यजगत्स्वरूपनिरूपणप्रज्ञप्तिनामक

प्रथम महाधिकार समाप्त हुआ.

[बिदुओ महाधियारो]

अजियजिणं जियमयणं दुरितहरं आजवंजवातीदं । पणमिय णिरूवमाणं णारयलोयं णिरूवेमो ॥ १
णिद्धंधणिवासखिदिपरमाणं आउदयओहिपरिमाणं । गुणठाणादीणं च य संखा उप्पज्जमाणजीवाणं ॥ २
जम्मणमरणाणंतरकालपमाणादि एक्कसमयम्मि । उप्पज्जणमरणाण य परिमाणं तह य आगमणं ॥ ३
णिरयगदिआउबंधणपरिणामा तह य जम्मभूमीओ । णाणादुक्खसरूवं दंसणगहणस्स हेदु जोणीओ ॥ ४
एवं पण्णरसविहा बहियारा वण्णिदा समासेण । तित्थयरवयणणिग्गयणारयपण्णत्तिणामाए ॥ ५
लोयबहुमज्झदेसे तरुम्मि सारं व रज्जुपदरजुदा । तेरसरज्जुच्छेहा किंचूणा होदि तसणाली ॥ ६
ऊणपमाणं दंडा कोडितियं एक्कवीसलक्खाणं । बासट्ठिं च सहस्सा दुसया इगिदाल दुतिभागा ॥ ७

३२१६२२४१।२।
३

अथवा—

उववादमारणंतियपरिणदतसलोयपूरणेण गदो । केवलिणो अवलंबिय सव्वजगो होदि तसणाली ॥ ८

जिन्होंने मदन अर्थात् कामदेवको जीत लिया है, पापको नष्ट कर दिया है, तथा जो संसारसे अतीत हैं अर्थात् मोक्षको प्राप्त कर चुके हैं और अनुपम हैं, ऐसे अजित भगवान्‌को नमस्कार करके नारकलोकका निरूपण करते हैं ॥ १ ॥

एक[1] ही घरमें रहनेवालों अर्थात् नारकियोंकी निवास-भूमियोंका वर्णन, परिमाण[2] अर्थात् नारकियोंकी संख्या, आयु[3]का प्रमाण, शरीर[4]की उंचाईका प्रमाण, अवधिज्ञान[5]का प्रमाण, गुणस्थान[6]दिकोंका निर्णय, नरक[7]कोंमें उत्पद्यमान जीवोंकी व्यवस्था, जन्म और मरणके अन्तरकालका प्रमाणादिक, एक[8] समयमें उत्पन्न होनेवाले और मरनेवाले जीवोंका प्रमाण, नरक[9]से निकलनेवाले जीवोंका वर्णन, नरकगति[10]सम्बन्धी आयुके बंधक परिणामोंका विचार, जन्म[11]स्थानोंका कथन, नाना[12] दुःखोंका स्वरूप, सम्यग्दर्शन[13]ग्रहणके कारण, और नरक[14]में उत्पन्न होनेके कारणोंका कथन, इसप्रकार ये पन्द्रह अधिकार तीर्थंकरके वचनसे निकले इस नारकप्रज्ञप्तिनामक महाधिकारमें संक्षेपसे कहे गये हैं ॥ २–५ ॥

जिसप्रकार वृक्षके ठीक मध्यभागमें सार हुआ करता है, उसीप्रकार लोकके बहुमध्यभाग अर्थात् बीचमें एक राजु लंबी-चौड़ी और कुछ कम तेरह राजु ऊंची त्रसनाली (त्रसजीवोंका निवासक्षेत्र) है ॥ ६ ॥

त्रसनालीको जो तेरह राजुसे कुछ कम ऊंचा बतलाया गया है, उस कमीका प्रमाण यहां तीन करोड़, इक्कीस लाख, बासठ हजार, दोसौ इकतालीस धनुष और एक धनुषके तीन भागोंमेंसे दो भाग अर्थात् $\frac{२}{३}$ है ॥ ७ ॥ त्रसनालीकी उंचाई– ३२१६२२४१$\frac{२}{३}$ धनुष कम १३ राजु.

अथवा— उपपाद और मारणांतिक समुद्घातमें परिणत त्रस तथा लोकपूरणसमुद्घातको प्राप्त केवलीका आश्रय करके सारा लोक ही त्रसनाली है ॥ ८ ॥

विशेषार्थ— विवक्षित भवके प्रथम समयमें होनेवाली पर्यायकी प्राप्तिको उपपाद कहते

---

१ द ब णिद्द°.

खरपंकप्पब्बहुला भागा रयणप्पहाए पुढवीए[1] । बहलत्तणं सहस्सा सोलसै चउसीदि सीदी य ॥ ९
१६००० । ८४००० । ८०००० ।

खरभागो णादव्वो सोलसभेदेहिं संजुदो णियमा । चित्तादीओ खिदिओ तेसिं चित्ता बहुवियप्पा ॥ १०
णाणाविहवण्णाओ महिओ तह सिलातला उववादा[2] । वालुवसक्करसीसयरुप्पसुवण्णाण वइरं च ॥ ११
अयदंबतउरसासयमणिसिलाहिंगुलाणि हरिदालं[3] । अंजणपवालगोमज्जगाणि रुजगं कलंभपदराणि ॥ १२
तह अंबवालुकाओ फलिहं जलकंतसूरकंताणि । चंदप्पहवेरुलियं गेरुवचंदस्सलोहिदंकाणि ॥ १३
बंबयबगमोअसारग्गपहुदीणि विविहवण्णाणि । जा होंति त्ति एत्तेण चित्तेत्ति य वण्णिदा एसा[4] ॥ १४
एदाए[5] बहलत्तं एक्कसहस्सं हवंति[6] जोयणया । तीए हेट्ठा कमसो चोद्दस अण्णा य ठिदमहीं[7] ॥ १५

हैं। वर्तमान पर्यायसम्बन्धी आयुके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें जीवके प्रदेशोंके आगामी पर्यायके उत्पत्ति-स्थान तक फैलजानेको मारणान्तिक समुद्घात कहते है। जब आयुकर्मकी स्थिति सिर्फ अन्तर्मुहूर्त ही बाकी हो, परन्तु नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मकी स्थिति अधिक हो, तब सयोगकेवली दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्घातको करते हैं। ऐसा करनेसे उक्त तीनों कर्मोंकी स्थिति भी आयुकर्मके बराबर होजाती है। इन तीनों अवस्थाओंमें त्रस जीव त्रसनालीके बाहर भी पाये जाते हैं।

अधोलोकमें सबसे पहिली रत्नप्रभा पृथिवी है। उसके तीन भाग हैं — खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग। इन तीनों भागोंका बाहल्य क्रमशः सोलह हजार, चौरासी हजार, और अस्सी हजार योजनप्रमाण है ॥ ९ ॥

खरभाग १६०००, पंकभाग ८४०००, अब्बहुलभाग ८०००० यो.।

इनमेंसे खरभाग नियमसे सोलह भेदोंसे सहित है। ये सोलह भेद चित्रादिक सोलह पृथिवीरूप हैं। इनमेंसे चित्रा पृथिवी अनेकप्रकार है ॥ १० ॥

यहांपर अनेकप्रकारके वर्णोंसे युक्त महीतल, शिलातल, उपपाद, वालु, शक्कर, शीशा, चांदी, सुवर्ण, इनके उत्पत्तिस्थान, वज्र तथा अयम् (लोहा) तांबा, त्रपु (रांगा), सस्यक (मणि-विशेष) मणिशिला, हिंगुल (सिंगरफ), हरिताल, अंजन, प्रवाल (मूंगा), गोमेदक (मणि-विशेष), रुचक, कदंब (धातुविशेष), प्रतर (धातुविशेष), ताम्रवालुका (लाल रेत), स्फटिक मणि, जलकान्त मणि, सूर्यकान्त मणि, चन्द्रप्रभ (चन्द्रकान्त मणि), वैडूर्य मणि, गेरु, चन्द्राश्म, लोहितांक (लोहिताक्ष ?), बंबय (पद्मक ?), बगमोच (?), और सारंग, इत्यादिक विविध वर्णवाली धातुएं हैं; इसीलिये इस पृथिवीका ' चित्रा ' इस नामसे वर्णन किया गया है ॥ ११–१४ ॥

इस चित्रा पृथिवीकी मुटाई एक हजार योजन है। इसके नीचे क्रमसे चौदह अन्य पृथिवियां स्थित हैं ॥ १५ ॥

१ द ब रयणप्पहाये पुढवीए, क रयणप्पहा य पुढवीणं. २ द ब सोल. ३ क सिलातला ओववादा. ४ द अरिदालं. ५ द क ब वण्णिदो एसो. ६ क एदाव. ७ द हुवंति. ८ क द रुणा य खिदमही.

तण्णामा वेरुलियं लोहिययंकं[1] असारगल्लं च । गोमज्जयं पवालं जोदिरसं अंजणं णाम ॥ १६
अंजणमूलं अंकं फलिहचंदणं च वच्चगयं । बहुला सेला एदा[2] पत्तेक्कं इगिसहस्सबहलाइं ॥ १७
ताण खिदीणं हेट्ठा पासाणं णाम रयणसेलसमा । जोयणसहस्सबहलं वेत्तासणसण्णिहाउ[3] संठाओ ॥ १८
पंकाजिरो य दीसदि एवं[4] पंकबहुलभागो वि । अप्पबहुलो वि भागं सलिलसरूवस्सवो होदि ॥ १९
एवं बहुविहरयणप्पयारभरिदो विराजदे जम्हा । रयणप्पहो त्ति[5] तम्हा भणिदा णिउणेहिं गुणणामा ॥ २०
सक्करवालुवपंका धूमतमा तमतमं च समचरियं । जेणं[6] अवसेसावो छप्पुढवीओ वि गुणणामा ॥ २१
बत्तीसट्ठावीसं चउवीसं वीस सोलसट्ठं च । हेट्ठिमछप्पुढवीणं बहलत्तं जोयणसहस्सा ॥ २२
३२००० । २८००० । २४००० । २०००० । १६००० । ८००० ।
विगुणियछच्चउसट्ठीसट्ठीउणसट्ठिअट्ठचउवण्णा । बहलत्तणं सहस्सा हेट्ठिमपुढवीयछण्णं पि ॥ २३

वैडूर्य, लोहितांक (लोहिताक्ष), असारगल्ल (मसारकल्प), गोमेदक, प्रवाल, ज्योतिरस, अंजन, अंजनमूल, अंक, स्फटिक, चन्दन, वर्चगत (सर्वार्थक), बहुल (बकुल) और शैल, ये उन उपर्युक्त चौदह पृथिवियोंके नाम हैं। इनमेंसे प्रत्येककी मुटाई एक हजार योजन है ॥ १६–१७ ॥

इन पृथिवियोंके नीचे एक पाषाण नामकी (सोलहवीं) पृथिवी है, जो रत्नशैलके समान है। इसकी मुटाई भी एक हजार योजनप्रमाण है। ये सब पृथिवियां वेत्रासनके सदृश स्थित हैं ॥ १८ ॥

इसीप्रकार पंकबहुलभाग भी है जो पंकसे परिपूर्ण देखा जाता है। तथैव अब्बहुलभाग जलस्वरूपके आश्रयसे है ॥ १९ ॥

इसप्रकार क्योंकि यह पृथिवी बहुतप्रकारके रत्नोंसे भरी हुई शोभायमान होती है, इसीलिये निपुण पुरुषोंने इसका 'रत्नप्रभा' यह सार्थक नाम कहा है ॥ २० ॥

रत्नप्रभा पृथिवीके नीचे शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और तमस्तमःप्रभा (महातमःप्रभा), ये शेष छह पृथिवियां क्रमशः शक्कर, वालु, कीचड़, धूम, अंधकार और महान्धकारकी प्रभासे सहचरित हैं, इसीलिये इनके भी उपर्युक्त नाम सार्थक हैं ॥ २१ ॥

इन छह अधस्तन पृथिवियोंकी मुटाई क्रमसे बत्तीस हजार, अट्ठाईस हजार, चौबीस हजार, बीस हजार, सोलह हजार और आठ हजार योजनप्रमाण है ॥ २२ ॥

श. प्र. ३२०००, बा. प्र. २८०००, पं. प्र. २४०००, धू. प्र. २००००, त. प्र. १६०००, म. प्र. ८००० योजन.

छ्यासठ, चौंसठ, साठ, उनसठ, अट्ठावन, और चौवन, इनके दुगुणे हजार अर्थात् एक लाख बत्तीस हजार, एक लाख अट्ठाईस हजार, एक लाख बीस हजार, एक लाख अठारह हजार, एक लाख सोलह हजार, और एक लाख आठ हजार, योजनप्रमाण उन अधस्तन छह पृथिवियोंकी मुटाई है ॥ २३ ॥

१ [लोहियवक्खं असार°]. २ द ब सेलं इय एदाइं. ३ ब रयणसोलसम. ४ द ब सण्णिहो. ५ द दिसदि एदा एवं, ब दिसदि एवं. ६ [रयणप्पह त्ति]. ७ द ब जेतं. ८ द ब दुविसट्ठि.

१३२०००। १२८०००। १२००००। ११८०००। ११६०००। १०८०००।

पाठान्तरम्।

सत्त वि य भूमीओ णवदिसभाएण घणोवहिविलग्गा। अट्ठमभूमी दसदिसभागेसु घणोवहिं छिवदि ॥ २४

पुव्वावरदिब्भाए वेत्तासणसंणिहाओ संठाओ। उत्तरदक्खिणदीहा अणादिणिहणा य पुढवीओ ॥ २५

चुलसीदी लक्खाणं णिरयबिला होंति सव्वपुढवीसुं। पुढविं पडि पत्तेक्कं ताण पमाणं परूवेमो ॥ २६

८४०००००।

तीसं पणवीसं[1] च य पण्णरसं दस तिण्णि होंति लक्खाणि। पणरहिदेक्कं लक्खं पंच य रयणाइपुढवीणं ॥ २७

३०००००० । २५००००० । १५००००० । १००००० । ३००००। ९९९९५ । ५ ।

सत्तमखिदिबहुमज्झे बिलाणि[2] सेसेसु अप्पबहुलंतं। उवरिं हेट्ठे जोयणसहस्समुज्झिय हवंति पडलकमे ॥ २८

पढमादितिचउछक्के पंचमपुढवीए तिचउक्कभागंतं। अदिउण्हा णिरयबिला तट्ठियजीवाण तिव्वदाघकरा ॥ २९

.....

श. प्र. १३२०००, बा. प्र. १२८०००, पं प्र. १२००००, धू. प्र. ११८०००, त. प्र. ११६०००, म. प्र. १०८०००। यह पाठान्तर अर्थात् मतभेद है।

सातों पृथिवियां ऊर्ध्वदिशाको छोड़ शेष नौ दिशाओंमें घनोदधि वातवलयसे लगी हुई हैं। परन्तु आठवीं पृथिवी दशों दिशाओंमें ही घनोदधि वातवलयको छूती है ॥ २४ ॥

उपर्युक्त पृथिवियां पूर्व और पश्चिम दिशाके अन्तरालमें वेत्रासनके सदृश आकारवाली हैं। तथा उत्तर और दक्षिणमें समानरूपसे दीर्घ एवं अनादिनिधन हैं ॥ २५ ॥

सर्व पृथिवियोंमें नारकियोंके बिल कुल चौरासी लाख हैं। अब इनमेंसे प्रत्येक पृथिवीका आश्रय करके उन बिलोंके प्रमाणका निरूपण करते हैं ॥ २६ ॥ समस्त पृथिवियोंके बिल ८४०००००।

रत्नप्रभा आदिक पृथिवियोंमें क्रमसे तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह लाख, दश लाख, तीन लाख, पांच कम एक लाख और केवल पांच ही नारकियोंके बिल हैं ॥ २७ ॥

बिलसंख्या—र. प्र. ३०००००० । श. प्र. २५००००० । बा. प्र. १५००००० । पं. प्र. १००००० । धू. प्र. ३००००। त. प्र. ९९९९५। म. प्र. ५। = ८४०००००।

सातवीं पृथिवीके तो ठीक मध्यभागमें ही नारकियोंके बिल हैं, परन्तु अब्बहुलभाग-पर्यन्त शेष छह पृथिवियोंमें नीचे व ऊपर एक एक हजार योजन छोड़कर पटलोंके क्रमसे नारकियोंके बिल हैं ॥ २८ ॥

पहिली पृथिवीसे लेकर दूसरी, तीसरी, चौथी और पांचवीं पृथिवीके चार भागोंमेंसे तीन भागों ($\frac{3}{4}$) में स्थित नारकियोंके बिल अत्यन्त उष्ण होनेसे वहां रहनेवाले जीवोंको तीव्र गर्मीकी पीड़ा पहुंचानेवाले हैं ॥ २९ ॥

.....

१ द ब पणवीसं. २ द ब रयणेइ. ३ द ब बिलाण. ४ ब पडालकमे. ५ द पुढवीय.

पंचमिखिदिए तुरिमे भागे छट्ठीय सत्तमे महिए[1] । अदिसीदा णिरयबिला तट्टिज्जीवाण घोरसीदयरा ॥ ३०
बासीदिं लक्खाणं उण्हबिला पंचवीसदिसहस्सा । पणहत्तरिं सहस्सा अदिसीदबिलाणि[2] इगिलक्खं ॥ ३१

८२२५००० । १७५००० ।

मेरुसमलोहपिंडं सीदं उण्हे बिलम्मि पक्खित्तं । ण लहदि तलप्पदेसं विलीयदे मयणखंडं व ॥ ३२
मेरुसमलोहपिंडं उण्हं सीदे बिलम्मि पक्खित्तं । ण लहदि तलप्पदेसं विलीयदे लवणखंडं व ॥ ३३
अजगजमहिसतुरंगमखरोट्ठमज्जारअहिणरादीणं । कुधिदाणं गंधेहिं णिरयबिला ते अणंतगुणा ॥ ३४
कक्खकवच्छुरीदो[3] खइरिंगालातितिक्खसूईए[4] । कुंजरचिक्कारादो णिरयबिला दारुणा तमसहावा ॥ ३५
इंदयसेढीबद्धा पइण्णया य हवंति तिवियप्पा[5] । ते सव्वे णिरयबिला दारुणदुक्खाण संजणणा ॥ ३६

पांचवीं पृथिवीके अवशिष्ट चतुर्थ भागमें, तथा छट्ठी और सातवीं पृथिवीमें स्थित नारकियोंके बिल अत्यन्त शीत होनेसे वहां रहनेवाले जीवोंको भयानक शीतकी वेदना करनेवाले हैं ॥ ३० ॥

नारकियोंके उपर्युक्त चौरासी लाख बिलोंमेंसे व्यासी लाख पचीस हजार बिल उष्ण, और एक लाख पचहत्तर हजार बिल अत्यन्त शीत हैं ॥ ३१ ॥

उष्ण बिल ८२२५०००, शीत बिल १७५०००।

यदि उष्ण बिलमें मेरुके बराबर लोहेका शीतल पिण्ड डाल दिया जाय, तो वह तलप्रदेशतक न पहुंचकर बीचमें ही मैनके टुकड़ेके समान पिघलकर नष्ट होजायगा। तात्पर्य यह है कि इन बिलोंमें उष्णताकी वेदना अत्यधिक है ॥ ३२ ॥

इसीप्रकार, यदि मेरुपर्वतके बराबर लोहेका उष्ण पिण्ड शीत बिलमें डाल दिया जाय तो वह भी तलप्रदेशतक नहीं पहुंच कर बीचमें ही नमकके टुकड़ेके समान विलीन होजावेगा ॥३३॥

बकरी, हाथी, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊंट, बिल्ली, सर्प और मनुष्यादिकके सड़े हुए शरीरोंके गन्धकी अपेक्षा वे नारकियोंके बिल अनन्तगुणी दुर्गंधसे युक्त हैं ॥ ३४ ॥

स्वभावतः अंधकारसे परिपूर्ण ये नारकियोंके बिल कक्षक (कौक्षेयक या ककच), कृपाण, छुरिका, खदिर (खैर) की आग, अति तीक्ष्ण सुई और हाथियोंकी चिक्कारसे अत्यन्त भयानक हैं ॥ ३५ ॥

वे नारकियोंके बिल इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकके भेदसे तीन प्रकारके हैं। ये सब ही नरकबिल नारकियोंको भयानक दुख दिया करते हैं ॥ ३६ ॥

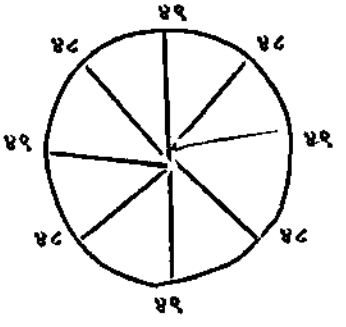
विशेषार्थ— जो अपने पटलके सब बिलोंके बीचमें हो वह इन्द्रक बिल कहलाता है। चार दिशा और चार विदिशाओंमें जो बिल पंक्तिसे स्थित होते हैं, उन्हें श्रेणीबद्ध कहते हैं। श्रेणीबद्ध बिलोंके बीचमें इधर उधर रहनेवाले बिलोंको प्रकीर्णक समझना चाहिये।

१ ब महीए. २ द ब अदिसीदि°. ३ द करवकछुरीदो [कक्खककवाणछुरिदो]. ४ द ब खइरिंगाला तिक्खसूईए. ५ द ब हवंति वियप्पा.

तेरसएक्कारसणवसगपंचतिएक्क इंदया होंति । रयणप्पहपहुदीसुं पुढवीसुं अणुपुव्वीए ॥ ३७

१३ । ११ । ९ । ७ । ५ । ३ । १ ।

पढमम्हि इंदयम्हि य दिसासु उणवण्णसेढिबद्धा य । अडदालं विदिसासुं विदियादिसु एक्कपरिहीणा ॥ ३८



एक्कंततेरसादी सत्तसु ठाणेसु मिलिदपरिसंखा । उणवण्णा पढमादो इंदयपडिणामयं होंति ॥ ३९

सीमंतगो य पढमं णिरयो रोरुग य भंतउब्भंता । संभंतयसंभंतं विब्भंता तत्तं तसिदा य ॥ ४०

वक्कंतयवक्कंता विक्कंतो होंति पढमपुढवीए । थणगो तणगो मणगो वणगो घादो[1] य संघादो ॥ ४१

जिब्भाजिब्भगलोला लोलयथणलोलुगाभिधाणा य । एदे बिदियखिदीए एक्कारस इंदया होंति ॥ ४२

११ ।

रत्नप्रभा आदिक पृथिवियोंमें क्रमसे तेरह, ग्यारह, नौ, सात, पांच, तीन और एक, इसप्रकार कुल उनंचास इन्द्रक बिल हैं ॥ ३७ ॥

इन्द्रक बिल— र. प्र. १३, श. प्र. ११, बा. प्र. ९, पं. प्र. ७, धू. प्र. ५, त. प्र. ३, म. प्र. १ ।

पहिले इन्द्रक बिलके आश्रित दिशाओंमें उनंचास और विदिशाओंमें अड़तालीस श्रेणीबद्ध बिल हैं । इसके आगे द्वितीयादिक इन्द्रक बिलोंके आश्रित रहनेवाले श्रेणीबद्ध बिलोंमेंसे एक एक बिल कम होता गया है ॥ ३८ ॥ (देखो मूलकी संदृष्टि)

उक्त सात भूमियोंमें तेरहको आदि लेकर एकपर्यन्त कुल मिलकर उनंचास इन्द्रक बिल हैं ॥ ३९ ॥

पहिला सीमन्तक तथा द्वितीयादि निरय, रौरुक, भ्रान्त, उद्भ्रान्त, संभ्रान्त, असंभ्रान्त, विभ्रान्त, तप्त, त्रसित, वक्रान्त, अवक्रान्त, और विक्रान्त, इसप्रकार, ये तेरह इन्द्रक बिल प्रथम पृथिवीमें हैं । स्तनक, तनक, मनक, वनक, घात, संघात, जिह्वा, जिह्वक, लोल, लोलक और स्तनलोलुक, ये ग्यारह इन्द्रक बिल द्वितीय पृथिवीमें हैं ॥ ४०–४२ ॥

---

१ ब तध. २ द धलगो. ३ ब दाघो. ४ द लोलयघण.

तत्तो[1] सीदो तवणो तावणणामा णिदाघपज्जलिदो । उज्जलिदो संजलिदो संपज्जलिदो य तदियपुढवीए ॥ ४३

९ ।

आरो मारो तारो तत्तो तमगो तहेव वादे य । खडखडणामा तुरिमक्खोणीए इंदया सत्त ॥ ४४

७ ।

तमभमाहसण्णं वाविलतिमिसो छुट्ठीए । हिमवद्दलल्लुंका सत्तमखवणीए अवधिठाणो त्ति ॥ ४५

५ । ३ । १ ।

घम्मादीपुढवीणं पढमिंदयपढमसेढिबद्धाणं । णामाणि णिरूवेमो पुव्वादिपदाहिणक्कमेणं ॥ ४६

कंखापिवासणामा महकंखा तदिपिपासणामा य । आदिमसेढीबद्धा चत्तारो होंति सीमंते ॥ ४७

पढमो अणिच्चणामो बिदिओ विज्जो तहा महाणिज्जो[6] । महविज्जो य चउत्थो पुव्वादिसु होंति वण्णम्हि[7] ॥ ४८

दुक्खा य वेदणामा महदुक्खा तुरिमया य महवेदा । तप्पिंदयस्स[8] एदे पुव्वादिसु होंति चत्तारो ॥ ४९

आरिंदए णिसट्ठो पढमो बिदिओ वि अंजणणिरोधो । तदिओ पुण अदिणिसट्ठो महणिरोधो चउत्थो त्ति[9] ॥ ५०

तप्त, शीत, तपन, तापन, निदाघ, प्रज्वलित, उज्वलित, संज्वलित और संप्रज्वलित, ये नौ इन्द्रक बिल तृतीय पृथिवीमें हैं ॥ ४३ ॥

आर, मार, तार, तत्व (चर्चा), तमक, वाद और खडखड, ये सात इन्द्रक बिल चतुर्थ पृथिवीमें हैं ॥ ४४ ॥

तमक, भ्रमक, झषक, वाविल (अन्ध) और तिमिश्र, ये पांच इन्द्रक बिल धूमप्रभा पृथिवीमें हैं। छठी पृथिवीमें हिम, वर्दल और लल्लंक, इसप्रकार तीन तथा सातवींमें केवल एक अवधिस्थाननामका इन्द्रक बिल है ॥ ४५ ॥

घर्मादिक सातों पृथिवियोंसम्बन्धी प्रथम इन्द्रक बिलोंके समीपवर्ती प्रथम श्रेणीबद्ध बिलोंके नामोंका पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणक्रमसे निरूपण करते हैं ॥ ४६ ॥

घर्मा पृथिवीमें सीमन्त इन्द्रक बिलके समीप पूर्वादिक चारों दिशाओंमें क्रमसे कांक्षा, पिपासा, महाकांक्षा और अतिपिपासा, ये चार प्रथम श्रेणीबद्ध बिल हैं ॥ ४७ ॥

वंशा पृथिवीमें प्रथम अनित्य, दूसरा अविद्य तथा महानित्य और चतुर्थ महाविद्य, ये चार श्रेणीबद्ध बिल पूर्वादिक दिशाओंमें स्तनक इन्द्रक बिलके समीप हैं ॥ ४८ ॥

मेघा पृथिवीमें दुःखा, वेदा, महादुःखा और चौथा महावेदा, ये चार श्रेणीबद्ध बिल पूर्वादिक दिशाओंमें तप्त इन्द्रक बिलके समीपमें हैं ॥ ४९ ॥

अंजना पृथिवीमें आर इन्द्रक बिलके समीप प्रथम निसृष्ट, द्वितीय निरोध, तृतीय अतिनिसृष्ट और चतुर्थ महानिरोध, ये चार श्रेणीबद्ध बिल हैं ॥ ५० ॥

---

१ द ब तेत्तो. २ द आरे मारे तारे. ३ द ब तस्स. ४ द दुव्वुपहा, ब दुच्चुपहा. ५ द पहादिको कमेण, ब पदादिको कमेण. ६ द ब महाणिज्जो. ७ द घलम्हि, ब घणगम्हि. ८ ब तप्पिंदियस्स. ९ ब तदिउ य.

तमकिंदेए[1] णिरुद्धो विमद्दणो यदिणिरुद्धणामो[2] य । तुरिमो महाविमद्दणणामो पुव्वादिसु दिसासु ॥ ५१
हिमइंदयम्हि होंति हु णीला पंका य तह य महणीला । महपंका पुव्वादिसु सेढीबद्धा इमे चउरो ॥ ५२
कालो रोरवणामो महकालो पुव्वपहुदिदिब्भाए । महरोरओ चउत्थो अवधीठाणस्स चिंतेदि ॥ ५३
अवसेसइंदयाणं पुव्वादिदिसासु सेढिबद्धाणं । णट्ठाइं णामाइं पढमाणं बिदियपहुदिसेढीणं ॥ ५४
दिसविदिसाणं मिलिदा अट्ठासीदीजुदा य तिण्णि सया । सीमंतएण जुत्ता उणणवदी समधिया होंति ॥ ५५

३८८ । ३८९ ।

उणणवदी तिण्णि सया पढमाए पढमपत्थले होंति । बिदियादिसु हीयंते माघवियाए पुढं पंच ॥ ५६

३८९ ।

अट्ठाणं पि दिसाणं एक्केकं हीयदे जहाकमसो । एक्केकहीयमाणे पंच चिय[3] होंति परिहाणे ॥ ५७
इट्ठिंदयप्पमाणं रूऊणं अट्ठताडियो णियमा । उणणवदीतिसएसुं अवणिय सेसो हवंति[4] य पडला ॥ ५८

तमक इन्द्रकबिलके समीप निरोध, विमर्दन, अतिनिरोध और चौथा महाविमर्दन, ऐसे चार श्रेणीबद्ध बिल पूर्वादिक चारों दिशाओंमें विद्यमान है ॥ ५१ ॥

हिम इन्द्रक बिलके समीप नीला, पंका, महानीला और महापंका, ये चार श्रेणीबद्ध बिल क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित हैं ॥ ५२ ॥

अवधिस्थान इन्द्रक बिलके समीप पूर्वादिक चारों दिशाओंमें काल, रौरव, महाकाल और चतुर्थ महारौरव ये चार श्रेणीबद्ध बिल हैं ॥ ५३ ॥

शेष द्वितीयादिक इन्द्रकबिलोंके समीप पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध बिलोंके और पहिले इन्द्रकबिलोंके समीपमें स्थित द्वितीयादिक श्रेणीबद्ध बिलोंके नाम नष्ट हो गये हैं ॥ ५४ ॥

दिशा और विदिशाओंके मिलकर कुल तीनसौ अठासी श्रेणीबद्ध बिल हैं । इनमें सीमन्त इन्द्रक बिलके मिला देनेपर सब तीनसौ नवासी होते हैं ॥ ५५ ॥ सीमन्त इन्द्रकसम्बन्धी श्रे. ब. बिल ३८८ सीमन्तसहित ३८९ ।

इसप्रकार प्रथम पृथिवीके प्रथम पाथड़ेमें इन्द्रकसहित श्रेणीबद्ध बिल तीनसौ नवासी हैं । इसके आगे द्वितीयादिक पृथिवियोंमें हीन होते होते माघवी पृथिवीमें सिर्फ पांच ही इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिल रह गये हैं ॥ ५६ ॥ घर्मा पृथिवीके प्रथम पाथड़ेमें स्थित इं. व श्रे. ब. बिल ३८९ ।

आठों ही दिशाओंमें यथाक्रमसे एक एक बिल कम होता गया है । इसप्रकार एक एकके कम होनेसे सम्पूर्ण हानिके होनेपर अन्तमें पांच ही बिल शेष रह जाते हैं ॥ ५७ ॥

इष्ट इन्द्रकप्रमाणमेंसे एक कम कर अवशिष्टको आठसे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो, उसे तीनसौ नवासीमेंसे घटा देनेपर शेष नियमसे विवक्षित पाथड़ेके श्रेणीबद्धसहित इन्द्रकका प्रमाण होता है ॥ ५८ ॥

उदाहरण — चतुर्थ पाथड़ेके इन्द्रकसहित श्रे. ब. बिल, ४ – १ × ८ = २४; ३८९ – २४ = ३६५ ।

---

१ द ब तमकिंदये. २ द ब यदिणिवुणामो. ३ द ब णत्ताइं. ४ द यंरजियं, ब यंरञ्जियं. ५ द इहतादिया. ६ द हुवंति.

अथवा—

इट्ठे पदरविहीणा उणवण्णा अट्ठताडिया णियमा । सा पंचरूवजुत्ता इच्छिदसेढिंदया होंति ॥ ५९

उद्दिट्ठं पंचूणं भजिदं अट्ठेहि सोधए लद्धं । एगुणवण्णाहिंतो[1] सेसा तत्थिंदया होंति ॥ ६०

आदीओ णिद्दिट्ठा णियणियचरिमिंदयस्स[2] परिमाणं । सव्वत्थुत्तरमट्ठं णियणियपदराणि गच्छाणि ॥ ६१

तेणवदिजुत्तदुसया पणजुददुसया सयं च तेत्तीसं । सत्ततरि सगतीसं तेरस रयणप्पहादिआदीओ ॥ ६२

२९३ । २०५ । १३३ । ७७ । ३७ । १३ ।

तेरसएक्कारसणवसगपंचतियाणि होंति गच्छाणि । सव्वट्ठुत्तरमट्ठं[3] रयणप्पहपहुदिपुढवीसु ॥ ६३

१३ । ११ । ९ । ७ । ५ । ३ । सव्वट्ठुत्तर ८ ।[4]

अथवा— इष्ट प्रतरके प्रमाणको उनंचासमेंसे कम कर देनेपर जो अवशिष्ट रहे उसको नियमपूर्वक आठसे गुणा कर प्राप्त राशिमें पांच मिला दे। इसप्रकार अन्तमें जो संख्या प्राप्त हो वही विवक्षित पटलके इन्द्रकसहित श्रेणीबद्ध बिलोंका प्रमाण होता है ॥ ५९ ॥

उदाहरण— चतुर्थ पटलसम्बन्धी इ. व श्रे. ब. बिल, ४९ – ४ × ८ + ५ = ३६५।

किसी विवक्षित पटलके श्रेणीबद्धसहित इन्द्रकके प्रमाणरूप उद्दिष्ट संख्यामेंसे पांच कम करके शेषमें आठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसको उनंचासमेंसे कम करदेनेपर अवशिष्ट संख्याके बराबर वहांके इन्द्रकका प्रमाण होता है ॥ ६० ॥

उदाहरण— चतुर्थ पटलके इन्द्रक और श्रेणीबद्धोंका प्रमाण जो ३६५ है, वह यहां उद्दिष्ट है, ३६५ – ५ ÷ ८ = ४५; ४९ – ४५ = ४ च. पटलके इन्द्रक.

अपने अपने अन्तिम इन्द्रकका प्रमाण आदि कहा गया है, चय सब जगह आठ है, और अपने पटलोंका प्रमाण गच्छ या पद है ॥ ६१ ॥

विशेषार्थ— श्रेणीव्यवहार गणितमें, प्रथम स्थानमें जो प्रमाण होता है उसे आदि, मुख (वदन) अथवा प्रभव कहते हैं। इसीप्रकार अनेक स्थानोंमें समानरूपसे होनेवाली वृद्धि अथवा हानिके प्रमाणको चय या उत्तर तथा जिन स्थानोंमें समानरूपसे वृद्धि या हानि हुआ करती है उन्हें गच्छ अथवा पद भी कहते हैं।

दोसौ तेरानवे, दोसौ पांच, एकसौ तेतीस, सतहत्तर, सैंतीस और तेरह, यह क्रमसे रत्नप्रभादिक छह पृथिवियोंमें आदिका प्रमाण है ॥ ६२ ॥

आदिका प्रमाण— र. प्र. २९३, श. प्र. २०५, वा. प्र. १३३, पं. प्र. ७७, धू. प्र. ३७ त. प्र. १३।

रत्नप्रभादिक पृथिवियोंमें क्रमसे तेरह, ग्यारह, नौ, सात, पांच, और तीन गच्छ है। उत्तर या चय सब जगह आठ है ॥ ६३ ॥

गच्छका प्रमाण— र. प्र. १३, श. प्र. ११, वा. प्र. ९, पं. प्र. ७, धू. प्र. ५ त. प्र. ३। सर्वत्र उत्तर ८।

१ [इट्ठे]. २ द ब ऊणावण्णाहिंतो. ३ द चरिमिंदयस्स. ४ द ब सव्वट्ठुत्तरमंतं. ५ द ब रयणपहाए. ६ द ब सव्वट्ठुत्तर ॥ ८ ॥

चयहदमिच्छूणपदं[1] रूवूणिच्छाए गुणिदचयजुत्तं । दुगुणिदवदणेणं जुदं पददलगुणिदं हवेदि संकलिदं ॥ ६४

चयहदमिच्छूणपदं $\frac{१}{२}$ । ८ । रूवूणिच्छाए गुणिदचयं $\frac{१}{२}$ । ८ । जुदं ९६ । दुगुणिदवदणादि सुगमं[2] ।

एक्कोणमेवणिइंदयमद्धियं वग्गिज्ज मूलसंजुत्तं । अट्ठगुणं पंचजुदं पुढविंदयताडिदम्मि पुढविधणं ॥ ६५

पढमा[3] इंदयसेढी चउदालसयाणि होंति तेत्तीसं । छस्सयदुसहस्साणिं पणणउदी बिदियपुढवीए ॥ ६६

४४३३ । २६९५ ।

तियपुढवीए इंदयसेढी चउँदससयाणि पणसीदी । सत्तुत्तराणि सत्त य सयाणि ते होंति तुरिमाए ॥ ६७

१४८५ । ७०७ ।

इच्छासे हीन गच्छको चयसे गुणा करके उसमें एक कम इच्छासे गुणित चयको जोड़कर प्राप्त हुए योगफलमें दुगुणे मुखको जोड़ देनेके पश्चात् उसको गच्छके अर्ध भागसे गुणा करनेपर संकलित धनका प्रमाण आता है ॥ ६४ ॥

उदाहरण— [१] $(१३-१)\times ८+(१-१\times ८)+(२९३\times २)\times \frac{१३}{२}$
$= १२\times ८+०+५८६\times \frac{१३}{२} = ६८२\times \frac{१३}{२} = ४४३३$ प्रथम पृथिवीका संकलित धन.

[२] $(११-२)\times ८+(२-१\times ८)+(२०५\times २)\times \frac{११}{२} = ९\times ८+८+४१०\times \frac{११}{२} = २६९५$ द्वि. पृ. का सं. धन.

[३] $(९-३)\times ८+(३-१\times ८)+(१३३\times २)\times \frac{९}{२} = ६\times ८+१६+२२६\times \frac{९}{२}$
$= १४८५$ तृ. पृ. का सं. धन । इत्यादि ।

एक कम इष्ट पृथिवीके इन्द्रकप्रमाणको आधा करके उसका वर्ग करनेपर जो प्रमाण हो उसमें मूलको जोड़कर आठसे गुणा करे और पांच जोड़ दे। पश्चात् विवक्षित पृथिवीके इन्द्रकका जो प्रमाण हो उससे गुणा करनेपर विवक्षित पृथिवीका धन अर्थात् इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिलोंका प्रमाण निकलता है ॥ ६५ ॥

विशेषार्थ—जैसे प्रथम पृथिवीके इन्द्रकके प्रमाण १३ मेंसे १ कम करनेपर अवशिष्ट १२ के आधे ६ का वर्ग ३६ होता है। इसमें मूल ६ के मिलानेपर योगफल ४२ हुआ। उसको ८ से गुणा करनेपर जो ३३६ गुणनफल होता है, इसमें ५ जोड़कर योगफल ३४१ को प्रथम पृथिवीके इन्द्रकप्रमाण १३ से गुणा करनेपर प्राप्त गुणनफल ४४३३ प्रमाण प्रथम पृथिवीमें इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिलोंका प्रमाण समझना चाहिये ।

उदाहरण—$\left(\frac{१३-१}{२}\right)^२ + \left(\frac{१३-१}{२}\right)\times ८+५\times १३ = ३६+६\times ८+५\times १३$
$= ४४३३$ प्र. पृ. के इन्द्रक व श्रेणीबद्ध ।

प्रथम पृथिवीमें इन्द्रक और श्रेणीबद्ध बिल चवालीससौ तेतीस है। और द्वितीय पृथिवीमें दो हजार छहसौ पंचानबे इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिल हैं ॥ ६६ ॥ ४४३३ । २६९५ ।

तृतीय पृथिवीमें इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिल चौदहसौ पचासी; और चौथी पृथिवीमें सातसौ सात हैं ॥ ६७ ॥ १४८५ । ७०७ ।

---

१ द ब °मिक्कूणपदं. २ द ब गुणिदं वदणेण. ३ द ब चयपदमित्थूणपदं १३३ । ८ । रूउणिच्छाए गुणिदचयं $\frac{१}{२}$ । ८ । जुदं ९ । दुगुणिदेत्यादि सुगमं । इति पाठः ७६ तमगाथायाः पश्चादुपलभ्यते. ४ द ब °मण्ण. ५ ब °भद्दिय, द °भदिय. ६ ब पुदमा. ७ द सेटीबद्धस्स सयाणि.

पणसट्ठी दोण्णि सया इंदयसेढीए पंचमखिदीए । तेसट्ठी परिमाणं पंचण्हं होंति णामाणं ॥ ६८
२६५ । ६३ । ५ ।

पंचादी अट्ठ चयं उणवण्णा होदि गच्छपरिमाणं । सव्वाणं पुढवीणं सेढीबद्धिंदयाणमिदं[1] ॥ ६९

चयहदमिट्ठाधियपदमेक्काधियइट्ठगुणिदचयहीणं । दुगुणिदवदणेण जुदं पददलगुणिदम्मि होदि संकलिदं ॥ ७०

अथवा—

अट्ठत्तालं दलिदं गुणिदं अट्ठेहि पंचरूवजुदं । उणवण्णाए पहदं सव्वधणं होइ पुढवीणं ॥ ७१

इंदयसेढीबद्धा णवसयसहस्साणि छस्सयाणं पि । तेवण्णं अधियाइं सव्वासु वि होंति पोलीसु ॥ ७२
९६५३ ।

णियणियचरिमिंदयपयमेक्कोणं होदि आदिपरिमाणं । णियणियपदरा गच्छा पंचण्हं सव्वत्थ अट्ठेव ॥ ७३

बाणउदिजुत्तदुसया दुसयं चउ सयजुदाण बत्तीसं । छावत्तरि छत्तीसं बारस रयणप्पहादिआदीणं ॥ ७४
२९२ । २०४ । १३२ । ७६ । ३६ । १२ ।

पांचवीं पृथिवीमें दोसौ पैंसठ, छठीमें तिरेसठ और अन्तिम सातवीं पृथिवीमें सिर्फ पांच ही इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिल हैं, ऐसा जानना चाहिये ॥ ६८ ॥ २६५; ६३; ५ ।

सम्पूर्ण पृथिवियोंके इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिलोंके प्रमाणको निकालनेके लिये आदि पांच, चय आठ और गच्छका प्रमाण उनंचास है, यह निश्चित समझना चाहिये ॥ ६९ ॥

इष्टसे अधिक पदको चयसे गुणा करके उसमेंसे, एक अधिक इष्टसे गुणित चयको घटा देनेपर जो शेष रहे उसमें दुगुणे मुखको जोड़कर गच्छके अर्ध भागसे गुणा करनेपर संकलित धन आता है ॥ ७० ॥

उदाहरण— $(४९ + ७ \times ८) - (७ + १ \times ८) + (५ \times २) \times \frac{४९}{२}$
$= ४४८ - ६४ + १० \times \frac{४९}{२} = ९६५३$ सातों पृथिवियोंका सं. धन ।

अथवा— अड़तालीसके आधेको आठसे गुणा करके उसमें पांच मिला देनेपर प्राप्त हुई राशिको उनंचाससे गुणा करे । इस रीतिसे पृथिवियोंका सर्वधन निकलता है ॥ ७१ ॥

उदाहरण— $\frac{४९}{२} \times ८ + ५ \times ४९ = ९६५३$ सर्व पृथिवियोंका सं. धन ।

सम्पूर्ण पृथिवियोंमें कुल नौ हजार छहसौ तिरेपन इन्द्रक व श्रेणीबद्ध बिल हैं ॥ ७२ ॥ ९६५३ ।

(प्रत्येक पृथिवीके श्रेणीधनको निकालनेके लिये) एक कम अपने अपने चरम इन्द्रकका प्रमाण आदि, अपने अपने पटलका प्रमाण गच्छ और चय सब जगह आठ ही है ॥ ७३ ॥

दोसौ बानबै, दोसौ चार, एकसौ बत्तीस, छयत्तर, छत्तीस और बारह, इसप्रकार रत्नप्रभादि छह पृथिवियोंमें आदिका प्रमाण है ॥ ७४ ॥

र. प्र. २९२; श. प्र. २०४; वा. प्र. १३२; पं. प्र. ७६; धू. प्र. ३६; त. प्र. १२ ।

१ द ब °दयाण इदमं. २ द चयपदमिट्ठाधियपदमेक्कादिय°, ब चयपदमिट्ठाधियपदेक्कादिय° ३ ब अट्ठेव, द लट्ठेव. ४ द चउअधियसय°.

तेरसएक्कारसणवसगपंचतियाणि होंति गच्छाणि । सव्वत्थुत्तरमट्ठं सेढिधणे सव्वपुढवीणं ॥ ७५

पदवग्गं चयपहिदं दुगुणिदगच्छेण गुणिदमुहजुत्तं । वड्ढिहदपदविहीणं दलिदं आणिज्ज संकलिदं ॥ ७६

चत्तारि सहस्साणि य चउस्सया वीस होंति पढमाए । सेढिगदा बिदियाए दुसहस्सा छस्सयाण चुलसीदी ॥ ७७

४४२० । २६८४ ।

चोद्दससयछाहत्तरि तदियाए तह य सत्त सया । तुरिमाए सट्ठिजुदं दुसयाणं पंचमीए णायव्वं ॥ ७८

१४७६ । ७०० । २६० ।

सट्ठी तमप्पहाए चरिमचरित्तीए होंति चत्तारि । एवं सेढीबद्धा पत्तेक्कं सत्तखोणीसु ॥ ७९

६० । ४ ।

चउरूवाइं आदिं पंचयपमाणं पि अट्ठरूवाइं । गच्छस्स य परिमाणं हवेदि एक्कोणपण्णासा ॥ ८०

४ । ८ । ४९ ।

तेरह, ग्यारह, नौ, सात, पांच, और तीन; यह सब पृथिवियोंके (पृथक् पृथक्) श्रेणिधनको निकालनेके लिये गच्छका प्रमाण है; चय सब जगह आठ ही है ॥ ७५ ॥

पदके वर्गको चयसे गुणा करके उसमे दुगुणे पदसे गुणित मुखको जोड़ देनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसमेसे चयसे गुणित पदप्रमाणको घटाकर शेषको आधा करदेनेपर प्राप्त हुई राशिके प्रमाण संकलित धनको जानना चाहिये ॥ ७६ ॥

उदाहरण— $\frac{(१३^२ \times ८) + (१३ \times ७ \times २००) - (८ \times १३)}{२} = \frac{८८४०}{२}$

= ४४२० प्रथम पृथिवीगत श्रेणीबद्ध बिलोंका कुल प्रमाण.

पहिली पृथिवीमें चार हजार चारसौ बीस; और दूसरीमें दो हजार छहसौ चौरासी श्रेणीबद्ध बिल है ॥ ७७ ॥ ४४२०; २६८४ ।

तृतीय पृथिवीमे चौदहसो छयत्तर, चौथीमे सातसौ और पांचवीमे दोसौ साठ श्रेणीबद्ध बिल है, ऐसा जानना जाहिये ॥ ७८ ॥ १४७६; ७००; २६० ।

तमःप्रभा पृथिवीमें साठ और अन्तिम अर्थात् महातमःप्रभा पृथिवीमे चार श्रेणीबद्ध बिल है । इसप्रकार सात पृथिवियोंमेसे प्रत्येकमें श्रेणीबद्ध बिलोका प्रमाण समझना चाहिये ॥ ७९ ॥ ६०; ४ ।

(रत्नप्रभादिक पृथिवियोमें संपूर्ण श्रेणीबद्ध बिलोंका प्रमाण निकालनेके लिये) आदिका प्रमाण चार, चयका प्रमाण आठ और गच्छका प्रमाण एक कम पचास होता है ॥ ८० ॥

आदि ४ चय ८; गच्छ ४९ ।

१ द ब चयपहिदं. २ द ब मुवजुत्तं. ३ ब चट्ठिहद°. ४ ब छसयाण. ५ द ब पंचमिए होदि णायव्वं. ६ द ब °खोणीए.

पदवग्गं पदरहिदं चयगुणिदं पदहदादिजुदमद्धं । मुहदलपहदपदेणं[1] संजुत्तं होदि संकलिदं ॥ ८१
रयणप्पहपहुदीसुं पुढवीसुं सव्वसेढिबद्धाणं । चउरुत्तरछस्सया[3] णव य सहस्साणि परिमाणं ॥ ८२

९६०४ ।

पददलहिदसंकलिदं[5] इच्छाए गुणियपचयसंजुत्तं । रूऊणिच्छाधियपदचयगुणिदं अवणियद्धिदे आदी ॥ ८३
पददलहदवेकपदावहरिदसंकलिदवित्तपरिमाणे । वेकपदद्धेणं हिदं आदिं सोहेज्ज[12] तत्थ सेस चयं ॥ ८४

९६०४ ।

अपवर्तिते $\frac{४९}{६}$ ।[14] अस्मिन् वेकपदद्धेणं $\frac{४९}{२}$ । ४८ ।[10] हिदं आदि $\frac{४}{२४}$[11] सोहेज्ज[12] शोधितशेषमिदं $\frac{४८}{६}$[13] अपवर्तिते ८ ।[14]

पदका वर्ग कर उसमेंसे पदके प्रमाणको कम करके अवशिष्ट राशिको चयके प्रमाणसे गुणा करना चाहिये। पश्चात् उसमें पदसे गुणित आदिको मिलाकर और फिर उसका आधाकर प्राप्त राशिमें मुखके अर्द्ध भागसे गुणित पदके मिलादेनेपर संकलित धनका प्रमाण निकलता है ॥ ८१ ॥

उदाहरण — $\frac{(४०^२ - ४०) \times ८ + (४० \times ४)}{२} + (२ \times ४०)$

$= १३५२ \times \frac{८}{२} + \frac{१६०}{२} + ९८ = ९६०४$ सं. धन।

रत्नप्रभादिक पृथिवियोंमें सम्पूर्ण श्रेणीबद्ध बिलोंका प्रमाण नौ हजार छहसौ चार है ॥ ८२ ॥ ९६०४.

पदके अर्ध भागसे भाजित संकलित धनमें इच्छासे गुणित चयको जोड़कर, और उसमेंसे चयसे गुणित एक कम इच्छासे अधिक पदको कम करके शेषको आधा करनेपर आदिका प्रमाण आता है ॥ ८३ ॥

$$\frac{(९६०४ \div \frac{४०}{२}) + (८ \times ७) - (७ - १ + ४९ \times ८)}{२} = \frac{३९२ + ५६ - ४४०}{२}$$

$= ४$ आदि.

पदके अर्द्ध भागसे गुणित जो एक कम पद, उससे भाजित संकलित धनके प्रमाणमेंसे, एक कम पदके अर्ध भागसे भाजित मुखको कम करदेनेपर शेष चयका प्रमाण होता है ॥८४॥

$$९६०४ \div (४९ - १ \times \frac{४९}{२}) - (४ \div \frac{४९-१}{२}) = \frac{९६०४}{११७६} - \frac{४}{२४} = ८ \text{ चय.}$$

१ द जुदमदं, ब जुदमद्धं. २ द एदेणं. ३ द ब °रुत्तरछस्सया. ४ ब °हिदलंसलिदं. ५ द पडलहदवेकपादावहरिदसंकलिदवित्तपरिमाणो, ब पडलहदवेकपाहावहरिदसंकलिदवित्तपरिमाणो. ६ द ब वेकपददेण. ७ द ब सोगेज्ज. ८ द ब ४९. ९ द ब वेकपददेण, १० द ब प्रत्योः इद ८५ तमगाथायाः पश्चादुपलभ्यते. ११ द $\frac{४}{२०}$. १२ द ब सोदेज्ज. १३ द $\frac{४८}{२०}$ । ब $\frac{४८}{२४}$. १४ द ब ९.

चयदलहदसंकलिदं चयदलरहिदादि अद्धकदिजुत्तं । मूलं परिमूलूणं पचयद्धहिदम्मि तं तु पदमवेदा ॥ ८५

चयदलहदसंकलिदं ४४२० । ४ । चयदलरहिदादि २८८ । अद्ध १४४ । कदि २०७३६ । जुत्तं ३८४१६ । मूलं १९६ । परिमूल १४४ । ऊणं ५२ । पचयद्ध ४ । हिदं १३ ।

दुचयहदं संकलिदं चयदलवदणंतरस्स वग्गजुदं । मूलं परिमूलूणं चयभजिदं होदि तं तु पदं ॥ ८६

दुचय २ । ८ । दुचयहदं संकलिदं ४४२० । १६ । चयदल ४ । वदन २९२ । अंतरस्स २८८ । वग्ग $\frac{=}{३६}$ । मूलं ३९२ । परिमूल २८८ । ऊणं १०४ । चयभजिदं $\frac{१०४}{८}$ । पदं १३ ।

पणेइं रयणादीसव्वबिलाणं ठवेज्ज परिसंखं । णियणियसेढिबेंईदयरहिदा पइण्णया होंति ॥ ८७

.....

चयके अर्द्ध भागसे गुणित संकलित धनमें चयके अर्ध भागसे रहित आदि (मुख) के अर्ध भागके वर्गको मिलादेनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसका वर्गमूल निकाले । पश्चात् उसमेंसे पूर्व मूलको (जिसके वर्गको संकलित धनमें जोड़ा था) घटाकर अवशिष्ट राशिमें चयके अर्ध भागका भाग देनेपर पदका प्रमाण निकलता है ॥ ८५ ॥

$$\left\{\sqrt{\left(\frac{६}{२}\times ४४२०\right)+\left(\frac{२९२-\frac{६}{२}}{२}\right)^{२}}-\left(\frac{२९२-\frac{६}{२}}{२}\div\frac{६}{२}\right)\right\}$$

$$=\sqrt{\frac{१७६८०+१४४^{२}}{४}}-\frac{१४४}{४}=\frac{१९६-१४४}{४}=\frac{५२}{४}=१३ \text{ प्र. पृ. का पदप्रमाण.}$$

अथवा—दुगुणे चयसे गुणित संकलित धनमें चयके अर्द्ध भाग और मुखके अन्तररूप संख्याके वर्गको जोड़कर उसका वर्गमूल निकालनेपर जो संख्या प्राप्त हो उसमेंसे पूर्व मूलको (जिसके वर्गको संकलित धनमें जोड़ा था) घटाकर शेषमें चयका भाग देनेपर विवक्षित पृथिवीके पदका प्रमाण निकलता है ॥ ८६ ॥

$$\left\{\sqrt{(२\times ८\times ४४२०)+(२९२-\frac{६}{२})^{२}}-(२९२-\frac{६}{२})\right\}\div ८$$

$$=\sqrt{\frac{७०७२०+८२९४४}{८}}-\frac{२८८}{८}=\frac{१०४}{८}=१३ \text{ प्र. पृ. का पदप्रमाण.}$$

रत्नप्रभादिक प्रत्येक पृथिवीके सम्पूर्ण बिलोंकी संख्याको रखकर उसमेंसे अपने अपने श्रेणीबद्ध और इन्द्रक बिलोंकी संख्याको घटादेनेपर शेष उस उस पृथिवीके प्रकीर्णक बिलोंका प्रमाण होता है ॥ ८७ ॥

प्रथम पृथिवीके समस्त बिल ३०००००; ३०००००–(१३ + ४४२०) = २९९५५६७ प्र. पृ. के प्रकी. बिल ।

.....

१ ब हिदमिसं. २ द ब पदयथवा. ३ द ब मूलूणं पूर्वमूले भाणं ५२ । चयभजिदं ५२ = १ । चयदलहद-संकलिदं ४४२० । ४ । चयदलरहिदादिहिदादि२८८ । अद्ध १४४ । १०७३७ । जुत्तं ३८४१६ । ४ । मूलं १९६ । पुरि १ = । दु २ । चयदुहदं संकलिदं ४४२० । १६ । चय ८ । द ४ । वदन २९२ । अंतरस्स २८८ । वग्गजुदं $\frac{=}{३६}$ । मूलं इदं ३९२ । पुरिमूल २८८ । चयभजिदं १०४ । पदं १३ = ८ । इति पाठः ८९ तमगाथावाः पश्चादुपलभ्यते. ४ द सेढीया, ब सेढिवा.

उणतीसं लक्खाणं पंचाणउदीसहस्सपंचसया । सगसट्ठीसंजुत्ता पइण्णया पढमपुढवीए ॥ ८८
२९९५५६७ ।

चउवीसं लक्खाणि य सत्ताणवदीसहस्सतिसयाणिं । पंचुत्तराणि होंति हु पइण्णया बिदियखोणीए ॥ ८९
२४९७३०५ ।

चोद्दसलक्खाणि[1] तहा अट्ठाणउदीसहस्सपंचसया । पंचदसेहिं जुत्ता पइण्णया तदियवसुहाए ॥ ९०
१४९८५१५ ।

णवलक्खा णवणउदीसहस्सया दोण्णयाणि तेणउदी । तुरिमाए वसुमइए पइण्णयाणं च परिमाणं ॥ ९१
९९९२९३ ।

दो लक्खाणि सहस्सा णवणउदी[2] सगसयाणि पणुतीसं । पंचमवसुधायाए पइण्णया होंति णियमेण ॥ ९२
२९९७३५ ।

अट्ठासट्ठीहीणं लक्खं छट्ठीए[3] मेइणीए वि । अवणीए सत्तमिए पइण्णया णत्थि णियमेण ॥ ९३
९९९३२ ।

प्रथम पृथिवीमें उनतीस लाख पंचानवे हजार पांचसौ सड़सठ प्रकीर्णक बिल हैं ॥ ८८ ॥
२९९५५६७ ।

द्वितीय पृथिवीमें चौबीस लाख सत्तानवे हजार तीनसौ पांच प्रकीर्णक बिल हैं ॥ ८९ ॥

समस्त बिल २५००००० – (२६८४ + ११) = २४९७३०५ द्वि. पृ. के प्रकी. बिल ।

तृतीय पृथिवीमें चौदह लाख अट्ठानवे हजार पांचसौ पन्द्रह प्रकीर्णक बिल हैं ॥ ९० ॥

समस्त बिल १५००००० – (१४७६ + ९) = १४९८५१५ तृ. पृ. के प्रकी. बिल ।

चतुर्थ पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका प्रमाण नौ लाख निन्यानवे हजार दोसौ तेरानवे है ॥ ९१ ॥

समस्त बिल १००००० – (७०० + ७) = ९९९२९३ च. पृ. के प्रकी. बिल ।

पांचवीं पृथिवीमें नियमसे दो लाख निन्यानवे हजार सातसौ पैंतीस प्रकीर्णक बिल हैं ॥ ९२ ॥

समस्त बिल ३००००० – (२६० + ५) = २९९७३५ पं. पृ. के प्रकी. बिल ।

छठवीं पृथिवीमें अड़सठ कम एक लाख प्रकीर्णक बिल हैं । सातवीं पृथिवीमें नियमसे प्रकीर्णक बिल नहीं हैं ॥ ९३ ॥

समस्त बिल ९९९०५ – (६० + ३) = ९९९३२ प. पृ. के प्रकी. बिल ।

१ द ब चोद्दसयं जाणि, ब चोद्दसएं जाणि. २ द णउणउदी. ३ द छट्ठी, ब छड्डीइ.

तेसीदिं लक्खाणिं णउदिसहस्साणि तिसयसगदालं । छप्पुढवीणं मिलिदा सव्वे वि पइण्णया होंति ॥ ९४

८३९०३४७ ।

संखेज्जमिंदयाणं रुंदं सेढीगदाण जोयणया । तं होदि असंखेज्जं[1] पइण्णयाणुभयमिस्सं च[2] ॥ ९५

६ । २७ । ७७ । (?)

संखेज्जा वित्थारा णिरयाणं पंचमस्स परिमाणं । सेस चउपंचभागा होंति असंखेज्जरुंदाइं ॥ ५६

८४००००० । १६८०००० । ६७२०००० ।

छप्पंचतिदुगलक्खा सट्ठिसहस्साणि तह य एक्कोणा । वीससहस्सा एक्कं रयणादिसुं संखवित्थारा ॥ ९७

६००००० । ५००००० । ३००००० । २००००० । ६०००० । १९९९९ । १ ।

चउवीसवीसबारसअट्ठपमाणाणि होंति लक्खाणि । सयकदिहदंचउवीसं सीदिसहस्सा य चउहीणा ॥ ९८

२४००००० । २०००००० । १२००००० । ८००००० । २४०००० । ७९९९६ ।

चत्तारि बिये एदे होंति असंखेज्जजोयणा रुंदा । रयणप्पहपहुदीए[3] कमेण सव्वाण पुढवीणं ॥ ९९

४ ।

छह पृथिवियोंके सब ही प्रकीर्णक बिल मिलकर तेरासी लाख नब्बै हजार तीनसौ सैंतालीस होते हैं ॥ ९४ ॥ ८३९०३४७ सब पृ. के प्रकी. बिल ।

इन्द्रक बिलोंका विस्तार संख्यात योजन, श्रेणीबद्ध बिलोंका असंख्यात योजन और प्रकीर्णक बिलोंका विस्तार उभयमिश्र अर्थात् कुछका संख्यात और कुछका असंख्यात योजन है ॥ ९५ ॥

संपूर्ण बिलसंख्याके पांच भागोंमेंसे एक भागप्रमाण ($\frac{1}{5}$) बिलोंका विस्तार संख्यात योजन, और शेष चार भागप्रमाण ($\frac{4}{5}$) बिलोंका विस्तार असंख्यात योजनप्रमाण है ॥९६॥

सर्व बिल ८४०००००, संख्यात योजन विस्तारवाले १६८०००० , असं. यो. विस्तारवाले ६७२०००० ।

रत्नप्रभादिक पृथिवियोंमें क्रमशः छह लाख, पांच लाख, तीन लाख, दो लाख, साठ हजार, एक कम बीस हजार और एक, इतने बिलोंका विस्तार संख्यात योजनप्रमाण है ॥९७॥

संख्यात योजनप्रमाण बिल— र. प्र. ६००००० ; श. प्र. ५००००० ; वा. प्र. ३००००० ; पं. प्र. २००००० ; धू. प्र. ६०००० ; त. प्र. १९९९९ ; म. प्र. १ ।

रत्नप्रभादिक सब पृथिवियोंमें क्रमसे चौबीस लाख, बीस लाख, बारह लाख, आठ लाख, चौबीससे गुणित सौके वर्गप्रमाण अर्थात् दो लाख चालीस हजार, चार कम अस्सी हजार, और चार, इतने बिल असंख्यात योजनप्रमाण विस्तारवाले हैं ॥ ९८–९९ ॥

असंख्यात योजन विस्तारवाले बिल—र. प्र. २४००००० ; श. प्र. २०००००० ; वा. प्र. १२००००० ; पं. प्र. ८००००० ; धू. प्र. २४०००० ; त. प्र. ७९९९६ म. प्र. ४ ।

---

१ द ब यसंखेज्जं. २ द ब °णुभयमस्सरूवं. ३ द ब ट्ठयणेदिसु. ४ द सयकदिहिद°. ५ द रचिय, ब रचिय.

संखेज्जरुंदसंजुदणिरयबिलाणं जहण्णविच्चालं[1] । छक्कोसा तेरिच्छे उक्कस्से दुगुणिदा तेपि ॥ १००

६ । १२ ।[2]

णिरयबिलाणं होदि हु असंखरुंदाण अवरविच्चालं । जोयणसत्तसहस्सा उक्कस्से तं असंखेज्जा ॥ १०१

७००० ।

उत्तपइण्णयमज्झे होंति हु बहुवो असंखवित्थारो[3] । संखेज्जवासजुत्ता थोवा होरा तिमिरजुत्तो[4] ॥ १०२

सगसगपुढविगयाणं संखासंखेज्जरुंदरासिम्मि । इंदयसेढिविहीणे कमसो सेसा पइण्णए उभयं ॥ १०३

५९९९८७ । अ २३९५५८० ।

संखेज्जवासजुत्ते णिरयबिले होंति णारया जीवा । संखेज्जा णियमेणं इदरम्मि तहा असंखेज्जा ॥ १०४

संख्यात योजन विस्तारवाले नारकियोंके बिलोंमें तिरछेरूपमें जघन्य अन्तराल छह कोस और उत्कृष्ट अन्तराल इससे दुगुणा अर्थात् बारह कोसमात्र है ॥ १०० ॥ ज. अंतराल ६, उ. अं. १२ कोस.

असंख्यात योजन विस्तारवाले नारकियोंके बिलोंमे जघन्य अन्तराल सात हजार योजन और उत्कृष्ट अन्तराल असंख्यात योजनमात्र है ॥ १०१ ॥ ज. अन्तराल ७००० यो. ।

पूर्वोक्त प्रकीर्णक बिलोंमेसे असंख्यात योजन विस्तारवाले बहुत और संख्यात योजन विस्तारवाले बिल थोड़े ही है । ये सब बिल अहोरात्र अन्धकारसे व्याप्त है ॥ १०२ ॥

अपनी अपनी पृथिवीके संख्यात योजन विस्तारवाले बिलोंकी राशिमेंसे इन्द्रक बिलोंके प्रमाणको घटा देनेपर शेष संख्यात योजन विस्तारवाले प्रकीर्णक बिलोंका प्रमाण होता है । इसी-प्रकार अपनी अपनी पृथिवीके असंख्यात योजन विस्तारवाले बिलोकी सख्यामेसे श्रेणीबद्ध बिलोंके प्रमाणको घटा देनेपर अवशिष्ट असंख्यात योजन विस्तारवाले प्रकीर्णक बिलोंका प्रमाण रहत है ॥ १०३ ॥

प्र. पृथिवीमें सं. यो. विस्ता. बिल ६००००; असं. यो. वि. २४०००००; इन्द्रक १३, श्रे. ब. ४४२०; ६००००० – १३ = ५९९९८७ सं. यो. वि. प्रकी. बिल, २४००००० – ४४२० = २३९५५८० असं. यो. वि. प्रकी. बिल ।

संख्यात योजन विस्तारवाले नरकबिलमें नियमसे संख्यात नारकी जीव, तथा असंख्यात योजन विस्तारवाले बिलमें असंख्यात ही नारकी जीव होते हैं ॥ १०४ ॥

१ द ज जहण्णवित्थारं. २ द ब दुगुणिदो. ३ द ६ । ४ द ब °वित्थारो. ५ ब होएति तिमिर°.

पणदालं लक्खाणिं पढमो चरिमिंदओ वि इगिलक्खं । उभयं सोहिय एक्कोणिंदयभजिदम्मि हाणिचयं ॥ १०५

४५०००००। १०००००।

छावट्ठिछस्सयाणिं इगिणउदिसहस्सजोयणाणिं पि । दुकलाओ तिविहत्ता परिमाणं हाणिवड्ढीए ॥ १०६

९१६६६। २।

३

बिदियादिसु इच्छंतो रूऊणिच्छाए गुणिदखयवड्ढी । सीमंतादो सोहिय[1] मेलिज्ज सुअवधिट्ठाणम्मि[2] ॥ १०७

रयणप्पहअवणीए सीमंतयइंदयस्स विन्थारो । पंचत्तालं जोयणलक्खाणिं होदि णियमेण ॥ १०८

४५०००००।

चोदालं लक्खाणिं[3] तेसीदिसयाणि होंति तेत्तीसं । एक्ककला तिविहत्ता णिरइंदयरुंदपरिमाणं ॥ १०९

४४०८३३३। १।

३

प्रथम इन्द्रकका विस्तार पैंतालीस लाख योजन और अन्तिम इन्द्रकका विस्तार एक लाख योजन है। इनमें प्रथम इन्द्रकके विस्तारमेंसे अन्तिम इन्द्रकके विस्तारको घटाकर शेषमें एक कम इन्द्रकप्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना (द्वितीयादि इन्द्रकोंके विस्तारको निकालनेके लिये) हानि और वृद्धिका प्रमाण समझना चाहिये ॥ १०५ ॥

४५०००००−१००००० ÷ (४९ − १) = ९१६६६$\frac{२}{३}$ हानि-वृद्धि।

इस हानि-वृद्धिका प्रमाण इक्यानवे हजार छहसौ छयासठ योजन और तीनसे विभक्त दो कला है ॥ १०६ ॥

द्वितीयादिक इन्द्रकोंके विस्तारको निकालनेकेलिये एक कम इच्छित इन्द्रकप्रमाणसे उक्त क्षय और वृद्धिके प्रमाणको गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो उसको सीमंत इन्द्रकके विस्तारमेंसे घटा देनेपर या अवधिस्थान इन्द्रकके विस्तारमें मिलानेपर अभीष्ट इन्द्रकका विस्तार निकलता है ॥ १०७ ॥

उदाहरण— सीमंत और अवधिस्थानकी अपेक्षा २५ वें तप्तनामक इन्द्रकका विस्तार— क्ष.वृ.९१६६६$\frac{२}{३}$ × (२५ − १) = २२०००००; ४५०००००−२२०००००=२३००००० सीमन्तकी अपेक्षा। ९१६६६$\frac{२}{३}$ × (२५ − १) = २२०००००; २२०००००+१००००० = २३००००० अवधिस्थानकी अपेक्षा।

रत्नप्रभा पृथिवीमें सीमन्त इन्द्रकका विस्तार नियमसे पैंतालीस लाख योजनप्रमाण है ॥ १०८ ॥ ४५००००० यो.

निरय (नरक) नामक द्वितीय इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण चवालीस लाख तेरासीसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग है ॥ १०९ ॥

सीमंत वि. ४५०००००−९१६६६$\frac{२}{३}$ = ४४०८३३३$\frac{१}{३}$।

१ द ब सेढीअ. २ ब ठाणं. ३ द बादालल्लक्खाणिं.

तेदालं लक्खाणं छस्सयसोलससहस्सछासट्ठी । दुतिभागो वित्थारो[1] रोरुगणामस्स[2] णादव्वो[3] ॥ ११०
४३१६६६६ । २ ।
३

पणुवीससहस्साधियजोयणबादाललक्खपरिमाणो । भंतिंदयस्स भणिदो वित्थारो पढमपुढवीए ॥ १११
४२२५००० ।

एक्कत्तालं लक्खा तेत्तीससहस्ससतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तिविहत्ता उब्भंतयरुंदपरिमाणं ॥ ११२
४१३३३३३ । १ ।
३

चालीसं लक्खाणिं इगिदालसहस्सछस्सयं होदि । छावट्ठी दोण्णि कलाओ वासो संभंतणामम्मि ॥ ११३
४०४१६६६ । २ ।
३

उणदालं लक्खाणिं पण्णाससहस्सजोयणाणिं पि । होदि असंभंतिंदयवित्थारो पढमपुढवीए ॥ ११४
३९५०००० ।

अट्ठत्तीसं लक्खा अडवण्णसहस्सतिसयतेत्तीसं । एक्ककला तिविहत्ता वासो विब्भंतणामम्मि ॥ ११५
३८५८३३३ । १ ।
३

रौरुक (रौरव) नामक तृतीय इन्द्रकका विस्तार तेतालीस लाख सोलह हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागमात्र जानना चाहिये ॥ ११० ॥

$४४०८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ४३१६६६६\frac{२}{३}$ ।

प्रथम पृथिवीमें भ्रान्त नामक चतुर्थ इन्द्रकका विस्तार ब्यालीस लाख पच्चीस हजार योजन-प्रमाण कहा गया है ॥ १११ ॥ $४३१६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ४२२५०००$ ।

उद्भ्रान्त नामक पांचवें इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण इकतालीस लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस योजन और योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग है ॥ ११२ ॥

$४२२५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ४१३३३३३\frac{१}{३}$ ।

सम्भ्रान्त नामक छठे इन्द्रकका विस्तार चालीस लाख इकतालीस हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ ११३ ॥

$४१३३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ४०४१६६६\frac{२}{३}$ ।

प्रथम पृथिवीमें असम्भ्रान्त नामक सातवें इन्द्रकका विस्तार उनतालीस लाख पचास हजार योजनप्रमाण है ॥ ११४ ॥ $४०४१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३९५०००००$ ।

विभ्रान्त नामक आठवें इन्द्रकका विस्तार अड़तीस लाख अट्ठावन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे एक भागप्रमाण है ॥ ११५ ॥

$३९५०००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ३८५८३३३\frac{१}{३}$ ।

१ द ब वित्थारा. २ द लोरुगणामस्स. ३ द णादव्वा. ४ द तीससहस्सं. ५ द ब. कला तिविगघा.

सगतीसं लक्खाणिं छासट्ठिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तियभजिदा रुंदो तसिंदये होदि ॥ ११६

३७६६६६६ । २ ।
३

छत्तीसं लक्खाणं जोयणया पंचहत्तरिसहस्सा । तसिदिंदयस्स रुंदं णादव्वं पढमपुढवीए ॥ ११७

३६७५०००

पणतीसं लक्खाणिं तेसीदिसहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तिविहत्ता रुंदं वक्कंतणामम्मि ॥ ११८

३५८३३३३ । १ ।
३

चउतीसं लक्खाणिं इगिणउदिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तियभजिदा एस यवक्कंतणामम्मि ॥ ११९

३४९१६६६ । २ ।
३

चोत्तीसं लक्खाणिं जोयणसंखा य पढमपुढवीए । विक्कंतणामइंदयवित्थारो[1] एत्थ णादव्वो ॥ १२०

३४०००००

तेत्तीसं लक्खाणिं अट्ठसहस्साणि तिसयतेत्तीसा । एक्ककला बिदियाए[2] थणइंदयरुंदपरिमाणं ॥ १२१

३३०८३३३ । १ ।
३

.....

तप्त नामक नववें इन्द्रकका विस्तार सैंतीस लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ योजन और योजनके तीन भागोंमेंसे दो भाग है ॥ ११६ ॥

$३८५८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३७६६६६६\frac{२}{३}$ ।

प्रथम पृथिवीमें त्रसित नामक दशवें इन्द्रकका विस्तार छत्तीस लाख पचहत्तर हजार योजनप्रमाण जानना चाहिये ॥ ११७ ॥ $३७६६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३६७५०००$ ।

वक्रान्त नामक ग्यारहवें इन्द्रकका विस्तार पैंतीस लाख तेरासी हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग है ॥ ११८ ॥

$३६७५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ३५८३३३३\frac{१}{३}$ ।

अवक्रान्त नामक बारहवें इन्द्रकका विस्तार चौंतीस लाख इक्यानबे हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ ११९ ॥

$३५८३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३४९१६६६\frac{२}{३}$ ।

प्रथम पृथिवीमें विक्रान्त नामक तेरहवें इन्द्रकका विस्तार चौंतीस लाख योजनप्रमाण जानना चाहिये ॥ १२० ॥ $३४९१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३४०००००$ ।

द्वितीय पृथिवीमें स्तन नामक प्रथम इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण तेतीस लाख आठ हजार तीनसौ तेतीस योजन और योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग है ॥ १२१ ॥

$३४०००००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ३३०८३३३\frac{१}{३}$ ।

.....

१ द ब वासट्ठि°. २ द इगणउदि°. ३ द ब विक्कंतणामाइयवित्थारो. ४ द ठिदियाए. ५ द थलइंदय.

बत्तीसं लक्खाणिं छस्सयसोलससहस्सछासट्ठी । दोण्णि कला तिविहत्ता वासो तणइंदए होदि ॥ १२२
३२१६६६६ । २ ।
३

इकतीसं लक्खाणिं[1] पणुवीससहस्सजोयणाणिं पि । मणइंदयस्स रुंदं णादव्वं विदियपुढवीए ॥ १२३
३१२५००० ।

तीसं विय लक्खाणिं तेत्तीससहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला विदियाए वणइंदयरुंदपरिमाणं ॥ १२४
३०३३३३३ । १ ।
३

एक्कोणतीसलक्खा इगिदालसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तिविहत्ता घादिंदयणामवित्थारो ॥ १२५
२९४१६६६ । २ ।
३

अट्ठावीसं लक्खा पण्णास[2]सहस्सजोयणाणिं पि । संघातणामइंदयवित्थारो विदियपुढवीए ॥ १२६
२८५०००० ।

सत्तावीसं लक्खा अट्ठवण्णसहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तिविहत्ता जिब्भिंदय[3]रुंदपरिमाणं ॥ १२७
२७५८३३३ । १ ।
३

.....

तनक नामक द्वितीय इन्द्रकका विस्तार बत्तीस लाख सोलह हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १२२ ॥

$३३०८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३२१६६६६\frac{२}{३}$ ।

द्वितीय पृथिवीमें मन नामक तृतीय इन्द्रकका विस्तार इकतीस लाख पच्चीस हजार योजन-प्रमाण जानना चाहिये ॥ १२३ ॥ $३२१६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३१२५०००$ ।

द्वितीय पृथिवीमें वन नामक चतुर्थ इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण तीस लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस योजन और योजनका एक तृतीय भाग है ॥ १२४ ॥

$३१२५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ३०३३३३३\frac{१}{३}$ ।

घात नामक पंचम इन्द्रकका विस्तार योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागसहित उनतीस लाख इकतालीस हजार छहसौ छ्यासठ योजनप्रमाण है ॥ १२५ ॥

$३०३३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २९४१६६६\frac{२}{३}$ ।

द्वितीय पृथिवीमें संघात नामक छठवें इन्द्रकका विस्तार अट्ठाईस लाख पचास हजार योजनप्रमाण है ॥ १२६ ॥ $२९४१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २८५०००$ ।

जिह्व नामक सातवें इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण सत्ताईस लाख अट्ठावन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १२७ ॥

$२८५०००० - ९१६६६\frac{२}{३} = २७५८३३३\frac{१}{३}$ ।

.....

१ द लक्खाणं पुणुवीस°. २ द ब पण्णरस. ३ द ब दिमिंदय°.

छव्वीसं लक्खाणिं छावट्ठिसहस्सछसयछासट्ठिं[1] । दोण्णि कला तिविहत्ता जिब्भगणामस्स वित्थारो ॥ १२८

२६६६६६६ । २ ।

३

पणुवीसं लक्खाणिं जोयणया पंचसत्तरिसहस्सा । लोलिंदयस्स रुंदो बिदियाए होदि पुढवीए ॥ १२९

२५७५००० ।

चउवीसं लक्खाणिं तेवीदिसहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तिविहत्ता लोलगणामस्स[2] वित्थारो ॥ १३०

२४८३३३३ । १ ।

३

तेवीसं लक्खाणिं इगिणउदिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तियभजिदा रुंदा थणलोलगे होंति ॥ १३१[3]

२३९१६६६ । २ ।

३

तेवीसं लक्खाणिं जोयणसंखा य तदियपुढवीए । पढमिंदयम्मि वासो णादव्वो तत्ततणामस्स ॥ १३२

२३००००० ।

बावीसं लक्खाणिं अट्ठसहस्साणि तिसयतेत्तीसं । एक्ककला तिविहत्ता पुढवीए तसिदवित्थारो ॥ १३३

२२०८३३३ । १ ।

३

जिह्वक नामक आठवें इन्द्रकका विस्तार छब्बीस लाख छयासठ हजार छहसौ छयासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १२८ ॥

$२७५८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २६६६६६६\frac{३}{३}$ ।

द्वितीय पृथिवीमें नववें लोल इन्द्रकका विस्तार पच्चीस लाख पचहत्तर हजार योजनप्रमाण है ॥ १२९ ॥ $२६६६६६६\frac{३}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २५७५०००$ ।

लोलक नामक दशवें इन्द्रकका विस्तार चौबीस लाख तेरासी हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १३० ॥ $२५७५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = २४८३३३३\frac{१}{३}$ ।

स्तनलोलक नामक ग्यारहवें इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख इक्यानवे हजार छहसौ छयासठ योजन और योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १३१ ॥

$२४८३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २३९१६६६\frac{२}{३}$ ।

तीसरी पृथिवीमें तप्त नामक प्रथम इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख योजनप्रमाण जानना चाहिये ॥ १३२ ॥ $२३९१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २३०००००$ ।

तृतीय पृथिवीमें त्रसित नामक द्वितीय इन्द्रकका विस्तार बाईस लाख आठ हजार तीनसौ तेतीस योजन और योजनका तीसरा भाग है ॥ १३३ ॥

$२३००००० - ९१६६६\frac{२}{३} = २२०८३३३\frac{१}{३}$ ।

---

१ द ब छावट्ठि. २ द लोलगणामास्स. ३ ब प्रतिषु एवं.

सोलसहस्सं छस्मयछासट्ठी एक्कवीसलक्खाणि । दोण्णि कला तदियाए पुढवीए तवणवित्थारो ॥ १३४

२२१६६६६ । २ ।

३

पणवीससहस्साधियविंसदिलक्खाणि जोयणाणिं पि । तदिए वि य स्वोणीए तावणणामस्स वित्थारो ॥ १३५

२०२५०००।

एक्कोणवीसलक्खा तेत्तीससहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तदियाए वसुहाए वण्णिदो हि[1] वित्थारो ॥ १३६

१९३३३३३ । १ ।

३

अट्ठारसलक्खाणिं इगिदालसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तदियाए भूए पज्जलिदवित्थारो ॥ १३७

१८४१६६६ । २ ।

३

सत्तरसं लक्खाणिं पण्णाससहस्सजोयणाणिं च । उज्जलिदइंदयस्स य वासो वसुहाए तदियाए ॥ १३८

१७५०००० ।

सोलसजोयणलक्खा अडवण्णसहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तदियाए संजलिदिंदस्स[2] वित्थारो ॥ १३९

१६५८३३३ । १ ।

३

तीसरी पृथिवीमें तपन नामक तृतीय इन्द्रकका विस्तार इक्कीस लाख सोलह हजार छहसौ छ्यासठ योजन और योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १३४ ॥

$२२०८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २११६६६६\frac{२}{३}$ ।

तीसरी पृथिवीमें तापन नामक चतुर्थ इन्द्रकका विस्तार बीस लाख पच्चीस हजार योजन-प्रमाण है ॥ १३५ ॥ $२११६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = २०२५०००$ ।

तृतीय वसुधामें [निदाघनामक पंचम इन्द्रकका] विस्तार उन्नीस लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस योजन और योजनके तृतीय भागप्रमाण है ॥ १३६ ॥

$२०२५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = १९३३३३३\frac{१}{३}$ ।

तीसरी पृथिवीमें प्रज्वलित नामक छठे इन्द्रकका विस्तार अठारह लाख इकतालीस हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १३७ ॥

$१९३३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १८४१६६६\frac{२}{३}$ ।

तृतीय वसुधामें उज्ज्वलित नामक सातवें इन्द्रकका विस्तार सत्तरह लाख पचास हजार योजनप्रमाण है ॥ १३८ ॥ $१८४१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १७५००००$ ।

तृतीय भूमिमें संज्वलित नामक आठवें इन्द्रकका विस्तार सोलह लाख अट्ठावन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनका तीसरा भाग है ॥ १३९ ॥

$१७५०००० - ९१६६६\frac{२}{३} = १६५८३३३\frac{१}{३}$ ।

१ द ब वण्णि होइ. २ ब दितयाए. ३ द ब संपज्जलिदस्स.

पण्णारसलक्खाणिं छस्सट्ठिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तेदियाए संपज्जलिदस्स वित्थारो ॥ १४०

१५६६६६६ । २ ।
३

चोद्दसजोयणलक्खा पणसत्तरि तह सहस्सपरिमाणा । तुरिमाए पुढवीए आरिंदयरुंदपरिमाणं ॥ १४१

१४७५००० ।

तेरसजोयणलक्खा तेसीदिसहस्सतिसयतेत्तीसं । एक्ककला तुरिमाए महीए मारिंदए रुंदो ॥ १४२

१३८३३३३ । १ ।
३

बारसजोयणलक्खा इगिणउदिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तिविहत्ता तुरिमातारिंदयस्स रुंदाउ ॥ १४३

१२९१६६६ । २ ।
३

बारसजोयणलक्खा तुरिमाए वसुंधराए वित्थारो । तच्चिंदयस्स रुंदो णिद्दिट्ठं सव्वदरिसीहिं ॥ १४४

१२००००० ।

एकादसलक्खाणिं अट्ठसहस्साणि तिसयतेत्तीसा । एक्ककला तुरिमाए महीए तमगस्स वित्थारो ॥ १४५

११०८३३३ । १ ।
३

तीसरी पृथिवीमें संप्रज्वलितनामक नववें इन्द्रकका विस्तार पन्द्रह लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १४० ॥

$१६५८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १५६६६६६\frac{२}{३}$ ।

चतुर्थ पृथिवीमें आर नामक प्रथम इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण चौदह लाख पचहत्तर हजार योजन है ॥ १४१ ॥ $१५६६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १४७५०००$ ।

चतुर्थ पृथिवीमें मार नामक द्वितीय इन्द्रकका विस्तार तेरह लाख तेरासी हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १४२ ॥

$१४७५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = १३८३३३३\frac{१}{३}$ ।

चतुर्थ पृथिवीमें तार नामक तृतीय इन्द्रकका विस्तार बारह लाख इक्यानवै हजार छहसौ छ्यासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १४३ ॥

$१३८३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १२९१६६६\frac{२}{३}$ ।

सर्वज्ञदेवने चतुर्थ पृथिवीमें तत्व (चर्चा) नामक चतुर्थ इन्द्रकका विस्तार बारह लाख योजन-प्रमाण बतलाया है ॥ १४४ ॥ $१२९१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १२०००००$ ।

चतुर्थ पृथिवीमें तमक नामक पंचम इन्द्रकका विस्तार ग्यारह लाख आठ हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १४५ ॥

$१२००००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ११०८३३३\frac{१}{३}$ ।

---

१ द ब तदिएसं. २ द ब तुरिमाइंदस्स. ३ द ब तब्भंतयस्स. ४ द $\frac{१}{२}$.

दसजोयणलक्खाणिं छस्सयसोलससहस्सछासट्ठी । दोण्णि कला तुरिमाए वादिंदयवासपरिसंखा ॥ १४६

१०१६६६६ । २ ।
३

पणवीससहस्साधियणवजोयणसयसहस्सपरिमाणा । तुरिमाए खोणीए खलखलणामस्स वित्थारो ॥ १४७

९२५००० ।

लक्खाणि अट्ठ जोयणतेत्तीससहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला तमइंदयवित्थारो पंचमधराए ॥ १४८

८३३३३३ । १ ।
३

सगजोयणलक्खाणिं इगिदालसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला भमइंदयरुंदो पंचमधरित्तीए ॥ १४९

७४१६६६ । २ ।
३

छज्जोयणलक्खाणिं पण्णाससहस्ससमधियाणिं च । धूमप्पहावणीए झसइंदयरुंदपरिमाणा ॥ १५०

६५०००० ।

लक्खाणि पंच जोयणअडवण्णसहस्सातिसयतेत्तीसा । ऐक्ककला यंधिंदयवित्थारो पंचमखिदीए ॥ १५१

५५८३३३ । १ ।
३

चतुर्थ भूमिमें वाद नामक छठे इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण दश लाख सोलह हजार छहसौ छयासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १४६ ॥

$११०८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १०१६६६६\frac{३}{३}$ ।

चौथी पृथिवीमें खलखल (गडखड) नामक सातवें इन्द्रकका विस्तार नौ लाख पच्चीस हजार योजनप्रमाण है ॥ १४७ ॥ $१०१६६६६\frac{३}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ९२५०००$ ।

पांचवीं पृथिवीमें तम नामक प्रथम इन्द्रकका विस्तार आठ लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १४८ ॥

$९२५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ८३३३३३\frac{१}{३}$ ।

पांचवीं पृथिवीमें भ्रम नामक द्वितीय इन्द्रकका विस्तार सात लाख इकतालीस हजार छहसौ छयासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १४९ ॥

$८३३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ७४१६६६\frac{२}{३}$ ।

धूमप्रभा पृथिवीमें झष नामक तृतीय इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण छह लाख पचास हजार योजन है ॥ १५० ॥ $७४१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ६५००००$ ।

पांचवीं पृथिवीमें अंध नामक चतुर्थ इन्द्रकका विस्तार पांच लाख अट्ठावन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १५१ ॥

$६५०००० - ९१६६६\frac{२}{३} = ५५८३३३\frac{१}{३}$ ।

---

१ द तमयं इंदय°, ब तमयंदय°. २ द ब एक्ककलायंदिदिय.

चउजोयणलक्खाणिं छासट्ठिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला तिमिसिंदयरुंदं पंचमधरित्तीए ॥ १५२

४६६६६६ । २ ।
३

तियजोयणलक्खाणिं सहस्सया पंचहत्तरिपमाणा । छट्ठीए वसुमईए हिमइंदयरुंदपरिसंखा ॥ १५३

३७५००० ।

दो जोयणलक्खाणिं तेसीदिसहस्सतिसयतेत्तीसा । एक्ककला छट्ठीए पुढवीए होइ वद्दले[1] रुंदो ॥ १५४

२८३३३३ । १ ।
३

एक्कं जोयणलक्खा इगिणउदिसहस्सछसयछासट्ठी । दोण्णि कला वित्थारो लल्लंके छट्ठवसुहाए ॥ १५५

१९१६६६ । २ ।
३

वासो जोयणलक्खो अवधिट्ठाणस्स[2] सत्तमखिदीए । जिणवरवयणविणिग्गदतिलोयपण्णत्तिगामाए ॥ १५६

१००००० ।

एक्काधियएक्कदिसंखं तियचउसत्तेहिं[3] गुणिय छब्भजिदे । कोसा इंदयसेढीपइण्णयाणं च बहलत्तं ॥ १५७

पांचवीं पृथिवीमें तिमिश्र नामक पांचवें इन्द्रकका विस्तार चार लाख छयासठ हजार छहसौ छयासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १५२ ॥

$५५८३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ४६६६६६\frac{२}{३}$ ।

छठी पृथिवीमें हिम नामक प्रथम इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण तीन लाख पचहत्तर हजार योजन है ॥ १५३ ॥ $४६६६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = ३७५०००$ ।

छठी पृथिवीमें वर्दल नामक द्वितीय इन्द्रकका विस्तार दो लाख तेरासी हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १५४ ॥

$३७५००० - ९१६६६\frac{२}{३} = २८३३३३\frac{१}{३}$ ।

छठी पृथिवीमें लल्लंक नामक तृतीय इन्द्रकका विस्तार एक लाख इक्यानवै हजार छहसौ छयासठ योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे दो भागप्रमाण है ॥ १५५ ॥

$२८३३३३\frac{१}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १९१६६६\frac{२}{३}$ ।

सातवीं पृथिवीमें अवधिस्थान नामक इन्द्रकका विस्तार एक लाख योजनप्रमाण है। इसप्रकार जिनेन्द्रदेवके वचनोंसे उपदिष्ट त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें इन्द्रकबिलोंका विस्तार कहा गया है ॥ १५६ ॥ $१९१६६६\frac{२}{३} - ९१६६६\frac{२}{३} = १००००० ।$

एक अधिक पृथिवीसंख्याको तीन, चार और सातसे गुणा करके छहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने कोसप्रमाण क्रमशः इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंका बाहल्य होता है ॥ १५७ ॥

---

१ द ब वसुमाइं. २ द ब वद्दलेसु. ३ द अवदिठाणस्स. ४ ब °सत्तेवि.

अथवा—

आदी छ अट्ठ चोद्दस तद्दलवड्ढिय जाव सत्तखिदिकोसं । छहिदे इंदयसेढीपइण्णयाणं च बहलत्तं ॥ १५८

१	३	२	५	३	७	४	४	२	८	१०	४	१४	१६	७	७	१४	३५	७	४९	२८
	२		२		२		३		३		३		३	३	२	३	६		६	३

र. प्र. पृथिवीके इं. बिलोंका बाहल्य—१ + १ × ३ ÷ ६ = १ कोस। श. प्र. पृ. के इं. का बाहल्य—२ + १ × ३ ÷ ६ = $\frac{3}{2}$ कोस। वा. प्र. पृ. के इं. का बाहल्य—३ + १ × ३ ÷ ६ = २ कोस। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके इन्द्रकोंका बाहल्य क्रमशः $\frac{5}{2}$, ३, $\frac{7}{2}$ और ४ कोस होता है।

र. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका बाहल्य— १ + १ × ४ ÷ ६ = $\frac{4}{3}$ को.। श. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका बाहल्य— २ + १ × ४ ÷ ६ = २ को.। वा. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका बाहल्य— ३ + १ × ४ ÷ ६ = $\frac{5}{3}$ को.। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके श्रेणीबद्ध बिलोंका बाहल्य क्रमशः $\frac{10}{3}$, ४, $\frac{14}{3}$ और $\frac{16}{3}$ कोस होता है।

र. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—१ + १ × ७ ÷ ६ = $\frac{8}{3}$ को.। श. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—२ + १ × ७ ÷ ६ = $\frac{3}{2}$ को.। वा. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—३ + १ × ७ ÷ ६ = $\frac{11}{3}$ को.। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके प्रकीर्णक बिलोंका बाहल्य क्रमशः $\frac{35}{6}$, ७, $\frac{49}{6}$ और $\frac{28}{3}$ कोस होता है।

अथवा—यहां आदिका प्रमाण क्रमसे छह, आठ और चौदह है। इसमें दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवीपर्यन्त उत्तरोत्तर इसी आदिके अर्ध भागको जोड़कर प्राप्त संख्यामें छहका भाग देनेपर क्रमशः विवक्षित पृथिवीके इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंका बाहल्य निकल आता है ॥ १५८ ॥

र. प्र. पृ. इन्द्रकोंका बाहल्य—६ ÷ ६ = १ कोस। श. प्र. पृ. इन्द्रकोंका बाहल्य—६ + $\frac{3}{2}$ ÷ ६ = $\frac{5}{2}$ को.। वा. प्र. पृ. इन्द्रकोंका बाहल्य— ९ + $\frac{6}{2}$ ÷ ६ = २ को.। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके इन्द्रकोंका बाहल्य क्रमशः $\frac{5}{2}$, ३, $\frac{7}{2}$ और ४ कोस होता है।

र. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका बाहल्य— ८ ÷ ६ = $\frac{4}{3}$ को.। श. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका बाहल्य—८ + $\frac{5}{2}$ ÷ ६ = २ को.। वा. प्र. पृ. श्रे. बिलोंका. बाहल्य— १२+$\frac{5}{2}$÷६= $\frac{5}{3}$ को.। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके श्रेणीबद्धोंका बाहल्य क्रमशः $\frac{10}{3}$, ४, $\frac{14}{3}$ और $\frac{16}{3}$ कोस होता है।

र. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—१४ ÷ ६ = $\frac{7}{3}$ को.। श. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—१४ + $\frac{14}{2}$ ÷ ६ = $\frac{8}{3}$ को.। वा. प्र. पृ. प्रकी. बिलोंका बाहल्य—२१ + $\frac{14}{2}$ + ६ = $\frac{14}{3}$ को.। इसीप्रकार पंकप्रभादि पृथिवियोंके प्रकीर्णक बिलोंका बाहल्य—$\frac{35}{6}$, ७, $\frac{49}{6}$ और $\frac{28}{3}$ कोस होता है।

रयणादिछट्ठमंतं णियणियपुढवीण बहलमज्झादो । जोयणसहस्सजुगलं अवणिय सेसं करिज्ज कोसाणि ॥ १५९
णियणियइंदयसेढीबद्धाणं पइण्णयाण बहलाणि । णियणियपदरपवण्णिदसंखागुणिदाण लद्धरासी य ॥ १६०
पुव्विल्लयरासीणं मज्झे तं सोहिऊण पत्तेक्कं । एक्कोणणियणियिंदयचउगुणिदेणं च भजिदव्वं ॥ १६१
लद्धो जोयणसंखा णियणिय णेयंतरालमुड्डेण[1] । जाणेज्ज परट्ठाणे किंचूणयरज्जुपरिमाणं ॥ १६२
सत्तमखिदीय बहले इंदयसेढीण बहलपरिमाणं । सोधिय दलिदे हेट्ठिमउवरिमभागा हवंति एदाणं ॥ १६३
पढमाविदीयवणीणं[2] रुंदं सोहेज्ज एक्करज्जूए । जोयणतिसहस्सजुदे होदि परट्ठाणविच्चालं ॥ १६४

रत्नप्रभा पृथिवीको आदि लेकर छठी पृथिवीपर्यन्त अपनी अपनी पृथिवीके बाहल्यमेंसे दो हजार योजन कम करके शेष योजनोंके कोस बनाना चाहिये ॥ १५९ ॥

अपने अपने पटलोंकी पूर्ववर्णित संख्यासे गुणित अपनी अपनी पृथिवीके इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंके बाहल्यको पूर्वोक्त राशिमेंसे, अर्थात् दो हजार योजन कम विवक्षित पृथिवीके बाहल्यके किये गये कोसोंमेंसे, कम करके प्रत्येकमें एक कम अपने अपने इन्द्रकप्रमाणसे गुणित चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने योजनप्रमाण अपनी अपनी पृथिवीके इन्द्रकादि बिलोंमें ऊर्ध्वग अन्तराल जानना चाहिये। इसके अतिरिक्त परस्थान अर्थात् एक पृथिवीके अन्तिम और अगली पृथिवीके आदिभूत इन्द्रकादि बिलोंमें कुछ कम एक राजुप्रमाण अन्तराल समझना चाहिये ॥ १६०–१६२ ॥

प्र. पृ. के इन्द्रकोंका अन्तराल— $\frac{(८०००० - २०००) \times ४ - (१ \times १३)}{(१३ - १) \times ४}$

$= \frac{७८००० \times ४ - १३}{४८} = ६४९९\frac{३५}{४८}$ यो.

द्वि. पृ. के " " $\frac{(३२००० - २०००) \times ४ - (\frac{३}{४} \times ११)}{(११ - १) \times ४} = \frac{३०००० \times ४ - \frac{३३}{४}}{४०}$

$= २९९९\frac{४१}{४८०}$ यो. इत्यादि.

सातवीं पृथिवीके बाहल्यमेंसे इन्द्रक और श्रेणीबद्ध बिलोंके बाहल्यप्रमाणको घटाकर अवशिष्ट राशिको आधा करनेपर क्रमसे इन्द्रक और श्रेणीबद्ध बिलोंके ऊपर-नीचेकी पृथिवीकी मुटाईका प्रमाण निकलता है ॥ १६३ ॥

$\frac{८००० - १}{२} = ३९९९\frac{१}{२}$ यो. सातवीं पृथिवीके इन्द्रक बिलके नीचे और ऊपरकी पृथिवीका बाहल्य.

$\frac{८००० - \frac{४}{४}}{२} = ३९९९\frac{३}{४}$ सा. पृ. के श्रेणीबद्ध बिलोंके ऊपर-नीचेकी पृथिवीका बाहल्य.

एक राजुमेंसे पहिली और दूसरी पृथिवीके बाहल्यप्रमाणको कम करके अवशिष्ट राशिमें तीन हजार योजनोंके मिलानेपर प्रथम पृथिवीके अन्तिम और द्वितीय पृथिवीके प्रथम बिलके मध्यमें परस्थान अन्तरालका प्रमाण निकलता है ॥ १६४ ॥

१ द ब 'णियणिइंदय', क 'णियणियइंदय'. २ द 'तराणमुड्डेण, ब 'तेराणमुड्डेण. ३ द ब पढमखिदीयवणीणं.

दुसहस्सजोयणाधियरज्जू तद्दियादिपुढविरुंदूणं । छट्ठो त्ति परट्ठाणे[1] विच्चालपमाणमुद्दिट्ठं ॥ १६५

सयकदिरूऊणद्धं रज्जुमुदं चरिमभूमिरुंदूणं । मघविस्सै[2] चरिमइंदयअवधिट्ठाणस्स विच्चालं ॥ १६६

णवणवदिजुदचदुस्सयछसहस्सा जोयणाइं बे कोसा । एक्कारसकलयारसहिदा य घम्मिंदयाण विच्चालं ॥ १६७

६४९९ । को २ । ११ ।

१२

रयणप्पहचरिमिंदयसक्करपुढविंदयाण विच्चालं । दोलक्खणवसहस्सा जोयणहीणेक्करज्जू य ॥ १६८

उ । रिण जो २०९०००।

एक्कविहीणा जोयणतिसहस्सा धणुसहस्सचत्तारि । सत्तसया वंसाए एक्कारसइंदयाण विच्चालं ॥ १६९

२९९९ । दंड ४७००।

विशेषार्थ—प्रथम पृथिवीकी मुटाई १८०००० योजन और द्वितीय पृथिवीकी मुटाई ३२००० योजनप्रमाण है। इस मुटाईसे रहित दोनों पृथिवियोंके मध्यमें एक राजुप्रमाण अन्तराल है। चूंकि एक हजार योजनप्रमाण चित्रा पृथिवीकी मुटाई प्रथम पृथिवीकी मुटाईमें सम्मिलित है परन्तु उसकी गणना ऊर्ध्व लोककी मुटाईमें कीगई है, अतएव इसमेंसे इन एक हजार योजनोंको कम करदेना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रथम पृथिवीके नीचे और द्वितीय पृथिवीके ऊपर एक एक, हजार योजनप्रमाण क्षेत्रमें नारकियोंके बिलोंके न होनेसे इन दो हजार योजनोंको भी कम कर देनेपर शेष २०९००० (१८०००० + ३२००० − ३०००) योजनोंसे रहित एक राजुप्रमाण प्रथम पृथिवीके अन्तिम और द्वितीय पृथिवीके प्रथम इन्द्रकके बीच परस्थान अन्तराल रहता है।

दो हजार योजन अधिक एक राजुमेंसे तीसरी आदिक पृथिवीके बाहल्यप्रमाणको घटा देनेपर जो शेष रहे, उतना छठी पृथिवीपर्यन्त परस्थान अन्तरालका प्रमाण कहा गया है ॥ १६५ ॥

सौके वर्गमेंसे एक कम करके शेषको आधा करे और उसे एक राजुमें जोड़कर लब्धमेंसे अन्तिम भूमिके बाहल्यको घटा देनेपर मघवी पृथिवीके अन्तिम इन्द्रक और अवधिस्थान इन्द्रकके बीच परस्थान अन्तरालका प्रमाण निकलता है ॥ १६६ ॥

घर्मा पृथिवीके इन्द्रक बिलोंका अन्तराल छह हजार चारसौ निन्यानबे योजन, दो कोस और एक कोसके बारह भागोंमेंसे ग्यारह भागप्रमाण है ॥ १६७ ॥ ६४९९ यो. २$\frac{११}{१२}$ को.।

रत्नप्रभा पृथिवीके अन्तिम इन्द्रक और शर्कराप्रभाके आदिके इन्द्रक बिलोंका अन्तराल दो लाख ना हजार योजन कम एक राजुप्रमाण है ॥ १६८ ॥ २०९००० यो. कम १ रा.।

वंशा पृथिवीके ग्यारह इन्द्रकोंका अन्तराल एक कम तीन हजार योजन और चार हजार सातसौ धनुषप्रमाण है ॥ १६९ ॥ २९९९ यो. ४७०० धनु.।

१ ब परिट्ठाणे. २ ब मघवस्स.

एक्को हवेदि रज्जू छव्वीससहस्सजोयणविहीणा । घणलोलुगस्स तत्तो[1] इंदयदो होदि विच्चाले ॥ १७०

$\frac{1}{7}$ । रिण २६०००।

तिण्णि सहस्सा दुसया जोयणउणवण्ण तदियपुढवीए । पणतीससयधणूणिं पत्तेक्कं इंदयाण विच्चालं ॥ १७१

३२४९ । दंड ३५००।

एक्को हवेदि रज्जू बावीससहस्सजोयणविहीणा । दोण्णं विच्चालमिणं संपज्जलिदारणामाणं ॥ १७२

$\frac{1}{7}$ । रिण जो २२०००।

तिण्णि सहस्सा छस्सयपण्णट्ठीजोयणाणि[2] पंकाए । पण्णत्तरिसयदंडा पत्तेक्कं इंदयाण विच्चाले ॥ १७३

३६६५ जो। दंड ७५००।

एक्को हवेदि रज्जू अट्ठारससहस्सजोयणविहीणा । खलखलतमिंदयाणं दोण्णं विच्चालपरिमाणं ॥ १७४

$\frac{1}{7}$ । रिण जो १८०००।

चत्तारि सहस्साणिं चउसयणवणवदिजोयणाणिं पि । पंचसयाणिं दंडा धूमपहाइंदयाण विच्चालं ॥ १७५

४४९९। दंड ५००।

चोद्दससहस्सजोयणपरिहीणा होदि केवलं रज्जू । तिमिसिंदयस्स हिमइंदयस्स दोण्णं पि विच्चाले ॥ १७६

$\frac{1}{7}$ । रिण जो १४०००।

वंशा पृथिवीके अन्तिम इन्द्रक स्तनलोलुकसे मेघा पृथिवीके प्रथम इंद्रक तमका अंतराल छब्बीस हजार योजन कम एक राजुप्रमाण है ॥ १७० ॥ २६००० यो. कम १ रा.।

तीसरी पृथिवीके प्रत्येक इन्द्रक बिलका अन्तराल तीन हजार दो सौ उनंचास योजन और पैंतीससौ धनुषप्रमाण है ॥ १७१ ॥ ३२४९ यो. ३५०० दण्ड।

तृतीय पृथिवीका अन्तिम इंद्रक संप्रज्वलित और चतुर्थ पृथिवीका प्रथम इंद्रक आर, इन दोनों बिलोंका अन्तराल बाईस हजार योजन कम एक राजुप्रमाण है ॥ १७२ ॥

२२००० यो. कम १ रा.

पंकप्रभा पृथिवीके इन्द्रक बिलोंका अन्तराल तीन हजार छहसौ पैंसठ योजन और पचहत्तरसौ दण्डप्रमाण है ॥ १७३ ॥ ३६६५ यो. ७५०० दण्ड।

चतुर्थ पृथिवीका अन्तिम इन्द्रक खल-खल और पांचवीं पृथिवीका प्रथम इन्द्रक तम, इन दोनों बिलोंके अन्तरालका प्रमाण अठारह हजार योजन कम एक राजु है ॥ १७४ ॥

१८००० यो. कम १ रा.।

धूमप्रभाके इन्द्रक बिलोंका अन्तराल चार हजार चारसौ निन्यानबे योजन और पांचसौ दण्डप्रमाण है ॥ १७५ ॥ ४४९९ यो. ५०० दण्ड।

पांचवीं पृथिवीका अन्तिम इन्द्रक तिमिश्र और छठी पृथिवीका प्रथम इन्द्रक हिम, इन दोनों बिलोंका अन्तराल चौदह हजार योजन कम एक राजुप्रमाण है ॥ १७६ ॥

१४००० यो. कम. १ रा.।

---

१ ब एका. २ द ब धणलोलुगस्स तत्ति. ३ द ब छस्सट्ठी. ४ द ब जोयणविहीण.

अट्ठाणउदी णवसयछस्सहस्सा जोयणाणि मघवीए । पणवण्णसयाणि धणू पत्तेक्कं इंदयाण विच्चालं ॥ १७७

६९९८ । दंड ५५००।

छट्ठमेखिदिचरिमिंदयमवधिट्ठाणाण होइ विच्चालं । एक्का रज्जू ऊणा जोयणतिसहस्सकोसजुगलेहिं ॥ १७८

७ । रिण जो ३००० को २ ।

तिण्णि सहस्सा णवसयणवणउदी जोयणाणि बे कोसा । उड्ढाधरभूमीणं अवधिट्ठाणस्स परिमाणं ॥ १७९

३९९९ । कोस २ ।

णवणउदिजुदचउस्सयछसहस्सा जोयणाणि बे कोसा । पंच कला णवभजिदा घम्माए सेढिबद्धविच्चालं ॥ १८०

६४९९ । कोस २ । ५ ।

९

णवणउदि णवसयाणिं दुसहस्सा जोयणाणि वंसाए । तिसहस्सछसयदंडा उड्ढुणं सेढिबद्धविच्चालं ॥ १८१

२९९९ । दंड ३६००।

उणवण्णा दुसयाणिं तिसहस्सा जोयणाणि मेघाए । दोण्णि सहस्साणि धणू सेढीबद्धाण विच्चालं ॥ १८२

३२४९ । दंड २०००।

णवहिदबावीससहस्सदंडहीणा हवेदि छासट्ठी । जोयणछत्तीससयं तुरिमाए सेढिबद्धविच्चालं ॥ १८३

३६६५ । दंड ५५५५ । ५।

९

मघवी पृथिवीमें प्रत्येक इन्द्रकका अन्तराल छह हजार नौसौ अट्ठानवै योजन और पचवनसौ धनुष है ॥ १७७ ॥ ६९९८ यो., ५५०० दण्ड ।

छठी पृथिवीके अन्तिम इन्द्रक लल्लंक और सातवीं पृथिवीके अवधिस्थान इन्द्रकका अन्तराल तीन हजार योजन और दो कोस कम एक राजुप्रमाण है ॥ १७८ ॥

यो. ३०००, को. २ कम १ रा.।

अवधिस्थान इन्द्रककी ऊर्ध्व और अधस्तन भूमिके बाहल्यका प्रमाण तीन हजार नौसौ निन्यानवै योजन और दो कोस है ॥ १७९ ॥ ३९९९ यो. २ को.।

घर्मा पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल छह हजार चारसौ निन्यानवै योजन दो कोस और एक कोसके नौ भागोंमेंसे पांच भागप्रमाण है ॥ १८० ॥ ६४९९ यो. २$\frac{५}{९}$ को.।

वंशा पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल दो हजार नौसौ निन्यानवै योजन और तीन हजार छहसौ दण्डप्रमाण हैं ॥ १८१ ॥ २९९९ यो. ३६०० दण्ड ।

मेघा पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल तीन हजार दोसौ उनंचास योजन और दो हजार धनुष है ॥ १८२ ॥ ३२४९ यो. २००० दण्ड।

चतुर्थ पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल, बाईस हजारमें नौका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतने धनुष कम छत्तीससौ छ्यासठ योजनप्रमाण है ॥ १८३ ॥ ३६६५ यो. ५५५५$\frac{५}{९}$ दण्ड।

१ द ब जोयणादि. २ द छट्ठुमखिदिचरिमिंदिय°. ३ द णउणउदी. ४ द उ उड्ढीणं, ब उड्ढीणं. ५ द हुवेदि. ६ ब °त्तीससयं.

अट्ठाणउदी जोयणचउदालसयाणि छस्सहस्सधणू । धूमप्पहपुढवीए सेढीबद्धाण विच्चालं ॥ १८४
४४९८ । दंड ६००० ।

अट्ठाणउदी णवसयछसहस्सा जोयणाणि मघवीए । दोण्णि सहस्साणि धणू सेढीबद्धाण विच्चालं ॥ १८५
६९९८ । दंड २००० ।

णवणउदिसहिदणवसयतिसहस्सा जोयणाणि एक्ककला । तिहिदा य माघवीए सेढीबद्धाण विच्चालं ॥ १८६
३९९९ । १ ।
३

सट्ठाणे विच्चालं एदं जाणिज्ज तह परट्ठाणे । जं इंदयपरठाणे भणिदं तं एत्थ वत्तव्वं ॥ १८७
णवरि विसेसो एसो लल्लंकयअवधिठाणविच्चाले । जोयणयद्धच्छब्भागूणं सेढिबद्धाण विच्चालं ॥ १८८
। सेढीबद्धाण विच्चालं समत्तं ।

छक्कदिहिदेक्कणउदीकोसोणा छसहस्सपंचसया । जोयणया घम्माए पइण्णयाणं हवेदि विच्चालं ॥ १८९
६४९९ । को १ । १७ ।
३६

णवणउदीजुदणवसयदुसहस्सा जोयणाणि वंसाए । तिण्णिसयदंडयाणं उड्ढेण पइण्णयाण विच्चालं ॥ १९०
२९९९ । दंड ३०० ।

धूमप्रभा पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल चवालीससौ अट्ठानबै योजन और छह हजार धनुष है ॥ १८४ ॥ ४४९८ यो. ६००० दण्ड ।

मघवी पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल छह हजार नौसौ अट्ठानबै योजन और दो हजार धनुष है ॥ १८५ ॥ ६९९८ यो. २००० दण्ड ।

माघवी पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल तीन हजार नौसौ निन्यानबै योजन और एक योजनके तीसरे भागप्रमाण है ॥ १८६ ॥ ३९९९$\frac{१}{३}$ यो. ।

यह जो श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल है उसे स्वस्थानमें समझना चाहिये । तथा परस्थानमें जो इन्द्रक बिलोंका अन्तराल कहा जाचुका है, उसीको यहां भी कहना चाहिये । किन्तु विशेषता यह है कि लल्लंक और अवधिस्थान इन्द्रकके मध्यमें जो अन्तराल कहा गया है उसमेंसे अर्ध योजनके छह भागोंमेंसे एक भाग कम यहां श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल जानना चाहिये ॥ १८७-१८८ ॥

इसप्रकार श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल समाप्त हुआ ।

घर्मा पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका अन्तराल, इक्यानबैमें छहके वर्गका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतने कोस कम छह हजार पांचसौ योजनप्रमाण है ॥ १८९ ॥

यो. ६५०० - ($\frac{१}{३६}$ × $\frac{१}{४}$) = यो. ६४९९, को. १$\frac{१७}{३६}$

वंशा पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका ऊर्ध्वग अन्तराल दो हजार नौसौ निन्यानबै योजन और तीनसौ धनुषप्रमाण है ॥ १९० ॥ २९९९ यो. ३००० दण्ड ।

१ ब अट्ठाणणउदी. २ द इंदयपरणाणे, ब इंदयवरठाणे. ३ द ब जोयणयार्ध. ४ ब सम्मत्तं. ५ द हुवेदि.

अट्ठत्तालं दुसयं तिसहस्सा जोयणाणि[1] मेघाए । पणवण्णसयाणि धणू उड्ढेण पइण्णयाण विच्चालं ॥ १९१

३२४८ । दंड ५५०० ।

चउसट्ठि छस्सयाणिं तिसहस्सा जोयणाणि तुरिमाए । उणहत्तरीसहस्सा पणसयदंडा य णवभजिदा ॥ १९२

३६६४ । दंड ६९५००/९ ।

सत्ताणवदीजोयणचउदालसयाणि पंचमखिदीए । पणसयजुदछसहस्सा दंडेण पइण्णयाण विच्चालं ॥ १९३

४४९७ । दंड ६५०० ।

सट्ठाणे विच्चालं एदं जाणिज्ज तह परट्ठाणे । जं इंदयपरठाणे भणिदं तं यत्थ वत्तव्वं[2] ॥ १९४

। एवं पइण्णयाणं विच्चालं सम्मत्तं ।

॥ एवं णिवासखेत्तं सम्मत्तं ॥

घम्माए णारइया संखठिदाओ[3] हवंति एदाणं । सेढीए गुणगारा विंदंगुलबिदियमूलकिंचूणं ॥ १९५

। — १२ (?)

१२

मेघा पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका ऊर्ध्वग अन्तराल तीन हजार दोसौ अड़तालीस योजन और पचवनसौ धनुष है ॥ १९१ ॥ ३२४८ यो. ५५०० दण्ड ।

चतुर्थ पृथिवीमें श्रेणीबद्ध बिलोंका अन्तराल तीन हजार छहसौ चौंसठ योजन और नौसे भाजित उनहत्तर हजार पांचसौ धनुषप्रमाण है ॥ १९२ ॥ ३६६४ यो. $\frac{६९५००}{९}$ दण्ड ।

पांचवीं पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका अन्तराल चवालीससौ सत्तानबै योजन और छह हजार पांचसौ धनुषप्रमाण है ॥ १९३ ॥ ४४९७ यो. ६५०० दण्ड ।

[छठी पृथिवीमें प्रकीर्णक बिलोंका अन्तराल छह हजार नौसौ छ्यानबै योजन और पचहत्तरसौ धनुष है ॥ १९३*१ ॥ ६९९६ यो. ७५०० दण्ड ।]

इसप्रकार यह प्रकीर्णक बिलोंका अन्तराल स्वस्थानमें समझना चाहिये । परस्थानमें जो इन्द्रकबिलोंका अन्तराल कहा जा चुका है, उसीको यहांपर भी कहना चाहिये ॥ १९४ ॥

इसप्रकार प्रकीर्णक बिलोंका अन्तराल समाप्त हुआ ।

इसप्रकार निवासक्षेत्र समाप्त हुआ ।

घर्मा पृथिवीमें नारकी जीव संख्यात आयुके धारक हैं । इनकी संख्या निकालनेके लिये गुणकार घनांगुलके द्वितीय वर्गमूलसे कुछ कम है । अर्थात् इस गुणकारसे जगश्रेणीको गुणा करने-पर जो राशि उत्पन्न हो उतने नारकी जीव घर्मा पृथिवीमें विद्यमान हैं ॥ १९५ ॥

श्रेणी × घनांगुलके २सरे वर्गमूलसे कुछ कम = घर्मा पृ. के नारकी ।

१ द जोयणाणि. २ द वत्थव्वं. ३ द संखठिदाओ.

वंसाए णारइया सेढीए असंखभागमेत्ता वि । सो रासी सेढीए बारसमूलावहिदा सेढी ॥ १९६

१२

मेघाए णारइया सेढीए असंखभागमेत्ता वि । सेढीए दसममूलेण भाजिदो होदि सो सेढी ॥ १९७

१०

तुरिमाए णारइया सेढीए असंखभागमेत्ता वि । सो सेढीए अट्ठममूलेणं यवहिदा सेढी ॥ १९८

८

पंचमखिदिणारइया सेढीए असंखभागमेत्ते वि । सो सेढीए छट्ठममूलेणं भाजिदा सेढी ॥ १९९

६

मघवीए णारइया सेढीए असंखभागमेत्ता वि । सेढीए तिदियमूलेण हरिदसेढी यै सो रासी ॥ २००

३

सत्तमखिदिणारइया सेढीए असंखभागमेत्ता वि । सेढीए बिदियमूलेण हरिदसेढीअ सो रासी ॥ २०१

२

। एवं संखा समत्ता ।

वंशा पृथिवीमें नारकी जीव यद्यपि जगश्रेणीके असंख्यातभागमात्र हैं, तथापि उनकी राशिका प्रमाण जगश्रेणीके बारहवें वर्गमूलसे भाजित जगश्रेणीमात्र है ॥ १९६ ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका १२हवां वर्गमूल = वंशा पृ. के नारकी ।

मेघा पृथिवीमें नारकी जीव जगश्रेणीके असंख्यातभागप्रमाण होते हुए भी जगश्रेणीके दशवें वर्गमूलसे भाजित जगश्रेणीप्रमाण हैं ॥ १९७ ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका १०वां वर्गमूल = मेघा. पृ. के नारकी ।

चौथी पृथिवीमें नारकी जीव यद्यपि जगश्रेणीके असंख्यातभागमात्र हैं, तथापि उनका प्रमाण जगश्रेणीमें जगश्रेणीके आठवें वर्गमूलका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना है ॥ १९८ ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका ८वां वर्गमूल = चौथी पृ. के नारकी ।

पांचवीं पृथिवीमें नारकी जीव जगश्रेणीके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर भी जगश्रेणीके छठे वर्गमूलसे भाजित जगश्रेणीमात्र हैं ॥ १९९ ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका ६वां वर्गमूल = पांचवीं पृ. के नारकी ।

मघवी पृथिवीमें भी नारकी जीव जगश्रेणीके असंख्यातवें भागमात्र हैं, तथापि उनका प्रमाण जगश्रेणीमें उसके तीसरे वर्गमूलका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना है ॥ २०० ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका ३सरा वर्गमूल = छठी पृ. के नारकी ।

सातवीं पृथिवीमें यद्यपि नारकी जीव जगश्रेणीके असंख्यातवें भागप्रमाण ही हैं, तथापि उनकी राशिका प्रमाण जगश्रेणीके द्वितीय वर्गमूलसे भाजित जगश्रेणी है ॥ २०१ ॥

श्रेणी ÷ श्रेणीका २सरा वर्गमूल = सातवां पृ. के नारकी ।

इसप्रकार संख्या समाप्त हुई ।

१ द ब दसमूलेण. २ द ब हरिदा सेढीय.

णिरयपदरेसु आऊ सीमंतादीसु दोसु संखेज्जा । तदिए संखासंखो दससु असंखो तहेव सेसेसु ॥ २०२

२ । १ । ३ । ७ । १० । १७ । २२ । ३३ । (१)

एगं तिण्णि य सत्त दह सत्तारस दुवीस तेत्तीसा । रयणादीचरिमिंदयजेट्ठाऊ उवहिउवमाणा ॥ २०३

१ । ३ । ७ । १० । १७ । २२ । ३३ ।

दसणउदिसहस्साणिं आऊ अवरो य जेट्ठसीमंते । वरिसाणि णउदिलक्खा णिरइंदयभाउअस्स[1] ॥ २०४

१०००० । ९०००० । ९०००००० ।

रोरुगए जेट्ठाऊ संखातीदा हु पुव्वकोडीओ । भंतस्सुक्कस्साऊ सायरउवमस्स दसमंसो ॥ २०५

पुव्व । २ । सा । १/१०

दसमंस चउत्थमये जेट्ठाऊ सोहिऊण णवभजिदे । आउस्स पढमभूमे[2] णायव्वा हाणिवड्ढीओ ॥ २०६

१/१०

नरकपटलोंमेंसे सीमन्त आदिक दो पटलोंमें संख्यात वर्षकी आयु है, तीसरेमें संख्यात व असंख्यात वर्षकी आयु है, और आगेके दश पटलोंमें तथा शेष पटलोंमें भी असंख्यात वर्षप्रमाण ही नारकियोंकी आयु होती है ॥ २०२ ॥

उन रत्नप्रभादिक सातों पृथिवियोंके अन्तिम इन्द्रक बिलोंमें क्रमसे एक, तीन, सात, दश, सत्तरह, बाईस और तेतीस सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ २०३ ॥

सा. १ । ३ । ७ । १० । १७ । २२ । ३३ ।

सीमन्त इन्द्रकमें जघन्य आयु दश हजार वर्ष और उत्कृष्ट आयु नब्बै हजार वर्षप्रमाण है। निरय इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण नब्बै लाख वर्ष है ॥ २०४ ॥

सीमंत इं. में ज. आयु १००००; उ. आ. ९००००; नरक इं. में उ. आ. ९००००० वर्ष।

रौरुक इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु असंख्यात पूर्वकोटी, और भ्रान्त इन्द्रकमें सागरोपमके दशवें भागप्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ २०५ ॥ रौ. इं. में असंख्यात पू. को.; भ्रां. इं. में १/१० सा.।

प्रथम पृथिवीके चतुर्थ पटलमें जो एक सागरके दशवें भागप्रमाण उत्कृष्ट आयु है, उसको प्रथम पृथिवीस्थ नारकियोंकी उत्कृष्ट आयुमेंसे कम करके शेषमें नौका भाग देनेपर जो जो लब्ध आवे उतना, प्रथम पृथिवीके अवशिष्ट नौ पटलोंमें आयुके प्रमाणको लानेकेलिये हानि-वृद्धिका प्रमाण जानना चाहिये। (इस हानि-वृद्धिके प्रमाणको चतुर्थादि पटलोंकी आयुमें उत्तरोत्तर जोड़नेपर पंचमादि पटलोंमें आयुका प्रमाण निकलता है) ॥ २०६ ॥

र. प्र. पृ. में उ. आयु एक सागरोपम है, अतः १ − १/१० ÷ ९ = १/१० हा. वृ.

---

१ द ब २ | ७ | ७० | १० | ० ॥. २ ब चरमिंदिय. ३ द ब °आउक्कस्सो. ४ द ब पटमाए.

सायरउवमा इगिदुतिचउपणछसत्तअट्ठणवदसया । दसभजिदा रयणप्पहतुरिमिंदयपहुडिजेट्ठाऊ ॥ २०७

$\frac{१}{१०}$ | $\frac{२}{१०}$ | $\frac{३}{१०}$ | $\frac{४}{१०}$ | $\frac{५}{१०}$ | $\frac{६}{१०}$ | $\frac{७}{१०}$ | $\frac{८}{१०}$ | $\frac{९}{१०}$ | $\frac{१०}{१०}$

उवरिमखिदिजेट्ठाऊ सोहियं हेट्ठिमखिदीय जेट्ठम्मि । सेसं णियणियइंदयसंखाभजिदम्मि हाणिवड्ढीओ ॥ २०८

तेरहउवही पढमे दोदोजुत्ता यं जाव तेत्तीसं । एक्कारसेहि भजिदा बिदियखिदीयिंदयाण[1] जेट्ठाऊ ॥ २०९

$\frac{१३}{११}$ | $\frac{१५}{११}$ | $\frac{१७}{११}$ | $\frac{१९}{११}$ | $\frac{२१}{११}$ | $\frac{२३}{११}$ | $\frac{२५}{११}$ | $\frac{२७}{११}$ | $\frac{२९}{११}$ | $\frac{३१}{११}$ | $\frac{३३}{११}$

इगतीसउवहिउवमा पभओ चउवड्ढिदा य पत्तेकं । जा तेसट्ठि णवभजिदं एदं तदियावणिम्मि जेट्ठाऊ ॥ २१०

$\frac{३१}{९}$ | $\frac{३५}{९}$ | $\frac{३९}{९}$ | $\frac{४३}{९}$ | $\frac{४७}{९}$ | $\frac{५१}{९}$ | $\frac{५५}{९}$ | $\frac{५९}{९}$ | $\frac{६३}{९}$

रत्नप्रभा पृथिवीके चतुर्थ पंचमादि इन्द्रकोंमें क्रमशः दशसे भाजित एक, दो, तीन, चार, पांच, छह, सात, आठ, नौ और दश सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ २०७ ॥

भ्रांत इं. $\frac{१}{१०}$; उद्भ्रांत इं. $\frac{२}{१०}$; सं. $\frac{३}{१०}$; असं. $\frac{४}{१०}$; विभ्रां. $\frac{५}{१०}$; तप्त $\frac{६}{१०}$; त्रसित $\frac{७}{१०}$; वक्रां. $\frac{८}{१०}$; अव. $\frac{९}{१०}$; त्रिक्रां. $\frac{१०}{१०}$ सा.

उपरिम पृथिवीकी उत्कृष्ट आयुको नीचेकी पृथिवीकी उत्कृष्ट आयुमेंसे कम करके शेषमें अपने अपने इन्द्रकोंकी संख्याका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना विवक्षित पृथिवीमें आयुकी हानि-वृद्धिका प्रमाण जानना चाहिये ॥ २०८ ॥

उदाहरण—द्वि. उ. आयु. सा. ३ − १ ÷ ११ = $\frac{२}{११}$ द्वि. पृ. में आयुकी हा. वृ.

द्वितीय पृथिवीके ग्यारह इन्द्रकोंमेंसे प्रथम इन्द्रकमें ग्यारहसे भाजित तेरह ($\frac{१३}{११}$) सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट आयु है। इसमें तेतीस ($\frac{३३}{११}$) प्राप्त होनेतक ग्यारहसे भाजित दो दो ($\frac{२}{११}$) को मिलानेपर क्रमशः द्वितीय पृथिवीके शेष द्वितीयादि इन्द्रकोंकी उत्कृष्ट आयुका प्रमाण होता है ॥ २०९ ॥

स्तनक इं. $\frac{१३}{११}$; त. $\frac{१५}{११}$; म. $\frac{१७}{११}$; व. $\frac{१९}{११}$; घा. $\frac{२१}{११}$; सं. $\frac{२३}{११}$; जिह्वा. $\frac{२५}{११}$; जिह्वक $\frac{२७}{११}$; लोल $\frac{२९}{११}$; लोलक $\frac{३१}{११}$; स्त. लो. $\frac{३३}{११}$ सा.।

तृतीय पृथिवीमें नौसे भाजित इकतीस ($\frac{३१}{९}$) सागरोपम प्रभव या आदि है। इसके आगे प्रत्येक पटलमें नौसे भाजित चारकी ($\frac{४}{९}$) की तिरेसठ ($\frac{६३}{९}$) तक वृद्धि करनेपर उत्कृष्ट आयुका प्रमाण निकलता है ॥ २१० ॥

तप्त. $\frac{३१}{९}$; शी. $\frac{३५}{९}$; तपन. $\frac{३९}{९}$; तापन. $\frac{४३}{९}$; नि. $\frac{४७}{९}$; प्रज्व. $\frac{५१}{९}$; उज्व. $\frac{५५}{९}$; संज्व. $\frac{५९}{९}$; संप्रज्व. $\frac{६३}{९}$ सा.

---

१ द ब सोहस. २ द दोदो जेट्ठा य. ३ ब °खिदीयंदयाण.

बावण्णुदहीउवमा पभओ तियवड्ढिदा य पत्तेक्कं । सत्तरिपरियंतं ते सत्तहिदा तुरिमपुढविजेट्ठाऊ ॥ २११

५२	५५	५८	६१	६४	६७	७०
७	७	७	७	७	७	७

सगवण्णोवहिउवमा आदी सत्ताधिया य पत्तेक्कं । पणसीदीपरिअंतं पंचहिदा पंचमीय जेट्ठाऊ ॥ २१२

५७	६४	७१	७८	८५
५	५	५	५	५

छप्पण्णा इगिसट्ठी छासट्ठी[1] होंति उवहिउवमाणा । तियभजिदा मघवीए णारयजीवाण जेट्ठाऊ ॥ २१३

५६	६१	६६
३	३	३

सत्तमखिदिजीवाणं आऊ तेत्तीसउवहिउवमाणा । उवरिमउक्कस्साऊ समयजुदो हेट्ठिमे जहण्णं खु ॥ २१४

३३ ।[2]

एवं सत्तखिदीणं पत्तेक्कं इंदयाण जो आऊ । सेढिविसेढिगदाणं सो चेय पइण्णयाणं पि ॥ २१५

। एवं आउ सम्मत्ता ।

चतुर्थ पृथिवीमें सातसे भाजित बावन सागरोपम प्रभव है । इसके आगे प्रत्येक पटलमें सत्तरपर्यन्त सातसे भाजित तीन ($\frac{३}{७}$) की वृद्धि करनेपर उत्कृष्ट आयुका प्रमाण निकलता है ॥ २११ ॥

आर. $५\frac{२}{७}$; मार $५\frac{५}{७}$ तार $५\frac{८}{७}$; चर्चा $६\frac{१}{७}$; तमक $६\frac{४}{७}$; वाद $६\frac{७}{७}$; ख. ख. $७\frac{०}{७}$ सा. ।

पांचवीं पृथिवीमें पांचसे भाजित सत्तावन सागरोपम आदि है । अनन्तर प्रत्येक पटलमें पचासीतक पांचसे भाजित सात सात ($\frac{७}{५}$) के जोड़नेपर उत्कृष्ट आयुका प्रमाण जाना जाता है ॥ २१२ ॥

तमक $५\frac{७}{५}$; भ्र. $६\frac{४}{५}$; झ. $७\frac{१}{५}$; अंध. $७\frac{८}{५}$; ति. $८\frac{५}{५}$ सा. ।

मघवी पृथिवीके तीन पटलोंमें नारकियोंकी उत्कृष्ट आयु क्रमसे तीनसे भाजित छप्पन, इकसठ और छ्यासठ सागरोपम है ॥ २१३ ॥

हिम. $५\frac{६}{३}$; वर्दल $६\frac{१}{३}$; लल्लंक $६\frac{६}{३}$ सा. ।

सातवीं पृथिवीके जीवोंकी आयु तेतीस सागरोपमप्रमाण है । ऊपर ऊपरके पटलोंमें जो उत्कृष्ट आयु है, उसमें एक समय मिलानेपर वही नीचेके पटलोंमें जघन्य आयु हो जाती है ॥२१४॥

अवधिस्थान ३३ सा.

इसप्रकार सातों पृथिवियोंके प्रत्येक इन्द्रकमें जो उत्कृष्ट आयु कही गई है, वही वहांके श्रेणीबद्ध और विश्रेणीगत प्रकीर्णक बिलोंकी भी आयु समझना चाहिये ॥ २१५ ॥

इसप्रकार आयुका वर्णन समाप्त हुवा ।

---

१ द ब बासट्ठी. २ द समओ जुदो, ब समउजुदो ३ द २० । ३३ ।, ब २२ । ३३ ।.

सत्तत्तिछदंडहत्थंगुलाणि कमसो हवंति घम्माए । चरिमिंदयम्मि उदओ दुगुणो दुगुणो य सेसचरिमाणं[1] ॥ २१६
दं ७, ह ३, अं ६ । दं १५, ह २, अं १२ । दं ३१, ह १ । दं ६२, ह २ । दं १२५ । दं २५० । दं ५०० ।
रयणप्पहपुत्थीए उदओ[2] सीमंतणामपडलम्मि । जीवाणं हत्थतियं सेसेसुं हाणिवड्ढीओ ॥ २१७
ह ३ ।
आदी अंते सोहिय रूऊणिंदाहिदम्मि हाणिचया । मुहसोहेदे खिदिसुद्धे णियणियपदरेसु उच्छेहो ॥ २१८
हाणिचयाण पमाणं घम्माए होंति दोण्णि हत्थाइं । अट्ठंगुलाणि अंगुलभागो दोहिं विहत्तो[3] यं ॥ २१९
ह २ । अं ८ । भा १/२
एक्कधणुमेक्कहत्थो सत्तरसंगुलदलं च णिरयम्मि । इगिदंडो तियहत्था सत्तरसं अंगुलाणि रोरुए ॥ २२०
दं १, ह १, अं १७ । दं १, ह ३, अं १७ ।

घर्मा पृथिवीके अन्तिम इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरकी उंचाई सात धनुष, तीन हाथ और छह अंगुल है। इसके आगे शेष पृथिवियोंके अन्तिम इन्द्रकोंमें रहनेवाले नारकियोंके शरीरकी उंचाईका प्रमाण उत्तरोत्तर इससे दुगुणा दुगुणा होता गया हैं ॥ २१६ ॥

घर्मा पृ. में शरीरकी उंचाई दं. ७, ह. ३, अं. ६; वंशा दं. १५, ह. २, अं. १२; मेघा दं. ३१, ह. १, अंजना दं. ६२, ह. २; अरिष्टा दं. १२५; मघवी दं. २५०; माघवी दं. ५००।

रत्नप्रभा पृथिवीके सीमन्त नामक पटलमें जीवोंके शरीरकी उंचाई तीन हाथ है। इसके आगे शेष पटलोंमें शरीरकी उंचाई हानि-वृद्धिको लिये हुए है ॥ २१७ ॥ सीमंत उंचाई ह. ३ ।

अन्तमेंसे आदिको घटाकर शेषमें एक कम अपने इन्द्रकके प्रमाणका भागदेनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रथम पृथिवीमें हानि-वृद्धिका प्रमाण है। इसे उत्तरोत्तर मुखमें मिलाने अथवा भूमिमेंसे कम करनेपर अपने अपने पटलोंमें उंचाईका प्रमाण ज्ञात होता है ॥ २१८ ॥

उदाहरण—अन्त ७ धनु. ३ हा. ६ अं.; आदि ३ हा.; इसे हाथोंमें परिवर्तित करके $३१\frac{१}{२} - ३ \div (१३ - १) = २$ हा. $८\frac{१}{२}$ अं. हानि-वृद्धि।

घर्मा पृथिवीमें इस हानि-वृद्धिका प्रमाण दो हाथ, आठ अंगुल और एक अंगुलका दूसरा भाग ($\frac{१}{२}$) है ॥ २१९ ॥ हा. २, अं. $८\frac{१}{२}$ ।

प्रथम पृथिवीके निरय नामक द्वितीय पटलमें एक धनुष एक हाथ और सत्तरह अंगुलके आधे अर्थात् साढ़े आठ अंगुलप्रमाण, तथा रौरुक पटलमें एक धनुष, तीन हाथ और सत्तरह अंगुल प्रमाण शरीरकी उंचाई है ॥ २२० ॥

नरक प. में दं. १, हा. १, अं. $\frac{१}{२}$; रौरुक प. में दं. १, ह. ३, अं. १७।

---

१ द सेसचरिमाणं. २ द ओदओ. ३ द दोहि विहत्थो य.

दो दंडा दो हत्था अंतम्मि विभंगमंगुलं होदि । उब्भंते तिण्णि दंडा दसअंगुलाणि य उच्छेहो ॥ २२१

दं २, ह २, अं ½ | दं ३, अंगु १० |

तिय दंडा दो हत्था अट्ठारह अंगुलाणि पब्भट्ठं । संभंतेणामइंदयउच्छेहो पढमपुढवीए ॥ २२२

दं ३, ह २, अं १८ भा १/२ |

चत्तारो चावाणिं सत्तावीसं च अंगुलाणिं पि । होदि असंभंतिंदयउदओ पढमाए पुढवीए ॥ २२३

दं ४, अं २७ ।

चत्तारो कोदंडा तिय हत्था अंगुलाणि तेवीसं । दलिदाणि होदि उदओ विब्भंतयणामि पढलम्मि ॥ २२४

दं ४, ह ३, अं २३ ½ |

पंच चिय कोदंडा एक्को हत्थो य वीस पव्वाणि । तत्तिंदयम्मि उदओ पण्णत्तो पढमखोणीए ॥ २२५

दं ५, ह १, अं २० ।

छ चिय कोदंडाणिं चत्तारो अंगुलाणि पब्भट्ठं । उच्छेहो णादव्वो पढलम्मि य तसिदणामम्मि ॥ २२६

दं ६, अं ४ भा १/२ |

भ्रान्त पटलमें दो धनुष, दो हाथ और डेढ़ अंगुल; तथा उद्भ्रान्त पटलमें तीन धनुष और दश अंगुलप्रमाण शरीरका उत्सेध है ॥ २२१ ॥

भ्रान्त प. में दं. २, ह. २, अं. ½; उद्भ्रांत प. में दं. ३. अं. १०

प्रथम पृथिवीके संभ्रान्त नामक इन्द्रकमें शरीरकी उंचाई तीन धनुष, दो हाथ और साढ़े अठारह अंगुल है ॥ २२२ ॥ संभ्रान्त प. में दं. ३, ह. २, अं. १८½.

प्रथम पृथिवीके असंभ्रान्त इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरकी उंचाईका प्रमाण चार धनुष और सत्ताईस अंगुल है ॥ २२३ ॥ असंभ्रान्त प. में दं. ४. अं. २७.

विभ्रान्त नामक पटलमें चार धनुष, तीन हाथ और तेईस अंगुलके आधे अर्थात् साढ़े ग्यारह अंगुलप्रमाण उत्सेध है ॥ २२४ ॥ विभ्रान्त प. में दं. ४, ह. ३ अं. ११½.

प्रथम पृथिवीके तप्त इन्द्रकमें शरीरका उत्सेध पांच धनुष, एक हाथ और बीस अंगुल-प्रमाण कहा गया है ॥ २२५ ॥ तप्त प. में दं. ५, ह. १, अं २०.

त्रसित नामक पटलमें नारकियोंके शरीरकी उंचाई छह धनुष और अर्ध अंगुलसहित चार अंगुलप्रमाण जानना चाहिये ॥ २२६ ॥ त्रसित प. में दं. ६, अं. ४½.

---

१ द सव्वत्थ, ब सव्वत्थ.

बाणासणाणि छ चिय दो हत्था तेरसंगुलाणिं पि । वक्कंतणामपडले उच्छेहो पढमपुढवीए ॥ २२७

दं ६, ह २, अं १३ ।

सत्त य सरासणाणिं अंगुलया एक्कवीसपण्णट्ठं । पडलम्मि य उच्छेहो होदि अवक्कंतणामम्मि ॥ २२८

दं ७, अं २१ भा १/२

सत्त विसिट्ठासणाणिं हत्थाइं तिण्णि छच्च अंगुलयं । चरिमिंदयम्मि उदओ विक्कंते पढमपुढवीए ॥ २२९

दं ७, ह ३, अं ६ ।

दो हत्था वीसंगुल एक्कारसभजिददो वि पव्वाइं । एयाइं वड्ढीओ मुहसहिदा होंति उच्छेहो ॥ २३०

ह २, अं २० भा २/११

अट्ठ विसिट्ठासणाणिं दो हत्था अंगुलाणि चउवीसं । एक्कारसभजिदाइं उदवो पुण बिदियवसुहाए ॥ २३१

दं ८, ह २, अं २४ ।

११

णव दंडा बावीसंगुलाणि एक्कारसम्मि चउपव्वं । भजिदाओ सो भागो बिदिए वसुहाय उच्छेहो ॥ २३२

दं ९, अं २२ भा ४/११

प्रथम पृथिवीके वक्रान्त नामक पटलमें शरीरका उत्सेध छह धनुष, दो हाथ और तेरह अंगुल है ॥ २२७ ॥ वक्रान्त प. में दं. ६, ह. २, अं. १३.

अवक्रान्त नामक पटलमें सात धनुष, और साढ़े इक्कीस अंगुलप्रमाण शरीरका उत्सेध है ॥ २२८ ॥ अवक्रान्त प. में दं. ७, अं. २१$\frac{1}{2}$.

प्रथम पृथिवीके विक्रान्त नामक अन्तिम इन्द्रकमें शरीरका उत्सेध सात धनुष, तीन हाथ और छह अंगुल है ॥ २२९ ॥ विक्रान्त प. में दं. ७, ह. ३, अं. ६.

वंशा पृथिवीमें दो हाथ, बीस अंगुल और ग्यारहसे भाजित दो भागप्रमाण प्रत्येक पटलमें वृद्धि होती है। इस वृद्धिको मुख अर्थात् प्रथम पृथिवीके उत्कृष्ट उत्सेध-प्रमाणमें उत्तरोत्तर मिलाते जानेसे क्रमशः द्वितीय पृथिवीके प्रथमादि पटलोंमें उत्सेधका प्रमाण निकलता है ॥ २३० ॥ ह. २, अं. २०$\frac{2}{11}$.

द्वितीय पृथिवीके (स्तनक नामक प्रथम इन्द्रकमें) नारकियोंके शरीरका उत्सेध आठ धनुष, दो हाथ और ग्यारहसे भाजित चौबीस अंगुलप्रमाण है ॥ २३१ ॥

स्तनक प. में दं. ८, ह. २, अं. $\frac{24}{11}$.

दूसरी पृथिवीके (तनक नामक द्वितीय पटलमें) नौ धनुष, बाईस अंगुल और ग्यारहसे भाजित चार भागप्रमाण शरीरका उत्सेध है ॥ २३२ ॥ तनक प. में दं. ९, अं २२$\frac{4}{11}$.

---

१ द ब °सहिदे. २ द अट्ठ विहासणाणिं.

णव दंडा तियहत्थं चउरुत्तरदोसयाणि पव्वाणिं । एक्कारसभजिदाहं उदओ मणइंदयम्मि जीवाणं ॥ २३३

दं ९, ह ३, अं १८ भा ६/११

दस दंडा दो हत्था चोद्दस पव्वाणि अट्ठ भागा य । एक्कारसेहिं भजिदा उदओ वणगिंदयम्मि बिदियाए ॥ २३४

दं १०, ह २, अं १४ भा ८/११

एक्कारस चावाणिं एक्को हत्थो दसंगुलाणिं पि । एक्कारसहिददसंसा उदओ घादिंदयम्मि बिदियाए ॥ २३५

दं ११, ह १, अं १० भा १०/११

बारस सरासणाणिं पव्वाणिं अट्ठहत्तरी होंति । एक्कारसभजिदाणिं संघादे णारयाण उच्छेहो ॥ २३६

दं १२, अं ७८/११

बारस सरासणाणिं तिय हत्था तिण्णि अंगुलाणिं च । एक्कारसहियतिभाया उदओ जिब्भिंदअम्मि बिदियाए ॥ २३७[1]

दं १२, ह ३, अं ३ भा ३/११

तेवण्णाण य हत्था तेवीसा अंगुलाणि पण भागा । एक्कारसेहिं भजिदो जिब्भगपडलम्मि उच्छेहो ॥ २३८

ह ५३, अं २३ भा ५/११

मन इन्द्रकमें जीवोंके शरीरका उत्सेध नौ धनुष, तीन हाथ और ग्यारहसे भाजित दोसौ चार अंगुलप्रमाण है ॥ २३३ ॥ मनक प. में दं. ९, ह. ३, अं. $\frac{२०४}{११}$ ($१८\frac{६}{११}$).

दूसरी पृथिवीके वनक इन्द्रकमें शरीरका उत्सेध दश धनुष, दो हाथ, चौदह, अंगुल और आठ अंगुलोंका ग्यारहवां भाग है ॥ २३४ ॥ वनक प. में दं. १०, ह. २, अं. $१४\frac{८}{११}$.

द्वितीय पृथिवीके घात इन्द्रकमें ग्यारह धनुष, एक हाथ, दश अंगुल और ग्यारहसे भाजित दश भागप्रमाण शरीरका उत्सेध है ॥ २३५ ॥ घात प. में दं. ११, ह. १, अं. $१०\frac{१०}{११}$.

संघात इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध बारह धनुष, और ग्यारहसे भाजित अठहत्तर अंगुलप्रमाण है ॥ २३६ ॥ संघात प. में दं. १२, अं. $\frac{७८}{११}$ ($७\frac{१}{११}$).

द्वितीय पृथिवीके जिह्व इन्द्रकमें शरीरका उत्सेध बारह धनुष, तीन हाथ, तीन अंगुल और ग्यारहसे भाजित तीन भागप्रमाण है ॥ २३७ ॥ जिह्व प. में दं. १२, ह. ३, अं. $३\frac{३}{११}$.

जिह्वक पटलमें शरीरका उत्सेध तिरेपन हाथ, तेईस अंगुल और एक अंगुलके ग्यारह भागोंमेंसे पांच भागमात्र है ॥ २३८ ॥ जिह्वक प. में ह. ५३, अं. $२३\frac{५}{११}$.

---

१ द ब तणगिंदयम्मि. २ ब घादिंदियम्मि. ३ द-पुस्तक एव. ४ द ब मजिदाणं.

चोद्दस पंच सोलसजुत्ताणि दोसयाणि पण्णाणि । एक्कारसभजिदाइं लोलाणामम्मि उच्छेहो ॥ २३९

दं १४, अं २१६ | ११

एक्कोणसट्ठि हत्था पण्णरसं अंगुलाणि णव भागा । एक्कारसेहिं भजिदा लोलयणामम्मि उच्छेहो ॥ २४०

ह ५९, अं १५ भा ९ | ११

पण्णरस दोण्णि दंडा दो हत्था बारसंगुलाणि च । अंतिमपडले थणलोलणम्मि विदियम्मि उच्छेहो ॥ २४१

दं १५, ह २, अं १२ ।

एक्क चयू दो हत्था बावीसं अंगुलाणि दो भागा । तियभजिदा णेदव्वा मेघाए हाणिवुड्ढीओ[1] ॥ २४२

ध १, ह २, अं २२ भा २ | ३

सत्तरसं चावाणिं चोत्तीसं अंगुलाणि दो भागा । तियभजिदा मेघाए उदओ तत्तिंदयम्मि जीवाणं ॥ २४३

ध १७, अं ३४ भा २ | ३

एक्कोणवीस दंडा अट्ठावीसंगुलाणि तिहिदाणि[2] । सीदिंदयम्मि[3] तदियक्खोणीए णारयाण उच्छेहो ॥ २४४

ध १९, अं २८ | ३

लोल नामक पटलमें शरीरका उत्सेध चौदह धनुष और ग्यारहसे भाजित दोसौ सोलह अंगुलमात्र है ॥ २३९ ॥ लोल प. में दं. १४, अं. $\frac{२१६}{११}$ ($१९\frac{७}{११}$).

लोलक नामक पटलमें नारकियोंके शरीरकी उंचाई उनसठ हाथ, पन्द्रह अंगुल और ग्यारहसे भाजित अंगुलके नौ भागप्रमाण है ॥ २४० ॥ लोलक प. में ह. ५९, अं. $१५\frac{९}{११}$.

द्वितीय पृथिवीके स्तनलोलक अन्तिम पटलमें पन्द्रह धनुष, दो हाथ और बारह अंगुल-प्रमाण शरीरका उत्सेध है ॥ २४१ ॥ स्तन. प. में दं. १५, ह. २, अं. १२.

मेघा पृथिवीमें एक धनुष, दो हाथ, बाईस अंगुल और तीनसे भाजित एक अंगुलके दो भागप्रमाण हानि-वृद्धि जानना चाहिये ॥ २४२ ॥ दं. १, ह. २, अं. $२२\frac{२}{३}$ हा. वृ.

मेघा पृथिवीके तप्त इन्द्रकमें जीवोंके शरीरका उत्सेध सत्तरह धनुष, चौंतीस अंगुल और तीनसे भाजित अंगुलके दो भागप्रमाण है ॥ २४३ ॥ तप्त प. में दं. १७, अं. $३४\frac{२}{३}$.

तीसरी पृथिवीके शीत इन्द्रकमें नारकियोंका उत्सेध उन्नीस धनुष और तीनसे भाजित अट्ठाईस अंगुलमात्र है ॥ २४४ ॥ शीत प. में. दं. १९, अं. $\frac{२८}{३}$ ($९\frac{१}{३}$).

---

१ ब पण्णरस. २ ब पण्णरस[2]. ३ ब घणलोलगम्मि. ४ द हत्थ. ५ द णादव्वो, ब णायव्वो. ६ द वड्ढीओ. ७ द तिहिदाणं. ८ द ततिदिदियंमि, ब ततिदिदयंमि.

वीसस्स दंडसहियं सीदीए अंगुलाणि होदि तदा । तदियाए पुढवीए[1] तवणिंदयणारयम्मि उच्छेहो ॥ २४५

ध २०, अं ८० ।

णउदिपमाणा हत्था तीहि[2] विहत्ताणि वीस पव्वाणि । मेघाए तावणिंदयठिदाण[3] जीवाण उच्छेहो ॥ २४६

ह ९०, अं २०
३

सत्ताणउदी हत्था सोलस पव्वाणि तियविहत्ताणि । उदओ णिदाघणामाए पडले णारया जीवा ॥ २४७

ह ९७, अं १६
३

छव्वीसं चावाणिं चत्तारी अंगुलाणि मेघाए । पज्जलिदणामपडले ठिदाण जीवाण उच्छेहो ॥ २४८

ध २६, अं ४ ।

सत्तावीसं दंडा तियहत्था अट्ठ अंगुलाणिं च । तियभजिदाइं उदओ उज्जलिदे[4] णारयाण णादव्वो ॥ २४९

ध २७, ह ३ भा ८
३

एक्कोणतीसं[5] दंडा दो हत्था अंगुलाणि चत्तारिं । तियभजिदाइं उदओ संजलिदे तदियपुढवीए ॥ २५०

ध २९, ह २, अं ४
३

तीसरी पृथिवीके तपन इन्द्रक बिलमें शरीरका उत्सेध बीस धनुष सहित अस्सी अंगुल-प्रमाण है ॥ २४५ ॥ तपन प. में. दं. २०, अं. ८० (ह. ३, अं. ८).

मेघा पृथिवीके तापन इन्द्रकमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध नब्बै हाथ और तीनसे भाजित बीस अंगुलमात्र है ॥ २४६ ॥ तापन प. में ह. ९०, अं. $\frac{२०}{३}$ (दं. २२, ह. २, अं. $६\frac{२}{३}$).

निदाघ नामक पटलमें नारकी जीवोंके शरीरकी उंचाई सत्तानवै हाथ और तीनसे भाजित सोलह अंगुलमात्र है ॥ २४७ ॥ निदाघ प. में. ह. ९७, अं. $\frac{१६}{३}$ (दं. २४, ह. १, अं. $५\frac{१}{३}$).

मेघा पृथिवीके प्रज्वलित नामक पटलमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध छब्बीस धनुष और चार अंगुलप्रमाण है ॥ २४८ ॥ प्रज्वलित प. में. दं. २६, अं. ४.

उज्वलित इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध सत्ताईस धनुष, तीन हाथ और तीनसे भाजित आठ अंगुलमात्र है ॥ २४९ ॥ उज्वलित प. में ध. २७, ह. ३, अं. $\frac{८}{३}$.

तीसरी पृथिवीके संज्वलित इन्द्रकमें शरीरका उत्सेध उनतीस धनुष, दो हाथ और तीनसे भाजित चार अंगुलमात्र है ॥ २५० ॥ संज्व. प. में. ध. २९, ह. २, अं. $\frac{४}{३}$ ($१\frac{१}{३}$).

---

१ द ब तदियं चयपुढवीए. २ द तीयविहत्थाणि, ब तदिविहत्ताणि. ३ द ब तवणिंदय . ४ द उज्जलिदो. ५ ब एकोणतीस. ६ ब संजलितदिय°.

इकतीसं दंडाइं एक्को हत्थो अ तदियपुढवीए । संपज्जलिदे[1] चरिमिंदयणारइयाण होदि उच्छेहो ॥ २५१

ध ३१, ह १ ।

चउ दंडा इगि हत्थो पव्वाणिं वीस सत्तपविहत्ता । चउ भागा तुरिमाए पुढवीए हाणिवड्ढीओ ॥ २५२

ध ४, ह १, अं २० भा ४/७

पणतीसं दंडाइं हत्थाइं दोण्णि वीस पव्वाणिं । सत्तहिदा चउभागा उदओ आरट्ठिदाण जीवाणं ॥ २५३

ध ३५, ह २, अं २० भा ४/७

चालीसं कोदंडा वीसब्भहियं सयं च पव्वाणिं । सत्तहिदा उच्छेहो तुरिमाए[2] मारपडलजीवाणं ॥ २५४

ध ४०, अं १२०/७

चउदालं चावाणिं दो हत्था अंगुलाणि छण्णउदी । सत्तहिदा उच्छेहो तारिंदयसंठिदाण जीवाणं ॥ २५५

ध ४४, ह २, अं ९६/७

एक्कोणवण्ण दंडा बाहत्तरि अंगुला य सत्तहिदा । तच्चिंदयम्मि[3] तुरिमक्खोणीए[4] णारयाण उच्छेहो ॥ २५६

ध ४९, अं ७२/७

तीसरी पृथिवीके संप्रज्वलित नामक अंतिम इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध इकतीस धनुष और एक हाथप्रमाण है ॥ २५१ ॥ संप्रज्व. प. में ध. ३१, ह. १.

चतुर्थ पृथिवीमें चार धनुष, एक हाथ, बीस अंगुल और सातसे भाजित चार भाग-प्रमाण हानि-वृद्धि है ॥ २५२ ॥ ध. ४, ह. १, अं. २०$\frac{४}{७}$. हा. वृ.

आर पटलमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध पैंतीस धनुष, दो हाथ, बीस अंगुल और सातसे भाजित चार भागप्रमाण है ॥ २५३ ॥ आर प. में ध. ३५, ह. २, अं. २०$\frac{४}{७}$.

चतुर्थ पृथिवीके मार नामक पटलमें रहनेवाले जीवोंके शरीरकी उंचाई चालीस धनुष और सातसे भाजित एकसौ बीस अंगुलप्रमाण है ॥ २५४ ॥ मार प. में. ध. ४०, अं. $\frac{१२०}{७}$ (१७$\frac{१}{७}$).

चतुर्थ पृथिवीके तार इन्द्रकमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध चवालीस धनुष, दो हाथ और सातसे भाजित छ्यानवै अंगुलमात्र है ॥ २५५ ॥

तार प. में ध. ४४, ह. २, अं. $\frac{९६}{७}$ (१३$\frac{५}{७}$).

चतुर्थ पृथिवीमें तत्व (चर्चा) इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध उनंचास धनुष और सातसे भाजित बहत्तर अंगुलमात्र है ॥ २५६ ॥ चर्चा. प. में ध. ४९, अं. $\frac{७२}{७}$ (१०$\frac{३}{७}$).

---

१ ब तदिद. २ द ब संजलिदे. ३ द ब णारया. ४ द ब पंचाए. ५ द ब तच्चिंदयम्मि.

तेवण्णो चावाणिं दो हत्था अट्ठताल पव्वाणि । सत्तहिदाणिं उदओ दमगिंदयसंठियाण जीवाणं ॥ २५७

ध ५३, ह २, अं ४८/७

अट्ठावण्णा दंडा सत्तहिदा अंगुला य चउवीसं । वादिंदयम्मि तुरिमक्खोणीए णारयाण उच्छेहो ॥ २५८

ध ५८, अं २४/७

बासट्ठी कोदंडा हत्थाइं दोण्णि तुरिमपुढवीए । चरिमिंदयम्मि खलखलणामाए णारयाण उच्छेहो ॥ २५९

दं ६२, ह २ ।

बारस सरासणाणिं दो हत्था पंचमीय पुढवीए । खयवड्ढीय पमाणं णिद्दिट्ठं वीयरागेहिं ॥ २६०

दं १२, ह २ ।

पण्हत्तरिपरिमाणा कोदंडा पंचमीय पुढवीए । पढमिंदयम्मि उदओ तमणामे संठिदाण जीवाणं ॥ २६१

दं ७५ ।

सत्तासीदी दंडा दो हत्था पंचमीए खोणीए । पडलम्मि य भमणामे णारयजीवाण उच्छेहो ॥ २६२

दं ८७, ह २ ।

एक्कं कोदंडसयं झसणामे णारयाण उच्छेहो । चावाणि बारसुत्तरसयमेक्कं अंधयम्मि दो हत्था ॥ २६३

दं १०० । दं ११२, ह २ ।

तमक इन्द्रकमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध तिरेपन धनुष, दो हाथ और सातसे भाजित अड़तालीस अंगुलप्रमाण है ॥ २५७ ॥ तमक प. में ध. ५३, ह. २, अं. $\frac{४८}{७}$ ($६\frac{६}{७}$).

चतुर्थ पृथिवीके बाद इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध अट्ठावन धनुष और सातसे भाजित चौबीस अंगुल है ॥ २५८ ॥ बाद प. में ध. ५८, अं. $\frac{२४}{७}$ ($३\frac{३}{७}$).

चतुर्थ पृथिवीके खलखल नामक अन्तिम इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध बासठ धनुष और दो हाथप्रमाण है ॥ २५९ ॥ खलखल प. में ध. ६२, ह. २.

वीतरागदेवने पांचवीं पृथिवीमें क्षय व वृद्धिका प्रमाण बारह धनुष और दो हाथ बतलाया है ॥ २६० ॥ ध. १२, ह. २ हा. वृ.

पांचवीं पृथिवीके तम नामक प्रथम इन्द्रकमें स्थित जीवोंके शरीरकी उंचाई पचहत्तर धनुषप्रमाण है ॥ २६१ ॥ तम प. में ध. ७५.

पांचवीं पृथिवीके भ्रम नामक पटलमें नारकी जीवोंके शरीरका उत्सेध सतासी धनुष और दो हाथप्रमाण है ॥ २६२ ॥ भ्रम प. में ध. ८७, ह. २.

झष नामक पटलमें एकसौ धनुष, तथा अंधक पटलमें एकसौ बारह धनुष और दो हाथ-प्रमाण नारकियोंके शरीरकी उंचाई है ॥ २६३ ॥

झष प. में ध. १०० । अंधक प. में ध. ११२, ह. २.

---

१ ब तेण्णाव.

एवं कोदंडसयं अब्भहियं पंचवीसरूवेहिं । धूमप्पहाए चरिमिंदयम्मि तिमिसयम्मि उच्छेहो ॥ २६४

दं १२५ ।

एक्कत्तालं दंडा हत्थाइं दोण्णि सोलसंगुलया । छट्ठीए वसुहाए परिमाणं हाणिवड्ढीए ॥ २६५

दं ४१, ह २, अं १६ ।

छासट्ठीअधियसयं कोदंडा दोण्णि होंति हत्था य । सोलस पव्वा य पुढं हिमपडलगदाण उच्छेहो ॥ २६६

दं १६६, ह २, अं १६ ।

दोण्णि सयाणिं अट्ठाउत्तरदंडाणि अंगुलाणं च । बत्तीसं छट्ठीएं वद्दलठिदजीवउच्छेहो ॥ २६७

दं २०८, अं ३२ ।

पण्णासब्भहियाणिं दोण्णि सयाणिं सरासणाणिं च । लल्लंकणामइंदयठिदाण जीवाण उच्छेहो ॥ २६८

दं २५० ।

पंचसयाइ धणूणिं सत्तमअवणीइ अवधिठाणम्मि । सव्वेसिं णिरयाणं काउच्छेहो जिणादेसो ॥ २६९

दं ५०० ।

एवं रयणादीणं पत्तेक्कं इंदयाण जो उदओ । सेढिविसेढिगदाणं पइण्णयाणं च सो णेओ ॥ २७०

। इदि णारयाण उच्छेहो सम्मत्तो[4] ।

धूमप्रभा पृथिवीके तिमिश्र नामक अन्तिम इन्द्रकमें नारकियोंके शरीरका उत्सेध पच्चीस अधिक एकसो अर्थात् एकसौ पच्चीस धनुषमात्र है ॥ २६४ ॥ तिमिश्र. प. में ध. १२५.

छठी पृथिवीमें हानि-वृद्धिका प्रमाण इकतालीस धनुष, दो हाथ और सोलह अंगुल है ॥ २६५ ॥ ध. ४१, ह. २, अं. १६ हा. वृ.

हिम पटलगत जीवोंके शरीरकी उंचाई एकसौ छयासठ धनुष, दो हाथ और सोलह अंगुलप्रमाण है ॥ २६६ ॥ हिम प. में दं. १६६, ह. २ अं. १६.

छठी पृथिवीके वर्दल पटलमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध दोसौ आठ धनुष और बत्तीस अंगुलप्रमाण है ॥ २६७ ॥ वर्दल प. में दं. २०८, अं. ३२ (१ ह. ८ अं.).

लल्लंक नामक इन्द्रकमें स्थित जीवोंके शरीरका उत्सेध दोसौ पचास धनुषमात्र है ॥ २६८ ॥ लल्लंक प. में दं. २५०.

सातवीं पृथिवीके अवधिस्थान इन्द्रकमें पांचसौ धनुषप्रमाण नारकियोंके शरीरका उत्सेध है । इसप्रकार जिन भगवान्ने सम्पूर्ण नारकियोंके शरीरका उत्सेध कहा है ॥ २६९ ॥

अवधिस्थान. प. में दं. ५००.

इसप्रकार रत्नप्रभादिक पृथिवियोंके प्रत्येक इन्द्रकोंमें जो उरीरका उत्सेध है, वही उत्सेध उन उन पृथिवियोंके श्रेणीबद्ध और विश्रेणीगत प्रकीर्णक बिलोंमें भी जानना चाहिये ॥ २७० ॥

इसप्रकार नारकियोंके शरीरका उत्सेधप्रमाण समाप्त हुआ ।

---

१ द धूमप्पाय. २ द छट्ठाए. ३ द वंदलट्ठिदलजीव°. ४ द समत्ता.

रयणप्पहावणीए कोसा चत्तारि ओहिणाणखिदी । तप्परदो पत्तेक्कं परिहाणी गाउदद्धेण ॥ २७१

को ४ । ७ । ३ । ५ । २ । ३ । १
२ २ २

। ओही सम्मत्ता ।

गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणा कमसो । उवजोगा कहिदव्वा णारइयाणं जहाजोग्गं[1] ॥ २७२

चत्तारो गुणठाणा णारयजीवाण होंति सव्वाणं । मिच्छाइट्ठी सासणमिस्सो य तहा य अविरदो सम्मो ॥ २७३

ताण यपच्चक्खाणावरणोदयसहिदसव्वजीवाणं । हिंसाणंदजुदाणं णाणाविहसंकिलेसपउराणं ॥ २७४

देसविरदादिउवरिमदसगुणठाणाणं हेदुभूदाओ । जाओ विसोधियाओ[2] कहया वि ण ताओ जायंति ॥ २७५

पज्जत्तापज्जत्ता जीवसमासा य होंति एदाणं । पज्जत्ती छब्भेया तेत्तियमेत्ता अपज्जत्ती ॥ २७६

पंच वि इंदियपाणा मणवचिकायाणि आउपाणा य । आणप्पाणप्पाणा दस पाणा होंति चउ सण्णा ॥ २७७

णिरयगदीए सहिदा पंचक्खा तह य होंति तसकाया । चउमणवचदुगवेगुव्वियकम्मइयसरीरजोगजुदा ॥ २७८

रत्नप्रभा पृथिवीमें अवधिज्ञानका क्षेत्र चार कोसमात्र है । इसके आगे प्रत्येक पृथिवीमें उक्त अवधि-क्षेत्रमेंसे अर्ध गव्यूतिकी कमी होती चली गई है ॥ २७१ ॥

र. प्र. को. ४; श. प्र. $\frac{७}{२}$; वा. प्र. ३; पं. प्र. $\frac{५}{२}$; धू. प्र. २; त. प्र. $\frac{३}{२}$; म. प्र. १ को.

इसप्रकार अवधिज्ञानका क्षेत्र समाप्त हुआ ।

अब इस समय नारकी जीवोंमें यथायोग्य क्रमसे गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपयोग (ज्ञान-दर्शन), इनका कथन करने योग्य है ॥ २७२ ॥

सब नारकी जीवोंके मिथ्यादृष्टि, सासादन, मिश्र और अविरतसम्यग्दृष्टि, ये चार गुण-स्थान हो सकते हैं ॥ २७३ ॥

अप्रत्याख्यानावरण कषायके उदयसे सहित, हिंसामें आनन्द माननेवाले और नानाप्रकारके प्रचुर दुःखोंसे संयुक्त उन सब नारकी जीवोंके देशविरत आदिक उपरितन दश गुणस्थानोंके हेतुभूत, जो विशुद्ध परिणाम हैं, वे कदाचित् भी नहीं होते हैं ॥ २७४–२७५ ॥

इन नारकी जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों ही जीवसमास होते हैं । इनमेंसे पर्याप्तिके छह और अपर्याप्तिके भी इतने (छह) ही भेद हैं ॥ २७६ ॥

नारकी जीवोंके पांचों इन्द्रिय प्राण, मन-वचन-काय ये तीनों बलप्राण, आयुप्राण और आनप्राण (श्वासोच्छ्वास) प्राण, ये दशों प्राण तथा आहार, भय, मैथुन और परिग्रह, ये चारों संज्ञायें होती हैं ॥ २७७ ॥

सब नारकी जीव नरकगतिसे सहित; पंचेन्द्रिय; त्रसकायवाले; सत्य, असत्य, उभय और अनुभय, इन चार मनोयोग, चारों वचनयोग, तथा दो वैक्रियिक (वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र), कार्मण, इन तीन काययोगोंसे संयुक्त; द्रव्य और भावसे नपुंसकवेदवाले; सम्पूर्ण कषायोंमें आसक्त; मति, श्रुत,

---

१ द जहाजोगं. २ द ब °गुणठाणाणि. ३ ब उवसोधियाउ.

होंति णपुंसयवेदा णारयजीवा य दव्वभावेहिं । सयलकसायासत्ता संजुत्ता णाणछक्केण ॥ २७९
सव्वे णारइया खलु विविहेहिं असंजमेहिं परिपुण्णा । चक्खुअचक्खूओहीदंसणतिदएण जुत्ता य ॥ २८०
भावेसुं तियलेस्सा ताओ किण्हा य णीलकाओदा । दव्वेणुक्कडकिण्हा[1] भव्वाभव्वा य ते सव्वे ॥ २८१
छस्सम्मत्ता ताहं उवसमखइयाइवेदगंमिच्छो । सासणमिस्सो[2] य तहा संणी आहारिणो अणाहारा ॥ २८२
साकारअणायारा उवयोगा दोण्णि होंति तेसिं च । तिव्वकसाएण जुदा तिव्वोदयअप्पसत्तपयडिजुदा ॥ २८३

। गुणठाणादी सम्मत्ता ।

पढमधरंतमसण्णी पढमंबिदियासु सरिसओ जादि । पढमादीतदियंतं पक्खि भुयंगादि याव[3] तुरिमं ॥ २८४
पंचमखिदिपरियंतं सिंहो इत्थी वि छट्ठखिदिअंतं । आसत्तमभूवलयं मच्छो मणुवो य वच्चंति ॥ २८५
अट्ठसगछक्कपणचउतियदुगवारो य सत्तपुढवीसु । कमसो उप्पज्जंते असंणिपमुहाइ उक्करसे ॥ २८६

। उप्पण्णमाणजीवाणं वण्णणा सम्मत्ता ।

अवधि, कुमति, कुश्रुत और विभंग, इन छह ज्ञानोंसे संयुक्त; विविध प्रकारके असंयमों (अविरति-भेदों) से परिपूर्ण; चक्षु, अचक्षु, अवधि, इन तीन दर्शनोंसे युक्त; भावकी अपेक्षा कृष्ण, नील, कापोत, इन तीन लेश्याओं और द्रव्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट कृष्ण लेश्यासे सहित; भव्यत्व और अभव्यत्व परिणामसे युक्त; औपशमिक, क्षायिक, वेदक, मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, इन छह सम्यक्त्वोंसे सहित; संज्ञी[13]; आहारक व अनाहारक; इसप्रकार चौदह मार्गणाओंमेंसे भिन्न भिन्न मार्गणाओंसे सहित होते हैं ॥ २७८–२८२ ॥

उन नारकी जीवोंके साकार (ज्ञान) और निराकार (दर्शन) दोनों ही उपयोग होते हैं । ये नारकी तीव्र कषाय और तीव्र उदयवाली पाप-प्रकृतियोंसे युक्त होते है ॥ २८३ ॥

इसप्रकार गुणस्थानादिका वर्णन समाप्त हुआ ।

प्रथम पृथिवीके अंततक असंज्ञी, तथा प्रथम और द्वितीयमें सरीसृप जाता है । पहिलीसे तीसरी पृथिवीपर्यन्त पक्षी, तथा चौथीतक भुजंगादिक उत्पन्न होते हैं ॥ २८४ ॥

पांचवीं पृथिवीपर्यन्त सिंह, छठी पृथिवीतक स्त्री, और सातवीं भूमितक मत्स्य एवं मनुज (पुरुष) ही जाते हैं ॥ २८५ ॥

उपर्युक्त सात पृथिवियोंमें क्रमसे वे असंज्ञी आदिक जीव उत्कृष्ट रूपसे आठ, सात, छह, पांच, चार, तीन और दो वार ही उत्पन्न होते हैं ॥ २८६ ॥

इसप्रकार उत्पद्यमान जीवोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

---

१ ब खु. २ द °किण्हो. ३ ब सासणिमिस्सा. ४ द °भुयंगाविएए.

चउवीस मुहुत्ताणिं सत्त दिणा एक्क पक्ख मासं च । दोचउछम्मासाइं पढमादो जम्ममरणअंतरयं ॥ २८७

मु २४, दि ७, दि १५, मा १, मा २, मा ४, मा ६।

। जम्मणमरणाणंतरकालपमाणं सम्मत्तं[1]।

रयणादिणारयाणं णियसंखादो असंखभागमिदा । पडिसमयं जायंते तेत्तियमेत्ता य मरंति पुढं ॥ २८८

२।३।१२२।१०३।६२।३२।५२।[2] (?)

१ २

। उप्पज्जंतमरणाण परिमाणवण्णणा सम्मत्ता ।

णिक्कंता णिरयादो गब्भेसुं कम्मसंणिपज्जत्ते । णरतिरिएसुं जम्मदि [6]तिरियंचिय चरमपुढवीए ॥ २८९

वालेसुं[7] दाढीसुं[8] पक्खीसुं जलचरेसु जाऊणं । संखेज्जाउगजुत्ता तेई णिरएसु वच्चंति ॥ २९०

केसवबलचक्कहरा ण होंति कइयावि णिरयसंचारी । जायंते तित्थयरा तदीयखोणीय परियंतं ॥ २९१

चौबीस मुहूर्त, सात दिन, एक पक्ष, एक मास, दो मास, चार मास और छह मास, यह क्रमसे प्रथमादिक पृथिवियोंमें जन्म-मरणके अन्तरका प्रमाण है ॥ २८७ ॥

प्र. पृ. में मुहूर्त २४; द्वि. पृ. दि. ७; तृ. पृ. दि. १५; च. पृ. मा. १; पं. पृ. मा. २; ष. पृ. मा. ४; स पृ. मा. ६ ।

इसप्रकार जन्म-मरणके अन्तरकालका प्रमाण समाप्त हुआ ।

रत्नप्रभादिक पृथिवियोंमें स्थित नारकियोंके अपनी संख्याके असंख्यातवें भागप्रमाण नारकी प्रत्येक समयमें उत्पन्न होते हैं और उतने ही मरते भी हैं ॥ २८८ ॥

इसप्रकार एक समयमें उत्पन्न होनेवाले व मरनेवाले जीवोंका कथन समाप्त हुआ ।

नरकसे निकले हुए जीव गर्भज, कर्मभूमिज, संज्ञी, एवं पर्याप्त ऐसे मनुष्य और तिर्यंचोंमें ही जन्म लेते हैं। परन्तु अन्तिम पृथिवीसे निकला हुआ जीव केवल तिर्यंच ही होता है, अर्थात् मनुष्य नहीं होता ॥ २८९ ॥

नरकोंसे निकले हुए उनमेंसे कितने ही जीव व्यालों (सर्पादिकों) में, डाढ़ों अर्थात् तीक्ष्ण दांतोंवाले व्याघ्रादिक पशुओंमें, गृद्धादिक पक्षियोंमें, तथा जलचर जीवोंमें जाकर और संख्यात वर्षकी आयुसे युक्त होकर पुनः नरकोंमें जाते हैं ॥ २९० ॥

नरकमें रहनेवाले जीव वहांसे निकलकर नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र, और चक्रवर्ती कदापि नहीं होते । तीसरी पृथिवीतकके नारकी जीव वहांसे निकलकर तीर्थंकर हो सकते है ॥ २९१ ॥

---

१ द सम्मत्ता. २ द तेत्तियमेत्ताए. ३ द ३२५५२।. ४ द ब उप्पज्ज. ५ द तिरियंचिय. ६ द ब वालीसुं. ७ द दालीसुं.

चउरिमखिदी चरमंगधारिणो संजदा य घूमंतं । छट्ठंतं देसवदा सम्मत्तधरा केइ चरिमंतं ॥ २९२

। आगमणवण्णणा सम्मत्ता ।

आउस्स बंधसमए सिलो व्व सेलो[1] व्व वेणुमूले य । किमिरायकसायाणं उदयम्मि बंधेदि णिरयाऊ ॥२९३

किण्हाय णीलकाऊणुदयादो बंधिऊण णिरयाऊ । मरिऊण ताहिं जुत्तो पावइ णिरयं महाघोरं[2] ॥ २९४

किण्हादितिलेस्सजुदा जे पुरिसा ताण लक्खणं एदं । गोत्तं तह सकलत्तं एक्कं वंछेदि मारिदुं दुट्ठो ॥ २९५

धम्मदयापरिचत्तो[3] अमुक्कवेरो पयंडकलहयरो । बहुकोहो किण्हाए जम्मदि धूमादिचरिमंते ॥ २९६

विसयासत्तो विमदी माणी विण्णाणवज्जिदो मंदो । अलसो भीरू मायापवंचबहुलो य णिद्दालू ॥ २९७

परवंचणप्पसत्तो लोहंधो धणसुहाकंखी[4] । बहुसण्णा णीलाए जम्मदि तं चेव घूमंतं ॥ २९८

अप्पाणं मण्णंता अण्णं णिंदेदि अलियदोसेहिं । भीरू सोकविसण्णो परावमाणी यसूयी अ[5] ॥ २९९

.....

चौथी पृथिवीतकके नारकी वहांसे निकलकर चरमशरीरी, धूमप्रभा पृथिवीतकके जीव सकलसंयमी और छठी पृथिवीतकके नारकी जीव देशव्रती हो सकते हैं। अन्तिम (सातवीं) पृथिवीसे निकले हुए जीवोंमें कोई विरले ही सम्यक्त्वके धारक होते हैं। ॥ २९२ ॥

इसप्रकार आगमनका वर्णन समाप्त हुआ।

आयुबन्धके समय सिलकी रेखाके समान क्रोध, शैलके समान मान, बांसकी जड़के समान माया और कृमिरागके समान लोभ कषायका उदय होनेपर नरकायुका बन्ध होता है ॥ २९३ ॥

कृष्ण, नील अथवा कापोत इन तीन लेश्याओंका उदय होनेसे नरकायुको बांधकर और मरकर उन्हीं लेश्याओंसे युक्त होकर महा भयानक नरकको प्राप्त करता है ॥ २९४ ॥

जो पुरुष कृष्णादि तीन लेश्याओंसे सहित हैं, उनका लक्षण यह है—कृष्ण लेश्यासे युक्त दुष्ट पुरुष अपने ही गोत्रीय तथा एकमात्र स्वकलत्रको भी मारनेकी इच्छा करता है ॥ २९५ ॥

दया धर्मसे रहित, वैरको न छोड़नेवाला, प्रचंड कलह करनेवाला और बहुत क्रोधी जीव कृष्ण लेश्याके साथ धूमप्रभा पृथिवीसे लेकर अन्तिम पृथिवीतकमें जन्म लेता है ॥ २९६ ॥

विषयोंमें आसक्त, मतिहीन, मानी, विवेकबुद्धिसे रहित, मंद (मूर्ख), आलसी, कायर, प्रचुर मायाप्रपंचमें संलग्न, निद्राशील, दूसरोंके ठगनेमें तत्पर, लोभसे अन्ध, धन-धान्यजनित सुखका इच्छुक, और बहुसंज्ञायुक्त अर्थात् आहारादि चारों संज्ञाओंमें आसक्त, ऐसा जीव नील लेश्याके साथ धूमप्रभा पृथिवीतकमें जन्म लेता है ॥ २९७–२९८ ॥

जो अपने आपकी प्रशंसा और असत्य दोषोंको दिखाकर दूसरोंकी निन्दा करता है, तथा जो भीरु, शोक व विषादसे युक्त, परका अपमान करनेवाला और ईर्ष्यासे संयुक्त है, जो कार्य-

.....

१ द ब सिलोव्व सिलोव्व. २ द ब प्रत्योः गाथेयं अग्रिमगाथायाः पश्चादुपलभ्यते. ३ द ब °परिचित्तो. ४ द धण्णधणसुहाकंखी. ५ द ब यसूयाअ.

असुणियकज्जाकज्जो धुवंतो परमपहे सद्दहइ[1] । अप्पं पिव मण्णंतो परं पि कस्स वि ण पत्तिज्जइ ॥ ३००
थुव्वंतो देइ धणं मरिदुं वंछेदि[2] समरसंघट्टे । काऊए संजुत्तो जम्मदि घम्मादिमेघंतं ॥ ३०१

। आउगबंधणपरिणामा सम्मत्ता ।

इंदयसेढीबद्धप्पइण्णयाणं हवंति उवरिम्मि[3] । बाहिं बहुलस्सिजुदा अद्धो वट्टा यधोमुहाकंठा ॥ ३०२
चेट्ठेदि जम्मभूमी सा घम्मप्पहुदिखेत्ततिदयम्मि । उट्ठियकोत्थलिकुंभीमोग्गरमुद्दंगणालिणिहा ॥ ३०३
गोहत्थितुरयभत्थो अज्जप्पुडअंबरीसदोणीओ[4] । चउपंचमपुढवीसुं आयारो जम्मभूमीणं ॥ ३०४
झल्लरिमल्लयपत्थीकेयूरमसूरसाणयकिलिंजा[5] । धयदीवियचक्कवायस्सिगालसरिसा महाभीमा ॥ ३०५
अजखरकरहसरिसाँ संदोलअरिक्खसंणिहायारा[6] । छस्सत्तमपुढवीणं दुरिक्खणिज्जा[7] महाघोरा ॥ ३०६
करवत्तसरिच्छाओ अंते वट्टा समंतदाऊ[8] यं[9] । मज्जवमइवो णारयजम्मणभूमीओ भीमा य[10] ॥ ३०७
अजगजमहिसतुरंगमखरोट्टमज्जालमेसपहुदीणं[11] । कुथितेणं[12] गंधादो णिरए गंधा अणंतगुणा ॥ ३०८

अकार्यको न समझकर चंचलचित्त होता हुआ परम पथका श्रद्धान करता है, अपने समान ही दूसरेको भी समझकर किसीका भी विश्वास नहीं करता है, स्तुति करनेवालोंको धन देता है, और समरसंघर्षमें मरनेकी इच्छा करता है, ऐसा प्राणी कापोत लेश्यासे संयुक्त होकर घर्मासे लेकर मेघा पृथिवीतकमें जन्म लेता है ॥ २९९–३०१ ॥

इसप्रकार आयुबंधक परिणामोंका कथन समाप्त हुआ ।

इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंके ऊपर अनेक प्रकारकी तलवारोंसे युक्त, अर्धवृत्त और अधोमुखवाली जन्मभूमियां हैं । ये जन्मभूमियां घर्मा पृथिवीको आदि लेकर तीसरी पृथिवीतक उष्ट्रिका, कोथली, कुम्भी, मुद्गलिका, मुद्गर, मृदंग और नालिके सदृश हैं ॥ ३०२–३०३ ॥

चतुर्थ और पंचम पृथिवीमें जन्मभूमियोंका आकार गाय, हाथी, घोड़ा, भस्त्रा, अब्जपुट, अम्बरीष और द्रोणी जैसा है ॥ ३०४ ॥

छठी और सातवीं पृथिवीकी जन्मभूमियां झालर (वाद्यविशेष), मल्लक (पात्रविशेष), पात्री, केयूर, मसूर, शाणक, किलिंज (तृणकी बनी बड़ी टोकरी), ध्वज, द्वीपी, चक्रवाक, शृगाल, अज, खर, करभ, संदोलक (झूला), और ऋक्ष (रीछ) के सदृश हैं । ये जन्मभूमियां दुष्प्रेक्ष्य एवं महा भयानक हैं ॥ ३०५–३०६ ॥

उपर्युक्त नारकियोंकी जन्मभूमियां अन्तमें करौंतके सदृश, चारों तरफसे गोल, मज्जवमयी (?) और भयंकर हैं ॥ ३०७ ॥

बकरी, हाथी, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊंट, बिलाव और भेंड़े आदिके सड़े-गले शरीरोंकी दुर्गन्धकी अपेक्षा नरकोंमें अनन्तगुणी दुर्गन्ध है ॥ ३०८ ॥

१ द ब परमपहइ सव्वहइ. २ द वुंछेदि. ३ ब इंदियसेढी°. ४ द उध्वियं°, ब उत्तिय°. ५ द ब अंतपुड. ६ द °चक्कवायासीगाल°, ब चक्कचावासीगाल°. ७ द °सरिच्छसंदोलअ°. ८ द धुरिक्खणिआ. ९ द समंतदाऊ. १० द ब भीमाए. ११ द कुथितांणं.

पणकोसवासजुत्ता होंति जहण्णम्हि जम्मभूमीओ । जेट्ठे चउस्सयाणिं दहपण्णरसं च मज्झिमए ॥ ३०९
५ । ४०० । १० । १५ ।

जम्मणखिदीण उदया णियणियरुंदाणि पंचगुणिदाणि । सत्ततिदुगेक्ककोणं पणकोणा होंति एदाओ ॥ ३१०
३५ । २००० । ५० । ७५ ।

एक्क दु ति पंच सत्त य जम्मणखेत्तेसु दारकोणाणि । तेत्तियमेत्ता दारा सेढीबद्धे पइण्णए एवं ॥ ३११

तिदारतिकोणाओ इंदयणिरयाणं[3] जम्मभूमीओ । णिरंधयारबहुला कत्थुरिहिंतो अणंतगुणो ॥ ३१२

। जम्मणभूमी गदा ।

पावेणं णिरयबिले जादूणं ता मुहुत्तगंमेत्ते[4] । छप्पज्जत्ती पाविय आकस्सियभयजुदो[5] होदि[6] ॥ ३१३

भीदीए कंपमाणो चलिदुं दुक्खेण पट्ठिओ[7] संतो । छत्तीसाउहमज्झे पडिदूणं तत्थ उप्पलइ ॥ ३१४

उच्छेहजोयणाणिं सत्त धणू छस्सहस्सपंचसया । उप्पलइ पढमखेत्ते दुगुणं दुगुणं कमेण सेसेसु ॥ ३१५

जो ७, ध ६५००।

उपर्युक्त जन्मभूमियोंका विस्तार जघन्यरूपसे पांच कोस, उत्कृष्टरूपसे चारसौ कोस और मध्यमरूपसे दश-पन्द्रह कोसप्रमाण है ॥ ३०९ ॥

जन्मभूमियोंका ज. विस्तार को. ५; उ. वि. को. ४००; म. वि. को. १०–१५ ।

जन्मभूमियोंकी उंचाई अपने अपने विस्तारकी अपेक्षा पांचगुणी है। ये जन्मभूमियां सात, तीन, दो, एक और पांच कोनवाली हैं ॥ ३१० ॥

ज. भू. की ज. उंचाई को. २५; उ. उंचाई २०००; म. उं. ५० – ७५ ।

जन्मभूमियोंमें एक, दो, तीन, पांच और सात द्वार-कोन और इतने ही दरवाजे होते हैं। इसप्रकारकी व्यवस्था केवल श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंमें ही है ॥ ३११ ॥

इन्द्रक बिलोंमें ये जन्मभूमियां तीन द्वार और तीन कोनोंसे युक्त हैं। उक्त सब ही जन्मभूमियां नित्य ही कस्तूरीसे अनन्तगुणित काले अन्धकारसे व्याप्त हैं ॥ ३१२ ॥

इसप्रकार जन्मभूमियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

नारकी जीव पापसे नरकबिलमें उत्पन्न होकर और एक मुहूर्तमात्र कालमें छह पर्याप्तियोंको प्राप्त कर आकस्मिक भयसे युक्त होता है ॥ ३१३ ॥

पश्चात् वह नारकी जीव भयसे कांपता हुआ बड़े कष्टसे चलनेकेलिये प्रस्तुत होकर और छत्तीस आयुधोंके मध्यमें गिरकर वहांसे उछलता है ॥ ३१४ ॥

प्रथम पृथिवीमें जीव सात उत्सेध योजन और छह हजार पांचसौ धनुषप्रमाण ऊपर उछलता है, इसके आगे शेष पृथिवियोंमें उछलनेका प्रमाण क्रमसे उत्तरोत्तर दूना दूना है ॥ ३१५ ॥

यो० ७, ध० ६५०० ।

---

१ द चउस्सयाणिं. २ द ब °कोणे. ३ द ब °णिरयाणि. ४ द तामुत्तगं मेत्ते, ब ता मुहुत्तगंमेत्ते. ५ द भयजुदा. ६ ब होंदि. ७ द पविओ, ब पविओ.

दट्ठूण मयसिलंबं जह वग्घो तह पुराणणेरइया । णवणारयं णिसंसा णिब्भच्छंता पधावंति ॥ ३१६
साणगणा एक्केक्के दुक्खं दावंति[1] दारुणपयारं । तह अण्णोण्णं णिच्चं दुस्सहपीडादि कुव्वंति ॥ ३१७
चक्कसरसूलतोमरमोग्गरकरवत्तकोंतसूईणं[2] । मुसलासिप्पहुदीणं वणगदावाणलादीणं[3] ॥ ३१८
बघवग्घतरच्छसिगालसाणमज्जालसीहपहुदीणं[4] । अण्णोण्णं[5] च सदा ते णियणियदेहं विगुव्वंति ॥ ३१९
गहिरबिलधूममारुदअइतत्तकद्दमिजंतचुल्लीणं[6] । कंडणिपीलणिदव्वीग रूवमण्णे विकुव्वंति ॥ ३२०
सूवरवणग्गिसोणिदकिमिसरिदहकूववाहिपहुदीणं[7] । पुहुपुहुरूवविहीणा णियणियदेहं पकुव्वंति ॥ ३२१
पुच्छिय पलायमाणं णारइयं वग्घकेसरिप्पहुदी । वज्जमयविवलतोंडा कत्थवि[8] भक्खंति रोसेण ॥ ३२२
पीलिज्जंते केई जंतसहस्सेहिं विरसविलवंता । अण्णे हम्मंति तहिं अवरे छेज्जंति विविहभंगीहिं ॥ ३२३
अण्णोण्णं बज्झंते वज्जोवमसंखलेहिं थंभेसु । पज्जलिदम्मि हुदासे केई छुब्भंति दुप्पिच्छे ॥ ३२४

...

जिसप्रकार दुष्ट व्याघ्र मृगके बच्चेको देखकर उसके ऊपर टूट पड़ता है, उसी-प्रकार क्रूर पुराने नारकी उस नवीन नारकीको देखकर धमकाते हुए उसकी ओर दौड़ते हैं ॥ ३१६ ॥

जिसप्रकार कुत्तोंके झुंड एक दूसरेको दारुण दुख देते हैं, उसीप्रकार नारकी नित्य ही परस्पर दुस्सह पीड़ादिक किया करते हैं ॥ ३१७ ॥

वे नारकी जीव चक्र, बाण, शूली, तोमर, मुद्गर, करौंत, भाला, सुई, मूसल और तलवार इत्यादिक शस्त्रास्त्र; वन एवं पर्वतकी आग, तथा भेड़िया, व्याघ्र, तरक्ष, शृगाल, कुत्ता, बिलाव और सिंह, इन पशुओंके अनुरूप परस्परमें सदैव अपने अपने शरीरकी विक्रिया किया करते हैं ॥ ३१८-१९ ॥

अन्य नारकी जीव गहरा बिल, धुआं, वायु, अत्यन्त तपा हुआ खप्पर, यंत्र, चूल्हा, कण्डनी (एक प्रकारका कूटनेका उपकरण), चक्की और दर्वी (वर्छी), इनके आकाररूप अपने अपने शरीरकी विक्रिया करते हैं ॥ ३२० ॥

उपर्युक्त नारकी शूकर, दावानल तथा शोणित और कीड़ोंसे युक्त सरित्, द्रह, कूप और वापी आदिरूप पृथक् पृथक् रूपसे रहित अपने अपने शरीरकी विक्रिया किया करते हैं। तात्पर्य यह कि नारकियोंके अपृथक् विक्रिया होती है, देवोंके समान उनके पृथक् विक्रिया नहीं होती ॥ ३२१ ॥

वज्रमय विकट मुखवाले व्याघ्र और सिंहादिक, पीठेको भागनेवाले अन्य नारकीको कहींपर भी क्रोधसे खा डालते हैं ॥ ३२२ ॥

कोई नारकी जीव विरस विलाप करते हुए हजारों यंत्रों (कोल्हुओं) से पेले जाते हैं। दूसरे नारकी जीव वहींपर हने जाते हैं, और इतर नारकी विविध प्रकारोंसे छेदे जाते हैं ॥ ३२३ ॥

कोई नारकी परस्परमें एक दूसरेके द्वारा वज्रतुल्य सांकलोंसे खंभोंमें बांधे जाते हैं, और कोई अत्यन्त जाज्वल्यमान दुष्प्रेक्ष्य अग्निमें फेंके जाते हैं ॥ ३२४ ॥

---

१ द ब धावंति. २ द कुंतसुईणं. ३ द ब °दावाणणादीणं. ४ द ब पसूणं. ५ द अण्णाणं. ६ ब °जंतच्चूलीणं. ७ द कूववाव°. ८ द °तुंडो खत्थवि.

फालिज्जंते केई दारुणकरवत्तकंटमुहेहिं । अण्णे भयंकरेहिं विज्झंति विचित्तभल्लेहिं ॥ ३२५
लोहकलाहाविट्ठदतेले तत्तम्मि के वि छुब्भंति । पत्तूणं[1] पच्चंते जलंतजालुक्कडे जलणे ॥ ३२६
इंगालजालमुम्मुरअग्गीदज्झंतमहसरीरा ते । सीदलजलमण्णंता धावित्रि पविसंति वइतरिणिं ॥ ३२७
कत्तरिसरिसिलायारा णारइया तत्थ ताण अंगाणि । छिंदंति दुस्सहावो[2] पावंता विविहपीडाओ ॥ ३२८
जलयरकच्छवमंडूकमयरपहुदीण विविहरूवधरो[3] । अण्णोण्णं भक्खंते[4] वइतरिणिजलम्मि[5] णारइया ॥ ३२९
विउलसिलाविच्चाले दट्ठूण बिलाणि झत्ति[6] पविसंति । तत्थ वि विसालजाला उट्ठदि सहसा महाअग्गी ।।३३०
दारुणहुदासजालामालाहिं दज्झमाणसव्वंगा । सीदलछायं मण्णिय असिपत्तवणम्मि पविसंति ॥ ३३१
तत्थ वि विविहतरूणं पवणहदा तवअपत्तफलपुंजा । णिवडंति ताण उवरिं दुप्पिच्छा वज्जदंडो व्व ॥ ३३२
चक्कसरकणयतोमरमोग्गरकरवालकोंतमुसलाणिं । अण्णाणि वि ताण सिरं असिपत्तवणादु णिवडंति ॥ ३३३

कोई नारकी करौंत (आरी) के काटोंके मुखोंसे फाड़े जाते हैं, और इतर नारकी भयंकर और विचित्र भालोंसे बेधे जाते हैं ॥ ३२५ ॥

कितने ही नारकी जीव लोहेकी कड़ाहियोंमें स्थित तपे हुए तेलमें फेंके जाते हैं, और कितने ही जलती हुई ज्वालाओंसे उत्कट अग्निमें पकाये जाते हैं ॥ ३२६ ॥

कोयले और उपलोंकी आगमें जल रहा है महान् शरीर जिनका, ऐसे वे नारकी जीव शीतल जल समझ दौड़कर वैतरिणी नदीमें प्रवेश करते हैं ॥ ३२७ ॥

उस वैतरिणी नदीमें कर्तरी (कैंची) के समान तीक्ष्ण जलके आकार परिणत हुए दूसरे नारकी उन नारकियोंके शरीरोंको दुस्सह अनेक प्रकारकी पीडाओंको पहुंचाते हुए छेदते हैं ॥ ३२८ ॥

वैतरिणी नदीके जलमें नारकी कछुआ, मेंढक और मगरप्रभृति जलचर जीवोंके विविध रूपोंको धारण कर एक दूसरेका भक्षण करते हैं ॥ ३२९ ॥

पश्चात् वे नारकी विस्तीर्ण शिलाओंके बीचमें बिलोंको देखकर झटपट उनमें प्रवेश करते हैं, परन्तु वहांपर भी सहसा विशाल ज्वालाओंवाली महान् अग्नि उठती है ॥ ३३० ॥

पुनः जिनके सम्पूर्ण अंग तीक्ष्ण अग्निकी ज्वालाओंके समूहोंसे जल रहे हैं, ऐसे वे ही नारकी शीतल छाया जानकर असिपत्र वनमें प्रवेश करते हैं ॥ ३३१ ॥

वहांपर भी विविध प्रकारके वृक्षोंके गुच्छे, पत्र और फलोंके पुंज पवनसे ताड़ित होकर उन नारकियोंके ऊपर दुष्प्रेक्ष्य (अदर्शनीय) वज्रदण्डके समान गिरते हैं ॥ ३३२ ॥

इसके अतिरिक्त उस असिपत्रवनसे चक्र, बाण, कनक (शलाकाकार ज्योतिःपिंड), तोमर (बाणविशेष), मुद्गर, तलवार, भाला, मूसल तथा और भी अस्त्र-शस्त्र उन नारकियोंके सिरपर गिरते हैं ॥ ३३३ ॥

१ द पुरूणं. २ द दुस्सहावे. ३ द विविहस्सयरूवधरा. ४ द भक्खंता. ५ द ब °जलचरंमि. ६ द झंति, ब जंति.

छिण्णसिरो भिण्णकरा तुदियच्छो लंबमाणअंतचया । रुहिरारुणघोरतणा णिस्सरणा तं वणं पि[1] मुंचंति ॥ ३३४
गिद्धा गरुडा काया विहगा अवरे वि वज्जमयतोंडा । कादूणं खड्डुदंता ताणंगे[2] ताणि कवलंति ॥ ३३५
अंगोवंगट्ठीणं चुण्णं कादूण चंडघादेहिं । विउलघणाणं मज्झे छुहंति बहुखारदव्वाणि ॥ ३३६
जइ किलवयंति करुणं लग्गंते जइ वि चलणजुगलम्मि । तहविह सण्णं खंडिय छुहंति चुल्लीसु णारइया ॥ ३३७
लोहमयजुवइपडिमं परदाररदाणं गाढमंगेसुं । लायंते अइतत्तं खिवंति जलणे जलंतम्मि ॥ ३३८
मंसाहाररदाणं णारइया ताण अंगमंसाणिं । छेत्तूण तम्मुहेसुं छुहंति रुहिरोल्लरूवाणिं ॥ ३३९
महुमज्जाहाराणं णारइया तम्मुहेसु अइतत्तं । लोहदवं[3] घल्लंते विलीयमाणंगपब्भारं ॥ ३४०
करवालपहरभिण्णं कूवजलं जह पुणो वि संघडदि । तह णारयाण अंगं छिज्जंतं विविहसत्थेहिं[4] ॥ ३४१

अनन्तर, जिनके शिर छिद गये हैं, हाथ खण्डित होगये हैं, नेत्र व्यथित हैं, आंतोंके समूह लंबायमान हैं, और शरीर खूनसे लाल तथा भयानक हैं, ऐसे वे नारकी अशरण होकर उस वनको भी छोड़ देते हैं ॥ ३३४ ॥

गृद्ध, गरुड़, काक, तथा और भी वज्रमय मुखवाले व तीक्ष्ण दांतोंवाले पक्षी नारकियोंके शरीरको काटकर उन्हें खाते हैं ॥ ३३५ ॥

अन्य नारकी उन नारकियोंके अंग और उपांगोंकी हड्डियोंका प्रचंड घातोंसे चूर्ण करके उत्पन्न हुए विस्तृत घावोंमें बहुत क्षार पदार्थोंको डालते हैं ॥ ३३६ ॥

घावोंमें क्षार द्रव्योंके डालनेसे यद्यपि वे नारकी करुणापूर्ण विलाप करते हैं और चरण-युगलमें लगते हैं, तथापि अन्य नारकी उसप्रकार खिन्न अवस्थामें ही उन्हें खंड खंड करके चूल्हेमें डालते हैं ॥ ३३७ ॥

इतर नारकी परस्त्रीमें आसक्त रहनेवाले जीवोंके शरीरोंमें अतिशय तपी हुई लोहमय युवती स्त्रीकी मूर्तिको दृढ़तासे लगाते हैं और उन्हें जलती हुई आगमें फेंकते हैं ॥ ३३८ ॥

जो पूर्व भवमें मांसभक्षणके प्रेमी थे, उनके शरीरके मांसको काटकर अन्य नारकी रक्तसे भीगे हुए उन्हींके अंगके मांसखंडोंको उनके ही मुखोंमें डालते हैं ॥ ३३९ ॥

मधु और मद्यका सेवन करनेवाले प्राणियोंके मुखोंमें नारकी अत्यन्त तपे हुए द्रवित लोहेको डालते हैं, जिससे उनके अवयवसमूह भी पिघल जाते हैं ॥ ३४० ॥

जिसप्रकार तलवारके प्रहारसे भिन्न हुआ कुएँका जल फिरसे भी मिल जाता है, इसीप्रकार अनेकानेक शस्त्रोंसे छेदा गया नारकियोंका शरीर भी फिरसे मिल जाता है। तात्पर्य यह कि अनेकानेक शस्त्रोंसे छेदनेपर भी नारकियोंका अकाल-मरण कभी नहीं होता ॥३४१॥

१ ब भिण्णसिरा. २ द ब वुदियंगा. ३ द ब तव्वणम्मि. ४ द खंडुदंताणंगं, ब खड्डदंता ताणंगं. ५ द अलंगंते, ब अंगंते. ६ द परदाररदाणि. ७ ब लोहदव्वं. ८ द विविहसत्तेहिं.

कच्छुरिकरकचसूजीखइरंगारादिविविहभंगीहिं । अण्णोण्णजादणाओ कुणंति णिरएसु णारइया ॥ ३४२
अइतिक्खकडुवकत्थरिसत्तीदो मट्टियं[1] अणंतगुणं । घम्माए णारइया थोवं ति चिरेण भुंजंति ॥ ३४३
अजगजमहिसतुरंगमखरोट्टमज्जारमेसपहुदीणं । कुधिताणं[6] गंधादो अणंतगंधो हुवेदि आहारो ॥ ३४४
आदिकुणिममसुहमण्णं रयणप्पहपहुदि जाव चरिमखिदिं । संखातीदगुणेणं दुगुच्छणिज्जो हु आहारो ॥ ३४५
घम्माए आहारो कोसस्सब्भंतरम्मि ठिदजीवे । इह मारेदि गंधेणं सेसे कोसद्धवड्ढिया सत्ती ॥ ३४६

१ । ३ । २ । ५ । ३ । ७ । ४ ।
२ २ २

पुव्वंबद्धसुराऊ अणंतअणुबंधिअण्णदरउदया । णासियतिरयणभावा णरतिरिया केइ असुरसुरा ॥ ३४७
सिकंदाणणासिपत्ता महबलकाला य सामसबला हि । रुद्दंबरिसा विलसिदणामो महरुहखरणामा ॥ ३४८
कालग्गिरुहणामा कुंभो[9] वेतरणिपहुदिअसुरसुरा । गंतूण वालुकंतं णारइयाणं पकोपंति[10] ॥ ३४९

नरकोंमें कच्छुरि (कपिकच्छु, केवाँच), करौंत, सुई और खैरकी आग इत्यादि विविध प्रकारोंसे नारकी परस्परमें एक दूसरेको यातनायें किया करते हैं ॥ ३४२ ॥

घर्मा पृथिवीके नारकी अत्यन्त तीखी और कड़वी कत्थरि (कचरी या अचार ?) की शक्तिसे अनन्तगुणी तीखी और कड़वी थोड़ीसी मट्टीको चिरकालमें खाते हैं ॥ ३४३ ॥

नरकोंमें बकरी, हाथी, भैंस, घोड़ा, गधा, ऊंट, बिल्ली और मैढ़े आदिके सड़े हुए शरीरोंकी गन्धसे अनन्तगुणी दुर्गन्धवाला आहार होता है ॥ ३४४ ॥

रत्नप्रभासे लेकर अन्तिम पृथिवीपर्यन्त अत्यन्त सड़ा, अशुभ और उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा ग्लानिकर अन्न आहार होता है ॥ ३४५ ॥

घर्मा पृथिवीमें जो आहार है, उसकी गन्धसे यहांपर एक कोसके भीतर स्थित जीव मर सकते हैं, इसके आगे शेष द्वितीयादिक पृथिवियोंमें इसकी घातक शक्ति, आधा आधा कोस और भी बढ़ती गई है ॥ ३४६ ॥

घर्मा १; वंशा २; मेघा २; अंज. २; अरि. ३; मघ. ३; माघ. ४ कोस।

पूर्वमें देवायुका बन्ध करनेवाले कोई नर या तिर्यंच अनन्तानुबन्धीमेंसे किसी एकका उदय आजानेसे रत्नत्रयको नष्ट करके असुरकुमार जातिके देव होते हैं ॥ ३४७ ॥

सिकतानन, असिपत्र, महाबल, महाकाल, श्याम और शबल, रुद्र, अंबरीष, विलसित नामक, महारुद्र, महाखर नामक, काल, तथा अग्निरुद्र नामक, कुम्भ और वैतरणि आदिक असुरकुमार जातिके देव तीसरी वालुकाप्रभा पृथिवीतक जाकर नारकियोंको क्रोधित कराते हैं ॥ ३४८–३४९ ॥

१ द ब सूजीए°. २ द ब अण्णेण. ३ द संतीदोमंधिअं, ब संतीदोवमंधियं. ४ द ब °तुरग. ५ द कुधिताणं. ६ द ब मातहि. ७ अंबे अंबरिसी चेव, सामे य सबलेवि य । रोद्दोवरुद्द काले य, महाकालेत्ति आवरे ॥ ६८ ॥ असिपत्ते धणु कुंभे, वालुवेयरणीवि य । खरस्सरे महाघोसे, एवं पण्णरसाहिया ॥ ६९ ॥ सूत्रकृतांगनिर्युक्तिः; प्रवचनसारोद्धारः पृष्ठ ३२१. ८ द ब °सवलं. ९ द ब कुंभी. १० द णारयप्पकोपंति.

इह खेत्ते जह मणुवा पेच्छंते मेसमहिसजुद्धादिं । तह णिरये असुरसुरा णारयकलहं पतुट्ठमणा ॥ ३५०
एक्क ति सग दस सत्तरस तह य बावीसं होंति तेत्तीसं । जा अण्णवुमो[1] पावंते ताव महा य बहुदुक्खं ॥ ३५१
णिरएसु णत्थि सोक्खं णिमेसमेत्तं[2] पि णारयाण सदा । दुक्खाइं दारुणाइं वट्टंते पच्चमाणाणं ॥ ३५२
कदलीघादेण विणा णारयगत्ताणि आउअवसाणे । मारुदपहदब्भाइ व णिस्सेसाणिं विलीयंते ॥ ३५३
एवं बहुविहदुक्खं जीवा पावंति पुव्वकददोसा । तद्दुक्खस्स सरूवं को सक्कइ वण्णिदुं सयलं ॥ ३५४
सम्मत्तरयणपव्वदसिहरादो मिच्छभावखिदिपडिदो । णिरयादिसु अइदुक्खं पाविय पविसइ णिगोदम्मि[3] ॥ ३५५
सम्मत्तं देसजमं लहिदूणं[4] विसयहेदुणा चलिदो । णिरयादिसु अइदुक्खं पाविय पविसइ णिगोदम्मि ॥ ३५६
सम्मत्तं सयलजमं लहिदूणं[5] विसयकारणा चलिदो । णिरयादिसुं अइदुक्खं पाविय पविसइ णिगोदम्मि ॥ ३५७

इस क्षेत्रमें जिसप्रकार मनुष्य मेंढ़े और भैंसे आदिके युद्धको देखते हैं, उसीप्रकार नरकमें असुरकुमार जातिके देव नारकियोंके युद्धको देखते हैं और मनमें सन्तुष्ट होते हैं ॥ ३५० ॥

रत्नप्रभादिक पृथिवियोंमें नारकी जीव, जबतक क्रमशः एक, तीन, सात, दश, सत्तरह, बाईस और तेतीस अर्णवोपम (सागरोपम) पूर्ण होते हैं, तबतक बहुत भारी दुखको प्राप्त करते हैं ॥ ३५१ ॥

नरकोंमें पचनेवाले नारकियोंको क्षणमात्रकोलिये भी सुख नहीं है, किन्तु उन्हें सदैव दारुण दुखोंका अनुभव होता रहता है ॥ ३५२ ॥

नारकियोंके शरीर कदलीघात (अकालमरण) के विना आयुके अन्तमें वायुसे ताड़ित मेघोंके समान निःशेष विलीन हो जाते हैं ॥ ३५३ ॥

इसप्रकार पूर्वमें किये गये दोषोंसे जीव नरकोंमें जिस नाना प्रकारके दुखको प्राप्त करते हैं, उस दुखके संपूर्ण स्वरूपका वर्णन करनेकेलिये भला कौन समर्थ है ? ॥ ३५४ ॥

सम्यक्त्वरूपी रत्नपर्वतके शिखरसे मिथ्यात्वभावरूपी पृथिवीपर पतित हुआ प्राणी नारकादिक पर्यायोंमें अत्यन्त दुःखको प्राप्तकर निगोदमें प्रवेश करता है ॥ ३५५ ॥

सम्यक्त्व और देश चारित्रको प्राप्तकर यह जीव विषयसुखके निमित्त उससे (सम्यक्त्व और चारित्रसे) चलायमान होजाता है, और इसीलिये वह नरकोंमें अत्यन्त दुखको भोगकर निगोदमें प्रविष्ट होता है ॥ ३५६ ॥

कभी सम्यक्त्व और सकल संयमको भी प्राप्तकर विषयोंके कारण उनसे चलायमान होता हुआ नरकोंमें अत्यन्त दुःखको पाकर निगोदमें प्रवेश करता है ॥ ३५७ ॥

---

१ द तसय. २ द ब जह अरुवमा, ब जह अरुवुमा. ३ द ब अणुभिसमेत्तं पि. ४ द पावी पइसं णिगोदम्मि. ५ द लद्धूणं. ६ द णिरयादीअइदुक्खं.

सम्मत्तरहिदचित्तो जोइसमंतादिएहि वट्टंतो । णिरयादिसु बहुदुक्खं पाविय पविसइ णिगोदम्मि ॥ ३५८

। दुक्खसरूवा समत्ता ।

धम्मादीतिदितिदये णारइया मिच्छभावसंजुत्ता । जाइभरणेण केई केई दुव्वारवेदणाभिहदा ॥ ३५९
केई देवाहिंतो धम्मणिबद्धा कहा वसोदूणं । गिण्हंते सम्मत्तं अणंतभवचूरणणिमित्तं ॥ ३६०
पंकपहापहुदीणं णारइया तिदसबोहणेण विणा । सुमरिदजाई दुक्खप्पहदा गेण्हंति[1] सम्मत्तं ॥ ३६१

। दंसणगहणं[2] गदं ।

मज्जं पिबंता पिसिदं लसंता जीवे हणंते मिगलाण तत्ता ।
णिमेसमेत्तेण[3] सुहेण पावं पावंति दुक्खं णिरए अणंतं ॥ ३६२
लोहकोहभयमोहबलेणं जे वदंति वयणं पि असच्चं । ते णिरंतरभंये[4] उरुदुक्खे दारुणम्मि णिरयम्मि पडंते ॥ ३६३
छेत्तूण भित्तिं वधिदूण पीयं[5] पट्टादि घेत्तूण धणं हरंता ।
अण्णेहि अण्णाअसएँहि[6] मूढा भुंजंति दुक्खं णिरयम्मि घोरे ॥ ३६४

.....

जिसका चित्त सम्यग्दर्शनसे विमुख है तथा जो ज्योतिष और मंत्रादिकोंसे आजीविका (वृत्ति) करता है, ऐसा जीव नरकादिकमें बहुत दुःखको पाकर निगोदमें प्रवेश करता है ॥ ३५८ ॥

दुःखके स्वरूपका वर्णन समाप्त हुआ।

घर्मा आदि तीन पृथिवियोंमें मिथ्यात्व भावसे संयुक्त नारकियोंमेंसे कोई जातिस्मरणसे, कोई दुर्वार वेदनासे व्यथित होकर, और कोई धर्मसे सम्बन्ध रखनेवाली कथाओंको देवोंसे सुनकर अनन्त भवोंके चूर्ण करनेमें निमित्तभूत ऐसे सम्यग्दर्शनको ग्रहण करते हैं ॥ ३५९-३६० ॥

पंकप्रभादिक शेष चार पृथिवियोंके नारकी जीव देवकृत प्रबोधके विना जातिस्मरण और वेदनाके अनुभवमात्रसे ही सम्यग्दर्शनको ग्रहण करते हैं ॥ ३६१ ॥

सम्यग्दर्शनके ग्रहणका कथन समाप्त हुआ।

जो मद्यको पीते हैं, मांसकी अभिलाषा करते हैं, जीवोंका घात करते हैं, और मृगयामें तृप्त होते हैं, वे क्षणमात्रके सुखकेलिये पाप उत्पन्न करते हैं और नरकमें अनन्त दुखको पाते हैं ॥ ३६२ ॥

जो जीव लोभ, क्रोध, भय अथवा मोहके बलसे असत्य वचन बोलते हैं, वे निरंतर भयको उत्पन्न करनेवाले, महान् कष्टकारक, और अत्यंत भयानक नरकमें पडते हैं ॥ ३६३ ॥

भीतको छेदकर, प्रिय जनको मारकर, और पट्टादिकको ग्रहण करके धनको हरने तथा अन्य सैकडों अन्यायोंसे मूर्ख लोग भयानक नरकमें तीव्र दुखको भोगते हैं ॥ ३६४ ॥

.....

१ द ब गेण्णंति. २ द ब °मग्गदं. ३ ब णिमेसमोहेण. ४ द ब्भइ ण पावंति. ५ द णिरंतरभं. ६ द पिपं, ब पियं. ७ द ब अण्णाअसहेइ.

लज्जाए चत्ता मयणेण मत्ता तारुण्णरत्ता परदारसत्ता ।
रत्तीदिणं मेहुणमाचरंता पावंति दुक्खं णिरएसु घोरं ॥ ३६५
पुत्ते कलत्ते सजणम्मि मित्ते जे जीवणत्थं परवंचणेणं ।
वड्ढंति तिण्णा दविणं हरंते ते तिव्वदुक्खे णिरयम्मि जंति ॥ ३६६
संसारण्णवमहणं तिहुवणभव्वाण धेम्मसुहजणणं । संदरिसियसयलट्ठं संभवदेवं णमामि तिविहेण ॥ ३६७

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए णारयलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम

बिदुओ महाधियारो सम्मत्तो ॥ २ ॥

लज्जासे रहित, कामसे उन्मत्त, जवानीमें मस्त, परस्त्रीमें आसक्त, और रात-दिन मैथुनका सेवन करनेवाले प्राणी नरकोंमें जाकर घोर दुःखको प्राप्त करते हैं ॥ ३६५ ॥

पुत्र, स्त्री, स्वजन और मित्रके जीवनार्थ जो लोग दूसरोंको ठगकर तृष्णाको बढ़ाते हैं, तथा परके धनको हरते हैं, वे तीव्र दुखको उत्पन्न करनेवाले नरकमें जाते हैं ॥ ३६६ ॥

संसारसमुद्रका मथन करनेवाले (वीतराग), तीनों लोकोंके भव्य जनोंको धर्मप्रेम और सुखके दायक (हितोपदेशक), और सम्पूर्ण पदार्थोंके यथार्थ स्वरूपको दिखलानेवाले (सर्वज्ञ), ऐसे सम्भवनाथको मैं मन, वचन और कायसे नमस्कार करता हूं ॥ ॥ ३६७ ॥

इसप्रकार आचार्यपरंपरागत त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें नारकलोकस्वरूप-निरूपणप्रज्ञप्तिनामक

द्वितीय महाधिकार समाप्त हुआ ॥ २ ॥

---

१ द पेमसुह°. २ द जणणो.

[तिदियो महाधियारो]

भव्वजणमोक्खजणणं मुणिंददेविंदपणदपयकमलं । णमिय अभिणंदणेसं भावणलोयं परूवेमो ॥ १
भावणणिवासखेत्तं भवणसुराणं वियप्पचिण्हाणि । भवणाणं परिसंखा इंदाण पमाणणामाइं ॥ २
दक्खिणउत्तरइंदा पत्तेक्कं ताण भवणपरिमाणं । अप्पमहद्धियमज्झिमभावणदेवाण भवणवासं च ॥ ३
भवणं वेदी कूडा जिणघरपासादइंदभूदीओ । भवणामराण संखा आउपमाणं जहाजोग्गं ॥ ४
उस्सेहोहिपमाणं गुणठाणादीणि एकसमयम्मि । उप्पज्जणमरणाण य परिमाणं तह य आगमणं ॥ ५
भावणलोयस्साऊबंधणपावोग्गभावभेदा य । सम्मत्तगहणहेऊ अहियारा इत्थ चउवीसं ॥ ६
रयणप्पहपुढवीए खरभाए पंकबहुलभागम्मि । भवणसुराणं भवणाइं होंति वररयणसोहाणि ॥ ७
सोलससहस्समेत्तो खरभागो पंकबहुलभागो वि । चउसीदिसहस्साणिं जोयणलक्खं दुवे मिलिदा ॥ ८

१६००० । ८४००० ।

। भावणदेवाणं णिवासखेत्तं गदं ।

जो भव्य जीवोंको मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं, तथा जिनके चरणकमलोंमें मुनीन्द्र अर्थात् गणधर एवं देवोंके इन्द्रोंने भी नमस्कार किया है, ऐसे अभिनन्दन स्वामीको नमस्कार करके भावन-लोकका निरूपण करते हैं ॥ १ ॥

भवनवासियोंका निवास[1]क्षेत्र, भवनवासी देवोंके भेद[2], उनके चिह्न[3], भवनोंकी संख्या[4], इन्द्रोंका प्रमाण[5], इन्द्रोंके नाम[6], दक्षिण इन्द्र और उत्तर इन्द्र[7], उनमेंसे प्रत्येकके भवनका परिमाण[8], अल्पर्द्धिक, महर्द्धिक और मध्यमर्द्धि भवनवासी देवोंके भवनोंका व्यास[9] (विस्तार), भवन[10], वेदी[11], कूट[12], जिनमन्दिर[13], प्रासाद[14], इन्द्रोंकी विभूति[15], भवनवासी देवोंकी संख्या[16], यथायोग्य आयु[17]का प्रमाण, उनके शरीरकी उंचाई[18]का प्रमाण, उनके अवधिज्ञान[19]के क्षेत्रका प्रमाण, गुणस्थान[20]आदिक, एक समयमें उत्पन्न होनेवाले और मरनेवाले भवनवासी देवोंका प्रमाण[21], तथा आगमन[22], भवनवासी देवोंकी आयुके बन्धयोग्य भाव[23]के भेद, और सम्यक्त्व-ग्रहणके[24] कारण, इसप्रकार इस तृतीय महाधिकारमें ये चौबीस अधिकार हैं ॥ २–६ ॥

रत्नप्रभा पृथिवीके खर भाग और पंकबहुल भागमें उत्कृष्ट रत्नोंसे शोभायमान भवनवासी देवोंके भवन हैं ॥ ७ ॥

इन दोनों भागोंमेंसे खर भाग सोलह हजार योजन और पंकबहुल भाग चौरासी हजार योजनप्रमाण मोटा है। उक्त दोनों भागोंकी मुटाई मिलकर एक लाख योजनप्रमाण है ॥ ८ ॥

खर भागकी मुटाई १६००० + पंकबहुल भाग ८४००० = १००००० योजन ।

भवनवासी देवोंके निवासक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब भवणपुराणं. २ द भवणं वासं.

असुरा णागसुवण्णा दीओवहिथणिदविज्जुदिसअग्गी । वाउकुमारा परया दसभेदा होंति भवणसुरा ॥ ९
। वियप्पा सम्मत्ता ।

चूडामणिअहिगरुडा करिमयरा वड्ढमाणवज्जहरी । कलसो तुरवो मउडे कमसो चिण्हाणि एदाणि ॥ १०
। चिण्हा सम्मत्ता ।

चउसट्ठी चउसीदी बावत्तरि होंति छस्सु ठाणेसु । छाहत्तरि छण्णउदी लक्खाणिं[1] भवणवासिभवणाणिं ॥ ११
६४०००००। ८४०००००। ७२०००००। ७६०००००। ७६०००००। ७६०००००। ७६०००००।
७६०००००। ७६०००००। ९६०००००।

एदाणं भवणाणं एक्कस्सिं मेलिदाण परिमाणं । बाहत्तरि लक्खाणिं कोडीओ सत्तमेत्ताओ ॥ १२
७७२०००००।
। भवणसंखा गदा ।

दससु कुलेसुं पुह पुह दो दो[2] इंदा हवंति णियमेण । ते एक्कस्सिं मिलिदे वीस विराजंति भूदीहिं[3] ॥ १३
। इंदपमाणं सम्मत्तं ।

असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, स्तनितकुमार, विद्युत्कुमार, दिक्कुमार, अग्निकुमार और वायुकुमार, इसप्रकार भवनवासी देव दश प्रकार हैं ॥ ९ ॥

विकल्पोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

उपर्युक्त दश भवनवासी देवोंके मुकुटमें क्रमसे चूडामणि, सर्प, गरुड़, हाथी, मगर, वर्द्धमान (स्वस्तिक), वज्र, सिंह, कलश और तुरग, ये (दश) चिह्न होते हैं ॥ १० ॥

चिह्नोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

चौंसठ लाख, चौरासी, लाख, बहत्तर लाख, छह स्थानोंमें छयत्तर लाख और छयानवे लाख, इसप्रकार क्रमसे दश स्थानोंमे उन भवनवासी देवोंके भवनोंकी संख्या है ॥ ११ ॥

असुरकु. ६४०००००, नागकु. ८४०००००, सुपर्णकु. ७२०००००, दीपकु. ७६०००००, उदधिकु. ७६०००००, स्तनितकु. ७६०००००, विद्युत्कु. ७६०००००, दिक्कु. ७६०००००, अग्निकु. ७६०००००, वायुकु. ९६०००००।

इन सब भवनोंके प्रमाणको एकत्र मिलानेपर सात करोड़ बहत्तर लाख होता है ॥ १२ ॥ ७७२०००००।

भवनोंकी संख्याका कथन समाप्त हुआ ।

उपर्युक्त दश भवनवासियोंके कुलोंमें नियमसे पृथक् पृथक् दो दो इन्द्र होते हैं। वे सब मिलकर बीस इन्द्र होते हैं, जो अपनी अपनी विभूतिसे शोभायमान हैं ॥ १३ ॥

इन्द्रोंका प्रमाण समाप्त हुआ ।

---

१ द ब एकाणिं. २ ब दो दो. ३ द ब मेलिदा. ४ द भूदीही.

पढमो हु चमरणामो इंदो बइरोयणो त्ति बिदिओ य । भूदाणंदो धरणाणंदो वेणू य वेणुदारी य ॥ १४
पुण्णवसिट्ठजलप्पहजलकंता तह य घोसमहघोसा । हरिसेणो हरिकंतो अमिदगदी अमिदवाहणग्गिसिही ॥ १५
अग्गीवाहणणामो वेलंबपभंजणाभिधाणा य । एदे असुरप्पहुविसु कुलेसु दोहो कमेण देविंदा ॥ १६

। इंदाण णाम सम्मत्ता ।

दक्खिणइंदा चमरो भूदाणंदो य वेणुपुण्णा य । जलपहघोसा हरिसेणामिदगदी अग्गिसिहिवेलंबा ॥ १७
वइरोअणो य धरणाणंदो तह वेणुधारवसिट्ठा । जलकंतमहाघोसा हरिकंता अमिदअग्गिवाहणया ॥ १८
तह य पभंजणणामो उत्तरइंदा हवंति दह एदे । अणिमादिगुणेहि जुदा मणिकुंडलमंडियकवोला ॥ १९

। दक्खिणउत्तरइंदा गदा ।

चउतीसं[1] चउदालं अट्ठत्तीसं हवंति लक्खाणिं । चालीसं छट्ठाणे तत्तो पण्णासलक्खाणि ॥ २०
तीसं चालं चउतीसं छस्सु वि ठाणेसुं छत्तीसं । छत्तालं चरिमम्मि य इंदाणं भवणलक्खाणिं ॥ २१

असुरकुमारोंमें प्रथम चमर नामक और दूसरा वैरोचन इन्द्र, नागकुमारोंमें भूतानन्द और धरणानन्द, सुपर्णकुमारोंमें वेणु और वेणुधारी, द्वीपकुमारोंमें पूर्ण और वशिष्ठ, उदधिकुमारोंमें जलप्रभ और जलकान्त, स्तनितकुमारोंमें घोष और महाघोष, विद्युत्कुमारोंमें हरिषेण और हरिकान्त, दिक्कुमारोंमें अमितगति और अमितवाहन, अग्निकुमारोंमें अग्निशिखी और अग्निवाहन, वायुकुमारोंमें वेलम्ब और प्रभंजन नामक, इसप्रकार ये दो दो इन्द्र क्रमसे उन असुरादिक निकायोंमें होते हैं ॥ १४–१६ ॥

इन्द्रोंके नामोंका कथन समाप्त हुआ।

चमर, भूतानन्द, वेणु, पूर्ण, जलप्रभ, घोष, हरिषेण, अमितगति, अग्निशिखी और वेलंब, ये दश दक्षिण इन्द्र; तथा वैरोचन, धरणानन्द, वेणुधारक, वशिष्ठ, जलकान्त, महाघोष, हरिकान्त, अमितवाहन, अग्निवाहन और प्रभंजन नामक, ये दश उत्तर इन्द्र हैं। ये सब इन्द्र अणिमादिक ऋद्धियोंसे युक्त और मणिमय कुण्डलोंसे अलंकृत कपोलोंको धारण करनेवाले हैं ॥ १७ – १९ ॥

दक्षिण उत्तर इन्द्रोंका वर्णन समाप्त हुआ।

चौंतीस लाख, चवालीस लाख, अड़तीस लाख, छह स्थानोंमें चालीस लाख, इसके आगे पचास लाख, तीस लाख, चालीस लाख, चौंतीस लाख, छह स्थानोंमें छत्तीस लाख, और अन्तमें छयालीस लाख, इसप्रकार क्रमशः उन दक्षिण इन्द्र और उत्तर इन्द्रोंके भवनोंकी संख्याका प्रमाण है ॥ २०–२१ ॥

१ द ब वेणु व. २ ब वइरो अण्णो. ३ ब वेणुदारअ°. ४ द अणिमादिगुणे जुदा, ब अणिमादिगुणे. जुत्ता. ५ द चोत्तीसं. ६ द ब छसु वि ठाण.

३४०००००। ४४०००००। ३८०००००। ४०००००। ४०००००। ४०००००। ४०००००। ४०००००। ४०००००। ५०००००। ३०००००। ४०००००। ३४०००००। ३६०००००। ३६०००००। ३६०००००। ३६०००००। ३६०००००। ४६०००००

भवणा भवणपुराणिं आवासा अ सुराण होदि तिविहा णं ।
रयणप्पहाए भवणा दीवसमुद्दाण उवरि भवणपुरा ॥ २२
दहसेलदुमादीणं रम्माणं उवरि होंति आवासा । णागादीणं केसिं तियणिलया भवणमेक्कमसुराणं ॥ २३
। भवणवण्णणा सम्मत्ता ।
अप्पमहद्धियमज्झिमभावणदेवाण होंति भवणाणि । दुगवादालसहस्सा लक्खम्मधोजो खिदीय गंताउ ॥ २४
२०००। ४२०००। १००००।
अप्पमहद्धियमज्झिमभावणदेवाण वासवित्थारो[1] । समचउरस्सा भवणा वज्जदुवारुज्जिया सव्वे ॥ २५

चमर ३४०००००, भूतानंद ४४०००००, वेणु ३८०००००, पूर्ण ४०००००, जलप्रभ ४०००००, घोष ४०००००, हरिषेण ४०००००, अमितगति ४०००००, अग्निशिखी ४०००००, वेलंब ५०००००, वैरोचन ३०००००, धरणानंद ४०००००, वेणुधारी ३४०००००, वसिष्ठ ३६०००००, जलकान्त ३६०००००, महाघोष ३६०००००, हरिकान्त ३६०००००, अमितवाहन ३६०००००, अग्निवाहन ३६०००००, प्रभंजन ४६०००००।

भवनवासी देवोंके निवास-स्थान भवन, भवनपुर और आवासके भेदसे तीन प्रकारके होते है। इनमेंसे रत्नप्रभा पृथिवीमें स्थित निवासस्थानोंको भवन, द्वीप-समुद्रोंके ऊपर स्थित निवासस्थानोंको भवनपुर, और रमणीय तालाब, पर्वत तथा वृक्षादिकके ऊपर स्थित निवास-स्थानोंको आवास कहते है। नागकुमारादिक देवोंमेंसे किन्हींके तो भवन, भवनपुर और आवासरूप तीनों ही तरहके निवासस्थान होते हैं, परन्तु असुरकुमारोंके केवल एक भवनरूप ही निवासस्थान होते हैं ॥ २२–२३ ॥

भवनोंका वर्णन समाप्त हुआ।

अल्पर्द्धिक, महर्द्धिक और मध्यम ऋद्धिके धारक भवनवासी देवोंके भवन क्रमशः चित्रा पृथिवीके नीचे नीचे दो हजार, ब्यालीस हजार और एक लाख योजनपर्यन्त जाकर है ॥ २४ ॥

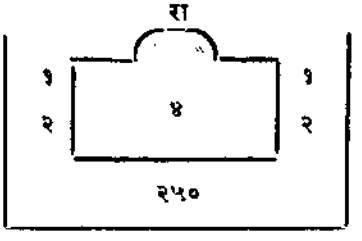
अल्पर्द्धिक २०००, महर्द्धिक ४२०००, मध्य. १००००।

अब अल्पर्द्धिक, महर्द्धिक और मध्यम ऋद्धिके धारक भवनवासी देवोंके निवासस्थानोंका विस्तार कहा जाता है। ये सब भवन समचतुष्कोण तथा वज्रमय द्वारोंसे शोभायमान हैं ॥ २५ ॥

---

१ द ब भुवण°. २ द ब णिवाससेत्तवि°.

बहुलसे तिसयाणिं संखासंखेज्जजोयणा बासे । संखेज्जरुंदभवणेसु भवणदेवा वसंति संखेज्जा ॥ २६
संखातीदा सेयं छत्तीससुरा[1] य होदि संखेज्जा (?) । भवणसरूवा एदे[2] वित्थारा होइ जाणिज्जो ॥ २७
। भवणवण्णणं सम्मत्तं[3] ।
तेसिं चउसु दिसासुं जिणदिट्ठपमाणजोयणे गंता । मज्झम्मि दिव्ववेदी पुह पुह वेट्ठेदि एक्केक्का ॥ २८
दो कोसा उच्छेहा वेदीणमकट्टिमाण सव्वाणं । पंचसयाणिं दंडा बासो वररयणछण्णाणं ॥ २९
गोउरदारजुदाओ उवरिम्मि जिणिंदगेहसहिदाओ । भवणसुररक्खिदाओ वेदीओ ताओ[4] सोहंति ॥ ३०
तब्बाहिरे असोयंसत्तच्छदचंपचूदवण पुण्णा । णियणाणातरुजुत्ता चेट्ठंति चेत्ततरुसहिदा ॥ ३१
चेचदुमत्थलरुंदं दोण्णि सया जोयणाणि पण्णासा । चत्तारो मज्झम्मि य अंते कोसद्धमुच्छेहो ॥ ३२



ये भवन बाहल्यमें (उंचाईमें) तीनसौ योजन, और विस्तारमें संख्यात व असंख्यात योजनप्रमाण होते हैं। इनमेंसे संख्यात योजन विस्तारवाले भवनोंमें संख्यात, और शेष असंख्यात योजन विस्तारवाले भवनोंमें असंख्यात भवनवासी देव रहते हैं (?)। ऐसा भवनोंका स्वरूप और विस्तार जानना चाहिये ॥ २६-२७ ॥

भवनोंके विस्तारका कथन समाप्त हुआ।

उन भवनोंकी चारों दिशाओंमें जिनभगवान्‌से उपदिष्ट योजनप्रमाण जाकर एक एक दिव्य वेदी (कोट) पृथक् पृथक् उन भवनोंको मध्यमें वेष्टित करती है ॥ २८ ॥

उत्तमोत्तम रत्नोंसे व्याप्त इन सब अकृत्रिम वेदियोंकी उंचाई दो कोस और विस्तार पांचसौ धनुषप्रमाण होता है ॥ २९ ॥

गोपुरद्वारोंसे युक्त और उपरिम भागमें जिनमन्दिरोंसे सहित वे वेदियां भवनवासी देवोंसे रक्षित होती हुई सुशोभित होती हैं ॥ ३० ॥

वेदियोंके बाह्य भागमें चैत्यवृक्षोंसे सहित और अपने नाना वृक्षोंसे युक्त पवित्र अशोक वन, सप्तच्छदवन, चंपकवन और आम्रवन स्थित हैं ॥ ३१ ॥

चैत्यवृक्षोंके स्थलका विस्तार दोसौ पचास योजन, तथा उंचाई मध्यमें चार योजन और अन्तमें अर्ध कोसप्रमाण होती है ॥ ३२ ॥

---

१ [सेसछत्तीसं]. २ ब एदो. ३ द ब सम्मत्ता. ४ द ब भवणासुरतक्खिदाओ वेदीणं तेसु.

छहोभूमुहरुंदा[1] चउजोयणउच्छिदाणि पीढाणि । पीढोवरि बहुमज्झे रम्मा चेट्ठंति चेत्तदुमा ॥ ३३

६ । २ । ४ ।

पत्तेक्कं रुक्खाणं अवगाढं कोसमेक्कमुद्दिट्ठं । जोयण खंदुच्छेहो साहादीहत्तणं च चत्तारि ॥ ३४

को १ । जो १ । ४ ।[2]

विविहवररयणसाहा विचित्तकुसुमोत्तसोभिदा सव्वे । वरमरगयवरपत्ता दिव्वतरू ते विराजंति ॥ ३५

विविहंकुरसंवड्ढया विविहफला विविहरयणपरिणामा । छत्तादिछत्तजुत्ता घंटाजालादिरमणिज्जा ॥ ३६

आदिणिहणेण हीणा पुढविमया सव्वभवणचेत्तदुमा । जीवुप्पत्तिलयाणं होंति णिमित्ताणि ते णियमा[3] ॥ ३७

चेत्ततरूणं मूले पत्तेक्कं चउदिसासु पंचेव । चेट्ठंति जिणप्पडिमा पलियंकठिया सुरेहिं महणिज्जा ॥ ३८

चउतोरणाभिरामा अट्ठमहामंगलेहि सोहिल्ला । वररयणणिम्मिदेहिं माणत्थंभेहि अइरम्मा ॥ ३९

। वेदीवण्णणा गदा ।

वेदीणं बहुमज्झे जोयणसयमुच्छिदा महाकूडा । वेत्तासणसंठाणा रयणमया होंति सव्वट्ठ ॥ ४०

पीठोंकी भूमिका विस्तार छह योजन, मुखका विस्तार दो योजन, और उंचाई चार योजन होती है । इन पीठोंके ऊपर बहुमध्यभागमें रमणीय चैत्यवृक्ष स्थित होते हैं ॥ ३३ ॥

भूविस्तार ६, मु. वि. २, उंचाई ४ यो. ।

प्रत्येक वृक्षका अवगाढ एक कोस, स्कंधका उत्सेध एक योजन, और शाखाओंकी लंबाई चार योजनप्रमाण कही गयी है ॥ ३४ ॥

अवगाढ को. १, स्कन्धकी उंचाई यो. १, शाखाओंकी लंबाई यो. ४ ।

वे सब दिव्य वृक्ष विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंकी शाखाओंसे युक्त, विचित्र पुष्पोंसे अलंकृत, और उत्कृष्ट मरकत मणिमय उत्तम पत्रोंसे व्याप्त होते हुए अतिशय शोभाको प्राप्त हैं ॥ ३५ ॥

विविधप्रकारके अंकुरोंसे मंडित, अनेक प्रकारके फलोंसे युक्त, नानाप्रकारके रत्नोंसे निर्मित, छत्रके ऊपर छत्रसे संयुक्त, घंटाजालादिसे रमणीय, और आदि-अन्तसे रहित, ऐसे वे पृथिवीके परिणामरूप सब भवनोंके चैत्यवृक्ष नियमसे जीवोंकी उत्पत्ति और विनाशके निमित्त होते हैं ॥ ३६–३७ ॥

चैत्यवृक्षोंके मूलमें चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें पद्मासनसे स्थित और देवोंसे पूजनीय पांच पांच जिनप्रतिमायें विराजमान होती हैं ॥ ३८ ॥

ये जिनप्रतिमायें चार तोरणोंसे रमणीय, आठ महा मंगल द्रव्योंसे सुशोभित, और उत्तमोत्तम रत्नोंसे निर्मित मानस्थम्भोंसे अतिशय शोभायमान होती हैं ॥ ३९ ॥

इसप्रकार वेदियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

इन वेदियोंके बहुमध्य भागमें सर्वत्र एकसौ योजन ऊंचे, वेत्रासनके आकार, और रत्नमय महाकूट स्थित हैं ॥ ४० ॥

---

१ द ब °रुंदो. २ ब अवगाढ°. ३ ब को १ । जो ४. ४ द °परिमाणा. ५ द ब °ड्ढा. ६ द ब जीहप्पतिआयाणं. ७ द ब णिआयामा.

ताणं मूले उवरिं समंतदो होंति दिव्ववेदीओ । पुव्विल्लवेदियाणं सारिच्छं वण्णणं सव्वं ॥ ४१
वेदीणब्भंतरए वणसंडा वरविचित्ततरुणियरा । पुक्खरिणीहिं समग्गा तप्परदो दिव्ववेदीओ ॥ ४२
। कूडा गदा ।
कूडोवरि पत्तेक्कं जिणवरभवणं हवेदि एक्केक्कं । वररयणकंचणमयं विचित्तविण्णासरमणिज्जं ॥ ४३
चउगोउरा तिसाला वीहिं पडि माणथंभणवयूहा । वेणइयचेत्तखिदीओ सव्वेसुं जिणणिकेदेसुं ॥ ४४
णंदादिओ तिमेहल तिपीढपुव्वाणि धम्मविभवाणि । चउवणमज्झेसु ठिदा चेत्ततरू तेसु सोहंति ॥ ४५
हरिकरिवसहखगाहिवसिहिससिरविहंसपउमचक्कधया । एक्केक्कमट्ठजुदसयमेक्केक्कं अट्ठसय खुल्ला ॥ ४६
वंदणभिसेयणट्टणसंगीआलोयमंडवेहिं जुदा । कीडणगुणणगिहेहिं विसालवरपट्टसालेहिं ॥ ४७
सिरिदेवीसुददेवीसव्वाणसणक्कुमारजक्खाणं । रूवाणि अट्ठमंगल देवच्छंदम्मि जिणणिकेदेसुं ॥ ४८

इन कूटोंके मूलभागमें और ऊपर चारों तरफ दिव्य वेदियां हैं । इन वेदियोंका सम्पूर्ण वर्णण पूर्व वेदियों जैसा ही समझना चाहिये ॥ ४१ ॥

इन वेदियोंके भीतर उत्तम एवं विविध प्रकारके वृक्षसमूहसे व्याप्त और वापिकाओंसे परिपूर्ण वनसमूह हैं, फिर इनके आगे दिव्य वेदियां हैं ॥ ४२ ॥

इसप्रकार कूटोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

प्रत्येक कूटके ऊपर एक एक जिनेन्द्रभवन है, जो उत्तम रत्न एवं सुवर्णसे निर्मित, तथा विचित्र विन्याससे रमणीय है ॥ ४३ ॥

सब जिनालयोंमें चार चार गोपुरोंसे संयुक्त तीन कोट, प्रत्येक वीथीमें एक मानस्तम्भ व नौ स्तूप, तथा (कोटोंके अन्तरालमें) क्रमसे वनभूमि, ध्वजभूमि और चैत्यभूमि होती हैं ॥ ४४ ॥

उन जिनालयोंमें चारों वनोंके मध्यमें स्थित तीन मेखलाओंसे युक्त नन्दादिक वापिकायें, और तीन पीठोंसे संयुक्त धर्मविभव, तथा चैत्यवृक्ष शोभायमान होते हैं ॥ ४५ ॥

ध्वजभूमिमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र, इन चिह्नोंसे अंकित प्रत्येक चिह्नवाली एकसौ आठ महाध्वजायें, और एक एक महाध्वजाके आश्रित एकसौ आठ क्षुद्रध्वजायें होती हैं ॥ ४६ ॥

उपर्युक्त जिनालय वंदनमंडप, अभिषेकमंडप, नर्तनमंडप, संगीतमंडप और आलोक (प्रेक्षण) मंडप, इन मंडपों तथा क्रीड़ागृह, गुणनगृह अर्थात् स्वाध्यायशाला एवं विशाल व उत्तम पट्टशालाओंसे (चित्रशालाओंसे) युक्त होते हैं ॥ ४७ ॥

जिनमन्दिरोंमें देवच्छंदके भीतर श्रीदेवी, श्रुतदेवी, तथा सर्वाह्न और सनत्कुमार यक्षोंकी मूर्तियां एवं आठ मंगल द्रव्य होते हैं ॥ ४८ ॥

१ द दिव्वदेवीओ. २ द हुवेदि. ३ द ब °विण्णाणरमणिजं. ४ द ब परि. ५ ब णवधय°. ६ द ब °खगावइ°. ७ द °णंदणाभिसेय°. ८ द °देवंणच्छाणि; ब देवच्छाणि.

भिंगारकलसदप्पणधयचामरछत्तवियणसुपइट्ठा । हवं अट्ठमंगलाणिं पत्तेक्कं अट्ठअहियसयं[1] ॥ ४९
दिप्पंतरयणदीवा जिणभवणा पंचवण्णरयणमया । गोसीसमलयचंदणकालागरुधूवगंधड्ढा ॥ ५०
भंभामुइंगमद्दलजयघंटाकंसतालतिवलीणं । दुंदुहिपडहादीणं सद्देहिं णिच्चहलबोला ॥ ५१
सिंहासणादिसहिदा चामरकरणागजक्खमिहुणजुदा । णाणाविहरयणमया जिणपडिमा तेसु भवणेसुं ॥ ५२
बाहत्तरि लक्खाणिं कोडीओ सत्त जिणणिकेदाणिं । आदिणिहणुज्जिदाणिं भवणसमाहं विराजंति ॥ ५३

७७२००००० ।

सम्मत्तरयणजुत्ता णिब्भरभत्तीय णिच्चमच्चंति । कम्मक्खवणणिमित्तं देवा जिणणाहपडिमाओ ॥ ५४
कुलदेवा इदि मण्णिय अण्णेहिं बोहिया बहुपयारं । मिच्छाइट्ठी णिच्चं पूजंति जिणिंदपडिमाओ ॥ ५५

। जिणभवणा गदा ।

कूडाण समंतादो[2] पासादा होंति भवणदेवाणं । णाणाविहविण्णासा वरकंचणरयणणियरमया ॥ ५६
सत्तट्ठणवदसादियविचित्तभूमीहिं भूसिदा सव्वे । लंबंतरयणमाला दिप्पंतमणिप्पदीयकंतिल्ला ॥ ५७

झारी, कलश, दर्पण, ध्वजा, चामर, छत्र, व्यजन और सुप्रतिष्ठ, इन आठ मंगल द्रव्योंमेंसे वहां प्रत्येक एकसौ आठ होते हैं ॥ ४९ ॥

ये जिनभवन चमकते हुए रत्नदीपकोंसे सहित, पांच वर्णके रत्नोंसे निर्मित, गोशीर्ष, मलयचंदन, कालागरु और धूपके गंधसे व्याप्त, तथा भंभा, मृदंग, मर्दल, जयघंटा, कांस्यताल, तिवली, दुंदुभि एवं पटहादिकके शब्दोंसे नित्य ही शब्दायमान रहते हैं ॥ ५०–५१ ॥

उन भवनोंमें सिंहासनादिकसे सहित, हाथमें चँवर लिये हुए नागयक्षयुगलसे युक्त, और नानाप्रकारके रत्नोंसे निर्मित, ऐसी जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ ५२ ॥

आदि-अन्तसे रहित (अनादिनिधन) वे जिनभवन, भवनवासी देवोंके भवनोंकी संख्याप्रमाण सात करोड़ बहत्तर लाख, सुशोभित होते हैं ॥ ५३ ॥

७७२००००० ।

जो देव सम्यग्दर्शनरूपी रत्नसे युक्त हैं, अर्थात् सम्यग्दृष्टि हैं, वे कर्मक्षयके निमित्त नित्य ही इन जिनप्रतिमाओंकी भक्तिसे पूजा करते हैं ॥ ५४ ॥

इसके अतिरिक्त अन्य सम्यग्दृष्टि देवोंसे सम्बोधित किये गये मिथ्यादृष्टि देव भी कुलदेवता मानकर उन जिनेन्द्र-मूर्तियोंकी नित्य ही बहुतप्रकारसे पूजा करते हैं ॥ ५५ ॥

जिनभवनोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

कूटोंके चारों तरफ नानाप्रकारकी रचनाओंसे युक्त और उत्तम सुवर्ण एवं रत्नसमूहसे निर्मित भवनवासी देवोंके प्रासाद हैं ॥ ५६ ॥

सब भवन सात, आठ, नौ, दश, इत्यादिक विचित्र भूमियोंसे भूषित; लंबायमान रत्नमालाओंसे सहित; चमकते हुए मणिमय दीपकोंसे सुशोभित; जन्मशाला, अभिषेकशाला, भूषणशाला,

१ ब अडअहियसयं. २ द ब गोसीर°. ३ द ब समचादो. ४ द ब पासादो. ५ द ब णाणाविविहविणासं. ६ ब °कंचणणियर°.

जम्माभिसेयभूसणमेहुणओलग्गमंतसालाहिं[1] । विविहाहिं रमणिज्जा मणितोरणसुंदरदुवारा ॥ ५८
सामण्णगब्भकदलीचित्तासणणालयादिगिहजुत्ता । कंचणपायारजुदा विसालवलहीविराजमाणा य ॥ ५९
धुव्वंतधयवडाया पोक्खरणीवाविकूवसंडाहिं[2] । सव्वे कीडणजुत्ता णाणावरमत्तवारणोपेता ॥ ६०
मणहरजालकवाडा णाणाविहसालभंजिकाबहुला । आदिणिहणेण हीणा किं बहुणा ते णिरुवमा णेया ॥ ६१
चउपासाणिं तेसुं विचित्तरूवाणि आसणाणिं च । वररयणविरचिदाणिं सयणाणि हवंति दिव्वाणिं[3] ॥ ६२

। पासादा गदा ।

एक्केक्कस्सिं इंदे परिवारसुरा हवंति दस णेदे[4] । पडिइंदा तेत्तीसत्तिदसा सामाणीयदिसाइंदा ॥ ६३
तणुरक्खा तिप्परिसा सत्ताणीया पइण्णगाभियोगा । किब्बिसया इदि कमसो पत्तेण्णिदा इंदपरिवारा ॥ ६४
इंदा रायसरिच्छा जुवरायसमा हुवंति पडिइंदा । पुत्तणिहा तेत्तीसत्तिदसा सामाणिया कलत्तसमा ॥ ६५
चत्तारि लोयपाला सावण्णा[5] होंति तंतवालाणं । तणुरक्खाण समाणा सरीररक्खा[6] सुरा सव्वे ॥ ६६

मैथुनशाला, ओलगशाला (परिचर्यागृह) और मंत्रशाला, इन विविध प्रकारकी शालाओंसे रमणीय; मणिमय तोरणोंसे सुंदर द्वारोंवाले; सामान्यगृह, गर्भगृह, कदलीगृह, चित्रगृह, आसनगृह, नादगृह और लतागृह, इत्यादि गृहविशेषोंसे सहित; सुवर्णमय प्राकारसे संयुक्त; विशाल छज्जोंसे विराजमान; फहराती हुई ध्वजापताकाओंसे सहित; पुष्करिणी, वापी और कूप, इनके समूहोंसे युक्त; क्रीडनयुक्त; अनेक उत्तम मत्तवारणोंसे संयुक्त; मनोहर गवाक्ष और कपाटोंसे सुशोभित; नानाप्रकारकी पुत्तलिकाओंसे सहित; और आदि-अन्तसे हीन अर्थात् अनादिनिधन हैं। बहुत कहनेसे क्या ? ये सब प्रासाद उपमासे रहित अर्थात् अनुपम हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ ५७-६१ ॥

उन भवनोंके चारों पार्श्वभागोंमें विचित्र रूपवाले आसन और उत्तम रत्नोंसे रचित दिव्य शय्यायें स्थित हैं ॥ ६२ ॥

प्रासादोंका कथन समाप्त हुआ।

प्रतीन्द्र, त्रायस्त्रिंश देव, सामानिक, दिशाइन्द्र (लोकपाल), तनुरक्षक, तीन पारिषद, सात अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्बिषिक, ये दश प्रत्येक इन्द्रके परिवार देव होते हैं। इसप्रकार क्रमसे इन्द्रके परिवार देव कहे गये हैं ॥ ६३-६४ ॥

इनमेंसे इन्द्र राजाके सदृश, प्रतीन्द्र युवराजके समान, त्रायस्त्रिंश देव पुत्रके सदृश, और सामानिक कलत्रके तुल्य होते हैं ॥ ६५ ॥

चारों लोकपाल मंत्रपालोंके सदृश और सब तनुरक्षक देव राजाके अंगरक्षकके समान होते हैं ॥ ६६ ॥

---

१ द ओलंग°, ब उलग°. २ द ब सालाइं. ३ द ब विदिलाहिं. ४ ब सामेण. ५ ब °कूड°. ६ द ब °संडाइं. ७ द ब विरचिदाणे. ८ द ब दव्वाणि. ९ द दस भेदा. १० द ब सावंता. ११ द ससरीरं, ब सरीरं वा.

बाहिरमज्झब्भंतरतंडयसरिसा [1]हवंति तिप्पारिसा । सेणोवमा यणीया पइण्णया पुरिजणसरिच्छा ॥ ६७
परिवारसमाणा ते अभियोगसुरा [2]हवंति किब्बिसया । पाणोवमाणधारी[3] देवाणिंदस्स णादव्वं ॥ ६८
इंदसमा पडिइंदा तेत्तीससुरा हवंति तेत्तीसं । चमरादीइंदाणं पुह पुह सामाणिया इमे देवा ॥ ६९
चउसट्ठि सहस्साणिं छट्ठी छप्पण्ण चमरतिदयम्मि । पण्णास सहस्साणिं पत्तेक्कं होंति सेसेसु ॥ ७०
६४००० । ६०००० । ५६००० । सेसे १७ । ५०००० ।
पत्तेक्कइंदयाणं सोमो यमवरुणधणदणामा य । पुव्वादिलोयपाला [4]हवंति चत्तारि चत्तारि ॥ ७१
छप्पण्णसहस्साधियबेलक्खा होंति चमरतणुरक्खा । चालसहस्सब्भहिया वे लक्खा बिदियइंदम्मि ॥ ७२
चउवीससहस्साधियलक्खदुगं [5]तदियइंदतणुरक्खा । सेसेसुं पत्तेक्कं णादव्वा दोण्णि लक्खाणि ॥ ७३
२५६००० । २४०००० । २२४००० । सेसे १७ । २००००० ।

राजाकी बाह्य, मध्य और अभ्यन्तर समितिके समान देवोंमें भी तीन प्रकारकी परिषद् होती हैं । इन तीनों परिषदोंमें बैठने योग्य देव क्रमशः बाह्य पारिषद, मध्यम पारिषद और अभ्यन्तर पारिषद कहलाते हैं । अनीक देव सेनाके तुल्य और प्रकीर्णक देव पौर जन अर्थात् प्रजाके सदृश होते हैं ॥ ६७ ॥

वे आभियोग्य जातिके देव दासके समान और किल्बिषिक देव चण्डालकी उपमाको धारण करनेवाले हैं । इसप्रकार यह देवोंके इन्द्रका परिवार जानना चाहिये ॥ ६८ ॥

प्रतीन्द्र इन्द्रके बराबर, और त्रायस्त्रिंश देव तेतीस होते हैं । चमर-वैरोचनादिक इन्द्रोंके सामानिक देवोंका प्रमाण पृथक् पृथक् निम्नप्रकार समझना चाहिये ॥ ६९ ॥

चमरादिक तीन इन्द्रोंके सामानिक देव क्रमशः चौंसठ हजार, साठ हजार, और छप्पन हजार होते हैं । इसके आगे शेष सत्तरह इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके पचास हजारप्रमाण सामानिक देव होते हैं ॥ ७० ॥

सामानिक—चमर ६४०००, वैरोचन ६००००, भूतानंद ५६०००, शेष सत्तरह ५०००० ।

प्रत्येक इन्द्रके पूर्वादिक दिशाओंके रक्षक क्रमसे सोम, यम, वरुण, और धनद (कुबेर) नामक चार चार लोकपाल होते हैं ॥ ७१ ॥

चमरेन्द्रके तनुरक्षक देव दो लाख छप्पन हजार, और द्वितीय इन्द्रके दो लाख चालीस हजार होते हैं ॥ ७२ ॥

तनुरक्षक—चमर २५६०००, वैरोचन २४०००० ।

तीसरे इन्द्रके तनुरक्षक देव दो लाख चौबीस हजार, और शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके दो लाखप्रमाण जानना चाहिये ॥ ७३ ॥

तनुरक्षक—भूतानंद २२४०००, शेष सत्तरह २००००० ।

---

१ द हुवंति. २ द हुवंति. ३ द ब °माणधीरी. ४ द हुवंति. ५ ब तदियतणु°.

अट्ठवीसं छव्वीसं छच्च सहस्साणि चमरतिदयम्मि । आदिमपरिसाए[1] सुरा सेसे पत्तेक्कचउसहस्साणि ॥ ७४

२८००० । २६००० । ६००० । सेसे १७ । ४००० ।

तीसं अट्ठावीसं अट्ठ सहस्साणि चमरतिदयम्मि । मज्झिमपरिसाए सुरा सेसेसुं छस्सहस्साणि ॥ ७५

३०००० । २८००० । ८००० । सेसे १७ । ६००० ।

बत्तीसं तीसं दस होंति सहस्साणि चमरतिदयम्मि । बाहिरपरिसाए सुरा अट्ठ सहस्साणि सेसेसु ॥ ७६

३२००० । ३०००० । १०००० । सेसे १७ । ८००० ।

सत्ताणीयं होंति हु पत्तेक्कं सत्त सत्त कक्खजुदा । पढमं सत्तमाणसमा तद्दुगुणा चरमकक्खंतं ॥ ७७

असुरम्मि महिसतुरगा रहकरिणो[2] तह पदातिगंधव्वो । णट्टाणया एदाणं महत्तरा छ महत्तरी एक्का ॥ ७८

। ७ ।

णागा गरुडगइंदा मयरट्ठा खग्गिसीहसिबिकस्सा । णागादीणं पढमाणीया बिदियाय असुरं वा ॥ ७९

चमरादिक तीन इन्द्रोंके आदिम पारिषद क्रमसे अट्ठाईस हजार, छब्बीस हजार, और छह हजारप्रमाण, तथा शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके चार हजारमात्र होते हैं ॥ ७४ ॥

आदिम पारिषद— चमर २८०००, वैरोचन २६०००, भूतानंद ६०००, शेष सत्तरह ४०००।

चमरादिक तीन इन्द्रोंके मध्यम पारिषद देव क्रमसे तीस हजार, अट्ठाईस हजार और आठ हजार, तथा शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके छह हजारमात्र होते हैं ॥ ७५ ॥

म. पारिषद— चमर ३००००, वैरोचन २८०००, भूतानंद ८०००, शेष सत्तरह ६०००।

चमरादिक तीन इन्द्रोंके क्रमसे बत्तीस हजार, तीस हजार, और दश हजार, तथा शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके आठ हजारप्रमाण बाह्य पारिषद देव होते हैं ॥ ७६ ॥

बा. पारिषद— चमर ३२०००, वैरोचन ३००००, भूतानंद १००००, शेष सत्तरह ८०००।

सात अनीकोंमेंसे प्रत्येक अनीक सात सात कक्षाओंसे युक्त होती है। उनमेंसे प्रथम कक्षाका प्रमाण अपने अपने सामानिक देवोंके बराबर, तथा इसके आगे अन्तिम कक्षातक उत्तरोत्तर प्रथम कक्षासे दूना दूना प्रमाण होता गया है ॥ ७७ ॥

असुरकुमारोंमें महिष, घोड़ा, रथ, हाथी, पादचारी, गन्धर्व और नर्तकी, ये सात अनीक होती हैं। इनमेंसे आदिकी छह अनीकोंमें छह महत्तर (प्रधान देव) और अन्तिम अनीकमें एक महत्तरी (प्रधान देवी) होती है ॥ ७८ ॥

नागकुमारादिकोंके क्रमसे नाग, गरुड़, गजेन्द्र, मगर, ऊंट, गेंडा, सिंह, शिबिका और अश्व, ये प्रथम अनीक होती हैं। शेष द्वितीयादि अनीकें असुरकुमारोंके ही समान होती हैं ॥ ७९ ॥

१ द ब 'परिसाण. २ ब रहकरणो. ३ द खग्ग'.

गच्छसमे गुणयारे परप्परं गुणिय रूवपरिहीणे[1] । पडोगगुणविहत्ते गुणिदे वयणेण गुणगणिदं ॥ ८०
एक्कासीदी लक्खा अडवीससहस्ससंजुदा चमरे । होंति हु महिसाणीया पुह पुह तुरयादिया वि तम्मेत्ता ॥ ८१
८१२८००० ।
तिट्ठाणे सुण्णाणिं छण्णवअडछक्कपंचअंककमे । चमरिंदस्स[2] य मिलिदा सत्ताणीया हवंति इमे ॥ ८२
५६८९६००० ।
छाहत्तरि लक्खाणिं वीससहस्साणि होंति महिसाणं । वइरोयणम्मि इंदे पुह पुह तुरगादिणो वि तम्मेत्ता ॥ ८३
७६२०००० ।
चउठाणेसुं सुण्णा चउतितिपंचंक एव मालाए । वइरोयणस्स मिलिदा सत्ताणीया इमे होंति ॥ ८४
५३३४०००० ।
एक्कत्तरि लक्खाणिं णावाओ होंति बारससहस्सा । भूदाणंदे पुह पुह तुरंगप्पहुदीणि तम्मेत्ता ॥ ८५
७११२००० ।

गच्छके बराबर गुणकारको परस्परमें गुणा करके प्राप्त गुणनफलमेंसे एक कम करके शेषमें एक कम गुणकारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसको मुखसे गुणा करनेपर गुणसंकलित धनका प्रमाण आता है ॥ ८० ॥

उदाहरण—गच्छका प्रमाण ७, गुणकारका प्रमाण २, और मुखका प्रमाण ६४००० है ।

२ × २ × २ × २ × २ × २ × २ − १ ÷ (२−१) × ६४००० = ८१२८००० चमरेन्द्रकी महिषानीक ।

चमरेन्द्रके इक्यासी लाख अट्ठाईस हजार महिष सेना, तथा पृथक् पृथक् तुरगादिक भी इतने ही होते हैं ॥ ८१ ॥ ८१२८००० ।

तीन स्थानोंमें शून्य, छह, नौ, आठ, छह और पांच, इन अंकोंके क्रमसे, अर्थात् पांच करोड़ अड़सठ लाख छयानवै हजार, यह चमरेन्द्रकी सातों अनीकोंका सम्मिलित प्रमाण होता है ॥ ८२ ॥ ५६८९६००० ।

वैरोचन इन्द्रके छयत्तर लाख, बीस हजार महिष, और पृथक् पृथक् तुरगादिक भी इतने ही होते हैं ॥ ८३ ॥ ७६२०००० ।

चार स्थानोंमें शून्य, चार, तीन, तीन और पांच, इन अंकोंके क्रमशः मिलानेपर जो संख्या हो, इतनेमात्र वैरोचन इन्द्रके मिलकर ये सात अनीक होती हैं ॥ ८४ ॥ ५३३४०००० ।

भूतानन्दके इकहत्तर लाख बारह हजार नाग, और पृथक् पृथक् तुरगादिक भी इतने ही होते हैं ॥ ८५ ॥ ७११२००० ।

---

१ ब परिहीणो. २ द चमरिंदयस्स. ३ ब पुहपुहउरग°.

तिट्ठाणे सुण्णाणिं चउक्कअट्ठसत्तणवचउक्कमे । सत्ताणीया मिलिदे भूदाणंदस्स णायव्वा ॥ ८६

४९७८४०००।

तेसट्ठी लक्खाइं पण्णास सहस्सयाणि पत्तेक्कं । सेसेसुं इंदेसुं पढमाणीयाण परिमाणा ॥ ८७

६३५००००।

चउठाणेसुं[3] सुण्णा पंच य तिट्ठाणए चउक्काणिं । अंककमे सेसाणं सत्ताणीयाण[4] परिमाणं ॥ ८८

४४४५००००।

होंति पयण्णयपहुदी जेत्तियमेत्ता य सयलइंदेसुं । तप्परिमाणपरूवणउवएसो[5] णत्थि कालवसा ॥ ८९

किण्हा रयणसुमेघा देवीणामा सुकंदअभिधाणा । णिरुवमरूवधराओ चमरे पंचग्गमहिसीओ ॥ ९०

अग्गमहिसीण सयलं अट्ठसहस्साणि होंति पत्तेक्कं । परिवारा देवीओ चालसहस्साणि संमिलिदा ॥ ९१

८०००। ४००००।

चमरग्गिममहिसीणं अट्ठसहस्सा विकुव्वणा संति । पत्तेक्कं अप्पसमं णिरुवमलावण्णरूवेहिं ॥ ९२

तीन स्थानोंमें शून्य, चार, आठ, सात, नौ और चार, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चार करोड़ सत्तानवे लाख चौरासी हजारप्रमाण भूतानन्द इन्द्रके मिलकर सात अनीक समझना चाहिये ॥ ८६ ॥ ४९७८४०००।

शेष सत्तरह इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके प्रथम अनीकका प्रमाण तिरेसठ लाख पचास हजारमात्र है ॥ ८७ ॥ ६३५०००० ।

चार स्थानोंमें शून्य, पांच और तीन स्थानोंमें चार, इसप्रकार अंकोंके क्रमसे, अर्थात् चार करोड़ चवालीस लाख पचास हजार, यह शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके सात अनीकोंका प्रमाण होता है । ॥ ८८ ॥ ४४४५०००० ।

सम्पूर्ण इन्द्रोंमें जितने प्रकीर्णक आदिक देव हैं, कालके वशसे उनके प्रमाणके प्ररूपणका उपदेश नहीं है ॥ ८९ ॥

चमरेन्द्रके कृष्णा, रत्ना, सुमेघा, देवी नामक और सुकंदा या सुकांता (शुकाढ्या) नामकी अनुपम रूपको धारण करनेवाली पांच अग्रमहिषियां होती हैं ॥ ९० ॥

अग्रदेवियोंमेंसे प्रत्येकके अपने साथ आठ हजार परिवार-देवियां होती हैं । इसप्रकार मिलकर सब परिवार-देवियां चालीस हजारप्रमाण होती हैं ॥ ९१ ॥ ८००० × ५ = ४०००० ।

चमरेन्द्रकी अग्रमहिषियोंमेंसे प्रत्येक अपने साथ, अर्थात् मूल शरीरसहित, अनुपम रूप-लावण्यसे युक्त आठ हजारप्रमाण विक्रियानिर्मित रूपोंको धारण कर सकती है ॥ ९२ ॥

---

१ ब अट्ठसत्त. २ द सत्ताणीआ. ३ ब चवट्ठाणेसुं. ४ द ब सत्ताणीयाणि. ५ द ब तप्परिमाण-परूवणं.

सोलससहस्समेत्ता वल्लहियाओ हवंति चमरस्स । छप्पण्णसहस्साणिं संमिलिदे सव्वदेवीओ ॥ ९३

१६००० । ५६००० ।

पउमापउमसिरीओ कणयसिरी कणयमालमहपउमा । अग्गमहिसीउ विदेए विकिरियापहुदि पुव्वं वं ॥ ९४

पण अग्गमहिसियाओ पत्तेक्कं वल्लभा दससहस्सा । णागिंदाणं विकिरियापहुदि होदि पुव्वं वं ॥ ९५

५ । १०००० । ४०००० । ५०००० ।

चत्तारि सहस्सा णं वल्लहियाओ हवंति पत्तेक्कं । गरुलिंदाणिं सेसं पुव्वं पिव एत्थ वत्तव्वं ॥ ९६

५ । ४००० । ४०००० । ४४००० ।

सेसाणं इंदाणं पत्तेक्कं पंच अग्गमहिसीओ । एदेसु छस्सहस्सा ससमं परिवारदेवीओ ॥ ९७

५ । ६००० । ३०००० ।

दीविंदप्पहुदीणं देवीणं वरविउव्वणा संति । छस्सहस्सं च समं पत्तेक्कं विविहरूवेहिं ॥ ९८

चमरेन्द्रके सोलह हजारप्रमाण वल्लभा देवियां होती हैं। इसप्रकार चमरेन्द्रके, पांचों अग्रदेवियोंकी परिवार-देवियों और वल्लभा देवियोंको मिलाकर, सब देवियां छप्पन हजार होती हैं ॥९३॥

वल्लभा १६००० + सपरिवार अग्रमहिषी ४०००० = ५६००० ।

द्वितीय इन्द्रके पद्मा, पद्मश्री, कनकश्री, कनकमाला, और महापद्मा, ये पांच अग्र-देवियां होती हैं। इनके विक्रिया आदिका प्रमाण पूर्वके समान अर्थात् प्रथम इन्द्रके समान ही जानना चाहिये ॥ ९४ ॥

नागेन्द्रोंमेंसे (भूतानन्द और धरणानन्दमेंसे) प्रत्येकके पांच अग्रदेवियां और दश हजार वल्लभायें होती हैं। शेष विक्रिया आदिका प्रमाण पहिले जैसा ही है ॥ ९५ ॥

अग्रदेवी ५, वल्लभा १००००, सपरिवार अग्रदेवी ४००००, समस्त ५००००।

गरुडेन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके चार हजार वल्लभायें होती हैं। शेष कथन पूर्वके समान ही यहांपर भी करना चाहिये ॥ ९६ ॥

अ. दे. ५, वल्लभा ४०००, सपरिवार अ. दे. ४००००, समस्त ४४०००।

शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके पांच अग्रदेवियां, और उनमेंसे प्रत्येकके अपनेको सम्मिलित कर छह हजार परिवार-देवियां होती हैं ॥ ९७ ॥ अ. दे. ५, परि. दे. ६००० × ५ = ३००००।

द्वीपेन्द्रादिकोंकी देवियोंमेंसे प्रत्येकके मूल शरीरके साथ विविधप्रकारके रूपोंसे छह हजार-प्रमाण विक्रिया होती है ॥ ९८ ॥

---

१ द ब वा. २ द ब वा. ३ द ब गरुणिंदाणं. ४ द ब देविंद°. ५ द वरविवणा, ब वारविव्वणा.

[· पुह पुह सेसिंदाणं वल्लभिया होंति दो सहस्साणि । बत्तीस सहस्साणिं संमिलिदे सव्वदेवीओ ॥ ९९
२००० । ३२००० ।
पडिइंदादिचउण्हं वल्लहियाणं तहेव देवीणं । सव्वं विउव्वणादिं णियणियइंदाण सारिच्छं ॥ १००
सव्वेसुं इंदेसुं तणुरक्खसुराण होंति देवीओ । पत्तेक्कं सयमेत्ता णिरुवमलावण्णबालाओ ॥ १०१
१०० ।
अट्ठाइजसयाणिं देवीओ दुवे सया दिवड्ढसयं । आदिममज्झिमबाहिरपरिसासुं होंति चमरस्स ॥ १०२
२५० । २०० । १५० ।
देवीओ तिण्णि सया अट्ठाइजं सयाणि दुसयाणिं । आदिममज्झिमबाहिरपरिसासुं होंति विदियइंदस्स ॥ १०३
३०० । २५० । २०० ।
दोण्णि सया देवीओ सट्ठीचालादिरित्तएक्कसयं । णागिंदाणं अब्भिंतरादितिप्परिसदेवेसुं ॥ १०४
२०० । १६० । १४० ।
सट्ठीजुदमेक्कसयं चालीसजुदं वीससहियमेक्कसयं । गरुडिंदाणं अब्भंतरादितिप्परिसदेवीओ ॥ १०५
१६० । १४० । १२० ।

शेष इन्द्रोंके पृथक् पृथक् दो हजार वल्लभा देवियां होती हैं। इसप्रकार मिलकर प्रत्येक इन्द्रके सब देवियां बत्तीस हजारप्रमाण होती हैं ॥ ९९ ॥

वल्लभा २००० + सपरिवार अग्रदेवी ३०००० = ३२०००।

प्रतीन्द्र, त्रायस्त्रिंश, सामानिक और लोकपाल, इन चारके वल्लभायें, तथा इन देवियोंकी सम्पूर्ण विक्रिया आदि अपने अपने इन्द्रोंके समान ही समझना चाहिये ॥ १०० ॥

सब इन्द्रोंके तनुरक्षक देवोंमेंसे प्रत्येकके अनुपम लावण्यको धारण करनेवाली सौ बाल देवियां होती हैं ॥ १०१ ॥ १००।

चमरेन्द्रके आदिम पारिषद, मध्यम पारिषद और बाह्य पारिषद देवोंके क्रमसे ढाईसौ, दोसौ और डेढ़सौ देवियां होती हैं ॥ १०२ ॥ २५०, २००, १५०।

द्वितीय इन्द्रके आदिम पारिषद, मध्य पारिषद और बाह्य पारिषद देवोंके क्रमसे तीनसौ, ढाईसौ और दोसौ देवियां होती हैं ॥ १०३ ॥ ३००, २५०, २००।

नागेन्द्रोंके अभ्यन्तरादिक तीनोंप्रकारके पारिषद देवोंके क्रमसे दोसौ, एकसौ साठ और एकसौ चालीस देवियां होती हैं ॥ १०४ ॥ २००, १६०, १४०।

गरुड़ेन्द्रोंके अभ्यन्तरादिक तीनों पारिषद देवोंके क्रमसे एकसौ साठ, एकसौ चालीस और एकसौ बीस देवियां होती हैं ॥ १०५ ॥ १६०, १४०, १२०

---

१ द ब चालादिरित्त. २ द ब तिप्परिसदेवीसु.

चालीसुत्तरमेक्कं[1] बीसब्भहियं सयं च केवलयं । सेसिंदाणं[2] आदिमपरिसप्पहुदीसु देवीओ ॥ १०६
१४० । १२० । १०० ।

असुरादिदसकुलेसुं हुवंति सेणासुराण पत्तेक्कं । पण्णासा देवीओ सयं च परो महत्तरसुराणं ॥ १०७
५० । १०० ।

जिणदिट्ठपमाणाओ[3] होंति पइण्णयतियस्स देवीओ । सव्वणिगिट्ठसुराणं पि देवीओ बत्तीस पत्तेक्कं ॥ १०८
३२ ।

एदे सव्वे देवा दोविंदाणं[4] पहाणपरिवारा । अण्णे वि यप्पभाणा संखातीदा विधायंति ॥ १०९
इंदपडिंदप्पहुदी तद्देवीओ मणेण आहारं । अमयमयमहसिणिद्धं संगिण्हंते णिरुवमाणं[5] ॥ ११०
चॅमरदुगे आहारो वरिससहस्सेण होदि णियमेण । पणुवीसदिणाण दलं भूदाणंदादिछण्णं पि ॥ १११
व १०००। दि २५।
२
बारसदिणेसु जलपहपहुदीछण्णं पि भोयणावसरो । पण्णरसवासदलं अमिदगदिप्पहुदिछक्कम्मि ॥ ११२
१२। १५।
२

शेष इन्द्रोंके आदिम पारिषदादिक देवोंके क्रमसे एकसौ चालीस, एकसौ बीस और केवल सौ देवियां होती हैं ॥ १०६ ॥ १४०, १२०, १०० ।

असुरादिक दश कुलोंमें सेना-सुरोंमेंसे प्रत्येकके उत्कृष्ट पचास, और महत्तर सुरोंके सौ देवियां होती हैं ॥ १०७ ॥ ५०, १०० ।

प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक, इन तीन देवोंकी देवियां जिनभगवान्‌से कहे गये प्रमाणरूप होती हैं । सम्पूर्ण निकृष्ट देवोंमेंसे भी प्रत्येकके बत्तीस देवियां होती हैं ॥ १०८ ॥ ३२ ।

ये सब उपर्युक्त देव इन्द्रोंके प्रधान परिवारस्वरूप होते हैं । इनके अतिरिक्त अन्य और भी अप्रधान परिवाररूप होते हैं, जो असंख्यात कहे गये हैं ॥ १०९ ॥

इन्द्र और प्रतीन्द्रादिक तथा इनकी देवियां अति स्निग्ध और अनुपम अमृतमय आहारको मनसे ग्रहण करती हैं ॥ ११० ॥

चमरेन्द्र और वैरोचन इन दो इन्द्रोंके नियमसे एक हजार वर्षोंके बीतनेपर आहार होता है । इसके आगे भूतानन्दादिक छह इन्द्रोंके पच्चीस दिनोंके आधे अर्थात् साढ़े बारह दिनोंमें आहार होता है ॥ १११ ॥ वर्ष १०००। दि. २५ ।

जलप्रभादिक छह इन्द्रोंके बारह दिनमें, और अमितगतिप्रभृति छह इन्द्रोंके पन्द्रहके आधे अर्थात् साढ़े सात दिनमें आहारका अवसर आता है ॥ ११२ ॥ दि. १२। १५ ।

१ द ब °मेक्कसयं. २ द ब देविंदाणं. ३ द °प्पमाणाओ. ४ द ब णिरुवमणं. ५ द चरमदुगे. ६ द वरसं.

इंदादीपंचण्णं सरिसो आहारकालपरिमाणं । तणुरक्खप्पहुदीणं तस्सिं उवदेस उच्छिण्णो[1] ॥ ११३
चमरदुगे उस्सासं पण्णरसदिणाणि पंचवीसदलं । पुह पुह मुहुत्तयाणिं[2] भूदाणंदादिछक्कम्मि ॥ ११४
दि १५ । मु २५ ।
२
बारसमुहुत्तयाणिं[3] जलपहपहुदीसु छस्सु उस्सासा । पण्णरसमुहुत्तदलं अमिदगदिप्पहुदिछण्णं पि ॥ ११५
मु १२ । १५ ।
२
दसवरसमहस्साऊ जो देवो तस्स भोयणावसरो । दोसु दिवसेसु पंचसु पल्लपमाणाउजुत्तस्स[4] ॥ ११६
जो यजुदाऊ देवो[5] उस्सासा तस्स सत्तपाणेहिं । ते पंचमुहुत्तेहिं पलिदोवमआउजुत्तस्स[6] ॥ ११७
पडिइंदादिचउण्णं इंदसरिसा हुवंति उस्सासा । तणुरक्खप्पहुदीसुं उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ ११८
सव्वे असुरा किण्हा हुवंति णागा वि कालसामलया । गरुडा दीवकुमारा सामलवण्णा सरीरेहिं ॥ ११९
उदधित्थणिदकुमारा ते सव्वे कालसामलायारा । विज्जू विज्जुसरिच्छा सामलवण्णा दिसकुमारा ॥ १२०

इन्द्रादिक (इन्द्र, प्रतीन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश और पारिषद) पांचके आहारकालका प्रमाण समान है। इसके आगे तनुरक्षकादि देवोंके आहारकालके प्रमाणका उपदेश नष्ट होगया है ॥ ११३ ॥

चमरेन्द्र और वैरोचन इन्द्रके पन्द्रह दिनमें, तथा भूतानन्दादिक छह इन्द्रोंके पृथक् पृथक् पच्चीसके आधे अर्थात् साढ़े बारह मुहूर्तोंमें उच्छ्वास होता है ॥ ११४ ॥ दि. १५ । मुहूर्त २५ ।

जलप्रभादिक छह इन्द्रोंके बारह मुहूर्तोंमें, और अमितगति आदि छह इन्द्रोंके पन्द्रहके आधे अर्थात् साढ़े सात मुहूर्तोंमें उच्छ्वास होता है ॥ ११५ ॥ मु. १२ । १५ ।

जो देव दश हजार वर्षकी आयुवाला है, उसके दो दिनमें, और पल्योपमप्रमाण आयुसे युक्त देवके पांच दिनमें भोजनका अवसर आता है ॥ ११६ ॥

जो देव अयुत अर्थात् दश हजार वर्षप्रमाण आयुवाला है, उसके सात श्वासोच्छ्वास-प्रमाण कालमें, और पल्योपमप्रमाण आयुसे युक्त देवके पांच मुहूर्तोंमें उच्छ्वास होते हैं ॥ ११७ ॥

प्रतीन्द्रादिक चार देवोंके उच्छ्वास इन्द्रोंके समान ही होते हैं। इसके आगे तनुरक्षकादि देवोंमें उच्छ्वासकालके प्रमाणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ११८ ॥

सब असुरकुमार शरीरसे कृष्ण, नागकुमार कालश्यामल, और गरुड़कुमार व द्वीपकुमार श्यामलवर्ण होते हैं ॥ ११९ ॥

सम्पूर्ण उदधिकुमार और स्तनितकुमार कालश्यामल आकारवाले, विद्युत्कुमार बिजलीके सदृश, और दिक्कुमार श्यामलवर्ण होते हैं ॥ १२० ॥

---

१ व °रक्खपहुदीणं. २ द ब उवदेस उच्छिण्णा. ३ ब पणरस°. ४ ब °मुहुत्तयाणं. ५ द °पमाणा-वजुत्तस्स. ६ द देओ. ७ द ब पलिदोवमयावजुत्तस्स. ८ द ब उदधिथणिद°.

अग्गिकुमारा सव्वे जलंतसिहिजालसरिसदित्तिधरा । णवकुवलयसमभावा वादकुमारा वि णादव्वा ॥ १२१
पंचसु कल्लाणेसुं जिणिंदपडिमाण पूजणणिमित्तं । णंदीसरम्मि दीवे इंदा जायंति भत्तीए ॥ १२२
सीलादिसंजुदाणं पूजणहेदुं परिक्खणणिमित्तं । णियणियकीडणकज्जुव वइरिसमूहस्स मारणेच्छाए ॥ १२३
असुरप्पहुदीण गदी उड्ढसरूवेण जाव ईसाणं । णियवसदो परवसदो अच्चुदकप्पावही होदि ॥ १२४
कणयं व णिरुवलेवा णिम्मलकंती सुगंधणिस्सासा । णिरुवमयरूवरेखा समचउरस्संगसंठाणा ॥ १२५
लक्खणजुत्ता संपुण्णमियंकसुंदरमहाभासा । णिच्चं चेय कुमारा देवा देवी य तारिसिया ॥ १२६
रोगजरापरिहीणा णिरुवमबलवीरियेहिं परिपुण्णा । आरत्तपाणिचरणा कदलीघादेण परिचत्ता ॥ १२७
वररयणमोडधारी [1]विविहविभूसणेहिं सोहिल्ला । [2]मंसट्ठिमेधलोहिदमज्जवसासुक्कपरिहीणा ॥ १२८
करुहकेसविहीणा णिरुवमलावण्णदित्तिपरिपुण्णा । बहुविहविलाससत्ता देवा देवी य ते होंति ॥ १२९
असुरादी भवणसुरा सव्वे ते होंति कायपविचारा [3] । वेदस्सुदीरणाए अणुभवणं माणुससमाणं ॥ १३०

सब अग्निकुमार जलती हुई अग्निकी ज्वालाके सदृश कान्तिके धारक और वातकुमार देव नवीन कुवलय (नील कमल) के सदृश जानना चाहिये ॥ १२१ ॥

इन्द्र लोग भक्तिसे पांच कल्याणकों के निमित्त (ढाई द्वीपमें) तथा जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजनके निमित्त नन्दीश्वर द्वीपमें जाते हैं ॥ १२२ ॥

शीलादिकसे संयुक्त किन्हीं मुनिवरादिककी पूजन व परीक्षाके निमित्त, अपनी अपनी क्रीडा करनेके लिये, अथवा शत्रुसमूहको नष्ट करनेकी इच्छासे असुरकुमारादिक देवोंकी गति ऊर्ध्वरूपसे अपने वश, अर्थात् अन्यकी सहायतासे रहित, ईशान स्वर्गतक, और परके वशसे अच्युत स्वर्गतक होती है ॥ १२३-१२४ ॥

उक्त देव सुवर्णके समान मलके संसर्गसे रहित, निर्मल कान्तिके धारक, सुगंधित निश्वाससे संयुक्त, अनुपम रूपरेखावाले, समचतुरस्र नामक शरीरसंस्थानसे सहित, लक्षणोंसे युक्त, पूर्ण चन्द्रके समान सुन्दर महाकान्तिवाले, और नित्य ही कुमार होते हैं। देवोंके समान उनकी देवियां भी वैसे ही गुणोंसे युक्त होती हैं ॥ १२५-१२६ ॥

वे देव और देवियां रोग एवं जरासे विहीन, अनुपम बल-वीर्यसे परिपूर्ण, किंचित् लालिमायुक्त हाथ-पैरोंसे सहित, कदलीघात अर्थात् अकालमरणसे रहित, उत्कृष्ट रत्नोंके मुकुटको धारण करनेवाले, उत्तमोत्तम विविधप्रकारके भूषणोंसे शोभायमान, मांस-हड्डी-मेदा-लोहू-मज्जा-वशा और शुक्र, इन सात धातुओंसे विहीन, नख एवं बालोंसे रहित, अतुल्य लावण्य व दीप्तिसे परिपूर्ण, और अनेक प्रकारके हाव-भावोंमें आसक्त होते हैं ॥ १२७-१२९ ॥

वे सब असुरादिक भवनवासी देव कायप्रवीचारसे युक्त होते हैं, तथा वेद नोकषायकी उदीरणा होनेपर वे मनुष्योंके समान कामसुखका अनुभव करते हैं ॥ १३० ॥

---

१ द मारणिट्ठाए. २ ब मेड°. ३ द मंसट्ठि. ४ द मज्जवसासुक्क°. ५ द ब °पडिचारा. ६ द ब वेदसुदीरणयाए. ७ द ब माणस°.

धादुविहीणत्तादो रेदविमिच्चमणमाहिय ण हु ताणं । संकप्पसुहं जायदि वेदस्स उदीरणविगमे ॥ १३१
बहुविहपरिवारजुदा देविंदा विविहछत्तपहुदीणं । सोहंति विभूदीहिं पडिइंदादी य चत्तारो ॥ १३२
पडिइंदादिचउण्हं सिंहासणछादवत्तचमराणिं । णियणियइंदसमाणिं आयारे होंति किंचूणा ॥ १३३
सव्वेसिं इंदाणं चिण्हाणि किरीटमेव मणिखचिदं । पडिइंदादिचउण्हं चिण्हं सउडं मुणेदव्वा ॥ १३४
ओलगसालापुरदो चेत्तदुमा होंति विविहरयणमया । असुरप्पहुदिकुलाणं ते चिण्हाइं इमा होंति[1] ॥ १३५
अस्सत्थसत्तवण्णा संमलजंबू य वेतसकडंबा । तह पीयंगू सिरसा पलासरायद्दुमा कमसो ॥ १३६
चेत्तदुमामूलेसुं पत्तेक्कं चउदिसासु चेट्ठंते[2] । पंच जिणिंदप्पडिमा पलियंकठिदी परमरम्मा ॥ १३७
पडिमाणं अग्गेसुं रयणत्थंभा हवंति वीस पुढं[3] । पडिमापीढसरिच्छा पीढा थंभाण णादव्वा ॥ १३८
एक्केकमाणथंभे अट्ठावीसं जिणिंदपडिमाओ । चउसु दिसासुं सिंहासणविण्णासजुत्ताओ ॥ १३९

परन्तु सप्त धातुओंसे रहित होनेके कारण निश्चयसे उन देवोंके वीर्यका क्षरण नहीं होता। केवल वेद नोकषायकी उदीरणाके शान्त होनेपर उन्हें संकल्पसुख उत्पन्न होता है ॥ १३१ ॥

बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त इन्द्र और प्रतीन्द्रादिक चार देव भी विविध प्रकारकी छत्रादिरूप विभूतियोंसे शोभायमान होते हैं ॥ १३२ ॥

प्रतीन्द्रादिक चार देवोंके सिंहासन, छत्र और चमर, ये अपने अपने इन्द्रोंके समान होते हुए भी आकारमें कुछ कम होते हैं ॥ १३३ ॥

सब इन्द्रोंके चिह्न मणियोंसे खचित किरीट (तीन शिखरवाला मुकुट) और प्रतीन्द्रादिक चार देवोंका चिह्न साधारण मुकुट ही जानना चाहिये ॥ १३४ ॥

ओलगशालाओंके आगे विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित चैत्यवृक्ष होते हैं। वे ये (अग्रिम गाथामें निर्दिष्ट) चैत्यवृक्ष असुरादिक कुलोंके चिह्नरूप होते हैं ॥ १३५ ॥

अश्वत्थ (पीपल), सप्तपर्ण, शाल्मलि, जामुन, वेतस, कदंब, तथा प्रियंगु, शिरीष, पलाश और राजद्रुम, ये दश चैत्यवृक्ष क्रमसे उन असुरादिक कुलोंके चिह्नरूप होते हैं ॥ १३६ ॥

प्रत्येक चैत्यवृक्षके मूल भागमें चारों ओर पल्यंकासनसे स्थित परम रमणीय पांच पांच जिनेन्द्रप्रतिमायें विराजमान होती हैं ॥ १३७ ॥

प्रतिमाओंके आगे बीस रत्नमय स्तम्भ (मानस्तम्भ) होते हैं। स्तम्भोंकी पीठिकायें प्रतिमाओंकी पीठिकाओंके सदृश जानना चाहिये ॥ १३८ ॥

एक एक मानस्तम्भके ऊपर चारों दिशाओंमें सिंहासनके विन्याससे युक्त अट्ठाईस जिनेन्द्रप्रतिमायें होती हैं ॥ १३९ ॥

---

१ ब चिण्हा इंदमाहोंति. २ ब तय. ३ द चेट्ठंतो. ४ द पुढं.

सेसाणो वण्णणाओ चउवण्णसुरत्थचेत्ततरुसरिसा[1] । छत्तादिछत्तपहुदीजुदाण[2] जिणजाइपडिमाणं ॥ १४०
चमरिंदो सोहम्मे ईसदि बइरोयणो य ईसाणे[3] । भूदाणंदे[4] वेणू धरणाणंदम्मि वेणुधारि[5] त्ति ॥ १४१
एदे अट्ठ सुरिंदा अण्णोण्णं बहुविहाओ भूदीओ । दट्ठूण मच्छरेणं ईसंति सहावदो केई ॥ १४२

। इंदविभवो[6] समत्तो[7] ।

संखातीदा सेढी भावणदेवाण दसविकप्पाणं । तीए पमाणं सेढी विंदंगुलपढममूलहदा ॥ १४३

। संखा समत्ता ।

रयणाकरेक्कउवमा चमरदुगे होदि आउपरिमाणं । तिण्णि पलिदोवमाणिं भूदाणंदादिजुगलम्मि ॥ १४४
वेणुदुगे पंचदलं पुण्णवसिट्ठेसु दोण्णि पल्लाइं । जलपहुदिसेसयाणं दिवड्ढपल्लं तु पत्तेक्कं ॥ १४५

सा १ । प ३ । प ५ । प २ । प ३ से १२ ।
२ २

अहवा उत्तरइंदेसु पुव्वभणिदं हुवेदि अदिरित्तं । पडिइंदादिचउण्णं आउपमाणाणि इंदसमं ॥ १४६

छत्रके ऊपर छत्र इत्यादिकसे युक्त इन जिनेन्द्रप्रतिमाओंका शेष वर्णन चार वनोंके मध्यमें स्थित चैत्यवृक्षोंके सदृश जानना चाहिये ॥ १४० ॥

चमरेन्द्र सौधर्मसे ईर्षा करता है, वैरोचन ईशानसे, वेणु भूतानन्दसे, और वेणुधारी धरणानन्दसे । इसप्रकार ये आठ सुरेन्द्र परस्पर नानाप्रकारकी विभूतियोंको देखकर मात्सर्यसे, व कितने ही स्वभावसे, ईर्षा करते हैं ॥ १४१–१४२ ॥

इन्द्रोंका वैभव समाप्त हुआ ।

दश भेदरूप भवनवासी देवोंका प्रमाण असंख्यात जगश्रेणीरूप है । उसका प्रमाण घनांगुलके प्रथम वर्गमूलसे गुणित जगश्रेणीमात्र है ॥ १४३ ॥

संख्या समाप्त हुई ।

चमरेन्द्र एवं वैरोचन इन दो इन्द्रोंकी आयुका प्रमाण एक सागरोपम, भूतानन्द एवं धरणानन्दयुगलकी आयुका प्रमाण तीन पल्योपम, वेणु एवं वेणुधारी इन दोकी आयुका प्रमाण पांचके आधे अर्थात् ढाई पल्योपम, पूर्ण एवं वशिष्ठकी आयुका प्रमाण दो पल्योपम, तथा जलप्रभ आदि शेष बारह इन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी आयुका प्रमाण डेढ़ पल्योपम है ॥ १४४–१४५ ॥

आयु—प्र. द्वि. इन्द्र. १ सागर, तृ. च. ३ पल्य, पं. ष. २½ प., स. अ. २ प., शेष १२ इन्द्र १½ प. ।

अथवा, उत्तर इन्द्रों (वैरोचन और धरणानन्दप्रभृति) की पूर्वमें जो आयु कही गयी है, वह कुछ अधिक होती है । प्रतीन्द्रादिक चार देवोंकी आयुका प्रमाण इन्द्रोंके समान है ॥ १४६ ॥

---

१ द ब °सहस्सा. २ द ब °जुदाणि. ३ ब ईसाणो. ४ ब ईसाणंदे. ५ ब वेणुदारि. ६ द इंदविभवे. ७ द ब समत्ता. ८ द ब पमाणसेढीविंदंगुलगार°.

चमरस्स । वइरोयणस्स अधियं भूदाणंदस्स कोडिपुव्वाणि ॥ १४७

प १ । प १ । पु को १ ।

धरणिंदे अधियाणिं धणुकोडी हुवेदि वेणुस्स । तणुरक्खाउवमाणं अदिरित्तो वेणुधारिस्स ॥ १४८

पु को १ । व को १ । व को १ ।

पत्तेक्कमेक्कलक्खं वासा आऊ सरीररक्खाणं । सेसम्मि दक्खिणिंदे उत्तरइंदम्मि अदिरित्तं ॥ १४९

१०००००। १०००००।

अड्ढाइज्जा दोण्णि य पल्लाणि दिवड्ढ आउपरिमाणं । आदिमसमज्झिमबाहिरतिप्परिससुराण चमरस्स ॥ १५०

प ५ । २ । ३ ।

२ २

तिण्णि पलिदोवमाणिं अड्ढाइज्जा दुवे कमा होदि । वइरोयणस्स आदिमपरिसप्पहुदीण जेट्ठाऊ ॥ १५१

प ३ । ५ । २ ।

२

अट्ठं सोलसवत्तीसेवं पलिदोवमस्स भागाणि । भूदाणंदे अधिओ धरणाणंदस्स परिसतिदयाऊ ॥ १५२

प १ । प १ । प १ ।

८ १६ ३२

चमरेन्द्रके शरीररक्षक देवोंकी आयु एक पल्योपम, वैरोचन इन्द्रके शरीररक्षक देवोंकी आयु एक पल्योपमसे अधिक, और भूतानन्दके शरीररक्षकोंकी आयु एक पूर्वकोटिप्रमाण होती है ॥ १४७ ॥ प. १, प. १, पू. को. १ ।

धरणानन्दके शरीररक्षकोंकी आयु एक पूर्वकोटिसे अधिक, वेणुके शरीररक्षकोंकी आयु एक करोड़ वर्ष, और वेणुधारीके शरीररक्षकोंकी आयु एक करोड़ वर्षसे अधिक होती है ॥ १४८ ॥

पू. को. १ (सातिरेक), वर्ष कोटि १, वर्ष कोटि १ (सातिरेक)।

शेष दक्षिण इन्द्रोंके शरीररक्षकोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक लाख वर्ष और उत्तर इन्द्रोंके शरीररक्षकोंकी आयु एक लाख वर्षसे अधिक होती है ॥ १४९ ॥

वर्ष १ लाख, वर्ष १ लाख (सातिरेक) ।

चमरेन्द्रके आदि, मध्यम और बाह्य, इन तीन पारिषद देवोंकी आयुका प्रमाण क्रमशः ढाई पल्योपम, दो पल्योपम और डेढ़ पल्योपम है ॥ १५० ॥ प. $\frac{५}{२}$, २, $\frac{३}{२}$ ।

वैरोचन इन्द्रके आदिम पारिषदादिक देवोंकी उत्कृष्ट आयु क्रमसे तीन पल्योपम, ढाई पल्योपम, और दो पल्योपम है ॥ १५१ ॥ प. ३, $\frac{५}{२}$, २ ।

भूतानन्दके तीनों पारिषद देवोंकी आयु क्रमशः पल्योपमके आठवें, सोलहवें, और बत्तीसवें भागप्रमाण, तथा धरणानन्दके तीनों पारिषद देवोंकी आयु इससे अधिक होती है ॥ १५२ ॥ प. $\frac{१}{८}$, प. $\frac{१}{१६}$, प. $\frac{१}{३२}$ ।

---

१ द वयरोयणस्स. २ ब अट्ठसोलस°.

परिसत्तयजेट्ठाऊ तिचदुएक्का य पुव्वकोडीओ । वेणुस्स होदि कमसो अदिरित्ता वेणुधारिस्स ॥ १५३

पु को ३ । २ । १ ।

तिप्पहुदितियाणं आऊ तिचदुगाइक्कओ वासकोडीओ । सेसम्मि दक्खिणिंदे अदिरित्तं उत्तरिंदम्मि ॥ १५४

व को ३ । २ । १ ।

एक्कपलिदोवमाऊ सेणाधीसाण होदि चमरस्स । बइरोयणस्स अधियं भूदाणंदस्स कोडिपुव्वाणि ॥ १५५

प १ । पुव्वको १ ।

धरणाणंदे अधियं वस्सस्सकोडी हवेदि वेणुस्स । सेणामहत्तराऊ अदिरित्ता[1] वेणुधारिस्स ॥ १५६

वर्ष को १ ।

पत्तेक्कमेक्कलक्खं आऊ सेणावईण णादव्वो । सेसम्मि दक्खिणिंदे अदिरित्तं[2] उत्तरिंदम्मि ॥ १५७

१०००००।

पलिदोवमद्धमाऊ आरोहकवाहणाण चमरस्स । बइरोयणस्स अधियं भूदाणंदस्स कोडिवरिसाइं ॥ १५८

प १ । व को १ ।

२

धरणाणंदे अधियं वस्सलक्खं हुवेदि वेणुस्स । आरोहवाहणाऊ[3] तु अदिरित्तं वेणुधारिस्स[4] ॥ १५९

१००००० ।

वेणुके तीनों पारिषद देवोंकी उत्कृष्ट आयु क्रमसे तीन, दो और एक पूर्वकोटि, तथा वेणुधारीके तीनों पारिषदोंकी उत्कृष्ट आयु इससे अधिक है ॥ १५३ ॥ पू. को. ३, २, १ ।

शेष दक्षिण इन्द्रोंके तीनों पारिषद देवोंकी आयु क्रमसे तीन, दो और एक करोड़ वर्ष, तथा उत्तर इन्द्रोंके तीनों पारिषद देवोंकी आयु इससे अधिक है ॥ १५४ ॥ वर्षकोटि ३, २, १ ।

चमरेन्द्रके सेनापति देवोंकी आयु एक पल्योपम, वैरोचनके सेनापति देवोंकी आयु इससे अधिक, और भूतानन्दके सेनापति देवोंकी आयु एक पूर्वकोटि है ॥ १५५ ॥ प. १, पू. को. १ ।

धरणानन्दके सेनापति देवोंकी आयु एक पूर्वकोटिसे अधिक, वेणुके सेनापति देवोंकी आयु एक करोड़ वर्ष, और वेणुधारीके सेनापति देवोंकी आयु एक करोड़ वर्षसे अधिक है ॥ १५६ ॥

वर्षकोटि १ ।

शेष दक्षिण इन्द्रोंके सेनापतियोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक लाख वर्ष और उत्तर इन्द्रोंके सेनापतियोंकी आयु इससे अधिक जानना चाहिये ॥ १५७ ॥ वर्ष १ लाख ।

चमरेन्द्रके आरोहक वाहनोंकी आयु अर्ध पल्योपम, वैरोचनके आरोहक वाहनोंकी आयु अर्ध पल्योपमसे अधिक, और भूतानन्दके आरोहक वाहनोंकी आयु एक करोड़ वर्ष होती है ॥१५८॥

प. $\frac{१}{२}$, वर्षकोटि १ ।

धरणानन्दके आरोहक वाहनोंकी आयु एक करोड़ वर्षसे अधिक, वेणुके आरोहक वाहनोंकी एक लाख वर्ष, और वेणुधारीके आरोहक वाहनोंकी आयु एक लाख वर्षसे अधिक होती है ॥ १५९ ॥ वर्ष १ लाख ।

१ द ब सेणा महत्तराऊ. २ द ब अधिरित्ता. ३ द सेण्णवईण. ४ ब अधिरित्तं. ५ ब °वाहणाउं. ६ ब वेणुदारिस्स.

पल्लेक्कमद्धलक्खं आरोहकवाहणाण जेट्ठाऊ । सेसम्मि दक्खिणिंदे अदिरित्तं उत्तरिंदम्मि ॥ १६०

५०००० ।

जेत्तियमेत्ता याऊ पइण्णअभिजोगकिब्बिससुराणं । तप्परिमाणपरूवणउवएसा[1] संपइं णट्ठा ॥ १६१

दसवाससहस्साऊ जो देवो[2] माणुसाण सयमेत्तं । मारिदुमह पोसेदुं सो सक्कदि अप्पसत्तीए ॥ १६२

खेत्तं दिवड्ढसयधणुपमाणआयामवासबहलत्तं । बाहाहिं वेढेदुं[3] उप्पाडेदुं[4] पि सो सक्को ॥ १६३

दं १५० ।

एक्कपलिदोवमाऊ उप्पाडेदुं महीए छक्खंडं । तग्गदणरतिरियाणं मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥ १६४

उवहिउवमाणजीवी जंबूदीवं समुद्दए[5] खिविदुं । तग्गदणरतिरियाणं मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥ १६५

दसवाससहस्साऊ सदरूवाणि विगुव्वणं कुणदि । उक्कस्सम्मि जहण्णे सगरूवा मज्झिमे विविहा ॥ १६६

अवसेससुरा सव्वे णियणियओहिप्पमाणखेत्ताणिं । जेत्तियमेत्ताणि पुढं पूरंति विकुव्वणीए[6] एदाहं ॥ १६७

संखेज्जाऊ अस्स व सो संखेज्जाणि जोयणाणि सुरो । गच्छेदि एक्कसमए आगच्छदि तेत्तियाणिं पि ॥ १६८

शेष दक्षिण इन्द्रोंके आरोहक वाहनोंमेंसे प्रत्येककी उत्कृष्ट आयु अर्ध लाख वर्ष और उत्तर इन्द्रोंके आरोहक वाहनोंकी उत्कृष्ट आयु इससे अधिक है ॥ १६० ॥ वर्ष ५० हजार।

प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक देवोंकी जितनी आयु होती है, उसके प्रमाणके प्ररूपणके उपदेश इस समय नष्ट होचुके हैं ॥ १६१ ॥

जिस देवकी आयु दश हजार वर्षकी है, वह अपनी शक्तिसे एकसौ मनुष्योंको मारने अथवा पोसनेकेलिये समर्थ है ॥ १६२ ॥

उपर्युक्त आयुका धारक वह देव डेढ़सौ धनुषप्रमाण लंबे, चौड़े और मोटे क्षेत्रको बाहुओंसे वेष्टित करने और उखाड़नेकेलिये भी समर्थ है ॥ १६३ ॥ द. १५० ।

एक पल्योपम आयुका धारक देव पृथिवीके छह खण्डोंको उखाड़ने तथा वहां रहनेवाले मनुष्य एवं तिर्यंचोंको मारने अथवा पोसनेकेलिये समर्थ है ॥ १६४ ॥

एक सागरोपम कालतक जीवित रहनेवाला देव जम्बूद्वीपको समुद्रमें फेंकने और उसमें स्थित मनुष्य एवं तिर्यंचोंको मारने अथवा पोसनेकेलिये समर्थ है ॥ १६५ ॥

दश हजार वर्षकी आयुवाला देव उत्कृष्टरूपसे सौ, जघन्यरूपसे सात, और मध्यमरूपसे विविध रूपोंकी, अर्थात् सातसे अधिक और सौसे कम रूपोंकी, विक्रिया करता है ॥ १६६ ॥

शेष सब देव, अपने अपने अवधिज्ञानके क्षेत्रोंका जितना प्रमाण है, उतने क्षेत्रोंको पृथक् पृथक् विक्रियासे पूरित करते हैं ॥ १६७ ॥

जिस देवकी संख्यात वर्षकी आयु है, वह एक समयमें संख्यात योजन जाता है और इतने ही योजन आता है ॥ १६८ ॥

१ द ब भेत्तयाऊ. २ द जभियोग. ३ द ब उवएसं. ४ ब देवाउ. ५ द वेदेदुं. ६ द ब उप्पादेदुं. ७ द ब जंबूदीवसउग्गमे. ८ द ब उहपमाण. ९ ब जित्तिय. १० ब विउव्वणाए. ११ द ब सुरा.

अस्स असंखेज्जाऊ सो वि असंखेज्जजोयणाणि पुढं । गच्छेदि एक्कसमये आगच्छदि तेत्तियाणिं पि ॥ १६९
अड्ढाइज्जं पहं आऊ देवीण होदि चमरम्मि । वइरोयणम्मि तिण्णि य भूदाणंदम्मि पल्लमट्ठंसो ॥ १७०

प ५ । ३ । १ ।
२ ८

धरणाणंदे अधियं वेणुम्मि हुवेदि पुव्वकोडि त्ति । देवीणं आउसंखा अदिरित्तं वेणुधारिस्स ॥ १७१

पु को ३ ।

पत्तेक्कमाउसंखा देवीणं तिण्णि वरसकोडीओ । सेसम्मि दक्खिणिंदे अदिरित्तं उत्तरिंदम्मि ॥ १७२

व को ३ ।

पडिइंदादिचउण्णं आऊ देवीण होदि पत्तेक्कं । णियणियइंदपवण्णिददेवीआउस्स सारिच्छा ॥ १७३
जेत्तियमेत्ता आऊ सरीररक्खाण होइ देवीणं । तस्स पमाणणिरूवणउवएसो णत्थि कालवसा ॥ १७४
असुरादिदसकुलेसुं सव्वणिगिट्ठाणं होदि देवाणं । दसवाससहस्साणिं जहण्णआउस्स परिमाणं ॥ १७५

। आउपरिमाणं सम्मत्तं[4] ।

असुराण पंचवीसं सेससुराणं हुवंति दस दंडा । एस सहाउच्छेहो विक्किरियंगेसु बहुभेया ॥ १७६

२५ । १० ।

। उच्छेहो गदो[5] ।

तथा जिस देवकी असंख्यात वर्षकी आयु है, वह एक समयमें असंख्यात योजन जाता है और इतने ही योजन आता है ॥ १६९ ॥

चमरेन्द्रकी देवियोंकी आयु ढाई पल्योपम, वैरोचनकी देवियोंकी तीन पल्योपम, और भूतानन्दकी देवियोंकी आयु पल्योपमके आठवें भागमात्र होती है ॥ १७० ॥ प. २½, ३, ⅛ ।

धरणानन्दकी देवियोंकी आयु पल्यके आठवें भागसे अधिक, वेणुकी देवियोंकी आयु तीन पूर्वकोटि, और वेणुधारीकी देवियोंकी आयु तीन पूर्वकोटिसे अधिक है ॥ १७१ ॥ पू. को. ३ ।

अवशिष्ट दक्षिण इन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी देवियोंकी आयु तीन करोड़ वर्ष और उत्तर इन्द्रोंमेंसे प्रत्येक इन्द्रकी देवियोंकी आयु इससे अधिक है ॥ १७२ ॥ वर्षकोटि ३ ।

प्रतीन्द्रादिक चार देवोंकी देवियोंमेंसे प्रत्येककी आयु अपने अपने इन्द्रोंकी देवियोंकी कही गई आयुके सदृश होती है ॥ १७३ ॥

शरीररक्षक देवोंकी देवियोंकी जितनी आयु होती है, उसके प्रमाणके कथनका उपदेश कालके वशसे इस समय नहीं है ॥ १७४ ॥

असुरादिक दश निकायोंमें सब निकृष्ट देवोंकी जघन्य आयुका प्रमाण दश हजार वर्ष है ॥ १७५ ॥ आयुका प्रमाण समाप्त हुआ ।

असुरकुमारोंकी उंचाई पचीस धनुष और शेष देवोंकी उंचाई दश धनुषमात्र होती है । यह जो उंचाईका प्रमाण कहा है, वह स्वाभाविक (मूल) शरीरका समझना चाहिये । विक्रियानिर्मित शरीरोंकी उंचाई अनेक प्रकार होती है ॥१७६॥ दं. २५, १० । उत्सेधका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब अदेवीण. २ द ब इंदाणि. ३ ब णिरिट्ठाण. ४ द ब सम्मत्ता. ५ द गदा.

णियणियभवणट्ठिदाणं णवणामाणं भवणवासिदेवाणं । उड्ढेण होदि णाणं जंपमाणिरिसिहरपरियंतं ॥ १७७
बहुगोवहेमेसो थोवथोवं पवट्टदे ओही । तिरियपवट्टणेण पुणो बहुतरखेत्तेसु णवट्ठिदं ॥ १७८
पणुवीस जोयणाणं होदि जहण्णेण ओहिपरिमाणं । भावणवासिसुराणं एक्कदिणब्भंतरे काले ॥ १७९
असुराणमसंखेज्जा जोयणकोडीउ ओहिपरिमाणं । खेत्ते कालम्मि पुणो होंति असंखेज्जवासाणिं ॥ १८०
संखातीदसहस्सा उक्कस्से जोयणाणि खेत्तादो । असुरसुरं कालादो संखेज्जगुणेण हीणा य ॥ १८१
णियणियओहिपमाणं णाणारूवाणि तह विकुव्वंता । पूरंति असुरपहुदी भावणदेवा दसवियप्पा ॥ १८२
। ओही गदा ।
गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणा कमसो । उवओगा कहिदव्वा एदाण कुमारदेवाणं ॥ १८३
भवणसुराणं अवरे दो गुणठाणं च तत्थ पज्जत्ता । मिच्छाइट्ठी सासणसम्मो मिस्सो अविरदसम्मा ॥ १८४
जीवसमासं दो तिण्णि णिव्वत्तिअपुण्णपुण्णभेदेण । पज्जत्ती छद्धं च तेत्तियमेत्ता अपज्जत्ती ॥ १८५

अपने अपने भवनमें स्थित भवनवासी देवोंका ज्ञान (अवधि) ऊर्ध्वदिशामें उत्कृष्टरूपसे मेरुपर्वतके शिखरपर्यन्त क्षेत्रको विषय करता है ॥ १७७ ॥

भवनवासी देवोंका अवधिज्ञान अपने अपने भवनोंके नीचे नीचे थोड़े थोड़े क्षेत्रमें प्रवृत्ति करता है, परन्तु वही तिरछेरूपसे बहुत अधिक क्षेत्रमें अबाधित प्रवृत्ति करता है ॥ १७८ ॥

भवनवासी देवोंके अवधिज्ञानका प्रमाण जघन्यरूपसे पच्चीस योजन है । पुनः क्षेत्रकी अपेक्षा उक्त अवधिज्ञान एक दिनके भीतरकी वस्तुको विषय करता है ॥ १७९ ॥

असुरकुमार देवोंके अवधिज्ञानका प्रमाण क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यात करोड़ योजन और कालकी अपेक्षा असंख्यात वर्षमात्र है ॥ १८० ॥

शेष देवोंके अवधिज्ञानका प्रमाण उत्कृष्टरूपसे क्षेत्रकी अपेक्षा असंख्यात हजार योजन और कालकी अपेक्षा असुरकुमारोंके अवधिज्ञानके कालसे संख्यातगुणा कम है ॥ १८१ ॥

असुरादिक दशप्रकारके भवनवासी देव अनेक रूपोंकी विक्रिया करते हुए अपने अपने अवधिज्ञानके क्षेत्रको पूरित करते हैं ॥ १८२ ॥ अवधिज्ञानका कथन समाप्त हुआ ।

अब इन कुमारदेवोंके क्रमसे गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणा और उपयोग, इनका कथन करना चाहिये ॥ १८३ ॥

भवनवासी देवोंके अपर्याप्त अवस्थामें मिथ्यात्व और सासादन ये दो, तथा पर्याप्त अवस्थामें मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यक्त्व, मिश्र और अविरतसम्यग्दृष्टि, ये चार गुणस्थान होते हैं ॥ १८४ ॥

इन देवोंके निर्वृत्यपर्याप्त और पर्याप्तके भेदसे दोनों जीवसमास, छहों पर्याप्तियां और उतनी ही अपर्याप्तियां होती हैं ॥ १८५ ॥

१ द ब तट्ठाणादो दोण्णि, क तट्ठाणादोहो. २ द ब वट्टव्वंता. ३ ब गुणट्ठाणं चउ. ४ ब छप्पेव.

पंच व इंदियपाण मणवचकायाणि आउआणपाणाई । पज्जत्ते दस पाणा इदरे मणवयणआणपाणूणा ॥ १८६
चउसण्णा तासो भयमेहुणजलाहारगंथणामाणि । देवगदी पंचक्खा तसकाया एक्कारसजोगा ॥ १८७
चउ मण चउ वयणाइं वेगुव्वदुगं तहेव कम्मइयं । पुरिसित्थी संढूणा सयलकसायेहिं परिपुण्णा ॥ १८८
सव्वे छण्णाणजुदा मदिसुदणाणाणि ओहिणाणं च । मदिअण्णाणं तुरिमं सुदअण्णाणं विभंगणाणं पि ॥ १८९
सव्वे असंजदा तिदंसणजुत्ता चक्खुचक्खोही[1] । लेस्सा किण्हा णीला काउया पीता य मज्झिमंसजुदा[2] ॥ १९०
भव्वाभव्वा पुव्वं हि सम्मसेहिं सयण्णिदा सव्वे । उवसमवेदगमिच्छासासणमिस्साणि ते होंति ॥ १९१
सण्णी[3] य भयणदेवा हवंति आहारिणो अणाहारा । साया[4]रणुवायारा उवजोगा होंति सव्वाणं ॥ १९२
मज्झिमविसोहिसहिदा उदयागदसव्वपयडिसत्तिगदा । पुव्वं पुण्णादीजुत्ता देवा य होंति देवीओ ॥ १९३

[5] गुणठाणादी समत्ता [6] ।

सेढीअसंखभागो विदंगुलपढमवग्गमूलहदो । भवणेसु एक्कसमए जायंति मरंति तम्मेत्ता ॥ १९४

[7] जम्मणमरणजीवाणं संखा समत्ता [8] ।

उपर्युक्त देवोंके पर्याप्त अवस्थामें पांचों इन्द्रिय प्राण, मन, वचन, काय, आयु और आनप्राण, ये दश प्राण, तथा अपर्याप्त अवस्थामें मन, वचन और श्वासोच्छ्वाससे रहित शेष सात प्राण होते हैं ॥ १८६ ॥

उन देवोंके भय, मैथुन, आहार और परिग्रह नामक प्रसिद्ध चार संज्ञायें होती हैं। ये कुमारदेव देवगतिविशिष्ट; पंचेन्द्रिय; त्रसकायसे संयुक्त; चारों मनोयोग, चारों वचनयोग, दो वैक्रियिक (वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र) तथा कार्मण, इसप्रकार ग्यारह योगोंसे सहित; नपुंसक वेदको छोड़ शेष पुरुष और स्त्री इन दो वेदोंसे[9] युक्त; सम्पूर्ण कषायोंसे परिपूर्ण; सब ही मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, और विभंग, इन छह ज्ञानोंसे सहित; सब असंयत; अचक्षु-दर्शन, चक्षुदर्शन और अवधिदर्शन इन तीन दर्शनोंसे संयुक्त; कृष्ण, नील, कापोत और पीतके मध्यम अंशसे युक्त; भव्य एवं अभव्य; तथा सभी औपशमिक, वेदक, मिथ्यात्व, सासादन और मिश्र इन पांच सम्यक्त्वोंसे समन्वित होते हैं ॥ १८७–१९१ ॥

भवनवासी देव [13]संज्ञी तथा आहारक और अनाहारक होते हैं। इन सब देवोंके साकार (ज्ञान) और निराकार (दर्शन) ये दोनों ही उपयोग होते हैं ॥ १९२ ॥

वे देव मध्यम विशुद्धिसे सहित और उदयमें आई हुई प्रशस्त प्रकृतियोंकी अनुभाग-शक्तिको प्राप्त हैं। इसप्रकार गुणस्थानादिसे युक्त देवोंके समान ही देवियां होती हैं ॥ १९३ ॥

गुणस्थानादिका वर्णन समाप्त हुआ।

घनांगुलके प्रथम वर्गमूलसे गुणित जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव एक समयमें भवनवासियोंमें उत्पन्न होते हैं और इतने ही मरते हैं ॥ १९४ ॥

उत्पन्न होनेवाले व मरनेवाले जीवोंकी संख्या समाप्त हुई।

---

१ द ब संहूणा. २ द ब असंजदादंसणजुत्ता य चक्खुअचक्खोही. ३ द मज्झिमसत्तजुदा, ब मज्झिमसत्तजुदा. ४ ब पुण्ण हि. ५ ब आहारण. ६ द ब छव्वे. ७ द ब 'परिदि'. ८ द ब इदं गुणठाणजुत्ता देवा य होंति देवीओ.

णिस्सरिदा भवणादो गब्भे सम्मुच्छिदे कम्मभूमीसुं । पज्जत्ते उप्पज्जदि णरेसु तिरिएसु मिच्छभावजुदा ॥ १९५
सम्माइट्ठी देवा णरेसुपज्जंति कम्मभूमीए । गब्भे पज्जत्तेसुं सलागपुरिसा ण होंति कइयाई ॥ १९६
तेसिमणंतरजम्मे णिव्वुदिगमणं हवंति केसिं पि । संजमदेसव्वदाइं गेण्हंते केइ भवभीरू ॥ १९७

। आगमणं गदं ।

अवमिदसंकाओ केई णाणचरित्ते किलिट्ठभावजुदा । भवणामरेसु आउं बंधंति हु मिच्छभावजुदा ॥ १९८
अविणयसत्ता केई कामिणिविरहजरेण जज्जरिदा । कलहपिया पाविट्ठा जायंते भवणदेवेसु[1] ॥ १९९
सण्णिअसण्णी जीवा मिच्छाभावेण संजुदा केई । जायंति[2] भावणेसुं दंसणसुद्धा ण कइया वि ॥ २००
मरणे विराधिदम्मि य केई कंदप्पकिब्बिसा देवा । अभियोगा संमोहप्पहुदीसुरदुग्गदीसु जायंते ॥ २०१
जे सच्चवयणहीणा हस्सं[3] कुव्वंति बहुजणे णियमा । कंदप्परत्तहिदया ते कंदप्पेसु जायंति ॥ २०२
जे भूदिकम्ममंताभियोगकोदूहलाइसंजुत्ता । जणवण्णे य पमट्ठा वाहणदेवेसु ते होंति ॥ २०३

भवनोंसे निकले हुए जीव मिथ्यात्वभावसे युक्त होते हुए गर्भ अथवा सम्मूर्च्छन जन्मका आश्रयकर कर्मभूमियोंमें पर्याप्त मनुष्य अथवा तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ १९५ ॥

उन भवनोंसे निकले हुए सम्यग्दृष्टी देव गर्भजन्मका अवलम्बन कर कर्मभूमिके पर्याप्त मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, किन्तु वे शलाका-पुरुष कदापि नहीं होते ॥ १९६ ॥

उनमेंसे किन्हींके आगामी भवमें मोक्षकी भी प्राप्ति होजाती है और कितने ही संसारसे भयभीत होकर सकल संयम अथवा देशव्रतोंको ग्रहण करते हैं । ॥ १९७ ॥

आगमनका कथन समाप्त हुआ ।

ज्ञान और चारित्रके विषयमें जिन्होंने शंकाको दूर नहीं किया है, तथा जो क्लिष्ट भावसे युक्त हैं, ऐसे जीव मिथ्यात्वभावसे सहित होते हुए भवनवासी देवोंसम्बन्धी आयुको बांधते हैं ॥१९८॥

कामिनीके विरहरूपी ज्वरसे जर्जरित, कलहप्रिय और पापिष्ठ कितने ही अविनयी जीव भवनवासी देवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ १९९ ॥

मिथ्यात्वभावसे संयुक्त कितने ही संज्ञी और असंज्ञी जीव भवनवासियोंमें उत्पन्न होते हैं, परन्तु विशुद्ध सम्यग्दृष्टि इन देवोंमें कदापि नहीं उत्पन्न होते ॥ २०० ॥

मरणके विराधित करनेपर, अर्थात् समाधिमरणके विना, कितने ही जीव देवदुर्गतियोंमें कन्दर्प, किल्विष, आभियोग्य और सम्मोह इत्यादि देव उत्पन्न होते हैं ॥ २०१ ॥

जो प्राणी सत्य वचनसे रहित हैं, नित्य ही बहुजनमें हास्य करते हैं और जिनका हृदय कामासक्त रहता है, वे कन्दर्पदेवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २०२ ॥

जो भूतिकर्म, मंत्राभियोग और कौतूहलादिसे संयुक्त हैं, तथा लोगोंके गुणगान (खुशामद) में प्रवृत्त रहते हैं, वे वाहन देवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २०३ ॥

१ द ब सम्मुच्छ. २ द ब आवलिदसंखा. ३ द भवणादिवेसु. ४ द जायंते. ५ द ब हिंस.

तित्थयरसंघमहिमाआगमगंथादिएसु पडिकूला । दुव्विणया णिगदिल्ला जायंते किब्बिससुरेसुं ॥ २०४
उप्पहउवएसयरा विप्पडिवण्णा जिणिंदमग्गम्मि । मोहेणं संमोहा संमोहसुरेसु जायंते ॥ २०५
जे कोहमाणमायालोहासत्ताकिविट्ठचारित्ता । वइराणुबद्धरुचिरा ते उप्पज्जंति असुरेसुं ॥ २०६
उप्पज्जंते भवणे उववादपुरे महारिहे सण्णे । पावंति छपज्जत्तिं जादा अंतोमुहुत्तेण ॥ २०७
अट्ठिसिरारुहिरवसामुत्तपुरीसाणि केसलोमाइं । चम्मडमंसप्पहुदी ण होइ देवाण संघडणे ॥ २०८
वण्णरसगंधफासे[2] अट्ठसयवेकुव्वदिव्वखंदा हि । णेदेसु रोयवादिउवठिदी[3] कम्माणुभावेण ॥ २०९
उप्पण्णे सुरभवणे[4] पुव्वमणुग्घाडिदं कवाडजुगं । उग्घडदि तम्मि समए पसरदि आणंदभेरिरवं ॥ २१०
आयण्णिय भेरिरवं ताणं पासम्मि कयजयंकारा । पुंति परिवारदेवा देवीओ पमोदभरिदाओ ॥ २११
वायंता जयघंटापडहपडा किब्बिसा य गायंति । संगीयणट्टमागधदेवा एदाण देवीओ ॥ २१२
देवीदेवसमूहं दट्ठूणं तस्स विम्हओ होदि । तक्काले उप्पज्जदि विभंगं[5] थोवप्पअक्खं ॥ २१३

जो लोग तीर्थंकर व संघकी महिमा एवं आगम-ग्रन्थादिकके विषयमें प्रतिकूल हैं, दुर्विनयी और मायाचारी हैं, वे किल्विषिक देवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २०४ ॥

उत्पथ अर्थात् कुमार्गका उपदेश करनेवाले, जिनेन्द्रोपदिष्ट मार्गमें विरोधी और मोहसे संमुग्ध जीव संमोह जातिके देवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २०५ ॥

जो जीव क्रोध, मान, माया और लोभमें आसक्त हैं; अकृपिष्टचारित्र अर्थात् क्रूराचारी हैं; तथा वैरभावमें रुचि रखते हैं, वे असुरोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २०६ ॥

उक्त जीव भवनवासियोंके भवनके भीतर महार्ह कोमल उपपादशालामें उत्पन्न होते हैं, और उत्पन्न होनेके पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें ही छह पर्याप्तियोंको प्राप्त कर लेते हैं ॥ २०७ ॥

देवोंके शरीरमें हड्डी, नस, रुधिर, चर्बी, मूत्र, मल, केश, रोम, चमड़ा और मांसादिक नहीं होता ॥ २०८ ॥

चूंकि वर्ण, रस, गन्ध, और स्पर्शके विषयमें अतिशयको प्राप्त वैक्रियिक दिव्य स्कंध होते हैं, इसीलिये इन देवोंके कर्मके प्रभावसे रोग आदिकी उपस्थिति नहीं होती ॥ २०९ ॥

सुरभवनमें उत्पन्न होनेपर पहिले अनुद्घाटित दोनों कपाट खुलते हैं, और फिर उसी समय आनन्द-भेरीका शब्द फैलता है ॥ २१० ॥

भेरीके शब्दको सुनकर पारिवारिक देव और देवियां हर्षसे परिपूर्ण हो जयकार करते हुए उन देवोंके पास आते हैं ॥ २११ ॥

उस समय किल्विषिक देव जयघंटा, पटह और पट इन बाजोंको बजाते हैं, और संगीत व नाट्यमें चतुर मागध देव एवं उनकी देवियां गाती हैं ॥ २१२ ॥

इन देव-देवियोंके समूहको देखकर उस नवजात देवको आश्चर्य होता है। पश्चात् उसी समय उसे अल्प प्रत्यक्षरूप विभंगज्ञान उत्पन्न होता है ॥ २१३ ॥

१ द ब चम्मह°. २ द °पासे. ३ द ब गेण्हेसु रोयवादिं उवठिदि. ४ द ब उप्पण्णसुरविमाणे. ५ [विब्भंगं].

मणुस्सतेरिच्छभवम्हि पुव्वे लद्धो ण सम्मत्तमणी पुरुत्तं ।
तिलप्पमाणस्स सुहस्स कज्जे चत्तं मए कामविमोहिदेण ॥ २१४
जिणोवदिट्ठागमभावणिज्जं देसव्वदं गेण्हियं सोक्खहेदुं ।
मुक्कं मए दुव्विसयत्थमप्पस्सोक्खाणुरत्तेण विचेदणेण ॥ २१५
अणंतणाणादिचउक्कहेदुं णिव्वाणबीजं जिणणाहलिंगं । पभूदकालं धरिदूण चत्तं मए मयंधेण वधूणिमित्तं ॥ २१६
कोहेण लोहेण भयंकरेणं मायापवंचेण समच्छरेणं । माणेण वड्ढंतमहाविमोहो मेल्लाविरो हं जिणणाहमग्गं ॥ २१७
तत्तो ववसायपुरं पविसिय पूजाभिसेयजोग्गाइं । गहिदूणं दव्वाइं देवा देवीहिं संजुत्ता ॥ २१८
णच्चिदविचित्तकीडणमालावरचमरछत्तसोहिल्ला । णिब्भरभत्तिपसण्णा वच्चंते कूडजिणभवणं ॥ २१९
पाविय जिणपासादं वरमंगलतोरणं रइदहलबोला । देवा देवीसहिदा कुव्वंति पदाहिणं णमिदा ॥ २२०
सिंहासणछत्तत्तयभामंडलचामरादिचारुणिभा । दट्ठूण जिणप्पडिमा जयजयसद्दा पकुव्वंति ॥ २२१
पडुपडहसंखमद्दलजयघंटाकहलगीयसंजुत्ता । वाइज्जंतेहि सुरा जिणिंदपूजा पकुव्वंति ॥ २२२

मैंने पूर्व कालमें मनुष्य और तिर्यंच भवमें उत्कृष्ट सम्यक्त्वरूपी मणिको प्राप्त नहीं किया और यदि प्राप्त भी किया है तो उसे कामसे विमोहित होकर तिलके बराबर अर्थात् किंचित् सुखकेलिये छोड़ दिया ॥ २१४ ॥

जिनोपदिष्ट आगममें भावनीय एवं वास्तविक सुखके निमित्तभूत देशचारित्रको ग्रहण करके मेरे जैसे मूर्खने अल्प सुखमें अनुरक्त होकर दुष्ट विषयोंकेलिये उसे छोड़ दिया ॥ २१५ ॥

अनन्तज्ञानादि-चतुष्टयके कारण और मुक्तिके बीजभूत जिनेन्द्रलिंग अर्थात् सकलचारित्रको बहुत कालतक धारण करके मैंने मदान्ध होकर कामिनीके निमित्त उसे छोड़ दिया ॥ २१६ ॥

भयंकर क्रोध, लोभ और मात्सर्यभावसहित मायाप्रपंच एवं मानसे वृद्धिंगत अज्ञान-भावको प्राप्त हुआ मैं जिनेन्द्रोपदिष्ट मार्गको छोड़े रहा ॥ २१७ ॥

इसके पश्चात् व्यवसायपुरमें प्रवेशकर पूजा और अभिषेकके योग्य द्रव्योंको लेकर वे देव देवियोंसे सहित; नर्तन, विचित्र क्रीडन, माला, उत्कृष्ट चमर और छत्रसे शोभायमान; एवं गाढ़ भक्तिसे प्रसन्न होते हुए कूटपर स्थित जिनभवनको जाते हैं ॥ २१८–२१९ ॥

उत्कृष्ट मंगल और तोरणोंसे सहित जिनभवनको प्राप्त कर कोलाहल करते हुए वे देव देवियोंके साथ नमस्कारपूर्वक प्रदक्षिणा करते हैं ॥ २२० ॥

वे देव वहांपर सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल और चामरादि आठ प्रातिहार्योंसे सुशोभित जिनेन्द्रमूर्तियोंका दर्शनकर जय जय शब्द करते हैं ॥ २२१ ॥

उक्त देव जिनमन्दिरमें उत्तम पटह, शंख, मृदंग, जयघंटा और काहल, इन बाजोंसे संयुक्त होकर गानपूर्वक जिनेन्द्रपूजन करते हैं ॥ २२२ ॥

---

१ द ब सम्मत्तमणं. २ द ब गेण्हय. ३ द ब °णाणाणि. ४ द मायापवत्तेण. ५ द ब वंदंत°. ६ द तणो ववसाय°. ७ द ब देवेहिं.

भिंगारकलसदप्पणछत्ततयचमरपहुदिदव्वेहिं । पूजंति फलिहदंडोवमाणवरवारिधारेहिं ॥ २२३
गोसीरमलयचंदणकुंकुमपंकेहिं परिमलिल्लेहिं । मुत्ताहलपुंजेहिं सालीए तंदुलेहिं सबलेहिं[1] ॥ २२४
वरविविहकुसुममालासएहिं धूवंगरंगगंधेहिं । अमयादो मुहुरेहिं णाणाविहदिव्वभक्खेहिं ॥ २२५
धूवेहिं सुगंधेहिं रयणपईवेहिं दित्तकिरणेहिं । पक्केहिं फणसकदलीदाडिमदक्खादियफलेहिं ॥ २२६
पूजाए अवसाणे कुव्वंते णाडयाइं विविहाइं । पवरच्छरापउत्ताबहुरसभावाभिणेयाइं ॥ २२७
णिस्सेसकम्मक्खवणेक्कहेदुं[2] मण्णंतया तत्थ जिणिंदपूजं ।
सम्मत्तविरया[3] कुव्वंति णिच्चं देवा महाणंतविसोहिपुव्वं ॥ २२८
कुलाहिदेवा[4] इव मण्णमाणा पुराणदेवाण पबोधणेण ।
मिच्छाजुदा ते य जिणिंदपूजं भत्तीए[5] णिच्चं णियमा कुणंति ॥ २२९
कादूण दिव्वपूजं आगच्छिय णियणियम्मि पासादे । सिंहासणाधिरूढा ओलगसालंति[6] देवा णं ॥ २३०
विविहरतिकरणभाविदविसुद्धबुद्धीहि दिव्वरूवेहिं । णाणाविकुव्वणंबहुविलाससंपत्तिजुत्ताहिं ॥ २३१
मायाचारविवज्जिदपकिदिपसण्णाहिं अच्छराहिं समं । णियणियविभूदिजोग्गं संकप्पवसंगदं सोक्खं ॥ २३२

वे देव झारी, कलश, दर्पण, तीन छत्र और चामरादि द्रव्योंसे, स्फटिकमणिमय दण्डके तुल्य उत्तम जलधाराओंसे; सुगन्धित गोशीर, मलयचन्दन, और केशरके पंकोंसे; मोतियोंके पुंजरूप शालिधान्यके अखण्डित तंदुलोंसे; जिनका रंग और गंध फैल रहा है ऐसी उत्तमोत्तम विविधप्रकारकी सैकड़ों मालाओंसे; अमृतसे भी मधुर नानाप्रकारके दिव्य नैवेद्योंसे; सुगंधित धूपोंसे; प्रदीप्त किरणोंसे युक्त रत्नमयी दीपकोंसे; और पके हुए कटहल, केला, दाडिम, एवं दाख इत्यादि फलोंसे पूजा करते हैं ॥ २२३–२२६ ॥

पूजाके अन्तमें वे देव उत्तम अप्सराओंसे प्रयुक्त किये गये और बहुत प्रकारके रस, भाव और अभिनयसे युक्त विविध प्रकारके नाटकोंको करते हैं ॥ २२७ ॥

वहांपर अविरत सम्यग्दृष्टि देव जिनपूजाको समस्त कर्मोंके क्षयकरनेमें एक अद्वितीय कारण समझकर नित्य ही महान् अनन्तगुणी विशुद्धिपूर्वक उसे करते हैं ॥ २२८ ॥

पुराने देवोंके उपदेशसे वे मिथ्यादृष्टि देव भी जिनप्रतिमाओंको कुलाधिदेवता मानकर नित्य ही नियमसे भक्तिपूर्वक जिनेन्द्रार्चन करते हैं ॥ २२९ ॥

इसप्रकार दिव्य जिनपूजा करनेके पश्चात् अपने अपने भवनमें आकर वे देव ओलग-शालामें सिंहासनपर विराजमान हो जाते हैं ॥ २३० ॥

फिर वे देव विविध रतिके प्रकटीकरणमें चतुर, दिव्य रूपोंसे युक्त, नानाप्रकारकी विक्रिया व बहुत विलास-सम्पत्तिसे सहित, और मायाचारसे रहित होकर स्वभावसे ही प्रसन्न रहनेवाली ऐसी अप्सराओंके साथ अपनी अपनी विभूतिके योग्य एवं संकल्पमात्रसे प्राप्त होनवाले सुख

१ द ब पलिह. २ द सालेहिं. ३ द ब °क्खवणकहेदुं. ४ द ब सम्मत्तविरयं. ५ द ब कुलाइदेवा°. ६ द भत्तीय. ७ [ओलगसालम्मि].

पडुपडहप्पहुदीहिं सत्तसराभरणमहुरगीदेहिं । वरललितणच्चणेहिं देवा भुंजंति उवभोगं ॥ २३३
ओहिं पि विजाणंतो अण्णोण्णुप्पण्णपेम्ममूलमणा । कामंधा ते सव्वे गदं पि कालं ण याणंति ॥ २३४
वररयणकंचणाए विचित्तसयलुज्जलम्मि पासादे । कालागरुगंधड्ढे रागणिधाणे रमंति सुरा ॥ २३५
सयणाणि आसणाणिं मउवाणि विचित्तरूवरइदाणिं । तणुमणवयणाणंदणजणणाणिं होंति देवाणं ॥ २३६
पासरसरूवसद्दुणिगंधेहिं[1] वड्ढियाणि सोक्खाणिं[2] । उवभुंजंता[3] देवा तित्तिं ण लहंति णिमिसं पि ॥ २३७
दीवेसु णगिंदेसुं भोगखिदीए वि णंदणवणेसुं । वरपोक्खरिणीपुलिणत्थलेसु कीडंति राएण ॥ २३८
। एवं सुहसरूवं[4] समत्तं ।
भवणेसु समुप्पण्णा पज्जत्तिं पाविदूण छब्भेयं । जिणमहिमदंसणेणं केई देविद्धिदंसणदो ॥ २३९
जादीए सुमरणेणं वरधम्मप्पबोहणावलद्धीए । गेण्हंते सम्मत्तं दुरंतसंसारणासकरं ॥ २४०
। सम्मत्तगहणं गदं ।

तथा उत्तम पटह इत्यादि वादित्र, सात स्वरोंसे शोभायमान मधुर गीत, एवं उत्कृष्ट सुन्दर नृत्यका उपभोग करते हैं ॥ २३१–२३३ ॥

अवधिज्ञानसे जानते हुए भी परस्परमें उत्पन्न हुए प्रेमके मूलभूत मानसिक विचारोंसे युक्त वे सब देव कामांध होकर बीते हुए समयको भी नहीं जानते हैं ॥ २३४ ॥

उक्त देव उत्तम रत्न और सुवर्णसे विचित्र और सर्वत्र उज्वल, कालागरुकी सुगन्धसे व्याप्त और रागके स्थानभूत प्रासादमें रमण करते हैं ॥ २३५ ॥

देवोंके शयन और आसन मृदुल, विचित्ररूपसे रचित, तथा शरीर, मन एवं वचनको आनन्दोत्पादक होते हैं ॥ २३६ ॥

ये देव स्पर्श, रस, रूप, सुन्दर शब्द और गंधसे वृद्धिको प्राप्त हुए सुखोंका अनुभव करते हुए क्षणमात्रकेलिये भी तृप्तिको प्राप्त नहीं होते हैं ॥ २३७ ॥

ये कुमार देव रागसे द्वीप, कुलाचल, भोगभूमि, नन्दनवन और उत्तम बावड़ी अथवा नदियोंके तटस्थानोंमें भी क्रीड़ा करते हैं ॥ २३८ ॥

इसप्रकार देवोंके सुखस्वरूपका कथन समाप्त हुआ।

भवनोंमें उत्पन्न होकर छह प्रकारकी पर्याप्तियोंको प्राप्त करनेके पश्चात् कोई जिनमहिमा (कल्याणकादि) के दर्शनसे, कोई देवोंकी ऋद्धिके देखनेसे, कोई जातिस्मरणसे, और कितने ही देव उत्तम धर्मोपदेशकी प्राप्तिसे दुरन्त संसारको नष्ट करनेवाले सम्यग्दर्शनको ग्रहण करते हैं ॥ २३९–२४० ॥ सम्यक्त्वका ग्रहण समाप्त हुआ।

१ द ॰रूववज्जूणि गंधेहि, ब ॰रूवचक्खूणि गंधेहिं. २ द ब सोक्खाणि. ३ द ब उवयंजुत्ता. ४ द ब सरूवप्पं. ५ द ब देविंद॰.

जे केइ अण्णाणतवेहिं जुत्ता णाणाविहुप्पादिददेहदुक्खा ।
घेत्तूण सण्णाणतवं पि पावा डज्झंति जे दुब्विसयप्पसत्ता ॥ २४१
विसुद्धलेस्साहि सुराउबंधं काऊण[1] कोहादिसुघादिदाऊ ।
सम्मत्तसंपत्तिविमुक्कबुद्धी जायंति एदे भवणेसु सव्वे ॥ २४२
सण्णाणरयणदीओ लोयालोयप्पयासणसमत्थो । पणमामि सुमइसामिं सुमइकरं भव्वलोगस्स ॥ २४३

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए भवणवासियलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम

तिदियो महाधियारो सम्मत्तो[2] ॥ ३ ॥

जो कोई अज्ञानतपोंसे युक्त होकर शरीरमें नानाप्रकारके कष्टोंको उत्पन्न करते हैं, तथा जो पापी सम्यग्ज्ञानसे युक्त तपको ग्रहण करके भी दुष्ट विषयोंमें आसक्त होकर जला करते हैं, वे सब विशुद्ध लेश्याओंसे पूर्वमें देवायुको बांधकर पश्चात् क्रोधादि कषायोंद्वारा उस आयुका घात करते हुए सम्यक्त्वरूप संपत्तिसे मनको हटाकर भवनवासियोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २४१–२४२ ॥

जिनका सम्यग्ज्ञानरूपी रत्नदीपक लोकालोकके प्रकाशनमें समर्थ है और जो भव्य जीवोंको सुमति देनेवाले हैं, उन सुमतिनाथ स्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥ २४३ ॥

इसप्रकार आचार्यपरंपरागत त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें भवनवासीलोकस्वरूप-निरूपणप्रज्ञप्तिनामक

तृतीय महाधिकार समाप्त हुआ ॥ ३ ॥

---

१ द ब कोऊण. २ द समत्तो.

[चउत्थो महाधियारो]

इदं उवरि माणुसलोयसरूवं वण्णयामि—

लोयालोयपयासं पउमप्पहजिणवरं णमंसित्ता[1] । माणुसजगपण्णत्तीं[2] वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ १
णिद्देसस्स सरूवं जंबूदीओ त्ति लवणजलही य । धादगिसंडो दीओ कालोदसमुद्दपोक्खरद्धाइं ॥ २
तेसुं ठिदमणुयाणं भेदा संखा य थोवबहुअत्तं । गुणठाणप्पहुदीणं संकमणं विविहभेयजुदं ॥ ३
आऊबंधणभावं जोणिपमाणं सुहं च दुक्खं च । सम्मत्तगहणहेदू णिव्वुदिगमणाण परिमाणं ॥ ४
एवं सोलसअंखे अहियारे एत्थ वत्तइस्सामो[4] । जिणमुहकमलविणिग्गयणरजगपण्णत्तिणामाए ॥ ५
तसणालीबहुमज्झे चित्ताय खिदीय उवरिमे भागे । अइवट्टो मणुवजगो जोयणपणदालल[5]क्खविक्खंभो[6] ॥ ६

जोयणलक्ख ४५०००००।

जगमज्झादो उवरिं तब्बहलं जोयणाणि इगिलक्खं । णवचदुदुगखत्तियदुगचउक्केक्कम्हि तप्परीही ॥ ७

१००००० । १४२३०२४९ ।

सुण्णणभगयणपणदुगएक्कखत्तियसुण्णणवणहासुण्णं । छक्केक्कजोयणा चिय अंककमे मणुवलोयखेत्तफलं ॥ ८

१६००९०३०१२५००० ।

इससे आगे मानुषलोकके स्वरूपका वर्णन करता हूं—

लोकालोकको प्रकाशित करनेवाले पद्मप्रभ जिनेन्द्रको नमस्कार करके अब अनुक्रमसे मनुष्यलोक-प्रज्ञप्तिको कहता हूं ॥ १ ॥

[1]निर्देशका स्वरूप, [2]जम्बूद्वीप, [3]लवणसमुद्र, [4]धातकीखण्डद्वीप, कालोदसमुद्र, पुष्करार्द्धद्वीप, इन द्वीपोंमें स्थित मनुष्योंके भेद, [5]संख्या, अल्पबहुत्व, [6]गुणस्थानादिकका विविध भेदोंसे युक्त संक्रमण, [7]आयुबन्धनके निमित्तभूत परिणाम, [8]योनिप्रमाण, [9]सुख, [10]दुःख, [11]सम्यक्त्वग्रहणके हेतु, और [12]मोक्ष जानेवालोंका प्रमाण, इसप्रकार जिनभगवान्‌के मुखरूपी कमलसे निकले हुए नरजगप्रज्ञप्ति नामक इस तृतीय महाधिकारमें इन सोलह अधिकारोंको कहेंगे ॥ २–५ ॥

त्रसनालीके बहुमध्यभागमें चित्रा पृथिवीके उपरिम भागमें पैंतालीस लाख योजनप्रमाण विस्तारवाला अतिगोल मनुष्यलोक है ॥ ६ ॥ यो. ४५०००००।

लोकके मध्यभागसे ऊपर उस मनुष्यलोकका बाहल्य एक लाख योजन, और परिधि क्रमशः नौ, चार, दो, शून्य, तीन, दो, चार और एक, इन अंकोंके प्रमाण है ॥ ७ ॥

बाहल्य १००००० परिधि १४२३०२४९।

शून्य, शून्य, शून्य, पांच, दो, एक, शून्य, तीन, शून्य, नौ, शून्य, शून्य, छह और एक इसप्रकार इन अंकोंके प्रमाण मनुष्यलोकका क्षेत्रफल है ॥ ८ ॥ १६००९०३०१२५०००।

---

१ द णमस्सित्ता, ब णमस्सित्तो. २ [°पण्णत्तिं]. ३ द गुणट्ठाण°. ४ ब वत्तयंस्सामो. ५ ब जोयणाण. ६ द ब विक्खंभा.

वासकदी दसगुणिदा करणी परिही च मंडले खेत्ते । विक्खंभचउब्भागप्पहदा सा होदि खेत्तफलं ॥ ९
अट्ठत्थाणं सुण्णं पंचदुरिगिगयणतिण्णहणवसुण्णा । अंबरछक्केक्केहिं अंककमे तस्स विंदफलं ॥ १०
१६००९०३०१२५०००००००० ।

। णिद्देसो गदो[2] ।

माणुसजगबहुमज्झे विक्खादो होदि जंबुदीओ त्ति । एक्कजोयणलक्खविक्खंभजुदो सरिसवट्टो ॥ ११
जगदीविण्णासाहं भरहक्खिदी तम्मि कालभेदं च । हिमगिरिहेमवदा[3] महहिमवंहरिवरिसणिसहट्ठी ॥ १२
विजओ विदेहणामो[4] णीलगिरी रम्मवरिसरुम्मिगिरी । हेरण्णवदो विजओ सिहरी एरावदो त्ति वरिसो य ॥ १३
एवं सोलसभेदा[5] जंबूदीवम्मि अंतरहियारा[6] । एण्हं[7] ताण सरूवं वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ १४
वेदेदि[8] तस्स जगदी अट्ठ च्चिय जोयणाणि उत्तुंगा । दीवं तं मणिबंधस्सरिसं होदूण वड्ढयणिहा ॥ १५
जो ८ ।

विस्तारके प्रमाणका वर्ग करके उसे दशसे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो उसके वर्गमूलप्रमाण गोल क्षेत्रकी परिधि होती है। इस परिधिको व्यासके चतुर्थांशसे गुणा करनेपर प्राप्त गुणनफलप्रमाण उसका क्षेत्रफल होता है ॥ ९ ॥

उदाहरण—मनुष्यलोकका विस्तार ४५ लाख योजन है; $\sqrt{४५०००००^2} \times १० =$ १४२३०२४९ परिधि; १४२३०२४९ $\times \frac{४५०००००}{४}$ = १६००९०३०१२५००० क्षेत्रफल।

आठ स्थानोंमें शून्य, पांच, दो, एक, शून्य, तीन, शून्य, नौ, शून्य, शून्य, छह और एक, इन अंकोंके क्रमशः रखनेपर जो राशि उत्पन्न हो तत्प्रमाण मनुष्यलोकका घनफल है ॥ १० ॥

क्षेत्रफल–१६००९०३०१२५०००×१००००० = १६००९०३०१२५०००००००० घ. फ.

निर्देश समाप्त हुआ।

मनुष्यक्षेत्रके बहुमध्यभागमें एक लाख योजन विस्तारसे युक्त, सदृश गोल और जम्बूद्वीप इस नामसे प्रसिद्ध पहिला द्वीप है ॥ ११ ॥

उस जम्बूद्वीपके वर्णन करनेमें जगती (वेदिका), विन्यास, भरत क्षेत्र, उस (भरत) क्षेत्रमें होनेवाला कालोंका भेद, हिमवान् पर्वत, हैमवत क्षेत्र, महाहिमवान् पर्वत, हरि क्षेत्र, निषध पर्वत, विदेह क्षेत्र, नील पर्वत, रम्यक क्षेत्र, रुक्मि पर्वत, हैरण्यवत क्षेत्र, शिखरी पर्वत और ऐरावत क्षेत्र, इसप्रकार सोलह अंतराधिकार हैं। अब उनके स्वरूपको अनुक्रमसे कहते हैं ॥ १२–१४ ॥

आठ योजन ऊंची उसकी जगती मणिबंधके सदृश उस द्वीपको कटय अर्थात् कड़ेके सदृश होकर वेष्टित करती है ॥ १५ ॥ यो. ८ ।

---

१ ब विक्खंभयचउ°. २ द ब गदा. ३ द ब हिमवदा. ४ द विदेहणामे. ५ द ब °भेदो. ६ द ब °हियारो. ७ द वण्णं, ब वण्हं. ८ द ब वेदेवि. ९ द दीवंतमिणियत्त, ब दीवं तं मणियत्तं.

मूले बारस मज्झे अट्ठ चिय ओवणाणि णिद्दिट्ठा । सिहरे चत्तारि पुढं जगदीउदयस्स परिमाणं ॥ १६

१२ । ८ । ४ ।

दो कोसा अवगाढा तेत्तियमेत्ता हुवेदि वज्जमयी[1] । मज्झे बहुरयणमयी[2] सिहरे वेरुलियपरिपुण्णा ॥ १७

कोस २ ।

तीए मूलपएसे पुव्वावरदो य सत्त सत्त गुहा । वरतोरणादिरामा अणाइणिधणा विचित्तयरा ॥ १८

जगदीउवरिमभाए बहुमज्झे कणयवेदिया दिव्वा । बे कोसा उत्तुंगा वित्थिण्णा पंचसयदंडा ॥ १९

को २ । दंड ५००।

जगदीउवरिमरुंदो वेदीरुंदं सु सोधियद्धकदो । जं लद्धमेक्कपासे[5] तं विक्खंभस्स परिमाणं ॥ २०

पण्णरससहस्साणि सत्तसया धणूणि[6] पण्णासा । अब्भंतरविक्खंभा बाहिरवासो वि तम्मेत्ता[7] ॥ २१

१५७५० ।

वेदीदोपासेसुं उववणसंडो हवंति रमणिज्जा । वरवावीसंजुत्ता विचित्तमणिगोउरपरिपुण्णा ॥ २२

जेट्ठा दोसयदंडा[8] विक्खंभजुदा हवेदि मज्झिमया । पण्णासब्भहियसयं जण्णवावी वि सयमेक्कं ॥ २३

दं २०० । १५० । १०० ।

जगतीके विस्तारका प्रमाण मूलमें बारह, मध्यमें आठ और शिखरपर चार योजन कहा गया है ॥ १६ ॥ जगतीविस्तार—मूलमें १२, मध्यमे ८, शिखरपर ४ यो.।

उक्त जगतीकी गहराई अर्थात् नीव दो कोस है, जो सब ही वज्रमय है। यह मध्यमें बहुत रत्नोसे निर्मित और शिखरपर वैडूर्यमणियोसे परिपूर्ण है ॥ १७ ॥ कोस २.

उस जगतीके मूल प्रदेशमें पूर्व-पश्चिमकी ओर सात सात गुफायें है, जो उत्कृष्ट तोरणोसे रमणीय, अनादिनिधन एवं अत्यन्त विचित्र है ॥ १८ ॥

इस जगतीके उपरिम भागपर ठीक बीचमें दिव्य सुवर्णमय वेदिका है। यह दो कोस ऊंची और पांचसौ धनुषप्रमाण चौड़ी है ॥ १९ ॥ उंचाई को. २, विस्तार दड ५००।

जगतीके उपरिम विस्तारमेसे वेदीके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करनेपर जो प्राप्त हो उतना वेदीके एक पार्श्वभागमे जगतीका विस्तार है ॥२०॥ $\frac{३२०००}{२} - \frac{५००}{२} = १५७५०$ धनुष।

जगतीका अभ्यन्तर विस्तार पन्द्रह हजार सातसौ पचास धनुष और इतना ही उसका बाह्य विस्तार भी है ॥ २१ ॥ १५७५०।

वेदीके दोनों पार्श्वभागोमें उत्तम वापियोसे संयुक्त और विचित्र मणिगृहोंसे परिपूर्ण रमणीय उपवनोंके समूह है ॥ २२ ॥

इनमेसे उत्कृष्ट बावड़ियोंका विस्तार दौसौ धनुष, मध्यमोका एकसौ पचास धनुष और जघन्योंका एकसौ धनुषप्रमाण है ॥ २३ ॥ उत्कृष्ट २००, मध्य. १५०, ज. १०० धनुष।

१ द ब जगदीमदस्स. २ द ब वज्जमय. ३ द ब °रयणमवो. ४ द °तोरणाइं, ब °तोरणाय°. ५ द ब रंदो. ६ द ब अद्धमेकपासे. ७ द ब दंडधणूणि. ८ द ब °वासोधितमेत्ता. ९ द °संदो, ब °खंडो. १० द ब °गुणिआर°. ११ द ब °दंडो.

तिविहाओ वावीओ णियरुंददसंसमेत्तमवगाढा । कइआरकमलकुवलयकुमुदामोदेहिं परिपुण्णा ॥ २४

२० । १५[1] । १० ।

पायारपरिगदाइं[2] वरगोउरदारतोरणाइं पि । अब्भंतरम्मि भागे महोरगाणं च चेट्ठंति ॥ २५

पाठान्तरम् ।

णयरेसुं रमणिज्जा पासादा होंति विविहविण्णासा । अब्भंतरचेत्तरुवा[3] णाणावररयणणियरमया ॥ २६

दिप्पंतरयणदीवा समंतदो विविहधूवघडजुत्ता । वज्जमयवरकवाडा वेदीगोउरदुवारजुदा ॥ २७

पणुहत्तरि चावाणिं[4] उत्तुंगा सयचयणूणि दीहजुदा । पण्णासदंडरुंदा होंति जहण्णम्मि पासादा ॥ २८

७५ । १०० । ५० ।

पासादावारेसुं बारस चावाणि होंति उच्छेहो । पत्तेक्कं छण्णाहं अवगाढं तं पि चत्तारि ॥ २९

१२ । ६ । ४ ।

पणुवीसं दोण्णि सया उच्छेहो होदि जिट्ठपासादा । दीहं तिसयधणूणिं[5] पत्तेक्कं सद्ध विक्खंभो[6] ॥ ३०

२२५ । ३०० । १५० ।

ताण दुवारुच्छेहो[7] दंडा छत्तीस[8] होदि पत्तेक्कं । अट्ठारस विक्खंभो बारस णियमेण अवगाढं ॥ ३१

दं ३६ । १८ । १२ ।

तीनों ही तरहकी बावड़ियां अपने अपने विस्तारके दशवें भागप्रमाण गहरी और कैरव (सफेद कमल), कमल, नील कमल एवं कुमुदोंकी सुगन्धसे परिपूर्ण हैं ॥ २४ ॥

वेदीके अभ्यन्तरभागमें प्राकारसे वेष्टित एवं उत्तम गोपुरद्वार व तोरणोंसे संयुक्त ऐसे महोरग देवोंके (भवन) स्थित हैं ॥ २५ ॥ पाठांतर ।

नगरोंमें विविधप्रकारकी रचनाओंसे युक्त, अनेक उत्तमोत्तम रत्नसमूहोंसे निर्मित, अभ्यन्तर-भागमें चैत्यतरुओंसे सहित, चारों ओर प्रदीप्त रत्नदीपकोंसे सुशोभित, विविधप्रकारके धूपघटोंसे युक्त, वज्रमय कपाटोंसे संयुक्त, और वेदी व गोपुरद्वारोंसे सहित रमणीय प्रासाद हैं ॥ २६–२७ ॥

ये प्रासाद जघन्यरूपसे पचहत्तर धनुष ऊंचे, सौ धनुष लंबे और पचास धनुषप्रमाण विस्तारयुक्त हैं ॥ २८ ॥ उंचाई ७५; लंबाई १००; विस्तार ५० धनुष ।

इन प्रासादोंके द्वारोंमें प्रत्येककी उंचाई बारह धनुष, व्यास छह धनुष, और अवगाढ़ चार धनुषप्रमाण है ॥ २९ ॥ उंचाई १२; व्यास ६; अवगाढ़ ४ धनुष ।

उत्कृष्ट प्रासादोंमें प्रत्येककी उंचाई दोसौ पचीस धनुष, लम्बाई तीनसौ धनुष और विष्कंभ इससे आधा अर्थात् एकसौ पचास धनुषप्रमाण है ॥ ३० ॥ उं. २२५; लं. ३००; वि. १५० ध. ।

उत्कृष्ट प्रासादोंके द्वारोंमें प्रत्येक द्वारकी उंचाई छत्तीस धनुष, विष्कंभ अठारह धनुष, और अवगाढ़ नियमसे बारह धनुषप्रमाण है ॥ ३१ ॥ उं. ३६; वि. १८; अव. १२ ध. ।

---

१ द ब २५. २ द ब परिमदाइं. ३ द ब अब्भंतचेत्तरुवा. ४ द ब णूणं. ५ ब चावालणिं. ६ ब तिसयधणूणं. ७ द सव्वविक्खंभो. ८ द ब दुवारच्छेहो. ९ ब वत्तीस.

मज्झिमपासादाणं हुवेदि उदओ दिवड्ढसयदंडा । दोण्णि सया दीहत्तं पत्तेक्कं एक्कसय रुंदं ॥ ३२

१५० । २०० । १०० ।

चउवीसं चावाणिं ताण दुवारेसु होदि उच्छेहो । बारस अट्ठ कमेणं दंडा वित्थारअवगाढा ॥ ३३

२४ । १२ । ८ ।

सामण्णचित्तकदलीगब्भलदाणादआसणगिहाओ । गेहा होंति विचित्ता वेंतरणयरेसु रमयारा ॥ ३४

मेहुणमंडणओलगवंदणअभिसेयणच्चणाणं पि । णाणाविहसालाओ वररयणविणिम्मिदा होंति ॥ ३५

करिहरिसुकमोराणं मयरपवालाण गरुडहंसाणं । सारिच्छाइं तेसुं रम्मेसुं आसणाणि चेट्ठंते ॥ ३६

वररयणविरइदाणि विचित्तसयणाणि मउव्वपासाइं । रेहंति मंदिरेसुं दोपासठिदोवधाणाणि ॥ ३७

कणय व्व णिरुवलेवा णिम्मलकंती सुगंधणिस्सासा । वरविविहभूसणयरा रविमंडलसरिसमउडसिरा ॥ ३८

रोगजरापरिहीणा पत्तेक्कं दसधणूणि उत्तुंगा । वेंतरदेवा तेसुं सुहेण कीडंति सच्छंदा ॥ ३९

जिणमंदिरजुत्ताइं विचित्तविण्णासभवणपुण्णाइं । सदृदं अकिट्टिमाइं वेंतरणयराणि रेहंति ॥ ४०

मध्यम प्रासादोंमें प्रत्येककी उंचाई डेढ़सौ धनुष, लम्बाई दोसौ धनुष और चौड़ाई एकसौ धनुषप्रमाण है ॥ ३२ ॥ उंचाई १५०; लंबाई २००; चौड़ाई १०० धनुष ।

इन प्रासादोंके प्रत्येक द्वारकी उंचाई चौवीस धनुष, चौड़ाई बारह धनुष और अवगाढ़ आठ धनुषमात्र है ॥ ३३ ॥ उंचाई २४; चौड़ाई १२; अव. ८ धनुष ।

व्यंतरोंके नगरोंमें सामान्यगृह, चित्तगृह (चित्रशाला या चैत्यगृह), कदलीगृह, गर्भगृह, लतागृह, नादगृह और आसनगृह; ये रम्य आकारवाले विचित्र गृहविशेष होते हैं ॥ ३४ ॥

इसके अतिरिक्त वहांपर मैथुनशाला, मण्डनशाला, ओलगशाला, वंदनशाला, अभिषेकशाला, और नृत्यशाला, इसप्रकार उत्तम रत्नोंसे निर्मित नानाप्रकारकी शालायें होती हैं ॥ ३५ ॥

इन रमणीय प्रासादोंमें हाथी, सिंह, शुक, मयूर, मगर, व्याल, गरुड़ और हंस, इनके सदृश आसन रखे हुए हैं ॥ ३६ ॥

महलोंमें उत्तम रत्नोंसे निर्मित, मृदुल स्पर्शवाले और दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित तकियोंसे युक्त विचित्र शय्यायें शोभायमान हैं ॥ ३७ ॥

सुवर्णके समान निर्लेप, निर्मल कान्तिके धारक, सुगन्धमय निश्वाससे युक्त, उत्तमोत्तम विविधप्रकारके भूषणोंको धारणकरनेवाले, सिरपर सूर्यमण्डलके समान मुकुटके धारक, रोग एवं जरासे रहित, और प्रत्येक दश धनुष ऊंचे, ऐसे व्यन्तर देव उन नगरोंमें सुखपूर्वक स्वच्छंद क्रीड़ा करते हैं ॥ ३८–३९ ॥

जिनमन्दिरोंसे संयुक्त, विचित्र रचनावाले भवनोंसे परिपूर्ण, और अकृत्रिम वे व्यन्तरनगर सदैव शोभायमान होते हैं ॥ ४० ॥

---

१ द ब मंडल ओलंग', ब मंडणउलगं'. २ द ब णिरुवलेहो. ३ द ब 'मंडसिरा. ४ द ब जीमंदरं.

विजयंतवेजयंतं जयंतअपराजयंतणामेहिं । चत्तारि दुवाराइं जंबूदीवे चउदिसासुं ॥ ४१
पुव्वदिसाए विजयं दक्खिणआसाय वइजयंतं हि । अवरदिसाय जयंतं अवराजिदमुत्तरासाए ॥ ४२
एदाणं दाराणं पत्तेक्कं अट्ठ जोयणा उदओ । उच्छेहद्धं[1] रुंदं होदि पवेसो वि वाससमं ॥ ४३
८ । ४ । ४ ।
वरवज्जकवाडजुदा णाणाविहरयणदामरमणिज्जा । णिच्चं रक्खिज्जंते वेंतरदेवेहिं चउदारा ॥ ४४
दारोवरिमपएसे पत्तेक्कं होदि दारपासादा । सत्तारहभूमिजुदा णाणावरमत्तवारणया ॥ ४५
दिप्पंतरयणदीवा विचित्तवरसालभंजिअत्थंभा[2] । धुव्वंतधयवडाया विविहालोएहिं रमणिज्जा ॥ ४६
उब्भंतरयणसाणू[3] समंतदो विविहरूवपुढजुत्ता । देवच्छराहिं[4] भजिदा[5] पट्टंसुयपहुदिकयसोहा ॥ ४७
उच्छेहवासपहुदिसु दारब्भवणाण जेत्तिया संखा । तप्परिमाणपरूवणउवएसो संपहि पणट्ठो ॥ ४८
सीहासणछत्तत्तयभामंडलचामरादिरमणिज्जा । रयणमया जिणपडिमा गोउरदारेसु सोहंति ॥ ४९

जम्बूद्वीपकी चारों दिशाओंमें विजयन्त (विजय), वैजयन्त, जयन्त और अपराजयन्त (अपराजित) इन नामोंसे प्रसिद्ध चार द्वार हैं ॥ ४१ ॥

इनमेंसे विजय पूर्व दिशामें, वैजयन्त दक्षिण दिशामें, जयन्त पश्चिम दिशामें, और अपराजित द्वार उत्तर दिशामें है ॥ ४२ ॥

उपर्युक्त द्वारोंमेंसे प्रत्येक द्वारकी उंचाई आठ योजन, विस्तार उंचाईसे आधा अर्थात् चार योजन, और प्रवेश भी विस्तारके समान चार योजन है ॥४३॥ उंचाई ८; व्यास ४; प्रवेश ४ यो.।

उत्कृष्ट वज्रमय कपाटोंसे युक्त और नानाप्रकारके रत्नोंकी मालाओंसे रमणीय ये चारों द्वार व्यन्तर देवोंसे सदा रक्षित हैं ॥ ४४ ॥

प्रत्येक द्वारके उपरिम भागमें सत्तरह भूमियोंसे युक्त, अनेकानेक उत्तम बरामदोंसे सुशोभित, प्रदीप्त रत्नदीपकोंसे सहित, नानाप्रकारकी उत्तम पुत्तलिकाओंसे युक्त स्तम्भोंवाले, लहलहाती हुई ध्वजापताकाओंसे युक्त, विविधप्रकारके दृश्योंसे रमणीय, उत्तुंग रत्नशिखरोंसे संयुक्त, सब ओर नानाप्रकारके स्पष्ट रूपोंसे युक्त, देवों व अप्सराओंसे सेवित, और पट्टांशुक आदिसे शोभायमान द्वारप्रासाद हैं ॥ ४५–४७ ॥

इन द्वारभवनोंकी उंचाई तथा विस्तारका जितना प्रमाण है, उस प्रमाणके प्ररूपणका उपदेश इस समय नष्ट होचुका है ॥ ४८ ॥

गोपुरद्वारोंपर सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल और चामरादिसे रमणीय रत्नमय जिनप्रतिमायें शोभायमान होती हैं ॥ ४९ ॥

---

१ द ज य च अपराजयं च. २ द ब उच्छेहमद्ध. ३ द वरवत्त, ब वरवत्त. ४ द भंजिअद्धंभा, ब भंजिअद्धंहा. ५ द ब दुब्भंत. ६ द अब्भंतरयणमाणुसमंतादो, ब अब्भंतरयणसाणुसमंतादो. ७ द ब दोवच्छाराहिं. ८ द ब भविदा. ९ द उच्छेहओस, ब उच्छेहउस.

तस्सिं दीवे परिही लक्खाणिं तिण्णि सोलससहस्सा । जोयणसयाणि दोण्णि य सत्तावीसादिरित्ताणि ॥ ५०

३१६२२७ ।

पादूणं जोयणयं अट्ठावीसुत्तरं सयं दंडा । किंकूहत्था णत्थि हवेदि एक्को विहत्थीह[1] ॥ ५१

३ । दं १२८ । ० । ० । १ ।

४

पादट्ठाणे सुण्णं अंगुलमेक्कं तहा जवा पंच । एक्को जूवो एक्को लिक्खं कम्मक्खिदीण छव्वालं ॥ ५२

० । अं १ । ज ५ । जू १ । लि १ । क ६[2] ।

सुण्णं जहण्णभोगक्खिदिए मज्झिमभोगभूमीए । सत्त य विय वालग्गा पंचुत्तमभोगखोणीए ॥ ५३

० । ७ । ५ ।

एक्को तह रहरेणू तसरेणू तिण्णि णत्थि तुडरेणू । दो वि य[3] सण्णासण्णा ओसण्णासण्णया वि तिण्णि पुढं ॥ ५४

१ । ३ । ० । २ । ३ ।

परमाणू य अणंताणंता संखा हुवेदि णियमेणं । वोच्छामि तप्पमाणं मिस्सं[4]दि दिट्ठिवादादो[5] ॥ ५५

तेवीस सहस्साणिं बेण्णि सयाणिं च तेरसं अंसा । हारो एक्कं लक्खं पंच सहस्साणि चउ सयाणि[6] णवं ॥ ५६

२३२१३ |
१०५४०९ |

खखपदस्संसस्स[7] पुढं गुणगारो होदि तस्स परिमाणं । जाण अणंताणंता परिभासकमेण उप्पण्णा ॥ ५७[8]

उस जंबूद्वीपकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दोसौ सत्ताईस योजन, पादून एक योजन अर्थात् तीन कोस, एकसौ अट्ठाईस धनुष, किष्कू और हाथके स्थानमें शून्य, एक वितस्ति, पादके स्थानमें शून्य, एक अंगुल, पांच जौ, एक यूक, एक लीख, कर्मभूमिके छह बाल, जघन्य भोगभूमिके बालोंके स्थानमें शून्य, मध्यम भोगभूमिके सात बालाग्र, उत्तम भोगभूमिके पांच बालाग्र, एक रथरेणु, तीन त्रसरेणु, त्रुटरेणुके स्थानमें शून्य, दो सन्नासन्न, तीन अवसन्नासन्न और अनन्तानन्त परमाणुप्रमाण है। उसके प्रमाणको, दृष्टिवादसे जैसा निकलता है, कहता हूं ॥ ५०–५५ ॥

यो. ३१६२२७, को. ३, ध. १२८, किष्कू०, हाथ०, वित. १, पा.०, अं १, जौ ५, यूक १, लीख १, क. भू, ६, ज. भो.०, म. भो. ७, उ. भो. ५, र. १, त्र. ३, त्रु.०, सन्ना. २, अव. ३, परमाणु अनंतानन्त।

तेईस हजार दोसौ तेरह अंश और एक लाख पांच हजार चारसौ नौ हार है ॥ ५६ ॥

२३२१३
१०५४०९

'खखपदस्संसस्स पुढं' (?) यह उस परिमाणका गुणकार है जिसका अनन्तानन्त परिमाण परिभाषाक्रमसे उत्पन्न हुआ है ॥ ५७ ॥

---

१ द ब णत्थि हुवेदीयं कोविहंदीहं, अ णत्थि हुवेदी एको विहंदीहं. २ द ब कहा. ३ द ब तिय. ४ ब मिस्संसिददिट्ठि°. ५ द सयाणं. ६ द °पदस्संस पुढं. ७ द ७९०५६९४१५० । ब ७९९०५६९४१५०।.

अंबरपंचेक्कचऊणवछप्पणसुण्णणवयसत्तो व । अंककमे जोयणया जंबूदीवस्स खेत्तफलं ॥ ५८

७ ९ ० ५ ६ ९ ४ १ ५ ०।

एक्को कोसो दंडा सहस्समेक्कं हुवेदि पंचसया । तेवण्णाए सहिदा किंकूहत्थेसुं सुण्णाइं ॥ ५९

को १। दंड १ ५ ५ ३। ०। ०।

एक्को होदि विहत्थी सुण्णं पादम्मि[1] अंगुलं एक्कं । छच्च जवा[2] तिय जूवा लिक्खाओ तिण्णि णादव्वा ॥ ६०

१। ०। १। ६। ३। ३।

कम्मक्खोणीए दुवे वालग्गा अवरभोगभूमीए । सत्त हुवंते मज्झिमभोगखिदीए वि तिण्णि पुढं ॥ ६१

२। ७। ३।

सत्त य सण्णासण्णा ओसण्णासण्णया तहा एक्को । परमाणू अणंताणंता संखा इमा होदि ॥ ६२

७। १।

अडतालसहस्साइं पणवण्णुत्तरचउस्सया अंसा । हारो एक्कं लक्खं पंच सहस्साणि चउ सया णवयं ॥ ६३

४ ८ ४ ५ ५
१ ० ५ ४ ० ९

खखपदसंसस्स पुढं गुणगारा होदि तस्स परिमाणं । एत्थ अणंताणंता परिभासकमेण उप्पण्णा ॥ ६४

सोलसजोयणहीणे जंबूदीवस्स परिधिमज्झम्मि । दारंतरपरिमाणं चउभजिदे होदि जं लद्धं ॥ ६५

शून्य, पांच, एक, चार, नौ, छह, पांच, शून्य, नौ और सात, इन अंकोंके क्रमसे रखनेपर जितनी संख्या हो, उतने योजनप्रमाण जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल है ॥ ५८ ॥ ७९०५६९४१५० ।

इसके अतिरिक्त एक कोस, एक हजार पांचसौ तिरेपन धनुष, किष्कू और हाथके स्थानमें शून्य, एक वितस्ति, पादके स्थानमें शून्य, एक अंगुल, छह जौ, तीन यूका, तीन लीख, कर्मभूमिके दो बालाग्र, जघन्य भोगभूमिके सात बालाग्र, मध्यम भोगभूमिके तीन बालाग्र, सात सन्नासन्न, तथा एक अवसन्नासन्न एवं अनन्ताअन्त परमाणु, इतना उक्त जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलका प्रमाण है ॥ ५९–६२ ॥

को. १, ध. १५५३, कि. ०, हा. ०, वि. १, पा. ०, अं. १, जौ. ६, यू. ३, ली. ३, क. २, ज. ७, म. ३, स. ७, अ. १, परमाणु अनंतानन्त ।

अड़तालीस हजार चारसौ पचवन अंश और एक लाख पांच हजार चारसौ नौ हार है ॥ ६३ ॥ $\frac{४८४५५}{१०५४०९}$

' खखपदसंसस्सपुढं ' (?) यह उस परिमाणका गुणकार है जिसका अनन्तानन्त परिमाण परिभाषाक्रमसे उत्पन्न हुआ है ॥ ६४ ॥

जम्बूद्वीपकी परिधिमेंसे सोलह योजन कम करके शेषमें चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण है ॥ ६५ ॥

---

१ द ब हत्थेस. २ द ब सोदंमि. ३ द ब जव क.

जगदीबाहिरभागे[1] दाराणं होदि अंतरपमाणं । उणसीदिसहस्साणं बावण्णा जोयणाणि अदिरेगो ॥ ६६

सत्त सहस्साणि धणू पंचसयाणिं हवंति बत्तीसं । तिण्णि खिय पव्वाणिं तिण्णि जवा किंचिददिरित्ता ॥ ६७

७ ९ ० ५ २ । ध ७ ५ ३ २ । अं ३ । ज ३ ।

जगदीअब्भंतरए परिही लक्खाणि तिण्णि जोयणया । सोलससहस्सइगिसैयबावण्णा होंति किंचूणा ॥ ६८

३१६१५२ ।

जगदीअब्भंतरए दाराणं होदि अंतरपमाणं । उणसीदिसहस्साणं चउत्तीसं जोयणाणि किंचूणं ॥ ६९

७९०३४ ।

विक्खंभद्धकदीओ विगुणा वट्टे दिसंतरे दीवे । वग्गो पणगुणचउभजिदो होदि धणुकरणी[4] ॥ ७०

सत्तरिसहस्सजोयण सत्त सया दसजुदो य अदिरित्तो । जगदीअब्भंतरए दाराणं रिजुसमाणत्तिच्चालं ॥ ७१

७०७१० ।

उणसीदिसहस्साणिं छप्पण्णा जोयणाणि दंडाइं । सत्त सहस्सा पणसयबत्तीसा होंति किंचूणा ॥ ७२

७९०५६ । दं ७५३२ ।

जगतीके बाह्यभागमें द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण उन्यासी हजार बावन योजनसे अधिक है ॥ ६६ ॥ ७९०५२ ।

सात हजार पांचसौ बत्तीस धनुष, तीन अंगुल और कुछ अधिक तीन जौ, इतने प्रमाणसे उपर्युक्त द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण अधिक है ॥ ६७ ॥ ध. ७५३२, अं. ३, जौ ३ ।

जगतीके अभ्यन्तरभागमें जम्बूद्वीपकी परिधि तीन लाख सोलह हजार एकसौ बावन योजनसे कुछ कम है ॥ ६८ ॥ ३१६१५२ ।

जगतीके अभ्यन्तरभागमें द्वारोंके अन्तरालका प्रमाण उन्यासी हजार चौंतीस योजनसे कुछ कम है ॥ ६९ ॥ ७९०३४ ।

विष्कम्भके आधेके वर्गका दुगुणा वृत्ताकार द्वीपकी चतुर्थांश परिधिरूप धनुषकी जीवाका वर्ग होता है, इस वर्गको पांचसे गुणा कर चारका भाग देनेपर धनुषका वर्ग, तथा उसका मूल धनुषका प्रमाण होता है ॥ ७० ॥

उदाहरण:—विष्कम्भ १००००० यो. । चतुर्थांश धनुषकी जीवाका वर्ग $५००००^{२} \times २ = ५०००००००००$; धनुषका वर्ग $\frac{५०००००००००\times५}{४} = ६२५०००००००$; जीवाका प्रमाण $\sqrt{५०००००००००} = ७०७१०$ यो. धनुषका प्रमाण $\sqrt{६२५०००००००} = ७९०५६$ यो. ७५३२ ध. ।

जगतीके अभ्यन्तरभागमें द्वारोंका सीधा अन्तराल सत्तर हजार सातसौ दश योजनोंसे अधिक है ॥ ७१ ॥ ७०७१० ।

उक्त विजयादि द्वारोंका उन्तराल उन्यासी हजार छप्पन योजन और सात हजार पांचसौ बत्तीस धनुषसे कुछ कम है ॥ ७२ ॥ यो. ७९०५६, दं, ७५३२ ।

---

१ द ब भागो. २ द पंचाणि. ३ द इगिस्सय. ४ ब धणुकरणी.

विजयादिदुवाराणं पंचसया जोयणाणि वित्थारो । पत्तेक्कं उच्छेहो सत्त सयाणिं च पण्णासा ॥ ७३

जो ५०० । ७५० ।

दारोवरिमपुराणं रुंदा दो जोयणाणि पत्तेक्कं । उच्छेहो चत्तारिं केई एवं परूवंति ॥ ७४

२ । ४ । पाठान्तरम् ।

एदेसिं दाराणं अहिवइदेवा हुवंति विंतरया[1] । जंणामा ते दारा तंणामा ते वि रक्खादो[2] ॥ ७५

एक्कपलिदोवमाऊ दसदंडसमाणतुंगवरदेहा[3] । दिव्वामलमउडधरा सहिदा देवीसहस्सेहिं ॥ ७६

दारस्स उवरिदेसे विजयस्स पुरं हवेदि गयणम्मि[4] । बारससहस्सजोयणदीहं तस्सद्धविक्खंभं ॥ ७७

१२००० । ६००० ।

चउगोउरसंजुत्ता तडवेदी तम्मि होदि कणयमई । चरियट्टालयचारू दारोवरि जिणपुरेहिं रमयारा[5] ॥ ७८

विजयपुरम्मि विचित्ता पासादा विविहरयणकणयमया । समचउरस्सा दीहा अणेयसंठाणसोहिल्ला ॥ ७९

कुंदेंदुसंखधवला मरगयवण्णा सुवण्णसंकासा । वरपउमरायसरिसा विचित्तवण्णंतरा पउरा ॥ ८०

ओलग्गमंतभूसणअभिसेउप्पत्तिमेहुणादीणं । सालाओ विसालाओ रयणमईओ विराजंति[6] ॥ ८१

विजयादिक द्वारोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार पांचसौ योजन और उंचाई सातसौ पचास योजनप्रमाण है ॥ ७३ ॥ विस्तार यो. ५००, उत्सेध ७५० ।

द्वारोंपर स्थित पुरोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार दो योजन और उंचाई चार योजनमात्र है, ऐसा कितने ही आचार्य प्ररूपण करते हैं ॥ ७४ ॥ विस्तार २, उत्सेध ४ यो. । पाठांतर ।

इन द्वारोंके अधिपति व्यन्तर देव हैं। द्वारोंके जो नाम हैं, वे ही नाम रक्षाके निमित्तसे इन देवोंके भी हैं ॥ ७५ ॥

ये देव एक पल्योपमप्रमाण आयुके भोक्ता, दश धनुषप्रमाण उन्नत उत्तम शरीरवाले, दिव्य निर्मल मुकुटके धारक, और हजारों देवियोंसे सहित हैं ॥ ७६ ॥

द्वारके ऊपर आकाशमें बारह हजार योजन लंबा और इससे आधे विस्तारवाला विजयदेवका नगर है ॥ ७७ ॥ लंबाई १२०००; विस्तार ६००० यो. ।

उस विजयपुरमें चार गोपुरोंसे संयुक्त सुवर्णमयी तटवेदी है, जो मार्ग व अट्टालिकाओंसे सुन्दर और द्वारोंके ऊपर स्थित जिनपुरोंसे रमणीय है ॥ ७८ ॥

विजयपुरमें नानाप्रकारके रत्नों और सुवर्णसे निर्मित, समचतुरस्र दीर्घ और अनेक आकृतियोंसे शोभायमान विचित्र प्रासाद हैं ॥ ७९ ॥

वे प्रासाद कुन्दपुष्प, चन्द्रमा एवं शंखके समान धवल, मरकत मणियों जैसे वर्णवाले, सुवर्णके सदृश, उत्तम पद्मरागमणियोंके समान व बहुतसे अन्य विचित्र वर्णोंवाले हैं ॥ ८० ॥

उपर्युक्त प्रासादोंमें ओलगशाला, मंत्रशाला, भूषणशाला, अभिषेकशाला, उत्पत्तिशाला और मैथुनशाला, इत्यादिक रत्नमई विशाल शालायें शोभायमान हैं ॥ ८१ ॥

---

१ द ब °देवो. २ द ब चित्तरया. ३ द रिक्खादे, ब रक्खादे. ४ द ब °धरदेहा. ५ द ब रयणम्मि. ६ द चरिमट्टालयं°. ७ द ओगलं मंतं°, ब पुउलंगमंतं°. ८ ब °उप्पच्छिं°.

ते पासादा सव्वे विचित्तवणसंडमंडणा रम्मा । दिप्पंतरयणदीवा वरधूवघडेहिं संजुत्ता ॥ ८२
सत्तट्ठणवदसादियविचित्तभूमीहिं भूसिदा विउला । धुव्वंतधयवडाया[1] अकट्टिमा सुट्ठु सोहंति ॥ ८३
पासरसवण्णवररणिगंधेहिं बहुविधेहिं कदसरिसा । उज्जलविचित्तबहुविधसयणासणणिवहसंपुण्णा ॥ ८४
एदस्सिं[2] णयरवरे बहुविहपरिवारपरिगदो[3] णिच्चं । देवीजुत्तो[4] भुंजदि उवचारसुहाइं विजयसुरो[5] ॥ ८५
एवं अवसेसाणं देवाणं पुरवराणि रम्माणि । दारोवरिमपदेसे[6] णहम्मि जिणभवणजुत्ताणि ॥ ८६
जगदीए अब्भंतरभागे[7] बेकोसवाससंजुत्ता । भूमितले वणसंडा वरतरुणियरा विराजंति ॥ ८७
तं उज्जाणं सीयलछायं वरसुरहिकुसुमपरिपुण्णं । दिव्वामोदसुगंधं सुरखेयरमिहुणमणहरणं ॥ ८८
बे कोसा उव्विद्धा उज्जाणवणस्स वेदिया दिव्वा । पंचसयचावरुंदा कंचणवररयणणियरमई ॥ ८९

। जगदी सम्मत्ता ।

तस्सिं[8] जंबूदीवे सत्तविहा होंति जणपदा पवरा । एदाणं[9] विच्चाले छक्कुलसेला विरायंते ॥ ९०

.....

वे सब भवन विचित्र वनसमूहोंसे सुशोभित, रमणीय, प्रदीप्त रत्नदीपकोंसे युक्त, श्रेष्ठ धूपघटोंसे संयुक्त; सात, आठ, नौ, और दश इत्यादि विचित्र भूमियोंसे विभूषित; विशाल, फहराती हुई ध्वजापताकाओंसे सहित, और अकृत्रिम होते हुए अच्छीतरह शोभायमान हैं ॥ ८२-८३ ॥

उपर्युक्त भवन नानाप्रकारके स्पर्श, रस, वर्ण, उत्तम ध्वनि एवं गन्धसे सदृशताको प्राप्त और उज्वल एवं विचित्र बहुत प्रकारके शयन तथा आसनोंके समूहसे परिपूर्ण हैं ॥ ८४ ॥

इस श्रेष्ठ नगरमें बहुतप्रकारके परिवारसे परिपूर्ण विजयदेव अपनी देवियोंसे युक्त होकर सर्वदा उपचारसुखोंको भोगता है ॥ ८५ ॥

इसीप्रकार अन्य द्वारोंके उपरिम भागपर आकाशमें जिनभवनोंसे युक्त अवशिष्ट देवोंके रमणीय उत्तम नगर हैं ॥ ८६ ॥

जगतीके अभ्यन्तरभागमें पृथ्वीतलपर दो कोस विस्तारसे युक्त और उत्तम वृक्षोंके समूहोंसे परिपूर्ण वनसमूह शोभायमान हैं ॥ ८७ ॥

वह उद्यान शीतल छायासे युक्त, उत्तम सुगन्धित पुष्पोंसे परिपूर्ण, दिव्य सुगन्धसे सुगंधित और देव एवं विद्याधरयुगलोंके चित्तको हरनेवाला है ॥ ८८ ॥

सुवर्ण एवं उत्तमोत्तम रत्नोंके समूहसे निर्मित उस उद्यानवनकी दिव्य वेदिका दो कोस ऊंची और पांचसौ धनुषप्रमाण चौड़ी है ॥ ८९ ॥

जगतीका वर्णन समाप्त हुआ ।

उस जंबूद्वीपके बीचमें सात प्रकारके श्रेष्ठ जनपद हैं और इन जनपदोंके अन्तरालमें छह कुलाचल शोभायमान हैं ॥ ९० ॥

.....

१ द ज्झंतरपरदाया, ब दुच्छंतरपरदाया. २ द ब एदेसिं. ३ द ब °परिभदा. ४ द ब °जुत्ता. ५ द ब विजयपुरी. ६ द ब °पवेसे. ७ द ब °भागो. ८ द ब °संडो. ९ द ब °तेणुं. १० द ब एदाणिं.

दक्खिणदिसाए भरहो हेमवदो हरिविदेहरम्माणि । हेरण्णवदेरावदवरिसा कुलपव्वदंतरिदा ॥ ९१
कप्पतरुधवलछत्ता वरउववणचामरेहिं चारुधरा । वरकुंडकुंडलेहिं विचित्तरूवेहिं रमणिज्जा ॥ ९२
वरवेदीकडिसुत्ता बहुरयणुज्जलणगिंदमउडधरा । सरिजलपवाहहारा खेत्तणरिंदा विराजंति ॥ ९३
हिमवंतमहाहिमवंतणिसिधणीलंदिरुम्मिसिहरिगिरी । मूलोवरिसमवासा पुव्वावरजलधीहिं[1] संलग्गा ॥ ९४
एदे हेमज्जुणतवणिज्जयवेरुलियरजदहेममया । एक्कदुचदुचदुदुगइगिजोयणसयउदयसंजुदा कमसो ॥ ९५

१०० । २०० । ४०० । ४०० । २०० । १०० ।

वरदहसिदादवत्ता[2] सरिचॅामरविज्जमाणया परिदो । कप्पतरुचारुचिंधा[4] वसुमईसिंहासणारूढा ॥ ९६
वरवेदीकडिसुत्ता विविहुज्जलरयणकूडमउडधरा । अंबरणिज्झरहारा चंचलतरुकुंडलाभरणा ॥ ९७
गोउरतिरीटरम्मा पायारसुगंधकुसुमदामग्गा । सुरपुरकंठाभरणा [6]वणराजिविचित्तवत्थकयसोहा ॥ ९८
तोरणकंकणजुत्ता वज्जपणालीफुरंतकेयूरा । जिणवरमंदिरतिलया भूधरराया विराजंति ॥ ९९

दक्षिण दिशासे लेकर भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत, ये सात क्षेत्र हैं, जो कुलपर्वतोंसे विभक्त हैं ॥ ९१ ॥

कल्पवृक्षरूपी सफेद छत्रसे विभूषित, उत्तम उपवनरूपी चामरोंसे शोभित पृथिवीसे युक्त, विचित्र रूपवाले उत्तम कुण्डरूपी कुण्डलोंसे रमणीय, उत्तम वेदीरूपी कटिसूत्रसे अलंकृत, बहुत प्रकारके रत्नोंसे उज्वल कुलपर्वतरूपी मुकुटको धारण करनेवाले, और नदियोंके जलप्रवाहरूपी हारसे संयुक्त, ऐसे ये भरतादिक क्षेत्ररूपी राजा विराजमान हैं ॥ ९२–९३ ॥

हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी, ये छह कुलपर्वत मूलमें व ऊपर समान विस्तारसे युक्त तथा पूर्वापर ससुद्रोंसे संलग्न हैं ॥ ९४ ॥

सुवर्ण, चांदी, तपनीय, वैडूर्यमणि, रजत और सुवर्णके समान वर्णवाले ये छहों कुलपर्वत क्रमसे एकसौ, दोसौ, चारसौ, चारसौ, दोसौ और एकसौ योजनप्रमाण उंचाईसे संयुक्त हैं ॥ ९५ ॥

हिम. १००, महा. २००, निषध ४००, नील ४००, रुक्मि २००, शिखरी १०० यो.

उत्तम द्रहरूपी सफेद छत्रसे विभूषित, चारों ओर नदीरूपी चामरोंसे वीज्यमान, कल्पवृक्षरूपी सुन्दर चिह्नोंसे सहित, वसुमतीरूपी सिंहासनपर विराजमान, उत्तम वेदीरूपी कटिसूत्रसे युक्त, विविध प्रकारके उज्वल रत्नोंके कूटरूपी मुकुटको धारण करनेवाले, आकाशके निर्झररूपी हारसे शोभायमान, चंचल वृक्षरूपी कुण्डलोंसे भूषित, गोपुररूप किरीटसे सुन्दर, कोटरूपी सुगन्धित फूलोंकी मालासे अग्रभागमें सुशोभित, सुरपुररूपी कण्ठाभरणसे अभिराम, वनपंक्तिरूप विचित्र वस्त्रोंसे शोभायमान, तोरणरूपी कंकणसे युक्त, वज्रप्रणालीरूपी स्फुरायमान केयूरोंसे सहित, और जिनालयरूप तिलकसे मनोहर, ऐसे कुलाचलरूपी राजा विराजमान हैं ॥ ९६–९९ ॥

१ द ब णीलद्धि. २ द ब जलदेहिं. ३ द ब वरदा हसिदा रत्ता. ४ द ब सवि°. ५ द ब °चारविंदा. ६ द ब वसुहमही°. ७ ब वरराजि°. ८ द ब तारिण°. ९ द वज्जफणाली°.

णउदीजुदसदभजिदे जंबूदीवस्स वासपरिमाणे । जं लद्धं तं रुंदं भरहक्खेत्तम्मि णादव्वं ॥ १००
पुव्वावरदो दीहा सत्त वि खेत्ता अणादिविण्णासा । कुलगिरिकयमज्जादा वित्थिण्णा दक्खिणुत्तरदो ॥ १०१
भरहम्मि होदि एक्का तत्तो दुगुणा य खुल्लहिमवंते[1] । एवं दुगुणा दुगुणा[2] होदि सलाया विदेहंतं ॥ १०२
१ । २ । ४ । ८ । १६ । ३२ । ६४ ।
अद्धं खु विदेहादो णीले णीलादु रम्मके होदि । एवं अद्धद्धाओ एरावदखेत्तपरियंतं ॥ १०३
३२ । १६ । ८ । ४ । २ । १ ।
वरिसादीण सलाया[3] मिलिदे णउदीयमधियमेक्कसयं । एसा जुत्ती हारस्स भासिदा आणुपुव्वीए ॥ १०४
भागभजिदम्मि लद्धं पणसयछव्वीसजोयणाणिं[4] पि । छच्चियं[5] कला य कहिदो भरहक्खेत्तम्मि विक्खंभो ॥ १०५
५२६ । ६ ।
१९

जम्बूद्वीपके विस्तारप्रमाणमें एकसौ नब्बेका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना भरत क्षेत्रका विस्तार समझना चाहिये ॥ १०० ॥

सातों क्षेत्र पूर्व-पश्चिममें लंबे, अनादि रचनायुक्त (अनादिनिधन), कुलाचलोंसे सीमित, और दक्षिण-उत्तरमें विस्तीर्ण हैं ॥ १०१ ॥

भरत क्षेत्रमें एक शलाका है, क्षुद्र हिमवान् पर्वतकी शलाकायें भरत क्षेत्रसे दूनी हैं, इसी-प्रकार विदेह क्षेत्रपर्यन्त शलाकायें दूनी दूनी हैं ॥ १०२ ॥

भरत १, हिम. २, हैम. ४, महा. ८, हरि १६, निषध ३२, विदेह ६४ ।

विदेहसे आधी शलाकायें नील पर्वतमें और नील पर्वतसे आधी रम्यक क्षेत्रमें हैं । इसी-प्रकारसे ऐरावत क्षेत्रपर्यन्त शलाकायें उत्तरोत्तर आधी आधी होती गई हैं ॥ १०३ ॥

नील ३२, रम्यक १६, रुक्मि ८, हैर. ४, शिखरी २, ऐरा. १.

क्षेत्रादिकोंकी शलाकायें मिलकर एकसौ नब्बे होती हैं । इसप्रकार अनुक्रमसे यह हार (भाजक) की युक्ति बतलायी गयी है ॥ १०४ ॥

१ + २ + ४ + ८ + १६ + ३२ + ६४ + ३२ + १६ + ८ + ४ + २ + १ = १९०

उपर्युक्त रीतिसे जम्बूद्वीपके विस्तारमें एकसौ नब्बेका भाग देनेपर लब्ध हुए पांचसौ छब्बीस योजन और छह कलाप्रमाण (छह बटे उन्नीस) भरत क्षेत्रका विस्तार कहा गया है ॥ १०५ ॥ जम्बूद्वीपका विस्तार १००००० ÷ १९० = ५२६$\frac{६}{१९}$ यो. भरत क्षे. का विस्तार ।

१ द ब 'हिमवंतो. २ ब दुगुणदुगुणा. ३ ब लल्लायां. ४ द 'जोयणायं. ५ द ब छच्चिह.

वरिसा दुगुणो अद्दी अद्दीदो[1] दुगुणिदो परो वरिसो । जाव विदेहं होदि हु तत्तो अद्धद्धहाणीए ॥ १०६

१०५२ । १२	१९	२१०५ । ५	१९	४२१० । १०	१९	८४२१ । १	१९	१६८४२ । २	१९	३३६८४ । ४	१९
१६८४२ । २	१९	८४२१ । १	१९	४२१० । १०	१९	२१०५ । ५	१९	१०५२ । १२	१९	५२६ । ६	१९

। एवं विण्णासो सम्मत्तो ।

भरहखिदीबहुमज्झे विजयद्धो णाम भूधरो तुंगो । रजदमओ 'चेट्टेदि हु णाणावररयणरमणिज्जो ॥ १०७

पणुवीसजोयणुदओ तुत्तो[2] तद्दुगुणमूलविक्खंभो । उदयतुरिमंसगाढो जलणिहिपुट्ठो तिसेढिगओ ॥ १०८

२५ । ५० । २५ ।

४

दसजोयणाणि उवरिं गंतूणं तस्स दोसु पासेसुं । विज्जाहराण सेढी एक्केक्का जोयणाणि दस रुंदा ॥ १०९

१० ।

विजयद्धायामेणं हुवंति विज्जाहराण सेढीओ । एक्केक्का तह वेदी णाणाविहतोरणेहिं कियसोहा ॥ ११०

दक्खिणदिससेढीए पण्णास पुराणि पुव्ववरदिसम्मि[3] । उत्तरसेढीए तह णयराणिं[4] सट्ठि चेट्ठंति ॥ १११

द ५० । उ ६० ।

वर्षसे दूना कुलपर्वत और पर्वतसे दूना आगेका वर्ष, इसप्रकार विदेह क्षेत्रपर्यन्त क्षेत्रसे पर्वत और पर्वतसे क्षेत्रके विस्तारमें क्रमशः दूनी दूनी वृद्धि होती गयी है । इसके पश्चात् क्रमशः क्षेत्रसे पर्वत और पर्वतसे क्षेत्रका विस्तार आधा आधा होता गया है ॥ १०६ ॥

हिमवान् १०५२$\frac{१२}{१९}$, हैम. २१०५$\frac{५}{१९}$, महाहि. ४२१०$\frac{१०}{१९}$, हरि ८४२१$\frac{१}{१९}$, निषध १६८४२$\frac{२}{१९}$, विदेह ३३६८४$\frac{४}{१९}$, नील १६८४२$\frac{२}{१९}$, रम्यक ८४२१$\frac{१}{१९}$, रुक्मि ४२१०$\frac{१०}{१९}$, हैर. २१०५$\frac{५}{१९}$, शिखरी १०५२$\frac{१२}{१९}$, ऐरावत ५२६$\frac{६}{१९}$ । इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ ।

भरत क्षेत्रके बहुमध्यभागमें रजतमय और नानाप्रकारके उत्तम रत्नोंसे रमणीय विजयार्द्ध नामक उन्नत पर्वत स्थित है ॥ १०७ ॥

वह पर्वत पचीस योजन ऊंचा, इससे दूने अर्थात् पचास योजनप्रमाण मूलमें विस्तारसे युक्त, ऊंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण (६$\frac{१}{४}$ यो.) नीवसे सहित, पूर्वापर समुद्रको स्पर्श करनेवाला, और तीन श्रेणियोंमें विभक्त कहा गया है ॥ १०८ ॥ ऊंचा २५, मूलविस्तार ५०, अवगाह $\frac{२५}{४}$ यो. ।

दश योजन ऊपर जाकर उस पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दश योजन विस्तारसे युक्त विद्याधरोंकी एक एक श्रेणी है ॥ १०९ ॥ १० ।

विजयार्द्धके आयामप्रमाण विद्याधरोंकी श्रेणियां तथा नानाप्रकारके तोरणोंसे शोभायमान एक एक वेदिका है ॥ ११० ॥

पूर्वसे पश्चिम दिशाकी ओर दक्षिण दिशाकी श्रेणीमें पचास, और उत्तर श्रेणीमें साठ नगर स्थित हैं ॥ १११ ॥ द. श्रे. ५० । उ. श्रे. ६० ।

---

१ द ब वरिसादु दुगुणवड्ढी आदीदो. २ द वट्टेदि. ३ द ब वुत्ता. ४ द °वहुदम्मि, ब °वहुदिम्मि. ५ ब णयराणं.

तण्णामा किंणामिदकिंणरगीदाइं तह य णरगीदं । बहुकेदुपुंडरीया सीहद्धयसेदकेदूइं ॥ ११२
गरुडद्धयं सिरिप्पहसिरिधरलोहग्गला[1] अरिंजयकं । वइरग्गलवइरड्ढो[2] विमोजिया जयपुरी य सगडमुही ॥ ११३
चदुमुहबहुमुहअरजक्खयाणि विरजक्खणामविक्खादं । तत्तो रहणेउरमेहलग्गखेमंपुरावराजिदया ॥ ११४
णामेण कामपुप्फं गयणचरी विजयचरियसुक्कपुरी । तह संजयंतणयरी जयंतविजयवइजयंतं च ॥ ११५
खेमंकरचंदाभा सूराभपुरुत्तमापुराइं पि[4] । चित्तमहाकूडाइं सुवण्णकूडा तिकूडा य ॥ ११६
वइचित्तमेहकूडा[5] तत्तो वइसवणकूडसूरपुरा । चंदं णिच्चुज्जोयं विमुही तह णित्यवाहिणी सुमुही ॥ ११७

५० ।

णिच्चु अज्जुणअरुणीकइलासवारुणीओ य विज्जुपहणामा । किलकिलचूडामणियं ससिपहवंसालपुप्फचूलाइं ॥ ११८
णामेण हंसगब्भं बलाहकसिवंकरा सिरिसउधं । चमरं सिवमंदिरवसुवक्खावसुमाहमा णामा ॥ ११९
सव्वत्थपुरं सत्तुंजयं च णामेण केदुमालं ति । सुरवइकंतं तह गगणणंदणं पुरमसोगं च ॥ १२०
तत्तो विसोकयं वीदसोकअलकाहतिलकणामं च । अंबरतिलकं मंदरकुमुदा कुंदं च गयणवल्लभयं ॥ १२१
दिव्वतिलयं च भूमीतिलयं गंधव्वपुरवरं तत्तो । मुत्ताहरणइमिसणामं तहँगिजालमहजाला ॥ १२२
णामेण सिरिणिकेदं जयावहं सिरिणिवासमणिवज्जं । भद्दस्सव्वधणंजयमाहिंदो विजयणयरं च ॥ १२३
तह य सुगंधिणिवेरद्धदरा गोखीरफेणमक्खोभा । गिरिसिहरधरणिवारणिदुग्गाइं दुद्धरं सुदंसणयं ॥ १२४
रयणायररयणपुरा उत्तरसेढीय सट्ठि णयरीओ । विजयद्धायामेणं विरचिदपंतीय णिवसंति ॥ १२५

६० ।

उन नगरोंके नाम ये हैं—[1]किंनामित, [2]किन्नरगीत, [3]नरगीत, [4]बहुकेतु, [5]पुण्डरीक, [6]सिंहध्वज, [7]श्वेतकेतु, [8]गरुड़ध्वज, [9]श्रीप्रभ, [10]श्रीधर, [11]लोहार्गल, [12]अरिंजय, [13]वज्रार्गल, [14]वज्राढ्य, [15]विमोचिता, [16]जयपुरी, [17]शकटमुखी, [18]चतुर्मुख, [19]बहुमुख, [20]अरजस्का, [21]विरजस्का, [22]रथनूपुर, [23]मेखलाग्र, [24]क्षेमपुर, [25]अपराजित, [26]कामपुष्प, [27]गगनचरी, [28]विजयचरी (विनयपुरी), [29]शुक्रपुरी, [30]संजयंत नगरी, [31]जयंत, [32]विजय, [33]वैजयंत, [34]क्षेमंकर, [35]चन्द्राभ, [36]सूर्याभ, [37]पुरोत्तम, [38]चित्रकूट, [39]महाकूट, [40]सुवर्णकूट, [41]त्रिकूट, [42]वैश्रवणकूट, [43]सूर्यपुर, [44]चन्द्र, [45]नित्योद्योत, [46]विमुखी, [47]नित्यवाहिनी और [48]सुमुखी, ये पचास नगरियां दक्षिण श्रेणीमें हैं ॥ ११२–११७ ॥ ५० ।

[1]अर्जुनी, [2]अरुणी, [3]कैलाशी, [4]वारुणी, [5]विद्युत्प्रभ, [6]किलकिल, [7]चूडामणि, [8]शशिप्रभ, [9]वंशाल, [10]पुष्पचूल, [11]हंसगर्भ, [12]बलाहक, [13]शिवंकर, [14]श्रीसौध, [15]चमर, [16]शिवमंदिर, [17]वसुमत्का, [18]वसुमती, [19]सर्वार्थपुर, (सिद्धार्थपुर), [20]शत्रुंजय, [21]केतुमाल, सुरपतिकान्त, [22]गगननन्दन, [23]अशोक, [24]विशोक, [25]वीतशोक, [26]अलका, [27]तिलक, [28]अंबरतिलक, [29]मन्दर, [30]कुमुद, [31]कुंद, [32]गगनवल्लभ, [33]दिव्यतिलक, [34]भूमितिलक, [35]गन्धर्वपुर, [36]मुक्ताहार, [37]निमिष, [38]अग्निज्वाल, [39]महाज्वाल, [40]श्रीनिकेत, [41]जयावह, [42]श्रीनिवास, [43]मणिवज्र, [44]भद्राश्व, [45]धनंजय, [46]महेन्द्र, [47]विजयनगर, [48]सुगन्धिनी, [49]वज्रार्द्धतर, [50]गोक्षीरफेन, [51]अक्षोभ, [52]गिरिशिखर, [53]धरणी, [54]वारिणी (धारिणी), [55]दुर्ग, [56]दुर्द्धर, [57]सुदर्शन, [58]रत्नाकर और [59]रत्नपुर, ये उत्तरश्रेणीमें साठ नगरियां हैं, जो विजयार्द्धकी लम्बाईमें पंक्तिसे स्थित हैं ॥ ११८–१२५ ॥ ६० ।

---

१ द ब लोयग्गला. २ द ब °वइरंदा. ३ द ब चंदमुहं°. ४ द ब पुवाइं पि. ५ द ब हेमकूडा. ६ द ब वंजुल. ७ ब कइलासे. ८ द ब तह अग्गिं. ९ द ब 'वेरंतदराणं खीर°.

विज्जाहरणयरवरा अणाइणिहणा सहावणिप्पण्णा । णाणाविहरयणमया गोउरपासायतोरणादिजुदा ॥ १२६
उज्जाणवणसंजुत्ता पोक्खरणीकूवदिग्घवासहिदा । धुव्वंतधयवडाया पासादा ते च रयणमया ॥ १२७
णाणाविहजिणगेहा विज्जाहरपुरवरेसु रमणिज्जा । वररयणकंचणमया ट्ठाणट्ठाणेसुं सोहंति ॥ १२८
वणसंडवत्थणाहा वेदीकडिसुत्तएहि कंतिल्ला । तोरणकंकणजुत्ता विज्जाहररायभवणमउडधरा ॥ १२९
मणिगिहकंठाभरणा चलंतहिंदोलकुंडलेहिं जुदा । जिणवरमंदिरतिलया णयरणरिंदा विरायंति ॥ १३०
[1]पुप्फिदकमलवणेहिं वावीणिचएहिं मंडिया विउला । पुरबाहिरभूभागा उज्जाणवणेहिं रेहंति ॥ १३१
कल्हारकमलकुवलयकुमुदुज्जलजलपवाहपडहत्था । दिव्वतलाया विउला तेसु पुरेसुं विरायंति ॥ १३२
जमणालवल्लतुवरीतिलजवगोधुम्ममासपहुदीहिं । सव्वेहिं सुधण्णेहिं पुराइं सोहंति भूमीहिं ॥ १३३
बहुदिव्वगामसहिदा दिव्वमहापट्टणेहिं रमणिज्जा । कव्वडदोणमुहेहिं संवाहमडंबएहि परिपुण्णा ॥ १३४
रयणाण यायरेहिं[6] विभूसिदा पउमरायपहुदीणं । दिव्वणरेहिं[10] पुण्णा धणधण्णसमिद्धिरम्मेहिं ॥ १३५

.....

उपर्युक्त विद्याधरोंके श्रेष्ठ नगर अनादिनिधन, स्वभावसिद्ध, अनेकप्रकार रत्नमय, तथा गोपुर, प्रासाद और तोरणादिसे सहित हैं ॥ १२६ ॥

उन नगरोंमें उद्यान-वनोंसे संयुक्त; पुष्करिणी, कूप एवं दीर्घिकाओंसे सहित, और फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सुशोभित रत्नमय प्रासाद हैं ॥ १२७ ॥

इन श्रेष्ठ विद्याधरपुरोंमें रमणीय, उत्तम रत्न और सुवर्णमय नानाप्रकारके जिनमंदिर स्थान स्थानपर शोभायमान होते हैं ॥ १२८ ॥

वनखंडरूपी वस्त्रसे आच्छादित, वेदिकारूप कटिसूत्रसे कान्तिमान्, तोरणरूपी कंकणसे युक्त, विद्याधरोंके राजभवनरूप मुकुटको धारण करनेवाले, मणिगृहरूप कंठाभरणसे विभूषित, चंचल हिंडोलेरूप कुण्डलोंसे युक्त, और जिनेन्द्रमन्दिररूपी तिलकसे सुशोभित, ऐसे विद्याधरनगर-रूपी राजा विराजमान हैं ॥ १२९-१३० ॥

नगरके बाहरी विशाल प्रदेश प्रफुल्लित कमलवनोंवाले और वापीसमूहोंसे युक्त उद्यानवनोंसे मंडित होते हुए शोभायमान हैं ॥ १३१ ॥

उन नगरोंमें कल्हार, कमल, कुवलय, और कुमुदोंसे उज्वल जलप्रवाहसे परिपूर्ण बहुत दिव्य तालाब शोभायमान हैं ॥ १३२ ॥

यवनाल (जुवार), वल्ल, तूवर, तिल, जौ, गेहूं, और उड़द, इत्यादिक समस्त उत्तम धान्योंसे युक्त भूमियोंद्वारा वे नगर शोभाको प्राप्त हैं ॥ १३३ ॥

वे नगर बहुत दिव्य ग्रामोंसे सहित, दिव्य महापट्टनोंसे रमणीय; कर्वट, द्रोणमुख, संवाह, और मटंबोंसे परिपूर्ण; पद्मरागादिक रत्नोंकी खानोंसे विभूषित, और धन-धान्यकी वृद्धिसे रमणीय दिव्य मनुष्योंसे परिपूर्ण हैं ॥ १३४-१३५ ॥

---

१ द ब धुव्वंतरयवदाया. २ द ब ताण ट्ठाणेसु. ३ द वेदीवडिं. ४ द कंचणं. ५ द ब भवणमौडं. ६ द ब पुप्फिदं. ७ द सुधणेहिं. ८ ब सयायारहिं. ९ द ब पंचमरायं. १० द ब णयरेहिं.

जंबकुमारसरिच्छा बहुविहविज्जाहिं संजुदा पवरा । विज्जाहरा मणुस्सा छक्कम्मजुदा हुवंति सदा ॥ १३६
अच्छरसरिच्छरूवा अहिणवलावण्णदिव्वरमणिज्जा । विज्जाहरवणिताओ बहुविहविज्जासमिद्धाओ ॥ १३७
कुलजाईविज्जाओ साहियविज्जा अणेयभेयाओ । विज्जाहरपुरिसपुरंधियाणं वरसोक्खजणणीओ ॥ १३८
रम्मुज्जाणेहिं जुदा होंति हु विज्जाहराण सेढीओ । जिणभवणभूसिदाओ को सक्कइ वण्णिदुं सयलं ॥ १३९
दसजोयणाणि तत्तो उवरिं गंतूण दोसु पासेसुं । अभियोगामरसेढी दसजोयणवित्थरा होदि ॥ १४०
वरकप्परुक्खरम्मा फलिदेहिं उववणेहि परिपुण्णा । वावितलायप्पउरा वरअच्छरकीडणेहिं जुदा ॥ १४१
कंचणवेदीसहिदा वरगोउरसुंदरा य बहुचित्ता । मणिमयमंदिरबहुला परिखापायारपरियरिया ॥ १४२
सोहम्मसुरिंदस्स य वाहणदेवा हुवंति विंतरया । दक्खिणउत्तरपासेसु तिए वरदिव्वरूवधरा ॥ १४३
अभियोगपुरेहिंतो गंतूणं पंचजोयणाणि तदो । दसजोयणविच्छिण्णं वेयड्ढगिरिस्स वरसिहरं ॥ १४४

उन नगरोंमें रहनेवाले उत्तम विद्याधर मनुष्य जम्बुकुमार (कामदेव) के समान बहुतप्रकारकी विद्याओंसे संयुक्त और सदा छह कर्मोंसे सहित हैं ॥ १३६ ॥

विद्याधरोंकी स्त्रियां अप्सराओंके सदृश रूपसे युक्त, नवीन दिव्य लावण्यसे रमणीय, और बहुत प्रकारकी विद्याओंसे समृद्ध हैं ॥ १३७ ॥

अनेकप्रकारकी कुलविद्याएं, जातिविद्याएं और साधितविद्याएं विद्याधर पुरुष एवं पुरंध्रियोंको उत्तम सुखको देनेवाली हैं ॥ १३८ ॥

विद्याधरोंकी श्रेणियां रमणीय उद्यानोंसे युक्त और जिनभवनोंसे भूषित हैं। इनका सम्पूर्ण वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ १३९ ॥

विद्याधरश्रेणियोंसे आगे दश योजन ऊपर जाकर विजयार्धके दोनों पार्श्वभागोंमें दश योजन विस्तारवाली आभियोग्य देवोंकी श्रेणी है ॥ १४० ॥

यह श्रेणी उत्कृष्ट कल्पवृक्षोंसे रमणीय, फलित उपवनोंसे परिपूर्ण, प्रचुर वापी एवं तलावोंसे सहित, उत्तम अप्सराओंकी क्रीड़ाओंसे युक्त, सुवर्णमय वेदीसे सहित, उत्कृष्ट गोपुरोंसे सुन्दर, बहुत चित्रोंसे युक्त, बहुतसे मणिमय भवनोंसे परिपूर्ण, और परिखा एवं प्राकारसे वेष्टित है ॥ १४१–१४२ ॥

इस श्रेणीके दक्षिण-उत्तर पार्श्वभागोंमें उत्तम दिव्य रूपके धारी सौधर्म इन्द्रके व्यंतर वाहन देव हैं ॥ १४३ ॥

अभियोगपुरोंसे पांच योजन ऊपर जाकर दश योजन विस्तारवाला वैताढ्य पर्वतका उत्तम शिखर है ॥ १४४ ॥

१ द ब जंबकुमारसरिच्छो. २ द ब पुरंवियाण. ३ द °वेयदो. ४ द ब चित्तरया. ५ द ब पुराहिंतो.

तियसिंदचावसरिसं विसालवरवेदियाहि परियरियं । बहुतोरणदारजुदं[1] विचित्तरयणेहिं[2] रमणिज्जं ॥ १४५
तत्थ समभूमिभागे फुरंतवररयणकिरणणियरम्मि । चेट्ठंते णव कूडा कंचणमणिमंडिया दिव्वा ॥ १४६
आमेहिं सिद्धकूडो पुव्वदिसंतो तदो भरहकूडो । खंडप्पवादणामो तुरिमो तह माणिभद्दो त्ति ॥ १४७
विजयड्ढकुमारो पुण्णतिमिस्सगुहाभिधाणो[3] य । उत्तरभरहो कूडो पच्छिमयंतम्मि वेसमणो ॥ १४८
कूडाणं उच्छेहो पुह पुह छज्जोयणाणि इगिकोसं । तेत्तियमेत्तं णियमा हुवेदि मूलम्मि विक्खंभो ॥ १४९

जो ६ को १ । जो ६ को १ ।

तस्सद्धं वित्थारो पत्तेक्कं होदि कूडसिहरम्मि । मूलसिहराण[4] रुंदं मेलिय दलिदम्मि मज्झस्स ॥ १५०

जो ३ को १ । जो ४ को ११ ।
२ ४

आदिमकूडे[5] चेट्ठदि जिणिंदभवणं विचित्तधयमालं । वरकंचणरयणमयं[6] तोरणजुत्तं विमाणं च ॥ १५१
दीहत्तमेक्ककोसो विक्खंभो होदि कोसबहुसम्मेत्तं[7] । गाउतियचरणभागो उच्छेहो जिणणिकेदस्स ॥ १५२

को १ । १ । ३ ।
२ ४

यह शिखर त्रिदशेन्द्रचाप अर्थात् इन्द्रधनुषके सदृश, विशाल व उत्तम वेदिकाओंसे वेष्टित, बहुत तोरणद्वारोंसे संयुक्त, और विचित्र रत्नोंसे रमणीय है ॥ १४५ ॥

वहांपर स्फुरायमान उत्तम रत्नोंके किरणसमूहोंसे युक्त समभूमिभागमें सुवर्ण और मणियोंसे मंडित दिव्य नौ कूट स्थित हैं ॥ १४६ ॥

पूर्व दिशाके अन्तमें सिद्धकूट, इसके पश्चात् भरतकूट, खण्डप्रपात, चतुर्थ माणिभद्र, विजयार्द्धकुमार, पूर्णभद्र, तिमिश्रगुह नामक, उत्तर भरतकूट और पश्चिम दिशाके अन्तमें वैश्रवण, ये उन नौ कूटोंके नाम हैं ॥ १४७–१४८ ॥

इन कूटोंकी उंचाई पृथक् पृथक् छह योजन और एक कोस, तथा इतना ही नियमसे मूलमें विस्तार भी है ॥ १४९ ॥ उंचाई यो. ६ को. १, मूलविस्तार यो. ६ को १ ।

प्रत्येक कूटका विस्तार शिखरपर इससे आधा अर्थात् तीन योजन और आधा कोस है । मूल और शिखरके विस्तारको मिलाकर आधा करनेपर जो प्रमाण हो उतना विस्तार उक्त कूटोंके मध्यमें है ॥ १५० ॥ शिखरपर यो. ३ को $\frac{1}{2}$, मध्यमें यो. ४ को $\frac{11}{2}$ $\left(\frac{6\frac{1}{2}+3\frac{1}{2}}{2}\right)$ ।

प्रथम कूटपर विचित्र ध्वजासमूहोंसे शोभायमान जिनेन्द्रभवन तथा उत्तम सुवर्ण और रत्नोंसे निर्मित तोरणोंसे युक्त विमान भी स्थित है ॥ १५१ ॥

उक्त जिनभवनकी लम्बाई एक कोस, चौड़ाई आधा कोस, और उंचाई गव्यूतिके तीन चौथाई भागप्रमाण है ॥ १५२ ॥ दीर्घता १, विष्कंभ $\frac{1}{2}$, उत्सेध $\frac{3}{4}$ कोस ।

---

१ द ब °हारजुदं. २ °रयणम्मि. ३ द पुत्तं°, ब पुरंतं°. ४ द ब °विधाणो. ५ द ब °सिहराणि. ६ द आदिमकूडो. ७ द जिणंद°. ८ द ब °मया. ९ द °समेत्तं.

कंचणपायारत्तयपरियरिओ गोउरेहिं संजुत्तो[1] । वरवज्जणीलविद्दुममरगयवेरुलियपरिणामो ॥ १५३
लंबंतरयणदामो णाणाकुसुमोवहारकयसोहो । गोसीरमलयचंदणकालागुरुधूवगंधड्ढो ॥ १५४
वरवज्जकवाडजुदो बहुविहदारेहिं सोहिदो विउलो । वरमाणथंभसहिओ जिणिंदगेहो णिरुवमाणो ॥ १५५
भिंगारकलसदप्पणचामरघंटादवत्तपहुदीहिं । पूजादव्वेहिं तदो विचित्तवरवत्थएहिं[2] वा ॥ १५६
पुण्णायणागचंपयअसोयवउलादिरुक्खपुण्णेहिं । उज्जाणेहिं सोहदि विविहेहिं जिणिंदपासादो ॥ १५७
सच्छजलपूरिदाहिं कमलुप्पलसंडमंडणधराहिं[3] । पोक्खरणीहिं रम्मो मणिमयसोवाणमालाहिं[4] ॥ १५८
तस्सिं जिणिंदपडिमा अट्ठमहामंगलेहिं संपुण्णा । सीहासणादिसहिदा चामरकरणागजक्खमिहुणजुदा ॥ १५९
भिंगारकलसदप्पणवीयणधयछत्तचमरसुपइट्ठा । इय अट्ठमंगलाइं पत्तेक्कं अट्ठअधियसयं ॥ १६०
किं तीए वण्णिज्जइ जिणिंदपडिमाय सासदड्ढीए[7] । जा हरइ सयलदुरियं सुमरणमेत्तेण भव्वाणं ॥ १६१

एवं हिरूवं पडिमं जिणस्स तत्थट्ठिदं भत्तिए सच्छचित्ता[9] ।
झायंति केई सुविणट्ठकम्मा ते मोक्खमग्गं[10] सकलं लहंते ॥ १६२

तीन सुवर्णमय प्राकारोंसे वेष्टित, गोपुरोंसे संयुक्त; उत्तम वज्र, नील, विद्रुम, मरकत और वैडूर्य मणियोंसे निर्मित; लटकती हुई रत्नमालाओंसे युक्त; नानाप्रकारके फूलोंके उपहारसे शोभायमान; गोशीर, मलयचंदन, कालागुरु और धूपकी गन्धसे व्याप्त; उत्कृष्ट वज्रकपाटोंसे युक्त, बहुतप्रकारके द्वारोंसे सुशोभित, विशाल और उत्तम मानस्तम्भोंसे सहित वह जिनेंद्रभवन अनुपम है ॥ १५३–१५५ ॥

वह जिनेंद्रप्रासाद झारी, कलश, दर्पण, चामर, घंटा और आतपत्र (छत्र) इत्यादि पूजाद्रव्योंसे; विचित्र व उत्तम वस्त्रोंसे; तथा नाग, पुंनाग, चंपक, अशोक और वकुलादिक वृक्षोंसे परिपूर्ण विविधप्रकारके उद्यानोंसे शोभायमान है ॥ १५६–१५७ ॥

वह जिनभवन स्वच्छ जलसे परिपूर्ण, कमल और नील कमलोंके समूहसे अलंकृत भूमिभागोंसे युक्त, और मणिमय सोपानपंक्तियोंसे शोभायमान, ऐसी पुष्करिणियोंसे रमणीय है ॥ १५८ ॥

उस जिनेन्द्रमन्दिरमें आठ महामंगलद्रव्योंसे परिपूर्ण, सिंहासनादिकसे सहित, और हाथमें चामरोंको लिये हुए नागयक्षोंके युगलसे युक्त, ऐसी जिनेन्द्रप्रतिमा विराजमान है ॥ १५९ ॥

झारी, कलश, दर्पण, व्यजन, ध्वजा, छत्र, चमर और सुप्रतिष्ठ (ठौना), इन आठ मंगलद्रव्योंमेंसे प्रत्येक वहां एकसौ आठ आठ हैं ॥ १६० ॥

जो स्मरणमात्रसे ही भव्य जीवोंके सम्पूर्ण पापको नष्ट करती है, ऐसी उस शाश्वत ऋद्धिसे युक्त जिनेन्द्रप्रतिमाका कितना वर्णन किया जाय ? ॥ १६१ ॥

उस जिनमन्दिरमें स्थित इसप्रकारकी सुन्दर जिनमूर्तिका जो कोई भव्य जीव निर्मलचित्त होकर भक्तिसे ध्यान करते हैं, वे कर्मोंको नष्ट करके सम्पूर्ण मोक्षमार्गको प्राप्त करते हैं ॥ १६२ ॥

---

१ द संजुत्ता. २ ब कालागरु. ३ द ब °वत्थसोहिं. ४ द °मंडणधराहं. ५ द ब सोहाण°. ६ द मालाहं. ७ ब सासदरिद्धीए. ८ ब जो. ९ द भत्तिपसत्थचित्तो, ब भत्तिए सच्चचित्तो. १० द ब मोक्खमाणं.

एसा जिणिंदपडिमा जणाणं[1] झाणंति णिच्चं सुहदुक्खयारं ।
भावाणुसारेण अणंतसोक्खं णिस्सेयसं अब्भुदयं च देदि[2] ॥ १६३

भरहादिसु कूडेसुं अट्ठसु वेंतरसुराण पासादा । वररयणकंचणमया वेदीगोउरदुवारकयसोहा ॥ १६४
उज्जाणेहिं जुत्ता मणिमयसयणासणेहिं परिपुण्णा । णच्चंतधयवडाया बहुविहवण्णा विरायंति ॥ १६५
बहुदेवदेविसहिदा वेंतरदेवाण होंति पासादा । जिणवरभवणपवण्णिदपासादसरिच्छरुंदादी ॥ १६६

को १ । १ । ३ ।
२ ४

भरहे कूडे भरहो खंडप्पवादम्मि णट्टमालसुरो[3] । कूडम्मि माणिभद्दे अहिवइदेवो अ माणिभद्दो त्ति ॥ १६७
वेदड्ढकुमारसुरो वेयड्ढकुमारणामकूडम्मि[4] । चेट्ठेदि पुण्णभद्दो अहिण्णाहो होइ पुण्णभद्दम्मि ॥ १६८
तिमिसगुहम्मि य कूडे देवो णामेण वसदि कदमालो । उत्तरभरहे कूडे अहिवइदेवो भरहणामो ॥ १६९
कूडम्मि य वेसमणे वेसमणो णाम अहिवरो देवो । दसधणुदेहुच्छेहा[5] सव्वे ते एक्कपल्लाऊ ॥ १७०
बेगाऊवित्थिण्णा दोसु वि पासेसु गिरिसमायामा । वेयड्ढम्मि गिरिंदे वणसंडा होंति भूमितले[6] ॥ १७१

यह जिनेन्द्रप्रतिमा उसका ध्यान करनेवाले जीवोंको उनके भावोंके अनुसार नित्य अनन्तसुखस्वरूप मोक्ष एवं नानाप्रकारके अभ्युदयको भी देती है ॥ १६३ ॥

भरतादिक आठ कूटोंपर व्यन्तर देवोंके उत्तम रत्न और सुवर्णसे निर्मित, वेदी एवं गोपुर-द्वारोंसे शोभायमान, उद्यानोंसे युक्त, मणिमय शय्या और आसनोंसे परिपूर्ण, नाचती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सुशोभित, और अनेक वर्णवाले प्रासाद विराजमान हैं ॥ १६४–१६५ ॥

ये व्यन्तर देवोंके प्रासाद बहुतसे देव-देवियोंसे सहित हैं। जिनभवनोंके वर्णनमें जो प्रासादोंके विस्तारादिका प्रमाण बतलाया जाचुका है, उसीके समान इनका भी विस्तारादिक जानना चाहिये ॥ १६६ ॥ दीर्घता १, विष्कंभ $\frac{1}{2}$, उत्सेध $\frac{3}{4}$ कोस।

भरत कूटपर भरत नामक देव, खण्डप्रपात कूटपर नृत्यमाल देव, और माणिभद्र कूटपर माणिभद्र नामक अधिपति देव है ॥ १६७ ॥

वैताढ्यकुमार नामक कूटपर वैताढ्यकुमार देव और पूर्णभद्र कूटपर पूर्णभद्र नामक अधिपति देव स्थित है ॥ १६८ ॥

तिमिश्रगुह कूटपर कृतमाल नामक देव और उत्तरभरत कूटपर भरत नामक अधिपति देव रहता है ॥ १६९ ॥

वैश्रवण नामक कूटपर वैश्रवण नामक अधिनायक देव है। ये सब देव दश धनुष ऊंचे शरीरके धारक और एक पल्योपमप्रमाण आयुसे युक्त हैं ॥ १७० ॥

वैताढ्य पर्वतके भूमितलपर दोनों पार्श्वभागोंमें दो गव्यूति विस्तीर्ण और पर्वतके बराबर लंबे वनखण्ड हैं ॥ १७१ ॥

१ द जिणाण. २ ब देहि. ३ द ब विंदपवादम्मि. ४ द ब सुरा. ५ द °कूटम्मि. ६ द ब अहिणामो, ७ द ब °देहुच्छेहो. ८ द ब भूमितलिं.

दोकोसं उच्छेहो[1] पणसयचावप्पमाणरुंदो दुं । वणवेदीआयारो[3] तोरणदारेहिं संजुत्तो ॥ १७२
चरियट्टालयचारू णाणाविहजंतलक्खसंछण्णा । विविहवररयणखचिदा णिरुवमसोहा हि वेदीओ ॥ १७३
सव्वेसु उववणेसुं वेंतरदेवाण होंति वरणयरा । पायारगोउरजुदा जिणभवणविभूसिया विउला ॥ १७४
रजदगिरी दोण्णि गुहा पण्णासा जोयणाणि दीहाओ । अट्ठ उच्चिद्धाओ बारसविक्खंभसंजुत्ता ॥ १७५
५० । ८ । १२ ।
पुव्वाए तिमिसगुहा खंडपवादी दिसाए अवराए[9] । वज्जकवाडेहि[7] जुदा अणादिणिहणा हि सोहंति ॥ १७६
जमलकवाडा दिव्वा होंति हु छज्जोयणाणि वित्थिण्णा । अट्ठुच्छेहा[8] दोसु वि गुहासु दाराणि[9] पत्तेक्कं ॥ १७७
पण्णासजोयणाणिं वेयड्ढगस्स मूलवित्थारो । तं भरहादो सोधिय[10] सेसद्धं दक्खिणद्धं तु ॥ १७८
दुसया अट्ठत्तीसं तिण्णि कलाओ य दक्खिणद्धम्मि । तस्स सरिच्छपमाणो उत्तरभरहो हि णियमेण ॥ १७९
२३८ । ३ ।
१९

दो कोस ऊंचाई तथा पांचसौ धनुषप्रमाण विस्तारसे सहित और तोरणद्वारोंसे संयुक्त वनवेदीका आकार होता है ॥ १७२ ॥

ये वेदियां मार्ग और अट्टालिकाओंसे सुन्दर, नानाप्रकारके लाखों यंत्रोंसे व्याप्त, विविध-प्रकारके उत्कृष्ट रत्नोंसे खचित, और अनुपम शोभाको धारणकरनेवाली हैं ॥ १७३ ॥

इन सब उपवनोंमें प्राकार और गोपुरोंसे युक्त, तथा जिनभवनोंसे भूषित व्यन्तरदेवोंके विशाल उत्कृष्ट नगर हैं ॥ १७४ ॥

रजतपर्वत अर्थात् विजयार्द्धमें पचास योजन लम्बी, आठ योजन ऊंची, और बारह योजन विस्तारसे युक्त दो गुफायें हैं ॥ १७५ ॥ दीर्घता ५०, ऊंचाई ८, विष्कंभ १२ यो.

इनमेंसे पूर्वमें तिमिश्र गुफा और पश्चिम दिशामें खण्डप्रपात गुफा है । ये दोनों गुफायें वज्रमय कपाटोंसे युक्त और अनादिनिधन होती हुई शोभायमान हैं ॥ १७६ ॥

दोनों ही गुफाओंमें द्वारोंके दिव्य युगल कपाटोंमेंसे प्रत्येक कपाट छह योजन विस्तीर्ण और आठ योजन ऊंचा है ॥ १७७ ॥

विजयार्द्ध पर्वतका विस्तार मूलमें पचास योजन है । इसको भरत क्षेत्रके विस्तारमेंसे कम करके शेषका आधा दक्षिण अर्द्ध भरत क्षेत्रका विस्तार होता ॥ १७८ ॥

दक्षिणार्द्ध भरतका विस्तार दोसौ अड़तीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे तीन भागप्रमाण है । इसीके सदृश विस्तारवाला नियमसे उत्तर भरत भी है ॥ १७९ ॥

$$(५२६\frac{६}{१९} - ५०) \div २, = २३८\frac{३}{१९} \text{ यो.}$$

---

१ द दोकोसं वित्थाओ, ब दोकोसं वित्थारो. २ द ब °चावा पमाणरुंदो उ. ३ द ब° आयारो होंति हु. ४ द चरियट्टले य. ५ द ब खेदपवाला. ६ द ब अवरधरा. ७ द ब °कवाडाहि. ८ द अट्ठवेयसिद्धाओ, ब अट्ठवेयसद्धाओ. ९ द ब दाराणि. १० द ब सोधय.

रुंदद्धं इसुहीणं वग्गिय अवणिज्ज रुंददलवग्गे । सेसं चउगुणमूलं जीवाए होदि परिमाणं ॥ १८०
बाणजुदरुंदवग्गे[1] रुंदकदी सोधिदूण दुगुणकदो । जं लद्धं तं होदि हु करणीचावस्स परिमाणं ॥ १८१
जीवाकदितुरिमंसा वासद्धकदीय[2] सोहिदूण पदं । रुंदद्धम्मि विहीणो लद्धं बाणस्स[3] परिमाणं ॥ १८२

बाणसे रहित अर्द्ध विस्तारका वर्ग करके उसे विस्तारके अर्द्धभागके वर्गमेंसे घटा देनेपर अवशिष्ट राशिको चारसे गुणा करके प्राप्त राशिका वर्गमूल निकालनेपर जीवाका प्रमाण प्राप्त होता है ॥ १८० ॥

उदाहरण—विष्कंभ १ लाख योजन; बाण २३८ $\frac{3}{19}$ = $\frac{4525}{19}$ यो.

$$\sqrt{4\left\{\left(\frac{1000000}{2}\right)^2-\left(\frac{1000000}{2}-\frac{4525}{19}\right)^2\right\}}$$

$$=\sqrt{4\left(250000000000-\frac{8939229476625}{361}\right)}$$

$$=\sqrt{4\times\frac{647702484305}{361}}=\sqrt{\frac{2588811938400}{361}}$$

= ९७४८ $\frac{12}{19}$ योजन दक्षिण विजयार्धकी जीवाका प्रमाण।

बाणसे युक्त व्यासके वर्गमेंसे व्यासके वर्गको घटाकर शेषको दुगुणा करनेपर जो प्राप्त हो वह धनुषका वर्ग होता है और उसका वर्गमूल धनुषका प्रमाण होता है ॥ १८१ ॥

उदाहरण—बाण २३८ $\frac{3}{19}$; व्यास १ लाख योजन।

$$2\left\{\left(1000000+238\tfrac{3}{19}\right)^2-(1000000)^2\right\}$$

$$=2\left\{\left(100238\tfrac{3}{19}\right)^2-1000000000000\right\}$$

$$=2\left\{\frac{3627215484765625}{361}-\frac{1000000000000}{1}\right\}$$

$$=2\left\{\frac{1721548476625}{361}\right\}$$

$$=\frac{3443096953250}{361}$$

$$=\left(\frac{1855555}{19}\right)^2=\left(9766\tfrac{1}{19}\right)^2 \text{ धनुषका वर्ग,}$$

९७६६ $\frac{1}{19}$ धनुषका प्रमाण.

जीवाके वर्गके चतुर्थ भागको अर्ध विस्तारके वर्गमेंसे घटाकर शेषका वर्गमूल निकालनेपर जो प्राप्त हो उसे विस्तारके अर्ध भागमेंसे कम करदेनेपर शेष बाणका प्रमाण प्राप्त होता है ॥ १८२ ॥

---

१ ब °रुंदवग्गो. २ द ब सावद्धकदीय. ३ द ब अद्धं.

एक्कसहस्सट्ठसया बाणउदी जोयणाणि भागा वि । पण्णरसहिदं एसा भरहक्खेत्तस्स पस्सभुजा ॥ १९४

१८९२ । १५ / २ / १९

हिमवंताचलमज्झे पडुमदहो पुव्वपच्छिमायामो । पणसयजोयणरुंदो तद्दुगुणायामसंपण्णो ॥ १९५

५०० । १००० ।

दसजोयणावगाढो चउतोरणवेदियाहिं संजुत्तो । तस्सिं पुव्वदिसाए णिग्गच्छदि गिम्मला गंगा ॥ १९६

छज्जोयणेक्ककोसा णिग्गदठाणम्मि होदि वित्थारो । गंगातरंगिणीए उच्छेहो कोसदलमेत्तो ॥ १९७

गंगाणईए णिग्गमठाणे चिट्ठेदि तोरणो दिव्वो । णवजोयणाणि तुंगो दिवड्ढकोसादिरित्तो य ॥ १९८

९ । ३ । २

चामरघंटाकिंकिणिवंदणमालासएहिं कयसोहा । भिंगारकलसदप्पणपूयणदव्वेहिं रमणिज्जा ॥ १९९

रयणमयथंभजोजिदविचित्तवरसालभंजियारम्मा । वज्जिंदणीलमरगयकक्केयणपउमरायजुदा ॥ २००

ससिकंतसूरकंतप्पमुहमऊखेहि णासियतमोघा । लंबंतकणयदामा अणाइणिहणा अणुवमाणा ॥ २०१

छत्तत्तयादिसहिदा वररयणमईओ फुरिदकिरिणोघा । सुरखेयरमहिदाओ जिणपडिमा तोरणुवरि णिवसंति ॥ २०२

एक हजार आठसौ बानवे योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे पन्द्रहके आधे अर्थात् साढ़े सात भागप्रमाण यह भरत क्षेत्रकी पार्श्वभुजा है ॥ १९४ ॥ १८९२$\frac{१५}{३८}$ ।

हिमवान् पर्वतके मध्यमें पूर्व-पश्चिम लंबा, पांचसौ योजन विस्तारसे सहित, और इससे दुगुणा अर्थात् एक हजार योजन लंबा पद्म द्रह है ॥ १९५ ॥ विष्कंभ ५००, आयाम १००० ।

यह द्रह दश योजन गहरा और चार तोरण एवं वेदिकाओंसे संयुक्त है । इसकी पूर्व दिशासे गंगा नदी निकलती है ॥ १९६ ॥

उद्गमस्थानमें गंगा नदीका विस्तार छह योजन एक कोस और ऊंचाई आधा कोस-मात्र है ॥ १९७ ॥

गंगा नदीके निर्गमनस्थानमें नौ योजन और डेढ़ कोस ऊंचा दिव्य तोरण है ॥१९८॥ ९$\frac{३}{८}$ ।

इस तोरणपर चामर, घंटा, किंकिणी (क्षुद्र घंटिका) और सैकड़ों वन्दनमालाओंसे शोभायमान; झारी, कलश, दर्पण तथा पूजाद्रव्योंसे रमणीय; रत्नमय स्तम्भोंपर नियोजित विचित्र और उत्तम पुत्तलिकाओंसे सुन्दर; वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्केतन एवं पद्मराग मणियोंसे युक्त; चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त प्रमुख मणियोंकी किरणोंसे अन्धकारसमूहको नष्ट करनेवाली; लटकती हुई सुवर्णमालाओंसे सुशोभित, अनादिनिधन, अनुपम, छत्रत्रयादिसे सहित, उत्तम रत्नमय, प्रकाशमान किरणोंके समूहसे युक्त और देव एवं विद्याधरोंसे पूजित, ऐसी जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ १९९–२०२ ॥

---

१ द १५/१९. २ द पउमदहो. ३ द तरंगणीए. ४ द उच्छेदो, ब उच्चेदो. ५ द तुंगा. ६ द ब मालासहेइ. ७ द ब °सालभदियारम्मो. ८ द ब °मईखेहि. ९ द ब लंबद.

तम्हि समभूमिभागे पासादा विविहरयणकणयमया । वज्जकवाडेहिं जुदा चउतोरणवेदियाजुत्ता ॥ २०३
एदेसु मंदिरेसुं होंति दिसाकण्णयाउ देवीओ । बहुपरिवाराणुगदा[1] णिम्मललावण्णरूवगदा[2] ॥ २०४
पउमद्दहादु दिसाए पुव्वाए थोवभूमिमेत्तम्मि । गंगाणईण मज्झे उब्भासदि एउ मणिमओ कूडो ॥ २०५
वियसियकमलायारो रम्मो वेरुलियणालसंजुत्तो । तस्स दला अइरत्ता[3] पत्तेक्कं कोसदलमेत्तं ॥ २०६
सलिलादुवरी उदओ एक्कं कोसं हुवेदि एदस्स । दो कोसा वित्थारो चामीयरकेसरेहिं संजुत्तो ॥ २०७
इगिकोसोदयरुंदा रयणमई तस्स कण्णिया होदि । तीए उवरिं चेट्ठदि पासादो मणिमओ दिव्वो ॥ २०८
तप्पासादे[4] निवसदि वेंतरदेवी बलेत्ति विक्खादा[5] । [6]एक्कपलिदोवमाऊ बहुपरिवारेहि संजुत्ता ॥ २०९
एवं पउमद्दहादो पंचसया जोयणाणि गंतूणं । गंगा कूडमपत्ता[7] जोयणअद्धेण दक्खिणावलिया ॥ २१०
खुल्लहिमवंतरुंदे णइरुंदं सोधिदूण अद्धकदो । दक्खिणभागे पव्वदउवरिम्मि हवेदि णइदीहं ॥ २११

उस सम भूमिभागमें विविधप्रकारके रत्न एवं सुवर्णसे निर्मित, वज्रमय कपाटोंसे सहित, और चार तोरण व वेदिकाओंसे संयुक्त प्रासाद हैं ॥ २०३ ॥

इन भवनोंमें बहुत परिवारसे युक्त और निर्मल लावण्यरूपको प्राप्त दिक्कन्या देवियां हैं ॥ २०४ ॥

पद्म द्रहसे पूर्व दिशामें थोड़ीसी भूमिपर गंगा नदीके बीचमें एक मणिमय कूट प्रकाशमान है ॥ २०५ ॥

यह मणिमय कूट विकसित कमलके आकार, रमणीय, और वैडूर्यमणिमय नालसे संयुक्त है । इसके पत्ते अत्यन्त लाल हैं, और प्रत्येक पत्रका विस्तार आधा कोसमात्र है ॥ २०६ ॥

पानीसे ऊपर इसकी उंचाई एक कोस और विस्तार दो कोस है । यह सुवर्णमय परागसे संयुक्त है ॥ २०७ ॥

इस कमलाकार कूटकी रत्नमय कर्णिका एक कोस ऊंची और इतने ही विस्तारसे युक्त है । इसके ऊपर मणिमय दिव्य भवन स्थित है ॥ २०८ ॥

उस भवनमें बला इस नामसे विख्यात, एक पल्योपम आयुवाली, और बहुत परिवारसे युक्त व्यन्तर देवी निवास करती है ॥ २०९ ॥

इसप्रकार गंगा नदी पद्म द्रहसे पांचसौ योजन आगे जाकर और गंगाकूटतक न पहुंचकर उससे आधा योजन पहिले ही दक्षिणकी ओर मुड़ जाती है ॥ २१० ॥

क्षुद्र हिमवान्के विस्तारमेंसे नदीके विस्तारको घटाकर अवशिष्टको आधा करनेपर दक्षिण भागमें पर्वतके ऊपर नदीकी लम्बाईका प्रमाण निकलता है ॥ २११ ॥

१ ब °परिवाराणुमदा. २ द ब अहिरत्तो. ३ द ब तप्पासादा. ४ द ब विक्खादो. ५ ब एक्का. ६ द ब कूडमपत्तो. ७ द °रुंदस्साधिदूण.

पंचसया तेवीसं अट्ठहिदा ऊणतीसभागा य । दक्खिणदो आगच्छिय गंगा गिरिजिब्भियं पत्ता ॥ २१२

$$५२३\left|\begin{matrix}२९^{१}\\ १९ \mid ८\end{matrix}\right|$$

हिमवंतयंतमणिमयवरकूडमुहम्मि वसहरूवम्मि ।
पविसिय णिवलइ धारा दसजोयणवित्थरा य ससिधवला ॥ २१३

छज्जोयणछक्कोसा पणालियाए हुवेदि विक्खंभो । आयामो बे कोसा तत्तियमेत्तं[१] च बहलत्तं ॥ २१४

६ । को १ । को २ । को २ ।

सिंगमुहकण्णजिब्भालोयणभूआदिएहि गोसरिसो[४] । वसहो त्ति तेण भण्णइ रयणामरजीहिया तत्थ ॥ २१५
पणुवीसं जोयणाणिं हिमवंते तत्थ अंतरेदूणं । दसजोयणवित्थारे गंगाकुंडम्मि[६] णिवसदे गंगा ॥ २१६[७]
पणुवीसजोयणाइं धारापमुहम्मि होदि विक्खंभो । सग्गायणिकत्तारो एवं णियमा परूवेदि ॥ २१७[८]

२५ । पाठान्तरम् ।

जोयणसट्ठीरुंदं समवट्टं अत्थि तत्थ वरकुंडं । दसजोयणउच्छेहं मणिमयसोवाणसोहिल्लं ॥ २१८

६० । १० ।

पांचसौ तेईस योजन और आठसे गुणित (उन्नीस) अर्थात् एकसौ बावनमेंसे उनतीस भागप्रमाण दक्षिणसे आकर गंगा नदी पर्वतके तटपर स्थित जिह्विकाको प्राप्त होती है ॥ २१२ ॥

$$१०५२\frac{१३}{२६}-६\frac{१}{२}=५२३\frac{२९}{१९}।$$

हिमवान् पर्वतके अन्तमें वृषभाकार मणिमय उत्तम कूटके मुखमें प्रवेशकर चन्द्रमाके समान धवल और दश योजन विस्तारवाली गंगाकी धारा नीचे गिरती है ॥ २१३ ॥

उस प्रणालीका विस्तार छह योजन और एक कोस, लंबाई दो कोस, और बाहल्य भी इतना ही अर्थात् दो कोस है ॥२१४॥ विष्कंभ यो. ६ को. १, आयाम को. २, बाहल्य को. २।

वह कूटमुख सींग, मुख, कान, जिह्वा, लोचन और भ्रुकुटी आदिकसे गौके सदृश है, इसीलिये उस रत्नमय जिह्विका (जृम्भिका) को 'वृषभ' कहते हैं ॥ २१५ ॥

वहांपर गंगानदी पच्चीस योजन हिमवान् पर्वतको छोड़कर दश योजन विस्तारवाले गंगा-कुण्डमें गिरती है ॥ २१६ ॥

धाराके प्रमुखमें गंगा नदीका विस्तार पच्चीस योजन है। सग्गायणीके कर्ता इसप्रकार नियमसे निरूपण करते हैं ॥ २१७ ॥ २५ । पाठान्तर ।

वहांपर साठ योजन विस्तारवाला, समवृत्त, दश योजन ऊंचा और मणिमय सीढ़ियोंसे शोभायमान उत्तम कुण्ड है ॥ २१८ ॥ ६० । १० ।

१ द ब अट्ठहिदा. २ द ब $\frac{२९}{१९}$ । ३ ब तत्तियमेत्तं. ४ द ब °भूदाओएहि गासरिसो. ५ द पणवीस. ६ द ब गंगाकूडम्मि. ७ ब-पुस्तके द्विरुक्ता. ८ द °सव्वाणिकत्ताणयवंण्णियमा, ब सव्वाणिकत्ताणय एवं णियमा.

बासट्ठि जोयणाइं दो कोसा होदि कुंडविस्थारो । संगोयणिकत्तारो एवं णियमा णिरूवेदि ॥ २१९

६२ । को २ । पाठान्तरम् ।

चउतोरणवेदिजुदो सो कुंडो तत्थ होदि बहुमज्झे । दीवो रयणविचित्तो चउतोरणवेदियाहि कयसोहो ॥ २२०

दसजोयणउच्छेहो सो जलमज्झम्मि अट्ठविस्थारो । जलउवरिं दो कोसो तम्मज्झे होदि वज्जमयसेलो ॥ २२१

१० । कोस २ ।

मूले मज्झे उवरिं चउदुगएक्का कमेण विक्खिण्णो । दसजोयणउच्छेहो चउतोरणवेदियाहि कयसोहो ॥ २२२

तप्पव्वदस्स उवरिं बहुमज्झे होदि दिव्वपासादो । वररयणकंचणमओ गंगाकूडं ति णामेण ॥ २२३

चउतोरणेहिं जुत्तो वरवेदीपरिगदो[1] विचित्तयरो । बहुविहजंतसहस्सो सो पासादो णिरुवमाणो ॥ २२४

मूले मज्झे उवरिं तिदुगेक्कसहस्सदंडवित्थारो । दोण्णिसहस्सोत्तुंगो सो दीसदि कूडसंकासो ॥ २२५

३००० । २००० । १००० । २००० ।

तस्सब्भंतररुंदो पण्णासब्भहियसत्तसयदंडा । चालीसचावबासं असीदिउदयं च तद्दारं ॥ २२६

७५० । ४० । ८० ।

मणितोरणरमणिज्जं वरवज्जकवाडजुगलसोहिल्लं । णाणाविहरयणपहाणिच्चुज्जोयं विराजदे दारं ॥ २२७

उस कुण्डका विस्तार बासठ योजन और दो कोस है, संगोयनीके कर्ता इसप्रकार नियमसे निरूपण करते हैं ॥ २१९ ॥ ६२ । को. २ । पाठान्तर ।

वह कुण्ड चार तोरण और वेदिकासे युक्त है । उसके बहुमध्यभागमें रत्नोंसे विचित्र और चार तोरण एवं वेदिकासे शोभायमान एक द्वीप है ॥ २२० ॥

वह द्वीप जलके मध्यमें दश योजन ऊंचा और आठ योजन विस्तारवाला तथा जलके ऊपर दो कोस ऊंचा है । इसके बीचमें एक वज्रमय शैल स्थित है ॥२२१॥ यो. १० । कोस २ ।

उसका विस्तार मूलमें चार योजन, मध्यमें दो योजन, और ऊपर एक योजन है । वह दश योजन ऊंचा और चार तोरण एवं वेदिकासे शोभायमान है ॥ २२२ ॥

उस पर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमें उत्तम रत्न एवं सुवर्णसे निर्मित और गंगाकूट इस नामसे प्रसिद्ध एक दिव्य प्रासाद है ॥ २२३ ॥

वह प्रासाद चार तोरणोंसे युक्त, उत्तम वेदीसे वेष्टित, अति विचित्र, बहुत प्रकारके हजारों यंत्रोंसे सहित, और अनुपम है ॥ २२४ ॥

वह प्रासाद मूलमें तीन हजार, मध्यमें दो हजार, और ऊपर एक हजार धनुषप्रमाण विस्तारयुक्त, तथा दो हजार धनुषप्रमाण ऊंचा होता हुआ कूटके सदृश दिखता है ॥ २२५ ॥

मूलवि. ३०००, मध्यवि. २०००, उपरिमवि. १०००, उत्सेध २००० धनुष ।

उसका अभ्यन्तर विस्तार सातसौ पचास धनुष, तथा द्वार चालीस धनुष विस्तारवाला और अस्सी धनुष ऊंचा है ॥ २२६ ॥ अभ्यं. वि. ७५०, द्वारवि. ४०, उत्सेध ८० धनुष ।

उसका द्वार मणिमय तोरणोंसे रमणीय, उत्तम वज्रमय दोनों कपाटोंसे शोभायमान, और नाना प्रकारके रत्नोंकी प्रभासे नित्य प्रकाशमान होता हुआ विराजमान है ॥ २२७ ॥

१ द ब परिमदो. २ द ब तिदुमेक्क

वरवेदीपरिखित्ते चउगोउरमंदिरम्मि[1] पासादे । रम्मुज्जाणे तस्सिं गंगादेवी सयं वसइ ॥ २२८
भवणोवरि कूडम्मि य जिणिंदपडिमाओ[2] सासदरिधीओ[3] । चेट्ठंति किरणमंडलउज्जोइदसयलआसाओ[4] ॥ २२९
आदिजिणप्पडिमाओ ताओ जडमउडसेहरिल्लाओ[5] । पडिमोवरिम्मि गंगा अभिसित्तुमणा[6] व सा पडदि ॥ २३०
पुप्फिदपंकजपीढा कमलोदरसरिसवण्णवरदेहा । पढमजिणप्पडिमाओ [7]भरंति जे ताण देंति णिव्वाणं ॥ २३१
कुंडस्स दक्खिणेणं तोरणदारेण णिग्गदा गंगा । भूमिविभागे वक्का होदूण गदा य रजदगिरिं ॥ २३२
रम्मायारा[8] गंगा संकुलिदूणं पि दूरदो एसा । विजयड्ढगिरिगुहाए [10]पविसदि मेदिणिबिले भुजंगी व[11] ॥ २३३
गंगातरंगिणीए उभयत्तडवेदियाण[12] वणसंडा । अत्तुट्टसरूवेणं संपत्ता[13] रजदसेलंतं ॥ २३४
वरवज्जकवाडाणं संवरणपवेसणाइं मुत्तूणं । सेसगुहब्भंतरयं गंगातडवेदिवणसंडा ॥ २३५
रुप्पगिरिस्स गुहाए गमणपदेसम्मि होदि वित्थारो । गंगातरंगिणीए अट्ठं चिय जोयणाणि पुढं ॥ २३६

उत्तम वेदीसे वेष्टित, चार गोपुर एवं मन्दिरसे सुशोभित और रमणीय उद्यानसे युक्त उस भवनमें स्वयं गंगादेवी रहती है ॥ २२८ ॥

उस भवनके ऊपर कूटपर किरणसमूहसे सम्पूर्ण दिशाओंको प्रकाशित करनेवाली, और शाश्वत ऋद्धिको प्राप्त, ऐसी जिनेन्द्रप्रतिमायें स्थित हैं ॥ २२९ ॥

वे आदि जिनेन्द्रकी प्रतिमायें जटामुकुटरूप शेखरसे सहित हैं। इन प्रतिमाओंके ऊपर वह गंगा नदी मानों मनमें अभिषेककी भावनाको रखकर ही गिरती है ॥ २३० ॥

वे आदि जिनेन्द्रकी प्रतिमायें फूले हुए कमलासनपर विराजमान और कमलके उदर अर्थात् मध्यभागके सदृश वर्णवाले उत्तम शरीरसे युक्त हैं। जो भव्य जीव इनका स्मरण करते हैं उन्हें ये निर्वाण प्रदान करती हैं ॥ २३१ ॥

गंगानदी इस कुण्डके दक्षिण तोरणद्वारसे निकलकर भूमिप्रदेशमें मुड़ती हुई रजतगिरि अर्थात् विजयार्द्ध पर्वतको प्राप्त हुई है ॥ २३२ ॥

यह रम्याकार गंगा नदी दूरसे ही संकुचित होकर विजयार्द्ध पर्वतकी गुफामें इसप्रकार प्रवेश करती है जैसे भुजंगी मेदिनीबिलमें ॥ २३३ ॥

गंगा नदीकी दोनों ही तटवेदियोंपर स्थित वनखंड अत्रुटितरूपसे विजयार्द्ध पर्वत तक चले गये हैं ॥ २३४ ॥

गंगातटवेदीसंबंधी ये वनखंड उत्तम वज्रमय कपाटोंके संवरण और प्रवेशभागको छोड़कर शेष गुफाके भीतर हैं ॥ २३५ ॥

रूपाचलकी गुफामें प्रवेश करनेके स्थानपर गंगा नदीका विस्तार आठ योजनप्रमाण होजाता है ॥ २३६ ॥

---

१ द मंदरम्मि. २ द ब °पडिमादि. ३ द सासदरदीओ, ब सासदरदीउ. ४ द सयलयसओ, ब सयलदिसओ. ५ द ब तोउक्खदमउडपासेहरिल्लाओ. ६ द अभिसित्तुमणप्पसा, ब अभिसत्तूमणप्पसा. ७ द ब पुव्विद°. ८ द सरंति. ९ द ब रम्मायाए. १० द ब परिसदि. ११ द ब मेदाभिलेभुजंगिहं. १२ द ब उभयंतर°. १३ द ब संपत्तं.

विजयद्धगिरिगुहाए[1] संगंतूणं जोयणाणि पणुवीसं । पुव्वावरायदाओ[2] उम्मग्गणिमग्गसरिआओ ॥ २३७
णियजलपवाहपडिदं दव्वं गरुवं पि णेदि उवरिम्मि । जम्हा तम्हा भण्णइ उम्मग्गा वाहिणी एसा ॥ २३८
णियजलभरउवरिगदं दव्वं लहुगं पि णेदि हेट्ठम्मि । जेणं तेणं भण्णइ एसा सरिया णिमग्ग त्ति ॥ २३९
सेलगुहाकुंडाणं मणितोरणदार णिस्सरंतीओ । वेड्डूरयणविणिम्मियसंकमपहुदीय विच्छिण्णा[3] ॥ २४०
वणवेदीपरिखित्ता पत्तेक्कं दोण्णि जोयणायामा । वररयणमया गंगाणइस्स पवहम्मि पविसंति ॥ २४१
पण्णासजोयणाइं अधियं गंतूण पव्वयगुहाए । दक्खिणदिसदारेणं खुभिदा भोगीव णिग्गदा गंगा ॥ २४२
णिस्सरिदूणं एसा दक्खिणभरहम्मि रुप्पसेलादो[4] । उणवीसं सहियसयं आगच्छदि जोयणा अधिया ॥ २४३

११९ । ३ ।
१९

आगंतूण णियंते[5] पुव्वमुहीं[6] मागधम्मि तित्थयरे । चोद्दससहस्ससरियापरिवारा पविसदे उवहिं[7] ॥ २४४
गंगामहाणदीए अड्ढाइज्जेसु मेच्छखंडेसु । कुंडजसरिपरिवारा हुवंति ण हु वज्जखंडम्मि ॥ २४५

विजयार्द्ध पर्वतकी गुफामें पच्चीस योजन जानेपर उन्मग्ना और निमग्ना ये दो नदियां पूर्व-पश्चिमसे आई हुई हैं ॥ २३७ ॥

क्योंकि यह नदी अपने जलप्रवाहमें गिरे हुए भारीसे भारी द्रव्यको भी ऊपर ले आती है, इसलिये यह नदी 'उन्मग्ना' कही जाती है ॥ २३८ ॥

क्योंकि यह अपने जलप्रवाहके ऊपर आयी हुई हलकीसे हलकी वस्तुको भी नीचे ले जाती है, इसीलिये यह नदी 'निमग्ना' कही जाती है ॥ २३९ ॥

ये दोनों नदियां पर्वतीय गुफाकुंडोंके मणिमय तोरणद्वारोंसे निकलकर बढ़ई (स्थपति) रत्नसे निर्मित संक्रम (एक प्रकारके पुल) आदिसे विभक्त, वनवेदीसे वेष्टित, प्रत्येक दो योजनप्रमाण आयामसे सहित, और उत्कृष्ट रत्नमय होती हुई गंगा नदीके प्रवाहमें प्रवेश करती हैं ॥ २४०–२४१ ॥

गंगा नदी पचास योजन अधिक जाकर पर्वतकी गुफाके दक्षिणद्वारसे क्रोधित हुए सर्पके समान निकली है ॥ २४२ ॥

यह नदी विजयार्द्ध पर्वतसे निकलकर एकसौ उन्नीस योजनोंसे कुछ अधिक दक्षिण भरतमें आती है ॥ २४३ ॥ ११९$\frac{3}{19}$ ।

इसप्रकार गंगा नदी दक्षिण भरतमें आकर और पूर्वकी ओर मुड़कर चौदह हजारप्रमाण परिवारनदियोंसे युक्त होती हुई अन्ततः मागध तीर्थपर समुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २४४ ॥

गंगा महानदीकी ये कुण्डोंसे उत्पन्न हुई परिवारनदियां ढाई म्लेच्छखण्डोंमें ही हैं, आर्यखण्डमें नहीं हैं ॥ २४५ ॥

१ द गुहाइं गंतूणं. २ ब पुव्वावरा णदाओ. ३ द वत्थ (च्छ) इ. ४ द ब विथिण्णा. ५ द ब वंदसेलादो. ६ द ब णियंतो. ७ द ब पुव्वमही. ८ द उवरिं.

बासट्ठि जोयणाइं दोण्णि य कोसाणि वित्थरा गंगा । पण कोसा गाढत्तं[1] उवहिपवेसप्पवेसम्मि ॥ २४६
दीवजगदीय पासे णइबिलवेदीणम्मि तोरणं दिव्वं । विविहवररयणखचिदं खंभट्ठियसालभंजियाणिवहं ॥ २४७
थंभाणं उच्छेहो तेणउदी जोयणाणि तिय कोसा । एदाण अंतरालं बासट्ठी जोयणा दुवे कोसा[2] ॥ २४८
९३ । को ३ । ६२ । को २ ।
छत्तत्तयादिसहिदा जिणिंदपडिमा य तोरणुवरिम्मि । चेट्ठंति सासदाओ[3] सुमरणमेत्तेण दुरिदहणा ॥ २४९
वरतोरणस्स उवरिं पासादा होंति रयणकणयमया । चउतोरणवेदिजुदा[4] वज्जकवाडुज्जलदुवारा ॥ २५०
एदेसु मंदिरेसुं देवीओ दिक्कुमारिणामाओ । णाणाविहपरिवारा वेंतरियाओ विरायंति ॥ २५१
पउमदहादो पच्छिमदारेणं णिस्सरेदि सिंधुणदी । तट्टाणच्छासादी[5] तोरणपहुदी य सुरणदीसरिसा ॥ २५२
गंतूण थोवभूमिं सिंधूमज्झम्मि होदि वरकूडो । वियसियकमलायारो रम्मो वेरुलियणालजुदो ॥ २५३
तस्स दलाँ अइरत्तां दीहजुदा होंति कोसदलमेत्तं । उच्छेहो सलिलादो उवरिंपएसम्मि इगिकोसो ॥ २५४

उदधिप्रदेशमें प्रवेश करते समय गंगाका विस्तार बासठ योजन दो कोस, और गहराई पांच कोस हो गई है ॥ २४६ ॥

द्वीपकी वेदीके पास नदीबिलके मुखपर अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम रत्नोंसे खचित और खम्भोंपर स्थित पुत्तलिकासमूहसे युक्त दिव्य तोरण है ॥ २४७ ॥

स्तम्भोंकी उंचाई तेरानबे योजन और तीन कोस, तथा इनका अन्तराल बासठ योजन और दो कोस है ॥ २४८ ॥ उंचाई यो. ९३ को. ३, अंतराल यो. ६२ को. २ ।

तोरणोंके ऊपर तीन छत्रादिसे सहित, शाश्वत और स्मरणमात्रसे ही पापको नष्ट करनेवाली, ऐसी जिनेन्द्रप्रतिमायें स्थित हैं ॥ २४९ ॥

उत्कृष्ट तोरणके ऊपर चार तोरण और वेदीसे युक्त तथा वज्रमय कपाटोंसे उज्वल द्वारवाले रत्न एवं सुवर्णमय भवन हैं ॥ २५० ॥

इन भवनोंमें नानाप्रकारके परिवारसे युक्त दिक्कुमारी नामक व्यन्तरिणी देवियां विराजमान हैं ॥ २५१ ॥

पद्म द्रहके पश्चिमद्वारसे सिन्धु नदी निकलती है । इसके स्थानके विस्तार आदिक और तोरणादिका कथन गंगा नदीके सदृश है ॥ २५२ ॥

कुछ थोड़ी दूर चलकर सिन्धु नदीके बीचमें विकसित कमलके आकार, रमणीय और वैडूर्यमणिमय नालसे युक्त एक उत्तम कूट है ॥ २५३ ॥

उसके पत्ते अत्यंत लाल और आधे कोसप्रमाण लम्बाईसे युक्त हैं । जलके उपरिम भागमें इसकी उंचाई एक कोस है ॥ २५४ ॥

---

१ द आगाढत्तं. २ ब णइविदवद°. ३ द दुरेकोसो, ब पुरेकोसो. ४ द ब सासमाओ. ५ द ब चौतोरण°. ६ द °दहादु. ७ द ब तट्ठाणच्छासरादी. ८ द ब पहुदी सुरणदिसरिच्छा, ९ द ब तला. १० ब अइरित्ता.

बे कोसा वित्थिण्णो [1]तेत्तियमेत्तोदएण संपुण्णो । वियसंतपउमकुसुमोवमाणसंठाणसोहिल्लो ॥ २५५
इगिकोसोदयरुंदो [2]रयणमई कण्णिया य अदिरम्मो [3] । तीए उवरि विचित्तो पासादो होदि रमणिज्जो ॥ २५६
वररयणकंचणमओ फुरंतकिरणो पणासिअतमोहो [4] । सो उत्तुंगतोरणदुवारसुंदरसुट्ठसोहिल्लो [5] ॥ २५७
तस्सिं णिलए णिवसइ अवणा णामेण वेंतरा देवी । एक्कपलिदोवमाऊ णिरुवमलावण्णपरिपुण्णा ॥ २५८
पउमदहादो पणुसयमेत्ताइं जोयणाइं गंतूणं । सिंधूकूडमपत्ता दुकोसमेत्तेण दक्खिणावलिदा ॥ २५९
उभयतडवेदिसहिदा उववणसंडेहिं सुट्ठु सोहिल्ला । गंग व्व पडइ सिंधू जिब्भादो सिंधुकूडउवरिम्मि ॥ २६०
कुंडं दीवो सेलो भवणं भवणस्स उवरिमं कूडं । तस्सिं जिणपडिमाओ सव्वं पुव्वं व वत्तव्वं ॥ २६१
णवरि विसेसो एसो सिंधूकूडम्मि सिंधुदेवि त्ति । बहुपरिवारेहिं जुदा उवभुंजदि विविहसोक्खाणिं [6] ॥ २६२
गंगाणई व सिंधू विजयड्ढगुहाय उत्तरदुवारे । पविसिय वेदीजुत्ता दक्खिणदारेण णिस्सरदि ॥ २६३
दक्खिणभरहस्सद्धं पाविय पच्छिमपभासतित्थम्मि । चोद्दससहस्ससरियापरिवारा पविसए उवहिं ॥ २६४

उपर्युक्त कमलाकार कूट दो कोस विस्तीर्ण और इतनी ही उंचाईसे परिपूर्ण एवं विकसित कमलपुष्पके सदृश आकारसे शोभायमान है ॥ २५५ ॥

उसकी एक कोस ऊंची और उतनी ही विस्तृत रमणीय रत्नमयी कर्णिका है। इस कर्णिकाके ऊपर रमणीय विचित्र प्रासाद है ॥ २५६ ॥

यह भवन उत्तम रत्न और सुवर्णसे निर्मित, प्रकाशमान किरणोंसे युक्त, अंधकारसमूहको नष्ट करनेवाला और उन्नत तोरणद्वारोंके सौन्दर्यसे भलेप्रकार शोभायमान है ॥ २५७ ॥

उस भवनमें एक पल्योपम आयुवाली और अनुपम लावण्यसे परिपूर्ण अवना (लवणा) नामकी व्यन्तर देवी रहती है ॥ २५८ ॥

पद्म द्रहसे पांचसौ योजनमात्र आगे चलकर और सिन्धुकूटको प्राप्त न होकर उससे दो कोस पहिले ही दक्षिणकी ओर मुड़ती हुई दोनों तटोंपर स्थित वेदिकासे सहित और उपवनखंडोंसे भलेप्रकार शोभायमान सिन्धु नदी भी गंगा नदीके समान ही जिह्विकासे सिन्धुकूटके ऊपर गिरती है ॥ २५९-२६० ॥

कुण्ड, द्वीप, पर्वत, भवन, भवनके ऊपर कूट और उसके ऊपर जिनप्रतिमायें, इन सबका पहिलेके समान ही कथन करना चाहिये ॥ २६१ ॥

विशेषता केवल यह है कि सिन्धुकूटपर बहुत परिवारसे युक्त सिन्धुदेवी विविधप्रकारके सुखोंका उपभोग करती है ॥ २६२ ॥

गंगा नदीके समान सिन्धु नदी भी विजयार्द्धकी गुफाके उत्तर द्वारमेंसे प्रवेश करके वेदी-सहित दक्षिण द्वारसे निकलती है ॥ २६३ ॥

पश्चात् दक्षिण भरतके अर्द्ध भागको प्राप्त करके चौदह हजार परिवारनदियोंसे सहित होती हुई पश्चिम प्रभास तीर्थपर समुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २६४ ॥

१ ब तत्तिय°. २ द ब कोसं बे रुंदा. ३ द ब कण्णिया य धीरम्मा. ४ द ब पणासिअंतमो. ५ द ब सुंदार. ६ द ब °सोक्खाणं.

तोरणउच्छेहादी[1] गंगाए वण्णिदा जहा पुव्वं । तस्सेव्वा सिंधूए वत्तव्वा णिउणबुद्धीहिं ॥ २६५
गंगासिंधुणईहिं[2] वेयड्ढगदेण भरहखेत्तम्मि । छक्खंडं संजादं ताण विभागं परूवेमो ॥ २६६
उत्तरदक्खिणभरहे[3] खंडाणि तिण्णि होंति पत्तेक्कं । दक्खिणतियखंडेसुं अज्जाखंडो त्ति मज्झिमम्मो[4] ॥ २६७
सेसा वि पंच खंडा णामेणं होंति मेच्छखंड त्ति[5] । उत्तरतियखंडेसुं मज्झिमखंडस्स बहुमज्झे ॥ २६८
चक्कीण माणमलणो णाणाचक्कहरणामसंछण्णो । मूलोवरिमज्झेसुं रयणमओ होदि वसहगिरी ॥ २६९
जोयणसयमुव्विद्धो पणुवीसं जोयणाणि अवगाढो । एक्कसयमूलरुंदो पण्णत्तरि मज्झविस्थारो ॥ २७०
१०० । २५ । १०० । ७५ ।
पण्णासजोयणाइं विस्थारो होदि तस्स सिहरम्मि । मूलोवरिमज्झेसुं चेट्ठंते वेदिवणसंडा ॥ २७१
चउतोरणेहिं जुत्ता[6] पोक्खरिणीवाविकूवपरिपुण्णा । वज्जिंदणीलमरगयकक्केयणपउमरायमया ॥ २७२
होंति हु वरपासादा विचित्तविण्णासमणहरायारा । दिप्पंतरयणदीवा वसहगिरिंदस्स सिहरम्मि ॥ २७३
वररयणकंचणमया जिणभवणा विविहसुंदरायारा । चेट्ठंति वण्णणाओ पुव्वं पि व होंति सव्वाओ ॥ २७४

जिसप्रकार पहिले गंगा नदीके वर्णनमें तोरणोंकी उंचाई आदिक बतलाई जाचुकी है, उसीप्रकार बुद्धिमानोंको उन सबका कथन यहांपर भी करना चाहिये ॥ २६५ ॥

गंगा व सिन्धु नदी और विजयार्द्ध पर्वतसे भरत क्षेत्रके जो छह खण्ड होगये हैं, उनके विभागको कहते हैं ॥ २६६ ॥

उत्तर और दक्षिण भरत क्षेत्रमेंसे प्रत्येकके तीन तीन खण्ड हैं। इनमेंसे दक्षिण भरतके तीन खण्डोंमेंसे मध्यका आर्यखण्ड है ॥ २६७ ॥

शेष पांचों ही खण्ड म्लेच्छखण्ड नामसे प्रसिद्ध हैं। उत्तर भरतके तीन खण्डोंमेंसे मध्यम खण्डके बहुमध्यभागमें चक्रवर्तियोंके मानका मर्दन करनेवाला, नाना चक्रवर्तियोंके नामोंसे व्याप्त; और मूलमें, ऊपर एवं मध्यमें रत्नोंसे निर्मित; ऐसा वृषभगिरि है ॥ २६८--२६९ ॥

यह पर्वत सौ योजन ऊंचा, पच्चीस योजनप्रमाण नीवसे युक्त, मूलमें सौ योजन और मध्यमें पचहत्तर योजन विस्तारवाला है ॥२७०॥ उं. १००, अव. २५, मू. वि. १००, म. वि. ७५।

उक्त पर्वतका विस्तार शिखरपर पचास योजनमात्र है। इसके मूलमें, ऊपर और मध्यमें वेदी और वनखंड स्थित हैं ॥ २७१ ॥ ५० ।

वृषभ गिरीन्द्रके शिखरपर चार तोरणोंसे सहित, पुष्करिणी, और कूपोंसे परिपूर्ण; वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्केतन और पद्मराग, इन मणिविशेषोंसे निर्मित; विचित्र रचनाओंसे मनोहर आकृतिको धारण करनेवाले, और देदीप्यमान रत्नोंके दीपकोंसे संयुक्त, ऐसे उत्तम भवन हैं ॥ २७२–२७३ ॥

वहांपर उत्तम रत्न एवं सुवर्णसे निर्मित विविध प्रकारके सुन्दर आकारोंवाले जिनभवन स्थित हैं। इनका सब वर्णन पहिलेके ही समान है ॥ २७४ ॥

---

१ द उत्तेहादी. २ द ब तस्सव्वं. ३ द ब °णईण. ४ द °णगे भरह°. ५ द ब भरहो. ६ द ब मज्झिदा. ७ द मेच्छखंडम्मि. ८ द ब जुत्तो. ९ द पोक्खरणी°.

गिरिउवरिमपासादे वसहो णामेण वंतरो देवो । विविहपरिवारसहिदो उवभुंजदि विविहसोक्खाइं ॥ २७५
एक्कपलिदोवमाऊ दसचावसमाणदेहउच्छेहो । पिहुवच्छो[1] दीहभुजो[2] एसो सव्वंगसोहिल्लो ॥ २७६
। छक्खंडं गदं ।
तस्सिं अज्जाखंडे णाणाभेदेहिं संजुदो कालो । वट्टइ तस्स सरूवं वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ २७७
पासरसगंधवण्णव्वदिरित्तो अगुरुल्लहुगसंजुत्तो । वत्तणलक्खणकलियं कालसरूवं इमं होदि ॥ २७८
कालस्स दो वियप्पा मुक्खामुक्खा हुवंति एदेसुं । मुक्खाधारबलेणं अमुक्खकालो पयट्टेदि ॥ २७९
जीवाण पुग्गलाणं हुवंति परियट्टणाइ विविहाइं । एदाणं पज्जाया वट्टंते मुक्खकालआधारे ॥ २८०
सव्वाण पयत्थाणं णियमा परिणामपहुदिवित्तीओ । बहिरंतरंगहेदुहि सव्वब्भेदेसु वट्टंति ॥ २८१
बाहिरहेदू कहिदो णिच्छयकालो त्ति सव्वदरिसीहिं । अब्भंतरं णिमित्तं णियणियदव्वेसु चेट्ठेदि ॥ २८२
कालस्स भिण्णभिण्णा अणुण्णएवेमणेण परिहीणा । पुह पुह लोयायासे चेट्ठंते संचएण विणा ॥ २८३

पर्वतके उपरिम भवनमें विविध प्रकारके परिवारसे सहित और वृषभ इस नामसे प्रसिद्ध व्यन्तर देव अनेक प्रकारके सुखोंका उपभोग करता है ॥ २७५ ॥

यह देव एक पल्योपम आयुसे युक्त, दश धनुषप्रमाण शरीरकी उंचाईवाला, विस्तृतवक्षःस्थल, दीर्घबाहु, और सर्वांगसुन्दर है ॥ २७६ ॥

छह खण्डोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

उस आर्यखण्डमें नाना भेदोंसे संयुक्त जो काल प्रवर्तता है, उसके स्वरूपको अनुक्रमसे कहते हैं ॥ २७७ ॥

स्पर्श, रस, गन्ध और वर्णसे रहित, अगुरुलघु गुणसे सहित, और वर्त्तनालक्षणसे संयुक्त, यह कालका स्वरूप है ॥ २७८ ॥

उस कालके मुख्य और अमुख्य इसप्रकार दो भेद हैं । इनमेंसे मुख्य कालके आश्रयसे अमुख्य कालकी प्रवृत्ति होती है ॥ २७९ ॥

जीव और पुद्गलोंमें विविध प्रकारके परिवर्त्तन हुआ करते हैं । इनकी पर्यायें मुख्य कालके आश्रयसे प्रवर्तती हैं ॥ २८० ॥

सर्व पदार्थोंके समस्त भेदोंमें नियमसे बाह्य और अभ्यन्तर निमित्तोंके द्वारा परिणामादिक (परिणाम, क्रिया, परत्वापरत्व) वृत्तियां प्रवर्तती हैं ॥ २८१ ॥

सर्वज्ञ देवने सर्व पदार्थोंके प्रवर्तनेका बाह्य निमित्त निश्चयकाल कहा है । अभ्यन्तर निमित्त अपने अपने द्रव्योंमें स्थित है ॥ २८२ ॥

अन्योन्यप्रवेशसे रहित कालके भिन्न भिन्न अणु संचयके विना पृथक् पृथक् लोकाकाशमें स्थित हैं ॥ २८३ ॥

---

१ द ब वधुवंछो, क बहुवंछो. २ द ब दिहभुंजो. ३ द ब वण्णोवदि°.

समयावलिउस्सासा पाणा थोवा य आदिया भेदा[1] । ववहारकालणामा णिद्दिट्ठा वीयरागेहिं ॥ २८४
परमाणुस्स णियट्टिदगयणपदेसस्सदिक्कमणमेत्तो[2] । जो कालो अविभागी होदि पुढं समयणामा सो ॥ २८५
होंति हु असंखसमया आवलिणामो तहेव उस्सासो । संखेज्जावलिणिवहो सो चिय पाणो[3] त्ति विक्खादो ॥ २८६

१ । १ । १ ।
२ ६

सत्तुस्सासो थोवं सत्तत्थोवा लवित्ति[4] णादव्वो । सत्ततरिदलिदलवो णाली बे णालिया मुहुत्तं च ॥ २८७

७ । ७ । ७७ । २ ।[5]
१ १ २

समऊणेक्कमुहुत्तं भिण्णमुहुत्तं मुहुत्तया तीसं । दिवसो पण्णरसेहिं दिवसेहिं एक्कपक्खो[6] हु ॥ २८८
दो पक्खेहिं मासो मासदुगेणं उडू उडुत्तिदयं । अयणं अयणदुगेणं वरिसो पंचेहिं वच्छरेहिं जुगं ॥ २८९
माघादी होंति उडू सिसिरवसंता णिदाघपाउसया । सरओ हेमंता वि य णामाइं ताण जाणिज्जं ॥ २९०
बेण्णि जुगा दस वरिसा ते दसगुणिदा हवेदि वाससदं । एदेस्सिं दसगुणिदे वाससहस्सं वियाणेहि ॥ २९१

समय, आवलि, उच्छ्वास, प्राण और स्तोक, इत्यादिक भेदोंको वीतराग भगवानने व्यवहार कालके नामसे निर्दिष्ट किया है ॥ २८४ ॥

पुद्गलपरमाणुका निकटमें स्थित आकाशप्रदेशके अतिक्रमणप्रमाण जो अविभागी काल है वही 'समय' नामसे प्रसिद्ध है ॥ २८५ ॥

असंख्यात समयोंकी आवलि और इसीप्रकार संख्यात आवलियोंके समूहरूप उच्छ्वास होता है। यही उच्छ्वासकाल 'प्राण' इस नामसे प्रसिद्ध है ॥ २८६ ॥

सात उच्छ्वासोंका एक स्तोक, और सात स्तोकोंका एक लव जानना चाहिये। सतत्तरके आधे अर्थात् साढ़े अड़तीस लवोंकी एक नाली और दो नालियोंका एक मुहूर्त होता है ॥ २८७ ॥

७ उ. = १ स्तोक। ७ स्तोक = १ लव। ३८½ लव = १ नाली। २ नाली = १ मुहूर्त।

समय कम एक मुहूर्तको भिन्नमुहूर्त कहते हैं। तीस मुहूर्तका एक दिन और पन्द्रह दिनोंका एक पक्ष होता है ॥ २८८ ॥

दो पक्षोंका एक मास, दो मासोंकी एक ऋतु, तीन ऋतुओंका एक अयन, दो अयनोंका वर्ष, और पांच वर्षोंका एक युग होता है ॥ २८९ ॥

माघ मासमें लेकर जो ऋतुएँ होती हैं उनके नाम शिशिर, वसन्त, निदाघ (ग्रीष्म), प्रावृष (वर्षा), शरद और हेमन्त, इसप्रकार जानना चाहिये ॥ २९० ॥

दो युगोंके दश वर्ष होते हैं; इन दश वर्षोंको दशसे गुणा करनेपर शतवर्ष, और शतवर्षको दशसे गुणा करनेपर सहस्रवर्ष जानना चाहिये ॥ २९१ ॥

---

१ ब भेदो. २ द ब कमेणंतो. ३ द ब पंणो. ४ द थोवायआवलित्ति, ब थोवायलित्ति. ५ द ब लया. ६ द ब १ । ७ । ७७ । १ । ७ १ २. ७ द ब एकपक्खा. ८ ब एदेस्सिं.

दस वाससहस्साणिं वाससहस्सम्मि दसहदे होंति । तेहिं दसगुणिदेहिं लक्खं णामेण णादव्वं ॥ २९२
चुलसीदिहदं लक्खं पुव्वंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं णादव्वं पुव्वपरिमाणं ॥ २९३
पुव्वं चउसीदिहदं णिउदंगं[1] होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं णिउदस्स पमाणमुद्दिट्ठं ॥ २९४
णिउदं चउसीदिहदं कुमुदंगं होदि तं पि णादव्वं । चउसीदिलक्खगुणिदं[2] कुमुदं णामं समुद्दिट्ठं ॥ २९५
कुमुदं चउसीदिहदं पउमंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदिलक्खवासे[3] पउमं णामं समुद्दिट्ठं ॥ २९६
पउमं चउसीदिहदं णलिणंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदिलक्खवासे णलिणं णामं वियाणाहि ॥ २९७
णलिणं चउसीदिगुणं कमलंगं णाम तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं कमलं णामेण णिद्दिट्ठं ॥ २९८
कमलं चउसीदिगुणं तुडिदंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं तुडिदं णामेण णादव्वं ॥ २९९
तुडिदं चउसीदिहदं अडडंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं अडडं णामेण णिद्दिट्ठं ॥ ३००

.....

सहस्रवर्षको दशसे गुणा करनेपर दश सहस्रवर्ष, और इनको भी दशसे गुणा करनेपर लक्षवर्ष जानना चाहिये ॥ २९२ ॥

लक्षवर्षको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'पूर्वाङ्ग', और इस पूर्वाङ्गको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर एक 'पूर्व' का प्रमाण समझना चाहिये ॥ २९३ ॥

पूर्वको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'नियुतांग' होता है, और इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर एक 'नियुत' का प्रमाण कहा गया है ॥ २९४ ॥

चौरासीसे गुणित नियुतप्रमाण एक 'कुमुदांग' होता है । इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'कुमुद' नाम कहा गया जानना चाहिये ॥ २९५ ॥

चौरासीसे गुणित कुमुदप्रमाण एक 'पद्मांग' होता है । इसको चौरासी लाख वर्षोंसे गुणा करनेपर 'पद्म' नाम कहा गया है ॥ २९६ ॥

चौरासीसे गुणित पद्मप्रमाण एक 'नलिनांग' होता है । इसको चौरासी लाख वर्षोंसे गुणा करनेपर 'नलिन' यह नाम जानना चाहिये ॥ २९७ ॥

चौरासीसे गुणित नलिनप्रमाण एक 'कमलांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'कमल' इस नामसे कहा गया है ॥ २९८ ॥

कमलसे चौरासीगुणा 'त्रुटितांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'त्रुटित' नाम समझना चाहिये ॥ २९९ ॥

चौरासीसे गुणित त्रुटितप्रमाण एक 'अटटांग' होता है । इसके चौरासी लाखसे गुणित होनेपर 'अटट' इस नामसे कहा गया है ॥ ३०० ॥

.....

१ द पुव्वंगं, ब णिवदंगं. २ द पव्वपमाणं स णादव्वं. ३ द °गुणिदे. ४ द ब °लक्खेहिं.

अडडं चउसीदिगुणं अममंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं अममं णामेण णिद्दिट्ठं ॥ ३०१
अममं चउसीदिगुणं हाहांगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं हाहाणामं समुद्दिट्ठं ॥ ३०२
हाहाचउसीदिगुणं हूहूंगं होदि तं पि गुणिदव्वं । चउसीदीलक्खेहिं हूहूणामस्स परिमाणं ॥ ३०३
हूहूचउसीदिगुणं एक्कलदंगं हुवेदि गुणिदं तं । चउसीदीलक्खेहिं परिमाणमिदं लदाणामे ॥ ३०४
चउसीदिहदलदाए महालदंगं[1] हुवेदि गुणिदं तं । चउसीदीलक्खेहिं महालदाणाममुद्दिट्ठं ॥ ३०५
चउसीदिलक्खगुणिदा महालदादो हुवेदि सिरिकप्पं[2] । चउसीदिलक्खगुणिदं तं हत्थपहेलिदं णाम ॥ ३०६
हत्थपहेलिदणामं गुणिदं चउसीदिलक्खवासेहिं । अचलप्पणाम चेओ[3] कालं कालाणुवेदिणिद्दिट्ठं[4] ॥ ३०७
एक्कत्तीसट्ठाणे चउसीदिं पुह पुह ट्ठवेदूणं । अण्णोण्णहदे लद्धं अचलप्पं होदि णउदिसुण्णंगं ॥ ३०८

८४ । ३१ । ९० ।

एवं एसो[5] कालो संखेज्जो वच्छराण गणणाए । उक्कस्सं संखेज्जं जावं तावं[6] पवत्तेज्जो[7] ॥ ३०९

चौरासीसे गुणित अटटप्रमाण एक 'अममांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'अमम' नामसे निर्दिष्ट किया गया है ॥ ३०१ ॥

चौरासीसे गुणित अममप्रमाण एक 'हाहांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'हाहा' नाम कहा गया है ॥ ३०२ ॥

हाहाको चौरासीसे गुणा करनेपर एक 'हूहांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'हूहू' नामक कालका प्रमाण समझना चाहिये ॥ ३०३ ॥

चौरासीसे गुणित हूहूका एक 'लतांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर यह 'लता' नामक प्रमाण उत्पन्न होता है ॥ ३०४ ॥

चौरासीसे गुणित लताप्रमाण एक 'महालतांग' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'महालता' नाम कहा गया है ॥ ३०५ ॥

चौरासी लाखसे गुणित महालताप्रमाण एक 'श्रीकल्प' होता है। इसको चौरासी लाखसे गुणा करनेपर 'हस्तप्रहेलित' नामक प्रमाण उत्पन्न होता है ॥ ३०६ ॥

चौरासी लाख वर्षोंसे गुणित हस्तप्रहेलितप्रमाण एक 'अचलात्म' नामका काल होता है, ऐसा कालाणुओंके जानकार अर्थात् सर्वज्ञ भगवान्ने निर्दिष्ट किया है ॥ ३०७ ॥

इकतीस स्थानोंमें पृथक् पृथक् चौरासीको रखकर परस्पर गुणा करनेपर 'अचलात्म' का प्रमाण प्राप्त होता है, जो नब्बे शून्यांकरूप है ॥ ३०८ ॥

इसप्रकार यह संख्यात काल वर्षोंकी गणनाद्वारा उत्कृष्ट संख्यात जबतक प्राप्त हो तबतक ले जाना चाहिये ॥ ३०९ ॥

---

१ द ॰लतंगं, ब ॰लतांगं. २ द सिरिकंपं, ब सिरकंपं. ३ द अचलप्पं णामदओ. ४ द कालाउ हवेदि. ५ द ब णिद्दिट्ठा. ६ द णवदी. ७ ब एवं सो. ८ द ब जावलतोवं. ९ ब पवत्तं उ.

वयण—

एत्थ उक्कस्ससंखेज्जयजाणणिमित्तं जंबूदीववित्थारं सहस्सजोयणउव्वेधपमाणचत्तारिखड्डा कादव्वा। सलागा पडिसलागा महासलागा एदे तिण्णि वि अवट्ठिदा चउत्थो अणवट्ठिदो। एदे सव्वे पण्णाए ठविदा। एत्थ चउत्थसरावयअब्भंतरे दुवे सरिसवे खुदे तं जहण्णं संखेज्जयं जादं। एदं पढमवियप्पं। तिण्णि सरिसवे खुद्दे[1] अजहण्णमणुक्कस्ससंखेज्जयं। एवं सरावए[2] पुण्णे[3] एदमुवरि मज्झिमवियप्पं। पुणो भरिदसरावया देओ वा दाणओ वा हत्थे घेत्तूण दीवे समुद्दे एक्केक्कं सरिसवं देउं[4]। सो णिट्ठिदो तक्काले सलायमब्भंतरे एगसरिसओ खुद्दो[5]। जम्हि सलाया समत्ता[6] तम्हि सरावओ वड्ढावेयव्वो[7]। तं भरिदूण हत्थे घेत्तूण दीवे समुद्दे णिट्ठिदव्वा। जम्हि णिट्ठिदं तम्हि सरावयं वड्ढावेयव्वं। सलायसरावए सरिसवे खुद्दे[8] एदा सलायसरावया पुण्णा[9], पडिसलायसरावया पुण्णा[10], महासलायसरावओ पुण्णो[11]। जह दीवसमुद्दे तिण्णि सरावया पुण्णा[12] तस्संखेज्जदीवसमुहवित्थरेण सहस्सजोयणगाढेण (सरावये वड्ढाविदे) सरिसवं भरिदे

वचन—

यहां उत्कृष्ट संख्यातके जाननेके निमित्त जम्बू द्वीपके समान विस्तारवाले (एक लाख योजन) और एक हजार योजनप्रमाण गहरे चार गड्ढे करना चाहिये। इनमें शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका, ये तीन गड्ढे अवस्थित और चौथा अनवस्थित है। ये सब गड्ढे बुद्धिसे स्थापित किये गये हैं। इनमेंसे चौथे कुण्डके भीतर दो सरसोंके डालनेपर वह जघन्य संख्यात होता है। यह संख्यातका प्रथम विकल्प है। तीन सरसोंके डालनेपर अजघन्यानुत्कृष्ट (मध्यम) संख्यात होता है। इसीप्रकार एक एक सरसोंके डालनेपर उस कुण्डके पूर्ण होनेतक यह तीनसे ऊपर सब मध्यम संख्यातके विकल्प होते हैं। पुनः इस सरसोंसे भरे हुए कुण्डमेंसे देव अथवा दानव हाथमें ग्रहण करके क्रमसे द्वीप और समुद्रमें एक एक सरसों देता जाय। इसप्रकार जब वह कुण्ड समाप्त हुआ तब उस समय शलाका कुण्डके भीतर एक सरसों डाला। जहांपर प्रथम कुण्डकी शलाकायें समाप्त हुई हों, उस द्वीप या समुद्रकी सूचीप्रमाण उस अनवस्थाकुण्डको बढ़ा दे। पुनः उसे सरसोंसे भरकर पहिलेके ही समान हाथमें ग्रहण करके क्रमसे आगेके द्वीप और समुद्रमें एक एक सरसों डालकर उन्हें पूरा कर दे। जिस द्वीप या समुद्रमें इस कुण्डके सरसों पूर्ण हो जावें उसकी सूचीके बराबर फिरसे उक्त कुण्डको बढ़ावे और शलाका कुण्डमें एक अन्य सरसों डाले। (इसप्रकार सरसों डालते डालते जब शलाका कुण्ड भरजावे तब एक सरसों प्रतिशलाका कुण्डमें डालना चाहिये। उपर्युक्त रीतिसे जब प्रतिशलाका कुण्ड भी भरजाय तब महाशलाका कुण्डमें एक सरसों डाले। इसप्रकार सरसों डालते डालते) शलाका कुंड पूर्ण होगये, प्रतिशलाका कुंड पूर्ण होगये, और महाशलाका कुंड पूर्ण होगया। जिस द्वीप या समुद्रमें शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका ये तीनों कुण्ड भरजावें उतने संख्यात द्वीपसमुद्रोंके विस्ताररूप और एक हजार योजन गहरे गड्ढेको सरसोंसे भरदेनेपर उत्कृष्ट संख्यातका

---

१ द ब उवेद°. २ द ब सरावयं. ३ द ब खुदे. ४ द सरावयो. ५ द ब पुण्णो. ६ द ब देय. ७ द ब खुदो. ८ ब सम्मत्ता. ९ द ब सरावउ वड्ढारेयंतु. १० द ब सरिसवखुदे. ११ द ब पुण्णो. १२ °सरावया.

तं उक्कस्ससंखेज्जयं अदिच्छिदूणं[1] जहण्णपरित्तासंखेज्जयं गंतूण पदिदं। तदो एगरूवमवणीदे जादमुक्कस्स-संखेज्जयं। जम्हि जम्हि संखेज्जयं मग्गिज्जदि तम्हि तम्हि जजहण्णमणुक्कस्ससंखेज्जयं गंतूण[2] घेत्तव्वं। तं कस्स विसओ। चोद्दसपुव्विस्स।

उक्कस्ससंखमज्झे इगिसमयजुदे जहण्णयमसंखं[3]। तत्तो असंखकालो उक्कस्सयसंखसमयंतं ॥ ३१०

जं तं असंखेज्जयं तं तिविधं, परित्तासंखेज्जयं, जुत्तासंखेज्जयं, असंखेज्जासंखेज्जयं चेदि। जं तं ५ परित्तासंखेज्जयं तं तिविधं, जहण्णपरित्तासंखेज्जयं, अजहण्णमणुक्कस्सपरित्तासंखेज्जयं, उक्कस्सपरित्तासं-खेज्जयं चेदि। जं तं जुत्तासंखेज्जयं तं तिविधं, जहण्णजुत्तासंखेज्जयं, अजहण्णमणुक्कस्सजुत्तासंखेज्जयं, उक्कस्सजुत्तासंखेज्जयं चेदि। जं तं असंखेज्जासंखेज्जयं तं [5]तिविधं, जहण्णअसंखेज्जासंखेज्जयं, अज-हण्णमणुक्कस्सअसंखेज्जासंखेज्जयं, उक्कस्सअसंखेज्जासंखेज्जयं चेदि।

जं तं जहण्णपरित्तासंखेज्जयं तं विरलेदूण[6] एक्केक्कस्स रूवस्स जहण्णपरित्तासंखेज्जयं देदूण अण्णो- १० ण्णब्भत्थे कदे उक्कस्सपरित्तासंखेज्जयं अदिच्छेदूण[7] जहण्णजुत्तासंखेज्जयं गंतूण पडिदं। तदो एगरूवे अव-णीदे जादं उक्कस्सपरित्तासंखेज्जयं। (जम्हि जम्हि असंखेज्जयं) अधिकज्जं[9] तम्हि तम्हि जहण्णजुत्त-

---

अतिक्रमण कर यह जघन्य परीतासंख्यात जाकर प्राप्त होता है। उसमेंसे एक रूप कम करदेनेपर उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण होता है। जहां जहां संख्यातको खोजना हो वहां वहां अजघन्यानुत्कृष्ट संख्यातका (मध्यम संख्यातका) जाकर ग्रहण करना चाहिये। यह किसका विषय है? यह चौदह पूर्वके ज्ञाता श्रुतकेवलीका विषय है।

उत्कृष्ट संख्यातमें एक समय मिलानेपर जघन्य असंख्यात होता है। इसके आगे उत्कृष्ट असंख्यातके प्राप्त होने तक असंख्यात काल है ॥ ३१० ॥

अब जो यह असंख्यात है वह तीन प्रकार है— परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात और असं-ख्यातासंख्यात। जो यह परीतासंख्यात है वह तीन प्रकारका है— जघन्य परीतासंख्यात, अजघ-न्यानुत्कृष्ट परीतासंख्यात और उत्कृष्ट परीतासंख्यात। इसीप्रकार युक्तासंख्यात भी तीन प्रकार है— जघन्य युक्तासंख्यात, अजघन्यानुत्कृष्ट युक्तासंख्यात और उत्कृष्ट युक्तासंख्यात। जो यह असंख्यातासंख्यात है सो भी तीन प्रकार है—जघन्य असंख्यातासंख्यात, अजघन्यानुत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात।

जो यह जघन्य परीतासंख्यात है उसका विरलन करके एक एक रूपके प्रति जघन्य परीतासंख्यात देकर परस्पर गुणा करनेपर उत्कृष्ट परीतासंख्यातका उल्लंघन कर जघन्य युक्तासंख्यात जाकर प्राप्त होता है। इसमेंसे एक अंक कम करनेपर उत्कृष्ट परीतासंख्यात होता है। (जहां जहां असंख्यातका) अधिकार हो, वहां वहां जघन्य युक्तासंख्यातका ग्रहण करना चाहिये। जो यह जघन्य

---

१ द अदिच्छि जहण्णं. २ द ब संखेयं. ३ द संखेज्जयं घेत्तव्वं. ४ द ब ७ जहण्णयमसंखं. ५ ब तिविधं. ६ द विरलेदूण. ७ द अदलिच्छेत्तूण, ब आविच्छेदूण. ८ ब पडिदणादो. ९ द ब अधियारकज्जं.

असंखेज्जयं घेत्तव्वं। जं तं जहण्णजुत्तासंखेज्जयं तं सयं वग्गिदो उक्कस्सजुत्तासंखेज्जयं अदिक्कमिदूण जहण्णपरित्तासंखेज्जयं गंतूणं पडिदं। तदो एगरूवं अवणीदे जादं उक्कस्सजुत्तासंखेज्जयं। तदा जहण्णपरित्तासंखेज्जयं वोप्पडिरासियं कादूण एगरासिं सलायप्पमाणं ठविय एगरासिं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स एगपुंजप्पमाणं दादूण अण्णोण्णब्भत्थं करिय सलायरासिदो एगरूवं अवणेदव्वं। पुणो वि उप्पण्णरासिं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्सुप्पण्णरासिपमाणं दादूण अण्णोण्णब्भत्थं[1] कादूण सलायरासिदो एयरूवं[2] अवणेदव्वं। एदेण कमेण सलायरासी णिट्ठिदो। णिट्ठिदतदणंतररासिं दुप्पडिरासिं कादूण एयपुंजं सलायं ठविय एयपुंजं विरलिदूण एक्केक्कस्स रूवस्स उप्पण्णरासिं दादूण अण्णोण्णब्भत्थं कादूण सलायरासिदो एयं रूवं अवणेदव्वं। एदेण सरूवेण विदियसलायपुंजं समत्तं। सम्मत्तकाले उप्पण्णरासिं दुप्पडिरासिं कादूण एयपुंजं सलायं ठविय एयपुंजं विरलिदूण एक्केक्कस्स रूवस्स उप्पण्णरासिपमाणं दादूण अण्णोण्णब्भत्थं कादूण सलायरासीदो एयरूवं[3] अवणेदव्वं। एदेण कमेण तदियपुंजं णिट्ठिदं। एवंकदे[4] उक्कस्सजुत्तासंखेज्जयं ण पावदि। धम्माधम्मलोगागासएग-जीवपदेसा चत्तारि वि लोगागासमेत्ता, पत्तेगसरीरबादरपदिट्ठिदा एदे दो वि (कमसो असंखेज्जलोगमेत्ता)[5],

युक्तासंख्यात है, उसका एकवार वर्ग करनेपर उत्कृष्ट युक्तासंख्यातको लांघकर जघन्य असंख्यातासंख्यात जाकर प्राप्त होता है। इसमेंसे एक रूप कम करदेनेपर उत्कृष्ट युक्तासंख्यात हो जाता है। फिर जघन्य असंख्यातासंख्यातकी दो प्रतिराशियां करके उनमेंसे एक राशिको शलाकाप्रमाण स्थापित करके और एक राशिका विरलन करके एक एक रूपके प्रति एक एक पुंजप्रमाण देकर परस्पर गुणा करके शलाकाराशिमेंसे एक अंक कम करदेना चाहिये, इसप्रकार जो राशि उत्पन्न हो उसको फिरसे विरलित करके एक एक अंकके प्रति उत्पन्न राशिके प्रमाणको देकर और परस्पर गुणा करके शलाकाराशिमेंसे एक अंक और कम करना चाहिये। इसी क्रमसे शलाकाराशि समाप्त हो गई। उस राशिकी समाप्तिके अनन्तर उत्पन्न हुई राशिप्रमाण दो प्रतिराशियां करके उनमेंसे एक पुंजको शलाकारूपसे स्थापित करके और एक पुंजको विरलित करके एक एक अंकके प्रति उत्पन्न राशिको देकर परस्पर गुणा करनेके पश्चात् शलाकाराशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिये। इस प्रक्रियासे द्वितीय शलाकाराशि समाप्त हो गई। उसकी समाप्तिकालमें उत्पन्न राशिप्रमाण दो प्रतिराशियां करके उनमेंसे एक पुंजको शलाकारूपसे स्थापित करके और एक पुंजका विरलन करके एक एक अंकके प्रति उत्पन्न राशिप्रमाणको देकर परस्पर गुणा करनेपर शलाकाराशिमेंसे एक अंक कम करदेना चाहिये। इस क्रमसे तृतीय पुंज समाप्त हो गया। ऐसा करनेपर भी उत्कृष्ट असंख्याता-संख्यात प्राप्त नहीं होता। तब धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, लोकाकाश और एक जीव, इन चारोंके प्रदेश, जो लोकाकाशप्रमाण हैं उनको, तथा प्रत्येकशरीर और बादरप्रतिष्ठित (अप्रतिष्ठित प्रत्येकराशि और प्रतिष्ठित प्रत्येकराशि), जो दोनों क्रमशः असंख्यात लोकप्रमाण हैं, इन छहों असंख्यातराशियोंको पूर्व

१ द ब सलायमप्पमाण, क सलायासणाम. २ द विरलेदूण. ३ द ब अण्णोण्णभत्तप्पो. ४ द ब एयरूवं. ५ द ब एयरूवस्स. ६ द ब कदो. ७ द ब किंचूणसायरोवमं विरलेदूण विभंगं कादूण अण्णोण्णब्भत्थे रासिपमाणं होदि.

छप्पि एदे[1] असंखेज्जरासीओ पुव्विल्लरासिस्स उवरि पक्खिवियूण पुव्वं व तिण्णिवारवग्गिदे कदे उक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं ण उप्पज्जदि। तदा ठिदिबंधज्झवसायठाणाणि[2] अणुभागबंधज्झवसायठाणाणि जोगप-लिच्छेदाणि उस्सप्पिणिओसप्पिणीसमयाणि च एदाणि पक्खिवियूण पुव्वं व वग्गिदसंवग्गिदं कदे (उक्कस्स-असंखेज्जासंखेज्जयं अदिच्छिदूण जहण्णपरित्ताणंतयं गंतूण पडिदं।) तदो (एगरूवं अवणीदे जादं) उक्कस्सअसंखेज्जासंखेज्जयं। जम्हि जम्हि असंखेज्जासंखेज्जयं मग्गिज्जदि तम्हि तम्हि यजहण्णमणुक्कस्स-[5] असंखेज्जासंखेज्जयं घेत्तव्वं। कस्स विसओ। ओधिणाणिस्स।

उक्कस्सअसंखेज्जे अवराणंतो हुवेदि रूवजुदे। तत्तो वड्ढदि कालो केवलणाणस्स परियंतं ॥ ३११

जं तं (अणंतं) तं तिविहं, परित्ताणंतयं, जुत्ताणंतयं, अणंताणंतयं चेदि। जं तं परित्ताणंतयं तं तिविहं, जहण्णपरित्ताणंतयं, अजहण्णमणुक्कस्सपरित्ताणंतयं, उक्कस्सपरित्ताणंतयं चेदि। जं तं जुत्ताणंतयं तं तिविहं, जहण्णजुत्ताणंतयं, अजहण्णमणुक्कस्सजुत्ताणंतयं, उक्कस्सजुत्ताणंतयं चेदि। जं तं अणंताणंतयं तं तिविधं, जहण्णमणंताणंतयं, अजहण्णमणुक्कस्सअणंताणंतयं, उक्कस्सअणंताणंतयं चेदि।

उत्पन्न राशिमें (तीन बार वर्गितसंवर्गित राशिमें) मिलाकर पहिलेके समान तीन बार वर्गित-संवर्गित करनेपर भी उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात उत्पन्न नहीं होता। तब फिर इस राशिमें स्थितिबन्धाध्यवसायस्थान, अनुभागबन्धाध्यवसायस्थान, योगोंके अविभागप्रतिच्छेद और उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालके समय, इन राशियोंको मिलाकर पूर्वके समान ही वर्गितसंवर्गित करनेपर (उत्कृष्ट असंख्याता-संख्यातका अतिक्रमण कर जघन्य परीतानन्त जाकर प्राप्त होता है।) इसमेंसे (एक अंक कम कर देनेपर) उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होता है। जहां जहां असंख्यातासंख्यातकी खोज करना हो वहां वहां अजघन्यानुत्कृष्ट असंख्यातासंख्यातको ग्रहण करना चाहिये। यह किसका विषय है? यह अवधिज्ञानीका विषय है।

उत्कृष्ट असंख्यातमें (असंख्यातसंख्यातमें) एक रूपके मिलानेपर जघन्य अनन्त होता है। उसके आगे केवलज्ञानपर्यन्त काल बढ़ता जाता है ॥ ३११ ॥

जो यह अनन्त है वह तीन प्रकार है—परीतानन्त, युक्तानन्त, और अनन्तानन्त। इनमेंसे जो परीतानन्त है वह तीन प्रकार है—जघन्य परीतानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट परीतानन्त और उत्कृष्ट परीतानन्त। इसीप्रकार युक्तानन्त भी तीन प्रकार है—जघन्य युक्तानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट युक्तानन्त और उत्कृष्ट युक्तानन्त। अनन्तानन्त भी तीन प्रकार है—जघन्य अनन्तानन्त, अजघन्यानुत्कृष्ट अनन्तानन्त और उत्कृष्ट अनन्तानन्त।

---

१ द ब छक्कि पदे. २ ब संखेज्जदी. ३ द ब ठिदिबंधठाणाणि ठिदिबंधज्झवसाणठाणाणि कसायोदयट्ठाणाणि. ४ द ब वग्गिज्जदि. ५ द ब जुत्तं.

जं तं जहण्णपरित्ताणंतयं तं विरलेदूण एक्केक्कस्स रूवस्स जहण्णपरित्ताणंतयं दादूण अण्णोण्णभत्थे कदे उक्कस्सपरित्ताणंतयं अदिच्छिदूण जहण्णजुत्ताणंतयं गंतूण पडिदं। एवदिओ अभवसिद्धियरासी। तदो एगरूवे अवणीदे जादं उक्कस्सपरित्ताणंतयं। तदा जहण्णजुत्ताणंतयं सयं वग्गिदं उक्कस्सजुत्ताणंतयं अदिच्छिदूण जहण्णमणंताणंतयं गंतूण पडिदं। तदो एगरूवे अवणीदे जादं उक्कस्सजुत्ताणंतयं। तदा जहण्णमणंताणंतयं पुव्वं व वग्गिदसंवग्गिदं कदे उक्कस्सअणंताणंतयं ण पावदि।

सिद्धा णिगोदजीवा वणप्फदि कालो य पोग्गला चेव। सव्वमलोगागासं[1] छप्पेदे[2] णंतपक्खेवा ॥ ३१२

ताणि पक्खित्तूण पुव्वं व तिण्णिवारे वग्गिदसंवग्गिदं कदे तदा उक्कस्सअणंताणंतयं ण पावदि। तदा धम्मट्ठियं अधम्मट्ठियं अगुरुलहुगुणं अणंतं पक्खिविदूण पुव्वं व तिण्णिवारे वग्गिदसंवग्गिदं कदे उक्कस्सअणंताणंतयं ण उप्पज्जदि। तदा केवलणाणकेवलदंसणस्स वाणंता भागा तस्सुवरिं पक्खित्ते[3] उक्कस्सअणंताणंतयं उप्पण्णं। अत्थि तं भायणं णत्थि तं दव्वं एवं भणिदो। एवं वग्गिय उप्पण्णसव्व- १० वग्गरासीणं पुंजं केवलणाणकेवलदंसणस्स अणंतिमभागं होदि तेण कारणेण अत्थि तं भाजणं णत्थि तं दव्वं। जम्हि जम्हि अणंताणंतयं मग्गिज्जदि[4] तम्हि तम्हि अजहण्णमणुक्कस्सअणंताणंतयं घेत्तव्वं। कस्स विसओ। केवलणाणिस्स।

.....

यह जो जघन्य परीतानन्त है, उसका विरलन करके और एक एक रूपके प्रति जघन्य परीतानन्तको देकर परस्पर गुणा करनेपर उत्कृष्ट परीतानन्तका उल्लंघन कर जघन्य युक्तानन्त जाकर प्राप्त होता है। इतनी ही अभव्यसिद्धराशि है। इस जघन्य युक्तानन्तमेंसे एक रूप कम करनेपर उत्कृष्ट परीतानन्त होता है। तत्पश्चात् जघन्य युक्तानन्तका एकवार वर्ग करनेपर उत्कृष्ट युक्तानन्तको लांघकर जघन्य अनन्तानन्त जाकर प्राप्त होता है। इसमेंसे एक अंक कम करनेपर उत्कृष्ट युक्तानन्तका प्रमाण होता है। पश्चात् जघन्य अनन्तानन्तको पूर्ववत् वर्गितसंवर्गित करनेपर उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्राप्त नहीं होता। तब इस उत्पन्न राशिमें—

सिद्ध, निगोद जीव, वनस्पति, काल, पुद्गल और सब अलोकाकाश, ये छह अनन्तप्रक्षेप हैं ॥ ३१२ ॥

इन छहों राशियोंको मिलाकर पूर्वके समान तीनवार वर्गितसंवर्गित करनेपर उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्राप्त नहीं होता। तब इस राशिमें, धर्म द्रव्यमें स्थित और अधर्म द्रव्यमें स्थित अनन्त अगुरुलघु गुणको, मिलाकर पूर्वके समान तीनवार वर्गितसंवर्गित करनेपर उत्कृष्ट अनन्तानन्त उत्पन्न नहीं होता। तब केवलज्ञान अथवा केवलदर्शनके अनन्त बहुभागको (उक्त प्रकारसे प्राप्त राशिसे हीन) उस पूर्वोक्त राशिमें मिलानेपर उत्कृष्ट अनन्तानन्त उत्पन्न हुआ। वह भाजन है, द्रव्य नहीं है, इसप्रकार कहा गया है। क्योंकि इसप्रकार वर्ग करके उत्पन्न सब वर्गराशियोंका पुंज केवलज्ञान-केवलदर्शनके अनन्तवें भाग है, इसी कारणसे वह भाजन है, द्रव्य नहीं है। जहां जहां अनन्तानन्तका ग्रहण करना हो वहां वहां अजघन्यानुत्कृष्ट अनन्तानन्तका ग्रहण करना चाहिये। यह किसका विषय है ? यह केवलज्ञानीका विषय है।

.....

१ द ब सव्वं वमलोगागासं. २ द ब थप्पेदि. ३ द ब पक्खित्तो. ४ द ब वग्गिज्जदि.

भरहक्खेत्तम्मि इमे अज्जाखंडम्मि कालपरिभागा । अवसप्पिणिउस्सप्पिणिपज्जाया दोण्णि होंति पुढं ॥ ३१३
णरतिरियाणं आऊ उच्छेहविभूदिपहुदियं सव्वं । अवसप्पिणिए हायदि उस्सप्पिणियासु वड्ढेदि ॥ ३१४
अद्धापल्लसायरउवमा दस होंति[1] कोडकोडीओ । अवसप्पिणिपरिमाणं तेत्तियमुस्सप्पिणीकालो ॥ ३१५
दोण्णि वि मिलिदे कप्पं छब्भेदा होंति तत्थ एक्केक्कं ।
सुसमसुसमं च सुसमं तइज्जयं सुसमदुस्समयं ॥ ३१६
दुस्समसुसमं दुस्समदिदुस्समयं च तेसु पढमम्मि । चत्तारिसायरोवमकोडाकोडीओ परिमाणं ॥ ३१७
सुसमम्मि तिण्णि जलहीउवमाणं होंति कोडकोडीओ ।
दोण्णि तदियम्मि तुरिमे बादालसहस्सविरहिदो एक्को ॥ ३१८
इगिवीससहस्साणिं वासाणिं दुस्समम्मिं परिमाणं । अतिदुस्समम्मि कालो तेत्तियमेत्तं सि णादव्वं ॥ ३१९
सुसमसुसमम्मि कैाले भूमी रजधूमजलणहिमरहिदा । कंटयअब्भसिलाईविच्छियादिकीडोवसग्गपरिचत्ता ॥ ३२०
णिम्मलदप्पणसरिसो णिंदिदवव्वेहिं विरहिदा तीए । सिकदा हवेदि दिव्वा तणुमणणयणाण सुहजणणी ॥ ३२१
विप्फुरिदपंचवण्णा सहावमउवा य मधुररसजुत्ता । चउअंगुलपरिमाणा तीए सि जाएदि सुरहिगंधड्ढा ॥ ३२२

भरत क्षेत्रके आर्यखण्डमें ये कालके विभाग हैं। यहां पृथक् पृथक् अवसर्पिणी और उत्सर्पिणीरूप दोनों ही कालकी पर्यायें होती हैं ॥ ३१३ ॥

अवसर्पिणी कालमें मनुष्य एवं तिर्यञ्चोंकी आयु, शरीरकी उंचाई और विभूति इत्यादिक सब ही घटते तथा उत्सर्पिणी कालमें बढ़ते रहते हैं ॥ ३१४ ॥

अद्धापल्योंसे निर्मित दश कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण अवसर्पिणी और इतना ही उत्सर्पिणी काल भी है ॥ ३१५ ॥

इन दोनोंको मिलानेपर बीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण एक कल्प काल होता है। अवसर्पिणी और उत्सर्पिणीमेंसे प्रत्येकके छह भेद हैं—सुषमसुषमा, सुषमा, सुषमदुष्षमा, दुष्षम-सुषमा, दुष्षमा और अतिदुष्षमा। इन छहोंमेंसे प्रथम सुषमसुषमा चार कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण, सुषमा तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण, तृतीय दो कोड़ाकोडी सागरोपमप्रमाण, चतुर्थ ब्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण, पंचम दुष्षमा इक्कीस हजार वर्षप्रमाण और अतिदु-ष्षमा काल भी इतने ही (इक्कीस हजार वर्ष) प्रमाण जानना चाहिये ॥ ३१६–३१९ ॥

सुषमसुषमा कालमें भूमि रज, धूम, अग्नि और हिमसे रहित, तथा कण्टक, अभ्रशिला (बर्फ) आदि एवं बिच्छू आदिक कीड़ोंके उपसर्गोंसे रहित होती है ॥ ३२० ॥

इस कालमें निर्मल दर्पणके सदृश और निन्दित द्रव्योंसे रहित दिव्य बालु तन, मन और नयनोंको सुखदायक होती है ॥ ३२१ ॥

उस पृथिवीपर पांच प्रकारके वर्णोंसे स्फुरायमान, स्वभावसे मृदुल, मधुर रससे युक्त, सुगन्धसे परिपूर्ण, और चार अंगुलप्रमाण ऊंचे तृण उत्पन्न होते हैं ॥ ३२२ ॥

१ द °पविभागा. २ ब उच्छेहा. ३ द हुंति. ४ द सुसुमं. ५ द ब दुस्सहम्मि. ६ द° कालो. ७ द ब भूमि. ८ द ब सव्वं. ९ ब °सरसा. १० द ब दव्वा. ११ द ब मयं ति.

तीए गुंछा गुम्मा कुसुमंकुरफलपवालपरिपुण्णा । बहओ विचित्तवण्णा रुक्खसमूहा समुत्तुंगा ॥ ३२३
कल्हारकमलकुवलयकुमुदुज्जलपवाहपडहत्था[1] । पोक्खरणीवावीओ मयरादिविवज्जिया[2] होंति ॥ ३२४
पुक्खरणीपहुदीणं चउतडभूमीसु रयणसोवाणा[3] । तेसुं वरपासादा सयणासणणिवहपरिपुण्णा ॥ ३२५
णिस्सेसवाहिणासणअमिदोवमणिम्मलसलिलपरिपुण्णा ।
रेहंति दिग्घियाओ जलकीडणदिव्वदव्वजुदा ॥ ३२६
भूमुत्तयाण भवणा सयणासणसोभिदा सुपासादा । विविचित्तं भासंते[4] णिरुवमं भोगभूमीए ॥ ३२७
धरणिधरा उत्तुंगा कंचणवररयणणियरपरिणामा । णाणाविहकप्पदुमसंपुण्णा दिग्घिआदिजुदा ॥ ३२८
धरणी वि पंचवण्णा तणुमणणयणाण णंदणं कुणइ । वज्जिंदणीलमरगदमुत्ताहलपउमरायफलिहजुदा ॥ ३२९
पवराउ वाहिणीओ दोतडमोहंतरयणसोवाणा[5] । अमयवरखीरपुण्णा मणिमयसिगदाहि सोहंति ॥ ३३०
संखपिपीलियमक्कुणगोमच्छीदंसमसयकिमिपहुदी । वियलिंदिया ण होंति हु णियमेणं पढमकालम्मि ॥ ३३१

उस कालमें पृथिवीपर गुच्छा, गुल्म (झाड़ी), पुष्प, अंकुर, फल एवं नवीन पत्तोंसे परिपूर्ण, विचित्र वर्णवाले और ऊंचे, ऐसे बहुतसे वृक्षोंके समूह होते है ॥ ३२३ ॥

वहांपर कल्हार, कमल, कुवलय और कुमुद, इन विशेष जातिके कमल पुष्पों तथा उज्वल प्रवाहसे परिपूर्ण और मकरादिक जलजंतुओंसे रहित, ऐसी पुष्करिणी व वापिकायें होती हैं ॥ ३२४ ॥

इन पुष्करिणी आदिककी चारों तटभूमियोंमें रत्नोंकी सीढ़ियां होती हैं। उनमें शय्या और आसनोंके समूहोंसे परिपूर्ण उत्तम भवन है ॥ ३२५ ॥

सम्पूर्ण व्याधियोंको नष्ट करनेवाले अमृतोपम निर्मल जलसे परिपूर्ण और जलक्रीड़ाके निमित्तभूत दिव्य द्रव्योंसे संयुक्त, ऐसी दीर्घिकायें शोभायमान होती है ॥ ३२६ ॥

भोगभूमिमें अतिमुक्तकों अर्थात् अति स्वच्छंद भोगभूमिजोंके भवन शय्या एवं आसनोंसे सुशोभित सुन्दर प्रासाद अनुपम और सुविचित्र प्रतिभासित होते है ॥ ३२७ ॥

वहांपर सुवर्ण एवं उत्तम रत्नसमूहोंके परिणामरूप, नाना प्रकारके कल्पवृक्षोंसे परिपूर्ण, और दीर्घिकादिकसे संयुक्त उन्नत पर्वत हैं ॥ ३२८ ॥

पंचवर्णवाली और हीरा, इन्द्रनील मरकत, मुक्ताफल, पद्मराग तथा स्फटिक मणिसे संयुक्त वहांकी पृथिवी भी तन, मन एवं नयनोंको आनन्द देती है ॥ ३२९ ॥

वहां उभय तटोंपर शोभायमान रत्नमय सीढ़ियोंसे संयुक्त और अमृतके समान उत्तम क्षीर (जल) से परिपूर्ण, ऐसी प्रवर नदियां मणिमय वालुकासे शोभायमान होती हैं ॥ ३३० ॥

प्रथम कालमें नियमसे शंख, चीटी, खटमल, गोमक्षिका, डांस, मच्छर और कृमि इत्यादिक विकलेन्द्रिय जीव नहीं होते ॥ ३३१ ॥

---

१ द ब °पदहत्थो. २ द ब अमरादिविवज्जिया. ३ ब सोवाणो. ४ द ब पासादो. ५ द ब अविदावम°. ६ द ब मासंतो. ७ द उत्तंगा. ८ द ब °कप्पदुमा. ९ द ब °पउररायपलिह°. १० द ब °सोहाणो.

णत्थि असण्णी जीवा णत्थि तहा सामिभिच्चभेदो य[1] । विकलपहा जुद्धादीरुद्धणभावा दु[2] ण हु होंति ॥ ३३२
रत्तिविणाणं भेदो तिमिरादवसीदवेदणा णिंदा । परदाररदी परधणचोरी[3] णं णत्थि णियमेण ॥ ३३३
जमलाजमलपसूदा वरवेंजणलक्खणेहिं परिपुण्णा । बदरपमाणाहारं अट्ठमभत्तेसु भुंजंति ॥ ३३४
तासिं काले छ च्चिय चावसहस्साणि[4] देहउस्सेहो । तिण्णि पलिदोवमाइं आऊणि णराण णारीणं ॥ ३३५
पुट्ठीए होंति अट्ठी छप्पण्णा समधिया य दोण्णि सया । सुसमसुसमम्मि काले णराण णारीण पत्तेक्कं ॥ ३३६
भिण्णिंदणीलकेसा णिरुवमलावण्णरूवपरिपुण्णा । सुहसायरमज्झगया णीलुप्पलसुरहिणिस्सासा ॥ ३३७
तब्भोगभूमिजादा णवणागसहस्ससरिसबलजुत्ता । आरत्तपाणिपादा वणचंपयकुसुमगंधड्ढा[5] ॥ ३३८
महवज्जवजुत्ता मंदकसाया सुसीलसंपुण्णा । आदिमसंहडणजुदा समचउरस्संगसठाणा ॥ ३३९
बालरवीसमतेया कवलाहारा वि विगदणीहारा । ते जुगलधम्मजुत्ता परिवारा णत्थि तक्काले ॥ ३४०
गामणयरादि सव्वं ण होदि ते होंति सव्वकप्पतरू । णियणियमणसंकप्पियवत्थूणिं[6] देंति जुगलाणं ॥ ३४१

इस कालमें असंज्ञी जीव नहीं होते तथा स्वामी और भृत्यका भी भेद नहीं होता। इसीप्रकार नर-नारी कान्तिसे रहित और युद्धादिक विरोधकारक भाव भी नहीं होते ॥ ३३२ ॥

प्रथमकालमें नियमसे रात-दिनका भेद, अन्धकार, गर्मी व शीतकी निंद्य वेदना, परस्त्रीरमण और परधनहरण नहीं होता ॥ ३३३ ॥

इसकालमें युगल-युगलरूपसे उत्पन्न हुए मनुष्य उत्तम व्यंजनों (तिल मशा इत्यादिक) और चिह्नों (शंख चक्र इत्यादिक) से परिपूर्ण होते हुए अष्टम भक्तमें अर्थात् चौथे दिन बेरके बराबर आहार ग्रहण करते हैं ॥ ३३४ ॥

इस कालमें पुरुष और स्त्रियोंके शरीरकी उंचाई छह हजार धनुष तथा आयु तीन पल्योपमप्रमाण होती है ॥ ३३५ ॥

सुषमसुषमाकालमें पुरुष और स्त्रियोंमेंसे प्रत्येकके पृष्ठभागमें दोसौ छप्पन हड्डियां होती हैं ॥ ३३६ ॥

इस कालमें मनुष्य भिन्न इन्द्रनील मणिके सदृश केशवाले, अनुपम लावण्यरूपसे परिपूर्ण, सुखसागरके मध्यमें मग्न, और नील कमलके समान सुगंधित निश्वासवायुसे युक्त होते हैं ॥ ३३७ ॥

उस भोगभूमिमें उत्पन्न हुए मनुष्य नौ हजार हाथियोंके सदृश बलसे युक्त, किंचित् लाल हाथ-पैरवाले, वनचम्पकके फूलोंकी सुगन्धसे व्याप्त, मार्दव एवं आर्जवसे सहित, मन्दकषायी, सुशीलतापूर्ण, आदिके अर्थात् वज्रवृषभनाराचसंहननसे युक्त, समचतुरस्रशरीरसंस्थानवाले उगते हुए सूर्यके सदृश तेजस्वी, कवलाहारको करते हुए भी मल-मूत्रसे रहित, और युगलधर्मसे सहित होते हैं। इस कालमें नर-नारीके अतिरिक्त अन्य परिवार नहीं होता ॥ ३३८–३४० ॥

इस समय वहांपर गांव व नगरादिक सब नहीं होते, केवल वे सब कल्पवृक्ष होते हैं जो युगलोंको अपने अपने मनकी कल्पित वस्तुओंको दिया करते हैं ॥ ३४१ ॥

---

१ द ब भेदाओ. २ द ब पहो. ३ द ब भावा हु. ४ द ब चारी. ५ द ब छव्विह. ६ द सहस्सा. ७ द वत्थूणं, ब वत्थूणं.

पाणंगतूरियंगा भूसणवत्थंगभोयणंगा य । आलयदीवियभायणमालातेजंगआदिकप्पतरू ॥ ३४२
पाणं मधुरसुसादं छरसेहि जुदं पसत्थमइसीदं । बत्तीसभेदजुत्तं पाणंगा देंति तुट्टिपुट्टियरं ॥ ३४३
तूरंगा वरवीणापटुपटहमुइंगझल्लरीसंखा । दुंदुभिभंभाभेरीकाहलपहुदाइ देंति तूरं ॥ ३४४
तरओ वि भूसणंगा कंकणकडिसुत्तहारकेयूरा । मंजीरकडयकुंडलतिरीडमउडादियं ॥ ३४५
वत्थंगा णित्तं पडचीणसुवरखउमपहुदिवत्थाणि । मणणयणाणंदकरं णाणावत्थादि ते देंति ॥ ३४६
सोलसविहमाहारं सोलसभेयाणि वेंजणाणिं पि । चोद्दसविहसोवाइं खज्जाणिं विगुणचउवण्णं ॥ ३४७
सायाणं च पयारे तेसट्ठीसंजुदाणि तिसयाणि । रसभेदा तेसट्ठी देंति फुडं भोयणंगदुमा ॥ ३४८
सत्थिअणंदावत्तप्पमुहा जे के वि दिव्वपासादा । सोलसभेदा रम्मा देंति हु ते आलयंगदुमा ॥ ३४९
दीवंगदुमा साहापवालफलकुसुममंकुरादीहिं । दीवा इव पज्जलिदा पासादे देंति उज्जोवं ॥ ३५०
भायणअंगा कंचणबहुरयणविणिम्मियाइ धवलाइं । भिंगारकलसगग्गरिचामरपीढादियं देंति ॥ ३५१

भोगभूमिमें पानांग, तूर्यांग, भूषणांग, वस्त्रांग, भोजनांग, आलयांग, दीपांग, भाजनांग, मालांग और तेजांग आदि कल्पवृक्ष होते हैं ॥ ३४२ ॥

इनमेंसे पानांग जातिके कल्पवृक्ष भोगभूमिजोंको मधुर, सुस्वादु, छह रसोंसे युक्त, प्रशस्त, अति शीत, और तुष्टि एवं पुष्टिको करनेवाले, ऐसे बत्तीस प्रकारके पेय द्रव्यको दिया करते हैं ॥३४३॥

तूर्यांग जातिके कल्पवृक्ष उत्तम वीणा, पटु पटह, मृदंग, झालर, शंख, दुंदुभि, भंभा, भेरी और काहल इत्यादि भिन्न भिन्न प्रकारके वादित्रोंको देते हैं ॥ ३४४ ॥

भूषणांग जातिके कल्पवृक्ष कंकण, कटिसूत्र, हार, केयूर, मंजीर, कटक, कुण्डल, किरीट और मुकुट इत्यादि आभूषणोंको प्रदान करते हैं ॥ ३४५ ॥

वे वस्त्रांग जातिके कल्पवृक्ष नित्य चीनपट एवं उत्तम क्षौमादि वस्त्र तथा अन्य मन और नयनोंको आनन्दित करनेवाले नाना प्रकारके वस्त्रादि देते हैं ॥ ३४६ ॥

भोजनांग जातिके कल्पवृक्ष सोलह प्रकारका आहार व सोलह प्रकारके व्यंजन, चौदह प्रकारके सूप (दाल आदि), चउवनके दुगुणे अर्थात् एकसौ आठ प्रकारके खाद्य पदार्थ, स्वाद्य पदार्थोंके तीनसौ तिरेसठ प्रकार, और तिरेसठ प्रकारके रसभेदोंको पृथक् पृथक् दिया करते हैं ॥ ३४७–४८ ॥

आलयांग जातिके कल्पवृक्ष, स्वस्तिक और नन्द्यावर्त इत्यादिक जो सोलह प्रकारके रमणीय दिव्य भवन होते हैं, उनको दिया करते हैं ॥ ३४९ ॥

दीपांग जातिके कल्पवृक्ष प्रासादोंमें शाखा, प्रवाल (नवजात पत्र), फल, फूल और अंकुरादिकके द्वारा जलते हुए दीपकोंके समान प्रकाश देते हैं ॥ ३५० ॥

भाजनांग जातिके कल्पवृक्ष सुवर्ण एवं बहुतसे रत्नोंसे निर्मित धवल झारी, कलश, गागर, चामर और आसनादिक प्रदान करते हैं ॥ ३५१ ॥

---

१ द पंडुह. २ द ब तूरंगा. ३ द ब पडिचीण°. ४ द भोगा°.

वल्लीतरुगुच्छलदुब्भवाणं सोलससहस्सभेदाणं । मालंगदुमा देंति हु कुसुमाणं विविहमालाओ ॥ ३५२
तेजंगा मज्झंदिणदिणयरकोडीण किरणसंकासा । णक्खत्तचंदसूरप्पहुदीणं कंतिसंहरणा[1] ॥ ३५३
ते सव्वे कप्पदुमा ण वणप्फदी णो वेंतरा[2] सव्वे । णवेरं पुढविसरूवा पुण्णफलं देंति जीवाणं ॥ ३५४
गीदरवेसुं सोत्तं रूवे चक्खू सुसोरभे घाणं । जीहा विविहरसेसुं पासे पासिंदियं रमइ ॥ ३५५
इय अण्णोण्णासत्ता ते जुगला वर णिरंतरे भोगे[3] । सुलभे वि ण संतिप्पिं इंदियविसएसु पावंति ॥ ३५६
जुगलाणि अणंतगुणं भोगं चक्कहरभोगयोहादो[4] । भुंजंति जावँ आउं कदलीघादेण रहिदाणि ॥ ३५७
कप्पदुमदिण्णवत्थुं घेत्तूण विकुव्वणाय बहुदेहे । कादूणं ते जुगला अणेयभोगाइं भुंजंति ॥ ३५८
पुरिसा वरमउडधरा देविंदादो वि सुंदरायारा । अच्छरसरिसा इत्थी मणिकुंडलमंडियकओला ॥ ३५९
मउडं कुंडलहारा मेहलपालंबबम्हसुत्ताइं । अंगदकडयप्पहुदी होंति सहावेण आभरणा ॥ ३६०
कुंडलमंगदहारा मउडं केयूरपट्टकडयाइं । पालंबसुत्तणेउरदोमुद्दीमेहलासिछुरियाओ ॥ ३६१

मालांग जातिके कल्पवृक्ष वल्ली, तरु, गुच्छ और लताओंसे उत्पन्न हुए सोलह हजार भेदरूप पुष्पोंकी विविध मालाओंको देते हैं ॥ ३५२ ॥

तेजांग जातिके कल्पवृक्ष मध्यंदिनके करोड़ों सूर्योंकी किरणोंके समान होते हुए नक्षत्र, चन्द्र और सूर्यादिककी कान्तिका संहरण करते हैं ॥ ३५३ ॥

ये सब कल्पवृक्ष न तो वनस्पति ही हैं और न कोई व्यन्तर देव हैं। किन्तु विशेषता यह है कि ये सब पृथिवीरूप होते हुए जीवोंको उनके पुण्य कर्मका फल देते हैं ॥ ३५४ ॥

भोगभूमिजोंकी श्रोत्र इन्द्रिय गीतरवोंमें, चक्षु रूपमें, घ्राण सुन्दर सौरभमें, जिह्वा विविध प्रकारके रसोंमें, और स्पर्शन इंद्रिय स्पर्शमें रमण करती है ॥ ३५५ ॥

इसप्रकार परस्परमें आसक्त हुए वे युगल नर-नारी उत्तम भोगसामग्रीके निरन्तर सुलभ होनेपर भी इन्द्रियविषयोंमें तृप्तिको नहीं पाते ॥ ३५६ ॥

ये भोगभूमिजोंके युगल कदलीघातमरणसे रहित होते हुए आयुपर्यन्त चक्रवर्तीके भोगसमूहकी अपेक्षा अनन्तगुणे भोगको भोगते हैं ॥ ३५७ ॥

वे युगल कल्पवृक्षोंसे दी गई वस्तुओंको ग्रहण करके और विक्रियासे बहुतसे शरीरोंको बनाकर अनेक प्रकारके भोगोंको भोगते हैं ॥ ३५८ ॥

वहांपर उत्तम मुकुटको धारणकरनेवाले पुरुष इन्द्रसे भी अधिक सुन्दराकार और मणिमय कुण्डलोंसे विभूषित कपोलोंवाली स्त्रियां अप्सराओंके सदृश होती हैं ॥ ३५९ ॥

मुकुट, कुण्डल, हार, मेखला, प्रालंब, ब्रह्मसूत्र, अंगद और कटक इत्यादिक आभूषण भोगभूमिजोंके स्वभावसे ही हुआ करते हैं ॥ ३६० ॥

भोगभूमिमें कुण्डलं[5], अंगदं[6], हारं[7], मुकुटं[8], केयूरं[9], पट्टं (भालपट्ट), कटकं[10], प्रालंबं[11], सूत्रं[12], (ब्रह्मसूत्र), नूपुरं[13], दो मुद्रिकाएँ[14], मेखलां[15], असिं (करवाल), छुरी[16], ग्रैवेयकं और कर्णपूरं[17], ये सोलह

---

१ द ब °लदुब्भवणा. २ द ब °संहरणं. ३ द ब वणप्पदीणो ण वेंतरा. ४ द ब णवरी. ५ द ब भागे. ६ द ब °भोगयाहादो. ७ द ब जाद. ८ द ब वरमौड°. ९ द ब °सुछुरियाओ.

गेवज्जं[1] कण्णपुरा पुरिसाणं होंति सोलसाभरणं । चोद्दस इत्थीआणं छुरियाकरवालहीणाइं ॥ ३६२
केऊरकडिसुत्तणेउरतिरीटपालंबसुत्तमुद्दीओ । हारा कुंडलमउलद्धहारचूडामणी वि गेविज्जा ॥ ३६३
अंगदछुरिया खग्गा पुरिसाणं होंति सोलसाभरणं । चोद्दस इत्थीण तहा छुरियाखग्गेहिं परिहीणा ॥ ३६४

पाठान्तरम् ।

भोगमहीए सव्वे जायंते मिच्छभावसंजुत्ता । मंदकसाया मणुवा पेसुण्णासूयदव्वपरिहीणा ॥ ३६५
वज्जिदमंसाहारा मधुमज्जोदुंबरेहिं परिचत्ता । सच्चजुदा मदरहिदा वारियपरदारपरिहीणा ॥ ३६६
गुणधरगुणेसु रत्ता[5] जिणपूजं जे कुणंति परवसतो । उववासतणुसरीरा अज्जवपहुदीहिं संपण्णा ॥ ३६७
आहारदाणणिरदा जदीसु वरविविहजोगजुत्तेसुं । विमलतरसंजमेसु य विमुक्कगंथेसु भत्तीए ॥ ३६८
पुव्वं बद्धणराऊ पच्छा तित्थयरपादमूलम्मि । पावियखाइयसम्मा जायंते केइ भोगभूमीए ॥ ३६९
एवं मिच्छाइट्ठी णिग्गंथाणं जदीण दाणाइं[6] । दादूण पुण्णपाके भोगमही केइ जायंति ॥ ३७०
आहाराभयदाणं विविहोसहपोत्थयादिदाणं च । सेसे णाणोयरणं दादूणं भोगभूमि जायंते ॥ ३७१

आभरण पुरुषोंके होते हैं। इनमेंसे छुरी तथा करवालसे रहित शेष चौदह आभरण स्त्रियोंके होते हैं ॥ ३६१--३६२ ॥

कड़ा[1], कटिसूत्र, नूपुर[2], किरीट[3], प्रालम्ब[4], सूत्र[5], मुद्रिका[6], हार[7], कुण्डल[8], मुकुट[9], अर्द्धहार[10], चूड़ामणि[11], ग्रैवेयक[12], अंगद[13], छुरी[14] और तलवार[15], ये सोलह आभरण पुरुषोंके, तथा छुरी और तलवारसे रहित शेष चोदह आभरण स्त्रियोंके होते हैं ॥ ३६३--३६४ ॥ पाठांतर ।

भोगभूमिमें वे सब जीव उत्पन्न होते हैं जो मिथ्यात्वभावसे युक्त होते हुए भी, मंदकषायी हैं, पैशून्य एवं असूयादि द्रव्योंसे रहित हैं, मांसाहारके त्यागी हैं, मधु मद्य और उदुम्बर फलोंके भी त्यागी हैं, सत्यवादी हैं, अभिमानसे रहित हैं, वेश्या और परस्त्रीके त्यागी हैं, गुणियोंके गुणोंमें अनुरक्त हैं, पराधीन होकर जिनपूजा करते हैं, उपवाससे शरीरको कृश करनेवाले हैं, आर्जवादिसे संपन्न हैं; तथा उत्तम एवं विविध प्रकारके योगोंसे युक्त, अत्यन्त निर्मल संयमके धारक, और परिग्रहसे रहित, ऐसे यतियोंको भक्तिसे आहारदान देनेमें तत्पर हैं ॥ ३६५--३६८ ॥

जिन्होंने पूर्वमें मनुष्य आयुको बांधलिया है, और पश्चात् तीर्थंकरके पादमूलमें क्षायिक सम्यग्दर्शनको प्राप्त किया है, ऐसे कितने ही सम्यग्दृष्टि पुरुष भी भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं ॥ ३६९ ॥

इसप्रकार कितने ही मिथ्यादृष्टि मनुष्य निर्ग्रंथ यतियोंको दानादि देकर पुण्यका उदय आनेपर भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं ॥ ३७० ॥

शेष कितने ही मनुष्य आहारदान, अभयदान, विविध प्रकारकी औषध तथा ज्ञानके उपकरण पुस्तकादिके दानको देकर भोगभूमिमें उत्पन्न होते हैं ॥ ३७१ ॥

---

१ ब गेवजा. २ द ब कडिसु. ३ ब परिचित्ता. ४ द ब सत्थद्धदा. ५ द ब रत्तो. ६ ब दीणाइं.

दादूण केइ दाणं पत्तविसेसेसु के वि दाणाणं । अणुमोदणेण तिरिया भोगखिदीए वि जायंति ॥ ३७२
गहिदूणं[1] जिणलिंगं संजमसम्मत्तभावपरिचत्ता । मायाचारपयट्टा चारित्तं णासयंति जे पावा ॥ ३७३
दादूण कुलिंगीणं[2] णाणादाणाणि जे णरा मुद्धा । तच्चेसधरा केई भोगमहीए हुवंति ते तिरिया ॥ ३७४
भोगजणतिरियाणं णवमासपमाणआउअवसेसे । ताणं हुवंति गब्भा णासे कालम्मि जायंति ॥ ३७५
पुण्णम्मि[4] य णवमासे भूसयणे सोविदूण जुगलाइं । गब्भादो जुगलेसुं णिक्कंतेसुं मरंति[5] तक्खणं ॥ ३७६
छिक्केण मरदि पुंसो जिंभारंभेण कामिणी दोण्हं । सारदमेघ व्व तणू आमूलादो विलीयदि ॥ ३७७
भावणवेंतरजोइसवसुरेसु जायंति मिच्छभावजुदा । सोहम्मदुगे भोगजणतिरिया सम्मभावजुदा[8] ॥ ३७८
तादाण भोगभूवे सयणोवरि बालयाण सुत्ताणं । णियअंगुट्ठयलिहणे गच्छंते तिण्णि दिवसाणि ॥ ३७९
बहुसणंअत्थिरगमणं थिरगमणकलागुणेण पत्तेक्कं । तारुण्णेणं[9] सम्मत्तगहणपाउग्ग तिदिणाइं[9] ॥ ३८०

कोई पात्रविशेषोंको दान देकर और कोई दानोंकी अनुमोदना करनेसे तिर्यंच भी भोग-भूमिमें उत्पन्न होते है ॥ ३७२ ॥

जो पापी जिनलिंगको (मुनिव्रतको) ग्रहण करके संयम एवं सम्यक्त्वभावको छोड़ देते हैं और पश्चात् मायाचारमें प्रवृत्त होकर चारित्रको नष्ट करते हैं; तथा जो कोई मूर्ख मनुष्य कुलिंगियोंको नाना प्रकारके दान देते है या उनके भेषको धारण करते हैं, वे भोगभूमिमें तिर्यंच होते हैं ॥ ३७३-३७४ ॥

भोगभूमिके मनुष्य और तिर्यञ्चोंकी नौ मास आयु शेष रहनेपर उनके गर्भ रहता है, और नाशकाल अर्थात् मृत्युका समय आनेपर (उनके युगल बालक-बालिका) जन्म लेते हैं ॥ ३७५ ॥

नव मासके पूर्ण होनेपर नर-नारीयुगल भूशय्यापर सोकर गर्भसे युगलके निकलनेपर तत्काल ही मरणको प्राप्त होते हैं ॥ ३७६ ॥

पुरुष छींकसे और स्त्री जृम्भाके (जिभाईके) आनेसे मृत्युको प्राप्त होती है । उन दोनोंके शरीर शरदकालीन मेघके समान आमूल विलीन हो जाते हैं ॥ ३७७ ॥

मृत्युके होनेपर भोगभूमिज मिथ्यादृष्टि मनुष्य-तिर्यंच भवनवासी, व्यंतर और ज्योतिषी देवोंमें, तथा सम्यग्दृष्टि मनुष्य-तिर्यञ्च सौधर्मयुगलमें उत्पन्न होते हैं ॥ ३७८ ॥

भोगभूमिमें उत्पन्न हुए बालकोंके शय्यापर सोते हुए अपने अंगूठेके चूसनेमें तीन दिन व्यतीत होते हैं ॥ ३७९ ॥

इसके पश्चात् उपवेशन (बैठने), अस्थिरगमन, स्थिरगमन, कलागुणोंकी प्राप्ति, तारुण्य और सम्यग्दर्शनके ग्रहण करनेकी योग्यता, इनमेंसे क्रमशः प्रत्येक अवस्थामें उन बालकोंके तीन तीन दिन व्यतीत होते हैं ॥ ३८० ॥

---

१ द ब गरहिदूणं. २ द गुलिंगीणं. ३ द ब तं वेसं, ४ द ब पुव्वम्मि. ५ द ब णिक्कंते मम्मरंति. ६ द ब सारमेघुव्व. ७ द ब पीहसणं. ८ ब ता पुण्णेण. ९ द ब पाउग्गठिदिणाइं.

जादिभरणेण केई केई पडिबोहणेण देवाणं । चारणमुणिपहुदीणं सम्मत्तं तत्थ गेण्हंति ॥ ३८१
देवीदेवसरिच्छा बत्तीसपसत्थलक्खणेहि जुदा । कोमलदेहाविहुणो समचउरस्संगसंठाणो ॥ ३८२
धादुमयंगा वि तहा छेत्तुं भेत्तुं च किर ण सक्का । असुचिविहीणत्तादो मुत्तपुरीसासवो णत्थि ॥ ३८३
ताण जुगलाण देहा अब्भंगुव्वट्टणजणविहीणा । मुहदंतणयणधोवणणहकट्टणविरहिदा वि रेहंति ॥ ३८४
अक्खरआलेक्खेसुं गणिदे गंधव्वसिप्पपहुदीसुं । ते चउसट्ठिकलासु होंति सहावेण णिउणयरा ॥ ३८५
ते सव्वे वरजुगला अण्णोण्णुप्पण्णपेममूढा । जम्हा तम्हा तेसुं सावयवदसंजमो णत्थि ॥ ३८६
कोइलमहुरालावा किण्णरकंठा हुवंति ते जुगला । कुलजादिभेदहीणा सुहसत्ता चत्तदारिद्दा ॥ ३८७
तिरिया भोगभिदाए जुगला जुगला हुवंति वरवण्णा । सरला मंदकसाया णाणाविहजादिसंजुत्ता ॥ ३८८
गोकेसरिकरिमयरा सूवरसारंगरोज्झमहिसवया । वाणरगवयतरच्छा वग्घसिगालल्लभल्ला य ॥ ३८९
कुक्कुडकोइलकीरा पारावदरायहंसकोरंडा । वरकाककोंचकंजकपहुदीओ होंति अण्णे वि ॥ ३९०

यहांपर कोई जीव जातिस्मरणसे, कोई देवोंके प्रतिबोधित करनेसे, और कोई चारणमुनि आदिकके सदुपदेशसे सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥ ३८१ ॥

वे भोगभूमिज जीव देव-देवियोंके सदृश बत्तीस प्रशस्त लक्षणोंसे सहित, सुकुमार देहरूप विभवके धारक, समचतुरस्रसंस्थानसे संयुक्त होते हैं और उनका शरीर धातुमय होते हुए भी छेदा भेदा नहीं जा सकता। एवं अशुचित्वसे रहित होनेके कारण इनके शरीरमें मल व विष्टाका आस्रव नहीं होता ॥ ३८२-३८३ ॥

उन युगल नर-नारियोंके शरीर तैलमर्दन, उबटन और अंजनसे तथा मुख, दांत एवं नेत्रोंके धोने व नाखूनोंके काटनेसे रहित होते हुए भी शोभायमान होते हैं ॥ ३८४ ॥

वे अक्षर, चित्र, गणित, गन्धर्व और शिल्प इत्यादि चौंसठ कलाओंमें स्वभावसे ही अतिशय निपुण होते हैं ॥ ३८५ ॥

क्योंकि ये सब उत्तम युगल पारस्परिक प्रेममें अत्यन्त मुग्ध रहा करते हैं, इसीलिये उनके श्रावकके व्रत और संयम नहीं होता ॥ ३८६ ॥

वे नर-नारीयुगल कोयलके समान मधुरभाषी, किन्नरके समान कंठवाले, कुल-जातिके भेदसे रहित, सुखमें आसक्त, और दारिद्र्यसे रहित होते हैं ॥ ३८७ ॥

भोगभूमिमें उत्तम वर्णविशिष्ट, सरल, मन्दकषायी और नाना प्रकारकी जातियोंवाले तिर्यञ्च जीव युगल-युगलरूपसे होते हैं ॥ ३८८ ॥

भोगभूमिमें गाय, सिंह, हाथी, मगर, शूकर, सारंग, रोझ (वन्य), भैंस, वृक (भेड़िया), बन्दर, गवय, तेंदुआ, व्याघ्र, शृगाल, रीछ, भालू, मुर्गा, कोयल, तोता, कबूतर, राजहंस, कोरंड काक, क्रौंच और कंजक तथा और भी तिर्यञ्च होते हैं ॥ ३८९-३९० ॥

१ द ब °चउरगस्संसठाण. २ ब किर ण ण सक्का. ३ द ब °णयकंदणं. ४ द ब सयूदा. ५ ब °सज्जदा. ६ ब वग्घसिग्घालस्सभल्ला. ७ द किंजक, ब किंजकं.

जह मणुवाणं भोगा तह तिरियाणं हुवंति एदाणं । णियणियजोग्गत्तेणं फलकंदतणंकुरादीणि ॥ ३९१
वग्घादी भूमिचरा वायसपहुदी य खेयरा तिरिया । मंसाहारेण विणा भुंजंते सुरतरूण मुहुरफलं ॥ ३९२
हरिणादियंतणयचरा तह भोगमहीए तणाणि दिव्वाणि । भुंजंति जुगलजुगला उदयदिणेसप्पहा सव्वे ॥ ३९३
कालम्मि सुसमसुसमे चउकोडाकोडिउवहिउवमाणं । पढमादो हीयंते उच्छेहाऊबलद्धितेआदी ॥ ३९४
उच्छेहपहुदि खीणे सुसमो णामेण पविसदे कालो । तस्स पमाणं सायरउवमाणं तिण्णि कोडिकोडीओ ॥ ३९५
सुसमस्सादिम्मि णराणुच्छेहो चउसहस्सचावाणि । दो पल्लपमाणाऊ संपुण्णमियंकसरिसपहा ॥ ३९६
दं ४०००।
अट्ठावीसुत्तरसयमट्ठी पुट्ठीय होंति एदाणं । अच्छरसरिसा इत्थी तिदससरिच्छा णरा होंति ॥ ३९७
तस्सिं काले मणुवा अक्खप्फलसरिसमभिदआहारं । भुंजंति छट्ठभत्ते समचउरस्संगसंठाणा ॥ ३९८
तस्सिं संजादाणं सयणोवरि बालयाण सुत्ताणं । णियअंगुट्ठविलिहणे पंच दिणाणिं पवच्चंति ॥ ३९९

यहां जिसप्रकार मनुष्योंके भोग होते हैं उसीप्रकार इन तिर्यञ्चोंके भी अपनी अपनी योग्यतानुसार फल, कंद, तृण और अंकुरादिरूप भोग होते हैं ॥ ३९१ ॥

वहां व्याघ्रादिक भूमिचर और काकप्रभृति नभचर तिर्यञ्च मांसाहारके विना कल्पवृक्षोंका मधुर फल भोगते हैं ॥ ३९२ ॥

तथा भोगभूमिमें उदयकालीन सूर्यके समान प्रभावाले समस्त हरिणादिक तृणजीवी पशुओंके युगल दिव्य तृणोंका भक्षण करते हैं ॥ ३९३ ॥

चार कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण सुषमसुषमा कालमें पहिलेसे शरीरकी उंचाई, आयु, बल, ऋद्धि और तेज आदि हीन हीन होते जाते हैं ॥ ३९४ ॥

इसप्रकार उत्सेधादिकके क्षीण होनेपर सुषमा नामका द्वितीय काल प्रविष्ट होता है। उसका प्रमाण तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ॥ ३९५ ॥

सुषमाकालके आदिमें मनुष्योंके शरीरका उत्सेध चार हजार धनुष, आयु दो पल्योपमप्रमाण, और प्रभा (शरीरकी कान्ति) पूर्ण चन्द्रमाके सदृश होती है ॥३९६॥ दं. ४०००।

इनके पृष्ठभागमें एकसौ अट्ठाईस हड्डियां होती हैं। उस समय अप्सराओं जैसी स्त्रियां और देवों जैसे पुरुष होते हैं ॥ ३९७ ॥

उस कालमें मनुष्य समचतुरस्रसंस्थानसे युक्त होते हुए षष्ठ भक्तमें अर्थात् तीसरे दिन अक्ष (बहेड़ा) फलके बराबर अमृतमय आहारको ग्रहण करते हैं ॥ ३९८ ॥

उस कालमें उत्पन्न हुए बालकोंके शय्यापर सोते हुए अपने अंगूठेके चूसनेमें पांच दिन व्यतीत होते हैं ॥ ३९९ ॥

१ ब तणचारा. २ द चउकोडा. ३ द ब तेआयं. ४ द ब णरा उच्छेहो. ५ ब सरिसा. ६ द भविदआहारं. ७ द विलीहणे. ८ द ब दिणाणेव वच्चंति.

बहुसणअत्थिरगमणं थिरगमणकलागुणेण पत्तेक्कं । तारुण्णेणं[1] सम्मग्गहणेणं जंति[2] पंचदिणं ॥ ४००
एत्तियमेत्तविसेसं मोत्तूणं सेसवण्णणपयारा । सुसमसुसममि काले जे भणिदा एत्थ वत्तव्वा ॥ ४०१
कालम्मि सुसमणामे तियकोडीकोडिउवहिउवमम्मि । पढमादो हायंते उच्छेहाऊबलद्धितेजादी ॥ ४०२
उच्छेहपहुदिखीणे पविसेदि हु सुसमदुस्समो कालो ।
तस्स पमाणं सायरउवमाणं दोण्णि कोडिकोडीओ ॥ ४०३
तक्कालादिम्मि णराणुच्छेहो दो सहस्सचावाणि । एक्कपलिदोवमाऊ पियंगुसारिच्छवण्णधरा ॥ ४०४
चउसट्ठी पुट्ठीए णराण णारीण होंति अट्ठी वि । अच्छरसरिसा णारी अमरसमाणो णरो होदि ॥ ४०५
तक्काले ते मणुवा आमलकपमाणममियआहारं । भुंजंति दिणंतरिया समचउरस्संगसंठाणा ॥ ४०६
तस्सिं संजादाणं सयणोवरि बालयाण सुत्ताणं । णियअंगुट्ठविलिहणे सत्त दिणाणि[3] पवच्चंति ॥ ४०७
बहुसणअत्थिरगमणं थिरगमणकलागुणेण पत्तेक्कं । तारुण्णेणं सम्मग्गहणंजोगेण सत्तदिणं ॥ ४०८

पश्चात् उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिरगमन, कलागुणप्राप्ति, तारुण्य और सम्यक्त्वग्रहणकी योग्यता, इनमेंसे प्रत्येक अवस्थामें उन बालकोंके पांच पांच दिन जाते हैं ॥ ४०० ॥

उपर्युक्त इतनीमात्र विशेषताको छोड़कर शेष वर्णनके प्रकार जो सुषमसुषमा कालमें कहे गये हैं, उन्हें यहांपर भी कहना चाहिये ॥ ४०१ ॥

तीन कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण सुषमा नामक कालमें पहिलेसे ही उत्सेध, आयु, बल, ऋद्धि और तेज इत्यादिक उत्तरोत्तर हीन हीन होते जाते हैं ॥ ४०२ ॥

उत्सेधादिकके क्षीण होनेपर सुषमदुषमा काल प्रवेश करता है । उस कालका प्रमाण दो कोड़ाकोड़ी सागरोपम है ॥ ४०३ ॥

उस कालके प्रारम्भमें मनुष्योंकी ऊंचाई दो हजार धनुष, आयु एक पल्योपमप्रमाण और वर्ण प्रियंगु फलके समान होता है ॥ ४०४ ॥

उस कालमें स्त्री-पुरुषोंके पृष्ठभागमें चौंसठ हड्डियां होती हैं, तथा नारियां अप्सराओंके समान और पुरुष देवोंके समान होते हैं ॥ ४०५ ॥

उस कालमें वे मनुष्य समचतुरस्रसंस्थानसे युक्त होते हुए एक दिनके अन्तरालसे आंवलेके बराबर अमृतमय आहारको ग्रहण करते हैं ॥ ४०६ ॥

उस कालमें उत्पन्न हुए बालकोंके शय्यापर सोते हुए अपने अंगूठेके चूसनेमें सात दिन व्यतीत होते हैं ॥ ४०७ ॥

इसके पश्चात् उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिरगमन, कलागुणप्राप्ति, तारुण्य और सम्यक्त्वग्रहणकी योग्यता, इनमेंसे प्रत्येक अवस्थामें क्रमशः सात सात दिन जाते हैं ॥ ४०८ ॥

---

१ द तरुणोणं, ब तारुणेणं. २ द ब जोग जुत्ति. ३ द ब जो मणिदो. ४ द ब णराउच्छेहो. ५ द णियअंगुट्ठालहणे. ६ द ब दिणाणं.

णत्तियमेत्तविसेसं मोत्तूणं सेसवण्णणपयारा । कालम्मि सुसमणामे जे भणिदा एत्थ वत्तव्वा ॥ ४०९
भोगखिदीए ण होंति हु चोरारिप्पहुदिविविहबाधाओ । असिपहुदिच्छकम्मा सीदादववादवरिसाणि ॥ ४१०
गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणा कमसो । उवजोगो कहिदव्वा भोगखिदीसंभवाण जहजोग्गं[1] ॥ ४११
जीवसमासा दोण्णि य णिव्वत्तियपुण्णपुण्णभेदेणं । पज्जत्ती छब्भेया तेत्तियमेत्ता अपज्जत्ती ॥ ४१२
अक्खा मणवचिकाआ उस्सासाऊ हुवंति दस पाणा । पज्जत्ते[2] इदरम्मि मणवचिउस्सासपरिहीणा ॥ ४१३
चउसण्णा णरतिरिया सयला तसकाय जोगएक्कारं । चउमणचउवयणाइं ओरालदुगं च कम्मइयं[3] ॥ ४१४
पुरिसित्थीवेदजुदं सयलकसाएहिं संजुदा णिच्चं । छण्णाणअजदा ताइं मदिओहीणाणसुदणाणे ॥ ४१५
मदिसुदअण्णाणाइं विभंगणाणं असंजदा सव्वे । तिदंसणा य ताइं चक्खुअचक्खूहिं ओहिदंसणयं ॥ ४१६
भोगापुण्णं मिच्छे सासणसम्मे य असुहतियलेस्सं ।
काऊ जहण्ण सम्मे मिच्छचउक्के सुभतियं पुण्णे[4] ॥ ४१७

इतनीमात्र विशेषताको छोड़कर शेष वर्णनके प्रकार, जो सुषमा नामक कालमें कह आये हैं, वही यहांपर भी कहना चाहिये ॥ ४०९ ॥

भोगभूमिमें चोर एवं शत्रु आदिकी विविध बाधायें, असि इत्यादिक छह कर्म, और शीत, आतप, वात्या (प्रचंड वायु) एवं वर्षा नहीं होती ॥ ४१० ॥

भोगभूमिमें उत्पन्न हुए जीवोंके यथायोग्य गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपयोग, इनका क्रमसे कथन करना चाहिये ॥ ४११ ॥

इन जीवोंके निर्वृत्यपर्याप्त और पर्याप्तके भेदसे दो जीवसमास, छह प्रकारकी पर्याप्तियां और इतनी ही अपर्याप्तियां भी होती है ॥ ४१२ ॥

उनके पर्याप्त अवस्थामें पांचों इन्द्रियां, मन, वचन, काय, श्वासोच्छ्वास और आयु, ये दश प्राण; तथा इतर अर्थात् अपर्याप्त अवस्थामें मन, वचन और श्वासोच्छ्वाससे रहित शेष सात प्राण होते हैं ॥ ४१३ ॥

उन जीवोंके आहार, भय, मैथुन और परिग्रह, ये चारों संज्ञायें होती हैं। चौदह मार्गणाओंमेंसे गतिकी अपेक्षा वे जीव मनुष्य और तिर्यंच; इन्द्रियकी अपेक्षा सकल अर्थात् पंचेन्द्रिय; कायकी अपेक्षा त्रस; योगकी अपेक्षा चार मन, चारों वचन, दो औदारिक (औदारिक, औदारिक-मिश्र), कार्मण, इसप्रकार ग्यारह योग; वेदकी अपेक्षा पुरुष और स्त्रीवेदसे युक्त; कषायकी अपेक्षा नित्य सभी कषायोंसे संयुक्त; ज्ञानकी अपेक्षा मति, श्रुत, अवधि, मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान और विभंग ये छह ज्ञान; संयमकी अपेक्षा सब ही असंयत; दर्शनकी अपेक्षा चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन ये तीन दर्शन; लेश्याकी अपेक्षा भोगभूमिजोंके अपर्याप्त अवस्थामें मिथ्यात्व एवं सासादन गुणस्थानमें तीन अशुभ लेश्यायें, और चतुर्थ गुणस्थानमें कपोत लेश्याका जघन्य अंश, तथा पर्याप्त

---

१ द ब जो मणिदो. २ द जहजोगं. ३ द मणुवचिं. ४ द ब पज्जत्ती. ५ ब उरालदुगं. ६ द ब पुण्णग. ७ ब पुणे.

भव्वाभव्वा छस्सम्मत्ता उवसंमियखइयसम्मत्ता । तह वेदयसम्मत्तं सासणमिस्सा य मिच्छो य ॥ ४१८
सण्णी जीवा होंति हु दोण्णि य आहारिणो अणाहारा । सायारअणायारा उवजोगा होंति णियमेणं ॥ ४१९
मंदकसायेण जुदा उदयागदसत्थपयडिसंजुत्ता । विविहविणोदासत्ता णरतिरिया भोगजा होंति ॥ ४२०
पल्लिदोवमट्ठमंसे किंचूणे तदियकालअवसेसे । पढमो कुलकरपुरिसो उप्पज्जदि पडिसुदी सुवण्णणिहो ॥ ४२१
एक्कसहस्सं अडसयसहिदं चावाणि तस्स उच्छेहो । पल्लस्स दसमभागो आऊ देवी सयंपहा णाम ॥ ४२२

१८०० । प १/१०

णभगजघंटणिभाणिं चंदाइच्चाण मंडलाणि तदा । आसाढपुण्णिमाए दट्ठूणं भोगभूमिजा सव्वे ॥ ४२३
आकंसिकमदिघोरं उप्पादं जादमेदमिदि मत्ता । पज्जाउला पकंपं पत्ता पवणेण पहदरुक्खो व्व ॥ ४२४
पडिसुदिणामो कुलकरपुरिसो एदाण देइ अभयगिरं । तेअंगा कालवसा संजादा मंदकिरणोघा ॥ ४२५
तक्कारणेण एण्हिं समहररविमंडलाणि गयणम्मि । पयडाणि णत्थि तुम्हं एदाण दिसाए भयहेदू ॥ ४२६

अवस्थामें मिथ्यात्वादि चारों गुणस्थानोंमें तीन शुभ लेश्यायें; भव्यत्वकी अपेक्षा भव्य और अभव्य; सम्यक्त्वकी अपेक्षा औपशमिक, सम्यक्त्व क्षायिक सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व, सासादन, मिश्र और मिथ्यात्व ये छहों सम्यक्त्व; संज्ञीकी अपेक्षा संज्ञी; और आहारमार्गणाकी अपेक्षा आहारक एवं अनाहारक दोनों ही होते हैं। इनके साकार (ज्ञान) और अनाकार (दर्शन) दोनों ही उपयोग नियमसे होते हैं ॥ ४१४–४१९ ॥

ये भोगभूमिज मनुष्य और तिर्यंच मन्द कषायसे युक्त, उदयमें आयी हुई पुण्यप्रकृतियोंसे संयुक्त, एवं विविध प्रकारके विनोदोंमें आसक्त होते हैं ॥ ४२० ॥

कुछ कम एक पल्योपमके आठवें भागमात्र तृतीय कालके शेष रहनेपर सुवर्णके सदृश प्रभासे युक्त प्रतिश्रुति नामक प्रथम कुलकर पुरुष उत्पन्न होता है ॥ ४२१ ॥

उसके शरीरका उत्सेध एक हजार आठसौ धनुष, आयु पल्यके दशवें भागप्रमाण, और देवी स्वयंप्रभा नामक थी ॥ ४२२ ॥ उत्सेध दं. १८००, आयु प. १/१०।

उस समय समस्त भोगभूमिज आषाढ़ मासकी पूर्णिमाको आकाशरूपी हाथीके घंटेके सदृश चन्द्र और सूर्यके मण्डलोंको देखकर 'यह कोई आकस्मिक महा भयानक उत्पात हुआ है' ऐसा समझकर व्याकुल होते हुए वायुसे आहत वृक्षके समान प्रकम्पनको प्राप्त हुए ॥ ४२३–४२४ ॥

तब प्रतिश्रुति नामक कुलकर पुरुषने उनको निर्भय करनेवाली वाणीसे बतलाया कि कालवश अब तेजांग जातिके कल्पवृक्षोंके किरणसमूह मंद पड़ गये हैं, इस कारण इस समय आकाशमें चन्द्र और सूर्यके मण्डल प्रगट हुए हैं। इनकी ओरसे तुम लोगोंको भयका कोई कारण नहीं है ॥ ४२५–४२६ ॥

---

१ द चेवसमिय. २ द ब सयंपहो. ३ द प १०।९। ४ द ब णिभाणं. ५ द ब जादमोदमिदि. ६ द मदिसुदि. ७ द ब यण्हि. ८ द ब भयदेहो.

णिचं चिय एदाणं उदयत्थमणाणि होंति आयासे । पडिहदकिरणाण[1] पुढं तेयंगदुमाण तेएहिं ॥ ४२७
जंबूदीवे मेरुं कुव्वंति पदाहिणं तरणिचंदा । रत्तिदिणाण विभागं कुणमाणा[2] किरणसत्तीए ॥ ४२८
सोऊण तस्स वयणं संजादा णिब्भया तदा सव्वे । अच्चंति चलणकमले[3] थुणंति बहुविहपयारेहिं ॥ ४२९
पडिसुदिमरणादु तदा पल्लस्सासीदिमंसविच्छेदे । उप्पज्जदि विदियमणू सम्मदिणामो सुवण्णणिहो ॥ ४३०

प १
८०

पणसहस्सं तिसयस्साहिदं दंडाणि तस्स उच्छेहो । पलिदोवमसदभागं आऊ देवी जसस्सदी णामो ॥ ४३१

दंड १३०० । प १
१००

तक्काले तेयंगा णट्ठपमाणा हुवंति ते सव्वे । तत्तो सूरत्थमणे दट्ठूण तमाइ ताराइं ॥ ४३२
उप्पादा अइघोरा अदिट्ठपुव्वा विअंभिदो एदे । इय भोगजणरतिरिया णिब्भरभयभंभला जादा ॥ ४३३
सम्मदिणामो कुलकरपुरिसो भीदीण देदि अभयगिरं । तेयंगा कालवसा णिम्मूलपणट्ठकिरणोघा ॥ ४३४
तेण तमं वित्थरिदं ताराणं मंडलं पि गयणतले । तुम्हाण[4] णत्थि किंचि वि एदाण दिसाय भयहेदू ॥ ४३५

आकाशमें यद्यपि इनका उदय और अस्त नित्य ही होता रहा है, परन्तु तेजांग जातिके कल्पवृक्षोंके तेजसे इनकी किरणोंके प्रतिहत होनेसे वे पहिले प्रगट नहीं दिखते थे ॥४२७॥

जम्बूद्वीपमें ये सूर्य और चन्द्रमा अपनी किरणशक्तिसे रात्रि-दिनके विभागको करते हुए मेरु पर्वतकी प्रदक्षिणा किया करते हैं ॥ ४२८ ॥

इसप्रकार उन प्रतिश्रुति कुलकरके वचनोंको सुनकर वे सब नर-नारी निर्भय होकर बहुत प्रकारसे उनके चरणकमलोंकी पूजा और स्तुति करते हैं ॥ ४२९ ॥

प्रतिश्रुति कुलकरकी मृत्युके पश्चात् पल्यके अस्सीवें भागके व्यतीत हो जानेपर सुवर्णके समान कान्तिवाला सन्मति नामक द्वितीय मनु उत्पन्न होता है ॥ ४३० ॥ प. $\frac{१}{८०}$ ।

उसके शरीरकी ऊंचाई एक हजार तीनसौ धनुष, आयु पल्योपमके सौवें भागप्रमाण, तथा देवीका नाम यशस्वती था ॥ ४३१ ॥ उत्सेध दं. १३००, आयु प. $\frac{१}{१००}$ ।

उस समय वे सब तेजांग जातिके कल्पवृक्ष नष्टप्राय होजाते हैं, इसीलिये सूर्यके अस्तंगत होनेपर अन्धकार और ताराओंको देखकर 'ये अत्यन्त भयानक अदृष्टपूर्व उत्पात प्रकट हुए' इसप्रकार वे भोगभूमिज मनुष्य और तिर्यंच अत्यन्त भयसे व्याकुल हुए ॥ ४३२-४३३ ॥

तब सन्मति नामक कुलकर इन भयभीत हुए भोगभूमिजोंको निर्भय करनेवाली वाणीसे बतलाते हैं कि अब कालवशसे तेजांग कल्पवृक्षोंके किरणसमूह सर्वथा प्रनष्ट होचुके हैं। इस कारण आकाशप्रदेशमें इस समय अन्धकार और ताराओंका समूह भी फैल गया है। तुम लोगोंको इनकी ओरसे कुछ भी भयका कारण नहीं है ॥ ४३४-४३५ ॥

---

१ ब पदाणि. २ द ब किरणाणि. ३ ब कुणमाणो. ४ द °कमलो. ५ द विअन्विदा, ब विअंविदा. ६ द भयमेत्तड्ढा, ब मब्भला. ७ द ब भेदाण देवि. ८ द ब तम्हाण.

अत्थि सदा अंधारं ताराओ तेयंगतरुगणेहिं[1] । पडिहदकिरणा पुव्वं कालवसेणज्ज पायडा[2] जादा ॥ ४३६
जंबूदीवे मेरुं कुव्वंति पदाहिणं गहा तारा । णक्खत्ता णिच्चं ते तेजविणासा तमो होदि ॥ ४३७
सोऊण तस्स वयणं संजादा णिब्भया तदा सव्वे । अच्चंति चरणकमले थुणंति विविहेहि भंगेहिं[3] ॥ ४३८
सम्मदिसग्गपवेसे अट्ठसयावहिदपल्लविच्छेदे । खेमंकरो त्ति कुलकरपुरिसो उप्पज्जदे तदियो ॥ ४३९
अट्ठसयचावतुंगो सहस्सहरिदेक्कपल्लपरमाऊ । चामीयरसमवण्णो तस्स सुणंदा महादेवी ॥ ४४०

दं ८०० । प १/१०००

वग्घादितिरियजीवा कालवसा कूरभावमावण्णा । तब्भयदो भोगणरा सव्वे अच्चाउला[4] जादा ॥ ४४१
खेमंकरणाम मणू भीदाणं देदि[5] दिव्वउवदेसं[6] । कालस्स विकारादो एदे कूरत्तणं पत्ता ॥ ४४२
ता एण्हिं विस्सासं पावाणं मा करेज्ज कइयां वि । तासेज्ज कलुसवयणा इय भणिदे णिब्भया जादा ॥ ४४३

अंधकार और तारागण तो सदा ही रहते हैं, किन्तु पूर्वमें तेजांग जातिके कल्पवृक्षोंके समूहोंसे वे प्रतिहतकिरण थे, सो अब आज कालके वशसे प्रकट होगये हैं ॥ ४३६ ॥

ये ग्रह, तारा और नक्षत्र जम्बू द्वीपमें नित्य ही मेरुकी प्रदक्षिणा किया करते हैं। तेजके विनाशसे ही अन्धकार होरहा है ॥ ४३७ ॥

तब कुलकरके वचनको सुनकर वे सब निर्भय हो गये और विविध प्रकारसे इसके चरणकमलोंकी पूजा और स्तुति करने लगे ॥ ४३८ ॥

सन्मति नामक इस द्वितीय कुलकरके स्वर्गारोहण करनेपर आठसौसे भाजित एक पल्यके पश्चात् क्षेमंकर नामक तीसरा कुलकर पुरुष उत्पन्न हुआ ॥ ४३९ ॥ प. $\frac{१}{८००}$ ।

इस कुलकरके शरीरकी उंचाई आठसौ धनुष, आयु हजारसे भाजित एक पल्यप्रमाण, और वर्ण सुवर्ण जैसा था। इसके सुनन्दा नामक महादेवी थी ॥ ४४० ॥

उंचाई दं. ८००, आयु प. $\frac{१}{१०००}$ ।

उस समय कालवश व्याघ्रादिक तिर्यञ्च जीव क्रूरताको प्राप्त हो गये थे। इस कारण सब भोगभूमिज मनुष्य उनके भयसे अत्यन्त व्याकुल हुए ॥ ४४१ ॥

तब क्षेमंकर नामक मनु उन भयभीत प्राणियोंको दिव्य उपदेश देते हैं कि कालके विकारसे ये तिर्यंच जीव क्रूरताको प्राप्त हुए हैं, इसलिये अब इन पापियोंका विश्वास कदापि मत करो; ये विकृतमुख प्राणी तुम्हें त्रास दे सकते हैं। उनके ऐसा कहनेपर वे भोगभूमिज निर्भयताको प्राप्त हुए ॥ ४४२-४४३ ॥

१ द तेयअंतरगतेहिं, ब तेयअंगतरगतेहिं. २ द पायदा. ३ द ब विविहेरमंतेहिं. ४ द ब सट्ठ°. ५ द ब तब्भयदा. ६ द अच्चाउला. ७ द ब अभयदाणं देहि. ८ ब उवएसं. ९ द ब कइयामि, १० द ब कलुववयणा.

तम्मणुवे तिदसगदे अट्ठसहस्सावहरिदपल्लम्मि । अंतरिदे उप्पज्जदि तुरिमो खेमंधरो य मणू ॥ ४४४

१
८०००

तस्सुच्छेहो दंडा सत्तसया पंचहत्तरीजुत्ता । सयकदिहिदेकपल्ला आउपमाणं पि एदस्स ॥ ४४५

१
७७५ । १००००

सो कंचणसमवण्णो देवी विमल त्ति तस्स विक्खादा । तक्काले सीहादी कूरयमा खंति मणुवमंसाइं ॥ ४४६
सीहप्पहुदिभएणं अदिभीदा भोगभूमिजा ताधे[3] । उवदिसदि मणू ताणं दंडादि सुरक्खणोपायं ॥ ४४७
तम्मणुवे णाकगदे सीदिसहस्सावहरिदपल्लम्मि । अंतरिदे पंचमओ जम्मदि सीमंकरो त्ति मणू ॥ ४४८

१
८००००

तस्सुच्छेहो दंडा पण्णासब्भहियसत्तसयमेत्ता । लक्खेण भजिदपल्लं आऊ वण्णो सुवण्णणिहो ॥ ४४९

१
७५० । १००००००

देवी तस्स पसिद्धा णामेण मणोहरि त्ति तक्काले । कप्पतरू अप्पफला अदिलोहो होदि[6] मणुवाणं ॥ ४५०

उस कुलकरका स्वर्गवास होनेपर आठ हजारसे भाजित पल्यप्रमाण कालके अनन्तर क्षेमंधर नामक चतुर्थ मनु उत्पन्न हुआ ॥ ४४४ ॥ प. $\frac{१}{८०००}$ ।

उसके शरीरकी उंचाई सातसौ पचत्तर धनुष और आयु सौके वर्गसे भाजित एक पल्यप्रमाण थी ॥ ४४५ ॥ उंचाई दं. ७७५; आयु प. $\frac{१}{१००००}$ ।

उसका वर्ण सुवर्णके समान और देवी 'विमला' इस नामसे विख्यात थी। उस समय क्रूरताको प्राप्त हुए सिंहादिक मनुष्योंके मांसको खाने लगे थे ॥ ४४६ ॥

तब सिंहादिकके भयसे अत्यन्त भयभीत हुए भोगभूमिजोंको क्षेमंधर मनुने उनसे अपने सुरक्षणके उपायभूत दण्डादिकके रखनेका उपदेश दिया ॥ ४४७ ॥

इस कुलकरके स्वर्गगमनके पश्चात् अस्सी हजारसे भाजित पल्यप्रमाण कालके अन्तरसे पांचवें सीमंकर मनुका जन्म हुआ ॥ ४४८ ॥ $\frac{१}{८००००}$ ।

उसके शरीरका उत्सेध सातसौ पचास धनुष, आयु एक लाखसे भाजित पल्यप्रमाण, और वर्ण सुवर्णके सदृश था ॥ ४४९ ॥ उंचाई दं. ७५०; आयु प. $\frac{१}{१००००००}$ ।

उसकी देवी मनोहरी नामसे प्रसिद्ध थी। इस कुलकरके समयमें कल्पवृक्ष अल्प फल देने लगे थे, और मनुष्योंमें लोभ अत्यन्त हो चला था ॥ ४५० ॥

---

१ द ब खेमंधरा. २ द ब विक्खादो. ३ द ब कूरमया. ४ द तावे, ब तावो. ५ द ब पंचमवी. ६ द अदिलोहादि.

सुरतरुलुद्धा जुगला अण्णोण्णं ते कुणंति संवादं । सीमंकरेण सीमं काऊण णिवारिदा सव्वे ॥ ४५१
सिक्खं कुणंति ताणं पडिसुदिपहुदी कुलंकरा पंच । सिक्खणकम्मणिमित्तं दंडं कुव्वंति हाकारं ॥ ४५२
तम्मणुवे तिदिवगदे अडलक्खावहिदपल्लपरिकंते । सीमंधरो त्ति छट्ठो उप्पज्जदि कुलकरो पुरिसो ॥ ४५३

१
८०००००

तस्सुच्छेहो दंडा पणवीसब्भहियसत्तसयमेत्ता । दसलक्खभजिदपल्लं आऊ देवी जसोधरा णाम ॥ ४५४

१
दंड ७२५ । प १०००००००

तक्काले कप्पदुमा अदिविरला अप्पफलरसा होंति । भोगणराणं तेसुं कलहो उप्पज्जदे णिच्चं ॥ ४५५
सव्वकलहणिवारणहेदूओ ताण कुणइ सीमाणं । तरुगच्छादी चिण्हं तेण य सीमंकरो भणिदो ॥ ४५६
तम्मणुवे सग्गगदे असीदिलक्खावहरिदपल्लम्मि । वोलीणे उप्पण्णो सत्तमओ विमलवाहणो त्ति मणू ॥४५७

१
८०००००००

वे भोगभूमिजयुगल कल्पवृक्षोंके विषयमें लोभयुक्त होकर परस्परमें विवाद करने लगे थे। तब सीमंकर कुलकरने सीमा करके उन सबको परस्परके संघर्षसे रोका ॥ ४५१ ॥

उपर्युक्त प्रतिश्रुति आदिक पांच कुलकर उन भोगभूमिजोंको शिक्षा करते है और इस शिक्षणकार्यके निमित्त 'हा' इसप्रकारका दण्ड भी करते है ॥ ४५२ ॥

इस कुलकरके स्वर्गगमनके पश्चात् आठ लाखसे भाजित पल्यप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर सीमन्धर नामक छठा कुलकर पुरुष उत्पन्न होता है ॥ ४५३ ॥ $८०\frac{१}{०००००}$ ।

उसके शरीरका उत्सेध सातसौ पचीस धनुष और आयु दश लाखसे भाजित पल्यप्रमाण थी। इसकी देवीका नाम यशोधरा था ॥ ४५४ ॥ दं. ७२५ । प. $१००\frac{१}{०००००}$ ।

इस कुलकरके समयमें कल्पवृक्ष अत्यन्त विरल और अल्प फल व रससे युक्त हो जाते है, इसीलिये भोगभूमिज मनुष्योंके बीच इनके विषयमें नित्य ही कलह उत्पन्न होने लगता है ॥ ४५५ ॥

वह छठा कुलकर इस सब कलहको दूर करनेके निमित्तभूत वृक्षसमूहादिकको चिह्नरूप मानकर सीमा नियत करता है, इसीलिये वह सीमङ्कर कहा गया है ॥ ४५६ ॥

इस मनुके स्वर्गगमनके पश्चात् अस्सी लाखसे भाजित पल्यप्रमाण कालका व्यतिक्रम होनेपर विमलवाहन नामक सातवां मनु उत्पन्न हुआ ॥ ४५७ ॥ प. $८०\frac{१}{०००००}$ ।

१ द सुरतरुलद्धा. २ द हकारं. ३ द ब °वाहण त्ति.

सत्तसयचावतुंगो इगिकोडीभजिदपल्लपरमाऊ । कंचणसरिच्छवण्णो सुमदीणामा महादेवी ॥ ४५८

१
दंड ७०० । प १०००००००

तक्काले भोगणरा गमणागमणेहि पीडिदा संता । आरोहंति करिंदप्पहुदिं तस्सोवदेसेणं ॥ ४५९

सत्तमए णाकगदे अडकोडीभजिदपल्लविच्छेदे । उप्पज्जदि[1] अट्ठमओ चक्खुम्मो कणयवण्णतणू ॥ ४६०

१
प ८०००००००

तस्सुच्छेहो दंडा पणवीसविहीणसत्तसयमेत्ता । दसकोडिभजिदमेक्कं पलिदोवममाउपरिमाणं ॥ ४६१

१
६७५ । प १०००००००००

देवी धारिणिणामा तक्काले भोगभूमिजुगलाणं । संजणिदे णियबाले दट्ठूण महब्भयं होदि ॥ ४६२

एस मणू भीदाणं[2] ताणं भासेदि दिव्वमुवदेसं । तुम्हाण[3] सुदा एदे पेच्छह पुण्णिंदुसुंदरं वयणं ॥ ४६३

तम्मणुउवएसादो बालकवयणाणि दोक्खिदूण पुढं । भोगणरा तक्काले आउविहीणा विलीयंति ॥ ४६४

यह मनु सातसौ धनुषप्रमाण ऊंचा, एक करोड़से भाजित पल्यप्रमाण आयुका धारक और सुवर्णके सदृश वर्णवाला था। इसके सुमती नामकी महादेवी थी ॥ ४५८ ॥

उंचाई दं. ७००, आयु प. $\frac{१}{१०००००००}$।

इसके समयमें गमनागमनसे पीड़ाको प्राप्त हुए भोगभूमिज मनुष्य इस मनुके उपदेशसे हाथी आदिकपर सवार होने लगे ॥ ४५९ ॥

सप्तम कुलकरके स्वर्गस्थ होनेपर आठ करोड़से भाजित पल्यप्रमाण कालके पश्चात् सुवर्णके सदृश वर्णवाले शरीरसे युक्त चक्षुष्मान् नामक आठवां कुलकर उत्पन्न होता है ॥ ४६० ॥

प. $\frac{१}{८०००००००}$।

उसके शरीरकी उंचाई पच्चीस कम सातसौ धनुष और आयु दश करोड़से भाजित एक पल्योपमप्रमाण थी ॥ ४६१ ॥ दं. ६७५। प. $\frac{१}{१०००००००००}$।

इस कुलकरके धारिणी नामकी देवी थी। इसके समयमें उत्पन्न हुए अपने बालयुगलको देखकर भोगभूमिज युगलोंको महा भय उपस्थित होता है ॥ ४६२ ॥

तब यह आठवां मनु उन भयभीत भोगभूमिजयुगलोंको दिव्य उपदेश देता है कि ये तुम्हारे पुत्र-पुत्री हैं, इनके पूर्ण चन्द्रके समान सुन्दर मुखको देखो ॥ ४६३ ॥

इसप्रकार इस मनुके उपदेशसे स्पष्टरूपसे अपने बालकोंके मुखको देखकर वे भोगभूमिज युगल तत्काल ही आयुसे रहित होकर विलीन हो जाते थे ॥ ४६४ ॥

---

१ द ब उप्पण्णदि. २ ब साजणिदे. ३ द ब मेदाणं. ४ द ब तुम्हेण.

अट्ठमए णाकगदे असीदिकोडीहिं भजिदपल्लम्मि । वोलीणे उप्पज्जदि जलसिंहणामो मणू णवमो ॥ ४६५

१
८०००००००० |

पण्णासाधियछस्सयकोदंडपमाणदेहउच्छेहो । कंचणवण्णसरीरो सयकोडीभजिदपल्लाऊ ॥ ४६६

१
६५० । १०००००००००० |

णामेण कंतमाला हुवेदि देवी इमस्स तक्काले । णामकरणुच्छवट्ठं उवदेसं देदि जुगलाणं ॥ ४६७
लद्धूणं उवदेसं णामाणि कुणंति ते वि बालाणं । णिवसिय थोवं कालं पक्खीणाऊ विलीयंति ॥ ४६८

णवमे सुरलोयगदे अट्ठसयकोडीहिं भाजिदपल्लम्मि । अंतरिदे उप्पज्जदि अभिचंदो णाम दसममणू ॥ ४६९

१
८०००००००० |

पणुवीसाधियछस्सयकोदंडपमाणदेहउच्छेहो । कोडीसहस्सभाजिदा पलिदोवममेत्तपरमाऊ ॥ ४७०

१
६२५ । १०००००००००० |

कंचणसमाणवण्णो देवी णामेण सिरिमदी तस्स । सो वि सिसूणं रोदणवारणहेदू कहेदि उवदेसं ॥ ४७१

आठवें कुलकरके स्वर्गगमनके पश्चात् अस्सी करोड़से भाजित पल्यके व्यतीत होनेपर यशस्वी नामक नवम मनु उत्पन्न हुआ ॥ ४६५ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००}$ ।

इसका शरीर सुवर्ण जैसे वर्णवाला था, जो छहसौ पचास धनुष ऊंचा था और आयु सौ करोड़से भाजित पल्योपमप्रमाण थी ॥ ४६६ ॥ ऊंचाई दं. ६५०; आयु प. $\frac{१}{१००००००००}$ ।

इसके कान्तमाला नामकी देवी थी। उस समय यह कुलकर युगलोंको अपनी सन्तानके नामकरणके उत्सवके लिये उपदेश देता है ॥ ४६७ ॥

इस उपदेशको पाकर वे युगल भी बालकोंके नामोंको करते हैं और थोड़े समय रहकर आयुके क्षीण होनेपर विलीन होजाते हैं ॥ ४६८ ॥

नवम कुलकरके स्वर्गस्थ होनेपर आठसौ करोड़से भाजित पल्यके अनन्तर अभिचन्द्र नामक दशवां मनु उत्पन्न होता है ॥ ४६९ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००}$ ।

उसके शरीरकी ऊंचाई छहसौ पच्चीस धनुष और आयु एक हजार करोड़से भाजित पल्योपमप्रमाण थी ॥ ४७० ॥ दं. ६२५ । प. $\frac{१}{१०००००००००}$ ।

उसके शरीरका वर्ण सुवर्णके समान और देवीका नाम श्रीमती था। वह भी बालकोंके रुदनको रोकनेके निमित्त उपदेश देता है ॥ ४७१ ॥

१ ब परिखीणाऊ. २ द णवमो.

रत्तीए ससिबिंबं दरिसिय खेलावणाणि कादूणं । ताण वअणोवदेसं सिक्खावइ कुणइ जदणं मि ॥ ४७२
सोऊणं उवएसं भोगणरा तह करंति बालाणं । अच्छिय थोवदिणाइं पक्खीणाऊ विलीयंति ॥ ४७३
लोभेणाभिहदाणं सीमंकरपहुदिकुलकरा पंच । ताणं सिक्खणहेदू हा-मा-कारं कुणंति दंडत्थं ॥ ४७४
अभिचंदे तिदिवगदे दसघणहदअट्ठकोडिहिदपल्ले । अंतरिदे चंदाभो एक्कारसमो हुवेदि मणू ॥ ४७५

$$\frac{1}{८०००००००००}$$

छस्सयदंडुच्छेहो वरचामीयरसरिच्छतणुवण्णो । दसकोडिसहस्सेहिं भाजिदपल्लुप्पमाणाऊ ॥ ४७६

$$\frac{1}{\text{दं } ६०० \mid १०००००००००००}$$

णिरुवमलावण्णजुदा तस्स य देवी पहावदीणामा । तक्काले अदिसीदं होदि तुसारं च अदिवाऊ ॥ ४७७
सीदाणिलफासादो अइदुक्खं पाविदूण भोगणरा । चंदादीजोदिगणे तुसारछण्णे ण पेच्छंति ॥ ४७८
अदिभीदाण इमाणं चंदाभो देदि तस्स उवदेसं । भोगावणिहाणीए जादा कम्मक्खिदी णिअडा ॥ ४७९

रात्रिमें चन्द्रमण्डलको दिखलाकर और खिलावन करके उन्हें वचनोपदेश अर्थात् बोलना सिखावो और उनका यत्न (पूर्वक रक्षण) करो ॥ ४७२ ॥

इस उपदेशको सुनकर भोगभूमिज मनुष्य बालकोंके साथ वैसा ही व्यवहार करते हैं। अब वे (युगल) थोड़े दिन रहकर आयुके क्षीण होनेपर विलीन होते हैं ॥ ४७३ ॥

सीमंकरादिक पांच कुलकर लोभसे आक्रान्त उन युगलोंके शिक्षणके निमित्त दण्डके लिये हा (खेदप्रकाशक) और मा (निषेधसूचक) इन दो शब्दोंका उपयोग करते हैं ॥ ४७४ ॥

अभिचन्द्र कुलकरके स्वर्गारोहण करनेपर दसके घन अर्थात् एक हजारसे गुणित आठ करोड़से भाजित पल्यप्रमाण अन्तरालके पश्चात् चन्द्राभ नामक ग्यारहवां मनु उत्पन्न होता है ॥ ४७५ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००००}$ ।

उसके शरीरकी उंचाई छहसौ धनुष, शरीरका वर्ण उत्तम सुवर्ण जैसा और आयु दश हजार करोड़से भाजित पल्योपमप्रमाण थी ॥ ४७६ ॥

उंचाई द. ६००; आयु प. $\frac{१}{१०००००००००००}$ ।

इस कुलकरके अनुपम लावण्यसे युक्त प्रभावती नामकी देवी थी। उस समय अति शीत, तुषार और अति वायु चलने लगी ॥ ४७७ ॥

शीत वायुके स्पर्शसे अत्यन्त दुख पाकर वे भोगभूमिज मनुष्य तुषारसे आच्छन्न चन्द्रादिक ज्योतिस्समूहको नहीं देख पाते ॥ ४७८ ॥

इस कारण अत्यन्त भयको प्राप्त हुए उन भोगभूमिज पुरुषोंको चन्द्राभ कुलकर इसका उपदेश देता है, और समझाता है कि भोगभूमिकी हानि होनेपर अब कर्मभूमि निकट आगई है ॥ ४७९ ॥

---

१ द ब खेलावणाणि. २ द ब वअणोदीर्म, क वअणोवदीगं. ३ द ब लोभेणाभयदाणं. ४ द दंडत्था. ५ द ब दसपुणहदं. ६ द दंडुच्छेदो. ७ ब भजिदे. ८ द °पाससदो. ९ द ब णअदा.

कालस्स विकारादो एस सहावो पयट्टदे णियमा । णासइ तुसारमेयं एण्हिं मत्तंडकिरणेहिं ॥ ४८०
सोदूण तस्स वयणं ते सव्वे भोगभूमिजा मणुवा । रविकरणासिदंसीदा पुत्तकलत्तेहिं जीवंति ॥ ४८१
चंदाभे सग्गगदे सीदिसहस्सेहिं गुणिदकोडिहिदे । पल्ले गयम्मि जम्मइ मरुदेवो णाम बारसमो ॥ ४८२

$$\frac{१}{८०००००००००००}$$

पंचसया पण्णत्तरिसहिदा चावाणि तस्स उच्छेहो । इगिलक्खकोडिभजिदं पलिदोवममाउपरिमाणं ॥ ४८३

$$\text{५७५} \mid \frac{१}{१००००००००००००}$$

कंचणणिहस्स तस्स य सच्चा णामेण अणुवमा देवी । तक्काले गज्जंता मेघा वरिसंति तडिवंता ॥ ४८४
कद्दमपवहणदीओ अदिट्ठपुव्वाओ तीव दट्ठूणं । अदिभीदाण णराणं कालविभागं भणेदि[1] मरुदेवो ॥ ४८५
कालस्स विकारादो आसण्णा होदि तुम्ह कम्ममही । णावादीणि[2] णदीणं उत्तारह भूधरेसु सोवाणं ॥ ४८६
काढूण चलह तुम्हे[3] पाउसकालम्मि धरह छत्ताहं[4] । सोदूण तस्स वयणं सव्वे ते भोगभूमिणरा ॥ ४८७
उत्तरिय वाहिणीओ आरुहिऊणं च तुंगसेलेसुं । विणिवारिदवरिसाओ पुत्तकलत्तेहिं जीवंति ॥ ४८८

कालके विकारसे नियमतः यह स्वभाव प्रवृत्त हुआ है। अब यह तुषार सूर्यकी किरणोंसे नष्ट होगा ॥ ४८० ॥

उस कुलकरके वचनोंको सुनकर वे सब भोगभूमिज मनुष्य सूर्यकी किरणोंसे शैत्यको नष्ट करते हुए पुत्र-कलत्रके साथ जीवित रहने लगे ॥ ४८१ ॥

चन्द्राभ कुलकरके स्वर्ग जानेपर अस्सी हजार करोड़से भाजित पल्यके व्यतीत होनेपर मरुदेव नामक बारहवें कुलकरने जन्म लिया ॥ ४८२ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००००००}$।

उसके शरीरकी उंचाई पांचसौ पचत्तर धनुष और आयु एक लाख करोड़से भाजित पल्योपमप्रमाण थी ॥ ४८३ ॥ उंचाई दं. ५७५; आयु प. $\frac{१}{१००००००००००००}$।

सुवर्ण जैसी प्रभावाले उस कुलकरके सत्या नामकी अनुपम देवी थी। उसके समयमें बिजलीयुक्त मेघ गरजते हुए बरसने लगे ॥ ४८४ ॥

उस समय पूर्वमें कभी नहीं देखी गयीं कीचड़युक्त जलप्रवाहवाली नदियोंको देखकर अत्यन्त भयभीत हुए भोगभूमिज मनुष्योंको मरुदेव कालके विभागको प्ररूपित करता है ॥ ४८५ ॥

कालके विकारसे अब कर्मभूमि तुम्हारे निकट है। अब तुम लोग नदियोंमें नौका आदि डालकर उन्हें पार करो, पहाड़ोंपर सीढ़ियोंको रचकर चलो, और वर्षाकालमें छत्रादिकको धारण करो। उस कुलकरके वचन सुनकर वे सब भोगभूमिज मनुष्य नदियोंको उतरकर और ऊंचे पहाड़ोंपर चढ़कर, वर्षाका निवारण करते हुए पुत्र एवं कलत्रके साथ जीवित रहने लगे ॥ ४८६-४८८ ॥

१ द ब रविकिरणासदसीदो. २ द ब लाव. ३ द ब च णेदि. ४ द ब णावादीण. ५ द ब तुम्हो. ६ द ब छत्ताहिं. ७ द ब तुरगसेलेसुं.

मरुदेवे तिदिवगदे अडकोडीलक्खभाजिदपल्लम्मि । अंतरिदे उप्पज्जदि पसेणजिण्णाम तेरसमो ॥ ४८९

१
८०००००००००००० |

चामीयरसमवण्णो दसहदपणवण्णचावउच्छेहो । दसकोडिलक्खभाजिदपलिदोवममेत्तपरमाऊ ॥ ४९०

१
५५० । १०००००००००००० |

अमिदमदी तद्देवी तक्काले बालपडलपरिवेढो । जायंतो जुगबाला देक्खिय भीदा किमेदमिदि ॥ ४९१
भयजुत्ताण पराणं पसेणजिब्भणदि दिव्वउवदेसं । वत्तिपडलावहरणं कहिदम्मि कुणंति ते सव्वे ॥ ४९२
पेच्छंते बालाणं मुहाणि य विसट्टकमलसरिसाणं । कुव्वंति पयत्तेणं सिसूण रक्खा णरा सव्वे ॥ ४९३
तम्मणुतिदिवपवेसे कोडिहदासीदिलक्खहिदपल्ले । अंतरिदे संभूदो चोद्दसमो णाभिराजमणू ॥ ४९४

१
८०००००००००००० |

पणुवीसुत्तरपणसयचाउच्छेहो सुवण्णवण्णणिहो । इगिपुव्वकोडिआऊ मरुदेवी णाम तस्स वधू ॥ ४९५

दं ५२५ । पूर्वकोटि १ आउ ।

मरुदेवके स्वर्गस्थ हो जानेपर आठ लाख करोड़से भाजित पल्यप्रमाण अन्तरालके पश्चात् प्रसेनजित् नामक तेरहवां कुलकर उत्पन्न होता है ॥ ४८९ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००००००}$ ।

वह कुलकर सुवर्णके सदृश वर्णसे युक्त, दशसे गुणित पचवन अर्थात् पांचसौ पचास धनुषप्रमाण ऊंचा, और दश लाख करोड़से भाजित पल्योपमप्रमाण आयुवाला हुआ ॥ ४९० ॥

ऊंचाई दं० ५५०; आयु प. $\frac{१}{१०००००००००००००}$ ।

उसके अमितमती नामक देवी थी । इसके समयमें वर्तिपटल (जरायु) से वेष्टित युगल बालकोंको जन्म लेते देखकर ' यह क्या है ? ' इसप्रकार भयसे संयुक्त मनुष्योंको प्रसेनजित् कुलकर वर्तिपटलके दूर करनेका दिव्य उपदेश देते हैं । तब उनके कथनानुसार वे सब मनुष्य वर्तिपटलको दूर करने लगे ॥ ४९१–४९२ ॥

तथा, सब भोगभूमिज मनुष्य विकसित कमलके सदृश बालकोंके मुखोंको देखने और प्रयत्नपूर्वक उन शिशुओंकी रक्षा करने लगे ॥ ४९३ ॥

उस मनुके स्वर्गस्थ होनेपर अस्सी लाख करोड़से भाजित पल्यप्रमाण कालके अन्तरालसे चौदहवें नाभिराय मनु उत्पन्न हुए ॥ ४९४ ॥ प. $\frac{१}{८०००००००००००००}$ ।

वह पांचसौ पच्चीस धनुष ऊंचा, सुवर्णके सदृश वर्णवाला, और एक पूर्वकोटिप्रमाण आयुसे युक्त था । उसके मरुदेवी नामकी पत्नी थी ॥ ४९५ ॥

ऊंचाई दं० ५२५; आयु पूर्वकोटि १ ।

१ द पसेणदिण्णाम. २ द ब °समवण्णा. ३ द ब 'परिवेदा. ४ द ब जायंतो. ५ ब विसि°. ६ द ब मुहाणि वसइ°. ७ द ब 'तिदवं'. ८ द ब अंतरिदो.

तस्सि काले होदि हु बालाणं णाभिणालमइदीहं । तक्कत्तणोवदेसं कहदि मणू ते पकुव्वंति ॥ ४९६
कप्पदुमा पणट्ठा तोहे विविहोसहीणि सस्साणिं[1] । महुररसाइं फलाइं पेच्छंति सहावदो धरित्तीसु ॥ ४९७
कप्पतरूण विणासे तिव्वभया भोगभूमिजा मणुवा । सव्वे वि णाभिराजं सरणं पविसंति रक्खेत्ति ॥ ४९८
करुणाए णाभिराजो णराण उवदिसदि जीवणोवायं । संजह वणप्फदीणं चोचादीणं फलाइं भक्खाणिं ॥ ४९९
सालिजवचलतुवरीतिलमासप्पहुदिविविहधण्णाहं[2] । उवभुंजह पियह तहा सुरभिप्पहुदीण दुद्धाणि ॥ ५००
अण्णं बहु उवदेसं देदि दयालू णराण सयलाणं । तं कादूणं सुखिदा[3] जीवंते तप्पसादेणं ॥ ५०१
पलिदोवमदसमंसो ऊणो थोवेण पदिसुदिस्साऊ । अममं अडडं तुडियं कमलं णलिणं च पउमपउमंगा ॥५०२
कुमुदकुमुदंगणउदा णउदंगं पव्वपुव्वकोडीओ । सेसमणूणं आऊ कमसो केई णिरूवंति[4] ॥ ५०३

पाठान्तरम् ।

एदे चउदस मणुओ पदिसुदिपहुदी हु णाहिरायंता । पुव्वभवम्मि विदेहे राजकुमारा महाकुले जादा ॥ ५०४

उस समय बालकोंका नाभिनाल अत्यन्त लम्बा होने लगा था, इसलिये नाभिराय कुलकर उसके काटनेका उपदेश देते हैं और वे भोगभूमिज मनुष्य वैसा ही करते हैं ॥ ४९६ ॥

उस समय कल्पवृक्ष नष्ट होगये और पृथिवीपर स्वभावसे ही उत्पन्न हुई अनेक प्रकारकी औषधियां, सस्य (धान्यादि) एवं मधुर रसयुक्त फल दिखाई देने लगे ॥ ४९७ ॥

कल्पवृक्षोंके नष्ट होजानेपर तीव्र भयसे युक्त सब ही भोगभूमिज मनुष्य नाभिराय कुलकरकी शरणमें पहुंचे और बोले 'रक्षा करो' ॥ ४९८ ॥

तब करुणापूर्वक नाभिराय उन मनुष्योंको आजीविकाके उपायका उपदेश देते हैं। चोचादिक वनस्पतियोंके भक्षण करने योग्य फलोंका संचय करो ॥ ४९९ ॥

शालि, जौ, वल्ल, तुवर, तिल और उड़द इत्यादिक विविध प्रकारके धान्योंको खाओ और गाय आदिकके दूधको पिओ ॥ ५०० ॥

इसके अतिरिक्त दयालु नाभिराय उन सब मनुष्योंको और भी बहुतसा उपदेश देते हैं। तदनुसार आचरण करके वे सब मनुष्य नाभिराय कुलकरके प्रसादसे सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे ॥ ५०१ ॥

कुछ कम पल्योपमके दशवें भागप्रमाण प्रतिश्रुति कुलकरकी आयु थी। इसके आगे शेष तेरह कुलकरोंकी आयु क्रमसे अमम, अडड, त्रुटित, कमल, नलिन, पद्म, पद्मांग, कुमुद, कुमुदांग, नयुत, नयुतांग, पर्व और पूर्वकोटिप्रमाण थी, ऐसा कोई आचार्य कहते हैं ॥ ५०२–५०३ ॥

पाठांतर ।

प्रतिश्रुतिको आदि लेकर नाभिरायपर्यन्त ये चौदह मनु पूर्वभवमें विदेह क्षेत्रके भीतर महा कुलमें राजकुमार थे ॥ ५०४ ॥

१ द तादे, ब तहि. २ द ब विविहोसहीण सत्थाणं. ३ द ब तोवरी ··विविहवण्णाहं. ४ द ब उवभुंजदि. ५ द ब सुखिदो. ६ द ब कुमुदंगणलिणा. ७ द णिरूवंति. ८ ब जादो.

कुसला दाणादीसुं संजमतवणाणवंतपत्ताणं । णियजोग्गअणुट्ठाणा मद्दवअज्जवगुणेहिं संजुत्ता ॥ ५०५
मिच्छत्तभावणाए भोगाउं बंधिऊण ते सव्वे । पच्छा खाइयसम्मं गेण्हंति जिणिंदचलणमूलम्हि ॥ ५०६
णियजोग्गसुदं पढिदा खीणे आउम्हि ओहिणाणजुदा । उप्पज्जिदूण भोगे केई णरा ओहिणाणेणं ॥ ५०७
जादिभरणेण केई भोगमणुस्साण जीवणोवायं । भासंति जेण तेणं मणुणो भणिदा मुणिंदेहिं ॥ ५०८
कुलधारणादु सव्वे कुलधरणामेण भुवणविक्खादा । कुलकरणम्मि य कुसला कुलकरणामेण सुपसिद्धा ॥ ५०९
एत्तो सलायपुरिसा तेसट्ठी सयलभुवणविक्खादा । जायंति भरहखेत्ते णरसीहा पुण्णपाकेण ॥ ५१०
तित्थयरचक्कबलहरिपडिसत्तू णाम विस्सुदा कमसो । बिउणियबारसबारसपयत्थणिधिरंधसंखाए ॥ ५११
२४ । १२ । ९ । ९ । ९ ।
उसहमजियं च संभवमहिणंदणसुमइणामधेयं च । पउमप्पहं सुपासं चंदप्पहपुप्फयंतसीयलए ॥ ५१२
सेयंसवासुपुज्जे विमलाणंते य धम्मसंती य । कुंथुअरमल्लिसुव्वयणमिणेमीपासवड्ढमाणा य ॥ ५१३
पणमह चउवीसजिणे तित्थयरे तत्थ भरहखेत्तम्मि । भव्वाणं भवरुक्खं छिंदंते णाणपरसूहिं ॥ ५१४

वे सब संयम, तप और ज्ञानसे युक्त पात्रोंके लिये दानादिकके देनेमें कुशल; अपने योग्य अनुष्ठानसे संयुक्त, और मार्दव-आर्जव गुणोंसे सहित होते हुए पूर्वमें मिथ्यात्वभावनासे भोगभूमिकी आयुको बांधकर पश्चात् जिनेन्द्रभगवान्के चरणोंके समीप क्षायिक सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥५०५-५०६॥

अपने योग्य श्रुतको पढ़कर इन राजकुमारोंमेंसे कितने ही आयुके क्षीण होनेपर अवधिज्ञानके साथ भोगभूमिमें मनुष्य उत्पन्न होकर अवधिज्ञानसे, और कितने ही जातिस्मरणसे भोगभूमिज मनुष्योंको जीवनके उपाय बतलाते हैं, इसीलिये मुनीन्द्रोंके द्वारा ये 'मनु' कहे गये हैं ॥ ५०७-५०८ ॥

ये सब कुलोंके धारणकरनेसे 'कुलधर' नामसे और कुलोंके करनेमें कुशल होनेसे 'कुलकर' नामसे भी लोकमें प्रसिद्ध हैं ॥ ५०९ ॥

अब यहांसे आगे (नाभिराय कुलकरके पश्चात्) पुण्योदयसे भरत क्षेत्रमें मनुष्योंमें श्रेष्ठ और सम्पूर्ण लोकमें प्रसिद्ध तिरेसठ शलाकापुरुष उत्पन्न होने लगते हैं ॥ ५१० ॥

ये शलाकापुरुष तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण और प्रतिशत्रु, इन नामोंसे प्रसिद्ध हैं । इनमेंसे तीर्थंकरोंकी बारहके दुगुणे अर्थात् चौबीस, चक्रवर्तियोंकी बारह, बलभद्रोंकी नौ (पदार्थ), नारायणोंकी नौ (निधि) और प्रतिशत्रुओंकी भी नौ (रंध्र) संख्या है ॥ ५११ ॥

तीर्थंकर २४ + चक्री १२ + बल. ९ + नारा. ९ + प्रतिशत्रु ९ = ६३ ।

उनमेंसे ऋषभ[1], अजित[2], संभव[3], अभिनन्दन[4], सुमति, पद्मप्रभ[5], सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त[6], शीतल[7], श्रेयांस[8], वासुपूज्य[9], विमल[10], अनन्त[11], धर्म[12], शान्ति, कुंथु[13], अर[14], मल्लि[15], सुव्रत[16], नमि[17], नेमि[18], पार्श्व[19] और वर्द्धमान[20], इन भरत क्षेत्रमें उत्पन्न हुए चौबीस तीर्थङ्करोंको नमस्कार करो । ये ज्ञानरूपी फरसेसे भव्य जीवोंके संसाररूपी वृक्षको छेदते हैं ॥ ५१२-५१४ ॥

---

१ द ब संजव°. २ ब णियजोगा. ३ द बंधदूण. ४ द ब पच्चा. ५ द ब पाडिदा. ६ द ब जुदो. ७ ब केई. ८ द ब °पुरिसो. ९ ब °भवण°.

भरहो सगरो मघवो सणंकुमारो य संतिकुंथुअरा। तह य सुभोमो पउमो हरिजेयसेणा य बम्हदत्तो य ॥५१५
छक्खंडपुढविमंडलपसाहणा कित्तिभरियभुवणयला । एदे बारस जादा चक्कहरा भरहखेत्तम्मि ॥ ५१६
विजयो अचल सुधम्मो सुप्पहणामो सुदंसणो णंदी । तह णंदिमित्त रामो पउमो णव होंति बलदेवा ॥ ५१७
तह य तिविट्ठदुविट्ठा सयंभु पुरिसुत्तमो पुरिससीहो। पुंडरियदत्तणारायणा य किण्हो हुवंति णव विण्हू ॥५१८
अस्सग्गीवो तारयमेरकमधुकीडभा तह णिसुंभो । बलिपहरणरावणओ जरसंधो य णव य पडिसत्तू ॥ ५१९
भीमावलिजियसत्तू रुद्दो वइस्साणलो य सुपइट्ठो। तह अचल पुंडरीओ अजियंधर अजियणाभिपेढाला ॥ ५२०
सच्चइसुदो य एदे एक्कारस होंति तित्थयरकाले । रुद्दा रउद्दकम्मा अहम्मवावारसंलग्गा ॥ ५२१
सव्वट्ठसिद्धिठाणा अवइण्णा उसहधम्मपहुदितिया । विजया णंदणअजिया चंदप्पह वइजयंतादु ॥ ५२२
अपराजियाभिधाणा अरणमिमल्लीओ णेमिणाहो य । सुमई जयंतठाणा आरणजुगला य सुविहिसीयलया ॥५२३
पुप्फोत्तराभिधाणा अणंतसेयंसवड्ढमाणजिणा । विमलो य सहाराणदपाणदकप्पा य सुव्वदा पासा ॥ ५२४
हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जादागदा महासत्ता । संभवसुपासपउमा महसुक्का वासुपुज्जजिणो ॥ ५२५

भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्ति, कुन्थु, अर, सुभौम, पद्म, हरिषेण, जयसेन और ब्रह्मदत्त, ये छह खण्डरूप पृथिवीमण्डलको सिद्ध करनेवाले और कीर्तिसे भुवनतलको भरनेवाले बारह चक्रवर्ती भरत क्षेत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५१५–५१६ ॥

विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दी, नन्दिमित्र, राम और पद्म, ये नौ भरत क्षेत्रमें बलदेव हुए ॥ ५१७ ॥

तथा त्रिपृष्ठ, द्विपृष्ठ, स्वयम्भू, पुरुषोत्तम, पुरुषसिंह, (पुरुष-) पुण्डरीक, (पुरुष-) दत्त, नारायण (लक्ष्मण) और कृष्ण, ये नौ विष्णु (नारायण) हैं ॥ ५१८ ॥

अश्वग्रीव, तारक, मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ, बलि, प्रहरण, रावण और जरासंध, ये नौ प्रतिशत्रु हैं ॥ ५१९ ॥

भीमावलि, जितशत्रु, रुद्र, विश्वानल, सुप्रतिष्ठ, अचल, पुण्डरीक, अजितंधर, अजितनाभि, पीठ और सात्यकिसुत, ये ग्यारह तीर्थंकरकालमें रुद्र होते हैं। ये सब अधर्मपूर्ण व्यापारमें संलग्न होकर रौद्रकर्म किया करते हैं ॥ ५२०–५२१ ॥

ऋषभ और धर्मादिक (धर्म, शान्ति, कुंथु) तीन तीर्थङ्कर सर्वार्थसिद्धिसे अवतीर्ण हुए थे; अभिनन्दन और अजितनाथ विजयसे; चन्द्रप्रभ वैजयंतसे; अर, नमि, मल्लि और नेमिनाथ, ये चार तीर्थंकर अपराजित नामक विमानसे; सुमति जयन्त विमानसे; पुष्पदन्त और शीतल क्रमशः आरणयुगलसे; अनन्त, श्रेयांस और वर्द्धमान, ये तीन तीर्थंकर पुष्पोत्तर विमानसे; विमल शतार कल्पसे; सुव्रत और पार्श्वनाथ क्रमशः आनत एवं प्राणत कल्पसे; संभव, सुपार्श्व और पद्मप्रभ, ये तीन महापुरुष क्रमशः अधोग्रैवेयक, मध्यग्रैवेयक और ऊर्ध्वग्रैवेयकसे; तथा वासुपूज्य जिनेन्द्र महाशुक्र कल्पसे अवतीर्ण हुए थे ॥ ५२२–५२५ ॥

---

१ ब सुभोम्मो. २ ब °जयसेणो. ३ द ब भवण. ४ द ब वेइसायणो. ५ द ब सुहर°. ६ द सहारापाणद. ७ द ब महसुक्के. ८ द ब °जिणा.

जादो हु अवज्झाए उसहो मरुदेविणाभिराएहिं । चेत्तासियणवमीए णक्खत्ते उत्तरासाढे[1] ॥ ५२६
माघस्स सुक्कपक्खे रोहिणिरिक्खम्मि दसमिदिवसम्मि । साकेदे अजियजिणो जादो जियसत्तुविजयाहिं ॥ ५२७
सावित्थीए संभवदेवो य जिदारिणा[2] सुसेणाए । मग्गसिरपुण्णिमाए जेट्ठारिक्खम्मि संजादो ॥ ५२८
माघस्स बारसीए सिद्धम्मि पक्खे पुणव्वसूरिक्खे । संवरसिद्धत्थाहिं साकेदे णंदणो जादो ॥ ५२९
मेघप्पहेण सुमई साकेदपुरीम्मि मंगलाए य । सावणसुक्केयारसिदिवसम्मि मघासु संजणिदो ॥ ५३०
अस्सयुदकिण्हतेरसिदिणम्मि पउमप्पहो अ चित्तासु । धरणेण सुसीमाए कोसंबिपुरम्मि जादो ॥ ५३१
वाराणसीए पुहवीसुपइट्ठेहिं[3] सुपासदेवो य । जेट्ठस्स सुक्कबारसिदिणम्मि जादो विसाहाए ॥ ५३२
चंदप्पहो चंदपुरे जादो महसेणलच्छिमइआहिं[4] । पुस्सस्स किण्हएयारसिए अणुराहणक्खत्ते ॥ ५३३
रामासुग्गीवेहिं काकंदीए य पुप्फयंतजिणो । मग्गसिरपाडिवाए सिदाए मूलम्मि संजणिदो ॥ ५३४
माघस्स बारसीए पुव्वासाढासु किण्हपक्खम्मि । सीयलसामी दिढरहणंदाहिं भद्दिले जादो ॥ ५३५

ऋषभनाथ तीर्थंकर अयोध्या नगरीमें, मरुदेवी माता, एवं नाभिराय पितासे, चैत्रकृष्णा नवमीके दिन, उत्तराषाढा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५२६ ॥

अजित जिनेन्द्र साकेत नगरीमें पिता जितशत्रु एवं माता विजयासे माघके शुक्लपक्षमें दशमीके दिन रोहिणी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५२७ ॥

संभवदेव श्रावस्ती नगरीमे पिता जितारि और माता सुसेनासे मगसिर मासकी पूर्णमासीके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५२८ ॥

अभिनन्दन स्वामी साकेतपुरीमें पिता संवर और माता सिद्धार्थासे माघशुक्ला द्वादशीके दिन पुनर्वसु नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५२९ ॥

सुमतिनाथ तीर्थंकर साकेत पुरीमें पिता मेघप्रभ और माता मंगलासे श्रावणशुक्ला एकादशीको मघा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५३० ॥

पद्मप्रभ तीर्थंकरने कौशाम्बी पुरीमें पिता धरण और माता सुसीमासे आसोजकृष्णा त्रयोदशीके दिन चित्रा नक्षत्रमें अवतार लिया ॥ ५३१ ॥

सुपार्श्व देव वाराणसी (बनारस) नगरीमें माता पृथिवी और पिता सुप्रतिष्ठसे ज्येष्ठशुक्ला द्वादशीके दिन विशाखा नक्षत्रमे उत्पन्न हुए ॥ ५३२ ॥

चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र चन्द्रपुरीमें पिता महासेन और माता लक्ष्मीमती (लक्ष्मणा) से पौषकृष्णा एकादशीको अनुराधा नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५३३ ॥

भगवान् पुष्पदन्त काकन्दी नगरीमें माता रामा और पिता सुग्रीवसे मगसिरशुक्ला प्रतिपद्के दिन मूल नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५३४ ॥

शीतलनाथ स्वामी भद्दलपुरमें (भद्रिकापुरीमें) पिता दृढ़रथ और माता नन्दासे माघके कृष्णपक्षकी द्वादशीके दिन पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५३५ ॥

१ द ब उत्तरासाढा. २ द ऐजिदारिणा, ब राजिदारिणा. ३ द मेघव्वएण, ब मेघरथएण. ४ ब पुहईसुं°. ५ द चंदप्पहो. ६ द °आईहिं, ब आइहिं.

सीहपुरे सेयंसो विण्हुणरिंदेण वेणुदेवीए । एक्कारसिए फग्गुणसिदपक्खे सवणभे जादो ॥ ५३६
चंपाए वासुपुज्जो वसुपुज्जणरेसरेण विजयाए । फग्गुणसुद्धचउद्दसिदिणम्मि जादो विसाहासु ॥ ५३७
कंपिल्लपुरे विमलो जादो कदवम्मजयस्सामाहिं । माघसिदचोद्दसीए णक्खत्ते पुव्वभद्दपदे ॥ ५३८
जेट्ठस्स बारसीए किण्हाए रेवदीसु य अणंतो । साकेदपुरे जादो सव्वजसासीहसेणेहिं ॥ ५३९
रयणपुरे धम्मजिणो भाणुणरिंदेण सुव्वदाए य । माघसिदतेरसीए जादो पुस्सम्मि णक्खत्ते ॥ ५४०
जेट्ठसिदबारसीए भरणीरिक्खम्मि संतिणाहो य । हत्थिणउरम्मि जादो अइराए विस्ससेणेण ॥ ५४१
तत्थ चिय कुंथुजिणो सिरिमइदेवीसु सूरसेणेण । वइसाहपाडिवाए सियपक्खे कित्तियासु संजणिदो ॥ ५४२
मग्गसिरचोद्दसीए सिदपक्खे रोहिणीसु अरदेवो । णागपुरे संजणिदो मित्ताए सुदरिसणावणिंदेसुं ॥ ५४३
मिहिलाए मल्लिजिणो पहवदिए कुंभअक्खिवदीसेहिं । मग्गसिरसुक्कएक्कारसीए अस्सिणीए संजादो ॥ ५४४
रायगिहे मुणिसुव्वयदेवो पउमासुमित्तराएहिं । अस्सजुदबारसीए सिदपक्खे सवणभे जादो ॥ ५४५

भगवान् श्रेयांस सिंहपुरीमें पिता विष्णु नरेन्द्र और माता वेणुदेवीसे फाल्गुन शुक्ला एकादशीके दिन श्रवण नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५३६ ॥

वासुपूज्य भगवान् चम्पा नगरीमें पिता वसुपूज्य राजा और माता विजयासे फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशीके दिन विशाखा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५३७ ॥

भगवान् विमलनाथ कंपिलापुरीमें पिता कृतवर्मा और माता जयश्यामासे माघशुक्ला चतुर्दशीके दिन पूर्वभाद्रपद नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५३८ ॥

भगवान् अनन्तनाथ अयोध्यापुरीमें माता सर्वयशा और पिता सिंहसेनसे ज्येष्ठकृष्णा द्वादशीको रेवती नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५३९ ॥

धर्मनाथ तीर्थंकर रत्नपुरमें पिता भानु नरेन्द्र और माता सुव्रतासे माघशुक्ला त्रयोदशीके दिन पुष्य नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४० ॥

भगवान् शान्तिनाथ हस्तिनापुरमें माता ऐरा और पिता विश्वसेनसे ज्येष्ठशुक्ला द्वादशीके दिन भरणी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४१ ॥

कुन्थुनाथ जिनेन्द्र हस्तिनापुरमें माता श्रीमतीदेवी और पिता सूर्यसेनसे वैशाखशुक्ला प्रतिपदाको कृतिका नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५४२ ॥

भगवान् अरनाथ हस्तिनापुरमें माता मित्रा और पिता सुदर्शन राजासे मगसिरशुक्ला चतुर्दशीके दिन रोहणी नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५४३ ॥

मल्लिनाथ जिनेन्द्र मिथलापुरीमें माता प्रभावती और पिता कुम्भसे मगसिरशुक्ला एकादशीको अश्विनी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४४ ॥

भगवान् मुनिसुव्रत राजगृह नगरमें माता पद्मा और पिता सुमित्रराजासे आसोजशुक्ला द्वादशीके दिन श्रवण नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४५ ॥

१ द वसुपुज्जो. २ द ब °वम्मजाद°. ३ द व सुव्वलाए अं. ४ द महिलाए. ५ द ब कुंथुअक्खिवदीसेहिं. ६ द °एकादसिए. ७ द ब अस्सिणीजदा एसं.

मिहिलापुरिए जादो विजयणरिंदेण वप्पिलाए[1] य । अस्सिणिरिक्खे[2] आसाढसुक्कदसमीए णमिसामी ॥ ५४६
सउरीपुरम्मि जादो सिवदेवीए समुद्दविजएण । वइसाहतेरसीए सिद्धाए चित्तासु णेमिजिणो ॥ ५४७
हयसेणवम्मिलाहिं[3] जादो हि वाणारसीए पासजिणो । पूसस्स बहुलएक्कारसिए रिक्खे विसाहाए ॥ ५४८
सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं णयरम्मि कुंडले वीरो[5] । उत्तरफग्गुणिरिक्खे चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो ॥ ५४९

इंदवज्रा—

धम्मारकुंथू कुरुवंसजादा णाहोग्गवंसेसु वि वीरपासा[7] ।
सो सुव्वदो जादुवंसजम्मा णेमी अ इक्खाकुकुलम्मि सेसा ॥ ५५०
एदे जिणिंदे भरहम्मि खेत्ते भव्वाण पुण्णेहिं कदावतारे ।
काएण वाचा मणसा णमंता सोक्खाइं मोक्खाइं लहंति भव्वा ॥ ५५१

धोडकं[8]—

केवलणाणवणप्फइकंदे तित्थयरे चउवीसजिणिंदे[9] । जो अहिणंदइ भत्तिपयट्टो बज्झइ तस्स पुरंदरपट्टो ॥५५२
सुसमदुसमम्मि णामे सेसे चउसीदिलक्खपुव्वाणिं । वासतए अट्ठमासे इगिपक्खे उसहउप्पत्ती ॥ ५५३

पुव्व ८४०००००, व ३, मा ८, दि १५।

नमिनाथ स्वामी मिथलापुरीमें पिता विजयनरेन्द्र और माता वप्रिलासे आषाढ़शुक्ला दशमीके दिन अश्विनी नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५४६ ॥

नेमि जिनेन्द्र शौरीपुरमें माता शिवदेवी और पिता समुद्रविजयसे वैशाखशुक्ला त्रयोदशीको चित्रा नक्षत्रमें अवतीर्ण हुए ॥ ५४७ ॥

भगवान् पार्श्वनाथ वाराणसी नगरीमें पिता अश्वसेन और माता वर्मिला (वामा) से पौषकृष्णा एकादशीके दिन विशाखा नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४८ ॥

भगवान् महावीर कुण्डलपुरमें पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणीसे चैत्रशुक्ला त्रयोदशीके दिन उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रमें उत्पन्न हुए ॥ ५४९ ॥

धर्मनाथ, अरनाथ और कुंथुनाथ ये तीन तीर्थंकर कुरु वंशमें उत्पन्न हुए । महावीर और पार्श्वनाथ क्रमसे नाथ और उग्र वंशमें, मुनिसुव्रत और नेमिनाथ यादव वंश (हरिवंश) में, तथा अवशिष्ट तीर्थङ्कर इक्ष्वाकु कुलमें उत्पन्न हुए ॥ ५५० ॥

भव्य जीवोंके पुण्योदयसे भरतक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए इन चौबीस तीर्थंकरोंको जो भव्य जीव मन-वचन-कायसे नमस्कार करते हैं, वे मोक्षसुखको पाते हैं ॥ ५५१ ॥

केवलज्ञानरूप वनस्पतिके कंद और तीर्थके प्रवर्तक चौबीस जिनेन्द्रोंका जो भक्तिसे प्रवृत्त होकर अभिनन्दन करता है, उसको इन्द्रका पट्ट बांधा जाता है ॥ ५५२ ॥

सुषमदुषमा नामक कालमें चौरासी लाख पूर्व, तीन वर्ष, आठ माह और एक पक्ष शेष रहनेपर भगवान् ऋषभ देवका अवतार हुआ ॥ ५५३ ॥

पूर्व ८४ लाख, व. ३, मा. ८, दि. १५ (१ पक्ष)।

---

१ द ब वप्पिलाए. २ द ब रेक्खे. ३ द आसाढे. ४ द °वम्मिणाहिं. ५ द कुंडलो धीरा. ६ ब सुविधीतपासो. ७ द ब भव्वो. ८ [दोधकम्]. ९ द °वणप्पइ°. १० द °जिणेंदो.

पण्णासकोडिलक्खा बारसहदपुव्वलक्खवासजुदा । जादम्हि उवहिउवमा उसहुप्पत्तीए अजियउप्पत्ती ॥ ५५४

सागरोवम ५०००००००००००००० पुव्व धण १२०००००० ।

अह तीसकोडिलक्खे बारसहदपुव्वलक्खवासजुदे । गलिदम्मि उवहिउवमे अजिउप्पत्तीए संभउप्पत्ती ॥ ५५५

सा ३०००००००००००००० धण पुव्व १२००००० ।

दसपुव्वलक्खसंजुदसायरदसकोडिलक्खवोच्छेए । संभवउप्पत्तीए[1] अहिणंदणदेवउप्पत्ती ॥ ५५६

सा १०००००००००००००० धण पुव्व १०००००० ।

दसपुव्वलक्खसंजुदसायरणवकोडिलक्खपरिमिच्चे[2] । अहिणंदणउप्पत्तिए सुमइजिणिंदस्स उप्पत्ती ॥ ५५७

सा ९०००००००००००००० धण पुव्व १०००००० ।

दसपुव्वलक्खसमधियसायरकोडीसहस्सणवदीए । पक्खित्ते पउमप्पहजम्मो सुमइस्स जम्मादो ॥ ५५८

सा ९००००००००००० धण पुव्व १०००००० ।

दसपुव्वलक्खसमधियसायरकोडीसहस्सणवकम्मि । वोलीणे पउमप्पहसंभूदीए सुपाससंभूदी ॥ ५५९

सा ९००००००००००० धण पुव्व १०००००० ।

भगवान् ऋषभदेवकी उत्पत्तिके पश्चात पचास लाख करोड़ सागरोपम और बारह लाख वर्षपूर्वोके बीत जानेपर अजितनाथ तीर्थङ्करका अवतार हुआ ॥ ५५४ ॥

सागरोपम ५० लाख करोड़ + वर्षपूर्व १२ लाख ।

अजितनाथकी उत्पत्तिके पश्चात बारह लाख वर्षपूर्व सहित तीस लाख करोड़ सागरोपमोंके निकल जानेपर भगवान् सम्भवनाथकी उत्पत्ति हुई ॥ ५५५ ॥

सा० ३० लाख करोड़ + वर्षपूर्व १२ लाख ।

सम्भव जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके पश्चात् दश लाख पूर्व सहित दश लाख करोड़ सागरोपमोंके बीत जानेपर अभिनन्दन भगवान्ने अवतार लिया ॥ ५५६ ॥

सा० १० लाख करोड़ + वर्षपूर्व १० लाख ।

अभिनन्दन स्वामीकी उत्पत्तिके पश्चात् दश लाख पूर्व सहित नौ लाख करोड़ सागरोपमोंके बीत जानेपर सुमति जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥ ५५७ ॥

सा० ९ लाख करोड़ + वर्षपूर्व १० लाख ।

सुमतिनाथ तीर्थंकरके जन्मके पश्चात् दश लाख पूर्व सहित नव्वै हजार करोड़ सागरोपमोंके बीत जानेपर पद्मप्रभका जन्म हुआ ॥ ५५८ ॥

सा० ९० हजार करोड़ + वर्षपूर्व १० लाख ।

पद्मप्रभके जन्मके पश्चात् दश लाख पूर्व सहित नौ हजार करोड़ सागरोपमोंका अतिक्रमण होनेपर भगवान् सुपार्श्वनाथका जन्म हुआ ॥ ५५९ ॥

सा० ९ हजार करोड़ + वर्षपूर्व १० लाख ।

१ द समवप्पत्ती. २ ब °परिवत्ते.

दसपुव्वलक्खसंजुदसायरणवकोडिसयविरामम्मि । चंदप्पहउप्पत्ती उप्पत्तीदो सुपासस्स ॥ ५६०

सा ९००००००००० पुव्व १०००००० ।

अट्ठलक्खपुव्वसमधियसायरकोडीण णउदिविच्छेदे[1] । चंदपहुप्पत्तीदो[2] उप्पत्ती पुप्फदंतस्स ॥ ५६१

सा ९०००००००० पुव्व ८००००० ।

इगिपुव्वलक्खसमधियसायरणवकोडिमेत्तकालम्मि । गलियम्मि पुप्फदंतुप्पत्तीदो सीयलुप्पत्ती ॥ ५६२

सा ९०००००००० पुव्व १००००० ।

इगिकोडिपण्णलक्खाछव्वीससहस्सवासमेत्ताए । अद्धभहिएण जलणिहिउवमसमयेण विहीणाए ॥ ५६३

वोलीणाए सायरकोडीए पुव्वलक्खजुत्ताए । सीयलसंभूदादो सेयंसजिणस्स संभूदी ॥ ५६४

सा १०००००००० पुव्व १००००० ऊण सागरोपम १०० व १५०२६००० ।

बारसहदइगिलक्खब्भहियाए वासउवहिमाणेसु । चउवण्णेसु गदेसुं सेयंसभवादु वासुपुज्जभवो ॥ ५६५

सा ५४ वस्स १२००००० ।

तीसोवहीण विरमे बारसहदवरिसलक्खअधियाणं । जाणेज्ज वासुपुज्जुप्पत्तीदो[3] विमलउप्पत्ती ॥ ५६६

सा ३० वस्स १२००००० ।

उवहिउवमाणणवके तियहददहलक्खवासअदिरित्ते[4] । वोलीणे विमलजिणुप्पत्तीदो[5] तह अणंतउप्पत्ती ॥ ५६७

सा ९ वस्स ३००००० ।

सुपार्श्वनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् दश लाख पूर्व सहित नौसौ सागरोपमोंके बीत जानेपर चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥ ५६० ॥ सा० ९ सौ करोड + वर्षपूर्व १० लाख ।

चन्द्रप्रभकी उत्पत्तिसे आठ लाख पूर्व सहित नब्बे करोड़ सागरोपमोंका विच्छेद होनेपर भगवान् पुष्पदन्तकी उत्पत्ति हुई ॥ ५६१ ॥ सा० ९० करोड़ + वर्षपूर्व ८ लाख ।

पुष्पदन्तकी उत्पत्तिके अनन्तर एक लाख पूर्व सहित नौ करोड़ सागरोपमोंके बीतनेपर शीतलनाथ तीर्थंकरने जन्म लिया ॥ ५६२ ॥ सा० ९ करोड़ + वर्षपूर्व १ लाख ।

शीतलनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् सौ सागरोपम और एक करोड़ पचास लाख छब्बीस हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व सहित करोड़ सागरोपमोंके अतिक्रान्त होनेपर श्रेयांस जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥ ५६३–५६४ ॥

(सा० १ करोड़ + वर्षपूर्व १ लाख) – (सा० १००, वर्ष १५०२६०००) ।

भगवान् श्रेयांसकी उत्पत्तिके पश्चात् बारह लाख वर्ष सहित चौवन सागरोपमोंके व्यतीत हो जानेपर वासुपूज्य तीर्थंकरने अवतार लिया ॥ ५६५ ॥ सा० ५४, वर्ष १२ लाख ।

वासुपूज्य भगवान्की उत्पत्तिके अनन्तर बारह लाख वर्ष अधिक तीस सागरोपमोंके बीतनेपर विमलनाथ तीर्थंकरकी उत्पत्ति जानना चाहिये ॥ ५६६ ॥ सा० ३०, वर्ष १२ लाख ।

विमल जिनकी उत्पत्तिके पश्चात् तीस लाख वर्ष अधिक नौ सागरोपमोंके व्यतीत होजानेपर भगवान् अनन्तनाथ उत्पन्न हुए ॥ ५६७ ॥ सा० ९, वर्ष ३० लाख ।

१ द ब विच्छेदो. २ द ब चंदप्पहउप्पत्तीदो. ३ द °पचलवसा. ४ द ब °भना. ५ द वासुपुज्जुप्पत्तीदा. ६ द ब °अधिरित्तो. ७ द °जिणुप्पत्तीदा.

वीसहदवासलक्खब्भहिएसुं चउसु उवहिउवमेसुं । विरदेसु धम्मजम्मो अणंतसामिस्स जम्मादो ॥ ५६८

सा ४ वस्स २०००००० ।

उवहिउवमाणतिदए वोलीणे णवयलक्खवासजुदे । पादोणपल्लरहिदो संतिभवो धम्मभवदो य ॥ ५६९

सा ३ वस्स धण ९००००० रिण प ¾

पल्लद्धे वोलीणे पणवाससहस्समोणअदिरित्ते । कुंथुजिणेसंजणणं जणणादो संतिणाहस्स ॥ ५७०

प ½ धण वस्स ५०००

एक्कारसहस्सूणियकोडिसहस्सोणपल्लपादम्मि । विरदम्मि अरजिणिंदो कुंथुप्पत्तीए उप्पण्णो ॥ ५७१

¼ रिण ९९९९९८९०००

उणतीससहस्सार्धियकोडिसहस्सम्मि वस्सतीदम्मि । अरजिणउप्पत्तीओ उप्पत्ती मल्लिणाहस्स ॥ ५७२

वा १०००००२९००० ।

पणुवीससहस्साहियणवहदछल्लक्खवासवोच्छेदे । मल्लिजिणुब्भूदीदो उब्भूदी सुव्वयजिणस्स ॥ ५७३

वा ५४२५००० ।

वीससहस्सब्भधिया छल्लक्खपमाणवासवोच्छेदे । सुव्वयउप्पत्तीदो उप्पत्ती णमिजिणिंदस्स ॥ ५७४

६२०००० ।

अनन्तनाथ स्वामीके जन्मके पश्चात् बीस लाख वर्ष अधिक चार सागरोपमोंके बीतनेपर धर्मनाथ प्रभुने जन्म लिया ॥ ५६८ ॥ सा० ४, वर्ष २० लाख ।

धर्मनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् पौन पल्य कम और नौ लाख वर्ष सहित तीन सागरोपमोंके बीत जानेपर शान्तिनाथ भगवान्ने जन्म लिया ॥ ५६९ ॥ (सा० ३ + वर्ष ९ लाख) – प. ¾ ।

भगवान् शान्तिनाथके जन्मके पश्चात् पांच हजार वर्ष अधिक आधे पल्यके बीतनेपर कुन्थुनाथ जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥ ५७० ॥ प० ½, वर्ष ५ हजार ।

कुंथुनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् ग्यारह हजार कम एक हजार करोड़ वर्षसे रहित पाव पल्यके बीतनेपर अर जिनेन्द्र उत्पन्न हुए ॥ ५७१ ॥ प० ¼ – वर्ष ९९९९९८९००० ।

अर जिनेन्द्रकी उत्पत्तिके पश्चात् उनतीस हजार अधिक एक हजार करोड़ वर्षोंके बीतनेपर मल्लिनाथ भगवान्का जन्म हुआ ॥ ५७२ ॥ व० १०००००२९००० ।

भगवान् मल्लिनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् पचीस हजार अधिक नौसे गुणित छह अर्थात् चौवन लाख वर्षोंके बीत जानेपर सुव्रत जिनेन्द्रकी उत्पत्ति हुई ॥ ५७३ ॥ व० ५४२५००० ।

भगवान् सुव्रतकी उत्पत्तिके पश्चात् बीस हजार अधिक छह लाख वर्षप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर नमिनाथ जिनेन्द्रका जन्म हुआ ॥ ५७४ ॥ व० ६२०००० ।

---

१ द पादाणं. २ द ब संतिभवा. ३ द ब मास अधिरित्तो. ४ द ब १.

पण्णत्तरिसहस्सेसु णवयसहस्साधिएसु वासाणं । णमिणाहुप्पत्तीदो उप्पत्ती णेमिणाहस्स ॥ ५७५

५०९०००।

पण्णासाधियछस्सयचुलसीदिसहस्सपरिवत्ते । णेमिजिणुप्पत्तीदो उप्पत्ती पासणाहस्स ॥ ५७६

८४६५०।

अट्ठत्तरिअधियाए बेसदपरिमाणवासअदिरित्ते[1] । पासजिणुप्पत्तीदो उप्पत्ती वड्ढमाणस्स ॥ ५७७

वा २७८।

एदं जिणाणं (समयं-) तरालप्पमाणमाणंदकरं जणस्स ।

कम्मग्गलाँहं विहडाविदूण उग्घाडए मोक्खपुरीकवाडं[3] ॥ ५७८

। उप्पत्ती समत्ता।

उसहादिदससु आऊ चुलसीदी तह बहत्तरी सट्ठी[4]। पण्णासचालतीसा वीसं दसदुइगिपुव्वलक्खाइं ॥ ५७९

आदिजिणे पुव्व ८४०००००। अजिय पुव्व ७२०००००। संभव पुव्व ६०००००। अहिणंदण पुव्व ५०००००। सुमइ पुव्व ४०००००। पउमप्पह पुव्व ३०००००। सुपासणाह पुव्व २०००००। चंदप्पह पुव्व १०००००। पुप्फदंत पुव्व २००००। सीयल पुव्व १००००।

नमिनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् नौ हजार अधिक पांच लाख वर्षोंके व्यतीत होनेपर भगवान् नेमिनाथकी उत्पत्ति हुई ॥ ५७५ ॥ ५०९०००।

नेमिनाथ तीर्थंकरकी उत्पत्तिके पश्चात् चौरासी हजार छहसौ पचास वर्षोंके व्यतीत होनेपर भगवान् पार्श्वनाथकी उत्पत्ति हुई ॥ ५७६ ॥ ८४६५०।

भगवान् पार्श्वनाथकी उत्पत्तिके पश्चात् दोसौ अठत्तर वर्षोंके बीत जानेपर वर्धमान तीर्थंकर अवतीर्ण हुए ॥ ५७७ ॥ व० २७८।

लोगोंको आनंदित करनेवाला यह तीर्थंकरोंके अन्तरालकालका प्रमाण उनकी कर्मरूपी अर्गलाको नष्ट करके मोक्षपुरीके कपाटको उद्घाटित करता है ॥ ५७८ ॥

उत्पत्तिका कथन समाप्त हुआ।

वृषभादिक दश तीर्थंकरोंकी आयु क्रमशः चौरासी लाख पूर्व, बहत्तर लाख पूर्व, साठ लाख पूर्व, पचास लाख पूर्व, चालीस लाख पूर्व, तीस लाख पूर्व, बीस लाख पूर्व, दश लाख पूर्व, दो लाख पूर्व और एक लाख पूर्वप्रमाण थी ॥ ५७९ ॥

ऋषभ पूर्व ८४ लाख। अजित पूर्व ७२ लाख। संभव पूर्व ६० लाख। अभिनन्दन पूर्व ५० लाख। सुमति पूर्व ४० लाख। पद्म पूर्व ३० लाख। सुपार्श्व पूर्व २० लाख। चन्द्रप्रभ पूर्व १० लाख। पुष्पदन्त पूर्व २ लाख। शीतल पूर्व १ लाख।

---

१ द ब अदिरित्ते. २ ब कम्मणिगलाहं. ३ द ब विहदाविदूण उग्घाडमोक्खस्स पुरीकवाडं. ४ द बिहत्तरी.

तत्तो य वरिसलक्खं चुलसीदी तह बहत्तरी[1] सट्ठी । तीसदसएक्कमाऊ सेयंसप्पहुदिछक्कस्स ॥ ५८०

सेयंस वरिसलक्ख ८४००००० । वासुपुज्ज वस्स ७२००००० । विमल वस्स ६०००००० अणंत वस्स ३०००००० । धम्म वस्स १०००००० । संति वस्स १००००० ।

तत्तो वरिससहस्सा पणणउदी चउरसीदि पणवण्णं । तीसदसएक्कमाऊ कुंथुजिणप्पहुदिछक्कस्स ॥ ५८१

कुंथुणाह वरिस ९५००० । अर वरिस ८४००० । मल्लि वरिस ५५००० । सुव्वय वरिस ३०००० । णमि वरिस १०००० । णेमिणाह वरिस १००० ।

वाससदमेक्कमाऊ पासजिणिंदस्स होइ णियमेण । सिरिवड्ढमाणआऊ बाहत्तरिवस्सपरिमाणो ॥ ५८२

पासजिणे वस्स १०० । वीरजिणिंदस्स वस्स ७२ ।

। आउ समत्तं ।

पढमे कुमारकालो जिणरिसहे वीसपुव्वलक्खाणि । अजिआदिअरजिणंते सगसगआउस्स पादेगो[2] ॥ ५८३

उसह पुव्व २०००००० । अजिय पुव्व १८००००० । संभव पुव्व १५००००० । अहिणंदण पुव्व १२५०००० । सुमइ पुव्व १०००००० । पउमप्पह पुव्व ७५०००००[3] । सुपास पुव्व ५००००० । चंदप्पह पुव्व २५०००० । पुप्फदंत पुव्व ५०००० । सीयल पुव्व २५००० ।

इसके आगे श्रेयांसप्रभृति छह तीर्थंकरोंकी आयु क्रमसे चौरासी लाख, बहत्तर लाख, साठ लाख, तीस लाख, दश लाख और एक लाख वर्षप्रमाण थी ॥ ५८० ॥

श्रेयांस वर्ष ८४ लाख । वासुपूज्य वर्ष ७२ लाख । विमल वर्ष ६० लाख । अनन्त वर्ष ३० लाख । धर्म वर्ष १० लाख । शान्ति वर्ष १ लाख ।

इसके आगे कुंथुनाथप्रभृति छह तीर्थंकरोंकी आयु क्रमसे पंचानवे हजार, चौरासी हजार, पचवन हजार, तीस हजार, दश हजार और एक हजार वर्षप्रमाण थी ॥ ५८१ ॥

कुंथुनाथ ९५ हजार वर्ष । अरनाथ ८४ हजार वर्ष । मल्लिनाथ ५५ हजार वर्ष । सुव्रत ३० हजार वर्ष । नमिनाथ १० हजार वर्ष । नेमिनाथ १ हजार वर्ष ।

भगवान् पार्श्वनाथकी आयु नियमसे सौ वर्ष और श्री वर्धमानजिनकी आयु बहत्तर वर्ष-प्रमाण थी ॥ ५८२ ॥ पार्श्वनाथ वर्ष १०० । वर्धमान वर्ष ७२ ।

आयु समाप्त हुई ।

प्रथम जिनेन्द्रका कुमारकाल बीस लाख पूर्व और अजितनाथको आदि लेकर अर जिनतक अपनी अपनी आयुके चतुर्थ भागप्रमाण कुमारकाल था ॥ ५८३ ॥

ऋषभ पूर्व २० लाख । अजित पूर्व, १८ लाख । संभव पूर्व १५ लाख । अभिनन्दन पूर्व १२ लाख ५० हजार । सुमति पूर्व १० लाख । पद्मप्रभ पूर्व ७ लाख ५० हजार । सुपार्श्व पूर्व५ लाख । चन्द्रप्रभ पूर्व २ लाख ५० हजार । पुष्पदन्त पूर्व ५० हजार । शीतल पूर्व २५ हजार ।

---

१ द ब्र निहत्तरी. २ ब तिसदस्स. ३ द ब पादोणा. ४ द ७५००००००.

सेयंस वे २१०००००। वासुपुज्ज व १८०००००। विमल वस्स १५०००००। अणंत ७५०००० । धम्म २५०००० । संति २५००० । कुंथु २३७५० । अरणाह २१००० ।

तत्तो कुमारकालो एगैसयं सगसहस्सपंचसया । पणुवीससयं तिसयं तीसं तीसं च छक्कस्स ॥ ५८४

मल्लिणाह १००[1] । मुणिसुव्वय ७५०० । णमि २५०० । णेमि ३०० । पासणाह ३० । वीरणाह ३० ।

। एवं कुमारकालो समत्तो[2] ।

पंचसयधणुपमाणो उसहजिणिंदस्स होदि उच्छेहो । तत्तो पण्णासूणा णियमेण य पुप्फदंतपेरंते ॥ ५८५

उ ५०० । अ ४५० । सं ४०० । अ ३५० । सु ३०० । प २५० । सु २०० । चंद १५० । पुप्फ १०० ।

एत्तो जाव अणंतं दसदसकोदंडमेत्तपरिहीणो । तत्तो णेमिजिणंतं पणपणचावेहिं परिहीणो ॥ ५८६

सी ९० । से ८० । वा ७० । वि ६० । अ ५० । ध ४५ । सं ४० । कुं ३५ । अर ३० । म २५ । सुव्व २० । ण १५ । णे १० ।

श्रेयांस वर्ष २१ लाख । वासुपूज्य वर्ष १८ लाख । विमल वर्ष १५ लाख । अनन्त वर्ष ७ लाख ५० हजार । धर्म वर्ष २ लाख ५० हजार । शान्ति वर्ष २५ हजार । कुंथु वर्ष २३७५० । अर वर्ष २१ हजार ।

इसके आगे छह तीर्थंकरोंका कुमारकाल क्रमसे एकसौ, सात हजार पांचसौ, पचीससौ, तीनसौ, तीस और तीस वर्षप्रमाण था ॥ ५८४ ॥

मल्लिनाथ वर्ष १०० । मुनिसुव्रत वर्ष ७५०० । नमिनाथ वर्ष २५०० । नेमिनाथ वर्ष ३०० । पार्श्वनाथ वर्ष ३० । महावीर वर्ष ३० ।

इसप्रकार कुमारकाल समाप्त हुआ ।

भगवान् ऋषभनाथके शरीरकी उंचाई पांचसौ धनुषप्रमाण थी । इसके आगे पुष्पदन्त-पर्यन्त शरीरकी उंचाई नियमसे पचास धनुष कम होती गई है ॥ ५८५ ॥

ऋषभ ध० ५०० । अजित ध० ४५० । सम्भव ध० ४०० । अभिनन्दन ध० ३५० ।

सुमति ध० ३०० । पद्मप्रभ ध० २५० । सुपार्श्व ध० २०० । चन्द्रप्रभ ध० १५० । पुष्पदन्त ध० १०० ।

इसके आगे अनन्तनाथ तीर्थंकरपर्यन्त दश दश धनुष और फिर नेमिनाथतक पांच पांच धनुष उत्सेध कम होता गया है ॥ ५८६ ॥

शीतल ध० ९० । श्रेयांस ध० ८० । वासुपूज्य ध० ७० । विमल ध० ६० । अनन्त ध० ५० । धर्म ध० ४५ । शान्ति ध० ४० । कुंथु ध० ३५ । अर ध० ३० । मल्लि ध० २५ । मुनिसुव्रत ध० २० । नमि ध० १५ । नेमि ध० १० ।

---

१ [वस्स]. २ द्र एकसयं. ३ द्र १०००. ४ द्र समत्ता, ब सम्मत्ता.

णव हत्था पासजिणे[1] सग हत्था वड्ढमाणणामम्मि । एत्तो तित्थयराणं सरीरवण्णं परूवेमो ॥ ५८७

पा ह ९ । वीर ह ७ ।

। उच्छेहो समत्तो[2] ।

चंदप्पहपुप्फदंता[3] कुंदेंदुतुसारहारसंकासा । हरिदा सुपासपासा सुव्वयणेमी सणीलवण्णाओ ॥ ५८८

विद्दुमसमाणदेहा पउमप्पहवासुपुज्जजिणणाहा[4] । सेसाण जिणवराणं काया चामीयरायारा ॥ ५८९

। सरीरवण्णं[5] गदं ।

तेसट्ठिपुव्वलक्खा पढमजिणे रज्जकालपरिमाणं । तेवण्णपुव्वलक्खा अजिदे पुव्वंगसंजुत्ता ॥ ५९०

पुव्व ६३००००० । अजि ५३००००० पुव्वंग १ ।

चउदालपमाणाइं संभवसामिस्स पुव्वलक्खाइं । चउपुव्वंगजुदाइं णिद्दिट्ठं सव्वदरिसीहिं ॥ ५९१

पुव्व ४४००००० अं ४ ।

छत्तीसपुव्वलक्खा पण्णाससहस्सपुव्वसंजुत्ता । अडपुव्वंगेहिं जुदा अहिणंदणजिणवरिंदस्स ॥ ५९२

पुव्व ३६५०००० अं ८ ।

एक्कोणतीसपरिमाणपुव्वलक्खाणि वच्छराणं पि । पुव्वंगाणिं बारससहिदाणिं सुमइसामिस्स ॥ ५९३

पुव्व २९००००० अं १२ ।

भगवान् पार्श्वनाथके शरीरका उत्सेध नौ हाथ और वर्धमान स्वामीके शरीरका उत्सेध सात हाथप्रमाण था । अब इसके आगे तीर्थंकरोंके शरीरके वर्णको कहते हैं ॥ ५८७ ॥

पार्श्वनाथ हस्त ९ । वर्धमान हस्त ७ । उत्सेधका कथन समाप्त हुआ ।

भगवान् चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त कुन्दपुष्प, चन्द्रमा, बर्फ एवं हारके सदृश धवल; सुपार्श्व और पार्श्वनाथ हरितवर्ण; सुव्रत और नेमिनाथ नीलवर्ण, पद्मप्रभ और वासुपूज्य जिनेन्द्रका शरीर मूंगेके समान रक्तवर्ण, तथा शेष तीर्थङ्करोंके शरीर सुवर्णके सदृश पीत थे ॥ ५८८–५८९ ॥

शरीरके वर्णका कथन समाप्त हुआ ।

आदि जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण तिरेसठ लाख पूर्व और अजित जिनेन्द्रके एक पूर्वांग सहित तिरेपन लाख पूर्व था ॥ ५९० ॥

ऋषभ पूर्व ६३००००० । अजित पूर्व ५३००००० + पूर्वांग १ ।

सम्भव स्वामीके राज्यकालका प्रमाण सर्वज्ञदेवने चार पूर्वाङ्ग सहित चवालीस लाख पूर्व-प्रमाण बतलाया है ॥ ५९१ ॥ संभव पूर्व ४४००००० + पूर्वांग ४ ।

अभिनन्दन जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण आठ पूर्वाङ्ग सहित छत्तीस लाख पचास हजार पूर्व था ॥ ५९२ ॥ अभिनन्दन पूर्व ३६५०००० + पूर्वांग ८ ।

सुमतिनाथ स्वामीका राज्यकाल बारह पूर्वांग सहित उनतीस लाख वर्षपूर्वप्रमाण था ॥ ५९३ ॥ सुमतिपूर्व २९००००० + पूर्वांग १२ ।

१ द पासजिणा. २ द ब सम्मत्ता. ३ द चंदप्पह°. ४ द ब °पुप्फदंतो. ५ द ब जिणणाहो. ६ द ब सरीरवण्णणं.

इगिवीसपुव्वलक्खा पण्णाससहस्सपुव्वसंजुत्ता । सोलसपुव्वंगहिया रज्जं पउमप्पहजिणस्स ॥ ५९४
पुव्व २१५०००० अंग १६ ।

चोद्दस सयस्सहस्सा पुव्वाणं तह य पुव्वअंगाइं । विंसदिपरिमाणाइं णेयाणि सुपाससामिस्स ॥ ५९५
पुव्व १४००००० अंग २० ।

पण्णाससहस्साधियछल्लक्खपमाणवरिसपुव्वाणि । पुव्वंगा चउवीसा चंदप्पहजिणवरिंदस्स ॥ ५९६
पुव्व ६५०००० अंग २४ ।

अडवीसपुव्वअंगब्भहियं सुविहिस्स पुव्वलक्खद्धं । सीयलदेवस्स तहा केवलयं पुव्वलक्खद्धं ॥ ५९७
पुव्व ५०००० अंग २८ । पुव्व ५०००० ।

सेयंसजिणेसस्स य दुचोलसंखाणि वासलक्खाणि । पढमं चिय परिहरिया रज्जसिरी वासुपुज्जेण ॥ ५९८
वस्साणि ४२००००० ।

विमलस्स तीसलक्खा अणंतणाहस्स पंचदसलक्खा । लक्खा पणप्पमाणा वासाणं धम्मसामिस्स ॥ ५९९
वासाणि ३००००० । १५००००० । ५००००० ।

लक्खस्स पादमाणं संतिजिणेसस्स मंडलीसत्तं । तस्स य चक्कधरत्तो तत्तियमेत्ताणि वस्साणि ॥ ६००
२५००० । २५००० ।

पद्मप्रभ जिनेन्द्रका राज्यकाल सोलह पूर्वांग सहित इक्कीस लाख पचास हजार पूर्व-प्रमाण था ॥ ५९४ ॥ पद्मप्रभ पूर्व २१५०००० + पूर्वांग १६ ।

सुपार्श्वनाथ स्वामीका राज्यकाल बीस पूर्वांग सहित चौदह लाख पूर्वप्रमाण जानना चाहिये ॥ ५९५ ॥ सुपार्श्व पूर्व १४००००० + पूर्वांग २० ।

चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रके राज्यकालका प्रमाण छह लाख पचास हजार वर्षपूर्व और चौबीस पूर्वांग है ॥ ५९६ ॥ चन्द्रप्रभ पूर्व ६५०००० + पूर्वांग २४ ।

सुविधिनाथ (पुष्पदन्त) स्वामीका राज्यकाल अट्ठाईस पूर्वांग अधिक अर्ध लाख पूर्व, और शीतलनाथका केवल अर्ध लाख पूर्वप्रमाण ही था ॥ ५९७ ॥

सुविधि पूर्व ५०००० पूर्वांग २८ । शीतल पूर्व ५०००० ।

भगवान् श्रेयांसका राज्यकाल ब्यालीस लाख वर्षप्रमाण था । वासुपूज्य जिनेन्द्रने पहिले ही राज्यलक्ष्मीको छोड़ दिया था ॥ ५९८ ॥ श्रेयांस ४२००००० वर्ष ।

विमलनाथका राज्यकाल तीस लाख, अनन्तनाथका पन्द्रह लाख, और धर्मनाथ स्वामीका पांच लाख वर्षप्रमाण था ॥ ५९९ ॥ विमल वर्ष ३०००००, अनंत १५०००००, धर्म ५००००० ।

शान्ति जिनेन्द्रका मण्डलेशत्वकाल एक लाखके चतुर्थांशप्रमाण और चक्रवर्तित्वकाल भी इतने ही वर्षप्रमाण था ॥ ६०० ॥ शान्ति मंडलेशत्व २५०००, चक्रवर्तित्व २५००० वर्ष ।

---

१ द ब दुचाल.

तेवीस सहस्साइं सगसयपण्णास मंडलीसत्तं । कुंथुजिणिंदस्स तहा ताइं चिय चक्कवट्टित्ते[1] ॥ ६०१

२३७५० । २३७५० ।

इगिवीस सहस्साइं वस्साइं होंति मंडलीसत्ते । अरणामम्मि जिणिंदे ताइं चिय चक्कवट्टित्ते ॥ ६०२

२१००० । २१००० ।

ण हि रज्जं मल्लिजिणे पण्णारसपणसहस्सवासाइं । सुव्वयणमिणाहाणं णेमित्तिदयस्स ण हि रज्जं[2] ॥ ६०३

मल्लि ० । मुणिसुव्वय १५००० । णमि ५००० । णेमि ० । पास ० । वीर ० ।

रिसहादीणं चिण्हं गोवदिगयतुरगवाणरा कोकं । पउमं णंदावत्तं अद्धससी मयरसोत्तीया ॥ ६०४

गंडं महिसवराहो साहीवेज्जाणि हरिणछगलो य । तगरकुसुमा य कलसा कुम्मुप्पलसंखअहिसिंहा ॥ ६०५

अरकुंथुसंतिणामा तित्थयरा चक्कवट्टिणो[7] भूदा । सेसा अणुवमभुयबलसाहियरिपुमंडला जादा ॥ ६०६

संतिदुयवासुपुज्जा सुमइदुयं सुव्वुदादिपंचजिणा । णियपच्छिमजम्माणं उपओगा जादवेरग्गा ॥ ६०७

अजियजिणपुप्फदंता अणंतदेओ य धम्मसामी य । दट्ठूण उक्कवडणं संसारसरीरभोगणिव्विण्णा ॥ ६०८

अरसंभवविमलजिणा अब्भविणासेण जादवेरग्गा । सेयंससुपासजिणा वसंतवणलच्छिणासेण ॥ ६०९

कुंथु जिनेन्द्र तेईस हजार सातसौ पचास वर्षतक मण्डलेश और फिर इतने ही वर्षप्रमाण चक्रवर्ती रहे ॥ ६०१ ॥ २३७५० । २३७५० ।

अरनाथ जिनेन्द्रके इक्कीस हजार वर्ष मण्डलेश अवस्थामें और इतने ही वर्ष चक्रवर्तित्वमें व्यतीत हुए ॥ ६०२ ॥ २१००० । २१००० ।

मल्लि जिनेन्द्रने राज्य नहीं किया। सुव्रत और नमिनाथका राज्यकाल क्रमशः पन्द्रह हजार और पांच हजार वर्षप्रमाण था। नेमि आदिक शेष तीनों तीर्थंकरोंने राज्य नहीं किया ॥ ६०३ ॥

मल्लि ० । मुनिसुव्रत १५००० वर्ष । नमि ५००० वर्ष । नेमि ० । पार्श्व ० । वीर ० ।

बैल, गज, अश्व, बन्दर, चकवा, कमल, स्वस्तिक, अर्धचन्द्र, मगर, स्वस्तिक, गेंडा, भैंसा, शूकर, सेही, वज्र, हरिण, छाग, तगरकुसुम (मत्स्य), कलश, कूर्म, उत्पल (नीलकमल), शंख, सर्प और सिंह ये क्रमशः ऋषभादिक चौबीस तीर्थंकरोंके चिह्न हैं ॥ ६०४–६०५ ॥

अरनाथ, कुंथुनाथ और शान्तिनाथ नामके तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती हुए और शेष तीर्थंकर अपने अनुपम बाहुबलसे रिपुवर्गको सिद्ध करनेवाले (माण्डलिक राजा) हुए हैं ॥ ६०६ ॥

शान्ति और कुंथु, वासुपूज्य, सुमति और पद्म, तथा सुव्रतादिक पांच तीर्थंकर अपने पिछले जन्मोंके स्मरणसे वैराग्यको प्राप्त हुए ॥ ६०७ ॥

अजितजिन, पुष्पदन्त, अनन्तदेव और धर्मनाथ स्वामी उल्कापातको देखकर संसार, शरीर एवं भोगोंसे विरक्त हुए ॥ ६०८ ॥

अरनाथ, संभवनाथ, और विमल जिनेन्द्र मेघके विनाशसे; तथा भगवान् श्रेयांस और सुपार्श्व जिनेन्द्र वसन्तकालीन वनलक्ष्मीके विनाशसे वैराग्यको प्राप्त हुए ॥ ६०९ ॥

---

१ द ब तायं चिय. २ एषा गाथा ब-पुस्तके पुनरुक्ता. ३ ब 'त्तिदयसणाहि'. ४ द ब वराहो. ५ द ब तीहा. ६ द ब तगरा. ७ द ब चक्कवट्टिणा. ८ द 'रिसमंडला, ब 'रिवमंडला. ९ ब सुव्वुदादि.

चंदप्पहमल्लिजिणा अद्धुवपहुदीहिं जादवेरग्गा । सीयलओ हिमणासे उसहो णीलंजसाए मरणाओ ॥ ६१०
गंधव्वणयरणासे णंदणदेवा वि जादवेरग्गा । इय बाहिरहेदूहिं जिणा विरागेण चिंतंति ॥ ६११
णिरएसु णत्थि सोक्खं णिमेसमेत्तं [1]पि णारयाण सदा । दुक्खाइं[2] दारुणाइं वट्टंते[3] पच्चमाणाणं ॥ ६१२
जं कुणदि विसयलुद्धो पावं तस्सोदयम्मि णिरएसु । तिव्वाउ[4] वेदणाओ पावंतो विलवदि वसण्णो ॥ ६१३
खणमित्ते[5] विसयसुहे जे दुक्खाइं असंखकालाइं । पविसंति घोरणिरए ताण समो णत्थि णिब्बुद्धी ॥ ६१४
अंधो[6] णिवडइ कूवे बहिरो ण सुणेदि साधुउवदेसं । पेच्छंतो णिसुणंतो णिरए जं पडइ तं चोज्जं ॥ ६१५
भोत्तूण णिमिसमेत्तं विसयसुहं विसयदुक्खबहुलाइं । तिरयगदीए पावा चेट्ठंति अणंतकालाइं ॥ ६१६
ताडणतासणबंधणवाहणलंछणविहेडणं[8] दमणं । कण्णच्छेदणणासाविंधणणिल्लंछणं चेव ॥ ६१७
छेदणभेदणदहणं णिप्पीडणगालणं छुधा तण्हा । भक्खणमद्दणमलणं विकत्तणं सीदमुण्हं च ॥ ६१८

चन्द्रप्रभ और मल्लिजिन अध्रुव (बिजली) आदिसे, शीतलनाथ हिमके नाशसे, और भगवान् ऋषभदेव नीलंजसाके मरणसे विरक्तिको प्राप्त हुए ॥ ६१० ॥

गन्धर्व नगरके नाशसे अभिनन्दन स्वामी विरक्त हुए। इसप्रकार इन बाह्य हेतुओंसे विरक्त होकर वे तीर्थंकर चिन्तवन करते हैं ॥ ६११ ॥

नरकोंमें पचनेवाले नारकियोंको क्षणमात्र भी सुख नहीं है, किन्तु उन्हें सदैव दारुण दुःखोंका अनुभव होता रहता है ॥ ६१२ ॥

विषयोंमें लुब्ध होकर जीव जो कुछ पाप करता है उसका उदय आनेपर नरकोंमें तीव्र वेदनाओंको पाकर विषण्ण हो विलाप करता है ॥ ६१३ ॥

जो लोग क्षणमात्र रहनेवाले विषयसुखके निमित्त असंख्यात कालतक दुःखोंका अनुभव करते हुए घोर नरकोंमें प्रवेश करते हैं उनके समान निर्बुद्धि और कोई नहीं है ॥ ६१४ ॥

यदि अंधा कुएँमें गिरता है और बहिरा सदुपदेशको नहीं सुनता है तो यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं हैं, परन्तु जीव जो देखता व सुनता हुआ भी नरकमें पड़ता है यह आश्चर्य है ॥ ६१५ ॥

पापी जीव क्षणमात्र विषयसुखको भोगकर विषम एवं प्रचुर दुःखोंको भोगते हुए अनन्त कालतक तिर्यंच गतिमें रहते हैं ॥ ६१६ ॥

तिर्यंच गतिमें ताड़ना, त्रास देना, बांधना, बोझा लादकर देशान्तरको लेजाना, शंखादिकके आकारसे जलाना, कष्ट पहुंचाना, दमन करना, कानोंका छेदना, नासाका वेधना, अण्डकोशको नष्ट करना, छेदन, भेदन, दहन, निष्पीडन, गालन, क्षुधा, तृष्णा, भक्षण, मर्दन, मलन, विकर्तन, शीत और उष्ण (इत्यादिक दुख प्राप्त होते हैं) ॥ ६१७–६१८ ॥

---

१ द णिमेसमेत्तंमि. २ द दुक्खाइं. ३ द वट्टंते. ४ द ब 'लुद्धा. ५ द तिव्वाओ. ६ द खणमत्तो. ७ द ब अंधा. ८ द ब विहेदणं. ९ द मेलिच्छणं, ब मेलच्छिणं.

एवं अणंतखुत्तो णिच्चचदुग्गदिणिगोदमज्झम्मि । जम्मणमरणरहट्टं अणंतखुत्तो परिगदो[1] जं ॥ ६१९
पुव्वगदपावगुरुगो मादापिदरस्स रत्तसुक्कादो । जादूण य दसरत्तं अच्छदि कललस्सरूवेणं ॥ ६२०
कलुसीकदम्मि अच्छदि दसरत्तं तत्तियं मि थिरभूदं । पत्तेक्कं मासं चिय बुल्बुदघणभूदमांसपेसी य ॥ ६२१
पंचेपुलगाउअंगोवंगाइं चम्मरोमणहरूवं[5] । फंदणमट्ठममासे णवमे दसमे य णिग्गमणं ॥ ६२२
असुची यपेक्खणिज्जं दुग्गंधं मुत्तसोणिददुवारं । वोत्तुं पि लज्जणिज्जं पोट्टमुहं जम्मभूमी से ॥ ६२३
आमासयस्स हेट्ठा उवरिं पक्कासयस्स गूथम्मि । मज्झम्मि वत्थिपडले[8] पच्छण्णो वमिकपिज्जंतो ॥ ६२४
अच्छदि णवदसमासे गब्भे आहरदि सव्वअंगेसु । गूथरसं अइकुणिमं घोरतरं दुक्खसंभूदं ॥ ६२५
बालत्तणम्मिं[9] गुरुगं दुक्खं पत्तो यजाणमाणेण । जोव्वणकाले मज्झे इत्थीपासम्मि संसत्तो ॥ ६२६
वेढेदि[10] विसयहेदुं[11] कलत्तपासेहिं दुव्विमोचेहिं । कोसेण कोसकारो व दुम्मदी[12] मोहपासेसु ॥ ६२७

इसप्रकार अनन्तवार नित्य और चतुर्गति (इतर) निगोदमें जाकर अनन्तवार जिस जन्म-मरणरूप अरहट (घटीयंत्र) को प्राप्त किया है (उसके विषयमें विचार कर) ॥ ६१९ ॥

पूर्वकृत महा पापके उदयसे जीव माताके रक्त और पिताके शुक्रसे उत्पन्न होकर दश रात्रितक कललरूप पर्यायमें रहता है ॥ ६२० ॥

पश्चात् दश रात्रितक कलुषीकृत पर्यायमें और इतनी ही अर्थात् दश रात्रितक स्थिरीभूत पर्यायमें रहता है । इसके पश्चात् प्रत्येक मासमें क्रमसे बुद्बुद, घनभूत, मांसपेशी, पांच पुलक, आंगोपांग और चर्म, तथा रोम व नखोंकी उत्पत्ति होती है । पुनः आठवें मासमें स्पंदन क्रिया और नववें या दशवें मासमें निर्गमन होता है ॥ ६२१-६२२ ॥

जो अशुचि है, अदर्शनीय है, दुर्गंधसे युक्त है, मूत्र और खूनका द्वार है, और जिसके कहनेमें भी लज्जा आती है, ऐसा जो उदरका मुख (योनि) है, वह इस प्राणीके जन्मका स्थान है ॥ ६२३ ॥

यह प्राणी गर्भसमयमें आमाशयके नीचे और पक्वाशयके ऊपर मलमें बीचोंबीच वस्तिपटलसे (जरायुपटलसे) आच्छादित, वान्ति (वमन) को पीता हुआ नौ दश मास गर्भमें स्थित रहता है और वहां सब अंगोंमें अत्यन्त दुर्गन्धसे युक्त एवं भयानक दुखसे उत्पन्न ऐसे विष्टारसको आहारके रूपमें ग्रहण करता है ॥ ६२४-६२५ ॥

यह जीव बालकपनमें अज्ञान रहनेसे भारी दुखको प्राप्त हुआ, और यौवनकालमें स्त्रीके पासमें आसक्त रहा ॥ ६२६ ॥

जिसप्रकार रेशमका कीड़ा रेशमके तन्तुजालसे अपने आपको वेष्टित करता है, उसीप्रकार यह दुर्मति जीव मोहपाशमें बंधकर विषयके निमित्त दुर्विमोच स्त्रीरूप पाशोंसे अपनेको मोहजालमें फंसा लेता है ॥ ६२७ ॥

१ द परिगदा जं, ब परिगदाइं. २ द कललहस्स. ३ द ब कलुसे°. ४ द °बुच्छुदघणभूद°. ५ द ब पंचबलकाउ°. ६ द चमणमरोमरूवं, ब चणमरोमरूवं. ७ द ब तिव्वपडले. ८ ब आहारदि. ९ द ब बालत्तणंपि. १० द ब वेदेदि. ११ द व °हेदू. १२ द बद्धुमदी, ब बद्धुममदी°.

कामातुरस्स गच्छदि खणमिवं संवच्छराणि बहुगाणि । पाणितलधरिदगंडो बहुसो चिंतेदि दीणमुहो ॥ ६२८
कामुम्मत्तो पुरिसो कामिअंते जणे यलभमाणे । घत्तदि मरिदुं बहुधा मरुप्पपातादिकरणेहिं ॥ ६२९
कामपुण्णो पुरिसो तिलोक्कसारं पि जहदि सुदलाहं । कुणदि असंजमबहुलं अणंतसंसारसंजणणं ॥ ६३०
उच्चो धीरो वीरो बहुमाणीओ वि विसयलुद्धमई । सेवदि णीचं णिच्चं सहदि हु बहुगं पि अवमाणं ॥ ६३१
दुक्खं दुज्जसबहुलं इह लोगे दुग्गदिं पि परलोगे । हिंडदि दूरमपारे संसारे विसयलुद्धमई ॥ ६३२
विसयामिसेहिं पुण्णो अणंतसोक्खाण हेदु सम्मत्तं । सच्चारित्तं जहदि हु तणं व लज्जं च मज्जादं ॥ ६३३
सीदं उण्हं तण्हं छुधं च दुस्सेज्जभत्तपंथसमं । सुकुमालको वि कामी सहदि वहदि भारमतिगुरुगं ॥ ६३४
अवि य वधो जीवाणं मेहुणसण्णाए होदि बहुगाणं । तिलणालीए तत्तायसप्पवेसो व्व जोणीए ॥ ६३५
इह लोके वि महल्लं दोसं कामस्स वसगदो पत्तो । कालगदो वि अणंतं दुक्खं पावेदि कामंधो ॥ ६३६

कामातुर जीवके बहुतसे वर्ष क्षणमात्रके समान चले जाते हैं । वह हस्ततलपर कपोलको रखकर दीनमुख होता हुआ बहुतप्रकार चिन्ता करता है ॥ ६२८ ॥

कामोन्मत्त पुरुष अभीष्ट जनको न पाकर बहुधा मरुप्रपातादि साधनोंसे मरनेकी चेष्टा करता है ॥ ६२९ ॥

कामसे परिपूर्ण पुरुष तीन लोकमें श्रेष्ठ श्रुतलाभको छोड़ देता है और अनन्त संसारको उत्पन्न करनेवाले प्रचुर असंयमको करता है ॥ ६३० ॥

उच्च, धीर, वीर और बहुत मानी भी मनुष्य विषयमें लुब्धबुद्धि होकर नित्य ही नीचका सेवन करता है और बहुत प्रकारके अपमानको सहता है ॥ ६३१ ॥

जिसकी बुद्धि विषयोंमें लुब्ध है, वह पुरुष इस लोकमें प्रचुर अपकीर्तियुक्त दुःखको तथा परलोकमें दुर्गतिको प्राप्त करके अपार संसारमें बहुत कालतक परिभ्रमण करता है ॥ ६३२ ॥

विषयभोगोंसे परिपूर्ण पुरुष अनन्तसुखके कारणभूत सम्यक्त्व, सम्यक्चारित्र, तथा लज्जा और मर्यादाको तृणके समान छोड़ देता है ॥ ६३३ ॥

सुकुमार भी कामी पुरुष शीत, उष्ण, तृष्णा, क्षुधा, दुष्ट शय्या, खोटा आहार और मार्गश्रमको सहता है तथा अत्यन्त भारी बोझेको ढोता है ॥ ६३४ ॥

तथा, मैथुनसंज्ञासे तिलोंकी नालीमें तप्त लोहेके प्रवेशके समान योनिमें बहुतसे जीवोंका वध होता है ॥ ६३५ ॥

कामके वशीभूत हुआ पुरुष इस लोकमें भी महान् दोषको प्राप्त होता है और कामान्ध हुवा मरकर परलोकमें भी अनन्त दुःख पाता है ॥ ६३६ ॥

---

१ द ब खणमवि. २ ब पालितल°. ३ द ब दीणमुहे. ४ द जणो य अममाणो, ब जणे य अममाणो. ५ द ब पत्तदि. ६ द कामं पुणो, ब कामं पुण्णो. ७ द ब उच्चा. ८ द °लद्धमई. ९ द ब बहुवाणि. १० ब पुणो. ११ ब नादि हु. १२ द तिलणाणीए, ब तिलघाणीए. १३ द ब जाणीए. १४ द ब दोसा.

सोणियसुक्कुपाइयदेहो[1] दुक्खाइ गब्भवासम्मि । सहिदूण दारुणाइं धिट्ठो[2] पावाइं कुणइ पुणो ॥ ६३७
वाहिणिहाणं[3] देहो बहुपोसपोसियो वि सयधोई[4] । अत्थी पवणपणोल्लियपाथवदलचंचलसहावो[5] ॥ ६३८
तारुण्णं तडितरलं विसयाहिरत्तं विरसवित्थारा । अत्था अणत्थमूलं अविचारियसुंदरं सव्वं ॥ ६३९
माहा पिदा कलत्तं पुत्ता बंधू य इंदजाला य । दिट्ठपणट्ठाइ खणे[7] मणस्स दुसहाइं सल्लाइं ॥ ६४०
पत्ता यत्थावेहिं सोक्खं भावेहिं णिच्चगरुवाहिं[8] । दुक्खाइ माणसाइं देवगदीए अणुभवंति ॥ ६४१
चइदूण चउगदीओ दारुणदुव्वारदुक्खखाणीओ । परमाणंदणिहाणं णिव्वाणं आसु वच्चामो ॥ ६४२
तम्हा मोक्खस्स कारणं—
दारवदीए[10] णेमी सेसा तेवीस तेसु तित्थयरा । णियणियजादपुरेसुं गिण्हंति जिणिंददिक्खाइं ॥ ६४३
चेत्तासिदणवमीए तदिए पहरम्मि उत्तरासाढे । सिद्धत्थवणे उसहो उववासे छट्ठमम्मि णिक्कंतो[11] ॥ ६४४
माघस्स सुक्कणवमीअवरण्हे रोहिणीसु अजियजिणो । रम्मे सहेदुगवणे[12] अट्ठमभत्तम्मि णिक्कंतो ॥ ६४५

शोणित और शुक्रसे उत्पन्न हुई देहसे युक्त जीव महा भयानक दुःखोंको सहकर निर्लज्ज हुआ फिरसे पापोंको करता है ॥ ६३७ ॥

बहुतसे पुष्टिकारक पदार्थोंसे अच्छी तरह सैकड़ों प्रकारसे पोषा गया भी यह व्याधियोंका निधानभूत शरीर पवनसे प्रेरित वृक्षके पत्तेके समान चंचल स्वभाववाला है ॥ ६३८ ॥

विषयाभिरक्त तारुण्य बिजलीके समान चंचल है और अर्थ अर्थात् इंद्रियविषय नीरसतापूर्ण हैं, अनर्थके मूलकारण हैं इसप्रकार ये सब अनर्थके मूल और अविचारितरम्य ही हैं ॥ ६३९ ॥

माता, पिता, कलत्र, पुत्र और बन्धुजन ये सब इन्द्रजालके समान क्षण भरमें देखते देखते नष्ट होते हुए मनके लिये दुस्सह शल्य हैं ॥ ६४० ॥

देवगतिमें सुखको प्राप्त हुए जीव उस सुखके विनाशकी चिन्तारूप भावोंसे नित्य ही महान् मानसिक दुःखोंका अनुभव किया करते हैं ॥ ६४१ ॥

अत एव दारुण और दुर्निवार दुःखोंकी खानिभूत इन चारों गतियोंको छोड़कर हम उत्कृष्ट आनन्दके निधानस्वरूप मोक्षको शीघ्र ही प्राप्त करें ॥ ६४२ ॥

इसीलिये मोक्षके निमित्त—

उन चौबीस तीर्थंकरोंमेंसे भगवान् नेमिनाथ द्वारावती नगरीमें और शेष तेईस तीर्थंकर अपने अपने जन्मस्थानोंमें जिनेन्द्रदीक्षाको ग्रहण करते हैं ॥ ६४३ ॥

भगवान् ऋषभदेव चैत्रकृष्णा नवमीके तीसरे पहर उत्तराषाढ़ नक्षत्रमें सिद्धार्थवनमें षष्ठ उपवासके साथ दीक्षित हुए ॥ ६४४ ॥

अजित जिनेन्द्र माघशुक्ला नवमीके दिन अपराह्न कालमें रोहिणी नक्षत्रके रहते सुन्दर सहेतुकवनमें अष्टम भक्तके साथ दीक्षित हुए ॥ ६४५ ॥

१ द ब 'सुक्कपाइयदाहो. २ द दिट्ठो, ब विट्ठो. ३ द ब वाहिणिणाहं. ४ द ब सयधारं. ५ द ब पणोचिय. ६ द ब 'सहावा. ७ ब खणो. ८ द ब दुसमाइं. ९ द ब 'गरुवाहिं. १० ब दारवदीये. ११ द ब णिक्कंता. १२ द ब सुहेदुगवणे.

मग्गसिरपुण्णिमाए तदिए पहरम्मि तदियउववासे । जेट्ठाए णिक्कंतो संभवसामी सहेदुगम्मि वणे ॥ ६४६
सिदबारसिपुव्वण्हे माघे मासे पुणव्वसूरिक्खे । उग्गवणे उववासे तदिए अभिणंदणो य णिक्कंतो[1] ॥ ६४७
णवमीए पुव्वण्हे मघासु वइसाहसुक्कपक्खम्मि । सुमई सहेदुगवणे णिक्कंतो तदियउववासे ॥ ६४८
चेत्तासु किण्हतेरसिअवरण्हे कत्तियस्स[2] णिक्कंतो । पउमप्पहो जिणिंदो तदिए खवणे मणोहरुज्जाणे ॥ ६४९
सिदबारसिपुव्वण्हे जेट्ठस्स विसाहभम्मि जिणदिक्खं । गेण्हेदि तदियखवणे सुपासदेवो सहेदुगम्मि वणे ॥६५०
अणुराहाए पुरसे बहुले एयारसीए अवरण्हे । चंदप्पहो धरइ तवं सव्वत्थवणम्मि तदियउववासे ॥ ६५१
अणुराहाए पुस्से सिदपक्खेकारसीए अवरण्हे । पव्वजिओ[3] पुप्फवणे तदिए खवणम्मि पुप्फयंतजिणो ॥ ६५२
माघस्स किण्हबारसिअवरण्हे मूलभम्मि पव्वज्जा । गहिया थं सहेदुवणे सीयलदेवेण तदियउववासे ॥ ६५३
एक्कारसिपुव्वण्हे फग्गुणबहुले मणोहरुज्जाणे । सवणम्मि तदियखवणे सेयंसो धरइ जिणदिक्खं ॥ ६५४
फग्गुणकसणचउद्दसिअवरण्हे वासुपुज्जतवगहणं । रिक्खम्मि विसाखाए इगिउववासे मणोहरुज्जाणे ॥ ६५५

सम्भवनाथ स्वामीने मगसिर मासकी पूर्णिमाको तृतीय पहरमें ज्येष्ठा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण की ॥ ६४६ ॥

अभिनन्दन भगवान्‌ने माघशुक्ला द्वादशीके दिन पूर्वाह्न कालमें पुनर्वसु नक्षत्रके रहते उग्रवनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा धारण की ॥ ६४७ ॥

भगवान् सुमतिनाथ वैशाखशुक्ला नवमीको पूर्वाह्न कालमें मघा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षित हुए ॥ ६४८ ॥

पद्मप्रभ जिनेन्द्र कार्तिककृष्णा त्रयोदशीके अपराह्न समयमें चित्रा नक्षत्रके होते हुए मनोहर उद्यानमें तृतीय भक्तके साथ दीक्षित हुए ॥ ६४९ ॥

भगवान् सुपार्श्वनाथने ज्येष्ठशुक्ला द्वादशीको पूर्वाह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते सहेतुक-वनमें तृतीय उपवासके साथ जिनदीक्षा ग्रहण की ॥ ६५० ॥

चन्द्रप्रभ भगवान्‌ने पौषकृष्णा एकादशीके दिन अपराह्न कालमें अनुराधा नक्षत्रके रहते तृतीय उपवासके साथ सर्वार्थवनमें तपको धारण किया ॥ ६५१ ॥

पुष्पदन्त तीर्थंकर पौषशुक्ला एकादशीको अपराह्न समयमें अनुराधा नक्षत्रके रहते पुष्पवनमें तृतीय भक्तके साथ दीक्षित हुए ॥ ६५२ ॥

शीतलनाथ स्वामीने माघकृष्णा द्वादशीके दिन अपराह्न समयमें मूल नक्षत्रके होते हुए सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ प्रव्रज्या (दीक्षा) ग्रहण की ॥ ६५३ ॥

भगवान् श्रेयांसने फाल्गुनकृष्णा एकादशीको पूर्वाह्न समयमें श्रवण नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें तृतीय भक्तके साथ जिनदीक्षा धारण की ॥ ६५४ ॥

वासुपूज्य जिनेन्द्रने फाल्गुनकृष्णा चतुर्दशीके दिन अपराह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें एक उपवासके साथ तप ग्रहण किया ॥ ६५५ ॥

---

१ ब णिक्कंता. २ ब किण्हियस्स. ३ द ब चंदप्प. ४ द ब पवज्जिय. ५ द किण्हे. ६ द ब र°.

माघस्स सिदचउत्थीअवरण्हे तह सहेदुगम्मि वणे । उत्तरभद्दपदाणं विमलो णिक्कमइ तदियउववासे ॥ ६५६
जेट्ठस्स बहुलबारसिअवरण्हे रेवदीसु खवणतिए । धरिया सहेदुगवणे अणंतदेवेण तवलच्छी ॥ ६५७
सिद्दतेरसिअवरण्हे भद्दपदे पुस्सभम्मि खवणतिए । णमिऊणं सिद्धाणं सालिवणे णिक्कमइ धम्मो ॥ ६५८
जेट्ठस्स बहुलचोत्थीअवरण्हे भरणिभम्मि चूदवणे । पडिवज्जदि पव्वज्जं संतिजिणो तदियउववासे ॥ ६५९
वइसाहसुद्धपाडिवअवरण्हे कित्तियासु खवणतिए । कुंथू सहेदुगवणे पव्वजिओ पणमिऊण सिद्धाणं ॥ ६६०
मग्गासिरसुद्धदसमीअवरण्हे रेवदीसु अरदेओ । तदियखवणम्मि गेण्हदि जिणिंदरूवं सहेदुगम्मि वणे ॥ ६६१
मग्गासिरसुद्धएक्कारसिए तह अस्सिणीसु पुव्वण्हे । धरेदि तवं सालिवणे मल्ली छट्ठेण भत्तेण ॥ ६६२
वइसाहबहुलदसमीअवरण्हे समणभम्मि णीलवणे । उववासे तदियम्मि य सुव्वदेवो महावदं धरदि ॥ ६६३
आसाढबहुलदसमीअवरण्हे अस्सिणीसु चेत्तवणे । णमिणाहो पव्वज्जं पडिवज्जदि तदियखवणम्हि ॥ ६६४
चेत्तासु सुद्धसट्ठीअवरण्हे मावणम्मि णेमिजिणो । तदियखवणम्मि गिण्हदि सहकारवणम्मि तवचरणं ॥ ६६५

विमलनाथ स्वामीने माघशुक्ला चतुर्थीको अपराह्न कालमें उत्तर भाद्रपद नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ दीक्षा ग्रहण की ॥ ६५६ ॥

भगवान् अनन्तनाथने ज्येष्ठकृष्णा द्वादशीके दिन अपराह्न कालमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय उपवासके साथ तपोलक्ष्मी धारण की ॥ ६५७ ॥

धर्मनाथ तीर्थंकरने भाद्रपदशुक्ला त्रयोदशीको अपराह्न कालमें पुष्य नक्षत्रके रहते शालिवनमें तृतीय उपवासके साथ सिद्धोंको नमस्कार कर जिनदीक्षा ग्रहण की ॥ ६५८ ॥

शान्तिनाथ जिनेन्द्रने ज्येष्ठकृष्णा चतुर्थी (? चतुर्दशी) के दिन अपराह्न कालमें भरणी नक्षत्रके रहते आम्रवनमें तृतीय उपवासके साथ जिनदीक्षा धारण की ॥ ६५९ ॥

भगवान् कुंथुनाथ वैशाखशुक्ला प्रतिपद्को अपराह्न कालमें कृत्तिका नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय भक्तके साथ सिद्धोंको प्रणाम कर दीक्षित हुए ॥ ६६० ॥

अरनाथ तीर्थंकरने मगसिरशुक्ला दशमीके दिन अपराह्न समयमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें तृतीय भक्तके साथ जिनेन्द्ररूपको ग्रहण किया ॥ ६६१ ॥

मल्लि जिनेन्द्रने मगसिरशुक्ला एकादशीके दिन पूर्वाह्नमें अश्विनी नक्षत्रके रहते शालिवनमें षष्ठभक्तके साथ तपको धारण किया ॥ ६६२ ॥

सुव्रत देवने वैशाखकृष्णा दशमीको अपराह्न कालमें श्रवण नक्षत्रके रहते नीलवनमें तृतीय उपवासके साथ महाव्रतोंको धारण किया ॥ ६६३ ॥

नमिनाथ भगवान्ने आषाढकृष्णा दशमीके दिन अपराह्न कालमें अश्विनी नक्षत्रके रहते चैत्रवनमें तृतीय भक्तके साथ दीक्षा स्वीकार की ॥ ६६४ ॥

भगवान् नेमिनाथने श्रावणशुक्ला षष्ठीको चित्रा नक्षत्रके रहते सहकार वनमें तृतीय भक्तके साथ तपको ग्रहण किया ॥ ६६५ ॥

१ द ब चोत्ती. २ ब सिद्धाणं. ३ द धरिदि, ब धरिद. ४ द ब मल्लि. ५ द ब देवा. ६ द ब चेतवणे.

माघस्सिदएक्कारसिपुव्वण्हे गेण्हदे विसाहासु । पव्वज्जं पासजिणो अस्सत्थवणम्मि छट्ठभत्तेण ॥ ६६६
मग्गसिरबहुलदसमीअवरण्हे उत्तरासु णाधवणे । तदियखवणम्मि गहिदं महव्वदं वड्ढमाणेण ॥ ६६७
पव्वजिदो[1] मल्लिजिणो रायकुमारेहिं तिसयमेत्तेहिं । पासजिणो वि तह चिय एक्क चिय वड्ढमाणजिणो[2] ॥ ६६८

मल्लि ३०० । पास ३०० । वीर १ ।

छावत्तरिजुदछस्सयसंखेहिं वासुपुज्जसामी य । उसहो तालसएहिं सेसा पुह पुह सहस्समेत्तेहिं ॥ ६६९

वासु ६७६ । उसह ४००० । सेसे १००० ।

णेमी मल्ली वीरो कुमारकालम्मि वासुपुज्जो य । पासो वि य गहिदतवा सेसजिणा रजचरमम्मि ॥ ६७०
एक्कवरिसेण उसहो उच्छुरसं कुणइ पारणं अवरे । गोक्खीरे णिप्पण्णं अण्णं बिदियम्मि[5] दिवसम्मि ॥ ६७१
सव्वाण पारणदिणे णिवडइ वररयणवरिसमंबरदो । पणघणहदंदहलद्धसंखं जेट्ठं अवरं सहस्सभागं च ॥ ६७२
दाणविसेसोहिविसेसोब्भेदणिमित्तं सु रयणमहीए । वायंति दुंदुहीओ देवा जलदेहि अंतरिदा ॥ ६७३

पार्श्वनाथ जिनेन्द्रने माघशुक्ला एकादशीको पूर्वाह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते षष्ठ भक्तके साथ अश्वत्थ वनमें दीक्षाको ग्रहण किया ॥ ६६६ ॥

वर्धमान भगवान्ने मगसिरकृष्णा दशमीके दिन अपराह्न कालमें उत्तरा नक्षत्रके रहते नाथवनमें तृतीय भक्तके साथ महाव्रतोंको ग्रहण किया ॥ ६६७ ॥

भगवान् मल्लिनाथ तीनसौ राजकुमारोंके साथ दीक्षित हुए । पार्श्वनाथ भी उतने ही अर्थात् तीनसौ राजकुमारोंके साथ, तथा वर्धमान जिनेन्द्र अकेले ही दीक्षित हुए ॥ ६६८ ॥

मल्लि ३०० । पार्श्व ३०० । वीर १ ।

वासुपूज्य स्वामी छहसौ छयत्तर, ऋषभनाथ चालीससौ, और शेष तीर्थंकर पृथक् पृथक् एक हजार राजकुमारोंके साथ दीक्षित हुए ॥ ६६९ ॥

वासु० ६७६ । ऋषभ ४००० । शेष १००० ।

भगवान् नेमिनाथ, मल्लिनाथ, महावीर, वासुपूज्य और पार्श्वनाथ, इन पांच तीर्थंकरोंने कुमारकालमें, और शेष तीर्थंकरोंने राज्यके अन्तमें तपको ग्रहण किया ॥ ६७० ॥

भगवान् ऋषभदेवने एक वर्षमें इक्षुरसकी पारणा की थी और इतर तीर्थंकरोंने दूसरे दिन गोक्षीरमें निष्पन्न अन्न अर्थात् खीरकी पारणा की थी ॥ ६७१ ॥

पारणाके दिन सब दाताओंके यहां आकाशसे उत्तम रत्नोंकी वर्षा होती है, जिसमें अधिकसे अधिक पांचके घनसे गुणित दश लाखप्रमाण अर्थात् साढ़े बारह करोड़ और कमसे कम इसके हजारवें भागप्रमाण रत्न बरसते हैं ॥ ६७२ ॥

दानविशुद्धिकी विशेषताको प्रकट करनेके निमित्त देव मेघोंसे अन्तर्हित होते हुए रत्नवृष्टिपूर्वक दुंदुभी बाजोंको बजाते हैं ॥ ६७३ ॥

---

१ द उत्तरासुणाधरणे, ब उत्तरासुणापवणे. २ ब पव्वजिदो. ३ ब वड्ढमाणजिणे. ४ द गोखीरे. ५ [तिदियम्मि]. ६ द ब पणपणहदं.

पसरइ दाणुग्घोसो वादि सुयंधो[1] सुसीयलो पवणो । दिव्वकुसुमेसु गयणं वरिसइ इय पंच चोज्जाणि[2] ॥ ६७४
उसहादीसुं वासा सहस्सबारसचउद्दसट्ठरसा । बीस छदुमत्थकालो छ चिय पउमप्पहे मासा ॥ ६७५
वासा १००० । १२ । १४ । १८ । २० । मा ६ ।
वासाणि णव सुपासे मासा चंदप्पहम्मि तिण्णि तदो । चदुतिदुएक्का तिदुइगिसोलसचउवग्गचउकदी वासा ॥ ६७६
सुपास वास ९ । चंद मा ३ । पुप्फ वा ४ । सीयल वास ३ । सेयं वा २ । वासु १ । विमल ३ ।
अणंत २ । धम्म १ । संति १६ । कुंथु १६ । अर १६ ।
मल्लिजिणे छद्दिवसा एक्कारस सुव्वदे जिणे मासा । णमिणाहे णव मासा दिणाणि छप्पण्ण णेमिजिणे ॥ ६७७
मल्लि दिण ६ । सुव्वद मा. ११ । णमि मा. ९ । णेमि दि ५६ ।
पासजिणे चउमासा बारसवासाणि वड्ढमाणजिणे । एत्तियमेत्ते समए केवलणाणं ण ताण उप्पण्णं ॥ ६७८
पास मास ४ । वीर वासा १२ ।
फग्गुणकिण्हेयारसपुव्वण्हे पुरिमतालणयरम्मि । उत्तरसाढे उसहे उप्पण्णं केवलं णाणं ॥ ६७९

उस समय दानका उद्घोष अर्थात् 'जय जय' शब्द फैलता है, सुगन्धित एवं शीतल वायु चलती है और आकाशसे दिव्य फूलोंकी वर्षा होती है। इस तरह ये पंचाश्चर्य होते हैं ॥ ६७४ ॥

ऋषभादिक पांच तीर्थंकरोंका क्रमसे एक हजार वर्ष, बारह वर्ष, चौदह वर्ष, अठारह वर्ष और बीस वर्षप्रमाण तथा पद्मप्रभका केवल छह मासप्रमाण ही छद्मस्थकाल है ॥ ६७५ ॥

ऋषभ वर्ष १००० । अजित १२ । संभव १४ । अभिनंदन १८ । सुमति २० । पद्मप्रभ मास ६ ।

सुपार्श्वनाथ स्वामीका छद्मस्थकाल नौ वर्ष, चन्द्रप्रभका तीन मास, और इसके आगे क्रमशः चार, तीन, दो, एक, तीन, दो, एक, सोलह, चारका वर्ग (सोलह) और फिर चारकी कृति अर्थात् वर्ग (सोलह) वर्षप्रमाण है ॥ ६७६ ॥

सुपार्श्व वर्ष ९ । चन्द्र. मा. ३ । पुष्प. व. ४ । शीतल व. ३ । श्रेयांस व. २ । वासु. व. १ । विमल व. ३ । अनन्त व. २ । धर्म व. १ । शान्ति व. १६ । कुन्थु व. १६ । अर. व. १६ ।

छद्मस्थकालमें मल्लि जिनेन्द्रके छह दिन, सुव्रत जिनेन्द्रके ग्यारह मास, नमिनाथके नौ मास और नेमिनाथके छप्पन दिन व्यतीत हुए ॥ ६७७ ॥

मल्लि दि. ६ । सुव्रत मा. ११ । नमि मा. ९ । नेमि दि. ५६ ।

पार्श्व जिनेन्द्रका चार मास और वर्धमान स्वामीका बारह वर्षप्रमाण छद्मस्थकाल रहा है। इतने समयतक अर्थात् उपर्युक्त छद्मस्थकालतक उन तीर्थंकरोंके केवलज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ था ॥ ६७८ ॥ पार्श्व मास ४ । वीर वर्ष १२ ।

ऋषभनाथ भगवान्को फाल्गुनकृष्णा एकादशीके पूर्वाह्न कालमें उत्तराषाढ़ नक्षत्रके रहते पुरिमताल नगरमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६७९ ॥

---

१ द सुयंधा. २ द ब चोज्जाणि. ३ ब छदुमट्ठ. ४ द ब कत्तिय. ५ ब केवलणाणे.

पुस्सस्स सुक्कचोद्दसिअवरण्हे रोहिणिम्मि णक्खत्ते । अजियजिणे उप्पण्णं अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥ ६८०
कत्तियसुक्के पंचमिअवरण्हे पुणव्वसुम्मि णक्खत्ते । उग्गवणे अभिणंदणजिणस्स संजाद सव्वगयं ॥ ६८१
पुस्सस्स पुण्णिमाए रिक्खम्मि करे[1] सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे उप्पण्णं सुमइजिणे केवलं णाणं ॥ ६८२
वइसाहसुक्कदसमीचित्तारिक्खे मणोहरुज्जाणे । अवरण्हे उप्पण्णं पउमप्पहजिणवरिंदस्स ॥ ६८३
फग्गुणकसिणे सत्तमिविसाहरिक्खे सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे असवत्तं सुपासणाहस्स संजादं ॥ ६८४
तहिवसे अणुराहे सव्वत्थवणे दिणस्स पच्छिमए । चंदप्पहजिणणाहे संजादं सव्वभावगदं ॥ ६८५
कत्तियसुक्के तइए अवरण्हे मूलभे य पुप्फवणे । सुविहिजिणे उप्पण्णं तिहुवणसंखोभयं णाणं ॥ ६८६
पुस्सस्स किण्हचोद्दसिपुव्वासाढे दिणस्स पच्छिमए । सीयलजिणस्स जादं अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥ ६८७
माघस्स य अमवासे [सवणे रिक्खे मणोहरुज्जाणे । अवरण्हे संजादं सेयंसजिणस्स केवलयं ॥ ६८८]

अजित जिनेन्द्रको पौषशुक्ला चतुर्दशीके अपराह्न समयमें रोहिणी नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८० ॥

[संभवनाथ जिनेन्द्रको कार्तिककृष्णा पंचमीके अपराण्ह कालमें जेष्ठा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥६८०*१॥]

अभिनन्दन जिनेन्द्रको कार्तिकशुक्ला पंचमीके अपराह्न कालमें पुनर्वसु नक्षत्रके रहते उग्रवनमें सर्वगत अर्थात् केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८१ ॥

सुमति जिनेन्द्रको पौष मासकी पूर्णिमाके अपराह्न कालमें हस्त नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८२ ॥

पद्मप्रभ जिनेन्द्रको वैशाखशुक्ला दशमीके अपराह्न कालमें चित्रा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८३ ॥

सुपार्श्वनाथ स्वामीको फाल्गुनकृष्णा सप्तमीके अपराह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें असपत्न अर्थात् केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था ॥ ६८४ ॥

चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रको उसी दिन अर्थात् फाल्गुनकृष्णा सप्तमीको दिनके पश्चिम भागमें अनुराधा नक्षत्रके रहते सर्वार्थ वनमें सम्पूर्ण पदार्थोंको अवगत करनेवाला केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८५ ॥

सुविधिनाथ तीर्थंकरको कार्तिकशुक्ला तृतीयाके दिन अपराह्न कालमें मूल नक्षत्रके रहते पुष्पवनमें तीनों लोकोंको क्षोभित करनेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८६ ॥

शीतलनाथ तीर्थंकरको पौषकृष्णा चतुर्दशीको दिनके पश्चिम भागमें पूर्वाषाढा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८७ ॥

श्रेयांस जिनेन्द्रको माघ मासकी अमावस्याके दिन (अपराह्न कालमें श्रवण नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें केवलज्ञान प्राप्त हुआ) ॥ ६८८ ॥

१ द रिक्खंमि रके. २ द ब अवसत्तं.

[माघस्स सुक्कबिदिये] विसाहरिक्खे मणोहरुज्जाणे । अवरण्हे संजादं केवलणाणं तु वासुपुज्जम्मि ॥ ६८९
पुस्से सिद्दसमीए अवरण्हे तह य उत्तरासाढे । विमलजिणिंदे[1] जादं अणंतणाणं सहेदुगम्मि वणे ॥ ६९०
चेत्तस्स य अमवासे रेवदिरिक्खे सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे संजादं केवलणाणं अणंतजिणे ॥ ६९१
पुस्सस्स पुण्णिमाए पुस्से रिक्खे सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे संजादं धम्मजिणिंदस्स[2] सव्वगदं ॥ ६९२
पुस्से सुक्केयारसिभरणीरिक्खे दिणस्स पच्छिमए । चूदवणे संजादं[3] संतिजिणेसस्स केवलं णाणं ॥ ६९३
चेत्तस्स सुक्कतदिए कित्तियरिक्खे सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे उप्पण्णं कुंथुजिणेसस्स केवलं णाणं ॥ ६९४
कत्तियसुक्के बारसिरेवदिरिक्खे सहेदुगम्मि वणे । अवरण्हे उप्पण्णं केवलणाणं अरजिणस्स ॥ ६९५
फग्गुणकिण्हे बारसिअस्सिणिरिक्खे मणोहरुज्जाणे । अवरण्हे मल्लिजिणे केवलणाणं समुप्पण्णं ॥ ६९६
फग्गुणकिण्हे सट्ठीपुव्वण्हे सवणभे य णीलवणे । मुणिसुव्वयस्स जादं असहायपरक्कमं णाणं ॥ ६९७
चित्तस्स सुक्कतट्ठए अस्सिणिरिक्खे दिणस्स पच्छिमए । चित्तवणे संजादं अणंतणाणं णमिजिणस्स ॥ ६९८

वासुपूज्य जिनेंद्रको (माघशुक्ला द्वितीयाके दिन) अपराह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६८९ ॥

विमलनाथ जिनेन्द्रके पौषशुक्ला दशमीको अपराह्न कालमें उत्तराषाढ़ा नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९० ॥

भगवान् अनन्तनाथके चैत्रमासकी अमावस्याको अपराह्न कालमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९१ ॥

धर्मनाथ जिनेन्द्रको पौष मासकी पूर्णिमाके दिन अपराह्न समयमें पुष्य नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें सर्व पदार्थोंको अवगत करनेवाला केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९२ ॥

शान्ति जिनेशको पौषशुक्ला एकादशीके दिन दिवसके पश्चिम भागमें भरणी नक्षत्रके रहते आम्रवनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९३ ॥

कुंथुनाथ जिनेन्द्रको चैत्रशुक्ला तृतीयाके दिन अपराह्न कालमें कृतिका नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९४ ॥

अरनाथ जिनेन्द्रको कार्तिकशुक्ला द्वादशीके अपराह्न कालमें रेवती नक्षत्रके रहते सहेतुक वनमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९५ ॥

भगवान् मल्लिनाथको फाल्गुनकृष्णा द्वादशीके अपराह्न कालमें अश्विनी नक्षत्रके रहते मनोहर उद्यानमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९६ ॥

मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकरको फाल्गुनकृष्णा षष्ठीके पूर्वाह्न समयमें श्रवण नक्षत्रके रहते नीलवनमें असहायपराक्रमरूप केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९७ ॥

नमिनाथ जिनको चैत्रशुक्ला तृतीयाको दिनके पश्चिम भागमें अश्विनी नक्षत्रके रहते चित्रवनमें अनन्तज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९८ ॥

१ ब °जिणंदे. २ ब °जिणंदस्स. ३ द सुक्केयारसि. ४ द ब संजादो.

अस्सट्ठजसुक्कपडिवदपुव्वण्हे उज्जयंतगिरिसिहरे । चित्ते रिक्खे जादं णेमिस्स य केवलं णाणं ॥ ६९९
चित्ते बहुलचउत्थीविसाहरिक्खम्मि पासणाहस्स । सक्कपुरे पुव्वण्हे केवलणाणं समुप्पण्णं ॥ ७००
वइसाहसुद्धदसमीमाघारिक्खम्मि वीरणाहस्स । रिजुकूलणदीतीरे[1] अवरण्हे केवलं णाणं ॥ ७०१
जणणंतरेसु पुह पुह पुव्विल्लाणं[2] कुमाररज्जं । छदुमत्थस्स य कालं अवणिय पच्छिल्लतित्थकत्ताणं[3] ॥ ७०२
कोमाररज्जछदुमत्थसमयमाणम्हि मेलिदे होदि । केवलणाणुप्पत्तीअंतरमाणं जिणिंदाणं ॥ ७०३

अ सा ५०००००००००००००० व ८३९९०१२ । सं सा ३००००००००००००० अंगाणि ३ वास २ । अ सा १००००००००००००० अं ४ वा ४ । सु सा ९०००००००००००० अं ४ व २ ।[4] प सा ९०००००००००००० अं ३ व ८३९९९८० मा ६ ।[5] सु सा ९०००००००००० अं ४ वा ८ मा ६ । चं सा ९००००००००० अं ३ वरस ८३९९९१ मा ३ ।[6] पु सा ९००००००० अं ४ वा ३ मा ९ । सी मा ९०००००० पू ७४९९९ अं ८३९९९१ व ८३९९९९९ । से सा ९९९९९०० पु २४९९९ वास ७०५५९९९१२७३९९९ । वासु सा ५४ रिण वा ३३०००० १ । वि सा ३० धण ३९०००० २ । अ सा ९ धण वस्स

नेमिनाथ भगवान्‌को आसोजशुक्ला प्रतिपदाके पूर्वाह्न समयमें चित्रा नक्षत्रके रहते ऊर्जयंत गिरिके शिखरपर केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ६९९ ॥

भगवान् पार्श्वनाथको चैत्रकृष्णा चतुर्थीके पूर्वाह्न कालमें विशाखा नक्षत्रके रहते शक्रपुरमें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ७००॥

वीरनाथ भगवान्‌को वैशाखशुक्ला दशमीके अपराह्न कालमें मघा नक्षत्रके रहते ऋजुकूला नदीके किनारेपर केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ॥ ७०१ ॥

जन्मके अन्तरकालमेंसे पृथक् पृथक् पूर्व तीर्थंकरोंके कुमारकाल, राज्यकाल और छद्मस्थकालको कम करके तथा पिछले तीर्थंकरोंके कुमार, राज्य और छद्मस्थकालके प्रमाणको मिला देनेपर जिनेन्द्रोंके केवलज्ञानकी उत्पत्तिके अन्तरकालका प्रमाण होता है ॥ ७०२–७०३ ॥

अजित सा. ५०००००००००००० व. ८३९९०१२ । संभव सा. ३०००००००००००० पू. अं. ३ व. २ । अभिनंदन सा. १००००००००००००० पू. अं. ४ व. ४ । सुमति सा. ९०००००००००००० पू. अ. ४ व २ । पद्म सा. ९०००००००००० पू. अं. ३ व. ८३९९९८० मा. ६ । सुपार्श्व सा. ९०००००००००० पू. अं. ४ व. ८ मास ६ । चन्द्रप्रभ सा. ९००००००००० पू. अं. ३ व. ८३९९९१ मा. ३ । पुष्पदंत सा. ९०००००००० पू. अं. ४ व. ३ मा. ९ । शीतल सा. ९००००००० पू. ७४९९९ पू. अं. ८३९९९१ व. ८३९९९९९ । श्रेयांस सा. ९९९९९०० पू. २४९९९ व. ७०५५९९९१२७३९९९ । वासुपूज्य सा. ५४ + वर्ष ३३०००० १ । विमल सा. ३० व. ३९०००० २ । अनंत सा. ९ + व.

१ ब ऋजुकूल°. २ द ब पच्छिल्लाणं. ३ द ब पुव्विल्ल°. ४ ब तित्थकत्तार. ५ द ब अणंतमाणं दिणिंदाणं. ६ द वा. ३३५९९९१ मा. ३. ७ द व. ३३५५५९८०. ८ द वा. ३३५९९९१ मा. ३.

७४९९९९ । ध सा ४ वा ४९९९९९ । संति सा ३ वरिस २२५०१५ रिण प $\frac{३}{४}$ । कुंथु प $\frac{१}{२}$ धण व १२५०[1] । अर प $\frac{१}{४}$ रिण वस्स ९९९९९९७२५० । मल्लि वा ९९९९९६६ ०८४ दिण ६ । सु वा ५४४७४०० मा १० दिण २४ । णमि ६०५००८ मा १ । णेमि वा ५०१७९१[2] दिण ५६ । पास वस्स ८४३८० मा २ दिण ४ । वीर वास २८९ मा ८ ।

। केवलणाणंतरं गयं ।

जे[3] संसारसरीरभोगविसए णिव्वेयणिग्घाहिणो, जे सम्मत्तविभूसिदा सविणया घोरं चरंता दवं ।
जे सज्झायमहड्ढिवड्ढिव गदा झाणं च कम्मंतकं, ताणं केवलणाणमुत्तमपदं जाणुदि किं कोदुकं ॥ ७०४
जादे केवलणाणे परमोरालं जिणाण सव्वाणं । गच्छदि उवरिं चावा पंचसहस्साणि वसुहाओ ॥ ७०५
भुवणत्तयस्स ताहे[4] अइसयकोडीय होदि पक्खोहो । सोहम्मपहुदिइंदाण आसणाइं पि कंपंति ॥ ७०६
तक्कंपेणं इंदा संखुग्घोसेण भवणवासिसुरा । पडहरवेहिं वेंतर सीहणिणादेण जोइसिया ॥ ७०७
घंटाए कप्पवासी णाणुप्पत्तिं जिणाण णादूणं । पणमंति भत्तिजुत्ता गंतूणं सत्त वि कमाओ[5] ॥ ७०८

७४९९९९ । धर्म सा. ४ व. ४९९९९९ । शान्ति सा. ३ व. २२५०१५ – पल्य $\frac{३}{४}$ । कुंथु प. $\frac{१}{२}$ + व. १२५० । अर प. $\frac{१}{४}$ – व. ९९९९९९७२५० । मल्लि व. ९९९९९६६०८४ दिन ६ । मुनिसुव्रत व. ५४४७४०० मा. १० दिन २४ । नमि व. ६०५००८ मा. १ । नेमि व. ५०१७९१ दिन ५६ । पार्श्व व. ८४३८० मा. २ दिन ४ । वीर व. २८९ मा. ८ ।

केवलज्ञानका अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

जो संसार, शरीर और भोग-विषयोंमें निर्वेदको धारण करनेवाले हैं, जो सम्यक्त्वसे विभूषित हैं, विनयसे संयुक्त हैं, और घोर तपका आचरण करते हैं, जो स्वाध्यायसे महान् ऋद्धि व वृद्धिको प्राप्त हैं और कर्मोंका अन्त करनेवाले ध्यानको भी प्राप्त हैं, उनके यदि केवलज्ञानरूप उत्तम पद उत्पन्न होता है तो इसमें क्या आश्चर्य है ? ॥ ७०४ ॥

केवलज्ञानके उत्पन्न होनेपर समस्त तीर्थंकरोंका परमौदारिक शरीर पृथिवीसे पांच हजार धनुषप्रमाण ऊपर चला जाता है ॥ ७०५ ॥

उस समय तीनों लोकोंमें अतिशय क्षोभ उत्पन्न होता है और सौधर्मादिक इन्द्रोंके आसन कंपायमान होते हैं ॥ ७०६ ॥

आसनोंके कंपित होनेसे इन्द्र, शंखके उद्घोषसे भवनवासी देव, पटहके शब्दसे व्यन्तर देव, सिंहनादसे ज्योतिषी देव, और घंटाके शब्दसे कल्पवासी देव तीर्थंकरोंके केवलज्ञानकी उत्पत्तिको जानकर भक्तियुक्त होते हुए सात पैर जाकर प्रणाम करते हैं ॥ ७०७-७०८ ॥

१ द ब १२७०. २ द ब ५१७९१. ३ द जो. ४ द ब उवरि. ५ द ब तासो. ६ ब अइसया'. ७ द ब 'इंदा आसणाइं. ८ द ब सत्त विक्खाओ.

अहमिंदा जे देवा आसणकंपेण ते वि णादूणं । गंतूण तेत्तियं चिय तत्थ ठिया ते णमंति जिणे[1] ॥ ७०९
ताहे सक्काणाए जिणाण सयलाण समवसरणाणिं । विक्किरियाए धणदो विरएदि विचित्तरूवेहिं ॥ ७१०
उवमातीतं ताणं को सक्कइ वण्णिदुं सयलरूवं । एण्हिं लवमेत्तमहं साहेमि जहाणुपुव्वीए ॥ ७११
सामण्णभूमिमाणं माणं सोवाणयाण विण्णासो । वीही धूलीसाला चेत्तप्पासादभूमीओ ॥ ७१२
णट्टयसाला थंभा वेदी खादी य वेदि-वल्लिखिदी । साला उववणवसुहा णट्टयसाला य वेदि-धयखोणी ॥ ७१३
साली कप्पमहीओ णट्टयसाला य वेदि-भवणमही । यूहा साला सिरिमंडव य रिसिगणाण[2] विण्णासो ॥ ७१४
वेदी पढमं बिदियं तदियं पीढं च गंधउडिमाणं । इदि इगितीसा पुह पुह अहियारा समवसरणाणं ॥ ७१५
रविमंडल व्व वट्टा सयला वि य खंधइंदणीलमई । सामण्णखिदी बारस जोयणमेत्तं मि उसहस्स ॥ ७१६
तत्तो वेकोसूणा पत्तेक्कं णेमिणाहपज्जंतं । चउभागेण विरहिदा पासस्स य वड्ढमाणस्स ॥ ७१७

उ जोयण १२ । अजिय २३ । सं ११ । अहिणं २१ । सु १० । प १९ । सु ९ । चं १७ । पु ८ ।
२ २ २ २
सी १५ । से ७ । वा १३ । वि ६ । अ ११ । ध ५ । सं ९ । कुं ४ । अ ७ । म ३ । मु ५ ।
२ २ २ २ २ २
ण २ । णे ३ । पा ५ । वी १ ।
२ ४

जो अहमिन्द्र देव हैं, वे भी आसनोंके कंपित होनेसे केवलज्ञानकी उत्पत्तिको जानकर और उतने ही (सात पैर) आगे जाकर वहां स्थित होते हुए जिन भगवान्‌को नमस्कार करते हैं ॥ ७०९ ॥

उस समय सौधर्म इन्द्रकी आज्ञासे कुबेर विक्रियाके द्वारा सम्पूर्ण तीर्थङ्करोंके समवसरणोंको विचित्ररूपसे रचता है ॥ ७१० ॥

उन समवसरणोंके अनुपम सम्पूर्ण स्वरूपका वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ है ! अब मैं आनुपूर्वीके अनुसार समवसरणके स्वरूपका लेशमात्र कथन करता हूं ॥ ७११ ॥

सामान्य भूमिका प्रमाण, [3]सोपानोंका प्रमाण, [4]विन्यास, [7]वीथी, [8]धूलिशाल, चैत्यप्रासाद-भूमियां, नृत्यशाला, मानस्तम्भ, [9]वेदी, [11]खातिका, [12]वेदी, लता[13]भूमि, [14]साल, [15]उपवनभूमि, [16]नृत्यशाला, [17]वेदी, [18]ध्वजक्षोणी, [19]साल, [20]कल्पभूमि, नृत्यशाला[21], [22]वेदी, [23]भवनमही, [24]स्तूप, [25]साल, [26]श्रीमण्डप, [27]ऋषि आदि गणोंका विन्यास, [28]वेदी, [29]पीठ, [30]द्वितीय पीठ, [31]तृतीय पीठ और गंधकुटीका प्रमाण, इस-प्रकार समवसरणके कथनमें पृथक् पृथक् ये इकतीस अधिकार हैं ॥ ७१२–७१५ ॥

भगवान् ऋषभदेवके समवसरणकी सम्पूर्ण सामान्यभूमि सूर्यमण्डलके सदृश गोल, स्कंध (भित्ति) इन्द्रनीलमणिमयी, और बारह योजनप्रमाण विस्तारसे युक्त थी ॥ ७१६ ॥

इसके आगे भगवान् नेमिनाथपर्यन्त प्रत्येक तीर्थंकरके समवसरणकी सामान्यभूमि दो कोस कम और पार्श्वनाथ एवं वर्धमान तीर्थंकरकी योजनके चतुर्थ भागसे कम थी ॥ ७१७ ॥

---

१ द ब जिणो. २ द इणं. ३ द सिरिमंदरिय हरिसगाणाण, ब °सिरिमंदवि य हरिसिगणाण. ४ द रविमंडलद्धवट्टा.

अवसप्पिणिए एदं भणिदं उस्सप्पिणीए विवरीदं । बारसजोयणमेत्ता सा सयलविदेहकत्ताणं ॥ ७१८

१ । ५ । ३ । २ । ५ । ३ । ७ । ४ । ९ । ५ । ११ । ६ । १३ । ७ । १५ । ८ । १७ । ९ । १९ ।
४ २ २ २ २ २ २ २ २ २

१० । २१ । ११ । २३ । १२ ।
२ २

इह केई आइरिया पण्णारसकम्मभूमिजादाणं । तित्थयराणं बारसजोयणपरिमाणमिच्छंति ॥ ७१९

। सामण्णभूमी समत्ता । पाठान्तरम् ।

सुरणरतिरियारोहणसोवाणा चउदिसासु पत्तेक्कं । वीससहस्सा गयणे कणयमया उड्डुउड्डुम्मि ॥ ७२०

२०००० ।

उसहादी चउवीसं जोयण एक्कूण णेमिपज्जंतं । चउवीसं भजिदव्वा दीहं सोवाण णादव्वा ॥ ७२१

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

८	७	६	५	४	३
२४	२४	२४	२४	२४	२४

पासम्मि पंच कोसा चउ वीरे अट्ठतालअवहरिदा । इगिहत्थुच्छेहा ते सोवाणा एक्कहत्थवासा य ॥ ७२२

५	४	१	१
४८	४८		

। सोवाणा समत्ता ।

यह जो सामान्य भूमिका प्रमाण बतलाया गया है, वह अपसर्पिणी कालका है। उत्सर्पिणी कालमें इससे विपरीत है। विदेह क्षेत्रके संपूर्ण तीर्थंकरोंके समवसरणकी भूमि बारह योजनप्रमाण ही रहती है ॥ ७१८ ॥

यहां कोई आचार्य पन्द्रह कर्मभूमियोंमें उत्पन्न हुए तीर्थंकरोंकी समवसरणभूमिको बारह योजनप्रमाण मानते हैं ॥ ७१९ ॥ पाठान्तर ।

सामान्यभूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

देव, मनुष्य और तिर्यञ्चोंके चढ़नेके लिये आकाशमें चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें ऊपर ऊपर सुवर्णमय बीस हजार सीढ़ियां होती हैं ॥ ७२० ॥

वृषभादिक चौबीस तीर्थंकरोंमेंसे भगवान् नेमिनाथपर्यन्त क्रमशः चौबीस और एक एक योजन कम चौबीसको चौबीससे भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सोपानोंकी लम्बाई जानना चाहिये ॥ ७२१ ॥

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें सीढ़ियोंकी लम्बाई अड़तालीससे भाजित पांच कोस और वीरनाथके अड़तालीससे भाजित चार कोसप्रमाण थी। ये सीढ़ियां एक हाथ ऊंची और एक हाथ ही विस्तारवाली थीं ॥ ७२२ ॥

सोपानोंका कथन समाप्त हुआ ।

१ ब सम्मता.

चउ साला वेदीओ पंच तदंतेसु अट्ठ भूमीओ । सव्वत्थंतरभागे पत्तेक्कं तिण्णि पीढाणि ॥ ७२३

सा ४ । वे ५ । भू ८ । पी ३ ।

। विण्णासो समत्तो[1] ।

पत्तेक्कं चउसंखा वीहीओ पढमपीढपज्जंता । णियणियजिणमोवाणयदीहत्तणसरिसवित्थारा ॥ ७२४

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

८	७	६	५	४	[३	५	४]
२४	२४	२४	२४	२४	[२४	४८	४८]

एक्केक्काणं दोद्दो[2] कोसा वीहीण रुंदपरिमाणं । कमसो हीणं जाव य वीरजिणं केचि[3] इच्छंति ॥ ७२५

पाठान्तरम् ।

च–सद्देण णियसोवाणाण दीहत्तणं पि ।

पंचसया बावण्णा कोसाणं वीहियाण दीहत्तं । चउवीसहिदा कमसो तेवीसोणा य णेमिपज्जंतं ॥ ७२६

५५२	५२९	५०६	४८३	४६०	४३७	४१४	३९१	३६८	३४५	३२२	२९९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

२७६	२५३	२३०	२०७	१८४	१६१	१३८	११५	९२	६९
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

चार कोट, पांच वेदियां, इनके बीचमें आठ भूमियां और सर्वत्र प्रत्येक अन्तरभागमें तीन पीठ होते है ॥ ७२३ ॥

विन्यास समाप्त हुआ ।

प्रथम पीठपर्यन्त प्रत्येकमें अपने अपने तीर्थंकरके समवसरणभूमिस्थ सोपानोंकी लम्बाईके बराबर विस्तारवाली चार वीथियां होती है ॥ ७२४ ॥

एक एक वीथीके विस्तारका परिमाण दो दो कोस है और वीर जिनेन्द्र तक क्रमसे हीन होता गया है, ऐसा कितने ही अन्य आचार्य मानते है ॥ ७२५ ॥ पाठान्तर ।

च शब्दसे अपने अपने सोपानोंकी दीर्घता भी (उसी प्रकार दो दो कोस है और क्रमसे कम होती गई है, ऐसा जानना चाहिये ।)

भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें चौवीससे भाजित पांचसौ बावन कोसप्रमाण वीथियोंकी लंबाई थी और इसके आगे नेमिनाथपर्यन्त क्रमशः भाज्य राशि (५५२) मेंसे उत्तरोत्तर तेईस कम करके चौवीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी वीथियोंकी दीर्घता होती है ॥ ७२६ ॥

---

१ द ब सम्मत्ता. २ द दो दो. ३ ब केचि. ४ द तेवीसा य णेमि°.

पण्णारसेहि अहियं कोसाण सयं च पासणाहम्मि । देवम्मि वड्ढमाणे वाणउदी अट्टतालहिदा ॥ ७२७

११५ | ९२ |
४८ | ४८ |

वीहीदीपासेसुं णिम्मलपलिहोवलेहि[1] रइदाओ । दो वेदीओ वीहीदीहत्तसमाणदीहत्ता ॥ ७२८

५५२	५२९	५०६	४८३	४६०	४३७	४१४	३९१	३६८	३४५	३२२	२९९	२७६
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४

२५३	२३०	२०७	१८४	१६१	१३८	११५	९२	६९	११५	९२
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	४८	४८

वेदीण रुंद दंडा अट्ठहरिदाणि[2] छस्सहस्साणि । अड्ढाइज्जसएहिं कमेण हीणाणि णेमिपज्जंतं ॥ ७२९

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०	४०००	३७५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८

३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०	२०००	१७५०	१५००	१२५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८

१०००	७५०
८	८

कोदंडछस्सयाइं पणवीसजुदाइं अट्ठहरिदाइं[3] । पासम्मि वड्ढमाणे पणघणदंडाणि दलिदाणि ॥ ७३०

६२५ । १२५ ।
८ २

अट्ठण्णं भूमीणं मूले बहवो हु तोरणद्दारा[4] । सोहियवज्जकवाडा सुरणरतिरिएहिं संचरिदा ॥ ७३१

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें वीथियोंकी दीर्घता अड़तालीससे भाजित एकसौ पन्द्रह कोस और वर्धमान जिनके अड़तालीससे भाजित बानबे कोसप्रमाण थी ॥ ७२७ ॥

वीथियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें वीथियोंकी दीर्घताके समान दीर्घतासे युक्त और निर्मल स्फटिकपाषाणसे रचित दो वेदियां होती हैं ॥ ७२८ ॥

भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें वेदियोंका विस्तार आठसे भाजित छह हजार धनुष-प्रमाण था। पुनः इससे आगे भगवान् नेमिनाथपर्यन्त क्रमसे उत्तरोत्तर छह हजारमेंसे अढ़ाईसौ कम होते गये हैं ॥ ७२९ ॥

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें वेदियोंका विस्तार आठसे भाजित छहसौ पच्चीस धनुष और वर्धमान स्वामीके दोसे भाजित पांचके घन अर्थात् एकसौ पच्चीस धनुषप्रमाण था ॥ ७३० ॥

आठों भूमियोंके मूलमें वज्रमय कपाटोंसे सुशोभित और देव, मनुष्य एवं तिर्यञ्चोंके संचारसे युक्त बहुतसे तोरणद्वार होते हैं ॥ ७३१ ॥

---

१ द पलिहोवदेहि. २ द रहिदाणि. ३ द अड्ढतीसहत्ताइं, ब अट्ठहत्थाइं. ४ द ब तोरणदारा.

णियणियजिणेसयाणं वेहुस्सेहेण चउहि गुणिदेण । चरियट्टालयचेचइयाणं वेदीण उस्सेहो ॥ ७३२

२०००। १८००। १६००। १४००। १२००। १०००। ८००। ६००। ४००। ३६०। ३२०। २८०। २४०। २००। १८०। १६०। १४०। १२०। १००। ८०। ६०। ४०। हत्थाणि[1] ३६। २८।

। वीही समत्ता[4] ।

सव्वाणं बाहिरए धूलीसाला विसाल[5]समवट्टा । विप्फुरियपंचवण्णा मणुसुत्तरपव्वदायारा ॥ ७३३

चरियट्टालयरम्मा पयलपदायाकलप्पकमणिज्जा । तिहुवणविम्हयजणणी चउहिं दुवारेहिं परिअरिया ॥ ७३४

विजयं ति पुव्वदारं[6] दक्खिणदारं च वइजयंतं ति । पच्छिमउत्तरदारा जयंतअपराजिदा णामा ॥ ७३५

एदे गोउरदारा तवणीयमया तिभूमिभूसणया । सुरणरमिहुणसणाहा तोरणणच्चंतमणिमाला ॥ ७३६

एक्केकगोउराणं बाहिरमज्झम्मि दारदो पासे । बाउलया वित्थिण्णा मंगलणिहिधूवघडभरिदा ॥ ७३७

भिंगारकलसदप्पणचामरधयवियणछत्तसुपइट्ठा । इय अट्ठ मंगलाइं अट्ठुत्तरसयजुदाणि एक्केक्कं ॥ ७३८

कालमहकालपंडू माणवसंखा य पउमणइसप्पा । पिंगलणाणारयणा अट्ठुत्तरसयजुदाणि णिहि एदे ॥ ७३९

मार्ग व अट्टालिकाओंसे रमणीक वेदियोंकी उंचाई अपने अपने जिनेन्द्रोंके शरीरके उत्सेधसे चौगुनी होती है ॥ ७३२ ॥

वीथियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

सबके बाहिर पांचों वर्णोंसे स्फुरायमान, विशाल एवं समान गोल, मानुषोत्तर पर्वतके आकार धूलिसाल नामक कोट होता है ॥ ७३३ ॥

उपर्युक्त धूलिसाल कोट मार्ग व अट्टालिकाओंसे रमणीय, चंचल पताकाओंके समूहसे सुन्दर, तीनों लोकोंको विस्मित करनेवाला, और चार द्वारोंसे युक्त होता है ॥ ७३४ ॥

इन चार द्वारोंमेंसे पूर्वद्वारका नाम विजय, दक्षिणद्वारका नाम वैजयन्त, पश्चिमद्वारका नाम जयन्त और उत्तरद्वारका नाम अपराजित होता है ॥ ७३५ ॥

ये चारों गोपुरद्वार सुवर्णसे निर्मित, तीन भूमियोंसे भूषित, देव एवं मनुष्योंके मिथुनोंसे (जोड़ोंसे) संयुक्त और तोरणोंपर नाचती हुई (लटकती हुई) मणिमालाओंसे शोभायमान होते हैं ॥ ७३६ ॥

प्रत्येक गोपुरके बाहिर और मध्य भागमें द्वारके पार्श्वभागोंमें मंगलद्रव्य, निधि और धूपघटसे युक्त विस्तीर्ण पुतलियां होती हैं ॥ ७३७ ॥

झारी, कलश, दर्पण, चमर, ध्वजा, व्यजन, छत्र और सुप्रतिष्ठ, ये आठ मङ्गलद्रव्य हैं । इनमेंसे प्रत्येक एकसौ आठ होते हैं ॥ ७३८ ॥

काल, महाकाल, पाण्डु, माणवक, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और नानारत्न, ये नव निधियां प्रत्येक एकसौ आठ होती हैं ॥ ७३९ ॥

१ द ब 'जिणेसठाणं. २ द ब °चेत्तइयाण. ३ द ब पुव्वाणि. ४ य सम्मत्ता. ५ ब विसाला. ६ द ब पुव्वदारा.

उडुजोग्गदव्वभायणधण्णायुहतूरवत्थहम्माणि । आभरणसयलरयणा दिंति[1] कालादिया कमसो ॥ ७४०
गोसीसमलयचंदणकालागरुपहुदिधूवगंधड्ढा । एक्केक्कपुत्तलाए धूवघडो होदि एक्केक्कं ॥ ७४१
धूलीसालगोउरबाहिरए मयरतोरणसयाणि । अब्भंतरम्मि भागे पत्तेयं रयणतोरणसयाणि ॥ ७४२
गोउरदुवारमज्झे दोसु वि पासेसु रयणणिम्मविया । एक्केक्कणट्टसाला णच्चंतसुरंगणाणिवहा ॥ ७४३
धूलीसालगोउरदारेसुं चउसु होंति पत्तेक्कं । वररयणदंडहत्था जोइसिया दाररक्खणया ॥ ७४४
चउगोउरदारेसुं बाहिरअब्भंतरम्मि भागम्मि । सुहसुंदरसंचारा सोवाणा विविहरयणमया ॥ ७४५
धूलीसालाण पुढं णियजिणदेहोदयप्पमाणेण । चउगुणिदेण उदओ सव्वेसुं समवसरणेसुं ॥ ७४६

२००० । १८०० । १६०० । १४०० । १२०० । १००० । ८०० । ६०० । ४०० । ३६० । ३२० । २८० । २४० । २०० । १८० । १६० । १४० । १२० । १०० । ८० । ६० । ४० । ९ । ७ ।

तोरणउदओ अहिओ धूलीसालाण उदयसंखादो । तत्तो य सादिरेको गोउरदाराण सयलाणं ॥ ७४७

उक्त कालादिक निधियां क्रमसे ऋतुके योग्य द्रव्य (मालादिक), भाजन, धान्य, आयुध, वादित्र, वस्त्र, महल, आभरण और सम्पूर्ण रत्नोंको देती हैं ॥ ७४० ॥

एक एक पुतलीके ऊपर गोशीर्ष, मलयचन्दन और कालागरु आदिक धूपोंके गंधसे व्याप्त एक एक धूपघट होता है ॥ ७४१ ॥

धूलिसालसम्बन्धी गोपुरोंके प्रत्येक बाह्य भागमें सैकड़ों मकरतोरण और अभ्यन्तर भागमें सैकड़ों रत्नमय तोरण होते हैं ॥ ७४२ ॥

गोपुरद्वारोंके बीच दोनों पार्श्वभागोंमें रत्नोंसे निर्मित, और नृत्य करती हुई देवांगनाओंके समूहसे युक्त एक एक नाट्यशाला होती है ॥ ७४३ ॥

धूलिसालके चारों गोपुरोंमेंसे प्रत्येकमें, हाथमें उत्तम रत्नदण्डको लिये हुए ज्योतिष्क देव द्वाररक्षक होते हैं ॥ ७४४ ॥

चारों गोपुरद्वारोंके बाह्य और अभ्यन्तर भागमें विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित एवं सुखपूर्वक सुन्दर संचारके योग्य सीढ़ियां होती हैं ॥ ७४५ ॥

सब समवसरणोंमें धूलिसालोंकी उंचाई अपने अपने तीर्थंकरके शरीरके उत्सेधप्रमाणसे चौगुणी होती है ॥ ७४६ ॥

धूलिसालोंकी उंचाईकी संख्यासे तोरणोंकी उंचाई अधिक होती है और इससे भी अधिक समस्त गोपुरोंकी उंचाई होती है ॥ ७४७ ॥

---

१ द ° रयणादी दंती.

चउवीसं चेय कोसा धूलीसालाण मूलवित्थारा । बारसवग्गेण हिदा णेमिजिणंतं कमेण एक्कूणा ॥ ७४८

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४

११	१०	९	८	७	६	५	४	३
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४

अडसीदिदोसगुहिं भजिदा पासम्मि पंच कोसा य । एक्को य वड्ढमाणे कोसो[1] बाहत्तरीहरिदो ॥ ७४९

५	१
२८८	७२

मज्झिमउवरिमभागे धूलीसालाण रुंदउवएसो । कालवसेण पणट्ठो सरितीरुप्पण्णविडओ व्व ॥ ७५०

। धूलीसाला समत्ता ।

ताणब्भंतरभागे चेत्तप्पासादणामभूमीओ । वेदंति[3] सयलछित्तं जिणपुरपासादसरिसाओ[5] ॥ ७५१

एक्केक्कं जिणभवणं पासादा पंच पंच अंतरिदा । विविहवणसंडमंडणवरवावीकूवकमणिज्जा ॥ ७५२

जिणपुरपासादाणं उस्सेहो णियजिणिंदउदएण । बारहदेण य सरिसो णट्ठो दीहत्तवासउवदेसो ॥ ७५३

६०००	५४००	४८००	४२००	३६००	३०००	२४००	१८००	१२००	१०८०
९६०	८४०	७२०	६००	५४०	४८०	४२०	३६०	३००	२४०	१८०	१२०
२७	२१											

भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें धूलिसालका मूलविस्तार बारहके वर्गसे भाजित चौबीस कोसप्रमाण था। फिर इसके आगे भगवान् नेमिनाथपर्यन्त भाज्य राशिमेंसे क्रमशः एक एक कम होता गया है ॥ ७४८ ॥

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें धूलिसालका मूलविस्तार दोसौ अठासीसे भाजित पांच कोस और वर्धमान भगवान्के बहत्तरसे भाजित एक कोसप्रमाण था ॥ ७४९ ॥

धूलिसालोंके मध्य और उपरिम भागमें जो विस्तार होता है, उसका उपदेश कालवशसे नदीतीरोत्पन्न वृक्षके समान नष्ट हो गया है ॥ ७५० ॥

धूलिसालोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

उन धूलिसालोंके अभ्यन्तर भागमें जिनपुरसम्बन्धी प्रासादोंके सदृश चैत्य-प्रासाद नामक भूमियां सकल क्षेत्रको वेष्टित करती हैं ॥ ७५१ ॥

एक एक जिनभवनके अन्तरालसे पांच पांच प्रासाद हैं, जो विविध प्रकारके वनसमूहोंसे मण्डित और उत्तम वापिकाओं एवं कुओंसे रमणीय होते हैं ॥ ७५२ ॥

जिनपुर और प्रासादोंकी उंचाई अपने अपने तीर्थंकरकी उंचाईसे बारहगुणी होती है। इनकी लम्बाई और विस्तारके प्रमाणका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ ७५३ ॥

१ द कोसा. २ द ब सरितीपप्पण्णविदओ व्व. ३ द ब वेदंति. ४ द सयलछत्तं. ५ द ब °पासादसरिसाओ.

दुसयचउसट्ठिजोयणमुसहे एक्कारसोणमणुकमसो[1] । चउवीसवग्गभजिदं णेमिजिणं जाव पढमखिदिरुंदं ॥ ७५४

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३	१३२
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६

१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६

पणवण्णासा कोसा पासजिणे अट्ठसीदिदुसयहिदा । बावीस वीरणाहे[2] बारसवग्गेहिं पविभत्ता ॥ ७५५

को	५५	४४
	२८८	२८८

। चैत्यप्रासादभूमी सम्मत्ता ।

आदिमखिदीसु पुह पुह वीहीणं दोसु दोसु पासेसुं । दोण्हो णट्टयसाला वरकंचणरयणणिम्मविदा ॥ ७५६

२ । २ ।

णट्टयसालाण पुढं उस्सेहो णियजिणंगउदएहिं । बारसहदेहिं सरिसो णट्ठा दीहत्तवासउवएसा ॥ ७५७

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

एक्केक्काए णट्टयसालाए चउहदट्ठरंगाणि । एक्केक्कस्सिं[3] रंगे भावणकण्णाउ बत्तीसं ॥ ७५८

गायंति जिणिंदाणं विजयं विविहत्थदिव्वगीदेहिं । अभिणइय णच्चणीओ[4] खिवंति कुसुमंजलिं ताओ ॥ ७५९

भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें प्रथम पृथिवीका विस्तार चौबीसके वर्गसे भाजित दोसौ चौसठ योजन था । फिर इससे आगे नेमिनाथ तीर्थंकरतक भाज्य राशिमेंसे क्रमशः उत्तरोत्तर ग्यारह कम होते गये हैं ॥ ७५४ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें प्रथम पृथिवीका विस्तार दोसौ अठासीसे भाजित पचवन कोस और वीरनाथ भगवान्के बारहके वर्ग अर्थात् एकसौ चवालीससे भाजित बाईस कोसप्रमाण था ॥ ७५५ ॥

चैत्य-प्रासादभूमिका कथन समाप्त हुआ ।

प्रथम पृथिवियोंमें पृथक् पृथक् वीथियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें उत्तम सुवर्ण एवं रत्नोंसे निर्मित दो दो नाट्यशालायें होती हैं ॥ ७५६ ॥

नाट्यशालाओंकी उंचाई बारहसे गुणित अपने अपने तीर्थंकरोंके शरीरकी उंचाईके सदृश होती है तथा इनकी लम्बाई और विस्तारका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ ७५७ ॥

प्रत्येक नाट्यशालामें चारसे गुणित आठ अर्थात् बत्तीस रंगभूमियां और प्रत्येक रंग-भूमिमें बत्तीस भवनवासीकन्यायें अभिनयपूर्वक नृत्य करती हुईं नाना प्रकारके अर्थोंसे युक्त दिव्य गीतोंद्वारा तीर्थंकरोंकी विजयके गीत गाती है और पुष्पांजलियोंका क्षेपण करती हैं ॥७५८–७५९॥

१ द एक्कारसाणि अणु°, ब एक्कारसोणअणु°. २ द वीरणाहो. ३ द एक्केक्कसिं, ब एक्केकसिं. ४ द अभिणइयणिव्वणीओ.

एक्केक्काएं णट्टयसालाए दोण्णि दोण्णि धूवघडा । णाणासुगंधधूवप्पसरेणं वासियदिगंता ॥ ७६०

। णट्टयसाला समत्ता ।

णियणियपढमखिदीए बहुमज्झे चउसु वीहिमज्झम्मि ।

माणत्थंभखिदीओ[1] समवट्टा विविहवण्णणसहाओ ॥ ७६१

अब्भंतरम्मि ताणं चउगोउरदारसुंदरा साला । णच्चंतधयवडाया मणिकिरणुज्जोइअदियंतो[2] ॥ ७६२

ताणं पि मज्झभागे वणसंडा विविहदिव्वतरुभरियां[3] । कलकोइलकलकलया किण्णरमिहुणेहि[4] संकिण्णा ॥ ७६३

तम्मज्झे रम्माइं पुव्वादिदिसासु लोयपालाणं । सोमजमवरुणधणदा होंति महाकीडणपुराइं ॥ ७६४

ताणब्भंतरभागे साला चउगोडरादिपरियरिया । तत्तो वणवावीओ कलिंदवरमाणणसहाओ ॥ ७६५

ताणं मज्झे णियणियदिसासु दिव्वाणि कीडणपुराणिं । हुदवहणेरिदमारुदईसाणाणं च लोयपालाणं ॥ ७६६

ताणब्भंतरभागे सालाओ वरविसालदाराओ । तम्मज्झे पीढाणिं एक्केक्के[5] समवसरणम्मि ॥ ७६७

वेरुलियमयं पढमं पीढं तस्सोवरिम्मि कणयमयं । दुइयं तस्स अ उवरिं तदियं बहुवण्णरयणमयं ॥ ७६८

प्रत्येक नाट्यशालामें नाना प्रकारकी सुगन्धित धूपके प्रसारसे दिङ्मण्डलको सुवासित करनेवाले दो दो धूपघट रहते हैं ॥ ७६० ॥

नाट्यशालाओंका वर्णन समाप्त हुआ ।

अपनी अपनी प्रथम पृथिवीके बहुमध्यभागमें चारों वीथियोंके बीचोंबीच समान गोल और विविध प्रकार वर्णनके योग्य मानस्तम्भ-भूमियां होती है ॥ ७६१ ॥

उनके अभ्यन्तर भागमें चार गोपुरद्वारोंसे सुंदर, नाचती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और मणियोंकी किरणोंसे दिङ्मण्डलको प्रकाशित करनेवाले कोट होते हैं ॥ ७६२ ॥

इनके भी मध्य भागमें विविध प्रकारके दिव्य वृक्षोंसे युक्त, सुन्दर कोयलोंके कल-कल शब्दोंसे मुखरित और किन्नर-युगलोंसे संकीर्ण वनखंड होते हैं ॥ ७६३ ॥

इनके मध्यमें पूर्वादिक दिशाओंमें क्रमसे सोम, यम, वरुण और कुबेर, इन लोकपालोंके रमणीय महा क्रीडानगर होते है ॥ ७६४ ॥

उनके अभ्यन्तर भागमें चार गोपुरादिसे वेष्टित कोट और फिर इसके आगे वनवापिकायें होती है जो प्रफुल्लित नीलकमलोंसे शोभायमान है ॥ ७६५ ॥

उनके बीचमें लोकपालोंके अपनी अपनी दिशा तथा आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य और ईशान, इन विदिशाओंमें भी दिव्य क्रीडन-पुर होते है ॥ ७६६ ॥

उनके अभ्यन्तर भागमें उत्तम विशाल द्वारोंसे युक्त कोट होते है और फिर इनके बीचमें पीठ होते हैं । ऐसी रचना प्रत्येक समवसरणमें होती है ॥ ७६७ ॥

इनमेंसे पहिला पीठ वैडूर्यमणिमय, उसके ऊपर सुवर्णमय द्वितीय पीठ, और उसके भी ऊपर बहुत वर्णके रत्नोंसे निर्मित तृतीय पीठ होता है ॥ ७६८ ॥

१ द ब एक्केक्काणं. २ द ब खिदीए. ३ द 'मणिकरणुज्जोइअधियंतो, ब मणिकरणुज्जोइअदियंते. ४ द दिव्वतरुवरिया. ५ द ब °मिहुणाणि. ६ ब एक्केक्कं.

आदिमपीढुच्छेहो दंडा चउवीस रूवतियहरिदा । उसहजिणिंदे कमसो रूवूणा णेमिपज्जंते ॥ ७६९

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३		
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३		

पासे पंच च्छहिदा तिदयहिदा दोण्णि वड्ढमाणजिणे । सेसाण अद्धमाणा आदिमपीढस्स उदयाओ ॥ ७७०

५	२
६	३

बिदियपीढाण उदओ दंडा—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३		
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	४	३		
६	५	४	३	५	२																		
६	६	६	६	१२	६																		

तदियपीढाणं उदयं दंडा—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३		
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	४	३		
६	५	४	३	५	२																		
६	६	६	६	१२	६																		

पीढत्तयस्स कमसो सोवाणं चउदिसासु एक्केक्कं । अट्ठं चउ चउ माणं जिणजाणिंददीहवित्थारा ॥ ७७१

पढमपीढाणं—

८ । ८ ।

भगवान् ऋषभ देवके समवसरणमें प्रथम पीठकी उंचाई तीनसे भाजित चौबीस धनुष-प्रमाण थी। फिर इसके आगे नेमिनाथपर्यन्त क्रमसे उत्तरोत्तर भाज्य राशिमेंसे एक अंक कम होता गया है ॥ ७६९ ॥

इसके आगे पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें प्रथम पीठकी उंचाई छहसे भाजित पांच, और वर्धमान जिनके तीनसे भाजित दो धनुषप्रमाण थी। शेष दो पीठोंकी उंचाई प्रथम पीठकी उंचाईसे आधी थी ॥ ७७० ॥

द्वितीय पीठोंकी उंचाई—(मूलमें देखिये).

तृतीय पीठोंकी उंचाई—(मूलमें देखिये).

चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें इन तीनों पीठोंकी सीढ़ियोंका प्रमाण क्रमसे आठ, चार और चार है। इन सीढ़ियोंकी लम्बाई और विस्तार जिन भगवान् ही जानते है, अर्थात् उसका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ ७७१ ॥

प्रथम पीठोंकी सीढ़ियोंका प्रमाण—(मूलमें देखिये).

१ द उदयदंडा.

बिदियपीढाणं सोवाणं—

४ । ४ ।

[तदियपीढाणं सोवाणं—]

४ । ४ ।

पढमाणं बिदियाणं वित्थारं माणथंभपीढाणं । जाणेदि जिणेंदो त्ति य उच्छिण्णो अम्ह उवएसो ॥ ७७२

दंडा तिण्णि सहस्सा तियहरिदा तदियपीढवित्थारो । उसहजिणिंदे कमसो पणघणहीणा य जाव णेमिजिणं ॥ ७७३

३०००	२८७५	२७५०	२६२५	२५००	२३७५	२२५०	२१२५	२०००	१८७५
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३

१७५०	१६२५	१५००	१३७५	१२५०	११२५	१०००	८७५	७५०	६२५
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३

५००	३७५
३	३

पंणवीसाधियछस्सयधणूणि पासम्मि छक्कभजिदाणि । दंडाणं पंचसदा छक्कहिदा वीरणाहम्मि ॥ ७७४

६२५	५००
६	६

पीढाण उवरि माणत्थंभा उसहम्मि तीण बहलत्तं । दुपणणवतिदुगदंडा अंककमे तिगुणअट्ठपविहत्ता ॥ ७७५

अडणउदिअधियणवसयऊणा कमसो य णेमिपरियंतं । पण्णकदी पंचूणा चउवीसहिदा य पासणाहम्मि ॥ ७७६

द्वितीय पीठोंकी सीढ़ियोंका प्रमाण—(मूलमें देखिये).

तृतीय पीठोंकी सीढ़ियोंका प्रमाण—(मूलमें देखिये).

प्रथम और द्वितीय मानस्तम्भ-पीठोंका विस्तार जिनेंद्र ही जानते हैं, हमारे लिए तो इसका उपदेश अब नष्ट हो चुका है ॥ ७७२ ॥

ऋषभ देवके समवसरणमें तृतीय पीठका विस्तार तीनसे भाजित तीन हजार धनुष-प्रमाण था। फिर इसके आगे नेमिजिनेन्द्रतक क्रमशः उत्तरोत्तर पांचका घन अर्थात् एकसौ पच्चीस भाज्य राशिमेंसे कम होते गये हैं ॥ ७७३ ॥

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें तृतीय पीठका विस्तार छहसे भाजित छहसौ पच्चीस धनुष और वीरनाथ भगवान्के छहसे भाजित पांचसौ धनुषप्रमाण था ॥ ७७४ ॥

पीठोंके ऊपर मानस्तम्भ होते हैं। उनका बाहल्य ऋषभ देवके समवसरणमें आठके तिगुणे अर्थात् चौबीससे प्रविभक्त, अंकक्रमसे दो, पांच, नौ, तीन और दो अर्थात् तेईस हजार नौसौ बावन (२३९५२) धनुषप्रमाण था। इसके आगे नेमिनाथ तीर्थंकरतक भाज्य राशिमेंसे क्रमसे उत्तरोत्तर नौसौ अट्ठानवै कम होते गये हैं। भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें मानस्तम्भोंका बाहल्य चौबीससे भाजित पचासके वर्गमेंसे पांच कम अर्थात् दो हजार चारसौ पंचानवे बटे चौबीस धनुषप्रमाण था ॥ ७७५-७७६ ॥

---

१ द पुणवीसधिय', ब पणवीसधिय'. २ द ताल्वहलत्तं.

उसहादिणेमिपरियंतं—

२३९५२	२२९५४	२१९५६	२०९५८	१९९६०	१८९६२	१७९६४	१६९६६
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
१५९६८	१४९७०	१३९७२	१२९७४	११९७६	१०९७८	९९८०	८९८२
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
७९८४	६९८६	५९८८	४९९०	३९९२	२९९४	२४९५	
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	

पंचसया रूऊणा छक्कहिदा वड्ढमाणदेवम्मि । णियणियजिणउदयेहिं बारसगुणिदेहिं थंभउच्छेहो ॥ ७७७

४९९	६०००	५४००	४८००	४२००	३६००	३०००	२४००	१८००
६								
१२००	१०८०	९६०	८४०	७२०	६००	५४०	४८०	४२०	३६०
३००	२४०	१८०	१२०	२७	२१			

जोयणमद्धियं उदयं माणत्थंभाण उसहसामिम्मि । कमहीणं सेसेसुं एवं केई परूवेंति ॥ ७७८

पाठान्तरम् ।

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४				
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	४८	४८				

थंभाण मूलभागा दुसहस्सपमाण वज्जदारड्ढा[1] । मज्झिमभागा[2] वट्टा एक्केक्कं पलिहणिम्मविया ॥ ७७९

२००० ।

उवरिमभागा उज्जलवेरुलियमया विभूसिया परदो । चामरघंटाकिंकिणिरयणावलिकेदुपहुदीहिं ॥ ७८०

ऋषभादिनेमिपर्यन्त- (मानस्तम्भोंका बाहल्य मूलमें देखिये).

वर्धमान तीर्थंकरके समवसरणमें मानस्तम्भोंका बाहल्य छहसे भाजित एक कम पांचसौ धनुषप्रमाण था । इन मानस्तम्भोंकी ऊंचाई अपने अपने तीर्थंकरके शरीरकी ऊंचाईसे बारहगुणी होती है ॥ ७७७ ॥

ऋषभनाथ स्वामीके समवसरणमें मानस्तम्भोंकी ऊंचाई एक योजनसे अधिक थी । शेष तीर्थंकरोंके मानस्तंभोंकी ऊंचाई क्रमसे हीन होती गई है, ऐसा कितने ही आचार्य निरूपण करते हैं ॥ ७७८ ॥ पाठान्तर ।

प्रत्येक मानस्तम्भके मूलभाग दो हजार (धनुष) प्रमाण वज्रद्वारोंसे युक्त और मध्यम भाग स्फटिक मणिसे निर्मित वृत्ताकार होते हैं ॥ ७७९ ॥

इन मानस्तम्भोंके उज्वल वैडूर्य मणिमय उपरिम भाग चारों ओर चमर, घंटा, किंकिणी, रत्नहार एवं ध्वजा इत्यादिकोंसे विभूषित रहते हैं ॥ ७८० ॥

---

१ ब $\frac{५}{१४}$ । $\frac{४}{१८}$ । २ द ब वज्जदारंदा. ३ द मज्झिमभावी.

ताणं चूले उवरिं अट्ठमहापाडिहेरजुत्ताओ । पडिदिसमेक्केक्काओ रम्माओ जिणिंदपडिमाओ ॥ ७८१
माणुल्लासयमिच्छा वि दूरदो दंसणेण थंभाणं । जं होंति गलिदमाणा माणत्थंभं ति तं[1] भणिदं ॥ ७८२
सालत्तयबाहिरए पत्तेक्कं चउदिसासु होंति[2] दहा । वीहिं पडि पुव्वादिक्कमेण सव्वेसु समवसरणेसु ॥ ७८३
णंदुत्तरणंदाओ णंदिमई णंदिघोसणामाओ । पुव्वत्थंभे पुव्वादिएसु भागेसु चत्तारो ॥ ७८४
विजया य वइजयंता जयंतअवराजिदाह णामेहिं । दक्खिणथंभे[3] पुव्वादिएसु भागेसु चत्तारो ॥ ७८५
असिधाणे य असोगा सुप्पइबुद्धाउ[4] कुमुदपुंडरिया । पच्छिमथंभे पुव्वादिएसु भाएसु चत्तारो ॥ ७८६
हिदयमहाणंदाओ सुप्पइबुद्धा पहंकरा णामा । उत्तरथंभे पुव्वादिएसु भाएसु चत्तारो ॥ ७८७
एदे समचउरस्सा पवरदहा पउमपहुदिसंजुत्ता । टंकुक्किण्णा वेदियचउतोरणरयणमालरमणिज्जा ॥ ७८८
सव्वदहाणं मणिमयसोवाणा चउतडेसु पत्तेक्कं । जलकीडणजोग्गेहिं संपुण्णं दिव्वदव्वेहिं ॥ ७८९

इनके शिखरपर उपरिम भागमें प्रत्येक दिशामें, आठ महाप्रातिहार्योंसे युक्त रमणीय एक एक जिनेन्द्रप्रतिमाएं होती हैं ॥ ७८१ ॥

चूंकि दूरसे ही मानस्तम्भोंके देखनेसे मानसे युक्त मिथ्यादृष्टि लोग अभिमानसे रहित हो जाते हैं, इसीलिये इनको 'मानस्तम्भ' कहा गया है ॥ ७८२ ॥

सब समवसरणोंमें तीनों कोटोंके बाहिर चार दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें क्रमसे पूर्वादिक वीथीके आश्रित द्रह (वापिकायें) होते हैं ॥ ७८३ ॥

पूर्व मानस्तम्भके पूर्वादिक भागोंमें क्रमसे नन्दोत्तरा, नन्दा, नन्दिमती और नन्दिघोषा नामक चार द्रह होते हैं ॥ ७८४ ॥

दक्षिण मानस्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोंमें क्रमशः विजया, वैजयन्ता, जयन्ता और अपराजिता नामक चार द्रह होते हैं ॥ ७८५ ॥

पश्चिम स्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोंमें क्रमसे अशोका, सुप्रतिबुद्धा (सुप्रसिद्धा, या सुप्रबुद्धा) कुमुदा और पुण्डरीका नामक चार द्रह होते हैं ॥ ७८६ ॥

उत्तर मानस्तम्भके आश्रित पूर्वादिक भागोंमें क्रमसे हृदयानन्दा, महानन्दा, सुप्रतिबुद्धा और प्रभंकरा नामक चार द्रह होते हैं ॥ ७८७ ॥

ये उपर्युक्त उत्तम द्रह समचतुष्कोण, कमलादिकसे संयुक्त, टङ्कोत्कीर्ण, और वेदिका, चार तोरण एवं रत्नमालाओंसे रमणीय होते हैं ॥ ७८८ ॥

सब द्रहोंके चारों तटोंमेंसे प्रत्येक तटपर जलक्रीड़ाके योग्य दिव्य द्रव्योंसे परिपूर्ण मणिमयी सोपान होते हैं ॥ ७८९ ॥

१ द ब माणत्थंभं तित्थयं भणिदं. २ द ब थं. ३ द ब होंदि. ४ द दक्खिणथंभा. ५ द ब सुप्पइबुंधाउ.

भावणवेंतरजोइसकप्पवासी य कीडणपयट्टा । णरकिण्णरमिहुणाण य कुंकुमपंकेण पिंजरिदा ॥ ७९०

एक्केक्ककमलसंडे दोहो कुंडाणि णिम्मलजलाइं । सुरणरतिरिया तेसुं धुव्वंतो चरणरेणूवो ॥ ७९१

। माणत्थंभा समत्ता ।

वररयणकेदुतोरणघंटाजालादिएहिं जुत्ताओ । आदिमवेदी वि तहा सव्वेसु वि समवसरणेसु ॥ ७९२

गोउरदुवारवाउलपहुदी सव्वाण वेदियाणं तहा । अट्ठुत्तरसयमंगलणवणिहिदव्वाइं पुव्वं व ॥ ७९३

णवरि विसेसो णियणियधूलीसालाण मूलरुंदेहिं । मूलोवरिभागेसुं समाणवासाओ वेदीओ ॥ ७९४

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४

१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	२८८	७२

। पढमवेदी समत्ता ।

खाइयखेत्ताणिं तदो हवंति वरसच्छसलिलपुण्णाणि ।

णियणियजिणउदएहिं चउभजिदेहिं सरिच्छगहिराणि ॥ ७९५

१२५ । २२५ । १०० । १७५ । ७५ । १२५ । ५० । ७५ । २५ । ४५ । २० । २५ । १५ ।
२ २ २ २ २ २

२५ । ४५ । १० । ३५ । १५ । २५ । ५ । १५ । ५ । हत्था । ९ । ७ ।
२ ४ ४ २ ४ ४ २ ४ ४

इन द्रहोंमें भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देव क्रीडामें प्रवृत्त होते है, तथा वे मनुष्य एवं किन्नरयुगलोंके कुंकुमपंकसे पीतवर्ण रहते हैं ॥ ७९० ॥

प्रत्येक कमलखंड अर्थात् द्रहके आश्रित निर्मल जलसे परिपूर्ण दो दो कुण्ड होते हैं, जिनमें देव, मनुष्य और तिर्यञ्च अपने पैरोंकी धूलिको धोया करते हैं ॥ ७९१ ॥

मानस्तम्भोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

सब समवसरणोंमें उत्तम रत्नमय ध्वजा, तोरण और घंटाओंके समूहादिकसे युक्त प्रथम वेदियां भी उसीप्रकार होती हैं ॥ ७९२ ॥

सब वेदियोंके गोपुरद्वार और पुत्तलिकाप्रभृति तथा एकसौ आठ मंगलद्रव्य एवं नौ निधियां पूर्वके ही समान होती हैं ॥ ७९३ ॥

विशेषता केवल यह है कि इन वेदियोंके मूल और उपरिम भागका विस्तार अपने अपने धूलिसालोंके मूलविस्तारके समान होता है ॥ ७९४ ॥

प्रथम वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

इसके आगे उत्तम एवं स्वच्छ जलसे परिपूर्ण और अपने जिनेन्द्रकी उंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण गहरे खातिकाक्षेत्र होते हैं ॥ ७९५ ॥

१ द ब तदा. २ द वेदिआण. ३ द खाइयमेत्ताणि. ४ द ब वरसत्त°.

फुल्लंतकुमुदकुवलयकमलवणामोदभवसुगंधीणि[1] । मणिमयसोवाणजुदाणि पक्खीहिं[2] हंसपहुदीहिं ॥ ७९६
णियणियपढमखिदीणं जेत्तियमेत्तं खु वासपरिमाणं । णियणियबिदियखिदीणं तेत्तियमेत्तं च पत्तेक्कं ॥ ७९७

२६४, ५७६	२५३, ५७६	२४२, ५७६	२३१, ५७६	२२०, ५७६	२०९, ५७६	१९८, ५७६	१८७, ५७६	१७६, ५७६	१६५, ५७६	१५४, ५७६	१४३, ५७६	
१३२, ५७६	१२१, ५७६	११०, ५७६	९९, ५७६	८८, ५७६	७७, ५७६	६६, ५७६	५५, ५७६	४४, ५७६	३३, ५७६	५५, २८८	११, ७२	

चेत्तप्पासादखिदिं केई णेच्छंति तागे उवएसे । खाइयखिदीय जोयणमुसहे सेसेसु कमहीणं ॥ ७९८

पाठान्तरम् ।

धूलीमालाणं वित्थरेहिं सहियखाइयखेत्ताणं कमसो रुंदजोयणाणि—

२४, २४	२३, २४	२२, २४	२१, २४	२०, २४	१९, २४	१८, २४	१७, २४	१६, २४	१५, २४	१४, २४	१३, २४	१२, २४
११, २४	१०, २४	९, २४	८, २४	७, २४	६, २४	५, २४	४, २४	३, २४	५, ४८	४, ४८		

तद्धूलीसालाणं कमसो मूलवित्थारो—

२४, २८८	२३, २८८	२२, २८८	२१, २८८	२०, २८८	१९, २८८	१८, २८८	१७, २८८	१६, २८८	१५, २८८	१४, २८८	१३, २८८
१२, २८८	११, २८८	१०, २८८	९, २८८	८, २८८	७, २८८	६, २८८	५, २८८	४, २८८	३, २८८	५, ५७६	४, ५७६

सगसगधूलीसालाणं विच्थारेण विरहिदम्मगम्मगम्वाइयखेत्ताणं वित्थारा—

२६४, २८८	२५३, २८८	२४२, २८८	२३१, २८८	२२०, २८८	२०९, २८८	१९८, २८८	१८७, २८८	१७६, २८८	१६५, २८८	१५४, २८८	१४३, २८८

ये खातिकायें फूले हुए कुमुद, कुवलय और कमलके वनोंके आमोदसे सुगन्धित तथा मणिमय सोपानों एवं हंसप्रभृति पक्षियोंसे सहित होती हैं ॥ ७९६ ॥

अपनी अपनी प्रथम पृथिवीके विस्तारका जितना प्रमाण होता है, उतना ही अपनी अपनी प्रत्येक द्वितीय पृथिवीका भी विस्तार हुआ करता है ॥ ७९७ ॥

कोई कोई आचार्य चैत्यप्रासादभूमिको स्वीकार नहीं करते हैं। उनके उपदेशानुसार भगवान् ऋषभ देवके समवसरणमें खातिकाभूमिका विस्तार एक योजनप्रमाण था और शेष तीर्थंकरोंके क्रमसे हीन था ॥ ७९८ ॥ पाठान्तर ।

धूलिसालके विस्तारके साथ खातिकाक्षेत्रका विस्तार क्रमसे इतने योजन रहता है (मूलमें देखिये).

क्रमसे धूलिसालका मूलविस्तार (मूलमें देखिये).

१ द ब भवणसुगंधीणि. २ द ब पक्खेहि. ३ द माण. ४ द 'वित्थारो. ५ द खाइयखेत्ताणं.

१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। खादीभूमी समत्ता ।

विदियाओ वेदीओ णियणियपढमिल्लवेदियाहिं समा । णवरि विसेसो वित्थारा दुगुणपरिमाणं ॥ ७९९

वित्थारं दुगुणदुगुणं होदि—

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२

८	७	६	५	४	३	२	१
७२	७२	७२	७२	७२	७२	१४४	३६

। विदियवेदीपमाणं सम्मत्तं ।

पुण्णायणायकुज्जयसंयवत्तहमुत्तपहुदिजुत्ताणि । वल्लीखेत्ताणि तदो कीडणगिरिगुरुवसोहाणि ॥ ८००

मणिसोवाणमणोहरपोक्खरणीफुल्लकमलसंडाणि । ताणं रुंदो दुगुणो खादियखेत्ताण रुंदादो ॥ ८०१

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	९८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	१४४	१४४

। तदियवल्लीभूमी सम्मत्ता ।

तत्तो विदिया साला धूलीसालाण वण्णणेहिं समा । दुगुणो रुंदो दारा रजदमया जक्खरक्खणा णवरि ॥८०२[1]

अपने अपने धूलिसालोंके विस्तारसे रहित अपने अपने खातिकाक्षेत्रोंका विस्तार (मूलमें देखिये).

खातिकाभूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

दूसरी वेदियां अपनी अपनी पूर्व वेदिकाओंके सदृश है । परन्तु विशेषता यह है कि इनका विस्तार दुगुणे प्रमाण है ॥ ७९९ ॥

विस्तार दूना दूना होता है (मूलमें देखिये).

द्वितीय वेदियोंका प्रमाण समाप्त हुआ ।

इसके आगे पुन्नाग, नाग, कुब्जक, शतपत्र एवं अतिमुक्त इत्यादिसे संयुक्त, क्रीड़ा-पर्वतोंसे अतिशय शोभायमान और मणिमय सोपानोंसे मनोहर वापिकाओंके विकसित कमलसमूहोंसे सहित वल्लीक्षेत्र होते हैं । इनका विस्तार खातिकाक्षेत्रोंके विस्तारसे दुगुणा रहता है ॥ ८००-८०१ ॥ तृतीय वल्लीभूमि समाप्त हुई ।

इसके आगे दूसरा कोट है, जिसका वर्णन धूलिसालोंके समान ही है । परन्तु इतना विशेष है कि इसका विस्तार दुगुणा और द्वार रजतमय एवं यक्षजातिके देवोंद्वारा रक्षित हैं ॥८०२॥

द्वितीय कोटका वर्णन समाप्त हुआ ।

१ ब 'सयवत्तयपुत्त'. २ द ब तदा. ३ द °गरूवसोहाणि. ४ द ब साखोण. ५ द मंदा. ६ एवा गाथा संदृष्टिम द पुस्तक एव.

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२

९	८	७	६	५	४	३	२	१
७२	७२	७२	७२	७२	७२	७२	१४४	३६

। विदियसाला सम्मत्ता ।

तत्तो चउत्थउववणभूमीए असोयसत्तवण्णवणं । चंपयचूदवणाणं पुव्वादिदिसासु राजंति ॥ ८०३

विविहवणसंडमंडणविविहणईपुलिणकीडणगिरीहिं ।
विविहवरवावियाहिं उववणभूमीउ रम्माओ ॥ ८०४

एक्केक्काए उववणखिदिए तरवो असोयसत्तदला । चंपयचूदा सुंदरभूदा[1] चत्तारि चत्तारि ॥ ८०५

चामरपहुदिजुदाणं चेत्ततरूणं हवंति उच्छेहो[2] । णियणियजिणउदएहिं बारसगुणिदेहिं सारिच्छा ॥ ८०६

६०००	५४००	४८००	४२००	३६००	३०००	२४००	१८००	१२००	१०८०	९६०	८४०
७२०	६००	५४०	४८०	४२०	३६०	३००	२४०	१८०	१२०	२७	२१

मणिमयजिणपडिमाओ अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ता[3] । एक्केक्कस्स चेत्तदुमम्मि चत्तारि चत्तारि ॥ ८०७

उववणवाविजलेणं सित्ता पेच्छंति एक्कभवजाइं । तस्स णिरिक्खणमेत्ते सत्तभवातीदभाविजादीओ ॥ ८०८

सालत्तयपरिअरियो[4] पीढत्तयउवरि माणथंभा य । चत्तारो चत्तारो एक्केक्के चेत्तरुक्खम्मि ॥ ८०९

इसके आगे चौथी उपवनभूमि होती है, जिसमें पूर्वादिक दिशाओंके क्रमसे अशोकवन, सप्तपर्णवन, चम्पकवन और आम्रवन, ये चार वन शोभायमान होते हैं ॥ ८०३ ॥

ये उपवनभूमियां विविध प्रकारके वनसमूहोंसे मण्डित, विविध नदियोंके पुलिन, और क्रीडापर्वतोंसे तथा अनेक प्रकारकी उत्तम वापिकाओंसे रमणीय होती हैं ॥ ८०४ ॥

एक एक उपवनभूमिमें अशोक, सप्तच्छद, चम्पक और आम्र, ये चार चार सुन्दर वृक्ष होते हैं ॥ ८०५ ॥

चामरादिसे सहित चैत्यवृक्षोंकी उंचाई बारहसे गुणित अपने अपने तीर्थंकरोंकी उंचाईके सदृश होती हैं ॥ ८०६ ॥

एक एक चैत्यवृक्षके आश्रित आठ महाप्रातिहार्योंसे संयुक्त चार चार मणिमय जिन-प्रतिमायें होती हैं ॥ ८०७ ॥

उपवनकी वापिकाओंके जलसे अभिषिक्त जनसमूह एक भवजातिको देखते हैं और उसके निरीक्षणमात्रके होनेपर अर्थात् वापीके जलमें निरीक्षण करनेपर सात अतीत व अनागत भवजातियोंको देखते हैं ॥ ८०८ ॥

एक एक चैत्यवृक्षके आश्रित तीन कोटोंसे वेष्टित व तीन पीठोंके ऊपर चार चार मानस्तम्भ होते हैं ॥ ८०९ ॥

१ ब उववणभूमी व. २ द पवयभूदा सुंदरभूया. ३ द ब उच्छेहो. ४ द ब संजुत्तो. ५ द सालत्तयपरिहरिया.

सहिदा वरवावीहिं कमलुप्पलकुमुदपरिमलिल्लाहिं[1] । सुरणरमिहुणतणुग्गदकुंकुमपंकेहिं पिंजरजलाहिं ॥ ८१०
कत्थ वि हम्मा रम्मा कीडणसालाओ कत्थ वि वराओ । कत्थ वि णट्टयसाला णच्चंतसुरंगणाइण्णा[2] ॥ ८११
बहुभूमीभूसणया सव्वे वरविविहरयणणिम्मविदा । एदे पंतिकमेणं उववणभूमीसु सोहंति ॥ ८१२
ताणं हम्मादीणं सव्वेसुं[3] होंति समवसरणेसुं । णियणियजिणेंउदएहिं बारसगुणिदेहिं समउदया ॥ ८१३
णियणियपढमखिदीणं जेत्तियमेत्तं हु रुंदपरिमाणं । णियणियवणभूमीणं तेत्तियमेत्तं हवे दुगुणं ॥ ८१४

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। [4]तुरिमवणभूमी सम्मत्ता ।

दोदोसुं पासेसुं सव्ववणप्पणिधिसव्ववीहीण । दोद्दो णट्टयसाला ताण पुढं आदिमट्ठसालासु ॥ ८१५
भावणसुरकण्णाओ णच्चंते कप्पवासिकण्णाओ । अग्गिमअट्ठसालासुं पुव्वा व सुवण्णणा सव्वा ॥ ८१६

। णट्टयसाला सम्मत्ता ।

ये मानस्तम्भ कमल, उत्पल, और कुमुदोंकी सुगन्धिसे युक्त तथा देव एवं मनुष्य-युगलोंके शरीरसे निकली हुई केशरके पंकसे पीत जलवाली उत्तम वापियोंसे सहित होते हैं ॥८१०॥

वहां कहींपर रमणीय भवन, कहीं उत्तम क्रीड़नशाला, और कहीं नृत्य करती हुई देवांगनाओंसे आकीर्ण नाट्यशालायें होती हैं ॥ ८११ ॥

बहुत भूमियोंसे (खण्डोंसे) भूषित तथा उत्तम और नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित ये सब भवन पंक्तिक्रमसे उपवनभूमियोंमें शोभायमान होते हैं ॥ ८१२ ॥

सब समवसरणोंमें इन हर्म्यादिकोंकी उंचाई बारहसे गुणित अपने अपने तीर्थंकरोंकी उंचाईके बराबर होती है ॥ ८१३ ॥

अपनी अपनी प्रथम पृथिवीके विस्तारका जितना प्रमाण होता है, उससे दूना अपनी अपनी उपवनभूमियोंके विस्तारका प्रमाण होता है ॥ ८१४ ॥

चतुर्थ वनभूमिका कथन समाप्त हुआ ।

सब वनोंके आश्रित सब वीथियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें दो दो नाट्यशालायें होती हैं। इनमेंसे आदिकी आठ नाट्यशालाओंमें भवनवासिनी देवकन्यायें और इससे आगेकी आठ नाट्यशालाओंमें कल्पवासिनी कन्यायें नृत्य किया करती हैं। इन नाट्यशालाओंका सुन्दर वर्णन पूर्वके समान ही है ॥ ८१५-८१६ ॥

नाट्यशालाओंका कथन समाप्त हुआ ।

१ द परिमलुल्लाहिं. २ ब °सुरंगणाइगणा. ३ ब सव्वेसिं. ४ ब णियजिणजिण°. ५ द° चरिमवण°. ६ द ब पुव्वासुरवण्णणा.

तदियाओ वेदीओ हवंति णियबिदियवेदियाहिं समा । णवरि विसेसो एसो जक्खिंदा दाररक्खणया ॥ ८१७
। तदिया वेदी सम्मत्ता ।

तत्तो धयभूमीए दिव्वधया होंति ते च दसभेया । सीहगयवसहखगवहसिहिससिरविहंसपउमचक्का य ॥ ८१८
अट्ठुत्तरसयसहिए[1] एक्केक्का तं पि अट्ठअधियसया । खुल्लयधयसंजुत्ता पत्तेक्कं चउदिसेसु फुडं ॥ ८१९
सुण्णअडअट्ठणहसगचउक्कअंकक्कमेण मिलिदाणं । सव्वधयाणं संखा एक्केक्के समवसरणम्हि ॥ ८२०
४७०८८० ।

संलग्गा सयलधया कणयत्थंभेसु रयणखचिदेसुं । थंभुच्छेहो णियणियजिणाणं[2] उदएहिं बारसहदेहिं ॥ ८२१
६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० ।
१०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० ।
१८० । १२० । २७ । २१ ।

उसहम्मि थंभरुंदं चउसट्ठीअधियदुसयपव्वाणि । तियभजिदाणिं कमसो एक्करसूणाणि णेमिपरियंतं ॥ ८२२

तीसरी वेदियां अपनी अपनी दूसरी वेदियोंके समान होती हैं। केवल विशेषता यह है कि यहांपर द्वाररक्षक यक्षेन्द्र हुआ करते हैं ॥ ८१७ ॥

तृतीय वेदी समाप्त हुई।

इसके आगे ध्वजभूमिमें दिव्य ध्वजायें होती हैं जो सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र, इन चिह्नोंसे चिह्नित दश प्रकारकी होती हैं ॥ ८१८ ॥

चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें इन दश प्रकारकी ध्वजाओंमेंसे एक एक एकसौ आठ रहती हैं और इनमेंसे भी प्रत्येक ध्वजा अपनी एकसौ आठ क्षुद्रध्वजाओंसे संयुक्त होती हैं ॥ ८१९ ॥

शून्य, आठ, आठ, शून्य, सात, और चार, इन अंकोंके क्रमशः मिलानेपर जो संख्या उत्पन्न हो उतनी ध्वजायें एक एक समवसरणमें हुआ करती हैं ॥ ८२० ॥

महाध्वजा १० × १०८ × ४ = ४३२०। क्षुद्रध्वजा १० × १०८ × १०८ × ४ = ४६६५६०। समस्त ध्वजा ४३२० + ४६६५६० = ४७०८८०।

समस्त ध्वजायें रत्नोंसे खचित सुवर्णमय स्तम्भोंमें संलग्न रहती हैं। इन स्तम्भोंकी उंचाई अपने अपने तीर्थंकरोंकी उंचाईसे बारहगुणी हुआ करती है ॥ ८२१ ॥

भगवान् ऋषभ देवके समवसरणमें इन स्तम्भोंका विस्तार तीनसे भाजित दोसौ चौंसठ अंगुल था। फिर इसके आगे नेमिनाथपर्यन्त क्रमशः भाज्य राशिमें ग्यारह कम होते गये हैं ॥ ८२२ ॥

---

१ ब अट्ठुत्तरसहिए. २ द 'जिणअणं'.

पासम्मि थंभरुंदा पव्वा पणवण्ण छक्कपविहत्ता । चउदाल च्छक्कहिदा णिद्दिट्ठा वड्ढमाणम्मि ॥ ८२३

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	६	६

धयदंडाणं अंतरमुसहजिणे छस्सयाणि चावाणि । चउवीसेहिं हिदाणिं पणकदिहीणाणि जाव णेमिजिणं ॥ ८२४

६००	५७५	५५०	५२५	५००	४७५	४५०	४२५	४००	३७५	३५०	३२५	३००
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४
२७५	२५०	२२५	२००	१७५	१५०	१२५	१००	७५				
२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४				

पणुवीसअधियधणुसय अडदालहिदं चं पासणाहम्मि । वीरजिणे एक्कसयं तेत्तियमेत्तेहिं अवहरिदं ॥ ८२५

१२५	१००
४८	४८

णियणियवल्लिविदीणं जेत्तियमेत्ता हवंति वित्थारा । णियणियधयभूमीणं तेत्तियमेत्ता मुणेदव्वं ॥ ८२६

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। पंचमधयभूमी सम्मत्ता ।

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें इन स्तम्भोंका विस्तार छहसे विभक्त पचवन अंगुल और वर्धमान स्वामीके छहसे भाजित चवालीस अंगुलप्रमाण बतलाया गया है ॥ ८२३ ॥

ऋषभ जिनेन्द्रके समवसरणमें ध्वजदण्डोंका अन्तर चौबीससे भाजित छहसौ धनुष-प्रमाण था । फिर इसके आगे नेमिजिनेन्द्रतक भाज्य राशिमेंसे क्रमशः उत्तरोत्तर पांचका वर्ग अर्थात् पच्चीस पच्चीस कम होते गये हैं ॥ ८२४ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें इन ध्वजदण्डोंका अन्तर अड़तालीससे भाजित एकसौ पच्चीस धनुष और वीर जिनेन्द्रके समवसरणमें इतनेमात्र अर्थात् अड़तालीससे भाजित एकसौ धनुषप्रमाण था ॥ ८२५ ॥

अपनी अपनी लताभूमियोंका जितना विस्तार होता है उतना ही विस्तार अपनी अपनी ध्वजभूमियोंका भी समझना चाहिये ॥ ८२६ ॥

पंचम ध्वजभूमिका वर्णन समाप्त हुआ ।

१ द अडदालसहिदं च. २ द ब जेत्तियमेत्तो.

तदिया साला अज्जुणवण्णा णियधूलिसालसरिसमणा। णवरि य दुगुणो वासो भावणया दाररक्खणया ॥ ८२७

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	१
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	१४४

। तदियसाला समत्ता[1]।

तत्तो छट्ठी भूमी दसविहकप्पद्दुमेहिं संपुण्णा । णियणियधयभूमीणं वाससमा कप्पतरुभूमी ॥ ८२८

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

पाणंगतूरियंगा भूसणवत्थंगभोयणंगा य । आलयदीवियभायणमालातेयंगया तरओ ॥ ८२९

कत्थ वि वरवावीओ कमलुप्पलकुमुदपरिमलिल्लाओ। सुरणरमिहुणतणुग्गदकुंकुमपंकेहिं पिंजरिजलाओ ॥ ८३०

कत्थ वि हम्मा रम्मा कीडणसालाओ कत्थ वि वराओ ।

कत्थ वि पेक्खणसाला गिज्जंतजिणिंदजयचरिया ॥ ८३१

बहुभूमीभूसणया सव्वे वरविविहरयणणिम्मविदा । एदे पंतिकमेणं सोहंते कप्पभूमीसु ॥ ८३२

इसके आगे चांदीके समान वर्णवाला तीसरा कोट अपने धूलिसाल कोटके ही सदृश होता है। परन्तु यहां इतनी विशेषता है कि इस कोटका विस्तार दूना और द्वाररक्षक भवनवासी देव होते हैं ॥ ८२७ ॥

तीसरे कोटका वर्णन समाप्त हुआ।

इसके आगे छठी कल्पभूमि है, जो दश प्रकारके कल्पवृक्षोंसे परिपूर्ण और अपनी अपनी ध्वजभूमियोंके विस्तारके सदृश विस्तारवाली होती है ॥ ८२८ ॥

इस भूमिमें पानांग, तूर्यांग, भूषणांग, वस्त्रांग, भोजनांग, आलयांग, दीपांग, भाजनांग, मालांग और तेजांग, ये दश प्रकारके कल्पवृक्ष होते हैं ॥ ८२९ ॥

उक्त भूमिमें कहींपर कमल, उत्पल और कुमुदोंकी सुगंधसे परिपूर्ण एवं देव और मनुष्य-युगलोंके शरीरसे निकले हुए केशरके कर्दमसे पीत जलवाली उत्तम वापिकायें, कहींपर रमणीय प्रासाद, कहींपर उत्तम क्रीड़नशालायें, और कहींपर जिनेन्द्र देवके विजयचरित्रके गीतोंसे युक्त प्रेक्षणशालायें होती हैं ॥ ८३०-८३१ ॥

ये सब हर्म्यादिक बहुत भूमियों (खण्डों) से भूषित और उत्तम विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित होते हुए पंक्तिक्रमसे इन कल्पभूमियोंमें शोभायमान होते हैं ॥ ८३२ ॥

१ ब दुगुणा. २ ब सम्मत्ता. ३ द आलयवीरिय°.

चत्तारो चत्तारो पुव्वादिसु[1] महा णमेरुमंदारा । संताणपारिजादा सिद्धत्था[2] कप्पभूमीसुं ॥ ८३३
सव्वे सिद्धत्थतरू तिप्पायारा तिमेहलसिरत्था[3] । एक्केक्कस्स य तरुणो मूले चत्तारि चत्तारि ॥ ८३४
सिद्धाणं पडिमाओ विचित्तपीढाओ रयणमइयाओ । वंदणमेत्तणिवारियदुरंतसंसारभीदीओ ॥ ८३५
सालत्तयपरिवेढियतिपीढउवरम्मि माणथंभा य । चत्तारो चत्तारो सिद्धत्थतरुम्मि एक्केके ॥ ८३६
कप्पतरू सिद्धत्था कीडणसालाओ तासु पासादा[4] । णियणियजिणउदयेहिं बारसगुणिदेहिं समउदया ॥ ८३७

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

। छट्ठमतरुखेत्ताओ सम्मत्ता ।

कप्पतरुभूमिपणविसु वीहिं पडि दिव्वरयणणिम्मविदा ।
चउ चउ णट्टयसाला णियचेत्ततरूहिं सरिसउच्छेहो ॥ ८३८

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

पणभूमिभूमिदाओ सव्वाओ दुतीसरंगभूमीओ । जोदिसियकण्णयाहिं पणच्चमाणाहिं रम्माओ ॥ ८३९

। णट्टयसाला समत्ता ।

कल्पभूमियोंके भीतर पूर्वादिक दिशाओंमें नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात, ये चार चार महान् सिद्धार्थ वृक्ष होते है ॥ ८३३ ॥

ये सब सिद्धार्थ वृक्ष तीन कोटोंसे युक्त और तीन मेखलाओंके ऊपर स्थित होते है । इनमेंसे प्रत्येक वृक्षके मूलभागमें विचित्र पीठोंसे संयुक्त और वंदना करनेमात्रसे ही दुरन्त संसारके भयको नष्ट करनेवाली ऐसी रत्नमय चार चार सिद्धोंकी प्रतिमायें होती है ॥ ८३४-८३५ ॥

एक एक सिद्धार्थ वृक्षके आश्रित, तीन कोटोंसे वेष्टित पीठत्रयके ऊपर चार चार मानस्तम्भ होते है ॥ ८३६ ॥

कल्पभूमियोंमें स्थित सिद्धार्थ कल्पवृक्ष, क्रीडनशालाएं और प्रासाद बारहसे गुणित अपने अपने जिनेन्द्रकी उंचाईके समान उंचाईवाले होते है ॥ ८३७ ॥

छठे तरुक्षेत्रोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

कल्पतरुभूमिके पार्श्वभागोंमें प्रत्येक वीथीके आश्रित दिव्य रत्नोंसे निर्मित और अपने चैत्यवृक्षोंके सदृश उंचाईवाली चार चार नाट्यशालायें होती हैं ॥ ८३८ ॥

सब नाट्यशालायें पांच भूमियोंसे विभूषित, बत्तीस रंगभूमियोंसे सहित और नृत्य करती हुई ज्योतिषी कन्याओंसे रमणीय होती हैं ॥ ८३९ ॥

नाट्यशालाओंका वर्णन समाप्त हुआ ।

१ द पुव्वादिसुहाणं. २ द सिद्धता. ३ द तिमेहलसरिच्छा. ४ द ब पासादो.

तत्तो चउत्थवेदी हुवेदि णियपढमवेदियासरिसा । णवरि विसेसो भवणदेवा दाराणि रक्खंति ॥ ८४०

। चतुर्थवेदी सम्मत्ता ।

तत्तो भवणखिदीओ भवणाइं तासु रयणरइदाओ । धुव्वंतधयवडाइं[1] वरतोरणतुंगदाराइं ॥ ८४१

सुरमिहुणगेयणच्चणतूररवेहिं जिणाभिसेएहिं । सोहंते ते भवणा एक्केक्के भवणभूमीसु ॥ ८४२

उववणपहुदिं सव्वं पुव्वं विय भवणपंतिविक्खंभा । णियपढमवेदिवासे गुणिदे एक्कारसेहिं सारिच्छा ॥ ८४३

२६४	२५३	२४२	२३१	२२०	२०९	१९८	१८७	१७६	१६५	१५४	१४३
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६
१३२	१२१	११०	९९	८८	७७	६६	५५	४४	३३	५५	४४
५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	५७६	११५२	११५२

। सप्तमभवणावणी सम्मत्ता ।

भवणखिदिप्पणिधीसुं वीहिं पडि होंति णवणवा थूहा । जिणसिद्धप्पडिमाहिं अप्पडिमाहिं समाइण्णा ॥ ८४४

छत्तादिछत्तजुत्ता णच्चंतविचित्तधयवलालोला[2] । अट्ठमंगलपमियरिया ते सव्वे दिव्वरयणमया ॥ ८४५

एक्केक्कम्मि थूहे अंतरयं मयरतोरणाण सयं । उच्छेहो थूहाणं[3] णियचेत्तदुमाण उदयसमं ॥ ८४६

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० । ६०० ।

इससे आगे अपनी प्रथम वेदीके सदृश चौथी वेदी होती है। विशेषता केवल इतनी है कि यहां भवनवासी देव द्वारोंकी रक्षा करते हैं ॥ ८४० ॥

चतुर्थ वेदीका वर्णन समाप्त हुआ।

इससे आगे भवनभूमियां होती हैं; जिनमें रत्नोंसे रचित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और उत्तम तोरणयुक्त उन्नत द्वारोंवाले भवन होते हैं ॥ ८४१ ॥

भवनभूमियोंपर स्थित वे एक एक भवन सुरयुगलोंके गीत, नृत्य एवं बाजेके शब्दोंसे तथा जिनाभिषेकोंसे शोभायमान होते हैं ॥ ८४२ ॥

यहां उपवनादिक सब पहिलेके ही समान होते हैं। उपर्युक्त भवनपंक्तियोंका विस्तार ग्यारहसे गुणित अपनी प्रथम वेदीके विस्तारके समान होता है ॥ ८४३ ॥

सातवीं भवनभूमिका वर्णन समाप्त हुआ।

भवनभूमिके पार्श्वभागोंमें प्रत्येक वीथीके मध्यमें जिन और सिद्धोंकी अनुपम प्रतिमाओंसे व्याप्त नौ नौ स्तूप होते हैं ॥ ८४४ ॥

वे सब स्तूप छत्रके ऊपर छत्रसे संयुक्त, फहराती हुई ध्वजाओंके समूहसे चंचल, आठ मंगलद्रव्योंसे सहित, और दिव्य रत्नोंसे निर्मित होते हैं ॥ ८४५ ॥

एक एक स्तूपके बीचमें मकरके आकार सौ तोरण होते हैं। इन स्तूपोंकी उंचाई अपने चैत्यवृक्षोंकी उंचाईके समान होती है ॥ ८४६ ॥

---

१ द ब °धयवदाइं. २ द धयवलालोला. ३ द ब थूहाणि.

९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

दीहत्तरुंदमाणं ताणं संपइ पणट्ठउवएसं । भव्वा अभिसेयच्चणपदाहिणं तेसु कुव्वंति ॥ ८४७

। थूहा समत्ता ।

तत्तो चउत्थसाला हवेइ आयासफडिहसंकासा । मरगयमणिमयगोउरदारचउक्केण रमणिज्जा ॥ ८४८

वररयणदंडमंडणभुवदंडा कप्पवासिणो देवा । जिणपादकमलभत्ता गोउरदाराणि रक्खंति ॥ ८४९

सालाणं विक्खंभो कोसं चउवीस वसहणाहम्मि । अडभजिदा एक्कूणा जाव णेमिजिणं ॥ ८५०

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८
१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३		
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८		

पणवीसाधियछस्सयदंडा छत्तीसभजिदा य । पासम्मि वड्ढमाणे णवहिदपणुवीसअधियसयं ॥ ८५१

६२५[1] । १२५
३६ । ९

। तुरिमसाला समत्ता ।

अह गिरिमंडवभूमी अट्ठमया अणुवमा मणोहरया । वररयणथंभधरिया मुत्ताजालाइकयसोहा ॥ ८५२

इन स्तूपोंकी लम्बाई और विस्तारके प्रमाणका उपदेश इस समय नष्ट होचुका है। भव्य जीव इन स्तूपोंका अभिषेक, पूजन और प्रदक्षिणा करते है ॥ ८४७ ॥

स्तूपोंका कथन समाप्त हुआ।

इसके आगे आकाश-स्फटिकके (आला या मणि-विशेषके) सदृश और मरकत मणिमय चार गोपुरद्वारोंसे रमणीय ऐसा चतुर्थ कोट होता है ॥ ८४८ ॥

जिनके भुजदण्ड उत्तम रत्नमय दण्डोंसे मण्डित है और जो जिन भगवान्‌के चरण-कमलोंकी भक्तिसे सहित हैं ऐसे कल्पवासी देव यहां गोपुरद्वारोंकी रक्षा करते हैं ॥ ८४९ ॥

वृषभनाथ भगवान्‌के समवसरणमें कोटका विस्तार दोसौ अटासीसे भाजित चौवीस कोस-प्रमाण था। इसके आगे भगवान् नेमिनाथपर्यन्त क्रमशः एक कम होता गया है ॥ ८५० ॥

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें कोटका विस्तार बत्तीससे विभक्त छहसौ पचीस धनुष और वर्धमान स्वामीके नौसे भाजित एकसौ पचीस धनुषप्रमाण था ॥ ८५१ ॥

चतुर्थ कोटका वर्णन समाप्त हुआ।

इसके पश्चात् अनुपम, मनोहर, उत्तम रत्नोंके स्तम्भोंपर स्थित और मुक्ताजालादिसे शोभायमान आठवीं श्रीमण्डपभूमि होती है ॥ ८५२ ॥

१ द मव्वाओ. २ ब बत्तीस. ३ द ब $\frac{६२५}{३२}$ । ४ द मणुवमा, ब मणुवमाणमणो. ५ द ब जालाओ कमसोहा.

णिम्मलपडिहविणिम्मियसोलसभित्तीण अंतरे कोट्ठा । बारस ताणं उदओ णियजिणउदएहिं बारसहदेहिं ॥ ८५३

६००० । ५४०० । ४८०० । ४२०० । ३६०० । ३००० । २४०० । १८०० । १२०० । १०८० । ९६० । ८४० । ७२० । ६०० । ५४० । ४८० । ४२० । ३६० । ३०० । २४० । १८० । १२० । २७ । २१ ।

वीसाहियकोससयं रुंदं कोट्ठाण उसहणाहम्मि । बारसवग्गेण हिदं पणहीणं जाव णेमिजिणं ॥ ८५४

१२०	११५	११०	१०५	१००	९५	९०	८५	८०	७५	७०	६५
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४
६०	५५	५०	४५	४०	३५	३०	२५	२०	१५		
१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४	१४४		

पासजिणे पणवीसा अडसीदीअधियदुसयपविहत्ता । वीरजिणिंदे दंडा पंचधणा दसहदा य णवभजिदा ॥ ८५५

२५ | १२५०
२८८ ९

। सिरिमंडवा समत्ता ।

चेट्ठंति रिसिगणाइं[1] कोट्ठाणब्भंतरेसु पुव्वादी । पुह पुह पदाहिणेणं गणाण साहेमि विण्णासा ॥ ८५६

अक्खीणमहाणसिया सप्पीरवीरासियासवरसाओ[2] । गणहरदेवप्पमुहा कोट्ठे पढमम्मि चेट्ठंति ॥ ८५७

बिदियम्मि फलिहभित्तीअंतरिदे कप्पवासिदेवीओ । तदियम्मि अज्जियाओ सावइयाओ विणीदाओ[3] ॥ ८५८

निर्मल स्फटिकमणिसे निर्मित सोलह दीवालोंके बीचमें बारह कोठे होते है । इन कोठोंकी उंचाई अपने अपने जिनेन्द्रकी उंचाईसे बारहगुणी होती है ॥ ८५३ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें कोठोंका विस्तार बारहके वर्ग अर्थात् एकसौ चवालीससे भाजित एकसौ बीस कोसप्रमाण था । इसके आगे नेमिनाथ तीर्थंकरतक क्रमशः उत्तरोत्तर पांच पांच कम होते गये है ॥ ८५४ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें इन कोठोंका विस्तार दोसौ अठासीसे भाजित पच्चीस कोस और महावीर स्वामीके पांचके घनको दशसे गुणा करके नौका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने धनुषप्रमाण था ॥ ८५५ ॥

श्रीमण्डपोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

इन कोठोंके भीतर पूर्वादि प्रदक्षिणक्रमसे पृथक् पृथक् ऋषि आदि बारह गण बैठते है । इन गणोंके विन्यासका आगे कथन करता हूं ॥ ८५६ ॥

इन बारह कोठोंमेंसे प्रथम कोठेमें अक्षीणमहानसिक ऋद्धि तथा सर्पिरास्रव, क्षीरास्रव व अमृतास्रवरूप रसऋद्धियोंके धारक गणधर देवप्रमुख बैठा करते हैं ॥ ८५७ ॥

स्फटिकमणिमयी दीवालोंसे व्यवहित दूसरे कोठेमें कल्पवासिनी देवियां और तीसरे कोठेमें अतिशय नम्र आर्यिकायें तथा श्राविकायें बैठा करती हैं ॥ ८५८ ॥

१ द ब हिरगणाइं, क रिहिगणाइं. २ द ब °मियामिवीरसओ. ३ द मणहरदेव°. ४ द सावइयाओ वि विणिदाओ.

तुरिमे जोदिसियाणं देवीओ परमभत्तिमंतीओ । पंचमए विंतरदेवाण देवीओ ॥ ८५९
छट्ठम्मि जिणवरच्चणकुसलाओ भवणवासिदेवीओ । सत्तमए जिणभत्ता दसभेदा भावणा देवा ॥ ८६०
अट्ठमए अट्ठविहा वेंतरदेवा य किण्णरप्पहुदी । णवमे ससिरविपहुदी जोइसिया जिणणिविट्ठमणा ॥ ८६१
सोहम्मादी अच्चुदकप्पंता देवराहणो दसमे । एक्कारसे चक्कहरा मंडलिया पत्थिवा मणुवा ॥ ८६२
बारसमम्मि य तिरिया करिकेसरिवग्घहरिणपहुदीओ । मोत्तूण पुव्ववेरं सत्तू वि सुमित्तभावजुदा ॥ ८६३

। गणविण्णासा समत्ता ।

अह पंचमवेदीओ णिम्मलफलिहोवलेहि रइदाओ । णियणियचउत्थसालासरिच्छउच्छेहपहुदीओ ॥ ८६४

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८

१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	२८८	५७६	५७६

। पंचमवेदी समत्ता ।

तत्तो पढमे पीढा वेरुलियमणीहि णिम्मिदा ताणं । णियमणथंभादिमहीउच्छेहा हवंति उच्छेहा[1] ॥ ८६५

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३

७	६	५	४	३	२	१
३	३	३	३	३	६	६

चतुर्थ कोठेमें परम भक्तिसे संयुक्त ज्योतिषी देवोंकी देवियां और पांचवें कोठेमें व्यन्तर देवोंकी विनीत देवियां बैठा करती हैं ॥ ८५९ ॥

छठे कोठेमें जिनेन्द्रदेवके अर्चनमें कुशल भवनवासिनी देवियां और सातवें कोठेमें जिन-भक्त दश प्रकारके भवनवासी देव बैठते हैं ॥ ८६० ॥

आठवें कोठेमें किन्नरादिक आठ प्रकारके व्यन्तर देव और नवम कोठेमें जिनदेवमें मनको निविष्ट करनेवाले चन्द्र-सूर्यादिक ज्योतिषी देव बैठते हैं ॥ ८६१ ॥

दशवें कोठेमें सौधर्म स्वर्गसे आदि लेकर अच्युत स्वर्गतकके देव और उनके इन्द्र तथा ग्यारहवें कोठेमें चक्रवर्ती, माण्डलिक राजा एवं अन्य मनुष्य बैठते हैं ॥ ८६२ ॥

बारहवें कोठेमें हाथी, सिंह, व्याघ्र और हरिणादिक तिर्यंच जीव बैठते हैं । इनमें पूर्व वैरको छोड़कर शत्रु भी उत्तम मित्रभावसे युक्त होते हैं ॥ ८६३ ॥

गणोंकी रचना समाप्त हुई ।

इसके अनन्तर निर्मल स्फटिक पाषाणोंसे विरचित और अपने अपने चतुर्थ कोटके सदृश विस्तारादिसे सहित पांचवीं वेदियां होती हैं ॥ ८६४ ॥

पांचवीं वेदीका वर्णन समाप्त हुआ ।

इसके आगे वैडूर्यमणियोंसे निर्मित प्रथम पीठ हैं । इन पीठोंकी उंचाई अपनी अपनी मानस्तम्भादिपृथिवीकी उंचाईके सदृश है ॥ ८६५ ॥

१ द ब वग्घहरिणि°. २ द ब महीदुच्छेहो हवंति दुच्छेहो.

पत्तेक्कं कोट्ठाणं पणधीसुं तह य सयलवीहीणं[1] । होंति हु सोलस सोलस सोवाणा पढमपीढेसुं ॥ ८६६

रुंदेण पढमपीढा कोसा चउवीस बारसेहिं हिदा[2] । उसहजिणिंदे कमसो एक्केणा जाव णेमिजिणं ॥ ८६७

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२

१०	९	८	७	६	५	४	३
१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२

पणपरिमाणा कोसा चउवीसहिदा य पासणाहम्मि । एक्को चिय छक्काहेदे देवे सिरिवड्ढमाणम्मि ॥ ८६८

५	१
२४	६

पीढाणं परिहीओ णियणियवित्थारतिउणियपमाणा । वररयणणिम्मियाओ अणुवमरमणिज्जसोहाओ ॥ ८६९

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४

८	७	६	५	४	३	५	४
४	४	४	४	४	४	८	८

वलयोवमपीढेसुं विविहधणदव्वमंगलजुदेसुं । सिरधरिदधम्मचक्का चेट्ठंते चउदिसासु जक्खिंदा ॥ ८७०

चावाणि छस्सहस्सा अट्ठहिदा पीढमेहलारुंदं । उसहजिणे पण्णाधियदोसयऊणाणि जाव णेमिजिणं ॥ ८७१

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०	४०००	३७५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८

३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०	२०००	१७५०	१५००	१२५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८

१०००	७५०
८	८

प्रथम पीठोंके ऊपर उपर्युक्त बारह कोठोंमेंसे प्रत्येक कोठोंके प्रवेशद्वारोंमें और समस्त (चार) वीथियोंके सन्मुख सोलह सोलह सोपान होते हैं ॥ ८६६ ॥

ऋषभदेवके समवसरणमें प्रथम पीठका विस्तार बारहसे भाजित चौबीस कोस था। फिर इसके आगे नेमि जिनेन्द्रतक क्रमशः एक एक अंश कम होता गया है ॥ ८६७ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें प्रथम वेदीका विस्तार चौबीससे भाजित पाच कोस, और श्रीवर्धमान भगवान्‌के छहसे भाजित एक कोसप्रमाण था ॥ ८६८ ॥

पीठोंकी परिधियोंका प्रमाण अपने अपने विस्तारसे तिगुणा होता है। ये पीठिकायें उत्तम रत्नोंसे निर्मित और अनुपम रमणीय शोभासे संपन्न होती है ॥ ८६९ ॥

चूड़ीके सदृश अर्थात् गोल और नाना प्रकारकी पूजाद्रव्य एवं मंगलद्रव्योंसे सहित इन पीठोंपर चारों दिशाओंमें सिरपर धर्मचक्रको रखे हुए यक्षेन्द्र स्थित रहते है ॥ ८७० ॥

ऋषभ जिनेन्द्रके समवसरणमें पीठकी मेखलाका विस्तार आठसे भाजित छह हजार धनुषप्रमाण था। पुनः इसके आगे नेमिनाथ तीर्थंकरतक क्रमशः उत्तरोत्तर दोसौ पचास अंश कम होते गये हैं ॥ ८७१ ॥

---

१ द पणधीसुत्तयसयवीहीण, ब पणधीसुत्तयसयलवीहीणं. २ द ब हदा.

पणवीसाहियछस्सयं अट्ठविहत्तं च पासणाहम्मि । एक्कसयं पणवीसब्भहियं वीरम्मि दोहि हिदं ॥ ८७२

६२५ | १२५
८ | २

आरुहिदूणं तेसुं गणहरदेवादिबारसगणा ते । कादूणं वि प्पदाहिणेमंचंति संमुहं[2] णाहं ॥ ८७३
थोदूण थुदिसएहिं असंखगुणसेढिकम्मणिज्जरणं । कादूण पसण्णमणा णियणियकोट्ठेसु पविसंति ॥ ८७४

। पढमपीढा सम्मत्ता ।

पढमोवरिम्मि विदिया पीढा चेट्ठंति ताण उच्छेहो । चउदंडा आदिजिणे छब्भागोणा य जाव णेमिजिणं ॥ ८७५

२४ | २३ | २२ | २१ | २० | १९ | १८ | १७ | १६ | १५ | १४ | १३ | १२ | ११ | १० | ९ | ८ | ७
६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६

६ | ५ | ४ | ३
६ | ६ | ६ | ६

पासजिणे पणदंडा बारसभजिदा य वीरणाहम्मि । एक्को चिय तियभजिदा णाणावररयणणिलयवट्टाओ ॥ ८७६

५ | १
१२ | ३

चावाणि छब्भहम्मा अट्ठहिदा ताण मेहलारुंदा । उसहजिणे पण्णाहियदोसयऊणा य णेमिपेरंतं ॥ ८७७

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें पीठकी मेखलाका विस्तार आठसे भाजित छहसौ पचास धनुष, और वीर भगवान्‌के दोसे भाजित एकसौ पच्चीस धनुषप्रमाण था ॥ ८७२ ॥

वे गणधरदेवादिक बारह गण उन पीठोंपर चढ़कर और प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्रदेवके सम्मुख होते हुए पूजा करते है ॥ ८७३ ॥

पश्चात् सैकड़ों स्तुतियोंद्वारा कीर्तन करके व असंख्यात गुणश्रेणीरूप कर्मोकी निर्जरा करके प्रसन्नचित्त होते हुए अपने अपने कोठोंमें प्रवेश करते हैं ॥ ८७४ ॥

प्रथम पीठोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

प्रथम पीठोंके ऊपर दूसरे पीठ होते हैं । भगवान् ऋषभदेवके समवसरणमें प्रथम पीठकी उचाई चार धनुष थी । फिर इसके आगे उत्तरोत्तर क्रमशः नेमि जिनेन्द्रतक एक छठवां भाग कम होता गया है ॥ ८७५ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें प्रथम पीठका विस्तार बारहसे भाजित पांच धनुष, और वीरनाथके तीनसे भाजित एक धनुषमात्र था । ये द्वितीय पीठिकायें नाना प्रकारके उत्तम रत्नोंसे खचित भूमियुक्त होती हैं ॥ ८७६ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें उन द्वितीय पीठोंकी मेखलाओंका विस्तार आठसे भाजित छह हजार धनुष था । फिर इसके आगे नेमिनाथपर्यन्त क्रमशः उत्तरोत्तर दोसौ पचास भाग कम होता गया है ॥ ८७७ ॥

---

१ द पणवीससहियछस्सय. २ द ब गणगणदेवादिं. ३ द विप्पणदाहीण°. ४ द मुहंमुहं. ५ द छब्भागो जाव. ६ ब णिलइयला.

६०००	५७५०	५५००	५२५०	५०००	४७५०	४५००	४२५०	४०००	३७५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
३५००	३२५०	३०००	२७५०	२५००	२२५०	२०००	१७५०	१५००	१२५०
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
१०००	७५०								
८	८								

पणवीसाधियछस्सय अट्ठविभत्तं च पाससामिस्स । एक्कसयं पणवीसब्भहियं वीरम्मि दोहि हिदं[1] ॥ ८७८

६२५	१२५
८	२

ताणं कणयमयाणं पीढाणं पंचवण्णरयणमया । समपट्टा सोवाणा चेट्ठंते चउदिसासु अट्ठट्ठं ॥ ८७९

केसरिवसहसरोरुहचक्कं वरदामगरुडहत्थिधया । मणिथंभलंबमाणा राजंत बिदियपीढेसुं ॥ ८८०

धूवघडा णवणिहिणो अच्चणदव्वाइं मंगलाणिं[2] पि । चेट्ठंति बिदियपीढे को सक्कइ ताण वण्णेदुं ॥ ८८१

वीसाहियसयकोसा उसहजिणे बिदियपीढवित्थारा । पंचूणा छण्णउदीभाजिदा कमसो य णेमिपरियंतं ॥ ८८२

१२०	११५	११०	१०५	१००	९५	९०	८५	८०	७५	७०	६५	६०
९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६
५५	५०	४५	४०	३५	३०	२५	२०	१५				
९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६	९६				

पासजिणे पणुवीसं अट्ठोणदोसएहिं अवहरिदा । पंच चिय वीरजिणे पविहत्ता अट्ठतालेहिं ॥ ८८३

२५	५
१९२	४८

। बिदियपीढा समत्ता ।

पार्श्वनाथ स्वामीके समवसरणमें द्वितीय पीठकी मेखलाका विस्तार आठसे भाजित छहसौ पच्चीस धनुष, और वीरनाथ भगवान्‌के दोसे भाजित एकसौ पच्चीस धनुषप्रमाण था ॥ ८७८ ॥

उन सुवर्णमय पीठोंके ऊपर चढ़नेकेलिये चारों दिशाओंमें पांच वर्णके रत्नोंसे निर्मित समपृष्ठ सोपान होते हैं ॥ ८७९ ॥

द्वितीय पीठोंके ऊपर मणिमय स्तम्भोंपर लटकती हुई सिंह, बैल, कमल, चक्र, उत्तम माला, गरुड़ और हाथी, इनके चिह्नोंसे युक्त ध्वजायें शोभायमान होती हैं ॥ ८८० ॥

द्वितीय पीठपर जो धूपघट, नव निधियां, पूजनद्रव्य और मंगलद्रव्य स्थित रहते हैं, उनका वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ है ? ॥ ८८१ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें द्वितीय पीठका विस्तार छ्यानवेसे भाजित एकसौ बीस कोसप्रमाण था। पश्चात् इसके आगे नेमिनाथपर्यन्त क्रममें पांच पांच भाग कम होते गये हैं ॥ ८८२ ॥

पार्श्वनाथ तीर्थंकरके समवसरणमें द्वितीय पीठका विस्तार आठ कम दोसौसे भाजित पच्चीस कोस और वीर जिनेन्द्रके अड़तालीससे भाजित पांच कोसमात्र था ॥ ८८३ ॥

द्वितीय पीठोंका वर्णन समाप्त हुआ।

१ द ब हिदो. २ द ब मंगलाणं.

ताणोवरि तदियाइं पीढाइं विविहरयणरइदाइं । णियणियदुइज्जपीढुच्छेधसमो ताण उच्छेधो ॥ ८८४

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६

६	५	४	३	५	१
६	६	६	६	१२	३

णियआदिमपीढाणं वित्थारचउत्थभागसारिच्छा । एदाणं वित्थारा तिउणकदे तत्थ समधिए परिधी ॥ ८८५

२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८

११	१०	९	८	७	६	५	४	३	५	४
४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	४८	९६	९६

ताणं दिणयरमंडलसमवट्टाणं हवंति अट्ठट्ठं । सोवाणा रयणमया चउसु दिसासुं सुहप्पासा ॥ ८८६

। तदियपीढा सम्मत्ता ।

एक्केक्का गंधउडी होदि तदो तदियपीढउवरिम्मि । चामरकिंकिणिवंदणमालाहारादिरमणिज्जा ॥ ८८७

गोसीसमलयचंदणकालागरुपहुदिधूवगंधड्ढा । पज्जलंतरयणदीवा णच्चंतविचित्तधयपंती ॥ ८८८

तीए रुंदायामा छस्सयदंडाणि उसहणाहम्मि । पणकदिपरिहीणाणिं कमसो सिरिणेमिपरियंतं ॥ ८८९

६०० । ५७५ । ५५० । ५२५ । ५०० । ४७५ । ४५० । ४२५ । ४०० । ३७५ । ३५० । ३२५ । ३०० । २७५ । २५० । २२५ । २०० । १७५ । १५० । १२५ । १०० । ७५ ।

द्वितीय पीठोंके ऊपर विविध प्रकारके रत्नोंसे रचित तीसरी पीठिकायें होती हैं। इन तीसरी पीठिकाओंकी उंचाई अपनी अपनी दूसरी पीठिकाओंकी उंचाईके समान होती है ॥ ८८४ ॥

इनका विस्तार अपनी प्रथम पीठिकाओंके विस्तारके चतुर्थ भागप्रमाण होता है, और तिगुणे विस्तारसे कुछ अधिक इनकी परिधि होती है ॥ ८८५ ॥

सूर्यमण्डलके समान गोल उन पीठोंके चारों ओर रत्नमय और सुखकर स्पर्शवाली आठ आठ सीढियां होती हैं ॥ ८८६ ॥

तृतीय पीठिकाओंका वर्णन समाप्त हुआ।

इसके आगे इन तीसरी पीठिकाओंके ऊपर एक एक गंधकुटी होती है। यह गंधकुटी चमर, किंकिणी, वन्दनमाला और हारादिकसे रमणीय, गोशीर, मलयचन्दन और कालागरु इत्यादिक धूपोंके गंधसे व्याप्त, प्रज्वलित रत्नोंके दीपकोंसे सहित, तथा नाचती हुई विचित्र ध्वजाओंकी पंक्तियोंसे संयुक्त होती है ॥ ८८७-८८८ ॥

उस गन्धकुटीकी चौड़ाई और लम्बाई भगवान् ऋषभनाथके समवसरणमें छहसौ धनुषप्रमाण थी। फिर इसके पश्चात् श्रीनेमिनाथपर्यन्त क्रमसे उत्तरोत्तर पांचका वर्ग अर्थात् पच्चीस पच्चीस धनुष कम होती गयी है ॥ ८८९ ॥

१ द 'पीटच्छेद'. २ द ब उच्छेधो. ३ ब तउणकदे. ४ द ब सुहप्पासं. ५ द ब गंधउडी. ६ ब गोसीर'.

पणवीसब्भहियसयं दोहि विहत्तं च पासणाहम्मि । विगुणियपणवीसाइं तित्थयरे वड्ढमाणम्मि ॥ ८९०

$$\frac{१२५}{२} \mid ५०$$

उदए गंधउडीए दंडाणं णवसयाणि उसहजिणे । कमसो णेमिजिणंतं चउवीसविभत्तपभवहीणाणि ॥ ८९१

९००	१७२५/२	१६५०/२	१५७५/२	१५००/२	१४२५/२	१३५०/२	१२७५/२	१२००/२	११२५/२
१०५०	९७५/२	९००/२	८२५/२	७५०/२	६७५/२	६००/२	५२५/२	४५०/२	३७५/२	३००/२	२२५/२

पणुहत्तरिजुदतिसया पासजिणिंदम्मि चउविहत्ता य । पणुवीसोणं च सयं जिणपवरे वीरणाहम्मि ॥ ८९२

$$\frac{३७५}{४} \mid ७५$$

सिंहासणाणि मज्झे गंधउडीणं सपादपीढाणि । वरफलिहणिम्मिदाणिं घंटाजालादिरम्माणि ॥ ८९३

रयणम्वचिदाणि ताणिं जिणिंदउच्छेहजोग्गउदयाणिं । इत्थं तित्थयराणं कहिदाइं समवसरणाइं ॥ ८९४

। समवसरणा समत्ता ।

चउरंगुलंतराले उवरिं सिंहासणाणि अरहंता । चेट्ठंति गयणमग्गे लोयालोयप्पयासयमतंडा ॥ ८९५

भगवान् पार्श्वनाथके समवसरणमें गन्धकुटीका विस्तार दोसे विभक्त एकसौ पचास धनुष, और वर्धमान तीर्थंकरके दुगुणित पचीस अर्थात् पचास धनुषप्रमाण था ॥ ८९० ॥

ऋषभ जिनेन्द्रके समवसरणमें गन्धकुटीकी उंचाई नौसौ धनुषप्रमाण थी। फिर इसके आगे क्रमसे नेमिनाथ तीर्थंकरपर्यंत चौवीससे विभक्त मुखप्रमाण (९०० ÷ २४ $\frac{५}{२}$) से हीन होती गयी है ॥ ८९१ ॥

पार्श्वनाथ जिनेन्द्रके समवसरणमे गंधकुटीकी उंचाई चारसे विभक्त तीनसौ पचत्तर धनुष, और वीरनाथ जिनेन्द्रके पचीस कम सौ धनुषप्रमाण थी ॥ ८९२ ॥

गन्धकुटियोंके मध्यमें पादपीठ सहित, उत्तम स्फटिक मणियोंसे निर्मित और घंटाओंके समूहादिकसे रमणीय सिंहासन होते हैं ॥ ८९३ ॥

रत्नोंसे खचित उन सिंहासनोंकी उंचाई तीर्थंकरोंकी उंचाईके ही योग्य हुआ करती है। इसप्रकार यहां तीर्थंकरोंके समवसरणोंका कथन किया गया है ॥ ८९४ ॥

समवसरणोंका वर्णन समाप्त हुआ।

लोक और अलोकको प्रकाशित करनेके लिये सूर्यके समान भगवान् अरहन्त देव उन सिंहासनोंके ऊपर आकाशमार्गमें चार अंगुलके अन्तरालसे स्थित रहते हैं ॥ ८९५ ॥

---

१ द ब पणवीससोले च. २ द ब गंधमर्दाणं. ३ द ब णिम्मदार्णि. ४ द ब इति समवसरण सम्मत्ता. ५ द ब °लंतराले. ६ द रयणमग्गे.

णिस्सेदत्तं णिम्मलगत्तत्तं दुद्धधवलरुहिरत्तं । आदिमसंहडणत्तं समचउरस्संगसंठाणं ॥ ८९६
अणुवमरूवत्तं णवचंपयवरसुरहिगंधधारित्तं । अट्ठुत्तरवरलक्खणसहस्सधरणं अणंतबलविरियं ॥ ८९७
मिदहिदमधुरालाओ साभावियअदिसयं च दसभेदं । एदं तित्थयराणं जम्मग्गहणादिउप्पण्णं ॥ ८९८
जोयणसदमज्जादं सुभिक्खदा चउदिसासु णियराणा । णहगमणाणमहिंसा भोयणउवसग्गपरिहीणा ॥ ८९९
सव्वाहिमुहट्ठियत्तं अच्छायत्तं अपम्हफंदित्तं[1] । विज्जाणं ईसत्तं समणहरोमत्तणं सजीवम्हि ॥ ९००
अट्ठरसमहाभासा खुल्लयभासा सयाइं सत्त तहा । अक्खरअणक्खरप्पय सण्णीजीवाण सयलभासाओ ॥ ९०१
एदासुं भासासुं तालुवदंतोट्ठकंठवावारे[2] । परिहरिय एक्ककालं भव्वजणे दिव्वभासित्तं ॥ ९०२
पगदीए अक्खलिओ संजत्तिदयम्मि णवमुहुत्ताणि । गिस्सरदि णिरुवमाणो दिव्वझुणी जाव जोयणयं[3] ॥ ९०३
सेसेसुं समएसुं गणहरदेविंदचक्कवट्टीणं । पण्हाणुरूवमत्थं दिव्वझुणी[4] अ सत्तभंगीहिं ॥ ९०४
छद्दव्वणवपयत्थे[5] पंचट्ठीकायसत्ततच्चाणि । णाणाविहहेदूहिं दिव्वझुणी[6] भणइ भव्वाणं ॥ ९०५
घादिक्खएण[7] जादा एक्कारस अदिसया महच्छरिया । एदे तित्थयराणं केवलणाणम्मि उप्पण्णे ॥ ९०६
माहप्पेण जिणाणं संखेज्जेसुं च जोयणेसु वणं । पल्लवकुसुमफलड्ढोभरिदं जायदि अकालम्मि ॥ ९०७

स्वेदरहितता, निर्मलशरीरता, दूधके समान धवल रुधिर, आदिका वज्रर्षभनाराचसंहनन, समचतुरस्रसंस्थान, अनुपमरूप, नूतनचम्पककी उत्तम गन्धके समान गन्धका धारण करना, एक हजार आठ उत्तम लक्षणोंका धारण करना, अनन्त बल-वीर्य, और हित मित एवं मधुर भाषण, ये स्वाभाविक अतिशयके दश भेद हैं। यह दशभेदरूप अतिशय तीर्थंकरोंके जन्मग्रहणसे ही उत्पन्न हो जाता है ॥ ८९६–८९८ ॥

अपने पाससे चारों दिशाओंमें एकसौ योजनतक सुभिक्षता, आकाशगमन, हिंसाका अभाव, भोजनका अभाव, उपसर्गका अभाव, सबकी ओर मुखकरके स्थित होना, छायारहितता, निर्निमेष दृष्टि, विद्याओंकी ईशता, सजीव होते हुए भी नख और रोमोंका समान रहना, अठारह महाभाषा, सातसौ क्षुद्रभाषा, तथा और भी जो संज्ञी जीवोंकी समस्त अक्षरानक्षरात्मक भाषायें हैं उनमें तालु, दांत, ओष्ठ और कण्ठके व्यापारसे रहित होकर एक ही समय भव्य जनोंको दिव्य उपदेश देना। भगवान् जिनेन्द्रकी स्वभावतः अस्खलित और अनुपम दिव्य ध्वनि तीनों संध्याकालोंमें नव मुहूर्ततक निकलती है और एक योजनपर्यन्त जाती है। इसके अतिरिक्त गणधरदेव, इन्द्र अथवा चक्रवर्तीके प्रश्नानुरूप अर्थके निरूपणार्थ वह दिव्य ध्वनि शेष समयोंमें भी निकलती है। यह दिव्यध्वनि भव्य जीवोंको छह द्रव्य, नौ पदार्थ, पांच अस्तिकाय और सात तत्वोंका नाना प्रकारके हेतुओंद्वारा निरूपण करती है। इसप्रकार घातियाकर्मोंके क्षयसे उत्पन्न हुए ये महान् आश्चर्यजनक ग्यारह अतिशय तीर्थंकरोंको केवलज्ञानके उत्पन्न होनेपर प्रगट होते हैं ॥८९९–९०६॥

तीर्थंकरोंके माहात्म्यसे संख्यात योजनोंतक वन असमयमें ही पत्र, फूल और फलोंकी वृद्धिसे संयुक्त हो जाता है; कंटक और रेती आदिको दूर करती हुई सुखदायक वायु चलने लगती

१ द ब अपम्हयंदित्तं. २ द ब वावारो. ३ द ब जोयणं. ४ द ब पण्हाणरूवमत्थं. ५ द ब °पयत्थो. ६ द दिव्वज्झाणि. ७ ब घादिक्खएण य.

कंटयसक्करपहुदिं अवणेंतो वादि सुक्खदो वाऊ । मोत्तूण पुव्ववेरं जीवा वट्टंति मेत्तीसु ॥ ९०८
दप्पणतलसारिच्छा रयणमई होदि तेत्तिया भूमी । गंधोदकाइं[1] वरिसइ मेघकुमारो य सक्कआणाए ॥ ९०९
फलभारणमिदसालीजवादिसस्सं सुरा विकुव्वंति । सव्वाणं जीवाणं उप्पज्जदि णिच्चमाणंदं ॥ ९१०
वायदि विक्किरियाए वाउकुमारो य सीयलो पवणो । कूवतडायादीणिं णिम्मलसलिलेण पुण्णाणि ॥ ९११
धूमुक्कपडणपहुदीहिं विरहिदं होदि णिम्मलं गयणं । रोगादीण बाधा ण होंति सयलाण जीवाणं ॥ ९१२
जक्खिंदमत्थएसुं किरणुज्जलदिव्वधम्मचक्काणि । दट्ठूण संठियाइं[2] चत्तारि जणस्स अच्छरिया ॥ ९१३
छप्पण चउदिसासुं कंचणकमलाणि तित्थकत्ताणं । एक्कं च पायपीढं अच्चणदव्वाणि दिव्वविविधाणि ॥ ९१४

। चोत्तीस अइसया समत्ता ।

जेसिं तरूण मूले उप्पण्णं जाण केवलं णाणं । उसहप्पहुदिजिणाणं ते चिय असोयरुक्ख त्ति ॥ ९१५
णग्गोहसत्तपण्णं सालं सरलं पियंगु तं चेव । सिरिसं णागतरू वि य अक्खा धूली पलास तेंदूवं ॥ ९१६
पाडलजंबू पिप्पलदहिवण्णो णंदितिलयचूदा य । कंकल्लिचंपबउलं मेसयसिंगं धवं सालं[3] ॥ ९१७
सोहंति असोयतरू पल्लवकुसुमाणदाहि साहाहिं । लंबंतमालदामा घंटाजालादिरमणिज्जा ॥ ९१८

है, जीवोंमें पूर्व वैरको छोड़कर मैत्रीभावसे रहने लगते हैं, उतनी भूमि दर्पणतलके सदृश स्वच्छ और रत्नमय होजाती है, सौधर्म इन्द्रकी आज्ञासे मेघकुमार देव सुगन्धित जलकी वर्षा करता है, देव विक्रियासे फलोंके भारसे नम्रीभूत शालि और जौ आदि सस्यको रचते हैं, सब जीवोंको नित्य आनन्द उत्पन्न होता है, वायुकुमार देव विक्रियासे शीतल पवन चलाता है, कूप और तालाब आदिक निर्मल जलसे पूर्ण होजाते हैं, आकाश धुआं और उल्कापातादिसे रहित होकर निर्मल होजाता है, सम्पूर्ण जीवोंको रोगादिक की बाधायें नहीं होती हैं, यक्षेन्द्रोंके मस्तकोंपर स्थित और किरणोंसे उज्वल ऐसे चार दिव्य धर्मचक्रोंको देखकर जनोंको आश्चर्य होता है, तीर्थंकरोंके चारों दिशाओंमें (विदिशाओंसहित) छप्पन सुवर्णकमल, एक पादपीठ और दिव्य एवं विविध प्रकारके पूजनद्रव्य होते है ॥ ९०७–९१४ ॥

चौंतीस अतिशयोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

ऋषभादि तीर्थंकरोंको जिन वृक्षोंके नीचे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है वे ही अशोक वृक्ष हैं ॥ ९१५ ॥

न्यग्रोध, सप्तपर्ण, शाल, सरल, प्रियंगु, फिर वही (प्रियंगु), शिरीष, नागवृक्ष, अक्ष (बहेड़ा), धूली (मालिवृक्ष), पलाश, तेंदू, पाटल, पीपल, दधिपर्ण, नन्दी, तिलक, आम्र, कंकेलि (अशोक , चम्पक, बकुल, मेषशृङ्ग, धव और शाल, ये अशोकवृक्ष लटकती हुई मालाओंसे युक्त और घंटासमूहादिकसे रमणीय होते हुए पल्लव एवं पुष्पोंसे झुकी हुई शाखाओंसे शोभायमान होते हैं ॥ ९१६–९१८ ॥

१ द ब गंधोदवेइ. २ ब संठियाइं. ३ ब किंकल्लि. ४ द ब मेसयसिंगं.

णियणियजिणउदएणं बारसगुणिदेहिं सरिसउच्छेहा । उसहजिणप्पहुदीणं असोयरुक्खा विरायंति ॥ ९१९
किं वण्णणेण बहुणा दट्ठूणमसोयपादवे एदे । णियउज्जाणवणेसुं ण रमदि चित्तं सुरेसस्स ॥ ९२०
ससिमंडलसंकासं मुत्ताजालप्पयाससंजुत्तं । छत्तत्तयं विरायदि सव्वाणं तित्थकत्ताणं[1] ॥ ९२१
सिंहासणं विसालं विसुद्धफलिहोवलेहिं णिम्मविदं । वररयणणिकरखचिदं को सक्कइ वण्णिदुं ताणं ॥ ९२२
णिब्भरभत्तिपसत्ता अंजलिहत्था पफुल्लमुहकमला । चेट्ठंति गणा सव्वे एक्केक्कं वेदिऊणं[2] जिणं ॥ ९२३
विसयकसायासत्ता हदमोहा[3] पविस जिणपहूसरणं । कहिदुं वा भव्वाणं गहिरं सुरदुंदुही रसइ ॥ ९२४
रुणरुणरुणंतछप्पयछण्णा वरभत्तिभरिदसुरमुक्का । णिवडंति कुसुमविट्टी जिणिंदपयकमलमूलेसुं ॥ ९२५
भवसयदंसणहेदुं दरिसणमेत्तेण सयललोयस्स । भामंडलं जिणाणं रविकोडिसमुज्जलं जयइ ॥ ९२६
चउसट्ठिचामरेहिं मुणालकुंदेंदुसंखधवलेहिं । सुरकरपणच्चिदेहिं विज्जिज्जंता जयंतु जिणा ॥ ९२७

। अट्ठ महपाडिहेरा समत्ता ।

ऋषभादिक तीर्थंकरोंके उपर्युक्त चौबीस अशोकवृक्ष बारहसे गुणित अपने अपने जिनकी उंचाईसे युक्त होते हुए शोभायमान होते हैं ॥ ९१९ ॥

बहुत वर्णनसे क्या ? इन अशोक वृक्षोंको देखकर इन्द्रका भी चित्त अपने उद्यानवनोंमें नहीं रमता है ॥ ९२० ॥

सब तीर्थंकरोंके चन्द्रमण्डलके सदृश और मुक्तासमूहोंके प्रकाशसे संयुक्त तीन छत्र शोभायमान होते हैं ॥ ९२१ ॥

उन तीर्थंकरोंका निर्मल स्फटिकपाषाणोंसे निर्मित और उत्कृष्ट रत्नोंके समूहसे खचित जो विशाल सिंहासन होता है, उसका वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ होसकता है ? ॥ ९२२ ॥

गाढ़ भक्तिमें आसक्त, हाथोंको जोड़े हुए, और विकसित मुखकमलसे संयुक्त, ऐसे सम्पूर्ण गण प्रत्येक तीर्थंकरको घेरकर स्थित रहते हैं ॥ ९२३ ॥

विषय-कषायोंमें अनासक्त और मोहसे रहित होकर जिनप्रभुके शरणमें जाओ, ऐसा भव्य जीवोंको कहनेके लिये ही मानों देवोंका दुंदुभी बाजा गम्भीर शब्द करता है ॥ ९२४ ॥

जिनेन्द्र भगवान्‌के चरणकमलोंके मूलमें, रुण-रुण शब्द करते हुए भ्रमरोंसे व्याप्त और उत्तम भक्तिसे युक्त देवोंके द्वारा छोड़ी गई पुष्पवृष्टि गिरती है ॥ ९२५ ॥

जो दर्शनमात्रसे ही सम्पूर्ण लोगोंको अपने सौ (सात ?) भवोंके देखनेमें निमित्त है और करोड़ों सूर्योंके समान उज्वल है ऐसा वह तीर्थंकरोंका प्रभामण्डल जयवन्त होता है ॥ ९२६ ॥

मृणाल, कुन्दपुष्प, चन्द्रमा और शंखके समान सफेद तथा देवोंके हाथोंसे नचाये गये (ढोरे गये) चौंसठ चमरोंसे वीज्यमान जिनभगवान् जयवन्त होवें ॥ ९२७ ॥

आठ महाप्रातिहार्योंका कथन समाप्त हुआ ।

१ ब तित्थकत्तारं. २ द ब चेदिऊण. ३ द ब मोहो हद.

चउतीसातिसयमिदे[1] अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ते । मोक्खयरे तित्थयरे तिहुवणणाहे णमंसामि ॥ ९२८
जिणवंदणापयट्टा पल्लासंखेज्जभागपरिमाणा । चेट्ठंति विविहजीवा एक्केक्के समवसरणेसुं ॥ ९२९
कोट्ठाणं खेत्तादो जीवक्खेत्तंफलं असंखगुणं । होदूण अपुट्ठ त्ति हु जिणमाहप्पेण ते सव्वे ॥ ९३०
संखेज्जजोयणाणिं बालप्पहुदी पवेसणिग्गमणे । अंतोमुहुत्तकाले जिणमाहप्पेण गच्छंति ॥ ९३१
मिच्छाइट्ठिअभव्वा सेसुमसण्णी ण होंति कइआइं । तह य अणज्झवसाया संदिद्धा विविहविवरीदा ॥ ९३२
आतंकरोगमरणुप्पत्तीओ वेरकामबाधाओ । तण्हाछुहपीडाओ जिणमाहप्पेण ण हवंति ॥ ९३३

जक्खणाम—

गोवदणमहाजक्खा तिमुहो जक्खेसरो य तुंबुरओ । मादंगविजयअजिओ बम्हो बम्हेसरो य कोमारी ॥ ९३४
छम्मुहओ पादालो किण्णरकिंपुरुसगरुडगंधव्वा । तह य कुबेरो वरुणो भिउडीगोमेधपास्समातंगा[2] ॥ ९३५
गुज्झकओ इदि एदे जक्खा चउवीस उसहपहुदीणं । तित्थयराणं पासे चेट्ठंते भत्तिसंजुत्ता ॥ ९३६

जो चौंतीस अतिशयोंको प्राप्त है, आठ महाप्रातिहार्योंसे संयुक्त है, मोक्षको करनेवाले अर्थात् मोक्षमार्गके नेता है, और तीनों लोकोंके स्वामी है, ऐसे तीर्थंकरोंको मैं नमस्कार करता हूं ॥ ९२८ ॥

एक एक समवसरणमे पल्यके असंख्यातवे भागप्रमाण विविध प्रकारके जीव जिनदेवकी वन्दनामें प्रवृत्त होते हुए स्थित रहते है ॥ ९२९ ॥

कोठोंके क्षेत्रसे यद्यपि जीवोंका क्षेत्रफल असंख्यातगुणा है, तथापि वे सब जीव जिनदेवके माहात्म्यसे एक दूसरेसे अस्पृष्ट रहते है ॥ ९३० ॥

जिनभगवान्‌के माहात्म्यसे बालकप्रभृति जीव प्रवेश करने अथवा निकलनेमें अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर संख्यात योजन चले जाते है ॥ ९३१ ॥

इन कोठोंमें मिथ्यादृष्टि, अभव्य और असंज्ञी जीव कदापि नहीं होते तथा अनध्यवसायसे युक्त, सन्देहसे संयुक्त और विविध प्रकारकी विपरीतताओंसे सहित जीव भी नहीं होते हैं ॥ ९३२ ॥

इसके अतिरिक्त वहांपर जिन भगवान्‌के माहात्म्यसे आतंक, रोग, मरण, उत्पत्ति, वैर, कामबाधा तथा तृष्णा (पिपासा) और क्षुधाकी पीड़ायें नहीं होती है ॥ ९३३ ॥

यक्षोंके नाम—

गोवदन[1], महायक्ष[2], त्रिमुख[3], यक्षेश्वर[4], तुम्बुरव[5], मातंग[6], विजय[7], अजित[8], ब्रह्म[9], ब्रह्मेश्वर[10], कुमार[11], षण्मुख[12], पाताल[13], किन्नर[14], किंपुरुष[15], गरुड[16], गन्धर्व[17], कुबेर[18], वरुण[19], भृकुटि[20], गोमेध[21], पार्श्व[22], मातंग और गुह्यक[23], इसप्रकार ये भक्तिसे संयुक्त चौबीस यक्ष ऋषभादिक तीर्थंकरोंके पासमे स्थित रहते हैं ॥ ९३४–९३६ ॥

---

१ द ब सयमेदे. २ द ब मिच्छाइट्ठीमव्वा. ३ द ब मिउदी.

जक्खीओ चक्केसरिरोहिणिपण्णत्तिवज्जसिंखलया । वज्जंकुसा य अप्पदिचक्केसरिपुरिसदत्ता य ॥ ९३७
मणवेगाकालीओ तह जालामालिणी महाकाली । गउरीगंधारीओ वेरोटी सोलसा अणंतमदी ॥ ९३८
माणसिमहमाणसिया जया य विजयापराजिदाओ य । बहुरूपिणिकुंभंडी पउमासिद्धायिणीओ त्ति ॥ ९३९

वसन्ततिलकम्—

पीऊसणिज्झरणिहं जिणचंदवाणिं सोऊण बारस गणा णिअकारणेसुं ।
णिच्चं अणंतगुणसेढिविसोहिअंगा छेदंति कम्मपडलं खु असंखसेणिं ॥ ९४०

इंद्रवज्रा—

भत्तीए आगत्तमणा जिणिंदपायारविंदेसु णिवेसियत्था ।
णादीदकालं ण पयट्टमाणं णो भाविकालं पविभावयंति ॥ ९४१
एवंपभावा भरहस्स खेत्ते धम्मप्पवुत्तिं परमं दिसंता ।
सव्वे जिणिंदा वरभव्वसंघस्सप्पोत्थिदंमोक्खसुहाइ देंतु ॥ ९४२
पुव्वाण एक्कलक्खं वासाणं ऊणिदं सहस्सेण । उसहजिणिंदे कहियं केवलिकालस्स परिमाणं ॥ ९४३
उसह पुव्व ९९९९९ पुव्वंग ८३९९९९९ वस्स ८३९९०००।
बारसवच्छरसमधियउव्वंगविहीणपुव्वइगिलक्खं । केवलिकालपमाणं अजियजिणिंदे मुणेदव्वं ॥ ९४४
अजिय पुव्व ९९९९९ पुव्वंग ८३९९९९८ वस्स ८३९९९८८।

चक्रेश्वरी, रोहिणी, प्रज्ञप्ति, वज्रशृंखला, वज्रांकुशा, अप्रतिचक्रेश्वरी, पुरुषदत्ता, मनोवेगा, काली, ज्वालामालिनी, महाकाली, गौरी, गांधारी, वैरोटी, सोलसा अनन्तमती, मानसी, महामानसी, जया, विजया, अपराजिता, बहुरूपिणी, कुष्माण्डी, पद्मा और सिद्धायिनी, ये यक्षिणियां भी क्रमशः ऋषभादिक चौबीस तीर्थंकरोंके समीपमें रहा करती है ॥ ९३७-९३९ ॥

जैसे चन्द्रमासे अमृत झरता है उसीप्रकार खिरती हुई जिनभगवान्‌की वाणीको अपने कर्तव्यके योगमें सुनकर वे भिन्न भिन्न जीवोंके बारह गण नित्य अनन्तगुणश्रेणीरूप विशुद्धिसे संयुक्त शरीरको धारण करते हुए असंख्यातश्रेणीरूप कर्मपटलको नष्ट करते हैं ॥ ९४० ॥

जिनका मन भक्तिमें आसक्त है और जिन्होंने जिनेन्द्रदेवके पादारविन्दोंमें आस्था (विश्वास) को रक्खा है ऐसे भव्य जीव अतीत, वर्तमान और भावी कालको भी नहीं जानते है ॥ ९४१ ॥

उपर्युक्त प्रभावसे संयुक्त वे सब तीर्थंकर भरतक्षेत्रमें उत्कृष्ट धर्मप्रवृत्तिका उपदेश देते हुए उत्तम भव्यसमूहको आत्मासे उत्पन्न हुए मोक्षसुखोंको प्रदान करें ॥ ९४२ ॥

भगवान् ऋषभ देवके केवलीकालका प्रमाण हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व कहा गया है ॥ ९४३ ॥ ऋषभ पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९९९, वर्ष ८३९९०००।

अजितनाथ तीर्थंकरके केवलीकालका प्रमाण बारह वर्ष और एक पूर्वांग कम एक लाख पूर्व जानना चाहिये ॥ ९४४ ॥ अजित पूर्व ९९९९९, पूर्वांग, ८३९९९९८, वर्ष ८३९९९८८।

१ ब पुरुसदत्ती. २ द अंकारएसु. ३ द धम्मप्पमत्तिं. ४ ब संघस्सुप्पोत्थिदंमोक्ष.

चोद्दसवच्छरसमधियचउपुव्वंगोणपुव्वइगिलक्खं । संभवजिणिंदे भणिदं केवलिकालस्स परिमाणं ॥ ९४५
संभव पुव्व ९९९९९ पुव्वंग ८३९९९९५ वस्स ८३९९९८६ ।
अट्ठारसवरिसाधियअडपुव्वंगोणपुव्वइगिलक्खं । केवलिकालपमाणं णंदणणाहम्मि णिद्दिट्ठं ॥ ९४६
णंदण पुव्व ९९९९९ पुव्वंग ८३९९९९१ वस्स ८३९९९८२ ।
वीसदिवच्छरसमधियबारसपुव्वंगहीणपुव्वाणं । एक्कं लक्खं होदि हु केवलिकालं सुमइणाहम्मि ॥ ९४७
सुमइ पुव्व ९९९९९ अंग ८३९९९८७ वस्स ८३९९९८० ।
विगुणियतिमाससमधियसोलसपुव्वंगहीणपुव्वाणं । इगिलक्खं पउमपहे केवलिकालस्स परिमाणं ॥ ९४८
पउम पुव्व ९९९९९ अंग ८३९९९८३ वस्स ८३९९९९९ मा ६ ।
णवसंवच्छरसमधियवीसदिपुव्वंगहीणपुव्वाणं । एक्कं लक्खं केवलिकालपमाणं सुपासजिणे ॥ ९४९
सुपास पुव्व ९९९९९ अंग ८३९९९७९ वस्स ८३९९९९१ ।
मासत्तिदयाहियचउवीसदिपुव्वंगरहिदपुव्वाणं । इगिलक्खं चंदप्पहकेवलिकालस्स संखाणं ॥ ९५०
चंद पुव्व ९९९९९ पुव्वंग ८३९९९७५ वस्स ८३९९९९९ मास ९ ।
चउवच्छरसमधियअडवीसदिपुव्वंगऊणपुव्वाणं । एक्कं लक्खं केवलिकालपमाणं च पुप्फदंतजिणे ॥ ९५१
पुप्फ पुव्व ९९९९९ अंग ८३९९९७१ वस्स ८३९९९९६ ।

सम्भवनाथ तीर्थंकरके केवलीकालका प्रमाण चौदह वर्ष और चार पूर्वांग कम एक लाख पूर्व कहा गया है ॥ ९४५ ॥ संभव पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९९५, वर्ष ८३९९९८६ ।

अभिनन्दननाथके केवलीकालका प्रमाण अठारह वर्ष और आठ पूर्वांग कम एक लाख पूर्व निर्दिष्ट किया गया है ॥ ९४६ ॥

अभिनन्दन पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९९१, वर्ष ८३९९९८२ ।

सुमतिनाथके केवलीकालका प्रमाण बीस वर्ष और बारह पूर्वांग कम एक लाख पूर्व है ॥ ९४७ ॥ सुमति पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९८७ वर्ष ८३९९९८० ।

भगवान् पद्मप्रभके केवलीकालका प्रमाण छह मास और सोलह पूर्वांग कम एक लाख पूर्व है ॥ ९४८ ॥ पद्म पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९८३, वर्ष ८३९९९९९, मास ६ ।

सुपार्श्व जिनेन्द्रके केवलीकालका प्रमाण नौ वर्ष और बीस पूर्वांग कम एक लाख पूर्व है ॥ ९४९ ॥ सुपार्श्व पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९७९ वर्ष ८३९९९९१ ।

चन्द्रप्रभ तीर्थंकरके केवलीकालकी संख्या तीन माह और चौबीस पूर्वांग कम एक लाख पूर्व है ॥ ९५० ॥ चन्द्र पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९७५, वर्ष ८३९९९९९ मास ९ ।

पुष्पदन्त तीर्थंकरके केवलीकालका प्रमाण चार वर्ष और अट्ठाईस पूर्वांग कम एक लाख पूर्व है ॥ ९५१ ॥ पुष्पदन्त पूर्व ९९९९९, पूर्वांग ८३९९९७१, वर्ष ८३९९९९६ ।

---

१ द ब अडपुव्वंगाण. २ द ब मास तिदया वि य.

संवच्छरतिदऊणियपणवीससहस्सयाणि पुव्वाणिं । सीयलजिणम्मि कहिदं केवलिकालस्स परिमाणं ॥ ९५२

सीअ पुव्व २४९९९ अंग ८३९९९९९ वस्स ८३९९९९७ ।

इगिवीसवस्सलक्खा दोहि विहीणा पहुम्मि[1] सेयंसे । चउवण्णवासलक्खं ऊणं एक्केण वासुपुज्जजिणे ॥ ९५३

सेयंस वस्सं[2] २०९९९९८ । वासुपुज्ज ५३९९९९९ ।

पण्णरसवासलक्खा तिदयविहीणा य विमलणाहम्मि[3] । सयकदिहदपण्णत्तरिवासा दोविरहिदा अणंतजिणे ॥ ९५४

विमल १४९९९९७ । अणंत वास ७४९९९८ ।

पंचसयाणं वग्गो ऊणो एक्केण धम्मणाहम्मि । दसघणहदपण्णवीसा सोलसहीणा य संतीसे ॥ ९५५

धम्म वस्स २४९९९९ । संति २४९८४ ।

चोत्तीसाधियसगसय तेवीससहस्सयाणि कुंथुम्मि । चुलसीदीजुदणवसयवीससहस्सा अरम्मि वासाणं ॥ ९५६

कुंथु २३७३४ । अर २०९८४ ।

णवणउदिअधियअडसयचउवण्णसहस्सयाणि वासाणि । एक्करसं चिय मासा चउवीस दिणाइं मल्लिम्मि ॥ ९५७

मल्लि वास ५४८९९ मा ११ दि २४ ।

णवणउदिअधियचउसयसत्तसहस्साणि वच्छराणिं पि । इगिमासो सुव्वदए केवलिकालस्स परिमाणं ॥ ९५८

सुव्वद ७४९९ मा १ ।

शीतलनाथ तीर्थंकरके केवलीकालका प्रमाण तीन वर्ष कम पचीस हजार पूर्व कहा गया है ॥ ९५२ ॥ शीतल पूर्व २४९९९, पूर्वांग ८३९९९९९, वर्ष ८३९९९९७ ।

भगवान् श्रेयांस प्रभुका केवलीकाल दो कम इक्कीस लाख वर्ष, और वासुपूज्य जिनेन्द्रका एक कम चौवन लाख वर्ष है ॥ ९५३ ॥ श्रेयांस वर्ष २०९९९९८ । वासुपूज्य वर्ष ५३९९९९९ ।

विमलनाथ तीर्थंकरका केवलीकाल तीन कम पन्द्रह लाख वर्ष और अनन्तनाथ जिनका सौके वर्गसे गुणित पचत्तरमेंसे दो कम अर्थात् सात लाख उनंचास हजार नौसौ अट्ठानबै वर्षप्रमाण है ॥ ९५४ ॥ विमल वर्ष १४९९९९७ । अनन्त वर्ष ७४९९९८ ।

धर्मनाथ तीर्थंकरका केवलीकाल पांचसौके वर्गमेंसे एक कम, और शान्तिनाथ भगवान्का दशके घनसे गुणित पच्चीसमेंसे सोलह वर्ष कम है ॥ ९५५ ॥

धर्म वर्ष २४९९९९ । शान्ति २४९८४ ।

भगवान् कुंथुनाथका केवलीकाल तेईस हजार सातसौ चौंतीस वर्ष, और अरनाथ तीर्थंकरका बीस हजार नौसौ चौरासी वर्षप्रमाण है ॥ ९५६ ॥

कुंथु वर्ष २३७३४ । अर वर्ष २०९८४ ।

मल्लिनाथ तीर्थंकरके केवलीकालका प्रमाण चौवन हजार आठसौ निन्यानबै वर्ष ग्यारह मास और चौबीस दिन है ॥ ९५७ ॥ मल्लि वर्ष ५४८९९, मास ११, दिन २४ ।

सुव्रतनाथके केवलीकालका प्रमाण सात हजार चारसौ निन्यानबै वर्ष और एक मास है ॥ ९५८ ॥ सुव्रत वर्ष ७४९९, मास १ ।

---

१ [पहुम्मि]. २ द ब पुव्व. ३ ब विमलस्स पुव्व.

वासाण दो सहस्सा चत्तारि सयाणि णमिम्मि इगिणउदी। एक्कोणा सत्तसया दस मासा चउदिणाणि णेमिस्सा॥९५९

णमि २४९१। णेमि वा ६९९ मास १० दि ४।

अडमाससमधियाणं ऊणत्तरि वच्छराणि पासजिणे। वीरम्मि तीस वासा केवलिकालस्स संखत्ति ॥ ९६०

पास ६९ मा ८। वीर ३०।

चुलसीदि णउदि पण-तिग-सोलस-एक्कारसुत्तरसयाइं। पगणउदी तेणउदी गणहरदेवा हु अट्ठपरियंतं ॥ ९६१

उ ८४, अ ९०, सं १०५, णं १०३, सु ११६, प १११, सु ९५, चं ९३।

अडसीदी सगसीदी सत्तत्तरि छक्कसमधिया छट्ठी। पणवण्णा पण्णासा तत्तो य अणंतपरियंतं ॥ ९६२

पु ८८, सी ८७, से ७७, वासु ६६, वि ५५, अणं ५०।

तेदालं छत्तीसा पणतीसा तीस अट्ठवीसा य। अट्ठारस-सत्तरसेक्कारस-दस-एक्करस य वीरंतं ॥ ९६३

ध ४३, संति ३६, कुंथु ३५, अर ३०, म २८, मु १८, ण १७, णे ११, पा १०, वीर ११।

पदमो[1] हु उसहसेणो केसरिसेणो य चारुदत्तो य। वज्जचमरो[2] य वज्जो चमरो बलदत्तवेदब्भा ॥ ९६४

णागो कुंथू धम्मो मंदिरणामा जओ अरिट्ठो य। सेणो चक्कायुधगो सयंभु कुंभो विसाखो य ॥ ९६५

नमिनाथ तीर्थंकरका केवलीकाल दो हजार चारसौ एकानवे वर्ष, और नेमिनाथका एक कम सातसौ वर्ष, दश मास तथा चार दिन है ॥ ९५९ ॥

नमि वर्ष २४९१। नेमि वर्ष ६९९ मास १० दिन ४।

पार्श्वनाथ जिनेन्द्रके केवलीकालकी संख्या आठ मास अधिक उनत्तर वर्ष, और वीर भगवान्‌के तीस वर्षप्रमाण है ॥ ९६० ॥ पार्श्व वर्ष ६९, मास ८। वीर वर्ष ३०।

आठवें तीर्थंकरपर्यन्त क्रमसे चौरासी, नब्बे, एकसौ पांच, एकसौ तीन, एकसौ सोलह, एकसौ ग्यारह, पंचानबे और तेरानवे गणधर देव थे ॥ ९६१ ॥

ऋषभ ८४, अजित ९०, संभव १०५, अभिनन्दन १०३, सुमति ११६, पद्म १११, सुपार्श्व ९५, चन्द्र ९३।

भगवान् पुष्पदन्तसे लेकर अनन्तनाथ तीर्थंकरतक क्रमसे अठासी, सतासी, सत्तर, छयासठ, पचवन और पचास गणधर थे ॥ ९६२ ॥

पुष्पदन्त ८८, शीतल ८७, श्रेयांस ७७, वासुपूज्य ६६, विमल ५५, अनन्त ५०।

धर्मनाथ तीर्थंकरसे लेकर महावीरपर्यन्त क्रमशः तेतालीस, छत्तीस, पैंतीस, तीस, अट्ठाईस, अठारह, सत्तरह, ग्यारह, दश और ग्यारह गणधर थे ॥ ९६३ ॥

धर्म ४३, शान्ति ३६, कुंथु ३५, अर ३०, मल्लि २८, मुनिसुव्रत १८, नमि १७, नेमि ११, पार्श्व १०, वीर ११।

[1]ऋषभसेन, [2]केशरिसेन (सिंहसेन), [3]चारुदत्त, [4]वज्रचमर, [5]वज्र, [6]चमर, बलदत्त, (बलि, दत्तक), [7]वैदर्भ, [8]नाग (अनगार), [9]कुंथु, [10]धर्म, मन्दिर, [11]जय, [12]अरिष्ट, [13]सेन (अरिष्टसेन), [14]चक्रायुध,

१ द ब पदमा. २ द ब वज्रदमरो.

मल्लीणामो सुप्पहवरदत्ता सयंभुहंदभूदीओ । उसहादीणं आदिमगणधरणामाणि एदाणि ॥ ९६६
एदे गणधरदेवा सव्वे वि हु अट्ठरिद्धिसंपण्णा । ताणं रिद्धिसरूवं लवमेत्तं तं णिरूवेमो ॥ ९६७
बुद्धी विकिरिय-किरिया तव-बल-ओसहि-रसक्खिदी रिद्धी । एदासु बुद्धिरिद्धी अट्ठारसभेदविक्खादा ॥ ९६८
ओहिमणपज्जवाणं केवलणाणी वि बीजबुद्धी य । पंचमिया कोट्ठमई पदाणुसारित्तणं छट्ठं ॥ ९६९
संभिण्णस्सोदित्तं दूरस्सादं च दूरपस्सं च । दूरघाणं दूरस्सवणं तह दूरदंसणं चेय ॥ ९७०
दसचोद्दसपुव्वित्तं णिमित्तरिद्धीए तत्थ कुसलत्तं । पण्णसमणाभिधाणं कमसो पत्तेयबुद्धिवादित्तं ॥ ९७१
अंतिमखंधंताइं[2] परमाणुप्पहुदिमुत्तिदव्वाइं । जं पच्चक्खं जाणइ तमोहिणाणं ति णायव्वं ॥ ९७२

। ओहिणाणं गदं ।

चिंताए अचिंताए अद्धचिंताए विविहभेयगयं । जं जाणइ णरलोए[3] तं चिय मणपज्जवं णाणं ॥ ९७३

। मणपज्जवं णाणं गदं ।

असवत्तसयलभावं लोयालोएसु तिमिरपरिचत्तं । केवलमखंडमेदं केवलणाणं भणंति जिणा[4] ॥ ९७४

। केवलणाणं गदं ।

स्वयंभू, कुम्भ (कुंथु), विशाख, मल्लि, सुप्रभ (सोमक), वरदत्त, स्वयंभू और इन्द्रभूति, ये क्रमशः ऋषभादि तीर्थंकरोंके प्रथम गणधरोंके नाम हैं ॥ ९६४–९६६ ॥

ये सब ही गणधर देव आठ ऋद्धियोंसे सहित होते हैं। यहां उन गणधरोंकी ऋद्धियोंके लवमात्र स्वरूपका हम निरूपण करते हैं ॥ ९६७ ॥

बुद्धि, विक्रिया, क्रिया, तप, बल, औषधि, रस और क्षिति (क्षेत्र) इन भेदोंसे ऋद्धि आठ प्रकारकी है। इनमेंसे बुद्धि ऋद्धि अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, बीजबुद्धि, कोष्ठमति, पदानुसारित्व, संभिन्नश्रोतृत्व, दूरास्वादन, दूरस्पर्श, दूरघ्राण, दूरश्रवण, दूरदर्शन, दशपूर्वित्व, चौदह पूर्वित्व, निमित्तऋद्धि इनमें कुशलता, प्रज्ञाश्रवण, प्रत्येकबुद्धित्व और वादित्व, इन अठारह भेदोंसे विख्यात है ॥ ९६८–९७१ ॥

जो प्रत्यक्ष ज्ञान अन्तिम स्कन्धपर्यन्त परमाणु आदिक मूर्त द्रव्योंको जानता है उसको अवधिज्ञान जानना चाहिये ॥ ९७२ ॥

अवधिज्ञान समाप्त हुआ।

चिन्ता, अचिन्ता या अर्धचिन्ताके विषयभूत अनेक भेदरूप पदार्थको जो ज्ञान नरलोकके भीतर जानता है वह मनःपर्यय ज्ञान है ॥ ९७३ ॥

मनःपर्ययज्ञान समाप्त हुआ।

जो ज्ञान असपत्न अर्थात् प्रतिपक्षीसे रहित होकर सम्पूर्ण पदार्थोंको विषय करता है, लोक एवं अलोकके विषयमें अज्ञानरूप तिमिरसे रहित है, केवल अर्थात् इन्द्रियादिककी सहायतासे विहीन है, और अखण्ड है उसे जिन भगवान् केवलज्ञान कहते हैं ॥ ९७४ ॥

केवलज्ञान समाप्त हुआ।

१ द बुद्धीविकिरिय°. २ द खंदत्ताई, ब खंदताइं. ३ द ब अत्थंचिंता य. ४ ब जिणा णं.

णोइंदियसुदणाणावरणाणं वीरअंतरायाए[1] । तिविहाणं पगदीणं उक्कस्सखउवसमविसुद्धस्स ॥ ९७५
संखेज्जसरूवाणं सद्दाणं[2] तत्थ लिंगसंजुत्तं । एक्कं चिय बीजपदं लद्धूण परोपदेसेण ॥ ९७६
तम्मि पदे आधारे सयलसुदं चिंतिऊणं[3] गेण्हेदि । कस्स वि महेसिणो जा बुद्धी सा बीजबुद्धि त्ति ॥ ९७७
। बीजबुद्धी समत्ता ।
उक्करिसधारणाए जुत्तो पुरिसो गुरूवएसेणं । णाणाविहगंथेसुं वित्थारे लिंगसद्दबीजाणि[4] ॥ ९७८
गहिऊण णियमदीए मिस्सेण विणा धरेदि मदिकोट्ठे । जो कोइ तस्स बुद्धी णिद्दिट्ठा कोट्ठबुद्धि त्ति ॥ ९७९
। कोट्ठबुद्धी गदा[5] ।
बुद्धी विचक्खणाणं पदाणुसारी हवेदि तिविहप्पा । अणुसारी पडिसारी जहत्थणामा उभयसारी ॥ ९८०
आदिअवसाणमज्झे गुरूवदेसेण एक्कबीजपदं । गेण्हिय उवरिमगंथं जा गिण्हदि सा मदी हु अणुसारी ॥ ९८१
। अणुसारी गदं[6] ।
आदिअवसाणमज्झे गुरूवदेसेण एक्कबीजपदं । गेण्हिय हेट्ठिमगंथं बुज्झदि जा सा च पडिसारी ॥ ९८२
। पडिसारी गदं[6] ।

नोइन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय, इन तीन प्रकारकी प्रकृतियोंके उत्कृष्ट क्षयोपशमसे विशुद्ध हुए किसी भी महर्षिकी जो बुद्धि, संख्यातस्वरूप शब्दोंके बीचमेंसे लिंगसहित एक ही बीजभूत पदको परके उपदेशसे प्राप्त करके उस पदके आश्रयसे सम्पूर्ण श्रुतको विचार कर ग्रहण करती है, वह बीजबुद्धि है ॥ ९७५-९७७ ॥

बीजबुद्धि समाप्त हुई ।

उत्कृष्ट धारणासे युक्त जो कोई पुरुष गुरुके उपदेशसे नाना प्रकारके ग्रन्थोंमेंसे विस्तार-पूर्वक लिंगसहित शब्दरूप बीजोंको अपनी बुद्धिसे ग्रहण करके उन्हें मिश्रणके विना बुद्धिरूपी कोठेमें धारण करता है, उसकी बुद्धि कोष्ठबुद्धि कही गई है ॥ ९७८-९७९ ॥

कोष्ठबुद्धि समाप्त हुई ।

विचक्षण पुरुषोंकी पदानुसारिणी बुद्धि अनुसारिणी, प्रतिसारिणी और उभयसारिणीके भेदसे तीन प्रकार है, इस बुद्धिके ये यथार्थ नाम है ॥ ९८० ॥

जो बुद्धि आदि, मध्य अथवा अन्तमें गुरुके उपदेशसे एक बीज पदको ग्रहण करके उपरिम ग्रन्थको ग्रहण करती है, वह अनुसारिणी बुद्धि कहलाती है ॥ ९८१ ॥

अनुसारिणी बुद्धि समाप्त हुई ।

गुरुके उपदेशसे आदि, मध्य अथवा अन्तमें एक बीज पदको ग्रहण करके जो बुद्धि अधस्तन ग्रन्थको जानती है, वह प्रतिसारिणी बुद्धि कहलाती है ॥ ९८२ ॥

प्रतिसारिणी बुद्धि समाप्त हुई ।

१ द ब वीरियं अंतरायाए. २ द ब तत्थाण. ३ द ब चिंतियाण. ४ द गंथत्थेसु वित्थरे लिंगसद्दं. ५ द ब कोट्ठबुद्धि गदं. ६ [गदा].

णियमेण अणियमेण य जुगवं एगस्स बीजसद्दस्स । उवरिमहेट्ठिमगंथं जो बुज्झइ उभयसारी सा ॥ ९८३

। उभयसारी गदं[2] ।

। एवं पदाणुसारी गदं[2] ।

सोदिंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९८४

सोदुक्कस्सखिदीदो बाहिं संखेज्जजोयणपएसे । संठियणरतिरियाणं बहुविहसद्दे समुट्ठंते ॥ ९८५

अक्खरअणक्खरमए सोदूणं दसदिसासु पत्तेक्कं । जं दिज्जदि पडिवयणं तं चिय संभिण्णसोदित्तं ॥ ९८६

। संभिण्णसोदित्तं गदं ।

जिब्भिंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९८७

जिब्भुक्कस्सखिदीदो बाहिं संखेज्जजोयणठियाणं । विविहरसाणं सादं जं जाणइ दूरसादित्तं ॥ ९८८

। दूरसादित्तं गदं ।

पासिंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९८९

पासुक्कस्सखिदीदो बाहिं संखेज्जजोयणठियाणि । अट्ठविहप्पासाणिं जं जाणइ दूरपासत्तं ॥ ९९०

। दूरपासं गदं ।

जो बुद्धि नियम अथवा अनियमसे एक बीजशब्दके (ग्रहण करनेपर) उपरिम और अधस्तन ग्रन्थको एक साथ जानती है, वह उभयसारिणी बुद्धि है ॥ ९८३ ॥

उभयसारिणी बुद्धि समाप्त हुई ।

इसप्रकार पदानुसारिणी बुद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

श्रोत्रेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर श्रोत्र इन्द्रियके उत्कृष्ट क्षेत्रसे बाहिर दशों दिशाओंमें संख्यात योजनप्रमाण क्षेत्रमें स्थित मनुष्य एवं तिर्यञ्चोंके अक्षरानक्षरात्मक बहुत प्रकारके उठनेवाले शब्दोंको सुनकर जिससे प्रत्युत्तर दिया जाता है, वह संभिन्नश्रोतृत्व नामक बुद्धिऋद्धि कहलाती है ॥ ९८४-९८६॥

संभिन्नश्रोतृत्वबुद्धिऋद्धि समाप्त हुई ।

जिह्वेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर जिह्वा इन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहिर संख्यात योजनप्रमाण क्षेत्रमें स्थित विविध रसोंके स्वादके जाननेको दूरास्वादित्वऋद्धि कहते हैं ॥ ९८७-९८८ ॥

दूरास्वादित्वऋद्धि समाप्त हुई ।

स्पर्शनेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर स्पर्शनेन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहिर संख्यात योजनोंमें स्थित आठ प्रकारके स्पर्शोंको जान लेना, यह दूरस्पर्शत्वबुद्धिऋद्धि है ॥ ९८९-९९० ॥

दूरस्पर्शत्वऋद्धि समाप्त हुई ।

१ द ब जो. २ [गदा]. ३ ब सोदिंदय.

घाणिंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९९१
घाणुक्कस्सखिदीदो बाहिं संखेज्जजोयणगदाणिं[1] । जं बहुविधगंधाणिं[2] तं घायदि दूरघाणत्तं ॥ ९९२
। दूरघाणत्तं गदं ।
सोदिंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९९३
सोदुक्कस्सखिदीदो बाहिरसंखेज्जजोयणपएसे । चेट्ठंताणं माणुसतिरियाणं बहुवियप्पाणं ॥ ९९४
अक्खरअणक्खरमए बहुविहसद्दे विसेससंजुत्ते । उप्पण्णे आयण्णइ जं भणिअं दूरसवणत्तं ॥ ९९५
। दूरसवणत्तं गदं ।
रूविंदियसुदणाणावरणाणं वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उदिदंगोवंगणामकम्मम्मि ॥ ९९६
रूउक्कस्सखिदीदो बाहिं संखेज्जजोयणठिदाइं । जं बहुविहदव्वाइं देक्खइ तं दूरदरिसिणं णाम ॥ ९९७
। दूरदरिसिणं गदं ।
रोहिणिपहुदीण महाविज्जाणं देवदाउ पंच सया । अंगुट्ठपसेणाइं खुद्दअविज्जाणं[3] सत्त सया ॥ ९९८
एत्तूण पेसणाइं मग्गंते दसमपुव्वपढणम्मि । णेच्छंति संजमंता ताओ जे ते[4] अभिण्णदसपुव्वी ॥ ९९९
भुवणेसु सुप्पसिद्धा विज्जाहरसमणणामपज्जाया । ताणं मुणीण बुद्धी दसपुव्वी णाम बोद्धव्वा ॥ १०००
। दसपुव्वित्तं गदं[5] ।

घ्राणेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर घ्राणेन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहिर संख्यात योजनोंमें प्राप्त हुए बहुत प्रकारके गन्धोंको सूंघना इसे दूरघ्राणत्व कहते हैं ॥ ९९१–९९२ ॥

दूरघ्राणत्वऋद्धि समाप्त हुई ।

श्रोत्रेन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर श्रोत्रेन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहिर संख्यात योजनप्रमाण क्षेत्रमें स्थित रहनेवाले बहुत प्रकारके मनुष्य और तिर्यञ्चोंके विशेषतासे संयुक्त अनेक प्रकारके अक्षरानक्षरात्मक शब्दोंके उत्पन्न होनेपर उनका श्रवण करना, इसे दूरश्रवणत्व कहा गया है ॥ ९९३–९९५ ॥ दूरश्रवणत्वऋद्धि समाप्त हुई ।

चक्षुरिन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम तथा आंगोपांग नामकर्मका उदय होनेपर चक्षुरिन्द्रियके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रसे बाहिर संख्यात योजनोंमें स्थित बहुत प्रकारके द्रव्योंको देखना, यह दूरदर्शित्वऋद्धि है ॥ ९९६–९९७ ॥

दूरदर्शित्वऋद्धि समाप्त हुई ।

दशवें पूर्वके पढ़नेमें रोहिणीप्रभृति महाविद्याओंके पांचसौ और अंगुष्टप्रसेनादिक (-प्रश्नादिक) क्षुद्रविद्याओंके सातसौ देवता आकर आज्ञा मांगते हैं । इस समय जो महर्षि जितेन्द्रिय होनेके कारण उन विद्याओंकी इच्छा नहीं करते हैं, वे 'विद्याधरश्रमण' इस पर्यायनामसे भुवनमें प्रसिद्ध होते हुए अभिन्नदशपूर्वी कहलाते हैं । उन मुनियोंकी बुद्धिको दशपूर्वी जानना चाहिये ॥ ९९८–१००० ॥

दशपूर्वित्वऋद्धि समाप्त हुई ।

१ ब जोयणगदाणं. २ द ब °गंधाणं. ३ द ब अक्खअविज्जाण. ४ द ब तं. ५ द ब दसपुव्वी गदं.

सयलागमपारगया सुदकेवलिणामसुप्पसिद्धा जे । एदाण बुद्धिरिद्धी चोद्दसपुव्वि त्ति णामेण ॥ १००१

। चोद्दसपुव्वित्तं गदं ।

णहमित्तिका य रिद्धी णभभउमंगंसराइ वेंजणयं । लक्खणचिण्हं सउणं अट्ठवियप्पेहि वित्थरिदं ॥ १००२

रविससिमहपहुदीणं उदयत्थमणादिआइं दट्ठूणं । खीणत्तं दुक्खसुहं जं जाणइ तं हि णहणिमित्तं ॥ १००३

। णहणिमित्तं गदं ।

घणसुसिरणिद्धलुक्खप्पहुदिगुणे भाविदूण भूमीए । जं जाणइ खयवड्ढिं तम्मयसंकण्णयरजदपमुहाणं ॥ १००४

दिसिविदिसअंतरेसुं चउरंगबलं ठिदं च दट्ठूणं । जं जाणइ जयमजयं तं भउमणिमित्तमुद्दिट्ठं ॥ १००५

। भउमणिमित्तं गदं ।

वातादिप्पगिदीओ[4] रुहिरप्पहुदिस्सहावसत्ताइं[5] । णिण्णाण उण्णयाणं[6] अंगोवंगाण दंसणा पासा[7] ॥ १००६

णरतिरियाणं दट्ठुं जं जाणइ दुक्खसोक्खमरणाइं । कालत्तयणिप्पण्णं अंगणिमित्तं पसिद्धं तु ॥ १००७

। अंगणिमित्तं गदं ।

जो महर्षि सम्पूर्ण आगमके पारंगत हैं और श्रुतकेवली नामसे सुप्रसिद्ध हैं उनके चौदहपूर्वी नामक बुद्धिऋद्धि होती है ॥ १००१ ॥

चौदहपूर्वित्वऋद्धि समाप्त हुई ।

नैमित्तिक ऋद्धि नभ, भौम, अंग, स्वर, व्यंजन, लक्षण, चिह्न (छिन्न ?) और स्वप्न इन आठ भेदोंसे विस्तृत है ॥ १००२ ॥

सूर्य, चन्द्र और ग्रह इत्यादिकके उदय व अस्तमन आदिकोंको देखकर जो क्षीणता और दुखसुखका जानना है, वह नभनिमित्त है ॥ १००३ ॥

नभनिमित्त समाप्त हुआ ।

पृथिवीके घन (सांद्रता), सुषिर (पोलापन), स्निग्धता और रुक्षताप्रभृति गुणोंको विचार कर जो तांबा, लोहा, सुवर्ण और चांदी आदिक धातुओंकी हानि-वृद्धिको तथा दिशा-विदिशाओंके अन्तरालमें स्थित चतुरंग बलको देखकर जो जय-पराजयको भी जानना है, इसे भौमनिमित्त कहा गया है ॥ १००४–१००५ ॥

भौमनिमित्त समाप्त हुआ ।

मनुष्य और तिर्यंचोंके निम्न व उन्नत अंग-उपांगोंके दर्शन व स्पर्शसे वातादि तीन प्रकृतियों और रुधिरादि सात स्वभावों (धातुओं) को देखकर तीनों कालोंमें उत्पन्न होनेवाले सुख, दुख या मरणादिको जानना, यह अंगनिमित्त नामसे प्रसिद्ध है ॥ १००६–१००७ ॥

अंगनिमित्त समाप्त हुआ ।

१ द ब पुव्विसिं. २ द ब °मणादिआदि. ३ द ब तंमयगं. ४ द ब °प्पादीओ. ५ द ब °सत्तेइं, ६ द ब तिण्हाणउण्हयाणं. ७ द ब पासं.

णरतिरियाण विचित्तं सद्दं सोदूण दुक्खसोक्खाइं । कालत्तयणिप्पण्णं जं जाणइ तं सरणिमित्तं ॥ १००८[1]

। सरणिमित्तं गदं ।

सिरमुहकंधप्पहुदिसु तिलमसयप्पहुदिआइं[2] दट्ठूणं । जं तियकालसुहाइं जाणइ तं वेंजणणिमित्तं ॥ १००९

। वेंजणणिमित्तं गदं ।

करचरणतलप्पहुदिसु पंकयकुलिसादियाणि दट्ठूणं । जं तियकालसुहाइं लक्खइ तं लक्खणणिमित्तं ॥ १०१०

। लक्खणणिमित्तं गदं ।

सुरदाणवरक्खसणरतिरिएहिं छिण्णसत्थवत्थाणि[3] । पासादणयरदेसादियाणि चिण्हाणि दट्ठूणं ॥ १०११

कालत्तयसंभूदं सुहासुहं मरणविविहदव्वं च । सुहदुक्खाइं लक्खइ चिण्हणिमित्तं ति तं जाणइ ॥ १०१२

। चिण्हणिमित्तं गदं ।

वातादिदोसचत्तो[4] पच्छिमरत्ते मुयंकरविपहुदिं । णियमुहकमलपविट्ठं देक्खिय सउणम्मि सुहसउणं ॥ १०१३

घडतेल्लब्भंगादिं रासहकरभादिएसु[5] आरुहणं । परदेसगमणसव्वं जं देक्खइ असुहसउणं तं ॥ १०१४

जं भासइ दुक्खसुहप्पमुहं कालत्तए वि संजादं । तं चिय सउणणिमित्तं चिण्हो मालो त्ति दोभेदं[6] ॥ १०१५

मनुष्य और तिर्यंचोंके विचित्र शब्दोंको सुनकर कालत्रयमें होनेवाले दुख-सुखको जानना, यह स्वरनिमित्त है ॥ १००८ ॥

स्वरनिमित्त समाप्त हुआ ।

सिर, मुख और कंधे आदिपर तिल एवं मशे आदिको देखकर तीनों कालके सुखादिकको जानना, यह व्यञ्जननिमित्त है ॥ १००९ ॥

व्यञ्जननिमित्त समाप्त हुआ ।

हस्ततल और चरणतलादिकमें कमल, वज्र इत्यादि चिह्नोंको देखकर कालत्रयमें होनेवाले सुखादिको जानना, यह लक्षणनिमित्त है ॥ १०१० ॥

लक्षणनिमित्त समाप्त हुआ ।

देव, दानव, राक्षस, मनुष्य और तिर्यंचोंके द्वारा छेदे गये शास्त्र एवं वस्त्रादिक तथा प्रासाद, नगर और देशादिक चिह्नोंको देखकर त्रिकालभावी शुभ, अशुभ, मरण, विविध प्रकारके द्रव्य और सुख-दुखको जानना, यह चिह्ननिमित्त है ॥ १०११–१०१२ ॥

चिह्ननिमित्त समाप्त हुआ ।

वात-पित्तादि दोषोंसे रहित व्यक्ति सोते हुए रात्रिके पश्चिम भागमें अपने मुखकमलमें प्रविष्ट चन्द्र-सूर्यादिरूप शुभ स्वप्नको; और घृत व तैलकी मालिश आदि, गर्दभ व ऊंट आदिपर चढ़ना, तथा परदेशगमनादिरूप जो अशुभ स्वप्नको देखता है, इसके फलस्वरूप तीन कालमें होनेवाले दुख-सुखादिकको बतलाना यह स्वप्ननिमित्त है । इसके चिह्न और मालारूपसे दो भेद हैं ।

---

१ एषा गाथा द-पुस्तक एव. २ द ब °प्पहुदिआदि. ३ द ब छंदसत्थ°. ४ द वालादिदोस°. ५ द खरमादिएसु. ६ द ब चिण्हा मालोद्दिदो भेदं.

करिकेसरिपहुदीणं दंसणमेत्तादि[1] चिण्हसउणं तं । पुव्वावरसंबंधं सउणं तं मालसउणो त्ति ॥ १०१६
। सउणणिमित्तं गदं ।
। एवं णिमित्तरिद्धी सम्मत्ता ।
पगडीए सुदणाणावरणाए वीरियंतरायाए । उक्कस्सक्खउवसमे उप्पज्जइ पण्णसमणद्धी ॥ १०१७
पण्णासवणद्धिजुदो चोद्दसपुव्वीसु विसयसुहुमत्तं ।
सव्वं हि सुदं जाणदि अकअज्झअणो वि णियमेण ॥ १०१८
भासंति तस्स बुद्धी पण्णासमणद्धि सा च चउभेदा। अउपत्तिअ-परिणामिय-वइणइकी-कम्मजा णेया ॥ १०१९
अउपत्तिकी भवंतरसुदविणएणं समुल्लसिदभावा। णियणियजादिविसेसे उप्पण्णा पारिणामिकी णामा ॥ १०२०
वइणइकी विणएणं उप्पज्जदि बारसंगसुदजोग्गं। उवदेसेण विणा तवविसेसलाहेण कम्मजा तुरिमा ॥ १०२१
। पण्णसवणं गदं ।
कम्माण उवसमेण य गुरूवदेसं विणा वि पावेदि । सण्णाणतवप्पगमं जीवं[2] पत्तेयबुद्धी सा ॥ १०२२
। पत्तेयबुद्धी गदा[3] ।

इनमेंसे स्वप्नमें हाथी व सिंहादिकके दर्शनमात्र आदिकको चिह्नस्वप्न और पूर्वापर सम्बन्ध रखनेवाले स्वप्नको मालास्वप्न कहते हैं ॥ १०१३–१०१६ ॥

स्वप्ननिमित्त समाप्त हुआ ।

इसप्रकार निमित्तऋद्धि समाप्त हुई ।

श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर प्रज्ञाश्रमणऋद्धि उत्पन्न होती है । प्रज्ञाश्रवणऋद्धिसे युक्त जो महर्षि अध्ययनके बिना किये ही चौदह पूर्वोंमें विषयकी सूक्ष्मताको लिये हुए सम्पूर्ण श्रुतको जानता है और उसका नियमपूर्वक निरूपण करता है उसकी बुद्धिको प्रज्ञाश्रमणऋद्धि कहते हैं । वह औत्पत्तिकी, पारणामिकी, वैनयिकी और कर्मजा, इन भेदोंसे चार प्रकारकी जानना चाहिये ॥ १०१७–१०१९ ॥

इनमेंसे पूर्व भवमें किये गये श्रुतके विनयसे उत्पन्न होनेवाली औत्पत्तिकी, निज निज जातिविशेषमें उत्पन्न हुई परिणामिकी, द्वादशांगश्रुतके योग्य विनयसे उत्पन्न होनेवाली वैनयिकी, और उपदेशके बिना ही विशेष तपकी प्राप्तिसे आविर्भूत हुई चतुर्थ कर्मजा प्रज्ञाश्रमणऋद्धि समझना चाहिये ॥ १०२०–१०२१ ॥

प्रज्ञाश्रवणऋद्धि समाप्त हुई ।

जिसके द्वारा गुरुके उपदेशके बिना ही कर्मोंके उपशमसे सम्यग्ज्ञान और तपके विषयमें प्रगति होती है, वह प्रत्येकबुद्धि कहलाती है ॥ १०२२ ॥

प्रत्येकबुद्धि समाप्त हुई ।

१ द ब दंसणजेट्ठादि. २ द ब जीवे. ३ द ब गदं.

सक्कादीण वि पक्खं बहुवादेहिं णिरुत्तरं कुणदि । परदव्वाइं गवेसइ जीए वादित्तरिद्धी सा ॥ १०२३

। वादित्तं गदं ।

। एवं बुद्धिरिद्धी समत्ता ।

अणिमा-महिमा-लघिमा-गरिमा-पत्ती य तह[1] अ पाकम्मं । ईसत्तवसित्ताइं[2] अप्पडिघादंतधाणा य ॥ १०२४

रिद्धी हु कामरूवा एवंरूवेहिं विविहभेएहिं । रिद्धिविकिरिया णामा समणाणं तवविसेसेणं ॥ १०२५

अणुतणुकरणं अणिमा अणुछिद्दे पविसिदूण तत्थेव । विकरदि खंदावारं णिएसमवि[4] चक्कवट्टिस्स ॥ १०२६

मेरूवमाणदेहा[5] महिमा अणिलाउ लहुतरो लहिमा । वज्जादिंतो गुरुत्तणं च गरिम त्ति भण्णंति ॥ १०२७

भूमीए चेट्ठंतो अंगुलिअग्गेण सूरससिपहुदिं । मेरुसिहराणि अण्णं जं पावदि पत्तिरिद्धी सा ॥ १०२८

सलिले विय भूमीए उम्मज्जणिमज्जणाणि जं कुणदि । भूमीए विय सलिले गच्छदि पाकम्मरिद्धी सा ॥ १०२९

णिस्सेसाण पहुत्तं जगाण ईसत्तणामरिद्धी सा । वसमेंति तवबलेणं जं जीओहा वसित्तरिद्धी सा ॥ १०३०

जिस ऋद्धिके द्वारा शाक्यादिक (या शक्रादि) के पक्षको भी बहुत वादसे निरुत्तर कर दिया जाता है और परके द्रव्योंकी गवेषणा (परीक्षा) करता है (या दूसरोंके छिद्र अथवा दोष ढूंढता है) वह वादित्वऋद्धि कहलाती है ॥ १०२३ ॥

वादित्वऋद्धि समाप्त हुई ।

इसप्रकार बुद्धिऋद्धि समाप्त हुई ।

अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व, अप्रतिघात, अन्तर्धान और कामरूप, इसप्रकारके अनेक भेदोंसे युक्त विक्रिया नामक ऋद्धि तपोविशेषसे श्रमणोंके हुआ करती है ॥ १०२४--१०२५ ॥

अणुके बराबर शरीरको करना अणिमाऋद्धि है । इस ऋद्धिके प्रभावसे महर्षि अणुके बराबर छिद्रमें प्रविष्ट होकर वहां ही चक्रवर्तिके कटक और निवेशकी विक्रियाद्वारा रचना करता है ॥ १०२६ ॥

मेरुके बराबर शरीरके करनेको महिमा, वायुसे भी लघु शरीरके करनेको लघिमा, और वज्रसे भी अधिक गुरुतायुक्त शरीरके करनेको गरिमाऋद्धि कहते हैं ॥ १०२७ ॥

भूमिपर स्थित रहकर अंगुलिके अग्रभागसे सूर्य-चन्द्रादिकको, मेरुशिखरोंको तथा अन्य वस्तुको प्राप्त करना यह प्राप्तिऋद्धि कहलाती है ॥ १०२८ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे जलके समान पृथिवीपर भी उन्मज्जन-निमज्जन क्रियाको करता है और पृथिवीके समान जलपर भी गमन करता है, वह प्राकाम्यऋद्धि है ॥ १०२९ ॥

जिससे सब जगत्पर प्रभुत्व होता है, वह ईशत्वनामक ऋद्धि; और जिससे तपोबलद्वारा जीवसमूह वशमें होते हैं, वह वशित्वऋद्धि कही जाती है ॥ १०३० ॥

१ [परछिद्दाइं]. २ द तह अप्पकम्मं, ब तहा अ पाकम्मं. ३ द ब °वसत्ताइं. ४ द णिएस चक्कवट्टिस्स. ५ ब मेरूवमाणा. ६ द ब उम्मज्जणाणि.

सेलसिलातरुपमुहाणब्भंतरं होइदूणं गयणं व । जं वच्चदि सा रिद्धी अप्पडिघादेत्ति गुणणामं ॥ १०३१
जं हवदि अहिसत्तं[1] अंतद्धाणाभिधाणरिद्धी सा । जुगवं बहुरूवाणिं जं विरयदि कामरूवरिद्धी सा ॥ १०३२
। विक्किरियारिद्धी[2] समत्ता ।
दुविहा किरियारिद्धी णहयलगामित्तचारणत्तेहिं । उट्ठीओ[3] आसीणो काउस्सग्गेण इदरेण ॥ १०३३
गच्छेदि जीए एसा रिद्धी गयणगामिणी णाम । चारणरिद्धी बहुविहविसयप्पसंदोहवित्थरिदा ॥ १०३४
जलजंघाफलपुप्फं पत्तग्गिसिहाण धूममेघाणं । धारामक्कडतंतूजोदीमरुदाण चारणा कमसो ॥ १०३५
अविराहियप्पुकाए जीवे पदखेवणेहिं जं जादि । धावेदि जलहिमज्झे स च्चिय जलचारणा रिद्धी ॥ १०३६
चउरंगुलमेत्तमहिं छंडिय गयणम्मि कुडिलजाणु विणा । जं बहुजोयणगमणं सा जंघाचारणा रिद्धी ॥ १०३७
अविराहिदूण जीवे तल्लीणे वणफलाण विविहाणं । उवरिम्मि जं पधावदि स च्चिय फलचारणा रिद्धी ॥ १०३८
अविराहिदूण जीवे तल्लीणे बहुविहाण पुप्फाणं । उवरिम्मि जं पयप्पदि सा रिद्धी पुप्फचारणा णामा ॥ १०३९

जिस ऋद्धिके बलसे शैल, शिला और वृक्षादिकके मध्यमें होकर आकाशके समान गमन किया जाता है, वह सार्थक नामवाली अप्रतिघातऋद्धि है ॥ १०३१ ॥

जिस ऋद्धिसे अदृश्यता प्राप्त होती है, वह अन्तर्धाननामक ऋद्धि; और जिससे युगपत् बहुतसे रूपोंको रचता है, वह कामरूपऋद्धि है ॥ १०३२ ॥

विक्रियाऋद्धि समाप्त हुई ।

नभस्तलगामित्व और चारणत्वके भेदसे क्रियाऋद्धि दो प्रकार है । इनमेंसे जिस ऋद्धिके द्वारा कायोत्सर्ग अथवा अन्य प्रकारसे ऊर्ध्व स्थित होकर या बैठकर जाता है, वह आकाशगामिनी नामक ऋद्धि है । तथा दूसरी चारणऋद्धि क्रमसे जलचारण, जंघाचारण, फलचारण, पुष्पचारण, पत्रचारण, अग्निशिखाचारण, धूमचारण, मेघचारण, धाराचारण, मर्कटतन्तुचारण, ज्योतिश्चारण और मरुच्चारण इत्यादि अनेक प्रकारके विकल्पसमूहोंसे विस्तारको प्राप्त है ॥ १०३३-१०३५ ॥

जिस ऋद्धिसे जीव पैरोंके रखनेसे जलकायिक जीवोंकी विराधना न करके समुद्रके मध्यमें जाता है और दौड़ता है, वह जलचारणऋद्धि है ॥ १०३६ ॥

चार अंगुलप्रमाण पृथिवीको छोड़कर आकाशमें घुटनोंको मोड़े विना जो बहुत योजनोंतक गमन करना है, वह जंघाचारणऋद्धि है ॥ १०३७ ॥

जिस ऋद्धिसे विविध प्रकारके वनफलोंमें रहनेवाले जीवोंकी विराधना न करके उनके ऊपरसे दौड़ता है, वह फलचारणऋद्धि है ॥ १०३८ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे बहुत प्रकारके फूलोंमें रहनेवाले जीवोंकी विराधना न करके उनके ऊपरसे जाता है, वह पुष्पचारण नामक ऋद्धि है ॥ १०३९ ॥

१ द ब पमुहाणं अंतरतं होइदम्मि. २ द ब लद्धिसत्तं. ३ द ब °ऋद्धि. ४ द ब उट्ठीओ. ५ द अक्कडतंतू. ६ द जलचालणा.

अविराहिदूण जीवे तल्लीणे[1] बहुविहाण पत्ताणं । जा उवरि वच्चदि मुणी सा रिद्धी पत्तचारणा णामा ॥ १०४० अविराहिदूण जीवे अग्गिसिहासंठिए विचित्ताणं । जं ताण उवरि गमणं अग्गिसिहाचारणा रिद्धी ॥ १०४१ अधउड्ढतिरियपसरं धूमं अवलंबिऊणं[2] जं देंति । पदखेवे अक्खलिआ सा रिद्धी धूमचारणा णाम ॥ १०४२ अविराहिदूण जीवे अपुकाए बहुविहाण मेघाणं । जं उवरि गच्छिइ मुणी सा रिद्धी मेघचारणा णाम ॥ १०४३ अविराहिय तल्लीणे जीवे घणमुक्कवारिधाराणं । उवरिं[3] जं जादि मुणी सा धाराचारणा रिद्धी ॥ १०४४ मक्कडयतंतुपंतीउवरिं अविलघुओ तुरिदपदखेवे । गच्छेदि मुणिमहेसी सा मक्कडतंतुचारणा रिद्धी ॥ १०४५ अधउड्ढतिरियपसरे किरणे अवलंबिदूण जोदीणं । जं गच्छेदि तवस्सी सा रिद्धी जोदिचारणा णाम ॥ १०४६ णाणाविहगदिमारुदपदेसपंतीसु देंति[4] पदखेवे । जं अक्खलिया मुणिणो सा मारुदचारणा रिद्धी ॥ १०४७ अण्णे विविहा भंगा चारणरिद्धीए भाजिदा भेदा । ताण सरूवंकहणे[5] उवएसो अम्ह उच्छिण्णो ॥ १०४८

। एवं किरियारिद्धी समत्ता ।

जिस ऋद्धिका धारक मुनि बहुत प्रकारके पत्तोंमें रहनेवाले जीवोंकी विराधना न करके उनके ऊपरसे जाता है, वह पत्रचारण नामक ऋद्धि है ॥ १०४० ॥

अग्निशिखाओंमें स्थित जीवोंकी विराधना न करके उन विचित्र अग्निशिखाओंपरसे गमन करनेको अग्निशिखाचारणऋद्धि कहते हैं ॥ १०४१ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिजन नीचे, ऊपर और तिरछे फैलनेवाले धुएँका अवलंबन करके अस्खलित पादक्षेप देते हुए गमन करते हैं, वह धूमचारण नामक ऋद्धि है ॥ १०४२ ॥

जिस ऋद्धिसे मुनि अप्कायिक जीवोंको पीड़ा न पहुंचाकर बहुत प्रकारके मेघोंपरसे गमन करता है, वह मेघचारण नामक ऋद्धि है ॥ १०४३ ॥

जिसके प्रभावसे मुनि मेघोंसे छोड़ी गयी जलधाराओंमें स्थित जीवोंको पीड़ा न पहुंचाकर उनके ऊपरसे जाते हैं, वह धाराचारणऋद्धि है ॥ १०४४ ॥

जिसकेद्वारा मुनि-महर्षि शीघ्रतासे किये गये पदविक्षेपमें अत्यन्त लघु होते हुए मकड़ीके तन्तुओंकी पंक्तिपरसे गमन करता है, वह मकड़ीतन्तुचारणऋद्धि है ॥ १०४५ ॥

जिससे तपस्वी नीचे, ऊपर और तिरछे फैलनेवाली ज्योतिषी देवोंके विमानोंकी किरणोंका अवलंबन करके गमन करता है, वह ज्योतिश्चारणऋद्धि है ॥ १०४६ ॥

जिसके प्रभावसे मुनि नाना प्रकारकी गतिसे युक्त वायुके प्रदेशोंकी पंक्तियोंपर अस्खलित होकर पदविक्षेप करते हैं, वह मारुतचारणऋद्धि है ॥ १०४७ ॥

इस चारणऋद्धिके विविध भंगोंसे युक्त विभक्त किये हुए और भी भेद होते हैं, परन्तु उनके स्वरूपका कथन करनेवाला उपदेश हमारे लिये नष्ट होचुका है ॥ १०४८ ॥

इसप्रकार क्रियाऋद्धि समाप्त हुई ।

१ द तल्लीणा. २ द ब अविलंबिऊण. ३ द ब उवरिम. ४ द ब अविलंबिदूण. ५ द ब पदेससतीहु. ६ द दिंति. ७ द मंजा. ८ द °कहणो.

उग्गतवा दित्ततवा तत्ततवा तह महातवा तुरिमा । घोरतवा पंचमिया घोरपरक्कमतवा छट्ठी ॥ १०४९
तवरिद्धीए कहिदं सत्तमयमघोरबम्हचारित्तं । उग्गतवा दो भेदा उग्गोग्गअवट्ठिदुग्गतवणामा ॥ १०५०
दिक्खोववासमादिं कादूणं[1] एक्काहिएक्कपव्वएणं[2] । आमरणंतं जवणं सा होदि उग्गोग्गतवरिद्धी ॥ १०५१
बहुविहउववासेहिं रविसमवट्टंतकायकिरणोघो । कायमणवयणबलिणो जीए[3] सा दित्ततवरिद्धी ॥ १०५२
तत्ते लोहकडाहे पडिअंबुकणं व जीए भुत्तण्णं । झिज्जदि धाऊहिं सा णियझाणाएहिं तत्ततवा ॥ १०५३
मंदरपंतिप्पमुहे महोववासे[4] करेदि सव्वे वि । चउसण्णाणबलेणं जीए[5] सा महातवा रिद्धी ॥ १०५४
जलसूलप्पमुहाणं रोगेणच्चंतपीडिअंगा[6] वि । साहंति दुद्धरतवं जीए[7] सा घोरतवरिद्धी ॥ १०५५
णिरवमबट्टंततवा तिहुवणसंहरणकरणसत्तिजुदा । कंटयसिलग्गिपव्वयधूमुक्कापहुदिवरिसणसमत्था ॥ १०५६

उग्रतप, दीप्ततप, तप्ततप, तथा चतुर्थ महातप, पांचवीं घोरतप, छठी घोरपराक्रमतप और सातवीं अघोरब्रह्मचारित्व, इसप्रकार तपऋद्धिके सात भेद कहे गये हैं। इनमेंसे उग्रतप-ऋद्धिके दो भेद हैं—उग्रोग्रतप और अवस्थितउग्रतप ॥ १०४९–१०५० ॥

दीक्षोपवासको आदि करके आमरणान्त एक एक अधिक उपवासको बढ़ाकर यापन अर्थात् निर्वाह करना, यह उग्रोग्रतपऋद्धि है ॥ १०५१ ॥

[दीक्षार्थ एक उपवास करके पारणा करे और पुनः एक एक दिनका अन्तर देकर उपवास करता जाय। पुनः कुछ निमित्त पाकर षष्ठ भक्त, पुनः अष्टम भक्त, पुनः दशम भक्त, पुनः द्वादशम भक्त, इत्यादि क्रमसे नीचे न गिरकर उत्तरोत्तर आमरणान्त उपवासोंको बढ़ाते जाना अवस्थितउग्रतपऋद्धि है ॥ १०५१*१ ॥]

जिस ऋद्धिके प्रभावसे मन, वचन और कायसे बलिष्ठ ऋषिके बहुत प्रकारके उपवासोंद्वारा सूर्यके समान शरीरकी किरणोंका समूह बढ़ता हो वह दीप्ततपऋद्धि है ॥ १०५२ ॥

तपी हुई लोहेकी कड़ाहीमें गिरे हुए जलकणके समान जिस ऋद्धिसे खाया हुआ अन्न धातुओंसहित क्षीण हो जाता है, अर्थात् मल-मूत्रादिरूप परिणमन नहीं करता है, वह निज ध्यानसे उत्पन्न हुई तप्ततपऋद्धि है ॥ १०५३ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनि चार सम्यग्ज्ञानोंके बलसे मंदरपंक्तिप्रमुख सब ही महान् उपवासोंको करता है, वह महातपऋद्धि है ॥ १०५४ ॥

जिस ऋद्धिके बलसे ज्वर और शूलादिक रोगसे शरीरके अत्यन्त पीड़ित होनेपर भी साधुजन दुर्द्धर तपको सिद्ध करते हैं, वह घोरतपऋद्धि है ॥ १०५५ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिजन अनुपम एवं वृद्धिगत तपसे सहित, तीनों लोकोंके संहार करनेकी शक्तिसे युक्त; कंटक, शिला, अग्नि, पर्वत, धुआं तथा उल्का आदिके

---

१ द काइं. २ द ब पंचेण. ३ द ब जीवे. ४ द ब महोववासो. ५ द ब जीवे. ६ द ब °पीडिअंगो. ७ द ब जीवे.

सहस त्ति सयलसायरसलिलुप्पीलस्स सोसणसमत्था । जायंति जीए मुणिणो घोरपरक्कमतव त्ति सा रिद्धी ॥ १०५७
जीए ण होंति मुणिणो खेत्तम्मि वि चोरपहुदिबाधाओ । कालमहाजुद्धादी रिद्धी साघोरबम्हचारित्ता ॥ १०५८
उक्कस्सक्खउवसमे चारित्तावरणमोहकम्मस्स । जा दुस्सिमणं णासइ रिद्धी साघोरबम्हचारित्ता ॥ १०५९
अथवा—
सव्वगुणेहिं अघोरं महेसिणो बम्हसद्दचारित्तं । विप्फुरिदाए जीए रिद्धी साघोरबम्हचारित्ता ॥ १०६०
। एवं तवरिद्धी समत्ता ।
बलरिद्धी तिविहप्पा मणवयणसरीरयाण भेएण । सुदणाणावरणाए पगडीए वीरयंतरायाए ॥ १०६१
उक्कस्सक्खउवसमे मुहुत्तमेत्तंतरम्मि सयलसुदं । चिंतइ जाणइ जीए सा रिद्धी मणबला णामा ॥ १०६२
जिब्भिंदियणोइंदियसुदणाणावरणविरियविग्घाणं । उक्कस्सक्खओवसमे मुहुत्तमेत्तंतरम्मि मुणी ॥ १०६३
सयलं पि सुदं जाणइ उच्चारइ जीए विप्फुरंतीए[1] ।
असमो अहिकंठो सा रिद्धीउ णेया वयणबलणामा ॥ १०६४

बरसानेमें समर्थ; और सहसा सम्पूर्ण समुद्रके सलिलसमूहके सुखानेकी शक्तिसे भी संयुक्त होते हैं, वह घोरपराक्रमतपऋद्धि है ॥ १०५६–१०५७ ॥

जिस ऋद्धिसे मुनिके क्षेत्रमें भी चौरादिककी बाधायें और काल (महामारी) एवं महायुद्धादिक नहीं होते हैं, वह अघोरब्रम्हचारित्वऋद्धि है ॥ १०५८ ॥

चारित्रनिरोधक मोहकर्म अर्थात् चारित्रमोहनीयका उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर जो ऋद्धि दुस्स्वप्नको नष्ट करती हैं, वह अघोरब्रम्हचारित्वऋद्धि है ॥ १०५९ ॥

अथवा—

जिस ऋद्धिके आविर्भूत होनेसे महर्षिजन सब गुणोंके साथ अघोर अर्थात् अविनश्वर ब्रम्हचर्यका आचरण करते हैं, वह अघोरब्रम्हचारित्वऋद्धि है ॥ १०६० ॥

इसप्रकार तपऋद्धिका कथन समाप्त हुआ ।

मन, वचन और कायके भेदसे बलऋद्धि तीन प्रकार है । इनमेंसे जिस ऋद्धिके द्वारा श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तराय, इन दो प्रकृतियोंका उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर मुहूर्तमात्र कालके भीतर अर्थात् अन्तर्मुहूर्त कालमें सम्पूर्ण श्रुतका चिन्तवन करता है व जानता है, वह मनोबल नामक ऋद्धि है ॥ १०६१–१०६२ ॥

जिह्वेन्द्रियावरण, नोइन्द्रियावरण, श्रुतज्ञानावरण और वीर्यान्तरायका उत्कृष्ट क्षयोपशम होनेपर जिस ऋद्धिके प्रगट होनेसे मुनि श्रमरहित और अहीनकंठ होता हुआ मुहूर्तमात्र कालके भीतर सम्पूर्ण श्रुतको जानता व उसका उच्चारण करता है, उसे वचनबल नामक ऋद्धि जानना चाहिये ॥ १०६२–१०६४ ॥

---

१ द ब जिय. २ द ब °महाजुद्धादी. ३ द ब जिय विप्फुरंतिए. ४ द ब यसमे.

उक्कस्सक्खउवसमे पविसेसे विरियविग्घपगडीएं[1] । मासचउमासपमुहे काउस्सग्गे वि समहीणा ॥ १०६५
उच्चट्ठिय तेलोक्कं[2] अत्थि कणिट्ठंगुलीए अण्णत्थं । थविदुं जीए समत्था सा रिद्धी कायबलणामा ॥ १०६६
। एवं बलरिद्धी समत्ता ।
आमरिससखेलजल्ला मलविप्पुसव्वा ओसहीपुव्वा । मुहदिट्ठिणिव्विसाओ अट्ठविहा ओसही रिद्धी ॥ १०६७
रिसिकरचरणादीणं अल्लियमेत्तम्मि जीए पासम्मि । जीवा होंति णिरोगा सा अम्मरिसोसही रिद्धी ॥ १०६८
जीए लालासेमच्छीमलसिंहाणआदिआ सिग्घं[3] । जीवाण रोगहरणा स च्चिय खेलोसही रिद्धी ॥ १०६९
सेयजलो अंगरयं जल्लं भण्णेत्ति जीए तेणावि[4] । जीवाण रोगहरणं रिद्धी जल्लोसही णामा ॥ १०७०
जीहोट्ठदंतणासासोत्तादिमलं पि जीए सत्तीए । जीवाण रोगहरणं मलोसही णाम सा रिद्धी ॥ १०७१
मुत्तपुरीसो वि पुढं दारुणबहुजीववायसंहरणा । जीए महामुणीणं विप्पोसहि णाम सा रिद्धी ॥ १०७२
जीए पस्सजलाणिलरोमणहादीणि[5] वाहिहरणाणि । दुक्करतवजुत्ताणं रिद्धी सव्वोसही णामा ॥ १०७३

जिस ऋद्धिके बलसे वीर्यान्तराय प्रकृतिके उत्कृष्ट क्षयोपशमकी विशेषता होनेपर मुनि मास व चतुर्मासादिरूप कायोत्सर्गको करते हुए भी श्रमसे रहित होते हैं, तथा झटिति (शीघ्रतासे) तीनों लोकोंको कनिष्ठ अंगुलीके ऊपर उठाकर अन्यत्र स्थापित करनेके लिये समर्थ होते हैं, वह कायबल नामक ऋद्धि है ॥ १०६५-१०६६ ॥

इसप्रकार बलऋद्धिका वर्णन समाप्त हुआ ।

आमर्शौषधि, क्ष्वेलौषधि, जल्लौषधि, मलौषधि, विप्रौषधि (विडौषधि), सर्वौषधि, मुखनिर्विष और दृष्टिनिर्विष, इसप्रकार औषधिऋद्धि आठ प्रकारकी है ॥ १०६७ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे जीव पासमें आनेपर ऋषिके हस्त व पादादिकके स्पर्शमात्रसे ही नीरोग होजाते हैं, वह आमर्शौषधिऋद्धि है ॥ १०६८ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे लार, कफ, अक्षिमल और नासिकामल शीघ्र ही जीवोंके रोगोंको नष्ट करता है, वह क्ष्वेलौषधिऋद्धि है ॥ १०६९ ॥

स्वेदजल (पसीना) के आश्रित अंगरज जल्ल कहा जाता है । जिस ऋद्धिके प्रभावसे उस अंगरजसे भी जीवोंके रोग नष्ट होते हैं, वह जल्लौषधिऋद्धि कहलाती है ॥ १०७० ॥

जिस शक्तिसे जिह्वा, ओष्ठ, दांत, नासिका और श्रोत्रादिकका मल भी जीवोंके रोगोंको दूर करनेवाला होता है, वह मलौषधि नामक ऋद्धि है ॥ १०७१ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे महामुनियोंका मूत्र व विष्ठा भी जीवोंके बहुत भयानक रोगोंको नष्ट करनेवाला होता है, वह विप्रौषधि नामक ऋद्धि कहलाती है ॥ १०७२ ॥

जिस ऋद्धिके बलसे दुष्कर तपसे युक्त मुनियोंका स्पर्श किया हुआ जल व वायु, तथा उनके रोम और नखादिक व्याधिके हरनेवाले हो जाते हैं, वह सर्वौषधि नामक ऋद्धि है ॥ १०७३ ॥

---

१ द ° पयडीए. २ द ब °पमुहो. ३ द तेलोकं. ४ द ब °सेमच्छेअर. ५ द ब रोमपहादीणि.

तित्तादिविविहमण्णं विसजुत्तं जीए वयणमेत्तेण । पावेदि णिव्विसत्तं सा रिद्धी वयणणिव्विसा णामा ॥ १०७४
अहवा बहुवाहीहिं परिभूदा झत्ति होंति णीरोगा । सोदुं वयणं जीए सा रिद्धी वयणणिव्विसा णामा ॥ १०७५
रोगविसेहिं पहदा दिट्ठीए जीए झत्ति पावंति । णीरोगणिव्विसत्तं सा भणिदा दिट्ठिणिव्विसा रिद्धी ॥ १०७६

। एवमोसहिरिद्धी समत्ता ।

छब्भेया रसरिद्धी आसीदिट्ठिविसा य दो तेसुं । खीरमहुअमियसप्पीसविओ चत्तारि होंति कमे ॥ १०७७
मर इदि भणिदे जीओ मरेइ सहस त्ति जीए सत्तीए । दुक्खरतवजुदमुणिणा आसीविसणामरिद्धी सा ॥ १०७८
जीए जीओ दिट्ठो महालिणा रोसभरिदहिदएण । अहिदट्ठं व मरिज्जदि दिट्ठिविसा णाम सा रिद्धी ॥ १०७९
करयलणिक्खित्ताणिं[3] रुक्खाहारादियाणि तक्कालं । पावंति खीरभावं जीए खीरोसवी रिद्धी ॥ १०८०
अहवा दुक्खप्पहुदी जीए मुणिवयणसवणमेत्तेणं । पसमदि णरतिरियाणं स च्चिय खीरोसवी रिद्धी ॥ १०८१
मुणिकरणिक्खित्ताणिं लुक्खाहारादियाणि होंति खणे । जीए महुररसाइं स च्चिय महुवोसवी रिद्धी ॥ १०८२

जिस ऋद्धिसे तिक्तादिक रस व विषसे युक्त विविध प्रकारका अन्न वचनमात्रसे ही निर्विषताको प्राप्त हो जाता है, वह वचननिर्विष नामक ऋद्धि है ॥ १०७४ ॥

अथवा, जिस ऋद्धिके प्रभावसे बहुत व्याधियोंसे युक्त जीव वचनको सुनकर ही झटसे नीरोग हो जाया करते हैं, वह वचननिर्विष नामक ऋद्धि है ॥ १०७५ ॥

रोग और विषसे युक्त जीव जिस ऋद्धिके प्रभावसे झट देखनेमात्रसे ही नीरोगता और निर्विषताको प्राप्त करते हैं, वह दृष्टिनिर्विषऋद्धि कही गयी है ॥ १०७६ ॥

इसप्रकार औषधिऋद्धि समाप्त हुई ।

आशीविष और दृष्टिविष ऐसे दो, तथा क्षीरस्रवी, मधुस्रवी, अमृतस्रवी और सर्पिस्रवी ऐसे चार, इसप्रकार क्रमसे रसऋद्धिके छह भेद हैं ॥ १०७७ ॥

जिस शक्तिसे दुष्कर तपसे युक्त मुनिके द्वारा 'मर जाओ' इसप्रकार कहनेपर जीव सहसा मर जाता है, वह आशीविष नामक ऋद्धि कही जाती है ॥ १०७८ ॥

जिस ऋद्धिके बलसे रोषयुक्त हृदयवाले महर्षिसे देखा गया जीव सर्पद्वारा काटे गयेके समान मर जाता है, वह दृष्टिविष नामक ऋद्धि है ॥ १०७९ ॥

जिससे हस्ततलपर रखे हुए रूखे आहारादिक तत्काल ही दुग्धपरिणामको प्राप्त हो जाते हैं, वह क्षीरस्रवीऋद्धि कही जाती है ॥ १०८० ॥

अथवा, जिस ऋद्धिसे मुनिओंके वचनोंके श्रवणमात्रसे ही मनुष्य-तिर्यंचोंके दुःखादिक शान्त हो जाते हैं, उसे क्षीरस्रवीऋद्धि समझना चाहिये ॥ १०८१ ॥

जिस ऋद्धिसे मुनिके हाथमें रखे गये रूखे आहारादिक क्षणभरमें मधुर रससे युक्त हो जाते हैं, वह मध्वास्रवऋद्धि है ॥ १०८२ ॥

---

१ द ब णिव्विसंते. २ द ब यदा. ३ द खीरमुहु. ४ द ब निक्खित्ताणं. ५ द ब 'रादियाण. ६ ब समण°.

अहवा दुक्खप्पहुदी जीए मुणिवयणसवणमेत्तेणं । णासदि णरतिरियाणं तच्चियं महुवासवी रिद्धी ॥ १०८३
मुणिपाणिसंठियाणिं रुक्खाहारादियाणि जीय[1] खणे[2] । पावंति अमियभावं एसा अमियासवी रिद्धी ॥ १०८४
अहवा दुक्खादीणं महेसिवयणस्स सवणकालम्मिं[3] । णासंति जीए सिग्घं सा रिद्धी अमियआसवी णामा ।। १०८५
रिसिपाणितलेणिखित्तं रुक्खाहारादियं पि खणमेत्ते । पावेदि सप्पिरूवं जीए सा सप्पियासवी रिद्धी ॥ १०८६
अहवा दुक्खप्पमुहं सवणेण मुणिंददिव्ववयणस्स । उवसामदि जीवाणं एसा सप्पियासवी रिद्धी ॥ १०८७

। एवं रसरिद्धी समत्ता ।

तिहुवणविम्हयजणणा दो भेदा होंति खेत्तरिद्धीए । अक्खीणमहाणसिया अक्खीणमहालया य णामेण ॥ १०८८
लाभंतरायकम्मक्खउवसमसंजुदाए जीए फुडं । मुणिभुत्तसेसमण्णं धामत्थं पियं जं कं पि[5] ॥ १०८९
तद्दिवसे खज्जंतं खंधावारेण चक्कवट्टिस्स । छिज्जइ ण लवेण वि सा अक्खीणमहाणसा रिद्धी ॥ १०९०

अथवा, जिस ऋद्धिसे मुनिके वचनोंके श्रवणमात्रसे मनुष्य-तिर्यंचोंके दुःखादिक नष्ट हो जाते हैं, वह मध्वास्रवीऋद्धि है ॥ १०८३ ॥

जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिके हाथमें स्थित रूखे आहारादिक क्षणमात्रमें अमृतपनेको प्राप्त करते हैं, वह अमृतास्रवी ऋद्धि है ॥ १०८४ ॥

अथवा, जिस ऋद्धिसे महर्षिके वचनोंके श्रवणकालमें शीघ्र ही दुःखादिक नष्ट हो जाते हैं, वह अमृतास्रवी नामक ऋद्धि है ॥ १०८५ ॥

जिस ऋद्धिसे ऋषिके हस्ततलमें निक्षिप्त रूखा आहारादिक भी क्षणमात्रमें घृतरूपको प्राप्त करता है, वह सर्पिरास्रवीऋद्धि है ॥ १०८६ ॥

अथवा, जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनीन्द्रके दिव्य वचनोंके सुननेसे ही जीवोंके दुःखादिक शान्त होजाते हैं, वह सर्पिरास्रवीऋद्धि है ॥ १०८७ ॥

इसप्रकार रसऋद्धि समाप्त हुई ।

क्षेत्रऋद्धिके त्रिभुवनको विस्मित करनेवाले दो भेद होते हैं, एक अक्षीणमहानसिक और दूसरा अक्षीणमहालय ॥ १०८८ ॥

लाभान्तरायकर्मके क्षयोपशमसे संयुक्त जिस ऋद्धिके प्रभावसे मुनिके आहारसे शेष भोजनशालामें रखे हुए अन्नमेंसे जिस किसी भी प्रिय वस्तुको यदि उस दिन चक्रवर्तीका सम्पूर्ण कटक भी खावे तो भी वह लेशमात्र क्षीण नहीं होता है, वह अक्षीणमहानसिकऋद्धि है ॥ १०८९–१०९० ॥

१ [स च्चिय]. २ ब महुरोसवी. ३ द जीवखणे. ४ द ब सवणकादम्मि. ५ द पाणितलां. ६ द ब मुणिभुत्तसेसेसुमण्णद्धामज्झं पियं कं पि ।

जीए चउभणुमाणे समचउरसालयम्मि णरतिरिया । मंति असंखेज्जा सा अक्खीणमहालया रिद्धी ॥ १०९१

। एवं खेत्तरिद्धी सम्मत्ता ।

। एवं चउसट्ठिरिद्धी सम्मत्ता ।

एत्तो[1] उवरि रिसिसंखं भणिस्सामि—

चउसीदिसहस्साणिं रिसिप्पमाणं हुवेदि उसहजिणे ।
इगि-दु-तिलक्खा कमसो अजियजिणे संभवम्मि णंदणए ॥ १०९२

उस ८४००० । अजि १००००० । संभव २००००० । अभि ३००००० ।

वीससहस्सजुदाइं लक्खाइं तिण्णि सुमइदेवम्मि । तीससहस्सजुदाणिं पउमपहे तिण्णि लक्खाणिं ॥ १०९३

सुमइ ३२०००० । पउम ३३०००० ।

तिण्णि सुपासे चंदप्पहदेवे दोण्णि अद्धसंजुत्ता । सुविहिजिणिंदम्मि दुवे सीयलणाहम्मि इगिलक्खं ॥ १०९४

सुपास ३००००० । चंद २५०००० । पुप्फ २००००० । सीय १००००० ।

जिस ऋद्धिसे समचतुष्कोण चार धनुषप्रमाण क्षेत्रमें असंख्यात मनुष्य-तिर्यंच समा जाते हैं, वह अक्षीणमहालयऋद्धि है ॥ १०९१ ॥

इसप्रकार क्षेत्रऋद्धि समाप्त हुई ।

इसप्रकार चौंसठ ऋद्धियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

यहांसे आगे अब ऋषियोंकी संख्याका कथन किया जाता है—

भगवान् ऋषभनाथ तीर्थंकरके समयमें ऋषियोंका प्रमाण चौरासी हजार और अजितनाथ, सम्भवनाथ एवं अभिनन्दननाथ तीर्थंकरके वह क्रमसे एक लाख, दो लाख और तीन लाख था ॥ १०९२ ॥

ऋषभ ८४००० । अजित १००००० । संभव २००००० । अभिनन्दन ३००००० ।

सुमतिनाथ तीर्थंकरके समयमें ऋषियोंका प्रमाण तीन लाख बीस हजार और पद्मप्रभके समयमें वह तीन लाख तीस हजार था ॥ १०९३ ॥

सुमति ३२०००० । पद्म ३३०००० ।

सुपार्श्वनाथ स्वामीके समयमें ऋषियोंकी संख्या तीन लाख, चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रके अढ़ाई लाख, सुविधिनाथ तीर्थंकरके दो लाख और शीतलनाथके एक लाखप्रमाण थी ॥ १०९४ ॥

सुपार्श्व ३००००० । चन्द्रप्रभ २५०००० । पुष्पदन्त २००००० । शीतल १००००० ।

---

१ ब तत्तो.

चउसीदिसहस्साइं सेयंसे वासुपुज्जणाहम्मि । बावत्तरि अडसट्ठी विमले छावट्ठिया अणंतम्मि ॥ १०९५
से ८४००० । वा ७२००० । विम ६८००० । अणं ६६००० ।
धम्मम्मि संतिकुंथूअरमल्लीसुं कमा सहस्साणि । चउसट्ठी बासट्ठी सट्ठी पण्णास चालीसा ॥ १०९६
धम्म ६४००० । सं ६२००० । कुं ६०००० । अर ५०००० । म ४०००० ।
सुव्वदणमिणेमीसुं कमसो पासम्मि वड्ढमाणम्मि । तीसं वीसट्ठारस सोलसचोद्दससहस्साणि ॥ १०९७
सु ३०००० । ण २०००० । णेमि १८००० । पास १६००० । वीर १४००० ।
पुव्वधरसिक्खकोहीकेवलिवेकुव्विविउलमदिवादी । पत्तेक्कं सत्तगणा सव्वाणं तित्थकत्ताणं ॥ १०९८
चत्तारि सहस्साइं सगसयपण्णास पुव्वधरसंखा । सिक्खगसंखा स च्चिय छस्सय ऊणिं कदं णवरिं ॥ १०९९
उसह पुव्व ४७५०, सिक्ख ४१५०,
णववीससहस्साणिं कमेण ओहिकेवलीणं पि । वेकुव्वीण सहस्सा स च्चिय छस्सयब्भहिया ॥ ११००
ओ ९०००, के २००००, वे २०६००,

भगवान् श्रेयांसके समयमें ऋषियोंका प्रमाण चौरासी हजार, वासुपूज्य स्वामीके बहत्तर हजार, विमलनाथके अड़सठ हजार, और अनन्तनाथके छयासठ हजार था ॥ १०९५ ॥

श्रेयांस ८४००० । वासुपूज्य ७२००० । विमल ६८००० । अनन्त ६६००० ।

धर्मनाथ, शान्तिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ और मल्लिनाथ तीर्थंकरके समयमें क्रमसे चौंसठ हजार, बासठ हजार, साठ हजार, पचास हजार और चालीस हजारप्रमाण ऋषियोंकी संख्या थी ॥ १०९६ ॥

धर्म ६४००० । शान्ति ६२००० । कुंथु ६०००० । अर ५०००० । मल्लि ४०००० ।

भगवान् सुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्वनाथ और वर्धमान स्वामीके समयमें क्रमशः तीस हजार, बीस हजार, अठारह हजार, सोलह हजार और चौदह हजारप्रमाण ऋषि थे ॥ १०९७ ॥

सुव्रत ३०००० । नमि २०००० । नेमि १८००० । पार्श्व १६००० । वीर १४००० ।

सब तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येक तीर्थंकरके पूर्वधर, शिक्षक, अवधिज्ञानी, केवली, विक्रियाऋद्धिके धारक, विपुलमति और वादी, इसप्रकार ये सात संघ होते हैं ॥१०९८ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकरके इन सात गणोंमेंसे पूर्वधरोंकी संख्या चार हजार सातसौ पचास थी। शिक्षकोंकी भी यही संख्या थी, परन्तु इसमेंसे छहसौ कम थे, इतनी यहां विशेषता है ॥ १०९९ ॥

उक्त तीर्थंकरके क्रमसे अवधिज्ञानी नौ हजार, केवली बीस हजार, और विक्रियाधारी छहसौ अधिक बीस हजार थे ॥ ११०० ॥

---

१ द्र 'चउदस'.

विउलमदीणं बारससहस्सया सगसयाइं पण्णासा । वादीण तत्तियं चिय एदे उसहम्मि सत्तगणा ॥ ११०१
वि १२७५०, वा १२७५० ।

तिसहस्सा सत्तसया पण्णासाजियपहुम्मि पुव्वधरा । इगिवीससहस्साणिं सिक्खकया छस्सयाइं पि ॥ ११०२
पु ३७५०, सि २१६००,

चउणउदिसया ओही वीससहस्साणि होंति केवलिणो । वेकुव्वीण सहस्सा वीस सयाणिं पि चत्तारि ॥ ११०३
ओ ९४००, के २००००, वे २०४००,

विउलमदीओ बारस सहस्सया चउसयाणि पण्णासा । वादीण सहस्साइं बारस चत्तारि यं सयाइं ॥ ११०४
वि १२४५०, वा १२४०० ।

पुव्वधरा पण्णाधियइगिवीससयाणि संभवजिणम्मि । उणतीससहस्साइं इगिलक्खं सिक्खगा तिसया ॥ ११०५
पु २१५०, सि १२९३००,

छण्णउदिसया ओही केवलिणो पण्णरससहस्साणिं । उणवीससहस्साइं वेगुव्विय अडसयाणिं पि ॥ ११०६
ओ ९६००, केवलि १५०००, वे १९८००,

होंति सहस्सा बारस पण्णाधियमिगिसयं च विउलमदी ।
छक्केण य गुणिदाणिं दोण्णि सहस्साणिं वादिगणा ॥ ११०७
वि १२१५०, वादि १२००० ।

इसके अतिरिक्त विपुलमति बारह हजार सातसौ पचास, और वादी भी इतने ही थे । इसप्रकार ऋषभदेवके ये सात गण थे ॥ ११०१ ॥

ऋषभ—पूर्वधर ४७५०, शिक्षक ४१५०, अवधिज्ञानी ९०००, केवली २००००, विक्रियाधारक २०६००, विपुलमति १२७५०, वादी १२७५० ।

अजितप्रभुके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीन हजार सातसौ पचास, शिक्षक इक्कीस हजार छहसौ, अवधिज्ञानी चौरानबैसौ, केवली बीस हजार, विक्रियाऋद्धिधारक बीस हजार चारसौ, विपुलमति बारह हजार चारसौ पचास, और वादी बारह हजार चारसौ थे ॥ ११०२–११०४ ॥

अजित—पूर्व ३७५०, शि. २१६००, अव ९४००, के. २००००, विक्रिया. २०४००, विपु १२४५०, वादी १२४०० ।

सम्भवनाथ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर इक्कीससौ पचास, शिक्षक एक लाख उनतीस हजार तीनसौ, अवधिज्ञानी छ्यानबैसौ, केवली पन्द्रह हजार, विक्रियाऋद्धिके धारक उन्नीस हजार आठसौ, विपुलमति बारह हजार एकसौ पचास, और वादिगण छहसे गुणित दो अर्थात् बारह हजार थे ॥ ११०५–११०७ ॥

सम्भव—पूर्व. २१५०, शि. १२९३००, अव. ९६००, के. १५०००, विक्रि. १९८००, विपु. १२१५०, वादी १२००० ।

---

१ द ब चउ°.

पंचसयब्भहियाइं दोण्णि सहस्साइं होंति पुव्वधरा । दो सिक्खगलक्खाइं तीससहस्साइं पण्णासा ॥ ११०८
पु २५००, सि २३००५०,
अडणउदिसया ओही केवलिणो विउणअट्ठसहस्साणि । वेकुव्विसहस्साइं भवंति एक्कूणवीसाणि ॥ ११०९
ओ ९८००, के १६०००, वे १९०००,
इगिवीससहस्साइं पण्णाधियछस्सया य विउलमदी । एक्कं चेय सहस्सा वादी अभिणंदणे देवे ॥ १११०
वि २१६५०, वा १०००।
दोण्णि सहस्सा चउसय देवे सुमदिप्पहुम्मि पुव्वधरा ।
अड्डाइज्जं लक्खा तेदालसयाणि सिक्खगा पण्णा ॥ ११११
पुव्व २४००, सि २५४३५०,
एक्करसतेरसाइं कमे[1] सहस्साणि ओहिकेवलिणो । अट्ठरससहस्साणिं चत्तारि सयाणि वेकुव्वी ॥ १११२
ओ ११०००, के १३०००, वे १८४००,
विउलमदी य सहस्सा दससंखा चउसएहिं संजुत्ता । पण्णासजुदसहस्सा दस चउसयअधिय वादिगणा ॥ १११३
वि १०४००, वा १०४५०।
दोण्णि सहस्सा तिसया पुव्वधरा सिक्खया दुवे लक्खा । ऊणत्तरिं सहस्सा ओहिगणा दससहस्साणिं ॥ १११४
पुव्व २३००, सि २६९०००, ओ १००००,
चउवंकेताडिदाइं तिण्णि सहस्साणिं होंति केवलिणो । अट्ठसएहिं जुत्ता वेकुव्वी सोलससहस्सा ॥ १११५
के १२०००, वे १६८००,

अभिनन्दन जिनके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार पांचसौ, शिक्षक दो लाख तीस हजार पचास, अवधिज्ञानी अट्ठानबैसौ, केवली दुगुणे आठ हजार अर्थात् सोलह हजार, विक्रिया-ऋद्धिके धारक एक कम बीस अर्थात् उन्नीस हजार, विपुलमति इक्कीस हजार छहसौ पचास, और वादी केवल एक हजार ही थे ॥ ११०८–१११० ॥

अभिनन्दन— पूर्व. २५००, शिक्षक २३००५०, अव. ९८००, केवली १६०००, विक्रिया. १९०००, विपु. २१६५०, वादी १०००।

सुमति प्रभुके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार चारसौ, शिक्षक अढ़ाई लाख तेतालीससौ पचास, अवधिज्ञानी ग्यारह हजार, केवली तेरह हजार, विक्रियाऋद्धिके धारक अठारह हजार चारसौ, विपुलमति दश हजार चारसौ, और वादी दश हजार चारसौ पचास थे ॥१११९–१११३॥

सुमति— पूर्व. २४००, शिक्षक २५४३५०, अव. ११०००, के. १३०००, विक्रि. १८४००, विपुल. १०४००, वादी १०४५०।

पद्मप्रभजिनके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार तीनसौ, शिक्षक दो लाख उनहत्तर हजार, अवधिज्ञानी दश हजार, केवली चारसे गुणित तीन अर्थात् बारह हजार, विक्रिया-

१ द ब कमेण. २ ब चउकं.

विउणा पंचसहस्सा तिण्णि सयाइं हवंति विउलमदी । छाधियणउदिसदा णं वादी पउमप्पहे देवे ॥ १११६
वि १०३००, वा ९६०० ।

पुव्वधरा तीसाधियदोण्णिसहस्सा हवंति सिक्खगणा । चोदाल सहस्साणिं दो लक्खा णवसया वीसा ॥ १११७
पु २०३०, सि २४४९२०,

णव य सहस्सा ओही केवलिणो एक्करससहस्साणिं । तेवण्णसयब्भहिया वेकुव्वी दस सहस्साणि ॥ १११८
ओ ९०००, के ११०००, वे १५३००,

एक्काणउदिसयाइं पण्णासासंजुदाइ विउलमदी । अट्ठ सहस्सा छस्सयसहिदा वादी सुपासजिणे ॥ १११९
वि ९१५०, वा ८६०० ।

चत्तारि सहस्साइं देवे चंदप्पहम्मि पुव्वधरा । दोलक्खदससहस्सा चत्तारि सयाइं सिक्खगणा ॥ ११२०
पु ४०००, सि २१०४००,

बे अट्ठरस सहस्सा छच्च सया अट्ठ सग सहस्साइं । कमसो ओहीकेवलिवेउव्वीविउलमदिवादी ॥ ११२१
ओ २०००, के १८०००, वे ६००, वि ८०००, वा ७००० ।

तिगुणियपंचसयाइं पुव्वधरा सिक्खयाइं इगिलक्खा । पणवण्णसहस्साइं अब्भहियाइं पणसएहिं ॥ ११२२
पु १५००, सि १५५५०० ।

ऋद्धिके धारक सोलह हजार आठसौ, विपुलमति पांच हजारके दुगुणे अर्थात् दश हजार तीनसौ, और वादी छ्यानबैसौ थे ॥ १११४-१११६ ॥

पद्म— पूर्व. २३००, शि. २६९०००, अ. १००००, के. १२०००, विक्रिया. १६८००, विपुल. १०३००, वादी ९६०० ।

सुपार्श्वजिनके सात गणोंमेंसे पूर्वधर दो हजार तीस, शिक्षकगण दो लाख चवालीस हजार नौसौ बीस, अवधिज्ञानी नौ हजार, केवली ग्यारह हजार, विक्रियाऋद्धिके धारक तिरेपनसौ अधिक दश हजार, अर्थात् पन्द्रह हजार तीनसौ, विपुलमति एकानबैसौ पचास, और वादी आठ हजार छहसौ थे ॥ १११७-१११९ ॥

सुपार्श्व— पूर्व. २०३०, शिक्षक २४४९२०, अव. ९०००, के. ११०००, विक्रिया. १५३००, विपुल. ९१५०, वादी ८६०० ।

चन्द्रप्रभदेवके सात गणोंमेंसे पूर्वधर चार हजार, शिक्षकगण दो लाख दश हजार चारसौ; और अवधिज्ञानी, केवली, विक्रियाधारी, विपुलमति तथा वादी क्रमसे दो हजार, अठारह हजार, छहसौ, आठ हजार और सात हजार थे ॥ ११२०-११२१ ॥

चन्द्रप्रभ— पूर्व. ४०००, शि. २१०४००, अवधि. २०००, के. १८०००, विक्रिया. ६००, विपुल. ८०००, वादी ७००० ।

श्रीपुष्पदन्त तीर्थंकरके सात गणोंमेंसे पूर्वधर पांचसौके तिगुणे अर्थात् पन्द्रहसौ, शिक्षक एक लाख पचवन हजार पांचसौ, अवधिज्ञानी चौरासीसौ, केवली सात हजार पांचसौ,

चउसीदिसया ओही केवलिणो सगसहस्सपंचसया । णहसुण्णसुण्णतियइगिअंककमेणं पि वेगुव्वी ॥ ११२३
ओ ८४००, के ७५००, वे १३०००,
सगसंखसहस्साणिं जुत्ताणिं पणसएहिं विउलमदी । छावट्ठि सया वादी देवे सिरिपुप्फदंतम्मि ॥ ११२४
वि ७५००, वा ६६००।
एक्कसहस्सं चउसयसंजुत्तं सीयलम्मि पुव्वधरा । उणसट्ठिसहस्साइं वेण्णि सया सिक्खगा होंति ॥ ११२५
पु १४००, सि ५९२००,
दुसयजुदसगसहस्सा सत्तसहस्साणि ओहि-केवलिणो । चउवंकताडिदाणिं तिण्णि सहस्साणि वेकुव्वी ॥ ११२६
ओ ७२००, के ७०००, वे १२०००,
सत्तसहस्साणि पुढं जुत्ताणिं पणसदेहिं विउलमदी । सत्तावण्ण सयाइं वादी सिरिसीयलेसम्मि ॥ ११२७
वि ७५००, वा ५७००।
एक्कं चेय सहस्सा संजुत्ता तियसएहिं पुव्वधरा । अडदालसहस्साइं दोसयजुत्ताइं सिक्खगणा ॥ ११२८
पु १३००, सि ४८२००,
छसहस्साइं ओही केवलिणो छसहस्सपंचसया । एक्कारसमेत्ताणिं होंति सहस्साणि वेकुव्वी ॥ ११२९
ओ ६०००, के ६५००, वे ११०००,
बेरूवताडिदाइं तिण्णि सहस्साइ तह य विउलमदी । पणगुणिदसहस्साइं वादी सेयंसदेवम्मि ॥ ११३०
वि ६०००, वा ५०००।
एक्कं चेव सहस्सा संजुत्ता दोसएहिं पुव्वधरा । उणतालसहस्साणिं दोण्णि सयाणिं पि सिक्खगणा ॥ ११३१
पु १२००, सि ३९२००,

विक्रियाऋद्धिके धारक क्रमसे शून्य, शून्य, शून्य, तीन, और एक अंकप्रमाण अर्थात् तेरह हजार, विपुलमति सात हजार पांचसौ, और वादी छ्यासठसौ थे ॥ ११२२-११२४ ॥

पुष्पदन्त— पूर्व. १५००, शिक्षक १५५५००, अवधि. ८४००, के. ७५००, विक्रिया. १३०००, विपुल. ७५००, वादी ६६००।

शीतलनाथ स्वामीके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार चारसौ, शिक्षक उनसठ हजार दोसौ, अवधिज्ञानी सात हजार दोसौ, केवली सात हजार, विक्रियाऋद्धिके धारी चारसे गुणित तीन अर्थात् बारह हजार, विपुलमति सात हजार पांचसौ, और वादी सत्तावनसौ थे ॥११२५-११२७॥

शीतल— पूर्व. १४००, शि. ५९२००, अ. ७२००, के. ७०००, विक्रि. १२०००, विपुल. ७५००, वा. ५७००।

श्रेयांस जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार तीनसौ, शिक्षकगण अड़तालीस हजार दोसौ, अवधिज्ञानी छह हजार, केवली छह हजार पांचसौ, विक्रियाऋद्धिके धारी ग्यारह हजार, विपुलमति दोसे गुणित तीन अर्थात् छह हजार, तथा वादी पांच हजार थे ॥ ११२८-११३०॥

श्रेयांस— पूर्व. १३००, शि. ४८२००, अ. ६०००, के. ६५००, विक्रि. ११०००, विपु. ६०००, वा. ५०००।

श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार दोसौ, शिक्षकगण उनतालीस

पंचसहस्सा चउसयजुत्ता ओही हवंति केवलिणो । छच्चेव सहस्साणिं वेगुव्वी दस सहस्साइं ॥ ११३२
ओ ५४००, के ६०००, वे १००००,

छच्चेव सहस्साणिं चत्तारि सहस्सया य दुसयजुदा[1] । विउलमदी वादीओ कमसो सिरिवासुपुज्जजिणे ॥ ११३३
वि ६०००, वा ४२०० ।

एक्कसएणब्भहियं एक्कसहस्सं हवंति पुव्वधरा । अट्ठत्तीस सहस्सा पणसयसहिदा य सिक्खगणा ॥ ११३४
पुव्व ११००, सि ३८५००,

अडदालसयं ओही केवलिणो पणसएण जुत्ताणिं । पणसंखसहस्साणिं वेकुव्वी णव सहस्साणिं ॥ ११३५
ओ ४८००, के ५५००, वि ९०००,

पंचसहस्साणि पुढं जुत्ताणिं पणसएहिं विउलमदी । तिण्णि सहस्सा छस्सयसहिदा वादी विमलदेवे ॥ ११३६
वि ५५००, वा ३६०० ।

एक्कं चेव सहस्सा पुव्वधरा सिक्खगा य पंचसया । उणदाल सहस्साणिं ओही तेदालसयसंखा ॥ ११३७
पु १०००, सि ३९५००, ओ ४३००,

पंचट्ठपणसहस्सा केवलिवेकुव्विविउलमदितिदए । तिण्णि सहस्सा बेसयजुदाणि वादी अणंतजिणे ॥ ११३८
के ५०००, वे ८०००, वि ५०००, वा ३२०० ।

हजार दोसौ, अवधिज्ञानी पांच हजार चारसौ, केवली छह हजार, विक्रियाऋद्धिधारी दश हजार, विपुलमति छह हजार, और वादी चार हजार दोसौ थे ॥ ११३१–११३३ ॥

वासुपूज्य–– पूर्व. १२००, शि. ३९२००, अ. ५४००, के.६०००, विक्रि. १००००, विपु. ६०००, वा. ४२०० ।

विमलनाथ तीर्थंकरके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार एकसौ, शिक्षकगण अड़तीस हजार पांचसौ, अवधिज्ञानी अड़तालीससौ, केवली पांच हजार पांचसौ, विक्रियाऋद्धिके धारी नौ हजार, विपुलमति पांच हजार पांचसौ, और वादी तीन हजार छहसौ थे ॥ ११३४–११३६ ॥

विमल—पूर्व. ११००, शि. ३८५००, अ.४८००, के. ५५००, विक्रि. ९०००, विपुल. ५५००, वा. ३६०० ।

अनन्तनाथजिनके सात गणोंमेंसे पूर्वधर एक हजार, शिक्षक उनतालीस हजार पांचसौ, अवधिज्ञानी तेतालीससौ, केवली पांच हजार, विक्रियाऋद्धिधारी आठ हजार, विपुलमति पांच हजार, और वादी तीन हजार दौसौ थे ॥ ११३७–११३८ ॥

अनंत—पूर्व. १०००, शि.३९५००, अ. ४३००, के. ५०००, विक्रिया. ८०००, विपु. ५०००, वा. ३२०० ।

---

१ ब दुसयजुदं.

णव पुव्वधरसयाइं चालसहस्साइं सगसया सिक्खा । छत्तीससया ओही पणदालसयाणि केवलिणो ॥ ११३९
पु ९००, सि ४०७००, ओ ३६००, के ४५००,
वेगुव्विं सगसहस्सा पणदालसयाणि होंति विउलमदी । अट्ठावीससयाणिं वादी सिरिधम्मसामिम्मि ॥ ११४०
वे ७०००, वि ४५००, वा २८०० ।
अट्ठसया पुव्वधरा इगिदालसहस्समडसया सिक्खा । तिण्णि सहस्सा ओही केवलिणो चउसहस्साणिं ॥ ११४१
पु ८००, सि ४१८००, ओ ३०००, के ४०००,
वेकुव्वि छस्सहस्सा चत्तारि सहस्सयाणि विउलमदी । दोण्णि सहस्सा चउसयजुत्ता संतीसरे वादी ॥ ११४२
वे ६०००, वि ४०००, वा २४०० ।
सत्त सयाणिं चेव य पुव्वधरा होंति सिक्खगा य तहा । तेदालसहस्साइं पण्णासब्भहियमेक्कसयं ॥ ११४३
पु ७००, सि ४३१५०,
पणुवीससया ओही बत्तीससयाणि होंति केवलिणो । एक्कसयब्भहियाणिं पंचसहस्साणि वेकुव्वी ॥ ११४४
ओ २५००, के ३२००, वे ५१००,
तीणि सहस्साणि[1] तिण्णि सया पण्णब्भहिया हवंति विउलमदी ।
दोण्णि सहस्साणि पुढं वादी सिरिकुंथुणाहम्मि ॥ ११४५
वि ३३५०, वा २०००।

श्रीधर्मनाथ स्वामीके सात गणोंमेसे पूर्वधर नौसौ, शिक्षक चालीस हजार सातसौ, अवधिज्ञानी छत्तीससौ, केवली पैंतालीससौ, विक्रियाऋद्धिके धारक सात हजार, विपुलमति पैंतालीससौ, और वादी अट्ठाईससौ थे ॥ ११३९-११४० ॥

धर्म— पूर्व. ९००, शि. ४८७००, अ. ३६००, के. ४५००, विक्रि. ७०००, विपु. ४५००, वा. २८०० ।

शान्तिनाथ स्वामीके सात गणोंमेंसे पूर्वधर आठसौ, शिक्षक इकतालीस हजार आठसौ, अवधिज्ञानी तीन हजार, केवली चार हजार, विक्रियाऋद्धिके धारी छह हजार, विपुलमति चार हजार, और वादी दो हजार चारसौ थे ॥ ११४१-११४२ ॥

शान्ति— पूर्व. ८००, शि. ४१८०० अ. ३०००, के. ४०००, विक्रि. ६०००, विपु. ४०००, वा. २४०० ।

श्रीकुंथुनाथ स्वामीके सात गणोंमेंसे पूर्वधर सातसौ, शिक्षक तेतालीस हजार एकसौ पचास, अवधिज्ञानी पचीससौ, केवली बत्तीससौ, विक्रियाऋद्धिधारक पांच हजार एकसौ, विपुलमति तीन हजार तीनसौ पचास, और वादी दो हजार थे ॥ ११४३-११४५ ॥

कुंथु— पूर्व. ७००, शि. ४३१५०, अ. २५००, के. ३२००, विक्रि. ५१००, विपु. ३३५०, वा. २०००।

---

१ द विगुव्वि. २ द पणवीस. ३ [तिसहस्सा तिण्णि].

दससहिया छस्सया य पुव्वधरा होंति सिक्खगा सवणा । पणतीससहस्साणिं अडसयजुत्ताणि पणतीसं ॥ ११४६
पु ६१०, सि ३५८३५,

अट्ठावीस सयाणिं ओहीओ तेत्तियाणि केवलिणो । चत्तारि सहस्साणिं तिसयब्भहियाणि वेउव्वी ॥ ११४७
ओ २८००, के २८००, वे ४३००,

पणवण्णब्भहियाणिं दोण्णि सहस्साइं होंति विउलमदी । एक्कसहस्सं छस्सयसंजुत्तं अरजिणे वादी ॥ ११४८
वि २०५५, वा १६०० ।

पण्णासब्भहियाणिं पंचसयाणि य हवंति पुव्वधरा । एक्कूणतीससंखा सिक्खगसमणा सहस्सा य ॥ ११४९
पु ५५०, सि २९०००,

बावीससया ओही तेत्तियमेत्ता य होंति केवलिणो । णवसयअब्भहियाणिं दोण्णि सहस्साणि वेकुव्वी ॥ ११५०
ओ २२००, के २२००, वे २९००,

एक्कसहस्सा रुगसयसहिदं पण्णा य होंति विउलमदी । चउसयजुदं सहस्सं वादी सिरिमल्लिणाहम्मि ॥ ११५१
वि १७५०, वा १४०० ।

पंचसया पुव्वधरा सिक्खगणा एक्कवीस य सहस्सा । अडसयजुदं सहस्सं ओही तं चेव केवलिणो ॥ ११५२
पु ५००, सि २१०००, ओ १८००, के १८००,

बावीसं पण्णारस बारस कमसो सयाणि वेउव्वी । विउलमदी वादीओ सुव्वयणाममि जिणणाहे ॥ ११५३
वे २२००, वि १५००, वा १२०० ।

अरनाथ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर छहसौ दश, शिक्षक श्रमण पैंतीस हजार आठसौ पैंतीस, अवधिज्ञानी अट्ठाईससौ, इतने ही केवली, विक्रियाऋद्धिके धारी चार हजार तीनसौ, विपुलमति दो हजार पचवन, और वादी एक हजार छहसौ थे ॥ ११४६–११४८ ॥

अर— पूर्व. ६१०, शि. ३५८३५, अ. २८००, के. २८००, विक्रि. ४३००, विपु. २०५५, वा. १६०० ।

श्रीमल्लिनाथ तीर्थंकरके सात गणोंमेंसे पूर्वधर पांचसौ पचास, शिक्षक श्रमण एक कम तीस अर्थात् उनतीस हजार, अवधिज्ञानी बाईससौ, इतने ही केवली, विक्रियाऋद्धिके धारी दो हजार नौसौ, विपुलमति एक हजार सातसौ पचास, और वादी एक हजार चारसौ थे ॥ ११४९–११५१ ॥

मल्लि— पूर्व. ५५०, शि. २९०००, अ. २२००, के. २२००, विक्रि. २९००, विपु. १७५०, वा. १४०० ।

सुव्रत नामक जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर पांचसौ, शिक्षक इक्कीस हजार, अवधिज्ञानी एक हजार आठसौ, उतने ही केवली, विक्रियाऋद्धिधारी बाईससौ, विपुलमति पन्द्रहसौ, और वादी बारहसौ थे ॥ ११५२–११५३ ॥

सुव्रत— पूर्व. ५००, शि. २१०००, अ. १८००, के. १८००, विक्रि. २२००, विपु. १५००, वा. १२०० ।

---

१ द ब अब्भहियाणं. २ द अट्ठसजुदं. ३ द बारसकमसो.

चत्तारि सया पण्णा पुव्वधरा सिक्खया सहस्साइं। बारस छसयजुदाइं ओही सोलससयाणि णमिणाहे ॥ ११५४
पु ४५०, सि १२६००, ओ १६००,
ताइं चिय केवलिणो पण्णारससयाइं होंति वेकुव्वी। बारस सया य पण्णा विउलमदी दससया वादी ॥ ११५५
के १६००, वे १५००, वि १२५०, वा १०००।
वीसकदी पुव्वधरा एक्कारससहस्सअट्ठसया सिक्खा। पण्णरससया ओही तेत्तियमेत्ता य केवलिणो ॥ ११५६
पु ४००, सि ११८००, ओ १५००, के १५००,
इगिसयजुदं सहस्सं वेकुव्वी णव सयाणि विउलमदी। अट्ठ सयाइं वादी तिहुवणसामिम्मि णेमिम्मि ॥ ११५७
वे ११००, वि ९००, वा ८००।
तिण्णि सयाणिं पण्णा पुव्वधरा सिक्खगा सहस्साणिं। दह णवसयजुत्ताणिं ओहिमुणी चोद्दससयाणि ॥ ११५८
पु ३५०, सि १०९००, ओ १४००,
दसघणकेवलणाणी वेकुव्वी तेत्तियं पि विउलमदी। सत्तसयाणिं पण्णा पासजिणे छस्सया वादी ॥ ११५९
के १०००, वे १०००, वि ७५०, वा ६००।
तिसयाइं पुव्वधरा [1]णवणउदिसयाइं होंति सिक्खगणा। तेरससयाणि ओही सत्तसयाइं पि केवलिणो ॥ ११६०
पु ३००, सि ९९००, ओ १३००, के ७००,

नमिनाथ तीर्थंकरके सात गणोंमेंसे पूर्वधर चारसौ पचास, शिक्षक बारह हजार छहसौ, अवधिज्ञानी सोलहसौ, केवली भी सोलहसौ, विक्रियाऋद्धिके धारक पन्द्रहसौ, विपुलमति बारहसौ पचास, और वादी दशसौ थे ॥ ११५४-११५५ ॥

नमि— पूर्व. ४५०, शि. १२६००, अ. १६००, के. १६००, विक्रि. १५००, विपु. १२५०, वा. १०००।

तीन लोकके स्वामी भगवान् नेमिनाथके सात गणोंमेंसे पूर्वधर बीसके वर्गप्रमाण अर्थात् चारसौ, शिक्षक ग्यारह हजार आठसौ, अवधिज्ञानी पन्द्रहसौ, इतने ही केवली, विक्रियाऋद्धिके धारी एक हजार एकसौ, विपुलमति नौसौ, और वादी आठसौ थे ॥ ११५६-११५७ ॥

नेमि— पूर्व. ४००, शि. ११८००, अ. १५००, के. १५००, विक्रि. ११००, विपु. ९००, वा. ८००।

पार्श्वनाथ जिनेन्द्रके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीनसौ पचास, शिक्षक दश हजार नौसौ, अवधिज्ञानी मुनि चौदहसौ, केवली दशके घनप्रमाण अर्थात् एक हजार, इतने ही विक्रियाऋद्धिके धारक, विपुलमति सातसौ पचास, और वादी छहसौ थे ॥ ११५८-११५९ ॥

पार्श्व— पूर्व. ३५०, शि. १०९००, अ. १४००, के. १०००, विक्रि. १०००, विपु. ७५०, वा. ६००।

वर्धमानजिनके सात गणोंमेंसे पूर्वधर तीनसौ, शिक्षकगण निन्यानबैसौ, अवधिज्ञानी

१ द णवणवदि.

इगिसयरहिदसहस्सं वेकुव्वी पणसयाणि विउलमदी। चत्तारिसया वादी गणसंखा वड्ढमाणजिणे ॥ ११६१

वे ९००, वि ५००, वा ४००।

णभचउणवछक्कतियं पुव्वधरा सव्वतित्थकत्ताणं। पणपंचपणणभा णभणभदुगअंककमेण सिक्खगणा ॥ ११६२

सव्वपुव्वधरांककमेण जाणिज्जइ ३६९४०। सव्व सि २०००५५५।

गयणंबरछस्सत्तदुएक्का सव्वे वि ओहिणाणीओ। केवलणाणी सव्वे गयणंबरभट्ठपंचभट्ठेक्का ॥ ११६३

सव्वओही १२७६००। सव्वके १८५८००।

आयासणभणवंपणंदुदुअंककमेण सव्ववेकुव्वी। पंचंबरणवयचऊपणमेक्कं चिय सव्वविउलमदी ॥ ११६४

सव्ववे २२५९००। सव्ववि १५४९०५।

णभणभतिछएक्केक्कं अंककमे होंति सव्ववादी णं। सत्तगणाणं अंबररयणट्ठचउक्कअडदोण्णि ॥ ११६५

सव्ववादिगणा ११६३००। सव्वगणा २८४८०००।

पण्णाससहस्साणिं लक्खाणिं तिण्णि उसहणाहस्स। अजियस्स तिण्णि लक्खा वीससहस्साणि विरदीओ ॥११६६

३५०००। ३२०००।

तेरहसौ, केवली सातसौ, विक्रियाऋद्धिधारी सौ कम एक हजार अर्थात् नौसौ, विपुलमति पांचसौ, और वादी चारसौ थे ॥ ११६०–११६१ ॥

वर्धमान — पूर्व. ३००, शि. ९९००, अ. १३००, के. ७००, विक्रि. ९००, विपु. ५००, वा. ४००।

सब तीर्थंकरोंके शून्य, चार, नौ, छह और तीन इतने अंकप्रमाण पूर्वधर; तथा पांच, पांच, पांच, शून्य, शून्य, शून्य और दो इतने अंकप्रमाण शिक्षकगण थे ॥ ११६२ ॥

सब पूर्वधरोंको अंकक्रमसे जानना चाहिये ३६९४०। सर्व शिक्षक २०००५५५।

सब अवधिज्ञानी शून्य, शून्य, छह, सात, दो और एक इतने अंकप्रमाण; तथा सब केवली शून्य, शून्य, आठ, पांच, आठ और एक इतने अंकप्रमाण थे ॥ ११६३ ॥

सर्व अवधिज्ञानी १२७६००, सर्व केवली १८५८००।

सर्व विक्रियाऋद्धिधारी अंकक्रमसे शून्य, शून्य, नौ, पांच, दो और दो अंकप्रमाण; तथा सर्व विपुलमति पांच, शून्य, नौ, चार, पांच और एक अंकप्रमाण थे ॥ ११६४ ॥

सर्व विक्रियाधारी २२५९००, सर्व विपुलमति १५४९०५।

सर्व वादी अंकक्रमसे शून्य, शून्य, तीन, छह, एक और एक अंकप्रमाण थे। इन उपर्युक्त सातों गणोंकी संख्या तीन शून्य, आठ, चार, आठ और दो इन अंकोंप्रमाण होती है ॥ ११६५ ॥ सर्व वादी ११६३००। सातों गण २८४८०००।

ऋषभनाथ तीर्थंकरके तीर्थमें तीन लाख पचास हजार और अजितनाथके तीर्थमें तीन लाख बीस हजार आर्यिकाएं थीं ॥ ११६६ ॥ ३५०००। ३२०००।

---

१ द °णवपण°.

तीससहस्सब्भहिया तियलक्खा संभवस्स तित्थम्मि ।
विरदीओ तिण्णि लक्खा तीससहस्साणि छसय तुरिमम्मि ॥ ११६७

३३०००० । ३३०६०० ।

तीससहस्सब्भहिया सुमइजिणिंदस्स तिण्णि लक्खाइं । विरदीओ चउलक्खा वीससहस्साणि पउमपहणाहे॥ ११६८

३३०००० । ४२०००० ।

तीससहस्सा तिण्णि य लक्खा तित्थे सुपासदेवस्स । चंदप्पहे तियलक्खा सीदिसहस्साणि विरदीओ ॥ ११६९

३३०००० । ३८०००० ।

ताइं चिय पत्तेक्कं सुविहिजिणेसम्मि सीयलजिणिंदे[1] । तीससहस्सब्भहियं लक्खं सेयंसदेवम्मि ॥ ११७०

३८०००० । ३८०००० । १३०००० ।

विरदीओ वासुपुज्जे इगिलक्खं होंति छस्सहस्साणिं । इगिलक्खं तिसहस्सा विरदीओ विमलदेवस्स ॥ ११७१

१०६००० । १०३००० ।

अट्ठसहस्सब्भहियं अणंतसामिस्स होंति इगिलक्खं । बासट्ठिसहस्साणिं[3] चत्तारि सयाणि धम्मणाहस्स ॥ ११७२

१०८००० । ६२४०० ।

सट्ठिसहस्सा तिसयब्भहिया संतीसतित्थे[4] विरदीओ । सट्ठिसहस्सा तिसया पण्णासा कुंथुदेवस्स ॥ ११७३

६०३०० । ६०३५० ।

सम्भवनाथके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार और चतुर्थ तीर्थंकरके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार छहसौ आर्यिकायें थीं ॥ ११६७ ॥ ३३०००० । ३३०६०० ।

सुमति जिनेन्द्रके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार और पद्मप्रभ स्वामीके तीर्थमें चार लाख बीस हजार आर्यिकायें थीं ॥ ११६८ ॥ ३३०००० । ४२०००० ।

सुपार्श्वजिनके तीर्थमें तीन लाख तीस हजार और चन्द्रप्रभके तीर्थमें तीन लाख अस्सी हजार आर्यिकायें थीं ॥ ११६९ ॥ ३३०००० । ३८०००० ।

सुविधि और शीतल जिनेन्द्रमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें उतनी ही अर्थात् तीन लाख अस्सी हजार, तथा श्रेयांसजिनके एक लाख तीस हजार आर्यिकायें थीं ॥ ११७० ॥

३८०००० । ३८०००० । १३०००० ।

वासुपूज्य स्वामीके तीर्थमें एक लाख छह हजार और विमलदेवके तीर्थमें एक लाख तीन हजार आर्यिकायें थीं ॥ ११७१ ॥ १०६००० । १०३००० ।

अनन्तनाथ स्वामीके तीर्थमें एक लाख आठ हजार और धर्मनाथके तीर्थमें बासठ हजार चारसौ आर्यिकायें थीं ॥ ११७२ ॥ १०८००० । ६२४०० ।

शान्तिनाथके तीर्थमें साठ हजार तीनसौ और कुन्थुजिनके तीर्थमें साठ हजार तीनसौ पचास आर्यिकायें थीं ॥ ११७३ ॥ ६०३०० । ६०३५० ।

---

१ द ब चंदप्पहे. २ ब जिणिंदो. ३ द सहस्साणं. ४ द ब °तित्थ.

अरजिणवारिंदतित्थे सट्ठिसहस्साणि होंति विरदीओ । पणवण्णसहस्साणिं मल्लिजिणेसस्स तित्थम्मि ॥ ११७४
६०००० । ५५०००।

पण्णाससहस्साणिं विरदीओ सुव्वदस्स तित्थम्मि । पंचसहस्सब्भहिया चालसहस्सा णमिजिणम्मि ॥ ११७५
५०००० । ४५०००।

विगुणियवीससहस्सा णेमिस्स कमेण पासवीराणं । अडतीसं छत्तीसं होंति सहस्साणि विरदीओ ॥ ११७६
४०००० । ३८००० । ३६०००।

णभपणदुछपंचंबरपंचंककमेण तित्थकत्ताणं । सव्वाणं विरदीओ चंदुज्जलणिक्कलंकसीलाओ ॥ ११७७
५०५६२५०।

बम्हप्पकुञ्जणामा धम्मसिरी मेरुसेणमयणंता । तह रतिसेणा मीणा वरुणा घोसा य धरणा य ॥ ११७८
चारणवरसेणाओ पम्मासव्वस्सिसुव्वदाओ वि[1] । हरिसेणभाविआओ कुंथूमधुसेणपुव्वदत्ताओ ॥ ११७९
मग्गिणिजक्खिसुलोया चंदणणामाओ उसहपहुदीणं । एदा पढमगणीओ एक्केक्का सव्वविरदीओ ॥ ११८०
लक्खाणि तिण्णि सावयसंखा उसहादिअट्ठतित्थेसु । पत्तेक्कं दो लक्खा सुविहिप्पहुदीसु अट्ठतित्थेसुं ॥ ११८१
८ । ३००००० । २००००० ।

अर जिनेन्द्रके तीर्थमें साठ हजार और मल्लि जिनेन्द्रके तीर्थमें पचवन हजार आर्यिकायें थीं ॥ ११७४ ॥ ६०००० । ५५००० ।

सुव्रतके तीर्थमें पचास हजार और नमिजिनके तीर्थमें पांच हजार अधिक चालीस हजार अर्थात् पैतालीस हजार आर्यिकाये थी ॥ ११७५ ॥ ५०००० । ४५००० ।

नेमिनाथके तीर्थमें द्विगुणित बीस हजार अर्थात् चालीस हजार और क्रमसे पार्श्वनाथ एवं वीर भगवान्के तीर्थमें अड़तीस तथा छत्तीस हजार आर्यिकायें थी ॥ ११७६ ॥

४०००० । ३८००० । ३६००० ।

सब तीर्थंकरोंके तीर्थमें चन्द्रके समान उज्वल एवं निष्कलंक शीलसे सयुक्त समस्त आर्यिकायें क्रमसे शून्य, पांच, दो, छह, पांच, शून्य और पांच, इन अंकोंके प्रमाण थी ॥ ११७७ ॥

५०५६२५०।

ब्राह्मी, प्रकुब्जा[2], धर्मश्री, मेरुषेणा[3], अनन्ता[4], रतिषेणा, मीना[5], वरुणा, घोषा[6], धरणा[7], चारणी[8] (धारणा), वरसेना[9], पद्मा[10], सर्वश्री, सुव्रता[11], हरिषेणा[12], भाविता[13], कुंथुसेना[14], मधुसेना[15] (बंधुसेना[1]), पूर्वदत्ता[16] (पुष्पदत्ता), मार्गिणी, यक्षिणी[17], सुलोका[18] (सुलोचना) और चन्दना[19] नामक ये एक एक आर्यिकायें क्रमसे ऋषभादिकके तीर्थमें रहनेवाली आर्यिकाओके समूहमे मुख्य थी ॥ ११७८-११८० ॥

श्रावकोंकी संख्या ऋषभादिक आठ तीर्थंकरोंमेसे प्रत्येकके तीर्थमें तीन लाख और सुविधिनाथप्रभृति आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें दो लाख थी ॥ ११८१ ॥

ऋषभादिक८— ३००००० , सुविधिनाथप्रभृति८— २००००० ।

.....

१ द ब 'णिम्मलंक'. २ द ब बम्हप्पकुव्वणामा. ३ ब णामा. ४ द ब पम्मासत्तस्ससुद्धभाओ वि. ५ द सुविहिप्पहुदीसु.

एक्केक्कं चिय लक्खं कुंथुजिणिंदादिअट्ठतित्थेसुं । सव्वाण सावयाणं मेलिदे अडदाललक्खाणिं ॥ ११८२
८ । १००००० । ४८०००००[1] ।

पणचउतियलक्खाइं पण्णविदाओ[2] अट्ठतित्थेसुं । पुह पुह सावगिसंखा सव्वा छण्णउदिलक्खाइं ॥ ११८३
५००००० । ४००००० । ३००००० । ९६००००० ।

देवीदेवसमूहा संखातीदा हुवंति णरतिरिया । संखेज्जा एक्केके[3] तित्थे विहरंति भत्तिजुत्ता य[4] ॥ ११८४

माघस्स किण्हचोद्दसिपुव्वण्हे णियजम्मणक्खत्ते । अट्ठावयम्मि उसहो अजुदेण समं गओ णोमि[5] ॥ ११८५
१०००० ।

चेत्तस्स सुद्धपंचमिपुव्वण्हे भरणिणामरिक्खम्मि । सम्मेदे अजियजिणे मुत्तिं पत्तो[7] सहस्ससमं ॥ ११८६
१००० ।

चेत्तस्स सुद्धछट्ठीअवरण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । संपत्तो अपवग्गं संभवसामी सहस्सजुदो[8] ॥ ११८७
१००० ।

वइसाहसुक्कसत्तमिपुव्वण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । दससयमहेसिसहिदो णंदणदेवो[9] गदो मोक्खं ॥ ११८८
१००० ।

इसके आगे कुंथुनाथादि आठ तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके तीर्थमें श्रावकोंकी संख्या एक एक लाख कही गयी है । सब श्रावकोंकी संख्याको मिलानेपर समस्त प्रमाण अड़तालीस लाख होता है ॥ ११८२ ॥ कुंथुनाथप्रभृति ८—१००००० । समस्त ४८००००० ।

आठ आठ तीर्थंकरोंके तीर्थोंमें श्राविकाओंकी संख्या पृथक् पृथक् क्रमसे पांच लाख, चार लाख, और तीन लाख; तथा सम्पूर्ण श्राविकाओंकी संख्या छ्यानवे लाख कही गयी है ॥ ११८३ ॥
५००००० । ४००००० । ३००००० । ९६००००० ।

प्रत्येक तीर्थंकरके तीर्थमें असंख्यात देव-देवियोंके समूह और संख्यात मनुष्य एवं तिर्यंच जीव भक्तिसे संयुक्त होते हुए विहार किया करते हैं ॥ ११८४ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकर माघकृष्णा चतुर्दशीके पूर्वाह्नकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते कैलाशपर्वतसे दश हजार मुनियोंके साथ [मुक्तिको] प्राप्त हुए हैं । उनको मैं नमस्कार करता हूं ॥ ११८५ ॥ १००००

अजित जिनेन्द्र चैत्रशुक्ला पंचमीके दिन पूर्वाह्नकालमें भरणी नामक नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ मुक्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११८६ ॥ १००० ।

सम्भवनाथ स्वामी चैत्रशुक्ला षष्ठीके दिन अपराह्नसमयमें जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ अपवर्ग अर्थात् मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ ११८७ ॥ १००० ।

अभिनन्दनजिन वैशाखशुक्ला सप्तमीको पूर्वाह्नसमयमें अपने जन्म नक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे दशसौ महर्षियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ ११८८ ॥ १००० ।

---

१ ब एक्कं. २ ब ८४०००००. ३ द ब पण्णिदिरा. ४ द एक्केको. ५ द ब भत्तिजुत्तो. ६ द ब जोमि. ७ द ब मुत्ति पत्ता. ८ द ब सहस्सजुदा. ९ द ब देवा.

चेत्तस्स सुक्कदसमीपुव्वण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । दससयरिसिसंजुत्तो[1] सुमइस्सामी स मोक्खगदो ॥ ११८९
१०००।

फग्गुणकिण्हचउत्थीअवरण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । चउवीसाधियतियसयसहिदो पउमप्पहो देवो ॥ ११९०
३२४।

फग्गुणबहुलच्छट्ठीपुव्वण्हे पव्वदम्मि सम्मेदे । अणुराहाए पणसयजुत्तो[2] मुत्तो सुपासजिणो ॥ ११९१
५००।

सिदसत्तमिपुव्वण्हे भद्दपदे मुणिसहस्ससंजुत्तो[3] । जेट्ठासुं सम्मेदे चंदप्पहजिणवरो सिद्धो ॥ ११९२
१०००।

अस्सजुदसुक्कअट्ठमिअवरण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । मुणिवरसहस्ससहिदो सिद्धिगदो पुप्फदंतजिणो ॥ ११९३
१०००।

कत्तियसुक्के पंचमिपुव्वण्हे जम्मभम्मि सम्मेदे । णिव्वाणं संपत्तो सीयलदेवो सहस्सजुदो ॥ ११९४
१०००।

सावणियपुण्णिमाए[4] पुव्वण्हे मुणिसहस्ससंजुत्तो । सम्मेदे सेयंसो सिद्धिं पत्तो धणिट्ठासुं ॥ ११९५
१०००।

सुमतिनाथ स्वामी चैत्रशुक्ला दशमीके दिन पूर्वाह्णकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेद-शिखरसे दशसौ ऋषियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ ११८९ ॥ १००० ।

पद्मप्रभदेव फाल्गुनकृष्णा चतुर्थीके दिन अपराह्णकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे तीनसौ चौबीस मुनियोंसे सहित होते हुए मुक्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९० ॥
३२४ ।

सुपार्श्व जिनेन्द्र फाल्गुनकृष्णा षष्ठीको पूर्वाह्णसमयमें अनुराधा नक्षत्रके रहते सम्मेदपर्वतसे पांचसौ मुनियोंसे युक्त होते हुए मुक्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९१ ॥ ५०० ।

चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र भाद्रपदशुक्ला सप्तमीको पूर्वाह्णकालमें ज्येष्ठा नक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंसे संयुक्त होते हुए सम्मेदशिखरसे मुक्त हुए हैं ॥ ११९२ ॥ १००० ।

पुष्पदन्तजिन आश्विनशुक्ला अष्टमीके दिन अपराह्णकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९३ ॥ १००० ।

शीतलदेव कार्तिकशुक्ला पंचमीके पूर्वाह्णसमयमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ निर्वाणको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९४ ॥ १००० ।

भगवान् श्रेयांस श्रावणकी पूर्णिमाको पूर्वाह्णमें धनिष्ठानक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंसे सहित होते हुए सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९५ ॥ १००० ।

---

१ द ब संजुत्ता. २ द ब °जुत्ता. ३ द ब °संजुदो. ४ ब पुण्णमाए.

फग्गुणबहुले पंचमिअवरण्हे अस्सिणीसु चंपाए । रूवाहियछस्सयजुदो[1] सिद्धिगदो वासुपुज्जिणो ॥ ११९६
६०१ ।

सुक्कट्ठमीपदोसे आसाढे जम्मभम्मि सम्मेदे । छस्सयमुणिसंजुत्तो मुत्तिं पत्तो विमलसामी ॥ ११९७
६०० ।

चेत्तस्स किण्हपच्छिमदिणप्पदोसम्मि जम्मणक्खत्ते । सम्मेदम्मि अणंतो सत्तसहस्सेहिं संपत्तो ॥ ११९८
७००० ।

जेट्ठस्स किण्हचोद्दसिपच्चूसे[2] जम्मभम्मि सम्मेदे । सिद्धो धम्मजिणिंदो रूवाहियअडसएहिं जुदो ॥ ११९९
८०१ ।

जेट्ठस्स किण्हचोद्दसिपदोससमयम्मि जम्मणक्खत्ते । सम्मेदे संतिजिणो णवसयमुणिसंजुदो[3] सिद्धो ॥ १२००
९०० ।

वइसाहसुक्कपाडिवपदोससमए हि जम्मणक्खत्ते । सम्मेदे कुंथुजिणो सहस्ससहिदो गदो सिद्धिं ॥ १२०१
१००० ।

चेत्तस्स बहुलचरिमे दिणम्मि[4] णियजम्मभम्मि पच्चूसे । सम्मेदे अरदेओ सहस्ससहिदो गदो मोक्खं ॥ १२०२
१००० ।

वासुपूज्य जिनेन्द्र फाल्गुनकृष्णा पंचमीके दिन अपराह्णकालमें अश्विनीनक्षत्रके रहते छहसौ एक मुनियोंसे संयुक्त होते हुए चम्पापुरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९६ ॥ ६०१ ।

विमलनाथ स्वामी आषाढ़शुक्ला अष्टमीके दिन प्रदोषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते छहसौ मुनियोंसे संयुक्त होते हुए सम्मेदशिखरसे मुक्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९७ ॥ ६०० ।

अनन्तनाथ भगवान् चैत्रमासके कृष्णपक्षसम्बन्धी पश्चिम दिन अर्थात् अमावस्याको प्रदोषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे सात हजार मुनियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ ११९८ ॥ ७००० ।

धर्मनाथ जिनेन्द्र ज्येष्ठकृष्णा चतुर्दशीके दिन प्रत्यूषकालमें अपने जन्म नक्षत्रके रहते आठसौ एक मुनियोंसे युक्त होते हुए सम्मेदशिखरसे सिद्ध हुए हैं ॥ ११९९ ॥ ८०१ ।

शान्तिनाथ तीर्थंकर ज्येष्ठकृष्णा चतुर्दशीके दिन प्रदोषसमयमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते नौसौ मुनियोंसे संयुक्त होते हुए सम्मेदशिखरसे सिद्ध हुए हैं ॥ १२०० ॥ ९०० ।

कुंथुजिन वैशाखशुक्ला प्रतिपदाके दिन प्रदोषसमयमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंसे सहित होते हुए सम्मेदशिखरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०१ ॥ १००० ।

अरनाथ भगवान् चैत्रकृष्णा अमावस्याके दिन प्रत्यूषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंके साथ सम्मेदशिखरसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०२ ॥ १००० ।

---

१ द ब छस्सयजुदा. २ द ब °पज्जूसे. ३ द ब किण्हपदोसे ४ द ब °संजुदा सिद्धा. ५ द दिणिम्मि.

पंचमिपदोससमए फग्गुणबहुलम्मि भरणिणक्खत्ते । सम्मेदे मल्लिजिणो पंचसयसमं गदो[1] मोक्खं ॥ १२०३
५००।

फग्गुणकिण्हे बारसिपदोससमयम्मि जम्मणक्खत्ते । सम्मेदे सिद्धिगदो सुव्वददेओ सहस्ससंजुत्तो ॥ १२०४
१०००।

वइसाहकिण्हचोद्दसिपच्चूसे जम्मभम्मि सम्मेदे । णिस्सेयससंपण्णो समं सहस्सेण णमिसामी ॥ १२०५
१०००।

बहुलट्ठमीपदोसे आसाढे जम्मभम्मि उज्जंते । छत्तीसाधियपणसयसहिदो णेमीसरो सिद्धो[2] ॥ १२०६
५३६।

सिदसत्तमीपदोसे सावणमासम्मि जम्मणक्खत्ते । सम्मेदे पासजिणो छत्तीसजुदो गदो मोक्खं ॥ १२०७
३६।

कत्तियकिण्हे चोद्दसिपच्चूसे[3] सादिणामणक्खत्ते । पावाए णयरीए एक्को वीरेसरो सिद्धो ॥ १२०८
१।

उसहो चोद्दसदिवसे दुदिणं वीरेसरस्स सेसाणं । मासेण य विणिवित्ते जोगादो मुत्तिसंपण्णो ॥ १२०९
उसहो य वासुपुज्जो णेमी पल्लंकबन्धयो[4] सिद्धा । काउस्सग्गेण जिणा सेसा मुत्तिं समावण्णा ॥ १२१०

मल्लिनाथ तीर्थंकर फाल्गुनकृष्णा पंचमीको प्रदोषसमयमें भरणीनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे पांचसौ मुनियोंके साथ मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०३ ॥ ५०० ।

सुव्रतदेव फाल्गुनकृष्णा बारसके दिन प्रदोषसमयमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते एक हजार मुनियोंसे सहित होते हुए सम्मेदशिखरसे सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०४ ॥ १००० ।

नमिनाथ स्वामी वैशाखकृष्णा चतुर्दशीके दिन प्रत्यूषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते सम्मेदशिखरसे एक हजार मुनियोंके साथ निश्रेयसपदको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०५ ॥ १००० ।

भगवान् नेमीश्वर आषाढकृष्णा अष्टमीके दिन प्रदोषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते पांचसौ छत्तीस मुनियोंसे सहित होते हुए ऊर्जयन्तगिरिसे सिद्ध हुए हैं ॥ १२०६ ॥ ५३६ ।

पार्श्वनाथ जिनेन्द्र श्रावणमासमें शुक्लपक्षकी सप्तमीको प्रदोषकालमें अपने जन्मनक्षत्रके रहते छत्तीस मुनियोंसे युक्त होते हुए सम्मेदशिखरसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं ॥ १२०७ ॥ ३६ ।

भगवान् वीरेश्वर कार्तिककृष्णा चतुर्दशीके दिन प्रत्यूषकालमें स्वाति नामक नक्षत्रके रहते पावापुरसे अकेले ही सिद्ध हुए हैं ॥ १२०८ ॥ १ ।

भगवान् ऋषभदेवने चौदह दिन पहिले, महावीर स्वामीने दो दिन पहिले, और शेष तीर्थंकरोंने एक मास पूर्वमें योगसे विनिवृत्त होनेपर मुक्तिको प्राप्त किया है ॥ १२०९ ॥

भगवान् ऋषभनाथ, वासुपूज्य और नेमिनाथ पल्यंकबद्धआसनसे, तथा शेष जिनेन्द्र कायोत्सर्गसे मुक्तिको प्राप्त हुए हैं ॥ १२१० ॥

---

१ द ब °यस्समगदो. २ द सिद्धा. ३ द ब °पज्जूसे. ४ द पल्लंकउड्ढया.

वसन्ततिलकम्—

घोरट्ठकम्मणियरे दलिदूण लद्धणिस्सेयसा जिणवरा जगवंदणिज्जा।
सिद्धिं दिसंतु तुरिदं सिरिबालचंदसिद्धंतियप्पहुदिभव्वजणाण[1] सव्वे ॥ १२११

दसमंते चउसीदी कमसो अणुबद्धकेवली होंति। बाहत्तरि चउदालं सेयंसे वासुपुज्जे य ॥ १२१२

पत्तेयं ८४। से ७२। वा ४४।

विमलजिणे चालीसं णवसु तदो चउविवज्जिदा कमसो। तिण्णि त्थिय पासजिणे तिण्णि त्थिय वड्ढमाणम्मि ॥ १२१३

४०। ३६। ३२। २८। २४। २०। १६। १२। ८। ४। ३। ३।

आ सत्तमेक्कसयं उवरितिए णउदि णउदि चउसीदी। सेसेसु पुव्वसंखा हवंति अणुबद्धकेवली अहवा ॥ १२१४[1]

पत्तेयं १००। १००। १००। १००। १००। १००। १००। ९०। ९०। ९०। ९०। ८४।

४०। ३६। ३२। २८। २४। २०। १६। १२। ८। ४। ३। ३।

जिन्होंने घोर अष्ट कर्मोंके समूहको नष्ट करके निश्रेयसपदको प्राप्त कर लिया है और जो जगत्के वन्दनीय हैं ऐसे वे सर्व जिनेन्द्र शीघ्र ही, श्रीबालचन्द्र सैद्धांतिक आदि भव्यजनोंको मुक्ति प्रदान करें ॥ १२११ ॥

आदिनाथसे लेकर दशवें तीर्थंकर तक चौरासी, तथा श्रेयांस और वासुपूज्य भगवान्के क्रमसे बहत्तर और चवालीस अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥ १२१२ ॥

ऋषभादि प्रत्येकके ८४। श्रेयांस ७२। वासुपूज्य ४४।

विमलनाथ भगवान्के चालीस, फिर इसके आगे नौ तीर्थंकरोंके क्रमसे उत्तरोत्तर चार चार हीन, पार्श्वनाथ जिनेन्द्रके तीन, और वर्धमान स्वामीके भी तीन ही अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥ १२१३ ॥

विमल ४०। अनंत ३६। धर्म ३२। शान्ति २८। कुंथु २४। अर २०। मल्लि १६। सुव्रत १२। नमि ८। नेमि ४। पार्श्व ३। वीर ३।

अथवा सातवें तीर्थंकर तक एकसौ, इसके आगे तीन तीर्थंकरोंके नब्बै, पुनः नब्बै, चौरासी, और शेष तीर्थंकरोंके पूर्वोक्त संख्याप्रमाण ही अनुबद्ध केवली हुए हैं ॥ १२१४ ॥

ऋषभ १००। अजित १००। संभव १००। अभि. १००। सुमति १००। पद्म १००। सुपार्श्व १००। चन्द्र ९०। पुष्प ९०। शीतल ९०। श्रेयांस ९०। वासु. ८४। विमल ४०। अनन्त ३६। धर्म ३२। शान्ति २८। कुंथु २४। अर २०। मल्लि १६। सुव्रत १२। नमि ८। नेमि ४। पार्श्व ३। वीर ३।

१ जगवदंणिज्जं. २ द ब °चंदं °सिद्धंतियं पहुदिभव्वजणाणु. ३ ब-पुस्तके एषा गाथा नास्ति.

उसहतियाणं सिस्सा वीससहस्सा यणुत्तरेसु गदा[1]। कमसो पंचजिणेसुं तत्तो बारससहस्साणिं ॥ १२१५

अ २०००० । २०००० । २०००० । १२००० । १२००० । १२००० । १२००० । १२००० ।

तत्तो पंचजिणेसुं एक्कारसहस्सयाणि पत्तेक्कं । पंचसु सामिसु तत्तो एक्केक्के दससहस्साणिं ॥ १२१६

११००० । ११००० । ११००० । ११००० । ११००० । १०००० । १०००० । १०००० । १०००० । १०००० ।

अट्ठासीदिसयाणिं कमेण सेसेसु जिणवरिंदेसुं । गयणणभअट्ठसगसगदोअंककमेण सव्वपरिमाणं ॥ १२१७

८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० । ८८०० । संमेलिदा २७७८०० ।

। अणुत्तरं गदं ।

सट्ठिसहस्सा णवसयसहिदा सिद्धिं गदा जदीण गणा। उसहस्स अजिवपहुणो एक्कसया सत्तहत्तरिसहस्सा॥ १२१८

६०९०० । ७७१०० ।

सत्तरिसहस्सइगिसयसंजुत्ता संभवस्स इगिलक्खं । दो लक्खा एक्कसयं सीदिसहस्साणि णंदणजिणस्सा॥ १२१९

१७०१०० । २८०१०० ।

ऋषभादिक तीन तीर्थंकरोंके क्रमसे बीस बीस हजार और इसके आगे पांच तीर्थंकरोंके बारह बारह हजार शिष्य अनुत्तर विमानोंमें गये है ॥ १२१५ ॥

ऋषभ २०००० । अजित २०००० । संभव २०००० । अभि. १२००० । सुमति १२००० । पद्म १२००० । सुपार्श्व १२००० । चन्द्र १२००० ।

इसके आगे पांच तीर्थंकरोंमेंसे प्रत्येकके ग्यारह हजार और फिर पांच तीर्थंकरोंमेंसे एक एकके दश हजार शिष्य अनुत्तर विमानोंमें गये हैं ॥ १२१६ ॥

पुष्प. ११००० । शीतल ११००० । श्रेयांस ११००० । वासु. ११००० । विमल ११००० । अनंत १०००० । धर्म १०००० । शान्ति १०००० । कुंथु १०००० । अर १०००० ।

इसके आगे शेष जिनेन्द्रोंके क्रमसे अठासीसौ शिष्य अनुत्तर विमानोंमें गये हैं । अनुत्तर विमानोंमें जानेवाले इन सब शिष्योंका प्रमाण अंकक्रमसे शून्य, शून्य, आठ, सात, सात और दो, इन अंकोंसे निर्मित संख्याके बराबर है ॥ १२१७ ॥

मल्लि ८८०० । सुव्रत ८८०० । नमि ८८०० । नेमि ८८०० । पार्श्व ८८०० । वर्धमान ८८०० । सम्मिलित २७७८०० ।

अनुत्तर जानेवालोंका कथन समाप्त हुआ ।

भगवान् ऋषभनाथके साठ हजार नौसौ, और अजित प्रभुके सतत्तर हजार एकसौ यतिगण सिद्धिको प्राप्त हुए हैं ॥ १२१८ ॥ ऋ. ६०९०० । अजि. ७७१०० ।

सम्भवनाथ स्वामीके एक लाख सत्तर हजार एकसौ, और नन्दन जिनेन्द्रके दो लाख अस्सी हजार एकसौ यतिगण सिद्ध हुए हैं ॥ १२१९ ॥ सं. १७०१०० । अभि. २८०१०० ।

१ द ब गदो.

लक्खाणि तिण्णि सोलससएहिं जुत्ताणि सुमइसामिस्स ।
चोद्दससहस्ससहिदा पउमप्पहजिणवरस्स तियलक्खा[1] ॥ १२२०
३०१६०० । ३१४००० ।

पंचासीदिसहस्सा दो लक्खा छस्सया सुपासस्स । चउतीससहस्सजुदा दो लक्खा चंदपहपहुणो ॥ १२२१
२८५६०० । २३४००० ।

उणसीदिसहस्साणिं इगिलक्खं छस्सयाणि सुविहिस्स । सीदिसहस्सा छस्सयजुत्ता हि[2] सीयलस्स देवस्स ॥ १२२२
१७९६०० । ८०६०० ।

पण्णट्ठिसहस्साणिं सेयंसजिणस्स छस्सयाणिं पि । चउवण्णसहस्साइं छच्च सया वासुपुज्जस्स ॥ १२२३
६५६०० । ५४६०० ।

एक्कावण्णसहस्सा तिण्णि सयाणिं पि विमलणाहस्स । तेत्तियमेत्तसहस्सा तियसयहीणा अणंतस्स ॥ १२२४
५१३०० । ५१००० ।

उणवण्णसहस्साणिं सत्तसएहिं जुदाणि धम्मस्स । अडदालसहस्साइं चत्तारि सदाणि संतिस्स ॥ १२२५
४९७०० । ४८४०० ।

छादालसहस्साणिं अट्ठसदाणिं च कुंथुणाहस्स । सत्ततीससहस्सा दोसयजुत्ता य अरजिणिंदस्स ॥ १२२६
४६८०० । ३७२०० ।

सुमतिनाथ स्वामीके तीन लाख सोलहसौ, और पद्मप्रभ जिनेन्द्रके तीन लाख चौदह हजार मुनि सिद्ध हुए ॥ १२२० ॥ सुम. ३०१६०० । प. ३१४००० ।

सुपार्श्वनाथ भगवान्‌के दो लाख पचासी हजार छहसौ, और चन्द्रप्रभ प्रभुके दो लाख चौंतीस हजार यति मुक्त हुए ॥ १२२१ ॥ सुपा. २८५६०० । चं. २३४००० ।

सुविधिनाथ भगवान्‌के एक लाख उन्यासी हजार छहसौ, और शीतलदेवके अस्सी हजार छहसौ ऋषि मुक्तिको प्राप्त हुए ॥ १२२२ ॥ सुवि. १७९६०० । शी. ८०६०० ।

श्रेयांसजिनके पैंसठ हजार छहसौ, और वासुपूज्य भगवान्‌के चौवन हजार छहसौ मुनि मोक्षको प्राप्त हुए ॥ १२२३ ॥ श्रे. ६५६०० । वा. ५४६०० ।

विमलनाथ तीर्थंकरके इक्यावन हजार तीनसौ, और अनन्तनाथजिनके तीनसौ कम इतने ही अर्थात् इक्यावन हजार यति सिद्ध हुए ॥ १२२४ ॥ वि. ५१३०० । अन. ५१००० ।

धर्मनाथ प्रभुके उनंचास हजार सातसौ, और शान्तिनाथ स्वामीके अड़तालीस हजार चारसौ ऋषि सिद्धपदको प्राप्त हुए ॥ १२२५ ॥ ध. ४९७०० । शा. ४८४०० ।

कुंथुनाथ तीर्थंकरके छ्यालीस हजार आठसौ, और अरनाथ जिनेन्द्रके सैंतीस हजार दोसौ मुनि मुक्त हुए ॥ १२२६ ॥ कुं. ४६८०० । अर ३७२०० ।

---

१ ब तिसयलक्खा. २ द ब °सहस्सं. ३ द ब °जुत्ताहिं.

अट्ठावीससहस्सा अट्ठसदाणिं पि मल्लिणाहस्स । उणवीससहस्साइं दोण्णि सया सुव्वदजिणस्स ॥ १२२७

२८८०० । १९२०० ।

णव य सहस्सा छस्सयसंजुत्ता णमिजिणस्स सिस्सगणा । णेमिस्स अडसहस्सा बासट्ठिसयाणि पासस्स ॥ १२२८

९६०० । ८००० । ६२०० ।

चउदालसया वीरेसरस्स सव्वाण मेलिदपमाणं[1] । चउवीसदिलक्खाणिं चउसट्ठिसहस्सचउसयाणि त्ति ॥ १२२९

४४०० । २४६४४०० ।

उसहादिसोलसाणं केवलणाणप्पसूदिदिवसम्मि । पढमं चिय सिस्सगणा णिस्सेयससंपयं पत्ता ॥ १२३०

कुंथुचउक्के कमसो इगिदुतिछम्मासमयपेरंते । णमिपहुदिजिणिंदेसुं इगिदुतिछव्वाससंखाए[2] ॥ १२३१

१ । २ । ३ । ६ । १ । २ । ३ । ६ ।

सोहम्मादियउवरिमगेवज्जा जाव उवगदा सग्गं । उसहादीणं सिस्सा ताण पमाणं परूवेमो ॥ १२३२

इगिसय तिण्णिसहस्सा णवसयअब्भहियदोसहस्साणिं ।

णवसयणवयसहस्सा णवसयसंजुत्तसगसहस्साणिं ॥ १२३३

३१०० । २९०० । ९९०० । ७९०० ।

मल्लिनाथ भगवान्‌के अट्ठाईस हजार आठसौ, और सुव्रतजिनके उन्नीस हजार दोसौ यति सिद्ध हुए ॥ १२२७ ॥ म. २८८०० । सुव्र. १९२०० ।

नमिनाथ जिनेन्द्रके नौ हजार छहसौ, नेमिनाथके आठ हजार, और पार्श्वनाथ भगवान्‌के बासठसौ शिष्यगण सिद्धपदको प्राप्त हुए ॥ १२२८ ॥

न. ९६०० । ने. ८००० । पा. ६२०० ।

वीरेश्वरके चवालीससौ शिष्यगण मुक्तिको प्राप्त हुए । सब शिष्योंका सम्मिलित प्रमाण चौबीस लाख चौंसठ हजार चारसौ होता है ॥ १२२९ ॥ वीर ४४०० । सम्मिलित २४६४४०० ।

ऋषभादिक सोलह तीर्थंकरोंके शिष्यगण केवलज्ञान उत्पन्न होनेके दिन पहिले ही निश्रेयस-संपदाको प्राप्त हुए ॥ १२३० ॥

कुंथुनाथ आदिक चार तीर्थंकरोंके शिष्यगण क्रमसे एक, दो, तीन, और छह मासतक तथा नमिनाथप्रभृति चार जिनेन्द्रोंके शिष्यगण एक, दो, तीन और छह वर्षतक निश्रेयसपदको प्राप्त हुए ॥ १२३१ ॥ १, २, ३, ६ । १, २, ३, ६ ।

ऋषभादिक तीर्थंकरोंके जो शिष्य सौधर्मसे लेकर ऊर्ध्व ग्रैवेयक तक स्वर्गको प्राप्त हुए हैं, उनके प्रमाणका प्ररूपण किया जाता है ॥ १२३२ ॥

तीन हजार एकसौ, नौसौ अधिक दो हजार, नौ हजार नौसौ, सात हजार नौसौ, छह हजार चारसौ, चालीससौ, दो हजार चारसौ, चालीससौ, प्रत्येकके चारसौके साथ नौ हजार और

---

१ द ब परिमाणं. २ द ब °छम्मासंखाए.

चउसयछसहस्साणिं चालसया दो सहस्स चारि सया ।
चालसया पत्तेक्कं चारिसदेण वि य णव अड सहस्सा ॥ १२३४

६४०० । ४००० । २४०० । ४००० । ९४०० । ८४०० ।

चउसयसत्तसहस्सा चउसयअदिरित्तछस्सहस्साणिं । सगसयसंखासमधियपंचसहस्सा पण सहस्सा ॥ १२३५

७४०० । ६४०० । ५७०० । ५००० ।

तियसयचउस्सहस्सा छस्सयसंजुत्ततियसहस्साणिं । दोसयजुददोसहस्सा अट्ठसयब्भहियदोसहस्साणिं ॥ १२३६

४३०० । ३६०० । ३२०० । २८०० ।

चउसदजुददुसहस्सा दोण्णि सहस्साणि सोलससयाणिं । बारससया सहस्सं अट्ठसयाणिं जहा कमसो ॥ १२३७

२४०० । २००० । १६०० । १२०० । १००० । ८०० ।

लक्खं पंचसहस्सा अट्ठसयाणिं[1] पि मिलिदपरिमाणं । विणयसुदणियमसंजमभरिदाणं भावसमणाणं ॥ १२३८

१०५८०० ।

तियवासो[2] अडमासं पक्खं तह तदियकालअवसेसे । सिद्धो रिसहजिणिंदो वीरो तुरिमस्स तेत्तिए सेसे ॥ १२३९

वा ३, मा ८, दि १५ ।

सिद्धिं गदम्मि उसहे सायरकोडाण पण्णलक्खेसुं । वोलीणेसुं अजिओ णिस्सेयससंपयं पत्तो[3] ॥ १२४०

सा ५०००००००००००००० ।

आठ हजार अर्थात् नौ हजार चारसौ और आठ हजार चारसौ, सात हजार चारसौ, चारसौ अधिक छह हजार, सातसौ संख्यासे अधिक पांच हजार, पांच हजार, चार हजार तीनसौ, छहसौ सहित तीन हजार, दोसौ सहित तीन हजार, आठसौ अधिक दो हजार, चारसौसे युक्त दो हजार, दो हजार, सोलहसौ, बारहसौ, एक हजार, और आठसौ, इसप्रकार क्रमसे ये ऋषभादिक चौबीस तीर्थंकरोंके शिष्य सौधर्मादिकको प्राप्त हुए ॥ १२३३–१२३७ ॥

ऋ. ३१०० । अजि. २९०० । सं. ९९०० । अभि. ७९०० । सुम. ६४०० ।
प. ४००० । सुपा. २४०० । चं. ४००० । पुष्प. ९४०० । शी. ८४०० ।
श्रे. ७४०० । वा. ६४०० । वि. ५७०० । अनं. ५००० । ध. ४३०० ।
शा. ३६०० । कुं. ३२०० । अर २८०० । म. २४०० । सुव्र. २००० ।
न. १६०० । ने. १२०० । पा. १००० । व. ८०० ।

विनय, श्रुत, नियम और संयमसे युक्त इन सब भावमुनियोंका सम्मिलित प्रमाण एक लाख पांच हजार आठसौ होता है ॥ १२३८ ॥ १०५८०० ।

तृतीय कालमें तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्षके अवशिष्ट रहनेपर ऋषभ जिनेन्द्र, तथा इतना ही चतुर्थ कालमें अवशेष रहनेपर वीर प्रभु सिद्धपदको प्राप्त हुए ॥ १२३९ ॥

वर्ष ३, मास ८, दिन १५ ।

भगवान् ऋषभदेवके मुक्त हो जानेके पश्चात् पचास लाख करोड़ सागरोंके व्यतीत होनेपर अजितनाथ तीर्थंकरने निश्रेयससंपदाको प्राप्त किया ॥ १२४० ॥ सा. ५० लाख करोड़ ।

---

१ ब चारिसहस्सा पणसहस्सा. २ द ब सयाणं. ३ द ब 'वासो. ४ द ब पत्ता.

उवहीसु तीस[1] दसणवसंखेसुं कोडिलक्खपहदेसुं[2] । तत्तो कमेण संभवणंदणसुमदी गदा सिद्धिं ॥ १२४१

३०००००००००००० । १०००००००००००० । ९००००००००००८० ।

उवहिउवमाण णउदी णउसु सहस्सेसु कोडिपहदेसुं[3] ।
तत्तो गदेसु कमसो सिद्धो पउमप्पहो सुपासो य[4] ॥ १२४२

९०००००००००० । ९०००००००००० ।

णवसयणउदिणवेसुं कोडिहदेसुं समुहउवमाणं । जादेसु तदो[5] सिद्धा चंदप्पहसुविहिसीयलया[6] ॥ १२४३

९००००००००० । ९००००००००० । ९०००००००० ।

छव्वीससहस्साधियछसट्ठिलैक्खेहि सायरसएण । ऊणम्मि कोडिसायरकाले सिद्धो य सेयंसो ॥ १२४४

९९९९९०० व रिण ६६२६००० ।

चउवण्णतीसणवचउसायरउवमेसु तह अदीदेसु । सिद्धो य वासुपुज्जो कमेण विमलो अणंतधम्मा यं[8] ॥ १२४५

५४ । ३० । ९ । ४ ।

तिसु सायरोवमेसुं तिचरणपल्लूणिएसु संतिजिणो । पलिदोवमस्स अद्धे तत्तो सिद्धिं गदो कुंथू ॥ १२४६

सा ३ रिण प ३/४ | कुं प १/२ |

इसके आगे तीस लाख करोड़, दश लाख करोड़ और नौ लाख करोड़ सागरोंके चले जानेपर क्रमसे सम्भव, अभिनन्दन और सुमतिनाथ भगवान् सिद्धिको प्राप्त हुए ॥ १२४१ ॥

३० लाख करोड़ । १० लाख करोड़ । ९ लाख करोड़ ।

इसके पश्चात् नब्बे हजार करोड़ और नौ हजार करोड़ सागरोंके बीत जानेपर क्रमसे पद्मप्रभ और सुपार्श्वनाथ तीर्थंकर सिद्ध हुए ॥ १२४२ ॥ ९० हजार करोड़ । ९ हजार करोड़ ।

इसके पश्चात् एक करोड़से गुणित नौसौ, नब्बे और नौ सागरोपम अर्थात् नौसौ करोड़ सागरोपम, नब्बे करोड़ सागरोपम और नौ करोड़ सागरोपमोंके चले जानेपर क्रमसे चन्द्रप्रभ, सुविधिनाथ और शीतलनाथ भगवान् सिद्ध हुए ॥ १२४३ ॥

९०० करोड़ । ९० करोड़ । ९ करोड़ ।

छ्यासठ लाख छब्बीस हजार सौ सागर कम एक करोड़ सागरप्रमाण कालके चले जानेपर भगवान् श्रेयांस सिद्ध हुए ॥ १२४४ ॥ सा. ३३७३९००।

पश्चात् चौवन, तीस, नौ और चार सागरोपमोंके व्यतीत होनेपर क्रमसे वासुपूज्य, विमल, अनन्त और धर्मनाथ तीर्थंकर सिद्ध हुए ॥ १२४५ ॥ ५४ । ३० । ९ । ४ ।

इसके पश्चात् पौन पल्य कम तीन सागरोपमोंके व्यतीत होनेपर शान्तिनाथ जिनेन्द्र और फिर अर्द्ध पल्योपमकालके बीत जानेपर भगवान् कुंथुनाथ मुक्तिको प्राप्त हुए ॥ १२४६ ॥

सा० ३ – प. ३/४ । प. १/२ ।

---

१ द ब तीसु°. २ द ब °पहुदेसुं. ३ द ब पहुदीसु. ४ द ब सिद्धा पउमप्पहा सुपासा य. ५ द ब जादे स तदो. ६ द ब °सुहस्सी°. ७ ब छासट्ठि°. ८ ब अणंतधम्मो य.

पलिदोवमस्स पादे इगिकोडिसहस्सवस्सपरिहीणे । अरदेओ मल्लिजिणो कोडिसहस्सम्मि वासाणं ॥ १२४७

अ प १ रिण वस्स १०००००००००० । मल्लि १०००००००००० ।

४

चउवण्णछक्कपंचसु लक्खेसुं ववगदेसु वासाणं । कमसो सिद्धिं पत्ता[1] सुव्वयणमिणेमिजिणणाहा ॥ १२४८

वास ५४००००० । ६००००० । ५००००० ।

तेसीदिसहस्सेसुं पण्णाधियसगसएसु जादेसुं । तत्तो पासो सिद्धो पण्णब्भहियम्मि दोसए वीरो ॥ १२४९

८३७५० । २५० ।

। कम्मक्खयंतरं समत्तं ।

पुव्वंगब्भहियाणिं सायरउवमाणकोडिलक्खाणिं । पण्णास तित्थवट्टणकालो उसहस्स णिद्दिट्ठो[2] ॥ १२५०

५०००००००००००० पुव्वंग १ ।

पुव्वंगतयजुदाइं समुद्दउवमाण कोडिलक्खाणिं । तीसं चिय सो कालो अजियजिणिंदस्स णादव्वो ॥ १२५१

सा ३०००००००००००० पुव्वंग ३ ।

चउपुव्वंगजुदाइं समुद्दउवमाण कोडिलक्खाणिं । दसमेत्ताइं भणिदो संभवसामिस्स सो कालो ॥ १२५२

सा १०००००००००००० पुव्वंग ४ ।

पश्चात् एक हजार करोड़ वर्ष कम पाव पल्योपमके बीत जानेपर अरनाथ भगवान् और फिर एक हजार करोड़ वर्षोंके पश्चात् मल्लिनाथजिन मुक्त हुए ॥ १२४७ ॥

प. $\frac{१}{४}$ – वर्ष १००० करोड़ । १००० करोड़ ।

इसके पश्चात् चौवन लाख, छह लाख और पांच लाख वर्षोंके बीत जानेपर क्रमसे सुव्रत, नमि और नेमिनाथ जिनेन्द्र मुक्तिको प्राप्त हुए ॥ १२४८ ॥

वर्ष ५४ लाख । ६ लाख । ५ लाख ।

इसके पश्चात् तेरासी हजार सातसौ पचास वर्षोंके बीत जानेपर पार्श्वनाथ तीर्थंकर और फिर दोसौ पचास वर्षोंके बीत जानेपर वीर भगवान् सिद्ध हुए ॥ १२४९ ॥

८३७५० । २५० ।

मोक्षका अन्तर समाप्त हुआ ।

भगवान् ऋषभनाथका तीर्थप्रवर्तनकाल एक पूर्वांग अधिक पचास लाख करोड़ सागर-प्रमाण कहा गया है ॥ १२५० ॥ सा. ५० लाख करोड़ + पूर्वांग १ ।

अजितनाथ तीर्थंकरका वह तीर्थप्रवर्तनकाल तीन पूर्वांग सहित तीस लाख करोड़ सागरोपमप्रमाण जानना चाहिये ॥ १२५१ ॥ सा. ३० लाख करोड़ + पूर्वांग ३ ।

सम्भवनाथ स्वामीका वह काल चार पूर्वांग सहित दश लाख करोड़ सागरोपमप्रमाण कहा गया है ॥ १२५२ ॥ सा. १० लाख करोड़ + पूर्वांग ४ ।

---

१ द ब पत्तो. २ द ब जिणणाहं. ३ द ब णिद्दिट्ठा.

चउपुव्वंगजुदाइं वारिधिउवमाण कोडिलक्खाणिं । णवमेत्ताणिं कहिदो णंदणसामिस्स सो समओ ॥ १२५३

९०००००००००० पुव्वंग ४ ।

चउपुव्वंगब्भहिया पओहिउवमाण णउदिमेत्ताणं । कोडिसहस्सा हि पुढं सो समओ सुमइसामिस्स ॥ १२५४

९०००००००००० अंग ४ ।

चउपुव्वंगब्भहिया सिंधुवमा णवसहस्सकोडीओ । तित्थपवट्टणसमओ पउमप्पहजिणवरिंदस्स ॥ १२५५

९००००००००० अंग ४ ।

चउपुव्वंगजुदाओ णवसयकोडीओ जलहिउवमाणं । धम्मपयट्टणकालप्पमाणमेदं सुपासस्स ॥ १२५६

९००००००००० अंग ४ ।

चउपुव्वंगजुदाओ रयणायरउवमणउदिकोडीओ । णिस्सेयपयपयट्टणकालो चंदप्पहजिणस्स ॥ १२५७

९०००००००० अंग ४ ।

अडवीसपुव्वअंगाधियपल्लचउत्थभायहीणाओ । मयरायरउवमाणं णवकोडीओ समधिआओ ॥ १२५८

८९९९९९९९ प ९९९९९९९९९९९९९९९ प ३ रिण अंग २८ ।

४

अदिरेगस्स पमाणं पुव्वाणं लक्खमेक्कपरिमाणं । मोक्खस्सेणिपयट्टणकालो सिरिपुप्फदंतस्स ॥ १२५९

१००००० ।

अभिनन्दन स्वामीका वह काल चार पूर्वांग सहित नौ लाख करोड़ सागरोपमप्रमाण कहा गया है ॥ १२५३ ॥ सा. ९ लाख करोड़ + पूर्वांग ४ ।

सुमतिनाथ स्वामीका वह समय चार पूर्वांग अधिक नब्बे हजार करोड़ सागरोपमप्रमाण कहा गया है ॥ १२५४ ॥ सा. ९० हजार करोड़ + पूर्वांग ४ ।

पद्मप्रभ जिनेन्द्रका तीर्थप्रवर्तनसमय चार पूर्वांग अधिक नौ हजार करोड़ सागरोपम-प्रमाण है ॥ १२५५ ॥ सा. ९ हजार करोड़ + पूर्वांग ४ ।

सुपार्श्वनाथ तीर्थंकरके धर्मप्रवर्तनकालका प्रमाण चार पूर्वांग सहित नौसौ करोड़ सागरोपम है ॥ १२५६ ॥ सा. ९०० करोड़ + पूर्वांग ४ ।

चन्द्रप्रभजिनका निश्रेयसपदप्रवर्तनकाल चार पूर्वांग सहित नब्बे करोड़ सागरोपमप्रमाण है ॥ १२५७ ॥ सा. ९० करोड़ + पूर्वांग ४ ।

श्रीपुष्पदन्त तीर्थंकरका मोक्षमार्गप्रवर्तनकाल अट्ठाईस पूर्वांग अधिक पल्यके चतुर्थ भागसे हीन नौ करोड़ सागरोपमोंसे अधिक है । इस अधिक कालका प्रमाण एक लाख पूर्व है ॥ १२५८-१२५९ ॥

सा. ८९९९९९९९, प. ९९९९९९९९९९९९९९९$\frac{३}{४}$ - पूर्वांग २८ + पूर्व १००००० ।

१ द मोक्खस्सेण°.

पलिदोवमद्धसमधियतोयहिउवमाण एक्कसयहीणा । रयणायरुवमकोडी सीयलदेवस्स अदिरित्ता ॥ १२६०

सा ९९९९८९९ प ९९९९९९९९९९९९९९९ । १/२

अदिरेगस्स पमाणं पणुवीससहस्स होंति पुव्वाणि । छव्वीससहस्साधियवच्छरछावट्ठिलक्खपरिहीणा ॥ १२६१

पुव्व २५००० रिण व ६६२६००० ।

इगिवीसलक्खवच्छरविरहिदपल्लस्स तिचरणेणूणा । चउवण्णउवहिउवमा सेयंसजिणस्स तित्थकत्तिस्सं ॥१२६२

सा ५४ वा २१००००० रिण प ३/४

चउवण्णलक्खवच्छरऊणियपल्लेण विरहिदा होंति । तीस महण्णवउवमा सो कालो वासुपुज्जस्स ॥ १२६३

सा ३० व ५४००००० रिण प १ ।

पण्णरसलक्खवच्छरविरहिदपल्लस्स तिचरणेणूणा । णववारिहिउवमाणा सो कालो विमलणाहस्स ॥ १२६४

सा ९ व १५००००० रिण प ३/४

पण्णाससहस्साधियसगलक्खेणूणपल्लदलमेत्ते । विरहिदचउरो सायरउवमाणि अणंतसामिस्स ॥ १२६५

सा ४ व ७५०००० रिण प १/२

पण्णाससहस्साधियदुलक्खवासूणपल्लपरिहीणा । तिण्णि महण्णवउवमा धम्मे धम्मोवदेसणाकालो ॥ १२६६

सा ३ व २५०००० रिण प १ ।

शीतलनाथका तीर्थप्रवर्तनकाल अर्ध पल्योपम और एकसौ सागर कम एक करोड़ सागरोपमप्रमाण कालसे अतिरिक्त है ॥ १२६० ॥

सा. ९९९,९८९९, प. ९९९९९९९९९९९९९९९९½ ।

इस अतिरिक्त कालका प्रमाण छ्यासठ लाख छब्बीस हजार वर्ष कम पच्चीस हजार पूर्व है ॥ १२६१ ॥ पूर्व २५००० — वर्ष ६६२६००० ।

श्रेयांस जिनेन्द्रका तीर्थकर्तृत्वकाल इक्कीस लाख वर्ष कम एक पल्यके तीन चतुर्थांशसे रहित चौवन सागरोपमप्रमाण है ॥ १२६२ ॥ सा. ५४ + वर्ष २१००००० – प. ¾ ।

वासुपूज्य भगवान्का वह काल चौवन लाख वर्ष कम एक पल्यसे रहित तीस सागरोपमप्रमाण है ॥ १२६३ ॥ सा. ३० + वर्ष ५४००००० – प. १ ।

विमलनाथ तीर्थंकरका वह काल पन्द्रह लाख वर्ष कम पल्यके तीन चतुर्थांशसे हीन नौ सागरोपमप्रमाण है ॥ १२६४ ॥ सा. ९ + वर्ष १५००००० – प. ¾ ।

अनन्तनाथ स्वामीका तीर्थप्रवर्तनकाल सात लाख पचास हजार वर्ष कम अर्ध पल्यमात्रसे रहित चार सागरोपमप्रमाण है ॥ १२६५ ॥ सा. ४ + वर्ष ७५०००० – प. ½ ।

धर्मनाथ स्वामीके धर्मोपदेशका काल दो लाख पचास हजार वर्ष कम एक पल्यसे हीन तीन सागरोपमप्रमाण है ॥ १२६६ ॥ सा. ३ वर्ष २५०००० – प १ ।

---

१ द ब धम्मोवदेसणो कालो.

बारससयाणि पण्णाधियाणि संवच्छराणि पल्लद्धं । मोक्खोवदेसकालो संतिजिणिंदस्स णिद्दिट्ठं ॥ १२६७

प १ ब १२५० ।

२

णभपणदुगसगछक्काणे णवसंखवासपरिहीणो । पल्लस्स चउत्थभागो सो कालो कुंथुणाहस्स ॥ १२६८

प १ रिण ब ९९९९९९७२५० ।

४

कोडिसहस्सा णवसयतेत्तीससहस्सवस्सपरिहीणा । णिव्वाणपयपयट्टणकालपमाणं अरजिणस्स ॥ १२६९

९९९९९६६१०० ।

पणवण्णवस्सलक्खा बावण्णसहस्सछस्सयविहीणा । अपवग्गमग्गपयडणकालो सिरिमल्लिसामिस्स ॥ १२७०

वा ५४४७४०० ।

पंचसहस्सजुदाणिं छ च्चिय संवच्छराण लक्खाणिं । णिस्सेयपयपयट्टणकालो सुव्वयजिणिंदस्स ॥ १२७१

वा ६०५०००।

अडसयपुव्वसहस्सब्भहियाणं संवच्छराण पणलक्खा । तित्थावयारवट्टणकालपमाणं णमिजिणस्स ॥ १२७२

व ५०१८०० ।

चउरासीदिसहस्सा तिण्णि सया होंति तिउणचालीसा । वरधम्मपयपयट्टणकालो सिरिणेमिसामिस्स ॥ १२७३

व ८४३८० ।

शान्तिनाथ जिनेन्द्रका मोक्षोपदेशकाल अर्द्ध पल्य और बारहसौ पचास वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १२६७ ॥ प. $\frac{1}{2}$ वर्ष १२५० ।

कुंथुनाथ स्वामीका वह काल शून्य, पांच, दो, सात और छह स्थानोंमें नौ, इन अंकोंसे निर्मित संख्याप्रमाण वर्षोंसे हीन पल्यके चतुर्थभागप्रमाण है ॥ १२६८ ॥

प. $\frac{1}{4}$ – ९९९९९९७२५० ।

अरनाथ जिनेन्द्रके निर्वाणपदप्रवर्तनकालका प्रमाण तेतीस हजार नौसौ वर्ष कम एक हजार करोड़ वर्ष है ॥ १२६९ ॥ ९९९९९६६१०० ।

श्रीमल्लिनाथ स्वामीका मोक्षमार्गप्रवर्तनका काल बावन हजार छहसौसे रहित पचवन लाख वर्षप्रमाण है ॥ १२७० ॥ वर्ष ५४४७४०० ।

सुव्रत जिनेन्द्रका निश्रेयसपदप्रवर्तनकाल छह लाख पांच हजार वर्षप्रमाण है ॥ १२७१ ॥

वर्ष ६०५००० ।

नमिनाथ जिनेन्द्रके तीर्थावतारवर्तनकालका प्रमाण पांच लाख एक हजार आठसौ वर्ष है ॥ १२७२ ॥ वर्ष ५०१८०० ।

श्रीनेमिनाथ स्वामीका उत्कृष्ट धर्मपथके प्रवर्तनका काल चौरासी हजार तीनसौ और चालीसके दुगुणे अर्थात् अस्सी वर्षप्रमाण है ॥ १२७३ ॥ वर्ष ८४३८० ।

१ द ब °संग.

दोण्णि सया अडहत्तरिजुत्ता वासाण पासणाहस्स । इगिवीससहस्साणिं दुदाल वीरस्स सो कालो ॥ १२७४
वा २७८ । वास २१०४२ ।

तोदकं—

तित्थपयट्टणकालपमाणं दारुणकम्मविणासयराणं[1] । जे णिसुणंति पढंति थुणंते ते अपवग्गसुहाइं लहंते ॥ १२७५
उसहजिणे णिव्वाणे वासतए अट्ठमास मासद्धे । वोलीणम्मि पविट्ठो दुस्समसुसमो तुरिमकालो ॥ १२७६
वा ३, मा ८, दि १५ ।

तस्स य पढमपएसे कोडिपुव्वाणि आउउक्कस्सो । अडदाला पुट्ठट्ठी पणसयपणुवीसदंडया उदओ ॥ १२७७
पु ४८ । उदय ५२५ । पु १०००००००

उच्छण्णो सो धम्मो सुविहिप्पमुहेसु सत्ततित्थेसुं[2] । सेसेसु सोलसेसुं णिरंतरं धम्मसंताणं ॥ १२७८
पल्लस्स पादमद्धं तिचरणपल्लं खु तिचरणं अद्धं । पल्लस्स पादमेत्तं वोच्छेदो धम्मतित्थस्स ॥ १२७९
हुंडावसप्पिणिस्स य दोसेणं सत्त[3] होंति विच्छेदो[4] । दिक्खाहिमुहाभावे अत्थमिदो धम्मरविदेओ[5] ॥ १२८०
भरहो सगरो मघओ सणक्कुमारो य संतिकुंथुअरा । कमसो सुभउमपउमो[6] हरिजयसेणा य बम्हदत्तो य ॥ १२८१
एदे बारस चक्की पच्चक्खपरोक्खवंदणासत्ता । णिब्भरभत्तिसमग्गा सव्वाणं तित्थकत्ताणं ॥ १२८२

पार्श्वनाथ स्वामीका वह तीर्थकाल दोसौ अठत्तर वर्ष और वीर भगवान्‌का इक्कीस हजार व्यालीस वर्षप्रमाण है ॥ १२७४ ॥ वर्ष २७८ । वर्ष २१०४२ ।

जो तीक्ष्ण कर्मोंका नष्ट करनेवाले इस तीर्थप्रवर्तनकालके प्रमाणको सुनते हैं, पढ़ते हैं, और स्तुति करते हैं, वे मोक्षसुखोंको प्राप्त करते हैं ॥ १२७५ ॥

ऋषभनाथ तीर्थंकरके निर्वाण होनेके पश्चात् तीन वर्ष और साढ़े आठ मासके व्यतीत होनेपर दुषमसुषमा नामक चतुर्थ काल प्रविष्ट हुआ ॥ १२७६ ॥ वर्ष ३, मास ८, दिन १५ ।

उस चतुर्थ कालके प्रथम प्रवेशमें उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि, पृष्ठभागकी हड्डियां अड़तालीस, और शरीरकी ऊंचाई पांचसौ पच्चीस धनुषप्रमाण थी ॥ १२७७ ॥

आयु पूर्व १०००००००। पृष्ठास्थियां ४८ । ऊंचाई ध. ५२५ ।

सुविधिनाथको आदि लेकर सात तीर्थोंमें उस धर्मकी व्युच्छित्ति हुई थी और शेष सोलह तीर्थोंमें धर्मकी परंपरा निरन्तर रही है ॥ १२७८ ॥

उक्त सात तीर्थोंमें क्रमसे पाव पल्य, अर्द्ध पल्य, पौन पल्य, पल्य, पौन पल्य, अर्द्ध पल्य और पाव पल्यप्रमाण धर्मतीर्थका उच्छेद रहा था ॥ १२७९ ॥

हुण्डावसर्पिणीके दोषसे यहां सात धर्मके विच्छेद होते हैं । उस समय दीक्षाके अभिमुख होनेवालोंका अभाव होनेपर धर्मरूपी सूर्यदेव अस्तमित होगया था ॥ १२८० ॥

भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्ति, कुंथु, अर, सुभौम, पद्म, हरिषेण, जयसेन और ब्रह्मदत्त, ये क्रमसे बारह चक्रवर्ती सब तीर्थंकरोंकी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष वंदनामें आसक्त और अत्यन्त गाढ़ भक्तिसे परिपूर्ण रहे हैं ॥ १२८१-१२८२ ॥

१ द तोदिक, ब तोदक. २ द ब °विणासणराणं. ३ द सति°. ४ द ब वति. ५ द ब विच्छेदो. ६ द ब धम्मवर. ७ द ब °पउमो.

रिसहेसरस्स भरहो सगरो अजिएसरस्स पच्चक्खं । मघवा सणक्कुमारो दो चक्की धम्मसंतिविच्चाले ॥ १२८३
अह संतिकुंथुअरजिण तित्थयरा ते च चक्कवट्टित्ते । एक्को सुभउमचक्की अरमल्लीअंतरालम्मि ॥ १२८४
अह पउमचक्कवट्टी मल्लीमुणिसुव्वयाण विच्चाले । सुव्वयणमीण मज्झे हरिसेणो णाम चक्कहरो ॥ १२८५
जयसेणचक्कवट्टी णमिणेमिजिणाणमंतरालम्मि । तह बम्हदत्तणामो चक्कवई णेमिपासविच्चाले ॥ १२८६
चउसहियतीस कोट्ठा कादव्वा तिरियरूवपंतीए । उड्ढेणं बे कोट्ठा कादूणं पढमकोट्ठेसुं ॥ १२८७
पण्णरसेसु जिणिंदा णिरंतरं दोसु सुण्णया तत्तो । तीसु जिणा दो सुण्णा इगि जिण दो सुण्ण एक्क जिणो[1] ॥ १२८८
दो सुण्णा एक्क जिणो इगि सुण्णो इगि जिणो य इगि सुण्णो ।
दोण्णि जिणा इदि[2] कोट्ठा णिद्दिट्ठा तित्थकत्ताणं[3] ॥ १२८९
दो कोट्ठेसुं चक्की सुण्णं तेरससु चक्किणो छक्के ।
सुण्ण तिय चक्कि सुण्णं चक्की दो सुण्ण चक्कि सुण्णो[4] य ॥ १२९०
चक्की दो सुण्णाइं छक्खंडवईण चक्कवट्टीणं । एदे कोट्ठा कमसो संदिट्ठी एक्कदो अंका ॥ १२९१

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	१	१	१	०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	०	१	१
२	२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	२	२	२	२	२	२	०	०	२	०	२	०	०	२	०	२	०	०

पंच सया पण्णाधियचउस्सया दोसुहरिदपणसीदी । दुविहत्ता चउसीदी चालं पणतीस तीसं च ॥ १२९२

दंड ५०० । ४५० । ८५ । ८४ । ४० । ३५ । ३० ।
२ २

भरत चक्रवर्ती ऋषभेश्वरके समक्ष, सगर चक्रवर्ती अजितेश्वरके समक्ष, तथा मघवा और सनत्कुमार ये दो चक्रवर्ती धर्मनाथ और शान्तिनाथके अन्तरालमें हुए हैं। शान्तिनाथ, कुंथुनाथ और अरनाथ, ये तीन चक्रवर्ती होते हुए तीर्थंकर भी थे। सुभौम चक्रवर्ती अरनाथ और मल्लिनाथ भगवान्‌के अन्तरालमें, पद्म चक्रवर्ती मल्लि और मुनिसुव्रतके अन्तरालमें, हरिषेण नामक चक्रधर सुव्रत और नमिनाथके मध्यमें, जयसेन चक्रवर्ती नमिनाथ और नेमिनाथजिनके अन्तरालमें, तथा ब्रह्मदत्त नामक चक्रवर्ती नेमिनाथ और पार्श्वनाथ तीर्थंकरके अन्तरालमें हुए हैं ॥ १२८३-१२८६ ॥

तिरछी पंक्तिके रूपमें चौंतीस कोठा, और ऊर्ध्वरूपसे दो कोठा बना करके इनमेंसे ऊपरके पन्द्रह प्रथम कोठोंमें निरन्तर तीर्थंकर, इसके आगे दो कोठोंमें शून्य, तीन कोठोंमें तीर्थंकर, दोमें शून्य, एकमें जिन, दोमें शून्य, एकमें तीर्थंकर, दोमें शून्य, एक जिन, एक शून्य, एक जिन, एक शून्य और दो जिन, इसप्रकार ये तीर्थंकरोंके कोठे निर्दिष्ट किये गये हैं। इनसे नीचेके कोठोंमेंसे दोमें चक्रवर्ती,तेरहमें शून्य, छहमें चक्रवर्ती, फिर तीन शून्य, चक्रवर्ती, शून्य, चक्रवर्ती, दो शून्य, चक्रवर्ती, शून्य, चक्रवर्ती और फिर दो शून्य, ये छह खण्डोंके अधिपति चक्रवर्तियोंके क्रमशः कोठे हैं जिनमें संदृष्टिके लिये क्रमशः एक और दो अंक ग्रहण किये गये हैं ॥ १२८७-१२९१ ॥

(संदृष्टि मूलमें देखिये)

भरतादिक चक्रवर्तियोंकी उंचाई क्रमसे पांचसौ, पचास अधिक चारसौ, दोसे भाजित

१ द ब सुण्णं. २ द ब जिणा. ३ द ब सुण्णो. ४ द ब इगि. ५ द तित्थकत्तीणं. ६ द ब सुण्णा. ७ द ब प्रत्योः अधस्तनकोष्ठेषु सर्वत्र २स्थाने १इति पाठः ।

अट्ठावीस दुवीसं वीसं पण्णरस सत्त इय कमसो । दंडा चक्कहराणं भरहप्पमुहाण उस्सेहो ॥ १२९३

२८ । २२ । २० । १५ । ७ ।

आउकुमारमंडलिअरिजयरज्जाण संजमट्ठिदीए[1] । चक्कीण कालमाणं वोच्छामि जहाणुपुव्वीए ॥ १२९४

चउरब्भहिया सीदी बाहत्तरि पुव्वयाणि लक्खाणि । पंच तिय एक्क वच्छरलक्खाणं पंचणउदि चुलसीदी ॥ १२९५

सट्ठी तीसं दस तिय वाससहस्साणि सत्त य सयाणि । कमसो भरहादीणं चक्कीणं आउपरिमाणं ॥ १२९६

आउ पुव्व ८४००००० । पुव्व ७२००००० । वरिस ५००००० । ३००००० । १००००० ।

९५००० । ८४००० । ६०००० । ३०००० । १०००० । ३००० । ७०० ।

सत्तत्तरिलक्खाणिं पण्णाससहस्सयाणि पुव्वाणं । पणुवीससहस्साइं वासाणं ताइं विगुणाइं ॥ १२९७

पुव्व ७७००००० । ५०००० । २५००० । ५०००० ।

पणुवीससहस्साइं तेवीससहस्ससत्तसयपण्णा । इगिवीससहस्साणिं पंचसहस्साणि पंचसया ॥ १२९८

२५००० । २३७५० । २१००० । ५००० । ५०० ।

पणुवीसाधियतिसया तिसयाइं अट्ठवीस इय कमसो । भरहादिसुचक्कीणं कुमारकालस्स परिमाणं ॥ १२९९

३२५ । ३०० । २८ ।

पचासी, दोसे विभक्त चौरासी, चालीस, पैंतीस, तीस, अट्ठाईस, बाईस, बीस, पन्द्रह और सात धनुषप्रमाण थी ॥ १२९२–१२९३ ॥

उत्सेध—भरत ५०० । सगर ४५० । मघवा $\frac{5}{5}$ = ४२$\frac{1}{2}$ । सनत् $\frac{5}{5}$ = ४२ । शांति ४० । कुंथु ३५ । अर ३० । सु. २८ । प. २२ । हरि. २० । जय. १५ । ब्रह्म. ७ ।

अब अनुक्रमसे चक्रवर्तियोंकी आयु, कुमारकाल, मण्डलीककाल, अरिजय-(दिग्विजय-) काल, राज्यकाल और संयमकालके प्रमाणको कहता हूं ॥ १२९४ ॥

भरतादिक चक्रवर्तियोंकी आयुका प्रमाण क्रमसे चार अधिक अस्सी अर्थात् चौरासी लाख पूर्व, बहत्तर लाख पूर्व, पांच लाख वर्ष, तीन लाख वर्ष, एक लाख वर्ष, पंचानवे हजार, चौरासी हजार, साठ हजार, तीस हजार, दश हजार, तीन हजार और सातसौ वर्ष है ॥ १२९५–१२९६ ॥

आयु—भरत पूर्व ८४००००० । सगर पूर्व ७२००००० । मघवा वर्ष ५००००० । सनत् ३००००० । शान्ति १००००० । कुंथु ९५००० । अर ८४००० । सुभौम ६०००० । पद्म ३०००० । हरिषेण १०००० । जयसेन ३००० । ब्र. ७०० ।

सतत्तर लाख पूर्व, पचास हजार पूर्व, पच्चीस हजार वर्ष, फिर इससे दुगुणे अर्थात् पचास हजार वर्ष, पच्चीस हजार वर्ष, तेईस हजार सातसौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, पांच हजार वर्ष, पांचसौ वर्ष, तीनसौ पच्चीस वर्ष, तीनसौ वर्ष और अट्ठाईस वर्ष, इस क्रमसे भरतादिक चक्रवर्तियोंके कुमारकालका प्रमाण है ॥ १२९७–१२९९ ॥

कुमारकाल—भरत पूर्व ७७००००० । सगर पूर्व ५०००० । मघवा वर्ष २५००० । सन. ५००००। शान्ति २५०००। कुंथु २३७५०। अर २१००० । सुभौम ५०००। पद्म ५०० । हरिषेण ३२५ । जयसेन ३०० । ब्रह्मदत्त २८ ।

---

१ द ब पञ्चमविदीए.

पुह पुह वाससहस्सं पण्णाससहस्सयाणि पुव्वाणिं । पणुवीससहस्साणिं पण्णाससहस्साणि वासाणं ॥ १३००
१००० । ५००८० । २५००० । ५०००० ।
पणुवीससहस्साणिं तेवीससहस्ससत्तसयपण्णा । इगिवीससहस्साणिं पंचसहस्साणि पंचसया ॥ १३०१
२५००० । २३७५० । २१००० । ५०००० । ५०० ।
पणुवीसाधियतिसया तिसया छप्पण्ण इयकमेण पुढं । मंडलियकालमाणं भरहप्पमुहाण चक्कीणं ॥ १३०२
३२५ । ३०० । ५६ ।
अह भरहप्पमुहाणं आयुधसालासु भुवणविम्हयरा । गदजम्मंतरकयतवबलेण उप्पज्जदे चक्कं ॥ १३०३
चक्कुप्पत्तिपहिट्ठा पूजं कादूण जिणवरिंदाणं । पच्छा विजयपयाणं ते पुव्वदिसाए कुव्वंति ॥ १३०४
सुरसिंधूए तीरं धरिऊणं जंति पुव्वदिब्भाए । मरुदेवणाममण्णे णो कालादो जावमुवजलधिं ॥ १३०५
अप्पविसिऊण गंगाउववणवेदीए तोरणदारे । उत्तरमुहेण पविसिय चउरंगबलेण संजुत्ता ॥ १३०६
गंतुं पुव्वाहिमुहं दीलीलवणस्स वेदियादारे । सोवाणे चडिदूणं गंगादारम्मि गच्छंति ॥ १३०७
गंतूणं लीलाए तण्णिम्मगरम्मदिव्ववणमज्झे । पुव्वावरआयामे चउरंगबलाणि अच्छंति ॥ १३०८

एक हजार वर्षपूर्व, पचास हजार वर्षपूर्व, पच्चीस हजार वर्ष, पचास हजार वर्ष, पच्चीस हजार वर्ष, तेईस हजार सातसौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, पांच हजार वर्ष, पांचसौ वर्ष, तीनसौ पच्चीस, तीनसौ और छप्पन वर्ष, इस क्रमसे पृथक् पृथक् भरतादिक चक्रवर्तियोंके मण्डलीककालका प्रमाण है ॥ १३००–१३०२ ॥

मण्डलीककाल— भरत पूर्व १००० । सगर ५०००० । मघवा वर्ष २५००० । सन. ५०००० । शान्ति २५००० । कुंथु २३७५० । अर २१००० । सुभौम ५००० । पद्म ५०० । हरिषेण ३२५ । जयसेन ३०० । ब्रह्म. ५६ ।

पूर्व जन्ममें किये गये तपके बलसे भरतादिकोंकी आयुधशालाओंमें भुवनको विस्मित करनेवाला चक्ररत्न उत्पन्न होता है ॥ १३०३ ॥

चक्रकी उत्पत्तिसे अतिशय हर्षको प्राप्त हुए वे चक्रवर्ती जिनेन्द्रोंकी पूजा करके पश्चात् विजयके निमित्त पूर्वदिशामें प्रयाण करते है ॥ १३०४ ॥

वे गंगानदीके तटका सहारा लेकर पूर्वदिशाभागमें....(?) कितने ही कालमें, उपसमुद्रपर्यन्त जाते हैं ॥ १३०५ ॥

इसके आगे गंगानदीसम्बन्धी उपवनवेदीके तोरणद्वारमें प्रवेश न करके चतुरंग बलसे संयुक्त होते हुए वे चक्रवर्ती उत्तरमुखसे प्रवेश करके पूर्वकी ओर जानेके लिये जम्बूद्वीपसम्बन्धी उपवनवेदिकाके द्वारमें सीढ़ियोंपर चढ़कर गंगाद्वारमे होकर जाते हैं ॥ १३०६–१३०७ ॥

इसप्रकार लीलामात्रसे जाकर पूर्वसे पश्चिम तक लम्बे नदीसम्बन्धी रमणीय दिव्य वनमें चतुरंग बल ठहर जाते हैं ॥ १३०८ ॥

---

१ द ब गंगादारंति.

मंतीणं उवरोधे जलथंभं साहयंति चक्कहरे । दसवरतुरंगधरिदे अजिदंजयणामधेयरहे ॥ १३०९
आरुहिऊणं गंगादारेणं पविसिदूण अणुउवहिं । बारसजोयणमेत्तं सव्वे गच्छंति णो परदो ॥ १३१०
मागधदेवस्स तदो ओलगसालाए रयणवरकलसं । विंधंति सणामंकिदबाणेण अमोघणामेण ॥ १३११
सोदूण सरणिणादं मागधदेवो[1] वि कोधमुव्वहइ । ताहे[2] तस्स य मंती वारंते महुरसद्देण ॥ १३१२
रयणमयपडलियाए कंडं[3] घेत्तूण कुंडलादिं च । दत्ता मागधदेवो[4] पणमइ चक्कीण पयमूले ॥ १३१३
ते तस्स अभयवयणं दादूण य मागधेण सह सव्वे । पविसिय खंधावारं[5] विजयपयाणाणि कुव्वंति ॥ १३१४
तत्तो उववणमज्झे दीवस्स पदक्खिणेण ते जंति । जंबूदीवस्स पुढं दक्खिणवरवइजयंतदारंते ॥ १३१५
दारम्मि वइजयंते पविसिय लवणंबुहिम्मि[6] चक्कहरा । पुव्वं व कुणंति वसं वरतणु णामंकियसरेण ॥ १३१६
तत्तो आगंतूणं खंधावारम्मि पविसिऊणं च । दीउववणप्पदेसेणं गच्छंते सिंधुवणवेदिं ॥ १३१७
तीए तोरणदारं[7] पविसिय पुव्वं व चेट्ठदे सेण्णं । सिंधुणदीए दारं पविसिय साहंति ते पभाससुरं ॥ १३१८

वहांपर चक्रवर्ती मंत्रियोंके उपरोधसे जलस्तम्भ (जलस्तम्भिनी) विद्याको सिद्ध करते हैं। पुनः दश उत्तम घोड़ोंसे धारण किये गये अजितंजय नामक रथपर चढ़कर और गंगाद्वारसे प्रवेश कर वे सब समुद्रतटके अनुसार बारह योजनप्रमाण जाते हैं, आगे नहीं ॥ १३०९-१३१० ॥

फिर वहांसे अपने नामसे अंकित अमोघ नामक बाणद्वारा मागधदेवकी ओलगशालाके रत्नमय उत्तम कलशको भेदते हैं ॥ १३११ ॥

मागधदेव भी बाणके शब्दको सुनकर क्रोधको धारण करता है, परन्तु उस समय उसके मंत्री उसे मधुर शब्दोंके द्वारा निवारण करते हैं ॥ १३१२ ॥

तब वह मागधदेव रत्नमय पटलिकामें उस बाण और कुण्डलादिकको लेकर और उन्हें देकर चक्रवर्तियोंके चरणोंमें प्रणाम करता है ॥ १३१३ ॥

वे उसे अभयवचन देकर और मागधदेवके साथ सब कटकमें प्रवेशकर विजयके लिये प्रस्थान करते हैं ॥ १३१४ ॥

फिर वे वहांसे उपवनके बीचमें होकर द्वीपके प्रदक्षिणरूपसे जम्बूद्वीपके वैजयन्त नामक उत्तम दक्षिणद्वारके समीप तक जाते हैं ॥ १३१५ ॥

वे चक्रवर्ती वैजयन्तद्वारसे लवणाम्बुधिमें प्रवेशकर पहिलेके समान ही अपने नामांकित बाणसे वरतनु नामक देवको वशमें करते हैं ॥ १३१६ ॥

पुनः वहांसे आकर और कटकमें प्रवेशकर द्वीपोपवनके मार्गसे सिन्धुनदीसम्बन्धी वन-वेदिकाकी ओर जाते हैं ॥ १३१७ ॥

उसके तोरणद्वारमें प्रवेशकर पहिलेके समान ही सेना ठहर जाती है और वे चक्रवर्ती सिन्धुनदीके द्वारमें प्रविष्ट होकर प्रभासदेवको सिद्ध करते हैं ॥ १३१८ ॥

---

१ द ब मागधदेवा. २ द ब तादे. ३ द ब कदं. ४ द ब मागधदेवा. ५ द ब खंधादारं. ६ द लवणंबुहम्मि. ७ द ब तोरणेहिं दारं.

तत्तो पुव्वाहिमुहा दीउववणस्स दारसोवाणं । चडिदूणं वणमज्झे चलंति उवजलधिसीमंतं ॥ १३१९
तप्पणिधिवेदिदारे पंचंगबलाणि ताणि णिस्सरिया । सारितीरेण चलंते वेयड्ढगिरिस्स जाव वणवेदिं ॥ १३२०
तत्तो तव्वणवेदिं धरिदूणं जंति पुव्वदिब्भाए । तग्गिरिमज्झिमकूडप्पणिधिम्मि य वेदिदारपरियंतं ॥ १३२१
तद्दारेणं पविसिय वणमज्झे जंति उत्तराभिमुहा । रजदाचलतडवेदिं पाविय तीए वि चेट्ठंति ॥ १३२२
तीधे तग्गिरिमज्झिमकूडे वेयड्ढवेंतरो णाम । आगंतुगभयविवलो पणमिय चक्कीण पहसरइ ॥ १३२३
तग्गिरिदक्खिणभाए संठियपण्णासणयरखयरगणा । साहिय आगच्छंते पुव्विल्लयतोरणदारा ॥ १३२४
तत्तो तव्वणवेदिं धरिदूणं गंति पच्छिमाभिमुहा । सिंधुवणवेदिपासे पविसंते तग्गिरिस्स दिव्ववणं ॥ १३२५
तीधे तग्गिरिवासी कदमालो णाम वेंतरो देओ । आगंतूणं वेयड्ढगिरिदारकवाडफेडणोवायं ॥ १३२६
तस्सुवदेसवसेणं[1] सेणवई तुरगरयणमारुहिय । गहिऊण दंडरयणं णिस्सरदि सडंगबलजुत्तो ॥ १३२७
सिंधुवणवेदिदारं पविसिय गिरिवेदितोरणदारे । गच्छिय खंधपहाए[2] संचाणे चडदि[3] बलजुत्तो ॥ १३२८

वहांसे वे पूर्वाभिमुख होकर द्वीपोपवनके द्वारकी सीढ़ियोंपर चढ़कर वनके मध्यमेंसे उपसमुद्रकी सीमा तक जाते हैं ॥ १३१९ ॥

समुद्रके समीपकी वेदीके द्वारसे वे पंचांग बल निकलकर विजयार्द्धगिरिकी वनवेदिका तक नदीके तीरसे जाते हैं ॥ १३२० ॥

फिर इसके आगे उस वनवेदीका आश्रय करके पूर्वदिशामें उस पर्वतके मध्यम कूटके समीपमें वेदीद्वारपर्यन्त जाते हैं ॥ १३२१ ॥

पश्चात् उस वेदीद्वारसे प्रविष्ट होकर वनके मध्यमेंसे उत्तरकी ओर गमन करते हैं और रजताचल अर्थात् विजयार्द्धके तटकी वेदीको पाकर वहांपर ही ठहर जाते हैं ॥ १३२२ ॥

उस समय विजयार्द्धगिरिके मध्यम कूटपर रहनेवाला वैताढ्य नामक व्यन्तर देव आगन्तुक भयसे विकल होता हुआ प्रणाम करके चक्रवर्तियोंकी सेवा करता है ॥ १३२३ ॥

उस पर्वतके दक्षिणभागमें स्थित पचास नगरोंके विद्याधरसमूहोंको सिद्ध करके पूर्वोक्त तोरणद्वारसे वापिस आते हैं ॥ १३२४ ॥

इसके आगे उस वनवेदीका आश्रय करके पश्चिमकी ओर जाते हैं और सिन्धुवनवेदीके पासमें उस पर्वतके दिव्य वनमें प्रवेश करते हैं ॥ १३२५ ॥

तब उस पर्वतपर रहनेवाला कृतमाल नामक व्यन्तर देव आकरके विजयार्द्ध पर्वतके द्वार कपाटोंके खोलनेका उपाय [बतलाता है] ॥ १३२६ ॥

उसके उपदेशसे सेनापति तुरग रत्नपर चढ़कर और दण्ड रत्नको ग्रहण करके षडंगबलसहित निकलता है ॥ १३२७ ॥

वह सिन्धुवनवेदीके द्वारमें प्रवेश करके पर्वतीय वेदीके तोरणद्वारमें होकर सैन्यसहित स्कंधप्रभा (खण्डप्रपात) नामक गुफाकी सीढ़ियोंपर चढ़ता है ॥ १३२८ ॥

१ द ब तावे. २ द सोहिय. ३ द ब °तस्सुवदेसएणं. ४ ब णिब्भरदि. ५ द ब चलदि.

अवराहिमुहे गच्छिय सोवाणसएहिं दक्खिणमुहेणं। उत्तारियं सव्वबलं वच्चदि सो सरिवणरसमज्झेणं॥ १३२९
तत्तो सेणाहिवई करयलधरिदेण दंडरयणेण । अहणदि कवाडजुगलं आणाए चक्कवट्टीणं ॥ १३३०
उग्घलियकवाडजुगलब्भंतरपसरउण्हभीदीए । बारसजोयणमेत्तं तुरंगरयणेण लंघंति ॥ १३३१
गंतूण दक्खिणमुहो पडिवासिदबलम्मिं पविसेदि । पच्छा पच्छिमवयणो सेणवई गिरिवणं एदि ॥ १३३२
दक्खिणमुहेण तत्तो गिरिवणवेदीए तोरणदारे । णिस्सरिय मेच्छखंडं साहेदि य वाहिणीजुत्तो[3] ॥ १३३३
सव्वे छम्मासेहिं मेच्छणरिंदा वसम्मि कादूणं । एदि[4] हु पुव्वपहेणं वेयड्ढगुहाए दारपरियंतं ॥ १३३४
कादूण दाररक्खं देवबलं मेच्छरायपडियरिओ । पविसिय खंधावारं पणमइ[5] चक्कीण[6] पयकमले ॥ १३३५
इय दक्खिणम्मि भरहे खंडदुयं साहिदूण लीलाए । पविसंति हु चक्कधरा सिंधुणईए[7] वणं विउलं ॥ १३३६
गिरितडवेदीदारे पविसिय गिरिदाररयणसोवाणे । आरुहिदूणं वच्चदि सयलबलं तण्णईयं दोतीरे ॥ १३३७

सौ सीढ़ियोंसे पश्चिमकी ओर जाकर और फिर दक्षिणकी ओरसे सब सैन्यको उतारकर वह सेनापति नदीवनके मध्यमें होकर जाता है ॥ १३२९ ॥

तदनन्तर सेनाधिपति चक्रवर्तियोंकी आज्ञासे हस्ततलमें धारण किये हुए दण्ड रत्नसे दोनों कपाटोंको ठोकर मारता है ॥ १३३० ॥

उद्घाटित कपाटयुगलके भीतर स्थित उष्णताके भयसे बारह योजनप्रमाण क्षेत्रको तुरंग रत्नसे लांघते हैं ॥ १३३१ ॥

वह दक्षिणकी ओर जाकर प्रतिवासित सैन्यमें (पड़ावमें) प्रवेश करता है। पश्चात् वह सेनापति पश्चिमाभिमुख होकर पर्वतके वनको जाता है ॥ १३३२ ॥

पश्चात् दक्षिणमुख होकर पर्वतीय वनवेदीके तोरणद्वारमेंसे निकलकर सैन्यसे संयुक्त होता हुआ वह म्लेच्छखण्डको सिद्ध करता है ॥ १३३३ ॥

सेनापति छह महिनोंमें सब म्लेच्छ राजाओंको वशमें करके पूर्व मार्गसे वैताढ्यगुहाके द्वारपर्यन्त आता है ॥ १३३४ ॥

वहांपर देवसेनाको द्वारका रक्षक करके म्लेच्छ राजाओंसे परिचारित वह सेनापति पड़ावमें प्रविष्ट होकर चक्रवर्तीके चरणकमलोंमें नमस्कार करता है ॥ १३३५ ॥

इसप्रकार दक्षिणभरतमें दो खण्डोंको अनायास ही सिद्ध करके चक्रवर्ती सिन्धुनदीके विशाल वनमें प्रवेश करते हैं ॥ १३३६ ॥

पुनः गिरितटसम्बन्धी वेदीके द्वारमें प्रवेश करके और गिरिद्वारकी रत्नमय सीढ़ियोंपर चढ़कर सम्पूर्ण सेना उस नदीके दोनों किनारोंपरसे जाती है ॥ १३३७ ॥

१ द ब उत्तोट्ठिय. २ द ब पडिवासिद°. ३ द ब सासादि पदाहिणं जुत्तो. ४ द ब एदे. ५ द ब पणम्मि. ६ द ब चक्कीय. ७ द ब तण्णई.

दोतीरवीहिरुंदं दोदोजोयणपमाणमेक्केक्कं[1] । तेसुं महंधयारे ण सक्कदे तब्बलं गंतुं[2] ॥ १३३८
उवदेसेण सुराणं काकिणिरयणेण तुरिदमालिहियं । ससहररविबिंबाणि सेलगुहाउभयभित्तीसुं ॥ १३३९
एक्केक्कजोयणंतरलिहिदाणं ताण दिंति उज्जोवे । वच्चेदि सडंगबलं उम्मग्गणिमग्गसरियंतं ॥ १३४०
ताण सरियाण गहिरं जलप्पवाहं सुदूरविथिण्णं । उत्तरिदुं पि ण सक्कइ सयलबलं चक्कवट्टीणं ॥ १३४१
सुरउवएसबलेणं वड्ढइरयणेण रइदसंकमणे । आरुहदि सडंगबलं ताओ सरियाओ उत्तरदि ॥ १३४२
सेलगुहाए उत्तरदारेणं णिस्सरेदि बलसहिदो । णट्ठपुव्ववेदिदारे गंतुं गिरिणंदणस्स मज्झम्मि ॥ १३४३
तत्थ य पसत्थसोहे णाणातरुमंडणे[4] विउले । चित्तहरे चक्कहरा खंधावारं णिवेसंति ॥ १३४४
आणाए चक्कीणं सेणवई अवरभागमेच्छमहिं । साहिय छम्मासेहिं खंधावारं समल्लियइ ॥ १३४५
णिग्गच्छंते चक्की गिरिवणवेदीय दारमग्गेणं । मज्झम्मि मेच्छखंडप्पसाहणट्ठं बलेण जुदा ॥ १३४६
मेच्छमहिं पहिदेहिं[5] तेहिं सह मेच्छणरवई सव्वे । कुलदेवदाबलेणं जुज्झं कुव्वंति घोरयरं ॥ १३४७

दोनों तीरकी वीथियोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार दो दो योजनप्रमाण है। उनमें महा अन्धकारके होनेसे चक्रवर्तीका सैन्य आगे जानेके लिये समर्थ नहीं होता है ॥ १३३८ ॥

तब देवोंके उपदेशसे विजयार्द्ध पर्वतकी गुफाकी दोनों भित्तियोंपर काकिणी रत्नसे शीघ्र ही चन्द्रकिरण और सूर्यमण्डलोंको लिख दिया ॥ १३३९ ॥

एक एक योजनके अन्तरालसे लिखे हुए उन बिंबोंके प्रकाश देनेपर षडंग बल उन्मग्न-निमग्न नदियों तक जाता है ॥ १३४० ॥

उन नदियोंके गहरे और दूर तक विस्तीर्ण जलप्रवाहको उतरनेके लिये चक्रवर्तियोंका सकल सैन्य समर्थ नहीं होता ॥ १३४१ ॥

तब देवके उपदेशबलसे बढ़ई रत्नके द्वारा पुलकी रचना करनेपर षडंग बल पुलपर चढ़ता है और उन नदियोंको पार करता है ॥ १३४२ ॥

इसप्रकार आगे गमन करते हुए नदीके पूर्व वेदीद्वारसे पर्वतवनके मध्यमें पहुंचनेके लिये चक्रवर्ती सैन्यसहित विजयार्द्धकी गुफाके उत्तरद्वारसे निकलता है ॥ १३४३ ॥

वहां चक्रवर्ती प्रशस्त शोभाको प्राप्त, विस्तृत एवं मनोहर तथा नाना वृक्षोंसे मंडित वनमें सैन्यको ठहराते हैं ॥ १३४४ ॥

पुनः चक्रवर्तियोंकी आज्ञासे सेनापति पश्चिमभागके म्लेच्छखण्डको वशमें करके छह मासमें पड़ावमें सम्मिलित होजाता है ॥ १३४५ ॥

पश्चात् मध्यम म्लेच्छखण्डको सिद्ध करनेके लिये चक्रवर्ती सैन्यसहित पर्वतीय वनवेदीके द्वारमार्गसे निकलते हैं ॥ १३४६ ॥

उस समय म्लेच्छमहीकी ओर प्रस्थित हुए उनके साथ सब म्लेच्छ राजा कुलदेवताओंके बलसे अतिशय घोर युद्ध करते हैं ॥ १३४७ ॥

१ द पमाणमेक्केक्कं. २ द ब तब्बलं भयभित्तीसु. ३ द ब ससिकर. ४ द ब 'तरुसंडणे. ५ द ब पहिरेहिं.

जेत्तूण मेच्छराए तत्तो सिंधूए तीरमग्गेणं । गंतूण उत्तरमुहा सिंधूदेविं कुणंति वसं ॥ १३४८
पुव्वाहिमुहा तत्तो हिमवंतवणस्स वेदिमग्गेणं । हिमवंतकूडपणिहीपरियंतं जाव गंतूणं ॥ १३४९
णियणामंकिदइसुणा चक्कहरा विंधिदूण साहंति । हिमवंतकूडसंठियवेंतरहिमवंतणामसुरं ॥ १३५०
अह दक्खिणभाएणं वसहगिरिं जाव ताव वच्चंति । तग्गिरितोरणदारं पविसंते णियणणामलिहणट्ठं ॥ १३५१
बहुविजयपसत्थीहिं गयचक्कीणं णिरंतरं भरिदं । वसहगिरिं ते सव्वे पदाहिणेणं पुलोवंति[1] ॥ १३५२
णियणामलिहणठाणं तिलमेत्तं पव्वए[2] अपावंता । गलिदविजयाभिमाणा चक्की चिंताए चेट्ठंति ॥ १३५३
मंतीणं अमराणं उवरोधवसेण पुव्वचक्कीणं । णामाणि पुंछठाणे णिण्णासिय दंडरयणेणं ॥ १३५४
लिहदूणं णियणामं तत्तो गंतूण उत्तरमुहेणं । पाविय गंगाकूडं गंगादेविं कुणंति वसं ॥ १३५५
अह दक्खिणभाएणं गंगासरियाए तीरमग्गेणं । गंतूणं चेट्ठंते वेयड्ढवणम्मि चक्कहरा ॥ १३५६
आणाए चक्कीणं तिमिसगुहाए कवाडजुगलं पि । उग्घाडिय सेणवई पुव्वं पिव मेच्छखंडं पि ॥ १३५७
साहिय तत्तो पविसिय खंधावारं पसण्णभत्तमणा । चक्कीण चलणकमले पणमंति कुणंति दासत्तं ॥ १३५८

अनन्तर वे चक्रवर्ती म्लेच्छ राजाओंको जीतकर सिन्धुनदीके तटवर्ती मार्गसे उत्तरकी ओर जाकर सिन्धुदेवीको वशमें करते हैं ॥ १३४८ ॥

इसके पश्चात् पूर्वाभिमुख होते हुए हिमवान् पर्वतसम्बन्धी वनके वेदीमार्गसे हिमवान् कूटके समीप तक जाकर वे चक्रवर्ती अपने नामसे अंकित बाणके द्वारा वेधकर हिमवान् कूटपर स्थित हिमवान् नामक व्यन्तर देवको सिद्ध करते हैं ॥ १३४९–१३५० ॥

अनन्तर वे दक्षिणभागसे वृषभगिरिपर्यन्त जाकर अपना नाम लिखनेके लिये उस पर्वतके तोरणद्वारमें प्रवेश करते हैं ॥ १३५१ ॥

वहां जाकर गत चक्रवर्तियोंकी बहुतसी विजयप्रशस्तियोंसे निरन्तर भरे हुए वृषभगिरिको वे सब प्रदक्षिणरूपसे देखते हैं ॥ १३५२ ॥

पुनः निज नामको लिखनेके लिये पर्वतपर तिलमात्र भी स्थान न पाकर चक्रवर्ती विजयाभिमानसे रहित होकर चिन्तायुक्त खड़े रह जाते हैं ॥ १३५३ ॥

तब मंत्रियों और देवताओंके उपरोधवश एक स्थानमें पूर्व चक्रवर्तियोंके नामोंको दण्ड रत्नसे नष्ट करके और अपना नाम लिखकर वहांसे उत्तरकी ओर जाते हुए गंगाकूटको पाकर गंगादेवीको वशमें करते हैं ॥ १३५४–१३५५ ॥

इसके पश्चात् वे चक्रधर गंगानदीके तटवर्ती मार्गसे दक्षिणकी ओर जाकर विजयार्द्ध पर्वतके वनमें ठहर जाते हैं ॥ १३५६ ॥

पुनः चक्रवर्तियोंकी आज्ञासे सेनापति तिमिश्रगुफाके दोनों कपाटोंको खोलकर और पूर्व म्लेच्छखण्डको भी वशमें करके वहांसे कटकमें प्रवेश कर प्रसन्न एवं भक्तिसे युक्त चित्तवाले होते हुए चक्रवर्तियोंके चरणकमलोंमें प्रमाण करते एवं दासत्वको प्रगट करते हैं ॥ १३५७–१३५८ ॥

१ द ब पुदोवंति. २ द ब 'लिहणाणं. ३ द ब पुव्वए.

वेयड्ढउत्तरदिसासंठियणयराण खयरराया[1] य । चक्कीण चलणकमले पणमंति कुणंति दासत्तं ॥ १३५९
इय उत्तरम्मि भरहे भूचरखचरादि साहिय समग्गं । वच्चंति बलेण जुदा गंगाए जाव वणवेदिं ॥ १३६०
तव्वेदीए दारे तीए उववणखिदीसु लीलाए । पविसिय बलं समग्गं णिक्कामदि दक्खिणमुहेणं ॥ १३६१
गिरितडवेदीदारं गच्छिय गुहदाररयणसोवाणे । चडिय सडंगबलं तं वच्चदि णइउभयतीरेसुं ॥ १३६२
तग्गिरिदारं पविसिय दोतीरेसुं णईए उभयतडे । वच्चदि दोद्दो जोयणमेत्ते रुंदत्ततीरवीहीणं ॥ १३६३
पुव्वं व गुहामज्झे गंतूणं दक्खिणेण दारेणं । णिक्कलिय सडंगबलं गंगावणमज्झमायादि[3] ॥ १३६४
णइवणवेदीदारे गंतूणं गिरिवणस्स मज्झम्मि । चेट्ठंते चक्कहरा खंधावारेण परियरिया ॥ १३६५
आणाए चक्कीणं सेणवई पुव्वमेच्छखंडं पि । छहिं[4] मासेहिं साहिय खंधावारं समल्लियदि ॥ १३६६
तग्गिरिवणवेदीए तोरणदारेण दक्खिणमुहेणं । णिक्कलिय चक्कवट्टी णियणियणयरेसु पविसंति ॥ १३६७

विजयार्द्धकी उत्तरदिशामें स्थित नगरोंके विद्याधर राजा भी चक्रवर्तियोंके चरणकमलोंमें नमस्कार करते और दासत्वको स्वीकार करते हैं ॥ १३५९ ॥

इसप्रकार वे चक्रवर्ती उत्तरभरतमें सम्पूर्ण भूमिगोचरी और विद्याधरोंको वशमें करके सैन्यसे युक्त होते हुए गंगाकी वनवेदी तक जाते हैं ॥ १३६० ॥

उस वेदीके द्वारसे उसकी उपवनभूमियोंमें लीलासे प्रवेश करके समस्त सैन्य दक्षिण-मुखसे निकलता है ॥ १३६१ ॥

तत्पश्चात् पर्वतकी तटवेदीके द्वार तक जाकर और फिर गुफाद्वारके रत्नसोपानोंपर चढ़कर वह षडंग बल नदीके दोनों तीरोंपरसे जाता है ॥ १३६२ ॥

उस पर्वतके द्वारमेंसे प्रवेश करके वह सैन्य नदीके दोनों ओर दो दो योजन विस्तारवाली तटवीथियोंपरसे जाता है ॥ १३६३ ॥

पूर्वके समान ही गुफाके बीचमेंसे जाकर और दक्षिणद्वारसे निकलकर वह षडंग बल गंगावनके मध्यमें आ पहुंचता है ॥ १३६४ ॥

इसके पश्चात् सैन्यसे पारिवारित चक्रवर्ती नदीकी वनवेदीके द्वारमेंसे जाकर पर्वतसम्बन्धी वनके मध्यमें ठहर जाते हैं ॥ १३६५ ॥

पुनः चक्रवर्तियोंकी आज्ञासे सेनापति छह मासमें पूर्व म्लेच्छखण्डको भी वशमें करके स्कन्धावारमें आ मिलता है ॥ १३६६ ॥

अनन्तर चक्रवर्ती उस पर्वतकी वनवेदीके दक्षिणमुख तोरणद्वारसे निकलकर अपने अपने नगरोंमें प्रवेश करते हैं ॥ १३६७ ॥

---

१ द °रायाए. २ [रंदुत्त°] ३ द ब गंतावण°. ४ द ब छट्ठे.

सट्ठि तीसं दस दस वाससहस्सा सणक्कुमारंतं । अड छच्चउ पण ति सया कमेण तत्तो य पउमंतं ॥ १३६८

६०००० । ३०००० । १०००० । १०००० । ८०० । ६०० । ४०० । ५०० । ३०० ।

पण्णब्भहियं च सयं सयमेक्कं सोलसं पि पत्तेयं । हरिसेणप्पमुहाणं परिमाणं विजयकालस्स ॥ १३६९

१५० । १०० । १६ ।

। एवं चक्कहराणं विजयकालो समत्तो[1] ।

अह णियणियणयरसुं चक्कीण रमंतयाण लीलाए । विभवस्सं[2] य लवमेत्तं वोच्छामि जहाणुपुव्वीए ॥ १३७०

आदिमसंहडणजुदा सव्वे तवणिज्जवण्णवरदेहा । सयलसुलक्खणभरिया समचउरस्संगसंठाणा[3] ॥ १३७१

सव्वाओ मणहराओ अहिणवलावण्णरूवरेहाओ । छण्णउदिसहस्साइं पत्तेक्कं होंति जुवदीओ ॥ १३७२

९६०००।

तासुं अज्जाखंडे बत्तीससहस्सराजकण्णाओ । खेचरराजसुदाओ तेत्तियमेत्ताओ मेच्छभूवाओ ॥ १३७३

३२००० । ३२००० । ३२००० ।

एक्केक्कजुवइरयणं एक्केक्काणं हवेदि चक्कीणं । भुंजंति हु तेहि समं संकप्पवसंगदं सोक्खं ॥ १३७४

सनत्कुमार चक्रवर्तीपर्यन्त क्रमसे साठ हजार, तीस हजार, दश हजार, और पुनः दश हजार वर्ष विजयकालका प्रमाण है। इसके आगे पद्म चक्रवर्ती तक वह क्रमसे आठसौ, छहसौ, चारसौ, पांचसौ और तीनसौ वर्ष है। पुनः हरिषेणादिक चक्रवर्तियोंमेंसे प्रत्येकका क्रमसे एकसौ पचास, एकसौ और सोलह वर्ष ही विजयकालका प्रमाण है ॥ १३६८-१३६९ ॥

भरत ६००००, सगर ३००००, मघवा १००००, सन. १००००, शांति ८००, कुंथु ६००, अर ४००, सुभौम ५००, पद्म ३००, हरि. १५०, जय. १००, ब्रह्म. १६ ।

इसप्रकार चक्रधरोंके विजयकालका वर्णन समाप्त हुआ।

इसके पश्चात् अपने अपने नगरोंमें लीलासे रमण करते हुए उन चक्रवर्तियोंके विभवका यहां अनुक्रमसे लवमात्र कथन किया जाता है ॥ १३७० ॥

सब चक्रवर्ती आदिके वज्रवृषभनाराचसंहननसे सहित, सुवर्णके समान वर्णवाले उत्तम शरीरके धारक, सम्पूर्ण सुलक्षणोंसे युक्त, और समचतुरस्रसंस्थानसे संयुक्त होते हैं ॥ १३७१ ॥

इनमेंसे प्रत्येक चक्रवर्तीके मनको हरण करनेवाली और अभिनव लावण्यरूपरेखासे युक्त ऐसी सब छ्यानबै हजार युवतियां होती हैं ॥ १३७२ ॥ ९६०००।

उनमेंसे बत्तीस हजार आर्यखण्डकी राजकन्यायें, इतनी ही विद्याधर राजाओंकी सुतायें, और इतनी ही म्लेच्छकन्यायें भी होती हैं ॥ १३७३ ॥

राजकन्या ३२००० । विद्याधरकन्या ३२००० । म्लेच्छकन्या ३२००० ।

प्रत्येक चक्रवर्तीके एक एक युवति रत्न होता है। उनके साथ वे संकल्पित (यथेच्छ) सुखको भोगते हैं ॥ १३७४ ॥

---

१ द ब °काल समत्ता. २ द ब वीभस्स. ३ द ब समचउरंगस्स संठाणा.

संखेज्जसहस्साइं पुत्तापुत्तीओ होंति चक्कीणं । गणबद्धदेवणामा बत्तीससहस्स ताण अभिधाणा ॥ १३७५
गण ३२०००।

तणुतं च महाणिसिया कमसो तिण्णयाइं सट्ठिजुत्ताइं । चोद्दसवररयणाइं जीवाजीवप्पभेददुविहाइं ॥ १३७६
३६०। ३६०। १४।

पवणंजयविजयगिरी भद्दमुहो तह य कामउट्ठी य । होंति अउज्झु सुभद्दा बुद्धिसमुद्दो त्ति पत्तेयं ॥ १३७७
तुरएभद्दत्थिरयणा विजयद्धगिरिम्मि होंति चत्तारि । अवसेसजीवरयणा णियणियणयरेसु जम्मंति ॥ १३७८

छत्तासिदंडचक्का काकिणिचिंतामणि त्ति रयणाइं । चम्मरयणं च सत्तम इय णिज्जीवाणि रयणाणिं ॥ १३७९
आदिमरयणचउक्कं आयुधसालाय उप्पदे[4] तत्तो। तिण्णि वि रयणाइ पुढं सिरिगिहे ताण णाम इमे ॥ १३८०
सूरप्पहभद्दमुहा पयड्ढवेगा सुदरिसिणा तुरिमो । चिंताजणणी चूडामणि वज्जमओ त्ति पत्तेयं ॥ १३८१
जह जह जोग्गट्ठाणे उप्पण्णा चोद्दसाइं रयणाइं । इदि केई आयरिया णियमसरूवं ण मण्णंति ॥ १३८२
[पाठान्तरम् ।]

चक्रवर्तियोंके संख्यात हजार पुत्र-पुत्रियां होती हैं और बत्तीस हजार गणबद्ध नामक देव उनके परिचारक (?) होते हैं ॥ १३७५ ॥ ३२००० ।

उनके तनुत्र (शरीररक्षक) और महानसिक अर्थात् रसोइये क्रमसे तीनसौ साठ, तथा चौदह उत्तम रत्न होते हैं। ये रत्न जीव और अजीवके भेदसे दो प्रकारके हुआ करते हैं ॥१३७६॥
तनुत्र ३६० । रसोइया ३६० । रत्न १४ ।

पवनंजय (अश्व), विजयगिरि (गज), भद्रमुख (गृहपति), कामवृष्टि (स्थपति), अयोध्य (सेनापति), सुभद्रा (युवति) और बुद्धिसमुद्र (पुरोहित), ये प्रत्येक जीवरत्न है ॥१३७७॥

इनमेंसे तुरग, हाथी और स्त्री, ये तीन रत्न विजयार्द्ध पर्वतपर तथा अवशिष्ट चार जीवरत्न अपने अपने नगरोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ १३७८ ॥

छत्र, असि, दण्ड, चक्र, काकिणी, चिन्तामणि और चर्म, ये सात रत्न निर्जीव होते हैं ॥ १३७९ ॥

इनमेंसे आदिके चार रत्न आयुधशालामें और तीन रत्न श्रीगृहमें उत्पन्न होते हैं । उन सातों रत्नोंके नाम ये हैं ॥ १३८० ॥

सूर्यप्रभ, भद्रमुख, प्रवृद्धवेग, चौथा सुदर्शन, चिन्ताजननी और चूडामणि, इनमेंसे प्रत्येक वज्रमय होता है ॥ १३८१ ॥

ये चौदह रत्न यथायोग्य स्थानमें उत्पन्न होते हैं । इसप्रकार कोई कोई आचार्य इनके नियमरूपको नहीं भी मानते हैं ॥ १३८२ ॥ [पाठान्तर ।]

---

१ द ब तणुतं ज. २ द जीवप्पभेददुविहाइं. ३ द ब भद्दमहा. ४ द ब उपदे.

चक्कीण चामराणिं जक्खा वत्तीस विक्खिवंति तहा । आउहा कोडीओ पत्तेक्कं बंधुकुलमाणं ॥ १३८३

३२ । ३५०००००० ।

कालमहकालपंडू माणवसंखा य पउमणइसप्पा । पिंगलणाणारयणा णवणिहिणो सिरिपुरे जादा ॥ १३८४

कालप्पमुहा णाणारयणंता ते णईमुहे णिहिणो । उप्पज्जदि इदि केई पुव्वाइरिया परूवेंति ॥ १३८५

पाठान्तरम् ।

उडुजोग्गदव्वभायणधण्णायुहतूरवत्थहम्माणिं । आभरणरयणणियरा णवणिहिणो देंति[1] पत्तेयं ॥ १३८६

दक्खिणमुहआवत्ता चउवीस हवंति धवलवरसंखा । एक्कोडिकोडिअंका हलाणि पुढवी वि छक्खंडा ॥१३८७

सं २४ । ह १०००००००००००००००। पु ६ ।

भेरी पडहा रम्मा बारस पुह पुह हवंति चक्कीणं । बारस जोयणमेत्ते देसे सुव्वंतवरसद्दा[2] ॥ १३८८

कोडितियं गोसंखा थालीओ एक्ककोडिमेत्ताओ । चुलसीदी लक्खाइं पत्तेक्कं भद्दवारणरहाणिं[3] ॥ १३८९

३०००००००। १०००००००। ८४०००००।

अट्ठारस कोडीओ तुरया चुलसीदिकोडिवरवीरा । खयरा बहुकोडीओ अडसीदिसहस्समेच्छणरणाहा ॥ १३९०

१८०००००००। ८४०००००००। ८८०००।

चक्रवर्तियोंके चामरोंको बत्तीस यक्ष ढुराया करते हैं। तथा प्रत्येकके बन्धुकुलका प्रमाण साढ़े तीन करोड़ होता है ॥ १३८३ ॥ यक्ष ३२ । बन्धुकुल ३५०००००० ।

काल, महाकाल, पाण्डु, मानव, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और नानारत्न, ये नौ निधियां श्रीपुरमें उत्पन्न हुआ करती हैं ॥ १३८४ ॥

कालनिधिको आदि लेकर नानारत्नपर्यंत वे निधियां नदीमुखमें उत्पन्न होती हैं, इस-प्रकार भी कितने ही पूर्वाचार्य निरूपण करते हैं ॥ १३८५ ॥ पाठान्तर ।

इन नौ निधियोंमेंसे प्रत्येक क्रमसे ऋतुके योग्य द्रव्य, भाजन, धान्य, आयुध, वादित्र, वस्त्र, हर्म्य, आभरण और रत्नसमूहोंको दिया करती हैं ॥ १३८६ ॥

चक्रवर्तियोंके चौबीस दक्षिणमुखावर्त धवल व उत्तम शंख, एक कोड़ाकोड़ी हल और छह खण्डरूप पृथिवी होती है ॥१३८७॥ शंख २४ । हल १०००००००००००००००। पृथिवी ६ ।

चक्रवर्तियोंके रमणीय भेरी और पटह पृथक् पृथक् बारह होते हैं, जिनका उत्तम शब्द बारह योजनप्रमाण देशमें सुना जाता है ॥ १३८८ ॥

उनकी गौओंकी संख्या तीन करोड़, एक करोड़ थालियां तथा भद्र हाथी एवं रथोंमेंसे प्रत्येक चौरासी लाखप्रमाण होते हैं ॥ १३८९ ॥

गाय ३००००००० । थाली १००००००० । हाथी ८४००००० । रथ ८४००००० ।

इसके अतिरिक्त अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी करोड़ उत्तम वीर, अनेकों करोड़ विद्याधर और अठासी हजार म्लेच्छ राजा होते हैं ॥ १३९० ॥

तुरग १८००००००० । वीर ८४०००००००। म्लेच्छ नरनाथ ८८०००।

---

१ द दिंति. २ द ब वरसद्दं. ३ द ब वहाणि.

सव्वाण मउडबद्धा बत्तीस सहस्सयाणि पत्तेक्कं । तेत्तियमेत्ता णाडयसाला संगीयसालाओ ॥ १३९१

३२००० । ३२००० । ३२००० ।

होंति पदाणीया दुगुणियचउवीसकोडिपरिमाणा । बत्तीससहस्साणिं देसा चक्कीण पत्तेक्कं ॥ १३९२

४८०००००००० । ३२००० ।

छण्णउदिकोडि गामा णयराहं पंचहत्तरिसहस्सा । अडहददुसहस्साणिं खेडा सव्वाण पत्तेक्कं ॥ १३९३

९६०००००००० । ७५००० । १६००० ।

चउवीससहस्साणिं कव्वडणामा मडंबणामा य । चत्तारि सहस्साहं अडदालसहस्सपट्टणाहं पि ॥ १३९४

२४००० । ४००० । ४८००० ।

णवणउदिसहस्साहं संखा दोणामुहाण चक्कीसु । संवाहाणि चउद्दससहस्समेत्ता य पत्तेक्कं ॥ १३९५

९९००० । १४००० ।

छप्पण्णंतरदीवा कुक्खिणिवासा हवंति सत्तसया । अडवीससहस्साहं दुग्गादीआणि सव्वेसुं ॥ १३९६

५६ । ७०० । २८००० ।

दिव्वपुरं रयणाणिहिं चमुभायणभोयणाइ सयणिज्जं । आसणवाहणणट्टा दसंगभोगा इमे ताणं ॥ १३९७

सब चक्रवर्तियोंमेंसे प्रत्येकके बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा, इतनी ही नाट्यशालायें और इतनी ही संगीतशालायें भी होती हैं ॥ १३९१ ॥

मुकुटबद्ध ३२००० । नाट्यशाला ३२००० । संगीतशाला ३२००० ।

प्रत्येक चक्रवर्तीके पदानीक (पदाति) दुगुणित चौबीस अर्थात् अड़तालीस करोड़ और देश बत्तीस हजार होते हैं ॥ १३९२ ॥ पदाति ४८०००००००० । देश ३२००० ।

सब चक्रवर्तियोंमेंसे प्रत्येकके छयानबे करोड़ ग्राम, पचत्तर हजार नगर और आठसे गुणित दो अर्थात् सोलह हजार खेड़े (खेट) होते हैं ॥ १३९३ ॥

ग्राम ९६०००००००० । नगर ७५००० । खेट १६००० ।

कर्वट नामक चौबीस हजार, मटंब नामक चार हजार और पट्टन अड़तालीस हजार होते हैं ॥ १३९४ ॥ कर्वट २४००० । मटंब ४००० । पट्टन ४८००० ।

प्रत्येक चक्रवर्तीके निन्यानबे हजार द्रोणमुख और चौदह हजारप्रमाण संवाहन हुआ करते हैं ॥ १३९५ ॥ द्रोणमुख ९९००० । संवाहन १४००० ।

सब चक्रवर्तियोंके छप्पन अन्तरद्वीप, सातसौ कुक्षिनिवास और अट्ठाईस हजार दुर्गादिक होते हैं ॥ १३९६ ॥ अन्तर्द्वीप ५६ । कुक्षिनिवास ७०० । दुर्गादि २८००० ।

दिव्य[1] पुर, रत्न[2], निधि[3], चमू[4] (सैन्य), भोजन[5], भोजन[6], शय्या[7], आसन[8], वाहन[9] और नाट्य[10], ये उन चक्रवर्तियोंके दशांग भोग होते हैं ॥ १३९७ ॥

---

१ द ब चमुहभायण°.

वइपरिवेढो[1] गामो णयरं चउगोउरेहि रमणिज्जं । गिरिसरिकदपरिवेढं[2] खेडं गिरिवेढिदं[3] च कव्वडयं ॥१३९८
पणसयपमाणगामप्पहाणभूदं मडंबणामं खु । वररयणाणं जोणी पट्टणणामं त्तिणिद्दिट्ठं ॥ १३९९
दोणमुहाभिधाणं सरिवइवेलाए वेढियं[4] जाण । संवाहणं ति बहुविहरण्णमहासेलसिहरत्थं ॥ १४००

[। एवं विभवो समत्तो ।]

भरहे छलक्खपुव्वा इगिसट्ठिसहस्सवासपरिहीणा । तीससहस्सूणाणि सत्तरि लक्खाणि पुव्व सगरम्मि ॥ १४०१

६००००० रिण वरिस ६१००० । सगर पुव्व ७०००००० रिण ३०००० ।

णउदिसहस्सजुदाणिं लक्खाणिं तिण्णि मघवणामम्मि । णउदिसहस्सा वासं सणक्कुमारम्मि चक्कहरे ॥ १४०२

३९०००० । ९०००० ।

चउवीससहस्साणिं वासाणिं दोसयाणि संतिम्मि । तीवीससहस्साइं इगिसयपण्णाधियाइं कुंथुम्मि ॥ १४०३

२४२०० । २३१५० ।

वीससहस्सा वस्सा छस्सयजुत्ता अरम्मि चक्कहरे । उणवण्णसहस्साइं[5] पणसयजुत्ता सुभउम्मि ॥ १४०४

२०६०० । ४९५०० ।

वृतिसे वेष्टित ग्राम, चार गोपुरोंसे रमणीय नगर, पर्वत और नदीसे घिरा हुआ खेट, और केवल पर्वतसे वेष्टित कर्वट कहलाता है ॥ १३९८ ॥

जो पांचसौ ग्रामोंमें प्रधानभूत होता है उसका नाम मटंब, और जो उत्तम रत्नोंकी योनि होता है उसका नाम पट्टन कहा गया है ॥ १३९९ ॥

समुद्रकी वेलासे वेष्टित द्रोणमुख और बहुत प्रकारके अरण्योंसे युक्त महापर्वतके शिखरपर स्थित संवाहन जानना चाहिये ॥ १४०० ॥

[इसप्रकार विभवका वर्णन समाप्त हुआ ।]

भरत चक्रवर्तीके [राज्यकालका प्रमाण] इकसठ हजार वर्ष कम छह लाख पूर्व और सगर चक्रवर्तीके राज्यकालका प्रमाण तीस हजार वर्ष कम सत्तर लाख पूर्वप्रमाण है ॥१४०१॥

भरत पूर्व ६००००० – वर्ष ६१००० । सगर पूर्व ७०००००० – वर्ष ३०००० ।

मघवा नामक चक्रवर्तीका राज्यकाल तीन लाख नब्बे हजार वर्ष और सनत्कुमार चक्रवर्तीका राज्यकाल नब्बे हजार वर्षप्रमाण है ॥ १४०२ ॥

मघवा ३९०००० । सनत्कुमार ९०००० ।

शान्तिनाथ चक्रवर्तीके राज्यकालका प्रमाण चौबीस हजार दोसौ वर्ष और कुंथुनाथके राज्यकालका प्रमाण तेईस हजार एकसौ पचास वर्ष है ॥ १४०३ ॥

शान्ति २४२०० । कुंथु २३१५० ।

अरनाथ चक्रधरका राज्यकाल बीस हजार छहसौ वर्ष, और सुभौम चक्रवर्तीका राज्यकाल उनंचास हजार पांचसौ वर्षप्रमाण है ॥ १४०४ ॥ अर २०६०० । सुभौम ४९५०० ।

---

१ द ब परिवेदो. २ द ब °परिवेदं. ३ द ब गिरिवेदेदं. ४ द ब वेदियं. ५ द सहस्सा.

अट्ठारसहस्साणिं सत्तसएहिं समं तहा पउमो । अट्ठसहस्सा अडसयपण्णब्भहिया य हरिसेणे ॥ १४०५

१८७०० । ८८५० ।

उणवीससया वस्सा जयसेणे बम्हदत्तणामम्मि । चक्कहरे छसयाणिं परिमाणं रज्जकालस्स ॥ १४०६

१९०० । ६०० ।

। एवं रज्जकालो समत्तो ।

एक्केक्कलक्खपुव्वा पण्णाससहस्स वच्छरा लक्खं । पणवीससहस्साणिं तेवीससहस्ससत्तसयपण्णा ॥ १४०७

पुव्व १००००० । १००००० । वस्स ५०००० । १००००० । २५००० । २३७५० ।

इगिवीससहस्साइं तत्तो सुण्णं च दस सहस्साइं । पण्णाधियातिण्णिसया चत्तारि सयाणि सुण्णं च ॥ १४०८

२१००० । सुं । १०००० । ३५० । ४०० । सुं ।

कमसो भरहादीणं रज्जविरत्ताण चक्कवट्टीणं । णिव्वाणलाहकारणसंजमकालस्स परिमाणं ॥ १४०९

अट्ठेव गया मोक्खं बम्हसुभउमो य सत्तमं पुढविं । मघवस्सणक्कुमारा सणक्कुमारं गया कप्पं ॥ १४१०

। एवं चक्कहराणं परूवणा समत्ता ।

विजयो अचलो धम्मो सुप्पहणामो[1] सुदंसणो णंदी । णंदिमित्तो य रामो पउमो णव होंति बलदेवा ॥ १४११

पद्म चक्रवर्तीके राज्यकालका प्रमाण अठारह हजार सातसौ वर्ष, और हरिषेण चक्रवर्तीके राज्यकालका प्रमाण आठसौ पचास अधिक आठ हजार वर्ष है ॥ १४०५ ॥

पद्म १८७०० । हरिषेण ८८५० ।

जयसेन चक्रवर्तीके राज्यकालका प्रमाण उन्नीससौ वर्ष, और ब्रह्मदत्त नामक चक्रधरके राज्यकालका प्रमाण छहसौ वर्ष है ॥ १४०६ ॥ जयसेन १९०० । ब्रह्मदत्त ६०० ।

इसप्रकार राज्यकालका कथन समाप्त हुआ ।

एक लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, पचास हजार वर्ष, एक लाख वर्ष, पच्चीस हजार वर्ष, तेईस हजार सातसौ पचास वर्ष, इक्कीस हजार वर्ष, फिर शून्य, दश हजार वर्ष, पचास अधिक तीनसौ वर्ष, चारसौ वर्ष और शून्य, इसप्रकार यह क्रमशः राज्यसे विरक्त भरतादिक चक्रवर्तियोंके निर्वाणलाभके कारणभूत संयमकालका प्रमाण है ॥ १४०७–१४०९ ॥

भरत पूर्व १००००० । सगर १००००० । मघवा वर्ष ५०००० । सनत्कुमार १००००० । शान्ति २५००० । कुंथु २३७५० । अर २१००० । सुभौम ० । पद्म १०००० । हरिषेण ३५० । जयसेन ४०० । ब्रह्मदत्त ० ।

इन बारह चक्रवर्तियोंमेंसे आठ मोक्ष गये, ब्रह्मदत्त और सुभौम सातवीं पृथिवी, तथा मघवा और सनत्कुमार चक्रवर्ती सनत्कुमार कल्पको प्राप्त हुए ॥ १४१० ॥

इसप्रकार चक्रवर्तियोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

विजय, अचल, धर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नन्दी, नन्दिमित्र, राम और पद्म, ये नौ बलदेव होते हैं ॥ १४११ ॥

---

१ द ब °कारणं संजमं. २ द ब बम्हसुभउमो. ३ द ब सुहप्पणामो. ४ द ब पउमो एदे णव बलदेवा य विण्णेया.

होंति तिविट्ठदुविट्ठा सयंभुपुरुत्तमा य पुरिससीहो। पुरिसवरपुंडरीओ[1] दत्तो णारायणो किण्हो ॥ १४१२
अस्सग्गीवो तारगमेरगमधुकीटभौ णिसुंभो य। बलिपहरणो य रावणजरसंधा[2] णव य पडिसत्तू ॥ १४१३
बलदेववासुदेवप्पडिसत्तूणं जाणावणट्ठं संदिट्ठी—
पंच जिणिंदे वंदंति केसवा पंच आणुपुव्वीए। सेयंससामिपहुदिं तिविट्ठपमुहा य पत्तेक्कं ॥ १४१४
अरमल्लिअंतराले णादव्वो पुंडरीयणामो सो[3]। मल्लिमुणिसुव्वयाणं विच्चाले दत्तणामो सो[4] ॥ १४१५
सुव्वयणमिसामीणं मज्झे णारायणो समुप्पण्णो। णेमिसमयम्मि किण्णो एदे णव वासुदेवा य ॥ १४१६
दस सुण्ण पंच केसव छस्सुण्णा केसि सुण्ण केसीओ। तियसुण्णमेक्ककेसी दो सुण्णं एक्क केसि तिय सुण्णं ॥ १४१७

| | | |

सगसीदी सत्तत्तरि सगसट्ठी सत्ततीस सत्तरसा । वस्सा लक्खाण पुढो आऊ विजयादिपंचण्हं ॥ १४१९

८७०००००। ७७०००००। ६७०००००। ३७०००००। १७०००००।

सगसट्ठी सगतीसं सत्तरससहस्स बारससयाणि । कमसो आउपमाणं णंदिप्पमुहाचउक्कम्मि ॥ १४२०

६७०००। ३७०००। १७०००। १२००।

चुलसीदी बाहत्तरि सट्ठी तीसं दसं च लक्खाणिं । पणसट्ठिसहस्साणिं तिविट्ठछक्के कमे आऊ ॥ १४२१

८४०००००। ७२०००००। ६०००००००। ३०००००००। १०००००००। ६५०००।

बत्तीसबारसेक्कं सहस्समाऊणि दत्तपहुदीणं । पडिसत्तुआउमाणं[1] णियणियणारायणाउसमं[2] ॥ १४२२

३२०००। १२०००। १०००।

एदे णव पडिसत्तू णवाण हत्थेहिं वासुदेवाणं । णियचक्केहि रणेसुं समाहदा जंति णिरयखिदिं ॥ १४२३

पणुवीससहस्साहं वासा कोमारमंडलित्ताहं । पढमहरिस्स कमेणं वाससहस्सं विजयकालो ॥ १४२४

२५०००। २५०००। १०००।

विजयादिक पांच बलदेवोंकी आयु क्रमसे सतासी लाख, सतत्तर लाख, सड़सठ लाख, सैंतीस लाख और सत्तरह लाख वर्षप्रमाण थी ॥ १४१९ ॥

विजय ८७ लाख। अचल ७७ लाख। धर्म ६७ ला.। सुप्रभ ३७ ला.। सुदर्शन १७ ला. वर्ष।

नन्दिप्रमुख चार बलदेवोंकी आयु क्रमसे सड़सठ हजार, सैंतीस हजार, सत्तरह हजार और बारहसौ वर्षप्रमाण थी ॥ १४२० ॥

नन्दि ६७०००। नन्दिमित्र ३७०००। राम १७०००। पद्म १२०० वर्ष।

त्रिपृष्ठादिक छह नारायणोंकी आयु क्रमसे चौरासी लाख, बहत्तर लाख, साठ लाख, तीस लाख, दश लाख और पैंसठ हजार वर्षप्रमाण थी ॥ १४२१ ॥

त्रिपृष्ठ ८४०००००। द्विपृष्ठ ७२०००००। स्वयंभु ६०००००००। पुरुषोत्तम ३०००००००। पुरुषसिंह १०००००००। पुरुषपुंडरीक ६५०००।

दत्तप्रभृति शेष तीन नारायणोंकी आयु क्रमसे बत्तीस हजार, बारह हजार और एक हजार वर्षप्रमाण थी। प्रतिशत्रुओंकी आयुका प्रमाण अपने अपने नारायणोंकी आयुके समान है ॥ १४२२ ॥ पुरुषदत्त ३२०००। नारायण १२०००। कृष्ण १०००।

ये नौ प्रतिशत्रु युद्धमें नौ वासुदेवोंके हाथोंसे निज चक्रोंके द्वारा मृत्युको प्राप्त होकर नरकभूमिमें जाते हैं ॥ १४२३ ॥

प्रथम नारायणका कुमारकाल और मण्डलित्वकाल क्रमसे पच्चीस पच्चीस हजार वर्ष और विजयकाल एक हजार वर्षप्रमाण है ॥ १४२४ ॥

त्रिपृष्ठ—कुमार २५०००, मंडलीक २५०००, विजय १०००।

---

१ द ब आउसाणं. २ द ब णारायणाउउदयसमं.

तेसीदिं लक्खाणिं उणवण्णसहस्ससंजुदाइं पि । वरिसाणि रज्जकालो णिद्दिट्ठो पढमकिण्हस्स ॥ १४२५
८३४९००० ।

कोमारमंडलित्ते ते चिय विदिए जवो वि वाससदं । इगिहत्तरिलक्खाइं उणवण्णसहस्सणवसया रज्जं ॥ १४२६
२५००० । २५००० । १०० । ७१४९९०० ।

बिदियादो[1] अद्धाइं सयंभूकुमारमंडलित्ताणिं । विजयो णउदी रज्जं तियकालविहीणसट्ठिलक्खाइं ॥ १४२७
१२५०० । १२५०० । ९० । ५९७४९१० ।

तुरिमस्स सत्त तेरस सयाणि कोमारमंडलित्ताणिं । विजयो सीदी रज्जं तियकालविहीणतीसलक्खाइं ॥ १४२८
७०० । १३०० । ८० । २९९७९२० ।

कोमारो तिण्णिसया बारससयपण्ण मंडलीयत्तं । पंचमे विजओ सत्तरि रज्जं तियकालहीणदहलक्खा ॥ १४२९
३०० । १२५० । ७० । ९९८३८० ।

प्रथम नारायणका राज्यकाल तेरासी लाख उनंचास हजार वर्षप्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥ १४२५ ॥ राज्य ८३४९००० ।

द्वितीय नारायणका कुमार और मण्डलित्वकाल उतना ही अर्थात् प्रथम नारायणके समान क्रमसे पचीस पचीस हजार वर्ष, जयकाल सौ वर्ष और राज्यकाल इकत्तर लाख उनंचास हजार नौसौ वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४२६ ॥

द्विपृष्ठ— कु. २५०००, मं. २५०००, वि. १००, रा. ७१४९९०० ।

स्वयंभु नारायणका कुमार और मण्डलित्वकाल द्वितीय नारायणकी अपेक्षा आधा अर्थात् बारह हजार पांचसौ वर्ष, विजयकाल नब्बे वर्ष और राज्यकाल इन तीनों (कुमार, मण्डलित्व, विजय) कालोंसे रहित साठ लाख वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४२७ ॥

स्वयंभु— कु. १२५००, मं. १२५००, वि. ९०, रा. ६००००० – (१२५०० + १२५०० + ९०) = ५९७४९१० ।

चतुर्थ नारायणका कुमार और मण्डलित्वकाल क्रमसे सातसौ और तेरहसौ वर्ष, विजयकाल अस्सी वर्ष तथा राज्यकाल इन तीनों कालोंसे रहित तीस लाख वर्षप्रमाण कहा गया है ॥१४२८॥ पुरुषो.— कु. ७००, मं. १३००, वि. ८०, रा. ३००००० – (७०० + १३०० + ८०) = २९९७९२० ।

पांचवें नारायणका कुमारकाल तीनसौ वर्ष, मण्डलीकत्वकाल बारहसौ पचास वर्ष, विजयकाल सत्तर वर्ष और राज्यकाल इन तीनों कालोंसे हीन दश लाख वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४२९ ॥ पु. सिं.— कु. ३००, मं. १२५०, वि. ७०, रा. १००००० – (३०० + १२५० + ७०) = ९९८३८० ।

१ द ° मंडलित्तो तत्थिय. २ द ब तिदियादो. ३ द ब पंचम.

कोमारमंडलित्ते कमसो छट्ठे सपण्णदोण्णिसया । विजओ सट्ठी रज्जं चउसट्ठिसहस्सचउसया तालं ॥ १४३०
२५० । २५० । ६० । ६४४४० ।

कोमारो दोण्णि सया वासा पण्णास मंडलीयत्तं । दत्ते विजओ पण्णा इगितीससहस्ससगसया रज्जं ॥ १४३१
२०० । ५० । ५० । ३१७०० ।

अट्ठमए इगितिसया कमेण कोमारमंडलीयत्तं । विजयं चालं रज्जं एक्करससहस्सपणसया सट्ठी ॥ १४३२
१०० । ३०० । ४० । ११५६० ।

सोलस छप्पण्ण कमे वासा कोमारमंडलीयत्तं[1] । किण्हस्स अट्ठ विजओ वीसाधियणवसया रज्जं ॥ १४३३
१६ । ५६ । ८ । ९२० ।

सत्तीकोदंडगदा चक्ककिवाणाणि संखदंडाणिं । इय सत्त महारयणा सोहंते अद्धचक्कीणं ॥ १४३४
७ ।

मुसलाइं लंगलाइं संदाह रयणावलीओ चत्तारि । रयणाइं राजंते बलदेवाणं णवाणं पि ॥ १४३५
अणिदाणगदा सव्वे बलदेवा केसवा णिदाणगदा । उड्ढंगामी सव्वे बलदेवा केसवा अधोगामी ॥ १४३६

छठे नारायणका कुमार और मण्डलित्वकाल क्रमसे दोसौ पचास वर्ष, विजयकाल साठ वर्ष, और राज्यकाल चौंसठ हजार चारसौ चालीस वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४३० ॥

पुंडरीक— कु. २५०, मं. २५०, वि. ६०, रा. ६४४४० ।

दत्त नारायणका कुमारकाल दोसौ वर्ष, मण्डलीककाल पचास वर्ष, विजयकाल पचास वर्ष और राज्यकाल इकतीस हजार सातसौ वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४३१ ॥

दत्त— कु. २००, मं. ५०, वि. ५०, रा. ३१७०० ।

आठवें नारायणका कुमार और मण्डलीककाल क्रमसे एकसौ और तीनसौ वर्ष, विजयकाल चालीस वर्ष और राज्यकाल ग्यारह हजार पांचसौ साठ वर्षप्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥ १४३२ ॥ नारायण— कु. १००, मं. ३००, वि. ४०, रा. ११५६० ।

कृष्ण नारायणका कुमार और मण्डलीककाल क्रमसे सोलह और छप्पन वर्ष, विजयकाल आठ वर्ष और राज्यकाल नौसौ बीस वर्षप्रमाण है ॥ १४३३ ॥

कृष्ण— कु. १६, मं. ५६, वि. ८, रा. ९२० ।

शक्ति, धनुष, गदा, चक्र, कृपाण, शंख और दण्ड, ये सात महारत्न अर्धचक्रियोंके पास शोभायमान रहते हैं ॥ १४३४ ॥

मूसल, लांगल (हल), स्यन्दन (रथ) और रत्नावली (हार), ये चार रत्न नौ ही बलदेवोंके यहां शोभायमान रहते हैं ॥ १४३५ ॥

सब बलदेव निदानसे रहित और सब नारायण निदानसे सहित होते हैं । इसीप्रकार सब बलदेव ऊर्ध्वगामी अर्थात् स्वर्ग व मोक्षको और सब नारायण अधोगामी अर्थात् नरकमें जानेवाले होते हैं ॥ १४३६ ॥

१ द ब मंडलीयत्ता.

णिस्सेयसमट्ठ गया हलिणो[1] चरिमो दु बम्हकप्पगदो। तत्तो कालेण मदो सिज्झदि किण्हस्स तित्थम्मि ॥ १४३७
पढमहरी सत्तमिए पंच छट्ठम्मि पंचमी एक्को। एक्को तुरिमे चरिमो तदिए णिरए तहेव पडिसत्तू ॥ १४३८
भीमावलिजिदसत्तू रुद्दो वइसाणलो य सुपइट्ठो। अचलो य पुंडरीओ अजितंधरअजियणाभी य ॥ १४३९
पीढो सच्चइपुत्तो अंगधरा तित्थकत्तिसमएसु। रिसहम्मि पढमरुद्दो[2] जितसत्तू होदि अजियसामिम्मि ॥ १४४०
सुविहिपमुहेसु रुद्दा सत्तसु सत्त क्कमेण संजादा। संतिजिणिंदे दसमो सच्चइपुत्तो य वीरतित्थम्मि ॥ १४४१
सव्वे दसमे पुव्वे रुद्दा भट्ठा तवाउ विसयत्थं[3]। सम्मत्तरयणरहिदा बुड्डा घोरेसु णिरएसुं ॥ १४४२
दो रुद्द सुण्ण छक्का सग रुद्दा तह य दोण्णि सुण्णाइं। रुद्दो पण्णरसाइं सुण्णं रुद्दं च चरिमम्मि ॥ १४४३

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	१	१	१	०	०	१	०	०	१	०	०	१	०	१	०	१	१
२	२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	२	२	२	२	२	२	०	०	०	२	०	२	०	०	२	०	२	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	३	३	३	३	३	०	०	०	०	०	०	३	०	३	०	०	०	३	०	०	३	०	०	०
४	४	०	०	०	०	०	०	४	४	४	४	४	४	४	०	०	४	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४

पंचसया पण्णाधियचउस्सया इगिसयं च णउदी य। सीदी सत्तरि सट्ठी पण्णासा अट्ठवीसं पि ॥ १४४४

आठ बलदेव मोक्ष और अन्तिम बलदेव ब्रह्मस्वर्गको प्राप्त हुए हैं। यह अन्तिम बलदेव स्वर्गसे च्युत होकर कृष्णके तीर्थमें सिद्धपदको प्राप्त होगा ॥ १४३७ ॥

प्रथम नारायण सातवें नरकमें, पांच नारायण छठे नरकमें, एक पांचवेंमें, एक चतुर्थ नरकमें, और अन्तिम नारायण तीसरे नरकमें गया है। इसीप्रकार प्रतिशत्रुओंकी भी गति जानना चाहिये ॥ १४३८ ॥

भीमावलि, जितशत्रु, रुद्र, वैश्वानर (विश्वानल), सुप्रतिष्ठ, अचल, पुण्डरीक, अजितंधर, अजितनाभि, पीठ और सात्यकिपुत्र, ये ग्यारह रुद्र अंगधर होते हुए तीर्थकर्ताओंके समयोंमें हुए हैं। इनमेंसे प्रथम रुद्र भगवान् ऋषभनाथके कालमें और जितशत्रु अजितनाथ स्वामीके कालमें हुआ है। इसके आगे सात रुद्र क्रमसे सुविधिनाथप्रमुख सात तीर्थंकरोंके समयमें हुए हैं। दशवां रुद्र शान्तिनाथ तीर्थंकरके समयमें और सात्यकिपुत्र वीर भगवान्‌के तीर्थमें हुआ है ॥ १४३९-१४४१ ॥

सब रुद्र दशवें पूर्वका अध्ययन करते समय विषयोंके निमित्त तपसे भ्रष्ट होकर सम्यक्त्व-रूपी रत्नसे रहित होते हुए घोर नरकोंमें डूब गये ॥ १४४२ ॥

दो रुद्र, छह शून्य, सात रुद्र, तथा दो शून्य, रुद्र, पन्द्रह शून्य और अन्तिम कोठेमें एक रुद्र, इसप्रकार रुद्रोंकी संदृष्टि है ॥ १४४३ ॥ (संदृष्टि मूलमें देखिये)

भीमावलिप्रभृति दश रुद्रोंकी उंचाई क्रमसे पांचसौ, पचास अधिक चारसौ, एकसौ,

१ द ह हरिणो. २ द ब पदमरुद्दा. ३ द ब विसयत्थं.

चउवीसा वि य दंडा भीमावलिपहुदिरुद्दसकस्स । उच्छेहो णिद्दिट्ठो सग हत्था सच्चइसुअस्स ॥ १४४५

५०० । ४५० । १०० । ९० । ८० । ७० । ६० । ५० । २८ । २४ । ७ ।

तेसीदी इगिहत्तरि दोण्णि एक्कं च पुव्वलक्खाणिं। चुलसीदि सट्ठि पण्णा चालिसवस्साणिं[1] लक्खाणिं ॥ १४४६

वीस दस चेव लक्खा वासा एक्कूणसत्तरी कमसो । एक्कारसरुद्दाणं पमाणमाउस्स णिद्दिट्ठं ॥ १४४७

८३००००० । ७१००००० । २००००० । १००००० । व ८४००००० । ६०००००० ५०००००० । ४०००००० । २०००००० । १०००००० । ६९ ।

सत्तावीसा लक्खा छावट्ठिसहस्सयाणि छच्च सया । छावट्ठी पुव्वाणिं कुमारकालो पहिल्लस्स ॥ १४४८

पु २७६६६६६ ।

सत्तावीसं लक्खा छावट्ठिसहस्सयाणि छच्च सया । अडसट्ठी पुव्वाणिं भीमावलिसंजमक्कालो[2] ॥ १४४९

पुव्व २७६६६६८ ।

सत्तावीसं लक्खा छावट्ठिसहस्सछस्सअब्भहिया । छावट्ठी पुव्वाणिं भीमावलिभंगतवकालो ॥ १४५०

पुव्व २७६६६६६ ।

नब्बे, अस्सी, सत्तर, साठ, पचास, अट्ठाईस और चौबीस धनुष तथा सात्यकिसुतकी ऊंचाई केवल सात हाथ कही गयी है ॥ १४४४–१४४५ ॥

प्रथम दण्ड ५०० । द्वि. ४५० । तृ. १०० । च. ९० । पं. ८० । प. ७० । स. ६० । अ. ५० । न. २८ । द. २४ । ग्या. ह. ७ ।

तेरासी लाख पूर्व, इकत्तर लाख पूर्व, दो लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, चौरासी लाख वर्ष, साठ लाख वर्ष, पचास लाख वर्ष, चालीस लाख वर्ष, बीस लाख वर्ष, दश लाख वर्ष और एक कम सत्तर वर्ष, यह क्रमसे ग्यारह रुद्रोंकी आयुका प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥ १४४६–१४४७ ॥

प्र. पूर्व ८३००० । द्वि. ७१००००० । तृ. २००००० । च. १००००० । पं. वर्ष ८४००००० । प. ६०००००० । स. ५०००००० । अ. ४०००००० । न. २०००००० । द. १०००००० । ग्या. ६९ ।

प्रथम रुद्रका कुमारकाल सत्ताईस लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ पूर्वप्रमाण है ॥ १४४८ ॥ पूर्व २७६६६६६ ।

भीमावलि (प्रथम) रुद्रका संयमकाल सत्ताईस लाख छ्यासठ हजार छहसौ अड़सठ पूर्वप्रमाण है ॥ १४४९ ॥ पूर्व २७६६६६८ ।

भीमावलि रुद्रका भंगतपकाल सत्ताईस लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ पूर्वप्रमाण है ॥ १४५० ॥ पूर्व २७६६६६६ ।

१ द ब चालीसं वासाणि, अ चालीसं वस्साणि. २ अ भीमावलिं. ३ द ब संजमे कालो.

तेवीस पुव्वलक्खा छावट्ठिसहस्सछसयछावट्ठी । जिदसत्तूकोमारो तेत्तियमेत्तो य भंगतवकालो ॥ १४५१

पु २३६६६६६ । २३६६६६६ ।

तेवीस पुव्वलक्खा छावट्ठिसहस्सछसयअडसट्ठी । संजमकालपमाणं एदं जिदसत्तुरुद्दस्स ॥ १४५२

पु २३६६६६८ ।

छावट्ठिसहस्साइं छावट्ठब्भहियछस्सयाइं पि । पुव्वाणं कोमारो विणट्ठकालो य रुद्दस्स ॥ १४५३

पु ६६६६६ । ६६६६६ ।

छासट्ठिसहस्साइं[1] पुव्वाणं छस्सयाणि अडसट्ठी । संजमकालपमाणं तद्दजरुद्दस्स णिद्दिट्ठं ॥ १४५४

पु ६६६६८ ।

तेत्तीससहस्साणिं पुव्वाणिं तियसयाणि तेत्तीसं । वइसाणरस्स कहिदो कोमारो भंगतवकालो ॥ १४५५

पु ३३३३३ । ३३३३३ ।

तेत्तीससहस्साणिं पुव्वाणिं तियसयाणि चउतीसं[2] । संजमसमयपमाणं वइसाणलणामधेयस्स ॥ १४५६

पु ३३३३४[3] ।

अट्ठावीसं लक्खा वासाणं सुप्पइट्ठकोमारो । तेत्तियमेत्तो संजमकालो तवभट्ठसमयस्स ॥ १४५७

२८००००० । २८००००० । २८००००० ।

वासाओ वीसलक्खा कुमारकालो य अचलणामस्स । तेत्तियमेत्तो[4] संजमकालो तवभट्ठकालो य ॥ १४५८

२०००००० । २०००००० । २०००००० ।

जितशत्रु रुद्रका तेईस लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ पूर्वप्रमाण कुमारकाल और इतना ही भंगतपकाल भी है ॥ १४५१ ॥ पूर्व २३६६६६६ । २३६६६६६ ।

जितशत्रु रुद्रके संयमकालका प्रमाण तेईस लाख छ्यासठ हजार छहसौ अड़सठ पूर्व है ॥ १४५२ ॥ पूर्व २३६६६६८ ।

तृतीय रुद्र नामक रुद्रका कुमारकाल और विनष्टसंयमकाल छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ पूर्वप्रमाण कहा गया है ॥ १४५३ ॥ पूर्व ६६६६६ । ६६६६६ ।

तृतीय रुद्रके संयमकालका प्रमाण छ्यासठ हजार छहसौ अड़सठ पूर्व कहा गया है ॥ १४५४ ॥ पूर्व ६६६६८ ।

वैश्वानर (विश्वानल) का कुमार और भंगतपकाल तेतीस हजार तीनसौ तेतीस पूर्वप्रमाण कहा गया है ॥ १४५५ ॥ पूर्व ३३३३३ । ३३३३३ ।

वैश्वानर (विश्वानल) नामक रुद्रके संयमसमयका प्रमाण तेतीस हजार तीनसौ चौंतीस पूर्व कहा गया है ॥ १४५६ ॥ पूर्व ३३३३४ ।

सुप्रतिष्ठका अट्ठाईस लाख वर्षप्रमाण कुमारकाल, इतना ही संयमकाल और इतना ही तपभृष्टकालका भी प्रमाण कहा गया है ॥ १४५७ ॥

वर्ष २८००००० । २८००००० । २८००००० ।

अचल नामक रुद्रका कुमारकाल बीस लाख वर्ष, इतना ही संयमकाल और इतना ही तपभृष्टकाल भी है ॥ १४५८ ॥ २०००००० । २०००००० । २०००००० ।

---

१ द ब छावट्ठि. २ द अडतीसं. ३ द ३३३३८. ४ द ब °मेत्ता.

वासा सोलसलक्खा छावट्ठिसहस्सछसयछावट्ठी । कोमारभंगकालो पत्तेयं पुंडरीयस्स ॥ १४५९
१६६६६६६ । १६६६६६६ ।
वासा सोलसलक्खा छावट्ठिसहस्सछसयअडसट्ठी । जिणदिक्खगमणकालप्पमाणयं पुंडरीयस्स ॥ १४६०
१६६६६६८ ।
तेरसलक्खा वासा तेत्तीससहस्सतिसयतेत्तीसा । अजियंधरकोमारो जिणदिक्खाभंगकालो य ॥ १४६१
१३३३३३३ । १३३३३३३ ।
वासा तेरसलक्खा तेत्तीससहस्सतिसयचोत्तीसा । अजियंधरस्स एसो जिणिंददिक्खग्गहणकालो ॥ १४६२
१३३३३३४ ।
वासाणं लक्खा छह छासट्ठिसहस्सछसयछावट्ठी । कोमारभंगकालो पत्तेयं अजियणाभिस्स ॥ १४६३
६६६६६६ । ६६६६६६ ।
छहलक्खा वासाणं छासट्ठिसहस्सछसयअडसट्ठी । जिणरूवधरियकालो परिमाणो अजियणाभिस्स ॥ १४६४
६६६६६८ ।
वरिसाण तिण्णि लक्खा तेत्तीससहस्सतिसयतेत्तीसा । कोमारभट्ठसमया कमसो पीढालरुद्दस्स ॥ १४६५
३३३३३३ । ३३३३३३ ।
तियलक्खाणिं वासा तेत्तीससहस्सतिसयचोत्तीसा । संजमकालपमाणं णिद्दिट्ठं दसमरुद्दस्स ॥ १४६६
३३३३३४ ।

पुण्डरीक रुद्रका कुमारकाल और भंगसंयमकाल प्रत्येक सोलह लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासट वर्षप्रमाण है ॥ १४५९ ॥ १६६६६६६ । १६६६६६६ ।

पुण्डरीक रुद्रके जिनदीक्षाप्राप्तिकालका प्रमाण सोलह लाख छ्यासठ हजार छहसौ अड़सठ वर्ष कहा गया है ॥ १४६० ॥ १६६६६६८ ।

अजितंधर रुद्रका कुमार और जिनदीक्षाभंगकाल तेरह लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस वर्षप्रमाण कहा गया है ॥ १४६१ ॥ १३३३३३३ । १३३३३३३ ।

तेरह लाख तेतीस हजार तीनसौ चौंतीस वर्ष, यह अजितंधर रुद्रका जिनेन्द्रदीक्षा-ग्रहणकाल है ॥ १४६२ ॥ १३३३३३४ ।

अजितनाभिके कुमार और भंगसंयमकाल प्रत्येक छह लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ वर्षप्रमाण हैं ॥ १४६३ ॥ ६६६६६६ । ६६६६६६ ।

अजितनाभिका जिनरूपधारणकाल छह लाख छ्यासठ हजार छहसौ अड़सठ वर्षप्रमाण है ॥ १४६४ ॥ ६६६६६८ ।

पीठाल (पीठ) रुद्रका कुमार और भृष्टतपकाल क्रमसे तीन लाख तेतीस हजार तीनसौ तेतीस वर्षप्रमाण है ॥ १४६५ ॥ ३३३३३३ । ३३३३३३ ।

दशवें रुद्रके संयमकालका प्रमाण तीन लाख तेतीस हजार तीनसौ चौंतीस वर्ष निर्दिष्ट किया गया है ॥ १४६६ ॥ ३३३३३४ ।

१ द छावट्ठि, ब वासट्ठि. २ ब छावट्ठि.

सगवासं कोमारो संजमकालो हवेदि चोत्तीसं । अडवीस भंगकालो एयारसमस्स रुद्दस्स ॥ १४६७

७ । ३४ । २८ ।

दो रुद्दा सत्तमए पंच छट्ठम्मि पंचमे एक्को । दोण्णि चउत्थे पडिदा एक्करसो तदियणिरयम्मि ॥ १४६८

भीममहभीमरुद्दा महरुद्दो[1] दोण्णि कालमहकाला । दुम्मुहणिरयमुहाधोमुहणामा णव य णारद्दा ॥ १४६९

रुद्दावह अइरुद्दा पावणिहाणा हवंति सव्वे दे । कलहमहाजुज्झप्पिया अधोगया वासुदेव व्व ॥ १४७०

उस्सेहआउतित्थयरदेवपच्चक्खभावपहुदीसुं । एदाण णारदाणं उवएसो अम्ह उच्छिण्णो[2] ॥ १४७१

। णारदा गया ।

कालेसु जिणवराणं चउवीसाणं हवंति चउवीसा । ते बाहुबलिप्पमुहा कंदप्पा णिरुवमायारा ॥ १४७२

तित्थयरा तग्गुरुओ चक्कीबलकेसिरुद्दणारद्दा । अंगजकुलयरपुरिसा भविया सिज्झंति णियमेणं ॥ १४७३

णिव्वाणे वीरजिणे वासतये अट्ठमासपक्खेसुं । गलिदेसुं पंचमओ दुस्समकालो समल्लियदि ॥ १४७४

ग्यारहवें रुद्रका कुमारकाल सात वर्ष, संयमकाल चौंतीस वर्ष और भंगसंयमकाल अट्ठाईस वर्षप्रमाण है ॥ १४६७ ॥ ७ । ३४ । २८ ।

इन ग्यारह रुद्रोंमेंसे दो रुद्र सातवें नरकमें, पांच छठेमें, एक पांचवेंमें, दो चौथेमें, और ग्यारहवां तृतीय नरकमें गया ॥ १४६८ ॥

भीम, महाभीम, रुद्र, महारुद्र, काल, महाकाल, दुर्मुख, नरकमुख और अधोमुख, ये नौ नारद हुए ॥ १४६९ ॥

ये सब नारद अनिरुद्र होते हुए दूसरोंको रुलाया करते हैं और पापके निधान होते हैं। सब ही नारद कलह एवं महायुद्धप्रिय होनेसे वासुदेवोंके समान अधोगत अर्थात् नरकको प्राप्त हुए ॥ १४७० ॥

इन नारदोंकी उंचाई, आयु और तीर्थंकरदेवोंके प्रत्यक्षभावादिकके विषयमें हमारे लिये उपदेश नष्ट हो चुका है ॥ १४७१ ॥

नारदोंका कथन समाप्त हुआ ।

चौबीस तीर्थंकरोंके समयोंमें अनुपम आकृतिके धारक वे बाहुबलिप्रमुख चौबीस कामदेव होते हैं ॥ १४७२ ॥

तीर्थंकर, उनके गुरुजन (माता-पिता), चक्रवर्ती, बलदेव, नारायण, रुद्र, नारद, कामदेव और कुलकर पुरुष, ये सब भव्य होते हुए नियमसे सिद्ध होते हैं ॥ १४७३ ॥

वीर भगवान्का निर्वाण होनेके पश्चात् तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्षके व्यतीत हो जानेपर दुषमाकाल प्रवेश करता है ॥ १४७४ ॥

---

१ द ब महरुद्दा. २ ब वासुदेवो. ३ द ब उच्छिण्णं. ४ द य °बलि.

तप्पढमपवेसम्मिं य वीसाधियइगिसयं पि परमाऊ । सगहत्थो उस्सेहो णराण चउवीस पुट्ठट्ठी ॥ १४७५
जादो सिद्धो वीरो तद्दिवसे गोदमो परमणाणी । जादो तस्सिं सिद्धे सुधम्मसामी तदो जादो ॥ १४७६
तम्मि कदकम्मणासे जंबूसामि त्ति केवली जादो । तत्थ वि सिद्धिपवण्णे केवलिणो णत्थि अणुबद्धा ॥ १४७७
बासट्ठी वासाणिं गोदमपहुदीण णाणवंताणं । धम्मपयट्टणकाले परिमाणं पिंडरूवेणं ॥ १४७८
कुंडलगिरिम्मि चरिमो केवलणाणीसु सिरिधरो सिद्धो । चारणरिसीसु चरिमो सुपासचंदाभिधाणो य ॥ १४७९
पण्णसमणेसु चरिमो वइरजसो णाम ओहिणाणीसुं[2] । चरिमो सिरिणामो सुदविणयसुसीलादिसंपण्णो ॥ १४८०
मउडधरेसुं चरिमो जिणदिक्खं धरदि[3] चंदगुत्तो य । तत्तो मउडधरा हुं पव्वज्जं णेव गेण्हंति ॥ १४८१
णंदी य णंदिमित्तो बिदिओ अवराजिदो तइज्जो यं । गोवद्धणो चउत्थो पंचमओ भद्दबाहु त्ति ॥ १४८२
पंच इमे पुरिसवरा चउदसपुव्वी जगम्मि विक्खादा । ते बारसअंगधरा तित्थे सिरिवड्ढमाणस्स ॥ १४८३
पंचाण मेलिदाणं कालपमाणं हवेदि वाससदं । वीदम्मि[4] य पंचमए भरहे सुदकेवली णत्थि ॥ १४८४
। चोद्दसपुव्वी ।

इस दुषमाकालके प्रथम प्रवेशमें मनुष्योंकी उत्कृष्ट आयु एकसौ बीस वर्ष, उंचाई सात हाथ और पृष्ठभागकी हड्डियां चौबीस होती हैं ॥ १४७५ ॥

जिस दिन भगवान् महावीर सिद्ध हुए उसी दिन गौतम गणधर केवलज्ञानको प्राप्त हुए। पुनः गौतमके सिद्ध होनेपर उनके पश्चात् सुधर्मस्वामी केवली हुए ॥ १४७६ ॥

सुधर्मस्वामीके कर्मनाश करने अर्थात् मुक्त होनेपर जम्बूस्वामी केवली हुए। पश्चात् जम्बूस्वामीके भी सिद्धिको प्राप्त होनेपर फिर कोई अनुबद्ध केवली नहीं रहे ॥ १४७७ ॥

गौतमादिक केवलियोंके धर्मप्रवर्तनकालका प्रमाण पिण्डरूपसे बासठ वर्ष है ॥१४७८॥

केवलज्ञानियोंमें अन्तिम श्रीधर कुण्डलगिरिसे सिद्ध हुए, और चारणऋषियोंमें अन्तिम सुपार्श्वचन्द्र नामक ऋषि हुए ॥ १४७९ ॥

प्रज्ञाश्रमणोंमें अन्तिम वज्रयश और अवधिज्ञानियोंमें अन्तिम श्रुत, विनय एवं सुशीलादिसे सम्पन्न श्री नामक ऋषि हुए ॥ १४८० ॥

मुकुटधरोंमें अन्तिम चन्द्रगुप्तने जिनदीक्षा धारण की। इसके पश्चात् मुकुटधारी प्रव्रज्याको ग्रहण नहीं करते ॥ १४८१ ॥

नन्दी, द्वितीय नन्दिमित्र, तृतीय अपराजित, चतुर्थ गोवर्द्धन और पंचम भद्रबाहु, इसप्रकार ये पांच पुरुषोत्तम जगमें 'चौदहपूर्वी' इस नामसे विख्यात हुए। वे बारह अंगोंके धारक पांचों श्रुतकेवली श्रीवर्धमान स्वामीके तीर्थमें हुए ॥ १४८२-१४८३ ॥

इन पांचों श्रुतकेवलियोंका काल मिलाकर सौ वर्ष होता है। पांचवें श्रुतकेवलीके पश्चात् फिर भरतक्षेत्रमें कोई श्रुतकेवली नहीं हुआ ॥ १४८४ ॥

चौदह पूर्वधारियोंका कथन समाप्त हुआ।

१ द ब 'पवेसि सव्विय. २ द ब 'णाणिस्स. ३ द धरिदि. ४ द ब दो. ५ द ब अवराजिदं तइं जाइं. ६ द ब वीरम्मि.

पढमो विसाहणामो पुट्ठिलो खत्तिओ जओ णागो । सिद्धत्थो धिदिसेणो विजओ बुद्धिल्लगंगदेवा य ॥ १४८५
एक्करसो य सुधम्मो दसपुव्वधरा इमे सुविक्खादा । पारंपरिओवगदो[1] तेसीदि सदं च ताण वासाणिं ॥१४८६

१८३ ।

सव्वेसु वि कालवसा तेसु अदीदेसु भरहखेत्तम्मि । वियसंतभव्वकमला ण संति[2] दसपुव्विदिवसयरा ॥ १४८७

। दसपुव्वी ।

णक्खत्तो जयपालो पंडुयधुवसेणकंसआइरिया । एक्कारसंगधारी पंच इमे वीरतित्थम्मि ॥ १४८८
दोण्णि सया वीसजुदा वासाणं ताण पिंडपरिमाणं । तेसु अतीदे णत्थि हु भरहे एक्कारसंगधरा ॥ १४८९

२२० ।

। एक्कारसंगधरा ।

पढमो सुभद्दणामो जसभद्दो तह य होदि जसबाहू । तुरिमो य लोहणामो[3] एदे आयारअंगधरा ॥ १४९०
सेसेक्करसंगाणं[4] चोद्दसपुव्वाणमेक्कदेसधरा । एक्कसयं अट्ठारसवासजुदं ताण परिमाणं ॥ १४९१

११८ ।

। आचारंगधरा ।

प्रथम विशाख, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, जय, नाग, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिल, गंगदेव और सुधर्म, ये ग्यारह आचार्य दश पूर्वके धारी विख्यात हुए है। परंपरासे प्राप्त इन सबका काल एकसौ तेरासी वर्ष है ॥ १४८५-१४८६ ॥ १८३ ।

कालके वश उन सब श्रुतकेवलियोंके अतीत होनेपर भरतक्षेत्रमें भव्यरूपी कमलोंको विकसित करनेवाले दशपूर्वधररूप सूर्य फिर नहीं होते है ॥ १४८७ ॥

दशपूर्वियोंका कथन समाप्त हुआ ।

नक्षत्र, जयपाल, पाण्डु, ध्रुवसेन और कंस, ये पांच आचार्य वीर भगवान्‌के तीर्थमें ग्यारह अंगके धारी हुए ॥ १४८८ ॥

इनके कालका प्रमाण पिण्डरूपसे दोसौ बीस वर्ष है। इनके स्वर्गस्थ होनेपर फिर भरतक्षेत्रमे कोई ग्यारह अंगोके धारक नहीं रहे ॥ १४८९ ॥ २२० ।

ग्यारह अंगोंके धारकोंका कथन समाप्त हुआ ।

प्रथम सुभद्र, तथा फिर यशोभद्र, यशोबाहु और चतुर्थ लोहार्य, ये चार आचार्य आचारांगके धारक हुए ॥ १४९० ॥

उक्त चारों आचार्य आचारांगके सिवाय शेष ग्यारह अंग और चौदह पूर्वोके एक देशके धारक थे । इनके कालका प्रमाण एकसौ अठारह वर्ष है ॥ १४९१ ॥ ११८ ।

आचारांगधारियोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

१ ब पारपरिओवगमदो. २ ब °कमलाणि संति. ३ द पंढमपुसेण, ब पंडसधुसेण. ४ द ब लोयणामो. ५ द ब °संगाणिं.

तेसु अदीदेसु तदा आचारधरा ण होंति भरहम्मि । गोदममुणिपहुदीणं वासाणं छस्सदाणि तेसीदी ॥ १४९२

६८३ ।

वीससहस्सं तिसदा सत्तारस वच्छराणि सुदतित्थं । धम्मपयट्टणहेदू वोच्छिस्सदि कालदोसेणं ॥ १४९३

२०३१७ ।

तेत्तियमेत्ते काले जम्मिस्सदि चाउरण्णसंघाओ । अविणी[1] दुम्मेधो[2] वि य असूयको तह य पाएणं ॥ १४९४

सत्तभयअट्ठमदेहिं संजुत्तो[3] सल्लगारवखरेहिं[4] । कलहप्पिओ रागिट्ठो[5] कूरो कोहाहओ[6] लोओ[7] ॥ १४९५

। सुदितित्थकहणं समत्तं ।

वीरजिणे[8] सिद्धिगदे चउसदइगिसट्ठिवासपरिमाणे[9] । कालम्मि अदिक्कंते[10] उप्पण्णो एत्थ सकराओ ॥ १४९६

४६१ ।

अहवा वीरे सिद्धे सहस्सणवकम्मि सगसयब्भहिए । पणसीदिम्मि यतीदे पणमासे सकणिओ जादो[11] ॥ १४९७

९७८५ मास ५ । पाठान्तरम् ।

चोद्दससहस्ससगसयतेणउदीवासकालविच्छेदे । वीरेसरसिद्धीदो[12] उप्पण्णो सगणिओ अहवा ॥ १४९८

१४७९३ । पाठान्तरम् ।

इनके स्वर्गस्थ होनेपर भरतक्षेत्रमें फिर कोई आचारांगके धारक नहीं होते । गौतममुनि-प्रभृतिके कालका प्रमाण छहसौ तेरासी वर्ष होता है ॥ १४९२ ॥

६२ + १०० + १८३ + २२० + ११८ = ६८३ ।

जो श्रुततीर्थ धर्मप्रवर्तनका कारण है, वह बीस हजार तीनसौ सत्तरह वर्षोंमें कालदोषसे व्युच्छेदको प्राप्त हो जायगा ॥ १४९३ ॥ २०३१७ ।

इतनेमात्र समयमें चातुर्वर्ण्य संघ जन्म लेता रहेगा । किन्तु लोक प्रायः अविनीत, दुर्बुद्धि, असूयक, सात भय व आठ मदोंसे संयुक्त, शल्य एवं गारवोंसे सहित, कलहप्रिय, रागिष्ठ, क्रूर एवं क्रोधी होगा ॥ १४९४-१४९५ ॥

श्रुतितीर्थका कथन समाप्त हुआ ।

वीर जिनेन्द्रके मुक्तिप्राप्त होनेके पश्चात् चारसौ इकसठ वर्षप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर यहां शक राजा उत्पन्न हुआ ॥ १४९६ ॥

अथवा, वीर भगवान्के सिद्ध होनेके पश्चात् नौ हजार सातसौ पचासी वर्ष और पांच मासोंके बीत जानेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥ १४९७ ॥ पाठान्तर ।

वर्ष ९७८५ मास ५ ।

अथवा, वीर भगवान्की मुक्तिके पश्चात् चौदह हजार सातसौ तेरानबै वर्षोंके व्यतीत होनेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥ १४९८ ॥ १४७९३ । पाठान्तर ।

---

१ द अवणी. २ द ब दुम्मेधा. ३ द ब संजुत्ता. ४ द °गारउवरे एहिं, ब °गारखवरे एहिं. ५ ब रागट्ठो. ६ द ब कोहाहुओ. ७ द ब लोहो. ८ द ब वीरजिणं. ९ द ब °परिमाणो. १० द अदिक्कंतो. ११ द ब सकनिज जादा. १२ द वीरेसरस्स सिद्धीदो.

णिव्वाणे वीरजिणे छव्वाससदेसु पंचवरिसेसुं । पणमासेसु गदेसुं संजादो सगणिओ अहवा ॥ १४९९
६०५ मा ५ । [पाठान्तरम् ।]
वीसुत्तरवाससदे विसवो वासाणि सोहिऊण तदो । इगिवीससहस्सेहिं भजिदे आऊण खयवड्ढी ॥ १५००
२१० ।[1]
सकणिववासजुदाणं चउसदइगिसट्ठिवासपहुदीणं । दसजुददोसयहरिदे लद्धं सोहेज्ज बिउणसट्ठी ॥ १५०१
तस्सिं जं[2] अवसेसं तस्सेय पवट्टमाणजेट्ठाऊ । रायंतरेसुं एसा जुत्ती सव्वेसु पत्तेक्कं ॥ १५०२
णिव्वाणगदे वीरे चउसदइगिसट्ठिवासविच्छेदे । जादो य सगणरिंदो रज्जं वंससस्स दुसयबादाला[3] ॥ १५०३
४६१ । २४२ ।
दोण्णि सदा पणवण्णा गुत्तीणं चउमुहस्स बादालं । वस्सं होदि सहस्सं केई एवं परूवंति ॥ १५०४
२५५ । ४२ । [पाठान्तरम् ।]

अथवा, वीर भगवान्‌के निर्वाणके पश्चात् छहसौ पांच वर्ष और पांच महिनोंके चले जानेपर शक नृप उत्पन्न हुआ ॥ १४९९ ॥ वर्ष ६०५ मास ५ ।

एकसौ बीस वर्षोंमेंसे बीस वर्षोंको घटाकर जो शेष रहे, उसमें इक्कीस हजारका भाग देनेपर आयुके क्षय-वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ १५०० ॥ १२० − २० ÷ २१००० = $\frac{१}{२१०}$ ।

शक नृपके वर्षोंसे युक्त चारसौ इकसठ वर्षप्रभृतिको दोसौ दशसे भाजित करनेपर जो लब्ध आवे उसे दुगुणे साठ अर्थात् एकसौ बीसमेंसे कम करनेपर जो अवशिष्ट रहे उतना उसके समयमें प्रवर्तमान उत्कृष्ट आयुका प्रमाण था । यह युक्ति सब अन्य राजाओंमेंसे प्रत्येकके समयमें भी जानना चाहिये ॥ १५०१–१५०२ ॥

उदाहरण— शक नृप वीरनिर्वाणके पश्चात् ४६१ वर्षमें उत्पन्न हुआ । शकोंका राज्य-काल २४२ वर्ष है ।

(१) १२० − { (४६१ + २४२) ÷ २१० } = ११६$\frac{३७}{१०}$ वर्ष शकराज्यके अन्तमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण ।

(२) १२० − { (९७८५$\frac{५}{१२}$ + २४२) ÷ २१० } = ७२$\frac{६३१}{२५२०}$ वर्ष ।

(३) १२० − { (१४७९३ + २४२) ÷ २१० } = ४८$\frac{१७}{२१}$ वर्ष ।

(४) १२० − { (६०५$\frac{६}{१२}$ + २४२) ÷ २१० } = ११५$\frac{३४३१}{२५२०}$ वर्ष ।

वीर भगवान्‌के निर्वाणके पश्चात् चारसौ इकसठ वर्षोंके बीतनेपर शक नरेन्द्र उत्पन्न हुआ । इस वंशके राज्यकालका प्रमाण दोसौ ब्यालीस वर्ष है ॥ १५०३ ॥ ४६१ । २४२ ।

गुप्तोंके राज्यकालका प्रमाण दोसौ पचवन वर्ष और चतुर्मुखके राज्यकालका प्रमाण ब्यालीस वर्ष है । इस सबको मिलानेपर एक हजार वर्ष होते हैं, ऐसा कितने ही आचार्य निरूपण करते हैं ॥ १५०४ ॥ २५५ । ४२ ।

४६१ + २४२ + २५५ + ४२ = १००० वर्ष ।

१ द ब २१०, ब २१००० । २ द ब °बीस. ३ द ब तिस्सइं. ४ द ब पारंतरेसु. ५ द ब वस्सरस. ६ द दुयवादाला. ७ ब गुत्ताणं.

जक्कालें[1] वीरजिणो णिस्सेयससंपयं समावण्णो । तक्काले अभिसित्तो पालयणामो अवंतिसुदो ॥ १५०५

पालकरज्जं सट्ठिं इगिसयपणवण्ण विजयवंसभवा । चालं मुरुदयवंसो तीसं वस्सा सुपुस्समित्तम्मि ॥ १५०६

६० । १५५ । ४० । ३० ।

वसुमित्तअग्गिमित्ता सट्ठी गंधव्वया वि सयमेक्कं । णरवाहणा य चालं तत्तो भत्थट्टणा जादा ॥ १५०७

६० । १०० । ४० ।

भत्थट्टणाण कालो दोण्णि सयाइं हवंति वादाला । तत्तो गुत्ता ताणं रज्जे दोण्णि य सयाणि[3] इगितीसा ॥ १५०८

२४२ । २३१ ।

तत्तो कक्की जादो इंदसुदो तस्स चउमुहो णामो । सत्तरि वरिसा आऊ विगुणियइगिवीस रज्जंतो[4] ॥ १५०९

७० । ४२ ।

आचारंगधरादो पणहत्तरिजुत्तदुसयवासेसुं । वोलीणेसुं बद्धो पट्टो कक्किस्स णरवइणो ॥ १५१०

२७५ ।

अह साहियाण कक्की णियजोग्गे[5] जणपदे पयत्तेणं । सुक्कं जाचदि[6] लुद्धो पिंडग्गं[7] जाव ताव समणाओ ॥ १५११

जिस कालमें वीर भगवान्‌ने निश्रेयससंपदाको प्राप्त किया था, उसी समय पालक नामक अवन्तिसुतका राज्याभिषेक हुआ ॥ १५०५ ॥

साठ वर्ष पालकका, एकसौ पचपन वर्ष विजयवंशियोंका, चालीस वर्ष मुरुंडवंशियोंका, और तीस वर्ष पुष्यमित्रका राज्य रहा ॥ १५०६ ॥ ६० । १५५ । ४० । ३० ।

इसके पश्चात् साठ वर्ष वसुमित्र-अग्निमित्र, एकसौ वर्ष गन्धर्व, और नरवाहन चालीस वर्ष राज्य करते रहे । पश्चात् भृत्य-आंध्र (?) उत्पन्न हुए ॥ १५०७ ॥

६० । १०० । ४० ।

इन भृत्य-आन्ध्रोंका काल दोसौ ब्यालीस वर्ष है । इसके पश्चात् फिर गुप्तवंशी हुए, जिनके राज्यकालका प्रमाण दोसौ इकतीस वर्ष रहा है ॥ १५०८ ॥ २४२ । २३१ ।

फिर इसके पश्चात् इन्द्रका सुत कल्की उत्पन्न हुआ । इसका नाम चतुर्मुख, आयु सत्तर वर्ष, और राज्यकाल दुगुणित इक्कीस अर्थात् ब्यालीस वर्षप्रमाण रहा ॥ १५०९ ॥ ७० । ४२ ।

६० + १५५ + ४० + ३० + ६० + १०० + ४० + २४२ + २३१ + ४२ = १००० वर्ष ।

आचारांगधरोंके पश्चात् दोसौ पचत्तर वर्षोंके व्यतीत होनेपर कल्की नरपतिको पट्ट बांधा गया था ॥ १५१० ॥ २७५ । ६८३ + २७५ + ४२ = १००० वर्ष ।

तदनन्तर वह कल्की प्रयत्नपूर्वक अपने योग्य जनपदोंको सिद्ध करके लोभको प्राप्त होता हुआ मुनियोंके आहारमेंसे भी अग्रपिंडको शुल्क मांगने लगा ॥ १५११ ॥

---

१ द ब जं कारे. २ द मुरुदवंसा. ३ द ब सयामि. ४ द ब रज्जतो. ५ ब णियजोग्गो. ६ द ब जातदि. ७ द ब पिकं.

दादूणं पिंडग्गं समणा कालो य अंतराणं पि । गच्छंति ओहिणाणं उप्पज्जइ तेसु एक्कम्मि ॥ १५१२
अह को वि असुरदेवो[1] ओहीदो मुणिगणाण उवसग्गं । णादूणं तं कक्किं मारेदि हु धम्मदोहि त्ति ॥ १५१३
कक्किसुदो अजिदंजयणामो[3] रक्ख त्ति जंपदि तच्चरणे । तं रक्खदि असुरदेओ धम्मे रज्जं करेज्ज त्ति ॥ १५१४
तत्तो दोवे वासे सम्मद्धम्मो पयट्टदि जणाणं । कमसो दिवसे दिवसे कालमहप्पेण हाएदे ॥ १५१५
एवं वस्ससहस्से पुह पुह कक्की हवेइ एक्केको[5] । पंचसयवच्छरेसुं एक्केको तह य उवकक्की ॥ १५१६
कक्की पडि एक्केकं दुस्समसाहुस्स ओहिणाणं पि । संघा य चादुवण्णा थोवा जायंति तक्काले ॥ १५१७
चंडालसबरपाणा पुलिंदणाहलचिलायपहुदीओ । दीसंति णरा बहवो पुव्वणिबद्धेहिं पावेहिं ॥ १५१८
दीणाणाहा कूरा णाणाविहवाहिवेयणाजुत्ता । खप्परकरंकहत्था देसंतरगमेण संतत्ता ॥ १५१९
एवं दुस्समकाले हीयंते धम्मआउउदयादी । अंते विसमसहाओ उप्पज्जदि एक्कवीसमो कक्की ॥ १५२०

तब श्रमण (मुनि) अग्रपिण्डको देकर और ' यह अन्तरायोंका काल है ' ऐसा समझकर [निराहार] चले जाते हैं । उस समय उनमेंसे किसी एकको अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है ॥ १५१२ ॥

इसके पश्चात् कोई असुरदेव अवधिज्ञानसे मुनिगणोंके उपसर्गको जानकर और धर्मका द्रोही मानकर उस कल्कीको मार डालता है ॥ १५१३ ॥

तब अजितंजय नामक उस कल्कीका पुत्र ' रक्षा करो ' इसप्रकार कहकर उस देवके चरणोंमें नमस्कार करता है । तब वह देव ' धर्मपूर्वक राज्य करो ' इसप्रकार कहकर उसकी रक्षा करता है ॥ १५१४ ॥

इसके पश्चात् दो वर्ष तक लोगोंमें समीचीन धर्मकी प्रवृत्ति रहती है । फिर क्रमशः कालके माहात्म्यसे वह प्रतिदिन हीन होती जाती है ॥ १५१५ ॥

इसप्रकार एक हजार वर्षोंके पश्चात् पृथक् पृथक् एक एक कल्की, तथा पांचसौ वर्षोंके पश्चात् एक एक उपकल्की होता है ॥ १५१६ ॥

प्रत्येक कल्कीके प्रति एक एक दुषमाकालवर्ती साधुको अवधिज्ञान प्राप्त होता है और उसके समयमें चातुवर्ण्य संघ भी अल्प होजाते हैं ॥ १५१७ ॥

उस समय पूर्वमें बांधे हुए पापोंके उदयसे चण्डाल, शबर, श्वपच, पुलिन्द, लाहल (म्लेच्छविशेष) और किरातप्रभृति, तथा दीन, अनाथ, क्रूर, और जो नाना प्रकारकी व्याधि एवं वेदनासे युक्त हैं, हाथोंमें खप्पर तथा भिक्षापात्रको लिये हुए हैं, और देशान्तरगमनसे संतप्त हैं, ऐसे बहुतसे मनुष्य दिखते हैं ॥ १५१८-१५१९ ॥

इसप्रकारसे दुषमाकालमें धर्म, आयु और उंचाई आदि कम होती जाती है । फिर अन्तमें विषम स्वभाववाला इक्कीसवां कल्की उत्पन्न होता है ॥ १५२० ॥

---

१ द ब एकंपि. २ द ब असुरदेवा. ३ द ब अदिदंजयणामो. ४ द ब वासी. ५ ब हवे इक्केको. ६ द चिलाण, ब चिलाण.

वीरंगजाभिधाणो[1] तक्काले मुणिवरो भवे एक्को। सव्वसिरी तह विरदी सावयजुगमग्गिदत्तपंगुसिरी[2] ॥ १५२१

आणाए कक्किणिओ णियजोग्गे साहिदूण जणपदए ।
सो कोइ णत्थि मणुओ जो मम ण वसं त्ति भणदि मंतिवरे[3] ॥ १५२२

अह विण्णविंति मंती सामिय एक्को मुणी वसो णत्थि। तत्तो भणेदि कक्की कहह रिसी कोविणीओ[4] सो[5] ॥ १५२३

सचिवा चवंति सामिय सयलअहिंसाव्वदाण आधारो । संतो विमोक्कसंगो तणुट्ठाणकारणेण मुणी ॥ १५२४

परघरदुवारएसुं मज्झण्हे कायदरिसणं किच्चा । पासुयमसणं[6] भुंजदि पाणिपुडे विग्घपरिहीणं[7] ॥ १५२५

सोदूण मंतिवयणं भणेदि कक्की अहिंसवदधारी। कोहि[8] सो वच्चदि पावो अप्पा जाणहि य सव्वभंगीहिं[9] ॥ १५२६

तं तस्स अग्गपिंडं सुक्कं गेण्हेह[10] अप्पधादिस्स । अध जाचिदम्हि पिंडे दादूणं मुणिवरो तुरिदं ॥ १५२७

कादूणमंतरायं गच्छदि पावेदि ओहिणाणं पि । अक्कारिय अग्गिलयं पंगुसिरीविरदिसव्वसिरी[11] ॥ १५२८

भासइ पसण्णहिदओ दुस्समकालस्स जादमवसाणं । तुम्हम्हं[12] तिदिणमाऊ एसो अवसाणकक्की हु ॥ १५२९

ताहे चत्तारि जणा चउविहआहारसंगपहुदीणं । जावज्जीवं छंडिय सण्णासं ते करंती यं[13] ॥ १५३०

उसके समयमें वीरांगज नामक एक मुनि, सर्वश्री नामक आर्यिका तथा अग्निदत्त (अग्निल) और पंगुश्री नामक श्रावकयुगल (श्रावक-श्राविका) होते हैं ॥ १५२१ ॥

वह कल्की आज्ञासे अपने योग्य जनपदोंको सिद्ध करके मंत्रिवरोंसे कहता है कि ऐसा कोई पुरुष तो नहीं है जो मेरे वशमें न हो ? ॥ १५२२ ॥

तब मंत्री निवेदन करते हैं कि हे स्वामिन् ! एक मुनि आपके वशमें नहीं है। तब कल्की कहता है कि कहो वह अविनीत मुनि कौन है ? इसके उत्तरमें सचिव अर्थात् मंत्री कहते हैं कि हे स्वामिन् ! सकल अहिंसाव्रतोंका आधारभूत वह मुनि विमुक्तसंग अर्थात् परिग्रहसे रहित होता हुआ शरीरकी स्थितिके निमित्त दूसरोंके घरद्वारोंपर कायको दिखलाकर मध्याह्नकालमें अपने हस्तपुटमें विघ्नरहित प्राशुक अशनको ग्रहण करता है ॥ १५२३–१५२५ ॥

इसप्रकार मंत्रिवचनको सुनकर वह कल्की कहता है कि वह अहिंसाव्रतका धारी पापी कहां जाता है, यह तुम स्वयं सर्व प्रकारसे पता लगाओ। उस आत्मघाती मुनिके प्रथम पिण्डको शुल्कके रूपमें ग्रहण करो। तत्पश्चात् [कल्कीकी आज्ञानुसार] प्रथम पिंडके मांगे जानेपर मुनीन्द्र तुरंत उसे देकर और अन्तराय करके वापिस चले जाते हैं तथा अवधिज्ञानको भी प्राप्त करते हैं। उस समय वे मुनीन्द्र अग्निल श्रावक, पंगुश्री श्राविका और सर्वश्री आर्यिकाको बुलाकर प्रसन्नचित्त होते हुए कहते हैं कि अब दुषमाकालका अन्त आचुका है, तुम्हारी और हमारी तीन दिनकी आयु शेष है, और यह अन्तिम कल्की है ॥ १५२६–१५२९ ॥

तब वे चारों जन चार प्रकारके आहार और परिग्रहादिकको जन्मपर्यन्त छोड़कर सन्यासको ग्रहण करते हैं ॥ १५३० ॥

---

१ द ब 'भिधाणा. २ द ब मग्गिदत्ति. ३ द मंतिपुरो, ब मंतिपुरे. ४ द ब सामय. ५ द ब केविणी-आओ. ६ द ब सचिवी. ७ द ब तणुवाण. ८ द ब परपर°. ९ द पासुयमसणं हि, ब पासुयमसणहिं. १० द ब विप्पुपरिहीणं. ११ द ब कह. १२ द ब जायणदि सव्वभंगीहिं. १३ द ब गेण्हेव. १४ द ब 'सव्वसिद्धीहिं. १५ द तुम्हम्हि. १६ द ब करंतीए.

कत्तियबहुलस्संते सादीसुं दिणयरम्मि उग्गमिए । कियसण्णासो[1] सव्वे पावंति समाहिमरणं हि ॥ १५३१
उवहिउवमाउजुत्तो[2] सोधम्मे मुणिवरो[3] तदो जादो। तम्मि य ते तिण्णि जणा साधियपलिदोवमाउजुदो[4]॥ १५३२
तद्दिवसे मज्झण्हे कयकोहो को वि असुरवरदेओ । मारेदि कक्किरायं अग्गी णासेदि दिणयरत्थमणे ॥ १५३३
एवमिगिवीस कक्की उवकक्की तेत्तिया य धम्माए। जम्मंति धम्मदोहा जलणिहिउवमाणआउजुदा ॥ १५३४
वासतए अडमासे पक्खे गलिदम्मि पविसदे तत्तो । सो अदिदुस्समणामो छट्ठो कालो महाविसमो ॥ १५३५

वा ३, मा ८, दि १५।

तस्स पढमप्पएसे तिहत्थदेहो[5] अहुट्ठहत्थो य । तह बारह पुट्ठट्ठी परमाऊ वीस वासाणिं ॥ १५३६

३ । ७ । १२ । २० ।

२

मूलप्फलमच्छादी सव्वाणं माणुसाण आहारो । ताहे वासा वच्छा गेहप्पहुदी णरा ण दीसंति ॥ १५३७
तत्तो णग्गा सव्वे भवणविहीणा वणेसु हिंडंता । सव्वंगधूमवण्णा[7] गोधम्मपरायणा कूरा ॥ १५३८

वे सब कार्तिक मासके कृष्णपक्षके अन्तमें अर्थात् अमावस्याके दिन सूर्यके स्वाति नक्षत्रके ऊपर उदित रहनेपर सन्यासको करके समाधिमरणको प्राप्त करते हैं ॥ १५३१ ॥

समाधिमरणके पश्चात् वीरांगद मुनि एक सागरोपम आयुसे युक्त होते हुए सौधर्म स्वर्गमें उत्पन्न हुए (होंगे) और वे तीनों जन भी एक पल्योपमसे कुछ अधिक आयुको लेकर वहांपर ही (सौधर्म स्वर्गमें) उत्पन्न होंगे ॥ १५३२ ॥

उसी दिन मध्याह्नकालमें क्रोधको प्राप्त हुआ कोई असुरकुमार जातिका उत्तम देव कल्की राजाको मारता है और सूर्यास्तसमयमें अग्नि नष्ट होती है ॥ १५३३ ॥

इसप्रकार इक्कीस कल्की और इतने ही उपकल्की धर्मके द्रोहसे एक सागरोपम आयुसे युक्त होकर घर्मा पृथिवीमें जन्म लेते है ॥ १५३४ ॥

इसके पश्चात् तीन वर्ष, आठ मास और एक पक्षके बीत जानेपर महा विषम वह अति-दुषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है ॥ १५३५ ॥ वर्ष ३, मास ८, दिन १५ ।

उसके प्रथम प्रवेशमें शरीरकी उंचाई तीन अथवा साढ़े तीन हाथ, पृष्ठभागकी हड्डिय बारह और उत्कृष्ट आयु बीस वर्षप्रमाण होती है ॥ १५३६ ॥ ३ । ३ । १२ । २० ।

उस कालमें सब मनुष्योंका आहार मूल, फल और मत्स्यादिक होते हैं । उस समय वस्त्र, वृक्ष और मकानादिक मनुष्योंको दिखाई नहीं देते ॥ १५३७ ॥

इसीलिये सब मनुष्य नंगे और भवनोंसे रहित होकर वनोंमें घूमते हैं । उस समयके लोग सर्वांग धूम्रवर्ण, गोधर्मपरायण अर्थात् पशुओं जैसा आचरण करनेवाले, क्रूर, बहिरे, अन्धे,

१ द ब कियसण्णासो. २ द ब °जुत्ता. ३ द ब मुणिवरे. ४ द ब जुदो. ५ द दुहत्थवेदओ, ब तिहत्थदेहओ. ६ द थावे, ब थादे. ७ द ब °धूमवण्णो.

बहिरा अंधा काणा मूका दारिद्दकोधपरिपुण्णा । दीणा वाणररूवा अइमेरच्छा हुंडसंठाणा ॥ १५३९
कुज्जा वामणतणुआ णाणाविहवाहिवेयणावियला । बहुकोहलोहमोहा पउराहूवा सहावपाविट्ठा ॥ १५४०
संबद्धसजणबंधवधणपुत्तकलत्तमित्तपरिहीणा । पुदिदंगपुदिदकेसा जूवालिक्खाहि संछण्णा ॥ १५४१
णारयतिरियगदीदो आगदजीवा हु एत्थ जम्मंति । मरिदूण य अइघोरे णिरए तिरियम्मि जायंते ॥ १५४२
उच्छेहआउविरिया दिवसे दिवसम्मि ताण हीयंते । दुक्खाण ताण कहिदुं को सक्कइ एक्कजीहाए ॥ १५४३
हूणवण्णदिवसविरहिदइगिवीससहस्सवस्सविच्छेदे[4] । जंतुभयंकरकालो पलयो त्ति पयट्टदे घोरो[5] ॥ १५४४
ताहे गरुवगभीरो पसरदि पवणो रउद्दसंवट्टो[6] । तरुगिरिसिलपहुदीणं कुणेदि चुण्णाइं सत्तदिणे ॥ १५४५
तरुगिरिभंगेहिं णरा तिरिया य लहंति गुरुवदुक्खाइं । इच्छंति वामणट्ठाणं[7] विलवंति बहुप्पयारेणं ॥ १५४६
गंगासिंधुणदीणं वेयद्धवणंतरम्मि पविसंति । पुह पुह संखेज्जाइं बाहत्तरि सयलजुवलाइं ॥ १५४७
देवा विज्जाहरया कारुण्णपरा णराण तिरियाणं । संखेज्जजीवरासिं णिवंति तेसुं पएसेसुं ॥ १५४८

कोने, गूंगे, दारिद्र्य एवं क्रोधसे परिपूर्ण, दीन, बन्दर जैसे रूपवाले, अतिनिकृष्ट, हुण्डकसंस्थानसे युक्त, कुबड़े, बौने शरीरवाले, नाना प्रकारकी व्याधि और वेदनासे विकल, बहुत क्रोध, लोभ एवं मोहसे संयुक्त, प्रचुर क्षोभसे युक्त, स्वभावसे ही पापिष्ट; संबन्धी, स्वजन, बान्धव, धन, पुत्र, कलत्र और मित्रोंसे विहीन; पूतिक अर्थात् दुर्गन्धयुक्त शरीर एवं दूषित केशोंसे संयुक्त, तथा जूं और लीख आदिसे आच्छन्न होते है ॥ १५३८-१५४१ ॥

इस कालमें नरक और तिर्यंच गतिसे आये हुए जीव ही यहां जन्म लेते है तथा यहांसे मरकर वे अत्यन्त घोर नरक व तिर्यंच गतिमें उत्पन्न होते है ॥ १५४२ ॥

दिन-प्रतिदिन उन जीवोंकी उंचाई, आयु और वीर्य हीन होते जाते है । इनके दुःखोंको एक जिह्वासे कहनेके लिये भला कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ १५४३ ॥

उनंचास दिन कम इक्कीस हजार वर्षोंके बीतनेपर जन्तुओंको भयदायक घोर प्रलयकाल प्रवृत्त होता है ॥ १५४४ ॥

उस समय महा गम्भीर एवं भीषण संवर्तक वायु चलती है, जो सात दिन तक वृक्ष, पर्वत और शिलाप्रभृतिको चूर्ण करती है ॥ १५४५ ॥

वृक्ष और पर्वतोंके भंग होनेसे मनुष्य एवं तिर्यंच महा दुखको प्राप्त करते है तथा वन और स्थानकी अभिलाषा करते हुए बहुत प्रकारसे विलाप करते है ॥ १५४६ ॥

इस समय पृथक् पृथक् संख्यात व सम्पूर्ण बहत्तर युगल गंगा-सिन्धु नदियोंकी वेदी और विजयार्द्धवनके मध्यमें प्रवेश करते हैं ॥ १५४७ ॥

इसके अतिरिक्त देव और विद्याधर दयार्द्र होकर मनुष्य और तिर्यंचोंमेंसे संख्यात जीवराशिको उन प्रदेशोंमें ले जाकर रखते हैं ॥ १५४८ ॥

---

१ द ब अडमेछा. २ द ब वामणतणुणा. ३ ब विउला. ४ द ब °विच्छेदो. ५ द ब घोरे. ६ द ब °संवट्टा. ७ द वासणट्ठाणं.

ताहे गभीरगज्जी मेघा मुंचंति तुहिणखारजलं । विससलिलं पत्तेक्कं पत्तेक्कं सत्त दिवसाणिं ॥ १५४९
धूमो धूली वज्जं जलंतजाला य दुप्पेच्छा[1] । वरिसंति जलदणिवहा एक्केक्कं सत्त दिवसाणिं ॥ १५५०[2]
एवं कमेण भरहे अज्जाखंडम्मि जोयणं एक्कं । चित्ताए उवरि ठिदा दज्झइ वड्ढिगदा भूमी ॥ १५५१
वज्जमहग्गिबलेणं अज्जाखंडस्स वड्ढियो भूमी । पुव्विल्लखंधरूवं मुत्तूणं जादि लोयंतं ॥ १५५२
ताहे[3] अज्जाखंडं दप्पणतलसुलिदकंतिसमवट्टं । गयधूलिपंककलुसं होइ समं सेसभूमीहिं ॥ १५५३
तत्थुवत्थिदणराणं हत्थं उदओ य सोलसं वस्सा । अहवा पण्णरसाऊ विरियादी तदणुरूवा य ॥ १५५४
तत्तो पविसदि रम्मो कालो उस्सप्पिणि त्ति विक्खादो । पढमो अइदुस्समओ दुइज्जओ दुस्समाणामा ॥ १५५५
दुस्समसुसमो तदिओ चउत्थओ सुसमदुस्समो णामापंचमओ तह सुसमो जणप्पिओ सुसमसुसमओ छट्ठो॥ १५५६
एदाण कालमाणं अवसप्पिणिकालमाणसारिच्छं । उच्छेहआउपहुदी दिवसे दिवसम्मि वड्ढंते ॥ १५५७

उस समय गम्भीर गर्जनासे सहित मेघ तुहिन अर्थात् शीतल और क्षार जल तथा विषजलमेंसे प्रत्येकको सात सात दिन तक बरसाते हैं ॥ १५४९ ॥

इसके अतिरिक्त वे मेघोंके समूह धूम, धूलि, वज्र, एवं जलती हुई दुष्प्रेक्ष्य ज्वाला, इनमेंसे हर एकको सात दिन तक बरसाते हैं ॥ १५५० ॥

इस क्रमसे भरतक्षेत्रके भीतर आर्यखण्डमें चित्रा पृथिवीके ऊपर स्थित वृद्धिगत एक योजनकी भूमि जलकर नष्ट हो जाती है ॥ १५५१ ॥

वज्र और महाअग्निके बलसे आर्यखण्डकी बढ़ी हुई भूमि अपने पूर्ववर्ती स्कन्ध स्वरूपको छोड़कर लोकान्त तक पहुंच जाती है ॥ १५५२ ॥

उस समय आर्यखण्ड शेष भूमियोंके समान दर्पणतलके सदृश कान्तिसे स्थित और धूलि एवं कीचड़की कलुषतासे रहित हो जाता है ॥ १५५३ ॥

वहांपर उपस्थित मनुष्योंकी उंचाई एक हाथ, आयु सोलह अथवा पन्द्रह वर्षप्रमाण और वीर्यादिक भी तदनुसार ही होते हैं ॥ १५५४ ॥

इसके पश्चात् उत्सर्पिणी इस नामसे विख्यात रमणीय काल प्रवेश करता है । इसके छह भेदोंमेंसे प्रथम अतिदुषमा, द्वितीय दुषमा, तृतीय दुषमसुषमा, चतुर्थ सुषमदुषमा, पांचवां सुषमा और छठा जनोंको प्रिय सुषमसुषमा है ॥ १५५५-१५५६ ॥

इनका कालप्रमाण अवसर्पिणीकालप्रमाणके सदृश होता है । इस उत्सर्पिणीकालमें उंचाई और आयु आदिक दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती हैं ॥ १५५७ ॥

१ द ब मेघो. २ द ब दुपेच्छे. ३ एषा गाथा ब-पुस्तके नास्ति. ४ द ब वड्ढिगा. ५ द ब तदे. ६ ब हत्थं. ७ द विक्खाओ.

अइदुस्समकाल २१००० । दु २१००० । दुसमसुसम सा १०००००००००००००० रिण वास ४२००० । सा २००००००००००००००० । सा ३००००००००००००००० । सु सा ४००००००००००००००० ।

पोक्खरमेघा सलिलं वरिसंति दिणाणि सत्त सुहजणणं । वज्जग्गिणिदड्ढा भूमी सयला वि सीयला होदि ॥ १५५८

वरिसंति खीरमेघा खीरजलं तेत्तियाणि दिवसाणिं । खीरजलेहिं भरिदा सच्छाया होदि सा भूमी ॥ १५५९

तत्तो अमिदपयोदा अमिदं वरिसंति सत्त दिवसाणिं । अभिदेणं सित्ताए महिए जायंति वल्लिगोम्मादी ॥ १५६०

ताधे रसजलवाहा दिव्वरसं पवरिसंति सत्तदिणे । दिव्वरसेणाउण्णा रसवंता होंति ते सव्वे ॥ १५६१

विविहरसोसहिभरिदा भूमी सुस्सादपरिणदा होदि । तत्तो सीयलगंधं णादित्तो णिस्सरंति णरतिरिया ॥ १५६२

फलमूलदलप्पहुदिं छुहिदा खादंति मत्तपहुदीणं । णग्गा गोधम्मपरा णरतिरिया वणपएसेसुं ॥ १५६३

तक्कालपढमभाए आऊ पण्णरस सोलस समा वा । उच्छेहो हत्थिहत्थं वड्ढंते आउपहुदीणिं ॥ १५६४

अतिदुषमा २१००० वर्ष । दुषमा २१००० वर्ष । दुषमसुषमा सागर १०००००-०००००००००० – वर्ष ४२००० । सु. दु. सा. २००००००००००००००० । सु. सा. ३००००००००००००००० । सु. सु. सा. ४००००००००००००००० ।

उत्सर्पिणीकालके प्रारम्भमें पुष्कर मेघ सात दिन तक सुखोत्पादक जलको बरसाते हैं, जिससे वज्राग्निसे जली हुई सम्पूर्ण पृथिवी शीतल हो जाती है ॥ १५५८ ॥

क्षीरमेघ उतने ही दिन तक क्षीरजलकी वर्षा करते हैं । इसप्रकार क्षीरजलसे भरी हुई यह पृथिवी उत्तम कान्तियुक्त हो जाती है ॥ १५५९ ॥

इसके पश्चात् सात दिन तक अमृतमेघ अमृतकी वर्षा करते हैं । इसप्रकार अमृतसे अभिषिक्त भूमिपर लता, गुल्म इत्यादि उगने लगते हैं ॥ १५६० ॥

उस समय रसमेघ सात दिन तक दिव्य रसकी वर्षा करते हैं । इस दिव्य रससे परिपूर्ण वे सब रसवाले हो जाते हैं ॥ १५६१ ॥

विविध रसपूर्ण औषधियोंसे भरी हुई भूमि सुस्वादपरिणत हो जाती है । पश्चात् शीतल-गंधको ग्रहणकर वे मनुष्य और तिर्यंच गुफाओंसे बाहर निकल आते हैं ॥ १५६२ ॥

उस समय मनुष्य और तिर्यंच नग्न रहकर गोधर्मपरायण अर्थात् पशुओं जैसा आचरण करते हुए क्षुधित होकर वनप्रदेशोंमें मत्त (धतूरा) आदि वृक्षोंके फल, मूल एवं पत्ते आदिको खाते हैं ॥ १५६३ ॥

उस कालके प्रथम भागमें आयु पन्द्रह अथवा सोलह वर्ष और ऊंचाई एक हाथप्रमाण होती है । इसके आगे वे आयु आदि बढ़ती ही जाती हैं ॥ १५६४ ॥

---

१ ब बलि°. २ द ब णादित्ते. ३ द ब छुदिदं.

आऊ तेजो बुद्धी बाहुबलं तह य देहउच्छेहो । खंतिधिदिप्पहुदीओ कालसहावेण वड्ढंति ॥ १५६५

एवं वोलीणेसुं इगिवीससहस्ससंखवासेसुं । पूरेदि भरहखेत्ते कालो अदिदुस्समो णाम ॥ १५६६

। अदिदुस्समं समत्तं ।

ताहे दुस्समकालो पविसदि तस्सिं च मणुवतिरियाणं । आहारो पुव्वं चिय वीससहस्सावधिं जाव ॥ १५६७

२०००० ।

तस्स पढमप्पवेसे वीसं वासाणि होइ परमाऊ । उदओ य तिण्णि हत्था आउट्ठहत्थो चवंति परे ॥ १५६८

२० । ३ । ७ ।

२

वाससहस्से सेसे उप्पत्ती कुलकराण भरहम्मि । अथ चोद्दसाण ताणं कमेण णामाणि वोच्छामि ॥ १५६९

कणओ कणयप्पहकणयराय[1]कणयद्धजा कणयपुंखो ।

णलिणो[2] णलिणप्पहणलिणरायणलिणद्धजा णलिणपुंखो ॥ १५७०

पउमपहपउमराजा पउमद्धयपउमपुंखणामा य । आदिमकुलकरउदओ चउ हत्था अंतिमस्स सत्तेव ॥ १५७१

सेसाणं उस्सेहे[3] संपदि अम्हाण णत्थि उवदेसो । कुलकरपहुदी णामा एदाणं होंति गुणणामा ॥ १५७२

४ । ७ ।

आयु, तेज, बुद्धि, बाहुबल, देहकी उंचाई, क्षमा तथा धृति (धैर्य) इत्यादि सब काल-स्वभावसे उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं ॥ १५६५ ॥

इसप्रकार इक्कीस हजार संख्याप्रमाण वर्षोंके बीत जानेपर भरतक्षेत्रमें अतिदुषमा नामक काल पूर्ण होता है ॥ १५६६ ॥

अतिदुषमा काल समाप्त हुआ ।

तब दुषमाकालका प्रवेश होता है । इस कालमें मनुष्य-तिर्यञ्चोंका आहार बीस हजार वर्ष तक पहिलेके ही समान रहता है ॥ १५६७ ॥ २०००० ।

इस कालके प्रथम प्रवेशमें उत्कृष्ट आयु बीस वर्ष और उंचाई तीन हाथप्रमाण होती है। दूसरे आचार्य उंचाई साढ़े तीन हाथप्रमाण कहते हैं ॥ १५६८ ॥ आयु २० । उत्सेध ३ । ३½ ।

इस कालमें एक हजार वर्षोंके शेष रहनेपर भरतक्षेत्रमें चौदह कुलकरोंकी उत्पत्ति होने लगती है । अब क्रमसे उन कुलकरोंके नामोंको कहता हूं ॥ १५६९ ॥

कनक[1], कनकप्रभ, कनकराज[2], कनकध्वज, कनकपुंख[3] (कनकपुंगव), नलिन[4], नलिनप्रभ, नलिनराज, नलिनध्वज, नलिनपुंख[5] (नलिनपुंगव), पद्म[6], पद्मप्रभ, पद्मराज[7], पद्मध्वज, और पद्मपुंख[8] (पद्मपुंगव), ये क्रमसे उन चौदह कुलकरोंके नाम हैं । इनमेंसे प्रथम कुलकरकी उंचाई चार हाथ और अन्तिम कुलकरकी उंचाई सात हाथ होती है ॥ १५७०–१५७१ ॥ ४ । ७ ।

शेष कुलकरोंकी उंचाईके विषयमें हमारे पास इस समय उपदेश नहीं है । इनके जो कुलकरप्रभृति नाम हैं, वे गुणनाम अर्थात् सार्थक हैं ॥ १५७२ ॥

---

१ द ब पुव्वचिय. २ द ब आउट्ठहत्था. ३ द ब वोलीणो. ४ द ब णलिणप्पह णराय°. ५ द ब उस्सेहो.

ताधे बहुविहओसहिजुदाणं पुंडरियपावको णत्थि । अह कुलकरा णराणं[2] उवदेसं देंति[3] विणयजुत्ताणं ॥ १५७३
मथिदूण कुणह अग्गिं पचेह अण्णाणि भुंजह जहिच्छं । करियं विवाहं बंधवपहुदिद्दारेण सोक्खेणं ॥ १५७४
अइमेच्छा ते पुरिसा जे सिक्खावंति कुलयरा इत्थं । णवरि विवाहविहीओ वट्टंते पउमपुंखाओ ॥ १५७५

। दुस्समकालो सम्मत्तो[5] ।

तत्तो दुस्समसुसमो कालो पविसेदि तस्स पढमस्स । सगहत्था उस्सेहो वीसब्भहियं सयं आऊ ॥ १५७६
७ । १२० ।

पुट्ठट्ठी चउवीसं मणुवा तह पंचवण्णदेहजुदा । मज्जायविणयलज्जा संतुट्ठा होदि संपण्णा ॥ १५७७
२४ ।

तक्काले तित्थयरा चउवीस हवंति ताण पढमजिणो[6] । अंतिल्लकुलकरसुदो विदेहवत्ती तदो होदि ॥ १५७८
महपउमो सुरदेओ सुपासणामो सयंपहो तह य । सव्वपहो देवसुदो कुलसुदउदका य पोट्टिलओ ॥ १५७९
जयकित्ती मुणिसुव्वयअरयअपापा य णिक्कसायाओ । विउलो णिम्मलणामा अ चित्तगुत्तो समाहिगुत्तो य॥ १५८०
उणवीसमो सयंभू अणिअट्टी जयो य विमलणामो य । तह देवपालणामा अणंतविरिओ अ होदि चउवीसा ॥ १५८१

उस समय विविध प्रकारकी औषधियोंके होते हुए भी पुण्डरीक (श्रेष्ठ) अग्नि नहीं रहती । तब विनयसे युक्त उन मनुष्योंको कुलकर उपदेश देते हैं ॥ १५७३ ॥

मथ करके आगको उत्पन्न करो और अन्नको पकाओ । तथा विवाह करके बान्धवादिकके निमित्तसे इच्छानुसार सुखका उपभोग करो ॥ १५७४ ॥

जिनको कुलकर इसप्रकारकी शिक्षा देते है, वे पुरुष अत्यन्त म्लेच्छ होते है । विशेष यह है कि पद्मपुंख कुलकरके समयसे विवाहविधियां प्रचलित होजाती है ॥ १५७५ ॥

इसप्रकार दुषमाकालका वर्णन समाप्त हुआ ।

इसके पश्चात् दुषमसुषमा कालका प्रवेश होता है । इसके प्रारंभमें उंचाई सात हाथ और आयु एकसौ बीस वर्षप्रमाण होती है ॥ १५७६ ॥ उत्सेध ७ हाथ । आयु १२० वर्ष ।

इस समय पृष्ठभागकी हड्डियां चौबीस होती है। तथा मनुष्य पांच वर्णवाले शरीरसे युक्त, मर्यादा, विनय एवं लज्जासे सहित, सन्तुष्ट और सम्पन्न होते हैं ॥ १५७७ ॥ २४ ।

इस कालमें चौबीस तीर्थंकर होते हैं । उनमेंसे प्रथम तीर्थंकर अन्तिम कुलकरका पुत्र होता है । उस समयसे यहां विदेहक्षेत्र जैसी वृत्ति होने लगती है ॥ १५७८ ॥

महापद्म[1], सुरदेव[2], सुपार्श्व[3] नामक, स्वयंप्रभ[4], सर्वप्रभ[5] (सर्वात्मभूत), देवसुत[6], कुलसुत[7], उदर्क (उदंक), प्रोष्ठिल[8], जयकीर्ति[9], मुनिसुव्रत[10], अर[11], अपाप[12], निष्कषाय[13], विपुल[14], निर्मल[15], चित्रगुप्त[16], समाधिगुप्त[17], उन्नीसवां स्वयंभू[18], अनिवृत्ति (अनिवर्तक), जय[19], विमल[20] नामक, देवपाल[21] नामक और अनन्तवीर्य[22], ये चौबीस तीर्थंकर होते हैं ॥ १५७९-१५८१ ॥

---

१ द ब ओसहिजुदाय. २ द ब पढाणं. ३ द दिति. ४ द ब करण. ५ द ब काला सम्मत्ता. ६ द ब सत्तुप्पा. ७ द ब पदमजिणा. ८ द ब जया.

आदिमजिणउदयाऊ सगहत्था सोलसुत्तरं च सदं । चरिमस्स पुव्वकोडी आऊ पणसयधणूणि उस्सेहो ॥ १५८२

७ । ११६ । पु को १ । ५०० ।

उच्छेहाऊपहुदिसु सेसाणं णत्थि अम्ह उवएसो । एदे तित्थयरजिणा तदियभवे तिभुवणस्स खोभकरं ॥ १५८३
तित्थयरणामकम्मं बंधंते ताण ते इमे णामा । सेणिगसुपासणामा उदंकपोट्ठिल्लकदसूया ॥ १५८४
खत्तियपाविलसंखा य णंदगुणंदा ससंकसेवगया । पेमगतोरणरेवदकिण्हा सिरिभगलिविगलिणामा य ॥ १५८५
दीवायणमाणवका णारदणामा सुरूवदत्तो य । सच्चइपुत्तो चरिमो णरिंदवंसम्मि ते जादा ॥ १५८६
तित्थयराणं काले चक्कहरा होंति ताण णामाइं । भरहो अ दिग्घदंतो मुत्तरदंतो य गूढदंतो य ॥ १५८७
सिरिसेणो सिरिभूदी सिरिकंतो पउमणाममहपउमा । तह चित्तवाहणो विमलवाहणो रिट्ठसेणणामा य ॥ १५८८
चंदो य महाचंदो चंदधरो चंदसीहवरचंदा । हरिचंदो सिरिचंदो सुपुण्णचंदो सुचंदो य ॥ १५८९
पुव्वभवे अणिदाणा पुंदे जायंति पुण्णपाकेहिं । अणुजा कमसो णंदी तह णंदिमित्तसेणा य ॥ १५९०
तुरिमो य णंदिभूदी बलमहबलदिबला तिविट्ठो यं । णवमो दुविट्ठणामो ताणं जायंति णव य पडिसत्तू ॥ १५९१
सिरिहरिणीलकंठा यसकंठसुकंठसिखिकंठा । अस्सग्गीवहयग्गीवमउरगीवा य पडिसत्तू ॥ १५९२

इनमेंसे प्रथम तीर्थंकरकी उंचाई सात हाथ और आयु एकसौ सोलह वर्ष तथा अन्तिम तीर्थंकरकी आयु एक पूर्वकोटि और उंचाई पांचसौ धनुषप्रमाण होती है ॥ १५८२ ॥

प्रथम— उत्सेध ७ । आयु ११६ । द्वितीय—आयु पूर्वकोटि १ । उत्सेध ५०० ।

शेष तीर्थंकरोंकी उंचाई और आयु इत्यादिके विषयमें हमारे पास उपदेश नहीं है । ये तीर्थंकर जिन तृतीय भवमें तीनों लोकोंको क्षोभित करनेवाले तीर्थंकर नामकर्मको बांधते हैं । उनके उस समयके वे नाम ये हैं— श्रेणिक[1], सुपार्श्व नामक, उदंक[2], प्रोष्ठिल[3], कृतसूय[4] (कटप्र), क्षत्रिय, पाविल[5] (श्रेष्ठी), शंख, नन्द[6], सुनन्द[7], शशांक, सेवक[8], प्रेमक[9], अतोरण[10], रेवत[11], कृष्ण, सीरी[12] (बलराम), भंगलि, विगलि[13], द्वीपायन, माणवक, नारद[14], सुरूपदत्त, और अन्तिम सत्यकिपुत्र[15] । ये सब राजवंशमें उत्पन्न हुए थे ॥ १५८३–८६ ॥

तीर्थंकरोंके समयमें जो चक्रवर्ती होते हैं, उनके ये नाम हैं—भरत[1], दीर्घदन्त[2], मुक्तदन्त[3], गूढदन्त[4], श्रीषेण[5], श्रीभूति, श्रीकान्त[6], पद्म नामक, महापद्म, चित्रवाहन[11], विमलवाहन[12], और अरिष्टसेन[13] ॥ १५८७–१५८८ ॥

चन्द्र[1], महाचन्द्र[2], चन्द्रधर (चक्रधर), वरचन्द्र[3], सिंहचन्द्र, हरिचन्द्र[4], श्रीचन्द्र[5], पूर्णचन्द्र और सुचन्द्र[6] (शुभचन्द्र), ये पूर्वभवमें निदानको न करके पुण्यके उदयसे नौ बलदेव होते हैं । नन्दी, नन्दिमित्र, नन्दिषेण, चतुर्थ नन्दिभूति, बल[1], महाबल, अतिबल, त्रिपृष्ठ, और नवमां द्विपृष्ठ, ये नौ नारायण क्रमसे उन उपर्युक्त बलदेवोंके अनुज होते हैं । इन नारायणोंके श्रीकंठ, हरिकंठ[2], नीलकंठ, अश्वकंठ, सुकंठ, शिखिकंठ[3], अश्वग्रीव, हयग्रीव और मयूरग्रीव, ये क्रमसे नौ प्रतिशत्रु हुआ करते हैं ॥ १५८९–१५९२ ॥

१ ब उदंक°. २ द ब खंभिय°. ३ द ब पेमगरो णाम वदकिण्हा. ४ द ब चंदा. ५ द ब चंदसीहचंदो य. ६ द ब °दिबलो तिविच्छाह. ७ द ब °णीलकंकंठायसकंठासुकंठ°. ८ द ब महुरग्गीवा.

एदे तेसट्ठिणरा सलागपुरिसा तइज्जकालम्मि । उप्पज्जंति हु कमसो एक्कोवहिओमकोडकोडीए ॥ १५९३

१०००००००००००००० ।

एक्को णवरि विसेसो बादालसहस्ससंघासपरिहीणो[1] । तच्चरिमम्मि णराणं आऊ इगिपुव्वकोडिपरिमाणं ॥ १५९४

पणवीसब्भहियाणि[2] पंच सयाणि धणूणि उच्छेहो । चउसट्ठी पुट्ठट्ठी णरणारी देवअच्छरसरिच्छा ॥ १५९५

। दुस्समसुसमो सम्मत्तो ।

तत्तो पविसदि तुरिमं णामेणं सुसमदुस्समो कालो । तप्पढमम्मि णराणं आऊ वासाण पुव्वकोडीओ ॥ १५९६

ताहे ताणं उदया पंचसयाणि धणूणि पत्तेक्क । कमसो आऊउदया कालबलेणं पवड्ढंति[3] ॥ १५९७

ताहे एसा वसुहा वण्णिज्जइ अवरभोगभूमि त्ति । तच्चरिमम्मि णराणं एक्क पल्लं भवे आऊ ॥ १५९८

उदएण एक्ककोसं सव्वणरा ते पियंगुवण्णजुदा । तत्तो पविसदि कालो पंचमओ सुसमणामेणं ॥ १५९९

तस्स पढमप्पवेसे आउप्पहुदीणि होंति पुव्वं व[4] । कालसहावेण तहा वड्ढंते मणुवतिरियाणं[5] ॥ १६००

ये तिरेसठ शलाकापुरुष एक कोटाकोटी सागरोपप्रमाण इस तृतीय कालमे क्रमसे उत्पन्न होते है ॥ १५९३ ॥ १०००००००००००००० ।

यहां विशेषता एक यह है कि यह काल एक कोटाकोटी सागरोपमोमेसे ब्यालीस हजार वर्ष हीन होता है । इस कालके अन्तमे मनुष्योकी आयु एक पूर्वकोटिप्रमाण, उचाई पाचसौ पचीस धनुष और पृष्ठभागकी हड्डियां चौसठ होती है । इस समय नर-नारी देव एव अप्सराओके सदृश होते है ॥ १५९४–१५९५ ॥

दुषमसुषमाकालका वर्णन समाप्त हुआ ।

इसके पश्चात् सुषमदुषमा नामक चतुर्थ काल प्रविष्ट होता है । इसके प्रारम्भमे मनुष्योकी आयु एक पूर्वकोटि वर्षप्रमाण होती है ॥ १५९६ ॥

उस समय उन मनुष्योकी उंचाई पांचसौ धनुषप्रमाण होती है । पुनः क्रमसे उत्तरोत्तर आयु और उंचाई प्रत्येक कालके बलसे बढती ही जाती है ॥ १५९७ ॥

उस समय यह पृथिवी जघन्य भोगभूमि कही जाती है । इस कालके अन्तमे मनुष्योकी आयु एक पल्यप्रमाण होती है ॥ १५९८ ॥

उस समय वे सब मनुष्य एक कोस ऊंचे और प्रियंगु जैसे वर्णसे युक्त होते है । इसके पश्चात् पांचवां सुषमा नामक काल प्रविष्ट होता है ॥ १५९९ ॥

उस कालके प्रथम प्रवेशमे मनुष्य-तिर्यञ्चोकी आयुप्रभृति पूर्वके ही समान होती है, परन्तु कालस्वभावसे वे उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है ॥ १६०० ॥

१ द ब परिहीणा. २ द ब °हियाण. ३ ब पवदते. ४ द ब तादे हेसा. ५ द ब पुव्वण्हं.

दो कोसा उच्छेहो णारिणरा पुण्णविंदुसरिसमुहा । बहुविणयसीलवंता विगुणियचउसट्ठिपुट्ठट्ठी ॥ १६०१

। सुसमो समत्तो[1] ।

सुसमसुसमाभिधाणो ताहे पविसेदि छट्ठमो कालो । तस्स पढमे पएसे आऊपहुदीणि पुव्वं व ॥ १६०२

कालसहावबलेणं वड्ढंते ताइं मणुवतिरियाणं । ताधे एस धरित्ती उत्तमभोगावणि त्ति सुपसिद्धा ॥ १६०३

तच्चरिमम्मि णराणं आऊ पलुत्तयप्पमाणं च । उदएण तिण्णि कोसा उदयदिणिंदुज्जलसरीरा ॥ १६०४

बेसदछप्पण्णाइं पुट्ठट्ठी होंति ताण मणुवाणं । बहुपरिवारविकुव्वणसमत्थसत्तीहिं संजुत्ता ॥ १६०५

ताहे पविसदि णियमा कमेण अवसप्पिणि त्ति सो कालो । एवं अज्जाखंडे परियट्टंते दु-काल-चत्तारि ॥ १६०६

पणमेच्छखयरसेढिसु अवसप्पुस्सप्पिणीए तुरिमम्मि । तदियाए हाणिचयं कमसो पढमादु चरिमो त्ति ॥ १६०७

उस्सप्पिणीए अज्जाखंडे अदिदुस्समस्स पढमखणे । होंति हु णरतिरियाणं जीवा सव्वाणि थोवाणि ॥ १६०८

उस समयके नर-नारी दो कोस ऊंचे, पूर्ण चन्द्रमाके सदृश मुखवाले, बहुत विनय एवं शीलसे सम्पन्न और दुगुणित चौंसठ अर्थात् एकसौ अट्ठाईस पृष्ठभागकी हड्डियोंसे सहित होते हैं ॥ १६०१ ॥

सुषमाकालका कथन समाप्त हुआ ।

तदनन्तर सुषमसुषमा नामक छठा काल प्रविष्ट होता है । उसके प्रथम प्रवेशमें आयुप्रभृति पहिलेके समान ही होते हैं ॥ १६०२ ॥

कालस्वभावके बलसे मनुष्य और तिर्यंचोंकी वे आयु आदिक क्रमसे आगे आगे बढ़ती जाती हैं । उस समय यह पृथिवी उत्तम भोगभूमिके नामसे सुप्रसिद्ध हो जाती है ॥ १६०३ ॥

उस कालके अन्तमें मनुष्योंकी आयु तीन पल्यप्रमाण और ऊंचाई तीन कोस होती है । उस समयके मनुष्य उदय होते हुए सूर्यके समान उज्वल शरीरवाले होते हैं ॥ १६०४ ॥

उन मनुष्योंके पृष्ठभागकी हड्डियां दोसौ छप्पन होती हैं, तथा वे बहुत परिवारकी विक्रिया करनेमें समर्थ ऐसी शक्तियोंसे संयुक्त होते हैं ॥ १६०५ ॥

इसके पश्चात् फिर नियमसे वह अवसर्पिणीकाल प्रवेश करता है । इसप्रकार आर्यखण्डमें दो और चार अर्थात् छह काल प्रवर्तते रहते हैं ॥ १६०६ ॥

पांच म्लेच्छखण्ड और विद्याधरश्रेणियोंमें अवसर्पिणी एवं उत्सर्पिणीकालमें क्रमसे चतुर्थ और तृतीय कालके प्रारम्भसे अन्त तक हानि व वृद्धि होती रहती है । (अर्थात् इन स्थानोंमें अवसर्पिणीकालमें चतुर्थकालके प्रारम्भसे अन्त तक हानि और उत्सर्पिणी कालमें तृतीय कालके प्रारम्भसे अन्त तक वृद्धि होती रहती है । यहां अन्य कालोंकी प्रवृत्ति नहीं होती है) ॥ १६०७ ॥

उत्सर्पिणीकालके आर्यखण्डमें अतिदुषमाकालके प्रथम क्षणमें मनुष्य और तिर्यञ्चोंमेंसे सब जीव थोड़े होते हैं ॥ १६०८ ॥

१ द ब °सुसमदुस्सम समत्ता.

तत्तो कमसो बहवा मणुवा तेरिच्छसयलवियलक्खा। उप्पज्जंति हु जाव य दुस्समसुसमस्स चरिमो त्ति॥१६०९
णासंति एक्कसमए वियलक्खायंगिणिवहकुलभेया[1] । तुरिमस्स पढमसमए कप्पतरूणं पि उप्पत्ती ॥ १६१०
पविसंति मणुवतिरिया जेत्तियमेत्ता जहण्णभोगखिदिं । तेत्तियमेत्ता होंति हु तक्काले भरहखेत्तम्मि ॥ १६११
अवसप्पिणीए दुस्समसुसमपवेसस्स पढमसमयम्मि। वियलिंदियउप्पत्ती वड्ढी जीवाण थोवकालम्मि ॥ १६१२
कमसो वड्ढंति हु तियकाले मणुवतिरियाणमवि संखा[2] । तत्तो उस्सप्पिणिए तिदए वट्टंति पुव्वं वा ॥ १६१३
अवसप्पिणिउस्सप्पिणिकाल चिय रहटघटियणाएणं । होंति अणंताणंता भरहेरावदखिदिम्मि पुढं ॥ १६१४
अवसप्पिणिउस्सप्पिणिकालसलाया गदे असंखाणि । हुंडावसप्पिणी सा एक्का[3] जाणदि तस्स चिण्हमिमं ॥ १६१५
तस्सिं[4] पि सुसमदुस्समकालस्स ठिदिम्मि[5] थोवअवसेसे । णिवडदि पाउसपहुदी वियलिंदियजीवउप्पत्ती ॥१६१६
कप्पतरूण विरामो वावारो होदि कम्मभूमीए । तक्काले जायंते पढमजिणो पढमचक्की य ॥ १६१७

इसके पश्चात् फिर क्रमसे दुषमसुषमाकालके अन्त तक बहुतसे मनुष्य और सकलेन्द्रिय एवं विकलेन्द्रिय तिर्यंच जीव उत्पन्न होते हैं ॥ १६०९ ॥

तत्पश्चात् एक समयमें विकलेन्द्रिय प्राणियोंके समूह व कुलभेद नष्ट होजाते हैं तथा चतुर्थ कालके प्रथम समयमें कल्पवृक्षोंकी भी उत्पत्ति हो जाती है ॥ १६१० ॥

जितने मनुष्य और तिर्यञ्च जघन्य भोगभूमिमें प्रवेश करते हैं उतने ही इस कालके भीतर भरतक्षेत्रमें होते हैं ॥ १६११ ॥

अवसर्पिणीकालमें दुषमसुषमाकालके प्रारंभिक प्रथम समयमें थोड़े ही समयके भीतर विकलेन्द्रियोंकी उत्पत्ति और जीवोंकी वृद्धि होने लगती है ॥ १६१२ ॥

इसप्रकार क्रमसे तीन कालोंमें मनुष्य और तिर्यञ्च जीवोंकी संख्या बढ़ती ही रहती है। फिर इसके पश्चात् उत्सर्पिणीके तीन कालोंमें भी पहिलेके समान ही वे जीव वर्तमान रहते हैं ॥१६१३॥

भरत और ऐरावत क्षेत्रमें रँहटघटिकान्यायसे अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी काल अनन्तानन्त होते हैं। (अर्थात् जिसप्रकार रँहटकी घरियां बार बार ऊपर व नीचे आती-जाती हैं इसीप्रकार अवसर्पिणीके फिर पश्चात् उत्सर्पिणी और उत्सर्पिणीके पश्चात् अवसर्पिणी, इस क्रमसे सदा इन कालोंका परिवर्तन होता ही रहता है) ॥ १६१४ ॥

असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीकालकी शलाकाओंके बीत जानेपर प्रसिद्ध एक हुण्डावसर्पिणी आती है; उसके चिह्न ये हैं ॥ १६१५ ॥

इस हुण्डावसर्पिणीकालके भीतर सुषमदुषमाकालकी स्थितिमेंसे कुछ कालके अवशिष्ट रहनेपर भी वर्षा आदिक पड़ने लगती है और विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति होने लगती है ॥ १६१६ ॥

इसके अतिरिक्त इसी कालमें कल्पवृक्षोंका अन्त और कर्मभूमिका व्यापार प्रारम्भ होजाता है। उस कालमें प्रथम तीर्थंकर और प्रथम चक्रवर्ती भी उत्पन्न हो जाते हैं ॥ १६१७ ॥

---

१ द ब °णिवहकुल°. २ द °तिरियपविसंखा, ब तिरियमविसंखा. ३ द ब सो एका. ४ द ब तस्सं. ५ द ब विंदिम्मि.

चक्किस्स विजयभंगो णिव्वुहगमणं च थोवजीवाणं । चक्कधराउ दिजाणं[1] हवेदि वंसस्स उप्पत्ती ॥ १६१८
दुस्समसुसमे काले अट्ठावण्णा सलायपुरिसा य । णवमादिसोलसंतं सत्तसु तित्थेसु धम्मवोच्छेदो ॥ १६१९
एक्करस होंति रुद्दा कलहपिया णारदा य णवसंखा । सत्तमतेवीसंतिमतित्थयराणं च उवसग्गो ॥ १६२०
तदियचदुपंचमेसुं कालेसुं परमधम्मणासयरा । विविहकुदेवकुलिंगी दीसंते दुट्ठपाविट्ठा[2] ॥ १६२१
चंडालसबरपाणप्पुलिंदणाहलचिलाय[3]पहुदिकुला । दुस्समकाले कक्की उवकक्की होंति बादाला ॥ १६२२
अइवुट्ठिअणावुट्टी भूवड्ढी वज्जअग्गिपमुहा य । इय णाणाविहदोसा विचित्तभेदा हवंति पुढं ॥ १६२३

। एवं कालविभागो समत्तो ।

। एवं भरहखेत्तपरूवणं[4] समत्तं ।

सदमुव्विद्धं हिमवं खुल्लो पणुवीसजोयणुव्वेहो[5] । विक्खंभेण सहस्सं बावण्णा बारसेहिं भागेहिं[6] ॥ १६२४

१०० । २५ । १०५२ । १२ ।
१९

चक्रवर्तीका विजयभंग और थोड़ेसे जीवोंका मोक्षगमन भी होता है। इसके अतिरिक्त चक्रवर्तीसे की गयी द्विजोंके वंशकी (वर्णकी) उत्पत्ति भी होती है ॥ १६१८ ॥

दुषमसुषमाकालमें अट्ठावन ही शलाकापुरुष होते हैं और नौवेंसे सोलहवें तीर्थंकर तक सात तीर्थोंमें धर्मकी व्युच्छित्ति होती है ॥ १६१९ ॥

ग्यारह रुद्र और कलहप्रिय नौ नारद होते हैं तथा इसके अतिरिक्त सातवें, तेईसवें और अन्तिम तीर्थंकरके उपसर्ग भी होता है ॥ १६२० ॥

तृतीय, चतुर्थ व पंचम कालमें उत्तम धर्मको नष्ट करनेवाले विविध प्रकारके दुष्ट पापिष्ठ कुदेव और कुलिंगी भी दिखने लगते हैं ॥ १६२१ ॥

दुषमाकालमें चाण्डाल, शबर, पाण (श्वपच), पुलिंद, लाहल और किरात इत्यादि जातियां तथा ब्यालीस कल्की व उपकल्की होते हैं ॥ १६२२ ॥

अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूवृद्धि (भूकंप ?), और वज्राग्नि आदिका गिरना, इत्यादि विचित्र भेदोंको लिये हुए नाना प्रकारके दोष इस दुण्डावसर्पिणीकालमें हुआ करते हैं ॥ १६२३ ॥

इसप्रकार कालका विभाग समाप्त हुआ ।

इसप्रकार भरतक्षेत्रका प्ररूपण समाप्त हुआ ।

क्षुद्र हिमवान् पर्वतकी उंचाई सौ योजन, अवगाह पच्चीस योजन, विस्तार एक हजार बावन योजन तथा एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे बारह भाग अधिक है ॥ १६२४ ॥

उत्सेध १०० । अवगाह २५ । विष्कम्भ १०५२$\frac{१२}{१९}$ ।

---

१ ब चक्कधराओ जिदाणं. २ द ब कट्ठपाविट्ठा. ३ द ब °चिलालपहुदि°. ४ द ब °सरूवणं. ५ द ब जोयणोवेदो. ६ द ब भागो य.

तस्स य उत्तरजीवा चउवीससहस्सणवसयाइं पि । बत्तीसं एक्ककला सव्वसमासेण णिद्दिट्ठा ॥ १६२५

२४९३२ । १ ।

१९

खुल्लहिमवंतसेले उत्तरभागम्मि होदि धणुपट्ठं । पणुवीससहस्साइं दोण्णिसया तीस चउकलब्भहिया ॥ १६२६

२५२३० । ४ ।

१९

तस्स य चूलियमाणं पंचसहस्साणि जोयणाणं पि । तीसाधियदोण्णिसया सत्तकला अद्धअहिरित्ता ॥ १६२७

५२३० । १५ ।

३८

पंचसहस्सा तिसया पण्णासा जोयणाणि अद्धजुदा । पण्णारस य कलाओ पस्सभुजा खुल्लहिमवंते ॥ १६२८

५३५० । ३१ ।

३८

हिमवंतसरिसदीहा तडवेदी दोण्णि होंति भूमितले[1] । बे कोसा उत्तुंगा पंचधणुस्सदपमाणविच्छिण्णा ॥ १६२९

को २ । दं ५०० ।

जोयणदलविक्खंभो उभए पासेसु दोहि वणसंडो । बहुतोरणदारजुदा वेदी पुव्विल्लवेदिएहिं समा[2] ॥ १६३०

य जो । १ ।

२

खुल्लहिमवंतसिहरे समंतदो पउमवेदिया दिव्वा । वणभवणवेदिसव्वं पुव्वं पिव एत्थ वत्तव्वं ॥ १६३१

हिमवान् पर्वतकी उत्तरजीवा सब मिलाकर चौबीस हजार नौसौ बत्तीस योजन और योजनके उन्नीस भागोंमेंसे एक भागप्रमाण है ॥ १६२५ ॥ २४९३२$\frac{१}{१९}$ ।

क्षुद्र हिमवान् पर्वतका धनुपृष्ठ उत्तरभागमें पचीस हजार दोसौ तीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे चार भाग अधिक है ॥ १६२६ ॥ २५२३०$\frac{४}{१९}$ ।

इस पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण पांच हजार दोसौ तीस योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे साढ़े सात भाग अधिक है ॥ १६२७ ॥ ५२३०$\frac{१५}{३८}$ ।

क्षुद्र हिमवान् पर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण पांच हजार तीनसौ पचास योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे साढ़े पन्द्रह भाग अधिक है ॥ १६२८ ॥ ५३५०$\frac{३१}{३८}$ ।

भूमितलपर हिमवान् पर्वतके सदृश लम्बी उसकी दो तटवेदियां हैं । ये वेदियां दो कोस ऊंची और पांचसौ धनुषप्रमाण विस्तारसे युक्त हैं ॥ १६२९ ॥

उत्सेध कोस २ । विस्तार दण्ड ५०० ।

पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें अर्ध योजनप्रमाण विस्तारसे युक्त वनखण्ड है, तथा पूर्वोक्त वेदियोंके समान बहुत तोरणद्वारोंसे संयुक्त वेदी है ॥ १६३० ॥ यो० $\frac{१}{२}$ ।

क्षुद्र हिमवान् पर्वतके शिखरपर चारों तरफ पद्मरागमणिमय दिव्य वेदिका है । वन, भवन और वेदी आदि सबका, पहिलेके समान यहांपर भी कथन करना चाहिये ॥ १६३१ ॥

१ द ब चक्कल. २ द ब तदवेदी. ३ द भूमियले. ४ द ब समो.

सिद्धहिमवंतकूडा भरहइलागंगकूडसिरिणामा[1] । रोहीदासा सिंधू सुरहेमवदं च वेसमणं ॥ १६३२
उदयं भूमुहवासं मज्झं पणुवीस तत्तियं दलिदं । मुहभूमिजुदद्धसमं पत्तेक्कं जोयणाणि कूडाणं ॥ १६३३
२५ । २५ । २५ । १८ । को ३ ।
२

णक्कारस पुव्वादी समवट्टा वेदिएहिं रमणिज्जा । वेंतरपासादजुदा पुव्वे कूडम्मि जिणभवणं ॥ १६३४
आयामो पण्णासं वित्थारो तद्दलं च जोयणया । पणहत्तरिदलमुदओ तिद्दारजुदस्स जिणणिकेदस्स ॥१६३५
५० । २५ । ७५ । ३ ।
२

पुव्वमुहदारउदओ जोयणया अट्ठ तद्दलं रुंदं । रुंदसमं तु पवेसं ताणद्धं दक्खिणुत्तरदुवारे ॥ १६३६
८ । ४ । ४ । ४ । २ । २ ।
अट्ठेव य दीहत्तं दीहचउभाग तत्थ वित्थारं । चउजोयणउच्छेहो देवच्छंदो[2] जिणणिवासे ॥ १६३७

सिद्ध, हिमवान्, भरत, इला, गंगा, श्री, रोहितास्या, सिन्धु, सुरा, हैमवत और वैश्रवण, इसप्रकार ये ग्यारह उस पर्वतके ऊपर कूट हैं ॥ १६३२ ॥

इनमेंसे प्रत्येक कूटकी उंचाई पच्चीस योजन, भूविस्तार भी इतना अर्थात् पच्चीस योजन, मुखविस्तार पच्चीसका आधा अर्थात् साढ़े बारह योजन और मध्यविस्तार भूमि एवं मुखके जोड़का अर्धभागमात्र है ॥ १६३३ ॥

उत्सेध यो. २५ । भूव्यास २५ । मुखव्यास $\frac{२५}{२}$ । मध्यव्यास $\frac{५०}{२} + \frac{२५}{२} \div २ =$ यो. १८, को. ३ ।

पूर्वादिक्रमसे ये ग्यारह कूट समान गोल, वेदियोंसे रमणीय और व्यन्तरोंके भवनोंसे संयुक्त हैं । इनमेंसे पूर्व कूटपर जिनभवन है ॥ १६३४ ॥

तीन द्वारोंसे संयुक्त इस जिनभवनकी लम्बाई पचास योजन, विस्तार इसका आधा अर्थात् पच्चीस योजन और उंचाई पचत्तर योजनके अर्धभागप्रमाण अर्थात् साढ़े सैंतीस योजन है ॥ १६३५ ॥ आयाम ५० । विस्तार २५ । उत्सेध $\frac{७५}{२}$ । द्वार ३ ।

उपर्युक्त तीन द्वारोंमेंसे पूर्वमुख द्वारकी उंचाई आठ योजन, विस्तार इससे आधा अर्थात् चार योजन, और विस्तारके समान प्रवेश भी चार योजनमात्र है । शेष दक्षिण और उत्तरद्वारकी लम्बाई आदि पूर्वद्वारसे आधी है ॥ १६३६ ॥

पूर्वमुखद्वार-उत्सेध ८ । विस्तार ४ । प्रवेश ४ । द. उ. द्वार-उत्सेध ४ । विस्तार २ । प्रवेश २ ।

जिनभवनमें आठ योजन लंबा तथा लंबाईके चतुर्थभागमात्र विस्तारसे संयुक्त और चार योजन ऊंचा ऐसा देवच्छंद है ॥ १६३७ ॥

---

१ ब सिरिणामाणा. २ द ब देवच्छंदा.

सिंहासणादिसहिया चामरकरणागजक्खमिहुणजुदा । पुरुजिणपडिमा तुंगा अट्ठुत्तरसयधणुप्पमाणाओ ॥ १६३८
सिरिदेवी सुददेवी सव्वाणसणक्कुमारजक्खाणं । रूवाणि अट्ठमंगल देवच्छंदम्मि चेट्ठंति ॥ १६३९
लंबंतकुसुमदामा पारावयमोरकंठणिहवण्णा । मरगयपवालवण्णा विदाणणिवहा विरायंति ॥ १६४०
भंभामुयंगमद्दलजयघंटाकंसतालतिवलिजुदा । पडुपडहसंखकाहलसुरदुंदुभिसद्दगंभीरा ॥ १६४१
जिणपुरदुवारपुरदो पत्तेक्कं वदणमंडवा दिव्वा । पणवीसजोयणाइं वासो विउणाइ आयामो ॥ १६४२
२५ । ५० ।

अट्ठ चिय जोयणया अदिरित्ता होदि ताण उच्छेहो । अभिसेयगीदअवलोयणाण वरमंडवा य तप्पुरदो ॥ १६४३
चउगोउराणि सालत्तिदयं वीहीसु माणथंभा य । णवथूवा तह वणधयचित्तक्खोणीओ जिणणिवासेसुं ॥ १६४४
सव्वे गोउरदारा रमणिज्जा पंचवण्णरयणमया । वाउलतोरणजुत्ता णाणाविहमत्तवारणया ॥ १६४५
बहुसालभंजियाहिं सुरकोकिलबरहिणादिपक्खीहिं । महुररवेहिं सहिदा णच्चंताणेयधयवडायाहिं[3] ॥ १६४६

वहांपर सिंहासनादिसे सहित, हाथमें चमरोंको लिये हुए नागयक्षयुगलसे संयुक्त और एकसौ आठ धनुषप्रमाण ऊंची उत्तम जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ १६३८ ॥

देवच्छंदके भीतर श्रीदेवी, श्रुतदेवी, तथा सर्वाह्न और सनत्कुमार यक्षोंकी मूर्तियां एवं आठ मंगलद्रव्य स्थित हैं ॥ १६३९ ॥

वहांपर लटकती हुई पुष्पमालाओंसे संयुक्त और कबूतर व मयूरके कंठसदृश तथा मरकत एवं मूंगा जैसे वर्णवाले चँदोवोंके समूह शोभायमान हैं ॥ १६४० ॥

प्रत्येक जिनपुरद्वारके आगे भंभा (भेरी), मृदंग, मर्दल, जयघंटा, कांस्यताल और तिवलीसे संयुक्त तथा पटुपटह, शंख, काहल और सुरदुन्दुभि बाजोंके शब्दोंसे गम्भीर ऐसे दिव्य मुखमण्डप हैं । इन मण्डपोंका विस्तार पच्चीस योजन और लंबाई इससे दूनी अर्थात् पचास योजन-मात्र है ॥ १६४१-१६४२ ॥ २५ । ५० ।

इन मण्डपोंकी उंचाई आठ योजनसे अधिक है । इनके आगे अभिषेक, गीत और अवलोकनके उत्तम मण्डप हैं ॥ १६४३ ॥

जिनभवनोंमें चार गोपुर, तीन प्राकार, वीथियोंमें मानस्तम्भ, नौ स्तूप, वनभूमि, ध्वजभूमि और चैत्यभूमि होती है ॥ १६४४ ॥

पांच वर्णके रत्नोंसे निर्मित सब गोपुरद्वार पूतलीयुक्त, तोरणोंसे सहित और नाना प्रकारके मत्तवारणोंसे रमणीय हैं ॥ १६४५ ॥

इसके अतिरिक्त ये गोपुरद्वार बहुतसी शालभंजिकाओं (पुतलियों) एवं मधुर शब्द करनेवाले सुरकोकिल और मयूर आदिक पक्षियोंसे सहित तथा नाचती हुई अनेक ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त हैं ॥ १६४६ ॥

---

१ द ब मंभा°. २ द ब णव. ३ द ब °चयवदाणाइं.

एलातमालवल्लीलवंगकंकोलकंदलिपहुदीहिं । णाणातरुरयणेहिं उज्जाणवणा विराजंति ॥ १६४७
कल्हारकमलकंदलणीलुप्पलकुमुदकुसुमसंछण्णा । जिणउज्जाणवणेसुं पोक्खरणीवाविवरकूवा[2] ॥ १६४८
णंदादीओ तिमेहल तिपीढपुव्वाणि धम्मचक्काणिं । चउवणमज्झगयाणिं चेदियरुक्खाणि सोहंति ॥ १६४९
सेसेसुं कूडेसुं वंतरदेवाण होंति पासादा । चउतोरणवेदिजुदा णाणाविहरयणणिम्मविदा ॥ १६५०
हेमवदभरहहिमवंतवेसमणणामधेयकूडेसुं । णियकूडणामदेवा सेसे णियकूडणामदेवीओ ॥ १६५१
बहुपरिवारेहिं जुदा चेट्ठंते तेसु देवदेवीओ । दसधणुउच्छेहतणू सोहम्मिंदस्स ते य परिवारा ॥ १६५२
ताणं वरपासादा सकोसइगितीसजोयणारुंदा[3] । दोकोससट्ठिजोयणउदया सोहंति रयणमया ॥ १६५३
पायारवलहिगोउरधवलामलवेदियाहिं परियरिया । देवाण होंति णयरा दसप्पमाणेसु कूडसिहरेसुं ॥ १६५४
धुव्वंतधयवडाया गोउरदारेहिं सोहिदा विउला । वरवज्जकवाडजुदा उववणपोक्खरणिवाविरमणिज्जा ॥ १६५५
कमलोदरवण्णणिहा तुहारससिकिरणहारसंकासा । वियसियचंपयवण्णा णीलुप्पलरत्तकमलवण्णा य ॥ १६५६

वहांके उद्यानवन इलायची, तमालवल्ली (शाल), लौंग, कंकोल (शीतल चीनीका वृक्ष) और केला, इत्यादि नाना वृक्ष-रत्नोंसे शोभायमान है ॥ १६४७ ॥

जिनगृहके उद्यानवनोंमें कल्हार, कमल, कन्दल, नीलकमल और कुमुदके फूलोंसे व्याप्त पुष्करिणी, वापी और उत्तम कूप है ॥ १६४८ ॥

चारों वनोंके मध्यमें स्थित तीन मेखलायुक्त नन्दादिक वापिकायें, तीन पीठोंसे सहित धर्मचक्र, और चैत्यवृक्ष शोभायमान हैं ॥ १६४९ ॥

शेष कूटोंपर चार तोरण-वेदियोंसे सहित और नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित व्यन्तर देवोंके भवन है ॥ १६५० ॥

हैमवत, भरत, हिमवान् और वैश्रवण नामक कूटोंपर अपने अपने कूटोंके नामके देव, तथा शेष कूटोंपर अपने अपने कूटोंके नामकी देवियां रहती है ॥ १६५१ ॥

इन कूटोंपर बहुत परिवार और दश धनुषप्रमाण ऊंचे शरीरसे युक्त जो देव-देवियां स्थित हैं, वे सौधर्म इन्द्रके परिवाररूप है ॥ १६५२ ॥

इन व्यन्तर देव-देवियोंके रत्नमय भवन विस्तारमें इकतीस योजन एक कोस और ऊंचाईमें बासठ योजन दो कोसप्रमाण होते हुए शोभायमान है ॥ १६५३ ॥

दश कूटोंके शिखरोंपर प्राकार, वलभी (छज्जा) गोपुर और धवल निर्मल वेदिकाओंसे व्याप्त देवोंके नगर हैं ॥ १६५४ ॥

ये देवोंके नगर उड़ती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित, गोपुरद्वारोंसे शोभित, विशाल, उत्तम वज्रमय कपाटोंसे युक्त और उपवन, पुष्करिणी एवं वापिकाओंसे रमणीय है ॥ १६५५ ॥

इन नगरोंमेंसे कितने ही कमलोदरवर्णके सदृश वर्णवाले, कितने ही तुषार, चन्द्रकिरण एवं हारके सदृश, कितने ही विकसित चम्पक जैसे वर्णवाले, और कितने ही नील व रक्त कमलके सदृश वर्णवाले हैं ॥ १६५६ ॥

१ द कयलि°. २ द ब °वरकूडा. ३ द ब °रुंदो. ४ द ब णीलुप्पलगत्त°.

वज्जिंदणीलमरगयकक्केयणपउमरायसंपुण्णा । जिणभवणेहि सणाहा को सक्कइ वण्णिदुं सयलं ॥ १६५७
हिमवंतयस्स मज्झे पुव्वावरमायदो य पउमद्दहो । पणसयजोयणरुंदो[1] तद्दुगुणायामसोहिल्लो ॥ १६५८

५०० । १००० ।

दसजोयणाणि गहिरो चउतोरणवेदिणंदणवणेहिं । सहिदो वियसिअकुसुमेहिं सुहसंचयरयणरचिदेहिं ॥ १६५९
वेसमणणामकूडो ईसाणे होदि पंकयदहस्स[2] । सिरिणिचयणामकूडो सिहिदिसभागम्हि णिद्दिट्ठो ॥ १६६०
खुल्लहिमवंतकूडो णइरिदिभागम्मि तस्स णिद्दिट्ठो । पच्छिमउत्तरभागे कूडो एरावदो णाम ॥ १६६१
सिरिसंचयकूडो तह भाए पउमद्दहस्स उत्तरए । एदेहिं कूडेहिं हिमवंतो पंचसिहरिणामजुदो ॥ १६६२
उववणवेदीजुत्ता वेंतरणयरेहिं होंति रमणिज्जा । सव्वे कूडा एदे णाणाविहरयणणिम्मविदा ॥ १६६३
उत्तरदिसाविभागे जलम्मि पउमद्दहस्स जिणकूडो । सिरिणिचयं वेरुलियं अंकमयं अच्छरीय रुचगं च ॥ १६६४
सिहरीउप्पलकूडा पदाहिणा होंति तस्स सलिलम्मि । तैडवणवेदीहिं जुदा वेंतरणयरेहिं[4] सोहिल्ला ॥ १६६५

उपर्युक्त नगर वज्रमणि, इन्द्रनीलमणि, मरकतमणि, कर्केतन (रत्नविशेष) और पद्मराग-मणियोंसे परिपूर्ण तथा जिनभवनोंसे सनाथ हैं। इनका पूरा वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ १६५७ ॥

हिमवान् पर्वतके मध्यमें पूर्व-पश्चिम लंबा, पांचसौ योजन विस्तारसे सहित और इससे दुगुणी अर्थात् एक हजार योजनप्रमाण लंबाईसे शोभायमान पद्म नामक द्रह है ॥ १६५८ ॥

विष्कंभ ५०० । आयाम १००० ।

यह पद्मद्रह दश योजन गहरा तथा चार तोरण, वेदियों नन्दनवनों, और शुभसंचय युक्त रत्नोंसे रचे गये विकसित फूलोंसे सहित है ॥ १६५९ ॥

इस पंकजद्रहके ईशानकोणमें वैश्रमण नामक कूट, और आग्नेय दिशामें श्रीनिचय नामक कूट निर्दिष्ट किया गया है ॥ १६६० ॥

उसके नैऋत्य भागमें क्षुद्रहिमवान् कूट और पश्चिमोत्तरभागमें ऐरावत नामक कूट कहा गया है ॥ १६६१ ॥

पद्मद्रहके उत्तर भागमें श्रीसंचयनामक कूट स्थित है। इन पांच कूटोंसे हिमवान् पर्वत 'पंचशिखरी' इस नामसे संयुक्त है ॥ १६६२ ॥

नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित ये सब कूट उपवन-वेदियोंसे सहित और व्यन्तरोंके नगरोंसे रमणीय हैं ॥ १६६३ ॥

पद्मद्रहके जलमें उत्तरदिशाकी ओरसे प्रदक्षिणरूपमें जिनकूट, श्रीनिचय, वैडूर्य, अंकमय, आश्चर्य, रुचक, शिखरी और उत्पलकूट, ये कूट उसके जलमें तटवेदियों और वन-वेदियोंसे सहित होते हुए व्यन्तर-नगरोंसे शोभायमान हैं ॥ १६६४–१६६५ ॥

१ द ब °रुंदा. २ द ब कप्पयदहस्स. ३ द ब तद°. ४ द ब °णयरेसु.

उदयं भूमुहवासं मज्झं पणवीस तत्तियं दलिदं । मुहभूमिजुदस्सद्धं पत्तेक्कं जोयणाणि कूडाणं ॥ १६६६

२५ । २५ । २५ । ७५ ।
२ ४

दहमज्झे अरविंदयणालं बादालकोसमुव्विद्धं । इगिकोसं बाहल्लं तस्स मुणालं ति रजदमयं ॥ १६६७

को ४२, बा को १ ।

कंदो[1] यरिट्ठरयणं णालो वेरुलियरयणणिम्मविदो । तस्सुवरिं दरवियसियपउमं चउकोसमुव्विद्धं ॥ १६६८

को ४ ।

चउकोसरुंदमज्झं अंते दोकोसमहव चउकोसा । पत्तेक्कं इगिकोसं उस्सेहायामकण्णिया तस्स ॥ १६६९

को ४ । २ । को ४ । को १ ।

अहवा दोद्दो कोसा एक्कारसहस्सपत्तसंजुत्ता । तक्कण्णिकाय[2] उवरिं वेरुलियकवाडसंजुत्तो ॥ १६७०

को २ को २ ।

कूडागारमहारिहभवणो[3] वरफलिहरयणणिम्मविदो । आयामवासतुंगा कोसं कोसद्धतिचरणा कमसो ॥ १६७१

को १ । १ । ३ ।
२ ४

तस्सिं सिरियादेवी[4] भवणे पलिदोवमप्पमाणाऊ । दसं चावाणिं तुंगा सोहम्मिंदस्स सहदेवी ॥ १६७२

उन कूटोंमेंसे प्रत्येक कूटकी ऊंचाई पचीस योजन, भूविस्तार भी इतना अर्थात् पचीस योजन, मुखविस्तार पचीस योजनके अर्धभागप्रमाण और मध्यविस्तार भूमि तथा मुखके जोड़का अर्धभागमात्र है ॥ १६६६ ॥ २५ । २५ । $\frac{२५}{२}$ । $\frac{७५}{४}$ ।

तालाबके मध्यमें व्यालीस कोस ऊंचा और एक कोस मोटा कमलका नाल है । इसका मृणाल रजतमय है ॥ १६६७ ॥ उत्सेध को. ४२, बा. को. १ ।

उस कमलका कन्द अरिष्टरत्नमय और नाल वैडूर्यमणिसे निर्मित है । इसके ऊपर चार कोस ऊंचा किंचित् विकसित पद्म है ॥ १६६८ ॥

उसके मध्यमें चार कोस और अन्तमें दो अथवा चार कोस विस्तार है । उसकी कर्णिकाकी ऊंचाई और आयाममेंसे प्रत्येक एक कोसमात्र है ॥ १६६९ ॥ को. ४ । २ । ४ । को. १ ।

अथवा, कर्णिकाकी ऊंचाई और लंबाई दो दो कोसमात्र है । यह कमलकर्णिका ग्यारह हजार पत्तोंसे संयुक्त है । इस कर्णिकाके ऊपर वैडूर्यमणिमय कपाटोंसे संयुक्त और उत्तम स्फटिकमणिसे निर्मित कूटागारोंमें श्रेष्ठ भवन है । इसकी लम्बाई एक कोस, विस्तार अर्ध कोसप्रमाण और ऊंचाई एक कोसके चार भागोंमेंसे तीन भागमात्र है ॥ १६७०–१६७१ ॥

को. १ । $\frac{१}{२}$ । $\frac{३}{४}$ ।

इस भवनमें एक पल्योपमप्रमाण आयुकी धारक और दश धनुष ऊंची श्री नामक सौधर्म इन्द्रकी सहदेवी निवास करती है ॥ १६७२ ॥

---

१ द ब कंदा. २ द ब तक्कण्णिकया. ३ द ब कूडागारामहरिह. ४ द ब तस्सिरिया सिरिदेवी. ५ द ब जस हेवाणिं.

सिरिदेवीए होंति हु देवा सामाणिया य तणुरक्खा। परिसत्तिदयाणीया पइण्णआभियोगकिब्बिसिया ॥ १६७३
ते सामाणियदेवा विविहंजणभूसणेहिं[1] कयसोहा। सुपसत्थविउलकाया चउस्सहस्सयपमाणा य[2] ॥ १६७४
४०००।
ईसाणसोममारुददिसाण भागेसु पउमउवरिम्मि। सामाणियाण भवणा होंति सहस्साणि चत्तारि ॥ १६७५
४०००।
सिरिदेवीतणुरक्खा देवा सोलससहस्सया ताणं। पुव्वादिसु पत्तेक्कं चत्तारिसहस्सभवणाणि ॥ १६७६
१६०००।
अब्भंतरपरिसाए आइच्चो णाम सुरवरो होदि। बत्तीससहस्साणं देवाणं अहिवई धीरो ॥ १६७७
पउमद्दहपउमोवरि अग्गिदिसाए भवंति भवणाइं। बत्तीससहस्साइं ताणं वररयणरइदाइं ॥ १६७८
३२०००।
पउमम्मि चंदणामो मज्झिमपरिसाए अहिवई देओ। चालीससहस्साणं सुराण बहुयाणसत्थाणं[3] ॥ १६७९
४००००।
अडदालसहस्साणं सुराण सामी समुग्गयपयाओ। बाहिरपरिसाए जदुणामो[4] सेवेदि सिरिदेविं ॥ १६८०
४८०००।

श्रीदेवीके सामानिक, तनुरक्ष, तीनों प्रकारके पारिषद, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्बिषिक जातिके देव हैं ॥ १६७३ ॥

विविध प्रकारके अंजन और भूषणोंसे शोभायमान तथा सुप्रशस्त एवं विशाल कायवाले वे सामानिक देव चार हजारप्रमाण हैं ॥ १६७४ ॥ ४०००।

ईशान, सोम (उत्तर) और वायव्य दिशाओंके भागोंमें पद्मोंके ऊपर उन सामानिक देवोंके चार हजार भवन हैं ॥ १६७५ ॥ ४०००।

श्रीदेवीके तनुरक्षक देव सोलह हजार हैं। इनके पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें चार हजार भवन हैं ॥ १६७६ ॥ ४ × ४००० = १६०००।

अभ्यन्तर परिषद्में बत्तीस हजार देवोंका अधिपति धीर आदित्य नामक उत्तम देव है ॥ १६७७ ॥

पद्मद्रहके कमलोंके ऊपर आग्नेय दिशामें उन देवोंके उत्तम रत्नोंसे रचित बत्तीस हजार भवन हैं ॥ १६७८ ॥ ३२०००।

पद्मद्रहपर मध्यम परिषद्के बहुत यान और शस्त्रयुक्त (?) चालीस हजार देवोंका अधिपति चन्द्र नामक देव है ॥ १६७९ ॥ ३२००० । (यहां भवनोंकी दिशा और संख्यासूचक गाथा त्रुटित प्रतीत होती है)

बाह्य परिषद्के अड़तालीस हजार देवोंका स्वामी प्रतापशाली जतु नामक देव श्रीदेवीकी सेवा करता है ॥ १६८० ॥ ४८०००।

---

१ द ब सामाणियतणुरक्खा. २ द ब विहंजण°. ३ द ब चउस्सद वि या पमाणाय. ४ द ब दहण°. ५ द ब °सहस्साइं. ६ द ब बहुसत्थाणं. ७ द ब सहस्साणि. ८ द ब जहदुणाणो.

णइरिदिसाए ताणं अडदालसहस्ससंखपासादा । पउमद्दहमज्झम्मि य सुतुंगतोरणदुवाररमणिज्जा ॥ १६८१
४८०००।

कुंजरतुरयमहारहगोवइगंधव्वणट्टदासाणं । सत्त यणीया सत्तहि कच्छाहिं तत्थ संजुत्ता ॥ १६८२
पढमाणीयपमाणं सरिसं सामाणियाण सेसेसुं । विउणा विउणा संखा छस्सु वणीएसु पत्तेयं ॥ १६८३
कुंजरपहुदितणूहिं देवा विकिरंति विमलसत्तिजुदा । मायालोहविहीणा णिच्चं सेवंति सिरिदेविं ॥१६८४
सत्ताणीयाण घरा पउमद्दहपच्छिमप्पएसम्मि । कमलकुसुमाण उवरिं सत्त च्चिय कणयणिम्मविदा ॥ १६८५
अट्ठुत्तरसयमेत्तं पडिहारा मंतिणो य दूदा य । बहुविहवरपरिवारा उत्तमरूवाइं विणयजुत्ताइं ॥ १६८६
अट्ठुत्तरसयसंखा पासादा ताण पउमगब्भेसुं । दिसविदिसविभागट्ठिदा दहमज्झे अधियरमणिज्जा ॥ १६८७
होंति पइण्णयपहुदी ताणं चउणं वि पउमपुप्फेसुं । उच्छिण्णो कालवसा तेसुं परिमाणउवएसो ॥ १६८८
कमला अकिट्टिमा ते पुढविमया सुंदरा य इगिलक्खं । चालीससहस्साणिं एक्कसयं सोलसेहिं जुदं ॥ १६८९
१४०११६ ।

नैऋतदिशामें उन देवोंके उन्नत तोरणद्वारोंसे रमणीय अड़तालीस हजार भवन पद्मद्रहके मध्यमें स्थित हैं ॥ १६८१ ॥ ४८००० ।

कुंजर, तुरंग, महारथ, बैल, गन्धर्व, नर्तक और दास, इनकी सात सेनायें हैं । इनमेंसे प्रत्येक सात कक्षाओंसे सहित है ॥ १६८२ ॥

प्रथम अनीकका प्रमाण सामानिकदेवोंके सदृश है । शेष छह सेनाओंमेंसे प्रत्येकका प्रमाण उत्तरोत्तर दूना दूना है ॥ १६८३ ॥

निर्मल शक्तिसे संयुक्त देव हाथी आदिके शरीरोंकी विक्रिया करते और माया एवं लोभसे रहित होकर नित्य ही श्रीदेवीकी सेवा करते हैं ॥ १६८४ ॥

सात अनीक देवोंके सात घर पद्मद्रहके पश्चिम प्रदेशमें कमलकुसुमोंके ऊपर सुवर्णसे निर्मित हैं ॥ १६८५ ॥

उत्तम रूप व विनयसे संयुक्त और बहुत प्रकारके उत्तम परिवारसे सहित ऐसे एकसौ आठ प्रतीहार, मंत्री एवं दूत हैं ॥ १६८६ ॥

उनके अतिशय रमणीय एकसौ आठ भवन द्रहके मध्यमें कमलोंपर दिशा और विदिशाके विभागोंमें स्थित हैं ॥ १६८७ ॥

पद्मपुष्पोंपर स्थित जो प्रकीर्णक आदिक देव हैं, उन चारोंके प्रमाणका उपदेश काल-वश नष्ट हो गया है ॥ १६८८ ॥

वे सब अकृत्रिम पृथिवीमय सुन्दर कमल एक लाख चालीस हजार एकसौ सोलह हैं ॥ १६८९ ॥ १४०११६ ।

---

१ द ब सुहा. २ द ब सुरा. ३ द ब °पच्छिमंपएसंति. ४ द चउवणावि, ब चउणावि. ५ द ब पउमपुप्फेसु. ६ द उच्छण्णो.

एवं महापुराणं परिमाणं ताण होदि कमलेसुं । खुल्लयपुरसंखाणं को सक्कइ कादुमखिलेणं ॥ १६९०
पउमदहे पुव्वमुहा उत्तरगेहा हवंति सव्वे वि । ताणभिमुहा वि सेसा[1] खुल्लयगेहा जहाजोग्गं ॥ १६९१
कमलकुसुमेसु तेसुं पासादा जेत्तिया समुद्दिट्ठा । तेत्तियमेत्ता होंति हु जिणगेहा विविहरयणमया ॥ १६९२
भिंगारकलसदप्पणबुब्बुदघंटाधयादिसंपुण्णा । जिणवरपासादा[2] ते णाणाविहतोरणदुवारा ॥ १६९३
वरचामरभामंडलछत्तत्तयकुसुमवरिसपहुदीहिं । संजुत्ताओ तेसुं जिणवरपडिमाओ राजंति ॥ १६९४
पउमद्दहादु[3] उत्तरभागेणं रोहिणामवरसरिया । उग्गच्छइ छावत्तरि जोयणदुसयाइं अदिरित्ता ॥ १६९५
२७६ । ६ ।
१९
रुंदावगाढतोरणअंतरकूडप्पणालियाठाणा । धारारुंदं कुंडदीवाचलकूडरुंदपहुदीओ ॥ १६९६
तत्थ य तोरणदारे तोरणथंभा अ तीए सरिदाए । गंगाणइए सरिसा णवरिं वासादिएहिं ते विगुणा ॥१६९७
। हिमवंतं गयं ।

इसप्रकार कमलोंके ऊपर स्थित उन महानगरोंका प्रमाण (एक लाख चालीस हजार एकसौ सोलह) है। इनके अतिरिक्त क्षुद्रपुरोंकी पूर्णरूपसे गिनती करनेके लिये कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ १६९० ॥

पद्मद्रहमें सब ही उत्तम गृह पूर्वाभिमुख हैं, और शेष क्षुद्रगृह यथायोग्य उनके सन्मुख स्थित हैं ॥ १६९१ ॥

उन कमलपुष्पोंपर जितने भवन कहे गये हैं, उतने ही वहां विविध प्रकारके रत्नोंसे निर्मित जिनगृह भी हैं ॥ १६९२ ॥

वे जिनेन्द्रप्रासाद नाना प्रकारके तोरणद्वारोंसे सहित और झारी, कलश, दर्पण, बुदबुद, घंटा एवं ध्वजा आदिसे परिपूर्ण हैं ॥ १६९३ ॥

उन जिनभवनोंमें उत्तम चमर, भामण्डल, तीन छत्र और पुष्पवृष्टि आदिसे संयुक्त जिनेन्द्र-प्रतिमायें विराजमान हैं ॥ १६९४ ॥

पद्मद्रहके उत्तरभागसे रोहितास्या नामक उत्तम नदी निकलकर दोसौ छयत्तर योजनसे कुछ अधिक दूर तक [पर्वतके ऊपर] जाती है ॥ १६९५ ॥ २७६$\frac{६}{१९}$ ।

इस नदीका विस्तार, गहराई, तोरणोंका अन्तर, कूट, प्रणालिकास्थान, धाराका विस्तार, कुण्ड, द्वीप, अचल और कूटका विस्तार इत्यादि तथा वहांपर तोरणद्वारमें तोरणस्तम्भ इन सबका वर्णन गंगानदीके सदृश ही जानना चाहिये। विशेष यह है कि यहांपर इन सबका विस्तार गंगा-नदीकी अपेक्षा दूना है ॥ १६९६-१६९७ ॥

हिमवान्पर्वतका कथन समाप्त हुआ ।

१ द ब ताणभिमहाभिसेसा. २ द ब °पासादे. ३ द ब पउमदहाउ दुत्तर°. ४ द ब दाराइंदा कूडं. ५ द ब कुंद.

हेमवदस्स य रुंदा चालसहस्सा य ऊणवीसहिदा । तस्स य उत्तरबाणो[1] भरहसलागादु सत्तगुणा ॥ १६९८

४००००।
१९

सत्ततीससहस्सा छच्च सया सत्तरी य चउअधिया । किंचूणसोलसकला हेमवदे उत्तरे जीवा ॥ १६९९

३७६७४। १६।
१९

अट्ठत्तीससहस्सा[2] सत्तसया जोयणाणि चालीसं । दसयकला णिद्दिट्ठं हेमवदस्सुत्तरं चावं[3] ॥ १७००

३८७४०। १०।
१९

इगिहत्तरिजुत्ताइं तेसट्ठिसयाइं जोयणाणं पि । सत्तकला दलअधियाँ णिद्दिट्ठा चूलिया तस्स ॥ १७०१

यो. ६३७१। क १५।
३८

पस्सभुजा तस्स हवे छच्च सहस्साइं जोयणाणं पि । सत्तसया पणवण्णब्भहिया तिण्णि च्चिय कलाओ ॥ १७०२

६७५५। क ३ ।
१९

अवसेसवण्णणाओ सरिसाओ सुसमदुरसमेणं पि । णवरि यवट्टिदरूवं[4] परिहीणं हाणिवड्ढीहिं ॥ १७०३

तक्खित्ते बहुमज्झे चेट्ठदि सद्दावणि त्ति णाभिगिरी । जोयणसहस्सउदओ तेत्तियवासो सरिसवट्टो ॥ १७०४

१०००। १०००।

हैमवत क्षेत्रका विस्तार उन्नीससे भाजित चालीस हजार योजन और उसका उत्तरबाण भरतक्षेत्रकी शलाकासे सातगुणा है ॥ १६९८ ॥ $\frac{४००००}{१९}$। $३६८४\frac{४}{१९}$।

हैमवत क्षेत्रमें उत्तरभागमें जीवा सैंतीस हजार छहसौ चौहत्तर योजन और कुछ कम सोलह कलाप्रमाण है ॥ १६९९ ॥ $३७६७४\frac{१६}{१९}$।

हैमवतक्षेत्रका उत्तरधनुष अड़तीस हजार सातसौ चालीस योजन और दश कलामात्र निर्दिष्ट किया गया है ॥ १७०० ॥ $३८७४०\frac{१०}{१९}$।

उसकी चूलिकाका प्रमाण तिरेसठसौ इकहत्तर योजन और साढ़े सात कला निर्दिष्ट किया गया है ॥ १७०१ ॥ $६३७१\frac{१५}{३८}$।

उसकी पार्श्वभुजा छह हजार सातसौ पचवन योजन और तीन कलाप्रमाण है ॥ १७०२ ॥

$६७५५\frac{३}{१९}$।

इसका शेष वर्णन सुषमदुषमा कालके सदृश है। विशेषता केवल यह है कि वह क्षेत्र हानि-वृद्धिसे रहित होता हुआ अवस्थितरूप अर्थात् एकसा है ॥ १७०३ ॥

इस क्षेत्रके बहुमध्यभागमें एक हजार योजन ऊंचा और इतने ही विस्तारवाला सदृशगोल शब्दावनि (शब्दवान्) नामक नाभिगिरि स्थित है ॥ १७०४ ॥ १०००। १०००।

१ द ब उत्तरहीणो. २ द ब अडतीससहस्सा. ३ द ब 'त्तरा चावा. ४ द ब दस अधिया. ५ ब यवट्टिदरूवं.

सव्वस्स तस्स परिही इगितीससयाइं तह य बासट्ठी । सो पल्लसरिसठाणो कणयमओ वट्टविजयड्ढो ॥ १७०५
एक्कसहस्सं पणसयमेक्कसहस्सं च सगसया पण्णा । उदओ मुहभूमज्झिमवित्थारा तस्स धवलस्स ॥ १७०६
१००० । ५०० । १००० । ७५० । पाठान्तरम् ।
मूलोवरिभाएसुं सो सेलो वेदिउववणेहिं जुदो । वेदीवणाण रुंदा हिमवंतणगे व्व णादव्वा ॥ १७०७
बहुतोरणदारजुदा तव्वणवेदी विचित्तरयणमई । चरियट्टालियविउला णच्चंताणेयधयवडालोया ॥ १७०८
तग्गिरिउवरिमभागे बहुमज्झे होदि दिव्वजिणभवणं । बहुतोरणवेदिजुदं पडिमाहिं सुंदराहि संजुत्तं ॥ १७०९
उच्छेहप्पहुदीसुं संपहि अम्हाण णत्थि उवदेसो । तस्स य चउदिसासुं पासादा होंति रयणमया ॥ १७१०
सत्तट्ठप्पहुदीहिं भूमीहिं भूसिदा विचित्ताहिं । धुव्वंतधयवडाया णाणाविहरयणकयसोहा ॥ १७११
बहुपरिवारेहिं जुदो सालीणामेण वेंतरो देओ । दसधणुतुंगो चेट्ठदि पल्लमिदाऊ महादेहो ॥ १७१२
पउमद्दहाओ उत्तरभागेसुं रोहिदास णाम णदी । बेकोसेहिं अपाविय णाभिगिरिं पच्छिमे वलइ ॥ १७१३

उस सब पर्वतकी परिधि इकतीससौ बासठ योजनप्रमाण है । यह पर्वत पल्य (कुशूल) के सदृश आकारवाला कनकमय वृत्त विजयार्द्ध है ॥ १७०५ ॥

उस धवल पर्वतकी उंचाई, मुखविस्तार, भूविस्तार और मध्यविस्तार क्रमसे एक हजार, पांचसौ, एक हजार और सातसौ पचास योजनप्रमाण है ॥ १७०६ ॥ पाठान्तर ।

उत्सेध १००० । मुखवि. ५०० । भूवि. १००० । मध्यवि. ७५० ।

वह पर्वत मूल और उपरिम भागोंमें वेदी एवं उपवनोंसे संयुक्त है । वेदी और वनोंका विस्तार हिमवान् पर्वतके समान ही जानना चाहिये ॥ १७०७ ॥

उस पर्वतकी वनवेदी बहुत तोरणद्वारोंसे संयुक्त, विचित्र रत्नमयी, मार्ग व अट्टालिकाओंसे विपुल और नाचती हुई अनेक ध्वजा-पताकाओंसे आलोकित है ॥ १७०८ ॥

उस पर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमें अनेक तोरण व वेदियोंसे युक्त और सुन्दर प्रतिमाओंसे सहित दिव्य जिनभवन है ॥ १७०९ ॥

इस जिनभवनकी उंचाईआदिके विषयमें इस समय हमारे पास उपदेश नहीं है । जिनभवनके चारों ओर रत्नमय प्रासाद हैं ॥ १७१० ॥

ये प्रासाद सात-आठ इत्यादि विचित्र भूमियोंसे भूषित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त और नाना प्रकारके रत्नोंसे शोभायमान हैं ॥ १७११ ॥

वहांपर दश धनुष ऊंचा, एक पल्यप्रमाण आयुसे सहित और महान् शरीरका धारक शाली नामक व्यन्तरदेव बहुत परिवारसे युक्त होकर रहता है ॥ १७१२ ॥

रोहितास्या नामक नदी पद्मद्रहके उत्तरभागसे निकलकर नाभिगिरि पहुंचनेसे दो कोस पूर्व ही पश्चिमकी ओर मुड़ जाती है ॥ १७१३ ॥

१ द ब कणयमदी. २ ब वट्टं°. ३ द ब भूमुह° ४ द ब णच्चंताणेरयवडालोया. ५ द ब °धयवलोया. ६ द ब जुदा. ७ द ब वेंतरा. ८ द महादेवो. ९ ब पउमदहाउत्तर°.

बे कोसे वि यपाविय अचलं तं वलियं पच्छिमाहिमुहा। उत्तरमुहेण तत्तो कुडिलसरूवेण एत्ति सा सरिया॥१७१४
गिरिबहुमज्झपदेसं णियमज्झपदेसयं च कादूणं। पच्छिममुहेण गच्छइ परिवारणदीहिं परियरिया॥ १७१५
अट्ठावीससहस्सा परिवारणदीण होदि परिमाणं। दीवस्स य जगदिविलं पविसिय पविसेदि लवणवारिणिहिं॥१७१६

२८०००।

। हेमवदो गदो ।

भरहायणिरुंदादो अडगुणरुंदो य दुसय उच्छेहो। होदि महाहिमवंतो हिमवंतवियं वणेहिं[1] कयसोहो॥ १७१७

रुं ८०००० । उ २००।

१९

पण्णसयंसहस्साणिं उणवीसहिदाणि[2] जोयणाणिं पि। भरहाउ उत्तरंतं तग्गिरिणाणस्स परिमाणं॥ १७१८

[१५०००० ।]

१९

तेवण्णसहस्साणिं णवसया एक्कतीससंजुत्ता। छ च्चिय कलाओ जीवा उत्तरभागम्मि तग्गिरिणो॥ १७१९

५३९३१। ६ ।

१९

सत्तावण्णसहस्सा दुसया तेणउदि दस कलाओ य। तत्थ महाहिमवंते जीवाए होदि धणुपट्ठं॥ १७२०

५७२९३। १०।

१९

वह नदी दो कोससे पर्वतको न पाकर अर्थात् पर्वतसे दो कोस पूर्व ही रहकर पश्चिमाभिमुख हो जाती है। इसके पश्चात् फिर उत्तराभिमुख होकर कुटिलरूपसे आगे जाती है, और पर्वतके बहुमध्य प्रदेशको अपना मध्यप्रदेश करके परिवारनदियोंसे युक्त होती हुई पश्चिमकी ओर चली जाती है ॥ १७१४-१७१५ ॥

इसकी परिवारनदियोंका प्रमाण अट्ठाईस हजार है। इसप्रकार यह नदी जम्बूद्वीपकी जगतीके बिलमें होकर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ १७१६ ॥ २८०००।

हैमवतक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ।

महाहिमवान् पर्वतका विस्तार भरतक्षेत्रसे अठगुणा और उंचाई दोसौ योजनप्रमाण है व हिमवन्तके समान ही वनोंसे शोभायमान है ॥ १७१७ ॥ वि. $\frac{८०००}{१९}$। उं. २००।

भरतक्षेत्रसे उत्तर तक इस पर्वतके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित एकसौ पचास सहस्र (एक लाख पचास हजार) योजन है ॥ १७१८ ॥ [$\frac{१५०००}{१९}$ = ७८९४$\frac{१४}{१९}$]

उस पर्वतके उत्तरभागमें जीवाका प्रमाण तिरेपन हजार नौसौ इकतीस योजन और छह कला है ॥ १७१९ ॥ ५३९३१$\frac{६}{१९}$।

महाहिमवान् पर्वतकी जीवाका धनुपृष्ठ सत्तावन हजार दोसौ तेरानवै योजन और दश कलामात्र है ॥ १७२० ॥ ५७२९३$\frac{१०}{१९}$।

१ द ब अवयं दं वलय. २ द तत्थि तरिया, ब तत्ति स तरिया. ३ द ब स्सणेहिं°. ४ द ब पण्णरस°. ५ द ब वदाणि.

णव य सहस्सा दुसया छाहत्तरि जोयणाणि भागा य । अडतीसहिदुणवीसा महहिमवंतम्मि पस्सभुजा ॥१७२१

९२७६ । १९ ।

३८

जोयण अट्ठसहस्सा एक्कसयं अट्ठवीससंजुत्तं । पंचकलाओ एदं[2] तग्गिरिणो चूलियामाणो ॥ १७२२

८१२८ । ५ ।

१९

महहिमवंते दोसुं पासेसुं वेदिवणाणि रम्माणिं । गिरिसमदीहत्ताणिं वासादीणं च हिमवगिरिं ॥ १७२३

सिद्धं[3]महाहिमवंता हेमवदो रोहिदो य हरिणामो । हरिकंता हरिवरिसो[4] वेरुलिओ अट्ठ इमे कूडा ॥ १७२४

हिमवंतपव्वदस्स य कूडादो उदयवासपहुदीणिं । एदाणं कूडाणं दुगुणसरूवाणि सव्वाणिं ॥ १७२५

जंणामा ते कूडा तंणामा वेंतरा सुरा होंति । अणुवमरूवसरीरा बहुविहपरिवारसंजुत्ता ॥ १७२६

पउमद्दहाउ दुगुणो वासायामेहिं[5] गहिरभावेणं । होदि महाहिमवंते[6] महपउमो णाम दिव्वदहो ॥ १७२७

वा १०००। आ २०००। गा २०।

तद्दहपउमस्सोवरि पासादे चेट्ठदे य हिरिदेवी । बहुपरिवारेहिं जुदा सिरियादेवि व्व वण्णिजगुणोहा ॥ १७२८

महाहिमवान् पर्वतकी पार्श्वभुजा नौ हजार दोसौ छयत्तर योजन और अड़तीससे भाजित उन्नीसभागमात्र है ॥ १७२१ ॥ ९२७६$\frac{१९}{३८}$ ।

उस पर्वतकी चूलिकाका प्रमाण आठ हजार एकसौ अट्ठाईस योजन और पांच कला है ॥ १७२२ ॥ ८१२८$\frac{५}{१९}$ ।

महाहिमवान् पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें रमणीय वेदी और वन हैं । इनकी लंबाई इसी पर्वतके बराबर और विस्तारादिक हिमवान् पर्वतके समान है ॥ १७२३ ॥

इस पर्वतके ऊपर सिद्ध, महाहिमवान्, हैमवत, रोहित्, हरि, हरिकान्त, हरिवर्ष और वैडूर्य, इसप्रकार ये आठ कूट हैं ॥ १७२४ ॥

हिमवान् पर्वतके कूटोंसे इन कूटोंकी उंचाई और विस्तारप्रभृति सब दुगुणा दुगुणा है ॥ १७२५ ॥

जिन नामोंके वे कूट हैं, उन्हीं नामवाले व्यन्तरदेव उन कूटोंपर रहते हैं । ये देव अनुपम रूपयुक्त शरीरके धारक और बहुत प्रकारके परिवारसे संयुक्त हैं ॥ १७२६ ॥

महाहिमवान् पर्वतपर स्थित महापद्म नामक द्रह पद्मद्रहकी अपेक्षा दुगुणे विस्तार, लंबाई व गहराईसे सहित है ॥ १७२७ ॥ विस्तार १००० । आयाम २००० । गहराई २० ।

उस तालाबमें कमलके ऊपर स्थित प्रासादमें बहुतसे परिवारसे संयुक्त तथा श्रीदेवीके सदृश वर्णनीय गुणसमूहसे परिपूर्ण ह्री देवी रहती है ॥ १७२८ ॥

---

१ द अट्ठतीस. २ द ब एहं. ३ द सव्वमहा°. ४ द हरवरिसो. ५ द ब °यामोहि. ६ द ब महाहिमवंतो.

णवरि विसेसो एसो दुगुणा परिवारपउमपरिसंखा । जेत्तियमेत्तपमाणो जिणभवणा तत्तियो रम्मा ॥ १७२९
ईसाणदिसाभाए वेसमणो णाम सुंदरो कूडो । दक्खिणदिसाविभागे कूडो सिरिणिचयणामो य ॥ १७३०
णइरिदिभागे कूडं महहिमवंतो विचित्तरयणमओ । पच्छिमउत्तरभागे कूडो एरावदो णाम ॥ १७३१
सिरिसंचयं[1] ति कूडो उत्तरभागे दहस्स चेट्ठेदि । एदेहिं कूडेहिं महहिमवंतो य पंचसिहरो त्ति ॥ १७३२
एदं सव्वे कूडा वेंतरणयरेहिं परमरमणिज्जा । उववणवेदीजुत्ता उत्तरपासे जलम्मि जिणकूडो ॥ १७३३
सिरिणिचयं वेरुलियं अंकमयं अच्छरीयरुजगं[2] । उप्पलसिहरी कूडा सलिलम्मि पदाहिणा होंति ॥ १७३४
तद्दहदक्खिणदारे रोहिणदी णिस्सरेदि विउलजला । दक्खिणमुहेण वच्चदि पणहदपणगिरिवासतिसयमदिरित्तं[3]॥ १७३५

१६०५ । ५ ।

१९

रोहीए रुंदादी सारिच्छा होंति रोहिदासाए[4] । णाभिगिरिदाहिणेणं हेमवदे जादि पुव्वमुहा ॥ १७३६
तक्खिदियबहुमज्झेणं गच्छिय दीवस्स जगदिबिलदारे ।
पविसेदि लवणजलधिं अडवीसमहस्सवाहिणीसहिदा ॥ १७३७

२८००० ।

। महहिमवंतो गदो ।

यहां विशेषता केवल यह है कि ह्री देवीके परिवार और पद्मोंकी संख्या श्री देवीकी अपेक्षा दूनी है । इस तालाबमें जितने प्रासाद हैं उतने ही रमणीय जिनभवन भी है ॥१७२९॥

इस तालाबके ईशानदिशाभागमें सुन्दर वैश्रवण नामक कूट, दक्षिणदिशाभागमें श्रीनिचय नामक कूट, नैऋत्यदिशाभागमें विचित्र रत्नोंसे निर्मित महाहिमवान् कूट, पश्चिमोत्तरभागमें ऐरावत नामक कूट और उत्तरभागमें श्रीसंचय नामक कूट स्थित है । इन कूटोंसे महाहिमवान् पर्वत पंचशिखर कहलाता है ॥ १७३०–१७३२ ॥

ये सब कूट व्यन्तरनगरोंसे परमरमणीय और उपवनवेदियोंसे संयुक्त हैं । तालाबके उत्तरपार्श्वभागमें जलमें जिनकूट है ॥ १७३३ ॥

श्रीनिचय, वैडूर्य, अंकमय, आश्चर्य, रुचक, उत्पल और शिखरी, ये कूट जलमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥ १७३४ ॥

इस तालाबके दक्षिणद्वारसे प्रचुरजलसंयुक्त रोहित् नदी निकलती है और पर्वतपर पांचसे गुणित तीनसौ इक्कीस योजनसे अधिक दक्षिणकी ओर जाती है ॥ १७३५ ॥

$३२१ \times ५ = १६०५\frac{५}{१९}$ ।

रोहित् नदीका विस्तार आदि रोहितास्याके समान है । यह नदी हैमवतक्षेत्रमें नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करती हुई पूर्वाभिमुख होकर आगे जाती है ॥ १७३६ ॥

इसप्रकार यह नदी उस हैमवतक्षेत्रके बहुमध्यभागसे द्वीपकी वेदीके बिलद्वारमें जाकर अट्ठाईस हजार नादियों सहित लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ १७३७ ॥ २८००० ।

महाहिमवान् पर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

१ द ब °पदेसा. २ द ब तत्ति भू°. ३ द ब सिसिवदं. ४ द ब गच्छय. ५ द ब महहिमवंत.

भरहावणीय[1] बाणे इगितीसहदम्मि होदि जं लद्धं । हरिवरिसस्स य बाणं तं उवहितडादु[2] णादव्वं ॥ १७३८

३१०००० ।
१९

एक्कं[3] जोयणलक्खं सट्ठिसहस्साणि भागहारो य । उणवीसेहिं एसो हरिवरिसखिदीए वित्थारो ॥ १७३९

१६०००० ।
१९

तेहत्तरीसहस्सा एक्कोत्तरणवसयाणि जोयणया । सत्तारस य कलाओ हरिवरिसासुत्तरे जीवा ॥ १७४०

७३९०१ । १७ ।
१९

चुलसीदिसहस्साणिं तह सोलसजोयणाइं चउरंसा । एदस्सिं[4] जीवाए धणुपट्ठं होदि हरिवरिसे ॥ १७४१

८४०१६ । ४ ।
१९

जोयण णवणउदिसया पणसीदी होंति अट्ठतीसहिदा । एक्कारसकलअधिया हरिवरिसे चूलियामाणं ॥ १७४२

९९८५ । ११ ।
३८

तेरस सहस्सयाणिं तिण्णि सया जोयणाइ इगिसट्ठी । अडतीसहरियतेरसकलाओ हरिवरिसपस्सभुजा ॥ १७४३

१३३६१ । १३ ।
३८

भरतक्षेत्रके बाणको इकतीससे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो उतना समुद्रके तटसे हरिवर्षक्षेत्रका बाण जानना चाहिये ॥ १७३८ ॥ $\frac{१०००००}{१९} \times ३१ = \frac{३१०००००}{१९}$ ।

उन्नीससे भाजित एक लाख साठ हजार योजनप्रमाण यह हरिवर्षक्षेत्रका विस्तार है ॥ १७३९ ॥ $\frac{१६००००}{१९}$ ।

हरिवर्षक्षेत्रकी उत्तरजीवा तिहत्तर हजार नौसौ एक योजन और सत्रारह कलाप्रमाण है ॥ १७४० ॥ ७३९०१$\frac{१७}{१९}$ ।

हरिवर्षक्षेत्रमें इस जीवाका धनुपृष्ठ चौरासी हजार सोलह योजन और चार भागमात्र है ॥ १७४१ ॥ ८४०१६$\frac{४}{१९}$ ।

हरिवर्षक्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण निन्यानबैसौ पचासी योजन और अड़तीससे भाजित ग्यारह कलाओंसे अधिक है ॥ १७४२ ॥ ९९८५$\frac{११}{३८}$ ।

हरिवर्षक्षेत्रकी पार्श्वभुजा तेरह हजार तीनसौ इकसठ योजन और अड़तीससे भाजित तेरह कलाप्रमाण है ॥ १७४३ ॥ १३३६१$\frac{१३}{३८}$ ।

---

१ द ब बाणो. २ द ब °तडादो. ३ द ब एक्कं. ४ द ब एदस्सं.

अवसेसवण्णणाओ सुसमस्स व होंति तस्सं खेत्तस्स । णवरि य संठिदरूवं परिहीणं हाणिवड्ढीहिं ॥ १७४४

तक्खेत्ते बहुमज्झे चेट्ठदि विजयावदित्ति णाभिगिरी । सव्वदिव्ववण्णणजुत्ता इह किर चारणा देवा ॥ १७४५

महपउमदहाउ णदी उत्तरभागेण तोरणदारे । णिस्सरिदूणं वच्चदि पव्वदउवरिम्मि हरिकंता ॥ १७४६

सा गिरिउवरिं गच्छइ एक्कसहस्सं पणुत्तरा छसया । जोयणया पंच कला पणालिए पडदि कुंडम्मिं ॥ १७४७

१६०५ । ५ ।
१९

बेकोसेहिमपाविय णाभिगिरिंदं पदाहिणं कादुं । पच्छिममुहेण वच्चदि रोहीदो बिगुणवासादी ॥ १७४८

छप्पण्णसहस्सेहिं परिवारतरंगिणीहिं परियरिया । दीवस्स य जगदिबिलं पविसिय पविसेइ लवणणिहिं ॥ १७४९

५६०००

। हरिवरसो गदो ।

सोलससहस्सअडसयबादालो दो कला णिसहरुंदं । उणवीसहिदा सूई तीससहस्साणि छलक्खं ॥ १७५०

१६८४२ । २ । ६३०००० ।
१९ १९

उस क्षेत्रका अवशेष वर्णन सुषमाकालके समान है । विशेष यह है कि वह क्षेत्र हानि-वृद्धिसे रहित होता हुआ संस्थितरूप अर्थात् एकसा ही रहता है ॥ १७४४ ॥

इस क्षेत्रके बहुमध्यभागमें विजयवान् नामक नाभिगिरि स्थित है । यहांपर सर्व दिव्य वर्णनसे संयुक्त चारण देव रहते हैं ॥ १७४५ ॥

महापद्मद्रहके उत्तरभागसम्बन्धी तोरणद्वारसे हरिकान्ता नदी निकलकर पर्वतके ऊपरसे जाती है ॥ १७४६ ॥

वह नदी एक हजार छहसौ पांच योजन और पांच कलाप्रमाण पर्वतके ऊपर जाकर नालीके द्वारा कुण्डमें गिरती है ॥ १७४७ ॥ १६०५$\frac{५}{१९}$ ।

पश्चात् वह नदी दो कोससे नाभिगिरिको न पाकर अर्थात् नाभिगिरिसे दो कोस इधर ही रहकर उसकी प्रदक्षिणा करके रोहित् नदीकी अपेक्षा दुगुणे विस्तारादिसे सहित होती हुई पश्चिमकी ओर जाती है ॥ १७४८ ॥

इसप्रकार वह नदी छप्पन हजार परिवारनदियोंसे सहित होती हुई द्वीपके जगती-बिलमें प्रवेश करके लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ १७४९ ॥ ५६००० ।

हरिवर्षक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

निषधपर्वतका विस्तार सोलह हजार आठसौ ब्यालीस योजन और दो कला तथा सूची उन्नीससे भाजित छह लाख तीस हजार योजनप्रमाण है ॥ १७५० ॥ १६८४२ । $\frac{६३०००}{१९}$ ।

१ द ब तस्स. २ द ब कूडम्मि. ३ द वीससहस्साणि.

अथवा गिरिविरिसाणं विगुणियवासम्मि भरहइसुमाणे । अवणीदे जं सेसं णियणियबाणाण तं माणं ॥ १७५१
चउणउदिसहस्साणिं जोयण छप्पण्णअधियएक्कसया । दोण्णि कलाओ अधिया णिसढगिरिस्सुत्तरे जीवा ॥ १७५२

९४१५६ । २ ।
१९

एक्कं जोयणलक्खं चउवीससहस्सणिसयछादाला । णवभागा अदिरित्ता णिसहे जीवाए धणुपट्ठं ॥ १७५३

१२४३४६ । ९ ।
१९

सयवग्गं एक्कसयं सत्तावीसं च जोयणाणं पि । दोण्णि कला णिसहस्स य चूलियमाणं च णादव्वं ॥ १७५४

जो १०१२७ । २ ।
१९

जोयण वीससहस्सं एक्कसयं पंचसमधियं छट्टी । अड्ढाइज्जकलाओ पस्सभुजा णिसहसेलस्स ॥ १७५५

२०१६५ । ५ ।
३८

तग्गिरिदोपासेसुं उववणसंडाणि होंति रमणिज्जा । बहुविहतरुरुक्खाणिं सुककोकिलमोरजुत्ताणिं ॥ १७५६
उववणसंडा सव्वे पव्वददीहत्तसरिसदीहत्ता । वरवावीकूवजुदा पुव्वं विय वण्णणा सव्वा ॥ १७५७

अथवा, पर्वत और क्षेत्रके दूने विस्तारमेंसे भरतक्षेत्रसम्बन्धी बाणप्रमाणके कम करदेनेपर जितना शेष रहे उतना अपने अपने बाणोंका प्रमाण होता है ॥ १७५१ ॥

$\frac{३२०००००}{१९} \times २ - \frac{१००००}{१९} = \frac{६३००००}{११}$ निषधका बाणप्रमाण ।

निषधपर्वतकी उत्तरजीवाका प्रमाण चौरानवे हजार एकसौ छप्पन योजन और दो कला अधिक है ॥ १७५२ ॥ ९४१५६$\frac{२}{१९}$ ।

निषधपर्वतकी जीवाके धनुपृष्ठका प्रमाण एक लाख चौबीस हजार तीनसौ छयालीस योजन और नौ भाग अधिक है ॥ १७५३ ॥ १२४३४६$\frac{९}{१९}$ ।

निषधपर्वतकी चूलिकाका प्रमाण सौका वर्ग अर्थात् दश हजार, तथा एकसौ सत्ताईस योजन और दो कलाप्रमाण जानना चाहिये ॥ १७५४ ॥ १०१२७$\frac{२}{१९}$ ।

निषधपर्वतकी पार्श्वभुजा बीस हजार एकसौ पैंसठ योजन और अढ़ाई कलाप्रमाण है ॥ १७५५ ॥ २०१६५$\frac{५}{३८}$ ।

इस पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें बहुत प्रकारके उत्तम वृक्षोंसे सहित और तोता, कोयल एवं मयूर पक्षियोंसे युक्त रमणीय उपवनखंड हैं ॥ १७५६ ॥

वे सब उपवनखंड पर्वतकी लम्बाईके समान लम्बे और उत्तम वापी एवं कूपोंसे संयुक्त हैं । इनका सब वर्णन पहिलेके समान ही है ॥ १७५७ ॥

१ द सत्तावीसब्भहियं.

कूडो सिद्धो [1]णिसहो हरिवरसो तह विदेहहरिविजया। सीदोदपरविदेहा रुजगो य हवेदि णिसहउवरिम्मि ॥ १७५८
ताणं उदयप्पहुदी सव्वे हिमवंतसेलकूडादो। चउगुणिया णवरि इमे कूडोवरि जिणपुरा[2] सरिसा ॥ १७५९
जंणामा ते कूडा तंणामा वेंतरा सुरा तेसुं। बहुपरिवारोहिं जुदा पल्लाऊ दसधणुत्तुंगा ॥ १७६०
पउमद्दहाउ चउगुणरुंदप्पहुदी भवेदि दिव्वदहो। तीगिच्छो[3] विक्खादो बहुमज्झे णिसहसेलस्स ॥ १७६१
वा २०००, आ ४०००, गा ४०, पउ ४२, संखा ५६०४६४, बों १, मु ३, प ४, मज्झि ४, अं ४ वा २।
तद्दहपउमस्सोवरि पासादे[4] चेट्ठदे य धिदिदेवी। बहुपरिवारोहिं जुदा णिरुवमलावण्णसंपुण्णा ॥ १७६२
इगिपल्लपमाणाऊ णाणाविहरयणभूसियसरीरा। अइरम्मा वेंतरिया सोहम्मिंदस्स सा देवी ॥ १७६३
जेत्तियमेत्ता तस्सिं पउमगिहा तेत्तिया जिणिंदपुरा। भव्वाणंदयरा[5] सुरकिण्णरमिहुणसंकिण्णा ॥ १७६४
ईसाणदिसाभाए वेसमणो णाम मणहरो कूडो। दक्खिणदिसाविभागे कूडो सिरिणिचयणामो य ॥ १७६५
णइरिदिदिसाविभागे णिसहो णामेण सुंदरो कूडो। अइरावदो[6] त्ति कूडो तीगिच्छीपच्छिमुत्तरविभागे[7] ॥ १७६६
उत्तरदिसाविभागे कूडो सिरिसंचयो त्ति णामेण। एदेहिं कूडेहिं णिसहगिरी पंचसिहरि त्ति[8] ॥ १७६७

निषधपर्वतके ऊपर सिद्ध, निषध, हरिवर्ष, विदेह, हरि, विजय, सीतोदा, अपरविदेह और रुचक, ये नौ कूट स्थित हैं ॥ १७५८ ॥

इन कूटोंकी ऊंचाई आदि सब हिमवान्पर्वतके कूटोंसे चौगुणी है। विशेषता केवल यह है कि कूटोंपर स्थित ये जिनपुर हिमवान्पर्वतसंबंधी जिनपुरोंके सदृश हैं ॥ १७५९ ॥

जिस नामके धारक ये कूट हैं, उसी नामके धारक व्यन्तरदेव उन कूटोंपर निवास करते हैं। ये देव बहुत परिवारोंसे युक्त, एक पल्यप्रमाण आयुवाले और दश धनुष ऊंचे हैं ॥ १७६० ॥

निषधपर्वतके बहुमध्यभागमें पद्मद्रहकी अपेक्षा चौगुणे विस्तारादिसे सहित और तिगिंछनामसे प्रसिद्ध एक दिव्य तालाब है ॥ १७६१ ॥

व्यास २०००, आयाम ४०००, अवगाह ४०, नालकी ऊंचाई ४२, संख्या ५६०४-६४, बाहल्य १, मृणाल ३, पद्म ४, मध्यव्यास ४, अंतव्यास २ वा ४ योजन।

उस द्रहसम्बन्धी पद्मके ऊपर स्थित भवनमें बहुत परिवारसे संयुक्त और अनुपम लावण्यसे परिपूर्ण धृति देवी निवास करती है ॥ १७६२ ॥

एक पल्यप्रमाण आयुकी धारक और नाना प्रकारके रत्नोंसे भूषित शरीरवाली अतिरमणीय वह व्यन्तरिणी सौधर्मइन्द्रकी देवी है ॥ १७६३ ॥

उस तालाबमें जितने पद्मगृह हैं, उतने ही भव्य जनोंको आनन्दित करनेवाले किन्नर-देवोंके युगलोंसे संकीर्ण जिनेन्द्रपुर हैं ॥ १७६४ ॥

तिगिंछ तालाबके ईशानदिशाभागमें मनोहर वैश्रवण नामक कूट, दक्षिणदिशाभागमें श्रीनिचय नामक कूट, नैर्ऋत्यदिशाभागमें सुन्दर निषध नामक कूट, पश्चिमोत्तरकोणमें ऐरावतकूट और उत्तरदिशाभागमें श्रीसंचय नामक कूट है। इन कूटोंसे निषधपर्वत 'पंचशिखरी' इसप्रकार प्रसिद्ध है ॥ १७६५-१७६७ ॥

---

१ द ब णिसहे. २ द जिणवरा. ३ द तीगिच्छे, ब तिंगिच्छे. ४ द ब वा २, अंबु वा २, उ ३, प ४, मज्झि ४. ५ द ब पासादा. ६ द ब भवणाणंदयरा. ७ द ब अइरावदा. ८ द ब तिगिच्छीपुत्तरं.

वरवेदियाहिं जुत्ता वेंतरणयरेहिं परमरमणिज्जा । एदे कूडा उत्तरपासे सलिलम्मि जिणकूडो[1] ॥ १७६८
सिरिणिचयं वेरुलियं अंकमयं अंबरीयरुजगाइं । सिहिरी उप्पलकूडो तिगिच्छिदहस्स सलिलम्मिं ॥ १७६९
तिगिंछादो दक्खिणदारेणं हरिणदी विणिक्कंतो[2]। सत्तसहस्सं चउसयइगिवीसा इगिकला य गिरिउवरिं॥ १७७०
७४२१ । १ ।
१९
आगच्छिय हरिकुंडे[3] पडिऊणं हरिणदी विणिस्सरई[4] । णाभिप्पदाहिणेणं हरिवरिसे जादि पुव्वमुही[5] ॥ १७७१
छप्पण्णसहस्सेहिं परिवारसमुद्दगाहि संजुत्ता। दीवस्स य जगदीबिलं पविसिय पविसेदि लवणणिहिं ॥ १७७२
५६००० ।
हरिकंतासारिच्छा हरिणामावासगाँहपहुदीओ । भोगवणीण णदीओ सरपहुदी जलयरविहीणा ॥ १७७३
। णिसहो[6] गदो ।
णिसहस्सुत्तरभागे दक्खिणभागम्मि णीलवंतस्स । वरिसो महाविदेहो मंदरसेलेण विहत्तो ॥ १७७४
तेत्तीससहस्साइं छप्पया चउसीदिआ य चउअंसा । ता महविदेहरुंदं जोयणलक्खं च मज्झगदजीवा ॥ १७७५
३३६८४ । ४ । १००००० ।
१९

ये कूट उत्तम वेदिकाओंसे सहित और व्यन्तरनगरोंसे अतिशय रमणीय हैं। उत्तरपार्श्व-भागमें जलमें जिनकूट है ॥ १७६८ ॥

तिगिंछ तालाबके जलमें श्रीनिचय, वैडूर्य, अंकमय, अंबरीक (अच्छरीय = आश्चर्य), रुचक, शिखरी और उत्पल कूट स्थित हैं ॥ १७६९ ॥

तिगिंछ द्रहके दक्षिणद्वारसे निकलकर हरित् नदी सात हजार चारसौ इक्कीस योजन व एक कलाप्रमाण गिरिके ऊपर आकर और हरित् कुण्डमें गिरकर वहांसे निकलती है तथा हरिवर्ष क्षेत्रमें नाभिगिरिके प्रदक्षिणरूपसे पूर्वकी ओर जाती है ॥ १७७०-१७७१ ॥

वह नदी छप्पन हजार परिवारनदियोंसे संयुक्त होकर द्वीपकी जगतीके बिलमें प्रवेश करती हुई लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ १७७२ ॥ ५६००० ।

हरित् नदीका विस्तार व गहराई आदि हरिकान्ता नदीके सदृश है। भोगभूमियोंकी नदियां और तालाब आदिक जलचर जीवोंसे रहित होते हैं ॥ १७७३ ॥

निषधपर्वतका वर्णन समाप्त हुआ।

निषधपर्वतके उत्तरभागमें और नीलपर्वतके दक्षिणभागमें मन्दरपर्वतसे विभक्त महा विदेहक्षेत्र है ॥ १७७४ ॥

उस महाविदेहक्षेत्रका विस्तार तेतीस हजार छहसौ चौरासी योजन और चार भागप्रमाण, तथा मध्यगत जीवा एक लाख योजनप्रमाण है ॥ १७७५ ॥ ३३६८४$\frac{४}{१९}$ । १००००० ।

१ द ब जिणकूडा. २ द ब दहसलिलम्मि. ३ द विदिकंता. ४ द ब हरिकूडे. ५ द ब विणिस्सरओ. ६ द ब पुव्वमुहे. ७ द वासगाहि. ८ द ब णिसह.

भरहस्स इसुपमाणे[1] पंचाणउदीहिं ताडिदम्मि पुढं । रयणायरतीरादो[2] विदेहअद्धो त्ति सो बाणो ॥ १७७६
अट्ठावण्णसहस्सा इगिलक्खा तेरसुत्तरं च सयं । सगकोसाणं अद्धं महाविदेहस्स धणुपट्ठं ॥ १७७७

१५८११३ । ७ ।
२

जोयण उणतीससया इगिवीसं अट्ठरस तहा भागा । एदं महाविदेहे णिद्दिट्ठं चूलियामाणं ॥ १७७८

२९२१ । १८ ।
१९

सोलससहस्सयाणिं अट्ठसया जोयणाणि तेसीदी । अद्धाधियअट्ठकला महाविदेहस्स पस्सभुजा ॥ १७७९

१६८८३ । १७ ।
३८

वरिसे महाविदेहे बहुमज्झे मंदरो महासेलो । जम्माभिसेयपीढो सव्वाणं तित्थकत्ताणं ॥ १७८०
जोयणसहस्सगाढो णवणवदिसहस्समेत्तउच्छेहो । बहुविहवणसंडजुदो णाणावररयणरमणिज्जो ॥ १७८१

१००० । ९९००० ।
दस य सहस्सा णउदी जोयणया दसकलेक्करसभागा । पायालतले रुंदं समवट्टतणुस्स मेरुस्स ॥ १७८२

१००९० । १० ।
११

भरतक्षेत्रके बाणप्रमाणको पंचानबैसे गुणा करनेपर जो गुणनफल प्राप्त हो उतना समुद्रके तीरसे आधे विदेहक्षेत्रका बाणप्रमाण होता है ॥ १७७६ ॥

$\frac{१०००००}{१९} \times ९५ = \frac{९५०००००}{१९} = ५०००० \text{ योजन}$ ।

महाविदेहका धनुपृष्ठ एक लाख अट्ठावन हजार एकसौ तेरह योजन और सात कोसोंका आधा अर्थात् साढ़े तीन कोसप्रमाण है ॥ १७७७ ॥ यो. १५८११३, को. $\frac{१}{२}$ ।

महाविदेहक्षेत्रकी चूलिकाका प्रमाण उनतीससौ इक्कीस योजन तथा अठारह भागमात्र है ॥ १७७८ ॥ २९२१ $\frac{१८}{१९}$ ।

महाविदेहकी पार्श्वभुजा सोलह हजार आठसौ तेरासी योजन और साढ़े आठ कलाप्रमाण है ॥ १७७९ ॥ १६८८३ $\frac{१७}{३८}$ ।

महाविदेहक्षेत्रके बहुमध्यभागमें सब तीर्थंकरोंके जन्माभिषेकका आसनरूप मन्दर नामक महापर्वत है ॥ १७८० ॥

यह महापर्वत एक हजार योजन गहरा, निन्यानबै हजार योजन ऊंचा, बहुत प्रकारके वनखंडोंसे युक्त और अनेक उत्तम रत्नोंसे रमणीय है ॥ १७८१ ॥ १०००।९९०००।

इस समानगोल शरीरवाले मेरूपर्वतका विस्तार पातालतलमें दश हजार नब्बै योजन और एक योजनके ग्यारह भागोंमेंसे दश भागप्रमाण है ॥ १७८२ ॥ १००९० $\frac{१०}{११}$ ।

१ द ब इसुपमाणो. २ द ब °तीरुदो. ३ द ब उणवीस.

कमहाणिए उवरिं धरपट्ठम्मि दससहस्साणिं । जोयणसहस्समेक्कं वित्थारो सिहरभूमीए ॥ १७८३

१००००। १०००।

सरसमयजलदणिग्गयदिणयरबिंबं व सोहए मेरू । विविहवररयणमंडियवसुमइमउडो व्व उत्तुंगो ॥ १७८४

जम्माभिसेयसुररइददुंदुहीभेरितूरणिग्घोसो[1] । जिणमहिमजणिदविक्कमसुरिंदसंदोहरमणिज्जो ॥ १७८५

ससिहारहंसधवलुच्छलंतखीरंबुरासिसलिलोघो । सुरकिण्णरमिहुणाणं णाणाविहकीडणेहिं जुदो ॥ १७८६

घणयरकम्ममहासिलसंचूरणजिणवरिंदभवणोघो । विविहतरुकुसुमपल्लवफलणिवहसुयंधभूभागो ॥ १७८७

भूमीदो पंचसया कमहाणीए तदुवरि गंतूणं । तट्ठाणे संकुलिदो पंचसया सो गिरी जुगवं ॥ १७८८

समवित्थारो उवरिं एक्कारसहस्सजोयणपमाणं । तत्तो कमहाणीए इगिवण्णसहस्सपणसया गंतुं ॥ १७८९

११०००। ५१५००।

जुगवं समंतदो सो संकुलिदो जोयणाणि पंचसया । समरुंदं उवरितले[7] एक्कारसहस्सपरिमाणं ॥ १७९०

५००। ११०००।

फिर क्रमसे हानिरूप होनेसे उसका विस्तार ऊपर धरापृष्ठपर अर्थात् पृथिवीके ऊपर दश हजार योजन और शिखरभूमिपर एक हजार योजनमात्र है ॥ १७८३ ॥ १००००। १०००।

यह उन्नत मेरुपर्वत शरत्कालके बादलोंमेंसे निकले हुए सूर्यमण्डलके समान और विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंसे मण्डित पृथिवीके मुकुटके समान शोभायमान होता है ॥ १७८४ ॥

वह मेरुपर्वत जन्माभिषेकके समय देवोंसे रचे गये दुंदुभी, भेरी एवं तूर्यके निर्घोषसे सहित और जिनमाहात्म्यसे उत्पन्न हुए पराक्रमवाले सुरेन्द्रसमूहोंसे रमणीय होता है ॥ १७८५ ॥

चन्द्रमा, हार अथवा हंसके समान धवल एवं उछलते हुए क्षीरसागरके जलसमूहसे युक्त वह मेरुपर्वत किन्नर जातिके देवयुगलोंकी नाना प्रकारकी क्रीड़ाओंसे सुशोभित होता है ॥ १७८६ ॥

अतिसघन कर्मरूपी महा शिलाओंको चूर्ण करनेवाले जिनेन्द्रभवनसमूहसे युक्त वह मेरुपर्वत अनेक प्रकारके वृक्ष, फूल, पल्लव और फलोंके समूहसे पृथिवीमण्डलको सुगंधित करनेवाला है ॥ १७८७ ॥

यह मेरुपर्वत क्रमसे हानिरूप होता हुआ पृथिवीसे पांचसौ योजन ऊपर जाकर उस स्थानमें युगपत् पांचसौ योजनप्रमाण संकुचित हो गया है ॥ १७८८ ॥

पश्चात् इससे ऊपर ग्यारह हजार योजन तक समान विस्तार है। वहांसे पुनः क्रमसे हानिरूप होकर इक्यावन हजार पांचसौ योजनप्रमाण ऊपर जानेपर वह पर्वत सब ओरसे युगपत् पांचसौ योजन फिर संकुचित होगया है। इसके आगे ऊपर ग्यारह हजार योजन तक उसका समान विस्तार है ॥ १७८९–१७९० ॥

समविस्तार ११०००। क्रमहानि ५१५००। संकोच ५००। समविस्तार ११०००।

---

१ द ब °णिग्गह. २ ब सुररइदुंदुहि°. ३ द ब दुंदुहिभेरीतूरणादणिग्घोसो. ४ द ब धवलुच्छंदखीरं°. ५ द ब घणहर°. ६ द ब समंतदे. ७ द ब °तलो.

उड्ढं कमहाणीए पणवीससहस्सजोयणा गंतुं । जुगवं संकुलिदो सो चत्तारि सयाणि चउणउदी ॥ १७९१

२५००० । ४९४ ।

एवं जोयणलक्खं उच्छेहो सयलपव्वदपहुस्स । णिलयस्स सुरवराणं अणाइणिहणस्स मेरुस्स ॥ १७९२

मुहभूविसेसमद्धिय वग्गगदं उदयवग्गसंजुत्तं । जं तस्स वग्गमूलं पव्वदरायस्स[1] तस्स पस्सभुजा ॥ १७९३

णवणउदिसहस्साणिं एक्कसयं दोण्णि जोयणाणि तहा । सविसेसाइं[2] एसा मंदरसेलस्स पस्सभुजा ॥ १७९४

९९१०२ ।

चालीसजोयणाइं मेरुगिरिंदस्स चूलियामाणं । बारह तब्भूवासं चत्तारि हवेदि मुहवासं ॥ १७९५

४० । १२ । ४ ।

मुहभूमीण विसेसे उच्छेहहिदम्मि भूमुहाहिंतो । हाणिचयं णिद्दिट्ठं तस्स पमाणं हु पंचंसो[3] ॥ १७९६

१ ।

५

.....

फिर ऊपर क्रमसे हानिरूप होकर पच्चीस हजार योजन जानेपर वह पर्वत युगपत् चारसौ चौरानबै योजनप्रमाण संकुचित होगया है ॥ १७९१ ॥

क्रमहानि २५००० । संकोच ४९४ ।

इसप्रकार सम्पूर्ण पर्वतोंके प्रभु और उत्तम देवोंके आलयस्वरूप उस अनादिनिधन मेरु-पर्वतकी ऊंचाई एक लाख योजनप्रमाण है ॥ १७९२ ॥

१००० + ५०० + ११००० + ५१५०० + ११००० + २५००० = १००००० यो.

भूमिमेंसे मुखको कम करके उसका आधा करनेपर जो संख्या प्राप्त हो उसके वर्गमें उंचाईके वर्गको मिलानेपर जो उसका वर्गमूल हो उतना उस पर्वतराजकी पार्श्वभुजाका प्रमाण है ॥ १७९३ ॥

$$\sqrt{\left(\frac{१००००-१०००}{२}\right)^२ + ९९०००^२} = \sqrt{२०२५०००० + ९८०१००००००}$$

=९९१०२ योजन ।

निन्यानबै हजार एकसौ दो योजन तथा कुछ अधिक ($\frac{१}{५}$), यह मन्दरपर्वतकी पार्श्वभुजाका प्रमाण है ॥ १७९४ ॥ ९९१०२ ।

मेरुपर्वतकी चूलिकाका प्रमाण चालीस योजन, भूविस्तार बारह योजन और मुखविस्तार चार योजन है ॥ १७९५ ॥ ४० । १२ । ४ ।

भूमिमेंसे मुखको कम करके उत्सेधका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण बतलाया गया है । वह हानि-वृद्धिका प्रमाण यहां योजनका पांचवां भाग होता है ॥ १७९६ ॥

$(१२-४) \div ४० = \frac{८}{४०} = \frac{१}{५}$ हानि-वृद्धिका प्रमाण ।

.....

१ द मंगगदं. २ द मंगमूल². ३ द ब पदहत्थसमस्स. ४ द ब सविसेसेइं. ५ द ब पंचंसा.

जत्थिच्छसि विक्खंभं चूलियसिहराउ समवदिण्णाणं । तं पंचेहि विहत्तं[1] चउजुत्तं तत्थ तव्वासं ॥ १७९७
तं मूले सगतीसं मज्झे पणुवीस जोयणाणं पि । उड्ढे बारस अधिया परिही वेरुलियमइयाए ॥ १७९८

३७ । २५ । १२ ।

जत्थिच्छसि विक्खंभं मंदरसिहराउ समवदिण्णाणं । तं एक्कारसभजिदं सहस्ससहिदं च तत्थ वित्थारं ॥ १७९९
जस्सिं इच्छसि वासं उवरिं मूलाउ तेत्तियपदेसं । एक्कारसेहिं भजिदं भूवासे सोधिदम्मि तव्वासं ॥ १८०००
एक्कारसे पदेसे एक्कपदेसा दु मूलदो हाणी । एदं पादकरंगुलकोसप्पहुदीहिं णादव्वं ॥ १८०१
हरिदालमईं परिही वेरुलियाण रयणवज्जमई । उड्ढम्मि य पउममई तत्तो उवरिम्मि पउमरायमई ॥ १८०२
सोलससहस्सयाणिं पंचसया जोयणाणि पत्तेक्कं । ताणं छप्परिहीणं मंदरसेलस्स परिमाणं ॥ १८०३

१६५०० ।

चूलिकाके शिखरसे नीचे उतरते हुए जितने योजनपर विष्कंभको जाननेकी इच्छा हो उतने योजनोंको पांचसे विभक्त करनेपर जो लब्ध आवे उसमें चार अंक और जोड़ देनेपर वहांका विस्तार निकलता है ॥ १७९७ ॥

उदाहरण—चूलिकाशिखरसे नीचे २० योजनपर विष्कंभका प्रमाण —

२० ÷ ५ + ४ = ८ योजन।

वैडूर्यमणिमय उस शिखरकी परिधि मूलमें सैंतीस योजन, मध्यमें पच्चीस योजन और ऊपर बारह योजनसे अधिक है ॥ १७९८ ॥ ३७ । २५ । १२ ।

सुमेरुपर्वतके शिखरसे नीचे उतरते हुए जितने योजनपर उसके विष्कंभको जाननेकी इच्छा हो, उतने योजनोंमें ग्यारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमें एक हजार योजन और मिला देनेपर वहांका विस्तार आजाता है ॥ १७९९ ॥

उदाहरण—शिखरसे नीचे ३३००० योजनपर विष्कंभका प्रमाण—

३३००० ÷ ११ + १००० = ४००० योजन।

मूलसे ऊपर जिस जगह मेरुके विस्तारको जाननेकी इच्छा हो, उतने प्रदेशमें ग्यारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे भूविस्तारमेंसे घटा देनेपर शेष वहांका विस्तार होता है ॥१८००॥

उदाहरण—६६००० योजनकी उंचाईपर विष्कंभका प्रमाण—

१०००० – (६६००० ÷ ११) = ४००० योजन।

मेरुके विस्तारमें मूलसे ऊपर ग्यारह प्रदेशोंपर एक प्रदेशकी हानि हुई है। इसीप्रकार पाद, हस्त, अंगुल और कोसादिककी उंचाईपर भी स्वयं जानना चाहिये ॥ १८०१ ॥

इस पर्वतकी परिधि क्रमशः नीचेसे हरितालमयी, वैडूर्यमणिमयी, रत्न–(सर्वरत्न–) मयी, वज्रमयी, इसके ऊपर पद्ममयी, और इससे भी ऊपर पद्मरागमयी है ॥ १८०२ ॥

मन्दरपर्वतकी इन छह परिधियोंमेंसे प्रत्येक परिधिका प्रमाण सोलह हजार पांचसौ योजन मात्र है ॥ १८०३ ॥ १६५०० ।

---

१ द ब तप्पंचे विविहत्थं. २ द ब मूलदा. ३ द ब हरिदालमही.

सत्तमयो तप्परिही णाणाविहतरुगणेहिं परियरिया । एक्कारसभेदजुदा बाहिरदो भणमि तब्भेदे ॥ १८०४
णामेण भद्दसालं मणुसुत्तरदेवणागरमणाइं । भूदारमणं पंचममेदाइं भद्दसालवणे ॥ १८०५
णंदणपहुदीएसुं णंदणमुवणंदणं च सोमणसं । उवसोमणसं पंडू उवेपंडूवणाणि दोदो दु ॥ १८०६
सो मूले वज्जमओ एक्कसहस्सं च जोयणपमाणो । मज्झे वररयणमओ इगिसट्ठिसहस्सपरिमाणं ॥ १८०७
१०००। ६१०००।
उवरिम्मि कंचणमओ अडतीससहस्सजोयणाणं पि । मंदरसेलस्सीसे पंडुवणं णाम रमणिजं ॥ १८०८
३८०००।
सोमणसं णाम वणं साणुपदेसेसु णंदणं तह य । तत्थ चउत्थं चेट्ठदि भूमीए भद्दसालवणं ॥ १८०९
जोयणसहस्समेक्कं मेरुगिरिंदस्स सिहरवित्थारं । एक्कत्तीससयाणिं बासट्ठी समधिया य तप्परिही ॥ १८१०
१०००। ३१६२।
पंडुवणे अट्टरम्मा समंतदो होदि दिव्वतडवेदी । चरिमट्टालयविउला णाणाविहधयवडेहिं संजुत्ता ॥ १८११
धुव्वंतधयवदाया रयणमया गोउराण पासादा। सुरकिण्णरमिहुणजुदा बेरिहिणपहुदीहिं वीहि वरसद्दा ॥१८१२

उस पर्वतकी सातवीं परिधि नाना प्रकारके वृक्षसमूहोंसे व्याप्त और बाहरसे ग्यारह प्रकार है। मैं उन भेदोंको कहता हूं ॥ १८०३ ॥

भद्रशालवनमें नामसे भद्रशाल, मानुषोत्तर, देवरमण, नागरमण और भूतरमण, ये पांच वन हैं ॥ १८०५ ॥

नन्दनादिक वनोंमें नन्दन और उपनन्दन, सौमनस और उपसौमनस, तथा पाण्डुक और उपपाण्डुक, इसप्रकार दो दो वन हैं ॥ १८०६ ॥

वह सुमेरुपर्वत मूलमें एक हजार योजनप्रमाण वज्रमय, मध्यमें इकसठ हजार योजन-प्रमाण उत्तम रत्नमय, और ऊपर अड़तीस हजार योजनप्रमाण सुवर्णमय है। इस मन्दरपर्वतके शीशपर रमणीय पाण्डु नामक वन है ॥ १८०७–१८०८ ॥

सौमनस तथा नन्दन वन मेरुपर्वतके सानुप्रदेशोंमें और चौथा भद्रशालवन भूमिपर स्थित है ॥ १८०९ ॥

मेरु महापर्वतके शिखरका विस्तार एक हजार योजन और उसकी परिधि इकतीससौ बासठ योजनसे कुछ अधिक है ॥ १८१० ॥ १००० । ३१६२ ।

पाण्डुवनमें चारों ओर मार्ग व अट्टालिकाओंसे विशाल और नाना प्रकारकी ध्वजापताका-ओंसे संयुक्त ऐसी अतिरमणीय दिव्य तटवेदी है ॥ १८११ ॥

फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त, सुर-किन्नर-युगलोंसे संयुक्त और मयूरप्रभृति पक्षि-योंके शब्दोंसे मुखरित ऐसे गोपुरोंके रत्नमय प्रासाद हैं ॥ १८१२ ॥

---

१ द ब तत्तमया. २ द ब तब्भेदो. ३ द ब णंदणमुहणंदणं. ४ ब उवसंपडू°. ५ द ब °सेलस्स सीसं. ६ द ब वरिअट्टालय. ७ द धयवदेहिं. ८ द पिरिहण.

उच्छेहो बे कोसा वेदीए पणसयाणि दंडाणं । वित्थारो भुवणत्तयविम्हयसंतावजणणीए ॥ १८१३

को २ । दं ५०० ।

तीए मज्झिमभागे पंडू णामेण दिव्ववणसंडा । सेलस्स चूलियाए समंतदो दिण्णपरिवेढा ॥ १८१४

कप्पूररुक्खपउरा तमालहिंतालतालकयलिजुदा । लवलीलवंगवलिदा दाडिमपणसेहिं[1] संछण्णा ॥ १८१५

सयवत्तिमल्लिसालाचंपयणारंगमाहुलिंगेहिं । पुण्णायणायकुज्जयअसोयपहुदीहिं कमणिज्जा ॥ १८१६

कोइलकलयलभरिदा मोराणं विविहकीडणेहिं जुदा । सुरकरिसद्दाइण्णा खेचरसुरमिहुणकीडयरा ॥ १८१७

पंडुवणे[4] उत्तरए पुदाण दिसाए होदि[5] पंडुसिला । तह वणवेदीजुत्ता अद्धेंदुसरिच्छसंठाणा ॥ १८१८

पुव्वावरेसु जोयणसदद्दीहा दक्खिणुत्तरस्सेसुं । पण्णासा बहुमज्झे कमहाणी तीए उभयपासेसुं ॥ १८१९

जोयणअट्ठुच्छेहो[6] सव्वत्थं होदि[7] कणयमइया सा । समवट्टा उवरिम्मि य वणवेदीपहुदिसंजुत्ता ॥ १८२०

चउजोयणउच्छेहं पणसयदीहं तदद्धवित्थारं । सग्गायणिआइरिया एवं भासंति पंडुसिलं ॥ १८२१

४ । ५०० । २५० ।

.....

भुवनत्रयको विस्मय और संताप (?) उत्पन्न करनेवाली इस वेदीकी ऊंचाई दो कोस और विस्तार पांचसौ धनुषप्रमाण है ॥ १८१३ ॥ को. २ । दं. ५०० ।

उस वेदीके मध्यभागमें पर्वतकी चूलिकाको चारों ओरसे वेष्टित किये हुए पाण्डु नामक वनखंड हैं ॥ १८१४ ॥

ये वनखंड प्रचुर कर्पूर वृक्षोंसे संयुक्त, तमाल, हिंताल, ताल, और कदली वृक्षोंसे युक्त, लवली और लवंगसे वलित, दाडिम और पनस वृक्षोंसे आच्छादित, सप्तपत्री (सप्तच्छद), मल्लि, शाल, चम्पक, नारंग, मातुलिंग, पुन्नाग, नाग, कुब्जक और अशोक इत्यादि वृक्षोंसे रमणीय, कोयलोंके कल-कल शब्दसे भरे हुए, मयूरोंकी विविध क्रीड़ाओंसे युक्त, सुरकरि अर्थात् ऐरावत हाथीके उत्तम शब्दसे व्याप्त, और विद्याधर व देवयुगलोंकी क्रीड़ाके स्थल हैं ॥ १८१५–१८१७ ॥

पाण्डुवनमें इन वनखंडोंकी उत्तरदिशामें तटवनवेदीसे युक्त और अर्ध चन्द्रमाके समान आकारवाली पाण्डुकशिला है ॥ १८१८ ॥

यह पाण्डुकशिला पूर्व-पश्चिममें सौ योजन लम्बी और दक्षिण-उत्तरभागमें पचास योजन विस्तारसे सहित है । इसके बहुमध्यभागमें दोनों ओरसे क्रमशः हानि होती गई है ॥ १८१९ ॥

सर्वत्र सुवर्णमयी वह पाण्डुकशिला आठ योजन ऊंची, ऊपर समवृत्ताकार और वनवेदी आदिसे संयुक्त है ॥ १८२० ॥

यह पाण्डुकशिला चार योजन ऊंची, पांचसौ योजन लंबी और इससे आधे अर्थात् अढ़ाईसौ योजनप्रमाण विस्तारसे सहित है । इसप्रकार सग्गायणी आचार्य निरूपण करते हैं ॥ १८२१ ॥

४ । ५०० । २५० ।

.....

१ द ब अवली. २ द ब °पलसेहिं. ३ द ब °सुरकरिवरसद्दइण्णो. ४ द ब पंडुवणं. ५ द ब होदे. ६ द ब अट्ठुच्छेहो. ७ द ब होहि.

तीए[1] बहुमज्झदेसे तुंगं[2] सीहासणं विविहसोहं । सरसमयतरणिमंडलसंकासफुरंतकिरणोघं ॥ १८२२
सिंहासणस्स दोसुं पासेसुं दिव्वरयणरइदाइं । भद्दासणाइं णिब्भरफुरंतवरकिरणणिवहाणिं ॥ १८२३
पुह पुह पीढतयस्स य उच्छेहो पणसयाणि कोदंडा । तेत्तियमेत्तो मूले वासो सिहरे अ तस्सद्धं ॥ १८२४
५०० । ५०० । २५० ।
धवलादवत्तजुत्ता ते पीढा पायपीढसोहिल्ला । मंगलदव्वेहि जुदा चामरघंटापयारेहिं ॥ १८२५
सव्वे पुव्वाहिमुहा पीढवरा तिहुवणस्स विम्हयरा । एक्कमुएणुक्कजीहो को सक्कइ वण्णिदुं ताणिं ॥ १८२६
भरहे खेत्ते जादं तित्थयरकुमारकं गहेदूणं । सक्कप्पहुदी इंदा णिंति विभूदीए विविहाए ॥ १८२७
मेरुप्पदाहिणेणं गच्छिय सव्विंद पंडुयसिलाए[4] । उवरिं मज्झिमसिंहासणए[5] वासंति जिणणाहं ॥ १८२८
दक्खिणपीढे सक्को ईसाणिंदो वि उत्तरापीढे । वइस्सिय अभिसेयाइं कुव्वंति महाविसोहीए ॥ १८२९
पंडूकंबलणामा रजदमई सिहिदिसामुहम्मि सिला । उत्तरदक्खिणदीहा पुव्वावरभायवित्थिण्णा ॥ १८३०

इस पाण्डुकशिलाके बहुमध्यदेशमें विविध प्रकारकी शोभासे सहित और शरत्कालीन सूर्यमण्डलके सदृश प्रकाशमान किरणसमूहसे संयुक्त उन्नत सिंहासन स्थित है ॥ १८२२ ॥

सिंहासनके दोनों पार्श्वभागोंमें अत्यन्त प्रकाशमान उत्तम किरणसमूहसे संयुक्त एवं दिव्य रत्नोंसे रचे गये भद्रासन विद्यमान हैं ॥ १८२३ ॥

तीनों पीठोंकी उंचाई पृथक् पृथक् पांचसौ धनुष, मूलमें विस्तार भी इतना अर्थात् पांचसौ धनुष, तथा शिखरपर इससे आधा विस्तार है ॥ १८२४ ॥ ५०० । ५०० । २५० ।

पादपीठोंसे शोभायमान वे पीठ धवल छत्र व चामर-घंटादिरूप मंगलद्रव्योंसे संयुक्त हैं ॥ १८२५ ॥

वे सब पूर्वाभिमुख उत्तम पीठ तीनों लोकोंको विस्मित करनेवाले हैं । इन पीठोंका वर्णन करनेके लिये एक मुख और एक ही जिह्वासे सहित कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ १८२६ ॥

सौधर्मादिक इन्द्र भरतक्षेत्रमें उत्पन्न हुए तीर्थंकरकुमारको ग्रहण करके विविध प्रकारकी विभूतिके साथ ले जाते हैं ॥ १८२७ ॥

सब इन्द्र मेरुकी प्रदक्षिणा करते हुए जाकर पाण्डुक शिलाके ऊपर मध्यम सिंहासनपर जिनेन्द्र भगवान्‌को विराजमान करते हैं ॥ १८२८ ॥

सौधर्मेन्द्र दक्षिण पीठपर और ईशानेन्द्र उत्तर पीठपर स्थित होकर महती विशुद्धिसे अभिषेक करते हैं ॥ १८२९ ॥

अग्निदिशामें उत्तर-दक्षिणदीर्घ और पूर्व-पश्चिमभागमें विस्तीर्ण रजतमयी पाण्डुकम्बला नामक शिला स्थित है ॥ १८३० ॥

---

१ द तीर. २ ब बहुमज्झे. ३ द ब तुंगा. ४ द ब गच्छे सव्विंद पंडुसिलाए. ५ द ब वसंति.

उच्छेहवासपहुदी पंडुसिलाए जहा तहा तीए । अवरविदेहजिणाणं अभिसेयं तत्थ कुव्वंति ॥ १८३१
णइरिदिदिसाविभागे रत्तसिला णाम होदि कणयमई । पुव्वावरेसु दीहा वित्थारो दक्खिणुत्तरे तीए ॥ १८३२
पंडुसिलासारिच्छा तीए वित्थारउदयपहुदीओ । एरावदेयजिणाणं अभिसेयं तत्थ कुव्वंति ॥ १८३३
पवणदिसाए होदि हु रुहिरमई रत्तकंबला णाम । उत्तरदक्खिणदीहा पुव्वावरभागविथिण्णा ॥ १८३४
पंडुसिलाय समाणा वित्थारुच्छेहपहुदिया तीए । पुव्वविदेहजिणाणं अभिसेयं तत्थ कुव्वंति ॥ १८३५
पुव्वदिसाए चूलियपासे पंडुगवणम्मि पासादो । लोहिदणामो वट्टो वासजुदो[1] तीसकोसाणिं[2] ॥ १८३६

३० ।

पुव्वासे[3] कोसुदओ तप्परिही णउदिकोसपरिमाणा । विविहवररयणखचिदो णाणाविहधूवगंधड्ढो ॥ १८३७
सयणाणि आसणाणिं अमिदाणिं णीरजाणि मउगाणिं[4] । वरपाससंजुदाणिं पउराणिं तत्थ चेट्ठंति ॥ १८३८
तम्मंदिरबहुमज्झे कीडणसेलो[5] विचित्तरयणमओ । सक्कस्स लोयपालो सोमो कीडेदि पुव्वदिसणाहो ॥ १८३९

उंचाई व विस्तारादिक जिसप्रकार पाण्डुकशिलाका है, उसीप्रकार उस शिलाका भी है। इस शिलाके ऊपर इन्द्र अपरविदेहके तीर्थंकरोंका अभिषेक करते हैं ॥ १८३१ ॥

नैऋत्य दिशाभागमें रक्तशिला नामक सुवर्णमयी शिला है, जो पूर्व-पश्चिममें दीर्घ और दक्षिण-उत्तरमें विस्तृत है ॥ १८३२ ॥

इसका विस्तार व उंचाई आदि पाण्डुकशिलाके सदृश हैं। यहांपर इन्द्र ऐरावतक्षेत्रमें उत्पन्न हुए तीर्थंकरोंका अभिषेक करते हैं ॥ १८३३ ॥

वायव्यदिशामें उत्तर-दक्षिणदीर्घ और पूर्व-पश्चिमभागमें विस्तीर्ण रक्तकंबला नामक रुधिरमयी शिला है ॥ १८३४ ॥

इसका विस्तार और उंचाई आदिक पाण्डुकशिलाके सदृश हैं। यहांपर इन्द्र पूर्वविदेहमें उत्पन्न हुए तीर्थंकरोंका अभिषेक करते हैं ॥ १८३५ ॥

पाण्डुकवनमें चूलिकाके पास पूर्वदिशामें तीस कोसप्रमाण विस्तारसे सहित लोहित नामक वृत्ताकार प्रासाद है ॥ १८३६ ॥ ३० ।

विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंसे खचित और नाना प्रकारके धूपोंके गन्धसे व्याप्त यह पूर्वमुख प्रासाद एक कोस ऊंचा है, तथा इसकी परिधि नब्बै कोसप्रमाण है ॥ १८३७ ॥

उस भवनमें नीरज (निर्मल), मृदुल, उत्तम पार्श्वभागसंयुक्त एवं उत्कृष्ट अपरिमित शय्यायें व आसन स्थित हैं ॥ १८३८ ॥

इस भवनके बहुमध्यभागमें विचित्र रत्नोंसे निर्मित एक क्रीड़ाशैल है। इस पर्वतके ऊपर पूर्वदिशाका स्वामी, सौधर्म इन्द्रका सोम नामक लोकपाल, क्रीड़ा करता है ॥ १८३९ ॥

---

१ ब एराउदय. २ द ब वासजुदा. ३ द ब °कासोणं. ४ द पुण्णासे. ५ ब मउणाणि. ६ द ब °सेला.

अाउट्ठकोडिआहिं[1] कप्पजइत्थीहिं परिउदो सोमो । अद्धियपणपल्लाऊ रमदि सयंपहविमाणपहू ॥ १८४०

३५०००००० । प ५ ।
२

छलुक्खा छासट्ठी सहस्सया छस्सयाइं छासट्ठी । सोमस्स विमाणाणं सयंपहे होंति परिवारा ॥ १८४१

६६६६६६ ।

वाहणवत्थाभरणा कुसुमा गंधा विमाणसयणाइं । सोमस्स समग्गाइं होंति अदिरत्तवण्णाणिं[2] ॥ १८४२

पंडुगवणस्स मज्झे चूलियपासम्मि दक्खिणविभागे । अंजणणामो भवणो वासप्पहुदीहिं पुव्वं व ॥ १८४३

जमणामलोयपालो[3] अंजणभवणस्स चेट्ठदे मज्झे । किण्णंबरपहुदिजुदो[4] अरिट्ठणामे पहू विमाणम्मि ॥ १८४४

छलुक्खा छासट्ठी सहस्सया छस्सयाइ छासट्ठी । तत्थारिट्ठविमाणे होंति विमाणाणि परिवारा ॥ १८४५

६६६६६६ ।

अाउट्ठकोडिसंखा कप्पजइत्थीओ णिरुवमायारा । होंति जमस्स पियाओ अद्धियपणपल्लआऊ सो[5] ॥ १८४६

३५०००००० । प ५ ।
२

अढ़ाई पल्यप्रमाण आयुसे सहित और स्वयंप्रभ विमानका प्रभु व सोम नामक लोकपाल साढ़े तीन करोड़प्रमाण कल्पवासिनी स्त्रियोंसे परिवृत होता हुआ रमण करता है ॥ १८४० ॥

कल्पज स्त्री ३५००००००० । आयु पल्य ३ ।

स्वयंप्रभ विमानमें सोम लोकपालके विमानोंका परिवार छह लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ संख्याप्रमाण है ॥ १८४१ ॥ ६६६६६६ ।

सोम लोकपालके वाहन, वस्त्र, आभरण, कुसुम, गन्धचूर्ण, विमान और शयनादिक सब अत्यन्त रक्तवर्ण होते हैं ॥ १८४२ ॥

पाण्डुकवनके मध्यमें चूलिकाके पास दक्षिणदिशाकी ओर अंजन नामक भवन है। इसका विस्तारादिक पूर्वोक्त भवनके ही समान है ॥ १८४३ ॥

अंजनभवनके मध्यमें अरिष्ट नामक विमानका प्रभु यम नामक लोकपाल कृष्ण वस्त्रादिकसे सहित होकर रहता है ॥ १८४४ ॥

वहां अरिष्टविमानके परिवारविमान छह लाख छ्यासठ हजार छहसौ छ्यासठ हैं ॥ १८४५ ॥ ६६६६६६ ।

साढ़े तीन करोड़ संख्याप्रमाण अनुपम आकारवाली कल्पवासिनी स्त्रियां यम लोकपालकी प्रियायें हैं। इस लोकपालकी आयु अर्धित पांच अर्थात् अढ़ाई पल्यप्रमाण होती है ॥ १८४६ ॥

३५०००००० । प. ३ ।

---

१ द 'कोडिलाहिं, ब 'कोडिताहिं. २ द ब हति अदिरित्त'. ३ द ब 'लोयपाला. ४ द ब पहुदिजुदा. ५ द ब सा.

पंडुगवणस्स मज्झे चूलियपासम्मि पच्छिमदिसाए । हारिद्दो पासादो वासप्पहुदीहिं पुव्वं व ॥ १८४७
वरुणो त्ति लोयपालो पासादे तत्थ चेट्ठदे णिच्चं । किंचूणतिपल्लाऊ जलपहणामे पहू विमाणम्मि ॥ १८४८
छल्लक्खा छावट्ठी सहस्सया छस्सयाणि छासट्ठी । परिवारविमाणाइं होंति जलप्पहविमाणस्स ॥ १८४९
६६६६६६ ।
वाहणवत्थविभूसणकुसुमप्पहुदीणि हेमवण्णाणिं । वरुणस्स होंति कप्पजपियाउ आउट्ठकोडीओ ॥ १८५०
तव्वणमज्झे चूलियपासम्मि य उत्तरे विभायम्मि । पंडुकणामो णिलओ वासप्पहुदीहिं पुव्वं व ॥ १८५१
तस्सिं कुवेरणामा पासादवरम्मि[1] चेट्ठदे देवो । किंचूणतिपल्लाऊ सामी वग्गुप्पहे विमाणम्मि ॥ १८५२
छल्लक्खा छावट्ठी सहस्सया छस्सयाइं छासट्ठी । परिवारविमाणाइं वग्गुप्पहे वरविमाणम्मि ॥ १८५३
६६६६६६ ।
वाहणवत्थप्पहुदी धवलो[2] उत्तरदिसाहिणाहस्स । कप्पजइत्थिपियाओ रमणी आउट्ठकोडीओ ॥ १८५४
तव्वणमज्झे चूलियपुव्वदिसाए जिणिंदपासादो । उत्तरदक्खिणदीहो कोससयं पंचहत्तरी उदओ ॥ १८५५
कोस १०० । ७५ ।

पाण्डुकवनके मध्यमें चूलिकाके पास पश्चिमदिशामें पूर्वभवनके समान व्यासादिसे सहित हारिद्र नामक प्रासाद है ॥ १८४७ ॥

उस प्रासादमें कुछ कम तीन पल्यप्रमाण आयुका धारक और जलप्रभ नामक विमानका प्रभु वरुण नामक लोकपाल नित्य ही रहता है ॥ १८४८ ॥

जलप्रभ विमानके परिवारविमान छह लाख छयासठ हजार छहसौ छयासठ संख्याप्रमाण हैं ॥ १८४९ ॥ ६६६६६६ ।

वरुण लोकपालके वाहन, वस्त्र, भूषण और कुसुमादिक सुवर्णके जैसे वर्णवाले होते हैं । तथा इसके कल्पवासिनी प्रियायें साढ़े तीन करोड़ होती हैं ॥ १८५० ॥

उस पाण्डुकवनके मध्यमें चूलिकाके पास उत्तरविभागमें पूर्वोक्त भवनके समान विस्तारादिसे सहित पाण्डुक नामक प्रासाद है ॥ १८५१ ॥

उस उत्तम प्रासादमें कुछ कम तीन पल्यप्रमाण आयुका धारक और वल्गुप्रभ विमानका प्रभु कुबेर नामक देव रहता है ॥ १८५२ ॥

वल्गुप्रभ नामक उत्तम विमानके परिवारविमान छह लाख छयासठ हजार छहसौ छयासठ संख्याप्रमाण हैं ॥ १८५३ ॥ ६६६६६६ ।

उत्तरदिशाके स्वामी उस कुबेरके वाहन-वस्त्रादिक धवल और साढ़े तीन करोड़ कल्पज स्त्रियां प्रियायें होती हैं ॥ १८५४ ॥

उस वनके मध्यमें चूलिकासे पूर्वकी ओर सौ कोसप्रमाण उत्तर-दक्षिणदीर्घ और पचत्तर कोसप्रमाण ऊंचा जिनेन्द्रप्रासाद है ॥ १८५५ ॥ कोस १०० । ७५ ।

---

१ द ब पासादवणम्मि. २ द ब धवलं.

पुव्वावरभाएसुं कोसा पण्णास तत्थ वित्थारो । कोसद्धं अवगाढो अकट्टिमणिहणपरिहीणो ॥ १८५६
को ५० । गा १ ।
२
एसो पुव्वाहिमुहो चउजोयण जेट्ठदारउच्छेहो । दोजोयण तव्वासो वाससमाणो पवेसो य ॥ १८५७
४ । २ । २ ।
उत्तरदक्खिणभाए खुद्दयदाराणि दोण्णि चेट्ठंति । तद्दलपरिमाणाणिं वरतोरणथंभजुत्ताणिं ॥ १८५८
२ । १ । १ ।
संखेंदुकुंदधवलो मणिकिरणकलप्पणासियतमोघो । जिणवइपासादवरो तिहुवणतिलओ त्ति णामेणं ॥ १८५९
दारसरिच्छुस्सेहा वज्जकवाडा विचित्तवित्थिण्णा । जमला तेसुं सव्वे जलमरगयकक्केयणादिजुदा ॥ १८६०
विम्हयकररूवाहिं[1] णाणाविहसालभंजियाहिं जुदा । पणवण्णरयणरइदा थंभा तस्सिं[2] विरायंति ॥ १८६१
भित्तीओ विविहाओ णिम्मलवरफलिहरयणरइदाओ । चित्तेहिं[3] विचित्तेहिं विम्हयजणणेहिं जुत्ताओ ॥ १८६२
थंभाण मज्झभूमी समंतदो पंचवण्णरयणमई । तणुमणणयणाणंदणसंजणणी णिम्मला विरजा ॥ १८६३
बहुविहविदाणएहिं मुत्ताहलदामचामरजुदेहिं । वररयणभूसणेहिं संजुत्तो सो जिणिंदपासादो ॥ १८६४

यह अकृत्रिम एवं अविनाशी (अनादिनिधन) जिनेन्द्रप्रासाद पूर्व-पश्चिम भागोंमें विस्तारमें पचास योजन और अवगाहमें अर्ध कोसमात्र है ॥ १८५६ ॥ को. ५० । अवगाह ½ ।

यह जिनभवन पूर्वाभिमुख है । इसके ज्येष्ठ द्वारकी उंचाई चार योजन, विस्तार दो योजन और प्रवेश भी विस्तारके समान दो योजनमात्र है ॥ १८५७ ॥ ४ । २ । २ ।

उत्तर-दक्षिण भागमें दो क्षुद्र द्वार स्थित हैं, जो ज्येष्ठ द्वारकी अपेक्षा अर्धभागप्रमाण उंचाई आदिसे सहित और उत्तम तोरणस्तम्भोंसे युक्त हैं ॥ १८५८ ॥ २ । १ । १ ।

शंख, चन्द्रमा अथवा कुंदपुष्पके समान धवल और मणियोंके किरणकलापसे अंधकार-समूहको नष्ट करनेवाला यह उत्तम जिनेन्द्रप्रासाद ' त्रिभुवनतिलक ' नामसे विख्यात है ॥ १८५९ ॥

इन द्वारोंमें द्वारोंके समान उंचाईसे सहित और विचित्र एवं विस्तीर्ण सब युगल वज्रकपाट जलकान्त, मरकत और कर्केतनादि मणिविशेषोंसे संयुक्त हैं ॥ १८६० ॥

उस जिनेन्द्रप्रासादमें विस्मयजनक रूपवाली नाना प्रकारकी शालभंजिकाओंसे युक्त और पांच वर्णके रत्नोंसे रचे गये स्तम्भ विराजमान हैं ॥ १८६१ ॥

निर्मल एवं उत्तम स्फटिक रत्नोंसे रची गईं विविध प्रकारकी भित्तियां विचित्र और विस्मय-जनक चित्रोंसे युक्त हैं ॥ १८६२ ॥

खम्भोंकी मध्यभूमि चारों ओर पांच वर्णके रत्नोंसे निर्मित, शरीर, मन एवं नेत्रोंको आनन्ददायक, निर्मल और धूलिसे रहित है ॥ १८६३ ॥

वह जिनेन्द्रप्रासाद मोतियोंकी माला तथा चामरोंसे युक्त एवं उत्तम रत्नोंसे विभूषित बहुत प्रकारके वितानोंसे संयुक्त है ॥ १८६४ ॥

१ द ब रूवाइं. २ द तरिसें, ब तरिसे. ३ द ब चेत्तेहिं.

वसहीए गब्भगिहे[1] देवच्छंदो दुजोयणुच्छेहो । इगिजोयणवित्थारो चउजोयणदीहसंजुत्तो ॥ १८६५

जो २ । १ । ४ ।

सोलसकोसुच्छेहं समचउरस्सं तदद्धवित्थारं । लोयविणिच्छयकत्ता देवच्छंदं परूवेई[2] ॥ १८६६

को १६ । ८ । पाठान्तरम् ।

लंबंतकुसुमदामो पारावयमोरकंठवण्णणिहो । मरगयपवालवण्णो कक्केयणइंदणीलमओ ॥ १८६७

चोसट्ठकमलमालो चामरघंटापयाररमणिज्जो । गोसीरमलयचंदणकालागरुधूवगंधड्ढो ॥ १८६८

भिंगारकलसदप्पणणाणाविहधयवडेहिं[3] सोहिल्लो । देवच्छंदो रम्मो जलंतवररयणदीवजुदो ॥ १८६९

अट्ठुत्तरसयसंखा जिणवरपासादमज्झभागम्मि । सिंहासणाणि तुंगा[4] सपायपीढा य फलिहमया ॥ १८७०

सिंहासणाणं उवरिं जिणपडिमाओ अणाइणिहणाओ । अट्ठुत्तरसयसंखा पणसयचावाणि तुंगाओ ॥ १८७१

भिण्णिंदणीलमरगयकुंतलभूयग्गदिण्णसोहाओ । फलिहिंदणीलणिम्मिदधवलासिदणेत्तजुयलाओ ॥ १८७२

वज्जमयदंतपंतीपहाओ पल्लवसरिच्छअधराओ । हीरमयवरणहाओ पउमारुणपाणिचरणाओ ॥ १८७३

अट्ठब्भहियसहस्सप्पमाणवंजणसमूहसहिदाओ । बत्तीसलक्खणेहिं जुत्ताओ जिणेसपडिमाओ ॥ १८७४

वसतिकामें गर्भगृहके भीतर दो योजन ऊंचा, एक योजन विस्तारवाला और चार योजन-प्रमाण लम्बाईसे संयुक्त देवच्छंद है ॥ १८६५ ॥ योजन २ । १ । ४ ।

लोकविनिश्चयके कर्ता देवच्छंदको समचतुष्कोण सोलह कोस ऊंचा और इससे आधे विस्तारसे संयुक्त बतलाते हैं ॥ १८६६ ॥ को. १६ । ८ । पाठान्तर ।

यह रमणीय देवच्छंद लटकती हुई पुष्पमालाओंसे सहित, कबूतर व मोरके कण्ठगत वर्णके सदृश, मरकत व प्रवाल जैसे वर्णसे संयुक्त, कर्केतन एवं इन्द्रनील मणियोंसे निर्मित, चौसठ कमलमालाओंसे शोभायमान, नाना प्रकारके चँवर व घंटाओंसे रमणीय, गोशीर, मलयचन्दन एवं कालागरु धूपके गन्धसे व्याप्त, झारी, कलश, दर्पण व नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंसे सुशोभित और देदीप्यमान उत्तम रत्नदीपकोंसे युक्त है ॥ १८६७-१८६९ ॥

जिनेन्द्रप्रासादके मध्यभागमें पादपीठोंसे सहित स्फटिकमणिमय एकसौ आठ उन्नत सिंहासन है ॥ १८७० ॥

सिंहासनोंके ऊपर पांचसौ धनुषप्रमाण ऊंची एकसौ आठ अनादिनिधन जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ १८७१ ॥

ये जिनेन्द्रप्रतिमायें भिन्न इन्द्रनीलमणि व मरकतमणिमय कुंतल तथा भ्रुकुटियोंके अग्रभागसे शोभाको प्रदान करनेवाली, स्फटिकमणि और इन्द्रनीलमणिसे निर्मित धवल व कृष्ण नेत्रयुगलसे सहित, वज्रमय दन्तपंक्तिकी प्रभासे संयुक्त, पल्लवके सदृश अधरोष्ठसे सुशोभित, हीरेसे निर्मित उत्तम नखोंसे विभूषित, कमलके समान लाल हाथ-पैरोंसे विशिष्ट, एक हजार आठ व्यंजनसमूहसे सहित और बत्तीस लक्षणोंसे युक्त हैं ॥ १८७२-१८७४ ॥

१ द ब गब्भगिहो. २ द ब परूवेउ. ३ द ब धयवलेहिं. ४ द ब तुंगो. ५ द ब सिंहासणाणि.

जीहासहस्सजुगजुद्धरणिंदसहस्सकोडिकोडीओ । ताणं ण वण्णणेसुं सक्काओ माणुसाण का सत्ती ॥ १८७५
पत्तेक्कं सव्वाणं चउसट्ठी देवमिहुणपडिमाओ । वरचामरहत्थाओ सोहंति जिणिंदपडिमाणं ॥ १८७६
छत्तत्तयादिजुत्ता पडियंकासणसमण्णिदा णिच्चं । समचउरस्सायारा जयंति जिणणाहपडिमाओ ॥ १८७७
खेयरसुररायेहिं भत्तीए णमियचलणजुगलाओ । बहुविहविभूसिदाओ जिणपडिमाओ णमंसामि ॥ १८७८
ते सव्वे उवयरणा घंटापहुदीओ तह य दिव्वाणिं । मंगलदव्वाणि पुढं जिणिंदपासेसु रेहंति ॥ १८७९
भिंगारकलसदप्पणचामरधयवियणछत्तसुपइट्ठा । अट्ठुत्तरसयसंखा पत्तेक्कं मंगला तेसुं ॥ १८८०
सिरिसुददेवीण तहा[1] सव्वाणंहसणक्कुमारजक्खाणं । रूवाणिं पत्तेक्कं पडि वररयणाहरहदाणिं[2] ॥ १८८१
देवच्छंदस्स पुरो णाणाविहरयणकुसुममालाओ । फुरिदंकिरणकलाओ लंबंताओ[3] विरायंते ॥ १८८२
बत्तीससहस्साणिं कंचणरजदेहिं[4] णिम्मिदा विउला । सोहंति पुण्णकलसा खचिदा वररयणणियरेहिं ॥ १८८३
चउवीससहस्साणिं धूवघडा कणयरजदणिम्मविदा[5] । कप्पूरागुरुचंदणपहुदिसमुब्भूतधूवगंधड्ढा ॥ १८८४

जब सहस्रों युगलजिह्वाओंसे युक्त धरणेन्द्रोंकी सहस्रों हजार कोड़ाकोड़ियां भी उन प्रतिमाओंके वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हो सकती, तब मनुष्योंकी तो शक्ति ही क्या है ॥ १८७५ ॥

सब जिनेन्द्रप्रतिमाओंमेंसे प्रत्येक प्रतिमाके समीप हाथमें उत्तम चँवरोंको लिये हुए चौंसठ देवयुगलोंकी प्रतिमायें शोभायमान हैं ॥ १८७६ ॥

तीन छत्रादिसे सहित, पल्यंकासनसे समन्वित और समचतुरस्र आकारवाली वे जिननाथ-प्रतिमायें नित्य जयवन्त हैं ॥ १८७७ ॥

जिनके चरणयुगलोंको विद्याधर और देवेन्द्र भक्तिसे नमस्कार करते हैं, उन बहुत प्रकारसे विभूषित जिनप्रतिमाओंको मैं नमस्कार करता हूं ॥ १८७८ ॥

घंटाप्रभृति वे सब उपकरण तथा दिव्य मंगलद्रव्य पृथक् पृथक् जिनेन्द्रप्रतिमाओंके पासमें सुशोभित होते हैं ॥ १८७९ ॥

भृंगार, कलश, दर्पण, चँवर, ध्वजा, बीजना, छत्र और सुप्रतिष्ठ, ये आठ मंगलद्रव्य हैं। इनमेंसे प्रत्येक वहां एकसौ आठ होते हैं ॥ १८८० ॥

प्रत्येक प्रतिमाके प्रति उत्तम रत्नादिकोंसे रचित श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाह्न व सनत्कुमार यक्षोंकी मूर्तियां रहती हैं ॥ १८८१ ॥

देवच्छंदके सन्मुख नाना प्रकारके रत्न और पुष्पोंकी मालायें प्रकाशमान किरणसमूहसे सहित लटकती हुई विराजमान है ॥ १८८२ ॥

सुवर्ण एवं रजतसे निर्मित और उत्तम रत्नसमूहोंसे खचित बत्तीस हजारप्रमाण विशाल पूर्ण कलश सुशोभित हैं ॥ १८८३ ॥

कर्पूर, अगुरु और चन्दनादिकसे उत्पन्न हुई धूपके गन्धसे व्याप्त और सुवर्ण एवं चांदीसे निर्मित चौबीस हजार धूपघट हैं ॥ १८८४ ॥

१ द ब सहा. २ द ब सव्वाण°. ३ द ब रयदाणि. ४ द पुरिदकिरणवलीओ. ५ द ब अब्भंताओ. ६ द °रुदेहिं, ब रइदेहिं. ७ द कणयरजविणि°.

झिंगाररयणदप्पणबुब्बुदवरचमरचक्ककयसोहं[2] ।[3] घंटापडायपउरं जिणिंदभवणं णिरुवमाणं तं[4] ॥ १८८५

जिणपासादस्स पुरो जेट्ठदुवारस्स दोसु पासेसुं । पुह चत्तारिसहस्सा लंबंते[5] रयणमालाओ ॥ १८८६

४०००।

ताणं पि अंतरेसुं अकट्टिमाओ फुरंतकिरणादी । बारससहस्ससंखा लंबंते[6] कणयमालाओ ॥ १८८७

१२०००।

अट्ठट्ठसहस्साणिं धूवघडा दारअग्गभूमीसुं । अट्ठट्ठसहस्साओ ताण पुरे कणयमालाओ ॥ १८८८

८०००।

पुह खुल्लयदारेसुं ताण्डं होंति रयणमालाओ । कंचणमालाओ तह धूवघडा कणयमालाओ ॥ १८८९

चउवीससहस्साणिं जिणपुरपुट्ठीए कणयमालाओ । ताणं च अंतरेसुं अट्ठसहस्साणि रयणमालाओ ॥ १८९०

मुहमंडवो[7] हि रम्मो जिणवरभवणस्स अग्गभागम्मि । सोलसकोसुच्छेहो सयं च पण्णासदीहवासाणिं ॥ १८९१

कोसद्धो ओगाढो[8] णाणावररयणणियरणिम्मविदो । धुव्वंतधयवडाओ किं बहुणा सो णिरुवमाणो ॥ १८९२

मुहमंडवस्स पुरदो अवलोयणमंडओ परमरम्मो । अधिया सोलसकोसा उदओ रुंदो[9] सयं सयं दीहं[10] ॥ १८९३

१६। १००।

झारी, रत्नदर्पण, बुद्बुद, उत्तम चमर और चक्रसे शोभायमान तथा प्रचुर घंटा और पताकाओंसे युक्त वह जिनेन्द्रभवन अनुपम है ॥ १८८५ ॥

जिनप्रासादके सन्मुख ज्येष्ठ द्वारके दोनों पार्श्वभागोंमें पृथक् पृथक् चार हजार रत्नमालायें लटकती हैं ॥ १८८६ ॥ ४०००।

इनके भी बीचमें प्रकाशमान किरणादिसे सहित बारह हजार अकृत्रिम सुवर्णमालायें लटकती हैं ॥ १८८७ ॥ १२०००।

द्वारकी अग्रभूमियोंमें आठ आठ हजार धूपघट और उन धूपघटोंके आगे आठ आठ हजार सुवर्णमालायें हैं ॥ १८८८ ॥ ८०००।

क्षुद्रद्वारोंमें पृथक् पृथक् इससे आधी रत्नमालायें, कंचनमालायें, धूपघट तथा सुवर्णमालायें हैं ॥ १८८९ ॥

जिनपुरके पृष्ठ भागमें चौबीस हजार कनकमालायें और इनके बीचमें आठ हजार रत्नमालायें हैं ॥ १८९० ॥

जिनेन्द्रभवनके अग्रभागमें सोलह कोस ऊंचा, सौ कोस लंबा और पचास कोसप्रमाण विस्तारसे युक्त रमणीय मुखमण्डप है ॥ १८९१ ॥

वह मुखमण्डप आध कोस अवगाहसे युक्त, नाना प्रकारके उत्तम रत्नसमूहोंसे निर्मित और फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित है। बहुत वर्णनसे क्या, वह मण्डप निरुपम है ॥१८९२॥

मुखमण्डपके आगे परमरमणीय अवलोकनमंडप है, जो सोलह कोससे अधिक ऊंचा, सौ कोस विस्तृत और सौ कोस लंबा है ॥ १८९३ ॥ १६। १००।

---

१ द ब ववुद°. २ द ब कयसोहो. ३ प्रथमा पंक्तिः ब-पुस्तके नास्ति. ४ द ब घंटापिदाय°. ५ द ब णिरुवमाणाओ. ६ द ब अब्भंते. ७ द ब अब्भंते. ८ द ब मुहमंडणेहिं. ९ द ब अंगाढो. १० द ब रुंदा. ११ ब दीहिं.

णियजोगुच्छेहजुदो तप्पुरदो चेट्ठदे अधिट्ठाणो[1] । कोसासीदी वासो तेत्तियमेदस्स दीहत्तं ॥ १८९४
८० ।

तस्स बहुमज्झदेसे सभापुरं दिव्वरयणवररइदं । अधिया सोलस उदओ कोसा चउसट्ठि दीहवासाणिं ॥१८९५
१६ । ६४ । ६४ ।

सीहासणभद्दासणवेत्तासणपहुदिविविहपीढाणिं । वररयणणिम्मिदाणिं सभापुरे परमरम्माणिं ॥ १८९६

होदि सभापुरपुरदो पीढो चालीसकोसउच्छेहो । णाणाविहरयणमओ उच्छण्णो तस्स वासउवएसो ॥१८९७
४० को ।

पीढस्स चउदिसासुं बारस वेदीओ होंति भूमियले । वरगोउराओ तेत्तियमेत्ताओ पीढउड्ढम्मि ॥ १८९८

पीढोवरि बहुमज्झे समवट्टो चेट्ठदे रयणथूहो । वित्थारुच्छेहेहिं कमसो कोसाणि दोहिं[2] चउसट्ठी ॥ १८९९
को ६४ । ६४ ।

तत्तो वि छत्तमहिओ कणयमओ पज्जलंतमणिकिरणो । थूहो अणाइणिहणो जिणसिद्धपडिमपडिपुण्णो ॥१९००

तस्स य पुरदो पुरदो अट्ठत्थूहा[3] सरिच्छवासादी । ताणं अग्गे दिव्वं पीढं चेट्ठेदि कणयमयं ॥ १९०१

तं रुंदायामेहिं[4] दोण्णि सया जोयणाणि पण्णासा । पीढस्स उदयमाणे[5] उवएसो अम्ह उच्छण्णो ॥ १९०२
२५० । २५० । ० ।

उसके आगे अपने योग्य उंचाईसे युक्त अधिष्ठान स्थित है । इसका विस्तार अस्सी कोस और लंबाई भी इतनी ही है ॥ १८९४ ॥ ८० ।

उसके बहुमध्यभागमें उत्तम दिव्य रत्नोंसे रचा गया सभापुर है, जिसकी उंचाई सोलह कोससे अधिक और लंबाई व विस्तार चौंसठ कोसप्रमाण है ॥ १८९५ ॥ १६ । ६४ । ६४ ।

सभापुरमें सिंहासन, भद्रासन और वेत्रासनप्रभृति विविध पीठ उत्तम रत्नोंसे निर्मित परम-रमणीय हैं ॥ १८९६ ॥

सभापुरके आगे चालीस कोस ऊंचा और नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित पीठ है । इसके विस्तारका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ १८९७ ॥ ४० ।

पीठके चारों ओर उत्तम गोपुरोंसे युक्त बारह वेदियां पृथिवीतलपर और इतनी ही पीठके ऊपर हैं ॥ १८९८ ॥

पीठके ऊपर बहुमध्यभागमें समवृत्त रत्नस्तूप स्थित है, जो क्रमसे चौंसठ कोसप्रमाण विस्तार व उंचाईसे सहित है ॥ १८९९ ॥ को. ६४ । ६४ ।

इसके भी आगे छत्रसे सहित, देदीप्यमान मणिकिरणोंसे विभूषित और जिन व सिद्ध-प्रतिमाओंसे परिपूर्ण अनादिनिधन सुवर्णमय स्तूप है ॥ १९०० ॥

इसके भी आगे समान विस्तारादिसे सहित आठ स्तूप हैं । इन स्तूपोंके आगे सुवर्णमय दिव्य पीठ स्थित है ॥ १९०१ ॥

इस पीठका विस्तार व लंबाई दोसौ पचास योजनप्रमाण है । इसकी उंचाईके प्रमाणका उपदेश हमारे लिये नष्ट हो गया है ॥ १९०२ ॥ २५० । २५० । ० ।

---

१ द ब अधिट्ठाणो. २ द ब हाणि. ३ द ब त्थूहो तस्सरिच्छ°. ४ द रुंदा आयामेहिं. ५ द ब उदयमाणो.

पीढस्स चउदिसासुं बारसवेदीओ होंति भूमियले । वरगोउराओ तेत्तियमेत्ताओ पीढउड्डुम्मि ॥ १९०३

पीढस्सुवरिमभागे[1] सोलसगंम्बूदिमेत्तउच्छेहो । सिद्धंतो णामेणं चेत्तदुमो दिव्ववरतेओ ॥ १९०४

को १६ ।

खंधुच्छेहो[2] कोसा चत्तारो बहलमेक्कगव्वूदी । बारसकोसा साहादीहत्तं चेय विच्चालं ॥ १९०५

को ४ । १ । १२ । १२ ।

इगिलक्खं चालीसं सहस्सया इगिसयं च वीसजुदं । तस्स परिवाररुक्खा पीढोवरि तप्पमाणधरो[3] ॥ १९०६

१४०१२० ।

विविहवररयणसाहा[4] मरगयपत्ता य पउमरायफला । चामीयररजदमयाकुसुमजुदा सयलकालं ते ॥ १९०७

सव्वे अणाइणिहणा पुढविमया दिव्वचेत्तवररुक्खा । जीवुप्पत्तिलयाणं[5] कारणभूदा सहं भवंति ॥ १९०८

रुक्खाण चउदिसासुं पत्तेक्कं विविहरयणरइदाओ । जिणसिद्धप्पडिमाओ जयंतु चत्तारि चत्तारि ॥ १९०९

चेत्ततरूणं पुरदो दिव्वं पीढं हवेदि कणयमयं । उच्छेहदीहवासा तस्स य उच्छण्णउवएसा ॥ १९१०

पीढस्स चउदिसासुं बारस वेदी य होंति भूमियले । चरिअट्टालयगोउरदुवारतोरणविचित्ताओ ॥ १९११

पीठके चारों ओर उत्तम गोपुरोंसे युक्त बारह वेदियां भूमितलपर और इतनी ही पीठके ऊपर हैं ॥ १९०३ ॥

पीठके उपरिम भागपर सोलह कोसप्रमाण ऊंचा दिव्य व उत्तम तेजको धारण करनेवाला सिद्धार्थ नामक चैत्यवृक्ष है ॥ १९०४ ॥ को. १६ ।

चैत्यवृक्षके स्कन्धकी उंचाई चार कोस, बाहल्य एक कोस, और शाखाओंकी लंबाई व अन्तराल बारह कोसप्रमाण है ॥ १९०५ ॥ को. ४ । १ । १२ । १२ ।

पीठके ऊपर इसी प्रमाणको धारण करनेवाले एक लाख चालीस हजार एकसौ बीस इसके परिवारवृक्ष हैं ॥ १९०६ ॥ १४०१२० ।

ये वृक्ष विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंसे निर्मित शाखाओं, मरकतमणिमय पत्तों, पद्मरागमणिमय फलों और सुवर्ण एवं चांदीसे निर्मित पुष्पोंसे सदैव संयुक्त रहते हैं ॥ १९०७ ॥

ये सब उत्तम दिव्य चैत्यवृक्ष अनादिनिधन और पृथिवीरूप होते हुए जीवोंकी उत्पत्ति और विनाशके स्वयं कारण होते हैं ॥ १९०८ ॥

इन वृक्षोंमें प्रत्येक वृक्षके चारों ओर विविध प्रकारके रत्नोंसे रचित चार चार जिन और सिद्धोंकी प्रतिमायें विराजमान हैं । ये प्रतिमायें जयवन्त होवें ॥ १९०९ ॥

चैत्यवृक्षोंके आगे सुवर्णमय दिव्य पीठ है । इसकी उंचाई, लंबाई और विस्तारादिकका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ १९१० ॥

पीठके चारों ओर भूमितलपर मार्ग व अट्टालिकाओं, गोपुरद्वारों और तोरणोंसे विचित्र बारह वेदियां हैं ॥ १९११ ॥

---

१ द ब पीढोवरिम°. २ द ब सोलसगम्मादि°. ३ द ब खंडुच्छेहो. ४ द ब गम्मादी. ५ द ब धरो. ६ द ब सोहा. ७ द जे रुप्पंति पयाणं, ब जे रुप्पंति य मयाणं.

चउजोयणउच्छेहो उवरिं पीढस्स कणयवरखंभा । विविहमणिणियरखचिदा चामरघंटापयारजुदा ॥ १९१२
सव्वेसुं थंभेसुं महाधया विविहवण्णरमणिज्जा । णामेण महिंदधया छत्ततयसिहरसोहिल्ला ॥ १९१३
पुरदो महाधयाणं[1] मकरप्पमुहेहिं मुक्कसलिलाओ । चत्तारो वावीओ कमलुप्पलकुमुदछण्णाओ ॥ १९१४
पण्णासकोसवासा पत्तेयं होंति दुगुणदीहत्ता । दस कोसा भवगाढा वावीओ वेदियादिजुत्ताओ ॥ १९१५
को ५० । १०० । ग १० ।
वावीणं बहुमज्झे चेट्ठदि एक्को जिणिंदपासादो । विप्फुरिदरयणकिरणो किं बहुसो सो णिरुवमाणो ॥ १९१६
तत्तो दहाउ पुरदो पुव्वुत्तरदक्खिणेसु भागेसुं । पासादा रयणमया देवाणं कीडणा होंति ॥ १९१७
पण्णासकोसउदया कमसो पणुवीस रुंददीहत्ता । धूवघडेहिं जुत्ता ते णिलया विविहवण्णधरा ॥ १९१८
को ५० । २५ । २५ ।
वरवेदियाहिं रम्मा वरकंचणतोरणेहिं परियरिया । वरवज्जणीलमरगयणिम्मिदभित्तीहिं सोहंते ॥ १९१९
ताण भवणाण पुरदो तेत्तियमाणेण दोण्णि पासादा । धुव्वंतधयवदाया फुरंतवररयणकिरणोहा ॥ १९२०
५० । २५ । २५ ।

पीठके ऊपर विविध प्रकारके मणिसमूहसे खचित और अनेक प्रकारके चमर व घंटाओंसे युक्त चार योजन ऊंचे सुवर्णमय खम्भे हैं ॥ १९१२ ॥

सब खम्भोंके ऊपर अनेक प्रकारके वर्णोंसे रमणीय और शिखररूप तीन छत्रोंसे सुशोभित महेन्द्र नामक महाध्वजायें हैं ॥ १९१३ ॥

महाध्वजाओंके आगे मगर आदि जलजन्तुओंसे रहित जलवाली और कमल, उत्पल व कुमुदोंसे व्याप्त चार वापिकायें हैं ॥ १९१४ ॥

वेदिकादिसे सहित वापिकायें प्रत्येक पचास कोसप्रमाण विस्तारसे युक्त, इससे दुगुणी अर्थात् सौ कोस लम्बी और दश कोस गहरी हैं ॥ १९१५ ॥ को. ५० । १०० । ग. १० ।

वापियोंके बहुमध्यभागमें प्रकाशमान रत्नकिरणोंसे सहित एक जिनेन्द्रप्रासाद स्थित है । बहुत कथनसे क्या, वह जिनेन्द्रप्रासाद निरुपम है ॥ १९१६ ॥

अनन्तर वापियोंके आगे पूर्व, उत्तर और दक्षिण भागोंमें देवोंके रत्नमय क्रीड़ाभवन हैं ॥ १९१७ ॥

विविध वर्णोंको धारण करनेवाले वे भवन पचास कोस ऊंचे, क्रमसे पच्चीस कोस विस्तृत और पच्चीस ही कोस लम्बे तथा धूपघटोंसे संयुक्त हैं ॥ १९१८ ॥ को. ५० । २५ । २५ ।

उत्तम वेदिकाओंसे रमणीय और उत्तम सुवर्णमय तोरणोंसे युक्त वे भवन उत्कृष्ट वज्र, नीलमणि और मरकत मणियोंसे निर्मित भित्तियोंसे शोभायमान हैं ॥ १९१९ ॥

उन भवनोंके आगे इतने ही प्रमाणसे संयुक्त, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और प्रकाशमान उत्तम रत्नोंके किरणसमूहसे सुशोभित दो प्रासाद हैं ॥ १९२० ॥ ५० । २५ । २५ ।

---

१ द ब °उच्छेहो. २ द ब महादहाणं.

तत्तो विचित्तरूवा पासादा दिव्वरयणणिम्मविदा । कोससयमेत्तउदया कमेण पण्णासदीहविच्छिण्णा ॥ १९२१
जे जेट्ठदारपुरदो दिव्वमुहमंडवादि कहिदा य[1] । ते खुल्लयदारेसुं हवंति अद्धप्पमाणेहिं ॥ १९२२
तत्तो परदो वेदी एदाणिं वेढिदूण[2] सव्वाणिं । चेट्ठदि चरिमट्टालयगोउरदारेहिं कणयमई ॥ १९२३
तीए परदो वरिया तुंगेहिं कणयरयणथंभेहिं । चेट्ठंति चउदिसासुं दसप्पयारा धयणिवंधा ॥ १९२४
हरिकरिवसहखगाहिवसिहिससिरविहंसकमलचक्कधया । अट्ठुत्तरसयसंखा पत्तेक्कं तेत्तिया खुल्ला ॥ १९२५
चामीयरवरवेदी एदाणिं वेढिदूण[3] चेट्ठेदि । विप्फुरिदरयणकिरणा चउगोउरदाररमणिज्जा ॥ १९२६
बे कोसाणिं तुंगा वित्थारेणं धणूणि पंचसया । विप्फुरिदधयवदाया फडिहमयाणेयवरभित्ती ॥ १९२७
को २ । दं ५०० ।
तीए परदो दसविहकप्पतरू ते समंतदो होंति । जिणभवणेसुं तिहुवणविम्हयजणणेहिं रूवेहिं ॥ १९२८
गोमेदयमयखंधा कंचणमयकुसुमणियररमणिज्जा । मरगयमयपत्तधरा विद्दुमवेरुलियपउमरायफला ॥ १९२९
सव्वे अणाइणिहणा अकट्टिमा कप्पपायवपयारा । मूलेसु चउदिसासुं चत्तारि जिणिंदपडिमाओ ॥ १९३०

इसके आगे सौ कोस ऊंचे और क्रमसे पचास कोस लंबे-चौड़े, दिव्य रत्नोंसे निर्मित विचित्र रूपवाले प्रासाद हैं ॥ १९२१ ॥

ज्येष्ठ द्वारके आगे जो दिव्य मुखमण्डपादिक कहे जा चुके हैं, वे आधे प्रमाणसे सहित क्षुद्रद्वारोंमें भी हैं ॥ १९२२ ॥

इसके आगे मार्ग, अट्टालिकाओं और गोपुरद्वारोंसे सहित सुवर्णमयी वेदी इन सबको वेष्टित करके स्थित है ॥ १९२३ ॥

इस वेदीके आगे चारों दिशाओंमें सुवर्ण एवं रत्नमय उन्नत खम्भोंसे सहित दश प्रकारकी श्रेष्ठ ध्वजपंक्तियां स्थित हैं ॥ १९२४ ॥

सिंह, हाथी, बैल, गरुड़, मोर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र, इन चिह्नोंसे युक्त ध्वजाओंमेंसे प्रत्येक एकसौ आठ और इतनी ही क्षुद्रध्वजायें हैं ॥ १९२५ ॥

प्रकाशमान रत्नकिरणोंसे संयुक्त और चार गोपुरद्वारोंसे रमणीय सुवर्णमय उत्तम वेदी इनको वेष्टित करके स्थित है ॥ १९२६ ॥

यह वेदी दो कोस ऊंची, पांचसौ धनुष चौड़ी, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और स्फटिक मणिमय अनेक उत्तम भित्तियोंसे संयुक्त है ॥ १९२७ ॥ को. २ । दं. ५०० ।

इसके आगे जिनभवनोंमें चारों ओर तीनों लोकोंको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले स्वरूपसे संयुक्त वे दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं ॥ १९२८ ॥

सब प्रकारके कल्पवृक्ष गोमेदमणिमय स्कन्धसे सहित, सुवर्णमय कुसुमसमूहसे रमणीय, मरकतमणिमय पत्तोंको धारण करनेवाले, मूंगा, नीलमणि एवं पद्मरागमणिमय फलोंसे संयुक्त, अकृत्रिम और अनादिनिधन हैं। इनके मूलमें चारों ओर चार जिनेन्द्रप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ १९२९–१९३० ॥

---

१ ब मुहमंडवादिकहिदा ये. २ द ब वेदिदूण. ३ द ब तुंगो. ४ ब धयवदेहा.

तप्फलिहवीहिमज्झे वेरुलियमयाणि माणथंभाणिं । वीहिं पडि पत्तेयं विचित्तरूवाणि रेहंति ॥ १९३१
चामरघंटाकिंकिणिकेतणपहुदीहिं उवरि संजुत्ता । सोहंति माणथंभा चउवेदीदारतोरणेहिं जुदा ॥ १९३२
ताणं मूले उवरिं जिणिंदपडिमाओ चउदिसंतेसुं । वररयणणिम्मिदाओ जयंतु जयभुणिदचरिदाओ ॥ १९३३
कप्पमहिं परिवेढिय साला वररयणणियरणिम्मविदा[2] । चेट्ठदि चरियट्टालयणाणाविहधयवडाडोवा ॥ १९३४
चूलियदक्खिणभाए पच्छिमभायम्मि उत्तरविभागे । एक्केक्कं जिणभवणं पुव्वम्हि व वण्णणेहिं जुदं ॥ १९३५
एवं संखेवेणं पंडुगवणवण्णणाओ[3] भणिदाओ । वित्थारवण्णणेसुं सक्को वि ण सक्कदे तस्स ॥ १९३६
पंडुगवणस्स हेट्ठे छत्तीससहस्सजोयणा गंतुं । सोमणसं णाम वणं मेरुं परिवेढिदूण चेट्ठेदे ॥ १९३७
३६०००।
पणसयजोयणरुंदं चामीयरवेदियाहिं परियरियं । चउगोउरसंजुत्तं खुल्लयदारेहिं रमणिज्जं ॥ १९३८
चत्तारि सहस्साणिं बाहत्तरिजुत्तदुसयजोयणया । एक्करसहिदट्ठकला[4] विक्खंभो बाहिरो तस्स ॥ १९३९
४२७२। ८।
११

उन स्फटिकमणिमय वीथियोंके मध्यमेंसे प्रत्येक वीथीके प्रति विचित्र रूपवाले वैडूर्यमणिमय मानस्तम्भ सुशोभित हैं ॥ १९३१ ॥

चार वेदीद्वार और तोरणोंसे युक्त ये मानस्तम्भ ऊपर चँवर, घंटा, किंकिणी और ध्वजा इत्यादिसे संयुक्त होते हुए शोभायमान होते हैं ॥ १९३२ ॥

इन मानस्तम्भोंके नीचे और ऊपर चारों दिशाओंमें विराजमान, उत्तम रत्नोंसे निर्मित और जगसे कीर्तित चरित्रसे संयुक्त जिनेन्द्रप्रतिमायें जयवन्त होवें ॥ १९३३ ॥

मार्ग व अट्टालिकाओंसे युक्त, नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंके आटोपसे सुशोभित, और श्रेष्ठ रत्नसमूहसे निर्मित कोट इस कल्पमहीको वेष्टित करके स्थित है ॥ १९३४ ॥

चूलिकाके दक्षिण, पश्चिम, और उत्तरभागमें भी पूर्वदिशावर्ती जिनभवनके समान वर्णनोंसे संयुक्त एक एक जिनभवन है ॥ १९३५ ॥

इसप्रकार यहां संक्षेपसे पाण्डुकवनका वर्णन किया गया है। उसका विस्तारसे वर्णन करनेके लिये तो इन्द्र भी समर्थ नहीं होसकता है ॥ १९३६ ॥

पाण्डुकवनके नीचे छत्तीस हजार योजन जाकर सौमनस नामक वन मेरुको वेष्टित करके स्थित है ॥ १९३७ ॥ ३६००० ।

यह सौमनस वन पांचसौ योजनप्रमाण विस्तारसे सहित, सुवर्णमय वेदिकाओंसे वेष्टित, चार गोपुरोंसे संयुक्त और क्षुद्रद्वारोंसे रमणीय है ॥ १९३८ ॥

उसका बाह्यविस्तार चार हजार दोसौ बहत्तर योजन और ग्यारहसे भाजित आठ कलाप्रमाण है ॥ १९३९ ॥ ४२७२$\frac{८}{११}$ ।

१ द तप्पलिहिं. २ द ब णिम्मविदो. ३ द ब वण्णणाणि. ४ ब °हिद अट्ठ°.

तेरससहस्सजुत्ता पंच सया जोयणाणि एक्करसं । एक्करसहि हिदछंसो सोमणसे परिरयपमाणं ॥ १९४०

१३५११ । ६ ।
११

सोमणसं करिकेसरितमालहिंतालकदलिबकुलेहिं । लवलीलवंगचंपयपणसप्पहुदीहिं तं छण्णं ॥ १९४१
सुरकोकिलमहुररवं मोरादिविहंगमेहिं रमणिज्जं । खेयरसुरमिहुणेहिं संकिण्णं विविहवावीजुदं ॥ १९४२
तम्मि वणे पुव्वादिसु मंदरपासे पुराइ चत्तारि । वज्जं वज्जपहक्खं सुवण्णणामं सुवण्णपहं ॥ १९४३
पंडुवणपुराहिंतो पदाणिं वासपहुदिदुगुणाणिं । वररयणविरइदाइं कालागरुधूवसुरहीणिं ॥ १९४४
ते चेव लोयपाला[1] तेत्तियमेत्ताहिं सुंदरीहिं जुदा । एदाणं मज्झेसुं विविहविणोदेण कीडंति ॥ १९४५
उप्पलगुम्मा णलिणा उप्पलणामा य उप्पलुज्जलया । तव्वणअग्गिदिसाए पोक्खरणीओ हवंति चत्तारि ॥१९४६
पणवीसद्धियरुंदा रुंदादो दुगुणजोयणायामा । पणजोयणावगाढा पत्तेक्कं ताओ सोहंति ॥ १९४७

२५ । २५ । ५ ।
२

जलयरचत्तजलोहा वरवेदीतोरणेहिं परियरिया । कद्दमरहिदा ताओ हीणाओ हाणिवड्ढीहिं ॥ १९४८

सौमनसवनकी परिधिका प्रमाण तेरह हजार पांचसौ ग्यारह योजन और ग्यारहसे भाजित छह अंशप्रमाण है ॥ १९४० ॥ १३५११$\frac{६}{११}$ ।

यह सौमनस वन नागकेशर, तमाल, हिताल, कदली, बकुल, लवली, लवंग, चम्पक और कटहलप्रभृति वृक्षोंसे व्याप्त, सुरकोयलोंके मधुर शब्दोंसे मुखरित, मोर आदि पक्षियोंसे रमणीय, विद्याधर व देवयुगलोंसे संकीर्ण और विविध प्रकारकी वापियोंसे युक्त है ॥ १९४१–१९४२ ॥

इस वनके भीतर मन्दरके पास पूर्वादिक दिशाओंमें वज्र, वज्रप्रभ, सुवर्ण और सुवर्णप्रभ नामक चार पुर हैं ॥ १९४३ ॥

ये पुर पाण्डुकवनके पुरोंकी अपेक्षा दुगुणे विस्तारादिसे सहित, उत्तम रत्नोंसे विरचित और कालागरु धूपकी सुगन्धसे व्याप्त हैं ॥ १९४४ ॥

इन पुरोंके मध्यमें वे ही (पूर्वोक्त) लोकपाल उतनी ही सुन्दरियोंसे युक्त होकर नाना प्रकारके विनोदसे क्रीड़ा करते हैं ॥ १९४५ ॥

उस वनकी आग्नेयदिशामें उत्पलगुल्मा, नलिना, उत्पला नामक और उत्पलोज्वला, ये चार पुष्करिणी हैं ॥ १९४६ ॥

वे प्रत्येक पुष्करिणी पच्चीसके आधे (साढ़े बारह) योजनप्रमाण विस्तारसे सहित, विस्तारकी अपेक्षा दूनी लंबी और पांच योजनमात्र गहराईसे संयुक्त होती हुई शोभायमान होती हैं ॥ १९४७ ॥ विस्तार १२$\frac{१}{२}$ । आयाम २५ । अवगाह ५ ।

वे पुष्करिणी जलचर जीवोंसे रहित जलसमूहको धारण करनेवाली, उत्तम वेदी व तोरणोंसे वेष्टित, कीचड़से रहित और हानि-वृद्धिसे हीन हैं ॥ १९४८ ॥

१ द ब एक्करसहिदो छंसा, ब एक्करसहिं छंसा. २ द ब वज्जपहक्खं जमहक्खं सुव्वणं णाम सुव्वणपहं, ब वज्जपहक्खं जमहक्खं णाम सुव्वणपहं. ३ द ब लोयपालो. ४ द ब जोयणावगादो.

पोक्खरणीणं मज्झे सक्कस्स हवे विहारपासादो । पणघणकोसुत्तुंगो तद्दलरुंदो[1] णिरुवमाणो ॥ १९४९
एक्कं कोसं गाढो सो णिलओ विविहकेदुकमणिज्जो । तस्सायामपमाणे[2] उवएसो णत्थि अम्हाणं ॥ १९५०
सोहासणमइरम्मं सोहम्मिंदस्स भवणमज्झम्मि । तस्स य चउसु दिसासुं चउपीढा लोयपालाणं ॥ १९५१
सोहम्मिंदासणदो दक्खिणभायम्मि कणयणिम्मविदं । सिंहासणं विरायदि मणिगणखचिदं पडिंदस्स ॥१९५२
सिंहासणस्स पुरदो अट्ठाणं होंति अग्गमहिसीणं । बत्तीससहस्साणिं वियाण पवराइं पीढाइं ॥ १९५३
३२०००।
पवणीसाणदिसासुं पासे सीहासणस्स चुलसीदी । लक्खाणिं वरपीढा भवंति सामाणियसुराणं ॥ १९५४
८४०००००।
तस्सग्गिदिसाभाए बारसलक्खाणि पढमपरिसाए । पीढाणि होंति कंचणरइदाणिं रयणखचिदाणिं ॥ १९५५
१२०००००।
दक्खिणदिसाविभागे मज्झिमपरिसामराण पीढाणिं । कंचणरयणमयाणिं चोद्दसलक्खप्पमाणाणिं ॥ १९५६
१४०००००।
णइरिदिदिसाविभागे बाहिरपरिसामराण पीढाणिं । कंचणरयणमयाणिं सोलसलक्खाणि चेट्ठंति ॥ १९५७
१६०००००।

पुष्करिणियोंके बीचमें पांचके घन अर्थात् एकसौ पच्चीस कोस ऊंचा और इससे आधे विस्तारवाला सौधर्म इन्द्रका अनुपम विहारप्रासाद है ॥ १९४९ ॥

वह प्रासाद एक कोस गहरा और विविध प्रकारकी ध्वजाओंसे रमणीय है। उसकी लंबाईके प्रमाणका उपदेश हमारे पास नहीं है ॥ १९५० ॥

भवनके मध्यमें अतिरमणीय सौधर्म इन्द्रका सिंहासन और इसके चारों ओर चार सिंहासन लोकपालोंके है ॥ १९५१ ॥

सौधर्म इन्द्रके आसनसे दक्षिणभागमें सुवर्णसे निर्मित और मणिसमूहसे खचित प्रतीन्द्रका सिंहासन विराजमान है ॥ १९५२ ॥

सिंहासनके आगे आठ अग्रमहिषियोंके सिंहासन होते है। इसके अतिरिक्त बत्तीस हजार प्रवर पीठ जानना चाहिये ॥ १९५३ ॥ ३२०००।

सिंहासनके पास वायव्य और ईशान दिशामें चौरासी लाख सामानिक देवोंके उत्तम आसन है ॥ १९५४ ॥ ८४०००००।

उस सिंहासनके अग्निदिशाभागमें सुवर्णसे रचित और रत्नोंसे खचित बारह लाख प्रथम पारिषद देवोंके आसन है ॥ १९५५ ॥ १२०००००।

दक्षिणदिशाभागमें मध्यम पारिषद देवोंके सुवर्ण एवं रत्नमय चौदह लाखप्रमाण आसन है ॥ १९५६ ॥ १४०००००।

नैऋत्यदिशाविभागमें बाह्य पारिषद देवोंके सुवर्ण एवं रत्नमय सोलह लाखप्रमाण आसन स्थित हैं ॥ १९५७ ॥ १६०००००।

१ द ब 'कोसुत्तुंगा तद्दलरुंदा. २ द ब 'पमाणं.

तत्थ य दिसाविभागे तेत्तीससुराण होंति तेत्तीसा । वरपीढाणि णिरंतरफुरंतमाणेकिरणणियराणिं ॥ १९५८

३३ ।

सिंहासणस्स पच्छिमभागे चेट्ठंति सत्त पीढाणिं । छक्कं महत्तराणं महत्तरीए हवे एक्कं ॥ १९५९

७ ।

सिंहासणस्स चउसु वि दिसासु चेट्ठंति अंगरक्खाणं । चउरासीदिसहस्सा पीढाणि विचित्तरूवाणिं ॥ १९६०

८४००० ।

सिंहासणम्मि तस्सिं पुव्वमुहे पट्ठसिदूण सोहम्मो । विविहविणोदेण जुदो पेच्छइ सेवागदे देवे[1] ॥ १९६१

भिंगा भिंगणिहक्खा कज्जलया कज्जलप्पहा तत्थ । णइरिदिदिसाविभागे पुव्वपमाणादिवावीओ ॥ १९६२

चउवावीमज्झपुरे[2] सोहम्मो भत्तिउवगदे देवे । पेच्छइ अत्थाणिरदे[3] चामरछत्तादिपरियरिदो ॥ १९६३

सिरिभद्दा सिरिकंता सिरिमहिदा सिरिणिलेया । पुक्खरणीओ होंति हु तासिं मज्झम्मि पासादो[4] ॥ १९६४

तस्सिं पासादवरे ईसाणिंदो सुहाणि भुंजेदि । बहुछत्तचमरजुत्तो विविहविणोदेण कीडंतो ॥ १९६५

णलिणा य णलिणगुम्मा कुमुदा कुमुदप्पह त्ति वावीओ । ईसाणदिसाभाए तासुं मज्झम्मि पासादो ॥ १९६६

उसी दिशाविभागमें त्रायस्त्रिंशदेवोंके निरंतर प्रकाशमान मणिकिरणसमूहसे सहित तेतीस उत्तम आसन हैं ॥ १९५८ ॥ ३३ ।

सिंहासनके पश्चिमभागमें महत्तरोंके छह और महत्तरीका एक, इसप्रकार सात आसन स्थित हैं ॥ १९५९ ॥ ७ ।

सिंहासनके चारो तरफ अंगरक्षक देवोंके विचित्र रूपवाले चौरासी हजार आसन स्थित हैं ॥ १९६० ॥ ८४००० ।

सौधर्मइन्द्र उस पूर्वाभिमुख सिंहासनपर प्रवेश करके (आरूढ होकर) विविध प्रकारके विनोदसे युक्त होता हुआ सेवार्थ आये हुए देवोंकी ओर देखता है ॥ १९६१ ॥

सौमनसवनके भीतर नैऋत्यदिशाविभागमें भृंगा, भृंगनिभा, कज्जला और कज्जलप्रभा, ये चार वापिकायें पूर्व वापिकाओंके समान प्रमाणादिसे संयुक्त हैं ॥ १९६२ ॥

इन चार वापिकाओंके मध्यमें स्थित पुरमें (भवनमें) चँवर-छत्रादिसे वेष्टित सौधर्मइन्द्र भक्तिसे समीप आये हुए व आस्था अर्थात् आदरमें निरत देवोंको देखता है ॥ १९६३ ॥

वायव्यदिशामें श्रीभद्रा, श्रीकान्ता, श्रीमहिता और श्रीनिलया, ये चार पुष्करिणी तथा उनके मध्यमें प्रासाद है ॥ १९६४ ॥

उस उत्कृष्ट भवनमें बहुत छत्र एवं चँवरोंसे युक्त ईशानेन्द्र विविध प्रकारके विनोदसे क्रीडा करता हुआ सुखोंको भोगता है ॥ १९६५ ॥

ईशानदिशाभागमें नलिना, नलिनगुल्मा, कुमुदा और कुमुदप्रभा, ये चार वापियां हैं और उनके मध्यमें प्रासाद है ॥ १९६६ ॥

---

१ द ब देवइ. २ द ब भिंगारभिंगणिहिक्खा. ३ द ब °पुरी. ४ द ब अत्थाणिरिदा. ५ द ब पासादा. ६ द ब णलिणगुव्वं.

तस्सिं पासादवरे ईसाणिंदो सुहेण कीडेदि । सव्वा विवण्णणा वि हु सोहम्मस्सेव वत्तव्वा ॥ १९६७
सोमणसब्भंतरए पुव्वादिचउदिसासु चत्तारो । पुव्वं व सयलवण्णणविस्थारो तेसु णादव्वो ॥ १९६८
पत्तेक्कं जिणमंदिरसालाणं बाहिरम्मि चेट्ठंति । दोपासेसुं दोहो कूडा णामा वि ताण इमे ॥ १९६९
णंदणणामा मंदरणिसहहिमा रजदरुजगणामा य । सायरचित्ता वज्जो पुव्वादिकमेण अक्खादा ॥ १९७०
पणवीसब्भहियसयं वासो[1] सिहरम्मि दुगुणिदो[2] मूले । मूलसमो उच्छेहो पत्तेक्कं ताण कूडाणं ॥ १९७१

१२५ । २५० । २५० ।

कूडाणं मूलोवरिभागेसुं वेदियाओ दिव्वाओ । वररयणविरइदाओ पुव्वं पिव वण्णणजुदाओ ॥ १९७२
कूडाण उवरिभागे चउवेदीतोरणेहिं रमणिज्जा । णाणाविहपासादा चेट्ठंते णिरुवमायारा ॥ १९७३
पण्णाससया दंडा उदओ रुंदं पि कोसचउभागो । तद्दुगुणं दीहत्तं पुह पुह सव्वाण भवणाणं ॥ १९७४

१५०० । को १ । १ ।
४ २

इस उत्तम भवनमे ईशानेन्द्र सुखसे क्रीड़ा करता है । यहां सब विवर्णन सौधर्मइन्द्रके समान ही कहना चाहिये ॥ १९६७ ॥

सौमनसभवनके भीतर पूर्वादिक चारो दिशाओमे चार [जिनमन्दिर] है । इनका सम्पूर्ण वर्णनविस्तार पूर्वके ही समान जानना चाहिये ॥ १९६८ ॥

प्रत्येक जिनमदिरसम्बन्धी कोटोके बाहिर दोनो पार्श्वभागोमे जो दो दो कूट स्थित हैं उनके नाम ये है— नन्दन, मन्दर, निषध, हिमवान्, रजत, रुचक, सागरचित्र और वज्र । ये कूट पूर्वादिक्रमसे कहे गये है ॥ १९६९-१९७० ॥

उन प्रत्येक कूटोका विस्तार शिखरपर एकसौ पच्चीस योजन और मूलमे इससे दुगुणा है । मूलविस्तारके समान ही उचाई भी दोसौ पचास योजनप्रमाण है ॥ १९७१ ॥

शिखरव्यास १२५ । मूलव्यास २५० । उत्सेध २५० ।

कूटोके मूल व उपरिम भागोमे उत्तम रत्नोसे रचित और पूर्वके समान वर्णनसे सहित दिव्य वेदिया है ॥ १९७२ ॥

कूटोके ऊपरीभागमे चार वेदीतोरणोसे रमणीय अनुपम आकारवाले नाना प्रकारके प्रासाद स्थित है ॥ १९७३ ॥

सब भवनोकी उंचाई पृथक् पृथक् पन्द्रहसौ धनुष, विस्तार एक कोसका चतुर्थ भाग और दीर्घता इससे दुगुणी अर्थात् आध कोसप्रमाण है ॥ १९७४ ॥

उत्सेध ध. १५०० । विस्तार को. $\frac{1}{4}$ । दीर्घता $\frac{1}{2}$ ।

---

१ ब सव्वाणि वण्णणा. २ द अक्खदा. ३ द ब वासा. ४ द ब दुगुणिदे

वासो पणवणकोसा तद्दुगुणा मंदिराणं[1] उच्छेहो । लोयविणिच्छयकत्ता एवं माणे णिरूवेदि ॥ १९७५

१२५ । २५० । [पाठान्तरम् ।]

कूडेसुं देवीओ कण्णकुमारीओ दिव्वरूवाओ । मेघंकरमेघवदी सुमेघया मेघमालिणी तुरिमा ॥ १९७६

तोयंधरा विचित्ता पुप्फयमाली[2] यणिंदिदा चरिमा । पुव्वादिसु कूडेसुं कमेण चेट्ठंति एदाओ ॥ १९७७

बलभद्दणामकूडो ईसाणदिसाए[3] तव्वणे होदि । जोयणसयमुत्तुंगो मूलम्मि य तत्तिओ वासो ॥ १९७८

१०० । १०० ।

पण्णासजोयणाइं सिहरे कूडस्स वासवित्थारो । मुहभूमीमिलिदद्धं मज्झमवित्थारपरिमाणं ॥ १९७९

एस बलभद्दकूडो सहस्सजोयणपमाणउच्छेहो । तेत्तियरुंदपमाणो दिणयरबिंबं व समवट्टो ॥ १९८०

१००० । १००० ।

सोमणसस्स य वासं णिस्सेसं रुंभिदूण सो सेलो । पंचसयजोयणाइं तत्तो रुंभेदि आकासं ॥ १९८१

दसविंदं भूवासो पंचसया जोयणाणि मुहवासो । एवं लोयविणिच्छयमग्गायणिएमुदीरेदि ॥ १९८२

१००० । ५०० । पाठान्तरम् ।

मन्दिरोंका विस्तार पांचके घन अर्थात् एकसौ पच्चीस कोसप्रमाण और उंचाई इससे दुगुणी है । इसप्रकार लोकविनिश्चयके कर्ता इनके प्रमाणका निरूपण करते है ॥ १९७५ ॥

व्यास १२५ । उत्सेध २५० । [पाठान्तर]

पूर्वादिक कूटोपर क्रमसे मेघंकरा, मेघवती, सुमेघा, चतुर्थ मेघमालिनी, तोयंधरा, विचित्रा, पुष्पमाला और अन्तिम अनिन्दिता, इसप्रकार ये दिव्य रूपवाली कन्याकुमारी देवियां स्थित है ॥ १९७६-१९७७ ॥

सौमनसवनके भीतर ईशानदिशामें एकसौ योजनप्रमाण ऊंचा और मूलमें इतने ही विस्तारवाला बलभद्र नामक कूट है ॥ १९७८ ॥ उत्सेध १०० । व्यास १०० ।

उस कूटका विस्तार शिखरपर पचास योजन और मध्यमें मुख एव भूमिके सम्मिलित विस्तारप्रमाणसे आधा है ॥ १९७९ ॥

यह बलभद्रकूट हजार योजनप्रमाण ऊंचा और इतने ही विस्तारप्रमाणसे सहित होता हुआ सूर्यमण्डलके समान समवृत्त है ॥ १९८० ॥ उत्सेध १००० । विस्तार १००० ।

वह शैल सौमनसवनके सम्पूर्ण विस्तारको रोककर पुनः पांचसौ योजनप्रमाण आकाशको रोकता है ॥ १९८१ ॥

उसका भूविस्तार दशके घनरूप अर्थात् एक हजार योजन और मुखविस्तार पांचसौ योजनप्रमाण है । इसप्रकार लोकविनिश्चय व मग्गायणीमें कहते हैं ॥ १९८२ ॥

१००० । ५०० । पाठान्तर ।

१ द ब मंदराण. २ द ब पुप्फयमाली. ३ द ब वित्थारस्स.

मूलोवरि मो कूडो चउवेदीतोरणेहि संजुत्तो । उवरिमभाए तस्स य पासादा विविहरयणमया ॥ १९८३
मंदिरसेलाहिवई[1] बलभद्दो णाम वेंतरो देवो । अच्छदि[2] तेसु पुरेसुं बहुपरिवारेहि संजुत्तो ॥ १९८४
तिण्णि सहस्सा दुसया बाहत्तरि जोयणाणि अट्ठकला । एक्करसहिदा वासो[3] सोमणसब्भंतरे होदि ॥ १९८५
३२७२ । ८ ।
११
दस य सहस्सा तिसया उणवण्णा जोयणाणि बेयंसा । एक्करसहिदा परिही सोमणसब्भंतरे भागे ॥ १९८६
१०३४९ । २ ।
११
एवं संखेवेणं सोमणसं वरवणं मए भणिदं । वित्थारवण्णणासुं तस्स ण सक्केदि सक्को वि ॥ १९८७
पंचसएहि जुत्ता बासट्ठिसहस्सजोयणा गंतुं । सोमणसादो हेट्ठे होदि वणं णंदणं णाम ॥ १९८८
६२५०० ।
पणसयजोयणरुंदं चामीयरवेदियाहिं परियरियं । चउतोरणदारजुदं खुद्दयदारेहि णंदणं णाम ॥ १९८९
५०० ।
णव य सहस्सा णवसयचउवण्णा जोयणाइ छब्भागा । एक्करसेहि हिदा णं णंदणबाहिरए होदि विक्खंभो॥१९९०
९९५४ । ६ ।
११

वह कूट मूलमे व ऊपर चार वेदीतोरणोसे सयुक्त है । उसके उपरिम भागपर विविध रत्नमय प्रासाद है ॥ १९८३ ॥

मन्दिर और शैलका अधिपति बलभद्र नामक व्यन्तरदेव उन पुरोमे बहुत परिवारसे संयुक्त होकर रहता है ॥ १९८४ ॥

सौमनसवनके अभ्यन्तर भागमे तीन हजार दोसौ बहत्तर योजन और ग्यारहसे भाजित आठ कलामात्र विस्तार है ॥ १९८५ ॥ ३२७२$\frac{८}{११}$ ।

सौमनसवनके अभ्यन्तर भागमे परिधिका प्रमाण दश हजार तीनसौ उनचास योजन और ग्यारहसे भाजित दो भागमात्र है ॥ १९८६ ॥ १०३४९$\frac{२}{११}$ ।

इसप्रकार मैने संक्षेपमे सौमनस नामक उत्तम वनका वर्णन किया है । उसका विस्तार-पूर्वक वर्णन करनेके लिये तो इन्द्र भी समर्थ नहीं है ॥ १९८७ ॥

बासठ हजार पांचसौ योजनप्रमाण सौमनसवनके नीचे जाकर नन्दन नामक वन है ॥ १९८८ ॥ ६२५०० ।

यह नन्दनवन पांचसौ योजनप्रमाण विस्तारसे सहित, सुवर्णमय वेदिकाओसे वेष्टित तथा क्षुद्रद्वारोंके साथ चार तोरणद्वारोसे संयुक्त है ॥ १९८९ ॥ ५०० ।

नन्दनवनके बाह्य भागमे नौ हजार नौसौ चौवन योजन और ग्यारहसे भाजित छह भाग-मात्र विस्तार है ॥ १९९० ॥ ९९५४$\frac{६}{११}$ ।

१ द ब 'हिवही. २ द ब अच्छहि. ३ द ब वासा. ४ द ब एक्कारसहिदं. ५ द सक्काओ, ब सक्काऊ. ६ द ब परियरिया ७ द ब एक्करसेहिदा.

एक्कत्तीससहस्सा चउस्सया जोयणाउ उणसीदी । णंदणवणस्स परिही बाहिरभागम्मि अदिरित्ता ॥ १९९१

३१४७९ ।

अट्ठसहस्सा णवसयचउवण्णा जोयणाणि छब्भागा । एक्करसहिदो वासो णंदणवणविरहिदो होदि ॥ १९९२

८९५४ । ६ ।

११

अट्ठावीससहस्सा तिसया सोलसजुदा य अट्ठकला । एक्करसहिदा परिही णंदणवणविरहिदो मेरुस्स ॥ १९९३

२८३१६ । ८ ।

११

माणं मि चारणक्खो[1] णिलया गंधव्वचित्तणामा य । णंदणवणम्मि मंदरपासे चत्तारि पुव्वादी ॥ १९९४

विक्खंभायामेहिं णंदणभवणाणि होंति दुगुणाणिं । सोमणसपुराहिंतो पुव्वं पि वण्णणजुदाणिं ॥ १९९५

सक्कस्स लोयपाला[2] सोमप्पहुदी वसंति एदेसुं । तेत्तियदेवीहिं[3] जुदा बहुविहकीडाउ कुणमाणा[4] ॥ १९९६

बलभद्दणामकूडो ईसाणदिसाए णंदणवणम्मि । तस्सुच्छेहप्पहुदी सरिसा सोमणसकूडेणं ॥ १९९७

जिणमंदिरकूडाणं वावीपासाददेवदाणं च । णामाइं विण्णासो सोहम्मीसाणदिसविभागो य ॥ १९९८

इयपहुदि णंदणवणे सोमणसवणं व होदि णिस्सेसं । णवरि विसेसो एक्को वासप्पमुहाणि दुगुणाणिं ॥ १९९९

नन्दनवनके बाह्य भागमें परिधिका प्रमाण इकतीस हजार चारसौ उन्यासी योजनसे अधिक है ॥ १९९१ ॥ ३१४७९ ।

नन्दनवनसे रहित मेरुका विस्तार आठ हजार नौसौ चौवन योजन और ग्यारहसे भाजित छह भागप्रमाण है ॥ १९९२ ॥ ८९५४ $\frac{६}{११}$ ।

नन्दनवनसे रहित मेरुकी परिधि अट्ठाईस हजार तीनसौ सोलह योजन और ग्यारहसे भाजित आठ कला अधिक है ॥ १९९३ ॥

नन्दनवनके भीतर सुमेरुके पासमें क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमें मान, चारण, गन्धर्व और चित्र नामक चार भवन हैं ॥ १९९४ ॥

पूर्वके समान वर्णनसे संयुक्त ये नन्दनभवन विस्तार व लंबाईमें सौमनसवनके भवनोंसे दुगुणे हैं ॥ १९९५ ॥

इन भवनोंमें उतनी देवियोंसे संयुक्त होकर विविध प्रकारकी क्रीड़ाओंको करनेवाले सौधर्म इन्द्रके सोमादिक लोकपाल निवास करते हैं ॥ १९९६ ॥

नन्दनवनके भीतर ईशानदिशामें बलभद्र नामक कूट है। इस कूटकी उंचाई आदि सौमनससम्बंधी कूटके सदृश है ॥ १९९७ ॥

जिनमन्दिर, कूट, वापी, प्रासाद व देवताओंके नाम, विन्यास और सौधर्म व ईशानेन्द्रकी दिशाओंका विभाग, इत्यादिक सब नन्दनवनमें सौमनस वनके ही समान है। विशेषता केवल एक यह है कि उनके विस्तारादिक दुगुणे हैं ॥ १९९८-१९९९ ॥

१ द ब एक्कारसहिदं. २ द ब चारणक्खा. ३ द ब लोयपालो. ४ द ब देवेहि. ५ द ब कुणमाणो.

एवं संखेवेणं णंदणणामं वणं मए भणिदं । एक्कमुहएक्कजीहो को सक्कदु वित्थरं भणिदुं ॥ २०००
णंदणवणाउ हेट्ठे पंचसया जोयणाणि गंतूणं । अट्ठासीदिवियप्पं चेट्ठदि सिरिभद्दसालवणं ॥ २००१
५०० ।
बावीससहस्साणिं कमसो पुव्वावरेसु वित्थारो । तह दक्खिणुत्तरेसुं दुसया पण्णास तम्मि वणे ॥ २००२
२२००० । २२००० । २५० । २५० ।
मेरुमहीधरपासे पुव्वदिसे दक्खिणवरउत्तरए । एक्केक्कं जिणभवणं होदि वरं भद्दसालवणे ॥ २००३
पंडुवणपुराहिंतो चउग्गुणा वासउदयपहुदीओ । जिणवरपासादाणं पुव्वं पिव वण्णणं सव्वं ॥ २००४
तम्मि वणे वरतोरणसोहिदवरदारणिवहरमणिज्जा । अट्टालयादिसहिया समंतदो कणयमयवेदी ॥ २००५
वेदीए उच्छेहो जोयणमेक्कं समंतदो होदि । कोदंडाण सहस्सं वित्थारो भद्दसालम्मि ॥ २००६
जो १ । दं १०००ं ।
सिरिखंड-अगरु-केसर असोय-कप्पूर-तिलय-कदलीहिं । अइमुत्तमालईयाहालिद्दपहुदीहिं संछण्णं ॥ २००७
पोक्खरणीरमणिज्जं सरवरपासादणिवहसोहिल्लं । कूडेहिं जिणपुरेहिं विराजदे भद्दसालवणं ॥ २००८

इसप्रकार संक्षेपसे मैंने नन्दन नामक वनका वर्णन किया है। एक मुख और एक ही जिह्वासे सहित कौनसा मनुष्य उसका विस्तारसे वर्णन करनेके लिये समर्थ है ? ॥ २००० ॥

नन्दनवनके नीचे पांचसौ योजनप्रमाण जाकर अठासी विकल्पोंसे सहित श्रीभद्रशालवन स्थित है ॥ २००१ ॥ ५०० ।

उस वनका विस्तार क्रमसे पूर्व व पश्चिममें बाईस हजार योजन तथा दक्षिण व उत्तरमें दोसौ पचास योजनप्रमाण है ॥ २००२ ॥

विस्तार पूर्व २२०००, पश्चिम २२०००, दक्षिण २५०, उत्तर २५० ।

भद्रशालवनमें मेरुपर्वतके पास पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें एक एक उत्तम जिनभवन है ॥ २००३ ॥

इन जिनभवनोंका विस्तार व उंचाई आदि पाण्डुकवनके जिनभवनोंकी अपेक्षा चौगुणे है। शेष सब वर्णन पूर्वके ही समान है ॥ २००४ ॥

उस वनके चारों ओर उत्तम तोरणोंसे शोभित श्रेष्ठ द्वारसमूहसे रमणीय और अट्टालिका-दिसे सहित सुवर्णमय वेदी है ॥ २००५ ॥

भद्रशालवनमें वेदीकी उंचाई चारों तरफ एक योजन और विस्तार एक हजार धनुषप्रमाण है ॥ २००६ ॥ उत्सेध यो. १ । विस्तार दं. १००० ।

श्रीखण्ड, अगरु, केशर, अशोक, कर्पूर, तिलक, कदली, अतिमुक्त, मालती और हारिद्र-प्रभृति वृक्षोंसे व्याप्त; पुष्करिणियोंसे रमणीय तथा उत्तम सरोवर व भवनोंके समूहसे शोभायमान यह भद्रशालवन कूटों और जिनपुरोंसे विराजमान है ॥ २००७–२००८ ॥

१ द ब णिरुव°.

मोरसुककोकिलाणं सारसहंसाण मधुरसद्दड्ढं । विविहफलकुसुमभरिदं सुरम्मियं भद्दसालवणं ॥ २००९
बावीससहस्साणिं अडसीदिहिदाणि वासमेक्केक्के । पुव्वावरभाएसुं वणम्मि[1] गिरिभद्दसालस्स ॥ २०१०
दोण्णि सया पण्णासा अट्ठासीदीविहत्तया रुंदा । दक्खिणउत्तरभागे एक्केक्के वणस्स भद्दसालम्मि ॥ २०११
वारणदंतसरिच्छा सेला चत्तारि मेरुविदिसासुं । वक्खार त्ति पसिद्धा अणाइणिहणा महारम्मा ॥ २०१२
णीलद्दिणिसहपव्वदमंदरसेलाण होंति संलग्गा । वंकसरूवायामा ते चत्तारो महासेला[2] ॥ २०१३
उत्तरदक्खिणभाए मंदरसेलस्स मज्झदेसम्मि । एक्केण पदेसेणं एक्केक्कं तेण लग्गंति ॥ २०१४
मंदरअणिलदिसादो सोमणसो णाम विज्जुपहणामो । कमसो महागिरी णं गंधमादणो मालवंतो य ॥ २०१५
ताणं रुप्पयतवणियकणयंवेरुलियसरिसवण्णाणं । उववणवेदिप्पहुदी सव्वं पुव्वोदिदं होदि ॥ २०१६
पंचसयजोयणाणिं वित्थारो ताण दंतसेलाणं । सव्वत्थ होदि सुंदरकप्पतरुप्पण्णसोहाणं ॥ २०१७
णीलणिसहद्दिपासे चत्तारि सयाणि जोयणा होदि । तत्तो पदेसवड्ढी पत्तेक्कं मेरुसेलंतं ॥ २०१८

मोर, शुक, कोयल, सारस और हंस, इन पक्षियोंके मधुर शब्दोंसे व्याप्त तथा विविध प्रकारके फल-फूलोंसे भरित वह भद्रशालवन सुरम्य है ॥ २००९ ॥

पूर्व-पश्चिम भागोंमेंसे प्रत्येक भागमें श्रीभद्रशालवनका विस्तार अठासीसे भाजित बाईस हजार योजनप्रमाण है ॥ २०१० ॥

दक्षिण-उत्तर भागोंमेंसे प्रत्येक भागमे भद्रशालवनका विस्तार अठासीसे विभक्त दोसौ पचास योजनप्रमाण है ॥ २०११ ॥

मेरुकी विदिशाओंमें हाथीदांतके सदृश, अनादिनिधन और महारमणीय 'वक्षार' नामसे प्रसिद्ध चार पर्वत हैं ॥ २०१२ ॥

तिरछेरूपसे आयत वे चारों महाशैल नीलाद्रि, निषधपर्वत और मंदरशैलसे संलग्न हैं ॥ २०१३ ॥

उनमेंसे प्रत्येक पर्वत उत्तर-दक्षिणभागमें मन्दरपर्वतके मध्यदेशमें एक एक प्रदेशसे उससे संलग्न हैं ॥ २०१४ ॥

क्रमसे मन्दरपर्वतकी वायव्यदिशासे लेकर सौमनस, विद्युत्प्रभ, गन्धमादन और माल्यवान नामक चार महापर्वत हैं ॥ २०१५ ॥

क्रमशः चांदी, तपनीय, कनक और वैडूर्यमणिके सदृश वर्णवाले उन पर्वतोंकी उपवनवेदी आदिक सब पूर्वोक्त ही हैं ॥ २०१६ ॥

सुन्दर कल्पवृक्षोंसे उत्पन्न हुई शोभासे संयुक्त उन दन्तशैलोंका विस्तार सर्वत्र पांचसौ योजनप्रमाण है ॥ २०१७ ॥

नील और निषध पर्वतके पासमें इनकी उंचाई चारसौ योजनप्रमाण है । इसके आगे मेरुपर्वतपर्यन्त प्रत्येकके प्रदेशवृद्धि होती गई है । इसप्रकार प्रदेशवृद्धिके होनेपर अनुपम रूपको

१ द ब वण्णमि. २ द ब महासेलो.

पासम्मि मेरुगिरिणो पंचसया जोयणाणि उच्छेहो । णिरुवमरूवधराणं ताणं वक्खारसेलाणं ॥ २०१९

दुगुणम्मि भद्दसाले मेरुगिरिंदस्स खिवसु[1] विक्खंभं । दोसेलमज्झजीवा तेवण्णसहस्सजोयणा होंति ॥२०२०

५३०००।

अद्धिय विदेहरुंदं पंचसहस्साणि तत्थ अवणिज्जं । दोवक्खारगिरीणं जीवाबाणस्स परिमाणं ॥ २०२१

पणवीससहस्सेहिं अब्भहिया जोयणाणि दो लक्खा । उणवीसेहिं विहत्ता बाणस्स पमाणमुद्दिट्ठं ॥ २०२२

२२५०००।

१९

जोयणसट्ठिसहस्सं चत्तारि सया य अट्ठरसजुत्ता । उणवीसहरिदबारसकलाओ वक्खारधणुपट्ठं ॥ २०२३

६०४१८। १२।

१९

जोयण तीससहस्सा णवउत्तर[2] दो सया य छब्भाया । उणवीसेहि विहत्ता ताणं सरिसायदा[3]णं दीहत्तं ॥२०२४

३०२०९। ६।

१९

जीवाए जं वग्गं चउगुणबाणप्पमाणपविहत्तं । इसुसंजुत्तं ताणं अंतरवट्टस्स विक्खंभं ॥ २०२५

धारण करनेवाले उन वक्षारपर्वतोंकी उंचाई मेरुपर्वतके पासमें पांचसौ योजनप्रमाण हो गई है ॥ २०१८–२०१९ ॥

[वक्षारके विस्तारसे रहित] भद्रशालवनके विस्तारको दुगुणा करके उसमे मेरुपर्वतके विस्तारको मिला देनेपर दोनों पर्वतोके मध्यमें जीवाका प्रमाण तिरेपन हजार योजन आता है ॥२०२०॥

$$(२२००० - ५००) \times २ + १०००० = ५३०००$$

विदेहके विस्तारको आधा करके उसमेंसे पांच हजार कम कर देनेपर दो वक्षारपर्वतोंकी जीवाके बाणका प्रमाण निकलता है ॥ २०२१ ॥ $\frac{६४०००^{०}}{१९} \div २ - ५००० = \frac{२२५०००}{१९}$ ।

उपर्युक्त बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित दो लाख पच्चीस हजार योजन कहा गया है ॥ २०२२ ॥ $\frac{२२५०००}{१९}$

साठ हजार चारसौ अठारह योजन और उन्नीससे भाजित बारह कलाप्रमाण वक्षारपर्वतोंका धनुपृष्ठ है ॥ २०२३ ॥ $६०४१८\frac{१२}{१९}$ ।

तीस हजार दोसौ नौ योजन और उन्नीससे विभक्त छह भागप्रमाण उन सदृश आयत वक्षारपर्वतोंकी लंबाई है ॥ २०२४ ॥ $३०२०९\frac{६}{१९}$ ।

जीवाका जो वर्ग हो उसमें चौगुणे बाणप्रमाणका भाग देकर लब्धराशिमें बाणप्रमाणको मिला देनेपर उनके अन्तर्वृत्त क्षेत्रका विष्कम्भ निकलता है ॥ २०२५ ॥

१ द ब चिरसु. २ द ब णउत्ता. ३ द ब सुविसायदाण.

एक्कत्तरिं सहस्सा इगिसयतेदालजोयणा य कला । णवहणिदुणवीसहिदा सगतीसा वट्टविक्खंभा ॥ २०२६

७११४३ । ३७ ।
१७१

णीलणिसहदिपासे पण्णासब्भहियदुसयजोयणया । तत्तो पदेसवड्ढी पत्तेक्कं मेरुसेलंतं ॥ २०२७

२५० ।

ताणं च मेरुपासे पंचसया जोयणाणि विच्थारो । लोयविणिच्छयकत्ता णूणं णियमा णिरूवेदि ॥ २०२८

५०० । पाठान्तरम् ।

सिरिभद्दसालवेदीवक्खारगिरीण अंतरपमाणं । पंचसयजोयणाणिं सग्गायणियम्मि णिद्दिट्ठं ॥ २०२९

५०० । पाठान्तरम् ।

गयदंताणं गाढा णियणियउदयप्पमाणचउभागा । सोमणसगिरिंदोवरि चेट्ठंते सत्त कूडाणिं ॥ २०३०

सिद्धो सोमणसक्खो देवकुरू मंगलो विमलणामो । कंचणवसिट्ठकूडा णिसहंता मंदरप्पहुदी ॥ २०३१

सोमणससेलउदए[1] चउभजिदे होंति कूडउदयाणिं । विच्थारायामेसुं कूडाणं णत्थि उवएसो ॥ २०३२

भूमिय मुहं विसोधियं उदयहिदं भूमुहा[2]दिरूवयवड्ढी । मुहसय पणघण भूमी उदओ इगिहारणकूडपरिसंखा[3]॥२०३३

१०० । १२५ । ६ ।

यह वृत्तविष्कंभ इकहत्तर हजार एकसौ तेतालीस योजन और सैंतीसगुणित उन्नीससे भाजित सैंतीस कलाप्रमाण है ॥ २०२६ ॥

$$५३०००^{२} \div \left(\frac{२२५०००\times ४}{१९}\right) + \frac{२२५०००}{१९} = ७११४३\frac{३७}{१७१} ।$$

नील और निषधपर्वतके पासमें इन पर्वतोंका विस्तार दोसौ पचास योजन है । इसके आगे मेरुपर्वततक प्रत्येकमें प्रदेशवृद्धिके होनेसे मेरुके पासमें उनका विस्तार पांचसौ योजनप्रमाण हो गया है । इसप्रकार लोकविनिश्चयके कर्ता नियमसे निरूपण करते हैं ॥ २०२७-२०२८ ॥ २५० । ५०० । पाठान्तर ।

श्रीभद्रशालवेदी और वक्षारगिरियोंके अन्तरका प्रमाण पांचसौ योजन सग्गायणीमें बतलाया गया है ॥ २०२९ ॥ ५०० । पाठान्तर ।

इन गजदन्तोंकी गहराई अपनी अपनी उंचाईप्रमाणके चतुर्थांशमात्र है । सौमनसपर्वतके ऊपर सिद्ध, सौमनस, देवकुरु, मंगल, विमल, कंचन और वशिष्ट, ये सात कूट मेरुसे लेकर निषध-पर्वतपर्यन्त स्थित हैं ॥ २०३०-२०३१ ॥

सौमनसपर्वतकी उंचाईमें चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी इन कूटोंकी उंचाई है । इन कूटोंके विस्तार और लंबाईके विषयमें उपदेश नहीं है ॥ २०३२ ॥

भूमिमेंसे मुखको कम करके उदयका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण होता है । यहां मुखका प्रमाण सौ योजन, भूमिका पांचके घनप्रमाण अर्थात् एकसौ पच्चीस योजन और उदय एक कम कूटसंख्याप्रमाण है ॥ २०३३ ॥

१०० । १२५ । ६ ।

---

१ द ब °समाणं. २ द ब °उदओ. ३ द ब मुहम्मि सोधिय. ४ द ब छम्माण°.

खयवड्ढीण पमाणं पणुवीसं जोयणाणि छब्भजिदं । भूमिमुहेसुं हीणाधियम्मि कूडाण उच्छेहो ॥ २०३४

२५ ।
६

अथवा इच्छागुणिदक्खयवड्ढी खिदिविसुद्धमुहजुत्ता । कूडाण होइ उदओ तेसुं पढमस्स पणविंदं । २०३५

१२५ ।

बिदियस्स वीसजुत्तं सयमेक्कं[1] छव्विहत्तपंचकला । सोलससहिदं च सयं दोण्णि कला तियहिदा तइज्जस्स ॥२०३६

१२० । ५ । ११६ । २ ।
६ ३

बारसअब्भहियसयं जोयणमद्धं च तुरिमकूडस्स । जोयणतिभागजुत्तं पंचमकूडस्स अट्ठसहिदसयं ॥ २०३७

११२ । १ । १०८ । १ ।
२ ३

चउजुत्तजोयणसयं छव्विहत्ता इगिकला य छट्ठस्स । एक्कसयजोयणाइं सत्तमकूडस्स उच्छेहो ॥ २०३८

१०४ । १ । १०० ।
६

सोमणसणामगिरिणो आयामे सगहिदम्मि जं लद्धं । कूडाणमंतरालं तं चिय जाणेदि पत्तेक्कं ॥ २०३९

चत्तारि सहस्साइं तिण्णि सया जोयणाणि पण्णरसा । तेत्तीसभजियसगुणं भाजिदबासीदिलवसंखा ॥ २०४०

४३१५ । ८२ ।
१३३

वह क्षय-वृद्धिका प्रमाण इससे भाजित पचीस योजन है । इसको भूमिमेंसे कम करने और मुखमें जोड़नेपर कूटोंकी उंचाईका प्रमाण आता है ॥ २०३४ ॥ $\frac{२५}{६}$ ।

अथवा, इच्छासे गुणित क्षय-वृद्धिको भूमिमेंसे कम करने और मुखमें मिला देनेपर कूटोंकी उंचाई होती है । इनमेंसे प्रथम कूटकी उंचाई पांचके घनप्रमाण अर्थात् एकसौ पचीस योजन है ॥ २०३५ ॥ १२५ ।

द्वितीय कूटकी उंचाई एकसौ बीस योजन और छहसे विभक्त पांच कलाप्रमाण, तथा तृतीयकी उंचाई एकसौ सोलह योजन और तीनसे भाजित दो कलाप्रमाण है ॥ २०३६ ॥

$१२०\frac{५}{६}$ । $११६\frac{२}{३}$ ।

चतुर्थ कूटकी उंचाई एकसौ साढ़े बारह योजन और पांचवें कूटकी उंचाई एकसौ आठ योजन तथा एक योजनके तीसरे भागसे अधिक है ॥ २०३७ ॥ $११२\frac{१}{२}$ । $१०८\frac{१}{३}$ ।

छठे कूटकी उंचाई एकसौ चार योजन और छहसे भाजित एक कलाप्रमाण तथा सातवें कूटकी उंचाई एकसौ योजनमात्र है ॥ २०३८ ॥ $१०४\frac{१}{६}$ । १०० ।

सौमनस नामक पर्वतकी लंबाईमें सातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक कूटोंके अन्तरालका प्रमाण होता है ॥ २०३९ ॥

यह अन्तरालप्रमाण चार हजार तीनसौ पन्द्रह योजन और एकसौ तेतीससे भाजित व्यासी कला है ॥ २०४० ॥ $४३१५\frac{८२}{१३३}$ ।

---

१ ब सयमेत्तं.

आदिमकूडोवरिमे जिणभवणं तस्स वासउच्छेहो । दीहं च वण्णणाओ पंडुगवणजिणपुरस्स सारिच्छा ॥२०४१
सेसेसुं कूडेसुं वेंतरदेवाण होंति पासादा । वेदीतोरणजुत्ता कणयमया रयणवरखचिदा ॥ २०४२
कंचणकूडे णिवसइ सुवच्छदेवि[1] त्ति एक्कपल्लाऊ । सिरिवच्छमित्तदेवी कूडवरे विमलणामम्मि ॥ २०४३
अवसेसेसुं चउसुं कूडेसुं वाणवेंतरा देवा[2] । णियकूडसरिसणामा विविहविणोदेण कीडंति ॥ २०४४
विज्जुपहस्स य उवरिं णव कूडा होंति णिरुवमायारा । सिद्धो विज्जुपहक्खो देवकुरूपउमतवणसट्टिकया ॥२०४५
सयउज्जलसीदोदा हरि त्ति णामेहिं भुवणविक्खादा । एदाण च उच्छेहो णियसेलुच्छेहचउभागो ॥ २०४६
दीहत्ते वि वियासे[3] उवएसो ताण संपइ पणट्ठो । आदिमकूडस्सुदयो[4] पणवीसजुदं च जोयणाण सयं ॥ २०४७
एक्कं चिय होदि सयं अंतिमकूडस्स उदयपरिमाणं । उभयविसेसे अट्ठहिदे[5]पंचकदी हाणिवड्ढीओ ॥ २०४८
इच्छाए गुणिदाओ हाणिवड्ढीओ खिदिविसुद्धाओ । मुहजुत्ताओ कमसो कूडाणं होदि उच्छेहो ॥ २०४९
पणवीसब्भहियसयं वियाणमुदओ पहिल्लए सेसे । उप्पण्णुप्पण्णेसुं पणवीसं समवणेज्ज अट्ठहिदं ॥ २०५०

प्रथम कूटके ऊपर एक जिनभवन है । इसके विस्तार, उंचाई और लंबाई आदिका वर्णन पाण्डुकवनसम्बन्धी जिनपुरके सदृश है ॥ २०४१ ॥

शेष कूटोंपर वेदी एवं तोरणसे सहित और उत्तम रत्नोंसे खचित ऐसे व्यन्तर देवोंके सुवर्णमय प्रासाद हैं ॥ २०४२ ॥

कंचनकूटपर एक पल्यप्रमाण आयुसे युक्त सुवत्सा देवी (सुमित्रा देवी) और विमल-नामक श्रेष्ठ कूटपर श्रीवत्समित्रा देवी निवास करती है ॥ २०४३ ॥

शेष चार कूटोंपर अपने कूटके सदृश नामवाले व्यन्तरदेव विविध प्रकारके विनोदसे क्रीड़ा करते हैं ॥ २०४४ ॥

विद्युत्प्रभ पर्वतके ऊपर सिद्ध, विद्युत्प्रभ नामक, देवकुरु, पद्म, तपन, स्वस्तिक, शत-उज्वल (शतज्वाल), सीतोदा और हरि, इन नामोंसे भुवनमें विख्यात और अनुपम आकारवाले नौ कूट हैं । इन कूटोंकी उंचाई अपने पर्वतकी उंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण है ॥ २०४५-२०४६ ॥

उन कूटोंकी लंबाई और विस्तारविषयक उपदेश इस समय नष्ट होचुका है । इनमेंसे प्रथम कूटकी उंचाई एकसौ पच्चीस योजन और अन्तिम कूटकी उंचाईका प्रमाण एकसौ योजन है । प्रथम कूटकी उंचाईमेंसे अन्तिम कूटकी उंचाईको घटाकर शेष पांचके वर्गमें आठका भाग देनेसे हानि-वृद्धिका प्रमाण निकलता है ॥ २०४७-२०४८ ॥

इच्छासे गुणित हानि-वृद्धिके प्रमाणको भूमिमेंसे कम करने अथवा मुखमें जोड़ देनेपर क्रमसे कूटोंकी उंचाई होती है ॥ २०४९ ॥

प्रथम कूटकी उंचाई एकसौ पच्चीस योजनप्रमाण जानना चाहिये । तथा शेष कूटोंकी उंचाई जाननेके लिये उत्तरोत्तर उत्पन्न प्रमाणमेंसे आठसे भाजित पच्चीस योजन कम करते जाना चाहिये ॥ २०५० ॥

१ द ब °देवो. २ द ब देवी. ३ द ब वि वियादे. ४ द आदिमकूडाणिवहो, ब आदिमकूडाणुदयो. ५ ब अट्ठहिद°. ६ द गुणिदादियवड्ढीओ खिदिमहाविसुद्धाओ, ब गुणेदाहियवड्ढीओ खिदिमहाविसुद्धाओ.

१२५ । १२१ । ७ ११८ । ३ ११५ । ५ ११२ । ४ | १०९ । ३ १०६ । १ | १०३ । १ | १०० ।
८ ४ ८ ८ | ८ ४ ८ |

विज्जुपहणामगिरिणो आयामे णवहिदम्मि जं लद्धं । कूडाणमंतरालं तं चिय जाणेदि पत्तेक्कं ॥ २०५१

तिण्णि सहस्सा तिसया छप्पण्णा जोयणा कलाणं । एक्कत्तरिअधियसए अवहिदएक्कोत्तरसयाइं ॥ २०५२

३३५६ । १०१ ।
१७१

जिणभवणप्पहुदीणं सोमणसे पव्वयं व एदस्सि । णवरि विसेसो एसो देवीणं अण्णणामाणिं ॥ २०५३

सोत्तिककूडे चेट्ठदि वेंतरदेवी बला त्ति णामेणं । कूडम्मि कणयणामे देवी वरवारिसेण त्ति ॥ २०५४

मंदरगिरिदो गच्छिय जोयणमद्धं गिरिम्मि विज्जुपहे । चेट्ठेदि गुहा रम्मा पव्वदवासो व आयामा ॥ २०५५

तीए दोपासेसुं दारा णियजोग्गउदयवित्थारा । होंति अकिट्टिमरूवा णाणावररयणरमणिज्जा ॥ २०५६

कूडाणि गंधमादणगिरिस्स उवरिम्मि सत्त चेट्ठंति । सिद्धक्खगंधमादणदेवकुरूगंधवासलोहिदया ॥ २०५७

फलिहाणंदा ताणं सत्ताणि इमाणिं होंति णामाणिं । एदाणं उदयादी सोमणसणगं व णादव्वा ॥ २०५८

प्र. १२५ । द्वि. १२१$\frac{७}{८}$ । तृ. ११८$\frac{३}{४}$ । च. ११५$\frac{५}{८}$ । पं. ११२$\frac{४}{८}$ । ष. १०९$\frac{३}{८}$ । स. १०६$\frac{१}{४}$ । अ. १०३$\frac{१}{८}$ । न. १००।

विद्युत्प्रभ नामक पर्वतकी लंबाईमें नौका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक कूटोंका अन्तरालप्रमाण होता है ॥ २०५१ ॥

यह अन्तरालप्रमाण तीन हजार तीनसौ छप्पन योजन और एकसौ इकहत्तरसे भाजित एकसौ एक कलामात्र है ॥ २०५२ ॥ ३३५६$\frac{१०१}{१७१}$ ।

इस पर्वतपर जिनभवनादिक सौमनसपर्वतके ही समान हैं। विशेष केवल यह है कि यहां देवियोंके नाम अन्य हैं ॥ २०५३ ॥

स्वस्तिककूटपर बला नामक व्यन्तरदेवी और कनककूटपर वारिषेणा नामक उत्तम देवी रहती है ॥ २०५४ ॥

मन्दरपर्वतसे आधा योजन जाकर विद्युत्प्रभपर्वतमें पर्वतके विस्तारसमान लंबी रमणीय गुफा स्थित है ॥ २०५५ ॥

इसके दोनों पार्श्वभागोंमें अपने योग्य उंचाई व विस्तारसे सहित तथा नाना उत्तम रत्नोंसे रमणीय अकृत्रिमरूप द्वार हैं ॥ २०५६ ॥

गन्धमादनपर्वतके ऊपर सात कूट स्थित हैं। सिद्ध नामक, गन्धमादन, देवकुरु, गन्धव्यास (गन्धमालिनी ?), लोहित, स्फटिक और आनन्द, ये उन कूटोंके सात नाम हैं। इन कूटोंकी उंचाई आदिक सौमनसपर्वतके समान ही जानना चाहिये ॥ २०५७-२०५८ ॥

१ द एकत्त°. २ द ब गुणा रम्मे. ३ द ब वित्थारो. ४ द ब राणं.

णवरि विसेसो एसो लोहिदकूडे वसेदि भोगवदी । भोगंकइ[1] भो देवी कूडे फलिहाभिधाणम्मि ॥ २०५९
णव कूडा चेट्ठंते उवरिम्मि गिरिस्स मालवंतस्स । सिद्धक्खमालमुत्तरकुरुकच्छो सागरं हि[2] रजदक्खं ॥ २०६०
तह पुण्णभद्दसीदा हरिसहणामो हवंति कूडाणं । वित्थारोदयपहुदी विज्जुप्पभकूडसारिच्छा ॥ २०६१
एक्को णवरि विसेसो सागरकूडेसु भोगवदिणामा । णिवसेदि रजदकूडे णामेणं भोगमालिणी देवी ॥ २०६२
मंदरगिरिदो गच्छिय जोयणमद्धं गिरिम्मि एदस्सिं । सोहेदि गुहा पव्वयवित्थारसरिच्छदीहत्ता ॥ २०६३
तीए दोपासेसुं दारा णियजोग्गउदयवित्थारा । फुरिदवररयणकिरणा अकिट्टिमा ते णिरुवमाणा ॥ २०६४
णिसहधराहरउवरिमतिगिंछदहस्स उत्तरदुवारे । णिग्गच्छेदि उच्चणदी सीदोदा भुवणविक्खादा ॥ २०६५
जोयण सत्तसहस्से चउस्सदे एक्कवीस अदिरित्तं । णिसहस्सोवरि वच्चदि सीदोदा उत्तरमुहेणं ॥ २०६६
आगंतूण तदो सा पडिसीदोदणामकुंडम्मि । पडिदूणं णिग्गच्छदि तस्सुत्तरतोरणदुवारे ॥ २०६७
णिग्गच्छिय सा गच्छदि उत्तरमग्गेण जाव मेरुगिरिं । दोकोसेहिमपाविय णिवत्तदे पच्छिममुहेणं ॥ २०६८

विशेष यह है कि लोहित कूटपर भोगवती और स्फटिक नामक कूटपर भोगंकृति या भोगंकरा नामक देवी निवास करती है ॥ २०५९ ॥

माल्यवान्पर्वतके ऊपर नौ कूट स्थित है । सिद्ध नामक, माल्यवान्, उत्तरकुरु, कच्छ, सागर, रजत नामक, पूर्णभद्र, सीता और हरिसह, ये इन कूटोंके नाम है । इनका विस्तार व उंचाई आदिक विद्युत्प्रभपर्वतके कूटोंके सदृश समझना चाहिये ॥ २०६०–२०६१ ॥

विशेषता केवल यह है कि सागरकूटपर भोगवती और रजतकूटपर भोगमालिनी नामक देवी निवास करती है ॥ २०६२ ॥

मन्दरपर्वतसे आधा योजन आगे जाकर इस पर्वतके ऊपर पर्वतीय विस्तारके सदृश लंबी गुफा कही जाती है ॥ २०६३ ॥

उसके दोनों पार्श्वभागोंमें अपने योग्य उदय व विस्तारसे सहित तथा प्रकाशमान उत्तम रत्नकिरणोंसे संयुक्त वे अकृत्रिम एवं अनुपम द्वार है ॥ २०६४ ॥

निषधपर्वतके ऊपर तिगिंछद्रहके उत्तरद्वारसे भुवनविख्यात सीतोदा महानदी निकलती है ॥ २०६५ ॥

यह सीतोदा नदी उत्तरमुख होकर सात हजार चारसौ इक्कीस योजनसे कुछ अधिक निषधपर्वतके ऊपर जाती है ॥ २०६६ ॥

पश्चात् वह नदी पर्वतपरसे आकर और प्रतिसीतोद नामक कुण्डमें गिरकर उसके उत्तर-तोरणद्वारसे निकलती हुई उत्तर मार्गसे मेरुपर्वतपर्यन्त जाती है। पुनः दो कोसोंसे मेरु पर्वतको न पाकर अर्थात् मेरुपर्वतसे दो कोस इधर ही रहकर उक्त नदी पश्चिमकी ओर मुड़ जाती है ॥ २०६७–२०६८ ॥

१ द ब भोगंकहि. २ द ब मंतर. ३ द ब सागरंमि. ४ द ब सोहेदि गुणा.

विज्जुप्पहस्स गिरिणो गुहाए उत्तरमुहेणं । पविसेदि[1] भद्दसालं[2] वंकसरूवेण तेत्तिअंतरिदा ॥ २०६९
मेरुबहुमज्झभागं णियमज्झप्पणिधियं पि कादूणं[3] । पच्छिममुहेण वच्चदि विदेहविजयस्स बहुमज्झे ॥ २०७०
देवकुरुखेत्तजादा णदी सहस्सा हवंति चुलसीदी । सीदोदापडितीरं पविसंति सहस्स बादालं ॥ २०७१
८४०००।
अपरविदेहसमुब्भवणदी समग्गा हवंति चउलक्खा । अडदालं च सहस्सा अडतीसा पविसंति सीदोदं ॥२०७२
४४८०३८।
जंबूदीवस्स तदो जगदीविलदारएण संचरियं । पविसइ लवणंबुणिहिं परिवारणईहिं जुत्ता सा ॥ २०७३
रुंदावगाढपहुदी हरिकंतादो भवंति दोगुणिदा । तीए वेतडवेदीउववणसंडाहिरामाए ॥ २०७४
जोयणसहस्समेक्कं णिसहगिरिंदस्स उत्तरे गंतुं । चेट्ठंति जमकसेला सीदोदाउभयपुलिणेसुं ॥ २०७५
णामेण य जमकूडो पुव्वम्मि तह णदीए चेट्ठेदि । अवरे मेघंकूडो फुरंतवररयणकिरणोहो ॥ २०७६
दोण्णं[4] पि अंतरालं पंचसया जोयणाणि सेलाणं[5] । दोण्णि सहस्सा जोयण तुंगा मूले सहस्सवित्थारो ॥ २०७७
५०० । २००० । १००० ।

अनन्तर वह नदी उतनेमात्र (दो कोस) अंतरसे सहित हो कुटिलरूपसे विद्युत्प्रभपर्वतकी गुफाके उत्तरमुखसे भद्रशालवनमें प्रवेश करती है ॥ २०६९ ॥

मेरुके बहुमध्यभागको अपना मध्यप्राणिधि करके वह नदी पश्चिममुखसे विदेहक्षेत्रके बहुमध्यमें होकर जाती है ॥ २०७० ॥

देवकुरुक्षेत्रमें उत्पन्न हुई नदियां चौरासी हजार हैं। इनमेंसे ब्यालीस हजार नदियां सीतोदाके दोनों तीरोंमेंसे प्रत्येक तीरमें प्रवेश करती हैं ॥ २०७१ ॥ ८४००० ।

अपरविदेहक्षेत्रमें उत्पन्न हुई सम्पूर्ण नदियां चार लाख अड़तालीस हजार अड़तीस हैं, जो सीतोदामें प्रवेश करती हैं ॥ २०७२ ॥ ४४८०३८ ।

पश्चात् जम्बूद्वीपकी जगतीके विलद्वारमेंसे जाकर वह नदी परिवारनदियोंसे युक्त होती हुई लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २०७३ ॥

दो तटवेदियों और उपवनखण्डोंसे अभिराम उस सीतोदानदीका विस्तार व गहराई आदि हरिकान्तानदीसे दूनी है ॥ २०७४ ॥

निषधपर्वतके उत्तरमें एक हजार योजन जाकर सीतोदानदीके दोनों किनारोंपर यमकशैल स्थित हैं ॥ २०७५ ॥

नदीके पूर्वमें प्रकाशमान उत्तम रत्नोंके किरणसमूहसे सहित यमकूट और पश्चिममें मेघकूट है ॥ २०७६ ॥

इन दोनों पर्वतोंका अन्तराल पांचसौ योजनमात्र है। प्रत्येक पर्वतकी उंचाई दो हजार योजन और विस्तार मूलमें एक हजार योजनप्रमाण है ॥ २०७७ ॥

५०० । २००० । १००० ।

१ द पविसेवि. २ द ब भद्दसालो. ३ द ब कूडाण. ४ [दोण्हं]. ५ द ब सेलाणि.

सत्तसया पण्णासा पत्तेक्कं ताण मज्झविक्खारो । पंचसयजोयणाणिं सिहरतले रुंदपरिमाणं ॥ २०७८

७५० । ५०० ।

एदाणं परिहीओ वित्थारे तिगुणिदम्मि अदिरित्तो । अवगाढो जमगाणं णियणियउच्छेहचउभागो ॥ २०७९

जमकोवरि बहुमज्झे पत्तेक्कं होंति दिव्वपासादा । पणधणकोसा रुंदा तद्दुगुणुच्छेहसंपण्णा ॥ २०८०

१२५ । २५० ।

उच्छेहअद्धवासा सव्वे तवणिज्जरजदरयणमया । धुव्वंतधयवदाया वरतोरणदाररमणिज्जा ॥ २०८१

१२५ ।

जमकगिरीणं उवरिं अवरे वि हवंति दिव्वपासादा । उच्छेहवासपहुदिसु उच्छण्णो ताण उवएसो ॥ २०८२

उववणसंडेहिं जुदा पोक्खरणीकूववाविआरम्मा । फुरिदवररयणदीवा ते पासादा विरायंते ॥ २०८३

पव्वदसरिच्छणामा वितरदेवा वसंति एदेसुं । दसकोदंडुत्तुंगा पत्तेक्कं एक्कपलाऊ ॥ २०८४

सामाणियतणुरक्खा सत्ताणीयाणि परिसतिदयं च । किब्बिसियआभियोगा पइण्णया ताण होंति पत्तेक्कं ॥२०८५

सामाणियपहुदीणं पासादा कणयरजदरयणमया । तद्देवीणं भवणा सोहंति हु णिरुवमायारा ॥ २०८६

उन प्रत्येक पर्वतोंका मध्यविस्तार सातसौ पचास योजन और शिखरतलमें विस्तारका प्रमाण पांचसौ योजन है ॥ २०७८ ॥ ७५० । ५०० ।

इनकी परिधियां तिगुणे विस्तारसे अधिक है । यमकपर्वतोंकी गहराई अपनी उंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण है ॥ २०७९ ॥

प्रत्येक यमकपर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमें पांचके वन अर्थात् एकसौ पच्चीस कोस विस्तारसे सहित और इससे दूनी उंचाईसे संपन्न दिव्य प्रासाद है ॥ २०८० ॥ १२५ । २५० ।

सुवर्ण, चांदी एवं रत्नोंसे निर्मित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त और उत्तम तोरण-द्वारोंसे रमणीय ये सब प्रासाद अपनी उंचाईके अर्धभागप्रमाण विस्तारसे सहित हैं ॥ २०८१ ॥

१२५ ।

यमकपर्वतोंके ऊपर और भी दिव्य प्रासाद हैं । उनकी उंचाई व विस्तारादिका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ २०८२ ॥

उपवनखण्डोंसे सहित, पुष्करिणी, कूप व वापिकाओंसे रमणीय, और प्रकाशमान उत्तम रत्नदीपकोंसे संयुक्त वे प्रासाद विराजमान हैं ॥ २०८३ ॥

इन प्रासादोंमें पर्वतोंके सदृश नामवाले व्यन्तरदेव निवास करते हैं । इनमेंसे प्रत्येक दश धनुष ऊंचे और एक पल्यप्रमाण आयुसे सहित हैं ॥ २०८४ ॥

उनमेंसे प्रत्येकके सामानिक, तनुरक्ष, सप्तानीक, तीनों पारिषद, किल्विषिक, आभियोग्य और प्रकीर्णक देव होते हैं ॥ २०८५ ॥

सुवर्ण, चांदी एवं रत्नोंसे निर्मित सामानिकप्रभृति देवोंके प्रासाद और अनुपम आकारवाले उनकी देवियोंके भवन शोभायमान हैं ॥ २०८६ ॥

१ द ब दव्व.

जमकंमेघसुराणं भवणेहिंतो दिसाए पुव्वाए[1] । एक्केक्कं जिणगेहा पंडुगजिणगेहसारिच्छा ॥ २०८७
पंडुगजिणगेहाणं मुहमंडवपहुदिवण्णणा सव्वा । जा पुव्वस्सिं भणिदा सा जिणभवणाण एदाणं ॥ २०८८
जमकंमेघगिरीदो पंचसया जोयणाणि गंतूणं । पंचदहा[2] पत्तेक्कं सहस्सदलजोयणंतरिदा ॥ २०८९
५००।
उत्तरदक्खिणदीहा सहस्समेक्कं हवंति पत्तेक्कं । पंचसयजोयणाइं रुंदा[3] दसजोयणवगाढा ॥ २०९०
१०००। ५००। १०।
णिसहकुरुसूरसुलसा विज्जूणामेह होंति ते पंच । पंचाणं बहुमज्झे सीदोदा सा णदी[4] सरिया ॥ २०९१
होंति दहाणं मज्झे अंबुजकुसुमाण दिव्वभवणेसुं । णियणियदहणामाणं[5] णागकुमाराण वासा वि ॥ २०९२
अवसेसवण्णणाओ जाओ पउमद्दहम्मि[6] भणिदाओ । ताओ चिय एदेसुं णादव्वाओ वरदहेसुं ॥ २०९३
एक्केक्कस्स दहस्स य पुव्वदिसाए य अवरदिब्भाए[7] । दह दह कंचणसेला जोयणसयमेत्तउच्छेहा[8] ॥ २०९४
१००।
रुंदं मूलम्मि सदं पण्णत्तरि जोयणाणि मज्झम्मि । पण्णासा सिहरतले पत्तेक्कं कणयसेलाणं[9] ॥ २०९५
१००। ७५। ५०।

यमक और मेघ सुरोंके भवनोंसे पूर्वदिशामें पाण्डुकवनके जिनमन्दिरसदृश एक एक जिनभवन हैं ॥ २०८७ ॥

पहिले पाण्डुकवनमें स्थित जिनभवनोंके मुखमण्डपादिकका जो सब वर्णन किया गया है, वही वर्णन इन जिनभवनोंका भी समझना चाहिये ॥ २०८८ ॥

यमक और मेघगिरिसे आगे पांचसौ योजन जाकर पांच ह्रद हैं, जिनमें प्रत्येकके बीच अर्ध सहस्र अर्थात् पांचसौ योजनका अन्तराल है ॥ २०८९ ॥ ५०० ।

प्रत्येक ह्रद एक हजार योजनप्रमाण उत्तर-दक्षिण लंबे, पांचसौ योजन चौड़े और दश योजन गहरे हैं ॥ २०९० ॥ १००० । ५०० । १० ।

निषध, कुरु (देवकुरु), सूर, सुलस और विद्युत्, ये उन पांच ह्रदोंके नाम हैं। इन पांचों ह्रदोंके बहुमध्यभागमेंसे सीतोदा नदी गई है ॥ २०९१ ॥

ह्रदोंके मध्यमें कमलपुष्पोंके दिव्य भवनोंमें अपने अपने ह्रदके नामवाले नागकुमारदेवोंके निवास हैं ॥ २०९२ ॥

अवशेष वर्णनायें जो पद्मह्रदके विषयमें कही गई हैं, वे ही इन उत्तम ह्रदोंके विषयमें भी जानना चाहिये ॥ २०९३ ॥

प्रत्येक ह्रदके पूर्व और पश्चिम दिग्भागमें एकसौ योजन ऊंचे दश दश कांचनशैल हैं ॥ २०९४ ॥ १०० ।

इन प्रत्येक कनकपर्वतोंका विस्तार मूलमें सौ, मध्यमें पचत्तर और शिखरतलमें पचास योजनप्रमाण है ॥ २०९५ ॥ १०० । ७५ । ५० ।

१ ब भवणेहिंते. २ द पुव्वाय. ३ द ब पंचदहो. ४ द ब रुंदं. ५ द ब रदा. ६ द ब °णामाओ. ७ द णामा, ब णासा. ८ द ब जादी पउद्दहम्मि. ९ द ब °उच्छेहो. १० द जणय, ब जाणय.

पणवीसजोयणाइं अवगाढा ते फुरंतमणिकिरणा । तिगुणिदपरियविच्छारा अदिरित्ता ताण परिहीओ ॥ २०९६
२५ ।

चउतोरणवेदीहिं मूले उवरिम्मि उववणवणेहिं । पोक्खरणीहिं रम्मा कणयगिरी मणहरा सव्वे ॥ २०९७
कणयगिरीणं[1] उवरिं पासादा कणयरजदरयणमया । णच्चंतधयवदाया कालागरुधूवगंधड्ढा ॥ २०९८
यमकंमेघगिरि व्व कंचणसेलाण वण्णणं सेसं । णवरि विसेसो कंचणणामवेंतराणं[2] वासेदे ॥ २०९९
दुसहस्सजोयणाणिं बाणउदी दो कलाउ पविहत्ता । उणवीसेहिं गच्छिय विज्जुदहादो[3] य उत्तरे भागे ॥२१००
२०९२ । क २ ।
१९
चेट्ठेदि दिव्ववेदी जोयणकोसद्धउदयविच्छारा । पुव्वावरभाएसुं संलग्गा गयदंतसेलाणं ॥ २१०१
जो १ । को ½ ।
२
चरियट्टालयविउलो बहुतोरणदारसंजुदा रम्मा । दारोवरिमतलेसुं सा जिणभवणेहिं संपुण्णा ॥ २१०२
पुव्वावरभाएसुं सीदोदणदीए भद्दसालवणे । सिद्धिकयंजणसेला णामेणं दिग्गइंदित्ति[4] ॥ २१०३
जोयणसयमुत्तुंगा तेत्तियपरिमाणमूलविच्छारा । उस्सेहचउरिमगाढा पण्णासा सिहरविक्खंभो ॥ २१०४
१०० । १०० । २५ । ५० ।

प्रकाशमान मणिकिरणोंसे सहित वे पर्वत पच्चीस योजन गहरे हैं । इनकी परिधियां अपने तिगुणे विस्तारसे अधिक हैं ॥ २०९६ ॥ २५ ।

ये सब मनोहर कनकगिरि मूलमें व ऊपर चार तोरणवेदियों, वन-उपवनों और पुष्करिणियोंसे रमणीय हैं ॥ २०९७ ॥

कनकगिरियोंके ऊपर सुवर्ण, चांदी एवं रत्नोंसे निर्मित, नाचती हुई ध्वजापताकाओंसे सहित और कालागरु धूपकी गन्धसे व्याप्त प्रासाद हैं ॥ २०९८ ॥

कांचनशैलोंका शेष वर्णन यमक और मेघगिरिके समान है । विशेषता केवल इतनी है कि ये पर्वत कांचन नामक व्यन्तर देवोंके निवास हैं ॥ २०९९ ॥

विद्युत्प्रभसे उत्तरकी ओर दो हजार बानबे योजन और उन्नीससे विभक्त दो कलाप्रमाण (२०९२$\frac{२}{१९}$) जाकर एक योजन ऊंची, अर्ध कोसप्रमाण विस्तारसे सहित और पूर्व-पश्चिम भागोंमें गजदन्तपर्वतोंसे संलग्न दिव्य वेदी स्थित है ॥ २१००-२१०१ ॥ यो. १ । को. ½ ।

वह वेदी विपुल मार्ग और अट्टालयोंसे सहित, बहुत तोरणद्वारोंसे संयुक्त और द्वारोंके उपरिम भागोंमें स्थित जिनभवनोंसे परिपूर्ण है ॥ २१०२ ॥

भद्रशालवनके भीतर सीतोदानदीके पूर्व-पश्चिम भागोंमें सिद्धिक (स्वस्तिक) और अंजन नामक दिग्गजेन्द्र पर्वत हैं ॥ २१०३ ॥

ये पर्वत एकसौ योजन ऊंचे, इतने ही प्रमाण मूलविस्तारसे सहित और ऊंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण पृथिवीमें गहरे हैं । तथा इनका शिखरविस्तार पचास योजनमात्र है ॥ २१०४ ॥

१०० । १०० । ५० । २५ ।

१ द ब कणयमईणं. २ द ब णामा वेंतरं पि. ३ द ब उज्जुदहादो. ४ द ब विरदा. ५ द ब दिग्गरिंदित्ति.

पुव्वं पिव वणसंडा मूले उवरिम्मि दिग्गयाणं[1] पि । वरवेदीदारजुदा समंतदो सुंदरा होंति ॥ २१०५
एदाणं परिहीओ वासेणं तिगुणिदेण अधियाओ । ताण उवरिम्मि दिव्वा पासादा कणयरयणमया ॥ २१०६
पणघणकोसायामा तद्दलवासा हवंति पत्तेक्कं । सव्वे सरिसुच्छेहा वासेण दिवड्ढगुणिदेणं ॥ २१०७

१२५ । १२५ । ३७५ ।
२ ४

एदेसुं भवणेसुं कीडेदि जमो त्ति वाहणो देवो । सक्कस्स विकुव्वंतो एरावदहत्थिरूवेणं ॥ २१०८
तत्तो सीदोदाए पच्छिमतीरे जिणिंदपासादो[2] । मंदरदक्खिणभागे तिहुवणचूडामणीणामो ॥ २१०९
उच्छेहवासपहुदिं पंडुगजिणणाहमंदिरादिहिंतो । मुहमंडवमधिठाणप्पहुदिं[3] च चउग्गुणं तस्स ॥ २११०
मंदरपच्छिमभागे सीदोदणदीए[4] उत्तरे तीरे । चेट्ठदि जिणिंदभवणं[5] पुव्वं पिव वण्णेहिं जुदं ॥ २१११
सीदोदवाहिणीए[6] दक्खिणतीरम्मि भद्दसालवणे । चेट्ठेदि कुमुदसेलो[7] उत्तरतीरे पलासगिरी ॥ २११२
एदाओ वण्णणाओ सयलाओ दिग्गइंदसरिसाओ । णवरि विसेसो एसो वासो वरुणस्स[8] उत्तरिंदस्स ॥२११३

इन दिग्गजपर्वतोंके ऊपर व मूलमें पहिलेके ही समान उत्तम वन-वेदीद्वारोंसे संयुक्त और सब ओर सुन्दर वनखण्ड हैं ॥ २१०५ ॥

इनकी परिधियां तिगुणे विस्तारसे अधिक हैं । उन पर्वतोंके ऊपर सुवर्ण और रत्नमय दिव्य प्रासाद हैं ॥ २१०६ ॥

इन सबमें प्रत्येक प्रासाद पांचके घन अर्थात् एकसौ पच्चीस कोसप्रमाण लंबे, इससे आधे विस्तारसे सहित और डेढ़गुणे विस्तारके सदृश ऊंचे हैं ॥ २१०७ ॥ १२५ । $\frac{१२५}{२}$ । $\frac{३७५}{४}$ ।

इन भवनोंमें सौधर्म इन्द्रका यम नामक वाहनदेव क्रीड़ा किया करता है । यह देव ऐरावतहाथीके रूपसे विक्रिया करता है ॥ २१०८ ॥

इसके आगे मन्दरपर्वतके दक्षिण भागमें सीतोदानदीके पश्चिम किनारेपर त्रिभुवनचूडामणि नामक जिनेन्द्रप्रासाद है ॥ २१०९ ॥

उस जिनेन्द्रप्रासादकी ऊंचाई व विस्तारप्रभृति तथा मुखमण्डप व अधिष्ठानप्रभृति पाण्डुकवनके जिनेन्द्रमन्दिरोंसे चौगुणे हैं ॥ २११० ॥

मन्दरपर्वतके पश्चिम भागमें सीतोदानदीके उत्तर किनारेपर पूर्वके ही समान वर्णनोंसे युक्त जिनेन्द्रभवन स्थित है ॥ २१११ ॥

भद्रशालवनमें सीतोदानदीके दक्षिण किनारेपर कुमुदशैल और उत्तर किनारेपर पलाशगिरि स्थित है ॥ २११२ ॥

ये सम्पूर्ण वर्णनायें दिग्गजेन्द्रपर्वतोंके सदृश हैं । विशेष केवल यह है कि यहां उत्तरेन्द्रके लोकपाल वरुणका निवास है ॥ २११३ ॥

---

१ द ब दिग्गदाणं. २ द ब 'पासादा. ३ द ब °जिणणाम°. ४ द ब मुहमंडलमदिवासं पहुदि. ५ द जिणंदभवणं. ६ द ब कुणदिसेलं. ७ द ब एसो वरुणेसुं.

तत्तो पच्छिमभागे कणयमया भद्दसालवणवेदी । णीलणिसहाचलाणं उववणवेदीए[1] संलग्गा ॥ २११४
तेत्तीससहस्साइं जोयणया छस्सयाइं चुलसीदी । उणवीसहिदाओ चउक्कलाओ वेदीए दीहत्तं ॥ २११५
उवरिम्मि णीलगिरिणो दिव्वदहो केसरि त्ति विक्खादो । तस्स य दक्खिणदारेणं गच्छदि वरणई सीदा॥२११६
सीदोदाय सरिच्छा पडिऊणं सीदकुंडे[2]उवरिम्मि । तद्दक्खिणदारेणं णिक्कामदि दक्खिणमुहेणं ॥ २११७
णिक्कमिदूणं वच्चदि दक्खिणभागेण जाव मेरुगिरिं । दोकोसेहिमपाविय पुव्वमुही वलदि तत्तिअंतरिदा ॥ २११८
सेलम्मि[3] मालवंते गुहाए दक्खिणमुहाए पविसेदि । णिस्सरिदूणं गच्छदि कुटिला[4] य मेरुमज्झंतं ॥ २११९
तग्गिरिमज्झपदेसं णियमज्झपदेसपणिधियं कहुं[5] । पुव्वमुहेणं गच्छदि पुव्वविदेहस्स बहुमज्झे ॥ २१२०
जंबूदीवस्स तदो जगदीविलदारएण संचरियं । परिवारणदीहि जुदा पविसदि लवणण्णवं सीदा ॥२१२१
रुंदावगाढपहुदिं तह वेदीउववणादिकं सव्वं । सीदोदासारिच्छं सीदणदीए वि णादव्वं[6] ॥ २१२२
णीलाचलदक्खिणदो एक्कं गंतूण जोयणसहस्सं । सीदादोपासेसुं चेट्ठंते दोण्णि जमकगिरी ॥ २१२३
१०००।

इसके आगे पश्चिम भागमें नील व निषध पर्वतकी उपवनवेदीसे संलग्न सुवर्णमय भद्रशालवनवेदी है ॥ २११४ ॥

वेदीकी लंबाई तेतीस हजार छहसौ चौरासी योजन और उन्नीससे भाजित चार कला-प्रमाण है ॥ २११५ ॥

नीलपर्वतके ऊपर केसरी नामसे प्रसिद्ध दिव्य द्रह है। उसके दक्षिणद्वारसे सीता नामक उत्तम नदी निकलती है ॥ २११६ ॥

सीतानदी सीतोदाके समान ही सीताकुंडमें गिरकर दक्षिणमुख होती हुई उसके दक्षिणद्वारसे निकलती है ॥ २११७ ॥

कुंडसे निकलकर वह नदी मेरुपर्वत तक दक्षिणकी ओरसे जाती हुई दो कोसोंसे उस मेरुपर्वतको न पाकर उतनेमात्र अन्तरसहित पूर्वकी ओर मुड़ जाती है ॥ २११८ ॥

उक्त नदी माल्यवंतपर्वतकी दक्षिणमुखवाली गुफामें प्रवेश करती है। पश्चात् उस गुफामेंसे निकलकर कुटिलरूपसे मेरुपर्वतके मध्यभाग तक जाती है ॥ २११९ ॥

उस पर्वतके मध्यभागको अपना मध्यप्रदेशप्रणिधि करके वह सीतानदी पूर्वविदेहके ठीक बीचमेंसे पूर्वकी ओर जाती है ॥ २१२० ॥

अनन्तर जम्बूद्वीपकी जगतीके बिलद्वारमेंसे जाकर वह सीतानदी परिवारनदियोंसे युक्त होती हुई लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २१२१ ॥

सीतानदीका विस्तार व गहराई आदि तथा उसकी वेदी और उपवनादिक सब सीतोदाके सदृश ही जानना चाहिये ॥ २१२२ ॥

नीलपर्वतके दक्षिणमें एक हजार योजन जाकर सीताके दोनों पार्श्वभागोंमें दो यमकगिरि स्थित हैं ॥ २१२३ ॥ १०००।

---

१ ब वेदीओ. २ द ब सीदकुड°. ३ द ब सीलम्मि. ४ ब कुटिलाया. ५ द ब कूडो. ६ द ब णादव्वा.

पुव्वस्सिं चित्तणगो[1] पच्छिमभाए विचित्तकूडो[2] य । जमकमेघगिरि व्व सव्वं चिय वण्णणं ताणं ॥ २१२४
जमकगिरिंदाहिंतो पंचसया जोयणाणि गंतूणं । पंच दहा पत्तेक्कं सहस्सदलजोयणंतरिदा ॥ २१२५
५००।
णीलकुरुइंदुएरावदो य णामेहिं मालवंतो य । ते[4] दिव्वदहा णिसहद्दहादिवरवण्णणेहिं जुदा ॥ २१२६
दुसहस्सा बाणउदी जोयण दोभाग ऊणवीसाहिदा । चरिमदहादो दक्खिणभागे[5] गंतूण होदि वरवेदी ॥२१२७
पुव्वावरभाएसुं सा गयदंताचलाण संलग्गा । इगिजोयणमुत्तुंगा जोयणअट्ठंसवित्थारा ॥ २१२८
जो १ । दं १०००।[6]
चरियट्टालयपउरा सा वेदी विविहधयवडेहि जुदा । दारोवरिमट्ठिदेहिं[9] जिणिंदभवणेहिं रमणिज्जा ॥ २१२९
वरभद्दसालमज्झे सीदादुतडेसु दिग्गइंदगिरी । रोचणवत्तंसकूडे सट्टियगिरिवण्णणेहिं जुदा ॥ २१३०
णवरि विसेसो एक्को ईसाणिंदस्स वाहणो[11] देवो । णामेण वइसमणो तेसुं लीलाए चेट्ठेदि ॥ २१३१
सीदातरंगिणीए पुव्वम्मि तदो जिणिंदपासादो । मंदरउत्तरपासे गयदंतब्भंतरे होदि ॥ २१३२

सीताके पूर्वमें चित्रनग और पश्चिम भागमें विचित्रकूट है । इनका सब वर्णन यमक और मेघगिरिके सदृश ही समझना चाहिये ॥ २१२४ ॥

यमकपर्वतोंके आगे पांचसौ योजन जाकर पांच द्रह हैं, जिनमेंसे प्रत्येक अर्ध सहस्र अर्थात् पांचसौ योजनप्रमाण दूरीपर है ॥ २१२५ ॥ ५०० ।

नील, कुरु (उत्तरकुरु), चन्द्र, ऐरावत और माल्यवन्त, ये उन दिव्य द्रहोंके नाम हैं । ये दिव्य द्रह निषधद्रहादिकके उत्तम वर्णनोंसे युक्त हैं ॥ २१२६ ॥

अन्तिम द्रहसे दो हजार बानवे योजन और उन्नीससे भाजित दो भागप्रमाण जाकर दक्षिणभागमें उत्तम वेदी है ॥ २१२७ ॥

वह वेदी पूर्व-पश्चिम भागोंमें गजदन्तपर्वतोंसे संलग्न, एक योजन ऊंची और योजनके आठवें भागप्रमाण विस्तारसे सहित है ॥ २१२८ ॥ यो. १ । दं. १००० ।

प्रचुर मार्ग व अट्टालिकाओंसे सहित और नाना प्रकारकी ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त वह वेदी द्वारोंके उपरिम भागोंमें स्थित जिनेन्द्रभवनोंसे रमणीय है ॥ २१२९ ॥

उत्तम भद्रशालवनके मध्यमें सीतानदीके दोनों किनारोंपर स्वस्तिक [व अंजन] गिरिके समान वर्णनोंसे युक्त रोचन व अवतंसकूट नामक दिग्गजेन्द्रगिरि हैं ॥ २१३० ॥

विशेषता केवल एक यही है कि उन भवनोंमें ईशानेन्द्रका वैश्रवण नामक वाहनदेव लीलासे निवास करता है ॥ २१३१ ॥

गजदन्तके अभ्यन्तर भागमें सीतानदीके पूर्व और मन्दरपर्वतके उत्तरपार्श्वभागमें जिनेन्द्रप्रासाद स्थित है ॥ २१३२ ॥

१ द ब चेत्तणगो. २ द ब विचित्तकूडा. ३ द ब °कुरुद्दहएवावदा. ४ ब ते दिव्व°. ५ द ब भागा. ६ द ब अद्धंस°. ७ द ब दं ४०००। ८ ब वरियट्टालय°. ९ द दारोवरिमरिदेहिं, ब दारोपरमतलेहिं. १० द ब रावणतवस्स कूडेसट्ठिगिरि°. ११ द ब वाहणा.

सीदाए दक्खिणए जिणभवणं भद्दसालवणमज्झे । मंदरपुव्वदिसाए पुव्वोदिदवण्णणाजुत्तं[1] ॥ २१३३
सीदाणदिए तत्तो उत्तरतीरम्मि दक्खिणे तीरे । पुव्वोदिदकमजुत्ता पउमोत्तरणीलदिग्गइंदाओ ॥ २१३४
णवरि विसेसो एक्को सोमो णामेण चेट्ठदे तेसुं । सोहम्मिंदस्स तहा वाहणदेओ जमो णाम ॥ २१३५
मेरुगिरिपुव्वदक्खिणपच्छिमए उत्तरम्मि पत्तेक्कं । सीदासीदोदाए पंच दहा केइ इच्छंति ॥ २१३६
ताणं उवदेसेण य एक्केकदहस्स दोसु तीरेसुं । पण पण कंचणसेला पत्तेक्कं होंति णियमेणं ॥ २१३७
[पाठान्तरम् ।]
मंदरगिरिंददक्खिणविभागगदभद्दसालवेदीदो । दक्खिणभायम्मि पुढं णिसहस्स य उत्तरे भागे ॥ २१३८
विज्जुप्पहपुव्वादिसा सोमणसादो य पच्छिमे भागे । पुव्वावरतीरेसुं सीदोदे होदि देवकुरू ॥ २१३९
णिसहवणवेदिपासे तस्स य पुव्वावरेसु दीहत्तं । तेवण्णसहस्साणिं जोयणमाणं विणिद्दिट्ठं ॥ २१४०
अट्ठसहस्सा चउसयचउत्तीसा मेरुदक्खिणदिसाए । सिरिभद्दसालवेदियपासे तक्खेत्तदीहत्तं ॥ २१४१
८४३४ ।
एक्करससहस्साणिं पंचसया जोयणाणि बाणउदी । उणवीसहिदा दुकला तस्सुत्तरदक्खिणे रुंदो ॥ २१४२
११५९२ । २ ।
१९

भद्रशालवनके मध्यमें सीताके दक्षिण और मन्दरकी पूर्वदिशामें पूर्वोक्त वर्णनासे सहित जिनभवन है ॥ २१३३ ॥

इसके आगे सीतानदीके उत्तर और दक्षिण किनारोंपर पूर्वोक्त क्रमसे युक्त पद्मोत्तर और नील नामक दिग्गजेन्द्र पर्वत स्थित हैं ॥ २१३४ ॥

यहां विशेषता एक यह है कि उन पर्वतोंपर सौधर्म इन्द्रके सोम और यम नामक वाहन-देव रहते हैं ॥ २१३५ ॥

कितने ही आचार्य मेरुपर्वतके पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर, इनमेंसे प्रत्येक दिशामें सीता तथा सीतोदानदीके पांच द्रहोंको स्वीकार करते हैं ॥ २१३६ ॥

उनके उपदेशसे एक एक द्रहके दोनों किनारोंमेंसे प्रत्येक किनारेपर नियमसे पांच पांच कांचनशैल हैं ॥ २१३७ ॥ [पाठान्तर ।]

मन्दरपर्वतके दक्षिणभागमें स्थित भद्रशालवेदीसे दक्षिण, निषधसे उत्तर, विद्युत्प्रभके पूर्व और सौमनसके पश्चिम भागमें सीतोदाके पूर्व-पश्चिम किनारोंपर देवकुरु है ॥ २१३८–२१३९ ॥

निषधपर्वतकी वनवेदीके पासमें उसकी पूर्व-पश्चिम लंबाई तिरेपन हजार योजनप्रमाण बतलाई गई है ॥ २१४० ॥

मेरुकी दक्षिणदिशामें श्रीभद्रशालवेदीके पास उस क्षेत्रकी लंबाई आठ हजार चारसौ चौंतीस योजनमात्र है ॥ २१४१ ॥ ८४३४ ।

उसका विस्तार उत्तर-दक्षिणमें ग्यारह हजार पांचसौ बानवे योजन और उन्नीससे भाजित दो कलामात्र है ॥ २१४२ ॥ ११५९२$\frac{२}{१९}$ ।

१ द ब उत्ता.

पणुवीससहस्साइं णवसयइगिसीदिजोयणा रुंदो । दोगयदंतसमीवे वंकसरूवेण णिद्दिट्ठं ॥ २१४३

२५९८१ ।

णिसहवरवेदिवारणदंताचलपासकुंडणिस्सरिदा । चउसीदिसहस्साणिं णदीउ पविसंति[1] सीदोदं ॥ २१४४

८४००० ।

सुसमसुसममि कालें जा भणिदा वण्णणा विचित्तयरा । सा हाणीए विहीणा एदस्सिं णिसहसेलें य ॥२१४५

णिसहम्सुत्तरपासें पुव्वाए दिसाए विज्जुपहगिरिणो । सीदोदवाहिणीए पच्छिमदिसाए भागम्मि ॥ २१४६

मंदरगिरिंदणइरिदिभागे खेत्तम्मि देवकुरुणामे । सम्मलिरुक्खाण थलं रजदमयं चेट्टदे रम्मं ॥ २१४७

पंचसयजोयणाणिं हेट्ठतलें तस्स होदि वित्थारो । पण्णारस परिहीए एक्कसीदिजुदा य तस्सधिया ॥ २१४८

५०० । १५८१ ।

मज्झिमउदयपमाणं अट्ठं चिय जोयणाणि एदस्स । सव्वंतेसुं उदओ दो दो[2] कोसं पुढं होदि ॥ २१४९

८ । २ ।

सम्मलिरुक्खाण थलं तिण्णि वणा वेढिदूण चेट्ठंति । विविहवररुक्खछण्णा देवासुरमिहुणसंकिण्णा ॥२१५०

उवरिं थलस्स चेट्ठदि समंतदो वेदिया सुवण्णमई । दारोवरिमतलेसुं जिणिंदभवणेहिं संपुण्णा ॥ २१५१

दोनों गजदन्तोंके समीपमें उसका विस्तार वक्ररूपसे पचीस हजार नौसौ इक्यासी योजन-प्रमाण निर्दिष्ट किया गया है ॥ २१४३ ॥ २५९८१ ।

निषधपर्वतकी उत्तम वेदी और गजदन्तपर्वतोंके पासमें स्थित कुण्डोंसे निकली हुई चौरासी हजार नदियां सीतोदानदीमें प्रवेश करती हैं ॥ २१४४ ॥ ८४००० ।

सुषमसुषमाकालके विषयमें जो विचित्रतर वर्णन किया गया है, वही वर्णन हानिसे रहित इस निषधशैलसे परे देवकुरुक्षेत्रमें समझना चाहिये ॥ २१४५ ॥

देवकुरुक्षेत्रके भीतर निषधपर्वतके उत्तरपार्श्वभागमें, विद्युत्प्रभपर्वतसे पूर्वदिशामें, सीतोदा-नदीकी पश्चिमदिशामें और मन्दरगिरिके नैऋत्यभागमें रमणीय रजतमय शाल्मलीवृक्षोंका स्थल स्थित है ॥ २१४६–२१४७ ॥

उसका विस्तार नीचे पांचसौ योजन और परिधि पन्द्रहसौ इक्यासी योजनसे अधिक है ॥ २१४८ ॥ ५०० । १५८१ ।

इसकी मध्यम उंचाईका प्रमाण आठ योजन और सबके अन्तमें पृथक् पृथक् दो दो कोसमात्र है ॥ २१४९ ॥ यो० ८ । को० २ ।

विविध प्रकारके उत्तम वृक्षोंसे व्याप्त और सुरासुरयुगलोंसे संकीर्ण तीन वन शाल्मलीवृक्षोंके स्थलको वेष्टित करके स्थित हैं ॥ २१५० ॥

स्थलके ऊपर चारों ओर द्वारोंके उपरिम भागमें स्थित जिनेन्द्रभवनोंसे परिपूर्ण सुवर्णमय वेदिका स्थित है ॥ २१५१ ॥

१ द ब पविसत्त. २ द ब एदासिं. ३ द संबलि°. ४ द दोदो.

अट्ठजोयणउत्तुंगो बारसचउमूलउड्ढवित्थारो । समवट्टो रजदमओ पीढो वेदीए मज्झम्मि ॥ २१५२

८ । १२ । ४ ।

तस्स बहुमज्झदेसे सपादपीढो य सम्मलीरुक्खो । सुप्पहणामो बहुविहवररयणुज्जोयसोहिल्लो ॥ २१५३

उच्छेहजोयणेणं अट्ठ चिय जोयणाणि उत्तुंगो । तस्सावगाढभागो वज्जमओ दोण्णि कोसाणिं ॥ २१५४

८ । २ ।

सोहेदि तस्स खंधो[1] फुरंतवरकिरणपुस्सरागमओ । इगिकोसबहलजुत्तो जोयणजुगमेत्तउत्तुंगो ॥ २१५५

को १ । २ ।

जेट्ठाओ साहाओ चत्तारि हवंति चउदिसाभाए । छज्जोयणदीहाओ तेत्तियमेत्तंतराउ पत्तेक्कं ॥ २१५६

६ । ६ ।

साहासुं पत्ताणिं मरगयवेरुलियणीलइंदाणिं । विविहाइं कक्केयणचामीयरविद्दममयाणिं ॥ २१५७

सम्मलितरुणो अंकुरकुसुमफलाणिं विचित्तरयणाणिं । पणवण्णसोहिदाणिं णिरुवमरूवाणि रेहंति ॥ २१५८

जीउप्पत्तिलयाणं कारणभूदो अणाइणिहणो सो । सम्मलिरुक्खो[2] चामरकिंकिणिघंटादिकयसोहो[3] ॥ २१५९

इस वेदीके मध्यभागमें आठ योजन ऊंचा और मूलमें बारह तथा ऊपर चार योजन-प्रमाण विस्तारसे सहित समवृत्त रजतमय पीठ है ॥ २१५२ ॥ ८ । १२ । ४ ।

उस पीठके बहुमध्यभागमें पादपीठसहित और बहुत प्रकारके उत्कृष्ट रत्नोंके उद्योतसे सुशोभित सुप्रभ नामक शाल्मलीवृक्ष स्थित है ॥ २१५३ ॥

वह वृक्ष उत्सेधयोजनसे आठ योजन ऊंचा है । उसका वज्रमय अवगाढ़भाग दो कोस-मात्र है ॥ २१५४ ॥ यो. ८ । को. २ ।

उस वृक्षका एक कोस बाहल्यसे सहित, दो योजनमात्र ऊंचा और प्रकाशमान उत्तम किरणोंसे संयुक्त पुष्यरागमय (पुखराजमय) स्कन्ध शोभायमान है ॥ २१५५ ॥

को. १ । यो. २ ।

इस वृक्षकी चारों दिशाओंमें चार महाशाखायें हैं । इनमेंसे प्रत्येक शाखा छह योजन लंबी और इतनेमात्र अन्तरसे सहित है ॥ २१५६ ॥ ६ । ६ ।

शाखाओंमें मरकत, वैडूर्य, इन्द्रनील, कर्केतन, सुवर्ण और मूंगेसे निर्मित विविध प्रकारके पत्ते हैं ॥ २१५७ ॥

शाल्मलीवृक्षके विचित्र रत्नस्वरूप और पांच वर्णोंसे शोभित अनुपम रूपवाले अंकुर, फूल एवं फल शोभायमान हैं ॥ २१५८ ॥

वह शाल्मलीवृक्ष स्वयं अनादिनिधन होकर भी जीवोंकी उत्पत्ति एवं नाशका कारण होता हुआ चामर, किंकिणी और घंटादिसे शोभायमान है ॥ २१५९ ॥

---

१ द ब खंदा. २ द ब °णिहणा. ३ द ब °रुक्खा. ४ द ब °किंकिणिपारादिकयसोहा.

तद्दक्खिणसाहाए जिणिंदभवणं विचित्तरयणमयं । चउहिदतिकोसउदयं कोसायामं तदद्धवित्थारं ॥ २१६०

३ । को १ । १ ।
४ २

जं पंडुगजिणभवणे भणियं णिस्सेसवण्णणं किं पि । एदस्सिं णादव्वं सुरदुंदुभिसद्दगहिरयरे[1] ॥ २१६१

सेसासुं साहासुं कोसायामा तदद्धविक्खंभा[2] । पादोणकोसतुंगा हवंति एक्केकपासादा ॥ २१६२

को १ । १ । ३ ।
२ ४

चउतोरणवेदिजुदा रयणमया विविहदिव्वधूवघडा । पज्जलंतरयणदीवा ते सव्वे धयवदाइण्णा ॥ २१६३

सयणासणपमुहाणिं भवणेसुं णिम्मलाणि विरजाणिं । पकिदिमउवाणि तणुमणणयणाणंदणसरूवाणिं ॥ २१६४

चेट्ठदि तेसु पुरेसुं वेणू णामेण वेंतरो देओ । बहुविहपरिवारजुदो दुइजओ वेणुधारि त्ति ॥ २१६५

सम्मद्दंसणसुद्धा सम्माइट्ठीण वच्छला दोण्णि । ते दसचाउत्तुंगा पत्तेक्कं पल्लपक्काऊ ॥ २१६६

सम्मलिदुमस्स बारस समंतदो होंति दिव्ववेदीओ । चउगोउरजुत्ताओ फुरंतवररयणसोहाओ ॥ २१६७

उस्सेधगाउदेणं[3] बेगाउदमेत्तउस्सिदा ताओ । पंचसया चावाणिं रुंदेणं होंति वेदीओ ॥ २१६८

उसकी दक्षिण शाखापर चारसे भाजित तीन कोसप्रमाण ऊंचा, एक कोस लंबा और लंबाईसे आधे विस्तारवाला विचित्र रत्नमय जिनभवन है ॥ २१६० ॥ को. $\frac{3}{4}$ । १ । $\frac{1}{2}$ ।

पाण्डुकवनमें स्थित जिनभवनके विषयमें जो कुछ भी वर्णन किया गया है वही सम्पूर्ण वर्णन देवदुंदुभी बाजोंके शब्दोंसे अतिशय गम्भीर इस जिनेन्द्रभवनके विषयमें भी जानना चाहिये ॥ २१६१ ॥

अवशिष्ट शाखाओंपर एक कोस लंबे, इससे आधे विस्तारवाले और पौन कोस ऊंचे एक एक प्रासाद हैं ॥ २१६२ ॥ को. १ । $\frac{1}{2}$ । $\frac{3}{4}$ ।

वे सब रत्नमय प्रासाद चार तोरणवेदियोंसे सहित, विविध प्रकारके दिव्य धूपघटोंसे संयुक्त, जलते हुए रत्नदीपकोंसे प्रकाशमान और ध्वजा-पताकाओंसे व्याप्त हैं ॥ २१६३ ॥

इन भवनोंमें निर्मल, धूलिसे रहित, शरीर, मन एवं नयनोंको आनन्ददायक और स्वभावसे मृदुल शय्यायें व आसनादिक स्थित हैं ॥ २१६४ ॥

उन पुरोंमें बहुत प्रकारके परिवारसे सहित वेणु नामक व्यन्तर देव और द्वितीय वेणुधारी देव रहता है ॥ २१६५ ॥

सम्यग्दर्शनसे शुद्ध और सम्यग्दृष्टियोंसे प्रेम करनेवाले उन दोनों देवोंमेंसे प्रत्येक दश धनुष ऊंचे व एक पल्यप्रमाण आयुसे सहित हैं ॥ २१६६ ॥

शाल्मलीवृक्षके चारों तरफ चार गोपुरोंसे युक्त और प्रकाशमान उत्तम रत्नोंसे सुशोभित बारह दिव्य वेदियां हैं ॥ २१६७ ॥

वे वेदियां उत्सेधकोससे दो कोसमात्र ऊंची और पांचसौ धनुषप्रमाण विस्तारसे सहित हैं ॥ २१६८ ॥

---

१ द ब एदेसिं. २ द ब गहिरयरो. ३ द ब °विक्खंभो. ४ द उस्सेण गाउदेणं, ब उस्सेण गाउदोणं.

कुलगिरिसरिया सुप्पहणामस्स य सम्मलिदुमस्स । चेट्ठदि उववणसंडाइण्णो सो[1] सु सम्मलीरुक्खो ॥२१६९
तत्तो बिदिया भूमी उववणसंडेहिं विविहकुसुमेहिं । पोक्खरणीवावीहिं सारसपहुदीहिं रमणिज्जा ॥ २१७०
बिदियं व तदियभूमी णवरि विसेसो विचित्तरयणमया । अट्ठुत्तरसयसम्मलिरुक्खा तीए समंतेणं ॥ २१७१
अद्धेण पमाणेणं ते सव्वे होंति सुप्पहाहिंतो । एदेसुं चेट्ठंते वेणुदुगाणं महामण्णा[2] ॥ २१७२
तदियं व तुरिमभूमी चउतोरणउवरिसम्मलीरुक्खा । पुव्वादिसाए तेसुं चउदेवीओ य वेणुजुगलस्स ॥ २१७३
४ । २ । २ ।
तुरिमं व पंचमंमही णवरि विसेसो ण सम्मलीरुक्खा[3] । तत्थ भवंति विचित्ता वावीओ विविहरूवाओ[4] ॥२१७४
छट्ठीए वणसंडो सत्तमभूमीए चउदिसाभागे । सोलससहस्सरुक्खा वेणुजुगरसंगरक्खाणं ॥ २१७५
८००० । ८००० ।
सामाणियदेवाणं चत्तारो होंति सम्मलिसहस्सा । पवणेसाणदिसासुं उत्तरभागम्मि वेणुजुगलस्स ॥ २१७६
२००० । २००० ।
बत्तीससहस्साणिं सम्मलिरुक्खाणि अणलदिब्भाए । भूमीए णवमीए अब्भंतरदेवपरिसाणं ॥ २१७७
१६००० । १६००० ।

इसप्रकार कुलगिरिवेदिकासदृश ही ये सुप्रभ नामक शाल्मलीवृक्षकी वेदिकायें हैं । वह शाल्मलीवृक्ष (प्रथम वेदिकाके भीतर) उपवनखंडोंसे आकीर्ण स्थित है ॥ २१६९ ॥

इसके आगे द्वितीय भूमि विविध प्रकारके फूलोंवाले उपवनखण्डों, पुष्करिणियों, वापियों और सारसादिकोंसे रमणीय है ॥ २१७० ॥

द्वितीय भूमिके समान तृतीय भूमि भी है । परन्तु विशेषता केवल यह है कि तृतीय भूमिमें चारों ओर विचित्र रत्नोंसे निर्मित एकसौ आठ शाल्मलीवृक्ष हैं ॥ २१७१ ॥

वे सब वृक्ष सुप्रभवृक्षकी अपेक्षा आधे प्रमाणसे सहित हैं। इनके ऊपर वेणु और वेणुधारी इन दोनोंके महामान्य देव निवास करते हैं ॥ २१७२ ॥

तृतीय भूमिके समान चतुर्थ भूमि भी है । इसकी पूर्वदिशामें चार तोरणोंपर शाल्मलीवृक्ष हैं, जिनपर वेणुयुगलकी चार देवियां रहती हैं ॥ २१७३ ॥ ४ । २ । २ ।

चतुर्थ भूमिके समान पांचवीं भूमि भी है। विशेष केवल यह है कि इस भूमिमें शाल्मलीवृक्ष तो नहीं है, परन्तु विविध रूपवाली विचित्र वापियां हैं ॥ २१७४ ॥

छठी भूमिमें वनखण्ड और सातवीं भूमिके भीतर चारों दिशाओंमें वेणुयुगलके अंगरक्षक देवोंके सोलह हजार वृक्ष हैं ॥ २१७५ ॥ ८००० । ८००० ।

[आठवीं भूमिमें] वायव्य, ईशान और उत्तरदिशाभागमें वेणुयुगलके सामानिक देवोंके चार हजार शाल्मलीवृक्ष हैं ॥ २१७६ ॥ २००० । २००० ।

नवमीं भूमिके भीतर अग्निदिशामें अभ्यन्तर पारिषद देवोंके बत्तीस हजार शाल्मलीवृक्ष हैं ॥ २१७७ ॥ १६००० । १६००० ।

---

१ द ब संडा अण्णेण. २ द ब महारण्णा. ३ द ब पंचमंहिव. ४ द ब रुक्खं. ५ द विविहरूवाणि.

पुह पुह वीससहस्सा सम्मलिरुक्खाण दक्खिणे भागे। दसमखिदीए मज्झिमपरिससुराणं च वेणुजुगे ॥२१७८
२०००० । २०००० ।

पुह चउवीससहस्सा सम्मलिरुक्खाण णइरिदिविभागे। एक्कारसममहीए बाहिरपरिसामराण दोण्णं पि ॥२१७९
२४००० । २४००० ।

सत्तेसु य अणिएसुं अधिवइदेवाण सम्मलीरुक्खा । बारसमाए महीए सत्त चिय पच्छिमदिसाए ॥ २१८०
७ ।

लक्खं चालसहस्सा वीसुत्तरसयजुदा य ते सव्वे । रम्मा अणाइणिहणा संमिलिदा[1] सम्मलीरुक्खा ॥ २१८१
१४०१२० ।

तोरणवेदीजुत्ता सपादपीढा अकित्तिमायारा । वररयणखचिदसाहा सम्मलिरुक्खा विरायंति ॥ २१८२
वज्जिंदणीलमरगयरविकंतमयंककंतपहुदीहिं । णिण्णासिअंधयारं सुप्पहरुक्खस्स भादि थलं[2] ॥ २१८३
सुप्पहथलस्स[3] विउला समंतदो तिण्णि होंति वणसंडा । विविहफलकुसुमपल्लवसोहिल्लविचित्ततरुछण्णा ॥२१८४
तेसुं पढमम्मि वणे चत्तारो चउदिसासु पासादा । चउहिदतिकोसउदया कोसायामा तदद्धवित्थारा ॥२१८५
३ । १ । १ ।
४ २

दशवीं पृथिवीके दक्षिणभागमें वेणुयुगलसम्बन्धी मध्यम पारिषद देवोंके पृथक् पृथक् बीस हजार शाल्मलीवृक्ष हैं ॥ २१७८ ॥ २०००० । २०००० ।

ग्यारहवीं भूमिके नैऋत्यदिग्विभागमें उक्त दोनों देवोंके बाह्य पारिषद देवोंके पृथक् पृथक् चौबीस हजार शाल्मलीवृक्ष हैं ॥ २१७९ ॥ २४००० । २४००० ।

बारहवीं भूमिमें पश्चिमदिशाकी ओर सात अनीकोंके अधिपति देवोंके सात ही शाल्मली-वृक्ष हैं ॥ २१८० ॥ ७ ।

रमणीय और अनादिनिधन वे सब शाल्मलीवृक्ष मिलकर एक लाख चालीस हजार एकसौ बीस हैं ॥ २१८१ ॥ १४०१२० ।

तोरणवेदियोंसे युक्त, पादपीठोंसे सहित, अकृत्रिम आकारके धारक और उत्तम रत्नोंसे खचित शाखाओंसे संयुक्त वे सब शाल्मलीवृक्ष विराजमान हैं ॥ २१८२ ॥

सुप्रभवृक्षका स्थल वज्र, इन्द्रनील, मरकत, सूर्यकान्त और चन्द्रकान्तप्रभृति मणिविशेषोंसे अन्धकारको नष्ट करता हुआ सुशोभित होता है ॥ २१८३ ॥

सुप्रभस्थलके चारों ओर विविध प्रकारके फल, फूल और पत्तोंसे शोभित ऐसे नाना प्रकारके वृक्षोंसे व्याप्त तीन विस्तृत वनखण्ड हैं ॥ २१८४ ॥

उनमेंसे प्रथम वनके भीतर चारों दिशाओंमें चारसे भाजित तीन कोसप्रमाण ऊंचे, एक कोस लंबे और इससे आधे विस्तारवाले चार प्रासाद हैं ॥ २१८५ ॥ को. ३/४ । १ । १/२ ।

---

१ द ब संमेलिदा. २ द ब तदं. ३ द सुप्पहरुक्खलस्स, ब सुप्पहबलस्स.

भवणाणं विदिसासुं पत्तेक्कं होंति दिव्वरूवाणं । चउ चउ पोक्खरणीओ दसजोयणमेत्तगाढाओ ॥ २१८६
पणवीसजोयणाइं रुंदं पण्णास ताण दोहत्तं । विविहजलणिवहैमंडिदकमलुप्पलकुमुदसंछण्णं ॥ २१८७
मणिमयसोवाणाओ जलयरचत्ताओ[2] ताओ सोहंति । अमरमिहुणाण कुंकुमपंकेणं पिंजरजलाओ ॥ २१८८
पुह पुह पोक्खरणीणं समंतदो होंति अट्ठ कूडाणिं । एदाण उदयपहुदिसु उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ २१८९
वणपासादसमाणा पासादा होंति ताण उवरिम्मि । एदेसुं चेट्ठंते परिवारा वेणुजुगलस्स ॥ २१९०
मंदरउत्तरभागे दक्खिणभागम्मि णीलसेलस्स । सीदाय दोतडेसुं पच्छिमभागम्मि मालवंतस्स ॥ २१९१
पुव्वाए गंधमादणसेलाए दिसाय होदि रमणिज्जो[4] । णामेण उत्तरकुरू विक्खादो भोगभूमि त्ति ॥ २१९२
देवकुरुवण्णणाहिं सरिसाओ वण्णणाओ एदस्स । णवरि विसेसो सम्मलितरुवण्फदी तत्थ ण हवंति ॥ २१९३
मंदरईसाणदिसाभाए णीलस्स दक्खिणे पासे । सीदाए पुव्वतडे पच्छिमभायम्मि मालवंतस्स ॥ २१९४
जंबूरुक्खस्स थलं[5] कणयमयं होदि पीढवरजुत्तं । विविहवररयणखचिदा जंबूरुक्खा भवंति एदस्सिं ॥ २१९५
सामलिरुक्खसरिच्छं जंबूरुक्खाण वण्णणं सयलं । णवरि विसेसा वेंतरदेवा चेट्ठंति अण्णण्णा[6] ॥ २१९६

दिव्य स्वरूपके धारक इन प्रत्येक भवनोंकी विदिशाओंमें दश योजनमात्र गहरी चार चार पुष्करिणी हैं ॥ २१८६ ॥

जलसमूहसे मंडित विविध प्रकारके कमल, उत्पल और कुमुदोंसे व्याप्त उन पुष्करिणियोंका विस्तार पचीस योजन व लंबाई पचास योजनमात्र है ॥ २१८७ ॥

वे पुष्करिणियां मणिमय सोपानोंसे सुन्दर, जलचर जीवोंसे परित्यक्त और देवयुगलोंके कुंकुमपंकसे पीतजलवाली हैं ॥ २१८८ ॥

पुष्करिणियोंके चारों ओर पृथक् पृथक् आठ कूट हैं। इन कूटोंकी उंचाई आदिका उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ २१८९ ॥

उन कूटोंके ऊपर वनप्रासादोंके समान प्रासाद हैं। इनमें वेणुयुगलके परिवार रहते हैं ॥ २१९० ॥

मन्दरपर्वतके उत्तर, नीलशैलके दक्षिण, माल्यवन्तके पश्चिम और गन्धमादनशैलके पूर्व दिग्विभागमें सीतानदीके दोनों किनारोंपर 'भोगभूमि' इसप्रकारसे विख्यात रमणीय उत्तरकुरु नामक क्षेत्र है ॥ २१९१-२१९२ ॥

इसका सम्पूर्ण वर्णन देवकुरुके वर्णनके ही समान है। विशेषता केवल यह है कि वहांपर शाल्मलीवृक्षके परिवार नहीं हैं ॥ २१९३ ॥

मन्दरपर्वतके ईशानदिशाभागमें, नीलगिरिके दक्षिणपार्श्वभागमें और माल्यवंतके पश्चिम-भागमें सीतानदीके पूर्व तटपर उत्तम पीठसे सहित सुवर्णमय जम्बूवृक्षका स्थल है। इस स्थलपर विविध प्रकारके उत्कृष्ट रत्नोंसे खचित जम्बूवृक्ष हैं ॥ २१९४-२१९५ ॥

जम्बूवृक्षोंका सम्पूर्ण वर्णन शाल्मलीवृक्षोंके ही समान है। विशेषता केवल इतनी है कि यहां व्यन्तर देव अन्य-अन्य रहते हैं ॥ २१९६ ॥

---

१ द ब जलविविह°. २ द ब सोहाणाओ. ३ द ब °चत्तारि. ४ द ब रमणिज्जा. ५ द ब तलं. ६ द ब अण्णाणा.

तेसुं पहाणरुक्खे जिणिंदपासादभूसिदे रम्मे । आदरअणादरक्खा णिवसंते वेंतरा देवा ॥ २१९७
सम्मद्दंसणसुद्धा सम्माइट्ठीण वच्छला दोण्णि । सयलं जंबूदीवं भुंजंति एक्कछत्ती णं ॥ २१९८
पुव्वावरभागेसुं मंदरसेलस्स सोलसंखाइं[1] । विजयाणिं[2] पुव्वावरविदेहणामाणि चेट्ठंति ॥ २१९९

१६ ।

सीदाए उभएसुं पासेसुं अट्ठ अट्ठ कयसीमा । चउचउवक्खारेहिं विजया तिहिं तिहिं विभंगसरियाहिं ॥२२००
पुव्वविदेहस्संते जंबूदीवस्स जगदिपासम्मि । सीदाए दोतडेसुं देवारण्णं ठिदं रम्मं ॥ २२०१[3]
सीदोदाए दोसुं पासेसुं अट्ठ अट्ठ कयसीमा । चउचउवक्खारेहिं विजया तिहिं तिहिं विभंगसरियाहिं॥२२०२[4]
अवरविदेहस्संते जंबूदीवस्स जगदिपासम्मि । सीदोदादुतडेसुं भूदारण्णं पि चेट्ठेदि ॥ २२०३
दोसुं पि विदेहेसुं वक्खारगिरी विभंगसिंधूओ । चेट्ठंते एक्केक्कं अंतरिदूणं सहावेणं ॥ २२०४
सीदाउत्तरतडओ पुव्वस्सिं भद्दसालवेदीदो । णीलस्स दक्खिणंते पदाहिणेणं हवंति ते विजया ॥ २२०५
कच्छा सुकच्छा महाकच्छा तुरिमा कच्छकावती । आवत्ता लंगलावत्ता पोक्खला पोक्खलावदी ॥ २२०६

उनमें जिनेन्द्रप्रासादसे भूषित और रमणीय प्रधान जम्बूवृक्षके ऊपर आदर एवं अनादर नामक व्यन्तरदेव निवास करते हैं ॥ २१९७ ॥

सम्यग्दर्शनसे शुद्ध और सम्यग्दृष्टियोंके प्रेमी वे दोनों देव सम्पूर्ण जम्बूद्वीपको एकछत्री सम्राट्के समान भोगते हैं ॥ २१९८ ॥

मन्दरपर्वतके पूर्व-पश्चिम भागोंमें पूर्व-अपरविदेह नामक सोलह क्षेत्र स्थित हैं ॥ २१९९ ॥ १६ ।

सीतानदीके दोनों पार्श्वभागोंमें चार चार वक्षारपर्वत और तीन तीन विभंगनादियोंसे सीमित आठ आठ क्षेत्र हैं ॥ २२०० ॥

पूर्वविदेहके अन्तमें जम्बूद्वीपकी जगतीके पास सीताके दोनों किनारोंपर रमणीय देवारण्य स्थित है ॥ २२०१ ॥

सीतोदाके दोनों पार्श्वभागोंमें, चार चार वक्षारपर्वत और तीन तीन विभंगनदियोंसे सीमित आठ आठ क्षेत्र हैं ॥ २२०२ ॥

अपरविदेहके अन्तमें जम्बूद्वीपकी जगतीके पास सीतोदानदीके दोनों किनारोंपर भूतारण्य भी स्थित है ॥ २२०३ ॥

दोनों ही विदेहोंमें स्वभावसे एक एकको व्यवहित करके वक्षारगिरि और विभंगनदियां स्थित हैं ॥ २२०४ ॥

वे क्षेत्र सीतानदीके उत्तरकिनारेसे भद्रशालवेदीके पूर्व और नीलपर्वतके दक्षिणान्तमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥ २२०५ ॥

कच्छा[1], सुकच्छा[2], महाकच्छा[3], चतुर्थ कच्छकावती, आवर्ता, लांगलावर्ता, पुष्कला, पुष्क-

१ द ब सोलसेसेय. २ द विजयाणं. ३ एषा गाथा ब-पुस्तके नास्ति. ४ एषा गाथा ब-पुस्तके नास्ति.

वच्छा सुवच्छा महावच्छा तुरिमा वच्छगावदी । रम्मा सुरम्मगा वि य रमणिज्जा मंगलावदी ॥ २२०७
पम्मा सुपम्मा महापम्मा तुरिमा पम्मगावदी । संखा णलिणा णामा कुमुदा सरिदा तहा ॥ २२०८
वप्पा सुवप्पा महावप्पा तुरिमा वप्पगावदी । गंधा सुगंधणामा गंधिला गंधमालिणी ॥ २२०९
णामेण चित्तकूडो पढमो बिदिओ हवे णलिणकूडो । तदिओ वि पउमकूडो चउत्थओ एक्कसेलो य ॥ २२१०
पंचमओ वि तिकूडो छट्ठो वेसमणकूडणामो य । सत्तमओ तह अंजणसेलो आदंजण त्ति अट्ठमओ ॥२२११
एदे गयदंतगिरी पुव्वविदेहम्मि अट्ठ चेट्ठंते । सव्वे पदाहिणेणं उववणपोक्खरणिरमणिज्जा ॥ २२१२
सद्दावदिविजडावदिआसीविसया सुहावहो तुरिमो । चंदगिरिसूरपव्वदणागगिरी देवमालो त्ति ॥ २२१३
एदे अवरविदेहे वारणदंताचला ठिदा अट्ठ । सव्वे पदाहिणेणं उववणवेदीपहुदिजुत्ता ॥ २२१४
दहगहपंकवदीओ तत्तजला पंचमी य मत्तजला । उम्मत्तजला छट्ठी पुव्वविदेहे विभंगणई ॥ २२१५
खीरोदा सीदोदा ओसहवाहिणिगभीरमालिणिया । फेणुम्मिमालिणीओ अवरविदेहे विभंगसरियाओ ॥२२१६
दोण्णि सहस्सा दुसया बारसजुत्ता सगंस अट्ठहिदा । पुव्वावरेण रुंदो एक्केक्के[3] होदि विजयम्मि ॥ २२१७

२२१२ । ७ ।

८

.....

लवती; वत्सा, सुवत्सा, महावत्सा, चतुर्थ वत्सकावती, रम्या, सुरम्यका, रमणीया, मंगलावती; पद्मा, सुपद्मा, महापद्मा, चतुर्थ पद्मकावती, शंखा, नलिना, कुमुदा, सरित्; वप्रा, सुवप्रा, महावप्रा, चतुर्थ वप्रकावती, गंधा, सुगंधा नामक, गन्धिला और गन्धमालिनी; इसप्रकार क्रमसे ये उन आठ आठ क्षेत्रोंके नाम हैं ॥ २२०६-२२०९ ॥

नामसे प्रथम चित्रकूट, द्वितीय नलिनकूट, तृतीय पद्मकूट, चतुर्थ एकशैल, पांचवां भी त्रिकूट, छठा वैश्रवणकूट नामक, सातवां अंजनशैल तथा आठवां आत्मांजन, इसप्रकार उपवन और वापिकाओंसे रमणीय ये सब आठ गजदन्तपर्वत पूर्वविदेहमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥ २२१०-२२१२ ॥

श्रद्धावान्, विजटावान्, आशीविषक, चतुर्थ सुखावह, चन्द्रगिरि, सूर्यपर्वत, नागगिरि और देवमाल, इसप्रकार उपवनवेदीआदिसे संयुक्त ये सब आठ गजदन्तपर्वत प्रदक्षिणरूपसे अपरविदेहमें स्थित हैं ॥ २२१३-२२१४ ॥

द्रहवती, ग्राहवती, पंकवती, तप्तजला, पांचवीं मत्तजला और छठी उन्मत्तजला, ये छह विभंगनदियां पूर्वविदेहमें हैं ॥ २२१५ ॥

क्षीरोदा, सीतोदा, औषधवाहिनी (स्रोतोवाहिनी), गभीरमालिनी, फेनमालिनी और ऊर्मिमालिनी, ये छह विभंगनदियां अपरविदेहमें स्थित हैं ॥ २२१६ ॥

प्रत्येक क्षेत्रका पूर्वापरविस्तार दो हजार दोसौ बारह योजन और आठसे भाजित सात अंशमात्र है ॥ २२१७ ॥ २२१२$\frac{७}{८}$ ।

.....

१ द ब आदस्सण ति. २ द ब संखावदि विजदावदि. ३ द ब एक्केको.

पंचसयजोयणाणिं पुह पुह वक्खारसेलविक्खंभो । णियणियकुंडुप्पत्तिट्ठाणे कोसाणि पण्णासा ॥ २२१८
वासो विभंगकत्तीणदीण[1] सव्वाण होदि पत्तेक्कं । सीदासीदोदणईपवेसदेसम्मि पंचसयकोसा ॥ २२१९
पुव्वावरेण जोयण उणतीससयाणि तह य बावीसं । रुंदो देवारण्णे भूदारण्णे य पत्तेक्कं ॥ २२२०
२९२२ ।
विजयगयदंतसरिया देवारण्णाणि भद्दसालवणं । णियणियफलेहिं गुणिदा कादव्वा मेरुफलजुत्ता ॥ २२२१
एदाणं रचिदूणं पिंडफलं जोयणेक्कलक्खम्मि । सोधिय णियंकभजिदे जं लब्भइ तस्स सो वासो ॥ २२२२
चउणवपणचउछक्का सोधिय अंकक्कमेण वासादो । सेसं सोलसभजिदं विजयाणं जाण विक्खंभं ॥ २२२३
६४५९४ । २२१२ । ७ ।
८
छण्णउदिसहस्साणिं वासादो जोयणाणि अवणिज्ज । सेसं अट्ठविहत्तं वक्खारगिरीण विक्खंभो ॥ २२२४
९६००० । ५०० ।
णवणउदिसहस्साणिं विक्खंभादो[2] य दुसयपण्णासा । सोधिय विभंगसरियावासो सेसस्स छब्भागे ॥ २२२५
९९२५० । १२५ ।

पृथक् पृथक् वक्षारशैलोंका विस्तार पांचसौ योजन और सब विभंगनदियोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार अपने अपने कुण्डके पास उत्पत्तिस्थानमें पचास कोस तथा सीता-सीतोदा नदियोंके पास प्रवेशस्थानमें पांचसौ कोसप्रमाण है ॥ २२१८–२२१९ ॥

देवारण्य और भूतारण्यमेंसे प्रत्येकका पूर्वापरविस्तार उनतीससौ बाईस योजनप्रमाण है ॥ २२२० ॥ २९२२ ।

विजय, गजदन्त, नदी, देवारण्य और भद्रशाल, इनको अपने अपने फलोंसे (क्रमशः १६, ८, ६, २, २) गुणा करके मेरुफलसे सहित करे। पश्चात् इनको जोड़नेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसको एक लाख योजनोंमेंसे घटा कर अपने अंकोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना उसका विस्तारप्रमाण होता है ॥ २२२१–२२२२ ॥

चार, नौ, पांच, चार और छह, इन अंकोंके क्रमसे उत्पन्न हुई संख्याको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करके जो शेष रहे उसमें सोलहका भाग देनेपर क्षेत्रोंके विस्तारका प्रमाण जानना चाहिये ॥ २२२३ ॥ (जं. वि. १००००० – ६४५९४) ÷ १६ = २२१२$\frac{7}{8}$ ।

छ्यानवै हजार योजनोंको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करके शेषको आठसे विभक्त करनेपर वक्षारगिरियोंका विस्तार निकलता है ॥ २२२४ ॥

(१००००० – ९६०००) ÷ ८ = ५०० ।

निन्यानवै हजार दोसौ पचासको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करके शेषके छह भाग करनेपर विभंगनदियोंका विस्तारप्रमाण जाना जाता है ॥ २२२५ ॥

(१००००० – ९९२५०) ÷ ६ = १२५ ।

१ द विभंगकत्तो णिलीण, ब विभंगतत्तो णदीण. २ द विक्खंभोदये.

चउणउदिसहस्साणिं सोधिय वासा छपण्णएक्कसयं । सेसस्स अद्धमेत्तं देवारण्णाण विक्खंभो ॥ २२२६

९४१५६ । २९२२ ।

छप्पण्णसहस्साणिं सोधिय वासाओ जोयणाणं च । सेसं दोहि विहत्तं विक्खंभो भद्दसालस्स ॥ २२२७

५६००० । २२००० ।

विक्खंभादो सोधिय णउदिसहस्साणि जोयणाणं च । अवसेसं जं लद्धं सो मंदरमूलविक्खंभो ॥ २२२८

९०००० । १०००० ।

चउवण्णसहस्साणिं सोधिय दीवस्स वासमज्झम्मि । सेसद्धं पुव्वावरविदेहमाणं खु पत्तेक्कं ॥ २२२९

५४००० । २३००० ।

सीदारुंदं सोधिय विदेहरुंदम्मि सेसदलमेत्तो । आयामो विजयाणं वक्खारविभंगसरियाणं ॥ २२३०

सोलससहस्सयाणिं बाणउदी समधिया य पंचसया । दो भागा पत्तेक्कं विजयप्पहुदीण दीहत्तं ॥ २२३१

१६५९२ । क २ ।

१९

अट्ठावीससहस्सा एक्केक्काए विभंगसिंधूए । परिवारवाहिणीओ विचित्तरूवाओ रेहंति ॥ २२३२

२८००० ।

सीदाय उत्तरतडे पुव्वंसे भद्दसालवेदीदो । णीलाचलदक्खिणदो पच्छिमदो चित्तकूडस्स ॥ २२३३

चौरानबे हजार एकसौ छप्पनको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे घटाकर शेषके अर्धभागप्रमाण देवारण्योंका विस्तार है ॥ २२२६ ॥ (१००००० – ९४१५६) ÷ २ = २९२२ ।

छप्पन हजार योजनोंको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करके शेषको दोसे विभक्त करनेपर भद्रशालवनके विस्तारका प्रमाण जानना चाहिये ॥ २२२७ ॥

(१००००० – ५६०००) ÷ २ = २२०००।

नब्बै हजार योजनोंको जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे कम करदेनेपर जो शेष रहे उतना मन्दर-पर्वतका मूलमें विस्तार समझना चाहिये ॥ २२२८ ॥ १००००० – ९०००० = १०००० ।

जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे चौवन हजार घटाकर शेषको आधा करनेपर पूर्वापरविदेहमेंसे प्रत्येकका प्रमाण निकलता है ॥ २२२९ ॥ (१००००० – ५४०००) ÷ २ = २३०००।

विदेहके विस्तारमेंसे सीतानदीके विस्तारको घटा देनेपर शेषके अर्धभागप्रमाण क्षेत्र, वक्षारपर्वत और विभंगनदियोंकी लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २२३० ॥

उपर्युक्त क्षेत्रादिकमेंसे प्रत्येककी लंबाई सोलह हजार पांचसौ बानबै योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेसे दो भाग अधिक है ॥ २२३१ ॥ $१६५९२\frac{२}{१९}$ ।

एक एक विभंगनदीकी विचित्ररूप अट्ठाईस हजार परिवारनदियां शोभायमान होती हैं ॥ २२३२ ॥ २८००० ।

भद्रशालवेदीके पूर्व, नीलपर्वतके दक्षिण और चित्रकूटके पश्चिममें सीतानदीके उत्तर-

---

१ द ब दिव्वस्स.

चेट्ठेदि कच्छणामो विजयो[1] वणगामणयरखेडेहिं । कव्वडमडंबपट्टणदोणामुहपहुदिएहिं जुदो[2] ॥ २२३४
दुग्गाडवीहि जुत्तो अंतरदीवेहि कुक्खिवासेहिं । सेसासमंतदम्मो सो रयणायरमंडिदो विजओ ॥ २२३५
गामाणं छण्णउदीकोडीओ रयणभवणभरिदाणं । परिदो कुक्कुडुयर्णप्पमाणविच्चालभूमीणं ॥ २२३६
९६०००००००।
णयराणि पंचहत्तरिसहस्समेत्ताणि विविहभवणाणिं । खेडाणि सहस्साणिं सोलस रमणिज्जाणिलयाणिं ॥ २२३७
७५००० । १६००० ।
चउतीससहस्साणिं कव्वडया होंति तह मडंबाणं । चत्तारि सहस्साणिं अडदालसहस्स पट्टणया ॥ २२३८
३४००० । ४००० । ४८००० ।
णवणउदिसहस्साणिं हवंति दोणामुहा सुहावासा । चउदससहस्समेत्ता संवाहणया परमरम्मा ॥ २२३९
९९००० । १४००० ।
अट्ठावीससहस्सा हवंति दुग्गाडवीओ छप्पण्णं । अंतरदीवा सत्त य सयाणि कुक्खीणिवासाणं ॥ २२४०
२८००० । ५६ । ७०० ।
छव्वीसमहस्साणिं हवंति रयणायरा विचित्तेहिं । परिपुण्णा रयणेहिं फुरंतवरकिरणजालेहिं ॥ २२४१
२६००० ।

तटपर कच्छा नामक देश स्थित है । यह रमणीय कच्छादेश वन, ग्राम, नगर, खेट, कर्वट, मटंब, पत्तन एवं द्रोणमुखादिसे युक्त, दुर्गाटवियो, अन्तरदीपो व कुक्षिवासोंसे सहित, समंततः रमणीय और रत्नाकरोंसे अलंकृत है ॥ २२३३–२२३५ ॥

उसके चारों ओर रत्नमय भवनोंसे परिपूर्ण और कुक्कुटके उड़नेप्रमाण अन्तरालभूमियोंसे युक्त छयानवे करोड़ ग्राम हैं ॥ २२३६ ॥ ९६०००००००।

प्रत्येक क्षेत्रमें विविध प्रकारके भवनोंसे युक्त पचत्तर हजार नगर और रमणीय आलयोंसे विभूषित सोलह हजार खेट होते है ॥ २२३७ ॥ ७५००० । १६००० ।

इसके अतिरिक्त चौंतीस हजार कर्वट, चार हजार मटंब और अड़तालीस हजार पत्तन होते हैं ॥ २२३८ ॥ ३४००० । ४००० । ४८००० ।

सुखके स्थानभूत निन्यानवे हजार द्रोणमुख और चौदह हजारप्रमाण परमरमणीय संवाहन होते हैं ॥ २२३९ ॥ ९९००० । १४००० ।

अट्ठाईस हजार दुर्गाटवियां, छप्पन अन्तरद्वीप और सातसौ कुक्षिनिवास होते हैं ॥ २२४० ॥ २८००० । ५६ । ७०० ।

देदीप्यमान उत्तम किरणोंके समूहसे संयुक्त ऐसे विचित्र रत्नोंसे परिपूर्ण छब्बीस हजार रत्नाकर होते हैं ॥ २२४१ ॥ २६००० ।

---

१ द ब विजया. २ द ब जुदा. ३ ब दुगडवीहिं. ४ द ब कुंकाडलं पुण. ५ द चोद्दस°.

सीदातरंगिणीजलसंभवखुद्दंबुरासितीरम्मि । दिप्पंतकणयरयणा पट्टणदोणामुहा होंति ॥ २२४२
सीदातरंगिणीए उत्तरतीरम्मि उवसमुद्दम्मि । छप्पण्णंतरदीवा समंतवेदीपहुदिजुत्ता ॥ २२४३
णाणारयणविणिम्मिदजिणिंदपासादभूसिदा रम्मा । मिच्छत्तभवणहीणा[1] गामप्पहुदी विरायंते ॥ २२४४
गोधूमकलमतिलजवउच्छुप्पहुदीहिं धण्णसंपुण्णा । दुब्भिक्खमारिमुक्का णिच्चुच्छवतूरगीदरवा ॥ २२४५
कच्छविजयम्मि विविहा वणसंडा मंडिदा विचित्तेहिं । रुक्खेहिं कुसुमपल्लवफलभरसोहंतसाहेहिं ॥ २२४६
पोक्खरणीवावीहिं विचित्तसोवाणरइददाराहिं । सोहदि कच्छाविजओ कमलुप्पलवणसुगंधाहिं ॥ २२४७
कच्छम्मि महामेघा भमरंजणसामला महाकाया । सत्त वरिसंति वासारत्तेसुं सत्त सत्त दिवसाइं ॥ २२४८
वरिसंति दोणमेघा बारस कुंदेंदुसुंदरायारा । वीसुत्तरमेक्कसयं सरिवडणा[2] तत्थ जायंति ॥ २२४९
बहुविहवियप्पजुत्ता खत्तियवइसाण तह य सुद्दाणं । वंसा हवंति कच्छे तिण्णि च्चिय तत्थ ण हु अण्णे ॥ २२५०

सीतानदीके जलसे उत्पन्न हुए क्षुद्र समुद्रके किनारेपर देदीप्यमान सुवर्ण व रत्नोंसे सहित पत्तन और द्रोणमुख होते हैं ॥ २२४२ ॥

सीतानदीके उत्तरतटपर उपसमुद्रमें चारों ओर वेदीआदिसे सहित छप्पन अन्तरद्वीप होते हैं ॥ २२४३ ॥

नाना प्रकारके रत्नोंसे निर्मित जिनेन्द्रप्रासादोंसे विभूषित रमणीय वे ग्रामादिक मिथ्यादृष्टियोंके भवनोंसे रहित होते हुए शोभायमान होते हैं ॥ २२४४ ॥

ये ग्रामादिक गेहूं, चावल, तिल, जौ और ईख इत्यादि धान्योंसे परिपूर्ण, दुर्भिक्ष व मारीआदि रोगोंसे रहित तथा नित्य उत्सवमें होनेवाले तूर्य और गीतोंके शब्दोंसे सहित होते हैं ॥ २२४५ ॥

कच्छाक्षेत्रमें फूल, पत्र व फलोंके भारसे शोभायमान शाखाओंवाले विचित्र वृक्षोंसे सुशोभित विविध प्रकारके वनखण्ड हैं ॥ २२४६ ॥

यह कच्छादेश विचित्र सोपानोंसे रचित द्वारोंवाली और कमल व उत्पलवनोंकी सुगन्धसे सहित ऐसी पुष्करिणी व वापिकाओंसे शोभायमान है ॥ २२४७ ॥

कच्छादेशमें भ्रमर व अंजनके समान काले सात महाकाय महामेघ सात सात दिन तक रात वर्षाकालीन रात्रियोंमें दिन बरसते हैं ॥ २२४८ ॥

कुन्दपुष्प और चन्द्रमाके समान सुन्दर आकारवाले बारह द्रोणमेघ भी बरसते हैं । वहां एकसौ बीस नदियोंके प्रपात उत्पन्न होते हैं ॥ २२४९ ॥

कच्छादेशमें बहुत प्रकारके भेदोंसे युक्त क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्रोंके तीन ही वंश हैं, अन्य वंश वहां नहीं हैं ॥ २२५० ॥

---

१ द ब मिच्छभवणाणहीणा. २ द ब वण्ण°. ३ द ब सरिवलणा.

परचक्कभीदिरहिदो अण्णायपयट्टणेहिं परिहीणो । अइवट्टिअणावट्टीपरिचत्तो सव्वकालेसुं ॥ २२५१
अवदुंबरफलसरिसा धम्माभासा ण तत्थ सुव्वंति[1] । सिववम्मविण्हुचंडीरविससिबुद्धाण ण पुराणिं ॥ २२५२
पासंडसमयचत्तो सम्माइट्ठीजणोघसंछण्णो । णवरि विसेसो केसिं पयट्टदे भावमिच्छत्तं ॥ २२५३
मागधवरतणुवेहि य पभासदीवेहिं कच्छविजयरस । मोहेदि उवसमुद्दो वेदीचउतोरणेहिं जुदो ॥ २२५४
अंतोमुहुत्तमवरं कोडी पुव्वाण होदि उक्कस्सं । आउस्स य परिमाणं णराण णारीण कच्छम्मि ॥ २२५५
पुव्व १०००००००।
उच्छेहो दंडाणिं पंचसया विविहवण्णमावण्णं । चउसट्ठी पुट्ठट्ठी अंगेसु णराण णारीणं ॥ २२५६
५००। ६४।
कच्छस्स य बहुमज्झे सेलो णामेण दीहविजयड्ढो । जोयणसयवित्थारो समदीहो देसवासेण ॥ २२५७
५०। २२१२। ७।
८
सव्वाओ वण्णणाओ भणिदा वरभरहसेत्तविजयड्ढे[2] । एदस्सिं णादव्वं णवरि विसेसं णिरूवेमो ॥ २२५८

यह देश सदा परचक्रकी भीतिसे रहित, अन्यायप्रवृत्तियोंसे विहीन और अतिवृष्टि-अनावृष्टिसे परित्यक्त है ॥ २२५१ ॥

उदुम्बरफलोंके सदृश धर्माभास वहां सुने नहीं जाते। शिव, ब्रह्मा, विष्णु, चण्डी, रवि, शशि व बुद्धके मंदिर वहां नहीं है ॥ २२५२ ॥

वह देश पाषण्ड सम्प्रदायोंसे रहित और सम्यग्दृष्टि जनोंके समूहसे व्याप्त है। विशेष इतना है कि यहां किन्हीं जीवोंके भावमिथ्यात्व विद्यमान रहता है ॥ २२५३ ॥

वेदी और चार तोरणोंसे युक्त कक्षादेशका उपसमुद्र मागध, वरतनु एवं प्रभास द्वीपोंसे शोभायमान है ॥ २२५४ ॥

कच्छादेशमें नर-नारियोंकी आयुका प्रमाण जघन्यरूपसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्टरूपसे पूर्वकोटिमात्र है ॥ २२५५ ॥ पूर्व १०००००००।

वहांपर विविध वर्णोंसे युक्त नर-नारियोंके शरीरकी उंचाई पांचसौ धनुष और पृष्ठभागकी हड्डियां चौंसठ होती हैं ॥ २२५६ ॥ ५००। ६४।

कच्छादेशके बहुमध्यभागमें पचास योजन विस्तारवाला और देशविस्तारसमान लंबा दीर्घविजयार्द्ध नामक पर्वत है ॥ २२५७ ॥ ५०। २२१२⅞।

उत्तम भरतक्षेत्रसम्बन्धी विजयार्द्धके विषयमें जिसप्रकार सम्पूर्ण वर्णन किया गया है, उसी प्रकार इस विजयार्द्धका भी वर्णन समझना चाहिये। उक्त पर्वतकी अपेक्षा यहां जो कुछ विशेषता है उसका निरूपण किया जाता है ॥ २२५८ ॥

---

१ द ब सुव्वंति. २ द ब विजयड्ढी.

विज्जाहराण सस्सि पत्तेक्कं दोतडेसु णयराणिं । पंचावण्णा होंति हु कूडाण य अण्णणामाणिं ॥ २२५९
सिद्धक्खकच्छखंडा पुण्णाविजयड्ढुमाणितिमिसगुहा । कच्छो वेसमणो णव णामा एदस्स कूडाणं ॥ २२६०
सव्वेसुं कूडेसुं मणिमयपासादसोहमाणेसुं । चेट्ठंति अट्ठकूडे ईसाणिंदस्स वाहणा देवा ॥ २२६१
णीलाचलदक्खिणदो उवयणवेदीए[1] दक्खिणे पासे । कुंडाणि[2] दोण्णि वेदीतोरणजुत्ताणि चेट्ठंति ॥ २२६२
ताणं दक्खिणतोरणदारेणं णिग्गदा दुवे सरिया । रत्तारत्तोदक्खा पुह पुह गंगाय सारिच्छा ॥ २२६३
रत्तारत्तोदाहिं वेयड्ढुगेण कच्छविजयम्मि । सव्वत्थ समाणाओ छक्खंडा णिम्मिदा एदे ॥ २२६४
रत्तारत्तोदाओ जुदाओ चोद्दससहस्समेत्ताहिं । परिवारवाहिणीहिं णिच्चं पविसंति सीदोदं ॥ २२६५
१४०००।
सीदाए उत्तरदो विजयड्ढगिरिस्स दक्खिणे भागे । रत्तारत्तोदाणं अज्जाखंडं भवेदि विच्चाले ॥ २२६६
णाणाजणवदणिहिदो अट्ठारसदेसभासससंजुत्तो । कुंजरतुरगादिजुदो णरणारीमंडिदो रम्मो ॥ २२६७

इस पर्वतके ऊपर दोनों तटोंमेंसे प्रत्येक तटपर विद्याधरोंके पचवन नगर हैं, और कूटोंके नाम भिन्न भिन्न हैं ॥ २२५९ ॥

सिद्ध, कच्छा, खण्डप्रपात, पूर्णभद्र, विजयार्द्ध, माणिभद्र, तिमिश्रगुह, कच्छा और वैश्रवण, ये क्रमशः इस विजयार्द्धके ऊपर स्थित नौ कूटोंके नाम हैं ॥ २२६० ॥

मणिमय प्रासादोंसे शोभायमान इन सब कूटोंमेंसे आठ कूटोंपर ईशानेन्द्रके वाहनदेव रहते हैं ॥ २२६१ ॥

नीलपर्वतसे दक्षिणकी ओर उपवनवेदीके दक्षिणपार्श्वभागमें वेदीतोरणयुक्त दो कुण्ड स्थित हैं ॥ २२६२ ॥

इन कुण्डोंके दक्षिण तोरणद्वारसे गंगानदीके सदृश पृथक् पृथक् रक्ता और रक्तोदा नामक दो नदियां निकली हैं ॥ २२६३ ॥

रक्ता-रक्तोदा और विजयार्द्धपर्वतसे कच्छादेशमें सर्वत्र समान ये छह खण्ड निर्मित हुए हैं ॥ २२६४ ॥

चौदह हजारप्रमाण परिवारनदियोंसे युक्त ये रक्ता-रक्तोदा नदियां नित्य सीतानदीमें प्रवेश करती हैं ॥ २२६५ ॥ १४०००।

सीतानदीके उत्तर और विजयार्द्धगिरिके दक्षिणभागमें रक्ता-रक्तोदाके मध्य आर्यखण्ड है ॥ २२६६ ॥

यह आर्यखण्ड अनेक देशोंसे सहित, अठारह देशभाषाओंसे संयुक्त, हाथी व अश्वादिकोंसे युक्त और नर-नारियोंसे मण्डित होता हुआ रमणीय है ॥ २२६७ ॥

---

१ द ब वेदीए. २ द ब कुण्डाण.

खेमाणामा णयरी अज्जाखंडस्स होदि मज्झम्मि । एसा अणाइणिहणा वररयणखचिदरमणिज्जा ॥ २२६८
कणयमओ पायारो समंतदो तीए होदि रमणिज्जो[1] । चरियट्टालयचारू विविहपदायाए कलप्पजुदो[2] ॥ २२६९
कमलवणमंडिदाए संजुत्तो खादियाहि विउलाए । कुसुमफलसोहिदेहिं सोहिल्लो बहुविहवणेहिं ॥ २२७०
तीए पमाणजोयण णवमेत्ते वरपुरीय वित्थारो । बारसजोयणमेत्तं दीहत्तं दक्खिणुत्तरदिसासुं ॥ २२७१
एक्केकदिसाभागे वणसंडा विविहकुसुमफलपुण्णा । सट्ठिजुदतिसयसंखा[3] पुरीए कीडंतवरमिहुणा ॥ २२७२

३६० ।

एक्कसहस्सं गोउरदाराणं चक्कवट्टिणयरीए । वररयणणिम्मिदाणं खुल्लयदाराण पंचसया ॥ २२७३

१००० । ५०० ।

बारससहस्समेत्ता वीहीओ वरपुरीए रेहंति । एक्कसहस्सपमाणा चउपहा सुहदसंचारा ॥ २२७४

१२००० । १००० ।

फलिहप्पवालमरगयचामीयरपउमरायपहुदिमया । वरतोरणेहिं रम्मा पासादा तत्थ वित्थिण्णा ॥ २२७५
पोक्खरणीवावीहिं कमलुप्पलकुमुदगंधसुरही सा । संपुण्णा णयरी णं णच्चंतविचित्तधयमाला ॥ २२७६

आर्यखण्डके मध्यमें क्षेमा नामक नगरी है। यह अनादिनिधन और उत्तम रत्नोंसे खचित [भवनोंसे] रमणीय है ॥ २२६८ ॥

इसके चारों ओर मार्ग व अट्टालयोंसे सुन्दर और विविध प्रकारकी पताकाओंके समूहसे संयुक्त रमणीय सुवर्णमय प्राकार है ॥ २२६९ ॥

यह प्राकार कमलवनोंसे मण्डित ऐसी विस्तृत खाईसे संयुक्त और फूल व फलोंसे शोभित बहुत प्रकारके वनोंसे शोभायमान है ॥ २२७० ॥

उस उत्तम पुरीका विस्तार नौ प्रमाणयोजनमात्र और दक्षिण-उत्तर दिशाओंमें लम्बाई बारह योजनमात्र है ॥ २२७१ ॥

इस नगरीके प्रत्येक दिशाभागमें विविध प्रकारके फल-फूलोंसे परिपूर्ण और क्रीड़ा करते हुए उत्तम [स्त्री-पुरुषोंके] युगलोंसे सहित तीनसौ साठ संख्याप्रमाण वनसमूह स्थित हैं ॥२२७२॥

३६० ।

चक्रवर्तीकी नगरीमें उत्कृष्ट रत्नोंसे निर्मित एक हजार गोपुरद्वार और पांचसौ क्षुद्र द्वार हैं ॥ २२७३ ॥ १००० । ५०० ।

उस उत्कृष्ट पुरीमें बारह हजारप्रमाण वीथियां और एक हजारप्रमाण सुखप्रद गमनसे संयुक्त चतुष्पथ हैं ॥ २२७४ ॥ १२००० । १००० ।

वहांपर स्फटिक, प्रवाल, मरकत, सुवर्ण एवं पद्मरागादिसे निर्मित और उत्तम तोरणोंसे रमणीय विस्तीर्ण प्रासाद हैं ॥ २२७५ ॥

नृत्य करती हुई विचित्र ध्वजाओंके समूहसे सहित वह नगरी निश्चय ही कमल, उत्पल और कुमुदोंकी गंधसे सुगंधित ऐसी पुष्करिणी तथा वापिकाओंसे परिपूर्ण है ॥ २२७६ ॥

---

१ द ब रमणिजा. २ द ब °जुदा. ३ द °जुदतीससंखा, ब °जुदतीयसंखा.

णरणारीणिवहेहिं विचित्तरूवेहिं । वररयणभूसणेहिं विविहेहिं सोहिदा णयरी ॥ २२७७
णयरीए चक्कवट्टी तीए चेट्ठेदि विविहगुणखाणी । आदिमसंहडणजुदो समचउरस्संगसंठाणो[1] ॥ २२७८
कुंजरकरथोरभुवो[2] रविंदुवरतेयपसरसंपुण्णो[3] । इंदो विव आणाए सोहग्गेणं च मयणो व्वं[4] ॥ २२७९
धणदो विव[5] दाणेणं धीरेणं मंदरो व्व सो होदि । जलही विव अक्खोभो पुहपुहविक्किरियसत्तिजुदो[6] ॥ २२८०
पंचसयचावतुंगो सो चक्की पुव्वकोडिसंखाऊ । दसविहभोगेहिं जुदो सम्माइट्ठी विसालमई ॥ २२८१
अज्जाखंडम्मि ठिदा तित्थयरा पाडिहेरसंजुत्ता । पंचमहाकल्लाणा चोत्तीसातिसयसंपण्णा ॥ २२८२
सयलसुरासुरमहिया णाणाविहलक्खणेहि संपुण्णा । चक्कहरणमिदचलणा तिलोयणाहा पसीदंतु ॥ २२८३
अमरणरणमिदचलणा भव्वजणाणंदणा पसण्णमणा । अट्ठविहरिद्धिजुत्ता गणहरदेवा ठिदा तस्सिं ॥ २२८४
अणगारकेवलिमुणीवरइड्ढिसुदकेवली तधा तस्सिं । चेट्ठदि चाउव्वण्णो तस्सिं संघो गुणगणड्ढो ॥ २२८५
बलदेववासुदेवा पडिसत्तू तत्थ होंति ते सव्वे । अण्णोण्णबद्धमच्छरपयट्टघोरयरसंगामा ॥ २२८६

वह नगरी बुद्धिमान् विचित्ररूप और उत्तम रत्नोंके भूषणोंसे भूषित ऐसे अनेक प्रकारके नर-नारियोंके समूहोंसे शोभित है ॥ २२७७ ॥

उस नगरीमें अनेक गुणोंकी खानिस्वरूप चक्रवर्ती निवास करता है। यह चक्रवर्ती आदिके वज्रर्षभनाराचसंहननसे सहित, समचतुरस्रस्वरूप शरीरसंस्थानसे संयुक्त, हाथीके शुंडादण्ड-समान स्थूल भुजाओंसे शोभित, सूर्य व चन्द्रमाके समान उत्कृष्ट तेजके विस्तारसे परिपूर्ण, आज्ञामें इन्द्र जैसा, सुभगतासे मानों कामदेव, दानसे कुबेरके समान, धैर्यगुणसे सुमेरुपर्वतके सदृश, समुद्रके समान अक्षोभ्य और पृथक् पृथक् विक्रियाशक्तिसे युक्त होता है ॥ २२७८-२२८० ॥

वह चक्रवर्ती पांचसौ धनुष ऊंचा, पूर्वकोटिप्रमाण आयुसे सहित, दश प्रकारके भोगोंसे युक्त, सम्यग्दृष्टि और विशाल बुद्धिका धारक होता है ॥ २२८१ ॥

आर्यखण्डमें स्थित, प्रातिहार्योंसे संयुक्त, पांच महाकल्याणकोंसे सहित, चौंतीस अतिशयोंसे सम्पन्न, सम्पूर्ण सुरासुरोंसे पूजित, नाना प्रकारके लक्षणोंसे परिपूर्ण, चक्रवर्तियोंसे नमस्कृत चरणवाले और तीनों लोकोंके अधिपति तीर्थंकर परमदेव प्रसन्न होवें ॥ २२८२-२२८३ ॥

जिनके चरणोंमें देव व मनुष्य नमस्कार करते हैं, तथा जो भव्य जनोंको आनन्ददायक, प्रसन्नचित्त, और आठ प्रकारकी ऋद्धियोंसे युक्त हैं, ऐसे गणधरदेव उस आर्यखण्डमें स्थित रहते हैं ॥ २२८४ ॥

उस आर्यखण्डमें अनगार, केवलीमुनि, परमर्द्धिप्राप्तऋषि और श्रुतकेवली, इसप्रकार गुण-समूहसे युक्त चातुर्वर्ण्य संघ स्थित रहता है ॥ २२८५ ॥

वहांपर बलदेव, वासुदेव और प्रतिशत्रु (प्रतिवासुदेव) होते हैं। ये सब परस्परमें बांधे हुए मत्सरभावसे घोरतर संग्राममें प्रवृत्त रहते हैं ॥ २२८६ ॥

(संदृष्टि मूलमें देखिये)

१ द ब संठाणं. २ द ब °भुवा. ३ द ब रविंदवर..... ...संपुण्णा. ४ द ब मयणव्व. ५ द ब ध णद पिव. ६ द ब °जुदा. ७ द ब °मुणिवरा°.

राजाधिराजवसहा तत्थ विरायंति ते महाराजा । छत्तचमरेहिं जुत्ता अद्धमहासयलमंडलिया ॥ २२८७
। आर्यखंडप्ररूपणा समाप्ता ।
णामेण मेच्छखंडा अवसेसा होंति पंच खंडा ते । बहुविहभावकलंका जीवा मिच्छागुणा तेसुं ॥ २२८८
णाहलपुलिंदबब्बरकिरायपहुदीण सिंहलादीणं । मेच्छाण कुलेहिं जुदा भणिदा ते मेच्छखंडा ओ ॥ २२८९
णीलाचलदक्खिणदो वक्खगिरिंदस्स[1] पुव्वदिब्भागे । रत्तारत्तोदाणं मज्झम्मि य मेच्छखंडबहुमज्झे ॥२२९०
चक्कहरमाणमलणो णाणाचक्कीण णामसंछण्णो । अत्थि वसह त्ति सेलो भरहक्खिदिवसहसारिच्छो ॥ २२९१
एवं कच्छाविजओ वाससमासेहि वण्णिदो[2] एत्थ । सेसाणं विजयाणं वण्णणमेवंविहं जाण ॥ २२९२
णवरि विसेसो एक्को ताणं णयरीण अण्णणामा य । खेमपुरी रिट्ठक्खा रिट्ठपुरी खग्गमंजुसा दोण्णि ॥ २२९३
ओसहणयरी तह पुंडरीकिणी एवमेत्थ णामाणिं । सत्ताणं णयरीणं सुकच्छपमुहाण विजयाणं ॥ २२९४
अट्ठाणं एक्कसमो वच्छप्पमुहाण होदि विजयाणं । णवरि विसेसो सरियाणयरीणं अण्णणामाणिं ॥ २२९५

वहां श्रेष्ठ राजा, अधिराज, महाराज, छत्र-चमरोंसे युक्त अर्धमण्डलीक, महामण्डलीक और सकलमण्डलीक विराजमान रहते हैं ॥ २२८७ ॥

आर्यखण्डकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

शेष पांच खण्ड नामसे म्लेच्छखण्ड हैं । उनमें स्थित जीव मिथ्यागुणोंसे युक्त और बहुत प्रकारके भावकलंकसे सहित होते हैं ॥ २२८८ ॥

ये म्लेच्छखण्ड नाहल, पुलिंद, बर्बर और किरातप्रभृति तथा सिंहलादिक म्लेच्छोंके कुलोंसे युक्त कहे गये हैं ॥ २२८९ ॥

नीलाचलके दक्षिण और वक्षार पर्वतके पूर्वदिग्भागमें रक्ता-रक्तोदाके मध्य म्लेच्छ-खण्डके बहुमध्यभागमें चक्रधरोंके मानका मर्दन करनेवाला और नाना चक्रवर्तियोंके नामोंसे व्याप्त भरतक्षेत्रसम्बन्धी वृषभगिरिके सदृश वृषभ नामक पर्वत है ॥ २२९०-२२९१ ॥

इसप्रकार यहां संक्षेपमें कच्छादेशके विस्तारादिका वर्णन किया गया है । शेष क्षेत्रोंका वर्णन भी इसी प्रकार जानना चाहिये ॥ २२९२ ॥

यहां विशेषता केवल एक यही है कि उन क्षेत्रोंकी नगरियोंके नाम भिन्न हैं—क्षेमपुरी, रिष्टा नामक, अरिष्टपुरी, खड्गा, मंजूषा, औषधनगरी और पुण्डरीकिणी, इसप्रकार ये यहां सुकच्छा आदि सात देशोंकी सात नगरियोंके नाम हैं ॥ २२९३-२२९४ ॥

वत्सा आदि आठ देशोंमें समानता है । परन्तु विशेष यही है कि यहां नदी और नगरि-योंके नाम भिन्न हैं ॥ २२९५ ॥

---

१ द ब अट्ठ. २ द ब अद्धगिरिंदस्स. ३ द ब वण्णिदा.

गंगासिंधूणामा पडिविजयं वाहिणीओ[1] तिट्ठंति । भरहक्खेत्तपवण्णिदगंगासिंधूहिं सरिसाओ ॥ २२९६
णयरी सुसीमकुंडलअवराजिदपहंकरा य णामाणिं । अंका पउमवदीया ताण सुभा रयणसंचया कमसो ॥२२९७
पुव्वविदेहे व कमो अवरविदेहे वि सेस दट्ठव्वं[2] । णवरि विसेसो एक्को णयरीणं अण्णणामाणिं ॥ २२९८
अस्सपुरी सीहपुरी महापुरी तह य होदि विजयपुरी । अरजा विरजासोकाउ[3] वीदसोक त्ति पउमपहुदीणं ॥२२९९
विजया य वइजयंता जयंतावराजिदाओ तह चेव । चक्कपुरी खग्गपुरी अउज्झणामा यवज्झा[4] त्ति ॥ २३००
कमसो वप्पादीणं विजयाणं अडपुरीण[5] णामाणिं । एक्कत्तीसपुरीणं खेमासरिसा पसंसाओ ॥ २३०१
इगिगिविजयमज्झत्थदीहाविजयद्धणवसुकूडेसुं[6] । दक्खिणपुव्वं विदिओ णियणियविजयक्खमुव्वहइ ॥ २३०२
उत्तरपुव्वं दुचरिमकूडो तं चेय धरइ सेसा य । सगकूडा णामेहिं भवंति कच्छम्मि भणिदेहिं ॥ २३०३
रत्तारत्तोदाओ सीदासीदोदयाण दक्खिणए । भागे तह उत्तरए गंगासिंधू व केवि भासंति ॥ २३०४

पाठान्तरम् ।

यहां प्रत्येक क्षेत्रमें भरतक्षेत्रमें कही गई गंगा-सिन्धुके सदृश गंगा और सिंधु नामक नदियां स्थित हैं ॥ २२९६ ॥

सुसीमा, कुण्डला, अपराजिता, प्रभंकरा, अंका, पद्मवती, शुभा और रत्नसंचया, ये क्रमशः उन देशोंकी नगरियोंके नाम हैं ॥ २२९७ ॥

पूर्वविदेहके समान ही अपर-विदेहमें भी वही क्रम जानना चाहिये । विशेष एक यह है कि यहां नगरियोंके नाम भिन्न ही हैं ॥ २२९८ ॥

अश्वपुरी, सिंहपुरी, महापुरी, विजयपुरी, अरजा, विरजा, अशोका और वीतशोका, इसप्रकार ये पद्मादिक देशोंकी प्रधान नगरियोंके नाम हैं ॥ २२९९ ॥

विजया, वैजयन्ता, जयन्ता, अपराजिता, चक्रपुरी, खड्गपुरी, अयोध्या और अवध्या, इसप्रकार ये क्रमसे वप्रादिक देशोंकी आठ नगरियोंके नाम हैं । उक्त इकतीस नगरियोंकी प्रशंसा क्षेमापुरीके समान ही जानना चाहिये ॥ २३००-२३०१ ॥

प्रत्येक देशके मध्यमें स्थित लंबे विजयार्द्ध पर्वतके ऊपर जो नौ नौ कूट हैं, उनमेंसे दक्षिण-पूर्वका द्वितीय कूट अपने देशके नामको और उत्तर-पूर्वका द्विचरम कूट भी उसी देशके नामको धारण करता है । शेष सात कूट कच्छादेशमें कहे गये नामोंसे युक्त हैं ॥२३०२-२३०३॥

कितने ही आचार्य सीता-सीतोदाके दक्षिण भागमें रक्ता-रक्तोदा और उसीप्रकार उत्तर भागमें गंगा सिन्धुनदियोंका भी निरूपण करते हैं ॥ २३०४ ॥ पाठान्तर ।

---

१ द ब वाहिणीए. २ द ब दट्ठाओ. ३ द ब विरजासोकोउ. ४ द ब यउज्झा. ५ द ब अदिपुरीण. ६ द ब इगिविजयमज्झत्थं दीहाविजयड्ढ°.

पत्तेक्कं पुव्वावरविदेहविजएसु अज्जखंडम्मि । सीदासीदोदाणं दुतडेसुं जिणिंदपडिमाओ ॥ २३०५
चेट्ठंति तिण्णि तिण्णि य पणमियचलणा तियंसणिवहेहिं । सव्वाओ छण्णउदी तित्थट्ठाणाणि मिलिदाओ ॥ २३०६
गयदंतगिरी सोलस सीदासीदोदयाण तीरेसुं । पणसयजोयणउदया कुलगिरिपासेसु एक्कसयहीणा ॥ २३०७

५०० । ४०० ।

वक्खाराणं दोसुं पासेसुं होंति दिव्ववणसंडा । पुह पुह गिरिसमदीहा जोयणदलमेत्तवित्थारा ॥ २३०८
सव्वे वक्खारगिरी तुरंगखंधेण होंति सारिच्छा । उवरिम्मि ताण कूडा चत्तारि हवंति पत्तेक्कं ॥ २३०९
सिद्धो वक्खारुद्धाभोगदविजयणामकूडा य' । ते सव्वे रयणमया पव्वयचउभागउच्छेहा ॥ २३१०
सीदासीदोदाणं पासे एक्को जिणिंदभवणजुदो । सेसा य तिण्णि कूडा वेंतरणयरेहिं रमणिज्जा ॥ २३११
रोहीए समा बारसविभंगसरियाओ वासपहुदीहिं । परिवारणईओ तह दोसु विदेहेसु पत्तेक्कं ॥ २३१२

२८००० ।

कंचणसोवाणाओ सुगंधविमलेहिं सलिलभरिदाओ । उववणवेदीतोरणजुदाओ णच्चंतउम्मीओ ॥ २३१३
तोरणदाराणुवरिमंताणट्ठिदजिणणिकेदणिचिदाओ । सोहंति णिरुवमाणा सयलाओ विभंगसरियाओ ॥ २३१४

पूर्वापर विदेह क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येक क्षेत्रके आर्यखण्डमें सीता-सीतोदाके दोनों किनारोंपर, जिनके चरणोंमें देवोंके समूह नमस्कार करते हैं ऐसी तीन तीन जिनेन्द्रप्रतिमायें स्थित हैं। ये सर्व तीर्थस्थान मिलकर छ्यानवे हैं ॥ २३०५-२३०६ ॥

सोलह गजदन्तपर्वत सीता-सीतोदाके किनारोंपर पांचसौ योजन और कुलाचलोंके पार्श्वभागोंमें एकसौ कम अर्थात् चारसौ योजन ऊंचे हैं ॥ २३०७ ॥

वक्षार पर्वतोंके दोनों पार्श्वभागोंमें पृथक् पृथक् पर्वतसमान लंबे और अर्द्धयोजनमात्र विस्तारवाले दिव्य वनखण्ड हैं ॥ २३०८ ॥

सब वक्षार पर्वत घोड़ेके स्कंधके सदृश होते हैं। इनमेंसे प्रत्येक पर्वतके ऊपर चार कूट हैं ॥ २३०९ ॥

इनमेंसे प्रथम सिद्धकूट, द्वितीय वक्षारके समान नामवाला, और शेष दो कूट वक्षारोंके अधस्तन और उपरिम क्षेत्रोंके नामोंसे युक्त हैं। वे सब तीनों कूट अपने पर्वतकी उंचाईके चतुर्थ-भाग प्रमाण ऊंचे हैं ॥ २३१० ॥

सीता-सीतोदाके पार्श्वभागमें एक कूट जिनेन्द्रभवनसे युक्त, और शेष तीन कूट व्यन्तर नगरोंसे रमणीय हैं ॥ २३११ ॥

दोनों विदेहोंमें रोहित्के समान विस्तारादिसे सहित बारह विभंगनदियां हैं। इनमेंसे प्रत्येक नदीकी परिवार नदियां रोहित्के ही समान अट्ठाईस हजार प्रमाण हैं ॥ २३१२ ॥

सम्पूर्ण विभंगनदियां सुवर्णमय सोपानोंसे सहित, सुगन्धित निर्मल जलसे परिपूर्ण, उपवन, वेदी एवं तोरणोंसे संयुक्त, नृत्य करती हुई लहरोंसे सहित, तोरणद्वारोंके उपरिम प्रदेशमें स्थित जिन-भवनोंसे युक्त और उपमासे रहित होती हुई शोभायमान होती हैं ॥ २३१३-२३१४ ॥

१ द ब सिद्धा वक्खारभोगदविजओ णागणाम कूडा. २ द ब उच्छेहो. ३ द ब तोरणदाराउवरिम°.

सीदाए उत्तरदो दीवोववणस्स[1] वेदिपच्छिमदो । णीलाचलदक्खिणदो पुव्वंते पोक्खलावदीविसए ॥ २३१५
चेट्ठदि देवारण्णं णाणातरुसंडमंडिदं रम्मं । पोक्खरणीवावीहिं कमलुप्पलपरिमलिल्लाहिं ॥ २३१६
तस्सि देवारण्णे पासादा कणयरयणरजदमया । वेदीतोरणधयवडपहुदीहिं मंडिदा विउला ॥ २३१७
उप्पत्तिमंचियाइं[2] अहिसेयपुरा य मेहुणगिहाइं[3] । कीडणसालाओ सभासालाओ जिणणिकेदेसुं ॥ २३१८
चउविदिसासुं गेहा ईसाणिंदस्स अंगरक्खाणं । दिप्पंतरयणदीवा बहुविहधुव्वंतधयमाला ॥ २३१९
दक्खिणदिसाविभागे तिप्परिसाणं पुराणि विविहाणिं[4] । सत्ताणमणीयाणं[5] पासादा पच्छिमदिसाए ॥ २३२०
किब्बिसअभियोगाणं सम्मोहसुराण तत्थ दिब्भागे । कंदप्पाण सुराणं होंति विचित्ताणि भवणाणिं ॥ २३२१
एदे सव्वे देवा तेसुं कीडंति बहुविणोदेहिं । रम्मेसु मंदिरेसुं ईसाणिंदस्स परिवारा ॥ २३२२
सीदाय दक्खिणतडे दीवोववणस्स वेदिपच्छिमदो । णिसहाचलउत्तरदो पुव्वाय दिसाए वच्छस्स ॥ २३२३
देवारण्णं अण्णं चेट्ठदि पुव्वस्स सरिसवण्णणयं । णवरि विसेसो देवा सोहम्मिंदस्स परिवारा ॥ २३२४

सीतानदीके उत्तर द्वीपोपवन सम्बन्धी वेदीके पश्चिम, नीलपर्वतके दक्षिण और पुष्कलावती देशके पूर्वान्तमें नाना वृक्षोंके समूहोंसे मण्डित तथा कमल व उत्पलोंकी सुगन्धसे संयुक्त ऐसी पुष्करिणी एवं वापिकाओंसे रमणीय देवारण्य नामक वन स्थित है ॥ २३१५-२३१६ ॥

उस देवारण्यमें सुवर्ण, रत्न व चांदीसे निर्मित तथा वेदी, तोरण और ध्वजपटादिकोंसे मण्डित विशाल प्रासाद हैं ॥ २३१७ ॥

इन प्रासादोंमें उत्पत्तिमंचिका (उपपाद शय्या), अभिषेकपुर, मैथुनगृह, क्रीडनशाला, सभाशाला और जिननिकेत स्थित हैं ॥ २३१८ ॥

चारों विदिशाओंमें प्रदीप्त रत्नदीपकोंसे सहित और बहुत प्रकारकी फहराती हुई ध्वजाओंके समूहोंसे सुशोभित ईशानेन्द्रके अंगरक्षक देवोंके गृह हैं ॥ २३१९ ॥

दक्षिणदिशाभागमें तीनों पारिषद देवोंके विविध भवन और पश्चिम दिशामें सात अनीकदेवोंके प्रासाद हैं ॥ २३२० ॥

उसी दिशामें किल्विष, आभियोग्य, संमोहसुर और कन्दर्पदेवोंके विचित्र भवन हैं ॥ २३२१ ॥

ईशानेन्द्रके परिवारस्वरूप ये सब देव उन रमणीय भवनोंमें बहुत प्रकारके विनोदोंसे क्रीड़ा करते हैं ॥ २३२२ ॥

द्वीपोपवनसम्बन्धी वेदीके पश्चिम, निषधाचलके उत्तर और वत्सादेशकी पूर्वदिशामें सीतानदीके दक्षिण तटपर पूर्वोक्त देवारण्यके सदृश वर्णनवाला दूसरा देवारण्य भी स्थित है । विशेष केवल इतना है कि इस वनमें सौधर्मइन्द्रके परिवार देव क्रीड़ा करते हैं ॥ २३२३-२३२४ ॥

१ द दीवावलणस्स. २ द ब उप्पत्तिमंडिदाइं. ३ द ब मिहुणगिहाहिं. ४ द ब पुराण विविहाणं. ५ द ब सत्ताणं आणीयाणं.

सीदोदादुतडेसुं दीओवणस्स वेदिपुव्वाए । णीलणिसहरिमज्झे अवरविदेहस्स अवरदिब्भाए ॥ २३२५
बहुतरुरमणीयाइं भूदारण्णाइं दोण्णि सोहंति । देवारण्णसमाणं सव्वं चिय वण्णणं ताणं ॥ २३२६

। एवं विदेहवण्णणा समत्ता ।

णीलगिरी णिसहो पिव उत्तरपासम्मि दोविदेहाणं । णवरि विसेसो अण्णे[1] कूडाणं देवदेविदहणामा ॥ २३२७
सिद्धक्खो णीलक्खो पुव्वविदेहो त्ति सीदकित्तीओ । णारी अवरविदेहो रम्मकणामावदंसणो कूडो ॥ २३२८
एदेसु पढमकूडे जिणिंदभवणं विचित्तरयणमयं । उच्छेहप्पहुदीहिं सोमणसि जिणालयसमाणं ॥ २३२९
सेसेसुं कूडेसुं वेंतरदेवाण होंति णयरीओ । णयरीसुं पासादा विचित्तरूवा णिरुवमाणा ॥ २३३०
वेंतरदेवा सव्वे णियणियकूडाभिधाणसंजुत्ता । बहुपरिवारा दसधणुतुंगा पल्लप्पमाणाऊ ॥ २३३१
उवरिम्मि णीलगिरिणो केसरिणामद्दहम्मि दिव्वम्मि । चेट्ठेदि कमलभवणे देवी कित्ति त्ति विक्खादा ॥ २३३२
धिदिदेवीय समाणो तीए सोहेदि सव्वपरिवारो । दसचावाणिं तुंगा णिरुवमलावण्णसंपुण्णा ॥ २३३३

द्वीपोपवनसम्बन्धी वेदीके पूर्व और अपरविदेहके पश्चिम दिग्भागमें नील-निषधपर्वतके मध्य सीतोदाके दोनों तटोंपर बहुतसे वृक्षोंसे रमणीय भूतारण्यनामक दो वन शोभित हैं । इनका समस्त वर्णन देवारण्योंके ही समान है ॥ २३२५-२३२६ ॥

इसप्रकार विदेहक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

दोनों विदेहोंके उत्तर पार्श्वभागमें निषधके ही समान नीलगिरि भी स्थित है । विशेष इतना है कि इस पर्वतपर स्थित कूटों, देव-देवियों और द्रहोंके नाम अन्य ही हैं ॥ २३२७ ॥

सिद्धाख्य, नीलाख्य, पूर्वविदेह, सीता, कीर्ति, नारी, अपरविदेह, रम्यक और अपदर्शन, इसप्रकार इस पर्वतपर ये नौ कूट स्थित हैं ॥ २३२८ ॥

इनमेंसे प्रथम कूटके ऊपर सौमनसस्थ जिनालयके समान उंचाई आदिसे सहित विचित्र-रत्नमय जिनेन्द्रभवन स्थित है ॥ २३२९ ॥

शेष कूटोंपर व्यन्तरदेवोंकी नगरियां और उन नगरियोंमें विचित्ररूपवाले अनुपम प्रासाद हैं ॥ २३३० ॥

सब व्यन्तर देव अपने अपने कूटोंके नामोंसे संयुक्त, बहुत परिवारोंसे सहित, दश धनुष ऊंचे और एक पल्य-प्रमाण आयुवाले हैं ॥ २३३१ ॥

नीलगिरिके ऊपर स्थित केसरीनामक दिव्य द्रहके मध्यमें रहनेवाले कमल-भवनपर कीर्ति नामसे विख्यात देवी स्थित है ॥ २३३२ ॥

उस देवीका सब परिवार धृतिदेवीके समान ही शोभित है । यह देवी दश धनुष ऊंची और अनुपम लावण्यसे परिपूर्ण है ॥ २३३३ ॥

---

१ द ब विसेसो एसो अण्णे.

आदिमसंठाणजुदा वररयणविभूसणेहिं विविहेहिं । सोहिदसुंदरमुत्ती[1] ईसाणिंदस्स सा देवी ॥ २३३४

। णीलगिरिवण्णणा समत्ता ।

रम्मकविजओ[2] रम्मो हरिवरिसो वं[3] वरवण्णणाजुत्तो । णवरि विसेसो एक्को णाभिणगो अण्णणामाणिं ॥ २३३५

रम्मकभोगखिदीए बहुमज्झे होदि पउमणामेणं । णाभिगिरी रमणिज्जो णियणामजुदेहिं देवेहिं ॥ २३३६

केसरिदहस्स उत्तरतोरणदारेण णिग्गदा दिव्वा । णरकंता णाम णदी सा गच्छिय उत्तरमुहेणं ॥ २३३७

णरकंतकुंडमज्झे णिवडियं णिस्सरदि उत्तरदिसाए । तत्तो णाभिगिरिंदं कादूण पदाहिणं पि पुव्वं व ॥ २३३८

गंतूणं सा मज्झं रम्मकविजयस्स पच्छिममुहेहिं । पविसेदि लवणजलहिं परिवारणदीहिं संजुत्ता ॥ २३३९

। रम्मकविजयस्स परूवणा समत्ता ।

रम्मकभोगखिदीए उत्तरभागम्मि होदि रुम्मिगिरी । महहिमवंतसरिच्छं सयलं चिय वण्णणं तस्स ॥ २३४०

णवरि य ताणं[4] कूडदहपुरदेवीण अण्णणामाणिं । सिद्धो रुम्मीरम्मकणरकंतबुद्धिरुप्पो त्ति ॥ २३४१

हेरण्णवदो मणिकंचणकूडो रुम्मियाण तहा[5] । कूडाण इमा णामा तेसुं जिणमंदिरं पढमकूडे ॥ २३४२

सेसेसुं कूडेसुं वेंतरदेवाण होंति णयरीओ । विक्खादा ते देवा णियणियकूडाण णामेहिं ॥ २३४३

आदिम संस्थान अर्थात् समचतुरस्र संस्थानसे सहित, विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंके भूषणोंसे सुशोभित सुन्दरमूर्ति वह ईशानेन्द्रकी देवी है ॥ २३३४ ॥

इसप्रकार नीलगिरिका वर्णन समाप्त हुआ ।

रमणीय रम्यकविजय भी हरिवर्षके समान उत्तम वर्णनासे युक्त है । विशेषता केवल एक यही है कि यहां नाभिपर्वतका नाम दूसरा है ॥ २३३५ ॥

रम्यकभोगभूमिके बहुमध्यभागमें अपने नामवाले देवोंसे युक्त रमणीय पद्म नामक नाभिगिरि स्थित है ॥ २३३६ ॥

केसरी द्रहके उत्तर तोरणद्वारसे निकली हुई दिव्य नरकान्ता नामक प्रसिद्ध नदी उत्तरकी ओर गमन करती हुई नरकान्तकुण्डके मध्यमें पड़कर उत्तरकी ओरसे निकलती है । पश्चात् वह नदी पहिलेके ही समान नाभिपर्वतको प्रदक्षिण करके रम्यकक्षेत्रके मध्यसे जाती हुई पश्चिममुख होकर परिवारनदियोंके साथ लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २३३७-२३३९ ॥

रम्यकक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

रम्यकभोगभूमिके उत्तरभागमें रुक्मिपर्वत है । उसका सम्पूर्णवर्णन महाहिमवान्के सदृश समझना चाहिये ॥ २३४० ॥

विशेष इतना है कि यहां उन कूट, द्रह, पुर और देवियोंके नाम भिन्न हैं। सिद्ध, रुक्मि, रम्यक, नरकान्ता, बुद्धि, रूप्यकूला, हैरण्यवत और मणिकांचन, ये रुक्मिपर्वतपर स्थित उन आठ कूटोंके नाम हैं । इनमेंसे प्रथम कूटपर जिनमन्दिर और शेष कूटोंपर व्यन्तरदेवोंकी नगरियां है । वे देव अपने अपने कूटोंके नामोंसे विख्यात हैं ॥ २३४१-२३४३ ॥

१ द ब °मूही, क °मुही. २ द ब °विजट्ठी. ३ द ब वि. ४ द णिवलिय. ५ द ब णवरि य णाम. ६ द ब °कूडा रुप्पिया तहा णवधू.

रुम्मिगिरिंदस्सोवरि बहुमज्झे होदि पुंडरीयदहो । फुल्लंतकमलपउरो तिगिंछदहस्स परिमाणो ॥ २३४४
तद्दहकमलणिकेदे देवी णिवसेदि बुद्धिणामेणं । तीए हवेदि अद्धो परिवारो कित्तिदेवीदो ॥ २३४५
णिरुवमलावण्णतणू वररयणविभूसणेहिं रमणिज्जा । विविहविणोदाकीडण ईसाणिंदस्स सा देवी ॥ २३४६
तद्दहदक्खिणतोरणदारेणं णिग्गदा णई णारी । णारीणामे कुंडे णिवददि गंतूण थोवमुही[1] ॥ २३४७
तद्दक्खिणदारेणं णिस्सरिदूणं च दक्खिणमुही सा । पत्ता णाभिगिरिंदं कादूण पदाहिणं हरिणइं वा ॥ २३४८
रम्मकभोगखिदीए बहुमज्झेणं पयादि पुव्वमुही । पविसेदि लवणजलहिं परिवारतरंगिणीहिं जुदा ॥ २३४९

। रुम्मिगिरिवण्णणा समत्ता ।

विजओ हेरण्णवदो हेमवदो व प्पवण्णणाजुत्तो[2] । णवरि विसेसो एक्को दहणाभिगईण अण्णणामाणिं ॥ २३५०
तस्स बहुमज्झभागे विजयड्ढो होदि गंधवंतो त्ति । तस्सोवरिमणिकेदे पभासणामो ठिदो देवो ॥ २३५१
पुंडरियदहादिंतो उत्तरदारेण रुप्पकूलणई । णिस्सरिदूणं णिवददि कुंडे सा रुप्पकूलम्मि ॥ २३५२
तस्सुत्तरदारेणं णिस्सरिदूणं च उत्तरमुही सा । णाभिगिरिं कादूणं पदाहिणं रोहिसरिय व्व ॥ २३५३

रुक्मिपर्वतके ऊपर बहुमध्यभागमें फूले हुए प्रचुर कमलोंसे संयुक्त तिगिंछद्रहके समान प्रमाणवाला पुण्डरीक द्रह है ॥ २३४४ ॥

उस द्रहसम्बन्धी कमल-भवनमें बुद्धि नामक देवी निवास करती है। इसका परिवार कीर्तिदेवीकी अपेक्षा आधा है ॥ २३४५ ॥

अनुपम लावण्यमय शरीरसे संयुक्त, उत्तम रत्नोंके भूषणोंसे रमणीय और विविधप्रकारके विनोदसे क्रीड़ा करनेवाली वह ईशानेन्द्रकी देवी है ॥ २३४६ ॥

उस द्रहके दक्षिणतोरणद्वारसे निर्गत नारी नदी स्तोकमुखी (अल्प-विस्तार) होकर नारी-नामक कुण्डमें गिरती है ॥ २३४७ ॥

पश्चात् वह कुण्डके दक्षिणतोरणद्वारसे निकलकर दक्षिणमुख होती हुई नाभिगिरिको पाकर और उसे हरित् नदीके समान ही प्रदक्षिण करके रम्यकभोगभूमिके बहुमध्यभागमेंसे पूर्वकी ओर जाती हुई परिवारनदियोंसे युक्त होकर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २३४८-२३४९ ॥

रुक्मिपर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

हैरण्यवतक्षेत्र हैमवतक्षेत्रके समान वर्णनसे युक्त है । विशेषता केवल एक यही है कि यहां द्रह, नाभिगिरि और नदियोंके नाम भिन्न हैं ॥ २३५० ॥

इस क्षेत्रके बहुमध्यभागमें गन्धवान् नामक विजयार्द्ध (नाभिगिरि) है। इसके ऊपर स्थित भवनमें प्रभास नामक देव रहता है ॥ २३५१ ॥

पुण्डरीक द्रहके उत्तरद्वारसे वह रूप्यकूलानदी निकलकर रूप्यकूल नामक कुंडमें गिरती है ॥ २३५२ ॥

तत्पश्चात् वह इस कुण्डके उत्तरद्वारसे निकलकर उत्तरकी ओर गमन करती हुई रोहित्

१ द ब धोवमुही. २ द ब °जुत्ता. ३ द वेणभीण, ब देवणाभीण.

पच्छिममुहेण गच्छिय परिवारतरंगिणीहिं संजुत्ता । दीवजगदीविलेणं पविसदि कल्लोलिणीणाहं[1] ॥ २३५४

। हेरण्णवदविजयवण्णणा समत्ता ।

तव्विजउत्तरभागे सिहरीणामेण चरमकुलसेलो । हिमवंतस्स सरिच्छं सयलं चिय वण्णणं तस्स ॥ २३५५

णवरि विसेसो कूडद्दहाण देवाण देविसरियाणं । अण्णाइं णामाइं तस्सिं सिद्धो पढमकूडो ॥ २३५६

सिहरी हेरण्णवदो रसदेवीरत्तलच्छिकंचणया । रत्तवदी गंधवदी रेवदमणिकंचणं कूडं ॥ २३५७

एक्कारसकूडाणं पुह पुह पणुवीस जोयणा उदओ । तेसुं पढमे कूडे[2] जिणिंदभवणं परमरम्मं ॥ २३५८

सेसेसुं कुडेसुं णियणियकूडाण णामसंजुत्ता । वेंतरदेवा मणिमयपासादेसुं विरायंति ॥ २३५९

महपुंडरीयणामा दिव्वदहो सिहरिसेलसिहरम्मि । पउमद्दहसारिच्छा वेदीपहुदीहिं कयसोहा ॥ २३६०

तस्स सयवत्तभवणे[3] लच्छियणामेण णिवसदे देवी । सिरिदेवीए सरिसा ईसाणिंदस्स सा देवी ॥ २३६१

तद्दहदक्खिणतोरणदारेण सुवण्णकूलणामणदी । णिस्सरिय दक्खिणमुही णिवदेदि सुवण्णकूलकुंडम्मि ॥२३६२

तदक्खिणदारेणं णिस्सरिदूणं च दक्खिणमुही सा । णाभिगिरिं कादूणं पदाहिणं रोहिसरिय व्व ॥ २३६३

.....

नदीके समान नाभिगिरिको प्रदक्षिण करके पश्चिमकी ओर जाती है। पुनः परिवारनदियोंसे संयुक्त होकर वह नदी जम्बूद्वीपकी जगतीके बिलमें होकर लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥२३५३-२३५४॥

हैरण्यवत्क्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ।

इस क्षेत्रके उत्तरभागमें शिखरीनामक अन्तिम कुलपर्वत स्थित है। इस पर्वतका सम्पूर्ण वर्णन हिमवान् पर्वतके सदृश है ॥ २३५५ ॥

विशेष यह है कि यहां कूट, द्रह, देव, देवी और नदियोंके नाम भिन्न हैं। उस पर्वत-पर प्रथम सिद्ध कूट, शिखरी, हैरण्यवत, रसदेवी, रक्ता, लक्ष्मी, कांचन, रक्तवती, गन्धवती, रैवत (ऐरावत) और मणिकांचनकूट, इसप्रकार ये ग्यारह कूट स्थित हैं। इन ग्यारह कूटोंकी ऊंचाई पृथक् पृथक् पच्चीस योजन प्रमाण है। इनमेंसे प्रथम कूटपर परमरमणीय जिनेन्द्रभवन और शेष कूटोंपर स्थित मणिमय प्रासादोंमें अपने अपने कूटोंके नामोंसे संयुक्त व्यन्तर देव विराजमान हैं ॥ २३५६-२३५९ ॥

इस शिखरीशैलके शिखरपर पद्मद्रहके सदृश वेदी आदिसे शोभायमान महापुण्डरीक नामक दिव्य द्रह है ॥ २३६० ॥

इस तालाबके कमलभवनमें श्रीदेवीके सदृश जो लक्ष्मी नामक देवी निवास करती है, वह ईशानेन्द्रकी देवी है ॥ २३६१ ॥

उस द्रहके दक्षिणतोरणद्वारसे निकलकर सुवर्णकूलानामक नदी दक्षिणमुखी होकर सुवर्ण-कूलकुण्डमें गिरती है ॥ २३६२ ॥

तत्पश्चात् उस कुण्डके दक्षिणद्वारसे निकलकर वह नदी दक्षिणमुखी होकर रोहित् नदीके

.....

१ द ब कल्लोलिणिं णाम. २ द ब कूडद्दावि. ३ द ब कूडो. ४ द ब पवरसुमवणे.

हेरण्णवदब्भंतरभागे गच्छिय दिसाए पुव्वाए । दीवजगदीबिलेणं पविसेदि तरंगिणीणाहं ॥ २३६४

। एवं सिहरिगिरिवण्णणा समत्ता ।

सिहरिस्सुत्तरभागे जंबूदीवस्स जगदिदक्खिणदो । एरावदो त्ति वरिसो चेट्ठदि भरहस्स सारिच्छो ॥ २३६५
णवरि विसेसो तस्सिं[1] सलागपुरिसा भवंति जे केई । ताणं णामप्पहुदिसु उवदेसो संपइ पणट्ठो ॥ २३६६
अण्णण्णा एदस्सिं[2] णामा विजयद्धकूडसरियाणं[3] । सिद्धो[4] रेवदखंडा माणी विजयद्धपुण्णा य ॥ २३६७
तिमिसगुहो रेवदवेसमणं णामाणि होंति कूडाणं । सिहरिगिरिंदोवरि महपुंडरियद्दहस्स पुव्वदारेणं ॥ २३६८
रत्ता णामेण णदी णिस्सरिय पडेदि रत्तकुंडम्मि । गंगाणइसारिच्छा पविसइ लवणंबुरासिम्मि ॥ २३६९
तद्दहपच्छिमतोरणदारेणं णिस्सरेदि रत्तोदा । सिंधुणईए सरिसा णिवडइ रत्तोदकुंडम्मि ॥ २३७०
पच्छिममुहेण तत्तो णिस्सरिदूणं अणेयसरिसहिदा । दीवजगदीबिलेणं लवणसमुद्दम्मि पविसेदि ॥ २३७१
गंगारोहिंहरिओ सीदाणारीसुवण्णकूलाओ । रत्त त्ति सत्त सरिया पुव्वाए दिसाए वच्चंति ॥ २३७२

समान नाभिगिरिकी प्रदक्षिणा करती हुई हैरण्यवतक्षेत्रके अभ्यन्तर भागमेंसे पूर्वदिशाकी ओर जाकर जम्बूद्वीपसम्बन्धी जगतीके बिलमेंसे समुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २३६३–२३६४ ॥

इसप्रकार शिखरीपर्वतका वर्णन समाप्त हुआ ।

शिखरीपर्वतके उत्तर और जम्बूद्वीपकी जगती के दक्षिणभागमें भरतक्षेत्रके सदृश ऐरावत-क्षेत्र स्थित है ॥ २३६५ ॥

विशेष यह कि उस क्षेत्रमें जो कोई शलाकापुरुष होते हैं, उनके नामादिविषयक उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ २३६६ ॥

इस क्षेत्रमें विजयार्द्धपर्वतके ऊपर स्थित कूटों और नदियोंके नाम भिन्न हैं । सिद्ध, ऐरावत, खण्डप्रपात, माणिभद्र, विजयार्द्ध, पूर्णभद्र, तिमिश्रगुह, ऐरावत और वैश्रवण नामक ये नौ कूट यहां विजयार्द्धपर्वतके ऊपर हैं । शिखरीपर्वतके ऊपर स्थित महापुण्डरीक द्रहके पूर्वद्वारसे निकलकर रक्ता नामक नदी रक्तकुण्डमें गिरती है । पुनः वह गंगानदीके सदृश लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २३६७–२३६९ ॥

उसी द्रहके पश्चिम तोरणद्वारसे रक्तोदानदी निकलती है और सिन्धुनदीके सदृश रक्तोद-कुण्डमें गिरती है ॥ २३७० ॥

पश्चात् वह उस कुण्डसे निकलकर पश्चिममुख होती हुई अनेक नदियोंसे सहित होकर द्वीपकी जगतीके बिलसे लवणसमुद्रमें प्रवेश करती है ॥ २३७१ ॥

गंगा, रोहित्, हरित्, सीता, नारी, सुवर्णकूला और रक्ता, ये सात नदियां पूर्वदिशामें जाती हैं ॥ २३७२ ॥

---

१ ब सम्मत्ता. २ द ब तेसिं. ३ द ब एदेसिं. ४ द ब सरिसाणं. ५ द ब सिद्धा. ६ द ब रत्तो.

पच्छिमदिसाए गच्छदि सिंधुणई रोहियासहरिकंता । सीदोदा णरकंता रुप्पतडा सत्तमी य रत्तोदा ॥ २३७३ ॥ एवं एरावदखेत्तस्स वण्णणा समत्ता ।

इसुपादगुणिदजीवा गुणिदव्वा दसगुणेण जं वग्गं । मूलं चावायारे खेत्तेत्थं होदि सुहुमफलं ॥ २३७४

पंचतितिएक्कदुगणभछक्का अंकक्कमेण जोयणया । एक्कछतिहरिदचउणवदुगभागो भरहखेत्तफलं ॥ २३७५[1]

६०२१३३५ । २९४ ।
३६१

तियएक्कंबरणवदुगणवचउइगिपंचएक्क यंसा य । तिण्णिसयबारसायं खेत्तफलं णिसहसेलस्स ॥ २३७६

१५१४९२९०१३ । ३१२ ।
३६१

दुखणवणवचउतियणवछण्णवदुगजोयणेक्कपंतीए । भागा तिण्णि सया इगिछत्तियहरिदा विदेहखेत्तफलं॥२३७७

२९६९३४९९०२ । ३०० ।
३६१

भरहादी णिसहंता जेत्तियमेत्ता हवंति खेत्तफलं । तं सव्वं वत्तव्वं एरावदपहुदिणीलंतं ॥ २३७८

सिन्धुनदी, रोहितास्या, हरिकान्ता, सीतोदा, नरकान्ता, रूप्यकूला और सातवीं रक्तोदा, ये सात नदियां पश्चिमदिशामें जाती हैं ॥ २३७३ ॥

इसप्रकार ऐरावतक्षेत्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

बाणके चतुर्थ भागसे गुणित जीवाका जो वर्ग हो उसको दशसे गुणा कर प्राप्त गुणनफलका वर्गमूल निकालनेपर धनुषके आकार क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल जाना जाता है ॥ २३७४ ॥

बाण $५२६\frac{६}{१९} = \frac{१००००}{१९}$ । जीवा $१४४७१\frac{५}{१९} = \frac{२७४९५४}{१९}$ । अतएव भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल हुआ $\sqrt{\left(\frac{१००००}{१९} \times \frac{१}{४} \times \frac{२७४९५४}{११}\right)^२ \times १०} = \sqrt{\left(\frac{६८७३८५०००}{३६१}\right)^२ \times १०}$

$= \sqrt{\frac{४७२४९८१३८२२५०००००००}{३६१ \times ३६१}} = ६०२१३३५\frac{२९४}{३६१}$ ।

पांच, तीन, तीन, एक, दो, शून्य और छह, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित दोसौ चौरानवे भागप्रमाण भरतक्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल है ॥ २३७५ ॥ $६०२१३३५\frac{२९४}{३६१}$ ।

तीन, एक, शून्य, नौ, दो, नौ, चार, एक, पांच और एक, इन अंकोंसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एक योजनके तीनसौ इकसठ भागोंमेंसे तीनसौ बारह भागप्रमाण निषधपर्वतका क्षेत्रफल है ॥ २३७६ ॥ $१५१४९२९०१३\frac{३१२}{३६१}$ ।

दो, शून्य, नौ, नौ, चार, तीन, नौ, छह, नौ और दो, इन अंकोंको एक पंक्तिमें रखनेसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और तीनसौ इकसठसे भाजित तीनसौ भागप्रमाण विदेहका क्षेत्रफल है ॥ २३७७ ॥ $२९६९३४९९०२\frac{३००}{३६१}$ ।

भरतक्षेत्रसे लेकर निषधपर्वत तक जितना क्षेत्रफल है, वह सब ऐरावतक्षेत्रसे लेकर नीलपर्वत तक भी कहना चाहिये ॥ २३७८ ॥

---

१ अतः परं हिमवद्-हैमवतादिपर्वत-क्षेत्राणां क्षेत्रफलसूचकगाथास्त्रुटिता इति भाति ।

अंबरपणएक्कचऊणवछप्पण्णसुण्णणवयसत्तं च । अंककमे परिमाणं जंबूदीवस्स खेत्तफलं ॥ २३७९

७९०५६९४१५० ।

अट्ठावीससहस्सं भरहस्स तरंगिणीओ दुगसहिदा । दुगुणा दुगेण रहिदा हेमवदक्खेत्तसरिया णं ॥ २३८०

२८००२ । ५६००२ ।

हेमवदवाहिणीणं दुगुणियसंखा य दुगविहीणा य । हरिवरिसम्मि पमाणं तरंगिणीणं च णादव्वं ॥ २३८१

११२००२ ।

एक्काण तिखेत्ताणं सरियाओ मेलिदूण दुगुणकदा । ..... ॥ २३८२

[३९२०१२ ।]

अट्ठासट्ठिसहस्सब्भहियं[1] एक्कं तरंगिणीलक्खं । देवकुरुम्मि य खेत्ते णादव्वं उत्तरकुरुम्मि ॥ २३८३

१६८००० ।

अट्ठुत्तरिसंजुत्ता चोद्दसलक्खाणि होंति दिव्वाओ । सव्वाओ पुव्वावरविदेहविजयाण सरियाओ ॥ २३८४

१४०००७८ ।

सत्तरससयसहस्सा बाणउदिसहस्सया य णउदिजुदा । सव्वाओ वाहिणीओ जंबूदीवम्मि मिलिदाओ ॥२३८५

१७९२०९० ।

[2]णदीसंखा— विदे० सीतासीतोदा २, क्षेत्रनदी ६४, विभंगा १२, सीतासीतोदापरिवार १६८०००, क्षे. न. प. ८९६०००, वि. परि ३३६०००, एकत्र १४०००७८ । भरतादि ३९२०१२ । १७९२०९० ।[2]

शून्य, पांच, एक, चार, नौ, छह, पांच, शून्य, नौ और सात, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या हो, उतने योजनप्रमाण जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल है ॥ २३७९ ॥ ७९०५६९४१५० ।

भरतक्षेत्रकी नदियां अट्ठाईस हजार दो और हैमवतक्षेत्रकी नदियां दो कम इससे दूनी अर्थात् छप्पन हजार दो हैं ॥ २३८० ॥ २८००२ । ५६००२ ।

हरिवर्षक्षेत्रमें भी नदियोंका प्रमाण हैमवतक्षेत्रकी नदियोंसे दो कम दुगुणित संख्यारूप अर्थात् एक लाख बारह हजार दो जानना चाहिये ॥ २३८१ ॥ ११२००२ ।

इन तीन क्षेत्रोंकी नदियोंको मिलाकर दूना करनेसे [तीन लाख बानवे हजार बारह होता है] । देवकुरु और उत्तरकुरुमें इन नदियोंकी संख्या एक लाख अड़सठ हजारप्रमाण है ॥ २३८२–२३८३ ॥

पूर्वापर विदेहक्षेत्रोंकी सब दिव्य नदियां चौदह लाख अठत्तर हैं ॥ २३८४ ॥

१४०००७८ ।

इसप्रकार सब मिलकर जम्बूद्वीपमें सत्तरह लाख बानवे हजार नब्बे नदियां हैं ॥ २३८५ ॥ १७९२०९० ।

नदीसंख्या — विदेहमें सीता-सीतोदा २, क्षेत्रनदी ६४, विभंगा १२, सीता-सीतोदा-परिवार १६८०००, क्षे. न. परिवार ८९६०००, विभंगापरिवार ३३६०००, एकत्र १४०००७८ । भरतादिक शेष छह क्षेत्र ३९२०१२ । समस्त- १७९२०९० ।

१ द ब दुगणारहिदा, ब दुगरहिदा. २ द ब णादव्वा. ३ द ब सहस्सं नहियं. ४ अस्योः पाठोऽयं २३७५ तमाया गाथायाः पश्चादुपलभ्यते । ५ अत्र पुस्तकयोः ' णवछचउणभगयणं ' इति लिखितम् ।

सरियाओ जेत्तियाओ चेट्ठंते तेत्तियाणि कुंडाणिं । विक्खादाओ ताओ णियणियकुंडाणं[1] णामेहिं ॥ २३८६
वेंतरदेवा बहुओ णियणियकुंडाण णामविदिदाओ। पल्लाउपमाणाओ णियणिवसंता[2] ताण दिव्वगिरिभवणे॥२३८७
जेत्तिय कुंडा जेत्तिय सरियाओ जेत्तियाओ वणसंडा । जेत्तिय सुरणयरीओ जेत्तिय जिणणाहभवणाणिं ॥२३८८
जेत्तिय विज्जाहरसेढियाओ[3] जेत्तियाओ पुरियाओ । अज्जाखंडे जेत्तिय णयरीओ जेत्तियद्दिदहा ॥ २३८९
वेदीओ तेत्तियाओ णियणियजोग्गाओ ताण पत्तेक्कं । जोयणदलमुच्छेहो रुंदा चावाणि पंचसया ॥ २३९०

१ । दंड ५०० ।

२

णवरि विसेसो एसो देवारण्णस्स भूदरण्णस्स । जोयणमेक्कं उदओ[4] दंडसहस्सं च वित्थारो ॥ २३९१
कुंडवणसंडसरियासुरणयरीसेलतोरणद्दारा । विज्जाहरवरसेढीणयरज्जाखंडणयरीओ ॥ २३९२
दहपंचयपुव्वावरविदेहगामादिसम्मलीरुक्खा । जेत्तियमेत्ता जंबूरुक्खाइ य तेत्तिया जिणणिकेदा ॥ २३९३
छक्कुलसेला सव्वे विजयड्ढा होंति तीस चउजुत्ता । सोलस वक्खारगिरी वारणदंताइ चत्तारो ॥ २३९४

६ । ३४ । १६ । ४ ।

तह अट्ठ दिग्गइंदा णाभिगिरिंदा हवंति चत्तारि । चोत्तीस वसहसेला कंचणसेला सयाण दुवे[5] ॥ २३९५

८ । ४ । ३४ । २०० ।

जितनी नदियां हैं उतने ही कुण्ड भी स्थित हैं । वे नदियां अपने अपने कुण्डोंके नामोंसे विख्यात हैं ॥ २३८६ ॥

अपने कुण्डोंके नामोंसे विदित बहुतसे व्यन्तरदेव एक पल्यप्रमाण आयुसे सहित होते हुए उन कुण्डोंके दिव्य गिरिभवनमें निवास करते हैं ॥ २३८७ ॥

जितने कुण्ड, जितनी नदियां, जितने वनसमूह, जितनी देवनगरियां, जितने जिनेन्द्रभवन, जितनी विद्याधरश्रेणियां, जितने नगर, आर्यखण्डोंकी जितनी नगरियां, जितने पर्वत और जितने द्रह हैं, उनमेंसे प्रत्येकके अपने अपने योग्य उतनी ही वेदियां हैं। इन वेदियोंकी उंचाई आधा योजन और विस्तार पांचसौ धनुषप्रमाण है ॥ २३८८–२३९० ॥

वेदियोंकी उंचाई $\frac{1}{2}$ यो. । विस्तार ५०० धनुष ।

विशेष यह है कि देवारण्य और भूतारण्यकी जो वेदियां हैं, उनकी उंचाई एक योजन व विस्तार एक हजार धनुषप्रमाण है ॥ २३९१ ॥

कुण्ड, वनसमूह, नदियां, देवनगरियां, पर्वत, तोरणद्वार, विद्याधरश्रेणियोंके नगर, आर्यखण्डोंकी नगरियां, द्रहपंचक (पांच पांच द्रह), पूर्वापरविदेहोंके ग्रामादिक, शाल्मलीवृक्ष और जम्बूवृक्ष जितने हैं उतने ही जिनभवन भी हैं ॥ २३९२–२३९३ ॥

जम्बूद्वीपमें सब कुलपर्वत छह, विजयार्द्ध चौंतीस, वक्षारगिरि सोलह और गजदन्त चार हैं ॥ २३९४ ॥ कुलशैल ६ । विजयार्ध ३४ । वक्षारगिरि १६ । गजदंत पर्वत ४ ।

दिग्गजेन्द्रपर्वत आठ, नाभिगिरीन्द्र चार, वृषभशैल चौंतीस तथा कांचनशैल दोसौ हैं ॥ २३९५ ॥ दिग्गजेन्द्र ८ । नाभिगिरि ४ । वृषभशैल ३४ । कांचनशैल २०० ।

---

१ द ब कुंडाणि. २ द ब णिवसंताण. ३ द ब सेढियाओ ताणं च. ४ द उदयो. ५ द ब दुवे.

एक्को य मेरु कूडा पंचसया अट्ठसट्ठिअब्भहिया। सत्त खिय महविजया चोत्तीस हवंति कम्मभूमीओ ॥२३९६

१ । ५६८ । ७ । ३४ ।

सत्तरि अब्भहियसयं मेच्छखिदी छच्च भोगभूमीओ । चत्तारि जमलसेला जंबूदीवे समुद्दिट्ठा ॥ २३९७

। एवं जंबूदीववण्णणा समत्ता ।

अत्थि लवणंबुरासी जंबूदीवस्स खाइयायारो । समवट्टो सो जोयणबेलक्खपमाणवित्थारो ॥ २३९८

२००००० ।

णावाए उवरि णावा अहोमुही जह ठिदा तह समुद्दो । गयणे समंतदो सो चेट्ठेदि हु चक्कवालेणं ॥ २३९९

चित्तोवरिमतलादो कूडायारेण उवरि वारिणिही । सत्तसयजोयणाइं उदएण णहम्मि चेट्ठेदि ॥ २४००

७०० ।

उद्वे[1] भवेदि रुंदं जलणिहिणो जोयणा दससहस्सा । चित्तावणिपणिहीए विक्खंभो दोण्णि लक्खाइं ॥२४०१

१०००० । २००००० ।

पत्तेक्कं दुतडादो पविसिय पण्णउदिजोयणसहस्सं । गाढे दोण्णि सहस्सा तलवासो दस सहस्साणिं ॥ २४०२

९५००० । ९५००० ।

एक मेरु, पांचसौ अड़सठ कूट, सात महाक्षेत्र और चौंतीस कर्मभूमियां हैं ॥ २३९६ ॥

मेरु १ । कूट ५६८ । महाक्षेत्र ७ । कर्मभूमियां ३४ ।

जम्बूद्वीपमें एकसौ सत्तर म्लेच्छखण्ड, छह भोगभूमियां और चार यमकशैल बतलाये गये हैं ॥ २३९७ ॥

इसप्रकार जम्बूद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ ।

लवणसमुद्र जम्बूद्वीपकी खाईके आकार गोल है । इसका विस्तार दो लाख योजनप्रमाण है ॥ २३९८ ॥ २००००० ।

एक नावके ऊपर अधोमुखी दूसरी नावके रखनेसे जैसा आकार होता है, उसीप्रकार वह समुद्र चारों ओर आकाशमें मण्डलाकारसे स्थित है ॥ २३९९ ॥

वह समुद्र चित्रापृथिवीके उपरिम तलसे ऊपर कूटके आकारसे आकाशमें सातसौ योजन ऊंचा स्थित है ॥ २४०० ॥ ७०० ।

उस समुद्रका विस्तार ऊपर दश हजार योजन और चित्रापृथिवीकी प्रणिधिमें दो लाख योजनप्रमाण है ॥ २४०१ ॥ १०००० । २००००० ।

दोनों तटोंमेंसे प्रत्येक तटसे पंचानबै हजार योजन प्रवेश करनेपर दोनों ओरसे एक हजार योजन गहराईमें तलविस्तार दश हजार योजनमात्र है ॥ २४०२ ॥ ९५००० । ९५००० ।

---

१ द ब कूवो. २ द ब अमआऊ. ३ ब उट्ठे. ४ द ब सहस्सो.

भूमीए मुहं सोहिय उदयहिदं भूमुहाणिचया । मुहमजुदं वे लक्खा भूमी जोयणसहस्समुस्सेहो ॥ २४०३

१००००। २००००० । १०००।

खयवड्ढीण पमाणं एक्कसयं जोयणाणि णउदिजुदं । इच्छाहदहाणिचया खिदिहीणा मुहजुदा रुंदं ॥ २४०४

१९०।

उवरिमजलस्स जोयण उणवीससयाणि सत्तहरिदाणिं । खयवड्ढीण पमाणं णादव्वं लवणजलणिहिम्मि ॥२४०५

१९००।

७

पत्तेक्कं दुतडादो पविसिय पणणउदिजोयणसहस्सा । गादा तस्स सहस्सं एवं सोधिज्ज अंगुलादीणं ॥ २४०६

९५०००। १०००। १ ।[1]

९५

दुतडादो जलमज्झे पविसिय पणणउदिजोयणसहस्सा । सत्तसयाइं उदओ एवं सोहेज्ज अंगुलादीणं ॥ २४०७

९५०००। ७००। ७ ।[2]

९५०

भूमिमेंसे मुखको कम करके उंचाईका भाग देनेपर भूमिकी ओरसे हानि और मुखकी ओरसे वृद्धिका प्रमाण आता है। यहां मुखका प्रमाण अयुत अर्थात् दश हजार योजन, भूमिका प्रमाण दो लाख योजन और उंचाईका प्रमाण एक हजार योजनमात्र है ॥ २४०३ ॥

मुख १०००० । भूमि २००००० । उत्सेध १००० ।

उस क्षय-वृद्धिका प्रमाण एकसौ नब्बे योजनमात्र है। इच्छासे गुणित हानि-वृद्धिके प्रमाणको भूमिमेंसे कम अथवा मुखमें मिला देनेपर विवक्षित स्थानपर विस्तारका प्रमाण जाना जाता है ॥ २४०४ ॥ (२००००० − १००००) ÷ १००० = १९० हानि-वृद्धिका प्रमाण।

लवणसमुद्रमें उपरिम (समतल भूमिके ऊपर स्थित) जलकी क्षय-वृद्धिका प्रमाण सातसे भाजित उन्नीससौ योजनमात्र है ॥ २४०५ ॥ (२००००० − १००००) ÷ ७०० = $\frac{१९००}{७}$ ।

दोनोंमेंसे प्रत्येक किनारेसे पंचानबै हजार योजन प्रवेश करनेपर उसकी गहराई एक हजार योजनमात्र है। इसीप्रकार अंगुलादिकको शोध लेना चाहिये ॥ २४०६ ॥

९५००० । १००० । $\frac{१}{९५}$ = $\frac{१०००}{९५०००}$ ।

दोनों तटोंसे जलके मध्यमें पंचानबै हजार योजनप्रमाण प्रवेश करनेपर सातसौ योजनमात्र उंचाई है। इसीप्रकार अंगुलादिकोंको शोध लेना चाहिये ॥ २४०७ ॥

९५००० । ७०० । $\frac{७}{९५०}$ = $\frac{७०००}{९५०००}$ ।

---

१ द ब ९५. २ ब सोहअ. ३ द ब $\frac{८५०}{७}$.

लवणोवहिबहुमज्झे पादाला ते समंतदो होंति । अट्ठुत्तरं सहस्सं जेट्ठा मज्झा जहण्णा यं ॥ २४०८

१००८ ।

चत्तारो पायाला जेट्ठा मज्झिमलघा वि चत्तारो । होदि जहण्ण सहस्सं ते सव्वे रंजणायारा ॥ २४०९

४ । ४ । १००० ।

उक्किट्ठा पायाला पुव्वादिदिसासु जलहिमज्झम्मि । पायालकदंबक्खो वडवामुहजोवकेसरिणो ॥ २४१०

पुह पुह दुगडाहिंतो पविभिय पणणउदि जोयणसहस्सा । लवणजले चत्तारो जेट्ठा चेट्ठंति पायाला ॥२४११

९५००० । ९५००० ।

पुह पुह मूलम्मि मुहे वित्थारो जोयणा दससहस्सा । उदओ वि एक्कलक्खं मज्झिमरुंदो वि तम्मेत्तं ॥ २४१२

१०००० । १०००० । १००००० । १००००० ।

जेट्ठा ते संलग्गा सीमंतबिलस्स उवरिमे भागे । पणसयजोयणबहला कुड्डा एदाण वज्जमया ॥ २४१३

५०० ।

जेट्ठाणं विच्चाले विदिसासुं मज्झिमा दु पादाला । ताणं रुंदप्पहुदी उक्किट्ठाणं दसंसेणं ॥ २४१४

१००० । १००० । १०००० । १०००० । ५० ।

लवणोदधिके बहुमध्यभागमें चारों ओर उत्कृष्ट, मध्यम व जघन्य एक हजार आठ पाताल है ॥ २४०८ ॥ १००८ ।

ज्येष्ठ पाताल चार, मध्यम चार और जघन्य एक हजार है । ये सब पाताल रांजन अर्थात् घड़ेके आकार है ॥ २४०९ ॥ ४ । ४ । १००० ।

पूर्वादिक दिशाओंमें समुद्रके मध्यमें पाताल, कदम्बक, बड़वामुख और यूपकेशरी नामक चार उत्कृष्ट पाताल है ॥ २४१० ॥

दोनों किनारोंसे लवणसमुद्रके जलमें पंचानवे हजार योजनप्रमाण प्रवेश करनेपर पृथक् पृथक् चार ज्येष्ठ पाताल स्थित है ॥ २४११ ॥ ९५००० । ९५००० ।

इन पातालोंका विस्तार पृथक् पृथक् मूलमें व मुखमें दश हजार योजन, उंचाई एक लाख योजन और मध्यमविस्तार भी एक लाख योजनप्रमाण ही है ॥ २४१२ ॥

मूलविस्तार १०००० । मुख १०००० । उदय १००००० । मध्यविस्तार १००००० ।

वे ज्येष्ठ पाताल सीमन्त बिलके उपरिम भागसे संलग्न हैं । इनकी वज्रमय भित्तियां पांचसौ योजनप्रमाण मोटी हैं ॥ २४१३ ॥ ५०० ।

इन ज्येष्ठ पातालोंके बीचमें विदिशाओंमें मध्यम पाताल स्थित हैं । इनका विस्तारादिक उत्कृष्ट पातालोंकी अपेक्षा दशवें भागमात्र है ॥ २४१४ ॥

१००० । १००० । १०००० । १०००० । ५० ।

१ द ब जहण्णया या य. २ कंदंबक्खा.

णवणउदिसहस्साणिं पंचसया जोयणाणि दुतडेसुं । पुह पुह पविसिय सलिले पायाला मज्झिमा होंति ॥ २४१५

९९५००। [२४१६-२४२५][1]

जेट्ठंतरसंखादो एक्कसहस्सम्मि समवणीदम्मि । अद्धकदे जेट्ठाणं मज्झिमयाणं च विच्चालं ॥ २४२६

जोयणलक्खं तेरससहस्सया पंचसीदिसंजुत्ता । तं विच्चालपमाणं दिवड्ढकोसेण अहिरित्तं ॥ २४२७

११३०८५। को ३।
२

जेट्ठाण मज्झिमाणं विच्चम्मिं[2] अहण्णवाण मुहवासं । केडियं सेसं विगुणियतेसट्ठीए कयविभागे ॥ २४२८

जं लद्धं अवराणं पायालाणं तमंतरं होदि । तं माणं सय सत्तय अट्ठाणउदी य सविसेसा ॥ २४२९

७९८। ३७ । १ ।
१२६ ३३६

पत्तेकं पायाला तिवियप्पा ते भवंति कमहीणं । हेट्ठाहिंतो वादं जलवादं सलिलमासेज्ज ॥ २४३०

तेत्तीससहस्साणिं तिसया तेत्तीस जोयणतिभागो । पत्तेकं जेट्ठाणं पमाणमेदं तियंसस्स ॥ २४३१

३३३३३। १ ।
३

पृथक् पृथक् दोनों किनारोंसे निन्यानबे हजार पांचसौ योजनप्रमाण जलमें प्रवेश करनेपर मध्यम पाताल हैं ॥ २४१५ ॥ ९९५००। [२४१६-२४२५]

ज्येष्ठ पातालोंके अन्तरालप्रमाणमेंसे एक हजार कम करके आधा करनेपर ज्येष्ठ और मध्यम पातालोंका अन्तरालप्रमाण निकलता है ॥ २४२६ ॥

वह अन्तरालप्रमाण एक लाख तेरह हजार पचासी योजन और डेढ़ कोस अधिक है ॥ २४२७ ॥ (२२७१७०$\frac{3}{4}$ − १०००) ÷ २ = यो. ११३०८५, को. $\frac{3}{4}$ ।

ज्येष्ठ और मध्यम पातालोंके अन्तरालप्रमाणमेंसे जघन्य पातालोंके मुखविस्तारको कम करके शेषमें द्विगुणित तिरेसठ अर्थात् एकसौ छब्बीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना जघन्य पातालोंका अन्तराल होता है। उसका प्रमाण सातसौ अट्ठानबे योजनोंसे अधिक है ॥ २४२८-२४२९ ॥ ७९८$\frac{३७}{१२६}$ + $\frac{१}{३३६}$ यो.।

वे पाताल क्रमसे हीन होते हुए नीचेसे वायु, जल-वायु और जलके आश्रयसे तीन प्रकार हैं अर्थात् प्रत्येक पातालके तीन भागोंमेंसे पहिले भागमें वायु, दूसरे भागमें जल-वायु और तीसरे भागमें केवल जल ही स्थित है ॥ २४३० ॥

ज्येष्ठ पातालोंमेंसे प्रत्येक पातालके तीसरे भागका प्रमाण तेतीस हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनका तीसरा भाग है ॥ २४३१ ॥ ३३३३३$\frac{१}{३}$ ।

१ अत्र दश गाथा नष्टा इत्यनुमीयते। द-पुस्तके ' इ दस गाहा नथी ' इति लिखितम्। ब-पुस्तके ' यहाँ दस गाथाएं नहीं हैं ' इति लिखितम्। २ ब विच्चम्मिद. ३ द ब पेलिय.

तिण्णि सहस्सा तिसया तेत्तीसजुदाणि जोयणतिभागो। पत्तेक्कं णादव्वं मज्झिमयाणं तियंसपरिमाणं ॥ २४३२

३३३३ । १ ।
३

तेत्तीसब्भहियाइं तिण्णि सयाणं च जोयणतिभागो । पत्तेक्कं दट्ठव्वं तियंसमाणं जहण्णाणं ॥ २४३३

३३३ । १ ।
३

हेट्ठिल्लम्मि तिभागे वसुमइविवराण केवलो वादो । मज्झिल्ले जलवादो उवरिल्ले सलिलपब्भारो ॥ २४३४

पवणेण पुण्णियं तं चलाचलं मज्झिमं सलिलघादं । उवरिं चेट्ठदि सलिलं पवणाभावेण केवलं तेसुं ॥ २४३५

पादालाणं मरुदो पक्खे सीदम्मि वड्ढंति । हीयंति किण्णपक्खे सहावदो सव्वकालेसुं ॥ २४३६

वड्ढी बावीससया बावीसा जोयणाणि अदिरेगो । पढमे सिदपक्खे य प्पडिवासं पुण्णिमं जाव ॥ २४३७

२२२२ । २ ।
९

पुण्णिमए हेट्ठादो णियणियदुतिभागमेत्तपायाले । चेट्ठदि वाऊ उवरिमतियभागे केवलं सलिलं ॥ २४३८

अमवस्से उवरीदो णियणियदुतिभागमेत्तपरिमाणे । कमसो सलिलं हेट्ठिमतियभागे केवलं वादं ॥ २४३९

मध्यम पातालोंमेंसे प्रत्येकके तीसरे भागका प्रमाण तीन हजार तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनका तीसरा भागमात्र समझना चाहिये ॥ २४३२ ॥ ३३३३$\frac{१}{३}$ ।

जघन्य पातालोंमेंसे प्रत्येकके तीसरे भागका प्रमाण तीनसौ तेतीस योजन और एक योजनका तृतीय भागमात्र जानना चाहिये ॥ २४३३ ॥ ३३३$\frac{१}{३}$ ।

नीचेके त्रिभागमें केवल वायु, मध्यम भागमें जल-वायु और ऊपरके भागमें जलसमूह स्थित है ॥ २४३४ ॥

उनमेंसे पहिला भाग वायुसे युक्त, मध्यम भाग जल व वायुसे युक्त होता हुआ चलाचल अर्थात् जल और वायुकी हानि-वृद्धिसे युक्त, और ऊपर वायुके न होनेसे केवल जल ही स्थित है ॥ २४३५ ॥

पातालोंके पवन सर्वकाल शुक्ल पक्षमें स्वभावसे बढ़ते हैं और कृष्ण पक्षमें घटते हैं ॥ २४३६ ॥

शुक्ल पक्षमें पूर्णिमा तक प्रतिदिन बाईससौ बाईस योजनोंसे अधिक पवनकी वृद्धि हुआ करती है ॥ २४३७ ॥ २२२२$\frac{२}{९}$ ।

पूर्णिमाके दिन पातालोंके अपने अपने तीन भागोंमेंसे नीचेके दो भागोंमें वायु और ऊपरके तृतीय भागमें केवल जल स्थित रहता है ॥ २४३८ ॥

अमावस्याके दिन अपने अपने तीन भागोंमेंसे क्रमशः ऊपरके दो भागोंमें जल और नीचेके तीसरे भागमें केवल वायु स्थित रहता है ॥ २४३९ ॥

---

१ द ब मज्झिमयं. २ द ब तियंसमाणाणं. ३ द ब परिदा. ४ द ब अदिरेगो. ५ द ब पवणो.

पेलिज्जंते उवही पवणेण तहेउ सीमंते[1] । हिंडदि पायदि गयणे दंडसहस्साणि चत्तारि ॥ २४४०

दं ४०००।

दिवसं पडि अट्ठसयं तिहिदा दंडाणि सुक्ककिण्हे[2] य । खयवड्ढी पुण्णुत्तयवट्टिदवेलाए उवरि जलहिजलं ॥२४४१

८००।

३

पुह पुह दुतडाहिंतो पविसिय पणणउदिजोयणसहस्सा । लवणजले बे कोसा उदओ सेसेसु हाणिचयं ॥२४४२

अमवस्साए उवही सरिसो[3] भूमीए होदि सिदपक्खे। कमेण वड्ढेदि णहे[4] कोसाणं दोण्णि पुण्णिमए[5] ॥ २४४३

हाएदि किण्हपक्खे तेण कमेणं च जाव वड्ढिगदं । एवं लोगाइण्णए गंथप्पवरम्मि णिद्दिट्ठं ॥ २४४४

एक्करससहस्साणिं जलणिहिणो जोयणाणि गयणम्मि । भूमीदो उच्छेहो होदि अवट्ठिदसरूवेणं ॥ २४४५

११०००।

तस्सोवरि सिदपक्खे पंचसहस्साणि जोयणा कमसो । वड्ढेदि जलणिहिजलं बहुले हाएदि[6] तम्मेत्तं ॥ २४४६

५०००।

पायालंते णियणियमुहविक्खंभे हदम्मि पंचेहिं । णियणियपणिधीसु णहे सलिलकणा जंति तम्मेत्ता ॥२४४७

५००००। ५०००। ५००।

समुद्र वायुसे प्रेरित होकर सीमान्तमें फैलता है और आकाशमें चार हजार धनुष पहुंचता है ॥ २४४० ॥ दं. ४०००।

प्रतिदिन शुक्ल पक्षमें तीनसे भाजित आठसौ धनुषप्रमाण पूर्वोक्त अवस्थित वेलामें वृद्धि और कृष्ण पक्षमें प्रतिदिन उतनी ही हानि हुआ करती है ॥ २४४१ ॥ $\frac{४०००}{१५} = \frac{८००}{३}$ ।

पृथक् पृथक् दोनों किनारोंसे पंचानवे हजार योजनप्रमाण प्रवेश करके लवणसमुद्रके जलमें दो कोस उंचाई व शेषमें हानि-वृद्धि है ॥ २४४२ ॥

अमावस्याके दिन समुद्र भूमिके सदृश (समतल) होता है। पुनः शुक्ल पक्षमें आकाशकी ओर क्रमसे बढ़ता हुआ पूर्णिमाको दो कोसप्रमाण बढ़ जाता है ॥ २४४३ ॥

वही समुद्र जितनी वृद्धि हुई थी उतना कृष्ण पक्षमें उसी क्रमसे घट जाता है। इसप्रकार श्रेष्ठ ग्रंथ लोगाइण्णमें बतलाया गया है ॥ २४४४ ॥

भूमिसे आकाशमें समुद्रकी उंचाई अवस्थितरूपसे ग्यारह हजार योजनप्रमाण है ॥ २४४५ ॥ ११०००।

शुक्ल पक्षमें इसके ऊपर समुद्रका जल क्रमसे पांच हजार योजनप्रमाण बढ़ता है और कृष्ण पक्षमें इतना ही हानिको प्राप्त होता है ॥ २४४६ ॥ ५०००।

पातालोंके अन्तमें अपने अपने मुखविस्तारको पांचसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो, तत्प्रमाण आकाशमें अपने अपने पार्श्वभागोंमें जलकण जाते हैं ॥ २४४७ ॥

ज्ये. पा. ५००००। म. प. ५०००। ज. पा. ५००।

---

१ द ब सम्मंते. २ द किण्णे. ३ द ब सरिसे. ४ द कमवड्ढेदि णहे, ब कमवड्ढेदि णहेणं. ५ द ब पुण्णमिए. ६ द ब बहुवे लाएदि.

जलसिहरे विक्खंभो जलणिहिणो जोयणा दससहस्सा । एवं संगाइण्णिए लोयविभाए विणिद्दिट्ठं ॥ २४४८
१०००० । पाठान्तरम् ।

दुतडाए सिहरम्मि य वलयायारेण दिव्वणयरीओ । जलणिहिणो चेट्ठंते वादालसहस्सणक्कलक्खाणिं ॥ २४४९
१४२००० ।

अब्भंतरवेदीदो सत्तसयं जोयणाणि उवहिम्मि । पविसिय आयासेसुं[1] वादालसहस्सणयरीओ ॥ २४५०
७०० खें[2] । ४२००० ।

लवणोवहिबहुमज्झे सत्तसया जोयणाणि दो कोसा । गंतूण होंति गयणे अडवीससहस्सणयरीओ ॥ २४५१
७०० । २ । २८००० ।

णयरीण तडो बहुविहवररयणमया हवंति समवट्टा । एदाणं पत्तेक्कं विक्खंभो जोयणदससहस्सा ॥ २४५२
१०००० ।

पत्तेक्कं णयरीणं तडवेदीओ[5] हवंति दिव्वाओ[6] । धुव्वंतधयवडाओ वरतोरणपहुदिजुत्ताओ ॥ २४५३
ताणं वरपासादाँ[7] पुरीण वररयणणियररमणिज्जा । चेट्ठंति हु देवाणं वेलंधरभुजगणामाणं ॥ २४५४
जिणमंदिररम्माओ पोक्खरणीउववणेहिं जुत्ताओ । को वण्णिदुं समत्थो अणाइणिहणाओ णयरीओ ॥ २४५५

जलशिखरपर समुद्रका विस्तार दश हजार योजन है इसप्रकार संगाइणीमें लोकविभागमें बतलाया गया है ॥ २४४८ ॥ १०००० । पाठान्तर ।

समुद्रके दोनों किनारों तथा शिखरपर वलयके आकारसे एक लाख व्यालीस हजार दिव्य नगरियां स्थित हैं ॥ २४४९ ॥ १४२००० ।

[उनमेंसे बाह्य वेदीसे ऊपर सातसौ योजन जाकर आकाशमें समुद्रपर बहत्तर हजार नगरियां हैं ॥ २४४९*१ ॥ ७०० । ७२०००]

अभ्यन्तर वेदीसे ऊपर सातसौ योजन जाकर आकाशमें समुद्रपर व्यालीस हजार नगरियां हैं ॥ २४५० ॥ ७०० यो. आकाशमें । ४२००० ।

लवणसमुद्रके बहुमध्यभागमें सातसौ योजन और दो कोसप्रमाण ऊपर जाकर आकाशमें अट्ठाईस हजार नगरियां हैं ॥ २४५१ ॥ यो. ७०० को. २ । २८००० ।

नगरियोंके तट बहुत प्रकारके उत्तम रत्नोंसे निर्मित समानगोल हैं । इनमेंसे प्रत्येकका विस्तार दश हजार योजनप्रमाण है ॥ २४५२ ॥ १०००० ।

प्रत्येक नगरियोंके फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और उत्तम तोरणादिकसे संयुक्त दिव्य तटवेदियां हैं ॥ २४५३ ॥

उन नगरियोंमें उत्कृष्ट रत्नोंके समूहोंसे रमणीय वेलंधर और भुजग नामक देवोंके प्रासाद स्थित हैं ॥ २४५४ ॥

जिनमन्दिरोंसे रमणीय और वापिकाओं व उपवनोंसे संयुक्त इन अनादिनिधन नगरियोंका वर्णन करनेके लिये कौन समर्थ हो सकता है ? ॥ २४५५ ॥

१ द ब तीयासेसुं. २ द ब से. ३ द अट्ठवीस. ४ द ब तदा. ५ द ब तदवेदीओ. ६ द ब दिव्वाए. ७ द ब °पासादो.

वण्णिदसुराण णयरीपणिधीए जलहिदुतडसिहरेसुं। वज्जपुढवीए उवरिं तेत्तियणयराणि के वि भासंति ॥२४५६

पाठान्तरम् ।

बादालसहस्साणिं जोयणया जलहिदोतडाहिंतो । पविसिय खिदिविवराणं[1] पासेसुं होंति अट्ठगिरी ॥ २४५७

४२००० ।

सोलससहस्सअधियं जोयणलक्खं च तिरियविक्खंभो । पत्तेक्काणं जगदीगिरीणि मिलिदूण[2] दोलक्खा ॥२४५८

११६००० । ८४००० । २००००० ।

ते कुंभद्धसरिच्छा सेला जोयणसहस्समुत्तुंगा । एदाणं णामाहं[3] ठाणविभागं च भासेमि ॥ २४५९

१००० ।

पादालस्स दिसाए पच्छिमए कोत्थुभो असदि[4] सेलो । पुव्वाए कोत्थुभासो दोण्णि वि ते वज्जमयमूला ॥२४६०

मज्झिमरजदंरजिदा अग्गेसुं विविहदिव्वरयणमया । चरिअट्टालयचारू तडवेदीतोरणेहिं जुदा ॥ २४६१

ताणं हेट्ठिममज्झिमउवरिमवासाणि संपइ पणट्ठा[5] । तेसुं वरपासादा[6] विचित्तरूवा विरायंति ॥ २४६२

समुद्रके दोनों किनारों और शिखरपर बतलाई गई देवोंकी नगरियोंके पार्श्वभागमें वज्रमय पृथिवीके ऊपर भी इतनी ही नगरियां हैं, ऐसा कितने ही आचार्य वर्णन करते हैं ॥ २४५६ ॥

पाठान्तर ।

समुद्रके दोनों किनारोंसे ब्यालीस हजार योजनप्रमाण प्रवेश करके पातालोंके पार्श्वभागोंमें आठ पर्वत हैं ॥ २४५७ ॥ ४२००० ।

प्रत्येक पर्वतका तिरछा विस्तार एक लाख सोलह हजार योजनप्रमाण है । इसप्रकार जगतीसे पर्वतों तक तथा पर्वतोंका विस्तार मिलकर दो लाख योजन होता है ॥ २४५८ ॥

पर्वतविस्तार ११६०००। जगतीसे पर्वतका अंतराल ४२००० + ४२००० = ८४०००।

११६००० + ८४००० = २०००००।

अर्धघटके सदृश वे पर्वत एक हजार योजन ऊंचे हैं । इनके नाम और स्थानविभागको कहते हैं ॥ २४५९ ॥ १००० ।

पातालकी पश्चिमदिशामें कौस्तुभ और पूर्वदिशामें कौस्तुभास पर्वत स्थित है । वे दोनों पर्वत वज्रमय मूलभागसे संयुक्त हैं ॥ २४६० ॥

ये पर्वत मध्यमें रजतसे रचित, अग्रभागोंमें विविध प्रकारके दिव्य रत्नोंसे निर्मित, मार्ग व अट्टालयोंसे सुन्दर, तथा तटवेदी एवं तोरणोंसे युक्त हैं ॥ २४६१ ॥

इन पर्वतोंका नीचे, मध्यमें और ऊपर जो कुछ विस्तार है, उसका प्रमाण इस समय नष्ट हो गया है । इनके ऊपर विचित्र रूपवाले उत्तम प्रासाद विराजमान हैं ॥ २४६२ ॥

---

१ द खिदिवराणं. २ द मिलिदोण दोलक्खा, ब मिलिदोलक्खा. ३ द ब णामाए. ४ द ब मसदि. ५ द ब कुत्थभासो. ६ द ब पण्डो. ७ द ब °पासादो.

वेलंधरवेंतरया पण्णिदणामेहिं संजुदा तेसुं । कीडंति मंदिरेसुं विजयो व्व णिआउपहुदिजुदा ॥ २४६३
उदको णामेण गिरी होदि कदंबस्स उत्तरदिसाए । उदकाभासो दक्खिणदिसाए ते णीलमणिवण्णा ॥ २४६४
सिवणामा सिवदेओ कमेण उवरिम्मि ताण सेलाणं । कोत्थुभदेवसरिच्छा आउप्पहुदीहिं चेट्ठंति ॥ २४६५
वडवामुहपुव्वाए दिसाए संख त्ति पव्वदो होदि । पच्छिमए महसंखो[1] दिसाए ते[2] संखसमवण्णा ॥ २४६६
उदगो उदगावासो कमसो उवरिम्मि ताण चेट्ठंति । देवा आउप्पहुदिसु उदगाचलदेवसारिच्छा ॥ २४६७
दकणामो होदि गिरी दक्खिणभागम्मि जूवकेसरिणो। दकवासो उत्तरए भाए वेरुलियमणिमया दोण्णि ॥२४६८
उवरिम्मि ताण कमसो लोहिदणामो य लोहिदंकक्खो। उदयगिरिस्स सरिच्छा आउप्पहुदीसु होंति सुरा ॥२४६९
एदाणं देवाणं णयरीओ अवरजंबुदीवम्मि । होंति णियणियदिसाए अवराजिदणयरसारिच्छा ॥ २४७०
बादालसहस्साइं जोयणया जंबुदीवजगदीदो । गंतूण अट्ठ दीवा णामेणं सूरदीउ त्ति[3] ॥ २४७१
४२०००।
पुव्वपवण्णिदकोत्थुहपहुदीणं हवंति दोसु पासेसुं । एदे दीवा मणिमयणिग्गच्छियदीआ पभासंति ॥२४७२

इन प्रासादोंमें, विजयदेवके समान अपनी आयु-आदिकसे सहित और पर्वतोंके नामोंसे संयुक्त वेलंधर व्यन्तरदेव क्रीड़ा करते हैं ॥ २४६३ ॥

कदंबपातालकी उत्तरदिशामें उदक नामक पर्वत और दक्षिणदिशामें उदकाभास नामक पर्वत स्थित है। ये दोनों पर्वत नीलमणि जैसे वर्णवाले हैं ॥ २४६४ ॥

उन पर्वतोंके ऊपर क्रमसे शिव और शिवदेव नामक देव निवास करते हैं। इनकी आयु-प्रभृति कौस्तुभदेवके समान है ॥ २४६५ ॥

वड़वामुख पातालकी पूर्वदिशामें शंख और पश्चिमदिशामें महाशंख नामक पर्वत है। ये दोनों ही शंखके समान वर्णवाले हैं ॥ २४६६ ॥

इनके ऊपर क्रमसे उदक और उदकावास नामक देव स्थित हैं। ये दोनों देव आयु-आदिकोंमें उदकपर्वतपर स्थित देवके सदृश है ॥ २४६७ ॥

यूपकेशरीके दक्षिणभागमें दक नामक पर्वत और उत्तरभागमें दकवास नामक पर्वत स्थित है। ये दोनों ही पर्वत वैडूर्यमणिमय हैं ॥ २४६८ ॥

उनके ऊपर क्रमसे लोहित और लोहितांक नामक देव निवास करते हैं। ये देव आयु-आदिकोंमें उदकपर्वतपर रहनेवाले देवके समान है ॥ २४६९ ॥

इन देवोंकी नगरियां अपर जम्बूद्वीपमें अपनी अपनी दिशामें अपराजित नगरके समान हैं ॥ २४७० ॥

जम्बूद्वीपकी जगतीसे ब्यालीस हजार योजन जाकर 'सूर्यद्वीप' नामसे प्रसिद्ध आठ द्वीप हैं ॥ २४७१ ॥ ४२०००।

ये द्वीप पूर्वमें बतलाये हुए कौस्तुभादिक पर्वतोंके दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित होकर निकले हुए मणिमय दीपकोंसे युक्त प्रकाशमान हैं ॥ २४७२ ॥

१ द ब महसंखे. २ ब दिसु एते. ३ द ब दोण्णि य णिय[2]. ४ द सूरदेओ त्ति, ब सुरदीउ त्ति.

एरावदविजओदिदरत्तोदावाहिणीए पणिधीए । मागधदीवसरिच्छो होदि समुद्दम्मि मागधो दीओ ॥ २४७१
अवराजिददारस्सप्पणिधीए होदि लवणजलहिम्मि । वरतणुणामो दीओ वरतणुदीवोवमो अण्णो ॥ २४७४
एरावदखिदिणिग्गदरत्तापणिधीए लवणजलहिम्मि । अण्णो पभासदीओ पभासदीओ व चेट्ठेदि ॥ २४७५
मागधदीवसमाणं सव्वं चिय वण्णणं पभासस्स । चेट्ठदि परिवारजुदो पभासणामो सुरो तस्सिं ॥ २४७६[1]
जे अब्भंतरभागे लवणसमुद्दस्स पव्वदा दीवा । ते सव्वे चेट्ठंते णियमेणं बाहिरे भागे ॥ २४७७
दीवा लवणसमुद्दे अडदाल कुमाणुसाण चउवीसं । अब्भंतरम्मि भागे तेत्तियमेत्ताए बाहिरए ॥ २४७८
४८ । २४ । २४ ।
चत्तारि चउदिसासुं चउविदिसासुं हवंति चत्तारि । अंतरदिसासु अट्ठ य अट्ठ य गिरिपणिधिठाणेसुं ॥ २४७९
४ । ४ । ८ । ८ ।
पंचसयजोयणाणिं गंतूणं जंबुदीवजगदीदो । चत्तारि होंति दीवा दिसासु विदिसासु तम्मेत्तं ॥ २४८०
५०० । ५०० ।
पण्णाधियपंचसया गंतूणं होंति अंतरा दीवा । छस्सयजोयणमेत्तं गच्छिय गिरिपणिधिगददीवा ॥ २४८१
५५० । ६०० ।

ऐरावतक्षेत्रमें कही हुई रक्तोदानदीके पार्श्वभागमें मागधद्वीपके सदृश समुद्रमें मागध-द्वीप है ॥ २४७३ ॥

अपराजितद्वारके पार्श्वभागमें वरतनुद्वीपके सदृश अन्य वरतनु नामक द्वीप लवणसमुद्रमें स्थित है ॥ २४७४ ॥

लवणसमुद्रमें ऐरावतक्षेत्रमेंसे निकली हुई रक्तानदीके पार्श्वभागमें प्रभासद्वीपके सदृश अन्य प्रभासद्वीप स्थित है ॥ २४७५ ॥

प्रभासद्वीपका सम्पूर्ण वर्णन मागधद्वीपके समान है । इस द्वीपमें परिवारसे युक्त होकर प्रभास नामक देव रहता है ॥ २४७६ ॥

लवणसमुद्रके अभ्यन्तर भागमें जो पर्वत और द्वीप हैं, वे सब नियमसे उसके बाह्य भागमें भी स्थित हैं ॥ २४७७ ॥

लवणसमुद्रमें अड़तालीस कुमानुषोंके द्वीप हैं । इनमेंसे चौबीस द्वीप तो अभ्यन्तर भागमें और इतने ही बाह्य भागमें भी हैं ॥ २४७८ ॥ २४ + २४ = ४८ ।

उपर्युक्त चौबीस द्वीपोंमेंसे चारों दिशाओंमें चार, चारों विदिशाओंमें चार, अन्तरदिशाओंमें आठ और पर्वतोंके प्रणिधिभागोंमें आठ हैं ॥ २४७९ ॥ ४ + ४ + ८ + ८ = २४ ।

जम्बूद्वीपकी जगतीसे पांचसौ योजन जाकर चार द्वीप चारों दिशाओंमें और इतने ही योजन जाकर चार द्वीप चारों विदिशाओंमें भी हैं ॥ २४८० ॥ ५०० । ५०० ।

अन्तरदिशाओंमें स्थित द्वीप जम्बूद्वीपकी जगतीसे पांचसौ पचास योजन और पर्वतोंके प्रणिधिभागोंमें स्थित द्वीप छहसौ योजनमात्र जाकर हैं ॥ २४८१ ॥ ५५० । ६०० ।

---

१ गाथेयं प्रत्योः २४७२-२४७३ गाथयोर्मध्ये लभ्यते ।

एक्कसयं पणवण्णा पण्णा पणुवीस जोयणा कमसो । वित्थारजुदा ताणं एक्केक्कं होदि तडवेदी ॥ २४८२

१०० । ५५ । ५० । २५ ।

ते सव्वे वरदीवा वणसंडेहिं दहेहिं रमणिज्जा । फलकुसुमभारभरिदा रसेहिं महुरेहिं सलिलेहिं ॥ २४८३

एक्कोरुकलंगुलिका[1] वेसणकाभासका य णामेहिं । पुव्वादिसुं दिसाधुं चउदीवाणं कुमाणुसा होंति ॥ २४८४

सक्कुलिकण्णा कण्णप्पावरणा लंबकण्णससकण्णा । अग्गिदिसादिसु कमसो चउदीवकुमाणुसा एदे ॥२४८५

सिंहस्ससाणमहिसेसूवरहासइल्लघूककपिवदणा । सक्कुलिकण्णेकोरुगपहुदीणं अंतरेसु ते कमसो ॥ २४८६

मच्छमुहा कालमुहा हिमगिरिपणिधीए पुव्वपच्छिमदो । मेसमुहगोमुहक्खा दक्खिणवेयड्ढपणिधीए ॥ २४८७

पुव्वावरेण सिहरिप्पणिधीए मेघविज्जुमुहणामा । आदंसणहत्थिमुहा उत्तरवेयड्ढपणिधीए ॥ २४८८

एक्कोरुगा गुहासुं वसंति भुंजंति मट्टियं मिट्ठं । सेसा तरुतलवासा पुप्फेहिं फलेहिं जीवंति ॥ २४८९

धादइसंडदिसासुं तेत्तियमेत्ता वि अंतरा दीवा । तेसुं तेत्तियमेत्ता कुमाणुसा होंति तण्णामा ॥ २४९०

.....

ये द्वीप क्रमसे एकसौ, पचवन, पचास और पच्चीस योजनप्रमाण विस्तारसे सहित हैं उनमेंसे एक एकके तटवेदी है ॥ २४८२ ॥

दिशागत १०० । विदिशागत ५५ । अन्तरद्वीपस्थ ५० । पर्वतप्रणिधिस्थ २५ ।

वे सब उत्तम द्वीप वनखण्ड व तालाबोंसे रमणीय, फल-फूलोंके भारसे संयुक्त, तथा मधुर रस एवं जलसे परिपूर्ण हैं ॥ २४८३ ॥

पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित चार द्वीपोंके कुमानुष क्रमसे एक जंघावाले, पूंछवाले, सींग-वाले और अभाषक अर्थात् गूंगे होते हुए इन्हीं नामोंसे युक्त हैं ॥ २४८४ ॥

अग्नि-आदिक विदिशाओंमें स्थित ये चार द्वीपोंके कुमानुष क्रमसे शष्कुलीकर्ण, कर्ण-प्रावरण, लंबकर्ण और शशकर्ण होते हैं ॥ २४८५ ॥

शष्कुलीकर्ण और एकोरुक आदिकोंके बीचमें अर्थात् अन्तरदिशाओंमें स्थित आठ द्वीपोंके वे कुमानुष क्रमसे सिंह, अश्व, श्वान, महिष, वराह, शार्दूल, ऋक्ष और बन्दरके समान मुख-वाले होते हैं ॥ २४८६ ॥

हिमवान्पर्वतके प्रणिधिभागमें पूर्व-पश्चिम दिशाओंमें क्रमसे मत्स्यमुख व कालमुख तथा दक्षिणविजयार्द्धके प्रणिधिभागमें मेषमुख व गोमुख कुमानुष होते हैं ॥ २४८७ ॥

शिखरीपर्वतके पूर्व-पश्चिम प्रणिधिभागमें क्रमसे मेघमुख व विद्युन्मुख तथा उत्तरविजयार्द्धके प्रणिधिभागमें आदर्शमुख व हस्तिमुख कुमानुष होते हैं ॥ २४८८ ॥

इन सबमेंसे एकोरुक कुमानुष गुफाओंमें रहते हैं और मीठी मिट्टीको खाते हैं। शेष सब वृक्षोंके नीचे रहकर फल-फूलोंसे जीवन व्यतीत करते हैं ॥ २४८९ ॥

धातकीखण्डद्वीपकी दिशाओंमें भी इतने ही अन्तरद्वीप और उनमें रहनेवाले पूर्वोक्त नामोंसे युक्त उतने ही कुमानुष भी हैं ॥ २४९० ॥

.....

१ द ब °भजिदा. २ ब रंगुलिका. ३ द ब °साणपहयरिओवरहा°.

लोयविभायाहारिय दीवाण कुमाणुसेहिं जुत्ताणं । अण्णसरूवेण ठिदिं भासंते तं परूवेमो ॥ २४९१
पण्णाधियपंचसया गंतूणं जोयणाणि विदिसासुं । दीवा दिसासु अंतरदिसासु पण्णासपरिहीणा ॥ २४९२
५५० । ५०० । ५०० ।
जोयणसयविक्खंभा अंतरदीवा तहा दिसादीवा । पण्णा रुंदा विदिसादीवा पणुवीस सेलपणिधिगया ॥ २४९३
१०० । १०० । ५० । २५ ।

पुव्वं व गिरिपणिधिगदा छस्सयजोयणाणिं चेट्ठंति[1] ।

एक्कोरुकवेसणिका लंगुलिका तह यभासगा तुरिमा । पुव्वादिसु वि दिसासुं चउदीवाणं कुमाणुसा कमसो ॥२४९४
अेणलादिसु विदिसासुं ससकण्णा ताण उभयपासेसुं । अट्ठंतरा य दीवा पुव्वग्गिदिसादिगणणिज्जा ॥ २४९५

पुव्वदिसट्ठियएक्कोरुकाण अग्गिदिसट्ठियससकण्णाणं विच्चालादिसु कमेण अट्ठंतरदीवट्ठिदकुमाणुसणामाणि गणिदव्वा—

केसरिमुहा मणुस्सा चक्कुलिकण्णा अ चक्कुलीकण्णा ।
साणमुहा कपिवदणा चक्कुलिकण्णा अ चक्कुलीकण्णा ॥ २४९६

हयकण्णाइं कमसो कुमाणुसा तेसु होंति दीवेसुं । घूकमुहा कालमुहा हिमवंतगिरिस्स पुव्वपच्छिमदो ॥२४९७

लोकविभागाचार्य कुमानुषोंसे युक्त उन द्वीपोंकी स्थिति भिन्नरूपसे बतलाते हैं। उसका निरूपण करते हैं ॥ २४९१ ॥

ये द्वीप जम्बूद्वीपकी जगतीसे पांचसौ पचास योजन जाकर विदिशाओंमें और इससे पचास योजन कम अर्थात् केवल पांचसौ योजनमात्र जाकर दिशाओं व अन्तरदिशाओंमें स्थित हैं ॥ २४९२ ॥ ५५० । ५०० । ५०० ।

अन्तरदिशा तथा दिशागत द्वीपोंका विस्तार एकसौ योजन, विदिशाओंमें स्थित द्वीपोंका विस्तार पचास योजन और पर्वतोंके प्रणिधिभागोंमें रहनेवाले द्वीपोंका विस्तार पचीस योजनमात्र है ॥ २४९३ ॥ १०० । १०० । ५० । २५ ।

गिरिप्रणिधिगत द्वीप पूर्वके समान ही जम्बूद्वीपकी जगतीसे छहसौ योजन जाकर स्थित हैं।

पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित चार द्वीपोंके कुमानुष क्रमसे एक जंघावाले, सींगवाले, पूंछवाले और गूंगे होते हैं ॥ २४९४ ॥

आग्नेय आदिक विदिशाओंके चार द्वीपोंमें शशकर्ण कुमानुष होते हैं। उनके दोनों पार्श्वभागोंमें आठ अन्तरदीप हैं जो पूर्व-आग्नेयदिशादिके क्रमसे जानना चाहिये ॥ २४९५ ॥

पूर्वदिशामें स्थित एकोरुक और अग्निदिशामें स्थित शशकर्ण कुमानुषोंके अंतराल आदिक अन्तरालोंमें क्रमसे आठ अन्तरद्वीपोंमें स्थित कुमानुषोंके नामोंको गिनना चाहिये—

इन अन्तरद्वीपोंमें क्रमसे केशरीमुख, शष्कुलिकर्ण, शष्कुलिकर्ण, श्वानमुख वानरमुख, शष्कुलिकर्ण, शष्कुलिकर्ण और हयकर्ण कुमानुष होते हैं। हिमवान्पर्वतके पूर्व-पश्चिम-भागोंमें क्रमसे वे कुमानुष घूकमुख और कालमुख होते हैं ॥ २४९६–२४९७ ॥

१ द ब 'पुव्वं व गिरिपणिधिगदा' इत्येव पाठः। २ द ब छस्सयजोयणाणि चरंति अणिलादिसासु विदिसासु। ससकण्णा तणुभयपासेसुं (ब तणुभयसेसुं) अट्ठ अंतरा दीवा ॥ पुव्वग्गिदिसादिगणणिज्जा।

गोमुहमेसमुहक्खा दक्खिणवेयड्ढपणिधिदीवेसुं[1] । मेघमुहा विज्जुमुहा सिहरिणिरिंदस्स पुव्वपच्छिमके ॥ २४९८
दप्पणगयसरिसमुहा उत्तरवेयड्ढपणिधिभागगदा । अब्भंतरम्मि भागे बाहिरए होंति तम्मेत्ता ॥ २४९९
मिच्छत्तम्मि रता[2] णं मंदकसाया पियंवदा कुडिला । धम्मफलं मग्गंता मिच्छादेवेसु भत्तिपरा ॥ २५००
सुद्धोदणसलिलोदणकंजियअसणादिकट्ठसुकिलिट्ठा । पंचग्गितवं विसमं कायकिलेसं च कुव्वंता ॥ २५०१
सम्मत्तरयणहीणा कुमाणुसा लवणजलधिदीवेसुं । उप्पज्जंति अधण्णा[3] अण्णाणजलम्मि मज्जंता ॥ २५०२
अदिमाणगव्विदा जे साहूण कुणंति किंचि अवमाणं[4] । सम्मत्ततवजुदाणं[5] जे णिग्गंथाण दूसणा देंति ॥ २५०३
जे मायाचाररदा संजमतवजोगवज्जिदा पावा । इड्ढिरससादगारवगरुवा जे मोहमावण्णा ॥ २५०४
थूलसुहमादिचारं जे णालोचंति गुरुअणसमीवे । सज्झायवंदणाओ जे गुरुसहिदा ण कुव्वंति ॥ २५०५
जे छंडिय मुणिसंघं वसंति एक्काकिणो दुराचारा । जे कोहेण य कलहं सव्वेसिंतो[6] पकुव्वंति ॥ २५०६
आहारसण्णसत्ता लोहकसाएण जणिदमोहा जे । धरिऊणं जिणलिंगं पावं कुव्वंति जे घोरं । २५०७
जे कुव्वंति ण भत्तिं अरहंताणं तहेव साहूणं । जे वच्छल्लविहीणा चाउव्वण्णम्मि संघम्मि ॥ २५०८
जे गेण्हंति सुवण्णप्पहुदिं जिणलिंगधारिणो हिट्ठा[7] । कण्णाविवाहपहुदिं संजदरूवेण जे पकुव्वंति ॥ २५०९

दक्षिणविजयार्द्धके प्रणिधिभागस्थ द्वीपोंमें रहनेवाले कुमानुष गोमुख और मेषमुख, तथा शिखरीपर्वतके पूर्व-पश्चिम द्वीपोंमें रहनेवाले वे कुमानुष मेघमुख और विद्युन्मुख होते हैं ॥ २४९८ ॥

उत्तरविजयार्द्धके प्रणिधिभागोंमें स्थित वे कुमानुष क्रमसे दर्पण और हाथीके सदृश मुखवाले हैं । जितने द्वीप व उनमें रहनेवाले कुमानुष अभ्यन्तर भागमें हैं, उतने ही वे बाह्य भागमें भी विद्यमान हैं ॥ २४९९ ॥

मिथ्यात्वमें रत, मन्दकषायी, प्रिय बोलनेवाले, कुटिल, धर्म-फलको खोजनेवाले, मिथ्यादेवोंकी भक्तिमें तत्पर; शुद्ध ओदन, सलिलोदन व काँजी खानेके कष्टसे संक्लेशको प्राप्त, विषम पंचाग्नितप व कायक्लेशको करनेवाले, और सम्यक्त्वरूपी रत्नसे रहित अधन्य जीव अज्ञानरूपी जलमें डूबते हुए लवणसमुद्रके द्वीपोंमें कुमानुष उत्पन्न होते हैं ॥ २५००–२५०२ ॥

इसके अतिरिक्त जो लोग तीव्र अभिमानसे गर्वित होकर सम्यक्त्व और तपसे युक्त साधुओंका किंचित् भी अपमान करते हैं, जो दिगम्बर साधुओंकी निन्दा करते हैं, जो पापी संयम, तप व प्रतिमायोगसे रहित होकर मायाचारमें रत रहते हैं, जो ऋद्धि, रस और सात इन तीन गारवोंसे महान् होते हुए मोहको प्राप्त हैं, जो स्थूल व सूक्ष्म दोषोंकी गुरुजनोंके समीपमें आलोचना नहीं करते हैं, जो गुरुके साथ स्वाध्याय व वंदनाकर्मको नहीं करते हैं, जो दुराचारी मुनिसंघको छोड़कर एकाकी रहते हैं, जो क्रोधसे सबसे कलह करते हैं, जो आहारसंज्ञामें आसक्त व लोभकषायसे मोहको प्राप्त होते हैं, जो जिनलिंगको धारणकर घोर पापको करते हैं, जो अरहन्त तथा साधुओंकी भक्ति नहीं करते हैं, जो चातुर्वर्ण्य संघके विषयमें वात्सल्यभावसे विहीन होते हैं, जो जिनलिंगके धारी

---

१ द ब 'वेदीसु. २ द ब °तिमिरता. ३ ब अधण्णम्मा. ४ द व अवमाणा. ५ द ब सम्मत्ततवजुत्ताम. ६ द ब सव्वेसिंते. ७ द ब दिट्ठा.

जे भुंजंति विहीणा भोणेणं घोरपावसंलग्गा । अणअण्णदरुदयादो सम्मत्तं जे विणासंति ॥ २५१०
ते कालवसं पत्ता फलेण पावाण विसमपाकाणं । उप्पज्जंति कुरूवा कुमाणुसा जलहिदीवेसुं ॥ २५११
गब्भादो ते मणुवा जुगलंजुगला सुहेण णिस्सरिया । तिरिया समुचिदेहिं दिणेहिं धारंति तारुण्णं ॥ २५१२
बेधणुसहस्सतुंगा मंदकसाया पियंगुसामलया । सव्वे ते पल्लाऊ कुभोगभूमीए चेट्ठंति ॥ २५१३
तब्भूमिजोग्गभोगं भोत्तूणं आउसस्स अवसाणे । कालवसं संपत्ता जायंते भवणतिदयम्मि ॥ २५१४
सम्मईसणरयणं गहियं जेहिं णरेहिं तिरिएहिं । दीवेसु चउविहेसुं सोहम्मदुगम्मि जायंते ॥ २५१५
णवजोयणदीहत्ता तदद्धवासा तदद्धबहलत्ता । तेसु णईमुहमच्छा पत्तेक्कं होंति पउरयरा[1] ॥ २५१६

९ । ९ | ९
२ | ४ |

लवणोदहिबहुमज्झे मच्छाणं दीहवासबहलाणिं । सरिमुहमच्छाहिंतो हवंति दुगुणप्पमाणाणिं ॥ २५१७
सेसेसुं ठाणेसुं बहुविहउग्गाहणेण्णिदा[2] मच्छा । मयरसिसुमारे[3]कच्छवमंडूकप्पहुदिणो अण्णे[4] ॥ २५१८

होकर सुवर्णादिकको हर्षसे ग्रहण करते हैं, जो संयमीके वेषसे कन्याविवाहादिक करते हैं, जो मौनके बिना भोजन करते हैं, जो घोर पापमें संलग्न रहते हैं, और जो अनन्तानुबंधिचतुष्टयमेंसे किसी एकके उदित होनेसे सम्यक्त्वको नष्ट करते हैं, वे मृत्युको प्राप्त होकर विषम परिपाकवाले पापकर्मोंके फलसे समुद्रके इन द्वीपोंमें कुत्सित रूपसे युक्त कुमानुष उत्पन्न होते हैं ॥२५०३–२५११॥

वे मनुष्य व तिर्यंच युगल-युगलरूपमें गर्भसे सुखपूर्वक निकलकर, अर्थात् जन्म लेकर, समुचित दिनोंमें यौवन अवस्थाको धारण करते हैं ॥ २५१२ ॥

वे सब कुमानुष दो हजार धनुष ऊंचे, मन्दकषायी, प्रियंगुके समान श्यामल और एक पल्यप्रमाण आयुसे युक्त होकर कुभोगभूमिमें स्थित रहते हैं ॥ २५१३ ॥

पश्चात् वे उस भूमिके योग्य भोगोंको भोगकर आयुके अन्तमें मरणको प्राप्त हो भवनत्रिक देवोंमें उत्पन्न होते हैं ॥ २५१४ ॥

जिन मनुष्य व तिर्यंचोंने इन चार प्रकारके द्वीपोंमें सम्यग्दर्शनरूप रत्नको ग्रहण करलिया है वे सौधर्मयुगलमें उत्पन्न होते हैं ॥ २५१५ ॥

लवणसमुद्रमें अधिकतर नदीमुखमत्स्य प्रत्येक नौ योजन लंबे, इससे आधे अर्थात् साढ़े चार योजन विस्तारवाले, और इससे आधे अर्थात् सवा दो योजन मोटे होते हैं ॥ २५१६ ॥

दीर्घता ९, व्यास ४½, बाहल्य २¼ यो. ।

लवणसमुद्रके बहुमध्यभागमें मत्स्योंकी लंबाई, विस्तार और बाहल्य नदीमुखमत्स्योंकी अपेक्षा दुगुणे प्रमाणसे संयुक्त है ॥ २५१७ ॥

शेष स्थानोंमें बहुत प्रकारकी अवगाहनासे अन्वित मत्स्य, मकर, शिशुमार, कछवा और मेंढक आदि अन्य जलजन्तु होते हैं ॥ २५१८ ॥

१ द ब जं भणुसहस्स°. २ द ब पउरधरा. ३ द ब उग्गणंणिदा. ४ द ब मंसिसुमार. ५ द ब अण्णो.

लवणजलधिस्स जगदी सारिच्छा जंबुदीवजगदीए । अब्भंतर सिलवट्टं बाहिरभागम्मि होदि वणं ॥ २५१९
भू १२ । म ८ । मु ४ । उ ८ ।

पण्णारसलक्खाइं इगिसीदिसहस्सजोयणाणि तहा । उणदालजुदेक्कसयं बाहिरपरिधी समुद्दजगदीए ॥ २५२०
१५८११३९ ।

दुगुणिदिय सूजीए इच्छियवलयाणं[1] दुगुणवासाणिं । सोधिय अवसेसकदिं वासद्धकदीहि गुणिदूणं ॥ २५२१
गुणिदूण दसेहिं तदो मूलेणंकं हवेदि जं लद्धं । इच्छियवलयायारे खेत्ते तं जाण सुहुमफलं ॥ २५२२
गयणेक्कछणवपंचछछतियैसत्तणवयअट्ठेक्का । जोयणया अंककमे खेत्तफलं लवणजलहिस्स ॥ २५२३
१८९७३६६५९६१०।[3]

अंबरछस्सत्तत्तियपणतिदुचउछस्सत्तणवयएक्काइं । खेत्तफलं मिलिदाणं जंबूदीवस्स लवणजलधिस्स ॥ २५२४
१९७६४२३५३७६० ।

लवणसमुद्रकी जगती जम्बूद्वीपकी जगतीके सदृश है । इस जगतीके अभ्यन्तर भागमें शिलापट्ट और बाह्य भागमें वन है ॥ २५१९ ॥ भूमि १२ । मध्य ८ । मुख ४ । उदय ८ यो. ।

इस समुद्रजगतीकी बाह्य परिधिका प्रमाण पन्द्रह लाख इक्यासी हजार एकसौ उनतालीस योजन है ॥ २५२० ॥ १५८११३९ ।

दुगुणी सूचीमेंसे इच्छित गोल क्षेत्रोंके दुगुणे विस्तारको घटाकर जो शेष रहे उसके वर्गको अर्ध विस्तारके वर्गसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उसे पुनः दशसे गुणा करके प्राप्त राशिका वर्गमूल निकालनेपर जो अंक लब्ध हों तत्प्रमाण इच्छित वलयाकार क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल जानना चाहिये ॥ २५२१–२५२२ ॥

उदाहरण— लवणसमुद्रकी सूची ५ लाख और व्यास २ लाख योजन है । उसका सूक्ष्म क्षेत्रफल इसप्रकार होगा—

$$\sqrt{\left\{(५०००००\times २)-(२०००००\times २)\right\}^{२}\times\frac{२०००००^{२}}{२}\times १०}=$$

१८९७३६६५९६१० योजन ।

शून्य, एक, छह, नौ, पांच, छह, छह, तीन, सात, नौ, आठ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजनमात्र लवणसमुद्रका क्षेत्रफल है ॥ २५२३ ॥

१८९७३६६५९६१० ।

शून्य, छह, सात, तीन, पांच, तीन, दो, चार, छह, सात, नौ और एक, इन अंकोंसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजनप्रमाण जम्बूद्वीप व लवणसमुद्रका सम्मिलित क्षेत्रफल है ॥ २५२४ ॥

जं. द्वी. का क्षेत्रफल ७९०५६९४१५० + ल. स. का क्षे. फ. १८९७३६६५९६१० =
१९७६४२३५३७६० ।

---

१ द ब °वलयाणि. २ द ब छण्णवपंचछतिय°. ३ द ब १८९७३६६५९१६१०.

बाहिरसूईवग्गो अब्भंतरसूइवग्गपरिहीणो । लक्खस्स कदीहिं[1] हिदो जंबूदीवप्पमाणया खंडा ॥ २५२५
चउवीस जलहिखंडा जंबूदीवप्पमाणदो होंति । एवं लवणसमुद्दो वाससमासेण णिद्दिट्ठो ॥ २५२६
। एवं लवणसमुद्दं गदं ।
धादइसंडो दीओ परिवेढदि[2] लवणजलणिहिं सयलं । चउलक्खजोयणाइं वित्थिण्णो चक्कवालेणं ॥ २५२७
४०००००।
जगदीविण्णासाइं भरहखिदी तम्मि कालभेदं च । हिमगिरिहेमवदा महहिमवं हरिवरिसणिसहद्दी ॥ २५२८
विजओ विदेहणामो णीलगिरी रम्मवरिसरुप्पिगिरी । हेरण्णवदो विजओ सिहरी एरावदो त्ति वरिसो य॥२५२९
एवं सोलसभेदा धादइसंडस्स अंतरहियारा । एण्हिं[3] ताण सरूवं वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ २५३०
तहीवं परिवेढदि समंतदो दिव्वरयणमयजगदी । जंबूदीवपवण्णिदजगदीए सरिसवण्णणया ॥ २५३१
। जगदी समत्ता ।
दक्खिणउत्तरभाए उसुगारा दक्खिणुत्तरया । एक्केक्को होदि गिरी धादइसंडं पविभंजंतो[5] ॥ २५३२

बाह्य सूचीके वर्गमेंसे अभ्यन्तर सूचीके वर्गको कम करनेपर जो शेष रहे, उसमें एक लाखके वर्गका भाग देनेपर लब्ध संख्याप्रमाण जम्बूद्वीपके समान खण्ड होते हैं ॥ २५२५ ॥

उदाहरण— लवणसमुद्रकी बाह्य सूची ५ लाख और अभ्यन्तर सूची १ लाख यो. है। अतः उसके जम्बूद्वीपप्रमाण खण्ड इसप्रकार होंगे—

$$(५०००००^२ - १०००००^२) \div १०००००^२ = २४ \text{ खण्ड}।$$

जम्बूद्वीपके प्रमाण लवणसमुद्रके चौबीस खण्ड होते हैं। इसप्रकार संक्षेपमें लवणसमुद्रका विस्तार यहां बतलाया गया है ॥ २५२६ ॥

इसप्रकार लवणसमुद्रका वर्णन समाप्त हुआ।

धातकीखंडद्वीप इस सम्पूर्ण लवणसमुद्रको वेष्टित करता है। मण्डलाकारसे स्थित यह द्वीप चार लाख योजनप्रमाण विस्तारसे संयुक्त है ॥ २५२७ ॥ ४००००० ।

जगती[1], विन्यास[2], भरतक्षेत्र[3], उसमें कालभेद[4], हिमवान्पर्वत[5], हैमवतक्षेत्र[6], महाहिमवान्पर्वत[7], हरिवर्षक्षेत्र[8], निषधपर्वत[9], विदेहक्षेत्र[10], नीलपर्वत[11], रम्यकक्षेत्र[12], रुक्मिपर्वत[13], हैरण्यवतक्षेत्र[14], शिखरीपर्वत[15] और ऐरावतक्षेत्र[16], इसप्रकार धातकीखण्डद्वीपके वर्णनमें ये सोलह भेदरूप अन्तराधिकार हैं। अब अनुक्रमसे इनके स्वरूपका कथन करते हैं ॥ २५२८–२५३० ॥

उस धातकीखण्डद्वीपको चारों तरफसे दिव्य रत्नमय जगती वेष्टित करती है। इस जगतीका वर्णन जम्बूद्वीपमें वर्णित जगतीके ही समान है ॥ २५३१ ॥

जगतीका कथन समाप्त हुआ।

धातकीखण्डद्वीपके दक्षिण और उत्तरभागमें इस द्वीपको विभाजित करनेवाला व दक्षिण-उत्तर लंबा एक एक इष्वाकार पर्वत है ॥ २५३२ ॥

---

१ द ब कदिम्हि. २ द ब परिवेददि. ३ द ब एण्हं. ४ द ब दीव°. ५ द ब पविभजंतं.

णिसहसमाणुच्छेहा[1] संलग्गा लवणकालजलहीणं । अब्भंतरम्मि वाहिं अंकमुहा ते खुरप्पसंठाणा ॥ २५३३
जोयणसहस्समेक्कं रुंदा सव्वत्थ ताण पत्तेक्कं । जोयणसयमवगाढा कणयमया ते विराजंति ॥ २५३४
एक्केक्का तडवेदी तेसिं चेट्ठेदि दोसु पासेसुं । पंचसयदंडवासा धुव्वंतधया दुकोसउच्छेहा ॥ २५३५
ताणं दोपासेसुं वणसंडा वेदितोरणेहिं जुदा । पोक्खरणीवावीहिं जिणिंदपासादरमणिज्जा ॥ २५३६
वणसंडेसुं दिव्वा पासादा विविहरयणणियरमया । सुरणरमिहुणसणाहा तडवेदीतोरणेहिं जुदा ॥ २५३७
उवरिं उसुगाराणं समंतदो हवदि दिव्वतडवेदी । वण-वणवेदी पुव्वुप्पवारवित्थारपरिपुण्णा ॥ २५३८
चत्तारो चत्तारो पत्तेक्कं होंति ताण वरकूडा । जिणभवणमादिकूडे सेसेसुं वेंतरपुराणिं ॥ २५३९
तद्दीवे[5] जिणभवणं वेंतरदेवाण दिव्वपासादा । णिसहपवण्णिदजिणभवणवेंतरावाससारिच्छा ॥ २५४०
दोसुं इसुगाराणं विच्चाले होंति ते दुवे विजया । जे होंति जंबुदीवे तेत्तियदुगुणकदा धादईसंडे[6] ॥ २५४१
सेलसरोवरसरिया विजया कुंडा य जेत्तिया होंति । णाणाविण्णासजुदा ते संलीणा य धादईसंडे ॥ २५४२

लवण और कालोद समुद्रसे संलग्न वे दोनों पर्वत निषधपर्वतके समान ऊंचे, तथा अभ्यन्तर भागमें अंकमुख व बाह्य भागमें क्षुरप्रके आकार हैं ॥ २५३३ ॥

उन दोनों पर्वतोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार सर्वत्र एक हजार योजनप्रमाण है। एकसौ योजनप्रमाण अवगाहसे सहित वे सुवर्णमय पर्वत विराजमान हैं ॥ २५३४ ॥

उन पर्वतोंके दोनों पार्श्वभागोंमें पांचसौ धनुषप्रमाण विस्तारसे सहित, दो कोस ऊंची और फहराती हुई ध्वजाओंसे संयुक्त एक एक तटवेदी है ॥ २५३५ ॥

उन वेदियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें वेदी, तोरण, पुष्करिणी एवं वापिकाओंसे युक्त और जिनेन्द्रप्रासादोंसे रमणीय वनखंड हैं ॥ २५३६ ॥

इन वनखण्डोंमें देव व मनुष्योंके युगलोंसे सहित, तटवेदी व तोरणोंसे युक्त और विविध प्रकारके रत्नोंके समूहोंसे निर्मित दिव्य प्रासाद हैं ॥ २५३७ ॥

इष्वाकार पर्वतोंके ऊपर चारों ओर पूर्वोक्तप्रकार विस्तारसे परिपूर्ण दिव्य तटवेदी, वन और वनवेदी स्थित है ॥ २५३८ ॥

उन प्रत्येक पर्वतोंपर चार चार उत्तम कूट हैं। इनमेंसे प्रथम कूटके ऊपर जिनभवन और शेष कूटोंके ऊपर व्यन्तरोंके पुर हैं ॥ २५३९ ॥

उस द्वीपमें जिनभवन और व्यन्तरदेवोंके दिव्य प्रासाद निषधपर्वतके वर्णनमें निर्दिष्ट जिनभवन और व्यन्तरावासोंके सदृश हैं ॥ २५४० ॥

दोनों इष्वाकारोंके मध्यमें वे क्षेत्र दो दो हैं। जो क्षेत्र जम्बूद्वीपमें हैं उनसे दुगुणे धातकीखण्डमें हैं ॥ २५४१ ॥

नाना प्रकारके विन्याससे युक्त जितने पर्वत, तालाब, नदियां, क्षेत्र और कुण्ड हैं, वे धातकीखण्डमें भी शोभायमान है ॥ २५४२ ॥

१ द णिसहमाणुच्छेहा°. २ द अंतमुहा, ब अंकुमुहा. ३ ब दुकोस°. ४ द ब पुव्वापवार°. ५ द ब तदीवं. ६ द ब तेत्तिय दुगुणकदो धादईसंडो. ७ द णाणाविण्णाससालिण. ८ द ब सालिण धादई°.

इसुगारगिरिंदाणं विच्चालेसुं भवंति सव्वे णं । णाणाविचित्तवण्णा सहलीणा धादईसंडे ॥ २५४३
विजया विजयाण तहा विजयड्ढाणं भवंति विजयड्ढा । मेरुगिरीणं मेरू कुलगिरिणो कुलगिरीणं च ॥ २५४४
णाभिगिरिण णाभिगिरी सरिया सरियाण दोसु दीवेसुं[1] । पणिधिगदा अवगाहुच्छेहसरिच्छा विणा मेरुं ॥ २५४५
जंबूदीवपवण्णिदरुंदादिहिंतो य दुगुणरुंदा ते । पत्तेक्कं वेथड्ढप्पहुदिणगाणं विणा मेरुं ॥ २५४६
मोत्तूणं मेरुगिरिं सव्वणगा कुंडपहुदि दीवदुगे । अवगाढवासपहुदी केई इच्छंति सारिच्छा[2] ॥ २५४७

पाठान्तरम् ।

मूलम्मि उवरिभागे बारसकुलपव्वया सरिसरुंदा । उभयंतेहिं लग्गा लवणोवहिकालजलहीणं ॥ २५४८
दो दो भरहेरावदवसुमइबहुमज्झदीहविजयड्ढा[3] । दोपासेसुं लग्गा लवणोवहिकालजलहीणं ॥ २५४९
ते बारस कुलसेला चत्तारो ते च दीहविजयड्ढा । अब्भंतरम्मि बाहिं अंकमुहा खुरप्पसंठाणा ॥ २५५०
विजयादीणं णामा जंबूदीवम्मि वण्णिदा विविहा । वज्जियं जंबूसम्मलिणामाइं एत्थ वत्तव्वा[4] ॥ २५५१

इष्वाकार पर्वतोंके अन्तरालमें नाना प्रकारके विचित्रवर्णवाले वे सब पर्वतादि धातकीखंडमें स्थित हैं ॥ २५४३ ॥

दोनों द्वीपोंमें प्रणिधिगत क्षेत्र क्षेत्रोंके सदृश, विजयार्द्ध विजयार्द्धोंके सदृश, मेरु मेरुके सदृश, कुलपर्वत कुलपर्वतोंके सदृश, नाभिगिरि नाभिगिरियोंके सदृश, और नदियां नदियोंके सदृश हैं। इनमेंसे मेरुके विना शेष सबोंका अवगाह व उंचाई सदृश है ॥ २५४४–२५४५ ॥

मेरुको छोड़कर विजयार्द्धप्रभृति पर्वतोंमेंसे वे प्रत्येक जम्बूद्वीपमें बतलाये हुए विस्तारकी अपेक्षा दुगुणे विस्तारसे सहित हैं ॥ २५४६ ॥

मेरुपर्वतको छोड़कर सब पर्वत और कुण्ड आदि तथा अवगाह एवं विस्तारादि दोनों द्वीपोंमें समान हैं, ऐसा कितने ही आचार्योंका अभिप्राय है ॥ २५४७ ॥ पाठान्तर ।

बारह कुलपर्वत मूल व उपरिम भागमें समान विस्तारसे सहित होते हुए दोनों अन्तिम भागोंसे लवणोदधि और कालोदधिसे संलग्न हैं ॥ २५४८ ॥

भरत व ऐरावत क्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें स्थित दो दो दीर्घ विजयार्द्ध दोनों पार्श्वभागोंमें लवणोदधि और कालोदधिसे संलग्न हैं ॥ २५४९ ॥

वे बारह कुलपर्वत और चारों ही दीर्घ विजयार्द्ध अभ्यन्तर व बाह्य भागमें क्रमसे अंकमुख और क्षुरप्र जैसे आकारवाले हैं ॥ २५५० ॥

जम्बू और शाल्मली वृक्षोंके नामोंको छोड़कर शेष जो क्षेत्रादिकोंके विविध प्रकारके नाम जम्बूद्वीपमें बतलाये गये हैं, उनको ही यहांपर भी कहना चाहिये ॥ २५५१ ॥

१ द ब णाभिगिरी णाभिगिरी सरिसरियासयाणु दोसु दीवेसुं. २ द ब सारिच्छा. ३ द ब °मज्झदीवविजयड्ढा. ४ ब वज्जिहावज्जिय.

दोपासेसुं दक्खिणइसुगारगिरिस्स दो भरहखेत्ता । उत्तरइसुगारस्स य भवंति एरावदा दोण्णि ॥ २५५२
दोण्णं इसुगाराणं बारसकुलपव्वयाण विच्चाले । [1]अरविवरेहिं सरिच्छा विजया सव्वे वि धादईसंडे ॥ २५५३
अंकायारा विजया भागे अब्भंतरम्मि ते सव्वे । सत्तिमुहं पिव बाहिं सयडुद्धिसमा य पस्सभुजा ॥ २५५४
अब्भंतरम्मि भागे मज्झिमभागम्मि बाहिरे भागे । विजयाणं विक्खंभं धादइसंडे परूवेमो ॥ २५५५
दुसहस्सजोयणाणिं पंचुत्तरसयजुदाणि पंचंसा । उणवीसहिदा रुंदा हिमवंतगिरिस्स णादव्वं ॥ २५५६

२१०५ । ५
१९

महहिमवंतं रुंदं [2]चउद्दहिमवंतरुंदपरिमाणं । णिसहस्स होदि वासो महहिमवंतस्स चउगुणो वासो ॥ २५५७

८४२१ । १ | ३३६८४ । ४ |
१९ | १९ |

एदाणं सेलाणं विक्खंभो मेलिऊण चउगुणिदो । सव्वाण कुलगिरीणं रुंदसमासो पुढो होदि ॥ २५५८
दोण्णं इसुगाराणं विक्खंभो होदि दो सहस्साणिं । तस्सिं मिलिदे[3] धादइसंडे गिरिरुद्धखिदिमाणं ॥ २५५९

२०००।

दक्षिण इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो भरतक्षेत्र और उत्तर इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो ऐरावतक्षेत्र हैं ॥ २५५२ ॥

धातकीखण्डद्वीपमें दोनों इष्वाकार और बारह कुलपर्वतोंके अन्तरालमें स्थित सब क्षेत्र अरविवर अर्थात् चक्केके अरोंके मध्यमें रहनेवाले छेदोंके समान हैं ॥ २५५३ ॥

वे सब क्षेत्र अभ्यन्तर भागमें अंकाकार और बाह्यमें शक्तिमुख हैं। इनकी पार्श्वभुजायें गाड़ीकी उद्धिके समान हैं ॥ २५५४ ॥

अब धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रोंका अभ्यन्तर, मध्य और बाह्य भागमें जितना विस्तार है उसे कहते हैं ॥ २५५५ ॥

दो हजार एकसौ पांच योजन और उन्नीससे भाजित पांच भागप्रमाण हिमवान्पर्वतका विस्तार समझना चाहिये ॥ २५५६ ॥ २१०५$\frac{५}{१९}$ ।

महाहिमवान्पर्वतका विस्तारप्रमाण हिमवान्पर्वतके विस्तारसे चौगुणा और निषधपर्वतका विस्तार महाहिमवान्पर्वतके विस्तारसे चौगुणा है ॥ २५५७ ॥ ८४२१$\frac{१}{१९}$ । ३३६८४$\frac{५}{१९}$ ।

इन तीनों पर्वतोंके विस्तारको मिलाकर चौगुणा करनेपर सब कुलपर्वतोंके विस्तारका संकलन होता है ॥ २५५८ ॥

$$२१०५\frac{५}{१९} + ८४२१\frac{१}{१९} + ३३६८४\frac{५}{१९} \times ४ = १७६८४२\frac{२}{१९}$$ ।

दोनों इष्वाकार पर्वतोंका विस्तार दो हजार योजनप्रमाण है। उपर्युक्त कुलपर्वतोंके विस्तारप्रमाणमें इसको भी मिला देनेपर धातकीखण्डद्वीपमें सम्पूर्ण पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण होता है ॥ २५५९ ॥ २०००।

---

१ द ब एरावदो. २ द अरविववेहि, ब अवरविवरेहि. ३ ब चउदह°. ४ द ब मेलिदे.

दुगचउअट्ठट्ठाई सत्तेक्कं जोयणाणि अंकक्कमे । उणवीसहिदा दुकला माणं गिरिरुद्धवसुहाए ॥ २५६०

१७८४४२ । २
१९

कयणादीणं एदं दुगतिगचउसंगुणं तिलक्खूणं । कमसो आदिममज्झिमबाहिरसूई हवे ताणं ॥ २५६१

आदिमबज्झिमबाहिरसूईवग्गा दसेहिं संगुणिदा । तस्स य मूला इच्छियसूईए होदि सा परिही ॥ २५६२

पण्णारसलक्खाइं इगिसीदिसहस्स जोयणेक्कसयं । उणदालजुदा धादइसंडे अब्भंतरे परिही ॥ २५६३

१५८११३९ ।

अट्ठावीसं लक्खा छादालसहस्स जोयणा पण्णा । किंचूणा णादव्वा मज्झिमपरिही य धादईसंडे ॥ २५६४

२८४६०५० ।

एक्कछणवणभएक्का एक्कचउक्का कमेण अंकाणिं । जोयणया किंचूणा तद्दीवे बाहिरो परिही ॥ २५६५

४११०९६१ ।

दो, चार, आठ, आठ, सात और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और उन्नीससे भाजित दो भाग धातकीखण्डमें पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण है ॥ २५६० ॥

$$१७६८४२\frac{२}{१९} - २००० = १७८८४१\frac{२}{१९}।$$

लवणसमुद्रादिकके विस्तारको दो, तीन और चारसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमेंसे तीन लाख कम करनेपर क्रमसे उनकी आदि, मध्य और अन्तिम सूचीका प्रमाण होता है ॥ २५६१ ॥

४ ला. × २ − ३ ला. = ५ लाख यो. धा. खं. की आदिमसूची । ४ × ३ − ३ = ९ लाख योजन धा. खं. की मध्यसूची । ४ × ४ − ३ = १३ लाख योजन धा. खं. की बाह्यसूची ।

आदि, मध्य और बाह्य सूचीके वर्गको दशसे गुणा करके उसका वर्गमूल निकालनेपर इच्छित सूचीकी परिधिका प्रमाण आता है ॥ २५६२ ॥

पन्द्रह लाख इक्यासी हजार एकसौ उनतालीस योजनमात्र धातकीखण्डकी अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण है ॥ २५६३ ॥

$\sqrt{५०००००^२ \times १०} = १५८११३९$ यो. धा. खं. की अभ्यन्तर परिधि ।

अट्ठाईस लाख छ्यालीस हजार पचास योजनसे कुछ कम धातकीखंडद्वीपकी मध्यमें परिधिका प्रमाण जानना चाहिये ॥ २५६४ ॥

$\sqrt{९०००००^२ \times १०} = २८४६०५०$ यो. से कुछ कम धा. खं. की मध्य परिधि ।

एक, छह, नौ, शून्य, एक, एक और चार, इन अंकोंको क्रमसे रखनेपर जो संख्या हो उतने योजनोंसे कुछ कम धातकीखण्डद्वीपकी बाह्य परिधिका प्रमाण है ॥ २५६५ ॥

$\sqrt{१३०००००^२ \times १०} = ४११०९६१$ यो. धा. खं. की बाह्य परिधि ।

---

१ द ब छण्णासं.

आदिममज्झिमबाहिरपरिहिपमाणेसु सेलरुद्धखिदिं । सोधिय सेसट्ठाणं सव्वाणं होदि विजयाणं ॥ २५६६

१४०२२९६ । १७ / १९ | २६६७२०७ । १७ / १९ | ३९३२११८ । १७ / १९ |

एक्कचउसोलसंखा चउगुणिदा अट्ठवीसजुत्तसया । मेलिय तिविहसमासं हरिदे तिट्ठाणभरहविक्खंभा ॥ २५६७

२१२ ।

भरहादीविजयाणं बाहिररुंदम्मि आदिमं रुंदं । सोधिय चउलक्खहिदे खयवड्ढी इच्छिदपदेसे ॥ २५६८

छावट्ठिं च सयाणिं चोद्दसजुत्ताणि जोयणाणि कला । उणतीस उत्तरसयं भरहस्सब्भंतरे वासो ॥ २५६९

६६१४ । १२९ / २१२ |

हेमवदप्पहुदीणं पत्तेक्कं चउगुणो हवे वासो । जाव य विदेहवस्सो तप्परदो चउगुणा हाणी ॥ २५७०

आदि, मध्य और बाह्य परिधिके प्रमाणमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्रको कम करनेपर शेष स्थान सब क्षेत्रोंका होता है ॥ २५६६ ॥

१५८११३९ − १७८८४२$\frac{२}{१२}$ = १४०२२९६$\frac{१७}{१९}$ आदि। २८४६०५० − १७८८४२$\frac{०}{१२}$ = २६६७२०७$\frac{१७}{१९}$ मध्य। ४११०९६१ − १७८८४२$\frac{३}{१२}$ = ३९३२११८$\frac{१७}{१९}$ बाह्य।

एक, चार और सोलह, इनकी चौगुणी संख्याके जोड़में एकसौ अट्ठाईसको मिलानेपर जो संख्या उत्पन्न हो उसका पर्वतरुद्ध क्षेत्रसे रहित उक्त तीन प्रकारके परिधिप्रमाणमें भाग देनेपर क्रमसे तीनों स्थानोंमें भरतक्षेत्रका विस्तारप्रमाण निकलता है ॥ २५६७ ॥

१४०२२९६$\frac{१७}{१९}$ ÷ (४ + १६ + ६४ + १२८) = ६६१४$\frac{१२९}{२१२}$ अभ्यंतरविस्तार।

२६६७२०७$\frac{१७}{१९}$ ÷ २१२ = १२५८१$\frac{३६}{२१२}$ मध्यविस्तार।

३९३२११८$\frac{१७}{१९}$ ÷ २१२ = १८५४७$\frac{१५५}{२१२}$ बाह्यविस्तार।

भरतादिक क्षेत्रोंके बाह्यविस्तारमेंसे आदिके विस्तारको कम करके शेषमें चार लाखका भाग देनेपर इच्छित स्थानमें हानि-वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ २५६८ ॥

(१८५४७$\frac{१५५}{२१२}$ − ६६१४$\frac{१२९}{२१२}$) ÷ ४०००० = $\frac{२५२९८२२}{८४८०००००}$।

छयासठसौ चौदह योजन और एक योजनके दोसौ बारह भागोंमेंसे एकसौ उनतीस भागमात्र भरतक्षेत्रका अभ्यन्तरविस्तार है ॥ २५६९ ॥ ६६१४$\frac{१२९}{२१२}$।

विदेहक्षेत्र तक क्रमसे हैमवतादिक क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार उत्तरोत्तर इससे चौगुणा है। इससे आगे क्रमसे चौगुणी हानि होती गई है ॥ २५७० ॥

१ द ब °कुंडम्मि, क बाहिकुंदम्मि. २ द ब °लक्खावहिदे.

२६४५८ । ९२ / २१२ | १०५८३३ । १५६ / २१२ | ४२३३३४ । २०० / २१२ | १०५८३३ । १५६ / २१२ | २६४५८ । ९२ / २१२ |

६६१४ । १२९ / २१२ |

बारससहस्सपणसयइगिसीदी जोयणा य छत्तीसा । भागा भरहस्सिदिस्स य मज्झिमवित्थारपरिमाणं ॥२५७१

१२५८१ । ३६ / २१२ | ५०३२४ । १४४ / २१२ | २०१२९८ । १५२ / २१२ | ८०५१९४ । १८४ / २१२ | २०१२९८ । १५२ / २१२ |

५०३२४ । १४४ / २१२ | १२५८१ । ३६ / २१२ |

अट्ठारसा सहस्सा पंचसया जोयणा य सगदाला । भागा पणवण्ण सयं वासो भरहस्स बाहिरए ॥ २५७२

१८५४७ । १५५ / २१२ | ७४१९० । १९६ / २१२ | २९६७६३ । १४८ / २१२ | ११८७०५४ । १६८ / २१२ | २९६७६३ । १४८ / २१२ |

७४१९० । १९६ / २१२ | १८५४७ । १५५ / २१२ |

धादइसंडे दीवे खुल्लयहिमवंतसिहरिमज्झगया । पउमदहपुंडरीए पुव्ववरदिसाए एक्क एक्क णई ॥ २५७३

उणवीससहस्साणि तिण्णि सया णवयसहियजोयणया । गंतूण गिरिंदुवरिं दक्खिणउत्तरदिसे वलइ ॥ २५७४

१९३०९ ।

हैमवत २६४५८$\frac{९२}{२१२}$ । हरि १०५८३३$\frac{१५६}{२१२}$ । विदेह ४२३३३४$\frac{२००}{२१२}$ ।

रम्यक १०५८३३$\frac{१५६}{२१२}$ । हैरण्यवत २६४५८$\frac{९२}{२१२}$ । ऐरावत ६६१४$\frac{१२९}{२१२}$ ।

भरतक्षेत्रके मध्यम विस्तारका प्रमाण बारह हजार पांचसौ इक्यासी योजन और छत्तीस भाग अधिक है ॥ २५७१ ॥

मध्यविस्तार— भरत १२५८१$\frac{३६}{२१२}$ । हैमवत ५०३२४$\frac{१४४}{२१२}$ । हरि २०१२९८$\frac{१५२}{२१२}$ ।

विदेह ८०५१९४$\frac{१८४}{२१२}$ । रम्यक २०१२९८$\frac{१५२}{२१२}$ । हैरण्यवत ५०३२४$\frac{१४४}{२१२}$ ।

ऐरावत १२५८१$\frac{३६}{२१२}$ ।

अठारह हजार पांचसौ सैंतालीस योजन और एकसौ पचवन भागप्रमाण भरतक्षेत्रका बाह्यविस्तार है ॥ २५७२ ॥

बाह्यविस्तार— भरत १८५४७$\frac{१५५}{२१२}$ । हैमवत ७४१९०$\frac{१९६}{२१२}$ । हरि २९६७६३$\frac{१४८}{२१२}$ ।

विदेह ११८७०५४$\frac{१६८}{२१२}$ । रम्यक २९६७६३$\frac{१४८}{२१२}$ । हैरण्यवत ७४१९०$\frac{१९६}{२१२}$ ।

ऐरावत १८५४७$\frac{१५५}{२१२}$ ।

धातकीखण्डद्वीपमें क्षुद्रहिमवान् और शिखरीपर्वतके मध्यगत पद्मद्रह और पुण्डरीकद्रहकी पूर्व व पश्चिम दिशासे एक एक नदी निकली है ॥ २५७३ ॥

प्रत्येक नदी उन्नीस हजार तीनसौ नौ योजन पर्वतके ऊपर जाकर यथायोग्य दक्षिण व उत्तर दिशाकी ओर मुड़ जाती है ॥ २५७४ ॥ १९३०९ ।

---

१ द ब सिहर°. २ द ब पुव्वव्व दिसा.

मंदरणामो सेलो हवेदि तस्सिं विदेहवरिसम्मि । किंचि विसेसो चेट्ठदि तस्स सरूवं परूवेमो ॥ २५७५

तहीवे पुव्वावरविदेहवस्साण होदि बहुमज्झे । पुव्वपवण्णिदरूवो एक्केको मंदिरो[1] सेलो ॥ २५७६

जोयणसहस्सगाढा चुलसीदिसहस्सजोयणुच्छेहा । ते सेला पत्तेक्कं वररयणविचित्तपरिणामा ॥ २५७७

१००० । ८४००० ।

मेरुतलस्स य रुंदं दस य सहस्साणि जोयणा होंति । चउणउदिसयाइं पि य धरणीपट्ठम्मिए रुंदा ॥ २५७८

१०००० । ९४०० ।

जोयणसहस्समेक्कं विक्खंभो होदि तस्स सिहरम्मि । भूमीय मुहं सोहिय उदयहिदे भूमुहादु हाणिचयं ॥ २५७९

तक्खयवड्ढिपमाणं छद्दसभागं सहस्सगाढम्मि । भूमीदो उवरिं पिय एक्कं दसरूवमवहरिदं ॥ २५८०

$\frac{६}{१०} \mid \frac{१}{१०}$

मेरुतलस्स य रुंदं पंचसया णवसहस्स जोयणया । सव्वत्थं खयवड्ढी दसमंसं केइ इच्छंति ॥ २५८१

$\frac{१}{१०}$ पाठान्तरम् ।

उस द्वीपके भीतर विदेहक्षेत्रमें किञ्चित् विशेषताको लिये हुए जो मन्दर नामक पर्वत स्थित है उसके स्वरूपको कहते हैं ॥ २५७५ ॥

उस द्वीपमें पूर्व और अपर विदेहक्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें पूर्वोक्त स्वरूपसे संयुक्त एक एक मन्दरपर्वत स्थित है ॥ २५७६ ॥

उत्तम एवं नाना प्रकारके रत्नोंके परिणामस्वरूप वे प्रत्येक पर्वत एक हजार योजन प्रमाण अवगाहसे सहित और चौरासी हजार योजन ऊंचे हैं ॥ २५७७ ॥

अवगाह १००० । उत्सेध ८४००० ।

मेरुका विस्तार तलभागमें दश हजार योजन और पृथिवीपृष्ठपर चौरानवैसौ योजनप्रमाण है ॥ २५७८ ॥ १०००० । ९४०० ।

उस मेरुका विस्तार शिखरपर एक हजार योजनमात्र है । भूमिमेंसे मुखको कम करके शेषमें उंचाईका भाग देनेपर भूमिकी अपेक्षा हानि और मुखकी अपेक्षा वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ २५७९ ॥ अवगाहमें – (१०००० – ९४००) ÷ १००० = $\frac{६}{१०}$ । भूमिसे ऊपर (९४०० – १०००) ÷ ८४००० = $\frac{१}{१०}$ हा. वृ. ।

वह क्षय-वृद्धिका प्रमाण एक हजार योजनमात्र अवगाहमें योजनके दश भागोंमेंसे छह भाग अर्थात् छह बटे दस भाग और पृथिवीके ऊपर दश रूपोंसे भाजित एक भाग-मात्र है ॥ २५८० ॥ $\frac{६}{१०}$ । $\frac{१}{१०}$ ।

कितने ही आचार्य मेरुके तलविस्तारको नौ हजार पांचसौ योजनमात्र मानकर सर्वत्र क्षय-वृद्धिका प्रमाण दशवां भाग मानते हैं ॥ २५८१ ॥ ९५०० – १००० ÷ ८५००० = $\frac{१}{१०}$ । पाठान्तर ।

---

१ द ब पुव्वं वण्णिद. २ द ब मंदिरा.

अत्थिच्छसि विक्खंभं खुद्दयमेरूण समवदिण्णाणं[1] । दसभजिदे जं लद्धं एक्कसहस्सेण संमिलिदं ॥ २५८२
जंबूदीवपवण्णिदमंदरगिरिचूलियाएँ[2] सरिसाओ । दोण्णं पि[3] चूलियाओ मंदरसेलाण एदस्सिं[4] ॥ २५८३
पंडुगसोमणसाणिं वणाणि णंदणयभद्दसालाणिं । जंबूदीवपवण्णिदमेरुसमाणाणि मेरूणं ॥ २५८४
णवरि विसेसो पंडुगवणाउ गंतूण जोयणे हेट्ठा । अडवीससहस्साणिं सोमणसं णाम वणमेत्थं[5] ॥ २५८५
२८००० ।
सोमणसादो हेट्ठं पणवण्णसहस्सपणसयाणिं पि । गंतूण जोयणाइं होदि वणं णंदणं एत्थ ॥ २५८६
५५५०० ।
पंचसयजोयणाणिं गंतूणं णंदणाओ हेट्ठम्मि । धादइसंडे दीवे होदि वणं भद्दसालं ति ॥ २५८७
५०० ।
एक्कं जोयणलक्खं सत्तसहस्साणि अडसयाणिं पि । उणसीदी पत्तेक्कं पुव्वावरदीहमेदाणं ॥ २५८८
१०७८७९ ।
मंदरगिरिंदउत्तरदक्खिणभागेसु भद्दसालाणं । जं विक्खंभपमाणं उवएसो तत्थ उच्छिण्णो ॥ २५८९

जितने योजन नीचे जाकर क्षुद्रमेरुओंके विस्तारको जानना हो, उतने योजनोंमें दशका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमें एक हजारके मिला देनेपर अभीष्ट स्थानमें मेरुओंके विस्तारका प्रमाण जाना जाता है ॥ २५८२ ॥

उदाहरण– शिखरसे २१००० यो. नीचे मेरुका विष्कम्भ २१००० ÷ १० + १००० = ३१०० यो. ।

इस द्वीपमें दोनों मन्दरपर्वतोंकी चूलिकायें जम्बूद्वीपके वर्णनमें कही हुई मन्दरपर्वतकी चूलिकाके सदृश हैं ॥ २५८३ ॥

जम्बूद्वीपमें कहे हुए मेरुपर्वतके समान इन मेरुओंके भी पाण्डुक, सौमनस, नन्दन और भद्रशाल नामक चार वन हैं ॥ २५८४ ॥

यहां विशेषता यह है कि पाण्डुकवनसे अट्ठाईस हजार योजनमात्र ही नीचे जाकर सौमनस नामक वन स्थित है ॥ २५८५ ॥ २८००० ।

इसीप्रकार यहां सौमनसवनके नीचे पचवन हजार पांचसौ योजनमात्र जाकर नन्दन वन है ॥ २५८६ ॥ ५५५०० ।

धातकीखण्डद्वीपमें नन्दनवनसे पांचसौ योजनमात्र नीचे जानेपर भद्रशाल नामक वन है ॥ २५८७ ॥ ५०० ।

इनमेंसे प्रत्येक भद्रशालवनकी पूर्वापर लंबाई एक लाख सात हजार आठसौ उन्यासी योजनमात्र है ॥ २५८८ ॥ १०७८७९ ।

मन्दरपर्वतोंके उत्तर-दक्षिण भागोंमें भद्रशालवनोंका जितना विस्तार है, उसके प्रमाणका उपदेश नष्ट हो गया है ॥ २५८९ ॥

---

१ द ब सममदिण्णाणं. २ द ब °चूलिय. ३ ब दोण्णि पि. ४ द ब एदंपि. ५ द ब वणमेत्तं.

बारससयपणुवीसं अट्ठासीदीविहत्तउणसीदी । जोयणया विक्खंभा एक्केक्के भद्दसालवणे ॥ २५९०

१२२५ । ७९ ।

८८

सत्तदुदुछक्कपंचतिअंकाण कमेण होइ जोयणया । अब्भंतरभागट्ठियगयदंताणं चउण्हं ॥ २५९१

३५६२२७ ।

णवपणवीसंणवछप्पणजोयणया उभयमेरुबाहिरए । चउगयदंतणगाणं दीहत्तं होदि पत्तेक्कं ॥ २५९२

५६९२५९ ।

णवजोयणलक्खाणिं पणुवीससहस्सचउसयाणिं पि । छासीदी धणुपट्ठं दोकुरवे धादईसंडे ॥ २५९३

९२५४८६ ।

दो जोयणलक्खाणिं तेवीससहस्सयाणि एक्कसयं । अट्ठावण्णा जीवा कुरवे तह धादईसंडे ॥ २५९४

२२३१५८ ।

तियलक्खा छासट्ठी सहस्सया छस्सयाणि सीदी य । जोयणया रिजुबाणो णादव्वो तम्मि दीवम्मि ॥ २५९५

३६६६८० ।

चउजोयणलक्खाणिं छस्सयजुत्ताणि होंति तेत्तीसं । दोमंदरकुरवाणं पत्तेक्कं वट्टविक्खंभो ॥ २५९६

४००६३३ ।

प्रत्येक भद्रशालवनका विस्तार बारहसौ पच्चीस योजन और अठासीसे विभक्त उन्यासी भागमात्र है ॥ २५९० ॥ १२२५$\frac{७९}{८८}$ ।

अभ्यन्तरभागमें स्थित चारों गजदन्तोंकी लंबाई सात, दो, दो, छह, पांच और तीन, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण है ॥ २५९१ ॥ ३५६२२७ ।

नौ, पच्चीस, नौ, छह और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन-प्रमाण उभय मेरुओंके बाह्यभागमें चारों गजदन्त पर्वतोंमेंसे प्रत्येककी लंबाई है ॥ २५९२ ॥

५६९२५९ ।

धातकीखण्डद्वीपमें दोनों कुरुओंका धनुःपृष्ठ नौ लाख पच्चीस हजार चारसौ छ्यासी योजनमात्र है ॥ २५९३ ॥ ९२५४८६ ।

धातकीखण्डद्वीपमें दोनों कुरुओंकी जीवा दो लाख तेईस हजार एकसौ अट्ठावन योजनप्रमाण है ॥ २५९४ ॥ २२३१५८ ।

उस द्वीपमें तीन लाख छ्यासठ हजार छहसौ अस्सी योजनप्रमाण कुरुक्षेत्रोंका ऋजुबाण जानना चाहिये ॥ २५९५ ॥ ३६६६८० ।

दोनों मन्दरपर्वतोंके कुरुक्षेत्रोंमेंसे प्रत्येकका वृत्तविस्तार चार लाख छहसौ तेतीस योजनप्रमाण है ॥ २५९६ ॥ ४००६३३ ।

---

१ द चउण्णाणं.

जीवाविक्खंभाणं वग्गविसेसस्स होदि जं मूलं । विक्खंभजुदं अद्धियं रिजुबाणो धादईसंडे ॥ २५९७
इसुवग्गं चउगुणिदं जीववग्गम्मि पक्खिवेज्ज तदो । चउगुणिदइसुविहत्तं जं लद्धं वट्टबासो सो ॥ २५९८
सत्तणवअट्ठसगणवतियाणि अंसाणि होंति बाणवदी । वंकेणेसुपमाणं धादगिसंडम्मि दीवम्मि ॥ २५९९

३९७८९७ । ९२ ।
२१२

उत्तरदेवकुरूसुं खेत्तेसुं तत्थ धादईरुक्खा । खेट्ठंति य गुणणामो तेण पुढं धादईसंडो[5] ॥ २६००
धादइतरूण ताणं परिवारदुमा भवंति एदस्सिं । दीवम्मि पंचलक्खा सट्ठिसहस्साणि चउसयासीदी ॥ २६०१

५६०४८० ।

पियदंसणो पभासो अहिवइदेवा वसंति तेसु दुवे । सम्मत्तरयणजुत्ता वरभूसणभूसिदायारा ॥ २६०२

जीवा और विष्कंभके वर्गोंके विशेषका, अर्थात् जीवाके वर्गको वृत्तविस्तारके वर्गमेंसे घटाकर जो शेष रहे उसका वर्गमूल निकाले, पश्चात् उसमें विस्तारप्रमाणको मिलाकर आधा करनेपर धातकीखण्डद्वीपमें ऋजुबाणका प्रमाण आता है ॥ २५९७ ॥

$$\frac{\sqrt{४००६३३^२ - २२३१५८^२} + ४००६३३}{२} = ३६६६८० \text{ कुरुक्षेत्रका ऋजुबाण।}$$

बाणके वर्गको चौगुणा करके जीवाके वर्गमें मिला दे। फिर उसमें चौगुणे बाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना वृत्त क्षेत्रका विस्तार होता है ॥ २५९८ ॥

$$(३६६६८०^२ \times ४ + २२३१५८^२) \div (३६६६८० \times ४) = ४००६३२\frac{३५}{३६}\frac{३६}{६८}\frac{६८}{८१}$$ अर्थात् कुछ कम ४००६३३ यो. ।

सात, नौ, आठ, सात, नौ और तीन, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बानबै भाग अधिक धातकीखण्डद्वीपमें कुरुक्षेत्रके वक्र बाणका प्रमाण है ॥ २५९९ ॥

विदेहका मध्यविस्तार $८०५१९४\frac{१८४}{२१२}$; मेरुविस्तार ९४००; $८०५१९४\frac{१८४}{२१२} - ९४००) \div २ = ३९७८९७\frac{९२}{२१२}$ प्रत्येक कुरुक्षेत्रका विस्तार।

धातकीखण्डद्वीपके भीतर उत्तरकुरु और देवकुरु क्षेत्रोंमें धातकीवृक्ष स्थित हैं, इसी कारण इस द्वीपका 'धातकीखण्ड' यह सार्थक नाम है ॥ २६०० ॥

इस द्वीपमें उन धातकीवृक्षोंके परिवारवृक्ष पांच लाख साठ हजार चारसौ अस्सी हैं ॥ २६०१ ॥ ५६०४८० ।

उन वृक्षोंपर सम्यक्त्वरूपी रत्नसे संयुक्त और उत्तम भूषणोंसे भूषित आकृतिको धारण करनेवाले प्रियदर्शन और प्रभास नामक दो अधिपति देव निवास करते हैं ॥ २६०२ ॥

१ द अधिय. २ द ब विहितं. ३ द ब चक्केणोपमाणं. ४ ब कुरूसुं तत्थ. ५ द ब °संडे. ६ द पभाते.

आदरअणादराणं परिवारादो भवंति एदाणं । दुगुणा परिवारसुरा पुव्वोदिदवण्णणेहिं जुदा ॥ २६०३
गिरिभद्दसालविजया वक्खारविभंगसरिसुरारण्णा । पुव्वावरवित्थारा वत्तव्वा धादईसंडे ॥ २६०४
एदेसुं पत्तेकं मंदरसेलाण धरणिपट्ठम्मि । चउणउदिसयपमाणा जोयणया होदि विक्खंभो ॥ २६०५

९४०० ।

एक्कं जोयणलक्खं सत्तसहस्सा य अट्ठसयजुत्ता । णवहत्तरिया भणिदा विक्खंभो भद्दसालस्स ॥ २६०६

१०७८७९ ।

छण्णवदिजोयणसया तीदुत्तरट्ठहिदा य तिकलाओ । सव्वाणं पत्तेकं विजयाणं होदि विक्खंभो ॥ २६०७

९६०३ । ३ ।
८

जोयणसहस्समेक्कं वक्खारगिरीण होदि वित्थारो । अड्ढाइजसयाणिं विभंगसरियाणं विक्खंभो ॥ २६०८

१००० । २५० ।

अट्ठावण्णसयाणिं चउदालजुदाणि जोयणा रुंदं । कहिदं देवारण्णे भूदारण्णे वि पत्तेकं ॥ २६०९

५८४४ ।

विजयावक्खाराणं विभंगणईदेवरण्णभद्दसालवणं । णियणियफलेण गुणिदा कादव्वा मेरुफलजुत्ता ॥ २६१०

इन दोनों देवोंके परिवारदेव आदर और अनादर देवोंके परिवारदेवोंकी अपेक्षा दुगुणे हैं जो पूर्वोक्त वर्णनसे संयुक्त हैं ॥ २६०३ ॥

अब धातकीखण्डमें गिरि (मेरु), भद्रशाल, विजय, वक्षार, विभंगनदी और देवारण्य, इनका पूर्वापरविस्तार कहना चाहिये ॥ २६०४ ॥

इनमेंसे प्रत्येक मेरुका विस्तार पृथिवीके पृष्ठभागपर चौरानबैसौ योजनप्रमाण है ॥ २६०५ ॥

९४०० ।

भद्रशालका विस्तार एक लाख सात हजार आठसौ उन्यासी योजनमात्र कहा गया है ॥ २६०६ ॥ १०७८७९ ।

छयानबैसौ तीन योजन और आठसे भाजित तीन भागमात्र सब विजयोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार है ॥ २६०७ ॥ ९६०३$\frac{३}{८}$ ।

एक हजार योजनप्रमाण वक्षारपर्वतोंका और अढ़ाईसौ योजनप्रमाण विभंगनदियोंका विस्तार है ॥ २६०८ ॥ वक्षार १००० । विभंगनदी २५० ।

देवारण्य और भूतारण्यमेंसे प्रत्येकका विस्तार अट्ठावनसौ चवालीस योजनप्रमाण कहा गया है ॥ २६०९ ॥ ५८४४ ।

विजय, वक्षार, विभंगनदी, देवारण्य और भद्रशालवनको [इष्टसे हीन] अपने अपने फलसे गुणा करके मेरुके फलसे युक्त करनेपर जो संख्या उत्पन्न हो उसे इस द्वीपके विस्तारमेंसे कम

---

१ द सरिसरोरण्णा, ब सरिसुरोरण्णा. २ द तिउत्तरायाहिदा. ३ द ब समवाओ. ४ द ब °सरियाद.

तं चिय दीवव्वासे सोधिय एदम्मि होदि जं सेसं । णियणियसंखाहरिदं णियणियवासाणि जायंते ॥ २६११
सोधसु वित्थारादो छचउतियछक्कचउदुर्यककमे । सेसं सोलसभजिदं विजयं पडि होदि वित्थारं ॥ २६१२
२४६३४६ ।
वित्थारादो सोधसु अंबरणभगयणदोण्णिणवयतियं । अवसेसं अट्ठहिदं वक्खारगगाण वित्थारो ॥ २६१३
३९२००० ।
चउछक्खादो सोधसु अंबरणभछक्कगयणणवयतियं[1] । अंककमे अवसेसं मेरुगिरिंदस्स परिमाणं ॥ २६१४
३९०६००[2] ।
दुगुणम्मि भद्दसाले मंदरसेलस्स खिवसु विक्खंभं । मज्झिमसूईसहिदं सस्सूई कच्छगंधमालिणिए ॥ २६१५
एक्कारसलक्खाणिं पणुवीससहस्स इगिसयाणिं पि । अडवण्ण जोयणाणिं कच्छाए[3] सा हवे सूई ॥ २६१६
११२५१५८ ।

करके शेषमें अपनी अपनी संख्याका भाग देनेपर अपना अपना विस्तारप्रमाण होता है ॥ २६१०-२६११ ॥

छह, चार, तीन, छह, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे उत्पन्न हुई संख्याको धातकीखण्डके विस्तारमेंसे कम करके शेषमें सोलहका भाग देनेपर प्रत्येक विजयका विस्तार होता है ॥२६१२॥ वक्षार यो. ८००० + विभंग १५०० + देवारण्य ११६८८ + भद्रशाल २१५७५८ + मेरु ९४०० = २४६३४६; (४००००० − २४६३४६) ÷ १६ = ९६०३$\frac{३}{८}$ यो. ।

शून्य, शून्य, शून्य, दो, नौ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे उत्पन्न हुई संख्याको धातकीखण्डके विस्तारमेंसे कम करके शेषमें आठका भाग देनेपर वक्षारपर्वतोंका विस्तार होत है ॥ २६१३ ॥ ३९२००० ।

४००००० − (१५३६५४ + १५०० + ११६८८ + २१५७५८ + ९४००) ÷ ८ = १००० यो. ।

शून्य, शून्य, छह, शून्य, नौ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे उत्पन्न हुई संख्याको चार लाखमेंसे कम करनेपर जो शेष रहे उतने योजनप्रमाण मेरुका विस्तार है ॥ २६१४ ॥ ३९०६००।

४००००० − (१५३६५४ + ८००० + १५०० + ११६८८ + २१५७५८) = ९४०० यो. ।

दुगुणे भद्रशालवनके विस्तारमें मन्दरपर्वतके विस्तारको मिलाकर उसमें मध्यम सूचीको मिला देनेपर कच्छा और गन्धमालिनीदेशकी सूचीका प्रमाण आता है ॥ २६१५ ॥

ग्यारह लाख पच्चीस हजार एकसौ अट्ठावन योजनप्रमाण कच्छादेशकी सूची होती है ॥ २६१६ ॥ १०७८७९ × २ + ९४०० + ९००००० = ११२५१५८ ।

१ द ब अंबरणभगयणदोण्णिणवयतियं. २ ब ३९२०००. ३ द ब कच्छाइं.

विक्खंभस्स य वग्गो दसगुणिदो करणि वट्टए परिही । दुछणभअडपणपणतियअंकक्कमे तीए परिमाणं ॥२६१७

$\sqrt{११३५१५८^२ \times १०} = ३५५८०६२$ ।

अट्ठत्तरिं सहस्सा बादालजुदा य जोयणट्ठसया । एक्कं लक्खं चोद्दसगिरिरुद्धक्खेत्तपरिमाणं ॥ २६१८

१७८८४२ ।

सेलविसुद्धा परिही चउसट्ठीए गुणिज्ज अवसेसं । दोसयबारसभजिदे जं लद्धं तं विदेहदीहत्तं ॥ २६१९

दसजोयणलक्खाणिं विंससहस्सं सयं पि इगिदालं । अडसीदिजुदसयंसा विदेहदीहत्तपरिमाणं ॥ २६२०

$(३५५८०६२ - १७८८४२) \times ६४ \div २१२ = १०२०१४१\frac{१८८}{२१२}$ ।

सीदाणईए वासं सहस्समेक्कं च तम्मि अवणेज्जे । अवसेसद्धपमाणं दीहत्तं कच्छविजयस्स ॥ २६२१

१००० ।

पणजोयणलक्खाणिं पणणउदिसयाणि सत्तरिं चादो[५] । दुसयकलाओ रुंदा वंकसरूवेण कच्छस्स ॥ २६२२

$\left(१०२०१४१\frac{१८८}{२१२} - १०००\right) \div २ = ५०९५७०\frac{२००}{२१२}$ ।

विजयादिवासवग्गो वक्खारविभंगदेवरण्णाणं । दसगुणिदो जं मूलं सो[६] पुह बत्तीसगुणिदस्स ॥ २६२३

विस्तारके वर्गको दशसे गुणा करके उसका वर्गमूल निकालनेपर परिधिका प्रमाण होता है। यहां कच्छादेशसम्बन्धी सूचीकी परिधिका प्रमाण अंकक्रमसे दो, छह, शून्य, आठ, पांच, पांच, और तीन अंकरूप है ॥ २६१७ ॥ $\sqrt{११३५१५८^२ \times १०} = ३५५८०६२$ ।

चौदह पर्वतोंसे रोके गये क्षेत्रका प्रमाण एक लाख अठत्तर हजार आठसौ ब्यालीस योजनमात्र है ॥ २६१८ ॥ १७८८४२ ।

उपर्युक्त परिधिप्रमाणमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्रको कम करदेनेपर जो शेष रहे उसको चौंसठसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी विदेहक्षेत्रकी लंबाई है ॥ २६१९ ॥

वह विदेहक्षेत्रकी लंबाई दश लाख बीस हजार एकसौ इकतालीस योजन और एक योजनके दौसौ बारह भागोंमेंसे एकसौ अठासी भागप्रमाण है ॥ २६२० ॥

$(३५५८०६२ - १७८८४२) \times ६४ \div २१२ = १०२०१४१\frac{१८८}{२१२}$ ।

उसमेंसे एक हजार योजनप्रमाण सीतानदीके विस्तारको कम करदेनेपर जो शेष रहे उसके अर्धभागप्रमाण कच्छादेशकी लंबाई है ॥ २६२१ ॥ १००० ।

पांच लाख पंचानबैसौ सत्तर योजन और दोसौ भाग अधिक कच्छादेशका तिर्यग्विस्तार है ॥ २६२२ ॥ $\left(१०२०१४१\frac{१८८}{२१२} - १०००\right) \div २ = ५०९५७०\frac{२००}{२१२}$ ।

कच्छादिक विजय, वक्षार, विभंगनदी और देवारण्य, इनके विस्तारके वर्गको दशसे गुणा करके उसका जो वर्गमूल हो, उसको पृथक् बत्तीससे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमें दोसौ बारहका

---

१ द ब गुणिज्जु. २ द ब विंससहस्ससयं पि होदि इगिदालं. ३ द ब वासं मेक्कं च तम्मि. ४ द अवणेज्ज. ५ द ब सत्तरिसादो. ६ द मूलं वपुसा, ब मूलं सा.

बारसजुददुसएहिं भजिदूणं कच्छलंदमेलिविदं । तत्थ णियणियट्ठाणे विदेहअद्धस्स विक्खंभो ॥ २६२४

चत्तारि सहस्साणिं पणसयचउसीदि जोयणाणं पि । परिवड्ढी विजयाणं णादव्वा धादईसंडे ॥ २६२५

४५८४ ।

चत्तारि जोयणाणं सयाणि सत्तत्तरीय जुत्ताणिं । सट्ठि कलाओ तस्सिं वक्खारगिरीण परिवड्ढी ॥ २६२६

४७७ । ६० / २१२

एक्कोणवीससहिदं एक्कसयं जोयणाणि भागा य । बावण्णा ठाणेसुं विभंगसरियाण परिवड्ढी ॥ २६२७

११९ । ५२ / २१२

दुसहस्सं सत्तसयं उणणवदी जोयणाणि अंसा य । बाणवदी ठाणेसुं देवारण्णस्स संवड्ढी ॥ २६२८[3]

२७८९ । ९२ / २१२

खेत्तादिवड्ढिमाणं आदीदो वाढिऊणं मज्झिल्ले । तम्हा अंतिमदीहे वड्ढिपमाणं च जाणिज्जं[5] ॥ २६२९

वि ४५८४ । व ४७७ । ६० / २१२ | विभं ११९ । ५२ / २१२ | दे २७८९ । ९२ / २१२

खेत्तादीणं अंतिमदीहपमाणं च होदि जं जत्थ । तं जि पमाणं अग्गिमवक्खारादीसु आदिल्लं ॥ २६३०

भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे कच्छादेशके विस्तारमें मिला देनेपर उत्पन्न राशिप्रमाण अपने अपने स्थानमें अर्धविदेहका विस्तार होता है ॥ २६२३-२६२४ ॥

धातकीखण्डमें चार हजार पांचसौ चौरासी योजनप्रमाण क्षेत्रोंकी वृद्धि जानना चाहिये ॥ २६२५ ॥ $\sqrt{(९६०३\frac{३}{४})^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ४५८४$ ।

इस द्वीपमें वक्षारपर्वतोंकी वृद्धिका प्रमाण चारसौ सतत्तर योजन और साठ कला अधिक है ॥ २६२६ ॥ $\sqrt{१०००^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ४७७\frac{६०}{२१२}$ ।

एकसौ उन्नीस योजन और बावन भागमात्र विभंगनदियोंके स्थानोंमें वृद्धि होती है ॥ २६२७ ॥ $\sqrt{२५०^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ११९\frac{५२}{२१२}$ ।

देवारण्यके स्थानोंमें वृद्धिका प्रमाण दो हजार सातसौ नवासी योजन और बानवे भाग अधिक है ॥ २६२८ ॥ $\sqrt{५८४४^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = २७८९\frac{९२}{२१२}$ ।

क्षेत्रादिकोंकी आदिम लंबाईमें मिलाकर मध्यम लंबाईका प्रमाण लानेके लिये तथा मध्यम लंम्बाईमें मिलाकर अन्तिम लंबाईको लानेके लिये यह वृद्धिप्रमाण जानना चाहिये ॥ २६२९ ॥

विजय ४५८४ । वक्षार ४७७$\frac{६०}{२१२}$ । विभंग ११९$\frac{५२}{२१२}$ । देवारण्य २७८९$\frac{९२}{२१२}$ ।

क्षेत्रादिकोंकी अन्तिम लंबाईका प्रमाण जहां जो हो, वही उससे आगेके वक्षारादिककी आदिम लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २६३० ॥

१ द ब तट्ठ, ब तट्ठा. २ द ब परिवड्ढिय. ३ द-प्रतौ इतो षोडश गाथा अन्यत्र लिखिताः. ४ द ब वाढिऊण. ५ द ब चाढिजं.

चउपणइगिचउइगिपण जोयण भागा तहेव दोण्णि सया। कच्छाए गंधमालिणिखेत्तस्स य मज्झिमं दीहं॥२६३१

५१४१५४। २००
२१२

अडतियसगट्ठइगिपण भागा सय दोण्णि विजयचरिमं च। दोण्हं गिरीण आदी दीहत्तं ताण णिद्दिट्ठं ॥२६३२

५१८७३८। २००
२१२

छक्केक्कदुणवइगिपण भागा अडदाल मज्झदीहत्तं। चित्तसुरादियकूडंमालंताणं गिरीणं च ॥ २६३३

५१९२१६। ४८
२१२

तियणवछक्कं णवइगिपण अंसा अडअहियएक्कसयं। दोण्हं गिरीण अंतिमदीहत्तं विजयआदीए ॥ २६३४

५१९६९३। १०८
२१२

सगसत्तदुचउदुगपण अंसा ता एव मज्झिमं दीहं। दोण्हं सुकच्छगंधिलविजयाणं ताण होदि त्ति ॥ २६३५

५२४२७७। १०८
२१२

चार, पांच, एक, चार, एक और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसौ भाग अधिक कच्छा और गन्धमालिनी देशकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६३१ ॥ $५०९५७०\frac{२००}{२१२} + ४५८४ = ५१४१५४\frac{२००}{२१२}$।

आठ, तीन, सात, आठ, एक और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसौ भाग अधिक कच्छाविजयकी अन्तिम तथा उन दोनों पर्वतोंकी आदिम लंबाई कही गई है ॥ २६३२ ॥ $५१४१५४\frac{२००}{२१२} + ४५८४ = ५१८७३८\frac{२००}{२१२}$।

छह, एक, दो, नौ, एक और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अड़तालीस भाग अधिक चित्रकूट और सुरमाल पर्वतोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६३३ ॥

$$५१८७३८\frac{२००}{२१२} + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५१९२१६\frac{४८}{२१२}।$$

तीन, नौ, छह, नौ, एक और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ आठ भाग अधिक उक्त दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा सुकच्छा और गंधिला देशकी आदिम लंबाई है ॥ २६३४ ॥ $५१९२१६\frac{४८}{२१२} + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५१९६९३\frac{१०८}{२१२}$।

सात, सात, दो, चार, दो और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ आठ भाग अधिक सुकच्छा और गन्धिला नामक उन दोनों क्षेत्रोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६३५ ॥ $५१९६९३\frac{१०८}{२१२} + ४५८४ = ५२४२७७\frac{१०८}{२१२}$।

इगिछट्ठअट्ठदुगपणसंखा भागा अट्ठुत्तरं च सयं । विजएसु दोसु अंतिमदीहत्तं दोविभंगादी ॥ २६३६

५२८८६१ । १०८ | २१२ |

णभअट्ठणवअट्ठदुगपण अंसा सट्ठीहि इक्कसयमेत्ता । हदवदीउम्मिमालिणिणईण मज्झिमआयामं ॥ २६३७

५२८९८० । १६० | २१२ |

सुण्णणभइक्कणवदुगपणसंखा जोयणाइं सरिदाणं । दोण्हं अंतिमदीहं [1]आदिल्लं अग्गविजयाणं ॥ २६३८

५२९१०० । ०० ।

चउअट्ठछक्कतितिपण भागट्ठाणेसु सुण्णयं जाण । महकच्छसुगंधाणं विजयाणं मज्झिमायामं ॥ २६३९

५३३६८४ । ०० ।

अट्ठछदुअट्ठतियपणजोयणया सव्वदंसिणा भणिया । दोसु वि विजयाणंतिमदीहं वक्खारआदिल्लं ॥ २६४०

५३८२६८ । ०० ।

एक, छह, आठ, आठ, दो और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ आठ भागप्रमाण उक्त दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा द्रहवती और ऊर्मिमालिनी इन दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६३६ ॥

$५२४२७७\frac{१०८}{२१२} + ४५८४ = ५२८८६१\frac{१०८}{२१२}$ ।

शून्य, आठ, नौ, आठ, दो और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भागप्रमाण द्रहवती और ऊर्मिमालिनी नामक विभंगनदियोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६३७ ॥ $५२८८६१\frac{१०८}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५२८९८०\frac{१६०}{२१२}$ ।

शून्य, शून्य, एक, नौ, दो और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण उक्त दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा महाकच्छा और सुगन्धा नामक अग्रिम दोनों देशोंकी आदिम लम्बाई है ॥ २६३८ ॥ $५२८९८०\frac{१६०}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५२९१००$ ।

चार, आठ, छह, तीन, तीन और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजनप्रमाण महाकच्छा और सुगन्धा देशोंकी मध्यम लंबाई है। यहां भागस्थानोंमें शून्य समझना चाहिये ॥ २६३९ ॥ ५२९१०० + ४५८४ = ५३३६८४ ।

उपर्युक्त दोनों देशोंकी अन्तिम और नलिनकूट व नागपर्वतकी आदिम लंबाई सर्वज्ञदेवने आठ, छह, दो, आठ, तीन, और पांच, इन अंकोंसे निर्मित संख्यारूप योजनप्रमाण बतलाई है ॥ २६४० ॥ ५३३६८४ + ४५८४ = ५३८२६८ ।

---

१ ब अट्ठुत्तरं. २ ब आदिल्लं आयाम वि°.

पणचउसगट्ठतियपणजोयणया होंति सट्ठि भागा य । णलिणादिकूडणागगिरीण मज्झेसु दीहत्तं ॥ २६४१

५३८२६८ । ६०
२१२

दुगदुगदुगणवतियपण भागा वीसुत्तरं च इक्कसयं । दोवक्खाराणंतिमदीहं विजयाण आदिल्लं[1] ॥ २६४२

५३९२२२ । १२०
२१२

छक्कणभअट्ठतियचउपण अंसा पुव्वभासिदा णेया । कच्छकवदिगंधासुं विजयेसुं मज्झिमायामं ॥ २६४३

५४३८०६ । १२०
२१२

णभणवतियअडचउपणं[2] पुव्वुत्तंसाणि दोसु विजएसुं । गहवदिए फेणमालिणि अंतिमआदिल्लदीहत्तं ॥ २६४४

५४८३९० । १२०
२१२

णवणभपणअडचउपण भागा बावत्तरीसदं दीहं । मज्झिल्लं गहवदिए तह चेव य फेणमालिणिए ॥ २६४५

५४८५०९ । १७२
२१२

पांच, चार, सात, आठ, तीन और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और साठ भागप्रमाण नलिनकूट और नागपर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥ २६४१ ॥

$$५३८२६८ + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५३८७४५\frac{६०}{२१२}।$$

दो, दो, दो, नौ, तीन और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बीस भागप्रमाण उक्त दोनों वक्षारपर्वतोंकी अन्तिम तथा कच्छकावती और गंधा देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६४२ ॥ $५३८७४५ + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५३९२२२\frac{१२०}{२१२}$ ।

छह, शून्य, आठ, तीन, चार और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और पूर्वमें कहे हुए एकसौ बीस भाग अधिक कच्छकावती और गंधा देशकी मध्यम लंबाई है ॥ २६४३ ॥ $५३९२२२\frac{१२०}{२१२} + ४५१४ = ५४३८०६\frac{१२०}{२१२}$ ।

शून्य, नौ, तीन, आठ, चार और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बीस भाग अधिक उक्त दोनों देशोंकी अन्तिम तथा ग्रहवती और फेनमालिनी नामक विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६४४ ॥

$$५४३८०६ + ४५८४ = ५४८३९०\frac{१२०}{२१२}।$$

नौ, शून्य, पांच, आठ, चार और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ बहत्तर भाग अधिक ग्रहवती और फेनमालिनी नदियोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६४५ ॥

$$५४८३९०\frac{१२०}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५४८५०९\frac{१७२}{२१२}।$$

---

१ द ब आदिस्स. २ द ब °तियअट्ठचउपण.

णवदोछअट्ठचउपण अंसा बारस विभंगसरियाणं । अंतिल्लयदीहत्तं आदी आवत्तवप्पकावदिए ॥ २६४६

५४८६२९ । १२ | २१२ |

तियइगिदुतिपणपणयं अंककमे जोयणाणि अंसा य । बारसमेत्तं मज्झिमदीहं आवत्तवप्पकावदिए ॥ २६४७

५५३२१३ । १२ | २१२ |

सगणवसगसगपणपण अंसा ता एत्थ दोसु विजयाणं । अंतिल्लयदीहत्तं आदीअं पउमसूरवरे ॥ २६४८

५५७७९७ । १२ | २१२ |

चउसत्तदोण्णिअट्ठयपणपणअंककमेण अंसाइं । बावत्तरि दीहत्तं मज्झिल्लं पउमसूरवरे[1] ॥ २६४९

५५८२७४ । ७२ | २१२ |

इगिपणसगअडपणपण भागा बत्तीसअधियसय दीहं । दोसु गिरीसुं अंतिल्लादिल्लं दोसु विजयाणं ॥ २६५०

५५८७५१ । १३२ | २१२ |

.....

नौ, दो, छह, आठ, चार और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बारह भागमात्र उक्त दोनों विभंगनदियोंकी अन्तिम तथा आवर्ता और वप्रकावती देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६४६ ॥ $५४८५०९\frac{१७२}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५४८६२९\frac{१२}{२१२}$ ।

तीन, एक, दो, तीन, पांच और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बारह भागमात्र अधिक आवर्ता और वप्रकावती देशोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६४७ ॥

$$५४८६२९\frac{१२}{२१२} + ४५८४ = ५५३२१३\frac{१२}{२१२} ।$$

सात, नौ, सात, सात, पांच और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बारह भाग अधिक उक्त दोनों देशोंकी अन्तिम लंबाई तथा यही पद्मकूट और सूर्य-पर्वतकी आदिम लंबाई है ॥ २६४८ ॥ $५५३२१३\frac{१२}{२१२} + ४५८४ = ५५७७९७\frac{१२}{२१२} ।$

चार, सात, दो, आठ, पांच और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बहत्तर भाग अधिक पद्मकूट और सूर्यपर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥ २६४९ ॥

$$५५७७९७\frac{१२}{२१२} + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५५८२७४\frac{७२}{२१२} ।$$

एक, पांच, सात, आठ, पांच और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बत्तीस भाग अधिक उक्त दोनों वक्षारपर्वतोंकी अन्तिम तथा लांगलावर्ता और महावप्रा देशोंकी आदिम लम्बाई है ॥ २६५० ॥

$$५५८२७४\frac{७२}{२१२} + ४७७\frac{६०}{२१२} = ५५८७५१\frac{१३२}{२१२} ।$$

.....

१ द्र त प्रतौ पाठः. २ द्र ब णलिणणागवरे. ३ द्र ब मज्झंअण्णलिणकूडणागवरे.

पणतिलितियछप्पणयं अंसा ता एव लंगलावत्ते । महवप्पे[1] विजयाए पत्तेक्कं मज्झिमं दीहं ॥ २६५१

५६३३३५ । १३२ / २१२

णवइगिणवसगछप्पण भागा ता एव दोसु विजयाणं । अंतिल्लयदीहत्तं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं[2] ॥ २६५२

५६७९१९ । १३२ / २१२

अडतियणभअडछप्पण अंसा चउसीदिअधियसयमेत्तं । गंभीरमालिणीए मज्झिल्लं पंकगावदिए ॥ २६५३

५६८०३८ । १८४ / २१२

अडपणइगिअडछप्पण अंसा चउवीसमेत्तदीहत्तं । दोण्णं णदीण अंतं आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥ २६५४

५६८१५८ । २४ / २१२

दुचउसगदोण्णिसगपण अंककमे अंसमेव पुव्वुत्तं[3] । मज्झिल्लयदीहत्तं पोक्खलविजए सुवप्पाए ॥ २६५५

५७२७४२ । २४ / २१२

पांच, तीन, तीन, तीन, छह और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बत्तीस भाग अधिक लांगलावर्ता व महावप्रा देशोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६५१ ॥ $५५८७५१\frac{१३२}{२१२} + ४५८४ = ५६३३३५\frac{१३२}{२१२}$ ।

नौ, एक, नौ, सात, छह, और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बत्तीस भाग अधिक उक्त दोनों देशोंकी अन्तिम तथा गंभीरमालिनी और पंकवती नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६५२ ॥

$५६३३३५\frac{१३२}{२१२} + ४५८४ = ५६७९१९\frac{१३२}{२१२}$ ।

आठ, तीन, शून्य, आठ, छह और पांच, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक गंभीरमालिनी व पंकवती नदियोंकी मध्यम लंबाई है ॥२६५३॥

$५६७९१९\frac{१३२}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५६८०३८\frac{१८४}{२१२}$ ।

आठ, पांच, एक, आठ, छह और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौबीस भागमात्र अधिक उक्त दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा पुष्कला एवं सुवप्रा विजयकी आदिम लंबाई है ॥ २६५४ ॥ $५६८०३८\frac{१८४}{२१२} + ११९\frac{५२}{२१२} = ५६८१५८\frac{२४}{२१२}$ ।

दो, चार, सात, दो, सात और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त चौबीस भाग अधिक पुष्कला व सुवप्रा विजयकी मध्यम लंबाई है ॥ २६५५ ॥

$५६८१५८\frac{२४}{२१२} + ४५८४ = ५७२७४२\frac{२४}{२१२}$ ।

---

१ द तहवप्पे. २ द ब संपत्तेकं मज्झिमदीहत्तं. ३ द सरीणं, ब सरीरं. ४ द पुव्वंता, ब पुव्वुत्ता.

छहोत्तिपसगसगपण अंसा ता एव अंतदीहत्तं । कमसो दोविजयाणं आदिल्लं एक्कसेलचंदणगे ॥ २६५६

५७७३२६ । २४
२१२

तियणभअडसगसगपण भागा चउसीदिमेत्त पत्तेक्कं । मज्झिल्लयदीहत्तं होदि पुढं एक्कसेलचंदणगे ॥२६५७

५७७८०३ । ८४
२१२

णभअडदुअट्ठसगपण अंसा बारसकदी हु अवसाणे। दीहं दोसु गिरीणं[1] आदी वप्पाए पोक्खलावदिए ॥२६५८

५७८२८० । १४४
२१२

चउछक्कअडदुअडपण कमसो अंका त एव भागा य । मज्झिल्लयदीहत्तं विजयाणं दोसु णादव्वं ॥ २६५९[2]

५८२८६४ । १४४
२१२

अडचउचउसगअडपण अंसा ते चेव पोक्खलावदिए । वप्पाए अंतदीहं आदिल्लं भूददेवरण्णाणं ॥ २६६०

५८७४४८ । १४४
२१२

छह, दो, तीन, सात, सात, और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौबीस भाग ही अधिक क्रमसे दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा एकशैल व चन्द्रनग नामक वक्षार-पर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६५६ ॥ ५७२७४२$\frac{२४}{२१२}$ + ४५८४ = ५७७३२६$\frac{२४}{२१२}$ ।

तीन, शून्य, आठ, सात, सात और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और चौरासी भागमात्र अधिक एकशैल व चन्द्रनग नामक वक्षारपर्वतोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६५७ ॥ ५७७३२६$\frac{२४}{२१२}$ + ४७७$\frac{६०}{२१२}$ = ५७७८०३$\frac{८४}{२१२}$ ।

शून्य, आठ, दो, आठ, सात और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बारहके वर्गप्रमाण अर्थात् एकसौ चवालीस भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा वप्रा एवं पुष्कलावती क्षेत्रकी आदिम लंबाई है ॥ २६५८ ॥

५७७८०३$\frac{८४}{२१२}$ + ४७७$\frac{६०}{२१२}$ = ५७८२८०$\frac{१४४}{२१२}$ ।

चार, छह, आठ, दो, आठ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चवालीस भाग ही अधिक उक्त दोनों देशोंकी मध्यम लंबाई जानना चाहिये ॥ २६५९ ॥ ५७८२८०$\frac{१४४}{२१२}$ + ४५८४ = ५८२८६४$\frac{१४४}{२१२}$ ।

आठ, चार, चार, सात, आठ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चवालीस भाग अधिक पुष्कलावती व वप्रा विजयकी अन्तिम तथा भूतारण्य व देवारण्यकी आदिम लंबाई है ॥ २६६० ॥ ५८२८६४$\frac{१४४}{२१२}$ + ४५८४ = ५८७४४८$\frac{१४४}{२१२}$ ।

१ द ब दीहत्तोसुं गिरीणं. २ एसा गाथा द-प्रतौ नास्ति.

अट्ठतियदोण्णिअंबरणवपणअंकक्कमेण चउवीसा । भागा मज्झिमदीहं पत्तेक्कं देवभूदरण्णाणं ॥ २६६१

५९०२३८ । २४ / २१२

सगदोणभतियणवपणकमसो अंका तहेव भागा य । सोलुत्तरसय अंतिमदीहं सुरभूदरण्णाणं[1] ॥ २६६२[2]

५९३०२७ । ११६ / २१२

कच्छादिप्पमुहाणं तिवियप्पं सण्णिरूविदं सव्वं । विजयाण मंगलावदिपमुहाण कमेण वत्तव्वं ॥ २६६३

कच्छादिसु विजयाणं आदिममज्झिमचरिमदीहत्ते । विजयद्धरुंदमवणिय अद्धकदे तस्स तस्स दीहत्तं ॥ २६६४

सोहसु मज्झिमसूई मेरुगिरिं दुगुणभद्दसालवणं । सा सूई पम्मादीपरियंतं मंगलावदिए ॥ २६६५

दोचउअडचउसगछज्जोयणआणिं कमेण तं वग्गं । दसगुणमूलं परिही अडतियणभचउतिएक्कदुगं ॥ २६६६

सूई ६७४८४२ । परि २१३४०३८ ।

आठ, तीन, दो, शून्य, नौ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और चौबीस भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६६१ ॥

$५८७४४८\frac{१४}{२१२} + २७८९\frac{९२}{२१२} = ५९०२३८\frac{२४}{२१२}$ ।

सात, दो, शून्य, तीन, नौ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ सोलह भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यकी अन्तिम लंबाई है ॥ २६६२ ॥

$५९०२३८\frac{२४}{२१२} + २७८९\frac{९२}{२१२} = ५९३०२७\frac{११६}{२१२}$ ।

यह सब कच्छादिक देशोंकी तीन प्रकारसे लंबाई कही गई है। अब क्रमसे वह मंगलावती आदि देशोंकी कही जाती है ॥ २६६३ ॥

कच्छादिक विजयोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लंबाईमेंसे विजयार्द्धके विस्तारको कम करके शेषको आधा करनेपर उस उसकी लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २६६४ ॥

धातकीखण्डकी मध्यसूचीमेंसे मेरुपर्वत और दुगुणे भद्रशालवनके विस्तारको घटा दो, तब वह शेष पद्मासे मंगलावतीदेश तककी सूची होती है ॥ २६६५ ॥

$९००००० - (९४०० + २१५७५८) = ६७४८४२$ सूची ।

दो, चार, आठ, चार, सात और छह, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनरूप उपर्युक्त सूचीका प्रमाण है । इस सूचीप्रमाणका वर्ग करके उसको दशसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उसका वर्गमूल निकालनेपर उक्त सूचीकी परिधिका प्रमाण होता है, जो क्रमसे आठ, तीन, शून्य, चार, तीन, एक और दो अंकरूप है ॥ २६६६ ॥

$\sqrt{६७४८४२^२ \times १०} = २१३४०३८$ परिधि ।

---

१ ब °दीहसूभूदरण्णा. २ एषा गाथा द-प्रतौ नास्ति. ३ द सो.

सेलविसुद्धो परिही चउसट्ठीहिं गुणेज्ज अवसेसं । बारसदोसयभजिदे जं लद्धं तं विदेहदीहत्तं ॥ २६६७
सगचउदोणभणवपण भागा दोगुणिदणउदि दीहत्तं । पुव्ववरविदेहाणं सामीवे भद्दसालवणे ॥ २६६८

५९०२४७ । १८० |
२१२ |

तम्मि सहस्सं सोधिय अद्धकदेणं विहीणदीहत्तं । उक्कस्सं पम्माए तह चेव य मंगलावदिए ॥ २६६९
तियदोछचउणवदुगअंककमे[1] जोयणाणि भागाणिं । चउहीणदुसयदीहं आदिल्लं पउममंगलावदिए ॥ २६७०

२९४६२३ । १९६ |
२१२ |

णवतियणभखंणवदोअंककमे भाय दुसद चउरहिदं । मज्झिल्लयदीहत्तं पम्माए मंगलावदिए ॥ २६७१

२९००३९ । १९६ |
२१२ |

पणपणचउपणअडदुग अंसा ता एव दोसु विजयासुं । अंतिल्लयदीहत्तं वक्खारदुगम्मि आदिल्लं ॥ २६७२

२८५४५५ । १९६ |
२१२ |

इस परिधिप्रमाणमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्रको कम करनेपर जो शेष रहे उसे चौंसठसे गुणा करके दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी विदेहक्षेत्रकी लंबाई है ॥ २६६७ ॥

सात, चार, दो, शून्य, नौ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और नब्बैके दूने अर्थात् एकसौ अस्सी भागमात्र अधिक भद्रशालवनके समीपमें पूर्वापर विदेहोंकी लंबाई है ॥ २६६८ ॥ (११३४०३८-१७८८४२$\frac{२}{१९}$) × ६४ ÷ २१२ = ५९०२४७$\frac{१६०}{२१२}$ ।

उस विदेहकी लंबाईमेंसे एक हजार योजन (सीतोदाका विस्तार) कम करके शेषको आधा करनेपर पद्मा तथा मंगलावती देशकी उत्कृष्ट लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २६६९ ॥

५९०२४७$\frac{१६०}{२१२}$ − १००० ÷ २ = २९४६२३ $\frac{१९६}{२१२}$ ।

तीन, दो, छह, चार, नौ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चार कम दोसौ अर्थात् एकसौ छ्यानवै भाग अधिक पद्मा और मंगलावती देशकी आदिम लंबाई है ॥ २६७० ॥ २९४६२३$\frac{१९६}{२१२}$ ।

नौ, तीन, शून्य, शून्य, नौ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छ्यानवै भाग अधिक पद्मा और मंगलावती देशकी मध्यम लंबाई है ॥ २६७१ ॥

२९४६२३$\frac{१९६}{२१२}$ − ४५८४ = २९००३९$\frac{१९६}{२१२}$ ।

पांच, पांच, चार, पांच, आठ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ छ्यानवै भाग अधिक उक्त दोनों देशोंकी अन्तिम तथा श्रद्धावान् व आत्मांजन नामक दो वक्षारपर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६७२ ॥

२९००३९$\frac{१९६}{२१२}$ − ४५८४ = २८५४५५$\frac{१९६}{२१२}$ ।

---

१ द ब अंककमेण.

अडसगणवचउअडदुग भागा छत्तीसअधियसयमेक्कं । सद्धावणमायंजणगिरिम्मि मज्झिल्लदीहत्तं ॥ २६७३

२८४९७८ । १३६ / २१२

इगिणभपणचउअडदुग भागा छाहत्तरी य अंतिल्लं । दीहं दोसु गिरीसुं आदीओ दोण्णिविजयाणं ॥ २६७४

२८४५०१ । ७६ / २१२

सगइगिणवणवसगदुग भागा ता एव मज्झदीहत्तं । पत्तेक्क सुपम्माए रमणिज्जाणमविजयाए ॥ २६७५

२७९९१७ । ७६ / २१२

तियतिण्णितिण्णिपणसगदोण्णि य अंसा तहेव दीहत्तं । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं ॥२६७६

२७५३३३ । ७६ / २१२

चउइगिदुगपणसगदुग भागा चउवीसमेत्त दीहत्तं । मज्झिल्लं खीरोदे[1] उम्मत्तणदिम्मि पत्तेक्कं ॥ २६७७

२७५२१४ । २४ / २१२

आठ, सात, नौ, चार, आठ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ छत्तीस भाग अधिक श्रद्धावान् व आत्मांजन पर्वतकी मध्यम लंबाई है॥२६७३॥

$२८५४५५\frac{१३६}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २८४९७८\frac{१३६}{२१२}$ ।

एक, शून्य, पांच, चार, आठ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छ्यत्तर भाग अधिक उक्त दोनों वक्षारपर्वतोंकी अन्तिम तथा सुपद्मा व रमणीया नामक दो देशोंकी आदिम लंबाई है ॥२६७४॥ $२८४९७८\frac{१३६}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २८४५०१\frac{७६}{२१२}$ ।

सात, एक, नौ, नौ, सात और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त छ्यत्तर भागमात्र अधिक सुपद्मा और रमणीया नामक क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६७५ ॥ $२८४५०१\frac{७६}{२१२} - ४५८४ = २७९९१७\frac{७६}{२१२}$ ।

तीन, तीन, तीन, पांच, सात और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त छ्यत्तर भाग अधिक उक्त दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा क्षीरोदा व उन्मत्तजला नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६७६ ॥

$२७९९१७\frac{७६}{२१२} - ४५८४ = २७५३३३\frac{७६}{२१२}$ ।

चार, एक, दो, पांच, सात और दो, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौबीस भागमात्र अधिक क्षीरोदा व उन्मत्तजलामेंसे प्रत्येक नदीकी मध्यम लंबाई है॥२६७७॥

$२७५३३३\frac{७६}{२१२} - ११९\frac{५२}{२१२} = २७५२१४\frac{२४}{२१२}$ ।

---

१ ब खीरोदे.

चउणवअंबरपणसगदो भागा चउरसीदिअधियसयं ।
दोण्णं णईण अंतिमदीहं आदिल्लं[1] दोसु विजएसुं ॥ २६७८

२७५०९४ । १८४ | २१२ |

णभइगिपणणभसगदुगअंककमे भागमेव पुव्विल्लं । मज्झिमलंबवित्थारं महपम्मसुरम्मविजयाणं[2] ॥ २६७९

२७०५१० । १८४ | २१२ |

छद्दोणवपणछद्दुग भागा ता एव अंतदीहत्तं । दोविजयाणं अंजणवियडावदियाए आदिल्लं ॥ २६८०

२६५९२६ । १८४ | २१२ |

णवचउचउपणछद्दोअंककमे जोयणाणि भागा य । बासट्ठि दुहद दीहं[4] मज्झिमलं दोसु वक्खारे ॥ २६८१

२६५४४९ । १२४ | २१२ |

दोसगणवचउछद्दो भागा चउसट्ठि अंतदीहत्तं । दोवक्खारगिरीणं आदीयं दोसु विजएसुं ॥ २६८२

२६४९७२ । ६४ | २१२ |

चार, नौ, शून्य, पांच, सात और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक उक्त दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा महापद्मा व सुरम्या नामक दो देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६७८ ॥

$२७५२१४\frac{२४}{२१२} - ११९\frac{५२}{२१२} = २७५०९४\frac{१८४}{२१२}$ ।

शून्य, एक, पांच, शून्य, सात और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ चौरासी भाग अधिक महापद्मा व सुरम्या नामक देशोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६७९ ॥ $२७५०९४\frac{१८४}{२१२} - ४५८४ = २७०५१०\frac{१८४}{२१२}$ ।

छह, दो, नौ, पांच, छह और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ चौरासी भाग अधिक उक्त दोनों देशोंकी अन्तिम तथा अंजन व विजटावान् पर्वतकी आदिम लंबाई है ॥ २६८० ॥

$२७०५१०\frac{१८४}{२१२} - ४५८४ = २६५९२६\frac{१८४}{२१२}$ ।

नौ, चार, चार, पांच, छह और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बासठके दुगुणे अर्थात् एकसौ चौबीस भाग अधिक दोनों वक्षारोंकी मध्यम लंबाई है ॥ २६८१ ॥

$२६५९२६\frac{१८४}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २६५४४९\frac{१२४}{२१२}$ ।

दो, सात, नौ, चार, छह और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौंसठ भाग अधिक दोनों वक्षारपर्वतोंकी अंतिम तथा पद्मकावती व रम्या देशकी आदिम लंबाई है ॥ २६८२ ॥ $२६५४४९\frac{१२४}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २६४९७२\frac{६४}{२१२}$ ।

---

१ द ब 'दीहिं आदीओ. २ द विजयद्द, ब विजयाद्द. ३ द ब सुपम्म. ४ द ब दीहा.

अट्ठडतियणभछहो भागा चउसट्ठि मज्झदीहत्तं । रम्माए पम्मकावदिविजयाए होदि पत्तेक्कं ॥ २६८३

२६०३८८ । ६४
२१२

चउणभअडपणपणदुग भागा ता एव दोण्णि विजयाणं । अंतिल्लयदीहत्तं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं ॥ २६८४

२५५८०४ । ६४
२१२

पणअडछप्पणपणदुग अंककमे बारसाणि अंसा य । मत्तजले सीदोदे पत्तेक्कं मज्झदीहत्तं ॥ २६८५

२५५६८५ । १२
२१२

पणछप्पणपणपंचयदो त्थि बाहत्तरीहिं अधियसयं । भागा दुणइदुविजए अंतिल्लादिल्लदीहत्तं ॥ २६८६

२५५५६५ । १७२
२१२

इगिअडणवणभपणदुग भागा ता एव मज्झदीहत्तं । संखाए वच्छकावदिविजए पत्तेक्क परिमाणं ॥ २६८७

२५०९८१ । १७२
२१२

आठ, आठ, तीन, शून्य, छह और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौंसठ भाग अधिक रम्या व पद्मकावती देशोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६८३ ॥ $२६४९७२\frac{६४}{२१२} - ४५८४ = २६०३८८\frac{६४}{२१२}$ ।

चार, शून्य, आठ, पांच, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त चौंसठ भाग अधिक उक्त दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा मत्तजला व सीतोदा नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २६८४ ॥

$$२६०३८८\frac{६४}{२१२} - ४५८४ = २५५८०४\frac{६४}{२१२}$$ ।

पांच, आठ, छह, पांच, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बारह भाग अधिक मत्तजला व सीतोदामेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६८५ ॥ $२५५८०४\frac{६४}{२१२} - ११९\frac{५२}{२१२} = २५५६८५\frac{१२}{२१२}$ ।

पांच, छह, पांच, पांच, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और एकसौ बहत्तर भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा शंखा व वत्सकावती नामक दो विजयोंकी आदिम लंबाई है ॥२६८६॥ $२५५६८५\frac{१२}{२१२} ११९\frac{५२}{२१२} = २५५५६५\frac{१७२}{२१२}$ ।

एक, आठ, नौ, शून्य, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बहत्तर भाग अधिक शंखा व वत्सकावती क्षेत्रोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६८७ ॥ $२५५५६५\frac{१७२}{२१२} - ४५८४ = २५०९८१\frac{१७२}{२१२}$ ।

---

१ द पव्वकावदि, ब वपाकावदि.

सगणवतियछचउदुग भागा ते चेव दोण्णिविजयाणं । दोवक्खारगिरीणं अंतिमआदिल्लदीहत्तं ॥ २६८८

२४६३९७ । १७२ | २१२ |

णभदोणवपणचउदुग अंसा बारसअधियमेक्कसयं । मज्झम्मि होदि दीहं आसीविसवेसमणकूडे ॥ २६८९

२४५९२० । ११२ | २१२ |

तियचउचउपणचउदुग अंसा बावण्ण दोण्णिवक्खारे । दोविजए अंतिल्लं कमसो आदिल्लदीहत्तं ॥ २६९०

२४५४४३ । ५२ | २१२ |

णवपणअट्ठणभचउदुगअंककमे अंसमेव बावण्णं । मज्झिमए दीहत्तं महवच्छाणलिणविजयम्मि ॥ २६९१

२४०८५९ । ५२ | २१२ |

पणसगदोछत्तियदुग भागा बावण्ण दोण्णिविजयाणं । बेवेभंगेणदीणं अंतिमआदिल्लदीहत्तं ॥ २६९२

२३६२७५ । ५२ | २१२ |

सात, नौ, तीन, छह, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पूर्वोक्त एकसौ बहत्तर भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा आशीविष व वैश्रवण-कूट नामक दो वक्षारपर्वतोंकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६८८ ॥

$२५०९८१\frac{१७२}{२१२} - ४५८४ = २४६३९७\frac{१७२}{२१२}$ ।

शून्य, दो, नौ, पांच, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बारह भाग अधिक आशीविष व वैश्रवणकूटकी मध्यम लंबाई है ॥ २६८९ ॥

$२४६३९७\frac{१७२}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २४५९२०\frac{११२}{२१२}$ ।

तीन, चार, चार, पांच, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बावन भाग अधिक दो वक्षार तथा नलिना व महावत्सा नामक दो देशोंकी क्रमशः अन्तिम एवं आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९० ॥

$२४५९२०\frac{११२}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २४५४४३\frac{५२}{२१२}$ ।

नौ, पांच, आठ, शून्य, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बावन भाग अधिक नलिना व महावत्सा देशकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९१ ॥

$२४५४४३\frac{५२}{२१२} - ४५८४ = २४०८५९\frac{५२}{२१२}$ ।

पांच, सात, दो, छह, तीन और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन और बावन भाग अधिक दोनों देशों तथा तप्तजला व औषधवाहिनी नामक दो विभंग-नदियोंकी क्रमसे अन्तिम एवं आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९२ ॥

$२४०८५९\frac{५२}{२१२} - ४५८४ = २३६२७५\frac{५२}{२१२}$ ।

---

१ ब संखा. २ द ब दीहत्तं महवप्पाण विजयम्मि. ३ ब विभंग°.

छप्पणइगिछत्तियदुगमंककमे जोयणाणि मज्झिमए । दीहत्तं तत्तजले ओसहवाहीए पत्तेक्कं ॥ २६९३

२३६१५६ ।

छत्तियणभछत्तियदुग भागा सट्ठीहिं अधियसय दीहं । दो वेभंगणदीणं अंतं आदी हु दोसु विजएसुं ॥२६९४

२३६०३६ । १६०
२१२

दोपणचउइगितियदुग भागा सट्ठीहिं अधियसयमेत्तं । मज्झिमपएसदीहं कुमुदाए सुवच्छविजयम्मि ॥ २६९५

२३१४५२ । १६०
२१२

अट्ठछअट्ठयछद्दो छिय सट्ठीहिं अधियसयभागं । विजयाणं वक्खारे अंतिल्लादिल्लदीहत्तं ॥ २६९६[1]

२२६८६८ । १६०
२१२

इगिणवतियछद्दुगं एक्कसयं होंति तह य अंसा य । सुहवहतिकूटपव्वदमज्झिमल्लं होदि दीहत्तं ॥ २६९७[1]

२२६३९१ । १००
२१२

छह, पांच, एक, छह, तीन और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनमात्र तप्तजला व औषधवाहिनीमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६९३ ॥

$२३६२७५\frac{५२}{२१२} - ११९\frac{५२}{२१२} = २३६१५६$ ।

छह, तीन, शून्य, छह, तीन और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भाग अधिक दोनों विभंगनदियोंकी अन्तिम तथा कुमुदा व सुवत्सा नामक दो देशोंकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९४ ॥

$२३६१५६ - ११९\frac{५२}{२१२} = २३६०३६\frac{१६०}{२१२}$ ।

दो, पांच, चार, एक, तीन और दो, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भाग अधिक कुमुदा व सुवत्सा देशकी मध्यम लंबाई है ॥ २६९५ ॥

$२३६०३६\frac{१६०}{२१२} - ४५८४ = २३१४५२\frac{१६०}{२१२}$ ।

आठ, छह, आठ, छह, दो और दो, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा सुखावह व त्रिकूट नामक दो वक्षारपर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥२६९६॥ $२३१४५२\frac{१६०}{२१२} - ४५८४ = २२६८६८\frac{१६०}{२१२}$ ।

एक, नौ, तीन, छह, दो और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ भाग अधिक सुखावह व त्रिकूट पर्वतकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९७ ॥

$२२६८६८\frac{१६०}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २२६३९१\frac{१००}{२१२}$ ।

---

१ द ब णंतरवाहीए. २ अत्र उपरिलिखिता दश गाथा ब-प्रतौ पुनरपि लिखिताः। ३ एषा गाथा द-ब प्रत्योर्नास्ति, सोलापुर-प्रतितोऽत्र लिखिता.

[1]चउइगिणवपणदोदो अंसा चालीसमेवं पत्तेक्कं । दोवक्खारदुविजए अंतिल्लादिल्लदीहत्तं ॥ २६९८

२२५९१४ । ४०/२१२

णभतियतियइगिदोदोअंककमे तुहदवीसभागा य । सरिदाए वच्छविजए[2] पत्तेक्कं मज्झदीहत्तं ॥ २६९९

२२१३३० । ४०/२१२

छचउसगछक्केक्कदु अंसा चालीसमेत्त दीहत्तं । दोविजए आदिमए देवारण्णम्मि भूदरण्णाए ॥ २७००

२१६७४६ । ४०/२१२

छप्पणणवतियइगिदुग भागा सट्ठीहिं अधियसयमेत्तं । भूदादेवारण्णे हवेदि मज्झिल्लदीहत्तं ॥ २७०१

२१३९५६ । १६०/२१२

सगछक्केक्केगिगिदुग भागा अडसट्ठि देवरण्णम्मि । तह चेव भूदरण्णे पत्तेक्कं अंतदीहत्तं ॥ २७०२

२१११६७ । ६८/२१२

चार, एक, नौ, पांच, दो और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भाग अधिक दो वक्षार तथा सरिता व वत्सा देशोंमेंसे प्रत्येककी क्रमशः अन्तिम एवं आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २६९८ ॥

$२२६३९१\frac{१००}{२१२} - ४७७\frac{६०}{२१२} = २२५९१४\frac{४०}{२१२}$ ।

शून्य, तीन, तीन, एक, दो और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बीसके दुगुणे अर्थात् चालीस भाग अधिक सरिता व वत्सा देशमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २६९९ ॥ $२२५९१४\frac{४०}{२१२} - ४५८४ = २२१३३०\frac{४०}{२१२}$ ।

छह, चार, सात, छह, एक और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भागमात्र अधिक दोनों देशोंकी [अन्तिम] तथा देवारण्य व भूतारण्यकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २७०० ॥ $२२१३३०\frac{४०}{२१२} - ४५८४ = २१६७४६\frac{४०}{२१२}$ ।

छह, पांच, नौ, तीन, एक और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भागमात्र अधिक भूतारण्य व देवारण्यकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २७०१ ॥ $२१६७४६\frac{४०}{२१२} - २७८९\frac{९२}{२१२} = २१३९५६\frac{१६०}{२१२}$ ।

सात, छह, एक, एक, एक और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अड़सठ भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यमेंसे प्रत्येककी अन्तिम लंबाई है ॥ २७०२ ॥

$२१३९५६\frac{१६०}{२१२} - २७८९\frac{९२}{२१२} = २१११६७\frac{६८}{२१२}$ ।

१ द ब इगिणवतियदोदो. २ द चालीसमेत्त. ३ द ब वलिलाए वप्पविजए. ४ द ब °क्केक्केगि°.

कच्छादीविजयाणं आदिममज्झिल्लचरमदीहम्मि। [विजयद्धरुंदमधणिय अद्धकदे तस्स तस्स दीहत्तं] ॥ २७०३

[वित्थारेणं खुल्लयहिमवंतणगस्स दीहम्मि ।] संगुणिदे जं लद्धं तं तस्स हवेदि खेत्तफलं ॥ २७०४

चउसीदीकोडीओ लक्खाणिं जोयणाणि इगिवीसं । बावण्णसय तिसट्ठी तिकलाओ तस्स परिमाणं ॥ २७०५

हिमवन्तस्य क्षेत्रफलम्— ८४२१०५२६३ । ३/१९

एदं चिय चउगुणिदं महहिमवंतस्स होदि खेत्तफलं । णिमहस्स तच्चउग्गुण चउगुणहाणी परं तत्तो ॥ २७०६

महाहिमवंत ३३६८४२१०५२ । १२/१९ | णिसह १३४७३६८४२१० । १०/१९ | णील १३४७३६८४-२१० । १०/१९ | रुम्मि ३३६८४२१०५२ । १२/१९ | सिखरी ८४२१०५२६३ । ३/१९ | एदाणि मेलिदूणं दुगुणं कादव्वं तच्चेदं[1]— ७०७३६८४२१०५ । ५/१९ |

दोण्णं उसुगाराणं असीदिकोडीओ होंति खेत्तफलं । एदं पुव्वविमिस्सं चोद्दससेलाण पिंडफलं ॥ २७०७

८००००००००।

कच्छादि देशोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईमेंसे [विजयार्धके विस्तारको घटाकर आधा करनेपर शेष उस उसकी लम्बाई होती है] ॥ २७०३ ॥

[क्षुद्रहिमवान्पर्वतकी लम्बाईको उसके विस्तारसे] गुणा करनेपर जो संख्या प्राप्त हो उतना उसका क्षेत्रफल होता है ॥ २७०४ ॥

उस क्षेत्रफलका प्रमाण चौरासी करोड़ इक्कीस लाख बावनसौ तिरेसठ योजन और तीन कलामात्र है ॥ २७०५ ॥

हिमवान्का क्षेत्रफल—४००००० × २१०५$\frac{५}{१९}$ = ८४२१०५२६३$\frac{३}{१९}$ ।

इसको चारसे गुणा करनेपर महाहिमवान्का क्षेत्रफल और महाहिमवान्के क्षेत्रफलको भी चारसे गुणा करनेपर निषधपर्वतका क्षेत्रफल होता है। इसके आगे फिर चौगुणी हानि है ॥२७०६॥

क्षेत्रफल—महाहिमवान् ३३६८४२१०५२$\frac{१२}{१९}$ । निषध १३४७३६८४२१०$\frac{१०}{१९}$ । नील १३४७३६८४२१०$\frac{१०}{१९}$ । रुक्मि ३३६८४२१०५२$\frac{१२}{१९}$ । शिखरी ८४२१०-५२६३$\frac{३}{१९}$ । इन छह पर्वतोंके क्षेत्रफलको मिलाकर दुगुणा करना चाहिये— ३५३६८४२१०५२$\frac{१२}{१९}$ × २ = ७०७३६८४२१०५$\frac{५}{१९}$ ।

दोनों इष्वाकार पर्वतोंका क्षेत्रफल अस्सी करोड़ योजन है। इसको पूर्वोक्त क्षेत्रफलमें मिला देनेपर चौदह पर्वतोंका समस्त क्षेत्रफल होता है ॥ २७०७ ॥ ८००००००००।

---

१ ब-प्रतौऽयं एष निर्देशः. २ द ब मेलिदूणं कादव्वं तच्चेदं.

पंचगयणेक्कदुगचउअट्ठतियपंचएक्कसत्ताणं । अंककमे पंचंसा चोद्दसगिरिगणिदफलमाणं ॥ २७०८

७१५३६८४२१०५ । ५/१९

एक्कछसत्तपणणवणवेक्कचउअट्ठतिदयएक्केक्का । अंककमे जोयणया धादइसंडस्स पिंडफलं ॥ २७०९

११३८४१९९५७६६१ ।

चोद्दसगिरीण रुद्धक्खेत्तफलं सोह सव्वखेत्तफले । बारसजुददुसएहिं भजिदे तं भरहखेत्तफलं ॥ २७१०

छक्कदुगपंचसत्तयछक्कचउदुगतिण्णिसुण्णपंचाणं । अंककमे जोयणया चउदाल कलाओ भरहखेत्तफलं ॥ २७११

भरह ५०३२४६७५२६ । ४४/२१२

एदं चिय चउगुणिदे खेत्तफलं होदि हेमवदखेत्ते । तं चेय चउग्गुणिदं हरिवरिसखिदीय गणिदफलं ॥ २७१२

हरिवरिसक्खेत्तफलं चउक्कगुणिदं विदेहखेत्तफलं । सेसवरिसेसु कमसो चउगुणहाणीय गणिदफलं ॥ २७१३

चौदह पर्वतोंके क्षेत्रफलका प्रमाण अंकक्रमसे, पांच, शून्य, एक, दो, चार, आठ, छह, तीन, पांच, एक और सात, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और पांच भागमात्र है ॥२७०८॥ ७०७३६८४२१०५$\frac{५}{१९}$ + ८००००००० = ७१५३६८४२१०५$\frac{५}{१९}$ यो.।

एक, छह, छह, सात, पांच, नौ, नौ, एक, चार, आठ, तीन, एक और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण सम्पूर्ण धातकीखण्डका क्षेत्रफल है ॥ २७०९ ॥ ११३८४१९९५७६६१ ।

सब क्षेत्रफलमेंसे चौदह पर्वतोंसे रुद्ध क्षेत्रफलको घटाओ। जो शेष रहे उसमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥ २७१० ॥

छह, दो, पांच, सात, छह, चार, दो, तीन, शून्य और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चवालीस कला अधिक भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल है ॥ २७११ ॥

११३८४१९९५७६६१ − ७१५३६८४२१०५$\frac{५}{१९}$ ÷ २१२ = ५०३२४६७-५२६$\frac{४४}{२१२}$ भरतका क्षेत्रफल।

इस भरतक्षेत्रके क्षेत्रफलको चौगुणा करनेपर हैमवतक्षेत्रका क्षेत्रफल और इसको भी चौगुणा करनेपर हरिवर्षक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥ २७१२ ॥

हैमवत २०१२९८७०१०४$\frac{१७}{२१२}$। हरिवर्ष ८०५१९४८०४१९$\frac{१८}{२१२}$।

हरिवर्षके क्षेत्रफलको चारसे गुणा करनेपर विदेहका क्षेत्रफल होता है। इसके आगे फिर क्रमसे शेष क्षेत्रोंके क्षेत्रफलमें चौगुणी हानि होती गई है ॥ २७१३ ॥

---

१ द ब °छहसत्तएपण°. २ द °पणणववेक्क°. ३ द ब चोद्दसइगिरिणदं खेत्तफलं. ४ द ब °सत्तछह

हे २०१२९८७०१०४।१७६/२१२	हरि ८०५१९४८०४१९।६८/२१२	वि ३२२०७७९२१६७७।६०/२१२
रं ८०५१९४८०४१९।६८/२१२	हइ २०१२९८७०१०४।१७६/२१२	अइरावद ५०३२४६७५२६।४४/२१२

जंबूदीवखिदीए फलप्पमाणेण धादईसंडे । खेत्तफलं किंजंतं बारसकदिसमसलाकाओ ॥ २७१४
अवसेसवण्णणाओ सव्वाणं विजयसेलसरियाणं । कुंडदहादीणं पिय जंबूदीवस्स सारिच्छा ॥ २७१५
एवं विण्णासो[1] समत्तो।
भरहवसुंधरपहुदिं जाव य एरावदो त्ति अहियारा । जंबूदीवे उत्तं तं सव्वं एत्थ वत्तव्वं ॥ २७१६
एवं संखेवेणं धादइसंडो पवण्णिदो दिव्वो । वित्थारवण्णणासुं का सत्ती म्हारिसमईणं ॥ २७१७
एवं धादइसंडस्स वण्णणा समत्ता।
परिवेढेदि समुद्दो कालोदो णाम धादईसंडं । अडलक्खजोयणाणिं वित्थिण्णो चक्कवालेणं ॥ २७१८
टंकुक्किण्णायारो[2] सव्वत्थ सहस्सजोयणवगाढो । चित्तोवरितलसरिसो पायालविवज्जिदो एसो ॥ २७१९
१०००।

विदेह ३२२०७७९२१६७७$\frac{६०}{२१२}$। रम्यक ८०५१९४८०४१९$\frac{६८}{२१२}$। हैरण्यवत २०१२९८७०१०४$\frac{१७६}{२१२}$। ऐरावत ५०३२४६७५२६$\frac{४४}{२१२}$।

जम्बूद्वीपके फलप्रमाणसे धातकीखंडका क्षेत्रफल करनेपर वह बारहके वर्गरूप अर्थात् एकसौ चवालीस शलाकाप्रमाण होता है। तात्पर्य यह कि जम्बूद्वीपके बराबर धातकीखण्डके एकसौ चवालीस खण्ड होते हैं ॥२७१४॥ $(१३०००००^२ - ५०००००^२) \div १०००००^२ = १४४$।

सम्पूर्ण क्षेत्र, पर्वत, नदी, कुण्ड और द्रहादिकोंका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके समान ही समझना चाहिये ॥ २७१५ ॥

इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ।

भरतक्षेत्रसे लेकर ऐरावतक्षेत्रपर्यन्त जितने अधिकार- जम्बूद्वीपके वर्णनमें कहे गये हैं, वे सब यहांपर भी कहने चाहिये ॥ २७१६ ॥

इसप्रकार संक्षेपमें यहां दिव्य धातकीखण्डका वर्णन किया गया है। हमारी जैसी बुद्धिवाले मनुष्योंकी भला विस्तारसे वर्णन करनेमें शक्ति ही क्या है ? ॥ २७१७ ॥

इसप्रकार धातकीखण्डद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ।

इस धातकीखण्डद्वीपको आठ लाख योजनप्रमाण विस्तारवाला कालोद नामक समुद्र मण्डलाकारसे वेष्टित किये हुए है ॥ २७१८ ॥

टांकीसे उकेरे हुएके समान आकारवाला यह समुद्र सर्वत्र एक हजार योजन गहरा, चित्रापृथिवीके उपरिम तलभागके सदृश अर्थात् समतल और पातालोंसे रहित है ॥ २७१९ ॥

१०००।

१ द ब सण्णियादि. २ द कुक्किणायारो.

अट्ठत्ताला दीवा दिसासु विदिसासु अंतरेसुं च । चउवीसब्भंतरए बाहिरए तेत्तिया तस्स ॥ २७२०
अब्भंतरम्मि दीवा चत्तारि दिसासु तह य विदिसासुं । अंतरदिसासु अट्ठ य अट्ठ य गिरिपणिधिभागेसुं ॥ २७२१
४ । ४ । ८ । ८ ।
जोयणपंचसयाणिं पण्णब्भहियाणि दोतडाहिंतो । पविसिय दिसासु[1] दीवा पत्तेक्कं दुसयविक्खंभो ॥ २७२२
५५० । २०० ।
जोयणयछस्सयाणिं पण्णब्भहियाणि दोतडाहिंतो । पविसिय विदिसादीवा पत्तेक्कं एक्कसयरुंदं ॥ २७२३
६५० । १०० ।
जोयणपंचसयाइं पण्णब्भहियाणि बेतडाहिंतो । पविसिय अंतरदीवा पण्णारुंदा य पत्तेक्कं ॥ २७२४
५५० । ५० ।
छच्चिय सयाणि पण्णाजुत्ताणिं जोयणाणि दुतडादो । पविसिय गिरिपणिधीसुं दीवा पण्णासविक्खंभा[2] ॥ २७२५
६५० । ५० ।
पत्तेक्कं ते दीवा तडवेदीतोरणेहिं रमणिज्जा । पोक्खरणीवावीहिं[3] कप्पदुमेहिं पि संपुण्णा ॥ २७२६

इस समुद्रके भीतर दिशाओं, विदिशाओं और अन्तरदिशाओंमें अड़तालीस द्वीप हैं। इनमेंसे चौबीस उसके अभ्यन्तरभागमें और चौबीस ही बाह्यभागमें भी हैं ॥ २७२० ॥

उसके अभ्यन्तरभागमें दिशाओंमें चार, विदिशाओंमें चार, अन्तरदिशाओंमें आठ और पर्वतोंके पार्श्वभागोंमें भी आठ ही द्वीप हैं ॥ २७२१ ॥ ४ + ४ + ८ + ८ = २४ ।

इनमेंसे दिशाओंके द्वीप दोनों तटोंसे पांचसौ पचास योजनप्रमाण समुद्रमें प्रवेश करके स्थित हैं। इन द्वीपोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार दोसौ योजनप्रमाण है ॥ २७२२ ॥

समुद्रतटसे दूर ५५० । विष्कम्भ २०० यो. ।

दोनों तटोंसे छहसौ पचास योजनप्रमाण समुद्रमें प्रवेश करनेपर विदिशाओंमें द्वीप स्थित हैं। इनमेंसे प्रत्येक द्वीपका विस्तार एकसौ योजनमात्र है ॥ २७२३ ॥

समुद्रतटसे दूर ६५० । विष्कम्भ १०० यो. ।

दोनों तटोंसे पांचसौ पचास योजन प्रवेश करके अन्तरद्वीप स्थित हैं। इनमेंसे प्रत्येकका विस्तार पचास योजनमात्र है ॥ २७२४ ॥ समुद्रतटसे दूर ५५० । विष्कम्भ ५० यो. ।

दोनों तटोंसे छहसौ पचास योजन प्रवेश करके पर्वतोंके प्रणिधिभागोंमें अन्तरद्वीप स्थित हैं। उनमेंसे प्रत्येकका विस्तार पचास योजनप्रमाण है ॥ २७२५ ॥

समुद्रतटसे दूर ६५० । विष्कम्भ ५० यो. ।

वे प्रत्येक द्वीप तटवेदी व तोरणोंसे रमणीय और पुष्करिणी वापिकाओं एवं कल्पवृक्षोंसे परिपूर्ण हैं ॥ २७२६ ॥

---

१ ब विदिसासु. २ द ब पण्णासंदा य. ३ द ब विक्खंभो. ४ द ब °वावीओ.

मच्छमुहा अभिकण्णा पक्खिमुहा तेसु हत्थिकण्णा य । पुव्वादिसु दीवेसु वि चिट्ठंति[1] कुमाणुसा कमसो ॥२७२७
अणिलादियासुं[2] सूवरकण्णा दीवेसु ताण विदिसासुं[3] । अट्ठंतरदीवेसुं पुव्वग्गिदिसादिगणणिज्जा ॥ २७२८
चेट्ठंति उट्टकण्णो मज्जारमुहा पुणो वि तच्चेय । कण्णप्पावरणा गजवयणा य मज्जारवयणा य ॥ २७२९
मज्जारमुहा य तहा गोकण्णा एवमट्ठ पत्तेक्कं । पुव्वपयणिदबहुविहपावफलेहिं कुमणुसाणि[4] जायंति ॥ २७३०
पुव्वावरपणिधीए सिसुमारमुहा तह य मयरमुहा । चेट्ठंति रुप्पगिरिणो कुमाणुसा कालजलहिम्मि ॥ २७३१
वयमुहवग्घमुहक्खा हिमवंतणगस्स पुव्वपच्छिमदो । पणिधीए चेट्ठंते कुमाणुसा पावपाकेहिं ॥ २७३२
सिहरिस्स तरच्छमुहा सिगालवयणा कुमाणुसा होंति । पुव्वावरपणिधीए जम्मंतरदुरियकम्मेहिं ॥ २७३३
दीपिकभिंगारमुहा कुमाणुसा होंति रुप्पसेलस्स । पुव्वावरपणिधीए कालोदयजलहिदीवम्मि ॥ २७३४
तस्सिं बाहिरभागे तेत्तियमेत्ता कुमाणुसा दीवा । पोक्खरणीवावीहिं कप्पदुमेहिं पि संपुण्णा ॥ २७३५
एदाओ वण्णणाओ लवणसमुद्दं व एत्थ वत्तव्वा । कालोदयलवणाणं छण्णउदिकुभोगभूमीओ ॥ २७३६

उनमेंसे पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित द्वीपोंमें क्रमसे मत्स्यमुख, अभिकर्ण (अश्वकर्ण), पक्षिमुख और हस्तिकर्ण कुमानुष स्थित हैं ॥ २७२७ ॥

उनकी वायव्यप्रभृति विदिशाओंमें स्थित द्वीपोंमें रहनेवाले कुमानुष शूकरकर्ण होते हैं। इसके अतिरिक्त पूर्वाग्निदिशादिकक्रमसे गणनीय आठ अन्तरद्वीपोंमें कुमानुष निम्नप्रकार स्थित हैं ॥ २७२८ ॥

उष्ट्रकर्ण, मार्जारमुख, पुनः मार्जारमुख, कर्णप्रावरण, गजमुख, मार्जारमुख, पुनः मार्जारमुख और गोकर्ण, इन आठमेंसे प्रत्येक पूर्वमें बतलाये हुए बहुत प्रकारके पापोंके फलसे कुमानुष जीव उत्पन्न होते हैं ॥ २७२९–२७३० ॥

कालसमुद्रके भीतर विजयार्द्धके पूर्वापर पार्श्वभागोंमें जो कुमानुष रहते हैं, वे क्रमसे शिशुमारमुख और मकरमुख होते हैं ॥ २७३१ ॥

हिमवान्पर्वतके पूर्व-पश्चिम पार्श्वभागोंमें रहनेवाले कुमानुष क्रमसे पापकर्मोंके उदयसे वृकमुख और व्याघ्रमुख होते हैं ॥ २७३२ ॥

शिखरीपर्वतके पूर्व-पश्चिम पार्श्वभागोंमें रहनेवाले कुमानुष पूर्व जन्ममें किये हुए पापकर्मोंसे तरक्षमुख (अक्षमुख) और शृगालमुख होते हैं ॥ २७३३ ॥

विजयार्धपर्वतके पूर्वापर प्रणिधिभागमें कालोदकसमुद्रस्थ द्वीपोंमें क्रमसे दीपिकमुख और भृंगारमुख कुमानुष होते हैं ॥ २७३४ ॥

पुष्करिणी, वापियों और कल्पवृक्षोंसे परिपूर्ण उतने ही कुमानुषद्वीप उस कालोदसमुद्रके बाह्यभागमें भी स्थित हैं ॥ २७३५ ॥

यह सब वर्णन लवणसमुद्रके समान यहांपर भी कहना चाहिये। इसप्रकार कालोदक और लवणसमुद्रसम्बन्धी कुभोगभूमियां छयानवै हैं ॥ २७३६ ॥

---

१ ब मण्णमुहा. २ ब चेट्ठंति. ३ द ब अणिलदिसासुं. ४ द ब दुदिसासुं. ५ ब उट्टकण्णा. ६ द °रणा णगला, ब °णगणा. ७ द ब कुमणुसजीवाणि. ८ द ब वंहमुहवग्घमुहक्खो. ९ द ब वरच्छ°.

दुगअट्ठगयणणवयं छक्कचउछदुदुगएगतियपंच । अंककमे जोयणया कालोदे होदि गणिदफलं ॥ २७३७

५३१२६२६४६९०८२ ।

जंबूदीवमहीए फलप्पमाणेण कालउवहिम्मि[1] । खेत्तफलं किंजंतं छस्सयबाहत्तरी[2] होदि ॥ २७३८

६७२ ।

इगिणउदिं लक्खाणिं सदरिसिहस्साणि छस्सयाणिं पि । पंचुत्तरो य परिही[3] बाहिरया तस्स किंचूणा ॥ २७३९

९१७०६०५ ।

अट्ठरसजोयणाइं दीहा दीहद्धवाससंपुण्णा । वासद्धबहलसहिदा णईमुहे जलचरा होंति ॥ २७४०

१८ । ९ । ९/२

कालोवहिबहुमज्झे मच्छाणं दीहवासबहलाणिं । छत्तीसट्ठारसणवजोयणमेत्ताणि कमसो य ॥ २७४१

३६ । १८ । ९ ।

अवसेसठाणमज्झे बहुविहओगाहणेण संजुत्ता । मयरसिसुसारकच्छवमंडूकप्पहुदिया होंति ॥ २७४२

एवं कालसमुद्दो संखेवेणं पवण्णिदो एत्थ । तस्सं[4] हरि उसंखजीहो वित्थारं वण्णिदुं[5] तरइ ॥ २७४३

। एवं कालोदगवण्णणा समत्ता ।

दो, आठ, शून्य, नौ, छह, चार, छह, दो, छह, दो, एक, तीन और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण कालोदसमुद्रका क्षेत्रफल है ॥ २७३७ ॥

५३१२६२६४६९०८२ ।

जम्बूद्वीपसम्बन्धी क्षेत्रफलके प्रमाणसे कालसमुद्रका क्षेत्रफल करनेपर वह उससे छहसौ बहत्तरगुणा होता है ॥ २७३८ ॥

$$(२९०००००^२ - १३०००००^२) \div १०००००^२ = ६७२ ।$$

उस कालोदसमुद्रकी बाह्य परिधि इक्यानबै लाख सत्तर हजार छहसौ पांच योजनसे किंचित् कम है ॥ २७३९ ॥ ९१७०६०५ ।

इस समुद्रके भीतर नदीप्रवेशस्थानमें रहनेवाले जलचर जीव अठारह योजन लंबे, लंबाईके आधे अर्थात् नौ योजनप्रमाण विस्तारसे सहित और विस्तारके अर्धभागप्रमाण (साढ़े चार योजन) बाहल्यसे संयुक्त होते हैं ॥ २७४० ॥ दीर्घता १८ । व्यास ९ । बाहल्य ९/२ ।

कालोदसमुद्रके बहुमध्यमें स्थित मत्स्योंकी लंबाई, विस्तार और बाहल्य क्रमसे छत्तीस, अठारह और नौ योजनमात्र है ॥ २७४१ ॥ दीर्घता ३६ । व्यास १८ । बाहल्य ९ ।

शेष स्थानोंमें मगर, शिशुमार, कछुआ और मेंढक आदि जलचर जीव बहुत प्रकारकी अवगाहनासे संयुक्त होते हैं ॥ २७४२ ॥

इसप्रकार यहां संक्षेपसे कालसमुद्रका वर्णन किया गया है। उसके विस्तारका वर्णन असंख्य जिह्वावाला हरि ही कर सकता है ॥ २७४३ ॥

इसप्रकार कालोदसमुद्रका वर्णन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब कालउहिम्मि. २ द ब छव्वाहत्तरी. ३ द ब तछ. ४ द ब वण्णिदो.

पोक्खरवरो त्ति दीवो परिवेढदि कालजलणिहिं सयलं । जोयणलक्खा सोलस रुंदजुदो चक्कवालेणं ॥ २७४४

१६०००००।

मणुसुत्तरधरणिधरं विण्णासभरहवसुमही तम्मि । कालविभागं हिमगिरि हेमवदो तह महाहिमवं ॥ २७४५

हरिवरिसो णिसहद्दी विदेहणीलगिरिरम्मवरिसाइं । रुप्पिगिरी हेरण्णवसिहरी एरावदो त्ति वरिसो य ॥२७४६

एवं सोलससंखा पोक्खरदीवम्मि अंतरहियारा । एण्हिं ताण सरूवं वोच्छामो[2] आणुपुव्वीए ॥ २७४७

कालोदयजगदीदो[3] समंतदो अट्ठलक्खजोयणया । गंतूणं तं परिदो परिवेढदि माणुसुत्तरो सेलो ॥ २७४८

८०००००।

तग्गिरिणो उच्छेहो सत्तरससयाणि एक्कवीसं च[5] । तीसब्भहिया जोयणचउस्सया गाढमिगिकोसं ॥ २७४९

१७२१[6]। ४३० को १।

जोयणसहस्समेक्कं बावीसं सगसयाणि तेवीसं । चउसयचउवीसाइं कमरुंदा मूलमज्झसिहरेसुं ॥ २७५०

१०२२। ७२३। ४२४।

अब्भंतरम्मि भागे टंकुक्किण्णो बहिम्मि कमहीणो । सुरखेयरमणहरणो अणाइणिहणो सुवण्णणिहो ॥ २७५१

चोद्दस गुहाओ तस्सिं समंतदो होंति दिव्वरयणाओ । विजयाणं बहुमज्झे पणिधीसु फुरंतकिरणाओ ॥ २७५२

इस सम्पूर्ण कालसमुद्रको, सोलह लाख योजनप्रमाण विस्तारसे संयुक्त पुष्करवरद्वीप मण्डलाकारसे वेष्टित किये हुए है ॥ २७४४ ॥ १६००००० ।

इस पुष्करद्वीपके कथनमें मानुषोत्तरपर्वत, विन्यास, भरतक्षेत्र, उसमें कालविभाग, हिमवान् पर्वत, हैमवतक्षेत्र, महाहिमवान् पर्वत, हरिवर्ष, निषधपर्वत, विदेह, नीलगिरि[11], रम्यकवर्ष, रुक्मिपर्वत, हैरण्यवतक्षेत्र, शिखरीपर्वत और ऐरावतक्षेत्र, इसप्रकार ये सोलह अन्तराधिकार हैं। अब अनुक्रमसे यहां उनका स्वरूप कहा जाता है ॥ २७४५–२७४७ ॥

कालोदकसमुद्रकी जगतीसे चारों ओर आठ लाख योजन जाकर मानुषोत्तर नामक पर्वत उस द्वीपको सब तरफसे वेष्टित किये हुए है ॥ २७४८ ॥ ८००००० ।

इस पर्वतकी उंचाई सत्तरहसौ इक्कीस योजन और अवगाह चारसौ तीस योजन व एक कोसप्रमाण है ॥ २७४९ ॥ उत्सेध १७२१ यो. । अवगाह ४३० यो. १ को. ।

इस पर्वतका विस्तार मूल, मध्य व शिखरपर क्रमसे एक हजार बाईस, सातसौ तेईस और चारसौ चौबीस योजनमात्र है ॥ २७५० ॥

मूलविस्तार १०२२ । मध्यविस्तार ७२३ । शिखरविस्तार ४२४ यो. ।

देव व विद्याधरोंके मनको हरनेवाला, अनादिनिधन और सुवर्णके सदृश यह मानुषोत्तर पर्वत अभ्यन्तरभागमें टंकोत्कीर्ण और बाह्यभागमें क्रमसे हीन है ॥ २७५१ ॥

उस पर्वतमें चारों ओर क्षेत्रोंके बहुमध्यभागमें उनके पार्श्वभागोंमें प्रकाशमान किरणोंसे संयुक्त दिव्यरत्नमय चौदह गुफायें हैं ॥ २७५२ ॥

---

१ द ब रुम्म. २ द ब वोच्छामि. ३ द ब °णगरीदो. ४ द माणुसुत्तरा, ब माणुसुत्तर°. ५ द एक्कतीसं च. ६ द १७३१. ७ ब °मूलमज्झि°. ८ द ब रयणमओ.

ताणं गुहाण रुंदे उदए बहलम्मि अम्ह उवएसो । कालवसेण पणट्ठो सरिकूले जादविडवो व्व ॥ २७५३

अब्भंतरबाहिरए समंतदो होदि दिव्वतडवेदी । जोयणदलमुस्सेहो पणसयचावाणि वित्थारो ॥ २७५४

१ । दं ५०० ।

२

जोयणदलवासजुदो अब्भंतरबाहिरम्मि वणसंडो । पुव्विल्लवेदिएहिं समाणवेदीहि परियरिओ ॥ २७५५

१ ।

२

उवरिं वि माणुसुत्तर समंतदो दोण्णि होंति तडवेदी । अब्भंतरम्मि भागे वणसंडो वेदितोरणेहिं जुदो ॥ २७५६

बिउणम्मि सेलवासे जोयणलक्खाणि खिवसु पणदालं । तप्परिमाणं सूई बाहिरभागे गिरिंदस्स ॥ २७५७

४५०२०४४ ।

एक्को जोयणकोडी लक्खा बादाल तीसछसहस्सा । तेरसजुदसत्तसया परिधीए[3] बाहिरम्मि अदिरेओ[4] ॥२७५८

१४२३६७१३ ।

अदिरेयस्स पमाणं सहस्समेक्क तिसयब्भहियं[5] । तीस धणू इगिहत्थो दंडंगुलाइं जवा पंच ॥ २७५९

दं १३३० । ह १ । अं १० । ज ५ ।

उन गुफाओंके विस्तार उंचाई और बाहल्यका उपदेश कालवश हमारे लिये नदीतटपर उत्पन्न हुए वृक्षके समान नष्ट हो गया है ॥ २७५३ ॥

इस पर्वतके अभ्यन्तर व बाह्य भागमें चारों ओर दिव्य तटवेदी है जिसका उत्सेध आध योजन और विस्तार पांचसौ धनुषप्रमाण है ॥ २७५४ ॥ उत्सेध यो. $\frac{1}{2}$ । विस्तार दं. ५०० ।

उसके अभ्यन्तर व बाह्य भागमें पूर्वोक्त वेदियोंके समान वेदियोंसे व्याप्त और आध योजन-मात्र विस्तारसे सहित वनखण्ड है ॥ २७५५ ॥ $\frac{1}{2}$ ।

मानुषोत्तरपर्वतके ऊपर भी चारों ओर दो तटवेदियां हैं । इनके अभ्यन्तरभागमें वेदी व तोरणोंसे संयुक्त वनखण्ड स्थित है ॥ २७५६ ॥

इस पर्वतके दुगुणे विस्तारमें पैंतालीस लाख योजनोंको मिला देनेपर उसकी बाह्य सूचीका प्रमाण होता है ॥ २७५७ ॥ १०२२ × २ + ४५००००० = ४५०२०४४ यो. ।

इस पर्वतकी बाह्य परिधि एक करोड़ ब्यालीस लाख छत्तीस हजार सातसौ तेरह योजनसे अधिक है ॥ २७५८ ॥ १४२३६७१३ ।

यह बाह्य परिधि उपर्युक्त प्रमाणसे जितनी अधिक है, उस अधिकताका प्रमाण एक हजार तीनसौ तीस धनुष एक हाथ दश अंगुल और पांच जौ है ॥ २७५९ ॥

दं. १३३०, ह. १, अं. १०, जौ ५ ।

---

१ द ब सरिकूडे जादविदलोव्व. २ द ब माणेसुत्तर. ३ द परिहीए. ४ द ब अधिरेओ. ५ द ब अधिरेयस्स. ६ द सहस्समेकं च तीस अभहिय.

पणदाकलक्खसंखा सूई अब्भंतरम्मि भागम्मि । णवचउदुखतिदुचउहयगिअंककमेणेव परिहिजोयणया ॥२७६०

४५००००० । १४२३०२४९ ।

सूचीए कदिए कदि दहगुणमूलं च लद्ध चउभजिदं । समवट्टवसुमईए हवेदि तं सुहमखेत्तफलं ॥ २७६१

णभपक्खपंचदुगसगदुगसगसगपंचतिदुखछक्का । अंककमे खेत्तफलं मणुसजगे सेलफलजुत्तं[1] ॥ २७६२

१६०२३५७७२७२५१० ।

दुगुणाए सूचीए दोसुं बासो विसोधिदस्स कदी । सोज्झस्सं चउब्भागं वग्गिय गुणियं च दसगुणं मूलं ॥२७६३

सत्तखणवसत्तेक्का छप्पक्कचउक्कपंचचउएक्कं । अंककमे जोयणया गणियफलं माणुसुत्तरगिरिस्स ॥ २७६४

१४५४६६१७९०७ ।

उवरिम्मि माणुसुत्तरगिरिणो[2] बावीस दिव्वकूडाणि । पुव्वादिचउदिसासुं पत्तेक्कं तिण्णि तिण्णि चेट्ठंति ॥ २७६५

वेरुलियअंजुमगब्भा सउगंधी तिण्णि पुव्वदिब्भाए । रुजगो लोहियअंजणणामा दक्खिणविभागम्मि ॥ २७६६

अभ्यन्तरभागमें इस पर्वतकी सूची पैंतालीस लाख योजन और परिधि अंकक्रमसे नौ, चार, दो शून्य, तीन, दो, चार और एक, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन है ॥ २७६० ॥ अभ्यन्तरसूची ४५००००० । परिधि १४२३०२४९ यो. ।

सूचीके वर्गके वर्गको दशसे गुणा करके उसके वर्गमूलमें चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना समानगोल क्षेत्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल होता है ॥ २७६१ ॥

शून्य, एक, पांच दो, सात, दो, सात, सात, पांच, तीन, दो, शून्य, छह और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण मानुषोत्तरपर्वतके क्षेत्रफलसहित मनुष्यलोकका क्षेत्रफल है ॥ २७६२ ॥ $\sqrt{(४५०२०४४^2)^2 \times १०} \div ४ = १६०२३५७७२७२५१०$ ।

दुगुणित बाह्यसूचीमेंसे दोनों ओरके व्यास को घटाकर जो शेष रहे उसके वर्गको शोध्य राशिके चतुर्थ भागके वर्गसे गुणित करके पुनः दशगुणा कर वर्गमूल निकालनेपर [वलयाकार क्षेत्रका] क्षेत्रफल आता है ॥ २७६३ ॥

सात, शून्य, नौ, सात, एक, छह, छह, चार, पांच, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण मानुषोत्तरपर्वतका क्षेत्रफल है ॥ २७६४ ॥

$\sqrt{\{(४५०२०४४ \times २) - (१०२२ \times २)\}^2 \times \frac{२०४४^2}{४} \times १०} = १४५४६६१७९०७$ ।

इस मानुषोत्तर पर्वतके ऊपर बाईस दिव्य कूट स्थित हैं। इनमें पूर्वादिक चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें तीन तीन कूट हैं ॥ २७६५ ॥

इनमेंसे वैडूर्य, अञ्जगर्भ और सौगन्धी, ये तीन कूट पूर्वदिशामें तथा रुचक, लोहित और अंजन नामक तीन कूट दक्षिणदिशाभागमें स्थित हैं ॥ २७६६ ॥

---

१ द ब कमेणेव. २ द ब सेलपणजुत्तं. ३ द ब सोऊस. ४ द गिरिणा. ५ द वेलुरिय.

अंजणमूलं कणयं[1] रजदं णामेहि पच्छिमदिसाए । फलिहंकपवालाइं कूडाइं उत्तरदिसाए ॥ २७६७
तवणिज्जरयणणामा कूडाइं[2] दोण्णि वि हुदासणदिसाए । ईसाणदिसाभाए पहंजणो वज्जणामो त्ति ॥ २७६८
एक्को चिय वेलंबो कूडो चेट्ठेदि मारुददिसाए । णइरिदिदिसाविभागे णामेणं सव्वरयणो त्ति ॥ २७६९
पुव्वादिचउदिसासुं वण्णिदकूडाण अग्गभूमीसुं । एक्केक्कसिद्धकूडा होंति वि माणुसुत्तरे सेले ॥ २७७०
गिरिउदयचउब्भागो उदयो कूडाण होदि पत्तेक्कं । तेत्तियमेत्तो रुंदो[3] मूले सिहरे तदद्धं च ॥ २७७१

४३० को १ । ४३० को १ । २१५ । १/२

मूलसिहराण रुंदं मेलिय दलिदम्मि होदि जं लद्धं । पत्तेक्कं कूडाणं मज्झिमविक्खंभपरिमाणं ॥ २७७२

३२२ । को २ । ३/४

मूलम्मि य सिहरम्मि य कूडाणं होंति दिव्ववणसंडा । मणिमयमंदिररम्मा वेदीपहुदीहिं सोहिल्ला ॥ २७७३
चेट्ठंति माणुसुत्तरसेलस्स य चउसु सिद्धकूडेसुं । चत्तारि जिणणिकेदा णिसहजिणभवणसारिच्छा ॥ २७७४

अंजनमूल, कनक और रजत नामक तीन कूट पश्चिम, तथा स्फटिक, अंक और प्रवाल नामक तीन कूट उत्तरदिशामें स्थित हैं ॥ २७६७ ॥

तपनीय और रत्न नामक दो कूट अग्निदिशामें तथा प्रभंजन और वज्र नामक दो कूट ईशानदिशाभागमें स्थित हैं ॥ २७६८ ॥

वायव्यदिशामें केवल एक वेलंबकूट और नैऋत्यदिशाभागमें सर्वरत्न नामक कूट स्थित है ॥ २७६९ ॥

मानुषोत्तरपर्वतके ऊपर पूर्वादिक चार दिशाओंमें बतलाये हुए कूटोंकी अग्रभूमियोंमें एक एक सिद्धकूट भी हैं ॥ २७७० ॥

इन कूटोंमेंसे प्रत्येक कूटकी उंचाई पर्वतकी उंचाईके चतुर्थ भागप्रमाण, तथा इतना ही उनका मूलमें विस्तार भी है। शिखरपर इससे आधा विस्तार है ॥ २७७१ ॥

उत्सेध यो. ४३०, को. १ । मूलविस्तार यो. ४३०, को. १ । शिखरविस्तार यो. २१५, को. $\frac{1}{2}$ ।

मूल और शिखरके विस्तारको मिलाकर आधा करनेपर जो प्राप्त हो उतना प्रत्येक कूटके मध्यम विस्तारका प्रमाण है ॥ २७७२ ॥

$$४३०\frac{1}{4} + २१५\frac{1}{2} \div २ = ३२२\frac{1}{8} = \text{यो. } ३२२, \text{ को. } २\frac{3}{4} ।$$

कूटोंके मूलमें व शिखरपर मणिमय मन्दिरोंसे रमणीय और वेदीआदिकोंसे सुशोभित दिव्य वनखण्ड स्थित हैं ॥ २७७३ ॥

मानुषोत्तरपर्वतके चारों सिद्धकूटोंपर निषधपर्वतपर स्थित जिनभवनोंके सदृश चार जिनमन्दिर स्थित हैं ॥ २७७४ ॥

---

१ ब कहो रजवणामेहि, ब कण्णेय रजदणामेहि. २ द ब पलिहंक°. ३ द ब कूडाए. ४ द ब तेत्तियमेत्ता रुंदे.

सेसेसुं कूडेसुं वेंतरदेवाण दिव्वपासादा । वररयणकंचणमया पुव्वोदिदवण्णणेहिं जुदा ॥ २७७५
पुव्वदिसाए जसस्सदिजसकंतजसोधरा तिकूडेसुं । कमसो अहिवइदेवा बहुपरिवारेहिं चेट्ठंति ॥ २७७६
दक्खिणदिसाए णंदो णंदुत्तरअसणिघोसणामा य । कूडतिदयम्मि वेंतरदेवा णिवसंति लीलाहिं ॥ २७७७
सिद्धत्थो वेसमणो माणसदेओ त्ति पच्छिमदिसाए । णिवसंति तिकूडेसुं तग्गिरिणो वेंतराहिवई ॥ २७७८
उत्तरदिसाए देओ सुदंसणो मेघसुप्पबुद्धक्खा । कूडतिदयम्मि कमसो होंति हु मणुसुत्तरगिरिस्स ॥ २७७९
अग्गिदिसाए सादीदेओ तवणिज्जणामकूडम्मि । चेट्ठंति रयणकूडे भवणिंदो वेणुणामेणं ॥ २७८०
ईसाणदिसाए सुरो हणुमाणो[1] वज्जणाभिकूडम्मि । वसदि पभंजणकूडे भवणिंदो वेणुधारि त्ति ॥ २७८१
वेलंबणामकूडे वेलंबो णाम मारुददिसाए । सव्वरयणम्मि णइरिदिदिसाए सो वेणुधारि त्ति ॥ २७८२
णइरिदिपवणदिसाओ वज्जिय अट्ठसु दिसासु पत्तेक्कं । तिय तिय कूडा सेसं[2] पुव्वं वा केइ इच्छंति ॥ २७८३
धादइसंडपवण्णिदइसुगारगिरिंदसरिसवण्णणया । आयामेणं दुगुणं दीवम्मि य पोक्खरद्धम्मि ॥ २७८४

शेष कूटोंपर पूर्वोक्त वर्णनाओंसे संयुक्त उत्तम रत्न एवं सुवर्णमय व्यन्तरदेवोंके दिव्य प्रासाद हैं ॥ २७७५ ॥

मानुषोत्तरशैलके पूर्वदिशासम्बन्धी तीन कूटोंपर क्रमसे यशस्वान्, यशस्कान्त और यशोधर नामक तीन अधिपति देव बहुत परिवारके साथ निवास करते हैं ॥ २७७६ ॥

इसीप्रकार दक्षिणदिशाके तीन कूटोंपर नन्द (नन्दन), नन्दोत्तर और अशनिघोष नामक तीन व्यन्तरदेव लीलापूर्वक निवास करते हैं ॥ २७७७ ॥

उस पर्वतके पश्चिमदिशासम्बन्धी तीन कूटोंपर सिद्धार्थ, वैश्रवण (क्रमण) और मानसदेव (मानुष), ये तीन व्यन्तराधिपति निवास करते हैं ॥ २७७८ ॥

मानुषोत्तरपर्वतके उत्तरदिशासम्बन्धी तीन कूटोंपर क्रमशः सुदर्शन, मेघ (अमोघ) और सुप्रबुद्ध नामक तीन देव स्थित हैं ॥ २७७९ ॥

अग्निदिशाके तपनीय नामक कूटपर स्वातिदेव और रत्नकूटपर वेणु नामक भवनेन्द्र स्थित है ॥ २७८० ॥

ईशानदिशाके वज्रनाभिकूटपर हनुमान नामक देव और प्रभंजनकूटपर वेणुधारी (प्रभंजन) भवनेन्द्र रहता है ॥ २७८१ ॥

वायव्यदिशाके वेलम्ब नामक कूटपर वेलम्ब नामक और नैऋत्यदिशाके सर्वरत्नकूटपर वेणुधारी (वेणुनीत) भवनेन्द्र रहता है ॥ २७८२ ॥

आठ दिशाओंमेंसे नैऋत्य और वायव्य दिशाओंको छोड़कर शेष दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें तीन तीन कूट हैं। शेष वर्णन पूर्वके ही समान है, ऐसा कितने ही आचार्य स्वीकार करते हैं ॥ २७८३ ॥

पुष्करार्द्धद्वीपमें भी धातकीखण्डमें वर्णित इष्वाकार पर्वतोंके सदृश वर्णनवाले और आयामसे दुगुणे [दो इष्वाकार पर्वत स्थित] हैं ॥ २७८४ ॥

१ द ब हणुणामो. २ द ब समंजण. ३ द ब सेसुं.

दोण्णि वि इसुगाराणं विचाले होंति दोण्णि विजयवरा । चंदद्धसमायारा[1] एक्केक्का तासु मेरुगिरी ॥ २७८५
धादइसंडे दीवे जेत्तियकुंडाणि जेत्तिया विजया । जेत्तियसरेवर जेत्तियसेलवरा जेत्तियणईओ ॥ २७८६
पोक्खरदीवद्धेसुं तेत्तियमेत्ताणि ताणि चेट्ठंति । दोण्णं इसुगाराणं गिरीण विचालभागेसुं ॥ २७८७
विजया विजयाण तहा वेयड्ढाणं हवंति वेयड्ढा । मेरुगिरीणं मेरू कुलसेला कुलगिरीणं च ॥ २७८८
सरियाणं सरियाओ णाभिगिरिंदाण णाभिसेलाणिं । पणिधिगदा तियदीवे[2] च उस्सेहसमं विणा मेरुं[3] ॥२७८९
एदाणं रुंदाणिं जंबूदीवम्मि भणिदरुंदादो । एत्थ चउग्गुणिदाइं णेयाइं जेण पढमविणा[4] ॥ २७९०
मुत्ता मेरुगिरिंदं कुलगिरिपहुदीणि दीवतिदयम्मि । वित्थारुच्छेहसमो केई एवं परूवेंति ॥ २७९१
छत्तिण्ण माणुसुत्तरसेलं कालोदगं च चेट्ठंति । चत्तारो विजयद्धा दीवद्धे बारस कुलद्दी ॥ २७९२
दीवम्मि पोक्खरद्धे कुलसेलादी तह य दीहविजयद्धा । अब्भंतरम्मि बाहिं अंकमुहा ते खुरुप्पसंठाणा[5] ॥ २७९३
वज्जिय जंबूसामलिणामाइं विजयसरगिरिप्पहुदिं । जंबूदीवसमाणं णामाणिं एत्थ वत्तव्वाँ ॥ २७९४

इन दोनों इष्वाकार पर्वतोंके बीचमें अर्धचन्द्रके समान (चक्रार्धके समान ?) आकारवाले दो उत्तम क्षेत्र और उनमें (दोनों विदेहोंमें) एक एक मेरु पर्वत है ॥ २७८५ ॥

धातकीखण्डद्वीपमें जितने कुंड, जितने विजय, जितने सरोवर, जितने श्रेष्ठ पर्वत और जितनी नदियां हैं, उतने ही वे सब पुष्करार्द्धद्वीपमें भी दोनों इष्वाकार पर्वतोंके अन्तरालभागोंमें स्थित हैं ॥ २७८६-२७८७ ॥

तीनों द्वीपोंमें प्रणिधिगत विजयोंके सदृश विजय, विजयार्द्धोंके सदृश विजयार्द्ध, मेरुपर्वतोंके सदृश मेरुपर्वत, कुलगिरियोंके सदृश कुलगिरि, नदियोंके सदृश नदियां, तथा नाभिगिरियोंके सदृश नाभिपर्वत हैं। इनमेंसे मेरुको छोड़कर शेष सबकी उंचाई समान है ॥ २७८८-२७८९ ॥

सर्व प्रथम कहे हुए विजयोंको छोड़ इनका विस्तार यहां जम्बूद्वीपमें बतलाये हुए विस्तारसे चौगुणा जानना चाहिये ॥ २७९० ॥

मेरुपर्वतको छोड़कर शेष कुलाचल आदिकोंका विस्तार व उंचाई तीनों द्वीपोंमें समान है ऐसा कितने ही आचार्य निरूपण करते हैं ॥ २७९१ ॥

पुष्करार्द्धद्वीपमें चार विजयार्द्ध व बारह कुलपर्वत मानुषोत्तरशैल और कालोदकसमुद्रको छूकर स्थित हैं ॥ २७९२ ॥

पुष्करार्द्धद्वीपमें स्थित वे कुलपर्वतादिक तथा दीर्घविजयार्द्ध अभ्यन्तर व बाह्य भागमें क्रमसे अंकमुख और क्षुरप्रके सदृश आकारवाले हैं ॥ २७९३ ॥

यहां जम्बू और शाल्मली वृक्षोंके नामोंको छोड़कर शेष क्षेत्र, तालाब और पर्वतादिकके नाम जम्बूद्वीपके समान ही कहने चाहिये ॥ २७९४ ॥

---

१ [अरद्धसमायारा]. २ द ब सरोवण. ३ द ब पणिधिसदातियवेदी. ४ द ब अणा मेरु. ५ द ब पटणविणा. ६ ब कुरुप्प°. ७ द ब वत्तंओ.

दोपासेसु य दक्खिणइसुगारगिरिस्स दो भरहखेत्ता । उत्तरइसुगारस्स य हवंति एरावदा दोण्णि ॥ २७९५
दोण्णं इसुगाराणं बारसकुलपव्वयाण विच्चाले । चेट्ठंति सयलविजया अरविवरसरिच्छसंठाणा ॥ २७९६
अंकाकारा विजया हवंति अब्भंतरम्मि भागम्मि । सत्तिमुहं पिव बाहिं सयदुद्विसमौ वि पस्समुजा ॥ २७९७
चत्तारि सहस्साणिं दुसया दसजोयणाणि दसभागा । विक्खंभो हिमवंते णिसहंत चउगुणो कमसो ॥२७९८

४२१०। १० | १६८४२। २ | ६७३६८। ८ |
१९ | १९ | १९ |

एदाणं तिण्णाणं विक्खंभं मेलिदूण चउगुणिदं । सव्वाणं णादव्वं रुंदसमासं कुलगिरीणं ॥ २७९९
दोण्णं इसुगाराणं विक्खंभं बेसहस्सजोयणया । तं पुव्वम्मि विमिस्सं दीवद्धे सेलरुद्धखिदी ॥ २८००

२०००।

जोयणलक्खत्तिदयं पणवण्णसहस्स छस्सयाणिं पि । चउसीदि चउब्भागा गिरिरुद्धखिदीए परिमाणं ॥२८०१

३५५६८४। ४ |
१९ |

आदिमपरिहिप्पहुदीचरिमंतं इच्छिदाण परिहीसुं । गिरिरुद्धखिदिं सोधिय बारसजुदबेसएहिं भजिदूणं ॥२८०२

दक्षिण इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो भरतक्षेत्र, और उत्तर इष्वाकार पर्वतके दोनों पार्श्वभागोंमें दो ऐरावतक्षेत्र हैं ॥ २७९५ ॥

दोनों इष्वाकार और बारह कुलपर्वतोंके अन्तरालमें चक्रके अरोंके छेदोंके सदृश आकारवाले सब विजय स्थित हैं ॥ २७९६ ॥

सब क्षेत्र अभ्यन्तरभागमें अंकाकार और बाह्यभागमें शक्तिमुख हैं। इनकी पार्श्वभुजायें गाड़ीकी उद्धिके समान हैं ॥ २७९७ ॥

हिमवान्पर्वतका विस्तार चार हजार दोसौ दश योजन और एक योजनके उन्नीस भागोंमेंसे दश भाग अधिक है। इसके आगे निषधपर्वतपर्यंत क्रमसे उत्तरोत्तर चौगुणा विस्तार है ॥ २७९८ ॥ हिमवान् ४२१०$\frac{१०}{१९}$। महाहिमवान् १६८४२$\frac{२}{१९}$। निषध ६७३६८$\frac{८}{१९}$।

इन तीनों पर्वतोंके विस्तारको मिलाकर चौगुणा करनेपर जो प्राप्त हो उतने योजनप्रमाण सब कुलपर्वतोंका समस्त विस्तार जानना चाहिये ॥ २७९९ ॥

$४२१०\frac{१०}{१९} + १६८४२\frac{२}{१९} + ६७३६८\frac{८}{१९} \times ४ = ३५३६८४\frac{४}{१९}$।

दोनों इष्वाकार पर्वतोंका विस्तार दो हजार योजनप्रमाण है। इसको पूर्वोक्त कुलपर्वतोंके समस्त विस्तारमें मिला देनेपर पुष्करार्द्धद्वीपमें पर्वतरुद्धक्षेत्रका प्रमाण होता हैं ॥ २८०० ॥

$२००० + ३५३६८४\frac{४}{१९} = ३५५६८४\frac{४}{१९}$।

पर्वतरुद्ध क्षेत्रका प्रमाण तीन लाख पचवन हजार छहसौ चौरासी योजन और चार भाग अधिक है ॥ २८०१ ॥ ३५५६८४$\frac{४}{१९}$।

पुष्करार्द्धद्वीपकी आदिम परिधिसे लेकर अन्तिमान्त इच्छित परिधियोंमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्रको कम करके शेषमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसको अपनी अपनी शलाकाओंसे

---

१ द ब सयदुद्विसमो.

सगसगसलायगुणिदं होदि पुढं भरहपहुदिविजयाणं । इच्छिदपदेसरुंदा तहिं तहिं तिण्णि णियमेणं ॥ २८०३

अहवा—

भरहादिसु विजयाणं बाहिररुंदम्मि आदिमं रुंदं । सोहिय अडलक्खहिदे खयवड्ढी इच्छिदपदेसे ॥ २८०४

एक्कत्तालसहस्सा पंचसया जोयणाणि उणसीदी । तेहत्तरिउत्तरसदकलाओ अब्भंतरे भरहरुंदं ॥ २८०५

४१५७९ । १७३ | २१२ |

भरहस्स मूलरुंदं चउगुणिदे होदि हेमवदमूएं । अब्भंतरम्मि रुंदं तह हरिवरिसस्स चउगुणिदं ॥ २८०६

१६६३१९ । ५६ | २१२ | ६६५२७७ । १२ | २१२ |

हरिवरिसो चउगुणिदो रुंदो अब्भंतरे विदेहस्स । सेसवरिसाण रुंदं पत्तेक्कं चउगुणा हाणी ॥ २८०७

२६६११०८ । ४८ | २१२ | ६६५२७७ । १२ | २१२ | १६६३१९ । ५६ | २१२ | ४१५७९ । १७३ | २१२ |

एवं सगसगविजयाणं आदिमरुंदपहुदीओ । बाहिरचरिमपदेसे रुंदंतिमं ति[2] वत्तव्वं ॥ २८०८

गुणा करनेपर नियमसे भरतादिक क्षेत्रोंका वहां वहां इच्छित स्थानमें (आदि, मध्य और अन्तमें) तीनों प्रकारका विस्तारप्रमाण होता है ॥ २८०२–२८०३ ॥

९१७०६०५—३५५६८४ ÷ २१२ × १ = ४१५७९$\frac{१७३}{२१२}$ भ. क्षे. का आदिविष्कम्भ ।

अथवा—

भरतादिक क्षेत्रोंके बाह्य विस्तारमेंसे आदिम विस्तारको घटाकर जो शेष रहे उसमें आठ लाखका भाग देनेपर इच्छित स्थानमें क्षय-वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ २८०४ ॥

६५४४६$\frac{१२}{२१२}$ − ४१५७९$\frac{१७३}{२१२}$ ÷ ८००००० = $\frac{१२६४९११}{४२४०००००}$ हा. वृ. ।

इकतालीस हजार पांचसौ उन्यासी योजन और एकसौ तिहत्तर भाग अधिक भरतक्षेत्रका अभ्यन्तरविस्तार है ॥ २८०५ ॥ ४१५७९ $\frac{१७३}{२१२}$ ।

भरतक्षेत्रके मूलविस्तारको चारसे गुणा करनेपर हैमवतक्षेत्रका अभ्यन्तरविस्तार और इसको भी चारसे गुणा करनेपर हरिवर्षका अभ्यन्तरविस्तार होता है ॥ २८०६ ॥

हैमवत १६६३१९$\frac{५६}{२१२}$ । हरि ६६५२७७$\frac{१२}{२१२}$ ।

हरिवर्षक्षेत्रके विस्तारको चारसे गुणा करनेपर विदेहक्षेत्रका अभ्यन्तरविस्तार होता है । फिर इसके आगे शेष क्षेत्रोंके विस्तारमें क्रमशः चतुर्गुणी हानि होती गई है ॥ २८०७ ॥

विदेह २६६११०८$\frac{४८}{२१२}$ । रम्यक ६६५२७७$\frac{१२}{२१२}$ । हैरण्यवत १६६३१९$\frac{५६}{२१२}$ ।

ऐरावत ४१५७९$\frac{१७३}{२१२}$ ।

इसप्रकार अपने अपने क्षेत्रोंका आदिम विस्तार आदि है। अब बाह्य चरम प्रदेशपर इनका अन्तिम विस्तार कहा जाता है ॥ २८०८ ॥

---

१ द ब हेमवभूये. २ द ब बाहिरुचरिमपदेसे रुंदंतिमपि.

पंणसट्ठिसहस्साणिं चउस्सया जोयणाणि छादालं । तेरस कलाओ भणिदं भरहक्खिदिबाहिरे एदं ॥ २८०९

६५४४६ । १३
२१२

एत्थ वि पुव्वं वं णेदव्वं ।

पुक्खरवरद्धदीवे खुल्लयहिमवंतसिहरिमेज्झिल्ले । पउमंदहपुंडरीए पुव्वपरदिसम्मि णिग्गदणदीओ ॥ २८१०
अट्ठेक्कछअट्ठतियं अंककमे जोयणाणि गिरिउवरिं । गंतूणं पत्तेक्कं दक्खिणउत्तरदिसम्मि जंति कमे ॥२८११

३८६१८ ।

धादइसंडपवण्णिददोण्णं मेरूण सव्ववण्णणयं । पुत्थेव य वत्तव्वं गयदंतब्भद्दसालकुरुरहिदं[1] ॥ २८१२
छक्केक्कएक्कछद्दुगछक्केक्कं जोयणाणि मेरूणं । अब्भंतरभागट्ठियगयदंताणं चउण्हाणं ॥ २८१३

१६२६११६ ।

णवइगिदोहोचउणभदो अंकक्कमेण जोयणा दीहं । दोमेरूणं बाहिरगयदंताणं चउण्हाणं ॥ २८१४

२०४२२१९ ।

छत्तीसं लक्खाणिं अडसट्ठिसहस्सतिसयपणतीसा । जोयणयाणिं पोक्खरदीवद्धे होदि कुरुचावं ॥ २८१५

३६६८३३५ ।

पैंसठ हजार चारसौ छयालीस योजन और तेरह कला अधिक भरतक्षेत्रका बाह्य भागमें विस्तार कहा गया है ॥ २८०९ ॥ १४२३०२४९ - ३५५६८४$\frac{५}{६६}$ ÷ २१२ × १ = ६५४४६$\frac{१३}{२१२}$ ।

पहिलेके समान यहांपर भी हैमवतादिक क्षेत्रोंका विस्तार चतुर्गुणी वृद्धि व हानिरूप जानना चाहिये ।

पुष्करार्धद्वीपमें क्षुद्रहिमवान् और शिखरी पर्वतपर स्थित पद्मद्रह व पुण्डरीकद्रहके पूर्व और पश्चिमदिशासे निकली हुई नदियां अंकक्रमसे आठ, एक, छह, आठ और तीन अंकप्रमाण अर्थात् अड़तीस हजार छहसौ अठारह योजनमात्र पर्वतके ऊपर जाकर क्रमसे प्रत्येक दक्षिण व उत्तरदिशाकी ओर जाती हैं ॥ २८१०-२८११ ॥ ३८६१८ ।

धातकीखण्डमें वर्णित दोनों मेरुओंका समस्त वर्णन गजदन्त, भद्रशाल और कुरुक्षेत्रोंको छोड़कर यहांपर भी कहना चाहिये ॥ २८१२ ॥

छह, एक, एक, छह, दो, छह और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण मेरुओंके अभ्यन्तरभागमें स्थित चारों गजदन्तोंकी लंबाई है ॥ २८१३ ॥

१६२६११६ ।

नौ, एक, दो, दो, चार, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या प्राप्त हो उतने योजनप्रमाण दोनों मेरुओंके बाह्यभागमें स्थित चारों गजदन्तपर्वतोंकी लंबाई है ॥ २८१४ ॥

२०४२२१९ ।

पुष्करार्द्धद्वीपमें कुरुक्षेत्रका धनुष छत्तीस लाख अड़सठ हजार तीनसौ पैंतीस योजनमात्र है ॥ २८१५ ॥ ३६६८३३५ ।

१ द ब पण्णट्ठ. २ द ब पुव्वं णेदव्वं. ३ द ब 'सिहर. ४ द पउहसह°, ब पउमहसह°. ५ ब गयदंतभद्दसालकुरुरहिदा. ६ द ब अंककमेणाणि.

चोद्दसजोयणलक्खा छासीदिसहस्सणवसयाइं इगितीसा । उत्तरदेवकुरूए पत्तेक्कं होदि रज्जुबाणो ॥ २८१६

१४८६९३१ ।

चउजोयणलक्खाणिं छत्तीससहस्स णवसयाइं पि । सोलसजुदाणि कुरवे' जीवाए होदि परिमाणं ॥ २८१७

४३६९१६ ।

इसुवग्गं चउगुणिदं जीववग्गम्मि खिवस तम्मि तदो । चउगुणबाणविहत्ते लद्धं वट्टस्स विक्खंभो ॥ २८१८

पण्णारसलक्खाणिं उणवीससहस्सयाइं छव्वीसा । इगिवीससदुदसदंसा पोक्खरकुरुमंडले खेत्तं ॥ २८१९

१५१९०२६ । १२१ / २१२

सत्तारसलक्खाणिं चोद्दसजुदसत्तहत्तरिसयाणिं । अट्ठकलाओ पोक्खरकुरवंसए होदि बंकहू ॥ २८२०

१७०७७१४ । ८ / २१२

बे लक्खा पण्णारससहस्ससत्तसयभट्ठवण्णाओ । पुव्वावरेण रुंदं दीवड्ढे भद्दसालवणं ॥ २८२१

२१५७५८ ।

एक्केक्कभद्दसालरुंदा—२४५१ । ७०[४] / ८८

उत्तरदक्खिणभागट्ठिदाणं जो होदि भद्दसालाणं[5] । विक्खंभो कालवसा उद्दिण्णो तस्स उवदेसो ॥ २८२२

उत्तर और देवकुरुमेंसे प्रत्येकका ऋजुबाण चौदह लाख छयासी हजार नौसौ इकतीस योजनप्रमाण है ॥ २८१६ ॥ १४८६९३१ ।

कुरुक्षेत्रकी जीवाका प्रमाण चार लाख छत्तीस हजार नौसौ सोलह योजनमात्र है ॥२८१७॥

४३६९१६ ।

बाणके वर्गको चौगुणाकर उसे जीवाके वर्गमें मिला दो पुनः चौगुणे बाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना गोलक्षेत्रका विस्तार होता है ॥ २८१८ ॥

पुष्करद्वीपसम्बधी कुरुओंका मण्डलाकार क्षेत्र पन्द्रह लाख उन्नीस हजार छब्बीस योजन और एकसौ इक्कीस भाग अधिक है ॥ २८१९ ॥ १५१९०२६$\frac{१२१}{२१२}$ ।

पुष्करद्वीपसम्बन्धी कुरुक्षेत्रका वक्रबाण सत्तरह लाख सतहत्तरसौ चौदह योजन और आठ कलाप्रमाण है ॥ २८२० ॥ १७०७७१४$\frac{८}{२१२}$ ।

पुष्करार्द्धद्वीपमें भद्रशालवनका पूर्वापर विस्तार दो लाख पन्द्रह हजार सातसौ अट्ठावन योजनमात्र है ॥ २८२१ ॥ २१५७५८ ।

एक एक भद्रशालका विस्तार २४५१$\frac{७०}{८८}$ ।

उत्तर-दक्षिण भागमें स्थित भद्रशालवनोंका जो कुछ विस्तार है, उसका उपदेश कालवश नष्ट हो गया है ॥ २८२२ ॥

---

१ द ब क्खे. २ द चउवीस. ३ द मंगळे. ४ द $\frac{५६८}{२१२}$, ब $\frac{५१}{२१२}$ । ५ द ब ठिदाणि. ६ द ब भद्दसालवणं.

गिरिभद्दसालविजया वक्खारविभंगसरिसुरारण्णा । पुव्वावरवित्थारा[1] पोक्खरदीवे विदेहाणं ॥ २८२३
एदाणं पत्तेक्कं मंदरसेलाण धरणिपट्ठम्मि । जोयणचउणवदिसया विक्खंभो पोक्खरद्धम्मि ॥ २८२४
९४०० ।
दो लक्खा पण्णारससहस्ससत्तसयसदट्ठवण्णाओ । जोयणया पुव्वावररुंदो एक्केक्कभद्दसालाणं ॥ २८२५
२१५७५८ ।
उणवीससहस्साणिं सत्तसया जोयणाणि चउणउदी । चउभागो पत्तेक्कं रुंदा चउसट्ठिविजयाणं ॥ २८२६
१९७९४ । १
४
दुसहस्सजोयणाणिं वासा वक्खारयाण पत्तेक्कं । पंचसयजोयणाणिं विभंगसरियाण विक्खंभो ॥ २८२७
२००० । ५००
एक्करससहस्साणिं जोयणया छस्सयाणि अडसीदी । पत्तेक्कं वित्थारो देवारण्णाण दोण्णं पि ॥ २८२८
११६८८ ।
मंदरगिरिपहुदीणं णियणियसंखाए ताडिदे[2] तदिदं । णियणियरुद्धा वासा वासाणं होदि पिंडफलं ॥ २८२९
तं पिंडमट्ठलक्खेसु सोधिदे जं हवे सेसं[3] । णियसंखाए भजिदे णियणियवासा हवंति पत्तेक्कं ॥ २८३०

पुष्करद्वीपमें विदेहोंके गिरि, भद्रशाल, विजय, वक्षार, विभंगनदियां और देवारण्य, ये पूर्व-पश्चिम विस्तृत हैं ॥ २८२३ ॥

पुष्करार्द्धद्वीपमें इन मन्दरपर्वतोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार पृथिवीपृष्ठपर चौरानबैसो योजनप्रमाण है ॥ २८२४ ॥ ९४०० ।

प्रत्येक भद्रशालका पूर्वापरविस्तार दो लाख पन्द्रह हजार सातसौ अट्ठावन योजनप्रमाण है ॥ २८२५ ॥ २१५७५८ ।

चौंसठ विजयोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार उन्नीस हजार सातसौ चौरानबै योजन और चतुर्थ भागसे अधिक है ॥ २८२६ ॥ १९७९४$\frac{१}{४}$ ।

प्रत्येक वक्षारोंका विस्तार दो हजार योजन और प्रत्येक विभंगनदियोंका विस्तार पांचसौ योजनमात्र है ॥ २८२७ ॥ २००० । ५०० ।

दोनों देवारण्योंमेंसे प्रत्येकका विस्तार ग्यारह हजार छहसौ अठासी योजनप्रमाण है ॥ २८२८ ॥ ११६८८ ।

[इष्टसे रहित] मन्दरपर्वतादिकोंके अपने अपने विस्तारको अपनी अपनी संख्यासे गुणित करनेपर जो प्राप्त हो वह अपने अपने द्वारा रुद्ध विस्तार होता है । इन विस्तारोंका जो पिण्डफल हो उस पिण्डफलको आठ लाखमेंसे घटाकर शेषको अपनी संख्यासे भाजित करनेपर प्रत्येकके अपने अपने विस्तार होते हैं ॥ २८२९–२८३० ॥

१ द ब °वित्थारो. २ द ब तादिसं. ३ द ब स पिंड अट्ठसु लक्खेसु सोधिदे सव्वदेसेसं.

दुगुणम्मि भद्दसाले मंदरसेलस्स विक्खंभं । मज्झिमसूईजुत्तं सा सूची कच्छगंधमालिणिए ॥२८३१
एक्कत्तालं लक्खा चालीससहस्स णवसया सोलं । दोमेरुणं बाहिर दुभद्दसालाण अंतो त्ति ॥ २८३२
४१४०९१६ ।
तस्सूजीए परिही एक्कं कोडी य तीसलक्खाणिं । चउणउदिसहस्साणिं सत्तसया जोयणाणि छव्वीसं ॥२८३३
१३०९४७२६ ।
पण्णदविसुद्धपरिहीसेसं चउसट्ठिरूपसंगुणिदं । बारसजुददुसएहिं भजिदम्हि विदेहदीहत्तं ॥ २८३४
अट्ठचउसत्तपणचउअट्ठतिअंककमेण जोयणया । बारसअधियसयंसा तट्टाणविदेहदीहत्तं ॥ २८३५
३८४५७४८ । ११२/२१२
सीदासीदोदाणं वासं दुसहस्स तम्मि अवणिज्जं । अवसेसद्धं दीहं कणिट्ठयं कच्छगंधमालिणिए ॥ २८३६
चउसत्तट्ठेक्कदुगं णवगुक्कमेण जोयणया । छावण्णकला दीहं कणिट्ठयं कच्छगंधमालिणिए ॥ २८३७
१९२१८७४ । ५६/२१२

भद्रशालके दुगुणे विस्तारमें मन्दरपर्वतके विस्तारको मिलाकर जो प्राप्त हो उसे मध्यम सूचीमें मिला देनेपर वह कच्छा और गन्धमालिनीकी सूची होती है ॥ २८३१ ॥

उक्त सूची दोनों मेरुओंके बाहिर दोनों भद्रशालोंके अन्त तक इकतालीस लाख चालीस हजार नौसौ सोलह योजनप्रमाण है ॥ २८३२ ॥

(२१५७५८ × २) + ९४०० + ३७००००० = ४१४०९१६ । ४१४०९१६ ।

इस सूचीकी परिधि एक करोड़ तीस लाख चौरानवे हजार सातसौ छब्बीस योजनप्रमाण है ॥ २८३३ ॥ १३०९४७२६ ।

इस परिधिमेंसे पर्वतरुद्ध क्षेत्रको घटाकर शेषको चौसठसे गुणा करके दोसौ बारहका भाग देनेपर विदेहकी लंबाईका प्रमाण आता है ॥ २८३४ ॥

आठ, चार, सात, पांच, चार, आठ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बारह भाग अधिक कच्छा और गन्धमालिनीके पास विदेहकी लंबाई है ॥ २८३५ ॥

(१३०९४७२६ − ३५५६८४$\frac{४}{११२}$) × ६४ ÷ २१२ = ३८४५७४८$\frac{११२}{२१२}$ ।

इसमेंसे सीता-सीतोदा नदियोंके दो हजार योजनप्रमाण विस्तारको घटा देनेपर जो शेष रहे उसके अर्धभागप्रमाण कच्छा और गन्धमालिनी देशकी कनिष्ठ अर्थात् आदिम लंबाई है ॥ २८३६ ॥

चार, सात, आठ, एक, दो, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छप्पन कला अधिक कच्छा और गन्धमालिनीकी आदिम लंबाई है ॥ २८३७ ॥ ३८४५७४८$\frac{११२}{२१२}$ − २००० ÷ २ = १९२१८७४$\frac{५६}{२१२}$ ।

---

१ द चउसत्तेक्कद्ग.

विजयादीणं वासं तव्वग्गं दसगुणिज्ज तम्मूलं । गिण्हह[1] तत्तो पुह पुह बत्तीसगुणं च करेमाणं ॥ २८३८
बारसजुददुसएहिं भजिदूणं कच्छरुंदमेलविदं[2] । णियणियठाणे वामो अद्धसरूवं विदेहस्स ॥ २८३९
णवजोयणसयसहस्सा चत्तारि सयाणि अट्ठतालं पि । छप्पण्णकलाओ तह विजयाणं होदि परिवड्ढी ॥ २८४०

९४४८ । ५६ / २१२

चउवण्णब्भहियाणिं सयाणि णव जोयणाणि तह भागा । वीसुत्तरमदमेत्ता वक्खारगिरीण परिवड्ढी ॥ २८४१

९५४ । १२० / २१२

जोयणसयाणि दोण्णिं अट्ठत्तीसाधियाणि तह भागा । छत्तीसउत्तरसयं विभंगसरियाण परिवड्ढी ॥ २८४२

२३८ । १३६ / २१२

पंचसहस्सा जोयण पंचसया अट्ठहत्तरीजुत्ता । चउसीदिजुदमदंसा देवारण्णाण परिवड्ढी ॥ २८४३

५५७८ । १८४ / २१२

विजयादीणं आदिमदीहे वड्ढिं विवेज्ज तं होदि । मज्झिमदीहं मज्झिमदीहे तं[3] विवसु अंतदीहत्तं ॥ २८४४

विजयादिकोंका जो विस्तार हो, उसके वर्गको दशसे गुणा करके उसका वर्गमूल ग्रहण करे। पश्चात् उसे पृथक् पृथक् बत्तीससे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे कच्छादेशके विस्तारमें मिलानेसे अपने अपने स्थानपर अर्ध विदेहका विस्तार होता है ॥ २८३८–२८३९ ॥

विजयोंकी वृद्धिका प्रमाण नौ हजार चारसौ अड़तालीस योजन और छप्पन कला अधिक है ॥ २८४० ॥ $\sqrt{(१९७९४\frac{१}{२})^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ९४४८\frac{५६}{२१२}$ ।

नौसौ चौवन योजन और एकसौ बीस भागमात्र वक्षारपर्वतोंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥ २८४१ ॥ $\sqrt{२०००^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ९५४\frac{१२०}{२१२}$ ।

दोसौ अड़तीस योजन और एकसौ छत्तीस भाग अधिक विभंगनदियोंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥ २८४२ ॥ $\sqrt{५००^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = २३८\frac{१३६}{२१२}$ ।

पांच हजार पांचसौ अठत्तर योजन और एकसौ चौरासी भागमात्र देवारण्योंकी वृद्धिका प्रमाण है ॥ २८४३ ॥ $\sqrt{११६८८^२ \times १० \times ३२ \div २१२} = ५५७८\frac{१८४}{२१२}$ ।

विजयादिकोंकी आदिम लंबाईमें उक्त वृद्धिप्रमाणको मिला देनेपर उनकी मध्यम लंबाईका प्रमाण, और मध्यम लंबाईमें भी उस वृद्धिप्रमाणको मिला देनेसे उनकी अन्तिम लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २८४४ ॥

---

१ द ब गिण्हेह. २ द ब कच्छरूणमेलविदं. ३ द ब चक्खसरूवं. ४ द ब ब्भहियाणं. ५ द °दीहत्तं.

दोदोतियइगितियणवएक्कं अंककमेण अंसा य । वारुत्तरएक्कसयं मज्झिल्लं कच्छगंधमालिणिए ॥ २८४५

१९३१३२२ । ११२ / २१२

णभसत्तससत्तणभचउणवेक्कअंककमेण अंसा य । अंडसट्ठिसयं विजयदुवक्खारणगाणमंतमादिल्लं ॥ २८४६

१९४०७७० । १६८ / २१२

पणदोसगइगिचउरो णवेक्क जोयण छहत्तरी अंसा । मज्झिल्ल चित्तकूडे होदि तहा देवपव्वए दीहं ॥ २८४७

१९४१७२५ । ७६ / २१२

णवसगछद्दोचउणवइगि कल छण्णउदिअधियसयमेक्कं । दोवक्खारगिरीणं अंतिम आदी सुकच्छगंधिलए ॥२८४८

१९४२६७९ । १९६ / २१२

अट्ठदुगेक्कं दोपण्णणवइगि[1] अंसा य तालमेत्ताणिं । मज्झिल्लयदीहत्तं विजयाए सुकच्छगंधिलए ॥ २८४९

१९५२१२८ । ४० / २१२

दो, दो, तीन, एक, तीन, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बारह भाग अधिक कच्छा और गन्धमालिनीदेशकी मध्यम लंबाई है ॥ २८४५ ॥ $१९२१८७४\frac{५६}{२१२} + ९४४८\frac{५६}{२१२} = १९३१३२२\frac{११२}{२१२}$ ।

शून्य, सात, सात, शून्य, चार, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अड़सठ भाग अधिक उक्त दोनों क्षेत्रों तथा चित्रकूट व देवमाल नामक दो वक्षारपर्वतोंकी क्रमसे अन्तिम और आदिम लंबाई है ॥ २८४६ ॥

$१९३१३२२\frac{११२}{२१२} + ९४४८\frac{५६}{२१२} = १९४०७७०\frac{१६८}{२१२}$ ।

पांच, दो, सात, एक, चार, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छयत्तर भागमात्र अधिक चित्रकूट व देवमाल पर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥ २८४७ ॥ $१९४०७७०\frac{१६८}{२१२} + ९५४\frac{१२०}{२१२} = १९४१७२५\frac{७६}{२१२}$ ।

नौ, सात, छह, दो, चार, नौ और एक, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छ्यानबै भाग अधिक दोनों वक्षारपर्वतोंकी अन्तिम तथा सुकच्छा और गन्धिला देशकी आदिम लंबाई है ॥२८४८॥ $१९४१७२५\frac{७६}{२१२} + ९५४\frac{१२०}{२१२} = १९४२६७९\frac{१९६}{२१२}$ ।

आठ, दो, एक, दो, पांच, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भागमात्र अधिक सुकच्छा और गंधिला देशकी मध्यम लंबाई है ॥ २८४९ ॥ $१९४२६७९\frac{१९६}{२१२} + ९४४८\frac{५६}{२१२} = १९५२१२८\frac{४०}{२१२}$ ।

---

१ द ब अट्ठट्ठि, ब अट्ठसट्ठि. २ द ब °एक्कं.

छस्सगपणइगिछण्णवएक्कं अंसा य होंति छण्णउदी । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोण्णिसरिच्छाणं ॥ २८५०

१९६१५७६ । ९६
२१२

पणइगिअट्ठिगिछण्णवएक्कं अंसा य वीसमेत्ताणि । दहवदीउम्मिमालिणिमज्झिमयं होदि दीहत्तं ॥२८५१

१९६१८१५ । २०
२१२

तियपणखंदुगछण्णवएक्कं छप्पण्णअधियसयअंसा । दोण्णिणईणं अंतं महकच्छसुवग्गुए आदी ॥ २८५२

१९६२०५३ । १५६
२१२

दुखपंचएक्कसगणवएक्कं अंकक्कमेण जोयणया । महकच्छसुवग्गूए दीहत्तं मज्झिमपएसे ॥ २८५३

१९७१५०२ ।

णभपणणवणभअडणवएक्कं अंसा य होंति छप्पण्णं । विजयाणंतं दोण्णं दोण्णं पि गिरीणमादिल्लं ॥ २८५४

१९८०९५० । ५६
२१२

छह, सात, पांच, एक, छह, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छ्यानवै भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा द्रहवती और ऊर्मिमालिनी नामक दो नदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८५० ॥

१९५२१२८$\frac{४०}{२१२}$ + ९४४८$\frac{५६}{२१२}$ = १९६१५७६$\frac{९६}{२१२}$ ।

पांच, एक, आठ, एक, छह, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बीस भागमात्र अधिक द्रहवती व ऊर्मिमालिनी नदीकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८५१ ॥ १९६१५७६$\frac{९६}{२१२}$ + २३८$\frac{३६}{२१२}$ = १९६१८१५$\frac{२०}{२१२}$ ।

तीन, पांच, शून्य, दो, छह, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छप्पन भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा महाकच्छा और सुवल्गु (सुगन्धा) नामक दो क्षेत्रोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८५२ ॥

१९६१८१५$\frac{२०}{२१२}$ + २३८$\frac{३६}{२१२}$ = १९६२०५३$\frac{१५६}{२१२}$ ।

दो, शून्य, पांच, एक, सात, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण महाकच्छा और सुवल्गु (सुगन्धा) क्षेत्रोंके मध्यम प्रदेशमें लंबाई है ॥२८५३॥

१९६२०५३$\frac{१५६}{२१२}$ + ९४४८$\frac{५६}{२१२}$ = १९७१५०२ ।

शून्य, पांच, नौ, शून्य, आठ, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छप्पन भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा पद्मकूट और सूर्य नामक दो पर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८५४ ॥ १९७१५०२ + ९४४८$\frac{५६}{२१२}$ = १९८०९५०$\frac{५६}{२१२}$ ।

---

१ द ब दीहस्स. २ द ब कच्छसुवग्गूए. ३ द दोण्णं पि विजयाणंतं दोपि गिरीणमादिल्लं.

चउणभणवइगिअइणवएक्कं अंसा सदं छहत्तरियं । वरपउमकूड तह सूरप्पव्वए मज्झिमम्मि दीहत्तं ॥२८५५

१९८१९०४ । १७६ |
२१२ |

णवपणअडदुगभइणवएक्कं अंसा य होंति चुलसीदी । अंतं दोसु गिरीणं आदी वग्गूए कच्छकावदिए॥२८५६

१९८२८५९ । ८४ |
२१२ |

सगणभतियदुगणवणवएक्कं अंसा य चालअधियसयं । मज्झिल्लं दीहत्तं वग्गूए कच्छकावदिए ॥ २८५७

१९९२३०७ । १४० |
२१२ |

पणपणसगइगिखंणभदो चिय अंसा छणउदिअधियसयं । दोण्णं विजयाणंतं आदिल्लं दोसु सरियाणं ॥२८५८

२००१७५५ । १९६ |
२१२ |

चउणवणवइगिखंणभदो चिय अंसा य वीसअधियसयं । मज्झिल्लं गहवदिए दीहत्तं फेणमालिणिए ॥२८५९

२००१९९४ । १२० |
२१२ |

चार, शून्य, नौ, एक, आठ, नौ और एक, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छयत्तर भाग अधिक उत्तम पद्मकूट तथा सूर्यपर्वतकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८५५ ॥ $१९८०९५०\frac{५६}{२१२} + ९५४\frac{१२०}{२१२} = १९८१९०४\frac{१७६}{२१२}$ ।

नौ, पांच, आठ, दो, आठ, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा वल्गु (गन्धा) और कच्छकावती देशकी आदिम लंबाई है ॥ २८५६ ॥

$१९८१९०४\frac{१७६}{२१२} + ९५४\frac{१२०}{२१२} = १९८२८५९\frac{८४}{२१२}$ ।

सात, शून्य, तीन, दो, नौ, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चालीस भाग अधिक वल्गु (गंधा) व कच्छकावतीकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८५७ ॥ $१९८२८५९\frac{८४}{२१२} + ९४४८\frac{५६}{२१२} = १९९२३०७\frac{१४०}{२१२}$ ।

पांच, पांच, सात, एक, शून्य, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छयानवे भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा ग्रहवती व फेनमालिनी नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८५८ ॥

$१९९२३०७\frac{१४०}{२१२} + ९४४८\frac{५६}{२१२} = २००१७५५\frac{१९६}{२१२}$ ।

चार, नौ, नौ, एक, शून्य, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बीस भाग अधिक ग्रहवती और फेनमालिनी नदीकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८५९ ॥ $२००१७५५\frac{१९६}{२१२} + २३८\frac{३६}{२१२} = २००१९९४\frac{१२०}{२१२}$ ।

तियतियदोहोखंणभदो छिय अंसा तहेव चउदालं । अंतं दोसरियाणं आदी आवत्तवप्पकावदिए ॥ २८६०

२००२२३३ । ४४
२१२

एकट्ठं छक्केकं एक्कं खं दोण्णि अंस एक्कसयं । मज्झिल्लयदीहत्तं आवत्तावप्पकावदिए ॥ २८६१

२०११६८१ । १००
२१२

णवदुगिगिदोण्णिखंदुग अंसा छप्पण्णअधिय एक्कसयं । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं णलिणणागणगे ॥ २८६२

२०२११२९ । १५६
२१२

चउअडखंदुगदोणभदुअंककमे जोयणाणि अंसा य । चउसट्ठी मज्झिल्ले णागणगे णलिणकूडम्मि ॥ २८६३

२०२२०८४ । ६४
२१२

अडतियणभतियदुगणभदो छिय अंसा सयं च चुलसीदी । दोसु गिरीणं अंतं आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥ २८६४

२०२३०३८ । १८४
२१२

तीन, तीन, दो, दो, शून्य, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चवालीस भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा आवर्ता व वप्रकावती क्षेत्रकी आदिम लंबाई है ॥ २८६० ॥ $२००१९९४\frac{४४}{२१२} + २८\frac{१००}{२१२} = २००२२३३\frac{१४४}{२१२}$ ।

एक, आठ, छह, एक, एक, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ भाग अधिक आवर्ता व वप्रकावतीकी मध्यम लंबाई है ॥ २८६१ ॥

$२००२२३३\frac{१४४}{२१२} + ९४४८\frac{१५६}{२१२} = २०११६८१\frac{१००}{२१२}$ ।

नौ, दो, एक, एक, दो, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छप्पन भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा नलिन व नाग पर्वतकी आदिम लंबाई है ॥ २८६२ ॥ $२०११६८१\frac{१००}{२१२} + ९४४८\frac{१५६}{२१२} = २०२११२९\frac{१५६}{२१२}$ ।

चार, आठ, शून्य, दो, दो, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौसठ भाग अधिक नागनग व नलिनकूटकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८६३ ॥ $२०२११२९\frac{१५६}{२१२} + ९५४\frac{१३०}{२१२} = २०२२०८४\frac{६४}{२१२}$ ।

आठ, तीन, शून्य, तीन, दो, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा लांगलावर्ता व महावप्रा देशकी आदिम लंबाई है ॥ २८६४ ॥

$२०२२०८४\frac{६४}{२१२} + ९५४\frac{१३०}{२१२} = २०२३०३८\frac{१८४}{२१२}$ ।

१ द ब पव्वकावदिए. २ द ब दो अंककमे.

सगअडचउदुगतियणभदो त्ति य अंसा तहेव अडवीसा । मज्झिमलंबयदीहत्तं महवप्पे लंगलावत्ते ॥ २८६५

२०३२४८७ । २८ |
२१२ |

पणतियणवइगिचउणभदोण्णि य अंसा तहेव चुलसीदी । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोसु सरियाणं ॥२८६६

२०४१९३५ । ८४ |
२१२ |

चउसत्तएक्कदुगचउणभदो अंसा कमेण अट्ठं च । गंभीरमालिणीए मज्झिमलं होदि दीहाए ॥ २८६७

२०४२१७४ । ८ |
२१२ |

दुगएक्कचउदुचउणभदो त्ति य अंसा सयं च चउतालं । दोण्णिणईणं अंतं आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥२८६८

२०४२४१२ । १४४ |
२१२ |

णभछक्कदइगिपण्णभदो त्ति य अंसाणि दोण्णिसयमेत्तं । मज्झिमलंबयदीहत्तं पोक्खलविजए सुवप्पाए ॥२८६९

२०५१८६० । २०० |
२१२ |

सात, आठ, चार, दो, तीन, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अट्ठाईस भाग अधिक महावप्रा व लांगलावर्ताकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८६५ ॥ $२०१३०३८\frac{१}{२}\frac{८}{२}\frac{४}{२} + ९४४८\frac{५}{२}\frac{६}{२} = २०३२४८७\frac{२}{२}\frac{८}{२}$ ।

पांच, तीन, नौ, एक, चार, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक दोनों विजयोंकी अन्तिम तथा गंभीरमालिनी व पंकवती नामक दो नदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८६६ ॥

$२०३२४८७\frac{२}{२}\frac{८}{२} + ९४४८\frac{५}{२}\frac{६}{२} = २०४१९३५\frac{८}{२}\frac{४}{२}$ ।

चार, सात, एक, दो, चार, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और आठ भाग अधिक गंभीरमालिनी व पंकवतीकी मध्यम लंबाई है ॥ २८६७ ॥

$२०४१९३५\frac{८}{२}\frac{४}{२} + २३८\frac{१}{२}\frac{३}{२}\frac{६}{२} = २०४२१७४\frac{८}{२}\frac{६}{२}$ ।

दो, एक, चार, दो, चार, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चवालीस भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा पुष्कला व सुवप्रा नामक दो क्षेत्रोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८६८ ॥

$२०४२१७४\frac{८}{२}\frac{६}{२} + २३८\frac{१}{२}\frac{३}{२}\frac{६}{२} = २०४२४१२\frac{१}{२}\frac{४}{२}\frac{४}{२}$ ।

शून्य, छह, आठ, एक, पांच, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसौ भागमात्र अधिक पुष्कला व सुवप्रा विजयकी मध्यम लंबाई है ॥२८६९॥

$२०४२४१२\frac{१}{२}\frac{४}{२}\frac{४}{२} + ९४४८\frac{५}{२}\frac{६}{२} = २०५१८६०\frac{२}{२}\frac{००}{२}$ ।

णवणभतियट्ठगिछण्णभदो खिय अंसा य होंति चउदालं । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं एक्कसेलचंदणगे ॥२८७०

२०६१३०९ । ४४ / २१२

तियछद्दोद्दोछण्णभदो खिय अंसा सयं च चउसट्ठी । मज्झिल्लयदीहत्तं होदि पुढं एक्कसेलचंदणगे ॥ २८७१

२०६२२६३ । १६४ / २१२

अट्ठिगिदुगतिगछण्णभदो खिय अंसा दुहत्तरी अंतं । दीहं दोसु गिरीणं आदी वप्पाए पोक्खलावदिए ॥ २८७२

२०६३२१८ । ७२ / २१२

छछक्कछक्कदुगसगणभदुगअंसा सयं च अडवीसं । मज्झिल्लयदीहत्तं वप्पाए पोक्खलावदिए ॥ २८७३

२०७२६६६ । १२८ / २१२

चउँहाक्किक्कं दुगअट्ठणभदो अंसा सयं च चुलसीदी । वप्पाए अंतदीहं आदिल्लं देवभूदरण्णाणं ॥ २८७४

२०८२११४ । १८४ / २१२

नौ, शून्य, तीन, एक, छह, शून्य, और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चवालीस भाग अधिक दोनों विजयोंकी अन्तिम तथा एकशैल और चन्द्रनगकी आदिम लंबाई है ॥ २८७० ॥ २०५१८६०$\frac{२००}{२१२}$ + ९४४८$\frac{१६}{२१२}$ = २०६१३०९$\frac{४४}{२१२}$ ।

तीन, छह, दो, दो, छह, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौंसठ भाग अधिक एकशैल व चन्द्रनगकी मध्यम लंबाई है ॥ २८७१ ॥

२०६१३०९$\frac{४४}{२१२}$ + ९५४$\frac{१२०}{२१२}$ = २०६२२६३$\frac{१६४}{२१२}$ ।

आठ, एक, दो, तीन, छह, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बहत्तर भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा वप्रा व पुष्कलावती देशकी आदिम लंबाई है ॥ २८७२ ॥ २०६२२६३$\frac{१६४}{२१२}$ + ९५४$\frac{१२०}{२१२}$ = २०६३२१८$\frac{७२}{२१२}$ ।

छह, छह, छह, दो, सात, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अट्ठाईस भाग अधिक वप्रा व पुष्कलावती देशकी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८७३ ॥ २०६३२१८$\frac{७२}{२१२}$ + ९४४८$\frac{५६}{२१२}$ = २०७२६६६$\frac{१२८}{२१२}$ ।

चार, एक, एक, दो, आठ, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक वप्रादेशकी अन्तिम तथा देवारण्य व भूतारण्यकी आदिम लंबाई है ॥ २८७४ ॥ २०७२६६६$\frac{१२८}{२१२}$ + ९४४८$\frac{५६}{२१२}$ = २०८२११४$\frac{१८४}{२१२}$ ।

१ द ब अंसा य. २ द एकएकं.

तियणवछस्सगअट्ठणभदो बिय अंसा सयं च छप्पण्णं । मज्झिल्लेयदीहत्तं पत्तेक्कं देवभूदरण्णाणं[1] ॥२८७५

२०८७६९३ । १५६ / २१२

दोसगदुगतिगणवणभदो बिय अंसा सयं च अडवीसं । पत्तेक्कं अंतिल्लं दीहत्तं देवभूदरण्णाणं[2] ॥ २८७६

२०९३२७२ । १२८ / २१२

कच्छादिप्पहुदीणं तिविहवियप्पं णिरूविदं सव्वं । विजयाए मंगलावदिपमुहाए तं च वत्तव्वं ॥ २८७७

कच्छादिसु विजयाणं आदिममज्झिल्लचरिमदीहत्तं । विजयड्ढरुंदमवणिय अद्धकदे इच्छिदस्स दीहत्तं ॥२८७८

सोहसु मज्झिमसुइए[3] मेरुगिरिं दुगुणभद्दसालवणं । सा सूई पम्मादीपरियंतं मंगलावदिए ॥ २८७९

तियपणणवखंणभपणएक्कं अंसा[4] चउत्तरं दुसयं । अंककमे दीहत्तं आदिल्लो पउममंगलावदिए ॥ २८८०

१५००९५३ । २०४ / २१२

तीन, नौ, छह, सात, आठ, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छप्पन भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥२८७५॥

$२०८२११४\frac{१६४}{२१२} + ५५७८\frac{१६४}{२१२} = २०८७६९३\frac{१५६}{२१२}$ ।

दो, सात, दो, तीन, नौ, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अट्ठाईस भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यमेंसे प्रत्येककी अन्तिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८७६ ॥ $२०८७६९३\frac{१५६}{२१२} + ५५७८\frac{१६४}{२१२} = २०९३२७२\frac{१२८}{२१२}$ ।

यहां कच्छादिकोंकी तीन प्रकारकी लंबाईका सब कथन किया जा चुका है । अब मंगलावतीप्रमुख क्षेत्रादिकोंका वह लंबाईका प्रमाण बतलाया जाता है ॥ २८७७ ॥

कच्छादिक क्षेत्रोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लम्बाईमेंसे विजयार्द्धके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करनेपर इच्छित क्षेत्रकी लंबाईका प्रमाण होता है ॥ २८७८ ॥

पुष्करार्द्धकी मध्यम सूचीमेंसे मेरुपर्वत और दुगुणे भद्रशालवनके विस्तारको घटा देनेपर जो शेष रहे उतना मंगलावतीसे पद्मादिपर्यन्त सूचीका प्रमाण है ॥ २८७९ ॥

$३७००००० - (९४०० + ४३१५१६) = ३२५९०८४$ ।

तीन, पांच, नौ, शून्य, शून्य, पांच और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसौ चार भाग अधिक पद्मा व मंगलावती क्षेत्रकी आदिम लम्बाईका प्रमाण है ॥ २८८० ॥ $१५००९५३\frac{२०४}{२१२}$ ।

---

१ द ब रण्णाए. २ द ब °रण्णाए. ३ द ब °सूईए. ४ द ब °गिरिंद दुगुण°. ५ द ब तिदय-पणणवयखंणभपणएक्कंसा.

पणणभपणइगिणवचउएक्कं अंसा सयं च अडदालं । मज्झिमछक्खदीहत्तं पम्माए मंगलावदिए ॥ २८८१

१४९१५०५ । १४८ / २१२

सगपणणभदुगभअट्ठचउएक्कं अंसा कमेण बाणउदी । दोविजयाणं अंतं वक्खारगगाण आदिल्लं ॥ २८८२

१४८२०५७ । ९२ / २१२

दुगणभएक्किगिभअट्ठचउएक्कं अंसा सयेण चुलसीदी । सद्धावदिमायंजणगिरिम्मि मज्झिमछदीहत्तं ॥ २८८३

१४८११०२ । १८४ / २१२

अट्ठचउएक्कणभअट्ठचउएक्कंसा कमेण चउसट्ठी । दोसु गिरीणं अंतं आदिल्लं दोण्णिविजयाणं ॥ २८८४

१४८०१४८ । ६४ / २१२

खंणभसगणभसगचउइगि अंसा अट्ठं मज्झदीहत्तं । पत्तेक्क सुपम्माए रमणिज्जाणामविजयाए ॥ २८८५

१४७०७०० । ८ / २१२

पांच, शून्य, पांच, एक, नौ, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अड़तालीस भाग अधिक पद्मा व मंगलावती क्षेत्रकी मध्यम लंबाई है ॥ २८८१ ॥ $१५००९५३\frac{३०४}{५२१} - ९४४८\frac{१५६}{५२१} = १४९१५०५\frac{१४८}{५२१}$ ।

सात, पांच, शून्य, दो, आठ, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बानवे भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा श्रद्धावान् और आत्मांजन वक्षारपर्वतकी आदिम लंबाई है ॥ २८८२ ॥

$१४९१५०५\frac{१४८}{५२१} - ९४४८\frac{१५६}{५२१} = १४८२०५७\frac{९२}{५२१}$ ।

दो, शून्य, एक, एक, आठ, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौरासी भाग अधिक श्रद्धावान् और आत्मांजन पर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥ २८८३ ॥ $१४८२०५७\frac{९२}{५२१} - ९५४\frac{१२०}{५२१} = १४८११०२\frac{१८४}{५२१}$ ।

आठ, चार, एक, शून्य, आठ, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौंसठ भाग अधिक दोनों पर्वतोंकी अन्तिम तथा सुपद्मा व रमणीया नामक दो देशोंकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८८४ ॥

$१४८११०२\frac{१८४}{५२१} - ९५४\frac{१२०}{५२१} = १४८०१४८\frac{६४}{५२१}$ ।

शून्य, शून्य, सात, शून्य, सात, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और आठ भागमात्र अधिक सुपद्मा व रमणीया नामक दो देशोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २८८५ ॥ $१४८०१४८\frac{६४}{५२१} - ९४४८\frac{१५६}{५२१} = १४७०७००\frac{८}{५२१}$ ।

१ द ब वक्खारगण°. २ द ब संडावदि°. ३ द ब आदीओ. ४ द ब अट्ठेव. ५ रमणिणाम.

इगिपणदोइगिछक्कडएक्कं अंसा सयं च चउसट्ठी । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं ॥ २८८६

१४६१२५१ । १६४
२१२

तियइगिणभइगिछक्कडएक्कं अंसा तहेव अडवीसं । मज्झिल्लं खीरोदे उम्मत्तजलम्मि पत्तेक्कं ॥ २८८७

१४६१०१३ । २८
२१२

चउसगसगणभछक्कं चउएक्कंसा सयं च चउरधियं । दोण्णं णईणमंतिमदीहत्तं आदि[1] दोसु विजयाणं ॥२८८८

१४६०७७४ । १०४
२१२

छद्दोतियइगिपणचउएक्कं अंसा तहेव अडदालं । मज्झिल्लयवित्थारं महपम्मसुरम्मविजयाए[1] ॥ २८८९

१४५१३२६ । ४८
२१२

सगसगअडइगिचउचउएक्कं अंसा य दुसयचउरधियं । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोसु वक्खारे ॥ २८९०

१४४१८७७ । २०४
२१२

एक, पांच, दो, एक, छह, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चौंसठ भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अंतिम तथा क्षीरोदा व उन्मत्तजला नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८८६ ॥

$१४७०७००\frac{६}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १४६१२५१\frac{१६४}{२१२}$ ।

तीन, एक, शून्य, एक, छह, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अट्ठाईस भाग अधिक क्षीरोदा व उन्मत्तजला नदियोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २८८७ ॥ $१४६१२५१\frac{१६४}{२१२} - २३८\frac{१३६}{२१२} = १४६१०१३\frac{२८}{२१२}$ ।

चार, सात, सात, शून्य, छह, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चार भाग अधिक दोनों नदियोंकी अंतिम तथा महापद्मा व सुरम्या नामक दो देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८८८ ॥

$१४६१०१३\frac{२८}{२१२} - २३८\frac{१३६}{२१२} = १४६०७७४\frac{१०४}{२१२}$ ।

छह, दो, तीन, एक, पांच, चार, और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और अड़तालीस भाग अधिक महापद्मा व सुरम्या नामक देशका मध्यम विस्तार है ॥ २८८९ ॥ $१४६०७७४\frac{१०४}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १४५१३२६\frac{४८}{२१२}$ ।

सात, सात, आठ, एक, चार, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और दोसौ चार भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा अंजन और विजटावान् इन दो वक्षारपर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८९० ॥

$१४५१३२६\frac{४८}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १४४१८७७\frac{२०४}{२१२}$ ।

---

१ द ब आदिओ. २ द ब महपम्मएसुपम्मएविजयाए.

तियदोणवणभचउचउएक्कं अंसा य होंति चुलसीदी । अंजणविजडावदिए होदि हु मज्झिल्लदीहत्तं ॥ २८९१

१४४०९२३ । ८४ ।
२१२ ।

अट्ठछणवणछतियचउएक्कं अंसा छहत्तरेक्कसयं । दोवक्खारगिरीणं अंतं आदी हु दोण्णिविजयाणं ॥ २८९२

१४३९९६८ । १७६ ।
२१२ ।

णभदोपणणभतियचउएक्कं अंसा सयं च वीसधियं । मज्झिल्लयदीहत्तं रम्माए पम्मकावदिए ॥ २८९३

१४३०५२० । १२० ।
२१२ ।

दोसगणभएक्कदुगं चउएक्कंसा तहेव चउसट्ठी । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं ॥ २८९४

१४२१०७२ । ६४ ।
२१२ ।

तियतियअट्ठणभदोचउएक्कं अंसा सयं च चालधियं । मत्तजले सीदोदे पत्तेक्कं मज्झदीहत्तं ॥ २८९५

१४२०८३३ । १४० ।
२१२ ।

तीन, दो, नौ, शून्य, चार, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौरासी भाग अधिक अंजन और विजटावान् पर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥२८९१॥

$१४४१८७७\frac{८४}{२१२} - ९५४\frac{१२०}{२१२} = १४४०९२३\frac{८४}{२१२}$ ।

आठ, छह, नौ, नौ, तीन, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छयत्तर भाग अधिक दो वक्षारपर्वतोंकी अन्तिम तथा रम्या व पद्मकावती नामक दो देशोंकी आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २८९२ ॥

$१४४०९२३\frac{८४}{२१२} - ९५४\frac{१२०}{२१२} = १४३९९६८\frac{१७६}{२१२}$ ।

शून्य, दो, पांच, शून्य, तीन, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ बीस भाग अधिक रम्या व पद्मकावती देशकी मध्यम लंबाई है ॥२८९३॥

$१४३९९६८\frac{१७६}{२१२} - ९४४८\frac{१७६}{२१२} = १४३०५२०\frac{१२०}{२१२}$ ।

दो, सात, शून्य, एक, दो, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चौंसठ भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा मत्तजला व सीतोदा नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८९४ ॥

$१४३०५२०\frac{१२०}{२१२} - ९४४८\frac{१७६}{२१२} = १४२१०७२\frac{६४}{२१२}$ ।

तीन, तीन, आठ, शून्य, दो, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चालीस भाग अधिक मत्तजला और सीतोदामेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २८९५ ॥ $१४२१०७२\frac{६४}{२१२} - २३८\frac{१३६}{२१२} = १४२०८३३\frac{१४०}{२१२}$ ।

पण्णवपण्णभदोचउएक्कं अंसा य होंति चत्तारि । दोसरियाणं अंतं आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥ २८९६

१४२०५९५ । ४
२१२

छचउइगिएक्केक्कं चउरेक्कंसा सयं च सट्ठिजुदं । मज्झिल्लयदीहत्तं संखाए वप्पकावदिए ॥ २८९७

१४१११४६ । १६०
२१२

अट्ठणवछक्केक्कणभं चउएक्कंसा सयं च चउरधियं । दोविजयाणं अंते आदिल्लं दोसु वक्खारे ॥ २८९८

१४०१६९८ । १०४
२१२

तियवडसगणभणवगं चउरेक्कंसं सयं च छण्णउदी । मज्झिमए दीहत्तं आसीविसवेसमणकूडे ॥ २८९९

१४०००७४३ । १९६
२१२

णवअट्ठसगणवणवतियएक्कं अंसा छहत्तरी होंति । दोवक्खारे अंतं आदिल्लं दोसु विजयाणं ॥ २९००

१३९९७८९ । ७६
२१२

पांच, नौ, पांच, शून्य, दो, चार और एक, इन अंकोंके क्रममें जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चार भाग अधिक दोनों नदियोंकी अन्तिम तथा शंखा और वप्रकावती नामक दो देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८९६॥

$$१४२०८३३\frac{१४०}{२१२} - २३८\frac{१३६}{२१२} = १४२०५९५\frac{४}{२१२}।$$

छह, चार, एक, एक, एक, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ साठ भाग अधिक शंखा और वप्रकावती देशकी मध्यम लंबाई है ॥ २८९७ ॥

$$१४२०५९५\frac{४}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १४१११४६\frac{१६०}{२१२}।$$

आठ, नौ, छह, एक, शून्य, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चार भाग अधिक दोनों देशोंकी अन्तिम तथा आशीविष व वैश्रवणकूट नामक दो वक्षारपर्वतोंकी आदिम लंबाई है ॥ २८९८ ॥

$$१४१११४६\frac{१६०}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १४०१६९८\frac{१०४}{२१२}।$$

तीन, चार, सात, शून्य, शून्य, चार और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छयानबे भाग अधिक आशीविष और वैश्रवणकूटकी मध्यम लंबाई है ॥ २८९९ ॥ $१४०१६९८\frac{१०४}{२१२} - ९५४\frac{१३०}{२१२} = १४०००७४३\frac{१९६}{२१२}।$

नौ, आठ, सात, नौ, नौ, तीन, और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और छयत्तर भाग अधिक दोनों वक्षारपर्वतोंकी अंतिम तथा महावप्रा व नलिन देशकी आदिम लंबाई है ॥ २९०० ॥ $१४०००७४३\frac{१९६}{२१२} - ९५४\frac{१३०}{२१२} = १३९९७८९\frac{७६}{२१२}।$

इगिचउतियणभणवतियएक्कं अंसा कमेण वीसं च । मज्झिमए दीहत्तं महवप्पाणलिणविजयम्मि ॥ २९०१

१३९०३४१ । २० / २१२

दोणवअट्ठणभअट्ठतिएक्कं अंसा छहत्तरधियसयं । दोविजयाणं अंतं आदिल्लं दोविभंगसरियाणं ॥ २९०२

१३८०८९२ । १७६ / २१२

चउपणछण्णभअट्ठतियएक्कं अंसा य चाल मज्झिमए । दीहत्तं तत्तजले अंतरवाहीए पत्तेक्कं ॥ २९०३

१३८०६५४ । ४० / २१२

पणइगिचउणभअट्ठतियएक्का अंसा य सोलसधियसयं । दोवेभंगणईणं अंतं आदिल्ल दोसु विजयाणं ॥२९०४

१३८०४१५ । ११६ / २१२

सगछण्णवणभसगतियएक्कं अंसा य सट्ठि परिमाणं । मज्झिमपदेसदीहं कुमुदाए सुवप्पविजयम्मि ॥२९०५

१३७०९६७ । ६० / २१२

एक, चार, तीन, शून्य, नौ, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और बीस भाग अधिक महावप्रा व नलिन क्षेत्रकी मध्यम लंबाई है ॥ २९०१ ॥

$१३९९७८९\frac{७६}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १३९०३४१\frac{२०}{२१२}$ ।

दो, नौ, आठ, शून्य, आठ, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छयत्तर भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा तप्तजला व अन्तरवाहिनी नामक दो विभंगनदियोंकी आदिम लंबाई है ॥ २९०२ ॥

$१३९०३४१\frac{२०}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १३८०८९२\frac{१७६}{२१२}$ ।

चार, पांच, छह, शून्य, आठ, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भाग अधिक तप्तजला व अन्तरवाहिनीमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाईका प्रमाण है ॥ २९०३ ॥ $१३८०८९२\frac{१७६}{२१२} - २३८\frac{१७६}{२१२} = १३८०६५४\frac{४०}{२१२}$ ।

पांच, एक, चार, शून्य, आठ, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ सोलह भाग अधिक दोनों विभंगनदियोंकी अन्तिम तथा कुमुदा व सुवप्रा नामक दो देशोंकी आदिम लंबाई है ॥ २९०४ ॥

$१३८०६५४\frac{४०}{२१२} - २३८\frac{१७६}{२१२} = १३८०४१५\frac{११६}{२१२}$ ।

सात, छह, नौ, शून्य, सात, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और साठ भागप्रमाण कुमुदा व सुवप्रा क्षेत्रके मध्यप्रदेशकी लंबाई है ॥ २९०५ ॥

$१३८०४१५\frac{११६}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १३७०९६७\frac{६०}{२१२}$ ।

---

१ द ब अडतिएक्कं. २ द सगछण्णंणभ°. ३ द सुवप्प°.

णवएक्कपंचएक्कं छत्तियएक्का तहेव चउअंसा । दोविजयदुवक्खारे अंतिल्लादिल्लदीहत्तं ॥ २९०६

१३६१५१९ । ४ / २१२

चउछक्कपंचणभछत्तियएक्कंसा सयं च छण्णवदी । मज्झिल्लं वक्खारे सुहावहक्खे तिकूडणगे ॥ २९०७

१३६०५६४ । १९६ / २१२ (?)

णवणभछण्णवपणतियएक्का अंसा हुवेदि चालीसं । दोवक्खारदुविजए अंतिल्लादिल्लदीहत्तं ॥ २९०८

१३५९६०९ । ४० / २१२ (?)

इगिछक्कएक्कणभपणतियएक्कंसा सयं च छण्णउदी । सरिदाए[1] वप्पविजए पत्तेक्कं मज्झदीहत्तं ॥२९०९

१३५०१६१ । १९६ / २१२ (?)

नौ, एक, पांच, एक, छह, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चार भाग अधिक दोनों क्षेत्रों तथा सुखावह व त्रिकूट नामक दो वक्षारपर्वतोंकी क्रमशः अन्तिम और आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २९०६ ॥

$१३७०९६७\frac{४०}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १३६१५१९\frac{४}{२१२}$ ।

चार, छह, पांच, शून्य छह, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छ्यानवे भाग अधिक सुखावह व त्रिकूटनग नामक वक्षारपर्वतकी मध्यम लंबाई है ॥ २९०७ ॥ $१३६०५६४\frac{१९६}{२१२}$ (?)

$१३६१५१९\frac{४}{२१२} - ९५४\frac{१२०}{२१२} = १३६०५६४\frac{९६}{२१२}$ ।

सूचना—यहां प्रक्रियासे ९६ अंश आते हैं किन्तु मूलमें शब्दों और अंकों दोनोंमें १९६ संख्या पाई जाती है । आगे की गाथा नं. २९०८ में भी क्रमप्राप्त प्रक्रियासे ८८ अंश आते हैं, किन्तु वहां मूलमें ४० अंश पाये जाते हैं जो न तो पूर्ववर्ती ९६ अंशोंको लेकर घटानेसे आते और न १९६ मेंसे । इसी प्रकार आगेके अंक भी प्रक्रियानुसार सिद्ध नहीं होते ।

नौ, शून्य, छह, नौ, पांच, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और चालीस भाग अधिक दोनों वक्षारों तथा सरिता व वप्रा नामक दो देशोंकी क्रमशः अन्तिम और आदिम लंबाईका प्रमाण है ॥ २९०८ ॥ $१३५९६०९\frac{४०}{२१२}$ (?)

$१३६०५६४\frac{९६}{२१२} - ९५४\frac{१२०}{२१२} = १३५९६०९\frac{१८८}{२१२}$ ।

एक, छह, एक, शून्य, पांच, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ छ्यानवे भाग अधिक सरिता व वप्रा देशोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम लंबाई है ॥ २९०९ ॥ $१३५०१६१\frac{१९६}{२१२}$ (?)

$१३५९६०९\frac{१८८}{२१२} - ९४४८\frac{५६}{२१२} = १३५०१६१\frac{१३२}{२१२}$ ।

---

१ द ब सलिलाए.

तियइगिसगणभचउतियएक्कं अंसा सयं च चालधियं । दोविजए अंतिल्लं आदिल्लं देवभूदरण्णाणं' ॥ २९१०

१३४०७१३ । १४० / २१२ | (?)

चउतियइगिपणतितियं एक्कं अट्ठट्ठिअधियसयअंसा । भूदादेवारण्णे हुवेदि मज्झिल्लदीहत्तं ॥ २९११

१३३५१३४ । १६८ / २१२ | (?)

पणपंचपंचणवदुगतियएक्कंसा सयं च छण्णउदी । भूदादेवारण्णे पत्तेक्कं अंतदीहत्तं ॥ २९१२

१३२९५५५ । १९६ / २१२ | (?)

कच्छादिसु विजयाणं आदिममज्झिल्लचरिमदीहत्तं' । विजयद्धरुंदमवणिय अद्धकदे तस्स दीहत्तं ॥ २९१३

दोपंचंबरइगिदुगचउअडछतिण्णितिदय अंसा य । बारस उणवीसहिदा हिमवंतगिरिस्स खेत्तफलं ॥ २९१४

३३६८४२१०५२ । १२ / १९ |

तीन, एक, सात, शून्य, चार, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ चालीस भाग अधिक दोनों क्षेत्रोंकी अन्तिम तथा देवारण्य व भूतारण्यकी आदिम लंबाई है ॥ २९१० ॥ १३४०७१३$\frac{१४०}{२१२}$ (?)

१३५०१६१$\frac{३२}{२१२}$ − ९४८$\frac{१६}{२१२}$ = १३४०७१३$\frac{१६}{२१२}$ ।

चार, तीन, एक, पांच, तीन, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ अड़सठ भाग अधिक देवारण्य व भूतारण्यकी मध्यम लंबाई है ॥ २९११ ॥ १३३५१३४$\frac{१६८}{२१२}$ (?)

१३४०७१३$\frac{१६}{२१२}$ − ५५७८$\frac{१४}{२१२}$ = १३३५१३४$\frac{१०४}{२१२}$ ।

पांच, पांच, पांच, नौ, दो, तीन और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या हो उतने योजन और एकसौ छयानवे भाग अधिक भूतारण्य व देवारण्यमेंसे प्रत्येककी अन्तिम लंबाई है ॥ २९१२ ॥ १३२९५५५$\frac{१९६}{२१२}$ (?)

१३३५१३४$\frac{१०४}{२१२}$ − ५५७८$\frac{१४}{२१२}$ = १३२९५५५$\frac{१३२}{२१२}$ ।

कच्छादिक देशोंकी आदिम, मध्यम और अन्तिम लंबाईमेंसे विजयार्द्धके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करनेपर उसकी लंबाई होती है ॥ २९१३ ॥

दो, पांच, शून्य, एक, दो, चार, आठ, छह, तीन और तीन, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और उन्नीससे भाजित बारह भागप्रमाण हिमवान्पर्वतका क्षेत्रफल है ॥ २९१४ ॥ ३३६८४२१०५२$\frac{१२}{१९}$ ।

---

१ द ब °रण्णाए. २ द ब °दीहत्तं. ३ द ब °हिदो.

एदं चउसीदिहदे बारसकुलपव्वयाण पिंडफलं । होदि हु उसुगारजुदे चोद्दसगिरिरुद्धखेत्तफलं ॥ २९१५

इगिदुगचउअट्ठछत्तियसगचउपणचऊअट्ठदो कमसो । जोयणया एक्कंसो चोद्दसगिरिरुद्धपरिमाणं ॥ २९१६

२८४५४७३६८४२१ । १ | १९ |

अट्ठणवणभचउक्का सत्तट्ठेक्का अ चउतिगयणाइं । छत्तियणवाइ अंककमेणयं अद्धखेत्तफलं ॥ २९१७

९३६०३४१८७४०९८ ।

सगसगछप्पणणभपणचउणवसगपंचसत्तणभणवयं । अंककमे जोयणया होदि फलं तस्स गिरिरहिदं ॥२९१८

९०७५७९४५०५६७७ ।

एदस्सिं[1] खेत्तफले बारसजुत्तेहिं दोसएहिं च । पविहत्ते जं लद्धं तं भरहविदीए खेत्तफलं ॥ २९१९

एक्कचउक्कचउक्केक्कपंचतियगयणएक्कअट्ठदुगा[2] । चत्तारि य जोयणया पणसीदीसयकलाउ तम्माणं ॥ २९२०

४२८१०३५१४४१ । १८५ | २१२ |

इस हिमवान्पर्वतके क्षेत्रफलको चौरासीसे गुणा करनेपर बारह कुलपर्वतोंका एकत्रित क्षेत्रफल होता है । इसमें इष्वाकार पर्वतोंके क्षेत्रफलको भी मिला देनेपर चौदह पर्वतोंसे रुद्ध क्षेत्रफलका प्रमाण होता है ॥ २९१५ ॥

एक, दो, चार, आठ, छह, तीन, सात, चार, पांच, चार, आठ और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एक भाग अधिक चौदह पर्वतोंसे रुद्ध क्षेत्रका क्षेत्रफल है ॥ २९१६ ॥

$२८२९४७३६८४२१\frac{१}{१९} + १६०००००००० = २८४५४७३६८४२१\frac{१}{१९}$ ।

आठ, नौ, शून्य, चार, सात, आठ, एक, चार, तीन, शून्य, छह, तीन और नौ, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण यह पुष्करार्द्धद्वीपका क्षेत्रफल है ॥२९१७॥

९३६०३४१८७४०९८ ।

सात, सात, छह, पांच शून्य, पांच, चार, नौ, सात, पांच, सात, शून्य और नौ, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजनप्रमाण उस पुष्करार्द्धद्वीपके पर्वतरहित क्षेत्रका क्षेत्रफल है ॥ २९१८ ॥ ९०७५७९४५०५६७७ ।

इस क्षेत्रफलमें दोसौ बारहका भाग देनेपर जो लब्ध हो उतना भरतक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥ २९१९ ॥

एक, चार, चार, एक, पांच, तीन, शून्य, एक, आठ, दो और चार, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन और एकसौ पचासी भाग अधिक उस क्षेत्रफलका प्रमाण है ॥ २९२० ॥ ९०७५७९४५०५६७७ ÷ २१२ = $४२८१०३५१४४१\frac{१८५}{२१२}$ ।

---

१ द ब पदेसिं. २ द ब अट्ठदुगा.

भरहखिदीए गणिदं पत्तेक्कं चउगुणं विदेहंतं । तत्तो कमेण चउगुणहाणी[1] एरावदं जाव ॥ २९२१

जंबूदीवखिदीए फलप्पमाणेण पोक्खरवरद्धे । खेत्तफलं किंजेतं एक्करससयाणि चुलसीदी ॥ २९२२

११८४।

चेट्ठंति माणुसुत्तरपरियंतं तस्स लंघणविहीणा । मणुवा माणुसखेत्ते बेअड्ढाइज्जउवहिदीवेसुं ॥ २९२३

। एवं विण्णासो समत्तो।

भरहवसुंधरपहुदिं जाव य एरावदो त्ति अहियारा । जंबूदीवे उत्तं सव्वं तं एत्थ वत्तव्वं[2] ॥ २९२४

। एवं पोक्खरवरदीवद्धभंतरअहियारा समत्ता।

णररासी सामण्णं पज्जत्ता मणुसिणी तपज्जत्ता । इय चउविहभेदजुदो उप्पज्जदि माणुसे खेत्ते ॥ २९२५

रूवेणोणा सेढी सूईअंगुलपहिल्लतदिएहिं । मूलेहिं पविहत्तो हवेदि सामण्णणररासी ॥ २९२६

१ । ३ । १ ।

चउअट्ठपंचसत्तट्ठणवयपंचट्ठतिदयअट्ठणवा । तिचउक्कट्ठणछाहं छछक्कपंचट्ठदुगच्छखचउक्का ॥ २९२७

णभसत्तसयणअट्ठणवएक्क पज्जत्तरासिपरिमाणं । दोण्णिसगदुगछण्णवसमपणट्ठणिपंचणवएक्कं ॥ २९२८

१९८०७०४०६२८५६६०८४३९८३८५९८७५८४।

भरतक्षेत्रका जो क्षेत्रफल है उससे विदेहपर्यन्त प्रत्येक क्षेत्रका क्षेत्रफल उत्तरोत्तर चौगुणा है। फिर इसके आगे ऐरावतक्षेत्र तक क्रमशः चौगुणी हानि होती गई है ॥ २९२१ ॥

जम्बूद्वीपसम्बन्धी क्षेत्रफलके प्रमाणसे पुष्करार्द्धद्वीपके क्षेत्रफलको करनेपर वह ग्यारहसौ चौरासी खण्डप्रमाण होता है ॥ २९२२ ॥

$$(४५०००००^2 - २९०००००^2) \div १०००००^2 = ११८४।$$

दो समुद्र और अढ़ाई द्वीपोंके भीतर मानुषोत्तरपर्वतपर्यन्त मानुषक्षेत्रमें ही मनुष्य रहते हैं। इसके आगे वे उस मानुषोत्तरपर्वतका उल्लंघन नहीं करते ॥ २९२३ ॥

इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ।

जम्बूद्वीपमें भरतक्षेत्रसे लेकर ऐरावतक्षेत्र तक जितने अधिकार कहे गये हैं, वे सब यहांपर कहे जाने चाहिये ॥ २९२४ ॥

इसप्रकार पुष्करार्द्धद्वीपके सब अंतराधिकार समाप्त हुए।

सामान्य, पर्याप्त, मनुष्यिणी और अपर्याप्त, इसप्रकार चार भेदोंसे युक्त मनुष्यराशि मानुषलोकमें उत्पन्न होती है ॥ २९२५ ॥

जगश्रेणीमें सूच्यंगुलके प्रथम और तृतीय वर्गमूलका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे एक कम करदेनेपर सामान्य मनुष्यराशिका प्रमाण होता है ॥ २९२६ ॥

चार, आठ, पांच, सात, आठ, नौ, पांच, आठ, तीन, आठ, नौ, तीन, चार, आठ, शून्य, छह, छह, पांच, आठ, दो, छह, शून्य, चार, शून्य, सात, शून्य, आठ, नौ और एक, इतने अंकप्रमाण पर्याप्त मनुष्यराशि, तथा दो, पांच, सात, दो, छह, नौ, सात, पांच, एक, पांच, नौ,

१ द ब °हाणि. २ द ब सव्वं एयत्त वत्तव्वं. ३ द एदोपण°

तियपणदुगभडणवयं छप्पणभट्ठट्ठएक्कदुगमेक्कं । हगिदुगचउणवपंचय मणुसिणिरासिस्स परिमाणं ॥ २९२९

५९४२११२१८८५६९८२५३१९५१५७९६२७५२ ।

सामण्णरासिमज्झे पज्जत्तं मणुसिणी य सोधिज्ज । अवसेसं परिमाणं होदि यपज्जत्तरासिस्स ॥ २९३०

७ । १
१ २

अंतरदीवमणुस्सा थोवा ते कुरुसु दससु संखेज्जा । तत्तो संखेज्जगुणा हवंति हरिरम्मगेसु वस्सेसुं ॥ २९३१

वरिसे संखेज्जगुणा हेरण्णवदम्मि[2] हेमवदवरिसे । भरहेरावदवस्से संखेज्जगुणा विदेहे य ॥ २९३२

होंति असंखेज्जगुणा लद्धिमणुस्साणि ते च सम्मुच्छा । तत्तो विसेसअधियं माणुससामण्णरासी य ॥ २९३३

पज्जत्ता णिव्वत्तियपज्जत्ता लद्धिया यपज्जत्ता । 'सत्तरिजुत्तसदज्जाखंडे पुण्णिदरलद्धिणरा[4]' ॥ २९३४

। अप्पाबहुगं समत्तं ।

पणपणअज्जाखंडे भरहेरावदम्मि मिच्छगुणठाणं । अवरे वरम्मि चोद्दसपरेंत[5] कआइ दीसंति ॥ २९३५

एक, तीन, पांच, दो, आठ, नौ, छह, पांच, आठ, आठ, एक, दो, एक, एक, दो, चार, नौ और पांच, इतने अंकमात्र मनुष्यिणीराशिका प्रमाण है ॥ २९२७–२९२९ ॥

पर्याप्त मनुष्यराशि १९८०७०४०६२८५६६०८४३९८३८५९८७५८४ ।

मनुष्यिणीराशि ५९४२११२१८८५६९८२५३१९५१५७९६२७५२ ।

सामान्यराशिमेंसे पर्याप्त और मनुष्यिणियोंके प्रमाणका घटा देनेपर जो शेष रहे, उतना अपर्याप्तराशिका प्रमाण होता है ॥ २९३० ॥ ७ । १ ।

अन्तर्द्वीपज मनुष्य थोड़े हैं । इनसे संख्यातगुणे मनुष्य दश कुरुक्षेत्रोंमें और इनसे भी संख्यातगुणे हरिवर्ष एवं रम्यक क्षेत्रोंमें हैं ॥ २९३१ ॥

हरिवर्ष व रम्यकक्षेत्रस्थ मनुष्योंसे संख्यातगुणे हैरण्यवत व हैमवतक्षेत्रमें, इनसे संख्यातगुणे भरत व ऐरावतक्षेत्रमें, और इनसे भी संख्यातगुणे विदेहक्षेत्रमें हैं ॥ २९३२ ॥

इनसे लब्ध्यपर्याप्त मनुष्य असंख्यातगुणे हैं । वे (लब्ध्यपर्याप्त) सम्मूर्च्छन होते हैं । लब्ध्यपर्याप्त मनुष्योंसे विशेष अधिक सामान्य मनुष्यराशि है ॥ २९३३ ॥

पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्तके भेदसे मनुष्य तीन प्रकारके होते हैं । एकसौ सत्तर आर्यखण्डोंमें पर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त और लब्ध्यपर्याप्त तीनों प्रकारके ही मनुष्य होते हैं ॥ २९३४ ॥

अल्पबहुत्वका कथन समाप्त हुआ ।

भरत व ऐरावत क्षेत्रके भीतर पांच पांच आर्यखण्डोंमें जघन्यरूपसे मिथ्यात्वगुणस्थान और उत्कृष्टरूपसे कदाचित् चौदह गुणस्थान तक पाये जाते हैं ॥ २९३५ ॥

---

१ द ब य मणुसिणिं य. २ द गुणवदम्मि. ३ द सत्तरिजुत्तं. ४ द ब पुण्णिदरेसु लद्धिणरा. ५ द ब अवरे अवरम्मि चोद्दसपरंत.

पंचविदेहे सट्ठिसमण्णिदसदअज्जखंडए अवरे । छग्गुणठाणे तत्तो चोद्दसपेरंत दीसंति ॥ २९३६
सव्वेसुं भोगभुवे दो गुणठाणाणि सव्वकालम्मि । दीसंति चउवियप्पं सव्वमिलिच्छम्मि[1] मिच्छत्तं ॥ २९३७
विज्जाहरसेढीए तिगुणट्ठाणाणि सव्वकालम्मि । पणगुणठाणा दीसइ छंडिदविज्जाण चोद्दसट्ठाणं ॥ २९३८
पज्जत्तापज्जत्ता जीवसमासा भवंति ते दोण्णि । पज्जत्तियपज्जत्ती छब्भेया सव्वमणुवाणं ॥ २९३९
दसपाणसत्तपाणा चउसण्णा मणुसगदि हु पंचेंदी । गदिइंदिय तसकाया तेरसजोगा विकुव्वदुगरहिदा ॥ २९४०
ते वेदत्तयजुत्ता अवगदवेदा वि केइ दीसंति । सयलकसाएहिं जुदा अकसाया होंति केइ णरा ॥ २९४१
सयलेहिं णाणेहिं संजमदंसणहिं लेस्सलेस्सेहिं । भव्वाभव्वत्तेहि य छव्विहसम्मत्तसंजुत्ता ॥ २९४२
सण्णी हुवेदि सव्वे ते आहारा तहा अणाहारा । णाणोवजोगदंसणउवजोगजुदा वि ते सव्वे ॥ २९४३

। गुणट्ठाणादी समत्ता ।

पांच विदेहक्षेत्रोंके भीतर एकसौ साठ आर्यखण्डोंमें जघन्यरूपसे छह गुणस्थान और उत्कृष्टरूपसे चौदह गुणस्थान तक पाये जाते हैं ॥ २९३६ ॥

सब भोगभूमिजोंमें सदा दो गुणस्थान (मिथ्यात्व और असंयतसम्यग्दृष्टि) और [उत्कृष्टरूपसे] चार गुणस्थान रहते हैं। सब म्लेच्छखण्डोंमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है ॥ २९३७ ॥

विद्याधरश्रेणियोंमें सर्वदा तीन गुणस्थान (मिथ्यात्व, असंयत और देशसंयत) और उत्कृष्टरूपसे पांच गुणस्थान होते हैं। विद्याओंके छोड़ देनेपर वहां चौदह गुणस्थान भी होते हैं ॥ २९३८ ॥

सब मनुष्योंके पर्याप्त व अपर्याप्त दोनों जीवसमास तथा छहों पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां भी होती हैं ॥ २९३९ ॥

सब मनुष्योंके पर्याप्त अवस्थामें दश और अपर्याप्त अवस्थामें सात प्राण होते हैं। संज्ञायें इनके चारों ही होती हैं। चौदह मार्गणाओंमेंसे क्रमशः गतिकी अपेक्षा मनुष्यगति, इन्द्रियकी अपेक्षा पंचेन्द्रिय, त्रसकाय और पन्द्रह योगोंमें वैक्रियिक और वैक्रियिकमिश्रको छोड़कर शेष तेरह योग होते हैं ॥ २९४० ॥

वे मनुष्य तीनों वेदोंसे युक्त होते हैं, परन्तु कोई मनुष्य (अनिवृत्तिकरणके अवेदभागसे लेकर) वेदसे रहित भी होते हैं। कषायकी अपेक्षा वे सम्पूर्ण कषायोंसे युक्त होते हैं। परन्तु कोई (ग्यारहवें गुणस्थानसे) कषायसे रहित भी होते हैं ॥ २९४१ ॥

ये मनुष्य सम्पूर्ण ज्ञानों, संयमों, दर्शनों, लेश्याओं, अलेश्यत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व और छह प्रकारके सम्यक्त्वसे सहित होते हैं ॥ २९४२ ॥

सब मनुष्य संज्ञामार्गणाकी अपेक्षा संज्ञी, और आहारमार्गणाकी अपेक्षा आहारक एवं अनाहारक भी होते हैं। वे सब ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोगसे सहित होते हैं ॥ २९४३ ॥

गुणस्थानादिकोंका वर्णन समाप्त हुआ।

१ ब छग्गुण°. २ द मेलच्छम्मि, ब मेलिच्छम्मि. ३ द ब पज्जत्तियअपज्जत्ती.

संखेज्जाउवमाणा मणुवा णरतिरियदेवणिरएसुं । सव्वेसुं जायंते सिद्धगदीओ वि पावंति ॥ २९४४
ते संखातीदाऊ जायंते केई जाव ईसाणं । ण हु होंति सलायणरा जम्मम्मि अणंतरे केई ॥ २९४५

। संक्रमणं गदं ।

कोहादिचउक्काणं धूलीराईए तह य कट्ठेणं । गोमुत्तेतणुमलेहिं छल्लेस्सांमज्झिमंसेहिं ॥ २९४६
जे जुत्ता णरतिरिया सगसगजोग्गेहिं लेस्ससंजुत्ता । णारयदेवा केई णियजोग्गणराउयं च बंधंति ॥ २९४७

। आउस्स बंधं गदं ।

उप्पत्ती मणुवाणं गब्भजसम्मुच्छिमं खु दोभेदा । गब्भुब्भवजीवाणं मिस्सं सच्चित्तजोणीए ॥ २९४८
सीदं उण्हं मिस्सं जीवेसुं होंति गब्भपभवेसुं । ताणं भवंति संवडजोणीए मिस्सजोणी यं ॥ २९४९
सीदुण्हमिस्सजोणी सच्चित्ताचित्तमिस्सविउडा य । सम्मुच्छिममणुवाणं सच्चित्तए होंति जोणीओ ॥२९५०
जोणी संखावत्ता कुम्मुण्णदवंसपत्तणामाओ । तेसुं संखावत्ता गब्भेण विवज्जिदा होदि ॥ २९५१
कुम्मुण्णदजोणीए तित्थयरा चक्कवट्टिणो दुविहा । बलदेवा जायंते सेसजणा वंसपत्ताए ॥ २९५२

संख्यात आयुप्रमाणवाले मनुष्य, मनुष्य, तिर्यञ्च, देव और नारकियोंमेंसे सबमें उत्पन्न होते हैं, तथा सिद्धगतिको भी प्राप्त करते हैं ॥ २९४४ ॥

असंख्यातायुष्क मनुष्योंमेंसे कितने ही ईशानस्वर्ग तक उत्पन्न होते हैं । किन्तु अनन्तर जन्ममें शलाकापुरुष कोई भी मनुष्य नहीं होते हैं ॥ २९४५ ॥

संक्रमण समाप्त हुआ ।

जो मनुष्य व तिर्यंच क्रोधादिक चार कषायोंके क्रमशः धूलिरेखा, काष्ठ, गोमूत्र तथा शरीरमलरूप भेदोंके साथ छह लेश्याओंके मध्यम अंशोंसे युक्त हैं वे, तथा अपने अपने योग्य छह लेश्याओंसे संयुक्त कितने ही नारकी व देव भी अपने योग्य मनुष्यायुको बांधते हैं ॥२९४६-२९४७॥

आयुका बन्ध समाप्त हुआ ।

मनुष्योंका जन्म गर्भ व सम्मूर्च्छनके भेदसे दो प्रकार है । इनमेंसे गर्भजन्मसे उत्पन्न जीवोंके सचित्तादि तीन योनियोंमेंसे मिश्र (सचित्ताचित्त) योनि होती है ॥ २९४८ ॥

गर्भसे उत्पन्न जीवोंके शीत, उष्ण और मिश्र, तीनों ही योनियां होती हैं । तथा इन्हीं गर्भज जीवोंके संवृतादिक तीन योनियोंमेंसे मिश्र (संवृतविवृत) योनि होती है ॥ २९४९ ॥

सम्मूर्च्छन मनुष्योंके उपर्युक्त सचित्तादिक नौ गुणयोनियोंमेंसे शीत, उष्ण, मिश्र (शीतोष्ण), सचित्त, अचित्त, मिश्र (सचित्ताचित्त) और विवृत, ये योनियां होती हैं ॥२९५०॥

शंखावर्त, कूर्मोन्नत और वंशपत्र नामक तीन आकारयोनियां होती हैं । इनमेंसे शंखावर्त योनि गर्भसे रहित है ॥ २९५१ ॥

कूर्मोन्नतयोनिसे तीर्थंकर, दो प्रकारके चक्रवर्ती (सकलचक्री और अर्धचक्री) और बलदेव, तथा वंशपत्रयोनिसे शेष साधारण मनुष्य उत्पन्न होते हैं ॥ २९५२ ॥

१ द सिद्धि°. २ ब काइ. ३ द ब गोमुत्तातणु°. ४ द ब छस्सलेसा°. ५ द ब णियजोगाणराउयं. ६ द ब दो भेदो. ७ द ब मिस्स सचित्तो जोणीए. ८ द सक्कड, ब सव्वड. ९ द ब °जोणीए. १० द ब विउला. ११ द ब सचित्तय. १२ ब विवज्जिदो.

एवं सामण्णेसुं होंति मणुस्साण अट्ठ जोणीसुं । एदाणं विसेसाणिं चोद्दसलक्खाणि भजिदाणिं ॥ २९५३

। जोणिपमाणं गदं ।

छव्वीसजुदेक्कसयप्पमाणभोगाखिदीण सुहमेक्कं । कम्मखिदीसु णराणं हवेदि सोक्खं[1] च दुक्खं च ॥२९५४

। सुखदुक्खं[2] गदं ।

केइ पडिबोहणेणं केइ सहावेण तासु भूमीसुं । दट्ठूणं सुहदुक्खं केइ मणुस्सा बहुपयारं[3] ॥ २९५५

जादिभरणेण केई केइ जिणिंदस्स महिमदंसणदो । जिणबिंबदंसणेणं उवसमपहुदीणि केइ गेण्हंति[4] ॥२९५६

। सम्मत्तं गदं ।

एक्कसमयं जहण्णं दुतिसमयप्पहुदि जाव छम्मासं । वरविरहं मणुवजगे[5] उवरिं सिज्झंति अट्ठसमए ॥२९५७

पत्तेक्कं अट्ठसमए बत्तीसदालसट्ठिदुयसदरिं । चुलसीदी छण्णउदी दुचरिमम्मि अट्ठअधियसयं ॥ २९५८

सिज्झंति एक्कसमए उक्कस्से अवरयम्मि एक्केक्कं । मज्झिमपडिवत्तीए चउहत्तरि सव्वसमएसुं ॥ २९५९

इसप्रकार मनुष्योंके सामान्य योनियोंमेंसे आठ, और इनके विशेष भेदोंमेंसे चौदह लाख योनियां होती हैं ॥ २९५३ ॥

योनिप्रमाणका निरूपण समाप्त हुआ ।

मनुष्योंको एकसौ छब्बीस भोगभूमियोंमें (३० भोगभूमियों और ९६ कुभोगभूमियोंमें) केवल सुख, और कर्मभूमियोंमें सुख एवं दुख दोनों ही होते हैं ॥ २९५४ ॥

सुख-दुःखका वर्णन समाप्त हुआ ।

उन भूमियोंमें कितने ही मनुष्य प्रतिबोधनसे, कितने ही स्वभावसे, कितने ही बहुत-प्रकारके सुख-दुःखको देखकर उत्पन्न हुए जातिस्मरणसे, कितने ही जिनेन्द्रभगवान्की कल्याणकादिरूप महिमाके दर्शनसे, और कितने ही जिनबिम्बके दर्शनसे औपशमादिक सम्यग्दर्शनोंको ग्रहण करते हैं ॥ २९५५-२९५६ ॥

सम्यक्त्वका कथन समाप्त हुआ ।

मनुष्यलोकमें मुक्तिगमनका जघन्य अन्तरकाल एक समय और उत्कृष्ट दो-तीन समयादिसे लेकर छह मासपर्यन्त है । इसके पश्चात् आठ समयोंमें जीव सिद्धिको प्राप्त करते ही हैं ॥ २९५७ ॥

इन आठ समयोंमेंसे प्रत्येकमें क्रमशः उत्कृष्टरूपसे बत्तीस, अड़तालीस, साठ, बहत्तर, चौरासी, छ्यानवै और अन्तिम दो समयोंमें एकसौ आठ एकसौ आठ जीव, तथा जघन्यरूपसे एक एक, सिद्ध होते हैं । मध्यम प्रतिपत्तिसे सब समयोंमें चौहत्तर चौहत्तर जीव सिद्ध होते हैं ॥ २९५८-२९५९ ॥ ५९२ ÷ ८ = ७४ ।

१ द ब एदेण. २ द सुक्खं च. ३ द ब ंदुक्ख. ४ द ब ंपयारा. ५ द गिण्हंति. ६ द दुतियसमं. ७ द ब छगे.

तीदसमयाण संखं पणसयबाणउदिरूवसंगुणिदं । अडसमयाधियछम्मासयभजिदं[1] णिव्वदा सव्वे ॥ २९६०

अ ५९२ । मा ६[2] ।

। एवं णिउदिगमणपरिमाणं समत्तं[3] ।

संसारण्णवमहणं[4] तिहुवणभव्वाण पेम्मसुहजणणं[5] । संदरिसियसयलट्ठं सुवासणाहं णमंसामि ॥ २९६१

एवमाइरियपरंपरागंथतिलोयपण्णत्तीए[6] मणुवजगसरूवनिरूवणपण्णत्ती[7] णाम

चउत्थो महाहियारो समत्तो ॥ ४ ॥

अतीतकालके समयोंकी संख्याको पांचसौ बानवे रूपोंसे गुणित करके उसमें आठ समय अधिक छह मासोंका भाग देनेपर लब्ध राशिप्रमाण सब निर्वृत्त अर्थात् मुक्त जीव हैं ॥ २९६० ॥ अतीतसमय × ५९२ ÷ ६ मास ८ समय = मुक्त जीव ।

इसप्रकार सिद्धगतिको प्राप्त होनेवालोंका प्रमाण समाप्त हुआ ।

संसाररूप समुद्रके मथनकर्ता, तीनों लोकोंके भव्योंको प्रेम एवं सुखके जनक, तथा सम्पूर्ण पदार्थोंके दर्शक सुपार्श्वनाथस्वामीको मैं नमस्कार करता हूं ॥ २९६१ ॥

इसप्रकार आचार्यपरंपरागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें मनुष्यलोकस्वरूप निरूपण करनेवाला

चतुर्थ महाधिकार समाप्त हुआ ।

---

१ द ब अडसमयाविय छम्मासयम्मि भजिदं णिम्मदा. २ ब–पुस्तके 'मा ६' इति नास्ति. ३ द ब समत्ता. ४ द ब ससारण्णमहण्णं. ५ द ब पेम्मदुहजलणं. ६ ब °परंपरायगय°. ७ द ब °जगपदावण्णित्तो वणसंपण्णत्ती.

त्रिलोकप्रज्ञप्तिकी प्रस्तावना

१ ग्रंथ-परिचय

तिलोयपण्णत्ति (त्रिलोकप्रज्ञप्ति) भारतीय साहित्यका एक प्राचीन ग्रंथ है। प्राकृत भाषामें हुई है और इसका विषय मुख्यतः विश्वरचना—लोकस्वरूप है, तथा प्रसगवश उसमें धर्म व संस्कृतिसे संबंध रखनेवाली अनेक अन्य बातोंकी भी चर्चा आई है। ग्रंथकर्ताके वचनानुसार समस्त ग्रंथ नौ महाधिकारोंमें विभाजित है (१,८८-८९) जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सामान्य लोकका स्वरूप, (२) नारकलोक, (३) भवनवासीलोक, (४) मनुष्य-लोक, (५) तिर्यग्लोक, (६) व्यन्तरलोक, (७) ज्योतिर्लोक, (८) देवलोक और (९) सिद्धलोक।

ग्रंथकी रूप-रेखा बड़ी सुव्यवस्थित है। प्रत्येक महाधिकारके अन्तर्गत अनेक अधिकार हैं जिनमें भिन्न भिन्न विषयोंका वर्णन किया गया है। कहीं कहीं इन अधिकारोंके भी अवान्तर अधिकार निरूपण किये गये हैं। और कहीं गाथाओंमें वर्णित विषयका संख्यात्मक विवरण दे दिया गया है। ग्रंथकी अधिकांश रचना पद्यात्मक है। किन्तु कुछ गद्यखण्ड भी आगये हैं व कहीं कहीं गाथाओंका प्रस्तावनारूप स्फुट शब्द व वाक्य भी पाये जाते हैं।

प्रथम महाधिकारके दो प्रमुख विभाग हैं— प्रस्तावना व विश्वका सामान्य निरूपण। इसमें कुल २८३ गाथायें और कुछ गद्यखंड है। दूसरे महाधिकारमें १५ अधिकार हैं (२,२–५) जिनमें कुल ३६७ पद्य पाये जाते है। इनमें ४ इन्द्रवज्रा (३६२, ३६४–६६) और १ स्वागता (३६३) को छोड़ शेष सब पद्य गाथा छंदमें हैं। तीसरे महाधिकारमें २४ अधिकार (३,२–६) व २४३ पद्य हैं जिनमें २ इन्द्रवज्रा (२२८ व २४१), ४ उपजाति (२१४-१५, २२९ व २४२) और शेष गाथाबद्ध हैं। चौथे महाधिकारमें १६ अधिकार हैं (४,२-५) और कुछ अधिकारोंमें अवान्तर अधिकार भी हैं। कुल पद्योंकी संख्या २९६१ है। कुछ गद्यखंड भी हैं। पद्योंमें ७ इन्द्रवज्रा (१६२–६३, ५५०–५१, ५७८, ९४१–४२), २ दोधक (५५२ व १२७५), १ शार्दूलविक्रीडित (७०४), २ वसन्ततिलका (९४० व १२११) और शेष गाथा छंदमें हैं। पांचवें महाधिकारमें १६ अधिकार (५,२–४), ३२१ गाथायें व अनेक गद्य-खंड हैं। छठे महाधिकारमें १७ अधिकार है (६,२–४) जिनमें अन्तिम तीन अधिकार महाधिकार ३ के अधिकारोंके समान है। इसकी गाथासंख्या १०३ है। सातवें महाधिकारमें १७ अधिकार हैं (७, २–४) जिनमें अन्तिम नौ तीसरे महाधिकारके समान हैं। इसकी गाथासंख्या ६१९ है व कुछ गद्यखंड भी हैं। आठवें महाधिकारमें २१ अधिकार (८, २–५) हैं इनमेंसे कुछका

स्पष्ट निर्देश नहीं पाया जाता; संभवतः उनके नाम छूट गये हैं। उदाहरणार्थ ११–१२ आदि। इसकी गाथासंख्या ७०३ है जिनमें केवल १ शार्दूलविक्रीडित (७०२) है और शेष गाथा। कुछ गद्यखंड भी हैं। नौवें अन्तिम महाधिकारमें ५ अधिकार व ७७ पद्य हैं जिनमें १ मालिनी (७४) और शेष गाथा रूप हैं।

ग्रंथका सम्पादन केवल थोड़ीसी हस्तलिखित प्राचीन प्रतियोंपरसे किया गया है। सम्पादकोंने ऐसे स्थल भी पाये हैं जहां प्रस्तुत पाठमें उन्हें स्खलन दिखाई देते हैं। कुछ पाठ अत्यधिक भ्रष्ट है, यद्यपि सामान्यतः उनका अर्थ अनुमान करना कठिन नहीं है। कहीं कहीं पंक्तियां छूटी हुई है (जैसे पृष्ठ ३३, २२८–२९, ४४२, ४४८, ४८९, ५७१, ५७६, ६२७–२८, ६३० आदि)। संख्यात्मक निरूपणोंमें अशुद्धियां हैं और बहुधा वे स्थानान्तरित भी हो गये हैं (पृ. ६०, ६४ आदि)। अधिकारोंके नाम सर्वत्र विधिवत् नहीं मिलते। और कहीं कहीं तो वे स्पष्टतः छूटे हुये दिखाई देते है (देखिये महाधिकार ८)। फिर भी उपलब्ध सामग्री की सीमाके भीतर प्रस्तुत पाठ प्रामाणिक कहा जा सकता है, और यदि आगे ग्रंथकी कुछ और प्राचीन प्रतियां मिल सकीं व उनसे प्रस्तुत पाठका मिलान किया जा सका, तो भविष्यमें उक्त त्रुटियां भी दूर की जा सकती है।

अशुद्ध प्रतियोंकी परम्परामें उत्पन्न उपर्युक्त त्रुटियोंके होते हुये भी त्रिलोकप्रज्ञप्ति सामान्यतः पर्याप्त प्राचीन परम्परापर निर्धारित है, और उसमें सामान्यतः एक ही रचियताके हाथ-की एकरूपता दिखाई देती है। प्रत्येक महाधिकारके अन्तमें ग्रंथकर्ताने स्पष्टतः उल्लेख किया है कि त्रिलोकप्रज्ञप्तिके विषयका ज्ञान उन्हें आचार्यपरम्परासे प्राप्त हुआ है। कहीं कहीं 'गुरूपदेश' का भी उल्लेख है; जैसे ७-११३,१६२)। उन्होंने प्राचीन ग्रंथों और उनके पाठान्तरोंका भी उल्लेख किया है। जैसे–आग्रायणी, परिकर्म, लोकविभाग और लोकविनिश्चय। ये ग्रंथ अब हमें उपलभ्य नहीं हैं। उन्होंने अनेक स्थलों (कोई पच्चीससे भी अधिक) पर यह भी स्वीकार किया है कि अमुक विषयका विवरण और उपदेश उन्हें परम्परासे गुरुद्वारा प्राप्त नहीं हुआ या नष्ट हो गया। समस्त ग्रंथके भीतर पाठकको यह अनुभव होता है कि लोकविज्ञान जैसा दुर्गम विषय उसके गणित आदि सहित भिन्न भिन्न आचार्यपरम्पराओंमें अध्ययन किया जाता था और इन परम्पराओंमें कुछ विषयोंपर परस्पर मतभेद भी था। ग्रंथमें चालीससे भी अधिक ऐसे स्थल हैं जहां हमें पाठान्तर रूप गाथाएं प्राप्त होती है और कहीं कहीं 'अथवा' शब्दके द्वारा मतभेदोंका निर्देश किया गया है, जैसे– पृ. ५१, ७१। ग्रंथकर्ताका प्रयोजन यही रहा है कि जहां तक हो सके परम्परागत ज्ञानको यथाशक्ति शुद्ध और पूर्णरूपसे सुरक्षित रखा जाय।

यद्यपि विद्वान् पाठकों व लेखकों द्वारा स्खलनों व क्षेपकोंकी सम्भावना तो तब तक दूर नहीं

की जा सकती जब तक और बहुतसी प्राचीन प्रतियोंका मिलान न कर लिया जाय, तथापि त्रिलोक-प्रज्ञप्तिकी रूपरेखा और विषयप्रतिपादनमें एक ही कर्ताका हाथ दिखाई देता है। ग्रंथके आदिमें स्पष्ट उल्लेखके पश्चात् पूरी रचना नौ महाधिकारोंमें विभक्त की गई है, जिनमेंसे प्रत्येक पुनः अन्तराधिकारोंमें विभाजित हैं जिनका निर्देश प्रारम्भमें ही कर दिया गया है। इस प्रकार समस्त ग्रंथमें एक योजना पाई जाती है। कहीं कहीं पश्चात्के अधिकारमें उपयोगी वस्तुविवरणके लिये पूर्वके किसी अधिकारका उल्लेख किया गया है (६, १०१)। कहीं हमें ऐसे निर्देश मिल जाते हैं—'पुव्वं व वत्तव्वं' (पहलेके समान कथन करना चाहिये—४, २६१, २७४ आदि)। इससे स्पष्ट है कि ग्रंथकर्ता लगातार विषयका प्रतिपादन कर रहा है। आदिमंगलमें पंचपरमेष्ठीको नमस्कारादि किया गया है, किन्तु सिद्धोंको प्रथम और अरहन्तको तत्पश्चात्। फिर प्रथम महाधिकारके अन्तसे प्रारंभके प्रत्येक महाधिकारके आदि और अन्तमें क्रमशः एक एक तीर्थंकरको नमस्कार किया गया है—जैसे १ नाभेय, २ अजित व संभव, ३ अभिनन्दन व सुमति, ४ पद्मप्रभ व सुपार्श्व ५ चन्द्रप्रभ व पुष्पदन्त, ६ शीतल व श्रेयांस, ७ वासुपूज्य व विमल, ८ अनन्त व धर्म तथा ९ शान्ति व कुन्थु। फिर शेष अरसे वर्धमानान्त तीर्थंकरोंको अन्तिम महाधिकारके अन्तमें नमस्कार किया गया है (९, ६७-७३)। इन नमस्कारात्मक पद्योंकी व्यवस्था व स्थानोंमें न केवल एक सुयोजना ही है किन्तु उनमें एक ही कर्ताका हाथ स्पष्ट दिखाई देता है।

२ ग्रंथकी कुछ विशेषतायें और तुलना

यहांपर तिलोयपण्णत्ति जैसे अति प्रामाणिक और प्राचीन ग्रंथके विषयकी कुछ महत्त्वपूर्ण बातोंपर ध्यान दे लेना अच्छा होगा। यह ग्रंथ मुख्यतः करणानुयोगका है जिसमें तीनों लोकोंके सम्बन्धकी समस्त ज्ञात बातोंका विवरण है। इस विशाल रचनामें अनेक रोचक बातोंका सम्बन्धी परिच्छेद भी सम्मिलित हो गये हैं जिनका जैन सिद्धान्त और साहित्यके अध्येताको पूर्वापर कालीन समानताओंकी खोज करके तुलनात्मक अध्ययन करना पड़ता है। परम्परागत विषयोंकी विवरणात्मक रचना होनेसे ति. प. में ऐसे ग्रंथोंसे समानतायें पाई जा सकती हैं जो उससे प्राचीन या अर्वाचीन होते हुए भी उनसे उसके प्रत्यक्ष आदान-प्रदानका कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसी अवस्थामें तद्गत विषयोंका तुलनात्मक अध्ययन तो किया जा सकता है, किन्तु उनके पूर्वापर कालीनत्व तथा परस्पर आदान-प्रदानका निर्णय स्वतंत्र रूपसे किया जाना चाहिये।

जहां तक करणानुयोगकी सामग्री (तत्संबंधी विवरण एवं गणितात्मक करणसूत्रों आदि सहित) का संबंध है, ति. प. का विषय अर्धमागधी आगमकी सूर्यप्रज्ञप्ति (बम्बई १९१९), चन्द्रप्रज्ञप्ति और जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति (बम्बई १९२०) तथा संस्कृत प्राकृतके अन्य प्राचीन अर्वाचीन ग्रंथों—जैसे लोकविभाग, तत्त्वार्थराजवार्तिक, धवला-जयधवला टीका, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिसंग्रह (इं. हि. का. भाग १४ पृ. १८८ आदि) त्रिलोकसार (बम्बई १९१७) और त्रिलोकदीपिका (ह. लि.) से बहुत कुछ

मिलता जुलता है। डॉ. किरफेलने अपनी डाइ कासमोग्राफी डेर इंडेर (बान, लीपज़िग १९२०) में जो सामग्री उपस्थित की है उसका ति. प. से सूक्ष्म मिलान करनेकी आवश्यकता है।

प्रासंगिक विषयोंमें मंगलके विषयकी चर्चा परम्परागत है। इसकी तुलना विशेषावश्यक भाष्य (जिनभद्रकृत दो भागोंमें गुजराती अनुवादसहित, सूरत, संवत् १९८०–८३), धवला टीका तथा पञ्चास्तिकायकी जयसेनकृत टीका (बम्बई १९१५) से करने योग्य है।

अठारह श्रेणियोंकी गणना तथा महाराज आदि पदवियोंकी परिभाषा (१, ४३ आदि) द्वारा हमें प्राचीन भारतके राजानुक्रम एवं वैभवका कुछ परिचय प्राप्त होता है। परमाणु आदि पुद्गलमापों, अंगुल आदि आकाशमापों और व्यवहार पल्य आदि कालमापोंसे हमें तत्कालीन ज्ञानको सुव्यवस्थित करनेके प्रयत्नोंकी स्पष्ट सूचना मिलती है। लोकके मापके लिये इन सबका उपयोग भी किया गया है। ये विषय धवला व जयधवला टीकाओंमें भी वर्णित हैं।

ति. प. के चतुर्थ महाधिकारमें सबसे अधिक रोचक प्रकरण शलाकापुरुषोंके वर्णनका है। इन महापुरुषोंके चरित्र जिनसेनकृत हरिवंशपुराण, जिनसेन और गुणभद्रकृत संस्कृत महापुराण, शीलाचार्यकृत प्राकृत महापुरुषचरित, पुष्पदन्तकृत अपभ्रंश तिसट्ठि-महापुरिसगुणालंकार, हेमचन्द्रकृत संस्कृत त्रिषष्टि-शलाका-पुरुष-चरित, चामुण्डरायकृत कन्नड त्रिषष्टि-लक्षण-महापुराण, तथा अज्ञातकर्तृक तामिल शीपुराण आदि ग्रंथोंमें विस्तारसे वर्णित पाये जाते हैं। इन चरित्रोंपर और भी अनेक ग्रंथ रचे गये हैं जिनमें कहीं सभी और कहीं कुछ या किसी एक ही महापुरुषका चरित्र वर्णन किया गया है। जैन साहित्यिक परम्परामें यह अधिकांश विवरण चिर कालसे चला आता है, और योग्य कवियोंने उसमेंसे अपनी इच्छानुसार पौराणिक या काव्यात्मक रचनाएं तैयार की हैं। ति. प. के समान ही इस विषयका विवरण समवायांग (सूत्र १५६ आदि पृ. १३९ आदि, बम्बई संस्करण अभयदेव टीका सहित) तथा विशेषावश्यक भाष्य (आगमोदय समिति सं. गुजराती अनुवाद सहित सूरत, संवत् १९८०, भाग १ परिशिष्ट पृ. ५४५ आदि) में भी पाया जाता है। तीर्थंकरोंके चरित्रमें बहुतसी धार्मिक व वर्णनात्मक चर्चाएं भी आई हैं। जैसे– समवसरणरचना, ऋद्धियां, चक्रवर्तीकी विजययात्रा इत्यादि जो पश्चात् कालीन लेखकोंके लिये आदर्श सिद्ध हुईं। उल्लेखकी सरलताके लिये इनमेंके अनेक विवरण इस ग्रंथके परिशिष्टोंमें तालिका रूपमें दे दिये गये हैं। विविध ग्रंथोंके विवरणोंकी तुलना कर उनमें भेद तथा वर्णनविस्तारकी बातों-पर ध्यान दिये जानेकी आवश्यकता है।

महावीर स्वामीके पश्चात्की अन्वयपरम्परा (पृ. ३३८ आदि) जैन धार्मिक व साहित्यिक इतिहास ही नहीं किन्तु भारतके इतिहासकी दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उसमें राजाओं, राजवंशों एवं उनकी कालगणनाका भी उल्लेख प्राप्त होता है। महावीरनिर्वाणसे लेकर शकराज तकका काल अनेक विकल्पोंके रूपमें दिया गया है जिससे ज्ञात होता है कि

तिलोयपण्णत्तिकारके सम्मुख अनेक मत-मतान्तर थे और उन्होंने उन्हें यथावत् प्रस्तुत करनेका प्रयत्न किया है। पालक, पुष्यमित्र, वसुमित्र, अग्निमित्र, गन्धर्व, नरवाहन व कल्कि आदि राजाओंके उल्लेख इतिहासोपयोगी हैं।

विविध क्षेत्रों एवं वहांकी नदियों, पर्वतों और मनुष्योंका वर्णन आजके भूगोलके विद्यार्थी-के लिये भले ही अधिक उपयोगी न हो, किन्तु जैन साहित्यकी पृष्ठभूमिको समुचित रूपसे समझनेके लिये इन बातोंका सावधानी पूर्वक अध्ययन आवश्यक है, क्योंकि जैन लेखक तो इन्हीं बातोंमें पगे हुए थे। यही बात आकाश तथा ज्योतिष सम्बन्धी विवरणोंके लिये समझना चाहिये।

सिद्धोंका वर्णन, आत्मचिन्तनके उपाय आदि (अन्तिम महाधिकारमें) जैन विचारधाराकी प्राचीन सम्पत्ति है। इसी प्रकारके विचार, समान शब्दावलीमें, प्राकृत सिद्धभक्ति, आवश्यकके अन्तिम पद्यों तथा कुन्दकुन्दके अनेक ग्रंथोंमें भी पाये जाते हैं।

केवल विषयनिरूपणमें ही नहीं, किन्तु पद्योंकी शब्दरचनामें भी ति. प. अन्य अनेक ग्रंथोंसे समानता रखती है। इनमेंकी अनेक तो प्राचीन परम्परागत गाथाएं ही हैं जिन्हें भिन्न भिन्न ग्रंथकारोंने अपनी रचनाओंमें सम्मिलित किया है। उनमेंसे कुछ ग्रंथ ति. प. से पुराने और कुछ पीछेके हैं, अतएव जहां समानता विशेष है वहां आदान-प्रदानकी संभावना भी हो सकती है। इस दिशामें यहां कुछ प्रयत्न किया जाता है, और यह विश्वास है कि दूसरे विद्वान् इस प्रकारकी अनेक समान गाथाओंकी खोज कर सकेंगे। ये गाथाएं दो मुख्य भागोंमें विभाजित होती हैं। एक तो वे गाथाएं जो कुछ पाठभेद लिये हुए समानता रखती हैं, और दूसरी वे जो प्रायः या अंशतः विषयसाम्यको लिये हुए हैं।

तुलना कीजिये **मूलाचार** (बम्बई सं. १९७७-८०) ५,३४ (अन्तिम पादमें कुछ भेद है) १२,८१-८२ का ति. प. १-९५; ७,६१४-१५ से। मूलाचार १२, ३७-४०, ६२, १०७-८, ११५, १३६-३७, १५० का ति. प. ५, २८-३१; ४-२९५२; ८,६८५-८६; २-२९०; ८,६८०-८१; ३-१८६ से।

तुलना कीजिये **पंचास्तिकाय** (बम्बई १९१५) ७५, १४६, १५२ का ति. प. १-९५; ९,२०-२१ से। **प्रवचनसार** (बम्बई १९३५) १-१, ९, ११, १२, १६, १७; २-६९, ७०, १०३ का ति. प. ९-७३, ५६, ५७, ५८, ५९, ५४, २९, ३०, ५० से। प्रवचन-सार १-५२; २-५४, ३-६८, ९९ (३, ४ भी), १०२, १०४; ३-१९ का ति. प. ९-६४; २-२७७; ९-२८, ३४, ३३, १९, १७ का। **समयसार** (बम्बई १९१९) १११, ३८, ६९, १५४ का ति. प. ९-२३, २४, ६३, ५३. से व समयसार १९, १६, १८८, २०६ का ति. प. ९-४३, २५, ४७, ४९ से।

तुलना कीजिये **भगवती आराधना** (शोलापुर संस्करण) ८८६-८७; ९१६; ९२२; १५८३ का ति. प. ४, ६२८-६२९, ६३४, ६३५, ६१८; तथा ८८८-८९, ९०४, ९३५ का ति. प. ४,६२९, ६३०, ६३६ से।

जोइंदुकृत परमात्मप्रकाश अपभ्रंश भाषाकी रचना है (बम्बई १९३७)। इसका एक पद्य २,६०, अन्य भाषामें है। तथापि परमात्मप्रकाशमें उसकी स्थिति पर्याप्त प्रामाणिक है। इसके अन्तिम पादको छोड़कर शेष सब ति. प. ९-५२ से मिलता है। संभव है जोइंदुने स्वयं उसे उद्धृत किया हो और अपनी रचनासे मेल मिलानेके लिये उसके अन्तिम चरणमें उत्तम पुरुषका निर्देश कर दिया हो।

ति. प. १-९५ का गोम्मटसार – जीवकांड (बम्बई १९१६) ६०३ से मिलान कीजिये। उसी प्रकार ति. प. ३,१८०-८१; ४-२९५२; ८-६८५ आदिका जीवकाण्ड ४२६-२७ ८२, ४२९ आदि। (विशेषावश्यक भाष्य ६९५ भी)। ति. प. ३-९; ४-१२०६; ६,४२-४४; ४८-४९; ७-५३०; ८-५६६ का त्रिलोकसार २०९, ६८७, २६५-६७, २७१-७२, ४११, ५३१ से। उसी प्रकार ति. प. ३-३८; ४-२५९८ (२८१८ भी) ६,३८-४१ का त्रिलोकसार २१५, ७६१, २६१-६३ से।

माधनन्दिने शास्त्रसारसमुच्चयके सूत्रोंपर एक विस्तृत टीका कनाड़ीमें लिखी है (बेलगांव १९१६) इस ग्रंथमें विना नामोल्लेखके अनेक ग्रंथोंके अवतरण दिये गये है। प्राकृतके अवतरण बहुत ही अशुद्ध छपे हैं। सामान्य अवलोकनसे ही निम्न अवतरण ति. प.के दृष्टिमें आये हैं—ति. प. ४,१६१४-२३ (पृ. ७-८); १५००-१ (पृ. २८); १५३४, १५४४ (पृ. ३०); ५२२-२५ (पृ. ३२); ५५०, ६४२, ६४३ (पृ. ३५); ६७५-७८ (पृ. ३७-८); ९०१-३, ९०५, ९२९ (पृ. ४६); १४७२-७३ (पृ. ५६) ८-१६८ (पृ. १०७). शास्त्रसारसमुच्चय टीकामें गाथाएं इतनी अशुद्ध छपी हैं कि उनकी ति. प. की गाथाओंके साथ एकताका पता कठिनाईसे चल पाता है।

३ ग्रंथकार यतिवृषभ

त्रिलोकप्रज्ञप्तिके ग्रंथकर्तृत्व और कालनिर्णयके सम्बन्धमें अनेक विद्वान् विवेचन कर चुके हैं। संभव है इस विषयकी हमारी लेखसूची पूर्ण न हो। तथापि जहां तक हमें ज्ञात हो सका है, इस विषयपर हिंदीमें लिखे गये निबन्ध निम्न प्रकार हैं और उनका हमने प्रस्तावनामें उपयोग भी किया है। —

१. पं. नाथूरामजी प्रेमी द्वारा लिखित ' लोकविभाग और तिलोयपण्णत्ति " (जैन हितैषी १९१७; जैन साहित्य और इतिहास, बम्बई १९४२ पृ. १-२२)।

२. पं. जुगलकिशोर मुख्तार द्वारा लिखित 'कुन्दकुन्द और यतिवृषभ' (अनेकान्त २, पृ. १-१२)।

३. पं. फूलचन्द्र शास्त्री द्वारा लिखित 'वर्तमान त्रिलोकप्रज्ञप्ति और उसके रचनाकाल आदिका विचार' (जैन सिद्धांत भास्कर ११, पृ. ६५-८२)।

४. पं. महेंद्रकुमार न्यायाचार्य द्वारा लिखित जयधवलाकी भूमिका पृ. १२-२५, ९९-६९ आदि (मथुरा, १९४४)।

५. पं. जुगलकिशोर मुख्तार द्वारा लिखित व अभी तक अप्रकाशित "तिलोयपण्णत्ति और यतिवृषभ" जिसमें लेखकने अपने पूर्व लेख (नं. २) का व पं. फूलचन्द्र शास्त्रीके लेख (नं. ३) का पुनः पर्यालोचन किया है। इस अप्रकाशित लेखकी हस्तलिखित प्रतिको हमारे उपयोगके लिये भेजकर पंडितजीने हमें विशेष रूपसे उपकृत किया है।

निम्न ऊहापोहमें जहां इन विद्वानोंका नामनिर्देश किया गया है वहां उनके इन्हीं उपर्युक्त लेखोंसे अभिप्राय है।

स्वयं तिलोयपण्णत्तिके उल्लेखानुसार प्रस्तुत ग्रंथका कर्तृत्व अर्थ और ग्रंथके भेदसे दो प्रकारका है। लोकातीत गुणोंसे सम्पन्न भगवान् महावीर इसके अर्थकर्ता हैं। उनके पश्चात् गौतमादि महान् आचार्योंके क्रमसे इस विषयका ज्ञान परम्परासे चला आया है (१,५५ आदि)। इस ज्ञानको ग्रंथका वर्तमान स्वरूप देनेका श्रेय किसी एक आचार्यको अवश्य होगा। अतएव हमें यह खोज करना आवश्यक है कि क्या प्रस्तुत ग्रंथमें इसका कोई वृत्तांत हमें प्राप्त हो सकता है। ग्रंथकर्ताने आदिमें या पुष्पिकाओंमें न तो अपने गुरुओंका कोई उल्लेख किया और न स्वयं अपना नामनिर्देश। इस प्रसंगमें हमारा ध्यान केवल निम्न लिखित दो गाथाओं (ति. प. ९, ७६-७७) पर जाता है—

पणमह जिणवरवसहं गणहरवसहं तहेव गुणवसहं।
दट्ठूण परिसवसहं जदिवसहं धम्मसुत्तपाढए वसहं॥
चुण्णिस्सरूवछक्करणसरूवपमाण होइ किं जं तं (?)।
अट्ठसहस्सपमाणं तिलोयपण्णत्तिणामाए॥

इन गाथाओंके ठीक अर्थ बैठानेमें कुछ कठिनाई प्रतीत होती है। प्रथम गाथामें यद्यपि 'जिनवरवृषभ' को नमस्कार किया गया है, तथापि उसमें यह भी आभास मिलता है कि कर्ताने वहां अपना नाम जदिवसह (यतिवृषभ) भी प्रकट किया है। दूसरी गाथामें कर्ताने तिलोयपण्णत्तिका प्रमाण बतलानेके लिये संभवतः अपनी ही दो अन्य रचनाओं चूर्णिस्वरूप और [षट् -] करण-स्वरूपका उल्लेख किया है। यह बात अन्य प्रमाणोंसे उपलब्ध वृत्तान्तों द्वारा भी बहुत कुछ समर्थित होती है।

कषायप्राभृतके अध्ययनकी आचार्यपरम्परा बतलाते हुये श्रुतावतारके कर्ता इन्द्रनन्दिने दो आर्या छंदोंसे इस प्रकार कहा है (१५५–१५६)—

पार्श्वे तयोर्द्वयोरप्यधीत्य सूत्राणि तानि यतिवृषभः ।
यतिवृषभनामधेयो बभूव शास्त्रार्थनिपुणमतिः ॥
तेन ततो यतिपतिना तद्गाथावृत्तिसूत्ररूपेण ।
रचितानि षट्सहस्रग्रंथान्यथ चूर्णिसूत्राणि ॥

इस प्रकार यतिवृषभने आचार्य नागहस्ति और आर्यमंक्षुसे (कषायप्राभृत) सूत्रोंका अध्ययन कर शास्त्रार्थमें निपुणता प्राप्त की । (यहां यतिवृषभ शब्दपर श्लेष पाया जाता है वह ध्यान देने योग्य है; क्योंकि वह हमें तिलोयपण्णत्तिकी ऊपर उद्धृत गाथाका स्मरण कराता है ।) फिर उसी कषायप्राभृतपर वृत्ति रूपसे उन्होंने चूर्णिसूत्रोंकी रचना की, जिनका प्रमाण छह हजार ग्रंथ था । यह वृत्तांत अब इन्द्रनन्दि द्वारा प्रसारित केवल मात्र एक परम्परा रूप नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अब हमें स्वयं जयधवला द्वारा उसकी प्रामाणिकता प्राप्त होती है । जयधवलाके आदिमें (वृत्तिसूत्रके कर्ता एवं) आर्यमंक्षुके शिष्य व नागहस्तिके साक्षात् शिष्य यतिवृषभका आशीर्वाद प्राप्त किया गया है, व अनेक वार उनके उस चूर्णिसूत्रका उल्लेख किया गया है जो अब वीरसेन व जिनसेनकृत जयधवला टीकामें सम्मिश्रित पाया जाता है । चूंकि तिलोयपण्णत्तिमें ' यतिवृषभ ' का उल्लेख है तथा उसके प्रमाण निर्देशके लिये ' चूर्णि ' का भी उल्लेख किया गया है एवं कषायप्राभृतपर यतिवृषभकृत चूर्णिसूत्र उपलब्ध है, अतएव अधिक संभवना यही है कि तिलोयपण्णत्ति व कषायप्राभृतके चूर्णिसूत्रके कर्ता एक ही हैं ।

पं. महेंद्रकुमारजीने जयधवला टीकाके अन्तर्गत चूर्णिसूत्रके मुख्य लक्षण प्रतिपादित करनेका कुशल प्रयत्न किया है । ये चूर्णिसूत्र अल्पाक्षर और गूढार्थ हैं । इसी कारण उच्चारणाचार्यको उनका अर्थ अधिक स्पष्ट करनेकी आवश्यकता पड़ी तथा वीरसेन व जिनसेनने उस रचनाके विषयको पूर्णतया समझानेके लिये उसे दशगुना विस्तार दिया । यतिवृषभकी अर्थव्यक्ति व स्पष्टीकरणकी शैली परम्परानुसरिणी है । उन्होंने आठवें पूर्व कर्मप्रवाद व द्वितीय पूर्वकी पंचम वस्तुके चतुर्थ प्राभृत कर्मप्रकृतिका उल्लेख किया है । उन्होंने आर्यमंक्षु और नागहस्तिमें परम्परा मतभेदका भी उल्लेख किया है, तथा यह भी कहा है कि उनमें नागहस्तिका मत परम्परा–सम्मत होनेसे अधिक ग्रहणीय है । उच्चारणावृत्तिमें बहुधा चूर्णिसूत्रका विस्तार पाया जाता है, यद्यपि अनेक स्थलोंपर उनमें भी परस्पर मतभेद है ।

यतिवृषभकी अन्य रचना करणस्वरूप या षट्करणस्वरूपके विषयमें हमें कुछ भी ज्ञात नहीं है । किन्तु तिलोयपण्णत्तिमें कर्ताने कुछ गाथाएं दी हैं जो ' करण–सूत्र ' या ' करण-गाथा ' कहलाती है । ' करण-कुशल ' (ति. प. १,११६) शब्द भी ध्यान देने योग्य है, क्योंकि उससे करणका अर्थ गणितके ' फार्मूला ' या संक्षिप्त सूत्र जैसा सूचित होता है ।

यह दुर्भाग्यकी बात है कि हमें कषायपाहुडके चूर्णिसूत्रके तथा प्रस्तुत तिलोयपण्णत्तिके कर्ता यतिवृषभके विषयमें अधिक ज्ञान नहीं है। तिलोयपण्णत्तिकी जिस गाथामें श्लेषरूपसे उनका संकेत किया गया है, उसीके समान एक गाथा जयधवलामें भी पाई जाती है, और संभवतः इन दोनों गाथाओंमें कषायप्राभृतकी गाथाओंके रचयिता गुणधरका उल्लेख अन्तर्निहित है। वहां यह संकेत मिलता है कि यतिवृषभका गुणधरके प्रति बड़ा आदरभाव था। उन दोनोंमें परस्पर क्या सम्बन्ध था, यह हमें ज्ञात नहीं है। वहां ऐसा कोई संकेत नहीं है कि वे समसामयिक थे। यह बात वीरसेनने कही है कि यतिवृषभ आर्यमंक्षुके शिष्य एवं नागहस्तिके अंतेवासी थे। शिष्यका अभिप्राय परम्परा शिष्य से भी हो सकता है, किन्तु 'अन्तेवासी' (निकटमें रहनेवाले) से तो यही ध्वनित होता है कि वे नागहस्तिके समसामयिक व साक्षात् शिष्य थे। कुछ वर्ष पूर्व यह अनुमान किया गया था कि आर्यमंक्षु और आर्य नागहस्ति तथा नन्दिसूत्रमें उल्लिखित 'अज्ज मंगु' और 'अज्ज नागहत्थि' क्रमशः एक ही हों (प्रवचनसारकी प्रस्तावना, बम्बई १९३५, पृ. १५ टि. ३)।

४ ग्रंथका रचनाकाल

यतिवृषभ और तदनुसार तिलोयपण्णत्तिका कालनिर्णय स्वयं एक बड़ी समस्या है। इस विषयसे सम्बद्ध जो कुछ प्रमाण उपलब्ध है वह न तो पर्याप्त है और न निर्णयात्मक। ऐसी परिस्थितिमें इनके कालनिर्णयका जो भी प्रयत्न किया जायगा वह अनिश्चयात्मक ही हो सकता है। इस कार्यमें हमें निष्पक्षभावसे उपलभ्य सामग्रीका पर्यालोचन करना चाहिये और किसी बातका एकान्त आग्रह नहीं रखना चाहिये। यहां हम जो कालनिर्देश कर रहे हैं वह और अधिक खोज-बीनके लिये दिग्दर्शन मात्र कहा जा सकता है।

तिलोयपण्णत्तिमें हमें जिस विवेचनपद्धतिका दर्शन होता है, उसमें जो निरन्तर इस बातपर जोर दिया गया है कि उसका समस्त विषय परम्परागत है, विषयका जो व्यक्तिनिरपेक्ष प्ररूपण किया गया है तथा जो प्रमाणोल्लेख पाये जाते हैं, वे सब यही सूचित करते हैं कि तिलोयपण्णत्तिकी ग्रंथरचना पीछेके वैयक्तिक ग्रंथकर्ताओंके ग्रंथोंकी अपेक्षा आगम ग्रंथोंसे अधिक सम्बद्ध है।

यतिवृषभ शिवार्य, वट्टकेर, कुन्दकुन्द आदि जैसे ग्रंथरचयिताओंके वर्गके हैं, और उनकी तिलोयपण्णत्ती उन आगमानुसारी ग्रंथोंमेंसे है जो पाटलीपुत्रमें संगृहीत आगमके कुछ आचार्योंद्वारा अप्रामाणिक और त्याज्य ठहराये जानेके पश्चात् शीघ्र ही आचार्यानुक्रमसे प्राप्त परम्परागत ज्ञानके आधारसे स्मृतिसहायक लेखोंके रूपमें संग्रह किये गये।

इस पार्श्वभूमिको ध्यानमें रखते हुए आइए हम बाह्य और आभ्यन्तर सूचनाओंकी

समीक्षा करें और यतिवृषभ तथा उनकी तिलोयपण्णत्तिके रचनाकालकी कुछ सीमाएं निर्धारित करनेका प्रयत्न करें।

अ. १. वीरसेनस्वामीने अज्जमंखुके शिष्य और नागहत्थिके अन्तेवासी यतिवृषभके न केवल आशीर्वादकी आकांक्षा प्रकट की है किन्तु उन्होंने उनके 'वृत्तिसूत्र' का भी उल्लेख किया है। तिलोयपण्णत्तिका भी निर्देश किया है, उसे सूत्रकी संज्ञा देकर सम्मानित किया है,[1] उसकी गाथाएं भी उद्धृत की हैं जो कुछ अल्प परिवर्तनोंके साथ प्रस्तुत ग्रंथमें पाई जाती हैं[2] तथा कहीं कहीं उसके विषयको भी रूपान्तरित करके उद्धृत किया है[3]। वीरसेनके समान टीकाकार एक पूर्वकालीन ग्रंथके विषयको अपनाते हैं और उसके अवतरण भी प्रस्तुत करते हैं, यह सर्वथा स्वाभाविक है; क्योंकि टीकाकारसे प्राचीन सूत्रोंके स्पष्टीकरणमें यही तो अपेक्षा की जाती है। वीरसेनके कालके सम्बन्धमें हमें उनकी स्वयं प्रशस्ति प्राप्त है कि उन्होंने धवला टीकाको शक सं. ७३८ (+७८) = ८१६ ईस्वीमें समाप्त किया था। अतएव यतिवृषभकृत तिलोयपण्णत्तिका काल इससे पूर्व ठहरता है।

२. पं० महेंद्रकुमारजीने बतलाया है कि जिनभद्र क्षमाश्रमणने अपने विशेषावश्यक भाष्य (शक ५३१=६०९ ईस्वी) में जो 'आदेशकषाय' का उल्लेख किया है इसका अभिप्राय संभवतः जयधवलान्तर्गत चूर्णिसूत्रमें यतिवृषभकृत विवेचनसे है।

ब. अब हम आभ्यन्तर सूचनाओंकी समीक्षा करेंगे—

१. यतिवृषभने किन्हीं पूर्ववर्ती ग्रंथकर्ताओंका स्मरण नहीं किया। केवल तिलोयपण्णत्तिकी ९-६९ वीं गाथाके सुधरे हुये पाठसे यह ध्वनित होता है कि वे श्लेषद्वारा अपने नामके साथ साथ गुणधराचार्यका भी नामोल्लेख कर रहे हैं। तथापि इससे हमें उनके कालनिर्णयमें अधिक सहायता नहीं मिलती।

२. तिलोयपण्णत्ती ४-१२११ में बालचन्द्र सैद्धांतिकका नामोल्लेख पाया जाता है। अब प्रथम प्रश्न यह है कि क्या वह पद्य यतिवृषभकृत ही है। इस प्रश्नके उत्तरमें हमें कहना है 'नहीं'। उस स्थलका प्रसंग ही यह बतला रहा है कि उस पद्यका ग्रंथसे कोई आन्तरिक संबन्ध नहीं है। उससे पूर्वके पद्यमें कहा गया है कि ऋषभ, वासुपूज्य और नेमिनाथको छोड़कर शेष समस्त तीर्थंकरोंने कायोत्सर्ग मुद्रासे मोक्ष प्राप्त किया। इस स्थलपर कोई भी कुशल व भक्तिमान् पाठक या लिपिकार तीर्थंकरोंके स्मरणकी भावनासे प्रेरित हो सकता है।

---

१. धवला ३. पृ. ३६. २. धवला १ पृ. ४०, ६३ आदि, ३. धवला १ पृ. १६, ३१–३३, ५६–५७, ६०–६१, ६३–६४ आदि।

अतएव इसमें कोई संदेश नहीं जान पड़ता कि बालचन्द्र सैद्धांतिक यदि लिपिकार नहीं तो कोई अभ्यासशील पाठक अवश्य रहे हैं, और उन्होंने ही उस प्रसंगमें वह पद्य जोड़ दिया। सैद्धांतिककी उपाधि अनेक आचार्योंके नामोंके साथ जुड़ी हुई पाई जाती है, जैसे–नेमिचन्द्र, वीरनन्दि, माघनन्दि आदि; और वह उनकी सिद्धान्तमें निपुणताकी बोधक है। बालचन्द्र नामधारी भी अनेक आचार्य हुये है। अतः हमें ऐसे एक बालचन्द्रका पता लगाना चाहिये जो साहित्यमें या शिलालेखादिमें सैद्धांतिक कहे गये हों। ऐसा एक जोड़ा हुआ पद्य यह संदेह उत्पन्न करनेके लिये अच्छा सूचक है कि क्या विद्वान् पाठकों और लिपिकारोंने ग्रंथमें इधर उधर अर्थविस्तारके लिये कहीं अन्यत्रसे कुछ पाठ जोड़े है। कुछ भी हो, किन्तु बालचन्द्र सैद्धांतिकका यह नामोल्लेख यतिवृषभके कालनिर्णयमें हमें कुछ भी सहायता नहीं पहुँचा सकता।

३. तिलोयपण्णत्तिमें कुछ पूर्ववर्ती रचनाओं और उनके मतभेद सम्बन्धी उल्लेख ध्यान देने योग्य है। उनका यहां पर्यालोचन करके देखा जाय कि वे कहां तक यतिवृषभके काल-निर्णयमें हमारी सहायता कर सकते हैं।

(१) **अग्गायणिय** (लोयविणिच्छयमग्गायणिए ४-१९८२) यह उल्लेख बारहवें श्रुतांग दृष्टिवादके अन्तर्गत १४ पूर्वोंमेंसे द्वितीय पूर्व अग्रायणीयका ज्ञात होता है। प्राचीनतर प्राकृत ग्रंथोंमें इसका रूप **अग्गाणीयं** या **अग्गेणियं** पाया जाता है। यदि ऊपर निर्देशानुसार हम सन्धिव्यंजनको पूर्व पदसे पृथक् करके उत्तर पदके साथ जोड़ दें तो पाठ '**मग्गायणिए**' हो जाता है जो यथार्थतः 'अग्गायणिए'का ही बोधक है। ऐसा प्रतीत होता है कि तिलोयपण्णत्तिमें उपलब्ध सग्गायणी (४-२१७, १८२१, २०२९), संगायणी (८-२७२), संगाइणी (४-२४४८), संगोयणी (४-२१९) व संगाहणी (८-३८७) केवल अक्षरसाम्य आदिसे उत्पन्न उसीके भ्रष्ट पाठ मात्र हैं। जब कि इस रचनाका उसके मतभेदोंके स्पष्ट कथन सहित इतने बार उल्लेख किया जाता है, तब इसका यही अर्थ हो सकता है कि तिलोयपण्णत्तिकारको अग्रायणीय पूर्वका सविवरण वृत्तान्त उपलब्ध था।

(२) दिट्ठिवाद (दृष्टिवाद) के तीन स्पष्ट उल्लेख प्रस्तुत ग्रंथमें पाये जाते हैं— १-९९, १४८; ४-५५। उनसे ग्रंथकारका उक्त आगमके विषयोंका विधिवत् ज्ञान नहीं तो विधिवत् परिचय तो अवश्य प्रकट होता है। यद्यपि दृष्टिवादके विषयों व प्रकरणोंकी सूचियां सुरक्षित पाई जाती है, तथापि जैन परम्परा इस विषयमें एकमत है कि इस श्रुतांगका ज्ञान क्रमशः लुप्त हो गया। कुछ आचार्यपरम्पराओंमें भले ही उसका यत्र–तत्र खण्डशः ज्ञान रहा हो। हाल ही में यह भी बतलाया जा चुका है कि जीवट्ठाण आदिका

बहुभाग दृष्टिवादके एक विभाग द्वितीय पूर्व अग्रायणीयसे लिया गया है (धवला, भाग १ प्रस्तावना, अमरावती १९३९–४०)

(३) परिकम्म (परिकर्म) के कथनसे अपने मतका जो विरोध दिखाई देता है उसका तिलोयपण्णत्तिकारने विवेचन किया है (पृ. ७६५) । संभवतः यह उल्लेख पद्मनन्दि अपरनाम कुन्दकुन्दकृत षट्खंडागमके प्रथम तीन खंडोंकी टीकाका हो । (धवला, भाग १, प्रस्तावना पृ. ३१, ४६–४८) । पं. महेंद्रकुमारजीने संदेह व्यक्त किया है कि क्या परिकर्म कोई गणित शास्त्रका ग्रंथ था (जयधवला १, प्रस्तावना पृ. ३६) ।

(४) मूलायार (मूलाचार) के मतका उल्लेख ८–५३२ में किया गया है और हम उसे वर्तमान मूलाचार ग्रंथके पर्याप्त्यधिकार, ८० में पाते भी हैं ।

(५) लोयविणिच्छय (लोकविनिश्चय) का उल्लेख ग्रंथ रूपसे कोई एक दर्जन बार आया है– (४-१८६, १९७५, १९८२, २०२८; ५-३९, १२९, १६७; ७-२०३; ८-२७०, ३८६; ९-९) । इस नामका कोई ग्रंथ अभी तक प्रकाशमें नहीं आया । संभव है यही वह ग्रंथ रहा हो जिसके आदर्शपर अकलंकने अपने सिद्धिविनिश्चय व न्यायविनिश्चय आदि ग्रंथोंका नामाभिधान किया हो ।

(६) लोयविभाग (लोकविभाग) का उल्लेख कोई पांच बार आया है (१-२८१, ४-२४४८, २४९१, ७-११५, ८-६३५] । ये उल्लेख अग्गायणी (४-२४४८) और लोयविणिच्छय (९-९) के साथ साथ हुये हैं; उनके प्रकरण विशेषके रूपसे नहीं । वर्तमानमें लोकविभाग नामक संस्कृत ग्रंथ ११ अध्यायोंमें सिंहसूरिकृत उपलब्ध है । ग्रंथकर्ताने सूचित किया है कि उनकी संस्कृत रचना एक प्राकृत ग्रंथका रूपान्तर मात्र है, जिसे शक ३८० (+७८) = ४५८ ईस्वीमें सर्वनन्दिने कांचीके नरेश सिंहवर्माके राज्यके २२वें वर्षमें बनाया था । सर्वनन्दिकृत ग्रंथ वर्तमानमें प्राप्य नहीं है । तिलोयपण्णत्तिमें कथित मतोंका संस्कृत लोकविभागसे मिलान करके पं. जुगलकिशोरजी मुख्तारने ठीक ही अनुमान किया है कि तिलोयपण्णत्तिकारके सन्मुख सर्वनन्दिकृत प्राकृत लोकविभाग रहा होगा ।

(७) लोगाइणि (लोकायनी) का उल्लेख (थोड़े वर्णभेदके साथ) दो बार आया है (४-२४४, ८-५३०) जहां उसके विषय व मतोंका उल्लेख किया गया है । उसे 'ग्रंथ–प्रवर' कहा गया है जिससे उसकी प्रामाणिकता और माहात्म्य प्रकट होता है ।

तिलोयपण्णत्तिमें जो उल्लेख मूलाचार व लोकविभागके आये हैं उनका विषय वर्तमान मूलाचार व संस्कृत लोकविभागमें पाया जाता है । इस बातसे तिलोयपण्णत्तिके इन उल्लेखोंकी सचाई बढ़ जाती है । अतएव हमें लोकविनिश्चय, लोकविभाग (प्राकृत) आदि

ग्रंथोंकी खोज प्राचीन ग्रंथभंडारोंमें करना चाहिये, विशेषतः गुजरात और कर्नाटकमें जहां इन्हीं कुछ वर्षोंमें बड़े दुर्लभ ग्रंथोंका पता चल चुका है।

तिलोयपण्णत्तिमें जिन ग्रंथोंका उल्लेख पाया जाता है, उनमेंसे अधिकांश जैन साहित्यके आदिम स्तरके हैं। मूलाचार यद्यपि एक प्राचीन जैन ग्रंथ माना जाता है, तथापि उसके रचनाकालके सम्बन्धमें कोई निश्चय नहीं है। जब तक यह न बतलाया जा सके कि सिंहसूरिकृत लोकविभागसे पूर्व भी उसी नामका कोई ग्रंथ था, तब तक यही मानना उचित होगा कि तिलोयपण्णत्तिमें इसी लोकविभागका उल्लेख है। अतएव तिलोयपण्णत्ति अपने वर्तमान रूपमें सर्वनन्दिकृत प्राकृत लोकविभागसे अर्थात् ४५८ ईस्वीसे पश्चात् कालकी रचना है।

इन्द्रनन्दिकृत श्रुतावतार (श्लोक १६०–१६१) के अनुसार कुन्दकुन्दपुरके पद्मनन्दि (अर्थात् कुन्दकुन्द) ने अपने गुरुओंसे सिद्धांतका अध्ययन किया और षट्खण्डागमके तीन खण्डोंपर परिकर्म नामकी टीका लिखी। जब तक धवला और जयधवला टीकायें प्रकाशमें नहीं आई थीं, तब तक परिकर्म नामकी किसी रचनाका अस्तित्व सन्देहास्पद ही था। किन्तु उक्त ग्रंथोंके प्रकाशित होनेसे परिकम्म (परिकर्म) नामक रचना–विशेषकी स्थितिमें तथा उसके वीरसेन व जिनसेनके सन्मुख उपस्थित होनेमें कोई संदेह नहीं रहता (धवला, भाग १ प्रस्तावना पृ. ४६)। परिकर्मके जितने उल्लेख अभी तक हमारे सन्मुख आये हैं वे सभी प्रायः गणितसे सम्बन्ध रखते हैं। इससे स्वभावतः यह सन्देह होता है कि वह कोई गणित विषयका ग्रंथ रहा है। कुन्दकुन्दाचार्यके उपलब्ध ग्रंथोंको देखकर यह कहना कठिन है कि वे गणितज्ञ थे। तथापि इस सम्बन्धके जब तक और भी साधक–बाधक प्रमाण हमारे सन्मुख न आजांय, तब तक इन्द्रनन्दिके कथनको मानकर चलना ही उचित होगा। तदनुसार तिलोयपण्णत्तिके परिकर्म सम्बन्धी उल्लेखोंपरसे उसके कर्ता यतिवृषभ कुन्दकुन्दसे पश्चात्कालीन प्रतीत होते हैं और कुन्दकुन्दका काल ईस्वीकी प्रारम्भिक शताब्दियोंमें ही पड़ता है (प्रवचनसारकी प्रस्तावना, बम्बई १९३५)।

४. तिलोयपण्णत्तिमें भगवान् महावीरके पश्चात्कालीन इतिहासकी बहुतसी सामग्री पाई जाती है। एक तो श्रुतपरम्परासे सम्बन्ध रखती है और दूसरी राजवंशोंसे।

महावीर भगवान्के निर्वाणसे पश्चात् तीन केवली ६२ वर्षोंमें, पांच श्रुत–केवली १०० वर्षोंमें, ग्यारह दशपूर्वी १८३ वर्षोंमें, पांच एकादशांगधारी २२० वर्षोंमें और चार आचारांगधारी ११८ वर्षोंमें हुये। इस प्रकार महावीरनिर्वाणसे ६८३ वर्ष तक, अर्थात् ६८३ – ५२७ = १५६ ईस्वी तक अंगज्ञानकी परम्परा चली। प्रसंगवश यह भी कहा गया है कि मुनिधर्म स्वीकार करनेवालोंमें मुकुटधारी अन्तिम राजा चन्द्रगुप्त ही था। तिलोय-

पण्णत्तिकारने महावीरके पश्चात् शकके राजा होने तक कितना काल व्यतीत हुआ इस विषयपर भिन्न भिन्न मतोंका उल्लेख किया है। इन अनेक मतभेदोंके उल्लेखसे ही सुस्पष्ट है कि या तो ग्रंथकार शकराजासे बहुत पीछे हुए, या इन मतभेदोंको पीछेके विद्वान् लिपिकारोंने विविध आधारोंसे समय समयपर जोड़ दिया है। इस द्वितीय विकल्पका कोई विशेष आधार नहीं है, अतः प्रथम विकल्पको ही स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि उससे कोई बड़ा विरोध उत्पन्न नहीं होता।

राजवंशोंके सम्बन्धमें तिलोयपण्णत्ति (४-१५०५ आदि) में कहा गया है कि जिस दिन अवन्तीमें सुप्रसिद्ध पालक राजाका अभिषेक हुआ उसी दिन पावामें महावीर भगवान् का निर्वाण हुआ। पालकने ६० वर्ष राज्य किया। उसके पश्चात् १५५ वर्ष विजय वंशका, फिर ४० वर्ष मुरुदय (मौर्य या मुरुण्डय) का, ३० वर्ष पुष्यमित्रका, ६० वर्ष वसुमित्र और अग्निमित्रका, १०० वर्ष गंधर्व (गंधर्व = गर्दभिल्ल) का, ४० वर्ष नरवाहनका, २४२ वर्ष भत्थट्ठण (भृत्यान्ध्र) राजाओंका, २३१ वर्ष गुप्त नरेशोंका और अन्ततः ४२ वर्ष कल्कीका राज्य रहा। कल्कीके पश्चात् उसका पुत्र राजा हुआ। इस प्रकार महावीरनिर्वाणसे कल्कीके राज्य तक १००० वर्ष हुये, जिसकी अवधि १००० – ५२७ = ४७३ ईस्वी होती है। गुणभद्रकृत उत्तरपुराणके अनुसार (७६-३९४) कल्कीकी उत्पत्ति दुषमा कालके एक हजार वर्ष व्यतीत होनेपर हुई थी और उसकी आयु ७० वर्षकी थी व उसका राज्यकाल ४० वर्षका। दुषमा कालका प्रारम्भ तिलोयपण्णत्तिके अनुसार महावीरनिर्वाणसे ३ वर्ष ८ मास पश्चात् हुआ। उसके अनुसार कल्कीकी मृत्यु महावीरनिर्वाणसे १००० + ३ + ७० = १०७३ वर्ष पश्चात् अर्थात् सन् १०७३ – ५२७ = ५४६ ईस्वीमें हुई। नेमिचन्द्रकृत त्रिलोकसार (गा. ८५०) के अनुसार वीरनिर्वाणसे ६०५ वर्ष ५ मास पश्चात् शक राजा हुआ और शकसे ३९४ वर्ष ७ मास पश्चात् कल्की हुआ जिसकी आयु ७० वर्षकी थी, और राज्यकाल ४० वर्षका। तदनुसार कल्कीकी मृत्यु वीरनिर्वाणसे १००० + ७० = १०७० अर्थात् १०७० – ५२७ =५४३ ईस्वीमें हुई, तथा उसका राज्यकाल ५०३ से ५४३ तक रहा। प्रो० काशीनाथ बापू पाठकके मतानुसार (Gupta Era and Mihirkula: Bhand Com. Vol. Poona, 1919 page 216) यह कल्की हूण नरेश मिहिरकुल ही था जो चीनी यात्री सुंग युनकी यात्राके समय ईस्वी सन् ५२० में राज्य कर रहा था। यह वृत्तान्त ग्रंथमें पीछेसे जोड़ा गया हो इसके लिये कोई पर्याप्त कारण नहीं दिखाई देता। जिस प्रकारसे यह वृत्तान्त दिया गया है (देखिये गाथा ४-१५१०) उससे प्रतीत होता है कि वह सब विवरण स्वयं ग्रंथकारकृत ही है। इससे स्पष्ट होता है कि तिलोयपण्णत्तिकार यतिवृषभ महावीरनिर्वाणके १००० पश्चात् अर्थात् सन् ४७३ ईस्वीसे पूर्व नहीं हो सकते।

उक्त प्रमाणोंके प्रकाशमें यतिवृषभका काल गुणधर, आर्यमंक्षु, नागहस्ति, कुन्दकुन्द और सर्वनन्दि (४५८ ईस्वी) से पश्चात्का सिद्ध होता है। वे संभवतः कल्कीसे पश्चात् (४७३ ईस्वी) शीघ्र हुये होंगे, क्योंकि उनके द्वारा प्रमुख राजाओंमें कल्कीका ही अन्तिम उल्लेख है। तथा दूसरी सीमाके सम्बन्धमें निश्चयतः तो इतना ही कहा जा सकता है कि वे वीरसेन (८१६ ईस्वी) से, और संभवतः जिनभद्र क्षमाश्रमण (६०९ ईस्वी) से भी पूर्व हुये। अतः यतिवृषभ और उनकी तिलोयपण्णत्तिका काल ४७३ और ६०९ ईस्वीके मध्य माना जा सकता है।

यतिवृषभ और उनकी तिलोयपण्णत्तिके उक्त कालनिर्णय एवं अन्य आचार्योंके उक्त काल-क्रमका इस विषयके कुछ लेखकोंके मतोंसे विरोध आता है जिसका यहां विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

कुछ विद्वानोंका मत है कि कुन्दकुन्दका काल उतना प्राचीन नहीं है, क्योंकि एक तो उन्होंने 'लोकविभाग' का उल्लेख किया है जिसका अभिप्राय संभवतः सर्वनन्दिकृत प्राकृत लोकविभागसे है। और दूसरे उन्होंने 'विष्णु' 'शिव' आदिका भी उल्लेख किया है। नियमसार गाथा १७ में स्पष्टतः 'लोयविभायेसु' पद बहुवचनान्त पाया जाता है, जिससे अनुमान किया जा सकता है कि उसका अभिप्राय किसी एक ग्रंथविशेषसे न होकर परम्परागत लोकविभागविषयक उपदेशोंसे है। इस सम्बन्धमें यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि संस्कृत लोकविभागके प्रथम श्लोकमें ही 'जिनेश्वरों' का विशेषण 'लोकालोकविभागज्ञ' दिया गया है जिससे जान पड़ता है कि लोकविभागका अर्थ ग्रंथविशेषके अतिरिक्त सामान्यतः लोकके विभागोंका भी लिया जाता रहा है। विष्णु कोई इतना आधुनिक देवता नहीं है जितना मुनि कल्याणविजयजी अनुमान करना चाहते हैं (श्रमण भगवान् महावीर पृ. ३०३)। विष्णु तो बहुत प्राचीन देवता है जिसका उल्लेख उनके गरुडसहित (पक्खीसु वा गरुडे वेणुदेवो, १, ६-२१) आगमके एक प्राचीनतम ग्रंथ सूयगडमें भी पाया जाता है। उसी ग्रंथमें अन्यत्र ईश्वर व स्वयंभूका भी उल्लेख आया है जिसका अर्थ टीकाकारने 'विष्णु' किया है। मुनिजीके अन्य तर्क इतने हलके हैं कि उनके यहां खण्डन करनेकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इस प्रकार कोई एक भी ऐसा गंभीर प्रमाण प्रस्तुत नहीं है जिसके बलसे हमें कुन्दकुन्दको यतिवृषभसे पश्चात्कालीन मानना पड़े।

पं. फूलचन्द्र शास्त्रीने तिलोयपण्णत्तिके कर्ता व समयका विस्तारसे विवेचन किया है (जैन सिद्धांत भास्कर, भाग ११, किरण १, पृ. ६५–८२) और उसका खण्डन पं. जुगलकिशोरजी मुख्तारने किया है (हस्तलिखित लेख अप्रकाशित)। इस वाद-विवादसे प्रस्तुत विषय-

पर जो प्रकाश पड़ता है वह महत्वपूर्ण है। अतएव संक्षेपमें उसकी यहीं समीक्षा कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है:—

१. पं. फूलचन्द्रजीने कहा है कि लोकके उत्तर-दक्षिण सर्वत्र सात राजुकी मान्यताको स्थापित करनेवाले धवलाके कर्ता वीरसेनाचार्य ही हैं। उनसे पूर्व वैसी मान्यता नहीं थी, जैसा कि राजवार्तिक आदि ग्रंथोंसे स्पष्ट है। तिलोयपण्णत्तिमें यही वीरसेन द्वारा स्थापित मान्यता ही स्वीकार की गई है। अतएव यह रचना अपने वर्तमान रूपमें वीरसेनके पश्चात्-कालीन प्रतीत होती है।

इसके विरुद्ध पं. जुगलकिशोरजीने तीन उल्लेख उपस्थित किये हैं जो, उनके मतसे, वीरसेनसे पूर्वकालीन होते हुये लोकको उत्तर-दक्षिण सर्वत्र सात राजु प्रमाणित करते हैं। उनमेंसे एक उल्लेख जिनसेनकृत हरिवंशपुराणका है, दूसरा स्वामि-कार्तिकेयानुप्रेक्षाका और तीसरा जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिका। हरिवंशपुराणमें लोकको चतुरस्रक तो कहा है, परन्तु उत्तर-दक्षिण सर्वत्र सात राजुकी मान्यताका वहां कोई पता नहीं है। चतुरस्रकका अभिप्राय समचतुरस्रक भी हो सकता है। यदि चतुरस्रक कहने मात्रसे ही आयतचतुरस्रककी मान्यताका अनुमान किया जा सकता हो तो हरिवंशपुराणमें ही स्पष्टतः वीरसेनको गुरु कहकर स्मरण किया गया है, उन्हें कविचक्रवर्तीकी उपाधि भी दी गई है और उनकी निर्मल कीर्तिका उल्लेख किया है। यही नहीं, किन्तु वीरसेनके शिष्य जिनसेनका और उनकी रचना पार्श्वाभ्युदयका भी वहां उल्लेख है। इस परिस्थितिमें यह कैसे कहा जा सकता है कि हरिवंशपुराणका उल्लेख वीरसेनसे पूर्वका है और उक्त पुराणकार वीरसेनकी रचनासे अपरिचित थे? इसके विपरीत उक्त उल्लेखसे तो यही सिद्ध होता है कि हरिवंशपुराणकार वीरसेनकी रचनासे सुपरिचित और प्रभावित थे।

हां, स्वामि-कार्तिकेयानुप्रेक्षामें अवश्य लोकके उत्तर-दक्षिण सर्वत्र सात राजुकी मान्यता सुस्पष्ट है। किन्तु पंडितजीने इसके रचनाकालके सम्बन्धमें केवल इतना कहा है कि वह एक बहुत प्राचीन ग्रंथ है और वीरसेनसे कई शताब्दि पहलेका बना हुआ है। किन्तु इस ग्रंथके वीरसेनसे पूर्ववर्ती होनेका उन्होंने एक भी प्रमाण उपस्थित नहीं किया। इस परिस्थितिमें उक्त उल्लेखको वीरसेनसे पूर्ववर्ती मानना सर्वथा निराधार है।

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिमें भी उक्त मान्यताका ग्रहण सुस्पष्ट है। किन्तु इसका समय-निर्णय सर्वथा काल्पनिक है, निश्चित नहीं। मुख्तारजीने स्वयं कहा है "यदि यह कल्पना ठीक हो तो····जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिका समय शक ६७० अर्थात् वि. सं. ८०५ के आस-पासका होना चाहिये" किन्तु जब तक 'कल्पना' को निश्चयका रूप न दिया जाय तब तक उसके आधारपर जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति धवलासे पूर्वकालीन नहीं स्वीकार की जा सकती। स्वयं ग्रंथकारके

उल्लेखानुसार जंबूदीवपण्णत्तिकी रचना पारियात्र देशके बारा नगरमें शक्तिकुमार राजाके राज्यकालमें हुई थी। गुहिलवंशीय राजा शक्तिकुमारका एक शिलालेख वैशाख सुदी १ वि. सं. १०३४ का आहाड़में (उदयपुरके समीप) मिला है। उसीके समयके और दो लेख जैन मन्दिरोंमें भी मिले हैं। किन्तु उनमें संवत्के अंश जाते रहे हैं। पद्मनन्दिने संभवतः अपनी ग्रंथरचना इसी राजाके समयमें की थी, अतः वह रचना ११वीं शताब्दिकी हो सकती है (जैन साहित्य और इतिहास पृ ५७१)।

इस विषयमें ध्यान देने योग्य बात यह है कि धवलाकारके सन्मुख ' तिलोयपण्णत्ति सूत्र ' उपस्थित था और फिर भी उन्होंने केवल दो प्राचीन गाथाओंके आधारपर अपने युक्तिबलसे लोकको आयतचतुरस्राकार सिद्ध करनेका स्पष्ट उल्लेख किया है। यदि उनके सन्मुख उपस्थित तिलोयपण्णत्ति सूत्रमें वह मान्यता स्पष्ट होती, जैसी वर्तमान तिलोयपण्णत्तिमें है, तो न तो उन्हें उक्त विषयकी उतने विस्तारसे विवेचना करनेकी आवश्यकता पड़ती, जैसी जीवट्ठाण क्षेत्रानुगमके पृ. १० से २२ तक की गई है, और न उन्हें स्पर्शनानुगमके पृ. १५७ पर यह कहनेका साहस होता कि रज्जुच्छेदोंके प्रमाणकी परीक्षाविधि उन्होंने उसी प्रकार युक्तिबलसे स्थापित की है जिस प्रकार असंख्येयावलि प्रमाण अन्तर्मुहूर्तकी व आयतचतुरस्र लोककी। रज्जुच्छेदोंके सम्बन्धमें उन्हें अपने मतानुकूल तिलोयपण्णत्ति सूत्र प्राप्त हो गया था, अतएव उन्होंने उसका स्पष्टोल्लेख भी कर दिया है। तब कोई कारण नहीं कि यदि उन्हें उसी सूत्र ग्रंथमें आयतचतुरस्र लोकका भी कोई संकेत या आधार मिलता तो वे उसका प्रमाण न देते, क्योंकि उस प्रमाणकी तो उन्हें बड़ी ही आवश्यकता थी, जिसकी पूर्ति उन्होंने केवल यह कहकर की है कि ' ण च सत्तरज्जुबाहल्लं करणाणिओगसुत्तविरुद्धं, तस्स तत्थ विधिप्पडिसेधाभावादो ' (धवला भाग ४, पृ. २२) अर्थात् लोकके उत्तर दक्षिण भागमें सर्वत्र सात राजुका बाहल्य करणानुयोग सूत्रके विरुद्ध नहीं है, क्योंकि सूत्रमें न तो उसका विधान है और न निषेध। इससे बिलकुल स्पष्ट है कि धवलाकारको ज्ञात साहित्यमें उक्त मान्यताका सर्वथा अभाव था। आज भी वीरसेनसे पूर्व निश्चितकालीन एक भी उल्लेख उस मान्यताका हमें प्राप्त नहीं है। और इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं रहता कि वीरसेनके सन्मुख उपस्थित ' तिलोयपण्णत्ति सूत्र ' में आयतचतुरस्राकार लोकका समर्थन करनेवाला कोई उल्लेख नहीं था।

(२) पं. फूलचन्द्रजीकी दूसरी युक्ति यह है कि ति. प. के प्रथम अधिकारके आदिमें जो मंगल आदि छह अधिकारोंका वर्णन है वह ग्रंथकारके कथनानुसार विविध ग्रंथ-युक्तियों द्वारा किया गया है और वह धवला टीकाके आदिके वर्णनसे मिलता है, अतः वह संभवतः

वहींसे लिया गया है। इसपर पं. जुगलकिशोरजीका यह मत सर्वथा उचित है कि ऐसे सादृश्य मात्रपरसे विना किसी प्रबल प्रमाणके उसका धवलासे लिया जाना सिद्ध नहीं होता। उक्त प्रकारका विवरण जिनभद्रके विशेषावश्यक भाष्य (७वीं शताब्दि) में भी मिलता है। यद्यपि ति. प. और धवलाके मंगलवर्णनमें इतना अधिक साम्य है कि एकमें दूसरेकी छायाका सन्देह होना अनिवार्य है, यथार्थतः धवलाकी सहायतासे ही ति. प. के मंगलविषयक पाठका संशोधन संभव हुआ है, तथापि ऐसे परम्परागत विषयका इतने परसे ही निश्चयतः यह कहना कठिन है कि किसने किससे लिया है।

(३) पं. फूलचन्द्रजीकी तीसरी युक्ति यह है कि 'ज्ञानं प्रमाणमात्मादेः' इत्यादि श्लोक भट्टाकलंकके लघीयस्त्रयमें आया है। यही श्लोक कुछ पाठभेद सहित धवलामें भी है जहां उससे पूर्व 'प्रमाण-नय-निक्षेपैः' आदि एक और भी श्लोक पाया जाता है जो लघीयस्त्रय में नहीं है। ये दोनों ही श्लोक प्राकृत-रूपान्तरसे तिलोयपण्णत्ति (१, ८२-८३) में भी पाये जाते हैं और संभवतः धवलापरसे ही लिये गये हैं। पं. जुगलकिशोरजीका मत है कि "दोनों गाथाओं और श्लोकोंकी तुलना करनेसे तो ऐसा मालूम होता है कि दोनों श्लोक उक्त गाथाओंपरसे अनुवाद रूपमें निर्मित हुये हैं, भले ही यह अनुवाद स्वयं धवलाकारके द्वारा निर्मित हुआ हो या उससे पहले किसी दूसरेके द्वारा।" तिलोयपण्णत्तिसे सीधे प्राकृत पाठको उद्धृत न कर संस्कृतानुवादमें प्रस्तुत करनेका कारण जुगलकिशोरजीने यह बतलाया है कि "यह सब धवलाकार वीरसेनकी रुचिकी बात है, वे अनेक प्राकृत वाक्योंको संस्कृतमें और संस्कृत वाक्योंको प्राकृतमें अनुवादित करके रखते हुये भी देखे जाते हैं।"

यदि ये गाथाएं धवलाकारके सन्मुख उपस्थित 'तिलोयपण्णत्ति सूत्र' में थीं तो कोई कारण नहीं कि वे उसे उसी रूपमें ही उद्धृत न कर उनका संस्कृत रूपान्तर करके लिखते। और जब उनसे पूर्व रचित लघीयस्त्रयमें वह एक संस्कृत श्लोक पाया जाता है, तब उनके संस्कृत रूपान्तर करनेकी बात सर्वथा निराधार हो जाती है। साथका जो संस्कृत श्लोक लघीयस्त्रयमें नहीं पाया जाता उसका अनुमान तो यही किया जा सकता है कि वह भी धवलाकारने विना अनुवादके जैसा कहीं उन्हें प्राप्त हुआ वैसा ही प्रसंगोपयोगी जान उद्धृत कर दिया है। यह बात सच है कि धवलाकार कहीं संस्कृतके वाक्योंको प्राकृतमें और कहीं प्राकृतके वाक्योंको संस्कृतमें प्रस्तुत करते पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि जब संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओंका विद्वान् स्मृतिके सहारे किसी विषयका वर्णन करता है तब वह यह भूल जा सकता है कि मूल वाक्य किस ग्रंथमें संस्कृतमें हैं या प्राकृतमें। किन्तु जब पद्य ही उद्धृत करना है तब यह अनुवाद कार्य अनायास नहीं हो सकता, क्योंकि

प्राकृतका पद्य संस्कृत छंदमें व संस्कृत छंद प्राकृतमें सरलतासे नहीं बैठता। इसी कारण ऐसे उदाहरण धवलामेंसे दिखाना कठिन है, जहां टीकाकारने प्राचीन संस्कृत या प्राकृत पद्योंको बदलकर प्राकृत व संस्कृत पद्यमें उद्धृत किया हो। अतः सीधा अनुमान तो यही होता है कि धवलाकारके सन्मुख तिलोयपण्णत्ति सूत्रमें वे गाथाएं नहीं थीं व उन्होंने वह एक श्लोक लघीयस्त्रयसे और दूसरा कहीं अन्यत्रसे उद्धृत किया है। ऐसी परिस्थितिमें सन्देह तो यही होता है कि वर्तमान तिलोयपण्णत्तिमें वे गाथाएं धवलामें संगृहीत श्लोकोंपरसे लिखी गई हों। किन्तु इससे अधिक निर्णय रूपसे अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

(४) फूलचन्द्रजी शास्त्रीका चौथा तर्क है कि धवला, द्रव्यप्रमाण, पृ. ३६ पर जो तिलोयपण्णत्तिका ' दुगुण-दुगुणो दुवग्गो ' आदि गाथांश उद्धृत किया गया है वह वर्तमान तिलोयपण्णत्तिमें नहीं पाया जाता। इस पर पं. जुगलकिशोरजीका यह कहना है कि जितनी प्रतियां अभी तक देखी गई हैं उनमें उक्त गाथांश न होनेसे यह नतीजा नहीं निकाला जा सकता कि वह अन्य अज्ञात प्रतियोंमें भी नहीं है। दूसरे, तिलोयपण्णत्ति जैसे बड़े ग्रंथमें लेखकोंके प्रमादसे दो चार गाथाओंका छूट जाना कोई बड़ी बात नहीं है। इस प्रकार यह बात तो सिद्ध होती ही है कि वर्तमान तिलोयपण्णत्ति धवलाकारके सन्मुख उपस्थित रूपमें नहीं है, उसमें कमी-बेशी हुई है।

(५) फूलचन्द्रजीका अन्तिम प्रमाण यह है कि तिलोयपण्णत्तिका बहुतसा गद्यांश धवलान्तर्गत पाठसे मिलता-जुलता है। यहां तक कि स्पर्शनानुयोगद्वार (पृ. १५७) में जो ' तिलोयपण्णत्ति सूत्र ' का उल्लेख किया गया है वह भी वर्तमान तिलोयपण्णत्ति (पृष्ठ ७६६) में पाया जाता है। अन्तर केवल इतना है कि धवलामें जहां "एसा···· परिक्खाविही····अम्हेहि परूविदा " रूप वाक्यरचना है, वहां तिलोयपण्णत्तिमें पाठ है " एसा···· परिक्खाविही ···· एसा पल्लवणा परूविदा "। इससे स्पष्ट है कि यह पाठ धवलासे लिया गया है, क्योंकि ति. प. में ही तिलोयपण्णत्तिका प्रमाण नहीं दिया जा सकता। और धवलामें ' अम्हेहि ' पद द्वारा जो ग्रंथकर्ताने वैयक्तिक उल्लेख किया है उसे दूर करनेके लिये उसके स्थानपर ' एसा पल्लवणा ' पद रखा गया है। वह वाक्यरचना ही बिगड़कर अशुद्ध हो गई है।

पं जुगलकिशोरजीने इस गद्यभागको पीछेसे जोड़ा गया स्वीकार कर लिया है। यही नहीं, उन्होंने कुछ और भी गद्यांश जैसे ' एत्तो चंदाण सपरिवाराणमाणयणविहाणं वत्तइस्सामो ', ' एदम्हादो चेव सुत्तादो ' तथा ' तदो ण एत्थ इदमित्थमेवे त्ति···· तं चेदं ' तिलोयपण्णत्तिमें प्रक्षिप्त स्वीकार किये हैं। उन्होंने यह भी सूचना की है कि " तिलोयपण्णत्तिका परिमाण ग्रंथमें आठ हजार श्लोक प्रमाण बतलाया गया है जब कि वर्तमान तिलोयपण्णत्तिका

प्रमाण एक हजार श्लोक जितना बढ़ा हुआ है, और उससे यह साफ जाना जाता है कि मूलमें उतना अंश पीछे प्रक्षिप्त हुआ है।"

इस ऊहापोहका तात्पर्य यह है कि 'तिलोयपण्णत्ति सूत्र' की रचना सर्वनन्दिकृत लोकविभागके पश्चात् तथा वीरसेनकृत धवलासे पूर्व, अर्थात् शक ३८० और ७३८ के बीच हुई अनुमान की जा सकती है। इस रचनामें परिवर्धन और संस्कार होकर ग्रंथका वर्तमान रूप धवलाकी रचनासे पश्चात् किसी समय उत्पन्न हुआ होगा। किन्तु पं. फूलचन्द्रजीने जो यह कल्पना की है कि वर्तमान तिलोयपण्णत्तिके कर्ता वीरसेनके शिष्य जिनसेन हो सकते हैं, इसके लिये कोई समुचित साधक-बाधक प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

५ ग्रंथका विषय-परिचय

प्रस्तुत ग्रंथ १ सामान्यलोक २ नारकलोक ३ भावनलोक ४ नरलोक ५ तिर्यग्लोक ६ व्यन्तरलोक ७ ज्योतिर्लोक ८ कल्पवासिलोक और ९ सिद्धलोक इन नौ महाधिकारोंमें विभक्त है। इसमें जैन भूगोल और खगोलका तो मुख्यतासे विवरण है ही, पर साथ ही वह प्रसंगवश जैन सिद्धान्त, पुराण एवं इतिहासादि अन्य विषयोंपर भी पर्याप्त प्रकाश डालता है। यहां हम पाठकोंको उसके विषयका दिग्दर्शन अधिकारक्रमसे करानेका प्रयत्न करेंगे।

१ सामान्यलोक—महाधिकारमें २८३ पद्य और ३ गद्य भाग है। प्रथम ५ गाथाओंमें क्रमशः पंच परम गुरुओंको नमस्कार कर त्रिलोकप्रज्ञप्तिके कहनेकी प्रतिज्ञा की गई है। गाथा ६-८० में मंगल, कारण, हेतु, शास्त्रका प्रमाण, नाम और कर्ताकी विस्तृत प्ररूपणा की गई है। यह प्रकरण श्री वीरसेन-स्वामिकृत षट्खण्डागमकी धवला टीका (पु. १, पृ. ८-७२) से बहुत अधिक मिलता-जुलता है। गाथा ८३ में ज्ञानको प्रमाण, ज्ञाताके अभिप्रायको नय और जीवादि पदार्थोंके संव्यवहारके उपायको निक्षेप कहा है। उक्त तीनोंके ठीक ऐसे ही लक्षण अकलंक-देवकृत लघीयस्त्रयमें[1] भी पाये जाते हैं।

गा. ९३-९४ में पल्योपम, सागरोपम, सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगश्रेणि, लोकप्रतर और लोक इस प्रकार उपमा-मानके आठ भेदोंको गिनाकर यह बतलाया है कि व्यवहारपल्यसे संख्या, उद्धारपल्यसे द्वीप-समुद्र और अद्धापल्यसे कर्मस्थिति जानी जाती है। गा. ९५-१०१ में परमाणुका स्वरूप अनेक प्रकारसे बतलाया है।

आगे कहा गया है कि अनन्तानन्त परमाणुओंका उवसन्नासन्न स्कन्ध, आठ उवसन्नासन्नोंका सन्नासन्न, आठ सन्नासन्नोंका त्रुटिरेणु, आठ त्रुटिरेणुओंका त्रसरेणु, आठ त्रसरेणुओं-

---

१ ज्ञानं प्रमाणमात्मादेरुपायो न्यास इष्यते। नयो ज्ञातुरभिप्रायो युक्तितोऽर्थपरिग्रहः॥ लघीयस्त्रय ६-२.

का रथरेणु, आठ रथरेणुओंका उत्तमभोगभूमिजबालाग्र, इसी प्रकार उत्तरोत्तर आठ आठ गुणित म. भो. बालाग्र, ज. भो. बालाग्र, कर्मभूमिजबालाग्र, लीख, जूं, जौ और उत्सेधांगुल होता है। पांच सौ उत्सेधांगुलोंका एक प्रमाणांगुल होता है। भरत व ऐरावत क्षेत्रमें भिन्न भिन्न कालमें होनेवाले मनुष्योंका अंगुल आत्मांगुल कहा जाता है। इनमें उत्सेधांगुलसे नर-नारकादिके शरीरकी ऊंचाई और चतुर्निकाय देवोंके भवन व नगरादिका प्रमाण जाना जाता है। द्वीप-समुद्र, शैल, वेदी, नदी, कुण्ड, जगती एवं क्षेत्रोंके विस्तारादिका प्रमाण प्रमाणांगुलसे ज्ञात होता है। झारी, कलश, दर्पण, भेरी, हल, मूसल, सिंहासन एवं मनुष्योंके निवासस्थान व नगरादि तथा उद्यान, इत्यादिके विस्तारादिका प्रमाण आत्मांगुलसे बतलाया जाता है।

इसके आगे योजनका प्रमाण निम्न प्रकार बतलाया है— ६ अंगुलोंका पाद, २ पादोंका वितस्ति, २ वितस्तियोंका हाथ, २ हाथका रिक्कु, २ रिक्कुओंका धनुष, २००० धनुषका कोश, ४ कोशका योजन।

अनादि-निधन व छह द्रव्योंसे व्याप्त लोकको अधः, ऊर्ध्व एवं तिर्यक्, इन तीन लोकोंमें विभक्त कर उनका आकार-प्रकार, विस्तार, क्षेत्रफल व घनफल आदिके द्वारा इसमें विस्तृत वर्णन किया गया है। गा. २१५–२६७ तक उपर्युक्त तीन लोकोंमेंसे प्रत्येकके सामान्य, दो चतुरस्र (ऊर्ध्वायत और तिर्यगायत), यव, मुरज, यवमध्य, मन्दर, दूष्य और गिरिकटक, ये आठ आठ भेद करके उनका पृथक् पृथक् घनफल निकालकर बतलाया गया है।

गा. २६८–२८१ में तीन वातवलयोंका आकार और भिन्न भिन्न स्थानोंमें उनकी मुटाईका प्रमाण बतलाया गया है। अन्तमें तीन गद्यभाग हैं। उनमें प्रथम गद्यभागद्वारा लोकके पर्यन्तभागोंमें स्थित उन वातवलयोंका क्षेत्रप्रमाण निकाला गया है। द्वितीय गद्यभाग द्वारा आठ पृथिवियोंके नीचे स्थित वातक्षेत्रोंका घनफल निकाला गया है। तृतीय गद्यभागमें आठ पृथिवियोंका घनफल बतलाया है। अन्तमें कहा है कि वातरुद्ध क्षेत्र और आठ पृथिवियोंके घनफलको सम्मिलित कर उसे सम्पूर्ण लोकमेंसे निकाल देनेपर शुद्ध आकाशका प्रमाण शेष रहता है।

२ नारकलोक—महाधिकारमें ३६७ पद्य हैं। प्रथम ५ गाथाओंमें मंगलपूर्वक आगे कहे जानेवाले १५ अन्तराधिकारोंकी सूचना की गई है। गा. ६-७ में एक राजु लम्बा-चौड़ा और कुछ (३२१६२२७१$\frac{१}{२}$ धनुष) कम १३ राजु ऊंची त्रसनालीका निर्देश किया है। गा. ७-८ में

१ यह गद्यभाग ष. खं. पु. ४ पृ. ५१ पर ज्योंका त्यों पाया जाता है। २ यह गद्यभाग ष. खं. पु. ४, पृ. ८८ पर प्रायः ज्योंका त्यों पाया जाता है।

प्रकारान्तरसे उपपाद और मारणान्तिक समुद्घातमें परिणत त्रस तथा लोकपूरण समुद्घातगत केवलियोंकी अपेक्षा समस्त लोकको ही त्रसनाली कह दिया है। गा. ९-१९४ में रत्नप्रभादि सात पृथिवियोंमें स्थित नारकियोंके इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंके नाम, विन्यास, संख्या, विस्तार, बाहल्य एवं स्वस्थान-परस्थान रूप अन्तरालका प्रमाण प्ररूपित है। गा. १९५-२०१ में नारकियोंकी संख्या, गा. २०२-२१५ में उनकी आयु, गा. २१६-२७० में शरीरोत्सेध और गा. २७१ में अवधिविषयकी प्ररूपणा की गई है। आगे १२ गाथाओंमें नारकी जीवोंमें सम्भव गुणस्थानादि २० प्ररूपणाओंका दिग्दर्शन कराया गया है।

गा. २८४-२८६ द्वारा प्रथमादि पृथिवियोंमें जन्म लेने योग्य प्राणियोंका निर्देश कर गा. २८७ में जन्म-मरणका अन्तरकाल और गा. २८८ में एक समयमें उत्पन्न होनेवाले व मरनेवाले नारकियोंकी संख्या निर्दिष्ट है। गा. २८९-२९२ में बतलाया गया है कि नरकसे निकले हुए जीव कर्मभूमिमें गर्भज संज्ञी पर्याप्त तिर्यंच या मनुष्य होते हैं। किन्तु सप्तम पृथिवीसे निकला हुआ जीव तिर्यंच ही होता है। नारक जीव संख्यात वर्षकी आयुवाले व्याल, दंष्ट्री (दाढ़ोंवाले सिंह-व्याघ्रादि), गृद्धादिक पक्षी एवं मत्स्यादिक जलचर जीवोंमें उत्पन्न होकर पुनरपि नरकोंमें उत्पन्न होते हैं। कोई भी नारक जीव अनन्तर भवमें केशव, बलदेव व चक्रवर्ती नहीं हो सकते। तृतीय पृथिवी तकके नारक जीव तीर्थंकर, चतुर्थ तकके चरमशरीरी, पंचम तकके संयत, छठी तकके देशव्रती एवं सातवीं तकके कोई जीव केवल सम्यग्दृष्टि ही हो सकते हैं।

प्रवचनसारोद्धार (गा. १०८७-९०) में भी यही क्रम पाया जाता है। विशेषता इतनी है कि वहां प्रथम पृथिवीसे निकलकर चक्रवर्ती और द्वितीयसे निकलकर बलदेव व वासुदेव होनेकी भी सम्भावना बतलायी गई है।

षट्खण्डागम[1] (जीवस्थान गत्यागति चूलिका) और तत्त्वार्थराजवार्तिकमें[2] सप्तम पृथिवीसे

---

१ अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइया णिरयादो णेरइया उव्वट्टिदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? ॥ २०३ ॥ एक्कं हि चेव तिरिक्खगदिमागच्छंति त्ति ॥ २०४ ॥ तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा छण्णो उप्पाएंति— आभिणिबोहियणाणं णो उप्पाएंति, सुदणाणं णो उप्पाएंति, ओहिणाणं णो उप्पाएंति, सम्मामिच्छत्तं णो उप्पाएंति, सम्मत्तं णो उप्पाएंति, संजमासंजमं णो उप्पाएंति ॥ २०५ ॥ पु. ६, पृ. ४८४.

२ सप्तम्यो नारका मिथ्यादृष्टयो नरकेभ्य उद्वर्तिता एकामेव तिर्यग्गतिमायान्ति। तिर्यक्ष्वायाताः पंचेंद्रिय-गर्भज-पर्याप्तक-संख्येयवर्षायुःषूत्पद्यन्ते, नेतरेषु। तत्र चोत्पन्नाः सर्वे मति-श्रुतावधि-सम्यक्त्व-सम्यङ्-मिथ्यात्व-संयमासंयमान् नोत्पादयन्ति। त. रा. ३, ६, ७.

निकलनेवाले नारक जीवोंके सम्यग्दृष्टि होनेका स्पष्टतः निषेध किया है। शेष विधि प्रायः वहां भी समान रूपसे पायी जाती है।

गा. २९३ में नारकायुबन्धके कारणका उल्लेख करते हुए कहा है कि आयुबन्धके समय शिला, शैल, वेणुमूल और कृमिरागके सदृश कषायों (क्रमशः क्रोध, मान, माया, लोभ) का उदय होनेपर नारकायुका बन्ध होता है। यही बात गो. जीवकाण्डकी गा. २८३-२८६ में भी निर्दिष्ट है। आगे गा. २९४ में कहा है कि कृष्ण, नील और कापोत लेश्याके उदयसे जीव नारकायुको बांधकर मरनेपर उक्त लेश्याओंके साथ नरकको प्राप्त होते हैं। ऐसा ही उपदेश कुछ विशेषताके साथ गो. जीवकाण्ड गा. ५२३-२५ में भी पाया जाता है। गा. २९५-३०१ में कृष्ण, नील और कापोत लेश्यावाले जीवोंके कुछ लक्षण बतलाये गये हैं।

गा. ३०२–३१२ में नारकियोंके जन्मस्थानोंका आकार व विस्तार आदि बतलाया गया है। ये जन्मस्थान इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक बिलोंके ऊपरी भागमें स्थित हैं। इनमें जन्म लेकर नारक जीव नीचे गिरते हैं और गेंदके समान पुनः ऊपर उछलते हैं।

गा. ३१३-३५८ में नारकी जीवोंके महान् दुःखोंकी प्ररूपणा है। इस प्रकरणमें यह भी बतलाया है कि जिस प्रकार इस लोकमें मनुष्य मेष-महिषादिको लड़ाकर उनकी हार-जीतपर प्रसन्न होते हैं, उसी प्रकार तृतीय पृथिवी तक कुछ असुरकुमार जातिके देव नारकियोंको लड़ाकर उससे सन्तुष्ट होते हैं। उक्त देवोंके कुछ नाम भी यहां निर्दिष्ट हैं। जैसे सिक्तानन, असिपत्र, महाबल, महाकाल, श्याम, शबल, रुद्र, अम्बरीष, विलसित, महारुद्र, महाम्बर, काल, अग्निरुद्र, कुम्भ और वैतरणी आदि। ये नाम अभी तक हमें किसी अन्य दिगम्बर ग्रन्थमें नहीं उपलब्ध हुए हैं। परन्तु कुछ श्वेताम्बर ग्रन्थोंमें साधारण भेदके साथ ये नाम अवश्य पाये जाते हैं।[1]

गा. ३५९-३६१ में सम्यग्दर्शनग्रहणके कारणोंका निर्देश कर आगेके ५ छन्दोंमें बतलाया गया है कि जो जीव मद्य-मांसका सेवन करते हैं, हिंसामें आसक्त हैं; क्रोध, लोभ, भय, अथवा मोहके वशीभूत हो असत्यभाषण करते हैं, परधन-हरण करते हैं, कामोन्मत्त होकर निर्लज्जतापूर्वक परदारासक्त होते हैं या रात्रिदिव विषयसेवन करते हैं, तथा जो पुत्र-

---

१ अंबे अंबरिसी चेव सामे य सबले ति य। रोद्दोवरुद्द काले य महाकाले ति आवरे॥
असिपत्ते धणू कुंभे वालु वेयरणी ति य। खरस्सरे महाघोसे एवं पण्णरसाहिया॥
सूत्रकृतांग १, ५, नि. ६८-६९; प्रवचनसारोद्धार १०८५-८६.

कलत्रादि निज परिवार या मित्रोंके जीवनार्थ तृष्णावश हो परवंचनपूर्वक धनका उपार्जन करते हैं वे नरकोंमें जाकर महान् कष्टको सहते हैं।

यहां गा. ४ में की गई प्रतिज्ञाके अनुसार नारक जीवोंमें योनियोंकी प्ररूपणा की जानी चाहिये थी, परन्तु वह उपलब्ध नहीं हैं। सम्भव है मूल प्रतियोंमें योनिप्ररूपक गाथायें छूट गई हों और उनके स्थानमें उपर्युक्त ५ छन्द प्रक्षिप्त हो गये हों। योनियोंके वर्णनका क्रम चतुर्थ (गा. २९४८-५३), पंचम (गा. २९३-९७) और अष्टम (गा. ७००-७०१) महाधिकारोंमें बराबर पाया जाता है।

३ भावनलोक—महाधिकारमें २४३ पद्य हैं। यहां भवनवासी देवोंका निवासक्षेत्र, उनके भेद, चिह्न, भवनसंख्या, इन्द्रोंका प्रमाण व नाम, दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंका विभाग व उनके भवनोंका प्रमाण, अल्पर्द्धिक, महर्द्धिक एवं मध्यमर्द्धिक भवनवासी देवोंके भवनोंका विस्तार, भवन, वेदी, कूट, जिनेन्द्रप्रासाद, इन्द्रविभूति, संख्या, आयुप्रमाण, शरीरोत्सेध, अवधिविषय, गुणस्थानादि, एक समयमें उत्पन्न होनेवाले व मरनेवालोंकी संख्या, आगति, भवनवासी देवोंकी आयु बांधनेवाले परिणाम और सम्यग्दर्शनग्रहणके कारण, इत्यादिका विशेष विवेचन किया है। (विशेष परिचयके लिये देखिये परिशिष्टमें यंत्र नं. २, ४ और १८)।

आयुबन्धक परिणामोंके प्रकरणमें बतलाया है कि जो ज्ञान व चरित्रके विषयमें शंकित हैं, क्लेशभावसे संयुक्त हैं, अविनयमें आसक्त हैं, कामिनीविरहसे व्याकुल हैं व कलहप्रिय हैं; वे संज्ञी-असंज्ञी जीव मिथ्यात्वभावसे संयुक्त होकर भवनवासी देवोंकी आयुको बांधते हैं; सम्यग्दृष्टि जीव कदापि वहां उत्पन्न नहीं होते। असत्यभाषी, हास्यप्रिय एवं कन्दर्पानुरक्त जीव कन्दर्प देवोंमें जन्म लेते हैं। भूतिकर्म, मंत्राभियोग व कौतूहलादिसे संयुक्त तथा चाटुकार जीव वाहनदेवोंमें उत्पन्न होते हैं। तीर्थंकर, संघ एवं आगमग्रन्थादिकके विषयमें प्रतिकूल आचरण करनेवाले दुर्विनयी मायाचारी प्राणी किल्विष सुरोंमें उत्पन्न होते हैं। उन्मार्गोपदेशक व जिनेन्द्रमार्गमें विप्रतिपन्न (विवादयुक्त) प्राणी संमोहसुरोंमें जन्मग्रहण करते हैं। क्रोध, मान, माया व लोभमें आसक्त; निकृष्ट आचरण करनेवाले तथा वैरभावसे संयुक्त जीव असुरोंमें उत्पन्न होते हैं।

जन्मग्रहणके पश्चात् अन्तर्मुहूर्तमें ही छह पर्याप्तियोंसे परिपूर्ण होकर वे देव वहां उत्पन्न होनेके कारणका विचार करते हैं। पुनः व्यवसायपुरमें प्रविष्ट हो पूजा व अभिषेकके योग्य द्रव्योंको लेकर बड़े आनन्दके साथ जिनालयको जाते हैं। वहां पहुंच कर देवियोंके साथ विनीत भावसे प्रदक्षिणापूर्वक जिनप्रतिमाओंका दर्शन कर जय-जय शब्द करते हैं। पश्चात् नाना वादित्रोंके साथ जल, चंदन, तंदुल, पुष्पमाला, नानाविध भक्ष्य द्रव्य (नैवेद्य), रत्नप्रदीप

धूप और पके हुए पनस (कटहल), केला, अनार एवं दाख आदि फलोंसे जिनपूजा करते हैं। पूजाके अन्तमें श्रेष्ठ अप्सराओंसे संयुक्त होकर विविध नाटकोंको करते हैं। तत्पश्चात् निज भवनोंमें आकर अनेक प्रकारके सुखोंका उपभोग करते हैं।

४ नरलोक– महाधिकारमें मनुष्य लोकका निर्देश, जंबूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कालोदक समुद्र, पुष्करार्ध द्वीप, इन अढ़ाई द्वीप–समुद्रोंमें स्थित मनुष्योंके भेद,संख्या, अल्पबहुत्व, गुणस्थानादि, आयुबन्धक परिणाम, योनि, सुख, दुख, सम्यक्त्वग्रहणके कारण और मोक्ष जानेवाले जीवोंका प्रमाण, इस प्रकार १६ अधिकार हैं। समस्त पद्यसंख्या २९६१ है। बीचमें एक कालभेद प्ररूपक ५ पृष्ठका गद्य भाग भी है।

इनमें जंबूद्वीपका वर्णन, वेदिका, भरतादि क्षेत्रों और कुलपर्वतोंका विन्यास, भरत क्षेत्र, उसमें प्रवर्तमान छह काल, हिमवान्, हैमवत, महाहिमवान्, हरिवर्ष, निषध, विदेह क्षेत्र, नील पर्वत, रम्यक क्षेत्र, रुक्मि पर्वत, हैरण्यवत क्षेत्र, शिखरी पर्वत और ऐरावत क्षेत्र, इन १६ अन्तराधिकारों द्वारा बहुत विस्तारपूर्वक किया गया है।

यहां विजयार्ध पर्वत और गंगा-सिंधु नदियों द्वारा छह खण्डोंमें विभक्त हुए भरत क्षेत्रके आर्यखण्डमें प्रवर्तमान उत्सर्पिणी व अवसर्पिणी स्वरूप सुषम-सुषमादि छह कालोंकी विस्तृत प्ररूपणा है। इस प्रकरणमें बतलाया गया है कि सुषम-सुषमा, सुषमा और सुषम-दुःषमा, इन तीन कालोंमें क्रमशः उत्तम, मध्यम और जघन्य भोगभूमि जैसी रचना होती है। इनमें युगल-युगल रूपसे उत्पन्न होनेवाले पुरुष-स्त्री पति-पत्नी जैसा आचरण करते हैं। यहां धर्म-कर्मका विवेक कुछ नहीं रहता। स्वामि-भृत्यादिका भेद भी नहीं होता। वैवाहिक संस्कारादि एवं कृषि आदि कर्म भी नहीं पाये जाते। वहां दस प्रकारके कल्पवृक्ष होते हैं जिनसे युगलोंको आवश्यक सामग्री प्राप्त होती रहती है। वर्तमान इतिहासमें जो यह बतलाया जाता है कि प्रारम्भमें मनुष्य जंगली थे, उस समय उनमें कुछ विवेक नहीं था। वे धीरे धीरे उन्नति करते हुए आजकी अवस्थामें आये इत्यादि, सम्भव है उसका मूल स्रोत यही व्यवस्था रही हो।

आगे कहा गया है कि जब तृतीय कालमें पल्योपमका आठवां भाग ($\frac{1}{8}$) शेष रहता है तब क्रमशः प्रतिश्रुति आदि चौदह कुलकर पुरुष उत्पन्न होते हैं जो प्रजाजनोंको भिन्न भिन्न विषयोंका उपदेश देते हैं (देखिये यंत्र नं. ३)। उनमें अन्तिम कुलकर नाभिराय थे। इन्होंने कल्पवृक्षोंके नष्ट हो जानेपर व्याकुलताको प्राप्त हुई प्रजाको आजीविकोपयोगी साधनोंका उपदेश दिया व भोजनादिकी सारी ही व्यवस्थायें समझाईं। तत्पश्चात् २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ विष्णु, ९ प्रतिशत्रु और ९ बलदेव, इस प्रकार ६३ शलाकापुरुष उत्पन्न होते हैं। इनमें

प्रथम तीर्थंकरका जब अवतार हुआ तब सुषम-दुःषमा कालमें ८४ लाख पूर्व ३ वर्ष और ८½ मास शेष थे।

यहां प्रसंग वश २४ तीर्थंकरोंका वर्णन ५२२ से १२८० गाथाओंमें बहुत विस्तारसे किया गया है (देखिये यंत्र नं ७)। इसी बीच प्रकरणानुसार ३१ अन्तराधिकारों द्वारा (गा. ७१० से ८९४) समवसरणकी भी विस्तृत प्ररूपणा की गई है। यहां ही गणधरोंका प्रसंग आनेपर बुद्धि, विक्रिया, क्रिया, तप, बल, औषधि, रस और क्षेत्र, इन ऋद्धियोंका भी महत्वपूर्ण विवेचन है (गा. ९६७-१०९१)।

चक्रवर्तिप्ररूपणामें (गा. १२८१–१४१०) भरतादिक चक्रवर्तियोंका उत्सेध, आयु, कुमारकाल, मण्डलीककाल, दिग्विजय, राज्य और संयमकालका वर्णन है (देखिये यंत्र नं. ९)।

बलदेव, नारायण, प्रतिनारायण, रुद्र, नारद और कामदेवोंकी भी यहां संक्षिप्त प्ररूपणा की गई है (देखिये यंत्र नं. ८, १०–१२) और इन सबोंको भव्य एवं मुक्तिगामी बतलाया गया है (गा. १४११–१४७३)।

भगवान् महावीरके मुक्त होनेके पश्चात् ३ वर्ष ८½ मासके बीतनेपर दुःषम कालका प्रारम्भ हो जाता है। वीर भगवान्के सिद्ध होनेपर गौतम स्वामीको, उनके सिद्ध होनेपर सुधर्म स्वामीको, तथा सुधर्म स्वामीके भी सिद्ध होनेपर जम्बू स्वामीको केवलज्ञानकी प्राप्ति हुई। यहां तक अनुबद्ध केवलियोंका अस्तित्व रहा। यहां विशेष यह भी बतलाया है कि मुक्तिगामियोंमें अन्तिम श्रीधर थे जो कुण्डलगिरिसे मुक्त हुए। चारण ऋषियोंमें अन्तिम सुपार्श्वचन्द्र, प्रज्ञाश्रमणोंमें अन्तिम वज्रयश, अवधिज्ञानियोंमें अन्तिम श्रीनामक, तथा मुकुटधरोंमें जिन-दीक्षाधारक अन्तिम चन्द्रगुप्त हुए।

आगे जाकर वर्धमान भगवान्के तीर्थमें ५ श्रुतकेवली, ११दशपूर्वधारी, ५ ग्यारह अंगोंके धारक और ४ आचारांगधारी, इनकी परम्परा बतलायी गई है। उक्त केवलि–श्रुतकेवली आदिकोंका समस्त काल छह सौ तेरासी (६२+१००+१८३+२२०+११८= ६८३) वर्ष है। तत्पश्चात् २०३१७ वर्ष व्यतीत होनेपर, अर्थात् पंचम कालके अन्तमें, धर्मकी प्रवृत्ति नष्ट हो जायगी, ऐसा कहा गया है।

इस कालमें भी चातुर्वर्ण धर्मसंघ तो रहेगा, किन्तु कषायोंकी तीव्रता उत्तरोत्तर बढ़ती जायगी। वीरनिर्वाणके ४६१ वर्ष पश्चात् शक राजा उत्पन्न हुवा। इसमें मतान्तरसे ९७८५ वर्ष ५ मास, १४७९३ वर्ष, तथा ६०५ वर्ष ५ मास पश्चात् भी शक राजाकी उत्पत्ति कही गई है। इनमेंसे अन्तिम मत ग्रंथकारको अभीष्ट

प्रतीत होता है और वर्तमानमें जो निर्वाण संवत् और शक संवत् प्रचलित हैं उनसे भी यही मत सिद्ध होता है। इस समय प्रचलित निर्वाण संवत् २४७७ और शक संवत् १८७२ है जिससे उनके बीच ठीक ६०५ वर्षका अन्तर पाया जाता है। निर्वाण संवत् कार्तिक शुक्ल १ से तथा शक संवत् चैत्र शुक्ल १ से प्रारंभ होता है जिसमें ५ माहके अन्तरकी व्युत्पत्ति भी ठीक बैठ जाती है (गा. १४९६-१५१०)।

वीरनिर्वाणसे चतुर्मुख कल्कीके राज्य पर्यन्त एक हजार वर्ष व्यतीत हुए जिसकी इतिहासपरंपरा तीन प्रकारसे बतलाई गई है—

१

वीरनिर्वाणके पश्चात्—	४६१ वर्ष
शक वंश—	२४२ वर्ष
गुप्त वंश—	२५५ ,,
चतुर्मुख—	४२ ,,
	१००० वर्ष

२

वीरनिर्वाणके समय पालक राजाका अभिषेक	
पालक	६० वर्ष
विजय वंश	१५५ ,,
मुरुंड वंश	४० ,,
पुष्यमित्र	३० ,,
वसुमित्र-अग्निमित्र	६० ,,
गन्धर्व	१०० ,,
नरवाहन	४० ,,
भृत्याभ्र	२४२ ,,
गुप्तवंश	२३१ ,,
चतुर्मुख कल्की	४२ ,,
	१००० वर्ष

३

वीरनिर्वाणसे आचारांगधरों तककी आचार्यपरंपरा	६८३ ,,
तत्पश्चात् व्यतीत काल	२७१ ,,
चतुर्मुख कल्की	४२ ,,
	१००० वर्ष

प्रसंगवश यह भी कहा है कि २१००० वर्ष प्रमाण इस दुःषम कालमें १०००-१००० वर्षके पश्चात् एक एक कल्की और ५००-५०० वर्षमें एक एक उपकल्की जन्म लेता है। ये कल्की लोभवश साधुओंके आहारमेंसे कर (टैक्स) के रूपमें अग्रिम ग्रास मांगते हैं। साधु ग्रास देकर अन्तराय मान निराहार वापिस चले जाते हैं। उस समय उनमें किसी एकको अवधिज्ञान प्रगट हो जाता है। अन्तिम कल्कीके समय वीरांगज मुनि, सर्वश्री आर्यिका, अग्निदत्त श्रावक और पंगुश्री श्राविका रहेंगी। कल्की द्वारा आहारमेंसे अग्रिम ग्रास मांगनेपर उसे देकर मुनि अन्तराय मान वापिस चल जाते हैं। पश्चात् अवधिज्ञान प्राप्त होनेपर वे अग्रिल (अग्निदत्त), पंगुश्री और सर्वश्रीको बुलाकर प्रसन्नतापूर्वक उपदेश देते हैं

कि ' अब दुःषम कालका अन्त आगया । तुम्हारी और हमारी तीन दिनकी आयु शेष है । यह अन्तिम कल्की है । ' तब उक्त चारों जन जीवन पर्यन्त चतुर्विध आहार एवं परिग्रहसे ममता छोड़ सन्यास ग्रहण करके कार्तिककी अमावस्याको समाधिमरण प्राप्त करते हैं व यथायोग्य सौधर्म स्वर्गमें उत्पन्न होते हैं । इसपर क्रोधित हुआ कोई असुर देव मध्याह्नमें कल्कीको मार डालता है । सूर्यास्त समय अग्नि भी नष्ट हो जाती है । इस समय उक्त दुःषम कालके ३ वर्ष ८½ मास शेष रहते हैं ।

तत्पश्चात् अतिदुःषम कालका प्रारम्भ होता है । उसके प्रारम्भमें उत्कृष्ट आयु २० वर्ष और शरीरकी उंचाई ३-३½ हाथ रह जाती है । उस समय मनुष्य पशुओं जैसा आचरण करने लगते हैं । इस कालमें नरक व तिर्यंच गतिसे आये हुए जीव ही यहां जन्म लेते हैं और यहांसे मरकर वे पुनः नरक व तिर्यंच गतिमें जाते हैं । उक्त कालमें जब ४९ दिन शेष रहते हैं तब प्रलयकालके उपस्थित होनेपर सात दिन तक भयानक संवर्तक पवन चलती है । पश्चात् सात सात दिन तक क्रमशः शीतल व क्षार जल, विषजल, धूम, धूलि, वज्र और अग्निकी वर्षा होती है, जिससे पर्वत व वृक्ष आदि नष्ट हो जाते हैं । उस समय कुछ भिन्न भिन्न जातियोंके ७२ युगल प्राणी विजयार्ध पर्वतकी गुफाओंमें जा छिपते हैं । कुछ प्राणियोंको दयालु देव व विद्याधर भी सुरक्षित स्थानोंमें पहुंचा देते हैं । इस प्रकार अवसर्पिणीके छह काल समाप्त हो जाते हैं ।

पश्चात् उत्सर्पिणीका अतिदुःषम नामक प्रथम काल उपस्थित होता है । इसके प्रारम्भमें जल व दूध आदिकी वर्षा होती है जिससे पृथिवीपर नाना रसोंसे परिपूर्ण तरु-गुल्मादि उत्पन्न होने लगते हैं । तब शीतल गन्ध ग्रहण कर विजयार्धकी गुफाओं आदिको प्राप्त हुए वे मनुष्य व तिर्यंच निकल आते हैं । इस कालके प्रथम समयमें आयु १६ अथवा १५ वर्ष और शरीरकी उंचाई एक हाथ प्रमाण होती है । पश्चात् कालस्वभावसे आयु, उत्सेध, तेज, बल व बुद्धि आदि उत्तरोत्तर बढ़ने लगते हैं ।

उत्सर्पिणीके दुःषम नामक द्वितीय काल में १००० वर्ष शेष रहनेपर क्रमशः चौदह कुलकर उत्पन्न होते हैं । दुःषम-सुषम नामक तृतीय कालमें तीर्थंकर आदि महापुरुष उत्पन्न होते हैं । इस प्रकार जैसे अवसर्पिणी कालमें आयु, बुद्धि एवं बल-वीर्यादिकी उत्तरोत्तर हानि होती है वैसे ही इस कालमें उनकी वृद्धि होती जाती है ।

ये दोनों काल भरत और ऐरावत क्षेत्रोंके आर्यखण्डमें चक्रवत् घूमते रहते हैं । इन क्षेत्रोंके ५-५ म्लेच्छखण्डों और विद्याधरश्रेणियोंमें अवसर्पिणीके चतुर्थ एवं उत्सर्पिणीके तृतीय

(दुःषम-सुषम) कालमें क्रमशः आदिसे अन्त तक हानि व वृद्धि होती रहती है, अन्य कालोंकी प्रवृत्ति वहां नहीं है ।

असंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी कालोंके बीतनेपर एक हुण्डावसर्पिणी काल आता है जिसमें कुछ अनहोनी घटनायें घटित होती हैं । जैसे– सुषम-दुःषम कालकी स्थितिके कुछ शेष रहनेपर भी वर्षाका होने लगना, विकलेन्द्रिय जीवोंकी उत्पत्ति प्रारम्भ हो जाना, कल्पवृक्षोंका नष्ट होना, कर्मभूमिका व्यापार प्रारम्भ हो जाना, प्रथम तीर्थंकर और प्रथम चक्रवर्तीका जन्म लेना, चक्रवर्तीका विजयभंग, इसी कालमें कुछ थोड़े जीवोंका मुक्ति प्राप्त करना, चक्रवर्ती द्वारा ब्राह्मण वर्णकी उत्पत्ति, दुःषम-सुषम कालमें ६३ के स्थानपर ५८ ही शलाकापुरुषोंका होना, नौवेंसे सोलहवें तीर्थंकर तक सात तीर्थोंमें धर्मका व्युच्छेद होना, कलहप्रिय ११ रुद्र और ९ नारदोंका जन्म लेना, सातवें, तेईसवें और चौबीसवें तीर्थंकरोंके उपसर्गका होना, तथा कल्की-उपकल्कीका जन्म लेना, इत्यादि ।

गा. १६२४–१७७३ में हिमवान्, महाहिमवान्, हरिवर्ष और निषध, इनकी प्ररूपणा की है (देखिये यंत्र नं. ५–६) ।

आगे गा. १७७४–२३२६ में विदेह क्षेत्रका वर्णन करते हुए उसका विस्तारादि, मंदर शैल (सुमेरु), तत्परिस्थ पाण्डुकादिक वन, जिनभवनरचनाका प्रकार, वक्षार पर्वत, गजदन्त, जम्बू व शाल्मली वृक्ष, मन्दर पर्वत के पूर्वापर मार्गोंमें स्थित १६-१६ क्षेत्र, कच्छा विजय व क्षेमा नगरी आदिका विस्तारसे कथन किया गया है ।

गा. २३२७–२३७३ में नीलगिरि, रम्यक विजय, रुक्मि पर्वत, हैरण्यवत क्षेत्र, शिखरी पर्वत और ऐरावत क्षेत्रका वर्णन किया है (देखिये यंत्र नं. ५-६.) । गा. २३७४–२३७९ में भरतादिकोंका क्षेत्रफल बतलाया गया है । आगे गा. २३९७ तक नदी आदिकोंकी समस्त संख्या निर्दिष्ट की है ।

गा. २३९८-२५२६ में लवण समुद्रकी प्ररूपणा की गई है । इस प्रकरणमें २४१६ से २४२५ तक १० गाथायें प्रतियोंमें नष्ट बतलायी गई हैं । उनका छूटना प्रकरणके अधूरेपनसे भी सिद्ध होता है । यहां लवणसमुद्रका विस्तारादि बतलानेके पश्चात् उसके मध्यमें चारों दिशाओंमें ४ उत्कृष्ट पाताल, विदिशाओंमें ४ मध्यम पाताल और उन दोनोंके बीच बीचमें १००० जघन्य पाताल बतलाये गये हैं । ये पाताल रांजन (एक प्रकारका घड़ा) के आकार हैं । मुख्य पातालोंका विस्तार मूल व मुखमें दस हजार योजन तथा मध्यमें एक लाख योजन प्रमाण है । उंचाई भी इनकी एक लाख योजन ही है । मध्यम पातालोंका विस्तारादि उत्कृष्ट पातालोंके दसवें भाग और वही जघन्य पातालोंका मध्यमोंके दसवें

भाग मात्र है। इनमेंसे प्रत्येक पातालके अधस्तन त्रिभागमें वायु, मध्यम त्रिभागमें जल-वायु और उपरिम त्रिभागमें केवल जल है। इन पातालोंकी वायु स्वभावसे शुक्ल पक्षमें प्रतिदिन २२२२$\frac{2}{9}$ योजन मात्र वृद्धिको और कृष्ण पक्षमें उतनी ही हानिको प्राप्त होती है। इस प्रकार पूर्णिमाके दिन अधस्तन दो त्रिभागोंमें वायु और उपरिम एक त्रिभागमें जल रहता है, तथा अमावस्याके दिन उपरिम दो त्रिभागोंमें जल और अधस्तन त्रिभागमें वायु रहती है। यही एक कारण समुद्रके जलकी वृद्धि व हानि अर्थात् ज्वारभाटाका यहां बतलाया गया है।

आगे चलकर लवण समुद्रके अभ्यन्तर भागमें २४ और उसके बाह्य भागमें भी २४ इस प्रकार कुमानुषोंके ४८ अन्तर्द्वीप बतलाये गये हैं। इनमें रहनेवाले कुमानुषोंकी शरीराकृति कुत्सित होती है। जैसे- किसीका एक ही जंघायुक्त होना तथा किसीके पूंछ व सींगोंका होना इत्यादि। मन्दकषायी, प्रियभाषी, कुटिल, धर्मके फलको खोजनेवाले, मिथ्या देवोंकी भक्तिमें तत्पर तथा भोजनके क्लेशको सह लेनेवाले मिथ्यादृष्टि जीव इन द्वीपोंमें उत्पन्न होते हैं।

धातकीखण्ड द्वीपका वर्णन जगती, विन्यास, भरतक्षेत्र, उसमें कालभेद, हिमवान्, हैमवत, महाहिमवान्, हरिवर्ष, निषध, विदेह, नील, रम्यक, रुक्मि, हैरण्यवत, शिखरी और ऐरावत, इन १६ अन्तराधिकारों द्वारा २५२७-२७१७ गाथाओंमें किया गया है, जो कुछ विशेषताओंको छोड़ प्रायः जम्बूद्वीपके ही समान है। गा. २७१८-२७४३ में कालोद समुद्रकी प्ररूपणा है जो लवण समुद्रके ही समान है। पुष्करार्ध द्वीपका वर्णन भी उपर्युक्त १६ अन्तराधिकारों द्वारा धातकीखण्ड द्वीपके समान २७४४-२९२४ गाथाओंमें किया गया है। यहां जगतीके स्थानमें मानुषोत्तर पर्वत है।

आगे सामान्य, पर्याप्त, मनुष्यनी और अपर्याप्त, इन चार प्रकारके मनुष्योंकी संख्या, उनमें क्षेत्रकी अपेक्षा अल्पबहुत्व, गुणस्थानादि, गति-आगति, योनि, सुख-दुख, सम्यक्त्वग्रहण-कारण और मुक्ति प्राप्त करनेवाले जीवोंका प्रमाण बतला कर इस महाधिकारको पूर्ण किया गया है।

५ तिर्यग्लोक– महाधिकारमें १२१ पद्य हैं। इसमें गद्यभाग ही अधिक है। इस महाधिकारमें सोलह अन्तराधिकारोंके द्वारा तिर्यग्लोकका विस्तृत वर्णन किया गया है। यहां स्थावरलोकका प्रमाण बतलाते हुए यह कहा है कि जहां तक आकाशमें धर्म एवं अधर्म द्रव्यके निमित्तसे होनेवाली जीव और पुद्गलकी गति व स्थिति सम्भव है उतना सब स्थावरलोक है। उसके मध्यमें सुमेरु पर्वतके मूलसे एक लाख योजन ऊंचा और एक राजु लम्बा-चौड़ा तिर्यक् त्रस-लोक है, जहां तिर्यंच त्रस जीव भी पाये जाते हैं।

तिर्यग्लोकमें परस्पर एक दूसरेको चारों ओरसे वेष्टित करके स्थित समवृत्त असंख्यात (२५ कोड़ाकोड़ि उद्धार पल्योंके बराबर) द्वीप-समुद्र हैं। उन सबके मध्यमें एक लाख योजन

विस्तारवाला जम्बूद्वीप नामक प्रथम द्वीप है। उसके चारों ओर दो लाख यो. विस्तारसे संयुक्त लवण समुद्र है। उसके आगे दूसरा द्वीप और फिर दूसरा समुद्र है। यही क्रम अन्त तक है। इन द्वीप-समुद्रोंका विस्तार उत्तरोत्तर पूर्व-पूर्वकी अपेक्षा दूना दूना होता गया है। यहां ग्रन्थकारने आदि व अन्तके सोलह सोलह द्वीप-समुद्रोंके नामोंका भी निर्देश किया है। इनमें आदिके अढ़ाई द्वीप और दो समुद्रोंकी प्ररूपणा विस्तारपूर्वक चतुर्थ महाधिकारमें की जा चुकी है।

यहां आठवें, ग्यारहवें और तेरहवें द्वीपका कुछ विशेष वर्णन किया गया है। शेष द्वीपोंमें कोई विशेषता न होनेसे उनका वर्णन नहीं किया। आठवें नन्दीश्वर द्वीपके वर्णनमें बतलाया है कि उसका विस्तार १६३८४००००० योजन है। इसके मध्यमें चारों दिशाओंमें एक एक अंजनगिरि नामक पर्वत है जिसके चारों ओर पूर्वादिक दिशाओंमें एक एक लाख योजन विस्तारसे संयुक्त समचतुष्कोण चार चार वापिकायें हैं। इनके मध्यमें एक एक दधिमुख पर्वत और ऊपर बाह्य दोनों कोनोंमें एक एक रतिकर गिरि है। इस प्रकार हर एक दिशामें जो एक एक अंजनगिरि, चार चार दधिमुख और आठ आठ रतिकर पर्वत हैं उन सबके शिखरोंपर एक एक रत्नमय जिनभवन है। ये सब चारों दिशाओंमें बावन हैं। प्रतिवर्ष आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन मासमें भवनवासी आदि चारों प्रकारके देव यहां आकर शुक्ल पक्षकी अष्टमीसे पूर्णिमा तक उन जिनभवनोंमें भक्तिपूर्वक पूजा करते हैं। इनमेंसे कल्पवासी देव पूर्व दिशामें, भवनवासी दक्षिणमें, व्यन्तर पश्चिममें और ज्योतिषी देव उत्तर दिशामें पूर्वाह्न, अपराह्न, पूर्व रात्रि व पश्चिम रात्रिमें दो दो प्रहर तक अभिषेकपूर्वक जल-चन्दनादिक आठ द्रव्योंसे पूजन करते व स्तुति करते हैं।

इस पूजामहोत्सवके निमित्त जो कल्पवासी १४ देवेन्द्र अपने अपने वाहनोंपर आरूढ़ होकर हाथमें कुछ फल-पुष्पादिको लिये हुए वहां जाते हैं उनके नाम यहां (५, ८४–९७) इस प्रकार बताये गये हैं — सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मेन्द्र, ब्रह्मोत्तरेन्द्र, शुक्रेन्द्र, महाशुक्रेन्द्र, शतारेन्द्र, सहस्रारेन्द्र आनतेन्द्र, प्राणतेन्द्र, आरणेन्द्र और अच्युतेन्द्र।

आगे चलकर कुण्डलवर और रुचकवर, इन दो द्वीपोंका कुछ थोड़ासा वर्णन करके यह बतलाया है कि जम्बूद्वीपसे आगे संख्यात द्वीप-समुद्रोंके पश्चात् एक दूसरा भी जम्बूद्वीप है। इसमें जो विजयादिक देवोंकी नगरियां स्थित हैं उनका यहां विशेष वर्णन किया गया है।

तत्पश्चात् अन्तिम स्वयम्भूरमण द्वीप और उसके बीचोंबीच वलयाकारसे स्थित स्वयम्प्रभ पर्वतका निर्देश कर यह प्रगट किया है कि लवणोद, कालोद और स्वयम्भूरमण

ये तीन समुद्र चूंकि कर्मभूमिसम्बद्ध हैं, अतः इनमें तो जलचर जीव पाये जाते हैं, किन्तु वे अन्य किसी और समुद्रमें नहीं पाये जाते।

आगे उन्नीस पक्षोंका उल्लेख करके उनमें द्वीप-समुद्रोंके विस्तार, खंडशलाकाओं, क्षेत्रफल, सूचीप्रमाण और आयाममें जो उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है उसका गणितप्रक्रियाके द्वारा बहुत विस्तारसे विवेचन किया है। पश्चात् चौंतीस भेदोंमें विभक्त तिर्यंच जीवोंकी संख्या, आयु, आयुबन्धक भाव, योनियां, सुख-दुख, गुणस्थानादिक, सम्यक्त्वग्रहणके कारण और पर्यायान्तर प्राप्तिका कथन किया गया है। फिर उक्त चौंतीस प्रकारके तिर्यंचोंमें अल्पबहुत्व और अवगाहनाविकल्पोंको बतला कर इस महाधिकारको समाप्त किया है।

६ व्यन्तरलोक– महाधिकारमें १०३ पद्य हैं। इसमें सत्तरह अन्तराधिकारोंके द्वारा व्यन्तर देवोंका निवासक्षेत्र, उनके भेद, चिह्न, कुलभेद, नाम, दक्षिण–उत्तर इन्द्र, आयु, आहार, उच्छ्वास, अवधिज्ञान, शक्ति, उत्सेध, संख्या, जन्म-मरण, आयुबन्धक भाव, दर्शनग्रहणकारण और गुणस्थानादि विकल्पोंकी प्ररूपणा की गई है। इसमें कुछ विशेष बातोंको ही बतला कर शेष प्ररूपणा तृतीय महाधिकारमें वर्णित भवनवासी देवोंके समान बतला दी गई है।

७ ज्योतिर्लोक– महाधिकारमें ६१९ पद्य हैं। इसमें ज्योतिषी देवोंका निवासक्षेत्र, उनके भेद, संख्या, विन्यास, परिमाण, चर ज्योतिषियोंकी गति, अचर ज्योतिषियोंका स्वरूप, आयु, आहार, उच्छ्वास, उत्सेध, अवधिज्ञान, शक्ति, एक समयमें जीवोंकी उत्पत्ति व मरण, आयुबन्धक भाव, सम्यग्दर्शनग्रहणके कारण और गुणस्थानादिवर्णन, इन सत्तरह अन्तराधिकारोंके द्वारा ज्योतिषी देवोंकी विस्तृत प्ररूपणा की गई है।

निवासक्षेत्रकी प्ररूपणामें बतलाया है कि एक राजु लम्बे-चौड़े और ११० योजन मोटे क्षेत्रमें ज्योतिषी देवोंका निवास है। चित्रा पृथिवीसे ७९० योजन ऊपर आकाशमें तारागण, इनसे १० यो. ऊपर सूर्य, उससे ८० यो. ऊपर चन्द्र, उससे ४ यो. ऊपर नक्षत्र, उनसे ४ यो. ऊपर बुध, उससे ३ यो. ऊपर शुक्र, उससे ३ यो. ऊपर गुरु, उससे ३ यो. ऊपर मंगल और उससे ३ यो. ऊपर जाकर शनिके नगर (विमान) हैं। ये नगरस्थल ऊर्ध्वमुख अर्ध गोलकके आकार हैं। इनमें चन्द्रनगरस्थलोंका उपरिम तलविस्तार $\frac{५६}{६१}$ यो., सूर्यनगरस्थलोंका $\frac{४८}{६१}$ यो., नक्षत्रनगरस्थलोंका $\frac{१}{२}$ यो., बुधका $\frac{१}{४}$ यो., शुक्रका $\frac{१}{४}$ यो., गुरुका कुछ कम $\frac{१}{४}$ यो., मंगलका $\frac{१}{४}$ यो. और शनिका $\frac{१}{४}$ यो. है। ताराओंके नगरस्थलोंका उपरिम तलविस्तार २०००, १५००, १००० और ५०० धनुष प्रमाण है। इन नगरस्थलोंका बाहल्य अपने अपने विस्तारसे आधा है। वे सब देव इन नगरस्थलोंमें सपरिवार आनन्दसे रहते हैं। इनमें चन्द्रनगरस्थलोंको सोलह हजार देवोंमेंसे चार चार हजार देव क्रमसे

पूर्वादिक दिशाओंमें खींचते हैं। अत एव वे सदा गतिमान् रहते हैं। इसी प्रकार अन्य सूर्यादिके नगरस्थलोंको भी आभियोग्य जातिके देव सदा खींचते रहते हैं।

इन ज्योतिषी देवोंमेंसे चन्द्रको इन्द्र और सूर्यको प्रतीन्द्र माना गया है। चन्द्रका चारक्षेत्र जम्बूद्वीपमें १८० यो. और लवणसमुद्रमें ३३०$\frac{४८}{६१}$ यो. है। इस चारक्षेत्रमें चन्द्रकी अपने मण्डल प्रमाण ($\frac{५६}{६१}$ यो.) विस्तारवाली ८५ गलियां हैं। प्रथम गली मेरुसे ४४८२० यो. की दूरीपर है। दूसरी गली इससे ३६$\frac{१७३}{६२७}$ यो. दूर है। इसी प्रकार आगेकी गलियां उत्तरोत्तर ३६$\frac{१७३}{६२७}$ यो. अधिक दूर होती गई हैं। इस प्रकार अन्तिम १५ वीं गली मेरुसे ४५३२९ $\frac{३५१}{६२७}$ यो. की दूरीपर है।

जम्बूद्वीपमें दो चन्द्र हैं। इनका अन्तर मेरुके विस्तारसे अधिक उसकी दूरीसे दूना रहता है। जैसे– प्रथम वीथीमें उन दोनोंका अन्तर ४४८२०×२+१०००=९९६४० यो. रहता है। प्रथम पथकी परिधिका प्रमाण ३१५०८९ यो. है। इससे आगे द्वितीयादिक पथोंकी परिधि २३०$\frac{१४३}{६२७}$ यो. अधिक होती गई है। चूंकि प्रथम पथसे द्वितीयादि पथोंकी ओर जाते हुए वे चन्द्रादिक देवोंके विमान शीघ्र गमनशील और वापिस आते समय मन्द गमनशील होते हैं, अतः वे उन विषम परिधियोंका परिभ्रमण समान कालमें ही पूर्ण करते हैं। उक्त पन्द्रह परिधियोंमेंसे प्रत्येक परिधिके १०९८०० यो. प्रमाण गगनखण्ड किये गये हैं। इनमें १७६७ गगनखण्डोंको एक चन्द्र एक मुहूर्तमें लांघता है। समस्त गगनखण्डोंको दोनों चन्द्र ६२$\frac{२३}{२२१}$ (१०९८०० ÷ १७६८) मुहूर्तोंमें लांघते हैं। अत एव चान्द्र दिवसका प्रमाण ३१$\frac{२४}{६२}$ मुहूर्त कहा है।

चन्द्रनगरस्थलोंसे ४ प्रमाणांगुल (८३$\frac{१}{३}$ हाथ) नीचे राहुविमानके ध्वजदण्ड हैं। ये अरिष्ट रत्नमय राहुविमान कुछ कम एक यो. विस्तृत और इससे आधे बाहल्यवाले हैं। इनका वर्ण कज्जल जैसा है। इनकी गति दिनराहु और पर्वराहुके भेदसे दो प्रकार है। जिस मार्गमें चन्द्र परिपूर्ण दिखता है वह दिन पूर्णिमा नामसे प्रसिद्ध है। इस मार्गसे अव्यवहित दूसरे मार्गमें चन्द्र वायव्य दिशाकी ओरसे और राहु आग्नेय दिशाकी ओरसे प्रविष्ट होते हैं। यहां दिनराहु अपनी गतिविशेषसे चन्द्रमण्डलकी एक कला ($\frac{५६}{६१}$ ÷ १६ = $\frac{७}{१२२}$ यो.) आच्छादित करता है। इस प्रकार प्रत्येक मार्गमें दिनराहु द्वारा एक एक कलाके आच्छादित करनेपर जिस मार्गमें चन्द्रकी एक कला ही अवशिष्ट रहती है वह दिन अमावस्या कहा जाता है। पश्चात् वह दिनराहु प्रतिपदासे प्रत्येक पथमें चन्द्रकी एक एक कलाको छोड़ता जाता है। पक्षान्तरमें यहां यह भी कह दिया है कि " अथवा चन्द्रबिम्ब पन्द्रह दिन पर्यन्त स्वभावतः

कृष्णवर्ण और शुक्लवर्ण परिणमता है" । पर्वराहु छह छह मासोंमें पूर्णिमाके अन्तमें गतिविशेषसे चन्द्रमण्डलोंको आच्छादित किया करते हैं ।

चन्द्रके समान सूर्य भी जम्बूद्वीपमें दो ही हैं । इनकी भी संचारभूमि $५१०\frac{४८}{६१}$ (१८० + ३३० + $\frac{४८}{६१}$) यो. है । इसमें सूर्यबिम्बके समान विस्तृत और इससे आधे बाहल्य-वाली १८४ वीथियां हैं । प्रथम वीथीमें सूर्य मेरुसे ४४८२० यो. दूर रहता है । यह दूरी आगे उत्तरोत्तर $२\frac{४८}{६१}$ यो. अधिक होती गई है । प्रथम पथमें स्थित दोनों सूर्योंका अन्तर ९९६४० यो. (४४८२० × २ + १००००) यो. होता है । यह अन्तर द्वितीयादि पथोंमें $५\frac{३५}{६१}$ यो. अधिक होता गया है । इन पथपरिधियोंमेंसे प्रत्येकके १०९८०० यो. प्रमाण गगनखण्ड किये गये हैं । चूंकि सूर्य एक मुहूर्तमें इनमेंसे १८३० गगनखण्डोंको लांघता है, अतः समस्त गगनखण्डोंके लांघनेमें दोनों सूर्योंको ६० मुहूर्त लगते हैं । सूर्य जब प्रथम पथमें स्थित रहता है तब दिन व रात्रि क्रमशः १८ व १२ मुहूर्त प्रमाण होते हैं । आगे द्वितीयादि पथोंमें दिन $\frac{३}{६१}$ मुहूर्त कम और रात्रि उतनी ही अधिक होती जाती है । इस प्रकार अन्तिम पथमें सूर्यके स्थित रहनेपर दिनका प्रमाण १२ मुहूर्त और रात्रिका १८ मुहूर्त हो जाता है ।

इसके आगे सूर्यके प्रथमादि पथोंमें स्थित होनेपर कहां कितनी धूप और कितना अंधेरा रहता है, यह विस्तारसे बतलाया है । इसी प्रकार भरत एवं ऐरावत क्षेत्रमें सूर्यके उदयकालमें कहां कितना दिन और रात्रि होती है, यह भी निर्दिष्ट कर दिया है । जम्बूद्वीपमें स्थित दोनों सूर्य पृथक् पृथक् आग्नेय व वायव्य दिशासे दो दो योजन लांघकर प्रथम पथसे द्वितीय पथमें प्रविष्ट होते हैं ।

तत्पश्चात् अठासी ग्रहोंकी संचारभूमि और वीथियोंका निदश मात्र किया है, उनकी विशेष प्ररूपणा नहीं की गई है । इसका कारण काल वश तद्विषयक उपदेशका नष्ट हो जाना बतलाया गया है । आगे चलकर अट्ठाईस नक्षत्रोंकी प्ररूपणा की गई है । इसका विवरण पृ. १०३० पर यंत्रके रूपमें दिया गया है, अतः वहांपर देखा जा सकता है । तत्पश्चात् चन्द्र-सूर्यादि उक्त ज्योतिषी देवोंकी संख्या, आहार, उच्छ्वास, और उत्सेध आदिको कहकर इस महाधिकारको समाप्त किया गया है ।

८ सुरलोक–महाधिकारमें ७०३ पद्य हैं । इसमें वैमानिक देवोंका निवासक्षेत्र, विन्यास, भेद, नाम, सीमा, विमानसंख्या, इन्द्रविभूति, आयु, जन्म-मरणअन्तर, आहार, उच्छ्वास, उत्सेध, आयुबन्धक भाव, लौकान्तिक देवोंका स्वरूप, गुणस्थानादिक,

सम्यक्त्वग्रहणके कारण, आगमन, अवधिज्ञान, देवोंकी संख्या, शक्ति और योनि, इन इकतीस अन्तराधिकारोंके द्वारा वैमानिक देवोंकी विस्तारसे प्ररूपणा की है।

यहां विमानोंके रचनाक्रममें समस्त इन्द्रक विमानोंकी संख्या नामनिर्देशपूर्वक ६३ बतलायी है। सभी इन्द्रक विमानोंके चारों ओर पूर्वादिक दिशाओंमें श्रेणिबद्ध विमान और विदिशाओंमें प्रकीर्णक विमान स्थित है। उनमेंसे प्रथम ऋतु इन्द्रकके चारों ओर प्रत्येक दिशामें बासठ श्रेणिबद्ध विमान हैं। इसके आगे उत्तरोत्तर १-१ श्रेणिबद्ध विमान कम (६१, ६० इत्यादि) होता गया है।

यहां गाथा ८४ के अनुसार ऋतु इन्द्रकके चारों ओर ६३-६३ श्रेणिबद्ध विमान भी बतलाये गये हैं। वहां आगे यह भी बतला दिया गया है कि जिनके मतानुसार ६३ श्रेणिबद्ध कहे गये हैं वे सर्वार्थसिद्धि इन्द्रककी चारों दिशाओंमें भी एक एक श्रेणिबद्ध विमान स्वीकार करते हैं। यहां गाथा ८५ में 'बासट्ठी' पद अशुद्ध प्रतीत होता है, उसके स्थानमें 'तेसट्ठी' पद होना चाहिये।

उक्त दोनों मतोंमें पूर्व मतका आश्रय करके ही प्रस्तुत ग्रन्थमें इन्द्रक, श्रेणिबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंकी सर्वत्र संख्या निर्दिष्ट की है। गा. १२५ में सर्वार्थसिद्धि इन्द्रककी पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशाओंमें जो क्रमशः विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित नामक चार विमान बतलाये हैं वे श्रेणिबद्ध ही कहे जावेंगे। यह कथन द्वितीय मतके आधारसे ही सम्भव है, क्योंकि, प्रथम मतके अनुसार वहां श्रेणिबद्धोंकी सम्भावना नहीं है। आगे गा. १२६ में उन विजयादिक विमानोंके दिशाक्रममें एक अन्य मतका भी उल्लेख किया गया है। हरिवंशपुराण और वर्तमान लोकविभागमें द्वितीय मतको स्वीकार करके सर्वत्र श्रेणिबद्ध विमानोंकी संख्या निर्दिष्ट की गई है।

इसी प्रकार तिलोयपण्णत्तिकारके सामने बारह और सोलह कल्पों विषयक भी पर्याप्त मतभेद रहा है। उन्होंने प्रथमतः बारह कल्पोंका स्वरूप बतलाते हुए यह कहा है कि ऋतु आदि इकतीस इन्द्रक; इनके पूर्व, पश्चिम व दक्षिण इन तीन दिशाओंमें स्थित श्रेणिबद्ध विमान; तथा नैऋत्य एवं आग्नेय विदिशाओंके प्रकीर्णक विमान; ये सब सौधर्म कल्पके अन्तर्गत हैं। उक्त इन्द्रक विमानोंकी उत्तर दिशाके श्रेणिबद्ध तथा वायव्य व ईशान विदिशाओंमें स्थित प्रकीर्णक, इन सबको ईशान कल्प कहा गया है। इसी दिशाक्रमसे सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्पोंका भी स्वरूप बतलाया गया है। अरिष्टादिक चारों इन्द्रक, उनके समस्त श्रेणिबद्ध और सभी प्रकीर्णक विमान, इनको ब्रह्म कल्प कहा गया है। यही क्रम लान्तव, महाशुक्र और सहस्रार कल्पोंमें है। आगे आनतादिक छह इन्द्रक; उनके पूर्व, पश्चिम एवं दक्षिण

दिशाके श्रेणिबद्ध और नैऋत्य व आग्नेय विदिशाओंके प्रकीर्णक; इन सबको आनत-आरण कल्प तथा उनके उत्तरके श्रेणिबद्ध और वायव्य एवं ईशान विदिशाओंके प्रकीर्णक, इनको प्राणत-अच्युत कल्प बतलाया है। यहां आनत, प्राणत, आरण और अच्युत कल्पोंका स्वरूप पृथक् पृथक् नहीं बतलाया जा सका है। इन बारह कल्पोंमें गणित प्रक्रियाके अनुसार उन्होंने श्रेणिबद्ध विमानोंकी संख्या निर्धारित की है। तत्पश्चात् उनमें प्रकीर्णक विमानोंकी भी संख्याका निर्देश करके उन्होंने सोलह कल्पोंके मतानुसार भी उक्त विमानोंकी संख्या समुदित (८, १७८-१८५) रूपमें बतला दी है। सोलह कल्पोंके मतानुसार उन कल्पोंकी सीमा निर्धारित करके (८-१४८) भी उनमें पृथक् पृथक् इन्द्र (सोलह) क्यों नहीं स्वीकार किये गये, यह विचारणीय है।

इसके आगे इन्द्रविभूतिप्ररूपणामें इन्द्रोंके सामानिक-त्रायस्त्रिंश आदि रूप देवपरिवार, उनकी देवियोंका प्रमाण एवं प्रासादादिकका वर्णन है। पटलक्रमसे सभी देव-देवियोंकी आयुका भी विस्तारसे कथन किया गया है।

तत्पश्चात् इन्द्रादिकोंके जन्म-मरणके अन्तरको बतला कर गा. ५४९-५० में उक्त अन्तरको प्रकारान्तरसे फिर भी बतलाया गया है। गाथा ५४९ त्रिलोकसार (५२९) में ज्योंकी त्यों पायी जाती है। आगे गा. ५५१ से ५५४ में आयुके अनुसार आहारकालकी प्ररूपणा की है। गा. ५५५ में सौधर्म इन्द्रके सोम और यम लोकपालोंके आहारकालका प्रमाण $\frac{२५}{२}$ दिन बतलाया है, परन्तु वरुण और कुबेर लोकपालोंके आहारकालका उल्लेख यहां कुछ भी नहीं है। इसके आगे गा. ३ में की गई प्रतिज्ञाके अनुसार उच्छ्वासकाल और उत्सेधकी भी प्ररूपणा पायी जानी चाहिये थी, परन्तु वह भी यहां उपलब्ध नहीं होती। अतः सम्भव है कि यहां प्रतियोंमें कुछ पाठ छूट गया है। यह उत्सेधप्ररूपणा मूलाचारके पर्याप्ति अधिकारमें (गा. २३ से २७) तथा सर्वार्थसिद्धि आदि अन्य ग्रन्थोंमें भी यथास्थान पायी जाती है।

इसके साथ ही एक-दो गाथायें आयुबन्धप्ररूपणाकी भी छूट गई प्रतीत होती हैं, क्योंकि, यहां भोगभूमिजोंकी उत्पत्तिका क्रम उपलब्ध नहीं होता, जब कि उनका उत्पाद केवल देवगतिमें ही सम्भव है। कौन कौनसे जीव आकर देवगतिमें कहां कहां जन्म लेते हैं, इसके लिये निम्न प्रकार यंत्र दिया जाता है। इसमें प्रस्तुत ग्रन्थके अतिरिक्त मूलाचार, तत्त्वार्थराजवार्तिक, हरिवंशपुराण और त्रिलोकसार ग्रन्थोंका भी आश्रय लिया गया है।

देवोंमें उत्पत्तिक्रम

कौनसे जीव ?	तिलोयपण्णत्ति ८, ५५६-५६४	मूलाचार १२,११८-१२५	तत्त्वार्थराजवार्तिक ४, २१, १०	हरिवंशपुराण ६,१०३-१०७	त्रिलोकसार ५४५-५४७
दशपूर्वधर	सौधर्मसे सर्वार्थ.	....	....	....	....
चतुर्दशपूर्वधर	लान्तवसे "	....	....	....	....
देशव्रती	सौधर्मसे अच्युत	अच्युत कल्प तक	सौधर्मसे अच्युत	सौधर्मसे अच्युत	अच्युत कल्प
स्त्री	अच्युत कल्प तक	"	....	....	....
निर्ग्रन्थ अभव्य	उपरिम ग्रैवेयक तक	उपरिम ग्रैवेयक तक	उपरिम ग्रैवेयक तक	उपरिम ग्रैवेयक	ग्रैवेयक तक
निर्ग्रन्थ सम्य.	उ. ग्रै. से सर्वार्थ.	उ. ग्रै. से सर्वार्थ.	उ. ग्रै. से सर्वार्थ.	उ. ग्रै. से सर्वार्थ.	उ. ग्रै. से सर्वार्थ.
चरक	भवन. से ब्रह्म.	....	....	....	ब्रह्मोत्तर तक
परिव्राजक	"	ब्रह्मलोक तक	ब्रह्मलोक तक	ब्रह्मलोक तक	"
संज्ञी पंचे.ति.मि.	सहस्रार तक	....	सहस्रार तक	....	....
आजीवक	भवनसे अच्युत	सहस्रार तक	"	सहस्रार तक	अच्युत तक
तापस	....	भवनत्रिक	भवनत्रिक	ज्योतिर्लोक तक	भवनत्रिक
भोगभूमिज मि.	....	"	"	....	"
संज्ञी मिथ्यादृष्टि	भवनत्रिक (३-२००)	भवनवासी,व्यन्तर	सहस्रार तक	....	....
असंज्ञी "	"	"	भवनवासी, व्यन्तर	....	....
संज्ञी पंचे.ति. स.	....	....	सौधर्मसे अच्युत	....	अच्युत तक
भोगभूमिज सम्य	....	देव	सौधर्म-ईशान	....	सौधर्मद्विक

आगे जाकर उत्पत्तिप्रकार, सुख, तमस्काय, लौकान्तिक देव, गुणस्थानादिक, सम्यग्दर्शनग्रहणके कारण, आगति, अवधिविषय, संख्या और योनि, इन सबकी प्ररूपणा करके इस अधिकारको पूर्ण किया है। यहां योनिप्ररूपणामें जो दो गाथायें (७००-७०१) दी गई हैं वे प्रतियोंमें यहां उपलब्ध न होकर आगे नौवें अधिकारमें गाथा १० के आगे पायी जाती हैं, जहां वे अप्रकृत हैं।

९ सिद्धलोक – महाधिकारमें सिद्धोंका क्षेत्र, उनकी संख्या, अवगाहना और सुखका वर्णन करके जिस भावनासे सिद्धत्व पद प्राप्त होता है उसका कथन किया गया है। इस प्रकरणकी बहुतसी गाथायें समयसार, प्रवचनसार और पंचास्तिकायमें दृष्टिगोचर होती हैं।

६ त्रिलोकप्रज्ञप्तिकी अन्य ग्रंथोंसे तुलना

१ समयसार, पंचास्तिकाय व प्रवचनसार

ये तीनों भगवत्कुन्दकुन्दाचार्यविरचित द्रव्यार्थिकनयप्रधान आध्यात्मिक ग्रन्थ हैं। इनका रचनाकाल सम्भवतः विक्रमकी प्रथम शताब्दि है।

तिलोयपण्णत्तिका नौवां अधिकार सिद्धत्व महाधिकार है। इसमें गाथा १८–६५ में सिद्धत्वकी हेतुभूत भावनाका वर्णन किया गया है। इन गाथाओंमें कितनी ही गाथायें प्रवचनसार व समयसारकी ज्योंकी त्यों हैं, ४-६ गाथायें पंचास्तिकायकी भी हैं। वे गाथायें स्वयं तिलोयपण्णत्तिकारके द्वारा निर्मित न होकर उपर्युक्त ग्रन्थोंसे वहां ली गई हैं, यह हम सिद्ध करनेका प्रयत्न करते हैं—

(१) तिलोयपण्णत्तिके प्रथम महाधिकारमें गा. ९३ के द्वारा उपमा-मानके आठ भेदोंका निर्देश करके आगेकी ९४वीं गाथामें तीन प्रकारके पल्यों व उनके उपयोगकी सूचना की गई है। ठीक इसके पश्चात् ही प्रकरणके पूर्वापर सम्बन्धकी कुछ भी सूचना न करके पुद्गलभेदोंका निर्देश करनेवाली निम्न गाथा दी गई है—

खंदं सयलसमत्थं तस्स य अद्धं भणंति देसो त्ति।
अद्धद्धं च पदेसो अविभागी होदि परमाणू ॥ ९५ ॥

यह गाथा पंचास्तिकायकी है। वहां इस गाथाके पूर्वमें निम्न गाथा उपलब्ध होती है—

खंधा य खंधदेसा खंधपदेसा य होंति परमाणू।
इदि ते चदुव्वियप्पा पुग्गलकाया मुणेयव्वा ॥ ७४ ॥

वहां यहांसे पुद्गल-अस्तिकायका प्रकरण प्रारम्भ होता है। इस गाथामें स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणु, ये चार पुद्गल-अस्तिकायके भेद बतलाये गये हैं। ठीक इसके पश्चात् ही प्रस्तुत गाथाके द्वारा उन चारों पुद्गलभेदोंका लक्षण बतलाया गया है। इससे सुस्पष्ट है कि उस गाथाकी स्थिति पंचास्तिकायमें कितनी दृढ व सुसंगत है। यदि

---

१ खंधं सयलसमत्थं तस्स दु अद्धं भणंति देसो त्ति। अद्धद्धं च पदेसो परमाणू चेव अविभागी ॥ पंचा. ७५.

इस गाथाको वहांसे अलग कर दिया जावे तो पूर्व गाथामें कहे गये उन स्कन्धादिकोंका लक्षण न बतलानेसे प्रकरण अधूरासा ही रह जाता है। परन्तु तिलोयपण्णत्तिमें उसकी ऐसी स्थिति नहीं है। वहां यदि यह गाथा न भी रहती तो भी पाठक प्रकरणकी असंगतिका अनुभव कदापि नहीं कर सकते थे।

(२) इसके आगे तिलोयपण्णत्तिमें आयी हुई गाथा ९७ और १०१ भी पंचास्तिकायमें क्रमशः ८१ और ७८ नं. पर पायी जाती हैं[१]। वहां तिलोयपण्णत्तिमें आयी हुई गा. १०१ के 'आदेसमुत्तमुत्तो' के स्थानमें 'आदेसमत्तमुत्तो'; 'जादो' के स्थानमें 'जो दु' और 'य खंदस्स' के स्थानमें 'सयमसद्दो' पाठभेद पाया जाता है जो सुव्यवस्थित है। यदि वहां 'आदेसमुत्तमुत्तो' पाठ लेते हैं तो उसका सुसंगत अर्थ नहीं बैठता। किन्तु 'आदेसमत्तमुत्तो' के होनेपर उसका इस प्रकार सुसंगत अर्थ हो जाता है– जो आदेश मात्र अर्थात् केवल संज्ञादिकके भेदसे ही मूर्तिक है, किन्तु वस्तुतः एकप्रदेशी होनेसे अमूर्तिक ही है। कर्तृपदके रूपमें तथा 'सो' पदका सापेक्ष होनेसे 'जो दु' में 'जो' पदका प्रयोग उचित है। 'जादो' पाठ असम्बद्ध है। इसी प्रकार चतुर्थ चरणके अन्तमें 'खंदस्स' पद भी असम्बद्ध व अनर्थक है। किन्तु 'सयमसद्दो' पाठ 'शब्दका कारण होनेपर भी स्वयं शब्दपर्यायसे रहित है' अर्थका बोधक होनेसे अधिक उपयोगी है। पंचास्तिकायमें इसके आगे आयी हुई 'सद्दो खंधप्पभवो' आदि गाथा इस अर्थको और भी पुष्ट कर देती है।

(३) ति. प. के नौवें अधिकारमें निम्न गाथा है—

कम्मे णोकम्मम्मि य अहमिदि अहयं च कम्म-णोकम्मं।
जायदि सा खलु बुद्धी सो हिंडइ गरुवसंसारे ॥ ४३ ॥

इसके उत्तरार्धमें प्रयुक्त 'सा' और 'सो' सर्वनाम पद 'जा' और 'जो' सर्वनाम पदोंकी अपेक्षा रखते हैं। परन्तु यहां उन दोनों ही पदोंका अभाव है। अतः एव बिना खींचातानीके उसका अर्थ ठीक नहीं बैठता। अब जरा इसी गाथाका असली रूप समयसारमें देखिये। वहां वह इस प्रकार है—

कम्मे णोकम्मम्हि य अहमिदि अहकं च कम्म-णोकम्मं।
जा एसा खलु बुद्धी अप्पडिबुद्धो हवदि ताव ॥ स. सा. १-१९.

अब इस रूपमें उसका अर्थ बड़ी सरलतासे इस प्रकार किया जा सकता है— कर्म

१ एयरस-वण्ण-गंधं दो फासं सद्दकारणमसद्दं। खंधंतरिदं दव्वं परमाणुं तं वियाणेहि ॥ ८१ ॥
आदेसमत्तमुत्तो धादुचदुक्कस्स कारणं जो दु। सो णेओ परमाणू परिणामगुणो सयमसद्दो ॥ ७८ ॥

और नोकर्ममें 'अहम्' ऐसी, तथा 'मै हूं सो ही कर्म-नोकर्म है' इस प्रकारकी यह बुद्धि 'जा=जाव' अर्थात् जब तक बनी रहती है 'ताव' अर्थात् तब तक यह जीव अप्रतिबुद्ध अर्थात् स्वानुभवसे शून्य बहिरात्मा ही बना रहता है।

उसके इस रूपको देखते हुए इसमें कोई सन्देह नहीं रहता कि उपर्युक्त गाथा उक्त परिवर्तनके साथ तिलोयपण्णत्तिमें समयसारसे ही ली गई है।

(४) इसके आगे तिलोयपण्णत्तिमें एक दूसरी गाथा इस प्रकार है—

परमट्ठबाहिरा जे ते अण्णाणेण पुण्णमिच्छंति।
संसारगमणहेदुं विमोक्खहेदुं अयाणंता ॥ ५३ ॥

यह गाथा समयसार (३-१०) में ज्योंकी त्यों पायी जाती है। इसके पूर्वमें वहां निम्न तीन गाथायें हैं जो विशेष ध्यान देने योग्य हैं—

परमट्ठो खलु समओ सुद्धो जो केवली मुणी णाणी।
तम्हि ट्ठिदा सहावे मुणिणो पावंति णिव्वाणं ॥ ७ ॥
परमट्ठम्मि य अठिदो जो कुणदि तवं वदं च धारयदि।
तं सव्वं बालतवं बालवदं बिंति सव्वण्हू ॥ ८ ॥
वद-णियमाणि धरंता सीलाणि तहा तवं च कुव्वंता।
परमट्ठबाहिरा जेण तेण ते होंति अण्णाणी ॥ ९ ॥

यहां प्रथम गाथामें बन्धका अकारण और मोक्षका कारण होनेसे ज्ञानको परमार्थ या आत्मा कह कर उसके ही नामान्तर समय, शुद्ध, केवली, मुनि व ज्ञानी बतलाये हैं और इसके साथ ही यह भी बतला दिया है कि जो मुनि उस स्वभावमें स्थित हैं वे निर्वाणको प्राप्त करते हैं।

आगेकी दूसरी गाथामें यह बतलाया है कि इस ज्ञानस्वरूप परमार्थमें स्थित न होकर जो तप व व्रतको धारण करता है उसका वह सब तप व व्रत बालतप एवं बालव्रत ही है, वास्तविक नहीं है। ऐसा बतला कर तप एवं व्रतको परमार्थभूत ज्ञानसे रहित होनेके कारण मोक्षका अहेतु सूचित कर दिया है।

तीसरी गाथामें व्रत-नियमोंको धारण करनेवाले तपस्वियोंको परमार्थबाह्य होनेसे अज्ञानी बतलाया गया है।

इनसे आगे प्रकृत गाथामें अज्ञानतासे केवल अशुभ कर्मको बन्धका कारण मान उक्त व्रत-नियम-शीलादि रूप पुण्य कर्मको भी बन्धका कारण न जानकर उसे मोक्षका हेतु माननेवाले उन्हीं परमार्थबाह्योंको पुण्यका इच्छुक बतलाया है और इस प्रकारसे उनकी संसार-हेतु विषयक अज्ञानता प्रगट की गई है।

इस पूर्वापर प्रकरणको देखकर अब पाठक स्वयं निर्णय करें कि उक्त गाथा समयसारकी होनी चाहिये या तिलोयपण्णत्तिकी।

(५) एक और भी नमूना लीजिये—

पडिक्कमणं पडिसरणं पडिहरणं धारणा णियत्ती य।
णिंदण-गरहण-सोही लब्भंति णियादभावणए ॥ ति प. ९-४९.

यह गाथा समयसार (८-१९) में भी पायी जाती है। वहां उसका उत्तरार्ध इस प्रकार है — णिंदा गरुहा सोहि य अट्ठविहो होदि विसकुंभो।

इसके आगे वहां निम्न गाथा और भी है—

अपडिक्कमणं अपडिसरणं अप्पडिहारो अधारणा चेव।
अणियत्ती य अणिंदा अगरुहा विसोहि य अमयकुंभो ॥ २० ॥

यहां इन दो गाथाओंके द्वारा प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, परिहरण, धारणा, निवृत्ति, निन्दा, गर्हा और विशुद्धि, इन आठको विषकुम्भ तथा इनसे विपरीत अप्रतिक्रमणादि रूप आठको अमृतकुम्भ बतलाया है। अभिप्राय यह कि प्रतिक्रमणादि व अप्रतिक्रमणादि रूप उभय अवस्थाओंसे रहित होकर तृतीय अवस्था (शुद्धोपयोग) पर लक्ष्य रखनेवालेके लिये निरपराध होनेसे वे प्रतिक्रमणादिक अकिंचित्कर ही है, अतः हेय हैं। परन्तु जो इस तृतीय भूमिको न देखकर केवल व्यवहार नयका आश्रय कर प्रतिक्रमणादिकको ही मोक्षहेतु मानता है उसके लिये वे विषकुम्भके ही समान हैं। वे (प्रतिक्रमणादिक) शुद्धोपयोग रूप तृतीय भूमिकाकी प्राप्तिमें कारण होनेसे केवल व्यवहार नयकी अपेक्षा उपादेय हैं, निश्चयसे नहीं।

अब देखिये कि उक्त दो गाथाओंमेंसे तिलोयपण्णत्तिमें केवल प्रथम गाथा ही कुछ पाठ-परिवर्तनके साथ उपलब्ध होती है। इस पाठपरिवर्तनसे उसकी यथार्थता नष्ट हो गई है, क्योंकि, उक्त पाठभेद (लब्भंति णियादभावणए) के कारण उन्हें (प्रतिक्रमणादिकोंको) निजात्मभावनाके द्वारा प्राप्तव्य या उपादेय मानना पड़ता है, जो प्रकृत (सिद्धस्वभाव) में विरुद्ध पड़ता है। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह गाथा समयसारसे ही यहां ली गई है।

इनके अतिरिक्त २१, २४, २५, ४२ और ६२-६४ गाथायें भी समयसारमें जैसीकी तैसी या कुछ परिवर्तनके साथ पायी जाती हैं (देखिये समयसार १, गा. १०, ३८, ३६, ११, ८-६, २-१, और २-८.)।

इसी प्रकार प्रवचनसारकी भी बीसों गाथायें तिलोयपण्णत्तिमें जैसीकी तैसी या कुछ

परिवर्तित रूपमें पायी जाती हैं। उदाहरण स्वरूप निम्न गाथाओंका मिलान किया जा सकता है—

ति. प. म. ९ प्र. सा.	१९ २-१०४	२६ २-९९	२८-३० २, ६८-७०	३१ २-१००	३२ २-९९	३३ २-१०२	३४ ३-४	३७ ३-३९	४४ २-१०४

ति. प. म. ९ प्र. सा.	५० २-१०३	५१ २-९८	५६ १-९	५७-५९ १, ११-१३

२ मूलाचार

इसके रचयिता श्री वट्टकेराचार्य हैं। इसमें १२ अधिकार व समस्त गाथायें १२५२ हैं। यह प्रायः मुनिधर्मका प्रतिपादन करता है। इसका रचनाकाल निश्चित नहीं है। फिर भी ग्रन्थकी रचनाशैली आदिको देखते हुए वह प्राचीन ही प्रतीत होता है। ति. प. गा. ८-५३२ में 'मूलाआरे इरिया' द्वारा सम्भवतः इसी ग्रन्थका उल्लेख किया गया प्रतीत होता है। यह माणिकचन्द ग्रन्थमाला द्वारा दो भागोंमें प्रकाशित हो चुका है। इसके अन्तमें जो पं. मेधाविविरचित हस्तलिखित प्रतिका प्रशस्ति-पाठ दिया गया है वही प्रशस्ति-पाठ आवश्यक परिवर्तनके साथ तिलोयपण्णत्तिकी बंबई प्रतिके अन्तमें भी पाया जाता है। देखिये ति. प. पृ. ८८३ आदि)।

इसका अन्तिम (१२वां) अधिकार पर्याप्तयधिकार (पर्याप्तिसंग्रहिणी) है। इसमें आहारादिक छह पर्याप्तियां, देवशरीरकी विशेषता, चारों गतियोंके जीवोंका शरीरोत्सेध, जम्बूद्वीपकी परिधिका प्रमाण, जम्बूद्वीपादिक सोलह द्वीपोंके नामोंका निर्देश, द्वीप-समुद्रसंख्या, समुद्रोंके नाम व उनका जलस्वाद, मत्स्यादिकोंकी सम्भावना व उनका देहप्रमाण, गर्भज आदिकोंका देहप्रमाण, शरीराकृतिभेद, इन्द्रियविषय, योनिस्वरूप, चतुर्गति जीवोंका आयुप्रमाण, संख्याप्रमाण, उपपादप्रमाण, योग, वेद, देव-देवी आदिकोंकी उत्पत्ति, लेश्या, प्रवीचार, देवोंमें आहारकालका प्रमाण, देव-नारकियोंका अवधिविषय, गत्यागति, निर्वृतिमुत्व, इन्द्रिय-प्राण-जीव-समास-गुणस्थान-मार्गणास्थानादि, कुलकोटि, चारों गतियोंमें अल्पबहुत्व एवं बन्धस्वरूप व उसके भेद, इन विषयोंकी प्ररूपणा की गई है।

उपर्युक्त विषयोंमेंसे प्रायः (बन्धादिकको छोड़कर) सभी विषय तिलोयपण्णत्तिमें यथास्थान चर्चित हैं। इतना ही नहीं, बल्कि कितनी ही गाथायें दोनों ग्रन्थोंमें ज्योंकी त्यों या साधारण शब्दपरिवर्तनके साथ पायी जाती हैं। जैसे—

[1]कणयमिव णिरुवलेवा णिम्मलगत्ता सुयंधणीसासा ।
अणादिवरचारुरूवा समचतुरंसोरुसंठाणं ॥ १२-१०.

[2]केस-णह-मंसु-लोमा चम्म-वसा-रुहिर-मुत्त-पुरिसं वा ।
णेवट्ठी णेव सिरा देवाण सरीरसंठाणे ॥ १२-११.

[3]वरवण्ण-गंध-रस-फासादिव्वबहुपोग्गलेहिं णिम्माणं ।
गेण्हदि देवो देहं सुचरिदकम्माणुभावेण ॥ १२-१२.

[4]आ ईसाणा कप्पा उववादो होइ देव-देवीणं ।
तत्तो परं तु णियमा उववादो होइ देवाणं ॥ १२-९०.

[5]बालेसु य दाढीसु य पक्खीसु य जलचरेसु उववण्णा ।
संखेज्जाउठिदिया पुणो वि णिरयावहा होंति ॥ १२-११५.

[6]आ उवरिमगेवज्जं उववादो अभवियाण उक्कस्सो ।
उक्कट्ठेण तवेण दु णियमा णिग्गंथलिंगेन ॥ १२-१३४.

[7]तत्तो परं तु णियमा तव-दंसण-णाण-चरणजुत्ताणं ।
णिग्गंथाणुववादो जाव दु सव्वट्ठसिद्धि त्ति ॥ १२-१३५.

[8]आ ईसाणा देवा चएत्तु एइंदियत्तणे भज्जा ।
तिरियत्त-माणुसत्ते भयणिज्जा जाव सहसारा ॥ १२-१३६.

[9]तत्तो परं तु णियमा देवा वि अणंतरे भवे सव्वे ।
उववज्जंति मणुस्से ण तेसिं तिरिएसु उववादो ॥ १२-१३७

बारहवें अधिकारके अतिरिक्त अन्य अधिकारोंकी भी गाथायें जैसीकी तैसी या कुछ परिवर्तित रूपमें तिलोयपण्णत्तिमें उपलब्ध होती हैं । यथा—

पुढवी य वालुगा सक्करा य उवले सिला य लोणे य ।
अय तंब तउय सीसय रुप्प सुवण्णे य वइरे य ॥
हरिदाले हिंगुलये मणोसिला सस्सगंजण पवाले य ।
अब्भपडलब्भवालुय बादरकाया मणिविधीया ॥

---

१ ति. प. ३-१२५. २ ति. प. ३-२०८. ३ ति. प. ३-२०९. ४ ति. प. ८-५६५.
५ ति. प. २-२९०; प्रवचनसारोद्धार १०९३ ('णिरयावहा' के स्थानमें 'नरयाउया' है).
६ ति. प. ८-५६०. ७ ति. प. ८-५६१. ८ ति. प. ८-६८०. ९ ति. प. ८-६८१.

गोमज्झगे य रुजगे अंके फलिहे लोहिदंके य ।
चंदप्पभे य वेरुलिए जलकंते सूरकंते य ॥
गेरुय चंदण वव्वग वयमोए तह मसारगल्लो य ।
ते जाण पुढविजीवा जाणित्ता परिहरेदव्वा ॥ मूला. ५, ९-१२.

(देखिये ति. प. गा. २, ११-१४ । यहां कुछ पाठ अशुद्ध हुआ प्रतीत होता है। जैसे– 'अंबवालुकाओ' = 'अब्भवालुकाओ' इत्यादि)

लोओ अकिट्टिमो खलु अणाइ-णिहणो सहावणिप्पण्णो ।
जीवाजीवेहि भुडो णिच्चो तालरुक्खसंठाणो ॥
धम्माधम्मागासा गदिरागदि जीव-पुग्गलाणं च ।
जावत्तावल्लोगो आगासमदो परमणंतं ॥ मूला. ८, २२-२३.
(ति. प. १, १३३-३४.)

३ भगवती-आराधना

तिलोयपण्णत्तिके चतुर्थ महाधिकारमें ऋषभादिक तीर्थंकरोंकी विरक्तिके कारणोंका निर्देश करके गा. ६११-६४२ में उनकी वैराग्यभावनाका वर्णन किया गया है। इस प्रकरणमें कुछ ऐसी गाथायें हैं जो भगवती-आराधनामें भी ज्योंकी त्यों या कुछ शब्दपरिवर्तनके साथ पायी जाती हैं। उदाहरणार्थ— गा. ६१७, ६१८, ६२३, ६३४ व ६३५ भगवती-आराधनामें क्रमशः गा. १५८२, १५८३, १०२०, ९१६ व ९२२ के रूपमें ज्योंकी त्यों उपलब्ध होती है। इसी प्रकरणमें निम्न गाथा आई हुई है—

एवं अणंतखुत्तो णिच्च-चदुगदिणिगोदमज्झम्मि ।
जम्मण-मरणरहट्टे अणंतखुत्तो परिगदो जं ॥ ६१९ ॥

इसका उत्तरार्ध भगवती-आराधनाकी निम्न गाथामें जैसाका तैसा है—

तिरियगदिं अणुपत्तो भीममहावेदणाउलमपारं ।
जम्मण-मरणरहट्टे अणंतखुत्तो परिगदो जं ॥ १५८१ ॥

यहां इस गाथासे तिर्यंच गतिके दुःखोंका वर्णन प्रारम्भ होकर वह निम्न गाथामें समाप्त होता है—

इच्चेवमादिदुक्खं अणंतखुत्तो तिरिक्खजोणीए ।
जं पत्तो सि अदीदे काले चिंतेहि तं सव्वं ॥ १५८७ ॥

यहां गाथा १५८१ में आये हुए 'जं' पदका सम्बन्ध गा. १५८७ में प्रयुक्त

'तं' पदसे है । परन्तु तिलोयपण्णत्तिकी गा. ६१९ में आया हुआ वह 'जे' पद साकांक्ष ही रह गया है । इसके अतिरिक्त उक्त गाथामें 'अणंतसुत्तो' पद दो वार प्रयुक्त हुआ है जो अनावश्यक है । इससे अनुमान किया जाता है कि ति. प. की गा. ६१९ का उत्तरार्ध भगवती-आराधनाकी गा. १५८१ से लिया गया है ।

भगवती आराधनाकी गा. १००३ में क्षपकको लक्ष्य करके देहके बीज, निष्पत्ति, क्षेत्र, आहार, जन्म, वृद्धि, अवयव, निर्गम, अशुचि, व्याधि एवं अध्रुवताके वर्णन करनेकी प्रतिज्ञा की गई है । तदनुसार ही क्रमसे उनकी प्ररूपणा करते हुए 'निष्पत्ति' प्रकरणमें निम्न गाथायें दी गई हैं--

कालगदं दसरत्तं अच्छदि कलुसीकदं च दसरत्तं ।
थिरभूदं दसरत्तं अच्छदि गब्भम्मि तं बीयं ॥ १००७.
तत्तो मासं बुब्बुदभूदं अच्छदि पुणो वि घणभूदं ।
जायदि मासेण तदो मंसपेसी य मासेण ॥ १००८.
मासेण पंचपुलगा तत्तो हुंति हु पुणो वि मासेण ।
अंगाणि उवंगाणि य णरस्स जायंति गब्भम्मि ॥ १००९.
मासम्मि सत्तमे तस्स होदि चम्म-णह-रोमणिप्पत्ती ।
फंदणमट्ठममासे णवमे दसमे य णिग्गमणं ॥ १०१०.

इन गाथाओंका प्रभाव ति. प. की गा. ६२० से ६२२ पर (६२२ का उत्तरार्ध भगवती आराधनाकी गा. १०१० में ज्योंका त्यों है) पर्याप्त रूपमें पड़ा हुआ है । भगवती-आराधनाकी गा. १००३ में की गई प्रतिज्ञाके निर्वहनार्थ उपर्युक्त गाथाओंकी स्थिति जैसी वहां अनिवार्य है वैसी तिलोयपण्णत्तिमें नहीं है, क्योंकि, इनके विना यहां प्रकरणमें कोई आपाततः विरोध नहीं था। इसके अतिरिक्त भगवती-आराधनाकी उन (१००७, १००९) गाथाओंमें 'बीयं' और 'णरस्स' पद भी ध्यान देने योग्य है । ये दोनों पद यहां आवश्यक थे । परन्तु तिलोयपण्णत्तिमें ऐसे कोई पद वहां नहीं प्रयुक्त किये गये। हां, वहां गा. ६२० में प्रयुक्त 'पुव्वगदपावगुरुगो' विशेषण पदसे विशेष्य पदके रूपमें 'नर' पदका ग्रहण येन केन प्रकारेण किया जा सकता है ।

इनके अतिरिक्त निम्न गाथायें भी यहां ध्यान देने योग्य हैं । इनमेंसे गा. ८८९, ९१६, ९१९, ९२२ और १०२० में कोई विशेष परिवर्तन नहीं है ।

भ. आरा.	८८६-७	८८९	९०४	९०८	९१६	९१९	९२२	१०१२	१०२०
ति. प.	४-६२८	४-६२९	४-६३०	४-६३१	४-६३४	४-६२७	४-६२५	४-६२४	४-६२३

आराधनामें गा. १७९-१८६ में कन्दर्प, किल्विषिक, आभियोग्य, आसुरी एवं सम्मोहा, इन पांच संक्लिष्ट भावनाओंके भेद और उनका स्वरूप बतला कर आगे १९५९-१९६१ गाथाओंके द्वारा उक्त भावनाओंका फल क्रमशः कन्दर्पिक, किल्विषिक, आभियोग्य, असुरकाय और सम्मोह, इन देवपर्यायोंकी प्राप्ति बतलाया गया है। यह विषय तिलोयपण्णत्ति गा. ३, २०१-२०६ में भी चर्चित है।

४ लोकविभाग

तिलोयपण्णत्तिमें अनेकों वार (१-२८१, ४-२४४८, ७-११५, ८-६३५ आदि) लोकविभाग ग्रन्थका उल्लेख पाया जाता है। परन्तु तिलोयपण्णत्तिकारके सामने जो लोकविभाग ग्रन्थ रहा है वह कब और किसके द्वारा रचा गया है, इसका कुछ भी पता नहीं लगता। वर्तमानमें जो लोकविभाग ग्रन्थ उपलब्ध है वह संस्कृत अनुष्टुप छन्दोंमें है। यह ग्रन्थ सिंहसूरिके द्वारा, सर्वनन्दि-मुनि-विरचित ग्रन्थकी भाषाका परिवर्तन कर लिखा गया है[1]। यह ग्यारहवीं शताब्दिके पश्चात् रचा गया प्रतीत होता है। कारण यह है कि इसमें अनेक स्थानोंपर तिलोयपण्णत्ति, आदिपुराण (आर्ष), जंबूदीवपण्णत्ति और त्रिलोकसार ग्रन्थोंका कहीं स्पष्टतया नामोल्लेखपूर्वक और कहीं 'उक्तं च' के रूपमें निर्देश किया गया है। तिलोयपण्णत्तिकी तो इसमें लगभग ९० गाथायें पायी जाती हैं। इसकी जो प्रति हमारे सामने है वह अशुद्धिबहुल और त्रुटित पाठोंवाली है।

इसमें निम्न ग्यारह प्रकरण हैं—१ जंबूद्वीपविभाग २ लवणसमुद्रविभाग ३ मानुषक्षेत्रविभाग ४ द्वीप-समुद्रविभाग ५ कालविभाग ६ ज्योतिर्लोकविभाग ७ भवनवासिलोकविभाग ८ अधोलोकविभाग ९ व्यन्तरलोकविभाग १० स्वर्गविभाग और ११ मोक्षविभाग। समस्त श्लोकोंका प्रमाण लगभग १९००-२००० है।

(१) जंबूद्वीपविभागमें प्रथमतः जंबूद्वीपका विस्तार बतलाकर विजयार्ध, छह कुलाचल, उनके ऊपर स्थित कूटादिक, विदेह विजय, मेरु, भद्रशालादि वनचतुष्टय, जिनभवनरचना और दूसरा जंबूद्वीप, इन सबका कथन किया गया है।

---

१ भव्येभ्यः सुरमानुषोरुसदसि श्रीवर्धमानार्हता यत्प्रोक्तं जगतो विधानमखिलं ज्ञानं सुधर्मादिभिः।
आचार्यावलिकागतं विरचितं तत् सिंहसूरर्षिणा भाषायाः परिवर्तनेन निपुणैः सम्मान्यतां साधुभिः॥
वैश्ये स्थिते रविसुते वृषभे च जीवे राजोत्तरेषु सितपक्षमुपेत्य चन्द्रे।
ग्रामे च पाटलिकनामनि पाणराष्ट्रे शास्त्रं पुरा लिखितवान् मुनिसर्वनन्दी॥
(अन्तिम प्रशस्ति)

(२) लवणसमुद्र विभागमें लवणसमुद्रका विस्तार, उसके मध्यमें स्थित पाताल, पर्वत, जलकी वृद्धि–हानि, देवनगरियां और अन्तरद्वीपज मनुष्योंकी प्ररूपणा की गई है।

(३) मानुषक्षेत्र विभागमें धातकीखण्ड और पुष्कर द्वीपमें स्थित इष्वाकार पर्वत, क्षेत्र, कुलपर्वत, मेरु पर्वत, वनचतुष्टय, कालोदक समुद्र, अन्तरद्वीपज मनुष्य, मानुषोत्तर पर्वत, और उसके ऊपर स्थित कूट, इत्यादिकोंका वर्णन है।

(४) द्वीप-समुद्रविभागमें आदिम एवं अन्तिम १६-१६ द्वीप-समुद्रोंका नामोल्लेख करके राजुके अर्धच्छेदोंका पतन और द्वीप-समुद्रोंके अधिपति व्यन्तर देवोंके नामोंका निर्देश किया है। पश्चात् नन्दीश्वर द्वीपके विस्तार व परिधिका प्रमाण, उसमें स्थित अंजनशैल, वापिकायें दधिमुख, रतिकरगिरि, और सौधर्मेन्द्रादिकके द्वारा किये जानेवाले पूजा-विधानका कथन किया गया है। आगे जाकर अरुणवरद्वीप व अरुणवर समुद्रका निर्देश करके आठ कृष्णराजियां कुण्डलद्वीप, कुण्डलगिरि व उसके ऊपर स्थित कूट, रुचकवर द्वीप, रुचकाद्रि, उसके ऊपर स्थित कूट, दिक्कुमारिकाएं और उनका सेवाकार्य इत्यादिकी प्ररूपणा की गई है।

(५) कालविभागमें उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालोंके सुषम-सुषमादि विभाग, प्रथम तीन कालोंमें होनेवाले मनुष्योंकी आयु व उत्सेधादिका प्रमाण, दश प्रकारके कल्पवृक्ष व उनका दानकार्य, क्षेत्रानुसार कालविभाग, कुलकरोंकी उत्पत्ति और उनका शिक्षणकार्य, पूर्वांग व पूर्वादिकोंका प्रमाण, भोगभूमिका अन्त व कर्मभूमिका प्रवेश, तीर्थंकरादिकोंकी उत्पत्ति, पांचवें व छठे कालकी विशेषता, अवसर्पिणीका अन्त और उत्सर्पिणीका प्रवेश तथा कुलकरादिकोंकी उत्पत्ति आदिकी प्ररूपणा की गई है।

इस प्रकरणमें आदि व अन्तके कुछ अंशको छोड़कर प्रायः सर्वत्र ही आदिपुराणके श्लोकोंका ज्योंका त्यों या उनका पादपरिवर्तनके साथ उपयोग किया है। यहां प्रारम्भमें लगभग ४०-४५ श्लोकोंके पश्चात् 'उक्तं चार्षे' कह कर तृतीय कालमें पल्योपमका आठवां भाग शेष रहनेपर उत्पन्न होनेवाले प्रतिश्रुति आदि कुलकरोंका वर्णन करते हुए जो श्लोक दिये गये हैं वे आदिपुराणके तीसरे पर्वमें क्रमशः इस प्रकार उपलब्ध होते हैं— ५५-५७, ६३-६४, ६९-७२, ७६-७७, ७९, ८१-८३ इत्यादि।

यहां १४ कुलकरोंकी आयुका प्रमाण क्रमशः इस प्रकार बतलाया है— पल्यका

१ यथा— इमे भद्रमृगाः पूर्वं संवसन्तेऽनुपद्रवाः। इदानीं तु विना हेतोः शृङ्गैरभिभवन्ति नः॥
इस श्लोककी पूर्ति यहां क्रमशः आदिपुराणके ९५ वें श्लोकके चतुर्थ चरण, ९६ वेंके चतुर्थ चरण और ९७ वें श्लोकके पूर्वार्ध भागसे की गई है।

दशवां भाग, अमम, अटट, त्रुटित, कमल, नलिन, पद्म, पद्मांग, कुमुद, कुमुदांग, नयुत, नयुतांग, पूर्व [पर्व] और पूर्वकोटि। इस मतका उल्लेख तिलोयपण्णत्ति (४, ५०२-५०३) में 'केई णिरूवेंति' वाक्यके द्वारा किया गया है।

भोगभूमिजोंकी यौवनप्राप्तिमें यहां सामान्यतः २१ दिनका कालप्रमाण बतलाया है[1]। परन्तु तिलोयपण्णत्तिमें उत्तम, मध्यम और जघन्य भोगभूमियोंके अनुसार पृथक् पृथक् (४,३७९-८०, ३९९- ४००, ४०७-८) क्रमशः २१, ३५ और ४९ दिनोंका कालक्रम बतलाया गया है। यही कालक्रम हरिवंशपुराण[2] और सागारधर्मामृतमें[3] सामान्य रूपसे ४९ दिन प्रमाण कहा गया है। लोकप्रकाश (२९-२१४) में इसी कालक्रमका निर्देश करते हुए 'तथा हि' कहकर जो श्लोक दिया है वह सागारधर्मामृतमें भी है, जो इस प्रकार है—

सप्तोत्तानशया लिहन्ति दिवसान् स्वांगुष्ठमार्यास्ततः,
कौ स्खिल्लन्ति ततः पदैः कलगिरो यान्ति स्खलद्भिस्ततः।
स्थेयोमिश्च ततः कलागुणभृतस्तारुण्यभोगोद्गताः,
सप्ताहेन ततो भवन्ति सुदृगादानेऽपि योग्यास्ततः॥ सा. ध. २-६८.

(६) ज्योतिर्लोकविभागमें ज्योतिषी देवोंके भेद, उनका निवासस्थान, विमानविस्तरादि, संचारक्रम, जंबूद्वीपादिकमें चन्द्रसंख्या, वीथियां, मेरुसे चन्द्र-सूर्योंका अन्तरप्रमाण, उनका परस्पर अन्तर, मुहूर्तगति, दिन-रात्रिप्रमाण, ताप-तमकी परिधियां, चारक्षेत्र, अधिक मास, दक्षिण-उत्तरअयन, आवृत्तियां, विषुप, चन्द्रकी हानि-वृद्धि, ग्रहादिकोंका आकार, कृत्तिकादिकोंका संचार, उनके देवता, समय-आवली आदिका प्रमाण, सूर्यका उदय व अस्तगमन, ताराप्रमाण, चन्द्रादिकोंकी आयुका प्रमाण और देवीसंख्या आदिकी प्ररूपणा की गई है।

(७) भवनवासिलोकविभागमें चित्रा-वज्रा आदि १६ पृथिवियों एवं पंकभाग व अब्बहुल भागका निर्देश करके भवनवासी देवोंके भवनोंकी संख्या, जिनभवन, इन्द्रोंके नाम, उनके भवन, परिवारदेव-देवियां, आयु, उच्छ्वास एवं आहारकालका प्रमाण तथा मुकुटचिह्न, इत्यादिकी प्ररूपणा की गई है।

(८) अधोलोकविभागमें रत्नप्रभादिक भूमियोंका बाहल्य, वातवलय, पृथिवीक्रमानुसार प्रस्तारसंख्या, श्रेणिबद्ध व प्रकीर्णक बिलोंकी संख्या, इन्द्रकादिकोंका विस्तार, उनका अन्तर, प्रथम श्रेणिबद्धोंके नाम, जन्मभूमियोंका आकार व विस्तारादि, नारकउत्सेध, आयु, आहार,

१ दिवसैरेकविंशत्या पूर्यन्ते यौवनेन च। प्रमाणयुक्तसर्वांगा द्वात्रिंशल्लक्षणाङ्किताः॥ ५-२५.
२ ह. पु. ७, ९२-९४. ३ सा. ध. २-६८.

अवधिविषय, इन्द्रियादिक मार्गणाओंकी सम्भावना, वेदना, उत्पतन, जन्म-मरणअन्तर, गत्यागति, क्रिया तथा पारस्परिक एवं असुरकृत वेदना, इन सबका वर्णन किया गया है।

(९) व्यन्तरलोकविभागमें पहले औपपातिक, अध्युषित और आभियोग्य, ये तीन भेद व्यन्तरोंके बतलाये गये है। पश्चात् भवन, आवास और भवनपुर, इन तीन प्रकारके व्यन्तर-स्थानोंका उल्लेख करके उनका विस्तारादि बतलाते हुए यह भी कथन किया गया है कि उक्त भवनादिक किनके होते हैं और किनके नहीं होते। आगे चलकर आठ प्रकारके व्यन्तरोंका निर्देश करते हुए उनमेंसे प्रत्येकके अवान्तरभेद, इन्द्रोंके नाम, उनकी आयु, वल्लभायें और उन वल्लभाओंके परिवारका प्रमाण बतलाया गया है। पश्चात् उपर्युक्त व्यन्तरजातियोंका शरीरवर्ण, चैत्यवृक्ष, सामानिकादि देवोंकी संख्या व्यन्तरनगरियां, गणिकामहत्तरियोंके नाम और उनकी आयु एवं उत्सेध आदिका कथन किया गया है।

(१०) ऊर्ध्वलोकविभागमें सर्वप्रथम भावन, व्यन्तर, नीचोपपातिक, दिग्वासी, अन्तरवासी, कूष्माण्ड, उत्पन्नक, अनुत्पन्नक, प्रमाणक, गन्धिक, महागन्ध, भुजग, पीतिक, आकाशोत्पन्न, ज्योतिषी, वैमानिक और सिद्ध, इनकी क्रमशः ऊपर-ऊपर स्थिति बतला कर ज्योतिषी पर्यन्त उनकी ऊर्ध्वस्थिति व आयुका प्रमाण दिखलाया गया है। तत्पश्चात् १२ कल्पोंका व कल्पातीतोंका उल्लेख करके कल्पविभागानुसार इन्द्रकप्रमाण, ऋतु आदि इन्द्रकोंके चारों ओर स्थित श्रेणिबद्ध विमानोंका संख्याक्रम, इन्द्रकनाम, १६ कल्पोंके मतानुसार विमानसंख्या, संख्यात-असंख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी संख्या, कल्पानुसार श्रेणिबद्ध विमानोंकी संख्या, कल्पोंका आधार, विमानबाहल्य, प्रासादोत्सेधादि, विमानवर्ण, गति-आगति, मुकुटचिह्न, सौधर्मेन्द्रका निवासस्थान, उसके नगर-प्रासादोंका रचनाक्रम, देवीसंख्या व उनके प्रासाद, ईशानादिक अन्य इन्द्रोंके नगर दिक्, सामानिक आदिकोंका प्रमाण, सोम-यमादिकोंकी आयु उच्छ्वास व आहारकाल, कल्पोंमें देवों व देवियोंकी आयुका प्रमाण, सुधर्मा सभादि, प्रासादोंके अग्र भागमें स्थित स्तम्भ व न्यग्रोध पादप, यानविमान, सोमादिकके प्रधान विमान, प्रवीचार, उत्सेध, लेश्या, विक्रिया, अवधिविषय, देवियोंकी उत्पत्ति, जन्म-मरणअन्तर, तमस्काय, लौकान्तिक देव, उत्पत्त्यन्तर जिनपूजाप्रकरण और सुखोपभोग इत्यादि विषयोंकी प्ररूपणा की गई है।

(११) मोक्षविभागमें आठवीं ईषत्प्राग्भार पृथिवीका विस्तारादि दिखाकर सिद्धोंका अवस्थान और उनकी अवगाहनाका प्रमाण बतलाया है। तत्पश्चात् सिद्धोंका स्वरूप बतलाते हुए सातजन्य सुख और अतीन्द्रिय सुखकी प्ररूपणा की गई है। आगे जाकर अधः और ऊर्ध्व लोकका उत्सेधादि बतला कर अन्तिम प्रशस्तिके साथ ग्रन्थकी समाप्ति की गई है।

तिलोयपण्णत्तिमें अनेक स्थानोंपर 'लोकविभाग' का उल्लेख करके जो जो मतभेद

दिखलाये हैं वे वर्तमान लोकविभागमें कहां तक पाये जाते हैं, इस बातका यहां विचार किया जाता है—

(१) ति. प. म. १, गा. २७३ में प्रथमतः तीनों वातवलयोंकी मुटाई लोकशिखरपर क्रमशः २, १ और कुछ (४२५ धनुष) कम १ कोश बतला कर पश्चात् गा. २८१ में लोकविभागके अनुसार उक्त मुटाईका प्रमाण क्रमशः १$\frac{१}{२}$, १$\frac{१}{३}$ और १$\frac{१}{२}$ कोश बतलाया गया है। यह मत वर्तमान लोकविभागमें उपलब्ध नहीं होता, प्रत्युत वहां पूर्व मतानुसार (१-२७३) ही उसका प्रमाण पाया जाता है। यथा—

लोकाग्रे क्रोशयुग्मं तु गव्यूतिर्नूनगोरुतम्।
न्यूनप्रमाणं धनुषां पंचविंश-चतुशतम् ॥ लो. वि. ८-१४.

(२) ति. प. ४-२४४८ में 'संगाइणी लोकविभाग' के अनुसार लवणसमुद्रका विस्तार जलशिखरपर दश हजार योजन प्रमाण कहा है। इस विषयको लोकविभागमें खोजनेपर वहां निम्न श्लोक प्राप्त होता है—

दशैवेश (?) सहस्राणि मूलेऽग्रेऽपि पृथुर्मतः।
सहस्रमवगाढोऽगादूर्ध्वं स्यात् षोडशोच्छ्रितः ॥ लो. वि. २-३.

इसमें अग्र भागमें उसका विस्तार दश हजार यो. प्रमाण ही बतलाया है। यहां विस्तारके लिये 'पृथु' शब्दका उपयोग किया गया है। इसके आगे 'उक्तं च त्रिलोकप्रज्ञप्तौ' कह कर ति. प. गाथा ४-२४०० उद्धृत की है। इसका सम्बन्ध प्रकरणसे स्पष्टतापूर्वक नहीं बतलाया गया।

तिलोयपण्णत्तिमें इससे पूर्व गा. २४४२ और २४४३ में बतलाया है कि दोनों ओर तटसे ९५००० यो. जानेपर लवणसमुद्रका जल शुक्ल पक्षमें क्रमशः बढ़ता हुआ पूर्णिमाके दिन दो कोश ऊंचा हो जाता है। वही अमावस्याके दिन घटकर भूमिके सदृश हो जाता है। यह मत 'लोगाइणी ग्रन्थप्रवर' का बतलाया गया है (गा. २४४४)। ठीक इसके आगे गा. २४४५-४६ में जलका ११००० यो. अवस्थित उत्सेध बतलाकर उसकी वृद्धि व हानिका प्रमाण ५००० यो. निर्दिष्ट किया गया है। यह पिछला मत वर्तमान लोकविभागमें पाया जाता है। यथा—

एकादश सहस्राणि यमवास्यां [अमावास्यां] गतोच्छ्रयः।
ततः पंच सहस्राणि पौर्णिमास्यां विवर्धते ॥ लो. वि. २-७.

(३) ति. प. गा. २४७८-२४९० में अन्तरद्वीपों और उनमें रहनेवाले कुमानुषोंका स्वरूप बतला कर आगे गा. २४९१-९९ में लोकविभागाचार्यके मतानुसार उसे फिरसे भी

अन्य प्रकारसे बतलाया है। यह मत वर्तमान लोकविभाग (२, ३३-४०) में पाया जाता है। विशेषता यह है कि इसी लोकविभागमें आगे जाकर श्लोक ४४ के पश्चात् 'उक्तं च त्रिलोकप्रज्ञप्तौ' कहकर ति. प. की २४७८ से ८८ तक जिन ११ गाथाओंको उद्धृत किया है वे उसके पूर्व मतके विरुद्ध पड़ती हैं।

(४) ति. प. गा. ७-११५ में ज्योतिषी देवोंकी नगरियोंका बाहल्य लोकविभागाचार्यके मतानुसार अपने अपने विस्तारके बराबर बतलाया है। इस विषयको लोकविभागमें खोजनेपर वहां सूर्य-चन्द्रादिके विमानोंका विस्तारप्रमाण तो मिलता है[1], परन्तु उनके बाहल्यका प्रमाण वहां दृष्टिगोचर नहीं होता। हां, वहांपर छठे प्रकरणके १५ वें श्लोकसे आगे 'पाठान्तरं कथ्यते' कहकर निम्न श्लोक द्वारा उक्त विमानोंका बाहल्य अपने अपने विस्तारसे आधा अवश्य बतलाया है जो तिलोयपण्णत्तिमें प्रकरणानुसार पाया जाता है[2]।

रवीन्दु-शुक्र-गुर्वाद्याः कुजाः सौम्यास्तगोदयाः।
ऋक्षास्तारास्त्रिषट्कभागार्धबाहल्यकाः मताः॥ लो. वि. ६ १६.

(५) तिलोयपण्णत्ति (८, ६१४-६३४) में लौकान्तिक देवोंकी प्ररूपणा करके आगे (गा. ६३५-३९) लोकविभागाचार्यके मतानुसार उनके अवस्थान व संख्या आदिकी प्ररूपणा फिरसे भी की गई है। यह मत वर्तमान लोकविभागमें[3] अंशतः पाया जाता है, क्योंकि, वहां उनकी संख्यामें कुछ भेद दिखायी देता है। ति. प. में सारस्वत और आदित्य आदिकोंके मध्यमें जिन अनलाभ और सूर्याभ आदि दो दो देवोंके नामोंका उल्लेख किया गया है उनका निर्देश भी यहां नहीं किया गया।

(६) तिलोयपण्णत्ति (९-६) में सिद्धोंकी उत्कृष्ट और जघन्य अवगाहनाका प्रमाण क्रमशः ५२५ धनुष और ३½ हाथ बतला कर फिर आगे गाथा ९ में 'लोकविनिश्चय ग्रन्थ लोकविभाग' के अनुसार उक्त अवगाहनाको अन्तिम शरीरसे कुछ कम बतलाया है। यह मत वर्तमान लोकविभागमें प्राप्त होता है। यथा—

गव्यूतेस्तत्र चोर्ध्वायास्तुर्ये भागे व्यवस्थिताः।
अन्त्यकायप्रमाणात्तु किंचिदूनसंकुचितात्मकाः॥ लो. वि. ११-७.

इस प्रकार वर्तमान लोकविभागके रूपको देखकर उसपर विचार करनेसे ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी रचनाके आधार तिलोयपण्णत्ति और त्रिलोकसार आदिक ग्रन्थ भी रहे हों तो

१ लो. वि. प्रकरण ६ श्लोक ९, ११ इत्यादि। २ ति. प. म. ७ गा. ३९, ६८, ८५, ९१ इत्यादि।
३ लो. वि. प. १०७.

आश्चर्य नहीं। इसके कर्ताके सामने कोई दूसरा प्राचीन लोकविभाग ग्रन्थ रहा है, जिसकी भाषाका परिवर्तन करके उन्होंने यह रचना प्रस्तुत की है। यह बात ग्रन्थकारने स्वयं कही है, जो विचारणीय है। इसमें कुछ मतभेदोंका भी जो उल्लेख किया है वह प्रायः तिलोयपण्णत्तिसे मिलता है। जैसे-- १२ और १६ कल्प[1], सर्वार्थसिद्धिमें जघन्य आयु[2] इत्यादि।

५ हरिवंशपुराण

यह पुन्नाटसंघीय जिनसेन सूरि द्वारा विरचित प्रथमानुयोगका एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसका रचनाकाल शक संवत् ७०५ (वि. सं. ८४०) है। यह ग्रन्थ ६६ सर्गोंमें विभक्त है। इसकी समस्त श्लोकसंख्या लगभग १०००० है। यह ग्रन्थ यद्यपि प्रथमानुयोगका है, फिर भी इसमें भूगोल, आयुर्वेद, ज्योतिष और संगीत आदि अन्य विषयोंकी भी यथास्थान प्ररूपणा पायी जाती है। ग्रन्थका मनन करनेसे उसके रचयिताकी बहुश्रुतज्ञताका परिचय मिलता है।

इसके चतुर्थ सर्गमें अधोलोक, पंचमसर्गमें तिर्यग्लोक, छठेमें ऊर्ध्वलोक और सातवें सर्गमें कालका वर्णन विस्तारसे किया गया है। यह वर्णन प्रायः तिलोयपण्णत्ति जैसा ही है। यद्यपि इन दोनों ग्रन्थोंमें कहीं कहीं कुछ भिन्न मत भी देखनेमें आते हैं, परन्तु दोनोंकी वर्णन-शैली बहुत कुछ मिलती-जुलती है। उदाहरणार्थ— जिस प्रकार तिलोयपण्णत्तिके प्रथम और द्वितीय महाधिकारोंमें अधोलोकका विस्तार, वातवलय, नारकबिलोंके नाम, उनकी संख्या व विस्तार, नारकियोंकी आयु, उत्सेध, अवधिविषय और जन्मभूमियों आदिका विस्तृत वर्णन पाया जाता है; उसी प्रकार उन सबका वर्णन हरिवंशपुराणके चतुर्थ सर्गमें भी किया गया है। विशेषतायें यहां ये हैं—

(१) तिलोयपण्णत्तिकारने विस्तारादिकी प्ररूपणा करते हुए प्रथमतः गणित-सूत्रोंका उल्लेख किया है और फिर तदनुसार सभी जगह कहीं सिद्धांकों द्वारा और कहींपर सिद्धांकोंको न देकर भी वर्णन किया है। परन्तु हरिवंशपुराणकारने गणित-सूत्रोंका उल्लेख कहीं भी न करके केवल सिद्धांकों द्वारा ही उनका वर्णन किया है। उदाहरणार्थ– अधोलोकका आठ स्थानोंमें

१ जे सोलस कप्पाइ केई इच्छंति ताण उवएसे। तीस्से तस्सिं वोच्छं परिमाणाणिं विमाणाणं॥ ति. प. ८-१७८.
ये च षोडश कल्पाँश्च केचिदिच्छन्ति तन्मते। तस्मिंस्तस्मिन् विमानानां परिमाणं वदाम्यहम्॥ लो. वि. १०-३६.

२ तेत्तीसउवहिउवमा पल्लासंखेज्जभागपरिहीणा। सव्वट्ठसिद्धिणामे मण्णते केइ अवरऊ॥ ति. प. ८-५११.
सर्वार्थीयुर्यदुत्कृष्टं तदेवास्मिंस्ततः पुनः। पल्यासंख्येयभागोनमिच्छन्त्येकेऽल्पजीवितम्॥ लो. वि. १०-२३५.

और ऊर्ध्वलोकका दश स्थानोंमें वर्णित विस्तारप्रमाण[1], तथा सीमन्तक आदि ४९ इन्द्रकोंका भी विस्तारप्रमाण[2]।

(२) तिलोयपण्णत्तिकारके सामने जिस विषयका परम्परागत उपदेश नहीं रहा है उस विषयका निरूपण न करनेका कारण उन्होंने तद्विषयक उपदेशका अभाव ही बतलाया है[3]। परन्तु हरिवंशपुराणकारने न तो कहीं वैसा उल्लेख ही किया है और न उन विषयोंका वर्णन भी। इसी प्रकार तिलोयपण्णत्तिकारके सामने जिस विषयपर आचार्योंका मतभेद रहा है उसका भी उन्होंने स्पष्टतासे कहीं नामनिर्देशपूर्वक या कहीं नामनिर्देश न करके 'केइ' आदि पदों द्वारा भी उल्लेख किया है[4], पर हरिवंशपुराणमें ऐसा नहीं है।

(३) तिलोयपण्णत्तिकारने नारकियोंमें असुरकृत वेदनाको बतलाते हुए सिक्तानन व असिपत्र आदि जिन पन्द्रह असुर सुरोंके नामोंका उल्लेख किया है वे हरिवंशपुराणमें उपलब्ध नहीं होते। इन नामोंको खोजनेका जहां तक प्रयत्न किया गया है, वे हमें किसी अन्य दिगम्बर ग्रन्थमें प्राप्त नहीं हो सके। परन्तु हां वे सूत्रकृताङ्ग और प्रवचनसारोद्धार आदि कितने ही श्वेताम्बर ग्रन्थोंमें अवश्य प्राप्त होते हैं। यथा—

अंबे अंबरिसी चेव सामे य सबले वि य। रुद्दोवरुद्द काले य महाकाले त्ति आवरे॥
असिपत्ते धणुं कुंभे वालु वेयरणी वि य। खरस्सरे महाघोसे एवं पन्नरसाहिया॥

सू. कृ. ५, १, ६८-६९ (निर्युक्ति)

(४) तिलोयपण्णत्तिमें जहां उत्कर्षसे प्रथमादिक सात पृथिवियोंमें क्रमशः आठ, सात, छह, पांच, चार, तीन और दो बार उत्पत्ति बतलाई गई है; वहां हरिवंशपुराणमें क्रमशः सात, छह, पांच, चार, तीन, दो और एक बार ही उत्पत्ति बतलाई है[5]।

(५) तिलोयपण्णत्तिकारने सातवीं पृथिवीसे निकलकर तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुए कोई कोई जीव सम्यक्त्वको प्राप्त कर सकते हैं, ऐसा स्पष्ट उल्लेख किया है (देखिये गा. २-२९२)। यह मत वर्तमान लोकविभागमें भी पाया जाता है। यथा—

संयतासंयतः षष्ठ्याः सप्तम्यास्तु मृतोद्गतः।
सम्यक्त्वार्हो भवेत् कश्चित् तिर्यक्ष्वेवात्र [तिर्यक्ष्वेवात्र] जायते॥ लो. वि. ८-१०१.

१ ति. प. १, १७६-१७८, १, १९३-१९७; ह. पु. ४, १७-२८.
२ ति. प. २, १०५-१५६. ह. पु. ४, १७१-२१७. ३ ति. प. २-५४, ३-११३, ४-१५७२, १५८३, १६८८, १७१०; ५-४८, ६-६६, ७-३२, ८-२७६. इत्यादि।
४ देखिये पृ. ९८७-८८. ५ ति. प. २, २४८-२४९. ६ ह. पु. ४, २७६-२७८.

परन्तु हरिवंशपुराणमें[1] इसका कुछ निर्देश नहीं किया गया। हां, षट्खंडागम आदि[2] ग्रन्थोंमें उसका स्पष्टतासे निषेध अवश्य किया गया है। यथा—

अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइया णिरयादो णेरइया उव्वट्टिदसमाणा कदि गदीओ आगच्छंति ? एक्कम्हि चेव तिरिक्खगदिमागच्छंति त्ति। तिरिक्खेसु उववण्णल्लया तिरिक्खा छण्णो उप्पाएंति— आभिणिबोहियणाणं णो उप्पाएंति, सुदणाणं णो उप्पाएंति, ओहिणाणं णो उप्पाएंति, सम्मामिच्छत्तं णो उप्पाएंति, सम्मत्तं णो उप्पाएंति, संजमासंजमं णो उप्पाएंति (ष. खं. पु. ६, ९, २०३-२०६)।

इसके विपरीत प्रज्ञापना[3] और प्रवचनसारोद्धार[4] आदि श्वेताम्बर ग्रन्थोंमें भी तिलोयपण्णत्तिके समान उनमें सम्यक्त्वकी योग्यता बतलाई गई है।

(६) तिलोयपण्णत्तिकारने कालप्ररूपणामें भोगभूमिजोंका वर्णन करते हुए यह बतलाया है कि अंगुष्ठाचलेहन, उपवेशन, अस्थिरगमन, स्थिरगमन, कलागुणप्राप्ति, तारुण्य और सम्यक्त्वग्रहण, इन सात अवस्थाओंमें उत्तमभोगभूमिजोंके तीन तीन दिन, मध्यमभोगभूमिजोंके पांच पांच दिन और जघन्यभोगभूमिजोंके सात सात दिन व्यतीत होते हैं। परन्तु हरिवंशपुराणकारने उक्त अवस्थाओंमें सामान्य रूपसे सात सात दिन व्यतीत होना ही बतलाया है[5]। यही बात आदिपुराण, त्रिलोकसार और सागारधर्मामृत आदि ग्रन्थोंमें भी पायी जाती है।

(७) इसी प्रकरणमें प्रतिश्रुति आदि चौदह कुलकरोंकी उत्पत्ति बतलाते हुए हरिवंशपुराणकारने उन्हें उत्तरोत्तर पहिले पहिलेका पुत्र होना सूचित किया है[6]। परन्तु तिलोयपण्णत्तिकारने उनको उत्तरोत्तर पुत्र होना तो दूर रहा, किन्तु उनके बीचमें आगे आगे पल्यके $\frac{१}{८०}$, $\frac{१}{८००}$, $\frac{१}{८०००}$ भाग प्रमाण इत्यादि कालका अन्तर भी बतलाया है[7]। गणितप्रक्रियासे विचार करनेपर यही मत ठीक प्रतीत होता है। कारण कि दोनों ही ग्रन्थकर्ताओंने यह समान रूपसे स्वीकार

१ ह. पु. ४-३७९. २ सप्तम्यां नारका मिथ्यादृष्टयो नरकेभ्य उद्वर्तिता एकामेव तिर्यग्गतिमायान्ति। तिर्यक्ष्वायाताः पंचेन्द्रिय-गर्भज-पर्याप्तक-संख्येयवर्षायुष्केषूपपद्यन्ते, नेतरेषु। तत्र चोत्पन्नाः सर्वे मति-श्रुतावधि-सम्यक्त्व-सम्यङ्मिथ्यात्व-संयमासंयमान्नोत्पादयन्ति। त. रा. ३, ६, ७.

३ अहे सत्तमपुढवी-पुच्छा। गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, सम्मत्तं पुण लभेज्जा। प्रज्ञापना २०, १०.

४ प्रवचनसारोद्धार १०८७. ५ ति. प. ४, ३७९-३८०; ३९९-४००, ४०७-४०८. ६ ह. पु. ७-९२-९४.

७ यथा— पल्यस्य दशमं भाग जीवित्वासौ प्रतिश्रुतिः। पुत्रं सन्मतिमुत्पाद्य जीवितान्ते दिवं स्मृतः [सृतः] ॥ ह. पु. ७-१४८. ८ यह अन्तर आदिपुराण (पर्व ३ श्लोक ७६, ९०, १०२ आदि) में प्रायः सर्वत्र असंख्यात वर्षकोटि प्रमाण बतलाया गया है।

किया है कि तृतीय कालमें पल्यका आठवां भाग शेष रहनेपर चौदह कुलकरोंकी उत्पत्ति होती है। उनमें प्रथम कुलकरकी आयु $\frac{१}{१०}$ पल्य, द्वितीयकी $\frac{१}{१००}$ पल्य, इस प्रकार आगे आगेके कुलकरकी आयु पूर्व पूर्वकी अपेक्षा दशवें भाग होती गई है। अब यदि हरिवंशपुराणकर्ताके अनुसार कुलकर पुरुषोंके बीच अन्तराल न स्वीकार किया जाय तो उन सबकी आयुके प्रमाणको मिलानेपर वह कुछ कम पल्यका नौवां भाग ($\frac{१}{९}$) होता है। इस प्रकार पल्यका आठवां भाग शेष रहनेपर जो उन्होंने कुलकर पुरुषोंकी उत्पत्ति स्वीकार की है[१], वह उनके ही मतके विरुद्ध पड़ती है। किन्तु तिलोयपण्णत्तिकारके अनुसार उक्त आयुप्रमाण $\left[\frac{१११११११११११११}{१०००००००००००००}\right.$ $=$ कुछ कम $\frac{१}{९}$ पल्य $\left.\right]$ में सबोंके अन्तरकाल $\left[\frac{१११११११११११११}{८०००००००००००००}\right.$ $=$ कुछ कम $\frac{१}{७२}$ पल्य $\left.\right]$ को मिला देनेपर वह कुछ कम पल्यका आठवां भाग $\left[\frac{१}{९}+\frac{१}{७२}=\frac{९}{७२}=\frac{१}{८}\right]$ होता है, जैसा कि उन्होंने स्वीकार भी किया है (देखिये गा. ४-४२१)।

हरिवंशपुराणके कर्ताने प्रतिश्रुति आदि उक्त कुलकरोंकी आयु, उत्सेध और वर्णादिका निर्देश करके भी उनकी पत्नियोंका कोई उल्लेख नहीं किया। परन्तु तिलोयपण्णत्तिकारने प्रत्येक कुलकरकी पत्नीका नामोल्लेख करके प्रसेनजित् नामक तेरहवें कुलकर तक उनके लिये 'देवी' या 'महादेवी' पदका तथा अन्तिम कुलकर नाभिरायकी पत्नीके लिये 'वधू' पदका प्रयोग किया है। इससे ध्वनित होता है कि उनके मतानुसार विवाहविधि प्रसेनजित् कुलकरके समयसे चालू हुई है। हरिवंशपुराणके अनुसार यह विधि मरुदेव नामक बारहवें कुलकरके समयसे प्रारम्भ हुई है, क्योंकि, वहां मरुदेवके द्वारा अपने पुत्र प्रसेनजित्का प्रधानकुलवाली कन्याके साथ विवाह करानेका स्पष्ट उल्लेख है[२]।

मिलान कीजिये—

एक्करस-वण्ण-गंधं दो फासा सद्दकारणमसद्दं। खंदंतरिदं दव्वं तं परमाणुं भणंति बुधा॥
अंतादि-मज्झहीणं अपदेसं इंदिएहि ण हु गेज्झं। जं दव्वं अविभत्तं तं परमाणुं कहंति जिणा॥
वण्ण-रस-गंध-फासे पूरण-गलणाइं सव्वकालम्हि। खंदं पि व कुणमाणा परमाणू पुग्गला तम्हा॥
ति. प. १ गा. ९७, ९८, १००.

१ अथ कालद्वयेऽतीते क्रमेण सुखकारणे। पल्याष्टभागशेषे च तृतीये समवस्थिते॥ क्रमेण क्षीयमाणेषु कल्पवृक्षेषु भूरिषु। क्षेत्रे कुलकरोत्पत्तिं शृणु श्रेणिक साम्प्रतम्॥ ह. पु. ७, १२२-२३. २ ह. पु. ७, १६६-६७.

एकदैकं रसं वर्णं गन्ध-स्पर्शावबाधकौ । दधन् स वर्तते ऽभेद्यः शब्दहेतुरशब्दकः ॥ ह. पु. ७-३३
आदि-मध्यान्तनिर्मुक्तं निर्विभागमतीन्द्रियम् । मूर्त्तमप्यप्रदेशं च परमाणुं प्रचक्षते ॥ ह. पु. ७-३२
वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शैः पूरणं गलनं च यत् । कुर्वन्ति स्कन्धवत्तस्मात् पुद्गलाः परमाणवः ॥ ७-३६

× × ×

तं चिय पंचसयाइं अवसप्पिणिपढमभरहचक्किस्स । अंगुल एक्कं चेव य तं तु पमाणंगुलं णाम ॥
जस्सि जस्सि काले भरहेरावदमहीसु जे मणुआ । तस्सि तस्सि ताणं अंगुलमादंगुलं णाम ॥
ति. प. १, १०८-१०९

प्रमाणांगुलमेकं स्यात् तत् पंचशतसंगुणम् । प्रथमस्यावसर्पिण्यामंगुलं चक्रवर्तिनः ॥ ह. ७-४२
खे खे काले मनुष्याणामंगुलं स्वांगुलं मतम् । मीयते तेन तच्छत्र-भृंगार-नगरादिकम् ॥ ह. ७-४४

× × ×

पास-रस-गंध-वण्णव्वदिरित्तो अगुरुअलहुगसंजुत्तो । वत्तणलक्खणकलियं कालसरूवं इमं होदि ॥
[कालस्स दो वियप्पा मुक्खामुक्खा हुवंति एदेसुं । मुक्खाधारवलेणं अमुक्खकालो पयट्टेदि ॥]
जीवाण पुग्गलाणं हुवंति परियट्टणाइ विविहाइं । एदाणं पज्जाया वट्टंते मुक्खकालआधारे ॥
सव्वाण पयत्थाणं णियमा परिणामपहुदिवित्तीओ । बहिरंतरंगहेदुहि सव्वब्भेदेसु वट्टंति ॥
बाहिरहेदू कहिदो णिच्छयकालो त्ति सव्वदरिसीहिं । अब्भंतरं णिमित्तं णिय णियदव्वेसु चेट्ठेदि ॥
कालस्स भिण्णाभिण्णा अणुएगपवेसणेण परिहीणा । पुह पुह लोयायासे चेट्ठंते संचएण विणा ॥
ति. प. ४, २७८-२८३.

वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शमुक्तोऽगौरवालाघवः । वर्तनालक्षणः कालो मुख्यो गौणश्च स द्विधा । ह. ७-१.
जीवानां पुद्गलानां च परिवृत्तिरनेकधा । गौणकालप्रवृत्तिश्च मुख्यकालनिबन्धना ॥ ह. ७-४.
सर्वेषामेव भावानां परिणामादिवृत्तयः । स्वान्तर्बहिर्निमित्तेभ्यः प्रवर्त्तन्ते समन्ततः ॥ ह. ७-५.
निमित्तमान्तरं तत्र योग्यता वस्तुनि स्थिता । बहिर्निश्चयकालस्तु निश्चितस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ७-६
अन्योन्यानुप्रवेशेन विना कालाणवः पृथक् । लोकाकाशमशेषं तु व्याप्य तिष्ठन्ति संचिताः
[तिष्ठन्त्यसंचिताः] ॥ ह. ७-७.

× × ×

णिरएसु णत्थि सोक्खं णिमेसमेत्तं पि णारयाण सदा । दुक्खाइं दारुणाइं वट्टंते पच्चमाणाणं ॥
ति. प. २-३५२.
अक्ष्णोर्निमीलनं यावन्नास्ति सौख्यं च जातुचित् । नरके पच्यमानानां नारकाणामहर्निशम् ॥
ह. ४-३६८

× × ×

विप्फुरिदपंचवण्णा सहावमउवा य मधुररसजुत्ता। चउरंगुलपरिमाणा तण त्ति जाएदि सुरहिगंधड्ढा॥
ति. प. ४-३२२

पंचवर्ण-सुखस्पर्श-सुगन्ध रस-शब्दकैः। संछन्ना राजंत क्षोणी तृणैश्च चतुरंगुलैः॥ ह. ७-७७.

× × ×

सोदरवेसु सोत्तं रूवे चक्खू सुसोरभे घाणं। जीहा विविहरसेसुं पासे पासिंदियं रमइ॥
इय अण्णोण्णासत्ता ते जुगला वर णिरंतरे भोगे। सुलभे वि ण संतित्तिं इंदियविसएसु पावंति॥
ति. प. ४, ३५५-३५६.

श्रोत्रं गीतरवे रूपे चक्षुर्घ्राणं सुसौरभे। जिह्वा मुख (सुख) रसास्वादे सुस्पर्शे स्पर्शनं तनोः॥
अन्योन्यस्य तदासक्तं दंपतीनां निरंतरम्। स्तोकमपि न संतृप्तं मनोऽधिष्ठितमिन्द्रियम्॥
ह. पु. ७, ९७-९८.

× × ×

णभगजघंटणिभाणिं चंदाइच्चाण मंडलाणि तदा। आसाढपुण्णिमाए दट्ठूणं भोगभूमिजा सव्वे॥
आकंसियमदिघोरं उप्पादं जादमेदमिदि मत्ता। पज्जाउला पकंपं पत्ता पवणेण पहदरुक्खो व्व॥
ति. प ४, ४२३-४२४.

तस्य काले प्रजा दृष्ट्वा पौर्णमास्या सहैव खे। आकाशगजघंटाभे द्वे चन्द्रादित्यमण्डले॥
आवस्मिकभयोद्विग्नाः स्वमहोत्पातशंकिताः। प्रजाः संभूय पप्रच्छुस्तं प्रभुं शरणागताः॥ ७, १२६-२७

× × ×

उवयणवाविजलेणं सित्ता पेच्छंति एक्कभवजाइं। तस्स णिरिक्खणमेत्ते सत्तभवातीद-भाविजादीओ॥
ति. प. ४-८०८.

नन्दा भद्रा जया पूर्णेत्यभिख्याभिः क्रमोदिताः। यज्जलाप्लुक्षिता पूर्वां जातिं जानन्ति जन्तवः॥
ताः पवित्रजलापूर्णसर्वपाप-रुजाहराः। परापरभवा सप्त दृश्यन्ते यासु पश्यताम्॥ ह. ५७, ७३-७४.

× × ×

पण्णरसेसु जिणिंदा णिरंतरं दोसु सुण्णया तत्तो।
तीसु जिणा दो सुण्णा इगि जिण दो सुण्ण एक्कजिणो॥ ति. प. ४-१२८८.

दो सुण्णा एक्कजिणो इगि सुण्णो इगि जिणो य इगि सुण्णो।
दोण्णि जिणा इदि कोट्ठा णिद्दिट्ठा तित्थकत्ताणं॥ ति. प. ४-१२८९.

दोकोट्ठेसुं चक्की सुण्णं तेरससु चक्किणो छक्के ।
सुण्ण तिय चक्कि सुण्णं चक्की दो सुण्ण चक्कि सुण्णो य ॥ ति. प. ४-१२९०

चक्की दो सुण्णाइं छक्खंडवईण चक्कवट्टीणं ।
एदे कोट्ठा कमसो संदिट्ठी एक्क दो अंका ॥ ति. प. ४-१२९१.

दस सुण्ण पंच केसव छस्सुण्णा केसि सुण्ण केसीओ ।
तियसुण्णमेक्ककेसी दो सुण्णं एक्क केसि तिय सुण्णं ॥ ति. प ४-१४१७.

वृषभाद्या धर्मपर्यन्ता जिनाः पंचदश क्रमात् । निरन्तरास्ततः शून्ये त्रिजिनाश्शून्ययोर्द्वयम् ॥
जिने [जिनो] शून्यद्वयं तस्माज्जिनः शून्यद्वयं पुनः ।
जिने [जिनो] शून्यं जिनः शून्यं द्वौ जिनेन्द्रौ निरन्तरौ ॥
चक्रिणौ भरताद्यौ द्वौ तौ शून्यानि त्रयोदश । षट् चक्रिणस्त्रिशून्यानि चक्री शून्यं च चक्रभृत् ॥
ततः शून्यद्वयं चक्री शून्यं चक्रधरस्ततः । शून्ययोर्द्वितयं तस्मादिति चक्रधरक्रमः ॥
शून्यानि दश पंचातस्त्रिपृष्ठाद्यास्तु केशवाः । शून्यषट्कं ततश्चैकः केशवो व्योम-केशवः [वाः] ॥
त्रिशून्यं केशवश्चैकः शून्यद्वितयमप्यतः । केशवस्त्रीणि शून्यानि केशवानामयं क्रमः ॥
ह. पु. ६०, ३२४-३२९.

× × ×

अणिदाणगदा सव्वे बलदेवा केसवा णिदाणगदा । उड्ढुगामी सव्वे बलदेवा केसवा अधोगामी ॥
ति. प. ४-१४३६.

ऊर्ध्वगा बलदेवास्ते निर्निदाना भवान्तरे । अधोगा सनिदानास्तु केशवाः प्रतिशत्रवः ॥
ह. पु. ६०-२९३.

× × ×

एदम्मि तमिस्से जे विहरंते अप्परिद्धिया देवा । दिग्मूढा वच्चंते माहप्पेण महद्धियसुराणं ॥
ति. प. ८-६१३.

अस्मिन्नल्पर्द्धयो देवा दिग्मूढाश्चिरमासते । महर्द्धिकसुरैः सार्द्धं कुर्युस्तद्वार्धिलंघनम् ॥
ह. पु. ५-६८५.

× × ×

तिलोयपण्णत्ति और हरिवंशपुराणका विषयसाम्य

विषय	ति. प.	ह. पु.
राजुविभाग	१, १५४-१६२	४, १२-१६
प्रथमादिक राजुकी समाप्तिपर लोकविस्तार	,, १७६-७८, १९३-९७	,, १७-२८
वातवलय	,, २६७-२७३	,, ३३-४२
रत्नप्रभादि ७ पृथिवियां	,, १५२-१५३	,, ४३-४६
खर-पंकभागादि विभाग	२, ९-२३	,, ४७-५८
भवनवासी १०	३, ९	,, ६३-६४
असुरकुमारादिकोंकी आयु	,, १४४-१४५	,, ६६-६७
असुरकुमारादिकोंकी उंचाई	,, १७६	,, ६८
नरकसंख्या	२, २६-२८	,, ७१-७४
प्रस्तारसंख्या	,, ३७	,, ७५
४९ इन्द्रकोंके नाम	,, ४०-४५	,, ७६-८५
इन्द्रक, श्रेणिबद्ध व प्रकीर्णक बिलोंकी संख्या	,, ५५-९४	,, ८६-१५०
सीमन्तक आदिक प्रथम श्रेणिबद्धोंके नाम	,, ४७-५३	,, १५१-१५८
संख्यात व असंख्यात योजन विस्तृत बिलोंकी संख्या	,, ९५-९९	,, १६०-१७०
सीमन्तकादि इन्द्रक बिलोंका विस्तार	,, १०५-१५६	,, १७१-२१७
इन्द्रकादिक बिलोंका बाहल्य	,, १५७-१५८	,, २१८-२२४
इन्द्रकादिकोंका अन्तराल	,, १५९-१९४	,, २२५-२४८
नारक बिलोंके अनुसार आयुका प्रमाण	,, २०२-२१५	,, २४९-२९४
उत्सेध	,, २१६-२७०	,, २९५-३३९
अवधिविषय	,, २७१	,, ३४०-३४१
मृत्तिकागन्ध	,, ३४६	,, ३४२
लेश्या	,, २८१	,, ३४३-३४५
स्पर्शवेदना	,, २९-३३	,, ३४६
जन्मभूमियां	,, ३०२-३१२	,, ३४७-३५४
समुत्पतन	,, ३१५	,, ३५५-३६२
वेदना	,, ३१६-३५८	,, ३६३-३६९
जन्म-मरणान्तर	,, २८७	,, ३७१-३७२
नरकोंमें उत्पन्न होनेवाले जीव व उत्पत्तिद्वार	,, २८४-२८६	,, ३७३-३७८
नरकोंसे निर्गमन	,, २८९-२९२	,, ३७९-३८३

६ त्रिलोकसार

यह आचार्यप्रवर श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती द्वारा विरचित लोकानुयोगका एक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसका रचनाकाल शककी दशवीं शताब्दि है। इसमें बहुतसी प्राचीन गाथायें ग्रन्थके अंग रूपमें सम्मिलित करली गई हैं। परन्तु उनके निर्माताओंका नामोल्लेख आदि कुछ भी नहीं पाया जाता है। इसमें लोकसामान्य, भावनलोक, व्यन्तरलोक, ज्योतिर्लोक, वैमानिकलोक और नर तिर्यग्लोक, ये छह अधिकार हैं। इसकी समस्त गाथासंख्या १०१८ है। यद्यपि ग्रन्थकारने इसमें उपर्युक्त ६ अधिकारोंका निर्देश नहीं किया है तथापि प्रारम्भमें "भवण-वेंतर-जोइस-विमाण-णरतिरियलोयजिणभवणे। सव्वामरिंद-णरवइसंपूजियवंदिए वंदे ॥२॥" इस मंगलगाथा द्वारा द्वितीयादि अधिकारोंकी सूचना कर दी है। इसी प्रकार इन भावनलोकादि अधिकारोंके प्रारम्भमें प्रथम गाथाके द्वारा वहां वहांके जिनभवनोंको नमस्कार किया गया है।

जिस प्रकार तिलोयपण्णत्तिमें तीनो लोकोंका विस्तृत वर्णन किया गया है उसी प्रकार इसमें भी प्रायः उन सभी विषयोंका विवेचन पाया जाता है। विशेषता यह कि जहां तिलोय-पण्णत्तिमें गणितसूत्रों द्वारा कई स्थानोंमें विस्तारादिके सिद्ध हो जानेपर भी उन्हीं स्थानोंमें पुनः पृथक् पृथक् सिद्धांकों द्वारा प्ररूपणा की है, वहां इस ग्रन्थमें केवल करणसूत्रों द्वारा ही काम निकाला है। जैसे ४९ नरकप्रस्तारोंका विस्तार (देखिये ति. प. गा. २, १०५-१५६ और त्रि. सा. गा. १६९)।

१ **लोकसामान्य** अधिकारमें पहले संख्याप्ररूपणामें संख्यात, असंख्यात व अनन्त संख्याओं[1] तथा सर्वधारा आदि १४ धाराओंकी प्ररूपणा करके फिर पल्य, सागर व सूच्यंगुल आदि आठ प्रकारके उपमामानका स्वरूप बतलाया गया है[2]। आगे चलकर अधोलोकस्थ रत्नप्रभादि सात पृथिवियोंमें स्थित नारकबिल, नारकियोंके उत्पादस्थान, विक्रिया, वेदना, आयु, उत्सेध, अवधिविषय और गति-आगतिकी प्ररूपणा है। यह नारकप्ररूपणा तिलोयपण्णत्तिमें नारकलोक नामक द्वितीय अधिकारमें की गई है।

यहां तिलोयपण्णत्तिसे निम्न कुछ विशेषतायें भी हैं—

(१) तिलोयपण्णत्ति महाधिकार १, गा. २१५ से २३४ [यहां पाठ कुछ स्खलित हो गया प्रतीत होता है] तक सामान्यलोक, आगे गा. २४९ तक अधोलोक और इसके

१ इसकी प्ररूपणा ति. प. में पृ. १७८-१८२ पर एक गद्यभाग द्वारा की गई है। २ ति प. १,९३-११२.

आगे गा. २६६ तक ऊर्ध्वलोक, इन तीनोंमेंसे प्रत्येकके निम्न आठ आठ भेद बतलाये हैं— १ सामान्य, २-३ दो चतुरस्र, ४ यवमुरज, ५ यवमध्य, ६ मन्दर, ७ दूष्य, और ८ गिरिकटक। परन्तु यहां त्रिलोकसारमें गा. ११५-११७ द्वारा केवल अधोलोकके ही उपर्युक्त आठ भेद बतलाये गये हैं। गा. ११८-१२० में ऊर्ध्वलोकके निम्न पांच भेद बतलाये हैं जो तिलोयपण्णत्तिसे भिन्न हैं— १ सामान्य, २ प्रत्येक, ३ अर्ध, ४ स्तम्भ और ५ पिनष्टि।

(२) तिलोयपण्णत्तिमें त्रसनालीकी ऊंचाई तेरह राजुसे कुछ (३२१६२२४१/३ धनुष) कम बतलाई गई है[1]। परन्तु यहां उसे पूर्ण चौदह राजु ऊंची ही बतलाया है। जैसे—

लोयबहुमज्झदेसे रुक्खे सारं व रज्जुपदरजुदा।
चोद्दसरज्जुत्तुंगा तसणाली होदि गुणणामा ॥ त्रि. सा. १४३.

(३) तिलोयपण्णत्ति (२,३४७–४९) में जिन १५ असुरकुमार जातिके देवोंके नामोंका निर्देश किया है वे यहां नहीं पाये जाते। यहां केवल गा. १९७ में असुरकृत वेदनाका ही सामान्यतया उल्लेख किया गया है।

(४) तिलोयपण्णत्ति (२,२९२) में सातवीं पृथिवीसे निकलकर तिर्यंचोंमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके सम्यग्दर्शनप्राप्तिकी योग्यता बतलाई गई है। परन्तु यहां उसका ' मिस्सतियं णत्थि णियमेण ' (गा. २०४) द्वारा स्पष्टतया निषेध किया गया है। इत्यादि। गाथाओंकी समानता—

लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइ-णिहणो सहावणिव्वत्तो। जीवाजीवेहि फुडो सव्वागासवयवो णिच्चो ॥
धम्माधम्मागासा गदिरागदि जीव-पोग्गलाणं च। जावत्तावल्लोगो आयासमदो परमणंतं ॥
उभियमुरवद्धयसंचयसण्णिहो हवे लोगो। अद्धुदयो मुरवसमो चोद्दसरज्जूदओ सव्वो ॥
त्रि. सा. ४–६.

आदि-णिहणेण हीणो पगदिसरूवेण एस संजादो। जीवाजीवसमिद्धो सव्वण्हावलोइओ लोओ ॥
धम्माधम्मणिबद्धा गदिरागदि जीव-पोग्गलाणं च। जेत्तियमेत्तायासे लोयायासो स णादव्वो ॥
हेट्ठिमलोयायारो वेत्तासणसण्णिहो सहावेण। मज्झिमलोयायारो उब्भियमुरअद्धसारिच्छो ॥
ति. प. १ गा. ११३, ११४, ११७.

ये गाथायें मूलाचार (द्वादशानुप्रेक्षाधिकार गा. २२-२४) में भी पायी जाती हैं।

---

१ ति. प. २-८.

अच्छिणिमीलणमेत्तं णत्थि सुहं दुक्खमेव अणुबद्धं । णिरए णेरइयाणं अहोणिसं पच्चमाणाणं ॥
त्रि. सा. २०७.

णिरएसु णत्थि सोक्खं णिमेसमेत्तं पि णारयाण सदा । दुक्खाइं दारुणाइं वट्टंते पच्चमाणाणं ॥
ति. प. २-३५२

२ भावनलोक अधिकारमें भवनवासी देवोंके भेद, इन्द्र, मुकुटचिह्न, चैत्यवृक्ष, भवन, सामानिक आदि परिवारदेव, देवीसंख्या, आयुप्रमाण, उच्छ्वास और आहार, इन सब विषयोंकी प्ररूपणा तिलोयपण्णत्तिके ही समान की गई है। गाथाओंकी समानता—

असुरा णाग-सुवण्णा दीवोदहि-विज्जु-थणिद-दिस-अग्गी ।
वादकुमारा पढमे चमरो वइरोइणो इंदो ॥ त्रि. सा. २०९.
असुरा णाग सुवण्णा दीओवहि-थणिद-विज्जु-दिस-अग्गी ।
वाउकुमारा परया दसभेदा होंति भवणसुरा ॥ ति. प. ३-९.

× × ×

चूडामणि-फणि-गरुडं गज मयरं वड्ढमाणगं वज्जं ।
हरि-कलसस्स चिण्हं मउले चेत्तदुमाह धया ॥ त्रि. सा. २१३.
चूडामणि-अहि-गरुडा करि-मयरा वड्ढमाण-वज्ज-हरी ।
कलसो तुरवो मउडे कमसो चिण्हाणि एदाणिं ॥ ति. प. ३-१०.

× × ×

अस्सत्थ-सत्त-सामलि-जंबू-वेतस-कदंबक-पियंगू । सिरिसं पलासरायद्दुमा य असुरादिचेत्ततरू ॥
चेत्ततरूणं मूले पत्तेयं पडिदिसम्हि पंचेव । पलियंकठिया पडिमा सुरच्चिया ताणि वंदामि ॥
त्रि. सा. २१४-१५

अस्सत्थ-सत्तवण्णा संमल-जंबू य वेतस-कडंबा । तह पीयंगू सिरसा पलासरायद्दुमा कमसो ॥
चेत्तदुमामूलेसुं पत्तेक्कं चउदिसासु चेट्ठंते । पंच जिणिंदपडिमा पलियंकठिदी परमरम्मा ॥
ति. प. ३,१३६-३७

× × ×

पदमेत्ते गुणयारे अण्णोण्णं गुणिय रूवपरिहीणे । रूऊणगुणेणहिए मुहेण गुणियम्मि गुणगणियं ॥
त्रि. सा. २३१.
गच्छसमे गुणयारे परप्परं गुणिय रूवपरिहीणे । एक्कोणगुणविहत्ते गुणिदे वयणेण गुणगणिदं ॥
ति. प. ३-८०.

× × ×

असुरस्स महिस-तुरग-रथेभ-पदाती-कमेण गंधव्वा। णिच्चाणीय महत्तर महत्तरी छक्क एक्का य॥
णावा गरुडिभ-मयरं करभं खग्गी सिगारि-सिविगस्सं। पढमाणीयं सेसे सेसाणीया हु पुव्वं व॥
त्रि. सा. २३२-३३.

असुरम्मि महिस-तुरगा रह-करिणो तह पदाति गंधव्वा। णच्चणया एदाणं महत्तरा छ महत्तरी एक्का॥
णावा गरुड-गइंदा मयरट्ठा खग्गि-सीह-सिविकस्सा। णागादीणं पढमाणीया बिदियाय असुरं वा॥
ति. प. ३, ७८-७९

३ **व्यन्तरलोक** अधिकारमें व्यन्तर देवोंके भेद, उनका शरीरवर्ण, चैत्यवृक्ष, व्यन्तरोंके अवान्तरभेद, इन्द्रनाम, गणिकामहत्तरी, सामानिक आदि परिवारदेव, निवासद्वीप, प्रासाद, आयु और भवनपुरादि विभागका उसी प्रकार वर्णन पाया जाता है जैसा कि तिलोयपण्णत्तिके छठे अधिकारमें किया गया है।

४ **ज्योतिर्लोक** अधिकारमें पहिले ज्योतिषी देवोंके पांच भेदोंका निर्देश करके उनके संचारादिके प्ररूपणार्थ आदि व अन्तके सोलह-सोलह द्वीपोंके नामोंका उल्लेख कर उनकी समस्त संख्याका प्रमाण बतलाया गया है। तत्पश्चात् जम्बूद्वीपादिकका विस्तार, उनकी आदिम मध्यम व बाह्य सूचियां, परिधि, बादर व सूक्ष्म क्षेत्रफल, जम्बूद्वीपप्रमाण खण्ड, लवणसमुद्रादिका जलस्वाद, उनमें जलचर जीवोंकी सम्भावना, मानुषोत्तर व स्वयम्प्रभादि पर्वत, अवगाहना और पृथिवी आदिक जीवोंका आयुप्रमाण, इन सबका कथन किया है[1]।

आगे ज्योतिषी देवोंका जो अवस्थान (निवासक्षेत्र) बतलाया है वह तिलोयपण्णत्तिके ही समान है[2]। इसके लिये यहां जो निम्न गाथा दी गई है वह किसी प्राचीनतम ग्रन्थकी प्रतीत होती है—

णउदुत्तरसत्तसए दस सीदी चदुदुगे तियचउक्के।
तारिण-ससि-रिक्ख-बुहा सुक्क-गुरुंगार-मंदगदी॥३३२॥

यह गाथा कुछ शब्दभेदके साथ सर्वार्थसिद्धि (४-१२) में 'उक्तं च' करके उद्धृत की गई है। यहां मात्र शब्दभेद ही है, अर्थभेद नहीं हुआ। परन्तु तत्त्वार्थ-राजवार्तिकमें[3] वही गाथा ऐसे पाठभेदोंके साथ उद्धृत की गई है कि जिससे वहां नक्षत्र, बुध,

१ इन सब विषयोंकी प्ररूपणा तिलोयपण्णत्तिके तिर्यग्लोक नामक पांचवें अधिकारमें विस्तारपूर्वक की गई है। २ ति. प. म. ७ गा. ३६, ६५, ८३, ८९, ९३, ९६, ९९, १०४.
२ णवदुत्तरसत्तसया दस सीदिच्चदुतिग च दुगचदुक्क। तारा-रवि-ससि-रिक्खा बुह-भग्गव-गुरु-अंगिरार-सणी॥
त. रा. ४, १२, १०.

शुक्र, बृहस्पति, मंगल और शनिके अवस्थानमें भी भेद हो गया है।

इसी अधिकारमें आगे ज्योतिष विमानोंका विस्तार, चन्द्रमण्डलकी हानि-वृद्धि, अढ़ाई द्वीपके चन्द्र-सूर्यादिकोंकी संख्या, अढ़ाई द्वीपके बाहिर चन्द्र-सूर्यादिका अवस्थान, असंख्यात द्वीप-समुद्रोंके ऊपर स्थित चन्द्र-सूर्यादिकोंकी संख्या, अठासी ग्रहोंके नाम, चारक्षेत्र, दिन-रात्रिका प्रमाण, ताप व तमका प्रमाण, चन्द्र सूर्यादिकोंके गगनखण्ड, अधिक मास, दक्षिण-उत्तर अयनका प्रारम्भ व आवृत्तियां, नक्षत्र तिथि एवं पर्वके निकालनेकी रीति, समान दिनरात्रि स्वरूप विषुप, नक्षत्रोंके नामादिक तथा चन्द्र-सूर्यादिकोंके आयुप्रमाणादिकी प्ररूपणा की गई है। गाथाओंकी समानता—

लवणादीणं वासं दुग-तिग-चदुभंगुणं तिलक्खुणं।
आदिम-मज्झिम-बाहिरसूइ त्ति भणंति आइरिया ॥ त्रि. सा. ३१०

लवणादीणं रुंदं दु-ति-चउगुणिदं कमा तिलक्खुणं।
आदिम-मज्झिम-बाहिरसूईणं होदि परिमाणं ॥ ति. प. ५-३४.

गाथा ४३३ ति. प. के सातवें अधिकारमें (१०१) ज्योंकी त्यों पायी जाती है।

५ वैमानिकलोक अधिकारमें प्रथमतः सोलह और फिर इन्द्रोंकी अपेक्षा बारह कल्पोंके नामोंका निर्देश किया गया है। तत्पश्चात कल्पातीत विमानोंका उल्लेख, सौधर्मादिकोंमें विमानोंकी संख्या, इन्द्रकोंका प्रमाण, नाम व विस्तार; श्रेणिबद्ध विमानोंका अवस्थान, दक्षिण उत्तर इन्द्रोंका निवास, मुकुटचिह्न, नगर प्रासादिकोंका रचनाक्रम, सामानिक देवादिकोंकी संख्या, अग्रदेवियोंके नाम, कल्पस्त्रियोंका उत्पत्तिस्थान, प्रवीचार, विक्रिया, अवधिविषय, जन्म-मरणान्तर, इन्द्रादिकोंका उत्कृष्ट विरह, आयुप्रमाण, लौकान्तिक देवोंका स्वरूप, कल्पस्त्रियोंका आयुप्रमाण, उत्सेध, उच्छ्वास व आहारग्रहणका काल, गत्यागति, उत्पत्तिप्रकार, ईषत्प्राग्भार नामक आठवीं पृथिवीका स्वरूप, सिद्धोंका क्षेत्र और उनका सुख, इत्यादि प्ररूपणा तिलोयपण्णत्तिके आठवें महाधिकारमें की गई प्ररूपणाके ही समान यहां भी पायी जाती है। सिद्धोंकी प्ररूपणा तिलोयपण्णत्तिके नौवें महाधिकारमें की गई है। यहां कुछ उल्लेखनीय विशेषतायें ये हैं—

(१) ति. प. (८, ८३-८४) में बतलाया है कि ऋतु इन्द्रककी चारों दिशाओंमें ६२-६२ श्रेणिबद्ध विमान हैं। आगे आदित्य इन्द्रक पर्यन्त वे एक एक कम (६१-६० इत्यादि) होते गये हैं। वहीं दूसरे मतसे ६२ के स्थानमें ६३ श्रेणिबद्ध विमान भी बतलाये हैं। इस मतके अनुसार सर्वार्थसिद्धि इन्द्रकके चारों ओर भी श्रेणिबद्ध विमानोंकी स्थिति स्वीकार की गई है। यहां त्रिलोकसारमें ६२ वाला मत (गा. ४७३) स्वीकार किया गया है।

(२) ति. प. (८, ३३२–३५०) में सौधर्मादिक इन्द्रोंका अवस्थान पृथक् पृथक् बतला देनेके पश्चात् इसी अर्थको समुदित रूपमें बतलानेके लिये जो 'छज्जुगलसेसएसुं....' इत्यादि गाथा (३५१) दी गई है वह यहां त्रिलोकसारमें (४८३) भी थोड़ेसे पाठभेदके साथ पायी जाती है ।

(३) ति. प. (८–४०१) में स्तम्भोंके ऊपर और नीचे २५–२५ कोश छोड़कर जो करण्डकोंका अवस्थान बतलाया है, यहां (५२१) उसे क्रमशः २५ और २३ कोश छोड़कर बतलाया है ।

(४) तिलोयपण्णत्ति (म. ८, १२५–२६) में जो विजयादिकके अवस्थानमें दिशाभेद बतलाया है उसमें यहां (५२७) द्वितीय मत स्वीकार किया गया प्रतीत होता है ।

(५) ति. प. (८–५११) में आचार्यान्तरके मतसे सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके असंख्यात भागसे हीन तेतीस सागरोपम प्रमाण जघन्य आयु भी बतलाई है । परन्तु यहां (५३२) जघन्य आयुका कुछ स्पष्ट उल्लेख नहीं पाया जाता ।

(६) ति. प. (८,५४४–४६) में कल्पवासी देवोंका उत्कृष्ट विरहकाल बतला कर फिर भी मतान्तरसे अन्य प्रकार बतलाते हुए जो गा. ५४९ दी गई है वह गाथा यहां (५२९) भी पायी जाती है । यहां इसी मत को अपनाया गया है ।

(७) ति. प. (८,५२५–२६) में पहले बारह कल्पोंकी विवक्षासे देवियोंकी आयुका प्रमाण बतला कर फिर गा. ५२७–२९ में, जो सोलह कल्पोंको स्वीकार करते हैं, उनके उपदेशानुसार भी उक्त आयुका प्रमाण बतलाया है । तत्पश्चात् गा. ५३० में 'लोकायनी' के अनुसार तथा गा. ५३१–३२ में मूलाचारके अनुसार भी उन देवियोंकी आयुका प्रमाण बतलाया है जो पल्योंमें निम्न प्रकार है—

सौ	ई.	स.	मा.	ब्र	ब्रह्मो.	लां.	का.	शु.	म.	श.	स.	आ.	प्रा	आरण	अ.
५	७	९	११	१३	...	१७	...	...	२३	...	२७	३४	४१	४८	५५
५	७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	२३	२५	२७	३४	४१	४८	५५
५	७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	२३	२५	२७	२९	३१	३३	३५
५		१७		२५		३५		४०		४५		५०		५५	

यहां त्रिलोकसारमें (५४२) द्वितीय मतको स्वीकार कर उसीके अनुसार देवियोंकी आयुका प्रमाण बतलाया गया है ।

समानताके लिये निम्न गाथाओंका मिलान कीजिये —

त्रिलोकसार	४५९	४६३	४७१	४७४	४७५	४८३	५२८	५२९
तिलोयपण्णत्ति	८-१४९	८-११	१-१६३	८-१०१	८-१६८	८-३५१	६८७	५४९

६ नर-तिर्यग्लोक यह अधिकार तिलोयपण्णत्तिमें मानुषलोक (४) और तिर्यग्लोक (५) इन दो स्वतन्त्र महाधिकारोंमें विभक्त पाया जाता है। इस अधिकारमें पहिले जम्बूद्वीपस्थ भरतादिक क्षेत्रों, हिमवदादि पर्वतों, पद्मादिक ह्रदों व उनसे निकलनेवाली गंगादिक नदियों, तथा मेरु पर्वत व भद्रशालादि वनोंका विस्तारादि बतलाया गया है। आगे जम्बू वृक्ष व शाल्मली वृक्ष और उनके परिवार वृक्षोंका उल्लेख करके क्षेत्रानुसार भोगभूमि और कर्मभूमियोंका विभाग बतलाया है। तत्पश्चात् यमकगिरि, ह्रदपंचक, कांचन शैल, दिग्गज पर्वत, गजदन्त पर्वत, वक्षार पर्वत व विभंग नदियां, इनके नामादिकका निर्देश करके ग्राम-नगरादिकका स्वरूप बतलाया गया है। फिर विदेह क्षेत्रमें वर्षा आदिका स्वरूप दिखाकर पांच मेरु सम्बन्धी तीर्थंकर व चक्रवर्ती आदिकोंकी जघन्य-उत्कृष्ट संख्या निर्दिष्ट की है। इससे आगे चक्रवर्तीकी सम्पदाका उल्लेख करके राजा-अधिराजा आदिके लक्षण बतलाते हुए ३२ विदेहों, विजयार्धगिरिस्थ ११० विद्याधरनगरियों, विदेहक्षेत्रस्थ ३२ नगरियों तथा हिमवदादि पर्वतोंके ऊपर स्थित कूटोंके नामोंका निर्देश किया है। आगे चलकर अनेक करणसूत्रों द्वारा चाप, बाण, वृत्तविष्कम्भ तथा स्थूल व सूक्ष्म क्षेत्रफल निकाल कर निर्दिष्ट किया गया है।

तत्पश्चात् भरत व ऐरावत क्षेत्रोंमें प्रवर्तमान सुषम-सुषमादिक छह कालोंका प्रमाण और उनमें होनेवाले प्राणियोंकी आयु व उत्सेध आदिका प्रमाण बतलाते हुए प्रथमतः भोगभूमियोंकी प्ररूपणा की है। फिर चतुर्थ कालमें होनेवाले ६३ शलाकापुरुष (२४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती और ९-९ बलदेव नारायण व प्रतिनारायण), ९ नारद और ११ रुद्रोंकी प्ररूपणा करके शक राजाकी उत्पत्ति एवं कल्किका कार्य बतलाया गया है। इसके आगे उत्सर्पिणी कालके प्रवेश-क्रमको दिखलाकर भरतादिक क्षेत्रोंमें सदा अवस्थित रहनेवाले कालोंका तथा द्वीप-समुद्रोंके मध्यमें स्थित प्राकार एवं वेदिकादिकोंका वर्णन करते हुए जम्बूद्वीपकी प्ररूपणा समाप्त की गई है।

आगे चलकर लवणसमुद्र व उसमें स्थित अन्तरद्वीपोंका निरूपण करते हुए धातकी व पुष्कर द्वीपों; मानुषोत्तर, कुण्डल एवं रुचक पर्वतों और उनके ऊपर स्थित कूटों, नन्दीश्वर द्वीप तथा अकृत्रिम जिनभवनोंकी प्ररूपणा की गई है। इस प्रकार इस अधिकारके पूर्ण होनेपर उक्त ग्रन्थ समाप्त होता है।

यहां हिमवान् पर्वतके ऊपरसे जिस जिह्विका नालीके द्वारा गंगा नीचे गिरी है उसका स्वरूप इस प्रकार बतलाया है—

केसरिमुह-सुदि-जिब्भा-दिट्ठी भू-सीसपहुदिगोसरिसा ।
तेणिह पणालिया सा वसहायारे त्ति णिद्दिट्ठा ॥ त्रि. सा. ५८५.

अर्थात् वह नाली मुख, कान, जिह्वा और नेत्र इनसे सिंहके आकार तथा भ्रू और शेर आदिसे गायके सदृश है, अत एव वह वृषभाकार कही गई है ।

इस प्रकार उस नालीका यह स्वरूप कुछ अटपटासा हो गया है, क्योंकि, उसका आकार न तो सिंहके समान ही रह सका है और न गायके ही समान । हम जब तिलोयपण्णत्तिमें इस प्रकरणको देखते है तो वहां हमें यह गाथा उपलब्ध होती है—

सिंग-मुह-कण्ण-जिंहा-लोयण-भूआदिएहि गोसारिसो ।
वसहो त्ति तेण भण्णइ रयणामरणोहिया तत्थ ॥ ति. प. ४–२१५.

इसमें उक्त नालीका स्वरूप पूर्ण रूपेण गायके आकार ही बतलाया गया है । यह गाथा सम्भवतः त्रिलोकसारकर्ताके सामने रही है । परन्तु उसका 'सिंग' पद अपने रूपमें रहकर सिंघ या सिंह पदके रूपमें भ्रष्ट होकर रहा है । इसीके द्वारा भ्रान्ति हो जानेसे उन्होंने 'सिंह' के पर्यायवाची 'केसरि' शब्दका प्रयोग उपर्युक्त गाथामें कर दिया है ।

इस विषयको तत्त्वार्थराजवार्तिकमें देखनेपर वहां गंगाकुण्डादिका निर्देश तो मिलता है, परन्तु उक्त नालीका निर्देश वहां किसी प्रकार भी देखनेमें नहीं आता । (देखिये त. रा. अध्याय ३ सूत्र २२)

हरिवंशपुराण[1] और वर्तमान लोकविभागमें[2] उसे वृषभाकार ही बतलाया है, न कि कुछ अवयवोंसे सिंहाकार भी । जंबूदीवपण्णत्तिमें[3] उसे स्पष्टतया सींग एवं मुखादिक सब अवयवों द्वारा वृषभाकार ही कहा है । जिनभद्रगणि-क्षमाश्रमण-विरचित बृहत्क्षेत्रसमासमें[4] उसे

१ षट्योजनो मगव्यूता विस्तीर्णा वृषभाकृतिः । जिह्विका योजनार्द्धं तु बाहुल्यायामतो गिरेः ॥
तस्यैव पतिता गंगा गोशृंगाकारधारिणी । श्रीगृहाग्रसमावर्त्त भ्रमी दशयोजनविस्तृता ॥ ह. पु. ५, १४०-४१.

२ सक्रोशषट च विस्तीर्णा बहत्वा चार्धयोजनम । जिह्विका वृषभाकारगोयोना चार्धयोजनम ॥
जिह्विकायां गता गंगा पतन्ती श्रीगृहं शुभे । गोशृंगसंस्थिता भूत्वा पतिता दशविस्तृता ॥ लो. वि. १,९२-९३.

३ सिंग-मुह-कण्ण-जीहा-णयणा-भूआदिएहि गोसरिसा । वसह त्ति तेण णामा णाणामणि-रयणपरिणामा ॥
जं. प. २-१५१.

४ निवडइ गिरिसिहराओ गंगाकुंडम्मि जिब्भियाए उ । मयरविइट्ठहरसंठियाए वइरामयतलम्मि ॥
बृ. क्षे. १, ११६.

मगरके खुले हुए अधरके आकार निर्दिष्ट किया है ।

यहां त्रिलोकसार गा. ८४२–८४६ में तीर्थंकर, चक्रवर्ती, अर्धचक्री और रुद्रोंका उत्पत्तिकाल बतलानेके लिये जिस संदृष्टिका उपयोग किया है वह तिलोयपण्णत्ति (४, १२८७–९१, १४१७, १४४३) में भी इसी क्रमसे पृथक् पृथक् पायी जाती है । इसके अतिरिक्त वह हरिवंशपुराण (६०, ३२४–३२९) और प्रवचनसारोद्धार (४०६–४०९) में भी इसी क्रमसे उपलब्ध होती है ।

किन्तु जब हम त्रिलोकसारकी गाथा ८५० का तिलोयपण्णत्तिकी गाथा ४, १५०७ आदिसे मिलान करते हैं तो हमें कल्किके सम्बन्धमें दोनों ग्रन्थोंमें बड़ा मतभेद दिखाई देता है । त्रिलोकसारके अनुसार महावीरनिर्वाणसे एक हजार वर्ष व्यतीत हो जानेपर कल्किका जन्म हुआ और उसने चालीस वर्ष राज्य किया, जब कि तिलोयपण्णत्तिके अनुसार महावीरनिर्वाणसे एक हजार वर्षके भीतर ही कल्किका आयुकाल आ जाता है और उसका राज्यकाल ब्यालीस वर्ष बतलाया गया है ।

अन्य अधिकारोंके समान इस अधिकारकी भी कितनी ही गाथायें ज्योंकी त्यों या कुछ परिवर्तनके साथ तिलोयपण्णत्तिमें देखी जाती हैं । उदाहरणार्थ निम्न गाथाओंका मिलान किया जा सकता है—

त्रि. सा.	३१०	५७०	५९०	५९४–५	६८७-९०	९२०	९८८	९८९	१००९	१०१४
ति. प.	२५६१	१६६७	४-२३०	४,२३८-९	२२०६-९	२४८९	१६३९	३-४९	३-४७	३-४५

७ जंबूदीवपण्णत्ति

यह पद्मनन्दिमुनि विरचित एक लोकानुयोग (करणानुयोग) का ग्रन्थ है । इसमें निम्न तेरह उद्देश हैं— १ उपोद्घात, २ भरत-ऐरावत वर्ष, ३ शैल-नदी-भोगभूमि, ४ सुदर्शन (मेरु), ५ मन्दरजिनभवन, ६ देवोत्तरकुरु, ७ कक्षाविजय, ८ पूर्व विदेह, ९ अपर विदेह, १० लवणसमुद्र, ११ द्वीप-सागर, अधः-ऊर्ध्व-सिद्धलोक, १२ ज्योतिर्लोक, और १३ प्रमाणपरिच्छेद । इनकी गाथासंख्या इस प्रकार है— ७४ + २१० + २४५ + २५२ + १२५ + १७८ + १५३ + १९८ + १९७ + १०२ + १६५ + ११४ + १७६ = २३८९ । इसकी रचनाशैली पूर्णतया तिलोयपण्णत्तिके समान है । यथा—

(१) जिस प्रकार तिलोयपण्णत्तिके प्रारम्भमें प्रथम पांच गाथाओंके द्वारा पांचों परमेष्ठियोंका स्मरण करके पश्चात् छठी गाथाके द्वारा तिलोयपण्णत्तिके कहनेकी प्रतिज्ञा की

गई है[1] उसी प्रकार इसके प्रारम्भमें भी प्रथमतः पांच गाथाओंके द्वारा पांचों परमेष्ठियोंकी वन्दना करके पश्चात् छठी गाथाके द्वारा 'दीव-सायरपण्णत्ति' के कहनेकी प्रतिज्ञा की गई है[2]। भेद केवल इतना हुआ है कि तिलोयपण्णत्तिमें पहले सिद्धोंको नमस्कार करके फिर अरहन्तोंको नमस्कार किया है। किन्तु इसमें पहले अरहन्त और फिर सिद्धोंको नमस्कार किया गया है।

(२) तिलोयपण्णत्तिके समान ही इसमें भी प्रत्येक अधिकार (प्रथम अधिकारको छोड़) के प्रारम्भ व अन्तमें क्रमशः ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरोंको नमस्कार किया गया है।

(३) विषयवर्णनपद्धति तो दोनों ग्रन्थोंकी समान है ही, साथ ही इसमें तिलोय-पण्णत्तिकी बीसों गाथायें यत्किंचित् परिवर्तनके साथ प्रायः ज्योंकी त्यों पायी जाती हैं। जैसे —

(क) भरतादिक सात क्षेत्रोंको नरेन्द्रकी उपमा देकर दोनों ग्रन्थोंमें उनका इस प्रकार वर्णन किया गया है—

कप्पतरु-धवलछत्ता वरउववण-चामरेहि चारुधरा । वरकुंड-कुंडलेहिं विचित्तरूवेहिं रमणिज्जा ॥
वरवेदी-कडिसुत्ता बहुरयणुज्जलणगिंद-मउडधरा । सरिजलपवाह-हारा खेत्त-णरिंदा विराजंति ॥
ति. प. ४, ९२-९३.

कप्पतरु-धवलछत्ता उववण-ससिधवलचामराडोवा । बहुकुंड-रयणकंठा वण-कुंडलमंडियागंडा ॥
वेइ-कडिसुत्तसोहा णाणापव्वय-फुरंतवरमउडा । चर [वर] णइजलंतहोए [जलच्छहारा] खेत्त-णरिंदा
विरायंति ॥ जं. दी. २, ३-४.

(ख) हिमवदादिक छह कुलपर्वतोंका वर्णन —

वरदह-सिदादवत्ता सरि-चामरविज्जमाणया परिदो । कप्पतरु-चारुचिंधा वसुमइ-सिंहासणारूढा ॥
वरवेदी-कडिसुत्ता विविहुज्जलरयणकूड-मउडधरा । अंबरणिज्झर-हारा चंचलतरु-कुंडलाभरणा ॥
गोउर-तिरीडरम्मा पायार-सुगंधकुसुमदामग्गा । सुरपुर-कंठाभरणा वणराजि-विचित्तवरयकयसोहा ॥
तोरण-कंकणजुत्ता वज्जपणाली-फुरंतकेयूरा । जिणवरमंदिर-तिलया भूधरराया विराजंति ॥
ति. प. ४, ९६-९९

वरदह-सिदादवत्ता सरि-चामरविज्जुमाण बहुमाणा । कप्पतरु-चारुचिण्हा वसुमइ-सिंहासणारूढा ॥
वेदि-कडिसुत्तणिवहा मणिकूट-किरंतदिव्ववरमउडा । णिज्झरपलंबणाहा [हारा] तरु-कुंडलमंडियागंडा ॥

१ एवं वरपंचगुरू तियरणसुद्धेण णमंसिऊणाहं । भव्वजणाण पबोधं वोच्छामि तिलोयपण्णत्तिं ॥ ति. प १-६.
२ दे [ते] णविऊण सिरसा वोच्छामि जहाकमेण जिणदिट्ठं । आयरियपरंपरया पण्णत्तिं दीव-जलधीणं ॥
जं. दी. १-६.

सुरधर [धर] कंठाभरणा वणसंड-विचित्तवत्थकयसोहा । गोउर-तिरीडमाला पायार-सुगंधदामड्ढा ॥
तोरण-कंकणहत्था वज्जाणाली-कु [फु] रंतकेऊरा । जिणभवण-तिलयभूदा भूहर-राया विरायंति ॥
जं. दी. ३, ३३-३६.

(ग) तिलोयपण्णत्तिके पांचवें महाधिकारमें नन्दीश्वर द्वीपके वर्णनमें बतलाया है कि चारों प्रकारके देव प्रति वर्ष अष्टाह्निक पर्वमें वहां जाकर गाढ़ भक्तिसे जिनपूजन करते हैं। उस समय वहां सौधर्मादिक इन्द्रोंके जानेका वर्णन जैसा तिलोयपण्णत्तिमें किया गया है (देखिये ति. प. ५, ८४–९७), ठीक उसी प्रकार जंबूदीवपण्णत्तिके पांचवें उद्देशमें भी मेरु-पर्वतस्थ जिनभवनोंमें जिनपूजनके निमित्त प्रस्थान करनेवाले उक्त इन्द्रोंकी यात्राका वर्णन किया गया है (देखिये जं. दी. ५, ९३–१०८)। विशेष इतना है कि उस समय नन्दीश्वर द्वीपको जाते हुए इन्द्रोंके हाथमें जहां तिलोयपण्णत्तिमें श्रीफल आदि पूजाद्रव्यका होना बतलाया है, वहां जंबूदीव-पण्णत्तिमें उनके हाथमें वज्र व त्रिशूल आदिके रहनेका उल्लेख है।

(घ) नर्तकानीक द्वारा किया जानेवाला तीर्थंकरादिके चरित्रका अभिनय (ति. प. ८ ३६०-३६७; जं. दी. ४, २१३-२१९)।

इसके अतिरिक्त दोनों ग्रन्थोंकी समानताके लिये निम्न गाथाओंकी ओर भी तुलना की जा सकती है—

जं. दी.	१-३६	२-६५	२-६८	२, १९.५-९८	४-४५	४-५६	६-१२	६-७९
ति. प.	४-१६४८	४ १६४१	४-१६५६	४, १५३९-४०	४-१९.१५	४ १६९३	४-२०२५	४-२१९८

जं. दी.	७,५७ ६०	७, ६१ ६४	७-६९	७-११०	७, ११२ १४	११-१९
ति. प	४, २४४८-५१	४, २२८२ ८५	४-२२८७	४-२२८९	४, २२७८-८०	४-२५८२

जं. दी.	११-१०८	११-२८५
ति. प.	१-१६५	८-३९१

जंबूदीवपण्णत्तिके विषयका परिचय उद्देशक्रमसे इस प्रकार है–

(१) प्रथम उद्देशमें पहले पंच गुरुओंको नमस्कार करके महावीर भगवान्‌के निर्वाणके पश्चात् रहनेवाली केवली व श्रुतकेवली आदिकी परम्परा बतलायी गई है। तत्पश्चात् उक्त

१ यहां लांतवेन्द्रकी यात्रासूचक गाथा प्रतियोंमें छूट गई प्रतीत होती है।

परम्परासे प्राप्त हुई द्वीप-सागरप्रज्ञप्तिके प्ररूपणकी प्रतिज्ञा करके समस्त द्वीप-समुद्रोंकी संख्याका निर्देश करते हुए जम्बूद्वीप, उसकी जगती, विजयादिक द्वार और उनके ऊपर स्थित विजयादिक देवोंकी नगरियोंकी प्ररूपणा की है। अन्तमें जम्बूद्वीपस्थ क्षेत्र, अनेक प्रकारके पर्वत और समस्त वेदियोंकी संख्या बतला कर इस उद्देशको पूर्ण किया है।

(२) दूसरे उद्देशमें भरतादिक सात क्षेत्रोंके नामोंका निर्देश करके उनके विस्तारादिका कथन करते हुए करणसूत्रों द्वारा जीवा, धनुःपृष्ठ, इषु, वृत्तविष्कम्भ, जीवाकरणि, धनुष्करणि, इषुकरणि, पार्श्वभुजा और चूलिका आदिके निकालनेकी विधि बतलायी है। फिर विजयार्ध पर्वत, उसके ऊपर स्थित कूट, जिनभवन, दक्षिण-उत्तर भरतकी जीवा आदिका प्रमाण, भरतसे ऐरावत क्षेत्रकी समानता और सुषम-सुषमादिक कालोंके वर्तनक्रमकी प्ररूपणा की गई है।

(३) तृतीय उद्देशमें हिमवदादि कुल पर्वत, उनपर स्थित द्रह, कूट एवं गंगादिक नदियोंका विस्तारसे वर्णन किया गया है।

(४) चतुर्थ उद्देशमें मेरु पर्वत, भद्रशालादि वनचतुष्टय और जिनजन्माभिषेक-यात्राकी अधिक विस्तारके साथ प्ररूपणा की गई है।

(५) पांचवें उद्देशमें मन्दरपर्वतस्थ त्रिभुवनतिलक नामक जिनभवनकी रचना आदिका बहुत विस्तारपूर्वक वर्णन करके नन्दीश्वरद्वीपादिकोंमें स्थित अन्य जिनभवनोंके प्रमाणादिकका भी निर्देश किया गया है।

(६) छठे उद्देशमें उत्तरकुरुकी स्थिति व विस्तारादि बताकर यमकगिरि, द्रहपंचक, द्रहोंमें स्थित कमल, कंचनशैल, सीतानदी, जम्बूवृक्ष, देवकुरु, वक्षारगिरि आदि, शाल्मलीवृक्ष और देव-उत्तरकुरुओंमें उत्पन्न हुए मनुष्योंके उत्सेध आदिकी प्ररूपणा की गई है।

(७) सातवें उद्देशमें विदेह क्षेत्रकी स्थिति व विस्तारादि बताकर देवारण्य, ८ वेदिकायें, १२ विभंग नदियां, १६ वक्षार पर्वत, ३२ विजय व ६४ नदियां, इनका विस्तारादि बतलाया गया है। पश्चात् कच्छा विजयका वर्णन करते हुए खंडप्रपात एवं गुहाद्वारोंका स्वरूप बतला कर तीर्थंकरादिकोंका अवस्थान, विजयार्ध पर्वत, मागध वरतनु व प्रभास द्वीप तथा चक्रवर्तीके दिग्विजयकी प्ररूपणा की गई है।

(८) आठवें उद्देशमें कच्छा विजयके समान ही सुकच्छा, महाकच्छा, कच्छकावती, आवर्ता, लांगलावर्ता, पुष्कला, पुष्कलावती, वत्सा, सुवत्सा, महावत्सा, वत्सकावती, रम्या, सुरम्या, रमणीया और मंगलावती, इन पन्द्रह विजयोंकी पृथक् पृथक् प्ररूपणा की गई है।

(९) नौवें उद्देशमें सौमनस और विद्युत्प्रभ पर्वतोंका विस्तारादि बतला कर अपरविदेहस्थ

पद्मा आदिक १६ विजयोंका पृथक् पृथक् वर्णन किया गया है। फिर गन्धमादन और माल्यवन्त पर्वतों एवं वेदी आदिकी प्ररूपणा करके इस उद्देशको समाप्त किया गया है।

(१०) दशवें उद्देशमें लवण समुद्रका विस्तार बतला कर उसके मध्यमें स्थित उत्तम मध्यम एवं जघन्य पातालों, जलकी वृद्धि-हानि, कौस्तुभादि आठ पर्वतों, देवनगरियों, गौतमादिक द्वीपों, अन्तरद्वीपों एवं उनमें रहनेवाले कुमानुषोंकी प्ररूपणा की गई है।

(११) ग्यारहवें उद्देशमें पहले धातकीखण्ड द्वीप, कालोद समुद्र, पुष्कर द्वीप और उसके मध्यमें स्थित मानुषोत्तर पर्वतका वर्णन करके जम्बूद्वीपको आदि लेकर १६ द्वीपोंके नामोंका निर्देश करते हुए लवणोद एवं कालोद समुद्रोंको छोड़ शेष समुद्रोंके नाम द्वीपसम बतलाये गये हैं। आगे जाकर लोकका आकार और विस्तार बतलाते हुए रत्नप्रभादिक सात पृथिवियों, भवनवासी व व्यन्तर देवों, ४९ नरकप्रस्तारों व उनमें स्थित नारकियोंके दुःखों एवं वहां उत्पन्न होनेके कारणोंका वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् अढ़ाई द्वीपोंके आगे असंख्यात द्वीपोंमें उत्पन्न होनेवाले तिर्यंचोंकी अवस्था बतला कर ६३ इन्द्रक पटलोंका निर्देश करते हुए सौधर्म एवं ईशान इन्द्रके सुखकी प्ररूपणा की है। आगे चलकर सनत्कुमारादि कल्पों एवं कल्पातीतोंका संक्षेपमें वर्णन करके यह उद्देश समाप्त किया गया है।

(१२) बारहवें उद्देशमें प्रथमतः चन्द्रोंका अवस्थान बतला कर उनकी गति और संख्या आदिकी प्ररूपणा करते हुए संक्षेपमें सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और ताराओंका भी कथन किया गया है।

(१३) तेरहवें उद्देशमें प्रथमतः कालके दो भेद बतला कर पुनः समयादि रूप व्यवहार कालके भेदोंका उल्लेख करते हुए उत्सेधांगुलादि तीन अंगुलों एवं पल्यादिकोंके प्रमाणकी प्ररूपणा की गई है। पश्चात् सर्वज्ञका स्वरूप बतला कर उसके वचनकी प्रमाणता प्रगट करते हुए प्रमाणके प्रत्यक्ष-परोक्षादि रूप अनेक भेद-प्रभेदोंका वर्णन किया है। आगे चलकर श्रुतकी विशेषता दिखलाते हुए पुनः सर्वज्ञका स्वरूप बतला कर जिन भगवान्के अतिशय बतलाये गये हैं।

अन्तमें कहा गया है कि ऋषि विजयगुरुके समीपमें जिनागमको सुनकर उनके प्रसादसे मैंने अढ़ाई द्वीपों, अधः ऊर्ध्व एवं तिर्यग् लोकोंमें जहां-जहां मंदर शैलादिक जो जो स्थान हैं उन सबोंका आचार्यपरम्परानुसार वर्णन किया है। आगे तप-संयमसम्पन्न एवं श्रुतसागर-पारंगत माघनन्दि गुरु, उनके शिष्य सकलचन्द गुरु और प्रशिष्य श्रीनन्दि गुरुका उल्लेख करके कहा गया है कि प्रस्तुत ग्रन्थ इन्हीं श्रीनन्दि गुरुके निमित्त लिखा गया है।

ग्रन्थकार पद्मनन्दि मुनिने अपने लिये यहां गुणगणकलित, त्रिदंडरहित, त्रिशल्य-

परिशुद्ध, गारव-त्रय-रहित व सिद्धान्तपारंगत आदि विशेषण पदोंका प्रयोग करते हुए अपनी गुरुपरम्परा इस प्रकार बतलाई है— पंचाचारपरिपालक (आचार्य) वीरनन्दि, उनके शिष्य विख्यात बलनन्दि और उनके शिष्य ग्रन्थकर्ता पद्मनन्दि ।

अन्तमें ग्रन्थरचनाका स्थान वारा नगर और वहांके राजा णउत्तम (नरोत्तम) 'शान्ति' का निर्देश करते हुए श्रुत-कल्पतरु, धर्म-समुद्र एवं वीरजिनेन्द्रको नमस्कार करके प्रस्तुत ग्रन्थको पूर्ण किया गया है ।

इस ग्रन्थमें चूंकि त्रिलोकसारकी निम्न गाथायें ज्योंकी त्यों पायी जाती हैं, अतः, यदि वे उससे भी प्राचीन किसी अन्य ग्रन्थकी नहीं हैं तो, प्रायः निश्चित है कि इसकी रचना त्रिलोकसारके पश्चात् हुई है—

'ववहारुद्धारद्धापल्ला तिण्णेव होंति णायव्वा । संखा दीव-समुद्दा कम्मट्ठिदि वण्णिदा जेहिं ॥ ९३ ॥
'विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरओ होदि । विक्खंभचउब्भागे परिरयगुणिदे हवे गणियं ॥९६॥

'इसुवग्गं चउगुणिदं जीवावग्गम्हि पक्खिवित्ताणं ।
चउगुणिदिसुणा भजिदे णियमा वट्टस्स विक्खंभो ॥ ७६१ ॥

इनके अतिरिक्त त्रिलोकसारकी ७६० और ७६४ नं. की गाथायें भी साधारण परिवर्तनके साथ जंबूदीवपण्णत्तिके द्वितीय उद्देशमें क्रमशः २३-२४ और २५ नं. पर पायी जाती हैं ।

चूंकि इसकी निम्न गाथा 'उक्तं च जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ' कह कर वर्तमान लोकविभागके तृतीय प्रकरणमें श्लोक ५२ के पश्चात् उद्धृत की गई है, अतः निश्चित है कि इसकी रचना वर्तमान लोकविभागके पहिले हो चुकी है—

कोसेक्कसमुत्तुंगा पल्लिदोवमआउगा समुद्दिट्ठा । आमलयपमाहारा चउत्थभत्तेण पारंति ॥

जं. दी. ११–५४.

८ बृहत्क्षेत्रसमास

जिस प्रकार दिगम्बर परम्परामें त्रिलोकप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, त्रिलोकसार और लोकविभाग आदि कितने ही ग्रन्थ लोकानुयोगके उपलब्ध हैं उसी प्रकार श्वेताम्बर परम्परामें भी बृहत्क्षेत्रसमास, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, प्रवचनसारोद्धार, बृहत्संग्रहणी और लोकप्रकाश आदि उक्त

१ जं. दी. १३-३६. (यह गाथा सर्वार्थसिद्धि ३-३९ में भी उद्धृत है, अतः प्राचीन है । साथ ही इसके अध्याय ३ सूत्र ३१ में उद्धृत की गई एक गाथा और भी जंबूदीवपण्णत्ति (१३-१२) में पायी जाती है । यह गाथा प्रवचनसारोद्धारमें भी १३८७ नं. पर उपलब्ध होती है ।
२ जं. दी. ४–३४. ३ जं. दी. ६–७.

विषयके अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। इन दोनों ही परम्पराओंमें लोककी प्ररूपणा प्रायः समान रूपसे पायी जाती है, मतभेद क्वचित् किंचित् ही पाये जाते हैं। ऐसे मतभेद तो प्रायः एक परम्पराके भीतर भी विद्यमान हैं।

बृहत्क्षेत्रसमास यह जिनभद्र-गणि-क्षमाश्रमण द्वारा प्रणीत है। इसका रचनाकाल प्रायः विक्रमकी सातवीं शताब्दि होना चाहिये। इनके द्वारा विरचित एक बृहत्संग्रहणी सूत्र भी रहा है। वर्तमान 'बृहत्संग्रहणी' चन्द्रमहर्षि द्वारा विरचित एक अर्वाचीन ग्रन्थ है। श्वेताम्बर सम्प्रदायमें बृहत्संग्रहणी सूत्र (त्रैलोक्यदीपिका) ग्रन्थोंकी परम्परा प्राचीन कालसे अब तक प्राप्त है। त्रिलोकप्रज्ञप्ति (४-२१७, २१९, २०२९, २४४८, ८-२७२, ३८७ आदि) में सग्गायणी, संगोयणी, संगायणी या संगाहणी आदि पदोंके द्वारा जिस ग्रन्थका उल्लेख किया गया है वह ऐसा ही कोई संग्रहणी सूत्र सम्भवतः प्रतीत होता है। त्रिलोकप्रज्ञप्तिके द्वितीय महाधिकारमें गा. २२ के द्वारा शर्करा आदि छह पृथिवियोंका बाहल्य बतला कर आगे गाथा २३ के द्वारा भी प्रकारान्तरसे उनका बाहल्य फिरसे बतलाया है। यह बाहल्यप्रमाण प्रायः अन्य दिगम्बर ग्रन्थमें तो नहीं देखा जाता, पर वर्तमान बृहत्संग्रहणीमें वह अवश्य उपलब्ध होता है। यथा—

असीइ बत्तीसडवीस-वीस-अट्ठार-सोल-अडसहस्सा।
लक्खुवरि पुढविपिंडो वणुदहि-घणवाय-तणुवाया ॥ बृ. सं. सू. २१२.

प्रस्तुत बृहत्क्षेत्रसमास ग्रन्थमें १ जम्बूद्वीपाधिकार, २ लवणाब्ध्यधिकार, ३ धातकीखण्डद्वीपाधिकार, ४ कालोदध्यधिकार और ५ पुष्करवरद्वीपार्धाधिकार, ये पांच अधिकार हैं। इनमें क्रमशः १९८ + ९० + ८१ + ११ + ७६ = ६५६ गाथायें हैं।

(१) जंबूद्वीपाधिकारमें जम्बूद्वीपादि स्वयम्भूरमणान्त सब द्वीप-समुद्रोंकी अढ़ाई उद्धार सागरोंके समयों प्रमाण संख्या बतला कर मानुषक्षेत्र व जम्बूद्वीपकी सविस्तार परिधि, जम्बूद्वीपकी जगती, भरतादिक सात क्षेत्रों व हिमवदादिक छह कुलपर्वतों एवं वैताढ्यगिरिका विस्तार, करणसूत्रपूर्वक बाण, जीवा, धनुष्पृष्ठ, बाहा (पार्श्वभुजा), क्षेत्रफल, घनफल, सब पर्वतोंके ऊपर स्थित कूटोंकी संख्या, नाम व उंचाई आदि; दक्षिणभरतस्थ शाश्वत नगरी अयोध्याका विस्तारादि, वैताढ्य (विजयार्ध) प्ररूपणा, वृषभ कूट, पद्मद्रह, गंगाप्रपातकुंड, नदीविस्तारादि, हैमवतादि क्षेत्रस्थ मनुष्योंका प्रमाणादिक, देव-उत्तरकुरु, जम्बूवृक्ष, देव-उत्तरकुरुस्थ मनुष्योंका प्रमाणादिक, मेरुप्ररूपणा, विजय व वक्षार पर्वतादिकोंका विस्तारादि, विदेह क्षेत्रमें तीर्थंकरादिकोंका अवस्थान व जम्बूद्वीपमें चन्द्र-सूर्यादिकोंकी संख्या, इत्यादिक विषयोंकी प्ररूपणा त्रिलोकप्रज्ञप्तिके ही समान की गई है।

यहां प्रकरण पाकर गा. ९९५-९६ की टीकामें टीकाकार श्री मलयगिरि सूरिके द्वारा चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र व ताराओंकी प्ररूपणा विस्तारपूर्वक उसी प्रकार की गई है जैसे कि त्रिलोकप्रज्ञप्तिके सातवें महाधिकारमें।

(२) लवणाब्ध्यधिकारमें लवणसमुद्रका विस्तार, परिधि, उसमें स्थित पाताल, जल-वृद्धि-हानि, वेलंधर नागकुमार देवोंकी संख्या आदि, गोतीर्थ, गौतमद्वीप, सूर्यद्वीप, चन्द्रद्वीप, लुप्पन अन्तरद्वीप, अन्तरद्वीपस्थ मनुष्योंका उत्सेधादिक, लवणसमुद्रके अवगाह व उत्सेधका प्रमाण एवं चन्द्र-सूर्यादिकोंकी संख्या, इत्यादिक विषयोंकी प्ररूपणा की गई है।

(३) धातकीखण्ड अधिकारमें धातकीखण्ड द्वीपके विस्तार व परिधिका प्रमाण, इषुकार पर्वत, मेरु पर्वत, भरतादिक क्षेत्रोंका आकार व विस्तारादि, हिमवदादिक पर्वतोंका विस्तार, द्रह व नदीकुण्डादिकोंका उत्सेधादि, धातकी वृक्ष, मेरु पर्वतोंका उत्सेधादिक, विजयों व वक्षार पर्वतोंका विस्तार तथा चन्द्रसूर्यादिकोंकी संख्या, इन सबका वर्णन किया गया है।

(४) चतुर्थ अधिकारमें कालोद समुद्रके विस्तार, परिधि, द्वारान्तर, चन्द्र-सूर्यद्वीप, कालोद समुद्रके जलका स्वरूप, उसके अधिपति देव एवं यहां चन्द्रसूर्यादिकोंकी संख्या बतलाई गई है।

(५) पांचवें अधिकारमें पुष्करद्वीप व उसके मध्यमें स्थित मानुषोत्तर पर्वतके विस्तारादिका प्रमाण, इषुकार पर्वत, वैताढ्य पर्वत, भरतादिक क्षेत्रों एवं हिमवदादिक पर्वतोंके विस्तारादिक, उत्तरकुरुस्थ पद्म व महापद्म वृक्षों एवं उनके अधिपति देवों, विजय व वक्षारादिकोंके विस्तारादि तथा चन्द्र-सूर्यादिकोंकी संख्या आदिकी प्ररूपणा की गई है।

यहां बृहत्क्षेत्रसमास व त्रिलोकप्रज्ञप्ति आदिक ग्रन्थोंमें गणितनियमोंमें प्रायः समानता ही देखी जाती है। उदाहरणार्थ परिधि व क्षेत्रफल निकालनेका करणसूत्र—

विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिओ होई।
विक्खंभपायगुणिओ परिओ तस्स गणियपयं ॥ बृ. क्षे. १-७.
समवट्टवासवग्गे दहगुणिदे करणि परिधिओ होदि।
वित्थारतुरिमभोगं परिधिहदे तस्स खेत्तफलं ॥ त्रि. प्र. १-११७.
तिगुणियवासं परिही दहगुणवित्थारवग्गमूलं च।
परिहिहदवासतुरिमं बादर सुहुमं च खेत्तफलं ॥ त्रि. सा. ३११.

बाणके निकालनेकी रीति—

जीवा-विक्खंभाणं वग्गविसेसस्स वग्गमूलं जं।
विक्खंभाओ सुद्धं तस्सद्धमिसुं वियाणाहि ॥ बृ. क्षे. १-४१.

जीवा-विक्खंभाणं वग्गविसेसस्स होदि जं मूलं ।
तं विक्खंभा सोहय सेसद्धमिसुं विजाणाहि ॥ त्रि. सा. ७६१.
जीवा-विक्खंभाणं वग्गविसेसस्स होदि जं मूलं ।
विक्खंभजुदं अद्धिय रिजुबाणो धादईसंडे ॥ त्रि. प्र. ४-२५९७.

अभीष्ट स्थानमें मेरुके विस्तारको निकालनेकी रीति —

जत्थिच्छसि विक्खंभं मंदरसिहराहि उवइत्ताणं ।
एक्कारसहि विभत्तं सहस्ससहियं च विक्खंभं ॥ बृ. क्षे. १–३०७.
जत्थिच्छसि विक्खंभं मंदरसिहराउ समवदिण्णाणं ।
तं एक्कारसभजिदं सहस्ससहिदं च तत्थ वित्थारं ॥ त्रि. प्र. ४–१७९९.

चूलिकाविस्तार—

जत्थिच्छसि विक्खंभं चूलियसिहराहि उवइत्ताणं ।
तं पंचहिं पविभत्तं चउहिं जुयं जाण विक्खंभं ॥ बृ. क्षे. १–३५०.
जत्थिच्छसि विक्खंभं चूलियसिहराउ समवदिण्णाणं ।
तं पंचेहि विहत्तं चउजुत्तं तत्थ तव्वासं ॥ त्रि. प्र. ४–१७९७.

कुछ विशेषतायें—

(१) यहां (१-१८०) विजयार्ध पर्वतकी दोनों गुफाओंमेंसे तिमिस्र गुफाको पश्चिमकी ओर और खण्डप्रपातको पूर्वकी ओर बतलाया गया है, किन्तु त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें तिमिस्रको पूर्व और खण्डप्रपातको उत्तरकी ओर स्थित बतलाया है (देखिये ति. प. गा. ४-१७६) ।

(२) यहां गुफाद्वारमें दक्षिण और उत्तरकी ओरसे कपाटपृष्ठभावी चार योजन आयत स्तूपसे सत्तर-सत्तरह योजन आगे जानेपर दो योजनके अन्तरसे तीन-तीन योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त उन्मग्ना व निमग्ना नदियोंकी स्थिति बतलायी गई है (४ + १७ + २ + ३ + ३ + १७ + ४ = ५० विजयार्धविस्तार) । यथा—

सत्तरस जोयणाइं गुहदाराणोभओ वि गंतूणं ।
जोयणदुगंतराओ विउलाओ जोयणे तिन्नि ॥
गुहविपुलायामाओ गंगं सिंधुं च ता समप्पंति ।
पव्वयकडगपवूढा उम्मग्ग-निमग्गसलिलाओ ॥ बृ. क्षे. १, १८४-८५.

परन्तु त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें गुफाके भीतर पचीस योजन प्रवेश करनेपर उपर्युक्त दोनों नदियोंकी स्थिति बतलायी गई है (देखिये ति. प. ४-२३७) । यहां न तो नदियोंका विस्तार ही बतलाया गया है और न उसे पर्वतविस्तारमेंसे कम ही किया गया है ।

(३) यहां बृहत्क्षेत्रसमासमें अन्तरद्वीपोंकी स्थिति इस प्रकार बतलाई है— पूर्व व पश्चिम दिशामें वेदिकासे आगे क्रमशः हिमवान् पर्वतके ईशान और अग्निकोण तथा नैऋत्य व वायुकोणमें एक-एक दंष्ट्रा है। इनसे आगे क्रमशः तीन सौ, चार सौ, पांच सौ, छह सौ, सात सौ, आठ सौ और नौ सौ योजन लवण समुद्रमें प्रवेश करनेपर एक एक अन्तरद्वीप है। इस प्रकार अट्ठाईस द्वीप हिमवान् पर्वत सम्बन्धी और अट्ठाईस ही शिखरी पर्वत सम्बन्धी, समस्त अन्तरद्वीप छप्पन हैं। इन अन्तरद्वीपोंके नाम क्रमशः एकोरुक, आभाषिक वैषाणिक और लाङ्गलिक आदि हैं। इनमें रहनेवाले मनुष्य आठ सौ धनुष ऊंचे, सदा प्रमुदित, मिथुनधर्म परिपालक, पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण आयुसे संयुक्त, चौंसठ पृष्ठकरण्डकोंसे सहित और एक दिनके अन्तरसे आहार करनेवाले हैं। (देखिये बृ. क्षे. २, ५६-६१, ७१-७४)

परन्तु त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें इन द्वीपोंका अवस्थान भिन्न स्वरूपसे बतलाया गया है। वहां एकोरुक आदिकोंको द्वीपोंके नाम न स्वीकार कर वहां रहनेवाले मनुष्योंका वैसा आकार माना गया है। (देखिये ति. प. ४, २४७८ से २४९९)।

(४) बृहत्क्षेत्रसमास (१, ३५५-५६) में जो पाण्डुकशिलादिकी लम्बाई ५०० यो. और चौड़ाई २५० यो. बतलायी गयी है, उस मतका उल्लेख ति. प. गा. ४-१८२१ में ' सग्गायणिआइरिया ' कह कर किया गया है।

९ प्रवचनसारोद्धार

श्वेताम्बर सम्प्रदायमें श्री नेमिचन्द्र सूरिनिर्मित यह एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसमें १७६, द्वार और १५९९ गाथायें हैं। यह सिद्धसेनसूरिकृत वृत्ति सहित दो भागोंमें सेठ देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार संस्था द्वारा प्रकाशित हो चुका है। इसमें बहुतसे विषय संगृहीत हैं। रचनाकाल इसका तेरहवीं शताब्दिके करीब प्रतीत होता है। जिस प्रकार त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें नारक, भवनवासी, व्यन्तर, तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव व वासुदेव आदिकोंकी विस्तृत प्ररूपणा की गई है वैसे ही प्रायः उन सभी विषयोंकी प्ररूपणा यहां भी देखी जाती है। इस प्ररूपणामें कहीं समानता व कहीं मतभेद भी हैं। समानता यथा—

(१) जिस प्रकार त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें नारकप्ररूपणामें नारक जीवोंकी निवासभूमि, नारकसंख्या, नारकायु, उत्सेध, विरहकाल व अवधिविषय आदिका वर्णन किया गया है ठीक उसी प्रकार ही इनका वर्णन यहां भी किया गया है (देखिये प्र. सा. गा. १०७१ आदि)।

(२) इसी प्रकरणके भीतर त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें असुरकुमार जातिके जिन १५ भेदोंका निर्देश किया गया है वे यद्यपि किसी अन्य दिगम्बर ग्रन्थमें देखनेमें नहीं आये, परन्तु वे यहां

अवश्य उपलब्ध होते हैं[1] (देखिये पीछे पृ. ५१)।

ये दोनों गाथायें सूत्रकृताङ्ग (५, १, नि. ६८-६९) में भी पायी जाती हैं। वहां 'पन्नरस परमाहम्मिया' के स्थानमें 'एवं पण्णरसाहिया' पाठ है।

(३) सातवीं पृथिवीसे निर्गत जीव किन किन तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं, यह बतलाने-के लिये त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें निम्न गाथा आई है—

वालेसुं दाढीसुं पक्खीसुं जलचरेसु जाऊणं । संखेज्जाउगजुत्ता तेई णिरएसु वच्चंति ॥ २-२९०.

यही गाथा कुछ परिवर्तनके साथ प्रवचनसारोद्धारमें भी पायी जाती है। यथा—

वालेसु य दाढीसु य पक्खीसु जलयरेसु उववन्ना ।
संखिज्जाउठिईया पुणोऽवि नरयाउया हुंति ॥ १०९३.

इसका पाठ मूलाचार (१२-११५) में आयी हुई इसी गाथाके पाठसे बहुत कुछ मिलता जुलता है[2]। मूलाचारमें इसके पूर्वमें जो 'उववट्टिदा य संता' इत्यादि गाथा (१२-११४) आयी है वह भी प्रवचनसारोद्धार (१०८९) में जैसीकी तैसी उपलब्ध होती है।

(४) त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें चतुर्थ महाधिकारकी गा. १२८७-९१, १४१७ और १४४३ के द्वारा तीर्थंकर एवं चक्रवर्ती आदिकोंके कालसे सम्बद्ध जिस संदृष्टिकी रचना की गई है उसका उल्लेख यहां भी निम्न गाथाओंके द्वारा किया गया है—

बत्तीसं घरयाइं काउं तिरियाअयाहि रेहाहिं । उड्ढाअयाहिं काउं पंच घराइं तओ पढमे ॥

पन्नरस जिणे निरंतर सुन्नदुगं तिजिण सुन्नतियगं च ।
दो जिण सुन्न जिणिंदो सुन्न जिणो सुन्न दोन्नि जिणा ॥

बिईयपंतिठवणा—

दो चक्कि सुन्न तेरस पण चक्की सुण्ण चक्कि दो सुण्णा ।
चक्की सुन्न दुचक्की सुण्णं चक्की दुसुण्णं च ॥

तईयपंतिठवणा—

दस सुण्ण पंच केसव पणसुण्णं केसि सुण्ण केसी य ।
दो सुण्ण केसवोऽवि य सुण्णदुगं केसव तिसुण्णं ॥ प्र. सा. ४०६-४०९.

यहां संदृष्टिमें रुद्रोंको सम्मिलित नहीं किया गया है। इस संदृष्टिका रूप जो त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें उन उन गाथाओंके नीचे दिया गया है वह सम्भवतः किसी प्रतिलेखकने लिखनेकी सहूलियतसे वैसा दिया है। उसकी आकृति सम्भवतः ऐसी रही हो जैसी कि परिशिष्ट (पृ.

---

१ प्रवचनसारोद्धार गा. १०८५-८६. २ देखिये पीछे पृ. ४१.

१०२३) में दी गई है। प्रवचनसारोद्धारकी टीकामें भी वह इसी रूपमें पायी जाती है।

(५) त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें परमाणुका स्वरूप बतलानेके लिये जो प्रथम महाधिकारमें ९६ वीं गाथा आयी है वह कुछ परिवर्तित रूपमें यहां भी पायी जाती है। यथा—

सत्थेण सुतिक्खेण वि छेत्तुं भेत्तुं च जं किर न सक्का।
तं परमाणुं सिद्धा वयंति आइं पमाणाणं ॥ ११९० ॥

यह अनुयोगद्वारसूत्र (सूत्र १३३, गा. १००) में भी इसी रूपमें उपलब्ध होती है।

विशेषता— (१) त्रिलोकप्रज्ञप्ति (२-२९१) में नरकसे निकले हुए जीवोंके केशव, बलभद्र और चक्रवर्ती होनेका निषेध किया है। परन्तु यहां उसका स्पष्टतया विधान पाया जाता है। यथा—

पढमाओ चक्कवट्टी बीयाओ राम-केसवा हुंति।
तच्चाओ अरहंता तहंऽत्तकिरिया चउत्थीओ ॥ १०८८ ॥

षट्खण्डागम व राजवार्तिक आदि अन्य दिगम्बर ग्रन्थोंमें सातवीं पृथिवीसे निकलकर सम्यक्त्व प्राप्त कर सकनेका निषेध होनेपर भी त्रिलोकप्रज्ञप्ति (२-२९२) में उक्त जीवोंके उसकी योग्यता प्रगट की गई है। यह योग्यता प्रवचनसारोद्धारमें भी बतलाई गई है। यथा—

तिसु तित्थ चउत्थीए केवलं पंचमीइ सामन्नं।
छट्ठीए विरइऽविरई सत्तमपुढवीइ सम्मत्तं ॥ १०८७.

(२) त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें उत्सेधांगुलका स्वरूप इस प्रकार बतलाया है— अनन्तानन्त परमाणुओंका उवसन्नासन्न स्कन्ध होता है। उवसन्नासन्न, सन्नासन्न, त्रुटिरेणु, त्रसरेणु, रथरेणु, उत्तमभोगभूमिजबालाग्र, म. भो. बालाग्र, ज. भो. बालाग्र, कर्मभूमिजबालाग्र, लिक्षा, यूक और यव, इनको उत्तरोत्तर आठसे गुणित करनेपर एक उत्सेधांगुल होता है। इसी प्रकार ही अनुयोगद्वार सूत्र (१३३) में भी उसका प्रमाण बतलाया गया है। वहां एक कर्मभूमिजबालाग्रके स्थानमें पूर्वापर-विदेह-जात-बालाग्र और भरत-ऐरावत-जात-बालाग्र ऐसे दो स्थान ग्रहण किये गये हैं। परन्तु यहां प्रवचनसारोद्धारमें परमाणु, त्रसरेणु, रथरेणु, बालाग्र, लिक्षा, यूक और यव, इन सातको ही उत्तरोत्तर आठसे गुणित करनेपर प्राप्त राशि प्रमाण उत्सेधांगुलको बतलाया गया है। इसमें समस्त परमाणुओंकी संख्या २०९७१५२ (८×८×८×८×८×८×८) बतलाई है जो उक्त क्रमानुसार ठीक है। यद्यपि यहां टीकाकारने अनुयोगसूत्रादिके विरुद्ध होनेसे उपलक्षण द्वारा शेष स्थानोंका भी ग्रहण किया है, परन्तु मूलग्रन्थकारने उनका ग्रहण क्यों नहीं किया, यह विचारणीय है। उनके वाक्य इस प्रकार हैं—

परमाणू तसरेणू रहरेणू अग्गयं च बालस्स।
लिक्खा जूया य जवो अट्ठगुणविवड्ढिया कमसो ॥ ११९१ ॥

बीसं परमाणुलक्खा सत्तावउई भवे सहस्साइं ।
सयमेगं बावन्नं एगंमि उ अंगुले हुंति ॥ १३९२ ॥

१० अनुयोगद्वार सूत्र

त्रिलोकप्रज्ञप्ति (४-२८५) में जो कालभेदोंकी प्ररूपणा की गई है उससे अनुयोगद्वारमें की गई उक्त प्ररूपणा कुछ भिन्न है । उक्त दोनों ग्रन्थोंमें उपलब्ध कालभेदोंके नाम इस प्रकार हैं--

क्रम	त्रिलोकप्रज्ञप्ति ४-२८५ से	अनुयोगद्वार सूत्र सूत्र ११४, १३७	क्रम	त्रिलोकप्रज्ञप्ति ४-२८५ से	अनुयोगद्वार सूत्र ११४, १३७
१	समय	समय	२५	कुमुदांग	अटटांग
२	आवलि	आवलिका	२६	कुमुद	अटट
३	उच्छ्वास	आन	२७	पद्मांग	अववांग
४	प्राण=निश्वास	प्राणु	२८	पद्म	अवव
५	स्तोक	स्तोक	२९	नलिनांग	हुहुकांग
६	लव	लव	३०	नलिन	हुहुक
७	नाली	....	३१	कमलांग	उत्पलांग
८	मुहूर्त	मुहूर्त	३२	कमल	उत्पल
९	दिवस	अहोरात्र	३३	त्रुटितांग	पद्मांग
१०	पक्ष	पक्ष	३४	त्रुटित	पद्म
११	मास	मास	३५	अटटांग	नलिनांग
१२	ऋतु	ऋतु	३६	अटट	नलिन
१३	अयन	अयन	३७	अममांग	अर्थनिपूरांग
१४	वर्ष	वर्ष	३८	अमम	अर्थनिपूर
१५	युग	युग	३९	हाहांग	अयुतांग
१६	वर्षदशक	....	४०	हाहा	अयुत
१७	वर्षशत	वर्षशत	४१	हूहूांग	नयुतांग
१८	वर्षसहस्र	वर्षसहस्र	४२	हूहू	नयुत
१९	दशवर्षसहस्र	....	४३	लतांग	प्रयुतांग
२०	वर्षलक्ष	वर्षशतसहस्र	४४	लता	प्रयुत
२१	पूर्वांग	पूर्वांग	४५	महालतांग	चूलिकांग
२२	पूर्व	पूर्व	४६	महालता	चूलिका
२३	नियुतांग	त्रुटितांग	४७	शीर्षकल्प	शीर्षप्रहेलिकांग
२४	नियुत	त्रुटित	४८	हस्तप्रहेलित	शीर्षप्रहेलिका
			४९	अचलात्म	....

त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें पूर्वांग व नियुतांग आदि अंगान्त स्थानोंको उत्तरोत्तर ८४ से गुणित तथा पूर्व व नियुत आदि स्थानोंको उत्तरोत्तर ८४ लाखसे गुणित बतलाया है। अन्तमें गा. ४-३०८ के द्वारा यह भी प्रगट किया है कि ३१ स्थानोंमें ८४ संख्याको रखकर परस्पर गुणा करनेपर ९० शून्याङ्क रूप 'अचलात्म' प्रमाण उत्पन्न होता है। यहां चूंकि ३१ स्थानोंमें ८४ को रखकर परस्पर गुणा करनेकी प्रक्रिया बतलाई गई है। अतः निश्चित है कि ये पूर्वांग व पूर्व आदि 'अचलात्म' पर्यन्त स्थान ३१ होने चाहिये। परन्तु हैं वे २९ ही (देखिये परिशिष्ट पृ. ९९७)। इसी लिये ऐसा प्रतीत होता है कि इनमेंसे किन्हीं दो स्थानोंकी सूचक गाथा किसी प्रतिलेखककी असावधानीसे छूट अवश्य गयी है। ये छूटे हुए स्थान पूर्वांग व पूर्वके पश्चात् पर्वांग व पर्व होने चाहिये। ये दोनों स्थान इसी प्रकार आदिपुराण (३-२१९) में पाये भी जाते हैं। हरिवंशपुराणमें भी इसी स्थलपर पाठ कुछ भ्रष्ट हो गया प्रतीत होता है। यथा—

भवेद् वर्षसहस्रं तु शतं चापि दशाहतम्। दशवर्षसहस्राणि तदेव दशताडितम् ॥२३॥
ज्ञेयं वर्षसहस्रं तु (?) तच्चापि दशसंगुणम्। पूर्वांगं तु तदभ्यस्तमशीत्या चतुरग्रया ॥२४॥
तत्तद्गुणं च पूर्वांगं पूर्वं भवति निश्चितम्। पूर्वांगं तद्गुणं तच्च पूर्वसंज्ञं तु तद्गुणम् ॥ २५॥
ह. पु. ७.

यहां श्लोक २४ में 'ज्ञेयं वर्षसहस्रं तु' के स्थानमें 'शतवर्षसहस्रं तु' ऐसा कोई पद रहा होना चाहिये। चूंकि श्लोक २४-२५ में पूर्वांग व पूर्व ये दोनों स्थान पुनरुक्त हैं, अतः श्लोक २५ में उनके स्थानमें पूर्वांग व पर्व पद ही रहे होंगे, ऐसा प्रतीत होता है। यहां गुणकारका भी कुछ स्पष्ट निर्देश नहीं किया गया।

अनुयोगद्वार सूत्रमें इसी सूत्र (११४) की श्री मलधारीय हेमचन्द्रसूरि निर्मित वृत्तिमें पूर्वांग व पूर्व आदिक सभी स्थानोंको उत्तरोत्तर चौरासी लाखसे गुणित बतलाया गया है। इस प्रकारके गुणनक्रमसे उत्पन्न हुई संख्याका वहां अङ्कक्रमसे इस प्रकार निर्देश भी किया गया है— ७५८२६३२५३०७३०१०२४११५७९७३५६९९७५६९६४०६२१८९६६८४-८०८०१८३२९६ आगे १४० शून्य। समस्त अंक १९४ होते हैं।

अनुयोगद्वार सूत्रके एक दूसरे सूत्र (१३७) में भी उपर्युक्त कालभेदोंका उल्लेख किया गया है। वहां 'उच्छ्वास' के आगे 'निश्वास' पद अधिक है तथा अयुतके पश्चात् प्रयुतांग-प्रयुत और इनके पश्चात् नयुतांग-नयुत पद पाये जाते हैं।

११ वैदिकधर्माभिमत भूगोल

(विष्णुपुराणके आधारसे)

जिस प्रकार जैन ग्रन्थों (तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार व बृहत्क्षेत्रसमास आदि) के

भीतर भूगोलके वर्णनमें बतलाया गया है कि इस पृथिवीपर वलयाकारसे एक-दूसरेको वेष्टित करके अनेक द्वीप व समुद्र स्थित हैं। उन सबके मध्यमें पहिला जम्बूद्वीप है। इसके ठीक बीचमें नाभिके समान मेरु पर्वत स्थित है। इसके दक्षिण व उत्तरमें तीन तीन कुलपर्वतोंके होनेसे उक्त जम्बूद्वीपके भरतादिक सात विभाग हो गये हैं इत्यादि। लगभग इसी प्रकारसे वैदिक धर्मके ग्रन्थोंमें भी उक्त भूगोलका वर्णन पाया जाता है। उदाहरण स्वरूप हम विष्णु-पुराणके आधारसे भूगोलका वर्णन करते हैं। यद्यपि पुराण ग्रन्थ होनेसे इसमें मुख्यतासे विष्णु भगवान्‌के चरित्रका ही वर्णन किया गया है; पर साथ ही इसमें भूगोल, ज्योतिष, वर्णाश्रमव्यवस्था, राजवंश एवं अनेक उपाख्यानोंकी भी चर्चा की गई है।

प्रस्तुत ग्रन्थके द्वितीय अंशमें दूसरे अध्यायसे भूगोलका वर्णन प्रारम्भ किया गया है। वहां बतलाया है कि इस पृथिवीपर १ जम्बू, २ प्लक्ष, ३ शाल्मल, ४ कुश,[1] ५ क्रौंच[2], ६ शाक और ७ पुष्कर[3], ये सात द्वीप हैं। ये द्वीप आकारसे गोल (चूड़ी जैसे) होते हुए अपने विस्तारके समान विस्तारवाले १ लवणोद,[4] २ इक्षुरस, ३ सुरोद, ४ सर्पिस्सलिल, ५ दधितोय, ६ क्षीरोद और ७ स्वादुसलिल, इन सात समुद्रोंसे क्रमशः वेष्टित हैं। इन सबके बीचमें जम्बूद्वीप है। इसका विस्तार एक लाख योजन है जो जैन-ग्रन्थ-सम्मत है। उसके मध्यमें चौरासी हजार योजन ऊंचा मेरु पर्वत है[5]। इसकी नींव पृथिवीके भीतर सोलह हजार योजन प्रमाण है। विस्तार उसका मूलमें सोलह हजार और फिर ऊपर क्रमशः बढ़ता हुआ शिखरपर आकर बत्तीस हजार योजन मात्र हो गया है।

इस जम्बूद्वीपमें सुमेरुसे दक्षिणमें हिमवान्, हेमकूट और निषध तथा उत्तरमें नील, श्वेत और शृङ्गी, ये छह वर्षपर्वत हैं[6] जो इसको सात भागोंमें विभक्त करते हैं। इनमेंसे क्रमशः मेरुके दक्षिण और उत्तरमें स्थित निषध और नील ये दो पर्वत पूर्व-पश्चिम समुद्र तक एक एक लाख योजन लम्बे, दो दो हजार योजन ऊंचे और इतने ही विस्तारसे संयुक्त हैं। हेमकूट और श्वेत ये दो पर्वत पूर्व-पश्चिममें नब्बे हजार यो. लम्बे, दो हजार योजन ऊंचे और इतने ही विस्तृत भी हैं। हिमवान् और शृङ्गी ये दो पर्वत अस्सी हजार यो. लम्बे, दो-दो हजार यो.

---

१ जैन शास्त्रानुसार १५ वें द्वीपका नाम कुशवर है। २ जैन ग्रन्थोंमें क्रौंचवर सोलहवां द्वीप है।

३ यह द्वीप जैन शास्त्रानुसार तीसरा है। ४ जैन शास्त्रानुसार लवणोद पहिला, सुरोद (वारुणिवर) चौथा, सर्पिःसलिल छठा और क्षीरोद पांचवां समुद्र है। ५ जैन ग्रन्थानुसार जम्बूद्वीपस्थ मेरुकी ऊंचाई १००००० यो. और धातकीखण्ड एवं पुष्करद्वीपस्थ मेरुओंकी ऊंचाई ८४००० यो. है। ६ जैन ग्रन्थोंमें उनके नाम इस प्रकार हैं— हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि (श्वेत-रजतमय) और शिखरी (शृङ्गी)।

ऊंचे और इतने ही विस्तृत भी हैं[1]। इन पर्वतोंके द्वारा जो जम्बूद्वीपके सात भाग किये गये हैं उनके नाम दक्षिणकी ओरसे ये हैं— भारत वर्ष, किम्पुरुष, हरि वर्ष, इलावृत, रम्यक, हिरण्मय और उत्तरकुरु[2]। इनमें इलावृतको छोड़ शेष छहका विस्तार दक्षिण-उत्तरमें नौ नौ हजार योजन है। इलावृत वर्ष मेरुके पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर, इन चारों दिशाओंमें नौ-नौ हजार योजन विस्तृत है। सब पर्वतों व वर्षोंके विस्तारको मिलानेपर वह एक लाख यो. प्रमाण होता है, जितना कि समस्त जम्बूद्वीपका विस्तार है। यथा— भारत वर्ष ९००० + हिमवान् २००० + किम्पुरुष ९००० + हेमकूट २००० + हरि वर्ष ९००० + निषध २००० + इलावृत १८००० (दक्षिण-उत्तर नौ-नौ हजार) मेरु १६००० + नील २००० + रम्यक ९००० + श्वेत २००० + हिरण्मय ९००० + शृङ्गी २००० +उत्तरकुरु ९००० = १००००० यो.।

मेरु पर्वतके दोनों ओर पूर्व-पश्चिममें इलावृत वर्षकी मर्यादाभूत माल्यवान् और गन्धमादन पर्वत हैं जो नील व निषध पर्वत तक फैले हुए हैं[3]। इनके कारण दोनों ओर जो दो विभाग हुए हैं उनका नाम भद्राश्व व केतुमाल है। उपर्युक्त सात वर्षोंमें इन दो वर्षोंको और मिला देनेपर जम्बूद्वीपस्थ सब वर्षोंकी संख्या नौ हो जाती है।

मेरुके चारों ओर पूर्वादिक दिशाओंमें क्रमशः मन्दर, गन्धमादन, विपुल और सुपार्श्व ये चार पर्वत हैं। इनके ऊपर क्रमशः ग्यारह सौ योजन ऊंचे कदम्ब, जम्बू, पीपल और वट, ये चार वृक्ष हैं। इनमेंसे जम्बू वृक्षके नामसे इस द्वीपका भी नाम जम्बू द्वीप प्रसिद्ध हुआ[4]।

उपर्युक्त नौ वर्षोंमें भारत वर्ष कर्मभूमि है, क्योंकि, यहांसे स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है, तथा यहांपर मनुष्य पाप कर्ममें रत होकर तिर्यंच व नारक पर्याय भी प्राप्त करता है[5]। यहां भरत क्षेत्रमें महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान्, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र, ये सात कुलपर्वत हैं। इनमें हिमवान्से शतद्रु और चन्द्रभागा आदि, पारियात्रसे वेद और स्मृति आदि, विन्ध्यसे नर्मदा और सुरसा आदि; ऋक्षसे तापी, पयोष्णी और निर्विन्ध्या आदि; सह्यसे गोदावरी, भीमरथी और कृष्णवेणी आदि; मलयसे कृतमाला और ताम्रपर्णी आदि, महेन्द्रसे त्रिसामा और

---

१ इसकी इस लम्बाईका प्रमाण गणितप्रक्रियामें नहीं बैठता। २ जैन ग्रन्थोंमें उनके नाम ये हैं— भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत। यहां विदेह क्षेत्रके भीतर मेरुसे उत्तरमें उत्तरकुरुकी स्थिति है। ३ जैन ग्रन्थानुसार माल्यवान् और गन्धमादन ये दो गजदन्ताकार वक्षार पर्वत क्रमशः मेरुकी नैऋत्य व वायव्य दिशामें स्थित हैं। ४ जैन ग्रन्थानुसार मेरुकी ईशान दिशामें जम्बू वृक्ष और नैऋत्य दिशामें शाल्मली वृक्ष स्थित है। ५ जैनग्रन्थानुसार भरत, ऐरावत, और विदेह क्षेत्र कर्मभूमियां, तथा शेष भोगभूमियां हैं।

आर्यकुल्या आदि, तथा शुक्तिमान् पर्वतसे ऋषिकुल्या और कुमारी (कुमारी) आदि नदियां निकली हैं। इन नदियोंके किनारोंपर मध्यदेशको आदि लेकर कुरु और पाञ्चाल, पूर्व देशको आदि लेकर कामरूप निवासी, दक्षिणको आदि लेकर पुण्ड्र, कलिङ्ग और मगध, सौराष्ट्र शूर, आभीर व अर्बुद ये पश्चिमान्त देश, पारियात्रनिवासी कारूष और मालव, कोशलनिवासी सौवीर, सैन्धव, हूण और साल्व, तथा पारसीकोंको आदि लेकर माद्र, आराम और अम्बष्ठ देशवासी रहते हैं।

कृतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग, ये चार युग इसी भारत वर्षमें ही हैं; किम्पुरुषादिक शेष वर्षोंमें वे नहीं हैं। उन शेष आठ क्षेत्रोंमें शोक, परिश्रम, उद्वेग और क्षुधाभय आदिक नहीं हैं। वहांके प्रजाजन स्वस्थ, आतङ्कसे रहित और सब प्रकारके दुःखोंसे वियुक्त होकर दश-बारह हजार वर्षों तक जीवित रहते हैं। वे जरा एवं मृत्युके भयसे रहित होकर सदा सुखी रहते हैं। वहां धर्म-अधर्म तथा उत्तम, मध्यम एवं अधम, ये भेद भी नहीं हैं। यहां स्वर्ग-मोक्षकी प्राप्तिके कारणभूत तपश्चरणादि रूप क्रियाओंका अभाव होनेसे वे क्षेत्र कर्मभूमि न होकर केवल भोगभूमियां ही हैं[1]। इसी कारण जम्बूद्वीपस्थ उन नौ वर्षोंमें एक मात्र भारत वर्ष ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। इसमें जन्म लेनेके लिये देवगण भी उत्कण्ठित रहते हैं।

स्वायम्भुव मनुके पुत्र प्रियव्रतके आग्नीध्र, अग्निबाहु, वपुष्मान्, द्युतिमान्, मेधा, मेधातिथि, भव्य, सवन, पुत्र और ज्योतिष्मान्, ये दस पुत्र हुए। इनमें मेधा, अग्निबाहु और पुत्र इन तीन पुत्रोंने जातिस्मरण हो जानेसे योगपरायण होकर राज्यकी अभिलाषा नहीं की। उनके पिता प्रियव्रतने शेष सात पुत्रोंमेंसे आग्नीध्रको जम्बू द्वीप, मेधातिथिको प्लक्ष द्वीप, वपुष्मान्को शाल्मल द्वीप, ज्योतिष्मान्को कुश द्वीप, द्युतिमान्को क्रौंच द्वीप, भव्यको शाक द्वीप और सवनको पुष्कर द्वीपका अधिपति बनाया।

इनमेंसे आग्नीध्रके नाभि, किम्पुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्य, हिरण्वान्, कुरु, भद्राश्व और केतुमाल, ये नौ पुत्र हुए जो क्रमशः हिम वर्ष (भारत वर्ष) आदि उपर्युक्त नौ वर्षोंके अधिपति थे। इनमें हिम वर्षके अधिपति महाराज नाभिके ऋषभ नामक पुत्र हुआ। महात्मा ऋषभके भरतादिक सौ पुत्र हुए। इनने कुछ काल तक धर्मपूर्वक राज्यकार्य करके पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र भरतको राज्याभिषिक्त किया और स्वयं तपश्चरण करनेके लिये मुनि पुलहके आश्रममें जा पहुंचे। वहां उन्होंने घोर तप किया। इससे वे अत्यन्त कृश हो गये, उनकी धमनियां

१ जैन ग्रन्थोंमें भी भोगभूमियोंका प्रायः ऐसा ही वर्णन किया गया है।

साफ साफ दिखने लगी थीं। तत्पश्चात् वे नम्र होकर मुखमें बीटा करके महाध्वानको प्राप्त हुए। चूंकि महाराज ऋषभने वन जाते समय राज्य भरतको दिया था, अतः यह हिम वर्ष भरतके नामसे भारत वर्ष प्रसिद्ध हुआ[1]। इसके निम्न नौ भाग हुए हैं— इन्द्रद्वीप, कसेरु, ताम्रवर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व और वारुण ये आठ, तथा समुद्रसे वेष्टित नौवां भाग। यह भाग दक्षिण-उत्तरमें सहस्र योजन प्रमाण है। इसके पूर्व भागमें किरात और पश्चिम भागमें यवनोंका निवास है।

जम्बू द्वीपको वलयाकारसे वेष्टित करके एक लाख योजन विस्तारवाला लवणसमुद्र स्थित है। इसको चारों ओरसे वेष्टित करनेवाला दो लाख योजन विस्तृत प्लक्ष द्वीप स्थित है। इसके अधीश्वर मेधातिथि थे। उनके सात पुत्र हुए, जिनके नामोंसे इस द्वीपके निम्न सात वर्ष प्रसिद्ध हुए हैं— शान्तहय, शिशिर, सुखोदय, आनन्द, शिव, क्षेमक और ध्रुव। इनके विभाजक पर्वतोंके नाम ये हैं— गोमेद, चन्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक, सुमना और वैभ्राज। इन वर्षोंमें और पर्वतोंके ऊपर देव-गन्धर्वोंके साथ जो प्रजाजन निवास करते हैं वे अतिशय पुण्यवान् व आधि व्याधिसे रहित हैं। वहां न उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी हैं और न युगपरिवर्तन ही है। वहां सदा त्रेता युग जैसा काल रहता है। आयु वहां पांच हजार वर्ष परिमित है। यहांके निवासी वर्णाश्रम विभागके अनुसार पांच धर्मों (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह) का परिपालन करते हैं। जिस प्रकार जम्बू द्वीपमें जम्बू वृक्ष है उसी प्रकार इस द्वीपमें एक प्लक्ष वृक्ष स्थित है। इसीके कारण इस द्वीपका भी नाम प्लक्ष द्वीप प्रसिद्ध हुआ।

इस द्वीपको इसीके समान विस्तारवाला इक्षुरसोद समुद्र वेष्टित करता है। इसको भी चारों ओरसे घेरनेवाला चार लाख योजन विस्तृत शाल्मल द्वीप है। इसी क्रमसे आगे सुरोद समुद्र, कुश द्वीप, घृतोद समुद्र, क्रौंच द्वीप, दधिमण्डोदक समुद्र, शाक द्वीप और क्षीर समुद्र स्थित है। ये द्वीप पूर्व-पूर्व द्वीपकी अपेक्षा दूने-दूने विस्तारवाले हैं। समुद्रोंका विस्तार अपने अपने द्वीपोंके समान है। शाल्मल आदि शेष उपर्युक्त द्वीपोंका रचनाक्रम प्लक्ष द्वीपके समान है।

---

१ जैन धर्ममें नाभिरायके पुत्र भगवान् ऋषभ देवको प्रथम तीर्थंकर माना गया है। उनके भरतादिक सौ पुत्र थे। उन्होंने कुछ समय तक प्रजापरिपालन करके राज्य भरतको दे दिया और स्वयं दैगम्बरी दीक्षा ले ली। पश्चात् घोर तप करके कैवल्य प्राप्त होनेपर धर्मप्रचार किया और अन्तमें मुक्ति प्राप्त की। विष्णुपुराणमें तृतीय अंशके अन्तर्गत सत्रहवें और अठारहवें अध्यायमें भगवान् ऋषभके चरित्रका चित्रण करके जैन धर्म और दिगम्बर साधुओंपर कुछ कटाक्ष किया गया है जो प्रायः धार्मिक असहिष्णुताका द्योतक है।

आगे सातवां पुष्कर द्वीप है[1]। इसके बीचोंबीच मानसोत्तर पर्वत वलयाकारसे स्थित है, जिसके कारण इस द्वीपके दो खण्ड हो गये हैं। इनमें मानसोत्तर पर्वतके बाह्य खण्डका नाम महावीर वर्ष और अभ्यन्तर खण्डका नाम धातकी वर्ष है[2]। इन दो वर्षोंके अधिपति क्रमशः महाराज सवनके महावीर और धातकी नामक दो पुत्र हुए। इस द्वीपमें रहनेवाले रोग, शोक एवं राग-द्वेषसे रहित हैं। आयु उनकी दश हजार वर्ष प्रमाण है। उनमें न तो उत्तम-अधमका भाव है और न वध्य-वधक भाव ही है। इसी प्रकार वहां न वर्णव्यवस्था है और न सत्य एवं मिथ्याका व्यवहार ही है। इस द्वीपमें पर्वत व नदियां नहीं हैं।

इस द्वीपको वेष्टित करके स्वादूदक समुद्र स्थित है। अब यहांसे आगे प्राणियोंका निवास नहीं है[3]। स्वादूदक समुद्रके आगे उससे दूने विस्तारवाली सुवर्णमयी भूमि है। उसके आगे दश हजार योजन विस्तृत और इतना ही ऊंचा लोकालोक पर्वत है। इसको चारों ओरसे वेष्टित करके तमस्तम स्थित है। यह तमस्तम भी चारों ओरसे अण्डकटाह द्वारा वेष्टित है। इस अण्डकटाहके साथ उपर्युक्त द्वीप-समुद्रोंको गर्भमें रखनेवाले समस्त भूमण्डलका विस्तार पचास करोड़ योजन और ऊंचाई सत्तर हजार योजन प्रमाण है।

यहां नीचे दश-दश हजार योजनके ये सात पाताल हैं— १ अतल, २ वितल, ३ नितल, ४ गभस्तिमत्, ५ महातल, ६ सुतल और ७ पाताल। ये पाताल क्रमशः शुक्ल, कृष्ण, अरुण, पीत, शर्करा, शैल और कांचन स्वरूप हैं। यहां उत्तम प्रासादोंसे सुशोभित भूमियां हैं जहां दानव, दैत्य, यक्ष एवं नाग आदि सैकड़ों जातियां निवास करती हैं[4]।

पातालोंके नीचे विष्णु भगवान्‌का शेष नामक तामस शरीर स्थित है जो 'अनन्त' कहा जाता है। यह शरीर हजार शिरों (फणों) से संयुक्त होकर समस्त भूमण्डलको धारण करता हुवा पातालमूलमें स्थित है। कल्पान्तमें इसके मुखसे निकली हुई संकर्षणात्मक रुद्र विषाग्नि-शिखा तीनों लोकोंका भक्षण करती है।

पृथिवी और जलके नीचे रौरव, सूकर, रोध, ताल, विशासन, महाज्वाल, तप्तकुम्भ, लवण, विलोहित, रुधिर, वैतरणि, कृमीश, कृमिभोजन, असिपत्रवन, कृष्ण, लालाभक्ष, दारुण,

---

१ इसे जैन ग्रन्थोंमें तीसरा द्वीप कहा गया है। मानुषोत्तर पर्वतकी स्थिति यहां भी इसी प्रकार ही स्वीकार की गई है। २ जैन ग्रन्थोंमें 'धातकीखण्ड' यह दूसरे द्वीपका नाम बतलाया गया है।

३ जैन ग्रन्थोंमें मानुषोत्तर पर्वतके आगे केवल मनुष्योंका ही अभाव बतलाया गया है। ४ जैन ग्रन्थानुसार अधोलोकमें रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा आदि ७ पृथिवियां बतलाई हैं। इनमेंसे रत्नप्रभाके खरभाग एवं पंकभागमें असुरकुमार नागकुमारादि १० भवनवासी तथा यक्षादि ८ जातिके व्यन्तर रहते हैं।

पूयवह, पाप, वह्निज्वाल, अधःशिरा, सन्दंश, कालसूत्र, तम, आवीचि, क्षभोजन, अप्रतिष्ठ और अग्रार्चि इत्यादि बहुतसे महा भयानक नरक हैं[1]। इनमें पापी जीव मरकर जन्म लेते हैं। फिर वहांसे निकलकर वे क्रमशः स्थावर, कृमि, जलचर, धार्मिक पुरुष, देव और मुमुक्षु होते हैं। जितने जीव स्वर्गमें हैं उतने ही नरकोंमें भी हैं।

भूमिसे ऊपर एक लाख योजनकी दूरीपर सौर मण्डल, इससे एक लाख योजन ऊपर चन्द्रमण्डल, इससे एक लाख योजन ऊपर समस्त नक्षत्रमण्डल, इससे दो लाख यो. ऊपर बुध, इससे दो लाख यो. ऊपर शुक्र, इससे दो लाख यो. ऊपर मंगल, इससे दो लाख यो. ऊपर बृहस्पति, इससे दो लाख यो ऊपर शनि, इससे एक लाख यो. ऊपर सप्तर्षिमण्डल, तथा इससे एक लाख यो. ऊपर ध्रुव स्थित है। (एतद्विषयक जैन मान्यताके लिये देखिये पीछे पृ. ३१)

ध्रुवसे एक करोड़ योजन ऊपर जाकर महर्लोक है। यहां कल्पकाल तक जीवित रहनेवाले कल्पवासियोंका निवास है[2]। इससे दो करोड़ यो. ऊपर जनलोक है। यहां नन्दनादिसे सहित ब्रह्माजीके प्रसिद्ध पुत्र रहते हैं। इससे आठ करोड़ यो. ऊपर तपलोक है। यहां वैराज देव निवास करते हैं। इससे बारह करोड़ यो. ऊपर सत्यलोक है। यहां फिरसे न मरनेवाले अमर (अपुनर्मारक) रहते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहा जाता है।

भूमि (भूलोक) और सूर्यके मध्यमें सिद्धजनों व मुनिजनोंसे सेवित स्थान भुवर्लोक कहलाता है। सूर्य और ध्रुवके मध्यमें चौदह लाख यो. प्रमाण क्षेत्र स्वर्लोक नामसे प्रसिद्ध है।

भूलोक, भूवर्लोक और स्वर्लोक ये तीन लोक कृतक तथा जनलोक, तपलोक और सत्यलोक ये तीन लोक अकृतक हैं। इन दोनों (कृतक और अकृतक) के बीचमें महर्लोक है। यह कल्पान्तमें जनशून्य हो जाता है, परन्तु सर्वथा नष्ट नहीं होता।

१२ बौद्धाभिमत भूगोल

(वसुबन्धुकृत अभिधर्म-कोशके आधारसे, ५वीं शताब्दि)

लोकके अधोभागमें सोलह लाख (१६००००० योजन ऊंचा अपरिमित वायुमण्डल है। उसके ऊपर ग्यारह लाख बीस हजार (११२०००० यो. ऊंचा जलमण्डल है। इसमें तीन

१ जैन ग्रन्थोंमें जो ४९ इन्द्रक नारक बिल कहे गये हैं उनमें ये नाम भी पाये जाते हैं— रौरव, प्रज्वलित, तप्त, तम व अप्रतिष्ठान। यहां वैतरणि नदी एवं असिपत्र वन भी बताये गये हैं। जन्मभूमियां यहां अधोमुख हैं। २ जैन ग्रन्थोंमें वैमानिक देवोंके कल्पवासी और कल्पातीत ये दो भेद बतलाये गये हैं। इन दोनोंका ही निवास ऊर्ध्व लोकमें है।

लाख बीस हजार (११२०००० – ८००००० = ३२००००) यो. कांचनमय भूमण्डल है। जलमण्डल व कांचनमण्डलका विस्तार १२०३४५० यो. और परिधि ३६१०३५० यो. प्रमाण है।

कांचनमय भूमण्डलके मध्यमें मेरु पर्वत है। यह अस्सी हजार यो. जलमें डूबा हुआ है तथा इतना ही ऊपर भी स्थित है। आगे अस्सी हजार यो. विस्तृत और दो लाख चालीस हजार यो. प्रमाण परिधिसे संयुक्त प्रथम सीता (समुद्र) है जो मेरुको चारों ओरसे वेष्टित करती है। आगे चालीस हजार यो. विस्तृत युगन्धर पर्वत वलयाकारसे स्थित है। इसके आगे भी इसी प्रकारसे एक-एक सीताको अन्तरित करके उत्तरोत्तर आधे आधे विस्तारसे संयुक्त क्रमशः ईषाधर, खदिरक, सुदर्शन, अश्वकर्ण, विनतक और निमिंधर पर्वत हैं। सीताओंका विस्तार भी उत्तरोत्तर आधा आधा होता गया है। उक्त पर्वतोंमें मेरु चतुरस्रमय और शेष सात पर्वत सुवर्णमय हैं। सबसे बाह्यमें स्थित सीता (महासमुद्र) का विस्तार तीन लाख बाईस हजार यो. प्रमाण है। अन्तमें लोहमय चक्रवाल पर्वत स्थित है।

निमिंधर और चक्रवाल पर्वतोंके मध्यमें जो समुद्र स्थित है उसमें जम्बूद्वीप, पूर्वविदेह, अवरगोदानीय और उत्तरकुरु, ये चार द्वीप हैं। इनमें जम्बूद्वीप मेरुके दक्षिण भागमें है। उसका आकार शकटके समान है। इसकी तीन भुजाओंमेंसे दो भुजायें दो दो हजार यो. और एक भुजा तीन हजार पचास यो. है।

मेरुके पूर्व भागमें अर्धचन्द्राकार पूर्वविदेह नामक द्वीप स्थित है। इसकी भुजाओंका प्रमाण जम्बूद्वीपके ही समान है।

मेरुके पश्चिम भागमें मण्डलाकार अवरगोदानीय द्वीप स्थित है। इसका विस्तार २५०० यो. और परिधि ७५०० यो. प्रमाण है।

मेरुके उत्तर भागमें समचतुष्कोण उत्तरकुरु द्वीप अवस्थित है। इसकी एक एक भुजा ९००० यो. है।

इनमेंसे पूर्वविदेहके समीपमें देह व विदेह, उत्तरकुरुके समीपमें कुरु व कौरव, जम्बूदीपके समीपमें चामर व अवरचामर, तथा गोदानीय द्वीपके समीपमें शाटा व उत्तर मंत्री अन्तरद्वीप स्थित है। इनमेंसे चमरद्वीपमें राक्षसों और शेष द्वीपोंमें मनुष्योंका निवास है।

जम्बूद्वीपमें उत्तरकी ओर नौ कीटादि और उनके आगे हिमवान् पर्वत अवस्थित है। हिमवान् पर्वतसे आगे उत्तरमें ५०० यो. विस्तृत अनवतप्त नामक अगाध सरोवर है। इससे गंगा, सिन्धु, वक्षु और सीता ये नदियां निकली हैं। उक्त सरोवरके समीपमें जम्बू वृक्ष है,

जिसके कारण इस द्वीपका 'जम्बू द्वीप' नाम प्रसिद्ध हुआ। अनवतप्त सरोवरके आगे गन्धमादन पर्वत है।

जम्बूद्वीपके नीचे २०००० यो. प्रमाण अवीचि नामक नरक है। उसके ऊपर क्रमशः प्रतापन, तपन, महारौरव, रौरव, संघात, कालसूत्र और संजीव, ये सात नरक और हैं। इन नरकोंके चारों पार्श्वभागोंमें कुकूल, कुणप, क्षुरमार्गादिक (असिपत्र वन, श्यामशबल-अ-स्थान, अयःशाल्मली वन) और खारोदक (वैतरिणी) नदी, ये चार उत्सद हैं। अर्बुद, निरर्बुद, अटट, हहव, हुहुव, उत्पल, पद्म और महापद्म, ये जम्बूद्वीपके अधोभागमें महानरकोंके धरातलमें आठ शीत नरक और हैं।

मेरु पर्वतके अर्ध भागसे अर्थात् भूमिसे ४०००० यो. ऊपर चन्द्र व सूर्य परिभ्रमण करते है। इनमें चन्द्रमण्डलका प्रमाण पचास यो. और सूर्यमण्डलका प्रमाण इक्यावन यो. है। जिस समय जम्बूद्वीपमें मध्याह्न होता है उस समय उत्तरकुरुमें अर्धरात्रि, पूर्वविदेहमें अस्तगमन और अवरगोदानीयमें सूर्योदय होता है। भाद्र मासके शुक्ल पक्षकी नवमीसे रात्रिकी वृद्धि और फाल्गुन मासके शुक्ल पक्षकी नवमीसे उसकी हानिका प्रारम्भ होता है। रात्रिकी वृद्धिमें दिनकी हानि व रात्रिकी हानिमें दिनकी वृद्धि होती है। सूर्यके दक्षिणायन व उत्तरायणमें क्रमशः रात्रि व दिनकी वृद्धि होती है।

मेरु पर्वतके चार परिषण्ड (विभाग) हैं। प्रथम परिषण्ड मेरु और सीताजलसे १०००० यो. ऊपर स्थित है। इसके आगे क्रमशः दश-दश हजार यो. ऊपर जाकर द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ परिषण्ड हैं। इनमेंसे प्रथम परिषण्ड सोलह हजार यो., द्वितीय परिषण्ड आठ हजार यो., तृतीय परिषण्ड चार हजार यो. और चतुर्थ परिषण्ड दो हजार यो. मेरुसे बाहिर निकला है। प्रथम परिषण्डमें पूर्वकी ओर करोटपाणि यक्ष रहते हैं। इनका राजा धृतराष्ट्र है। द्वितीय परिषण्डमें दक्षिणकी ओर मालाधर रहते हैं। इनका राजा विरूढक है। तृतीय परिषण्डमें पश्चिमकी ओर सदामद रहते है। इनका राजा विरूपाक्ष है। चतुर्थ परिषण्डमें चातुर्महाराजिक देव रहते हैं। इनका राजा वैश्रवण है। इसी प्रकार शेष सात पर्वतोंपर भी इन देवोंका निवास है।

मेरुशिखरपर त्रयस्त्रिंश (स्वर्ग) लोक है। इसका विस्तार अस्सी हजार योजन है। यहां त्रयस्त्रिंश देव रहते है। यहां चारों विदिशाओंमें वज्रपाणि देवोंका निवास है। त्रयस्त्रिंश लोकके मध्यमें इन्द्रका २५० यो. विस्तृत वैजयन्त नामक प्रासाद स्थित है। नगरके बाह्य भागमें चारों ओर चैत्ररथ, पारुष्य, मिश्र और नन्दन, ये चार वन हैं। इनके चारों ओर बीस योजनके अन्तरसे देवोंके क्रीड़ास्थल है।

त्रयस्त्रिंश लोकके ऊपर विमानोंमें याम, तुषित, निर्माणरति और परनिर्मितवशवर्ती देव रहते हैं। कामधातुगत देवोंमेंसे चातुर्महाराजिक और त्रयस्त्रिंश देव मनुष्यवत् कामभोग भोगते हैं। याम, तुषित, निर्माणरति और परनिर्मितवशवर्ती देव क्रमशः आलिंगन, पाणिसंयोग, हसित

और अवलोकनसे ही तृप्तिको प्राप्त होते हैं[1]।

कामधातुके ऊपर सत्तरह स्थानोंसे संयुक्त रूपधातु है। वे सत्तरह स्थान ये हैं— प्रथम ध्यानमें ब्रह्मकायिक, ब्रह्मपुरोहित व महाब्रह्म लोक; द्वितीय ध्यानमें परित्ताभ, अप्रमाणाभ, व आभस्वर लोक; तृतीय ध्यानमें परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ व शुभकृत्स्न लोक; तथा चतुर्थ ध्यानमें अनभ्रक, पुण्यप्रसव, बृहत्फल, पंचशुद्धावासिक, अबृह, अतपसुदृश, सुदर्शन और अकनिष्ठ; इस प्रकार इन चार ध्यानोंमें उक्त सत्तरह लोक हैं। ये देवलोक क्रमशः ऊपर-ऊपर अवस्थित हैं। इनमें रहनेवाले देव ऋद्धिबलसे अथवा अन्य देवकी सहायतासे ही अपनेसे ऊपरके देवलोकको देख सकते हैं।

जम्बूद्वीपवासी मनुष्योंका शरीर ३½ या ४ हाथ, पूर्वविदेहवासियोंका ७-८ हाथ, गोदानीयद्वीपवासियोंका १४-१६ हाथ और उत्तरकुरुस्थ मनुष्योंका शरीर २८-३२ हाथ ऊंचा होता है। कामधातुवासी देवोंमें चातुर्महाराजिक देवोंका शरीर ¼ कोश, त्रयस्त्रिंशोंका ½ कोश, यामोंका ¾ कोश, तुषितोंका १ कोश, निर्माणरति देवोंका १¼ कोश और परनिर्मितवशवर्ती देवोंका शरीर १½ कोश ऊंचा है। रूपधातुमें ब्रह्मकायिक देवोंका शरीर ½ योजन ऊंचा है। आगे ब्रह्मपुरोहित, महाब्रह्म, परित्ताभ, अप्रमाणाभ, आभस्वर, परित्तशुभ, अप्रमाणशुभ और शुभकृत्स्न, इन देवोंका शरीरोत्सेध क्रमशः १, १½, २, ४, ८, १६, ३२ और ६४ योजन प्रमाण है। अनभ्र देवोंके शरीरकी ऊंचाई १२५ यो. प्रमाण है। आगे इस ऊंचाईका प्रमाण पुण्यप्रसव आदिक सात देवोंमें उत्तरोत्तर दूना-दूना होता गया है।

यहां अंगुलादिकका प्रमाण इस प्रकार बतलाया गया है— परमाणु, अणु, लोहरज, जलरज, शशरज, अविरज, गोरज, छिद्ररज, लिक्षा, यव और अंगुलीपर्व, ये क्रमशः उत्तरोत्तर सात-सातगुणे हैं। २४ अंगुलियोंका एक हाथ, ४ हाथका एक धनुष, ५०० धनुषका एक कोश, १०० धनुषका अरण्य और ८ कोशका एक योजन होता है।

७ हमारा आधुनिक विश्व

गत पृष्ठोंमें हम देख चुके कि जिस विश्वमें हम निवास करते हैं उसको हमारे पूर्वाचार्योंने तथा नाना धर्मोंके गुरुओंने किस प्रकार समझा है। यहां हम तुलनात्मक अध्ययनकी सुविधाके लिये विश्वका वह स्वरूप संक्षेपमें प्रस्तुत करते हैं जो इस युगके वैज्ञानिकोंने निर्धारित किया है।

जिस पृथ्वीपर हम निवास करते हैं वह मिट्टी पत्थरका एक नारंगीके समान चपटा गोला है जिसका व्यास लगभग आठ हजार मील और परिधि पच्चीस हजार मीलकी है। किसी समय, आजसे करोड़ों वर्ष पूर्व, यह ज्वालामयी अग्निका गोला था। यह अग्नि धीरे धीरे ठंडी होती गई और अब यद्यपि पृथ्वीका धरातल सर्वत्र शीतल हो चुका है तो भी अभी इसके गर्भमें अग्नि तीव्रतासे जल रही है, जिसके कारण हमारा धरातल भी कुछ उष्णताको लिये हुए है, तथा नीचेकी ओर खुदाई की जाय तो अधिकाधिक उष्णता पाई जाती है। कभी कभी यही

१ यह व्यवस्था प्रायः "कायप्रवीचारा आ ऐशानात्, शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनःप्रवीचाराः" (त. सू. ४, ७-८.) इन सूत्रोंमें बतलायी गयी व्यवस्थाके समान है।

भूगर्भकी ज्वाला कुपित होकर भूकम्प उत्पन्न कर देती है, व ज्वालामुखीके रूपमें फूट निकलती है। इसीसे शैल, पर्वत, कन्दराओं आदिका निर्माण व विध्वंस तथा भूमि और जलभागोंमें विपरिवर्तन होता रहता है। इसी अग्निके तापसे पृथ्वीका द्रव्य यथायोग्य दबाव व शीतलता पाकर नाना प्रकारकी धातु-उपधातुओं एवं द्रव और वायु रूपी पदार्थोंमें परिवर्तित हो गया है, जो हमें पत्थर, कोयला, लोहा, सोना, चांदी आदि तथा जल और वायुमण्डलके रूपमें दिखाई देता है। जल और वायु ही सूर्यके प्रतापसे मेघों आदिका रूप धारण कर लेते हैं। यह वायु-मण्डल पृथ्वीके धरातलसे उत्तरोत्तर विरल होते हुए लगभग पांच सौ मील तक फैला हुआ अनुमान किया जाता है। पृथ्वीका धरातल भी सम नहीं है। पृथ्वीतलका उच्चतम भाग हिमालयका गौरीशंकर शिखर (माउंट एवरेस्ट) माना जाता है जो समुद्रतलसे उनतीस हजार फुट अर्थात् कोई साढ़े पांच मील ऊंचा है। तथा समुद्रकी उत्कृष्ट गहराई बत्तीस हजार फुट अर्थात् लगभग छह मील तक नापी जा चुकी है। इस प्रकार पृथ्वीतलकी ऊंचाई निचाईमें उत्कृष्टतम साढ़े ग्यारह मील का अन्तर पाया जाता है। इसकी ठण्डी होकर जमी हुई पपड़ी सत्तर मील समझी जाती है जिसकी द्रव्यरचनाके अध्ययनसे अनुमान लगाया गया है कि उसे जमे लगभग तीन करोड़ वर्ष हुए हैं। सजीव तत्त्वके चिह्न केवल चौंतीस मीलकी ऊपरकी पपड़ीमें पाये जाते है जिससे अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वीपर जीव तत्त्व उत्पन्न हुए दो करोड़ वर्ष से अधिक काल नहीं हुआ। इसमें भी मनुष्यके विकासके चिह्न केवल एक करोड़ वर्षके भीतरके ही पाये गये हैं।

पृथ्वीतलके ठण्डे हो जानेके पश्चात् उसपर आधुनिक जीवशास्त्रके अनुसार, जीवनका विकास इस क्रमसे हुआ। सर्व प्रथम स्थिर जलके ऊपर जीव-कोश प्रकट हुए जो पाषाणादि जड़ पदार्थोंसे मुख्यतः तीन बातोंमें भिन्न थे। एक तो वे आहार ग्रहण करते और बढ़ते थे। दूसरे वे इधर उधर हलचल भी सकते थे। और तीसरे वे अपने ही तुल्य अन्य कोश भी उत्पन्न कर सकते थे। कालक्रमसे इनमेंके कुछ कोश भूमिपर जड़ जमा कर स्थावरकाय-वनस्पति बन गये, और कुछ जलमें ही विकसित होते होते मत्स्य बन गये। क्रमशः ऐसे वनस्पति व मैंढक आदि प्राणी उत्पन्न हुए जो जलमें ही नहीं किन्तु थलपर भी श्वासोच्छ्वास कर सकते थे। इन्हीं स्थल प्राणियोंमेंसे सरीसृप अर्थात् घिसटकर चलनेवाले जन्तु सांप आदि उत्पन्न हुए। सरीसृपका विकास दो दिशाओंमें हुआ— एक पक्षी और दूसरे स्तनधारी प्राणी। स्तनी जातिकी यह विशेषता है कि वे अण्डे उत्पन्न न कर गर्भधारण करके अपनी जातिके शिशु उत्पन्न करते और अपने स्तनोंके दूधसे उनका पोषण करते हैं। इसी कारण उनमें शिशुपालन व मातृप्रेमकी भावना उत्पन्न होती है। मकरसे लेकर भेड़, बकरी, गाय, भैंस, घोड़ा, हाथी आदि सब इसी महा जातिके प्राणी हैं। इन्हीं स्तनधारी प्राणियोंकी एक जाति वानर उत्पन्न हुई। किसी समय कुछ वानरोंने अपने अगले दो पैर उठाकर पीछेके दो पैरोंपर चलना सीख लिया। बस, यहींसे मनुष्य जातिका विकास प्रारम्भ हुआ माना जाता है। उक्त जीवकोशसे लगाकर

मनुष्यके विकास तक प्रत्येक नई धारा उत्पन्न होनेमें हजारों नहीं किन्तु लाखों व करोड़ों वर्षका अन्तराल माना जाता है।

इस विकासक्रममें समय समयपर तात्कालिक परिस्थितियोंके अनुसार नाना जीव-जातियां उत्पन्न हुईं। उनमेंकी अनेक जातियां परिस्थितियोंके विपरिवर्तन व अपनी अयोग्यताके कारण विनष्ट हो गईं। उनका पता अब हमें भूगर्भमें उनके निखातकों द्वारा मिलता है।

पृथ्वीतलपर भूमिसे जलका विस्तार लगभग तिगुणा है– दोनोंका अनुपात शतांशमेंसे २८ : ७२ बतलाया जाता है। जलके विभागानुसार प्रमुख भूमिखण्ड पांच पाये जाते हैं– एशिया, यूरोप व आफ्रिका मिलकर एक, उत्तर-दक्षिण अमेरिका मिलकर दूसरा, आस्ट्रेलिया तीसरा, तथा उत्तर ध्रुव और दक्षिण ध्रुव। इनके अतिरिक्त अनेक छोटे मोटे द्वीप भी है। यह भी अनुमान किया जाता है कि सुदूर पूर्वमें सम्भवतः ये प्रमुख भूमिभाग परस्पर जुड़े हुए थे। उत्तर-दक्षिण अमेरिकाकी पूर्वी सीमारेखा ऐसी दिखाई देती है कि वह यूरोप-आफ्रिकाकी पश्चिमी सीमारेखाके साथ ठीक मिलकर बैठ सकती है। तथा हिन्द महासागरके अनेक द्वीपसमुदायोंकी शृंखला एशिया खण्डको आस्ट्रेलियाके साथ जोड़ती हुई दिखाई देती है। वर्तमानमें नहरें खोदकर आफ्रिकाका एशिया-यूरोप भूमिखण्डसे तथा उत्तर अमेरिकाका दक्षिण अमेरिकासे भूमिसम्बन्ध तोड़ दिया गया है। इन भूमिखण्डोंका आकार, परिमाण व स्थिति परस्पर अत्यन्त विषम है। इस समस्त पृथ्वीपर रहनेवाले मनुष्योंकी संख्या लगभग दो अरब है।

भारत वर्ष एशिया खण्डका दक्षिण पूर्वीय भाग है। वह त्रिकोणाकार है। दक्षिणी कोना लंका द्वीपको प्रायः स्पर्श कर रहा है। वहांसे भारतवर्षकी सीमा उत्तरकी ओर पूर्व-पश्चिम दिशाओंमें फैलती हुई चली गई है और हिमालय पर्वतकी श्रेणियोंपर जाकर समाप्त हुई है। देशका उत्तर-दक्षिण तथा पूर्व-पश्चिम दिशाओंका उत्कृष्ट विस्तार लगभग दो हजार मीलका है। इसकी उत्तर सीमापर तो हिमालय पर्वत फैला हुआ है, मध्यमें विन्ध्य और सतपुड़ा पर्वतमालायें पायी जाती हैं, तथा दक्षिणके पूर्वीय व पश्चिमी तटोंपर पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट नामक पर्वतश्रेणियां फैली हुई हैं। देशकी प्रमुख नदियां हिमालयके प्रायः मध्यसे निकलकर पूर्वकी ओर समुद्रमें गिरनेवाली ब्रह्मपुत्रा व गंगा और उसकी सहायक जमना, चम्बल, सिंध, बेतवा, सोन आदि हैं तथा पश्चिमकी ओर समुद्रमें गिरनेवाली सिन्धु व उसकी सहायक नदियां झेलम, चिनाब, रावी, व्यास और सतलज हैं। गंगा व सिन्धुकी लम्बाई लगभग पन्द्रह सौ मीलकी है। देशके मध्यमें विन्ध्य और सतपुड़ाके बीच पूर्वसे पश्चिमकी ओर समुद्र तक प्रवाहित नर्मदा नदी है, तथा सतपुड़ाके दक्षिणमें तापी। दक्षिणकी प्रमुख नदियां गोदावरी, कृष्णा और कावेरी पश्चिमसे पूर्वकी ओर प्रवाहित हैं।

देशके उत्तरमें सिन्धसे गंगा कछार तक प्रायः आर्य जातिके, सतपुड़ाके सुदूर दक्षिणमें द्राविड जातिके, एवं पहाड़ी प्रदेशोंमें गोंड, भील, कोल व किरात आदि पर्वतीय जातियोंके लोग

निवास करते हैं।

भारतवर्षकी जनसंख्या लगभग चालीस करोड़ है जिसमें हिन्दी, मराठी, बंगाली व गुजराती आदि आर्य भाषाओंके बोलनेवाले कोई बत्तीस करोड़ और शेष तामिल, तेलुगू, कनाड़ी, मलयालम आदि द्राविड़ी भाषाओंके बोलने वाले हैं।

इस आठ हजार मील व्यास व पच्चीस हजार मील परिधि प्रमाण भूमण्डलके चारों ओर अनन्त आकाश है, जिसमें हमें दिनको सूर्यमण्डल तथा रात्रिको चन्द्र, ग्रह व ताराओंके दर्शन होते है और उनसे प्रकाश मिलता है। इनमें सबसे अधिक समीपवर्ती चन्द्रमा है, जो पृथ्वीसे कोई सवा दो लाख मीलकी दूरीपर है। यह पृथ्वीके समान ही एक भूमण्डल है जो पृथ्वीसे बहुत छोटा है और उसीके आसपास घूमा करता है जिसके कारण हमारे शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष होते है। चन्द्रमें स्वयं प्रकाश नहीं है, किन्तु वह सूर्यके प्रकाशसे प्रकाशित होता है और इसी लिये अपने परिभ्रमणानुसार घटता बढ़ता दिखाई देता है। अनुसन्धानसे जाना गया है कि चन्द्रमा बिलकुल ठंडा हो गया है। पृथ्वीके भूगर्भके समान उसमें अग्नि नहीं है। उसके आसपास वायुमण्डल भी नहीं है और धरातलपर जल भी नहीं है। इन्हीं कारणोंसे वहां श्वासोच्छ्वासप्रधान प्राणी व वनस्पति भी नहीं पाये जाते। भीषण शैल व पर्वतों तथा कन्दराओंके सिवाय वहां कुछ भी नहीं है। अनुमान किया जाता है कि चन्द्रमा पृथ्वीका ही एक भाग है जिसे टूटकर अलग हुए कोई पांच-छह करोड़ वर्ष हुए हैं।

चन्द्रसे परे क्रमशः शुक्र, बुध, मंगल, बृहस्पति व शनि आदि ग्रह है जो सब पृथ्वीके समान ही भूमण्डल हैं और सूर्यकी परिक्रमा किया करते हैं तथा सूर्यके ही प्रकाशसे प्रकाशित होते हैं। इन ग्रहोंमेंसे किसीमें भी पृथ्वीके समान जीवोंकी सम्भावना नहीं मानी जाती, क्योंकि वहांकी परिस्थितियां जीवनके साधनोंसे सर्वथा विहीन है।

इन ग्रहोंसे परे, पृथ्वीसे कोई साढ़े नौ करोड़ मीलकी दूरीपर सूर्यमण्डल है, जो पृथ्वीसे लगभग पन्द्रह लाख गुणा बड़ा है— अर्थात् पृथ्वीके समान कोई पन्द्रह लाख भूमण्डल उसके गर्भमें समा सकते हैं। यह महाकाय मण्डल अग्निसे प्रज्वलित है और उसकी ज्वालायें लाखों मील तक उठती है। सूर्यकी इसी जाज्वल्यतासे करोड़ों मील, विस्तृत सौर मण्डल भरमें प्रकाश और उष्णता फैल रहे है। एक वैज्ञानिक मत है कि इसी सूर्यमण्डलकी चिनगारियोंसे पृथ्वी व बुध-बृहस्पति आदि ग्रह और उपग्रह बने हैं, जो सब अभी तक उसके आकर्षणसे निबद्ध होकर उसीके आसपास घूम रहे है। हमारा भूमण्डल सूर्यकी परिक्रमा एक वर्षमें पूरी करता है और इसी परिक्रमाके आधारपर हमारा वर्षमान अवलंबित है। इस परिक्रमणमें पृथ्वी निरन्तर अपनी कीलपर भी घूमा करती है जिसके कारण हमारे दिन और रात्रि हुआ करते हैं। जो गोलार्ध सूर्यके सन्मुख पड़ता है वहां दिन और शेष गोलार्धमें रात्रि होती है। वैज्ञानिकोंका यह भी अनुमान है कि ये पृथ्वी आदि ग्रहोपग्रह धीरे धीरे पुनः सूर्यकी ओर आकृष्ट हो रहे

हैं। अतः आश्चर्य नहीं जो किसी सुदूरवर्ती एक दिन वे पुनः सूर्यमण्डलमें लवलीन हो जांय।

हमने ऐसे महाकाय सूर्यमण्डलके दर्शन किये जिनकी बराबरीका अन्य कोई भी ज्योतिर्मण्डल आकाश भरमें दिखाई नहीं देता। किन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिये कि उन अति लघु दिखाई देनेवाले तारोंमें सूर्यके तुल्य महान् कोई एक भी नहीं हैं। यथार्थतः तो हमें जिन तारोंका दर्शन होता है उनमें सूर्यसे छोटे व सूर्यके बराबरके तो बहुत थोड़े तारे हैं। उनमें अधिकांश तो सूर्यसे भी बहुत विशाल, उससे सैकड़ों, सहस्रों व लाखों गुणे बड़े हैं। किन्तु उनके छोटे दिखाई देनेका कारण यह है कि वे हमसे सूर्यकी अपेक्षा बहुत ही अधिक दूरीपर हैं। तारोंकी दूरी समझनेके लिये हमारे संख्यावाची शब्द काम नहीं देते। उसके लिये वैज्ञानिकोंकी दूसरी ही प्रक्रिया है। प्रकाशकी गति प्रति सैकंड १,८६,००० एक लाख छयासी हजार मील, तथा प्रति मिनिट १,११,६०,००० एक करोड़, ग्यारह लाख, साठ हजार मील मापी गई है। इस प्रमाणसे सूर्यका प्रकाश पृथ्वी तक कोई ८-९ मिनटमें आता है। तारे हमसे इतनी दूर है कि उनका प्रकाश हमारे समीप वर्षोंमें आ पाता है, और जितने वर्षोंमें वह आता है उतने ही प्रकाशवर्षकी दूरीपर वह तारा कहा जाता है। सेन्टोरी नामक अति निकटवर्ती तारा हमसे चार प्रकाशवर्षकी दूरीपर है, क्योंकि उसके प्रकाशको हमारे पास तक पहुंचनेमें चार वर्ष लगते है। इस प्रकार दश, बीस, पचास एवं सैकड़ों प्रकाशवर्षोंकी दूरीके ही नहीं किन्तु ऐसे ऐसे तारोंका ज्ञान हो चुका है जिनकी दूरी दश लाख प्रकाशवर्षकी मापी गई है तथा जो प्रमाणमें भी हमारी पृथ्वी तो क्या हमारे सूर्यसे भी लाखों गुने बड़े हैं। तारोंकी संख्याका भी पार नहीं है। हमें अपनी नग्न दृष्टिसे तो अधिकसे अधिक छठवें प्रमाण तकके कोई छै सात हजार तारे ही दिखाई देते हैं। किन्तु दूर-दर्शक यंत्रोंकी जितनी शक्ति बढ़ती जाती है उतने ही उत्तरोत्तर अधिकाधिक तारे दिखाई देते हैं। अभी तक बीसवें प्रमाण तकके तारोंको देखने योग्य यंत्र बन चुके है जिनके द्वारा सब मिलाकर दो अरबसे भी अधिक तारे देखे जा चुके हैं। किन्तु तारोंकी संख्याका अन्त नहीं। जेम्स जीन्स सदृश ज्योतिषी वैज्ञानिकका मत है कि तारोंकी संख्या हमारी पृथ्वीके समस्त समुद्र-तटोंकी रेतके कणोंके बराबर हो तो आश्चर्य नहीं। और ये असंख्य तारे एक दूसरेसे कितने दूर दूर हैं इसका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि सूर्यसे निकटतम दूसरा तारा चार प्रकाशवर्ष अर्थात् अरबों खबों मीलकी दूरीपर है। ये सब तारे बड़े वेगसे गतिशील हैं और उनका प्रवाह दो भिन्न दिशाओंमें पाया जाता है।

इस प्रकार लोकका प्रमाण असंख्य है, और आकाशका कहीं अन्त दिखाई नहीं देता। किन्तु दृश्यमान लोकका आकार कुछ कुछ समझा गया है। तारागणोंका जिस प्रकार आकाशमें वितरण है तथा आकाशगंगामें जो तारापुंज दिखाई देते हैं, उनपरसे अनुमान

लगाया गया है कि इस समस्त तारामण्डल रूप लोकका आकार लेन्सके आकारका है अर्थात् ऊपर और नीचेको उभरा हुआ और बीचमें फैला हुआ गोल है, जिसकी परिधिपर आकाश-गंगा दिखाई देती है और उभरे हुए भागके मध्यमें हमारा सूर्यमण्डल है।

प्रश्न होता है कि क्या इस तारामण्डलमें पृथ्वीके अतिरिक्त और कहीं जीवधारी हैं या नहीं? कुछ काल पूर्व मंगल ग्रहमें जीवधारियोंकी संभावना की जाती थी, किन्तु, जैसा हम ऊपर कह आये हैं, अब किसी भी ग्रहमें जीव-जन्तुओंकी सम्भावना नहीं की जाती। और जिन तारोंका हमने ऊपर वर्णन किया है वे तो सब सूर्यके समान अग्निके गोले हैं जिनमें जीवोंकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सूर्यके अतिरिक्त अन्य किसी तारेके ग्रहों उप-ग्रहोंका कोई पता नहीं चलता जिनमें जीव-जगत्की कल्पना की जा सके। इस प्रकार विज्ञान इस विषयमें बहुत ही सशंक है कि हमारी इस पृथ्वीके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी दृश्यमान लोकमें जीवधारी है या नहीं। [आधारभूत ग्रंथः — The Structure of the earth by Prof. T. G. Bonney; An outline of Modern knowledge; Mysterious universe by Eddington; विश्वकी रूपरेखा— रा. सांकृत्यायनकृत]

८ अन्तिम निवेदन

तिलोयपण्णत्तिका प्रथम भाग सन् १९४३ में प्रकाशित हो गया था। उससे सात वर्ष पश्चात् यह दूसरा अन्तिम भाग प्रकाशित हो रहा है। इस विलम्बके अनेक कारण हैं। एक तो प्राचीन ग्रंथों विशेषतः—प्राकृतकी गहनविषयात्मक रचनाओंकी थोड़ीसी मौलिक प्रतियोंपरसे संशोधन, सम्पादन व अनुवाद करना एक बड़ा कठिन कार्य है। चित्तकी निरा-कुलताके विना यह कार्य सुचारु रूपसे नहीं हो पाता। पूर्वोक्त समयावधिके भीतर मेरा अमरावतीसे स्थान-परिवर्तन हो गया, तथा एक समय ऐसा भी आगया जब मेरा इस कार्यसे सम्बन्ध रहना भी संदिग्ध अवस्थामें पड़ गया। कागजकी दुर्लभता तथा मुद्रणकी विघ्न-बाधाओंने भी गति-रोध उत्पन्न करनेमें कसर नहीं रक्खी। फिर अनुक्रमणिकाओं आदिके तैयार करनेमें बड़ा परिश्रम और समय लगा। सम्पादकोंके हाथ अन्य साहित्यिक कार्योंसे भरे होनेके कारण प्रस्तावना तैयार होनेमें भी विलम्ब हुआ। तथापि, इन सब विपत्तियोंके होते हुए भी, आज इस महान् ग्रन्थका पूर्णतः प्रकाशन हो रहा है इस बातका हमें बड़ा हर्ष है। और इस सफलता-का श्रेय है हमारे समस्त सहयोगियोंको। हमारी ग्रन्थमालाके संस्थापक ब्रह्मचारी जीवराज भाईकी धर्मनिष्ठा और कार्यतत्परता सराहनीय है। उनकी यह प्रेरणा बनी ही रहती है कि ग्रन्थप्रकाशन कार्य जितना हो सके और जितने वेगसे हो सके उतना किया जाय। संस्कृति-संरक्षक संघके अधिकारियों तथा प्रबन्धसमितिके सदस्योंका भी इस विषयमें मतैक्य है। फिर भी यदि ग्रन्थप्रकाशनमें पाठकोंको विलम्ब दिखाई दे तो इसका कारण कार्यकर्ताओंके उत्साहमें कमी नहीं, किन्तु इस कार्यकी विशेष अनिवार्य अड़चनें ही हैं। ग्रन्थमें आये हुए गणितने हमें अनेक वार बहुत हैरान किया। इस सम्बन्धमें, विशेषतः पांचवेंसे सातवें अधिकार तक, आये

हुए गणितके अनेक स्थलोंकी गुत्थियोंको सुलझानेमें मुझे मेरे प्रिय मित्र श्री नेमिचन्द्र सिंघई, इंजीनियर, नागपुरसे बहुत सहायता मिली। मेरे सहयोगी और स्नेही मित्र डॉ. आदिनाथ उपाध्येके धैर्य और उत्साहकी भी प्रशंसा किये बिना मुझसे नहीं रहा जाता। उनकी निरन्तर प्रेरणा और मेरे लिये आकर्षण यदि प्रबल नहीं होते तो संभवतः इस कार्यमें और भी विघ्न एवं विलम्ब हो सकता था। परिस्थितियोंके चढ़ाव-उतारके बीच भी कार्यमें एकरूपता और अविच्छिन्नता बनाये रखनेका श्रेय हमारे पं. बालचन्द्रजी शास्त्रीको है, जो सब अवस्थाओंमें बड़ी ही एकाग्रता, तत्परता एवं निराकुल भावसे कार्यको गतिशील बनाये रहे हैं। हम तीनोंके बीच सम्पादन कार्यके सम्बन्धमें कभी कोई असामञ्जस्य उत्पन्न नहीं हुआ, यह प्रकट करते मुझे बड़ा हर्ष होता है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम किसी भी बातमें कोई मतभेद ही नहीं रखते। सच्चे और स्वतंत्र विचारकोंमें ऐसा होना असम्भव है। मेरे कहनेका अभिप्राय यह है कि हमारे मतभेदसे ग्रन्थरचनामें कोई त्रुटि या कठिनाई उत्पन्न नहीं हुई, किन्तु उससे सदैव विषयकी समृद्धि और पुष्टि ही हुई है। यह बात इस ग्रन्थकी प्रस्तावनाओंपर ध्यान देनेसे पाठकोंको खूब ही स्पष्ट हो जायगी। ग्रन्थकी अंग्रेजी भूमिका मेरे प्रिय मित्र डॉ. उपाध्येने लिखी है। मैंने उसीके आधारपर, प्रायः अनुवाद रूपसे ही, हिन्दी प्रस्तावनाके प्रथम तीन परिच्छेद लिखे हैं। ग्रन्थके रचनाकाल सम्बन्धी प्रमाणोंके विषयमें भी यद्यपि मेरे और डॉ. उपाध्येजीके बीच मतैक्य है, तथापि किन बातोंको आपेक्षिक कितना महत्त्व दिया जाय इस बातपर हमारा कुछ मतभेद है। अतएव इस विषयपर हमने अपने अपने विचार एक दूसरेके लेखोंसे लाभ उठाकर भी कुछ स्वतंत्रतासे प्रकट किये हैं। इससे पाठकोंको विचार व अध्ययनके लिये प्रचुर सामग्री मिलेगी और आगे अन्वेषणका मार्ग अवरुद्ध न होकर खुला रहेगा। ग्रन्थका विषय-परिचय तथा ग्रन्थकी अन्य ग्रन्थोंसे तुलना शीर्षक परिच्छेद पं. बालचन्द्रजी शास्त्री द्वारा लिखे गये हैं जिनमें मैंने यत्र तत्र परिवर्तन व घटा बढ़ीके सिवाय विशेष कुछ नहीं किया। 'हमारा आधुनिक विश्व' शीर्षक परिच्छेद मैंने लिखा है। मुझे पूर्ण आशा और भरोसा है कि यह सब सामग्री इस महान् ग्रन्थके इतिहास, उसकी विषयसमृद्धि एवं साहित्यमें प्रभावको समझनेमें पाठकोंकी बड़ी सहायता करेगी।

अन्तमें मैं इस ग्रन्थके मुद्रक, सरस्वती प्रेसके मैनेजर श्री टी. एम्. पाटिलके सहयोग का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता। आज कोई बीस वर्षसे मेरा जो सम्बन्ध सरस्वती प्रेससे अविच्छिन्न चला आ रहा है, उसका मुख्य कारण श्री पाटिलका सौजन्य और हमारे प्रति सद्भाव ही है। इसी कारण मेरे नागपुर आजानेपर भी इस प्रेससे सम्बन्धविच्छेदकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की। मुझे आशा है कि जब तक उनका प्रेससे सम्बन्ध है और मेरा साहित्यिक कार्यसे, तब तक हमारा सहयोग अस्खलित बना रहेगा।

नागपुर महाविद्यालय,
विजयादशमी, १९५०

हीरालाल जैन

विषयानुक्रमणिका

विषय	गाथा
महाधिकार ५	
मंगलाचरण	१
तिर्यग्लोकप्रज्ञप्तिमें १६ अन्तराधिकारोंका निर्देश	२
स्थावरलोकका प्रमाण	५
तिर्यग्लोकका प्रमाण	६
द्वीप-सागरसंख्या	७
द्वीप-सागरोंकी स्थिति	९
अभ्यन्तर भागमें स्थित ३२ द्वीप-समुद्रोंके नाम	११
बाह्य भागमें स्थित ३२ द्वीप-समुद्रोंके नाम	२२
लवण और कालोद समुद्रोंको छोड़ शेष सब समुद्रोंके द्वीपसम नामोंका निर्देश	२८
समुद्रोंके रसका निर्देश	२९
आदिके दो और अन्तिम समुद्रको छोड़ शेष समुद्रोंमें जलचरोंके अभावकी सूचना	३१
द्वीप-समुद्रोंका विस्तार	३२
आदिम, मध्यम और बाह्य सूचियोंका प्रमाण	३४
द्वीप-समुद्रोंकी परिधिका प्रमाण	३५
द्वीप-समुद्रोंके जम्बूद्वीपसम खण्ड	३६
आदिके नौ द्वीप और नौ समुद्रोंके अधिपति देवोंके नामोंका निर्देश	३७
शेष द्वीप-समुद्रोंके अधिपति देवोंके नामोंके उपदेशका अभाव	४८
उक्त देवोंकी स्थिति आदि	४९
नन्दीश्वर द्वीपका वर्णन	५२
कुण्डलवर द्वीपका वर्णन	११७
रुचकवर द्वीपस्थ रुचकवर पर्वतका वर्णन	१४१
लोकविनिश्चय ग्रन्थके अनुसार रुचकवर पर्वतका वर्णन	१६७
द्वितीय जम्बूद्वीपका वर्णन	१७९
स्वयम्भूरमण पर्वतका वर्णन	२३८
द्वीप-समुद्रोंका बादर क्षेत्रफल	२४१
प्रकारान्तरसे उनका बादर क्षेत्रफल	२४२
उन्नीस विकल्पों द्वारा द्वीप-समुद्रोंका अल्पबहुत्व	पृष्ठ ५६१
चौंतीस प्रकारके तिर्यंच	,, ५९६
तेजकायिक जीवोंकी संख्या	,, ५९७
पृथिवीकायिकादि जीवोंकी संख्या	,, ५९९
द्वीन्द्रियादि जीवोंकी संख्या	,, ६०७
पृथिवीकायिकादिकोंकी आयु	२८१
आयुबन्धक भाव	२९१
तिर्यंचोंमें योनिप्ररूपणा	२९३
उनमें सुख-दुखका निर्देश	२९८
उनमें यथासम्भव गुणस्थानादिकोंकी प्ररूपणा	२९९
सम्यक्त्वग्रहणके कारण	३०८
उनके द्वारा प्राप्त करने योग्य गति	३११
चौंतीस पदवाला अल्पबहुत्व	पृष्ठ ६१५
जघन्य अवगाहनाका स्वामी	३१५
पद्म आदिकोंकी अवगाहना	३१७

विषय	गाथा
द्वीन्द्रियादिकोंमें जघन्य अवगाहनाके स्वामी	३१८
अवगाहनाके विकल्पोंका क्रम	पृष्ठ ६१८
महाधिकार ६	
आद्य मंगल	१
सत्तरह अन्तराधिकारोंका निर्देश	२
व्यन्तर देवोंके तीन प्रकारके पुर	५
व्यन्तरोंके भेद	२५
चैत्य वृक्षोंका निर्देश	२७
कुलभेद	३२
किन्नर जातिके १० भेद	३४
किम्पुरुष जातिके १० भेद	३६
महोरग जातिके १० भेद	३८
गन्धर्व जातिके १० भेद	४०
यक्षोंके १२ भेद	४२
राक्षसोंके ७ भेद	४४
भूतोंके ७ भेद	४६
पिशाचोंके १४ भेद	४८
व्यन्तरोंमें गणिकामहत्तरियोंके नाम	५०
व्यन्तरोंका शरीरवर्ण	५५
दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंका निर्देश	५९
व्यन्तरनगरोंका वर्णन	६०
व्यन्तरेन्द्रोंके परिवार देवोंकी प्ररूपणा	६७
नीचोपपाद आदि देवोंका अवस्थान	८०
व्यन्तरोंमें आयुप्रमाण	८३
आहारकाल	८७
उच्छ्वासकाल	८९
अवधिविषय	९०
शक्तिप्ररूपणा	९२
शरीरोत्सेध	९८

विषय	गाथा
संख्या	९९
जन्म-मरण	१००
आयुबन्धक भाव आदि	१०१
जिनपुरोंका प्रमाण	१०२
महाधिकार ७	
आद्य मंगल	१
सत्तरह अन्तराधिकारोंका निर्देश	२
ज्योतिष देवोंका निवासक्षेत्र	५
ज्योतिष देवोंके भेद	७
उनकी संख्याका निर्देश	११
चन्द्र ज्योतिषियोंका प्रमाण	१२
सूर्य ज्योतिषियोंका प्रमाण	१४
अठासी ग्रहोंके नाम	१५
समस्त ग्रहोंकी संख्या	२३
अट्ठाईस नक्षत्रोंके नाम	२५
समस्त नक्षत्रोंकी संख्या	२९
एक चन्द्र सम्बन्धी ताराओंका प्रमाण	३१
ताराओंके नामोंके उपदेशका अभाव	३२
समस्त ताराओंकी संख्या	३३
चन्द्रमण्डलोंकी प्ररूपणा	३६
सूर्यनगरोंकी प्ररूपणा	६५
बुधनगरोंकी प्ररूपणा	८२
शुक्रनगरियां	८९
बृहस्पतिनगरियां	९३
मंगलनगरियां	९६
शनिनगरियां	९९
नक्षत्रनगरियां	१०४
तारानगरियां	१०८
नगरोंका प्रमाण	११४

विषय	गाथा
लोकविभागाचार्यके मतानुसार ज्योतिष-नगरियोंका बाहल्य	११५
चन्द्रोंकी संचारभूमि	११६
ध्रुवराशिका प्रमाण	१२३
चन्द्रवीथियोंका अन्तर	१२४
द्वितीयादि वीथियोंमें स्थित चन्द्रका मेरुसे अन्तर	१२८
दोनों चन्द्रोंका अन्तर	१४३
चन्द्रपथपरिधियोंका प्रमाण	१६१
समान कालमें असमान परिधियोंके परिभ्रमण कर सकनेका कारण	१७९
चन्द्रके गगनखण्ड	१८०
चन्द्रके वीथीपरिभ्रमणका काल	१८३
चन्द्रका एक मुहूर्तपरिमित गमनक्षेत्र	१८५
राहुविमानका वर्णन	२०१
पूर्णिमाकी पहिचान	२०६
अमावस्याकी पहिचान	२०७
चान्द्र दिवसका प्रमाण	२१३
प्रतिपद्से पूर्णिमा तक क्रमशः होनेवाली एक एक कलाकी हानि	२१४
प्रकारान्तरसे चन्द्रका कृष्ण व शुक्ल रूप परिणत होनेका निर्देश	२१५
पर्वराहु द्वारा चन्द्रका आच्छादन	२१६
सूर्यकी संचारभूमि	२१७
सूर्यवीथियां व उनका विस्तारादि	२१९
सूर्यवीथी और मेरुके बीच अन्तर	२२१
सूर्यकी ध्रुवराशि	२२२
सूर्यपथोंके बीच अन्तरका प्रमाण	२२३
प्रथमादि पथोंमें सूर्यका मेरुसे अन्तर	२२८
दोनों सूर्योंका अन्तर	२३४
सूर्यबिम्बका विस्तार	२४१
सूर्यपथोंका प्रमाण	२४२
मेरु आदिकी परिधियां	२४४
समान कालमें असमान परिधियोंके परिभ्रमण कर सकनेका कारण	२६५
सूर्यके गगनखण्ड	२६६
सूर्यका मुहूर्तपरिमित गमन	२६९
केतुके नगरस्थल	२७२
प्रथमादि पथोंमें दिन-रात्रिका प्रमाण	२७६
आतपक्षेत्र व उसका प्रमाण	२९१
तिमिरक्षेत्रका प्रमाण	३६१
आतप और तिमिर क्षेत्रका क्षेत्रफल	४१६
सूर्योंके उदय व अस्त होनेके समयकी कुछ विशेषतायें	४२१
उत्कृष्ट चक्षुस्पर्शक्षेत्रका प्रमाण	४३०
चक्रवर्ती द्वारा सूर्यबिम्बका दर्शन	४३२
भरत क्षेत्रमें सूर्यके उदित होनेपर क्षेमा आदिमें दिन-रात्रिका विभाग	४३५
ऐरावत क्षेत्रमें सूर्यके उदित होनेपर दिन-रात्रिका विभाग	४४१
चक्रवर्ती ५५७४$\frac{२ ३ ३}{६ ८ ०}$ यो. से अधिक दूरीपर सूर्यबिम्ब नहीं देख सकते	४४६
दोनों सूर्योंके प्रथम मार्गसे द्वितीय मार्गमें प्रविष्ट होनेकी दिशायें	४४९
सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर दिन-रात्रिका प्रमाण	४५२
सूर्यके उदयस्थान	४५४
ग्रहप्ररूपणा	४५७

विषय	गाथा
नक्षत्रप्ररूपणा	४५९
ताराप्ररूपणा	४९४
सूर्य व चन्द्रके अयन और उनमें दिन-रात्रियोंकी संख्या	४९८
नक्षत्रोंके गगनखण्ड	५०१
सूर्य व चन्द्र द्वारा एक मुहूर्तमें लांघने योग्य गगनखण्डोंका प्रमाण	५०६
अभिजित् आदि नक्षत्रोंकी सूर्यसंगति	५१६
अभिजित् आदि नक्षत्रोंकी चन्द्रसंगति	५२१
दक्षिण व उत्तर अयनमें आवृत्तिसंख्या	५२६
युगका प्रारम्भ दिवस	५३०
द्वितीयादिक आवृत्तियोंकी तिथियां	५३१
प्रथमादिक विषुवोंकी तिथियां	५३७
लवणसमुद्र आदिमें चन्द्रोंकी संख्या	५५०
चन्द्रके अभ्यन्तर पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथ व द्वीप-समुद्रजगतीके बीच अन्तराल	५५४
दोनों चन्द्रोंके बीच अन्तर	५६१
चन्द्रकिरणोंकी गति	५६७
लवणसमुद्रादिमें चन्द्रवीथियोंकी संख्या	५६८
चन्द्रकी मुहूर्तपरिमित गतिका प्रमाण	५६९
लवणसमुद्रादिमें चन्द्रोंकी शेष प्ररूपणा	५७०
लवणसमुद्रादिमें सूर्यसंख्या	५७१
दो दो सूर्योंका एक एक चारक्षेत्र व उसका विस्तार	५७३
एक एक चारक्षेत्रमें वीथीसंख्या व उनका विस्तार	५७४
लवणसमुद्रादिमें प्रत्येक सूर्यके बीच तथा प्रथम पथ व जगतीके बीच अन्तर	५७५
जम्बूद्वीपादिमें चन्द्र-सूर्यकी किरणगति	५८६
लवणसमुद्रादिमें सूर्यवीथियोंकी संख्या	५९०
प्रत्येक सूर्यकी मुहूर्तपरिमित गतिका प्रमाण	५९२
लवणसमुद्रादिमें ग्रहसंख्या	५९४
लवणसमुद्रादिमें नक्षत्रसंख्या	५९६
लवणसमुद्रादिमें तारासंख्या	५९९
अढ़ाई द्वीपके बाहर अचर ज्योतिषोंकी प्ररूपणा	६१२
समस्त ज्योतिष देवोंका प्रमाण	पृष्ठ ७६४
चन्द्र-सूर्यादिकोंकी आयु आदिकी प्ररूपणा	६१४
महाधिकार ८	
आद्य मंगल	१
इक्कीस अन्तराधिकारोंका निर्देश	२
स्वर्गपटलोंकी स्थिति	६
तिरेसठ इन्द्रकविमानोंके नाम	१२
इन्द्रकविमानोंका विस्तार	१८
ऋतु इन्द्रकादिके श्रेणिबद्ध व उनका विन्यासक्रम	८२
कल्पसंख्याविषयक मतभेद	११५
कल्पोंकी स्थिति	११८
बारह कल्प व कल्पातीत विमानोंके नाम	१२०
मतान्तरसे विजयादि विमानोंका दिग्भेद	१२६
मतान्तरसे सोलह कल्पोंके नाम	१२७
कल्प व कल्पातीत विमानोंकी स्थिति और सीमाका निर्देश	१२९
सौधर्म आदि कल्पोंके आश्रित श्रेणिबद्ध व प्रकीर्णक विमानोंका निर्देश	१३७
सौधर्मादि कल्पोंमें समस्त विमानसंख्या	१४९
सौधर्मादि कल्पोंमें श्रेणिबद्ध और इन्द्रक विमानोंकी संख्या	१५१

विषय	गाथा
प्रकीर्णक विमानोंकी संख्या	१६८
मतान्तरसे सोलह कल्पोंमें विमानसंख्या	१७८
संख्यात व असंख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी संख्या	१८६
विमानतलोंका बाहल्य	१९८
विमानोंका वर्ण	२०३
विमानोंका आधार	२०६
विमानोंके ऊपर स्थित प्रासादोंका वर्णन	२०८
इन्द्रोंके दशविध परिवारका वर्णन	२१४
इन्द्र व प्रतीन्द्र आदिकी देवियोंका प्रमाण	२०५
देवियोंका उत्पत्तिस्थान	२३१
सौधर्म आदि कल्पोंमें प्रवीचारका नियम	२३६
इन्द्रोंके निवासस्थानोंका निर्देश	२३८
इन्द्रोंके प्रासादोंका वर्णन	२५२
इन्द्रोंकी देवियोंकी समस्त संख्या	२७९
लोकविनिश्चय ग्रन्थके अनुसार इन्द्र-देवियोंकी संख्या	२८६
संग्रहणीके अनुसार इन्द्रदेवियोंकी संख्या	२८७
इन्द्रोंकी सेवाविधि	२८८
इन्द्रप्रासादोंके आगे स्थित स्तम्भोंका वर्णन	२९८
इन्द्रप्रासादोंके आगे स्थित न्यग्रोध वृक्षोंका वर्णन	४०५
सुधर्मा सभा	४०७
उपपाद सभा	४१०
जिनेन्द्रप्रासाद	४११
इन्द्रदेवियोंके भवन	४१३
द्वितीयादि वेदियोंका वर्णन	४२१
उपवनप्ररूपणा	४२९
सौधर्मेन्द्रादिके यानविमानोंका निर्देश	४३८
इन्द्रोंके मुकुटचिह्न	४४८
मतान्तरसे मुकुटचिह्नोंका निर्देश	४५०
अहमिन्द्रोंकी विशेषता	४५२
आयुप्रमाण	४५८
इन्द्रादिकोंका विरह	५४२
देवोंका आहारकाल	५५१
आयुबन्धक परिणाम	५५६
उत्पत्ति समयमें देवोंकी विशेषता	५६७
उत्पत्तिके अनन्तर जिनपूजाप्रक्रम	५७६
देवोंका सुखोपभोग	५९०
तनुस्कायकी प्ररूपणा	५९७
लौकान्तिक देवोंकी स्थिति व संख्या	६१४
लोकविभागके अनुसार लौकान्तिकोंकी स्थिति व संख्या	६१५
बीस प्ररूपणाओंका दिग्दर्शन	६६३
सम्यक्त्वग्रहणके कारण	६७७
वैमानिक देवोंकी आगति	६८०
अवधिविषय	६८५
संख्या	६९१
शक्तिदिग्दर्शन	६९७
योनिप्ररूपणा	७००

महाधिकार ९

आद्य मंगल	१
पांच अन्तराधिकारोंका निर्देश	२
सिद्धोंका निवासक्षेत्र	३
संख्या	५
अवगाहना	९
सुख	१७
सिद्धत्वके कारण	१८
अन्तिम मंगल	९९

शुद्धि-पत्र

—◇—

अशुद्धियोंके साथ ही जो पाठ प्रतियोंमें ऐसे ही उपलब्ध हैं, परन्तु अशुद्ध प्रतीत होते हैं; उनके स्थानमें यहां शुद्ध पाठ इस [ ] कोष्ठकमें सुझाये गये हैं और उन्हींके अनुसार अर्थभेद भी दिखला दिया गया है—

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२	५	अयदंबतउरसासयमणिसिला··· रुजगं कलंभपदराणि	[अयतंबतउयमस्सयमणोसिला ····· रुजगंकअब्भपडलाणि]
,,	६	अंबवालुकाओ	[अब्भवालुकाओ]
,,	,,	चंदस्स	[चंदण]
,,	७	वंवयवगमोअसारगपहुदीणि · एसेण	[वज्जयवगमोअमसारगल्लपहुदीणि ···एदेण]
,,	२२	मणिशिला, ···· गोमेदक	मनःशिला, ···· गोमध्यक
,,	२३	रुचक, कदंब (धातुविशेष), प्रवर (धातुविशेष), ताम्रवालुका (लालरेत)	रुचक, अंक, अभ्रपटल, अभ्र-बालुका
,,	२४	चन्द्राश्म	चन्दन
,,	२५	वंवय (वप्रक ?) वगमोच (!) और सारंग	वप्रक (मरकत), वकमणि (पुष्पराग), मोचमणि (कदली-वर्णाकार नीलमणि) और मसार-गल्ल (मसृणपाषाणमणि विद्रुम-वर्ण)
५३	१	असारगल्लं	[मसारगल्लं]
६०	६	तियपुढवीए	[तदियपुढवीए]
७१	५	विय	[चिय]
११८	२	णालयादि	[णाडयादि]
,,	१२	नादगृह और लतागृह	और नाटकादि गृह
१३५	६	सवण्णिदा	[समण्णिदा]
,,	७	सायारणयायारा	[सायारयणायारा]
१३७	४	सण्णे	[सयणे]
,,	१७	महाई कोमल उपपादशालामें	उपपादशालामें बहुमूल्य शय्याके ऊपर
१४६	५	णादआसण	[णाडआसण]
,,	१७	नादगृह	नाटकगृह

१५६	१८	मेखलाम्र	मेखलापुर
१६०	१०	सच्छचित्ता	[सत्तचित्ता]
,,	२८	निर्मलचित्त होकर भक्तिसे	भक्तिमें आसक्तचित्त होकर
१६३	२	करणीचावस्स	करणी चावस्स
१६८	१	अट्ठहदा	अट्ठहिदा
,,	१३	आटसे गुणित (उन्नीस)	आठसे भाजित उनतीस $\left(\frac{२९ \div ८}{१९}\right)$
१९२	४	उवमाणं	उवमाणे
२२०	७	विसयदुक्ख	[विसमदुक्ख]
२२४	६	पुरस्मे	पुरस्से
२६४	२६	धूलि (मालिवृक्ष), पलाश, तेंदू पाटल, पीपल	धूलिपलाश, तेंदू , पाटल, जंबू पीपल
२६७	५	णिअकारएसु	[णिअकोट्ठएसु]
३१६	१३	एक हजार वर्षपूर्व, पचास हजार वर्षपूर्व,	एक हजार वर्ष, पचास हजार पूर्व,
,,	१७	पूर्व १००० । सगर ५०००० ।	वर्ष १००० । सगर पूर्व ५००००
३२३	६	णयरसुं	णयरेसुं
३२७	२२	वर्ष ३००० ।	वर्ष ३०००० ।
३३४	२०	प्र. पूर्व ८३०००	प्र. पूर्व ८३०००००
३४१	१२	× × ×	[पाठान्तर]
,,	३०	× × ×	[पाठान्तर]
३४५	२२	हड्डिय	हड्डियां
३५४	६	रोहिणाम	[रोहिदाम]
३६७	१	वेकोसे वि	[वेकोसेहि]
४४२	१७	$\frac{२७४९५४}{११}$	$\frac{२७४९५४}{१९}$
४४५	२७	दोनों ओरसे एक हजार योजन गहरीमें	गहराई दो योजन और
४५१	१	विणिहिट्ठं	वि णिहिट्ठं
,,	१४	संगाइणीमें लोकविभागमें	संगाइणी और लोकविभागमें
४७६	२	हदवदी	दहवदी
५१२	५	एस समुद्दा दीवा	[एदे समुद्ददीवा]

५३३	५	३५८४ धण····१७९२	[$\overline{३५८४}$ धण···· $\overline{१७९२}$]
,,	६	८९६ धण···४४८···२२४	[$\overline{८९६}$ धण···$\overline{४४८}$···$\overline{२२४}$]
,,	७	११२ धण···५६ धण ··· २८	[$\overline{११२}$ धण··· $\overline{५६}$ धण ··· $\overline{२८}$]
,,	१९	१७९२	ज. श्रे. ÷ १७९२
,,	२०	९३५७	५३७५
५३४	२-४	११२ रिण··· २२४ रिण ·· ५६ रिण $\frac{}{१}$ २५०० । ··· रिण··· ११२ रिण ··· $\frac{}{१}$ २८ रिण ··· २८ रिण ··· ५६ रिण $\frac{}{१}$ ··· १४ रिण · · १४ रिण ··· २ रिण $\frac{}{२८}$ ७५००० ।	[$\overline{११२}$ रिण··· $\frac{—१}{२२४}$ रिण··· $\overline{५६}$ रिण २६२५०० । ··· $\overline{५६}$ रिण ··· $\frac{—१}{११२}$ रिण ··· $\overline{२८}$ रिण ··· $\overline{२८}$ रिण ··· $\frac{—१}{५६}$ रिण ·· $\overline{१४}$ रिण ··· $\overline{१४}$ रिण — $\frac{३}{२८}$ रिण ७५००० बाहिर $\overline{७}$ ।]
५३४	११-१५	अहीन्द्रवर द्वीपकी आदि सूची ··· ·····मध्य $\frac{३}{२८}$ रिण ७५००० ।	अहीन्द्रवर द्वीपकी आदिम सूची ज. श्रे ÷ ११२ — यो.२८१२५० = २८१२५० यो कम $\frac{१}{१६}$ रा जु, मध्यम सूची २७१८७५ यो. कम $\frac{३}{३२}$ राजु, बाह्य सूची २६२५०० यो. कम $\frac{१}{८}$ राजु । अहीन्द्रवर समुद्र आ. सूची २६२५०० यो. कम $\frac{१}{८}$ राजु, म. सू. २४३७५० यो. कम $\frac{३}{१६}$ राजु, बा. सू २२५००० यो. कम $\frac{१}{४}$ राजु । स्वयंभू.द्वीप आ. सू. २२५००० यो. कम $\frac{१}{४}$ राजु, म. सू. १८७५०० यो. कम $\frac{३}{८}$ राजु, बा. सू. १५०००० यो. कम $\frac{१}{२}$ राजु । स्वयंभू. समुद्र आ. सू. १५०००० यो. कम $\frac{१}{२}$ राजु, म सू. ७५००० यो. कम $\frac{३}{४}$ राजु, बा. सू. १ राजु ।
५३५	१९	श्रीप्रभ	श्रीप्रभु

५३५	२६	नन्दिप्रभ	नन्दिप्रभु
५४७	२	जिणचरियणालयं	[जिणचरियणालयं]
५५३	७	वहंति	[वहंति]
,,	८	पडिभणामो	पडि भणामो
,,	२०	दिशाओंमें चार दिव्य प्रासाद है। (!) उनसे आगे	दिशाओंमें उत्पन्न-अनुत्पन्न देवोंके चार दिव्य प्रासाद हैं। आगे
५६८	७	माहिंदवर	[माहिंदवर]
५६८	८	$\frac{-३}{११२}$	$\frac{-३}{११२}$
५७८	६	सलागादु	सलागा दु
६१६	८	विसेसाहिया रिण; $\frac{}{११}$ a १० रिण $\frac{\overline{=}\,\frac{४}{५}}{a}$ | ९।	विसेसाहिया $\frac{}{११}$ a १० रिण $\frac{\overline{=}\,\frac{४}{५}}{a}$ | ९।
६३२	९	वच्चदि तप्पाओग्गजहण्णखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति।	वच्चदि रूऊणपक्खित्तेोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिददरणिगोदपडिट्ठिदणिव्वत्तिपज्जत्तउक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाओग्गासंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति।
,,	२१-२५	विकल्प उसके योग्य × × × चालू रहता है।	विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित इतर-निगोद-प्रतिष्ठित निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती।
,,	२५	उत्कृष्ट	जघन्य
६४१	१५	अवधिज्ञानकी शक्तियां, "उंचाई, "संख्या, ऐक समयमें जन्म, मरण	अवधिज्ञान, शक्ति, "उंचाई, "संख्या ऐक समयमें जन्म-मरण
६४७	५	रयणड्ढा	रयणड्ढा
६४९	९	पदसु	एदेसु
६५६	१	दंसणगहणाण····· भावसामाणि	[दंसणगहणस्स····· भावणसमाणे]
६५६	२	कदी भजिदे	कदीभजिदे

७०१	१९	॥ २७२ ॥	॥ २७२ ॥ ४ प्रमाणांगुल ।
७३०	२	विव सायरा	[चेव सयरा]
७३५	१	लंघणक्कालं (?)	[लंघंता जक्काले]
७४७	१५	जघन्य	मध्यम
,,	२५	१५०५	१००५
७४८	१४	३१५; ३१५	३०१५; ३०१५
७८२	६	बासट्ठी	[तेसट्ठी]
७८४	१	जोएज्ज	जोएज्ज
७९०	५	सुदंसणाओ	[सुदंसणाइ]
७९२	११	लोनेके लिये	लानेके लिये
७९४	१	सेदिगदाण	सेदिगदा ण
७९५	१७	। तिरेसठवें पटलमें प्रकीर्णक नहीं हैं, श्रेणिबद्ध विमान हैं	। परन्तु जो आचार्य ऋतु इन्द्रकके चारों ओर तिरेसठ-तिरेसठ श्रेणिबद्ध विमान स्वीकार करते हैं उनके अभिप्रायसे यहां प्रकीर्णक नहीं हैं, केवल श्रेणिबद्ध विमान हैं ।
८०७	२२	ऋषम	ऋषभ
८०९	४	वसहाणीयादीणं	वसहाणीयादीणं
८१३	८	किण्हा या ये पुराइं रामावइ	[किण्हा य मेघराइं रामा वइ]
,,	२१	बलनामा अर्चिनिका ये सब इन्द्रोंके सदृश नामवाली होती हैं ।	[पद्मा, शिवा, शची, अंजुका, रोहिणी, नवमी] बला नामक और अर्चिनिका [ये आठ ज्येष्ठ देवियां प्रत्येक दक्षिण इन्द्रके होती हैं] वे सब देवियां सभी इन्द्रोंके समान नामवाली होती हैं ।
८१३	२१	कृष्णा ··· (!) रामापति ···· वसुधर्मा, वसुंधरा सब इन्द्रसम नामवाली हैं ॥ २०७ ॥	कृष्णा, मेघराजी, रामा, ····· वसुधर्मा और वसुन्धरा, ये आठ ज्येष्ठ देवियां नियमसे [प्रत्येक उत्तर इन्द्रके होती हैं ।] सब इन्द्रोंकी इन देवियोंके नाम समान ही होते हैं ॥ २०७ ॥

८२३	२४	देवी १६०००, अग्रदेवी ८।	अग्रदेवी ८, परिवारदेवी १६०००; १६००० × ८ = १२८०००; वल्लभा ३२०००; १२८००० + ३२००० = १६०००० ।
८५१	५	सहिया जीवा	सहियाजीवा
„	१९	जीव	आजीवक साधु
८५४	४	उपपत्ती	उप्पत्ती
८५९	८	वरुण	[अरुण]
„	२८	वरुण	अरुण
८६२	१	अण्णसरूवं वेति	[अण्णेण परूवेंति]
८६७	५	आईसाणं	आ ईसाणं
„	९	वज्जा	[भज्जा]
„	२५	शलाकापुरुष न होकर नियमसे	शलाकापुरुष रूपसे भाज्य अर्थात् विकल्पनीय हैं। किंतु वे नियमसे
८७४	९	जावद्धं गेदव्वं	[जावद्धम्मं दव्वं]
„	२२	जितना मार्ग जाने योग्य है उतना	जहां तक धर्म द्रव्य है वहां तक
९८७	११	× × ×	२४ लवण समुद्रके ... की हानि-वृद्धि ४-२४४४
„	१३	× × ×	२५ अन्तरद्वीप ४-२४९१
„	२०	× × ×	१६ पाण्डुकशिलाकी उंचाई आदि ४-१८२१



जदिवसहाइरिय-विरइदा

तिलोयपण्णत्ती

[पंचमो महाधियारो]

भव्वकुमुदेक्ककंदं चंदप्पहजिणवरं[1] हि णमिऊणं । भासेमि तिरियलोयं लवमेत्तं अप्पसत्तीए ॥ १
थावरलोयपमाणं मज्झम्मि य तस्स तिरियतसलोओ[2] । दीवोवहीण संखा विण्णासो णामसंजुत्तं ॥ २
णाणाविहखेत्तफलं तिरियाणं भेदसंखआऊ य । आउगबंधणभावं जोणी सुहदुक्खगुणपहुदी ॥ ३
सम्मत्तगहणहेदू गदिरागदिथोववहुगमोगाहं । सोलसया अहियारा पण्णत्तीए हि तिरियाणं ॥ ४
जा जीवपोग्गलाणं धम्माधम्मप्पवद्दआयासे[3] । होंति हु गदागदाणि ताव हवे थावरालोओ ॥ ५
। थावरलोयं गदं ।

भव्यजनरूप कुमुदोंको विकसित करनेके लिये एक अद्वितीय चन्द्रस्वरूप चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रको नमस्कार करके मैं अपनी शक्तिके अनुसार तिर्यग्लोकका लेशमात्र निरूपण करता हूं ॥ १ ॥

स्थावरलोकका प्रमाण[1], उसके बीचमें तिर्यक् त्रसलोक[2], द्वीप-समुद्रोंकी संख्या[3], नामसहित विन्यास[4], नाना प्रकारका क्षेत्रफल[5], तिर्यंचोंके भेद[6], संख्या[7] और आयु[8], आयुबन्धके निमित्तभूत परिणाम[9], योनि[10], सुख-दुःख[11], गुणस्थान आदिक[12], सम्यक्त्वग्रहणके कारण[13], गति-आगति[14], अल्पबहुत्व[15] और अवगाहना[16], इस प्रकार ये तिर्यंचोंकी प्रज्ञप्तिमें सोलह अधिकार हैं ॥ २-४ ॥

धर्म व अधर्म द्रव्यसे संबन्धित जितने आकाशमें जीव और पुद्गलोंका जाना-आना रहता है, उतना स्थावरलोक है ॥ ५ ॥

स्थावरलोकका कथन समाप्त हुआ ।

१ द ब °जिणवरे हिं. २ द ब °लोए. ३ ब धम्मधहदुक्खगुणपहुदी.

मंदरगिरिमूलादो इगिलक्खं जोयणाणि बहलम्मि । रज्जूय पदरखेत्ते चिट्ठेदि तिरियतसलोओ ॥ ६

= । १ ००००० ।
४९

। तसलोयपरूवणा गदा ।

पणुवीसकोडकोडीपमाणउद्धारपल्लरोमसमा । दीओवहीण संखा तस्सद्धं दीवजलणिही कमसो ॥ ७

। संखा समत्ता ।

सव्वे दीवसमुद्दा संखादीदा भवंति समवट्टा । पढमो दीओ उवही चरिमो मज्झम्मि दीउवही ॥ ८
चित्तोवरि बहुमज्झे रज्जूपरिमाणदीहविक्खंभे । चेट्ठंति दीवउवही एक्केक्के वेढिऊण हु परिदो ॥ ९
सव्वे वि वाहिणीया चित्तखिदिं खंडिदूण चेट्ठंति । वज्जखिदीए उवरिं दीवा वि हु उवरि चित्ताए ॥ १०
आदी जंबूदीओ हवेदि दीवाण णाम सयलाणं । अंते सयंभुरमणो णामेण विस्सुदो दीओ ॥ ११
आदी लवणसमुद्दो पव्वाण हवेदि सलिलरासीणं । अंते सयंभुरमणो णामेण विस्सुदो उवही ॥ १२

मंदरपर्वतके मूलसे एक लाख योजन बाहल्यरूप राजुप्रतर अर्थात् एक राजु लंबे-चौड़े क्षेत्रमें तिर्यक्तसलोक स्थित है ॥ ६ ॥

१ राजु लम्बा चौड़ा और एक लाख योजन ऊंचा तिर्यग्लोक त्रसलोक ।

त्रसलोकप्ररूपणा समाप्त हुई ।

पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्योंके रोमोंके प्रमाण द्वीप व समुद्र दोनोंकी संख्या है । इसकी आधी क्रमशः द्वीपोंकी और आधी समुद्रोंकी संख्या है ॥ ७ ॥

संख्या समाप्त हुई ।

सब द्वीप-समुद्र असंख्यात एवं समवृत्त हैं । इनमेंसे पहिला द्वीप, अन्तिम समुद्र और मध्यमें द्वीप-समुद्र है ॥ ८ ॥

चित्रा पृथिवीके ऊपर बहुमध्यभागमें एक राजु लंबे-चौड़े क्षेत्रके भीतर एक एकको चारों ओरसे घेरे हुए द्वीप व समुद्र स्थित हैं ॥ ९ ॥

सब ही समुद्र चित्रा पृथिवीको खण्डित कर वज्रा पृथिवीके ऊपर, और सब द्वीप चित्रा पृथिवीके ऊपर स्थित हैं ॥ १० ॥

उन सब द्वीपोंके आदिमें जम्बूद्वीप और अन्तमें स्वयम्भूरमण नामसे प्रसिद्ध द्वीप है ॥ ११ ॥

सब समुद्रोंमें आदि लवणसमुद्र और अन्तिम स्वयम्भूरमण इस नामसे प्रसिद्ध समुद्र है ॥ १२ ॥

१ द चित्तेहु, ब चित्तेदि हु. २ ब दीउवही. ३ द ब °विक्खमो. ४ द ब पदरो. ५ द लवणसमुद्दे.

पढमो जंबूदीओ तप्परदो होदि लवणजलरासी । तत्तो धादइसंडो दीओ उवही य कालोदो ॥ १३
पोक्खरवरो त्ति दीओ पोक्खरवरवारिही[1] तदो होदि । वारुणिवरक्खदीओ वारुणिवरवारिही[2] वि तप्परदो ॥ १४
तत्तो खीरवरक्खो खीरवरो होदि णीररासी य । पच्छा घदवरदीओ घदवरजलही य परो तस्स ॥ १५
खोदवरक्खो दीओ खोदवरो णाम वारिही होदि । णंदीसरवरदीओ णंदीसरणीररासी य ॥ १६
अरुणवरणामदीओ अरुणवरो णाम वाहिणीणाहो । अरुणब्भासो दीओ अरुणब्भासो पयोरासी ॥ १७
कुंडलवरो त्ति दीओ कुंडलवरणामसयलगरासी य । संखवरक्खो दीओ संखवरो होदि सयलरयरो ॥ १८
रुजगवरणामदीओ रुजगवरक्खो तरंगिणीरमणो । भुजगवरणामदीओ भुजगवरो अण्णओ होदि ॥ १९
कुसवरणामो दीओ कुसवरणामो य णिण्णगाणाहो । कुंचवरणामदीओ कुंचवरणामआपगाकंतो ॥ २०
अब्भंतरभागादो एदे बत्तीस दीववारिणिही । बाहिरदो पुढाणं साहेमि इमाणि णामाणि ॥ २१

प्रथम जम्बूद्वीप, उसके पर लवणसमुद्र फिर धातकीखण्डद्वीप और उसके पश्चात् कालोदसमुद्र है ॥ १३ ॥

तत्पश्चात् पुष्करवरद्वीप व पुष्करवरवारिधि और फिर वारुणीवरद्वीप व वारुणीवरसमुद्र है ॥ १४ ॥

उसके पश्चात् क्रमसे क्षीरवरद्वीप, क्षीरवरसमुद्र और तत्पश्चात् घृतवरद्वीप व घृतवरसमुद्र है ॥ १५ ॥

पुनः क्षोदवरद्वीप, क्षोदवरसमुद्र और तत्पश्चात् नन्दीश्वरद्वीप व नन्दीश्वरसमुद्र है ॥ १६ ॥

इसके पश्चात् अरुणवरद्वीप, अरुणवरसमुद्र, अरुणाभासद्वीप और अरुणाभाससमुद्र है ॥ १७ ॥

पश्चात् कुण्डलवरद्वीप, कुण्डलवरसमुद्र, शंखवरद्वीप और शंखवरसमुद्र है ॥ १८ ॥

पुनः रुचकवर नामक द्वीप, रुचकवरसमुद्र, भुजगवर नामक द्वीप व भुजगवरसमुद्र है ॥ १९ ॥

तत्पश्चात् कुशवर नामक द्वीप, कुशवरसमुद्र, क्रौंचवर नामक द्वीप और क्रौंचवर-समुद्र है ॥ २० ॥

ये बत्तीस द्वीप-समुद्र अभ्यन्तर भागमें हैं । अब बाह्य भागमें द्वीप-समुद्रोंके नामोंको कहता हूं जो ये हैं— ॥ २१ ॥

१ द ब पोक्खरवा°. २ द ब वारुणिवरदीवि. ३ द रसणाओ.

उवही सयंभुरमणो अंते दीओ सयंभुरमणो त्ति । आदिल्लो णादव्वो अहिंदवरउवहिदीवा य ॥ २२
देववरोदधिदीओ जक्खवरक्खा समुद्ददीवा य । भूदवरण्णवदीवा समुद्ददीवा वि णागवरा ॥ २३
वेरुलियजलहिदीवा वज्जवरा वाहिणीरमणदीवा । कंचणजलणिहिदीवा रुप्पवरा सलिलणिहिदीवा ॥ २४
हिंगुलपयोधिदीवा अंजणवरणिण्णगादइददीवा[1] । सामसमुद्दो दीवो सिंदूरो अंबुणिहिदीवा ॥ २५
हरिदालसिंधुदीवा मणिसिलकल्लोलिणीरमणदीवा । एत्त समुद्दा दीवा बाहिरदो होंति बत्तीसा ॥ २६
चउसट्ठीपरिवज्जिदअड्ढाइज्जंबुरासिरोमाणिं[2] । मेत्तंभोणिहिदीवा सुभणामा[3] एक्कणाम बहुवाणं ॥ २७
जंबूदीवे लवणो उवही कालो त्ति धादईसंडे । अब्भेसा वारिणिही वत्तव्वा दीवसमणामा ॥ २८
पत्तेयरसा जलही चत्तारो होंति तिण्णि उदयरसा । मेसदो[4] उच्छुरसा तदियसमुद्दम्मि मधुसलिलं ॥ २९
पत्तेक्करसा वारुणिलवणाघिघदवरा य खीरवरो । उदकरसो कालोदो पोक्खरओ सयंभुरमणो य ॥ ३०

अन्तसे प्रारम्भ करनेपर स्वयंभूरमणसमुद्र, पश्चात् स्वयम्भूरमणद्वीप आदिमें है ऐसा जानना चाहिये । फिर अहीन्द्रवरसमुद्र, अहीन्द्रवरद्वीप, देववरसमुद्र, देववरद्वीप, यक्षवरसमुद्र, यक्षवरद्वीप, भूतवरसमुद्र, भूतवरद्वीप, नागवरसमुद्र, नागवरद्वीप, वैडूर्यसमुद्र, वैडूर्यद्वीप, वज्रवरसमुद्र, वज्रवरद्वीप, कांचनसमुद्र, कांचनद्वीप, रूप्यवरसमुद्र, रूप्यवरद्वीप, हिंगुलसमुद्र, हिंगुलद्वीप, अंजनवर निम्नगाधिपति, अंजनवरद्वीप, श्यामसमुद्र, श्यामद्वीप, सिंदूरसमुद्र, सिंदूरद्वीप, हरितालसमुद्र, हरितालद्वीप तथा मनःशिलसमुद्र, मनशिलाद्वीप, ये बत्तीस समुद्र व द्वीप बाह्य भागमें है ॥ २२–२६ ॥

चौसठ कम अढ़ाई उद्धारसागरोंके रोमोंप्रमाण अवशिष्ट शुभनामधारक द्वीप-समुद्र है । इनमें बहुतोंका एक ही नाम है ॥ २७ ॥

जम्बूद्वीपमें लवणोदधि और धातकीखंडमें कालोद नामक समुद्र है । शेष समुद्रोंके नाम द्वीपोंके नामोंके समान ही कहना चाहिये ॥ २८ ॥

चार समुद्र प्रत्येकरस अर्थात् अपने नामोंके अनुसार रसवाले, तीन उदकरस (स्वाभाविक जलके स्वादसे संयुक्त) और शेष समुद्र ईखके समान रससे सहित है । तीसरे समुद्रमें मधुरूप जल है ॥ २९ ॥

वारुणीवर, लवणाब्धि, घृतवर और क्षीरवर, ये चार समुद्र प्रत्येकरस; तथा कालोद, पुष्करवर और स्वयम्भूरमण; ये तीन समुद्र उदकरस है ॥ ३० ॥

---

१ ब णिण्णगादइदीवा, द णिण्णगादइददीवा. २ द ब °रोमा. ३ द सुभणामो. ४ द सेसदिय.

लवणोदे कालोदे जीवा अंतिमसयंभुरमणम्मि । कम्ममहीसंबद्धे जलयरया होंति ण हु सेसे ॥ ३१
जंबू जोयणलक्खप्पमाणवासो दु दुगुणदुगुणाणिं । विक्खंभपमाणाणिं लवणादिसयंभुरमणंतं ॥ ३२
१००००० । २००००० । ४००००० । ८००००० । १६००००० । ३२००००० ।
एवं सयंभुरमणंबायरपरियंत होइ वित्थारं । तत्तो उवरिमजक्खेंवरदीवे होदि वित्थारो ॥ ३३
३५८४ घणजोयणाणि ९३७५ । जक्खवरसमुद्दस्स विन्थारो १७९२ धण ९३७५ । देववरदीव
१६ ८
८९६ धण ९३७५ । देववरसमुद्द ४४८ धण ९३७५ । अहिंदवरदीव २२४ धण ९३७५ । अहिंदवरसमुद्द
४ २
११२ धण १८७५० । सयंभुवरदीव ५६ धण ३७५०० । सयंभुवरसमुद्द २८ धण ७५०००
लवणादीणं रुंदं दुतिचउगुणिदं कमा तिलक्खूणं । आदिममज्झिमबाहिरसूईणं होदि परिमाणं ॥ ३४
१००००० । ३००००० । ५००००० । बाद ५००००० । ५००००० । १३००००० । कालो

कर्मभूमिसे सम्बद्ध लवणोद, कालोद और अन्तिम स्वयम्भूरमण समुद्रमें ही जलचर जीव है । शेष समुद्रोंमें नहीं है ॥ ३१ ॥

जम्बूद्वीपका विस्तार एक लाख योजनप्रमाण है । इसके आगे लवणसमुद्रसे लेकर स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्त द्वीप-समुद्रोंके क्रमशः दुगुणे दुगुणे विस्तारप्रमाण है ॥ ३२ ॥

जं. द्वी. १००००० । ल. स. २००००० । धा. द्वी. ४००००० । का. स. ८००००० । पु. द्वी. १६००००० । पु. स. ३२००००० ।

इस प्रकार स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्त विस्तार है । उसके उपरिम यक्षवरद्वीपका विस्तार है ॥ ३३ ॥

यक्षवरद्वीप जगश्रेणी ÷ ३५८४ = $\frac{९३७५}{१६}$ राजु + योजन $\frac{९३७५}{१६}$ । यक्षवरसमुद्र १७९२ धन $\frac{९३७५}{८}$ । देववरद्वीप ज. श्रे. ÷ ८९६ धन $\frac{९३७५}{४}$ । देववरसमुद्र ज. श्रे. ÷ ४४८ धन $\frac{९३७५}{२}$ । अहीन्द्रवरद्वीप ज. श्रे. ÷ २२४ धन ९३५७ । अहीन्द्रवरसमुद्र ज. श्रे. ÷ ११२ धन १८७५० । स्वयंभूवरद्वीप ज. श्रे.÷५६ धन ३७५०० । स्वयंभूवरसमुद्र ज. श्रे.÷२८ धन ७५००० ।

लवणसमुद्रादिकके विस्तारको क्रमसे दो, तीन और चारसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमेंसे तीन लाख कम करनेपर क्रमसे आदिम, मध्यम और बाह्य सूचीका प्रमाण होता है ॥ ३४ ॥

२ ला. × २ – ३ ला. = १ ला. लवणसमुद्रकी आ. सूची, २ ला. × ३ – ३ ला. = ३ ला. ल. स. की. म. सूची, २ ला. × ४ – ३ ला. = ५ ला. ल. स. की. बा. सूची । ४ ला. × २ – ३ ला. = ५ ला. धा. की आ. सूची, ४ ला. × ३ – ३ ला. = ९ ला. धा. की म. सूची, ४ ला. × ४ – ३ ला. = १३ ला. धा. की बा. सूची, । इसी प्रकार कालोदसमुद्रकी आदि, मध्य और बाह्य सूचीका प्रमाण क्रमसे १३ ला., २१ ला. और २९ ला. योजन जानना चाहिये ।

१३००००० । २१००००० । २९००००० । एवं देवसमुद्दं त्ति दट्ठव्वं । तस्सुवरिमहिंदवरदीवस्स ११२ रिण जोयणाणि २८१२५० , मज्झिम २२४ रिण २७१८७५, बाहिर ५६ रिण २५००। अहिंदवर-
३
समुद्दं ५६ रिण २६२५००, मज्झिमम ११२ रिण २४३७५०, बाहिर २८ रिण २२५०००। सयंभू-
३
रमणदीव २८ रिण २२५०००, मज्झिमम ५६ रिण १८७५००, बाहिर १४ रिण १५००००। सयंभू-
३
रमणसमुद्द १४ रिण १५००००, मज्झिमम २ रिण ७५०००।
२८
बाहिर जंबूपरिहीजुगलं इच्छियदीवंबुरासिसूइहदं । जंबूवासविहत्तं इच्छियदीवद्धिपरिहि त्ति ॥ ३५
बाहिरसूईवग्गो अब्भंतरसूइवग्गपरिहीणो। लक्खस्स कदिम्मि हिदे इच्छियदीवद्धिखंडपरिमाणं ॥ ३६
२४। १४४। ६७२। एवं सयंभुरमणंतं दट्ठव्वं ।
जंबूलवणादीणं दीवुवहीणं च अहिवई दोण्णि । पल्लेक्कं वेंतरया ताणं णामाणि साहेमि[4] ॥ ३७

इस प्रकार देवसमुद्र तक अपनी अपनी सूचीका प्रमाण जानना चाहिये। इसके आगे अर्हीन्द्रवरद्वीपकी आदि सूची ११२ रिण २८१२५०, मध्य $\frac{२२४}{३}$ रिण २४३७५०, बाह्य सूची ५६ रिण २५००। अर्हीन्द्रवरसमुद्र ५६ रिण २६२५००, मध्यम $\frac{११२}{३}$ रिण २४३७५०, बाह्य २८ रिण २२५०००। स्वयंभूरमणद्वीप २८ रिण २२५०००, मध्य $\frac{५६}{३}$ रिण १८७५००, बाह्य १४ रिण १५००००। स्वयंभूरमणसमुद्र १४ रिण १५००००, मध्य $\frac{२८}{३}$ रिण ७५०००।

जम्बूद्वीपके बाह्य परिधियुगलको (स्थूल और सूक्ष्म) अभीष्ट द्वीप व समुद्रकी सूचीसे गुणा करके उसमें जम्बूद्वीपके विस्तारका भाग देनेपर इच्छित द्वीप समुद्रकी परिधिका प्रमाण आता है ॥ ३५ ॥

बाह्य सूचीके वर्गमेंसे अभ्यन्तर सूचीके वर्गको घटाकर शेषमें एक लाखके वर्गका भाग देनेपर इच्छित द्वीप-समुद्रोंके खण्डोंका प्रमाण आता है ॥ ३६ ॥

५ ला.[२] − १ ला.[२] ÷ १ ला.[२] = २४ लवणसमुद्रके जम्बूद्वीपप्रमाण खण्ड।

धा. १४४। का. ६७२। इस प्रकार स्वयम्भूरमणपर्यन्त जानना चाहिये।

जम्बूद्वीप व लवणसमुद्रादिकोंमेंसे प्रत्येकके अधिपति जो दो दो व्यन्तरदेव हैं, उनके नामोंको कहता हूं ॥ ३७ ॥

१ द ब तस्सुवरिवरिम. २ द ब ३८१२५०. ३ द ब २२३४ २७१८७५. ४ द साहिमि, ब साहेम्मि.

आदरअणादरक्खा जंबूदीवस्स अहिवई होंति । तह य पभासो पियदंसणो य लवणंबुरासिम्मि ॥ ३८
भुंजेदि पियणामा दंसणणामा य धादईसंडं । कालोदयस्स पहुणो कालमहाकालणामा य ॥ ३९
पउमो पुंडरियक्खो दीवं भुंजंति पोक्खरवरक्खं । चक्खुसुचक्खू पहुणो होंति य मणुसुत्तरगिरिस्स ॥ ४०
[1]सिरिपहुसिरिधरणामा देवा पालंति पोक्खरसमुद्दं । वरुणो वरुणपहक्खो भुंजंते[2] चारु वारुणीदीवं ॥ ४१
वारुणिवरजलहिपहू णामेणं मज्झमज्झिमा देवा । पंडुरयपुप्फदंता दीवं भुंजंति खीरवरं ॥ ४२
विमलपहक्खो विमलो खीरवरंवाहिणीसअहिवइणो । सुप्पहधदवरदेवा घदवरदीवस्स अधिणाहा ॥ ४३
उत्तरमहप्पहक्खा देवा रक्खंति घदवरंतुणिहिं । कणयकणयाभणामा दीवं पालंति खोदवरं[3] ॥ ४४
पुण्णपुण्णपहक्खा देवा रक्खंति खोदवरसिंधुं । णंदीसरम्मि दीवे गंधमहागंधया पहुणो ॥ ४५
णंदीसरवारिणिहिं रक्खंते[4] णंदिणंदिपहुणामा । चंदसुभद्दा देवा भुंजंते अरुणवरदीवं ॥ ४६

जम्बूद्वीपके अधिपति आदर और अनादर नामक तथा लवणसमुद्रके प्रभास और प्रियदर्शन नामक दो व्यन्तरदेव हैं ॥ ३८ ॥

प्रिय और दर्शन नामक दो देव धातकीखण्डद्वीपका उपभोग करते हैं। तथा काल और महाकाल नामक दो देव कालोदकसमुद्रके प्रभु हैं ॥ ३९ ॥

पद्म और पुण्डरीक नामक दो देव पुष्करवरद्वीपको भोगते हैं। चक्षु व सुचक्षु नामक दो देव मानुषोत्तर पर्वतके प्रभु हैं ॥ ४० ॥

श्रीप्रभ और श्रीधर नामक दो देव पुष्करसमुद्रका तथा वरुण और वरुणप्रभ नामक दो देव वारुणीवरद्वीपका भलीभांति रक्षण करते हैं ॥ ४१ ॥

मध्य और मध्यम नामक दो देव वारुणीवर समुद्रके प्रभु हैं। पाण्डुर और पुष्पदन्त नामक दो देव क्षीरवरद्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४२ ॥

विमलप्रभ और विमल नामक दो देव क्षीरवरसमुद्रके तथा सुप्रभ और घृतवर नामक दो देव घृतवरद्वीपके अधिपति हैं ॥ ४३ ॥

उत्तर और महाप्रभ नामक दो देव घृतवरसमुद्रकी तथा कनक और कनकाभ नामक दो देव क्षौद्रवरद्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४४ ॥

पूर्ण और पूर्णप्रभ नामक दो देव क्षौद्रवरसमुद्रकी रक्षा करते हैं। गंध और महागंध नामक दो देव नन्दीश्वरद्वीपके प्रभु हैं ॥ ४५ ॥

नन्दि और नन्दिप्रभ नामक दो देव नन्दीश्वरसमुद्रकी तथा चन्द्र और सुभद्र नामक दो देव अरुणवरद्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४६ ॥

१ द ब गिरिपहु. २ द चुंबंते. ३ द ब पंदरय°. ४ द ब खूरवरं. ५ द ब रक्खंतते.

अरुणवरवारिरासिं रक्खंते अरुणअरुणपहणामा । अरुणब्भासं दीवं भुंजंति सुगंधसव्वगंधसुरा ॥ ४७
सेसाणं दीवाणं वारिणिहीणं च अहिवई देवा । जे केइ ताण णामम्मुवएसो संपहि पणट्ठो ॥ ४८
पढमपवण्णिददेवा दक्खिणभागम्मि दीवउवहीणं । चरिमुद्दारिददेवा चेट्ठंते उत्तरे भाए ॥ ४९
णियणियदीउवहीणं उवरिमतलमंडिदेसु णयरेसुं । बहुविहपरिवारजुदा कीडंते बहुविणोदेणं ॥ ५०
एक्कपलिदोवमाऊ पत्तेक्कं दसधणूणि उत्तुंगा । भुंजंते विविहसुहं समचउरस्संगसंठाणा ॥ ५१
जंबूदीवादीहिंतो अट्ठमओ होदि भुवणविक्खादो । णंदीसरो त्ति दीओ णंदीसरजलहिपरिखित्तो ॥ ५२
एक्कसया तेसट्ठी कोडीओ जोयणाणि लक्खाणं । चुलसीदी तद्दीवे विक्खंभो चक्कवालेणं ॥ ५३

१६३८४००००० ।

पणवण्णाधियछस्सयकोडीओ जोयणाणि तेत्तीसा । लक्खाणि तस्स बाहिरसूचीए होदि परिमाणं ॥ ५४

६५५३३००००० ।

अरुण और अरुणप्रभ नामक व्यन्तर देव अरुणवरसमुद्रकी तथा सुगंध और सर्वगंध नामक देव अरुणाभासद्वीपकी रक्षा करते है ॥ ४७ ॥

शेष द्वीप-समुद्रोंके जो कोई भी अधिपति देव है, उनके नामोंका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ४८ ॥

इन देवोंमेंसे पहिले (युगलोंमेंसे) कहे हुए देव द्वीप-समुद्रोंके दक्षिणभागमें तथा अन्तमें कहे हुए देव उत्तरभागमें स्थित है ॥ ४९ ॥

ये देव अपने अपने द्वीप-समुद्रोंके उपरिम भागमें स्थित नगरोंमें बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त होकर बहुत विनोदके साथ क्रीड़ा करते हैं ॥ ५० ॥

इनमेंसे प्रत्येककी आयु एक पल्योपम व उंचाई दश धनुषप्रमाण है । ये सब समचतुरस्रसंस्थानसे युक्त होते हुए विविध प्रकारके सुखको भोगते है ॥ ५१ ॥

जम्बूद्वीपसे आठवां द्वीप भुवनविख्यात व नन्दीश्वरसमुद्रसे वेष्टित 'नन्दीश्वर' है ॥ ५२ ॥

उस द्वीपका मण्डलाकारसे विस्तार एकसौ तिरेसठ करोड़ चौरासी लाख योजनमात्र है ॥ ५३ ॥

१६३८४००००० ।

इस द्वीपकी बाह्य सूचीका प्रमाण छहसौ पचवन करोड़ तेतीस लाख योजन है ॥ ५४ ॥

६५५३३००००० ।

१ द ब णिद्दि प.

तदियपणसत्तदुखदोहगिछत्तियमुण्णएक्कअंककमें[1] । जोयणया णंदीसरअब्भंतरपरिहिपरिमाणं ॥ ५५
१०३६१२०२७५३ ।

बाहत्तरिजुददुसहसकोडीतेत्तीसलक्खजोयणया । चउवण्णसहस्साइं इगिसयणउदी य बाहिरे परिही ॥ ५६
२०७२३३५४१९० ।

णंदीसरबहुमज्झे पुव्वदिसाए हुवेदि सेलवरो । अंजणगिरि त्ति खादो णिम्मलवरइंदणीलमओ ॥ ५७
जोयणसहस्सगाढो चुलसीदिसहस्समेत्तउच्छेहो । सव्वम्मि चुलसीदीसहस्सरुंदो य समवट्टो ॥ ५८
१००० । ८४००० । ८४००० ।

मूलम्मि य उवरिम्मि य तडवेदीओ विचित्तवणसंडा । वणवेदीओ[2] तस्स य पुव्वोदिदवण्णणा होंति[3] । ५९
चउसु दिसाभागेसुं चत्तारि दहा भवंति तग्गिरिणो । पत्तेक्कमेक्कजोयणलक्खपमाणा य चउरस्सा ॥ ६०
१००००० ।

जोयणसहस्सगाढा टंकुक्किण्णा य जलयरविमुक्का । फुल्लंतकमलकुवलयकुमुदवणामोदसोहिल्ला ॥ ६१
१००० ।

नन्दीश्वरद्वीपकी अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण अंकक्रमसे तीन, पांच, सात, दो, शून्य, दो, एक, छह, तीन, शून्य और एक, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने योजन है ॥ ५५ ॥ १०३६१२०२७५३ ।

इसकी बाह्य परिधि दो हजार बहत्तर करोड़ तेतीस लाख चउवन हजार एक सौ नब्बे योजनमात्र है ॥ ५६ ॥ २०७२३३५४१९० ।

नन्दीश्वरद्वीपके बहुमध्यभागमें पूर्व दिशाकी ओर अंजनगिरि इस नामसे प्रसिद्ध निर्मल उत्तम इन्द्रनीलमणिमय श्रेष्ठ पर्वत है ॥ ५७ ॥

यह पर्वत एक हजार योजन गहरा, चौरासी हजार योजन ऊंचा और सब जगह चौरासी हजार योजनमात्र विस्तारसे सहित समवृत्त है ॥ ५८ ॥

अवगाह १००० । उत्सेध ८४००० । विस्तार ८४००० ।

उसके मूल व उपरिम भागमें तटवेदियां व विचित्र वनखण्ड स्थित हैं । उसकी वन-वेदियोंका वर्णन पूर्वोक्त वेदियोंके ही समान है ॥ ५९ ॥

उस पर्वतके चारों ओर चार दिशाओंमें चौकोण चार द्रह है । इनमेंसे प्रत्येक एक लाख योजन विस्तारवाले एवं चतुष्कोण है ॥ ६० ॥ विस्तार १००००० यो.

फूले हुए कमल, कुवलय और कुमुदवनोंकी सुगन्धसे शोभित ये द्रह एक हजार योजन गहरे, टंकोत्कीर्ण एवं जलचर जीवोंसे रहित है ॥ ६१ ॥ गहराई १००० यो. ।

१ द पणसत्त°. २ द ब अंककमो. ३ द ब वरवेदीओ. ४ द ब होदि.

णंदाणंदवतीओ णंदुत्तरणंदिघोसणामाओ । एदाओ वावीओ पुव्वादिपदाहिणकमेणं ॥ ६२
असोयवणं पढमं णं[1] सत्तच्छदचंपयाण विडणाणिं । चूदवणं पत्तेक्कं पुव्वादिदिसासु चत्तारि ॥ ६३
जोयणलक्खायामा तदद्धवासा भवंति वणसंडा । पत्तेक्कं चेत्तदुमा वणणामजुदा वि एदाणं ॥ ६४
वावीणं बहुमज्झे दधिमुहणामा भवंति दधिवण्णा । एक्केका वरगिरिणो पत्तेक्कं अद्दजोयणुच्छेहो ॥ ६५
१०००० ।
तम्मेत्तवासजुत्ता सहस्सगाढम्मि वज्जसमवट्टा । ताणोवरिमतडेसुं तडवेदीवरवणाणि विविहाणि ॥ ६६
१०००० । १००० ।
वावीण बाहिरेसुं दोसुं कोणेसु दोण्णि पत्तेक्कं । रतिकरणामा गिरिणो कणयमया दहिमुहस्सरिच्छा ॥ ६७
जोयणसहस्सवासा तेत्तियमेत्तोदया य पत्तेक्कं । अद्धाइज्जसयाइं अवगाढा रतिकरा गिरिणो[2] ॥ ६८
१००० । १००० । २५० ।
ते चउचउकोणेसुं एक्केक्कदहस्स होंति चत्तारि । लोयविणिच्छयकत्ता एवं णियमा परूवेंति ॥ ६९
पाठान्तरम् ।

नन्दा, नन्दवती, नन्दोत्तरा और नन्दिषेणा नामक ये चार वापिकायें पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिण रूपसे स्थित हैं ॥ ६२ ॥

पूर्वादिक चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें प्रथम अशोकवन, सप्तच्छद और चम्पक वन एवं आम्रवन ये चार वन हैं ॥ ६३ ॥

ये वनखण्ड एक लाख योजन लंबे और इससे आधे विस्तारसे सहित हैं । इनमेंसे प्रत्येक वनमें वनके नामसे संयुक्त चैत्यवृक्ष है ॥ ६४ ॥

वापियोंके बहुमध्यभागमें दहीके समान वर्णवाले एक एक दधिमुख नामक उत्तम पर्वत है । इनमेंसे प्रत्येक पर्वतकी उंचाई दश हजार योजनप्रमाण है ॥ ६५ ॥ १०००० ।

उतनेमात्र (दश हजार यो.) विस्तारसे सहित उक्त पर्वत एक हजार योजन गहराईमें वज्रमय व गोल है । इनके उपरिम तटोंपर तटवेदियां और विविध प्रकारके वन हैं ॥६६॥

व्यास १०००० । अवगाह १००० ।

वापियोंके दोनों बाह्य कोनोंमेंसे प्रत्येकमें दधिमुखोंके सदृश सुवर्णमय रतिकर नामक दो पर्वत हैं ॥ ६७ ॥

प्रत्येक रतिकर पर्वतका विस्तार एक हजार योजन, इतनी ही उंचाई और अढ़ाई सौ योजनप्रमाण अवगाह है ॥ ६८ ॥ व्यास १००० । उदय १००० । अवगाह २५० ।

वे रतिकर पर्वत प्रत्येक द्रहके चार चार कोनोंमें चार होते हैं, इस प्रकार लोकविनिश्चयकर्ता नियमसे निरूपण करते हैं ॥ ६९ ॥ पाठान्तर ।

---

१ द ब पढमाणं. २ द ब रतिकर°.

एक्कचउक्कट्ठंजणदहिमुहरइयरगिरीण सिहरम्मि । चेट्ठदि[1] वररयणमओ एक्केक्कजिणिंदपासादो ॥ ७०
जं भद्दसालवणजिणपुराण उस्सेहपहुदि उद्दिट्ठं । तेरसजिणभवणाणं तं एदाण पि वत्तव्वं ॥ ७१
जलगंधकुसुमतंदुलवरचरुफलदीवधूवपहुदीण । अच्चंते धुव्वमाणा जिणिंदपडिमाणि देवाणं[2] ॥ ७२
जोइसियवाणवेंतरभावणसुरकप्पवासिदेवीओ । णच्चंति य गायंति य जिणभवणेसुं विचित्तभंगेहिं ॥ ७३
भेरीमद्दलवंटापहुदीणिं विविहदिव्ववज्जाणिं । वायंते देववरा[3] जिणवरभवणेसु भत्तीए ॥ ७४
एवं दक्खिणपच्छिमउत्तरभागेसु होंति दिव्वदहा । णवरि विसेसो णामा पउमिणिसंडाण अण्णण्णा ॥ ७५
पुव्वादिसुं अरज्जा विरजासोका य वीदसोक[4] त्ति । दक्खिणअंजणसेले चत्तारो पउमिणीसंडा ॥ ७६
विजय त्ति वइजयंती जयंतिअपराजिदा य तुरिमाए[5] । पच्छिमअंजणसेले चत्तारो कमलिणीसंडा ॥ ७७
रम्मारमणीयाओ सुप्पहणामा य सव्वदोभद्दा । उत्तरअंजणसेले पुव्वादिसु कमलिणीसंडा ॥ ७८

एक अंजनगिरि, चार दधिमुख और आठ रतिकर पर्वतोंके शिखरपर उत्तम रत्नमय एक एक जिनेन्द्रमन्दिर स्थित है ॥ ७० ॥

भद्रशालवनके जिनपुरोंकी जो उंचाई आदि बतलाई है, वही इन तेरह जिनभवनोंकी भी कहना चाहिये ॥ ७१ ॥

इन मन्दिरोंमें देव जल, गन्ध, पुष्प, तंदुल, उत्तम नैवेद्य, फल, दीप और धूपादिक द्रव्योंसे जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी स्तुतिपूर्वक पूजा करते हैं ॥ ७२ ॥

ज्योतिषी, वान व्यंतर, भावनवासी और कल्पवासी देवोंकी देवियां इन जिनभवनोंमें विचित्र रीतिसे नाचती और गाती हैं ॥ ७३ ॥

जिनेन्द्रभवनोंमें उत्तम देव भक्तिसे भेरी, मर्दल और घंटा आदि अनेक प्रकारके दिव्य बाजोंको बजाते हैं ॥ ७४ ॥

इस प्रकार पूर्वदिशाके समान ही दक्षिण, पश्चिम और उत्तर भागोंमें भी दिव्य द्रह हैं। विशेष इतना है कि इन दिशाओंमें स्थित कमलयुक्त वापियोंके नाम भिन्न भिन्न हैं ॥ ७५ ॥

दक्षिण अंजनगिरिकी पूर्वादिक दिशाओंमें अरजा, विरजा, अशोका और वीतशोका नामक चार वापिकायें हैं ॥ ७६ ॥

पश्चिम अंजनगिरिकी चारों दिशाओंमें विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और चौथी अपराजिता, इस प्रकार ये चार वापिकायें हैं ॥ ७७ ॥

उत्तर अंजनगिरिकी पूर्वादिक दिशाओंमें रम्या, रमणीया, सुप्रभा और सर्वतोभद्रा नामक चार वापिकायें हैं ॥ ७८ ॥

१ द ब चेट्ठति. २ द ब देवाणि. ३ द ब देववरो. ४ द ब वीदसोका. ५ द ब सेला.

एक्केके[1] पासादा चउमट्टिजणेसु अंजणगिरीणं । धुव्वंतधयवडाया हवंति वररयणकणयमया[2] ॥ ७९
बासट्ठि जोयणाणिं उदओ इगितीस ताण वित्थारो। वित्थारसमो दीहो वेदियवरगोउरेहि परियरिओ ॥ ८०
वणसंडणामजुत्ता[3] वेंतरदेवा वसंति एदेसुं । मणिमयपासादेसुं बहुविहपरिवारपरियरिया ॥ ८१
णंदीसरविदिसासुं अंजणसेला भवंति चत्तारि । रइकरमाणसरिच्छा केई एवं परूवेंति ॥ ८२
वरिसे वरिसे चउविहदेवा णंदीसरम्मि दीवम्मि । आसाढकत्तिएसुं फग्गुणमासे समायेंति ॥ ८३
पूरावणमारूढो दिव्वविभूदीए भूसिदो रम्मो । णालियरपुण्णपाणी सोहम्मो एदि भत्तीए ॥ ८४
वरवारणमारूढो वररयणविभूसणेहिं सोहंतो । पूगफलगोच्छहत्थो ईसाणिंदो वि भत्तीए ॥ ८५
वरकेसरिमारूढो णवरविसारिच्छकुंडलाभरणो । चूदफलगोच्छहत्थो सणक्कुमारो वि भत्तिजुदो ॥ ८६

अंजनगिरियोंके चौमुख वनोंमें फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त उत्तम रत्न एवं सुवर्णमय एक एक प्रासाद है ॥ ७९ ॥

इन प्रासादोंकी ऊंचाई बासठ योजन और विस्तार इकतीस योजनमात्र है। विस्तारके समान लंबाई भी इनकी इकतीस योजनप्रमाण ही है। ये सब प्रासाद उत्तम वेदिकाओं और गोपुरद्वारोंसे व्याप्त है ॥ ८० ॥

इन मणिमय प्रासादोंमें वनखण्डोंके नामोंसे संयुक्त व्यन्तर देव बहुत प्रकारके परिवारसे व्याप्त होकर रहते हैं ॥ ८१ ॥

नन्दीश्वरद्वीपकी विदिशाओंमें रतिकर पर्वतोंके सदृश परिमाणवाले चार अंजनशैल हैं, इस प्रकार भी कोई आचार्य निरूपण करते हैं ॥ ८२ ॥

चारों प्रकारके देव नन्दीश्वरद्वीपमें प्रत्येक वर्ष आषाढ, कार्तिक और फाल्गुन मासमें आते हैं ॥ ८३ ॥

इस समय दिव्य विभूतिसे विभूषित रमणीय सौधर्म इन्द्र हाथमें नारियलको लिये हुए भक्तिसे ऐरावत हाथीपर चढ़कर यहां आता है ॥ ८४ ॥

उत्तम हाथीपर आरूढ और उत्कृष्ट रत्न-विभूषणोंसे सुशोभित ईशान इन्द्र भी हाथमें सुपाड़ी फलोंके गुच्छेको लिये हुए भक्तिसे यहां आता है ॥ ८५ ॥

नवीन सूर्यके सदृश कुण्डलोंसे विभूषित और हाथमें आम्रफलोंके गुच्छेको लिये हुए सनत्कुमार इन्द्र भी भक्तिसे युक्त होता हुआ उत्तम सिंहपर चढ़कर यहां आता है ॥ ८६ ॥

---

१ द एक्केक्कं. २ ब वणयमाला. ३ द ब जुत्तो. ४ द ब णाम. ५ द वरकेसर°.

आरूढो वरतुरयं वरभूसणभूसिदो विविहसोहो । कदलीफलसहहत्थो माहिंदो एदि भत्तीए ॥ ८७
हंसम्मि चंदधवले आरूढो विमलदेहसोहिल्लो । वरकेईकुसुमकरो भत्तिजुदो एदि बम्हिंदो ॥ ८८
कोंचविहंगारूढो वरचामरविविहछत्तसोहिल्लो । पप्फुल्लकमलहत्थो एदि हु बम्हुत्तरिंदो वि ॥ ८९
वरचक्काआरूढो कुंडलकेयूरपहुदिदिप्पंतो । सयवंतियकुसुमकरो सुक्किंदो भत्तिभरिदमणो ॥ ९०
कीरविहंगारूढो महसुक्किंदो वि एदि भत्तीए । दिव्वविभूदिविभूसिददेहो वरविविहकुसुमदामकरो ॥ ९१
णीलुप्पलकुसुमकरो कोइलवाहणविमाणमारूढो । वररयणभूसिदंगो सदरिंदो एदि भत्तीए ॥ ९२
गरुडविमाणारूढो दाडिमफललुंबिसोहमाणकरो । जिणचलणभत्तिरतो एदि सहस्सारइंदो वि ॥ ९३
विहगाहिवमारूढो पणसंकुलकुंबिलंबणागकरो । वरदिव्वविभूदीए आणच्छदि आणदिंदो वि ॥ ९४
पउमविमाणारूढो पाणदइंदो वि एदि भत्तीए । तुंबुरुफललुंबिकरो वरमंडणमंडियायारो ॥ ९५

उत्तम मणोंसे विभूषित और विविध प्रकारकी शोभाको प्राप्त माहेन्द्र श्रेष्ठ घोड़ेपर चढ़कर हाथमें केलेको लिये हुए भक्तिसे यहां आता है ॥ ८७ ॥

चन्द्रके समान धवल हंसपर आरूढ, निर्मल शरीरसे सुशोभित और भक्तिसे युक्त ब्रह्मेन्द्र उत्तम केतकी पुष्पको हाथमें लेकर आता है ॥ ८८ ॥

उत्तम चँवर एवं विविध छत्रसे सुशोभित और फूले हुए कमलको हाथमें लिये हुए ब्रह्मोत्तर इन्द्र भी क्रौंच पक्षीपर आरूढ होकर यहां आता है ॥ ८९ ॥

कुंडल एवं केयूर प्रभृति आभरणोंसे देदीप्यमान और भक्तिसे पूर्ण मनवाला शुक्रेन्द्र उत्तम चक्रवाकपर आरूढ होकर सेवंती पुष्पको हाथमें लिये हुए यहां आता है ॥ ९० ॥

दिव्य विभूतिसे विभूषित शरीरको धारण करनेवाला तथा उत्तम एवं विविध प्रकारके फूलोंकी मालाको हाथमें लिये हुए महाशुक्रेन्द्र भी तोता पक्षीपर चढ़कर भक्तिवश यहां आता है ॥ ९१ ॥

कोयलवाहन विमानपर आरूढ, उत्तम रत्नोंसे अलंकृत शरीरसे संयुक्त और नील कमलपुष्पको हाथमें धारण करनेवाला शतार इन्द्र भक्तिसे प्रेरित होकर यहां आता है ॥ ९२ ॥

गरुड़विमानपर आरूढ, अनार फलोंके गुच्छेसे शोभायमान हाथवाला और जिनचरणोंकी भक्तिमें अनुरक्त हुआ सहस्रार इन्द्र भी आता है ॥ ९३ ॥

विहगाधिप अर्थात् गरुड़पर आरूढ और पनस अर्थात् कटहल फलके गुच्छेको हाथमें लिये हुए आनतेन्द्र भी उत्तम एवं दिव्य विभूतिके साथ यहां आता है ॥ ९४ ॥

उत्तम आभरणोंसे मण्डित आकृतिसे संयुक्त और तुम्बुरु फलके गुच्छेको हाथमें लिये हुए प्राणतेन्द्र भी भक्तिवश पद्म विमानपर आरूढ होकर यहां आता है ॥ ९५ ॥

१ द य सदरिंदो.

परिपक्कउच्छहत्थो कुमुदविमाणं विचित्तमारूढो । विविहालंकारधरो आगच्छदि आरणिंदो वि ॥ ९६
आरूढो वरमोरं वलयंगदमउडहारसंजुत्तो[1] । सचिधवलचमरहत्थो आगच्छदि अच्चुदाहिवई ॥ ९७
णाणाविहवाहणया णाणाफलकुसुमदामभरिदकरा । णाणाविभूदिसहिदा जोइसवणभवण पुंति भत्तिजुदा ॥ ९८
आगच्छिय णंदीसरवरदीवजिणिंददिव्वभवणाइं । बहुविहथुदिमुहलमुदा पदाहिणाइं पकुव्वंति ॥ ९९
पुव्वाए कप्पवासी भवणसुरा दक्खिणाए[5] वेंतरया[5] । पच्छिमदिसाए तेसुं जोइसिया उत्तरदिसाए ॥ १००
णियणियविभूदिजोग्गं महिमं कुव्वंति थोत्तबहलमुहा । णंदीसरजिणमंदिरजत्तासुं विउलभत्तिजुदा ॥ १०१
पुव्वण्हे अवरण्हे पुव्वणिसाए वि पच्छिमणिसाए । पहराणि दोण्णि दोण्णि वरभत्तीए पसत्तमणा ॥ १०२
कमसो पदाहिणेणं पुण्णिमयं जाव अट्ठमीदु[8] तदो । देवा विविहं पूजा जिणिंदपडिमाण कुव्वंति ॥ १०३
कुव्वंते अभिसेयं महाविभूदीहिं ताण देविंदा । कंचणकलसगदेहिं विमलजलेहिं सुगंधेहिं ॥ १०४

पके हुए गन्नेको हाथमें धारण करनेवाला और विचित्र कुमुद विमानपर आरूढ हुआ आरणेन्द्र भी विविध प्रकारके अलंकारोंको धारण करके यहां आता है ॥ ९६ ॥

कटक, अंगद, मुकुट एवं हारसे संयुक्त और चन्द्रमाके समान धवल चँवरको हाथमें लिये हुए अच्युतेन्द्र उत्तम मयूरपर चढ़कर यहां आता है ॥ ९७ ॥

नाना प्रकारकी विभूतिसे सहित, अनेक फल व पुष्पमालाओंको हाथोंमें लिये हुए और अनेक प्रकारके वाहनोंपर आरूढ ज्योतिषी, व्यन्तर एवं भवनवासी देव भी भक्तिसे संयुक्त होकर यहां आते हैं ॥ ९८ ॥

इस प्रकार ये देव नन्दीश्वरद्वीपके दिव्य जिनेन्द्रभवनोंमें आकर नाना प्रकारकी स्तुतियोंसे वाचालमुख होते हुए प्रदक्षिणायें करते हैं ॥ ९९ ॥

नन्दीश्वरद्वीपस्थ जिनमन्दिरोंकी यात्रामें बहुत भक्तिसे युक्त कल्पवासी देव पूर्वदिशामें, भवनवासी दक्षिणमें, व्यन्तर पश्चिमदिशामें और ज्योतिषी देव उत्तरदिशामें मुखसे बहुत स्तोत्रोंका उच्चारण करते हुए अपनी अपनी विभूतिके योग्य महिमाको करते हैं ॥ १००–१०१ ॥

ये देव आसक्तचित्त होकर अष्टमीसे लेकर पूर्णिमा तक पूर्वाह्न, अपराह्न, पूर्वरात्रि और पश्चिमरात्रिमें दो दो प्रहर तक उत्तम भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणक्रमसे जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी विविध प्रकारसे पूजा करते हैं ॥ १०२–१०३ ॥

देवेन्द्र महान् विभूतिके साथ इन प्रतिमाओंका सुवर्ण-कलशोंमें भरे हुए सुगन्धित निर्मल जलसे अभिषेक करते हैं ॥ १०४ ॥

---

१ द ब परिपिक. २ द ब आगच्छिय. ३ द ब संहत्तो. ४ द ब दव्व. ५ द ब वेंतरिया. ६ द ब मरमतीए. ७ द ब पसत्त. ८ द ब पुण्णमयं जाव अट्ठमीदु.

कुंकुमकप्पूरेहिं चंदणकालागरूहिं अण्णेहिं । ताणं विलेवणेहिं ते कुव्वंते सुगंधेहिं ॥ १०५
कुंदेंदुसुंदरेहिं कोमलविमलेहिं सुरभिगंधेहिं । वरकलमतंदुलेहिं पूजंति जिणिंदपडिमाओ[1] ॥ १०६
सयवंतगा य चंपयमाला पुण्णायणायरहुदीहिं । अच्चंति ताओ देवा सुरहीहिं कुसुममालाहिं[2] ॥ १०७
बहुविहरसवंतेहिं वरभक्खेहिं विचित्तरूवेहिं । अमयसरिच्छेहिं सुरा जिणिंदपडिमाओ महयंति ॥ १०८
विप्फुरिदकिरणमंडलमंडिदभवणेहि रयणदीवेहिं । णिक्कज्जलकलुसेहिं पूजंति जिणिंदपडिमाओ ॥ १०९
वासिददियंतरेहिं कालागरुपमुहविविहधूवेहिं । परिमलिदमंदिरेहिं महयंति जिणिंदबिंबाणि ॥ ११०
दक्खादाडिमकदलीणारंगयमाहुलिंगचूदेहिं[3] । अण्णेहिं वि पक्केहिं फलेहिं पूजंति जिणणाहं ॥ १११
णच्चंतचमरकिंकिणिविविहविताणादियाहिं वित्थाहिं[4] । ओलंबिदहारेहिं अच्चंति जिणेसरं देवा ॥ ११२
महलमुयंगभेरीपडहप्पहुदीणि विविहवज्जाणि । वायंति जिणवराणं देवा पूजासु[5] भत्तीए ॥ ११३

वे इन्द्र कुंकुम, कर्पूर, चन्दन, कालागरु और अन्य सुगन्धित द्रव्योंसे उन प्रतिमाओंका विलेपन करते हैं ॥ १०५ ॥

ये कुन्दपुष्प व चन्द्रमाके समान सुन्दर, कोमल, निर्मल और सुगन्धित उत्तम कलम धान्यके तंदुलोंसे जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०६ ॥

वे देव सेवंती, चम्पकमाला, पुंनाग और नाग प्रभृति सुगन्धित पुष्पमालाओंसे उन प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०७ ॥

ये देवगण बहुत प्रकारके रसोंसे संयुक्त, विचित्र रूपवाले और अमृतके सदृश उत्तम भक्ष्य पदार्थोंसे (नैवेद्यसे) जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०८ ॥

देदीप्यमान किरणसमूहसे जिनभवनोंको विभूषित करनेवाले और कज्जल एवं कलुषतासे रहित ऐसे रत्न-दीपकोंसे इन प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०९ ॥

देवगण मंदिर एवं दिङ्मण्डलको सुगन्धित करनेवाले कालागरु प्रभृति अनेक प्रकारके धूपोंसे जिनेन्द्रबिम्बोंकी पूजा करते हैं ॥ ११० ॥

दाख, अनार, केला, नारंगी, मातुलिंग, आम तथा अन्य भी पके हुए फलोंसे वे जिननाथकी पूजा करते हैं ॥ १११ ॥

वे देव विस्तीर्ण एवं लटकते हुए हारोंसे संयुक्त तथा नाचते हुए चँवर व किंकिणियोंसे सहित अनेक प्रकारके चंदोवा आदिसे जिनेश्वरकी पूजा करते हैं ॥ ११२ ॥

देवगण पूजाके समय भक्तिसे मर्दल, मृदंग, भेरी और पटहादि विविध प्रकारके बाजे बजाते हैं ॥ ११३ ॥

१ द ब विलेइणाइ. २ द य कमलतंदुलेहि. ३ द पाडिमाए. ४ द ब सव्वेहि. ५ ब भूदेहिं. ६ द ब वित्थाहि. ७ ब मुयिंग. ८ द ब पूजास.

विविहाहि णच्चणाइं वररयणविभूसिदाओ दिव्वाओ। कुव्वंते कण्णाओ[1] जंति जिणिंदस्स चरिदाणिं ॥ ११४

जिणचरियणालयं ते चउव्विहाभिणयभंगिसोहिल्लं । आणंदेणं देवा बहुरसभावं पकुव्वंति ॥ ११५

एवं जेत्तियमेत्ता जिणिंदणिलया विचित्तपूजाओ। कुव्वंति तेत्तिएसुं णिब्भरभत्तीए[2] सुरसंघा ॥ ११६

एक्कारसमो कोंडलणामो दीवो भवेदि रमणिज्जो। एदस्स य बहुमज्झे अत्थि गिरी कोंडलो णाम ॥ ११७

पण्णत्तरी सहस्सा उच्छेहो जोयणाणि तग्गिरिणो। एक्कसहस्सं साहे णाणाविहरयणभरिदस्स ॥ ११८

७५००० । १००० ।

वासो वि माणुसुत्तरवासादो दसगुणो पमाणेणं। तग्गिरिणो मूलोवरि तडवेदीपहुदिजुत्तस्स ॥ ११९

मू १०२२० । मज्झ ७२३० । सिहर ४२४० ।

उवरिं कुंडलगिरिणो दिव्वाणि हवंति वीस कूडाणिं। एदाणं विण्णासं भासेमो[4] आणुपुव्वीए ॥ १२०

उत्तम रत्नोंसे विभूषित दिव्य कन्यायें विविध प्रकारके नृत्योंको करती हैं और अन्तमें जिनेन्द्र भगवान्‌के चरितों (का अभिनय) करती हैं ॥ ११४ ॥

वे चार प्रकारके देव आनन्दके साथ अभिनयके प्रकारोंसे शोभायमान बहुत प्रकारके रस-भाववाले जिनचरित्रसंबन्धी नाटक करते हैं ॥ ११५ ॥

इस प्रकार नन्दीश्वरद्वीपमें जितने जिनेन्द्रमन्दिर हैं, उन सबमें देवगण गाढ़ भक्तिसे विचित्र पूजाएं करते हैं ॥ ११६ ॥

ग्यारहवां रमणीय कुण्डल नामक द्वीप है । इसके बहुमध्यभागमें कुण्डल नामक पर्वत है ॥ ११७ ॥

नाना प्रकारके रत्नोंसे भरे हुए इस पर्वतकी उंचाई पचत्तर हजार योजन और अवगाह एक हजार योजनमात्र है ॥ ११८ ॥ उत्सेध ७५००० । अवगाह १००० यो. ।

तटवेदी आदिसे संयुक्त इस पर्वतका विस्तार मूलमें व ऊपर मानुषोत्तर पर्वतके विस्तार-प्रमाणसे दशगुणा है ॥ ११९ ॥

मूलव्यास १०२२० । मध्यव्यास ७२३० । उपरिव्यास ४२४० ।

कुण्डलगिरिके ऊपर जो दिव्य बीस कूट हैं, उनके विन्यासको अनुक्रमसे कहता हूं ॥ १२० ॥

१ द ब कण्णाहो. २ द ब °भत्तीसु सुरसंघा. ३ ब विण्णासे. ४ ब भासमो.

पुव्वादिचउदिसासुं चउ चउ कूडाणि होंति पत्तेकं । ताणब्भंतरभागे एक्केक्को सिद्धवरकूडो ॥ १२१
वज्जं वज्जपहक्खं कणयं कणयप्पहं च पुव्वाए । दक्खिणदिसाए रजदं रजदप्पहसुप्पभा महप्पभयं ॥ १२२
अंकं अंकपहं मणिकूडं पच्छिमदिसाए मणिपभयं । उत्तरदिसाए रुचकं रुचकाभं हेमवंतमंदरया ॥ १२३
एदे सोलस कूडा णंदणवणवण्णिदाण कूडाणं । उच्छेहादिसमाणा[2] पासादेहिं विचित्तेहिं ॥ १२४
एदेसिं कूडेसुं जिणभवणविभूसिदेसु[3] रम्मेसु । णिवसंति वेंतरसुरा णियणियकूडेहिं सरिणामा ॥ १२५
एकपलिदोवमाऊ बहुपरिवारा भवंति ते सव्वे । एदाणं णयरीओ विचित्तभवणाओ तेसु कूडेसुं ॥ १२६
चत्तारि सिद्धकूडा चउजिणभवणेहिं[4] ते पभासंते । णिसहगिरिकूडवण्णिदजिणपुरसमवासपहुदीहिं ॥ १२७
णग्गिरिवरस्स होंति दिसि विदिसासुं जिणिंदकूडाणिं । पत्तेकं एक्केक्कं केई एवं परूवेंति ॥ १२८

पाठान्तरम् ।

पूर्वादिक चार दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें चार चार कूट और उनके अभ्यन्तर भागमें एक एक सिद्धवर कूट है ॥ १२१ ॥

उन सोलह कूटोंमेंसे वज्र, वज्रप्रभ, कनक और कनकप्रभ, ये चार पूर्वदिशामें; रजत, रजतप्रभ, सुप्रभ, और महाप्रभ, ये चार दक्षिणदिशामें; अंक, अंकप्रभ, मणिकूट और मणिप्रभ, ये चार पश्चिमदिशामें; तथा रुचक, रुचकाभ, हिमवान् और मंदर, ये चार कूट उत्तरदिशामें स्थित है ॥ १२२–१२३ ॥

ये सोलह कूट नन्दनवनमें कहे हुए कूटोंकी उंचाई आदि तथा विचित्र प्रासादोंसे समान है ॥ १२४ ॥

जिनभवनसे विभूषित इन रमणीय कूटोंपर अपने अपने कूटोंके सदृश नामवाले व्यन्तर देव निवास करते है ॥ १२५ ॥

वे सब देव एक पल्योपमप्रमाण आयु और बहुत प्रकारके परिवारसे सहित होते हैं । उपर्युक्त कूटोंपर विचित्र भवनोंसे संयुक्त इन देवोंकी नगरियां हैं ॥ १२६ ॥

वे चार सिद्धकूट निषध पर्वतके सिद्धकूटपर कहे हुए जिनपुरके सदृश विस्तार व उंचाई आदि सहित ऐसे चार जिनभवनोंसे शोभायमान होते है ॥ १२७ ॥

इस श्रेष्ठ पर्वतकी दिशा व विदिशाओंमेंसे प्रत्येकमें एक एक जिनेन्द्रकूट है, इस प्रकार भी कोई आचार्य बतलाते है ॥ १२८ ॥

पाठान्तर ।

१ द ह हेमवयं°, ब हेमवरयं°. २ द ब उच्छेहोदिसमाणा ३ द ब °विभूसिदासु. ४ द ब °भवणेसु.

लोयविणिच्छयकत्ता कुंडलसेलस्स वण्णणपयारं । अण्णरेण सरूवेणं वक्खाणइ तं परूवेमो ॥ १२९
मणुसुत्तरसमवासो बादालसहस्सजोयणुच्छेहो । कुंडलगिरी सहस्संगाढो बहुरयणकयसोहो ॥ १३०
कूडाणं ताइं चिय णामाइं माणुसुत्तरगिरिस्स । कूडेहिं सरिच्छाणं णवरि सुराणं इमे णामा ॥ १३१
पुव्वदिसाए विमिट्ठो पंचसिरो महसिरो महाबाहू । पउमो पउमुत्तरमहपउमो दक्खिणदिसाए वासुगिओ ॥ १३२
थिरहिदयमहाहिदया सिरिवच्छो सत्थिओ[1] य पच्छिमदो । सुंदरविसालणेत्तं पंडुयपंडुरा[2] य उत्तरए ॥ १३३
एक्कपलिदोवमाऊ वररयणविभूसिदंगरमणिज्जा । बहुपरिवारेहिं जुदा ते देवा होंति णागिंदा ॥ १३४
बहुविहदेवीहिं जुदा कूडोवरि तेसु भवणेसुं । णियणियविभूदिजोग्गं सोक्खं भुंजंति बहुभेयं ॥ १३५
पुव्वावरदिग्भागट्ठिदाण कूडाण अग्गभूमीए । एक्केक्का वरकूडा तडवेदीपहुदिपरियरिया ॥ १३६
जोयणसहस्सतुंगा पुह पुह तम्मेत्तमूलवित्थारा । पंचसयसिहररुंदा सगसयपण्णासमज्झवित्थारा ॥ १३७
१००० । ५०० । ७५० ।

लोकविनिश्चयकर्ता कुण्डल पर्वतके वर्णनप्रकारका जो दूसरी तरहसे व्याख्यान करते हैं, उसका यहां निरूपण किया जाता है ॥ १२९ ॥

बहुत रत्नोंसे की गयी शोभासे सहित यह कुण्डल पर्वत मानुषोत्तर पर्वतके समान विस्तारवाला, ब्यालीस हजार योजन ऊंचा, और एक हजार योजनप्रमाण अवगाहसे सहित है ॥ १३० ॥

मानुषोत्तर पर्वतके कूटोंके सदृश इस पर्वतपर स्थित कूटोंके नाम तो वे ही है, परन्तु देवोंके नाम ये हैं— पूर्वदिशामें विशिष्ट (त्रिशिर), पंचशिर, महाशिर और महाबाहु; दक्षिण-दिशामें पद्म, पद्मोत्तर, महापद्म और वासुकि; पश्चिममें स्थिरहृदय, महाहृदय, श्रीवृक्ष और स्वस्तिक; तथा उत्तरमें सुन्दर, विशालनेत्र, पाण्डुक और पांडुर, इस प्रकार ये सोलह देव उक्त क्रमसे उन कूटोंपर स्थित हैं ॥ १३१-१३३ ॥

वे नागेन्द्र देव एक पल्योपममात्र आयुसे सहित, उत्तम रत्नोंसे विभूषित शरीरसे रमणीय, और बहुत परिवारोंसे युक्त होते है ॥ १३४ ॥

ये देव बहुत प्रकारकी देवियोंसे युक्त होकर कूटोंपर स्थित उन भवनोंमें अपनी अपनी विभूतिके योग्य बहुत प्रकारके सुखको भोगते हैं ॥ १३५ ॥

पूर्वापर दिग्भागमें स्थित कूटोंकी अग्रभूमिमें तटवेदी आदिकसे व्याप्त एक एक श्रेष्ठ कूट हैं ॥ १३६ ॥

ये कूट पृथक् पृथक् एक हजार योजन ऊंचे, इतनेमात्र मूलविस्तारसे सहित, पांच सौ योजनमात्र शिखरविस्तारवाले, और सात सौ पचास योजनप्रमाण मध्यविस्तारसे संयुक्त हैं ॥१३७॥

उत्सेध १००० । मूलविस्तार १००० । शिखरविस्तार ५०० । मध्यविस्तार ७५० ।

१ द ब सिरिवंतो सच्छिओ. २ द ब इंदरपंडुरय.

ताणोवरिमपुरेसुं कोंडलदीवस्स अहिवई देवा । विंतरया[1] णियजोग्गं बहुपरिवारेहिं संजुत्ता[2] ॥ १३८
अब्भंतरभागेसुं एदाणि जिणिंददिव्वकूडाणिं । एक्केक्काणं अंजणगिरिजिणमंदिरसमाणाणिं ॥ १३९
एक्केक्का जिणकूडा चेट्ठंते दक्खिणुत्तरदिसासुं । ताणिं अंजणपव्वयजिणिंदपासादसारिच्छा ॥ १४०
पाठान्तरम् ।
तेरहमो रुचकवरो दीवो चेट्ठेदि तस्स बहुमज्झे । अत्थि गिरी रुचकवरो कणयमओ चक्कवालेणं ॥ १४१
सव्वस्स तस्स रुंदो चउसीदिसहस्सजोयणपमाणं । तम्मेत्तो उच्छेहो एक्कसहस्सं पि गाढत्तं ॥ १४२
मूलोवरिम्मि भागे तडवेदीउववणाइं चेट्ठंति । तग्गिरिणो वणवेदिप्पहुदीहिं अधियरम्माइं ॥ १४३
तग्गिरिउवरिमभागे चउदाला होंति दिव्वकूडाणिं । एदाणं विण्णासं भासेमो आणुपुव्वीए ॥ १४४
कणयं कंचणकूडं तवणं सत्थियदिसासुभद्दाणिं । अंजणमूलं अंजणवज्जं[4] कूडाणि अट्ठ[5] पुव्वाए ॥ १४५

इन कूटोंके ऊपर स्थित भवनोंमें कुण्डल द्वीपके अधिपति व्यन्तर देव अपने योग्य बहुत परिवारसे संयुक्त होकर निवास करते हैं ॥ १३८ ॥

इन एक एक कूटोंके अभ्यन्तर भागोंमें अंजनपर्वतस्थ जिनमन्दिरोंके समान दिव्य जिनेन्द्रकूट हैं ॥ १३९ ॥

उनके उत्तर-दक्षिण भागोंमें अंजनपर्वतस्थ जिनेन्द्रप्रासादोंके सदृश एक एक जिनकूट स्थित है ॥ १४० ॥ पाठान्तर ।

तेरहवां द्वीप रुचकवर है । इसके बहुमध्यभागमें मण्डलाकारसे सुवर्णमय रुचकवर पर्वत स्थित हैं ॥ १४१ ॥

उस सब पर्वतका विस्तार चौरासी हजार योजन, इतनी ही उंचाई, और एक हजार योजनप्रमाण अवगाह है ॥ १४२ ॥

उस पर्वतके मूल व उपरिम भागमें वनवेदी आदिकसे अधिक रमणीय तटवेदियां व उपवन स्थित है ॥ १४३ ॥

इस पर्वतके उपरिम भागमें जो चवालीस दिव्य कूट हैं, उनके विन्यासको अनुक्रमसे कहता हूं ॥ १४४ ॥

कनक, कांचनकूट, तपन, स्वस्तिकदिशा, सुभद्र, अंजनमूल, अंजन और वज्र, ये आठ कूट पूर्वदिशामें है ॥ १४५ ॥

१ द ब वितरया २ द ब संजुत्तं. ३ द ब संधियदिसा. ४ द अंजणमूलं अजवज्जं, ब अजमूलं अंजवज्जं. ५ ब अट्ठ.

पंचसयजोयणाइं तुंगा तम्मेत्तमूलविक्खंभा । तद्दलउवरिविक्खंभा ते कूडा वेदिवणजुत्ता ॥ १४६
५०० । ५०० । २५० ।

ताणोवरि भवणाणिं गोदमदेवस्स गेहसरिसाणिं । जिणभवणभूसिदाणिं विचित्तरूवाणि रेहंति ॥ १४७
एदेसु दिसाकण्णा णिवसंति णिरुवमेहिं रूवेहिं । विजया य वइजयंता जयंतणामा वराजिदया ॥ १४८
णंदा णंदवदीओ णंदुत्तरणंदिसेण सि । भिंगारधारिणीओ ताओ जिणजम्मकल्लाणे ॥ १४९
दक्खिणदिसाए फलियं रजदं कुमुदं च णलिणपउमाणिं । चंदक्खं वेस्समणं वेरुलियं अट्ठ कूडाणिं ॥ १५०
उच्छेहप्पहुदीहिं ते कूडा होंति पुव्वकूडसमा व । एदेसु दिसाकण्णा वसंति इच्छासमाहारा ॥ १५१
सुपइण्णा जसधरया लच्छीणामा य सेसवदिणामा । तह चित्तगुत्तदेवी वसुंधरा दप्पणधराओ ॥ १५२
होंति यमोघ सत्थियसंदरहेमवदरज्जणामाणिं । रज्जुत्तमचंदसुदंसणाणिं[1] पच्छिमदिसाए कूडाणिं ॥ १५३
पुव्वोदिदकूडाणं वासप्पहुदीहिं होंति सारिच्छा । एदेसुं कूडेसुं कुणंति वासं दिसाकण्णा ॥ १५४
इलणामा सुरदेवी पुढविपउमाओ[2] एक्कणासा य । णवमी सीदा भद्दा जिणजणणीए छत्तधारीओ ॥ १५५

वेदी व वनोंसे संयुक्त ये कूट पांच सौ योजन ऊंचे और इतनेमात्र मूलविस्तार व इससे आधे उपरिम विस्तारसे सहित है ॥ १४६ ॥

उत्सेध ५०० । मूलविष्कम्भ ५०० । उपरिमविष्कम्भ २५० ।

इन कूटोंके ऊपर जिनभवनोंसे भूषित और विचित्र रूपवाले गौतम देवके भवनसमान भवन विराजमान है ॥ १४७ ॥

इन भवनोंमें अनुपम रूपसे संयुक्त विजया, वैजयन्ता, जयन्ता, अपराजिता, नन्दा, नन्दवती, नन्दोत्तरा और नन्दिषेणा नामक दिक्कन्यायें निवास करती है। ये जिनभगवान्‌के जन्मकल्याणकमें झारीको धारण किया करती है ॥ १४८–१४९ ॥

स्फटिक, रजत, कुमुद, नलिन, पद्म, चन्द्र, वैश्रवण और वैडूर्य, ये आठ कूट दक्षिण-दिशामें स्थित हैं ॥ १५० ॥

ये सब कूट उंचाई आदिकमें पूर्व कूटोंके ही समान है। इनके ऊपर इच्छा, समाहारा, सुप्रकीर्णा, यशोधरा, लक्ष्मी, शेषवती, चित्रगुप्ता और वसुंधरा नामकी आठ दिक्कन्यायें निवास करती है। ये सब जिनजन्मकल्याणकमें दर्पणको धारण किया करती है ॥ १५१–१५२ ॥

अमोघ, स्वस्तिक, मन्दर, हैमवत, राज्य, राज्योत्तम, चन्द्र और सुदर्शन, ये आठ कूट पश्चिमदिशामें स्थित है ॥ १५३ ॥

ये कूट विस्तारादिकमें पूर्वोक्त कूटोंके ही समान हैं। इनके ऊपर इला, सुरादेवी, पृथिवी, पद्मा, एकनासा, नवमी, सीता और भद्रा नामक दिक्कन्यायें निवास करती है। ये दिक्कन्यायें जिनजन्मकल्याणकमें जिनमाताके ऊपर छत्रको धारण किया करती हैं ॥ १५४–१५५ ॥

---

१ द ब °चंदसदंसुणाणी. २ द पुविपउमाओ य, ब पुविपउमाउ य.

विजयं च वइजयंतं जयंतमपराजिदं च कुंडलयं। रुजगाइरयणकूडाणि सव्वरयण त्ति उत्तरदिसाए॥ १५६
एदे वि अट्ठ कूडा सारिच्छा होंति पुव्वकूडाणं। तेसु पि दिसाकण्णा अलंबुसामिस्सकेसीओ॥ १५७
तह पुंडरीकिणी वारुणि त्ति आसा य सव्वणामा य। हिरिया सिरिया देवी एदाओ चमरधारीओ॥ १५८
एदाणं वेदीणं अब्भंतरचउदिसासु चत्तारि। महकूडा चेट्ठंते पुव्वोदिदकूडसारिच्छा॥ १५९
णिच्चुज्जोवं विमलं णिच्चालोयं सयंपहं कूडं। उत्तरपुव्वदिसादिसु दक्खिणपच्छिमदिसासु कमा॥ १६०
सोदामिणि त्ति कणया सदपदादेवी य कणयचेत्त त्ति। उज्जोवकारिणीओ दिसासु जिणजम्मकल्लाणे॥ १६१
तक्कूडब्भंतरए कूडा पुव्वुत्तकूडसारिच्छा। वेरुलियरुचकमणिरज्जउत्तमा पुव्वपहुदीसुं[3]। १६२
तेसुं पि दिसाकण्णा वसंति रुचका तहा रुचककित्ती। रुचकादीकंतपहा जाणंति[4] जिणजातकम्माणिं॥ १६३
पल्लपमाणाउठिदी पत्तेक्कं होदि सयलदेवीणं। सिरिदेवीए सरिच्छा परिवारा ताण णादव्वा॥ १६४

विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित, कुण्डलक, रुचक, रत्नकूट और सर्वरत्न, ये आठ कूट उत्तरदिशामें स्थित है॥ १५६॥

ये भी आठ कूट पूर्वकूटोंके ही सदृश है। इनके ऊपर भी अलंभूषा, मिश्रकेशी, पुण्डरीकिणी, वारुणी, आशा, सर्वा, ह्री और श्री नामकी आठ दिक्कन्यायें निवास करती हैं। जिनजन्मकल्याणकमें ये सब चँवरोंको धारण किया करती है॥ १५७-१५८॥

इन कूटोंकी वेदियोंके अभ्यन्तर चार दिशाओंमें पूर्वोक्त कूटोंके सदृश चार महाकूट स्थित है॥ १५९॥

नित्योद्योत, विमल, नित्यालोक और स्वयंप्रभ, ये चार कूट क्रमसे उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशामें स्थित हैं॥ १६०॥

सौदामिनी, कनका, शतपदा (शतह्रदा) और कनकचित्रा, ये चार देवियां इन कूटोंपर स्थित होती हुई जिनजन्मकल्याणकमें दिशाओंको निर्मल किया करती है॥ १६१॥

इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें पूर्वोक्त कूटोंके सदृश वैडूर्य, रुचक, मणि और राज्योत्तम नामक चार कूट पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित हैं॥ १६२॥

उन कूटोंपर भी रुचका, रुचककीर्ति, रुचककांता और रुचकप्रभा, ये चार दिक्कन्यायें निवास करती है। ये कन्यायें जिनभगवान्‌के जातकर्मोंको जानती है॥ १६३॥

इन सब देवियोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक पल्यप्रमाण होती है। उनके परिवार श्रीदेवीके समान जानना चाहिये॥ १६४॥

१ ब चरम. २ द ब देवीण. ३ द ब मणिरजउत्तमपउमस्स पहुदीसु. ४ द ब जणंति.

तक्कूडब्भंतरए चत्तारि हवंति सिद्धकूडाणि । पुव्वसमाणं णिसहट्ठिदजिणपुरेसरिसजिणणिकेदाणि ॥ १६५

दिसविदिसं तब्भाए चउ चउ अट्ठाणि सिद्धकूडाणि । उच्छेदप्पहुदीए णिसहसमा[2] केइ इच्छंति ॥ १६६

लोयविणिच्छयकत्ता रुचकवरहिस्स वण्णणपयारं । अण्णेण सरूवेणं वक्खाणइ तं पयासेमि ॥ १६७

होदि गिरी रुचकवरो रुंदो अंजणगिरिंदसमउदओ । बादालसहस्साणि वासो सव्वत्थ दसघणो गाढो ॥ १६८

८४००० । ४२००० । १००० ।

कूडा णंदावत्तो सत्थियसिरिवच्छवड्ढमाणक्खा । तग्गिरिपुव्वदिसाए सहस्सरुंदं तदद्धउच्छेहो ॥ १६९

एदेसु दिग्गजिंदा[3] देवा णिवसंति एक्कपल्लाऊ । णामेहिं पउमुत्तरसुभद्दणीलंजणगिरीओ ॥ १७०

तक्कूडब्भंतरए वरकूडा चउदिसासु अट्ठट्ठा । चेट्ठंति दिव्वरूवा सहस्सरुंदा तदद्धउच्छेहा ॥ १७१

१००० । ५०० ।

इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें चार सिद्धकूट है, जिनपर पहिलेके समान ही निषध-पर्वतस्थ जिनभवनोंके सदृश जिनमन्दिर विद्यमान है ॥ १६५ ॥

कोई आचार्य उंचाई आदिकमें निषध पर्वतके समान ऐसे दिशाओंमें चार और विदिशाओंमें चार इस प्रकार आठ सिद्धकूटोंको स्वीकार करते है ॥ १६६ ॥

लोकविनिश्चयकर्ता रुचकवर पर्वतके वर्णनप्रकारका अन्यप्रकारसे व्याख्यान करते है, उसको यहां दिखलाता हूं ॥ १६७ ॥

रुचकवरपर्वत अंजनगिरिके समान ऊंचा, व्यालीस हजार योजन विस्तारवाला और सर्वत्र दशके घन (एक हजार) योजनप्रमाण अवगाहसे सहित है ॥ १६८ ॥

उत्सेध ८४००० । व्यास ४२००० । अवगाह १००० ।

इस पर्वतकी पूर्वदिशासे लेकर नन्द्यावर्त, स्वस्तिक, श्रीवृक्ष और वर्धमान नामक चार कूट हैं । इन कूटोंका विस्तार एक हजार योजन और उंचाई इससे आधी है ॥ १६९ ॥

इन कूटोंपर एक पल्यप्रमाण आयुके धारक पद्मोत्तर, सुभद्र, नील और अंजनगिरि नामक चार दिग्गजेन्द्र देव निवास करते है ॥ १७० ॥

इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें एक हजार योजन विस्तारवाले और इससे आधे ऊंचे चारों दिशाओंमें आठ आठ दिव्य रूपवाले उत्तम कूट स्थित हैं ॥ १७१ ॥

विस्तार १००० । उत्सेध ५०० ।

---

१ द ब पुरजिण°. २ द ब णिसहसमो ३ द दिगदिंदा, ब दिगादिंदा.

पुव्वोदिदणामजुदा एदे बत्तीस रुचकवरकूडा। तेसु य दिसायकण्णा ताइं चिय ताण णामाणिं ॥ १७२
होंति हु ईसाणादिसु[1] विदिसासुं दोण्णि दोण्णि वरकूडा। वेरुलियमणीणामा[2] रुचका रयणप्पहा णामा ॥ १७३
रयणं च संखरयणा रुचकुत्तमरयणउच्चका[3] कूडा। एदे पदाहिणेणं पुव्वोदिदकूडसारिच्छा ॥ १७४
तेसु दिसाकण्णाणं महत्तरीओ कमेण णिवसंति। रुचका विजया रुचकाभा[4] वइजयंति रुचककंता ॥ १७५
तह य जयंती रुचकुत्तमा य अपराजिदा जिणिंदस्स। कुव्वंति जातकम्मं एदाओ परमभत्तीए ॥ १७६
विमला णित्यालोका सयंपहा तह य णित्यउज्जोवा। चत्तारो वरकूडा पुव्वादिपदाहिणा होंति ॥ १७७
तक्कूडब्भंतरए चत्तारि भवंति सिद्धवरकूडा। पुव्वादिसु पुव्वसमा अंजणजिणगेहसरिसजिणगेहा ॥ १७८
पाठान्तरम्।
जंबूदीवादिंतो संखेज्जाणिं पयोधिदीवाणिं। गंतूण अत्थि अण्णो जंबूदीओ परमरम्मो ॥ १७९
तत्थ वि विजयप्पहुदिसु भवंति देवाण दिव्वणयरीओ[5]। उवरिं[6] वज्जखिदीए चित्तामज्झम्मि पुव्वपहुदीसुं ॥ १८०

ये बत्तीस रुचकवरकूट पूर्वोक्त नामोंसे युक्त हैं। इनपर जो दिक्कन्यायें रहती हैं, उनके नाम भी वे (पूर्वोक्त) ही है ॥ १७२ ॥

वैडूर्य, मणिप्रभ, रुचक, रत्नप्रभ, रत्न, शंखरत्न (सर्वरत्न), रुचकोत्तम और रत्नोच्चय, इन पूर्वोक्त कूटोंके सदृश कूटोंमें दो दो उत्तम कूट प्रदक्षिणक्रमसे ईशानादि विदिशाओंमें स्थित हैं ॥ १७३–१७४ ॥

इन कूटोंपर क्रमसे रुचका, विजया, रुचकाभा, वैजयन्ती, रुचककान्ता, जयन्ती, रुचकोत्तमा और अपराजिता, ये दिक्कन्याओंकी महत्तरियां (प्रधान) निवास करती हैं। ये सब उत्कृष्ट भक्तिसे जिनेन्द्रभगवान्‌के जातकर्मको किया करती हैं ॥ १७५–१७६ ॥

विमल, नित्यालोक, स्वयंप्रभ तथा नित्योद्योत, ये चार उत्तम कूट पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणरूपसे स्थित हैं ॥ १७७ ॥

इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें चार सिद्धवर कूट है, जिनके ऊपर पहिलेके ही समान अंजनपर्वतस्थ जिनभवनोंके सदृश जिनालय स्थित हैं ॥१७८ ॥ पाठान्तर।

जम्बूद्वीपसे आगे संख्यात समुद्र व द्वीपोंके पश्चात् अतिशय रमणीय दूसरा जम्बूद्वीप है ॥ १७९ ॥

वहांपर भी वज्रा पृथिवीके ऊपर चित्राके मध्यमें पूर्वादिक दिशाओंमें विजयप्रभृति देवोंकी दिव्य नगरियां है ॥ १८० ॥

१ द ब ईसाणदिसा° २ द वेलुरिय पयणि णामा, ब वेरुलिय पयणि णामा. ३ द ब उच्चका. ४ द ब रुचकाय. ५ ब °नयरी. ६ द उवरिम.

उच्छेहजोयणेणं पुरीओ बारसमहस्सरुंदाओ । जिणभवणभूमिदाओ उववणवेदीहिं जुत्ताओ ॥ १८१

१२०००।

पण्णत्तरिदलतुंगा पायारा जोयणद्धमवगाढा । सव्वाणं णयरीणं णाणंतविचित्तधयमाला ॥ १८२

$\frac{७५}{२}$ । $\frac{१}{२}$ ।

कंचणपायाराणं वररयणविणिम्मियाण भूवासो । जोयणपणुवीसदलं तच्चउभागो य मुहवासो ॥ १८३

$\frac{२५}{२}$ । $\frac{२५}{४}$ ।

एक्केक्काए दिसाए पुरीण पणुवीसगोउरदुवारे । जंबूणदणिम्मविदा मणितोरणथंभरमणिज्जा ॥ १८४

बासट्ठि जोयणाणिं ताणं हवंति पुरोवरिपुराणं । उदओ[1] तद्दलमेत्तो रुंदो गाढो दुवे कोसा[2] ॥ १८५

६२ । ३१ । को २ ।

मज्झे चेट्ठदि रायं विचित्तबहुभवणएहिं[3] अदिरम्मं। जोयणसदाणि बारस वासजुदं एक्ककोसउच्छेहो ॥ १८६

१२०० । को १ ।

ये नगरियां उत्सेध योजनसे बारह हजार योजनप्रमाण विस्तारसे सहित, जिनभवनोंसे विभूषित और उपवनवेदियोंसे संयुक्त है ॥ १८१ ॥ विस्तार १२०० यो.।

इन सब नगरियोंके प्राकार पचहत्तरके आधे (साढ़े सैंतीस) योजन ऊंचे, अर्ध योजन-प्रमाण अवगाहसे सहित, और फहराती हुई विचित्र ध्वजाओंके समूहसे संयुक्त हैं ॥ १८२ ॥

उत्सेध $\frac{७५}{२}$ । अवगाह $\frac{१}{२}$ ।

उत्तम रत्नोंसे निर्मित इन सुवर्णप्राकारोंका भूविस्तार पच्चीसके आधे (साढ़े बारह) योजन और मुखविस्तार पच्चीसका चतुर्थ भाग अर्थात् सवा छह योजनमात्र है ॥ १८३ ॥

भूविस्तार $\frac{२५}{२}$ । मुखविस्तार $\frac{२५}{४}$ ।

इन नगरियोंकी एक एक दिशामें सुवर्णसे निर्मित और मणिमय तोरणस्तम्भोंसे रमणीय पच्चीस गोपुरद्वार है ॥ १८४ ॥

इन नगरियोंके उत्तम भवनोंकी ऊंचाई बासठ योजन, इससे आधा विस्तार और अवगाह दो कोशमात्र है ॥ १८५ ॥

उत्सेध ६२ । विस्तार ३१ । अवगाह को० २ ।

नगरियोंके मध्यमें विचित्र बहुत भवनोंसे अतिशय रमणीय, बारहसौ योजनप्रमाण विस्तारसे सहित और एक कोश ऊंचा राजांगण स्थित है ॥ १८६ ॥

विस्तार १२०० । उत्सेध को० १ ।

१ द ब उदए. २ द ब कोओ. ३ द ब विचित्तबहुभवणएहिं.

तस्स य थलस्स उवरिं समंतदो दोण्णि कोस उच्छेहं । पंचसयचावरुंदं चउगोउरसंजुदं वेदी ॥ १८७
को २ । दंड ५०० ।
रायंगणबहुमज्झे कोससयं पंचवीसमब्भहियं । विक्खंभो तद्दुगुणो इदओ गाढं दुवे कोसा ॥ १८८
१२५ । २५० । को २ ।
पासादो मणितोरणसंपुण्णो अट्ठजोयणुच्छेहो । चउवित्थारो दारो[1] वज्जकवाडेहिं सोहिल्लो ॥ १८९
८ । ४ ।
एदस्स चउदिसासुं चत्तारो होंति दिव्वपासादा । उप्पण्णुप्पण्णाणं चउ चउ वट्टंति जाव छक्कंतं ॥ १९०
एत्तो[2] पासादाणं परिमाणं मंडलं पडिभणामो । एक्को हवेदि मुक्खो चत्तारो मंडलम्मि पढमम्मि ॥ १९१
१ । ४ ।
सोलस बिदिए तदिए चउसट्ठी वेसदं च छप्पण्णं । तुरिमे तं चउपहदं पंचमए मंडलम्मि पासादा ॥ १९२
१६ । ६४ । २५६ । १०२४ ।
चत्तारि सहस्साणिं छण्णउदिजुदाणि होंति छट्ठीए । एत्तो पासादाण उच्छेहादिं परूवेमो ॥ १९३
४०९६ ।

इस स्थलके ऊपर चारों ओर दो कोश ऊंची, पांचसौ धनुष विस्तीर्ण और चार गोपुरोंसे युक्त वेदी स्थित है ॥ १८७ ॥ उत्सेध २ को. । विस्तार ५०० धनुष ।

राजांगणके बहुमध्यभागमें एकसौ पच्चीस कोश विस्तारवाला, इससे दूना ऊंचा, दो कोशमात्र अवगाहसे सहित, और मणिमय तोरणोंसे परिपूर्ण प्रासाद है । इसका वज्रमय कपाटोंसे सशोभित द्वार आठ योजन ऊंचा और चार योजनमात्र विस्तारसे सहित है ॥ १८८–१८९ ॥
प्रासादविस्तार १२५ । उत्सेध २५० । अवगाह २ को. । द्वारोत्सेध ८ । विस्तार ४ यो. ।

इसकी चारों दिशाओंमें चार दिव्य प्रासाद हैं । (१) इनसे आगे छठे मण्डल तक उत्तरोत्तर चार चार गुणे प्रासाद हैं ॥ १९० ॥

यहांसे प्रत्येक मण्डलके प्रासादोंके प्रमाणको कहते हैं । एक (मध्यका) प्रासाद मुख्य है । प्रथम मण्डलमें चार प्रासाद हैं ॥ १९१ ॥

द्वितीय मण्डलमें सोलह, तृतीयमें चौंसठ, चतुर्थमें दो सौ छप्पन और पांचवें मण्डलमें इससे चौगुणे अर्थात् दश सौ चौबीस प्रासाद हैं ॥ १९२ ॥

द्वि. मं. १६ । तृ. मं. ६४ । च. म २५६ । प. म. १०२४ ।

छठे मण्डलमें चार हजार छ्यानवे प्रासाद हैं । अब यहांसे आगे भवनोंकी उंचाई आदिका निरूपण किया जाता है ॥ १९३ ॥ षष्ठ मं. ४०९६ ।

१ ब उवउगाद. २ द दासा. ३ द एक्को

सव्वब्भंतरमुक्खप्पासादुस्सेहवासगाढसमा । आदिमदुगमंडलए तस्स दलं तदिय-तुरिमम्मि ॥ १९४
पंचमिए छट्ठीए तहल्लमेत्तं हुवेदि उदयादी । एक्केके पासादे एक्केक्का वेदिया विचित्तयरा ॥ १९५
बेकोसुच्छेहादिं पंचसयाणिं धणूणि वित्थिण्णा । आदिल्लयपासादे पढमे बिदियम्मि तस्सेत्ता ॥ १९६
पुव्विल्लवेदिअद्धं तदिए तुरिमम्मि होंति मंडलए । पंचमिए छट्ठीए तस्सद्धपमाणवेदीओ ॥ १९७
गुणसंकमणं[1]सरूवट्ठिदाण सव्वाण होदि परिसंखा । पंचसहस्सा चउसयं[2]संजुत्ता एक्कसट्ठी य ॥ १९८

५४६१ ।

आदिमपासादादो[3] उत्तरभागे ट्ठिदा सुधम्मसभा । दलिदपणुवीसजोयणदीहा तस्सद्धवित्थारा ॥ १९९

१२½ । ६¼ ।

आदिके दो मंडलोंमें स्थित प्रासादोंकी उंचाई, विस्तार और अवगाह सबके बीचमें स्थित मुख्य प्रासादकी उंचाई, विस्तार और अवगाहके समान है। तृतीय और चतुर्थ मंडलके प्रासादोंकी उंचाई आदि उससे आधी है। इससे भी आधी पंचम और छठे मण्डलके प्रासादोंकी उंचाई आदिक है। प्रत्येक प्रासादके विचित्रतर एक एक वेदिका है ॥ १९४–१९५ ॥

प्रथम प्रासादके आश्रित वेदी दो कोश उंचाई आदिसे सहित और पांच सौ धनुष विस्तीर्ण है। प्रथम और द्वितीय मंडलमें स्थित प्रासादोंकी वेदिया भी इतनीमात्र उंचाई आदिसे सहित है ॥ १९६ ॥

तृतीय व चतुर्थ मण्डलके प्रासादोंकी वेदिकाकी उंचाई व विस्तारका प्रमाण पूर्वोक्त वेदियोंसे आधा और इससे भी आधा प्रमाण पांचवे व छठे मण्डलके प्रासादोंकी वेदिकाओंका है ॥ १९७ ॥

गुणितक्रमसे स्थित इन सब भवनोंकी संख्या पांच हजार चार सौ इकसठ है ॥ १९८ ॥

५४६१ ।

प्रथम प्रासादके उत्तर भागमें पच्चीस योजनके आधे अर्थात् साढ़े बारह योजन लंबा और इससे आधे विस्तारवाली सुधर्मसभा स्थित है ॥ १९९ ॥ लंबाई १२½ । विस्तार ६¼ यो. ।

१ ब दुग. २ द ब गुणसंकरण. ३ ब चउस्सय. ४ द °पासादो.

णवजोयणउच्छेहा[1] गाउदगाढा सुवण्णरयणमई । तीए उत्तरभागे जिणभवणं होदि तम्मेत्तं ॥ २००

९ । को १ ।

पवणदिसाए पढमप्पासादादो जिणिंदगेहसमा । चेट्ठदि उववादसभा कंचणवररयणणिवहमई ॥ २०१

$\frac{२}{२}$ । $\frac{२}{४}$ । ९ । को १ ।

पुव्वदिसाए पढमप्पासादादो विचित्तविण्णासा । चेट्ठदि अभिसेयसभा उववादसभाए सारिच्छा ॥ २०२

तत्थ चिय दिव्भाए अभिसेयसभासरिच्छवासादी । होदि अलंकारसभा मणितोरणदाररमणिज्जा । २०३

तस्सिं चिय दिव्भाए पुव्वसभासरिसउदयवित्थारा । मंतसभा चामीयररयणमई सुंदरदुवारा ॥ २०४

एदे छप्पासादा पुव्वेहिं मंदिरेहि मेलविदा । पंच सहस्सा चउसयअब्भहिया सत्तसट्ठीहिं ॥ २०५

५४६७ ।

सुवर्ण और रत्नमयी यह सभा नौ योजन ऊंची और एक गव्यूति अर्थात् कोशमात्र अवगाहसे सहित है । इसके उत्तरभागमें इतनेमात्र प्रमाणसे संयुक्त जिनभवन है ॥ २०० ॥

उत्सेध ९ यो. । अवगाह को. १ ।

प्रथम प्रासादसे वायव्यदिशामें जिनेन्द्रभवनके समान सुवर्ण एवं उत्तम रत्नसमूहोंसे निर्मित उपपादसभा स्थित है ॥ २०१ ॥

लम्बाई $\frac{२}{२}$ । विस्तार $\frac{२}{४}$ । उत्सेध ९ यो. । अवगाह १ को. ।

प्रथम प्रासादके पूर्वमें उपपादसभाके समान विचित्र रचनासे संयुक्त अभिषेकसभा स्थित है ॥ २०२ ॥

इसी दिशाभागमें अभिषेकसभाके समान विस्तारादिसे सहित और मणिमय तोरणद्वारोंसे रमणीय अलंकारसभा है ॥ २०३ ॥

इसी दिशाभागमें पूर्व सभाके सदृश उंचाई व विस्तारसे सहित, सुवर्ण एवं रत्नोंसे निर्मित, और सुन्दर द्वारोंसे संयुक्त मंत्रसभा है ॥ २०४ ॥

इन छह प्रासादोंको पूर्व मन्दिरोंमें मिलादेनेपर सबके समस्त संख्या पांच हजार चार सौ सड़सठ होती है ॥ २०५ ॥ ५४६७ ।

१ द ब उच्छेहो.

ते सव्वे पासादा चउदिम्मुहविप्फुरंतकिरणेहिं । वररयणपईवेहिं णिच्चच्चियणिच्चउज्जोवा ॥ २०६
पोक्खरणीरम्मेहिं उववणसंडेहिं विविहरुक्खेहिं । कुसुमफलसोहिदेहिं सुरमिहुणजुदेहि सोहंति ॥ २०७
विद्दुमवण्णा केई केई कप्पूरकुंदसंकासा । कंचणवण्णा केई केई वज्जिंदणीलणिहा ॥ २०८
तेसुं पासादेसुं विजओ देवो सहस्ससोहिल्लो । णिच्चजुवाणो देवो वररयणविभूसिदसरीरो ॥ २०९
लक्खणवंजणजुत्तो धादुविहीणो य वाहिपरिचत्तो । विविहसुहेसुं सत्तो कीडदि बहुविणोदेणं ॥ २१०
मउवाणि णिम्मलाणिं मणणयणाणंदजणणाणिं ॥ २११
आदिमपासादस्स य बहुमज्झे होदि कणयरयणमयं । सिंहासणं विसालं सपादपीढं परमरम्मं ॥ २१२
सिंहासणमारूढो विजओ णामेण अहिवई तत्थ । पुव्वमुहो पासादे लच्छाणदेदि लीलाए ॥ २१३
तस्स य सामाणीया चेट्ठंते छस्सहस्सपरिमाणा । उत्तरदिसाविभागे विदिसाए विजयपीढादो ॥ २१४

जिनकी किरणें चारों दिशाओंमें प्रकाशमान हो रही हैं ऐसे उत्तम रत्नमयी प्रदीपोंसे वे सब भवन नित्य अर्चित और नित्य उद्योतित रहते हैं ॥ २०६ ॥

पुष्करिणिओंसे रमणीय, फल-फूलोंसे सुशोभित, अनेक प्रकारके वृक्षोंसे सहित, और देवयुगलोंसे संयुक्त ऐसे उपवनखण्डोंसे वे प्रासाद शोभायमान होते हैं ॥ २०७ ॥

इनमेंसे कितने ही भवन मूंगे जैसे वर्णवाले, कितने ही कपूर और कुन्दपुष्पके सदृश, कितने ही सुवर्णवर्ण, और कितने ही वज्र एवं इन्द्रनीलमणिके सदृश हैं ॥ २०८ ॥

उन भवनोंमें हजारों देवियोंसे सुशोभित, विजय नामक देव शोभायमान है। और वहां नित्ययुवक, उत्तम रत्नोंसे विभूषित शरीरसे संयुक्त, लक्षण व व्यंजनोंसे सहित, धातुओंसे विहीन, व्याधिसे रहित, तथा विविध प्रकारके सुखोंमें आसक्त देव बहुत विनोदके साथ क्रीडा करते हैं ॥ २०९-२१० ॥

इन भवनोंमें मृदुल, निर्मल और मन एवं नेत्रोंको आनन्ददायक रत्नमय शय्यायें व आसन विद्यमान हैं ॥ २११ ॥

प्रथम प्रासादके बहुमध्यभागमें अतिशय रमणीय और पादपीठ सहित सुवर्ण एवं रत्नमय विशाल सिंहासन है ॥ २१२ ॥

वहां पूर्वमुख प्रासादमें सिंहासनपर आरूढ विजय नामक अधिपति देव लीलासे आनन्दको प्राप्त होता है ॥ २१३ ॥

विजयके सिंहासनसे उत्तरदिशा और विदिशामें उसके छह हजार प्रमाण सामानिक देव स्थित रहते हैं ॥ २१४ ॥

---

१ ब 'विद्दुपह'. २ द ब °संडा. ३ द ब जोवेद.

चेट्ठंति णिरुवमाणा छ च्चिय विजयस्स अग्गदेवीओ । ताणं पीढा रम्मा सिंहासणपुव्वदिब्भाए ॥ २१५
परिवारा देवीओ तिण्णि सहस्सा हुवंति पत्तेक्कं । साहियपल्लं आऊ णियणियठाणम्मि चेट्ठंति ॥ २१६
बारस्स देवसहस्सा बाहिरपरिसाए विजयदेवस्स । णइरिदिदिसाए ताणं पीढाणिं सामिपीढादो ॥ २१७
१२०००।
दस देवसहस्साणि मज्झिमपरिसाए होंति विजयस्स । दक्खिणदिसाविभागे तप्पीढा णाहपीढादो । २१८
१००००।
अब्भंतरपरिसाए अट्ठ सहस्साणि विजयदेवस्स । अग्गिदिसाए होंति हु तप्पीढा णाहपीढादो ॥ २१९
(८०००)
सत्तण्हं महत्तराणं सत्ताणं होंति दिव्वपीढाणि । सिंहासणपच्छिमदो वरकंचणरयणरइदाइं ॥ २२०
तणुरक्खा अट्ठारससहस्समेत्ता हवंति पत्तेक्कं । ताणं चउसु दिसासु चेट्ठंते चंदपीढाणिं ॥ २२१
१८०००। १८०००। १८०००। १८०००।

मुख्य सिंहासनके पूर्वदिशाभागमें विजयदेवकी अनुपम अग्रदेवियाँ स्थित रहती हैं। उनके सिंहासन रमणीय हैं ॥ २१५ ॥

इनमेंसे प्रत्येक अग्रदेवीकी परिवारदेवियाँ तीन हजार हैं जिनकी आयु एक पल्यसे कुछ अधिक होती है। ये परिवारदेवियाँ भी अपने अपने स्थानमें स्थित रहती हैं ॥ २१६ ॥

विजयदेवकी बाह्य परिषद्में बारह हजार देव हैं। उनके सिंहासन स्वामीके सिंहासनसे नैर्ऋत्य दिशाभागमें हैं ॥ २१७ ॥ १२००० ।

विजयदेवकी मध्यम परिषद्में दश हजार देव होते हैं। उनके सिंहासन स्वामीके सिंहासनसे दक्षिणदिशाभागमें स्थित रहते हैं ॥ २१८ ॥ १०००० ।

विजयदेवकी अभ्यन्तर परिषद्में जो आठ हजार देव रहते हैं, उनके सिंहासन स्वामीके सिंहासनसे अग्निदिशामें स्थित रहते हैं ॥ २१९ ॥ ८००० ।

सात सेनामहत्तरोंके उत्तम सुवर्ण एवं रत्नोंसे रचित दिव्य पीठ मुख्य सिंहासनके पश्चिममें होते हैं ॥ २२० ॥

विजयदेवके जो अठारह हजारप्रमाण आत्मरक्षक देव हैं, उन प्रत्येकके चन्द्रपीठ चारों दिशाओंमें स्थित हैं ॥ २२१ ॥

पूर्व १८००० । दक्षिण १८००० । पश्चिम १८००० । उत्तर १८००० ।

१ ब हंति

मत्तसरमहुरगीयं गायंता पलहवंसपडुदाणि । वायंता णच्चंता[1] विजयं रंजंति तत्थ सुरा ॥ २२२

रायंगणस्स बाहिर परिवारसुराण होंति पासादा । विप्फुरिदधयवडाया वररयणजोइअधियंता ॥ २२३

बहुविहरइकरणेहिं कुसलाओ णिच्चजोव्वणजुदाओ । णाणाविहुव्वणाओ मायालोहादिरहिदाओ ॥ २२४

उल्लसिदविब्भमाओ चित्तसहावेण[2] पेम्मवंताओ । सव्वाओ देवीओ लग्गंते विजयदेवस्स ॥ २२५

णियणयराणि णिविट्ठा देवा सव्वे वि विणयसंपुण्णा । णिब्भरभत्तिपसत्ता सेवंते विजयमणवरदं ॥ २२६

तण्णयरीए बाहिर गंतूणं जोयणाणि पणवीसं । चत्तारो वणसंडा पत्तेक्कं चेत्ततरुजुत्ता ॥ २२७

होंति हु ताणि[3] वणाणि दिव्वाणि असोयसत्तवण्णाणं । चंपयचूदवणा तह पुव्वादिपदाहिणक्कमेणं ॥ २२८

बारसमहस्समजोयणदीहा ते होंति पंचसयरुंदा । पत्तेक्कं वणसंडा बहुविहरुक्खेहिं परिपुण्णा ॥ २२९

१२००० । ५०० ।

वहां देव सात स्वरोंसे परिपूर्ण मधुर गीतको गाते और पटह एवं वांसुरी आदिक बाजोंको बजाते व नाचते हुए विजयका मनोरंजन करते हैं ॥ २२२ ॥

राजांगणसे बाहिर फहरती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित और उत्तम रत्नोंकी ज्योतिसे अधिक रमणीय परिवारदेवोंके प्रासाद हैं ॥ २२३ ॥

जो बहुत प्रकारकी रतिके करनेमें कुशल है, नित्य यौवनसे युक्त हैं, नाना प्रकारकी विक्रियाको करती हैं, माया एवं लोभादिसे रहित हैं, उल्लासयुक्त विलास सहित हैं, और स्वभावसे ही प्रेम करनेवाली हैं ऐसी समस्त देवियां विजयदेवकी सेवा करती हैं ॥ २२४–२२५ ॥

अपने नगरोंमें रहनेवाले सब ही देव विनयसे परिपूर्ण और अतिशय भक्तिमें आसक्त होकर निरन्तर विजयदेवकी सेवा करते हैं ॥ २२६ ॥

उस नगरीके बाहिर पच्चीस योजन जाकर चार वनखण्ड स्थित हैं, जो प्रत्येक चैत्यवृक्षोंसे संयुक्त है ॥ २२७ ॥

अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र वृक्षोंके ये वन पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणक्रमसे हैं ॥ २२८ ॥

बहुत प्रकारके वृक्षोंसे परिपूर्ण ये प्रत्येक वनखण्ड बारह हजार योजन लंबे और पांच सौ योजन चौड़े हैं ॥ २२९ ॥ दीर्घ १२००० । विस्तीर्ण ५०० यो.

१ द ब ण चिंता. २ द ब चित्तसहावेण. ३ द ब ताणं.

एदेसुं चेत्तदुमा भावणचेत्तप्पमाणसारिच्छा । ताणं चउसु दिसासुं चउचउजिणणाहपडिमाओ ॥ २३०
देवासुरमहिदाओ सपाडिहेराओ[1] रयणमइयाओ । पल्लंकआसणाओ जिणिंदपडिमाओ विजयंते ॥ २३१
चेत्तदुमस्सीमाणे भागे चेट्ठेदि दिव्वपासादो । इगितीसजोयणाणिं कोसब्भहियाणि वित्थिण्णो ॥ २३२
३१ । को १ ।
वासाहि दुगुणउदओ दुकोस गाढा विचित्तमणिखंभो । चउ-अट्ठजोयणाणिं रुंदुच्छेहा दु तद्दारे ॥ २३३
६२ । को २ । ४ । ८
सुअलंतरयणदीओ विचित्तसयणासणेहिं[2] परिपुण्णो । सद्दरसरूवगंधप्पासेहिं[3] सुरमणारम्मो[4] ॥ २३४
कणयमयकुड्डविरचिदविचित्तचित्तप्पबंधरमणिज्जो । अच्छरियजणणरूवो किं बहुणा सो णिरुवमाणो ॥ २३५
तस्सिं असोयदेओ रमेदि देवीसहस्ससंजुत्तो । वररयणमउडधारी चामरछत्तादिसोहिल्लो ॥ २३६

इन वनोंमें भवनलोकके चैत्यवृक्षोंके प्रमाणसे सदृश जो चैत्यवृक्ष स्थित हैं उनकी आगे दिशाओंमें चार जिनेन्द्रप्रतिमायें हैं ॥ २३० ॥

देव व असुरोंसे पूजित, प्रातिहार्योंसे सहित, और पद्मासनसे स्थित वे रत्नमय जिनेन्द्र-प्रतिमायें जयवंत हैं ॥ २३१ ॥

प्रत्येक चैत्यवृक्षके ईशानदिशाभागमें एक कोश अधिक इकतीस योजनप्रमाण विस्तार-वाला दिव्य प्रासाद स्थित है ॥ २३२ ॥ यो. ३१, को. १ ।

विचित्र मणिमय खम्भोंसे संयुक्त इस प्रासादकी उंचाई विस्तारसे दुगुणी अर्थात् साढ़े इकसठ योजन और अवगाह दो कोशप्रमाण है । उसके द्वारका विस्तार चार योजन और उंचाई आठ योजन है ॥ २३३ ॥ उंचाई यो. ६२, को. २ । (अवगाह को. २) । विस्तार ४ । उंचाई ८ यो. ।

उपर्युक्त प्रासाद देदीप्यमान रत्नदीपकोंसे सहित, विचित्र शय्याओं व आसनोंसे परिपूर्ण, और शब्द-रस-रूप-गन्ध एवं स्पर्शसे देवोंके मनको आनन्दजनक, सुवर्णमय भीतोंपर रचे गये विचित्र चित्रोंके सम्बन्धसे रमणीय, और आश्चर्यजनक स्वरूपसे संयुक्त है । बहुत कहनेसे क्या ? वह प्रासाद अनुपम है ॥ २३४-२३५ ॥

उस प्रासादमें उत्तम रत्नमुकुटको धारण करनेवाला और चमर-छत्रादिसे सुशोभित वह अशोक देव हजारों देवियोंसे युक्त होकर रमण करता है ॥ २३६ ॥

१ द ब सपादिहेराओ रमणमइराओ. २ द ब चेत्तदुमीसाणे भागे चेट्ठेदि हु होदि दिव्व°. ३ द रुंदं छेदाओ, ब रुंदंछेदाओ. ४ द ब गंधे पासेहिं. ५ द तुरयमणो रम्मा, ब तुरंयमणोरम्मा. ६ ब कुंडल.

सेसम्मि बहुजयंतादिए विजयं व[1] वण्णणं सयलं । दक्खिणपच्छिमउत्तरदिसासु ताणं पि णयराणिं ॥ २३७

। जंबूदीववण्णणा समत्ता[2] ।

दीवो[3] सयंभुरमणो चरिमो सो होदि सयलदीवाणं[4] । चेट्ठेदि तस्स मज्झे वलएण सयंपहो सेलो ॥ २३८

जोयणसहस्समेक्कं गाढो वरविविहरयणदिप्पंतो । मूलोवरिभाएसुं तडवेदीउववणादिजुदो ॥ २३९

तग्गिरिणो उच्छेहे[5] वासे कूडेसु जेत्तियं माणं । तस्सिं कालवसेणं[6] उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ २४०

। एवं विण्णासो समत्तो ।

एत्तो दीवरयणायराण बादरखेत्तफलं[7] वत्तइस्सामो । तत्थ जंबूदीवमादिं कादूण वट्टपरूवावट्टिद-खेत्ताणं खेत्तफलमाणयणट्ठमेसा सुत्तगाहा—

तिगुणियवासा परिही तीए[8] विक्खंभपादगुणिदाए । जं लद्धं तं बादरखेत्तफलं सरिसवट्टाणं[9] ॥ २४१

शेष वैजयन्तादि तीन देवोंका संपूर्ण वर्णन विजय देवके ही समान है । इनके भी नगर क्रमशः दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें स्थित है ॥ २३७ ॥

जम्बूद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ ।

सब द्वीपोंमें अन्तिम वह स्वयम्भूरमण द्वीप है । इसके मध्यभागमें मण्डलाकारसे स्वयंप्रभ शैल स्थित है ॥ २३८ ॥

यह पर्वत एक हजार योजनप्रमाण अवगाहसे सहित, उत्तम अनेक प्रकारके रत्नोंसे देदीप्यमान, और मूल व उपरिम भागोंमें तटवेदी एवं उपवनादिसे संयुक्त है ॥ २३९ ॥

इस पर्वतकी उंचाई, विस्तार और कूटोंका जितना प्रमाण है, उसका उपदेश कालवश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ २४० ॥

इस प्रकार विन्यास समाप्त हुआ ।

अब यहांसे आगे द्वीप-समुद्रोंके स्थूल क्षेत्रफलको कहते है । उनमेंसे जम्बूद्वीपको आदि करके गोलाकारसे अवस्थित क्षेत्रोंके क्षेत्रफलको लानेके लिये यह सूत्रगाथा है —

गोल क्षेत्रके विस्तारसे तिगुणी उसकी परिधि (बादर) होती है, इस परिधिको विस्तारके चतुर्थ भागसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उतना समानगोल क्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४१ ॥

१ द ब विजय पि. २ ब जंबूदीपवण्णा. ३ द पुस्तके नास्त्येतत्. ४ द आदीओ. ५ द देवाण ६ द ब उच्छेहो. ७ द ब कालवसेसा. ८ द ब दीवरणायराठाण बादरमेदतफलं. ९ द ब °मिस्सा. १० द ब परिहीए ११ द ब .सरिसदेवाणं.

लवणसमुद्दमादिं कादूण उवरि वलयसरूवेण ठिददीवसमुद्दाण खेत्तफलमाणयणट्ठं एदा वि सुत्तगाहाओ—

इच्छियखेत्तरुंदं णवहि गुणं इच्छियस्स आयामो। तं रुंदेण य गुणिदं खेत्तफलं दीवउवहीणं ॥ २४२

अहवा आदिममज्झिमबाहिरसूईण मेलिदं माणं। विक्खंभहदो इच्छियवलयाणं होदि बादरं खेत्तं ॥ २४३

अहवा तिगुणियमज्झिमसूई जाणिज्ज इट्ठवलयाणं। तह य पमाणं तं चिय रुंदहदे वलयखेत्तफलं ॥ २४४

जंबूदीवस्स बादरखेत्तफलं सत्तसयपण्णासकोडिजोयणपमाणं होदि— ७५००००००००। लवणसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठारसहस्सकोडिजोयणपमाणं— १८०००००००००००। धादइसंडदीवस्स बादरखेत्तफलं अट्ठसहस्सकोडिअब्भहियएक्ककलक्खकोडिजोयणपमाणं— १०८०००००००००००। कालोदसमुद्दस्स

उदाहरण—जम्बूद्वीपका विस्तार यो. १००००० । १००००० × ३ = ३००००० । ३००००० × $\frac{१००००}{४}$ = ७५०००००००० बा. क्षे. फल ।

लवणसमुद्रको आदि करके आगे वलयाकारसे स्थित द्वीप-समुद्रोंके क्षेत्रफलको लानेके लिये ये भी सूत्रगाथायें है—

इच्छित क्षेत्रके विस्तारमेंसे एक लाख कम करके शेषको नौसे गुणा करनेपर इच्छित द्वीप या समुद्रका आयाम होता है । पुनः इस आयामको विस्तारसे गुणा करनेपर द्वीप-समुद्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥ २४२ ॥

उदाहरण—लवणसमुद्रका विस्तार यो. २ लाख । २ लाख – १ लाख × ९ = ९ लाख आयाम । ९ लाख × २ लाख = १८०००००००००० लवणसमुद्रका क्षेत्रफल ।

अथवा— आदि, मध्य और बाह्य सूचियोंके प्रमाणको मिलाकर विस्तारसे गुणित करनेपर इच्छित वलयाकार क्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४३ ॥

उदाहरण—लवणसमुद्रकी आदि, मध्य व बाह्य सूची— १ लाख + ३ लाख + ५ लाख = ९ लाख; ९ लाख × २ लाख = १८०००००००००० ल. स. का बादर क्षेत्रफल ।

अथवा— तिगुणी मध्यसूचीको इष्ट वलयक्षेत्रोंका पूर्वोक्त अर्थात् आदि, मध्यम और बाह्य सूचियोंका सम्मिलित प्रमाण जानना चाहिये । इसे विस्तारसे गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना उन वलयक्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४४ ॥

उदाहरण—लवणसमुद्रकी म. सू. यो. ३ लाख । ३ लाख × ३ – ९ लाख । ९ लाख × २ लाख = १८०००००००००० ल. स. का बादर क्षे. फ. ।

जम्बूद्वीपका बादर क्षेत्रफल सात सौ पचास करोड़ योजनप्रमाण है –७५०००००००० । लवणसमुद्रका क्षेत्रफल अठारह हजार करोड़ योजनप्रमाण है— १८००००००००००। धातकीखंडद्वीपका बादर क्षेत्रफल एक लाख आठ हजार करोड़ योजनप्रमाण है— १०८०००-

खेत्तफलं चत्तारिसहस्सकोडिअब्भहियपंचलक्खकोडिजोयणपमाणं— ५०४०००००००००० । पोक्खर-दीवस्स खेत्तपमाणं सट्ठिसहस्सकोडिअब्भहियेक्कवीसलक्खकोडिजोयणपमाणं—२१६०००००००००००। पोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीससहस्सकोडिअब्भहियउणणउदिलक्खकोडिजोयणपमाणं— ८९२८०-०००००००००। एवं जंबूदीवप्पहुदिजहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवाहियछेदणयमेत्तट्ठाणं गंतूण ट्ठिददीवस्स खेत्तफलं जहण्णपरित्तासंखेज्जयं रूऊणजहण्णपरित्तासंखेज्जेण गुणिय पुणो णवसहस्सकोडिजोयणेहिं गुणिदमेत्तं खेत्तफलं होदि। तच्चेदं — १६ । १५ । ९०००००००००। पुणो जंबूदीवप्पहुदिपलिदोवमस्स रूवाहिय [-छेदणय-] मेत्तं ठाणं गंतूण ट्ठिददीवस्स खेत्तफलं पलिदोवमं रूऊणपलिदोवमेण गुणिय पुणो णवसहस्सकोडिजोयणेहिं गुणिदमेत्तं होदि । तच्चेदं पमाणं — [प । प-१]९०००००००००। एवं गणिदेण[7] णादव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दं त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दस्स खेत्तफलं जगसेढीए वग्गं णवरूवेहिं गुणिय सत्तसदचउरसीदिरूवेहिं भाजिदमेत्तं पुणो एक्कलक्खं बारससहस्स-पंचसयजोयणेहिं गुणिदरज्जुणा अब्भहियं होदि । पुणो एक्कसहस्सछस्सयसत्तासीदिकोडीओ पण्णासलक्ख-

०००००००। कालोदसमुद्रका क्षेत्रफल पांच लाख चार हजार करोड़ योजनप्रमाण है— ५०४०००००००००० । पुष्करद्वीपका क्षेत्रफल इक्कीस लाख साठ हजार करोड़ योजनप्रमाण है—२१६०००००००००००। पुष्करवरसमुद्रका क्षेत्रफल नवासी लाख अट्ठाईस हजार करोड़ योजनप्रमाण है— ८९२८०००००००००। इस प्रकार जम्बूद्वीपको आदि लेकर जघन्य परीतासंख्यातके एक अधिक अर्धच्छेदप्रमाण स्थान जाकर जो द्वीप स्थित है उसका क्षेत्रफल जघन्यपरीतासंख्यातको एक कम जघन्यपरीतासंख्यातसे गुणा करके फिर नौ हजार करोड़ योजनोंसे भी गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना है। वह प्रमाण यह है— १६× (१६–१)×९०००००००००० (१६ यह संदृष्टिके लिये कल्पित जघन्यपरीतसंख्यातका प्रमाण है)। पश्चात् जम्बूद्वीपको आदि लेकर पल्योपमके एक अधिक अर्धच्छेदप्रमाण स्थान जाकर जो द्वीप स्थित है उसका क्षेत्रफल पल्योपमको एक कम पल्योपमसे गुणा करके फिर नौ हजार करोड़ योजनोंसे भी गुणा करनेपर प्राप्त हुई राशिके प्रमाण है। वह प्रमाण यह है— पल्य × (पल्य – १) × ९०००००००००। इस प्रकार गिनकर स्वयम्भूरमण समुद्रपर्यन्त क्षेत्रफल जानना चाहिये। इनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं—

जगश्रेणीके वर्गको नौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें सात सौ चोरासीका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमें फिर एक लाख बारह हजार पांच सौ योजनोंसे गुणित राजुको जोड़दे: पुनः एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजनोंसे पूर्वोक्त दोनों राशियोंको कम

१ द ब अब्भहिएक्क°. २ द ब रूवाय. ३ द °मेत्तधाण. ४ द ट्ठिदजीवस्स. ५ द गुणिद खेत्तं होदि. ६ द ब १६। ७ द गणिणिदूण, ब गणिणदूण.

जोयणेहिं पुव्विल्लदोण्णिरासीहिं परिहीणं होदि । तस्स ठवणा $\frac{=९}{७८४}$ धण रज्जू १ । ११२५०० रिण जोयणाणि १६८७५०००००० । एत्तो दीवसमुद्दाणं एगेगदिसियप्पं अप्पाबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा—

पढमपक्खे जंबूदीवस्सयलरुंदादो लवणजलरासिस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ । जंबूदीव-लवणसमुद्दादो धादइसंडस्स । एवं सव्वब्भंतरिमदीवसमुद्दादो एयदिसरुंदादो तदणंतरबाहिरणिविट्ठ- ५ दीवस्स वा तरंगिणीरमणस्स वा एयदिसरुंदवड्ढी गवेसिज्जइ ।

बिदियपक्खे जंबूदीवस्सद्धादो लवणजलणिण्णगाणाहस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ । तदो जंबूदीवस्सद्धम्मि सम्मिलिदलवणसमुद्दादो धादइसंडस्स । एवं सव्वब्भंतरिमदीवउवहीणं एयदिसरुंदादो तदणंतरबाहिरणिविट्ठदीवस्स वा तरंगिणीरमणस्स वा एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

तदियपक्खे इच्छियसलिलरासिस्स एयदिसरुंदादो तदणंतरतरंगिणीणाहस्स एयदिसरुंदम्मि १० वड्ढी गवेसिज्जइ ।

करनेपर जो शेष रहे उतना स्वयंभूरमण समुद्रका क्षेत्रफल है । उसकी स्थापना— ७×७×९÷७८४ + राजु १ × ११२५००—(रिण) १६८७५०००००० योजन । (स्वयंभूरमण समुद्रका प्रकारान्तरसे क्षेत्रफल लानेके लिये देखो षट्खंडागम १, ४, २५ – भा. ४, पृ. १९८).

अब यहांसे उन्नीस विकल्पों द्वारा द्वीपसमुद्रोंके अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है—

प्रथम पक्षमें जम्बूद्वीपके सम्पूर्ण विस्तारकी अपेक्षा लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिका प्रमाण खोजा जाता है । जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डके विस्तारमें वृद्धिका प्रमाण मालूम किया जाता है । इस प्रकार समस्त अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिके प्रमाणको मालूम किया जाता है ।

द्वितीय पक्षमें जम्बूद्वीपके अर्धविस्तारसे लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है । पश्चात् जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तारमें लवणसमुद्रके विस्तारको मिलाकर इस सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डद्वीपके विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है । इस प्रकार सम्पूर्ण अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

तृतीय पक्षमें अभीष्ट समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें उसके अनन्तर स्थित समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

तुरिमपक्खे अब्भंतरिमणारसीणं एयदिसविक्खंभादो तदणंतरतरंगिणीणहस्स एयदिसविक्खंभम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

पंचमपक्खे इच्छियदीवस्स एयदिसरुंदादो तदणंतरोवरिमदीवस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

छट्ठमपक्खे अब्भंतरिमसव्वदीवाणं एयदिसरुंदादो तदणंतरोवरिमदीवस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

सत्तमपक्खे अब्भंतरिमस्स दीवस्स[1] दोण्णिदिसरुंदादो तदणंतरोवरिमदीवस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

अट्ठमपक्खे हेट्ठिमसयलमयरायराणं दोण्णिदिसरुंदादो तदणंतरवाहिणीरमणस्स एयदिसरुंदम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

णवमपक्खे जंबूदीववादरसुहुमखेत्तफलप्पमाणेण उवरिमापगाकंतदीवाणं खेत्तफलस्स खंडसलागं कादूणुवरिमादो दीवस्स खंडसलागाणं वड्ढी गवेसिज्जइ ।[2]

चतुर्थ पक्षमें अभ्यन्तर समुद्रोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी खोज की जाती है ।

पंचम पक्षमें इच्छित द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारसे तदनन्तर उपरिम द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

छठे पक्षमें अभ्यन्तर सब द्वीपोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर उपरिम द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी खोज की जाती है ।

सातवें पक्षमें अभ्यन्तर द्वीपोंके दोनों दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर उपरिम द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

आठवें पक्षमें अभ्यन्तर सम्पूर्ण समुद्रोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

नवम पक्षमें जम्बूद्वीपके बादर व सूक्ष्म क्षेत्रफलके प्रमाणसे आगेके समुद्र और द्वीपोंके क्षेत्रफलकी खण्डशलाकायें करके समुद्रसे द्वीपकी और द्वीपसे समुद्रकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिकी गवेषणा की जाती है ।

१ द ब दीवाण. २ द ब खंदसलागं.

दसमपक्खे जंबूदीवादो लवणसमुद्दस्स लवणसमुद्दादो धादईसंडस्स एक्कदीवादो उवहिस्स उवहीदो दीवस्स वा खंडसलागाणं वड्ढी गवेसिज्जइ[1] ।

एक्कारसमपक्खे अब्भंतरकल्लोलिणीरमणदीवाणं खंडसलागाणं समुहादो बाहिरणिधिट्ठणीररासिस्स वा दीवस्स वा खंडसलागाणं वड्ढी गवेसिज्जइ ।

बारसमपक्खे इच्छियसायरादो दीवस्स दीवादो णीररासिस्स खेत्तफलस्स वड्ढी गवेसिज्जइ ।

तेरसमपक्खे अब्भंतरिमदीवपयोहीणं खेत्तफलादो तदणंतरोवरिमदीवस्स वा तरंगिणीणाहस्स ५ वा खेत्तफलस्स वड्ढी गवेसिज्जइ ।

चोद्दसमपक्खे लवणसमुद्दादिइच्छियसमुद्दादो तदणंतरतरंगिणीरासिस्स [खेत्तफलस्स] वड्ढी गवेसिज्जइ ।

पण्णारसमपक्खे सव्वब्भंतरिमसयंभुरमणं खेत्तफलादो तदणंतरोवरिमणिण्णगाणाहस्स वड्ढी गवेसिज्जइ ।

सोलसमपक्खे धादइसंडादिइच्छियदीवादो तदणंतरोवरिमदीवस्स खेत्तफलस्स वड्ढी गवेसिज्जइ । १०

दशवें पक्षमें जम्बूद्वीपसे लवणसमुद्रकी और लवणसमुद्रसे धातकीखण्डद्वीपकी इस प्रकार एक द्वीपसे समुद्रकी अथवा समुद्रसे द्वीपकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिका प्रमाण मालूम किया जाता है ।

ग्यारहवें पक्षमें अभ्यन्तर समुद्र व द्वीपोंकी खण्डशलाकाओंके समूहसे बाह्य भागमें स्थित समुद्र अथवा द्वीपकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धि खोजी जाती है ।

बारहवें पक्षमें इच्छित समुद्रसे द्वीपके और द्वीपसे समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धि खोजी जाती है ।

तेरहवें पक्षमें अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके क्षेत्रफलकी अपेक्षा तदनन्तर अग्रिम द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धि खोजी जाती है ।

चौदहवें पक्षमें लवणसमुद्रको आदि लेकर इच्छित समुद्रके क्षेत्रफलसे उसके अनन्तर स्थित समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिको खोजा जाता है ।

पन्द्रहवें पक्षमें समस्त अभ्यन्तर समुद्रोंके क्षेत्रफलसे इनके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिको खोजा जाता है ।

सोलहवें पक्षमें धातकीखण्डादि इच्छित द्वीपसे उसके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीपके क्षेत्रफलकी वृद्धिको खोजा जाता है ।

१ ब पुस्तके नास्त्येतत्.

सत्तरसमपक्खे धादइसंडप्पहुदिअब्भंतरिमदीवाणं खेत्तफलादो तदणंतरबाहिरणिविट्ठदीवस्स खेत्तफलम्मि वड्ढी गवेसिज्जइ ।

अट्ठारसमपक्खे इच्छियदीवस्स वा तरंगिणीणाहस्स वा आदिममज्झिमबाहिरसूईणं परिमाणादो तदणंतरबाहिरणिविट्ठदीवस्स वा तरंगिणीणाहस्स वा आदिममज्झिमबाहिरसूईणं पत्तेक्कं वड्ढी गवेसिज्जइ ।

उणवीसदिमपक्खे इच्छियदीवणिण्णगाणाहाणं आयामादो तदणंतरबाहिरणिविट्ठदीवस्स वा णीर- ५
रासिस्स वा आयामवड्ढी गवेसिज्जइ ।

तत्थ पढमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । त जहा— जंबूदीवस्स सयलविक्खंभादो लवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदं एक्कलक्खेणब्भहियं होदु । जंबूदीवेणब्भहियलवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदादो धादइसंडस्स एयदिसरुंदं एक्कलक्खेणब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तव्वड्ढीआणयणहेदुं इमा सुत्तगाहा—

इच्छियदीवुवहीणं चउगुणरुंदम्मि पढमसूइजुदं । तियभजिदं तं सोधसु दुगुणिदरुंदस्स सा हवे वड्ढी ॥२४५

सत्तरहवें पक्षमें धातकीखण्डप्रभृति अभ्यंतर द्वीपोंके क्षेत्रफलमें उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीपके क्षेत्रफलमें होनेवाली वृद्धिको खोजा जाता है ।

अठारहवें पक्षमें इच्छित द्वीप अथवा समुद्रकी आदि, मध्य और बाह्य सूचियोंके प्रमाणसे उसके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रकी आदि, मध्य व बाह्य सूचियोंमेंसे प्रत्येककी वृद्धिको खोजा जाता है ।

उन्नीसवें पक्षमें इच्छित द्वीप-समुद्रोंके आयाममें उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके आयामकी वृद्धिको खोजा जाता है ।

उपर्युक्त उन्नीस विकल्पोंमेंसे प्रथम पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है—

जम्बूद्वीपके समस्त विस्तारकी अपेक्षा लवणसमुद्रका एक दिशासम्बन्धी विस्तार एक लाख योजन अधिक है । जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डका एक दिशासम्बन्धी विस्तार एक लाख योजन अधिक है । इस प्रकार स्वयम्भूरमणसमुद्रपर्यन्त अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके सम्मिलित एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके आगे स्थित द्वीप अथवा समुद्रका विस्तार एक एक लाख योजन अधिक है । इस वृद्धि-प्रमाणको लानेके लिये यह गाथा सूत्र है—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंके चौगुणे विस्तारमें आदि सूचीके प्रमाणको मिलाकर तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे विवक्षित द्वीप-समुद्रके दुगुणे विस्तारमेंसे कम करदेनेपर शेष वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २४५ ॥

१ द ब दीवोवहीण.

इट्ठस्स दीवस्स वा सायरस्स वा आदिमसूइस्सद्धं लक्खद्धसंजुदस्स आणयणहेदुमिमा सुत्तगाहा— इच्छियदीवुवहीणं[1] रुंदं दोलक्खविरहिदं मिलिदं । बाहिरसूइम्मि तदो पंचहिदं तत्थ जं लद्धं ॥ २४६ आदिमसूइस्सद्धं लक्खद्धजुदं हुवेदि इट्ठस्स । एवं लवणसमुद्दप्पहुदिं आणेज्ज अंतो त्ति ॥ २४७

बिदियपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो[2]— जंबूदीवस्सद्धस्स विक्खंभादो लवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदं दिवड्ढलक्खेणब्भहियं होइ । जंबूदीवस्सद्धसहितलवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदादो धादइसंडदीवस्स एयदिसरुंदं दिवड्ढलक्खेणब्भहियं होइ । एवं सव्वब्भंतरदीवसायराणं एयदिसरुंदादो तदणंतरउवरिमदीवस्स वा सायरस्स वा एयदिसरुंदवड्ढी दिवड्ढलक्खेणब्भहिय होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तब्बड्ढी-आणयणहेदुमिमा सुत्तगाहा—

उदाहरण— पुष्करद्वीपकी विस्तारवृद्धिका प्रमाण— पु. वि. १६ ला. × ४ + २९ ला. ३ = ३१ ला.; १६ ला. × २ − ३१ ला. = १ ला.

विवक्षित द्वीप अथवा समुद्रकी अर्ध लाख योजनोंसे संयुक्त अर्ध आदिम सूचीको लानेके लिये ये सूत्रगाथायें है—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंके विस्तारमेंसे दो लाख कम करके शेषको बाह्य सूचीमें मिलाकर उसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उतना अर्ध लाख सहित इष्ट द्वीप अथवा समुद्रकी आधी आदिम सूचीका प्रमाण होता है । इसी प्रकार लवणसमुद्रसे लेकर अन्तिम समुद्र तक उक्त सूचीप्रमाणको लाना चाहिये ॥ २४६–२४७ ॥

उदाहरण— धातकीखण्डकी अर्ध लाख योजन सहित अर्ध आदिम सूची ३ ला. योजन है— धात. वि. ४ लाख − २ लाख = २ लाख । बाह्य सूची १३ लाख + २ लाख ÷ ५ = ला. = २५०००० + ५०००० ।

द्वितीय पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तारकी अपेक्षा लवण-समुद्रका एक दिशासम्बन्धी विस्तार डेढ़ लाख योजन अधिक है । जम्बूद्वीपके अर्धविस्तार सहित लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डद्वीपका एक दिशासम्बन्धी विस्तार डेढ़ लाख योजन अधिक है । इसी प्रकार सम्पूर्ण अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें स्वयम्भूरमणसमुद्र तक डेढ़ लाख योजन वृद्धि होती गई है । इस वृद्धिप्रमाणको लानेके लिये ये सूत्रगाथायें है—

१ द ब दीवावहीणं, क दीवोवहीण. २ द वण्णइस्सामो, ब वंतइस्सामो.

इच्छियदीवुवहीणं[1] बाहिरसूइस्स अद्धमेत्तम्मि । आदिमसूई सोधसु जं सेसं तं च[2] परिवड्ढी ॥२४८

इच्छियदीवुवहीदो[3] हेट्ठिमदीवोवहीण मेलिदं । सगसगआदिमसूइस्सद्धं लवणादिचरिमंतं[4] ॥ २४९

तदियपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— लवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदादो कालोदगसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी छलक्खेणब्भहियं होदि । कालोदगसमुद्दस्स एयदिसरुंदादो पोक्खरवरसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी चउवीसलक्खेणब्भहियं होदि । एवं कालोदगसमुद्दप्पहुडि विवक्खिदणरंगिणीरमणादो तदणंतरोवरिमणीररासिस्स एयदिसरुंदवड्ढी चउग्गुणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दं ति । तस्स अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— महिंदवरसायरस्स एयदिसरुंदादो सयंभूरमणसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी बारसुत्तरसएण भजिदतिगुणसेडीओ पुण छप्पण्णसहस्सदुसदपण्णासजोयणेहिं अब्भहियं होदि तस्स ठवणा $\frac{३}{११२}$ । एदस्स भणजोयणाणि ५६२५० । तव्वड्ढीणं आणयणसुत्तगाहा—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंकी बाह्य सूचीके अर्ध प्रमाणमेंसे आदिम सूचीको घटा देनेपर जो शेष रहे उतना उस वृद्धिका प्रमाण है ॥ २४८ ॥

उदाहरण — कालोद समुद्रके विस्तारमें वृद्धि— का. स. बा. सूची यो. २९ लाख ÷ २ = १४५०००० ; १४५०००० – १३ लाख (आ. सू.) = १५०००० वृद्धि ।

लवणसमुद्रसे लेकर अन्तिम समुद्र तक इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन (पहिलेके) द्वीप-समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार अपनी अपनी आदिम सूचीके अर्धभागमात्र होता है ॥ २४९ ॥

उदाहरण— पुष्करद्वीपसे पहिलेके द्वीप-समुद्रोंका विस्तार— पु. द्वी. आ. सूची यो. २९ लाख ÷ २ = १४५०००० ।

तृतीय पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा कालोदकसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि छह लाख योजन अधिक है । कालोदकसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि चौबीस लाख योजन अधिक है । इस प्रकार कालोदकसमुद्रसे लेकर स्वयम्भूरमणसमुद्रपर्यन्त विवक्षित समुद्रके विस्तारकी अपेक्षा उसके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें उत्तरोत्तर चौगुणी वृद्धि होती गई है । उसके अन्तिम विकल्पको कहते हैं । अहीन्द्रवरसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयंभूरमणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें एक सौ बारहसे भाजित तिगुणी जगश्रेणियां और छप्पन हजार दो सौ पचास योजनप्रमाण वृद्धि हुई है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— जगश्रेणी×३÷११२+यो. ५६२५० ।

१ द ब दीओवहीणं. २ द ब तं सेसं तच्च. ३ द दीवउवहीदो, ब दीवोवहीदो. ४ द दीवावहीण.

इच्छियजलणिहिरुंदं तिगुणं दलिदूण तिण्णिलक्खूणं । तिलक्खूणतिगुणवासे सोहिय दलिदम्मि सा हवे वड्ढी ॥ २५०

चउत्थपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— लवणसमुद्दस्स एयदिसरुंदादो कालोदगसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी छल्लक्खेणब्भहिय होइ । लवणसमुद्दसंमिलिदकालोदगसमुद्दादो पोक्खरवरसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी बावीसलक्खेण अब्भहियं होदि । एवं हेट्ठिमसायराणं समुद्दादो तदणंतरोवरिमणीररासिस्स एयदिसरुंदवड्ढी चदुगुणं दोलक्खेहिं रहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तस्स अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दस्स हेट्ठिमसयलसायराणं एयदिसरुंदसमुद्दादो सयंभूरमणसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी छरूवेहिं भजिदरज्जू पुणो तिदयहिदं तिण्णिलक्खपण्णाससहस्सजोयणाणि अब्भहियं होदि— ३ धणजोयणाणि ३५००००। तव्वड्ढीआणयणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

अंडलक्खहीणइच्छियवासं बारसेहिं भजिदलद्धं सो । सोधसु तिचरणभागेण सोदवासम्मि तं हवे वड्ढी ॥ २५१

उन वृद्धिओंको लानेके लिये यह सूत्रगाथा है— इच्छित समुद्रके तिगुणे विस्तारको आधा करके उसमेंसे तीन लाख कम करदेनेपर जो शेष रहे उसे तीन लाख कम तिगुणे विस्तारमेंसे घटाकर शेषको आधा करनेपर वह वृद्धिप्रमाण आता है ॥ २५० ॥

उदाहरण—कालोदसमुद्रसे पुष्करवरसमुद्रके विस्तारमें हुई वृद्धिका प्रमाण—

पु स वि. यो. ३२ लाख × ३ – २– ३ लाख = ४५ लाख; ३२ लाख × ३ – ३ लाख = ९३ लाख; ९३ लाख – ४५ लाख – २ = २४०००० यो. वृद्धि ।

चतुर्थ पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— लवणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा कालोदकसमुद्रका एक दिशासंबंधी विस्तार छह लाख योजन अधिक है । लवणसमुद्रसम्मिलित कालोदकसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरसमुद्रकी एक दिशासम्बन्धी विस्तारवृद्धि बाईस लाख योजन अधिक है । इस प्रकार अभ्यन्तर समुद्रसमूहसे उसके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारसे दो लाख कम चौगुणी वृद्धि स्वयंभूरमणसमुद्र तक होती गयी है । उसके अल्पबहुत्वको कहते हैं— स्वयंभूरमणसमुद्रके अभ्यन्तर सम्पूर्ण समुद्रोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारसमूहकी अपेक्षा स्वयंभूरमण समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें छह रूपोंसे भाजित एक राजु और तीनसे भाजित तीन लाख पचास हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है । राजु $\frac{१}{६}$ यो. $\frac{५००००}{३}$ ।

इस वृद्धिप्रमाणके लानेके हेतु यह गाथासूत्र है—

इच्छित समुद्रके विस्तारमेंसे आठ लाख कम करके शेषमें बारहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे विस्तारके तीन चतुर्थ भागोंमेंसे घटा देनेपर जो अवशिष्ट रहे उतनी विवक्षित समुद्रके विस्तारमें वृद्धि होती है ॥ २५१ ॥

इच्छियवड्ढीदो हेट्ठिमसयलसमयरासं संबंधिऐयदिसरुंदसमासाणं आणयणट्ठं गाहासुत्तं—

सगसगवड्ढिपमाणे दोलक्खं अवणिदूण अद्धकदे । इच्छियवड्ढीदु तदो हेट्ठिमउवहीणसंबंधं ॥ २५२

पंचमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— सयलजंबूदीवस्स रुंदादो धादइसंडस्स एयदिसरुंदवड्ढी तियलक्खेणब्भहियं होदि । धादइसंडस्स एयदिसरुंदादो पोक्खरवरदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी बारसलक्खेणब्भहियं होदि । एवं तदणंतरहेट्ठिमदीवादो अणंतरोवरिमदीवस्स वासवड्ढी तिगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति । तस्स अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— दुचरिमअहिंदवरदीवादो अंतिमसयंभूरमणदीवस्स वड्ढिपमाणं तियरज्जू बत्तीसरूवेहिं अवहरिदपमाणं पुणो अट्ठावीससहस्सएक्कसयपणुवीसजोयणेहिं अब्भहियं होइ । $\frac{3}{32}$ घणजोयण २८१२५ । तव्वड्ढीणं आणयणे गाहासुत्तं—

उदाहरण— वारुणीवर समुद्रका विस्तार यो. १२८ लाख; १२८ लाख − ८ लाख ÷ १२ = १० लाख; ९६ लाख (विस्तारका $\frac{3}{4}$) − १० लाख = ८६००००० वृद्धि ।

इच्छित वृद्धिसे अधस्तन समस्त समुद्रोंसम्बन्धी एक दिशाके विस्तारयोगोंको लानेकेलिये यह गाथा सूत्र है—

अपनी अपनी वृद्धिके प्रमाणमेंसे दो लाख कम करके शेषको आधा करनेपर इच्छित वृद्धिवाले समुद्रसे पहिलेके समस्त समुद्रोंसम्बन्धी विस्तारका प्रमाण आता है ॥ २५२ ॥

उदाहरण— वारुणीवर समुद्रकी विस्तारवृद्धि ८६ लाख । ८६ लाख − २ लाख ÷ २ = ४२००००० योजन लवणोद, कालोद और पुष्कर समुद्रका सम्मिलित विस्तार ।

पांचवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— सम्पूर्ण जम्बूद्वीपके विस्तारसे धातकीखण्डके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें तीन लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है । धातकीखण्डके एक दिशासम्बन्धी विस्तारसे पुष्करवरद्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें बारह लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है । इस प्रकार स्वयंभूरमणद्वीप पर्यन्त अनंतर अधस्तनद्वीपसे उसके आगे स्थित द्वीपके विस्तारमें तिगुणी वृद्धि होती गई है । उसके अन्तिम विकल्पको कहते हैं— द्विचरम अहीन्द्रवरद्वीपसे अन्तिम स्वयंभूरमणद्वीपके विस्तारमें होनेवाली वृद्धिका प्रमाण बत्तीससे भाजित तीन राजु और अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीस योजन अधिक है ।

राजु $\frac{3}{32}$ + यो. २८१२५ ।

१ द ब सयंभू. २ द ब तियरज्जूहिं.

इच्छियदीवे रुंदं तिगुणं दलिदूण तिण्णिलक्खूणं। तिलक्खूणतिगुणवासे सोहिय दलिदे हुवे वड्ढी ॥ २५३

छट्ठमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो। तं जहा— जंबूदीवस्स अद्धरुंदादो धादइसंडस्स एयदिसरुंदं आउट्ठलक्खेणब्भहियं होदि ३५००००। जंबूदीवस्स अद्धेण मिलिदधादईसंडस्स एयदिसरुंदादो पोक्खरवरदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी एयारसलक्खपण्णाससहस्सजोयणेहिं अब्भहियं होइ ११५००००। एवं धादईसंडप्पहुदिइच्छियदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढीदो तदणंतरउवरिमदीवस्स वड्ढी चउगुणं अड्ढाइज्जलक्खेणूणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति। तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— [सयंभूरमणदीवस्स हेट्ठिमसयलदीवाणं एयदिसरुंदसमूहादो सयंभूरमणदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी] चउरासीदिरूवेहिं भजिदसेढी पुणो तिण्णिलक्खपणुवीसमहस्सजोयणेहिं अब्भहियं होइ। तस्स ठवणा $\frac{\text{जगसे}}{८४} + ३२५०००$। तव्वड्ढीणं आणयणट्ठं गाहासुत्तं—

इस वृद्धिप्रमाणको लानेके लिये यह गाथा सूत्र है— इच्छित द्वीपके तिगुणे विस्तारको आधा करके उसमेंसे तीन लाख कम करदेनेपर जो शेष रहे उसे तीन लाख कम तिगुणे विस्तारमेंसे घटाकर शेषको आधा करनेपर वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २५३ ॥

उदाहरण— पुष्कर. वि. १६ लाख × ३ ÷ २ − ३ लाख = २१ लाख; ४८ लाख − ३ लाख = ४५ लाख; ४५ लाख − २१ लाख = २४००००० वृद्धि।

छठे पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं। वह इस प्रकार है— जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डका एक दिशासम्बन्धी विस्तार साढ़े तीन लाख योजन अधिक है— ३५०००० । जंबूद्वीपके अर्ध विस्तार सहित धातकीखण्डके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि ग्यारह लाख पचास हजार योजन अधिक है— ११५०००० । इस प्रकार धातकीखण्डप्रभृति इच्छित द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर अग्रिम द्वीपके विस्तारमें अढ़ाई लाख कम चौगुणी वृद्धि स्वयम्भूरमणद्वीप तक होती चली गई है। उनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणद्वीपसे पहिलेके समस्त द्वीपोंके एक दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयंभूरमणद्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें चौरासी रूपोंसे भाजित जगश्रेणी और तीनसे भाजित तीन लाख पच्चीस हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है। उसकी स्थापना इस प्रकार है—

$$\text{जगश्रेणी} \div ८४ + \frac{३२५०००}{३}$$

उन वृद्धियोंको लानेके लिये गाथासूत्र—

अंतिमरुंदपमाणे लक्खेणूणे तीहि भाजिदे दुगुणे । दलिदतियलक्खजुत्ते परिवड्ढी होदि दीवाणं ॥ २५४

इच्छियदीवादो हेट्ठिमदीवाणं रुंदसमासाणं आणयणट्ठं गाहासुत्तं—

चउभाजिदइट्ठरुंदं हेट्ठं च दुविदुग लद्धेहूं[1] । लक्खूणे तियभजिदे उवरिमगामिम्मि मेलविदे ॥ २५५

लक्खद्धं हीणकदे जंबूदीवस्स अद्धपहुदि तदो । इट्ठम्मि दुचरिमंते दीवाणं मेलणं होदि ॥ २५६

सत्तमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । सयलजंबूदीवरुंदादो धादईसंडस्स एयदिसरुंदवड्ढी तिण्णिलक्खेणब्भहियं होदि ३००००० । जंबूदीवसंमिलिदधादईसंडदीवस्स दोण्णिदिसरुंदादो पोक्खरवरदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी सत्तलक्खेहिं अब्भहियं होदि ७००००० । एवं धादईपहुदिइच्छियदीवाणं दोण्णिदिसरुंदादो तदणंतरोवरिमदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी चउरग्गुणं पंचलक्खेणूणं होदूण गच्छदि जाव सयंभूरमणदीवो

एक लाख कम अन्तिम विस्तारप्रमाणमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे दुगुणा करके अधिक तीन लाख अर्थात् इष्ट लाख ( ) और मिलानेपर द्वीपोंकी वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २५४ ॥

उदाहरण—पुष्कर. वि. यो. १६ लाख – १ लाख – ३ × २ + = ११५०००० पु. द्वी. की विस्तारवृद्धि ।

इच्छित द्वीपसे पहिलेके द्वीपोंके विस्तारसमूहको लानेके लिये गाथासूत्र—

चारसे भाजित इष्ट द्वीपके विस्तारको अलग रखकर इच्छित द्वीपसे पहिले द्वीपका जो विस्तार हो उसमेंसे एक लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे उपरिम राशिमें मिलाकर आधा लाख कम करनेपर अर्थ जम्बूद्वीपसे लेकर इच्छित द्वितीय (अहीन्द्रवर) द्वीप तक उन द्वीपोंका सम्मिलित विस्तार होता है ॥ २५५-२५६ ॥

उदाहरण—वारुणी. द्वी. वि. यो. ६४ लाख ÷ ४ = १६ लाख; पु. द्वी. वि. १६ लाख – १ लाख – ३ = ५ लाख; १६ लाख + ५ लाख – ५०००० २०५०००० अर्थ जम्बूद्वीपसे सम्मिलित पुष्करवरद्वीप तकका विस्तारयोग ।

सातवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— सम्पूर्ण जम्बूद्वीपसे धातकीखण्डके एकदिशासम्बन्धी विस्तारमें तीन लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है— ३००००० । जम्बूद्वीप सहित धातकीखण्डके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करद्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें सात लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है—७००००० । इस प्रकार धातकीखण्डप्रभृति इच्छित द्वीपोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें पांच लाख कम चौगुणी वृद्धि स्वयंभूरमणद्वीप तक होती चली

१ द्र. ब. रूद चेट्ठाहे दुविदुग तद्धेक्क.

त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणदीवस्स हेट्ठिमसयलदीवाणं दोण्णिदिसरुंदसमूहादो सयंभूरमणदीवस्स एयदिसरुंदवड्ढी चउवीसरूवेहिं भजिदरज्जू पुणो तियहिदपंचलक्खसत्ततीससहस्स-पंचसयजोयणेहिं अब्भहियं होदि । तस्स ठवणा $\frac{१}{२४}$ धण जोयणाणि ५३७५०० । तव्वड्ढीणं आणयणट्ठं गाहासुत्तं—

सगसगवासप्पमाणे लक्खोणे तियहिदे दुलक्खजुदे । अहवा पणलक्खाहियवासतिभागं तु परिवड्ढी । २५७

पुणो इच्छियदीवादो वा हेट्ठिमसयलदीवाणं दोण्णिदिसरुंदस्स समासो वि एक्कलक्खादिचउ-गुणे पंचलक्खेहिं अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव अहिंदवरदीवो त्ति । तव्वड्ढीणं आणयणहेदुं इमं गाहासुत्तं—

दुगुणियसगसगवासे पणलक्खे अवणिदूण तियभजिदे । हेट्ठिमदीवाण पुढ दोदिसरुंदम्मि होदि विंदफलं ॥

गई है । इनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणद्वीपसे अधस्तन सम्पूर्ण द्वीपोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयंभूरमणद्वीपके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें चौबीससे भाजित एक राजु और तीनसे भाजित पांच लाख सैंतीस हजार पांचसौ योजन अधिक वृद्धि हुई है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— राजु $\frac{१}{२४}$ + यो. $\frac{५३७५००}{३}$ ।

उन वृद्धियोंको लानेके लिये गाथासूत्र—

एक लाख कम अपने अपने विस्तारप्रमाणमें तीनका भाग देकर दो लाख और मिलानेपर उस वृद्धिका प्रमाण होता है, अथवा— पांच लाख अधिक विस्तारमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना उस वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २५७ ॥

उदाहरण—पु. द्वी. वि. १६ ला.—१ ला. ÷ ३ + २ ला.—७ ला. वृद्धि । अथवा— पु. द्वी. वि. १६ ला. + ५ ला. ÷ ३ = ७ ला. वृद्धिप्रमाण ।

पुनः इच्छित द्वीपसे अधस्तन समस्त द्वीपोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारका योग भी एक लाखको आदि लेकर चौगुणा और पांच लाख अधिक होकर अहीन्द्रवरद्वीप तक चला जाता है । उस वृद्धिको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

अपने अपने दुगुणे विस्तारमेंसे पांच लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना अधस्तन द्वीपोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारका योगफल होता है ॥ २५८ ॥

१ द ब इमा. २ द हिंदफल, ब विंदफलं.

अट्ठमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— लवणसमुद्दस्स दोण्णिदिसरुंदादो कालोदगसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी चउलक्खेणब्भहियं होदि ४००००० । लवणकालोदगसमुद्दाणं दोण्णिदिसरुंदादो पोक्खरवरसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी बारसलक्खेणब्भहियं होदि १२००००० । एवं कालोदगसमुप्पहुदि तत्तो उवरिमतदणंतरइच्छियरयणायराणं एयदिसरुंदवड्ढी हेट्ठिमसव्वजलरासीणं दोण्णिदिसरुंदवड्ढीदो चउग्गुणं चउलक्खविहीणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणस्स हेट्ठिमसयलसायराणं दोण्णिदिसरुंदादो सयंभूरमणसमुद्दस्स एयदिसरुंदवड्ढी रज्जूए बारसभागो पुणो तियहिदचउलक्खपंचहत्तरिसहस्सजोयणेहि अब्भहियं होदि । तस्स ठवणा रा | १२ धण जोयणाणि ४ ७५००० | तव्वड्ढीए आणयणहेदुं इमं गाहासुत्तं—

इट्ठोवहिवित्थंभे चउलक्खं मेलिदूण तियभजिदे । तीदसयलायराणं दोदिसरुंदादु उवरिमेयदिसं ॥ २५९

उदाहरण—पु. द्वी. का विस्तार यो. १६ ला.×२–५ ला. ÷ ३ = ९ ला. यो. जं. द्वी. और धात. का उभयदिशासम्बन्धी विस्तार ।

आठवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— लवणसमुद्रके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा कालोदकसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें चार लाख अधिक वृद्धि हुई है— ४००००० । लवण और कालोदक समुद्रके दोनों दिशाओंसम्बन्धी सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा पुष्करसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें बारह लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है— १२००००० । इस प्रकार कालोदकसमुद्रसे लेकर उससे उपरिम तदनन्तर इच्छित समुद्रोंकी एक दिशासम्बन्धी विस्तारवृद्धि अवस्तन सब समुद्रोंकी दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारवृद्धिसे चार लाख कम चौगुणी होकर स्वयंभूरमणसमुद्र तक चली गई है । उनमेंसे अंतिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणसमुद्रके अवस्तन सम्पूर्ण समुद्रोंके दोनों दिशासम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयंभूरमणसमुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें राजुका बारहवां भाग और तीनसे भाजित चार लाख पचत्तर हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

राजु $\frac{१}{१२}$ + यो. $\frac{४७५०००}{३}$ ।

उस वृद्धिके लानेके हेतु यह गाथा सूत्र है—

इष्ट समुद्रके विस्तारमें चार लाख मिलाकर तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओं संबन्धी विस्तारकी अपेक्षा उपरिम समुद्रके एक दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धि होती है ॥ २५९ ॥

१ द ब होदिऊण. २ द ब इमा.

हेट्ठिमसमासो वि— इट्ठस्स कालोदसमुद्दादो हेट्ठिमेक्कस्स समुद्दस्स दोण्णिदिसरुंदसमासं चउलक्खं होदि ४०००००। पोक्खरवरसमुद्दादो हेट्ठिमदोण्णिसमुद्दाणं दोण्णिदिसरुंदसमासं वीसलक्खजोयणपमाणं होदि २०००००० । एवमब्भंतरिमणीररासिस्स दोण्णिदिसरुंदसमासादो तदणंतरोवरिमसमुद्दस्स एवदिसरुंदवड्ढी चउगुणं चउलक्खेणब्भहियं होऊण गच्छइ जाव अहिंदुवरसमुद्दो त्ति । तब्बड्ढीणं आणयणहेदुं इमं गाहासुत्तं—

दुगुणियसगसगवासे चउलक्खे अवणिदूण तियभजिदे। णीदरयणायराणं दोदिसभायम्मि पिंडफलं ॥ २६० ॥

णवमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— जंबूदीवस्स बादरसुहुमखेत्तफलस्स पमाणेण लवणसमुद्दस्स खेत्तफलं किंऊणं चउवीसगुणं होदि २४ । जंबूदीवस्स खेत्तफलादो धादईसंडस्स खेत्तफलं चउदालीसब्भहियं एक्कसयमेत्तं होदि १४४ । एवं जाणिदूण णेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तत्थ अंतिमविकप्पं वत्तइस्सामो— जगसेढीए वग्गं तिगुणिय एक्कलक्खछण्णउदिसहस्सकोडिरूवेहिं भजिदमेत्तं पुणो तिगुणिदसेढिं चोद्दसलक्खरूवेहि भजियमेत्तेहिं अब्भहियं होदि पुणो णवकोडीहिं परिहीणं । तस्स

उदाहरण— वारुणीवरसमुद्रका वि. १२८ ला. + ४ ला. ÷ २ = ४४ ला. वृद्धि ।

अधस्तन योग भी— इष्ट कालोदसमुद्रसे अधस्तन एक लवणसमुद्रका दोनों दिशाओं संबन्धी विस्तारसमास चार लाख है— ४००००० । पुष्करवरसमुद्रसे अधस्तन दोनों समुद्रोंका दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारसमास बीस लाख योजनप्रमाण है— २००००००। इस प्रकार अभ्यन्तर समुद्रके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारसमाससे तदनन्तर स्थित उपरिम समुद्रकी दोनों दिशासम्बन्धी विस्तारवृद्धि चौगुणी और चार लाख अधिक होकर अहीन्द्रवर समुद्र तक चली गई है । उस वृद्धिको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

अपने अपने दुगुणे विस्तारमेंसे चार लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओंसम्बन्धी विस्तारका योग होता है ॥ २६० ॥

उदाहरण— पु. समुद्रका वि. ३२ ला. × २ − ४ ला. ÷ ३ ला. = २० ला. कालोद और लवणसमुद्रका सम्मिलित उभय दि. विस्तार ।

नवमें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— जम्बूद्वीपके बादर व सूक्ष्म क्षेत्रफलके प्रमाणसे लवणसमुद्रका क्षेत्रफल करनेपर चौबीसगुणा होता है २४ । जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डका क्षेत्रफल एक सौ चवालीस गुणा है १४४ । इस प्रकार जानकर स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्त लेजाना चाहिये । उसमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— जगश्रेणीके वर्गको तिगुणा करके उसमें एक लाख छयानवे हजार करोड़ रूपोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना और तिगुणी जगश्रेणीमें चौदह लाखका भाग देनेपर लब्ध हुए प्रमाणसे अधिक तथा नौ कोश कम है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

१ द ब किंउण.

ठवणा— $\frac{-३}{१९६\cdots\cdots}$ धण खेत्तं $\frac{२१}{१४०००००}$ रिण कोसाणि ९ । तम्बूदीवं आणयण-हेदुं इमं गाहासुत्तं—

लक्खूणइट्ठरूवं तिगुणं चउगुणिदइट्ठवासगुणं । लक्खस्स कदिम्मि हिदे जंबूदीवप्पमा खंडा ॥ २६१

दसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा— जंबूदीवस्स बादरसुहुमक्खेत्तपमाणेण लवण-समुद्दस्स खेत्तफलं किज्जंतं चउवीसगुणप्पमाणं होदि २४ । लवणसमुद्दस्स खंडसलागाणं संखादो धादइ-संडस्स खंडसलागा छगुणं होदि । धादइसंडस्स खंडसलागादो कालोदगसमुद्दस्स खंडसलागा चउगुणं होऊण[1] छण्णवदिरूवेणब्भहियं होइ । तत्तो उवरि तदणंतरहेट्ठिमदीवउवहीदो अणंतरोवरिमदीवस्स उव-हिस्स वा खंडसलागा चउग्गुणं, पक्खेवभूदछण्णवदी दुगुणदुगुणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— [सयंभूरमणदीवखंडसलागादो सयंभूरमणसमुद्दस्स खंडसलागा] तिण्णि सेढीओ सत्तलक्खजोयणेहिं भजिदाओ पुणो णवजोयणेहिं अब्भहियाओ होंति । तस्स ठवणा—

(ज. × ज. × ३ ÷ १९६००००००००००) + (ज. × ३ ÷ १ ४०००००) − को. ९ ।

उस वृद्धिको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

एक लाख कम इष्ट द्वीप या समुद्रके विस्तारको तिगुणा करके फिर उसे चौगुणे अपने विस्तारसे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसमें एक लाखके वर्गका भाग देनेपर जम्बूद्वीपके समान खण्डोंकी संख्या आती है ॥ २६१ ॥

धातकीखण्डका विस्तार यो. ४ ला ; [४ ला. − १ ला. × ३ ला] × [४ ला. × ४] ÷ १ ला.^{२} = १४४ खण्ड ।

दशवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है— जम्बूद्वीपके बादर व सूक्ष्म क्षेत्रफलके बराबर लवणसमुद्रका क्षेत्रफल करनेपर वह उससे चौबीसगुणा होता है २४ । लवणसमुद्रसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी संख्यासे धातकीखण्डकी खण्डशलाकायें छहगुणी है । धातकीखण्डद्वीपकी खण्डशलाकाओंसे कालोदकसमुद्रकी खण्डशलाकायें छहगुणी होकर छयानवे रूपोंसे अधिक है । पुनः इससे ऊपर तदनन्तर अधस्तन द्वीप या समुद्रसे अनन्तर उपरिम द्वीप या समुद्रकी खण्डशलाकायें चौगुणी हैं और इनके प्रक्षेपभूत छयानवे उत्तरोत्तर स्वयंभूरमणसमुद्र तक दुगुणे दुगुणे होते गये हैं । उनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभू-रमणद्वीपकी खण्डशलाकाओंसे स्वयंभूरमणसमुद्रकी खण्डशलाकायें सात लाख योजनोंसे भाजित तीन जगश्रेणी और नौ योजनोंसे अधिक है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— ज. ३ ÷ यो. ७००००० + यो. ९ ।

१ द होदिऊण.

$७००^{३}_{०००}$ घण जोयणाणि ९ । तत्थ अदिरेगस्स पमाणाणयणट्ठं इमा सुत्तगाहा—

लक्खेण भजिदसगसगवासं इगिरूवविरहिदं तेण । सगसगखंडसलागं भजिदे अदिरेगपरिमाणं ॥ २६२

एक्कारसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा— लवणसमुद्दस्स खंडसलागाणं संखादो धादईसंडदीवस्स खंडसलागाणं वड्ढी वीसुत्तरएक्कसएणब्भहियं होदि १२० । लवणसमुद्दखंडसलागसंमिलिदधादईसंडदीवस्स खंडसलागाणं संखादो कालोदगसमुद्दस्स खंडसलागाणं वड्ढी चउरुत्तरपंचसएणब्भहियं होदि ५०४ । एवं धादईसंडस्स वड्ढिप्पहुदि[1] हेट्ठिमदीवउवहीणं समूहादो अणंतरोवरिमदीवस्स वा रयणायरस्स वा खंडसलागाणं वड्ढी चउगुणं चउवीसरूवेहिं अब्भहियं होऊण गच्छदि जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दादो हेट्ठिमसव्वदीवरयणायराणं खंडसलागाण समूहं सयंभूरमणसमुद्दस्स खंडसलागम्मि अवणिदे वड्ढिपमाणं केत्तियमिदि भणिदे जगसेढीए वग्गं अट्ठाणवदिसहस्साकोडिजोयणेहिं भजिदं पुणो सत्तलक्खजोयणेहिं भजिदतिण्णिजगसेढीअब्भहियं पुणो चोद्दसकोसेहिं परिहीणं होदि । तस्स

उनमें चौगुणीसे अतिरिक्त प्रमाणको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

एक लाखसे भाजित अपने अपने विस्तारमेंसे एक रूप कम करके शेषका अपनी अपनी खंडशलाकाओंमें भाग देनेपर अतिरिक्त संख्याका प्रमाण आता है ॥ २६२ ॥

उदाहरण—कालोदकसमुद्रकी चतुर्गुणित खण्डशलाकाओंसे अतिरिक्त खण्डशलाकाओंका प्रमाण— का. स. विस्तार यो. ८ लाख ÷ १ लाख – १ = ७; का. स. की खण्डश. ६७२ ÷ ७ = ९६ अतिरिक्तप्रमाण ।

ग्यारहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है— लवणसमुद्रसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी संख्यासे धातकीखण्डद्वीपकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिका प्रमाण एक सौ बीस है १२० । लवणसमुद्रकी खण्डशलाकाओंको मिलाकर धातकीखण्डद्वीपसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी संख्यासे कालोदकसमुद्रसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिका प्रमाण पांच सौ चार है ५०४ । इस प्रकार धातकीखण्डद्वीपसम्बन्धी शलाकावृद्धिसे प्रारंभ कर स्वयंभूरमणसमुद्र तक अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके शलाकासमूहसे अनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्रकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धि चौगुणी और चौबीस संख्यासे अधिक होती गई है । उनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं—

स्वयंभूरमणसमुद्रसे अधस्तन समस्त द्वीप-समुद्रोंके खण्डशलाकासमूहको स्वयंभूरमणसमुद्रकी खण्डशलाकाओंमेंसे घटादेनेपर वृद्धिका प्रमाण कितना है, ऐसा कहनेपर अट्ठानवै हजार करोड़ योजनोंसे भाजित जगश्रेणीके वर्गसे अतिरिक्त सात लाख योजनोंसे भाजित तीन

१ द ब वड्ढिं पुहदी. २ द ब धादइसंडसलागाण.

ठवणा $\frac{\text{ज.}^{२}}{९८०००००००००}$ धण रज्जु $-\frac{\text{ज.}^{३}}{७०००००}$ रिण कोस १४ । तव्वड्ढिआणयणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

लक्खेण भजिदअंतिमवासस्स[1] कदीए एगरूऊणं । अट्ठगुणं हिट्ठाणं[2] संकलणादो दु उवरिमे वड्ढी ॥ २६३

पुणो इट्ठस्स दीवस्स वा समुद्दस्स वा हेट्ठिमदीवसयणायराणं मेलावणं भण्णमाणे[3] लवणसमुद्दस्स खंडसलागादो लवणसमुद्दसंमिलिदधादईसंडदीवस्स खंडसलागाओ सत्तगुणं होदि । लवणोदसिखंड-सलागसंमिलिदधादईसंडखंडसलागादो कालोदगसमुद्दखंडसलागसंमिलिदहेट्ठिमखंडसलागादु[4] पंचगुणं होदि । कालोदगसमुद्दस्स खंडसलागसंमिलिदहेट्ठिमदीवउवहीणं खंडसलागादो पोक्खरवरदीवखंडसलाग-संमिलिदहेट्ठिमदीवसयणायराणं खंडसलागा चउगुणं होदूण तिण्णिसयसट्ठिरूवेहि अब्भहियं होदि । पोक्खरवरदीवखंडसलागसंमिलिदहेट्ठिमदीवसयणायराणं खंडसलागादो पोक्खरवरसमुद्दसंमिलिदहेट्ठिम-

जगश्रेणी अधिक तथा चौदह कोश कम है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

$$\text{ज.}^{२} \div \text{यो.}\ ९८०००००००००० + \frac{\text{ज.}\ ३}{\text{यो.}\ ७०००००} - \text{को.}\ १४ ।$$

इस वृद्धिप्रमाणको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

एक लाखसे भाजित अन्तिम विस्तारका जो वर्ग हो उसमेंसे एक कम करके शेषको आठसे गुणा करनेपर अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके शलाकासमूहसे उपरिम द्वीप व समुद्रकी खण्ड-शलाकाओंकी वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ २६३ ॥

उदाहरण— कालोदकसमुद्रकी खण्डशलाकावृद्धि— $[(८ \text{ लाख} \div १ \text{ लाख})^{३} - १] \times ८ = ५०४$ कालोदककी खण्डशलाकावृद्धि ।

पुनः इष्ट द्वीप अथवा समुद्रके अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्डशलाकाओंका मिश्रित कथन करनेपर लवणसमुद्रकी खण्डशलाकाओंसे लवणसमुद्रसम्मिलित धातकीखण्डद्वीपकी खण्ड-शलाकायें सातगुणी है । लवणसमुद्रकी खण्डशलाकाओंसे सम्मिलित धातकीखण्डद्वीपसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी अपेक्षा कालोदकसमुद्रकी खण्डशलाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-शलायें पंचगुणी हैं । कालोदकसमुद्रकी खण्डशलाकासम्मिलित अधस्तन द्वीपसमुद्रोंसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपकी खण्डशलाकाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्डशलाकायें चौगुणी होकर तीन सौ साठ अधिक हैं । पुष्करवरद्वीपकी खण्डशलाकाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंसम्बन्धी खण्डशलाकाओंकी अपेक्षा पुष्करवरसमुद्रसम्मिलित अधस्तन

१ द ब 'वास', क 'वास्स'. २ द ब अट्ठ गुणंतिदाणं. ३ द ब भण्णिमाणे. ४ द ब 'खंडसलागादो.

दीवोवहीणं खंडसलागा[1] चउग्गुणं होदूण सत्तसयचउदालरूवेहिं अब्भहियं होदि। एत्तो उवरिं चउग्गुणं चउग्गुणं पक्खेवभूदसत्तसयचउदालं दुगुणदुगुणं होऊण चउवीसरूवेहिं अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। तब्बड्ढीआणयणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

अंतिमविक्खंभद्धं लक्खूणं लक्खछेदणवासगुणं। पणधणकोडीहिं हिदं इट्ठादो हेट्ठिमाण पिंडफलं ॥ २६४

सादिरेयपमाणाणयणट्ठं इमं गाहासुत्तं—

दोलक्खेहिं विभाजिदसगसगवासम्मि लद्धरूवेहिं। सगसगखंडसलागं भजिदे अदिरेगपरिमाणं ॥ २६५

बारसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो। तं जहा— ताव जंबूदीवमवणिय लवणसमुद्दस्स विक्खंभे वेण्णिलक्खे आयामं णवलक्खं, धादईसंडदीवस्स विक्खंभ चत्तारिलक्खं आयामं सत्तावीसलक्खं, कालोदगसमुद्दस्स विक्खंभे अट्ठलक्खं आयामं तेसट्ठिलक्खं, एवं समुद्दादो दीवस्स दीवादो समुद्दस्स

द्वीप-समुद्रोंकी खण्डशलाकायें चौगुणी होकर सात सौ चवालीस अधिक हैं। इससे ऊपर स्वयंभूरमणसमुद्र तक चौगुणी चौगुणी होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत सात सौ चवालीस दुगुणे दुगुणे और चौबीस अधिक होते गये हैं। इस वृद्धिको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

अन्तिम विस्तारके अर्ध भागमेंसे एक लाख कम करके शेषको एक लाख कम विस्तारसे गुणा करके प्राप्त राशिमें पांचके घन अर्थात् एक सौ पच्चीस करोड़का भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रोंका पिंडफल होता है॥ २६४ ॥

उदाहरण— कालोदसमुद्रके अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित खण्डशलाकायें—
$[(८ \text{ लाख} \div २) - १ \text{ लाख}] \times (८ \text{ ला.} - १ \text{ ला.}) \div १२५०००००० = १६८$।

अतिरिक्त प्रमाणको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

अपने अपने विस्तारमें दो लाखका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसका अपनी अपनी खण्डशलाकाओंमें भाग देनेपर अतिरेकका प्रमाण आता है॥ २६५ ॥

उदाहरण—पु. समु. वि. यो. १२ ला. ÷ २ ला. = ६; पु. समु. खं. श. ११९०४ ÷ १६ = ७४४ अतिरेकप्रमाण।

बारहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं। वह इस प्रकार है— जम्बूद्वीपको छोड़कर लवणसमुद्रका विस्तार दो लाख और आयाम नौ लाख योजन है। धातकीखण्डका विस्तार चार लाख और आयाम सत्ताईस लाख योजन है। कालोदकसमुद्रका विस्तार आठ लाख और आयाम तिरेसठ लाख योजन है। इस प्रकार समुद्रसे द्वीपका और द्वीपसे समुद्रका विस्तार दुगुणा तथा

१ चउग्गुणमिच्चादिखंडसलागापर्यन्तं द प्रतौ नास्ति.

विक्खंभादो विक्खंभं दुगुणं आयामादो आयामं दुगुणं णवलक्खेहिं अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो धादइसंडदस्स खेत्तफलं छग्गुणं, धादइसंडदीवस्स खेत्तफलादो कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलं चउग्गुणं बाहत्तरिसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदि । खेत्तफलं ७२०००-०००००००० । एवं हेट्ठिमदीवस्स वा णीररासिस्स वा खेत्तफलादो तदणंतरोवरिमदीवस्स वा रयणायरस्स वा खेत्तफलं चउग्गुणं पक्खेवभूदबाहत्तरिसहस्सकोडिजोयणाणि दुगुणदुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणो त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणदीवस्स विक्खंभं छप्पण्णरूवेहिं भजिदजगसेढी पुणो सत्ततीससहस्सपंचसयजोयणेहिं अब्भहियं होइ । तस्स ठवणा — $\frac{ज}{५६}$ । घण जोयणाणि ३७५००। आयामं पुण छप्पण्णरूवेहिं हिदणवजगसेढीओ पुणो पंचलक्खबासट्ठिसहस्सपंचसयजोयणेहिं परिहीणं होदि । तस्स ठवणा $\frac{९ ज}{५६}$ रिण जोयणाणि ५६२५००। पुणो विक्खंभायामं परोप्परगुणिदे खेत्तफलं रज्जुवे कदि णवरूवेहिं गुणिय चउसट्ठिरूवेहि भजिदमेत्तं । किंचूणं पमाणं रज्जू ठविय अट्ठावीसहस्सएक्कसयपंचवीसरूवेहिं गुणिद-मेत्तं पुणो पण्णाससहस्स-सत्ततीसलक्ख-णवकोडिअब्भहियदोण्णिसहस्सएक्कसयकोडिजोयणमेत्तं होदि । तस्स ठवणा $\frac{रा^२}{६४}$ । $\frac{९}{६४}$ रिण — । २८१२५ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० सयंभूरमणसमुद्दस्स विक्खंभ

आयामसे आयाम दुगुणा और नौ लाख अधिक होकर स्वयंभूरमणसमुद्र तक चला गया है ।

लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डका क्षेत्रफल छहगुणा और धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे कालोदकसमुद्रका क्षेत्रफल चौगुणा व बहत्तर हजार करोड़ योजन अधिक है— ७२०००००००००० । इस प्रकार अवस्तन द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलसे तदनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्रका क्षेत्रफल चौगुणा और प्रक्षेपभूत बहत्तर हजार करोड़ योजन स्वयंभूरमण-समुद्र तक दुगुणे होते गये है । इसमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते है— स्वयंभूरमणद्वीपका विस्तार छप्पनसे भाजित जगश्रेणी मात्र और सैंतीस हजार पाच सौ योजन अधिक है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— ज. ÷ ५६ + ३७५०० यो. = $\frac{१}{५६}$ राजु + ३७५०० योजन ।

स्वयंभूरमणद्वीपका आयाम छप्पनसे भाजित नौ जगश्रेणियोंमेसे पांच लाख बासठ हजार पाच सौ योजन कम है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— ज. ९ ÷ ५६ – ५६२५०० यो. = $\frac{९}{५६}$ राजु – ५६२५०० यो. ।

इस विस्तार और आयामको परस्पर गुणित करनेपर स्वयंभूरमणद्वीपका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा करके चौसठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उससे कुछ कम होता है । इस किंचित् कमका प्रमाण राजुको स्थापित करके अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीससे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना और दो हजार एकसौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजनमात्र है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— $रा.^२ \times ९ \div ६४ - ($ १ राजु $\times २८१२५$ यो. $- २१०९३७५०००$ यो. $)$

१ ब तेत्तीस. २ द ब ठवणा ४ । ९ । ६४.

अट्ठावीसरूवेहिं भजिदजगसेढी पुणो पंचत्तरिसहस्सजोयणेहिं अब्भहियं होदि । आयामं अट्ठवीसरूवेहिं भजिद [णव] जगसेढी पुणो दोण्णिलक्खपंचवीससहस्सजोयणेहिं परिहीणं होदि । तस्स ठवणा $\frac{ज}{२८}$ धण ७५००० । आयाम $\frac{ज^{९}}{२८}$ रिण २२५००० । खेत्तफलं रज्जूवे कदी णवरूवेहिं गुणिय सोलसरूवेहिं भजिदमेत्तं पुणो रज्जू ठविय एक्कलक्ख-बारससहस्स-पंचसयजोयणेहि गुणिदकिंचूणकदिमेत्तेहिं अब्भहियं होदि । तं किंचूणपमाणं पण्णासलक्ख-सत्तासीदिकोडिअब्भहियछस्सय-एक्कसहस्सकोडिजोयणमेत्तं होदि । तस्स ठवणा $\frac{ज^{२}}{१६}$ । $\frac{ज^{१}}{१६}$ । धण ज । ११२५०० । रिण १६८७५०००००० । एवं दीवोदधीणं विक्खंभायाम-खेत्तफलं च परूवणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

लक्खविहीणं रुंदं णवहि गुणं इच्छियस्स दीहत्तं । तं चेव य रुंदगुणं खेत्तफलं होदि वलयाणं[2] ॥ २६६ ॥

हेट्ठिमदीवस्स वा रयणायरस्स वा खेत्तफलादो उवरिमदीवस्स वा तरंगिणीणाहस्स वा खेत्तफलस्स

स्वयंभूरमणसमुद्रका विस्तार अट्ठाईससे भाजित जगश्रेणीमात्र और पचत्तर हजार योजन अधिक है, तथा आयाम अट्ठाईससे भाजित नौ जगश्रेणीमेंसे दो लाख पच्चीस हजार योजन कम है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

विस्तार — ज. ÷ २८ + यो. ७५००० = $ज^{१}$ गजु + ७५००० यो. ।

आयाम — ज. ९ ÷ २८ − यो. २२५००० = गजु $ज^{१}$ − २२५००० यो.

स्वयंभूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल गजुके वर्गको नौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना और गजुको स्थापित करके एक लाख बारह हजार पांच सौ योजनोंसे गुणित किंचून कृतिमात्रसे अधिक है । इस किंचूनका प्रमाण एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजनमात्र है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— ग.^{२} × ९ ÷ १६ + (ग. १ × यो. ११२५००) − योजन १६८७५०००००० ।

इस प्रकार द्वीप-समुद्रोंके विस्तार, आयाम और क्षेत्रफलके निरूपणके हेतु यह गाथा-सूत्र है—

एक लाख कम विस्तारको नौसे गुणा करनेपर इच्छित द्वीप या समुद्रकी लंबाई होती है । इस लंबाईको विस्तारसे गुणा करनेपर गोलाकार क्षेत्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥ २६६ ॥

उदाहरण— धा. विस्तार यो. ४००००० − १००००० = ३ लाख । ३००००० × ९ = २७००००० आयाम । २७००००० × ४००००० = १०८०००००००००० क्षेत्रफल ।

अधस्तन द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलकी

१ द ब ठवणा ४९ । १६. २ ब लवयाणं.

सादिरेयत्तारूवणहेदुमिमा गाहा—

कालोदगोदहीदो उवरिमदीवोवहीण पत्तेक्कं । रुंदं णवलक्खगुणं परिवड्ढी होदि उवरुवरिं ॥ २६७ ॥

तेरसमपक्खे अप्पबहुगं वत्तइस्सामो— जंबूदीवस्स खेत्तफलादो लवणणीरधिस्स खेत्तफलं चउवीसगुणं । जंबूदीवसहियलवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो धादईसंडदीवस्स खेत्तफलं पंचगुणं होऊण चोद्दस-सहस्स-सेदय-पण्णासकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदि । १४२५०००००००० । जंबूदीवलवणसमुद्दसहिय-धादईसंडदीवस्स खेत्तफलादो कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलं तिगुणं होऊण एयलक्ख-तेवीसमहस्स-सत्तसय-पण्णासकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होइ । तस्स ठवणा १२३७५००००००००० । एवं कालोदगसमुद्दप्पहुदि हेट्ठिमदीवसायराणं पिंडफलादो उवरिमदीवस्स वा सायरस्स वा खेत्तफलं पत्तेयं तिगुणं पक्खेवभूद-एयलक्ख-तेवीसमहस्स-सत्तसय-पण्णासकोडिजोयणाणि कमसो दुगुणं दुगुणं होऊण वीससहस्स-दुसय-पण्णासकोडिजोयणेहिं अब्भहियं— पमाणं २०२५००००००००० होऊण गच्छदि जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति । तस्स अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दस्स हेट्ठिमदीवउवहीओ सव्वाओ जंबूदीवविरहिदाओ

सादिरेकपनेके निरूपणके हेतु यह गाथासूत्र है—

कालोदकसमुद्रसे ऊपरके द्वीप समुद्रोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार नौ लाखसे गुणा करनेपर ऊपर ऊपर वृद्धिका प्रमाण आता है ॥ २६७ ॥

उदाहरण—पु. द्वी. वि. यो. १६०००००×९,००००० = १४४०००००००००० सादिरेक पं. फ. । (यह पुष्करवरद्वीपमें पुष्करवरसमुद्रके आयामकी वृद्धिका प्रमाण होता है ।)

तेरहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे लवणसमुद्रका क्षेत्रफल चौबीसगुणा है । जम्बूद्वीप सहित लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डद्वीपका क्षेत्रफल पांचगुणा होकर चौदह हजार दो सौ पचास करोड़ योजन अधिक है—१४२५०००००००० । जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे सहित धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे कालोदकसमुद्रका क्षेत्रफल तिगुणा होकर एक लाख तेईस हजार सातसौ पचास करोड़ योजन अधिक है । उसकी स्थापना— १२३७५००००००००० । इस प्रकार कालोदकसमुद्रपर्यंत अवस्थित द्वीप-समुद्रोंके पिण्डफलसे ऊपरके द्वीप अथवा समुद्रका क्षेत्रफल प्रत्येक तिगुणा होनेके साथ प्रक्षेपभूत एक लाख तेईस हजार सात सौ पचास करोड़ योजन क्रमसे दुगुणे दुगुणे होकर बीस हजार दो सौ पचास करोड़ योजन २०२५००००००००० अधिक होता हुआ स्वयंभूरमणसमुद्र तक चला गया है । इसमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणसमुद्रके नीचे जम्बूद्वीपको छोड़कर जितने द्वीप-समुद्र

१ द वणवीस.

ताणं खेत्तफलं रज्जूवे कदी तिगुणिय सोलसेहिं भाजिदमेत्तं, पुणो णवणय-सत्ततीसकोडि-पण्णासलक्खजोयणेहिं अब्भहियं होइ । पुणो एक्कलक्ख-बारससहस्स-पंचसयजोयणेहिं गुणिदरज्जूए हीणं होइ । तस्स ठवणा[1]— $\frac{=}{४९}$ । $\frac{३}{१६}$ धण जोयणाणि ९३७५०००००० रिण रज्जूओ ११२५०० । इट्ठादो हेट्ठिमदीवंबुहीणं पिंडफलमाणयणट्ठं गाहासुत्तं—

इट्ठियदीउवहीए विक्खंभायामयम्मि अवणिज्जे । दुगिणवलक्खं सेसं तिहिदं इट्ठादु हेट्ठिमाणफलं ॥२६८॥

सादिरेयस्स आणयणट्ठं गाहासुत्तं—

इट्ठियवासं दुगुणं दोलक्खूणं तिलक्खसंगुणियं । जंबूदीवफलूणं सेसं तिगुणं हुवेदि अदिरेगं ॥ २६९ ॥

चोद्दसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— लवणसमुद्दस्स विक्खंभं वेण्णिलक्खं २०००००, आयामं णवलक्खं ९००००० । कालोदगसमुद्दविक्खंभं अट्ठलक्खं ८०००००, आयामं तेसट्ठिलक्ख ६३००००० । पोक्खरवरसमुद्दस्स विक्खंभं बत्तीसलक्खं ३२०००००, आयामं एऊणसीदिलक्खेणब्भहियेक्कोडीओ होइ

है उन सबका क्षेत्रफल राजुके वर्गको तिगुणा करके सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना और नौ सौ सैंतीस करोड़ पचास लाख योजन अधिक व एक लाख बारह हजार पांच सौ योजनोंसे गुणित राजुसे हीन है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

रा.[2]×३÷१६+ यो. ९३७५०००००० – (राजु × ११२५०० यो.) ।

इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके पिण्डफलको लानेके लिये यह गाथा-सूत्र है—

इच्छित द्वीप या समुद्रके विष्कम्भ व आयाममेंसे क्रमशः एक लाख और नौ लाख कम करे । पुनः शेष (के गुणनफलमें) तीनका भाग देनेपर इच्छित द्वीप या समुद्रके (जम्बूद्वीपको छोड़कर) अधस्तन द्वीप-समुद्रोंका पिण्डफल प्राप्त होता है ॥ २६८ ॥

उदाहरण— कालोदकसमुद्रका विष्कंभ ८ लाख यो.; आयाम ६३ लाख यो.; अतएव धातकीखंड और लवणसमुद्रका पिंडफल हुआ— ८ - १ = ७ लाख; ६३ – ९ = ५४ लाख । ७ ला. × ५४ ला. ÷ ३ = १२६०००००००००० ।

सातिरेकप्रमाणको लानेके लिये गाथासूत्र—

इच्छित द्वीप या समुद्रके दुगुणे विस्तारमेंसे दो लाख कम करके शेषको तीन लाखसे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसमेंसे जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलको कम करके शेषको तिगुणा करनेपर अतिरेकप्रमाण आता है ॥ २६९ ॥ (?)

चौदहवें पक्षमें अल्प-बहुत्वको कहते हैं— लवणसमुद्रका विस्तार दो लाख २००००० और आयाम नौ लाख ९००००० योजन है । कालोदकसमुद्रका विस्तार आठ लाख ८००००० और आयाम तिरेसठ लाख ६३००००० योजन है । पुष्करवरसमुद्रका विस्तार बत्तीस लाख ३२००००० और आयाम दो करोड़ उन्यासी लाख २७९००००० योजन है । इस प्रकार

१ ब बारसहस्स. २ द ब ठवणा— ४९ । १६.

२७९०००००। एवं हेट्ठिमसमुद्दस्स विक्खंभादो उवरिमसमुद्दस्स [विक्खंभं चउग्गुणं, हेट्ठिमसमुद्दस्स] आयामादो उवरिमसमुद्दस्स आयामं चउग्गुणं सत्तावीसलक्खेहिं अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीसगुणं, कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलादो पोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलं सत्तारसगुणं होऊण तिण्णिलक्ख-साट्ठिसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदि ३६०००००००००००। पोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलादो वारुणिवरसमुद्दस्स खेत्तफलं सोलसगुणं होऊण पुणो चोत्तीसलक्ख-छप्पण्णसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदि। पमाणं ३४५६०००००-००००। एत्तो पहुदि हेट्ठिमणीररासिस्स खेत्तफलादो तदणंतरोवरिमणीररासिस्स खेत्तफलं सोलसगुणं पक्खेवभूदचोत्तीसलक्ख-छप्पण्णसहस्सकोडिजोयणाणि चउगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दं त्ति। तस्स विक्खंभायामखेत्तफलाणं अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— अहिंदवरसमुद्दस्स विक्खंभं रज्जूए सोलस-समभागं पुण अट्ठारहसहस्स-सत्तसय-पण्णासजोयणेहिं अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा— $\frac{1}{16}$ । $\frac{1}{१६}$ । धण जोयणाणि १८७५०। तस्स आयामं णव रज्जू ठविय सोलसरूवेहिं भाजिदमेत्तं पुण सत्तलक्ख-एक्कतीससहस्स बेण्णिसय पण्णासजोयणेहिं परिहीणं होदि। तस्स ठवणा— $\frac{9}{16}$ । रिण जोयणाणि ७३१२५०। सयंभूरमणसमुद्दस्स विक्खंभं एक्कसेढिं ठविय अट्ठावीसरूवेहिं भाजिदमेत्तं पुण पंचहत्तरि-

अधस्तन समुद्रके विष्कम्भसे उपरिम समुद्रका विष्कम्भ चौगुणा, तथा अधस्तन समुद्रके आयामसे उपरिम समुद्रका आयाम चौगुणा और सत्ताईस लाख योजन अधिक होकर स्वयंभूरमणसमुद्र तक चला गया है। लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे कालोदकसमुद्रका क्षेत्रफल अट्ठाईसगुणा और कालोदक-समुद्रके क्षेत्रफलसे पुष्करवरसमुद्रका क्षेत्रफल सत्तरहगुणा होकर तीन लाख साठ हजार करोड़ योजन अधिक है ३६०००००००००००। पुष्करवरसमुद्रके क्षेत्रफलसे वारुणीवरसमुद्रका क्षेत्रफल सोलहगुणा होकर चौंतीस लाख छप्पन हजार करोड़ योजन अधिक है ३४५६०० ००००००००। यहांसे आगे अधस्तन समुद्रके क्षेत्रफलसे तदनन्तर उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल स्वयंभूरमणसमुद्रपर्यन्त क्रमशः सोलहगुणा होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत चौंतीस लाख छप्पन हजार करोड़ योजनोंसे भी चौगुणा होता गया है। उनमें विस्तार, आयाम और क्षेत्रफलके अंतिम विकल्पको कहते हैं —

अहीन्द्रवरसमुद्रका विस्तार राजुका सोलहवां भाग और अठारह हजार सात सौ पचास योजन अधिक है। उसकी स्थापना इस प्रकार है— रा. $\frac{1}{16}$ + यो. १८७५०।

इस समुद्रका आयाम नौ राजुओंको रखकर सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे सात लाख इकतीस हजार दो सौ पचास योजन हीन है। उसकी स्थापना— रा. $\frac{9}{16}$ यो. ७३१२५०।

स्वयंभूरमणसमुद्रका विस्तार एक जगश्रेणीको रखकर उसमें अट्ठाईसका भाग देनेपर

सहस्सजोयणेहिं अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा $\frac{१}{२८}$ धण जोयणाणि ७५०००। तस्सेव आयामं णवसेढि तिण्णिसयवीसेहिं भजिदमेत्तं, पुणो दोण्णिलक्ख-पंचवीससहस्सजोयणेहिं परिहीणं होदि। तस्स ठवणा सेढिं $\frac{१}{२८}$ रिण जोयणाणि २२५०००। अहिंदवरसमुद्दस्स खेत्तफलं रज्जुवे कदी णवरूवेहिं गुणिय वेसदछप्पण्णरूवेहिं भजिदमेत्तं, पुणो एक्कलक्ख-चालीससहस्स-छस्सय-पंचवीसजोयणेहिं गुणिदमेत्त-रज्जुए चउत्थभागं, पुणो एक्कसहस्स-तिण्णिसय-एक्कहत्तरिकोडीओ णवलक्ख-सत्ततीससहस्स-पंचसयजोयणेहिं परिहीणं होदि $\frac{रा.^२ \times ९}{२५६} - (रा. \times १४०६२५ यो.)$। रिण रज्जु १। १३७१०९३७५००। सयंभूरमणणिण्णगरमणस्स खेत्तफलं रज्जुवे कदी णवरूवेहिं गुणिय सोलसरूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्कलक्ख-बारससहस्स-पंचसयजोयणेहि [गुणिदरज्जुए] अब्भहियं पुणो एक्कसहस्स-छस्सय-सत्तासीदिकोडि-पण्णास-लक्खजोयणेहिं परिहीणं होदि। तस्स ठवणा $\frac{रा.^२ \times ९}{१६} + (रज्जु \times यो. ११२५००) - यो. १६८७५०००००$। रिण रज्जु १। ११२५०० रिण जोयणाणि १६८७५००००००००।

अदिरेयस्स पमाणमाणयणहेदुं इम गाहासुत्तं—

वारुणिवरादिदुवरिमदुच्छियरयणायरस्स रुंदत्तं। सत्तावीसं लक्खे गुणिदे अहियस्स परिमाणं ॥ २७० ॥

जो लब्ध आवे उतना और पचत्तर हजार योजन अधिक है। उसकी स्थापना— ज. $\frac{१}{२८}$ + यो. ७५००० । इसको आयाम नौ जगश्रेणियोंको रखकर अट्ठाईसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे दो लाख पच्चीस हजार योजन कम है। उसकी स्थापना— ज. $\frac{१}{२८}$ − यो. २२५००० ।

अहीन्द्रवरसमुद्रका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा कर दो सौ छप्पनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे एक लाख चालीस हजार छह सौ पच्चीस योजनसे गुणित राजुका चतुर्थ भाग और एक हजार तीन सौ इकत्तर करोड नौ लाख सैंतीस हजार पांच सौ योजन कम है।

$रा.^२ \times ९ \div २५६ - (रा. \times यो. १४०६२५ यो.) - १३७ ०९३७५००$ ।

स्वयंभूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा करके सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना होकर एक लाख बारह हजार पांचसौ योजनोंसे गुणित राजुसे अधिक और एक हजार छह सौ सत्तासी करोड़ पचास लाख योजन कम है। उसकी स्थापना इस प्रकार है—

$रा.^२ \times ९ \div १६ + (राजु \times यो. ११२५००) - यो. १६८७५०००००$ ।

अतिरेकके प्रमाणको लानेके लिये गाथासूत्र—

वारुणीवरसमुद्रको आदि लेकर उपरिम स्थित समुद्रके विस्तारको सत्ताईस लाखसे गुणा करनेपर अधिकताका प्रमाण आता है ॥ २७० ॥

उदाहरण— वारुणीवरसमुद्रका विस्तार यो. १२८ ला.। १२८ ला. × २७ ला. = ३४५६०००००००००० अतिरिक्त क्षे. फ.।

पण्णारसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो। तं जहा— लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीसगुणं। लवणसमुद्दसहिदकालोदसमुद्दस्स खेत्तफलादो पोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलं सत्तारसगुणं होऊण चउवण्णसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदि। पमाणं ५४०००००००००००। लवणकालोदगसहिदपोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलादो वारुणिवरणीरासिस्स खेत्तफलं पण्णारसगुणं होदूण पणदालसक्खचउवण्णसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदू ४५५४०००००००००००। एवं वारुणिवरणीरासिप्पहुदि हेट्ठिमणीरासीणं खेत्तफलसमूहादो उवरिमणिण्णगणाहस्स खेत्तफलं पत्तेयं पण्णारसगुणं पक्खेवभूदपणदालसक्ख-चउवण्णसहस्सकोडीओ चउग्गुणं होऊण पुणो एक्कलक्ख-बासट्ठिसहस्सकोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदू १६२०००००००००००। एवं णेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणणिण्णगाणाहस्साधो हेट्ठिमसव्वाण णीरासीणं खेत्तफलपमाणं रज्जूवे वग्गं तिगुणिय असीदिरूवेहिं भजिदमेत्तं, पुणो एक्कसहस्स-छसय-सत्तासीदिकोडिपणालक्खजोयणेहिं अब्भहियं होदि, पुणो बावण्णसहस्स-पंचसयजोयणेहिं गुणिदरज्जूहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा $\frac{रा.^{२}\times ३}{८०}$ + यो. १६८७५०००००० रिण रज्जू $\frac{रा.\times यो. ५२५००}{}$। सयंभूरमणसमुद्दस्स खेत्तफलं तप्पमाणं रज्जूवे वग्गं णवरूवेहिं गुणिय सोलसरूवेहिं भजिदमेत्तं, पुणो एक्कलक्ख बारससहस्स पंचसयजोयणेहिं

पन्द्रहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते है। वह इस प्रकार है— लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे कालोदकसमुद्रका क्षेत्रफल अट्ठाईसगुणा है। लवणसमुद्र सहित कालोदकसमुद्रके क्षेत्रफलसे पुष्करवरसमुद्रका क्षेत्रफल सत्तरहगुणा होकर चौवन हजार करोड़ योजन अधिक है। प्रमाण ५४०००००००००००। लवण व कालोदक सहित पुष्करवरसमुद्रके क्षेत्रफलसे वारुणीवरसमुद्रका क्षेत्रफल पन्द्रहगुणा होकर पैंतालीस लाख चौवन हजार करोड़ योजन अधिक है ४५५४०००००००००००। इस प्रकार वारुणीवरसमुद्रसे लेकर अधस्तन समुद्रोंके क्षेत्रफलसमूहसे उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल प्रत्येक पन्द्रहगुणा होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत पैंतालीस लाख चौवन हजार करोड़ योजनोंसे चौगुणा होकर एक लाख बासठ हजार करोड़ योजन अधिक है १६२०००००००००००। इस प्रकार यह क्रम स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त जानना चाहिये। इसमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणसमुद्रके नीचे अधस्तन सब समुद्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण राजुके वर्गको तीनसे गुणा करके अस्सीका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनेमात्र होकर एक हजार छहसौ सतासी करोड़ पचास लाख योजन अधिक और बावन हजार पांच सौ योजनोंसे गुणित राजुसे हीन है। उसकी स्थापना— $\frac{रा.^{२}\times ३}{८०}$ + यो. १६८७५०००००० — (रा. × यो. ५२५००)।

स्वयंभूरमणसमुद्रका जो क्षेत्रफल है उसका प्रमाण राजुके वर्गको नौसे गुणा करके सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना होनेके अतिरिक्त एक लाख बारह हजार

१ द ब पण्णारस.

गुणिदरज्जूअब्भहियं होइ, पुणो पण्णासलक्ख-सत्तासीदिकोडिअब्भहियछसयएक्कसहस्सकोडिजोयणेहिं परिहीणं होदि । तस्स ठवणा $\frac{\text{रा.}^{2}}{\text{यो.}}$ ५०० | १६ धण ७ | ११२५०० रिण १६८७५०००००० । तव्वड्ढीणं आणयणहेदु इमं गाहासुत्तं—

तियलक्खूणं अंतिमरुंदं णवलक्खरहिदआयामो । पण्णारससाहिदेहिं संगुणं लद्धं हेट्ठिल्लसव्वउवहिफलं ॥ २७१

सादिरेयपमाणाणयणणिमित्तं गाहासुत्तं—

पांचसौ योजनोंसे गुणित राजुसे अधिक और एक हजार छहसौ सतासी करोड़ पचास लाख योजन कम है । उसकी स्थापना— रा.^{2}×५००÷१६+ (रा. × यो. ११२५००)— यो. १६८७५०००००० ।

इन वृद्धियोंके लानेके हेतु यह गाथासूत्र है—

तीन लाख कम अन्तिम विस्तार और नौ लाख कम आयामको परस्पर गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसमें पन्द्रहका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उतना अधस्तन सब समुद्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥ २७१ ॥

उदाहरण— (१) पुष्करवरसमुद्रका वि. यो. ३२ ला. । ३२ ला. – ३ ला. = २९ ला., आयाम २७९ ला. । २७९ ला. – ९ ला. = २७० ला.; २७० ला. × २९ ला. ÷१५ = ५२२०००००००००० लवण व कालोदका सम्मिलित क्षे. फ. ।

(२) स्वयंभूरमणसमुद्रका विस्तार = $\frac{1}{2}$ रा. + ७५००० यो. व आयाम = $\frac{1}{2}$ रा. – २२५००० यो. । अतएव स्वयंभूरमणसमुद्रसे अधस्तन समस्त समुद्रोंका क्षेत्रफल हुआ—

$$\left\{ \left(\frac{1}{2} \text{ रा.} + ७५००० \text{ यो.} - ३ \text{ लाख यो.} \right) \times \left(\frac{1}{2} \text{ रा.} - २२५००० \text{ यो.} - ९ \text{ लाख यो.} \right) \right\} \div १५$$

$$= \left\{ \left(\frac{1}{2} \text{ रा.} - २२५००० \text{ यो.} \right) \times \left(\frac{1}{2} \text{ रा.} - ११२५००० \text{ यो.} \right) \right\} \div १५$$

$$= \left(\frac{1}{4} \text{ रा.}^{2} - ७८७५०० \text{ रा. यो.} + २५३१२५ \times १०^{1} \right) \div १५$$

$$= \frac{1}{60} \text{ रा.}^{2} - ५२५०० \text{ रा. यो.} + १६८७५ \times १०^{1} \text{ ।}$$

सातिरेक प्रमाणको लानेकेलिये गाथासूत्र—

१ द ब एक्कसयकोडि.• २ [भजिदेहिं].

तिविहं सूइसमूहं वारुणिवरउवहिपहुदिउवरिल्लं । चउलक्खगुणं अहियं अट्ठरसमहस्सकोडिपरिहीणं ॥२७२

सोलसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा— धादईसंडदीवस्स विक्खंभं चत्तारिलक्खं, आयामं सत्तावीसलक्खं । पुक्खरवरदीवविक्खंभं सोलसलक्खं, आयामं पणतीसलक्खसहियएयकोडिजोयणपमाणं । वारुणिवरदीवविक्खंभं चउसट्ठिलक्खं आयामं सत्तसट्ठिलक्खसहियपंचकोडीओ । एवं हेट्ठिमविक्खंभादो उवरिमविक्खंभं चउगुणं, आयामादो आयामं चउरगुणं सत्तावीसलक्खेहिं अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति । धादईसंडदीवखेत्तफलादो पुक्खरवरदीवस्स खेत्तफलं वीसगुणं । पुक्ख-

वारुणीवरसमुद्रप्रभृति उपरिम समुद्रकी तीनों प्रकारकी सूचियोंके समूहको चार लाखसे गुणा करके प्राप्त राशिमेंसे अठारह हजार करोड़ कम करदेनेपर अधिकताका प्रमाण आता है ॥ २७२ ॥

उदाहरण — (१) वारुणीवरसमुद्रकी आदि सूची २५३ ला. + म. सू. ३८१ ला. + बा. सू. ५०९ ला. = ११४३ ला.; ११४३ ला × ४ ला. − १८००००००००००० = ४५५४०००००००००० अतिरेकप्रमाण ।

(२) स्वयंभूरमणसमुद्रकी आदि सूची = $\frac{1}{2}$ रा. − १५०००० यो.; मध्य सूची = $\frac{1}{2}$ रा. − ७५००० यो.; अन्त सूची = १ रा. । अतः इन तीनों सूचियोंका योग हुआ = $\frac{3}{2}$ रा. − २२५००० यो. । इस सूचियोंके योगसे चार लाखका गुणा करने व गुणनफलमेंसे १८ × १०^१० कम कर देनेसे प्राप्त हुआ = ९ लाख रा. यो. − २७१००० × १०^५ । यह अधस्तन समुद्रोंके क्षेत्रफलसे पन्द्रहगुणितसे अधिकका प्रमाण हुआ ।

अतः अधस्तन समुद्रोंका क्षेत्रफल — $\frac{1}{2}$ रा.^२ − ५२५०० रा. यो. + १६८७५ × १०^५ । इसका १५ गुणा हुआ = $\frac{15}{2}$ रा.^२ − ७८७५०० रा. यो. + २५३१२५ × १०^५ । इसमें उपर्युक्त सातिरेकप्रमाण जोडनेसे स्वयंभूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल हुआ — $\frac{15}{2}$ रा.^२ + ११२५०० रा. यो. − १६८७५ × १० ।

सोलहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है— धातकीखण्डद्वीपका विस्तार चार लाख और आयाम सत्ताईस लाख योजन है । पुष्करवरद्वीपका विस्तार सोलह लाख और आयाम एक करोड़ पैंतीस लाख योजन है । वारुणीवरद्वीपका विस्तार चौंसठ लाख और आयाम पांच करोड़ सड़सठ लाख योजन है । इस प्रकार अधस्तन द्वीपके विस्तारसे तदनन्तर उपरिम द्वीपका विस्तार चौगुणा और आयामसे आयाम चौगुणा होनेके अतिरिक्त सत्ताईस लाख योजन अधिक होता हुआ स्वयंभूरमणद्वीप तक चला गया है ।

धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल बीसगुणा है । पुष्करवरद्वीपके

वरदीवस्स खेत्तफलादो वारुणीवरदीवस्स खेत्तफलं सोलसगुणं होऊण सत्तारसलक्ख-अट्ठावीससहस्स-कोडिजोयणेहिं अब्भहियं होदु १७२८०००००००००० । एवं हेट्ठिमदीवस्स खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स खेत्तफलं सोलसगुणं पक्खेवभूदसत्तारसलक्ख-अट्ठावीससहस्सकोडीओ चउग्गुणं होऊण गच्छदि जाव सयंभूरमणदीओ त्ति । एत्थ विक्खंभायामखेत्तफलाणं अंतिमविअप्पं वत्तइस्सामो— अहिंदवरदीवस्स विक्खंभं रज्जूए बत्तीसमभागं, पुणो णवसहस्स तिण्णिसय पंचहत्तरिजोयणेहिं अब्भहियं होदु । आयामं णव रज्जू ठविय बत्तीसरूवेहिं भागं घेत्तूण पुणो अट्ठलक्ख पण्णारस-सहस्स छसयपणवीसजोयणेहिं परिहीणं होदु । तस्स ठवणा $\frac{१}{३२}$ धण जोयणाणि ९३७५ । आयामं $\frac{९}{१}$ रिण जोयणाणि ८१५६२५ । अहिंदवर-दीवस्स खेत्तफलं रज्जूवे वग्ग णवरूवेहि गुणिय एक्कसहस्स-चउवीसरूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो रज्जूए सोलसम-भाग ठविय तिण्णिलक्ख-पंचसट्ठिसहस्स-छसय पणवीसजोयणेहिं गुणिदमेत्त परिहीणं होदि, पुणो सत्तसय-चउसट्ठिकोडि-चउसट्ठि-कल-चउरासीदिसहस्स-तिसय पंचहत्तरिजोयणेहिं परिहीणं होदु । तस्स ठवणा $\frac{१}{१६}$ रिण रज्जूओ — $\frac{७६४६४८४३७५}{१६}$ रिण जोयणाणि ७६४६४८४३७५ । सयंभूरमणदीवस्स विक्खंभं रज्जूए अट्ठमभागं पुणो सत्तत्तीससहस्स-पंचसयजोयणेहिं अब्भहियं होदि, आयामं पुणो णवरज्जूए अट्ठमभागं पुणो पंचलक्ख बावट्ठिसहस्स पंचसयजोयणेहिं परिहीणं होदु । तस्स ठवणा

क्षेत्रफलसे वारुणीवरद्वीपका क्षेत्रफल सोलहगुणा होकर सत्तरह लाख अट्ठाईस हजार करोड़ योजन अधिक है १७२८०००००००००० । इस प्रकार स्वयंभूरमणद्वीप तक अवस्तन द्वीपके क्षेत्रफलसे तदनन्तर उपरिम द्वीपका क्षेत्रफल सोलहगुणा होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत सत्तरह लाख अट्ठाईस हजार करोड़ योजनोंसे चौगुणा होता गया है । यहां विस्तार, आयाम और क्षेत्र-फलके अन्तिम विकल्पको कहते हैं—

अहीन्द्रवरद्वीपका विस्तार राजुके बत्तीसवें भाग और नौ हजार तीन सौ पचत्तर योजन अधिक है, तथा इसका आयाम नौ राजुओंको रखकर बत्तीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे आठ लाख पन्द्रह हजार छह सौ पच्चीस योजन हीन है । उसकी स्थापना इस प्रकार है— विस्तार रा. $\frac{१}{३२}$ + यो. ९३७५ । आयाम रा. $\frac{९}{१}$ — यो. ८१५६२५ ।

अहीन्द्रवरद्वीपका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा करके एक हजार चौबीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे, राजुके सोलहवें भागको रखकर तीन लाख पैंसठ हजार छह सौ पच्चीस योजनोंसे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना, कम है, पुनः सात सौ चौंसठ करोड़ चौंसठ लाख चौरासी हजार तीन सौ पचत्तर योजन कम है । उसकी स्थापना इस प्रकार है—

रा.^{२} × ९ ÷ १०२४ − (रा. $\frac{१}{१६}$ × ३६५६२५ यो.) − ७६४६४८४३७५ यो. ।

स्वयंभूरमणद्वीपका विस्तार राजुका आठवां भाग होकर सैंतीस हजार पांच सौ योजन अधिक है, और इसका आयाम नौ राजुओंके आठवें भागमेंसे पांच लाख बासठ हजार पांच सौ

$\frac{१}{७}$ | $\frac{१}{८}$ घण जोयणाणि ३७५०० । आयामं $\frac{१}{७}$ | $\frac{९}{८}$ रिण जोयणाणि ५६२५०० । पुणो खेत्तफलं रज्जूवे कदी णवरूवेहिं गुणिय चउसट्ठिरूवेहिं भजिदमेत्तं, पुणो रज्जू ठविय अट्ठावीससहस्स-एक्कसय-पंचवीसरूवेहिं गुणिदमेत्तं, पुणो पण्णाससहस्स-सत्ततीसलक्ख णवकोडिअट्ठभहियदोण्णिसहस्स-एक्कसय-कोडिजोयणं एदेहिं[1] दोहि रासीहिं परिहीणं पुविल्लरासी होदि । तस्स ठवणा $\frac{९}{६४}$ रिण रज्जू $\frac{२८१२५}{७}$ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० । अदिरेयस्स पमाणाणयणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

* सगसगमज्झिमसूई णवलक्खगुणं पुणो वि मिलिदव्वं । सत्तावीससहस्सं कोडीओ तं हुवेदि अदिरेगं ॥ २७३

योजन हीन है । उसकी स्थापना इस प्रकार है — विस्तार रा. $\frac{१}{८}$ + यो. ३७५०० । आयाम रा. $\frac{९}{८}$ − यो. ५६२५०० ।

पुनः इस द्वीपका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें चौसठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे, राजुको स्थापित करके अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीसरो गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसे और दो हजार एक सौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन, इन दो राशियोंको कम कर देनेपर अवशिष्ट पूर्वोक्त राशिप्रमाण है । उसकी स्थापना इस प्रकार है — रा.^{२} × ९ ÷ ६४ − (रा १ × २८१२५ यो.) − २१०९-३७५०००० ।

अतिरेकके प्रमाणको लानेके लिये गाथासूत्र —

अपनी अपनी मध्यम सूचीको नौ लाखसे गुणा करके उसमें सत्ताईस हजार करोड़ और मिला देनेपर वह अतिरेकप्रमाण होता है ॥ २७३ ॥

उदाहरण—(१) वारुणीवरद्वीपकी मध्य सूची १८९ ला. × ९ ला. + २७००० करोड़ = १७२८०००००००००० अतिरेकप्रमाण ।

(२) स्वयंभूरमणद्वीपकी मध्य सूची = $\frac{१}{८}$ − १८७५०० यो.

× ९००००० यो.

३३७५०० रा. यो. − १६८७५०००००० + २७००००००००० अतिरेकका प्रमाण — ३३७५०० रा. यो. + १०१२५०००००० अहीन्द्र. द्वी. का सोलह गुणित क्षे.फ. $\frac{९}{६४}$ रा.^{२} − २६५६२५ रा. यो.−१२२३४३७५०००० स्वयंभूरमणद्वीपका क्षेत्रफल— $\frac{९}{६४}$ रा.^{२} − २८१२५ रा. यो.− २१०९३७५०००० ।

१ द एदे हदाहः ब एदे हवाह.

सत्तारसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो। तं जहा— धादईसंडखेत्तफलादो पुक्खरवरदीवस्स खेत्तफलं वीसगुणं। धादईसहिदपोक्खरवरदीवखेत्तफलादो वारुणिवरखेत्तफलं सोलसगुणं। धादईपोक्खरवरदीवसहियवारुणिवरदीवखेत्तफलादो खीरवरदीवखेत्तफलं पण्णारसगुणं होऊण सीदिसहस्सभहियएक्काणउदिलक्खकोडीओ अब्भहियं होइ ९१८०००००००००००। एवं खीरवरदीवप्पहुदि अब्भंतरिमसव्वदीवखेत्तफलादो तदणंतरबाहिरभागणिविट्ठदीवखेत्तफलं पण्णारसगुणं पक्खेवभूदसीदिसहस्सकोडिसहियएक्काणवदिलक्खकोडीओ चउग्गुणं होऊण एयलक्ख-अट्ठसहस्सकोडिजोयणेहिं[1] अब्भहियं होइ १०८०००-००००००००। एवं णेदव्वं जाव सयंभूरमणदीवो त्ति। तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणदीवस्स हेट्ठिमसव्वदीवाणं खेत्तफलपमाणं रज्जूवे वग्गं तिगुणिय तीसुत्तरतिण्णिसदाहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्कसहस्सं तिण्णिसयउणसट्ठिकोडीओ सत्तणीसलक्खं पण्णाससहस्सजोयणेहिं अब्भहियं होइ। पुणो एक्कतीससहस्सं अट्ठसयपंचहत्तरिजोयणेहिं गुणिदरज्जूए[2] परिहीणं होइ। तस्स ठवणा रू.°। रू.°। धणं जोयणाणि १३५९३७५००००। रिणं रज्जू रू.। ३१८७५। सयंभूरमणदीवस्स खेत्तफलं रज्जूए कदी णवरूवेहिं गुणिय चउसट्ठिरूवेहिं भजिदमेत्तं, पुणो रज्जू रूविय अट्ठावीससहस्स-एक्कसयपंचवीसरूवेहिं गुणिद-

सत्तरहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं। वह इस प्रकार है— धातकीखण्डके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल बीसगुणा है। धातकीखण्ड सहित पुष्करवरद्वीपके क्षेत्रफलसे वारुणीवरद्वीपका क्षेत्रफल सोलहगुणा है। धातकीखण्ड और पुष्करवरद्वीपसे सहित वारुणीवरद्वीपके क्षेत्रफलसे क्षीरवरद्वीपका क्षेत्रफल पन्द्रहगुणा होकर इक्यानवे लाख अस्सी हजार करोड़ योजन अधिक है ९१८०००००००००००। इस प्रकार क्षीरवरप्रभृति अभ्यन्तर सब द्वीपोंके क्षेत्रफलसे तदनंतर बाह्य भागमें स्थित द्वीपका क्षेत्रफल पन्द्रहगुणा होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत इक्यानवे लाख अस्सी हजार करोड़ चौगुणे होकर एक लाख आठ हजार करोड़ योजनोंसे अधिक है १०८०००००००००। यह क्रम स्वयंभूरमणद्वीप तक जानना चाहिये। इनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं— स्वयंभूरमणद्वीपके अधस्तन सब द्वीपोंके क्षेत्रफलका प्रमाण राजुके वर्गको तिगुणा करके तीनसौ बीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे, एक हजार तीनसौ उनसठ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन अधिक तथा इकतीस हजार आठसौ पचत्तर योजनोंसे गुणित राजुसे हीन है। उसकी स्थापना—

(रा.° ×३÷३२०) + यो. १३५९३७५०००० − (रा. × ३१८७५)।

स्वयंभूरमणद्वीपका क्षेत्रफल राजुके वर्गको नौसे गुणा करके चौंसठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे, राजुको स्थापित करके अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीससे गुणा करनेपर

१ द ब एयलक्ख-अट्ठारससहस्स°, अंबे-पाप्रौ ११८० आदि। २ द ब रज्जूएविं.
३ द ब पंचवीससहस्सरूवेहिं.

सेसं, पुणो पण्णारसहस्से सत्ततीसलक्ख णवकोडिअब्भहियदोण्णिसहस्स-एक्कसयकोडिजोयणं, एदेहिं दोहिं रासीहिं परिहीणं पुढविरज्जुरासी होदि। तस्स ठवणा $\frac{१}{२}$ । $\frac{१}{२}$ रिण रज्जुओ $\frac{१}{२}$। २८१२५ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० । अब्भंतरिमसयंभूरमणदीवसेसफलं मेलावेदूण आणयणट्ठमिमं गाहासुत्तं—

विक्खंभायामे इगि सगतीसं लक्खसवणमंतिमए। पण्णारसहिदे लद्धं इच्छादो हेट्ठिमाण संकलणं ॥ २७४

अधियपमाणेमाणेयं गहेदुमिमं गाहासुत्तं —

जो राशि उत्पन्न हो उसको, तथा दो हजार एकसौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन, इन दो राशियोंको कम कर देनेपर अवशिष्ट पूर्वोक्त राशिप्रमाण है। उसकी स्थापना- (रा.^{२} × ९ ÷ ६४) – (रा. १ × २८१२५) – २१०९३७५०००० ।

अभ्यन्तर सब द्वीपोंके क्षेत्रफलको मिलाकर निकालनेके लिये यह गाथासूत्र है —

अन्तिम द्वीपके विष्कम्भ और आयामसे क्रमशः एक लाख और सत्ताईस लाख कम करके (शेषके गुणफलमें) पन्द्रहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना इच्छित द्वीपसे (जम्बूद्वीपको छोड़कर) अधस्तन द्वीपोंका संकलन होता है ॥ २७४ ॥

उदाहरण— (१) वारुणीवरद्वीपका विष्कम्भ ६४ लाख और आयाम ५६७ लाख योजन है। अतएव धातकीखण्ड और पुष्करद्वीपका सम्मिलित क्षेत्रफल इस प्रकार हुआ - ६४ ला.– १ ला. = ६३ ला.; ५६७ ला. – २७ ला. = ५४० ला. यो.: ६३ ला. × ५४० ला. ÷ १५– २२६८०००००००००० यो. ।

(२) स्वयंभूरमणद्वीपके अधस्तन समस्त द्वीपों (जम्बूद्वीपको छोड़कर) का प्रमाण— स्वयंभूरमणद्वीपका विष्कम्भ = $\frac{१}{२}$ रा. + ३७५०० यो.; आयाम = $\frac{१}{२}$ रा. – ५६२५०० यो.। इन दोनों राशियोंमेंसे क्रमशः १ लाख और २७ लाख घटानेसे शेष रहे—

$\frac{१}{२}$ रा. – ६२५०० यो. व $\frac{१}{२}$ रा. – ३२६२५०० यो.; इन दोनोंका परस्पर गुणा करनेपर उत्पन्न हुआ—

$\frac{१}{४}$ रा.^{२} – ४७८१२५ रा. यो. + २०३९०३२५०००० यो.; इस राशिमें १५ का भाग देनेपर उत्पन्न हुआ—

$\frac{१}{६०}$ रा.^{२} – ३१८७५ रा. यो. + १३५९३७५०००० यो.; यह स्वयंभूरमणद्वीपसे अधस्तन द्वीपोंका संकलित क्षेत्रफल हुआ ।

अधिक प्रमाणको लानेका हेतु यह गाथासूत्र है—

१ द ब पण्णारससहस्स°, अकेष्वपि २१०९३७१५०००. २ द ब हेट्ठिमाह. ३ द ब समाण°.

खीरवरदीवपहुदिं उवरिमदीवस्स दीहपरिमाणं । चउलक्खे संगुणिदे परिवड्ढी होइ उवरिं उवरिं ॥ २७५

अट्ठारसमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो— लवणोदधीए[1] आदिमसूई एक्कलक्खं, मज्झिमसूई तिण्णिलक्खं, बाहिरसूई पंचलक्खं, एदेसिं तिट्ठाणसूईणं मज्झे कमसो चउलक्कट्ठलक्खाणि मेलिदे धादईसंड-दीवस्स आदिममज्झिमबाहिरसूईओ होंति । पुणो धादईसंडदीवस्स तिट्ठाणसूईणं मज्झे पुव्विल्लपक्खेवं दुगुणिय कमसो मेलिदे कालोदगसमुद्दस्स तिट्ठाणसूईओ होंति[2] । एवं हेट्ठिमदीवस्स वा रयणायरस्स वा तिट्ठाण-सूईणं मज्झे चउलक्कट्ठलक्खाणि अब्भहियं करिय[3] उवरिमदुगुणदुगुणकमेण[4] मेलावेदव्वं जाव सयंभूरमण-

क्षीरवरद्वीपको आदि लेकर उपरिम द्वीपकी दीर्घताके प्रमाण अर्थात् आयामको चार लाखसे गुणित करनेपर ऊपर ऊपर वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २७५ ॥

उदाहरण — (१) क्षीरवरद्वीपका विस्तार = २५६ लाख यो.; आयाम २२९५ लाख यो.। अतएव २२९५ ला. × ४ ला. = ९१८० × १०[10] यो. । यह क्षीरवरद्वीपसे अधस्तन द्वीपोंके क्षेत्रफलसे पन्द्रह गुणा होकर अधिकका प्रमाण है जो क्षीरवरद्वीपमें प्राप्त होता है ।

(२) अधस्तन द्वीपोंके क्षेत्रफलसे १५ गुणा होकर जो सातिरेकप्रमाण स्वयंभूरमणद्वीपमें पाया जाता है वह इस प्रकार है— स्वयंभूरमणद्वीपका आयाम = $\frac{1}{2}$ रा. — ५६२५०० यो.; इसको चार लाखसे गुणा करनेपर प्राप्त हुआ = ४५०००० रा. यो.— २२५×१०[5] । अतः स्वयंभूरमणद्वीपका क्षेत्रफल हुआ —

$\frac{1}{2}$ रा. — ४७८१२५ रा. यो. + २०३९०६२५०००० यो.
४५०००० रा. यो. — २२५०००००००० यो.

$\frac{1}{2}$ रा. — २८१२५ रा. यो. — २१०९३७५०००० यो.

अठारहवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं— लवणसमुद्रकी आदिम सूची एक लाख, मध्यम सूची तीन लाख और बाह्य सूची पांच लाख योजन है । इन तीन सूचियोंके मध्यमें क्रमसे चार लाख, छह लाख और आठ लाख मिलानेपर धातकीखण्डकी आदिम, मध्यम और बाह्य सूची होती है । पुनः धातकीखण्डकी तीनों सूचियोंमें पूर्वोक्त प्रक्षेपको दुगुणा करके क्रमशः मिलादेनेपर कालोदकसमुद्रकी तीनों सूचियां होती हैं । इस प्रकार अधस्तन द्वीप अथवा समुद्रकी त्रिस्थान सूचियोंमें चार, छह और आठ लाख अधिक करके आगे आगे स्वयंभूरमणसमुद्र तक

१ द ब णीरद्धीए. २ द ब होंदि. ३ द ब अब्भहियं व करिय. ४ द ब उवरिमगुणदुगुण.
५ द ब ०
TP. 75

समुद्दो त्ति। तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो। तं जहा- सयंभूरमणदीवस्स आदिमसूईमज्झे रज्जूए चाउब्भागं पुणो पंचहत्तारिसहस्सजोयणाणि संमिलिदे सयंभूरमणसमुद्दस्स आइमसूई होदि। तस्स ठवणा $\frac{-}{२\ ४}$ धण जोयणाणि ७५०००। पुणो तद्दीवस्स मज्झिमसूइम्मि तियरज्जूण अट्ठमभागं पुणो एक्कलक्ख-बारससहस्स-पंचसयजोयणाणि संमिलिदे सयंभूरमणसमुद्दस्स मज्झिमसूई होइ $\frac{-}{८}\ \frac{३}{४}$ धण जोयणाणि ११२५००। पुणो सयंभूरमणदीवस्स बाहिरसूईमज्झे रज्जूए अद्धं[1] पुणो दिवड्ढलक्खजोयणेण मेलिदे चरिमसंसमुद्दअंतिम-सूई होइ। तस्स ठवणा— $\frac{-}{१\ ४}$ धण जोयणाणि १५००००। एत्थ वड्ढीण आणयणहेदुमिमं गाहासुत्तं—

धादइसंडप्पहुदिं इच्छियदीओदहीण रुंदद्धं। दुतिचउरूवेहिं हदो तिट्ठाणे होंति परिवड्ढी ॥ २७६

दूने दूने क्रमसे मिलाने जाना चाहिये। उनमें अन्तिम विकल्पको कहते हैं। वह इस प्रकार है— स्वयंभूरमणद्वीपकी आदिम सूचीमें राजुके चतुर्थ भाग और पचत्तर हजार योजनोंको मिलानेपर स्वयंभूरमणसमुद्रकी आदिम सूची होती है। उसकी स्थापना— रा. $\frac{१}{४}$ + यो. ७५०००। पुनः इसी द्वीपकी मध्यम सूचीमें तीन राजुओंके आठवें भाग और एक लाख बारह हजार पांचसौ योजनोंको मिलानेपर स्वयंभूरमणसमुद्रकी मध्यम सूची होती है— रा. $\frac{३}{४}$ + यो. ११२५००। पुनः स्वयंभूरमणद्वीपकी बाह्य सूचीमें राजुके अर्ध भाग और डेढ़ लाख योजनोंको मिलानेपर उपरिम (स्वयंभूरमण) समुद्रकी अन्तिम सूची होती है। उसकी स्थापना— रा. $\frac{१}{२}$ + यो. १५००००।

यहां वृद्धियोंके लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

धातकीखण्डप्रभृति इच्छित द्वीप-समुद्रोंके आधे विस्तारको दो, तीन और चारसे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उतनी क्रमसे तीनों स्थानोंमें वृद्धि होती है ॥ २७६ ॥

उदाहरण— (१) कालोदकसमुद्रका विस्तार आठ लाख यो. है; अतः $\frac{१}{२}$ ला. × २ = ८ ला. आदिमसूचीवृद्धि। $\frac{१}{२}$ ला. × ३ = १२ ला. म. सू. वृद्धि। $\frac{१}{२}$ ला. × ४ = १६ ला. अं. सू. वृद्धि।

(२) स्वयंभूरमणद्वीपकी आदिसूची $\frac{१}{४}$ रा. – २२५००० यो.; मध्यसूची $\frac{३}{४}$ रा. – १८७५००; अन्तसूची $\frac{१}{२}$ रा. – १५०००० यो.; स्वयंभूरमणसमुद्रका विस्तार $\frac{१}{४}$ रा. + ७५००० यो.; अतएव स्वयंभूरमणसमुद्रकी सूचियोंको लानेके लिये ($\frac{१}{४}$ रा. + ७५०००) ÷ २ को क्रमशः २, ३ व ४ से गुणा करनेपर वे ही प्रक्षेप राशियां उत्पन्न होंगी जो ऊपर बतला चुके हैं। इनको स्वयंभूरमणद्वीपकी उपर्युक्त सूचियोंमें मिलानेसे क्रमशः स्वयंभूरमणसमुद्रकी सूचियां इस प्रकार प्राप्त होती हैं —

१ द ब पिंड. २ द ब मेलिदोपरिम°.

छणवीसदिमपक्खे अप्पाबहुगं वत्तइस्सामो। तं जहा— लवणसमुद्दस्सायामं णवलक्खं, तम्मि अट्ठारसलक्खं संमेलिदे धादईसंडस्स दीवस्स आयामं होदि। धादईसंडदीवस्स आयामम्मि पक्खेवभूद-अट्ठारसलक्खं दुगुणिय मेलिदे कालोदगसमुद्दस्स आयाम होइ। एवं पक्खेवभूदअट्ठारसलक्खं दुगुणदुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। तत्तो अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— तत्थ सयंभूरमणदीवस्स आयामादो सयंभूरमणसमुद्दस्स आयामवड्ढी णवरज्जूणं अट्ठमभागं पुणो तिण्णिलक्ख-सत्ततीससहस्स-पंच-सयजोयणेहिं अब्भहियं होइ। तस्स ठवणा $\frac{1}{8}$ रूण जोयणाणि ३३७५००। लवणसमुद्दादिइच्छिय-दीवसयणायराणं आयामवड्ढिपमाणाणयणहेदुं इमं गाहासुत्त—

स्वयंभूरमणद्वीपकी आदिसूची	$\frac{1}{4}$ रा.	– २२५००० यो.
प्रक्षेप	$\frac{1}{8}$ रा.	+ ७५००० यो.
स्वयंभूरमणसमुद्रकी आदिसूची	$\frac{1}{2}$ रा.	– १५०००० यो.
स्वयंभूरमणद्वीपकी मध्यसूची	$\frac{1}{2}$ रा.	– १८७५०० यो.
प्रक्षेप	$\frac{1}{8}$ रा.	+ ११२५०० यो.
स्वयंभूरमणसमुद्रकी मध्यसूची	$\frac{1}{8}$ रा.	– ७५००० यो.
स्वयंभूरमणद्वीपकी अंतसूची	$\frac{1}{2}$ रा.	– १५०००० यो.
प्रक्षेप	$\frac{1}{2}$ रा.	+ १५०००० यो.
स्वयंभूरमणसमुद्रकी अंतसूची	१ राजु.	

उन्नीसवें पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं — लवणसमुद्रका आयाम नौ लाख है। इसमें अठारह लाख मिलानेपर धातकीखण्डका आयाम होता है। धातकीखण्डद्वीपके आयाममें प्रक्षेपभूत अठारह लाखको दुगुणा करके मिलानेपर कालोदकसमुद्रका आयाम होता है। इस प्रकार स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त प्रक्षेपभूत अठारह लाख दुगुणे दुगुणे होते गये हैं। यहां अन्तिम विकल्पको कहते हैं — स्वयंभूरमणद्वीपके आयामसे स्वयंभूरमणसमुद्रके आयाममें नौ राजुओंके आठवें भाग तथा तीन लाख सैंतीस हजार पांचसौ योजन अधिक वृद्धि होती है। उसकी स्थापना— रा. $\frac{1}{8}$ + यो. ३३७५००।

लवणसमुद्रको आदि लेकर इच्छित द्वीप-समुद्रोंकी आयामवृद्धिके प्रमाणको लानेके लिये यह गाथासूत्र है—

---

१ द ब होंति. २ द ब °दीवे.

धादइसंडप्पहुदिं इच्छियदीवोवहीण विक्खारं । अद्धिय तं णवहि गुणं हेट्ठिमदो होदि उवरिमे वड्ढी ॥ २७७

। एवं दीउवहीणं णाणाविहखेत्तफलपरूवणं समत्तं ।

एयक्खवियलसयला बारस तिय दोण्णि होंति उत्तकमे । भूआउतेउवाऊ पत्तेकं बादरा सुहुमा ॥ २७८

साहारणपत्तेयसरीरवियप्पे वणप्फई[1] दुविहा । साहारण थूलिदरा[2] पदिट्ठिदिदरा[3] य पत्तेयं ॥ २७९

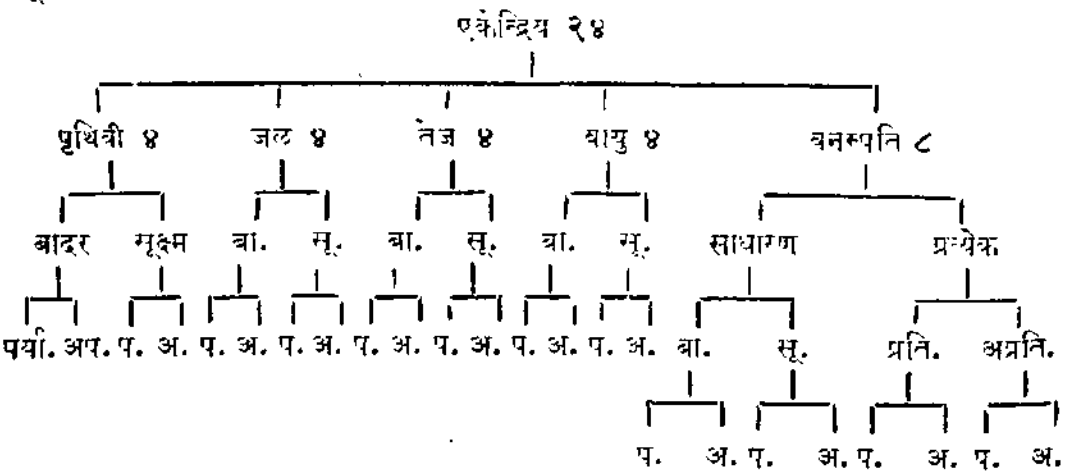
धातकीखण्डको आदि लेकर इच्छित द्वीप-समुद्रोंके विस्तारको आधा करके उसे नौसे गुणित करनेपर प्राप्त राशिप्रमाण अधस्तन द्वीप या समुद्रसे उपरिम द्वीप या समुद्रके आयाममें वृद्धि होती है । ॥ २७७ ॥

उदाहरण—(१) कालोदकसमुद्रका विस्तार यो. ८ ला.; ८ ला. ÷ २ × ९ = ३६ ला. = कालोद. ६३ ला. – धातकी. २७ ला. यो. । यह धातकीखण्डके आयामसे कालोदसमुद्रके आयाममें हुई वृद्धिका प्रमाण है ।

(२) स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार $\frac{1}{2}$ रा. + ७५००० यो. है । अतएव उक्त नियमानुसार स्वयम्भूरमणद्वीपके आयामसे उसकी आयामवृद्धिका प्रमाण इस प्रकार होगा— ($\frac{1}{2}$ रा. + ७५००० यो.) ÷ २ × ९ = $\frac{9}{4}$ रा. + ३३७५०० = (स्व. रा. आ. $\frac{1}{2}$ रा. – २२५००० यो.) – (स्व. द्वी. आ. $\frac{1}{2}$ रा. – ५६२५०० यो.) ।

इस प्रकार द्वीप-समुद्रोंके नाना प्रकारके क्षेत्रफलका प्ररूपण समाप्त हुआ ।

एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय जीव उक्त क्रमसे बारह, तीन और दो भेदरूप है । इनमेंसे एकेन्द्रियोंमें पृथिवी, जल, तेज और वायु, ये प्रत्येक बादर एवं सूक्ष्म होते है । साधारणशरीर और प्रत्येकशरीरके भेदसे वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकार है । इनमें साधारण स्थूल और सूक्ष्म, तथा प्रत्येकशरीर प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित होते है ॥ २७८–२७९ ॥



१ द ब वणपई. २ द ब °थूलिदिरा. ३ द ब परिदिट्ठिदिरा.

विगला विदितिचउरक्खा सयला सण्णी असण्णिणो एदे। पज्जत्तेदरभेदा चोत्तीसा अह यणेयविहा ॥ २८०

पु. ४	अ. ४	ते. ४	वा ४	सा.४	प.४	बि.२	ति २	च. २	अ. २	स. २
बा सु.	बा.सु.	बा.सु.	बा.सु.	बा.सु.	प अ.	प.अ.	प. अ.	प. अ.	प अ.	प. अ

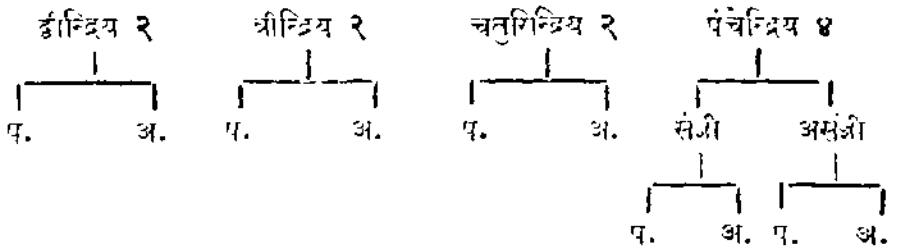
एवं जीवभेदपरूवणा गाहा[1] ।

पुढविआईभेयं[2] परूवेमो ।

एत्तो चोत्तीसविहाणं तिरिक्खाणं परिमाणं उच्चदे ।

[संपहि] सुत्तविरुद्धेण आइरियपरंपरागदोवदेसेण तेउक्काइयरासिउप्पायणविहाणं वत्तइस्सामो। तं जहा— एग घणलोगं सलागभूदं ठविय अवरेगं घणलोगं[3] विरलिय एक्केक्कस्स रूवस्स[4] घणलोगं[5] दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय सलागरासीदो एगरूवमवणेयव्वं । तावे एक्का अण्णोण्णगुणगारसलागा लब्भदि । तस्सुप्पण्णरासिस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता वग्गसलागा भवंति । तस्सद्धच्छेदणयसलागा असं-

दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय और चारइन्द्रियके भेदसे विकल जीव तीन प्रकार, तथा संज्ञी और असंज्ञीके भेदसे सकल जीव दो प्रकार है। ये सब जीव (१२ + ३ + २) पर्याप्त व अपर्याप्तके भेदसे चौंतीस प्रकार होते है, अथवा अनेक प्रकार है ॥ २८० ॥



इस प्रकार ये गाथायें जीवभेदोंका प्ररूपण करनेवाली है ।

अब पृथ्वी आदि जीव भेदोंकी प्ररूपणा करते है ।

यहांसे आगे चौंतीस प्रकारके तिर्यंचोंके प्रमाणको कहते है—

इस समय सूत्रसे अविरुद्ध आचार्यपरंपरागसे चले आये उपदेशके अनुसार तेजस्कायिक राशिके उत्पादन-विधानको कहते है। वह इस प्रकार है— एक घनलोकको शलाकारूपसे स्थापित कर और दूसरे घनलोकका विरलन करके एक एक रूपके प्रति घनलोकप्रमाणको देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिये। तब एक अन्योन्यगुणकार शलाका प्राप्त होती है। इस प्रकारसे उत्पन्न हुई उस राशिकी वर्गशलाकायें पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण होती हैं। इसी राशिकी अर्धच्छेदशलाकायें असंख्यात लोकप्रमाण और

१ द ब 'भेदो. २ 'एवं जीवभेदपरूवणा गाहा' इत्येतत् प्रत्योः पुनरुक्तम्। ३ द ब पुढविआईभेयं ४ द ब पुणलोगस्स. ५ द ब पुणलोगं. ६ द ब एक्केक्कं रूवस्स.

खेज्जा लोगा, रासी वि य संखेज्जलोगमेत्तो जादो। पुणो उट्ठिदमहारासिं विरलिदूण तत्थ एक्केक्कस्स रूवस्स उट्ठिदमहारासिपमाणं दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय सलागरासीदो अवरेगरूवमवणेयव्वं। तावे[1] अण्णोण्ण-गुणगारसलागा दोण्णि, वग्गसलागा अद्धच्छेदणयसलागा रासी च असंखेज्जा लोगा। एवमेदेण कमेण णेदव्वं जाव लोगमेत्तसलागरासी समत्तो त्ति। तावे अण्णोण्णगुणगारसलागपमाणं लोगो, सेसतिगमसंखेज्जा लोगा। पुणो उट्ठिदमहारासिं विरलिदूण तं चेव सलागभूदं ठविय विरलिय एक्केक्कस्स रूवस्स उप्पण्णमहारासिपमाणं दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय[2] सलागरासीदो एगरूवमवणेयव्वं। तावे अण्णोण्णगुणगारसलागा लोगो रूवाहिओ, सेसतिगमसंखेज्जा लोगा। पुणो उप्पण्णरासिं विरलिय रूवं पडि उप्पण्णरासिमेव दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय सलागरासीदो अण्णेगरूवमवणेदव्वं। तावे अण्णोण्णगुणगारसलागा लोगो दुरूवाहिओ, सेसतिगमसंखेज्जा लोगा। एवमेदेण कमेण दुरूवूणुक्कस्ससंखेज्जलोगमेत्तसलागासु[3] दुरूवाहिय-

यह राशि भी असंख्यात लोकप्रमाण होती है। पुनः उत्पन्न हुई इस महाराशिका विरलन करके उसमेंसे एक एक रूपके प्रति इसी महाराशिप्रमाणको देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाका-राशिमेंसे एक अन्य रूप कम करना चाहिये। इस समय अन्योन्यगुणकारशलाकायें दो और वर्गशलाका एवं अर्धच्छेदशलाका राशि असंख्यात लोकप्रमाण होती है। इस प्रकार जब तक लोकप्रमाण शलाकाराशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे करते जाना चाहिये। उस समय अन्योन्यगुणकारशलाकाओंका प्रमाण लोक और शेष तीनों राशियां अर्थात् उस समय उत्पन्न हुई महाराशि, उसकी वर्गशलाकाओं और अर्धच्छेदशलाकाओंका प्रमाण असंख्यात लोक होता है। पुनः उत्पन्न हुई इस महाराशिका विरलन करके इसे ही शलाकारूपसे स्थापित करके विरलित राशिके एक एक रूपके प्रति उत्पन्न महाराशिप्रमाणको देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिये। तब अन्योन्यगुणकारशलाकायें एक अधिक लोकप्रमाण और शेष तीनों असंख्यात लोकप्रमाण ही रहती हैं। पुनः उत्पन्न राशिका विरलन करके एक एक रूपके प्रति उत्पन्न राशिको ही देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे अन्य एक रूप कम करना चाहिये। तब अन्योन्यगुणकारशलाकायें दो रूप अधिक लोकप्रमाण और शेष तीनों राशियां असंख्यात लोकप्रमाण ही रहती हैं। इस प्रकार इस क्रमसे दो कम उत्कृष्ट संख्यात लोकप्रमाण अन्योन्यगुणकारशलाकाओंके दो अधिक लोकप्रमाण

---

१ द ह उट्ठिद°, ब ईट्ठिद°. २ द ब ता जह. ३ द य लोगा. ४ द ब वग्गिदकरिय. ५ द ब दुरूवाणुक्कस्ससंखेज्जलोगमेत्तलोगसलागासु.

लोगम्मि पविट्ठासु चत्तारि वि असंखेज्जा[1] लोगा भवंति । एवं णेदव्वं जाव विदियवारट्ठविदसलागरासी समत्तो त्ति[2] । तदो चत्तारि वि असंखेज्जा लोगा । पुणो उट्ठिदमहारासिं सलागभूदं ठविय अवरेगमुट्ठिदमहारासिं विरलिदूण उट्ठिदमहारासिपमाणं[3] दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय सलागरासीदो एगरूवमवणिदव्वं । ताधे चत्तारि वि असंखेज्जा लोगा । एवमेदेण कमेण णेदव्वं[4] जाव तदियवारट्ठविदसलागरासी समत्तो त्ति । तावे[5] चत्तारि वि असंखेज्जा लोगा । पुणो उट्ठिदमहारासिं तिप्पडिरासिं कादूण तत्थेगं सलागभूदं ठविय अण्णेगरासिं विरलिदूण तत्थ एक्केक्करस रूवस्स एगरासिपमाणं दादूण वग्गिदसंवग्गिदं करिय सलागरासीदो एगरूवमवणेयव्वं । एवं पुणो पुणो करिय णेदव्वं जाव[6] अदिक्कंतअण्णोण्णगुणगारसलागाहि ऊणचउत्थवारट्ठविदअण्णोण्णगुणगारसलागरासी समत्तो त्ति । तावे[7] तेउक्काइयरासी उट्ठिदो भवदि ≡ a । तस्स गुणगारसलागा चउत्थवारट्ठविदसलागरासिपमाणं होदि ॥ ९ ॥'[8] पुणो तेउक्काइयरासिमसंखेज्जलोगेण भागे

अन्योन्यगुणकारशलाकाओंमें प्रविष्ट होनेपर चारों ही राशियां असंख्यात लोकप्रमाण हो जाती हैं । इस प्रकार जब तक दूसरी बार स्थापित शलाकाराशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे करना चाहिये । तब भी चारों राशियां असंख्यात लोकप्रमाण होती हैं । पुनः उत्पन्न हुई महाराशिको शलाकारूपसे स्थापित करके उसी उत्पन्न महाराशिका विरलन करके उत्पन्न महाराशिप्रमाणको एक एक रूपके प्रति देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक कम करना चाहिये। इस समय चारों राशियां असंख्यात लोकप्रमाण रहती हैं। इस प्रकार तीसरी बार स्थापित शलाकाराशिके समाप्त होने तक यही क्रम चालू रखना चाहिये । तब चारों ही राशियां असंख्यात लोकप्रमाण रहती हैं । पुनः इस उत्पन्न महाराशिकी तीन प्रतिराशियां करके उनमेंसे एकको शलाकारूपसे स्थापित कर और दूसरी एक राशिका विरलन करके उसमेंसे एक एक रूपके प्रति एक राशिप्रमाणको देकर और वर्गितसंवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिये । इस प्रकार पुनः पुनः करके जब तक अतिक्रान्त अन्योन्यगुणकारशलाकाओंसे रहित चौथी बार स्थापित अन्योन्यगुणकारशलाकाराशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे लेजाना चाहिये । तब तेजकायिक राशि उत्पन्न होती है जो असंख्यात घनलोकप्रमाण है । घनलोककी संदृष्टि ≡ तथा असंख्यातकी संदृष्टि a है । उस तेजकायिक राशिकी अन्योन्यगुणकारशलाकायें चौथी बार स्थापित शलाकाराशिके समान होती हैं । इस राशिके असंख्यातकी संदृष्टि ९ है । पुनः तेजस्कायिक राशिमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे इसी राशिमें

१ द ब वि तियसखेज्जा. २ द ब पविट्ठो त्ति. ३ द ब वग्गसमुट्ठिद°, ब वेग्गसमुट्ठिद°. ४ द °समाणं. ५ द ब णावद्ध. ६ द ब तादे. ७ द ब नाम. ८ द ब तादे. ९ द ब तेउकायपरासी १० द ब ॥ ० ॥

हिदे लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते पुढविकाइयरासी होदि $\equiv a \cdot \frac{१०}{९}$। तम्मि असंखेज्जलोगेण भागे

हिदे' लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते आउकाइयरासी होदि $\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$। तम्मि असंखेज्जलोगेण भागे

हिदे लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते वाउकाइयरासी होइ $\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$। पुणो एदे चत्तारि सामण्ण-

मिला देनेपर पृथिवीकायिक राशिका प्रमाण होता है।

उदाहरण— पृथ्वीकायिक राशि = तेजका. रा. + $\frac{\text{ते. का. रा.}}{\text{असं. लो.}}$

$$= \equiv a + \frac{\equiv a}{९}$$

$$= \equiv a \cdot \frac{१०}{९}$$

इसमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे इसी राशिमें मिला देनेपर जलकायिक जीवराशिका प्रमाण होता है।

उदाहरण— जलका. राशि = पृ. का. रा. + $\frac{\text{पृ. का. रा.}}{\text{असं. लो.}}$

$$= \equiv a \cdot \frac{१०}{९} + \frac{\equiv a \cdot \frac{१०}{९}}{९}$$

$$= \equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$$

इसमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे इसी राशिमें मिला देनेपर वायुकायिक जीवराशिका प्रमाण होता है।

उदाहरण— वायुका. राशि = ज. का. रा. + $\frac{\text{ज. का. रा.}}{\text{असं. लो.}}$

$$= \equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९} + \frac{\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}}{९}$$

$$= \equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$$

पुनः इन चारों सामान्य राशियोंमेंसे प्रत्येकको अपने योग्य असंख्यात लोकसे खण्डित

१ ब हिदे २ द $\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$, ब $\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$ ३ द $\equiv a \cdot \frac{१०}{९} \cdot \frac{१०}{९}$

रासीओ पत्तेक्कं तप्पाउग्गअसंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थेगखंडं सगसगबादररासिपमाणं होदि । तेउ ≡ a ।
                                                                                                  ९

पुढवि ≡ a १० । आउ ≡ a १० १० । वाउ ≡ a १० १० १० । सेसबहुभागा सगसगसुहुमजीवा होंति ।
       ९ ९   ९ ९ ९   ९ ९ ९ ९

तेउ ≡ a ८ । पुढवि ≡ a । १० ८ । आउ ≡ a १० १० ८ । वाउ ≡ a १० १० १० ८ । पुणो
       ९   ९   ९ ९   ९ ९ ९   ९ ९ ९ ९

करनेपर एक भाग रूप अपनी अपनी बादरराशिका प्रमाण होता है, और शेष बहुभागप्रमाण अपने अपने सूक्ष्म जीव होते है ।

उदाहरण— तेजका. बादर राशि = $\frac{\text{ते. का. रा.}}{\text{असं. लो.}} = \left(\equiv \frac{a}{९} \right)$

तेजका. सूक्ष्म राशि = ते. का. रा. − ते. का. बा. रा.

$= (\equiv a) - \left(\equiv \frac{a}{९} \right) = \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{८}{१} \right)$

पृथ्वीका. बादर राशि = $\frac{\text{पृ. का. रा.}}{\text{असं. लो.}} = \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \right)$

,, सूक्ष्म राशि = पृ. का. रा. − पृ. का. बा. रा.

$= \left(\equiv a \frac{१०}{९} \right) - \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \right)$

$= \left(\equiv a \frac{१०}{९} \frac{८}{१} \right)$

जलका. बादर राशि = $\frac{\text{ज. का. रा.}}{\text{असं. लो.}} = \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)$

,, सूक्ष्म राशि = ज. का. रा. − ज. का. बा. रा.

$= \left(\equiv a \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right) - \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)$

$= \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{८}{१} \right)$

वायुका. बादर राशि = $\frac{\text{वा. का रा.}}{\text{असं. लो.}} = \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)$

,, सूक्ष्म राशि = वा. का. रा. − वा. का. बा. रा.

$= \left(\equiv a \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right) - \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)$

$= \left(\equiv \frac{a}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{८}{१} \right)$

१ द तज्जगखंड, ब तज्जेगखंड.

पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तजगपदरं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदपदरंगुलेहि भागे हिदे पुढविकाइयबादरपज्जत्तरासिपमाणं होदि $= \frac{४ । ९ । प}{a}$ । तम्मि आवलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदे हि बादरआउपज्जत्तरासिपमाणं होदि $= \frac{४ प}{a}$ । पुणो आवलिस्स असंखेज्जदिभागो बादरतेउपज्जत्तजीवपरिमाणं होदि ८ । पुणो लोगस्स संखेज्जदिभागो बादरवाउपज्जत्तजीवपमाणं होदि $\frac{\equiv}{७}$ । सगसगबादरपज्जत्तरासिस्स

पुनः पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण जगप्रतरमें आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित प्रतरांगुलका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है। इसे आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित करनेपर बादर अप्कायिक पर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है।

$$\text{उदाहरण— पृ. बा. प. राशि} = \left(\frac{\text{पल्यो.}}{\text{असं.}} \times \frac{\text{जगप्र.}}{१}\right) \div \left(\text{प्रतरांगुल} \times \frac{\text{आ.}}{\text{असं.}}\right)$$

$$= \left(\frac{प}{a}\right) \div \left(\frac{४}{१} \times \frac{१}{९}\right) = \left(\frac{= प ९}{४ a}\right)$$

$$\text{जलका. बा. प. राशि} = \text{पृ. बा प.} \times \frac{\text{आ.}}{\text{असं.}} = \frac{= प ९}{४ a} \times \frac{१}{९} = \frac{= प}{४ a}$$

पुनः आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण बादर तेजस्कायिक पर्याप्त जीवराशि होती है।

$$\text{उदाहरण— तेजका. बा. प. रा.} = \frac{\text{घना.}}{\text{असं}} = \frac{८}{a}$$

पुनः लोकके संख्यातवें भागरूप बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है।

$$\text{उदाहरण— वायुका. बा. प. रा.} = \frac{\text{लो.}}{\text{सं.}} = \frac{\equiv}{७}$$

अपनी अपनी बादर राशिमेंसे अपनी अपनी बादर पर्याप्त राशिको घटा देनेपर

सगसगबादररासीदो सोधिदे सगसगबादरअपज्जत्तरासी होदि । पुढ ≡ a १० रिण = | ९। आउ
९ ९ ४ प a |

≡ a १० १० रिण = | तेउ ≡ a रिण ८ | वाउ ≡ a १० १० १० रिण ≡ | पुणो पुढविकायादीणं
९ ९ ९ ४ प a | ९ a | ९ ९ ९ ९ ७) |

सुहुमरासिपत्तेयं तप्पाउग्गस्स संखेज्जरूवेहिं खंडिदे बहुभागा सुहुमपज्जत्तजीवरासिपमाणं होदि । पुढवि
≡ a १० ८ ४ | आउ ≡ a १० १० ८ ४ | तेउ ≡ a ८ ४ | वाउ ≡ a १० १० १० ८ ४ |
९ ९ ९ ५ | ९ ९ ९ ५ | ९ ५ | ९ ९ ९ ९ ५ |

तत्थेगभागं सगसगसुहुमपज्जत्तरासिपरिमाणं होदि । पुढवि ≡ a १० ८ | आउ ≡ a १० १० ८ |
९ ९ ५ | ९ ९ ९ ५ |

तेउ ≡ a ८ | वाउ ≡ a १० १० १० ८ | पुणो सव्वजीवरासीदो सव्वतसरासिसमकाइय-पुढविकाइय-
९ ५ | ९ ९ ९ ९ ५ |

आउकाइय-तेउकाइय-वाउकाइयजीवरासिपमाणमवणिदे अवसेसं सामण्णवणप्फदिकाइयजीवरासिपरिमाणं

शेष अपनी अपनी बादर अपर्याप्त राशिका प्रमाण होता है (संदृष्टि मूलमें देखिये) । पुनः पृथिवीकायिकादि जीवोंकी प्रत्येक सूक्ष्म राशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करनेपर बहुभागरूप सूक्ष्म पर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है और इसमेंसे एक भागरूप अपनी अपनी सूक्ष्म अपर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है (संदृष्टियां मूलमें देखिये) । पुनः सब जीवराशिमेंसे सम्पूर्ण त्रसकायिक, पृथिवीकायिक, जलकायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवोंके राशि-प्रमाणको घटा देनेपर शेष सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशिका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशि = सर्व जीवराशि – (सर्व त्रसराशि + सर्व तेजस्काय राशि + सर्व पृथ्वीकाय राशि + सर्व जलकाय राशि + सर्व वायुकाय राशि).

$$= \text{सर्व जीवराशि} - \left[\underset{\text{त्रस}}{\left\{ = \div \left(४ \div \frac{२}{a} \right) \right\}} + \underset{\text{तेज}}{\left(\equiv a \right)} + \underset{\text{पृथिवी}}{\left(\equiv a \frac{१०}{९} \right)} + \underset{\text{जल}}{\left(\equiv a \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)} + \underset{\text{वायु}}{\left(\equiv a \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \frac{१०}{९} \right)} \right]$$

$$= (\text{स. जी. रा.}) - \left[\left(\frac{= २}{४\ a} \right) + \left(\equiv a\ ४\frac{५२३}{७२९} \right) \right]$$

होदि [सव्वजीवरासी रिण $\overline{\underset{४}{\equiv}}$ रिण $\overline{\underset{२}{\equiv}}$ a । $\overline{\underset{४}{\equiv}}$]। तम्हि असंखेज्जलोगपरिमाणमवणिदे सेसं साधारणवणप्फदिकाइयजीवपरिमाणं होदि । १३ $\overline{\equiv}$ । तं तप्पाउग्गअसंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थ एगभागो साहारणबादरजीवपरिमाणं होदि । १३ $\overline{\underset{९}{\equiv}}$ । सेसबहुभागा साधारणसुहुमरासिपरिमाणं होदि । १३ $\overline{\underset{९}{\equiv}}$ ८ । पुणो साधारणबादररासिं तप्पाउग्गअसंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थेगभागं साधारणबादरपज्जत्तपरिमाणं होदि १३ $\overline{\underset{९}{\equiv}}$ १ । सेसबहुभागा साधारणबादरअपज्जत्तरासिपरिमाणं

इसमेंसे असंख्यात लोकप्रमाणको घटानेपर शेष साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— साधारण वनस्पतिकायिक जीवराशि = सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशि– असंख्यात लोकप्रमाण (प्रत्येक वनस्पति जीवराशि) = (स. जी. रा.) – $\left[\overline{\left(\frac{\overline{=}\,२}{४\;a}\right)} + \left(\equiv a^{४}_{७२९}\right)\right] - \left(\equiv a \overline{\equiv} a\right) = (१३ \overline{=})$.

इसे अपने योग्य असंख्यात लोकसे खण्डित करने पर उसमेंसे एक भाग साधारण बादर जीवोंका प्रमाण होता है, और शेष बहुभाग साधारण सूक्ष्म जीवराशिका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— साधारण बादर वनस्पति (निगोद) कायिक जीवराशि

$$= \frac{\text{साधारण वनस्पति कायिक जीवराशि}}{\text{असंख्यात लोक}} = \left(\frac{१३ \overline{\equiv}}{९}\right)$$

साधारण सूक्ष्म वनस्पति (निगोद) कायिक जीवराशि

$$= \frac{\text{साधारण व. का. जी. राशि}}{\text{असंख्यात लोक}} \times \frac{\text{अ. लो.} - १}{१} = \left(१३ \overline{\equiv} \frac{८}{९}\right)$$

पुनः साधारण बादर राशिको अपने योग्य असंख्यात लोकसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक भाग साधारण बादर पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है, और शेष बहुभाग साधारण बादर अपर्याप्त जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है।

होदि १३ ≡ ६ । पुणो साधारणसुहुमरासिं तप्पाओग्गसंखेज्जरूवेहि खंडिय तत्थ बहुभागं साधारण-
९ ७

सुहुमपज्जत्तपरिमाणं होदि १३ ≡ ८ ४ । सेसेगभागं साधारणसुहुमअपज्जत्तरासिपमाणं होदि १३ ≡ ८ ।
९ ५ ९ ५

पुणो पुव्वमवणिदअसंखेज्जलोगपरिमाणरासी पत्तेयसरीरवणप्फदिजीवपरिमाणं होदि ≡ a ≡ a ।
तप्पत्तेयसरीरवणप्फई दुविहा बादरणिगोदपदिट्ठिद-अपदिट्ठिदभेदेण । तत्थ अपदिट्ठिदपत्तेयसरीरवणप्फई असंखेज्जलोगपरिमाणं होइ ≡ a । तम्मि असंखेज्जलोगेण गुणिदे बादरणिगोदपदिट्ठिदरासिपरिमाणं होदि

उदाहरण– साधारण बादर पर्याप्त वनस्पतिका. जी. रा. = $\frac{\text{साधारण बा. व. का. जीवराशि}}{\text{असंख्यात}}$

$$= \left(\begin{matrix} १३ \equiv १ \\ ९ \quad ७ \end{matrix} \right)$$

साधारण बादर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवराशि

$$= \frac{\text{सा. बा. व. का. जीवराशि}}{\text{असंख्यात}} \times \frac{\text{अ} - १}{१} = \left(\begin{matrix} १३ \equiv ६ \\ ९ \quad ७ \end{matrix} \right)$$

पुनः साधारण सूक्ष्म राशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करनेपर उसमेंसे बहुभाग साधारण सूक्ष्म पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है, और शेष एक भाग साधारण सूक्ष्म अपर्याप्त जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— साधारण सूक्ष्म वनस्पतिकायिक पर्याप्त जीवराशि

$$= \frac{\text{साधारण सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव राशि}}{\text{संख्यात}} \times \frac{\text{संख्यात} - १}{१} = \left(\begin{matrix} १३ \equiv ८ \quad ४ \\ ९ \quad ५ \end{matrix} \right)$$

साधारण सूक्ष्म वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवराशि

$$= \frac{\text{सा. सू. व. जीवराशि}}{\text{संख्यात}} = \left(\begin{matrix} १३ \equiv ८ \quad १ \\ ९ \quad ५ \end{matrix} \right)$$

पुनः पूर्वमें घटाई गई असंख्यात लोकप्रमाण राशि प्रत्येकशरीर वनस्पति जीवोंका प्रमाण होता है । बादर निगोद जीवोंसे प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित होनेके कारण वे प्रत्येकशरीर वनस्पति जीव दो प्रकार हैं । इनमेंसे अप्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पति जीव असंख्यात लोकप्रमाण हैं । इस अप्रतिष्ठित प्रत्येकवनस्पति जीवराशिको असंख्यात लोकोंसे गुणा करनेपर बादर-निगोद प्रतिष्ठित जीवराशिका प्रमाण होता है ।

$\equiv a \equiv a$ । ते दो वि रासी पज्जत्त-अपज्जत्तभेदेण दुविहा होंति । पुणो पुव्वुत्तबादरपुढविपज्जत्तरासि-मावलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदे बादरणिगोदपदिट्ठिदपज्जत्तरासिपरिमाणं होदि $= \frac{\text{पृ ९ ९}}{\text{प a}}$ । तं आवलि-याए असंखेज्जदिभागेण भागे हिदे बादरणिगोदअपदिट्ठिदपज्जत्तरासिपरिमाणं होदि $= \frac{\text{पृ ९ ९ ९}}{\text{प a}}$ । सग-सगपज्जत्तरासिं सगसगसामण्णरासिम्मि अवणिदे सगसगअपज्जत्तरासिपरिमाणं होदि । बादरणिगोद-

उदाहरण— प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक जीवराशि = असंख्यात लोकप्रमाण

$= (\equiv a \; \bar{\equiv} \; \bar{a})$

अप्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक जीवराशि

= असंख्यात लोकप्रमाण = $\equiv a$ ।

सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवराशि = असंख्यात लोकप्रमाण अप्रति-ष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक जीवराशि = $(\equiv a \equiv a)$.

ये दोनों ही राशियां पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे दो प्रकार हैं । पुनः पूर्वोक्त बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीवराशिको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर बादर-निगोद-प्रतिष्ठित पर्याप्त जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— बादर-निगोद-प्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक पर्याप्त जीवराशि

$= \text{पृ. का. बा. पर्याप्त जीवराशि} \div \frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}} = \left(\frac{= \text{प ९}}{\text{४ a}} \div \frac{१}{९} \right) = \left(\frac{= \text{प ९}}{\text{४ a}} \frac{९}{१} \right)$

इसमें आवलीके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना बादर-निगोद-अप्रतिष्ठित पर्याप्त जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है ।

उदाहरण— बादर-निगोद-अप्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक पर्याप्त जीवराशि

$= \text{बा. नि. प्र. प्र. श. व. कायिक पर्याप्त जीवराशि} \div \frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$

$= \left(\frac{= \text{प ९}}{\text{४ a}} \frac{९}{१} \div \frac{१}{९} \right) = \left(\frac{= \text{प ९}}{\text{४ a}} \frac{९}{१} \frac{९}{१} \right)$

अपनी अपनी सामान्यराशिमेंसे अपनी अपनी पर्याप्त राशिको घटा देनेपर शेष अपनी अपनी अपर्याप्त राशिका प्रमाण होता है ।

पदिट्ठिद ≡ a ≡ a रिण = । बादरणिगोदअपदिट्ठिद ≡ a रिण = ।
४ ९ ९ ४ ९ ९ ९
प प
a a

पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागेण पदरंगुलमवहारिय लद्धेण जगपदरे भागं घेत्तूण लद्धं = ।
४
५
७

तं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडियाणेगखंडं पुधं ठविय सेसबहुभागे घेत्तूण चत्तारि समपुंजं कादूण पुधं ठवेयव्वं[1] । पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागे विरलिदूण अवणिदएगखंडं समखंडं करिय दिण्णे तत्थ बहुखंडे पढमपुंजे पक्खित्ते[2] बेइंदिया होंति । पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण दिण्णसेससमखंडं करिय दादूण तत्थ बहुभागे बिदियपुंजे पक्खित्ते तेइंदिया होंति । पुव्वविरलणादो[3] संपहि विरलणा किं सरिसा किं साधिया किं ऊणेत्ति पुच्छिदे णत्थि एत्थ उवएसो । पुणो तप्पाउग्ग-

उदाहरण— बादर निगोद अप्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवराशि
= अप्र. प्र. श. व. कायिक जीवराशि – अप्र. प्र. श. व. कायिक पर्याप्त जीवराशि

$$= (\equiv a) - \left(\frac{= प\ ९}{४\ a} \frac{९}{१} \frac{९}{१} \right)$$

बादर-निगोद-प्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वनस्पतिकायिक अपर्याप्त जीवराशि
= सप्र. प्र. श. व. कायिक जीवराशि – सप्र. प्र. श. व. कायिक पर्याप्त जीवराशि

$$= (\equiv a \equiv a) - \left(\frac{= प\ ९}{४\ a} \frac{९}{१} \right)$$

पुनः आवलीके असंख्यातवें भागसे भाजित प्रतरांगुलका जगप्रतरमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे आवलीके असंख्यातवें भागसे खंडित कर एक भागको पृथक् स्थापित करके और शेष बहुभागको ग्रहण करके उसके चार समान पुंज करके पृथक् स्थापित करना चाहिये । पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलन करके अपनीत एक खण्डके समान खण्ड कर देनेपर उसमेंसे बहुभागको प्रथम पुंजमें मिला देनेपर दोइन्द्रिय जीवोंका प्रमाण होता है । पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलन करके देनेसे अवशिष्ट रही राशिके समान खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको द्वितीय पुंजमें मिलानेसे तीनइन्द्रिय जीवोंका प्रमाण होता है । इस समयका विरलन पूर्व विरलनसे क्या सदृश है, क्या साधिक है, किं वा न्यून है, इस प्रकार पूछनेपर यही उत्तर है कि इसका उपदेश नहीं है । पुनः तत्प्रायोग्य आवलीके असंख्यातवें भागका विरलन

१ द ब ट्ठवेयंतये. २ द ब पक्खेते. ३ द ब °विरलणाउ.

आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेसखंडं समखंडं करिय दिण्णे तत्थ बहुखंडे तदियपुंजे पक्खित्ते चउरिंदिया होंति । सेसेगखंडं चउत्थपुंजे पक्खित्ते पंचेंदियमिच्छाइट्ठी होंति । तस्स ट्ठवणा परिमाणा वि

बी = ८४२४ । ४।४।६५६१ । २ a	ती = ६१२० । ४।४।६५६१ । २ a	च = ५८६४ । ४।४।६५६१ । २ a	प = ५८३६ । ४।४।६५६१ । २ a

पुणो पदरंगुलस्स संखेज्जदिभागेण जगपदरे[1] भागं घेत्तूण जं लद्धं तं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिऊणेगखंडं पुधं ठवेदूण सेसबहुभागं घेत्तूण चत्तारि सरिसपुंजे कादूण ट्ठवेयव्वं[2] । पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण अवणिदएयखंडं समखंडं करिय दिण्णे[3] तत्थ बहुखंडे पढमपुंजे पक्खित्ते तेइंदियपज्जत्ता होंति । पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेसएयखंडं समखंडं कादूण दिण्णे तत्थ बहुखंडा बिदियपुंजे पक्खित्ते बेइंदियपज्जत्ता होंति । पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेसएयखंडं समखंडं कादूण दिण्णे तत्थ बहुभागं तदियपुंजे पक्खित्ते पंचेंदियपज्जत्ता होंति पुणो सेसेगभागं

कर शेष खण्डके समान खण्ड करके देनेपर उनमेंसे बहुभागको तृतीय पुंजमें मिला देनेसे चारइन्द्रिय जीवोंका प्रमाण होता है । शेष एक खण्डको चौथे पुंजमें मिलानेपर पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंका प्रमाण होता है । (उनकी स्थापना व प्रमाण मूलमें तथा गो. जी गाथा १७९ की टीकामें देखिये) ।

पुनः प्रतरांगुलके संख्यातवें भागसे भाजित जगप्रतरको ग्रहण करके अर्थात् जगप्रतरमें प्रतरांगुलके संख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर एक भागको पृथक् स्थापित करके शेष बहुभागके चार सदृश पुंज करके स्थापित करना चाहिये । पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलन करके अलग स्थापित किये हुए एक खण्डके समान खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको प्रथम पुंजमें मिला देनेसे तीनइन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है । पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर शेष एक भागके समान खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको द्वितीय पुंजमे मिला देनेसे दोइन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है । पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर शेष खण्डके समान खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको तीसरे पुंजमें मिला देनेसे पंचेन्द्रिय पर्याप्त

१ द ज जगपदर°, ब अगपदरं. २ द ब ट्ठवेयं वा. ३ द ब दिण्णो.

चउत्थपुंजे पक्खित्ते चउरिंदियपज्जत्ता होंति । तस्स ट्ठवणा

ती = ८४२४ ४।४।६५६१ ५	वि = ६१२० ४।४।६५६१ ५

पं = ५८६४ ४।४।६५६१ ५	च = ५८३६ ४।४।६५६१ ५

पुणो दुक्कुत्तबीइंदियादिसामण्णरासिम्मि सगसगपज्जत्त-

रासिमवणिदे सगसगअपज्जत्तरासिपमाणं होदि । तं चेदं

वि ५।६१२० । =८४२४ । a । ४।४।६५६१ ।	ती ५ । ८४२४ । = ६१२० । a । ४।४।६५६१ ।

च ५ । ५८३६ । = ५८६४ । a । ४।४।६५६१ ।	पं ५ । ५८६४ । = ५८३६ । a । ४।४।६५६१ ।

पुणो पंचेंदियपज्जत्तरासीणं मज्झे देव-णेरइय-मणुयरासि-

देवरासिसंखेज्जदिभागभूदतिरिक्खसण्णिरासिमवणिदे अवसेसा तिरिक्खअसण्णिपज्जत्ता होंति । तं

चेदं पज्जत्त = ५८६४ रिण रा. = ४ । ४ । ६५६१ / ५ − २ मू. | १ । ३ मू. | = ४ । ६५५३६ । ५ | पुणो

पुव्वं अवणिदतिरिक्खसण्णिरासीणं तप्पाउग्गसंखेज्जरूवेहि खंडिदे तत्थ बहुभागा तिरिक्खसण्णिपंचेंदिय-

जीवोंका प्रमाण होता है । पुनः शेष एक भागको चौथे पुंजमें मिलादेनेपर चारइन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है । (इनकी स्थापना मूलमें तथा गो. जी. गाथा १८० की टीकामें देखिये) ।

पुनः पूर्वोक्त दोइन्द्रियादि सामान्य राशिमेंसे अपनी अपनी पर्याप्त राशिको घटा देनेपर शेष अपनी अपनी अपर्याप्त राशिका प्रमाण होता है । (स्थापना मूलमें देखिये) ।

पुनः पंचेन्द्रिय पर्याप्त राशियोंके बीचमेंसे देव, नारकी, मनुष्य तथा देवराशिके संख्यातवें भागप्रमाण तिर्यंच संज्ञी जीवोंकी राशिको घटा देनेपर शेष तिर्यंच असंज्ञी पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है । पुनः पूर्वमें अपनीत तिर्यंच संज्ञी राशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करनेपर उसमेंसे बहुभाग तिर्यंच संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवराशि होती है और

१ द ब पुव्वत्तर. २ द मणुसरासिदेवरासिं च. ३ द अवसेसं, ब अवसेमे.

पज्जत्तरासी होदि, सेसेगभागं सण्णिपंचेंदियअपज्जत्तरासिपमाणं होदि। तं चेदं $\frac{=}{४}$। ६५५३६। ५। ५।

$\frac{=}{४}$। ६५५३६। ५। ५।

। एवं संखापरूवणा सम्मत्ता ।

सुद्धखरभूजलाणं बारस बावीस सत्त य सहस्सा। तेउतिए दिवसतियं वरिसं तिसहस्स दस य जेट्ठाऊ ॥ २८१

१२००० । २२००० । ७००० । दि ३ । व ३००० । व १०००० ।

वासदिणमासबारसमुगुवण्णछक्क वियलजेट्ठाऊ । णवपुव्वंगपमाणं उक्कस्साऊ सरिसवाणं ॥ २८२

व १२ । दि ४९ । मा ६ । पुव्वंग ९ ।

बाहत्तरि बादालं बाससहस्साणि पक्खिउरगाणं । अवसेसतिरियाणं उक्कस्सं पुव्वकोडीओ ॥ २८३

७२००० । ४२००० । पुव्वकोडि १ ।

शेष एक भाग संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीव राशिका प्रमाण होता है । (स्थापना मूलमें देखिये) ।

इस प्रकार संख्याप्ररूपणा समाप्त हुई ।

शुद्ध पृथिवीकी उत्कृष्ट आयु बारह हजार वर्ष, खर पृथिवीकी बाईस हजार वर्ष, जलकी सात हजार वर्ष, तेजस्कायकी तीन दिन, वायुकायकी तीन हजार वर्ष, और वनस्पतिकायकी दश हजार वर्ष प्रमाण है ॥ २८१ ॥

शुद्ध पृथिवी वर्ष १२०००, ख. पृ. २२००० । जल ७००० । तेज. दिन ३ । वायु. ३००० वर्ष । वन. १०००० ।

विकलेन्द्रियोंमें दोइन्द्रियोंकी उत्कृष्ट आयु बारह वर्ष, तीनइन्द्रियोंकी उनंचास दिन, और चारइन्द्रियोंकी छह मासप्रमाण है । पंचेन्द्रियोंमें सरिसृपोंकी उत्कृष्ट आयु नौ पूर्वांगप्रमाण होती है ॥ २८२ ॥ वर्ष १२ । दिन ४९ । मास ६ । पूर्वांग ९ ।

पक्षियोंकी उत्कृष्ट आयु बहत्तर हजार वर्ष और सर्पोंकी ब्यालीस हजार वर्षप्रमाण होती है । शेष तिर्यंचोंकी उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटिप्रमाण है ॥ २८३ ॥

वर्ष ७२०००० । ४२००० । पूर्वकोटि १ ।

१ द ब सरिपाणं.

एदे उक्कस्साऊ पुव्वावरविदेहजादतिरियाणं । कम्मावणिपडिबद्धे बाहिरभागे सयंपहगिरीदो[1] ॥ २८४
तत्थेव सव्वकालं केई जीवाण भरहे एरवदे । तुरिमस्स पढमभागे एदेणं होदि उक्कस्सं ॥ २८५
उस्सासस्सट्ठारसभागं एइंदिए जहण्णाऊ । वियलसयलिंदियाणं तत्तो संखेज्जसंगुणिदं ॥ २८६
वरमज्झिमवरभोगजतिरियाणं तियदुगेक्कपल्लाऊ । अवरे वरम्मि तत्तियमविणस्सरभोगभूवाणं ॥ २८७

प ३ । प २ । प १ ।

समयजुदपुव्वकोडी जहण्णभोगजजहण्णयं आऊ । उक्कस्समेगपल्लं मज्झिमभेयं अणेयविहं ॥ २८८
समयजुदपल्लमेक्कं जहण्णयं मज्झिमम्मि अवराऊ । उक्कस्सं दोपल्लं मज्झिमभेयं अणेयविहं ॥ २८९
समयजुददोण्णिपल्लं जहण्णयं तिण्णिपल्लमुक्कस्सं । उक्कस्सियभोयभुए मज्झिमभेयं अणेयविहं ॥ २९०

। आऊ समत्ता ।

उपर्युक्त उत्कृष्ट आयु पूर्वापर विदेहोंमें उत्पन्न हुए तिर्यंचोंके तथा स्वयंप्रभ पर्वतके बाह्य कर्मभूमि भागमें उत्पन्न हुए तिर्यंचोंके ही सर्व काल पायी जाती है। भरत और ऐरावत क्षेत्रके भीतर चतुर्थ कालके प्रथम भागमें भी किन्हीं तिर्यंचोंके उक्त उत्कृष्ट आयु पायी जाती है ॥ २८४-२८५ ॥

एकेन्द्रियकी जघन्य आयु उच्छ्वासके अठारहवें भागप्रमाण और विकलेन्द्रिय एवं सकलेन्द्रिय जीवोंकी क्रमशः इससे उत्तरोत्तर संख्यातगुणी है ॥ २८६ ॥

उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य भोगभूमिज तिर्यंचोंकी आयु क्रमसे तीन, दो और एक पल्यप्रमाण है। अविनश्वर भोगभूमियोंमें जघन्य व उत्कृष्ट आयु उक्त तीन प्रकार ही है ॥२८७॥

प. ३ । प. २ । प. १ ।

जघन्य भोगभूमिजोंकी जघन्य आयु एक समय अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट एक पल्यप्रमाण है। मध्यम आयुके भेद अनेक प्रकार है ॥ २८८ ॥

मध्यम भोगभूमिमें जघन्य आयु एक समय अधिक एक पल्य और उत्कृष्ट दो पल्यप्रमाण है। मध्यम आयु अनेक प्रकार है ॥ २८९ ॥

उत्कृष्ट भोगभूमिमें जघन्य आयु एक समय अधिक दो पल्य और उत्कृष्ट तीन पल्य प्रमाण है। मध्यम आयुके अनेक भेद हैं ॥ २९० ॥

आयुका वर्णन समाप्त हुआ।

१ ब जदि. २ ब गिरिंदो.

आउबंधणकाले[1] भूभेदट्ठीउरब्भयसिंगा[2] । चक्कमलो व्व कसाया छल्लेस्सामज्झिमंसेहिं ॥ २९१
के जुत्ता णरतिरिया सगसगजोगेहिं लेस्ससंजुत्ता । णारइदेवा केई णियजोगतिरिक्खमाउ बंधंति ॥ २९२
। आउगबंधणभावा सम्मत्ता ।

उप्पत्ती तिरियाणं गब्भजसम्मुच्छिमो त्ति पत्तेक्कं । सच्चित्तसीदसंवदसेदरमिस्सा य जहजोग्गं ॥ २९३
गब्भुब्भवजीवाणं मिस्सं सच्चित्तणामधेयस्स । सीदं उण्हं मिस्सं संवदजोणिम्मि मिस्सा य ॥ २९४
संमुच्छिमजीवाणं सच्चित्ताचित्तमिस्ससीदुसिणा । मिस्सं संवदविवुदं णवजोणीओ हु सामण्णा ॥ २९५
पुढवीआदिचउक्के णिच्चिदरे सत्तलक्ख पत्तेक्कं । दस लक्खा रुक्खाणं छल्लक्खा वियलजीवाणं ॥ २९६
पंचक्खे चउलक्खा एवं बासट्ठिलक्खपरिमाणं । णाणाविहतिरियाणं होंति हु जोणी विसेसेणं ॥ २९७
। एवं जोणी सम्मत्ता ।

आयुके बन्धकालमें भूरेखा, हड्डी, मेढ़के सींग और पहियेके मल (ओंगन) के सदृश क्रोधादि कषायोंसे संयुक्त जो मनुष्य और तिर्यंच जीव अपने अपने योग्य छह लेश्याओंके मध्यम अंशोंसे सहित होते हैं तथा अपने अपने योग्य लेश्याओंसे सहित कोई कोई नारकी व देव भी अपने योग्य तिर्यंच आयुका बन्ध करते हैं ॥ २९१-२९२ ॥

आयुबन्धक भावोंका कथन समाप्त हुआ ।

तिर्यंचोंकी उत्पत्ति गर्भ और सम्मूर्छन जन्मसे होती है । इनमेंसे प्रत्येक जन्मकी सचित्त, शीत, संवृत तथा इनसे विपरीत अचित्त, उष्ण, विवृत और मिश्र (सचित्ताचित्त, शीतोष्ण और संवृतविवृत), ये यथायोग्य योनियां होती हैं ॥ २९३ ॥

गर्भसे उत्पन्न होनेवाले जीवोंके सचित्त नामक योनिमेंसे मिश्र (सचित्ताचित्त), शीत, उष्ण, मिश्र (शीतोष्ण) और संवृत योनिमेंसे मिश्र (संवृत-विवृत) योनि होती है ॥२९४॥

सम्मूर्छन जीवोंके सचित्त, अचित्त, मिश्र, शीत, उष्ण, मिश्र, संवृत, विवृत और संवृत-विवृत, ये साधारण रूपसे नौ ही योनियां होती हैं ॥ २९५ ॥

पृथिवी आदिक चार तथा नित्य व इतर निगोद इनमेंसे प्रत्येकके सात लाख, वृक्षोंके दश लाख, विकल जीवोंके छह लाख, और पंचेन्द्रियोंके चार लाख, इस प्रकार विशेष रूपसे नाना प्रकारके तिर्यंचोंके ये बासठ लाख प्रमाण योनियां होती है ॥ २९६-२९७ ॥

इस प्रकार योनियोंका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब काळो. २ द ब भूमेदट्ठीउग्गब्भयसिंगा. ३ द ब गब्भुब्भव. ४ द ब आउ.

सव्वे भोगभुवाणं संकप्पवसेण होइ सुहमेक्कं । कम्मावणितिरियाणं सोक्खं दुक्खं च संकप्पो ॥ २९८

। सुहदुक्खं समत्तं ।

तेत्तीसभेदसंजुदतिरिक्खजीवाण सव्वकालम्मि । मिच्छत्तगुणट्ठाणं वोच्छं सण्णीण तं माणं ॥ २९९
पणपणअज्जाखंडे भरहेरावदखिदिम्मि मिच्छत्तं । अवरे वरम्मि पण गुणठाणाणि कयाइ दीसंति ॥ ३००
पंचविदेहे सट्ठिसमण्णिदसदअज्जखंडए तत्तो । विज्जाहरसेढीए बाहिरभागे सयंपहगिरीदो ॥ ३०१
सासणमिस्सविहीणा तिगुणट्ठाणाणि थोवकालम्मि । अवरे वरम्मि पण गुणठाणाइ कयाइ दीसंति ॥ ३०२
सव्वेसु वि भोगभुवे दो गुणठाणाणि थोवकालम्मि । दीसंति चउवियप्पं सव्वमिलिच्छम्मि मिच्छत्तं ॥३०३
पज्जत्तापज्जत्ता जीवसमासाणि सयलजीवाणं । पज्जत्तिअपज्जत्ती पाणाणं होंति णिस्सेसा ॥ ३०४

सब भोगभूमिज तिर्यंचोंके संकल्पवशसे केवल एक सुख ही होता है, और कर्मभूमिज तिर्यंचोंके सुख व दुख दोनोंकी कल्पना होती है ॥ २९८ ॥

सुख-दुखका वर्णन समाप्त हुआ ।

संज्ञी जीवोंको छोड़ शेष तेतीस प्रकारके भेदोंसे युक्त तिर्यंच जीवोंके सब कालमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान रहता है । संज्ञी जीवोंके गुणस्थानप्रमाणको कहते हैं ॥ २९९ ॥

भरत और ऐरावत क्षेत्रके भीतर पांच पांच आर्यखण्डोंमें जघन्य रूपसे एक मिथ्यात्व गुणस्थान और उत्कृष्ट रूपसे कदाचित् पांच गुणस्थान भी देखे जाते हैं ॥ ३०० ॥

पांच विदेहोंके भीतर एकसौ साठ आर्यखण्डोंमें, विद्याधरश्रेणियोंमें और स्वयंप्रभ पर्वतके बाह्य भागमें सासादन एवं मिश्र गुणस्थानको छोड़ तीन गुणस्थान जघन्यरूपसे स्तोक कालके लिये होते हैं । उत्कृष्टरूपसे पांच गुणस्थान भी कदाचित् देखे जाते हैं ॥ ३०१–३०२ ॥

सर्व भोगभूमियोंमें दो गुणस्थान और स्तोक कालके लिये चार गुणस्थान देखे जाते हैं । सब म्लेच्छखण्डोंमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है ॥ ३०३ ॥

सम्पूर्ण जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों जीवसमास, पर्याप्ति और अपर्याप्ति तथा सब ही प्राण होते हैं ॥ ३०४ ॥

---

१ द सम्मे°.

चउसण्णा तिरियगदी सयलाओ इंदियाओ छक्काया । एक्कारस जोगा तियवेदा कोहादियकसाया ॥३०५
छण्णाणा दो संजम तियदंसण दव्व-भावदो लेस्सा । छच्चेव य भवियदुगं छस्सम्मत्तेहिं संजुत्ता ॥ ३०६
सण्णिअसण्णी होंति हु ते आहारा तहा अणाहारा । णाणोवजोगदंसणउवजोगजुदाणि ते सव्वे ॥ ३०७

। एवं गुणठाणा सम्मत्ता ।

केइ पडिबोहणेण य केइ सहावेण तासु भूमीसुं । दट्ठूणं सुहदुक्खं केइ तिरिक्खा बहुपयारा ॥ ३०८
जाइभरणेण केई केइ जिणिंदस्स महिमदंसणदो । जिणबिंबदंसणेण य पढमुवसमं[2] वेदगं च गेण्हंति ३०९

। सम्मत्तगहणं गदं ।

पुढविप्पहुदिवणप्फदिअंतं विगला य कम्मणरतिरिए । ण लहंति तेउवाउ मणुवाउ अणंतरे जम्मे ॥ ३१०
बत्तीसभेदतिरिया ण होंति कइयाइ[3] भोगसुरणिरए । सेढिघणमेत्तलोए सव्वे पक्खेसु जायंति ॥ ३११

---

१ ब सम्म. २ द ब पदमुवसमे. ३ द किरियाइ.

सब तिर्यंच जीवोंके चारों संज्ञायें, तिर्यंचगति, समस्त इन्द्रियां, छहों काय, ग्यारह योग (वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक और आहारकमिश्रको छोड़), तीनों वेद, क्रोधादिक चारों कषायें, छह ज्ञान (३ ज्ञान और ३ अज्ञान), दो संयम (असंयम व देशसंयम), केवलदर्शनको छोड़ शेष तीन दर्शन, द्रव्य व भाव रूपसे छहों लेश्यायें, भव्यत्व-अभव्यत्व और छहों सम्यक्त्व होते हैं। ये सब तिर्यंच संज्ञी व असंज्ञी, आहारक व अनाहारक, तथा ज्ञान व दर्शन रूप दोनों उपयोगोंसे सहित होते हैं ॥ ३०५-३०७ ॥

इस प्रकार गुणस्थानादिका वर्णन समाप्त हुआ।

उन भूमियोंमें कितने ही तिर्यंच जीव प्रतिबोधसे और कितने ही स्वभावसे भी प्रथमोपशम एवं वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत प्रकारके तिर्यंचोंमेंसे कितने ही सुख-दुखको देखकर, कितने ही जातिस्मरणसे, कितने ही जिनेन्द्रमहिमाके दर्शनसे, और कितने ही जिनबिम्बके दर्शनसे प्रथमोपशम व वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥ ३०८-३०९ ॥

इस प्रकार सम्यक्त्वग्रहणका कथन समाप्त हुआ।

पृथिवीको आदि लेकर वनस्पतिपर्यन्त स्थावर और विकलेन्द्रिय जीव कर्मभूमिज मनुष्य व तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं। परन्तु विशेष इतना है कि तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव अनन्तर जन्ममें मनुष्यायुको नहीं पाते हैं ॥ ३१० ॥

संज्ञी पर्याप्त और अपर्याप्तको छोड़ शेष बत्तीस प्रकारके तिर्यंच जीव भोगभूमिज, देव और नारकियोंमें कदापि उत्पन्न नहीं होते। शेष जीव श्रेणीके घनप्रमाण लोकमें ये सब कहीं भी उत्पन्न होते हैं ॥ ३११ ॥

पढमधरंतमसण्णी भवणतिए सयलकम्मणरतिरिए । मेघिघणमेत्तलोए सव्वे पक्खेसु जायंति ॥ ३१२

संखेज्जाउवसण्णी सदरसहस्सारगो त्ति जायंति । णरतिरिए णिरएसु वि संखातीदाउ जाव ईसाणं ॥ ३१३

चोत्तीसभेदसंजुदतिरिया हु अणंतरम्मि जम्मम्मि । ण हुंति सलागणरा भयणिज्जा णिव्वुदिपवेसे[1] ॥ ३१४

। एवं संकमं गदं ।

एत्तो चोत्तीसपदमप्पाबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा— सव्वत्थोवा तेउक्काइयबादरपज्जत्ता ८ | ८ |

पंचेंदियतिरिक्खसण्णिअपज्जत्ता असंखेज्जगुणा । ४ | ६५५३६ | ५ | ५ । सण्णिपज्जत्ता संखेज्जगुणा ।

४ | ६५५३६ | ५ | ५ । चउरिंदियपज्जत्ता संखेज्जगुणा = ५८३६ । पंचेंदियतिरिक्खा असण्णिपज्जत्ता
४ | ४ | ६५६१
५

विसेसाहिया = ५८६४ रिण रा. = ४ | ४ | ६५६१ | ५ | - २ मू. | १ | ३ मू. | = ४ | ६५५३६ | ५ |

असंज्ञी जीव प्रथम पृथिवीके नारकी, भवनत्रिक (भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिष्क) और समस्त कर्मभूमिके मनुष्य व तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते है । ये सब श्रेणीके घनप्रमाण लोकमें कहीं भी पैदा होते हैं ॥ ३१२ ॥

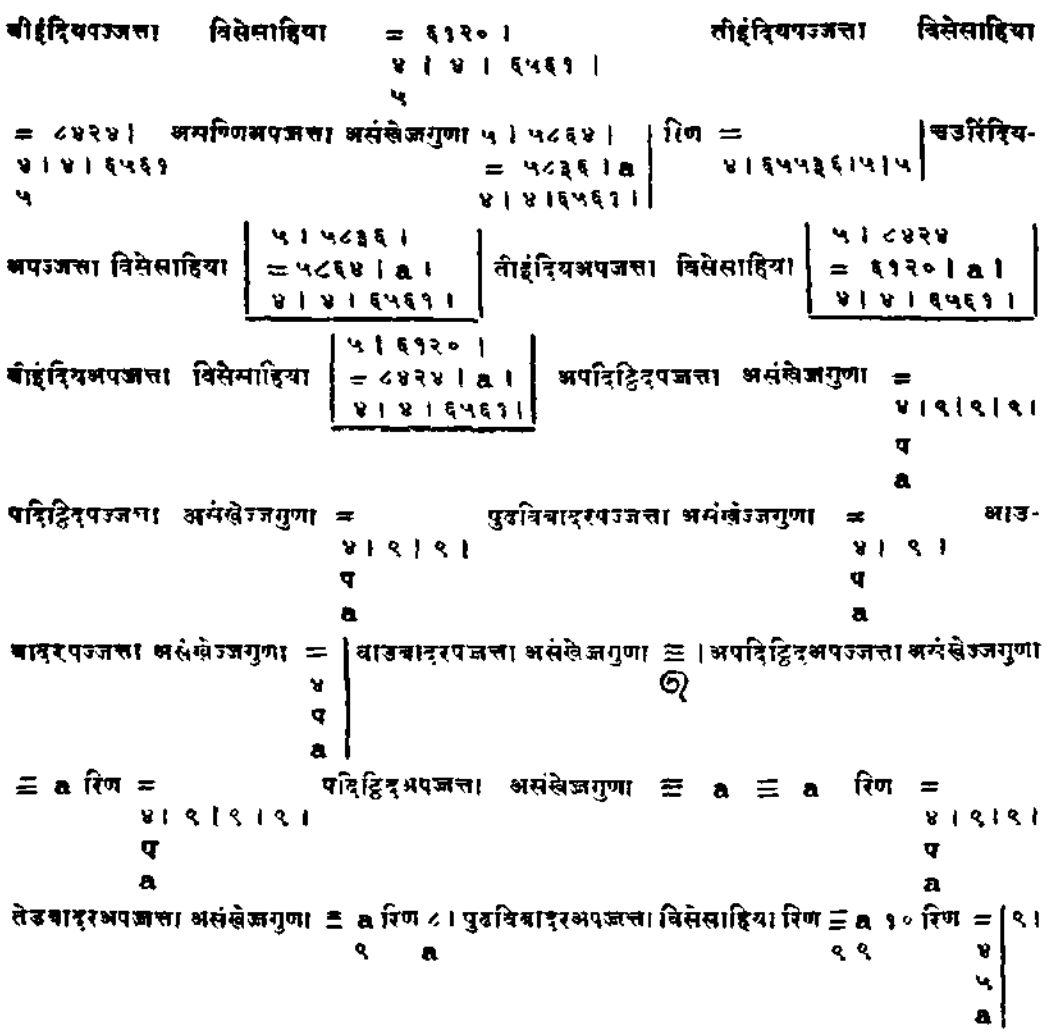
संख्यात वर्षकी आयुवाले संज्ञी जीव शतार-सहस्रार स्वर्ग तकके देव, मनुष्य, तिर्यंच और नारकियोंमें भी उत्पन्न होते हैं । परन्तु असंख्यात वर्षकी आयुवाले संज्ञी जीव ईशान कल्प तक देवोंमें ही उत्पन्न होते है ॥ ३१३ ॥

उपर्युक्त चौंतीस भेदोंसे संयुक्त तिर्यंच जीव निश्चय ही अनन्तर जन्ममें शलाकापुरुष नहीं होते । परन्तु मुक्तिप्रवेशमें ये भजनीय है, अर्थात् अनन्तर जन्ममें ये कदाचित् मुक्तिको भी प्राप्त कर सकते हैं ॥ ३१४ ॥

इस प्रकार संक्रमका कथन समाप्त हुआ ।

अब यहांसे आगे चौंतीस प्रकारके तिर्यंचोंमें अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इस प्रकार है— (१) बादर तेजस्कायिक पर्याप्त जीव सबसे थोड़े हैं । (२) इनसे असंख्यातगुणे पंचेन्द्रिय तिर्यंच संज्ञी अपर्याप्त हैं । (३) इनसे संख्यातगुणे संज्ञी पर्याप्त हैं । (४) इनसे संख्यातगुणे चार इन्द्रिय पर्याप्त हैं । (५) इनसे विशेष अधिक पंचेन्द्रिय तिर्यंच असंज्ञी पर्याप्त हैं । (६) इनसे

१ ब मंडिपवेसे. २ द ब सव्वट्ठोत्ता.



विशेष अधिक दो इन्द्रिय पर्याप्त हैं। (७) इनसे विशेष अधिक तीन इन्द्रिय पर्याप्त हैं। (८) इनसे असंख्यातगुणे असंज्ञी अपर्याप्त हैं। (९) इनसे विशेष अधिक चार इन्द्रिय अपर्याप्त हैं। (१०) इनसे विशेष अधिक तीन इन्द्रिय अपर्याप्त हैं। (११) इनसे विशेष अधिक दो इन्द्रिय अपर्याप्त हैं। (१२) इनसे असंख्यातगुणे अप्रतिष्ठित प्रत्येक हैं। (१३) इनसे असंख्यातगुणे प्रतिष्ठित प्रत्येक हैं। (१४) इनसे असंख्यातगुणे पृथिवीकायिक बादर पर्याप्त जीव हैं। (१५) इनसे असंख्यातगुणे बादर जलकायिक पर्याप्त जीव हैं। (१६) इनसे असंख्यातगुणे बादर वायुकायिक पर्याप्त जीव हैं। (१७) इनसे असंख्यातगुणे अप्रतिष्ठित अपर्याप्त हैं। (१८) इनसे असंख्यातगुणे प्रतिष्ठित अपर्याप्त हैं। (१९) इनसे असंख्यातगुणे तेजस्कायिक बादर अपर्याप्त हैं। (२०) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक बादर अपर्याप्त हैं। (२१) इनसे

आउवादरअपज्जत्ता विसेसाहिया = a १० १० रिण = । वाउवादरअपज्जत्ता[1] विसेसाहिया
९ ९ ९ ४ प a

= a १० १० १० रिण = । तेउसुहुमअपज्जत्ता असंखेज्जगुणा = a ८ । पुढविसुहुमअपज्जत्ता
९ ९ ९ ९ ७ ९ ५

विसेसाहिया = a १० ८ । आउसुहुमअपज्जत्ता[2] विसेसाहिया = a १० १० ८ । वाउसुहुमअप-
९ ९ ५ ९ ९ ९ ५

ज्जत्ता विसेसाहिया = a १० १० १० ८ । तेउकायसुहुमपज्जत्ता संखेज्जगुणा = a ८ ४ । पुढवि-
९ ९ ९ ९ ५ ९ ५

सुहुमपज्जत्ता विसेसाहिया = a १० ८ ४ । आउसुहुमपज्जत्ता विसेसाहिया = a १० १० ८ ४ ।
९ ९ ९ ५ ९ ९ ९ ५

वाउसुहुमपज्जत्ता विसेसाहिया = a १० १० १० ८ ४ । साधारणबादरपज्जत्ता असंखेज्जगुणा
९ ९ ९ ९ ५

१३ = १ । साधारणबादरअपज्जत्ता असंखेज्जगुणा १३ = ६ । साधारणसुहुमअपज्जत्ता अणंतगुणा
९ ७ ९ ७

१३ = ८ । साधारणसुहुमपज्जत्ता असंखेज्जगुणा १३ = ८ ४ ।
९ ५ ९ ५

। एवमप्पाबहुगं समत्तं ।

ओगाहणं तु अवरं सुहुमणिगोदस्स पुण्णलद्धिस्स । अंगुलअसंखभागं जादस्स य तदियसमयम्मि ॥ ३१५

विशेष अधिक जलकायिक बादर अपर्याप्त है । (२२) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक बादर अपर्याप्त हैं । (२३) इनसे असंख्यातगुणे तेजस्कायिक सूक्ष्म अपर्याप्त है । (२४) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं । (२५) इनसे विशेष अधिक जलकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं । (२६) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं । (२७) इनसे संख्यातगुणे तेजस्कायिक सूक्ष्म पर्याप्त है । (२८) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं । (२९) इनसे विशेष अधिक जलकायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं । (३०) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं । (३१) इनसे असंख्यातगुणे साधारण बादर पर्याप्त हैं । (३२) इनसे असंख्यातगुणे साधारण बादर अपर्याप्त है । (३३) इनसे अनंतगुणे साधारण सूक्ष्म अपर्याप्त हैं । (३४) और इनसे संख्यातगुणे साधारण सूक्ष्म पर्याप्त हैं ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वका कथन समाप्त हुआ ।

सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकके उत्पन्न होनेके तीसरे समयमें अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण जघन्य अवगाहना पायी जाती है ॥ ३१५ ॥

१ द ब आउवादरपज्जत्ता. २ द ब सुहुमपज्जत्ता. ३ द ब सुहुमपज्जत्ता.

तत्तो पदेसवड्ढी जाव य दीहं तु जोयणसहस्सं । तस्स दलं विक्खंभं तस्सद्धं बहलमुक्कस्सं ॥ २१६

जोयणसहस्समधियं बारस कोसूणमेक्कमेक्कं च । दोहसहस्सं पम्मे विगले सम्मुच्छिमे महामच्छे ॥ २१७

१०००। १२। ३। १। १०००।

४

तिदिचपुण्णजहण्णं अणुद्धरीकुंथुकाणमच्छीसु । सित्थयमच्छोगाहं विंदंगुलसंखसंखगुणिदक्कमा[1] ॥ २१८

एत्थ ओगाहणवियप्पं वत्तइस्सामो । तं जहा— सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तयस्स तद्दिय-समयतब्भवत्थस्स एगमुस्सेहघणंगुलं ठविय तप्पाउग्गपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण भागे हिदे बलद्धं एदिस्से सव्वजहण्णोगाहणापमाणं होदि । तं चेदं[2] । एदस्स उवरि एगपदेसं वड्ढिदे सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तयस्स मज्झिमोगाहणवियप्पं होदि । तदो दुपदेसुत्तर-तिपदेसुत्तर-

तत्पश्चात् एक हजार योजन लंबे, इससे आधे अर्थात् पांचसौ योजन चौड़े, और इससे आधे अर्थात् ढाईसौ योजन मोटे शरीरकी उत्कृष्ट अवगाहना तक प्रदेशवृद्धि होती गई है ॥ २१६ ॥

कुछ अधिक एक हजार योजन, बारह योजन, एक कोश कम एक योजन, एक योजन और एक हजार योजन यह क्रमसे पद्म, विकलेन्द्रिय जीव और सम्मूर्छन महामत्स्यकी अवगाहनाका प्रमाण है ॥ ३१७ ॥

पद्म यो० १०००। द्वीन्द्रिय १२। त्री. ३/४। च. १। पं. १०००।

दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें क्रमसे अनुद्धरी, कुंथु, कानमक्षिका और सिक्थकमत्स्यके जघन्य अवगाहना होती है । इनमेंसे अनुद्धरीकी अवगाहना घनांगुलके संख्यातवें भागप्रमाण और शेष तीनकी उत्तरोत्तर क्रमसे संख्यातगुणी है ॥ ३१८ ॥

अब यहां अवगाहनाके विकल्पको कहते हैं । वह इस प्रकार है— उत्पन्न होनेके तीसरे समयमें उस भवमें स्थित सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्त जीवकी सर्व जघन्य अवगाहनाका प्रमाण, एक उत्सेधघनांगुलको रखकर उसके योग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे भाजित करनेपर जो लब्ध आवे, उतना है । इसके ऊपर एक प्रदेशकी वृद्धि होनेपर सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प होता है । इसके पश्चात् दो प्रदेशोत्तर, तीन

१ द ब अणुद्धरी, क अणुदरी. २ द ब सिद्धय. ३ द ब १११११।१११।६।११।६।१।६।. अस्य संभावितसंदृष्टिः गोम्मटसार-जीवकांडस्य ९६तमगाथायाः संस्कृतटीकायां द्रष्टव्या । ४ द ब

६८२२
प a १९९९४
a a २२२७७७७७७७

अस्य संभावितसंदृष्टिः गो. जी. ९४ तमगाथायाः संस्कृतटीकायां द्रष्टव्या ।

चदुपदेसुत्तरकमेण जाव सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणाणुवरि जहण्णोगाहणा रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदा त्ति[1]। ताधे सुहुमवाउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स[2] सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। एदमवि सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तयस्स मज्झिमोगाहियाण वियप्पं होदि। तदा इमा ओगाहणा पदेसुत्तरकमेण वड्ढावेदव्वा। तदणंतरोगाहणा रूवूणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमतेउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। एदमवि पुव्विल्लदोण्णं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं होदि। पुणो एदस्सुवरिमपदेसुत्तरकमेण इमा ओगाहणा रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमआउक्काइयलद्धिअपज्जत्तयस्स[3] सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। एदमवि पुव्विल्लतिण्हं जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं होदि। तदो पदेसुत्तरकमेण चउण्हं जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणा रूवूणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमपुढविकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पहुदि पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि। इमा ओगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। [ताधे बादरवाउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ।

प्रदेशोत्तर एवं चार प्रदेशोत्तर क्रमसे सूक्ष्मनिगोदिया लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहनाके ऊपर, यह जघन्य अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो, उतनी बढ़ जाती है। उस समय सूक्ष्म वायुकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है। यह भी सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तककी मध्यम अवगाहनाका विकल्प है। तत्पश्चात् इस अवगाहनाके ऊपर प्रदेशोत्तर क्रमसे वृद्धि करना चाहिये। इस प्रकार वृद्धिके होनेपर वह अनन्तर अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त हो जाती है। तब सूक्ष्म तेजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तकका सर्वजघन्य अवगाहनास्थान प्राप्त होता है। यह भी पूर्वोक्त दो जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका ही विकल्प होता है। पुनः इसके ऊपर प्रदेशोत्तरक्रमसे वृद्धिके होनेपर यह अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त होजाती है। तब सूक्ष्म जलकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना प्राप्त होती है। यह भी पूर्वोक्त तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहना चालू रहती है। जब तक कि यह अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त होजावे। तब सूक्ष्म पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना प्राप्त होती है। यहांसे लेकर प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहना चालू रहती है। यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त हो जाती है। [तब बादर वायुकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है। इसके

१ द ब गुणिदमेत्तवड्ढीदो त्ति. २ द ब लद्धिपज्जत्तयस्स. ३ द ब लद्धपज्जत्तयस्स.

तत्तो उवरि पदेसुत्तरकमेण छण्णं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणा रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण] गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरतेउकाइयअपज्जत्तस्स सव्वजहण्णो-गाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणा-मुवरि रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदतदणंतरोगाहणपमाणं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-आउलद्धियपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरपुढविलद्धिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं जीवाण मज्झि-मोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदजीवलद्धियपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा होदि । तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि एदिस्से ओगाहणाए उवरि इमा ओगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति । ताधे णिगोदपदिट्ठिदलद्धियपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसजीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणासुवरि

ऊपर प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चालू रहता है जब तक कि यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे] गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त होजावे । तब बादर तेजस्कायिक अपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चालू रहता है जब तक कि इस अवगाहनाके ऊपर एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित उस अनन्तर अवगाहनाका प्रमाण बढ़ चुकता है । तब बादर जलकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चालू रहता है जब तक कि तदनंतर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त हो जावे । तब बादर पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उपर्युक्त नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होजावे । तब बादर निगोद लब्ध्यपर्याप्तक जीवकी सर्वजघन्य अवगाहना होती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि इस अवगाहनाके ऊपर यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त हो चुकती है । तब निगोदप्रतिष्ठित लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है

१ द ब रूऊणा°. २ द तादे.

रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदतदणंतरोगाहणमेत्तं वड्ढिदो[1] त्ति। ताधे बादरवणप्पदिकाइय-पत्तेयसरीरलद्धिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बीइंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पहुदि पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहणवियप्पं रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तदो तीइंदियलद्धियपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे चउरिंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदोवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे पंचेंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण सोलसण्हं [जीवाणं] मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्ज-

जब तक कि इस अवगाहनाके ऊपर एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित तदनन्तर अवगाहनाप्रमाण वृद्धि होचुकती है। तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होचुके। तब दो इन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् यहांसे आगे प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहनाविकल्प एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होचुके। तब तीन इन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है। इसके पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होचुकती है। तब चार इन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है। इसके पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त करलेती है। तब पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त सोलह [जीवोंकी] मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तक कि इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि

१ द ब मेत्तवड्ढिदि त्ति. २ द तधे. ३ द तधे.

पदेसवड्ढिदो त्ति । तदो सुहुमणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णा ओगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं होदि जाव तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदुवरि णत्थि[1] सुहुमणिगोदलद्धिअपज्जत्तस्स य ओगाहणवियप्पं, सव्वुक्कस्सोगाहणंपत्तत्तादो[2] । तदुवरिं सुहुमवाउकाइयलद्धिअपज्जत्तयप्पहुदिसोलसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि, तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसणूणपंचेंदियलद्धिअपज्जत्तजहण्णोगाहणा रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पहुदि पदेसुत्तरकमेण सत्तरसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगभागमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो उवरि णत्थि तस्स ओगाहणवियप्पा । तं कस्स होदि ? से काले पज्जत्तो होदि त्ति ठिदस्स । तदो पहुदि पदेसुत्तरकमेण सोलसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि

प्राप्त होती है । पश्चात् सूक्ष्म निगोद निर्वृत्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उक्त सत्तरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प होता है जब तक कि इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होजाती है । तब सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । इसके ऊपर सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकी अवगाहनाका विकल्प नहीं रहता, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त होचुका है । इसलिये इसके आगे सूक्ष्म वायुकायिक लब्ध्यपर्याप्तकको आदि लेकर उक्त सोलह जीवोंकी ही मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है जब तक कि इसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होजावे । तब सूक्ष्म निगोद निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । फिर यहांसे आगे प्रदेशोत्तरक्रमसे तदनन्तर अवगाहनाके आवलीके असंख्यातवें भागसे खंडित एक भागमात्र इसके ऊपर बढ़ जाने तक उक्त सत्तरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है । तब सूक्ष्म निगोद निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । इसके आगे उस सूक्ष्म निगोद निर्वृत्यपर्याप्तकी अवगाहनाके विकल्प नहीं रहते । यह अवगाहना किसके होती है ? अनन्तर कालमें पर्याप्त होनेवालेके उक्त अवगाहना होती है । यहांसे आगे प्रदेशोत्तरक्रमसे अवगाहनाके आवलीके असंख्यातवें भागसे खंडित एक भागमात्र उसके ऊपर बढ़ जाने तक उक्त सोलह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है । इस समय सूक्ष्म निगोद निर्वृत्ति-

१ द ब गट्ठिद. २ द ब °गाहणं पत्तं तादो. ३ द ब तदा.

जाव इमा ओगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स ओगाहणवियप्पं वड्ढदि, सव्वउक्कस्सोगाहणपत्तत्तादो । तदो पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमवाउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तर [कमेण] सोलण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसवड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमवाउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स ओगाहणवियप्पं वड्ढदि, समुक्कस्सोगाहणं पत्तं । ताधे पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं व मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि । केत्तियमेत्तेण ? सुहुमणिगोदणिव्वत्तिपज्जत्तस्स उक्कस्सोगाहणं रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं हेट्ठिम तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमवाउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सोलसण्हं ओगाहणवियप्पं वड्ढदि इमा ओगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमवाउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमवाउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि । तदो पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं ओगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमतेउ-

पर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प स्थगित होजाता है, क्योंकि वह सर्वोत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त होचुका है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है । तदनन्तर सूक्ष्म वायुकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी सर्वजघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक सोलह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है । तब सूक्ष्म वायुकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प स्थगित होजाता है, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको पा चुका है । तब प्रदेशोत्तरक्रमसे पन्द्रह जीवोंके समान मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है । कितने मात्रसे ? सूक्ष्म निगोद निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र अधस्तन उसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम उसके ऊपर वृद्धि होने तक । तब सूक्ष्म वायुकायिक निर्वृत्ति पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सोलह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक ये अवगाहनायें आवलीके असंख्यातवें भागसे खंडित एक भागप्रमाण वृद्धिको प्राप्त न होजांय । उस समय सूक्ष्म वायुकायिक निर्वृत्तिअपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनंतर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक खण्डप्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके । उस समय सूक्ष्म वायुकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना होती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चौदह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक बढ़ता जाता है । उस समय सूक्ष्म

१ द ब °गाहणं पत्तं तदो पदेसुत्तर°. २ द ब संओगाहणं'.

काइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमतेउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स ओगाहणवियप्पं पत्तदि, स उक्कस्सोगाहणं पत्तं । तदो पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं ओगाहणवियप्पं वच्चदि । केत्तियमेत्तेण ? सुहुमवाउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदं तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमतेउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पण्णारसण्हं ओगाहणवियप्पं गच्छदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमतेउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए संखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमतेउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । एत्तियमेत्ताणि चेव तेउकाइयजीवस्स ओगाहणवियप्पा । कुदो ? समुक्कस्सोगाहणवियप्पं[1] पत्तं । ताधे पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुमआउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो

तेजस्कायिक निर्वृत्तिअपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है । उस समय सूक्ष्म तेजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प विश्रान्त हो जाता है, क्योंकि यह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त होचुका है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चौदह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है । कितने मात्रसे ? सूक्ष्म वायुकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित इसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम उसके ऊपर वृद्धिके होने तक । तब सूक्ष्म तेजस्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पन्द्रह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भाग प्रमाण वृद्धिको प्राप्त न हो जावे । उस समय सूक्ष्म तेजस्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो जावे । तब सूक्ष्म तेजस्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । इतने मात्र ही तेजस्कायिक जीवकी अवगाहनाके विकल्प हैं, क्योंकि यह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त होचुका है । इसके पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक कि उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि न हो चुके । तब फिर सूक्ष्म जलकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।

१ द ब कदिसे उक्कस्सोगाहणवियप्पं ।

पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमआउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि। केत्तियमेत्तेण। सुहुमतेउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तुक्कस्सोगाहणं रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमआउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण चोद्दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा[1] आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमआउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमआउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि। एत्तियमेत्ता आउकाइयजीवाणं ओगाहणवियप्पा[2]। कुदो। सव्वोक्कस्सोगाहणं पत्तत्तादो। तदो पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमपुढविकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ।

तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। इस समय सूक्ष्म जलकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। कितने मात्रसे? सूक्ष्म तेजस्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित इसके ऊपर वृद्धि होने तक। तब सूक्ष्म जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। तब सूक्ष्म जलकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र उसके ऊपर वृद्धिको न प्राप्त होचुके। उस समय सूक्ष्म जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना होती है। इतने मात्र ही जलकायिक जीवोंकी अवगाहनाके विकल्प हैं, क्योंकि सर्वोत्कृष्ट अवगाहना प्राप्त होचुकी है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है। तब सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। यहांसे आदि लेकर प्रदेशोत्तर-

१ द ब तदंतरोगाहणा. २ द ब °वियप्पं. ३ द ब °गाहणं पत्तं तादो.

तदो[1] पहुदि पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमपुढविलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि। केत्तियमेत्तेण। सुहुमआउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं रूऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमपुढविकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेयखंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुमपुढविणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदो[2] पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगभागं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तदो सुहुमपुढविकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदोवरि सुहुमपुढविकाइयस्स ओगाहणवियप्पं णत्थि। तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरवाउकाइयणिव्वत्तियपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं

क्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है। तब सूक्ष्म पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता रहता है। कितने मात्रसे? सूक्ष्म जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे कम इसके ऊपर वृद्धि होने तक। उस समय सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनंतर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। तब सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भागप्रमाण उसके ऊपर वृद्धि होने तक चलता रहता है। तत्पश्चात् सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। इसके आगे सूक्ष्म पृथिवीकायिककी अवगाहनाका विकल्प नहीं है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर वायुकायिक निर्वृत्यपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना

१ द ब तदा. २ द ब तदा.

दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरवाउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि। तं केत्तियमेत्तेण इदि उत्ते सुहुमपुढविकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा रूऊणपलिदोवमसंखेज्जदिभागेण गुणिदं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरवाउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णिया ओगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण बारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडियमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। [ताधे बादरवाउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति]। ताधे बादरवाउकाइयपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदुवरि तस्स ओगाहणवियप्पा णत्थि, सव्वुक्कस्सं पत्तत्तादो। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरतेउकाइयणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ।

दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक बढ़ता रहता है। उस समय बादर वायुकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। वह कितने मात्रसे, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि सूक्ष्म पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन उसके ऊपर वृद्धि होने तक। उस समय बादर वायुकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डितमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न होचुके। [तब बादर वायुकायिक निर्वृत्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है।] तब बादर वायुकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। इसके आगे उसकी अवगाहनाके विकल्प नहीं हैं, क्योंकि वह सर्वोत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त कर चुका है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर तेजस्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे ग्यारह

१ ब ब तदे.

तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जदिपदेसं वड्ढिदो[1] त्ति। ताधे बादरतेउकाइयलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि बादरवाउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिय पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरतेउणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरतेउणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तदेगभागं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरतेउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ। [तदुवरि तस्स ओगाहणवियप्पा णत्थि, उक्कस्सोगाहणं पत्तत्तादो।] तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं गच्छदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसवड्ढिदो त्ति। ताधे बादरवाउणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं मज्झिमो-

जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर तेजस्कायिक लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक बादर वायुकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करके पुनः इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित उसके ऊपर वृद्धि होती है। तब बादर तेजस्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धि न होजावे। तब बादर तेजस्कायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धि होचुकती है। तब बादर तेजस्कायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। [इसके आगे उसकी अवगाहनाके विकल्प नहीं हैं, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त कर चुका है।] तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। इस समय बादर जलकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके

१ द ब वड्ढिदि. २ द ब तधे.

गाहणवियप्पं गच्छदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरआउलद्धिअपज्जत्तयस्स[1] उक्कस्सोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं गच्छदि रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदतेउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरआउणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरआउणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरआउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स[2] उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदोवरि णत्थि एदस्स ओगाहणवियप्पं। तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो[3] त्ति। ताधे बादरपुढविणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति। ताधे बादरपुढविकाइयलद्धि-

योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर जलकायिक लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित तेजस्कायिक निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं होजाती। तब बादर जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है तक जब तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं होजाती। तब बादर जलकायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागप्रमाण इसके ऊपर नहीं बढ़ जाती। तब बादर जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। इसके आगे उसकी अवगाहनाके विकल्प नहीं हैं। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर पृथिवी-कायिक निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है।

१ द ब लद्धिपज्जत्तयस्स. २ द ब णिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स. ३ द ब वड्ढिदि.

अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं [गच्छदि रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदभाउकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाउग्ग-असंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरपुढविकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं] वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखे-ज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरपुढविणिव्वत्ति-[अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरपुढविकाइयणिव्वत्ति-] पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदकड्ढिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं

तब बादर पृथिवीकायिक लब्ध्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प [तब तक चलता रहता है जब तक बादर जलकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करके पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित उसके ऊपर वृद्धि नहीं हो चुकती । तब बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प] तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर एक भागप्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके । तब बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्ति-[अपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । तब प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्डप्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं होजाती । तब बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्ति-]पर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशो-त्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब बादर निगोद निर्वृत्यपर्याप्तकी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब बादर निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है

वच्चदि ऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदबादरपुढविकाइयणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं गच्छदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरिं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदपदिट्ठिदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदपदिट्ठिदलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि बादरणिगोदणिव्वत्तिपज्जत्तउक्कस्सोगाहणं ऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिय पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदपदिट्ठिदणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।

जब तक एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित बादर पृथिवीकायिक निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन होकर इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो चुकती । तब बादर निगोद निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है । जब तदनंतर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होचुके तब बादर निगोद निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक भागप्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न होचुके । तब बादर निगोद निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादरनिगोदप्रतिष्ठित निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादरनिगोदप्रतिष्ठित लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक बादरनिगोद निर्वृत्तिपर्याप्तकी उत्कृष्ट अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित होकर पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं होचुकती । तब बादर निगोदप्रतिष्ठित निर्वृत्तिपर्याप्तकी जघन्य

तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदपदिट्ठिदणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्णं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणमावलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेगखंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरणिगोदपदिट्ठिदणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसदि । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीर-

अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर एक भागप्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो चुकती । तब बादरनिगोदप्रतिष्ठित निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक तदनंतर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक भागप्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं होजाती । तब बादरनिगोदप्रतिष्ठित निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती

१ द ब 'पज्जत्तयस्स. २ द ब तादे.

णिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ[1] । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे[2] बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो[3] त्ति । [ताधे बीइंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।] पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे[4] तीइंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण चउण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे चउरिंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो

है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि न हो चुके । [तब दोइन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है] । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब तीनइन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब चारइन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तीन जीवोंकी

१ वाक्यस्यास्य प्राक् द ब प्रत्योः ' ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्ह जीवाण मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेस वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदिदरणिगोदपदिट्ठिदणिव्वत्तिपज्जत्तउक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसपरिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीर- ' इत्यधिकः पाठः ।

२ द ब तादे. ३ द ब लद्धिअपज्जत्तयस्स. ४ द ब °पदेस संवड्ढिदो.

५ द ब अ प्रत्योः ' ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । ' इत्यधिकः पाठः ।

पदेसुत्तरकमेण तिण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो[1] त्ति । ताधे पंचिंदियलद्धिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । एदमवि घणंगुलस्स असंखेज्जदिभागेण[2] । एत्तो उवरि ओगाहणा घणंगुलस्स संखेज्जभागो, कत्थ वि घणंगुलो, कत्थ वि संखेज्जघणंगुलो त्ति घेत्तव्वं । तदो पदेसुत्तरकमेण दोण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे तीइंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण तिण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे चउरिंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण चउण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बीइंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे पंचेंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्णं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तप्पाउग्गअसंखेज्जपदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।

मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । यह भी घनांगुलके असंख्यातवें भागसे है । इससे आगे अवगाहना घनांगुलके संख्यातवें भाग, कहींपर घनांगुलप्रमाण, और कहींपर संख्यात घनांगुलप्रमाण ग्रहण करना चाहिये । तत्पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दो जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है । तब तीनइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है । तब चारइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब दोइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है । तब पंचेन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है । तब दोइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।

---

१ द ब °पदेस संवड्ढिदो. २ द ब असंखेयदिभागेण.

ताव एदाणं गुणगारस्सं विचारेमो— बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणपहुदि बीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्तजहण्णोगाहणपज्जवसाणं जाव एदम्मि अंतराले[1] जादाणं सव्वाणं मिलिदे किंचिया इदि उत्ते बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं रूऊणपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति घेत्तव्वं। तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं तप्पाउग्गसंखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे तीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स सव्वजहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं ओगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणवियप्पं तप्पाउग्गसंखेज्जगुणं पत्तो[2] त्ति। ताधे चउरिंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे पंचेंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण दसण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे तीइंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदो पदेसुत्तरकमेण णवण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे

अब इनकी गुणकारसंख्याका विचार करते हैं— बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनाको लेकर दोइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना तक इनके अन्तरालमें उत्पन्न सबके सम्मिलित करनेपर 'कितनी हैं' इस प्रकार पूछनेपर बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उतनी इसके ऊपर वृद्धि होती है, इस प्रकार ग्रहण करना चाहिये। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना उसके योग्य संख्यातगुणी प्राप्त न हो जावे। तब तीनइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहनाविकल्प उसके योग्य संख्यातगुणा प्राप्त न हो जावे। तब चारइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चालू रहता है। तब पंचेन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दश जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। तब तीनइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी

१ द ब अंतराओ. २ द ब पज्जत्तो.

चउरिंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । ताधे बीइंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स[1] उक्कस्सोगाहणा दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण छण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । ताधे पंचेंदियणिव्वत्तिअपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदो पदेसुत्तरकमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । [ताधे तीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।] तं कस्स[2] होदि त्ति भणिदे तीइंदियस्स णिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणावट्ठमाणस्स सयंपहाचलपरभागट्ठियखेत्ते उप्पण्णगोहीए उक्कस्सोगाहणं कस्सइ जीवस्स दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेहजोयणस्स तिण्णिचउब्भागो आयामो तद्दुभागो[3] विक्खंभो विक्खंभद्धबहल्लं[4] । एदे तिण्णि वि परोप्परं गुणिय पमाणघणंगुले कदे एक्ककोडि[5]-उणवीसलक्ख-तेदालसहस्स-णवसयछत्तीसरूवेहि गुणिदघणंगुला होंति । ६ । ११९४३९३६ ।

प्राप्त होने तक चलता है । तब चारइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है । तब दोइन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता है । तब पंचेन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पांच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चालू रहता है । [तब तीनइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।] यह अवगाहना किस जीवके होती है, ऐसा पूछनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयंप्रभाचलके बाह्य भागमें स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न और उत्कृष्ट अवगाहनामें वर्तमान किसी गोम्हीके वह उत्कृष्ट अवगाहना होती है, यह उत्तर है । वह कितने प्रमाण है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि उसका एक उत्सेध योजनके चार भागोंमेंसे तीन भाग प्रमाण आयाम, इसके आठवें भाग प्रमाण विस्तार, और विस्तारसे आधा बाहल्य है । इन तीनोंका परस्पर गुणा करके प्रमाणघनांगुल करनेपर एक करोड़ उन्नीस लाख तेतालीस हजार नौ सौ छत्तीस रूपोंसे गुणित घनांगुल होते हैं ।

१ द ब °पज्जत्तयस्स. २ द ब अंतं उक्कस्सं. ३ द ब तदट्ठभागे. ४ द ब विक्खंभबहल्लं. ५ द ब एक्कक्कोडीए, ब एक्केकोडीए. ६ द ब °लक्खा.

तदो पदेसुत्तरकमेण चदुण्हं मज्झिमोगाहणविअप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे चउरिंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं होदि। तं कस्स होदि त्ति भणिदे सयंपहाचलपरभाग-ट्ठिदखेत्ते उप्पण्णभमरस्स उक्कस्सोगाहणं कस्सइ दीसइ। तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेहजोयणायामं अद्ध-जोयणुस्सेहं जोयणद्धपरिहिविक्खंभं ठविय विक्खंभद्धमुस्सेहगुणमायामेण गुणिदे उस्सेहजोयणस्स तिण्णि अट्ठभागा भवंति। तं चेदं। $\frac{३}{८}$। ते पमाणघणंगुला कीरमाणे एक्कत्तपंचतीसकोडीए उवरिमछण्हि-चउण्णसहस्स-चउसय-छण्णउदिरूवेहिं गुणिदघणंगुलाणि हवंति। तं चेदं। ६। १३५८९५४४९६।

तदो पदेसुत्तरकमेण तिण्हं मज्झिमोगाहणविअप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति। ताधे बीइंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं होइ। तं कम्हि होइ त्ति भणिदे सयंपहाचलपरभागट्ठिद-

उदाहरण— $\frac{३}{४} \times \frac{३}{२} \times \frac{३}{४} = \frac{२७}{३२}$; $\frac{२७}{३२} \times ३६२३८७८६५६ =$ ११९४२९३६ प्र. घ. अं.।

पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी होने तक चालू रहता है। तब चारइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह किस जीवके होती है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयंप्रभाचलके बाह्य भागस्थ क्षेत्रमें उत्पन्न किसी भ्रमरके उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह कितने मात्र है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि एक उत्सेध योजनप्रमाण आयाम, आध योजन उंचाई, और आध योजनकी परिधिप्रमाण विष्कंभको रखकर विष्कम्भके आधेको उंचाईसे गुणा करके फिर आयामसे गुणा करनेपर एक उत्सेध योजनके आठ भागोंमेंसे तीन भाग होते हैं। इनके प्रमाणघनांगुल करनेपर एक सौ पैंतीस करोड़ नवासी लाख चौअन हजार चारसौ छयानवे रूपोंसे गुणित घनांगुल होते हैं।

उदाहरण— आयाम १ उत्सेध योजन, उंचाई $\frac{१}{२}$ यो., विस्तार १$\frac{१}{२}$ यो. ($\frac{१}{२}$ यो. की परिधि $\frac{१}{२} \times ३$)। $\frac{३}{२} \div २ = \frac{३}{४}$; $\frac{३}{४} \times \frac{१}{२} = \frac{३}{८}$; $\frac{३}{८} \times १ = \frac{३}{८}$; $\frac{३}{८} \times ३६२३८७८६५६ =$ १३५८९५४४९६ प्र. घनांगुल।

पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चालू रहता है। तब दोइन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना होती है। यह कहां होती है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयंप्रभाचलके बाह्य भागमें

---

१ द ब एक्कत्तमयंकसमयपंचतीस°, क एक्कत्तमयंकसेल य पंचतीस°. २ द ब छण्ण.

खेत्ते उप्पण्णबीइंदियस्स उक्कस्सोगाहणा कस्सइ दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते बारसजोयणायाम-चउजोयणमुहस्स खेत्तफलं—

आयामं तावकुत्वा वदनदलोनं मुखार्धवर्गयुतम् । द्विगुणं चतुर्विभक्तं सनाभिकेऽस्मिन् गणितमाहुः ॥ ३१९

एदेण सुत्तेण खेत्तफलमाणिदे तेहत्तरिउस्सेहजोयणाणि भवंति । ७३ ।

आयामे मुहसोहिय पुणरवि आयामसहिदमुहभजिदे । बाहल्लं णायव्वं संखायारट्ठिए खेत्ते ॥ ३२०

एदेण सुत्तेण बाहल्ले आणिदे पंचजोयणपमाणं होदि । ५ । पुव्वमाणीदतेहत्तरिभूदखेत्तफलं पंच-जोयणबाहल्लेण गुणिदे घणजोयणाणि तिण्णिसयपण्णट्ठी होंति । ३६५। एदं घणपमाणंगुलाणि कदे एक्कलक्ख-बत्तीससहस्स दोण्णिसय-एक्कहत्तरीकोडीओ सत्तावण्णलक्ख णवसहस्स-चउसय-चालीसरूवेहि गुणिदघणं-गुलमेत्तं होदि । तं चेदं । ६ । १३२२७१५७०९४४० ।

स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी दोइन्द्रियके उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । वह कितने प्रमाण है, ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि बारह योजन लंबे और चार योजन मुखवाले [शंखका] क्षेत्रफल—

विस्तारको उतनी बार करके अर्थात् विस्तारको विस्तारसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसमेंसे मुखके आधे प्रमाणको कम कर शेषमें मुखके आधे प्रमाणके वर्गको जोड़ देनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसे दूना करके चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे शंखक्षेत्रका गणित कहते हैं ॥ ३१९ ॥

इस सूत्रसे क्षेत्रफलके लानेपर तिहत्तर उत्सेध योजन होते हैं । ७३ ।

आयाममेंसे मुखको कम करके शेषमें फिर आयामको मिलाकर मुखका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना शंखके आकारसे स्थित क्षेत्रका बाहल्य जानना चाहिये ॥ ३२० ॥

इस सूत्रसे बाहल्यको लानेपर उसका प्रमाण पांच योजन होता है । ५ । पूर्वमें लाये हुए तिहत्तर योजनप्रमाण क्षेत्रफलको पांच योजनप्रमाण बाहल्यसे गुणा करनेपर तीनसौ पैंसठ घन-योजन होते हैं । ३६५। इसके घनप्रमाणांगुल करनेपर एक लाख बत्तीस हजार दो सौ इकहत्तर करोड़ सत्तावन लाख नौ हजार चारसौ चालीस रूपोंसे गुणित घनांगुलमात्र होता है ।

उदाहरण— शंखका आयाम १२ योजन; मुख ४ यो. । १२×१२=१४४; १४४-४ =१४२; १४२+(४)²=१४६; १४६×२=२९२; २९२÷४=७३ शंखका क्षेत्रफल ।

१२-४+१२=२०, २०÷४=५ शंखका बाहल्य ।

७३ × ५ = ३६५ यो. शंखका घनफल. = ३६५ × ३६२३८७८६५६ = १३२२७१५७०९४४० प्रमाण घनांगुल ।

१ द ब तेहत्तरस्सेहं°.

तदो पदेसुत्तरकमेण दोण्हं मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । ताधे बादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीरणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । कम्हि खेत्ते कस्स वि जीवस्स कम्मि ओगाहणे वट्टमाणस्स होदि त्ति भणिदे सयंपहाचलपरभागट्ठियखेत्तउप्पण्ण-[पउमस्स] उक्कस्सोगाहणा कस्सइ दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेहजोयणेण कोसाहियएक्कसहस्सं उस्सेहं एक्कजोयणबहलं समवट्टं । तं पमाणं जोयणफल ७५० को १ । घणंगुले कदे दोण्णिकक्खएक्कहत्तरिसहस्सअट्ठसयअट्ठावण्णकोडि-चउरासीदिलक्ख-ऊणहत्तरिसहस्स-दुसय-अट्ठतालरूवेहि गुणिदपमाणंगुलाणि होदि । तं चेदं ॥ १ । ६ । २७१८५८८४६९२४८ ।

तदो पदेसुत्तरकमेण पंचेंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स मज्झिमोगाहणवियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं संखेज्जगुणं पत्तो त्ति । [ताधे पंचेंदियणिव्वत्तिपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।] तं कम्मि खेत्ते कस्स

पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे दो जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनंतर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । किस क्षेत्र और कौनसी अवगाहनामें वर्तमान किस जीवके यह उत्कृष्ट अवगाहना होती है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयंप्रभाचलके बाह्य भागस्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी [पद्मके] उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । वह कितनेप्रमाण है, इस प्रकार पूछनेपर उत्तर देते है कि उत्सेध योजनसे एक कोश अधिक एक हजार योजन ऊंचा और एक योजन मोटा समवृत्त कमल है । उसकी इस अवगाहनाका घनफल योजनोंमें सातसौ पचास योजन और एक कोशप्रमाण है । इसके प्रमाणघनांगुल करनेपर दो लाख इकहत्तर हजार आठ सौ अट्ठावन करोड़ चौरासी लाख उनहत्तर हजार दो सौ अड़तालीस रूपोंसे गुणित प्रमाणघनांगुल होते हैं ।

उदाहरण — पद्मकी उंचाई यो. १०००½; बाहल्य यो. १ ।

वासो तिगुणो परिही वासचउत्थाहदो दु खेत्तफलं ।
खेत्तफलं वेहगुणं खातफलं होइ सव्वत्थ ॥

इस सूत्रके अनुसार व्यास यो. १×३=३; ३×¼=¾ यो. क्षेत्रफल । ¾×१०००½ =७५०½ यो. खातफल (घनफल) । ७५०½×१६२३८७८५६=२७१८५८८४६९२४८ प्रमाण घनांगुल ।

पश्चात् प्रदेशोत्तरक्रमसे पंचेन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता है । [तब पंचेन्द्रिय निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।] यह अवगाहना किस क्षेत्रमें और किस जीवके

जीवस्स होदि त्ति उत्ते सयंपहाचलपरभागट्ठिए खेत्ते उप्पण्णसंमुच्छिममहामच्छस्स सव्वोक्कस्सोगाहणं कस्सइ दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेहजोयणेण एक्कसहस्सायामं पंचसदविक्खंभं तदद्धउस्सेहं । तं पमाणंगुले कीरमाणे चउसहस्स-पंचसय-बृउणतीसकोडीओ चुलसीदिलक्ख-तेसीदिसहस्स-दुसयकोडि-रूवेहि गुणेदूपमाणघणंगुलाणि भवंति । तं चेदं । ६ । ४५२९८४८३२०००००००० ।

। एवं जोगाहणविकप्पं समत्तं ।

जे णाणरयणदीओ[1] लोयालोयप्पयासणसमत्थो । पणमामि पुप्फयंतं सुमइकरं भव्वसंघस्स ॥ ३२१ ॥

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए तिरियलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम
पंचमो महाधियारो समत्तो ॥ ५ ॥

होती है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते है कि स्वयंप्रभाचलके बाह्य भागस्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी सम्मूर्छन महामत्स्यके सर्वोत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । वह कितने प्रमाण है, इस प्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि उत्सेध योजनसे एक हजार योजन लंबाईरूप, पांच सौ योजन विस्ताररूप, और इससे आधी अर्थात् अढ़ाई सौ योजनप्रमाण ऊंचाई रूप उक्त अवगाहना है । इसके प्रमाणांगुल करनेपर चार हजार पांच सौ उनतीस करोड़ चौरासी लाख तेरासी हजार दो सौ करोड़ रूपोंसे गुणित प्रमाणघनांगुल होते हैं ।

उदाहरण —महामत्स्यकी लंबाई यो. १०००, विस्तार यो. ५००, उंचाई यो. २५० है ।

१०००×५००=५००००० ; ५००००००×२५०=१२५०००००० ; १२५०००००००×३६२१८७८६५६=४५२९८४८३२०००००००० प्रमाणघनांगुल ।

इस प्रकार अवगाहनाभेदोंका कथन समाप्त हुआ ।

जिनका ज्ञानरूपी रत्नदीपक लोक व अलोकके प्रकाशित करनेमें समर्थ है और जो भव्यसमूहको सुमति प्रदान करनेवाले हैं ऐसे पुष्पदन्त जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूं ॥३२१॥

इस प्रकार आचार्यपरम्परागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें तिर्यग्लोकस्वरूपनिरूपणप्रज्ञप्ति
नामक पांचवां महाधिकार समाप्त हुआ ।

---

१ द्र णराण रयणदीओ, ब णरयारयदीओ.

[छट्ठो महाधियारो]

चोत्तीसादिसएहिं विम्हयजणणं सुरिंदपहुदीणं । णमिऊण सीदलजिणं वेंतरलोयं णिरूवेमो ॥ १
वेंतरणिवासखेत्तं भेदा एदाण विविहचिण्हाणि । कुलभेदो णामाइं भेदविही दक्खिणुत्तरिंदाणं ॥ २
आऊणि आहारो उरसासो ओहिणाणसत्तीओ । उस्सेहो संखाणिं जम्मणमरणाणि एक्कसमयम्मि ॥ ३
आउबंधणभावो दंसणगहणस्स कारणं विविहं । गुणठाणादिवियप्पा सत्तरस हुवंति अहियारा ॥ ४

१७ ।

रज्जुकदी गुणिदव्वा णवणउदिसहस्सअधियलक्खेणं । तम्मज्झे तिवियप्पा वेंतरदेवाण होंति पुरा ॥ ५

९९ । १९९००० ।

भवणं[1] भवणपुराणिं आवासा इय भवंति तिवियप्पा[2] । जिणमुहकमलविणिग्गदवेंतरपण्णत्तिणामाए ॥ ६
रयणप्पहपुढवीए भवणाणिं दीवउवहिउवरिम्मि । भवणपुराणिं दहगिरिपहुदीणं उवरि आवासा ॥ ७
बारससहस्सजोयणपरिमाणं होदि जेट्ठभवणाणं । पत्तेक्कं विक्खंभा तिण्णि सयाणिं[3] च बहलत्तं ॥ ८

१२००० । ३०० ।

चौंतीस अतिशयोंसे देवेन्द्र आदि जनोंको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले शीतल जिनेन्द्रको नमस्कार करके व्यन्तरलोकका निरूपण करते हैं ॥ १ ॥

[1]व्यन्तरोंका निवासक्षेत्र, [2]उनके भेद, [3]विविध प्रकारके चिन्ह, [4]कुलभेद, [5]नाम, [6]दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंका भेद, [7]आयु, [8]आहार, [9]उच्छ्वास, [10]अवधिज्ञानकी शक्तियां, [11]उंचाई, [12]संख्या, [13]एक समयमें जन्म, [14]मरण, [15]आयुके बन्धक भाव, [16]सम्यक्त्वग्रहणके विविध कारण और [17]गुणस्थानादि-विकल्प, इस प्रकार ये सत्तरह अधिकार होते हैं ॥ २–४ ॥

राजुके वर्गको एक लाख निन्यानवै हजारसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उसके मध्यमें व्यन्तर देवोंके तीन प्रकारके पुर होते हैं ॥ ५ ॥

जिन भगवान्‌के मुखरूप कमलसे निकले हुए व्यन्तर प्रज्ञप्ति नामक अधिकारमें भवन, भवनपुर और आवास इस प्रकार तीन प्रकारके भवन कहे गये हैं ॥ ६ ॥

इनमेंसे रत्नप्रभा पृथिवीमें भवन, द्वीप-समुद्रोंके ऊपर भवनपुर और द्रह एवं पर्वतादिकोंके ऊपर आवास होते हैं ॥ ७ ॥

उत्कृष्ट भवनोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार बारह हजार योजन और बाहल्य तीन सौ योजन-प्रमाण है ॥ ८ ॥ १२००० । ३०० ।

१ द ब चउतीसा. २ द ब भवणिं. ३ द ब तिविहप्पा. ४ द दीवओहि. ५ द सयाणिं.

पणुवीस जोयणाणिं रुंदपमाणं जहण्णभवणाणं । पत्तेक्कं बहलत्तं तिचउब्भागप्पमाणं च ॥ ९

अहवा रुंदपमाणं पुह पुह कोसो जहण्णभवणाणं । तव्वेदीउच्छेहो कोदंडाणिं पि पणुवीसं ॥ १०

को १ । दं २५ । पाठान्तरम् ।

बहलत्तिभागपमाणा कूडा भवणाण होंति बहुमज्झे । वेदी चउवणतोरणदुवारपहुदीहिं रमणिज्जा ॥ ११

कूडाण उवरि भागे चेट्ठंते जिणवरिंदपासादा । कणयमया रजदमया रयणमया विविहविण्णासा ॥ १२

भिंगार-कलस-दप्पण-धय-चामर-वियण-छत्त-सुपइट्ठा । इय अट्ठुत्तरसयवरमंगलजुत्ता य पत्तेक्कं ॥ १३

दुंदुहि-मयंग-मद्दल-जयघंटा-पडह-कंसतालाणं । वीणा-वंसादीणं सद्देहिं णिच्चहलबोला ॥ १४

सीहासणादिसहिदा चामरकरणागजक्खमिहुणजुदा । तेसुं अकिट्टिमाओ जिणिंदपडिमाओ विजयंते ॥ १५

कम्मक्खवणणिमित्तं णिब्भरभत्तीए विविहदव्वेहिं । सम्माइट्ठी देवा जिणिंदपडिमाओ पूजंति ॥ १६

जघन्य भवनोंमेंसे प्रत्येकके विस्तारका प्रमाण पच्चीस योजन और बाहल्य एक योजनके चार भागोंमेंसे तीन भागमात्र है ॥ ९ ॥

अथवा जघन्य भवनोंके विस्तारका प्रमाण पृथक् पृथक् एक कोश और उनकी वेदीकी ऊंचाई पच्चीस धनुष है ॥ १० ॥ को. १ । दं. २५ । पाठान्तर ।

भवनोंके बहुमध्य भागमें वेदी, चार वन और तोरणद्वारादिकोंसे रमणीय ऐसे बाहल्यके तीसरे भागप्रमाण कूट होते हैं ॥ ११ ॥

इन कूटोंके उपरिम भागपर विविध प्रकारके विन्याससे संयुक्त सुवर्ण, चांदी और रत्नमय जिनेन्द्रप्रसाद हैं ॥ १२ ॥

प्रत्येक जिनेन्द्रप्रासाद झारी, कलश, दर्पण, ध्वजा, चंवर, बीजना, छत्र और ठौना, इन एक सौ आठ आठ उत्तम मंगल द्रव्योंसे संयुक्त हैं ॥ १३ ॥

उपर्युक्त जिनेन्द्रप्रासाद दुन्दुभी, मृदंग, मर्दल, जयघंटा, भेरी, झांझ, वीणा और बांसुरी आदि वादित्रोंके शब्दोंसे हमेशा मुखरित रहते हैं ॥ १४ ॥

उन जिनेन्द्र-भवनोंमें सिंहासनादि प्रातिहार्योंसे सहित और हाथमें चामरोंको लिये हुए नागयक्ष देवयुगलोंसे संयुक्त ऐसी अकृत्रिम जिनेन्द्रप्रतिमायें जयवन्त होती हैं ॥ १५ ॥

सम्यग्दृष्टि देव कर्मक्षयके निमित्त गाढ़ भक्तिसे विविध द्रव्योंके द्वारा उन जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १६ ॥

एदे कुलदेवा इव मण्णंता देवबोहणवलेण । मिच्छाइट्ठी देवा पूयंति[1] जिणिंदपडिमाओ ॥ १७

एदाणं कूडाणं सभंसदो वेंतराण पासादा । सत्तट्ठपहुदिभूमी विण्णासविचित्तसंठाणा ॥ १८

लंबंतरयणमाला वरतोरणरइदसुंदरदुवारा । णिम्मलविचित्तमणिमयसयणासणणिवहपरिपुण्णा ॥ १९

एवंविहरूवाणि तीससहस्साणि होंति भवणाणिं । पुव्वोदिदभवणामरभवणसमं वण्णणं सयलं ॥ २०

। भवणा समत्ता ।

वट्टादिसरूवाणं भवणपुराणं हुवेदि जेट्ठाणं । एक्कावणलक्खाणं[2] जोयणमेक्कं जहण्णाणं ॥ २१

५१०००० जो । १ ।

कूडा जिणिंदभवणा पासादा वेदिया वणप्पहुदी । भवणसरिच्छं सव्वं भवणपुरेसुं पि वट्टव्वं ॥ २२

। भवणपुरं ।

बारससहस्सबेसयजोयणवासा य जेट्ठआवासा । होंति जहण्णावासा तिकोसपरिमाणवित्थारा ॥ २३

१२२०० । को ३ ।

अन्य देवोंके उपदेशवश मिथ्यादृष्टि देव भी 'ये कुलदेवता हैं' ऐसा समझकर उन जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी पूजा करते है ॥ १७ ॥

इन कूटोंके चारों ओर सात आठ आदि भूमियोंके विन्यास और विचित्र आकृतियोंसे सहित व्यन्तरोंके प्रासाद हैं ॥ १८ ॥

ये प्रासाद लम्बायमान रत्नमालाओंसे सहित, उत्तम तोरणोंसे रचित सुन्दर द्वारोंवाले, और निर्मल एवं विचित्र मणिमय शयनों तथा आसनोंके समूहसे परिपूर्ण हैं ॥ १९ ॥

इस प्रकारके स्वरूपवाले ये प्रासाद तीस हजार प्रमाण हैं। इनका सम्पूर्ण वर्णन पूर्वमें कहे हुए भवनवासी देवोंके भवनोंके समान है ॥ २० ॥

भवनोंका वर्णन समाप्त हुआ।

वृत्त इत्यादि स्वरूपसे संयुक्त उत्कृष्ट भवनपुरोंका विस्तार इक्यावन लाख योजन और जघन्य भवनपुरोंका विस्तार एक योजनमात्र है ॥ २१ ॥ यो. ५१००००० । १ ।

कूट, जिनेन्द्रभवन, प्रासाद, वेदिका और वन आदि सब भवनोंके सदृश भवनपुरोंमें भी जानना चाहिये ॥ २२ ॥

भवनपुरोंका वर्णन समाप्त हुआ।

उत्कृष्ट आवास बारह हजार दो सौ योजनप्रमाण विस्तारवाले और जघन्य आवास तीन कोश प्रमाण विस्तारवाले हैं ॥ २३ ॥

१ द पूजंति. २ द वट्टादि. ३ 'एक्कावण लक्खाणं' इति द पुस्तके नास्ति.

कूडा जिणिंदभवणा पासादा वेदिया वणप्पहुदी । भवणपुराण सरिच्छं आवासाणं पि णादव्वा ॥ २४

। आवासा सम्मत्ता ।

। णिवासखेत्तं सम्मत्तं ।

किंणरकिंपुरुसमहोरगा य गंधव्वजक्खरक्खसिया । भूदपिसाया पुव्वं अट्ठविहा वेंतरा होंति ॥ २५

चोद्दससहस्समेत्ता भवणा भूदाण रक्खसाणं पि । सोलससहस्ससंखा सेसाणं णत्थि भवणाणिं ॥ २६

१४००० । १६००० ।

। वेंतरभेदा सम्मत्ता ।

किंणरकिंपुरुसादियवेंतरदेवाण अट्ठभेयाणं । तिदियप्पणिलयपुरदो चेत्तदुमा होंति एक्केक्का ॥ २७

कमसो असोयचंपयणागदुमतुंबुरू य पग्गोहे[1] । कंटयरुक्खो तुलसी कदंब विदओ[2] त्ति ते अट्ठ ॥ २८

ते सव्वे चेत्ततरू भावणसुरचेत्तरुक्खसारिच्छा । जीउप्पत्तिलयाणं हेऊ पुढवीसरूवा य ॥ २९

कूट, जिनेन्द्रभवन, प्रासाद, वेदिका और वन आदि भवनपुरोंके सदृश आवासोंके भी जानना चाहिये ॥ २४ ॥

आवासोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

इस प्रकार निवासक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच, इस प्रकार व्यन्तर देव आठ प्रकारके होते हैं ॥ २५ ॥

भूतोंके चौदह हजार प्रमाण और राक्षसोंके सोलह हजार प्रमाण भवन हैं । शेष व्यन्तरोंके भवन नहीं हैं ॥ २६ ॥ १४००० । १६००० ।

व्यन्तरभेदोंका कथन समाप्त हुआ ।

किन्नर-किम्पुरुषादिक आठ प्रकारके व्यन्तर देवों सम्बन्धी तीनों प्रकारके (भवन, भवनपुर, आवास) भवनोंके सामने एक एक चैत्यवृक्ष है ॥ २७ ॥

अशोक, चम्पक, नागद्रुम, तुम्बरु, न्यग्रोध (वट), कण्टकवृक्ष, तुलसी और कदम्ब वृक्ष, इस प्रकार क्रमसे वे चैत्यवृक्ष आठ प्रकारके हैं ॥ २८ ॥

ये सब चैत्यवृक्ष भवनवासी देवोंके चैत्यवृक्षोंके सदृश जीवोंकी उत्पत्ति व विनाशके कारण और पृथिवीस्वरूप हैं ॥ २९ ॥

---

१ द ब णग्गोदे. २ [विदिअ].

मूलम्मि चउदिसासुं चेत्ततरूणं जिणिंदपडिमाओ । चत्तारो चत्तारो चउतोरणसोहमाणाओ ॥ ३०
पल्लंकआसणाओ सपाडिहेराओ रयणमइयाओ । दंसणमेत्तणिवारिददुरिताओ देंतु वो मोक्खं ॥ ३१
। चिण्हाणि सम्मत्ता ।
किंणरपहुदिचउक्कं दसदसभेदं हवेदि पत्तेक्कं । जक्खा बारसभेदा सत्तवियप्पाणि रक्खसिया ॥ ३२
भूदाणि सत्तिआणिं पिसाचणामा चउद्दसवियप्पा । दोहो इंदा दोहो देवीओ दोसहस्सवल्लहिया ॥ ३३
किं १०, किंपु १०, म १०, गं १०, ज १२, र ७, भू ७, पि १४ । २ । २ । २०००।
। कुलभेदो सम्मत्तो ।
ते किंपुरिसा किंणरहिदयंगमरूवपालिकिंणरया । किंणरणिंदिदणामा मणरम्मा किंणरुत्तमया ॥ ३४
रतिपियजेट्ठा ताणं किंपुरुसा किंणरा दुवे इंदा । अवतंसा केतुमदी रतिसेणारतिपियाओ देवीओ ॥ ३५
किंणर गदा ।

चैत्यवृक्षोंके मूलमें चारों ओर चार तोरणोंसे शोभायमान चार चार जिनेन्द्रप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ ३० ॥

पल्यंक आसनसे स्थित, प्रातिहार्योंसे सहित, और दर्शनमात्रसे ही पापको दूर करनेवाली वे रत्नमयी जिनेन्द्रप्रतिमायें आप लोगोंको मोक्ष प्रदान करें ॥ ३१ ॥

इस प्रकार चिन्होंका कथन समाप्त हुआ ।

किन्नरप्रभृति चार प्रकारके व्यन्तरोंमेंसे प्रत्येकके दश दश, यक्षोंके बारह, राक्षसोंके सात, भूतोंके सात और पिशाचोंके चौदह भेद है । इनमें दो दो इन्द्र और उनके दो दो देवियां (अग्रदेवियां) होती हैं । ये देवियां दो हजार वल्लभिकाओंसे सहित होती हैं ॥३२–३३॥

किन्नर १०, किम्पुरुष १०, महोरग १०, गंधर्व १०, यक्ष १२, राक्षस ७, भूत ७, पिशाच १४ । इं. २, देवी २, वल्ल. २००० ।

कुलभेदका वर्णन समाप्त हुआ ।

किम्पुरुष, किन्नर, हृदयंगम, रूपपाली, किन्नरकिन्नर, अनिन्दित, मनोरम, किन्नरोत्तम, रतिप्रिय और ज्येष्ठ, ये दश प्रकारके किन्नर जातिके देव होते हैं । इनके किम्पुरुष और किन्नर-नामक दो इन्द्र और इन इन्द्रोंके अवतंसा, केतुमती, रतिसेना व रतिप्रिया नामक देवियां होती हैं ॥ ३४–३५ ॥

किन्नरोंका कथन समाप्त हुआ ।

पुरुसा पुरुसुत्तमसप्पुरुसमहापुरुसपुरुसपहभणामा । अतिपुरुसा तह मरुओ[1] मरुदेवमरुप्पहा जसोवंता ॥ २६
इय किंपुरुसाणिंदा[2] सप्पुरुसो ताण तह महापुरिसो । रोहणिणवमी हिरिया पुप्फवदीओ वि देवीओ ॥ २७
। किंपुरुसा गदा ।

भुजगा भुजगसाली महतणुअतिकायखंधसाली य । मणहरअसणिजमहसर गंभीरं पियदंसणा महोरगया[3] ॥ २८
महकाओ अतिकाओ इंदा पदाण होंति देवीओ । भोगा भोगवदीओ अणिंदिदा पुप्फगंधीओ ॥ २९
। महोरगा गदा ।

हाहाहूहूणारदतुंबरवासवकदंबमहसरया । गीदरदीगीदरसा वहरवतो होंति गंधव्वा ॥ ४०
गीदरदी गीदरसा इंदा ताणं पि होंति देवीओ । सरसहसरसेणाओ णंदिणिपियदंसणाओ देवीओ ॥ ४१
। गंधव्वा गदा ।

पुरुष, पुरुषोत्तम, सत्पुरुष, महापुरुष, पुरुषप्रभ, अतिपुरुष, मरु, मरुदेव, मरुप्रभ और यशस्वान्, इस प्रकार ये किम्पुरुष जातिके देवोंके दश भेद हैं। इनके सत्पुरुष और महापुरुष नामक दो इन्द्र तथा इन इन्द्रोंके रोहिणी, नवमी, ह्री व पुष्पवती नामक देवियां होती हैं ॥ १६–२७ ॥

किम्पुरुषोंका कथन समाप्त हुआ।

भुजग, भुजंगशाली, महातनु, अतिकाय, स्कन्धशाली, मनोहर, अशनिजव, महेश्वर, गम्भीर और प्रियदर्शन, ये दश महोरग जातिके देवोंके भेद हैं। इनके महाकाय और अतिकाय नामक इन्द्र व इन इन्द्रोंके भोगा, भोगवती, अनिन्दिता और पुष्पगन्धी नामक चार देवियां होती हैं ॥ २८–२९ ॥

महोरग जातिके देवोंका कथन समाप्त हुआ।

हाहा, हूहू, नारद, तुम्बर, वासव, कदम्ब, महास्वर, गीतरति, गीतरस और वज्रवान्, ये दश गन्धर्वोंके भेद हैं। इनके गीतरति और गीतरस नामक इन्द्र और इन इन्द्रोंके सरस्वती, स्वरसेना, नन्दिनी और प्रियदर्शना नामक देवियां हैं ॥ ४०–४१ ॥

गन्धर्व जातिके देवोंका कथन समाप्त हुआ।

---

१ द ब अमरा. २ द ब किंपुरुसाईद. ३ [मणहरअसणिजमहसरगंभीरप्पियदरिसणा य ।].

अह माणिपुण्णसेलमणोभद्दा भद्दका सुभद्दा य । तह सव्वभद्दमाणुसधणपालसरूवजक्खक्खा ॥ ४२
जक्खुत्तममणीहरणा ताणं दो माणिपुण्णभद्दिंदा । कुंदाबहुपुत्ताओ तारा तह उत्तमाओ देवीओ ॥ ४३
। जक्खा गदा ।

भीममहभीमविग्घविणायका उदकरक्खसा तह य । रक्खसरक्खसणामा सत्तमया बम्हरक्खसया ॥ ४४
रक्खसइंदा भीमो महभीमो ताण होंति देवीओ । पउमावसुमित्ताओ रयणड्ढकंचणपहाओ ॥ ४५
। रक्खसा गदा ।

भूदा इमे सरूवा पडिरूवा भूदउत्तमा होंति । पडिभूदमहाभूदा पडिछण्णाकासभूद त्ति ॥ ४६
भूदिंदा य सरूवो पडिरूवो ताण होंति देवीओ । रूववदी बहुरूवा सुमुही णामा सुसीमा य ॥ ४७
। भूदा गदा ।

कुंभंडजक्खरक्खससंमोहा तारआ यचोक्खक्खा । कालमहकालचोक्खा सतालया देहमहदेहा ॥ ४८
तुण्हिअपवयणणामा पिसाचइंदा य कालमहकाला । कमलाकमलपहुप्पलसुदंसणा ताण देवीओ ॥ ४९
। पिसाचा गदा ।

माणिभद्र, पूर्णभद्र, शैलभद्र, मनोभद्र, भद्रक, सुभद्र, सर्वभद्र, मानुष, धनपाल, स्वरूप-यक्ष, यक्षोत्तम और मनोहरण, ये बारह भेद यक्षोंके हैं। इनके माणिभद्र और पूर्णभद्र नामक दो इन्द्र और उन इन्द्रोंके कुन्दा, बहुपुत्रा, तारा तथा उत्तमा नामक देवियां हैं ॥ ४२-४३ ॥

यक्षोंका कथन समाप्त हुआ।

भीम, महाभीम, विनायक, उदक, राक्षस, राक्षसराक्षस और सातवां ब्रह्मराक्षस, इस प्रकार ये सात भेद राक्षस देवोंके है। इन राक्षसोंके भीम व महाभीम नामक इन्द्र और इन इन्द्रोंके पद्मा, वसुमित्रा, रत्नाढ्या और कंचनप्रभा नामक देवियां है ॥ ४४-४५ ॥

राक्षसोंका कथन समाप्त हुआ।

स्वरूप, प्रतिरूप, भूतोत्तम, प्रतिभूत, महाभूत, प्रतिच्छन्न और आकाशभूत, इस प्रकार ये सात भेद भूतोंके हैं। इन भूतोंके इन्द्र स्वरूप व प्रतिरूप और इन इन्द्रोंके रूपवती, बहुरूपा, सुमुखी और सुसीमा नामक देवियां हैं ॥ ४६-४७ ॥

भूतोंका कथन समाप्त हुआ।

कुष्माण्ड, यक्ष, राक्षस, संमोह, तारक, अशुचिनामक, काल, महाकाल, शुचि, सतालक, देह, महादेह, तूष्णीक और प्रवचन नामक, इस प्रकार ये चौदह पिशाचोंके भेद हैं। काल व महाकाल, ये पिशाचोंके इन्द्र और इन इन्द्रोंके कमला, कमलप्रभा, उत्पला व सुदर्शना नामक देवियां हैं ॥ ४८-४९ ॥

पिशाचोंका कथन समाप्त हुआ।

१ द ब विप्पू, क भीप्पू [विग्घ]. २ ब महा.

सोलसभोमिंदाणं किंणरपहुदीण होंति पत्तेक्कं । गणिका महदेवीओ दुवे दुवे रूववंतीओ ॥ ५०
मधुरा मधुरालावा सुस्सरमिदुभासिणीओ णामेहिं । पुरिसप्पियपुरिसकंता सोमाओ पुरिसदंसिणिया[1] ॥ ५१
भोगाभोगवदीओ भुजगा भुजगप्पिया य णामेणं । विमला सुघोसणामा अणिंदिदा सुस्सरस्सा य ॥ ५२
तह य सुभद्दा भद्दाओ मालिणी पउममालिणीओ वि । सव्वसिरिसव्वसेणा रुद्दाहह रुद्दणामा य ॥ ५३
भूदा य भूदकंता महबाहू भूदरत्तणामा य । अंबा य कला णामा रससुलसा तह सुदरिसणया ॥ ५४
किंणरदेवा सव्वे पियंगुसामेहि देहवण्णेहिं । उब्भासंते कंचणसारिच्छेहि पि किंपुरुसा ॥ ५५
कालस्सामलवण्णा महोरगा जक्ख[2] कंचणसवण्णा । गंधव्वा जक्खा तह कालस्सामा विराजंति ॥ ५६
सुद्धस्सामा रक्खसदेवा भूदा वि कालसामलया । सव्वे पिसाचदेवा कज्जलइंगालकसणतणू ॥ ५७
किंणरपहुदी वेंतरदेवा सव्वे वि सुंदरा होंति । सुभगा विलासजुत्ता सालंकारा महातेजा ॥ ५८

। एवं णामा समत्ता ।

किन्नर आदि सोलह व्यन्तरेन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके दो दो रूपवती गणिकामहत्तरी होती हैं ॥ ५० ॥

मधुरा, मधुरालापा, सुस्वरा, मृदुभाषिणी, पुरुषकान्ता, सौम्या, पुरुषदर्शिनी, भोगा, भोगवती, भुजगा, भुजगप्रिया, विमला, सुघोषा, अनिन्दिता, सुस्वरा, सुभद्रा, भद्रा, मालिनी, पद्ममालिनी, सर्वश्री, सर्वसेना, रुद्रा, रुद्रवती, भूता, भूतकान्ता, महाबाहु, भूतरक्ता, अम्बा, कला, रसा, सुरसा और सुदर्शनिका, ये उन गणिका महत्तरियोंके नाम हैं ॥ ५१–५४ ॥

सब किन्नर देव प्रियङ्गुके सदृश देहवर्णसे और किम्पुरुष देव सुवर्णके सदृश देहवर्णसे शोभायमान होते हैं ॥ ५५ ॥

महोरग देव काल-श्यामल वर्णवाले, गन्धर्व शुद्ध सुवर्णके सदृश, तथा यक्षदेव काल-श्यामल वर्णसे युक्त होकर शोभायमान होते है ॥ ५६ ॥

राक्षस देव शुद्ध श्यामवर्ण, भूत कालश्यामल और समस्त पिशाच देव काजल व इंगाल अर्थात् कोयलेके समान कृष्ण शरीरवाले होते है ॥ ॥ ५७ ॥

किन्नर आदि सब ही व्यन्तर देव सुन्दर, सुभग, विलासके संयुक्त, अलंकारोंसे सहित, और महान् तेजके धारक होते हैं ॥ ५८ ॥

इस प्रकार नामोंका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब महप्पियाओ. २ द ब देसिणिया. ३ द ब जंभ°.

पढमुच्चारिदणामा दक्खिणइंदा हवंति पत्तेसुं । चरिमुच्चारिदणामा उत्तरइंदा पभावजुदा ॥ ५९
ताण णयराणि अंजणकवज्जधातुकसुवण्णमणिसिलका । दीवे वज्जे रजदे हिंगुलके होंति हरिदाले ॥ ६०
णियणामंकं मज्झे पहकंतावत्तमज्झणामाइं । पुव्वादिसु इंदाणं समभागे पंच पंच णयराणि ॥ ६१
जंबूदीवसरिच्छा दक्खिणइंदा य दक्खिणे भागे । उत्तरभागे उत्तरइंदा णं तेसु दीवेसुं ॥ ६२
समचउरसंठिदाणं पायारा तप्पुराण कणयमया । विजयसुरणयरवण्णिदपायारचउत्थभागसमा ॥ ६३
ते णयराणं बाहिर असोयसत्तच्छदाण वणसंडा । चंपयचूदाण तहा पुव्वादिदिसासु पत्तेक्कं ॥ ६४
जोयणलक्खायामा पण्णाससहस्सरुंदसंजुत्ता । ते वणसंडा बहुविहविविहविभूदीहि रेहंति ॥ ६५
णयरेसु तेसु दिव्वा पासादा कणयरजदरयणमया । उच्छेहादिसु तेसुं उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ ६६
एदसु चेंतरिंदा कीडंते बहुविभूदिभंगीहिं । णाणापरिवारजुदा भणिमो परिवारणामाइं ॥ ६७

इन इन्द्रोंमेंसे जिनके नामोंका उच्चारण पहिले किया गया है वे दक्षिणेन्द्र, और जिनके नामोंका उच्चारण अन्तमें किया गया है वे उत्तरेन्द्र है। ये सब इन्द्र प्रभावसे संयुक्त होते है ॥ ५९ ॥

उन व्यन्तर देवोंके नगर अंजनक, वज्रधातुक, सुवर्ण, मनःशिलक, वज्र, रजत, हिंगुलक और हरिताल द्वीपमें स्थित है ॥ ६० ॥

इन्द्रोंके सम भागमें पांच पांच नगर होते है। इनमेंसे अपने नामसे अंकित नगर मध्यमें और प्रभ, कान्त, आवर्त एवं मध्य, इन नामोंसे अंकित [जैसे — किन्नरप्रभ, किन्नरकान्त, किन्नरावर्त, किन्नरमध्य] नगर पूर्वादिक दिशाओंमें होते है ॥ ६१ ॥

जम्बूद्वीपके समान इन द्वीपोंमें दक्षिण-इन्द्र दक्षिण भागमें, और उत्तर-इन्द्र उत्तर भागमें निवास करते है ॥ ६२ ॥

सम चौकोणरूपसे स्थित उन पुरोंके सुवर्णमय कोट विजय देवके नगरके वर्णनमें कहे गये कोटके चतुर्थ भागप्रमाण हैं ॥ ६३ ॥

उन नगरोंके बाहिर पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें अशोक, सप्तच्छद, चम्पक तथा आम्रवृक्षोंके वनसमूह स्थित है ॥ ६४ ॥

एक लाख योजन लंबे और पचास हजार योजनप्रमाण विस्तारसे सहित वे वनसमूह बहुत प्रकारकी अनेको विभूतियोंसे सुशोभित होते हैं ॥ ६५ ॥

उन नगरोंमें सुवर्ण, चांदी एवं रत्नमय जो दिव्य प्रासाद हैं उनकी ऊंचाई आदिका उपदेश इस समय नष्ट होगया है ॥ ६६ ॥

इन नगरोंमें नाना प्रकारके परिवारसे संयुक्त व्यन्तरेन्द्र बहुत प्रकारकी विभूतियोंसे क्रीड़ा करते हैं। यहां उनके परिवारके नामोंको कहते हैं ॥ ६७ ॥

पडिइंदा सामाणिय तणुरक्खा होंति तिण्णि परिसाओ । सत्ताणीयपइण्णा अभियोगं ताण पत्तेयं ॥ ६८

एक्केक्को पडिइंदो एक्केक्काणं हवेदि इंदाणं । चत्तारि सहस्साणिं सामाणियणामदेवाणं ॥ ६९

१ । सा ४००० ।

एक्केक्कस्सिंदे तणुरक्खाणं होइ सोलसहस्सा । अट्ठदहबारसकमा तिप्परिसासुं सहस्साणिं ॥ ७०

१६००० । ८००० । १०००० । १२००० ।

करिहयपाइक्क तहा गंधव्वा णट्टआ रहा वसहा । इय सत्ताणीयाणिं पत्तेक्कं होंति इंदाणं ॥ ७१

कुंजरतुरयादीणं पुह पुह चेट्ठंति सत्त कक्खाओ । तेसुं पढमा कक्खा अट्ठावीसं सहस्साणिं ॥ ७२

२८००० ।

बिदियादीणं दुगुणा दुगुणा ते होंति कुंजरप्पहुदी । एदाणं मिलिदाणं परिमाणाइं परूवेमो ॥ ७३

पंचत्तीसं लक्खा छप्पण्णसहस्ससंजुदा ताणं । एक्केक्कस्सिं इंदे हत्थीणं होंति परिमाणं ॥ ७४

३५५६००० ।

उन इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके प्रतीन्द्र, सामानिक, तनुरक्ष, तीनों पारिषद, सात अनीक, प्रकीर्णक और आभियोग्य, इस प्रकार ये परिवार देव होते हैं ॥ ६८ ॥

प्रत्येक इन्द्रके एक एक प्रतीन्द्र और चार हजार सामानिक नामक देव होते हैं ॥ ६९ ॥

प्र. १ । सा. ४००० ।

एक एक इन्द्रके तनुरक्षकोंका प्रमाण सोलह हजार और तीनों पारिषद देवोंका प्रमाण क्रमशः आठ हजार, दश हजार तथा बारह हजार है ॥ ७० ॥

१६००० । ८००० । १००००० । १२००० ।

हाथी, घोड़ा, पदाति, गन्धर्व, नर्तक, रथ और बैल, इस प्रकार ये प्रत्येक इन्द्रोंके सात सेनायें होती है ॥ ७१ ॥

हाथी और घोड़े आदिकी पृथक् पृथक् सात कक्षायें स्थित हैं । इनमेंसे प्रथम कक्षाका प्रमाण अट्ठाईस हजार है ॥ ७२ ॥ २८००० ।

द्वितीयादिक कक्षाओंमें वे हाथी आदि दूने दूने है । इनके सम्मिलित प्रमाणको कहते हैं ॥ ७३ ॥

उनमेंसे प्रत्येक इन्द्रके हाथियोंका प्रमाण पैंतीस लाख और छप्पन्न हजार है ॥ ७४ ॥

३५५६००० ।

बाणउदिसहस्साणिं छक्खा सगदाल बेण्णि कोडीओ। इंदाणं पत्तेकं सत्ताणीयाण परिमाणं ॥ ७५

२४८९२०००।

भोमिंदाण पइण्णयअभिजोग्गसुरा हुवंति किब्बिसिया। ताणं पमाणहेदू उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ ७६

एवंविहपरिवारा वेंतरइंदा सुहाइ भुंजंता। णंदंति णियपुरेसुं बहुविहकेलीओ' कुणमाणा ॥ ७७

णियणियइंदपुरीणं दोसु वि पासेसु होंति णयराणिं। गणिकामहत्तियाणं वरवेदीपहुदिजुत्ताणिं ॥ ७८

चुलसीदिसहस्साणिं जोयणया तप्पुरीण वित्थारो। तेत्तियमेत्तं दीहं पत्तेकं होदि णियमेणं ॥ ७९

। ८४०००।

णीचोपपाददेवा हत्थपमाणे वसंति भूमीदो। दिग्गुत्तासिसुरायंतरणिवासिकुंभंडउप्पण्णा ॥ ८०

अणुपण्णा अ पमाणय गंधमहगंधभुजंगपीदिकया। बारसमा आयासे उववण्ण वि इंदपरिवारा ॥ ८१

उवरिं उवरिं वसंते तिण्णि वि णीचोववादट्ठाणादो। दस हत्थसहस्साइं सेसा विउणेहि पत्तेकं ॥ ८२

प्रत्येक इन्द्रोंकी सात अनीकोंका प्रमाण दो करोड़ अड़तालीस लाख बानवे हजार है ॥ ७५ ॥ २४८९२००० ।

व्यन्तरेन्द्रोंके जो प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक देव होते है, उनके प्रमाणका निरूपक उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ ७६ ॥

इस प्रकारके परिवारसे संयुक्त होकर सुखोंको भोगनेवाले व्यन्तरेन्द्र अपने अपने पुरोंमें बहुत प्रकारकी क्रीड़ाओंको करते हुए आनन्दको प्राप्त होते है ॥ ७७ ॥

अपने अपने इन्द्रकी नगरियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें उत्तम वेदी आदिसे संयुक्त गणिका-महत्तरियोंके नगर होते हैं ॥ ७८ ॥

उन पुरियोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार चौरासी हजार योजनप्रमाण और इतनी ही नियमसे लंबाई भी है ॥ ७९ ॥ ८४००० ।

नीचोपपाद देव पृथिवीसे एक हाथप्रमाण ऊपर निवास करते हैं। इनके अतिरिक्त दिग्वासी देव, अन्तरनिवासी, कूष्माण्ड, उत्पन्न, अनुत्पन्न, प्रमाणक, गन्ध, महागन्ध, भुजंग, प्रीतिक और बारहवें आकाशोत्पन्न, ये इन्द्रके परिवार-देव क्रमसे ऊपर ऊपर निवास करते है। इनमेंसे तीन प्रकारके (दिग्वासी, अन्तरनिवासी, कूष्माण्ड) देव नीचोपपाद देवोंके स्थानसे उत्तरोत्तर दश हजार हाथोंके अन्तरसे और शेष देवोंमेंसे प्रत्येक इससे दूने अर्थात् बीस हजार हाथोंके अन्तरसे रहते हैं ॥ ८०–८२ ॥

---

१ द्र केदीओ, ब केदाओ.

ताणं विण्णासरूवसंदिट्ठी—



। दक्खिण-उत्तरइंदाणं परूवणा समत्ता ।

उक्कस्साऊ पल्लं होदि असंखो य मज्झिमो आऊ । दस वाससहस्साणिं भोमसुराणं जहण्णाऊ ॥ ८३

प १ । a[1] । १०००० ।

इंदपडिंदसमाणय पत्तेक्कं एक्कमेक्कपल्लाऊ । गणिकामहत्तियाणं पल्लद्धं सेसयाण जहजोग्गं ॥ ८४

उनकी विन्यासरूप संदृष्टि—

क्रम संख्या	देव	अन्तर
१२	आकाशोत्पन्न	२०००० ह.
११	प्रीतिक	२०००० ह.
१०	भुजंग	२०००० ह.
९	महागन्ध	२०००० ह.
८	गन्ध	२०००० ह.
७	प्रमाणक	२०००० ह.
६	अनुत्पन्न	२०००० ह.
५	उत्पन्न	२०००० ह.
४	कूष्माण्ड	१००००० ह.
३	अन्तरनिवासी	१०००० ह.
२	दिग्वासी	१०००० ह.
१	नीचोपपाद	१ हस्त

इस प्रकार दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

व्यन्तर देवोंकी उत्कृष्ट आयु एक पल्यप्रमाण, मध्यम आयु असंख्यात वर्ष, और जघन्य आयु दश हजार वर्षमात्र है ॥ ८३ ॥ प. १ । असंख्यात । १०००० ।

इन्द्र, प्रतीन्द्र व सामानिक देवोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक एक पल्यप्रमाण, गणिका-महत्तरियोंकी अर्ध पल्य, और शेष देवोंकी आयु यथायोग्य है ॥ ८४ ॥

१ द ब ज.

दस वाससहस्साणिं आऊ णीचोपवाददेवाणं । तत्तो जाव यसीदिं तेत्तियमेत्ताए वड्ढीए ॥ ८५

अह चुलसीदी पल्लट्ठमंसपादं कमेण[1] पल्लद्धं । दिव्वासिप्पहुदीणं भणिदं आउस्स परिमाणं ॥ ८६

१०००० । २०००० । ३०००० । ४०००० । ५०००० । ६०००० । ७०००० ।

८०००० । ८४००० । $\frac{१}{८}$ । $\frac{१}{४}$ । $\frac{१}{२}$ ।

। आउपमाणा समत्ता ।

दिव्वं अमयाहारं मणेण भुंजंति किंणरप्पमुहा । देवा देवीओ तहा तेसुं कवलासणं णत्थि ॥ ८७

पल्लाउजुदे देवे कालो असणस्स पंच दिवसाणिं । दोण्णि च्चिय णादव्वो दसवाससहस्सआउम्मि ॥ ८८

। आहारपरूवणा सम्मत्ता ।

पलिदोवमाउजुत्ता पंचमुहुत्तेहिं एंदि उस्सासो । सो अजुदाउजुदे वेंतरदेवम्मि अ सत्त पाणेहिं ॥ ८९

। उस्सासपरूवणा सम्मत्ता ।

नीचोपपाद देवोंकी आयु दश हजार वर्ष है । इसके आगे दिग्वासी आदि शेष देवोंकी आयुका प्रमाण क्रमसे अस्सी हजार वर्ष तक इतनी मात्र अर्थात् दश हजार वर्षोंकी वृद्धिसे, पश्चात् चौरासी हजार वर्ष, पल्यका आठवां भाग, पल्यका एक पाद, और अर्ध पल्यप्रमाण कहा गया है ॥ ८५–८६ ॥ नीचोपपाद वर्ष १०००० । दिग्वासी २०००० । अन्तरनिवासी ३०००० । कूष्माण्ड ४०००० । उत्पन्न ५०००० । अनुत्पन्न ६०००० । प्रमाणक ७०००० । गन्ध ८०००० । महागन्ध ८४००० । भुजंग पल्य $\frac{१}{८}$ । प्रीतिक $\frac{१}{४}$ । आकाशोत्पन्न $\frac{१}{२}$ ।

आयुका प्रमाण समाप्त हुआ ।

किन्नर आदि व्यन्तर देव तथा देवियां दिव्य एवं अमृतमय आहारका मनसे ही उपभोग करती हैं, उनके कवलाहार नहीं है ॥ ८७ ॥

पल्यप्रमाण आयुसे युक्त देवोंके आहारका काल पांच दिन, और दश हजार वर्षप्रमाण आयुवाले देवोंके आहारका काल दो दिनमात्र जानना चाहिये ॥ ८८ ॥

आहारप्ररूपणा समाप्त हुई ।

व्यन्तर देवोंमें जो पल्यप्रमाण आयुसे युक्त हैं वे पांच मुहूर्तोंमें, और जो दश हजार वर्षप्रमाण आयुसे संयुक्त हैं वे सात प्राणोंमें (उच्छ्वास-निश्वासपरिमित कालविशेष) ही उच्छ्वासको प्राप्त करते है ॥ ८९ ॥

उच्छ्वासप्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ द ब 'पादकमेण.

अवरा ओहिधरित्ती अणुदसजुदस्स पंचकोसाणिं । उक्किट्ठा पण्णासा हेट्ठोवरि पत्तमाणस्स ॥ ९०

। को ५ । को ५० ।

पलिदोवमाउजुत्तो वेंतरदेवो तकम्मि उवरिम्मि । अवधीए जोयणाणं एक्कं लक्खं पलोएदि ॥ ९१

१००००० ।

। ओहिणाणं समत्तं ।

दसवाससहस्साऊ एक्कसयं माणुसाण मारेदुं । पोसेदुं पि समत्थो एक्केक्को वेंतरो देवो ॥ ९२

पण्णाधियसयदंडप्पमाणविक्खंभबहलजुत्तं सो । खेत्तं णियसत्तीए उक्खणिदूणं खवेदि[1] अण्णत्थ ॥ ९३

पल्लट्ठदि[2] भाजेहिं छक्खंडाणिं पि एक्कपल्लाऊ । मारेदुं पोसेदुं तेसु समत्थो ठिदं[3] लोयं ॥ ९४

उक्कस्से रूवसदं देवो विकरेदि अणुदमेत्ताऊ । अवरे सगरूवाणिं मज्झिमयं विविहरूवाणिं ॥ ९५

नीचे व ऊपर देखनेवाले दश हजार वर्षप्रमाण आयुसे युक्त व्यन्तर देवोंके जघन्य अवधिका विषय पांच कोश और उत्कृष्ट पचास कोशमात्र है ॥ ९० ॥

जघन्य को. ५ । उत्कृष्ट को. ५० ।

पल्योपमप्रमाण आयुसे युक्त व्यन्तरदेव अवधिज्ञानसे नीचे व ऊपर एक लाख योजन-प्रमाण देखते हैं ॥ ९१ ॥ १००००० ।

अवधिज्ञानका कथन समाप्त हुआ ।

दश हजार वर्ष प्रमाण आयुका धारक प्रत्येक व्यन्तर देव एक सौ मनुष्योंको मारने व पालनेके लिये समर्थ है ॥ ९२ ॥

वह देव एक सौ पचास धनुषप्रमाण विस्तार व बाहल्यसे युक्त क्षेत्रको अपनी शक्तिसे उखाड़कर अन्यत्र फेंक सकता है ॥ ९३ ॥

एक पल्यप्रमाण आयुका धारक व्यन्तर देव अपनी भुजाओंसे छह खण्डोंको उलट सकता है और उनमें स्थित लोगोंको मारने व पालनेके लिये भी समर्थ है ॥ ९४ ॥

दश हजार वर्षमात्र आयुका धारक व्यन्तर देव उत्कृष्ट रूपसे सौ रूपोंकी और जघन्यरूपसे सात रूपोंकी विक्रिया करता है । मध्यमरूपसे वह देव सातसे ऊपर और सौसे नीचे विविध रूपोंकी विक्रिया करता है ॥ ९५ ॥

---

१ द ब खेदि. २ द पडडेदि, ब पडदि. ३ द छक्खंडेण पि, ४ द ब दिदं.

सेसा वेंतरदेवा णियणियओहीण जेत्तियं खेत्तं । पूरंति तेत्तियं पि हु पत्तेक्कं विकरणबलेणं ॥ ९६

संखेज्जजोयणाणिं संखेज्जाऊ य एक्कसमयेणं । जादि असंखेज्जाणिं ताणि असंखेज्जआऊ य ॥ ९७

। सत्तिपरूवणा सम्मत्ता ।

अट्ठाण वि पत्तेक्कं किंणरपहुदीण वेंतरसुराणं । उच्छेहो णादव्वो दसकोदंडप्पमाणेणं ॥ ९८

। उच्छेहपरूवणा सम्मत्ता ।

चउलक्खाधियतेवीसकोडिअंगुलयसूइवग्गेहिं । भजिदाए सेढीए वग्गे भोमाण परिमाणं ॥ ९९

$\frac{\overline{\text{व}}}{४}$ | ५३०८४१६०००००००००० ।

। संखा सम्मत्ता ।

संखातीदविभत्ते वितरवासम्मि लद्धपरिमाणा । उप्पज्जंता देवा मरमाणा होंति तम्मेत्ता ॥ १००

। उप्पज्जणमरणा सम्मत्ता ।

बाकीके व्यन्तर देवोंमेंसे प्रत्येक देव अपने अपने अवधिज्ञानोंका जितना क्षेत्र है उतने मात्र क्षेत्रको विक्रियाबलसे पूर्ण करते हैं ॥ ९६ ॥

संख्यात वर्षप्रमाण आयुसे युक्त व्यन्तर देव एक समयमें संख्यात योजन और असंख्यात वर्षप्रमाण आयुसे युक्त वह असंख्यात योजन जाता है ॥ ९७ ॥

शक्तिप्ररूपणा समाप्त हुई ।

किन्नर प्रभृति आठों व्यन्तर देवोंमेंसे प्रत्येककी उंचाई दश धनुषप्रमाण जानना चाहिये ॥ ९८ ॥

उत्सेधप्ररूपणा समाप्त हुई ।

तेईस करोड़ चार लाख सूच्यंगुलोंके वर्गका (अर्थात् तीन सौ योजनके वर्गका) जगश्रेणिके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना व्यन्तर देवोंका प्रमाण है ॥ ९९ ॥

संख्याका कथन समाप्त हुआ ।

व्यन्तरोंके असंख्यातका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने देव उत्पन्न होते है और उतने ही मरते हैं ॥ १०० ॥

उत्पद्यमान व म्रियमाण देवोंका कथन समाप्त हुआ ।

आउसबंधणभावं दंसणगहणाण कारणं विविहं । गुणठाणपहुदीणिं भउमाणं भावसामाणि ॥ १०१

जोयणसदत्तियकदी भजिदे पदरस्स संखभागम्मि । जं लद्धं तं माणं वेंतरलोए जिणपुराणं ॥ १०२

$\frac{३००}{४}$ | ५३०८४१६०००००००००० ।

इंदसदणमिदचलणं अणंतसुहणाणविरियदंसणया । भव्वंबुजवणभाणुं सेयंसजिणं पसादेमि[१] ॥ १०३

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए वेंतरलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम
छट्ठमो महाहियारो सम्मत्तो ॥ ६ ॥

आयुके बांधनेवाले भाव, सम्यग्दर्शनग्रहणके विविध कारण और गुणस्थानादिकोंका कथन व्यन्तरोंके भवनवासियोंके समान जानना चाहिये ॥ १०१ ॥

जगप्रतरके संख्यात भागमें तीनसौ योजनोंके वर्गका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना व्यन्तरलोकमें जिनपुरोंका प्रमाण है । ॥ १०२ ॥

जिनके चरणोंमें सौ इन्द्रोंने नमस्कार किया है और जो अनन्तसुख, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य व अनन्तदर्शनसे सहित हैं तथा भव्यजीवरूप कमलवनके विकसित करनेके लिये सूर्यके समान हैं ऐसे श्रेयांस जिनको मैं प्रसन्न करता हूं ॥ १०३ ॥

इस प्रकार आचार्यपरंपरागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें व्यन्तरलोकस्वरूपनिरूपण प्रज्ञप्ति नामक छठा महाधिकार समाप्त हुआ ।

---

१ द ब पसादम्मि.

[सत्तमो महाधियारो]

[1]अक्खलियणाणदंसणसहियं सिरिवासुपुज्जजिणसामिं । णमिऊणं वोच्छामो जोइसियजगस्स पण्णत्तिं ॥ १
जोइसियणिवासखिदी भेदो संखा तहेव विण्णासो । परिमाणं चरचारो अचरसरूवाणि आऊ य ॥ २
आहारो उस्सासो उच्छेहो ओहिणाणसत्तीओ । जीवाणं उप्पत्तीमरणाइं एक्कसमयम्मि ॥ ३
आउगबंधणभावं दंसणगहणस्स कारणं विविहं । गुणठाणादिपवण्णणमहियारा सत्तरसिमाए ॥ ४

[१७][2]

रज्जुकदी गुणिदव्वं एक्कसयदसुत्तरेहिं जोयणए । तस्सिं अगम्मदेसं[3] सोधिय सेसम्मि जोदिसिया ॥ ५

=

४९ । ११० ।

तं पि य अगम्मखेत्तं समवट्टं जंबुदीवबहुमज्झे । पणएक्कखपणदुगणवदोतिखतियएक्कजोयणंककमे ॥ ६

१३०३२९२५०१५ ।

। णिवासखेत्तं सम्मत्तं ।

अस्खलित ज्ञान-दर्शनसे सहित श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्रको नमस्कार करके ज्योतिर्लोककी प्रज्ञप्तिको कहते हैं ॥ १ ॥

[1]ज्योतिषी देवोंका निवासक्षेत्र, [2]भेद, [3]संख्या, [4]विन्यास, [5]परिमाण, [6]चर ज्योतिषियोंका संचार, [7]अचर ज्योतिषियोंका स्वरूप, [8]आयु, [9]आहार, [10]उच्छ्वास, [11]उत्सेध, [12]अवधिज्ञान, [13]शक्ति, [14]एक समयमें जीवोंकी उत्पत्ति व मरण, [15]आयुके बन्धक भाव, [16]सम्यग्दर्शनग्रहणके विविध कारण और [17]गुणस्थानादि वर्णन, इस प्रकार ये ज्योतिर्लोकके कथनमें सत्तरह अधिकार है ॥ २–४ ॥

राजुके वर्गको एक सौ दश योजनोंसे गुणा करनेपर जो लब्ध आवे उनमेंसे अगम्य देशको छोड़कर शेषमें ज्योतिषि देव रहते है ॥ ५ ॥ रा[2] × ११० ।

वह अगम्य क्षेत्र भी समवृत्त जम्बूद्वीपके बहुमध्य भागमें स्थित है । उसका प्रमाण अंकक्रमसे पांच, एक, शून्य, पांच, दो, नौ, दो, तीन, शून्य, तीन और एक, इन अंकोसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजनमात्र है ॥ ६ ॥ १३०३२९२५०१५ यो. ।

निवासक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ अतः प्राक् द ब प्रत्योः एतत्पद्यमुपलभ्यते– पुनिकुमुदाकरंगदनुरागदिनादमरल्विनं कृशाननविरतातिसादतमसं मनुद्विये पापिनं जग । ज्जननयनोत्पलं विरिविनं सुतपोधरणीधराग्रदिं जनयिसिद सुकांतिकुलचंद्रमुनींद्रशशांकमंडलं ॥ २ द ब अवर°. ३ द ब ⅀ । १०० । ४ द अगमदेसि.

चंदा दिवायरा गहणक्खत्ताणि पइण्णताराओ । पंचविहा जोदिगणा लोयंतघणोवहिं पुट्ठा ॥ ७

णवरि विसेसो पुव्वावरदक्खिणउत्तरेसु भागेसुं । अंतरमत्थि त्ति[1] ण ते छिवंति जोइग्ग सो वाऊ ॥ ८

पुव्वावरविच्चालं एक्कसहस्सं विहत्तरी अधिया[2] । जोयणया पत्तेक्कं रूवस्सासंखभागपरिहीणं[3] ॥ ९

$$१०७२ । \text{रिण } \frac{१}{a} |$$

तद्दक्खिणुत्तरेसुं रूवस्सासंखभागअधियाओ । बारसजोयणहीणा पत्तेक्कं तिण्णि रज्जूओ ॥ १०

$$— ३ \text{ रिण जो } १२ । \frac{१}{a} |^{४}$$

। भेदो सम्मत्तो[5] ।

भजिदम्मि सेढिवग्गे वेसयछप्पण्णअंगुलकदीए । जं लद्धं सो रासी जोदिसियसुराण सव्वाणं । ११

$$= । ६५५३६ ।$$

चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक तारा, इस प्रकार ज्योतिषी देवोंके समूह पांच प्रकारके है । ये ज्योतिषी देव लोकके अन्तमे घनोदधि वातवलयको छूते है ॥ ७ ॥

विशेष इतना है कि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर भागोंमें अन्तर है । इसलिये वे ज्योतिषी देव उस घनोदधि वातवलयको नही छूते (?) ॥ ८ ॥

प्रत्येक दिशामें पूर्व-पश्चिम अन्तराल एक हजार बहत्तर योजन व रूपके असंख्यातवे भागसे हीन है ॥ ९ ॥

$$\text{यो. } १०७२ - \frac{१}{\text{असं.}} ।$$

वह अन्तराल प्रत्येकके दक्षिण-उत्तर भागोंमें रूपके असंख्यातवे भागसे अधिक व बारह योजन कम तीन राजु प्रमाण है ॥ १० ॥

$$\text{रा. } ३ - \text{यो. } १२ - \frac{१}{\text{असं.}} ।$$

भेदका कथन समाप्त हुआ ।

दो सौ छप्पन अंगुलोंके वर्गका जगश्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सम्पूर्ण ज्योतिषी देवोंकी राशि है ॥ ११ ॥ जगश्रेणी ÷ ६५५३६ ।

---

१ द ब अंतरमत्थि त. २ ब अधियाओ. ३ द ब परिमाणं ४ द ब $\frac{१}{a}$. ५ द ब सम्मत्तं.

अट्ठचउदुतितिसत्ता सत्त य ठाणेसु णवसु सुण्णाणिं। छत्तीससत्तदुणवअट्ठातिचउक्का होंति अंककमा ॥ १२

एदेहि गुणिदसंखेज्जरूवपदरंगुलेहिं भजिदाए। सेढिकदीए लद्धं माणं चंदाण जोइसिंदाणं ॥ १३

४। ७। ४३८३८९२७३६०००००००००७७३३२४८।

तेत्तियमेत्ता रविणो हुवंति चंदाण ते पडिंद त्ति। अट्ठासीदि गहाणिं एक्केक्काणं मयंकाणं ॥ १४

४। ७। ४३८३८९२७३६०००००००००७७३३२४८।

बुहसुक्कबिहप्पइणो मंगलसणिकाललोहिदा कणओ। णीलविकाला केसो कवयवओ कणयसंठाणा ॥ १५

। १३'।

दुंदुभगो रत्तणिभो णीलब्भासो असोयसंठाणो। कंसो रूवणिभक्खो कंसयवण्णो य संखपरिणामा ॥ १६

। ८।

तिलपुप्फसंखवण्णोदयवण्णो पंचवण्णणामक्खा। उप्पायधूमकेदू तिलो य णभछाररासी य ॥ १७

। ९'।

विजयण्हसरिससंधी कलेवराभिण्णगंधिमाणवया। कालककालककेदू णियलाणयविज्जुजीहा य ॥ १८

। १२।

आठ, चार, दो, तीन, तीन, सात, सात, नौ स्थानोंमें शून्य, छत्तीस, सात, दो, नौ, आठ, तीन और चार, ये क्रमसे अंक होते हैं। इनसे गुणित संख्यातरूप प्रतरांगुलोंका जगश्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना चन्द्र ज्योतिषियोंका प्रमाण है ॥ १२–१३ ॥

ज. श्रे.[२] ÷ (सं. प्र. अं. × ४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८).

इतने ही (चन्द्रोंके बराबर) सूर्य भी है। ये चन्द्रोंके प्रतीन्द्र होते हैं। प्रत्येक चन्द्रके अठासी ग्रह होते हैं ॥ १४ ॥

ज. श्रे.[२] ÷ (सं. प्र. अं. × ४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८).

बुध[1], शुक्र[2], बृहस्पति[3], मंगल[4], शनि[5], काल[6], लोहित[7], कनक[8], नील[9], विकाल[10], केश[11], कवयव[12], कनकसंस्थान[13], दुंदुभक[14], रक्तनिभ[15], नीलाभास[16], अशोकसंस्थान[17], कंस[18], रूपनिभ[19], कंसकवर्ण[20], शंखपरिणाम[21], तिलपुष्प[22], शंखवर्ण[23], उदकवर्ण[24], पंचवर्ण[25], उत्पात[26], धूमकेतु[27], तिल[28], नभ[29], क्षारराशि[30], विजिष्णु[31], सदृश[32], संधि[33], कलेवर[34], अभिन्न[35], ग्रन्थि[36], मानवक[37], कालक[38], कालकेतु[39], निलय[40], अनय[41], विद्युज्जिह्व[42], सिंह[43], अलक[44], निर्दुःख[45],

१ ब १४. २ द ब कंचयवण्णो. ३ द ब १०.

सिंहालकणिदुक्खा कालमहाकालरुद्दमहरुद्दा । संताणविउलसंभवसव्वट्ठी खेमचंदो य ॥ १९

। १३[1] ।

णिम्मंतजोइमंता दिससंठियविरदवीतसोका य । णिच्चलपलंबभासुरसयंपभा विजयवइजयंते य ॥ २०

। ११[2] ।

सीमंकरावराजियैजयंतविमलाभयंकरो वियसो[3] । कट्टी वियडो[4] कज्जलि अग्गीजालो असोकयो केतू ॥ २१

। १२ ।

खीरसऽघस्सवणज्जलकेदुकेदुअंतरयएक्कसंठाणा । अस्सो य भावगहं[5] चरिमा य महग्गहा णामा ॥ २२

। १० ।

छप्पण छक्क छक्कं छण्णव सुण्णाणि होंति[6] दसठाणा । दोणवपंचयछक्कं अट्ठचउपंचअंककमे ॥ २३

एदेण गुणिदसंखेज्जरूवपदरंगुलेहि भजिदूणं । सेढिकदी एक्कारसहदम्मि सव्वग्गहाण परिसंखा ॥ २४

$$= \frac{\text{ज. श्रे.}}{\text{सं. प्र. अं.} \times ५४८६५९२०००००००००९६६६५६} \times ११$$

एक्केक्कसमंकाणं अट्ठावीसा हुवंति णक्खत्ता । एदाणं णामाइं कमजुत्तीए परूवेमो ॥ २५

काल[7], महाकाल[8], रुद्र[9], महारुद्र, संतान[10], विपुल[11], संभव[12], सर्वार्थी[13], क्षेम[14], चन्द्र[15], निर्मन्त्र[16], ज्योतिष्मान्[17], दिशासंस्थित[18], विरत[19], वीतशोक[20], निश्चल[21], प्रलंब[22], भासुर[23], स्वयंप्रभ[24], विजय[25], वैजयन्त[26], सीमंकर[1], अपराजित[2], जयन्त[3], विमल[4], अभयंकर[5], विकस[6], काष्ठी[7], विकट[8], कज्जली[9], अग्निज्वाल[10], अशोक[11], केतु[12], क्षीरस[13], अघ[14], श्रवण[15], जलकेतु[16], केतु[17], अन्तरद[18], एकसंस्थान[19], अश्व[20], भावग्रह[21] और अन्तिम महाग्रह[22], इस प्रकार ये अट्ठासी ग्रहोंके नाम हैं ॥ १५-२२ ॥

छह, पांच, छह, छह, छह, नौ, दश स्थानोंमें शून्य, दो, नौ, पांच, छह, आठ, चार और पांच, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यातरूप प्रतरांगुलोंका जगश्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे ग्यारहसे गुणा करनेपर सम्पूर्ण ग्रहोंकी संख्या होती है ॥ २३-२४ ॥

ज. श्रे. ÷ (सं. प्र. अं. × ५४८६५९२०००००००००९६६६५६) × ११.

एक एक चन्द्रके अट्ठाईस नक्षत्र होते है । यहां क्रमयुक्तिसे उनके नामोंको कहते हैं ॥ २५ ॥

---

१ द ब १२. २ द ब १०. ३ द ब °जय°. ४ द ब विमला. ५ द ब. विमलो. ६ द ब असतो. ७ ब °भावगाह. ८ ब हुंति.

कित्तियरोहिणिमिगसिरअद्दाओ[1] पुणव्वसु तहा पुस्सो। असिलेसादी मघओ पुव्वाओ उत्तराओ य हत्थो य ॥
चित्ताओ सादीओ होंति विसाहाणुराहजेट्ठाओ। मूलं पुव्वासाढा तत्तो वि य उत्तरासाढा ॥ २७
अभिजीसवणधणिट्ठा सदभिसणामाओ पुव्वभद्दपदा। उत्तरभद्दपदा रेवदीओ तह अस्सिणी भरणी[2] ॥२८
दुगइगितियतितिणवया एक्का ठाणेसु णवसु सुण्णाणिं। चउअट्ठएक्कतियसत्तणवयगयणेक्कअंककमे[3] ॥ २९
एदेहि गुणिदसंखेज्जरूवपदरंगुलेहिं भजिदूणं। सेढिकदी सत्तहदे परिसंखा सव्वरिक्खाणं ॥ ३०

= ७
४ । ७ । १०९७३१८४०००००००००१९३३३१२ ।

एक्केक्कमयंकाणं हुवंति ताराण कोडिकोडीओ। छावट्ठिसहस्साणं णवसय पंचहत्तरिजुदाणिं ॥ ३१
तारागणसंखा ६६९७५०००००००००००० ।

संपहि कालवसेणं ताराणामाण णत्थि उवदेसो। एदाणं सव्वाणं पमाणाणिं परूवेमो ॥ ३२

---

[1]कृत्तिका, [2]रोहिणी, [3]मृगशीर्षा, [4]आर्द्रा, [5]पुनर्वसु, [6]पुष्य, [7]आश्लेषा, [8]मघा, [9]पूर्वा फाल्गुनी, [10]उत्तरा फाल्गुनी, [11]हस्त, [12]चित्रा, [13]स्वाति, [14]विशाखा, [15]अनुराधा, [16]ज्येष्ठा, [17]मूल, [18]पूर्वाषाढा, [19]उत्तराषाढा, [20]अभिजित्, [21]श्रवण [22]धनिष्ठा, [23]शतभिषा, [24]पूर्व भाद्रपदा, [25]उत्तर भाद्रपदा, [26]रेवति, [27]अश्विनी और [28]भरणी, ये उन नक्षत्रोंके नाम हैं ॥ २६–२८ ॥

दो, एक, तीन, तीन, तीन नौ, एक, नौ स्थानोंमें शून्य, चार, आठ, एक, तीन, सात, नौ, शून्य और एक, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यातरूप प्रतरांगुलोंका जगश्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे सातसे गुणा करनेपर सब नक्षत्रोंकी संख्या होती है ॥ २९–३० ॥

ज. श्रे.[2] ÷ (सं. प्र. अं. × १०९७३१८४०००००००००१९३३३१२) × ७.

एक एक चन्द्रके छयासठ हजार नौ सौ पचत्तर कोड़ाकोड़ी तारे होते हैं ॥ ३१ ॥

इस समय कालके वशसे ताराओंके नामोंका उपदेश नहीं है। इन सबके प्रमाणोंको कहते हैं ॥ ३२ ॥

---

१ द ब 'सिरे'. २ ब अद्द. ३ द ब मरणीओ. ४ द ब °कमो.

दुगसत्तचउक्काहं एक्कारसठाणएसु सुण्णाहं । णवसत्तछद्दुगाइं अंकाण कमेण एदेणं ॥ ३३

संगुणिदेहिं संखेज्जरूवपदरंगुलेहिं भजिदव्वो । सेढीवग्गो तत्तो पणसत्तियचउक्कट्ठा ॥ ३४

णवअट्ठपंचणवदुगअट्ठासत्तट्ठणवचउक्काणिं । अंककमे गुणिदव्वो परिसंखा सव्वतारांणं ॥ ३५

= ४९८७८२९५८९८४३७५

४ । ७ । २६७९०००००००००००४७२ ।

। संखा समत्ता ।

गंतूणं सीदिजुदं अट्ठसया जोयणाणि चित्ताए । उवरिम्मि मंडलाइं चंदाणं होंति गयणम्मि ॥ ३६

। ८८० ।

उत्ताणावट्ठिदगोलगद्धसरिसाणि सग्गिमणिमयाणिं । ताणं पुह पुह बारससहस्सलिस्सियरमंदकिरणाणिं ॥३७

तेसु ट्ठिदपुढविजीवा जुत्ता उज्जोवकम्मउदएणं । जम्हा तम्हा ताणिं फुरंतविसियरमंदकिरणाणिं ॥ ३८

दो, सात, चार, ग्यारह स्थानोंमें शून्य, नौ, सात, छह और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यात रूप प्रतरांगुलोंका जगश्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसको पांच, सात, तीन, चार, आठ, नौ, आठ, पांच, नौ, दो, आठ, सात, आठ, नौ और चार, इन अंकोंसे गुणा करनेपर सब ताराओंकी संख्या होती है ॥ ३३-३५ ॥

ज. श्रे.[2] ÷ (सं. प्र. अं × २६७९०००००००००४७२)

× ४९८७८२९५८९८४३७५.

इस प्रकार संख्याका कथन समाप्त हुआ ।

चित्रा पृथिवीसे ऊपर आठसौ अस्सी योजन जाकर आकाशमें चन्द्रोंके मण्डल हैं ॥ ३६ ॥ ८८० ।

उत्तान अर्थात् ऊर्ध्वमुख रूपसे अवस्थित अर्ध गोलकके सदृश चन्द्रोंके मणिमय विमान हैं । उनकी पृथक् पृथक् अतिशय शीतल एवं मन्द किरणें बारह हजार प्रमाण हैं ॥ ३७ ॥

उनमें स्थित पृथिवी जीव चूंकि उद्योत नामकर्मके उदयसे संयुक्त हैं, इसीलिये वे प्रकाशमान अतिशय शीतल मन्द किरणोंसे संयुक्त होते है ॥ ३८ ॥

---

१ द ब गोलगद्ध°.

एक्कट्ठियभागकदे जोयणए ताण होदि छप्पण्णा । उवरिमतलाण रुंदं दलिदेकुबहलं पि पत्तेक्कं ॥ ३९

। ५६ । २८ ।
६१ । ६१ ।

एदाणं परिहीओ पुह पुह बे जोयणाणि अदिरेको । ताणि अकिट्टिमाणिं अणाइणिहणाणि बिंबाणिं ॥ ४०

चउगोउरसंजुत्ता तडवेदी तेसु होदि पत्तेक्कं । तम्मज्झे वरवेदीसहिदं रायंगणं रम्मं ॥ ४१

रायंगणबहुमज्झे वररयणमयाणि दिव्वकूडाणिं । कूडेसु जिणपुराणिं वेदीचउतोरणजुदाइं ॥ ४२

ते सव्वे जिणणिलया मुत्ताहलकणयदामरमणिज्जा । वरवज्जकवाडजुदा दिव्वविदाणेहिं रेहंति ॥ ४३

दिप्पंतरयणदीवा अट्ठमहामंगलेहिं परिपुण्णा । वंदणमालाचामरकिंकिणियाजालसोहिल्ला ॥ ४४

एदेसुं णट्टसभा अभिसेयसभा विचित्तरयणमई । कीडणसाला विविहा ठाणट्ठाणेसु सोहंति ॥ ४५

महलमुइंगपडहप्पहुदीहिं विविहादिव्वतूरेहिं । उवहिसरिच्छरवेहिं जिणगेहा णिच्चहलबोला ॥ ४६

एक योजनके इकसठ भाग करनेपर छप्पन भागप्रमाण उन चन्द्रविमानोंमेंसे प्रत्येकके उपरिम तलका विस्तार व इससे आधा बाहल्य है ॥ ३९ ॥ ५६ । २८ ।

इनकी परिधियां पृथक् पृथक् दो योजनसे कुछ अधिक हैं । वे बिम्ब अकृत्रिम व अनादिनिधन हैं ॥ ४० ॥

उनमेंसे प्रत्येककी तटवेदी चार गोपुरोंसे संयुक्त होती है । उसके बीचमें उत्तम वेदी सहित रमणीय राजांगण होता है ॥ ४१ ॥

राजांगणके ठीक बीचमें उत्तम रत्नमय दिव्य कूट और उन कूटोंपर वेदी व चार तोरणोंसे संयुक्त जिनपुर होते हैं ॥ ४२ ॥

वे सब जिनभवन मोती व सुवर्णकी मालाओंसे रमणीय और उत्तम वज्रमय किवाड़ोंसे संयुक्त होते हुए दिव्य चन्दोवोंसे सुशोभित रहते हैं ॥ ४३ ॥

ये जिनभवन देदीप्यमान रत्नदीपकोंसे सहित, अष्ट महामंगल द्रव्योंसे परिपूर्ण और वन्दनमाला, चंवर व क्षुद्र घंटिकाओंके समूहसे शोभायमान होते हैं ॥ ४४ ॥

इन जिनभवनोंमें स्थान स्थानपर विचित्र रत्नोंसे निर्मित नाट्यसभा, अभिषेकसभा और विविध प्रकारकी क्रीड़ाशालायें सुशोभित होती हैं ॥ ४५ ॥

वे जिनभवन समुद्रके समान गम्भीर शब्द करनेवाले मर्दल, मृदंग और पटह आदि विविध प्रकारके दिव्य वादित्रोंसे नित्य शब्दायमान रहते हैं ॥ ४६ ॥

१ द ब दलदद्ध°.

छत्तत्तयसिंहासणभामंडलचामरेहिं जुत्ताइं । जिणपडिमाओ तेसुं रयणमईओ विराजंति ॥ ४७
सिरिदेवी सुदेवी सव्वाण सणक्कुमारजक्खाणं[1] । रूवाणि मणहराणिं रेहंति जिणिंदपासेसुं ॥ ४८
जलगंधकुसुमतंदुलवरभक्खप्पदीवधूवफलपुण्णं । कुव्वंति ताण पुज्जं णिब्भरभत्तीए सव्वसुरा ॥ ४९
एदाणं कूडाणं समंतदो होंति चंदपासादा । समचउरस्सा दीहा णाणाविण्णासरमणिज्जा ॥ ५०
मरगयवण्णा केई केई कुंदेंदुहारहिमवण्णा । अण्णे सुवण्णवण्णा अवरे वि पवालणिहवण्णा ॥ ५१
उववादमंदिराइं अभिसेयपुराणि भूसणगिहाणिं । मेहुणकीडणसालाओ मंतसत्थाणसालाओ ॥ ५२
ते सव्वे पासादा वरपायारा विचित्तगोउरया । मणितोरणरमणिज्जा जुत्ता बहुचित्तभित्तीहिं[2] ॥ ५३
उववणपोक्खरणीहिं विराजमाणा विचित्तरूवाहिं । कणयमयविउलथंभा सयणासणपहुदिपुण्णाणिं ॥ ५४
सुंदरसरूवगंधप्पासेहि णिरुवमेहिं सोक्खाणिं । देंति विविहाणि दिव्वा पासादा धूवगंधड्ढा ॥ ५५

उन जिनभवनोंमें तीन छत्र, सिंहासन, भामण्डल और चामरोंसे संयुक्त रत्नमयी जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ॥ ४७ ॥

जिनेन्द्रप्रासादोंमें श्रीदेवी, श्रुतदेवी और सर्व सनत्कुमार यक्षोंकी मनोहर मूर्तियां शोभायमान होती हैं ॥ ४८ ॥

सब देव गाढ़ भक्तिसे जल, गन्ध, फूल, तन्दुल, उत्तम भक्ष्य (नैवेद्य), दीप, धूप और फलोंसे परिपूर्ण उनकी पूजा करते हैं ॥ ४९ ॥

इन कूटोंके चारों ओर समचतुष्कोण लंबे और नाना प्रकारके विन्याससे रमणीय चन्द्रोंके प्रासाद होते हैं ॥ ५० ॥

इनमेंसे कितने ही प्रासाद मरकतवर्ण, कितने ही कुन्दपुष्प, चन्द्र, हार एवं बर्फ जैसे वर्णवाले; कोई सुवर्णके समान वर्णवाले और दूसरे मूंगेके सदृश वर्णसे सहित हैं ॥ ५१ ॥

इन भवनोंमें उपपादमन्दिर, अभिषेकपुर, भूषणगृह, मैथुनशाला, क्रीड़ाशाला, मंत्रशाला और आस्थानशालायें (सभाभवन) स्थित रहती हैं ॥ ५२ ॥

वे सब प्रासाद उत्तम कोटोंसे सहित, विचित्र गोपुरोंसे संयुक्त, मणिमय तोरणोंसे रमणीय, बहुत प्रकारके चित्रोंवाली दीवालोंसे युक्त, विचित्र रूपवाली उपवन-वापिकाओंसे विराजमान, सुवर्णमय विशाल खम्भोंसे सहित और शयनासन आदिसे परिपूर्ण हैं ॥ ५३–५४ ॥

ये दिव्य प्रासाद धूपके गन्धसे व्याप्त होते हुए अनुपम एवं शुद्ध रस, रूप, गन्ध और स्पर्शसे विविध प्रकारके सुखोंको देते हैं ॥ ५५ ॥

१ द ब रज्जाणं. २ द ब भित्तीओ.

सत्तट्ठप्पहुदीओ भूमीओ भूसिदाओ कूडेहिं । विप्फुरिदरयणकिरणावलीओ भवणेसु रेहंति ॥ ५६
तम्मंदिरमज्झेसुं चंदा सिंहासणाणमारूढा । पत्तेक्कं चंदाणं चत्तारो अग्गमहिसीओ ॥ ५७
चंदाभसुसीमाओ पहंकरा[1] अच्चिमालिणी ताणं । पत्तेक्कं परिवारा चत्तारिसहस्सदेवीओ ॥ ५८
णियणियपरिवारसमं विकिरियं दरिसियंति देवीओ । चंदाणं परिवारा अट्ठवियप्पा य पत्तेक्कं ॥ ५९
पडिइंदा सामाणियतणुरक्खा तह हवंति तिप्परिसा । सत्ताणीयपइण्णयअभियोगा किब्बिसा देवा ॥ ६०
सयलिंदाण पडिंदा एक्केक्का होंति ते वि आइच्चा । सामाणियतणुरक्खप्पहुदी संखेज्जपरिमाणा ॥ ६१
रायंगणबाहिरए परिवाराणं हवंति पासादा । विविहवररयणरइदा विचित्तविण्णासभूदीहिं ॥ ६२
सोलससहस्समेत्ता अभिजोगसुरा हवंति पत्तेक्कं । चंदाण पुरतलाइं विकिरियासाविणो णिच्चं ॥ ६३

। १६००० ।

भवनोंमें कूटोंसे विभूषित और प्रकाशमान रत्न-किरण-पंक्तिसे संयुक्त सात आठ आदि भूमियां शोभायमान होती है ॥ ५६ ॥

इन मन्दिरोंके बीचमें चन्द्र सिंहासनोंपर विराजमान रहते हैं। उनमेंसे प्रत्येक चन्द्रके चार अग्रमहिषियां (पट्ट देवियां) होती हैं ॥ ५७ ॥

चन्द्राभा, सुसीमा, प्रभंकरा और अर्चिमालिनी, ये उन अग्रदेवियोंके नाम हैं। इनमेंसे प्रत्येककी चार हजार प्रमाण परिवार देवियां होती है ॥ ५८ ॥

अग्रदेवियां अपनी अपनी परिवार देवियोंके समान अर्थात् चार हजार रूपों प्रमाण विक्रिया दिखलाती है। प्रतीन्द्र, सामानिक, तनुरक्ष, तीनों पारिषद, सात अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विष, इस प्रकार प्रत्येक चन्द्रके परिवार देव आठ प्रकारके होते हैं ॥ ५९-६० ॥

सब इन्द्रोंके एक एक प्रतीन्द्र होते हैं। वे (प्रतीन्द्र) सूर्य ही हैं। सामानिक और तनुरक्ष प्रभृति देव संख्यात प्रमाण होते है ॥ ६१ ॥

राजांगणके बाहिर विविध प्रकारके उत्तम रत्नोंसे रचित और विचित्र विन्यासरूप विभूतिसे सहित परिवारदेवोंके प्रासाद होते हैं ॥ ६२ ॥

प्रत्येक इन्द्रके सोलह हजारप्रमाण आभियोग्य देव होते हैं जो नित्य ही विक्रिया धारण करते हुए चन्द्रोंके पुरतलोंको वहन करते हैं ॥ ६३ ॥ १६००० ।

१ द ब पहंकरा.

चउचउसहस्समेत्ता पुव्वादिदिसासु कुंदसंकासा । केसरिकरिवसहाणं जडिलतुरंगाण रूवधरा[1] ॥ ६४

चित्तोवरिमतलादो उवरिं गंतूण जोयणट्ठसए । दिणयरणयरतलाइं णिच्चं चेट्ठंति गयणम्मि ॥ ६५

। ८०० ।

उत्ताणायट्ठिदगोलयद्धसरिसाणि रविमणिमयाणिं । ताणं पुहु पुहु बारसमहस्सउण्हयरकिरणाणिं ॥ ६६

। १२००० ।

तेसु ठिदपुढविजीवा जुत्ता आदावकम्मउदएणं । जम्हा तम्हा ताणिं फुरंतउण्हयरकिरणाणिं ॥ ६७

इगिसट्ठिभागकदे जोयणए ताण होंति अडदालं । उवरिमतलाण रुंदं तलद्धबहलं पि पत्तेक्कं[2] ॥ ६८

| ४८ | २४ |
| ६१ | ६१ |

एदाणं परिहीओ पुह पुह बे जोयणाणि अदिरेगा । ताणिं अकट्टिमाणिं अणादिणिहणाणि बिंबाणिं ॥ ६९

पत्तेक्कं तडवेदी चउगोउरदारसुंदरा ताणं । तम्मज्झे वरवेदीपरिहिदं रायंगणं होदि ॥ ७०

इनमेंसे सिंह, हाथी, बैल और जटा युक्त घोड़ेके रूपको धारण करनेवाले तथा कुन्द-पुष्पके सदृश सफेद चार चार हजार प्रमाण देव क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमें चन्द्रबिम्बोंको वहन करते हैं ॥ ६४ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे ऊपर आठ सौ योजन जाकर आकाशमें नित्य सूर्यनगरतल स्थित है ॥ ६५ ॥ ८०० ।

सूर्योंके मणिमय बिम्ब ऊर्ध्व अवस्थित अर्ध गोलकके सदृश हैं । इनकी पृथक् पृथक् बारह हजारप्रमाण उष्णतर किरणें होती हैं ॥ ६६ ॥ १२००० ।

चूंकि उनमें स्थित पृथिवी जीव आताप नामकर्मके उदयसे संयुक्त होते हैं, इसीलिये वे प्रकाशमान उष्णतर किरणोंसे युक्त होते हैं ॥ ६७ ॥

एक योजनके इकसठ भाग करनेपर अड़तालीस भागप्रमाण उनमेंसे प्रत्येक सूर्यके बिम्बके उपरिम तलोंका विस्तार और तलोंसे आधा बाहल्य भी होता है ॥ ६८ ॥ $\frac{४८}{६१}$ । $\frac{२४}{६१}$ ।

इनकी परिधियां पृथक् पृथक् दो योजनसे अधिक होती हैं । वे सूर्यबिम्ब अकृत्रिम एवं अनादिनिधन हैं ॥ ६९ ॥

उनमेंसे प्रत्येककी तटवेदी चार गोपुरद्वारोंसे सुन्दर होती है । उसके बीचमें उत्तम वेदीसे संयुक्त राजांगण होता है ॥ ७० ॥

---

१ द ब स रूवधरा. २ द ब गोलद्ध°. ३ द एक्कस्सट्ठिय, ब एक्करसतिय.

रायंगणस्स मज्झे वररयणमयाणि दिव्वकूडाणिं । तेसुं जिणपासादा चेट्ठंते सूरकंतमया ॥ ७१
एदाण मंदिराणं मयंकपुरकूडभवणसारिच्छं । सव्वं चिय वण्णणयं णिउणेहिं एत्थ वत्तव्वं ॥ ७२
तेसु जिणप्पडिमाओ पुव्वोदिदवण्णणप्पयाराओ । विविहच्चणदव्वेहिं ताओ पूजंति सव्वसुरा ॥ ७३
एदाणं कूडाणं होंति समंतेण सूरपासादा । ताणं पि वण्णणाओ ससिपासादेहिं सरिसाओ ॥ ७४
तण्णिलयाणं मज्झे दिवायरा दिव्वसिंघपीढेसुं । वरछत्तचमरजुत्ता चेट्ठंते दिव्वयरतेया ॥ ७५
जुदिसुदिपहंकराओ सूरपहाअच्चिमालिणीओ वि । पत्तेक्कं चत्तारो दुमणीणं अग्गदेवीओ ॥ ७६
देवीणं परिवारा पत्तेक्कं चउसहस्सदेवीओ । णियणियपरिवारसमं विकिरियं ताओ मेण्हंति ॥ ७७
सामाणियतणुरक्खा तिप्परिसाओ पइण्णयाणीया । अभियोग्ग किब्बिसिया सत्तविहा सूरपरिवारा ॥ ७८
रायंगणबाहिरए परिवाराणं हुवंति पासादा । वररयणभूसिदाणं फुरंततेयाण सव्वाणं ॥ ७९

राजांगणके मध्यमें जो उत्तम रत्नमय दिव्य कूट होते है उनमें सूर्यकान्त मणिमय जिनभवन स्थित है ॥ ७१ ॥

निपुण पुरुषोंको इन मन्दिरोंका सम्पूर्ण वर्णन चन्द्रपुरोंके कूटोंपर स्थित जिनभवनोंके सदृश यहांपर भी करना चाहिये ॥ ७२ ॥

उनमें जो जिनप्रतिमायें विराजमान है उनके वर्णनका प्रकार पूर्वोक्त वर्णनके ही समान है । समस्त देव विविध प्रकारके पूजाद्रव्योंसे उन प्रतिमाओंकी पूजा करते है ॥ ७३ ॥

इन कूटोंके चारों तरफ जो सूर्यप्रासाद हैं उनका भी वर्णन चन्द्रप्रासादोंके सदृश है ॥ ७४ ॥

उन भवनोंके मध्यमें उत्तम छत्र-चँवरोंसे संयुक्त और अतिशय दिव्य तेजको धारण करनेवाले सूर्य दिव्य सिंहासनोंपर स्थित होते है ॥ ७५ ॥

द्युतिश्रुति, प्रभंकरा, सूर्यप्रभा और अर्चिमालिनी, ये चार प्रत्येक सूर्यकी अग्रदेवियां होती है ॥ ७६ ॥

इनमेंसे प्रत्येक अग्रदेवीकी चार हजार परिवार-देवियां होती है । वे अपने अपने परिवारके समान अर्थात् चार हजार रूपोंकी विक्रिया ग्रहण करती है ॥ ७७ ॥

सामानिक, तनुरक्ष, तीनों पारिषद, प्रकीर्णक, अनीक, आभियोग्य और किल्विषिक, इस प्रकार सूर्योंके सात प्रकार परिवार देव होते है ॥ ७८ ॥

राजांगणके बाहिर उत्तम रत्नोंसे विभूषित और प्रकाशमान तेजको धारण करनेवाले समस्त परिवार-देवोंके प्रासाद होते है ॥ ७९ ॥

सोलससहस्समेत्ता अभिजोगसुरा हवंति पत्तेक्कं । दिणयरणयरतलाइं विकिरियाहारिणो[1] णिच्चं ॥ ८०

१६००० ।

ते पुव्वादिदिसासुं केसरिकरिवसहजडिलहयरूवा । चउचउसहस्समेत्ता कंचणवण्णा विराजंते ॥ ८१

चित्तोवरिमतलादो गंतूणं जोयणाणि अट्ठसए । अडसीदिजुदे गहगणपुरीओ दोगुणिदछक्कबहलम्मि ॥ ८२

८८८ । १२ ।

चित्तोवरिमतलादो पुव्वोदिदजोयणाणि गंतूणं । तासुं बुहगयरीओ णिच्चं चेट्ठंति गयणम्मि ॥ ८३

एदाओ सव्वाओ कणयमईओ य मंदकिरणाओ । उत्ताणावट्ठिदगोलयद्धसरिसाओ णिच्चाओ ॥ ८४

उवरिमतलाण रुंदं कोसस्सद्धं तदद्धबहलत्तं । परिही दिवड्ढकोसो सविसेसा ताण पत्तेक्कं ॥ ८५

एक्केक्काए पुरीए तडवेदी पुव्ववण्णणा होदि । तम्मज्झे वरवेदीजुत्तं रायंगणं रम्मं ॥ ८६

प्रत्येक सूर्यके सोलह हजार प्रमाण आभियोग्य देव होते हैं जो नित्य ही विक्रिया करके सूर्यनगरतलोंको ले जाते हैं ॥ ८० ॥ १६००० ।

सिंह, हाथी, बैल और जटायुक्त घोड़ेके रूपको धारण करनेवाले तथा सुवर्णके समान वर्णसे संयुक्त वे आभियोग्य देव क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमें चार चार हजार प्रमाण विराजमान होते हैं ॥ ८१ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे आठ सौ अठासी योजन ऊपर जाकर दुगुणित छह अर्थात् बारह योजनमात्र बाहल्यमें ग्रहसमूहकी नगरियां हैं ॥ ८२ ॥ ८८८ । १२ ।

उनमेंसे चित्रा पृथिवीके उपरिमतलसे पूर्वोक्त आठसौ अठासी योजन ऊपर जाकर आकाशमें बुधकी नगरियां नित्य स्थित हैं ॥ ८३ ॥

ये सब नगरियां सुवर्णमयी, मन्द किरणोंसे संयुक्त, नित्य और ऊर्ध्व अवस्थित अर्ध गोलकके सदृश हैं ॥ ८४ ॥

उनमेंसे प्रत्येकके उपरिम तलका विस्तार आध कोश, बाहल्य इससे आधा, और परिधि डेढ़ कोशसे अधिक होती है ॥ ८५ ॥

हर एक पुरीकी तटवेदी पूर्वोक्त वर्णनासे युक्त होती है । उसके बीचमें उत्तम वेदीसे संयुक्त रमणीय राजांगण स्थित रहता है ॥ ८६ ॥

---

१ द ब °कारिणो.

तम्मज्झे वरकूडा हुवंति तेसुं जिणिंदपासादा । कूडाण समंतेणं बुहणिलया पुव्वसरिसवण्णणया ॥ ८७

दोहो सहस्समेत्ता अभियोगा हरिकरिंदवसहहया । पुव्वादिसु पत्तेक्कं कणयणिहा बुहपुराणि धारंति ॥ ८८

चित्तोवरिमतलादो णवऊणियणवसयाणि जोयणए । गंतूण णहे उवरिं सुक्काण पुराणि चेट्ठंति ॥ ८९

८९१ ।

ताणं णयरतलाणं पणसयदुसहस्समेत्तकिरणाणिं । उत्ताणगोलयद्धोवमाणि वररुप्पमइयाणिं ॥ ९०

२५०० ।

उवरिमतलविक्खंभो कोसपमाणं तदद्धबहलत्तं । ताणं अकिट्टिमाणं खचिदाणं विविहरयणेहिं ॥ ९१

को १ । को १/२

पुह पुह ताणं परिही तिकोसमेत्ता हुवेदि णवियप्पा । सेसाओ वण्णणाओ बुहणयराणं सरिच्छाओ ॥ ९२

चित्तोवरिमतलादो छक्कोणियणवसयाणि जोयणए । गंतूण णहे उवरिं चेट्ठंति गुरूण णयराणिं ॥ ९३

८९४ ।

. . . . . .

राजांगणके मध्यमें उत्तम कूट और उन कूटोंपर जिनेन्द्रप्रासाद होते हैं । कूटोंके चारों ओर पूर्व भवनोंके समान वर्णनवाले बुधोंके भवन हैं ॥ ८७ ॥

बुधके सिंह, हाथी, बैल एवं घोड़ेके मुखको धारण करनेवाले और सुवर्ण जैसे वर्णसे संयुक्त दो दो हजार मात्र आभियोग्य देव क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें बुधोंके पुरोंको धारण करते हैं ॥ ८८ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे नौ कम नौ सौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें शुक्रोंके पुर स्थित हैं ॥ ८९ ॥ ८९.१ ।

ऊर्ध्व अवस्थित गोलकार्धके सदृश और उत्तम चांदीसे निर्मित उन नगरतलोंकी दो हजार पांचसौ किरणें होती हैं ॥ ९० ॥ २५०० ।

विविध प्रकारके रत्नोंसे खचित उन अकृत्रिम पुरोंके उपरिम तलका विस्तार एक कोश-प्रमाण और इससे आधा बाहल्य है ॥ ९१ ॥ को. १ । को. $\frac{१}{२}$ ।

उनकी परिधि पृथक् पृथक् तीन कोशमात्रसे अधिक है । इन नगरोंका बाकी सब वर्णन बुधनगरोंके सदृश है ॥ ९२ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे छह कम नौ सौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें गुरुओंके (बृहस्पतिके) नगर स्थित हैं ॥ ९३ ॥ ८९४ ।

ताणं णयरतलाणिं फलिहमयाणिं सुमंदकिरणाणिं । उत्ताणगोलगद्धोवमाणि णिच्चस्सहावाणिं ॥ ९४
उवरिमतलविक्खंभा ताणं कोसस्स परिमभागा य । सेसा हि वण्णणाओ सुक्कपुराणं सरिच्छाओ ॥ ९५
चित्तोवरिमतलादो तियऊणियणवसयाणि जोयणए । गंतूण उवरि गयणे मंगलणयराणि चेट्ठंति ॥ ९६

८९७ ।

ताणिं णयरतलाणिं रुहिरारुणपउमरायमइयाणिं । उत्ताणगोलगद्धोवमाणि सव्वाणि मंदकिरणाणिं ॥ ९७
उवरिमतलविक्खंभो कोसस्सद्धं तदद्धबहलत्तं । सेसाओ वण्णणाओ ताणं पुव्वुत्तसरिसाओ ॥ ९८
चित्तोवरिमतलादो गंतूणं णवसयाणि जोयणए । उवरिं सुवण्णमयाइं सणिणयराणिं णहे होंति ॥ ९९

९०० ।

उवरिमतलविक्खंभा[1] कोसद्धं होंति ताण पत्तेक्कं । सेसाओ वण्णणाओ पुव्वपुराणं सरिच्छाओ ॥ १०० ॥
अवसेसाण गहाणं णयरीओ उवरि चित्तभूमीओ । गंतूण बुहसणीणं विच्चाले होंति णिच्चाओ ॥ १०१ ॥

उन गुरुओंके नगरतल स्फटिकमणिसे निर्मित, सुन्दर मन्द किरणोंसे संयुक्त, ऊर्ध्वमुख स्थित गोलकार्धके सदृश और नित्य-स्वभाववाले हैं ॥ ९४ ॥

उनके उपरिम तलका विस्तार कोशके बहुभाग अर्थात् कुछ कम एक कोश प्रमाण है। उनका शेष वर्णन शुक्रपुरोंके सदृश है ॥ ९५ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे तीन कम नौ सौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें मंगल-नगर स्थित हैं ॥ ९६ ॥ ८९७ ।

ये सब नगरतल खूनके समान लाल वर्णवाले पद्मरागमणियोंसे निर्मित, ऊर्ध्वमुखस्थित गोलकार्धके सदृश और मन्द किरणोंसे संयुक्त होते हैं ॥ ९७ ॥

उनके उपरिम तलका विस्तार आधा कोश व बाहल्य इससे आधा है। इनका शेष वर्णन पूर्वोक्त नगरोंके सदृश है ॥ ९८ ॥

चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे नौसौ योजन ऊपर जाकर आकाशमें शनियोंके सुवर्णमय नगर है ॥ ९९ ॥ ९०० ।

उनमेंसे प्रत्येकके उपरिम तलका विस्तार आध कोशमात्र है। इनका शेष वर्णन पूर्व नगरोंके सदृश है ॥ १०० ॥

अवशिष्ट ग्रहोंकी नित्य नगरियां चित्रा पृथिवीके ऊपर जाकर बुध और शनियोंके अन्तरालमें हैं ॥ १०१ ॥

---

१ ब णयरी°. २ द ब बहलद्धं. ३ द ब विक्खंभो.

ताणिं णयरतलाणिं जहजोग्गुद्दिट्ठवासबहलाणिं । उत्ताणगोलगद्धोवमाणि बहुरयणमइयाणिं ॥ १०२ ॥
सेसाओ वण्णणाओ पुव्विल्लपुराण होंति सरिसाओ । किं पारेमि भणेदुं जीहाए एक्कमेत्ताए ॥ १०३ ॥
अट्ठसयजोयणाणिं चउसीदिजुदाणि उवरि चित्तादो । गंतूण गयणमग्गे हुवंति णक्खत्तणयराणिं ॥ १०४ ॥
८८४ ।
ताणिं णयरितलाणिं बहुरयणमयाणि मंदकिरणाणिं । उत्ताणगोलगद्धोवमाणि रम्माणि रेहंति ॥ १०५ ॥
उवरिमतलविस्थारो ताणं कोसो तद्दलबहलाणिं । सेसाओ वण्णणाओ दिणयरणयराण सरिसाओ ॥ १०६
णवरि विसेसो देवा अभियोगा सीहहत्थिवसहस्सा । ते एक्केक्कसहस्सा पुव्वदिसासु ताणि धारंति ॥ १०७
णउदिजुदसत्तजोयणसदाणि गंतूण उवरि चित्तादो । गयणयले ताराणं पुराणि बहले दहुत्तरसदम्मि ॥ १०८
ताणं पुराणि णाणावररयणमयाणि मंदकिरणाणिं । उत्ताणगोलगद्धोवमाणि पासाद दोसहसदंडा (?) ॥ १०९
२००० । (?)

ये नगरतल यथायोग्य कहे हुए विस्तार व बाहल्यसे सहित, ऊर्ध्वमुख गोलकार्धके सदृश, और बहुतसे रत्नोंसे रचित है ॥ १०२ ॥

इनका शेष वर्णन पूर्वोक्त पुरोंके सदृश है । एकमात्र जिह्वासे इनका विशेष कथन करते हुए क्या पार पा सकता हूं ? ॥ १०३ ॥

चित्रा पृथिवीसे आठसौ चौरासी योजन ऊपर जाकर आकाशमार्गमें नक्षत्रोंके नगर है ॥ १०४ ॥ ८८४ ।

वे सब रमणीय नगरतल बहुतसे रत्नोंसे निर्मित, मन्द किरणोंसे संयुक्त, और ऊर्ध्वमुख गोलकार्धके सदृश होते हुए विराजमान होते है ॥ १०५ ॥

उनके उपरिम तलका विस्तार एक कोश और बाहल्य इससे आधा है । इनका शेष वर्णन सूर्यनगरोंके सदृश है ॥ १०६ ॥

इतना विशेष है कि सिंह, हाथी, बैल एवं घोड़ेके आकारको धारण करनेवाले जो चार हजार आभियोग्य देव है वे एक एक हजार प्रमाण क्रमसे पूर्वादिक दिशाओंमें उन नगरोंको धारण किया करते है ॥ १०७ ॥

चित्रा पृथिवीसे सात सौ नब्बे योजन ऊपर जाकर आकाशतलमें एकसौ दश योजनमात्र बाहल्यमें ताराओंके नगर है ॥ १०८ ॥

उन ताराओंके पुर नाना प्रकारके उत्तम रत्नोंसे निर्मित, मन्द किरणोंसे संयुक्त और ऊर्ध्वमुख गोलकार्धके सदृश है । इनमें स्थित प्रासाद.....(?) ॥ १०९ ॥

२००० । (?)

१ द ब पावेदि भणामो.

वरअवरमज्झिमाणं तिविहपयाणं हुवंति एदाणं । उवरिमतलविक्खंभा जेट्ठाणं दोसहस्सदंडाणि ॥ ११०

२००० ।

पंचसयाणि धणूणि तदियस्सं भो हुवेदि अवराणं । तिदुगुणिदावरमाणं मज्झिमयाणं दुठाणेसुं ॥ १११

५०० । १००० । १५०० ।

तेरिच्छमंतरालं जहण्णतारागकोसपत्तंसो । जोयणया पंचासा मज्झिमए सहस्समुक्कस्से । ११२

को ½ जो ५० । १००० ।

सेसाओ वण्णणाओ पुव्वपुराणं हुवंति सरिसाणि । एत्तो गुरूवइट्ठं पुरपरिमाणं परूवेमो ॥ ११३

। विण्णासं समत्तं[1] ।

णियणियरासिपमाणं एदाणं जं मयंकपहुदीणं । णियणियणयरपमाणं तेत्तियमेत्तं च कूडजिणभवणं । ११४

जोइसगणणयरीणं सव्वाणं रुंदमाणसारिच्छं । बहुलत्तं मण्णंते लोगविभायस्स आइरिया ॥ ११५

। परिमाणं समत्तं । पाठान्तरम् ।

ये उत्कृष्ट, जघन्य और मध्यम भेदसे तीन प्रकार होते है । उनमेसे उत्कृष्ट नगरोंके उपरिम तलका विस्तार दो हजार धनुषमात्र है ॥ ११० ॥ २००० ।

जघन्य नगरोंका यह विस्तार पाचसौ धनुषप्रमाण है । इस जघन्य प्रमाणको तीन और दोसे गुणा करनेपर क्रमसे दो स्थानोंमे मध्यम नगरोंका विस्तार होता है ॥ १११ ॥

५०० । १००० । १५०० ।

जघन्य तारओंका निरुद्ध अन्तराल एक कोशका सातवां भाग, मध्यम तारओंका पचास योजन, और उत्कृष्ट तारओंका एक हजार योजनप्रमाण है ॥ ११२ ॥

को. ½ । यो. ५० । १००० ।

इनका शेष वर्णन पूर्व पुरोंके सदृश है । अब यहांसे आगे गुरूपदिष्ट पुरोंके प्रमाणको कहते है ॥ ११३ ॥

इस प्रकार विन्यासका कथन समाप्त हुआ ।

इन चन्द्रादिकोंकी निज निज राशिका जो प्रमाण है उतना ही अपने अपने नगरों, कूटों और जिनभवनोंका प्रमाण है ॥ ११४ ॥

' लोकविभाग ' के आचार्य समस्त ज्योतिर्गणोंकी नगरियोंके विस्तारप्रमाणके सदृश ही उनके बाहल्यको भी मानते है ॥ ११५ ॥ पाठान्तर ।

परिमाणका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब सम्मत्ता. २ द ब पण्हाणं. ३ द जम्हयंक, ब जमयंक. ४ द ब जोइट्ठण°.

चरबिंबा मणुवाणं खेत्ते तरिंस च जंबुदीवम्मि । दोण्णि मियंका ताणं एक्के चिय होदि चारमही ॥ ११६

पंचसयजोयणाणिं दसुत्तराइं हुवेदि विक्खंभो[1] । ससहरचारमहीए दिणयरबिंबादिरित्ताणिं ॥ ११७

५१० | ४८ / ६१ |

वीसूणबेसयाणिं जंबूदीवे चरंति सीदकरा । रविमंडलादियाणिं तीसुत्तरतियसयाणि लवणम्मि ॥ ११८

पण्णरससंसहराणं वीथीओ होंति चारखेत्तम्मि । मंडलसमरुंदाओ तद्दुगबहलाओ पत्तेक्कं ॥ ११९

५६ | २८ / ६१ | ६१ |

सट्ठिजुदं तिसयाणिं मंदररुंदं च जंबुविक्खंभे । सोधिय दलिते लद्धं चंदादिमहीहिं मंदरंतरयं ॥ १२०

चउदालसहस्साणिं वीसुत्तरअडसयाणि मंदरदो । गच्छिय सव्वब्भंतरवीही[2] इंदूण परिमाणं ॥ १२१

४४८२० ।

चर अर्थात् गमनशील बिम्ब मनुष्यक्षेत्रमें ही हैं, मनुष्यक्षेत्रके भीतर भी जम्बूद्वीपमें जो दो चन्द्र हैं उनकी संचार-भूमि एक ही है ॥ ११६ ॥

चन्द्रकी संचार-भूमिका विस्तार सूर्य-बिम्बसे अतिरिक्त अर्थात् एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे अड़तालीस भाग अधिक पांचसौ दश योजनमात्र है ॥ ११७ ॥ यो. ५१०$\frac{४८}{६१}$ ।

चन्द्रमा बीस कम दोसौ योजन जम्बूद्वीपमें और सूर्यमण्डलसे अधिक तीनसौ तीस योजनप्रमाण लवणसमुद्रमें संचार करते हैं ॥ ११८ ॥

चन्द्रोंके चारक्षेत्रमें जो पन्द्रह गलियां हैं उनमेंसे प्रत्येकका विस्तार चन्द्रमण्डलके बराबर एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे छप्पन भागप्रमाण और बाहल्य इससे आधा है ॥ ११९ ॥

$\frac{५६}{६१}$ । $\frac{२८}{६१}$ ।

जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीनसौ साठ योजन (दोनों ओरका चार-क्षेत्र) और मन्दर पर्वतके विस्तारको कम करके शेषको आधा करनेपर जो लब्ध आवे उतना चन्द्रकी आदि चारपृथिवीसे मन्दर पर्वतका अन्तर है ॥ १२० ॥

मन्दर पर्वतसे चलकर चवालीस हजार आठसौ बीस योजन चन्द्रोंकी सर्वाभ्यन्तर वीथीका प्रमाण है । अर्थात् मन्दराचल और चन्द्रकी अभ्यन्तर गलीके बीच उपर्युक्त योजनों प्रमाण अन्तराल है ॥ १२१ ॥

उदाहरण — जं. द्वी. का वि. यो. १००००० − ३६० = ९९६४०; ९९६४० − १०००० (मन्दरविष्कम्भ) = ८९६४०; ८९६४० ÷ २ = ४४८२० अन्तरप्रमाण ।

१ द ब विक्खंभा. २ गच्छेय सव्वभंतरवीही.

एक्कसट्ठीए गुणिदा पंचसया जोयणाणि दससुत्ता । ते अडदालविभिस्सा धुवरासी णाम चारमही ॥ १२२

एक्कत्तीससहस्सा अट्ठावण्णुत्तरं सदं तह य । इगिसट्ठीए भजिदे धुवरासिपमाणमुद्दिट्ठं ॥ १२३

$$\frac{३१११५८}{६१}$$

पण्णरसेहिं गुणिदं हिमकरबिंबप्पमाणमवणिज्जं । धुवरासीदो सेसं विच्चालं सयलवीहीणं ॥ १२४

$$\frac{३०३१८}{६१}$$

तं चोद्दसपविहत्तं हुवेदि एक्केक्कवीहिविच्चालं । पणुतीसजोयणाणिं अदिरेकं तस्स परिमाणं ॥ १२५

अदिरेकस्स पमाणं चोद्दसमदिरित्तविण्णिसदमंसा । सत्तावीसब्भहिया चत्तारि सया हवे हारो ॥ १२६

$$३५\frac{२१४}{४२७}$$

पांच सौ दश योजनोंको इकसठसे गुणा करनेपर जो संख्या प्राप्त हो उसमें वे अड़तालीस भाग और मिला देनेपर ध्रुवराशि नामक चार-महीका विस्तार होता है ॥ १२२ ॥

उदाहरण— ५१० × ६१ = ३१११०; ३१११० + ४८ = ३११५८ = $\frac{३१११५८}{६१}$ ध्रु. रा. चार मही ।

इकतीस हजार एक सौ अट्ठावनमें इकसठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना ध्रुव-राशिका प्रमाण कहा गया है ॥ १२३ ॥ $\frac{३१११५८}{६१}$ ।

चन्द्रबिम्बके प्रमाणको पन्द्रहसे गुणा करनेपर जो कुछ प्राप्त हो उसे ध्रुवराशिमेंसे कमकर देनेपर शेष सम्पूर्ण गलियोंका अन्तरालप्रमाण होता है ॥ १२४ ॥

चन्द्रबिम्बका प्रमाण $\frac{५६}{६१} \times १५ = \frac{८४०}{६१}$; ध्रुवराशि $\frac{३१११५८}{६१} - \frac{८४०}{६१} = \frac{३०३१८}{६१}$ कुल वीथी अन्तराल ।

इसमें चौदहका भाग देनेपर एक एक वीथीके अन्तरालका प्रमाण होता है । यह प्रमाण पैंतीस योजनोंसे अधिक है । इस अधिकताका जो प्रमाण है उसमें दो सौ चौदह अंश और चार सौ सत्ताईस भागहार है, अर्थात् वह प्रमाण एक योजनके चार सौ सत्ताईस भागोंमेंसे दो सौ चौदह भाग अधिक है ॥ १२५-१२६ ॥

उदाहरण— समस्त वीथियोंका अन्तराल $\frac{३०३१८}{६१}$; $\frac{३०३१८}{६१} \div १४ \left(= \frac{८५४}{६१}\right)$ = $३५\frac{४३८}{६१}$ = $३५\frac{२१४}{४२७}$ प्रत्येक वीथीका अन्तराल प्रमाण ।

पढमपहादो चंदा बाहिरमग्गस्स गमणकालम्मि । वीहिं पडि मेलिज्जं विच्चालं बिंबसंजुत्तं ॥ १२७

$$३६\left|\begin{matrix}१७९\\४२७\end{matrix}\right|$$

चउदालसहस्सा अडसयाणि छप्पण्णजोयणा अधिया । उणसीदिजुदसदंसा बिदियद्धगदेंदुमेरुविच्चालं ॥

$$४४८५६\left|\begin{matrix}१७९\\४२७\end{matrix}\right|$$

चउदालसहस्सा अडसयाणि बाणउदि जोयणा भागा । अडवण्णुत्तरतिसया तदियद्धगदेंदुमंदरपमाणं ॥ १२९

$$४४८९२\left|\begin{matrix}३५८\\४२७\end{matrix}\right|$$

चउदालसहस्सा णवसयाणि उणतीस जोयणा भागा । दसजुत्तसदं विच्चं चउत्थपहगदहिमंसुमेरूणं ॥ १३०

$$४४९२९\left|\begin{matrix}११०\\४२७\end{matrix}\right|$$

चन्द्रोंके प्रथम वीथीसे द्वितीयादि बाह्य वीथियोंकी ओर जाते समय प्रत्येक वीथीके प्रति बिम्बसंयुक्त अन्तरालको मिलाना चाहिये ॥ १२७ ॥

प्रत्येक वीथीका अन्तर $३५\frac{२१४}{४२७} + \frac{३२७}{४२७}$ ($= \frac{५६}{१}$ बिम्बविस्तार) $= ३५\frac{२७१}{४२७}$ $= ३६\frac{१७९}{४२७}$ बिम्बसंयुक्त अन्तराल प्रमाण ।

द्वितीय अध्व अर्थात् गलीको प्राप्त हुए चन्द्रमाका मेरु पर्वतसे चवालीस हजार आठ सौ छप्पन योजन और एक योजनके चार सौ सत्ताईस भागोंमेंसे एक सौ उन्यासी भागप्रमाण अन्तर है ॥ १२८ ॥

प्रथम वीथी और मेरुका अन्तर $४४८२० + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४४८५६\frac{१७९}{४२७}$ मेरु और द्वितीय वीथीके मध्यका अन्तर ।

तृतीय गलीको प्राप्त हुए चन्द्र और मेरुपर्वतके बीचमें चवालीस हजार आठ सौ बानवे योजन और तीन सौ अट्ठावन भाग अधिक अन्तरप्रमाण है ॥ १२९ ॥

$$४४८५६\frac{१७९}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४४८९२\frac{३५८}{४२७} ।$$

चतुर्थ पथको प्राप्त हुए चन्द्रमा और मेरुके मध्य चवालीस हजार नौ सौ उनतीस योजन और एक सौ दश भागमात्र अधिक अन्तर है ॥ १३० ॥

$$४४८९२\frac{३५८}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४४९२९\frac{११०}{४२७}$$

चउदालसहस्सा णवसयाणि पण्णट्ठि जोयणा भागा। दोण्णि सया उणणउदी पंचमपहइंदुमंदरपमाणं ॥१३१

४४९६५ | २८९ / ४२७ |

पणदालसहस्सा बेजोयणजुत्ता कलाओ इगिदालं। छट्ठपहट्ठिदहिमकरचामीयरसेलविच्चालं ॥ १३२

४५००२ | ४१ / ४२७ |

पणदालसहस्सा जोयणाणि अडतीस दुसयवीसंसा। सत्तमवीहिगदं सीदमयूखमेरुण विच्चालं ॥ १३३

४५०३८ | २२० / ४२७ |

पणदालसहस्सा चउहत्तरिअधिया कलाओ तिण्णिसया। णवणवदी विच्चालं अट्ठमवीहीगदिंदुमेरूणं ॥१३४

४५०७४ | ३९९ / ४२७ |

पणदालसहस्सा सयमेक्कारसजोयणाणि कलाण सयं। इगिवण्णा विच्चालं णवमपहे चंदमेरूणं ॥ १३५

४५१११ | १५१ / ४२७ |

पंचम पथको प्राप्त चन्द्रका मेरु पर्वतसे चवालीस हजार नौ सौ पैंसठ योजन और दो सौ नवासी भागप्रमाण अन्तर है ॥ १३१ ॥

$४४९२९\frac{११}{४२७} + ३६\frac{१७०}{४२७} = ४४९६५\frac{२८९}{४२७}$ ।

छठे पथमें स्थित चन्द्र और सुवर्णशैल (मेरु) के मध्यमें पैंतालीस हजार दो योजन और इकतालीस कलाप्रमाण अन्तर है ॥ १३२ ॥

$४४९६५\frac{२८९}{४२७} + ३६\frac{१७०}{४२७} = ४५००२\frac{४१}{४२७}$ ।

सातवीं गलीको प्राप्त चन्द्र और मेरुके मध्यमें पैंतालीस हजार अड़तीस योजन और दो सौ बीस भाग अधिक अन्तर है ॥ १३३ ॥

$४५००२\frac{४१}{४२७} + ३६\frac{१७०}{४२७} = ४५०३८\frac{२२०}{४२७}$ ।

आठवीं गलीको प्राप्त चन्द्र और मेरुके बीचमें पैंतालीस हजार चौहत्तर योजन और तीन सौ निन्यानवे कला अधिक अन्तर है ॥ १३४ ॥

$४५०३८\frac{२२०}{४२७} + ३६\frac{१७०}{४२७} = ४५०७४\frac{३९९}{४२७}$ ।

नौवें पथमें चन्द्र और मेरुके मध्यमें पैंतालीस हजार एक सौ ग्यारह योजन और एक सौ इक्यावन कलामात्र अन्तराल है ॥ १३५ ॥

$४५०७४\frac{३९९}{४२७} + ३६\frac{१७०}{४२७} = ४५१११\frac{१५१}{४२७}$ ।

पणदालसहस्सा सय सत्ततालं कलाण तिण्णि सया । तीसजुदा दसमपहे विच्चं हिमकिरणमेरूणं[1] ॥ १३६

४५१४७ | ३३० / ४२७ |

पणदालसहस्साणिं चुलसीदी जोयणाणि एक्कसयं । बासीदिकला विच्चं एक्कारसपहम्मि एदाणं ॥ १३७

४५१८४ | ८२ / ४२७ |

पणदालसहस्साणिं वीसुत्तरदोसयाणि जोयणया । इगिसट्ठिदुसयभागा बारसमपहम्मि तं विच्चं ॥ १३८

४५२२० | २६१ / ४२७ |

पणदालसहस्साणिं दोण्णि सया जोयणाणि सगवण्णा । तेरसकलाओ तेरसपहम्मि एदाण विच्चालं ॥ १३९

४५२५७ | १३ / ४२७ |

पणदालसहस्सा बे सयाणि तेणउदि जोयणा अधिया । अट्ठोणदुसयभागा चोद्दसमपहम्मि तं विच्चं ॥ १४०

४५२९३ | १९२ / ४२७ |

दशवें पथमें स्थित चन्द्र और मेरुका अन्तराल पैंतालीस हजार एक सौ सैंतालीस योजन और तीन सौ तीस कलाप्रमाण जानना चाहिये ॥ १३६ ॥

$४५१११\frac{१५}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४५१४७\frac{३३०}{४२७}$ ।

ग्यारहवें पथमें इन दोनोंका अन्तर पैंतालीस हजार एक सौ चौरासी योजन और ब्यासी कलामात्र है ॥ १३७ ॥ $४५१४७\frac{३३०}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४५१८४\frac{८२}{४२७}$ ।

बारहवें पथमें वह अन्तराल पैंतालीस हजार दो सौ बीस योजन और दो सौ इकसठ भागमात्र है ॥ १३८ ॥ $४५१८४\frac{८२}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४५२२०\frac{२६१}{४२७}$ ।

तेरहवें पथमें इन दोनोंका अन्तराल पैंतालीस हजार दो सौ सत्तावन योजन और तेरह कलामात्र है ॥ १३९ ॥ $४५२२०\frac{२६१}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४५२५७\frac{१३}{४२७}$ ।

चौदहवें पथमें वह विस्तार पैंतालीस हजार दो सौ तेरानबे योजन और आठ कम दो सौ भाग अधिक है ॥ १४० ॥ $४५२५७\frac{१३}{४२७} + ३६\frac{१७९}{४२७} = ४५२९३\frac{१९२}{४२७}$ ।

---

१ द ब प्रत्योरियं गाथा १३४-१३५ गाथयोरन्तराले प्राप्यते, अस्मिन् स्थाने चैतत्समानार्थका निम्ना गाथोपलभ्यते— पणदालसहस्साणिं सगदाल सयं च जोयणमेयं । तीसं तिसयकलाओ दहमो पहचंद णायव्वो ।

पणदालसहस्साणिं तिण्णि सया जोयणाणि उणतीसं । इगिहत्तरितिसयकला पण्णरसपहम्मि तं विच्चं ॥१४१

४५३२९ | ३७१ / ४२७ |

बाहिरपहादु ससिणो आदिमवीहीए आगमणकाले । पुव्वपमेलिदखेदं फेलसु[1] जा चोद्दसादिपढमपहं ॥

सट्ठिजुदं तिसयाणिं सोहेज्जसु जंबुदीववासम्मि । जं सेसं आबाहं अब्भंतरमंडलिंदूणं ॥ १४३

णवणउदिसहस्साणिं छस्सयचालीसजोयणाणिं पि । चंदाणं विच्चालं अब्भंतरमंडलट्ठिदाणं ॥ १४४

९९६४० ।

गिरिससहरपहवड्ढी दोहिं गुणिदाए होदि जं लद्धं । सा याबाधावड्ढी पडिमग्गं चंदचंदाणं ॥ १४५

७२ | ३५८ / ४२७ |

पन्द्रहवें पथमें वह अन्तराल पैंतालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और तीन सौ इकहत्तर कला अधिक है ॥ १४१ ॥ ४५२९३$\frac{१९३}{४२७}$ + ३६$\frac{१९३}{४२७}$ = ४५३२९$\frac{३७१}{४२७}$ ।

बाह्य अर्थात् पन्द्रहवें पथसे चन्द्रके प्रथम वीथीकी ओर आगमनकालमें पहिले मिलाये हुए क्षेत्र (३६$\frac{१९३}{४२७}$) को उत्तरोत्तर कम करते जानेसे चौदहवीं गलीको आदि लेकर प्रथम गली तकका अन्तरालप्रमाण आता है ॥ १४२ ॥

जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीन सौ साठ योजनोंको कम कर देनेपर जो शेष रहे उतना अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित दोनों चन्द्रोंके आबाधा अर्थात् अन्तरालका प्रमाण होता है ॥ १४३ ॥

ज. द्वी. वि. १००००० − ३६० (दोनों ओरका चार क्षेत्र) = ९९६४० यो. ।

अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानबे हजार छह सौ चालीस योजन-प्रमाण है ॥ १४४ ॥

सुमेरु और चन्द्रपथोंके बीच जो अन्तरालवृद्धिका प्रमाण है उसे दोसे गुणा करनेपर जो लब्ध हो उतना प्रत्येक गलीमें चन्द्रोंके परस्पर एक दूसरेके बीचमें रहनेवाले अन्तरालकी वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ १४५ ॥

मेरु और चन्द्रपथोंका अन्तर ३६$\frac{१९३}{४२७}$ × २ = ७२$\frac{३५८}{४२७}$ चन्द्रोंकी अन्तरालवृद्धि ।

---

१ द फेलसु.

बारसजुदसत्तसया णवणउदिसहस्स जोयणाणिं पि । अडवण्णा तिसयकला बिदियपहे चंदचंदस्स ॥१४६

९९७१२ | ३५८/४२७ |

णवणउदिसहस्साणिं सत्तसया जोयणाणि पणसीदी । उणणउदीदुसयकला तदिए बिंबं सिदंसूणं ॥ १४७

९९७८५ | २८९/४२७ |

णवणवदिसहस्साणिं अट्ठसया जोयणाणि अडवण्णा । वीसुत्तरदुसयकला ससीण बिंबं तुरिममग्गे ॥ १४८

९९८५८ | २२०/४२७ |

णवणउदिसहस्सा णवसयाणि इगितीस जोयणाणं पि । इगिसदइगिवण्णकला बिदालं पंचमपहम्मि ॥१४९

९९९३१ | १५१/४२७ |

एक्कं जोयणलक्खं चउअब्भहियं हुवेदि सविसेसं । बासीदिकला छट्ठे पहम्मि चंदाण विच्चालं ॥ १५०

१००००४ | ८२/४२७ |

सत्ततरिसंजुत्तं जोयणलक्खं च तेरस कलाओ । सत्तममग्गे दोण्हं तुगाकिरणाण विच्चालं ॥ १५१

१०००७७ | १३/४२७ |

द्वितीय पथमें एक चन्द्रसे दूसरे चन्द्रका अन्तराल निन्यानवे हजार सात सौ बारह योजन और तीन सौ अट्ठावन कला अधिक है ॥ १४६ ॥

$९९६४० + ७२\frac{३५८}{४२७} = ९९७१२\frac{३५८}{४२७}$ ।

तृतीय पथमें चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार सात सौ पचासी योजन और दो सौ नवासी कालमात्र है ॥ १४७ ॥ $९९७१२\frac{३५८}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = ९९७८५\frac{२८९}{४२७}$ ।

चौथे मार्गमें चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार आठ सौ अट्ठावन योजन और दो सौ बीस कला अधिक है ॥ १४८ ॥ $९९७८५\frac{२८९}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = ९९८५८\frac{२२०}{४२७}$ ।

पांचवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार नौ सौ इकतीस योजन और एक सौ इक्यावन कलाप्रमाण है ॥ १४९ ॥ $९९८५८\frac{२२०}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = ९९९३१\frac{१५१}{४२७}$ ।

छठे पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख चार योजन और व्यासी कला अधिक है ॥ १५० ॥ $९९९३१\frac{१५१}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००००४\frac{८२}{४२७}$ ।

सातवें मार्गमें दोनों चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख सतत्तर योजन और तेरह कलामात्र है ॥ १५१ ॥ $१००००४\frac{८२}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १०००७७\frac{१३}{४२७}$ ।

इगिवण्णजुदेक्कसयं जोयणलक्खं कलाओ तिण्णिसया । एक्कत्तरी ससीणं अट्ठममग्गम्मि विच्चालं ॥ १५२

$$१००१४९\left|\begin{matrix}३७१\\४२७\end{matrix}\right|$$

एक्कं जोयणलक्खं बावीसजुदा बियसयाणिं । दोउत्तरतिसयकला णवमपहे ताण विच्चालं ॥ १५३

$$१००२२२\left|\begin{matrix}३०२\\४२७\end{matrix}\right|$$

एक्कं जोयणलक्खं पणणउदिजुदाणि दोण्णि य सयाणिं । बेसयतेत्तीसकला विच्चं दसमम्मि इंदूणं ॥१५४

$$१००२९५\left|\begin{matrix}२३३\\४२७\end{matrix}\right|$$

एक्कं जोयणलक्खं अट्ठासट्ठीजुदा य तिण्णि सया । चउसट्ठिसदकलाओ एक्करसपहम्मि तं विच्चं ॥ १५५

$$१००३६८\left|\begin{matrix}१६४\\४२७\end{matrix}\right|$$

एक्कं लक्खं चउसय इगिदाला जोयणाणि अदिरेगे । पणणउदिकला मग्गे बारसमे अंतरं ताणं ॥ १५६

$$१००४४१\left|\begin{matrix}९५\\४२७\end{matrix}\right|$$

चउदसजुदपंचसया जोयणलक्खं कलाओ छव्वीसं । तेरसपहम्मि दोण्हं विच्चालं सिसिरकिरणाणं ॥ १५७

$$१००५१४\left|\begin{matrix}२६\\४२७\end{matrix}\right|$$

आठवें मार्गमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख एक सौ उनंचास योजन और तीन सौ इकहत्तर कला अधिक है ॥ १५२ ॥ $१०००७७\frac{१३}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} - १००१४९\frac{३७१}{४२७}$ ।

नौवें मार्गमें उन चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख दो सौ बाईस योजन और तीन सौ दो कला अधिक है ॥ १५३ ॥ $१००१४९\frac{३७१}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००२२२\frac{३०२}{४२७}$ ।

दशवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख दो सौ पंचानबे योजन और दो सौ तेतीस कलाप्रमाण है ॥ १५४ ॥ $१००२२२\frac{३०२}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००२९५\frac{२३३}{४२७}$ ।

ग्यारहवें पथमें यह अन्तराल एक लाख तीन सौ अड़सठ योजन और एक सौ चौसठ कला अधिक है ॥ १५५ ॥ $१००२९५\frac{२३३}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००३६८\frac{१६४}{४२७}$ ।

बारहवें मार्गमें उन चन्दोंका अन्तर एक लाख चार सौ इकतालीस योजन और पंचानबे कला अधिक है ॥ १५६ ॥

$$१००३६८\frac{१६४}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००४४१\frac{९५}{४२७}$$ ।

तेरहवें पथमें दोनों चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख पांच सौ चौदह योजन और छब्बीस कला प्रमाण है ॥ १५७ ॥ $१००४४१\frac{९५}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००५१४\frac{२६}{४२७}$ ।

लक्खं पंचसयाणिं छासीदी जोयणा कला तिसया । चउसीदी चोद्दसमे पहम्मि दिच्चं सिदकराणं[1] ॥ १५८

$$१००५८६\left|\begin{matrix}३८४\\४२७\end{matrix}\right|$$

लक्खं छच्च सयाणिं उणसट्ठी जोयणा कला तिसया । पण्णरसजुदा मग्गे पण्णरसं अंतरं ताणं ॥ १५९

$$१००६५९\left|\begin{matrix}३१५\\४२७\end{matrix}\right|$$

बाहिरपहादु ससिणो आदिममग्गम्मि आगमणकाले । पुव्वपमेलिदखेत्तं सोहसु जा चोद्दसादिपदमपहं ॥

तियजोयणलक्खाणिं पण्णरससहस्सयाणि इणणउदी । अब्भंतरवीधीए परिरयरासिस्स परिसंखा ॥ १६१

३१५०८९ ।

सेसाणं वीहीणं परिहीपरिमाणजाणणणिमित्तं[3] । परिहिक्खेवं[4] भणिमो गुरूवदेसाणुसारेणं ॥ १६२

चौदहवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख पांचसौ छयासी योजन और तीन सौ चौरासी कला अधिक है ॥ १५८ ॥

$$१००५१४\frac{२६}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००५८६\frac{३८४}{४२७} ।$$

पन्द्रहवें मार्गमें उनका अन्तर एक लाख छह सौ उनसठ योजन और तीन सौ पन्द्रह कलामात्र है ॥ १५९ ॥ $१००५८६\frac{३८४}{४२७} + ७२\frac{३५८}{४२७} = १००६५९\frac{३१५}{४२७}$ ।

चन्द्रके बाह्य पथसे प्रथम पथकी ओर आते समय पूर्वमें मिलाये हुए क्षेत्रको उत्तरोत्तर कम करनेपर चौदहवें पथसे प्रथम पथ तक दोनों चन्द्रोंका अन्तरालप्रमाण होता है ॥ १६० ॥

अभ्यन्तर वीथीके परिरय अर्थात् परिधिकी राशिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार नवासी योजन है ॥ १६१ ॥ ३१५०८९ ।

शेष गलियोंके परिधिप्रमाणको जाननेके लिये गुरूपदेशानुसार परिधिके प्रक्षेपको कहते हैं ॥ १६२ ॥

---

१ द ब उणसट्ठी. २ द ब सीदकराणं. ३ द ब जाणणणमित्तं. ४ ब परिहिक्खेदं.

चंदपहसूइवड्ढीदुगुणं काऊण वग्गिदूणं च । दसगुणिदे जं मूलं परिहिक्खेओ[1] स णादव्वो ॥ १६३

७२ | ३५८ / ४२७ |

तीसुत्तरबेसयजोयणाणि तेदालजुत्तसयमंसा । हारो चत्तारि सया सत्तावीसेहिं अब्भहिया ॥ १६४

२३० | १४३ / ४२७ |

तियजोयणलक्खाणिं पण्णरससहस्ससतिसयउणवीसा । तेदालजुदसदंसा बिदियपहे परिहिपरिमाणं ॥ १६५

३१५३१९ | १४३ / ४२७ |

उणवण्णा पंचसया पण्णरससहस्स जोयण तिलक्खा । छासीदी दुसदकला सा परिही तदियवीहीए ॥१६६

३१५५४९ | २८६ / ४२७ |

चन्द्रपथोंकी सूचीवृद्धिको दुगुणा करके उसका वर्ग करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसको दश गुणा करके वर्गमूल निकालनेपर प्राप्त राशिके प्रमाण परिधिप्रक्षेप जानना चाहिये ॥ १६३ ॥

च. प. सू. वृद्धि $३६\frac{५८}{४२७}$; इसका दूना $= ७२\frac{३५८}{४२७} = \frac{३११०२}{४२७}$;
$\sqrt{\left(\frac{३११०२}{४२७}\right)^{२} \times १०} = २३०\frac{१४३}{४२७}$ परिधिप्रक्षेप ।

उपर्युक्त प्रक्षेपक प्रमाण दो सौ तीस योजन और एक योजनके चार सौ सत्ताईस भागोंमेंसे एक सौ तेतालीस भाग अधिक है ॥ १६४ ॥ $२३०\frac{१४३}{४२७}$ ।

द्वितीय पथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार तीन सौ उन्नीस योजन और एक सौ तेतालीस भागमात्र है ॥ १६५ ॥

$$३१५०८९ + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१५३१९\frac{१४३}{४२७} ।$$

तृतीय वीथीकी वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार पांच सौ उनंचास योजन और दो सौ छयासी भाग मात्र है ॥ १६६ ॥

$$३१५३१९\frac{१४३}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१५५४९\frac{२८६}{४२७} ।$$

---

१ ब. परिक्खेओ.

सीदी सत्तसयाणिं पण्णरससहस्स जोयण तिलक्खा । दोण्णि कलाओ परिही चंदस्स चउत्थवीहीए ॥ १६७

३१५७८० | २ / ४२७ |

तियजोयणलक्खाणिं दहुत्तरा तह य सोलससहस्सा । पणदालजुदसयंसा सा परिही पंचमपहम्मि ॥ १६८

३१६०१० | १४५ / ४२७ |

चालीस दुसय सोलससहस्स तियलक्ख जोयणा अंसा । अट्ठासीदी दुसया छट्ठपहे होदि सा परिही ॥ १६९

३१६२४० | २८८ / ४२७ |

सोलससहस्स चउसय एक्कत्तरिअधियजोयण तिलक्खा । चत्तारि कला सत्तमपहम्मि परिही ससंकस्स[1] ॥

३१६४७१ | ४ / ४२७ |

चन्द्रकी चतुर्थ वीथीकी परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार सात सौ अस्सी योजन और दो कला अधिक है ॥ १६७ ॥

$३१५५४९\frac{२८६}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१५७८०\frac{२}{४२७}$ ।

पांचवें पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार दश योजन और एक सौ पैंतालीस भाग अधिक है ॥ १६८ ॥

$३१५७८०\frac{२}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१६०१०\frac{१४५}{४२७}$ ।

छठे पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ चालीस योजन और दो सौ अठासी भाग प्रमाण है ॥ १६९ ॥

$३१६०१०\frac{१४५}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१६२४०\frac{२८८}{४२७}$

चन्द्रके सातवें पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार चार सौ इकत्तर योजन और चार कलामात्र है ॥ १७० ॥

$३१६२४०\frac{२८८}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१६४७१\frac{४}{४२७}$ ।

---

१ ब मर्दकस्स.

सत्तसया इक्कहिया लक्खा तिण्णेव सोलससहस्सा । इक्कसयं सगतालं भागा अट्ठमपहे परिही ॥ १७१

३१६७०१ | १४७ / ४२७ |

सोलससहस्सणवसयइक्कत्तीसादिरित्ततियलक्खा । णवदीजुददुसयकला ससिस्स परिही णवममग्गे ॥ १७२

३१६९३१ | २९० / ४२७ |

बासट्ठिजुत्तइगिसयसत्तरससहस्सं जोयण तिलक्खा । छ च्चिय कलाओ परिही हिमंसुणो दसमवीहीए ॥

३१७१६२ | ६ / ४२७ |

तियजोयणलक्खाणिं सत्तरससहस्सतिसयबाणउदी । उणवण्णजुदसदंसा परिही एक्कारसपहम्मि ॥ १७४

३१७३९२ | १४९ / ४२७ |

आठवें पथमें उस परिधिका प्रमाण तीन लाख सोलह हजार सात सौ एक योजन और एक सौ सैंतालीस भाग अधिक है ॥ १७१ ॥

$$३१६४७१\frac{४}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१६७०१\frac{१४७}{४२७}।$$

चन्द्रके नौवें मार्गमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार नौ सौ इकतीस योजन और दो सौ नब्बे कलाप्रमाण है ॥ १७२ ॥

$$३१६७०१\frac{१४७}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१६९३१\frac{२९०}{४२७}।$$

चन्द्रकी दशवीं वीथीकी परिधि तीन लाख सत्तरह हजार एक सौ बासठ योजन और छह कलामात्र है ॥ १७३ ॥

$$३१६९३१\frac{२९०}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१७१६२\frac{६}{४२७}।$$

ग्यारहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार तीन सौ बानबे योजन और एक सौ उनंचास भागप्रमाण है ॥ १७४ ॥

$$३१७१६२\frac{६}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१७३९२\frac{१४९}{४२७}।$$

---

१ द ब एक्कतीसा°. २ ब सत्तरसहस्स. ३ द ब सत्तरसहस्सा°.

बारसमुत्तरछस्सय सत्तरससहस्सजोयण तिलक्खा । अट्ठेणियतिसयकला बारसमपहम्मि सा परिही ॥१७५

३१७६२२ | २९२ / ४२७ |

तेवण्णुत्तरअडसयसत्तरससहस्सजोयण तिलक्खा । अट्ठकलाओ परिही तेरसमपहम्मि सीदरुचिकिरणो ॥

३१७८५३ | ८ / ४२७ |

तियजोयणलक्खाणिं अट्ठारससहस्सयाणि तेसीदी । इगिवण्णजुदसदंसा चोद्दसमपहे हवा परिही ॥ १७७

३१८०८३ | १५१ / ४२७ |

तियजोयणलक्खाइं अट्ठरससहस्सतिसयतेरसया । बेसयचउणउदिकला बाहिरमग्गम्मि सा परिही ॥ १७८

३१८३१३ | २९४ / ४२७ |

चंदसुरा[3] सिग्घगदी णिग्गच्छंता हुवंति पविसंता । मंदगदी असमाणा परिहीओ भमंति सरिसकालेणं ॥

बारहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार छह सौ बाईस योजन और आठ कम तीन सौ अर्थात् दो सौ बानवे कलाप्रमाण है ॥ १७५ ॥

$३१७३९२\frac{१४९}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१७६२२\frac{२९२}{४२७}$ ।

चन्द्रके तेरहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार आठ सौ तिरेपन योजन और आठ कलाप्रमाण है ॥ १७६ ॥

$३१७६२२\frac{२९२}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१७८५३\frac{८}{४२७}$ ।

चौदहवें पथमें यह परिधि तीन लाख अठारह हजार तेरासी योजन और एक सौ इक्यावन भागप्रमाण है ॥ १७७ ॥

$३१७८५३\frac{८}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१८०८३\frac{१५१}{४२७}$ ।

बाह्य मार्गमें वह परिधि तीन लाख अठारह हजार तीन सौ तेरह योजन और दो सौ चौरानवे कला अधिक है ॥ १७८ ॥

$३१८०८३\frac{१५१}{४२७} + २३०\frac{१४३}{४२७} = ३१८३१३\frac{२९४}{४२७}$ ।

चन्द्र व सूर्य बाहर निकलते हुए अर्थात् बाह्य मार्गकी ओर आते समय शीघ्रगतिवाले और अभ्यन्तर मार्गकी ओर प्रवेश करते हुए मन्द गतिसे संयुक्त होते हैं, इसीलिये वे समान कालमें ही असमान परिधियोंका भ्रमण करते हैं ॥ १७९ ॥

---

१ ब सत्तरसहस्स. २ द ब सत्तरसहस्स°. ३ ब चंदपुरा.

एक्कं जोयणलक्खं णव य सहस्साणि अडसयाणिं[1] पि । परिहीणं पत्तेक्कं ते कादव्वा गयणखंडा[2] ॥ १८०

१०९८००।

गच्छदि मुहुत्तमेक्के अडसट्ठीजुत्तसत्तरसयाणिं । णभखंडाणिं ससिणो तम्मि हिदे सव्वगयणखंडाणिं ॥१८१

१७६८।

बासट्ठिमुहुत्ताणिं भागा तेवीस सत्तहाराइं । इगिवीसाधिय विसदं लद्धं तं गयणखंडादो ॥ १८२

$$६२\left|\begin{matrix}२३\\२२१\end{matrix}\right|^{४}$$

अब्भंतरवीहीदो बाहिरपेरंत दोण्णि ससिबिंबा । कमसो परिब्भमंते बासट्ठिमुहुत्तएहिं अधिएहिं ॥ १८३

६२।[५]

अदिरेयस्स पमाणं अंसा तेवीसया[6] मुहुत्तस्स । हारो दोण्णि सयाणिं जुत्ताणिं एक्कवीसेणं ॥ १८४

$$\begin{matrix}२३\\२२१\end{matrix}\Big|$$

उन परिधियोंमेसे प्रत्येकके एक लाख नौ हजार आठ सौ योजन प्रमाण वे गगनखण्ड करना चाहिये ॥ १८० ॥ १०९८००।

चन्द्र एक मुहूर्तमें सत्तरह सौ अड़सठ गगनखण्डोंका अतिक्रमण करते हैं। इसलिये इस राशिका समस्त गगनखण्डोंमें भाग देनेपर बासठ मुहूर्त और एक मुहूर्तके दो सौ इक्कीस भागोमेसे तेईस भाग लब्ध आते है ॥ १८१–१८२ ॥

मुहूर्तमात्रमें अतिक्रमणीय खण्ड १७६८; समस्त गगनखण्ड १०९८००; १०९८००+ १७६८ = $६२\frac{२३}{२२१}$ मुहूर्त कुल गगनखण्डोंका अतिक्रमणकाल।

दोनों चन्द्रबिम्ब क्रमसे अभ्यन्तर वीथीसे बाह्य बीथी पर्यन्त बासठ मुहूर्तसे अधिक कालमें परिभ्रमण करते है ॥ १८३ ॥

इस अधिकताका प्रमाण एक मुहूर्तके तेईस भाग और दो सौ इक्कीस हार रूप अर्थात् तेईस बटे दो सौ इक्कीस है ॥ १८४ ॥ $\frac{२३}{२२१}$।

---

१ द ब अडसयाणं; ब अट्ठसयाणिं. २ ब खंडाणि. ३ ब मुहुत्तमेत्तमेक्के. ४ द ब ६२।२३। ५ २।६२। ६ द ब तेवीसमो.

सम्मेलिय बासट्ठिं इच्छियपरिहीए भागमवहरिदं। तस्सिं तस्सिं सविणो एक्कमुहुत्तम्मि गदिमाणं ॥ १८५

$\frac{१३७२५}{२२१} \Big| ३१५०८९ । १ ।$

पंचसहस्सं अधिया तेहत्तरजोयणाणि तियकोसा। लद्धं मुहुत्तगमणं पढमपहे सीदकिरणस्स ॥ १८६

५०७३ । को ३ ।

सत्तत्तरि सविसेसा पंचसहस्साणि कोसअधियाणिं। लद्धं मुहुत्तगमणं चंदस्स दुइज्जवीहीए ॥ १८७

५००७ । को १ ।

जोयणपंचसहस्सा सीदीजुत्ता य तिण्णि कोसाणिं। लद्धं मुहुत्तगमणं चंदस्स तइज्जवीहीए ॥ १८८

५०८० । को ३ ।

पंचसहस्सा जोयण चुलसीदी तह दुवे कोसा। लद्धं मुहुत्तगमणं चंदस्स चउत्थमग्गम्मि ॥ १८९

५०८४ । को २ ।

अट्ठासीदी अधिया पंचसहस्सा य जोयणा कोसो। लद्धं मुहुत्तगमणं पंचममग्गे मियंकस्स ॥ १९०

५०८८ । को १ ।

समच्छेदरूपसे बासठको मिलाकर उसका इच्छित परिधिमें भाग देनेपर उस उस वीथीमें चन्द्रका एक मुहूर्तमें गमनप्रमाण आता है ॥ १८५ ॥

मु. $६२\frac{२३}{२२१} = \frac{१३७२५}{२२१}$; परिधिप्रमाण $३१५०८९ = \frac{६९६३४६६९}{२२१}$;

$\frac{६९६३४६६९}{२२१} \div \frac{१३७२५}{२२१} = ५०७३\frac{७१४४}{१३७२५}$ = ५०७३ यो. और ३ को. से कुछ कम।

प्रथम पथमें चन्द्रका एक मुहूर्त सम्बन्धी गमन पांच हजार तिहत्तर योजन और तीन कोश प्रमाण प्राप्त होता है ॥ १८६ ॥ यो. ५०७३ को. ३।

द्वितीय वीथीमें चन्द्रका मुहूर्तकालपरिमित गमनक्षेत्र पांच हजार सतत्तर योजन और एक कोशमात्र प्राप्त होता है ॥ १८७ ॥ यो. ५००७ को. १।

तृतीय वीथीमें चन्द्रका मुहूर्तपरिमित गमनक्षेत्र पांच हजार अस्सी योजन और तीन कोशप्रमाण प्राप्त होता है ॥ १८८ ॥ यो. ५०८० को. ३।

चतुर्थ मार्गमें चन्द्रका मुहूर्तपरिमित गमन पांच हजार चौरासी योजन तथा दो कोशमात्र प्राप्त होता है ॥ १८९ ॥ यो. ५०८४ को. २।

पांचवें मार्गमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार अठासी योजन और एक कोशमात्र प्राप्त होता है ॥ १९० ॥ यो. ५०८८ को. १।

णवणउदिउत्तराणिं पंचसहस्साणि जोयणाणिं च । लद्धं मुहुत्तगमणं हिमंसुणो छट्ठमग्गम्मि ॥ १९१

५०९२ ।

पंचेव सहस्साइं पणणउदी जोयणा तिकोसा य । लद्धं मुहुत्तगमणं सीदंसुणो सत्तमपहम्मि ॥ १९२

५०९५ । को ३ ।

पणसंखसहस्साणिं णवणउदी जोयणा दुवे कोसा । लद्धं मुहुत्तगमणं अट्ठममग्गे हिमरसिस्स[1] ॥ १९३

५०९९ । को २ ।

पंचेव सहस्साणिं तिउत्तरं जोयणाणि एक्कसयं । लद्धं मुहुत्तगमणं णवमपहे तुहिणरासिस्स ॥ १९४

५१०३ ।

पंचसहस्सा छाधियमेक्कसयं जोयणा तिकोसा य । लद्धं मुहुत्तगमणं दसमपहे हिममयूखाणं ॥ १९५

५१०६ । को ३ ।

पंचसहस्सा दसजुदएक्कसया जोयणा दुवे कोसा । लद्धं मुहुत्तगमणं एक्करसपहे ससंकस्स ॥ १९६

५११० । को २ ।

छठे मार्गमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार बानवे योजन मात्र लब्ध होता है ॥ १९१ ॥ यो. ५०९२ ।

सातवें पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार पंचानवे योजन और तीन कोशमात्र प्राप्त होता है ॥ १९२ ॥ यो. ५०९५ को. ३ ।

आठवें मार्गमें हिमरश्मि अर्थात् चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार निन्यानवे योजन और दो कोशमात्र प्राप्त होता है ॥ १९३ ॥ यो. ५०९९ को. २ ।

नौवें पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ तीन योजनप्रमाण प्राप्त होता है ॥ १९४ ॥ यो. ५१०३ ।

दशवें पथमें चन्द्रोंका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ छह योजन और तीन कोश-प्रमाण पाया जाता है ॥ १९५ ॥ यो. ५१०६ को. ३ ।

ग्यारहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ दश योजन और दो कोश-प्रमाण पाया जाता है ॥ १९६ ॥ यो. ५११० को. २ ।

---

१ द ब हिमरविस्स, क हिसरसिविस.

जोयणपंचसहस्सा एक्कसयं चोद्दसुत्तरं कोसो । लद्धं मुहुत्तगमणं बारसमपहे सिदंसुस्स ॥ १९७

५११४ । को १ ।

अट्ठारसुत्तरसयं पंचसहस्साणि जोयणाणिं च । लद्धं मुहुत्तगमणं तेरसमगे हिमंसुस्स ॥ १९८

५११८ ।

पंचसहस्सा इगिसयमिगिवीसजुदं सजोयण तिकोसा । लद्धं मुहुत्तगमणं चोद्दसमपहम्मि चंदस्स ॥ १९९

५.२१ । को ३ ।

पंचसहस्सेक्कसया पणुवीसं जोयणा दुवे कोसा । लद्धं मुहुत्तगमणं सीदंसुणो बाहिरपहम्मि ॥ २००

५१२५ । को २ ।

णगहरणयरतलादो चत्तारि पमाणअंगुलाणं पि । हेट्ठा गच्छिय होंति हु राहुविमाणस्स धयदंडा ॥ २०१

ते राहुस्स विमाणा अंजणवण्णा अरिट्ठरयणमया । किंचूणं जोयणयं विक्खंभजुदा तद्दलबहलत्तं ॥ २०२

पण्णासाधियदुसया कोदंडा राहुणयरबहलत्तं । एवं लोयविणिच्छयकत्तारिओ परूवेदि ॥ २०३

पाठान्तरम् ।

. . . . . .

बारहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ चौदह योजन और एक कोश-मात्र पाया जाता है ॥ १९७ ॥ यो. ५११४ को. १ ।

तेरहवें मार्गमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ अठारह योजनप्रमाण पाया जाता है ॥ १९८ ॥ यो. ५११८ ।

चौदहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ इक्कीस योजन और तीन कोशमात्र पाया जाता है ॥ १९९ ॥ यो. ५१२१ को. ३ ।

बाह्य पथमें चन्द्रका मुहूर्तगमन पांच हजार एक सौ पच्चीस योजन और दो कोशमात्र लब्ध होता है ॥ २०० ॥ यो. ५१२५ को. २ ।

चन्द्रके नगरतलसे चार प्रमाणांगुल नीचे जाकर राहुविमानके ध्वजदण्ड होते हैं ॥ २०१ ॥

वे राहुके विमान अंजनवर्ण, अरिष्ट रत्नोंसे निर्मित, कुछ कम एक योजनमात्र विस्तारसे संयुक्त, और विस्तारसे आधे बाहल्यवाले हैं ॥ २०२ ॥

राहुनगरका बाहल्य दो सौ पचास धनुषप्रमाण है ऐसा लोकविनिश्चयकर्ता आचार्य प्ररूपण करते हैं ॥ २०३ ॥ पाठान्तर ।

चउगोउरजुत्तेसु य जिणमंदिरमंडिदेसु णयरेसुं । तेसुं बहुपरिवारा राहू णामेण होंति सुरा॥ २०४
राहूण पुरतलाणं दुविहप्पाणिं हुवंति गमणाणिं । दिणपव्वविभेदेहिं दिणराहू ससिसरिच्छगदी ॥ २०५
जस्सिं मग्गे ससहरबिंबं दिस्सेदि य तेसु परिपुण्णं । सो होदि पुण्णिमक्खो दिवसो इह माणुसे लोए ॥
तब्बीहीदो लंघिय दीवस्स हुदासमारुदिसाए । तदणंतरबीहीए एंति हु दिणराहुससिबिंबा ॥ २०७
आदे ससहरमंडलसोलसभागेसु एक्कभागस्सो । आवरमाणो दीसइ राहूलंघणविसेसेणं ॥ २०८
अणलदिसाए लंघिय ससिबिंबं एदि वीहिअद्धंसो । सेसद्धं खु ण गच्छदि अरससविभमिदहेदूदो ॥
तदणंतरमग्गाइं णिच्चं लंघंति राहुससिबिंबा । पवणग्गिदिसाहिंतो एवं सेसासु वीहीसुं ॥ २१०
ससिबिंबस्स दिणं पडि एक्केक्कपहम्मि भागमेक्केक्कं । पच्छादेदि हु राहू पण्णरसकलाओ परियंतं ॥ २११
इय एक्केक्ककलाए आवरिदाए खु राहुबिंबेणं । चंदेक्ककला सग्गे जस्सिं दिस्सेदि सो य अमवासो ॥ २१२

चार गोपुरोंसे संयुक्त और जिन मन्दिरोंसे सुशोभित उन नगरोंमें बहुत परिवारसे सहित राहु नामक देव होते हैं ॥ २०४ ॥

दिन और पर्वके भेदसे राहुओंके पुरतलोंके गमन दो प्रकार होते है । इनमेंसे दिन-राहुकी गति चन्द्रके सदृश होती है ॥ २०५ ॥

यहां मनुष्य लोकमें उनमेंसे जिस मार्गमें चन्द्रबिम्ब परिपूर्ण दिखता है वह पूर्णिमा नामक दिवस होता है ॥ २०६ ॥

उस वीथीको लांघकर दिनराहु और चन्द्रबिम्ब जम्बूद्वीपकी आग्नेय और वायव्य दिशासे तदनन्तर वीथीमें आते है ॥ २०७ ॥

द्वितीय वीथीको प्राप्त होनेपर राहुके गमन विशेषसे चन्द्रमण्डलके सोलह भागोंमेंसे एक भाग आच्छादित दिखता है ॥ २०८ ॥

पश्चात् चन्द्रबिम्ब अग्निदिशासे लांघकर वीथीके अर्ध भागमें जाता है, द्वितीय-चन्द्रसे भ्रमित होनेके कारण शेष अर्ध भागमे नहीं जाता है ॥ २०९ ॥

इसी प्रकार शेष वीथियोंमे भी राहु और चन्द्रबिम्ब वायु और अग्नि दिशासे नित्य तदनन्तर मार्गोंको लांघते है । ॥ २१० ॥

राहु प्रतिदिन एक एक पथमें पन्द्रह कला पर्यन्त चन्द्रबिम्बके एक एक भागको आच्छादित करता है ॥ २११ ॥

इस प्रकार राहुबिम्बके द्वारा एक एक करके कलाओंके आच्छादित हो जानेपर जिस मार्गमें चन्द्रकी एक ही कला दिखती है वह अमावस्या दिवस होता है ॥ २१२ ॥

एक्कत्तीसमुहुत्ता अदिरेगो चंदवासरपमाणं । तेवीसंसा हारो चउसयबादालभेत्ता य ॥ २१३

$$३१\left|\frac{२३}{४४२}\right|$$

पडिवाए वासरादो तीहिं पडि ससहरस्स सो राहू । एक्केक्ककलं मुंचदि पुण्णिमयं जाव लंघणदो ॥ २१४

अहवा ससहरबिंबं पण्णरसदिणाइं तस्सहावेणं । कसणाभं सुक्किलाभं तेत्तियमेत्ताणि परिणमदि ॥ २१५

पुह पुह ससिबिंबाणिं छम्मासेसु च पुण्णिमंतम्मि । छादंति पव्वराहू णियमेण गदिविसेसेहिं ॥ २१६

जंबूदीवम्मि दुवे दिवायरा ताण एक्कचारमही । रविबिंबाधियपणसयदहुत्तरा जोयणाणि तब्बासो ॥ २१७

$$५१०\left|\frac{४८}{६१}\right|$$

सीदीजुदमेक्कसयं जंबूदीवे चरंति मत्तंडा । तीसुत्तरतिसयाणिं दिणयरबिंबाधियाणि लवणम्मि ॥ २१८

$$१८०\ |\ ३३०\left|\frac{४८}{६१}\right|$$

चउसीदीअधियसयं दिणयरवीहीओ[1] होंति एदाणं । बिंबसमाण वासो एक्केक्काणं तदद्धबहलत्त ॥ २१९

$$१८४\left|\frac{४८}{६१}\right|\frac{२४}{६१}\left|\right.$$

चान्द्र दिवसका प्रमाण इकतीस मुहूर्त और एक मुहूर्तके चार सौ बयालीस भागोंमेंसे तेईस भाग अधिक है ॥ २१३ ॥ $३१\frac{२३}{४४२}$ ।

वह राहु प्रतिपद् दिनसे एक एक वीथीमें गमन विशेषसे पूर्णिमा तक चन्द्रकी एक एक कलाको छोड़ता है ॥ २१४ ॥

अथवा, चन्द्रबिम्ब अपने स्वभावसे ही पन्द्रह दिनों तक कृष्ण कान्ति स्वरूप और इतने ही दिनों तक शुक्ल कान्तिस्वरूप परिणमता है ॥ २१५ ॥

पर्वराहु नियमसे गतिविशेषोंके कारण छह मासोंमें पूर्णिमाके अन्तमें पृथक् पृथक् चन्द्रबिम्बोंको आच्छादित करते है ॥ २१६ ॥

जम्बूद्वीपमें दो सूर्य है । उनकी चार-पृथिवी एक ही है । इस चार-पृथिवीका विस्तार सूर्यबिम्बसे अधिक पांचसौ दश योजनप्रमाण है ॥ २१७ ॥ $५१०\frac{४८}{६१}$ ।

सूर्य एक सौ अस्सी योजन जम्बूद्वीपमें और दिनकरबिम्ब ($\frac{४८}{६१}$) से अधिक तीनसौ तीस योजन लवणसमुद्रमें गमन करते हैं ॥ २१८ ॥ $१८०\ |\ ३३०\frac{४८}{६१}$ ।

सूर्यकी गलियां एक सौ चौरासी है । इनमेंसे प्रत्येक गलीका विस्तार बिम्बके समान और बाहल्य इससे आधा है ॥ २१९ ॥ $१८४\ |\ \frac{४८}{६१}\ |\ \frac{२४}{६१}$ ।

---

१ द ब बिंबाओ, अ बीहाओ.

तेसीदीअधियसयं दिणेसवीहीण होदि विच्चालं । एक्कपहम्मि चरंते दोण्णि वि भाणुबिंबाणि ॥ २२०

सट्ठिजुदं तिसयाणिं मंदररुंदं च जंबुदीवस्स । वासे सोधिय दलिदे सूरादिमपहसुरद्दिविच्चालं ॥ २२१

३६० । ४४८२० ।

एक्कत्तीससहस्सा एक्कसयं जोयणाणि अडवण्णा । इगिसट्ठीए भजिदे धुवरासी होदि दुमणीणं ॥ २२२

३११५८
६१

दिवसयरबिंबरुंदं चउसीदीसमधियसएणं । धुवरासिस्स य मज्झे सोहेज्जसु तत्थ अवसेसं ॥ २२३

तेसीदिजुदसदेणं भजिदव्वं तम्मि होदि जं लद्धं । वीहिं पडि णादव्वं तरणीणं लंघणपमाणं ॥ २२४

तम्मेत्तं पहविच्चं तं माणं दोण्णि जोयणा होंति । तम्मि रविबिंबरुंदे पहसूचिचयो दिणिंदस्स ॥ २२५

१७०
६१

सूर्यकी एक सौ तेरासी गलियोंमें अन्तराल होता है । दोनों ही सूर्यबिंब एक पथमें गमन करते हैं ॥ २२० ॥

जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीनसौ साठ योजन और मेरुके विस्तारको घटा करके शेषको आधा करनेपर सूर्यके प्रथम पथ और मेरुके मध्यका अन्तरालप्रमाण होता है ॥ २२१ ॥

जं. विस्तार यो. १००००० − ३६० = ९९६४०; ९९६४० − १०००० (मेरु विस्तार)=८९६४०; ८९६४० ÷ २ = ४४८२० प्रथम पथ और मेरुके बीचका अन्तराल ।

इकतीस हजार एक सौ अट्ठावन योजनोंमें इकसठका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना द्युमणि अर्थात् सूर्योंकी ध्रुवराशिका प्रमाण होता है ॥ २२२ ॥ $\frac{३११५८}{६१}$ ।

ध्रुवराशिके बीचमेंसे एक सौ चौरासीसे गुणित सूर्यबिम्बके विस्तारको घटा देनेपर जो शेष रहे उसमें एक सौ तेरासीका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्योंका प्रत्येक वीथीके प्रति लंघनप्रमाण अर्थात् अन्तराल जानना चाहिये ॥ २२३ । २२४ ॥

ध्रु. रा. $\frac{३११५८}{६१}$, सू बिं. $\frac{४८}{६१}$; $\frac{४८}{६१} \times १८४ = \frac{८८३२}{६१}$; $\frac{३११५८}{६१} - \frac{८८३२}{६१} = \frac{२२३२६}{६१}$; $\frac{२२३२६}{६१} ÷ १८३ = \frac{२२३२६}{६१ \times १८३} = \frac{२२३२६}{११२६३} = २$ यो. ।

उतने मात्र जो वह प्रत्येक वीथीका अन्तराल है उसका प्रमाण दो योजन है । इसमें सूर्यबिम्बके विस्तारको मिलानेपर सूर्यके पथसूचीचयका प्रमाण होता ॥ २२५ ॥

यो. २ + $\frac{४८}{६१} = \frac{१७०}{६१}$ ।

१ ब भजिदे य धुवं. २ द ब $\frac{१८३}{६१}$ ।

पढमपहादो रविणो बाहिरमग्गम्मि गमणकालम्मि । पडिमग्गमेत्तियं बिंबविसालं मंदरक्काणं ॥ २२६

अह—

रूऊणं इट्ठपहं पहसूचिचएण गुणिय मेलिज्जं । तवणादिमपहमंदरविच्चाले होदि इट्ठविच्चालं ॥ २२७

चउदालसहस्साणिं अट्ठसया जोयणाणि बीसं पि । एदं पढमपहट्ठिददिणयरकणयद्दिविच्चालं ॥ २२८

४४८२० ।

चउदालसहस्सा अडसयाणि बावीस भाणुबिंबजुदा । जोयणया बिदियपहे तिण्हंसुसुमेरुविच्चालं ॥ २२९

४४८२२ | ४८ / ६१ |

चउदालसहस्सा अडसयाणि पणुवीस जोयणाणि कला । पणतीस तइज्जपहे पतंगहेमद्दिविच्चालं ॥ २३०

४४८२५ | ३५ / ६१ |

एवमादिमज्झिमपहपरियंतं णेदव्वं ।

सूर्यके प्रथम पथसे बाह्य मार्गकी ओर जाते समय प्रत्येक मार्गमें मन्दर पर्वत और सूर्यबिम्बके बीच इतना अन्तराल होता है ॥ २२६ ॥ $\frac{१७}{६१}^{\circ}$ ।

अथवा, एक कम इष्ट पथको पथसूचीचयसे गुणा करके प्राप्त प्रमाणको सूर्यके आदि पथ और मन्दरके बीच जो अन्तराल है उसमें मिला देनेपर इष्ट अन्तरालका प्रमाण होता है ॥ २२७ ॥

उदाहरण— तृतीय पथ और मेरुका अन्तराल जाननेके लिये— इष्ट पथ ३ − १ = २; पथसूचीचय $\frac{१७}{६१}^{\circ} \times २ = \frac{३४}{६१}^{\circ} = ५\frac{३४}{६१}$; ४४८२० + $५\frac{३४}{६१} = ४४८२५\frac{३४}{६१}$ ।

प्रथम पथमें स्थित सूर्य और कनकाद्रि (मेरु) के बीच चवालीस हजार आठसौ बीस योजनप्रमाण अन्तराल है ॥ २२८ ॥ ४४८२० ।

द्वितीय पथमें सूर्य और मेरुके बीच सूर्यबिम्ब सहित चवालीस हजार आठ सौ बाईस योजनप्रमाण अन्तराल है ॥ २२९ ॥ $४४८२२\frac{४८}{६१}$ ।

तृतीय पथमें सूर्य और सुवर्णपर्वतके बीच चवालीस हजार आठ सौ पच्चीस योजन और पैंतीस कलाप्रमाण अन्तराल है ॥ २३० ॥ $४४८२५\frac{३५}{६१}$ ।

इस प्रकार आदिसे लेकर मध्यम पथ पर्यन्त जानना चाहिये ।

---

१ ब ४४८२२ ।, क ४४८२२ । ४८.

पंचत्ताळसहस्सा पणहत्तरि जोयणाणि अदिरेके । मज्झिमपहठिददिवसयरसेलविच्चालं ॥ २३१

४५०७५ ।

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

पणदालसहस्साणिं तिण्णिसया तीसजोयणा अधिया । बाहिरपहठिदवासरकरकंचणसेलविच्चालं ॥ २३२

४५३३० ।

बाहिरपहादु आदिममग्गे तवणस्स आगमणकाले । पुव्वक्खेवं सोहसु दुचरिमपहपहुदि जाव पढमपहं ॥

सट्ठिजुदा तिसयाणिं सोहेज्जसु जंबुदीवरुंदम्मि । जं सेसं पढमपहे दोण्हं दुमणीण विच्चालं ॥ २३४

णवणउदिसहस्सा छस्सयाणि चालीसजोयणाणं पि । तवणाणं आबाहा अब्भंतरमंडलट्ठिदाणं ॥ २३५

९९६४० ।

विणवहपहमूचिचए दोसुं गुणिदे हुवेदि भाणूणं । आबाहाए वड्ढी जोयणया पंच पंचतीसकला ॥ २३६

$५\left|\frac{३५}{६१}\right|$

मध्यम पथमें स्थित सूर्य और सुवर्णशैलके बीच पैंतालीस हजार पचत्तर योजनसे अधिक अन्तराल है ॥ २३१ ॥ ४५०७५ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

बाह्य पथमें स्थित सूर्य और सुवर्णशैलके बीच पैंतालीस हजार तीन सौ तीस योजन-प्रमाण अन्तराल है ॥ २३२ ॥ ४५३३० ।

सूर्यके बाह्य मार्गसे आदि पथकी ओर आते समय पूर्व वृद्धिको कम करनेपर द्विचरम पथसे लेकर प्रथम पथ तकका अन्तरालप्रमाण जाना जाता है ॥ २३३ ॥

जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीन सौ साठ योजनोंको कम करनेपर जो शेष रहे उतना प्रथम पथमें दोनों सूर्योंके बीच अन्तराल रहता है ॥ २३४ ॥

जं. वि. १००००० − ३६० = ९९६४० यो. अन्तराल ।

अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित दोनों सूर्योंका अन्तराल निन्यानवे हजार छह सौ चालीस योजनमात्र है ॥ २३५ ॥

सूर्यकी पथसूचीवृद्धिको दोसे गुणित करनेपर सूर्योंकी अन्तरालवृद्धिका प्रमाण आता है जो पांच योजन और पैंतीस कला अधिक है ॥ २३६ ॥

सूर्यपथसूची $\frac{१७०}{६१} \times २ = \frac{३४०}{६१} = ५\frac{३५}{६१}$ यो. अं. वृ. ।

रूऊणं इट्ठपहं गुणिदूणं मग्गसूइवड्ढीए । पढमाबाहागमिदं वासरणाहाण इट्ठविच्चालं ॥ २३७

णवणउदिसहस्सा छस्सयाणि पणदाल जोयणाणि कला । पणतीस दुहजपहे दोण्हं भाणूण विच्चालं ॥

$$९९६४५\left|\frac{३५}{६१}\right.$$

एवं मज्झिममग्गंतं णेदव्वं ।

एक्कं लक्खं पण्णासहियसयजोयणाणि अदिरेगो । मज्झिमपहम्मि दोण्हं विच्चालं कमलबंधूणं ॥ २३९

१००१५० ।

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

एक्कं जोयणलक्खं सट्ठीजुत्ताणि छस्सयाणिं पि । बाहिरपहम्मि दोण्हं सहस्सकिरणाण विच्चालं ॥ २४०

१००६६० ।

इच्छंतो रविबिंबं सोहेज्जसु तस्स मयलविच्चालं । धुवरासिस्स य मज्झे चुलसीदीजुदसदेण भजिदव्वं ॥

$$४८\left|\frac{३११५८}{६१}\right|\frac{२२३१६}{६१}\left.\right|$$

एक कम इष्ट पथको दुगुणित मार्गसूचीवृद्धिसे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसे प्रथम अन्तरालमें मिला देनेसे सूर्योका अभीष्ट अन्तराल प्रमाण आता है ॥ २३७ ॥

उदाहरण— इष्ट पथ १८४ − १ = १८३; द्विगुणित प. सू. $\frac{३४}{६१}^{\circ}$ × १८३ = $\frac{६२२००}{६१}$ = १०२०; प्र. अं. ९९६४० + १०२० = १००६६० अन्तिम पथ अन्तराल ।

द्वितीय पथमें दोनों सूर्योका अन्तराल निन्यानवै हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पैंतीस भागमात्र है ॥ २३८ ॥ ९९६४५$\frac{३५}{६१}$ ।

इस प्रकार मध्यम मार्ग तक लेजाना चाहिये ।

मध्यम पथमें दोनों सूर्योका अन्तराल एक लाख एक सौ पचास योजनमात्र होता है ॥ २३९ ॥ १००१५० ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक लेजाना चाहिये ।

बाह्य पथमें दोनों सूर्योका अन्तराल एक लाख छह सौ साठ योजनप्रमाण है ॥२४०॥

१००६६० ।

यदि सूर्यबिम्बके विस्तारको जाननेकी इच्छा हो तो ध्रुवराशिके बीचमेंसे उसके समस्त मार्गान्तरालको घटाकर शेषमें एक सौ चौरासीका भाग देना चाहिये । ऐसा करनेसे जो लब्ध आवे उतना ही सूर्यबिम्बका विस्तार होता है ॥ २४१ ॥

ध्रु. रा. $\frac{३११५८}{६१}$ − $\frac{२२३१६}{६१}$ = $\frac{८८३२}{६१}$; $\frac{८८३२}{६१}$ ÷ १८४ = $\frac{४८}{६१}$ सूर्यबिम्ब वि. ।

अथवा—

दिणवड्ढपहंतराणिं लोहिय धुवरासियम्मि भजिदूणं । रविबिंबेणं आणसु रविमग्गे विउणबाणउदी ॥ २४२

४८ | ८८३२ | १८४ ।[1]
६१ | ६१ |

दिणवड्ढपहसूचिचए[2] वियप्पीदीजुदसदेण संगुणिदे । होदि हु चारक्खेत्तं बिंबूणं तज्जुदं सयलं ॥ २४३

१ । १७० | १८३ । अङ्क ५१० ।
६१ |

दिणरयणिजाणणट्ठं आदवतिमिराण कालपरिमाणं । मंदरपरिहिप्पहुदिं चउणवदिमयं परूवेमो ॥ २४४

१९४ ।

एक्कत्तीससहस्सा जोयणया छस्सयाणि बावीसं । मंदरगिरिंदपरिरयरासिस्स हुवेदि परिमाणं ॥ २४५

३१६२२ ।

णभछक्कसत्तसत्ता सत्तेक्कंककमेण जोयणया । अट्ठहिदपंचभागा[3] खेमावज्झाण पणिधिपरिहि त्ति ॥२४६

१७७७६० | ५
८ |

अथवा, ध्रुवराशिमेंसे सूर्यके मार्गान्तरालोंको घटाकर शेषमें रविबिम्ब (सूर्यबिम्बविस्तार) का भाग देनेपर बानवैके दूने अर्थात् एक सौ चौरासी सूर्यमार्गोंका प्रमाण आता है ॥ २४२ ॥

ध्रु. रा. $\frac{३१५१०}{६१} - \frac{२२३२६}{६१} = \frac{८८३२}{६१}$; $\frac{८८३२}{६१} \div \frac{४८}{६१} = १८४$ मार्ग संख्या ।

सूर्यकी पथसूचीवृद्धिको एक सौ तेरासीसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उतना सूर्यका बिम्बसे रहित चार-क्षेत्र होता है । इसमें बिम्बविस्तारको मिलानेपर समस्त चारक्षेत्रका प्रमाण होता है ॥ २४३ ॥

सू. प. सूचीवृद्धि – $\frac{१७०}{६१} \times १८३ = \frac{३११११०}{६१} = ५१०$ बिम्बरहित चार क्षेत्र; $५१० + \frac{४८}{६१} = ५१०\frac{४८}{६१}$ समस्त चार क्षेत्र ।

दिन और रात्रिके जाननेके लिये आतप और तिमिरके कालप्रमाणको और मेरुपरिधि आदि एक सौ चौरानवै परिधियोंको कहते हैं ॥ २४४ ॥ १९४ ।

मन्दरपर्वतकी परिधिराशिका प्रमाण इकतीस हजार छह सौ बाईस योजनमात्र है ॥२४५॥

३१६२२ ।

क्षेमा और अवध्या नगरीके प्रणिधिभागोंमें परिधिका प्रमाण शून्य, छह, सात, सात, सात और एक, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् एक लाख सतत्तर हजार सात सौ साठ योजन और एक योजनके आठ भागोंमेंसे पांच भागमात्र है ॥ २४६ ॥ १७७७६०$\frac{५}{८}$ ।

१ द १८८ ३२ | १ । ४८ । २ द ब °सूचिविए. ३ द ब हिदा पंचमागे.
६१ |

अट्ठेक्कणवचउक्का णवेक्कअंकक्कमेण जोयणया । तिकलाओ परिहिसंखा खेमपुरीयउज्झाण मज्झपणिधीए ॥

१९४९१८ | ३/८ |

चउगयणसत्तणवणहदुगाण अंकक्कमेण जोयणया । तिकला ओ खग्गरिट्ठापुराण पणिधीए परिमाणं ॥२४८

२०९७०४ | ३/८ |

दुगछक्कअट्ठछक्का दुगदुगअंकक्कमेण जोयणया । एक्ककला परिमाणं चक्कारिट्ठाण पणिधिपरिहीए ॥२४९

२२६८६२ | १/८ |

अट्ठचउछक्कएक्का चउदुगअंकक्कमेण जोयणया । एक्ककला खग्गापराजिदाण णयरीण मज्झि परिही सा ॥

२४१६४८ | १/८ |

पंचगयणट्ठअट्ठा पंचदुगंकक्कमेण जोयणया । सत्तकलाओ मंजूसंजयंतपुरमज्झपरिही सा ॥ २५१

२५८८०५ | ७/८ |

क्षेमपुरी और अयोध्या नगरीके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण आठ, एक, नौ, चार, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् एक लाख चौरानबे हजार नौ सौ अठारह योजन और तीन कला अधिक है ॥ २४७ ॥ १९४९१८$\frac{३}{८}$ ।

खड्गपुरी और अरिष्टा नगरियोंके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण चार, शून्य, सात, नौ, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख नौ हजार सात सौ चार योजन और तीन कला अधिक है ॥ २४८ ॥ २०९७०४$\frac{३}{८}$ ।

चक्रपुरी और अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण दो, छह, आठ, छह, दो और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख छब्बीस हजार आठ सौ बासठ योजन और एक कलामात्र है ॥ २४९ ॥ २२६८६२$\frac{१}{८}$ ।

खड्गा और अपराजिता नगरियोंके मध्यमें उस परिधिका प्रमाण आठ, चार, छह, एक, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख इकतालीस हजार छह सौ अड़तालीस योजन और एक कलामात्र है ॥ २५० ॥ २४१६४८$\frac{१}{८}$ ।

मंजूषा और जयन्त पुरोंके मध्यमें वह परिधि पांच, शून्य, आठ, आठ, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख अट्ठावन हजार आठ सौ पांच योजन और सात कला अधिक है ॥ २५१ ॥ २५८८०५$\frac{७}{८}$ ।

एक्कणवपंचतियसत्तदुगा अंककमेण जोयणया । सत्तकलाओ परिही ओसहिपुरवइजयंताणं ॥ २५२

२७३५९१ | ७/८ |

णवचउसत्तणहाइं णवयदुगा जोयणाइं अंककमे । पंचकलाओ परिही विजयपुरीपुंडरीगिणीणं पि ॥२५३

२९०७४९ | ५/८ |

तियजोयणलक्खाइं पण्णरससहस्सआणि उणणउदी । सव्वब्भंतरमग्गे परिरयरासिस्स परिमाणं ॥ २५४

३१५०८९ ।

सेसाणं मग्गाणं परिहीपरिमाणजाणणणिमित्तं । परिहिक्खेवं वोच्छं गुरूवदेसाणुसारेणं ॥ २५५

सूरपहसूहवड्ढी दुगुणं काऊण वग्गिदूणं च । दसगुणिदे जं मूलं परिहिक्खेवो इमो होइ ॥ २५६

सत्तरसजोयणाणिं अदिरेका तस्स होइ परिमाणं । अट्ठत्तीसं अंसा हारो तह एक्कसट्ठी य ॥ २५७

१७ | ३८/६१ |

ओषधीपुर और वैजयन्ती नगरीकी परिधि एक, नौ, पांच, तीन, सात, और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख तिहत्तर हजार पांच सौ इक्यानवै योजन और सात कला अधिक है ॥ २५२ ॥ २७३५९१$\frac{७}{८}$ ।

विजयपुरी और पुण्डरीकिणी नगरियोंकी परिधि नौ, चार, सात, शून्य, नौ और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् दो लाख नब्बै हजार सात सौ उनंचास योजन और पांच कला अधिक है ॥ २५३ ॥ २९०७४९$\frac{५}{८}$ ।

सूर्यके सब मार्गोंमेंसे अभ्यन्तर मार्गमें परिधिराशिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार नवासी योजनमात्र है ॥ २५४ ॥ ३१५०८९ ।

शेष मार्गोंकी परिधिके प्रमाणको जाननेके निमित्त गुरूपदेशके अनुसार परिधिक्षेपको कहते हैं ॥ २५५ ॥

सूर्यपथोंकी सूचीवृद्धिको दूगुणा करके उसका वर्ग करनेके पश्चात् जो प्रमाण प्राप्त हो उसे दशसे गुणा करनेपर प्राप्त हुई राशिके वर्गमूल प्रमाण उपर्युक्त परिधिक्षेप (परिधिवृद्धि) होता है ॥ २५६ ॥

सूर्यपथसूचीवृद्धि $\frac{१७०}{६१}$; $\sqrt{\left(\frac{१७०}{६१} \times २\right)^२ \times १०} = १७\frac{३८}{६१}$ परिधिक्षेप ।

उक्त परिधिक्षेपका प्रमाण सत्तरह योजन और एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे अड़तीस भाग अधिक है ॥ २५७ ॥ १७$\frac{३८}{६१}$ ।

तियजोयणलक्खाणं पण्णरससहस्स एक्कसय छक्का । अट्ठत्तीस कलाओ सा परिही बिदियमग्गम्मि ॥

३१५१०६ | ३८/६१ |

चउवीसजुदेक्कसयं पण्णरससहस्स जोयण तिलक्खा । पण्णरसकला परिही परिमाणं तदियवीहीए ॥२५९

३१५१२४ | १५/६१ |

एक्कत्तालेक्कसयं पण्णरससहस्स जोयण तिलक्खा । तेवण्णकला तुरिमे पहम्मि परिहीए परिमाणं ॥२६०

३१५१४१ | ५३/६१ |

उणसट्ठिजुदेक्कसयं पण्णरससहस्स जोयण तिलक्खा । इगिसट्ठीपविहत्ता तीसकला पंचमपहे सा ॥ २६१

३१५१५९ | ३०/६१ |

एवं पुव्वुप्पण्णे परिहिक्खेवं मेलवि माणसुयरुवरिं[1] । परिहिपमाणं जाव दुचरिमपरिहिं ति णेदव्वं[2] ॥

चोद्दसजुदतिसयाणिं अट्ठरसमहस्स जोयण तिलक्खा । सूरस्स बाहिरपहे हुवेदि परिहीए परिमाणं ॥ २६३

३१८३१४ ।

द्वितीय मार्गमें वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ छह योजन और अड़तीस कला अधिक है ॥ २५८ ॥ ३१५०८९ + १७$\frac{३८}{६१}$ = ३१५१०६$\frac{३८}{६१}$ ।

तृतीय वीथीमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ चौबीस योजन और पन्द्रह कला अधिक है ॥ २५९ ॥ ३१५१०६$\frac{३८}{६१}$ + १७$\frac{१५}{६१}$ = ३१५१२४$\frac{१५}{६१}$ ।

चतुर्थ पथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ इकतालीस योजन और तिरेपन कला अधिक है ॥ २६० ॥ ३१५१२४$\frac{१५}{६१}$ + १७$\frac{५३}{६१}$ = ३१५१४१$\frac{५३}{६१}$ ।

पंचम पथमें वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ उनसठ योजन और इकसठसे विभक्त तीस कला अधिक है ॥ २६१ ॥

३१५१४१$\frac{५३}{६१}$ + १७$\frac{३०}{६१}$ = ३१५१५९$\frac{३०}{६१}$ ।

इस प्रकार पूर्वोत्पन्न परिधिप्रमाणमें उपर्युक्त परिधिक्षेपको मिलाकर द्विचरम परिधि पर्यन्त आगे आगेका परिधिप्रमाण जानना चाहिये ॥ २६२ ॥

सूर्यके बाह्य पथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख अठारह हजार तीन सौ चौदह योजन-मात्र है ॥ २६३ ॥ ३१८३१४ ।

१ द ब माण उवरिवरिं, क माण उवरुवरिं. २ द ब अणेदव्वं.

सत्तावीससहस्सा छादालं जोयणाणि पणलक्खा । परिही लवणमहण्णवविक्खंभच्छट्ठभागम्मि ॥ २६४

५२७०४६ ।

रविबिंबा सिग्घगदी णिग्गच्छंता हुवंति पविसंता । मंदगदी असमाणा परिही साहंति समकाले ॥ २६५

एक्क जोयणलक्खं णव य सहस्सयाणि अट्ठसयाणिं पि । परिहीणं पत्तेक्कं कादव्वा[1] गयणखंडाणिं ॥२६६

१०९८०० ।

गच्छदि मुहुत्तमेक्के तीसब्भहियाणि अट्ठरसयाणिं । णभखंडाणिं रविणो तम्मि हिदे[2] सव्वगयणखंडाणिं ॥

१८३० ।

अब्भंतरवीहीदो दुतिचदुपहुदीसु सव्ववीहीसुं । कमसो वे रविबिंबा भमंति सट्ठीमुहुत्तेहिं ॥ २६८

इच्छियपरिहिपमाणं सट्ठिमुहुत्तेहिं भाजिदे लद्धं । णेयं[3] दिवसकराणं मुहुत्तगमणस्स परिमाणं ॥ २६९

लवण महासमुद्रके विस्तारके छठे भागमें परिधिका प्रमाण पांच लाख सत्ताईस हजार छयालीस योजनमात्र है ॥ २६४ ॥ ५२७०४६ ।

सूर्यबिम्ब बाहिर निकलते हुए शीघ्रगतिवाले और प्रवेश करते हुए मन्दगतिवाले होते हैं, इसीलिये ये समान कालमें ही असमान परिधियोंको सिद्ध करते हैं ॥ २६५ ॥

इन परिधियोंमेंसे प्रत्येकके एक लाख नौ हजार आठ सौ योजनरूप गगनखण्ड करना चाहिये ॥ २६६ ॥ १०९८०० ।

सूर्य एक मुहूर्तमें अठारह सौ तीस गगन खण्डोंका अतिक्रमण करता है, इसलिये इस राशिका समस्त गगनखण्डोंमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने मुहूर्तप्रमाण सम्पूर्ण गगन-खण्डोंके अतिक्रमणका काल होगा ॥ २६७ ॥

सर्व ग. खं. १०१८०० ÷ १८३० = ६० मुहूर्त स. ग. अतिक्रमणकाल ।

अभ्यन्तर वीथीसे लेकर दो, तीन, चार इत्यादि सब वीथियोंमें क्रमसे दो सूर्यबिम्ब साठ मुहूर्तोंमें भ्रमण करते हैं ॥ २६८ ॥

इष्ट परिधिप्रमाणमें साठ मुहूर्तोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्योंके एक मुहूर्तकालपरिमित गमन क्षेत्रका प्रमाण जानना चाहिये ॥ २६९ ॥

इष्ट परिधिप्रमाण ३१५०८९ ÷ ६० = ५२५१$\frac{२९}{६०}$ एक मुहूर्त गमनक्षेत्र ।

---

१ द ब कालं वा. २ द ब तम्मिल्लिदे. ३ द ब सेसं.

पंचसहस्साणि दुवे सयाणि इगिवण्ण जोयणा अधिया। उणतीसकला पढमप्पहम्मि दिणयरमुहुत्तगदिमाणं॥

$$५२५१\left|\frac{२९}{६०}\right|$$

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं।

पंचसहस्सा तिसया पंच चिय जोयणाणि अदिरेगो। चोद्दसकलाओ बाहिरपहम्मि दिणयरमुहुत्तगदिमाणं॥

$$५३०५\left|\frac{१४}{६०}\right|$$

दिणयरणयरतलादो चत्तारि पमाणअंगुलाणिं च। हेट्ठा गच्छिय होंति अरिट्ठविमाणाण धयदंडा॥ २७२

४।[1]

रिट्ठाणं णयरतला अंजणवण्णा अरिट्ठरयणमया। किंचूणं जोयणयं पत्तेक्कं वाससंजुत्तं॥ २७३

पण्णाधियदुसयाणिं कोदंडाणं हुवंति पत्तेक्कं। बहुलत्तणपरिमाणं तण्णयरागं[2] सुरम्माणं॥ २७४

२५०।

प्रथम पथमें सूर्यकी एक मुहूर्तपरिमित गतिका प्रमाण पांच हजार दो सौ इक्यावन योजन और एक योजनकी साठ कलाओंमेंसे उनतीस कला अधिक है॥ २७०॥

$$५२५१\frac{२९}{६०}।$$

इस प्रकार द्विचरम अर्थात् एक सौ तेरासीवें मार्ग तक ले जाना चाहिये।

बाह्य अर्थात् एक सौ चौरासीवें मार्गमें सूर्यकी मुहूर्तपरिमित गतिका प्रमाण पांच हजार तीन सौ पांच योजन और चौदह कला अधिक है॥ २७१॥ $५३०५\frac{१४}{६०}$।

(बाह्य पथपरिधि $३१८३१४ \div ६० = ५३०५\frac{१४}{६०}$)

सूर्यके नगरतलसे चार प्रमाणांगुल नीचे जाकर अरिष्ट विमानोंके ध्वजदण्ड होते है॥ २७२॥

अरिष्ट रत्नोंसे निर्मित केतुओंके नगरतल अंजनवर्ण होते हैं। इनमेंसे प्रत्येक कुछ कम एक योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त होता है॥ २७३॥

उन सुरम्य नगरोंमेंसे प्रत्येकका बाहल्यप्रमाण दो सौ पचास धनुष होता है॥ २७४॥

२५०।

१ द ब मग्गाणि; क मग्गाणि. २ द ब २५६। ३ द ब तं तं णयराणं.

चउगोउरजुत्तेसुं[1] जिणभवणभूसिदेसु रम्मेसुं । चेट्ठंते रिद्धसुरा बहुपरिवारेहिं परियरिया ॥ २७५

मत्तंडमंडलाणं गमणविसेसेण मणुवलोयम्मि । जे दिणरत्ति य[2] भजिदा जादा तेसिं परूवेमो ॥ २७६

पढमपहे दिणबड्ढी संठिदकालम्मि सव्वपरिहीसुं । अट्ठरसमुहुत्ताणिं दिवसो बारस णिसा होदि ॥ २७७

१८ । १२ ।

बाहिरमग्गे रविणो संठिदकालम्मि सव्वपरिहीसुं । अट्ठरसमुहुत्ताणिं रत्ती बारस दिणं होदि ॥ २७८

१८ । १२ ।

भूमीय मुहं[3] सोधिय रूऊणेणं पहेण भजिदव्वं । सा रत्तीए दिणादो वड्ढी दिवसस्स रत्तीदो[4] ॥ २७९

तस्स पमाणं दोण्णि य मुहुत्तया एक्कसट्ठिपविहत्ता । दोण्हं दिणरत्तीणं पडिदिवसं हाणिवड्ढीओ ॥ २८०

$\frac{२}{६१}$[5]

चार गोपुरोंसे संयुक्त, जिनभवनोंसे विभूषित, और रमणीय उन नगरतलोंमें बहुत परिवारोंसे घिरे हुए केतु देव रहते है ॥ २७५ ॥

मनुष्यलोकमें सूर्यमण्डलोंके गमनविशेषसे जो दिन व रात्रिके विभाग हुए हैं उनका निरूपण करते हैं ॥ २७६ ॥

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते समय सब परिधियोंमें अठारह मुहूर्तका दिन और बारह मुहूर्तकी रात्रि होती है ॥ २७७ ॥ दिन १८ मु. । रात्रि १२ मु. ।

सूर्यके बाह्य मार्गमे स्थित रहते समय सब परिधियोंमें अठारह मुहूर्तकी रात्रि और बारह मुहूर्तका दिन होता है ॥ २७८ ॥ रात्रि १८ मु. । दिन १२ मु. ।

भूमिमेंसे मुखको कम करके शेषमें एक कम पथप्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी दिनसे रात्रिमें और रात्रिसे दिनमे वृद्धि होती है ॥ २७९ ॥

भूमि मुहूर्त १८, मुख मु. १२; १८ − १२ = ६; पथ १८४ − १ = १८३; ६ ÷ १८३ = $\frac{६}{१८३}$ = $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त वृद्धि ।

उपर्युक्त वृद्धिका प्रमाण इकसठसे विभक्त दो मुहूर्त है । इतनी प्रतिदिन दोनों दिन-रात्रियोंमें हानि-वृद्धि हुआ करती है ॥ २८० ॥ $\frac{२}{६१}$ ।

---

१ द ब चउगोउरखेत्तेसुं. २ द ब जे दिणरत्ति. ३ द ब दिणं. ४ द ब रत्तिदो.
५ द १२ $\left|\frac{०}{६१}\right|$, ब $\frac{३१}{६१}$ ते वा १७३ । १ ।

बिदियपहट्ठिदसूरे सत्तरसमुहुत्तयाणि होदि दिणं । उणसट्ठिकलब्भहियं छक्कोणिसदुसयपरिहीसुं ॥ २८१

$$१७\left|\frac{५९}{६१}\right|$$

बारसमुहुत्तयाणिं दोण्णि कलाओ णिसाए परिमाणं । बिदियपहट्ठिदसूरे तेत्तियमेत्तासु परिहीसुं ॥ २८२

$$१२\left|\frac{२}{६१}\right|$$

तदियपहट्ठिदतवणे सत्तरसमुहुत्तयाणि होदि दिणं । सत्तावण्ण कलाओ तेत्तियमेत्तासु परिहीसुं ॥ २८३

$$१७\left|\frac{५७}{६१}\right|$$

बारस मुहुत्तयाणिं चत्तारि कलाओ रत्तिपरिमाणं । तप्परिहीसुं सूरे अत्थट्ठिदे तिदियमग्गम्मि ॥ २८४

$$१२\left|\frac{४}{६१}\right|$$

सत्तरसमुहुत्ताइं पंचावण्णा कलाओ परिमाणं । दिवसस्स तुरिममग्गट्ठिदम्मि तिव्वंसुबिंबम्मि ॥ २८५

$$१७\left|\frac{५५}{६१}\right|$$

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर छह कम दो सौ अर्थात् एक सौ चौरानबे परिधियोंमें दिनका प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और उनसठ कला अधिक होता है ॥ २८१ ॥ १७ $\frac{५९}{६१}$ ।

सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित रहनेपर उतनी (१९४) ही परिधियोंमें रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और दो कलामात्र होता है ॥ २८२ ॥ १२ $\frac{२}{६१}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर उतनी ही परिधियोंमें दिनका प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और सत्तावन कला अधिक होता है ॥ २८३ ॥ १७ $\frac{५७}{६१}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर उन परिधियोंमें रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और चार कला अधिक होता है ॥ २८४ ॥ १२ $\frac{४}{६१}$ ।

तीव्रांशुबिम्ब अर्थात् सूर्यमण्डलके चतुर्थ मार्गमें स्थित रहनेपर दिनका प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और पचवन कला अधिक होता है ॥ २८५ ॥ १७ $\frac{५५}{६१}$ ।

---

१ द बिदिय.

बारस मुहुत्तयाणिं छक्ककलाओ वि रत्तिपरिमाणं । तुरिमपहट्ठिदपंकयबंधवबिंबम्मि परिहीसुं ॥ २८६

$$१२\left|\frac{६}{६१}\right|$$

एवं मज्झिमपहंतं णेदव्वं ।

पण्णरसमुहुत्ताइं पत्तेयं होंति दिवसरत्तीओ । पुव्वोदिदपरिहीसुं मज्झिममग्गट्ठिदे तवणे ॥ २८७

१५ ।

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

अट्ठरसमुहुत्ताणिं रत्ती बारस दिणो वि दिणगाहे । बाहिरमग्गपवण्णे पुव्वोदिदसव्वपरिहीसुं ॥ २८८

१८ । १२ ।

बाहिरपहादु पत्ते मग्गं अब्भंतरं सहस्सकरे । पुव्वावण्णिदमेदं पक्खेवसु दिणप्पमाणम्मि ॥ २८९

$$\frac{२}{६१}\Big|$$

इय वासररत्तीओ एक्कस्स रविस्स गदिविसेसेणं । एदाओ दुगुणाओ हुवंति दोण्हं दिणिंदाणं ॥ २९०

। दिण-रत्तीणं भेदं समत्तं ।

सूर्यबिम्बके चतुर्थ पथमें स्थित रहनेपर सब परिधियोंमे रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और छह कलामात्र होता है ॥ २८६ ॥ $१२\frac{६}{६१}$ ।

इस प्रकार मध्यम पथ पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

सूर्यके मध्यम पथमे स्थित रहनेपर पूर्वोक्त परिधियोंमें दिन-रात्रियोंमेंसे प्रत्येक पन्द्रह मुहूर्त प्रमाण होते हैं ॥ २८७ ॥ १५ ।

इस प्रकार द्विचरम (१८३) मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके बाह्य मार्गको प्राप्त होनेपर पूर्वोक्त सब परिधियोंमें अठारह मुहूर्त प्रमाण रात्रि और बारह मुहूर्त प्रमाण दिन होता है ॥ २८८ ॥ १८ । १२ ।

सूर्यके बाह्य पथसे अभ्यन्तर मार्गको प्राप्त होनेपर पूर्ववर्णित क्रमसे दिनप्रमाणमें उत्तरोत्तर इस वृद्धिप्रमाणको मिलाना चाहिये ॥ २८९ ॥ $\frac{२}{६१}$ ।

इस प्रकार एक सूर्यकी गतिविशेषसे उपर्युक्त प्रकार दिन-रात्रियां हुआ करती हैं । इनको दुगुणा करनेपर दोनों सूर्योंकी गतिविशेषसे होनेवाली दिन-रात्रियोंका प्रमाण होता है ॥ २९० ॥

दिन-रात्रियोंके भेदका कथन समाप्त हुआ ।

पुत्तो वासरपहुणो मग्गविसेसेण मणुवलोयम्मि । जे आदवतमखेत्ता जादा ताणि परूवेमो ॥ २९१
मंदरगिरिमज्झादो लवणोदधिछट्ठभागपरियंतं । णियदायामा आदवतमखेत्तं सकटउड्ढिणिहा ॥ २९२
तेसीदिसहस्साणिं तिण्णिसया जोयणाणि तेत्तीसं । तिभागा पत्तेक्कं आदवतिमिराण आयामो ॥ २९३

$$८३३३३\frac{१}{३}$$

इच्छं परिरयरासिं तिगुणिय दसभाजिदम्मि जं लद्धं । सा धम्मखेत्तपरिही पढमपहट्ठिदे सूरे ॥ २९४

$$\frac{३}{१०}$$

णव य सहस्सा चउसय छावीदी जोयणाणि तिण्णि कला । पंचहिदा तावखिदी मेरुगिरे पढमपहट्ठिदेक्कम्मि ॥

$$९४८६\frac{३}{५}$$

खेमक्खापणिधीए तेवण्णसहस्स तिसयअडवीसा । सोलसहिदा तियंसा तावक्खिदी पढमपहट्ठिदेक्कम्मि ॥

$$५३३२८\frac{३}{१६}$$

अब यहांसे आगे वासरप्रभु अर्थात् सूर्यके मार्गविशेषसे जो मनुष्यलोकमें आतप व तम क्षेत्र हुए हैं उनको कहते हैं ॥ २९१ ॥

मन्दर पर्वतके मध्य भागसे लेकर लवणसमुद्रके छठे भाग पर्यंत नियमित आयामवाले गाड़ीकी उद्धि (अवयवविशेष) के सदृश आतप व तमक्षेत्र है ॥ २९२ ॥

प्रत्येक आतप व तिमिरक्षेत्रोंकी लंबाई तेरासी हजार तीनसौ तेंतीस योजन और एक योजनके तृतीय भागसे सहित है ॥ २९३ ॥ ८३३३३$\frac{१}{३}$ ।

इच्छित परिधिराशिको तिगुणा करके दशका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर उस आतप क्षेत्रकी परिधिका प्रमाण होता है ॥ २९४ ॥ $\frac{३}{१०}$ ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर मेरु पर्वतके ऊपर नौ हजार चारसौ छयासी योजन और पांचसे भाजित तीन कला प्रमाण तापक्षेत्र रहता है ॥ २९५ ॥ ९४८६$\frac{३}{५}$ ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर क्षेमा नामक नगरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण तिरेपन हजार तीन सौ अट्ठाईस योजन और एक योजनके सोलह भागोंमेंसे तीन भाग अधिक होता है ॥ २९६ ॥ ५३३२८$\frac{३}{१६}$ ।

१ द अडतीसा.

खेमपुरीपणिधीए अट्ठावण्णसहस्स चउसयाणिं पि । पंचत्तरि जोयणया इगिदालकलाओ सीदिहिदा ॥

५८४७५ | ४१ / ८०

रिट्ठार पणिधीए बासट्ठिसहस्स णवसयाणिं पि । एक्कारस जोयणया सोलसहिदएगकलाओ तावखिदी ॥

६२९११ | १ / १६

अट्ठासट्ठिसहस्सा अट्ठावण्णा य जोयणा होंति । एक्कावण्ण कलाओ रिट्ठपुरीपणिधितावखिदी ॥ २९९

६८०५८ | ५१ / ८०

बाहत्तरी सहस्सा चउसया जोयणाणि चउणवदी । सोलसहिदसत्तकला खग्गपुरीपणिधितावमही ॥ ३००

७२४९४ | ७ / १६

सत्तत्तरी सहस्सा छच्च सया जोयणाणि इगिदालं । सीदिहिदा इगिसट्ठी कलाओ मंजुसपुरम्मि तावमही ॥

७७६४१ | ६१ / ८०

बासीदिसहस्साणिं सत्तत्तरि जोयणाणि णव अंसा । सोलसभजिदा ताओ ओसहिणयरस्स[1] पणिधीए ॥

८२०७७ | ९ / १६

वह तापक्षेत्र क्षेमपुरीके प्रणिधिभागमें अट्ठावन हजार चार सौ पचत्तर योजन और अस्सीसे भाजित इकतालीस कलाप्रमाण रहता है ॥ २९७ ॥ ५८४७५$\frac{४१}{८०}$ ।

वह तापक्षेत्र अरिष्टनगरीके प्रणिधिभागमें बासठ हजार नौ सौ ग्यारह योजन और सोलहसे भाजित पांच कलामात्र रहता है ॥ २९८ ॥ ६२९११$\frac{१}{१६}$ ।

यह आतपक्षेत्र अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें अड़सठ हजार अट्ठावन योजन और एक योजनके अस्सी भागोंमेंसे इक्यावन कला अधिक रहता है ॥ २९९ ॥ ६८०५८$\frac{५१}{८०}$ ।

खड्गपुरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण बहत्तर हजार चार सौ चौरानवे योजन और सोलहसे भाजित सात कला अधिक है ॥ ३०० ॥ ७२४९४$\frac{७}{१६}$ ।

मंजूषपुरमें तापक्षेत्रका प्रमाण सतत्तर हजार छह सौ इकतालीस योजन और अस्सीसे भाजित इकसठ कला अधिक है ॥ ३०१ ॥ ७७६४१$\frac{६१}{८०}$ ।

औषधिनगरके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्र व्यासी हजार सतत्तर योजन और सोलहसे भाजित नौ भाग अधिक है ॥ ३०२ ॥ ८२०७७$\frac{९}{१६}$ ।

---

१ द ब होदिसणयरस्स.

सत्तासीदिसहस्सा दुसया चउवीस जोयणा अंसा । एक्कत्तरि सीदिहिदा तावखिदी पुंडरीगिणीणयरे ॥

८७२२४ | ७१ / ८०

चउगउदिसहस्सा पणुपयाणि छव्वीस जोयणा सत्त । अंसा दसेहिं भजिदा पढमपहे तावखिदिपरिही ॥

९४५२६ | ७ / १०

चउणउदिसहस्सा पणुवयाणि इगितीस जोयणा अंसा । चत्तारो पंचहिदा दिदियपहे तावखिदिपरिही ॥

९४५३१ | ४ / ५

एवं मज्झिममग्गंतं णेदव्वं ।

पंचाणउदिसहस्सा दसुत्तरा जोयणाणि तिण्णि कला । पंचविहत्ता मज्झिमपहम्मि तावस्स परिमाणं ॥

९५०१० | ३ / ५

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

पणणउदिसहस्सा चउसयाणि चउणउदि जोयणा अंसा । पंचहिदा बाहिरए पढमपहे संठिदे सूरे ॥ २०७

९५४९४ | १ / ५

पुण्डरीकिणी नगरमें तापक्षेत्र सत्तासी हजार दो सौ चौबीस योजन और अस्सीसे भाजित इकहत्तर भाग अधिक है ॥ २०३ ॥ ८७२२४$\frac{७१}{८०}$ ।

प्रथम पथमें तापक्षेत्रकी परिधि चौरानवे हजार पांच सौ छब्बीस योजन और दशसे भाजित सात भाग अधिक है ॥ २०४ ॥ ९४५२६$\frac{७}{१०}$ ।

द्वितीय पथमें तापक्षेत्रकी परिधि चौरानवे हजार पांच सौ इकतीस योजन और पांचसे भाजित चार भाग अधिक है ॥ २०५ ॥ ९४५३१$\frac{४}{५}$ ।

इस प्रकार मध्यम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

मध्यम पथमें तापका प्रमाण पंचानवे हजार दश योजन और पांचसे विभक्त तीन कला अधिक है ॥ २०६ ॥ ९५०१०$\frac{३}{५}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर बाह्य मार्गमें तापक्षेत्रका प्रमाण पंचानवे हजार चार सौ चौरानवे योजन और एक योजनके पांचवें भागसे अधिक है ॥ २०७ ॥ ९५४९४$\frac{१}{५}$ ।

१ द ब पुरिणी.

अट्ठावण्ण सहस्सा एक्कसयं तेरसुत्तरं लक्खं[1] । जोयणया चउअंसा पविहत्ता पंचरूवेहिं ॥ ३०८

$$१५८११३\frac{४}{५}$$

एदं होदि पमाणं लवणोदहिवासछट्ठभागस्स । परिधीए तावखेत्तं दिवसयरे पढममग्गठिदे ॥ ३०९

इट्ठं परिरयरासिं चउहत्तरि दोसएहिं गुणिदव्वं । णवसयपण्णरसहिदे तावखिदी बिदियपहट्ठिदक्कस्स ॥

$$२७४ \mid ९१५$$

णवयसहस्सा चउसय उणहत्तरि जोयणा दुसयअंसा । तेणवदीहि जुदा तह[2] मेरुणगविदियपहठिदे तवणे ॥

$$९४६९\frac{२९३}{९१५}$$

इगितिदुतिपंचकमम्मो जोयणया तह कलाओ सगतीसं । सगसयबत्तीसहिदा खेमापणिधीए तावखिदी ॥

$$५३२३१\frac{३७}{७३२}$$

अट्ठं छक्कतिअट्ठं पंचा अंककमे णवपणछत्तिय अंसा । णभछच्छत्तियभजिदा खेमपुरीपणिधितावखिदी ॥३१३

$$५८३६८\frac{३६५९}{३६६०}$$

सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित रहनेपर लवणोदधिके विस्तारके छठे भागकी परिधिमें यह तापक्षेत्रका प्रमाण एक लाख अट्ठावन हजार एक सौ तेरह योजन और पांच रूपोंसे विभक्त चार भाग अधिक है ॥ ३०८-३०९ ॥ १५८११३$\frac{४}{५}$ ।

इष्ट परिधिराशिको दो सौ चौहत्तरसे गुणा करके नौ सौ पन्द्रहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना द्वितीय पथमें स्थित सूर्यके तापक्षेत्रका प्रमाण होता है ॥ ३१० ॥ $\frac{२७४}{९१५}$ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर मेरुपर्वतके ऊपर तापक्षेत्रका प्रमाण नौ हजार चार सौ उनहत्तर योजन और दो सौ तेरानवे भाग अधिक है ॥ ३११ ॥ ९४६९$\frac{२९३}{९१५}$ ।

(मेरुपरिधि ३१६२२×२७४=८६६४४२८; ८६६४४२८÷९१५=९४६९$\frac{२९३}{९१५}$)

क्षेमा नगरीके प्रणिधि भागमें तापक्षेत्रका प्रमाण एक, तीन, दो, तीन और पांच, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् तिरेपन हजार दो सौ इकतीस योजन और सात सौ बत्तीससे भाजित सैंतीस कला अधिक है ॥ ३१२ ॥ ५३२३१$\frac{३७}{७३२}$ ।

क्षेमपुरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, छह, तीन, आठ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् अट्ठावन हजार तीन सौ अड़सठ योजन और तीन हजार छह सौ साठसे भाजित तीन हजार छह सौ उनसठ भाग अधिक है ॥ ३१३ ॥ ५८३६८$\frac{३६५९}{३६६०}$ ।

१ द ब लक्खा. २ द बासरछभाग°. ३ द ब तेणवदिजुदा तहा.

छण्णवसगदुगछक्का अंककमे पंचतियछद्दोण्णि कमे । णभछच्छक्कतियहरिदा रिट्ठापणिधीए तावखिदी ॥ ३१४

$$६२७९६\left|\frac{२६३५}{३६६०}\right.$$

चउतियणवसगछक्का अंककमे जोयणाणि अंसा य । णवचउचउक्कदुगया रिट्ठपुरीपणिधितावखिदी ॥ ३१५

$$६७९३४\left|\frac{२४४९}{३६६०}\right.$$

दुगछक्कतिदुगसत्ता अंककमे जोयणाणि अंसा य । पंचदुचउक्कदुगया खग्गपुरीपणिधितावखिदी ॥ ३१६

$$७२३६२\left|\frac{१४२५}{३६६०}\right.$$

णभणयणपंचसत्ता सत्तंककमेण जोयणा अंसा । णवतियदुगेक्कसत्ता मंजुसपुरपणिधितावखिदी ॥ ३१७

$$७७५००\left|\frac{१२३९}{३६६०}\right.$$

अट्ठदुगणेक्कअट्ठा अंककमे जोयणाणि अंसा य । पंचेक्कदुगपमाणा ओसहिपुरपणिधितावखिदी ॥ ३१८

$$८१९२८\left|\frac{२१५}{३६६०}\right.$$

अरिष्टा नगरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण छह, नौ, सात, दो और छह, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् बासठ हजार सात सौ छयानवे योजन और तीन हजार छह सौ साठसे भाजित दो हजार छह सौ पैंतीस भाग अधिक है ॥ ३१४ ॥ $६२७९६\frac{२६३५}{३६६०}$ ।

अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण चार, तीन, नौ, सात और छह, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सड़सठ हजार नौ सौ चौंतीस योजन और दो हजार चार सौ उनंचास भाग अधिक है ॥ ३१५ ॥ $६७९३४\frac{२४४९}{३६६०}$ ।

खड्गपुरीके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण दो, छह, तीन, दो और सात, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् बहत्तर हजार तीन सौ बासठ योजन और एक हजार चार सौ पच्चीस भाग अधिक होता है ॥ ३१६ ॥ $७२३६२\frac{१४२५}{३६६०}$ ।

मंजूषपुरके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण शून्य, शून्य, पांच, सात और सात, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सतत्तर हजार पांच सौ योजन और एक हजार दो सौ उनतालीस भागमात्र होता है ॥ ३१७ ॥ $७७५००\frac{१२३९}{३६६०}$ ।

औषधिपुरके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, दो, नौ, एक और आठ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् इक्यासी हजार नौ सौ अट्ठाईस योजन और दो सौ पन्द्रह भाग अधिक होता है ॥ ३१८ ॥ $८१९२८\frac{२१५}{३६६०}$ ।

छप्पंचगयणसत्ता अट्ठंकक्कमेण जोयणाणि कला । एक्कोणतीसमेत्ता तावखिदी पुंडरंगिणिए ॥ ३१९

८७०६६ | २९ / ९६०

चउपंचतिचउणवया अंककमे छक्कमत्तचउअंसा । पंचेक्कगवहिदाओ बिदियपहक्कस्स पढमपहताओ ॥ ३२०

९४३५४ | ४७६ / ९१५

चउणउदिमहस्सा तियसयाणि उगसट्ठि जोयणा अंसा । उगसट्ठी पंचसया बिदियपहक्कम्मि बिदियपहताओ ॥

९४३५९ | ५ ९ / ९१५

चउणउदिमहस्सा तियसयाणि पण्णट्ठि जोयणा अंसा । इगिरूवं होंति तदो बिदियपहक्कम्मि तदियपहताओ[1] ॥

९४३६१ | १ / ९१५

एवं मज्झिमपहस्स आइल्लपहपरियंतं णेदव्वं ।

सत्ततियअट्ठचउणवअंककक्कमेण जोयणाणि अंसा । तेणउदी चारिसया बिदियपहक्कम्मि मज्झपहताओ ॥

९४८३७ | ४९३ / ९१५

पुंडरीकिणी नगरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण छह, छह, शून्य, सात और आठ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सतासी हजार छयासठ योजन और उनतीस कलामात्र होता है ॥ ३१९ ॥

८७०६६ २९/९६० ।

द्वितीय पथमें स्थित सूर्यका तापक्षेत्र प्रथम पथमें चार, पांच, तीन चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चौरानवे हजार तीन सौ चौवन योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित चार सौ छयत्तर भाग अधिक होता है ॥ ३२० ॥ ९४३५४ ४७६/९१५ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर द्वितीय पथमें तापक्षेत्रका प्रमाण चौरानवे हजार तीन सौ उनसठ योजन और पांच सौ उनसठ भाग अधिक होता है ॥ ३२१ ॥

९४३५९ ५ ९/९१५ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर तृतीय पथमें तापक्षेत्रका प्रमाण चौरानवे हजार तीन सौ पैंसठ योजन और एक भागमात्र अधिक होता है ॥ ३२२ ॥ ९४३६१ १/९१५ ।

इस प्रकार मध्यम पथके आदि पथ पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित रहनेपर मध्यम पथमें तापका प्रमाण सात, तीन, आठ, चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चौरानवे हजार आठ सौ सैंतीस योजन और चार सौ तेरानवे भाग अधिक होता है ॥ ३२३ ॥ ९४८३७ ४९३/९१५ ।

१ एषा गाथा ब पुस्तके नास्ति.

एवं बाहिरपहट्ठिमपहंतं णेदव्वं ।

पणणउदिसहस्सा तियसयाणि बीसुत्तराणि जोयणया छत्तीस दुसयभंसा बिदियपहक्कम्मि अंतरहत्ताओ ॥

$$९५३२० \left| \begin{matrix} २३६ \\ ९१५ \end{matrix} \right.$$

पंचदुगअट्ठसत्ता पंचेक्केक्कमेण जोयणया । अंसा णवदुगसत्ता बिदियपहक्कम्मि लवणछट्ठंसे ॥ ३२५

$$१५७८२५ \left| \begin{matrix} ७२९ \\ ९१५ \end{matrix} \right.$$

इट्ठं परिरयरासिं सगदालब्भहियपंचसयगुणिदं । णभतियअट्ठेक्कहिदे ताओ तवणम्मि तदियमग्गठिदे ॥

$$\begin{matrix} ५४७ \\ १८३० \end{matrix} \Big|$$

णवयसहस्सा [तिइ] चउसयाणि बावण्णजोयणाणि कला । चउहत्तरिमेत्ताओ तदियपहक्कम्मि मंदरे ताओ ॥

$$९४५१ \left| \begin{matrix} ७४ \\ १८३० \end{matrix} \right.$$

तियतियएक्कतिपंचा अंककमे पंचसत्तछदुगकला । अट्ठदुगणवदुगभजिदा ताओ खेमाए तदियपहसूरे ॥

$$५३१३३ \left| \begin{matrix} २६७५ \\ २९२८ \end{matrix} \right.$$

इस प्रकार बाह्य पथके अवस्तन पथ तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर अन्तिम पथमें तापका प्रमाण पंचानवे हजार तीन सौ बीस योजन और दो सौ छत्तीस भाग अधिक रहता है ॥ ३२४ ॥ ९५३२०$\frac{२३६}{९१५}$ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर लवण समुद्रके छठे भागमें तापक्षेत्रका प्रमाण पांच, दो, आठ, सात, पांच और एक, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् एक लाख सत्तावन हजार आठ सौ पच्चीस योजन और सात सौ उनतीस भाग अधिक रहता है ॥ ३२५ ॥ १५७८२५$\frac{७२९}{९१५}$ ।

इष्ट परिधिराशिको पांच सौ सैंतालीसगुणे गुणित करके उसमें एक हजार आठ सौ तीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर विवक्षित परिधिमें तापक्षेत्रका प्रमाण रहता है ॥ ३२६ ॥

उदाहरण—इष्ट मेरुपरिधि ३१६२२ × ५४७ = १७२९७२३४; १७२९७२३४ ÷ १८३० = ९४५२$\frac{७४}{१८३०}$ मेरुका तापक्षेत्र ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर मन्दर पर्वतके ऊपर तापक्षेत्रका प्रमाण नौ हजार चार सौ बावन योजन और चौहत्तर कलामात्र अधिक रहता है ॥ ३२७ ॥ ९४५२$\frac{७४}{१८३०}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर क्षेमा नगरीमें तापका प्रमाण तीन, तीन, एक, तीन, और पांच, इन अंकोंके क्रमसे तिरेपन हजार एक सौ तेतीस योजन और दो हजार नौ सौ अट्ठाईससे भाजित दो हजार छह सौ पचहत्तर कला अधिक रहता है ॥ ३२८ ॥

५३१३३$\frac{२६७५}{२९२८}$ ।

दुगछदुगअट्ठपंचा अंककमे णवदुगेक्कसत्तकला। खचउछचउइगिभजिदा तदियपहक्कम्मि खेमपुरताओ ॥

५८२६२ | ७१२९ / १४६४० |

दुगअट्ठछदुगछक्का अंककमे जोयणाणि अंसा य। पंचयछअट्ठएक्का ताओ रिट्ठाय तदियपहसूरे ॥ ३३०

६२६८२ | १८६५ / १४६४० |

गयणेक्कअट्ठसत्ता छक्कं अंककक्कमेण जोयणया। अंसा णवपणदुखइगि तदियपहक्कम्मि रिट्ठपुरे ॥ ३३१

६७८१० | १०२५९ / १४६४० |

णभतियदुगदुगसत्ता अंककमे जोयणाणि अंसा य। पणणवणवचउमेत्ता ताओ खग्गाए तदियपहतवणे ॥

७२२३० | ४९९५ / १४६४० |

अट्ठपणतिदयसत्ता सत्तंककमे णवट्ठतितिण्णिक्का। होंति कलाओ ताओ तदियपहक्कम्मि मंजुसपुरीए ॥

७७३५८ | १३३८९ / १४६४० |

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर क्षेमपुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण दो, छह, दो, आठ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे अट्ठावन हजार दो सौ बासठ योजन और चौदह हजार छह सौ चालीससे भाजित सात हजार एक सौ उनतीस कला अधिक रहता है ॥ ३२९ ॥

५८२६२$\frac{७१२९}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहनेपर अरिष्टा नगरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण दो, आठ, छह, दो और छह, इन अंकोंके क्रमसे बासठ हजार छह सौ व्यासी योजन और एक हजार आठ सौ पैंसठ भाग अधिक रहता है ॥ ३३० ॥ ६२६८२$\frac{१८६५}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर अरिष्टपुरमें तापक्षेत्रका प्रमाण शून्य, एक, आठ, सात और छह, इन अंकोंके क्रमसे सड़सठ हजार आठ सौ दश योजन और दश हजार दो सौ उनसठ भाग अधिक रहता है ॥ ३३१ ॥ ६७८१०$\frac{१०२५९}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर खड्गापुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण शून्य, तीन, दो, दो और सात, इन अंकोंके क्रमसे बहत्तर हजार दो सौ तीस योजन और चार हजार नौ सौ पंचानवे भाग अधिक रहता है ॥ ३३२ ॥ ७२२३०$\frac{४९९५}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर मंजूषापुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, पांच, तीन, सात और सात, इन अंकोंके क्रमसे सतत्तर हजार तीन सौ अट्ठावन योजन और तेरा हजार तीन सौ नवासी कला अधिक होता है ॥ ३३३ ॥ ७७३५८$\frac{१३३८९}{१४६४०}$ ।

अट्ठसगसत्तएक्का अट्ठंककमेण पंचदुगएक्का । अट्ठ य अंसा ताओ तदियपहरुक्कम्मि ओसहपुरीए ॥ ३१४

८१७७८ | ८१२५ / १४६४०

सत्तणभणवयछक्का अट्ठंककमेण णवसगट्ठेक्का । अंसा होंदि हु ताओ तदियपहरुक्कम्मि पुंडरीगिणिए[1] ॥

८६९०७ | १८७९ / १४६४०

दुगअट्ठएक्कचउणव अंककमे तिदुगछक्क अंसा य । णभतियअट्ठेक्कहिदा तदियपहरुक्कम्मि पढमपहताओ ॥

९४१८२ | ६२३ / १८३०

चउणवदिसहस्सा इगिसयं च सगसीदि जोयणा अंसा । बाहत्तरि सत्तसया तदियपहरुक्कम्मि बिदियपहताओ ॥

९४१८७ | ७७२ / १८३०

चउणउदिसहस्सा इगिसयं च बाणउदि जोयणा अंसा । सोलससया तिरधिया तदियपहरुक्कम्मि तदियपहताओ ॥

९४१९२ | १६०३ / १८३०

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर ओषधीपुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, सात, सात, एक और आठ, इन अंकोंके क्रमसे इक्यासी हजार सात सौ अठहत्तर योजन और आठ हजार एक सौ पच्चीस भाग अधिक रहता है ॥ ३१४ ॥ ८१७७८$\frac{८१२५}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर पुंडरीकिणी नगरीमें तापक्षेत्र सात, शून्य, नौ, छह और आठ, इन अंकोंके क्रमसे छयासी हजार नौ सौ सात योजन और एक हजार आठ सौ उन्यासी भाग प्रमाण होता है ॥ ३१५ ॥ ८६९०७$\frac{१८७९}{१४६४०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तापक्षेत्र दो, आठ, एक, चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे चौरानबै हजार एक सौ व्यासी योजन और एक हजार आठ सौ तीससे भाजित छह सौ तेईस भाग प्रमाण रहता है ॥ ३१६ ॥ ९४१८२$\frac{६२३}{१८३०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर द्वितीय पथमें तापक्षेत्र चौरानबै हजार एक सौ सतासी योजन और सात सौ बहत्तर भाग प्रमाण रहता है ॥ ३१७ ॥ ९४१८७$\frac{७७२}{१८३०}$ ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर तृतीय पथमें तापक्षेत्रका प्रमाण चौरानबै हजार एक सौ बानबै योजन और सौलह सौ तीन भाग अधिक रहता है ॥ ३१८ ॥

९४१९२$\frac{१६०३}{१८३०}$ ।

१ एषा गाथा ब पुस्तके नास्ति.

चउणउदिसहस्सा इगिसयं च अडणउदि जोयणा अंसा। तेसट्ठी दोण्णि सया तदियपहकम्मि तुरिमपहताओ ॥

९४१९८ | २६३ / १८३०

एवं मज्झिल्लपहआइल्लपरिहिपरियंतं णेदव्वं ।

चउणवदिसहस्सा छस्सयाणि चउसट्ठि जोयणा अंसा। चउहत्तरि अट्ठसया तदियपहकम्मि मज्झपहताओ ॥

९४६६४ | ८७४ / १८३०

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

णवणउदिसहस्सा इगिसयं च छादाल जोयणाणि कला। अट्ठत्तरि पंचसया तदियपहकम्मि बहिपहे ताओ ॥

९९१४६ | ५७८ / १८३०

सगतियपणसगपंचा एक्कं कमसो दुवेचचउक्का। अंसा हुवेदि ताओ तदियपहकम्मि लवणजलट्ठंसे ॥३४२

१५७५३७ | १४५२ / १८३०

धरिऊण दिणमुहुत्ते[1] पडिवीदिं सेसएसु मग्गेसुं। सव्वपरिहीण तावं दुचरिममग्गंत णेदव्वं ॥ ३४३

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर चतुर्थ मार्गमें तापक्षेत्र चौरानवे हजार एक सौ अट्ठानवे योजन और दो सौ तिरेसठ भागप्रमाण रहता है ॥ ३३९ ॥ ९४१९८$\frac{२६३}{१८३०}$ ।

इस प्रकार मध्यम पथकी आदि परिधि पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तापक्षेत्र चौरानवे हजार छह सौ चौंसठ योजन और आठ सौ चौहत्तर भाग प्रमाण रहता है ॥ ३४० ॥ ९४६६४$\frac{८७४}{१८३०}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर बाह्य पथमें तापक्षेत्र पंचानवे हजार एक सौ छयालीस योजन और पांच सौ अठहत्तर कला प्रमाण रहता है ॥ ३४१ ॥ ९५१४६$\frac{५७८}{१८३०}$ ।

सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर लवण समुद्रके आठवें भागमें तापक्षेत्र सात, तीन, पांच, सात, पांच और एक, इन अंकोंके क्रमसे एक लाख सत्तावन हजार पांच सौ सैंतीस योजन और एक हजार चार सौ बावन भाग प्रमाण रहता है ॥ ३४२ ॥ १५७५३७$\frac{१४५२}{१८३०}$ ।

इसी प्रकार प्रत्येक वीथीमें दिनके मुहूर्तोंका आश्रय करके शेष मार्गोंमें द्विचरम मार्ग तक सब परिधियोंमें तापक्षेत्रको निकाल लेना चाहिये ॥ ३४३ ॥

---

[1] द ब दिणमुहुत्त.

पंचविहत्ते इच्छियपरिरयरासिम्मि होदि जं लद्धं । सा तावखेत्तपरिही[1] बाहिरमग्गम्मि दुमणिठिदसमए ॥

छच्चं सहस्सा तिसया चउवीसं जोयणाणि दोण्णि कला । पंचहिदा मेरुगदे तावो बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥

$$६३२४\left|\frac{२}{५}\right|$$

पंचत्तीससहस्सा पणसय बावण्ण जोयणा अंसा । अट्ठहिदा खेमोवरि तावो बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ३४६

$$३५५५२\left|\frac{१}{८}\right|$$

विशेष— सूर्यके विवक्षित वीथीमें स्थित होनेपर उस समय जितने मुहूर्तोंका दिन हो उनसे मुहूर्तोंसे (तिमिरक्षेत्रके लिये रात्रि मुहूर्तोंसे) विवक्षित परिधिप्रमाणको गुणा करके प्राप्त राशिमें साठ मुहूर्तोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना उस परिधिमें तापक्षेत्रका प्रमाण होता है । प्रकृतमें विस्तार भयसे जिन परिधियोंमें तापक्षेत्रका प्रमाण नहीं कहा गया है उनमें भी इस सामान्य नियमके अनुसार उस प्रमाणको ले आना चाहिये ।

उदाहरण— जब सूर्य तृतीय वीथीमें स्थित रहता है तब उस परिधिमें दिनका प्रमाण १७$\frac{२}{५}$ मुहूर्त होता है । उस समय अभ्यन्तर वीथीसे ६८ भागमें तापक्षेत्रका प्रमाण इस प्रकार होगा— द. म. के ६८ भागमें परिधिप्रमाण ५२७०४६; १७$\frac{२}{५}$ = $\frac{८७}{५}$; ६० = $\frac{३००}{५}$; गुणकार व भागहारको देने अपवर्तन करनेपर ५२७०४६ × ५४७ = २८८२९४१६२; २८८२९४१६२ − १८३० = १५७५३७$\frac{१}{२}$ आतपक्षेत्र (देखो गा. नं ३४२) ।

इच्छित परिधि राशिमें पांचका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित रहने समय आतपक्षेत्रकी परिधि होती है ॥ ३४४ ॥

इच्छित मेरुपरिधि ३१६२२ ÷ ५ = ६३२४$\frac{२}{५}$ मेरुके ऊपर आतपक्षेत्रका प्रमाण ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मेरु पर्वतके ऊपर तापक्षेत्रका प्रमाण छह हजार तीन सौ चौबीस योजन और पांचसे भाजित दो कला अधिक रहता है ॥ ३४५ ॥ ६३२४$\frac{२}{५}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर क्षेमा नगरीके ऊपर तापक्षेत्र पैंतीस हजार पांच सौ बावन योजन और योजनके आठवें भागप्रमाण रहता है ॥ ३४६ ॥ ३५५५२$\frac{१}{८}$ ।

१ द ब तवखेत्तपरिही. २ द ब अस.

तियअट्ठणवट्ठतिया अंककमे सत्त दोण्णि अंसा य । चालविहत्ता तावो खेमपुरे बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ३४७

२८९८३ | २७ / ४० |

एक्कत्तालसहस्सा णवसयचालीस जोयणा भागा । पणतीसं रिट्ठाए तावो[1] बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ३४८

४१९४० | ३५ / ४० |

पंचत्तालसहस्सा बाहत्तरि तिसय जोयणा अंसा । सत्तरस अरिट्ठपुरे तावो बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ३४९

४५३७२ | १७ / ४० |

अट्ठत्तालसहस्सा तिसया उणतीस जोयणा अंसा । पणुवीसा खग्गोवरि तावो बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ३५०

४८३२९ | २५ / ४० |

एक्कावण्णसहस्सा सत्तसया एक्कसट्ठि जोयणया । सत्तंसा बाहिरपहट्ठिदसूरे मंजुसे तावो ॥ ३५१

५१७६१ | ७ / ४० |

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर क्षेमपुरमे तापक्षेत्र तीन, आठ, नौ, आठ, और तीन, इन अंकोंके क्रमसे अड़तीस हजार नौ सौ तेरासी योजन और चालीससे विभक्त सत्ताईस भागप्रमाण रहता है ॥ ३४७ ॥ २८९८३$\frac{२७}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर अरिष्टा नगरीमें तापक्षेत्र इकतालीस हजार नौ सौ चालीस योजन और पैंतीस भागप्रमाण रहता है ॥ ३४८ ॥ ४१९४०$\frac{३५}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर अरिष्टपुरमें तापक्षेत्र पैंतालीस हजार तीन सौ बहत्तर योजन और सत्तरह भागप्रमाण रहता है ॥ ३४९ ॥ ४५३७२$\frac{१७}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर खड्गानगरीके ऊपर तापक्षेत्र अड़तालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और पच्चीस भागप्रमाण रहता है ॥ ३५० ॥ ४८३२९$\frac{२५}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मंजूषा नगरीमें तापक्षेत्र इक्यावन हजार सात सौ इकसठ योजन और सात भागप्रमाण रहता है ॥ ३५१ ॥ ५१७६१$\frac{७}{४०}$ ।

---

१ द ताहो.

चउवण्णसहस्सा सगसयाणि अट्ठरस जोयणा अंसा । पण्णरस ओसहिपुरे तावो बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥

५४७१८ | १५ / ४०

अट्ठावण्णसहस्सा इगिसयउणवण्ण जोयणा अंसा । सगतीस बहिपहट्ठिदतवणे तावो पुरम्मि चरिमम्मि ॥

५८१४९ | ३७ / ४०

तेसट्ठिसहस्साणिं सत्तरसं जोयणाणि चउअंसा । पंचहिदा बहिमग्गट्ठिदम्मि दुमणिम्मि पढमपहतावो ॥

६३०१७ | ४ / ५

तेसट्ठिसहस्साणिं जोयणया एक्कवीस एक्ककला । बिदियपहतावपरिही बाहिरमग्गट्ठिदे तवणे ॥ ३५५

६३०२१ | १ / ५

एवं मज्झिमपहंतं णेदव्वं ।

तेसट्ठिसहस्साणिं तिसया चालीस जोयणा दुकला । मज्झपहतावखेत्तं विरोचणे बाहिरमग्गट्ठिदे ॥ ३५६

६३३४० | २ / ५

एवं दुचरिममग्गंतं णेदव्वं ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर ओषधिपुरमें तापक्षेत्र चौवन हजार सात सौ अठारह योजन और पन्द्रह भागमात्र रहता है ॥ ३५२ ॥ ५४७१८$\frac{१५}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर अन्तिम पुर अर्थात् पुण्डरीकिणी नगरीमें तापक्षेत्र अट्ठावन हजार एक सौ उनंचास योजन और सैंतीस भागप्रमाण रहता है ॥ ३५३ ॥

५८१४९$\frac{३७}{४०}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तापक्षेत्र तिरेसठ हजार सत्तरह योजन और पांचसे भाजित चार भागप्रमाण रहता है ॥ ३५४ ॥ ६३०१७$\frac{४}{५}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर द्वितीय पथकी तापपरिधिका प्रमाण तिरेसठ हजार इक्कीस योजन और एक भागमात्र होता है ॥ ३५५ ॥ ६३०२१$\frac{१}{५}$ ।

इस प्रकार मध्यम पथ पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विरोचन अर्थात् सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तापक्षेत्रका प्रमाण तिरेसठ हजार तीन सौ चालीस योजन और दो कला अधिक रहता है ॥ ३५६ ॥

६३३४०$\frac{२}{५}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

तेसट्ठिसहस्साणि छस्सय बासट्ठि जोयणाणि कला । चत्तारो बहिमग्गट्ठिदम्मि तवणम्मि बहिपहे ताओ ॥

$$६३६६२\left|\frac{४}{५}\right|$$

एक्कं लक्खं णवजुदचउत्तणसयाणि जोयणा अंसो । बाहिरपहट्ठिदक्के तावखिदी लवणछट्ठंसे ॥ ३५८

$$१०५४०९\left|\frac{१}{५}\right|$$

आदिमपहादु बाहिरपहम्मि भाणुम्मि गमणकालम्मि । हाणूदि किरणसत्ती चड्ढदि आगमणकालम्मि ॥३५९

तावक्खिदिपरिधीए' ताओ एक्ककमलणाहम्मि । दुगुणिदपरिमाणाओ सहस्सकिरणेसु दोण्हम्मि ॥ ३६०

। तावक्खिदिपरिही समत्ता ।

सव्वासुं परिहीसुं पढमपहट्ठिदसहस्सकिरणम्मि । बारसमुहुत्तमेत्ता पुह पुह उप्पज्जदे रत्ती ॥ ३६१

इच्छिदपरिधिपमाणं पंचविहत्तम्मि होदि जं लद्धं । सा तिमिरक्खेत्तपरिही पढमपहट्ठिददिणेसम्मि ॥ ३६२

$$\frac{१}{५}\Big|$$

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर बाह्य पथमें तापक्षेत्र तिरेसठ हजार छह सौ बासठ योजन और चार कलाप्रमाण रहता है ॥ ३५७ ॥ ६३६६२$\frac{४}{५}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर लवण समुद्रके छठे भागमें तापक्षेत्र एक लाख चौवन सौ नौ योजन और एक भागमात्र रहता है ॥ ३५८ ॥ १०५४०९$\frac{१}{५}$ ।

आदि पथमें बाह्य पथकी ओर जाते समय सूर्यकी किरणशक्ति हीन होती है और बाह्य पथसे आदि पथकी ओर आनेके समय वह किरणशक्ति वृद्धिगत होती है ॥ ३५९ ॥

एक सूर्यके रहते तापक्षेत्रपरिधिमें जितने प्रमाण ताप रहता है उससे दुगुणा प्रमाण वह दो सूर्योंके रहनेपर होता है ॥ ३६० ॥

तापक्षेत्रपरिधिका कथन समाप्त हुआ ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर पृथक् पृथक् सब परिधियोंमें बारह मुहूर्तप्रमाण रात्रि होती है ॥ ३६१ ॥

इच्छित परिधिप्रमाणको पांचसे विभक्त करनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर तिमिरक्षेत्रपरिधिका प्रमाण होता है ॥ ३६२ ॥

इच्छित मेरुपरिधि ३१६२२ ÷ ५ = ६३२३$\frac{२}{५}$ मेरुके ऊपर ति. क्षे. प्रमाण ।

१ द ब परिहिदीए. २ एषा गाथा ब पुस्तके नास्ति.

छच्च सहस्सा तिसया चउवीसं जोयणाणि दोण्णि कला । मेरुगिरितिमिरखेत्तं आदिममग्गट्ठिदे तवणे ॥३६३

६३२४ | २ / ५ |

पणतीससहस्सा पणसयाणि बावण्णजोयणा अंसा । अट्ठहिदा खेमाए तिमिरक्खिदी पढमपहठिदपयगे ॥३६४

३५५५२ | १ / ८ |

तियअट्ठणवट्ठतिया अंककमे सगदुगंग चालहिदा । खेमपुरीतमखेत्तं दिवायरे पढममग्गठिदे ॥ ३६५

३८९८३ | २७ / ४० |

एक्कत्तालसहस्सा णवसयचालीस जोयणाणि कला । पणतीस तिमिरखेत्तं रिट्ठाए पढमपहगदद्दिणेसे ॥

४१९४० | ३५ / ४० |

बावत्तरि तिसयाणि पणदालसहस्स जोयणा अंसा । सत्तरस अरिट्ठपुरे तमखेत्तं पढमपहमूरे ॥ ३६७

४५३७२ | १७ / ४० |

अट्ठत्तालसहस्सा तिसया उणतीस जोयणा अंसा । पणुवीसं खग्गाए बहुमज्झिमपणिधितमखेत्तं ॥ ३६८

४८३२९ | २५ / ४० |

सूर्यके आदि मार्गमें स्थित होनेपर मेरुपर्वतके ऊपर तिमिरक्षेत्रका प्रमाण छह हजार तीन सौ चौबीस योजन और दो भाग अधिक रहता है ॥ ३६३ ॥ ६३२४ २/५ ।

पतंग अर्थात् सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर क्षेमा नगरीमें तिमिरक्षेत्र पैंतीस हजार पांच सौ बावन योजन और एक योजनके आठवें भागप्रमाण रहता है ॥ ३६४ ॥

३५५५२ १/८ ।

सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित होनेपर क्षेमपुरीमें तमक्षेत्र तीन, आठ, नौ, आठ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे अड़तीस हजार नौ सौ तेरासी योजन और सत्ताईस भागप्रमाण रहता है ॥ ३६५ ॥ ३८९८३ २७/४० ।

सूर्यके प्रथम पथको प्राप्त होनेपर अरिष्टा नगरीमें तिमिरक्षेत्र इकतालीस हजार नौ सौ चालीस योजन और पैंतीस कलाप्रमाण रहता है ॥ ३६६ ॥ ४१९४० ३५/४० ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर अरिष्टपुरमें तमक्षेत्र पैंतालीस हजार तीन सौ बहत्तर योजन और सत्तरह भागमात्र रहता है ॥ ३६७ ॥ ४५३७२ १७/४० ।

खड्गा नगरीके बहुमध्यम प्रणिधि भागमें तमक्षेत्र अड़तालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और पच्चीस भागमात्र रहता है ॥ ३६८ ॥ ४८३२९ २५/४० ।

एक्कावण्णसहस्सा सत्तसया एक्कसट्ठि जोयणया । सत्तंसा तमखेत्तं मंजुसपुरमज्झपणिधीए ॥ ३६९

५१७६१ | ७ / ४० |

चउवण्णसहस्सा सगसयाणि अट्ठरसजोयणा अंसा । पण्णरस ओसहीपुरबहुमज्झिमपणिधितिमिरखिदी ॥

५४७१८ | १५ / ४० |

अट्ठावण्णसहस्सा इगिसय उणवण्ण जोयणा अंसा । सगतीस पुंडरीगिणिपुरीए बहुमज्झपणिधितमं ॥३७१

५८१४९ | ३७ / ४० |

तेसट्ठिसहस्साणिं सत्तरसं जोयणाणि चउअंसा[1] । पंचहिदा पढमपहे तमपरिही पहठिददिणेसे ॥ ३७२

६३०१७ | ४ / ५ |

तेसट्ठिसहस्साणिं जोयणया एक्कवीस एक्ककला । बिदियपहतिमिरखेत्तं आदिममग्गट्ठिदे सूरे ॥ ३७३

६३०२१ | १ / ५ |

मंजूषपुरकी मध्यप्रणिधिमें तमक्षेत्र इक्यावन हजार सात सौ इकसठ योजन और सात भागमात्र रहता है ॥ ३६९ ॥ ५१७६१$\frac{७}{४०}$ ।

औषधीपुरकी बहुमध्यप्रणिधिमें तिमिरक्षेत्र चौवन हजार सात सौ अठारह योजन और पन्द्रह भागप्रमाण रहता है ॥ ३७० ॥ ५४७१८$\frac{१५}{४०}$ ।

पुण्डरीकिणी पुरीकी बहुमध्यप्रणिधिमें तमका प्रमाण अट्ठावन हजार एक सौ उनंचास योजन और सैंतीस भाग अधिक रहता है ॥ ३७१ ॥ ५८१४९$\frac{३७}{४०}$ ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तमकी परिधि तिरेसठ हजार सत्तरह योजन और चार भागप्रमाण होती है ॥ ३७२ ॥ ६३०१७$\frac{४}{५}$ ।

सूर्यके आदिम मार्गमें स्थित होनेपर द्वितीय पथमें तिमिरक्षेत्र तिरेसठ हजार इक्कीस योजन और एक कला अधिक रहता है ॥ ३७३ ॥ ६३०२१$\frac{१}{५}$ ।

१ द् जोयणया चउक्कओ.

तेसट्ठिसहस्साणिं चउवीसं जोयणाणि चउ अंसा । तदियपहतिमिरभूमी मत्तंडे पढममग्गगदे ॥ ३७४

$$६३०२४\left|\begin{matrix}४\\५\end{matrix}\right|$$

एवं मज्झिममग्गंतं णेदव्वं ।

तेसट्ठिसहस्साणिं तिसया चालीस जोयणा दुकला । मज्झिमपहतिमिरखिदी तिग्गकरे पढममग्गठिदे ॥ ३७५

$$६३३४०\left|\begin{matrix}२\\५\end{matrix}\right|$$

एवं दुचरिमपरियंतं णेदव्वं ।

तेसट्ठिसहस्साणिं छस्सयबासट्ठिजोयणाणि कला । चत्तारो बाहिमगे तमखेत्तं पढमपहठिदे तवणे ॥ ३७६

$$६३६६२\left|\begin{matrix}४\\५\end{matrix}\right|$$

एक्कं लक्खं णवजुदचउवण्णसयाणि जोयणा अंसा । जलछट्ठभागतिमिरं उण्हयरं पढममग्गठिदे ॥ ३७७

$$१०५४०९\left|\begin{matrix}१\\५\end{matrix}\right|$$

इच्छियपरिरयरासिं सगसट्ठीतियसएहिं गुणिदूणं । णभतियभट्ठेक्कहिदे तमखेत्तं बिदियपहठिदे सूरे ॥ ३७८

$$\begin{matrix}३६७\\१८३०\end{matrix}\Big|$$

सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित रहनेपर तृतीय पथमें तिमिरक्षेत्र तिरेसठ हजार चौबीस योजन और चार भाग अधिक रहता है ॥ ३७४ ॥ ६३०२४$\frac{४}{५}$ ।

इस प्रकार मध्यम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

तीव्रकर अर्थात् सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तिमिरक्षेत्र तिरेसठ हजार तीन सौ चालीस योजन और दो कला अधिक रहता है ॥ ३७५ ॥ ६६३४०$\frac{२}{५}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर बाह्य मार्गमें तमक्षेत्र तिरेसठ हजार छह सौ बासठ योजन और चार कला अधिक रहता है ॥ ३७६ ॥ ६३६६२$\frac{४}{५}$ ।

सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित होनेपर लवणसमुद्रसम्बन्धी जलके छठे भागमें तिमिरक्षेत्र एक लाख चौवन सौ नौ योजन और एक भाग अधिक रहता है ॥ ३७७ ॥

१०५४०९$\frac{१}{५}$ ।

इष्ट परिधिराशिको तीन सौ सड़सठसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमें अठारह सौ तीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर विवक्षित परिधिमें तमक्षेत्रका प्रमाण होता है ॥ ३७८ ॥

एक्कचउक्कतिअंका अंककमे दुगदुगण्णछक्केसा य । पंचेक्कणवयभजिदा मेरुसमं विदियपरिहवणे[1] ॥ ३७९

$$६३४१\left|\frac{६२२}{९१५}\right|$$

णवचउछप्पंचंका अंककमे दुत्तएक्कसत्तंसा । अट्ठदुणवदुगभजिदा सेमाणु मज्झपणिधितमं ॥ ३८०

$$३५६४९\left|\frac{७६७}{२९२८}\right|$$

णभणवणभणवयतिया अंककमे णवचउक्कएगदुकला । णभचउछचउएक्कहिदा सेमपुरीपणिधितमक्खेत्तं ॥

$$३९०५०\left|\frac{२७४९}{१४६४०}\right|$$

पंचपणगयणदुगचउ अंककमे पणछउक्कअडछक्का । सेसा विदिमक्खेत्ते मज्झिमपणिधीए[2] सिट्ठाए[3] ॥ ३८२

$$४२०५५\left|\frac{६८४५}{१४६४०}\right|$$

उदाहरण— इष्ट मेरुपरिधिराशि ३१६२२; ३१६२२ × ३६७ = ११६०५२७४; ११६०५२७४ ÷ १८३० = ६३४१ $\frac{६२२}{९१५}$ मेरुका विदिक्षेत्रप्रमाण ।

भूमिके द्वितीय परमें स्थित होनेपर मेरु पर्वतके ऊपर क्रमशः एक, चार, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे छह हजार तीन सौ इकतालीस योजन और सौ में पन्द्रहसे भाजित दो सौ बाईस भाग अधिक रहता है ॥ ३७९ ॥ ६३४१ $\frac{२२२}{९१५}$ ।

श्रेणी नगरीके मध्य प्रणिधि भागमें क्रमशः नौ, चार, छह, पांच और तीन, इन अंकोंके क्रमसे पैंतीस हजार छह सौ उनंचास योजन और दो हजार सौ सौ अट्ठावनसे भाजित सात सौ सड़सठ भाग प्रमाण रहता है ॥ ३८० ॥ ३५६४९ $\frac{७६७}{२९२८}$ ।

क्षेमपुरीके प्रणिधिभागमें क्रमशः नौ, शून्य, नौ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे उनतालीस हजार तीन सौ योजन और दो हजार छह सौ चालीससे भाजित दो हजार सात सौ उनंचास कला प्रमाण रहता है ॥ ३८१ ॥ ३९०५० $\frac{२७४९}{१४६४०}$ ।

रिष्टा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें विदिक्षेत्र पांच, पांच, शून्य, दो और चार, इन अंकोंके क्रमसे बयालीस हजार पचपन योजन और छह हजार आठ सौ पैंतालीस भाग अधिक रहता है ॥ ३८२ ॥ ४२०५५ $\frac{६८४५}{१४६४०}$ ।

---

१ द ब विदियपरिधितवणे. २ द चउक्कपणअट्ठ. ३ द $\frac{६८४५}{१४६४०}$

छण्णवचउक्कपणचउ अंककमे णवयपंचसगपंचा । अंसा मज्झिमपणिहीतमखेत्तमरिट्ठणयरीए ॥ ३८३

४५४९६ | ५७५९ / १४६४० |

एक्क छच्चउअट्ठा चउ अंककमेण पंचपंचट्ठा । णव य कलाओ खगगामज्झिमपणधीए णिसिरम्हिदी ॥ ३८४

४८४६१ | ९८५५ / १४६४० |

दुगणभणवेक्कपंचा अंककमे णवयछक्कसत्तट्ठा । अंसा मेजुप्पणयरीमज्झिमपणधीए तमखेत्तं ॥ ३८५

५१९०२ | ८७८९ / १४६४० |

सगछसट्ठचउक्का पंचेक्ककमेण जोयणा अंसा । पंच य अट्ठदुगेक्का अंसहिपुरपणिधितमखेत्तं ॥ ३८६

५४८६७ | १२८९५ / १४६४० |

अट्ठण्णतिअट्ठपंचा अंककमेण जोयणाणि अंसा य । णवयसमगणुक्केक्का तमखेत्तं पुंडरी गिद्दिट्ठं ॥ ३८७

५८३०८ | ११७७९ / १४६४० |

अरिष्ट नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र छह, नौ, चार, पाँच और चार, इन अंकोंके क्रमसे पैंतालीस हजार चार सौ छयानवे योजन और पाँच हजार सात सौ उनसठ भाग अधिक रहता है ॥ ३८३ ॥ ४५४०६ ५७५९/१४६४० यो. ।

खड्गा पुरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तिमिस्रक्षेत्र एक, छह, चार, आठ और चार, इन अंकोंके क्रमसे अड़तालीस हजार चार सौ इकसठ योजन और नौ हजार आठ सौ पचपन कला अधिक रहता है ॥ ३८४ ॥ ४८४६१ ९८५५/१४६४० यो. ।

मंजुषा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र दो, शून्य, नौ, एक और पाँच, इन अंकोंके क्रमसे इक्यावन हजार नौ सौ दो योजन और आठ हजार सात सौ उनसठ भाग प्रमाण रहता है ॥ ३८५ ॥ ५१९०२ ८७८९/१४६४० यो. ।

औषधि पुरके प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र सात, छह, आठ, चार और पाँच, इन अंकोंके क्रमसे चौवन हजार आठ सौ सड़सठ योजन और बारह हजार आठ सौ पैंसठ भाग प्रमाण रहता है ॥ ३८६ ॥ ५४८६७ १२८९५/१४६४० यो. ।

पुण्डरीकिणी नगरीमें तमक्षेत्र आठ, शून्य, तीन, आठ और पाँच, इन अंकोंके क्रमसे अट्ठावन हजार तीन सौ आठ योजन और ग्यारह हजार सात सौ उन्यासी भाग प्रमाण रहता है ॥ ३८७ ॥ ५८३०८ ११७७९/१४६४० यो. ।

णवअट्ठेक्कतिछक्का अंककमे तिणवसत्ततेक्कंसा । णभतियअट्ठेक्कहिदा बिदियपहक्कम्मि पढमपहतिमिरं ॥ ३८८

६३१८९ | १७९३ / १८३० |

तियणवएक्कतिछक्का अंकाण कमे दुगेक्कसत्तंसा । पंचेक्कणवविहत्ता बिदियपहक्कम्मि बिदियपहतिमिरं ॥

६३१९३ | ७१२ / ९१५ |

छण्णवएक्कतिछक्का अंककमे अट्ठदुगट्ठएक्कंसा । गयणतिअट्ठेक्कहिदा बिदियपहक्कम्मि तदियमग्गतमं ॥

६३१९६ | १८२८ / १८३० |

एवं मज्झिममग्गंतं णेदव्वं ।

तेसट्ठिसहस्सा पणसयाणि तेरस य जोयणा अंसा । चउदालजुदट्ठसया बिदियपहक्कम्मि मज्झमग्गतमं ॥

६३५१३ | ८४४ / १८३० |

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तिमिरक्षेत्र नौ, आठ, एक, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ नवासी योजन और अठारह सौ तीससे भाजित सत्तरह सौ तेरानवे भाग अधिक रहता है ॥ ३८८ ॥ ६३१८९$\frac{१७९३}{१८३०}$ ।

(= प्र. प. प. ३१५०८९ × ३६७ = ११५६३७६६३; ११५६३७६६३ ÷ १८३० = ६३१८९$\frac{१७९३}{१८३०}$ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर द्वितीय पथमें तिमिरक्षेत्र तीन, नौ, एक, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ तेरानवे योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित सात सौ बारह भाग प्रमाण रहता है ॥ ३८९ ॥ ६३१९३$\frac{७१२}{९१५}$ ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर तृतीय मार्गमें तमक्षेत्र छह, नौ, एक, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ छयानवे योजन और अठारह सौ तीससे भाजित अठारह सौ अट्ठाईस भाग प्रमाण रहता है ॥ ३९० ॥ ६३१९६$\frac{१८२८}{१८३०}$ ।

इस प्रकार मध्यम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर मध्यम मार्गमें तमक्षेत्र तिरेसठ हजार पांच सौ तेरह योजन और आठ सौ चवालीस भाग अधिक रहता है ॥ ३९१ ॥ ६३५१३$\frac{८४४}{१८३०}$ ।

छत्तियअट्ठतिछक्का अंककमे णवयसत्तछक्कसा । पंचेक्कणवविहत्ता विदियपहम्मि बाहिरे तिमिरं ॥ ३९२

६३८३६ | ६७९ / ९१५ |

एवं दुचरिममग्गंतं[1] णेदव्वं ।

सत्तणवछक्कपणगभएक्कंककमेण दुगसगतियंसा । णभतियअट्ठेक्कहिदा लवणोदहिछट्ठभागतमं ॥ ३९३

१०५६९७ | ३७२ / १८३० |

एवं सेसपहेसुं वीहिं पडि जामिणीमुहुत्ताणिं । ठविऊणाणेज्ज तमं छक्केणियदुसयपरिहीसुं ॥ ३९४

१९४ ।

सव्वपरिहीसु रत्तिं अट्ठरसमुहुत्तयाणि रविबिंबे । बाहिरपहट्ठिदम्मि एदं धरिऊण भणामि तमखेत्तं ॥ ३९५

इच्छियपरिरयरासिं तिगुणं कादूण दसहिदे लद्धं । होदि तिमिरस्स खेत्तं बाहिरमग्गट्ठिदे सूरे ॥ ३९६

३ / १० |

सूर्यके द्वितीय मार्गमे स्थित होनेपर बाह्य पथमें तिमिरक्षेत्र छह, तीन, आठ, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार आठ सौ छत्तीस योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित छह सौ उन्यासी भाग अधिक है ॥ ३९२ ॥ ६३८३६$\frac{६७९}{९१५}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित होनेपर लवणोदधिके छठे भागमें तिमिरक्षेत्र सात, नौ, छह, पांच, शून्य और एक, इन अंकोंके क्रमसे एक लाख पांच हजार छह सौ सत्तानवे योजन और अठारह सौ तीससे भाजित तीन सौ बहत्तर भाग अधिक है ॥ ३९३ ॥ १०५६९७$\frac{३७२}{१८३०}$ ।

इस प्रकार शेष पथोंमेसे प्रत्येक वीथीमे रात्रिमुहूर्तोंको स्थापित करके छह कम दो सौ अर्थात् एक सौ चौरानवे परिधियोंमे तिमिरक्षेत्रको ले आना चाहिये । (देखो विशेषार्थ गा. नं. ३४३) ॥ ३९४ ॥

सूर्यबिम्बके बाह्य पथमें स्थित होनेपर सब परिधियोंमें अठारह मुहूर्तप्रमाण रात्रि होती है, इसका आश्रय करके तमक्षेत्रको कहता हूं ॥ ३९५ ॥

इच्छित परिधिराशिको तिगुणा करके दशका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर विवक्षित परिधिमें तिमिरका क्षेत्र होता है ॥ ३९६ ॥

उदाहरण— इच्छित मेरुपरिधि ३१६२२ × ३ = ९४८६६; ९४८६६ + १० = ९४८६$\frac{६}{१०}$ तिमिरक्षेत्र ।

१ द ब °मग्गो ति. २ द ब छट्ठमागंतं. ३ द ब विंबं.

णव य सहस्सा चउसय छावट्ठी जोयणाणि तिण्णि कला । पंचहिदा मेरुतमं बाहिरमग्गे ठिदे तवणे ॥३९७

९४८६ | ३ / ५ |

तेवण्णसहस्साइं तियया अडवीसजोयणा तिकला । सोलसहिदा य खेमामज्झिमपणधीए तमखेत्तं ॥ ३९८

५३३२८ | ३ / १६ |

अट्ठावण्णसहस्सा चउसयबणहत्तरी य जोयणया । एक्कत्तालकलाओ सीदिहिदा खेमणयरीए ॥ ३९९

५८४७५ | ४१ / ८० |

बासट्ठिसहस्सा णव सयाणि एक्करस जोयणा भागा । पणुवीस सीदिभाजिदा रिट्ठाए मज्झपणिधिगमं ॥

६२९११ | २५ / ८० |

अट्ठासट्ठिसहस्सा अट्ठावण्णा य जोयणा अंसा । एक्कावण्णं तिमिरं रिट्ठपुरीमज्झपणिधीए ॥ ४०१

६८०५८ | ५१ / ८० |

बाहत्तरिं सहस्सा चउसयचउणउदि जोयणा अंसा । पणुतीसं खग्गाए मज्झिमपणिधीए तिमिरखिदी ॥

७२४९४ | ३५ / ८० |

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित रहनेपर मेरुके ऊपर तमक्षेत्र नौ हजार चार सौ छयासठ योजन और पांचसे भाजित तीन कला प्रमाण रहता है ॥ ३९७ ॥ ९४८६ $\frac{३}{५}$ ।

क्षेमा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र तिरेपन हजार तीन सौ अट्ठाईस योजन और सोलहसे भाजित तीन कला प्रमाण रहता है ॥ ३९८ ॥ ५३३२८ $\frac{३}{१६}$ ।

क्षेमपुरीमें तमक्षेत्र अट्ठावन हजार चार सौ पचहत्तर योजन और अस्सीसे भाजित इकतालीस कला प्रमाण रहता है ॥ ३९९ ॥ ५८४७५ $\frac{४१}{८०}$ ।

रिष्टा नगरीके मध्य प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र बासट हजार नौ सौ ग्यारह योजन और अस्सीसे भाजित पच्चीस भाग अधिक रहता है ॥ ४०० ॥ ६२९११ $\frac{२५}{८०}$ ।

अरिष्टपुरीके मध्यप्रणिधिभागमें तिमिरक्षेत्र अड़सठ हजार अट्ठावन योजन और इक्यावन भाग अधिक रहता है ॥ ४०१ ॥ ६८०५८ $\frac{५१}{८०}$ ।

खड्गा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तिमिरक्षेत्र बहत्तर हजार चार सौ चौरानवे योजन और पैंतीस भाग अधिक रहता है ॥ ४०२ ॥ ७२४९४ $\frac{३५}{८०}$ ।

सत्तत्तरिं सहस्सा छस्सय इगिदाल जोयणाणि कला । एक्कासट्ठी मंजुसणयरीपणिहीए तमखेत्तं ॥ ४०३

७७६४१ | ६१ / ८०

बासीदिसहस्साणिं सत्ततरिजोयणा कलाओ वि । पंचत्तालं ओसहिपुरीए बाहिरपहट्ठिदक्कम्मि ॥ ४०४

८२०७७ | ४५ / ८०

सत्तासीदिसहस्सा भेसयचउवीस जोयणा अंसा । एक्कत्तरी अ तमिस्सपणिधीए पुंडरीगिणीणयरे ॥ ४०५

८७२२४ | ७१ / ८०

चउणउदिसहस्सा पणसयाणि छव्वीस जोयणा अंसा । सत्त य दसपविहत्ता बहिपहचरणम्मि पढमपहतिमिरं ॥

९४५२६ | ७ / १०

चउणउदिसहस्सा पणसयाणि इगितीस जोयणा अंसा । चत्तारो पंचहिदा बाहिपहभागुम्मि बिदियपहतिमिरं ॥

९४५३१ | ४ / ५

चउणउदिसहस्सा पणसयाणि सगतीस जोयणा अंसा । तदियपहतिमिरखेत्तं बहिमग्गट्ठिदे सहस्सकरे ॥४०८

९४५३७ | १ / ५

सुसीमा नगरीके प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र सतत्तर हजार छह सौ इकतालीस योजन और इकसठ कला अधिक रहता है ॥ ४०३ ॥ ७७६४१ $\frac{६१}{८०}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर ओषधीपुरीमें तमक्षेत्र व्यासी हजार सतत्तर योजन पैंतालीस कला प्रमाण रहता है ॥ ४०४ ॥ ८२०७७ $\frac{४५}{८०}$ ।

पुण्डरीकिणी नगरके प्रणिधिभागमें तमिस्रक्षेत्र सतासी हजार दो सौ चौबीस योजन और इकहत्तर भाग अधिक रहता है ॥ ४०५ ॥ ८७२२४ $\frac{७१}{८०}$ ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तिमिरक्षेत्र चौरानवे हजार पांच सौ छब्बीस योजन और दशसे भाजित सात भाग अधिक रहता है ॥ ४०६ ॥ ९४५२६ $\frac{७}{१०}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर द्वितीय पथमें तिमिरक्षेत्र चौरानवे हजार पांच सौ इकतीस योजन और पांचसे भाजित चार भाग प्रमाण रहता है ॥ ४०७ ॥ ९४५३१ $\frac{४}{५}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर तृतीय पथमें तिमिरक्षेत्र चौरानवे हजार पांच सौ सैंतीस योजन और एक भागमात्र अधिक रहता है ॥ ४०८ ॥ ९४५३७ $\frac{१}{५}$ ।

१ द ब तिमिसप्पणिधीए. २ द ब बहितमभागुम्मि बिदियपहतावं.

चउणउदिसहस्सा पणसयाणि बादालजोयणा तिकला । दसपविहत्ता बहिपहठिदतवणे तुरिममग्गतमं ॥

$$९४५४२\left|\begin{matrix}३\\१०\end{matrix}\right|$$

एवं मज्झिममग्गाइल्लमग्गं ति णेदव्वं ।

पंचाणउदिसहस्सं दसुत्तरा जोयणाणि तिण्णि कला । पंचहिदा मज्झपदे तिमिरं बहिपहठिदे[1] तवणे ॥ ४१०

$$९५०१०\left|\begin{matrix}३\\५\end{matrix}\right|$$

एवं दुचरिममग्गं ति णेदव्वं ।

पंचाणउदिसहस्सा चउसयचउणउदि जोयणा अंसा । बाहिरपहतमखेत्तं दीहत्तं बाहिरट्ठिदे ॥ ४११

$$९५४९४\left|\begin{matrix}१\\५\end{matrix}\right|$$

तियपुक्कपुक्कअट्ठा पंचेक्कंकक्कमेण चउअंसा । बहिपहठिदुदिचमयरे लवणोदहिछट्ठभागतमं ॥ ४१२

$$१५८११३\left|\begin{matrix}४\\५\end{matrix}\right|$$

एदाणिं[2] तिमिराणं भंगाणि होंति एक्कभाणुम्मि । दुगुणिदपरिमाणाणिं दोसुं पि य हेमकिरणेसुं ॥ ४१३

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर चतुर्थ मार्गमें तमक्षेत्र चौरानवे हजार पांच सौ ब्यालीस योजन और दशमे विभक्त तीन कला अधिक रहता है ॥ ४०९ ॥ ९४५४२$\frac{३}{१०}$ ।

इस प्रकार मध्यम मार्गके आदिम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके बाह्य पथमे स्थित होनेपर मध्यम पथमें तिमिरक्षेत्र पंचानवे हजार दश योजन और पांचसे भाजित तीन कला अधिक रहता है ॥ ४१० ॥ ९५०१०$\frac{३}{५}$ ।

इस प्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिये ।

सूर्यके बाह्य अध्व (मार्ग) में स्थित रहनेपर बाह्य पथमें तमक्षेत्र पंचानवे हजार चार सौ चौरानवे योजन और एक भागमात्र लम्बा रहता है ॥ ४११ ॥ ९५४९४$\frac{१}{५}$ ।

सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर लवणोदधिके छठे भागमें तमक्षेत्र तीन, एक, एक, आठ, पांच और एक, इन अंकोंके क्रमसे एक लाख अट्ठावन हजार एक सौ तेरह योजन और चार भाग अधिक रहता है ॥ ४१२ ॥ १५८११३$\frac{४}{५}$ ।

ये तिमिरक्षेत्रोंके भंग एक सूर्यके रहते हुए होते है । दोनों सूर्योंके होते हुए इन्हे द्विगुणित प्रमाण जानना चाहिये ॥ ४१३ ॥

१ द ब पिहिपहठिदे २ द ब एदाणं.

पढमपहादो बाहिरपहम्मि दिवसाहिवस्स गमणेसुं । वड्ढंति तिमिरखेत्ता आगमणेसुं च परियंति ॥ ४१४

एवं सव्वपहेसुं भणियं तिमिरक्खिदीण परिमाणं । पुत्तो आदवतिमिरक्खेत्तफलाइं परूवेमो ॥ ४१५

लवणंबुरासिवासच्छट्ठमभागस्स परिहिबारसमे । पणलक्खेहिं गुणिदे तिमिरादवखेत्तफलमाणं ॥ ४१६

चउठाणेसुं सुण्णा पंचदुणभछक्कणवयएक्कदुगा । अंककमे जोयणया त खेत्तफलस्स परिमाण ॥ ४१७

२१९६०२५०००० ।

एदे तिगुणिय भजिदं दसेहि एक्कादवक्खिदीय फल । तत्तिय दुतिभागहदं होदि फलं एक्कतमखेत्तं ॥ ४१८

६५८८०७५००० । ति ४३९२०५०००० ।

दिवसाधिप अर्थात् सूर्यके प्रथम पथसे बाह्य पथकी ओर गगन करनेमें तिमिरक्षेत्र वृद्धिको और आगमनकालमें हानिको प्राप्त होते हैं ॥ ४१४ ॥

इस प्रकार सब पथोंमें तिमिरक्षेत्रोंके प्रमाणको कह दिया है । अब यहांसे आगे आतप और तिमिरके क्षेत्रफलको कहते हैं ॥ ४१५ ॥

लवण समुद्रके विस्तारके छठे भागकी जो परिधि है उसके बारहवें भागको पांच लाखसे गुणा करनेपर तिमिर और आतपक्षेत्रका क्षेत्रफलप्रमाण आता है ॥ ४१६ ॥

लवण समुद्रका वि. यो. २००००० ; २००००० ÷ ६ = ३३३३३$\frac{२}{३}$; दोनों ओरके प्रमाणके लिये इसे दुगुणा करनेपर ६६६६६$\frac{४}{३}$; जम्बूद्वीपका विस्तार १००००० ; १००००० + ६६६६६$\frac{४}{३}$ = १६६६६६$\frac{१}{३}$; इसकी परिधि 'विक्खंभवग्गदहगुणकरणी' इस करणसूत्रके अनुसार ५२७०४६ ÷ १२ = ४३९२०$\frac{१}{३}$; ४३९२०$\frac{१}{३}$ × ५ लाख = २१९६०२५०००० वि. व आ. क्षेत्रफल ।

चार स्थानोंमें शून्य, पांच, दो, शून्य, छह, नौ, एक और दो, इन अंकोंके क्रमसे उस क्षेत्रफलका प्रमाण इक्कीस सौ छयानवे करोड़ दो लाख पचास हजार योजनमात्र होता है ॥ ४१७ ॥ २१९६०२५०००० ।

इसको तिगुणा करके दशका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना एक आतपक्षेत्रका क्षेत्रफल और इस आतपक्षेत्रफल प्रमाणके तीन भागोंमेंसे दो भागमात्र एक तमक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥ ४१८ ॥

२१९६०२५०००० × ३ = ६५८८०७५०००० ; ६५८८०७५०००० ÷ १० = ६५८८०७५००० एक आतप क्षेत्रफल ।

आतप. क्षे. फ. ६५८८०७५००० × $\frac{२}{३}$ = ४३९२०५०००० एक तमक्षेत्रफल ।

एदं आदवतिमिरक्खेत्तफलं एक्कसूरिणिमित्तं । दोसुं रविचलणेसुं णादव्वं दुगुणपुव्वपरिमाणं ॥ ४१९

अट्ठारस चिय सया तावक्खेत्तं[1] तु हेट्ठदो तवदि । सव्वेसिं सूराणं सतमेक्कं उवरि तावं तु ॥ ४२०

१८०० । १०० ।

एत्तो दिवायराणं हवयत्थमणेसु जाणि रूवाणि । ताइं परमगुरूणं उवदेसेणं परूवेमो ॥ ४२१

बाणविहीणे वासे चउगुणसरतालिदम्मि जीवकदी । इसुवग्गा छग्गुणिदा सीए जुदो होदि चावकदी ॥

तियजोयणलक्खाणिं दस य सहस्साणि ऊणवीसेहिं । भवहरिदाइं भणिदं हरिवरिससरस्स परिमाणं ॥ ४२३

$\frac{३१०००० }{१९}$ |

तम्मज्झे सोधेज्जं सीदिस्समधियमदं च जं सेसं । सो आदिमग्गादो बाणं हरिवरिसविजयस्स ॥ ४२४

१८० ।

यह उपर्युक्त आतप व निमिरक्षेत्रफल एक सूर्यके निमित्तसे है । दोनों सूर्योंके रहनेपर इसे पूर्वप्रमाणसे दुगुणा जानना चाहिये ॥ ४१९ ॥

सब सूर्योंके नीचे अठारह सौ योजन प्रमाण और ऊपर एक सौ योजनमात्र तापक्षेत्र तपता है ॥ ४२० ॥ १८०० । १०० ।

यहांसे आगे सूर्योंके उदय व अस्त होनेमें जो स्वरूप होते हैं, उन्हें परम गुरुओंके उपदेशानुसार कहते हैं ॥ ४२१ ॥

बाण रहित विस्तारको चौगुणे बाणप्रमाणसे गुणा करनेपर जीवाकी कृति होती है । बाणके वर्गको छहसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसे उपर्युक्त जीवाकी कृतिमें मिला देनेसे धनुषकी कृति होती है ॥ ४२२ ॥

हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित तीन लाख दश हजार योजन मात्र कहा गया है ॥ ४२३ ॥ $\frac{३१०००० }{१९}$ ।

इसमेंसे एक सौ अस्सी योजन (जम्बूद्वीपका चार क्षेत्र) कम करनेपर जो शेष रहे उतना प्रथम मार्गसे हरिवर्ष क्षेत्रका बाण होता है ॥ ४२४ ॥

जं. द्वी. चा. क्षे. १८० = $\frac{३४२०}{१९}$; ह. क्षे. बाण $\frac{३१००००}{१९}$ − रिण $\frac{३४२०}{१९}$ = $\frac{३०६५८०}{१९}$ आदि मार्गसे हरिवर्ष क्षेत्रका बाणप्रमाण ।

---

१ [अट्ठारसजोयणसय तावक्खेत्तं].

तिणजोयणलक्खाणिं छच्च सहस्साणि पणसयाणिं पि । सीदिजुदाणिं आदिममग्गादो तस्स परिमाणं ॥

३०६५८० | १९ |

णवणवदिसहस्साणिं छस्सयचत्तालजोयणाणिं च । परिमाणं णादव्वं आदिममग्गस्स सूईए ॥ ४२६

९९६४० ।

तियठाणेसुं सुण्णा चउछप्पंचदुगछणवसुण्णा । पंचदुगंककमेणं एक्कं छत्तिभजिदा अ धणुवग्गो ॥ ४२७

२५०९६०२५६४०००/३६१

तेसीदिसहस्सा तियसयाणि सत्ततरी य जोयणया । णव य कलाओ आदिमपहादु हरिवरसधणुपट्ठं ॥

८३३७७ ९/१९

तद्धणुपट्ठस्सद्धं सोधेज्जसु चक्खुपासखेत्तम्मि । जं अवसेसपमाणं णिसधाचलउवरिमखिदी सा ॥ ४२९

४१६८८ १४/१९

आदिम मार्गसे उस हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित तीन लाख छह हजार पांच सौ अस्सी योजनमात्र होता है ॥ ४२५ ॥ ३०६५८०/१९ ।

प्रथम मार्गकी सूचीका प्रमाण निन्यानवै हजार छहसौ चालीस योजनमात्र जानना चाहिये ॥ ४२६ ॥ ९९६४० ।

तीन स्थानोंमें शून्य, चार, छह, पांच, दो, शून्य, छह, नौ, शून्य, पांच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उसमें तीन सौ इकसठका भाग देनेपर लब्ध राशिप्रमाण हरिवर्षक्षेत्रके धनुषका वर्ग होता है । ॥ ४२७ ॥ २५०९६०२५६४०००/३६१

आदिम पथसे हरिवर्षक्षेत्रका धनुःपृष्ठ तेरासी हजार तीन सौ सतत्तर योजन और नौ कलाप्रमाण है ॥ ४२८ ॥ ८३३७७ ९/१९ ।

इस धनुःपृष्ठप्रमाणके अर्ध भागको चक्षुस्पर्शक्षेत्रमेंसे कम कर देनेपर जो शेष प्रमाण रहे उतनी निषधपर्वतकी उपरिम पृथिवी है [जहांपर उदित हुए सूर्यबिम्बको अयोध्यापुरीमें भरतादिक चक्रवर्ती देखते हैं] ॥ ४२९ ॥

हरिवर्षका धनुषपृष्ठ ८३३७७ ९/१९ = १५८४१७२/१९; इसका आधा = १५८४१७२/३८ = १५८४१७२०/३८०; चक्षुस्पर्शक्षेत्र ४७२६३ ७/२० = ९४५२६७/२० = १५७५६००७३/३८०; १५७५६००७३/३८० − १५८४१७२०/३८० = २११८३५३/३८० = ५५७४ २३३/३८० निषध पर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण ।

१ द ब लवसेस°.

आदिमपरिहिं तिगुणिय वीसहिदो लद्धमेत्ततेसट्ठी । दुसदा सत्ततालं सहस्सया वीसहरिदसत्तंसा ॥ ४३०

४७२६३ | ७ / २० |

एदं चक्खुप्पासोक्किट्ठक्खेत्तस्स होदि परिमाणं । तं पुत्थं णेदव्वं हरिवरिससरासपट्ठद्धं ॥ ४३१

पंचसहस्सा [तह] पणसयाणि चउहत्तरी य जोयणया । बेसयतेत्तीसंसा हारो सीदीजुदा तिसया ॥ ४३२

५५७४ | २३३ / ३८० |

उवरिम्मि णिसहगिरिणो पुत्तियमाणेण पढममग्गठिदं । पेच्छंति तवणिबिंबं भरहक्खेत्तम्मि चक्कहरा ॥ ४३३

आदिम परिधिको तिगुणा करके बीसका भाग देनेपर जो सैंतालीस हजार दो सौ तिरेसठ योजन और एक योजनके बीस भागोंमेंसे सात भाग लब्ध आते हैं यही उत्कृष्ट चक्षुस्पर्शक्षेत्रका प्रमाण होता है। इसमेंसे हरिवर्षक्षेत्रके धनुःपृष्ठप्रमाणके अर्ध भागको घटाना चाहिये ॥ ४३०-४३१ ॥

विशेषार्थ— जब श्रावण मासमें (कर्क संक्रान्तिके समय) सूर्य अभ्यन्तर वीथीमें स्थित होता है तब अयोध्या नगरीके मध्यमें अपने महलके ऊपर स्थित भरतादिक चक्रवर्ती निषध पर्वतके ऊपर उदित होते हुए सूर्यबिम्बको देखते हैं। यह अयोध्या नगरी निषध पर्वतके एक भागसे दूसरे भाग तककी अभ्यन्तर वीथीके ठीक बीचमें स्थित है। इस प्रकार जब सूर्य अपने भ्रमण द्वारा पूर्ण (३१५०८९ यो.) अभ्यन्तरपरिधिको साठ मुहूर्तमें और निषध पर्वतके एक ओरसे दूसरे ओर तककी अभ्यन्तरपरिधिको अठारह मुहूर्तमें समाप्त करता है, तब वह निषध पर्वतसे अयोध्या तककी परिधिको नौ मुहूर्तमें समाप्त करेगा। अब जब सूर्य ३१५०८९ योजनप्रमाण परिधिको साठ मुहूर्तमें समाप्त करता है, तब वह नौ मुहूर्तमें कितनी परिधिको समाप्त करेगा ? इस प्रकार त्रैराशिक करनेपर सैंतालीस हजार दो सौ त्रेसठ योजन और एक योजनके बीस भागोंमेंसे सात भागप्रमाण यह उत्कृष्ट चक्षुस्पर्शक्षेत्र आता है।

उदाहरण— $\frac{९}{६०} = \frac{३}{२०}$; अभ्यन्तरपरिधि ३१५०८९ × $\frac{३}{२०}$ = ४७२६३$\frac{७}{२०}$ उत्कृष्ट चक्षुस्पर्शक्षेत्र। (देखो त्रिलोकसार गाथा ३८९)।

उक्त प्रकारसे चक्षुके उत्कृष्ट विषयक्षेत्रमेंसे हरिवर्षके अर्ध धनुःपृष्ठको निकाल देनेपर निषध-पर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण पांच हजार पांच सौ चौहत्तर योजन और एक योजनके तीन सौ अस्सी भागोंमेंसे दो सौ तेतीस भाग अधिक आता है। इतने योजनमात्र निषध पर्वतके ऊपर प्रथम वीथीमें स्थित सूर्यबिम्बको भरतक्षेत्रके चक्रवर्ती देखते हैं ॥ ४३२-४३३॥

५५७४$\frac{२३३}{३८०}$ ।

उवरिम्मि णीलगिरिणो तेत्तियमाणेण पढममग्गगदो । एरावदम्मि विजए चक्की देक्खंति इयररविं[1] ॥ ४३४
मग्गेक्कमुहुत्ताणिं खेमादीतियपुरम्मि अधियाणिं । किंचूणएक्कणाली[2] रत्ती य अरिट्ठणयरम्मि ॥ ४३५

णालि १ ।

तावे खग्गपुरीए अत्थमणं होदि मंजुसपुरम्मि । अवरण्हमधियणालिया[3] ओसहियणयरम्मि साधियमुहुत्तं ॥
तावे मुहुत्तमधियं अवरण्हं पुंडरीगिणीणयरे । तप्पालिधी सुरवणे दोण्णि[4] मुहुत्ताणि अदिरेगो ॥ ४३७
तक्कालम्मि सुसीमप्पणधीए सुरवणम्मि पढमपहे । होदि अवरण्हकालो तिण्णि मुहुत्ताणि अदिरेगो ॥४३८
तिय तिय मुहुत्तमधिया[5] सुसीमकुंडलपुरम्मि दो दो य । एक्केक्कसाधियाणि य अवराजिदपहंकरंकपउमपुरे ॥
सुभणयरे अवरण्हं साधियणाली य होदि परिमाणं । णालितिभागं रत्ती किंचूणं रयणसंचयपुरम्मि ॥४४०
एरावदम्मि उदओ जंकाले होदि कमलबंधुस्स । तावे[6] दिणरत्तीओ अवरविदेहेसु साहेमि ॥ ४४१

ऐरावत क्षेत्रके चक्रवर्ती उतने ही योजनप्रमाण (५५७४$\frac{३३}{२१९}$) नील पर्वतके ऊपर प्रथम मार्गमें स्थित द्वितीय सूर्यबिम्बको देखते हैं ॥ ४३४ ॥

भरतक्षेत्रमें सूर्यके उदित होनेपर क्षेमा आदिक तीन पुरोंमें एक मुहूर्तसे कुछ अधिक और अरिष्टनगरमें कुछ कम एक नाली (घड़ी) प्रमाण रात्रि होती है ॥ ४३५ ॥

उस समय खड्गपुरीमें सूर्यास्त, मंजूषपुरमें एक नालीसे अधिक अपराह्न, और औषधी-नगरमें वह (अपराह्न) मुहूर्तसे अधिक होता है । ॥ ४३६ ॥

उस समय पुण्डरीकिणी नगरमें वह अपराह्न एक मुहूर्तसे अधिक और इसके समीप देवारण्यमें दो मुहूर्तसे अधिक होता है ॥ ४३७ ॥

इसी समय प्रथम पथमें सुसीमा नगरीके समीप देवारण्यमें तीन मुहूर्तसे अधिक अपराह्न काल होता है ॥ ४३८ ॥

इस समय सुसीमा व कुण्डलपुरमें तीन तीन मुहूर्तसे अधिक, अपराजित व प्रभंकर पुरमें दो दो मुहूर्तसे अधिक, अंकपुर व पद्मपुरमें एक एक मुहूर्तसे अधिक, और शुभ नगरमें एक नालीसे अधिक अपराह्न काल होता है । इसके अतिरिक्त रत्नसंचय पुरमें उस समय कुछ कम नालीके तीसरे भागप्रमाण रात्रि होती है ॥ ४३९-४४० ॥

जिस समय ऐरावत क्षेत्रमें सूर्यका उदय होता है उस समय अपर विदेहोंमें होनेवाले दिन-रात्रिविभागोंको कहता हूं ॥ ४४१ ॥

१ द ब इक्खंति तियररविं, अ देक्खंति रयररविं. २ अ किंचूणं एक्का णाली. ३ द ब °धुलिया. ४ द ब सुरचरणे दोण्णि य. ५ द ब °मधिया. ६ द तादे.

खेमादिसुरवणंतं हुवंति जे पुव्वरत्तिअवरण्हा । कमसो ते णादव्वा अस्सपुरीपहुदि णवठाणेसुं ॥ ४४२
होंति अवज्झादिसु णवठाणेसुं पुव्वरत्तिअवरण्हं । पुव्वुत्तरयणसंचयपुरादिणयराण सारिच्छा ॥ ४४३
किंचूणछम्मुहुत्ता रत्ती जा पुंडरीगिणीणयरे । तह होदि वीदसोके भरहेरावदखिदीसु मज्झण्णे ॥ ४४४
तावे णिसहगिरिंदे उदयत्थमणाणि होंति भाणुस्स । णीलगिरिंदेसु तहा एक्कक्खणे दोसु पासेसुं ॥ ४४५
पंचसहस्सा [तह] पणसयाणि चउहत्तरी य अदिरेगो । तेत्तीस वेसयंसा हारो सीदीजुदा तिसया ॥ ४४६

५५७४ | २३३ / ३८० |

एत्तियमेत्तादु परं उवरिं णिसहस्स पढममग्गम्मि । भरहक्खेत्ते चक्की दिणयरबिंबं ण देक्खंति ॥ ४४७
उवरिम्मि णीलगिरिणो ते परिमाणादु पढममग्गम्मि । एरावदम्मि चक्की इदरदिणेसं ण देक्खंति ॥ ४४८
सिहिपवणदिसाहिंतो जंबूदीवस्स दोण्णि रविबिंबा । दो जोयणाणि पुह पुह आदिममग्गादु विदियपहे ॥

क्षेमा नगरीसे लेकर देवारण्य तक जो पूर्वरात्रि एवं अपराह्न काल होते हैं वे ही क्रमसे अश्वपुरी आदिक नौ स्थानोंमें भी जानने चाहिये ॥ ४४२ ॥

अवध्यादिक नौ स्थानोंमें पूर्वोक्त रत्नसंचयपुरादिक नगरोंके सदृश ही पूर्वरात्रि व अपराह्न काल होते हैं ॥ ४४३ ॥

भरत और ऐरावत क्षेत्रमें मध्याह्नके होनेपर जिस प्रकार पुण्डरीकिणी नगरमें कुछ कम छह मुहूर्त रात्रि होती है, उसी प्रकार वीतशोका नगरीमें भी कुछ कम छह मुहूर्तप्रमाण रात्रि होती है ॥ ४४४ ॥

उस समय जिस प्रकार निषध पर्वतपर सूर्यका उदय व अस्तगमन होता है, उसी प्रकार एक ही क्षणमें नील पर्वतके ऊपर भी दोनों पार्श्वभागोंमें (द्वितीय) सूर्यका उदय व अस्तगमन होता है ॥ ४४५ ॥

भरतक्षेत्रमें चक्रवर्ती पांच हजार पांचसौ चौहत्तर योजन और एक योजनके तीनसौ अस्सी भागोंमेंसे दो सौ तेतीस भाग अधिक, इतनेसे आगे निषध पर्वतके ऊपर प्रथम मार्गमें सूर्यबिम्बको नहीं देखते हैं ॥ ४४६-४४७ ॥ $५५७४\frac{२३३}{३८०}$ ।

ऐरावत क्षेत्रमें स्थित चक्रवर्ती नील पर्वतके ऊपर इस प्रमाणसे ($५५७४\frac{२३३}{३८०}$) अधिक दूर प्रथम मार्गमें दूसरे सूर्यको नहीं देखते हैं ॥ ४४८ ॥

जम्बूद्वीपके दोनों सूर्यबिम्ब अग्नि व वायु दिशासे पृथक् पृथक् दो दो योजन लांघकर प्रथम मार्गसे द्वितीय पथमें प्रवेश करते हैं ॥ ४४९ ॥

लंबंतकाले[1] (?) भरदेरावदखिदीसु पविसंति । ताधे पुव्वुत्ताइं रत्तादिवसाणि जायंति ॥ ४५० ॥

एवं सव्वपहेसुं उदयत्थमणाणि ताणि णादूणं । पडिवीहिं दिवसणिसा बाहिरमग्गंतमाणेज्ज[2] ॥ ४५१ ॥

सव्वपरिहीसु बाहिरमग्गट्ठिदे दिवद्धणाहार्विबम्मि । दिणरत्तीओ बारस अट्ठरसमुहुत्तमेत्ताओ ॥ ४५२ ॥

बाहिरपहादु आदिमपहम्मि दुमणिस्स आगमणकाले । पुव्वुत्तदिणणिसादी हुवंति अधियाओ ऊणाओ ॥ ४५३ ॥

मत्तंडदिणगदीए एक्कं चिय लब्भदे उदयठाणं । एवं दीवे वेदीलवणसमुद्देसु आणेज्ज ॥ ४५४ ॥

$$\frac{१७०}{६१} \Big| १ \Big| १७६ \Big| \frac{१७०}{६१} \Big| १ \Big| ४ \Big| \frac{१७०}{६१} \Big| १ \Big| \frac{२०१७८}{६१} \Big|$$

जिस समय उक्त दोनों सूर्य प्रथम मार्गमें प्रवेश करते हुए क्रमशः भरत और ऐरावत क्षेत्रमें प्रविष्ट होते है, उसी समय पूर्वोक्त दिन-रात्रियां होती हैं ॥ ४५० ॥

इस प्रकार सर्व पथोंमें उन उदय व अस्तमनोंको जानकर सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित प्रत्येक वीथीमें दिन व रात्रि प्रमाणको ले आना चाहिये ॥ ४५१ ॥

सूर्यबिम्बके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर सब परिधियोंमें बारह मुहूर्तमात्र दिन और अठारह मुहूर्त प्रमाण रात्रि होती है ॥ ४५२ ॥

सूर्यके बाह्य पथसे आदि पथकी ओर आते समय पूर्वोक्त दिन व रात्रि क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक और कम होती है ॥ ४५३ ॥

सूर्यकी दिनगतिमें एक ही उदयस्थान लब्ध होता है । इस प्रकार द्वीप, वेदी और लवणसमुद्रमें उदयस्थानोंके प्रमाणको लेआना चाहिये ॥ ४५४ ॥

उदाहरण— वेदिकासे रहित जम्बूद्वीपका चारक्षेत्र १७६ $= \frac{१०७३६}{६१}$; सूर्यकी दिनगति $\frac{१७०}{६१}$; $\frac{१०७३६}{६१} \div \frac{१७०}{६१} = ६३\frac{२६}{१७०}$ द्वीप उदयस्थान । वेदिका चारक्षेत्र यो. ४ $= \frac{२४४}{६१} \div \frac{१७०}{६१} = १\frac{७४}{१७०}$ वेदिका उदयस्थान ।

ल. स. चारक्षेत्र (बिम्बविस्तारसे रहित) यो. ३३० $= \frac{२०१३०}{६१}$; $\frac{२०११०}{६१} \div \frac{१७०}{६१} = ११८\frac{७०}{१७०}$ ल. स. उदयस्थान । $६३\frac{२६}{१७०} + १\frac{७४}{१७०} + ११८\frac{७०}{१७०} = १८३$, इसके अतिरिक्त बाह्य पथमें उदयस्थान १; १८३ + १ = १८४ सर्व उदयस्थान ।

१ ब लंबंतकाले. २ द ब मग्गत्थमाणेज्ज.

ते दीवे तेसट्ठी छब्बीसंसा सयस्सएक्कहिदा । एक्को छिय वेदीए कलाओ चउहत्तरी होंति ॥ ४५५

$$६३\left|\frac{२६}{१७०}\right|\;१\left|\frac{७४}{१७०}\right|^{२}$$

अट्ठारसुत्तरसदं लवणसमुद्दम्मि तेत्तियकलाओ । एदे मिलिदा उदया तेसीदिसदाणि अट्ठताल कला॥ ४५६

$$११८\left|\frac{११८}{१७०}\right|$$

अट्ठासीदिगहाणं एक्कं छिय होदि जत्थ चारखिदी । तज्जोगो वीहीओ पडिवीहिं होंति परिहीओ ॥ ४५७

परिहीसु ते चरंते ताणं कणयाचलस्स विच्चालं । अण्णं पि पुव्वभणिदं कालवसादो पणट्ठमुवएसं ॥ ४५८

। गहाणं परूवणा सम्मत्ता ।

ससिणो[१] पण्णरसाणं वीहीणं ताण होंति मज्झम्मि । अट्ठ छिय वीहीओ अट्ठावीसाण रिक्खाणं ॥ ४५९

वे उदयस्थान एक सौ सत्तरसे भाजित छब्बीस भाग अधिक तिरेसठ जम्बूद्वीपमें और चौहत्तर कला अधिक केवल एक उसकी वेदीके ऊपर है ॥ ४५५ ॥

जं. द्वी. $६३\frac{२६}{१७०}$ । वेदी $१\frac{७४}{१७०}$ ।

लवणसमुद्रमें उतनी (११८) ही कलाओंसे अधिक एक सौ अठारह उदयस्थान हैं । ये सब उदयस्थान मिलकर अड़तालीस कलाओंसे अधिक एक सौ तेरासी है ॥ ४५६ ॥

उदाहरण — लवणसमुद्रमें बिम्बविस्तारसहित सूर्यका चारक्षेत्र यो० $३३०\frac{४८}{६१}$ है, $३३०\frac{४८}{६१} = \frac{२०१७४}{६१} \div \frac{१७०}{६१} = ११८\frac{११८}{१७०}$ उदयस्थान । $६३\frac{२६}{१७०} + १\frac{७४}{१७०} + ११८\frac{११८}{१७०} = १८३\frac{४८}{१७०}$ कुल ।

यहां अठासी ग्रहोंका एक ही चारक्षेत्र है जहां प्रत्येक वीथीमें उनके योग्य वीथियां और परिधियां हैं ॥ ४५७ ॥

वे ग्रह इन परिधियोंमें संचार करते है । इनका मेरु पर्वतसे अन्तराल तथा और भी जो पूर्वमें कहा जा चुका है इसका उपदेश कालवश नष्ट होचुका है ॥ ४५८ ॥

ग्रहोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

चन्द्रकी पन्द्रह गलियोंके मध्यमें उन अट्ठाईस नक्षत्रोंकी आठ ही गलियां होती हैं ॥ ४५९ ॥

---

१ द २१ $\left|\frac{७४}{१७०}\right|$ ब ६३ $\left|\frac{७४}{१७०}\right|$ २ द ससिणे.

अभि अभिजिप्पहुदीणिं[1] सादी पुव्वाओ उत्तराओ वि । हय बारस रिक्खाणिं चंदस्स चरंति पढमपहे ॥४६०

तदिए पुणव्वसू मघ सत्तमए रोहिणी य चित्ताओ । छट्ठम्मि कित्तियाओ तह य विसाहाओ अट्ठमए ॥

दसमे अणुराहाओ जेट्ठा एक्कारसम्मि पण्णरसे । हत्थो मूलादितियं मिगसिरदुगपुस्सअस्सिलेसा ॥ ४६२

ताराओ कित्तियादिसु छप्पंचतियेक्कछक्कतियछक्का । चउदुगदुगपंचेक्का एक्कचउछतिणवचउक्का य ॥

चउतियतियपंचा तह एक्करसजुदं सयं दुगदुगाणिं । बत्तीस पंच तिण्णि य कमेण णिद्दिट्ठसंखाओ ॥ ४६४

६ । ५ । ३ । १ । ६ । ३ । ६ । ४ । २ । २ । ५ । १ । १ । ४ । ६ । ३ । ९ । ४ । ४ । ३ । ३ । ५ । १११ । २ । २ । ३२ । ५ । ३ ।

बीयणयसयलछत्ती कुरंगसिरदीवतोरणाणं च । आदववारणवम्मियगोमुत्तं सरजुगाणं च ॥ ४६५

हत्थुप्पलदीवाणं अधियरणं हारवीणसिंगा य । विच्छुयदुक्कयवावी केसरिगयसीस आयारा ॥ ४६६

मुरयं पत्तंतपक्खी सेणा गयपुव्वमवरगत्ता य । णावा हयसिरसरिसा णं[2] चुल्ली कित्तियादीणं ॥ ४६७

अभिजित् आदि नौ, स्वाति, पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी ये बारह नक्षत्र चन्द्रके प्रथम मार्गमें संचार करते हैं ॥ ४६० ॥

चन्द्रके तृतीय पथमे पुनर्वसु और मघा, सातवेंमें रोहिणी और चित्रा, छठेंमें कृत्तिका तथा आठवेंमें विशाखा नक्षत्र संचार करता है ॥ ४६१ ॥

दशवेंमें अनुराधा, ग्यारहवेंमें ज्येष्ठा तथा पन्द्रहवें मार्गमें हस्त, मूलादिक तीन (मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढ़ा), मृगशीर्षा, आर्द्रा, पुष्य और आश्लेषा, ये आठ नक्षत्र संचार करते हैं ॥ ४६२ ॥

छह, पांच, तीन, एक, छह, तीन, छह, चार, दो, दो, पांच, एक, एक, चार, छह, तीन, नौ, चार, चार, तीन, तीन, पांच, एक सौ ग्यारह, दो, दो, बत्तीस, पांच और तीन, यह क्रमसे उन कृत्तिकादिक नक्षत्रोंके ताराओंकी संख्या निर्दिष्टकी गई है ॥ ४६३–४६४ ॥

६, ५, ३, १, ६, ३, ६, ४, २, २, ५, १, १, ४, ६, ३, ९, ४, ४, ३, ३, ५, १११, २, २, ३२, ५, ३ ।

बीजना,[1], गाड़ीकी उद्धिका[2], हिरणका शिर[3], दीप[4], तोरण[5], आतपवारण[6] (छत्र), वल्मीक[7], (चींटी आदिसे किया गया मिट्टीका पुंजविशेष), गोमूत्र[8], सरयुग[9], हस्त[10], उत्पल[11], दीप[12], अधिकरण[13], हार[14], वीणा[15], सींग[16], बिच्छु[17], दुष्कृतवापी[18], सिंहका शिर[19], हाथीका शिर[20], मुरज[21], पतत्पक्षी[22], सेना[23], हाथीका पूर्व शरीर[24], हाथीका अपर शरीर[25], नौका[26], घोड़ेका शिर[27] और चूल्हा[28], इनके समान क्रमसे उन कृत्तिकादिक नक्षत्रोंके ताराओंका आकार है ॥ ४६५–४६७ ॥

१ द ब पहुदीणं. २ द ब हयं ससीसापासाणं.

णियतारासं संखा सव्वाणं ठाविदूण रिक्खाणं । पत्तेक्कं गुणिदव्वं एक्कारससंदेहि एक्कारसे ॥ ४६८
१११११ ।

होंति परिवारतारा मूलेमिस्साओ सयलताराओ । तिविहाइं रिक्खाइं मज्झिमवरजवरभेदेहिं ॥ ४६९

६६६६ । ५५५५ । ३३३३ । ११११ । ६६६६ । ३३३३ । ६६६६ । ४४४४ । २२२२ । २२२२ । ५५५५ । १११९ । १११९ । ४४४४ । ६६६६ । ३३३३ । ९९९९ । ४४४४ । ४४४४ । ३३३३ । ३३३३ । ५५५५ । १२३३२१ । २२२२ । २२२२ । ३५५५२ । ५५५५ । ३३३३ ।

६६७२ । ५५६० । ३३३६ । १११२ । ६६७२ । ३३३६ । ६६७२ । ४४४८ । २२२४ । २२२४ । ५५६० । १११२ । १११२ । ४४४८ । ६६७२ । ३३३६ । १०००८ । ४४४८ । ४४४८ । ३३३६ । ३३३६ । ५५६० । १२३४३२ । २२२४ । २२२४ । ३५५८४ । ५५६० । ३३३६ ।

अवराओ जेट्ठद्दासद्दभिसभरणीओ सादिअसिलेस्सा । होंति ण वराओ पुणव्वस्सु तिउत्तरा रोहणिविसाहाओ ॥
सेसाओ मज्झिमाओ जहण्णभे पंचउत्तरसहस्सं । तं चिय दुगुणं तिगुणं मज्झिमवरभेसु णभखंडा ॥ ४७१
१००५ । २०१० । ३०१५ ।

अपने अपने सब ताराओंकी संख्याको रखकर उसे ग्यारहसे गुणा करनेपर प्रत्येक नक्षत्रोंके परिवार-ताराओंका प्रमाण होता है । इसमें मूल ताराओंका प्रमाण मिलादेनेसे समस्त ताराओंका प्रमाण होता है । मध्यम, उत्कृष्ट और जघन्यके भेदसे नक्षत्र तीन प्रकारके होते हैं ॥ ४६८-४६९ ॥

गुणकार— १११११ । परिवार तारा— कृ. ६६६६, रो. ५५५५, मृ. ३३३३, आ. १११९, पुन. ६६६६, पुष्य ३३३३, आ. ६६६६, म. ४४४४, पू. २२२२, उ. २२२२, ह. ५५५५, चि. १११९, स्वा. १११९, वि. ४४४४, अ. ६६६६, ज्ये. ३३३३, मू. ९९९९, पू. आ. ४४४४, उ. आ. ४४४४, अभि. ३३३३, श्र. ३३३३, ध. ५५५५, श. १२३३२१, पू. भा. २२२२, उ. भा. २२२२, रे. ३५५५२, अ. ५५५५ भ. ३३३३ ।

सकल तारा— कृ. ६६७२, रो. ५५६०, मृ. ३३३६, आ. १११२, पुन. ६६७२, पु. ३३३६, आ. ६६७२, म. ४४४८, पू. २२२४, उ. २२२४, ह. ५५६०, चि. १११२, स्वा. १११२, वि. ४४४८, अनु. ६६७२, ज्ये. ३३३६, मू. १०००८, पू. आ. ४४४८, उ. आ. ४४४८, अभि. ३३३६, श्र. ३३३६, ध. ५५६०, श. १२३४३२, पू. भा. २२२४, उ. भा. २२२४, रे. ३५५८४, अ. ५५६०, भ. ३३३६ ।

ज्येष्ठा, आर्द्रा, शतभिषक्, भरणी, स्वाति और आश्लेषा, ये छह जघन्य; पुनर्वसु, तीन उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपदा), रोहिणी और विशाखा ये उत्कृष्ट; तथा शेष नक्षत्र मध्यम हैं । इनमेंसे जघन्य नक्षत्रोंके एक हजार पांच, मध्यम नक्षत्रोंके इससे दुगुणे और उत्कृष्ट नक्षत्रोंके उससे तिगुणे नभखण्ड होते हैं ॥ ४७०-४७१ ॥

१००५ । २०१० । ३०१५ ।

अभिजिस्स छस्सयाणिं तीसजुदाणिं हुवंति णभखंडा । एवं णक्खत्ताणं सीमविभागं विजाणेहि ॥ ४७२

६३० ।

पत्तेक्कं रिक्खाणिं सव्वाणि मुहुत्तकालेणं । लंघंति गयणखंडे पणतीसट्ठारससयाणिं ॥ ४७३

१८३५ ।

दोससिणक्खत्ताणं परिमाणं भणमि[1] गयणखंडेसुं । लक्खं णव य सहस्सा अट्ठसया काहलायारा ॥ ४७४

रिक्खाण मुहुत्तगदी होदि पमाणं फलं मुहुत्तं च । इच्छा णिस्सेसाइं मिलिदाइं गयणखंडाणिं ॥ ४७५

१८३५ । १०९८०० ।

तेरासियम्मि लद्धं णियणियपरिहीसु सो गमणकालो । तम्माणं उणसट्ठी होंति मुहुत्ताणि अदिरेको ॥ ४७६

५९ ।

परन्तु अभिजित् नक्षत्रके छहसौ तीस ही नभखण्ड होते हैं । इस प्रकार नभखण्डोंसे इन नक्षत्रोंकी सीमाका विभाग जानना चाहिये ॥ ४७२ ॥ ६३० ।

सब नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येक एक मुहूर्तकालमें अठारहसौ पैंतीस गगनखण्डोंको लांघते हैं ॥ ४७३ ॥ १८३५ ।

दो चन्द्रों सम्बन्धी नक्षत्रोंके गगनखण्डप्रमाणको कहता हूं । ये गगनखण्ड काहला (वाद्यविशेष) के आकार हैं । इनका कुल प्रमाण एक लाख नौ हजार आठसौ है ॥ ४७४ ॥

ज. न. गगनखण्ड १००५; १००५ × ६ = ६०३० । म. न. ग. खण्ड २०१०; २०१० × १५ = ३०१५० । उ. न. ग. खण्ड ३०१५; ३०१५ × ६ = १८०९० । अभिजित् ग. खं. ६३०; ६०३० + ३०१५० + १८०९० + ६३० = ५४९०० एक चन्द्रसम्बन्धी नक्षत्रोंके गगनखण्ड । ५४९०० × २ = १०९८०० उभय चन्द्र सम्बन्धी न. ग. खण्ड ।

[यदि अठारहसौ पैंतीस गगनखण्डोंके अतिक्रमण करनेमें नक्षत्रोंका एक मुहूर्त काल व्यतीत होता है, तो समस्त गगनखण्डोंके अतिक्रमण करनेमें उनका कितना काल व्यतीत होगा ! इस प्रकार त्रैराशिक करनेमें] नक्षत्रोंकी मुहूर्तकालपरिमित गति (१८३५) प्रमाणराशि, एक मुहूर्त फलराशि और सब मिलकर गगनखण्ड (१०९८००) इच्छाराशि होती है । उक्त प्रकार त्रैराशिकके करनेपर जो लब्ध आवे उतना अपनी अपनी परिधियोंमें गमनका काल समझना चाहिये । उसका प्रमाण यहां उनसठ मुहूर्तसे अधिक आता है ॥ ४७५-४७६ ॥ ५९ ।

---

१ द ब णमि.

अदिरेकस्स पमाणं तिण्णि सयाणिं हवंति सत्त कला । तिसएहि सत्तसट्ठीसंजुत्तेहिं विभत्ताणिं ॥ ४७७

$\frac{३०७}{३६७}$

सवणादिअट्ठभाणिं अभिजिस्सादीओ उत्तरा पुव्वा। वचंति मुहुत्तेणं बावण्णसयाणि अधियपणसट्ठी ॥४७८

अधियप्पमाणमंसा अट्ठारसहस्सदुसयतेसट्ठी । इगिवीससहस्साणिं णवसयसट्ठी हवे हारो ॥ ४७९

$५२६५\frac{१८२६३}{२१९६०}$

वचंति मुहुत्तेणं पुणव्वसुमघा तिसत्तदुगपंचा । अंककमे जोयणया तियणभचउएक्कएक्ककला ॥ ४८०

$५२७३\frac{११४०३}{२१९६०}$

बावण्णसया पणसीदिउत्तरा सत्ततीस अंसा य। चउणउदिपणसयहिदा[1] जादि मुहुत्तेण कित्तिया रिक्खा ॥

$५२८५\frac{३७}{५९४}$

इस अतिरेकका प्रमाण तीन सौ सड़सठसे विभक्त तीन सौ सात कला है ॥ ४७७ ॥

समस्त ग. खण्ड १०९८००; १०९८०० × १ = १०९८००; १०९८०० + १८३५ = $५९\frac{१५३५}{१८३५} = ५९\frac{३०७}{३६७}$ मुहूर्त ।

श्रवणादिक आठ, अभिजित्, स्वाति, उत्तरा और पूर्वा, ये नक्षत्र बावन सौ पैंसठ योजनसे अधिक एक मुहूर्तमें गमन करते हैं । यहां अधिकताका प्रमाण इक्कीस हजार नौ सौ साठ भागोंमेंसे अठारह हजार दो सौ तिरेसठ भागमात्र है ॥ ४७८-४७९ ॥

$५२६५\frac{१८२६३}{२१९६०}$ ।

पुनर्वसु और मघा अंकक्रमसे तीन, सात, दो और पांच अर्थात् पांच हजार दो सौ तिहत्तर योजन और ग्यारह हजार चार सौ तीन भाग अधिक एक मुहूर्तमें गमन करते हैं ॥ ४८० ॥ $५२७३\frac{११४०३}{२१९६०}$ ।

कृत्तिका नक्षत्र एक मुहूर्तमें बावनसौ पचासी योजन और पांचसौ चौरानबैसे भाजित सैंतीस भाग अधिक गमन करता है । ॥ ४८१ ॥ $५२८५\frac{३७}{५९४}$ ।

---

१ द ब पुव्वाउ. २ द ब चउणउदीपणयहिदा.

पंचसहस्सा दुसया अट्ठासीदी य जोयणा अधिया । चित्ताओ रोहिणीओ जंति मुहुत्तेण पत्तेक्कं ॥ ४८२
अदिरेकस्स पमाणं कलाओ सगसत्ततिण्हदुगमेत्ता । अंककमे तह हारो खडछणवएक्कदुगमाणे ॥ ४८३

५२८८ | २०३७७ / २१९६० |

बावण्णसया बाणउदि जोयणा वच्चदे विसाहा य । सोलससहस्सणवसयसगदालकला मुहुत्तेणं ॥ ४८४

५२९२ | १६९४७ / २१९६० |

तेवण्णसयाणिं जोयणाणि वच्चदि मुहुत्तेणं । चउवण्ण चउसया दससहस्स अंसा य अणुराहा ॥ ४८५

५३०० | १०४५४ / २१९६० |

तेवण्णसयाणिं जोयणाणि चत्तारिं वच्चदि जेट्ठा । अंसा सत्तसहस्सा चउवीसजुदा मुहुत्तेणं ॥ ४८६

५३०४ | ७०२४ / २१९६० |

पुस्सो अस्सिलेसाओ पुव्वासाढा य उत्तरासाढा । हत्थो मिगसिरमूला अद्दाओ अट्ठ पत्तेक्कं ॥ ४८७
तेवण्णसया णवदीसजोयणा[1] जंति इगिमुहुत्तेणं । अट्ठाणउदी णवसय पण्णरससहस्स अंसा य ॥ ४८८

५३१९ | १५९९८ / २१९६० |

चित्रा और रोहिणीमेंसे प्रत्येक एक मुहूर्तमें पांच हजार दो सौ अठासी योजनसे अधिक जाते हैं । यहां अधिकताका प्रमाण अंकक्रमसे शून्य, छह, नौ, एक और दो अर्थात् इक्कीस हजार नौ सौ साठसे भाजित बीस हजार तीन सौ सतत्तर कला है ॥ ४८२–४८३ ॥

$५२८८\frac{२०३७७}{२१९६०}$

विशाखा नक्षत्र बावन सौ बानवे योजन और सोलह हजार नौ सौ सैंतालीस कला अधिक एक मुहूर्तमें गमन करता है ॥ ४८४ ॥ $५२९२\frac{१६९४७}{२१९६०}$ ।

अनुराधा नक्षत्र एक मुहूर्तमें तिरेपनसौ योजन और दश हजार चार सौ चौवन भाग अधिक गमन करता है ॥ ४८५ ॥ $५३००\frac{१०४५४}{२१९६०}$ ।

ज्येष्ठा नक्षत्र एक मुहूर्तमें तिरेपन सौ चार योजन और सात हजार चौबीस भाग अधिक गमन करता है ॥ ४८६ ॥ $५३०४\frac{७०२४}{२१९६०}$ ।

पुष्य, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, हस्त, मृगशीर्षा, मूल और आर्द्रा, इन आठ नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येक एक मुहूर्तमें तिरेपन सौ उन्नीस योजन और पन्द्रह हजार नौ सौ अट्ठानवे भाग अधिक गमन करते हैं ॥ ४८७-४८८ ॥ $५३१९\frac{१५९९८}{२१९६०}$ ।

---

१ द ब उणवण्णसयजोयणा, क उणबोयणा.

मंडलखेत्तपमाणं जहण्णभे तीस जोयणा होंति । तं चिय दुगुणं तिगुणं मज्झिमवरभेसु पत्तेक्कं ॥ ४८९

३० । ६० । ९० ।

अट्ठारस जोयणया हवेदि अभिजिस्स मंडलक्खित्तं । सट्ठियणहमेत्ताओ णियणियताराणं मंडलखिदीओ ॥ ४९०

सादीभरणीमूलं अभिजीकित्तियरिक्खाओ चरंति णियमग्गे ॥ ४९१

पदाहिणं रिक्खाणि णियणियमग्गेसु पुव्वभणिदेसुं । णिच्चं चरंति मंदरसेलस्स पदाहिणक्कमेणं ॥ ४९२

एदि मघा मज्झण्हे कित्तियरिक्खस्स अत्थमणसमए । उदए अणुराहाओ एवं जाणेज्ज सेसाओ ॥ ४९३

। एवं णक्खत्ताणं पख्वणा सम्मत्ता ।

जघन्य नक्षत्रोंके मण्डलक्षेत्रका प्रमाण तीस योजन और इससे दूना एवं तिगुना यही प्रमाण क्रमसे मध्यम और उत्कृष्ट नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येकका है ॥ ४८९ ॥ ३० । ६० । ९० ।

अभिजित् नक्षत्रका मण्डलक्षेत्र अठारह योजन प्रमाण है । और अपने अपने ताराओंका मंडलक्षेत्र स्वस्थित आकाश मात्र ही है ॥ ४९० ॥

स्वाति, भरणी, मूल, अभिजित् और कृत्तिका, ये पांच नक्षत्र अपने मार्गमें क्रमसे ऊर्ध्व, अधः, दक्षिण, उत्तर और मध्यमें संचार करते हैं ॥ ४९१ ॥

ये नक्षत्र मन्दर पर्वतके प्रदक्षिणक्रमसे पूर्वोक्त अपने अपने मार्गोंमें नित्य ही संचार करते हैं ॥ ४९२ ॥

कृत्तिका नक्षत्रके अस्तमनकालमें मघा मध्याह्नको और अनुराधा उदयको प्राप्त होता है । इसी प्रकार शेष नक्षत्रोंके भी उदयादिकको जानना चाहिये ॥ ४९३ ॥

विशेषार्थ— जिस समय किसी विवक्षित नक्षत्रका अस्तमन होता है उस समय उससे आठवां नक्षत्र मध्याह्नको और इससे भी आठवां नक्षत्र उदयको प्राप्त होता है । इस नियमके अनुसार कृत्तिकादिकके अतिरिक्त शेष नक्षत्रोंके भी अस्तमन, मध्याह्न और उदयको स्वयं ही जानलेना चाहिये (देखो त्रिलोकसार गा. ४३६) ।

इस प्रकार नक्षत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

---

१ द ब तारापि.

दुविहा चरअचराओ पइण्णतारा तारण वरसंखा । कोडाकोडीलक्खं तेत्तीससहस्सणवसया पण्णं ॥ ४९४

१३३९५०००००००००००००० ।

छत्तीस अचरतारा जंबूदीवस्स चउदिसाभाए । एदाओ दोससिणो परिवारा अद्धमेक्कम्मि ॥ ४९५

३६ । ६६९७५०००००००००००० ।

रिक्खगमणादु अधियं गमणं जाणेज्ज सयलताराणं । ताणं णामण्णुद्दिसु इदएसो संपह पणट्ठो ॥ ४९६

चंदादो सत्तंडो सत्तंडादो गहा गहाहिंतो । रिक्खा रिक्खाहिंतो ताराओ होंति सिग्घगदी ॥ ४९७

। एवं ताराणं परूवणं समत्तं ।

अयणाणि य रविसणिणो सगसगखेत्तेसु[1] गहा य जे[2] चारी । णत्थि अयणाण भणणे णियमा ताराण एमेव ॥

रविअयणे एक्केकं तेसीदिसया हवंति दिणरत्ती । तेरसदिवसा चंदे[3] सत्तट्ठीभागचउचालं ॥ ४९९

१८३ । १३ | ४४ / ६७ |

प्रकीर्णक तारे चर और अचर रूपसे दो प्रकारके होते हैं । इनकी उत्कृष्ट संख्या एक लाख तेतीस हजार नौ सौ पचास कोड़ाकोड़ी है ॥ ४९४ ॥

१३३९५०००००००००००००० ।

इनमेसे छत्तीस अचर तारा जम्बूद्वीपके चारों दिशाभागोंमें स्थित हैं । ये (उपर्युक्त संख्याप्रमाण) दो चन्द्रोंके परिवार-तारे है । इनसे आधे एक चन्द्रके परिवार-तारे समझना चाहिये ॥ ४९५ ॥ अचर तारा ३६ । ६६९७५०००००००००००० ।

नक्षत्रोंके गमनसे सब ताराओंका गमन अधिक जानना चाहिये । इनके नामादिकका उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥ ४९६ ॥

चन्द्रसे सूर्य, सूर्यसे ग्रह, ग्रहोंसे नक्षत्र और नक्षत्रोंसे भी तारा शीघ्र गमन करनेवाले होते हैं ॥ ४९७ ॥

इस प्रकार ताराओंका कथन समाप्त हुआ ।

सूर्य, चन्द्र और जो अपने अपने क्षेत्रमें संचार करनेवाले ग्रह हैं उनके अयन होते हैं। नक्षत्रसमूह और ताराओंके इस प्रकार अयनोंका नियम नहीं है ॥ ४९८ ॥

सूर्यके प्रत्येक अयनमें एक सौ तेरासी दिन-रात्रियां और चन्द्रके अयनमें सड़सठ भागोंमेंसे चवालीस भाग अधिक तेरह दिन होते हैं ॥ ४९९ ॥ १८३ । १३ ४४/६७ ।

१ द ब समयसेसे. २ ब जं. ३ द ब दिवादिचंदे.

दक्खिणमयणं आदी पज्जवसाणं तु उत्तरं अयणं । सव्वेसिं सूराणं विवरीदं होदि चंदाणं ॥ ५००

छच्चेव सया तीसं भगणाणं अभिजिणिक्खविक्खंभा । दिट्ठा सव्वदरिसिहिं सव्वेहि अणंतणाणेहिं ॥ ५०१

६३० ।

सदभिसभरणी अद्दा सादी तह असिलेस्सजेट्ठा य । पंचुत्तरं सहस्सा भगणाणं सीमविक्खंभा ॥ ५०२

एदं चेव य तिगुणं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य । तिण्णेव उत्तराओ अवसेसाणं भवे विउणं ॥ ५०३

चउवण्णं च सहस्सा णव य सया होंति सयलरिक्खाणं । बिगुणियगयणक्खंडा दोचंदाणं पि णादव्वं ॥ ५०४

५४९०० ।

एयं च सयसहस्सा अट्ठाणउदीसया य परिपुण्णा । एसो मंडलछेदो भगणाणं सीमविक्खंभो ॥ ५०५

१०९८०० ।

अट्ठारसभागसया तीसं गच्छदि रवी[1] मुहुत्तेणं । णक्खत्तसीमछेदो ते चेट्ठं[2] इमेण जाणित्ता ॥ ५०६

१८३० ।

सब सूर्योंका दक्षिण अयन आदिमें और उत्तर अयन अन्तमें होता है । चन्द्रोंके अयनोंका क्रम इससे विपरीत है ॥ ५०० ॥

नक्षत्रोंमें अभिजित् नक्षत्रका विस्तार अर्थात् उसके गगनखण्डोंका प्रमाण जो छह सौ तीस है उसे सभी सर्वदर्शियोंने अनन्त ज्ञानसे देखा है ॥ ५०१ ॥ ६३० ।

शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा और ज्येष्ठा, इन नक्षत्रगणोंके सीमाविष्कम्भ अर्थात् गगनखण्ड एक हजार पांच हैं ॥ ५०२ ॥

पुनर्वसु, रोहिणी, विशाखा और तीनों उत्तरा (उत्तराफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपदा) इनके गगनखण्ड इससे (१००५) तिगुणे तथा शेष नक्षत्रोंके दूने हैं ॥ ५०३ ॥

सब नक्षत्रोंके गगनखण्ड चौवन हजार नौ सौ हैं । इससे दूने दोनों चन्द्रोंके गगनखण्ड समझना चाहिये ॥ ५०४ ॥ ५४९०० ।

इस प्रकार एक लाख अट्ठानवे सौ गगनखण्डोंसे परिपूर्ण यह मण्डलविभाग नक्षत्रगणोंकी सीमाके विस्तार स्वरूप है ॥ ५०५ ॥ १०९८०० ।

सूर्य एक मुहूर्तमें अठारह सौ तीस गगनखण्डोंको लांघता है । नक्षत्रोंकी सीमाका विभाग....इस प्रकार जानना चाहिये ॥ ५०६ ॥

---

१ द ब भागाणं. २ द ब जे. ३ द चेट्ठइ.

सत्तरसट्ठसयाणि हु चंदे सूरे बिसट्ठिसंहियं च । सत्तट्ठी वि य भागा चरदु मुहुत्तेण भागाणं ॥ ५०७

१७६८ । १८३० । १८३५ ।

चंदरविगयणखंडे अण्णोण्णविसुद्धसेसबासट्ठी । एयमुहुत्तपमाणं बासट्ठिहिदिच्छया तीसा ॥ ५०८

१ । ६२ । ३० ।

एयट्ठेतिण्णिसुण्णं गयणक्खंडेण लब्भदि मुहुत्तं । अट्ठरसट्ठी य तहा गयणक्खंडेण किं लद्धं ॥ ५०९

१८३० । १८६० । १ ।

चंदादो सिग्घगदी दिवसमुहुत्तेण चरदि खलु सूरो । एक्कं चेव मुहुत्तं एक्कं एयट्ठिभागं च ॥ ५१०

$$1 \left| \begin{matrix} 1 \\ \frac{1}{61} \end{matrix} \right|$$

रविरिक्खगमणखंडे अण्णोण्णं सोहिऊण जं सेसं । एयमुहुत्तपमाणं फल पण इच्छा तहा तीसं ॥ ५११

१ । ५ । ३० ।

चन्द्र एक मुहूर्तमें सत्तरह सौ अड़सठ गगनखण्डोंको लांघता है । इसकी अपेक्षा सूर्य बासठ गगनखण्ड अधिक और नक्षत्रगण सड़सठ गगनखण्ड अधिक लांघते हैं ॥ ५०७ ॥

१७६८ + ६२ = १८३० । १७६८ + ६७ = १८३५ ।

चन्द्र और सूर्यके गगनखण्डोंको परस्पर घटानेपर बासठ शेष रहते हैं । जब सूर्य एक मुहूर्तमें चन्द्रकी अपेक्षा बासठ खण्ड अधिक जाता है तब वह तीस मुहूर्तमें कितने खण्ड अधिक जावेगा ? इस प्रकारके त्रैराशिकमें यहां एक मुहूर्त प्रमाणराशि, बासठ फलराशि और तीस मुहूर्त इच्छाराशि होती है ॥ ५०८ ॥ ६२ × ३० = १८६० ।

जब एक, आठ, तीन और शून्य अर्थात् अठारह सौ तीस गगनखण्डोंके अतिक्रमणमें एक मुहूर्त प्राप्त होता है तो अठारह सौ साठ गगनखण्डोंके अतिक्रमणमें क्या प्राप्त होगा ? ॥ ५०९ ॥ १८६० ÷ १८३० = $1\frac{1}{61}$ मु. ।

सूर्य चन्द्रमाकी अपेक्षा दिनमुहूर्त अर्थात् तीस मुहूर्तोंमें एक मुहूर्त और एक मुहूर्तके इकसठवें भाग अधिक शीघ्र गमन करता है ॥ ५१० ॥

सूर्य और नक्षत्रोंके गगनखण्डोंको परस्पर घटाकर जो शेष रहे उसे ग्रहण करनेपर यहां एक मुहूर्त प्रमाणराशि, पांच फलराशि और तीस मुहूर्त इच्छाराशि है ॥ ५११ ॥

३० × ५ = १५० गगनखण्ड ।

१ ब बिअट्ठि°.

तीसट्ठारसया खलु मुहुत्तकालेण कमइ जइ[1] सूरो । तो केत्तियकालेणं सयपंचासं कमेइ त्ति ॥ ५१२

१८३० । १ । १५० ।

सूरादो णक्खत्तं दिवसमुहुत्तेण जहणतरमाहु । एक्कस्स मुहुत्तस्स य भागं एकट्ठिमे पंच ॥ ५१३

५
६१

णक्खत्तसीमभागं भजिदे दिवसस्स जहणभागेहिं । लद्धं तु होइ रविससिणक्खत्ताणं तु संजोगा ॥ ५१४

णिसयदलगगणखंडे कमेइ जइ दिणयरो दिणिक्केणं । तउ रिक्खाणं णियणिय णहखंडगमण को कालो ॥

१५० । १ । ६३०

अभिजी छच्च मुहुत्ते चत्तारि य केवलो अहोरत्ते । सूरेण समं गच्छदि एत्तो सेसाणि वोच्छामि ॥ ५१६

अ. रा. ४, मु. ६ ।

सदभिसभरणीअद्दा सादी तह अस्सिलेसजेट्ठा य । छच्चेव अहोरत्ते एक्कावीसा मुहुत्तेणं ॥ ५१७

अ. रा. ६, मु. २१ ।

सूर्य जब अठारह सौ तीस गगनखण्डोंको एक मुहूर्तकालमें लांघता है तब वह एक सौ पचास गगनखण्डोंको कितने समयमें लांघेगा ? ॥ ५१२ ॥

$१५० \div १८३० = \frac{१५०}{१८३०} = \frac{५}{६१}$ मु. ।

सूर्यकी अपेक्षा नक्षत्र एक दिनमुहूर्तों (३० मु.) में एक मुहूर्तके इकसठ भागोंमेंसे पांच भाग अधिक जवीयस्तर अर्थात् अतिशय वेगवाला है ॥ ५१३ ॥

सूर्य और चन्द्र एक दिनमें नक्षत्रोंकी अपेक्षा जितने गगनखण्ड पीछे रहते हैं उनका नक्षत्रोंके गगनखण्डोंमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने समय तक सूर्य व चन्द्रमाका नक्षत्रोंके साथ संयोग रहता है ॥ ५१४ ॥

यदि सूर्य एक दिनमें तीन सौके आधे एक सौ पचास गगनखण्ड पीछे रहता है तो नक्षत्रोंके अपने अपने गगनखण्डोंके गमनमें कितना काल लगेगा ? ॥ ५१५ ॥

अभिजित् नक्षत्र चार अहोरात्र और छह मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ गमन करता है । यहांसे आगे शेष नक्षत्रोंका कथन करता हूं ॥ ५१६ ॥

अभि. ग. खं. ६३० ÷ १५० = ४$\frac{१}{५}$ दिन = ४ अहोरात्र और ६ मुहूर्त अधिक ।

शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा तथा ज्येष्ठा, ये नक्षत्र छह अहोरात्र और इक्कीस मुहूर्त तक सूर्यके साथ गमन करते हैं ॥ ५१७ ॥

ज. न. ग. खण्ड १००५; १००५ ÷ १५० = ६$\frac{५}{६}$ दिन = ६ अहोरात्र और २१ मुहूर्त अधिक ।

---

१ द ब ज. २ द ब णहतदे.

तिण्णेव उत्तराओ पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य । वीसं च अहोरत्ते तिण्णेव य होंति मूरस्स ॥ ५१८

अ. रा. २०, मु. ३ ।

अवसेसा णक्खत्ता पण्णारस वि सूरगदा होंति । बारस चेव मुहुत्ता तेरस य समे अहोरत्ते ॥ ५१९

अ. १३, मु. १२ ।

सत्तट्ठिगयणखंडे मुहुत्तमेत्तेण कमइ जो चंदो । भगणाण गयणखंडे को कालो होइ गमणम्मि ॥ ५२०

६७ । १ । ६३० ।

अभिजिस्स चंदचारो[1] सत्तट्ठी खंडिदे मुहुत्तेगे । भागो य सत्तवीसा ते पुण अहिया णवमुहुत्तेहिं ॥ ५२१

९ | २७ / ६७ |

सदभिसभरणीअद्दा सादी तह अस्सलेसजेट्ठा य । एदे छण्णक्खत्ता पण्णारसमुहुत्तसंजुत्ता ॥ ५२२

१५ ।

तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा, ये छह उत्कृष्ट नक्षत्र बीस अहोरात्र और तीन मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ गमन करते है ॥ ५१८ ॥

उ. न. ग. खण्ड ३०१५; ३०१५ ÷ १५० = २०$\frac{१}{१०}$ अ. रा. = २० अहोरात्र और ३ मु. अधिक ।

शेष पन्द्रह ही जघन्य नक्षत्र तेरह अहोरात्र और बारह मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ संगत रहते हैं ॥ ५१९ ॥

म. न. ग. खण्ड २०१०; २०१० ÷ १५० = १३$\frac{४}{५}$ अ. रा. = १३ अहोरात्र और १२ मुहूर्त अधिक ।

जब चन्द्रमा एक मुहूर्तमें नक्षत्रोंसे सड़सठ गगनखण्ड पीछे रह जाता है तब उनके (नक्षत्रोंके) गगनखण्डों तक साथ गमन करनेमें कितना समय लगेगा ? ॥ ५२० ॥

अभिजित् नक्षत्रके गगनखण्डोंमें सड़सठका भाग देनेपर एक मुहूर्तके सड़सठ भागोंमेंसे सत्ताईस भाग अधिक नौ मुहूर्त लब्ध आते हैं । यही चन्द्रमाका अभिजित् नक्षत्रके साथ गमन करनेका कालप्रमाण है ॥ ५२१ ॥ अ. न. ग. खण्ड ६३०; ६३० ÷ ६७ = ९$\frac{२७}{६७}$ मु. का. ।

शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा और ज्येष्ठा, ये छह नक्षत्र चन्द्रमाके साथ पन्द्रह मुहूर्त तक रहते हैं ॥ ५२२ ॥ज. ग. खं. १००५, १५०५ ÷ ६७ = १५ मुहूर्त ।

---

१ द ब चंदचारो. २ द ब $\frac{९}{२७}$ |.

अवसेसा णक्खत्ता पण्णरसा तीसदिमुहुत्ता य । चंदम्मि एस जोगो णक्खत्ताणं समक्खादं ॥ ५२३
३० ।

तिण्णेव उत्तराओ पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य । एदे छण्णक्खत्ता पणदालमुहुत्तसंजुत्ता ॥ ५२४
४५ ।

दुमणिस्स एक्कअयणे दिवसा तेसीदिअधियएक्कसयं । दक्खिणअयणं आदी उत्तरअयणं च अवसाणं ॥ ५२५
१८३ ।

एक्कादिदुउत्तरियं दक्खिणआउट्टियाए[1] पंच पदा । दोआदिदुउत्तरयं उत्तरआउट्टियाए[1] पंच पदा ॥ ५२६
तिप्पंचदुउत्तरियं[2] दसपदपज्जंतदेहि अवहरिदं । उसुपस्स य होदि पदं वोच्छं आउट्टिउसुपदिणं रिक्खं ॥
रूऊणकं छगुणं भोगजुदं उसुवं उसुपउंदि तिथिमाणं । तं बारगुणं पव्वस्समविसमे किण्हसुक्कं च ॥ ५२८
सत्तमुणे ऊणकं दसहिदमेसेसु अयणदिवसगुणं । सत्तट्ठिहिदे लद्धं अभिजादीदे हवे रिक्खं ॥ ५२९

अवशिष्ट पन्द्रह नक्षत्र चन्द्रमाके साथ तीस मुहूर्त तक रहते है । यह उन नक्षत्रोंका योग कहा गया है ॥ ५२३ ॥ म. ग. ग्वं. २०१० – ६७ = ३० मुहूर्त ।

तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा, ये छह नक्षत्र पैंतालीस मुहूर्त तक चन्द्रमाके साथ संयुक्त रहते है ॥ ५२४ ॥ उ. ग. ग्वं. ३१५; ३१५ ÷ ६७ = ४५ मुहूर्त ।

सूर्यके एक अयनमें एक सौ तेरासी दिन होते है । इन अयनोंमेंसे दक्षिण अयन आदिमें और उत्तर अयन अन्तमें होता है ॥ ५२५ ॥ १८३ ।

सूर्यके दक्षिण-अयनमें एकको आदि लेकर दो अधिक अर्थात् एक, तीन, पांच, सात और नौ, इस प्रकार आवृत्ति होती है । इस आवृत्तिमें गच्छ पांच है । इसी प्रकार दोको आदि लेकर दो अधिक अर्थात् दो, चार, छह, आठ और दश, इस प्रकार उत्तरायनमें आवृत्ति होती है । इस उत्तरावृत्तिमें भी गच्छ पांच ही रहता है ॥ ५२६ ॥

[गाथा ५२७-५२९ का अर्थ अस्पष्ट है । गाथा ५२७ में विषुप अर्थात् समान दिन-रात्रिवाले दिवसके पद बतलाकर आवृत्ति और विषुपके दिन और नक्षत्र बतलानेकी प्रतिज्ञा की गई है । गाथा ५२८ में विषुप और आवृत्तिकी तिथि निकालने और कृष्ण व शुक्ल पक्षका निर्णय करनेका गणित दिया गया है जो त्रिलोकसार गाथा ४२८ के अनुसार इस प्रकार है— आवृत्तिकी संख्यामेंसे एक घटाकर जो बचे उसमें छहका गुणा करो । इस गुणनफलमें एक और मिलानेसे आवृत्तिकी तिथि आती है एवं तीन मिलानेसे विषुपकी । और यह तिथि-संख्या यदि विषम हो तो कृष्ण पक्ष जानना चाहिये और सम हो तो शुक्ल पक्ष । गाथा ५२९ में नक्षत्र निकालनेकी प्रक्रिया बतलाई गई है जो त्रिलोकसार गा. ४२९-४३० से भिन्न जान पड़ती है, किन्तु अस्पष्ट है ।]

१ द आउट्टिदाए, ब आउट्टिदाए. २ द ब तिप्पंचदुउत्तरियं ३ द उसुदं. ४ द किराह°.

आसाढपुण्णिमीए जुगणिप्पत्ती दु सावणे किण्हे । अभिजिम्मि चंदजोगे पाडिवदिवसम्मि पारंभो ॥ ५३०
सावणकिण्हे तेरसि मियसिररिक्खम्मि विदियआउट्टी । तदिया विसाहरिक्खे दसमीए सुक्कलम्मि तम्मासे ॥
पंचसु वरिसे एदे सावणमासम्मि उत्तरे कट्ठे । आवित्ती दुमणीणं पंचेव य होंति णियमेणं ॥ ५३२
माघस्स किण्हपक्खे सत्तमिए रुद्दणाममुहुत्ते । हत्थम्मि ट्ठिददुमणी दक्खिणदो एदि उत्तराभिमुहे ॥ ५३३
चोत्थीए सदभिसए सुक्के विदिया तहज्जयं किण्हे । पक्खे पुस्से रिक्खे पडिवाए होदि तम्मासे ॥ ५३४
किण्हे तयोदसीए मूले रिक्खम्मि तुरिमआवित्ती । सुक्के पक्खे दसमिय कित्तियरिक्खम्मि पंचमिया ॥ ५३५
पंचसु वरिसे एदे माघे मासम्मि दक्खिणे कट्ठे । आवित्ती दुमणीणं पंचेव य होंति णियमेणं ॥ ५३६
होदि हु पढमं विसुपं कत्तियमासम्मि किण्हतइयाए । छसु पव्वमदीदेसु वि रोहिणिणामम्मि रिक्खम्मि ॥ ५३७

आसाढ़ मासकी पूर्णिमाके दिन पांच वर्ष प्रमाण युगकी पूर्णता और श्रावण कृष्णा प्रतिपद्के दिन अभिजित् नक्षत्रके साथ चन्द्रमाका योग होनेपर उस युगका प्रारम्भ होता है ॥ ५३० ॥

श्रावण कृष्णा त्रयोदशीके दिन मृगशीर्षा नक्षत्रका योग होनेपर द्वितीय और इसी मासमें शुक्ल पक्षकी दशमीके दिन तृतीय आवृत्ति होती है ॥ ५३१ ॥

[चतुर्थ और पंचम आवृत्तिसूचक गाथा छूट गया प्रतीत होता है । (देखो त्रि. सा. ४१४)]

सूर्यके उत्तर दिशाको प्राप्त होनेपर पांच वर्षोंके भीतर श्रावण मासमें ये नियमसे पांच ही आवृत्तियां होती हैं ॥ ५३२ ॥

हस्त नक्षत्रपर स्थित सूर्य माघ मासके कृष्ण पक्षमें सप्तमीके दिन रुद्र नामक मुहूर्तके होने दक्षिणसे उत्तराभिमुख प्राप्त होता है ॥ ५३३ ॥

इसी मासमें शतभिषक् नक्षत्रके रहते शुक्ल पक्षकी चतुर्थीके दिन द्वितीय और कृष्ण पक्षकी पड़िवाके दिन पुष्य नक्षत्रके रहते तृतीय आवृत्ति होती है ॥ ५३४ ॥

कृष्ण पक्षकी त्रयोदशीके दिन मूल नक्षत्रके रहते चौथी और शुक्ल पक्षकी दशमी तिथिको कृत्तिका नक्षत्रके रहते पांचवीं आवृत्ति होती है ॥ ५३५ ॥

पांच वर्षोंके भीतर माघ मासमें दक्षिण अयनके होनेपर नियमसे ये पांच ही सूर्योंकी आवृत्तियां होती हैं ॥ ५३६ ॥

समान दिन-रात्रि स्वरूप विषुपोंमेंसे प्रथम विषुप कार्तिक मासमें कृष्ण पक्षकी तृतीया तिथिको छह पर्वोंके (पौर्णमासी और अमावस्या) बीतनेपर रोहिणी नामक नक्षत्रके रहते होता है ॥ ५३७ ॥

१ ब किण्हि°.

वइसाहकिण्हपक्खे[1] णवमीए धणिट्ठणामणक्खत्ते । आदीदो अट्ठारस पव्वमदीदे दुहजयं उसुयं ॥ ५३८
कत्तियमासे पुण्णिमिदिवसे इगितीसपव्वमादीदो । तीदाए सादीए रिक्खे होदि हु तइजयं विसुयं ॥ ५३९
वइसाहसुक्कपक्खे छट्ठीए पुणव्वसुक्खणक्खत्ते । तेदालसंखपव्वमदीदेसु चउत्थयं विसुयं ॥ ५४०
कत्तियमासे सुक्किक्कबारसिए पंचउणणपरिसंखे । पव्वमदीदे उसुयं पंचमयं होदि णियमेण ५४१
वइसाहकिण्हपक्खे तदियाए [अट्ठसट्ठिपरिसंखे । पव्वमदीदे उसुयं] छट्ठमयं होदि णियमेण ॥ ५४२
कत्तियमासे किण्हे णवमीदिवसे मघाए णक्खत्ते । सीदीपव्वमदीदे होदि पुढं सत्तमं उसुयं ॥ ५४३
वइसाहपुण्णमीए अस्सिणिरिक्खे जुगस्स पढमादो । तेणउदी पव्वेसु वि होदि पुढं अट्ठमं उसुयं ॥ ५४४
कत्तियमासे सुक्कच्छट्ठीए उत्तरादिभद्दपदे । पंचुत्तरएक्कसयं पव्वमदीदेसु णवमयं उसुयं ॥ ५४५

दूसरा विषुप वैशाख मासमें कृष्ण पक्षकी नवमीको धनिष्ठा नामक नक्षत्रके रहते आदिसे अठारह पर्वोंके बीतनेपर होता है ॥ ५३८ ॥

तीसरा विषुप कार्तिक मासकी पूर्णिमाके दिन आदिसे इकतीस पर्वोंके बीत जानेपर स्वाति नक्षत्रके रहते होता है ॥ ५३९ ॥

चौथा विषुप वैशाख मासमें शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको पुनर्वसु नक्षत्रके रहते तेतालीस पर्वोंके बीत जानेपर होता है ॥ ५४० ॥

पांचवां विषुप कार्तिक मासमें शुक्ल पक्षकी द्वादशीको पचवन पर्वोंके व्यतीत होनेपर [उत्तरा भाद्रपदा नक्षत्रके रहते] नियमसे होता है ॥ ५४१ ॥

छठा विषुप वैशाख मासमें कृष्ण पक्षकी तृतीयाके दिन [अड़सठ पर्वोंके बीत जानेपर अनुराधा नक्षत्रके रहते] नियमसे होता है ॥ ५४२ ॥

सातवां विषुप कार्तिक मासमें कृष्ण पक्षकी नवमीके दिन मघा नक्षत्रके रहते अस्सी पर्वोंके बीतनेपर होता है ॥ ५४३ ॥

आठवां विषुप वैशाख मासकी पूर्णिमाके दिन अश्विनी नक्षत्रके रहते युगकी आदिसे तेरानबे पर्वोंके बीतनेपर होता है ॥ ५४४ ॥

नौवां विषुप कार्तिक मासमें शुक्ल पक्षकी षष्ठीको उत्तरा भाद्रपदा नक्षत्रके रहते एक सौ पांच पर्वोंके बीत चुकनेपर होता है ॥ ५४५ ॥

---

१ द ब वइसम्मि किण्हपक्खे.

बहसाहसुक्कबारसि उत्तरपुव्वम्हि फग्गुणीरिक्खे । सत्तारसएक्कसयं पव्वमदीदेसु दसमयं उसुयं ॥ ५४७
पणवरिसे दुमणीणं दक्खिणउत्तरायणं उसुयं । चयं आणेज्जो उस्सप्पिणिपढमसमादिचरिमंतं ॥ ५४७
पल्लस्ससंखभागं दक्खिणअयणस्स होदि परिमाणं । तेत्तियमेत्तं उत्तरअयणं उसुपं च तद्गुणं ॥ ५४८

दक्षि प	उत्त प	उसुप प २
अ	अ	अ

अवसप्पिणिए एवं वत्तव्वा ताओ रहट्टघडिएणं[1] । होंति अणंताणंता पुव्वं वा दुमणिपक्खित्तं ॥ ५४९
चत्तारो लवणजले धादइदीवम्मि बारस मियंका । बादाल कालसलिले बाहत्तरि पुक्खरद्धम्मि ॥ ५५०
४ । १२ । ४२ । ७२ ।
णियणियससीण अद्धं दीवसमुद्दाण एक्कभागम्मि । अवरे भागं अद्धं चरंति पंतिक्कमेणं च ॥ ५५१
एक्केक्कचारखेत्तं दोहोचंदाण होदि तव्वासो । पंचसया दससहिदा दिणयरबिंबादिरित्ता य ॥ ५५२

दशवां विषुप वैशाख मासमें शुक्ल पक्षकी द्वादशीके दिन 'उत्तरा' पद जिसके पूर्वमें है ऐसे फाल्गुनी अर्थात् उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रके रहते एकसौ सत्तरह पर्वोंके बीत जानेपर होता है ॥ ५४६ ॥

इस प्रकार उत्सर्पिणीके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय तक पांच वर्षपरिमित युगोंमें सूर्योंके दक्षिण व उत्तर अयन तथा विषुपोंको ले आना चाहिये ॥ ५४७ ॥

दक्षिण अयनका प्रमाण पल्यका असंख्यातवां भाग और इतना ही उत्तर अयनका भी प्रमाण है । विषुपोंका प्रमाण इससे दूना है ॥ ५४८ ॥

दक्षिण अयन पल्य ÷ असं., उत्तर पल्य ÷ असं., विषुप (पल्य ÷ असं.) × २ ।

इसी प्रकार (उत्सर्पिणीके समान) अवसर्पिणी कालमें भी अरघटकी घटिकाओंके समान उन दक्षिण-उत्तर अयन और विषुपोंको कहना चाहिये। सूर्यके प्रक्षेप पूर्ववत् अनंतानंत होते हैं ॥ ५४९ ॥

लवण समुद्रमें चार, धातकीखण्ड द्वीपमें बारह, कालोद समुद्रमें ब्यालीस और पुष्करार्द्ध द्वीपमें बहत्तर चन्द्र हैं ॥ ५५० ॥ ४ । १२ । ४२ । ७२ ।

द्वीप व समुद्रोंके अपने अपने चन्द्रोंमेंसे आधे एक भागमें और आधे दूसरे भागमें पंक्तिक्रमसे संचार करते हैं ॥ ५५१ ॥

दो दो चन्द्रोंका जो एक एक चारक्षेत्र है उसका विस्तार सूर्यबिम्बसे ($\frac{४}{६१}$) अधिक पांचसौ दश योजनप्रमाण है ॥ ५५२ ॥

१ [चिय]. २ द ब रहउपडिएण.

पुह पुह चारक्खेत्ते पण्णरस हुवंति चंदवीहीओ । तव्वासो छप्पण्णा जोयणया एक्कसट्ठिहिदा ॥ ५५३

$$१५ \left| \frac{५६}{६१} \right|$$

णियणियचंदपमाणं भजिदूणं एक्कसट्ठिरूवेहिं । अडवीसेहिं गुणिदं सोहियणियउवहिदीववासम्मि॥ ५५४

ससिसंकापविहत्तं[1] मज्झब्भंतरवीहिट्ठिदिंदूणं । दीवाणं उवहीणं आदिमपहजगदिविच्चालं ॥ ५५५

उणवण्णसहस्सा णवसयगवणउदिजोयणा य तेत्तीसा । अंसा लवणसमुद्दे अब्भंतरवीहिजगदिविच्चालं ॥

$$४९९९९ \left| \frac{३३}{६१} \right|$$

दुगतिगतियतियतिण्णि य विच्चालं धादइम्मि दीवम्मि । णभछक्कएक्कअंसा तेसीदिसदेहिं अवहरिदा ॥५५७

$$२३३३१ \left| \frac{१६०}{१८३} \right|$$

पृथक् पृथक् चारक्षेत्रमें जो पन्द्रह पन्द्रह चन्द्रवीथियां होती हैं उनका विस्तार इकसठसे भाजित छप्पन योजनप्रमाण है ॥ ५५३ ॥ वीथियां १५ । विस्तार $\frac{५६}{६१}$ ।

अपने अपने चन्द्रोंके प्रमाणमें इकसठ रूपोंका भाग देकर अट्ठाईससे गुणा करनेपर जो संख्या प्राप्त हो उसे अपने द्वीप अथवा समुद्रके विस्तारमेंसे घटाकर चन्द्रसंख्यासे विभक्त करनेपर जो लब्ध आवे उतना सर्व अभ्यन्तर वीथीमें स्थित चन्द्रोंके आदिम पथ और द्वीप अथवा समुद्रकी जगतीके बीच अंतराल होता है ॥ ५५४–५५५ ॥

उदाहरण—लवण समुद्रमें चन्द्र ४; $४ \div ६१ = \frac{४}{६१}$; $\frac{४}{६१} \times २८ = \frac{११२}{६१}$; ल. स. विस्तार $२००००० = \frac{१२२०००००}{६१}$; $\frac{१२२०००००}{६१} - \frac{११२}{६१} = \frac{१२१९९८८८}{६१}$ । चन्द्र संख्या $४ = \frac{२४४}{६१}$; $\frac{१२१९९८८८}{६१} \div \frac{२४४}{६१} = ४९९९९\frac{३३}{६१}$ अभ्यन्तर वीथी और जगतीके मध्य अन्तराल ।

लवण समुद्रमें अभ्यन्तर वीथी और जगतीके बीच उनंचास हजार नौ सौ निन्यानवे योजन और एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे तेतीस भागमात्र अन्तराल है ॥ ५५६ ॥

धातकीखण्ड द्वीपमें यह अन्तरालप्रमाण दो, तीन, तीन, तीन और तीन अर्थात् तेतीस हजार तीन सौ बत्तीस योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ साठ भाग अधिक है ॥ ५५७ ॥ $३३३१२\frac{१६०}{१८३}$ ।

१ द ब पविहत्तं.

सगचउणहणवएक्का अंककमे पणखदोण्णि अंसा य । इगिभट्ठदुएक्काहिदा कालोदयजगदिविच्चालं ॥ ५५८

$$१९०४७\left|\begin{matrix}२०५\\१२८१\end{matrix}\right|$$

सुण्णं चउठाणेक्का अंककमे अट्ठपंचतिण्णि कला । णवचउपंचविहत्तो विच्चालं पुक्खरद्धम्मि ॥ ५५९

$$११११०\left|\begin{matrix}३५८\\५४९\end{matrix}\right|$$

एदाणि अंतराणिं पढमप्पहसंठिदाण चंदाणं । बिदियादीण पहाणं अधिया अब्भंतरे बाहिं ऊणा ॥ ५६०

लवणादिचउक्काणं वासपमाणम्मि णियससिदलाणं । विंबाणिं फेलित्ता तत्तो णियचंदसंखअद्धेण ॥५६१

भजिदूणं जं लद्धं तं पत्तेक्कं ससीण विच्चालं । एवं सव्वपहाणं अंतरमेदम्मि णिद्दिट्ठं ॥ ५६२

णवणउदिसहस्सं णवसयणवणउदि जोयणा य पंच कला । लवणसमुद्दे दोण्णं तुसारकिरणाण विच्चालं ॥

$$९९९९९\left|\begin{matrix}५\\६१\end{matrix}\right|$$

कालोदक समुद्रकी जगती और अन्तर वीथीके मध्यमें सात, चार, शून्य, नौ और एक, इन अंकोंके क्रमसे उन्नीस हजार सैंतालीस योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित दो सौ पांच भाग अधिक अन्तराल है ॥ ५५८ ॥ $१९०४७\frac{२०५}{१२८१}$ ।

पुष्करार्द्ध द्वीपमें यह अन्तरालप्रमाण शून्य और चार स्थानोंमें एक, इन अंकोंके क्रमसे ग्यारह हजार एक सौ दश योजन और पांच सौ उनंचाससे भाजित तीन सौ अट्ठावन कला अधिक है ॥ ५५९ ॥ $११११०\frac{३५८}{५४९}$ ।

प्रथम पथमें स्थित चन्द्रोंके ये उपर्युक्त अन्तर अभ्यन्तरमें द्वितीयादिक पथोंसे अधिक और बाह्यमें उनसे रहित हैं ॥ ५६० ॥

लवणसमुद्रादिक चारोंके विस्तार प्रमाणमेंसे अपने चन्द्रोंके आधे बिम्बोंको घटाकर शेषमें निज चन्द्रसंख्याके अर्धभागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक चन्द्रोंका अन्तराल-प्रमाण होता है । इस प्रकार यहांपर सब पथोंका अन्तराल निर्दिष्ट किया गया है ॥५६१–५६२॥

ल. स. का विस्तार २००००, २००००$=\frac{१२२०००००}{६१}$; चार चन्द्रबिम्बोंका वि. $\frac{२२४}{६१}$; $\frac{२२४}{६१}\div २=\frac{११२}{६१}$; $\frac{१२२०००००}{६१}$ रिण $+\frac{११२}{६१}=\frac{१२१८९८८८}{६१}$; ल. स. चन्द्र संख्या ४, ४ ÷ २ = २; $२=\frac{१२२}{६१}$; $\frac{१२१९९८८८}{६१}\div\frac{१२२}{६१}=$ $९९९९९\frac{५}{६१}$ ल. समुद्रमें दो चन्द्रोंका अन्तर प्रमाण ।

लवण समुद्रमें दो चन्द्रोंके बीच निन्यानबै हजार नौ सौ निन्यानबै योजन और पांच कला अधिक अन्तराल है ॥ ५६३ ॥ $९९९९९\frac{५}{६१}$ ।

पंच चउट्ठाणट्ठा अंककमे सगतिपुक्क अंसा य । तियअट्ठेक्कविहत्ता अंतरमिंदूण धादईसंडे ॥ ५६४

६६६६५ | १३७ / १८३ |

चउणवगयणदुतिया अंककमे सुण्णपुक्कचारि कला । इगिअडदुगइगिभजिदा अंतरमिंदूण कालोदे ॥ ५६५

३८०९४ | ४१० / १२८१ |

एक्कचउट्ठाणदुगा अंककमे सत्तछक्कएक्क कला । णवचउपंचविहत्ता अंतरमिंदूण पोक्खरद्धम्मि ॥ ५६६

२२२२१ | १६७ / ५४९ |

णियणियपढमपहाणं जगदीणं अंतरप्पमाणसमं । णियणियलेस्सगदीओ सव्वमियंकाण पत्तेक्कं ॥ ५६७

२२२२१ | १७१ / ५४९ | (?)

तीस णउदी तिसया पण्णरसजुदा य चाल पंचसया । लवणप्पहुदिचउक्के चंदाणं होंति वीहीओ ॥ ५६८

३० । ९० । ३१५ । ५४० ।

धातकीखण्ड द्वीपमें चन्द्रोंके बीच पांच और चार स्थानोंमें छह इन अंकोंके क्रमसे छयासठ हजार छह सौ पैंसठ योजन और एक सौ तेरासीसे विभक्त एक सौ सैंतीस कलाप्रमाण अन्तर है ॥ ५६४ ॥ ६६६६५$\frac{१३७}{१८३}$ ।

कालोद समुद्रमें चन्द्रोंके मध्य चार, नौ, शून्य, आठ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे अड़तीस हजार चौरानवे योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित चार सौ दश कला अधिक अन्तर है ॥ ५६५ ॥ ३८०९४$\frac{४१०}{१२८१}$ ।

पुष्करार्द्ध द्वीपमें चन्द्रोंके मध्य एक और चार स्थानोंमें दो इन अंकोंके क्रमसे बाईस हजार दो सौ इक्कीस योजन और पांच सौ उनंचाससे विभक्त एक सौ सड़सठ कला अधिक अन्तर है ॥ ५६६ ॥ २२२२१$\frac{१६७}{५४९}$ ।

अपने अपने प्रथम पथ और जगतियोंके अन्तरप्रमाणके बराबर सब चन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी अपनी अपनी किरणोंकी गतियां होती हैं ॥ ५६७ ॥

लवणसमुद्रादिक चारमें क्रमसे तीस, नब्बे, तीन सौ पन्द्रह और पांच सौ चालीस चन्द्रोंकी वीथियां हैं ॥ ५६८ ॥ ३० । ९० । ३१५ । ५४० ।

णियपहपरिहिपमाणे पुह पुह दुसदेक्कवीससंगुणिदे । तेरससहस्ससगसयपणुवीसहिदे मुहुत्तगदिमाणं ॥

२२१
१३७२५

सेसाओ वण्णणाओ जंबूदीवम्मि जाओ चंदाणं । ताओ लवणे धादइसंडे कालोदपुक्खरद्धेसुं ॥ ५७०

। एवं चंदाणं परूवणा सम्मत्ता ।

चत्तारि होंति लवणे बारस सूरा य धादईसंडे । बादाला कालोदे बावत्तरि पुक्खरद्धम्मि ॥ ५७१

४ । १२ । ४२ । ७२ ।

णियणियरवीण अद्धं दीवसमुद्दाण एक्कभागम्मि । अवरे भागे अद्धं चरंति पंतिक्कमेणेव ॥ ५७२

एक्केक्कचारखेत्तं दोण्हं[1] दुमणीण होदि तच्चासो । पंचसया दुसहिदा दिणवइबिंबादिरित्ता य ॥ ५७३

१ । २ । ५१० | ४४/६१

एक्केक्कचारखेत्ते चउसीदिजुदसदेक्कवीहीओ । तच्चासो अडदालं जोयणया एक्कसट्ठिहिदा ॥ ५७४

१८४ | ४८/६१

अपने अपने पथोंकी परिधिके प्रमाणको पृथक् पृथक् दो सौ इक्कीससे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसमें तेरह हजार सात सौ पच्चीसका भाग देनेपर मुहूर्तकालपरिमित गतिका प्रमाण आता है ॥ ५६९ ॥ $२\frac{२}{३}\frac{२}{७}\frac{१}{२८}$ ।

लवण समुद्र, धातकीखण्ड, कालोद समुद्र और पुष्करार्द्ध द्वीपमें स्थित चन्द्रोंका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके चन्द्रोंके समान जानना चाहिये ॥ ५७० ॥

इस प्रकार चन्द्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवण समुद्रमें चार, धातकीखण्डमें बारह, कालोद समुद्रमें ब्यालीस और पुष्करार्द्धमें बहत्तर सूर्य स्थित हैं ॥ ५७१ । ४ । १२ । ४२ । ७२ ।

अपने अपने सूर्योंके आधे द्वीप-समुद्रोंके एक भागमें और आधे दूसरे भागमें पंक्तिक्रमसे संचार करते हैं ॥ ५७२ ॥

दो दो सूर्योंका एक एक चारक्षेत्र होता है । इस चार क्षेत्रका विस्तार सूर्यबिम्बसे अतिरिक्त पाँच सौ दश योजनप्रमाण है ॥ ५७३ ॥ $५१०\frac{४४}{६१}$ ।

एक एक चार क्षेत्रमें एक सौ चौरासी वीथियाँ होती हैं । इनका विस्तार इकसठसे भाजित अड़तालीस योजन होता है ॥ ५७४ ॥ $१८४; \frac{४८}{६१}$ ।

---

१ द ब मुहुत्ते. २ चारखेत्ते दो दो.

लवणादिचउक्काणं वासपमाणम्मि णियरविंदलाणं । बिंबाणि केलिसा तत्तो णियपूरणहेदुं[1] ॥ ५७५
भजिदूणं जं लद्धं तं पत्तेक्कं रवीण विच्चालं । तस्स य अद्धपमाणं जगदीपासण्णमग्गाणं ॥ ५७६
णवणउदिसहस्साणिं णवसयणवणउदिजोयणाणिं पि । तेरसमेत्तकलाओ भजिदव्वा एक्कसट्ठीए ॥ ५७७

$$९९९९९ \left| \frac{१३}{६१} \right|$$

पुत्तियमेत्तपमाणं पत्तेक्कं दिणयराण विच्चालं । लवणोदे तस्सद्धं जगदीणं णियपढममग्गाणं[2] ॥ ५७८
छावट्ठिसहस्साणिं छस्सयपण्णट्ठि जोयणाणि कला । इगिसट्ठीजुत्तसयं तेसीदीभुद्दसयं हारो ॥ ५७९

$$६६६६५ \left| \frac{१६१}{१८३} \right|$$

एदं अंतरमाणं एक्केक्करवीण धादईसंडे । लेस्सागदी तदद्धं तस्सरिसा उदधियाबाहा ॥ ५८०
अडतीससहस्सा चउणउदी जोयणाणि पंच सया । अट्ठाहत्तरि हारो बारसयसयाणि इगिसीदी ॥ ५८१

$$३८०९४ \left| \frac{५७८}{१२८१} \right|$$

एदं अंतरमाणं एक्केक्करवीण कालसलिलम्मि । लेस्सागदी तदद्धं तस्सरिसं उवहिआबाहा ॥ ५८२

लवणादिक चारोंके विस्तारप्रमाणमेंसे अपने आधे सूर्योंके बिम्बोंको घटाकर शेषमें अर्ध सूर्यसंख्याका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक सूर्योंका और इससे आधा जगती व आसन्न (प्रथम) मार्गके बीचका अन्तरालप्रमाण होता है ॥ ५७५-५७६ ॥

ल. स. वि. यो. २००००० = $\frac{१२२०००००}{६१}$; ल. स. सूर्य ४; ४ ÷ २ = २; इनका बिम्बविस्तार $\frac{९६}{६१}$; $\frac{१२२०००००}{६१} - \frac{९६}{६१} = \frac{१२१९९०००४}{६१}$; सूर्यसंख्या ४ ÷ २ = २ = $\frac{१२२}{६१}$; $\frac{१२१९९०००४}{६१} \div \frac{१२२}{६१} = ९९९९९\frac{१३}{६१}$ सूर्य-अन्तर ।सू. अ. $९९९९९\frac{१३}{६१} \div २ = ४९९९९\frac{३७}{६१}$ जगती और प्रथम मार्गका अन्तर ।

निन्यानबै हजार नौ सौ निन्यानबै योजन और इकसठसे भाजित तेरह मात्र कला इतना लवण समुद्रमें प्रत्येक सूर्योंके अन्तरालका प्रमाण है । इससे आधा जगती और निज प्रथम मार्गके बीच अन्तर है । ॥ ५७७-५७८ ॥

छ्यासठ हजार छह सौ पैसठ योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ इकसठ कला इतना धातकीखण्डमें प्रत्येक सूर्योंका अन्तराल प्रमाण है । इससे आधी किरणोंकी गति और उसके सदृश ही समुद्रका अन्तराल भी है ॥ ५७९-५८० ॥ $६६६६५\frac{१६१}{१८३}$ ।

अड़तीस हजार चौरानबै योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित पांच सौ अठत्तर भाग, यह कालोद समुद्रमें एक एक सूर्यका अन्तरालप्रमाण है । इससे आधी किरणोंकी गति और उसके ही बराबर समुद्रका अन्तर भी है ॥ ५८१-५८२ ॥ $३८०९४\frac{५७८}{१२८१}$ ।

१ द ब पुक्खरद्धेण. २ द ब °मग्गा य.

बावीससहस्साणिं बेसयबहुगिवीस जोयणा अंसा । दोण्णिसया उणदालं हारो उणवण्णपंचसया ॥ ५८३

$$२२२२१\left|\frac{२३९}{५४९}\right|$$

एदं अंतरमाणं एक्केक्करवीण पोक्खरद्धम्मि । लेस्सागदी तदद्धं तस्सरिसा उदधिणावाहा ॥ ५८४

ताओ आबाधाओ दोसुं पासेसु संठिदरवीणं । चारक्खेत्तेणहिया[1] अब्भंतरए बहिं ऊणा ॥ ५८५

जंबूपंके दोण्हं लेस्सा वच्चंति चरिममग्गादो । अब्भंतरए णभतियतियसुण्णा पंच जोयणया ॥ ५८६

५०३३०।

चरिमपहादो बाहिं लवणे दोणभदुतितियजोयणया । बच्चइ लेस्सा अंसा सयं च हारा तिसीदिअधियसया ॥

$$३३००२\left|\frac{१००}{१८३}\right|$$

पढमपहसंठियाणं लेस्सागदीण चदुअट्ठणवचउरो । अंककमे जोयणया तियतिय भागस्सेस पुहहाणिवड्ढीओ ॥

$$३३५१३\left|\frac{७}{३}\right|(?)$$

बाईस हजार दो सौ इक्कीस योजन और पांच सौ उनंचाससे भाजित दो सौ उनतालीस भाग, यह पुष्करार्द्ध द्वीपमें एक एक सूर्यका अन्तरालप्रमाण है । इससे आधी किरणोंकी गति और उसके बराबर ही समुद्रका अन्तर भी है ॥ ५८३–५८४ ॥

$$२२२२१\frac{२३९}{५४९}$$ ।

दो पार्श्वभागोंमें स्थित सूर्योंके ये अन्तर अभ्यन्तरमें चारक्षेत्रसे अधिक और बाह्यमें चार क्षेत्रसे रहित हैं ॥ ५८५ ॥

जम्बूद्वीपमें अन्तिम मार्गसे अभ्यन्तरमें दोनों चन्द्र-सूर्योंकी किरणें शून्य, तीन, तीन, शून्य और पांच अर्थात् पचास हजार तीन सौ तीस योजनप्रमाण जाती हैं ॥ ५८६ ॥

५०३३० ।

लवण समुद्रमें अन्तिम पथसे बाह्यमें दो, शून्य दो, तीन और तीन अर्थात् तेतीस हजार दो योजन और एक सौ तेरासी भागोंमेंसे सौ भागप्रमाण किरणें जाती हैं ॥ ५८७ ॥

$$३३००२\frac{१००}{१८३}$$ ।

प्रथम पथमें स्थित [सूर्य-चन्द्रोंकी किरणगति] अंककमसे चार, आठ, नौ और चार, इन अंकोंके प्रमाण अर्थात् चार हजार नौ सौ चौरासी योजन और तीन भाग अधिक है । शेष पथोंमें हानि-वृद्धि है (?) ॥ ५८८ ॥

---

१ द ब चारक्खेत्तजहिया.

लवणम्बुहिपहुदिचउक्के णियणियखेत्तेसु विणयरमयंका । वच्चंति ताण लेस्सा अण्णक्खेत्तं ण कहवा वि ॥५८९

अट्ठासट्ठिसिया लवणम्मि हुवंति भाणुवीहीओ । चउरुत्तरएक्कारससयमेत्ता धादईसंडे ॥ ५९०

३६८ । ११०४ ।

चउसट्ठी अट्ठसया तिण्णि सहस्साणि कालसलिलम्मि । चउवीसुत्तरछसया छच्च सहस्साणि पोक्खरद्धम्मि ॥

३८६४ । ६६२४ ।

णियणियपरिहिपमाणे सट्ठिमुहुत्तेहि अवहिदे लद्धं । पत्तेक्कं भाणूणं मुहुत्तगमणस्स परिमाणं ॥ ५९२

सेसाओ वण्णणाओ जंबूदीवम्मि जाओ दुमणीणं । ताओ लवणे धादइसंडे कालोदपुक्खरद्धेसुं ॥ ५९३

। सूरप्परूवणा ।

बावण्णा तिण्णिसया होंति गहाणं च लवणजलहिम्मि । छप्पण्णा अब्भहियं सहस्समेक्कं च धादईसंडे ॥

३५२ । १०५६ ।

तिण्णि सहस्सा छसयं छण्णउदी होंति कालउवहिम्मि । छत्तीसब्भहियाणिं तेसट्ठिसयाणि पुक्खरद्धम्मि ॥

३६९६ । ६३२६ ।

। एवं गहाण परूवणा सम्मत्ता ।

लवण समुद्र आदि चारमें जो सूर्य व चन्द्र हैं उनकी किरणें अपने अपने क्षेत्रोंमें ही जाती हैं, अन्य क्षेत्रमें कदापि नहीं जातीं ॥ ५८९ ॥

तीन सौ अड़सठ सूर्यवीथियां लवण समुद्रमें और ग्यारह सौ चार मात्र धातकीखण्ड द्वीपमें हैं ॥ ५९० ॥ ३६८ । ११०४ ।

तीन हजार आठ सौ चौंसठ सूर्यवीथियां कालोद समुद्रमें और छह हजार छह सौ चोबीस पुष्करार्द्ध द्वीपमें हैं ॥ ५९१ ॥ ३८६४ । ६६२४ ।

अपने अपने परिधिप्रमाणमें साठ मुहूर्तोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रत्येक सूर्योंकी मुहूर्तगतिका प्रमाण होता है ॥ ५९२ ॥

जम्बूद्वीपमें स्थित सूर्योंका जो शेष वर्णन है वही लवणसमुद्र, धातकीखण्ड, कालोद और पुष्करार्द्धमें भी समझना चाहिये ॥ ५९३ ॥

इस प्रकार सूर्यप्ररूपणा समाप्त हुई ।

तीन सौ बावन ग्रह लवण समुद्रमें और एक हजार छप्पन धातकीखण्ड द्वीपमें हैं ॥ ५९४ ॥ ३५२ । १०५६ ।

तीन हजार छह सौ छयानवे ग्रह कालोद समुद्रमें और तिरेसठ सौ छब्बीस पुष्करार्द्ध द्वीपमें हैं ॥ ५९५ ॥ ३६९६ । ६३२६ ।

इस प्रकार ग्रहोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवणम्मि बारसुत्तरसयमेत्ताणि हुवंति रिक्खाणि । छत्तीसेहिं अहिया तिण्णिसया धादईसंडे ॥ ५९६
११२ । ३३६ ।

छादत्तरिजुत्ताइं एक्करससयाणि कालसलिलम्मि । सोलुत्तरदोसहस्सा दीवदरे पोक्खरद्धम्मि ॥ ५९७
११७६ । २०१६ ।

सेसाओ वण्णणाओ जंबूदीवम्मि जाव रिक्खाणं । ताओ लवणे धादइसंडे कालोदपोक्खरद्धेसुं ॥ ५९८
। एवं णक्खत्ताण पत्ररूवणा समत्ता ।

दोण्णि चिय लक्खाणिं सत्तट्ठीसहस्स णवसयाणिं च । होंति हु लवणसमुद्दे ताराणं कोडिकोडीओ ॥ ५९९
२६७९०००००००००००००००० ।

अट्ठ चिय लक्खाणिं तिण्णि सहस्साणि सत्तसयाणिं पि । होंति हु धादइसंडे ताराणं कोडकोडीओ ॥६००
८०३७०००००००००००००००० ।

अट्ठावीसं लक्खा कोडाकोडीण बारससहस्सा । पण्णासुत्तरणवसयजुत्ता ताराणि कालोदे ॥ ६०१
२८१२९५०००००००००००००००० ।

अट्ठत्तालं लक्खा बावीससहस्ससेसयाणिं च । होंति हु पोक्खरदीवे ताराणं कोडकोडीओ ॥ ६०२
४८२२२०००००००००००००००० ।

लवण समुद्रमें एक सौ बारह नक्षत्र और धातकीखण्डमें तीन सौ छत्तीस हैं ॥ ५९६ ॥
११२ । ३३६ ।

ये नक्षत्र ग्यारह सौ छत्तर कालोद समुद्रमें और दो हजार सोलह पुष्करार्द्ध द्वीपमें हैं ॥ ५९७ ॥ ११७६ । २०१६ ॥

नक्षत्रोंका शेष वर्णन जैसा जम्बूद्वीपमें किया गया है उसी प्रकार लवण समुद्र, धातकीखण्ड द्वीप, कालोद समुद्र और पुष्करार्द्ध द्वीपमें भी समझना चाहिये ॥ ५९८ ॥

इस प्रकार नक्षत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवण समुद्रमें दो लाख सड़सठ हजार नौ सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥ ५९९ ॥
२६७९०००००००००००००००० ।

धातकीखण्डमें आठ लाख तीन हजार सात सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥ ६०० ॥
८०३७०००००००००००००००० ।

कालोद समुद्रमें अट्ठाईस लाख बारह हजार नौ सौ पचास कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥६०१॥
२८१२९५०००००००००००००००० ।

पुष्करार्द्ध द्वीपमें अड़तालीस लाख बाईस हजार दो सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥ ६०२ ॥
४८२२२०००००००००००००००० ।

सेसाणो वण्णणाओ जंबूदीवस्स वण्णणसमाओ। णवरि विसेसो संखा भण्णण्णा थिरतराणं ॥ ६०३
एक्कसयं उणदालं लवणसमुद्दम्मि थिरतराओ। दसउत्तरं सहस्सा दीवम्मि य धादईसंडे ॥ ६०४
११९। १०१०।
एक्कत्तालसहस्सा बीसुत्तरमिगिसयं च कालोदे। तेवण्णसहस्सा बेसयाणि तीसं च पुक्खरद्धम्मि ॥ ६०५
४११२०। ५३२३०।
माणुसखेत्ते ससिणो छासट्ठी होंति एक्कपासम्मि। दोपासेसुं दुगुणा तेत्तियमेत्ताओ मत्तंडा ॥ ६०६
६६। १३२।
एक्कारससहस्साणिं होंति गहा सोलसुत्तरा छसया। रिक्खा तिण्णि सहस्सा छस्सयछण्णउदिअहिरित्ता ॥ ६०७
११६१६। ३६९६।
अट्ठासीदीलक्खा चालीससहस्ससगसयाणिं पि। होंति हु माणुसखेत्ते ताराणं कोडकोडीओ ॥ ६०८
८८४०७०००७००००००००००।
पंचाणउदिसहस्सं पंचसया पंचतीसअब्भहिया। खेत्तम्मि माणुसाणं चेट्ठंते थिरतराओ ॥ ६०९
९५५३५।
सव्वे ससिणो सूरा णक्खत्ताणिं गहा य ताराणिं। णियणियपहपणिधीसुं पंतीए चरंति णभखंडे ॥ ६१०

इनका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके वर्णनके समान है। विशेषता केवल यह है कि स्थिर ताराओंकी संख्या भिन्न भिन्न है ॥ ६०३ ॥

ये स्थिर तारे लवण समुद्रमें एक सौ उनतालीस और धातकीखण्ड द्वीपमें एक हजार दश हैं ॥ ६०४ ॥ ११९। १०१०।

कालोद समुद्रमें इकतालीस हजार एक सौ बीस और पुष्करार्द्ध द्वीपमें तिरेपन हजार दो सौ तीस स्थिर तारे हैं ॥ ६०५ ॥ ४११२०। ५३२३०।

मनुष्यलोकके भीतर एक पार्श्वभागमें छयासठ और दोनों पार्श्वभागोंमें इससे दूने चन्द्र तथा इतने मात्र ही सूर्य भी हैं ॥ ६०६ ॥ ६६। १३२।

मनुष्यलोकमें ग्यारह हजार छह सौ सोलह ग्रह और तीन हजार छह सौ छ्यानवे नक्षत्र हैं ॥ ६०७ ॥ ११६१६। ३६९६।

मनुष्यक्षेत्रमें अठासी लाख चालीस हजार सात सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥ ६०८ ॥

८८४०७०००००००००००००००।

मनुष्योंके क्षेत्रमें पंचानवे हजार पांच सौ पैंतीस स्थिर तारा स्थित हैं ॥ ६०९ ॥

९५५३५।

चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह और तारा, ये सब अपने अपने पथोंकी प्रणिधियोंमें पंक्ति रूपसे नभखण्डोंमें संचार करते हैं ॥ ६१० ॥

सव्वे कुणंति मेरुं पदाहिणं जंबुदीवजोदिगणा । अद्धपमाणा धादइसंडे तह पोक्खरद्धम्मि ॥ ६११

। एवं चरगिहाणं[1] चारो समत्तो ।

माणुसुत्तरादु परदो सयंभुरमणो त्ति दीवउवहीणं । अचरसरूवठिदाणं जोइगणाणं परूवेमो ॥ ६१२

एत्तो माणुसुत्तरगिरिंदादो पण्णाससहस्सजोयणाणि गंतूण पढमवलयं[2] होदि । तत्तो परं पत्तेक्कमेक्कलक्खजोयणाणि गंतूण बिदियादिवलयाणि होंति जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । णवरि सयंभूरमण-समुद्दस्स वेदीए पण्णाससहस्सजोयणाणिमपाविय तस्मि पदेसे[3] चरिमवलयं होदि । एवं सव्ववलयाणि केत्तिया होंति त्ति उत्ते चोद्दसलक्खजोयणेहिं भजिदजगसेढी पुणो तेत्तीसवलएहि परिहीणं होदि । तस्स

ठवणा १४०००० रि २३ ।

एदाणं वलयाणं संठिदचंदाइच्चपमाणं वत्तइस्सामो— पोक्खरवरदीवद्धस्स पढमवलए संठिदचंदाइच्चा पत्तेक्कं चउदालब्भहियएक्कसयं होदि । १४४ । १४४ । पुक्खरवरणीररासिस्स

जम्बूद्वीपमें सब ज्योतिषी देवोंके समूह मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं । तथा धातकीखण्ड और पुष्करार्द्ध द्वीपमें आधे ज्योतिषी देव मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं ॥ ६११ ॥

इस प्रकार चर ग्रहोंका चार समाप्त हुआ ।

मानुषोत्तर पर्वतसे आगे स्वयंभूरमणपर्यन्त द्वीप-समुद्रोंमें अचर स्वरूपसे स्थित ज्योतिषी देवोंके समूहोंका निरूपण करते हैं ॥ ६१२ ॥

यहांसे आगे मानुषोत्तर पर्वतसे लेकर स्वयंभूरमण समुद्र तक स्थित चन्द्र-सूर्योंकी विन्यासविधिको कहते हैं । वह इस प्रकार है— मानुषोत्तर पर्वतसे पचास हजार योजन आगे जाकर प्रथम वलय है । इसके आगे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त प्रत्येक एक लाख योजन आगे जाकर द्वितीयादिक वलय हैं । विशेष इतना है कि स्वयंभूरमण समुद्रकी वेदीसे पचास हजार योजनोंको न पाकर अर्थात् स्वयंभूरमण समुद्रकी वेदीसे पचास हजार योजन इधर ही उस प्रदेशमें अन्तिम वलय है । इस प्रकार सर्व वलय कितने होते हैं, ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि जगश्रेणीमें चौदह लाख योजनोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसमेंसे तेईस कम करनेपर समस्त वलयोंका प्रमाण होता है । उसकी स्थापना ज. श्रे. ÷ १४००००० – २३ ।

इन वलयोंमें स्थित चन्द्र-सूर्योंके प्रमाणको कहते हैं— पुष्करार्द्ध द्वीपके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र व सूर्य प्रत्येक एक सौ चवालीस हैं । १४४ । १४४ ।

१ द ब विहाणं. २ द ब वलेयं. ३ द ब पदेसं.

पढमवलए संठिदचंदाइच्चा पत्तेक्कं अट्ठासीदिअब्भहियदोण्णिसयमेत्ता होदि । हेट्ठिमदीवस्स वा रयणायरस्स वा पढमवलए संठिदचंदाइच्चादो तदणंतरोवरिमदीवस्स वा णीररासिस्स वा पढमवलए संठिदचंदाइच्चा पत्तेक्कं दुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति । तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दस्स पढमवलए संठिदचंदाइच्चा अट्ठावीसलक्खेण भजिदजगसेढीओ पुणो चउरूवहिदसत्तावीसरूवेहिं अब्भहियं होइ । तच्चेदं । $\frac{\text{ज. श्रे.}}{२८०००००} \Big| \frac{२७}{४} \Big|$ पोक्खरवरदीवद्धपहुदि जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति पत्तेक्कदीवस्स वा उवहिस्स वा पढमवलयसंठिदचंदाइच्चाणं आणयणहेदु इमा सुत्तगाहा—

पोक्खरवरद्धवहिपहुदिं उवरिमदीओवहीण विक्खंभे । लक्खेहिं णवगुणिदं सगसगदीउवहिपढमवलयफलं ॥

विचयं पुण पडिवलयं पडि पत्तेक्कं चउत्तरकमेण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दं ति । दोवरिम-

पुष्करवर समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र व सूर्य प्रत्येक दो सौ अठासी मात्र है । इस प्रकार अधस्तन द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योकी अपेक्षा तदनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र और सूर्य प्रत्येक स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त दुगुणे दुगुणे होते चले गये है । उनमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते है — स्वयंभूरमण समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र और सूर्य अट्ठाईस लाखसे भाजित नौ जगश्रेणी और चार रूपोंसे भाजित सत्ताईस रूपोंसे अधिक है । वह यह है— ज. श्रे. ९ ÷ २८ ला. + $\frac{२७}{४}$ । पुष्करार्ध द्वीपसे लेकर स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त प्रत्येक द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योके लाने के लिये यह गाथासूत्र है—

पुष्करवर समुद्र आदि उपरिम द्वीप-समुद्रोंके विस्तारमें एक लाखका भाग देकर जो लब्ध आवे उसे नौसे गुणा करनेपर अपने अपने द्वीप-समुद्रोंके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योका प्रमाण आता है ॥ ६१३ ॥

उदाहरण— (१) पुष्करवर समुद्रका वि. ३२००००० यो; ३२००००० + १००००० = ३२; ३२ × ९ = २८८ पुष्करवर समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र व सूर्योकी संख्या ।

(२) स्वयम्भूरमण समुद्रका विष्कम्भ (ज. श्रे. ÷ २८ + ७'१०००) ÷ १००००० × ९ = ज. श्रे. ÷ २८ + $\frac{२७}{४}$ ।

यहांपर चय प्रत्येक वलयके हर एक स्थानमें चार उत्तर क्रमसे स्वयंभूरमण समुद्र तक

१ द ब $\frac{\text{ज. श्रे.}}{२८०००००} \Big| \frac{२७}{४} \Big|$

दीवस्स वा उवहिस्स वा दु पणजादपढमवलयट्ठाणं मोत्तूण सव्वत्थ चउक्कं उत्तरकमं वत्तव्वं। माणुसुत्तरगिरिंदादो पण्णासमहस्सजोयणाणि गंतूण पढमवलयम्मि ठिदचंदाइच्चाणं विच्चालं सत्तेतालसहस्स-णवसय-चोद्दसजोयणाणि पुणो छहत्तरिजादसयंसा तेसीदिजुदएक्कसयरूवेहिं[1] भजिदमेत्तं होदि। तं चेदं ४७९१४ $\left|\begin{matrix}१७६\\१८३\end{matrix}\right|$ बिदियवलये चंदाइच्चाणमंतरं अट्ठेतालसहस्स-छसय-छादाला जोयणाणि पुणो इगिसयतीस-जुदाणं दोण्णि सहस्सा कलाओ होदि दोण्णिसयसत्तावण्णरूवेणब्भहियदोण्णिसहस्सेण हरिदमेत्तं होदि। तं चेदं। ४८६४६ $\left|\begin{matrix}२१३०\\२२५७\end{matrix}\right|$ एवं णेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। तत्थ अंतिमवियप्पं वत्तइस्सामो— सयंभूरमणसमुद्दस्स पढमवलए एक्केक्कचंदाइच्चाणमंतरं तेत्तीसमहस्स-तिसय-इगितीस-जोयणाणि अंसा पुण पण्णारसजुदेक्कसयं हारो तेसीदिजुदएक्कसयरूवेण अब्भहियं होदि पुणो रूवस्स असंखेज्जभागेणब्भहियं होदि। तच्चेदं ३३३३१। भा $\left|\begin{matrix}११५\\१८३\end{matrix}\right|$ एवं सयंभूरमणसमुद्दस्स बिदियपहप्पहुदि-दुचरिमपहंतं विसेसाहियपरूवेण जादि। एवं सयंभूरमणसमुद्दस्स चरिमवलयम्मि चंदाइच्चाणं विच्चालं भण्णमाणे छादालसहस्स-एक्कसय बावण्णजोयणपमाणं होदि पुणो बारसाहियएक्कसयकलाओ हारो तेणउदिरूवेणब्भहियसत्तसयमेत्तं होदि। तं चेदं ४६१५२ $\left|\begin{matrix}११२\\७९३\end{matrix}\right|$

। एवं अचरजोइगणपरूवणा समत्ता।

चला गया है। अर्थात् इन वलयोंमें चयका प्रमाण सर्वत्र चार है (जैसे— पु. द्वीपके उत्तरार्द्धमें प्र. वलयमें १४४, १४८, १५२ इत्यादि)। द्विचरम द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलय स्थानको छोड़कर सर्वत्र चार चारके उत्तर क्रमसे वृद्धि कहना चाहिये (?)।

मानुषोत्तर पर्वतसे आगे पचास हजार योजन जाकर प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्यका अन्तराल सैंतालीस हजार नौ सौ चौदह योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ छयत्तर भागमात्र अधिक है। वह यह है — $४७९१४\frac{१७६}{१८३}$। द्वितीय वलयमें चन्द्र-सूर्यका अन्तर अड़तालीस हजार छह सौ छयालीस योजन और दो हजार दो सौ सत्तावनसे भाजित दो हजार एक सौ तीस कला अधिक है। वह यह है— $४८६४६\frac{२१३०}{२२५७}$। इस प्रकार स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिये। उसमेंसे अन्तिम विकल्पको कहते हैं — स्वयंभूरमण समुद्रके प्रथम वलयमें प्रत्येक चन्द्र-सूर्यका अन्तर तेतीस हजार तीन सौ इकतीस योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ पन्द्रह भाग अधिक तथा असंख्यातसे भाजित एक रूप अधिक है। वह यह है— $३३३३१\frac{११५}{१८३}$। इस प्रकार स्वयंभूरमण समुद्रके द्वितीय पथसे लेकर द्विचरम पथ पर्यन्त विशेष अधिक रूपसे होता गया है। इस प्रकार स्वयंभूरमण समुद्रके अन्तिम वलयमें चन्द्र-सूर्यके अन्तरालके कहनेपर छयालीस हजार एक सौ बावन योजनप्रमाण और सात सौ तेरानबैसे भाजित एक सौ बारह कला अधिक है। वह यह है—$४६१५२\frac{११२}{७९३}$।

इस प्रकार अचर ज्योतिर्गणकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

१ द ब तेसदसीदिरूवेहिं.

एत्तो चंदाण सपरिवाराणमाणयणविहाणं वत्तइस्सामो। तं जहा— जंबूदीवादिपंचदीवसमुद्दे[1] मुत्तूण तदियसमुद्दमादिं कादूण जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति एदासिमाणयणकिरिया ताव उच्चदे— तदियसमुद्दम्मि गच्छो बत्तीस, चउत्थदीवे गच्छो चउसट्ठी, उवरिमसमुद्दे गच्छो अट्ठावीसुत्तरसयं। एवं दुगुणकमेण गच्छा गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दं ति। संपहि एदेहि गच्छेहि पुध पुध गुणिज्जमाणरासिपरूवणा कीरदे— तदियसमुद्दे बेसदमट्ठासीदिमुवरिमदीवे तत्तो दुगुणं, एवं दुगुणदुगुणकमेण गुणिज्जमाणरासीओ गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दं पत्ताओ त्ति। संपहि अट्ठासीदिविसदेहि[2] गुणिज्जमाणरासीओ ओवट्टिय[3] लद्धेण सगसगगच्छे गुणिय अट्ठासीदिबेसदमेत्त सव्वगच्छाणं गुणिज्जमाणं कादव्वं। एवं कदे सव्वगच्छा अण्णोण्णं पेक्खिदूण चउग्गुणकमेण अवट्ठिदा जादा। संपहि चत्तारिरूवमादिं कादूण चदुरुत्तरकमेण गद-संकलणाए आणयणे कीरमाणे पुव्विल्लगच्छेहिंतो संपहियगच्छा रूऊणा होंति, दुगुणजादट्ठाणे चत्तारि-रूववड्ढीए अभावादो। एदेहि गच्छेहि गुणिज्जमाणमज्झिमधणाणि चउसट्ठिरूवमादिं कादूण दुगुण-दुगुणकमेण गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति। पुणो गच्छसमीकरणट्ठं सव्वगच्छेसु एगेगरूवपक्खेवो[4] कायव्वो। एवं कादूण चउसट्ठिरूवेहि मज्झिमधणाणिमोवट्टिय[5] लद्धेण सगसगगच्छे गुणिय सव्वगच्छाणं

यहांसे आगे सपरिवार चन्द्रोंके लानेके विधानको कहते हैं। वह इस प्रकार है— जम्बूद्वीपादिक पांच द्वीप-समुद्रोंको छोड़कर तृतीय समुद्रको आदि करके स्वयंभूरमण समुद्र तक इनके लानेकी प्रक्रियाको कहते हैं— तृतीय समुद्रमें गच्छ बत्तीस, चतुर्थ द्वीपमें गच्छ चौंसठ और इससे आगेके समुद्रमें गच्छ एक सौ अट्ठाईस, इस प्रकार स्वयंभूरमण समुद्र तक गच्छ दूने दूने क्रमसे चले जाते हैं। अब इन गच्छोंमें पृथक् पृथक् गुण्यमान राशियोंकी प्ररूपणा की जाती है। इनमेंसे तृतीय समुद्रमें दो सौ अठासी और आगेके द्वीपमें इससे दुगुणी गुण्यमान राशि है, इस प्रकार स्वयंभूरमण समुद्र तक गुण्यमान राशियां दुगुणे दुगुणे क्रमसे चली जाती है। अब दो सौ अठासीसे गुण्यमान राशियोंका अपवर्तन करके लब्ध राशिसे अपने अपने गच्छोंको गुणा करके सब गच्छोंकी दो सौ अठासी ही गुण्यमान राशि करना चाहिये। इस प्रकार करनेपर सब गच्छ परस्परकी अपेक्षा चौगुणे क्रमसे अवस्थित होजाते हैं। इस समय चार को आदि करके चार चार उत्तर क्रमसे गत संकलनाके लाते समय पूर्वोक्त गच्छोंसे सांप्रतिक गच्छ एक कम होते है, क्योंकि दुगुणे हुए स्थानमें चार रूपोंकी वृद्धिका अभाव है। इन गच्छोंसे गुण्यमान मध्यम धन चौंसठ रूपको आदि करके स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त दुगुणे-दुगुणे क्रमसे होते गये हैं। पुनः गच्छोंके समीकरणके लिये सब गच्छोंमें एक एक रूपका प्रक्षेप करना चाहिये। ऐसा करनेके पश्चात् मध्यम धनोंका चौंसठसे अपवर्तन करनेपर जो लब्ध आवे उससे अपने अपने गच्छोंको गुणा करके सब गच्छोंकी गुण्यमान राशिके रूपमें चौंसठ रूपोंको

१ द ब °समुद्दं. २ द ब बीसदे. ३ द ब °दिवड्ढिय. ४ द ब चदुत्तर°. ५ द ब °पक्खेव. ६ द ब °भणाणीमोवड्ढीय.

चउसट्ठिरूवाणिं गुणिज्जमाणत्तणेण ठवेदव्वाणि । एवं कदे रिणरासिस्स पमाणं उच्चदे— एगरूवमादिं कादूण गच्छं पडि दुगुण-दुगुणकमेण जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति गदरिणरासी होदि । संपहि एवं ठिदसंकलणाणमाणयणं उच्चदि— छरूवाहियजंबूदीवच्छेदणएहि परिहीणरज्जुच्छेदणाओ गच्छं काऊण जदि संकलणा आणिज्जदि तो जोदिसियजीवरासी ण उप्पज्जदि, जगपदरस्स बेछप्पण्णंगुल-[सद-] वग्गभाग-हारस्सुवलद्धीदो । तेण रज्जुच्छेदणासु अण्णेसिं पि तप्पाओग्गाणं संखेज्जरूवाणं हाणिं काऊण गच्छा ठवेदव्वा । एवं कदे तदियसमुद्दो आदी ण होदि त्ति णासंकणिज्जं, सो चेव आदी होदि, सयंभूरमणसमुद्दस्स परभाग-समुप्पण्णरज्जुच्छेदणयसलागाणमवणयणकरणादो । सयंभूरमणसमुद्दस्स परदो रज्जुच्छेदणया अत्थि त्ति कुदो णव्वदे । बेछप्पण्णंगुलसदवग्गसुत्तादो । ' जेत्तियाणि दीव-सायररूवाणि जंबूदीवच्छेदणाणि छरूवाहियाणि तेत्तियाणि रज्जुच्छेदणाणि' त्ति परियम्मेण एदं वक्खाणं किं ण विरुज्झदे । ण, एदेण सह विरुज्झदि, किंतु सुत्तेण सह ण विरुज्झदि । तेणेदस्स वक्खाणस्स गहणं कायव्वं, ण परियम्मसुत्तस्स; सुत्तविरुद्धत्तादो । ण सुत्तविरुद्धं वक्खाणं होदि, अदिप्पसंगादो । तत्थ जोइसिया णत्थि त्ति कुदो णव्वदे । एदम्हादो चेव

रखना चाहिये । ऐसा करनेपर ऋण राशिके प्रमाणको कहते हैं— एक रूपको आदि करके गच्छके प्रति (प्रत्येक गच्छमें) दूने दूने क्रमसे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त ऋण राशि गई है । अब समय इस प्रकारसे स्थित संकलनोंके लानेको कहते हैं— छह रूपोंसे अधिक जम्बू-द्वीपके अर्धच्छेदोंसे हीन राजुके अर्धच्छेदोंको गच्छ करके यदि संकलनको लाया जाय तो ज्योतिषी जीवराशि उत्पन्न नहीं होती है, क्योंकि जगप्रतरका दो सौ छप्पन अंगुलके वर्गप्रमाण भागहार नहीं बनता है । अत एव राजुके अर्धच्छेदोंमेंसे उसके योग्य अन्य भी संख्यात रूपोंकी हानि करके गच्छ स्थापित करना चाहिये । ऐसा करनेपर तृतीय समुद्र आदि नहीं होता है इस प्रकारकी आशंका भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि, वह तृतीय समुद्र ही आदि होता है । इसका कारण स्वयंभूरमण समुद्रके परभागमें उत्पन्न राजुकी अर्धच्छेदशलाकाओंका अपनयन अर्थात् कम करना है । स्वयंभूरमण समुद्रके परभागमें राजुके अर्धच्छेद हैं यह कहांसे जाना जाता है ? दो सौ छप्पन अंगुलके वर्गप्रमाण भागहारके निरूपक सूत्रसे । ' जितनी द्वीप-सागरोंकी संख्या और जितने जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद हैं, छह रूपोंसे अधिक उतने ही राजुके अर्धच्छेद हैं ', इस प्रकारके परिकर्मके साथ यह व्याख्यान क्यों न विरोधको प्राप्त होगा ? इस प्रश्नका उत्तर देते हैं कि यह व्याख्यान इस परिकर्मसे विरोधको प्राप्त होगा किन्तु सूत्रके साथ विरोधको प्राप्त नहीं होगा । इसलिये इस व्याख्यानका ग्रहण करना चाहिये, न कि परिकर्मसूत्रका; क्योंकि वह सूत्रके विरुद्ध है और सूत्रविरुद्ध व्याख्यान अतिप्रसंग होनेसे होता नहीं है । वहां ज्योतिषी नहीं हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ? इसी सूत्रसे । यह

१ द ब क °सयरे आदिय ण. २ द ब क बदछप्पण्णगुलसदव्वग्ग°

सुत्तादो । एत्थ तप्पाओग्गसंखेज्जरूवाहियजंबूदीवछेदणयसहिददीव-समुद्दरूवमेत्तरज्जुच्छेदणयपमाणपरिक्खाविही[1] ण अण्णाइरियउवदेसपरंपराणुसारिणी[2], केवलं तु तिलोयपण्णत्तिसुत्ताणुसारिणी[3], जोदिसियदेवभागहारपदुप्पाइयसुत्तावलंबिजुत्तिबलेण पयदगच्छसाधणट्ठमेसा परूवणा परूविदा। तदो ण एत्थ इदमित्थमेवेत्ति[4] एयंतपरिग्गहेण[5] असग्गाहो कायव्वो, परमगुरुपरंपरागउवएसस्स जुत्तिबलेण विहडावेदुमसक्कियत्तादो, अदिंदिएसु पदत्थेसु छदुमत्थवियप्पाणमविसंवादणियमाभावादो। तम्हा[6] पुव्वाइरियवक्खाणपरिच्चाएण[7] एसा चि दिसा[8] हेदुवादाणुसारिविउप्पण्णसिस्साणुग्गहण-अवुप्पण्णजणउप्पायणट्ठं च दरिसेदव्वा । तदो ण एत्थ संपदायविरोधो[9] कायव्वो त्ति ।

एदेण विहाणेण परूविदगच्छं विरलिय रूवं पडि चत्तारि रूवाणि दादूण अण्णोण्णभत्थे कदे[10] किंचिया जादा इदि उत्ते संखेज्जरूवगुणिदजोयणलक्खस्स[11] वग्गं पुणो सत्तरूवसदीए गुणिय चउसट्ठिरूववग्गेहि पुणो वि गुणिय जगपदरे भागे हिदे तत्थ लद्धमेत्तं होदि । पुणो एदं दुट्ठाणे

तत्प्रायोग्य असंख्यात रूपाधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदोंसे सहित द्वीप–समुद्रसंख्या मात्र राजुके अर्धच्छेदोंके प्रमाणकी परीक्षाविधि अन्य आचार्योंके उपदेशकी परंपराका अनुसरण करनेवाली नहीं है, यह तो केवल त्रिलोकप्रज्ञप्तिके सूत्रका अनुसरण करनेवाली है । ज्योतिषी देवोंके भागहारका प्रत्युत्पादन करनेवाले सूत्रका आलम्बन करनेवाली युक्तिके बलसे प्रकृत गच्छको सिद्ध करनेके लिये यह प्ररूपणा प्ररूपित की गयी है । अतएव यहां 'यह ऐसा ही है' इस प्रकारके एकान्तको ग्रहण करके कदाग्रह नहीं करना चाहिये, क्योंकि परमगुरुओंकी परम्परासे आये हुए उपदेशको इस प्रकार युक्तिके बलसे विघटित नहीं किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त अतीन्द्रिय पदार्थोंके विषयमें अल्पज्ञोंके द्वारा किये गये विकल्पोंके विरोध न होनेका कोई नियम भी नहीं है । इसलिये पूर्वाचार्योंके व्याख्यानका परित्याग न कर हेतुवादका अनुसरण करनेवाले व्युत्पन्न शिष्योंके अनुग्रहण और अव्युत्पन्न जनोंके व्युत्पादनके लिये इस दिशाका दिखलाना योग्य ही है, अत एव यहां संप्रदाय विरोधकी भी आशंका नहीं करना चाहिये ।

इस उपर्युक्त विधानके अनुसार पूर्वोक्त गच्छका विरलन कर एक एक रूपके प्रति चार चार रूपोंको देकर परस्पर गुणा करनेपर कितने हुए इस प्रकार पूछनेपर एक लाख योजनके वर्गको संख्यात रूपोंसे गुणित करनेपर पुनः सात सौ रूपों (?) से गुणा करके पुनरपि चौंसठ रूपोंके वर्गसे गुणा करके जगप्रतरमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे तत्प्रमाण

१ द ब °दीवसोदणय°. २ द ब °वीही. ३ द ब अण्णाइरियाउवदेसपरंपराणुसारिणे. ४ द ब सुत्ताणुसारि. ५ द ब इदमेत्थमेवेति. ६ द ब परिग्गहो ण. ७ द ब विहदावेदु°. ८ द ब तहा. ९ द ब वक्खाणपरिच्चाएण. १० विधीसा. ११ द ब संपदाए विरोधो. १२ द ब अण्णोण्णं मंडेक्कदे. १३ द ब गुणिदे ओवण.

रचिय एक्करासिं बेसदअट्ठासीदिरूवेहिं गुणिदे सव्वआदिधणपमाणं होदि । अवररासिं चउसट्ठिरूवेहिं गुणिदे सव्वपचयधणं होदि । एदे दो रासीओ मेलिय[1] रिणरासिसवणिय गुणगारे-भागहाररूवाणिअवट्ठविय भारभूदसंखेज्जरूवगुणिदजोयणलक्खवग्गं पदरंगुलकदे संखेज्जरूवेहिं गुणिदपण्णट्ठिसहस्स-पंचसय-छत्तीस-रूवमेत्तपदरंगुलेहि जगपदरमवहरिदमेत्तं सव्वजोइसियबिंबपमाणं होदि । तं चेदं । ४।६५५३६।६५५३६।। पुणो एक्कम्मि बिंबम्मि तप्पाउग्गसंखेज्जजीवा अत्थि त्ति तं संखेज्जरूवेहि गुणिदेसिं सव्वजोइसिय-जीवरासिपरिमाणं होदि । तं चेदं १६५५३६।।

चंदस्स सदसहस्सं सहस्स रविणो सदं च सुक्कस्स । वासाधियेहि पल्लं तं पुण्णं थिसणणामस्स[2] ॥ ६१४

सेसाणं तु गहाणं पल्लद्धं आउगं मुणेदव्वं । ताराणं तु जहण्णं पादद्धं पादमुक्कस्सं ॥ ६१५

प १ व १००००० । प १ व १००० । प १ व १०० । प १ | प $\frac{१}{२}$ | प $\frac{१}{८}$ | प $\frac{१}{४}$ |

। आऊ समत्तं ।

होते हैं । पुनः इसे दो स्थानोंमें रचकर (रखकर) एक राशिको दो सौ अठासीसे गुणा करनेपर सब आदिधन होता है; और इतर राशिको चौंसठ रूपोंसे गुणा करनेपर सर्व प्रचय धनका प्रमाण होता है । इन दो राशियोंको मिलाकर ऋणराशिको कम करते हुए गुणकार एवं भागहार रूपोंको अपवर्तित करके भारभूत (?) संख्यात रूपोंसे गुणित एक लाख योजन-के वर्गके प्रतरांगुल करनेपर संख्यात रूपोंसे गुणित पैंसठ हजार पांचसौ छत्तीस रूपमात्र प्रतरांगुलोंसे भाजित जगप्रतरप्रमाण सब ज्योतिषी बिम्बोंका प्रमाण होता है । वह यह है (देखो मूलमें) । पुनः एक बिम्बमें तत्प्रायोग्य संख्यात जीव विद्यमान रहते हैं, इसलिये उसे (बिम्बप्रमाण) संख्यात रूपोंसे गुणा करनेपर सर्व ज्योतिषी जीवराशिका प्रमाण होता है । वह यह है (देखो मूलमें) ।

चन्द्रकी उत्कृष्ट आयु एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य, सूर्यकी एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य, शुक्रकी सौ वर्ष अधिक एक पल्य; और बृहस्पतिकी पूर्ण पल्यप्रमाण है । शेष ग्रहोंकी उत्कृष्ट आयु आध पल्यमात्र जानना चाहिये । ताराओंकी जघन्य आयु पादार्ध अर्थात् पल्यके आठवें भागमात्र और उत्कृष्ट पल्यके चतुर्थ भागप्रमाण है ॥ ६१४–६१५ ॥

चन्द्र. उ. आयु पल्य १ वर्ष १००००० । सूर्य प. १ व १००० । शुक्र प. १. व. १०० । बृह. प. १ । शेष ग्रह प. $\frac{१}{२}$ । तारा ज. प. $\frac{१}{८}$ और उ. $\frac{१}{४}$ ।

इस प्रकार आयुका कथन समाप्त हुआ ।

१ ब द मेलि. २ द ब गुणहार°. ३ द ते पुट्ठवीरिसणामस्स, ब ते पुट्ठवरिसणामस्स.
४ ब द प १ ल १०००००० प । सा १००० प १ । १०० प १ | $\frac{१}{२}$ | प $\frac{१}{४}$ | प $\frac{१}{८}$ |

आहारो उस्सासो उच्छेहो ओहिणाणसत्तीओ । जीवाणं उप्पत्तीमरणाइं एक्कसमयम्मि ॥ ६१६
आउबंधणभावं दंसणगहणस्स कारणं विविहं । गुणठाणादिपवण्णण भावणलोए व वत्तव्वं ॥ ६१७
णवरि य जोइसियाणं उच्छेहो सत्तदंडपरिमाणं । ओही असंखगुणिदं सेसाओ होंति जहजोग्गं ॥ ६१८
इंदसदणमिदपदलणं अणंतसुहणाणविरियदंसणयं । भव्वकुमुदेक्कचंदं विमलजिणिंदं पणमिदूणं ॥ ६१९

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए जोइसियलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम
सत्तमो महाधियारो सम्मत्तो ॥ ७ ॥

आहार, उच्छ्वास, उत्सेध, अवधिज्ञान, शक्ति, एक समयमें जीवोंकी उत्पत्ति व मरण, आयुके बन्धक भाव, सम्यग्दर्शन ग्रहणके विविध कारण और गुणस्थानादिका वर्णन भावनलोकके समान कहना चाहिये ॥ ६१६–६१७ ॥

विशेष यह कि ज्योतिषियोंकी उंचाई सात धनुषप्रमाण और अवधिज्ञानका विषय असंख्यातगुणा है । शेष आहारादिक यथायोग्य होते हैं ॥ ६१८ ॥

जिनके चरणोंमें सैकड़ों इन्द्रोंने नमस्कार किया है और जो अनन्त सुख, ज्ञान, वीर्य एवं दर्शनसे संयुक्त तथा भव्य जनरूपी कुमुदोंको विकसित करनेके लिये अद्वितीय चन्द्रस्वरूप है ऐसे विमलनाथ जिनेंद्रको मैं नमस्कार करता हूं ॥ ६१९ ॥

इस प्रकार आचार्यपरंपरासे चली आई त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें ज्योतिर्लोक-
स्वरूपनिरूपणप्रज्ञप्ती नामक सातवां महाधिकार समाप्त हुआ ।

[अट्ठमो महाहियारो]

कम्मकलंकविमुक्कं केवलणाणेण दिट्ठपयलट्ठं । णमिऊण अणंतजिणं भणामि सुरलोयपण्णत्तिं ॥ १

सुरलोकणिवासखिदिं विण्णासो भेदणामसीमाओ । संखा इंदविभूदी आऊ उप्पत्तिमरणअंतरियं ॥ २

आहारो उस्सासो उच्छेहो तह य देवलोयम्मि । आउगबंधणभावो देवलोयंतियाणं तहा ॥ ३

गुणठाणादिसरूवं दंसणगहणस्स कारणं विविहं । आगमणमोहिणाणं सुराण[1] संखं च सत्तीओ ॥ ४

जोणी इदि इगिवीसं अहियारा विमलबोहजणणीए । जिणमुहकमलविणिग्गयसुरजगपण्णत्तिणामाए ॥ ५

उत्तरकुरुमणुवाणं एक्केणूणेण[2] तह य बालेण । पणवीसुत्तरचउसयकोदंडेहिं विहीणेणं ॥ ६

इगिसट्ठीअहिएणं लक्खेणं जोयणेण ऊणाओ । रज्जूओ सत्त गयणे उड्ढुड्ढं[3] णाकपडलाणिं ॥ ७

७ रिण १०००६१ रिण दंड ४२५ रि बा १ ।

। णिवासखेत्तं सम्मत्तं ।

कणयद्दिचूलिउवरिं उत्तरकुरुमणुवणुक्कबालस्स । परिमाणेणंतरिदो चेट्ठेदि हु इंदओ पढमो ॥ ८

जो कर्मरूपी कलंकसे रहित है और जिन्होंने केवलज्ञानके द्वारा सम्पूर्ण पदार्थोंको देख लिया है ऐसे अनन्तनाथ जिनको नमस्कार करके मैं सुरलोकप्रज्ञप्तिको कहता हूं ॥ १ ॥

सुरलोकनिवासक्षेत्र[1], विन्यास[2], भेद[3], नाम[4], सीमा[5], संख्या[6], इन्द्रविभूति[7], आयु[8], उत्पत्ति व मरणका अन्तर, आहार[9], उच्छ्वास[10], उत्सेध[11], देवलोकसम्बन्धी आयुके बन्धक भाव[12], लौकान्तिक देवोंका स्वरूप[13], गुणस्थानादिकका स्वरूप[14], दर्शनग्रहणके विविध कारण[15], आगमन[16], अवधिज्ञान[17], देवोंकी संख्या[18], शक्ति[19] और योनि[20], इस प्रकार निर्मल बोधको उत्पन्न करनेवाले जिन भगवान्‌के मुखसे निकले हुए सुरलोकप्रज्ञप्ति नामक महाधिकारमें ये इक्कीस अधिकार हैं ॥ २–५ ॥

उत्तरकुरुमें स्थित मनुष्योंके एक बाल, चार सौ पच्चीस धनुष और एक लाख इकसठ योजनोंसे रहित सात राजु प्रमाण आकाशमें ऊर्ध्व ऊर्ध्व (ऊपर ऊपर) स्वर्गपटल स्थित हैं ॥६–७॥

राजु ७ – यो. १०००६१ दण्ड ४२५ बाल १.

निवासक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ।

कनकाद्रि अर्थात् मेरुकी चूलिकाके ऊपर उत्तरकुरुक्षेत्रवर्ती मनुष्यके एक बाल मात्रके अन्तरसे प्रथम इन्द्रक स्थित है ॥ ८ ॥

१ द ब य सुराउ. २ द एक्कणूणेण, ब एक्कं णूणं. ३ द ब रयणे दंडुइं

लोयसिहरादु हेट्ठा चउसयपणवीस चावमाणाणिं । इगिवीसजोयणाणिं गंतूणं इंदओ चरिमो ॥९

यो २१ दंडा ४२५ ।

सेढी य पुप्फकण्णो एदाण इंदयाण विच्चाले । सव्वे अणादिणिहणा रयणमया इंदया होंति ॥ १०

एक्केक्कइंदयस्स य विच्चालमसंखजोयणाण समं[1] । एदाणं णामाणिं वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ ११

उडुविमलचंदणामा वग्गू वीरारुणा य णंदणया । णलिणं कंचणरुहिरं चंचं मरुदं च रिद्धिसयं[2] ॥ १२

१३ ।

वेरुलियरुचककचिरंकफलिहत्तवणीयमेघअब्भाइं । हारिद्दपउममालो लोहिदवज्जाभिहाणेणं ॥ १३

१२ ।

णंदावत्तपहंकरपिट्ठगगजमित्तपह य अंजणए[3] । वणमालणागगरुडा लंगलबलभद्दचक्करिट्ठाणिं ॥ १४

१४ ।

सुरसमिदीबम्हाइं बम्हुत्तरबम्हहिदयलंतवया । महसुक्कसहस्सारा आणदपाणदयपुप्फकया ॥ १५

१० ।

सायंकरारणच्चुदसुदंसणामोघसुप्पबुद्धा य । जसहरसुभद्दसुविसालसुमणसा तह य सोमणसो ॥ १६

११ ।

लोकशिखरके नीचे चार सौ पच्चीस धनुष और इक्कीस योजनमात्र जाकर अन्तिम इन्द्रक स्थित है ॥ ९ ॥ यो. २१ दण्ड ४२५ ।

शेष इकसठ इन्द्रक इन दोनों इन्द्रकोंके बीचमें हैं । ये सब रत्नमय इन्द्रक विमान अनादि-निधन हैं ॥ १० ॥

एक एक इन्द्रकका अन्तराल असंख्यात योजनप्रमाण है । अब इनके नामोंको अनुक्रमसे कहते हैं ॥ ११ ॥

ऋतु[1], विमल[2], चन्द्र[3], वल्गु[4], वीर[5], अरुण[6], नन्दन[7], नलिन[8], कंचन[9], रुधिर[10] (रोहित), चंचत्[11], मरुत्[12], ऋद्धीश[13], वैडूर्य[14], रुचक[15], रुचिर[16], अंक[17], स्फटिक[18], तपनीय[19], मेघ[20], अभ्र[21], हारिद्र[22], पद्ममाल[23], लोहित[24], वज्र नामक[25], नन्द्यावर्त[26], प्रभंकर[27], पृष्ठक[28], गज[29], मित्र[30], प्रभ[31], अंजन[32], वनमाल[33], नाग[34], गरुड़[35], लांगल[36], बलभद्र[37], चक्र[38], अरिष्ट[39], सुरसमिति[40], ब्रह्म[41], ब्रह्मोत्तर[42], ब्रह्महृदय लांतव[43], महाशुक्र[44], सहस्रार[45], आनत[46], प्राणत[47], पुष्पक[48], शातंकर[49] (शातक), आरण[50], अच्युत[51], सुदर्शन[52], अमोघ[53], सुप्रबुद्ध[54], यशोधर[55], सुभद्र[56], सुविशाल[57], सुमनस[58], सौमनस[59], प्रीतिंकर[60],

---

१ द ब २१ रूण दंडा. २ द ब विच्चालं संखजोयणाण समा. ३ द ब चंदं मरुदं चंदिदसयं. ४ द ब अंजणमे. ५ द ब लंगलमद्द.

पीदिंकरमाइच्चं चरिमो सव्वट्ठसिद्धिणामो त्ति । तेसट्ठी समवट्टा णाणावररयणणियरमया ॥ १७

३ ।[1]

पंचत्तालं लक्खं जोयणया इंदओ उडू पढमो[2] । एक्कं जोयणलक्खं चरिमो सव्वट्ठसिद्धी य ॥ १८

४५००००० । १००००० ।

पढमे चरिमं सोधिय रूऊणियइंदयप्पमाणेणं । भजिदूणं जं लद्धं ताओ इह हाणिवड्ढीओ ॥ १९

ते रासि ६२ । ४४००००० । १ ।

सत्तरिसहस्सणवसयछगसट्ठीजोयणाणि तेवीसं । अंसा इगिवीसहिदा हाणी पढमादु चरिमदो[3] वड्ढी ॥२०

७०९६७ | २३ / ३१ |

चउदालल्लक्खजोयण उणतीससहस्सयाणि बत्तीसं । इगिवीसहिदा अट्ठ य कलाओ विमलिंदयस्स वित्थारो ।

४४२९०३२ | ८ / ३१ |

आदित्य[1] और अन्तिम सर्वार्थसिद्धि नामक[2], इस प्रकार ये समान गोल और नाना उत्तम रत्नोंके समूहोंसे रचे गये तिरेसठ इन्द्रक विमान है ॥ १२–१७ ॥

इनमेंसे प्रथम ऋतु इन्द्रक विमान पैंतालीस लाख योजन और अन्तिम सर्वार्थसिद्धि इन्द्रक एक लाख योजनमात्र विस्तारसे सहित है ॥ १८ ॥ ४५००००० । १००००० ।

प्रथम इन्द्रकके विस्तारमेंसे अन्तिम इन्द्रकके विस्तारको घटाकर शेषमें एक कम इन्द्रक-प्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना यहां हानि-वृद्धिका प्रमाण समझना चाहिये ॥ १९ ॥

प्र. इं. ४५००००० , अन्तिम इं. १००००० ; ४५००००० – १००००० = ४४००००० ; ४४००००० ÷ (६२ – १) = ७०९६७ $\frac{२३}{३१}$ हानि-वृद्धि ।

सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और एक योजनके इकतीस भागोंमेंसे तेईस भाग अधिक प्रथम इन्द्रककी अपेक्षा उत्तरोत्तर हानि और इतनी ही अन्तिम इन्द्रककी अपेक्षा उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई है ॥ २० ॥

चवालीस लाख उनतीस हजार बत्तीस योजन और इकतीससे भाजित आठ कला अधिक विमल इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण कहा गया है ॥ २१ ॥ ४४२९०३२ $\frac{८}{३१}$ ।

१ द ब ६२. २ ब पढमे. ३ द ब चरिमउदो.

तेदालसक्खजोयणअट्ठावण्णासहस्सचउसट्ठी । सोलसकलाओ कहिदा चंदिंदयमंदपरिमाणं ॥ २२

४३५८०६४ | १६ / ३१ |

बादालसक्खजोयणसगसीदिसहस्सयाणि छण्णउदी । चउवीसकला रुंदो वग्गुविमाणस्स णादव्वं ॥ २३

४२८७०९६ | २४ / ३१ |

बादालसक्खसोलससहस्सएक्कसयजोयणाणिं च । उणतीसब्भहियाणिं एक्ककला वीरइंदए रुंदो ॥ २४

४२१६१२९ | १ / ३१ |

एक्कत्तालं लक्खं पणदालसहस्स जोयणेक्कसया । इगिसट्ठी अब्भहिया णव अंसा अरुणइंदम्मि ॥ २५

४१४५१६१ | ९ / ३१ |

चउहत्तरिं सहस्सा तेणवदीसमधियं च एक्कसयं । चालं जोयणलक्खा सत्तरस कलाओ णंदणे रामो ॥

४०७४१९३ | १७ / ३१ |

चालं जोयणलक्खं तिसहस्सा दो सयाणि पणुवीसं । पणवीसकलाए साधियेवित्थारो णलिणइंदस्स ॥

४००३२२५ | २५ / ३१ |

तेतालीस लाख अट्ठावन हजार चौंसठ योजन और सोलह कला अधिक चन्द्र इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण कहा गया है ॥ २२ ॥ ४३५८०६४$\frac{१६}{३१}$ ।

ब्यालीस लाख सतासी हजार छयानवे योजन और चौबीस कला अधिक वल्गु विमानका विस्तार जानना चाहिये ॥ २३ ॥ ४२८७०९६$\frac{२४}{३१}$ ।

वीर इन्द्रकका विस्तार ब्यालीस लाख सोलह हजार एक सौ उनतीस योजन और एक कला अधिक है ॥ २४ ॥ ४२१६१२९$\frac{१}{३१}$ ।

अरुण इन्द्रकका विस्तार इकतालीस लाख पैंतालीस हजार एक सौ इकसठ योजन और नौ भाग अधिक है ॥ २५ ॥ ४१४५१६१$\frac{९}{३१}$ ।

नन्दन इन्द्रकका विस्तार चालीस लाख चौहत्तर हजार एक सौ तेरानवे योजन और सत्तरह कला अधिक है ॥ २६ ॥ ४०७४१९३$\frac{१७}{३१}$ ।

नलिन इन्द्रकका विस्तार चालीस लाख तीन हजार दो सौ पच्चीस योजन और पच्चीस कला अधिक जानना चाहिये ॥ २७ ॥ ४००३२२५$\frac{२५}{३१}$ ।

१ द ब वण्ण. २ द ब °कलाए साधि. ३ ब वित्थारे. ४ द य णलिणं इंदस्स विण्णेवो.

उणताललक्खजोयणबत्तीससहस्सदोसयाणिं पि । अट्ठावण्णा कुक्कड कंचणणामस्स वित्थारो ॥ २८

$$३९३२२५८\frac{२}{३१}$$

अडतीसलक्खजोयण इगिसट्ठिसहस्सदोसयाणिं पि । णउदिजुदाणि दसंसा रोहिदणामस्स वित्थारो ॥ २९

$$३८६१२९०\frac{१०}{३१}$$

सगतीसलक्खजोयण णउदिसहस्साणि तिसयबावीसा । अट्ठारसा कलाओ चंचाणामस्स विक्खंभो ॥ ३०

$$३७९०३२२\frac{१८}{३१}$$

सत्तत्तीसं लक्खा उणवीससहस्सतिसयजोयणया । चउवण्णा छव्वीसा कलाओ मरुदस्स परिसंखा ॥ ३१

$$३७१९३५४\frac{२६}{३१}$$

छत्तीसं लक्खाणिं अडदालसहस्सतिसयजोयणया । सगसीदी तिण्णिकला रिद्धिसकंदस्स[1] परिसंखा ॥

$$३६४८३८७\frac{३}{३१}$$

सत्तत्तरिं सहस्सा चउस्सया पंचवीसलक्खाणिं । उणवीसजोयणाणिं एक्करसकलाओ वेरुलियइंदे[2] ॥ ३३

$$३५७७४१९\frac{११}{३१}$$

कंचन नामक इन्द्रकका विस्तार उनतालीस लाख बत्तीस हजार दो सौ अट्ठावन योजन और दो कला मात्र है ॥ २८ ॥ ३९३२२५८$\frac{२}{३१}$ ।

रोहित नामक इन्द्रकका विस्तार अड़तीस लाख इकसठ हजार दो सौ नब्बे योजन और दश भाग अधिक है ॥ २९ ॥ ३८६१२९०$\frac{१०}{३१}$ ।

चंचत् नामक इन्द्रकका विस्तार सैंतीस लाख नब्बे हजार तीन सौ बाईस योजन और अठारह कला अधिक है ॥ ३० ॥ ३७९०३२२$\frac{१८}{३१}$ ।

मरुत् इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण सैंतीस लाख उन्नीस हजार तीन सौ चौवन योजन और छब्बीस कला अधिक है ॥ ३१ ॥ ३७१९३५४$\frac{२६}{३१}$ ।

ऋद्धीश इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण छत्तीस लाख अड़तालीस हजार तीन सौ सतासी योजन और तीन कला अधिक है ॥ ३२ ॥ ३६४८३८७$\frac{३}{३१}$ ।

वैडूर्य इन्द्रकका विस्तार पैंतीस लाख सतत्तर हजार चार सौ उन्नीस योजन और ग्यारह कला अधिक है ॥ ३३ ॥ ३५७७४१९$\frac{११}{३१}$ ।

---

१ द ब चंदा. २ द ब दिंदसकंदस्स.

पंचत्तीसं लक्खा छस्सहस्सा चउसयाणि इगिवण्णा। जोयणया उणवीसा कलाओ रुजगस्स वित्थारो ॥ १४

$$३५०६४५१\left|\begin{matrix}१९\\३१\end{matrix}\right|$$

चउतीसं लक्खाणिं पणतीससहस्सचउसयाणिं पि। तेसीदि जोयणाणिं सगवीसकलाओ रुचिरवित्थारो ॥

$$३४३५४८३\left|\begin{matrix}२७\\३१\end{matrix}\right|$$

तेत्तीसं लक्खाणिं चउसट्ठिसहस्सपणसयाणिं पि। सोलस य जोयणाणिं चत्तारि कलाओ अंकवित्थारो ॥ १६

$$३३६४५१६\left|\begin{matrix}४\\३१\end{matrix}\right|$$

बत्तीस चिय लक्खा तेणउदिसहस्सपणसयाणिं पि। अडदालजोयणाणिं बारसभागा फलिहरुंदो ॥ १७

$$३२९३५४८\left|\begin{matrix}१२\\३१\end{matrix}\right|$$

बत्तीसलक्खजोयण बावीससहस्सपणसया सीदी। अंसा य बीसमेत्ता रुंदो तवणिज्जणामस्स ॥ १८

$$३२२२५८०\left|\begin{matrix}२०\\३१\end{matrix}\right|$$

इगितीसलक्खजोयण इगिवण्णसहस्सछसयबारं च। अंसा अट्ठावीसं[1] वित्थारो मेघणामस्स ॥ १९

$$३१५१६१२\left|\begin{matrix}२८\\३१\end{matrix}\right|$$

रुचक इन्द्रकका विस्तार पैंतीस लाख छह हजार चार सौ इक्यावन योजन और उन्नीस कला अधिक है ॥ १४ ॥ ३५०६४५१$\frac{१९}{३१}$।

रुचिर इन्द्रकका विस्तार चौंतीस लाख पैंतीस हजार चार सौ तेरासी योजन और सत्ताईस कला अधिक है ॥ १५ ॥ ३४३५४८३$\frac{२७}{३१}$।

अंक इन्द्रकका विस्तार तेंतीस लाख चौंसठ हजार पांच सौ सोलह योजन और चार कला अधिक है ॥ १६ ॥ ३३६४५१६$\frac{४}{३१}$।

स्फटिक इन्द्रकका विस्तार बत्तीस लाख तेरानवै हजार पांच सौ अड़तालीस योजन और बारह भाग अधिक है ॥ १७ ॥ ३२९३५४८$\frac{१२}{३१}$।

तपनीय नामक इन्द्रकका विस्तार बत्तीस लाख बाईस हजार पांच सौ अस्सी योजन और बीस भाग मात्र अधिक है ॥ १८ ॥ ३२२२५८०$\frac{२०}{३१}$।

मेघ नामक इन्द्रकका विस्तार इकतीस लाख इक्यावन हजार छह सौ बारह योजन और अट्ठाईस भाग अधिक है ॥ १९ ॥ ३१५१६१२$\frac{२८}{३१}$।

---

१ द अट्ठावीसा.

तीसं चिय लक्खाणिं सीदिसहस्साणि छस्सयाणिं च । पणदालजोयणाणिं पंच कला अब्भहुंदए वासो ॥

$$३०८०६४५\left|\begin{matrix}५\\३१\end{matrix}\right|$$

सत्ततरिजुदछसया णव य सहस्साणि तीसलक्खाणिं । जोयण तह तेरसया कलाओ हारिद्दविक्खंभो ॥

$$३००९६७७\left|\begin{matrix}१३\\३१\end{matrix}\right|$$

एक्कोणतीसलक्खा अडतीससहस्ससगसयाणिं च । णव जोयणाणि अंसा इगिवीसं पउमविंथारो ॥ ४२

$$२९३८७००९\left|\begin{matrix}२१\\३१\end{matrix}\right|$$

अट्ठावीसं लक्खा सत्तट्ठीसहस्ससगसयाणिं पि । इगिदालजोयणाणिं कलाओ उणतीस लोहिदे वासो ॥ ४३

$$२८६७७४१\left|\begin{matrix}२९\\३१\end{matrix}\right|$$

सत्तावीसं लक्खं छण्णउदिसहस्ससगसयाणिं च । चउहत्तरिजोयणया छकलाओ वज्जविक्खंभो ॥ ४४

$$२७९६७७४\left|\begin{matrix}६\\३१\end{matrix}\right|$$

सगवीसलक्खजोयण पणुवीससहस्स अडसयं छक्का । चोद्दस कलाओ कहिदा णंदावट्टस्स विक्खंभो ॥ ४५

$$२७२५८०६\left|\begin{matrix}१४\\३१\end{matrix}\right|$$

अब्र इन्द्रकका विस्तार तीस लाख अस्सी हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पांच कला अधिक है ॥ ४० ॥ ३०८०६४५$\frac{५}{३१}$ ।

हारिद्र नामक इन्द्रकका विस्तार तीस लाख नौ हजार छह सौ सतत्तर योजन और तेरह कला अधिक है ॥ ४१ ॥ ३००९६७७$\frac{१३}{३१}$ ।

पद्म इन्द्रकका विस्तार उनतीस लाख अड़तीस हजार सात सौ नौ योजन और इक्कीस भाग अधिक है ॥ ४२ ॥ २९३८७००९$\frac{२१}{३१}$ ।

लोहित इन्द्रकका विस्तार अट्ठाईस लाख सड़सठ हजार सात सौ इकतालीस योजन और उनतीस कला अधिक है ॥ ४३ ॥ २८६७७४१ $\frac{२९}{३१}$ ।

वज्र इन्द्रकका विस्तार सत्ताईस लाख छयानवे हजार सात सौ चौहत्तर योजन और छह कला अधिक है ॥ ४४ ॥ २७९६७७४$\frac{६}{३१}$ ।

नन्द्यावर्त इन्द्रकका विस्तार सत्ताईस लाख पच्चीस हजार आठ सौ छह योजन और चौदह कला अधिक कहा गया है ॥ ४५ ॥ २७२५८०६$\frac{१४}{३१}$ ।

छव्वीसं च य लक्खा चउवण्णसहस्सअट्ठसयाणिं पि । अडतीसजोयणाणिं बावीसकला पइंकरे इंदे ॥ ४६

$$२६५४८३८\left|\begin{matrix}२२\\३१\end{matrix}\right|$$

पणुवीस लक्खाणिं तेरसीदिसहस्सअट्ठसयाणिं पि । सत्तरि य जोयणाणि य तीसकला पिट्ठके वासो ॥ ४७

$$२५८३८७०\left|\begin{matrix}३०\\३१\end{matrix}\right|$$

बारसहस्सणवसयतिउत्तरा पंचवीसलक्खाणिं । जोयणए सत्तंसा गजाभिधाणस्स विक्खंभो ॥ ४८

$$२५१२९०३\left|\begin{matrix}७\\३१\end{matrix}\right|$$

चउवीसं लक्खाणिं इगिदालसहस्सणवसयाणिं पि । पणतीसजोयणाणिं पण्णरसकलाओ मित्तविथारो ॥

$$२४४१९३५\left|\begin{matrix}१५\\३१\end{matrix}\right|$$

तेवीसं लक्खाणिं णवसयजुत्ताणि सत्तरिसहस्सा । सत्तट्ठिजोयणाणिं तेवीसकलाओ पहवविथारो ॥ ५०

$$२३७०९६७\left|\begin{matrix}२३\\३१\end{matrix}\right|$$

तेवीसलक्ख रुंदो अंजणए जोयणाणि वणमाले । दुगतियणइणवदुगदुगदुगंककमसो कला अट्ठ[1] ॥ ५१

$$२३०००००।२२२९०३२\left|\begin{matrix}८\\३१\end{matrix}\right|$$

प्रभंकर इन्द्रकका विस्तार छब्बीस लाख चौवन हजार आठ सौ अड़तीस योजन और बाईस कलामात्र है ॥ ४६ ॥ $२६५४८३८\frac{२२}{३१}$ ।

पिष्टक इन्द्रकका विस्तार पच्चीस लाख तेरासी हजार आठ सौ सत्तर योजन और तीस कला प्रमाण है ॥ ४७ ॥ $२५८३८७०\frac{३०}{३१}$ ।

गज नामक इन्द्रकका विस्तार पच्चीस लाख बारह हजार नौ सौ तीन योजन और सात भाग अधिक है ॥ ४८ ॥ $२५१२९०३\frac{७}{३१}$ ।

मित्र इन्द्रकका विस्तार चौबीस लाख इकतालीस हजार नौ सौ पैंतीस योजन और पन्द्रह कला अधिक है ॥ ४९ ॥ $२४४१९३५\frac{१५}{३१}$ ।

प्रभ इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और तेईस कला अधिक है ॥ ५० ॥ $२३७०९६७\frac{२३}{३१}$ ।

अंजन इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख योजन और वनमालका विस्तार दो, तीन, शून्य, नौ, दो, दो और दो, इन अंकोंके क्रमसे बाईस लाख उनतीस हजार बत्तीस योजन तथा आठ कला अधिक है ॥ ५१ ॥ २३०००००। $२२२९०३२\frac{८}{३१}$ ।

१ द ब जोयणाणि बत्तीस°. २ ब पमित्त. ३ द दुगदुगगंकमरककमसो कला अट्ठ.

इगिवीसं लक्खाणिं अट्ठावण्णा सहस्स जोयणया । चउसट्ठीसंजुत्ता सोलस भंसा य णागविंथारो ॥ ५२ ॥

$$२१५८०६४\left|\begin{matrix}१६\\३१\end{matrix}\right|$$

जोयणया छण्णवदी सगसीदिसहस्सवीयलक्खाणिं । चउवीसकला एदं गरुडिंदयरुंदपरिमाणं ॥ ५३ ॥

$$२०८७०९६\left|\begin{matrix}२४\\३१\end{matrix}\right|$$

सोलससहस्सइगिसयउणतीसं वीयलक्खजोयणया । एक्ककला विक्खंभो लंगलणामस्स विण्णेयो ॥ ५४ ॥

$$२०१६१२९\left|\begin{matrix}१\\३१\end{matrix}\right|$$

एक्कोणवीसलक्खा पणदालसहस्स इगिसयाणिं च । एगसट्ठिजोयणा णव कलाओ बलभद्दविंथारो ॥ ५५ ॥

$$१९४५१६१\left|\begin{matrix}९\\३१\end{matrix}\right|$$

चउहत्तरिं सहस्सा इगिसयतेणउदि अट्ठरसलक्खा । जोयणया सत्तरसं कलाओ चक्कस्स विंथारो ॥ ५६ ॥

$$१८७४१९३\left|\begin{matrix}१७\\३१\end{matrix}\right|$$

अट्ठारसलक्खाणिं तिसहस्सा पंचवीसमुद्दिसया । जोयणया पणुवीसा कलाओ रिट्ठस्स विक्खंभो ॥ ५७ ॥

$$१८०३२२५\left|\begin{matrix}२५\\३१\end{matrix}\right|$$

नाग इन्द्रकका विस्तार इक्कीस लाख अट्ठावन हजार चौंसठ योजन और सोलह भाग अधिक है ॥ ५२ ॥ २१५८०६४$\frac{१६}{३१}$ ।

गरुड इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण बीस लाख सत्तासी हजार छयानवे योजन और चौबीस कला अधिक है ॥ ५३ ॥ २०८७०९६$\frac{२४}{३१}$ ।

लांगल नामक इन्द्रकका विस्तार बीस लाख सोलह हजार एक सौ उनतीस योजन और एक कला अधिक जानना चाहिये ॥ ५४ ॥ २०१६१२९$\frac{१}{३१}$ ।

बलभद्र इन्द्रकका विस्तार उन्नीस लाख पैंतालीस हजार एक सौ इकसठ योजन और नौ कला अधिक है ॥ ५५ ॥ १९४५१६१$\frac{९}{३१}$ ।

चक्र इन्द्रकका विस्तार अठारह लाख चौहत्तर हजार एक सौ तेरानवे योजन और सत्तरह कला अधिक है ॥ ५६ ॥ १८७४१९३$\frac{१७}{३१}$ ।

अरिष्ट इन्द्रकका विस्तार अठारह लाख तीन हजार दो सौ पच्चीस योजन और पच्चीस कला अधिक है ॥ ५७ ॥ १८०३२२५$\frac{२५}{३१}$ ।

अट्ठावण्णा दुसया बत्तीससहस्स सत्तरसलक्खा । जोयणया दोण्णि कला वासो सुरसमिदिणामस्स ॥ ५८

१७३२२५८ | २/३१ |

सोलसजोयणलक्खा इगिसट्ठिसहस्स दुसयणवदीओ । दसमेत्ताओ कलाओ बम्हिंदयरंदपरिसंखा ॥ ५९

१६६१२९० | १०/३१ |

बावीसतिसयजोयण णवदिसहस्साणि पण्णरसलक्खा । अट्ठारसा कलाओ बम्हुत्तरइंदए वासो ॥ ६०

१५९०३२२ | १८/३१ |

चउवण्ण तिसयजोयण उणवीसमहस्स पण्णरसलक्खा । छव्वीसं च कलाओ वित्थारो बम्हहिदयस्स ॥ ६१

१५१९३५४ | २६/३१ |

चोद्दसजोयणलक्खं अडदालसहस्सतीसयसगसीदी । तिण्णि कलाओ लंतवइंदस्स य होइ परिमाणं ॥ ६२

१४४८३८७ | ३/३१ |

तेरसजोयणलक्खा चउसय सत्तत्तरीसहस्साणि । उणवीसं एक्करसा कलाओ महसुक्कविक्खंभो ॥ ६३

१३७७४१९ | ११/३१ |

सुरसमिति नामक इन्द्रकका विस्तार सत्तरह लाख बत्तीस हजार दो सौ अट्ठावन योजन और दो कला अधिक है ॥ ५८ ॥ १७३२२५८$\frac{२}{३१}$ ।

ब्रम्ह इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण सोलह लाख इकसठ हजार दो सौ नब्बे योजन और दश कला मात्र अधिक है ॥ ५९ ॥ १६६१२९०$\frac{१०}{३१}$ ।

ब्रम्होत्तर इन्द्रकका विस्तार पन्द्रह लाख नब्बे हजार तीन सौ बाईस योजन और अठारह कला अधिक है ॥ ६० ॥ १५९०३२२$\frac{१८}{३१}$ ।

ब्रम्हहृदय इन्द्रकका विस्तार पन्द्रह लाख उन्नीस हजार तीन सौ चौवन योजन और छब्बीस कला अधिक है ॥ ६१ ॥ १५१९३५४$\frac{२६}{३१}$ ।

लांतव इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण चौदह लाख अड़तालीस हजार तीन सौ सतासी योजन और तीन कला अधिक है ॥ ६२ ॥ १४४८३८७$\frac{३}{३१}$ ।

महाशुक्र इन्द्रकका विस्तार तेरह लाख सतत्तर हजार चार सौ उन्नीस योजन और ग्यारह कला अधिक है ॥ ६३ ॥ १३७७४१९$\frac{११}{३१}$ ।

तेरसजोयणलक्खा चउसयइगिवण्ण छस्सहस्साणिं । एक्कोणवीसअंसा होदि सहस्सारविच्थारो ॥ ६४

$$१३०६४५१\left|\frac{१९}{३१}\right|$$

लक्खाणि बारसं चिय पणतीससहस्स चउसयाणिं पि । तेसीदि जोयणाइं सगवीसकलाओ आणदे इंदं ॥६५

$$१२३५४८३\left|\frac{२७}{३१}\right|$$

एक्कारसलक्खाणिं चउसट्ठिसहस्स पणुसयाणिं पि । सोलस य जोयणाणिं चत्तारि कलाओ पाणदे इंदं ॥

$$११६४५१६\left|\frac{४}{३१}\right|$$

लक्खं दसप्पमाणं तेणउदिसहस्स पणसयाणिं च । अडदालजोयणाइं बारसअंसा य पुप्फगे इंदो ॥ ६७

$$१०९३५४८\left|\frac{१२}{३१}\right|$$

दसजोयणलक्खाणिं बावीससहस्स पणुसया सीदी । वीसकलाओ इंदं सायंकरइंदयस्स[1] णादव्वं ॥ ६८

$$१०२२५८०\left|\frac{२०}{३१}\right|$$

सहस्रार इन्द्रकका विस्तार तेरह लाख छह हजार चार सौ इक्यावन योजन और उन्नीस भाग अधिक है ॥ ६४ ॥ १३०६४५१$\frac{१९}{३१}$ ।

आनत इन्द्रकका विस्तार बारह लाख पैंतीस हजार चार सौ तेरासी योजन और सत्ताईस कला अधिक है ॥ ६५ ॥ १२३५४८३$\frac{२७}{३१}$ ।

प्राणत इन्द्रकका विस्तार ग्यारह लाख चौंसठ हजार पांच सौ सोलह योजन और चार कला अधिक है ॥ ६६ ॥ ११६४५१६$\frac{४}{३१}$ ।

पुष्पक इन्द्रकका विस्तार दश लाख तेरानवे हजार पांच सौ अड़तालीस योजन और बारह भाग अधिक है ॥ ६७ ॥ १०९३५४८$\frac{१२}{३१}$ ।

शातंकर (शातक) इन्द्रकका विस्तार दश लाख बाईस हजार पांच सौ अस्सी योजन और बीस कला अधिक जानना चहिये ॥ ६८ ॥ १०२२५८०$\frac{२०}{३१}$ ।

१ द सयंकराइंदस्स, ब सयंकरइंदस्स.

णवजोयणलक्खाणिं इगिवण्णसहस्स छसय अंककमे । बारुत्तरमारणए[1] अट्ठावीसं कलाओ णादव्वा ॥ ६९

$$९५१६१२\left|\begin{matrix}२८\\३१\end{matrix}\right|$$

अट्ठ चिय लक्खाणिं सीदिसहस्साणि छस्सयाणिं[2] च । पणदालजोयणाणिं पंचकला अच्चुदे रुंदं ॥ ७०

$$८८०६४५\left|\begin{matrix}५\\३१\end{matrix}\right|$$

अट्ठ चिय लक्खाणिं णव य सहस्साणि छस्सयाणिं च । सत्तत्तरि जोयणया तेरसभंसा सुदंसणए ॥ ७१

$$८०९६७७\left|\begin{matrix}१३\\३१\end{matrix}\right|$$

णवजोयण सत्तसया अडतीससहस्स[3] सत्तलक्खाणिं । इगिवीस कला रुंदं अमोघणामम्मि इंदए होदि ॥ ७२

$$७३८७०९\left|\begin{matrix}२१\\३१\end{matrix}\right|$$

इगिदालुत्तरसगसय सत्तट्ठिसहस्सजोयण छलक्खा । उणतीसकला कहिदो वित्थारो सुप्पबुद्धस्स ॥ ७३

$$६६७७४१\left|\begin{matrix}२९\\३१\end{matrix}\right|$$

चउहत्तरिजुदसगसय छण्णउदिसहस्स पंचलक्खाणिं । जोयणया छच्च कला जसहरणामस्स विक्खंभो ॥

$$५९६७७४\left|\begin{matrix}६\\३१\end{matrix}\right|$$

आरण इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण अंकक्रमसे नौ लाख इक्यावन हजार छह सौ बारह योजन और अट्ठाईस कला जानना चाहिये ॥ ६९ ॥ $९५१६१२\frac{२८}{३१}$ ।

अच्युत इन्द्रकका विस्तार आठ लाख अस्सी हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पांच कला अधिक है ॥ ७० ॥ $८८०६४५\frac{५}{३१}$ ।

सुदर्शन इन्द्रकका विस्तार आठ लाख नौ हजार छह सौ सतहत्तर योजन और तेरह भाग अधिक है ॥ ७१ ॥ $८०९६७७\frac{१३}{३१}$ ।

अमोघ नामक इन्द्रकका विस्तार सात लाख अड़तीस हजार सात सौ नौ योजन और इक्कीस कला अधिक है ॥ ७२ ॥ $७३८७०९\frac{२१}{३१}$ ।

सुप्रबुद्ध इन्द्रकका विस्तार छह लाख सड़सठ हजार सात सौ इकतालीस योजन और उनतीस कला अधिक कहा गया है ॥ ७३ ॥ $६६७७४१\frac{२९}{३१}$ ।

यशोधर नामक इन्द्रकका विस्तार पांच लाख छयानवे हजार सात सौ चौहत्तर योजन और छह कला अधिक है ॥ ७४ ॥ $५९६७७४\frac{६}{३१}$ ।

---

१ द ब बेउत्तरमारणओ, क बाहत्तरं आरणओ. २ द ब छस्सयाणं. ३ द ब अडसीदिसहस्स.

छज्जोयण अट्ठसया पणुवीससहस्स पंचलक्खाणिं । चोद्दसकलाओ होदि हु सुभद्दणामस्स विक्खंभो[1] ॥ ७५

$$५२५८०६\left|\begin{matrix}१४\\३१\end{matrix}\right|$$

अट्ठसया अडतीसा लक्खा चउरो सहस्स चउवण्णा । सुविसाले जोयणया अंसा बावीस बोधव्वा ॥ ७६

$$४५४८३८\left|\begin{matrix}२२\\३१\end{matrix}\right|$$

सत्तरिजुदअट्ठसया तेसीदिसहस्स जोयणतिलक्खा । तीसकलाओ सुमणसणामस्स हुवेदि वित्थारं ॥ ७७

$$३८३८७०\left|\begin{matrix}३०\\३१\end{matrix}\right|$$

बारससहस्स णवसय तिउत्तरा जोयणाणि तियलक्खा । सत्तकलाओ वासो सोमणसेंदस्स णादव्वो[2] ॥ ७८

$$३१२९०३\left|\begin{matrix}७\\३१\end{matrix}\right|$$

पणतीसुत्तरणवसय इगिदालसहस्स जोयणदुलक्खा । पण्णरसकला रुंदं पीदिंकरइंदए कहिदो ॥ ७९

$$२४१९३५\left|\begin{matrix}१५\\३१\end{matrix}\right|$$

सत्तरिसहस्स णवसय सत्तट्ठीजोयणाणि इगिलक्खा । तेवीसंसा वासो आइच्चे इंदए होदि ॥ ८०

$$१७०९६७\left|\begin{matrix}२३\\३१\end{matrix}\right|$$

सुभद्र नामक इन्द्रकका विस्तार पांच लाख पच्चीस हजार आठ सौ छह योजन और चौदह कला अधिक है ॥ ७५ ॥ $५२५८०६\frac{१४}{३१}$ ।

सुविशाल इन्द्रकका विस्तार चार लाख चौवन हजार आठ सौ अड़तीस योजन और बाईस भाग प्रमाण समझना चाहिये ॥ ७६ ॥ $४५४८३८\frac{२२}{३१}$ ।

सुमनस नामक इन्द्रकका विस्तार तीन लाख तेरासी हजार आठ सौ सत्तर योजन और तीस कला प्रमाण है ॥ ७७ ॥ $३८३८७०\frac{३०}{३१}$ ।

सौमनस इन्द्रकका विस्तार तीन लाख बारह हजार नौ सौ तीन योजन और सात कला प्रमाण जानना चाहिये ॥ ७८ ॥ $३१२९०३\frac{७}{३१}$ ।

प्रीतिंकर इन्द्रकका विस्तार दो लाख इकतालीस हजार नौ सौ पैंतीस योजन और पन्द्रह कला प्रमाण कहा गया है ॥७९॥ $२४१९३५\frac{१५}{३१}$ ।

आदित्य इन्द्रकका विस्तार एक लाख सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और तेईस कला प्रमाण है ॥ ८० ॥ $१७०९६७\frac{२३}{३१}$ ।

१ द ब णादव्वो. २ द ब वासोमणसेइंदस्स विक्खंभो.

एक्कं जोयणलक्खं वासो सव्वट्ठसिद्धिणामस्स । एवं तेसट्ठीणं वासो सिट्ठो सिस्सूण बोहट्ठं ॥ ८१
१०००००।

सव्वाण इंदयाणं चउसु दिसासुं पि सेढिबद्धाणिं । चत्तारि वि विदिसासुं होंति पइण्णयविमाणाओ ॥ ८२
उडुणामे पत्तेक्कं सेढिगदा चउदिसासु बासट्ठी । एक्केक्कूणा सेसे पडिदिसमाइच्चपरियंतं[1] ॥ ८३
उडुणामे सेढिगया एक्केकदिसाए होंति तेसट्ठी । एक्केक्कूणा सेसे जाव य सव्वट्ठसिद्धि त्ति ॥ ८४
[पाठान्तरम् ।]
बासट्ठी सेढिगया पभासिदा जेहि ताण उवएसे । सव्वट्ठे वि चउद्दिसमेक्केक्कं सेढिबद्धा य ॥ ८५
पढमिंदयपहुदीदो पीदिंकरणामइंदयं जाव । तेसुं चउसु दिसासुं सेढिगदाणं इमे णामा ॥ ८६
उडुपइण्णउडुमज्झिमउडुआवत्तयउडुविसिट्ठणामेहिं । उडुइंदयस्स एदे पुव्वादिपदाहिणा होंति[2] ॥ ८७

सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रकका विस्तार एक लाख योजनप्रमाण है । इस प्रकार तिरेसठ इन्द्रकोंका विस्तार शिष्योंके बोधनार्थ कहा गया है ॥ ८१ ॥ १००००० ।

सब इन्द्रकोंकी चारों दिशाओंमें श्रेणीबद्ध और चारों ही विदिशाओंमें प्रकीर्णक विमान होते हैं ॥ ८२ ॥

ऋतु नामक विमानकी चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें बासठ श्रेणीबद्ध हैं । इसके आगे आदित्य इन्द्रक पर्यन्त शेष इन्द्रकोंकी प्रत्येक दिशामें एक एक कम होते गये हैं ॥ ८३ ॥

ऋतु नामक इन्द्रक विमानके आश्रित एक एक दिशामें तिरेसठ श्रेणीबद्ध विमान हैं । इसके आगे सर्वार्थसिद्धि पर्यंत शेष विमानोंमें एक एक कम होते गये हैं ॥ ८४ ॥
[पाठांतर ।]

जिन आचार्योंने (ऋतु विमानके आश्रित प्रत्येक दिशामें) बासठ श्रेणीबद्ध विमानोंका निरूपण किया है उनके उपदेशानुसार सर्वार्थसिद्धिके आश्रित भी चारों दिशाओंमें एक एक श्रेणीबद्ध विमान है ॥ ८५ ॥

प्रथम इन्द्रकसे लेकर प्रीतिंकर नामक इन्द्रक पर्यन्त चारों दिशाओंमें उनके आश्रित रहनेवाले श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम ये हैं ॥ ८६ ॥

ऋतुप्रभ, ऋतुमध्यम, ऋतुआवर्त और ऋतुविशिष्ट, ये चार श्रेणीबद्ध विमान ऋतु इन्द्रकके समीप पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणक्रमसे हैं ॥ ८७ ॥

---

१ द ब °माइच्चस्स परियंतं. २ द ब पदाहिणे होदि.

विमलपहविमलमज्झिम विमलावत्तं खु विमलणामम्मि । विमलविसिट्ठो तुरिमो पुव्वादिपदाहिणो[1] होदि ॥
एवं चंदादीणं[2] णियाणियणामाजि सेढिबद्धेसुं । पदमेसुं पहमाजिसमआवत्तविसिट्ठजुत्ताणिं ॥ ८९
उडुइंदयपुव्वादी सेढिगया जे हुवंति बासट्ठी । ताणं बिदियादीणं एक्कदिसाए भणामो णामाइं ॥ ९०
संठियणामा सिरिवच्छवट्टणामा य कुसुमजावाणिं । छत्तंजणकलसा[3] वसहसीहसुरासुरमणहरया ॥ ९१
१३ ।
भद्दं सव्वदोभद्दं दिवसोत्थिय अंदिसाभिधाणं च । दिगुवड्ढमाणमुरजं अब्भयइंदो[4] महिंदो य ॥ ९२
[९] ।
तह य उवड्ढं कमलं कोकणदं चक्कमुप्पलं कुमुदं । पुंडरियसोमयाणिं तिमिसंकसरंत पासं च ॥
[१२] ।
गगणं सुज्जं सोमं कंचणणक्खत्तचंदणा यमलं । विमलं णंदणसोमणससायरा उदिवसमुदिवा णामा ॥९४
१३ ।
धम्मवरं वेसमणं कण्णं कणयं तहा य भूदहिदं । णामेण लोयकंतं णं सरयं अमोघपासं च ॥ ९५
८ ।
जलकंतं लोहिदयं अमदब्भासं तहेव सिद्धंतं । कुंडलसोमा एवं इगिसट्ठी सेढिबद्धाणिं ॥ ९६
[९] ।

विमलप्रभ, विमलमध्यम, विमलावर्त और चतुर्थ विमलविशिष्ट, ये चार श्रेणीबद्ध विमान विमल नामक इन्द्रकके आश्रित पूर्वादिक प्रदक्षिणक्रमसे हैं ॥ ८८ ॥

इसी प्रकार चन्द्रादिक इन्द्रकोंके आश्रित रहनेवाले प्रथम श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम प्रभ, मध्यम, आवर्त और विशिष्ट, इन पदोंसे युक्त अपने अपने नामोंके ही अनुसार हैं ॥ ८९ ॥

ऋतु इन्द्रककी पूर्वादिक दिशाओंमें जो बासठ श्रेणीबद्ध हैं उनके द्वितीयादिकोंके एक दिशामें नामोंको कहते हैं ॥ ९० ॥

संस्थित नामक[1], श्रीवत्स[2], वृत्त नामक[3], कुसुम[4], चाप[5], छत्र[6], अंजन[7], कलश[8], वृषभ[9], सिंह[10], सुर[11], असुर[12], मनोहर[13], भद्र[14], सर्वतोभद्र[15], दिक्स्वस्तिक[16], अंदिश नामक[17], दिगु[18], वर्धमान[19], मुरज[20], अभयेन्द्र[21], माहेन्द्र[22], उपार्धि[23], कमल[24], कोकनद[25], चक्र[26], उत्पल[27], कुमुद[28], पुण्डरीक[29], सोमक[30], तिमिश्रा[31], अंक[32], स्वरान्त[33], पास[34], गगन[35], सूर्य[36], सोम[37], कंचन[38], नक्षत्र[39], चन्दन[40], अमल[41], विमल[42], नंदन[43], सौमनस[44] सागर[45], उदित[46], समुदित नामक[47], धर्मवर[48], वैश्रवण[49], कर्ण[50] कनक[51], तथा भूतहित[52], नामसे लोककान्त[53], सरय[54], अमोघस्पर्शी[55], जलकान्त[56], लोहितक[57], अमितभास[58], तथा सिद्धांत[59], कुण्डल[60] और सौम्य[61], इस प्रकार ये इकसठ श्रेणीबद्ध विमान हैं ॥ ९१–९६ ॥

---

१ द ब पदाहिणे. १ द ब चउदादीणं. ३ द ब °कलाहा. ४ द ब अमइंदो.

पुरिमावलिपवण्णिदसंठियपहुदीसु तेसु पत्तेक्कं । णियणामेसुं मज्झिमआवत्तविसिट्ठआइ जोएज्ज ॥ ९७

एवं चउसु दिसासुं णामेसुं दक्खिणादियदिसासुं । सेढिगदाणं णामा पीदिंकरइंदयं जाव ॥ ९८

आइच्चइंदयस्स य पुव्वादिसु लच्छिलच्छिमालिणिया । वइरावइरावणिया चत्तारो वरविमाणाणिं ॥ ९९

विजयंतवइजयंतं जयंतमपराजिदं च चत्तारो । पुव्वादिसु माणाणिं ठिदाणि[1] सव्वट्ठसिद्धिस्स ॥ १००

उडुसेढीबद्धद्धं सयंभुरमणंबुरासिपणिधिगदं । सेसा[2] आइल्लेसुं तिसु दीवेसुं तिसुं समुद्देसुं ॥ १०१

३१ । १५ । ८ । ४ । २ । १ । १ ।

एवं मित्तिंदंतं विण्णासो होदि सेढिबद्धाणं । कमसो आइल्लेसुं तिसु दीवेसुं तिजलहीसुं ॥ १०२

पभपत्थलादिपरदो जाव सहस्सारपत्थलंतो त्ति । आइल्लतिण्णिदीवे दोण्णिसमुद्दम्मि सेसाओ ॥ १०३

पूर्व पंक्तिमें वर्णित उन संस्थित आदि श्रेणीबद्ध विमानोंमेंसे प्रत्येकके अपने नामोंमें मध्यम, आवर्त, विशिष्ट आदि जोड़ना चाहिए [जैसे— संस्थितमध्यम, संस्थितावर्त और संस्थितविशिष्ट आदि] ॥ ९७ ॥

इस प्रकार दक्षिणादिक चारों दिशाओंमें प्रीतिकर इन्द्रक तक श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम हैं ॥ ९८ ॥

आदित्य इन्द्रककी पूर्वादिक दिशाओंमें लक्ष्मी, लक्ष्मीमालिनी, वज्र और वज्रावनि, ये चार उत्तम विमान हैं ॥ ९९ ॥

विजयन्त, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित, ये चार विमान सर्वार्थसिद्धिकी पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित हैं ॥ १०० ॥

ऋतु इन्द्रकके अर्ध श्रेणीबद्ध स्वयम्भूरमण समुद्रके प्रणिधि भागमें स्थित है। शेष श्रेणीबद्ध विमान आदिके अर्थात् स्वयंभूरमण समुद्रसे पूर्वके तीन द्वीप और तीन समुद्रोंपर स्थित है ॥ १०१ ॥ ३१, १५, ८, ४, २, १, १ ।

इस प्रकार मित्र इन्द्रक पर्यन्त श्रेणीबद्धोंका विन्यास क्रमसे आदिके तीन द्वीपों और तीन समुद्रोंके ऊपर है ॥ १०२ ॥

प्रभ प्रस्तारसे आगे सहस्रार प्रस्तार तक शेष आदिके तीन द्वीपों और दो समुद्रोंपर स्थित है ॥ १०३ ॥

---

१ द ब ठिदाण. २ द सेसुं, ब सेसं.

तत्तो आणदपहुदी जाव अमोघो त्ति सेढिबद्धाणं । आदिल्लदोण्णिदीवे दोण्णिसमुद्दम्मि सेसाओ ॥ १०४
तह सुप्पबुद्धपहुदी जाव य सुविसालओ त्ति सेढिगदा । आदिल्लतिण्णिदीवे एक्कसमुद्दम्मि सेसाओ ॥
सुमणस सोमणसाए आइल्लयएक्कदीवउवहिम्मि । पीदिंकराए एवं[1] आइच्चे चरिमउवहिम्मि ॥ १०६
होदि असंखेज्जाणिं[2] एदाणं जोयणाणि विच्चालं । तिरियेणं सव्वाणं तेत्तियमेत्तं च वित्थारं ॥ १०७
एवं चउव्विहेसुं[3] सेढीबद्धाण होदि उत्तकमे । अवसेसदीवउवहीसु णत्थि सेढीण विण्णासो ॥ १०८
सेढीबद्धे सव्वे समवट्टा विविहदिव्वरयणमया । उल्लसिदधयवदाया णिरुवमरूवा विराजंति ॥ १०९
एदाणं विच्चाले पइण्णकुसुमोवयारसंठाणा[4] । होंति पइण्णयणामा रयणमया विदिसे वरविमाणा ॥ ११०
संखेज्जासंखेज्जं सरूवजोयणपमाणविक्खंभो । सव्वे पइण्णयाणं विच्चालं तेत्तियं तेसुं ॥ १११

इसके आगे आनत पटलसे लेकर अमोघ पटल पर्यन्त शेष श्रेणीबद्धोंका विन्यास आदिके दो द्वीपों और दो समुद्रोंके ऊपर है ॥ १०४ ॥

तथा सुप्रबुद्ध पटलसे लेकर सुविशाल पटल तक शेष श्रेणीबद्ध आदिके तीन द्वीपों और एक समुद्रके ऊपर स्थित है ॥ १०५ ॥

सुमनस और सौमनस पटलके श्रेणीबद्ध विमान आदिके एक द्वीप तथा एक समुद्रके ऊपर स्थित हैं। इसी प्रकार प्रीतिंकर पटलके भी श्रेणीबद्धोंका विन्यास समझना चाहिये। आदित्य पटलके श्रेणीबद्ध अन्तिम समुद्रके ऊपर स्थित है ॥ १०६ ॥

इन सब विमानोंका अन्तराल तिरछे रूपसे असंख्यात योजनप्रमाण है। इतना ही इनका विस्तार भी है ॥ १०७ ॥

इस प्रकार उक्त क्रमसे श्रेणीबद्धोंका विन्यास चतुर्विध रूपमें (?) है। अवशेष द्वीप-समुद्रोंमें श्रेणीबद्धोंका विन्यास नहीं है ॥ १०८ ॥

सब श्रेणीबद्ध समान गोल, विविध प्रकारके दिव्य रत्नोंसे निर्मित, ध्वजा-पताकाओंसे सुशोभित और अनुपम रूपसे युक्त होते हुए विराजमान है ॥ १०९ ॥

इनके अन्तरालमें विदिशामें प्रकीर्णक पुष्पोंके सदृश स्थित, रत्नमय, प्रकीर्णक नामक उत्तम विमान हैं ॥ ११० ॥

सब प्रकीर्णकोंका विस्तार संख्यात व असंख्यात योजनप्रमाण और इतना ही उनमें अन्तराल भी है ॥ १११ ॥

१ द ब दीवं, अ देवं. २ द ब असंखेज्जाणं. ३ ब चउव्विदेसुं. ४ द ब सठाणं.

इंदयसेढीबद्धप्पइण्णयाणं पि वरविमाणाणं[1] । उवरिमतलेसु रम्मा एक्केक्का होदि तडवेदी ॥ ११२

चरियट्टालियचारू वरगोउरदारतोरणाभरणा । धुव्वंतधयवदाया अच्छरियविसेसकररूवा ॥ ११३

। विण्णासो सम्मत्तो ।

कप्पाकप्पातीदं इदि दुविहं होदि णाकवरलोए । बावण्णकप्पपडला कप्पातीदा य[2] एक्करसं ॥ ११४

५२ । ११ ।

बारस कप्पा केई केई सोलस वदंति आइरिया । तिविहाणि भासिदाणिं कप्पातीदाणि पडलाणिं ॥ ११५

हेट्ठिम मज्झे उवरिं पत्तेक्कं ताण होंति चत्तारि । एवं बारसकप्पा सोलस उड्ढुमट्ठ जुगलाणिं ॥ ११६

गेवज्जमणुदिसयं अणुत्तरं इय हुवंति तिविहप्पा । कप्पातीदा पडला गेवज्जं णवविहं तेसुं ॥ ११७

मेरुतलादो उवरिं दिवड्ढरज्जूए आदिमं जुगलं । तत्तो हुवेदि बिदियं तेत्तियमेत्ताए रज्जूए ॥ ११८

इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक, इन उत्तम विमानोंके उपरिम व तल भागोंमें रमणीय एक एक तटवेदी है ॥ ११२ ॥

यह वेदी मार्ग व अट्टालिकाओंसे सुन्दर, उत्तम गोपुरद्वार व तोरणोंसे सुशोभित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त, और आश्चर्यविशेषको करनेवाले रूपसे संयुक्त है ॥ ११३ ॥

विन्यास समाप्त हुआ ।

स्वर्गलोकमें कल्प और कल्पातीतके भेदसे पटल दो प्रकारके हैं । इनमेंसे बावन कल्प पटल और ग्यारह कल्पातीत पटल है ॥ ११४ ॥ कल्प. ५२ + कल्पा. ११ = ६३ ।

कोई आचार्य बारह कल्प और कोई सोलह कल्प बतलाते हैं । कल्पातीत पटल तीन प्रकार कहे गये हैं ॥ ११५ ॥

जो बारह कल्प स्वीकार करते हैं उनके मतानुसार अधोभाग, मध्य भाग और उपरिम भागमेंसे प्रत्येकमें चार चार कल्प हैं । इस प्रकार सब बारह कल्प होते हैं । सोलह कल्पोंकी मान्यतानुसार ऊपर ऊपर आठ युगलोंमें सोलह कल्प हैं ॥ ११६ ॥

ग्रैवेय, अनुदिश और अनुत्तर, इस प्रकार कल्पातीत पटल तीन प्रकार हैं । इनमेंसे ग्रैवेय पटल नौ प्रकार हैं ॥ ११७ ॥

मेरुतलसे ऊपर डेढ़ राजुमें प्रथम युगल और इसके आगे इतने ही राजुमें अर्थात् डेढ़ राजुमें द्वितीय युगल है ॥ ११८ ॥

१ द ब °विमाणिं. २ द ब होंति. ३ द ब कप्पातीदा इय. ४ द ब हुवेदि यं ते तेत्तिय°.

तत्तो छज्जुगलाणिं पत्तेक्कं अद्धअद्धरज्जूए । एवं कप्पा कमसो कप्पातीदा य ऊणरज्जूए ॥ ११९

$$\left|\frac{-३}{१४}\right|\left|\frac{-३}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{—}{१४}\right|\left|\frac{-}{७}\right|$$

। एवं भेदपरूवणा समत्ता ।

सोहम्मीसाणसणक्कुमारमाहिंदबम्हलंतवया । महसुक्कसहस्सारा आणदपाणदयआरणच्चुदया ॥ १२०

एवं बारस कप्पा कप्पातीदेसु णव य गेवेज्जा । हेट्ठिमहेट्ठिमणामो हेट्ठिममज्झिल्ल हेट्ठिमोवरिमो ॥ १२१

मज्झिमहेट्ठिमणामो मज्झिममज्झिम य मज्झिमोवरिमो ।
उवरिमहेट्ठिमणामो उवरिममज्झिम य उवरिमोवरिमो ॥ १२२

आइच्चइंदयस्स य पुव्वादिसु लच्छिलच्छिमालिणिया । वइरो वइरोहणिया चत्तारो वरविमाणाइं ॥ १२३

अण्णदिसाविदिसासुं सोमज्जं सोमरूवअंकाइं । पढिइं पइण्णयाणि य चत्तारो तस्स णादव्वा ॥ १२४

विजयंतवइजयंतं जयंतअपराजिदं च णामाणिं । सव्वट्ठसिद्धिणामे पुव्वावरदक्खिणुत्तरदिसाए ॥ १२५

सव्वट्ठसिद्धिणामे पुव्वादिपदाहिणेण विजयादी । ते होंति वरविमाणा एवं केई परूवेंति ॥ १२६

पाठान्तरम् ।

इससे आगे छह युगलोंमेंसे प्रत्येक आधे आधे राजुमें है । इस प्रकार कल्पोंकी स्थिति बतलाई गई है । कल्पातीत विमान ऊन अर्थात् कुछ कम एक राजुमें हैं ॥ ११९ ॥

सौ. ई. रा. १$\frac{१}{२}$, सा. मा. रा. १$\frac{१}{२}$, ब्र. ब्रह्मो. रा. $\frac{१}{२}$, लां. का. $\frac{१}{२}$, शु. महा. $\frac{१}{२}$, श. स. $\frac{१}{२}$, आ. प्रा. $\frac{१}{२}$, आ. अ. $\frac{१}{२}$, कल्पातीत रा. १ ।

इस प्रकार भेदप्ररूपणा समाप्त हुई ।

सौधर्म, ईशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, लांतव, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, इस प्रकार ये बारह कल्प है । कल्पातीतोंमें अधस्तन-अधस्तन, अधस्तन मध्यम, अधस्तन-उपरिम, मध्यम-अधस्तन, मध्यम-मध्यम, मध्यम-उपरिम, उपरिम-अधस्तन, उपरिम-मध्यम और उपरिम-उपरिम, ये नौ ग्रैवेयक विमान हैं ॥ १२०–१२२ ॥

आदित्य इन्द्रककी पूर्वादिक दिशाओंमें लक्ष्मी, लक्ष्मीमालिनी, वज्र और वैरोचिनी, ये चार उत्तम श्रेणीबद्ध विमान तथा अन्य दिशा-विदिशाओंमें सोमार्य, सोमरूप, अंक और स्फटिक, ये चार उसके प्रकीर्णक विमान जानना चाहिये ॥ १२३–१२४ ॥

सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रकके पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशामें विजयंत, वैजयंत, जयंत और अपराजित नामक विमान हैं ॥ १२५ ॥

सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रककी पूर्वादि दिशाओंमें प्रदक्षिणरूप वे विजयादिक उत्तम विमान हैं । इस प्रकार कोई आचार्य प्ररूपण करते हैं ॥ १२६ ॥ पाठान्तर ।

सोहम्मो ईसाणो सणक्कुमारो तहेव माहिंदो । बम्हा बम्हुत्तरयं लंतवकसिट्ठसुक्कमहसुक्का ॥ १२७
सदरसहस्सारणदपाणदआरणयअच्चुदा[1] णामा । इय सोलस कप्पाणिं मण्णंते केइ आइरिया ॥ १२८
पाठान्तरम् ।

। एवं णामपरूवणा समत्ता ।

कणयद्दिचूलउवरिं किंचूणदिवड्ढरज्जुबहलम्मि । सोहम्मीसाणक्खं कप्पदुगं[2] होदि रमणिज्जं ॥ १२९
— ३ |
१४

ऊणस्स य परिमाणं चालजुदं जोयणाणि इगिलक्खं । उत्तरकुरुमणुवाणं बालग्गेणादिरित्तेणं ॥ १३०
= १०००४० ।

सोहम्मीसाणाणं चरिमिंदयकेदुदंडसिहरादो । उड्ढं असंखकोडीजोयणविरहिददिवड्ढरज्जूए ॥ १३१
चिट्ठेदि कप्पजुगलं णामेहि सणक्कुमारमाहिंदा । तच्चरिमिंदयकेदणदंडाइ असंखजोयणूणेणं ॥ १३२
रज्जूए अद्धेणं कप्पो चेट्ठेदि तत्थ बम्हक्खो । तम्मेत्ते पत्तेक्कं लंतवमहसुक्कया सहस्सारो[3] ॥ १३३
आणदपाणदआरणअच्चुअकप्पा हुवंति उवरुवरिं । तत्तो असंखजोयणकोडीओ उवरि अंतरिदा ॥ १३४

सौधर्म, ईशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लांतव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, और अच्युत नामक, ये सोलह कल्प हैं, ऐसा कोई आचार्य मानते हैं ॥ १२७–१२८ ॥ पाठान्तर ।

इस प्रकार नामप्ररूपणा समाप्त हुई ।

कनकाद्रि अर्थात् मेरु पर्वतकी चूलिकाके ऊपर कुछ कम डेढ़ राजुके बाहल्यमें रमणीय सौधर्म-ईशान नामक कल्पयुगल है ॥ १२९ ॥ रा. १ ।

इस ऊनताका प्रमाण उत्तर कुरुके मनुष्योंके बालाग्रसे अधिक एक लाख चालीस योजन है ॥ १३० ॥ १००० ४० ।

सौधर्म-ईशान सम्बन्धी अन्तिम इन्द्रकके ध्वजदण्डके शिखरसे ऊपर असंख्यात करोड़ योजनोंसे रहित डेढ़ राजुमें सानत्कुमार-माहेन्द्र नामक कल्पयुगल स्थित है । इसके अन्तिम इन्द्रक सम्बन्धी ध्वजदण्डके ऊपर असंख्यात योजनोंमें कम आधे राजुमें ब्रह्म नामक कल्प स्थित है । इसके आगे इतने मात्र अर्थात् आधे आधे राजुमें ऊपर ऊपर लांतव, महाशुक्र, सहस्रार, आनत-प्राणत और आरण-अच्युत कल्पोंमेंसे प्रत्येक है । इसके आगे असंख्यात करोड़ योजनोंके

१ द ब आरणया अच्चुदा. २ कप्पदुगं. ३ द ब १४३. ४ द ब सुक्कयसहस्सारो.

कप्पातीदा पढला एक्करसा होंति ऊणरज्जूए । पढमाए अंतराओ उवरिम्मदिं होंति अहियाओ ॥ १३५
कप्पाणं सीमाओ णियणियचरिमिंदयाण धयदंडा । किंचूणयलोयंतो कप्पातीदाण अवसाणं ॥ १३६

। एवं सीमापरूवणा समत्ता ।

उडुपहुदिएक्कतीसं एदेसुं पुव्वअवरदक्खिणदो । सेढीबद्धा णइरिदिसाणलदिसाठिदपइण्णा य ॥ १३७
सोहम्मकप्पणामा तेसुं उत्तरदिसाए सेढिगया । मरुदीसाण्णदिसट्ठिदपइण्णया होंति ईसाणे ॥ १३८
अंजणपहुदी सत्त य एदेसिं पुव्वअवरदक्खिणदो । सेढीबद्धा णइरिदिसाणलदिसट्ठिदपइण्णा य ॥ १३९
णामे सणक्कुमारो तेसुं उत्तरदिसाए सेढिगया । पवणीसाणे संठिदपइण्णया होंति माहिंदे ॥ १४०
रिट्ठादी चत्तारो एदाणं चउदिसासु सेढिगया । विदिसापइण्णयाणिं[1] ते कप्पा बम्हणामेणं ॥ १४१
बम्हहिदयादिदुदयं एदाणं चउदिसासु सेढिगया । विदिसापइण्णयाइं णामेणं लंतवो कप्पो ॥ १४२

अन्तरसे ऊपर कुछ कम एक राजुमें शेष ग्यारह कल्पातीत पटल हैं । इनमें प्रथमके अन्तरसे ऊपर ऊपर अन्तर अधिक है ॥ १३१–१३५ ॥

कल्पोंकी सीमायें अपने अपने अन्तिम इन्द्रकोंके ध्वजदण्ड हैं और कुछ कम लोकका अन्त कल्पातीतोंका अन्त है ॥ १३६ ॥

इस प्रकार सीमाकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

ऋतु आदि इकतीस इन्द्रक एवं उनमें पूर्व, पश्चिम और दक्षिणके श्रेणीबद्ध; तथा नैऋत्य व अग्नि दिशामें स्थित प्रकीर्णक, इन्हींका नाम सौधर्म कल्प है । उपर्युक्त उन विमानोंकी उत्तर दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध और वायु एवं ईशान दिशामें स्थित प्रकीर्णक, ये ईशान कल्पमें हैं ॥ १३७–१३८ ॥

अंजन आदि सात इन्द्रक एवं उनके पूर्व, पश्चिम और दक्षिणके श्रेणीबद्ध तथा नैऋत्य एवं अग्नि दिशामें स्थित प्रकीर्णक, इनका नाम सनत्कुमार कल्प है । इन्हींकी उत्तर दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध और पवन एवं ईशान दिशामें स्थित प्रकीर्णक, ये माहेन्द्र कल्पमें हैं ॥ १३९–१४० ॥

अरिष्टादिक चार इन्द्रक तथा इनकी चारों दिशाओंके श्रेणीबद्ध और विदिशाओंके प्रकीर्णक, इनका नाम ब्रह्म कल्प है ॥ १४१ ॥

ब्रह्महृदयादिक दो इन्द्रक और इनकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध तथा विदिशाओंके प्रकीर्णक, इनका नाम लान्तव कल्प है ॥ १४२ ॥

---

१ द ब °अणिल°. २ द ब पवणीसाणं सट्ठिद°. ३ द ब पइण्णयाणं.

महसुक्कइंदओ तह एदस्स य चउदिसासु सेढिगदा । विदिसापइण्णयाइं कप्पो महसुक्कणामेणं ॥ १४३
इंदयसहस्सयारा एदस्स चउदिसासु सेढिगदा । विदिसापइण्णयाइं होंति[1] सहस्सारणामेणं ॥ १४४
आणदपहुदी छक्कं एदस्स य पुव्वअवरदक्खिणदो । सेढीबद्धा णइरिदिअणलेदिसट्ठिदपइण्णाणिं १४५
आणदआरणणामा दो कप्पा होंति पाणदच्चुदया । उत्तरदिससेढिगया समीरणीसाणदिसपइण्णा य ॥
हेट्ठिमहेट्ठिमपमुहा एक्केक्क सुदंसणाओ पडलाणिं । होंति हु एवं कमसो कप्पातीदा ठिदा सव्वे ॥
जे सोलसकप्पाइं केई इच्छंति ताण उवएसे । बम्हादिचउदुगेसुं सोहम्मदुगं व दिब्भेदो[2] ॥ १४८
पाठान्तरम् ।
बत्तीसट्ठावीसं बारस अट्ठं कमेण लक्खाणिं । सोहम्मादिचउक्के होंति विमाणाणि विविहाणिं ॥ १४९
३२००००० । २८००००० । १२००००० । ८००००० ।

महाशुक्र इन्द्रक तथा इसकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध और विदिशाके प्रकीर्णक, इनका नाम महाशुक्र कल्प है ॥ १४३ ॥

सहस्रार इन्द्रक और इसकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध व विदिशाओंके प्रकीर्णक, इनका नाम सहस्रार कल्प है ॥ १४४ ॥

आनत आदि छह इन्द्रक और इनकी पूर्व, पश्चिम व दक्षिण दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध तथा नैऋत्य एवं अग्नि दिशामें स्थित प्रकीर्णक इनका नाम आनत और आरण दो कल्परूप है। उक्त इन्द्रकोंकी उत्तर दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध तथा वायु व ईशान दिशाके प्रकीर्णक, इनका नाम प्राणत और अच्युत कल्प है ॥ १४५-१४६ ॥

अधस्तन-अधस्तन आदि एक एकमें सुदर्शनादिक पटल हैं। इस प्रकार क्रमसे सब कल्पातीत स्थित हैं ॥ १४७ ॥

जो कोई आचार्य सोलह कल्पोंको मानते हैं उनके उपदेशानुसार ब्रह्मादिक चार युगलोंमें सौधर्म युगलके समान दिशाभेद है॥ १४८ ॥ पाठान्तर ।

सौधर्मादि चार कल्पोंमें तीनों प्रकारके विमान क्रमसे बत्तीस लाख, अट्ठाईस लाख, बारह लाख और आठ लाख है ॥ १४९ ॥

सौ. कल्प. ३२ लाख, ई. क. २८ ला., सा. क. १२ ला., मा. क. ८ ला. ।

---

१ द ब होदि. २ द ब °अणिल°. ३ द ब °दुगं चदि मेदो.

चउलक्खाणिं बम्हे पण्णाससहस्सयाणि लंतवए । चालीससहस्साणिं कप्पे महसुक्कणामम्मि ॥ १५०

४००००० । ५०००० । ४०००० ।

छच्चेव सहस्साणिं होंति सहस्सारकप्पणामम्मि । सत्तसयाणि विमाणा कप्पचउक्कम्मि आणदप्पमुहे ॥

६००० । ७०० ।

खंगयणसत्तछण्णवचउअट्ठंककमेण इंदयादितिए । परिसंखा णादव्वा बावण्णाकप्पपडलेसुं ॥ १५२

८४९६७०० ।

एक्कारसुत्तरसयं हेट्ठिमगेवज्जतियविमाणाणिं । मज्झिमगेवज्जतिए सत्तब्भहियं सयं होदि ॥ १५३

१११ । १०७ ।

एक्कब्भहिया णउदी उवरिमगेवज्जतियविमाणाणिं[1] । णवपंचविमाणाणिं अणुदिसाणुत्तरेसु कमा ॥ १५४

९१ । ९ । ५ ।

इन्द्रकादिक तीनों प्रकारके विमान ब्रह्म कल्पमें चार लाख, लान्तव कल्पमें पचास हजार और महाशुक्र नामक कल्पमें चालीस हजार हैं ॥ १५० ॥

ब्र. क. ४ लाख, लां. क. ५०००० महाशुक्र ४०००० ।

उक्त विमान महस्रार नामक कल्पमें छह हजार और आनत प्रमुख चार कल्पोंमें सात सौ हैं ॥ १५१ ॥ महस्रार ६०००, आनत प्रमुख ४ कल्प ७०० ।

शून्य, शून्य, सात, छह, नौ, चार और आठ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चौरासी लाख छयानवे हजार सात सौ, यह बावन कल्पपटलोंमें इन्द्रादिक तीन विमानोंकी संख्या है ॥ १५२ ॥

३२ ला. + २८ ला. + १२ ला. + ८ ला. + ४ ला. + ५० सहस्र. + ४० स. + ६ स. + ७००=८४९६७०० ।

अधस्तन तीन ग्रैवेयकोंके विमान एक सौ ग्यारह और मध्यम तीन ग्रैवेयकोंमें एक सौ सात विमान हैं । ॥ १५३ ॥ अध. ग्रै. १११, म. ग्रै. १०७ ।

उपरिम तीन ग्रैवेयकोंके विमान इक्यानवे और अनुदिश व अनुत्तरोंमें क्रमसे नौ और पांच ही विमान हैं ॥ १५४ ॥

१ द ब °विमाणाणं.

छासीदीजुदसयं बासट्ठी सत्तविरहिदेक्कसयं । इगितीसं छण्णउदी सीदी बाहत्तरी य अडसट्ठी ॥
चउसट्ठी चालीसं अट्ठत्तीसं सोलसं च चउ चउरो । सोहम्मादीअट्ठसु आणदपहुदीसु चउसु कमा ॥ १५६
हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जेसुं अणुदिसादिदुगे । सेढीबद्धपमाणप्पत्तासणट्ठं इमे पभवा ॥ १५७

१८६ । ६२ । ९३ । ३१ । ९६ । ८० । ७२ । ६८ । ६४ । ४० । २८ । १६ । ४ । ४ ।

सोहम्मादिचउक्के तियएक्कतियेक्कयाणि रिणपचओ । सेसेसुं कप्पेसुं चउचउरूवाणि दादव्वा ॥ १५८

३ । १ । ३ । १ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।

इगितीससत्तचउदुगएक्केक्कइतितियएक्केक्का । ताणं कमेण गच्छा बारसठाणेसु रचिदव्वा ॥ १५९

३१ । ७ । ४ । २ । १ । १ । ६ । ३ । ३ । ३ । १ । १ ।

गच्छं चयेण गुणिदं दुगुणिदमुहमेलिदूणचयविहीणं । गच्छद्धेणप्पहदे संकलिदं एत्थ णादव्वं ॥ १६०

सौधर्मादिक आठ, आनतप्रभृति चार, तथा अधस्तन, मध्यम व उपरिम ग्रैवेयक और अनुदिशादिक दोमें श्रेणीबद्धोंका प्रमाण लानेके लिये क्रमसे एक सौ छयासी, बासठ, सात कम एक सौ, इकतीस, छयानबे, अस्सी, बहत्तर, अड़सठ, चौंसठ, चालीस, अड़तीस, सोलह, चार और चार, यह प्रभव (मुख) का प्रमाण है ॥ १५५–१५७ ॥

सौ. १८६, ई. ६२, स. ९३, मा. ३१, ब्र. ब्र. ९६, ला. का. ८०, शु. म. ७२, श. स. ६८, आनतप्रभृति चार ६४, अ. ग्रै. ४०, म. ग्रै. २८, उ. ग्रै. १६, अनुदिश ४, अनुत्तर ४ ।

सौधर्मादिक चार कल्पोंमें तीन, एक, तीन और एक चय है, शेष कल्पोंमें चार चार रूप देना चाहिये ॥ १५८ ॥

सौ. ३, ई. १, स. ३, मा. १, शेष कल्प ४–४ ।

इकतीस, सात, चार, दो, एक, एक, छह, तीन, तीन, तीन, एक और एक, इन बारह स्थानोंमें गच्छ रखना चाहिये ॥ १५९ ॥

सौ. ई. ३१, स. मा. ७, ब्र. ब्र. ४, ला. का. २, शु. म. १, श. स. १, आनतादि चार ६, अ. ग्रै. ३, म. ग्रै. ३, उ. ग्रै. ३, अनुदिश १, अनुत्तर १ ।

गच्छको चयसे गुणाकर उसे दुगुणित मुखमें मिलाये हुए चयमेंसे कम करनेपर जो शेष रहे उसे गच्छके अर्ध भागसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उतना यहां संकलित धन समझना चाहिये ॥ १६० ॥

$३१ \times ३; (१८६ \times २ + ३) - (३१ \times ३) \times \frac{३}{२} = ४३७१$ सौ. श्रेणीबद्ध ।

तेदालीससयाणिं इगियत्तरिउत्तराणि सेढिगदा । सोहम्मणामकप्पे इगितीसं इंदया होंति ॥ १६१

४३७१ । ३१ ।

सत्तावण्णा चोद्दससयाणि सेढिगदाणि ईसाणे । पंचसया अडसीदी सेढिगदा सत्त इंदया तत्थ ॥ १६२

१४५७ । ५८८ । ७ ।

माहिंदे सेढिगदा छण्णउदीजुदसदं च बम्हम्मि । सट्ठीजुदतिसयाणि सेढिगदा इंदयचउक्कं ॥ १६३

१९६ । ३६० । ४ ।

छप्पण्णब्भहियसयं सेढिगदा इंदया दुवे छट्ठे । महसुक्के बाहत्तरि सेढिगया इंदओ एक्को ॥ १६४

१५६ । २ । ७२ । १ ।

अडसट्ठी सेढिगया एक्को विचय इंदयं सहस्सारे । चउवीसुत्तरतिसया छहंदया आणदादियचउक्के ॥

६८ । १ । ३२४ । ६ ।

हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जाणं च सेढिगदसंखा । अट्ठब्भहिएक्कसयं कमसो बाहत्तरी य छत्तीसं ॥ १६६

१०८ । ७२ । ३६ ।

सौधर्म नामक कल्पमें तेतालीस सौ इकहत्तर श्रेणीबद्ध और इकतीस इन्द्रक हैं ॥१६१॥

श्रे. ४३७१, इं. ३१ ।

ईशान कल्पमें चौदह सौ सत्तावन श्रेणीबद्ध हैं । तृतीय कल्पमें पांच सौ अठासी श्रेणीबद्ध और सात इन्द्रक हैं ॥ १६२ ॥ ई. श्रे. १४५७ । स. श्रे. ५८८, इं. ७ ।

माहेन्द्रमें एक सौ छयानवे श्रेणीबद्ध हैं । ब्रह्ममें तीनसौ साठ श्रेणीबद्ध और चार इन्द्रक हैं ॥ १६३ ॥ मा. श्रे. १९६ । ब्र. श्रे. ३६०, इं. ४ ।

छठे कल्प अर्थात् लांतवमें एक सौ छप्पन श्रेणीबद्ध और दो इन्द्रक, तथा महाशुक्र कल्पमें बहत्तर श्रेणीबद्ध और एक इन्द्रक है ॥ १६४ ॥

लां. श्रे. १५६, इं. २ । म. श्रे. ७२, इं. १ ।

सहस्रारमें अड़सठ श्रेणीबद्ध और एक इन्द्रक, तथा आनतादिक चारमें तीन सौ चौबीस श्रेणीबद्ध और छह इन्द्रक हैं ॥ १६५ ॥

सह. श्रे. ६८, इं. १ । आनतादि चार श्रे. ३२४, इं. ६ ।

अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकोंके श्रेणीबद्ध विमानोंकी संख्या क्रमसे एक सौ आठ, बहत्तर और छत्तीस है ॥ १६६ ॥ अ. ग्रै. १०८, म. ग्रै. ७२, उ. ग्रै. ३६ ।

ताणं गेवज्जाणं पत्तेक्कं तिण्णि इंदया चउरो। सेढिगदाण अणुद्दिस अणुत्तरे इंदया हु एक्केक्का ॥ १६७

सेढीणं विच्चाले पइण्णकुसुमोवमाणसंठाणा। होंति पइण्णयणामा सेढिंदयहीणरासिसमा ॥ १६८

इगितीसं लक्खाणिं पणणउदिसहस्स पणसयाणिं पि। अट्ठाणउदिजुदाणिं पइण्णया होंति सोहम्मे ॥ १६९

३१९५५९८।

सत्तावीसं लक्खा अडणउदिसहस्स पणसयाणिं पि। तेदालउत्तराइं पइण्णया होंति ईसाणे ॥ १७०

२७९८५४३।

एक्कारसलक्खाणिं णवणउदिसहस्स चउसयाणिं पि। पंचुत्तराइ कप्पे सणक्कुमारे पइण्णया होंति ॥ १७१

११९९४०५।

सत्त च्चिय लक्खाणिं णवणउदिसहस्सयाणि अट्ठसया। चउरुत्तराइ[2] कप्पे पइण्णया होंति माहिंदे ॥

७९९८०४।

छत्तीसुत्तरछसया णवणउदिसहस्सयाणि तियलक्खा। एदाणि बम्हकप्पे होंति पइण्णयविमाणाणिं ॥ १७३

३९९६३६।

उन ग्रैवेयकोंमेंसे प्रत्येकमें तीन इन्द्रक है। अनुदिश और अनुत्तरमें चार श्रेणीबद्ध और एक एक इन्द्रक है ॥ १६७ ॥

श्रेणीबद्ध विमानोंके बीचमें बिखरे हुए कुसुमोंके सदृश आकारवाले प्रकीर्णक नामक विमान होते है। इनकी संख्या श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंसे हीन अपनी अपनी राशिके समान है ॥ १६८ ॥

सौधर्म कल्पमें इकतीस लाख पंचानवे हजार पांच सौ अट्ठानवे प्रकीर्णक विमान हैं ॥ १६९ ॥ ३१९५५९८।

ईशान कल्पमें सत्ताईस लाख अट्ठानवे हजार पांच सौ तेतालीस प्रकीर्णक विमान हैं ॥ १७० ॥ २७९८५४३।

सनत्कुमार कल्पमें ग्यारह लाख निन्यानवे हजार चार सौ पांच प्रकीर्णक विमान हैं ॥ १७१ ॥ ११९९४०५।

माहेन्द्र कल्पमें सात लाख निन्यानवे हजार आठ सौ चार प्रकीर्णक है ॥ १७२ ॥

७९९८०४।

ब्रह्म कल्पमें तीन लाख निन्यानवे हजार छह सौ छत्तीस, इतने प्रकीर्णक विमान हैं ॥ १७३ ॥ ३९९६३६।

---

१ द ब पइण्णकंसुउवमाण°. २ द पंचुत्तराइ.

उणवण्णसहस्सा चउसयाणि बादाल ताणि लंतवए । उणदालसहस्सा णवसयाणि सगवीस महसुक्के ॥

४९८४२ । ३९९२७ ।

उणसट्ठिसया इगितीसउत्तरा होंति ते सहस्सारे । सत्तरिजुदतिसयाणि कप्पचउक्के पइण्णया सेसे ॥

५९३१ । ३७० ।

अध हेट्ठिमगेवज्जे ण होंति तेसिं पइण्णयविमाणा[1] । बत्तीसं मज्झिमले उवरिमए होंति बावण्णा ॥ १७६

० । ३२ । ५२ ।

तत्तो अणुदिसाए चत्तारि पइण्णया वरविमाणा । तेसट्ठिअहिदिसाए पइण्णया णत्थि अत्थि सेढिगया ॥

जे सोलसकप्पाइं केई इच्छंति ताण उवएसे । तस्सिं तस्सिं वोच्छं परिमाणाणिं विमाणाणं[2] ॥ १७८

बत्तीस अट्ठवीसं[3] बारस अट्ठं कमेण लक्खाणिं । सोहम्मादिचउक्के होंति विमाणाणि विविहाणिं ॥ १७९

३२००००० । २८००००० । १२००००० । ८००००० ।

लांतव कल्पमें उनंचास हजार आठ सौ ब्यालीस और महाशुक्रमें उनतालीस हजार नौ सौ सत्ताईस प्रकीर्णक विमान हैं ॥ १७४ ॥ लां. ४९८४२, महा. ३९९२७ ।

वे प्रकीर्णक विमान सहस्रार कल्पमें उनसठ सौ इकतीस और शेष चार कल्पोंमें तीन सौ सत्तर हैं ॥ १७५ ॥ ५९३१, शेष चार ३७० ।

अधस्तन ग्रैवेयकमें उनके प्रकीर्णक विमान नहीं है । मध्यम ग्रैवेयकमें बत्तीस और उपरिम ग्रैवेयकमें बावन प्रकीर्णक विमान है ॥ १७६ ॥ अ. ग्रै. ०, म. ग्रै. ३२, उ. ग्रै. ५२ ।

इसके आगे अनुदिशोंमें चार प्रकीर्णक विमान है । तिरेसठवें पटलमें प्रकीर्णक नहीं हैं, श्रेणीबद्ध विमान हैं ॥ १७७ ॥

जो कोई सोलह कल्पोंको मानते हैं उनके उपदेशानुसार उन उन कल्पोंमें विमानोंके प्रमाणको कहते हैं ॥ १७८ ॥

सौधर्मादि चार कल्पोंमें क्रमसे बत्तीस लाख, अट्ठाईस लाख, बारह लाख और आठ लाख प्रमाण विविध प्रकारके विमान हैं ॥ १७९ ॥

सौ. ३२०००००, ई. २८०००००, स. १२०००००, मा. ८००००० ।

---

१ द ब पइण्णया विमाणा. २ द ब परिमाणि विमाणाणिं. ३ ब बत्तीसट्ठवीसं.

छण्णउदिउत्तराणिं दोलक्खाणिं हुवंति बम्हम्मि । बम्हुत्तरम्मि लक्खा दो वि य छण्णउदिपरिहीणा ॥

२०००९६ । १९९९०४ ।

पणुवीसम्महस्साइं बादालजुदा य होंति लंतवए । चउवीससहस्साणिं णवसयअडवण्ण कविट्ठे ॥ १८१

२५०४२ । २४९५८ ।

वीसुत्तराणि होंति हु वीसम्महस्साणि सुक्ककप्पम्मि । ताइं चिय महसुक्के वीसूणाणिं विमाणाणिं ॥

२००२० । १९९८० ।

उणवीसउत्तराणिं तिण्णिसहस्साणि सदरकप्पम्मि । कप्पम्मि सहस्सारे उणतीससयाणि इगिसीदी ॥ १८३

३०१९ । २९८१ ।

आणदपाणदकप्पे पंचसया सट्ठिविरहिदा होंति । आरणअच्चुदकप्पे दुसयाणिं सट्ठिजुत्ताणिं ॥ १८४

४४० । २६० ।

अहवा आणदजुगले चत्तारि सयाणि वरविमाणाणिं । आरणअच्चुदकप्पे सयाणि तिण्णि चिय हुवंति ॥

४०० । ३०० । पाठान्तरम् ।

ब्रह्म कल्पमें दो लाख छयानवै और ब्रह्मोत्तर कल्पमें छयानवै कम दो लाख विमान हैं ॥ १८० ॥ ब्रह्म. २०००९६, ब्रह्मो. १९९९०४ ।

लांतव कल्पमें पच्चीस हजार ब्यालीस और कापिष्ठ कल्पमें चौबीस हजार नौ सौ अट्ठावन विमान है ॥ १८१ ॥ लां. २५०४२, का. २४९५८ ।

शुक्र कल्पमें बीस अधिक बीस हजार और महाशुक्रमें बीस कम इतने ही अर्थात् उन्नीस हजार नौ सौ अस्सी विमान हैं ॥ १८२ ॥ शु. २००२०, महा. १९९८० ।

शतार कल्पमें तीन हजार उन्नीस और सहस्रार कल्पमें उनतीस सौ इक्यासी विमान हैं ॥ १८३ ॥ श. ३०१९, स. २९८१ ।

आनत-प्राणत कल्पमें साठ कम पांच सौ और आरण-अच्युत कल्पमें दो सौ साठ विमान हैं ॥ १८४ ॥ आनत-प्रा. ४४०, आरण-अ. २६० ।

अथवा, आनतयुगलमें चार सौ और आरण-अच्युत कल्पमें तीन सौ उत्तम विमान हैं ॥ १८५ ॥ आ. युगल ४००, आ. अ. ३०० । पाठान्तर ।

---

१ द ब मरहुक्कं.

कप्पेसुं संखेज्जो विक्खंभो रासिपंचमविभागो । णियणियसंखेज्जूणा णियणियरासी यसंखेज्जो ॥ १८६

संखेज्जो विक्खंभो चालीसमहस्सयाणि छल्लक्खा । सोहम्मे ईसाणे चालसहस्सूणछल्लक्खा ॥ १८७

६४०००० । ५६०००० ।

चालीससहस्साणिं दोलक्खाणिं सणक्कुमारम्मि । सट्ठिसहस्सब्भहियं माहिंदे एक्कलक्खाणिं ॥ १८८

२४०००० । १६०००० ।

बम्हे सीदिसहस्सा लंतवकप्पम्मि दससहस्साणिं । अट्ठसहस्सा बारससयाणि महसुक्ककप्पे सहस्सारे ॥ १८९

८०००० । १०००० । ८००० । १२०० ।

आणदपाणदआरणअच्चुदणामेसु चउसु कप्पेसुं । संखेज्जरुंदसंखा चालब्भहियं सयं होदि ॥ १९०

१४० ।

तियअट्ठारसमत्तरसएक्कएक्काणि तस्स परिमाणं । हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जेसुं अणुदिसादिजुगे ॥

३ । १८ । १७ । १ । १ ।

कल्पोंमें राशिके पांचवें भाग प्रमाण विमान संख्यात योजन विस्तारवाले हैं और अपने अपने संख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी राशिसे कम अपनी अपनी राशिप्रमाण असंख्यात योजन विस्तारवाले है ॥ १८६ ॥

सौधर्म कल्पमें संख्यात योजन विस्तारवाले विमान छह लाख चालीस हजार और ईशान कल्पमें चालीस हजार कम छह लाख हैं ॥ १८७ ॥ सौ. ६४०००० , ई. ५६०००० ।

सनत्कुमार कल्पमें संख्यात योजन विस्तारवाले दो लाख चालीस हजार और माहेन्द्र कल्पमें एक लाख साठ हजार है ॥ १८८ ॥ स. २४०००० , मा. १६०००० ।

ब्रह्म कल्पमें अस्सी हजार, लांतव कल्पमें दश हजार, महाशुक्रमें आठ हजार, और सहस्रारमें बारह सौ संख्यात योजन विस्तारवाले विमान हैं ॥ १८९ ॥

ब्र. ८०००० , लां. १०००० , महा. ८००० , स. १२०० ।

आनत, प्राणत, आरण और अच्युत नामक चार कल्पोंमें संख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी संख्या एक सौ चालीस है ॥ १९० ॥ १४० ।

अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयक तथा अनुदिशादियुगलमें संख्यात योजन विस्तार-वालोंका प्रमाण क्रमसे तीन, अठारह, सत्तरह, एक और एक है ॥ १९१ ॥

अ. ग्रै. ३, म. ग्रै. १८, उ. ग्रै. १७, अनुदिश. १, अनुत्तर १ ।

पणुवीसं लक्खाणिं सट्ठिसहस्साणि सो असंखेज्जो । सोहम्मे ईसाणे लक्खा बावीस चालयसहस्सा ॥

२५६०००० । २२४०००० ।

सट्ठिसहस्सजुदाणिं णवलक्खाणिं सणक्कुमारम्मि । चालीससहस्साणिं माहिंदे छच्च लक्खाणिं ॥ १९३

९६०००० । ६४०००० ।

बीससहस्स तिलक्खा चालसहस्साणि बम्हलंतवए । बत्तीससहस्साणिं महसुक्के सो असंखेज्जो[1] ॥

३२०००० । ४०००० । ३२००० ।

चत्तारि सहस्साणिं अट्ठसयाणिं तहा सहस्सारे । आणदपहुदिचउक्के पंचसया सट्ठिसंजुत्ता ॥ १९५

४८०० । ५६० ।

अट्ठुत्तरमेक्कसयं उणणउदी सत्तरी य चउअधिया । हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जेसुं असंखेज्जो ॥ १९६

१०८ । ८९ । ७४ ।

अट्ठ अणुदिसणामे बहुरयणमयाणि वरविमाणाणिं । चत्तारि अणुत्तरए होंति असंखेज्जवित्थारा ॥ १९७

८ । ४ ।

....

असंख्यात विस्तारवाले वे विमान सौधर्म कल्पमें पच्चीस लाख साठ हजार और ईशान कल्पमें बाईस लाख चालीस हजार हैं ॥ १९२ ॥ सौ. २५६०००० , ई. २२४०००० ।

उक्त विमान सनत्कुमार कल्पमें नौ लाख साठ हजार और माहेन्द्र कल्पमें छह लाख चालीस हजार हैं ॥ १९३ ॥ सन. ९६०००० , मा. ६४०००० ।

वे असंख्यात योजन विस्तारवाले विमान ब्रह्म कल्पमें तीन लाख बीस हजार, लांतव कल्पमें चालीस हजार, और महाशुक्रमें बत्तीस हजार हैं ॥ १९४ ॥

ब्र. ३२०००० , लां. ४०००० , महा. ३२००० ।

उक्त विमान सहस्रार कल्पमें चार हजार आठ सौ तथा आनतादि चार कल्पोंमें पांच सौ साठ हैं ॥ १९५ ॥ सह. ४८०० , आनतादि चारमें ५६० ।

असंख्यात योजन विस्तारवाले विमान अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकमें क्रमसे एक सौ आठ, नवासी और चौहत्तर हैं ॥ १९६ ॥ अ. ग्रै. १०८ , म. ग्रै. ८९ , उ. ग्रै. ७४ ।

अनुदिश नामक पटलमें आठ और अनुत्तरोंमें चार असंख्यात विस्तारवाले बहुत रत्नमय उत्तम विमान हैं ॥ १९७ ॥ अनुदिश ८ , अनुत्तर ४ ।

---

१ द ब महसुक्केसु सो असंखेज्जा.

एक्करससया इगिवीसउत्तरा जोयणाणि पत्तेक्कं । सोहम्मीसाणेसुं विमाणतलबहलपरिमाणं ॥ १९८

११२१ ।

बावीसजुदसहस्सं[1] माहिंदसणक्कुमारकप्पेसुं । तेवीसउत्तराणिं सयाणि णव बम्हकप्पम्मि ॥ १९९

१०२२ । ९२३ ।

चउवीसजुदछसया लंतवे पंचवीस सत्तसया । महसुक्के छव्वीसं छच्चसयाणिं सहस्सारे ॥ २००

८२४ । ७२५ । ६२६ ।

आणदपहुदिचउक्के[2] पंचसया सत्तवीसअब्भहिया । अट्ठवीस चउसयाणिं हेट्ठिमगेवज्जए होंति ॥ २०१

५२७ । ४२८ ।

उणतीसं तिण्णिसया मज्झिमए तीसअधियदुसयाणिं । उवरिमए एक्कसयं इगितीस अणुद्दिसादिदुगे ॥

३२९ । २३० । १३१ ।

सोहम्मीसाणं सव्वविमाणेसु पंचवण्णाणिं । कप्पजुगे वज्जित्ता सणक्कुमारादिजुगलम्मि ॥ २०२

सौधर्म और ईशानमेंसे प्रत्येक विमानतलके बाहल्यका प्रमाण ग्यारह सौ इक्कीस योजन है ॥ १९८ ॥ ११२१ ।

विमानतलबाहल्य सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पमें एक हजार बाईस और ब्रह्म कल्पमें नौ सौ तेईस योजन है ॥ १९९ ॥ स. मा. १०२२, ब्र. ९२३ ।

उक्त विमानतलबाहल्य लांतव कल्पमें आठ सौ चौबीस, महाशुक्रमें सात सौ पच्चीस, और सहस्रारमें छह सौ छब्बीस योजन है ॥ २०० ॥ लां. ८२४, महा. ७२५, सह. ६२६ ।

विमानतलबाहल्य आनतादि चार कल्पोंमें पांच सौ सत्ताईस और अधस्तन ग्रैवेयकमें चार सौ अट्ठाईस योजनप्रमाण है ॥ २०१ ॥ आनतादि चार ५२७, अध. ग्रै. ४२८ ।

विमानतलबाहल्य मध्यम ग्रैवेयकमें तीन सौ उनतीस, उपरिम ग्रैवेयकमें दो सौ तीस, और अनुदिशादि दोमें एक सौ इकतीस योजन है ॥ २०२ ॥

म. ग्रै. ३२९, उ. ग्रै. २३०, अनुदिशद्विक १३१ ।

सौधर्म और ईशान कल्पके सब विमानोंमें पांचों वर्णवाले तथा सनत्कुमारादि युगलमें कृष्ण वर्णसे रहित शेष चार वर्णवाले हैं ॥ २०२ ॥

---

१ द ब सहस्सा. २ द ब चउक्कं.

णीलेण वज्जिदाणिं बम्हे लंतवए णाम कप्पेसुं । रत्तेण विरहिदाणिं महसुक्के तह सहस्सारे ॥ २०४
आणदपाणदआरणअच्चुदगेवज्जयादियविमाणा । ते सव्वे मुत्ताहलमयंककुंदुज्जला होंति ॥ २०५
सोहम्मदुगविमाणा घणसरूवस्स उवरि सलिलस्स । चेट्ठंते पवणोवरि माहिंदसणक्कुमाराणिं ॥ २०६
बम्हाई चत्तारो कप्पा चेट्ठंति सलिलवादूहं । आणदपाणदपहुदी सेसा सुद्धम्मि गयणयले ॥ २०७
उवरिम्मि इंदयाणं सेढिगदाणं पइण्णयाणं च । समचउरस्सा दीहा चेट्ठंते विविहपासादा ॥ २०८
कणयमया फलिहमया मरगयमाणिक्कइंदणीलमया । विद्दुममया विचित्ता वरतोरणसुंदरदुवारा ॥ २०९
सत्तट्ठणवदसादियविचित्तभूमीहिं भूसिदा सव्वे । वररयणभूसिदेहिं बहुविहजंतेहि रमणिज्जा ॥ २१०
दिप्पंतरयणदीवा कालागरुपहुदिधूवगंधड्ढा । आसणणाडयकीडणसालापहुदीहिं कयसोहा ॥ २११
सीहकरिमयरसिहिसुकयवालगरुडासणादिपरिपुण्णा । बहुविहविचित्तमणिमयसेज्जाविण्णासकमणिज्जा ॥

ब्रह्म और लांतव नामक कल्पोंमें कृष्ण व नीलसे रहित तीन वर्णवाले तथा महाशुक्र और सहस्रार कल्पमें रक्त वर्णसे भी रहित शेष दो वर्णवाले हैं ॥ २०४ ॥

आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और ग्रैवेयकादिके वे सब विमान मुक्ताफल, मृगांक अथवा कुन्द पुष्पके समान उज्ज्वल हैं ॥ २०५ ॥

सौधर्म युगलके विमान घनस्वरूप जलके ऊपर तथा माहेन्द्र व सनत्कुमार कल्पके विमान पवनके ऊपर स्थित हैं ॥ २०६ ॥

ब्रह्मादिक चार कल्प जल व वायु दोनोंके ऊपर, तथा आनत-प्राणतादि शेष विमान शुद्ध आकाशतलमें स्थित हैं ॥ २०७ ॥

इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंके ऊपर समचतुष्कोण व दीर्घ विविध प्रकारके प्रासाद स्थित हैं ॥ २०८ ॥

ये सब प्रासाद सुवर्णमय, स्फटिकमणिमय, मरकत माणिक्य एवं इन्द्रनील मणियोंसे निर्मित, मूंगासे निर्मित, विचित्र, उत्तम तोरणोंसे सुन्दर द्वारोंवाले, सात आठ नौ दश इत्यादि विचित्र भूमियोंसे भूषित, उत्तम रत्नोंसे भूषित बहुत प्रकारके यंत्रोंसे रमणीय, चमकते हुए रत्नदीपकोंसे सहित, कालागरु आदि धूपोंके गन्धसे व्याप्त; आसनशाला, नाट्यशाला व क्रीड़नशाला आदिकोंसे शोभायमान; सिंहासन, गजासन, मकरासन, मयूरासन, शुकासन, व्यालासन एवं गरुडासनादिसे परिपूर्ण; बहुत प्रकारकी विचित्र मणिमय शय्याओंके विन्याससे

णिच्चं विमलसरूवा पहुण्णवरदीवकुसुमकंतिल्ला । सव्वे अणाइणिहणा अकट्टिमाइं विरायंति ॥ २१३

। एवं संखापरूवणा समत्ता ।

बारसविहकप्पाणं बारस इंदा हुवंति वररूवा । दसविहपरिवारजुदा पुव्वज्जिदपुण्णपाकादो ॥ २१४

पडिइंदा सामाणियतेत्तीससुरा दिगिंदतणुरक्खा । परिसाणीयपइण्णयआभियोगा होंति किब्बिसिया ॥

जुवरायकलत्ताणं तह तणुयतंतरायाणं । वपुरक्खाकीवाणं वरमज्झिमअवरतट्ठल्लाणं ॥ २१६

सेणाण पुरजणाणं परिचाराणं तहेव पाणाणं । कमसो ते सारिच्छा पडिइंदप्पहुदिणो होंति ॥ २१७

एक्केक्का पडिइंदा एक्केक्काणं हुवंति इंदाणं । ते जुवरायरिधीए वट्टंते आउपरियंतं ॥ २१८

चउसीदिसहस्साणिं सोहम्मिंदस्स होंति सुरपवरा । सामाणिया सहस्सा सीदी ईसाणइंदस्स ॥ २१९

८४००० । ८०००० ।

कमनीय, नित्य, विमल स्वरूपवाले, विपुल उत्तम दीपों व कुसुमोंसे कान्तिमान, अनादि-निधन और अकृत्रिम विराजमान हैं ॥ २०९-२१३ ॥

इस प्रकार संख्याप्ररूपणा समाप्त हुई ।

बारह प्रकारके कल्पोंके बारह इन्द्र पूर्वोपार्जित पुण्यके परिपाकसे उत्तम रूपके धारक और दश प्रकारके परिवारसे युक्त होते हैं ॥ २१४ ॥

प्रतीन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश देव, दिगिन्द्र, तनुरक्ष, पारिषद, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक, ये उपर्युक्त दश प्रकारके परिवार देव हैं ॥ २१५ ॥

वे प्रतीन्द्र आदि क्रमसे युवराज, कलत्र, तथा तनुज, तंत्ररक्ष, कृपाणधारी शरीररक्षक, उत्तम मध्यम व जघन्य परिषद्में बैठने योग्य (सभासद), सेना, पुरजन परिचारक, तथा चण्डाल, इनके सदृश होते हैं ॥ २१६-२१७ ॥

एक एक इन्द्रके जो एक एक प्रतीन्द्र होते हैं वे आयु पर्यन्त युवराजकी ऋद्धिसे युक्त रहते हैं ॥ २१८ ॥

सामानिक जातिके उत्कृष्ट देव सौधर्म इन्द्रके चौरासी हजार और ईशान इन्द्रके अस्सी हजार होते हैं ॥ २१९ ॥ सौ. इं. ८४०००, ई. इं. ८०००० ।

१ ब परिसंद.

बाहत्तरीसहस्सा ते चेट्ठंते सणक्कुमारिंदे । सत्तरिसहस्समेत्ता माहिंदहिंदस्स ॥ २२०

७२००० । ७०००० ।

बम्हिंदम्मि सहस्सा सट्ठी पण्णास लंतविंदम्मि । चालं महसुक्किंदे तीस सहस्सारइंदम्मि ॥ २२१

६०००० । ५०००० । ४०००० । ३०००० ।

आणदपाणदइंदे वीसं सामाणिया सहस्साणिं । वीस सहस्साण पुढं पत्तेक्कं आरणच्चुदिंदेसुं ॥ २२२

२०००० । २०००० । २०००० । २०००० ।

तेत्तीस सुरप्पवरा एक्केक्काणं हुवंति इंदाणं । चत्तारि लोयपाला सोमो यमवरुणधणदा य ॥ २२३

तिण्णि च्चिय लक्खाणिं छत्तीससहस्सयाणि तणुरक्खा । सोहम्मिंदे विदिए ताणिं सोलससहस्सहीणाणिं ॥

३३६००० । ३२०००० ।

अट्ठासीदिसहस्सा दोलक्खाणिं सणक्कुमारिंदे । माहिंदिंदे लक्खा दोण्णि य सीदीसहस्साणिं ॥ २२५

२८८००० । २८०००० ।

उक्त देव सनत्कुमार इन्द्रके बहत्तर हजार और माहेन्द्र इन्द्रके सत्तर हजार प्रमाण होते हैं ॥ २२० ॥ सन. इं. ७२०००, मा. इं. ७००००।

उक्त देव ब्रह्मेन्द्रके साठ हजार, लांतवेन्द्रके पचास हजार, महाशुक्र इन्द्रके चालीस हजार और सहस्रार इन्द्रके तीस हजार है ॥ २२१ ॥

ब्र. इं. ६०००० , लां. इं. ५०००० , म. इं. ४०००० , स. इं. ३०००० ।

सामानिक देव आनत-प्राणत इन्द्रके बीस हजार और आरण अच्युत इन्द्रके पृथक् पृथक् बीस हजार है ॥ २२२ ॥

आनत इं. २०००० , प्रा. इं. २०००० , आरण इं. २०००० , अ. इं. २०००० ।

एक एक इन्द्रके तेतीस त्रायस्त्रिंश देव और सोम, यम, वरुण तथा धनद, ये चार लोकपाल होते हैं ॥ २२३ ॥

तनुरक्षक देव सौधर्म इन्द्रके तीन लाख छत्तीस हजार और द्वितीय इन्द्रके इनसे सोलह हजार कम होते हैं ॥ २२४ ॥ सौ. ३३६०००, ई. ३२०००० ।

उक्त देव सनत्कुमार इन्द्रके दो लाख अठासी हजार और माहेन्द्र इन्द्रके दो लाख अस्सी हजार होते हैं ॥ २२५ ॥ स. २८८०००, मा. २८०००० ।

१ द ब ताणं.

बम्हिंदे चालीससहस्सअब्भहिय दुवे दुवे लक्खा । लंतवए दोलक्खं बिगुणियसीदीसहस्स महसुक्के ॥

२४०००० । २००००० । १६०००० ।

बिगुणियसट्ठिसहस्सं सहस्सथारिंदयम्मि पत्तेक्कं । सीदिसहस्सपमाणं उवरिमचत्तारिइंदम्मि ॥ २२७

१२०००० । ८०००० । ८०००० । ८०००० । ८०००० ।

अब्भंतरपरिसाए सोहम्मिंदाण बारससहस्सा । चेट्ठंते सुरपवरा ईसाणिंदस्स दससहस्साणि ॥ २२८

१२००० । १०००० ।

तदिए अट्ठसहस्सा माहिंदिंदस्स छस्सहस्साणि । बम्हिंदम्मि सहस्सा चत्तारो दोण्णि लंतविंदम्मि ॥ २२९

८००० । ६००० । ४००० । २००० ।

सत्तमयस्स सहस्सं पंचसयाणिं सहस्सथारिंदे । आणदइंदादिदुगे पत्तेक्कं दोसयाणि पण्णासा ॥ २३०

१००० । ५०० । २५० । २५० ।

अब्भंतरपरिसाए आरणइंदस्स अच्चुदिंदस्स । पत्तेक्कं सुरपवरा एक्कसयं पंचवीसजुदं ॥ २३१

१२५ । १२५ ।

उक्त देव ब्रह्मेन्द्रके दो लाख चालीस हजार, लांतव इन्द्रके दो लाख और महाशुक्र इन्द्रके द्विगुणित अस्सी हजार अर्थात् एक लाख साठ हजार होते हैं ॥ २२६ ॥

ब्र. २४०००० , लां. २००००० , म. १६०००० ।

उक्त देव सहस्रार इन्द्रके द्विगुणित साठ हजार और उपरिम चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके अस्सी हजार प्रमाण होते हैं ॥ २२७ ॥

सह. १२०००० , आन. ८०००० , प्रा. ८०००० , आर. ८०००० , अ. ८०००० ,

सौधर्म इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में बारह हजार और ईशान इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में दश हजार देव स्थित होते हैं ॥ २२८ ॥ सौ. १२००० , ई. १०००० ।

तृतीय इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में आठ हजार, माहेन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में छह हजार, ब्रह्मेन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में चार हजार और लांतव इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में दो हजार देव होते हैं ॥ २२९ ॥ सन. ८००० , मा. ६००० , ब्र. ४००० , लां. २००० ।

सप्तम इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में एक हजार, सहस्रार इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में पांच सौ और आनतादि दो इन्द्रोंकी अभ्यन्तर परिषद्में दो सौ पचास देव होते हैं ॥ २३० ॥

म. १००० , सह. ५०० , आन. २५० , प्रा. २५० ।

आरण इन्द्र और अच्युत इन्द्रमेंसे प्रत्येककी अभ्यन्तर परिषद्में एक सौ पच्चीस उत्तम देव होते हैं ॥ २३१ ॥ आ. १२५ , अ. १२५ ।

मज्झिमपरिसाए सुरा चोद्दसबारसदसट्ठछचउदुगा । होंति सहस्सा कमसो सोहम्मिंदादिएसु सत्तेसुं ॥

१४००० । १२००० । १०००० । ८००० । ६००० । ४००० । २००० ।

एक्कसहस्सपमाणं सहस्सयारिंदयम्मि पंचसया । उवरिमचउइंदेसुं पत्तेक्कं मज्झिमा परिसा ॥ २३३

१००० । ५०० । ५०० । ५०० । ५०० ।

सोलसचोद्दसबारसदसट्ठछच्चदुदुगेक्क य सहस्सा । बाहिरपरिसा कमसो समिदा चंदा य जडणामा[1] ॥ २३४

। बाहिरपरिसा सम्मत्ता ।

वसहतुरंगमरहगजपदातिगंधव्वणट्टयाणीया । एवं सत्ताणीया एक्केक्क हुवंति इंदाणं ॥ २३५

एदे सत्ताणीया पत्तेक्कं सत्तपत्तकक्खजुदा । तेसुं पढमाणीया णियणियसामाणियाण समा[2] ॥ २३६

तत्तो दुगुणं दुगुणं कादव्वं जाव सत्तमाणीयं । परिमाणजाणणट्ठं ताणं संखं परूवेमो ॥ २३७

सौधर्मादिक सात इन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम परिषद्में क्रमसे चौदह, बारह, दश, आठ, छह, चार और दो हजार देव होते हैं ॥ २३२ ॥

सौ. १४०००, ई. १२०००, सन. १००००, मा. ८०००, ब्र. ६०००,
लां. ४०००, म. २०००।

सहस्रार इन्द्रकी मध्यम परिषद्में एक हजार प्रमाण और उपरिम चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम परिषद्में पांच सौ देव होते हैं ॥ २३३ ॥

सह. १०००, आन. ५००, प्रा. ५००, आ. ५००, अ. ५०० ।

उपर्युक्त इन्द्रोंके बाह्य पारिषद देव क्रमसे सोलह, चौदह, बारह, दश, आठ, छह, चार, दो और एक हजार प्रमाण होते हैं। इन तीनों परिषदोंका नाम क्रमसे समित, चन्द्रा और जतु हैं ॥ २३४ ॥

बाह्य पारिषद्का कथन समाप्त हुआ।

वृषभ, तुरंगम, रथ, गज, पदाति, गंधर्व और नर्तक अनीक, इस प्रकार एक एक इन्द्रके सात सेनायें होती हैं ॥ २३५ ॥

इन सात सेनाओंमेंसे प्रत्येक सात सात कक्षाओंसे युक्त होती है। उनमेंसे प्रथम अनीकका प्रमाण अपने अपने सामानिकोंके बराबर होता है ॥ २३६ ॥

इसके आगे सप्तम अनीक पर्यन्त उससे दूना दूना करना चाहिये। इस प्रमाणको जाननेके लिये उनकी संख्या कहते हैं ॥ २३७ ॥

---

१ द ब चंदा य जुयणाओ. २ द °सामाणियाणि समत्ता, ब °सामाणियाणि सम्मत्ता.

इगिकोडी छल्लक्खा अट्ठासट्ठीसहस्सया वसहा । सोहम्मिंदे होंति हु तुरयादी[1] तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥

१०६६८००० पिंड । ७४६७६००० ।

एक्का कोडी एक्कं लक्खं सट्ठी सहस्स वसहाणं । ईसाणिंदे होंति हु तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥ २३९

१०१६०००० । पिंड ७११२०००० ।

लक्खाणि एक्कणउदी चउदालसहस्सयाणि वसहाणं । होंति हु तदिए इंदे तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥

९१४४००० । पिंड ६४००८००० ।

अट्ठासीदीलक्खा णवदिसहस्साणि होंति वसहाणं । माहिंदिंदे तेत्तियमेत्ता तुरयादिणो वि पत्तेक्कं ॥ २४१

८८९०००० । पिंड ६२२३००००० ।

छाहत्तरिलक्खाणि बंभसहस्साणि होंति वसहाणं । बम्हिंदे पत्तेक्कं तुरयप्पहुदी वि तम्मेत्तं ॥ २४२

७६२०००० । पिंड ५३३४०००० ।

तेसट्ठीलक्खाणिं पण्णाससहस्सयाणि वसहाणि । लंतवइंदे होंति हु तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥ २४३

६३५०००० । पिंड ४४४५०००० ।

सौधर्म इन्द्रके एक करोड़ छह लाख अड़सठ हजार वृषभ होते हैं और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २३८ ॥

वृषभ १०६६८०००; १०६६८००० × ७ = ७४६७६००० प्र. क. सप्तानीक ।

ईशान इन्द्रके एक करोड़ एक लाख साठ हजार वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २३९ ॥ १०१६०००० × ७ = ७११२०००० सप्तानीक ।

तृतीय इन्द्रके इक्यानवे लाख चवालीस हजार वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४० ॥ ९१४४००० × ७ = ६४००८००० सप्तानीक ।

माहेन्द्र इन्द्रके अठासी लाख नब्बे हजार वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४१ ॥ ८८९०००० × ७ = ६२२३००००० सप्तानीक ।

ब्रह्मेन्द्रके छयत्तर लाख बीस हजार वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४२ ॥ ७६२०००० × ७ = ५३३४०००० सप्तानीक ।

लांतव इन्द्रके तिरेसठ लाख पचास हजार वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४३ ॥ ६३५०००० × ७ = ४४४५०००० सप्तानीक ।

१ ब तुरयादिय.

पण्णासं लक्खाणिं सीदिसहस्साणि होंति वसहाणिं । महसुक्किंदे होंति हु तुरियादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥
५०८०००० । पिंड ३५५६०००० ।

अट्ठत्तीसं लक्खं दस य सहस्साणि होंति वसहाणिं । तुरयादी तम्मेत्ता होंति सहस्सारइंदम्मि ॥ २४५
३८१०००० । पिंड २६६७०००० ।

पणुवीसं लक्खाणि चालीससहस्सयाणि वसहाणिं । आरणइंदादिदुगे तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥
२५४०००० । पिंड १७७८०००० ।

अलहरपडलसमुट्ठिदसरयमयंकसुजालसंकासा । वसहतुरंगादीया णियणियकक्खासु पढमकक्खठिदा ॥
उदयंतदुमणिमंडलसमाणवण्णा हवंति वसहारी । ते णियणियकक्खासुं चेट्ठंते बिदियकक्खासुं ॥ २४८
फुल्लंतकुमुदकुवलयसरिच्छवण्णा तदुज्जकक्खठिदा । ते णियणियकक्खासुं वसहस्सरहादिणो होंति ॥
मरगयमणिसमिसमणू वरविविहविभूसणेहिं सोहिल्ला । ते णियणियकक्खासुं वसहादी तुरिमकक्खठिदा ॥
पारावयमोराणं कंठसरिच्छेहि देहवण्णेहिं । ते णियणियकक्खासुं पंचमकक्खासु वसहपहुदीओ ॥ २५१

महाशुक्र इन्द्रके पचास लाख अस्सी हजार वृषभ और तुरगादिकोंमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४४ ॥ ५०८०००० × ७ = ३५५६०००० सप्तानीक ।

सहस्रार इन्द्रके अड़तीस लाख दश हजार वृषभ और तुरगादिक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४५ ॥ ३८१०००० × ७ = २६६७०००० सप्तानीक ।

आरण इन्द्रादिक दोके पचीस लाख चालीस हजार वृषभ और तुरगादिकोंमेंसे प्रत्येक भी इतने मात्र ही होते हैं ॥ २४६ ॥ २५४०००० × ७ × १७७८०००० सप्तानीक ।

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे प्रथम कक्षामें स्थित वृषभ-तुरगादिक मेघपटलसे उत्पन्न शरत्कालीन चन्द्रमाके किरणसमूहके सदृश होते हैं ॥ २४७ ॥

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे द्वितीय कक्षामें स्थित वे वृषभादिक उदित होनेवाले सूर्यमण्डलके समान वर्णवाले होते हैं ॥ २४८ ॥

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे तृतीय कक्षामें स्थित वे वृषभ, अश्व और रथादिक फूलते हुए कुमुद एवं कुवलयके समान निर्मल वर्णवाले होते हैं ॥ २४९ ॥

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे चतुर्थ कक्षामें स्थित वे वृषभादिक मरकत मणिके सदृश शरीरवाले और उत्तम अनेक प्रकारके आभूषणोंसे शोभायमान होते हैं ॥ २५० ॥

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे पंचम कक्षामें स्थित वे वृषभादिक कबूतर एवं मयूरके कण्ठके सदृश देहवर्णसे युक्त होते हैं ॥ २५१ ॥

---

१ ब होंति वसहाणि. २ द ब सरिसच्छवण्णा. ३ ब तणू विविह°.

वरपउमरायबंधूयकुसुमसंकासदेहसोहिल्ला । ते णियणियकक्खासुं वसहाई छट्ठकक्खजुदा ॥ २५२
भिण्णिंदणीलवण्णा सत्तमकक्खट्ठिदा वसहपहुदी । ते णियणियकक्खासुं वरमंडणमंडिदायारा ॥ २५३
सत्ताण अणीयाणं[1] णियणियकक्खाण होंति विच्चाले । होंति वरपडहसंखं मद्दलकाहलपहुदीण पत्तेक्कं ॥
लंबंतरयणकिंकिणिमुहदामणिकुसुमदामरमणिज्जा । घुव्वंतधयवदाया वरचामरछत्तकंतिल्ला ॥ २५५
रयणमयप्पल्लाणा वसहतुरंगा रहा य इंदाणं । बहुविहविगुव्वणाण वाहिज्जंताण सुरकुमारेहि ॥ २५६
असिमुसलकणयतोमरकोदंडप्पहुदिविविहसत्थकरा । ते सत्तसु कक्खासुं पदाहिणो दिव्वरूवधरा ॥ २५७
सज्जे रिसहं[2] गंधारमज्झिमा पंचपंचमहरस्सरं । धइवदजुदं णिसादं पुह पुह गायंति गंधव्वा ॥ २५८
वीणावेणुप्पमुहं णाणाविहतालकरणलयजुत्तं । वाइज्जंति वाइत्तं गंधव्वेहिं महुरस्सरं ॥ २५९
कंदप्परायराजाधिराजविज्जाहराण चरियाणि । णच्चंति णट्टयसुरा णिच्चं पढमाए कक्खाए ॥ २६०

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे छठी कक्षामें स्थित वृषभादिक उत्तम पद्मराग मणि अथवा बंधूक पुष्पके सदृश शरीरसे शोभायमान होते हैं ॥ २५२ ॥

अपनी अपनी कक्षाओंमेंसे सातवीं कक्षामें स्थित वृषभादिक भिन्न इन्द्रनीलमणिके सदृश वर्णवाले और उत्तम आभूषणोंसे मण्डित आकारसे युक्त होते हैं ॥ २५३ ॥

सातों अनीकोंकी अपनी अपनी कक्षाओंके अन्तरालमें उत्तम पटह, शंख, मर्दल और काहल आदिमेंसे प्रत्येक होते हैं ॥ २५४ ॥

बहुविध विक्रिया करनेवाले तथा सुरकुमारों द्वारा उठाये जानेवाले इन्द्रोंके वृषभ, तुरग और रथादिक लटकती हुई रत्नमय क्षुद्रघंटिकाओं, मणि एवं पुष्पोंकी मालाओंसे रमणीय; फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त, उत्तम चँवर व छत्रसे कान्तिमान और रत्नमय तथा सुखप्रद साजसे संयुक्त होते हैं ॥ २५५-२५६ ॥

जो असि, मूसल, कनक, तोमर और धनुष आदि विविध प्रकारके शस्त्रोंको हाथमें धारण करनेवाले हैं वे सात कक्षाओंमें दिव्य रूपके धारक पदाति होते हैं ॥ २५७ ॥

गन्धर्व देव षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद, इन मधुर स्वरोंको पृथक् पृथक् गाते हैं ॥ २५८ ॥

गन्धर्व देव नाना प्रकारकी तालक्रिया व लयसे संयुक्त और मधुर स्वरसे वीणा एवं वांसुरी आदि वादित्रोंको बजाते हैं ॥ २५९ ॥

प्रथम कक्षाके नर्तक देव नित्य ही कन्दर्प, राजा, राजाधिराज और विद्याधरोंके चरित्रोंका अभिनय करते हैं ॥ २६० ॥

१ सत्ताण य आणीया. २ द ब ल ं सद्दिलं.

पुढवीपालाणं चरियं अद्धमहादिमंडलीयाणं । बिदियाए कक्खाए णच्चंते णच्चणा देवा ॥ २६१
बलदेवाण हरीणं पडिसत्तूणं विचित्तचरिदाणि । तदियाए कक्खाए वररसभावेहिं णच्चंति ॥ २६२
चोद्दसरयणवईणं णवणिहिसामीण चक्कवट्टीणं । अच्छरियचरित्ताणिं णच्चंति चउत्थकक्खाए ॥ २६३
सक्काण सुरिंदाणं सलोयपालाण चारुचरियाइं' । ते पंचमकक्खाए णच्चंति विचित्तभंगीहिं ॥ २६४
गणहरदेवादीणं विमलमुणिंदाण विविहरिद्धीणं । चरियाइं विचित्ताइं णच्चंते छट्ठकक्खाए ॥ २६५
चोत्तीसाइसयाणं बहुविहकल्लाणपाडिहेराणं । जिणणाहाण चरित्तं सत्तमकक्खाए णच्चंति ॥ २६६
दिव्ववरदेहजुत्ते वररयणविभूसणेहि कयसोहा । ते णच्चंते णिच्चं णियणियइंदाण अग्गेसुं ॥ २६७
एदा सत्त अणीया देविंदाणं हुवंति पत्तेक्कं । अण्णा वि छत्तचामरपीढाणि य बहुविहा होंति ॥ २६८

द्वितीय कक्षाके नर्तक देव अर्द्धमण्डलीक और महामण्डलीकादि पृथिवीपालकोंके चरित्रका अभिनय करते है ॥ २६१ ॥

तृतीय कक्षाके नर्तक देव उत्तम रस एवं भावोंके साथ बलदेव, नारायण और प्रतिनारायणोंके विचित्र चरित्रोंका अभिनय करते है ॥ २६२ ॥

चतुर्थ कक्षाके नर्तक देव चौदह रत्नोंके अधिपति और नव निधियोंके स्वामी ऐसे चक्रवर्तियोंके आश्चर्यजनक चरित्रोंका अभिनय करते है ॥ २६३ ॥

पंचम कक्षाके वे नर्तक देव लोकपालों सहित समस्त इन्द्रोंके सुन्दर चरित्रोंका विचित्र प्रकारोंसे अभिनय करते है ॥ २६४ ॥

छठी कक्षाके नर्तक देव विविध ऋद्धियोंके धारक गणधर देवादि निर्मल मुनीन्द्रोंके विचित्र चरित्रोंका अभिनय करते है ॥ २६५ ॥

सप्तम कक्षाके नर्तक देव चौंतीस अतिशयोंसे सयुक्त और बहुत प्रकारके मंगलमय प्रातिहार्योंसे युक्त जिननाथोंके चरित्रका अभिनय करते है ॥ २६६ ॥

दिव्य एवं उत्तम देहसे सहित और उत्तम रत्नविभूषणोंसे शोभायमान वे नर्तक देव नित्य ही अपने अपने इन्द्रोंके आगे नाचते है ॥ २६७ ॥

ये सात सेनायें प्रत्येक देवेन्द्रके होती है । इसके अतिरिक्त अन्य बहुत प्रकार छत्र, चँवर और पीठ भी होते है ॥ २६८ ॥

१ द ब चरियाणं. २ द ब उच्चरिय. ३ द ब सत्त पदा णाणीए. ४ द ब देविंदाण होंति.

सव्वाणि यणीयाणि वसहाणीयस्स होंति सारिसाणि । वरविविहभूसणेहिं विभूसिदंगाणि पत्तेक्कं ॥ २६९
सव्वाणि यणीयाणि कक्खं पडि छस्सयं सहावेणं । पुव्वं व विकुव्वणाए लोयविणिच्छयमुणी भणइ[1] ॥ २७०

६०० । ४२०० । पाठान्तरम् ।

वसहाणीयादीणं पुह पुह चुलसीदिलक्खपरिमाणं । पढमाए कक्खाए सेसासुं दुगुणदुगुणकमे ॥ २७१
एवं सत्तविहाणं सत्ताणीयाण[2] होंति पत्तेक्कं । संगायणिआहरिया एवं णियमा परूवेंति ॥ २७२

पाठान्तरम् ।

सत्ताणीयाहिवई जे देवा होंति दक्खिणिंदाणं । उत्तरइंदाण तहा ताणं णामाणि वोच्छामि ॥ २७३
वसहेसु दामयट्टी तुरंगमेसुं हवेदि हरिदामो । तह मादली[3] रहेसुं गजेसु एरावदो णाम ॥ २७४
वाऊ पदातिसंघे गंधव्वेसुं अरिट्ठसंका य । णीलंजण त्ति देवी विक्खादा णट्टयाणीए ॥ २७५
पीढाणीए दोण्णं अहिवइदेओ हुवेदि हरिणामो । सेसाणधिवईणं णामेसुं णत्थि उवएसो ॥ २७६

सब अनीकोंमेंसे प्रत्येक उत्तम विविध प्रकारके भूषणोंसे विभूषित शरीरवाले होते हुए वृषभानीकके सदृश हैं ॥ २६९ ॥

प्रत्येक कक्षाकी सब सेनाये स्वभावसे छह सौ और विक्रियाकी अपेक्षा पूर्वोक्त संख्याके समान है, ऐसा लोकविनिश्चयमुनि कहते है ॥ २७० ॥ ६०० × ७ = ४२०० ।

पाठान्तर ।

प्रथम कक्षामें वृषभादिक अनीकोंका प्रमाण पृथक् पृथक् चौरासी लाख है । शेष कक्षाओंमें क्रमशः इससे दूना दूना है । इस प्रकार सात प्रकार सप्तानीकोंमें प्रत्येकके है, ऐसा संगायणि आचार्य नियमसे निरूपण करते है ॥ २७१–२७२ ॥ पाठान्तर ।

दक्षिण इन्द्रों और उत्तर इन्द्रोंकी सात अनीकोंके जो अधिपति देव है उनके नामोंको कहते है ॥ २७३ ॥

वृषभोंमें दामयष्टि, तुरंगमोंमें हरिदाम, तथा रथोंमें मातलि, गजोंमें ऐरावत नामक, पदातिसंघमें वायु, गन्धर्वोंमें अरिष्टशंका (अरिष्टयशस्क) और नर्तकानीकमें नीलांजसा (नीलांजना) देवी, इस प्रकार सात अनीकोंमें ये महत्तर देव विख्यात है ॥ २७४–२७५ ॥

दोनोंकी पीठानीक (अश्वसेना) का अधिपति हरि नामक देव होता है । शेष अनीकोंके अधिपतियोंके नामोंका उपदेश नहीं है ॥ २७६ ॥

१ द ब 'मुणि भणइ. २ द ब सव्वेदाणं सत्ताणीयाणि. ३ द संवाहणि° ४ द ब उवरिम°. ५ द ब तह मरुदली. ६ द ब णीलंजसो.

अभियोगाणं अहिवइदेवा चेट्ठंदि दक्खिणिंदेसुं । बालकणामो उत्तरइंदेसुं पुप्फदंतो य ॥ २७७
सक्कदुगम्मि य वाहणदेवा[1] एरावदणाम हत्थि कुव्वंति । विकिरियाओ लक्खं उच्छेहं जोयणा दीहं ॥
१०००००।
एदाणं बत्तीसं होंति मुहा दिव्वरयणदामजुदा । पुह पुह रुणंति किंकिणिकोलाहलसद्दकयसोहा ॥ २७९
एक्केकमुहे चंचलचंदुज्जलचमरचारुरूवम्मि । चत्तारि होंति दंता धवला वररयणभरखचिदा ॥ २८०
एक्केकम्मि विसाणे एक्केकसरोवरो विमलवारी । एक्केकसरवरम्मि य एक्केकं कमलवणसंडा ॥ २८१
एक्केककमलसंडे बत्तीस विकस्सरा महापउमा । एक्केकमहापउमे एक्केकजोयणं पमाणेणं ॥ २८२
वरकंचणकयसोहा वरपउमा सुरविकुव्वणबलेणं । एक्केकमहापउमे णाडयसाला य एक्केक्का ॥ २८३
एक्केकाए तीए बत्तीस वरच्छरा पणच्चंति । एवं सत्ताणीया णिद्दिट्ठा बारसिंदाणं ॥ २८४
पुह पुह पइण्णयाणं अभियोगसुराण किब्बिसाणं च । संखातीदपमाणं भणिदं सव्वेसु इंदाणं ॥ २८५

दक्षिण इन्द्रोंमें आभियोग देवोंका अधिपति देव बालक नामक और उत्तर इन्द्रोंमें इनका अधिपति पुष्पदन्त नामक देव होता है ॥ २७७ ॥

सौधर्म और ईशान इन्द्रके वाहन देव विक्रियासे एक लाख उत्सेध योजन प्रमाण दीर्घ ऐरावत नामक हाथीको करते हैं ॥ २७८ ॥ १००००० ।

इनके दिव्य रत्नमालाओंसे युक्त बत्तीस मुख होते हैं जो घंटिकाओंके कोलाहल शब्दसे शोभायमान होते हुए पृथक् पृथक् शब्द करते हैं ॥ २७९ ॥

चंचल एवं चन्द्रके समान उज्ज्वल चामरोंसे सुन्दर रूपवाले एक एक मुखमें रत्नोंके समूहसे खचित धवल चार दांत होते हैं ॥ २८० ॥

एक एक विषाण (हाथी दांत) पर निर्मल जलसे युक्त एक एक सरोवर होता है । एक एक सरोवरमें एक एक उत्तम कमल-वनखण्ड होता है ॥ २८१ ॥

एक एक कमलखण्डमें विकसित बत्तीस महापद्म होते हैं, और एक एक महापद्म एक एक योजन प्रमाण होता है ॥ २८२ ॥

देवोंके विक्रिया बलसे वे उत्तम पद्म उत्तम सुवर्णसे शोभायमान होते हैं । एक एक महापद्मपर एक एक नाट्यशाला होती है ॥ २८३ ॥

उस एक एक नाट्यशालामें उत्तम बत्तीस अप्सरायें नृत्य करती हैं । इस प्रकार बारह इन्द्रोंकी सात सेनायें कही गयी हैं ॥ २८४ ॥

सभी [स्वर्गों] में इन्द्रोंके प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक देवोंका पृथक् पृथक् असंख्यात प्रमाण कहा गया है ॥ २८५ ॥

---

१ द ब वाहणएवा.

पडिइंदाणं सामाणियाण[1] तेत्तीससुरवराणं च । दसभेदा परिवारा णियइंदसमा य पत्तेक्कं ॥ २८६

चत्तारि सहस्साणिं सक्कादुगे दिग्गिदसामंता । एक्कं चेव सहस्सं सणक्कुमारादिदोण्हं पि ॥ २८७

४००० । १००० ।

पंचचउतियदुगाणं सयाणि बम्हिंदयादियंचउक्के । आणदपहुदिचउक्के पत्तेक्कं एक्कएक्कसयं ॥ २८८

५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० ।

पण्णास चउसयाणिं पंचसयब्भंतरादिपरिसाओ । सोमजमाणं भणिदा पत्तेक्कं सयलदक्खिणिंदेसुं ॥ २८९

५० । ४०० । ५०० ।

सट्ठी पंचसयाणिं छच्च सया ताओ तिण्णिपरिसाओ । वरुणस्स कुबेरस्स य सत्तरिया छस्सयाणि सत्तसया ॥

६० । ५०० । ६०० । ७० । ६०० । ७०० ।

चउदक्खिणइंदाणं कुबेरवरुणस्समत्तनिप्परिसा । कादव्व विवज्जासं उत्तरइंदाणं सेस पुव्वं वा ॥ २९१

५० । ४०० । ५०० । वरु ७० । ६०० । ७०० । कुबेर ६० । ५०० । ६०० ।

प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंमेंसे प्रत्येकके दश प्रकारके परिवार अपने इन्द्रके समान होते हैं ॥ २८६ ॥

सौधर्म और ईशान इन्द्रके लोकपालोंके सामन्त चार हजार और सनत्कुमारादि दोंके एक ही हजार होते हैं ॥ २८७ ॥ ४००० । १००० ।

ब्रह्मेन्द्रादिक चारके उक्त देव क्रमशः पांच सौ, चार सौ, तीन सौ और दो सौ तथा आनत आदि चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके एक एक सौ होते हैं ॥ २८८ ॥

५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० ।

समस्त दक्षिणेन्द्रोंमें प्रत्येकके सोम व यम लोकपालके अभ्यन्तरादि पारिषद देव क्रमसे पचास, चार सौ और पांच सौ कहे गये हैं ॥ २८९ ॥

अ. पा. ५० । म. पा. ४०० । बा. पा. ५०० ।

वे तीनों पारिषद देव वरुणके साठ, पांच सौ और छह सौ तथा कुबेरके सत्तर, छह सौ और सात सौ होते हैं ॥ २९० ॥

वरुण—अ. पा. ६०, म. पा. ५००, बा. पा. ६०० । कुबेर— अ. पा. ७०, म. पा. ६००, बा. पा. ७०० ।

चार दक्षिण इन्द्रोंके कुबेर और वरुणके तीनों पारिषद समान हैं । उत्तर इन्द्रोंके इससे विपरीत क्रम करना चाहिये । शेष पूर्वके समान समझना चाहिये (?) ॥ २९१ ॥

---

१ द ब सामाणियाणियाणं. २ द ब बम्हिंदयादिम°. ३ द ब आरण°.

सव्वेसु दिगिंदाणं सामंतसुराण तिण्णि परिसाओ। णियणियदिगिंदपरिसासरिसाओ[1] हवंति पत्तेक्कं ॥ २९२
सोमादिदिगिंदाणं सत्ताणीयाणि होंति पत्तेक्कं। अट्ठावीससहस्सा पढमं सेसेसु दुगुणकमा ॥ २९३
पंचत्तीसं लक्खा छप्पण्णसहस्सयाणि पत्तेक्कं। सोमादिदिगिंदाणं हुवेदि वसहादिपरिमाणं ॥ २९४
३५५६०००।
दोकोडीओ लक्खा अडदाल सहस्सयाणि बाणउदी। सत्ताणीयपमाणं पत्तेक्कं लोयपालाणं ॥ २९५
२४८९२०००।
जे अभियोगपइण्णयकिब्बिसिया होंति लोयपालाणं। ताण पमाणणिरूवणउवएसा संपइ पणट्ठा ॥ २९६
छल्लक्खा छासट्ठीसहस्सया छस्सयाणि छासट्ठी। सक्कस्स दिगिंदाणं विमाणसंखा य पत्तेक्कं ॥ २९७
६६६६६६।
तेसु पहाणविमाणा सयंपहारिट्ठजलपहा णामा। वग्गूपहो य कमसो सोमादियलोयपालाणं ॥ २९८
इय संखाणामाणिं सणक्कुमारिंदबम्हइंदेसुं। सोमादिदिगिंदाणं भणिदाणिं वरविमाणेसुं ॥ २९९
६६६६६६।

सब लोकपालोंके सामन्त सुरोंके तीनों पारिषदोंमेंसे प्रत्येक अपने अपने लोकपालोंके पारिषदोंके सदृश हैं (१) ॥ २९२ ॥

सोमादि लोकपालोंके जो सात सेनायें होती हैं उनमेंसे प्रत्येक प्रथम कक्षामें अट्ठाईस हजार और शेष कक्षाओंमें दुगुणित क्रमसे युक्त हैं ॥ २९३ ॥

सोमादिक लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके वृषभादिका प्रमाण पैंतीस लाख छप्पन हजार है ॥ २९४ ॥ ३५५६०००।

लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके सात अनीकोंका प्रमाण दो करोड़ अड़तालीस लाख बानबे हजार है ॥ २९५ ॥ २४८९२०००।

लोकपालोंके जो आभियोग्य, प्रकीर्णक और किल्विषिक देव होते हैं उनके प्रमाणके निरूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ २९६ ॥

सौधर्म इन्द्रके लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके विमानोंकी संख्या छह लाख छयासठ हजार छह सौ छयासठ है ॥ २९७ ॥ ६६६६६६।

उन विमानोंमें सोमादि लोकपालोंके क्रमसे स्वयंप्रभ, अरिष्ट, जलप्रभ और वल्गुप्रभ नामक प्रधान विमान हैं ॥ २९८ ॥

सनत्कुमार और ब्रह्मेन्द्रके सोमादि लोकपालोंके उत्तम विमानोंकी यहीं संख्या और नाम कहे गये हैं ॥ २९९ ॥ ६६६६६६।

---

१ द ब क दिगिंदपरिसाओ.

होदि हु सयंपहक्खं वरजेट्ठमयंजणाणि वग्गू य । ताण पहाणविमाणा सेसेसुं दक्खिणिंदेसुं ॥ ३००
सोमं सव्वदभद्दा सुभद्दअमिदाणि[1] सोमपहुदीणं । होंति पहाणविमाणा सव्वेसुं उत्तरिंदाणं ॥ ३०१
ताणं विमाणसंखाउवएसो णत्थि कालयवमेणं । ते सव्वे वि दिणिंदा तेसु विमाणेसु कीडंते ॥ ३०२
सोमजमा समरिद्धी दोण्णि वि ते होंति दक्खिणिंदेसुं । तेसिं अधिओ वरुणो वरुणादो होदि धणणाहो ॥
सोमजमा समरिद्धी दोण्णि वि ते होंति उत्तरिंदाणं । तेसु कुबेरो अधिओ हुवेदि वरुणो कुबेरादो ॥
इंदपडिंदादीणं देवाणं जेत्तियाओ देवीओ । चेट्ठंति तेत्तियाणिं[2] वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ ३०५
बलणामा अच्चिणिया ताओ सव्विंदसरिसणामाओ । एक्केक्कउत्तरिंदे तम्मेत्ता जेट्ठदेवीओ ॥ ३०६
किण्हा या ये पुराइं रामावइरामरक्खिदा वसुका । वसुमित्ता वसुधम्मा वसुंधरा सव्वइंदसमणामा ॥

सौम्य दक्षिण इन्द्रोंमें स्वयंप्रभ, वरज्येष्ठ, अंजन और वल्गु, ये उन लोकपालोंके प्रधान विमान होते हैं ॥ ३०० ॥

सब उत्तर इन्द्रोंके सोमादिक लोकपालोंके सौम (सोम), सर्वतोभद्र, सुभद्र और अमित नामक प्रधान विमान होते हैं ॥ ३०१ ॥

उन विमानोंकी संख्याका उपदेश कालवश इस समय नहीं है । वे सब लोकपाल उन विमानोंमें क्रीड़ा किया करते हैं ॥ ३०२ ॥

दक्षिण इन्द्रोंके सोम और यम ये दोनों लोकपाल समान ऋद्धिवाले होते हैं । उनसे अधिक वरुण और वरुणसे अधिक कुबेर होता है ॥ ३०३ ॥

उत्तर इन्द्रोंके वे दोनों सोम और यम समान ऋद्धिवाले होते हैं । उनसे अधिक कुबेर और कुबेरसे अधिक वरुण होता है ॥ ३०४ ॥

इन्द्र और प्रतीन्द्रादिक देवोंके जितनी जितनी देवियां होती हैं उनको अनुक्रमसे कहते हैं ॥ ३०५ ॥

बलनामा अर्चिनिका ये सब इन्द्रोंके सदृश नामवाली होती है । एक एक उत्तर इन्द्रके इतनी ही ज्येष्ठ देवियां होती हैं ॥ ३०६ ॥

कृष्णा,...(?) रामापति, रामरक्षिता, वसुका, वसुमित्रा, वसुधर्मी, वसुंधरा सब इन्द्रसम नामवाली हैं ॥ ३०७ ॥

---

१ द ब °समिदाणि. २ द ब तेत्तियाणं.

सक्कदुगम्मि सहस्सा सोलस एक्केक्कगेट्ठदेवीए । चेट्ठंति चारुअणुवमरूवा[1] परिवारदेवीओ ॥ १०८

अट्ठचउदुगसहस्सा एक्कसहस्सं सणक्कुमारदुगे । बम्हम्मि लंतविंदे कमेण महसुक्कइंदम्मि ॥ १०९

पंचसया देवीओ होंति सहस्सारइंददेवीणं । अट्ठाइज्जसयाणिं आणदइंदादियचउक्के ॥ ११०

१६००० । ८००० । ४००० । २००० । १००० । ५०० । २५० ।

बत्तीसमहस्साणिं सोहम्मदुगम्मि होंति वल्लहिया । पत्तेक्कमट्ठसहस्सा सणक्कुमारिंदजुगलम्मि ॥ १११

३२००० । ३२००० । ८००० । ८००० ।

बम्हिंदे दुसहस्सा पंचसयाणिं च लंतविंदम्मि । अट्ठाइज्जसयाणिं हुवंति महसुक्कइंदम्मि ॥ ११२

२००० । ५०० । २५० ।

पणुवीसजुदेक्कसयं होंति सहस्सारइंदवल्लहिया । आणदपाणदआरणअच्चुदइंदाण तेसट्ठी ॥ ११३

१२५ । ६३ ।

सौधर्म और ईशान इन्द्रकी एक एक ज्येष्ठ देवीके सुन्दर व अनुपम रूपवाली सोलह हजार परिवार देवियां होती है ॥ १०८ ॥ १६००० ।

सानत्कुमार और माहेन्द्र, ब्रह्मेन्द्र, लांतवेन्द्र और महाशुक्र इन्द्रकी एक एक ज्येष्ठ देवीके क्रमसे आठ हजार, चार हजार, दो हजार और एक हजार परिवार देवियां होती है ॥ १०९ ॥

स. मा. ८०००, ब्र. ४०००, लां. २००० , म. १००० ।

सहस्रार इन्द्रकी प्रत्येक ज्येष्ठ देवीके पांच सौ परिवार देवियां और आनतेन्द्रादिक चारकी प्रत्येक ज्येष्ठ देवीके अढ़ाई सौ परिवार देवियां होती है ॥ ११० ॥

सह. ५००, आनतेन्द्रादिक चार २५० ।

सौधर्मद्विकमें प्रत्येक इन्द्रके बत्तीस हजार और सनत्कुमारादि दो इन्द्रोंमें प्रत्येकके आठ हजार वल्लभा देवियां होती है ॥ १११ ॥

सौ. ३२०००, ई. ३२०००, स. ८०००, मा. ८००० ।

ब्रह्मेन्द्रके दो हजार, लांतवेन्द्रके पांच सौ, और महाशुक्र इन्द्रके अढ़ाई सौ वल्लभा देवियां होती है ॥ ११२ ॥ ब्र. २०००, लां. ५००, म. २५० ।

सहस्रार इन्द्रके एक सौ पच्चीस और आनत-प्राणत-आरण-अच्युत इन्द्रोंके तिरेसठ वल्लभायें होती हैं ॥ ११३ ॥ स. १२५, आनतादि ६३ ।

---

१ द ब 'रूवाणं. २ द ब °अट्ठ°.

परिवारवल्लभाओ सक्काओदुगस्स जेट्ठदेवीओ। णियसमविकुव्वणाओ पत्तेक्कं सोलससहस्सा ॥ ३१४

१६०००।

तत्तो दुगुणं ताओ णियणियतणुविकुव्वणकराओ। आणदइंदचउक्कं जाव कमेणं पवत्तव्वो ॥ ३१५

३२०००। ६४०००। १२८०००। २५६०००। ५१२०००। १०२४०००।

विणयासिरिकणयमालापउमाणंदासुसीमजिणदत्ता। एक्केक्कदक्खिणिंदे एक्केक्का पाणवल्लहिया ॥

एक्केक्कउत्तरिंदे एक्केक्का होदि हेममाला य। णीलुप्पलविस्सुदया णंदावइलक्खणाओ जिणदासी ॥

सयलिंदवल्लभाणं चत्तारि महत्तरीओ पत्तेक्कं। कामा कामिणिआओ पंकयगंधा यलंबुणामा य ॥३१८

पडिइंदादितियस्स य[1] णियणियइंदेहिं सरिसदेवीओ। संखाए णामेहिं विक्किरियारिद्धि चत्तारि ॥ ३१९

तप्परिवारा कमसो चउएक्कसहस्सयाणि पंचसया। अड्ढाइज्जसयाणि तहलतेसट्ठिबत्तीसं ॥ ३२०

४०००। २०००। १०००। ५००। २५०। १२५। ६३। ३२।

सौधर्म और ईशान इन्द्रकी परिवारवल्लभाओं और ज्येष्ठ देवियोंमें प्रत्येक अपने समान सोलह हजार प्रमाण विक्रिया करनेमें समर्थ हैं ॥ ३१४ ॥ १६०००।

इसके आगे आनतादि चार इन्द्रों तक वे ज्येष्ठ देवियां क्रमशः इससे दूने प्रमाण अपने अपने शरीरकी विक्रिया करनेवाली हैं, ऐसा क्रमसे कहना चाहिए ॥ ३१५ ॥

स. मा. ३२०००, ब्र. ६४०००, लां. १२८०००, म. २५६०००, सह. ५१२०००, आनतादि १०२४०००।

एक एक दक्षिण इन्द्रके विनयश्री, कनकमाला, पद्मा, नंदा, सुसीमा और जिनदत्ता, इस प्रकार एक एक प्राणवल्लभा होती है ॥ ३१६ ॥

हेममाला, नीलोत्पला, विश्रुता, नन्दा, वैलक्षणा और जिनदासी, इस प्रकार एक एक उत्तर इन्द्रके एक एक प्राणवल्लभा होती है ॥ ३१७ ॥

सब इन्द्रोंकी वल्लभाओंमेंसे प्रत्येकके कामा, कामिनिका, पंकजगंधा और अलंबु (अलंबूषा) नामक चार महत्तरी (गणिका महत्तरी) होती हैं ॥ ३१८ ॥

प्रतीन्द्रादिक तीनकी देवियां संख्या, नाम, विक्रिया और ऋद्धि, इन चारमें अपने अपने इन्द्रोंके सदृश हैं ॥ ३१९ ॥

उनके परिवारका प्रमाण क्रमसे चार हजार, एक हजार, पांच सौ, अढ़ाई सौ, इसका आधा अर्थात् एक सौ पच्चीस, तिरेसठ और बत्तीस है ॥ ३२० ॥

४०००, २०००, १०००, ५००, २५०, १२५, ६३, ३२।

---

१ द ब णियसमय°. २ द ब पडिइंदातिधियस्स य.

णिरुवमलावण्णाओ वरविविहविभूषणाओ पत्तेक्कं । अड्ढकोडिमेत्ता वल्लहिया लोयपालाणं ॥ ३२१

३५०००००० ।

सामाणियदेवीओ सव्वादिगिंदाण होंति पत्तेक्कं । णियणियदिगिंददेवीसमाणसंखाओ सव्वाओ ॥ ३२२

सव्वेसुं इंदेसुं तणुरक्खसुराण होंति देवीओ । पुह छस्सयमेत्ताणिं णिरुवमलावण्णरूवाओ ॥ ३२३

६०० ।

आदिमदोजुगलेसुं बम्हादिसु चउसु आणदचउक्के । पुह पुह सव्वियदाणं अब्भंतरपरिसदेवीओ ॥ ३२४

पंचसयचउसयाणिं तिण्णा दोसयाणि एक्कसयं । पण्णासं पणुवीसं कमेण एदाण णादव्वं ॥ ३२५

५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० । ५० । २५ ।

छप्पंचचउसयाणिं तिण्हदुगएक्कसयाणि पण्णासा । पुव्वोदिदठाणेसुं मज्झिमपरिसाए देवीओ ॥ ३२६

६०० । ५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० । ५० ।

सत्तच्छपंचचउतियदुगएक्कसयाणि पुव्वठाणेसुं । सव्वियदाणं होंति हु बाहिरपरिसाए देवीओ ॥ ३२७

७०० । ६०० । ५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० ।

प्रत्येक लोकपालके अनुपम लावण्यसे युक्त और विविध प्रकारके भूषणोंवाली ऐसी साढ़े तीन करोड़ वल्लभायें होती हैं ॥ ३२१ ॥ ३५०००००० ।

सब लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके सामानिक देवोंकी सब देवियां अपने अपने लोकपालोंकी देवियोंके समान संख्यावाली हैं ॥ ३२२ ॥

सब इन्द्रोंमें तनुरक्षक देवोंकी अनुपम लावण्यरूपवाली देवियां पृथक् पृथक् छह सौ मात्र होती हैं ॥ ३२३ ॥

आदिके दो युगल, ब्रह्मादिक चार युगल और आनतादिक चारमें सब इन्द्रोंके अभ्यन्तर पारिषद देवियां क्रमशः पृथक् पृथक् पांच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ, पचास और पच्चीस जानना चाहिये ॥ ३२४-३२५ ॥

सौ. ई. ५००, स. मा. ४००, ब्र. ३००, लां. २००, म. १००, सह. ५०, आनतादि चार २५ ।

पूर्वोक्त स्थानोंमें मध्यम पारिषद देवियां क्रमसे छह सौ, पांच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ और पचास हैं ॥ ३२६ ॥

सौ. ई. ६००, स. मा. ५००, ब्र. ४००, लां. ३००, म. २००, सह. १००, आनतादिक चार ५० ।

पूर्वोक्त स्थानोंमें सब इन्द्रोंके बाह्य पारिषद देवियां क्रमसे सात सौ, छह सौ, पांच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ और एक सौ हैं ॥ ३२७ ॥

सौ. ई. ७००, स. मा. ६००, ब्र. ५००, लां. ४००, म. ३००, सह. २००, आनतादि चार १०० ।

सत्ताणीयपहूणं पुह पुह देवीओ छस्सया होंति । दोण्णि सया पत्तेक्कं देवीओ आणीयदेवाणं ॥ ३२८

६०० । २०० ।

जाओ पइण्णयाणं अभियोगसुराण किब्बिसाणं च । देवीओ ताण संखा उवएसो संपइ पणट्ठो ॥ ३२९

तणुरक्खप्पहुदीणं पुह पुह एक्केक्कजेट्ठदेवीओ । एक्केक्का वल्लहिया विविहालंकारकंतिल्ला ॥ ३३०

सोहम्मीसाणेसुं उप्पज्जंते हु सव्वदेवीओ । उवरिमकप्पे ताणं उप्पत्ती णत्थि कइया वि ॥ ३३१

छल्लक्खाणि विमाणा सोहम्मे दक्खिणिंदसव्वाणं । ईसाणे चउलक्खा उत्तरइंदाण य विमाणा ॥ ३३२

६००००० । ४००००० ।

तेसुं उप्पण्णाओ देवीओ भिण्णओहिणाणेहिं । णादूणं णियकप्पे णेंति हु देवा सरागमणा ॥ ३३३

सोहम्मम्मि विमाणा सेसा छव्वीसलक्खसंखा जे । तेसुं उप्पज्जंते देवा देवीहि सम्मिस्सा ॥ ३३४

ईसाणम्मि विमाणा सेसा चउवीसलक्खसंखा जे । तेसुं उप्पज्जंते देवीओ देवमिस्साओ ॥ ३३५

सात अनीकोंके प्रभुओंके पृथक् छह सौ और प्रत्येक अनीक देवके दो सौ देवियां होती हैं ॥ ३२८ ॥ महत्तर ६००, अनीक २०० ।

प्रकीर्णक, आभियोग्य सुर और किल्विषिक देवोंके जो देवियां है उनकी संख्याका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ३२९ ॥

तनुरक्षक आदि देवोंके पृथक् पृथक् विविध अलंकारोंसे शोभायमान एक एक ज्येष्ठ देवी और एक एक वल्लभा होती है ॥ ३३० ॥

सब देवियां सौधर्म और ईशान कल्पोंमें ही उत्पन्न होती हैं, इससे उपरिम कल्पोंमें उनकी उत्पत्ति कदापि नहीं होती ॥ ३३१ ॥

सब दक्षिण इन्द्रोंके सौधर्म कल्पमें छह लाख विमान और उत्तर इन्द्रोंके ईशान कल्पमें चार लाख विमान है ॥ ३३२ ॥ सौ. ६०००००, ई. ४०००००।

उन कल्पोंमें उत्पन्न हुई देवियोंको भिन्न अवधिज्ञानसे जानकर सराग मनवाले देव अपने कल्पमें ले जाते है ॥ ३३३ ॥

सौधर्म कल्पमें शेष जो छब्बीस लाख विमान है उनमें देवियोंसे सहित देव उत्पन्न होते है ॥ ३३४ ॥

ईशान कल्पमें जो शेष चौबीस लाख विमान हैं उनमें देवोंसे युक्त देवियां उत्पन्न होती है ॥ ३३५ ॥

सोहम्मीसाणेसुं देवा सव्वे वि कायपडिचारा । होंति हु सणक्कुमारप्पहुदी दु प्फासपडिचारा । ३३६
बम्हाभिधाणकप्पे लंतवकप्पम्मि रूवपडिचारा । कप्पम्मि महासुक्के सहस्सयारम्मि सद्दपडिचारा ॥
आणदपाणदआरणअच्चुदकप्पेसु चित्तपडिचारा । एत्तो सक्किंदाणं आवासविधिं परूवेमो ॥ ३३८
पढमादु एक्कतीसे पभणामजुदस्स दक्खिणोलीए । बत्तीसेदिबद्धे अट्ठारसमम्मि चेट्ठदे सक्को ॥ ३३९
तस्सिंदयस्स उत्तरदिसाए बत्तीससेढिबद्धेसुं । अट्ठारसमे चेट्ठदि ईदो ईसाणणामो य ॥ ३४०
पढमादु अट्ठतीसे दक्खिणपंतीए चक्कणामस्स । पणुवीससेढिबद्धे सोलसमे तह सणक्कुमारिंदो ॥ ३४१
तस्सिंदयस्स उत्तरदिसाए पणुवीससेढिबद्धम्मि । सोलसमसेढिबद्धे चेट्ठेदि महिंदणामिंदो ॥ ३४२
बम्हुत्तरस्स दक्खिणदिसाए इगिवीससेढिबद्धेसुं । चोद्दसमसेढिबद्धे चेट्ठेदि हु बम्हकप्पिंदो ॥ ३४३
लंतवइंदयदक्खिणदिसाए वीसाए सेढिबद्धेसुं । बारसमसेढिबद्धे चेट्ठेदि हु लंतविंदो वि ॥ ३४४

सौधर्म-ईशान कल्पोंमें सब ही देव कायप्रवीचारसे सहित और सानत्कुमार आदि स्पर्शप्रवीचारसे युक्त होते है ॥ ३३६ ॥

ब्रह्म नामक कल्पमें व लांतव कल्पमें रूपप्रवीचारसे युक्त तथा महाशुक्र व सहस्रार कल्पमें शब्दप्रवीचारसे युक्त होते है ॥ ३३७ ॥

आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, इन कल्पोंमें देव चित्तप्रवीचार (मनःप्रवीचार) से सहित होते है । यहांसे आगे सब इन्द्रोंकी आवासविधिको कहते है ॥ ३३८ ॥

प्रथम इकतीस इन्द्रकोंमें प्रभ नाम युक्त इन्द्रककी दक्षिण श्रेणीमें बत्तीस श्रेणीबद्धोंमेंसे अठारहवेंमें सौधर्म इन्द्र स्थित है ॥ ३३९ ॥

इसी इन्द्रककी उत्तर दिशाके बत्तीस श्रेणीबद्धोंमेंसे अठारहवेंमें ईशान नामक इन्द्र स्थित है ॥ ३४० ॥

पहिलेसे अड़तीसवें चक्र नामक इन्द्रककी दक्षिण पंक्तिमें पच्चीस श्रेणीबद्धोंमेंसे सोलहवेंमें सानत्कुमार इन्द्र स्थित है ॥ ३४१ ॥

इस इन्द्रककी उत्तर दिशामें पच्चीस श्रेणीबद्धोंमेंसे सोलहवें श्रेणीबद्धमें माहेन्द्र नामक इन्द्र स्थित है ॥ ३४२ ॥

ब्रह्मोत्तरकी दक्षिण दिशामें इक्कीस श्रेणीबद्धोंमेंसे चौदहवें श्रेणीबद्धमें ब्रह्म कल्पका इन्द्र स्थित है ॥ ३४३ ॥

लांतव इन्द्रककी दक्षिण दिशामें बीस श्रेणीबद्धोंमेंसे बारहवें श्रेणीबद्धमें लांतव इन्द्र स्थित है ॥ ३४४ ॥

महसुक्किंदयउत्तरदिसाए अट्ठरससेढिबद्धेसुं । दसमम्मि सेढिबद्धे वसइ महासुक्कणामिंदो ॥ ३४५
होदि सहस्सारुत्तरदिसाए सत्तरससेढिबद्धेसुं । अट्ठमए सेढिबद्धे वसइ सहस्सारणामिंदो ॥ ३४६
जिणदिट्ठणामइंदयदक्खिणओलीए सेढिबद्धेसुं । छट्ठमसेढीबद्धे आणदणामिंदआवासो ॥ ३४७
तस्सिंदयस्स उत्तरदिसाए तस्सेवसेढिबद्धेसुं । छट्ठमसेढीबद्धे पाणदणामिंदआवासो ॥ ३४८
आरणइंदयदक्खिणदिसाए एक्कारससेढिबद्धम्मि । छट्ठमसेढीबद्धे [आरणइंदस्स आवासो ॥ ३४९
तस्सिंदयस्स उत्तरदिसाए एक्कारससेढिबद्धम्मि । छट्ठमसेढीबद्धे] अच्चुदइंदस्स आवासो ॥ ३५०
छज्जुगलसेसएसुं अट्ठारसमम्मि सेढिबद्धेसुं । दोहीणकमे दक्खिणउत्तरभागम्मि होंति दोविंदा ॥ ३५१
पाठान्तरम् ।
एदाणं सेढीओ पत्तेक्कमसंखजोयणपमाणा । रविमंडलसमवट्टा णाणावररयणणियरमया ॥ ३५२

महाशुक्र इन्द्रककी उत्तर दिशामें अठारह श्रेणीबद्धोंमेंसे दसवें श्रेणीबद्धमें महाशुक्र नामक इन्द्र निवास करता है ॥ ३४५ ॥

सहस्रार इन्द्रककी उत्तर दिशामें सत्तरह श्रेणीबद्धोंमेंसे आठवें श्रेणीबद्धमें सहस्रार नामक इन्द्र निवास करता है ॥ ३४६ ॥

जिन भगवान्‌से देखे गये नामवाले इन्द्रककी दक्षिणपंक्तिके श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें आनत नामक इन्द्रका निवास है ॥ ३४७ ॥

इस इन्द्रककी उत्तर दिशामें उतनी ही संख्या प्रमाण श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें प्राणत नामक इन्द्रका निवास है ॥ ३४८ ॥

आरण इन्द्रककी दक्षिण दिशाके ग्यारह श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें आरण इन्द्रका निवास है ॥ ३४९ ॥

उस इन्द्रककी उत्तर दिशाके ग्यारह श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें अच्युत इन्द्रका आवास है ॥ ३५० ॥

इह युगलों और शेष कल्पोंमें यथाक्रमसे प्रथम युगलमें अपने अन्तिम इन्द्रकसे सम्बद्ध अठारहवें श्रेणीबद्धमें तथा इससे आगे दो हीन क्रमसे अर्थात् सोलहवें, चौदहवें, बारहवें, दसवें, आठवें और छठे श्रेणीबद्धमें दक्षिण भागमें दक्षिण इन्द्र और उत्तर भागमें उत्तर इन्द्र स्थित है ॥ ३५१ ॥ पाठान्तर ।

सूर्यमण्डलके समान गोल और नाना उत्तम रत्नसमूहोंसे निर्मित इनकी श्रेणियोंमेंसे प्रत्येक असंख्यात योजन प्रमाण है ॥ ३५२ ॥

१ ब °मसंखेज्जजोयण°.

तेसुं तडवेदीओ कणयमया होंति विविहधयमाला । चरियट्टालयचारू वरतोरणसुंदरदुवारा ॥ ३५३

दारोवरिमतलेसुं जिणभवणेहिं विचित्तरूवेहिं । उत्तुंगतोरणेहिं सविसेसं सोहमाणाओ ॥ ३५४

एवं पवण्णिदाणं सेढीणं होंति ताण बहुमज्झे । णियणियणामजुदाइं सक्कप्पहुदीण णयराइं ॥ ३५५

चुलसीदीओ सीदी बाहत्तरिसत्तरीओ सट्ठी य । पण्णासचालतीसा वीस सहस्साणि जोयणया ॥ ३५६

८४००० । ८०००० । ७२००० । ७०००० । ६०००० । ५०००० । ४०००० । ३०००० । २०००० ।

सोहम्मिंदादीणं अट्ठसुरिंदाण सेसइंदाणं । रायंगणस्स वासो पत्तेक्कं एस णादव्वो ॥ ३५७

रायंगणभूमीए समंतदो दिव्वकणयतडवेदी । चरियट्टालयचारू णच्चंतविचित्तधयमाला ॥ ३५८

सक्कदुगे तिण्णिसया अड्ढाइज्जासयाणि उवरिदुगे । बम्हिंदे दोण्णिसया आदिमपायारउच्छेहो ॥ ३५९

३०० । २५० । २०० ।

उनमें मार्ग व अट्टालिकाओंसे सुन्दर, उत्तम तोरणोंसे युक्त सुन्दर द्वारोंवाली, और विविध प्रकारकी ध्वजासमूहोंसे युक्त सुवर्णमय तटवेदियां है ॥ ३५३ ॥

द्वारोंके उपरिम तलोंपर उन्नत तोरणोंसे सहित और विचित्र रूपवाले ऐसे जिनभवनोंसे वे वेदियां विशेष शोभायमान हैं ॥ ३५४ ॥

इस प्रकार वर्णित उन श्रेणियोंके बहुमध्य भागमें अपने अपने नामसे युक्त सौधर्म इन्द्र आदिके नगर है ॥ ३५५ ॥

चौरासी हजार, अस्सी हजार, बहत्तर हजार, सत्तर हजार, साठ हजार, पचास हजार, चालीस हजार, तीस हजार और बीस हजार योजन; यह सौधर्मादि आठ सुरेन्द्र और शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके राजांगणका विस्तार जानना चाहिये ॥ ३५६–३५७ ॥

सौ. ८४०००, ई. ८००००, सान. ७२०००, मा. ७००००, ब्र. ६००००, लां. ५००००, म. ४००००, सह. ३००००, आनतादिक चार २००००।

राजांगण भूमिके चारों ओर दिव्य सुवर्णमय तटवेदी है। यह वेदी मार्ग व अट्टालिकाओंसे सुन्दर तथा नाचती हुई विचित्र ध्वजापंक्तियोंसे युक्त है ॥ ३५८ ॥

शक्रद्विक अर्थात् सौधर्म और ईशान इन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध तीन सौ, उपरिद्विक अर्थात् सानत्कुमार और माहेन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध अढ़ाई सौ तथा ब्रह्मेन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध दो सौ योजन है ॥ ३५९ ॥

सौ. ई. ३००, सान. मा. २५०, ब्र. २००।

पण्णासजुदेक्कसया वीसब्भहियं सयं सयं सुद्धं । सो लंतविंदतिदए असीदि पत्तेक्कआणदादिम्मि ॥ ३६०
१५० । १२० । १०० । ८० ।

पण्णासं पणुवीसं तस्सद्धं तद्दलं च चत्तारिं । तिण्णि य अड्ढाइज्जं जोयणया तह कमे गाढं ॥ ३६१
५० । २५ । २५/२ | २५/४ | ४ । ३ । ५/२ ।

जं गाढस्स पमाणं तं चिय बहलत्तणं मि[1] णादव्वं । आदिमपायारस्स य कमसोयं पुव्वठाणेसुं ॥ ३६२

सक्कदुगे चत्तारो तह तिण्णि सणक्कुमारइंददुगे । बम्हिंदे दोण्णि सया सयमेक्कं आणदादिइंदेसुं ॥ ३६३
[४०० । ३०० । २०० ।] १६० । १४० । १२० । १०० ।

चत्तारि तिण्णि दोण्णि य सयाणि सयमेक्क सट्ठिसंजुत्तं । चालीसजुदेक्कसयं वीसब्भहियं सयं एक्कं ॥ ३६४
४०० । ३०० । २०० । १६० । १४० । १२० । १०० ।

एदाइ जोयणाइं गोउरदाराण होइ उच्छेहो । सोहम्मप्पहुदीसुं पुव्वोदिदसत्तठाणेसुं ॥ ३६५

एक सौ पचास, एक सौ बीस और केवल सौ, यह क्रमसे लांतवेन्द्रादिक तीनके आदिम प्राकारका उत्सेधप्रमाण है । प्रत्येक आनतेन्द्रादिके राजांगणका उत्सेध अस्सी योजन है ॥ ३६० ॥ लां. १५०, म. १२०, सह. १००, आनतादि प्रत्येक ८० ।

उपर्युक्त आदिम प्राकारका अवगाढ़ क्रमशः पचास, पच्चीस, उसका आधा अर्थात् साढ़े बारह, उसका भी आधा अर्थात् सवा छह, चार, तीन और अढ़ाई योजन प्रमाण है ॥ ३६१ ॥

सौ. ई. ५०, सा. मा. २५, ब्र. १२½, लां. ६¼, म. ४, सह. ३, आनतादिक २½ योजन ।

पूर्वोक्त स्थानोंमें जो आदिम प्राकारके अवगाढ़का प्रमाण है वही क्रमसे उसका बाहल्य भी जानना चाहिये ॥ ३६२ ॥

शक्रद्विकमें चार सौ, तथा सानत्कुमार इन्द्रद्विकमें तीन सौ, ब्रह्मेन्द्रमें दो सौ [लांतव कल्पमें एक सौ साठ, महाशुक्रमें एक सौ चालीस, सहस्रारमें एक सौ बीस] और आनतादि इन्द्रोंमें एक सौ [इतने प्रत्येक दिशामें उन प्राकारोंके गोपुरद्वार हैं] ॥ ३६३ ॥

चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ साठ, एक सौ चालीस, एक सौ बीस और एक सौ, इतने योजन प्रमाण सौधर्म आदि पूर्वोक्त सात स्थानोंमें गोपुरद्वारोंका उत्सेध है ॥३६४-३६५॥

सौ. ई. ४००, सान. मा. ३००, ब्र. २००, लां. १६०, म. १४०. सह. १२०,
आनतादि १०० ।

---

१ द ब बहलत्तणम्मि. २ द ब १६१.

सदणउदिसीदिसत्तरि पण्णासं चाल तीस होंति कमा । जोयणया विस्थारा गोउरदाराण पत्तेकं ॥ ३६६
१०० । ९० । ८० । ७० । ५० । ४० । ३० ।

रायंगणबहुमज्झे एक्केक्कपहाणदिव्वपासादा । एक्केक्कासें इंदे णियणियइंदाण णामसमा ॥ ३६७

धुव्वंतधयवदाया मुत्ताहलहेमदामकमणिज्जा । वररयणमत्तवारणणाणाविहभोइसाभरणा ॥ ३६८

दिप्पंतरयणदीया वज्जकवाडेहिं सुंदरदुवारा । दिव्ववरधूवसुरही सेज्जासणपहुदिपरिपुण्णा ॥ ३६९

सत्तट्ठणवदसादियविचित्तभूमीहिं भूसिदा सव्वे । हुव्वंति रयणखचिदा सोहंते सासयसरूवा ॥ ३७०

छस्सयपंचसयाणि पण्णुत्तरचउसयाणि उच्छेहो । एदाणं सक्कदुगे दुइंदजुगलम्मि[1] बम्हिंदे[2] ॥ ३७१
६०० । ५०० । ४५० ।

चत्तारिसय पणुत्तरतिण्णिसया केवला य तिण्णि सया । सो लंतविंदतिदए आणदपहुदीसु दुसयपण्णासा ॥
४०० । ३५० । ३०० । २५० ।

उपर्युक्त स्थानोंमें गोपुरद्वारोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार क्रमसे सौ, नब्बे, अस्सी, सत्तर, पचास, चालीस और तीस योजन प्रमाण है ॥ ३६६ ।

सौ. ई. १००, सान. मा. ९०, ब्र. ८०, लां ७०, म. ५०, सह. ४०, आनतादि ३० ।

राजांगणके बहुमध्य भागमें एक एक इन्द्रका अपने अपने इन्द्रोंके नामोंके समान एक एक प्रधान दिव्य प्रासाद है ॥ ३६७ ॥

सब प्रासाद फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित, मुक्ताफल एवं सुवर्णकी मालाओंसे रमणीय, उत्तम रत्नमय मत्तवारणोंसे संयुक्त, नाना प्रकारके सोलह आभरणोंवाले, चमकते हुए रत्नदीपकोंसे सुशोभित, वज्रमय कपाटोंसे सुन्दर द्वारोंवाले, दिव्य उत्तम धूपसे सुगंधित, शय्या व आसन आदिसे परिपूर्ण और सात, आठ, नौ एवं दश, इत्यादिक विचित्र भूमियोंसे भूषित हैं । शाश्वत स्वरूपसे युक्त ये प्रासाद रत्नोंसे खचित होते हुए शोभायमान है ॥३६८–३७०॥

शक्रद्विक, सानत्कुमार-माहेन्द्र युगल और ब्रह्मेन्द्रके इन प्रासादोंका उत्सेध क्रमशः छह सौ, पांच सौ और चार सौ पचास योजन प्रमाण है ॥ ३७१ ॥

सौ. ई. ६००, सान. मा. ५००, ब्र. ४५० यो. ।

वह प्रासादोंका उत्सेध लांतवेन्द्रादि तीनके क्रमसे चार सौ, तीन सौ पचास और केवल तीन सौ तथा आनतेन्द्रादिकोंके दो सौ पचास योजन प्रमाण है ॥ ३७२ ॥

लां. ४००, म. ३५०, सह. ३००, आनतादि २५० यो. ।

---

१ द ब दुइंदजुगलम्मि. २ द बम्हिंदे ब.

एदाणं वित्थारा णियणियउच्छेहपंचमविभागा । वित्थारद्धं गाढं पत्तेक्कं सव्वपासादे ॥ ३७३
पासादाणं मज्झे सपादपीढा यकट्ठिमायारा[1] । सिंहासणा विसाला वररयणमया विरायंति ॥ ३७४
सिंहासणाण सोहा जा एदाणं विचित्तरूवाणं । ण य सक्का वोत्तुं मे[2] पुण्णफलं[3] एत्थ पच्चक्खं ॥ ३७५
सिंहासणमारूढा सोलसवरभूसणेहि सोहिल्ला । सम्मत्तरयणसुद्धा सव्वे इंदा विरायंति ॥ ३७६
पुव्वज्जिदाहि सुचरिदकोडीहि संचिदाए लच्छीए . सक्कादीणं उवमा का दिज्जइ णिरुवमाणाए ॥ ३७७
देवीहिं पडिंदेहिं सामाणियपहुदिदेवसंघेहिं । सेविज्जंते णिच्चं इंदा वरछत्तचमरधारीहिं ॥ ३७८
सट्ठिसहस्सब्भहियं एक्कं लक्खं हुवंति पत्तेक्कं । सोहम्मीसाणिंदे अट्ठट्ठा अग्गदेवीओ ॥ ३७९

१६०००० । ८ ।

अग्गमहिसीओ अट्ठ माहिंदसणक्कुमारइंदाणं । बाहत्तरिं सहस्सा देवीओ होंति पत्तेक्कं ॥ ३८०

८ । ७२००० ।

इन प्रासादोंका विस्तार अपने अपने उत्सेधके पांचवें भागप्रमाण है । सब प्रासादोंमेंसे प्रत्येकका अवगाह विस्तारसे आधा है ॥ ३७३ ॥

प्रासादोंके मध्यमें पादपीठसे सहित, अकृत्रिम आकारवाले, विशाल और उत्तम रत्नमय सिंहासन विराजमान है ॥ ३७४ ॥

विचित्र रूपवाले इन सिंहासनोंकी जो शोभा है उसको कहनेके लिये मैं समर्थ नहीं हूं । यहां पुण्यका फल प्रत्यक्ष है ॥ ३७५ ॥

सिंहासनपर आरूढ, सोलह उत्तम भूषणोंसे शोभायमान, और सम्यग्दर्शनरूपी रत्नसे शुद्ध सब इन्द्र विराजमान है ॥ ३७६ ॥

पूर्वोपार्जित करोड़ों सुचरित्रोंसे प्राप्त हुई शक्रादिकोंकी अनुपम लक्ष्मीको कौनसी उपमा दी जाय ॥ ३७७ ॥

उत्तम छत्र व चमरोंको धारण करनेवाली देवियों, प्रतीन्द्रों और सामानिक आदि देव-समूहोंके द्वारा इन्द्रोंकी नित्य ही सेवा की जाती है ॥ ३७८ ॥

सौधर्म और ईशान इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके एक लाख साठ हजार देवियां तथा आठ आठ अग्रदेवियां होती है ॥ ३७९ ॥ देवी १६०००० अग्रदेवी ८ ।

माहेन्द्र और सानत्कुमार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके आठ अग्रमहिषियां तथा बहत्तर हजार देवियां होती है ॥ ३८० ॥ अग्रमहिषी ८, देवी ७२००० ।

१ द ब यकट्ठिमायाय. २ द ब गे. ३ द ब पुण्णपदं.

अग्गमहिसीओ अट्ठ य चोत्तीससहस्सयाणि देवीओ । णिरुवमलावण्णाओ सोहंते बम्हकप्पिंदे ॥ ३८१

८ । ३४००० ।

सोलससहस्सपणसयदेवीओ अट्ठ अग्गमहिसीओ । लंतवइंदम्मि पुढं णिरुवमरूवाओ रेहंति ॥ ३८२

८ । १६५०० ।

अट्ठसहस्सा दुसया पण्णं चहिया हुवंति देवीओ । अग्गमहिसीओ अट्ठ य रम्मा महसुक्कइंदम्मि ॥ ३८३

८२५० । ८ ।

चत्तारिसहस्साहं एक्कसयं पंचवीसअब्भहियं । देवीओ अट्ठ जेट्ठा होंति सहस्सारइंदम्मि ॥ ३८४

४१२५ । ८ ।

आणदपाणदआरणअच्चुदइंदेसु अट्ठ जेट्ठाओ । पत्तेक्कं दुसहस्सा तेसट्ठी होंति देवीओ ॥ ३८५

८ । २०६३ ।

सण्णहणहट्ठदुगहणिअट्ठयछस्सत्तसक्कदेवीओ । लोयविणिच्छयगंथे हुवंति सेसेसु पुव्वं व ॥ ३८६

७६८१२८००० । पाठान्तरम् ।

सगवीसं कोडीओ सोहम्मिंदेसु होंति देवीओ । पुव्वं पिव सेसेसु संगाहणियम्मि णिद्दिट्ठं ॥ ३८७

२७००००००० । पाठान्तरम् ।

ब्रह्मकल्पेन्द्रके अनुपम लावण्यवाली आठ अग्रमहिषियां और चौंतीस हजार देवियां शोभायमान है ॥ ३८१ ॥ अ. म. ८, देवी ३४००० ।

लांतवेन्द्रके अनुपम रूपवाली सोलह हजार पांच सौ देवियां और आठ अग्रमहिषियां शोभायमान है ॥ ३८२ ॥ अ. म. ८, देवी १६५०० ।

महाशुक्र इन्द्रके आठ हजार दो सौ पचास देवियां और रमणीय आठ अग्रमहिषियां होती हैं ॥ ३८३ ॥ दे. ८२५०, अ. म. ८ ।

सहस्रार इन्द्रके चार हजार एक सौ पच्चीस देवियां और आठ ज्येष्ठ देवियां होती है ॥ ३८४ ॥ दे. ४१२५, ज्ये. ८ ।

आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके आठ अग्रमहिषियां और दो हजार तिरेसठ देवियां होती है ॥ ३८५ ॥ ज्ये. ८, दे. २०६३ ।

शून्य, शून्य, शून्य, आठ, दो, एक, आठ, छह और सात, इन अंकोंके प्रमाण सौधर्म इन्द्रके देवियां होती है । शेष इन्द्रोंमें देवियोंका प्रमाण पहिलेके ही समान है, ऐसा लोकविनिश्चय ग्रन्थमें निर्दिष्ट है ॥ ३८६ ॥ ७६८१२८००० । पाठांतर ।

सौधर्म इन्द्रके सत्ताईस करोड़ और शेष इन्द्रोंके पूर्वोक्त संख्या प्रमाण देवियां होती है, ऐसा संगाहणिमें निर्दिष्ट है ॥ ३८७ ॥ २७००००००० । पाठांतर ।

मायाविवज्जिदाओ बहुरदिकरणेसु णिउणबुद्धीओ । ओलग्गंते णिच्चं णियणियइंदाण चलणाइं ॥ ३८८
वरबरविलादसुजयकम्मंतियदासदासिपहुदीओ । अंतेउरजोग्गाओ चेट्ठंति विचित्तवेसाओ ॥ ३८९
इंदाणं अत्थाणे[1] पीढाणीयस्स अहिवई देवा । रयणासणाणि देंति हु सपादपीढाणि बहुवाणिं ॥ ३९०
जं जस्स जोग्गमुच्चं [णिच्चं] णियडं विदोरमासणयं । तं तस्स [देंति] देवा णादूणं भूमिभागाइं ॥ ३९१
वररयणदंडहत्था पडिहारा होंति इंदअट्ठाणे । परथावसपत्थावं ओलग्गंताण[2] घोसंति ॥ ३९२
अवरे वि सुरा तेसिं णाणाविहपेसणाणि कुणमाणा । इंदाण भत्तिभरिदा आणं सिरसा पडिच्छंति ॥ ३९३
पडिइंदादी देवा णिब्भरभत्तीए णियमोलग्गं । अभिमुहठिदा सभाए णियणियइंदाण कुव्वंति ॥ ३९४
पुव्वं ओलग्गसभा सक्कीसाणाण जारिसा भणिदा । तारिसया सव्वाणं णियणियणयरेसु इंदाणं ॥ ३९५

मायासे रहित और बहुत अनुरागके करनेमें निपुण बुद्धिवाली वे देवियां नित्य अपने अपने इन्द्रोंके चरणोंकी सेवा करती है ॥ ३८८ ॥

अन्तःपुरके योग्य बर्बर, किरात, कुब्जक, कर्मान्तिक और दास-दासी आदि विचित्र वेषोंसे युक्त स्थित रहते हैं ॥ ३८९ ॥

इन्द्रोके आस्थानमें पीठानीकके अधिपति देव पादपीठ सहित बहुतसे रत्नमय आसनोंको देते है ॥ ३९० ॥

जो जिसके योग्य उच्च व [नीच] एवं निकट व दूरवर्ती आसन होता है, भूमिभागोंको जानकर देव उसके लिये वह देते हैं ॥ ३९१ ॥

इन्द्रके आस्थान अर्थात् सभामें उत्तम रत्नदण्डको हाथमें लिये हुए जो द्वारपाल होते हैं वे सेवकोंके लिये प्रस्तुत व अप्रस्तुत कार्यकी घोषणा करते है ॥ ३९२ ॥

उनके नाना प्रकारके कार्योंको करनेवाले इतर देव भी इन्द्रोंकी भक्तिसे भरे हुए उनकी आज्ञाको शिरसे ग्रहण करते हैं ॥ ३९३ ॥

प्रतीन्द्रादिक देव अत्यन्त भक्तिसे सभामें अभिमुख स्थित होकर अपने अपने इन्द्रोंकी नित्य सेवा करते है ॥ ३९४ ॥

पूर्वमें सौधर्म व ईशान इन्द्रकी जैसी ओलगसभा (सेवकशाला) कही है वैसी अपने अपने नगरोंमें सब इन्द्रोंके होती है ॥ ३९५ ॥

---

१ द ब अत्थाणं २ द ब ओलगताणं त.

इंदप्पहाणपासादपुव्वदिब्भागपहुदिसंठाणा । चत्तारो पासादा पुव्वोदिदवण्णणेहिं जुदा ॥ ३९६

वेरुलियरजदसोका मिसक्कसारं च दक्खिणिंदेसुं । रुचकं मंदरसोका सत्तच्छदयं च उत्तरिंदेसुं ॥ ३९७

सक्कीसाणगिहाणं पुरदो छत्तीसजोयणुच्छेहा । जोयणबहलविखंभा[1] बारसधारा[2] हुवंति वज्जमया ॥ ३९८

पत्तेक्कं धाराणं[3] वासो एक्केक्ककोसपरिमाणं[4] । माणत्थंभसरिच्छं[5] सेसत्थंभाण वण्णणयं ॥ ३९९

भरहेरावदभूगादितित्थयरबालयाणाभरणाणं[6] । वररयणकरंडेहिं लंबंतेहिं विरायंते ॥ ४००

मूलादो उवरितले पुह पुह पणुवीसकोसपरिमाणा । गंतूणं सिहरादो तेत्तियमोदरिय होंति हु करंडा ॥ ४०१

२५ । २५ ।

पंचसयचावरुंदा पत्तेक्कं एक्ककोसदीहत्ता । ते होंति वरकरंडा णाणावररयणरासिमया ॥ ४०२

५०० । को १ ।

ते संखेज्जा सव्वे लंबंता रयणसिक्कजालेसुं । सक्कादिपूजणिज्जा अणादिणिहणा महारम्मा ॥ ४०३

इन्द्रोंके प्रधान प्रासादके पूर्वदिशाभागादिमें स्थित और पूर्वोक्त वर्णनोंसे युक्त चार प्रासाद होते हैं ॥ ३९६ ॥

दक्षिण इन्द्रोंमें वैडूर्य, रजत, अशोक और मृषत्कसार तथा उत्तर इन्द्रोंमें रुचक, मन्दर, अशोक और सप्तच्छद, ये चार प्रासाद होते हैं ॥ ३९७ ॥

सौधर्म और ईशान इन्द्रके गृहोंके आगे छत्तीस योजन ऊंचे, एक योजन बाहल्य व विष्कम्भसे सहित बज्रमय बारह धाराओंवाले [स्तम्भ] होते हैं ॥ ३९८ ॥

उन धाराओंमें प्रत्येक धाराका व्यास एक एक कोश प्रमाण है । शेष स्तम्भोंका वर्णन मानस्तम्भोंके सदृश है ॥ ३९९ ॥

[ये स्तम्भ] भरत और ऐरावत भूमिके तीर्थंकर बालकोंके आभरणोंके लटकते हुए उत्तम रत्नमय पिटारोंसे विराजमान हैं ॥ ४०० ॥

मूलसे उपरिम तलमें पृथक् पृथक् पच्चीस कोश प्रमाण जाकर और शिखरसे इतने ही उतरकर ये करण्ड होते हैं ॥ ४०१ ॥ मूल २५, शिखर २५ ।

नाना उत्तम रत्नोंकी राशि स्वरूप उन श्रेष्ठ करण्डोंमेंसे प्रत्येक पांच सौ धनुष विस्तृत और एक कोश लम्बा होता है ॥ ४०२ ॥ विस्तार ५०० ध., दीर्घता १ को. ।

रत्नमय सींकोंके समूहोंमें लटकते हुए वे सब संख्यात करण्ड शक्रादिसे पूजनीय, अनादिनिधन और महा रमणीय होते हैं ॥ ४०३ ॥

१ द ब बहलाकंमा. २ द ब दारा. ३ द ब बाराणं. ४ द ब कोसापरिमाणं. ५ द ब माणट्ठं च सरिच्छं. ६ द ब °बालदंदाणं.

आभरणा पुव्वावरविदेहतित्थयरबालयाणं च । थंभोवरि चेट्ठंते भवणेसु सणक्कुमारजुगलस्स ॥ ४०४
सयलिंदमंदिराणं पुरदो णग्गोहपायवा होंति । एक्केक्कं पुढविमया पुव्वोदिदजंबुदुमसरिसा ॥ ४०५
तम्मूले एक्केक्का जिणिंदपडिमा य पडिदिसं होदि । सक्कादिणमिदचलणा सुमरणमेत्ते वि दुरिदहरा ॥
सक्कस्स मंदिरादो ईसाणदिसे सुधम्मणामसभा । तिसहस्सकोसउदया चउसयदीहा तदद्धवित्थारा ॥
३००० । ४०० । २००
तीए दुवारछेहो कोसा चउसट्ठि तद्दलं रुंदो । सेसाओ वण्णणाओ सक्कप्पासादसरिसाओ ॥ ४०८
६४ । ३२ ।
रम्माए सुधम्माए विविहविणोदेहि कीडदे सक्को । बहुविहपरिवारजुदो भुंजंतो विविहसोक्खाणिं ॥ ४०९
तत्थेसाणदिसाए उववादसभा हुवेदि पुव्वसमा । दिप्पंतरयणसेज्जा विण्णासविसेससोहिल्ला ॥ ४१०
तीए दिसाए चेट्ठदि वररयणमओ जिणिंदपासादो । पुव्वसरिच्छो अहवा पंडुगजिणभवणसारिच्छो ॥ ४११

सानत्कुमार युगलके भवनोंमें स्तम्भोंके ऊपर पूर्व व पश्चिम विदेह सम्बन्धी तीर्थंकर बालकोंके आभरण स्थित होते हैं ॥ ४०४ ॥

समस्त इन्द्रमन्दिरोंके आगे न्यग्रोध वृक्ष होते हैं । इनमें एक एक वृक्ष पृथिवी स्वरूप और पूर्वोक्त जम्बू वृक्षके सदृश होते हैं ॥ ४०५ ॥

इनके मूलमें प्रत्येक दिशामें एक एक जिनेन्द्रप्रतिमा होती है जिसके चरणोंमें शक्रादिक प्रणाम करते हैं तथा जो स्मरण मात्रमें ही पापको हरनेवाली है ॥ ४०६ ॥

सौधर्म इन्द्रके मन्दिरसे ईशान दिशामें तीन हजार (तीन सौ) कोश ऊंची, चार सौ कोश लंबी, और इससे आधे विस्तारवाली सुधर्मा नामक सभा है ॥ ४०७ ॥

उ. ३०००, दी. ४००, वि. २०० कोस ।

सुधर्मा सभाके द्वारोंकी उंचाई चौसठ कोश और विस्तार इससे आधा है । शेष वर्णन सौधर्म इन्द्रके प्रासादके सदृश है ॥ ४०८ ॥ उत्सेध ६४, विस्तार ३२ कोश ।

इस रमणीय सुधर्मा सभामें बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त सौधर्म इन्द्र विविध सुखोंको भोगता हुआ अनेक विनोदोंसे क्रीड़ा करता है ॥ ४०९ ॥

वहां ईशान दिशामें पूर्वके समान उपपाद सभा है। यह सभा देदीप्यमान रत्नशय्याओंसे सहित और विन्यासविशेषसे शोभायमान है ॥ ४१० ॥

उसी दिशामें पूर्वके समान अथवा पाण्डुक वन सम्बन्धी जिनभवनके सदृश उत्तम रत्नमय जिनेन्द्रप्रासाद है ॥ ४११ ॥

---

१ द ब तिप्पंति.

अट्ठजोयणउच्चिदो तेत्तियवासो हुवंति पत्तेक्कं । सेसिंदे पासादा सेसो पुव्वं व विण्णासो ॥ ४१२

८ । ८ ।

इंदप्पासादाणं समंतदो होंति दिव्वपासादा । देवीवल्लहियाणं णाणावररयणकणयमया ॥ ४१३

देवीभवणुच्छेहा सक्कदुगे जोयणाणि पंचसया । माहिंददुगे पण्णासब्भहियाचारिसयजुत्ता ॥४१४

५०० । ४५० ।

बम्हिंदलंतविंदे महसुक्किंदे सहस्सयारिंदे । आणदपहुदिचउक्के कमसो पण्णासहीणाणिं ॥ ४१५

४०० । ३५० । ३०० । २५० । २०० ।

देवीपुरउदयादो वल्लहियामंदिराण उच्छेहो । सव्वेसुं इंदेसुं जोयणवीसाधिओ होदि ॥ ४१६

उच्छेहदसमभागे एदाणं मंदिरेसु विक्खंभा । विक्खंभदुगुणदीहं वासस्सद्धं पि गाढत्तं ॥ ४१७

सव्वेसु मंदिरेसुं उववणसंडाणि होंति दिव्वाणिं । सव्वउदुजोग्गपल्लवफलकुसुमविभूदिभरिदाणिं ॥ ४१८

पोक्खरणीवावीओ सच्छजलाओ विचित्तरूवाओ । पुप्फिदकमलवणाओ एक्केक्के मंदिरे होंतिं ॥ ४१९

शेष इन्द्रोंके प्रासादोंमेंसे प्रत्येक आठ योजन ऊंचा और इतने ही विस्तारसे सहित है । शेष विन्यास पहिलेके ही समान है ॥ ४१२ ॥ उत्सेध ८, विस्तार ८ यो. ।

इन्द्रप्रासादोंके चारों ओर देवी और वल्लभाओंके नाना उत्तम रत्न एवं सुवर्णमय दिव्य प्रासाद हैं ॥ ४१३ ॥

सौधर्म और ईशान इन्द्रकी देवियोंके भवनोंकी ऊंचाई पांच सौ योजन तथा माहेन्द्र व सानत्कुमार इन्द्रकी देवियोंके भवनोंकी ऊंचाई चार सौ पचास योजन है ॥ ४१४ ॥

ब्रह्मेन्द्र, लांतवेन्द्र, महाशुक्र इन्द्र, सहस्रार इन्द्र और आनत आदि चार इन्द्रोंकी देवियोंके भवनोंकी ऊंचाई क्रमसे पचास योजन कम है ॥ ४१५ ॥

ब्र. ४००, लां. ३५०, म. ३००, स. २५०, आनतादि २०० ।

सब इन्द्रोंमें वल्लभाओंके मंदिरोंका उत्सेध देवियोंके पुरोंके उत्सेधसे बीस योजन अधिक है ॥ ४१६ ॥

इनके मंदिरोंका विष्कम्भ उत्सेधके दशवें भागप्रमाण, दीर्घता विष्कंभसे दूनी और अवगाढ व्याससे आधा है ॥ ४१७ ॥

सब मंदिरोंमें समस्त ऋतुओंके योग्य पत्र, फूल और कुसुम रूप विभूतिसे परिपूर्ण दिव्य उपवन-खण्ड होते हैं ॥ ४१८ ॥

एक एक मंदिरमें स्वच्छ जलसे परिपूर्ण, विचित्र स्वरूपवाली और पुष्पित कमलवनोंसे संयुक्त पुष्करिणी वापियां हैं ॥ ४१९ ॥

णाणाविहतूरेहिं णाणाविहमहुरगीयसद्देहिं । ललियमयणट्टणेहिं सुरणयराइं विराजंति ॥ ४२०

आदिमपायारादो तेरसलक्खाणि जोयणे गंतुं[1] । चेट्ठेदि बिदियवेदी पढमा मिव सव्वणयरेसुं ॥ ४२१

१३००००० ।

वेदीणं विच्चाले णियणियसामीसरीररक्खा य । चेट्ठंति सपरिवारा पासादेसुं विचित्तेसुं ॥ ४२२

बिदियवेदी गया ।

तेसट्ठीलक्खाणिं पण्णाससहस्सजोयणाणि तदो । गंतूण तदियवेदी पढमा मिव सव्वणयरेसुं ॥ ४२३

६३५०००० ।

एदाणं विच्चाले तिप्परिसाणं सुरा विचित्तेसुं । चेट्ठंति मंदिरेसुं णियणियपरिवारसंजुत्ता ॥ ४२४

तदियवेदी समत्ता ।

तव्वेदीदो गच्छिय चउसट्ठिसहस्सजोयणाणिं च । चेट्ठेदि तुरिमवेदी पढिमामिव सव्वणयरेसुं ॥ ४२५

देवोंके नगर नाना प्रकारके तूर्य (वादित्रों), अनेक प्रकारके मधुर गीतशब्दों और विलासमय नृत्योंसे विराजमान है ॥ ४२० ॥

सब नगरोंमें आदिम प्राकारसे तेरह लाख योजन जाकर प्रथमके समान द्वितीय वेदी स्थित है ॥ ४२१ ॥ १३००००० ।

वेदियोंके अन्तरालमें विचित्र प्रासादोंमें सपरिवार अपने अपने स्वामियोंके शरीररक्षक देव रहते है ॥ ४२२ ॥

द्वितीय वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

सब नगरोंमें इससे आगे तिरेसठ लाख पचास हजार योजन जाकर प्रथमके समान तृतीय वेदी है ॥ ४२३ ॥ ६३५०००० ।

इन वेदियोंके मध्यमें स्थित विचित्र मन्दिरोंमें अपने अपने परिवारसे संयुक्त तीन परिषदोंके देव स्थित होते हैं ॥ ४२४ ॥

तृतीय वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

इस वेदीसे चौंसठ हजार योजन आगे जाकर सब नगरोंमें प्रथम वेदीके समान चतुर्थ वेदी स्थित है ॥ ४२५ ॥

---

१ द ब अलिय°. २ द जोयणे गं द ब, ब जोयणेगे द ब.

एदाणं विच्चाले वररयणमएसु दिव्वभवणेसुं । सामाणियणामसुरा णिवसंते विविहपरिवारा ॥ ४२६

तुरिमवेदी गदा ।

चउसीदीलक्खाणिं गंतूणं जोयणाणि तुरिमादो । चेट्ठेदि पंचवेदी पदमा मिव सव्वणयरेसुं ॥ ४२७

८४००००० ।

एदाणं विच्चाले णियणियआरोहका यणीया य । अभियोगा किब्बिसिया पइण्णया तह सुरा य तेत्तीसा ॥

पंचमवेदी गदा ।

तप्परदो गंतूणं पण्णाससहस्सजोयणाणं च । होंति हु दिव्ववणाणिं इंदपुराणं चउदिसासुं ॥ ४२९

पुव्वादिसु ते कमसो असोयसत्तच्छदाण वणसंडा । चंपयचूदाण तहा पउमद्दहसरिसपरिमाणा ॥ ४३०

एक्केक्का चेत्ततरू तेसु असोयादिणामसंजुत्ता । णग्गोहतरुपरिच्छा वरचामरछत्तपहुदिजुदा ॥ ४३१

पोक्खरणीवावीहिं मणिमयभवणेहिं[1] संजुदा विउला । सव्वउडुजोग्गपल्लवकुसुमफला भांति वणसंडा ॥

इन वेदियोंके मध्यमें स्थित उत्तम रत्नमय दिव्य भवनोंमें विविध परिवारसे युक्त सामानिक नामक देव निवास करते हैं ॥ ४२६ ॥

चतुर्थ वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

चतुर्थ वेदीसे चौरासी लाख योजन आगे जाकर सब नगरोंमें पहिली वेदीके समान पंचम वेदी स्थित है ॥ ४१७ ॥ ८४००००० ।

इन वेदियोंके मध्यमें अपने अपने आरोहक अनीक, आभियोग्य, किल्विषिक, प्रकीर्णक तथा त्रायस्त्रिंश देव निवास करते है ॥ ४२८ ॥

पंचम वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

इसके आगे पचास हजार योजन जाकर इन्द्रपुरोंकी चारों दिशाओंमें दिव्य वन हैं ॥ ४२९ ॥

पूर्वादिक दिशाओंमें क्रमसे वे अशोक, सप्तच्छद, चंपक और आम्र वृक्षोंके वनखण्ड है । इन वनोंका प्रमाण पद्म द्रहके वनोंके समान है ॥ ४३० ॥

उन वनोंमें अशोकादि नामोंसे संयुक्त और उत्तम चमर-छत्रादिसे युक्त न्यग्रोध तरुके सदृश एक एक चैत्य वृक्ष है ॥ ४३१ ॥

पुष्करिणी वापियों व मणिमय भवनोंसे संयुक्त तथा सब ऋतुओंके योग्य पत्र, कुसुम एवं फलोंसे परिपूर्ण विपुल वनखण्ड शोभायमान है ॥ ४३२ ॥

---

१ द ब भवणेहिं.

संखेज्जजोयणाणिं पुह पुह गंतूण णंदणवणादो । सोहम्मादिदिगिंदाणं कीडणणयराणि चेट्ठंति ॥ ४३३

बारससहस्सजोयणदीहत्ता पणसहस्सविक्खंभा । पत्तेक्कं ते णयरा वरवेदीपहुदिकयसोहा ॥ ४३४

१२००० । ५००० ।

गणियामहत्तरीणं समचउरस्सा पुरीओ विदिसासुं । एक्कं जोयणलक्खं पत्तेक्कं दीहवासजुदा ॥ ४३५

१००००० । १००००० ।

सव्वेसुं णयरेसुं पासादा दिव्वविविहरयणमया । णच्चंतविचित्तधया णिरुवमसोहा विरायंति ॥ ४३६

जोयणसयदीहत्ता ताणं पण्णासमेत्तवित्थारा । मुहमंडवपहुदीहिं विचित्तरूवेहिं संजुत्ता ॥ ४३७

वालुगपुप्फगणामा याणविमाणाणि सक्कजुगलम्मि । सोमणसं सिरिरुक्खं सणक्कुमारिंददुदयम्मि ॥ ४३८

बम्हिंदादिचउक्के याणविमाणाणि सव्वदोभद्दा । पीदिकरम्मकणामा[1] मणोहरा होंति चत्तारि ॥ ४३९

आणदपाणदइंदे लच्छीमादिंतिणामदो होदि । आरणकप्पिंददुगे याणविमाणं विमलणामं ॥ ४४०

नन्दन वनसे पृथक् पृथक् संख्यात योजन जाकर सौधर्मादि इन्द्रोंके लोकपालोंके क्रीडा-नगर स्थित हैं ॥ ४३३ ॥

उत्तम वेदी आदिसे शोभायमान उन नगरोंमेंसे प्रत्येक बारह हजार योजन लम्बे और पांच हजार योजन प्रमाण विस्तारसे सहित हैं ॥ ४३४ ॥ दं १२०००, वि. ५००० ।

विदिशाओंमें गणिकामहत्तरियोंकी समचतुष्कोण नगरियां हैं । इनमेंसे प्रत्येक एक लाख योजन प्रमाण दीर्घता व विस्तारसे युक्त है ॥ ४३५ ॥ दी. १००००० वि. १००००० यो. ।

सब नगरोंमें नाचती हुई विचित्र ध्वजाओंसे युक्त और अनुपम शोभाके धारक दिव्य विविध रत्नमय प्रासाद विराजमान है ॥ ४३६ ॥

ये प्रासाद एक सौ योजन दीर्घ, पचास योजन प्रमाण विस्तारसे सहित, और विचित्र-रूप मुखमण्डपादिसे संयुक्त है ॥ ४३७ ॥

शक्रयुगल (सौधर्म व ईशान इन्द्र) में वालुक और पुष्पक नामक यान विमान तथा सानत्कुमारादि दो इन्द्रोंमें सौमनस और श्रीवृक्ष नामक यान विमान होते हैं ॥ ४३८ ॥

ब्रह्मेन्द्रादिक चारके सर्वतोभद्र, प्रीतिक (प्रीतिंकर), रम्यक और मनोहर नामक चार यान विमान होते हैं ॥ ४३९ ॥

आनत और प्राणत इन्द्रके लक्ष्मी मादिन्ति (?) नामक यान विमान तथा आरण कल्पेन्द्र युगलमें विमल नामक यान विमान होते हैं ॥ ४४० ॥

---

१ द ब पीदिकरम्मकणामा; लोकापुरप्रतौ तु गृहीतः पाठः।

सोहम्मादिचउक्के कमसो अवसेसकप्पजुगलेसुं । होंति हु पुव्वुत्ताइं याणविमाणाणि पत्तेक्कं ॥ ४४१
पाठान्तरम् ।

एक्कं जोयणलक्खं पत्तेक्कं दीहवाससंजुत्ता । याणविमाणा दुविहा विक्किरियाए सहावेणं ॥ ४४२
ते विक्किरियाजादा याणविमाणा विणासिणो होंति । अविणासिणो य णिचं सहावजादा परमरम्मा ॥
धुव्वंतधयवदाया विविहासणसयणपहुदिपरिपुण्णा । धूवघडेहिं जुत्ता चामरघंटादिकयसोहा ॥ ४४४
वंदणमालारम्मा मुत्ताहलहेमदामरमणिज्जा । सुंदरदुवारसहिदा वज्जकवाडुज्जला चिरायंति ॥ ४४५
सच्छाइं भायणाइं वत्थाभरणाइमाइं दुविहाइं । होंति हु याणविमाणे विक्किरियाए सहावेणं ॥ ४४६
विक्किरियाजणिदाइं विणासरूवाइं होंति सव्वाइं । वत्थाभरणादीया सहावजादाणि णिच्चाणिं ॥ ४४७
सोहम्मादिसु अट्ठसु आणदपहुदीसु चउसु इंदाणं । सूवरहरिणीमहिसा मच्छा भेकोहिछगलवसहा य ॥
कप्पतरू मउडेसुं चिण्हाणिं णव कमेण भणिदाणिं । एदेहिं ते इंदा लक्खिज्जंते सुराण मज्झम्मि ॥ ४४९

सौधर्मादि चारमें और शेष कल्पयुगलोंमें क्रमसे प्रत्येकके पूर्वोक्त यानविमान होते है ॥ ४४१ ॥ पाठान्तर ।

इनमेंसे प्रत्येक विमान एक लाख योजन प्रमाण दीर्घता व व्याससे संयुक्त है । ये विमान दो प्रकार है, एक विक्रियासे उत्पन्न हुए और दूसरे स्वभावसे ॥ ४४२ ॥

विक्रियासे उत्पन्न हुए वे यान विमान विनश्वर और स्वभावसे उत्पन्न हुए वे परम रम्य यान विमान नित्य व अविनश्वर होते हैं ॥ ४४३ ॥

उक्त यान विमान फहरती हुई ध्वजा-पताकाओंसे सहित, विविध आसन व शय्या आदिसे परिपूर्ण, धूपघटोंसे युक्त, चामर एवं घंटादिकसे शोभायमान, वंदनमालाओंसे रमणीय मुक्ताफल व सुवर्णकी मालाओंसे सुशोभित, सुन्दर द्वारोंसे सहित, और वज्रमय कपाटोंसे उज्ज्वल होते हुए विराजमान है ॥ ४४४-४४५ ॥

यान विमानमें स्वच्छ भाजन, वस्त्र और आभरणादिक विक्रिया व स्वभावसे दो प्रकारके होते हैं ॥ ४४६ ॥

विक्रियासे उत्पन्न सब वस्त्राभरणादिक विनश्वर और स्वभावसे उत्पन्न हुए ये सभी नित्य होते हैं ॥ ४४७ ॥

सौधर्मादिक आठ और आनत आदि चार कल्पोंमें इन्द्रोंके मुकुटोंमें क्रमसे शूकर, हरिणी, महिष, मत्स्य, भेक, सर्प, छगल, वृषभ और कल्पतरु, ये नौ चिह्न कहे गये है । इन चिह्नोंसे सुरोंके मध्यमे वे इन्द्र पहिचाने जाते हैं ॥ ४४८-४४९ ॥

१ द ब कच्छ. २ द ब धुव्व. ३ द ब मच्छा भेका.

इंदाणं चिण्हाणिं पत्तेक्कं ताव जा[1] सहस्सारं । आणदआरणजुगले चोद्दसठाणेसु वोच्छामि ॥ ४५०
सूवरहरिणीमहिसा मच्छा कुम्मा य भेकहयहत्थी । चंदाहिगवयछगला वसहकप्पतरू[2] मउडमज्झेसुं ॥ ४५१
[पाठान्तरम् ।]
इंदाणं परिवारा पडिंदपहुदी ण होंति कइया वि[3] । अहमिंदाणं सप्पडिवाराहिंतो अणंतसोक्खाणं ॥ ४५२
उववादसभा विविहा कप्पातीदाण होंति सव्वाणं । जिणभवणा पासादा णाणाविहदिव्वरयणमया ॥ ४५३
अभिसेयसभा संगीयपहुदिमालाओ चित्तरुक्खा य । देवीओ ण दीसंति कप्पातीदेसु कइया वि ॥ ४५४
गेहुच्छेहो दुसया पण्णब्भहियं सयं सुद्धं । हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जेसुं कमा होंति ॥ ४५५
२०० । १५० । १०० ।
भवणुच्छेहपमाणं अणुदिसाणुत्तराभिधाणेसुं । पण्णासा जोयणया कमसो पणुवीसमेत्ताणिं ॥ ४५६
५० । २५ ।
उदयस्स पंचमंसा दीहत्तं तद्दलं च वित्थारो । पत्तेक्कं णादव्वा कप्पातीदाण भवणेसुं ॥ ४५७
एवं इंदविभूदिपरूवणा समत्ता ।

सहस्रार कल्प तक प्रत्येक इन्द्रके तथा आनत और आरण युगलमें इस प्रकार चौदह स्थानोंमें चिह्नोंको कहते हैं ॥ ४५० ॥

शूकर, हरिणी, महिष, मत्स्य, कूर्म, भेक, हय, हाथी, चन्द्र, सर्प, गवय, छगल, वृषभ और कल्पतरु, ये चौदह चिह्न मुकुटोंके मध्यमें होते हैं ॥ ४५१ ॥ [पाठान्तर ।]

इन्द्रोंके प्रतीन्द्र आदि परिवार होते हैं । किन्तु सपरिवार इन्द्रोंकी अपेक्षा अनन्त सुखसे युक्त अहमिन्द्रोंके उपर्युक्त परिवार कदापि नहीं होते ॥ ४५२ ॥

सब कल्पातीतोंके विविध प्रकारकी उपपादसभायें, जिनभवन, नाना प्रकारके दिव्य रत्नोंसे निर्मित प्रासाद, अभिषेकसभा, संगीत आदि शालायें और चैत्यवृक्ष भी होते हैं । परन्तु कल्पातीतोंके देवियां कदापि नहीं दिखतीं ॥ ४५३-४५४ ॥

अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकोंमें प्रासादोंकी उंचाई क्रमसे दो सौ, एक सौ पचास और केवल सौ योजन है ॥ ४५५ ॥ अ. ग्रै. २००, म. ग्रै. १५०, उ. ग्रै. १००।

अनुदिश और अनुत्तर नामक विमानोंमें भवनोंकी उंचाईका प्रमाण क्रमसे पचास और पच्चीस योजन मात्र है ॥ ४५६ ॥ अनुदिश ५० अनुत्तर २५ ।

कल्पातीतोंके भवनोंमें प्रत्येककी दीर्घता उंचाईके पांचवें भाग और विस्तार उससे आधा समझना चाहिये ॥ ४५७ ॥

इस प्रकार इन्द्रविभूतिकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

१ ब जाव. २ द ब हयचंगा हिदवयछगला पंचतरू. ३ द ब कइया आदि.

पढमे बिदिए जुगले बम्हादिसु चउसु आणददुगम्मि । आरणदुगे सुदंसणपहुदिसु एक्कारसेसु कमे ॥ ४५८

दुगसत्तदसं चउदससोलसमट्ठरसवीसबावीसा । तत्तो एक्केक्कजुदा उक्कस्साऊ समुद्दउवमाणा ॥ ४५९

२ । ७ । १० । १४ । १६ । १८ । २० । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ ।
२९ । ३० । ३१ । ३२ । ३३ ।

एसो उक्कस्साऊ इंदप्पहुदीण होदि हु चउण्णं । सेससुराणं आऊ मज्झिमजहण्णपरिमाणा ॥ ४६०

छासट्ठिकोडिलक्खा कोडिसहस्साणि तेत्तियाणिं पि । कोडिसया छच्चेव य छासट्ठीकोडियहियाणिं ॥ ४६१

छासट्ठीलक्खाणिं तेत्तियमेत्ताणि तह सहस्साणिं । छस्सयछासट्ठीओ दोण्णि कला तियविहत्ताओ[1] ॥ ४६२

एदाणिं[2] पलाइं आऊ उडुविंदयम्मि उक्कस्से । तं सेढीबद्धाणं पइण्णयाणं च णादव्वं ॥ ४६३

६६६६६६६६६६६६६ | २/३

उडुपडलुक्कस्साऊ इच्छियपडलप्पमाणरूवेहिं । गुणिदूणं आणेज्जं तस्सिं जेट्ठाउपरिमाणं ॥ ४६४

प्रथम व द्वितीय युगल, ब्रम्हादिक चार युगल, आननयुगल, आरणयुगल और सुदर्शन आदि ग्यारहमें उत्कृष्ट आयु क्रमसे दो, सात, दश, चौदह, सोलह, अठारह, बीस, बाईस, इसके पश्चात् एक एक अधिक सागरोपम प्रमाण है ॥ ४५८-४५९ ॥

सौ. ई. २, स. मा. ७, ब्र. ब्रह्मो. १०, लां. का. १४, शु. म. १६, श. स १८, आ. प्रा. २०, आ. अ. २२, सु. २३, अ. २४, सुप्र. २५, यशो. २६, सुभ. २७, सुवि. २८, सुम. २९, सौ. ३०, प्री. ३१, आ. ३२, सर्वार्थसिद्धि ३३ ।

यह उत्कृष्ट आयु इन्द्र आदि चारकी है । शेष देवोंकी आयु मध्यम व जघन्य प्रमाणसे सहित है ॥ ४६० ॥

छ्यासठ लाख करोड़ छ्यासठ हजार करोड़ छह सौ छ्यासठ करोड़ अधिक छ्यासठ लाख छ्यासठ हजार छह सौ छ्यासठ और तीनसे विभक्त दो कला, इतने पल्य प्रमाण ऋतु इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है । यही आयु उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंकी भी जानना चाहिये ॥ ४६१-४६३ ॥ ६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ ।

ऋतु पटलकी उत्कृष्ट आयुको इच्छित पटल प्रमाण रूपोंसे गुणित कर उसमें उत्कृष्ट आयुके प्रमाणको ले आना चाहिये ॥ ४६४ ॥

---

१ द ब तिविहत्ताओ. २ द ब पदाणं.

चोद्दसठाणेसु तिया एक्कं अंककमेण पल्लाणिं । एक्ककला उक्कस्से आऊ विमलिंदयम्मि पुणं ॥ ४६५

१३३३३३३३३३३३३३ | १/२ |

चोद्दसठाणे सुण्णं दुगं च अंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ चंदिंदयम्मि सेढीपइण्णएसुं च ॥ ४६६

२०००००००००००००० ।

चोद्दसठाणे छक्का दुगं च अंककमेण पल्लाणिं । दोण्णि कला उक्कस्से आऊ वग्गुम्मि णादव्वो ॥ ४६७

२६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

पण्णरसट्ठाणेसुं तियाणि अंककमेण पल्लाणिं । एक्ककला उक्कस्से आऊ वीरिंदयसमूहे[1] ॥ ४६८

३३३३३३३३३३३३३३ | १/२ |

चोद्दसठाणे सुण्णं चउगं[2] अंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ अरुणिंदयम्मि[3] सेढीपइण्णएसुं च ॥ ४६९

४०००००००००००००० ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें तीन और एक, इतने पल्य और एक कला प्रमाण विमल इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४६५ ॥

६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ × २ = १३३३३३३३३३३३३३$\frac{१}{२}$ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और दो, इतने पल्य प्रमाण चन्द्र इन्द्रक तथा उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४६६ ॥

६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ × ३ = २०००००००००००००० ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें छह और दो, इतने पल्य व दो कला प्रमाण वल्गु इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४६७ ॥

६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ × ४ = २६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ ।

अंककमसे पन्द्रह स्थानोंमें तीन, इतने पल्य और एक कला प्रमाण वीर इन्द्रक समूहमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४६८ ॥ ३३३३३३३३३३३३३३$\frac{१}{२}$ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और चार, इतने पल्य प्रमाण अरुण इन्द्रक व उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४६९ ॥ ४०००००००००००००० ।

---

१ द ब वीरिंदयसमूहे. २ द ब चउगं. ३ द ब अरिणिंदयम्मि.

चोद्दसठाणे छक्का चउ अंककमेण पल्लाणिं । दोण्णि कलाओ णंदणणामे आउस्स उक्कस्सो ॥ ४७०

४६६६६६६६६६६६६६ | २ / ३ |

चोद्दसठाणेसु तिया पंचंककमेण होंति पल्लाणिं । एक्ककला णलिणिंदयणामे आउस्स उक्कस्सो ॥ ४७१

५३३३३३३३३३३३३३ | १ / ३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं छक्कं अंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ कंचणणामे सेढीपइण्णएसुं पि ॥ ४७२

६०००००००००००००० ।

पण्णरसट्ठाणेसुं छक्का अंककमेण पल्लाणिं । दोण्णि कलाओ रोहिद्णामे आउस्स उक्कस्सो ॥ ४७३

६६६६६६६६६६६६६६ | २ / ३ |

चोद्दसठाणेसु तिया सत्तं अंककमेण पल्लाणिं । एक्कल चिचय चंचिंदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥ ४७४

७३३३३३३३३३३३३३ | १ / ३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं अट्ठंककमेण होंति पल्लाणि । उक्कस्साऊ मरुदिंदयम्मि[1] सेढीपइण्णएसुं च ॥ ४७५

८०००००००००००००० ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें छह और चार, इतने पल्य व दो कला प्रमाण नन्दन नामक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७० ॥ ४६६६६६६६६६६६६६ $\frac{२}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और पांच, इतने पल्य व एक कला प्रमाण नलिन नामक इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७१ ॥ ५३३३३३३३३३३३३३ $\frac{१}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और छह, इतने पल्य प्रमाण कंचन नामक इन्द्रक और उसके श्रेणीबद्ध व प्रकीर्णकोंमें भी उत्कृष्ट आयुका प्रमाण है ॥ ४७२ ॥

६०००००००००००००० ।

अंकक्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें छह, इतने पल्य व दो कला प्रमाण रोहित नामक पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण है ॥ ४७३ ॥ ६६६६६६६६६६६६६६ $\frac{२}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और सात, इतने पल्य व एक कला प्रमाण चंचत् [चन्द्र] इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७४ ॥ ७३३३३३३३३३३३३३ $\frac{१}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और आठ, इतने पल्य प्रमाण मरुत् इन्द्रक व उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७५ ॥ ८०००००००००००००० ।

---

१ द ब मुरुदिंदयम्मि.

चोद्दसठाणे छक्का अट्ठंककमेण होंति पल्लाणिं । दुकलाओ रिद्दिसए[1] उक्कस्साऊ समग्गम्मि ॥ ४७६

८६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

चोद्दसठाणेसु तिया णव अंककमेण होंति पल्लाणिं । एक्ककलावेरुलिए उक्कस्साऊ सपद्दम्मि ॥ ४७७

९३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

पण्णरसठाणे सुण्णं एक्कं अंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ रुचकिंदयम्मि सेढीपइण्णएसुं पि ॥ ४७८

१०००००००००००००० ।

चोद्दसठाणे छक्का णहमेक्कंककमेण पल्लाइं । दोण्णि कलाओ रुचिरिंदयम्मि[2] आउस्स उक्कस्सो ॥ ४७९

१०६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

चोद्दसठाणेसु तिया[3] एक्केक्क कमेण पल्लाणिं । एक्ककल चिय अंकिंदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥ ४८०

११३३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं दुगमेक्कंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ पडिहिंदयम्मि सेढीपइण्णएसुं पि ॥ ४८१

१२०००००००००००००० ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें छह और आठ, इतने पल्य व दो कला प्रमाण समस्त ऋद्धीश पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७६ ॥ ८६६६६६६६६६६६६६ २/३ ।

अंककमसे चोदह स्थानोंमें तीन और नौ, इतने पल्य व एक कला प्रमाण वैडूर्य पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७७ ॥ ९३३३३३३३३३३३३३३ १/३ ।

अंककमसे पन्द्रह स्थानोमे शून्य और एक, इतने पल्य प्रमाण रुचक इन्द्रक व उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें भी उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७८ ॥ १०००००००००००००० ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें छह, शून्य और एक, इतने पल्य और दो कला प्रमाण रुचिर इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४७९ ॥ १०६६६६६६६६६६६६ २/३ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें तीन, एक और एक, इतने पल्य और एक कला प्रमाण अंक इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८० ॥ ११३३३३३३३३३३३३३ १/३ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, दो और एक, इतने पल्य प्रमाण स्फटिक इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें भी उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८१ ॥ १२०००००००००००००० ।

---

१ द ब दिदिसए. २ द चोद्दस. ३ द रुचिदंयम्मि, रुचिदयम्मि. ४ द ब ति.

चोद्दसठाणे छक्का दुगमेक्कंककमेण पल्लाणिं । दोण्णि कलाओ तवणियइंदए आउ उक्कस्सा ॥ ४८२

१२६६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

पण्णारसठाणेसुं तियाणि एक्कं कमेण पल्लाइं । एक्कं कला य मेघेंदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥ ४८३

१३३३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं चउएक्कंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ अब्भिंदयम्मि सेढीपइण्णएसुं च ॥ ४८४

१४०००००००००००००० ।

चोद्दसठाणे छक्का चउएक्कंककमेण पल्लाइं । दोण्णि कला हारिद्दयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥ ४८५

१४६६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

चोद्दसठाणेसु तिया पंचेक्कंककमेण पल्लाणिं । एक्का कला य आऊ उक्कस्से पउमपडलम्मि ॥ ४८६

१५३३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं छक्केक्कंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साऊ रोहिदसेढीबद्धप्पइण्णएसुं पि ॥ ४८७

१६०००००००००००००० ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, दो और एक, इतने पल्य और दो कला प्रमाण तपनीय इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८२ ॥ १२६६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ ।

क्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें तीन और एक, इतने पल्य व एक कला प्रमाण मेघ इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८३ ॥ १३३३३३३३३३३३३३३३$\frac{१}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, चार और एक, इतने पल्य प्रमाण अभ्र इन्द्रक, श्रेणीबद्ध व प्रकीर्णकोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८४ ॥ १४०००००००००००००० ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, चार और एक, इतने पल्य व दो कला प्रमाण हारिद्र इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८५ ॥ १४६६६६६६६६६६६६६६$\frac{२}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन, पांच और एक, इतने पल्य व एक कला प्रमाण पद्म पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८६ ॥ १५३३३३३३३३३३३३३३$\frac{१}{३}$ ।

अंकक्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, छह और एक, इतने पल्य प्रमाण रोहित (लोहित) इन्द्रक, श्रेणीबद्ध व प्रकीर्णकोंमें भी उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८७ ॥ १६०००००००००००००० ।

पण्णरसट्ठाणेसुं छक्कं एक्कं कमेण पल्लाइं । दोण्णि कलाओ आऊ उक्कसे वज्जपडलम्मि ॥ ४८८

१६६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

चोद्दसठाणेसु तिया सत्तेक्कंकक्कमेण पल्लाणिं । एक्ककला उक्कस्सो णंदावट्टम्मि आउस्सं ॥ ४८९

१७३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

चोद्दसठाणे सुण्णं अट्ठेक्कंककमेण पल्लाणिं । उक्कस्साउपमाणं पडलम्मि पहंकरे होदि[1] ॥ ४९०

१८०००००००००००००० ।

चोद्दसठाणे छक्का अट्ठेक्क कमेण होंति पल्लाणिं । दोण्णि कलाओ पिट्ठकंपडले आउस्स उक्कस्सो ॥ ४९१

१८६६६६६६६६६६६६६ | २/३ |

चोद्दसठाणेसु तिया णवेक्कअंकक्कमेण पल्लाइं । एक्ककला गजणामे पडले आउस्स उक्कस्सो ॥ ४९२

१९३३३३३३३३३३३३३ | १/३ |

दोण्णि पयोणिहिउवमा उक्कस्साऊ हुवेदि पडलम्मि । चरिमट्ठाणणिविट्ठे सोहम्मीसाणजुगलम्मि ॥ ४९३

सा २ ।

अंककमसे पन्द्रह स्थानोंमें छह और एक, इतने पल्य व दो कला प्रमाण वज्र पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८८ ॥ १६६६६६६६६६६६६६६ २/३ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें तीन, सात और एक, इतने पल्य व एक कला प्रमाण नन्द्यावर्त पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४८९ ॥ १७३३३३३३३३३३३३३ १/३ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, आठ और एक, इतने पल्य प्रमाण प्रभंकर पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९० ॥ १८०००००००००००००० ।

क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, आठ और एक, इतने पल्य व दो कला प्रमाण पृष्ठक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९१ ॥ १८६६६६६६६६६६६६६ २/३ ।

अंककमसे चौदह स्थानोंमें तीन, नौ और एक, इतने पल्य व एक कला प्रमाण गज नामक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९२ ॥ १९३३३३३३३३३३३३३ १/३ ।

सौधर्म-ईशान युगलके भीतर अन्तिम स्थानमें निविष्ट पटलमें दो सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९३ ॥ सा. २ ।

---

१ द ब होहि. २ ब पिट्ठव.

उक्कस्साउवमाणं सणक्कुमारस्स पढमपडलम्मि । दोण्णि पयोणिहिउवमा पंचकला सत्तपविहत्ता ॥ ४९४

सा २ | ५/७ |

तिण्णि महण्णवउवमा तिण्णि कला इंदयम्मि वणमाले । चत्तारि उवहिउवमा एक्ककला णागपडलम्मि ॥

सा ३ | क ३/७ | सा ४ | १/७ |

चत्तारि सिंधुउवमा छच्च कला गरुडणामपडलम्मि । पंचण्णवउवमाणा चत्तारि कलाओ लंगलए[1] ॥ ४९६

सा ४ | ६/७ | सा ५ | ४/७ |

छट्ठोवहिउवमाणा दोण्णि कला इंदयम्मि बलभद्दे । सत्तसरिरमणउवमा माहिंददुगस्स चरिमपडलम्मि ॥

६ | २/७ |

सत्तंबुरासिउवमा तिण्णि कलाओ चउक्कविहत्ता । उक्कस्साउवमाणं पढमंपडलम्मि बम्हकप्पस्स ॥ ४९८

सा ७ | ३/४ |

अट्ठण्णवउवमाणा दुकला सुरसमिदिणामपडलम्मि । णवरयणायरउवमा एक्ककला बम्हपडलम्हि ॥ ४९९

सा ८ | २/४ | ९ | १/४ |

सानत्कुमारके प्रथम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण दो सागरोपम और सातसे विभक्त पांच कला मात्र है ॥ ४९४ ॥ सा. २ ५/७ ।

तीन सागरोपम व तीन कला प्रमाण वनमाल इन्द्रकमें, तथा चार सागरोपम व एक कला प्रमाण नाग पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९५ ॥ वनमाल ३ ३/७, नाग ४ १/७ सा. ।

गरुड़ नामक पटलमें चार सागरोपम व छह कला तथा लांगल पटलमें पांच सागरोपम व चार कला प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९६ ॥ गरुड़ ४ ६/७, लांगल ५ ४/७ सा. ।

बलभद्र इन्द्रकमें छह सागरोपम व दो कला तथा माहेन्द्र युगलके अन्तिम पटलमें सात सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९७ ॥ बलभद्र ६ २/७, चक्र ७ सा. ।

ब्रह्म कल्पके प्रथम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण सात सागरोपम और चारसे विभक्त तीन कला है ॥ ४९८ ॥ सा. ७ ३/४ ।

सुरसमिति नामक पटलमें आठ सागरोपम और दो कला तथा ब्रह्म पटलमें नौ सागरोपम और एक कला प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ४९९ ॥ सुरसमिति ८ २/४, ब्रह्म ९ १/४ सा. ।

---

१ द ब लिंगलए.

बम्हुत्तराभिधाणे चरिमे पडलम्मि बम्हकप्पस्स । उक्कस्साउपमाणं दस सरिरमणाण उवमाणा ॥ ५०० १० ।

बम्हहिदयम्हि[1] पडले बारसकल्लोलिणीसउवमाणं । चोद्दसणीरहिउवमा उक्कस्साऊ[2] हवंति लंतवए ॥५०१ १२ । १४ ।

महसुक्कणामपडले सोलससरियाहिणाहउवमाणा । अट्ठरसं सहसारे तरंगिणीरमणउवमाणा ॥ ५०२ १६ । १८ ।

आणदणामे पडले अट्ठारस सलिलरासिउवमाणा । उक्कस्साउपमाणं चत्तारि कलाओ छक्कहिदा ॥ ५०३ $१८\left|\frac{४}{६}\right|$

एक्कोणवीस वारिहिउवमा दुकलाओ पाणदे पडले । पुप्फगए वीसं चिय तरंगिणीकंतउवमाणा ॥ ५०४ १९ । क २ । २० ।

वीसंबुरासिउवमा चत्तारि कलाओ सादगे पडले । इगिवीस जलहिउवमा आरणणामम्मि दोण्णि कला ॥ २० । क ४ । २१ $\left|\frac{२}{६}\right|$

ब्रह्म कल्पके ब्रह्मोत्तर नामक अन्तिम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण दश सागरोपम है ॥ ५०० ॥ १० ।

ब्रह्महृदय पटलमें बारह सागरोपम और लांतव पटलमें चौदह सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०१ ॥ ब्र. ह. १२, लां. १४ सा. ।

महाशुक्र नामक पटलमें सोलह सागरोपम और सहस्रार पटलमें अठारह सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०२ ॥ म. १६, सह. १८ सा. ।

आनत नामक पटलमें अठारह सागरोपम और छहसे भाजित चार कला प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०३ ॥ $१८\frac{४}{६}$ सा. ।

प्राणत पटलमें उन्नीस सागरोपम और दो कला तथा पुष्पक पटलमें बीस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०४ ॥ प्रा. $१९\frac{२}{६}$, पु. २० ।

शातक पटलमें बीस सागरोपम और चार कला तथा आरण नामक पटलमें इक्कीस सागरोपम और दो कला प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०५ ॥ शा. $२०\frac{४}{६}$, आ. $२१\frac{२}{६}$ सा. ।

१ द ब बम्हिदयम्हि. २ द ब कप्पस्साऊ.

अच्चुदणामे पडले बावीस तरंगिणीरमणउवमाणा[1] । तेवीस सुदंसणए अमोघपडलम्मि चउवीसं ॥ ५०६
२२ । २३ । २४ ।

पणुवीस सुप्पबुद्धे[2] जसहरपडलम्मि होंति छव्वीसं । सत्तावीस सुभद्दे सुविसाले अट्ठवीसं च ॥ ५०७
२५ । २६ । २७ । २८ ।

सुमणसणामे उणतीस तीस[3] सोमणसणामपडलम्मि । एक्कत्तीसं पीदिंकरम्मि बत्तीस आइच्चे ॥ ५०८
२९ । ३० । ३१ । ३२ ।

सव्वट्ठसिद्धिणामे तेत्तीसं वाहिणीसउवमाणा । उक्कस्स जहण्णा वि य णिद्दिट्ठं वीयरागेहिं ॥ ५०९
३३ ।

उदुपहुदिइंदयाणं हेट्ठिमउक्कस्सयाउपरिमाणं । एक्कसमएण अहियं उवरिमपडले जहण्णाऊ ॥ ५१०

तेत्तीस उवहिउवमा पल्लासंखेज्जभागपरिहीणा । सव्वट्ठसिद्धिणामे मण्णंते केइ अवराऊ ॥ ५११
पाठान्तरम् ।

अच्युत नामक पटलमें बाईस सागरोपम, सुदर्शन पटलमें तेईस सागरोपम, और अमोघ पटलमें चौबीस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०६ ॥

अ. २२, सु. २३, अमोघ २४ सा. ।

सुप्रबुद्ध पटलमें पच्चीस, यशोधर पटलमें छब्बीस, सुभद्र पटलमें सत्ताईस और सुविशाल पटलमें अट्ठाईस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥ ५०७ ॥

सुप्र. २५, यशो. २६, सुभद्र २७, सुवि. २८ ।

सुमनस नामक पटलमें उनतीस, सौमनस नामक पटलमें तीस, प्रीतिंकर पटलमें इकतीस और आदित्य पटलमें बत्तीस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति है ॥ ५०८ ॥

सुम. २९, सौम. ३०, प्री. ३१, आ. ३२ सा. ।

वीतराग भगवान्‌ने सर्वार्थसिद्धि नामक पटलमें उत्कृष्ट व जघन्य आयुका प्रमाण तेतीस सागरोपम कहा है ॥ ५०९ ॥ ३३ सा. ।

ऋतु आदि इन्द्रकोंमें अधस्तन इन्द्रक सम्बन्धी उत्कृष्ट आयुके प्रमाणमें एक समय मिलानेपर उपरिम पटलमें जघन्य आयुका प्रमाण होता है ॥ ५१० ॥

कोई आचार्य सर्वार्थसिद्धि नामक पटलमें पल्यके असंख्यातवें भागसे रहित तेतीस सागरोपम प्रमाण जघन्य आयु मानते हैं ॥ ५११ ॥ पाठान्तर ।

---

१ द ब उवमा. २ द ब सुप्पबुद्धी. ३ द ब उणतीस सोम°.

सोहम्मकप्पपढमिंदयम्मि पलिदोवमं हुवे एक्कं । सव्वणिगिट्ठसुराणं जहण्णआउस्स परिमाणं ॥ ५१२

अड्ढाइज्जं पल्ला आऊ सोमे जमे य पत्तेकं । तिण्णि कुबेरे वरुणे किंचूणा सक्कदिप्पाले ॥ ५१३

$\frac{५}{२} \mid \frac{५}{२} \mid ३ । ३ ।$

सक्कादो सेसेसुं दक्खिणइंदेसु लोयपालाणं । एक्केक्कपल्लअधियो आऊ सोमादियाण पत्तेक्कं ॥ ५१४

ईसाणिंददिगिंद्दे आऊ सोमे जमे[1] तिपल्लाइं । किंचूणाणि कुबेरे वरुणम्मि य सादिरेगाणि ॥ ५१५

३ । ३ । ३ । ३ ।

ईसाणादो सेसयउत्तरइंदेसु लोयपालाणं । एक्केक्कपल्लअधियो आऊ सोमादियाण पत्तेक्कं ॥ ५१६

सव्वाण दिगिंदाणं सामाणियसुरवराण पत्तेक्कं । णियणियदिगिंदाणं आउपमाणाणि आऊणि ॥ ५१७

पढमे बिदिए जुगले बम्हादिसु चउसु आणददुगम्मि । आरणजुगले कमसो सव्विंदेसुं सरीररक्खाणं ॥ ५१८

सौधर्म कल्पके प्रथम इन्द्रकमें सब निकृष्ट देवोंकी जघन्य आयुका प्रमाण एक पल्योपम है ॥ ५१२ ॥

सौधर्म इन्द्रके दिक्पालोंमें सोम और यमकी अढ़ाई पल्योपम, कुबेरकी तीन पल्योपम और वरुणकी तीन पल्यसे किंचित् ऊन आयु होती है ॥ ५१३ ॥

सोम २½, यम २½, कुबेर ३, वरुण कुछ कम ३ प. ।

सौधर्म इन्द्रके अतिरिक्त शेष दक्षिण इन्द्रोंके सोमादिक लोकपालोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक एक पल्य अधिक है ॥ ५१४ ॥

ईशान इन्द्रके लोकपालोंमें सोम व यमकी आयु तीन पल्य, कुबेरकी तीन पल्यसे कुछ कम और वरुणकी कुछ अधिक तीन पल्य है ॥ ५१५ ॥

सोम ३, यम ३, कुबेर-कुछ कम ३, वरुण ३ प. सातिरेक ।

ईशान इन्द्रके अतिरिक्त शेष उत्तर इन्द्रोंके सोमादिक लोकपालोंमें प्रत्येककी आयु एक एक पल्य अधिक है ॥ ५१६ ॥

सब लोकपालोंके सामानिक देवोंमें प्रत्येककी आयु अपने अपने लोकपालोंकी आयुके प्रमाण होती है ॥ ५१७ ॥

प्रथम युगल, द्वितीय युगल, ब्रम्हादिक चार युगल, आनत युगल और आरण युगल,

---

१ द ब सोमक्कमे.

पलिदोवमाणि आऊ अड्ढाइज्जं हुवेदि पढमम्मि । एक्केक्कपल्लवड्ढी पत्तेक्कं उवरिउवरिम्मि ॥ ५१९

५	७	९	११	१३	१५	१७	१९
२	२	२	२	२	२	२	२

बाहिरमज्झब्भंतरपरिसाए होंति तिण्णि चत्तारि । पंच पलिदोवमाणिं उवरिं एक्केक्कपल्लवड्ढीए ॥ ५२०

३, ४, ५ । ४, ५, ६ । ५, ६, ७ । ६, ७, ८ । ७, ८, ९ । ८, ९, १० । ९, १०, ११ । १०, ११, १२[1] ।

पढमम्मि अधियपल्लं आरोहकवाहणाण तट्ठाणे । आऊ हवेदि तत्तो वड्ढी एक्केक्कपल्लस्स ॥ ५२१

१ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८[1] ।

एक्केक्क पल्ल वाहणसामीणं होंति तेसु ठाणेसुं । पढमादु उत्तरुत्तरवड्ढीए एक्कपल्लस्स ॥ ५२२

१ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ ।

ताणं पइण्णएसुं अभियोगसुरेसु किब्बिसेसुं च । आउपमाणणिरूवणउवएसो संपहि पणट्ठो ॥ ५२३

इनमेंसे प्रथममें शरीररक्षकोंकी आयु अढ़ाई पल्योपम और ऊपर ऊपर सब इन्द्रोंके शरीररक्षकोंकी आयु क्रमसे एक एक पल्य अधिक है ॥ ५१८–५१९ ॥

सौ. यु. $\frac{५}{२}$, सन. यु. $\frac{७}{२}$, ब्र. यु. $\frac{९}{२}$, लां. यु. $\frac{११}{२}$, शु. यु. $\frac{१३}{२}$, श. यु. $\frac{१५}{२}$, आन. यु. $\frac{१७}{२}$, आर. यु. $\frac{१९}{२}$ पल्य ।

प्रथम युगलमें बाह्य, मध्यम और अभ्यन्तर पारिषद देवोंकी आयु क्रमसे तीन, चार और पांच पल्य है । इसके ऊपर एक एक पल्य अधिक है ॥ ५२० ॥

सौ. यु. ३, ४, ५ । सन. यु. ४, ५, ६ । ब्र. यु. ५, ६, ७ । लां. यु. ६, ७, ८ । शु. यु. ७, ८, ९ । श. यु. ८, ९, १० । आ. यु. ९, १०,११ । आर. यु. १०, ११, १२ प. ।

उन आठ स्थानोंमेंसे प्रथम स्थानमें आरोहक वाहनोंकी आयु एक पल्यसे अधिक और इसके आगे एक एक पल्यकी वृद्धि हुई है ॥ ५२१ ॥

सौ. १, सन. २, ब्र. ३, लां. ४, शु. ५, श. ६, आन. ७, आर. ८ ।

उन स्थानोंमेंसे प्रथममें वाहनस्वामियोंकी आयु एक एक पल्य और इससे आगे उत्तरोत्तर एक एक पल्यकी वृद्धि है ॥ ५२२ ॥

सौ. १, स. २, ब. ३, लां. ४, शु. ५, श. ६, आन. ७, आर. ८ प. ।

उनके प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विष देवोंमें आयुप्रमाणके निरूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ५२३ ॥

---

[1] द ब ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १२ । [1] द ब ८ । ९ ।

जो सोलस कप्पाइं केई इच्छंति ताण उवएसे[1] । जुगलं पडि णादव्वं पुव्वोदिदआउपरिमाणं ॥ ५२४

पलिदोवमाणि पण णव तेरस सत्तरस तह य चोत्तीसं । अट्ठत्तालं आऊ देवीणं दक्खिणिंदेसुं ॥ ५२५

५ । ९ । १३ । १७ । ३४ । ४८ ।

सत्तेयारसतेवीससत्तवीसेक्कतालपणवण्णा । पल्ला कमेण आऊ देवीणं उत्तरिंदेसुं ॥ ५२६

७ । ११ । २३ । २७ । ४१ । ५५ ।

जे सोलस कप्पाणिं केई इच्छंति ताण उवएसे । अट्ठसु आउपमाणं देवीणं दक्खिणिंदेसुं ॥ ५२७

पंचिंदोवमाणि पण णव तेरस सत्तरस एक्कवीसं च । पणवीसं चउतीसं अट्ठत्तालं कमेणेव ॥ ५२८

५ । ९ । १३ । १७ । २१ । २५ । ३४ । ४८ ।

पल्ला सत्तेक्कारस पण्णरसेक्कोणवीसतेवीसं । सगवीसमेक्कतालं पणवण्णं उत्तरिंददेवीणं ॥ ५२९

७ । ११ । १५ । १९ । २३ । २७ । ४१ । ५५ ।

जो कोई आचार्य सोलह कल्पोंकी इच्छा करते हैं उनके उपदेशानुसार पूर्वोक्त आयुका प्रमाण एक एक युगलके प्रति जानना चाहिये ॥ ५२४ ॥

दक्षिण इन्द्रोंमें देवियोंकी आयु क्रमशः पांच, नौ, तेरह, सत्तरह, चौंतीस और अड़तालीस पल्य प्रमाण है ॥ ५२५ ॥

सौ. ५, सन. ९, ब्र. १३, लां. १७, आ. ३४, आरण ४८ पल्य ।

उत्तर इन्द्रोंमें देवियोंकी आयु क्रमसे सात, ग्यारह, तेईस, सत्ताईस, इकतालीस और पचवन पल्य प्रमाण है ॥ ५२६ ॥

ई. ७, मा. ११, म. २३, सह. २७, प्रा. ४१, अ. ५५ पल्य ।

जो कोई आचार्य सोलह कल्पोंकी इच्छा करते है उनके उपदेशानुसार आठ दक्षिण इन्द्रोंमें देवियोंकी आयुका प्रमाण क्रमसे पांच, नौ, तेरह, सत्तरह, इक्कीस, पच्चीस, चौंतीस और अड़तालीस पल्य है ॥ ५२७–५२८ ॥

सौ. ५, सन. ९, ब्र. १३, लां. १७, शु. २१, श. २५, आ. ३४, आर. ४८ पल्य ।

उक्त आचार्योंके उपदेशानुसार उत्तर इन्द्रोंकी देवियोंकी आयु क्रमसे सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेईस, सत्ताईस, इकतालीस और पचवन पल्य प्रमाण है ॥ ५२९ ॥

ई. ७, मा. ११, ब्रह्मोत्तर १५, कापिष्ठ १९, म. २३, सह. २७, प्रा. ४१, अच्युत ५५ पल्य ।

---

१ द ब उवएसो.

कप्पं पडि पंचादी पल्ला देवीण वड्ढदे आऊ । दोदोवड्ढी तत्तो लोगायणिणे समुद्दिट्ठं ॥ ५३०

५ । ७ । ९ । ११ । १३ । १५ । १७ । १९ । २१ । २३ । २५ । २७ । २९ । ३१ । ३३ । ३५ ।

पाठान्तरम् ।

पलिदोवमाणि पंचयसत्तारसपंचवीसपणतीसं । चउसु जुगलेसु आऊ णादव्वा इंददेवीणं ॥ ५३१

आरणदुगपरियंतं वड्ढंते पंचपल्लाइं । मूलाचारे इरिया[1] एवं णिउणं[2] णिरूवेंति ॥ ५३२

५ । १७[3] । २५ । ३५ । ४० । ४५ । ५० । ५५ ।

पडिइंदाणं सामाणियाण तेत्तीस सुरवराणं पि । देवीण होदि आऊ णियिंददेवीण आउसमो ॥ ५३३

सक्कदिगिंदे सोमे जमे च देवीण आउपरिमाणं । चउभजिदपंचपल्ला किंचूणदिवड्ढ वरुणम्मि ॥ ५३४

५	३
४	२

पलिदोवमं दिवड्ढं होदि कुबेरम्मि सक्कदिप्पाले[4] । तेत्तियमेत्ता आऊ दिगिंदसामंतदेवीणं ॥ ५३५

देवियोंकी आयु प्रथम कल्पमें पांच पल्य प्रमाण है । इसके आगे प्रत्येक कल्पमें दो दो पल्यकी वृद्धि होती गयी है । ऐसा 'लोकायनी' में कहा गया है ॥ ५३० ॥ पाठान्तर ।

सौ. ५, ई. ७, सन. ९, मा. ११, ब्र. १३, ब्रह्मो. १५, लां १७, का. १९, शु. २१, म. २३, श. २५, सह. २७, आ. २९, प्रा. ३१, आ. ३३, अच्युत ३५ पल्य ।

चार युगलोंमें इन्द्रदेवियोंकी आयु क्रमसे पांच, सत्तरह, पच्चीस और पैंतीस पल्य प्रमाण जानना चाहिये । इसके आगे आरणयुगल तक पांच पल्यकी वृद्धि होती गयी है, ऐसा मूलाचार (पर्याप्त्यधिकार ८०) में आचार्य स्पष्टतासे निरूपण करते हैं ॥५३१–५३२॥

पाठान्तर ।

सौ. यु. ५, सन. यु. १७, ब्र. यु. २५, लां. यु. ३५, शु. यु. ४०, श. यु. ४५, आ. यु. ५०, आर. यु. ५५ पल्य ।

प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंकी देवियोंकी आयु अपने इन्द्रोंकी देवियोंकी आयुके समान होती है ॥ ५३३ ॥

सौधर्म इन्द्रके दिक्पालोंमें सोम व यमकी देवियोंकी आयुका प्रमाण चारसे भाजित पांच पल्य तथा वरुणकी देवियोंकी आयुका प्रमाण कुछ कम डेढ़ पल्य है ॥ ५३४ ॥

सोम $\frac{५}{४}$, यम $\frac{५}{४}$, वरुण $\frac{३}{२}$ प. ।

सौधर्म इन्द्रके कुबेर दिक्पालकी देवियोंकी आयु डेढ़ पल्योपम तथा लोकपालोंके सामंतोंकी देवियोंकी आयु भी इतनी ही होती है ॥ ५३५ ॥

---

१ द ब मूलाआरेइरिया. २ द ब णिउणा. ३ द ब ७. ४ द ब दिप्पालो.

पडिइंदतिदयस्स य दिगिंददेवीण आउपरिमाणं । एक्केकपल्लवड्ढी सेसेसुं दक्खिणिंदेसुं ॥ ५३६

ईसाणदिगिंदाणं जमसोमधणेसदेवीसुं[1] । पुह पुह दिवड्ढपल्लं आऊ वरुणस्स अदिरित्तं ॥ ५३७

३ | ३ | ३
२ | २ | २

एदेसु दिगिंदेसुं आऊ सामंतअमरदेवीणं । णियणियदिगिंददेवीआउपमाणस्स सारिच्छं ॥ ५३८

पडिइंदतिदयस्स य दिगिंददेवीण आउपरिमाणं[2] । एक्केकपल्लवड्ढी सेसेसुं उत्तरिंदेसुं[3] ॥ ५३९

तणुरक्खाण सुराणं तिप्परिसप्पहुदिआण देवीणं । आउपमाणणिरूवणउवएसो संपहि पणट्ठो ॥ ५४०

बद्धाउं पडि भणिदं उक्कस्समज्झिमंजहण्णाणिं । घादाउवमासेज्ज अण्णसरूवं पवेमो ॥ ५४१

एत्थ उडुम्मि पढमपत्थले जहण्णमाऊ दिवड्ढपलिदोवमं उक्कस्समद्धसागरोवमं । अद्धसागरोवमं[4] मुहं

शेष दक्षिण इन्द्रोंमें प्रतीन्द्रादिक तीन और लोकपालोंकी देवियोंकी आयुका प्रमाण एक एक पल्य अधिक है ॥ ५३६ ॥

ईशान इन्द्रके लोकपालोंमें यम, सोम और कुबेरकी देवियोंकी आयु पृथक् पृथक् डेढ़ पल्य तथा वरुणकी देवियोंकी आयु इससे अधिक है ॥ ५३७ ॥

य. $\frac{3}{2}$, सो. $\frac{3}{2}$, कु. $\frac{3}{2}$, व. साधिक $\frac{3}{2}$ पल्य ।

इन दिक्पालोंमें सामंत देवोंकी देवियोंकी आयु अपने अपने दिक्पालोंकी देवियोंके आयुप्रमाणके सदृश है ॥ ५३८ ॥

शेष उत्तर इन्द्रोंमें प्रतीन्द्रादिक तीन और लोकपाल इनकी देवियोंकी आयुका प्रमाण एक एक पल्य अधिक है ॥ ५३९ ॥

तनुरक्षक देव और तीनों पारिषद आदि देवोंकी देवियोंके आयुप्रमाणके निरूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ५४० ॥

यह उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य आयुका प्रमाण बद्धायुष्कके प्रति कहा गया है । घातायुष्कका आश्रय करके अन्य स्वरूप कहते हैं ॥ ५४१ ॥

यहां ऋतु नामक प्रथम पटलमें जघन्य आयु डेढ़ पल्योपम और उत्कृष्ट आयु अर्ध सागरोपम

१ द ब ठाणवीसुं. २ द ब परिमाणो. ३ द ब उत्तरादीगिंदेसुं. ४ द ब °सागरोवमं सगरोवमं.

होदि, भूमी अड्ढाइज्जसागरोवमाणि। भूमीदो मुहमवणिय[1] उच्छेहेण भागे हिदे तत्थ एक्कंसागरोवमस्स पण्णारसभागोवरिमवड्ढी[2] होदि $\left|\frac{१}{१५}\right|$ एदामिच्छिदपत्थडसंखाए[3] गुणिय मुहे पक्खित्ते विमलादीण तीसण्हं पत्थडाणमाउआणि होंति। तेसिमेसा संदिट्ठी $\left|\frac{१७}{३०}\right|\left|\frac{१९}{३०}\right|\left|\frac{२१}{३०}\right|\left|\frac{२३}{३०}\right|\left|\frac{२५}{३०}\right|\left|\frac{२७}{३०}\right|\left|\frac{२९}{३०}\right|\left|\frac{३१}{३०}\right|\left|\frac{३३}{३०}\right|$ $\left|\frac{३५}{३०}\right|\left|\frac{३७}{३०}\right|\left|\frac{३९}{३०}\right|\left|\frac{४१}{३०}\right|\left|\frac{४३}{३०}\right|\left|\frac{४५}{३०}\right|\left|\frac{४७}{३०}\right|\left|\frac{४९}{३०}\right|\left|\frac{५१}{३०}\right|\left|\frac{५३}{३०}\right|\left|\frac{५५}{३०}\right|\left|\frac{५७}{३०}\right|\left|\frac{५९}{३०}\right|\left|\frac{६१}{३०}\right|\left|\frac{६३}{३०}\right|\left|\frac{६५}{३०}\right|\left|\frac{६७}{३०}\right|$ $\left|\frac{६९}{३०}\right|\left|\frac{७१}{३०}\right|\left|\frac{७३}{३०}\right|$ सा $\left|\frac{५}{२}\right|$[4] सणक्कुमारमाहिंदे सत्त पत्थडा। एदेसिमाउवपमाणमाणिज्जमाणे मुहमड्ढाइज्ज-

है। यहां अर्ध सागरोपम मुह और भूमि अढ़ाई सागरोपम (अन्तिम पटलकी उत्कृष्ट आयु) है। भूमिमेंसे मुखको कम करके शेषमें उत्सेधका (एक कम गच्छका) भाग देनेपर एक सागरोपमका पन्द्रहवां भाग उपरिम वृद्धिका प्रमाण आता है।

स्पष्टार्थ— सौधर्मयुगलमें समस्त पटल ३१ हैं। इनमेंसे प्रथम पटलमें घातायुष्ककी अपेक्षा उत्कृष्ट आयु $\frac{१}{२}$ सा. और अन्तिम पटलमें $\frac{५}{२}$ सा. है। $\frac{५}{२} - \frac{१}{२} \div (३१ - १) = \frac{४}{३०} = \frac{१}{१५}$ हानि-वृद्धि।

इसे (एक कम) इच्छित पटलकी संख्यासे गुणा कर मुहमें मिला देनेपर विमलादिक तीस पटलोंमें आयुका प्रमाण निकलता है।

उदाहरण— इच्छित पटल १५ रुचक; $\frac{१}{१५} \times (१५ - १) + \frac{१}{२} = \frac{४}{३०}$ सागरोपम।

उनकी यह संदृष्टि है— विमल $\frac{१७}{३०}$, चन्द्र $\frac{१९}{३०}$, वल्गु $\frac{२१}{३०}$, वीर $\frac{२३}{३०}$, अरुण $\frac{२५}{३०}$, नन्दन $\frac{२७}{३०}$, नलिन $\frac{२९}{३०}$, कंचन $\frac{३१}{३०}$, रुधिर $\frac{३३}{३०}$, चन्द $\frac{३५}{३०}$, मरुत् $\frac{३७}{३०}$, ऋद्धीश $\frac{३९}{३०}$, वैडूर्य $\frac{४१}{३०}$, रुचक $\frac{४३}{३०}$, रुचिर $\frac{४५}{३०}$, अंक $\frac{४७}{३०}$, स्फटिक $\frac{४९}{३०}$, तपनीय $\frac{५१}{३०}$, मेघ $\frac{५३}{३०}$, अभ्र $\frac{५५}{३०}$, हारिद्र $\frac{५७}{३०}$, पद्ममाल $\frac{५९}{३०}$, लोहित $\frac{६१}{३०}$, वज्र $\frac{६३}{३०}$, नन्द्यावर्त $\frac{६५}{३०}$, प्रभंकर $\frac{६७}{३०}$, पिष्टक $\frac{६९}{३०}$, गज $\frac{७१}{३०}$, मित्र $\frac{७३}{३०}$, प्रभ $\frac{७५}{३०} = \frac{५}{२}$ सागरोपम।

सनत्कुमार-माहेन्द्रमें सात पटल हैं। इनमें आयुप्रमाणको लानेके लिये मुख अढ़ाई

१ द ब मुहवणिय. २ द ब वड्ढ. ३ द ब पण्णारससागरोवमट्ठि. ४ द ब पंचदसंखाए. ५ द ब $\left|\frac{सा ५}{१ २}\right|$.

सागरोवमाणि, भूमी अद्धसागरोवमहियसत्तसागरोवमाणि[1], सत्त उच्छेहो होदि । तेसिं संदिट्ठी | ३ | ३ १४ | ४ | ९ १४ | ५ | ५ १४ | ६ | १ १४ | ६ | ११ १४ | ७ | १ २ | सा । बम्ह-बम्हुत्तरकप्पे चत्तारि पत्थडा । एदेसिमाउवमाणिज्जमाणे[2] मुहं अद्धसागरोवमहियसत्तसागरोवमाणि, भूमी अद्धसागरोवमहियदससागरोवमाणि । एदेसिमाउआण संदिट्ठी | ८ | १ ४ | ९ | ९ | ३ ४ | १० | १ २ | लांतव-काविट्ठे दोण्णि पत्थडा । तेसिमाउआण संदिट्ठी | १२ | १ २ | १४ | १ २ | महसुक्को[3] त्ति एक्को चेव पत्थलो सुक्क-महसुक्ककप्पेसु । तम्मि आउस्स अ संदिट्ठी एसा | १६ | १ २ | सहस्सारओ त्ति एक्को पत्थलो सदर-सहस्सारकप्पेसु । आउसंदिट्ठी[4] १८ | १ २ | आणद-पाणदकप्पेसु तिण्णि पत्थडा । तेसुमाउस्स वुत्तकमेण आणीदसंदिट्ठी | १९ | १९ | १ २ | २० | आरण-अच्चुदकप्पे तिण्णि पत्थडा । एदेसुमाउआणं एस संदिट्ठी | २० | २ ३ | २१ | १ ३ | २२ |

सागरोपम, भूमि साढ़े सात सागरोपम, और उत्सेध सात है । [$\frac{१}{२}$ − $\frac{१}{२}$ ÷ ७ = $\frac{१}{१४}$ हानि-वृद्धि ।] उनकी संदृष्टि— अंजन ३ $\frac{३}{१४}$, वनमाल ३ $\frac{१}{१४}$, नाग ४ $\frac{९}{१४}$, गरुड ५ $\frac{५}{१४}$, लांगल ६ $\frac{१}{१४}$, बलभद्र ६ $\frac{११}{१४}$, चक्र ७ $\frac{१}{२}$ सागरोपम ।

ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर कल्पमें चार पटल है । इनके आयुप्रमाणको लानेके लिये मुख साढ़े सात सागरोपम, भूमि साढ़े दश सागरोपम [और उत्सेध चार] है । [$\frac{२}{२}$ − $\frac{१}{२}$ ÷ ४ = $\frac{१}{४}$ हानि-वृद्धि ।] इनमें आयुप्रमाणकी संदृष्टि — अरिष्ट ८ $\frac{१}{४}$, सुरसमिति ९, ब्रह्म ९ $\frac{१}{२}$, ब्रह्मोत्तर १० $\frac{३}{४}$ सा. ।

लांतव--काप्पिष्टमें दो पटल है । उनमें आयुप्रमाणकी संदृष्टि— ब्रह्महृदय १२ $\frac{१}{२}$, लांतव १४ $\frac{१}{२}$ सा. । शुक्र-महाशुक्र कल्पमें महाशुक्र नामक एक ही पटल हैं । उसमें आयुकी संदृष्टि यह है— महाशुक्र १६ $\frac{१}{२}$ सा. । शतार-सहस्रार कल्पमें सहस्रार नामक एक ही पटल है । उसमें आयुकी संदृष्टि — १८ $\frac{१}{२}$ सा. । आनत-प्राणत कल्पमें तीन पटल हैं । उनमें आयुकी उक्त क्रमसे निकाली हुई संदृष्टि— आनत १९, प्राणत १९ $\frac{१}{२}$, पुष्पक २० सा. । आरण-अच्युत कल्पमें तीन पटल हैं । इनमें आयुप्रमाणकी संदृष्टि यह है— शातक २० $\frac{२}{३}$, आरण २१ $\frac{१}{३}$, अच्युत २२ सा. ।

१ द ब साद्धसागरोवमाण. २ द ब °आउवमाणामिमाणे. ३ द ब महसुक्के. ४ ब पत्थडा, द पत्थडा आउसंदिट्ठी.

तत्तो उवरि सुदंसणो अमोघो सुप्पबुद्धो जसोधरो सुभद्दो सुविसालो सुमणसो सोमणसो पीदिंकरो त्ति एदे णव पत्थडा गेवज्जेसु। एदेसुमाउआणं वड्ढिहाणी णत्थि, पादेक्कमेक्कपत्थलस्स पहण्णियादो। वेसिमाउसंदिट्ठी[1] एसा— २३। २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। णवाणुदिसेसु आइच्चो णाम एक्को चेव पत्थलो। तम्मि आउअं[2] एत्तियं होदि ३२। पंचाणुत्तरेसु सव्वट्ठसिद्धिसण्णिदो एक्को पत्थलो। तत्थ विजय-वइजयंत-जयंतै-अपराजिदाणं जहण्णाउअं समयाधिकबत्तीससागरोवमुक्कस्सं तेत्तीससागरोवमाणि। सव्वट्ठसिद्धिविमाणम्मि जहण्णुक्कस्सेण तेत्तीससागरोवमाणि ३३।[3]

। एवमाउगं सम्मत्तं।

सव्वेसिं इंदाणं ताणं[4] महदेविलोयपालाणं। पडिइंदाणं विरहो उक्कस्सं होइ छम्मासं ॥ ५४२

तेत्तीसामरसामाणियाण तणुरक्खपरिसतिदयाणं। चउमासं वरविरहो वोच्छं[5] आणीयपहुदीणं ॥ ५४३

सोहम्मे छमुहुत्ता ईसाणे चउमुहुत्त वरविरहं। णवदिवस सदुतिभागा सणक्कुमारम्मि कप्पम्मि ॥ ५४४

बारसदिणं तिभागा माहिंदे तालं बम्हम्मि। सीदिदिणं महसुक्के सतदिवसं तह सहस्सारे ॥ ५४५

उससे ऊपर सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुभद्र, सुविशाल, सुमनस, सौमनस और प्रीतिंकर, इस प्रकार ये नौ पटल ग्रैवेयकोंमें हैं। इनमें आयुओंकी वृद्धि-हानि नहीं है, क्योंकि, प्रत्येकमें एक एक पटलकी प्रधानता है। उनमें आयुओंकी संदृष्टि यह है— २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१ सागरोपम। नौ अनुदिशोंमें आदित्य नामक एक ही पटल है। उसमें आयु इतनी होती है— ३२ सा.। पांच अनुत्तरोंमें सर्वार्थसिद्धि नामक एक पटल है। उसमें विजय, वैजयंत, जयंत और अपराजित विमानमें जघन्य आयु एक समय अधिक बत्तीस सागरोपम और उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम प्रमाण है। सर्वार्थसिद्धि विमानमें जघन्य व उत्कृष्ट आयु तेतीस सागरोपम प्रमाण है ३३ सा.।

इस प्रकार आयुका कथन समाप्त हुआ।

सब इन्द्र, उनकी महादेवियां, लोकपाल और प्रतीन्द्र, इनका उत्कृष्ट विरह छह मास है ॥ ५४२ ॥

त्रायस्त्रिंश देव, सामानिक, तनुरक्ष और तीनों पारिषद, इनका उत्कृष्ट विरह चार मास है। अनीक आदि देवोंका उत्कृष्ट विरह कहते हैं— वह उत्कृष्ट विरह सौधर्ममें छह मुहूर्त, ईशानमें चार मुहूर्त, सनत्कुमार कल्पमें तीन भागोंमेंसे दो भाग सहित नौ दिन, माहेन्द्र कल्पमें त्रिभाग सहित बारह दिन, ब्रह्म कल्पमें चालीस दिन, महाशुक्रमें अस्सी दिन, सहस्रारमें सौ दिन,

१ द ब माउआउसंदिट्ठी. २ द ब °विजयावइजयंतअजयंत. ३ अत्र द प्रतौ 'एत्तिओ सेसे पुव्वं व वत्तव्वं', ब प्रतौ च 'एत्तिओ सेसे पुव्वं' इत्यधिकः पाठः। ४ द ब ताव. ५ द ब वोच्छं.

संखेज्जसहं वरिसा वरविरहं आणदादियचउक्के । भणिदं कप्पगदाणं एक्कारसभेददेवाणं ॥ ५४६

कप्पातीदसुराणं उक्कस्सं अंतराणि पत्तेक्कं । संखेज्जसहस्साणि वासा गेवज्जगउवरिमं पि ॥ ५४७

पल्लासंखेज्जं सो[1] अणुदिसाणुत्तरेसु उक्कस्सं । सव्वे अवरं समयं जम्मणमरणाण अंतरयं ॥५४८

दुसु दुसु तिचउक्केसु य सेसे जणणंतराणि चवणम्मि[2] । सत्तदिणपक्खमासा दुचउछम्मासया कमसो ॥

दि ७ । १५ । मा १ । २ । ४ । ६ ।

इय जम्मणमरणाणं उक्कस्से होदि अंतरपमाणं । सव्वेसु कप्पेसु जहण्ण एक्केक्कसमओ य ॥ ५५० पाठान्तरम् ।

। जम्मणमरणाणंतरकालो सम्मत्तो ।

उवहिउवमाणजीवी वरिससहस्सेण दिव्वअमयमयं । भुंजदि मणसाहारं णिरुवमयं तुट्ठिपुट्ठिकरं ॥ ५५१

और आनतादिक चार कल्पोंमें संख्यात सौ वर्ष प्रमाण है। यह उत्कृष्ट विरह इन्द्रादिरूप ग्यारह भेदोंसे युक्त कल्पवासी देवोंका कहा गया है ॥ ५४३–५४६ ॥

कल्पातीत देवोंमें नौ ही ग्रैवेयकोंमेंसे प्रत्येकमें उत्कृष्ट अन्तर संख्यात हजार वर्ष प्रमाण है ॥ ५४७ ॥

वह उत्कृष्ट अंतर अनुदिश और अनुत्तरोंमें पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। जन्म-मरणका जघन्य अन्तर सब जगह एक समयमात्र है ॥ ५४८ ॥

दो, दो; त्रिचतुष्क अर्थात् चार, चार, चार; इन कल्पोंमें तथा शेष ग्रैवेयकादिकोंमें जन्म व मरणका अन्तर क्रमशः सात दिन, एक पक्ष, एक मास, दो मास, चार मास और छह मास प्रमाण है ॥ ५४९ ॥

सौ. ई. ७ दिन, स. मा. १ पक्ष, ब्रह्मादिक चार १ मास, शुक्रादिक चार २ मास, आनतादिक चार ४ मास, शेष ग्रैवेयकादि ६ मास।

इस प्रकार सब कल्पोंमें जन्म-मरणका यह अन्तरप्रमाण उत्कृष्ट है, जघन्य अन्तर सब कल्पोंमें एक एक समय है ॥ ५५० ॥ पाठान्तर।

जन्म-मरणका अन्तरकाल समाप्त हुआ।

एक सागरोपम काल तक जीवित रहनेवाला देव एक हजार वर्षमें दिव्य, अमृतमय, अनुपम और तुष्टि एवं पुष्टि कारक मानसिक आहारका भोजन करता है ॥ ५५१ ॥

१ द ब सा. २ द ब मरण. ३ द ब जणंतराणि मरणाणि.

जेत्तियजलणिहिउवमा जो जीवदि तस्स तेत्तिएहिं च । वरिससहस्सेहि हवे आहारो पणुदिणाणि पल्लमिदे ॥
पडिइंदाणं सामाणियाण[1] तेत्तीससुरवराणं च । भोयणकालपमाणं णियणियइंदाण सारिच्छं ॥ ५५३
इंदप्पहुदिचउक्के देवीणं भोयणम्मि जो समओ । तस्स पमाणपरूवणउवएसो संपहि पणट्ठो ॥ ५५४ ॥
सोहम्मिंददिगिंदे सोमम्मि जमम्मि भोयणावसरो । सामाणियाण ताणं पत्तेक्कं पंचवीसदलदिवसा ॥ ५५५

२५
२

दूसियचरित्ता क्रूरा उम्मग्गट्ठा णिदाणकदभावा । मंदकसायाणुरदा बंधंते[2] अप्पड्ढिअसुराउं[3] ॥ ५५६
दसपुव्वधरा सोहम्मपहुदि सव्वट्ठसिद्धिपरियंतं । चोद्दसपुव्वधरा तह लंतवकप्पादि वच्चंते ॥ ५५७
सोहम्मादीअच्चुदपरियंतं जंति देसवदजुत्ता । चउविहदाणपयट्टा अकसाया पंचगुरुभत्ता ॥ ५५८
सम्मत्तणाणअज्जवलज्जासीलादिएहि परिपुण्णा । जायंते इत्थीओ जा अच्चुदकप्पपरियंतं[4] ॥ ५५९

जो देव जितने सागरोपम काल तक जीवित रहता है उसके उतने ही हजार वर्षोंमें आहार होता है । पल्य प्रमाण काल तक जीवित रहनेवाले देवके पांच दिनमें आहार होता है ॥ ५५२ ॥

प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंके आहारकालका प्रमाण अपने अपने इन्द्रोंके सदृश है ॥ ५५३ ॥

इन्द्र आदि चारकी देवियोंके भोजनका जो समय है उसके प्रमाणके निरूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ५५४ ॥

सौधर्म इन्द्रके दिक्पालोंमेंसे सोम व यमके तथा उनके सामानिकोंमेंसे प्रत्येकके भोजनका अवसर पच्चीसके आधे अर्थात् साढ़े बारह दिन है ॥ ५५५ ॥ $१२\frac{१}{२}$ दिन ।

दूषित चरित्रवाले, क्रूर, उन्मार्गमें स्थित, निदानभावसे सहित और मन्द कषायोंमें अनुरक्त जीव अल्पर्द्धिक देवोंकी आयुको बांधते हैं ॥ ५५६ ॥

दश पूर्वके धारी जीव सौधर्म आदि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त तथा चौदह पूर्वधारी लांतव कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जाते हैं ॥ ५५७ ॥

चार प्रकारके दानमें प्रवृत्त, कषायोंसे रहित व पंच गुरुओंकी भक्तिसे युक्त, ऐसे देशव्रत संयुक्त जीव सौधर्म स्वर्गको आदि लेकर अच्युत स्वर्ग पर्यन्त जाते हैं ॥ ५५८ ॥

सम्यक्त्व, ज्ञान, आर्जव, लज्जा एवं शीलादिसे परिपूर्ण स्त्रियां अच्युत कल्प पर्यन्त जाती हैं ॥ ५५९ ॥

१ द ब सामाणियओ. २ द ब बद्धंते ३ ब अप्पड्ढिअ. ४ द अज्जवलीला°, ब अज्जावलीला°.

जिणलिंगधारिणो जे उक्किट्ठतवस्समेण[1] संपुण्णा । ते जायंति अभव्वा उवरिमगेवज्जपरियंतं ॥ ५६०

पूजा वद तव दंसणणाणचरणसंपण्णा । णिग्गंथा जायंते भव्वा सव्वट्ठसिद्धिपरियंतं ॥ ५६१

चरया परिवज्जधरा मंदकसाया पियंवदा केई । कमसो भावणपहुदी जम्मंते बम्हकप्पंतं ॥ ५६२

जे पंचेंदियतिरिया सण्णी हु अकामणिज्जरेण जुदा । मंदकसाया केई जंति[2] सहस्सारपरियंतं ॥ ५६३

तणुदंडणादिसहिया जीवा जे अमंदकोहजुदा । कमसो भावणपहुदी केई जम्मंति अच्चुदं जाव ॥ ५६४

आ ईसाणं कप्पं उप्पत्ती होदि देवदेवीणं । तप्परदो उब्भूदी देवाणं केवलाणं पि ॥ ५६५

ईसाणलंतवच्चुदकप्पंतं जाव होंति कंदप्पा । किब्बिसिया अभियोगा णियकप्पजहण्णठिदिसहिया ॥ ५६६

। एवमाउगबंधो समत्तो[3] ।

जायंते सुरलोए उववादपुरे महारिहे सयणे । जादा य[4] मुहुत्तेणं छप्पज्जत्तीओ पावंति ॥ ५६७

जो अभव्य जिनलिंगको धारण करनेवाले और उत्कृष्ट तपके श्रमसे संपूर्ण हैं वे उपरिम ग्रैवेय पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥ ५६० ॥

पूजा, व्रत, तप, दर्शन, ज्ञान और चारित्रसे सम्पन्न निर्ग्रन्थ भव्य इससे आगे सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त उत्पन्न होते है ॥ ५६१ ॥

मंदकषायी व प्रिय बोलनेवाले कितने ही चरक (साधुविशेष) और परिव्राजक क्रमसे भवनवासियोंको आदि लेकर ब्रम्ह कल्प तक उत्पन्न होते है ॥ ५६२ ॥

जो कोई पंचेन्द्रिय तिर्यंच संज्ञी अकामनिर्जरासे युक्त और मंदकषायी हैं वे सहस्रार कल्प तक उत्पन्न होते हैं ॥ ५६३ ॥

जो तनुदण्डन अर्थात् कायक्लेश आदिसे सहित और तीव्र क्रोधसे युक्त हैं ऐसे कितने ही जीव क्रमशः भवनवासियोंसे लेकर अच्युत स्वर्ग पर्यन्त जन्म लेते हैं ॥ ५६४ ॥

देव और देवियोंकी उत्पत्ति ईशान कल्प तक होती है । इसके आगे केवल देवोंकी ही उत्पत्ति है ॥ ५६५ ॥

कन्दर्प, किल्बिषिक और आभियोग्य देव अपने अपने कल्पकी जघन्य स्थिति सहित क्रमशः ईशान, लान्तव और अच्युत कल्प पर्यन्त होते हैं ॥ ५६६ ॥

इस प्रकार आयुबंधका कथन समाप्त हुआ ।

ये देव सुरलोकके भीतर उपपादपुरमें महार्घ शय्यापर उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होनेके पश्चात् एक मुहूर्तमें ही छह पर्याप्तियोंको भी प्राप्त कर लेते हैं ॥ ५६७ ॥

१ द ब तवाउसमेण. २ द ब जंपतपद. ३ द ब जाव. ४ द ब गंथ समत्ता. ५ द ब जाता य.

णत्थि णहकेसलोमा ण चम्ममंसा ण लोहिदवसाओ। णट्ठी ण मुत्तपुरिसं ण सिराओ देवसंघडणे ॥ ५६८
वण्णरसगंधपासं अइसयवेगुव्वदिव्वबंधादो। णेहोदिदबाधादिं[1] ण वचिदकम्माणुभावेणं ॥ ५६९
उप्पण्णसुरविमाणे पुव्वमणुग्घाडिदं कवाडजुगं। उग्घडदि तम्मि काले पसरदि आणंदभेरिरवं ॥ ५७०
। एवं उपपत्ती गदा ।
सोदूण भेरिसद्दं जय जय णंद त्ति विविहघोसेणं। एंति परिवारदेवा देवीओ रत्तहिदयाओ ॥ ५७१
वायंति किव्विससुरा जयघंटा पडहमद्दलप्पहुदिं। संगीयणच्चणाइं पप्पवदेवा पकुव्वंति ॥ ५७२
देवीदेवसमाजं दट्ठूणं तस्स कोदुगं होदि। तावे कस्स विभंगं कस्स वि ओही फुरदि णाणं ॥ ५७३
णादूण देवलोयं अप्पफलं जादमेदमिदि केई। मिच्छाहट्ठी देवा गेण्हंति विसुद्धसम्मत्तं ॥ ५७४
तादे देवीणिवहो आणंदेणं महाविभूदीए। एदाणं देवाणं भरणं[2] सेसं पहिट्ठमणे ॥ ५७५

देवोंके शरीरमें न नख, केश और रोम होते हैं; न चमड़ा और मांस होता है; न रुधिर और चर्बी होती है; न हड्डियां होती हैं, न मूत्र और मल होता है; और न नसें ही होती हैं ॥ ५६८ ॥

संचित कर्मके प्रभावसे अतिशयित वैक्रियिक रूप दिव्य बंध होनेके कारण देवोंके शरीरमें वर्ण, रस, गंध और स्पर्श बाधा रूप नहीं होते ॥ ५६९ ॥

देवविमानमें उत्पन्न होनेपर पूर्वमें अनुद्घाटित (बिना खोले) कपाटयुगल खुलते हैं और फिर उसी समय आनन्दभेरीका शब्द फैलता है ॥ ५७० ॥

इस प्रकार उत्पत्तिका कथन समाप्त हुआ ।

भेरीके शब्दको सुनकर अनुरागयुक्त हृदयवाले परिवारके देव और देवियां ' जय जय, नन्द ' इस प्रकारके विविध शब्दोंके साथ आते है ॥ ५७१ ॥

किल्बिष देव जयघंटा, पटह व मर्दल आदिको बजाते हैं और पप्पव (?) देव संगीत व नृत्योंको करते हैं ॥ ५७२ ॥

देव और देवियोंके समूहको देखकर उस देवको कौतुक होता है। उस समय किसीको विभंग और किसीको अवधि ज्ञान प्रकट होता है ॥ ५७३ ॥

अपने (पूर्व पुण्यके) फलसे यह देवलोक प्राप्त हुआ है, इस प्रकार जानकर कोई मिथ्यादृष्टि देव विशुद्ध सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥ ५७४ ॥

फिर देवीसमूह आनन्दपूर्वक हर्षितमन होकर महा विभूतिके साथ इन देवोंका भरण-पोषण करते हैं ॥ ५७५ ॥

---

१ द ब ब णेहोदिदबाधादिं. २ द भरं.

जिणपूजाउज्जोगं कुणंति[1] केई महाविभूदीए । केई पुव्विल्लाणं देवाणं ओहणवसेणं ॥ ५७६
कादूण दहे ण्हाणं पविसिय अभिसेयमंडवं दिव्वं । सिंहासणाभिरूढं देवा कुव्वंति अभिसेयं ॥ ५७७
भूसणसालं पविसिय वररयणविभूषणाणि दिव्वाणिं । गहिदूण परमहरिसंभरिदा कुव्वंति णेवत्थं ॥ ५७८
तत्तो ववसायपुरं पविसिय अभिसेयदिव्वपूजाणं । जोग्गाइं दव्वाइं गेण्हिय परिवारसंजुत्ता ॥ ५७९
णच्चंतविचित्तधया वरचामरचारुछत्तसोहिल्ला । णिब्भरभत्तिपयट्टा वच्चंति जिणिंदभवणम्मि ॥ ५८०
दट्ठूण जिणिंदपुरं वरमंगलतूरसद्दहलबोलं । देवा देवीसहिदा कुव्वंति[2] पदाहिणं पणदा ॥ ५८१
छत्तत्तयसिंहासणभामंडलचामरादिचारूणं । जिणपडिमाणं पुरदो जयजयसद्दं पकुव्वंति ॥ ५८२
थोदूण थुदिसएहिं जिणिंदपडिमाओ भत्तिभरिदमणा । एदाणं अभिसेए तत्तो कुव्वंति पारंभं ॥ ५८३
खीरद्दिसलिलपूरिदकंचणकलसेहिं अट्ठ सहस्सेहिं । देवा जिणाभिसेयं महाविभूदीए कुव्वंति ॥ ५८४

कोई देव महा विभूतिके साथ स्वयं ही जिनपूजाके उद्योगको करते हैं । और कितने ही देव पूर्वोक्त देवोंके उपदेश वश जिनपूजा करते हैं ॥ ५७६ ॥

द्रहमें स्नान करके दिव्य अभिषेकमंडपमें प्रविष्ट हो सिंहासनपर आरूढ हुए उस नव जात देवका अन्य देव अभिषेक करते हैं ॥ ५७७ ॥

भूषणशालामें प्रवेशकर और दिव्य उत्तम रत्नभूषणोंको लेकर उत्कृष्ट हर्षसे परिपूर्ण हो वेषभूषा करते हैं ॥ ५७८ ॥

तत्पश्चात् वे देव व्यवसायपुरमें प्रवेशकर अभिषेक और दिव्य पूजाके योग्य द्रव्योंको ग्रहणकर परिवारसे संयुक्त, नाचती हुई विचित्र ध्वजाओंसे सहित, उत्तम चँवर व सुन्दर छत्रसे शोभायमान तथा अतिशय भक्तिसे प्रवृत्त हो जिनेन्द्रभवनमें जाते हैं ॥ ५७९,—५८० ॥

देवियोंसे सहित वे देव उत्तम मंगलवादित्रोंके शब्दसे मुखरित जिनेन्द्रपुरको देखकर नम्र हो प्रदक्षिणा करते हैं ॥ ५८१ ॥

पुनः वे देव तीन छत्र, सिंहासन, भामण्डल और चामरादिसे सुन्दर जिनप्रतिमाओंके आगे जय जय शब्दको करते हैं ॥ ५८२ ॥

उक्त देव भक्तियुक्त मनसे सहित होकर सैकड़ों स्तुतियोंके द्वारा जिनेन्द्रप्रतिमाओंकी स्तुति करके पश्चात् उनके अभिषेकका प्रारंभ करते हैं ॥ ५८३ ॥

उक्त देव क्षीरसमुद्रके जलसे पूर्ण एक हजार आठ सुवर्णकलशोंके द्वारा महा विभूतिके साथ जिनाभिषेक करते हैं ॥ ५८४ ॥

---

१ ब कुव्वंति २ द ब कुव्वंति.

वज्जंतेसुं मद्दलजयघंटापडहकाहलादीसुं[1] । दिव्वेसुं तूरेसुं ते जिणपूजं पकुव्वंति ॥ ५८५

भिंगारकलसदप्पणछत्ततयचमरपहुदिदव्वेहिं । पूजं कादूण तदो जलगंधादीहि अच्चंति ॥ ५८६

तत्तो हरिसेण सुरा णाणाविहणाडयाइं दिव्वाइं । बहुरसभावजुदाइं णच्चंति विचित्तभंगीहिं ॥ ५८७

सम्माइट्ठी देवा पूजा कुव्वंति जिणवराण सदा । कम्मक्खयणिमित्तं णिब्भरभत्तीए भरिदमणा ॥ ५८८

मिच्छाइट्ठी देवा णिचं अच्चंति जिणवरप्पडिमा । कुलदेवदाओ इमा किर मण्णंता अण्णबोहणवसेणं ॥ ५८९

इय पूजं कादूणं पासादेसुं णिएसु गंतूणं । सिंहासणाहिरूढा सेविज्जंते सुरेहिं देविंदा ॥ ५९०

बहुविहविगुव्वणाहिं लावण्णविलाससोहमाणाहिं । रदिकरणकोविदाहिं वरच्छराहिं[2] रमंति समं ॥ ५९१

वीणावेणुसुगीओ[3] सत्तसरेहिं विभूसिदं गीदं । ललियाइं णच्चणाइं सुणंति पेच्छंति सयलसुरा ॥ ५९२

मर्दल, जयघंटा, पटह और काहल आदिक दिव्य वादित्रोंके बजते रहते वे देव जिनपूजाको करते हैं ॥ ५८५ ॥

उक्त देव भृंगार, कलश, दर्पण, तीन छत्र और चामरादि द्रव्योंसे पूजा करके पश्चात् जल-गन्धादिकसे अर्चन करते है ॥ ५८६ ॥

तत्पश्चात् हर्षसे देव विचित्र शैलियोंसे बहुत रस व भावोंसे युक्त दिव्य नाना प्रकारके नाटकोंको करते हैं ॥ ५८७ ॥

सम्यग्दृष्टि देव कर्मक्षयके निमित्त सदा मनमें अतिशय भक्तिसे सहित होकर जिनेन्द्रोंकी पूजा करते हैं ॥ ५८८ ॥

मिथ्यादृष्टि देव अन्य देवोंके संबोधनसे 'ये कुलदेवता हैं' ऐसा मानकर नित्य जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ ५८९ ॥

इस प्रकार पूजा करके और अपने प्रासादोंमें जाकर वे देवेन्द्र सिंहासनपर आरूढ होकर देवों द्वारा सेवे जाते हैं ॥ ५९० ॥

उक्त इन्द्र बहुत प्रकारकी विक्रियासे सहित, लावण्य विलाससे शोभायमान और रतिकरनेमें चतुर ऐसी उत्तम अप्सराओंके साथ रमण करते हैं ॥ ५९१ ॥

समस्त देव वीणा एवं बांसुरीकी ध्वनिको तथा सात स्वरोंसे विभूषित गीतको सुनते और विलासपूर्ण नृत्योंको देखते हैं ॥ ५९२ ॥

१ द ब काहलहिदेसुं. २ द ब वाकरण°. ३ द ब वरच्छाहि. ४ द ब °सणीओ.

चामीयररयणमए सुगंधधूवादिवासिदे विमले । देवा देवीहि समं रमंति दिव्वम्मि पासादे ॥ ५९३
संते ओहीणाणे अण्णोण्णुप्पण्णपेममूढमणा । कामंधा गदकालं देवा देवीओ ण विदंति ॥ ५९४
गब्भावयारपहुदिसु उत्तरदेहा सुराण गच्छंति । जम्मणठाणेसु सुहं मूलसरीराणि चेट्ठंति ॥ ५९५
णवरि विसेसो एसो सोहम्मीसाणजाददेवीणं । वच्चंति मूलदेहा णियणियकप्पामराण पासम्मि ॥ ५९६
। सुखपरूवणा सम्मत्ता[1] ।
अरुणवरदीववाहिरजगदीदो जिणवरुत्तसंखाणिं । गंतूण जोयणाणिं अरुणसमुद्दस्स पणिधीए ॥ ५९७
एक्कदुगसत्तएक्के अंककमे जोयणाणि उवरिं णहं । गंतूणं वलएणं चेट्ठेदि तमो तमक्काओ[2] ॥ ५९८
१७२१ ।
आदिमचउकप्पेसुं देसवियप्पाणि तेसु कादूणं । उवरिगदबम्हकप्पप्पदमिंदयपणिधितल पत्तो[3] ॥ ५९९
मूलम्मि रुंदपरिही हुवेदि संखेज्जजोयणा तस्स । मज्झम्मि असंखेज्जा उवरिं तत्तो असंखेज्जो ॥ ६००

उक्त देव सुवर्ण एवं रत्नोंसे निर्मित और सुगंधित धूपादिसे सुवासित विमल दिव्य प्रासादमें देवियोंके साथ रमण करते है ॥ ५९३ ॥

अवधिज्ञानके होनेपर परस्परमें उत्पन्न हुए प्रेममें मूढमन होनेसे वे देव और देवियां कामान्ध होकर बीते हुए कालको नहीं जानते हैं ॥ ५९४ ॥

गर्भ और जन्मादि कल्याणकोंमें देवोंके उत्तर शरीर जाते है। उनके मूल शरीर सुखपूर्वक जन्मस्थानोंमें स्थित रहते हैं ॥ ५९५ ॥

विशेष यह है कि सौधर्म और ईशान कल्पमें उत्पन्न हुई देवियोंके मूल शरीर अपने अपने कल्पके देवोंके पासमें जाते हैं ॥ ५९६ ॥

सुखप्ररूपणा समाप्त हुई ।

अरुणवर द्वीपकी बाह्य जगतीसे जिनेन्द्रोक्त संख्या प्रमाण योजन जाकर अरुण समुद्रके प्रणिधि भागमे अंककमसे एक, दो, सात और एक अर्थात् सत्तरह सौ इक्कीस योजन प्रमाण ऊपर आकाशमें जाकर वलय रूपसे तमस्काय स्थित है ॥ ५९७-५९८ ॥ १७२१ ।

यह तमस्काय आदिके चार कल्पोंमें देशविकल्पोंको अर्थात् कहीं कहीं अन्धकार उत्पन्न करके उपरिगत ब्रह्म कल्प सम्बन्धी प्रथम इन्द्रकके प्रणिधितल भागको प्राप्त हुआ है (?) ॥ ५९९ ॥

उसकी विस्तारपरिधि मूलमे संख्यात योजन, मध्यमें असंख्यात योजन, और इससे ऊपर असंख्यात योजन है ॥ ६०० ॥

१ द ब मूल. २ द ब संभाधयार. ३ द ब आउअबंधणपरिणामाभंतरकज्जसुखपरूवणा सम्मत्ता. ४ द ब तमंकादि. ५ द ब °कप्पं पदमिंदा य पणधितल पंचे.

संखेज्जजोयणाणिं तमकायादो दिसाए पुव्वाए । गच्छिय सट्ठंसमुखायारधरो[1] दक्खिणुत्तरायामो ॥ ६०१
णामेण किण्हराई पच्छिमभागे वि तारिसो य तमो[2] । दक्खिणउत्तरभागे तम्मेत्तं मंथुव दीहचउरस्सा ॥
एक्केक्ककिण्हराई हुवेदि पुव्वावरट्ठिदायामा । एदाओ राजीओ णियमा ण छिवंति अण्णोण्णं ॥ ६०३
संखेज्जजोयणाणिं राजीहिंतो दिसाए पुव्वाए[3] । गंतूणब्भंतरए राजी किण्हा य दीहचउरस्सा ॥ ६०४
उत्तरदक्खिणदीहा दक्खिणराजिं छिदा य छिविदूण[4] । पच्छिमदिसाए उत्तरराजिं छिविदूण होदि अण्णतमो ॥
संखेज्जजोयणाणिं राजीदो दक्खिणाए आसाए । गंतूणब्भंतरए एक्का चिय किण्हराजियं[5] होइ ॥ ६०६
दीहेण छिंदिदस्स य जवखेत्तस्सेक्कभागसारिच्छा । पच्छिमबाहिरराजिं छिविदूणं सा ठिदा णियमा[6] ॥६०७
पुव्वावरआयामो तमकाय दिसाए होदि तट्ठाणे । उत्तरभागम्मि तमो एक्को छिविदूण पुव्वबहिराजी ॥
अरुणवरदीववाहिरजगदीए तह य तमसरीरस्स । विच्चाल णहयलादो अब्भंतरराजितेभिरकायाणं ॥६०९
विच्चालं आयासे[7] तह संखेज्जगुणं हवेदि णियमेण । तं माणादो णेयं अब्भंतरराजिसंखगुणजुत्ता ॥ ६१०
अब्भंतरराजीदो अधिरेगजुदो हवेदि तमकाओ । अब्भंतरराजीदो बाहिरराजी य किंचूणा ॥ ६११

तमस्कायसे पूर्व दिशामें संख्यात योजन जाकर षट्कोण आकारको धारण करनेवाला और दक्षिण-उत्तर लंबा कृष्णराजी नामक तम है । पश्चिम भागमें भी वैसा ही अंधकार है । दक्षिण व उत्तर भागमें उतनी मात्र आयत, चतुष्कोण और पूर्व-पश्चिम आयामवाली एक एक कृष्ण-राजी स्थित है। ये राजियां नियमसे परस्परमें एक दूसरेको स्पर्श नहीं करती है ॥६०१–६०३॥

राजियोंसे संख्यात योजन पूर्व दिशामें अभ्यन्तर भागमें जाकर आयतचतुरस्र और उत्तर-दक्षिण दीर्घ कृष्णराजी है जो दक्षिण राजीको छूती है । पश्चिम दिशामें उत्तर राजीको छूकर अन्य तम है ॥ ६०४–६०५ ॥

राजीसे दक्षिण दिशामें अभ्यन्तर भागमें संख्यात योजन जाकर एक ही कृष्ण राजी है ॥ ६०६ ॥

दीर्घताकी ओरसे छेदे हुए यवक्षेत्रके एक भागके सदृश वह राजी नियमसे पश्चिम बाह्य राजीको छूकर स्थित है ॥ ६०७ ॥

दिशामें पूर्वापर आयत तमस्काय है (?) । उत्तर भागमें पूर्व बाह्य राजीको छूकर एक तम है ॥ ६०८ ॥

अरुणवर द्वीपकी बाह्य जगती तथा तमस्कायके अन्तरालसे अभ्यन्तर राजीके तमस्कायोंका अन्तरालप्रमाण नियमसे संख्यातगुणा है । इस प्रमाणसे अभ्यन्तर राजी संख्यातगुणी है । अभ्यन्तर राजीसे अधिक तमस्काय है । अभ्यन्तर राजीसे बाह्य राजी कुछ कम है ॥६०९–६११॥

१ द ब सट्ठंसमुखायारधरो. २ द ब तारिसा य तमो. ३ द ब राजीहिंतोभिब्भाए. ४ द ब राजी-रिदो पविसिदूण. ५ द ब रिणराजिय. ६ द ब सा रिदा णियमा. ७ द ब विच्चेलायासं.

बाहिररायीहिंतो दोण्णं राजीण जो दु विच्चालो । अधिरित्तो इय अप्पाबहुवं होदि हु चउदिसासुं पि ॥
एदम्मि तमिस्से जे विहरंते अप्पड्ढिया देवा । दिम्मूढा वच्चंते माहप्पेणं[1] महड्ढियसुराणं ॥ ६१३
राजीणं विच्चाले संखेज्जा होइ बहुविहविमाणा । एदेसु सुरा जादा खादा[2] लोयंतिया णाम ॥ ६१४
संसारवारिरासी जो[3] लोओ तस्स होंति अंतम्मि । जम्हा तम्हा एदे देवा लोयंतिय त्ति गुणणामा ॥ ६१५
ते लोयंतियदेवा अट्ठसु राजीसु होंति[4] विच्चाले । सारस्सदपहुदि तदा ईसाणादिअदिसासु[5] चउवीसं ॥
२४ ।
पुव्वुत्तरदिब्भाए वसंति सारस्सदा[6] सुरा णिच्चं । आइच्चा पुव्वाए अणलदिसाए वि वण्हिसुरा ॥ ६१७
दक्खिणदिसाए वरुणा णइरिदिभागम्मि गद्दतोया य । पच्छिमदिसाए तुसिदा अव्वाबाधा समीरदिब्भाए ॥
उत्तरदिसाए रिट्ठा[7] एमेते अट्ठ ताण विच्चाले । दोदो हवंति अण्णं[8] देवा तेसुं इमे णामा ॥ ६१९
सारस्सदणामाणं आइच्चाणं सुराण विच्चाले । अणलाभा सूराभा[9] देवा चेट्ठंति णियमेणं ॥ ६२०

बाह्य राजियोंसे दोनों राजियोंका जो अन्तराल है वह अधिक है । इस प्रकार चारों दिशाओंमें भी अल्पबहुत्व है ॥ ६१२ ॥

इस अन्धकारमें जो अल्पर्द्धिक देव दिग्भ्रान्त होकर विहार करते हैं वे वहां महर्द्धिक देवोंके माहात्म्यसे निकल पाते हैं ॥ ६१३ ॥

राजियोंके अन्तरालमें संख्यात बहुत प्रकारके विमान हैं । इनमें जो देव उत्पन्न होते हैं वे लौकान्तिक नामसे विख्यात है ॥ ६१४ ॥

संसार-समुद्ररूपी जो लोक है उसके चूंकि वे अन्तमें हैं इसीलिये ये देव 'लोकान्तिक' इस सार्थक नामसे युक्त है ॥ ६१५ ॥

वे सारस्वत आदि लौकान्तिक देव आठ राजियोंके अन्तरालमें हैं । ईशान आदिक दिशाओंमें चौबीस देव है ॥ ६१६ ॥ २४ ।

पूर्व-उत्तर दिग्भागमें सर्वदा सारस्वत देव, पूर्व दिशामें आदित्य, अग्नि दिशामें वह्नि देव, दक्षिण दिशामें वरुण, नैऋत्य भागमें गर्दतोय, पश्चिम दिशामें तुषित, वायु दिग्भागमें अव्याबाध, और उत्तर दिशामें अरिष्ट, इस प्रकार ये आठ देव निवास करते हैं । इनके अन्तरालमें दो दो अन्य देव हैं । उनके ये नाम हैं ॥ ६१७-६१९ ॥

सारस्वत और आदित्य नामक देवोंके अन्तरालमें नियमसे अनलाभ और सूर्याभ देव स्थित हैं ॥ ६२० ॥

१ द ब माहप्पेण. २ द ब खादा. ३ द ब जे. ४ द ब राजीसु व होंति. ५ द ब ईसाण-दिसादिअसुर. ६ द ब सारस्सदो. ७ द ब अरिट्ठा. ८ द ब अण्णे. ९ द ब अणलाभसूरामा.

चंदाभा सूराभा देवा आइच्चवण्हिविच्चाले । सेअंकरा खेमंकर णाम सुरा[1] वण्हिअरुणम्मि[2] ॥ ६२१

विसकोट्ठा कामधरा विच्चाले अरुणगद्दतोयाणं । णिम्माणराजदिसयंतरक्खिआ[3] गद्दतोयतुसिताणं ॥ ६२२

तुसिदव्वाबाहाणं अंतरदो अप्पसव्वरक्खसुरा । मरुदेवा वसुदेवा तह अव्वाबाहरिट्ठमज्झम्मि ॥ ६२३

सारस्सदरिट्ठाणं विच्चाले अस्सविस्सणामसुरा । सारस्सदआइच्चा पत्तेक्कं होंति सत्तसया ॥ ६२४

७०० ।

वण्ही वरुणा देवा सत्तसहस्साणि सत्त पत्तेक्कं । णवजुत्तणवसहस्सा तुसिदसुरा गद्दतोया वि ॥ ६२५

७००७ । ९००९ ।

अव्वाबाहारिट्ठा एक्करससहस्स एक्करसजुत्ता । अणलाभा वण्हिसमा सूराभा गद्दतोयसारिच्छा ॥ ६२६

११०११ । ७००७ । ९००९ ।

अव्वाबाहसारिच्छा चंदाभसुरा[5] हवंति सच्चाभा[6] । अजुदं तिण्णि सहस्सं तेरसजुत्ताए संखाए ॥ ६२७

११०११ । १३०१३ ।

आदित्य और वह्निके अन्तरालमें चन्द्राभ और सूर्याभ (सत्याभ), तथा वह्नि और अरुणके अन्तरालमें श्रेयस्क और क्षेमंकर नामक देव शोभायमान है ॥ ६२१ ॥

अरुण और गर्दतोयके अन्तरालमें वृषकोष्ठ (वृषभेष्ट) और कामधर (कामचर) तथा गर्दतोय और तुषितके अन्तरालमें निर्माणराज (निर्माणरज) और दिगंतरक्षित देव है ॥६२२॥

तुषित और अव्याबाधके अन्तरालमें आत्मरक्ष और सर्वरक्ष देव, तथा अव्याबाध और अरिष्टके अन्तरालमें मरुत् देव और वसु देव हैं ॥ ६२३ ॥

सारस्वत और अरिष्टके अन्तरालमें अश्व और विश्व नामक देव स्थित है । सारस्वत और आदित्यमेंसे प्रत्येक सात सौ है ॥ ६२४ ॥ ७०० ।

वह्नि और अरुणमेंसे प्रत्येक सात हजार सात तथा तुषित और गर्दतोयमेंसे प्रत्येक नौ हजार नौ हैं ॥ ६२५ ॥ ७००७ । ९००९ ।

अव्याबाध और अरिष्ट ग्यारह हजार ग्यारह है । अनलाभ वह्नि देवोंके समान और सूर्याभ गर्दतोयोंके सदृश है ॥ ६२६ ॥ ११०११ । ७००७ । ९००९ ।

चन्द्राभ देव अव्याबाधोंके सदृश तथा सत्याभ तेरह हजार तेरह होते हैं ॥ ६२७ ॥

११०११ । १३०१३ ।

१ द ब सुरो. २ द वण्हिएतम्मि; ब वम्हिए मंति. ३ द ब °रक्खिणा. ४ द ब तुरिद. ५ द ब चंदामासुर. ६ द ब संखामा.

पण्णरससहस्साणिं पण्णरसजुदाणि होंति सेअक्खा[1] । खेमंकराभिधाणं सत्तरससहस्सयाणि सत्तरसा ॥
१५०१५ । १७०१७ ।
उणवीससहस्साणिं उणवीसजुदाणि होंति विसकोट्ठा : इगिवीससहस्साणिं इगिवीसजुदाणि कामधरा ॥
१९०१९ । २१०२१ ।
णिम्माणराजणामा तेत्तीससहस्सयाणि तेवीसा । पणुवीससहस्साणिं पणवीसजुदाणि दिंतरक्खा य[2] ॥ ६३०
२३०२३ । २५०२५ ।
सत्तावीससहस्सा सत्तावीसं च अप्परक्खसुरा । उणतीससहस्साणिं उणतीसजुदाणि सव्वरक्खा य ॥ ६३१
२७०२७ । २९०२९ ।
एक्कत्तीससहस्सा एक्कत्तीसं हुवंति मरुदेवा । तेत्तीससहस्साणिं तेत्तीसजुदाणि वसुणामा । ६३२
३१०३१ । ३३०३३ ।
पंचत्तीससहस्सा पंचत्तीसा हुवंति अस्समुरा । सत्ततीससहस्सा सत्ततीसं च विस्समुरा ॥ ६३३
३५०३५ । ३७०३७ ।
चत्तारि य लक्खाणिं सत्तसहस्साणि अडसयाणिं पि । छब्भहियाणिं होदि हु सव्वाणं पिंडपरिमाणं ॥६३४
४०७८०६ ।

श्रेयस्क पन्द्रह हजार पन्द्रह और क्षेमंकर नामक देव सत्तरह हजार सत्तरह होते है ॥ ६२८ ॥ १५०१५ । १७०१७ ।

वृषकोष्ठ उन्नीस हजार उन्नीस और कामधर इक्कीस हजार इक्कीस होते है ॥६२९॥
१९०१९ । २१०२१ ।

निर्माणराज देव तेईस हजार तेईस और दिगन्तरक्ष पच्चीस हजार पच्चीस होते हैं ॥ ६३० ॥ २३०२३ । २५०२५ ।

आत्मरक्ष देव सत्ताईस हजार सत्ताईस और सर्वरक्ष उनतीस हजार उनतीस होते हैं ॥ ६३१ ॥ २७०२७ । २९०२९ ।

मरुदेव इकतीस हजार इकतीस और वसु नामक देव तेतीस हजार तेतीस होते हैं ॥ ६३२ ॥ ३१०३१ । ३३०३३ ।

अश्व देव पैंतीस हजार पैंतीस और विश्व देव सैंतीस हजार सैंतीस होते है ॥ ६३३ ॥
३५०३५ । ३७०३७ ।

इन सबका पिण्डप्रमाण चार लाख सात हजार आठ सौ छह है ॥ ६३४ ॥
४०७८०६ ।

---

१ द्र ब सेअव्वा. २ द्र ब तरक्खस्स.

लोयविभागाइरिया[1] सुराण लोयंतिमाण वक्खाणं । अण्णसरूवं वेंति त्ति तं पि एण्हिं[2] पवक्खेमो ॥ ६३५
पुव्वुत्तरदिब्भाए[3] वसंति सारस्सदाभिधाणसुरा[4] । आइच्चा पुव्वाए वण्हिदिसाए सुरवरा वण्ही ॥ ६३६
दक्खिणदिसाए अरुणा णइरिदिभागम्मि गद्दतोया य । पच्छिमदिसाए तुसिदा अव्वाबाधा मरुदिसाए ॥
उत्तरदिसाए रिट्ठा अग्गिदिसाए वि होंति मज्झम्मि । एदाणं पत्तेयं परिमाणाइं पवक्खेमो ॥ ६३८
पत्तेक्कं सारस्सदआइच्चा तुसिदगद्दतोया य । सत्तुत्तरसत्तसया सेसा पुव्वोदिदपमाणा ॥ ६३९

पाठान्तरम् ।

पत्तेक्कं पण हत्था उदओ लोयंतियाण देहेसुं । अट्ठमहण्णवउवमा सोहंते सुक्कलेस्साओ ॥ ६४०
सव्वे लोयंतसुरा एक्कारसअंगधारिणो णियमा । सम्मद्दंसणसुद्धा होंति सतित्ता सहावेणं ॥ ६४१
महिलादी परिवारा ण होंति एदाण संततं जम्हा[5] । संसारखवणकारणवेरग्गं भावयंति ते तम्हा ॥ ६४२
अद्धुवमसरणपहुदिं भावं ते भावयंति भवभवरदं । बहुदुक्खसलिलपूरिदसंसारसमुद्दबुड्डणभएणं ॥ ६४३

लोकविभागाचार्य लौकान्तिक देवोंका व्याख्यान अन्य रूपसे करते हैं; इसलिये उसे भी अब हम कहते हैं ॥ ६३५ ॥

पूर्व-उत्तर कोणमें सारस्वत नामक देव, पूर्वमें आदित्य, अग्नि दिशामें वह्नि देव, दक्षिण दिशामें अरुण, नैऋत्य भागमें गर्दतोय, पश्चिम दिशामें तुषित, वायु दिशामें अव्याबाध और उत्तर दिशामें तथा अग्नि दिशाके मध्यमें भी अरिष्ट देव रहते है । इनमेंसे प्रत्येकके प्रमाणको कहते हैं । सारस्वत और आदित्य तथा तुषित और गर्दतोयमेंसे प्रत्येक सात सौ सात और शेष देव पूर्वोक्त प्रमाणसे युक्त हैं ॥ ६३६–६३९ ॥

पाठान्तर ।

लौकान्तिक देवोंमेंसे प्रत्येकके शरीरका उत्सेध पांच हाथ और आयु आठ सागरोपम प्रमाण होती है । ये देव शुक्ल लेश्यासे शोभायमान होते है ॥ ६४० ॥

सब लौकान्तिक देव नियमसे ग्यारह अंगके धारी, सम्यग्दर्शनसे शुद्ध और स्वभावसे ही तृप्त होते हैं ॥ ६४१ ॥

चूंकि इनके निरंतर महिलादिक रूप परिवार नहीं होते हैं इसीलिये ये संसार क्षयके कारणभूत वैराग्यकी भावना भाते हैं ॥ ६४२ ॥

बहुत दुःख रूप जलसे परिपूर्ण संसार रूपी समुद्रमें डूबनेके भयसे वे लौकान्तिक देव निरंतर अनित्य व अशरण आदि भावनाओंको भाते हैं ॥ ६४३ ॥

---

१ द ब क लोयविभाइरिया. २ द ब अण्णसरूवं हुंति तिं पिण्हे. ३ द पुव्व तदिब्भाए, ब पुव्वं व तदिब्भाए. ४ द ब क सारस्सतिसादाभिधानसुरा. ५ द ब पुणंत. ६ द ब जे.

तित्थयराणं समए परिणिक्कमणम्मि अंति ते सव्वे । दुचरिमदेहा देवा बहुविसमकिलेसउम्मुक्का[1] ॥ ६४४
देवरिसिणामधेया सव्वेहिं सुरेहिं अच्चणिज्जा ते । भत्तिप्पसत्ता सज्झयसाधीणा सव्वकालेसुं ॥ ६४५
इह खेत्ते बेरग्गं बहुभेयं भाविदूण बहुकालं । संजमभावेहि मुणी[2] देवा लोयंतिया होंति ॥ ६४६
सुहणिंदासु समाणो सुहदुक्खेसुं सबंधुरिउवग्गे । जो समणो सम्मत्तो सो चिय लोयंतिओ होदि[3] ॥ ६४७
जे णिरवेक्खा देहे णिद्वंदा णिम्ममा णिरारंभा । णिरवज्जा समणवरा ते चिय लोयंतिया होंति ॥ ६४८
संजोगविप्पयोगे[4] लाहालाहम्मि जीविदे मरणे । जो समदिट्ठी[5] समणो सो चिय लोयंतिओ होदि[6] ॥ ६४९
अणवरदसमं पत्ता[7] संजमसमिदीसुं झाणजोगेसुं । तिव्वतवचरणजुत्ता समणा लोयंतिया होंति ॥ ६५०
पंचमहव्वयसहिदा पंचसु समिदीसु चिरम्मि[8] चेट्ठंति । पंचक्खविसयविरदा रिसिणो लोयंतिया होंति ॥

द्विचरम शरीरके धारक अर्थात् एक ही मनुष्य जन्म लेकर मोक्ष जानेवाले, और अनेक विषम क्लेशोंसे रहित वे सब देव तीर्थंकरोंके दीक्षासमयमें जाते हैं ॥ ६४४ ॥

देवर्षि नामवाले वे देव सब देवोंसे अर्चनीय, भक्तिमें प्रसक्त और सर्व काल स्वाध्यायमें स्वाधीन होते हैं ॥ ६४५ ॥

इस क्षेत्रमें बहुत काल तक बहुत प्रकारके वैराग्यको भाकर संयमसे युक्त मुनि लौकान्तिक देव होते हैं ॥ ६४६ ॥

जो सम्यग्दृष्टी श्रमण (मुनि) स्तुति और निन्दामें, सुख और दुखमें तथा बन्धु और रिपु वर्गमें समान है वही लौकान्तिक होता है ॥ ६४७ ॥

जो देहके विषयमें निरपेक्ष, निर्द्वन्द, निर्मम, निरारम्भ और निरवद्य हैं वे ही श्रेष्ठ श्रमण लौकान्तिक देव होते है ॥ ६४८ ॥

जो श्रमण संयोग और विप्रयोगमें, लाभ और अलाभमें तथा जीवित और मरणमें समदृष्टि होते हैं वे ही लौकान्तिक होते हैं ॥ ६४९ ॥

संयम, समिति, ध्यान एवं समाधिके विषयमें जो निरन्तर श्रमको प्राप्त है अर्थात् सावधान हैं, तथा तीव्र तपश्चरणसे संयुक्त है वे श्रमण लौकान्तिक होते हैं ॥ ६५० ॥

पांच महाव्रतोंसे सहित, पांच समितियोंका चिर काल तक आचरण करनेवाले, और पांचों इन्द्रिय-विषयोंसे विरक्त ऋषि लौकान्तिक होते हैं ॥ ६५१ ॥

१ द ब उज्झका. २ द ब मणा. ३ द ब होंति. ४ द ब सजोगविप्पयोगे. ५ द ब सम्मादिट्ठि. ६ द ब पवो. ७ द ब धिराणि.

सव्वट्ठसिद्धिइंदयकेदणदंडादु उवरि गंतूणं । बारसजोयणमेत्तं अट्ठमिया चेट्ठदे पुढवी ॥ ६५२

पुव्वावरेण तीए उवरिमहेट्ठिमतलेसु पत्तेक्कं । वासो हवेदि एक्का रज्जू[1] रूवेण परिहीणा ॥ ६५३

उत्तरदक्खिणभाए दीहा[2] किंचूणसत्तरज्जूओ । वेत्तासणसंठाणा सा पुढवी अट्ठजोयणा बहला ॥ ६५४

जुत्ता घणोदधिघणाणिलतणुवादेहिं[3] तिहि सभीरेहिं । जोयणवीससहस्सं पमाणबहलेहि पत्तेक्कं ॥ ६५५

एदाए बहुमज्झे खेत्तं णामेण ईसिपब्भारं । अज्जुणसुवण्णसरिसं णाणारयणेहिं परिपुण्णं ॥ ६५६

उत्ताणधवलछत्तोवमाणसंठाणसुंदरं एदं । पंचत्तालं जोयणलक्खाणिं वाससंजुत्तं ॥ ६५७

तम्मज्झबहलमट्ठं जोयणया अंगुलं पि अंतम्मि । अट्ठमभूमिअल्लगदो तप्परिही मणुवखेत्तपरिहिसमो ॥ ६५८

८ । अं १ ।

सर्वार्थसिद्धि इन्द्रकके ध्वजदण्डसे बारह योजन मात्र ऊपर जाकर आठवीं पृथिवी स्थित है ॥ ६५२ ॥

उसके उपरिम और अधस्तन तलोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार पूर्व-पश्चिममें रूपसे रहित एक राजु प्रमाण है ॥ ६५३ ॥

वेत्रासनके सदृश वह पृथिवी उत्तर दक्षिण भागमें कुछ कम सात राजु लंबी और आठ योजन बाहल्यवाली है ॥ ६५४ ॥

यह पृथिवी घनोदधि, घनवात और तनुवात इन वायुओंसे युक्त है । इनमेंसे प्रत्येक वायुका बाहल्य बीस हजार योजन प्रमाण है ॥ ६५५ ॥

इसके बहुमध्य भागमें चांदी एवं सुवर्णके सदृश और नाना रत्नोंसे परिपूर्ण ईषत्प्राग्भार नामक क्षेत्र है ॥ ६५६ ॥

यह क्षेत्र उत्तान धवल छत्रके सदृश आकारसे सुन्दर और पैंतालीस लाख योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त है ॥ ६५७ ॥

उसका मध्यबाहल्य आठ योजन और अन्तमें एक अंगुल मात्र है । अष्टम भूमिमें स्थित सिद्ध क्षेत्रकी परिधि मनुष्य क्षेत्रकी परिधिके समान है ॥ ६५८ ॥

मध्य बा. ८ यो., अन्त बा. १ अं. ।

१ द ब रज्जो. २ द ब दीहि. ३ द ब घणाणिलवावादेहि.

एदस्स चउदिसासुं चत्तारि तमोमयाओ राजीओ[1] । णिस्सरिदूणं बाहिरराजीणं होदि बाहिरप्पासा ॥ ६५९
तच्चिअविदूणं तत्तो ताओ पदिदाओ चरिमउवहिम्मि । अब्भंतरतीरादो संखातीदे अ जोयणे य भुवं ॥ ६६०
बाहिरचउरराजीणं बाहियवलंबो पदेदि दीवम्मि । जंबूदीवादिंतो गंतूण यसंखदीववारिणिहिं ॥ ६६१
बाहिरभागादिंतो अवलंबो तिमिरकायणामस्स । जंबूदीवादिंतो तम्मेत्तं गदुअ[2] पददि दीवम्मि ॥ ६६२

। एवं लोयंतियपरूवणा[3] सम्मत्ता ।

गुणजीवा पज्जत्ती पाणा सण्णा य मग्गणाओ वि । उवओगा भणिदव्वा देवाणं देवलोयम्मि ॥ ६६३
चत्तारि गुणट्ठाणा जीवसमासेसु सण्णिपज्जत्ती । णिव्वत्तियपज्जत्ती छपज्जत्तीओ छहं अपज्जत्ती ॥ ६६४
पज्जत्ते दस पाणा इदरे पाणा हवंति सत्तेव । इंदियमणवयणतणू आउस्सासा य दसपाणा[4] ॥ ६६५
तेसुं मणवचउच्छासवाजिदा सत्त तह यपज्जत्ते । चउसण्णाओ होंति हु चउसु गदीसुं च देवगदी ॥
पंचक्खा तसकाया जोगा एक्कारसप्पमाणा य । ते अट्ठ मणवयाणिं वेगुव्वदुगं च कम्मइयं ॥ ६६७
पुरिसित्थीवेदजुदा सयलकसाएहिं[5] संजुदा देवा । छण्णाणेहिं सहिदा[6] सव्वे वि असंजदा तिदंसणया ॥६६८

इसके चारो दिशाओंमे चार तमोमय राजियां निकलकर बाह्य राजियोंके बाह्य पार्श्वपर होती हुई उन्हें छूकर वे निश्चयसे अभ्यन्तर तीरसे असंख्यात योजन मात्र अन्तिम समुद्रमें गिरी हैं । बाह्य चार राजियोंके बाह्य भागका अवलंबन करनेवाला जम्बूद्वीपसे असंख्यात द्वीप-समुद्र जाकर द्वीपमें गिरता है । बाह्य भागोंसे तिमिरकाय नामका अवलंब जम्बूद्वीपसे इतने मात्र जाकर द्वीपमें गिरता है (१) ॥ ६५९–६६२ ॥

इस प्रकार लौकान्तिक देवोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

अब देवलोकमें देवोंके गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपयोग, इनका कथन करना चाहिये ॥ ६६३ ॥

चार गुणस्थान, जीवसमासोंमे संज्ञी पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त, छह पर्याप्तियां और छहों अपर्याप्तियां; पर्याप्त अवस्थामें पांच इन्द्रिय, मन, वचन, काय, आयु और श्वासोच्छ्वास, ये दश प्राण; तथा अपर्याप्त अवस्थामें मन, वचन और उच्छ्वाससे रहित शेष सात प्राण; चार संज्ञायें, चार गतियोंमेंसे देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रसकाय; आठ मन-वचन, दो वैक्रियिक (वैक्रियिक और वैक्रियिकमिश्र) और कार्मण इस प्रकार ग्यारह योग; पुरुष व स्त्रीवेदसे युक्त, समस्त कषायोंसे संयुक्त, छह ज्ञानोंसे सहित, सब ही असंयत और तीन दर्शनसे युक्त होते हैं ॥ ६६४–६६८ ॥

---

१ द ब रज्जूओ. २ द अब्भंतर. ३ द य गद पददि. ४ द ब लोयपरूवणा. ५ द ब आउस्ससयासदसपाणा. ६ द ब सयलकसाए. ७ द ब सदा.

दोण्हं दोण्हं छक्कं दोण्हं तह तेरसाण देवाणं । लेस्साओ चोद्दसण्हं वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥ ६६९
तेऊए मज्झिमंसा तेउक्कस्सपउमअवरसा । पउमाए मज्झिमंसा पउमुक्कस्सं ससुक्कअवरंसा ॥ ६७०
सुक्काय मज्झिमंसा उक्कस्संसा य सुक्कलेस्साए । एदाओ लेस्साओ णिद्दिट्ठा सव्वदरिसीहिं ॥ ६७१
सोहम्मप्पहुदीणं एदाओ[1] दव्वभावलेस्साओ । उवरिमगेवज्जंतं भव्वाभव्वा सुरा होंति ॥ ६७२
तत्तो उवरिं भव्वा उवरिमगेवज्जयस्स परियंत । छब्भेदं सम्मत्तं उवरिं उवसमियखइयवेदगया ॥ ६७३
ते सव्वे सण्णीओ देवा आहारिणो अणाहारा । सागारअणागारा दो चेव य होंति उवजोगा ॥ ६७४
कप्पा कप्पादीदा दुचरमदेहा हवंति केइ सुरा । सक्को सहग्गमहिसी[2] सलोयवालो य दक्खिणा इंदा ॥
सव्वट्ठसिद्धिवासी लोयंतियणामधेयसव्वसुरा । णियमा दुचरिमदेहा सेसेसुं णत्थि णियमो य ॥ ६७६

। एवं गुणट्ठाणादिपरूवणा समत्ता ।

दो (सौधर्म-ईशान), दो (सनत्कुमार-माहेन्द्र), ब्रह्मादिक छह, शतारद्विक, आनतादि नौ ग्रैवेयक पर्यन्त तेरह, तथा चौदह (नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर), इन देवोंके अनुक्रमसे लेश्याओंको कहते है— सौधर्म और ईशानमें पीतका मध्यम अंश, सनत्कुमार और माहेन्द्रमें पद्मके जघन्य अंशसे सहित पीतका उत्कृष्ट अंश, ब्रह्मादिक छहमें पद्मका मध्यम अंश, शतार-युगलमें शुक्ललेश्याके जघन्य अंशसे सहित पद्मका उत्कृष्ट अंश, आनतादि तेरहमें शुक्लका मध्यम अंश और अनुदिशादि चौदहमें शुक्ललेश्याका उत्कृष्ट अंश होता है; इस प्रकार सर्वज्ञ देवने देवोंमें ये लेश्यायें कही है। सौधर्मादिक देवोंके ये द्रव्य व भाव लेश्यायें समान होती है। उपरिम ग्रैवेय पर्यन्त देव भव्य व अभव्य दोनों तथा इससे ऊपर भव्य ही होते है। उपरिम ग्रैवेय पर्यन्त छहों प्रकारका सम्यक्त्व तथा इससे ऊपर औपशमिक, क्षायिक और वेदक ये तीन सम्यक्त्व होते है। वे सब देव संज्ञी तथा आहारक एवं अनाहारक होते है। इन देवोंके साकार और अनाकार दोनों ही उपयोग होते है ॥ ६६९–६७४ ॥

कल्पवासी और कल्पातीतोंमेंसे कोई देव द्विचरमशरीरी अर्थात् आगामी भवमें मोक्ष प्राप्त करनेवाले हैं। अग्रमहिषी और लोकपालोंसे सहित सौधर्म इन्द्र, दक्षिण इन्द्र, सर्वार्थसिद्धि-वासी तथा लौकान्तिक नामक सब देव नियमसे द्विचरमशरीरी है। शेष देवोंमें नियम नहीं है ॥ ६७१-६७६ ॥

इस प्रकार गुणस्थानादिप्ररूपणा समाप्त हुई।

१ ब एदाणं. २ द ब उवससमियखइय. ३ द ब मण्णासि.

जिणमहिमदंसणेणं केई जादीसुमरणादो वि । देवड्ढिदंसणेण य ते देवा देसजमवसेणं ॥ ६७७
गेण्हंते सम्मत्तं णिव्वाणब्भुदयसाहणणिमित्तं । दुव्वारगहिरसंसारजलहिणोत्तारणोवायं ॥ ६७८
णवरि हु णवगेवज्जा एदे देवड्ढिवज्जिदा होंति । उवरिमचोद्दसठाणे सम्माइट्ठी सुरा सव्वे ॥ ६७९

। दंसणगहणकारणं समत्तं ।

आईसाणं देवा जणणा एइंदिएसु भजिदव्वा । उवरि सहस्सारंतं ते भज्जा सण्णितिरियमणुवत्ते ॥ ६८०
तत्तो उवरिमदेवा सव्वे सुक्काभिधाणलेस्साए । उप्पज्जंति मणुस्से णत्थि तिरिक्खेसु उववादो ॥ ६८१
देवगदीदो चत्ता कम्मक्खेत्तम्मि सण्णिपज्जत्ते । गब्भभवे जायंते ण भोगभूमीण णरतिरिए ॥ ६८२
सोहम्मादी देवा भज्जा हु सलागपुरिसणिवहेसुं । णिस्सेयसगमणेसुं सव्वे वि अणंतरे जम्मे ॥ ६८३
णवरि विसेसो सव्वट्ठसिद्धिठाणदो विच्चुदा देवा । वज्जा सलागपुरिसा णिव्वाणं जंति णियमेण ॥ ६८४

। एवं आगमणपरूवणा समत्ता ।

उनमेंसे कोई देव जिनमहिमाके दर्शनसे, कोई जातिस्मरणसे, कोई देवर्द्धिके देखनेसे, और कोई उपदेशके वशसे, निर्वाण एवं स्वर्गादि अभ्युदयके साधक तथा दुर्वार एवं गंभीर संसाररूपी समुद्रसे पार उतारनेवाले सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥ ६७७-६७८ ॥

विशेष यह है कि नौ ग्रैवेयकोंमें उपर्युक्त कारण देवर्द्धिदर्शनसे रहित होते हैं । इसके ऊपर चौदह स्थानोंमें सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं ॥ ६७९ ॥

दर्शनग्रहणके कारणोंका कथन समाप्त हुआ ।

ईशान कल्प तकके देवोंका जन्म एकेन्द्रियोंमें विकल्पनीय है । इससे ऊपर सहस्रार कल्प तकके सब देव विकल्पसे संज्ञी तिर्यंच या मनुष्य होते हैं ॥ ६८० ॥

इससे ऊपरके सब देव शुक्ल लेश्याके साथ मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं, इनकी उत्पत्ति तिर्यंचोंमें नहीं है ॥ ६८१ ॥

देवगतिसे च्युत होकर वे देव कर्मभूमिमें संज्ञी पर्याप्त व गर्भज होते हैं, भोगभूमियोंके मनुष्य और तिर्यंचोंमें उत्पन्न नहीं होते ॥ ६८२ ॥

सब सौधर्मादिक देव अगले जन्ममें शलाकापुरुषोंके समूहमें और मुक्तिगमनके विषयमें विकल्पनीय हैं ॥ ६८३ ॥

विशेष यह है कि सर्वार्थसिद्धिसे च्युत हुए देव शलाकापुरुष न होकर नियमसे निर्वाण प्राप्त करते हैं ॥ ६८४ ॥

इस प्रकार आगमनप्ररूपणा समाप्त हुई ।

१ द ब देवत्ति, क देवत्ति. २ द ब दंसण. ३ द ब रहिद. ४ द ब भज्जा. ५ द ब विच्चुदो.

सक्कीसाणा पढमं माहिंदसणक्कुमारया बिदियं । तदियं च बम्हलंतवासी तुरिमं सहस्सारगदा ॥
आणदपाणदआरणअच्चुदवासी य पंचमं पुढविं । छट्ठी पुढवी हेट्ठा णवविधगेवज्जगा देवा ॥ ६८६
सव्वं च लोयणालिं अणुदिसाणुत्तरेसु पस्संति । सक्खेत्ते य सकम्मे[1] रूवमगदमणंतभागो य ॥ ६८७
कप्पामराण[2] णियणियओहीदव्वं सविस्ससोवचयं । ठविदूण य हरिदव्वं तत्तो धुवभागहारेण ॥ ६८८
णियणियखोणियदेसं सलागसंखा समप्पदे जाव[3] । अंतिल्लखंधमेत्तं एदाणं ओहिदव्वं खु ॥ ६८९
होंति असंखेज्जाओ सोहम्मदुगस्स वासकोडीओ । पल्लस्सासंखेज्जो भागो सेसाण जहजोग्गं ॥ ६९०

। एवं ओहिणाणं गदं ।

सोहम्मीसाणदुगे विदंगुलतदियमूलहदसेढी । बिदियजुगलम्मि[4] सेढी एक्करसमवग्गमूलहिदा ॥ ६९१

३ । ११ ।

सौधर्म और ईशान कल्पवासी देव प्रथम पृथिवी तक, सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पवासी द्वितीय पृथिवी तक, ब्रह्म और लांतव कल्पवासी तृतीय पृथिवी तक, सहस्रार कल्पवासी चतुर्थ पृथिवी तक; आनत, प्राणत, आरण एवं अच्युत कल्पवासी पांचवीं पृथिवी तक, नौ प्रकारके ग्रैवेयकवासी देव छठी पृथिवीके नीचे तक, तथा अनुदिश व अनुत्तरवासी देव सब ही लोकनालीको देखते है। अपने कर्मद्रव्यमें अनन्तका भाग देकर अपने क्षेत्रमेंसे एक एक कम करना चाहिये। [इस प्रकार अन्तमें जो स्कन्ध रहे वह विवक्षित देवके अवधिज्ञानका विषयभूत द्रव्य होता है।] कल्पवासी देवोंके विस्रसोपचय सहित [रहित] अपने अवधिज्ञानावरण द्रव्यको रखकर जब तक अपने अपने क्षेत्रप्रदेशकी शलाकायें समाप्त न हो जावें तब तक ध्रुवहारका भाग देना चाहिये। उक्त प्रकारसे भाग देनेपर अन्तमें जो स्कन्ध रहे उतने मात्र इनके अवधिज्ञानके विषयभूत द्रव्यका प्रमाण समझना चाहिये ॥ ६८५–६८९ ॥

कालकी अपेक्षा सौधर्मयुगलके देवोंका अवधिविषय असंख्यात वर्ष करोड़ और शेष देवोंका यथायोग्य पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ॥ ६९० ॥

इस प्रकार अवधिज्ञानका कथन समाप्त हुआ।

सौधर्म-ईशानयुगलमें देवोंकी संख्या घनांगुलके तृतीय वर्गमूलसे गुणित श्रेणी प्रमाण और द्वितीय युगलमें अपने ग्यारहवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण है ॥ ६९१ ॥

सौ. युगल – श्रे. × घ. अं. का ३ वर्गमूल। सनत्कुमारयुगल श्रे. ÷ श्रे. ११ वर्गमूल।

१ द ब संखेत्तं संकम्मे. २ द ब कप्पामरा य. ३ क जीवा. ४ द ब विदियजुगलं. ५ द ब एक्करसग.

बम्हम्मि होदि सेढी सेढीणववग्गमूलभवहरिदा । लंतवकप्पे सेढी सेढीसगवग्गमूलहिदा ॥ ६९२

९ । ७ ।

महसुक्कम्मि य सेढी सेढीपणवग्गमूलभजिदव्वा । सेढी सहस्सयारे सेढीचउवग्गमूलहिदा ॥ ६९३

५ । ४ ।

अवसेसकप्पजुगले पल्लासंखेज्जभागमेक्केक्के । देवाणं संखादो संखेज्जगुणा हुवंति देवीओ ॥ ६९४

| प १ |
| ७ |

हेट्ठिममज्झिमउवरिमगेवज्जेसु अणुद्दिसादिदुगे । पल्लासंखेज्जदिमो सुराण संखाए जहजोग्गं ॥ ६९५

| प १ |
| ७ |

णवरि विसेसो सव्वट्ठसिद्धिणामम्मि होदि संखेज्जा । देवाणं परिसंखा णिद्दिट्ठा वीयरागेहिं ॥ ६९६

। संखा गदा ।

ब्रह्म कल्पमें देवोंकी संख्या श्रेणीके नौवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण और लांतव कल्पमें श्रेणीके सातवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण है ॥ ६९२ ॥

ब्रह्म – श्रे ÷ श्रे. ९ व. मू. । लांतव – श्रे. ÷ श्रे. ७ वर्गमूल ।

महाशुक्र कल्पमें देवोंकी संख्या श्रेणीके पांचवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण और सहस्रार कल्पमें श्रेणीके चतुर्थ वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण है ॥ ६९३ ॥

महाशुक्र – श्रे. ÷ श्रे. ५ व. मू. । सहस्रार – श्रे. ÷ श्रे. ४ व. मू.

शेष दो कल्पयुगलोंमेंसे एक एकमें देवोंका प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भाग मात्र है । देवोंकी संख्यासे देवियां संख्यातगुणी हैं ॥ ६९४ ॥

अधस्तन ग्रैवेयक, मध्य ग्रैवेयक, उपरिम ग्रैवेयक और अनुदिशादिक (अनुदिश और अनुत्तर) में देवोंकी संख्या यथायोग्य पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ॥ ६९५ ॥

विशेष यह है कि सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रकमें संख्यात देव हैं । इस प्रकार वीतराग भगवान्‌ने देवोंकी संख्या निर्दिष्ट की है ॥ ६९६ ॥

संख्याका कथन समाप्त हुआ ।

एक्कपलिदोमाऊ उप्पाडेदुं धराए छक्खंडं । तग्गदणरतिरियजणे मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥ ६९७
उवहिदुवमाणजीवी पल्लट्टेदुं च जंबुदीवं हि[1] । तग्गदणरतिरियाणं मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥ ६९८
सोहम्मिंदो[2] णियमा जंबूदीवं समुक्खिवदि एवं । केई आइरिया हय सत्तिसहावं परूवंति ॥ ६९९
। सत्ती गदा । पाठान्तरम् ।
भावणवेंतरजोइसियकप्पवासीणमुववादे[3] । सीदुण्हं अचित्तं संउदया होंति सामण्णे ॥ ७००
एदाण चउविहाणं सुराण सव्वाण होंति जोणीओ । चउलक्खा हु विसेसे इंदियकल्लादरूवाओ (?) ॥
जोणी समत्ता ।
सम्मद्दंसणसुद्धिमुज्जलयरं संसारणिण्णासणं, सम्मण्णाणमणंतदुक्खहरणं चारंति जे संततं ।
णिव्वाहंति विसिट्ठसीलसहिदा जे सम्मचारित्तयं, ते सग्गे सुविचित्तपुण्णजणिदे भुंजंति सोक्खामयं ॥

एक पल्योपम प्रमाण आयुवाला देव पृथिवीके छह खंडोंको उखाड़नेके लिये और उनमें स्थित मनुष्य व तिर्यंचोंको मारने अथवा पोषनेके लिये समर्थ है ॥ ६९७ ॥

सागरोपम प्रमाण काल तक जीवित रहनेवाला देव जम्बूद्वीपको भी पलटनेके लिये और उसमें स्थित मनुष्य व तिर्यंचोंको मारने अथवा पोषनेके लिये समर्थ है ॥ ६९८ ॥

सौधर्म इन्द्र नियमसे जम्बूद्वीपको फेंक सकता है । इस प्रकार कोई आचार्य शक्ति-स्वभावका निरूपण करते हैं ॥ ६९९ ॥ पाठान्तर ।

शक्तिका कथन समाप्त हुआ ।

भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासियोंके उपपाद जन्ममें शीतोष्ण, अचित और संवृत योनि होती है । इन चारों प्रकारके सब देवोंके सामान्य रूपसे ये योनियां होती हैं । विशेष रूपसे चार लाख योनियां होती हैं ॥ ७००-७०१ ॥

योनियोंका कथन समाप्त हुआ ।

जो अतिशय उज्ज्वल एवं संसारको नष्ट करनेवाली सम्यग्दर्शनकी शुद्धि तथा अनन्त दुःखको हरनेवाले सम्यग्ज्ञानका निरन्तर आचरण करते हैं, और जो विशिष्ट शीलसे सहित होकर सम्यक्चारित्रका निर्वाह करते हैं वे विचित्र पुण्यसे उत्पन्न हुए स्वर्गमें सौख्यामृतको भोगते हैं ॥ ७०२ ॥

१ द ब दीवम्मि. २ द ब सोहम्मिंदो. ३ द-ब-प्रत्योर्गोम्मटसारजीवकाण्डस्य पर्याप्तप्ररूपणाधिकारे दशमगाथाया अर्धमेतावदुपलभ्यते. ४ द ब कप्पवासीणमुववादे.

चउगइपंकविमुक्कं णिम्मलवरमोक्खलच्छिमुहमुकुरं । पणमामि य धम्मतित्थं धम्मजिणिंदं णमंसामि ॥ ७०३

एवमाइरियपरंपरागदतिलोयपण्णत्तीए देवलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती[1] णाम
अट्ठमो महाधियारो सम्मत्तो ॥ ८ ॥

जो चतुर्गति रूप पंकसे रहित, निर्मल व उत्तम मोक्ष-लक्ष्मीके मुखके मुकुर (दर्पण) स्वरूप तथा धर्म तीर्थके प्रतिपादक है उन धर्म जिनेन्द्रको मै नमस्कार करता हूं ॥ ७०३ ॥

इस प्रकार आचार्यपरम्परागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें देवलोकस्वरूपनिरूपणप्रज्ञप्ति नामक आठवां महाधिकार समाप्त हुआ ।

---

१ द ब सरूवणपण्णत्ती.

[णवमो महाधियारो]

उम्मग्गसंठियाणं भव्वाणं मोक्खमग्गदेसयरं । पणमिय संतिजिणेसं[1] वोच्छामो सिद्धलोयपण्णत्तिं ॥ १

सिद्धाण णिवासखिदी संखा ओगाहणाणि सोक्खाइं । सिद्धत्तहेदुभावो सिद्धजगे[2] पंच अहियारा ॥ २

अट्ठमखिदीए उवरिं पण्णासब्भहियसत्तयसहस्सा । दंडाणिं गंतूणं सिद्धाणं होदि आवासो ॥ ३

पणदोछप्पणेइगिअडणहचउसगचउखचदुरअडकमसो । अट्ठहिदा जोयणया सिद्धाण णिवासखिदिमाणं ॥

८४०४७४०८१५६२५ ।
८

। णिवासखेत्तं गदं ।

तीदसमयाण संखं अडसमयब्भहियमासछक्कहिदा । अडहीणछस्सयावहदपरिमाणजुदा[4] हुवंति ते सिद्धा ॥ ५

अ । ५९२ [5]
मा ६ स ८

। संखा गदा ।

उन्मार्गमें स्थित भव्योंको मोक्षमार्गका उपदेश करनेवाले शान्ति जिनेन्द्रको नमस्कार करके सिद्धलोकप्रज्ञप्तिको कहते हैं ॥ १ ॥

सिद्धोंकी निवासभूमि, संख्या, अवगाहना, सौख्य और सिद्धत्वके हेतुभूत भाव, ये सिद्धलोकमें पांच अधिकार हैं ॥ २ ॥

आठवीं पृथिवीके ऊपर सात हजार पचास धनुष जाकर सिद्धोंका आवास है ॥ ३ ॥

सिद्धोंके निवासक्षेत्रका प्रमाण अंकक्रमसे आठसे भाजित पांच, दो, छह, पांच, एक, आठ, शून्य, चार, सात, चार, शून्य, चार और आठ इतने योजन है ॥ ४ ॥

$\frac{८४०४७४०८१५६२५}{८}$ ।

निवासक्षेत्र समाप्त हुआ ।

अतीत समयोंकी संख्यामें छह मास और आठ समयका भाग देकर आठ कम छह सौ अर्थात् पांच सौ बानवैसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उतने सिद्ध हैं ॥ ५ ॥

अतीत समय ÷ ६ मास ८ स. × ५९२ = सब सिद्ध ।

संख्याका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब जिणेसं. २ द ब जुगे. ३ द ब छप्पण्ण. ४ द ब अडहीणछस्सयावहदपरिमाणजुदा. ५ द ब ब मा ५१२.

पणकदिजुदपंचसया ओगाहणया धणूणि[1] उक्कस्से । आउट्ठहत्थमेत्ता सिद्धाण जहण्णठाणम्मि ॥ ६

५२५ । ३½

तणुवादबहलसंखं पणसयरूवेहि ताडिदूण तदो । पण्णरसदेहि भजिदे उक्कस्सोगाहणं होदि ॥ ७

१५७५ । ५०० | ५२५ ।[2]
१५००

तणुवादबहलसंखं पणसयरूवेहि ताडिदूण तदो । णवलक्खेहिं भजिदे जहण्णमोगाहणं होदि ॥ ८

१५७५ । ५०० | ३ |[3]
९००००० | ½

लोयविणिच्छयगंथे लोयविभागम्मि सव्वसिद्धाणं । ओगाहणपरिमाणं भणिदं[4] किंचूणचरिमदेहसमो ॥ ९

पाठान्तरम् ।

दीहत्तं बाहल्लं चरिमभवे जस्स जारिसं ठाणं । तत्तो तिभागहीणं ओगाहण सव्वसिद्धाणं ॥ १०

इन सिद्धोंकी उत्कृष्ट अवगाहना पांचके वर्गसे युक्त पांच सौ अर्थात् पांच सौ पच्चीस धनुष और जघन्य अवगाहना साढ़े तीन हाथ प्रमाण है ॥ ६ ॥

उत्कृष्ट ५२५ ध., जघन्य ३½ हाथ ।

तनुवातके बाहल्यकी संख्याको पांच सौ रूपोंसे गुणा करके पन्द्रह सौका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना उत्कृष्ट अवगाहनाका प्रमाण होता है ॥ ७ ॥ पाठान्तर ।

त. वा. १५७५ × ५०० ÷ १५०० = ५२५ धनुष ।

तनुवातके बाहल्यकी संख्याको पांच सौ रूपोंसे गुणा करके नौ लाखका भाग देनेपर जघन्य अवगाहनाका प्रमाण होता है ॥ ८ ॥

१५७५ × ५०० ÷ ९००००० = ½ धनुष = ३½ हाथ ।

लोकविनिश्चय ग्रन्थमें लोकविभागमें सब सिद्धोंकी अवगाहनाका प्रमाण कुछ कम चरम शरीरके समान कहा है ॥ ९ ॥ पाठान्तर ।

अन्तिम भवमें जिसका जैसा आकार, दीर्घता और बाहल्य हो उससे तृतीय भागसे कम सब सिद्धोंकी अवगाहना होती है ॥ १० ॥

१ द ब दणाणि. २ द ब १५००। १५७५। ५००। १। ५२५। ३ द ब ९०००००। १५७५। ५००। १। ७। ४ द ब भजिदं.

पण्णासुत्तरतिसया उक्कस्सोगाहणं हवे दंडं । तियभाजिदसत्तहत्था जहण्णओगाहणं ताणं ॥ ११

३५० । ह | ७ / ३ |

पाठान्तरम् ।

तणुवादपवणबहले हीणेहिं गुणि णवेण भाजिदम्मि । जं लद्धं सिद्धाणं उक्कस्सोगाहणं ठाणं ॥ १२

२२५० । १५७५ । ५०० । १ । एदेण तेरासिलद्धं २ । १५७५ । ३५० ।

तणुवादस्स य बहले छस्सयपण्णत्तरीहि भाजिदम्मि । जं लद्धं सिद्धाणं जहण्णओगाहणं होदि ॥ १३

१३५०००० । १५७५ । २००० । १ । तेरासिएण सिद्धं १५७५ | ७ / ३ |

६७५

पाठान्तरम् ।

अवरुक्कस्समज्झिमओगाहणसहिदसिद्धजीवाओ । होंति अणंता एक्केणोगाहिदखेत्तमज्झम्मि ॥ १४

माणुसलोयपमाणे संठियतणुवादउवरिमे भागे । सरिस सिरा सव्वाणं हेट्ठिमभागम्मि विसरिसा केई ॥

जावद्धं गंदव्वं तावं गंतूण लोयसिहरम्मि । चेट्ठंति सव्वसिद्धा पुह पुह गयसित्थमूसगब्भणिहा ॥ १६

। ओगाहणा गदा ।

सिद्धोंकी उत्कृष्ट अवगाहना तीन सौ पचास धनुष और जघन्य अवगाहना तीनसे भाजित सात हाथ प्रमाण है ॥ ११ ॥ पाठान्तर ।

उ. ३५० ध. । ज. ७/३ हा. ।

तनुवात पवनके बाहल्यको दोसे गुणित कर नौका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सिद्धोंकी उत्कृष्ट अवगाहनाका स्थान होता है ॥ १२ ॥ १५७५ × २ ÷ ९ = ३५० धनुष ।

तनुवातके बाहल्यमें छह सौ पचहत्तरका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सिद्धोंकी जघन्य अवगाहना होती है ॥ १३ ॥ १५७५ ÷ ६७५ = ७/३ = २ १/३ ध. ।

एक जीवसे अवगाहित क्षेत्रके भीतर जघन्य, उत्कृष्ट और मध्यम अवगाहनासे सहित अनन्त सिद्ध जीव होते हैं ॥ १४ ॥

मनुष्यलोक प्रमाण स्थित तनुवातके उपरिम भागमें सब सिद्धोंके सिर सदृश होते हैं । अधस्तन भागमें कोई विसदृश होते हैं ॥ १५ ॥

जितना मार्ग जाने योग्य है उतना जाकर लोकशिखरपर सब सिद्ध पृथक् पृथक् मोमसे रहित मूषकके अभ्यन्तर आकाशके सदृश स्थित हो जाते हैं ॥ १६ ॥

अवगाहनाका कथन समाप्त हुआ ।

---

१ द ब तेरासियं २ द ब एक्केणोगहिद. ३ द ब गयसिद्ध.

णिरुवमरूवा णिट्ठियकज्जा णिच्चा णिरंजणा णिरुजा । णिम्मलबोधा सिद्धा णिरुवं जाणंति हु एक्कसमएणं ॥

। सोक्खं सम्मत्तं ।

जह चिरसंचिदमिंधणमणलो पवणाहदो लहुं डहदि । तह कम्मिंधणमहियं खणेण झाणाणलो दहइ ॥ १८

जो खविदमोहकलुसो[1] विसयविरत्तो मणो णिरुंभित्ता । समवट्ठिदो सहावे सो पावइ णिव्वुदीसोक्खं ॥

जस्स ण विज्जदि रागो दोसो मोहो व जोगपरिकम्मो । तस्स सुहासुहदहणो झाणमओ जायदे अगणी ॥

दंसणणाणसमग्गं झाणं णो अण्णदव्वसंसत्तं । जायदि णिज्जरहेदू सभावसहिदस्स साहुस्स ॥ २१

जो सव्वसंगमुक्को अणण्णमणो अप्पणो[2] सहावेण । जाणदि पस्सदि आदं सो सगचरियं चरदि जीवो ॥ २२

णाणम्मि भावणा खलु कादव्वा दंसणे चरित्ते य । ते पुण आदा तिण्णि वि तम्हा कुण भावणं आदे ॥

अहमेक्को खलु सुद्धो दंसणणाणप्पगो सदारूवी[3] । ण वि अत्थि मज्झ किंचि वि अण्णं[4] परमाणुमेत्तं पि ॥

अनुपम स्वरूपसे संयुक्त, कृतकृत्य, नित्य, निरंजन, नीरोग और निर्मल बोधसे युक्त सिद्ध एक ही समयमें समस्त पदार्थोंको संवेद्य जानते हैं ॥ १७ ॥

सौख्यका कथन समाप्त हुआ ।

जिस प्रकार चिरसंचित इंधनको पवनसे आहत अग्नि शीघ्र ही जला देती है, उसी प्रकार ध्यानरूपी अग्नि अधिक कर्मरूपी इंधनको क्षणमात्रमें जला देती है ॥ १८ ॥

जो दर्शनमोह और चारित्रमोहको नष्ट कर विषयोंसे विरक्त होता हुआ मनको रोककर आत्मस्वभावमें स्थित होता है वह मोक्षसुखको प्राप्त करता है ॥ १९ ॥

जिसके राग, द्वेष, मोह और योगपरिकर्म (योगपरिणति) नहीं है उसके शुभाशुभ (पुण्य-पाप) को जलानेवाली ध्यानमय अग्नि उत्पन्न होती है ॥ २० ॥

शुद्ध स्वभावसे सहित साधुका दर्शन-ज्ञानसे परिपूर्ण ध्यान निर्जराका कारण होता है, अन्य द्रव्योंसे संसक्त वह निर्जराका कारण नहीं होता ॥ २१ ॥

जो अन्तरङ्ग बहिरङ्ग सर्व संगसे रहित और अनन्यमन अर्थात् एकाग्रचित्त होता हुआ अपने चैतन्य स्वभावसे आत्माको जानता व देखता है वह जीव आत्मीय चारित्रका आचरण करता है ॥ २२ ॥

ज्ञान, दर्शन और चारित्रमें भावना करना चाहिये । चूंकि वे तीनों (दर्शन, ज्ञान और चारित्र) आत्मस्वरूप हैं इसलिये आत्मामें भावनाको करो ॥ २३ ॥

मैं निश्चयसे सदा एक, शुद्ध, दर्शन-ज्ञानात्मक और अरूपी हूं । मेरा परमाणु मात्र भी अन्य कुछ नहीं है ॥ २४ ॥

१ द ब विविदमोहके कलुसो. २ द ब अण्णो अप्पणा. ३ द ब णाणप्पगा सगारूवी. ४ द ब अत्थि.

णत्थि मम कोइ मोहो दुज्झो उवजोगमेवमहमेगो[1] । इह[2] भावणाहि जुत्तो खवेइ दुट्ठट्ठकम्माणि ॥ २५
णाहं होमि परेसिं ण मे परे संति[3] णाणमहमेक्को । इदि जो झायदि झाणे सो मुच्चइ अट्ठकम्मेहिं ॥ २६
चित्तविरामे विरमंति इंदिया तेसु[4] विरदेसुं । आदसहावम्मि रदी होदि पुढं तस्स णिव्वाणं ॥ २७
णाहं देहो ण मणो ण चेव वाणी ण कारणं तेसिं । एवं खलु जो भाओ सो पावइ सासयं ठाणं ॥ २८
देहो व मणो वाणी पोग्गलदव्वप्पगो[5] त्ति णिद्दिट्ठं । पोग्गलदव्वं[6] पि पुणो पिंडो परमाणुदव्वाणं ॥ २९
णाहं पोग्गलमइओ ण दे मया पुग्गला कदा पिंडं । तम्हा हि ण देहो हं कत्ता वा तस्स देहस्स ॥ ३०
एवं णाणप्पाणं दंसणभूदं अदिंदियमहत्थं । धुवमचलमणालंबं भावेमं अप्पयं सुद्धं ॥ ३१
णाहं होमि परेसिं ण मे परे संति णाणमहमेक्को । इदि जो झायदि झाणे सो अप्पाणं हवदि झादा ॥ ३२

मोह मेरा कोई नहीं है, एक ज्ञान-दर्शनोपयोगस्वरूप ही मैं जानने योग्य हूं; ऐसी भावनासे युक्त जीव दुष्ट आठ कर्मोंको नष्ट करता है ॥ २५ ॥

न मैं पर पदार्थोंका हूं और न पर पदार्थ मेरे है, मै तो ज्ञानस्वरूप अकेला ही हूं; इस प्रकार जो ध्यानमें चिंतन करता है वह आठ कर्मोंसे मुक्त होता है ॥ २६ ॥

चित्तके शान्त होनेपर इन्द्रियां शान्त होती हैं और उन इन्द्रियोंके शान्त होनेपर आत्मस्वभावमें रति होती है । पुनः इससे उसे स्पष्टतया निर्वाण प्राप्त होता है ॥ २७ ॥

न मैं देह हूं, न मन हूं, न वाणी हूं, और न उनका कारण ही हूं । इस प्रकार जो भाव है वह शाश्वत स्थानको प्राप्त करता है ॥ २८ ॥

देहके समान मन और वाणी पुद्गल द्रव्यात्मक पर है, ऐसा कहा गया है । पुद्गल द्रव्य भी परमाणु द्रव्योंका पिण्ड है ॥ २९ ॥

न मै पुद्गलमय हूं और न मैंने उन पुद्गलोंको पिण्डरूप (स्कन्धरूप) किया है । इसीलिये न मै देह हूं और न उस देहका कर्ता ही हूं ॥ ३० ॥

इस प्रकार ज्ञानात्मक, दर्शनभूत, अतीन्द्रिय, महार्थ, नित्य, निर्मल और निरालम्ब शुद्ध आत्माका चिन्तन करना चाहिये ॥ ३१ ॥

न मैं पर पदार्थोंका हूं और न पर पदार्थ मेरे है, मैं तो ज्ञानमय अकेला हूं, इस प्रकार जो ध्यानमें आत्माका चिन्तन करता है वह ध्याता है ॥ ३२ ॥

१ द ब दुज्झोउवजोगमेदमेवमहमेगो, ब वुज्झो उवज्जोगमेवमहमेगो. २ द ब इह. ३ द ब तिति. ४ द ब इंदियाहु. ५ द ब दव्वं परो. ६ द ब पोग्गलधम्म.

जो सुद्धं जाणित्ता झादि परं अप्पयं विसुद्धप्पा । अणुवममपारविसयं[1] सोक्खं पावेदि सो जीवो ॥ ३३
णाहं होमि परेसिं ण मे परे णत्थि मज्झमिह किं पि । एवं खलु जो भावइ सो पावइ सव्वकल्लाणं ॥ ३४
उड्ढोवमज्झलोए ण मे परे णत्थि मज्झमिह किंचि । इह भावणाहि जुत्तो लहु पावइ अक्खयं सोक्खं ॥ ३५
मद्दमाणमायरहिदो लोहेण विवज्जिदो य जो जीवो । णिम्मलसहावजुत्तो सो पावइ अक्खयं ठाणं ॥ ३६
परमाणुपमाणं वा मुच्छा देहादिएसु जस्स पुणो । सो ण वि जाणदि[2] समयं सगस्स सव्वागमधरो वि ॥ ३७
तम्हा[3] णिव्वुदिकामो रागं देहेसु कुणदि मा किंचि । देहविभिण्णो अप्पा झायव्वो[4] इंदियादीदो ॥ ३८
देहत्थो देहादो किंचूणो देहवज्जिओ सुद्धो । देहायारो अप्पा झायव्वो इंदियादीदो ॥ ३९
झाणे जदि णियअप्पा णाणादो णावभासदे अस्स । झाणं होदि ण तं पुण अण्ण पमादो दु मोहसुच्छा वा ॥

जो विशुद्ध आत्मा इस प्रकार जानकर उत्कृष्ट आत्माका ध्यान करता है वह जीव अनुपम और अपार विषयिक अर्थात् अनन्तचतुष्टयात्मक सुखको प्राप्त करता है ॥ ३३ ॥

न मैं पर पदार्थोंका हूं और न पर पदार्थ मेरे है, यहां मेरा कुछ भी नहीं है; इस प्रकार जो भावना भाता है वह सब कल्याणको पाता है ॥ ३४ ॥

यहां ऊर्ध्व लोक, अधो लोक और मध्य लोकमें मेरे पर पदार्थ कोई नहीं हैं, यहां मेरा कुछ भी नहीं है । इस प्रकारकी भावनाओंसे युक्त वह जीव अक्षय सुखको पाता है ॥ ३५ ॥

जो जीव मद, मान व मायासे रहित; लोभसे वर्जित और निर्मल स्वभावसे युक्त होता है वह अक्षय स्थानको पाता है ॥ ३६ ॥

जिसके परमाणु प्रमाण भी देहादिकमें राग है वह समस्त आगमका धारी होकर भी अपने समयको नहीं जानता है ॥ ३७ ॥

इसलिये मोक्षके अभिलाषी पुरुषको देहमें कुछ भी राग न करके देहसे भिन्न अतीन्द्रिय आत्माका ध्यान करना चाहिये ॥ ३८ ॥

देहमें स्थित, देहसे कुछ कम, देहसे रहित, शुद्ध, देहाकार और इन्द्रियातीत आत्माका ध्यान करना चाहिये ॥ ३९ ॥

जिस जीवके ध्यानमें यदि ज्ञानसे निज आत्माका प्रतिभास नहीं होता है तो वह ध्यान नहीं है । उसे प्रमाद, मोह अथवा मूर्छा ही जानना चाहिये ॥ ४० ॥

---

१ द ब णिरयं. २ द ब जादि. ३ द तेण, ब तम्हा. ४ द झायज्जो.

मयसिथ्यमूसगब्भायारो रयणत्तयादिगुणजुत्तो । णियआदा झायव्वो खयरहिदो जीवघणदेसो ॥ ४१
जो आदभावणमिणं णिच्चुवजुत्तो मुणी[1] समाचरदि । सो सव्वदुक्खमोक्खं[2] पावइ अचिरेण कालेण ॥
कम्मे णोकम्मम्मि य अहमिदि अहयं च कम्मणोकम्मं । जायदि सा खलु बुद्धी सो हिंडइ गरुवसंसारं ॥
जो खविदमोहकम्मो[3] विसयविरत्तो मणो णिरुंभित्ता । समवट्ठिदो सहावे सो मुच्चइ कम्मणिगलेहिं ॥
पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसबंधेहिं वज्जिओ अप्पा । सो हं इदि चिंतेजो तत्थेव य कुणह थिरभावं ॥ ४५
केवलणाणसहावो केवलदंसणसहावो सुहमइओ । केवलविरियसहाओ सो हं इदि चिंतए णाणी ॥ ४६
जो सव्वसंगमुक्को झायदि अप्पाणमप्पणो[4] अप्पा । सो सव्वदुक्खमोक्खं पावइ अचिरेण कालेण ॥ ४७
जो इच्छदि णिस्सरिदुं संसारमहण्णवस्स रुद्दस्स । सो एवं जाणित्ता परिझायदि अप्पयं सुद्धं ॥ ४८

मोमसे रहित मूषकके (अभ्यन्तर) आकाशके आकार, रत्नत्रयादि गुणोसे युक्त, अविनश्वर और जीवघनदेशरूप निज आत्माका ध्यान करना चाहिये ॥ ४१ ॥

जो साधु नित्य उद्योगशील होकर इस आत्मभावनाका आचरण करता है वह थोड़े समयमें ही सब दुःखोंसे छुटकारा पा लेता है ॥ ४२ ॥

कर्म और नोकर्ममें 'मैं हूं' तथा मैं कर्म नोकर्म रूप हूं; इस प्रकार जो बुद्धि होती है उससे यह प्राणी महान् संसारमें घूमता है ॥ ४३ ॥

जो मोहकर्म (दर्शनमोह और चारित्रमोह) को नष्टकर विषयोंसे विरक्त होता हुआ मनको रोककर स्वभावमें स्थित होता है वह कर्मरूपी सांकलोंसे छूट जाता है ॥ ४४ ॥

जो प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश बन्धसे रहित आत्मा है वही मै हूं, इस प्रकार चिन्तन करना चाहिये और उसमें ही स्थिरभावको करना चाहिये ॥ ४५ ॥

जो केवलज्ञान व केवलदर्शन स्वभावसे युक्त, सुखस्वरूप और केवल वीर्यस्वभाव है वही मै हूं, इस प्रकार ज्ञानी जीवको विचार करना चाहिये ॥ ४६ ॥

जो जीव सर्व संगसे रहित होकर अपने आत्माका आत्माके द्वारा ध्यान करता है वह थोड़े ही समयमें समस्त दुःखोंसे छुटकारा पा लेता है ॥ ४७ ॥

जो भयानक संसाररूपी महासमुद्रसे निकलनेकी इच्छा करता है वह इस प्रकार जानकर शुद्ध आत्माका ध्यान करता है ॥ ४८ ॥

---

१ द ब ब मुणी. २ द मोक्खे, ब मोक्खो. ३ द ब कमसो. ४ द ब अप्पाणं अप्पणो.

पडिकमणं पडिसरणं पडिहरणं धारणा णियत्ती य । णिंदणगरहणसोही लब्भंति णियादभावणए ॥ ४९
जो णिहदमोहगंठी रागपदोसे[1] वि खविय सामण्णे । होजं समसुहदुक्खो[2] सो सोक्खं अक्खयं लहदि ॥ ५०
ण जहदि जो दु[3] ममत्तं अहं ममेदं ति देहदविणेसु । सो मूढो अण्णाणी बज्झदि दुट्ठट्ठकम्मेहिं ॥ ५१
पुण्णेण होइ विहवो विहवेण मओ[4] मएण मइमोहो । मइमोहेण य पावं तम्हा[5] पुण्णो वि वज्जेओ ॥ ५२
परमट्ठबाहिरा जे ते अण्णाणेण पुण्णमिच्छंति । संसारगमणहेदुं विमोक्खहेदुं अयाणंता[6] ॥ ५३
ण हु मण्णदि जो एवं[7] णत्थि विसेसो त्ति पुण्णपावाणं । हिंडदि घोरमपारं संसारं मोहसंछण्णो[8] ॥ ५४
मिच्छत्तं अण्णाणं पावं पुण्णं चएवि तिविहेणं । सो णिच्चयेण जोई झायव्वो अप्पयं सुद्धं ॥ ५५
जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो । सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हु परिणामसब्भावो ॥

निजात्मभावनासे प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, प्रतिहरण, धारणा, निवृत्ति, निन्दन, गर्हण और शुद्धिको प्राप्त करते है ॥ ४९ ॥

जो दर्शन मोह रूप ग्रन्थिको नष्ट कर श्रमण अवस्थामें राग-द्वेषका क्षपण करता हुआ सुख-दुखमें समान हो जाता है वह अक्षय सुखको प्राप्त करता है ॥ ५० ॥

जो देह और धनमें क्रमशः 'अहम्' और 'ममेदं' इस प्रकारके ममत्वको नहीं छोड़ता है वह मूर्ख अज्ञानी दुष्ट आठ कर्मोंसे बंधता है ॥ ५१ ॥

चूंकि पुण्यसे विभव, विभवसे मद, मदसे मतिमोह और मतिमोहसे पाप होता है; इसलिये पुण्यको भी छोड़ना चाहिये ॥ ५२ ॥

जो परमार्थसे बाहिर हैं वे संसारगमन और मोक्षके हेतुको न जानते हुए अज्ञानसे पुण्यकी इच्छा करते हैं ॥ ५३ ॥

पुण्य और पापमें कोई भेद नहीं है, इस प्रकार जो नहीं मानता है वह मोहसे युक्त होता हुआ घोर एवं अपार संसारमें घूमता है ॥ ५४ ॥

मिथ्यात्व, अज्ञान, पाप और पुण्य, इनका [मन, वचन, काय] तीन प्रकारसे त्याग करके योगीको निश्चयसे शुद्ध आत्माका ध्यान करना चाहिये ॥ ५५ ॥

परिणामस्वभाव रूप जीव जब शुभ अथवा अशुभ परिणामसे परिणमता है तब शुभ अथवा अशुभ होता है, और जब शुद्ध परिणामसे परिणमता है तब शुद्ध होता है ॥ ५६ ॥

---

१ द ब रायपदोसो. २ द ब समसुहदुक्खं. ३ ब हु. ४ ब माया. ५ द ब तम्मा. ६ द ब णयाणंता. ७ द ब एणं. ८ द ब समोहछण्णो.

धम्मेण परिणदप्पा [अप्पा] जदि सुद्धसंपजोगजुदो । पावइ णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो य सग्गसुहं ॥ ५७
असुहोदएण आदा[1] कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो । दुक्खसहस्सेहिं सदा अभिहुदो[2] भमइ अचंतं ॥ ५८
अदिसयमादसमुत्थं[3] विसयातीदं अणोवममणंतं । अव्वुच्छिण्णं च सुहं सुद्धवजोगप्पसिद्धाणं ॥ ५९
रागादिसंगमुक्को दहइ मुणी सेयझाणजोगेणं । कम्मिंधणसंघायं अणेयभवसंचियं खिप्पं ॥ ६०
जो संकप्पवियप्पो तं कम्मं कुणदि असुहसुहजणगं । अप्पासभावलद्धी जाव ण हियये परिफुरइ ॥ ६१
बंधाणं[4] च सहावं विजाणिदुं अप्पणो सहावं च । बंधेसु जो ण रज्जदि सो कम्मविमोक्खणं[5] कुणइ ॥ ६२
जाव ण वेदि विसेसंतरं[6] तु आदासवाण दोण्हं पि । अण्णाणी ताव दु सो विसयादिसु वट्टदे जीवो ॥
ण वि परिणमदि[7] ण गेण्हदि उप्पजदि ण परदव्वपजाए । णाणी जाणंतो वि हु पोग्गलदव्वं अणेयविहं[8] ॥

धर्मसे परिणतस्वरूप आत्मा यदि शुद्ध उपयोगसे युक्त होता है तब निर्वाणसुखको और शुभोपयोगसे युक्त होकर स्वर्गसुखको प्राप्त करता है ॥ ५७ ॥

अशुभोदयसे यह आत्मा कुमानुष, तिर्यंच और नारकी होकर सदा अचिन्त्य हजारों दुःखोंसे पीड़ित होकर संसारमें अत्यन्त घूमता है ॥ ५८ ॥

शुद्धोपयोगसे उत्पन्न अरहन्त और सिद्ध जीवोंको अतिशय, आत्मोत्थ, विषयातीत, अनुपम, अनन्त और विच्छेद रहित सुख प्राप्त होता है ॥ ५९ ॥

रागादि परिग्रहसे रहित मुनि शुक्लध्यान नामक ध्यानसे अनेक भवोंमें संचित किये हुए कर्मरूपी ईंधनके समूहको शीघ्र जला देता है ॥ ६० ॥

जब तक हृदयमें आत्मस्वभावलब्धि प्रकाशमान नहीं होती तब तक जीव संकल्पविकल्प रूप शुभ-अशुभको उत्पन्न करनेवाला कर्म करता है ॥ ६१ ॥

जो बन्धोंके स्वभावको और आत्माके स्वभावको जानकर बन्धोंमें अनुरंजायमान नहीं होता है वह कर्मोंके मोक्षको करता है ॥ ६२ ॥

जब तक आत्मा और आस्रव इन दोनोंके विशेष अंतरको नहीं जानता है तब तक वह अज्ञानी जीव विषयादिकोंमें प्रवृत्त रहता है ॥ ६३ ॥

ज्ञानी जीव अनेक प्रकारके पुद्गल द्रव्यको जानता हुआ पर द्रव्यपर्यायसे न परिणमता है, न ग्रहण करता है, और न उत्पन्न होता है ॥ ६४ ॥

---

१ द ब यादो. २ द ब अभिहुदो. ३ द ब समेतं. ४ द ब बद्धाणं. ५ द ब रंभविमोक्खयं. ६ द ब विसेसंमतरं. ७ द ब परणमदि. ८ ब दव्वमणेयविहं.

जो परदव्वं तु सुहं असुहं वा मण्णदे विमूढमई । सो मूढो अण्णाणी बज्झदि दुट्ठट्ठकम्मेहिं ॥ ६५

। एवं भावणा समत्ता ।

केवलणाणदिणेसं चोत्तीसादिसयभूदिसंपण्णं । अप्पसरूवम्मि ठिदं कुंथुजिणेसं णमंसामि ॥ ६६

संसारण्णवमहणं तिहुवणभवियाण मोक्खसंजणणं । संदरिसियसयलत्थं[1] अरजिणणाहं णमंसामि ॥ ६७

भव्वजणमोक्खजणणं मुणिंददेविंदणमिदपयकमलं । अप्पसुहं संपत्तं मल्लिजिणेसं णमंसामि ॥ ६८

णिट्ठवियघाइकम्मं केवलणाणेण दिट्ठसयलट्ठं । णमह मुणिसुव्वयं भवियाणं सोक्खदेसयरं ॥ ६९

घणघाइकम्ममहणं मुणिंददेविंदपणदपयकमलं । पणमह णमिजिणणाहं तिहुवणभवियाण सोक्खयरं ॥ ७०

इंदसयणमिदचलणं आदसरूवम्मि सरवकालगदं । इंदियसोक्खविमुक्कं णेमिजिणेसं णमंसामि ॥ ७१

कमठोपसग्गदलणं तिहुयणभवियाण मोक्खदेसयरं । पणमह पासजिणेसं घाइचउक्कंविणासयरं ॥ ७२

जो मूढ़मति पर द्रव्यको शुभ अथवा अशुभ मानता है वह मूढ़ अज्ञानी होकर दुष्ट आठ कर्मोंसे बंधता है ॥ ६५ ॥

इस प्रकार भावना समाप्त हुई ।

जो केवलज्ञानरूप प्रकाश युक्त सूर्य हैं, चौंतीस अतिशयरूप विभूतिसे सम्पन्न, और आत्मस्वरूपमें स्थित हैं, उन कुंथु जिनेन्द्रको नमस्कार करता हूं ॥ ६६ ॥

जो संसार-समुद्रका मथन करनेवाले और तीनों लोकोंके भव्य जीवोंको मोक्षके उत्पादक हैं तथा जिन्होंने सकल पदार्थोंको दिखला दिया है ऐसे अर जिनेन्द्रको नमस्कार करता हूं ॥६७॥

जो भव्य जीवोंके लिये मोक्ष प्रदान करनेवाले है, जिनके चरण-कमलोंमें मुनीन्द्र और देवेन्द्रोंने नमस्कार किया है, और जो आत्मसुखको प्राप्त कर चुके हैं, उन मल्लि जिनेन्द्रको नमस्कार करता हूं ॥ ६८ ॥

जो घातिकर्मको नष्ट करके केवलज्ञानसे समस्त पदार्थोंको देख चुके हैं और जो भव्य जीवोंको सुखका उपदेश करनेवाले हैं, ऐसे मुनिसुव्रत स्वामीको नमस्कार करो ॥ ६९ ॥

घनघातिकर्मोंका मथन करनेवाले, मुनीन्द्र और देवेन्द्रोंसे नमस्कृत चरण-कमलोंसे संयुक्त, तथा तीनों लोकोंके भव्य जीवोंको सुखदायक, ऐसे नमि जिनेन्द्रको नमस्कार करो ॥ ७० ॥

सैकड़ों इन्द्रोंसे नमस्कृत चरणोंवाले, सब काल आत्मस्वरूपमें स्थित, और इन्द्रियसुखसे रहित, ऐसे नेमि जिनेन्द्रको नमस्कार करता हूं ॥ ७१ ॥

कमठकृत उपसर्गको नष्ट करनेवाले, तीनों लोकों सम्बन्धी भव्योंके लिये मोक्षके उपदेशक और घातिचतुष्टयके विनाशक पार्श्व जिनेन्द्रको नमस्कार करो ॥ ७२ ॥

---

१ द सीक्ख. २ द ब सयंकदं.

एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं । पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं ॥ ७३

जयउ जिणवरिंदो कम्मबंधा अवद्धो[1], जयउ जयउ सिद्धो सिद्धिमग्गासमग्गो[2] ।

जयउ जयअणंदो सूरिसत्थो पसत्थो, जयउ जयदि वण्णीण[3] उग्गसंघो यविग्घो ॥ ७४

पणमह चउवीसजिणे तित्थयरे तत्थ भरहखेत्तम्मि । भव्वाणं[4] भवदुक्खं छिंदंते णाणपरसूहिं[5] ॥ ७५

पणमह जिणवरवसहं गणहरवसहं तहेव गुणवसहं । दट्ठूण परिसवसहं जदिवसहं धम्मसुत्तपाढए वसहं[6] ॥

चुण्णिस्सरूवछक्करणसरूवपमाण होइ किं जं तं[7] (?) । अट्ठसहस्सपमाणं तिलोयपण्णत्तिणामाए ॥ ७७

एवमाइरियपरंपरागयतिलोयपण्णत्तीए सिद्धलोयसरूवणिरूवणपण्णत्ती णाम
णवमो महाधियारो समत्तो[10] ॥ ९ ॥

मग्गप्पभावणट्ठं पवयणभत्तिप्पबोधिदेण मया ।
भणिदं गंथप्पवरं सोहंतु बहुस्सुदाइरिया ॥
॥ तिलोयपण्णत्ती सम्मत्ता ॥

जो इन्द्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्तियोंसे वंदित, घातिकर्मरूपी मलसे रहित और धर्म-तीर्थके कर्ता हैं उन वर्धमान तीर्थंकरको नमस्कार करता हूं ॥ ७३ ॥

कर्मबन्धसे मुक्त जिनेन्द्र देव जयवन्त होवें, समग्र सिद्धिमार्गको प्राप्त हुए सिद्ध भगवान् जयवन्त होवें, जगत्को आनन्द देनेवाला प्रशस्त सूरिसमूह जयवन्त होवे, और विघ्नोंसे रहित साधुओंका प्रबल संघ जगत्में जयवंत होवे ॥ ७४ ॥

जो ज्ञानरूपी परशुसे भव्योंके भव-दुखको छेदते हैं, उन भरतक्षेत्रमें उत्पन्न हुए चौबीस तीर्थंकरोंको नमस्कार करो ॥ ७५ ॥

जिनवर वृषभको, गुणोंमें श्रेष्ठ गणधर वृषभको तथा परिषहोंको सहन करनेवाले व धर्मसूत्रके पाठकोंमें श्रेष्ठ यतिवृषभको देखकर नमस्कार करो ॥ ७६ ॥

चूर्णिस्वरूप तथा षट्करणस्वरूपका जितना प्रमाण है, त्रिलोकप्रज्ञप्ति नामक ग्रन्थका भी प्रमाण उतना— आठ हजार श्लोक परिमित है (?) ॥ ७७ ॥

इस प्रकार आचार्यपरम्परासे प्राप्त हुई त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें सिद्धलोकस्वरूप-
निरूपणप्रज्ञप्ति नामक नववां महाधिकार समाप्त हुआ ।

प्रवचनभक्तिसे प्रेरित होकर मैंने मार्गप्रभावनाके लिये इस श्रेष्ठ ग्रन्थको कहा है । बहु श्रुतके धारक आचार्य इसे शुद्ध करलें ।

त्रिलोकप्रज्ञप्ति समाप्त हुई ।

---

१ द. ब अवंधो. २ द ब समग्गा. ३ द ब वड्ढीणं ४ द ब सव्वाणं. ५ द ब णाणपरेसेहिं. ६ द ब सुत्तपाढयवसं. ७ द ब °रूवत्थकरण. ८ द ब किंजत्तं. ९ द ब लोयसरूव. १० द ब सम्मत्तं.

बंबई प्रतिकी लिपिकार-प्रशस्ति ।

वृषभो वः श्रियं कुर्याद् वृषभाङ्को वृषाग्रणीः । ध्वस्ता रागादयो येन दोषाः सिंहेन वा मृगाः ॥ १ ॥
चन्द्रप्रभो जिनो जीयाच्चन्द्राभोऽपि तनुश्रिया । निःकलंकः कलानेको भ्रान्तिहीनस्तमोगतः ॥ २ ॥
शान्तिः शान्तिकरो भूयात्षोडशस्तीर्थनायकः । चकार जगतः शान्तिं यो धर्मामृतवर्षणैः ॥ ३ ॥
श्रीवीरं च महावीरं वर्धमानं च सन्मतिम् । महतिं प्रणमामीशं कलौ कल्पतरूपमम् ॥ ४ ॥
यदालम्ब्य जना यान्ति पारं संसारवारिधेः । अनन्तमहिमाक्ष्य तज्जिनं जयति शाश्वतम् ॥ ५ ॥
जयन्तु गौतमस्वामिप्रमुखा गणनायकाः । सूरयो जिनचन्द्रान्ताः[1] श्रीमन्तः क्रमदेशकाः ॥ ६ ॥
वर्षे नवैकपंचैक (१५१९) पूरणे त्रिक्रमे ततः । ज्येष्ठमासे सिते पक्षे पंचम्यां भोमवासरे ॥ ७ ॥
अधोमध्योर्ध्वलोकस्य यस्यां प्रज्ञापनं मतं । तस्यास्त्रिलोकयप्रज्ञप्तेर्वंशं लेखयितुर्मुदे[2] ॥ ८ ॥

अथ—

श्रीजम्बूपपदे द्वीपे क्षेत्रे भरतसंज्ञके । कुरुजङ्गलदेशोऽस्ति यो देशः सुखसंपदाम् ॥ ९ ॥
विद्यते तत्समीपस्था श्रीमती योगिनीपुरी । यां पाति पातिसाहि श्रीबहलोलाभिधो नृपः ॥ १० ॥
तस्याः प्रत्यग्दिशि ख्यातं श्रीहिसारपिरोजकम् । नगरं नगरम्भादिवर्लीराजिविराजितम् ॥ ११ ॥
तत्र राज्यं करोत्येष श्रीमान् कुतबखानकः । यश्चकार प्रजाः स्वस्था दाता भोक्ता प्रतापवान् ॥ १२ ॥
अथ श्रीमूलसंघेऽस्मिन् नन्दिसंघेऽनघेऽजनि । बलात्कारगणस्तत्र गच्छः सारस्वतस्त्वभूत् ॥ १३ ॥
तत्राजनि प्रभाचन्द्रः सूरिचन्द्रो जिताङ्गजः । दर्शनज्ञानचारित्रतपोवीर्यसमन्वितः ॥ १४ ॥
श्रीमान् बभूव मार्तण्डस्तत्पट्टोदयभूधरे । पद्मनन्दी बुधानन्दी तमश्छेदी मुनिप्रभुः ॥ १५ ॥
तत्पट्टाम्बुधिसच्चन्द्रः शुभचन्द्रः सतां वरः । पञ्चाक्षवनदावाग्निः कषायद्रुमाधराशनिः ॥ १६ ॥

तदीयपट्टाम्बरभानुमाली क्षमादिनानागुणरत्नशाली ।
भट्टारकश्रीजिनचन्द्रनामा सैद्धान्तिकानां भुवि योऽस्ति सीमा ॥ १७ ॥

स्याद्वादामृतपानतृप्तमनसो यस्यातनोत्सर्वतः, कीर्तिर्भूमितले शशाङ्कधवला सुज्ञानदानान्मतः ।
चार्वाकादिमतप्रवादितिमिरोत्सर्मांशोर्मुनीन्द्रप्रभोः, सूरिश्रीजिनचन्द्रकस्य जयतात्पंधो हि तस्यानघ. ॥१८॥
बभूव मण्डलाचार्यः सूरेः श्रीपद्मनन्दिनः । शिष्यः सकलकीर्त्याख्यो लसत्कीर्तिमहातपाः ॥ १९ ॥
आचार्यो जयकीर्त्याह्वस्तच्छिष्यो मुनिकुञ्जरः । उत्तमक्षान्तिमुख्यानि धर्माङ्गानि दधाति यः ॥ २० ॥
दक्षिणात्[3] उदग्देशे समागत्य मुनिप्रभुः । जैनमुद्द्योतयामास शासनं धर्मदेशनात् ॥ २१ ॥
पुर्यां सिंहतरंगिण्यां यस्मिन्याते[4] मुनीश्वरे । भव्यैः सम्यक्त्वमग्राहि कैश्चिच्चाणुमहाव्रतम् ॥ २२ ॥
हरिभूषणसंज्ञोऽस्ति तस्य शिष्योऽस्तमन्मथः । एकान्तराद्यजस्रं यः करोत्युग्रं तपो मुनिः ॥ २३ ॥
परः सहस्रकीर्त्याख्यस्तच्छिष्यो भवभीरुकः । दीक्षां जग्राह यस्यक्त्वा भ्रातृ-पुत्र-परिग्रहम् ॥ २४ ॥
क्षान्तिका क्षान्तिशीलादिगुणरत्नखनिः सती । गन्धर्वश्रीरिति ख्याता शीलालङ्कारचित्रिग्रहा ॥ २५ ॥
अणुव्रत्यास्ति घोषाख्यो जिनादिष्टार्थसद्रुचिः । शंकाकांक्षादिनिर्मुक्तसम्यक्त्वादिगुणान्वितः ॥ २६ ॥

इन दोनों प्रशस्ति-पाठोंमें बहुत अशुद्धियां मिलती हैं । हमने प्रायः सभी लिपिदोषोंको सुधारा है । जहाँ जहाँ पाठपरिवर्तन किया है वहांका मूल पाठ नीचे दिया जाता है—

१ जिनेन्द्रान्ताः २ °तु नुते. ३ दक्षिणा उद°. ४ यस्मिन्नायते. ५ °ङ्ग्यादि.

द्वितीयो ब्रह्मसेवाख्यो भवकायविरक्तधीः । विनयादिगुणैर्युक्तः शास्त्राध्ययनतत्परः ॥ २७ ॥
आप्रोतवंशजः साधुर्लवदेवाभिधानकः । तत्त्वमुद्वरणः[1] संज्ञा तत्पत्नी भीकुही श्रुतिः ॥ २८ ॥
तयोः पुत्रोऽस्ति मेधाविनामा पण्डितकुञ्जरः । आप्तागमविचारज्ञो जिनपादाब्जषट्पदः ॥ २९ ॥
एषामाम्नायसंभूते वंशे खण्डेलसंज्ञके । गोत्रो गोधाभिधानेन नानागोधाकरोऽजनि ॥ ३० ॥
साधुपावंतकस्तत्र सोवतंसोपमः कुले । यस्योपकारजा कीर्त्या सर्वं श्वेतीकृतं जगत् ॥ ३१ ॥
तत्पुत्रौ परमोदारौ दानमानादिसद्गुणैः । नागपाशाविवाश्लिष्टौ मिथः स्नेहवशौ भृशम् ॥ ३२ ॥
साधुः कुमारपालाख्यस्तद्राद्योऽभून्यनां मतः । देवपूजादिषट्कर्मनिरतो विरतोऽशुभात् ॥ ३३ ॥
तत्पत्नी लाछिसंज्ञाभीर्लक्ष्मीरिव हरेः प्रिया । यया जिग्ये स्वशीलेन सीता रूपेण सद्रतिः ॥ ३४ ॥
तत्पुत्रत्रितयं जातं विनयादिगुणाश्रितं । येन स्वं भूषितं गोत्रं तपो रत्नत्रयेण वा ॥ ३५ ॥
तत्राद्यः पद्मसिंहाह्वः संघेशो जिनपादश्रित् । ऽहिंसासत्यादिपञ्चाणुव्रतभूषणभूषितः ॥ ३६ ॥
भाग्यं भालस्थले यस्य शिरस्युच्चैर्गुरोर्नतिः । शास्त्रस्य श्रवणं श्रुत्योर्नेत्रयोः साम्यदर्शनम् ॥ ३७ ॥
वचने प्रियवादित्वं कण्ठे सद्गुणकीर्तनम् । बुद्धौ परोपकारस्तु हृदि पञ्चगुरुस्मृतिः ॥ ३८ ॥
करे दानं सुपात्रस्य लक्ष्मीर्वक्षःस्थलेऽवसत् । पादयोस्तीर्थयात्रा हि सभा भूपतिसंनिधौ ॥३९॥ त्रिकलम्
अन्यो नेमाभिधानोऽभूत्प्रियमादिगुणालयः । संघधुर्धरणे नेमिर्निजवंशनभोरविः[2] ॥ ४० ॥
जातः पुरुषसारंगः सारंगस्तृतीयः सुतः । चतुर्विधमहादानविधौ कल्पतरुप्रभः ॥ ४१ ॥
साधुपावंतसंज्ञस्य यो द्वितीयस्तनूरुहः । सोऽयं ब्राह्मणनामासीच्छीलालंकृतविग्रहः ॥ ४२ ॥

तद्भ्रजाख्यः ख्याता मुनिराजसदस्यथो । दानिनो मानिनश्चापि धनिनोऽपि यशस्विनः ॥ ४३ ॥
तेष्वाद्यः साधुसाल्हाख्यः साह्लादो[3] जिनपूजने । घृतादिव्यसनत्यागाच्छ्रावकव्रतभावकः ॥ ४४ ॥
सहजाको द्वितीयोऽभून्महजेनः प्रियंवदः । गाम्भीर्येण पयोराशिं यो जिगाय धिया गुरुम् ॥ ४५ ॥
तृतीयः साबलाभिख्यो जातो जगति कीर्तिमान् । यो दानं याचकेभ्योऽदात्प्रहृष्टो दृष्टिमात्रतः ॥ ४६ ॥
श्रीमत्कुमारपालस्य यो जातः प्रथमोऽङ्गजः । पद्मसिंहोऽभिधानेन पद्माभास्यो जनप्रियः ॥ ४७ ॥
तद्भार्या कृतसत्कार्या साध्वी मेहिणिसंज्ञका । गौरीवेशस्य चंद्रस्य रोहिणीव मनःप्रिया ॥ ४८ ॥
या सती नारिवृन्देऽभात्कीलनिर्मलवारिभिः । गीतादिकलहंसैश्च गंगेव सरितां गणे ॥ ४९ ॥
तयोस्तनूरुहाः सन्ति त्रयः कन्दर्पमूर्तयः । शंखकुन्देन्दुहाराभकीर्तयः पटुरीतयः ॥ ५० ॥
तेषामाद्योऽस्ति संवेशो वेरूनामा गुणाकरः । सतामग्रेसरः स्फारः सर्वलोकमनोहरः ॥ ५१ ॥
मानितः सुरसालेन महलोलाभिधेन यः । पुर्यां सिंहतरंगिण्यां भाण्डागारपदे धृतः ॥ ५२ ॥
ये बन्दिगृहमानीता म्लेच्छैः श्राद्धादिसज्जनाः । तान्विमोच्य स्वद्रव्येण न्यायेनोपार्जितेन वै ॥ ५३ ॥
तेभ्यो दत्वा च सद्भुक्तिं वस्त्राणि परिधाप्य च । स्वयं वितीर्य[4] मार्गाय विससर्ज गृहं प्रति ॥५४॥ युगलम्
भाण्डागारपदे यस्मिन् श्रावकाः सुखमास्थिताः । दानपूजाविधीश्चक्रुर्भक्त्या संविग्नमानसाः ॥ ५५ ॥
दुर्गनगरकोटाख्ये येन सूत्तुंगतोरणम् । कलशध्वजरोचिष्णु कारितं जिनमन्दिरम् ॥ ५६ ॥
सूहोनाम्न्यस्ति तज्जाया लसच्छाया[5] कलालया । दायिनी पात्रदानानां भर्तुर्भक्तिविधायिनी ॥ ५७ ॥
मिष्टं वचिरमाकर्ण्य कोकिला वा हिया पुरात् । निर्गत्य स्वं च निन्दन्ती वनवासमशिश्रियत् ॥ ५८ ॥
यदास्येन जितं चन्द्रं मन्ये संपूर्णमण्डलम् । नोचेत्कथं तमोग्रः[6] स क्षीयते प्रतिवासरम् ॥ ५९ ॥

---

१ तत्त्वमुद्व°. २ रवि. ३ सल्हादो. ४ यतीर्य. ५ ऊच्चकाया. ६ तमोहः.

मन्थरां यद्गतिं वीक्ष्य वराटा[1] श्लोकसंगता । तत्प्राप्त्यै वा तपश्चक्रे दुर्गमे जलसंगमे ॥ ६० ॥
तच्चन्दनौ समुत्पन्नौ रूपयौवनशालिनौ । कुलधूर्धरणे दक्षौ पुरुषौ वृषभाविव ॥ ६१ ॥
आद्यः साधारणः संज्ञा साधारो गुणभूषणः । यः सर्वज्ञपदाम्भोजे जातः षट्चरणोपमः ॥ ६२ ॥
यच्छासनमनुल्लंघ्यं सर्वैर्नागरिकैर्जनैः । सीमेव पक्षिराजस्य हंसपुंस्कोकिलादिभिः ॥ ६३ ॥
लक्ष्मनामोल्लघनामा द्वितीयो विनयान्वितः । प्रसादाच्छान्तिनाथस्य चिरं जीयास्स भूतले ॥ ६४ ॥
संघेशपद्मसिंहस्य द्वितीयोऽस्ति शरीरजः । सीहा श्रुतिधृतिक्षान्तिशान्तिकान्तिगुणालयः ॥ ६५ ॥
पराक्रमेण सिंहाभः कान्त्या चंद्रो धिया गुरुः । गांभीर्येण पयोराशिर्मेरुर्गरिमया स्वया ॥ ६६ ॥
यो नित्यं भवविच्छेदि कुरुते देवपूजनम् । जलाद्यैरष्टभिर्द्रव्यैर्विधिवत्स्नानपूर्वकम् ॥ ६७ ॥
महतीं स्वसमां लघ्वीं परनारीं निरीक्ष्य यः । मन्यते जननी-भगिनी-पुत्रीतुल्याः स्वचेतसि ॥ ६८ ॥
गुणश्रीरिति तं भेजे गङ्गेव लवणार्णवम् । उच्चैः कुलाद्रिजा[2] शुद्धद्विजराजिविराजिता ॥ ६९ ॥
किन्नर्या इव सत्कण्ठ्या गीतानि जिनमन्दिरे । जहुरक्षोभ्यचित्तानां मुनीनामपि मानसम् ॥ ७० ॥
बर्हैः पीतां सुहारैश्च श्वेतां कृष्णां शिरोरुहैः । हरितां करताम्बूलै रक्तां कुङ्कुममण्डनैः ॥ ७१ ॥
यकां सौभाग्ययुक्ताङ्गीं विलोक्य सुजना जनाः । नित्यमानन्दयामासुरिति मङ्गलदर्शनम् ॥ ७२ ॥
तृतीयनन्दनो जातः पद्मसिंहस्य पापहृत् । संघेशचाहडाभिख्यो दान्तात्मा च प्रशान्तधीः ॥ ७३ ॥
कुदेव-गुरु-तत्त्वेषु सदेव-गुरु-तत्त्वधीः । येनात्याजीति मिथ्यात्वं भवदुःखविवर्धनम् ॥ ७४ ॥
देवेऽष्टादशदोषघ्ने[3] गुरौ ग्रन्थविवर्जिते । तत्त्वे सर्वज्ञनिर्दिष्टे जीवादौ रुचिलक्षणम् ॥ ७५ ॥
सम्यक्त्वमिति यच्चित्ते स्थिरीभूतं सुनिर्मलम् । प्राणिनां भ्रमतां शश्वद्दुर्लभं यद्भवार्णवे ॥७६॥ युगलम् ।
अष्टौ मूलगुणान् पाति मधुमांसादिवर्जनात् । अतिचारगताञ्शाकाद्यनन्तकायमुञ्झति ॥७७॥ प्रथमप्रतिमा ।
हिंसायाश्च मृषावादान्परस्वग्रहणात्तथा । परस्त्रीरमणाद्यायः संगाद्विरमणं भजन् ॥ ७८ ॥
इति पञ्चविधं यश्चाणुव्रतं मलवर्जनम् । धत्ते त्रिकरणैः शुद्धः स्वर्लोकसुखकारणम् ॥ ७९ ॥ युग्मम् ।
यश्चाणुव्रतरक्षार्थं गुणव्रतत्रयं स्थिरम् । शिक्षाव्रतचतुष्कं च पायाद्दोषोज्झितं हितम् ॥८०॥ द्वितीयप्रतिमा ।
त्रिकालं क्रियते येन सामायिकमनुत्तमम् । सप्तशुद्धिभिराली[4]ढं द्वात्रिंशद्दोषवर्जितम् ॥८१॥ तृतीयप्रतिमा ।
चतुःपर्वाणि कुर्याद्यो मासं मासं प्रतीच्छया । क्षमणं करणग्रामनिग्रहं[5] प्राणिरक्षणम् ॥८२॥ चतुर्थी प्रतिमा ।
कालाग्नियंत्रपक्वं यत्फलशालिकणादिकम् । जलं च प्रासुकं यश्च भुङ्क्ते पिबति नित्यशः ॥८३॥ पंचमी प्रतिमा ।
एकपत्नीव्रतं येन गृहीतं गुरुसंनिधौ । तत्रापि न दिवा भक्ती रात्रावेव निषेवणम् ॥ ८४ ॥ षष्ठी प्रतिमा ।
इति गार्हस्थ्ययोग्यानि षट्स्थानानि दधाति यः । स्थानानां शेषपद्मानां भावानां भावयन्मलम् ॥ ८५ ॥
देवानर्चति नित्यं यो जलाद्यैर्वसुभिः शुभैः । गुरूनमति भक्त्या च रत्नत्रयपवित्रितान् ॥ ८६ ॥
शृणोत्यध्येति सच्छास्त्रं द्रव्यशुद्ध्यादिपूर्वकम् । इन्द्रियाणि निगृह्णाति जन्तून् रक्षति यत्नवान् ॥ ८७ ॥
स्वशक्त्या तपति प्रायः प्रायश्चित्तादि यस्तपः । दानं चतुर्विधं भक्त्या सत्पात्रेभ्यः प्रयच्छति ॥ ८८ ॥
स्थाने श्रीक्षत्रुणाल्लि येनाकारि जिनालयः । निजवित्तेन यस्तम्भकलशध्वजराजितः ॥ ८९ ॥
नित्यं जिनालये श्राद्धास्त्रिकालं देवतार्चनम् । कुर्वन्ति सोऽयं भक्त्या विधिवत्स्नानपूर्वकम् ॥ ९० ॥
चैत्रे भाद्रपदे मासे माघेऽष्टाह्निकपर्वणि । अभिषेकाश्च जायन्ते यत्र मण्डलपूर्वकम् ॥ ९१ ॥
गायन्ति यत्र सज्जार्यो माङ्गल्यानि जिनेशिनाम् । वादयन्ति च वाद्यानि नृत्यन्ति पुरुषोत्तमाः ॥ ९२ ॥

---

१ वराटाख्यो. २ ल (?) नामालङ्कृता. ३ भगी. ४ कुलादिजाशुद्धि. ५ दोषघ्नि. ६ °निग्रह.

सच्छायं पात्रसंयुक्तं सुमनोभिः समञ्चितम् । फलदायकमुच्चैःस्थं नानाश्रमणसेवितम् ॥ ९३ ॥
यमुद्दिश्य समागत्य चतुर्दिग्भ्यो मुनीश्वराः । विश्राम्यन्ति च वन्दित्वा महाद्रुममिवाध्वगाः ॥९४॥ युगलम् ।
पूर्वजन्मजपापौघराशिं संदग्धुमिच्छुकैः । भव्यैरक्षिप्तकर्पूरकृष्णागुरुजधूपजम् ॥ ९५ ॥
मंण्डलीभूतमालोक्य धूमं खे मेघशंकिनः । अकाण्डे ताण्डवाटोपं यत्र तन्वन्ति बर्हिणः ॥९६॥ युग्मम् ।
येन चारुभटाख्येन पण्डितानां धृतेन वै । अन्वर्थेन हि पापारिर्निर्जितोऽत्र सुभासिना ॥ ९७ ॥

विलोक्य संसारशरीरभोग्यं विनश्वरं दैर्भपुटस्थिताम्बुवत् ।
परोपकारे जगतीह सारे धृता मतिर्येन सदा विशुद्धा ॥ ९८ ॥

यत्कीर्त्या हरहारचन्द्रकिरणप्रोत्तुङ्गदुग्धार्णव-रङ्गद्भङ्गतरङ्गसंनिभभया श्वेतीकृते विष्टपे ।
श्रीवैरिञ्चिजनैर्विलोक्य वदनं स्वादर्शपट्टे सिते, भ्रष्टं वा विकृतिं विधुय रुरुदे पत्युर्वियोगाभयात् ॥९९॥
पद्मावती जनी तस्य पद्माख्या पद्मसंनिभा । पद्मावतीव नागाधिपतेः संभोगदायिनी ॥ १०० ॥
लावण्यवाहिनीकाया यस्या रूपं विलोक्य ते । युवानः स्मरबाणैर्धर्विध्यन्ते शतजर्जरम् ॥ १०१ ॥
सीता मन्दोदरी गङ्गा द्रौपदी चन्दना यथा । जिग्ये शीलेन सत्येन कलौ स्व.सौख्यदायिना ॥ १०२ ॥
प्रातः पवित्रभूताङ्गी समर्च्यार्हंतमीश्वरम् । वन्दित्वा सुगुरूल्लासं श्रुत्वागत्य स्वमन्दिरम् ॥ १०३ ॥
भोजनावसरे साध्वी या श्रद्धादिगुणान्विता । भुङ्क्ते त्रितीयं पात्रेभ्यस्ततो भोजयते पतिम् ॥१०४॥ युग्मम् ।
एषां मध्ये स्ववित्तेन न्यायेनोपार्जितेन वै । संघेशचाहडाख्येन विनयादिगुणाश्रिता ॥ १०५ ॥
विज्ञापयित्वा मेधाविनामानं पण्डितं वरम् । सिद्धान्तरत्ननूतनान्तःकरणं शरणं धियाम् ॥ १०६ ॥
लेखयित्वा हिसाराख्यनगराज्जगराजितात् । पुर्यां सिंहतरङ्गिण्यामानाय्य स्वभ्यमश्रियाम् ॥ १०७ ॥
प्रावर्त्तयैतत्सिद्धान्तं हि भव्यानां पठनाय च । केवलज्ञानसंभूत्यै स्वज्ञानावृतिहानये ॥१०८॥ चतुष्कलम् ।
पश्चान्मेधाविसंज्ञाय पण्डिताय सदात्मने । प्रदत्तं शास्त्रमेतद्धि यत्परंपरयागतम् ॥ १०९ ॥

योऽष्टाविंशतिमूलसद्गुणयुतो धत्ते गुणानुत्तरान्, खण्डेलान्वयमण्डनेन्दुवदनश्रीपद्मसिंहाङ्गजः ।
सीहाचाहडसत्सहोदरलसद्धेरूकपुत्रान्वितः, सोऽयं श्रीयशकीर्तिरत्र भवते दद्यात्सुखं मङ्गलम् ॥११०॥
आशीर्वादः ।

तदा तैर्जिनबिम्बानामभिषेकपुरस्सरा । कारिता चार्चा महाभक्त्या यथायुक्तिकृतोत्सवम् ॥ १११ ॥
भृङ्गारकलशादीनि जिनावासेषु पञ्चसु । क्षिप्तानि पञ्च पञ्चैव चैत्योपकरणानि च ॥ ११२ ॥
चतुर्विधाय संघाय सदाहारश्चतुर्विधः । प्रादात्यौषधदानं च वस्त्रोपकरणानि च ॥ ११३ ॥
मित्र-याचक-हीनेभ्यः प्रीति-तुष्टि-कृपादि च । दानं प्रदत्तमित्यादि धनव्ययो व्यधायि तैः ॥ ११४ ॥
दृश्यं सप्तक्षेत्र्यां वपते यो दानमात्मनो भक्त्या । लभते तदनन्तगुणं परत्र सोऽत्रापि पूज्यः स्यात् ॥११५॥

यो दत्ते ज्ञानदानं भवति हि स नरो निर्जराणां प्रपूज्यो
भुक्त्वा देवाङ्गनाभिर्विषयसुखमनुप्राप्य मानुष्यजन्म ।
भुक्त्वा राज्यस्य सौख्यं भवतनुजसुखान्निस्पृहीकृत्य चित्तं
लात्वा दीक्षां च बुध्वा श्रुतमपि सकलं ज्ञानमन्त्यं लभेत ॥ ११६ ॥

ज्ञानदानान्नरोऽज्ञानी सुखी स्यान्नोजनादिह । निर्भयोऽभयतो जीवो नीरुगौषधदानतः ॥ ११७ ॥

धर्मतः सकलमङ्गलावली धर्मतो भवति मुण्डकेवली ।
धर्मतो जिनसुचक्रभृद्बली नाथ तद्रिपुमुखो नरो बली ॥ ११८ ॥

---

१ दर्भपुरस्थिता. २ आदर्श. ३ पद्मारव्य. ४ प्रतिवसोत्सवं. ५ भवतनुजसु°.

ज्ञात्वेति कुर्वन्तु[1] जनाः सुधर्मं सदैहिकामुष्मिकसौख्यकामाः ।
देवार्चनादानतपोव्रतादैर्धैर्य न लभ्यं कृपिमन्तरेण ॥ ११९ ॥
शास्त्रं शस्त्रं पापवैरिक्षयेऽदः शास्त्रं नेत्रं स्वन्तरार्थप्रदर्शी ।
शास्त्रं पात्रं सर्वसद्गुणाणं शास्त्रं तस्माद्यत्नतो रक्षणीयम् ॥ १२० ॥
श्रुत्वा शास्त्रं पापशत्रुं हिनास्ति श्रुत्वा शास्त्रं पुण्यमित्रं भिनोति ।
श्रुत्वा शास्त्रं सद्विवेकं दधाति तस्माद्भव्यो यत्नतस्तद्धि पाति ॥ १२१ ॥
यावत्तिष्ठति भूतले सुरनदी रत्नाकरो भूधरः कैलासः किल चक्रिकारितजगद्वन्द्यश्च चैत्यालयः ।
यावद्व्योम्नि शशाङ्कवासरमणी प्रस्फेटयन्तौ तमस्तावत्तिष्ठतु शास्त्रमेतदमलं संसेव्यमानं बुधैः ॥ १२२ ॥
सूरिश्रीजिनचन्द्राङ्घ्रिस्मरणाधीनचेतसा । प्रशस्तिर्विहिता यासौ सीहाख्येन[2] सुधीमता ॥ १२३ ॥
यत्रत्र काव्यवर्यं स्यादर्थे पाठे मयाऽऽदृतम् । तदाशोध्य बुधैर्वाच्यमनन्तः शब्दवारिधिः ॥ १२४ ॥

इति सूरिश्रीजिनचन्द्रान्तेवासिना पण्डितमेधाविना विरचिता प्रशस्ता प्रशस्तिः समाप्ता ।

संवत् १८०३ का मिती आसोजवदि १ लिखितं मया सागरश्री सवाईजयपुरनगरे ॥ श्रीरस्तु ॥ कल्याण ।

पोथी[3] त्रैलोक्यप्रज्ञप्तीकी भट्टारकजीने साधन करावीनै दीनी दूसरी प्रतिमा ती
श्रावण सुदी १३ संवत् १८५९ ।

देहली प्रतिकी लिपिकार-प्रशस्ति ।

स्वस्ति श्री सं. १५१७ वर्षे मार्गे सुदि ५ भौमवारे श्री मूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे कुंदकुंदाचार्यान्वये भट्टारक श्रीपद्मनंदिदेवास्तत्पट्टे भट्टारक श्रीशुभचन्द्रदेवाः तत्पट्टालंकार भ. श्री जिनचन्द्रदेवाः । मु. श्री मदनकीर्ति तच्छिष्य ब्रह्मनरस्यंघकस्य खंडेलवालान्वये पाटणीगोत्रे सं. वी भू भार्या बहुश्री तत्पुत्र सा. लिहुणा भार्या लिहुणश्री सुपुत्रःदेवगुरुचरणकमलसंसेवनमधुकराः द्वादशव्रततप्रति-पालनतत्पराः सा. महिराजभ्रातृभ्यां राजसुपुत्रजालप । महिराज भार्या महणश्रीभ्यां राजभार्याभ्यां श्री सहिते स्वः एतद्ग्रंथं त्रैलोक्यप्रज्ञप्तिसिद्धान्तं लिखाप्य ब्र. नरस्यंघकृते कर्मक्षयनिमित्तेः प्रदत्तं ॥ छ ॥

यावज्जिनेन्द्रधर्मोऽयं लोलोकेऽस्मिन् प्रवर्तते ।
तावत्सुरनदीवाहास्तावन्नन्दतु पुस्तकः ॥ १ ॥
इदं पुस्तकं चिरं नंद्यात् ॥ छ ॥ शुभमस्तु ।
लिखितं पं. नरसिंहेन ॥ छ ॥
श्री संघणपुरे लिखितमेतत्पुस्तकम् ॥ छ ॥

---

१ कुर्वन्तितु. २ सीहाख्येन. ३ पोथी-आदि आगेका पाठ भिन्न हस्ताक्षरोंसे बादमें लिखा गया मालूम होता है ।

ॐ

अदिवसहस्सइरिय-विरइदा

तिलोयपण्णत्ती

पंचमो महाहियारो

मङ्गलाचरण

भव्व-कुमुदेक्क-चंदं, वंदित्तु-जिणवरं[1] हि पउमिदूरणं ।
भासेमि तिरिय-लोयं, सक्कमेत्तं अप्प-सत्तीए ॥१॥

अर्थ—भव्यजनरूप कुमुदोंको विकसित करने के लिए अद्वितीय चन्द्रस्वरूप पद्मप्रभ जिनेन्द्रको नमन करके मैं अपनी शक्तिके अनुसार तिर्यग्लोकका यत्किंचित् (लेशमात्र) निरूपण करता हूँ ॥ १ ॥

तिर्यग्लोक-प्रज्ञप्तिमें १६ अन्तराधिकारोंका निर्देश

थावरलोय-पमाणं, मज्झम्मि य तस्स तिरिय-तस-लोगो[2] ।
दीवोवहीण संखा, विण्णासो णाम - संजुत्तं ॥२॥
णाणाविहु - वेत्तफलं, तिरियाणं भेद - संख - आऊ य ।
आउग - बंधण - भावं, लोगो सुह - दुक्ख - सुख - पहुदी ॥३॥
सम्मत्त - गहण - हेदू, गविरायदि - लोय - बहुगमोयाहं ।
सोलसया अहियारा, पण्णत्तीए य तिरियाणं ॥४॥

अर्थ—स्थावर लोकका प्रमाण[1], उसके मध्यमें तिर्यक् त्रस-लोक[2], द्वीप-समुद्रोंकी संख्या[3], नाम सहित विन्यास[4], नानाप्रकारका क्षेत्रफल[5], तिर्यंचोंके भेद[6], संख्या[7], आयु[8], आयुबन्धके

---

१. द. ब. क. जिणवरे हि । २. द. ब. क. लोए ।

निमित्तभूत परिणाम[९], योनि[१०], सुख-दुःख[११], गुणस्थान आदिक[१२], सम्यक्त्व-ग्रहणके कारण[१३], गति-आगति[१४], अल्पबहुत्व[१५] और अवगाहना[१६], इसप्रकार तिर्यंचोंकी प्ररूपणामें ये सोलह अधिकार हैं ॥ ३-४ ॥

स्थावर-लोक का लक्षण एवं प्रमाण

जा जीव-पोग्गलाणं, [१]धम्माधम्म-प्पबंध-आयासे ।
होंति हु गदागदाणि, ताव हवे थावरो लोओ ॥५॥

=।

थावरलोयं गदं ॥१॥

अर्थ—धर्म एवं अधर्म द्रव्यसे सम्बन्धित जितने आकाशमें जीव और पुद्गलोंका आवागमन रहता है, उतना (= अर्थात् ३४३ घन राजू प्रमाण तीन लोक) स्थावर लोक है ॥ ५ ॥

स्थावर-लोकका कथन समाप्त हुआ ॥ १ ॥

तिर्यग्लोकका प्रमाण

मंदरगिरि-मूलादो, इगि-लक्खं जोयणाणि बहलम्मि ।
रज्जूअ पदर-खेत्ते, वेट्ठेदि[२] हु तिरिय-तस-लोओ ॥६॥

= । १००००० ।

तस-लोय-परूवणा गदा ॥२॥

अर्थ—मन्दरपर्वतके मूलसे एक लाख (१०००००) योजन बाहल्य (ऊंचाई) रूप राजू-प्रतर अर्थात् एक राजू लम्बे-चौड़े क्षेत्र में तिर्यक्-त्रसलोक स्थित है ॥ ६ ॥

॥ त्रस-लोक प्ररूपणा समाप्त हुई ॥ २ ॥

द्वीपों एवं सागरोंकी संख्या

पणुवीस-कोडकोडी-पमाण-उद्धार-पल्ल-रोम-सम्मा ।
दीओवहीण संखा, तस्सद्धं दीव-अवणिही कमसो ॥७॥

संखा समत्ता ॥३॥

---

१. ब. धम्मबहुदुक्खगुण पहुदी । २. द. ब. विट्ठेदि हु ।

अर्थ—पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धार-पल्योंके रोमोंके प्रमाण द्वीप एवं समुद्र दोनों की संख्या है। इसकी आधी संख्या क्रमशः द्वीपोंकी और आधी समुद्रोंकी संख्या है ॥ ७ ॥

नोट—किंतु देखें इसी अधिकार की २७ वीं गाथा।

संख्या का कथन समाप्त हुआ ॥ ३ ॥

द्वीप-समुद्रोंकी अवस्थिति

सव्वे दीव-समुद्दा, संखादीदा हवंति समवट्टा।
पढमो दीओ उवही, चरिमो मज्झम्मि दीवुवही[1] ॥८॥

अर्थ—सब द्वीप-समुद्र असंख्यात हैं और समवृत्त (गोल) हैं। इनमें सबसे पहले द्वीप, सबसे अन्त में समुद्र और मध्य में द्वीप-समुद्र हैं ॥ ८ ॥

चित्तावणि बहु-मज्झे, रज्जू-परिमाण-दीह-विक्खम्भे[2]।
वेट्ठंति दीव-उवही, एक्केक्कं वेदिऊण हु परिदो[3] ॥९॥

अर्थ—चित्रा पृथिवीके (ऊपर) बहु मध्यभागमें एक राजू लम्बे-चौड़े क्षेत्रके भीतर एक-एकको चारों ओरसे घेरे हुए द्वीप एवं समुद्र स्थित हैं ॥ ९ ॥

सव्वे वि बाहिणीसा, चित्तखिदिं खंडिदूण वेट्ठंति।
वज्ज-खिदीए उवरिं, दीवा वि हु उवरि चित्ताए ॥१०॥

अर्थ—सब समुद्र चित्रा पृथिवीको खण्डितकर वज्रापृथिवीके ऊपर और सब द्वीप चित्रा पृथिवीके ऊपर स्थित हैं ॥१०॥

विशेषार्थ—चित्रापृथिवीकी मोटाई १००० योजन है और सब समुद्र १००० योजन गहराई वाले हैं। अर्थात् समुद्रोंका तल भाग चित्राको भेदकर वज्रापृथिवीके ऊपर स्थित है।

आदि-अन्तके द्वीप-समुद्रोंके नाम

आदो जंबूदीवो, हवेदि दीवाण तत्थ सयलाणं।
अंते सयंभुरमणो, णामेणं विस्सुदो दीवो ॥११॥

अर्थ—उन सब द्वीपोंके आदिमें जम्बूद्वीप और अन्तमें स्वयम्भूरमण नामसे प्रसिद्ध द्वीप है ॥ ११ ॥

---

१. ब. क. दीवउवही। २. द. ब. क. ब. विक्खंभो। ३. द. ब. क. ब. परिदो।

आदी लवण-समुद्दो[1], सव्वाण हवेदि सव्वअब्भंतरो ।
अंते सयंभुरमणो, णामेणं विस्सुदो उवहो ॥१२॥

अर्थ—सब समुद्रोंमें आदि लवणसमुद्र और अन्तिम स्वयम्भूरमण नामसे प्रसिद्ध समुद्र है ॥ १२ ॥

अभ्यन्तरभाग (प्रारम्भ) में स्थित ३२ द्वीप-समुद्रों के नाम

पढमो जंबूदीवो, तप्परदो होदि लवण-जलरासी ।
तत्तो धादइसंडो, दीवो उवहो य कालोदो ॥१३॥

पोक्खरवरो त्ति दीवो, पोक्खरवर[2]-वारिही तदो होदि ।
वारुणिवरक्ख-दीवो, वारुणिवर-खीरवो[3] त्ति तप्परदो ॥१४॥

तत्तो खीरवरक्खो, खीरवरो होदि खीररासी य ।
पच्छा घदवर-दीवो, घदवर-जलही य परो तस्स ॥१५॥

खोदवरक्खो दीवो, खोदवरो णाम वारिही होदि ।
णंदीसर-वर दीवो, णंदीसर - खीररासी य ॥१६॥

अरुणवर-णाम-दीवो, अरुणवरो णाम वारिणीवाहो ।
अरुणब्भासो दीवो, अरुणब्भासो पयोरासी ॥१७॥

कुंडलवरो त्ति दीवो, कुंडलवर-णाम-रयणरासी य ।
संखवरक्खो दीवो, संखवरो होदि मयरहरो ॥१८॥

रुचगवर-णाम-दीवो, रुचगवरक्खो तरंगिणी-रमणो[4] ।
भुजगवर-णाम-दीवो, भुजगवरो अब्भओ होदि ॥१९॥

कुसवर-णामो दीवो, कुसवर-णामो य सिन्धुगा-वाहो ।
कुंचवर-णाम-दीवो, कुंचवरो-णाम-आयरा-कंतो ॥२०॥

अब्भंतर-णामाओ, एदे बत्तीसे-दीव-वारिणिहो ।
बाहिरओ एक्कमं, साहेमि इमाणि णामाणि ॥२१॥

---

१. द. ब. क. ब. समुद्दं । २. द. ब. क. ब. पोक्खरवरा । ३. द. ब. ब. ब. दीवि ।
४. द. ब. रमणओ ।

अर्थ—प्रथम जम्बूद्वीप, उसके परे (आगे) लवणसमुद्र फिर धातकीखण्डद्वीप और उसके पश्चात् कालोदसमुद्र है। तत्पश्चात् पुष्करवर द्वीप एवं पुष्करवर वारिधि और फिर वारुणीवरद्वीप तथा वारुणीवरसमुद्र है। उसके पश्चात् क्रमशः क्षीरवरद्वीप, क्षीरवरसमुद्र और तत्पश्चात् घृतवरद्वीप और घृतवर समुद्र है। पुनः क्षौद्रवरद्वीप, क्षौद्रवर समुद्र और तत्पश्चात् नन्दीश्वरद्वीप तथा नन्दीश्वर समुद्र है। इसके पश्चात् अरुणवरद्वीप, अरुणवरसमुद्र, अरुणाभासद्वीप और अरुणाभाससमुद्र है। पश्चात् कुण्डलवरद्वीप, कुण्डलवरसमुद्र, शंखवरद्वीप और शंखवरसमुद्र है। पुनः रुचकवर नामक द्वीप, रुचकवरसमुद्र, भुजगवर नामक द्वीप और भुजगवरसमुद्र है। तत्पश्चात् कुशवर नामक द्वीप, कुशवरसमुद्र, क्रौंचवर नामक द्वीप और क्रौंचवर समुद्र है। ये बत्तीस द्वीप-समुद्र अभ्यन्तर भाग से हैं। अब बाह्यभागमें द्वीप-समुद्रोंके नाम कहता हूँ जो इस प्रकार हैं—॥ १३ – २१ ॥

बाह्यभागमें स्थित द्वीप-समुद्रोंके नाम

उवही सयंभुरमणो, अंते दीवो सयंभुरमणो त्ति ।
आइल्लो णायव्वो, अहिवइ - उवहि - दीवा य ॥२२॥

देववरोवहि - दीवा, जक्खवरक्खो समुद्द-दीवा य ।
भुवगवरण्णव - दीवा, समुद्द - दीवा त्ति णागवरा ॥२३॥

वेडुरिय-अवहि-दीवा, वज्जवरा बाहिणीरमण-दीवा ।
कंचण-अवधिहि-दीवा, रूप्पवरा सत्तिसणिहि - दीवा ॥२४॥

हिंगुल-पयोहि-दीवा, अंजणवर-णिम्मलहिवइ[1]-दीवा ।
सामंभोणिहि - दीवा, सिंदूर - समुद्द - दीवा य ॥२५॥

हरिवाल-सिंधु-दीवा, मणिसिल-खल्लोलिणीरमण-दीवा ।
एस समुद्दा - दीवा, बाहिरदो होंति बत्तीसं ॥२६॥

अर्थ—अन्तसे प्रारम्भ करने पर स्वयम्भूरमण समुद्र पश्चात् स्वयम्भूरमण द्वीप आदिमें है ऐसा जानना चाहिये। इसके पश्चात् अहीन्द्रवर समुद्र, अहीन्द्रवर द्वीप, देववर समुद्र, देववर द्वीप, यक्षवर समुद्र, यक्षवर द्वीप, भूतवर समुद्र, भूतवरद्वीप, नागवर समुद्र, नागवर द्वीप, वैडूर्यसमुद्र, वैडूर्यद्वीप, वज्रवरसमुद्र, वज्रवरद्वीप, कांचनसमुद्र, कांचनद्वीप,

---

१. ब. क. णिम्मलवहिद, ज. ठ. णिहिणवइद।

रूप्यवरसमुद्र, रूप्यवरद्वीप, हिंगुलसमुद्र, हिंगुलद्वीप, अंजनवरसिम्नसाक्षिप, अंजनवर द्वीप, श्यामसमुद्र, श्यामद्वीप, सिंदूरसमुद्र, सिंदूरद्वीप, हरितालसमुद्र, हरितालद्वीप तथा मनःशिलसमुद्र और मनःशिलद्वीप, ये बत्तीस समुद्र और द्वीप बाह्यभागमें अवस्थित हैं ॥ २२-२६ ॥

समस्त द्वीप-समुद्रोंका प्रमाण

छउसट्ठी-परिवज्जिय-अड्ढाइज्जंबु-रासि-रोम-समा ।
सेसंभोधिहि-दीवा, सुह-णामा एक्क-णाम बहुवण्णं ॥२७॥

अर्थ—चौंसठ कम अढ़ाई उद्धार-सागरोंके रोमों प्रमाण अवशिष्ट शुभ-नाम-धारक द्वीप-समुद्र हैं। इनमेंसे बहुतोंका एक ही नाम है ॥ २७ ॥

विशेषार्थ—त्रिलोकसार गाथा ३५९ और उसकी टीकामें अर्ध द्वीपसागरों की संख्या इस प्रकार दर्शाई गयी है—

जघन्य श्रेणीके अर्धच्छेद = $\left(\frac{\text{प० जे०}}{\text{असं०}} \times \text{साधिक प० जे}^2 \times 3\right)$

जघन्य श्रेणीके इन अर्धच्छेदोंमेंसे ३ अर्धच्छेद घटा देनेपर राजूके अर्धच्छेद प्राप्त होते हैं। यथा—

राजूके अर्धच्छेद = $\left[\left(\frac{\text{प० जे०}}{\text{असं०}} \times \text{साधिक प० जे}^2 \times 3\right) - 3\right]$

राजूके इन अर्धच्छेदोंमेंसे जम्बूद्वीपके साधिक प० जे^{2} कम कर देनेपर $\left[\left(\frac{\text{प० जे०}}{\text{असं०}} \times \text{प० जे}^2 \times 3 - 3\right) - \text{साधिक प० जे}^2\right]$ जो अवशेष रहे उतने प्रमाण ही द्वीप-समुद्र हैं। इनमेंसे आदि-अन्तके ३२ द्वीपों और ३२ समुद्रों (६४) के नाम कह दिये गये हैं। शेष द्वीप-समुद्र भी शुभ नाम वाले हैं और इनमें बहुतसे द्वीप-समुद्र (एक) समान नाम वाले ही हैं, क्योंकि शब्द संख्यात हैं और द्वीप-समुद्र असंख्यात हैं।

समुद्रोंके नामोंका निर्देश

जंबूदीवे भवचो, उवही कालो त्ति धादईसंडे ।
अवसेसा पारिच्छी, वत्तव्वा दीव-सम-णामा ॥२८॥

अर्थ—जम्बूद्वीपमें लवणोदधि और धातकीखण्डमें कालोद नामक समुद्र हैं। शेष समुद्रों के नाम द्वीपोंके नामोंके सदृश ही कहने चाहिए ।। २८ ।।

समुद्रस्थित जलके स्वादोंका निर्देश

पत्तेयरसा जलही, चत्तारो होंति तिण्णि उदय-रसा ।
सेसं[1] खोदक्खु-रसा, तदिय-समुद्दम्मिमधु-सलिलं ।।२९।।

अर्थ—चार समुद्र प्रत्येक रस (अर्थात् अपने-अपने नामके अनुसार रसवाले), तीन समुद्र उदक (जलके स्वाभाविक स्वाद सदृश) रस और शेष समुद्र ईख रस सदृश हैं। तीसरे समुद्रमें मधु (के स्वाद) सदृश जल है ।। २९ ।।

पत्तेयक-रसा वारुणि-लवणद्धि-घदवरो य खीरवरो ।
उदक-रसा कालोदो, पोक्खरणामो सयंभुरमणो य ।।३०।।

अर्थ—वारुणीवर, लवणाब्धि, घृतवर और क्षीरवर, ये चार समुद्र प्रत्येक रस (अपने-अपने नामानुसार रस) वाले तथा कालोद, पुष्करवर और स्वयम्भूरमण, ये तीन समुद्र उदक रस (जल रसके स्वाभाविक स्वाद) वाले हैं ।। ३० ।।

समुद्रों में जलचर जीवों के सद्भाव और अभाव का दिग्दर्शन

लवणोदे कालोदे, जीवा अंतिम-सयंभुरमणम्मि ।
कम्म-मही-संबद्धे, जलयरया होंति ण हु सेसे ।।३१।।

अर्थ—कर्मभूमिसे सम्बद्ध लवणोद, कालोद और अन्तिम स्वयम्भूरमण समुद्रमें ही जलचर जीव हैं। शेष समुद्रोंमें नहीं हैं ।। ३१ ।।

द्वीप–समुद्रोंका विस्तार

जंबू जोयण-लक्खं, पमाण-वासा दु दुगुण-दुगुणाणि ।
विक्खंभ - पमाणाणि, लवणादि - सयंभुरमणंतं ।।३२।।

१००००० । २००००० । ४००००० । ८००००० । १६००००० । ३२००००० ।

---

१. द. सेसदिम, ब, सेसद्दी ।

अर्थ—जम्बूद्वीपका विस्तार एक लाख योजन प्रमाण है। इसके आगे लवणसमुद्र से लेकर स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त द्वीप-समुद्रोंके विस्तार प्रमाण क्रमशः दुगुने-दुगुने हैं ॥३२॥

विशेषार्थ—प्रत्येक द्वीप-समुद्रका विस्तार इसप्रकार है—

क्र०	नाम	विस्तार	क्र०	नाम	विस्तार
१.	जम्बूद्वीप	१ लाख योजन	७.	वारुणीवर द्वीप	६४ लाख योजन
२.	लवणसमुद्र	२ लाख योजन	८.	वारुणीवर समुद्र	१२८ लाख योजन
३.	धातकी खण्ड	४ लाख योजन	९.	क्षीरवर द्वीप	२५६ लाख योजन
४.	कालोदधि	८ लाख योजन	१०.	क्षीरवर समुद्र	५१२ लाख योजन
५.	पुष्करवरद्वीप	१६ लाख योजन	११.	घृतवर द्वीप	१०२४ लाख योजन
६.	पुष्करवर समुद्र	३२ लाख योजन	१२.	घृतवर समुद्र	२०४८ लाख योजन

एवं घृतवरसायर-परियंतं दट्ठव्वं । तस्सोवरिमखेत्तक्खवर दीवस्स वित्थारो ॥ $\frac{३२}{३२}$ धण जोयणाणि $\frac{३२}{३२}$ ॥ खक्खवर - समुद्द - वित्थारो ॥ $\frac{६४}{६४}$ धण जोयणाणि $\frac{३२}{३२}$ ॥ देवदर - दीव ॥ $\frac{१२८}{१२८}$ धण $\frac{३२}{३२}$ ॥ देववर समुद्द ॥ $\frac{२५६}{२५६}$ धण $\frac{३२}{३२}$ ॥ अहिंदवरदीव ॥ $\frac{५१२}{५१२}$ धण ९३७५ ॥ अहिंदवरसमुद्द $\frac{१०२४}{१०२४}$ धण १८७५० ॥ सयंभुवरदीव $\frac{२०४८}{२०४८}$ धण ३७५०० ॥ सयंभूरमणसमुद्द $\frac{४०९६}{४०९६}$ धण ७५००० ।

अर्थ—इसप्रकार घृतवर-सागर पर्यन्त ले जाना चाहिए। उसके ऊपर—

यक्षवर द्वीपका विस्तार [जगच्छ्रेणी ÷ ३५८४ = $\frac{१}{३५८४}$ राजू] + $\frac{३२}{३२}$ यो० ।
यक्षवर समुद्रका विस्तार [ज० श्रे० ÷ १७९२ = $\frac{१}{१७९२}$ राजू] + $\frac{६४}{६४}$ यो० ।
देववर द्वीप का विस्तार [ज० श्रे० ÷ ८९६ = $\frac{१}{८९६}$ राजू] + $\frac{१२८}{१२८}$ यो० ।
देववर समुद्र का विस्तार [ज० श्रे० ÷ ४४८ = $\frac{१}{४४८}$ राजू] + $\frac{२५६}{२५६}$ यो० ।
अहीन्द्रवर द्वीप का विस्तार [ज० श्रे० ÷ २२४ = $\frac{१}{२२४}$ राजू] + ९३७५ यो० ।
अहीन्द्रवर समुद्र का विस्तार [ज० श्रे० ÷ ११२ = $\frac{१}{११२}$ राजू] + १८७५० यो० ।
स्वयम्भूरमणद्वीप का विस्तार [ज० श्रे० ÷ ५६ = $\frac{१}{५६}$ राजू] + ३७५०० योजन ।
स्वयम्भूरमणसमुद्र का विस्तार [ज० श्रे० ÷ २८ = $\frac{१}{२८}$ राजू] + ७५००० योजन है ।

विवक्षित द्वीप-समुद्रका वलय-व्यास प्राप्त करनेकी विधि

बाहिर-सूई-मज्झे, लक्ख-तयं मेलिदूण चउ-भजिदे ।
इच्छिय-दीवड्ढोयं, वित्थारो होदि वलयाणं ॥३३॥

अर्थ—विवक्षित द्वीप-समुद्रके बाह्य-सूची-व्यासके प्रमाणमें तीन-लाख जोड़कर चारका भाग देनेपर वलय-व्यासका प्रमाण प्राप्त होता है ॥३३॥

विशेषार्थ—यहाँ कालोदधि समुद्र विवक्षित है। इसका सूची-व्यास २९ लाख योजन है। इसमें तीन लाख जोड़कर ४ का भाग देनेपर कालोदधिके वलय व्यासका प्रमाण (२९००००० + ३०००००) ÷ ४ = ८ लाख योजन प्राप्त होता है।

आदिम, मध्य और बाह्य-सूची प्राप्त करनेकी विधि

लवणादीणं रुंदं, दु-ति-चउ-गुणिदं कमा ति-लक्खूणं ।
आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूईणं होदि परिमाणं ॥३४॥

लव १००००० । ३००००० । ५००००० ॥ आदि ५००००० । ९००००० । १३००००० । कालो १३००००० । २१००००० । २९००००० । एवं देववर-समुद्दत्ति वट्टव्वं । तस्सु-वरिमाहिवर[1]-दोवस्स $\overline{\text{११२}}$ रिण जोयणाणि २८१२५०[2] । मज्झिम $\overline{\text{२२४}}$ । रिण २७१८७५[3] । बाहिर $\overline{\text{२८}}$ । रिण २६२५०० ॥ अहिदेवर-समुद्दं । $\overline{\text{२८}}$ रिण २६२५०० । मज्झिम $\overline{\text{११३}}$ । रिण २४३७५० । बाहिर $\overline{\text{२८}}$ । रिण २२५००० ॥ सयंभूरमणदीव । $\overline{\text{२८}}$ रिण २२५००० । मज्झिम $\overline{\text{११३}}$ । रिण १८७५०० । बाहिर $\overline{\text{१४}}$ रिण १५०००० ॥ सयंभूरमणसमुद्द । $\overline{\text{१४}}$ रिण १५०००० । मज्झिम $\overline{\text{७३}}$ । रिण ७५००० । बाहिर $\overline{\text{०}}$ ॥

अर्थ—लवणसमुद्रादिकके विस्तारको क्रमशः दो, तीन और चारसे गुणाकर प्राप्त लब्ध-राशिमेंसे तीन लाख कम करनेपर क्रमशः आदिम, मध्यम और बाह्य सूचीका प्रमाण प्राप्त होता है ॥३४॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रादिमेंसे विवक्षित जिस द्वीप-समुद्रका अभ्यन्तर सूची-व्यास ज्ञात करना इष्ट हो उसके वलय-व्यासको दो से गुणित कर प्राप्त लब्धराशिमेंसे तीन लाख घटाने पर अभ्यन्तर सूची-व्यासका प्रमाण प्राप्त होता है।

---

१. ब. क. ज. सिस्सुवरिवरिम । २. ब. ४८१२५० । ३. ब. ज. २२१४ २७१८७५ ।

विवक्षित वलय-व्यासके प्रमाणको तीनसे गुणित कर तीन लाख घटाने पर मध्यम सूची-व्यासका प्रमाण प्राप्त होता है।

विवक्षित वलय-व्यासको चारसे गुणितकर तीन लाख घटा देनेपर बाह्य सूची-व्यासका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

लवणसमुद्रका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = (२००००० × २) — ३ लाख = १००००० यो०।

मध्यम सूची-व्यास = (२००००० × ३) — ३ लाख = ३००००० यो०।

बाह्य सूची-व्यास = (२००००० × ४) — ३ लाख = ५००००० यो०।

धातकीखण्डका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = (४००००० × २) — ३ लाख = ५००००० यो०।

मध्यम सूची-व्यास = (४००००० × ३) — ३ लाख = ९००००० यो०।

बाह्य सूची-व्यास = (४००००० × ४) — ३ लाख = १३००००० यो०।

कालोदसमुद्रका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = (८००००० × २) — ३ लाख = १३००००० यो०।

मध्यम सूची-व्यास = (८००००० × ३) — ३ लाख = २१००००० यो०।

बाह्य सूची-व्यास = (८००००० × ४) — ३ लाख = २९००००० यो०।

गच्छ का अर्थ—इसीप्रकार देववर समुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिए। इसके बाद अहीन्द्रवर द्वीपका—

अभ्यन्तर सूची-व्यास = ($\sqrt{१६४}$ + ९३७५) × (२) — ३ लाख = $\sqrt{१६४}$ — २८१२५० यो०।

मध्यम सूची-व्यास = ($\sqrt{१६४}$ + ९३७५) × (३) — ३ लाख = $\sqrt{१६४}$ — २७१८७५ योजन

बाह्य सूची-व्यास = ($\sqrt{१६४}$ + ९३७५) × (४) — ३ लाख = $\sqrt{६४}$ — २६२५०० योजन

अहीन्द्रवर समुद्रका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = ($\sqrt{१६२}$ + १८७५०) × (२) — ३ लाख = $\sqrt{६४}$ — २६२५००।

मध्यम सूची-व्यास = ($\sqrt{१६२}$ + १८७५०) × (३) — ३ लाख = $\sqrt{१६२}$ — २४३७५०।

बाह्य सूची-व्यास = ($\sqrt{१६२}$ + १८७५०) × (४) — ३ लाख = $\sqrt{६४}$ — २२५०००।

स्वयम्भूरमणद्वीपका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = ($\overline{५८}$ + ३७५००) × (२) − २ लाख = $\overline{२८}$ − २२५००० ।

मध्यम सूची-व्यास = ($\overline{५८}$ + ३७५००) × (३) − ३ लाख = $\overline{५२}$ − ६८७५०० ।

बाह्य सूची-व्यास = ($\overline{५८}$ + ३७५००) × (४) − ३ लाख = $\overline{७४}$ − १५००००० ।

स्वयम्भूरमण समुद्रका

अभ्यन्तर सूची-व्यास = ($\overline{२८}$ + ७५००००) × (२) − २ लाख = $\overline{७४}$ − ६५००००० ।

मध्यम सूची-व्यास = ($\overline{२८}$ + ७५००००) × (३) − ३ लाख = $\overline{२२}$ − ७५००००० ।

बाह्य सूची-व्यास = ($\overline{२८}$ + ७५००००) × (४) − ३ लाख = $\overline{७}$ या १ राजू है ।

विवक्षित द्वीप-समुद्रकी परिधिका प्रमाण

प्राप्त करनेकी विधि

जंबू-परिही-जुगलं, इच्छिय-दीवंबु-रासि-सूइ-हदं ।
जंबू-वास-विहत्तं, इच्छिय-दीवद्धि -परिहि त्ति ।।३५।।

अर्थ—जम्बूद्वीपके परिधि-युगल (स्थूल और सूक्ष्म) को अभीष्ट द्वीप एवं समुद्र की (बाह्य) सूचीसे गुणा करके उसमें जम्बूद्वीपके विस्तारका भाग देनेपर इच्छित द्वीप तथा समुद्रकी (स्थूल एवं सूक्ष्म) परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है ।।३५।।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपकी स्थूल-परिधि ३ लाख योजन और सूक्ष्म-परिधि ३१६२२७ योजन, ३ कोस, १२८ धनुष और साधिक १३½ अंगुल है ।

लवणसमुद्र, धातकीखण्ड और कालोद समुद्र विवक्षित समुद्र एवं द्वीपादि हैं ।

$$\text{लवण स० की परिधि} = \frac{\text{जंबू० की परिधि} \times \text{ल० स० का बाह्य सूची व्यास}}{१०००००}$$

$$\text{लवण स० की स्थूल परिधि} = \frac{३ \text{ लाख} \times ५ \text{ लाख}}{१ \text{ लाख}}$$

= १५ लाख योजन स्थूल परिधि ।

$$\text{लवण स० की सूक्ष्म प०} = \frac{(३१६२२७ \text{ यो०, } ३ \text{ कोस, } १२८ \text{ ध०, } १३½ \text{ अंगुल}) \times ५ \text{ लाख}}{१०००००}$$

= १५८११३८ यो० ३ कोस, ६४० धनुष, २ हाथ और १९½ अंगुल लवणसमुद्रकी सूक्ष्म परिधिका प्रमाण है ।

धातकी खण्डकी स्थूल परिधि $= \frac{३ \text{ लाख} \times १३ \text{ लाख}}{१ \text{ लाख}}$

$= ३९$ लाख योजन स्थूल परिधि ।

कालोदधिकी स्थूल परिधि $= \frac{३ \text{ लाख} \times २९ \text{ लाख}}{१ \text{ लाख}}$

$= ८७$ लाख योजन स्थूल परिधि ।

द्वीप-समुद्रादिकोंके जम्बूद्वीप प्रमाण खण्ड प्राप्त करने हेतु करण-सूत्र

बाहिर - सूई - वग्गो, अब्भंतर-सूइ-वग्ग-परिहीणो ।
लक्खस्स वग्गहिम्मि हिदे, इच्छिय-दीवुवहि-खंड-परिमाणं ॥३६॥

२४ । १४४ । ६७२ । एवं सयंभुरमण-परियंतं वड्ढव्वं ।

अर्थ—बाह्य सूची-व्यासके वर्गमेंसे अभ्यन्तर सूची-व्यासका वर्ग घटानेपर जो प्राप्त हो उसमें एक लाख (जम्बूद्वीपके व्यास) के वर्गका भाग देनेपर इच्छित द्वीप-समुद्रोंके खण्डोंका प्रमाण (निकल) आता है ॥३६॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीप बराबर खण्ड $= \frac{\text{बाह्य सूची व्यास}^२ - \text{अभ्य० सूची व्यास}^२}{१०००००^२}$

लवणसमुद्रके जम्बूद्वीप बराबर खण्ड $= \frac{५ \text{ लाख}^२ - १ \text{ लाख}^२}{१ \text{ लाख}^२}$

$= २४$ खण्ड होते हैं ।

धातकी० के जम्बूद्वीप बराबर खण्ड $= \frac{१३ \text{ लाख}^२ - ५ \text{ लाख}^२}{१ \text{ लाख}^२}$

$= \frac{१६९ \text{ ला ला} - २५ \text{ ला ला}}{१ \text{ ला ला}}$

$= १४४$ खण्ड होते हैं ।

कालोद के जम्बूद्वीप बराबर खण्ड $= \frac{२९ \text{ लाख}^२ - १३ \text{ लाख}^२}{१ \text{ लाख}^२}$

$= \frac{८४१ \text{ ला ला} - १६९ \text{ ला ला}}{१ \text{ ला ला}}$

$= ६७२$ खण्ड होते हैं ।

इसप्रकार स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त जानना चाहिए।

जम्बूद्वीपको आदि लेकर नौ द्वीपों और लवणसमुद्र को आदि लेकर नौ समुद्रोंके अधिपति देवोंके नाम निर्देश

अंबू-लवणादीणं, दीवुवहीणं च अहिवई दोण्णि ।
पत्तेक्कं वेंतरया, तांणं णामाणि [1]साहेमि ॥३७॥

अर्थ—जम्बूद्वीप एवं लवणसमुद्रादिकोंमेंसे प्रत्येकके अधिपति जो (दो-दो) व्यन्तरदेव हैं, उनके नाम कहता हूँ ॥ ३७ ॥

आदर-अणादरक्खा, अंबूदीवस्स अहिवई होंति ।
तह य पभासो पियदंसणो य लवणंबुरासिम्मि ॥३८॥

अर्थ—जम्बूद्वीपके अधिपति देव आदर और अनादर हैं तथा लवणसमुद्रके प्रभास और प्रियदर्शन हैं ॥ ३८ ॥

भुंजेवि पिय-णामा, वंसण-णामा य धादईसंडे ।
कालोदयस्स पहुणो, काल-महाकाल-णामा य ॥३९॥

अर्थ—प्रिय और दर्शन नामक दो देव धातकीखण्ड द्वीपका उपभोग करते हैं तथा काल और महाकाल नामक दो देव कालोदक-समुद्रके प्रभु हैं ॥ ३९ ॥

पउमो पुंडरियक्खो, दीवं भुंजंति पोक्खरवरक्खं
वरुण-सुवरुण पहुणो, होंति य माणुसुत्तर-गिरिस्स ॥४०॥

अर्थ—पद्म और पुण्डरीक नामक दो देव पुष्करवरद्वीपको भोगते हैं। वरुण और सुवरुण नामक दो देव मानुषोत्तर पर्वतके प्रभु हैं ॥ ४० ॥

सिरिपह[2]-सिरिधर-णामा, देवा पालंति पोक्खर-समुहं ।
वरुणो वरुण - पहक्खो, भुंजंते वारुणी - दीवं ॥४१॥

अर्थ—श्रीप्रभ और श्रीधर नामक दो देव पुष्कर-समुद्रका तथा वरुण और वरुणप्रभ नामक दो देव वारुणीवर द्वीपका रक्षण करते हैं ॥ ४१ ॥

---

१. द. साहिमि, ब. क. ज. साहिम्मि। २. द. ब. क. ज. सिरिपह।

वारुणिवर-जलहि-पहू, मज्झिम-मज्झिमा देवा ।
पंडुरय[1] - पुप्फवंता, दीवं भुंजंति खीरवरं ॥४२॥

अर्थ—मध्य और मध्यम नामक दो देव वारुणीवर-समुद्रके प्रभु हैं। पाण्डुर और पुष्पदन्त नामक दो देव क्षीरवर-द्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४२ ॥

विमल-पहवखो विमलो, खीरवरंभोणिहस्स अहिवइणो ।
सुप्पह - घयवर - देवा, घयवर - दीवस्स अहिलाहा ॥४३॥

अर्थ :—विमलप्रभ और विमल नामक दो देव क्षीरवर-समुद्रके तथा सुप्रभ और घृतवर नामक दो देव घृतवर द्वीपके अधिपति हैं ॥ ४३ ॥

उत्तर-महप्पहक्खा, देवा रक्खंति घयवरंबुणिहिं ।
कणय-कणयाभ-णामा, दीवं पालंति खोदवरं[2] ॥४४॥

अर्थ—उत्तर और महाप्रभ नामक दो देव घृतवर-समुद्रकी तथा कनक और कनकाभ नामक दो देव क्षौद्रवर-द्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४४ ॥

पुण्णं पुण्ण-पहक्खा, देवा रक्खंति खोदवर-सिंधुं ।
णंदीसरम्मि दीवे, गंध - महागंधया पहुणो ॥४५॥

अर्थ पूर्ण और पूर्णप्रभ नामक दो देव क्षौद्रवर-समुद्रकी रक्षा करते हैं। गंध और महा-गंध नामक दो देव नन्दीश्वर द्वीपके प्रभु हैं ॥ ४५ ॥

णंदीसर-वारिणिहिं, रक्खंते[3] णंदि-णंदिपह-णामा ।
भद्द - सुभद्दा देवा, भुंजंते अरुणवर - दीवं ॥४६॥

अर्थ—नन्दि और नन्दिप्रभ नामक दो देव नन्दीश्वर-समुद्रकी तथा भद्र और सुभद्र नामक दो देव अरुणवर-द्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४६ ॥

अरुणवर-वारिरासिं, रक्खंते अरुण-अरुणपह-णामा ।
अरुणब्भासं दीवं, भुंजंति सुगंध-सव्वगंध-सुरा ॥४७॥

अर्थ—अरुण और अरुणप्रभ नामक (व्यन्तर) देव अरुणवर समुद्रकी तथा सुगन्ध और सर्वगन्ध नामक देव अरुणाभास-द्वीपकी रक्षा करते हैं ॥ ४७ ॥

---

१. ब. ब. क. ज. पंदरय । २. ब. ब. क. ज. खुरवरं । ३. ब. क. रक्खंतं, ब. रक्खंतसि ।

शेष द्वीप-समुद्रोंके अधिपति देवोंका निर्देश

सेसाणं दीवाणं, वारि-णिहीणं[1] च अहिवई देवा ।
जे केइ तेसि णामं, सुवएसो संपहि पणिट्ठो ॥४८॥

अर्थ—शेष द्वीप-समुद्रोंके जो कोई भी अधिपति देव हैं, उनके नामोंका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥ ४८ ॥

उत्तर-दक्षिण अधिपति देवोंका निर्देश

पढम-पवण्णिद-देवा, दक्खिण-भागम्मि दीव-उवहीणं ।
चरिमुच्चारिद - देवा, चेट्ठंते उत्तरे भाए ॥४९॥

अर्थ—इन देवों (युगलों) में से पहले कहे हुए देव द्वीप-समुद्रोंके दक्षिणभागमें तथा अन्तमें कहे हुए देव उत्तरभागमें स्थित हैं ॥ ४९ ॥

णिय-णिय-दीउवहीणं, णिय-णिय-तल-सट्ठिदेसु णयरेसुं ।
बहुविह - परिवार - जुदा, कीडंते बहु - विणोदेण ॥५०॥

अर्थ—ये देव अपने-अपने द्वीप-समुद्रोंमें स्थित अपने-अपने नगर-तलोंमें बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त होकर बहुत विनोदपूर्वक क्रीड़ा करते हैं ॥ ५० ॥

उपर्युक्त देवोंकी आयु एवं उत्सेधादिका वर्णन

एक्क-पलिदोवमाऊ, पत्तेक्कं दस-धणूणि उत्तुंगा ।
भुंजंते विविह - सुहं, समचउरस्संग - संठाणा ॥५१॥

अर्थ—इनमेंसे प्रत्येककी आयु एक पल्योपम है एवं ऊँचाई दस-धनुष प्रमाण है। ये सब समचतुरस्रसंस्थानसे युक्त होते हुए अनेक प्रकारके सुख भोगते हैं ॥ ५१ ॥

नन्दीश्वरद्वीपकी अवस्थिति एवं व्यास

जंबू-दीवादीदो, अट्ठमओ होदि भुवण-विक्खादो ।
णंदीसरो त्ति दीओ, णंदीसर-जलहि-परिखित्तो ॥५२॥

अर्थ—भुवन-विख्यात एवं नन्दीश्वर-समुद्रसे वेष्टित जम्बूद्वीपसे आठवाँ द्वीप 'नन्दीश्वर' है ॥ ५२ ॥

---

१. ब. ब. क. ज. णिहि ।

एक्क-सया तेसट्ठी, कोडीओ जोयणाणि लक्खाणि ।
चुलसीदी तद्दोवे, विक्खंभो वलयवासेणं ॥५३॥

१६३८४००००० ।

अर्थ—इस द्वीपका मण्डलाकार विस्तार एक सौ तिरेसठ करोड़ चौरासी लाख (१६३८४०००००) योजन प्रमाण है ॥ ५३ ॥

विशेषार्थ—इष्ट गच्छके प्रमाणमेंसे एक कम करके जो प्राप्त हो उतनी बार दो-दोका परस्पर गुणाकर लब्धको एक लाखसे गुणित करनेपर वलय-व्यास प्राप्त होता है ।

जैसे—यहाँ द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित गणनामें १५ वाँ नन्दीश्वरद्वीप इष्ट है । उपर्युक्त करणसूत्रानुसार इसमेंसे १ घटाकर जो (१५—१=१४) शेष बचे उतनी (१४) बार दो का संवर्गन कर लब्धमें एक लाख का गुणा करना चाहिए । यथा $२^{१४} \times १००००० = १६३८४००००० $ योजन नन्दीश्वरद्वीपका विस्तार है ।

नन्दीश्वरद्वीपकी बाह्य-सूचीका प्रमाण

पणवण्णाहिय छस्सय, कोडीओ जोयणाणि तेवीसा ।
लक्खाणि तस्स बाहिर - सूचीए होदि परिमाणं ॥५४॥

६५५२३००००० ।

अर्थ—उस नन्दीश्वरद्वीपकी बाह्य-सूचीका प्रमाण छहसौ पचपन करोड़ तेईस लाख (६५५२३०००००) योजन है ॥ ५४ ॥

विशेषार्थ—इसी अधिकारकी गाथा ३४ के नियमानुसार नन्दीश्वर द्वीपकी सूचियोंका प्रमाण इसप्रकार है—

नन्दीश्वरद्वीपकी अभ्यन्तर सूची = (१६३८४००००० × २) — ३ लाख = ३२७६५००००० योजन है ।

इसी द्वीपकी मध्यम सूची=(१६३८४००००० × ३) — ३ लाख=४९१४६००००० योजन प्रमाण है ।

इसी द्वीपकी बाह्य सूची=(१६३८४००००० × ४) — ३ लाख =६५५२३००००० योजन प्रमाण है ।

नन्दीश्वरद्वीपकी अभ्यन्तर और बाह्य-परिधिका प्रमाण

तिदय-पण-सत्त-दु-ख-दो-एक्कछत्तिय-सुण्ण-एक्क-अंक-कमे[1] ।
जोयणया णंदीसर - अब्भंतर - परिहि - परिमाणं ॥५५॥

१०३६१२०२७५३ ।

बाहत्तरि-जुद-दु-सहस्स-कोडी-तेत्तीस-लक्ख-जोयणया ।
चउवण्ण-सहस्साइं, इगि-सय-णउदी य बाहिरे परिही ॥५६॥

२०७२३३५४१९० ।

अर्थ—नन्दीश्वर द्वीप की अभ्यन्तर परिधिका प्रमाण अंक-क्रमसे तीन, पांच, सात, दो, शून्य, दो, एक, छह, तीन, शून्य और एक, इन अंकोंसे जो संख्या उत्पन्न हो उतने (१०३६१२०२७५३) योजन है ॥ ५५ ॥

इसकी बाह्य परिधि दो हजार बहत्तर करोड़ तेंतीस लाख चउवन हजार एक सौ नब्बे (२०७२३३५४१९०) योजन प्रमाण है ॥ ५६ ॥

विशेषार्थ—चतुर्थाधिकार गाथा ९ के नियमानुसार नन्दीश्वरद्वीपकी अभ्यन्तर, मध्यम और बाह्य परिधि इसप्रकार है—

नन्दीश्वर द्वीपकी अभ्यन्तर परिधि = $\sqrt{(३२७६५००००००)^२ \times १०} =$ १०३६१२०२७५३ योजन, २ कोस, २३७ धनुष, ३ हाथ और साधिक १२ अंगुल प्रमाण है।

इसी द्वीपकी मध्यम परिधि— $\sqrt{(४६१४९००००००)^२ \times १०}$ = १५५४२२७८४७१ योजन, ३ कोस, १६९२ धनुष, २ हाथ और साधिक ४ अंगुल प्रमाण है।

इसी द्वीप की बाह्य परिधि = $\sqrt{(६५४३३००००००)^२ \times १०}$ = २०७२३३५४१९० यो० १ कोस, १०५१ धनुष, २ हाथ और साधिक २ अंगुल प्रमाण है।

अंजनगिरि पर्वतोंका कथन—

णंदीसर - बहुमज्झे, पुव्व - दिसाए हवेदि सेलवरो ।
अंजणगिरि त्ति णामो, णिम्मल - वर - इंदणीलमओ ॥५७॥

---

१. द. ब. क. ज. कमो ।

अर्थ—नन्दीश्वर द्वीपके बहुमध्यभागमें पूर्व-दिशाकी ओर अञ्जनगिरि नामसे प्रसिद्ध, निर्मल, उत्तम-इन्द्रनीलमणिमय श्रेष्ठ पर्वत है ॥ ५७ ॥

जोयण-सहस्स-गाढो, चुलसीदि-सहस्समेत्त-उच्छेहो ।
सव्वेस्सिं चुलसीदी-सहस्स-कंदो अ सम-वट्टो ॥५८॥

१००० । ८४००० । ८४००० ।

अर्थ—यह पर्वत एक हजार (१०००) योजन गहरा, चौरासी हजार (८४०००) योजन ऊँचा और सब जगह चौरासी हजार (८४०००) योजन प्रमाण विस्तार युक्त समवृत्त है ॥ ५८ ॥

मूलम्मि उवरिमतले, तड-वेदीओ विचित्त-वण-संडा ।
वर-वेदीओ तस्स य, पुव्वोदित-वण्णणा होंति[1] ॥५९॥

अर्थ—उस (अंजनगिरि) के मूल एवं उपरिम-भागमें तट-वेदियाँ तथा अनुपम वन-खण्ड स्थित हैं। उसकी उत्तम वेदियोंका वर्णन पूर्वोक्त वेदियोंके ही सदृश है ॥ ५९ ॥

चार द्रहोंका कथन

चउसु विसा-भागेसुं, चत्तारि दहा हवंति तग्गिरिणो ।
पत्तेक्कमेक्क-जोयण-लक्ख-पमाणा य चउरस्सा ॥६०॥

१००००० ।

अर्थ—उस पर्वतके चारों ओर चार दिशाओंमें चौकोण चार द्रह हैं। इनमेंसे प्रत्येक द्रह एक लाख (१०००००) योजन विस्तार वाला एवं चतुष्कोण है ॥ ६० ॥

जोयण-सहस्स-गाढा, टंकुक्किण्णा य जलयर-विमुक्का ।
फुल्लंत-कमल-कुवलय-कुमुद - वण्ण - गंध - सोहिल्ला ॥६१॥

१०००।

अर्थ—फूले हुए कमल, कुवलय और कुमुदवनोंकी सुगन्धसे सुशोभित ये द्रह एक हजार (१०००) योजन गहरे, टंकोत्कीर्ण एवं जलचर जीवोंसे रहित हैं ॥ ६१ ॥

पूर्व दिशागत-वापिकाओंका प्ररूपण

वंदा - खंडवदीओ, अंजुत्तर - अंकिवोस - णामा य ।
एवाओ वावीओ, पुव्वादि - पदाहिण - कमेणं ॥६२॥

---

१. द. ब. क. ज. होंदि ।

अर्थ—नन्दा, नन्दवती, नन्दोत्तरा और नन्दिघोषा नामक ये वापिकायें पूर्वादिक दिशाओं में प्रदक्षिणा रूपसे अवस्थित हैं ।। ६२ ।।

वापिकाओंके वन-खण्डोंका वर्णन

बावीस असोय-वणं, सत्तच्छद-चंपयाणि विविहाणि ।
चूदवणं पत्तेक्कं, पुव्वादि - दिसासु चत्तारि ।।६३।।

अर्थ—उन वापिकाओंकी पूर्वादि चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें क्रमशः अशोक वन, सप्तच्छद, चम्पक और आम्रवन हैं ।। ६३ ।।

जोयण-लक्खायामा, तदद्ध-वासा हवंति वण-संडा ।
पत्तेक्कं चेत्त-दुमा, वण-णाम-जुदा वि एदाणं ।।६४।।

१००००० । ५००००० ।

अर्थ—ये वन-खण्ड, एक लाख (१०००००) योजन लम्बे और इससे अर्ध (५०००० योजन) विस्तार सहित हैं । इनमेंसे प्रत्येक वनमें, वनके नामसे संयुक्त चैत्यवृक्ष हैं ।। ६४ ।।

दधिमुख नामक पर्वतोंका निरूपण

बावीसं बहु-मज्झे, वहिमुह-णामा हवंति वहिवण्णा ।
एक्केक्का वर-गिरिणो, पत्तेक्कं अयुद-जोयणुच्छेहो ।।६५।।

१००००

अर्थ—वापियोंके बहु-मध्यभागमें दहीके सदृश वर्ण वाला एक-एक दधिमुख नामक उत्तम पर्वत है । प्रत्येक पर्वतकी ऊँचाई दस हजार (१००००) योजन प्रमाण है ।। ६५ ।।

तम्मेत्त-वास-जुत्ता, सहस्स-गाढम्मि वज्जमय-बहुला ।
ताहोवरिम-तडेसुं, तड-वेदी-वर-वणाणि विविहाणि ।।६६।।

१०००० । १००० ।

अर्थ—उतने (१०००० योजन) प्रमाण विस्तार सहित उक्त पर्वत एक हजार (१०००) योजन गहराईमें वज्रमय एवं गोल हैं । इनके तटोंपर तट-वेदियाँ और विविध प्रकारके वन हैं ।।६६।।

रतिकर पर्वतोंका कथन

बावीसं बाहिरए, दीसुं कोणेसु वीसु पत्तेक्कं ।
रतिकर-णामा गिरिणो, कणयमया वहिमुह-सरिच्छा ।।६७।।

अर्थ—वापियोंके दोनों बाह्य कोनोंमेंसे प्रत्येकमें स्वर्णमय रतिकर नामक दो पर्वत दधि-मुखोंके आकार सदृश हैं ॥ ६७ ॥

जोयण-सहस्स-वासा, तेत्तिय-मेत्तोदया य पत्तेक्कं ।
अद्दाइज्ज-सयाइं य, अवगाढा रतिकरा[1] गिरिणो[2] ॥६८॥

१००० । १००० । २५० ।

अर्थ—प्रत्येक रतिकर पर्वतका विस्तार एक हजार (१०००) योजन, इतनी (१००० यो०) ही ऊँचाई और अढ़ाई सौ (२५०) योजन प्रमाण अवगाह (नींव) है ॥ ६८ ॥

ते सव्व-चउ-कोणेसुं, एक्केक्क-दहस्स होंति चत्तारि ।
लोयविणिच्छय - कत्ता, एवं णियमा परूवेंति ॥६९॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ – वे रतिकर पर्वत प्रत्येक द्रहके चारों कोनोंमें चार होते हैं, इसप्रकार लोक विनिश्चय कर्ता नियमसे निरूपण करते हैं ॥ ६९ ॥

पाठान्तर ।

नन्दीश्वरद्वीपकी प्रत्येक दिशामें तेरह-तेरह जिनालयों की अवस्थिति

एक्क-जव-चउ-अंजण-दहिमुह-रइयर-गिरीण सिहरम्मि ।
वेदुदि[3] वर - रयणमओ, एक्केक्क-जिणिंद-पासादो ॥७०॥

अर्थ– एक भव्यजनविरि, चार दधिमुख और आठ रतिकर पर्वतोंके शिखरों पर उत्तम रत्नमय एक-एक जिनेन्द्र मन्दिर स्थित हैं ॥ ७० ॥

नन्दीश्वरद्वीप स्थित जिनालयोंकी ऊँचाई आदिका प्रमाण

जं महसाल-वण-जिण-घराण उत्तेह-पहुदि-उवइट्ठं ।
तेरस - जिण - भवणाणं, तं एदाणं पि वत्तव्वं ॥७१॥

अर्थ—महशाल वनके जिन-गृहोंकी जो ऊँचाई आदि बतलाई है, वही इन तेरह जिन-भवनों की भी कहना चाहिए ॥ ७१ ॥

विशेषार्थ—चतुर्थाधिकार गाथा २०२९ में महशालवन स्थित जिनालयोंकी लम्बाई-चौड़ाई आदि पाण्डुकवन स्थित जिनालयोंकी लम्बाई-चौड़ाई आदिसे चौगुनी कही गई है और इसी

---

१. द. ब. रतिकर। २. ब. गिरिणा। ३. द. ब. क. ब. वेदुदि ।

अधिकारकी गाथा १८७९-१८८० में पाण्डुकवन स्थित जिनालयोंकी लम्बाई १०० कोस, चौड़ाई ५० कोस, ऊँचाई ७५ कोस और नींव ¼ कोस कही गई है अतः भद्रशालवन एवं नन्दीश्वरद्वीप स्थित जिनालयोंका प्रमाण इससे चौगुना अर्थात् १०० योजन लम्बाई, ५० यो० चौड़ाई, ७५ यो० ऊँचाई और २ यो० की नींव जानना चाहिए।

पूजा, नृत्य और गानों द्वारा भक्ति प्रदर्शन

जल-गंध-कुसुम-तंदुल-चरु-वर-फल-दीव-धूव-पहुदीहिं ।
अच्चंते पुण-णामा, विविध-पडिमाओ देवा[1] य ॥ ७२ ॥

अर्थ—इन मन्दिरों में देव जल, गन्ध, पुष्प, तन्दुल, उत्तम नैवेद्य, फल, दीप और धूपादिक द्रव्योंसे जिनेन्द्र प्रतिमाओंकी स्तुति-पूर्वक पूजा करते हैं ॥ ७२ ॥

जोइसिय-वाणवेंतर-भावण-सुर-कप्पवासि-देवीओ ।
णच्चंति य गायंति य, जिण-भवणेसुं विचित्त-भंगीहिं ॥७३॥

अर्थ—ज्योतिषी, वानव्यन्तर, भवनवासी और कल्पवासी देवोंकी देवियाँ इन जिन-भवनोंमें अद्भुत रीतिसे नाचती और गाती हैं ॥ ७३ ॥

भेरी-महल-संटा-पहुदीणि विविह-दिव्व-वज्जाणि
वायंते देवयरा[2], जिणवर - भवणेसु अतीए ॥ ७४ ॥

अर्थ—जिनेन्द्र-भवनोंमें उत्तम देव भक्ति-पूर्वक भेरी, महल और घण्टा आदि अनेक प्रकार के दिव्य बाजे बजाते हैं ॥ ७४ ॥

दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा स्थित वापिकाओंके नाम

एवं दक्खिण-पच्छिम-उत्तर-भागेसु होंति दिव्व-दहा ।
णवरि विसेसो णामा, पढमम्मि-संठाण अण्णाणि ॥७५॥

अर्थ—इसीप्रकार (पूर्व दिशाके सदृश ही) दक्षिण, पश्चिम और उत्तर भागोंमें भी दिव्य द्रह हैं। विशेष इतना है कि इन विभागोंमें स्थित कमल युक्त वापियोंके नाम भिन्न-भिन्न हैं ॥ ७५ ॥

पुव्वादीसुं अरुणा, वरुणाभासो य कुंडलो वि ।
दक्खिण - अंजण - तेसे, चत्तारो पढमसिलसंठा ॥७६॥

---

१. द. ब. क. ज. देवाहि । २. द. ब. क. ज. देवरो ।

अर्थ—दक्षिण अञ्जनगिरिकी पूर्वादिक दिशाओंमें अरजा, विरजा, अशोका और वीत-शोका नामक चार वापिकाएँ हैं ।। ७६ ।।

विजया त्ति वइजयंती, जयंति णामापराजिदा तुरिमा ।
पच्छिम - अंजण - सेले[1], चत्तारो कमलिणीसंडा ।।७७।।

अर्थ—पश्चिम अञ्जनगिरिकी चारों दिशाओंमें विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और चौथी अपराजिता, इसप्रकार ये चार वापिकाएँ हैं ।। ७७ ।।

रम्मा-रमणीयाओ, सुप्पह - णामा य सव्वदो - भद्दा ।
उत्तर - अंजण - सेले, पुव्वादिसु कमलिणीसंडा ।।७८।।

अर्थ—उत्तर अञ्जनगिरिकी पूर्वादिक दिशाओंमें रम्या, रमणीया, सुप्रभा और सर्वतो-भद्रा नामक चार वापिकाएँ हैं ।। ७८ ।।

वनोंमें अवस्थित प्रासाद और उनमें रहनेवाले देवोंका कथन

एक्केक्का[2] पासादा, चउसट्ठि-वणेसु अंजणगिरीणं ।
धुव्वंत-धय-वडाया, हवंति वर-रयण-कणयमया[3] ।।७९।।

अर्थ—अञ्जनगिरियोंके चौंसठ वनोंमें फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे संयुक्त उत्तम रत्न एवं स्वर्णमय एक-एक प्रासाद है ।। ७९ ।।

विशेषार्थ—नन्दीश्वरद्वीपकी चारों दिशाओंमें एक-एक अञ्जनगिरि पर्वत है। प्रत्येक अंजनगिरिकी चारों दिशाओंमें एक-एक वापिका है और प्रत्येक वापिकाकी प्रत्येक दिशामें एक-एक वन है।

इसप्रकार एक दिशामें एक अञ्जनगिरिकी चार वापिकाओं सम्बन्धी १६ वन हैं। चारों दिशाओंके ६४ वन हैं और प्रत्येक वनमें एक-एक प्रासाद है।

बासट्ठि जोयणाणि, उदओ इगितीस ताण वित्थारो ।
वित्थार-समो दीहो, वेदिय-वण-गोउरेहि परिवारिओ ।।८०।।

अर्थ—इन (प्रासादों) की ऊँचाई बासठ योजन और विस्तार इकतीस योजन प्रमाण है। इनकी लम्बाई भी विस्तारके सदृश इकतीस योजन प्रमाण ही है। ये सब प्रासाद वेदियों और वन-गोपुरोंसे व्याप्त हैं ।। ८० ।।

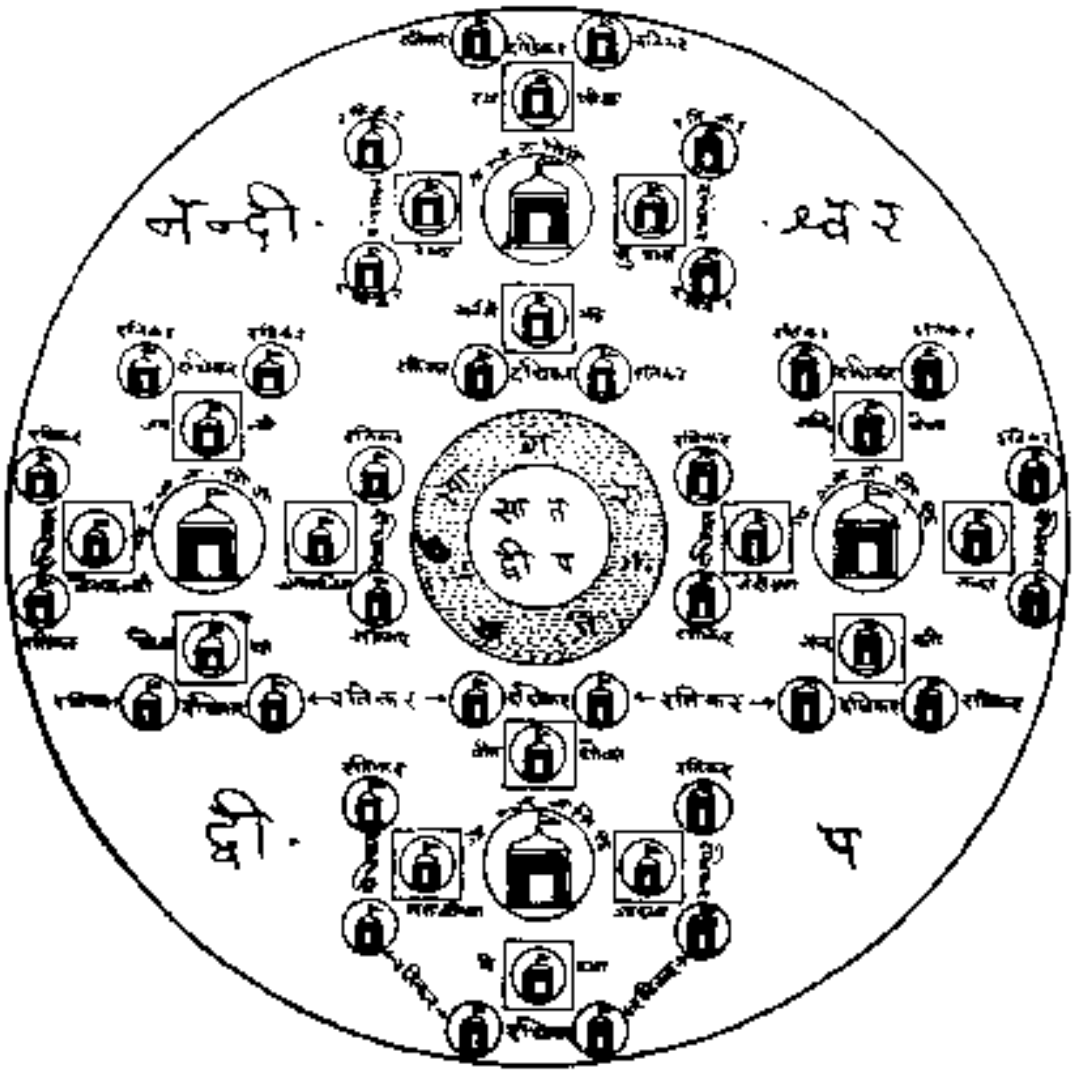
---

१. द. ब. क ज. सेमा। २. द. ब. एक्केक्क। ३. ब. कणयमया।

वण-संड-णाम-जुत्ता[1], वेंतर - देवा वसंति एवेसुं ।
मणिमय-पासादेसुं, बहुविह-परिवार-परियरिया ॥८१॥

अर्थ—इन मणिमय प्रासादोंमें वन-खण्डोंके नामोंसे संयुक्त व्यन्तर देव बहुत प्रकारके परिवारसे व्याप्त होकर रहते हैं ॥ ८१ ॥

नोट—नन्दीश्वरद्वीपकी चारों दिशा सम्बन्धी ५२ जिनालयोंका चित्रण इसप्रकार है—



१. ब. ब. क. ब. जुत्तो ।

णंदीसर-विदिसासुं, अंजण-सेला हवंति चत्तारि ।
रइकर - णाम[1] - सरिच्छा, केई एवं परूवेंति ॥८२॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—नन्दीश्वरद्वीपकी विदिशाओंमें रतिकर पर्वतोंके सदृश परिमाणवाले चार अञ्जन-शैल हैं। इसप्रकार भी कोई आचार्य निरूपण करते हैं ॥ ८२ ॥

पाठान्तर ।

नन्दीश्वर द्वीपमें विशिष्ट पूजनके समयका निर्धारण

वरिसे-वरिसे चउ-विह-देवा णंदीसरम्मि दीवम्मि ।
आसाढ - कत्तिएसुं, फग्गुण - मासे समायंति ॥८३॥

अर्थ—चारों प्रकारके देव नन्दीश्वर द्वीपमें प्रत्येक वर्ष आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन मासमें आते हैं ॥ ८३ ॥

नन्दीश्वरद्वीपमें सौधर्म आदि १६ इन्द्रोंका पूजनके लिए आगमन

एरावणमारूढो, दिव्व - विभूदीए भूसिदो रम्मो ।
कालियर - पुण्ण - पाणी, सोहम्मो एदि भत्तीए ॥८४॥

अर्थ—इससमय ऐरावत हाथीपर आरूढ़ और दिव्य विभूतिसे विभूषित, रमणीय सौधर्म इन्द्र हाथमें पवित्र नारियल लिए हुए भक्तिसे यहाँ आता है ॥ ८४ ॥

वर - वारणमारूढो, वर-रयण-विभूषणेहि सोहंतो ।
पूग - फल - गोच्छ - हत्थो, ईसाणिंदो वि भत्तीए ॥८५॥

अर्थ—उत्तम हाथीपर आरूढ़ और उत्कृष्ट रत्न-विभूषणोंसे सुशोभित ईशान इन्द्र भी हाथमें सुपारी फलोंके गुच्छे लिये हुए भक्तिसे यहाँ आता है ॥ ८५ ॥

वर-केसरिमारूढो[2], णव-रवि-सारिच्छ-कुंडलाभरणो ।
पूव-फल-गोच्छ-हत्थो, सणक्कुमारो वि भत्ति - जुदो ॥८६॥

अर्थ उत्तम सिंहपर चढ़कर, नवीन सूर्यके सदृश कुण्डलोंसे विभूषित और हाथमें आम्र-फलोंके गुच्छे लिये हुए सनत्कुमार इन्द्र भी भक्तिसे युक्त होता हुआ यहाँ आता है ॥ ८६ ॥

---

१. द. ब. क. ज. णाम । २. द. ज. इसर ।

आरूढो वर-तुरयं, वर-भूसण-भूसिदो विविह-सोहो ।
कदली - फल - लंबि - हत्थो, माहिंदो एदि भत्तीए ॥८७॥

अर्थ—श्रेष्ठ घोड़ेपर चढ़कर, उत्तम भूषणोंसे विभूषित और विविध प्रकारकी शोभाको प्राप्त माहेन्द्र इन्द्र लटकते हुए केले हाथमें लेकर भक्तिसे यहाँ आता है ॥ ८७ ॥

हंसम्मि चंद - धवले, आरूढो विमल-देह-सोहिल्लो ।
वर-केई-कुसुम-करो, भत्ति - जुदो एदि बम्हिंदो ॥८८॥

अर्थ - चन्द्र सदृश धवल हंसपर आरूढ़, निर्मल शरीरसे सुशोभित और भक्तिसे युक्त ब्रह्मेन्द्र उत्तम केतकी पुष्पको हाथमें लेकर आता है ॥ ८८ ॥

कोंच-विहंगारूढो, वर-चामर-विविह-छत्त-सोहंतो ।
पप्फुल्ल-कमल-हत्थो, एदि हु बम्हुत्तरिंदो वि ॥८९॥

अर्थ—क्रौंच पक्षीपर आरूढ़, उत्तम चँवर एवं विविध छत्रसे सुशोभित और खिला हुआ कमल हाथमें लेकर ब्रह्मोत्तर इन्द्र भी यहाँ आता है ॥ ८९ ॥

नोट—ऐसा ज्ञात होता है कि शायद यहाँ लांतव और कापिष्ठ इन्द्रकी भक्तिको प्रदर्शित करनेवाली दो गाथाएँ छूट गई हैं ।

वर - चक्कवायरूढो, कुंडल-केयूर-पहुदि-दिप्पंतो ।
सयवंती-कुसुम-करो, सुक्किंदो भत्ति-भरिद-मणो ॥९०॥

अर्थ—उत्तम चक्रवाकपर आरूढ़ कुण्डल और केयूर आदि आभरणोंसे देदीप्यमान एवं भक्तिसे पूर्ण मन-वाला शुक्रेन्द्र सेवन्ती पुष्प हाथमें लिये हुए यहाँ आता है ॥ ९० ॥

कीर - विहंगारूढो, महसुक्किंदो वि एदि भत्तीए ।
दिव्व-विभूदि-विभूसिय-देहो वर-विविह-कुसुम-दाम करो ॥९१॥

अर्थ—तोता पक्षीपर चढ़कर, दिव्य विभूतिसे विभूषित शरीरको धारण करनेवाला तथा उत्तम एवं विविध प्रकारके फूलोंकी माला हाथमें लिये हुए महाशुक्रेन्द्र भी भक्ति वश यहाँ आता है ॥ ९१ ॥

णीलुप्पल-कुसुम-करो, कोइल-वाहण-विमाणमारूढो ।
वर - रयण - भूसिदंगो, [1]सदरिंदो एदि भत्तीए ॥९२॥

---

१. ब. ब. क. ज. सदारिंदो ।

अर्थ—कोयल-वाहन विमानपर आरूढ, उत्तम रत्नोंसे अलंकृत शरीरसे संयुक्त और नील-कमलपुष्प हाथमें धारण करनेवाला शतार इन्द्र भक्तिसे प्रेरित होकर यहाँ आता है ।। ९२ ।।

गरुड-विमाणारूढो, दाडिम-फल-लुंचि-सोहमाण-करो ।
जिण-चरण-भत्ति-जुत्तो, एदि सहस्सार - इंदो वि ।।९३।।

अर्थ—गरुडविमान पर आरूढ, अनार फलोंके गुच्छेसे शोभायमान हाथवाला और जिन-चरणोंकी भक्तिमें अनुरक्त हुआ सहस्रार इन्द्र भी आता है ।। ९३ ।।

विहगाहिव-मारूढो, पणस-फल-लुंचि-लंबमाण-करो ।
वर-दिव्व - विभूदीए, आगच्छदि आणदिंदो वि ।।९४।।

अर्थ—विहगाधिप अर्थात् गरुडपर आरूढ और पनस अर्थात् कटहल फलके गुच्छेको हाथमें लिये हुए आनतेन्द्र भी उत्तम एवं दिव्य विभूतिके साथ यहाँ आता है ।। ९४ ।।

पउम-विमाणारूढो, पाणव-इंदो वि एदि भत्तीए ।
तुंबुरु-फल-लुंचि-करो, वर - मंडल - मंडियायारो ।।९५।।

अर्थ—पद्म विमानपर आरूढ उत्तम आभरणोंसे मण्डित आकृतिसे संयुक्त और तुम्बुरु फलके गुच्छेको हाथमें लिये हुए प्राणतेन्द्र भी भक्तिवश होकर यहाँ आता है ।। ९५ ।।

परिपक्क[1]-उच्छु-हत्थो, कुमुद-विमाणं विचित्तमारूढो ।
विविहालंकार - धरो, [2]आगच्छइ आरणिंदो वि ।।९६।।

अर्थ—अद्भुत कुमुद-विमानपर आरूढ, पके हुए गन्नेको हाथमें धारण करनेवाला आरणेन्द्र भी विविध-प्रकारके अलंकार धारण करके यहाँ आता है ।। ९६ ।।

आरूढो वर-मोरं, वलयंगद - मउड - हार-सोहंतो[3] ।
ससि-धवल-चमर-हत्थो, आगच्छइ अच्चुदाहिवई ।।९७।।

अर्थ—उत्तम मयूरपर चढ़कर, कटक, अंगद, मुकुट एवं हारसे सुशोभित और चन्द्र सदृश धवल चँवरको हाथमें लिये हुए अच्युतेन्द्र यहाँ आता है ।। ९७ ।।

सपरिवार देवोंका पूजाके लिये आगमन

जाणाविह-वाहणया, पाणा-फल-कुसुम-वाम-भरिद-करा ।
णाणा-विभूदि-सहिदा, जोइस-वण-भवण एंति भत्ति-जुदा ।।९८।।

---

१. द. ज. परिपिक्क । २. द. ब. क. ज. आगच्छिय । ३. द. ब. क. ज. संहतो ।

अर्थ—नाना प्रकारके वाहनोंपर आरूढ, नाना-प्रकारकी विभूति सहित, अनेक फल एवं पुष्पमालाएँ हाथोंमें लिये हुए ज्योतिषी, व्यन्तर तथा भवनवासी देव भी भक्तिसे संयुक्त होकर यहाँ आते हैं ॥ ९८ ॥

आगच्छिय णंदीसर-वर-दीव-जिणिंद-दिव्व[1]-भवणाइं ।
बहुविह - थुदि - मुहल - मुहा, पदाहिणाहिं पकुव्वंति ॥९९॥

अर्थ—इसप्रकार ये देव नन्दीश्वर द्वीपके दिव्य जिनेन्द्र भवनोंमें आकर नाना प्रकारकी स्तुतियोंसे वाचाल-मुख होते हुए प्रदक्षिणाएँ करते हैं ॥ ९९ ॥

पूजन प्रारम्भ करते समय दिशाओंका विभाजन

पुव्वाए कप्पवासी, भवणसुरा दक्खिणाए वेंतरया[2] ।
पच्छिम - दिसाए तेसुं, जोइसिया उत्तर - दिसाए ॥१००॥
णिय-णिय-विभूदि-जोग्गं, महिमं कुव्वंति थोत्त-बहुल-मुहा ।
णंदीसर - जिणमंदिर - अत्तासुं विउल - भत्ति - जुदा ॥१०१॥

अर्थ—नन्दीश्वरद्वीपस्थ जिन-मन्दिरोंकी यात्रामें प्रचुर भक्तिसे युक्त कल्पवासी देव पूर्व-दिशामें, भवनवासी दक्षिणमें, व्यन्तर पश्चिममें और ज्योतिषी देव उत्तर दिशामें (स्थित होकर) मुखसे बहुत स्तोत्रोंका उच्चारण करते हुए अपनी-अपनी विभूतिके योग्य महिमाको करते हैं ॥ १००-१०१ ॥

प्रत्येक दिशामें प्रत्येक इन्द्रकी पूजाके लिए समयका विभाजन

पुव्वण्हे अवरण्हे, पुव्वाणिसाए वि पच्छिम-णिसाए ।
पहराणि दोण्णि दोण्णिं, णिब्भर[3]-भत्ती पसत्त-मणा ॥१०२॥
कमसो पदाहिणेणं, पुण्णिमयं[4] जाव अट्ठमीदु तदो ।
देवा विविहं पूजं, जिणिंद - पडिमाण कुव्वंति ॥१०३॥

अर्थ—ये देव आसक्त चित्त होकर अष्टमीसे लेकर पूर्णिमा पर्यन्त पूर्वाह्न, अपराह्न, पूर्वरात्रि और पश्चिमरात्रिमें दो-दो प्रहर तक उत्तम भक्ति-पूर्वक प्रदक्षिण-क्रमसे जिनेन्द्र-प्रतिमाओं की विविध प्रकारसे पूजा करते हैं ॥ १०२-१०३ ॥

---

१. ब. दव्व । २. क. वेंतरिया । ३. ब. क. ज. अरमलीए । ४. ब. ब. क. ज. पुण्णमयं जाव अट्ठमीदु ।

विशेषार्थ—नन्दीश्वर द्वीपकी चारों दिशाओंमें ५२ जिनालय अवस्थित हैं। आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुन मासके शुक्ल पक्षकी अष्टमीके पूर्वाह्न में सर्व कल्पवासी देवोंसे युक्त सौधर्मेन्द्र पूर्व दिशामें, भवनवासी देवोंसे युक्त असुरेन्द्र दक्षिण दिशामें, व्यन्तर देवोंसे युक्त किम्पुरुष इन्द्र पश्चिम दिशामें और ज्योतिषी देवोंसे युक्त चन्द्र इन्द्र उत्तर दिशामें पूजा प्रारम्भ करते हैं। दो प्रहर बाद अपराह्नमें कल्पवासी दक्षिणमें, भवनवासी पश्चिममें, व्यन्तरदेव उत्तरमें और ज्योतिषी देव पूर्वमें आ जाते हैं। फिर दो प्रहर बाद पूर्व रात्रिको ये देव प्रदक्षिणा क्रमसे पुनः दिशा परिवर्तन करते हैं। इसके बाद दो प्रहर व्यतीत हो जाने पर अपर रात्रि को उसी प्रकार पुनः दिशा परिवर्तन करते हैं। इसप्रकार अहोरात्रिके ८ प्रहर पूर्णकर नवमी तिथिको प्रातःकाल कल्पवासी आदि चारों निकायों के देव पूर्व आदि दिशाओं में क्रमशः दो-दो प्रहर तक पूजन करते हैं इसी क्रमसे पूर्णिमा पर्यन्त अर्थात् आठ दिन तक चारों निकायोंके देवों द्वारा अनवरत महापूजा होती है।

नन्दीश्वरद्वीप स्थित जिन-प्रतिमाओंके अभिषेक, विलेपन और पूजा आदिका कथन

कुव्वंते अभिसेयं, महाविभूदीहि ताण देविंदा।
कंचण-कलस-गदेहिं, विउल - जलेहिं सुगंधेहिं ॥१०४॥

अर्थ—देवेन्द्र, महान् विभूतिके साथ उन जिन प्रतिमाओंका सुवर्ण-कलशोंमें भरे हुए विपुल सुगन्धित जलसे अभिषेक करते हैं ॥ १०४ ॥

कुंकुम - कप्पूरेहिं, चंदण - कालागरूहि अण्णेहिं।
ताणं विलेवणाइं[1], ते कुव्वंते सुगंध - गंधेहिं ॥१०५॥

अर्थ—वे इन्द्र कुंकुम, कर्पूर, चन्दन, कालागरु और अन्य सुगन्धित द्रव्योंसे उन प्रतिमाओंका विलेपन करते हैं ॥ १०५ ॥

कुंदेंदु - सुंदरेहिं, कोमल - विमलेहिं सुरहि - गंधेहिं।
वर - कलम - तंदुलेहिं[2], पूजंति जिणिंद - पडिमाओ[3] ॥१०६॥

अर्थ—वे देव, कुन्दपुष्प एवं चन्द्र सदृश सुन्दर, कोमल, निर्मल और सुगन्धित उत्तम कलम-धान्यके तन्दुलोंसे जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०६ ॥

सयवंतराय चंपय-माला पुण्णाग - णाग - पहुदीहिं।
अच्चंति ताओ देवा, सुरहीहिं कुसुम - मालाहिं ॥१०७॥

अर्थ—वे देव सेवन्तीराज, चम्पकमाला, पुन्नाग और नाग आदि सुगन्धित पुष्प-मालाओंसे उन प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०७ ॥

---

१. द. विलेवणाइं, ब. विलेदणाइं। २. द. तंदुलेहि। ३. ब. द. पडिमाए।

बहुविह - रसवंतेहिं, वर - भक्खेहिं विचित्त-रूवेहिं ।
अमय-सरिच्छेहिं सुरा, जिणिंद - पडिमाओ महयंति ॥१०८॥

अर्थ—वे देवगण, बहुत प्रकारके रसोंसे संयुक्त, अद्भुत रूपवाले और अमृत सदृश उत्तम भोज्य-पदार्थोंसे (नैवेद्यसे) जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०८ ॥

विप्फुरिद-किरण-मंडल-मंडिद-भवणेहि[1] रयण-दीवेहिं ।
णिक्कज्जल - कलुसेहिं, पूजंति जिणिंद - पडिमाओ ॥१०९॥

अर्थ—देदीप्यमान किरण-समूहसे जिन-भवनोंको विभूषित करनेवाले, कज्जल एवं कालुष्य रहित (ऐसे) रत्न-दीपकोंसे इन प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥ १०९ ॥

वासिद - दिसंतरेहिं, कालागरु-पमुह-विविध-धूवेहिं ।
परिमलिद - मंदिरेहिं, महयंति जिणिंद - बिंबाणि ॥११०॥

अर्थ—देवगण मन्दिर एवं दिग्-मण्डलको सुगन्धित करनेवाले कालागरु आदि अनेक प्रकारके धूपोंसे जिनेन्द्र-बिम्बोंकी पूजा करते हैं ॥ ११० ॥

दक्खा-दाडिम-कदली - णारंगय - मादुलिंग-चूवेहिं[2] ।
अण्णेहिं पक्केहिं, फलेहिं पूजंति जिणणाहं ॥१११॥

अर्थ—दाख, अनार, केला, नारंगी, मातुलिंग, आम तथा अन्य भी पके हुए फलोंसे वे देव जिननाथकी पूजा करते हैं ॥ १११ ॥

अच्चंत-चमर-किंकिणि, विविह-वितारादियाहि [3]वत्थाहिं ।
ओलंबिद - हारेहिं, अच्चंति जिणेसरं देवा ॥११२॥

अर्थ—वे देव विस्तीर्ण एवं लटकते हुए हारोंसे संयुक्त तथा नाचते हुए चँवर एवं किंकिणियों सहित अनेक प्रकारके चँदोवा आदिसे जिनेश्वरकी पूजा करते हैं ॥ ११२ ॥

महल-मुइंग[4]-भेरी-पडह-प्पहुदीणि विविह - वज्जाणि ।
वायंति जिणवराणं, देवा पूजासु[5] भत्तीए ॥११३॥

अर्थ—देवगण पूजाके समय भक्तिसे मर्दल, मृदङ्ग, भेरी और पटहादि विविध बाजे बजाते हैं ॥ ११३ ॥

---

१. ब. सवणेहि । २. धूवेहि । ३. क. ब. वित्थाहि । ४. ब. मुरिंग । ५. क. ब. पूजाय ।

नृत्य, गान एवं नाटक आदिके द्वारा भक्ति प्रदर्शन

विविहाइ णच्चणाइं, वर-रयण-विभूसिदाओ दिव्वाओ ।
कुव्वंते [1]कण्णाओ, गायंति जिणिंद - चरिदाणि ॥११४॥

अर्थ—उत्तम रत्नोंसे विभूषित दिव्य कन्यायें विविध नृत्य करती हैं और जिनेन्द्रके चरितोंको गाती हैं ॥ ११४ ॥

जिण-चरिय-णाडयं ते, चउ-विहाभिणय-भंग-सोहिल्लं ।
आणंदेणं देवा, बहु - रस - भावं पकुव्वंति ॥११५॥

अर्थ—वे चार प्रकारके देव आनन्दके साथ अभिनयके प्रकारोंसे शोभायमान बहुत प्रकार के रस-भाववाले जिनचरित्र सम्बन्धी नाटक करते हैं ॥ ११५ ॥

एवं जेत्तियमेत्ता, जिणिंद - णिलया विचित्त-पूजाओ ।
कुव्वंति तेत्तिएसुं, णिब्भर - भत्तीसु सुर - संघा[2] ॥११६॥

अर्थ—इसप्रकार नन्दीश्वरद्वीपमें जितने जिनेन्द्र-मन्दिर हैं, उन सबमें गाढ़ भक्ति युक्त देवगण अद्भुत रीतिसे पूजाएँ करते हैं ॥ ११६ ॥

कुण्डलपर्वतकी अवस्थिति एवं उसका विस्तार आदि

एक्कारसमो कुण्डल-णामो बीओ हवेदि रमणिज्जो ।
एदस्स य बहु - मज्झे, अत्थि गिरी कुंडलो णाम ॥११७॥

अर्थ—ग्यारहवाँ कुण्डल नामा रमणीक द्वीप है। इस द्वीपके बहुमध्य भागमें कुण्डल नामक पर्वत है ॥ ११७ ॥

पण्णत्तरी सहस्सा, उच्छेहो ओयणाणि तस्सरिसो ।
एक्क - सहस्सं गाढं, णाणाविह - रयण - भरिदस्स ॥११८॥

७५००० । १०००

अर्थ—नाना प्रकारके रत्नोंसे भरे हुए इस पर्वतकी ऊँचाई पचहत्तर हजार (७५०००) योजन और अवगाह (नींव) एक हजार (१०००) योजन प्रमाण है ॥ ११८ ॥

---

१. ब. क. ज. कण्णाहो, द. कण्णाया । २. ब. क. ज. संघा ।

कडसो वि माणुसुत्तर-सेलादो दस-गुण-प्पमाणेणं ।
तग्गिरिणो मूलोवरि, तड - वेदी - प्पहुदि-जुत्तस्स ॥११९ ।

मूल १०२२० । मध्य ७२३० । शिखर ४२४० ।

अर्थ – तटवेदी आदिसे संयुक्त इस पर्वतका मूल एवं उपरिम विस्तार मानुषोत्तर पर्वतके विस्तार-प्रमाणसे दसगुना है ॥ ११९ ॥

विशेषार्थ – चतुर्थाधिकार गाथा २७९४ में मानुषोत्तर पर्वतका मूल वि० १०२२ योजन, मध्य वि० ७२३ यो० और शिखर वि० ४२४ यो० कहा गया है । कुण्डलगिरिका विस्तार इससे दस गुना है अतः उसका मूल विस्तार १०२२० योजन, मध्य विस्तार ७२३० योजन और शिखर विस्तार ४२४० योजन प्रमाण है ।

कुण्डलगिरिपर स्थित कूटोंका निरूपण

उवरिं कुण्डलगिरिणो, दिव्वाणि हवंति तीस कूडाणि ।
एदाणं विण्णासं[1], भासेमो[2] आणुपुव्वीए ॥१२०॥

अर्थ – कुण्डलगिरिके ऊपर जो दिव्य कूट हैं, उनका विन्यास अनुक्रमसे कहता हूँ ॥ १२० ॥

पुव्वादि-चउ-दिसासुं[3], चउ-चउ कूडाणि होंति पत्तेक्कं ।
ताणब्भंतर - भागे, एक्केक्को सिद्धवर - कूडो ॥१२१॥

अर्थ – पूर्वादिक चार दिशाओंमेंसे प्रत्येकमें चार-चार कूट हैं और उनके अभ्यन्तर-भागमें एक-एक सिद्धवर कूट है ॥ १२१ ॥

वज्जं वज्जपहक्खं, कणयं कणयप्पहं च पुव्वाए ।
दक्खिण-दिसाए रजदं, रजदप्पह-रुप्पहा महप्पहयं ॥१२२॥
अंकं अंकपहं मणिकूडं पच्छिम-दिसाए मणिपहयं ।
उत्तर-दिसाए रुचकं, रुचकाभं हेमवंत[3] - मंदरया ॥१२३॥

अर्थ – वज्र, वज्रप्रभ, कनक और कनकप्रभ, ये चार कूट पूर्व-दिशामें; रजत, रजतप्रभ, रूप्यप्रभ और महाप्रभ, ये चार दक्षिण-दिशामें; अंक, अंकप्रभ, मणिकूट और मणिप्रभ, ये चार पश्चिम दिशामें तथा रुचक, रुचकाभ, हिमवान् और मन्दर, ये चार कूट उत्तर-दिशामें स्थित हैं ॥ १२२-१२३ ॥

---

१. ब. विण्णासे । २. ब. भासेमो । ३. ब. अ. हेमवयं, ब. हेमवरयं ।

एदे सोलस कूडा, णंदणवणे वण्णिदाण कूडाणं ।
उच्चेहादि[1] - समाणा, पासादेहिं विचित्तेहिं ॥१२४॥

अर्थ—ये सोलह कूट नन्दनवनमें कहे हुए कूटोंकी ऊँचाई आदि तथा अद्भुत प्रासादोंसे समान हैं ॥ १२४ ॥

विशेषार्थ—चतुर्थाधिकार गा० १९९६ में सौमनसके कूटोंका उत्सेध २५० योजन, मूल विस्तार २५० योजन और शिखर विस्तार १२५ योजन कहा गया है तथा गाथा २०२३-२०२४ में नन्दनवनके कूटोंका विस्तार सौमनस के कूट विस्तारसे दुगुना कहा है और यहाँ कुण्डलगिरिके कूटोंका विस्तार नन्दनवनके कूट विस्तार सदृश कहा है। अर्थात् कुण्डलगिरिके कूटोंका उत्सेध ५०० योजन, मूल विस्तार ५०० योजन और शिखर विस्तार २५० योजन प्रमाण है।

एदेसुं कूडेसुं, जिणभवण - विभूसिएसु[2] रम्मेसुं ।
णिवसंति वेंतर-सुरा, णिय-णिय-कूडेहिं सम - णामा ॥१२५॥

अर्थ—जिन-भवनसे विभूषित इन रमणीय कूटोंपर अपने-अपने कूटोंके सदृश नामवाले व्यन्तरदेव निवास करते हैं ॥ १२५ ॥

एक्क - पलिदोवमाऊ, बहु-परिवारा हवंति ते सव्वे ।
एदाणं णयरीओ, विचित्त - भवणाओ तेसु कूडेसु ॥१२६॥

अर्थ—वे सब देव एक पल्योपम-प्रमाण आयु और बहुत प्रकारके परिवार सहित होते हैं। उपर्युक्त कूटोंपर अद्भुत भवनोंसे संयुक्त इन देवोंकी नगरियाँ हैं ॥ १२६ ॥

चत्तारि सिद्ध-कूडा, चउ-जिण-भवणेसु ते पभासंते ।
णिसहगिरि-कूड-सरिसा-विक्खंभ-घर-सम-वास-पहुदीहिं ॥१२७॥

अर्थ—ये चार सिद्धकूट निषध पर्वतके सिद्धकूट पर कहे हुए जिनपुरके सदृश विस्तार एवं ऊँचाई आदि सहित ऐसे चार जिन-भवनोंसे शोभायमान होते हैं ॥ १२७ ॥

विशेषार्थ—चतुर्थाधिकार गाथा १५५ में कहे गये निषधपर्वतके सिद्धकूटपर स्थित जिन भवन के व्यासादिके सदृश यहाँ सिद्धकूटोंपर स्थित प्रत्येक जिनभवनका आयाम एक कोस, विष्कम्भ अर्ध-कोस और उत्सेध पौन (¾) कोस प्रमाण है।

---

१. ब. उच्चेहादि। २. ब. ब. क. क विभूसिदासु।

नोट—कुण्डलवर द्वीप, उसके मध्य स्थित कुण्डलगिरि पर्वत, इसपर स्थित जिनेन्द्रकूट एवं अन्य १६ कूट और इन कूटोंके स्वामियोंके नाम आदि इस चित्रमें चित्रित हैं—



मतान्तरसे कुण्डलगिरि पर्वतका निरूपण

तग्गिरि-वरस्स होंति हु, दिसि विदिसासुं जिणिंद-कूडाणि।
एक्केक्कं एक्केक्के, केई एवं परूवेंति ॥१२८॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—इस श्रेष्ठ पर्वतकी दिशाओं एवं विदिशाओंमेंसे प्रत्येकमें एक-एक जिनेन्द्रकूट है, इसप्रकार भी कोई आचार्य बतलाते हैं ॥ १२८ ॥

पाठान्तर ।

लोयविणिच्छय-कत्ता, कुंडलसेलस्स वण्णण-पयारं ।
अवरेण सरूवेणं, वण्णदि तं पवक्खेमो ॥१२९॥

अर्थ – लोकविनिश्चय-कर्ता कुण्डल पर्वतके वर्णन-प्रकारका जो दूसरी तरहसे व्याख्यान करते हैं, उसका यहाँ निरूपण किया जाता है ॥ १२९ ॥

मणुसुत्तर-सम-वासो, बादाल-सहस्स-जोयणुच्छेहो ।
कुंडलगिरी सहस्सं, गाढो बहु-रयण-कय-सोहो ॥१३०॥

अर्थ - बहु-रत्न-कृत शोभा युक्त वह कुण्डलपर्वत मानुषोत्तर-पर्वत सदृश विस्तार-वाला, बयालीस हजार योजन ऊँचा और एक हजार योजनप्रमाण अवगाह सहित है ।। १३० ।।

कूडाणं ताइं चिय, णामाणं माणुसुत्तर-गिरिस्स ।
कूडेहिं, सरिच्छाणं, णवरि सुराणं इमे णामा ।।१३१।।

पुव्व-दिसाए विसिट्ठो, पंचसिरो महसिरो महाबाहू ।
पउमो पउमुत्तर-महपउमो दक्खिण-दिसाए वासुगिओ ।।१३२।।

थिरहिदय-महाहिदया, सिरिवच्छो[1] सत्थिओ य पच्छिमदो ।
सुन्दर - विसालणेत्तो, [2]पांडुर - पुंडरय उत्तरए ।।१३३।।

अर्थ—मानुषोत्तर पर्वतके कूटोंके सदृश इस पर्वतपर स्थित कूटोंके नाम तो वही हैं किन्तु देवोंके नाम इसप्रकार हैं—पूर्व दिशामें विशिष्ट (विशिर), पंचशिर, महाशिर और महाबाहु; दक्षिण-दिशामें पद्म, पद्मोत्तर, महापद्म और वासुकि; पश्चिममें स्थिरहृदय, महाहृदय, श्रीवृक्ष और स्वस्तिक तथा उत्तरमें सुन्दर, विशालनेत्र, पाण्डुर और पुण्डरक, ये सोलह देव उपर्युक्त क्रमसे उन कूटोंपर स्थित हैं ।। १३१-१३३ ।।

एक्क-पलिदोवमाऊ, वर-रयण-विभूसियंग-रमणिज्जा ।
बहु - परिवारेहि जुदा, ते देवा होंति णागिंदा ।।१३४।।

अर्थ—एक पल्यप्रमाण आयुवाले वे नागेन्द्रदेव उत्तम रत्नोंसे विभूषित शरीरसे रमणीय और बहुत परिवारोंसे युक्त होते हैं ।। १३४ ।।

बहुविह-देवीहि जुदा, कूडोवरिमेसु तेसु भवणेसु ।
णिय-णिय-विभूदि-जोग्गं, सोक्खं भुंजंति बहु-भेयं ।।१३५।।

अर्थ—ये देव बहुत प्रकारकी देवियोंसे युक्त होकर कूटोपर स्थित उन भवनोंमें अपनी-अपनी विभूतिके योग्य बहुत प्रकारके सुख भोगते हैं ।। १३५ ।।

पुव्वावर-दिग्भायं, ठिदाण कूडाण अग्ग-भूमीए ।
एक्केक्का वर-कूडा, तड-वेदी-पहुदि-परियरिया ।।१३६।।

अर्थ—पूर्वापर दिग्भागमें स्थित कूटोंकी अग्रभूमिमें तट-वेदी आदिकसे व्याप्त एक-एक श्रेष्ठ कूट है ।। १३६ ।।

---

१. ब. क. ज. सिरिवंसो वच्छिओ । २. ब. क. ज. इरपंडुरय ।

जोयण-सहस्स-तुंगा, पुह-पुह तम्मेत्त-मूल-वित्थारा ।
पंच-सय-सिहर-वंदा, सग-सय-पण्णास-मज्झ-वित्थारा ।।१३७।।

१००० । ५०० । ७५० ।

अर्थ—ये कूट पृथक्-पृथक् एक हजार (१०००) योजन ऊँचे, इतने-मात्र (१००० यो०) मूल विस्तार सहित, पाँच सौ (५००) योजन प्रमाण शिखर विस्तारवाले और सात सौ पचास (७५०) योजन प्रमाण मध्य विस्तारसे युक्त हैं ।। १३७ ।।

ताणोवरिम-घरेसुं, कुंडल-दीवस्स अहिवई देवा ।
वेंतरया[1] णिय-जोग्गं, बहु-परिवारा[2] विराजंति[3] ।।१३८।।

अर्थ—इन कूटोंके ऊपर स्थित भवनोंमें कुण्डलद्वीपके अधिपति व्यन्तर देव अपने योग्य बहुत परिवारसे संयुक्त होकर निवास करते हैं ।। १३८ ।।

अब्भंतर-भागेसुं, एक्काणि जिणिंद-दिव्व-कूडाणि ।
एक्केक्काणं अंजणगिरि-जिण-मंदिर-समाणाणि ।।१३९।।

अर्थ– इन सभी कूटोंके अभ्यन्तर भागोंमें अंजनपर्वतस्थ जिन मन्दिरोंके सदृश दिव्य जिनेन्द्र कूट हैं ।। १३९ ।।

एक्केक्का जिण-कूडा, चेट्ठंते दक्खिणुत्तर-दिसासुं ।
ताणि अंजण-पव्वय - जिणिंद - पासाद - सारिच्छा ।।१४०।।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—उनके उत्तर-दक्षिण भागोंमें अञ्जनपर्वतस्थ जिनेन्द्रप्रासादोंके सदृश एक-एक जिन-कूट स्थित है ।। १४० ।।

पाठान्तर[1]।

रुचकवर द्वीपके मध्य रुचकवर पर्वतका अवस्थान एवं उसके विस्तार आदिका विवेचन

तेरसमो रुचकवरो, दीवो चेट्ठेदि तस्स बहु-मज्झे ।
अत्थि गिरी रुचकवरो, कणयमओ चक्कवालेणं ।।१४१।।

अर्थ—तेरहवाँ द्वीप रुचकवर है । इसके बहु-मध्यभागमें गोलाकारसे स्वर्णमय रुचकवर पर्वत स्थित है ।। १४१ ।।

---

१. द. ब. क. ज. वितरया । २. द. ब. क. ज. परिवारेहिं । ३. द. ब. क. ज. संजुत्तं ।

सव्वत्थ तस्स रुंदो, चउसीदि-सहस्स-जोयण-पमाणा ।
तम्मेत्तो उच्छेहो, एक्क - सहस्सं पि मादस्सं ॥१४२॥

८४००० । १००० ।

अर्थ—उस पर्वतका विस्तार सर्वत्र चौरासी हजार (८४०००) योजन, इतनी ही ऊँचाई और एक हजार (१०००) योजन प्रमाण अवगाह है ॥ १४२ ॥

मूलोवरिम्मि भागे, तड-वेदी उववणाइ रेहंति ।
तग्गिरिणो वण-वेदि-प्पहुदीहिं अहिय-रम्माणि ॥१४३॥

अर्थ—उस पर्वतके मूल और उपरिम भागमें वन-वेदी आदिकसे अधिक रमणीय तट-वेदियाँ एवं उपवन स्थित हैं ॥ १४३ ॥

रुचक पर्वतके ऊपर स्थित कूट, उनका विस्तार आदि, उनमें निवास करने वाली देवांगनाएँ और जन्माभिषेकमें उन देवांगनाओंके कार्य

तग्गिरि-उवरिम-भागे, चोदालो होंति दिव्व-कूडाणि ।
एदाणं विण्णासं, भासेमो आणुपुव्वीए ॥१४४॥

अर्थ - इस (रुचक) पर्वतके उपरिम भागमें जो चवालीस दिव्य कूट हैं, उनका विन्यास अनुक्रमसे कहता हूँ ॥ १४४ ॥

कणयं कंचण-कूडं, तवणं सत्तिय[1]-दिसासु-भद्दाणि ।
अंजणमूलं[2] अंजणणामं[3] कूडाणि [4]अट्ठ पुव्वाए ॥१४५॥

अर्थ—कनक, कांचनकूट, तपन, स्वस्तिकदिशा, सुभद्र, अंजनमूल, अंजन और वज्र, ये आठ कूट पूर्व दिशामें हैं ॥ १४५ ॥

पंच-सय-जोयणाइं, तुंगा तम्मेत्त-मूल-विक्खंभा ।
तद्दल-उवरिम-रुंदा, ते कूडा वेदि - वज्ज - जुत्ता ॥१४६॥

५०० । ५०० । २५० ।

अर्थ—वेदी एवं वनोंसे संयुक्त ये कूट पाँच सौ (५००) योजन ऊँचे और इतने ही ५०० यो०) प्रमाण मूल-विस्तार तथा इससे आधे (२५० यो०) उपरिम विस्तार सहित हैं ॥ १४६ ॥

---

१. ब. क. ज. सत्तिय । २. द. ब. क. अंजमूलं, ब. वजमूल । ३ द. ब. क. जणणामं, ब. संजणण्णं । ४. क. अट्ठ ।

तत्तोवरि भवणाणि, गोदम-देवस्स मेरु-तरिसाणि ।
जिण - भवण - भूसिदाइं, विचित्त - रूवाणि रेहंति ॥१४७॥

अर्थ—उन कूटोंपर जिन-भवनोंसे भूषित और विचित्र रूपवाले गौतम देवके मेरु सदृश भवन विराजमान हैं ॥ १४७ ॥

एदेसु दिसा-कण्णा, वसंते णिरुवमेहि रूवेहिं ।
विजया य वैजयंता, जयंत-णामा अपराजिदया ॥१४८॥

णंदा-णंदवदीओ, णंदुत्तरया य णंदिसेण त्ति ।
णियय-णाणोहो, ताओ जिण-जम्मकल्लाणे ॥१४९॥

अर्थ—इन भवनोंमें अनुपम-रूपसे संयुक्त विजया, वैजयन्ता, जयन्ता, अपराजिता, नन्दा, नन्दवती, नन्दोत्तरा और नन्दिषेणा नामक दिक्-कन्याएँ निवास करती हैं। ये जिन-भगवान्के जन्म-कल्याणकमें झारी धारण किया करती हैं ॥ १४८-१४९ ॥

दक्खिण-दिसाए कूडेसु, रजदं कुमुदं च णलिण-पउमाणि ।
वंभवदं सेदमणं, सेदणियं होंति कूडाणि ॥१५०॥

अर्थ—स्फटिक, रजत, कुमुद, नलिन, पद्म, वज्र, वैश्रवण और वैडूर्य, ये आठ कूट दक्षिण दिशामें स्थित हैं ॥ १५० ॥

उच्छेह-प्पहुदीहिं, ते कूडा होंति पुव्व-कूडो व्व ।
एदेसु दिसा-कण्णा, वसंति इच्छा - समाहारा ॥१५१॥

सुप्पइण्णा जसधरया, लच्छी-सेसवदि-चित्तगुत्ता ।
तह चेव वसुंधरा दव्वय - णामाओ ॥१५२॥

अर्थ—ये सब कूट ऊँचाई आदिकमें पूर्व कूटोंके सदृश ही हैं। इनके ऊपर इच्छा, समाहारा, सुप्रकीर्णा, यशोधरा, लक्ष्मी, शेषवती, चित्रगुप्ता और वसुन्धरा नामकी आठ दिक्कन्याएँ निवास करती हैं। ये सब जिन-जन्म कल्याणकमें दर्पण धारण किया करती हैं ॥ १५१-१५२ ॥

होंति अमोघं सत्तिय-मंदर-हेमवद-रजद-णामाणि ।
रुचगुत्तम-मंदर-सुदंसणाणि[1] पच्छिम-दिसाए कूडाणि ॥१५३॥

---

१. ब. क. ब. सुदंसणाणी, ब. सुदंसुणाणी ।

अर्थ—अमोघ, स्वस्तिक, मन्दर, हैमवत, राज्य, राज्योत्तम, चन्द्र और सुदर्शन, ये आठ कूट पश्चिम-दिशामें स्थित हैं ।। १५३ ।।

पुव्वोदिद-कूडाणं, वास-प्पहुदीहि होंति सारिच्छा ।
एदेसुं कूडेसुं, कुणंति वासं दिसा - कण्णा ।।१५४।।

इल-णामा सुरदेवी, पुदवी[1] पउमावी[2] एक्कणासा य ।
णवमी सीदा भद्दा, जिण-जण्णमी छत्त-धारीओ ।।१५५।।

अर्थ—ये कूट विस्तारादिकमें पूर्वोक्त कूटोंके ही सदृश हैं । इनके ऊपर इला, सुरदेवी, पृथिवी, पद्मा, एकनासा, नवमी, सीता और भद्रा नामक दिक्कन्याएँ निवास करती हैं । ये दिक्कन्याएँ जिन-जन्म कल्याणकमें जिन-माताके ऊपर छत्र धारण किया करती हैं ।। १५४-१५५ ।।

विजयं च वइजयंतं, जयंतमपराजियं च कुंडलयं ।
रुजगक्क-रयण-कूडाणि सव्वरयण त्ति उत्तर-दिसाए ।।१५६।।

अर्थ—विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित, कुण्डलक, रुचक, रत्नकूट और सर्वरत्न, ये आठ कूट उत्तर दिशामें स्थित हैं ।। १५६ ।।

एदे वि अट्ठ कूडा, सारिच्छा होंति पुव्व-कूडाणं ।
तेसुं पि दिसा-कण्णा, अलंबुसा - मिस्सकेसीओ ।।१५७।।

तह पुंडरीकिणी वारुणि त्ति आसा य सव्व-सत्ता य ।
हिरिया सिरिया देवी, एदाओ [3]अमर - धारीओ ।।१५८।।

अर्थ—ये आठ कूट भी पूर्व कूटोंके सदृश ही हैं । इनके ऊपर भी अलंबूषा, मिश्रकेशी, पुण्डरीकिणी, वारुणी, आशा, सत्या, ह्री और श्री नामकी आठ दिक्कन्याएँ निवास करती हैं । जिन-जन्मकल्याणकमें ये सब चँवर धारण किया करती हैं ।। १५७-१५८ ।।

एदाणं देवीणं, कूडाणब्भंतरे चउ - दिसासु ।
चत्तारि महाकूडा, चेट्ठंते पुव्व - कूड - समा ।।१५९।।

णिच्चुज्जोवं विमलं, णिच्चालोकं सयंपहं कूडं ।
उत्तर-पुव्व-दिसासुं, वसिकरण-पच्छिम-दिसासु रुजगा ।।१६०।।

---

१. ब. ब. क. पुधि, ब. पृथ्वि । २. ब. क. पउमाव य । ३. ब. चरव ।

अर्थ—पूर्वोक्त कूटोंके ही सदृश चार महाकूट इन देवियोंके कूटोंके अभ्यन्तर भागमें चार दिशाओंमें स्थित हैं। ये नित्योद्योत, विमल, नित्यालोक और स्वयंप्रभ नामक चारों कूट क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशामें स्थित हैं ।। १५९-१६० ।।

सोदामिणि त्ति कणया, सदहृव-देवी य कणय-चित्ते त्ति ।
उज्जोवकारिणीओ, दिसासु जिण - जम्मकल्लाणे ।।१६१।।

अर्थ—इन कूटोंपर स्थित होती हुई सौदामिनी, कनका, शतह्रदा और कनकचित्रा, ये चार देवियाँ जिन-जन्मकल्याणकमें दिशाओंको निर्मल किया करती हैं ।। १६१ ।।

तक्कूडब्भंतरए, कूडा पुव्वुत्त-कूड - सारिच्छा ।
वेरुलिय-रुचक-मणि-रुचजुत्तमा[1] पुव्व-पहुदीसुं ।।१६२।।

अर्थ—इन कूटोंके अभ्यन्तरभागमें पूर्वोक्त कूटोंके सदृश वैडूर्य, रुचक मणि और रत्नोत्तम नामक चार कूट पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित हैं ।। १६२ ।।

तेसुं पि दिसाकण्णा, वसंति रुचका तहा रुचककित्ती ।
रुचकादी-कंत-पहा, कुर्वंति जिण - जातकम्माणि ।।१६३।।

अर्थ—इन कूटोंपर भी रुचका, रुचककीर्ति, रुचककान्ता और रुचकप्रभा, ये चार दिक्कन्याएँ निवास करती हैं। ये कन्याएँ जिन-भगवान्का जातकर्म करती हैं ।। १६३ ।।

पल्ल-पमाणाउ-ठिदी, पत्तेक्कं होदि सयल-देवीणं ।
सिरि-देवीए सरिच्छा, परिवारा ताण णादव्वा ।।१६४।।

अर्थ—उन सब देवियोंमेंसे प्रत्येककी आयु एक पल्य-प्रमाण होती है। उनके परिवार श्रीदेवीके परिवार सदृश जानने चाहिए ।। १६४ ।।

सिद्धकूटोंका अवस्थान

तक्कूडब्भंतरए, चत्तारि हुवंति सिद्ध - कूडाणि ।
पुव्व-समाणं णिसह-ट्ठिद-जिण[2]-घर-सरिस-जिण णिकेदाणि ।।१६५।।

अर्थ—इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें चार सिद्ध-कूट हैं, जिनपर पहलेके सदृश निषध-पर्वतस्थ जिन-भवनोंके समान जिन-मन्दिर विद्यमान हैं ।। १६५ ।।

---

१. द. ब. क. ज. रुचजुत्तमपहुदीसु । २. ब. ब. क. ज. पुरजिण ।

मतान्तरसे सिद्धकूटोंका अवस्थान

दिस-विदिसं तब्भागे, चउ-चउ अट्ठाणि सिद्ध-कूडाणि ।
उच्छेह - पहुदीए, णिसह - सभा[1] केइ इच्छंति ॥१६६॥

अर्थ—कोई आचार्य ऊँचाई आदिकमें निषध पर्वतके सदृश (ऐसे) दिशाओंमें चार और विदिशाओंमें चार इसप्रकार आठ सिद्ध कूट स्वीकार करते हैं ॥ १६६ ॥

नोट—रुचकवर पर्वत पर स्थित कूटोंका प्रमाण, नाम, उनपर स्थित देवियाँ और उन देवियोंके कार्य आदिका चित्रण इसप्रकार है—



मतान्तरसे रुचकगिरि-पर्वतका निरूपण

लोयविणिच्छय-कत्ता, रुचकवरद्दिस्स वण्णण-पयारं ।
अण्णेस्स सव्वेसं, वक्खाणइ तं पयासेमि ॥१६७॥

अर्थ—लोकविनिश्चय-कर्ता रुचकवर पर्वतके वर्णन-प्रकारका जो अन्य-प्रकारसे व्याख्यान करते हैं, उसको यहाँ दिखाता हूँ ॥ १६७ ॥

---

१. ब. क. ज. ठ. इसो ।

होदि गिरि रुचकवरो, रुंदो अंजणगिरिंद-सम-उदयो ।
बादाल-सहस्साणि, वासो सव्वत्थ दस-ओगाढो ॥१६८॥

८४००० । ४२००० । १००० ।

अर्थ—रुचकवर पर्वत अञ्जनगिरिके सदृश (८४००० योजन) ऊँचा, बयालीस हजार (४२०००) योजन विस्तारवाला और सर्वत्र दसके घन (१००० यो०) प्रमाण अवगाहसे युक्त है ॥ १६८ ॥

कूडा णंदावत्तो, सत्थिय-सिरिवच्छ-वड्ढमाणक्खा ।
तग्गिरि-पुव्वादि-दिसे, सहस्स-रुंदं तदद्ध-उच्छेहो ॥१६९॥

अर्थ—इस पर्वतकी पूर्व दिशासे क्रमशः नन्द्यावर्त, स्वस्तिक, श्रीवृक्ष और वर्धमान नामक चार कूट हैं । इन कूटोंका विस्तार एक हजार (१०००) योजन और ऊँचाई इससे आधी (५०० यो०) है ॥ १६९ ॥

एदेसु [1]दिग्गजिंदा, देवा णिवसंति एक्क-पल्लाऊ ।
आमेहि पउमुत्तर - सुभद्द - णीलंजण - गिरीओ ॥१७०॥

अर्थ—इन कूटोंपर एक पल्य प्रमाण आयु के धारक पद्मोत्तर, सुभद्र, नील और अञ्जन-गिरि नामक चार दिग्गजेन्द्र देव निवास करते हैं ॥ १७० ॥

तग्गकूडब्भंतरए, वर-कूडा चउ-दिसासु अट्ठट्ठा ।
वेट्ठंति दिव्व-रूपा, सहस्स-रुंदा तदद्ध-उच्छेहा ॥१७१॥

वि १००० । उ ५०० ।

अर्थ—इन कूटोंके अभ्यन्तर भागमें एक हजार (१०००) योजन विस्तारवाले और इससे अर्ध (५०० योजन) प्रमाण ऊँचे चारों दिशाओंमें आठ-आठ दिव्य-रूपवाले उत्तम कूट स्थित हैं ॥ १७१ ॥

पुव्वोदिद-णाम-जुदा, एदे बत्तीस रुचक-वर-कूडा ।
तेसुं च दिसाकण्णा, तद्दं दिव्व ताव णामाणि ॥१७२॥

अर्थ—ये बत्तीस रुचकवर कूट पूर्वोक्त नामोंसे युक्त हैं । इनपर जो दिक्कन्याएँ रहती हैं, उनके नाम भी वे (पूर्वोक्त) ही हैं ॥ १७२ ॥

---

१. द. क. ज. दिग्गदिंदा, ब. दिग्गादिंदा ।

होंति हु [1]'ईसाणादिसु, विदिसासुं दोण्णि-दोण्णि वर-कूडा ।
वेरुलिय[2] - मणी[3] - णामा, रुचका रयणप्पहा णामा ॥१७३॥

रयणं च सव्व-रयणा, रुचकुत्तम-रयणउच्चका[4] कूडा ।
एदे पदाहिणेणं, पुव्वोदिद - कूड - सारिच्छा ॥१७४॥

अर्थ—वैडूर्य, मणिप्रभ, रुचक, रत्नप्रभ, रत्न, सर्वरत्न, रुचकोत्तम और रत्नोच्चय इन पूर्वोक्त कूटोंके सदृश कूटोंमें दो-दो उत्तम कूट प्रदक्षिण-क्रमसे ईशानादि विदिशाओंमें स्थित हैं ॥ १७३-१७४ ॥

तेसु दिसाकण्णाणं, महत्तरीओ कमेण णिवसंति ।
रुचका विजया [5]रुचकाभा सइअमंति रुचककंता ॥१७५॥
तह य अयंती रुचकुत्तमा य अपराजिदा जिणिंदस्स ।
कुव्वंति जाव - कम्मं, एदाओ परम - भत्तीए ॥१७६॥

अर्थ—इन कूटोंपर क्रमशः रुचका, विजया, रुचकाभा, सइअमन्ती, रुचककान्ता, जयन्ती, रुचकोत्तमा और अपराजिता, ये दिक्कन्याओंकी महत्तरियाँ (प्रधान) निवास करती हैं। ये सब उत्कृष्ट भक्तिसे जिनेन्द्र-भगवान् का जातकर्म किया करती हैं ॥१७५-१७६ ॥

विमलो णिच्चालोको, सयंपहो तह य णिच्चउज्जोवो ।
चत्तारो वर - कूडो, पुव्वादि - पदाहिणा होंति ॥१७७॥

अर्थ—विमल, नित्यालोक, स्वयंप्रभ तथा नित्योद्योत, ये चार उत्तम कूट पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणा रूपसे स्थित हैं ॥ १७७ ॥

तेसुं पि दिसाकण्णा, वसंति सोदामिणी तहा कणया ।
सदहद-देवी कंचणचित्ता ताओ कुणंति उज्जोवं ॥१७८॥

अर्थ—उन कूटोंपर क्रमशः सौदामिनी, कनका, शतह्रद देवी और कञ्चनचित्रा ये चार दिक्कन्याएँ रहती हैं जो दिशाओंको प्रकाशित करती हैं ॥ १७८ ॥

तक्कूडब्भंतरए, चत्तारि हवंति सिद्ध - वर - कूडा ।
पुव्वादिसु पुव्व-समा, अंजण-गिरि-गेह-सरिस-जिण-गेहा ॥१७९॥

पाठान्तरम् ।

---

१. द. ब. क. ज. ईसाणादिसा । २. द. ज. वेलुरिय । ३. द. ब. क. ज. पयणि । ४. द. ब. क. ज. उच्चुका । ५. द. ब. क. ज. रुचकाव ।

अर्थ—इन कूटोंके अभ्यन्तर-भागमें चार सिद्धवर कूट हैं, जिनके ऊपर पहलेके ही सदृश अंजन-पर्वतस्थ जिन-भवनोंके सदृश जिनालय स्थित हैं ।। १७९ ।।

पाठान्तर ।

द्वितीय जम्बूद्वीपका अवस्थान

जंबूदीवादितो, संखेज्जाणि पयोहि - दीवाणि ।
गंतूण अत्थि अण्णो, जंबूदीओ परम - रम्मो ॥१८०॥

अर्थ—जम्बूद्वीपसे आगे संख्यात समुद्र एवं द्वीपोंके पश्चात् अतिशय रमणीय दूसरा जम्बू-द्वीप है ।। १८० ।।

वहाँ विजय आदि देवोंकी नगरियोंका अवस्थान और उनका विस्तार

तत्थ हि विजय-प्पहुविसु हवंति देवाण दिव्व-णयरीओ[1] ।
उवरिं[2] वज्ज-खिदीए, चित्ता-मज्झम्मि पुव्व-पहुदीसुं ॥१८१॥

अर्थ—(जहाँ दूसरा जम्बूद्वीप स्थित है) वहाँ पर भी वज्रा पृथिवीके ऊपर चित्राके मध्यमें पूर्वादिक दिशाओंमें विजय-आदि देवोंकी दिव्य नगरियाँ हैं ।। १८१ ।।

उच्छेह - जोयणेणं, पुरिओ बारस-सहस्स-रुंदाओ ।
जिण-भवण-भूसियाओ, उववण - वेदीहि जुत्ताओ ॥१८२॥

१२००० ।

अर्थ—ये नगरियाँ उत्सेध योजनसे बारह हजार (१२०००) योजन-प्रमाण विस्तार सहित, जिन-भवनोंसे विभूषित और उपवन-वेदियों से संयुक्त हैं ।। १८२ ।।

नगरियोंके प्राकारोंका उत्सेध आदि

पण्णत्तरि-दल-तुंगा, पायारा जोयणद्ध-मवगाढा ।
सव्वाणं णयरीणं, णाणंत-विचित्त-धय-माला ॥१८३॥

७५ । ½ ।

अर्थ—इन सब नगरियोंके प्राकार पचहत्तरके आधे (३७½) योजन ऊँचे, अर्ध (½) योजन-प्रमाण अवगाह सहित और फहराती हुई नाना प्रकारकी ध्वजाओंके समूहसे संयुक्त है ।।१८३।।

कंचण-पायाराणं, वर-रयण-विणिम्मियाण भू-वासो ।
जोयण-पणुवीस-दलं, तच्चउ-भागो य मुह-वासो ॥१८४॥

२५ । ६¼ ।

---

१. ब. णयरी । २. द. उवरिम ।

अर्थ—उत्तम रत्नोंसे निर्मित इन स्वर्ण-प्राकारोंका भू-विस्तार पच्चीसके आधे (१२½) योजन और मुख-विस्तार पच्चीसके चतुर्थ भाग (६¼ योजन) प्रमाण है ॥ १८४ ॥

नगरियोंकी प्रत्येक दिशामें स्थित गोपुरद्वार

एक्केक्काए दिसाए, पुरीए पणुवीस-गोउर-दुवारा ।
जंबूणद-णिम्मविदा, मणि-तोरण-खंभ-रमणिज्जा ॥१८५॥

अर्थ—इन नगरियोंकी एक-एक दिशामें सुवर्णसे निर्मित और मणिमय तोरण-स्तम्भोंसे रमणीय पच्चीस गोपुरद्वार हैं ॥ १८५ ॥

नगरियोंमें स्थित भवनोंका निरूपण

बासट्ठि जोयणाणि, बे कोसा गोउरोवरि-घराणं ।
उदओ[1] तद्दलमेत्तो, रुंदो गाढो दुवे कोसा[2] ॥१८६॥

६२ । को २ ॥ ३१ । को १ ॥ को २ ॥

अर्थ—उन गोपुरद्वारोंके ऊपर भवन स्थित हैं। उन भवनोंकी ऊँचाई बासठ (६२) योजन, दो (२) कोस, विस्तार इससे आधा (३१ योजन, १ कोस) और अवगाह (नींव) दो (२) कोस प्रमाण है ॥ १८६ ॥

ते गोउर-पासादा, संछण्णा बहु-विहेहि रयणेहिं ।
सत्तरस-भूमि-जुत्ता, विमाण सरिसा विराजंति ॥१८७॥

अर्थ—वे गोपुर-प्रासाद अनेक प्रकारके रत्नोंसे आच्छन्न हैं और सत्रह भूमियों से युक्त विमान सदृश शोभायमान होते हैं ॥ १८७ ॥

राजाङ्गणका अवस्थान एवं प्रमाण आदि

पायाराणं मज्झे, चेट्ठदि रायंगणं परम - रम्मं ।
जोयण-सयाणि बारस, वास-जुदं एक्क-कोस-उच्छेहो ॥१८८॥

१२०० । को १ ।

---

१. द. ब. क. क. उदए । २. द. ब. क. क. कोसो ।

अर्थ—प्राकारके मध्यमें अतिशय रमणीय, बारह सौ (१२००) योजन-प्रमाण विस्तार सहित और एक कोस ऊँचा राजाङ्गण स्थित है ॥ १८८ ॥

तस्स य बलस्स उवरि, समंतदो बोद्धिण कोस उच्छेहं ।
पंच-सय - चाव - रुंदं, चउ - गोउर - संजुदं वेदी ॥१८९॥

को २ । दंड ५०० ।

अर्थ—इस स्थलके ऊपर चारों ओर दो (२) कोस ऊँची, पाँचसौ (५००) धनुष विस्तीर्ण और चार गोपुरोंसे युक्त वेदी स्थित है ॥ १८९ ॥

राजाङ्गण स्थित प्रासादका विस्तारादि

रायंगण-बहु-मज्झे, कोस - सयं पंचवीसमब्भहियं ।
विक्खंभो तद्दुगुणो, उदओ गाढं[1] दुवे कोसा ॥१९०॥

१२५ । २५० । को २ ।

पासादो मणि - तोरण - संपुण्णो बहु-ओयणुच्छेहो ।
चउ-वित्थारो दारो[2], वज्ज - कवाडेहि सोहिल्लो ॥१९१॥

८ । ४ ।

अर्थ—राजाङ्गणके बहु-मध्य-भागमें एक सौ पच्चीस (१२५) कोस विस्तारवाला, इससे दूना (२५० कोस) ऊँचा, दो (२) कोस-प्रमाण अवगाह सहित और मणिमय तोरणोंसे परिपूर्ण प्रासाद है। वज्रमय कपाटोंसे सुशोभित इसका द्वार आठ (८) योजन ऊँचा और चार (४) योजन प्रमाण विस्तार सहित है ॥ १९०-१९१ ॥

पूर्वोक्त प्रासादकी चारों दिशाओंमें स्थित प्रासाद

एवस्स चउ-दिसासुं, चत्तारो होंति दिव्व-पासादा ।
उप्पल्लुप्पल्लाणं, चउ चउ वड्ढंति जाव छक्कंतं ॥१९२॥

अर्थ—इस (राजाङ्गणके बहुमध्यभागमें स्थित) प्रासादकी चारों दिशाओंमें चार दिव्य प्रासाद हैं। इसके आगे छठे मण्डल पर्यन्त ये प्रासाद उत्तरोत्तर चार-चार गुणे बढ़ते जाते हैं ॥ १९२ ॥

---

१. ब. उदयगाढं । २. द. दारा ।

प्रत्येक मण्डलके प्रासादोंका प्रमाण

एत्तो[1] पासादाणं, परिमाणं मंडलं पडि भणामो ।
एक्को हवेदि मुक्खो, चत्तारो मंडलम्मि पढमम्मि ॥१९३॥

। १ । ४ ।

अर्थ—यहाँसे प्रत्येक मण्डलके प्रासादोंका प्रमाण कहता हूँ । मध्यका प्रासाद मुख्य है । प्रथम मण्डलमें चार प्रासाद हैं ॥ १९३ ॥

सोलस बिदिए तदिए, चउसट्ठी बे-सदं च छप्पण्णं ।
तुरिमे तं चउगुणिदं, पंचमए मंडलम्मि पासादा ॥१९४॥

१६ । ६४ । २५६ । १०२४ ।

अर्थ—द्वितीय मण्डलमें सोलह (१६), तृतीयमें चौंसठ (६४), चतुर्थमें दो सौ छप्पन (२५६) और पाँचवें मण्डलमें इससे चौगुने (१०२४) प्रासाद हैं ॥ १९४ ॥

चत्तारि सहस्साणि, छप्पण्णउदि-जुदाणि होंति छट्ठीए ।
एसो पासादाणं, उच्छेहादिं परूवेमो ॥१९५॥

४०९६ ।

अर्थ—छठे मण्डलमें चार हजार छयानवे (४०९६) प्रासाद हैं । अब यहाँसे आगे भवनोंकी ऊँचाई आदि का निरूपण किया जाता है ॥ १९५ ॥

मण्डल स्थित प्रासादोंकी ऊँचाई आदि का कथन

सव्वब्भंतर - मुक्खं, पासादुस्सेह - वास-गाढ-समा ।
आदिम-दुग[2]-मंडलए, तस्स दलं तदिय-तुरियम्मि ॥१९६॥
पंचमए छट्ठीए, तद्दलमेत्तं हवेदि उदयादी ।
एक्केक्के पासादे, एक्केक्का वेदिया विचित्तयरा ॥१९७॥

अर्थ—आदिके दो मण्डलोंमें स्थित प्रासादोंकी ऊँचाई, विस्तार और अवगाह सबके मध्य स्थित प्रमुख प्रासादकी ऊँचाई, विस्तार और अवगाहके सदृश है । तृतीय और चतुर्थ मण्डल के प्रासादों की ऊँचाई आदि उससे अर्ध है । इससे भी आधी पञ्चम और छठे मण्डल के प्रासादों की ऊँचाई आदिक है । प्रत्येक प्रासादकी एक-एक विचित्रतर वेदिका है ॥ १९६-१९७ ॥

---

१. ब. क. ज. एक्को २. ब. दुग ।

विशेषार्थ—

प्रासाद	विस्तार	ऊँचाई	नींव
राजांगणके मध्य स्थित प्रमुख प्रासाद का	१२५ कोस	२५० कोस	२ कोस
१ले, २ रे मण्डलोंमें स्थित प्रासादों का	१२५ कोस	२५० कोस	२ कोस
३ रे, ४ थे मण्डलोंमें स्थित प्रासादों का	६२½ कोस	१२५ कोस	१ कोस
५ वें, ६ ठे मण्डलोंमें स्थित प्रासादों का	३१¼ कोस	६२½ कोस	½ कोस

प्रासादोंके आश्रित स्थित वेदियों की ऊँचाई आदि

बे-कोसुच्छेहाओ, पंच-सयाणि धणूणि विस्थिण्णा ।
आदिल्लय - पासावे, पढमे विदियम्मि तस्सेसा ॥१९८॥

अर्थ—प्रमुख प्रासाद के आश्रित जो वेदी है वह दो कोस ऊँची और पाँचसौ (५००) धनुष विस्तीर्ण है । प्रथम और द्वितीय मण्डलमें स्थित प्रासादोंकी वेदियाँ भी इतनी ही ऊँचाई आदि सहित (२ कोस ऊँची और ५०० धनुष विस्तीर्ण) हैं ॥ १९८ ॥

पुव्विल्ल-वेदि-अद्धं, तदिए तुरियम्मि होंति मंडलए ।
पंचमए छट्ठीए, तस्सद्ध - पमाण - वेदीओ ॥१९९॥

अर्थ—तृतीय और चतुर्थ मण्डल के प्रासादों की वेदिका की ऊँचाई एवं विस्तार का प्रमाण पूर्वोक्त वेदियों के प्रमाण से आधा अर्थात् ऊँचाई १ कोस तथा विस्तार २५० धनुष है और इससे भी आधा अर्थात् ऊँचाई ½ कोस और विस्तार १२५ धनुष प्रमाण पाँचवें तथा छठे मण्डलके प्रासादो की वेदिकाओं का है ॥ १९९ ॥

सर्व भवनोंका एकत्र प्रमाण

गुण-संकलण[1]-सरिसं, ठविदाण भवणाण होदि परिसंखा ।
पंच - सहस्सा [2]चउ - सय - संजुत्ता एक्क-सट्ठी य ॥२००॥

५४६१ ।

अर्थ—गुणित-क्रमसे स्थित इन सब भवनोंकी संख्या—पाँच हजार चार सौ इकसठ (१+४+१६+६४+२५६+१०२४+४०९६=५४६१) है ॥ २०० ॥

सुधर्म-सभाकी अवस्थिति और उसका विस्तार आदि

आदिम-पासादादो[3], उत्तर-भागे ठिदा सुधम्म-सभा ।
वलिद-पणुवीस - जोयण - बोहा तस्सद्ध - वित्थारा ॥२०१॥

२५ । १२½ ।

१. द. ब. क. ज. संकरण । २. ब. चउस्सय । ३. द. पासादो ।

अर्थ—प्रथम प्रासादके उत्तर-भागमें पच्चीस योजन के आधे (१२½) योजन लम्बी और इससे आधे (६½ यो०) विस्तार वाली सुधर्म-सभा स्थित है ।। २०१ ।।

णव-जोयण-उच्छेहा[1], गाउव-गाढा सुवण्ण-रयणमई ।
तीए उत्तर - भागे, जिण - भवणं होदि तम्मेत्तं ।।२०२।।

९ । को १ ।

अर्थ—सुवर्ण और रत्नमयी यह सभा नौ (९) योजन ऊँची और एक गव्यूति (१ कोस) अवगाह सहित है । इसके उत्तर-भागमें इतने ही प्रमाणसे संयुक्त जिन-भवन है ।। २०२ ।।

उपपाद आदि छह सभाओं (भवनों) की अवस्थिति आदि

पवण-विसाए पढमं, पासादादो जिणिंद-पासादा ।
चेट्ठदि उववाद-सभा, कंचण-वर-रयण-णिवहमई ।।२०३।।

½५ । ½५ । यो ९ । को १ ।

अर्थ—प्रथम प्रासादमें वायव्य-दिशामें जिनेन्द्रभवन सदृश (१२½ योजन लम्बी, ६½ यो० चौड़ी, ९ यो० ऊँची और १ कोस अवगाह वाली) स्वर्ण एवं उत्तम रत्न-समूहोंसे निर्मित उपपाद सभा स्थित है ।। २०३ ।।

पुव्व-दिसाए पढमं, पासादादो विचित्त-विण्णासा ।
चेट्ठदि अभिसेय-सभा, उववाद-सभेहि-सारिच्छा ।।२०४।।

अर्थ—प्रथम प्रासादके पूर्वमें उपपाद सभाके सदृश विचित्र रचना संयुक्त अभिषेक-सभा (भवन) स्थित है ।। २०४ ।।

तत्थ वि दिस विभाए, अभिसेयसभा-सरिच्छ-पासादो ।
होदि अलंकार-सभा, मणि-तोरणदार-रमणिज्जा ।।२०५।।

अर्थ—इसी दिशा-भागमें अभिषेक सभाके सदृश विस्तारादि सहित और मणिमय तोरण-द्वारोंसे रमणीय अलंकार-सभा (भवन) है ।। २०५ ।।

तस्सि दिस विभाए, पुव्व-सभा-सरिस-उदय-विस्थारा ।
मंत - सभा वामीयर - रयणमई सुन्दर - दुवारा ।।२०६।।

---

१. ब. ब. क. ज. उच्छेहो ।

अर्थ—इसी दिशा-भागमें पूर्व सभाके सदृश ऊँचाई एवं विस्तार सहित स्वर्ण एवं रत्नोंसे निर्मित और सुन्दर द्वारोंसे संयुक्त मन्त्र-सभा (भवन) है ॥ २०६ ॥

एवे छप्पासादा, पुव्वेहिं मंदिरेहि मेलविदा ।
पंच सहस्सा चउ-सय-अब्भहिया सत्त-सट्ठीहिं ॥२०७॥

५४६७ ।

अर्थ—इन छह प्रासादोंको पूर्व प्रासादोंमें मिला देनेपर प्रासादों (भवनों) की समस्त संख्या पाँच हजार चार सौ सड़सठ (५४६१ + ६ = ५४६७) होती है ॥ २०७ ॥

भवनोंकी विशेषताएँ

ते सव्वे पासादा, चउ-दिम्मुह[1]-विप्फुरंत-किरणेहिं ।
वर-रयण-पईवेहिं, णिच्चं चिय णिब्भरुज्जोवा ॥२०८॥

अर्थ—वे सब भवन चारों दिशाओंमें प्रकाशमान् किरणोंसे युक्त उत्तम रत्नमयी प्रदीपोंसे नित्य अचित और नित्य उद्योतित रहते हैं ॥ २०८ ॥

पोक्खरणी-रम्मेहिं, उववण-संडेहिं[2] विविह-रुक्खेहिं ।
कुसुमफल-सोहिदेहिं, सुर - मिहुण जुवेहिं सोहंति ॥२०९॥

अर्थ—वे प्रासाद पुष्करिणियोंसे रमणीय, फल-फूलोंसे सुशोभित, अनेक प्रकारके वृक्षों सहित और देव-युगलोंसे संयुक्त उपवनखण्डोंसे शोभायमान होते हैं ॥ २०९ ॥

विद्दुम-वण्णा केई, केई कप्पूर-कुंद-संकासा ।
कंचण - वण्णा केई, केई [3]अज्जिज-णील-णिहा ॥२१०॥

अर्थ—(इनमेंसे) कितने ही (भवन) मूंगा सदृश वर्णवाले, कितने ही कपूर और कुन्द-पुष्प सदृश, कितने ही स्वर्ण वर्ण सदृश और कितने ही वज्र एवं इन्द्रनीलमणि सदृश वर्ण वाले हैं ॥ २१० ॥

तेसुं पासादेसुं, विजओ देवो - सहस्स - सोहिल्लो ।
णिच्च - जुवाणा देवा, वर-रयण-विभूसिद-सरीरा ॥२११॥

लक्खण-वंजण-जुत्ता, मायु-विहीणा य आहि-परिचत्ता ।
विविह - सुहेसुं सदा, कीडंते बहु - विणोदेण ॥२१२॥

---

१. ब. क. विसुमुह । २. द. ब. ज. ज. संडा । ३. ब. द. क. ज. अंजिद ।

अर्थ—उन भवनोंमें हजारों देवियोंसे सुशोभित, विजय नामक देव शोभायमान है और वहाँ उत्तम रत्नोंसे विभूषित शरीर वाले लक्षण एवं व्यञ्जनों सहित, (सप्त) धातुओंसे विहीन, व्याधिसे रहित तथा विविध प्रकारके सुखोंमें आसक्त नित्य-युवा, देव बहुत विनोद पूर्वक क्रीडा करते हैं ।। २११-२१२ ।।

सयणाणि आसणाणि, रयणमयाणि हवंति भवणेसुं ।
मउवाणि णिम्मलाणि, मण-णयणाणंद-जणणाणि ॥२१३॥

अर्थ—इन भवनोंमें मृदुल, निर्मल और मन तथा नेत्रोंको आनन्ददायक रत्नमय शय्यायें एवं आसन विद्यमान है ।। २१३ ।।

आदिम-पासादस्स य, बहु-मज्झे होदि कणय-रयणमयं ।
सिंहासणं विसालं, सपाद - पीढं परम - रम्मं ॥२१४॥

अर्थ—प्रथम प्रासादके बहु-मध्य-भागमें अतिशय रमणीय और पादपीठ सहित सुवर्ण एवं रत्नमय विशाल सिंहासन है ।। २१४ ।।

सिंहासणमारूढो, विजओ णामेण अहिवई तत्थ ।
पुव्व - मुहे पासादे, अच्छदि देवि लीलाए ॥२१५॥

अर्थ—वहाँ पूर्व-मुख प्रासादमें सिंहासन पर आरूढ विजय नामक अधिपति देव लीलासे आनन्दको प्राप्त होता है ।। २१५ ।।

विजयदेव के परिवार का अवस्थान एवं प्रमाण

तस्स य सामाणीया, चेट्ठंते छस्सहस्स-परिमाणा ।
उत्तर-दिसा-विभागे, विदिसाए विजय - पीढादो ॥२१६॥

अर्थ—विजयदेवके सिंहासनसे उत्तर-दिशा और विदिशामें उसके छह हजार प्रमाण सामानिक देव स्थित रहते हैं ।। २१६ ।।

चेट्ठंति णिरुवमाओ[1], छस्सिय विजयस्स अग्ग-देवीओ ।
ताणं पीढा रम्मा, सिंहासण - पुव्व - दिब्भाए ॥२१७॥

अर्थ—मुख्य सिंहासनके पूर्व-दिशा-भागमें विजयदेवकी अनुपम छहों अग्र-देवियाँ स्थित रहती हैं । उनके सिंहासन रमणीय हैं ।। २१७ ।।

परिवारा देवीओ, तिण्णि सहस्सा हवंति पत्तेक्कं ।
साहिय-पल्लं आऊ, णिय-णिय-ठाणम्मि चेट्ठंति ॥२१८॥

---

१. द. क. ज. णिरुवमाओ ।

अर्थ—इनमेंसे प्रत्येक अग्र-देवीकी परिवार-देवियाँ तीन हजार हैं, जिनकी आयु एक पल्यसे अधिक होती है। ये परिवार देवियाँ अपने-अपने स्थानमें स्थित रहती हैं ॥ २१८ ॥

बारस देव-सहस्सा, बाहिर-परिसाए विजयदेवस्स ।
अइरिवि-दिसाए ताणं, पीढाणि सामि - पीढादो ॥२१९॥

१२००० ।

अर्थ—विजय देवकी बाह्य परिषद्में बारह हजार (१२०००) देव हैं। उनके सिंहासन, स्वामीके सिंहासनसे नैऋत्य-दिशा-भागमें स्थित है ॥ २१९ ॥

दसदस-सहस्साणि, मज्झिम-परिसाए होंति विजयस्स ।
दक्खिण-दिसा-विभागे, तप्पीढा साहु - पीढादो ॥२२०॥

१०००० ।

अर्थ—विजयदेवकी मध्यम परिषद्में दस हजार (१००००) देव होते हैं। उनके सिंहासन, स्वामीके सिंहासनसे दक्षिण-दिशा-भागमें स्थित रहते हैं ॥ २२० ॥

अब्भंतर - परिसाए, अट्ठ सहस्साणि विजयदेवस्स ।
अग्गि - दिसाए होंति हु, तप्पीढा साहु - पीढादो ॥२२१॥

८००० ।

अर्थ—विजयदेवकी अभ्यन्तर परिषद्में जो आठ हजार (८०००) देव रहते हैं उनके सिंहासन स्वामीके सिंहासनसे अग्नि-दिशामें स्थित रहते हैं ॥ २२१ ॥

सेणा - महत्तराणं, सयाणं होंति दिव्व - पीढाणि ।
सिंहासण - पच्छिमदो, वर - कंचण-रयण-रइदाइं ॥२२२॥

अर्थ—सात सेना-महत्तरोंके उत्तम स्वर्ण एवं रत्नोंसे रचित दिव्य पीठ मुख्य सिंहासनके पश्चिममें होते हैं ॥ २२२ ॥

तणुरक्खा अट्ठारस - सहस्स - संखा हवंति पत्तेक्कं ।
ताणं चउसु दिसासुं, चेट्ठंते सह - पीढाणि ॥२२३॥

१८००० । १८००० । १८००० । १८००० ।

अर्थ—विजयदेवके अंगरक्षक देवोंके भद्रपीठ चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें अठारह हजार (पूर्वमें १८०००, दक्षिणमें १८०००, पश्चिममें १८००० और उत्तरमें १८०००) प्रमाण स्थित हैं ॥ २२३ ॥

सत्त-सर-महुर-गीयं, गायंता पडह-वंस-पहुदीहिं ।
वायंता णच्चंता[1], विजयं रञ्जंति तत्थ सुरा ॥२२४॥

अर्थ—वहाँ देव सात स्वरोंसे परिपूर्ण मधुर गीत गाते हैं और पटह एवं बांसुरी आदिक बाजे बजाते एवं नाचते हुए विजयदेवका मनोरंजन करते हैं ॥ २२४ ॥

रायंगणस्स बाहिं, परिवार-सुराण होंति पासादा ।
धिक्कुरिय-धय - वडाया, वर-रयणुज्जोह-अहिरामा ॥२२५॥

अर्थ—परिवार-देवोंके प्रासाद राजाङ्गणसे बाहर फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं सहित और उत्तम रत्नोंकी ज्योतिसे अधिक रमणीय हैं ॥ २२५ ॥

बहुविह-रति-करणेहिं, कुसलाओ णिच्च-जोव्वण-जुदाओ ।
णाणा - विगुव्वणाओ, माया - लोहादि - रहिदाओ ॥२२६॥
उल्लसिद - विब्भमाओ, [2]छत्त - सहावेण पेम्मवंताओ ।
सव्वाओ देवीओ, ओलग्गंते विजयदेवं ॥२२७॥

अर्थ—बहुत प्रकारकी रति करनेमें कुशल, नित्य यौवन युक्त, नानाप्रकारकी विक्रिया करने वाली, माया एवं लोभादिसे रहित, उल्लास युक्त विलास सहित और छत्र[3]-योगके स्वभाव सदृश प्रेम करने वाली समस्त देवियाँ विजयदेवकी सेवा करती हैं ॥ २२६-२२७ ॥

णिय-णिय-ठाण णिविट्ठा, देवा सव्वे वि विजय-संपुण्णा ।
णिब्भर - भत्ति - पसत्ता, सेवंते विजयमणवरतं ॥२२८॥

अर्थ—अपने-अपने स्थान पर रहते हुए भी सब देव विनयसे परिपूर्ण होकर और अतिशय भक्तिमें आसक्त होकर निरन्तर विजयदेवकी सेवा करते हैं ॥ २२८ ॥

विजयदेवके नगरके बाहर स्थित वन-खण्डोंका निरूपण

तप्पुरीए बाहिं, गंतूणं जोयणाणि पणवीसं ।
चत्तारो वणसंडा, पत्तेक्कं चेत्त - तरु - जुत्ता ॥२२९॥

---

१. द. ब. ज. णं चित्ता, क. णं चत्ता । २. ब. ज. क. ठ. छित्त । ३. ज्योतिषमें छत्र योग दो प्रकारसे कहे गये हैं । (१) जन्मकुण्डलीमें सप्तम भावसे आगेके छहों स्थानोंमें समस्त ग्रह स्थित हों तो छत्र योग होता है । यह योग जातकको अपूर्व सुख-शान्ति देता है । (२) रविवारको पू० फा०, सोमवारको स्वाति, मंगलको मूल, बुधवारको अश्वि०, गुरुवारको उत्तरा षा०, शुक्रवारको कृत्तिका और शनिवारको पुनर्वसु नक्षत्र हो तो छत्र योग बनता है । इस योगमें किया हुआ कार्य पूर्ण फलदायी होता है ।

अर्थ—उस नगरीके बाहर पच्चीस (२५) योजन जाकर चार वन-खण्ड स्थित हैं। प्रत्येक वनखण्ड चैत्यवृक्षोंसे संयुक्त है ॥ २२९ ॥

होंति हु तरणि[1] वणाणि, दिव्वाणि असोव-सत्त-वण्णाणं ।
चंपय - चूद - वणा तह, पुव्वादि - पदाहिणि - कमेणं ॥२३०॥

अर्थ—अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र वृक्षोंके ये वन पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिणा क्रमसे हैं ॥ २३० ॥

बारस-सहस्स-जोयण-दीहा ते होंति पंच-सय-रुंदा ।
पत्तेक्कं वणसंडा, बहुविह रुक्खेहि परिपुण्णा ॥२३१॥

१२००० । ५०० ।

अर्थ—बहुत प्रकारके वृक्षोंसे परिपूर्ण वे प्रत्येक वन-खण्ड बारह हजार (१२०००) योजन लम्बे और पाँच सौ (५००) योजन चौड़े हैं ॥ २३१ ॥

चैत्य-वृक्ष

एदेसुं चेत्त-दुमा, भवण-चेत्त-दुमा व सारिच्छा ।
ताणं चउसु दिसासुं, चउ-चउ-जिण-णाह-पडिमाओ ॥२३२॥

अर्थ—इन वनोंमें भवनलोकके चैत्यवृक्षोंके सदृश जो चैत्यवृक्ष स्थित हैं, उनकी चारों दिशाओंमें चार जिनेन्द्र प्रतिमाएँ हैं ॥ २३२ ॥

देवासुर-महिदाओ, सपाडिहेराओ[2] रयण-मइयाओ ।
पल्लंक - आसणाओ, जिणिंद - पडिमाओ विजयंते ॥२३३॥

अर्थ—देव एवं असुरोंसे पूजित, प्रातिहार्यों सहित और पद्मासन स्थित वे रत्नमय जिनेन्द्र प्रतिमाएँ जयवंत हैं ॥ २३३ ॥

अशोकदेवके प्रासादका सविस्तार वर्णन

चेत्तदुम[3] - ईसाणे, आगे चेट्ठेदि दिव्व - पासादो ।
इगितीस - जोयणाणि, कोसब्भहियाणि वित्थिण्णो ॥२३४॥

३१ । को १ ।

---

१. ब. ब. क. क. तरुणं । २. द. ब. सपाडिहेराओ रयणमइयाओ, क. ब. सपाडिहेराओ रयणमइयाओ । ३. द. ब. क. ब. चेत्तदुमीसाणे आगे चेट्ठेदि हु होदि दिव्वपासादो ।

अर्थ—प्रत्येक चैत्यवृक्षके ईशान-दिशा-भागमें एक कोस अधिक इकतीस योजन प्रमाण विस्तारवाला दिव्य प्रासाद स्थित है ।। २३४ ।।

तासद्धिं बुगुण-उदओ, वु-कोस गाढो विचित्त-मणि-संगो ।
चउ - अट्ठ - जोयणाणि, [1]दंदुच्छेधालो तद्दारे ।।२३५।।

६२।२ को । को २ । ४ । ८

अर्थ– अनुपम मणिमय खम्भोंसे संयुक्त इस प्रासादकी ऊंचाई विस्तारसे दुगुनी (६२½ योजन) और अवगाह दो कोस प्रमाण है । उसके द्वारका विस्तार चार (४) योजन और ऊँचाई आठ (८) योजन है ।। २३५ ।।

पज्जलंत-रयण-दीवा, विचित्त - सयणासणेहि परिपुण्णा ।
सद्द - रस - रूव - गंध[2] - प्फासेहि जय[3]-मणाणंदो ।।२३६।।
कणयमय-कुड्ड[4]-विरचिद-विचित्त-चित्त-प्पबंध-रमणिज्जो ।
अच्छरिय-जणण-रूवो, किं बहुणा सो णिरुवमाणो ।।२३७।।

अर्थ—उपर्युक्त प्रासाद देदीप्यमान रत्नदीपकों सहित, अनुपम शय्याओं एवं आसनोंसे परिपूर्ण और शब्द, रस, रूप, गन्ध तथा स्पर्शसे इन्द्रिय एवं मनको आनन्दजनक, सुवर्णमय भीतों पर रचे गये अद्भुत चित्रोंके सम्बन्धसे रमणीय और आश्चर्यजनक स्वरूपसे संयुक्त हैं। बहुत कहनेसे क्या ? वह प्रासाद अनुपम है ।। २३६-२३७ ।।

तस्सि असोयदेवो, रमेदि देवी - सहस्स - संजुत्तो ।
वर-रयण-मउडधारी, चमरं छत्तादि - सोहिल्लो ।।२३८।।

अर्थ—उस प्रासादमें उत्तम रत्न-मुकुटको धारण करने वाला और चमर तथा छत्रादिसे सुशोभित वह अशोक देव हजारों देवियोंसे युक्त होकर रमण करता है ।। २३८ ।।

सेसम्मि वइजयंत-पिदए विजयं व[5] अण्णहं सयलं ।
दक्खिण-पच्छिम-उत्तर-दिसासु ताणं पि णयराणि ।।२३९।।

[6]जंबूदीव-पण्णत्ती समत्ता ।

अर्थ– शेष वैजयन्तादि तीन देवोंका सम्पूर्ण वर्णन विजय देवके ही सदृश है । इनके भी नगर क्रमशः दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें स्थित हैं ।। २३९ ।।

इस प्रकार (द्वितीय) जम्बूद्वीपका वर्णन समाप्त हुआ ।

---

१. द. ब. दंदं छेदालो, क. दंदं छेदालो । २. द. ब. गंधे । ३. द. ब. कुसमणाणंदो, क. कुसंमणाणंदो, ज. कुसमणसस्संदो । ४. ब. कुंड्य । ५. द. ब. क. ज. णि । ६. ब. जंबूदीव ।

स्वयम्प्रभ-पर्वत का वर्णन

दीवो[1] सयंभुरमणो, चरिमो सो होदि सयल-दीवाणं[2] ।
चेट्ठेदि तस्स मज्झे, वलएण सयंपहो सेलो ॥२४०॥

अर्थ—सब द्वीपोंमें अन्तिम वह स्वयम्भूरमणद्वीप है। उसके मध्य-भागमें वलयाकार स्वयंप्रभ शैल स्थित है ॥ २४० ॥

जोयण-सहस्समेक्कं, गाढो तर-विविह-रयण-दिप्पंतो ।
मूलोवरि-भाएसुं[3], तड - वेदी - उववणादि - जुदो ॥२४१॥

अर्थ—यह पर्वत एक हजार (१०००) योजन प्रमाण अवगाह सहित, उत्तम अनेक प्रकारके रत्नोंसे देदीप्यमान और मूल एवं उपरिम भागोंमें तट-वेदी तथा उपवनादिसे संयुक्त है ॥ २४१ ॥

तग्गिरिणो उच्छेहे[4], वासे कूडेसु जेत्तियं माणं ।
तस्सि काल - वसेणं,[5] उवएसो संपइ पणट्ठो ॥२४२॥

एवं विण्णासो समत्तो ॥४॥

अर्थ—इस पर्वतकी ऊँचाई, विस्तार और कूटोंका जितना प्रमाण है, उसका उपदेश इस समय कालवश नष्ट हो चुका है ॥ २४२ ॥

इसप्रकार विन्यास समाप्त हुआ ॥ ४ ॥

वृत्ताकार क्षेत्रका स्थूल क्षेत्रफल प्राप्त करनेकी विधि

एत्तो खेत्त[6]-रयणायराणं बादर-खेत्तफलं वत्तइस्सामो । तत्थ जंबूदीवमादिं कादूण वट्टसरूवावट्ठिद-खेत्ताणं खेत्तफल-पमाणाणयणट्ठमिमा[7] सुत्त-गाहा—

अर्थ—अब यहाँसे आगे द्वीप-समुद्रोंके स्थूल क्षेत्रफलको कहते हैं। उनमेंसे जम्बूद्वीप को आदि करके गोलाकारसे अवस्थित क्षेत्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण लानेके लिए यह सूत्र-गाथा है—

ति-गुणिय-वासा परिही, तीए[8] विक्खंभ-पाद-गुणिदाए ।
जं लद्धं तं बादर - खेत्तफलं सरिस - वट्टाणं[9] ॥२४३॥

---

१. द. क. ज. आदीओ । २. द. देवाणं । ३. ट. ब. क. ज. उच्छेहो । ४. ब. ब क. ज. वसेसा । ५. द. ब. क. ज. दीवरयणायराणं बादरमेवत्तफलं । ६. द. ब. क. ज. मिस्सा । ७. द. ब. क. ज. परिहीए । ८. द. ब क. ज. वट्टाणं ।

अर्थ—गोल क्षेत्रके विस्तारसे तिगुनी उसकी बादर परिधि होती है, इस परिधिको विस्तारके चतुर्थ भागसे गुणा करने पर जो राशि प्राप्त हो उतना समान-गोल-क्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४३ ॥

उदाहरण—जम्बूद्वीपका विस्तार १००००० योजन है। १००००० × ३ = ३००००० योजन स्थूल परिधि। ३००००० × $\frac{१}{४}$ × $\frac{१}{४}$ = ७५०००००००० वर्ग योजन बादर क्षेत्रफल।

वलयाकार क्षेत्रका आयाम एवं स्थूल क्षेत्रफल प्राप्त करनेकी विधियाँ

लवणसमुद्दमादिं कादूण उवरि वलय-सरूवेण ठिवदीव-समुद्दाणं खेत्तफलमाणयणट्ठं एदा वि सुत्त-गाहाओ—

अर्थ—लवणसमुद्रको आदि करके आगे वलयाकारसे स्थित द्वीप-समुद्रोंका क्षेत्रफल लानेके लिए ये सूत्र-गाथाएँ हैं—

सयलेणूणं दंवं, णवहि गुणं इच्छियस्स आयामो ।
तं दंवेण य गुणिदं, खेत्तफलं दीव - उवहीणं ॥२४४॥

अर्थ—इच्छित क्षेत्रके विस्तारमेंसे एक लाख कम करके शेष को नौसे गुणा करने पर इच्छित द्वीप या समुद्रका आयाम होता है। पुनः इस आयामको विस्तारसे गुणा करने पर द्वीप-समुद्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥ २४४ ॥

उदाहरण—लवणसमुद्रका विस्तार २ लाख यो० है।

ल० स० का आयाम = (२ ला० — १ ला०) × ९ = ९०००० योजन।

" " " बादर क्षेत्रफल = ९ ला० आयाम × २ ला० वि० = १८०००००००००० वर्ग योजन।

अहवा आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूईण मेलिदं माणं ।
विक्खंभ - हदे इच्छिय - वलयाणं बादरं खेत्तं ॥२४५॥

अर्थ—अथवा—आदि, मध्य एवं बाह्य सूचियोंके प्रमाणको मिलाकर विस्तारसे गुणित करने पर इच्छित वलयाकार क्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४५ ॥

उदाहरण—लवण समुद्रकी आदि सूची १ ला० यो० + मध्य सूची ३ ला० यो० + बाह्य सूची ५ ला० यो० = ९ लाख योजन। ल० स० का बादर क्षेत्रफल = ९ लाख × २ लाख विस्तार = १८००००००००००० वर्ग योजन।

अहवा ति-गुणिय-मज्झिम-सूई आणेज्ज इट्ठ-वलयाणं ।
तह य पमाणं तं चिय, दंव - हदे वलय - खेत्तफलं ॥२४६॥

अर्थ—अथवा-तिगुनी मध्य-सूचीका इष्ट वलय-क्षेत्रोंका पूर्वोक्त अर्थात् आदि, मध्यम और बाह्य सूचियोंका सम्मिलित प्रमाण जानना चाहिए। इसे विस्तारसे गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना उन वलय-क्षेत्रोंका बादर क्षेत्रफल होता है ॥ २४६ ॥

उदाहरण लवण समुद्रकी तीनों सूचियोंका योग (१ ल० + ३ ल० + ५ ल० =) ९ लाख होता है और मध्यम सूची ३ लाख को ३ से गुणित करनेपर भी (३ लाख × ३ =) ९ लाख होता है।

ल० स० का बादर क्षेत्रफल = ९ लाख × २ लाख विस्तार = १८०००००००००० वर्ग योजन।

द्वीप-समुद्रोंके बादर क्षेत्रफलका प्रमाण

जंबूदीवस्स बादर - खेत्तफलं सत्त - सय - पण्णास - कोडि-जोयण-पमाणं—७५०००००००० । लवणसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठारस-सहस्स-कोडि-जोयण-पमाणं—१८०००००००००० । धादइसंड-दीवस्स बादर-खेत्त-फलं अट्ठ-सहस्स-कोडि-अब्भहिय-एक्क-लक्ख-कोडि-जोयण-पमाणं—१०८०००००००००० । कालोवग - समुद्दस्स बादर-खेत्तफलं चत्तारि - सहस्स - कोडि - अब्भहिय - पंच - लक्ख - कोडि - जोयण-पमाणं—५०४०००००००००० । पोक्खरवर - दीवस्स खेत्तफलं सट्ठि-सहस्स-कोडि-अब्भहिय[1]-एक्क-बीस-लक्ख-कोडि-जोयण-पमाणं—२१६०००००००००० । पोक्खरवर - समुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीस - सहस्स - कोडि - अब्भहिय - उणणउदि-लक्ख-कोडि-जोयण-पमाणं—८९२८०००००००००० ।

अर्थ—जम्बूद्वीपका बादर क्षेत्रफल सात सौ पचास करोड़ (७५००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है। लवणसमुद्र का बादर क्षेत्रफल अठारह हजार करोड़ (१८००००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है। धातकी खण्डद्वीपका बादर क्षेत्रफल एक लाख आठ हजार करोड़ (१०८००००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है। कालोदसमुद्रका बादर क्षेत्रफल पाँच लाख चार हजार करोड़ (५०४००००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है। पुष्करवरद्वीपका बादर क्षेत्रफल इक्कीस लाख साठ हजार करोड़ (२१६००००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है और पुष्करवर समुद्रका बादर क्षेत्रफल नवासी लाख अट्ठाईस हजार करोड़ (८९२८००००००००) वर्ग योजन प्रमाण है।

---

१. द. अब्भहिएक्क।

विशेषार्थ—

क्र०	नाम	(विस्तार-१ लाख) × ९=आयाम	आयाम × वि० = बादर क्षेत्रफल
१.	लवण समुद्र	(२ ला०—१ ला०) × ९=९ ला०यो०	९ला० × २ला०=१८०००करोड़वर्ग यो०
२.	धातकी खण्ड	(४ ला०—२ला०) × ९= २७ला०यो०	२७ला० × ४ला०=१०८००० क० ,, ,,
३.	कालोद स०	(८ला०—१ला०) × ९=६३ ला०यो०	६३ला० × ८ला०=५०४००० क० ,, ,,
४.	पुष्कर० द्वीप	(१६ला०-१ला०) × ९=१३५ला०यो०	१३५ला० × १६ला०=२१६०००० ,, ,,
५.	पुष्कर० समुद्र	(३२ला०-१ला०) × ९=२७९ ला०यो०	२७९ला० × ३२ला०=८९२८००० ,, ,,

जघन्य-परीतासंख्यातवें क्रमवाले द्वीप या समुद्रका बादर क्षेत्रफल

एवं जंबूदीव-प्पहुदि-जहण्ण-परित्तासंखेज्जयस्स [1]रूवाहियच्छेदणयमेत्तट्ठाणं[2] गंतूण दुवे-[3]जीवस्स खेत्तफलं जहण्ण-परित्तासंखेज्जयं रूऊण-जहण्ण-परित्तासंखेज्जएण गुणिय-पुणो णव-सहस्स-कोडि-जोयणेहि गुणिदमेत्तं[4] खेत्तफलं होदि। तच्चेदं—१६। १६। ९०००००००००००।

अर्थ—इसप्रकार जम्बूद्वीपको आदि लेकर जघन्य-परीतासंख्यातके एक अधिक अर्धच्छेद प्रमाण स्थान जाकर जो द्वीप स्थित है उसका क्षेत्रफल जघन्य-परीतासंख्यातको एक कम जघन्य-परीतासंख्यातसे गुणा करके फिर नौ हजार करोड़ योजनोंसे भी गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना है। वह प्रमाण यह है—१६×(१६ — १)×९०००००००००००।

(संदृष्टिमें ग्रहण किया गया १६, जघन्यपरीतासंख्यातका कल्पित मान है)।

पल्योपमके एक अधिक अर्धच्छेद स्थानपर स्थित द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल

पुणो जंबूदीव-प्पहुदि-पलिदोवमस्स रूवाहियच्छेदणय-मेत्तं ठाणं गंतूण दुवे-जीवस्स खेत्तफलं पलिदोवमं रूऊण-पलिदोवमेण गुणिय पुणो णव-सहस्स-कोडि-जोयणेहि गुणिदमेत्तं होदि। तच्चेदं पमाणं—प। प १। ९०००००००००००। एवं णाणिसूण[5] णेदव्वं जाव सयंभूरमण-समुद्दोत्ति।

---

१ द. ज. क रूवाहिय, ब. रूवोय। २. ब. क. मेत्तठाणं। ३. ब. जीवस्स। ४. ब. ज. गुणिद खेत्तं होदि। ५. द. ज. णाणिसूण, ब. णाणरूवूण।

अर्थ—पश्चात् जम्बूद्वीपको आदि लेकर पल्योपमके एक अधिक अर्धच्छेदप्रमाण स्थान जाकर जो द्वीप स्थित है उसका क्षेत्रफल पल्योपमको एक कम पल्योपमसे गुणा करके फिर नौ हजार करोड़ योजनोंसे भी गुणा करनेपर प्राप्त हुई राशिके प्रमाण है। वह प्रमाण यह है—पल्य × (पल्य—१) × ९०००००००००० यो०। इसप्रकार जानकर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त क्षेत्रफल ले जाना चाहिए।

स्वयम्भूरमण समुद्रका बादर क्षेत्रफल

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो-सयंभूरमण-समुद्दस्स खेत्तफलं जगसेढीए वग्गं णव-कवेहि गुणिय सत्त-सय-चउसीदि-रूवेहि भजिदमेत्तं पुणो एक्क - लक्ख बारस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि गुणिद-रज्जूए अब्भहियं होदि। पुणो एक्क-सहस्स-छस्सय-सत्तासीदि-कोडीओ पण्णास-लक्ख-जोयणेहि पुव्विल्ल-वोण्णि-रासीहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा $=\frac{९}{७८४}$ **घण रज्जू** $\overline{\text{ज}}$ । ११२५०० **रिण जोयणाणि १६८७५०००००००।**

अर्थ—इनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—

जगच्छ्रेणीके वर्गको नौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें सात सौ चौरासीका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें फिर एक लाख बारह हजार पाँच सौ योजनोंसे गुणित राजूको जोड़कर पुनः एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजनोंसे पूर्वोक्त दोनों राशियोंको कम करनेपर जो शेष रहे उतना स्वयम्भूरमण समुद्रका क्षेत्रफल है। उसकी स्थापना—{(७ × ७ × ९) ÷ (७८४)} + (१ राजू × ११२५००) — १६८७५०००००० योजन।

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका बादर-क्षेत्रफल निकालनेके लिए इसी अधिकारकी गाथा २४४ का उपयोग किया गया है। स्वयम्भूरमण समुद्रके बादर-क्षेत्रफलकी प्राप्ति हेतु सूत्र—स्वयं० का बा० क्षे० = (स्वयं० समुद्रका व्यास) × ९ × (स्वयं० सं० का व्यास—१ ला० यो०)

नोट—स्वयम्भूरमण समुद्रका व्यास $\frac{\text{जग०}}{२८}$ + ७५००० योजन है।

बादर क्षेत्रफल = $\left(\frac{\text{जग०}}{२८} + ७५०००\text{यो०}\right) \times ९ \times \left(\frac{\text{जग०}}{२८} + ७५०००\text{यो०} - १००००० \text{ यो०}\right)$

$= \left(\frac{१}{२८}\text{ जगच्छ्रेणी} + ६७५००० \text{ यो०}\right) \times \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \text{ यो०}\right)$

क्षेत्रफल = $\frac{९\,(\text{जगच्छ्रेणी})^२}{७८४} + \text{जग०}\left[\frac{१}{२८} \times (-२५००० \text{ यो०}) + \frac{६७५००० \text{ यो०}}{२८}\right] -$

$(२५००० \text{ यो०} \times ६७५००० \text{ यो०})$

$= \frac{3}{4}$ (जगच्छ्रेणी)^2 + (११२५०० वर्ग यो० × १ राजू) — १६८७५०००००० वर्ग योजन बादर क्षेत्रफल है ।

नोट—(२८)^2 = ७८४ होता है और जगच्छ्रेणी = ७ राजू है ।

उन्नीस विकल्पों द्वारा द्वीप-समुद्रोंका अल्पबहुत्व

एत्तो दीव-रयणायराणं एऊणवीस-वियप्पं अप्पबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा—

पढम-पक्खे जंबूदीव-सयल-रुंदादो लवणजलीर-रासिस्स एय-दिस-रुंदम्मि बड्ढी-गदे सिज्झइ । जंबूदीव-लवणसमुद्दादो धादइ-संडस्स । एवं सव्वब्भंतरिम-दीव-रयणायराणं एय-दिस-रुंदादो तदणंतर-बाहिर-णिविट्ठ-दीवस्स वा तरंगिणी-रमणस्स वा एस-दिस-रुंद-बड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—अब यहांसे उन्नीस विकल्पों द्वारा द्वीप-समुद्रोंके अल्पबहुत्वको कहते हैं । वह इसप्रकार है—

प्रथम पक्षमें जम्बूद्वीपके सम्पूर्ण विस्तारकी अपेक्षा लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है । जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डके विस्तारमें वृद्धिका प्रमाण ज्ञात किया जाता है । इसप्रकार समस्त अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर बाह्य-भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिके प्रमाणकी सिद्धि ज्ञात की जाती है ।।

बिदिय-पक्खे जंबूदीवस्सद्धादो लवण-सिण्णगाणाहस्स एय-दिस-रुंदम्मि बड्ढी गदे सिज्झइ । तदो जंबूदीवस्सद्धम्मि सम्मिलिद-लवणसमुद्दादो धादइसंडस्स । एवं सव्वब्भंतरिम-दीव-उवहीणं एय-दिस-रुंदादो तदणंतर-बाहिर-णिविट्ठ-दीवस्स वा तरंगिणी रमणस्स वा एय-दिस-रुंदम्मि बड्ढी-गदे-सिज्झइ ।।

अर्थ—द्वितीय-पक्षमें जम्बूद्वीपके अर्ध-विस्तारसे लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है । पश्चात् जम्बूद्वीपके अर्ध-विस्तारसे लवणसमुद्रके विस्तारको मिलाकर इस सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डद्वीपके विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है । इसप्रकार संपूर्ण अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशा संबन्धी विस्तारसे उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशा संबन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

तदिय-पक्खे इच्छिय-सलिलरासिस्स एय-दिस-रुंदादो तदणंतर-तरंगिणी-णाहस्स एय-दिस-रुंदम्मि बड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—तृतीय-पक्षमें अभीष्ट समुद्रके एक दिशा संबन्धी विस्तारसे उसके अनन्तर स्थित समुद्रके एक दिशासंबन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

तुरिम-पक्खे अब्भंतरिम-गोरधीणं एय-दिस-विक्खम्भादो तदणंतर-तरंगिणी-णाहस्स एय-दिस-विक्खम्भि वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—चतुर्थ-पक्षमें अभ्यन्तर समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर समुद्रके एक-दिशासम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी खोज की जाती है ।।

पंचम-पक्खे इच्छिय-दीवस्स एय-दिस-रुंदादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स एय-दिस-रुंदम्मि वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—पंचम-पक्षमें इच्छित द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारसे तदनन्तर उपरिम द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

छट्ठम-पक्खे अब्भंतरिम-सव्व-दीवाणं एय-दिस-रुंदादो तदणंतोवरिम-दीवस्स एय-दिस-रुंदम्मि वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—छठे पक्षमें अभ्यन्तर सब द्वीपोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर उपरिम द्वीपके एकदिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

सत्तम-पक्खे अब्भंतरिमस्स दीवाणं दोण्णि-दिस रुंदादो तदणंतर-बाहिर-ट्ठिविट्ठ दीवस्स एय-दिस-रुंदम्मि वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—सातवें पक्षमें अभ्यन्तर द्वीपोंके दोनों दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर बाह्य स्थित द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

अट्ठम-पक्खे हेट्ठिम-सयल-मयरहराणं दोण्णि दिस-रुंदादो तदणंतर-बाहिरणी-रमणस्स एय-दिस-रुंदम्मि वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—आठवें पक्षमें अधस्तन सम्पूर्ण समुद्रोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

णवम-पक्खे जंबूदीव-बादर-सुहुम-खेत्तफलप्पमाणेण उवरिमापमाणंत-दीवाणं खेत्तफलस्स खंड[1]-सलागं कादूण वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

---

१. द. ब. क. ज. खंद ।

अर्थ—नवमपक्षमें जम्बूद्वीपके बादर और सूक्ष्म क्षेत्रफलके प्रमाणसे आगेके समुद्र और द्वीपोंके क्षेत्रफलकी खण्ड-शलाकाएँ करके वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

दसम-पक्खे जंबूदीवादो लवणसमुद्दस्स लवणसमुद्दादो धादईसंडस्स एवं दीवादो उवहिस्स उवहीदो दीवस्स वा खंडसलागाणं वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—दसवें पक्षमें जम्बूद्वीपसे लवणसमुद्रकी और लवणसमुद्रसे धातकीखण्डद्वीपको इसप्रकार द्वीपसे समुद्रकी अथवा समुद्रसे द्वीपकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिके प्रमाणकी सिद्धि की जाती है ।।

एक्कारसम-पक्खे अब्भंतर-कल्लोलिणी-रमण-दीवाणं खंडसलागाणं समूहादो बाहिर-ल्लिविट्ठ-णीररासिस्स वा दीवस्स वा खंडसलागाणं वड्ढी-गदे-सिज्झइ ।।

अर्थ—ग्यारहवें-पक्षमें अभ्यन्तरसमुद्र एवं द्वीपोंकी खण्डशलाकाओंके समूहसे बाह्य भागमें स्थित समुद्र अथवा द्वीपकी खण्डशलाकाओंकी वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

बारसम पक्खे इच्छिय-सायरादो दीवस्स दीवादो णीररासिस्स खेत्तफलस्स वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—बारहवें-पक्षमें इच्छित समुद्रसे द्वीपके और द्वीपसे समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

तेरसम-पक्खे अब्भंतरिम-दीव-पयोहीणं खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स वा तरंगिणी-णाहस्स वा खेत्तफलस्स वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—तेरहवें-पक्षमें अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके क्षेत्रफलकी अपेक्षा तदनन्तर अग्रिम द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

चोद्दसम-पक्खे लवणसमुद्दादि-इच्छिय-समुद्दादो तदणंतर-तरंगिणी-रासिस्स खेत्तफलस्स वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—चौदहवें-पक्षमें लवणसमुद्रको आदि लेकर इच्छित समुद्रके क्षेत्रफलसे उससे अनन्तर स्थित समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

पण्णारसम - पक्खे सव्वब्भंतरिम-मयरहराणं खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-विण्णाणा-णाहस्स [खेत्तफलस्स] वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—पन्द्रहवें-पक्षमें समस्त अभ्यन्तर समुद्रोंके क्षेत्रफलसे उनके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके क्षेत्रफलकी वृद्धिकी सिद्धि की जाती है ।।

सोलसम-पक्खे धादइसंडादि-इच्छिय-दीवादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स खेत्त-फलस्स वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—सोलहवें-पक्षमें धातकीखण्डादि इच्छित द्वीपसे उसके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीपके क्षेत्रफलकी वृद्धि सिद्ध की जाती है ।।

सत्तरसम-पक्खे धादइसंड-पहुदि अब्भंतरिम-दीवाणं खेत्तफलादो तदणंतर-बाहिर-ट्ठिविट्ठ-दीवस्स खेत्तफलस्स वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—सत्तरहवें-पक्षमें धातकीखण्डादि अभ्यन्तर द्वीपोंके क्षेत्रफलसे उनके अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीपके क्षेत्रफलमें होनेवाली वृद्धि सिद्ध की जाती है ।।

अट्ठारसम-पक्खे इच्छिय-दीवस्स वा तरंगिणी-णाहस्स वा आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूईणं परिमाणादो तदणंतर-बाहिर-ट्ठिविट्ठ-दीवस्स वा तरंगिणी-णाहस्स वा आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूईणं पत्तेक्कं वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—अठारहवें-पक्षमें इच्छित द्वीप अथवा इच्छित समुद्रकी आदि-मध्य और बाह्य-सूचीके प्रमाणसे उसके अभ्यन्तर बाह्य-भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रकी आदि-मध्य एवं बाह्य सूचियोंमेंसे प्रत्येककी वृद्धि सिद्ध की जाती है ।।

एऊणवीसदिम-पक्खे इच्छिय-दीव-सिण्णगा-णाहाणं आयामादो तदणंतर-बाहिर-ट्ठिविट्ठ-दीवस्स वा णीररासिस्स वा आयाम-वड्ढी-गदे सिज्झइ ।।

अर्थ—उन्नीसवें-पक्षमें इच्छित द्वीप-समुद्रोंके आयामसे उनके अनन्तर-बाह्य-भागमें स्थित द्वीप अथवा समुद्रके आयामकी वृद्धि सिद्ध की जाती है ।।

प्रथम-पक्ष

पूर्वोक्त उन्नीस विकल्पोंमेंसे प्रथमपक्ष द्वारा दो सिद्धान्त कहते हैं—

(१) अपरवर्ती द्वीप-समुद्रके सम्मिलित एक दिशा सम्बन्धी विस्तारसे पूर्ववर्ती द्वीप या समुद्रका विस्तार १ लाख यो० अधिक होता है—

तत्थ पढम-पक्खे अप्पबहुसं वत्तइस्सामो । तं जहा-जंबूदीवस्स सयल-विक्खंभादो लवणसमुद्दस्स एय-दिस-रुंदं एक्क-लक्खेणब्भहियं होइ । जंबूदीवेणब्भहिय-लवणसमुद्दस्स एय-दिस-रुंदादो धादइसंडस्स एय-दिस-रुंदं एक्क-लक्खेणब्भहियं होइ । एवं जंबूदीव-सयल-रुंदेणब्भहियं अब्भंतरिम रयणायर-दीवाणं एय-दिस-रुंदादो तदणंतर बाहिर-

णिविट्ठ-दीवस्स वा तरंगिणी-रमणस्स वा एय-दिस-रूंदं एक्क-लक्खेणब्भहियं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ।

अर्थ—उपर्युक्त उन्नीस विकल्पोंमेंसे प्रथम पक्षमें अल्पबहुत्वको कहते हैं वह इसप्रकार है—

जम्बूद्वीपके समस्त विस्तारकी अपेक्षा लवण समुद्रका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार एक लाख योजन अधिक है। जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार एक लाख योजन अधिक है। इसप्रकार जम्बूद्वीपके समस्त विस्तार सहित अभ्यन्तर समुद्र एवं द्वीपोंके सम्मिलित एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके आगे (बाहर) स्थित द्वीप अथवा समुद्रका विस्तार एक-एक लाख योजन अधिक है। इसप्रकार स्वयम्भूरमण समुद्र-पर्यन्त ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहां जम्बूद्वीपसे लेकर इष्ट द्वीप या समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी सम्मिलित विस्तारसे उनके आगे स्थित द्वीप या समुद्रका विस्तार निकाला जाता है। इस तुलनामें वह एक-एक लाख योजन अधिक रहता है। यथा—जम्बूद्वीपके पूर्ण विस्तारकी अपेक्षा लवणसमुद्रका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार एक लाख योजन अधिक है।

पुनः जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रका विस्तार यदि एक दिशामें सम्मिलित किया जाय तो ३ लाख योजन होगा, जिसकी अपेक्षा धातकीखण्डद्वीपका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार ४ लाख योजन होनेसे (४ लाख — ३ लाख =) १ लाख योजन अधिक है।

सव्वट्ठो-आगमण-हेदुं इमा सुत्त-गाहा—

इच्छिय-दीवुवहीणं[1], चउ-गुण-रूंदम्मि पढम-सूइ-जुदं ।
तिय-भजिदं तं सोहसु, दुगुणिद-रूंदम्मि सा हवे वड्ढी ॥२४७॥

अर्थ—इस वृद्धि-प्रमाणको प्राप्त करनेके लिए यह गाथा सूत्र है—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंके चौगुने विस्तारमें आदि सूचीके प्रमाणको मिलाकर तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे विवक्षित द्वीप-समुद्रके दुगुने विस्तारमेंसे कम कर देनेपर शेष वृद्धिका प्रमाण होता है ॥२४७॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त गाथामें शेष वृद्धिका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि बताई गई है। जिसका सूत्र इसप्रकार है—

---

१. ब. ब. क. ज. दीवोवहीणं।

शेषवृद्धि = २ (इष्ट द्वीप या समुद्रका व्यास) − $\left(\frac{४ \times \text{इष्ट द्वीप या समुद्रका व्यास} + \text{उसकी आदि सूची}}{३}\right)$

= $\frac{२ \times (\text{इष्टद्वीप या समुद्रका व्यास}) - (\text{उसकी आदि सूची})}{३}$

उदाहरण—यहाँ पुष्करवरद्वीप विवक्षित है अतः उसकी विस्तार वृद्धिका प्रमाण निकालना है। पुष्करवरद्वीपका व्यास १६ लाख योजन तथा उसकी आदि सूची २६ लाख योजन है, अतएव यहाँ—

शेषवृद्धि = $\left(२ \times १६ \text{ लाख यो०}\right) - \left(\frac{४ \times १६ \text{ ला० यो०} + २६ \text{ ला० यो० आदि सूची}}{३}\right)$

= ३२ लाख यो० − $\frac{६३ \text{ ला० यो०}}{३}$

= ३२ लाख यो० − ३१ लाख यो० = १ लाख योजन शेष वृद्धि।

(२) इष्ट द्वीप या समुद्रकी अर्ध आदिम सूची प्राप्त करनेकी विधि—

इट्ठस्स दीवस्स वा सायरस्स वा आदिम-सूइस्सद्धं
लक्खद्ध-संजुदस्स आणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—
इच्छिय-दीवुवहीणं,[1] रुंदं दो-लक्ख-विरहिदं मिलिदं।
बाहिर-सूइम्मि तदो, पंच-हिदं तत्थ जं लद्धं ॥२४८॥
आदिम-सूइस्सद्धं, लक्खद्ध-जुदं हवेदि इट्ठस्स।
एवं लवणसमुद्द - प्पहुदिं आणेज्ज अंतो त्ति ॥२४९॥

अर्थ—विवक्षित द्वीप अथवा समुद्रकी अर्ध-लाख योजनोंसे संयुक्त अर्ध आदिम सूची प्राप्त करने हेतु ये सूत्र-गाथाएँ हैं—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंके विस्तारमेंसे दो लाख कम करके शेषको बाह्य सूचीमें मिलाकर पाँचका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो, उतना अर्ध-लाख सहित इष्ट द्वीप अथवा समुद्रकी अर्ध-आदिम सूचीका प्रमाण होता है। इसीप्रकार लवणसमुद्रसे लेकर अन्तिम समुद्र पर्यन्त (सूची प्रमाणको) लाना चाहिए ॥ २४८-२४९ ॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त गाथासे सम्बन्धित सूत्र इसप्रकार है—अर्ध लाख यो० + इष्ट द्वीप समुद्रकी अर्ध आदि सूची = ५०००० योजन + $\frac{\text{आदिम सूची}}{२}$

---

१. ब. दीवमहीणं, ब. क. ज. दीवोवहीणं।

$$= \frac{\text{उसकी बाह्य सूची} + (\text{उसका व्यास} - २०००००\ \text{यो०})}{५}$$

उदाहरण—मानलो—धातकीखण्डद्वीपकी अर्धलाख योजन सहित आदिम सूची प्राप्त करना है। धातकीखण्डका व्यास ४ लाख योजन, आदिम सूची व्यास ५ लाख योजन और बाह्य सूची व्यास १३ लाख योजन प्रमाण है। इसकी अर्धलाख (५००००) यो० सहित अर्ध आदि (५ लाख ÷ २ = २५०००० यो०) सूची प्राप्त करनेके लिए—

$$= \frac{१३\ \text{लाख यो०} + (४\ \text{लाख यो०} - २\ \text{लाख यो०})}{५}$$

$$= \frac{१३\ \text{ला० यो०} + २\ \text{लाख यो०}}{५}$$

$$= \frac{१५\ \text{ला० यो०}}{५} = ३\ \text{लाख योजन}$$

$$= ५०००० \text{ यो०} + २५०००० \text{ योजन}।$$

द्वितीय-पक्ष

उन्नीस विकल्पोंमेंसे द्वितीय पक्षमें दो सिद्धान्त कहते हैं

(१) विवक्षित सम्पूर्ण अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा अग्रिम द्वीप या समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें १½ लाख यो० की वृद्धि होती है—

बिदिय - पक्खे अप्पबहुलं [1]अवहरसामो - जंबूदीवस्सद्धस्स विक्खंभादो लवण-समुद्दस्स एय-दिस-रुंदं विसेसब्भहियं होदि। जंबूदीवस्सद्धस्स विक्खंभेण सि बद्धेणब्भहिय-लवणसमुद्दस्स एय-दिस-रुंदादो तदणंतर-उवरिम-दीवस्स वा सायरस्स वा एय-दिस-रुंद-वड्ढी विसेसब्भहियं होऊण गच्छदि जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ॥

अर्थ— द्वितीय-पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—जम्बूद्वीपके अर्ध-विस्तारकी अपेक्षा लवणसमुद्र का एक-दिशा-सम्बन्धी विस्तार डेढ़ लाख योजन अधिक है।

जम्बूद्वीपके अर्धविस्तार सहित लवणसमुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डद्वीपका एक दिशा-सम्बन्धी विस्तार भी डेढ़ लाख योजन अधिक है।

---

१. ब. ज. अप्पहस्सामो, ब. अवेदस्सामो।

इसीप्रकार सम्पूर्ण अभ्यन्तर द्वीप-समुद्रोंके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीप अथवा समुद्रके एक दिशा विस्तारमें स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त डेढ़ लाख योजन वृद्धि होती गई है ।।

तम्बड्ढी-आणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—

इच्छिय-दीवुवहीणं,[1] बाहिर-सूइस्स अद्धमेत्तम्मि ।
आदिम - सूई सोहसु, अं[2] सेसं तं च परिवड्ढी ।।२५०।।

अर्थ—इस वृद्धि-प्रमाणको प्राप्त करने हेतु ये सूत्र-गाथाएँ हैं—

इच्छित द्वीप-समुद्रोंकी बाह्य सूचीके अर्ध-प्रमाणमेंसे आदिम सूचीका प्रमाण घटा देनेपर जो शेष रहे उतना उस वृद्धि का प्रमाण है ।। २५० ।।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके अर्ध-विस्तार सहित इष्ट द्वीप या समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा उससे अग्रिम द्वीप या समुद्रका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार १½ लाख योजन अधिक होता है। इस वृद्धिका प्रमाण प्राप्त करने हेतु इष्ट द्वीप या समुद्रकी बाह्य सूचीके अर्ध प्रमाणमेंसे उसीकी आदि सूचीका प्रमाण घटा देना चाहिए। उसका सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या समुद्रके विस्तारमें उपर्युक्त वृद्धि --

=[½ (इष्टद्वीप या समुद्रकी बाह्यसूची) — (उसकी आदि सूची)]= १½ ला० यो० ।

उदाहरण—यहाँ इष्ट कालोदक समुद्र है। इसके विस्तारमें उपर्युक्त वृद्धि प्राप्त करना है। कालोदक समुद्रका विस्तार ८ लाख यो०, बाह्य सूची २९ लाख योजन और आदि सूचीका प्रमाण १३ लाख योजन है। तदनुसार—

कालोदकसमुद्रके विस्तारमें उपर्युक्त वृद्धि—

$=\frac{२९०००००}{२}-१३०००००$ योजन ।

$=१४५००००-१३०००००$ योजन ।

=१५००००० या १½ लाख योजन वृद्धि ।

(२) इष्ट द्वीप या समुद्रसे अभ्यन्तर द्वीप या समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार अपनी आदि सूचीके अर्ध-बाह्य-प्रमाण होता है—

---

१. द. दीवोवहीणं । २. द. ब. क. ज. तं जेसं तत्थ ।

इच्छिय-दीवुवहीओ,[1] हेट्ठिम-दीवोवहीण[2] सं मिलिदं ।
सग-सग - आदिम - सुइस्सद्धं लवणादि - चरिमंतं ॥२५१॥

अर्थ—लवणसमुद्रसे लेकर अन्तिम समुद्र पर्यन्त इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन (पहिलेके) द्वीप-समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार अपनी-अपनी आदिम सूचीके अर्ध-भाग-प्रमाण होता है ॥ २५१ ॥

विशेषार्थ—मानलो-पुष्करवरद्वीप इष्ट है । इसका विस्तार १६ लाख यो० और आदि सूची २९ लाख यो० है । इस आदि सूचीका अर्ध भाग (२९ लाख ÷ २ =) १४५०००० योजन होता है । जो जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, धातकीखण्ड और कालोद समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी सम्मिलित विस्तार (१ ला० + २ ला० + ४ ला० + ८ लाख =) १४५०००० योजनके बराबर है । इसकी सिद्धिका सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप या समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार = अपनी-आदि सूची ÷ २ ।

उदाहरण—मानलो- इष्ट द्वीप पुष्करवरद्वीप है । उसके पहले स्थित द्वीप-समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार—

$$= \frac{\text{पुष्करवर द्वीपकी आदि सूची}}{२}$$

$$= \frac{२९ \text{ लाख यो०}}{२} = १४५०००० \text{ योजन} ।$$

तृतीय-पक्ष

विवक्षित समुद्रके विस्तारकी अपेक्षा उससे अग्रिम समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें उत्तरोत्तर चौगुनी वृद्धि होती है—

तदिय-पक्खे अप्पबहुगं वत्तइस्सामो—

लवणसमुद्दस्स एय-दिस-खंडादो कालोदय-समुद्दस्स एय-दिस-खंड-वड्ढि ह्रस्स-संखेज्जगुणहियं होदि । कालोदग-समुद्दस्स एय-दिस-खंडादो पोक्खरवर समुद्दस्स एय-दिस-खंड - वड्ढी चउदोस - संखेज्जगुणहियं होदि । एवं कालोदय - समुद्दप्पहुदि विवक्खिद-

---

१. ब. क. ज. दीवउवहीओ, ब. दीवोवहीओ । २. ब. दीवाउवहीण ।

तदियविचारस्स-सलाहावो तदणंतरोवरिम-खोररासिस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी चउ-गुणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ।।

अर्थ—तृतीय-पदमें अल्पबहुत्व कहते हैं—

लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा कालोदकसमुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि छह लाख योजन अधिक है। कालोदकसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर समुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि चौबीस लाख योजन अधिक है। इसप्रकार कालोदक-समुद्रसे स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त विवक्षित समुद्रके विस्तारकी अपेक्षा उसके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें उत्तरोत्तर चौगुनी वृद्धि होती गई है।।

विशेषार्थ—लवणसमुद्रका एक दिशाका विस्तार दो लाख योजन है। उसकी अपेक्षा कालोद समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी ८ लाख योजन विस्तारकी वृद्धि (८ लाख यो० — २ लाख यो० =) ६ लाख योजन है। कालोदके एक दिशा सम्बन्धी ८ लाख यो० विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी ३२ लाख यो० विस्तारकी वृद्धि (३२ लाख यो० — ८ लाख यो० = २४ लाख योजन अधिक है। पुष्करवर समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी ३२ लाख योजन विस्तार की अपेक्षा वारुणीवरसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी १२८ लाख यो० की वृद्धि (१२८ लाख यो० — ३२ लाख यो० =) ९६ लाख योजन है, जो पुष्करवर समुद्रकी वृद्धिसे (२४ × ४ = ९६) चौगुनी है। इसप्रकार स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिए।

अन्तिम स्वयम्भूरमणसमुद्रकी वृद्धि

तस्स अंतिम - वियप्पं वत्तइस्सामो—अहिंदवर-सायरस्स एय-दिस-रुंदादो सयंभूरमण - समुद्दस्स एय - दिस - रुंद-वड्ढी बारसुत्तर - सएण भजिद-ति-गुण-सेढीओ पुणो छप्पण्ण-सहस्स-दु-सद-पण्णास-जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा—$\frac{रू}{११२}$। एवस्स चए जोयणाणि १६२५०।

अर्थ—उसका अन्तिम विकल्प कहते हैं—अहीन्द्रवर-समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तार की अपेक्षा स्वयम्भूरमण-समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें एकसौ बारहसे भाजित तिगुनी जगच्छ्रेणियाँ और छप्पन हजार दो सौ पचास योजन-प्रमाण वृद्धि हुई है।

उसकी स्थापना इसप्रकार है—$\frac{\text{जगच्छ्रेणी} \times ३}{११२}$ + १६२५० यो०।

उपर्युक्त वृद्धि प्राप्त करनेकी विधि

तब्बड्ढीणं आणयण-सुत्त-गाहा—

इच्छिय-जलणिहि-रुंदं, ति-गुणं वलिदूण तिण्णि-सयसूणं ।
ति-सयसूण-ति-गुण-वासे सोहिय वलिदम्मि सा हवे वड्ढी ।।२५२।।

अर्थ—इन वृद्धियोंको लानेके लिए यह सूत्र गाथा है—

इच्छित समुद्रके विस्तारको आधा करके उसमेंसे तीन लाख कम कर देनेपर जो शेष रहे उसे तीन लाख कम विस्तारमेंसे घटाकर शेषको आधा करने पर वह वृद्धि-प्रमाण आता है ॥ २५२ ॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त गाथासे सम्बन्धित सूत्र इसप्रकार है —

इष्ट समुद्रके विस्तारमें वर्णित वृद्धि—

$$=\frac{(३\times \text{इष्ट समुद्रका व्यास}-३००००० \text{यो०})-\left(\frac{३\times \text{इष्ट समुद्रका व्यास}}{२}-३००००० \text{यो०}\right)}{२}$$

उदाहरण—मानलो-कालोद समुद्रकी अपेक्षा पुष्करवर समुद्रके विस्तारमें हुई वृद्धिका प्रमाण ज्ञात करना है।

सूत्रानुसार—

$$\text{वर्णित वृद्धि}=\frac{(३\times ३२ \text{ ला० यो०}-३००००० \text{ यो०})-\left(\frac{३\times ३२ \text{ला० यो०}}{२}-३००००० \text{यो०}\right)}{२}$$

$$=\frac{९३००००० \text{ यो०}-४५००००० \text{ यो०}}{२}$$

$$=\frac{४८००००० \text{ यो०}}{२}=२४००००० \text{ यो० वृद्धि।}$$

अब यहाँ गाथा-सूत्रानुसार अन्तिम विकल्पमें (अहीन्द्रवर-समुद्रकी अपेक्षा स्वयम्भूरमण समुद्रके विस्तारमें) वर्णित वृद्धि कहते हैं—

वर्णित वृद्धि=

$$=\frac{\{३\times(\text{घन०}+७५००० \text{ यो०})-३००००० \text{ यो०}\}-\{३\times(\text{घन०}+७५००० \text{ यो० })-३ \text{ ला० यो०}\}}{२}$$

$$=\frac{३\times(\text{घन०}+७५०००)-३००००० \text{ यो०}-\{३(\text{घन०}+७५०००)-३००००० \text{ यो० }\}}{२}$$

$$=\frac{३(\text{घन०}+७५०००)}{४}$$

$$=\frac{३\ \text{घन०}}{२\times२\times२८}+\frac{३\times७५०००}{४} \text{ यो०}$$

$= \frac{३ \text{ जगच्छ्रेणी}}{११२} + ५६२५०$ योजन।

चतुर्थ-पक्ष

चतुर्थपक्षके अल्पबहुत्वमें दो सिद्धान्त कहते हैं।

(१) अधस्तन समुद्र-समूहसे उसके आगे स्थित समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें दो लाख कम चौगुनी वृद्धि होती है—

चउत्थ-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामो—लवणणीर-रासिस्स एय-दिस-रुंदादो कालोदग-समुद्दस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी छल्लक्खेणब्भहियं होइ। लवण-समुद्द-संमिलिद-कालोदग-समुद्दादो पोक्खरवर-समुद्दस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी बावीस - लक्खेण अब्भहियं होदि। एवं हेट्ठिम-सायराणं समूहादो तदणंतरोवरिम-णीररासिस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी चउ-गुणं दो-लक्खेहि रहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति॥

अर्थ—चतुर्थ-पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा कालोद समुद्रका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार छह लाख योजन अधिक है। लवणसमुद्र सहित कालोदसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरसमुद्रकी एक दिशा सम्बन्धी विस्तार-वृद्धि बाईस लाख योजन अधिक है। इसप्रकार अधस्तन समुद्र-समूहसे उसके अनन्तर स्थित अग्रिम समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें दो लाख कम चौगुनी वृद्धि स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त होती गई है॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी २ लाख यो० विस्तारकी अपेक्षा कालोदक-समुद्रका एक दिशा सम्बन्धी ८ लाख यो० विस्तार (८ ला० यो० — २ ला० यो० =) ६ लाख यो० अधिक है। लवणसमुद्र सहित कालोदकके एक दिशा सम्बन्धी (२ ला० यो० + ८ ला० यो० =) १० लाख योजन विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर समुद्रकी एक दिशा सम्बन्धी ३२ ला० यो० विस्तारमें वृद्धिका-प्रमाण (३२ लाख यो० — १० लाख यो० =) २२ लाख यो० है।

इसप्रकार अधस्तन समुद्र समूहसे उस समुद्रके बादमें (अनन्तर) स्थित अग्रिम समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें २ लाख योजन कम ४ गुनी वृद्धि स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त होती गई है। अर्थात् (६ लाख × ४)—२ लाख = २२ लाख योजनोंकी वृद्धि होती गयी है॥

स्वयम्भूरमणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धिका प्रमाण

तस्स अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो-सयंभूरमणसमुद्दस्स हेट्ठिम-सयल-सायराणं एय-दिस-रुंद-समूहादो सयंभूरमण-समुद्दस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी छ-क्खेहि भजिद-रज्जू

पुणो तिदय-हिद तिण्णि-लक्ख-पण्णास-सहस्स-जोयणाणि अब्भहियं होदि— ४½ अब्भ-जोयणाणि ३५०,००० ।

अर्थ—उसका अन्तिम विकल्प कहते हैं - स्वयम्भूरमण-समुद्रके अधस्तन सम्पूर्ण समुद्रोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तार-समूहकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणसमुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें सह-स्रपोंसे भाजित एक राजू और तीनसे भाजित तीन लाख पचास हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है। इसकी स्थापना (१ या ½ राजू) + ३५००० योजन ।

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमण समुद्रके पहलेके सभी समुद्रोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तार-समूहकी अपेक्षा अन्तिम समुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें ½ राजू + ३५००० योजनोंकी वृद्धि होती है।

तव्वड्ढी-आगमण-हेदुमिमं गाहा-सुत्तं—

अड-लक्ख-हीण-इच्छिय-वासं बारसहि भजिदे लद्धं ।
सोहसु ति-चरण-भागेणाहव वासम्मि सं हवे वड्ढी ॥२५३॥

अर्थ—इस वृद्धिको प्राप्त करने हेतु यह गाथा—सूत्र कहते हैं—इच्छित समुद्रके विस्तारमेंसे आठ लाख कम करके शेषमें बारहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे विस्तारके तीन चतुर्थ भागोंमेंसे घटा देनेपर जो अवशिष्ट रहे उतनी विवक्षितसमुद्रके विस्तारमें वृद्धि होती है ॥२५३॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{3}{4} \times (\text{इष्ट समुद्रका व्यास}) - \left(\frac{\text{उसका व्यास} - ८००००० \text{ यो०}}{१२}\right)$$

उदाहरण—मानलो-इष्ट समुद्र वारुणीवरसमुद्र है। इसका विस्तार १२८ लाख योजन है। तदनुसार उसमें—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{3}{4} \times (१२८०००००\ \text{यो०}) - \left(\frac{१२८०००००-८०००००}{१२}\ \text{यो०}\right)$$
$$= ९६०००००\ \text{यो०} - १०००००० = ८६००००० \text{ योजन वृद्धि।}$$

स्वयम्भूरमणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारका प्रमाण $\frac{\text{जग०}}{२८} + ३५०००$ यो० है। अतः इसकी—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{3}{4} \times \left[\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{२८} + ३५०००\ \text{यो०}\right] - \left[\frac{\text{जग०}}{२८} + ३५००० - ८००००० \text{ यो०}\right]$$
$$= \frac{3}{११२}\ \text{जगच्छ्रेणी} - \frac{1}{११२}\ \text{जग०} + \frac{3}{4} \times ३५००० - \frac{३५०००}{१२} + ८००००००$$
$$= \frac{९\ \text{जग०}}{३३६} - \frac{१\ \text{जग०}}{३३६} + ३५००० \left(३ - \frac{१}{३}\right) + २००००००$$

$= \frac{८ \text{ जग०}}{३३^{२}} + \left(\frac{७५०००}{१} \times \frac{६}{१} + \frac{२०००००}{१} \right)$ यो०

$= \frac{\text{जग०}}{६६} + \left(\frac{१५००००}{१} + \frac{२०००००}{१} \right)$ यो०

$= \frac{\text{जग०}}{४९} + \frac{३५००००}{१}$ योजन ।

(२) इच्छित वृद्धिसे अधस्तन समस्त समुद्रों-सम्बन्धी एक दिशाका विस्तार प्राप्त करनेकी विधि—

इच्छिय-वड्ढीदो हेट्ठिम-सयल-सायराणं एय-दिस-रुंद-समासाणं आणयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

सग-सग-वड्ढि-पमाणे, दो-लक्खं अवणिदूण अद्ध-कदे ।
इच्छिय - वड्ढीदो तदो हेट्ठिम - उवहीण - संखं ॥२५४॥

अर्थ—इच्छित वृद्धिसे अधस्तन समस्त समुद्रों-सम्बन्धी एक दिशाके विस्तार-योगोंको प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है—

अपनी-अपनी वृद्धिके प्रमाणमेंसे दो लाख कम करके शेषको आधा करनेपर इच्छित वृद्धि-वाले समुद्रसे पहलेके समस्त समुद्रों सम्बन्धी विस्तारका प्रमाण प्राप्त होता है ॥ २५४ ॥

विशेषार्थ—गाथा २५३ की प्रक्रियासे इस गाथाकी प्रक्रियाका फल विपरीत है। यहाँ इच्छित समुद्रकी वृद्धि द्वारा उस समुद्रसे पहलेके (अधस्तन) समुद्रों-सम्बन्धी एक दिशाके विस्तार योगोंको प्राप्त करनेकी विधि दर्शाई गयी है।

इष्ट वृद्धिवाले समुद्रके पहलेके समस्त समुद्रों सम्बन्धी विस्तारका प्रमाण प्राप्त करने हेतु सूत्र इसप्रकार है—इष्ट समुद्रसे पहलेका समस्त समुद्रों सम्बन्धी विस्तार—

$= \frac{\text{वर्णित वृद्धि} - २००००० \text{ यो०}}{२}$

उदाहरण—मानलो-बारहवीं समुद्रकी वृद्धि इष्ट है। इस समुद्रकी वृद्धिका प्रमाण ८६ लाख योजन है अतः इसके पहलेके समस्त समुद्रोंका विस्तार (लवणसमुद्र २ लाख+कालोदका ८ लाख+पुष्करवर समुद्रका ३२ लाख=) ४२ लाख योजन है। यथा—

अधस्तन समुद्रोंका सम्मिलित विस्तार $= \frac{८६०००० - २००००}{२}$

$= ४२००००$ योजन ।

पंचम-पक्ष

इष्ट द्वीपके विस्तारमें उसके आगे स्थित द्वीपके विस्तारमें तिगुनी वृद्धि होती है—

पंचम-पक्खे अप्पबहुत्तं वत्तइस्सामो—सयल-जम्बूदीवस्स रुंदादो धादइसंडस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी तिय-लक्खेणब्भहियं होदि । धादईसंडस्स एय-दिस-रुंदादो पोक्खरवर-दीवस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी बारस-लक्खेणब्भहियं होदि । एवं तदणंतर-हेट्ठिम-दीवादो अणंतरोवरिम-दीवस्स वास-वड्ढी ति-गुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति ।।

अर्थ—पाँचवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—जम्बूद्वीपके सम्पूर्ण विस्तारसे धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें तीन लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है। धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारसे पुष्करवर द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें बारह लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है। इसप्रकार स्वयम्भूरमणद्वीप पर्यन्त अनन्तर अधस्तनद्वीपसे उसके आगे स्थित द्वीपके विस्तारमें तिगुनी वृद्धि होती गई है ।।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके पूर्ण (१ लाख यो०) विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी ४ लाख यो० विस्तारमें (४ — १=) ३ लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है। धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी ४ लाख यो० विस्तारसे पुष्करवरद्वीपके एक दिशा सम्बन्धी १६ लाख यो० विस्तारमें (१६ लाख — ४ लाख =) १२ लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है।

इसप्रकार यहां सभी अधस्तनद्वीपोंसे स्वयम्भूरमणद्वीप पर्यन्त आगे-आगे स्थित द्वीपके विस्तारमें (१२ लाख — ३ लाख = ९ लाख यो० अर्थात्) ३ गुनी वृद्धि होती है।

अहीन्द्रवरद्वीपसे अन्तिम स्वयम्भूरमणद्वीपके विस्तारमें होनेवाली वृद्धिका प्रमाण—

तस्स अंतिम-विअप्पं वत्तइस्सामो-दुचरिम-अहिंदवर-दीवादो अंतिम-सयंभूरमण-दीवस्स वड्ढि-पमाणं तिय-रज्जूओ बत्तीस-हरेहि अवहरिद-पमाणं पुणो अट्ठावीस-सहस्स-एक्क-सय-पणुवीस-जोयणेहि अब्भहियं होइ । ३ । ३२ । अध्व जोयण २८१२५ ।।

अर्थ—उसका अन्तिम विकल्प कहते हैं—द्विचरम अहीन्द्रवर-द्वीपसे अन्तिम स्वयम्भूरमण-द्वीपके विस्तारमें होने वाली वृद्धिका प्रमाण बत्तीससे भाजित तीन राजू और अट्ठाईस हजार एकसौ पच्चीस योजन अधिक है। अर्थात् राजू $\frac{3}{32}$ + २८१२५ योजन है ।।

विशेषार्थ—द्विचरम अहीन्द्रवरद्वीपसे अन्तिम स्वयम्भूरमण द्वीपके विस्तारमें अधिक वृद्धि का प्रमाण ३२ से भाजित ३ राजू तथा २८१२५ योजन है।

तम्मद्दीणं आणयणे गाहा-सुत्तं—

इच्छिय-दीवे रुंदं, ति-गुणं वलिदूण तिण्णि-लक्खूणं ।
ति-लक्खूण-ति-गुण-वासे, सोहिय वलिदे हुवे वड्ढी ॥२५५॥

अर्थ—इस वृद्धि प्रमाणको लानेके लिए यह गाथा सूत्र है—इच्छित द्वीपके तिगुने विस्तार-को आधा करके उसमेंसे तीन लाख कम कर देनेपर जो शेष रहे उसे तीन लाख कम तिगुने विस्तारमेंसे घटाकर शेषको आधा करनेपर वृद्धिका प्रमाण होता है ॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{(३ \times \text{इष्ट द्वीपका व्यास} - ३०००००) - (३ \times \text{उसका विस्तार} - ३०००००)}{२}$$

उदाहरण—मानलो—इष्टद्वीप पुष्करवरद्वीप है। जिसका विस्तार १६ लाख योजन है। उसकी

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{(३ \times १६०००००) - ३०००००) - (३ \times \frac{१६०००००}{२} - ३०००००)}{२}$$

$$= \frac{४८०००००}{२} - \frac{२१०००००}{२} = १२००००० \text{ योजन वृद्धि।}$$

इसीप्रकार अन्तिम विकल्पमें इष्टद्वीप स्वयम्भूरमण द्वीप है। जिसका विस्तार $\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ योजन है। इसलिए उसकी

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{[३ \times (\frac{\text{जग०}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}) - ३०००००] - [३ \times \frac{१}{२} \times (\frac{\text{जग०}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}) - ३०००००]}{२}$$

$$= \frac{३ (\frac{\text{जग०}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}) - ३०००००ं - \frac{३}{२} (\frac{\text{जग०}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}) + ३०००००}{२}$$

$$= \frac{\frac{३}{२} (\frac{\text{जग०}}{\text{राजू}} + \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}})}{२}$$

$$= \frac{३ \text{ जग०}}{२ \times २ \times २ \times ४ \times ७} + \frac{३ \times ७२०००}{२ \times २ \times २} = \frac{३ \text{ राजू}}{३२} + २०१२५ \text{ योजन।}$$



षष्ठम-पक्ष

छठे पक्षके अल्पबहुत्वमें दो सिद्धान्त कहते हैं—

(१) इच्छित द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा अग्रिम द्वीपके विस्तारमें २½ लाख कम चौगुनी वृद्धि होती है—

छट्ठम-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामो । तं जहा—जंबूदीवस्स अद्ध-रुंदादो धादइसंडस्स एग-दिस-रुंदं आहट्ठ-लक्खेणब्भहियं होदि ३५०००० । जंबूदीवस्स अद्धं च सम्मिलिदे धादईसंडस्स एग-दिस-रुंदादो पोक्खरवर-दीवस्स एग-दिस-रुंद-वड्ढी एयारस-लक्ख-पण्णास-सहस्स-जोयणेहि अब्भहियं होइ ११५०००० । एवं धादईसंड-प्पहुदि-इच्छिय-दीवस्स एग-दिस-रुंद-वड्ढीदो तदणंतर-उवरिम-दीवस्स वड्ढी चउ-गुणं अड्ढाइज्ज-लक्खेणूणं होदूण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीवो त्ति ॥

अर्थ—छठे पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है—जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डका एक दिशा-सम्बन्धी विस्तार साढ़े तीन लाख योजन अधिक है—३५०००० । जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तार सहित धातकीखण्डके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि ग्यारह लाख पचास-हजार योजन अधिक है—११५०००० । इसप्रकार धातकीखण्ड-प्रभृति इच्छित द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा तदनन्तर अग्रिम द्वीपके विस्तारमें अढ़ाई लाख कम चौगुनी वृद्धि स्वयम्भूरमण द्वीप तक होती चली गई है ।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तारकी अपेक्षा धातकीखण्डका एक दिशा सम्बन्धी विस्तार (४ लाख यो० — ½ लाख यो०=) ३½ लाख योजन अधिक है। पुनः जम्बूद्वीपके अर्ध विस्तार सहित धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि (१६ — ४½ लाख यो०)=११५०००० योजन है ।

इसप्रकार धातकीखण्ड आदि इष्ट द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा बादमें आगे आनेवाले द्वीपके विस्तारमें २½ लाख यो० कम ४ गुनी वृद्धि अन्तिम द्वीप तक चली गई है ।

अधस्तन द्वीपोंके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणद्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि

तत्थ अंतिम-विकप्पं वत्तइस्सामो—[सयंभूरमणदीवस्स हेट्ठिम-सयल-दीवाणं एग-दिस-रुंद-समूहादो सयंभूरमणदीवस्स एग-दिस-रुंद-वड्ढी] अउरासीदि - रूवेहिं

भजिद-सेढी पुणो तिय-छिव-तिण्णि-लक्ख-पणुवीस-सहस्स-जोयणेहि अब्भहियं होइ । तस्स ठवणा ८४ लक्ख-जोयण ३२५००० ।

अर्थ—इनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमण-द्वीपसे पहलेके समस्त द्वीपोंके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणद्वीपके एक-दिशा सम्बन्धी विस्तारमें चौरासी रूपोंसे भाजित जगच्छ्रेणी और तीनसे भाजित तीन लाख पच्चीस हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है । उसकी स्थापना इसप्रकार है—(जगच्छ्रेणी ÷ ८४) + ३२५००० ।

तब्बड्ढीणं आणयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

अंतिम-रंद-पमाणं, लक्खूणं तीहि भाजिदं दुगुणं ।
दलिद-तिय-लक्ख-जुत्तं, परिवड्ढी होदि दीवाणं ॥२५६॥

अर्थ—उन वृद्धियोंको प्राप्त करने हेतु गाथा-सूत्र—

एक लाख कम अन्तिम विस्तार-प्रमाणमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे दुगुना करके अर्धित तीन लाख (३०००००) और मिला देनेपर द्वीपोंकी वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २५६ ॥

उदाहरण—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{\text{इष्ट द्वीपका व्यास} - १००००० }{३} \times २ + \frac{३००००० }{२}$$

उदाहरण—मानलो—पुष्करवरद्वीपकी वर्णित-वृद्धि निकालना है जिसका व्यास १६००००० यो० है । सूत्रानुसार

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{१६००००० - १००००० }{३} \times २ + \frac{३००००० }{२}$$

$$= (५००००० \times २) + १५००००० = ११५००००ॐ \text{ योजन} ।$$

इसीप्रकार स्वयम्भूरमणद्वीपकी

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \left(\frac{\text{जग०}}{२८×८४} + \frac{३२५००० - १००००० }{३} \right) \times २ + \frac{३००००० }{२}$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८×८४} \times २ \right) + \left(\frac{३२५००० }{३} \times २ \right) - \left(\frac{१००००० }{३} \times २ \right) + \frac{३००००० }{२}$$

$$= \frac{\text{जग०}}{८४} + \left(\frac{३२५००० }{३} - \frac{१००००० }{३} + \frac{१५००००० }{२} \right) \text{ यो०}$$

$$= \frac{\text{जग०}}{८४} + \frac{७५०००० - २००००० + ४५००००० }{३} \text{ यो०}$$

$= \frac{\text{अग्र०}}{२५} + ११५००० \text{ योजन} ।$

(२) इष्टद्वीपसे पहलेके द्वीपोंके विस्तार समूहको
प्राप्त करनेकी विधि

इच्छिय-दीवादो हेट्ठिम-दीवाणं रुंद-समासाणं आणयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

चउ-भजिद-इट्ठ-रुंदं, [1]हेट्ठं च ट्ठविदूण तत्थेक्कं ।
लक्खूणे तिय-भजिदे, उवरिम-रासिम्मि सम्मिलिदे ॥२५७॥

लक्खद्ध हीण-कदे, जंबूदीवस्स अद्ध - पहुदि तदो ।
इट्ठस्स दुचरिमंतं, दीवाणं मेलणं होदि ॥२५८॥

अर्थ—इच्छित द्वीपसे पहलेके द्वीपोंके विस्तार-समूहको प्राप्त करने हेतु गाथा-सूत्र—

चारसे भाजित इष्ट द्वीपके विस्तारको अलग रखकर इच्छित द्वीपसे पहले द्वीपका जो विस्तार हो उसमेंसे एक लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे उपरिम राशिमें मिलाकर आधा लाख कम करनेपर अर्ध जम्बूद्वीपसे लेकर इच्छित द्विचरम (उपान्तिम) द्वीप तक उन द्वीपोंका सम्मिलित विस्तार होता है ॥ २५७-२५८ ॥

विशेषार्थ—अर्धजम्बूद्वीपसे इष्ट द्वीप पर्यन्तके द्वीपोंका सम्मिलित विस्तार प्राप्त करने हेतु दोनों गाथाओंके अनुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{सम्मिलित विस्तार} = \frac{\text{इष्ट द्वीपका विस्तार}}{४} + \frac{\text{इष्ट द्वीपसे पहलेके द्वीपका व्यास} - १००००}{३} - \frac{१००००}{२}$$

उदाहरण—इस सूत्रसे अर्धजम्बूद्वीप सहित पुष्करवर द्वीप तकका विस्तार योग प्राप्त करने हेतु उससे आगेके वारुणीवर-द्वीपका विस्तार ६४ लाख योजन और पुष्करवर का विस्तार १६ लाख योजन प्रमाण है । तदनुसार—

$$\text{उपर्युक्त सम्मिलित विस्तार} = \frac{६४०००००}{४} + \frac{१६०००००-१००००००}{३} - \frac{१००००००}{२}$$

$$= १६००००० + ५००००० - ५०००० \text{ योजन} ।$$

$$= २०५०००० \text{ योजन} ।$$

---

१. द. ब. क. ज. चेट्ठाहे ट्ठाविदूण तत्थेक्कं ।

सप्तम-पक्ष

सातवें पक्षके अल्पबहुत्वमें दो सिद्धान्त कहते हैं -

(१) इच्छित द्वीपोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारमें पाँच लाख कम चौगुनी वृद्धि प्राप्त होती है।

सत्तम-पक्खे अप्पबहुसं वत्तइस्सामो—सयल-जंबूदीव-रुंदादो धादईसंडस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी तिण्णि-लक्खेणब्भहियं होइ ३००००० । जंबूदीव-सम्मिलिद-धादई-संड-दोवस्स दोण्णि-दिस-रुंदादो पोक्खरवर-दीवस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी सत्त-लक्खेहि अब्भहियं होइ ७००००० । एवं धादईसंड-प्पहुदि-इच्छिय-दीवाणं दोण्णि-दिस-रुंदादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स एय-दिस रुंद-वड्ढी चउ-गुणं पंच-लक्खेणूणं होदूण गच्छदि जाव सयंभूरमणदीवो त्ति ॥

अर्थ—सातवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—जम्बूद्वीपके सम्पूर्ण विस्तारसे धातकीखण्डके एक-दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें तीन लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है—३००००० । जम्बूद्वीप सहित धातकीखण्डके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें सात लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है—७००००० । इसप्रकार धातकीखण्ड आदि इच्छित द्वीपोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके अनन्तर स्थित अग्रिम द्वीपके एक-दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें पाँच लाख कम चौगुनी वृद्धि स्वयम्भूरमणद्वीप पर्यन्त होती चली गई है ॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके १ लाख यो० विस्तारमें धातकीखण्डके एक दिशा सम्बन्धी ४ लाख यो० विस्तारमें (४००००० — १००००० यो० =) ३००००० यो० अधिक वृद्धि हुई है। जम्बूद्वीप के (१ लाख यो०) सहित धातकीखण्डके दोनों दिशाओं सम्बन्धी (४ ला० + ४ ला० = ८ लाख योजन) विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर-द्वीपके एक दिशा सम्बन्धी (१६००००० यो०) विस्तारमें (१६००००० — ९००००० =) ७००००० योजनकी अधिक वृद्धि हुई है। इसप्रकार धातकीखण्ड आदि इष्ट द्वीपोंके दोनों दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उनके बाद (अनन्तर) स्थित आगेके द्वीपके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें (३ लाख × ४ = १२ लाख । १२ लाख — ७ लाख =) ५००००० कम चौगुनी वृद्धि स्वयम्भूरमणद्वीप पर्यन्त चली गई है।

अधस्तन समस्त द्वीपोंके दोनों दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणद्वीपके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—सयंभूरमण-दीवस्स हेट्ठिम-सयल-दीवाणं दोण्णि-दिस-रुंद-समूहादो सयंभूरमण-दीवस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी चउवीस-लक्खेहि भजिद-

रज्जू पुणो तिय-हिद-पंच-लक्ख-सत्ततीस-सहस्स-पंच-सय जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा $\frac{रा}{३}$ । २४ पंच जोयणाणि ५३०५०० ।

अर्थ—इनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमण-द्वीपसे अधस्तन सम्पूर्ण द्वीपोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणद्वीपके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें चौबीससे भाजित एक राजू और तीनसे भाजित पाँच लाख सैंतीस हजार पाँचसौ योजन अधिक वृद्धि हुई है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—राजू $\frac{१}{२४}+\frac{५३७५००}{३}$ यो० ।

तब्बड्ढीणं आगयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

सग-सग-वास-पमाणं, लक्खूणं तिय-हिदं दु-लक्ख-जुदं ।
अहवा पण-लक्खाहिय-वास-ति-भागं तु परिवड्ढी ॥२५९॥

अर्थ—उन वृद्धियोंको प्राप्त करने हेतु गाथा-सूत्र—

एक लाख कम अपने-अपने विस्तार-प्रमाणमें तीनका भाग देकर दो लाख और मिलानेपर उस वृद्धिका प्रमाण होता है। अथवा पाँच लाख अधिक विस्तारमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना उक्त वृद्धिका प्रमाण होता है ॥ २५९ ॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णितवृद्धि}=\frac{\text{विस्तार}-१००००}{३}+२००००\ \text{यो०}\ ।$$

$$\text{अथवा}=\frac{\text{विस्तार}+५००००\ \text{यो०}}{३}$$

उदाहरण—मानलो-अष्ट-द्वीप पुष्करवर है। तदनुसार—

$$\text{वर्णितवृद्धि (प्रथम सूत्र से)}=\frac{१६००००००-१००००}{३}+२००००\ \text{यो०}\ ।$$

$$=७००००० \text{ योजन वृद्धि}\ ।$$

$$\text{अथवा, वर्णितवृद्धि (द्वितीय सूत्रसे)}=\frac{१६००००००+५००००}{३}$$

$$=७००००० \text{ योजन वृद्धि}\ ।$$

इसीप्रकार स्वयम्भूरमणद्वीपकी

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{५६} + ३७५०० - १००००० \text{ यो०}}{३} + २००००० \text{ यो०}$$

$$= \frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{७ \times ८ \times ३} + \frac{३७५००}{३} - \frac{१००००}{३} + २००००० \text{ यो०}$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{७} \times \frac{१}{२४} \right) + \left(\frac{३७५०० - १००००० + ६००००}{३} \right) \text{ यो०}$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{७} \times \frac{१}{२४} \right) + \frac{५३७५००}{३} \text{ योजन वृद्धि ।}$$

(२) इष्ट द्वीपसे अधस्तन समस्त द्वीपोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारके योगका प्रमाण—

पुणो इच्छिय-दीवादो हेट्ठिम-सयल-दीवाणं दोण्णि-दिस-रुंदस्स समासो वि एक्क-लक्खादि-चउ-गुणं पंच-लक्खेहि अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव अहिंदवरदीवो त्ति ॥

अर्थ—पुनः इच्छित द्वीपसे अधस्तन समस्त द्वीपोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारका योग भी एक लाखको आदि लेकर चौगुना और पांच लाख अधिक होकर अहीन्द्रवर-द्वीप तक चला जाता है ।।

तब्बड्ढीणं आणयण-हेदुं [1]इमं गाहा-सुत्तं—

दु-गुणिय-सय-सग-वासे, पण-लक्खं अवणिदूण तिय-भजिदे ।
हेट्ठिम-दीवाण पुढं, दो-दिस-रुंदम्मि होदि [2]णिद्द-फलं ॥२६०॥

अर्थ—उस वृद्धिको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

अपने-अपने दुगुने विस्तारमेंसे पांच लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना अधस्तन द्वीपोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारका योगफल होता है ।। २६० ।।

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित विस्तार योगफल} = \frac{२ \times \text{व्यास} - ५००००}{३}$$

---

१. द. ब. क. ज. इमा । २. द. ज. णिद्दफलं, ब. तिदफलं, क. णिदुफलं ।

मानलो —पुष्करवरद्वीप इष्ट है। उसका व्यास १६००००० योजन है। अतएव उसके अधस्तन द्वीपोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी द्वीपोंका —

विस्तार योगफल = $\frac{२ \times १६०००००}{२} - ५०००००$ यो०

= १००००० योजन।

अष्टम-पक्ष

आठवें पक्षके अल्पबहुत्वमें दो सिद्धान्त कहते हैं।

(१) इच्छित समुद्रोंकी एक दिशा सम्बन्धी विस्तार-वृद्धि अधस्तन सब समुद्रोंकी दोनों दिशा-सम्बन्धी विस्तार वृद्धिसे ४ लाख यो० कम चौगुनी होती है—

अट्ठम-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामो-लवणसमुद्दस्स दोण्णि-दिस-रुंदादो कालोदग-समुद्दस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी चउ-लक्खेणब्भहियं होदि ४००००० । लवण-कालोदग-समुद्दाणं दोण्णि-दिस-रुंदादो पोक्खरवर-समुद्दस्स एय-दिस-रुंद-वड्ढी बारस-लक्खेणब्भहियं होदि १२००००० । एवं कालोदग-समुद्दप्पहुदि तत्तो उवरिम-तदणंतर-इच्छिय-रयणायराणं एय-दिस-रुंद-वड्ढी हेट्ठिम-सव्व-णीरासीणं दोण्णि-दिस-रुंद-वड्ढीदो चउ-गुणं चउ-लक्ख-विहीणं होऊण[1] गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—आठवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—लवणसमुद्रके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तार की अपेक्षा कालोद-समुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें चार लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है—४००००० यो०। लवण और कालोद समुद्रके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी सम्मिलित विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर-समुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें बारह लाख योजन अधिक वृद्धि हुई है—१२००००० यो०। इसप्रकार कालोद समुद्रसे लेकर उपरिम तदनन्तर इच्छित समुद्रोंकी एक दिशा-सम्बन्धी विस्तार-वृद्धि अधस्तन सब समुद्रोंकी दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारवृद्धिसे चार लाख कम चौगुनी होकर स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त चली गई है॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके दोनों दिशाओं सम्बन्धी (२ लाख + २ लाख = ४ लाख यो०) विस्तारकी अपेक्षा कालोद-समुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी (८ लाख यो०,) विस्तारमें (८ लाख − ४ लाख यो० =) ४००००० योजन अधिक वृद्धि होती है। लवण और कालोद समुद्रके दोनों

१. द. ब. क. ज. होदिऊण।

दिशाओं सम्बन्धी सम्मिलित [(२+२)+(८+८)=२० लाख यो०] विस्तारकी अपेक्षा पुष्करवर समुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी (३२ लाख यो०) विस्तारमें (३२ लाख यो० — २० लाख यो०=) १२००००० योजन अधिक वृद्धि होती है।

इसप्रकार कालोदसमुद्रसे लेकर उससे उपरिम तदनन्तर इष्ट समुद्रोंकी एक दिशा-सम्बन्धी विस्तार-वृद्धि अधस्तन समस्त समुद्रोंकी दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तार-वृद्धिसे ४००००० कम ४ गुनी होकर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त चली जाती है।

अधस्तन समस्त समुद्रोंके दोनों दिशा सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणसमुद्रके एक दिशा सम्बन्धी विस्तारकी वृद्धि—

तत्थ अंतिम - वियप्पं वत्तइस्सामो—सयंभूरमणस्स हेट्ठिम-सव्व-सायराणं दोण्णि-दिस-रूंदादो सयंभूरमण-समुद्दस्स एय-दिस-रूंद-वड्ढी रज्जूए बारस-भागो पुणो तिय-हिद-चउ-लक्ख-पंचहत्तरि-सहस्स-जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा— $\overline{\text{उ}}$ । १२ । पञ्च जोयणाणि $\frac{४००००}{३}$ ।

अर्थ—उनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमण-समुद्रके अधस्तन सम्पूर्ण समुद्रोंके दोनों दिशा-सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा स्वयम्भूरमणसमुद्रके एक दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें राजूका बारहवाँ भाग और तीनसे भाजित चार-लाख पचहत्तर हजार योजन अधिक वृद्धि हुई है। उसकी स्थापना इसप्रकार है— राजू $\frac{१}{१२}+\frac{४००००}{३}$ यो०।

तब्बड्ढीयं आणयण-हेदुं इमं[1] गाहा-सुत्तं—

इट्ठोवहि-विक्खंभे, चउ-लक्खं मेलिदूण तिय-भजिदे।
तोद-रयणायराणं, दो-दिस-रूंदादु उवरिमेय-दिसं ॥२६१॥

अर्थ—उस वृद्धिको प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है—

इष्ट समुद्रके विस्तारमें चार लाख मिलाकर तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतनी अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उपरिम समुद्रके एक-दिशा-सम्बन्धी विस्तारमें वृद्धि होती है ॥ २६१ ॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

वर्णितवृद्धि= $\frac{\text{इष्ट समुद्रका विस्तार} + ४००००}{३}$

---

१. ब. म. क. ज. इमा।

उदाहरण—मानलो—इष्ट समुद्र वारुणीवर है। उसका विस्तार १२८ लाख योजन है। तदनुसार—

वारुणीवर समुद्रके अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारकी अपेक्षा उपरिम समुद्रकी एक दिशा सम्बन्धी—

$$\text{विस्तार वृद्धि} = \frac{१२८०००००+४००००००}{२}$$

$$= ४४००००० \text{ योजन}।$$

इसीप्रकार स्वयम्भूरमण समुद्रकी

$$\text{वांछित वृद्धि} = \frac{\text{जग०}}{२८} + ७५००० + ४००००००$$

$$= \frac{\text{जग०}}{७\times४\times२} + \frac{४७५०००}{२}$$

$$= \frac{१}{४} \text{ राजू} + ४७५००० \text{ योजन}।$$

(२) अभ्यन्तर समुद्रोंके दोनों दिशाओं सम्बन्धी विस्तारसे तदनन्तर स्थित उपरिम समुद्रकी दोनों दिशा-सम्बन्धी विस्तारवृद्धि चौगुनी और चार लाख अधिक है—

हेट्ठिम-समासो वि-हट्ठस्स-कालोवग-समुद्दादो हेट्ठिमेक्कस्स समुद्दस्स दोण्णि-दिस-खंड-समासं उत्त-सरिसं होदि ४००००० । पोक्खरवर-समुद्दादो हेट्ठिम-दोण्णि-समुद्दाणं दोण्णि-दिस-खंड-समासं वीस-लक्ख-जोयण-पमाणं होदि २००००००। एवमब्भंतरिम-तोरासीणं दोण्णि-दिस-खंड-समासादो तदणंतरोवरिम-समुद्दस्स एय-दिस-खंड-वड्ढी चउगुणं उत्त-सरिसेणब्भहियं होऊण गच्छइ जाव अहिंदवर-समुद्दो त्ति ॥

अर्थ—अधस्तन तीन की—इष्ट कालोद समुद्रसे अधस्तन (केवल) एक लवणसमुद्रका दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तार-समास चार लाख है—४००००० यो०। पुष्करवर-समुद्रसे अधस्तन दोनों समुद्रोंका दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तार-समास बीस लाख—२००००००० योजन-प्रमाण है। इसप्रकार अभ्यन्तर समुद्रोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारसमाससे तदनन्तर स्थित उपरिम समुद्रकी दोनों दिशा-सम्बन्धी विस्तार-वृद्धि चौगुनी और चार लाख अधिक होकर अहीन्द्रवर-समुद्र पर्यन्त चली गई है ॥

तब्बड्ढीणं आणयण-हेदुं इमं गाहा-सुत्तं—

बु-गुणिय-सग-सग-वासे, चउ-लक्खे अवणिदूण तिय-भजिदे ।
तीद - रयणायराणं, दो - दिस - भायम्मि पिंड - फलं ॥२६२॥

अर्थ—उस वृद्धिको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

अपने-अपने दुगुने विस्तारमेंसे चार लाख कम करके शेषमें तीनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी विस्तारका योग होता है ॥ २६२ ॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{अभीष्ट विस्तार} = \frac{(\text{इष्ट द्वीपका विस्तार} \times 2) - ४००००० }{३}$$

उदाहरण—मानसी—यहाँ पुष्करवरद्वीप इष्ट है और उसका विस्तार ३२ लाख यो० है ।

अतीत समुद्रोंके दोनों दिशाओं-सम्बन्धी (लवण और कालोद समुद्रका) सम्मिलित विस्तार योग = $\frac{(३२०००००\times२)-४००००० }{३}$ यो० ।

$=२०००००$ योजन ।

नवम-पक्ष

इष्ट द्वीप या समुद्रमें जम्बूद्वीपके समान खण्डोंकी संख्या प्राप्त करनेकी विधि—

णवम - पक्खे अप्पबहुगं वत्तइस्सामो—जंबूदीवस्स बादर-सुहुम-खेत्तफलस्स पमाणेण लवण-समुद्दस्स खेत्तफलं किण्णंतं[1] चउवीस-गुणं होदि २४ । जंबूदीवस्स खेत्तफलादो धादईसंडस्स खेत्तफलं चउवासीसन्भहियं एक्क-सयमेत्तं होदि १४४ । एवं णादूण खेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—नवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—जम्बूद्वीपके बादर एवं सूक्ष्म क्षेत्रफलके प्रमाणसे लवणसमुद्रका क्षेत्रफल करनेपर चौबीस-गुणा होता है २४ । जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डका क्षेत्रफल एक सौ चवालीस गुणा है १४४ । इसप्रकार जानकर स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिए ॥

---

१. द. ब. क. ज. किण्णत्तं ।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका बादर क्षेत्रफल $३ \times (\frac{१०००००}{४})^२$ अथवा $३ \times (२५०००००००००)$ वर्ग योजन है और उसका सूक्ष्मक्षेत्रफल $\sqrt{१०} \times (२५०००००००००)$ वर्ग यो० है।

इसीप्रकार लवणसमुद्रका बादर क्षेत्रफल—

$$३ \times [(\frac{५००००००}{४})^२ - (\frac{१०००००}{४})^२]$$

अथवा $३ \times [६२५०००००००० - २५००००००००]$ वर्ग यो०

अथवा $३ \times [६०००००००००००]$ वर्ग योजन है। और उसका सूक्ष्म-क्षेत्रफल—

$\sqrt{१०} \times [६०००००००००००]$ वर्ग योजन है।

लवणसमुद्रका बादर एवं सूक्ष्म (प्रत्येक) क्षेत्रफल जम्बूद्वीपके बादर एवं सूक्ष्म (प्रत्येक) क्षेत्रफलसे २४ गुणा है। यथा—लवणसमुद्रका बादर क्षेत्रफल = (जम्बूद्वीपका बादर क्षेत्र० × २४)

$= ३ \times (२५०००००००० \times २४)$

$= ३ \times (६००००००००००)$ वर्ग यो०।

लवणसमुद्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल = (जम्बूद्वीपका सूक्ष्म क्षेत्र० × २४)

$= \sqrt{१०} \times (२५०००००००० \times २४)$

$= \sqrt{१०} \times (६००००००००००)$ वर्ग योजन।

इसीप्रकार जम्बूद्वीपके बादर एवं सूक्ष्म क्षेत्रफलसे धातकीखण्डके बादर एवं सूक्ष्म क्षेत्रफल प्रत्येक १४४ गुणे हैं।

धातकीखण्डका बादर क्षेत्रफल = $३ \times [(\frac{१०००००००}{४})^२ - (\frac{५००००००}{४})^२]$

अथवा $३ \times [३६००००००००००]$ वर्ग योजन है।

उसीका सूक्ष्मक्षेत्रफल = $\sqrt{१०} \times [३६००००००००००]$ वर्ग योजन है। जो जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे क्रमशः १४४ गुने है।

जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे स्वयम्भूरमण समुद्रका क्षेत्रफल कितना गुणा है ? उसका कथन—

तत्थ अंतिम-विक्खंभं बत्तइस्सामो-अगसेढीए वग्गं ति-गुणिय एक्क-लक्ख-सत्तट्ठि-सहस्स-कोडि-रूवेहिं भजिदमेत्तं पुरतो ति गुणिद-सेढि चोद्दस-लक्ख-रूवेहिं भजिद-मेत्तेहिं अब्भहियं होदि पुणो णव-कोडीहिं परिहीणं। तस्स ठवणा—

=३ —३

१९६०००००००००० घण खेत्तं १४००००० रिण कोसाणि ६ ।।

अर्थ– उनमेंसे अन्तिम-विकल्प कहते हैं—जगच्छ्रेणीके वर्गको तिगुना करके उसमें एक लाख छ्यानवे हजार करोड़ रूपोंका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना और तिगुनी जगच्छ्रेणीमें चौदह लाखका भाग देनेपर प्राप्त हुए लब्ध प्रमाणसे अधिक तथा नौ कोस कम है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

[(जग० × जग० × ३) ÷ १९६००००००००००] + [((जग० × ३) ÷ १४०००००)—९ को०]

तत्तवड्ढीणं आणयण-हेदुं इमं गाहा-सुत्तं—

लक्खूण-इट्ठ-रुंदं, ति-गुणं चउ-गुणिद-इट्ठ-वास-गुणं ।
लक्खस्स कदिम्मि हिदे, जंबूदीवोवमा खंडा ।।२६३।।

अर्थ—उस वृद्धिको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

एक लाख कम इष्ट द्वीप या समुद्रके विस्तारको तिगुना करके फिर उसे चौगुने अपने विस्तारसे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसमें एक लाखके वर्गका भाग देनेपर जम्बूद्वीप सदृश खण्डोंकी संख्या प्राप्त होती है ।। २६३ ।।

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

इष्टद्वीप या समुद्रमें जम्बूद्वीप सदृश खण्डोंकी संख्या अथवा

वर्णित क्षेत्रफलमें वृद्धिका प्रमाण—

$$= \frac{३ \times (\text{इष्ट द्वीप या समुद्रका विस्तार} - १०००००) \times ४ \times (\text{उसका विस्तार})}{(१०००००)^२}$$

उदाहरण—मानलो—यहाँ वारुणीवर समुद्र इष्ट है और उसका विस्तार १२८ लाख योजन है, इसमें जम्बूद्वीप सदृश खण्डोंकी संख्या—

$$= \frac{३ \times (१२८००००० - १०००००) \times ४ \times (१२८०००००)}{(१०००००)^२}$$

$$= \frac{३ \times १२७००००० \times ४ \times १२८००००० }{१००००० \times १००००० }$$

=१२×१२७×१२८=१९२०७२ खण्ड होते हैं ।

इसीप्रकार [उपर्युक्त सूत्रानुसार] स्वयम्भूरमणसमुद्रमें—

$$\text{वर्णित-खण्ड-वृद्धि} = \frac{३ \times \left(\frac{\text{जग०}}{२^{८}} + ७५००० - १००००० \right) \times ४ \times \left(\frac{\text{जग०}}{२^{८}} + ७५००० \right)}{(१०००००)^{२}}$$

$$= \frac{३ \times \text{जग०} \times ४\left(\frac{\text{जग०}}{२^{८}} + ७५०००\right) + ३ \times (-२५०००) \times ४\left(\frac{\text{जग०}}{२^{८}} + ७५०००\right)}{(१०)^{१०}}$$

$$= \frac{३\ (\text{जग०} \times \text{जग०})}{१९६ \times (१०)^{१०}} + \frac{३\ \text{जग०} \times ७५०००}{७ \times (१०)^{१०}} - \frac{३\ \text{जग०} \times २५०००}{७ \times (१०)^{१०}} - ३ \times २५००० \times \frac{४ \times ७५०००}{(१०)^{१०}}$$

$$= \frac{३\ (\text{जग०} \times \text{जग०})}{१९६ \times (१०)^{१०}} + \frac{३\ \text{जग०}}{७ \times (१०)^{१०}} (७५००० - २५०००) - \frac{३ \times ४ \times २५००० \times ७५०००}{१००००० \times १००००}$$

$$= \frac{३\ (\text{जग०} \times \text{जग०})}{१९६ \times (१००००)^{२}} + \frac{३\ \text{जग०} \times ५००००}{७ \times (१००००) \times (१००००)} - \frac{९}{४} \text{ योजन ।}$$

$$= \frac{३\ (\text{जग०} \times \text{जग०})}{१९६०००००००००} + \frac{३\ \text{जगच्छ्रेणी}}{१४०००००} - ९ \text{ कोस ।}$$

$$= \frac{३ \times \text{जग०}^{२}}{१९६०००००००००} + \frac{३\ \text{जग०}}{१४०००००} - ९ \text{ कोस ।}$$

दसवाँ-पक्ष

अधस्तन द्वीप या समुद्रसे उपरिम द्वीप या समुद्रकी खण्ड-शलाकाएँ चौगुनी हैं और प्रक्षेपभूत ९६ उत्तरोत्तर दुगने-दुगने होते गये हैं—

दसम-पक्खे अप्पबहुत्तं वत्तइस्सामो । तं जहा—जंबूदीवस्स बादर-सुहुम-खेत्त-फल-प्पमाणेण लवणसमुद्दस्स खेत्तफलं किंचूणं चउवीस-गुण-प्पमाणं होदि २४ । लवण-समुद्दस्स खंड-सलागाणं संखादो धादइसंडस्स खंड-सलागा दुगुणं होदि । धादइसंडस्स-खंड-सलागादो कालोवग-समुद्दस्स खंड-सलागा चउ-गुणं होऊण[1] छण्णउदि-रूवेणब्भहियं होदि तत्तो उवरिम-तदणंतर-हेट्ठिम-दीव-उवहीदो अणंतरोवरिम-दीवस्स उवहिस्स वा खंड-सलागा चउग्गुणं-चउग्गुणं पक्खेव-रूव-छण्णउदी दुगुण-दुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभू-रमण-समुद्दो त्ति ॥

---

१. द. होदिऊण ।

अर्थ—दसवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है—जम्बूद्वीपके बादर एवं सूक्ष्म क्षेत्रफलके बराबर लवण-समुद्रका क्षेत्रफल करनेपर वह उससे चौबीस-गुणा होता है २४। लवण-समुद्र सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओंकी संख्यासे धातकीखण्डकी खण्ड-शलाकाएँ छह-गुणी हैं धातकीखण्ड-द्वीपकी खण्डशलाकाओंसे कालोद-समुद्रकी खण्डशलाकाएँ चार-गुणी होकर छयानवें रूपोंसे अधिक हैं। पुनः इससे ऊपर तदनन्तर अधस्तन द्वीप या समुद्रसे अनन्तर उपरिम द्वीप या समुद्रकी खण्ड-शलाकाएँ चौगुनी हैं और इनके प्रक्षेपभूत छयानवें उत्तरोत्तर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त दुगने-दुगने होते गये हैं।

विशेषार्थ—धातकीखण्डका बादर क्षेत्रफल—

$$३\left[\left(\frac{१३०१५०००}{२}\right)^{२}-\left(\frac{५०३०००}{२}\right)^{२}\right]$$

अथवा ३×६०००००००००० वर्ग योजन।

उसीका सूक्ष्म क्षेत्रफल—

$$\sqrt{१०}\left[\left(\frac{१३०१५०००}{२}\right)^{२}-\left(\frac{५०३०००}{२}\right)^{२}\right]$$

$$=\sqrt{१०}\times३६००००००००००\text{ वर्ग योजन।}$$

कालोदकका बादर क्षेत्रफल—

$$=३(१०)^{८}\left[\left(\frac{३६१}{२}\right)^{२}-\left(\frac{३३०}{२}\right)^{२}\right]$$

$$=३\times(१०)^{८}\times१६८००\text{ वर्ग योजन।}$$

उसीका सूक्ष्म क्षेत्रफल—

$$=\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\left[\left(\frac{३६०}{२}\right)^{२}-\left(\frac{३३०}{२}\right)^{२}\right]$$

$$=\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\times१६८००\text{ वर्ग योजन।}$$

पुष्करवर द्वीपका बादर क्षेत्रफल—

$$=३(१०)^{८}\left[\left(\frac{७३०}{२}\right)^{२}-\left(\frac{३६०}{२}\right)^{२}\right]$$

$$=३\times७२००००००००००\text{ वर्ग योजन।}$$

उसीका सूक्ष्मक्षेत्रफल—

$$=\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\left[\left(\frac{७३०}{२}\right)^{२}-\left(\frac{७२०}{२}\right)^{२}\right]$$

$$=\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\left[७२०००\right]\text{ वर्ग योजन।}$$

जम्बूद्वीपके सूक्ष्म क्षेत्रफल $\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\times(२५)$ वर्ग योजनसे लवणसमुद्रका सूक्ष्म-क्षेत्रफल $\sqrt{१०}\times(१०)^{८}\times(६००)$ वर्ग योजन २४ गुणा है।

उसी (जम्बूद्वीप) के सूक्ष्म क्षेत्रफलसे धातकीखण्डद्वीपका सूक्ष्म-क्षेत्रफल $\sqrt{१०} \times (१०)^{८} \times$ (३६००) वर्ग योजन १४४ गुणा है। उसीके सूक्ष्मक्षेत्रफलसे कालोदक समुद्रका सूक्ष्म क्षेत्रफल $\sqrt{१०} \times (१०)^{८} \times$ (१६८००) वर्ग योजन ६७२ गुणा है।

उसी (जम्बूद्वीप) के सूक्ष्मक्षेत्रफलसे पुष्करवर द्वीपका $\sqrt{१०} \times (१०)^{८} \times (७२०००)$ वर्ग योजन सूक्ष्म क्षेत्रफल २८८० गुणा है।

खण्डशलाकाएं—धातकीखण्ड द्वीपकी १४४ खण्ड शलाकाओंसे कालोदधिसमुद्रकी ६७२ खण्डशलाकाएं ४ गुणी होकर ९६ अधिक हैं।

यथा - $६७२ = (१४४ \times ४) + ९६$।

कालोदधि समुद्रकी ६७२ खण्डशलाकाओंसे पुष्करवरद्वीपकी २८८० खण्डशलाकाएं ४ गुणी होकर ९६ × २ अधिक है।

यथा—$२८८० = (६७२ \times ४) + (९६ \times २)$। इत्यादि।

इसीप्रकार $\sqrt{१०}$ के स्थान पर ३ रख देनेपर उपर्युक्त समस्त द्वीप-समुद्रोंके बादर क्षेत्रफल के लिए घटित हो जावेगा।

उपर्युक्त गणित-प्रक्रियासे स्पष्ट हो जाता है कि अग्रस्तन द्वीप या समुद्रकी खण्डशलाकाओंसे अनन्तर उपरिम द्वीप या समुद्रकी खण्डशलाकाएं चौगुनी हैं और इनके प्रक्षेप-भूत ९६ उत्तरोत्तर दुगुने-दुगुने होते गये हैं। इसीप्रकार स्वयम्भूरमण पर्यन्त जानना चाहिए।

स्वयम्भूरमणद्वीपकी खण्डशलाकाओंसे स्वयम्भूरमण-समुद्रकी खण्डशलाकाएँ
कितनी अधिक हैं? उन्हें कहते हैं—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—[सयंभूरमणदीव-खंड-सलागादो सयंभूरमणसमुद्दस्स खंड-सलागा] तिण्णि-सेढीओ सत्त-लक्ख-जोयणेहि भजिदाओ पुणो णव-जोयणेहि अब्भहियाओ होंदि। तस्स ठवणा— $\frac{३}{७०००००}$ घण जोयणाणि ९ ॥

अर्थ—इनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—(स्वयम्भूरमणद्वीपकी खण्ड-शलाकाओंसे स्वयम्भूरमणसमुद्रकी खण्डशलाकाएं) सात लाख योजनोंसे भाजित तीन जगच्छ्रेणी और नौ योजनोंसे अधिक हैं। उसकी स्थापना इसप्रकार है—जगच्छ्रेणी ३ ÷ ७००००० यो० + ९ यो०।

तत्थ अविरेगस्स पमाणाणयणट्ठं इमा सुत्त-गाहा—

सयलेण भजिद-सग-सग-वासं इगि-रूव-विरहिदं तेण।
सग-सग-खंड-सलागं, भजिदे अविरेग - परिमाणं ॥२६४॥

अर्थ—उनमें (बोगुनीसे) अतिरिक्त प्रमाण लानेके लिए यह गाथा-सूत्र है—

एक लाखसे भाजित अपने-अपने विस्तारमेंसे एक रूप कम करके शेषका अपनी-अपनी खण्ड-शलाकाओंमें भाग देनेपर अतिरिक्त संख्याका प्रमाण आता है ।। २६४ ।।

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

अतिरिक्त खण्ड-शलाकाएँ अथवा प्रक्षेप

$$= \frac{\text{क्षेत्रकी निज खण्ड-शलाकाएँ}}{\frac{\text{निज विस्तार}}{१००००० - १}}$$

उदाहरण—मानलो—कालोद समुद्रकी ४ गुणित खण्ड-शलाकाओंसे अतिरिक्त खण्ड-शलाकाओं (प्रक्षेप) का प्रमाण ज्ञात करना है । कालोद समुद्रका विस्तार ८ लाख यो० है । इसमें १ लाखका भाग देनेपर ८ प्राप्त होते हैं । ८ मेंसे एक घटाकर जो शेष बचे उसका कालोदकी खण्ड-शलाकाओंके प्रमाणमें भाग देनेपर प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । यथा—

$$\text{प्रक्षेप} = \frac{६७२}{\frac{८०००००}{१००००० - १}} = \frac{६७२}{७} = ९६$$ प्रक्षेप अथवा अतिरिक्त प्रमाण प्राप्त हो जाता है ।

स्वयम्भूरमणद्वीपके क्षेत्रफलमें जम्बूद्वीप सदृश खण्डोंकी संख्या ।

अथवा जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे स्वयम्भूरमणद्वीप का क्षेत्रफल कितना गुना है ? उसका प्रमाण ।

गाथा २६३ से सम्बन्धित सूत्रानुसार ।

स्वयम्भूरमणद्वीपका आदर क्षेत्रफल $= ३ \times \frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० \text{ यो०}$ ।

$$\text{वर्गित वृद्धि} = \frac{३ \times \left(\frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० - १००००० \right) \times ४ \times \left(\frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० \right)}{(१००००)^२}$$

$$= \frac{१}{(१०)^{१०}} \left[३ \times ४ \left\{ \frac{\text{जग०}}{५६} \times \left(\frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० \right) - ६२५०० \times \left(\frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० \right) \right\} \right]$$

$$= \frac{१}{(१०)^{१०}} \left[३ \times ४ \left\{ \frac{\text{जग०} \times \text{जग०}}{५६ \times ५६} + \frac{\text{ज०} \times ३७५००}{५६} - \frac{\text{ज०} \times ६२५००}{५६} - ६२५०० \times ३७५०० \right\} \right]$$

$$= \frac{१}{(१०)^{१०}} [३ \times ४ \{ \frac{जे० \times जे०}{३१३६} + \frac{जग०}{४६} (३७५०० - ६२५००) - ६२५०० \times ३७५०० \}]$$

$$= \frac{१}{(१०)^{१०}} [३ \times ४ \{ \frac{जे० \times जे०}{३१३६} - (\frac{जग०}{४६} \times २५०००) - ६२५०० \times ३७५०० \}]$$

$$= \frac{१}{(१०)^{१०}} \times \frac{१२ \times जे० \times जे०}{३१३६} - (\frac{१२ \times जे० \times २५०००}{४६ \times (१०)^{१०}}) - (\frac{१२}{(१०)^{१०}} \times ६२५०० \times ३७५००) \text{यो.}$$

$$= \frac{३}{७८४} \times \frac{जग० \times जग०}{(१०)^{१०}} - \frac{३ \times ४ \times जग० \times २५०००}{१४ \times ४ \times (१०००००) \times १००००००} - \frac{३ \times ४ \times ६२५०० \times ३७५००}{(१०००००) \times (१०००००)} \text{यो.}$$

$$= ३ \times (\frac{जग० \times जग०}{७८४ \times (१०)^{१०}}) - \frac{३ जग०}{५६०००००} - \frac{४५}{१६} \text{ योजन ।}$$

इन खण्डशलाकाओंको ४ से गुणित करके स्वयम्भूरमण-समुद्र की खण्ड-शलाकाओंमेंसे घटा देनेपर स्वयम्भूरमणसमुद्र की प्रक्षेपभूत (अतिरिक्त) संख्या का प्रमाण प्राप्त होता है । यथा—

स्वयम्भूरमणसमुद्रकी खण्ड-शलाकाएँ—

$$= [(\frac{३ \times जग० \times जग०}{१९६ \times (१०)^{१०}}) + (\frac{३ जग०}{१४०००००}) - (\frac{९}{४} \text{ यो०})] - \{ \text{स्वयम्भूरमण- द्वीप की}$$

खण्ड शलाकाएँ $\times ४ = (\frac{३ \times जे० \times जे० \times ४}{७८४ \times (१०)^{१०}}) - \frac{३ जे० \times ४}{५६०००००} - \frac{४५ \times ४}{१६}]$

$$= (\frac{३ जग०}{१४०००००} + \frac{३ जग०}{१४०००००}) - (\frac{९}{४} \text{ यो० } - \frac{४५}{४} \text{ यो० })$$

$$= \frac{३ जग०}{७०००००} + ९ \text{ योजन । अथवा } \frac{३}{७०,०००} \text{ घन जोयणाणि ९ ।}$$

ग्यारहवाँ—पक्ष

ग्यारहवें-पक्षके अल्पबहुत्वमें दो सिद्धान्त कहते हैं—

(१) अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी शलाकाओंसे उपरिम द्वीप या समुद्र की शलाका-वृद्धि चौगुनी से २४ अधिक है—

एक्कारसम-पक्खे अप्पबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा-सयंभूरमणसमुद्दस्स खंड-सलागाणं संखादो धादईसंड-दीवस्स खंड-सलागाणं चउग्गो चोद्दुत्तर-एक्क-सएणब्भहियं होदि १२० । सयंभूरमणसमुद्दस्स-खंड-सलागाणं सम्मिलिद-धादईसंड-दीवस्स खंड-सलागाणं संखादो कालो-

एत्थ समुद्दस्स खंड-सलागाणं वड्ढी चउरुत्तर-पंच-सएणब्भहियं होदि ५०४ । एवं धादई-संडस्स वड्ढि[1]-पहुदि हेट्ठिम-दीव-उवहीणं समूहादो अणंतरोवरिम-दीवस्स वा रयणा-यरस्स वा खंड[2]-सलागाणं वड्ढी चउग्गुणं चउवीस-रूवेहि अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ।।

अर्थ—ग्यारहवें-पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है—लवणसमुद्र-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओं की संख्या से धातकीखण्ड-द्वीपकी खण्ड-शलाकाओं की वृद्धि का प्रमाण एक सौ बीस है १२० । लवणसमुद्र की खण्ड-शलाकाओं को मिलाकर धातकीखण्ड द्वीप-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओं की संख्यासे कालोदकसमुद्र-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओंकी वृद्धि का प्रमाण पाँच सौ चार है ५०४ । इसप्रकार धातकीखण्डद्वीप-सम्बन्धी शलाका-वृद्धिसे प्रारम्भ कर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त अधस्तन द्वीप-समुद्रों के शलाका-समूह से अनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्र की खण्ड-शलाकाओं की वृद्धि चौगुनी और चौबीस संख्या से अधिक होती गई है ।

विशेषार्थ—लवणसमुद्र सम्बन्धी २४ खण्डशलाकाओं से धातकीखण्ड-द्वीप की १४४ खण्ड-शलाकाओं में वृद्धि का प्रमाण (१४४—२४=) १२० है । लवणसमुद्र और धातकीखण्ड द्वीप की सम्मिलित (२४ + १४४=) १६८ खण्डशलाकाओं से कालोद समुद्र सम्बन्धी ६७२ खण्डशलाकाओं में वृद्धिका प्रमाण (६७२—१६८=) ५०४ है । जो ४ गुनी होकर २४ अधिक हैं । यथा—
५०४=(१२० × ४) + २४ ।

इसप्रकार धातकी खण्डद्वीप सम्बन्धी शलाका वृद्धि से प्रारम्भ कर स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त अधस्तन द्वीप-समुद्रों के शलाका-समूह से उपरिम द्वीप या समुद्र की शलाकाओं की वृद्धि ४ गुनी और २४ से अधिक होती गई है । यथा—पुष्करवर द्वीप की २८८० खण्ड - शलाकाओं में वृद्धि का प्रमाण २०४० = [{ (५०४) × ४ } + २४] है ।

अधस्तन द्वीप-समुद्रों के शलाका समूह से स्वयम्भूरमण समुद्र की शलाकाओं में वृद्धि का प्रमाण कितना है ?

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो-सयंभूरमण-समुद्दादो हेट्ठिम-सव्व-दीव-रयणा-यराणं खंड-सलागाण-समूहं सयंभूरमण-समुद्दस्स खंड-सलागम्मि अवणिदे वड्ढि-पमाणं केत्तियमिदि भणिदे अणंतेहोए वग्गं अट्ठाणउदि-सहस्स-कोडि-जोयणेहि भजिदं पुणो सत्त-सयस्स-जोयणेहि भजिद-तिण्णि-जय-सेढी-अब्भहियं पुणो सोहस-कोसेहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा— $\frac{(\text{अनन्त})^2}{\text{९८००००००७००}}$ चय जोयणाणि $\frac{\text{३}}{\text{७००}}$ रिण कोस १४ ।

---

१. ब. ब. क. ब. वड्ढि गुणी । २. ब. ब. धादइसंडसलागाणं ।

अर्थ—स्वयम्भूरमण समुद्र से अधस्तन समस्त द्वीप-समुद्रोंके खण्ड-शलाका-समूहको स्वयम्भूरमणसमुद्रकी खण्ड-शलाकाओंमेंसे घटा देनेपर वृद्धिका प्रमाण कितना है ? ऐसा कहनेपर अट्ठानवें हजार करोड़ योजनोंसे भाजित जगच्छ्रेणीके वर्गसे अतिरिक्त सात लाख योजनोंसे भाजित तीन जगच्छ्रेणी अधिक तथा १४ कोस कम है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$$=\frac{\text{जग०}\times\text{जग०}}{९८\times(१०)^{१२}}+\frac{३\ \text{जग०}}{७०००००\ \text{यो०}}\ -१४\ \text{कोस}।$$

तव्वड्ढी-आणयण-हेदुमिमं गाहा-सुत्तं—

लक्खेण भजिद-अंतिम-वासस्स[1] कदीए एग-रूवूणं।
अट्ठ[2]-गुणं हिट्ठाणं, संकलणादो दु उवरिमे वड्ढी ॥२६५॥

अर्थ—इस वृद्धि-प्रमाणको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

एक लाखसे भाजित अन्तिम विस्तारका जो वर्ग हो उसमेंसे एक कम करके शेषको आठसे गुणा करने पर अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके शलाका-समूहसे उपरिम द्वीप एवं समुद्रकी खण्ड-शलाकाओंकी वृद्धिका प्रमाण आता है ॥२६५॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित खण्ड-शलाका वृद्धि}=\left[\left(\frac{\text{अन्तिम विस्तार}}{१००००}\right)^{२}-१\right]\times ८$$

उदाहरण—मानलो—यहाँ वारुणीवर समुद्र इष्ट है। उसका विस्तार १२८ लाख योजन है।

वारुणीवर समुद्रकी वर्णित खण्ड-शलाका वृद्धि—

$$=\left[\left(\frac{१२८०००००}{१००००}\right)^{२}-१\right]\times ८$$

$$=(१६३८४-१)\times ८$$

$$=१३१०६४\ \text{योजन}।$$

इसीप्रकार स्वयम्भूरमण समुद्र-सम्बन्धी—

$$\text{वर्णित खण्ड-शलाका वृद्धि}=\left[\left(\frac{\frac{\text{जग०}}{२८}+७५०००\ \text{यो०}}{१००००}\right)^{२}-१\right]\times ८$$

---

१. द. वास; ब. वासस। २. द. ब. क. ज. अट्ठं गुणहिट्ठाणं।

$$= \left[\left(\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{२८०००००} + \frac{३}{४} \right)^२ - १ \right] \times ८$$

$$= \left(\frac{\text{जग०} \times \text{जग०}}{२८०००००० \times २८००००००} \times ८ \right) + \left(\frac{९}{१६} \times ८ \right) + \left(\frac{२ \times ३ \text{ जग०}}{२८००००० \times ४} \times ८ \right) - ८$$

$$= \frac{\text{जग०} \times \text{जग०}}{७००००० \times १४००००००} + \frac{९}{२} - ८ + \frac{३ \text{ जग०}}{७००००० \text{ यो०}}$$

$$= \frac{\text{जग०} \times \text{जग०}}{९८०००००००००००० \text{ यो०}} + \frac{३ \text{ जग०}}{७००००० \text{ यो०}} - १ \text{ कोस} ।$$

(२) इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-शलाकाओंका पिंड-फल प्राप्त करनेकी विधि—

पुणो इट्ठस्स दीवस्स वा समुद्दस्स वा हेट्ठिम-दीव-रयणायराणं मेलावणं भण्णमाणे[1] लवणसमुद्दस्स खंड-सलागादो लवणसमुद्द-संमिलित-धादईसंड-दीवस्स खंड-सलागाओ[2] सत्त - गुणं होदि । लवण-णीररासि-खंड-सलाग-संमिलिद-धादईसंड-खंड-सलागादो कालोदग-समुद्द-खंड-सलाग-संमिलिद-हेट्ठिम-खंड-सलागाओ पंच-गुणं होदि । कालोदग-समुद्दस्स खंड-सलाग-संमिलिद-हेट्ठिम-दीवोवहीणं खंड-सलागादो पोक्खरवर-दीव-खंड-सलाग-संमिलिद-हेट्ठिम-दीव-रयणायराणं खंड-सलागा चउग्गुणं होऊण तिण्णि-सय-सट्ठि - रूवेहि अब्भहियं होदि । पोक्खरवरदीव खंड-सलाग-संमिलिद-हेट्ठिम-दीव-रयणायराणं खंड-सलागादो पोक्खरवर-समुद्दस्स संमिलिद-हेट्ठिम-दीवोवहीणं खंड-सलागा चउग्गुणं होऊण सत्त-सय-चउवास-रूवेहि अब्भहियं होदि । एत्तो उवरिम-चउग्गुणं चउग्गुणं पक्खेव-भूद-सत्त-सय-चउवालं दुगुण-दुगुणं होऊण चउवीस-रूवेहि अब्भहियं होऊण गच्छह जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ।।

अर्थ— पुनः इष्ट द्वीप अथवा समुद्रके अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-शलाकाओंका मिश्रित कथन करने पर लवण-समुद्रकी खण्ड-शलाकाओं से लवणसमुद्र-सम्मिलित धातकीखण्ड द्वीपकी खण्ड-शलाकाएँ सात-गुणी हैं। लवणसमुद्रकी खण्ड-शलाकाओंसे सम्मिलित धातकीखण्डद्वीप-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओंकी अपेक्षा कालोदसमुद्रकी खण्डशलाकाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-शलाकाएँ पाँच-गुणी हैं। कालोदसमुद्रकी खण्ड-शलाका-सम्मिलित अधस्तन द्वीप-समुद्रों-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओंकी अपेक्षा पुष्करवरद्वीपकी खण्डशलाकाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-

---

१. द. ब. क. ज. अण्णमाणे। २. द. ब. क. ज. सलागादो।

शलाकाएँ चौगुनी होकर तीन सौ साठ अधिक हैं। पुष्करवरद्वीप की खण्ड-शलाकाओं सहित अधस्तन द्वीप-समुद्रों-सम्बन्धी खण्ड-शलाकाओंकी अपेक्षा पुष्करवर-समुद्र-सम्मिलित अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्डशलाकाएँ चौगुनी होकर सात सौ चवालीस अधिक हैं। इससे ऊपर स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त चौगुनी-चौगुनी होनेके अतिरिक्त प्रक्षेप-भूत सात सौ चवालीस दुगुने-दुगुने और चौबीस अधिक होते गये हैं॥

विशेषार्थ—इष्ट द्वीप अथवा समुद्रके अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी खण्ड-शलाकाओंका मिश्रित कथन किया जाता है। लवणसमुद्रकी खण्डशलाकाओं (२४) से लवणसमुद्र सहित धातकीखण्ड द्वीपकी खण्डशलाकाएँ (२४+१४४=१६८) सात गुनी (२४×७=१६८) हैं।

लवणसमुद्र और धातकी खण्ड द्वीप सम्बन्धी सम्मिलित १६८ खण्ड-शलाकाओं में कालोद-समुद्रकी ६७२ खण्ड शलाकाएँ मिला देनेपर (२४+१४४+६७२=) ८४० खण्ड-शलाकाएँ प्राप्त होती हैं। जो लवणसमुद्र और धातकीखण्ड की सम्मिलित (२४+१४४=) १६८ खण्ड-शलाकाओं से ५ गुनी (१६८×५=८४०) हैं।

पुष्करवरद्वीपमें अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित (२४+१४४+६७२=) ८४० खण्ड-शलाकाओं में पुष्करवर द्वीप की २८८० खण्ड-शलाकाओं में मिला देनेपर (८४०+२८८०) =३७२० खण्ड-शलाकाएँ होती हैं; जो अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित ८४० खण्ड-शलाकाओं की अपेक्षा ३६० अधिक ४ गुनी हैं। यथा—(८४०×४)+३६०=३७२०।

पुष्करवर समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रों की सम्मिलित (२४+१४४+६७२+२८८०=) ३७२० खण्ड-शलाकाओंमें पुष्करवरसमुद्रकी ११९०४ खण्ड-शलाकाएँ मिला देनेपर पुष्करवरसमुद्र पर्यन्तकी सम्मिलित खण्ड-शलाकाएँ (३७२०+११९०४=) १५६२४ हैं। जो अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित ३७२० खण्डशलाकाओंकी अपेक्षा ७४४ अधिक ४ गुनी हैं। यथा—(३७२०×४) +७४४=१५६२४।

इससे ऊपर स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त ४ गुना-४ गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत खण्ड-शलाकाएँ २४ अधिक ७४४ की दुगुनी-दुगुनी होती चली गई हैं। यथा—

वारुणीवर द्वीपसे अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित (२४+१४४+६७२+२८८०+ ११९०४=) १५६२४ खण्ड-शलाकाओंमें वारुणीवर द्वीपकी ४८३८४ खण्डशलाकाएँ मिला देनेपर वारुणीवरद्वीप पर्यन्त की सम्मिलित खण्डशलाकाएँ (१५६२४+४८३८४=) ६४००८ हैं। जो अधस्तन द्वीप-समुद्रोंकी सम्मिलित १५६२४ खण्डशलाकाओंकी अपेक्षा ४ गुनी होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत शलाकाएँ २४ अधिक ७४४ की दुगुनी हैं। यथा—

६४०००८=[(१५६२४×४)+(७४८×२)+२४]

तब्बड्ढी-आणयण-हेदुमिमं गाहा-सुत्तं—

अंतिम-विक्खंभद्धं, लक्खूणं लक्ख-हीण-वास-गुणं ।
पण-सय-कोडीहि हिदं, इट्ठाओ हेट्ठिमाण पिंड-फलं ॥२६६॥

अर्थ—इस वृद्धि को प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

अन्तिम विस्तारके अर्ध भागमेंसे एक लाख कम करके शेष को एक लाख कम विस्तार से गुणा करके प्राप्त राशिमें पाँचके घन अर्थात् एक सौ पच्चीस करोड का भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रों का पिण्डफल होता है ॥२६६॥

गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रका पिण्डफल—

$$= \left(\frac{\text{अन्तिम विस्तार}}{२} - १००००० \right) \times \left(\frac{\text{अन्तिम विस्तार} - १००००० }{१२५०००००००} \right)$$

उदाहरण—मानलो—यहाँ क्षीरवर द्वीप इष्ट है। जिसका विस्तार २५६ लाख योजन प्रमाण है।

क्षीरवर द्वीपसे अधस्तन (जम्बूद्वीपसे वारुणीवर समुद्र पर्यन्त) द्वीप - समुद्रका पिण्डफल—

$$\text{पिण्डफल} = \left(\frac{२५६०००००}{२} - १००००० \right) \times \left(\frac{२५६००००० - १००००० }{१२५०००००००} \right)$$

$$= \frac{१२७००००० \times २५५००००० }{१२५०००००००} = २५६०८० \text{ योजन}।$$

सादिरेय-पमाणाणयणट्ठं इमं गाहा-सुत्तं—

दो-लक्खेहि विभाजिद-सग-सग-वासम्मि लद्ध-कदेहिं ।
सग-सग-खंडसलागं, भजिदे अदिरेग - परिमाणं ॥२६७॥

अर्थ :—अतिरिक्त प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

अपने-अपने विस्तारमें दो लाखका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसका अपनी-अपनी खण्डशलाकाओं में भाग देनेपर अतिरेकका प्रमाण आता है ॥ २६७ ॥

विशेषार्थ :—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{वर्णित अतिरेक} = \frac{\frac{\text{निज खण्डशलाकाएँ}}{\text{निज विस्तार}}}{२०००००}$$

उदाहरण—मानलो—यहाँ क्षीरवर द्वीप इष्ट है। जिसका विस्तार २५६००००० योजन है और खण्डशलाकाएँ ७८३३६० हैं।

$$\text{वर्णित अतिरेक} = \frac{\frac{७८३३६०}{२५६०००००}}{२०००००}$$

$$= \frac{७८३३६०}{१२८} = ६१२०।$$

बारहवाँ—पक्ष

जम्बूद्वीपको छोड़कर समुद्रसे द्वीप और द्वीपसे समुद्रका विष्कम्भ
दुगुना एवं आयाम दुगुनेसे ९ लाख योजन अधिक है—

आरसम-पक्खे अप्पबहुसं वत्तइस्सामो। तं जहा-जाव जंबूदीवमवणिज्ज लवण-समुद्दस्स विक्खंभं वेण्णि-लक्खं आयामं णव-लक्खं, धादईसंड-दीवस्स विक्खंभं चत्तारि-लक्खं आयामं सत्तावीस-लक्खं, कालोदगसमुद्दस्स विक्खंभं अट्ठ-लक्खं आयामं तेसट्ठि-लक्खं, एवं समुद्दादो दीवस्स दीवादो समुद्दस्स विक्खंभादो विक्खंभं दुगुणं आयामादो आयामं दुगुणं णव-लक्खेहि अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति॥

अर्थ—बारहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है—जम्बूद्वीपको छोड़कर लवणसमुद्र का विस्तार दो लाख यो० और आयाम नौ लाख योजन है। धातकीखण्डका विस्तार चार लाख यो० और आयाम सत्ताईस लाख योजन है। कालोदसमुद्र का विस्तार आठ लाख यो० और आयाम तिरेसठ लाख योजन है। इसप्रकार समुद्रसे द्वीपका और द्वीपसे समुद्रका विस्तार दुगुना तथा आयामसे आयाम दुगुना और नौ लाख अधिक होकर स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त चला गया है॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपको छोड़कर लवणसमुद्रका विस्तार २ लाख योजन है और आयाम ९००००० योजन है।

इसी अधिकारकी गाथा २४४ के अनुसार—

आयाम निकालनेकी विधि :—इच्छित क्षेत्रके विस्तारमेंसे एक लाख कम करके शेषको नौसे गुणा करने पर इच्छित द्वीप या समुद्रका आयाम होता है। तदनुसार लवणसमुद्रका आयाम (२ लाख — १ लाख) × ९ = ९ लाख योजन है।

धातकीखण्डद्वीपका विस्तार ४ लाख योजन है और आयाम (४ लाख यो० — १ लाख) × ९ = २७ लाख योजन है।

कालोद समुद्र का विस्तार ८ लाख योजन है और आयाम (८ लाख यो० — १ लाख) × ९ = ६३ लाख यो० है।

इसीप्रकार समुद्रसे द्वीपका और द्वीपसे समुद्रका विस्तार दुगुना तथा आयाम से आयाम दुगुना और ९ लाख योजन अधिक होकर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त चला जाता है।

अवस्तन द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल चौगुना तथा प्रक्षेप ७२००० करोड़ योजन है—

लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो धादईसंडस्स खेत्तफलं छग्गुणं, धादईसंडदीवस्स खेत्तफलादो कालोदयसमुद्दस्स खेत्तफलं चउग्गुणं बाहत्तरि-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि। खेत्तफलं ७२०००००००००० । एवं हेट्ठिम-दीवस्स वा सीररासिस्स वा खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स वा रयणायरस्स वा खेत्तफलं चउग्गुणं पक्खेवभूद-बाहत्तरि-सहस्स-कोडि-जोयणाणं वग्ग-दुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति ॥

अर्थ—लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डका क्षेत्रफल छह-गुणा और धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे कालोदसमुद्रका क्षेत्रफल चौगुना एवं बहत्तर हजार करोड़ योजन अधिक है—७२०००००-००००० । इसप्रकार अवस्तन द्वीप अथवा समुद्रके क्षेत्रफलसे तदनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्र का क्षेत्रफल चौगुना और प्रक्षेपभूत बहत्तर हजार करोड़ योजन स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त दुगुने होते गये हैं ॥

विशेषार्थ—गा० २४३ के अनुसार जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल ३ × (१००००)² या ७९०००००००० वर्ग योजन है अतः अन्य द्वीप-समुद्रोंके क्षेत्रफलमें जम्बूद्वीप सदृश जो खण्ड हुए हैं उनमेंसे प्रत्येक खण्डका प्रमाण ७९० करोड़ वर्ग योजन है।

लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डद्वीपका क्षेत्रफल ६ गुना अर्थात् (लवण० की खंड-शलाकाएँ २४ हैं अतः) २४ × ६ = १४४ है। धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे कालोदक-समुद्रका क्षेत्रफल ९६ से अधिक ४ गुना है। अर्थात् ६७२ = (१४४ × ४) + ९६ खण्डशलाकाएँ हैं।

अब एक खण्डशलाका का प्रमाण ७५० करोड़ वर्ग योजन है तब ९६ खण्डशलाकाओंका क्या प्रमाण होगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर उपर्युक्त (७५० करोड़ × ९६ =) ७२००० करोड़ वर्ग योजन अतिरेक रूपमें प्राप्त होते हैं।

इसप्रकार अनन्तर द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलसे तदनन्तर उपरिम द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल ४ गुना और प्रक्षेपभूत ७२००००००००००० वर्ग योजन दुगुना-दुगुना होता हुआ स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त चला गया है।

स्वयम्भूरमण द्वीप का विस्तार, आयाम एवं क्षेत्रफल—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो-सयंभूरमण-दीवस्स विक्खंभं छप्पण्ण-रूवेहि भजिद-अगसेढी पुणो सत्त-तीस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा— $\frac{\text{अग०}}{५६}$ । अण जोयणाणि ३७५००।

आयामं पुण छप्पण्ण-रूवेहि हिद-णव-अगसेढीओ पुणो पंच-लक्ख-बासट्ठि-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा $\frac{९}{५६}$। रिण जोयणाणि ५६२५००।

पुणो विक्खंभायामं परोप्पर-गुणिदे खेत्तफलं रज्जूवे कदि णव-रूवेहि गुणिय चउसट्ठि-रूवेहि भजिदमेत्तं किंचूणं होदि। तस्स किंचूणं पमाणं रज्जू ठविय अट्ठावीस-सहस्स-एक्क-सय-पंच-बीस-रूवेहि गुणिदमेत्तं पुणो पण्णास-सहस्स-सत्त[1]-तीस-लक्ख-णव-कोडि-अब्भहिय-बोण्णि-सहस्स-एक्क-सय-कोडि-जोयणमेत्तं होदि। तस्स ठवणा[2] $\frac{\text{रज्जू}}{६४}$। $\frac{९}{६४}$ रिण $\frac{\text{रज्जू}}{७}$। २८१२५ रिण जोयणाणि २१०६३७५०००० ॥

अर्थ—इनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमण-द्वीपका विस्तार छप्पनसे भाजित जगच्छ्रेणी प्रमाण और सैंतीस हजार पाँच सौ योजन अधिक है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$\frac{\text{अग०}}{५६}$ + ३७५०० योजन।

स्वयम्भूरमणद्वीपका आयाम छप्पनसे भाजित नौ जगच्छ्रेणियोंमेंसे पाँच लाख बासठ हजार पाँचसौ योजन कम है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$\frac{\text{अग०}\ ९}{५६}$ — ५६२५०० योजन।

---

१. ब. तेतीस। २. ब. ब. ठवणा ४। ६। ६४।

इस विस्तार और आयामको परस्पर गुणित करने पर स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणा करके चौंसठका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उससे कुछ कम होता है। इस किंचित् कमका प्रमाण राजूको स्थापित करके पचहत्तर हजार एक सौ पच्चीससे गुणा करने पर जो राशि उत्पन्न हो उतना और दो हजार एकसौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार वर्ग योजन प्रमाण है। इसकी स्थापना इसप्रकार है—

$$\text{राजू} \times \text{राजू} \times \frac{९}{६४} - (१ \text{ राजू} \times २८१२५ \text{ यो०} + २१०९३७५००००) \text{ ।।}$$

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपका विस्तार $= \frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० \text{ योजन}$

अर्थात् $\frac{१}{२}$ राजू + ३७५०० योजन है।

स्वयम्भूरमण द्वीपका आयाम =

$= ($ द्वीपका विस्तार $- १०००००) \times ९$

$= \left(\frac{\text{जग०}}{५६} + ३७५०० - १००००० \right) \times ९$

$= \left(\frac{\text{जग०} \times ९}{५६} \right) - ५६२५०० \text{ योजन या } \frac{९}{६४} \text{ राजू} - ५६२५०० \text{ यो०}$ ।

स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल—

इस द्वीपके विस्तार और आयाम को परस्पर गुणित करनेसे स्वयम्भूरमण द्वीपका क्षेत्रफल राजूके वर्गको ९ से गुणित कर ६४ का भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उससे कुछ कम होता है। यथा—

कुछ कम स्वयं० द्वीपका क्षेत्रफल = विस्तार × आयाम।

$= \left(\frac{१}{२} \text{ राजू} + ३७५०० \text{ यो०} \right) \times \left(\frac{९}{६४} \text{ राजू} - ५६२५०० \text{ यो०} \right)$

$= \frac{९}{६४} \times (\text{राजू})^२ + \text{राजू} \left(- \frac{५६२५००}{२} + \frac{९ \times ३७५००}{६४} \right) - ३७५०० \times ५६२५००$

$= \frac{९}{६४} (\text{राजू})^२ - \frac{१९६८७५}{२} \text{ राजू} - २१०९३७५०००० \text{ वर्ग योजन}$।

स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल $\frac{९}{६४} (\text{राजू})^२$ से कुछ कम कहा गया है। इस किञ्चित् कमका प्रमाण—

$- २८१२५ \text{ राजू} - २१०९३७५०००० \text{ वर्ग योजन है।}$

इसकी स्थापना इसप्रकार है—

$\frac{९}{६४}$ । $\frac{९}{६४}$ । रिण $\frac{१}{०}$ । २८१२५ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० ।

स्वयम्भूरमणसमुद्रके विष्कम्भ, आयाम और क्षेत्रफलका प्रमाण—

सयंभूरमणसमुद्दस्स विक्खंभं अट्ठावीस-रूवेहिं भजिद-जगसेढी पुणो पंचहत्तरि-सहस्स-जोयणेहिं अब्भहियं होदि। आयामं अट्ठवीस-रूवेहिं भजिद-णव-जगसेढी पुणो दोण्णि-सयस-पंचवीस-सहस्स-जोयणेहिं परिहीणं होदि। तस्स ठवणा—$\frac{\text{ज}}{२८}$ धण ७५००० । आयाम $\frac{\text{ज}}{२८}$ रिण २२५००० ।

खेत्तफलं रज्जूए कदी चय-रूवेहिं गुणिय सोलस-रूवेहिं भजिदमेत्तं पुणो रज्जू ठविय एक्क-सयस-बारस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहिं गुणिद-किंचूणिय-कदिमेत्तेहिं अब्भहियं होदि। तं किंचूण-पमाणं पण्णास-सयस-सत्तासीदि-कोडि-अब्भहिय-छस्सय-एक्क-सहस्स-कोडि-जोयणमेत्तं होदि।

तस्स ठवणा— $\frac{\text{क}}{\text{ख}}$ । $\frac{\text{ग}}{\text{घ}}$ । घण $\frac{\text{च}}{\text{छ}}$ । ११२५०० । रिण १६८७५०००००० ।

अर्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार अट्ठाईससे भाजित जगच्छ्रेणी और पचहत्तर हजार योजन अधिक है तथा आयाम अट्ठाईससे भाजित नौ जगच्छ्रेणीमेंसे दो लाख पच्चीस हजार योजन कम है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—विस्तार = $\frac{\text{जग०}}{२८}$ +७५००० योजन।

आयाम = $\frac{\text{जग०} \times ९}{२८}$ —२२५००० योजन।

स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल राजूके वर्गको सौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना और राजूको स्थापित करके एक लाख बारह हजार पाँच सौ योजनसे गुणित लब्धमेंसे कुछ कम करके जो शेष रहे उससे अधिक है। इस किञ्चित् कमका प्रमाण एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजन है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$[(\text{राजू})^२ \times ९ \div १६] + (\text{राजू} \times ११२५०० \text{ यो०}) - १६८७५०००००$ ।

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमण समुद्रका विस्तार = $\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{२८}$ +७५००० योजन।

= $\frac{१}{४}$ राजू +७५००० योजन।

स्वयम्भूरमणसमुद्रका आयाम = (विस्तार — १०००००) × ९

= $\left(\frac{१}{४} \text{ राजू} + ७५००० - १००००० \right) \times ९$

= $\frac{९}{४}$ राजू — २२५००० योजन।

---

१. ब. ज. ठवणा ४६ । १६ ।

स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल = (विस्तार × आयाम)

= ($\frac{1}{2}$ राजू + ७५००० यो०) × ($\frac{1}{2}$ राजू — २२५००० योजन ।

= $\frac{1}{64}$ (राजू)^2 + राजू [$\frac{1}{2}$ × (—२२५०००) + ($\frac{1}{2}$ × ७५०००)] —७५००० × २२५००० यो० ।

= $\frac{1}{64}$ × (राजू)^2 + राजू (—५६२५० + १६८७५०) — १६८७५००००० ।

= $\frac{1}{64}$ × (राजू)^2 + (११२५००) राजू — १६८७५००००००० वर्ग योजन ।

गोलाकार क्षेत्रका क्षेत्रफल प्राप्त करनेकी विधि—

एवं दीवोदहीणं विक्खंभायाम-खेत्तफलं च परूवण-हेदुमिमं गाहा-सुत्तं—

लक्ख-विहीणं रूंदं, णवहि गुणं इच्छियस्स दीहत्तं ।
तं चेव य रूंद - गुणं, खेत्तफलं होदि वलयाणं[1] ॥२६८॥

अर्थ—इसप्रकार द्वीप-समुद्रके विस्तार, आयाम और क्षेत्रफलके निरूपण हेतु यह गाथा सूत्र है—

एक लाख कम विस्तारको नौसे गुणा करनेपर इच्छित द्वीप या समुद्रकी लम्बाई होती है। इस लम्बाईको विस्तारसे गुणा करनेपर गोलाकार क्षेत्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥ २६८ ॥

उदाहरण—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या समुद्रका आयाम (लम्बाई) = (विस्तार—१०००००) × ९

इष्ट द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल = लम्बाई (आयाम) × विस्तार

मानलो—यहाँ नन्दीश्वर द्वीप इष्ट है, जिसका विस्तार १६३८४००००० योजन है।

नन्दीश्वरद्वीपका आयाम = (१६३८४००००० — १०००००) × ९

= १४७४५६००००० योजन ।

नन्दीश्वरद्वीपका क्षेत्रफल = १४७४५६००००० × १६३८४००००० ।

= २४१५७७१६४८०००००००००० वर्ग योजन ।

---

१. ब. लयाणं ।

अधस्तन द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलकी
सातिरेकताका प्रमाण—

हेट्ठिम-दीवस्स वा रयणायरस्स वा खेत्तफलादो उवरिम-दीवस्स वा तरंगिणी-णाहस्स वा खेत्तफलस्स सादिरेयत्त-परूवण-हेदुममा गाहा-सुत्तं—

कालोवगोवहीदो, उवरिम-दीवोवहीण पत्तेक्कं ।
रुंदं णव-लक्ख-गुणं, परिवड्ढी होदि उवरुवरि ॥२६९॥

अर्थ—अधस्तन द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलकी सातिरेकता के निरूपण हेतु यह गाथा-सूत्र है—

कालोदसमुद्रसे उपरिम द्वीप-समुद्रोंमेंसे प्रत्येकके विस्तारको नौ लाखसे गुणा करनेपर ऊपर-ऊपर वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है ॥ २६९ ॥

विशेषार्थ—कालोद समुद्रके बाद अधस्तन द्वीप या समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल चार-चार गुना होता गया है और प्रक्षेप (७२००० करोड़) दूना-दूना होता गया है। उपर्युक्त गाथा द्वारा प्रक्षेप (सातिरेक) का प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि दर्शाई गई है। यथा—

गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

वर्णित ऊपर-ऊपर वृद्धि = (कालोदसे ऊपर इष्ट द्वीप या स० का विस्तार) × ९

मानलो—नन्दीश्वर समुद्रके प्रक्षेप (सातिरेक) का प्रमाण इष्ट है। इससे अधस्तन स्थित नन्दीश्वर द्वीपका विस्तार १६३८४ लाख योजन है अतः—

१६३८४०००००×९०००००० = १४७४५६०००००००००० योजन है जो ७२००० करोड़ योजनोंका दूना होता हुआ २०४८ गुना है

यथा—७२००० करोड़ × २०४८ = १४७४५६०००००००००० ।

तेरहवाँ—पक्ष

अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके विष्कम्भ एवं प्रक्षेपभूत क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रका
क्षेत्रफल कितना होता है ? उसे कहते हैं—

तेरसम-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामोजंबूदीवस्स खेत्तफलादो लवणजोरधिस्स खेत्तफलं चउवीस[1]-गुणं । जंबूदीव-सहिद-लवणसमुद्दस्सखेत्तफलादो धादईसंडदीवस्स खेत्त-

---

१. ब. चउवीस ।

फलं पंच-गुणं होऊण चोद्दस-सहस्स बे-सय-पण्णास-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि १४२५०००००००० । जंबूदीव-लवणसमुद्द-सहिय-धादईसंडदीवस्स खेत्तफलादो कालोदग-समुद्दस्स खेत्तफलं तिगुणं होऊण एय-लक्ख-तेवीस-सहस्स-सत्तसय-पण्णास-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि । तस्स ठवणा—१२३७५०००००००० । एवं कालोदग-समुद्द-प्पहुदि-हेट्ठिम-दीव-रयणायराणं पिंड-फलादो उवरिम-दीवस्स वा रयणायरस्स वा खेत्तफलं पत्तेयं तिगुणं पक्खेवभूद-एय-लक्ख-तेवीस-सहस्स-सत्तसय-पण्णास-कोडि-जोयणाणि कमसो दुगुण-दुगुणं होऊण वीस-सहस्स-दु-सय-पण्णास-कोडि-जोयणेहि पमाणं २०२५०००००००० अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—तेरहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलसे लवणसमुद्रका क्षेत्रफल चौबीस (२४) गुना है। जम्बूद्वीप सहित लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे धातकीखण्डद्वीपका क्षेत्रफल पाँच-गुना होकर चौदह हजार दो सौ पचास करोड़ योजन अधिक है—१४२५०००००००० । जम्बूद्वीप और लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे युक्त धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे कालोदसमुद्रका क्षेत्रफल तिगुना होकर एक-लाख तेईस हजार सात सौ पचास करोड़ योजन अधिक है। उसकी स्थापना—१२३७५०००००००० । इसप्रकार कालोदसमुद्र आदि अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके पिण्डफलसे उपरिम द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल प्रत्येक तिगुना होनेके साथ प्रक्षेपभूत एक लाख तेईस हजार सात सौ पचास करोड़ योजन क्रमसे दुगुने-दुगुने होकर बीस हजार दो सौ पचास करोड़ योजन २०२५०००००००० अधिक होता हुआ स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त चला गया है ॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल १ खण्ड-शलाका और लवणसमुद्रका क्षेत्रफल २४ खण्ड शलाका स्वरूप है। जम्बूद्वीप सहित लवणसमुद्रके (१+२४=२५ खंडशलाका स्वरूप) क्षेत्रफलसे धातकीखण्डद्वीपका (१४४ खण्डशलाका स्वरूप) क्षेत्रफल ५ गुना होकर १९ खण्ड-शलाका प्रमाण वर्ग योजनसे अधिक है। यथा—

$$(२५ \times ५) + १९ = १४४ ।$$

एक खण्डशलाका $३ \times (५००००)^२$ अथवा $७५ \times (१०)^८$ वर्ग योजन प्रमाण होती है अतः १९ खण्डशलाकाओंके [$१९ \times ३ (५००००)^२$ या $५७ \times २५ \times (१०)^८ =$] १४२५०००००००० वर्ग योजन प्राप्त हुए।

धातकी खण्डका प्रक्षेपभूत (अधिक धनका) यही प्रमाण ऊपर कहा गया है।

जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र और धातकीखण्डके सम्मिलित (१ + २४ + १४४ = १६९ खण्ड-शलाका स्वरूप) क्षेत्रफलसे कालोदका (६७२ खण्डशलाका स्वरूप) क्षेत्रफल ३ गुना (१६९ × ३ = ५०७) होकर (६७२ — ५०७ =) १६५ खण्डशलाका प्रमाण वर्ग योजनसे अधिक है।

यथा :- ६७२ = (१६९ × ३) + १६५ ।

एक खण्डशलाका ७५ × (१०)^{८} वर्ग योजन प्रमाण है अतः १६५ खण्डशलाकाओंका प्रमाण १६५ × ७५ × (१०)^{८} = १२३७५०००००००० वर्ग योजन है। कालोदधिका प्रक्षेपभूत (अधिक धनका) यही प्रमाण ऊपर कहा गया है।

इसप्रकार अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके पिण्डफलसे कालोदका क्षेत्रफल = ६७२ खण्ड० = (१ + २४ + १४४) × ३ खंडश० + १२३७५०००००००० वर्ग यो० है।

मानलो—यहाँ पुष्करवरद्वीपकी प्रक्षेप वृद्धि प्राप्त करना इष्ट है। जम्बूद्वीप, लवणसमुद्र, धातकीखण्डद्वीप और कालोदसमुद्रके सम्मिलित (१ + २४ + १४४ + ६७२ = ८४१ खण्डशलाका स्वरूप) क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका (२८८० खण्डशलाका स्वरूप) क्षेत्रफल तिगुना (८४१ × ३ = २५२३) होकर (२८८० — २५२३ =) ३५७ खण्डशलाका प्रमाण वर्ग योजनोंसे अधिक है। यथा :-

२८८० = (८४१ × ३) + ३५७ ।

एक खण्डशलाका ७५ × (१०)^{८} वर्ग योजन प्रमाण है अतः ३५७ खण्डशलाकाओंका प्रमाण (३५७ × ७५ × (१०)^{८}) = २६७७५०००००००० वर्ग योजन प्राप्त होता है। यही पुष्करवर द्वीपका प्रक्षेपभूत (अधिक घन) क्षेत्र है। जो कालोदधिके प्रक्षेपभूत क्षेत्रके दुगुनेसे २०२५०००००००० वर्ग यो० अधिक है। इसका सूत्र पु० द्वीपका प्रक्षेप० क्षेत्र = (कालोदधिका प्रक्षेप × २) + २०२५ × (१०)^{८}। २६७७५ × (१०)^{८} = (१२३७५०००००००० × २) + २०२५०००००००० ।

कालोदधि समुद्रके ऊपर द्वीप या समुद्रका क्षेत्रफल प्राप्त करनेकी विधिमें दो नियम निर्णीत हैं—

१. अधस्तन द्वीप-समुद्रके पिण्डफल क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप-समुद्रका पिण्डफल क्षेत्रफल नियमसे तिगुना होता हुआ अन्त-पर्यन्त जाता है।

२. अधस्तन द्वीप या समुद्रके प्रक्षेप [१२३७५ × (१०)^{८}] से उपरिम द्वीप या समुद्रका प्रक्षेप नियमसे दुगुना होता हुआ अन्त पर्यन्त जाता है।

अब यहाँ प्रक्षेपके ऊपर जो २०२५ $(१०)^{८}$ अधिक धन कहा गया है वह ऊपर-ऊपर किस विधिसे प्राप्त होता है ? उसे दर्शाते हैं—

कालोद समुद्रके प्रक्षेपसे पुष्करवर द्वीपका प्रक्षेपभूत दुगनेमें २०२५ $(१०)^{८}$ वर्ग योजन अधिक है। इस २०२५ × $(१०)^{८}$ वर्ग योजन अधिकको १ शलाका मानकर उपरिम द्वीप या समुद्रका यह अधिक धन अधस्तन द्वीप-समुद्रकी शलाकासे १ अधिक दुगुना है। इसका सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या स० का अधिक धन = [(अधस्तन द्वीप या स० की खण्ड ग० × २) + १] × २०२५ × $(१०)^{८}$ ।

पुष्करवर समुद्रका अधिक धन = [(१ × २) + १] × २०२५००००००००० ।

= ३ × [२०२५ × $(१०)^{८}$ = ६०७५००००००००० वर्ग योजन है ।

अर्थात् पु० स० का अधिक धन = (प्रक्षेप युक्त अधिक धन) — (प्रक्षेप × ४)

पु० समुद्रका अ० धन ६०७५ × $(१०)^{८}$ = [५५५७५ × $(१०)^{८}$] — [१२३७५ × $(१०)^{८}$ × ४]

वारुणीवर द्वीपका अधिक धन = [(३ × २) + १] × २०२५ × $(१०)^{८}$

= १४१७५००००००००० = [७ × २०२५०००००००००] वर्ग योजन ।

इसीप्रकार आगे भी जानना चाहिए।

जम्बूद्वीप और स्वयम्भूरमणसमुद्रके मध्य स्थित समस्त द्वीप-समुद्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण—

तत्थ अंतिम-विकप्पं वत्तइस्सामो—सयंभूरमण-समुद्दस्स हेट्ठिम-दोण्ण-उवहीओ सव्वाओ जंबूदीव-विरहिदाओ ताणं खेत्तफलं रज्जूवे कदी ति-गुणिय सोलसेहिं भजिदमेत्तं, पुणो सय-सय-सत्तदोस-कोडि-पण्णास-सयल-जोयणेहिं अब्भहियं होदि । पुणो एक्क-सयल-बारस[1]-सहस्स पंच-सय-जोयणेहिं गुणिद-रज्जूए हीणं होदि । तस्स ठवणा—

$^{५}\frac{१}{१६}$ । $^{१}\frac{१}{१६}$ घण जोयणाणि ६३७५००००००० रिण-रज्जूओ $\overline{७}$ । ११२५०० ।

अर्थ— इसमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमण-समुद्रके नीचे जम्बूद्वीपको छोड़कर जितने द्वीप-समुद्र हैं उन सबका क्षेत्रफल राजूके वर्गको तिगुना करके सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध

---

१. ब. बारसहस्स । २ द. ब. ठवणा—४६ । १६ ।

प्राप्त हो उतना और नौ सौ सैंतीस करोड़ पचास लाख योजन अधिक एवं एक लाख बारह हजार पांच सौ योजनोंसे गुणित राजूसे हीन है। उसकी स्थापना इस प्रकार है—

$$\left(\frac{३\times(\text{राज})^{२}}{१६}\right)+९३७५००००००\ \text{वर्ग यो०})-\text{राजू}\times ११२५००\ \text{यो०}\ )$$

इट्ठादो हेट्ठिम-दीवोवहीणं पिंडफलमाणयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

इच्छिय-दीवुवहीए, विक्खंभायामयम्मि अवणेज्जं।
इगि-णव-लक्खं सेसं, ति-हिदं इच्छादु हेट्ठिमाणफलं ॥२७०॥

अर्थ—इच्छित द्वीप या समुद्रसे अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके पिण्डफलको प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है—

इच्छित द्वीप या समुद्रके विष्कम्भ एवं आयाममेंसे क्रमशः एक लाख और नौ लाख कम करे। पुनः शेष (के गुणनफल) में तीनका भाग देनेपर इच्छित द्वीप या समुद्रके (जम्बूद्वीपको छोड़कर) अधस्तन द्वीप-समुद्रोंका पिण्डफल प्राप्त होता है ॥ २७० ॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट द्वीप या समुद्रमें अधस्तन द्वीप-समुद्रोंका सम्मिलित पिण्डफल

= (इष्ट द्वीप या स० का विस्तार — १०००००) × [{ (इष्ट द्वीप या स० का विस्तार — १०००००) × ९ } — ९०००००] ÷ ३।

उदाहरण—मानलो—यहाँ नन्दीश्वर द्वीप इष्ट है। जिसका विस्तार १६३८४००००० योजन है और आयाम [(१६३८४००००० — १०००००) × ९ =] १४७४४६००००० योजन है। अतः लवणसमुद्रसे क्षीरवरसमुद्रका पिण्डफल—

क्षेत्रफल = (१६३८४००००० — १०००००) × (१४७४४६००००० — ९ ला०) ÷ ३

$$=\frac{१६३८३००००० \times १४७४३८००००००}{३}$$

= ८०१५८९१८०००००००००००० वर्ग योजन।

इसीप्रकार जम्बूद्वीप और स्वयम्भूरमण समुद्रके मध्यवर्ती समस्त द्वीप-समुद्रोंका—

क्षेत्रफल =

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} + ७५००० - १००००० \right) \times \left[\left(\frac{\text{जग०}}{२८} + ७५००० - १००००० \right) \times ९ - ९००००० \right] \div ३$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times \left[\left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times ९ - ९००००० \right] \div ३$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times \left[\left(\frac{९ \text{ जग०}}{२८} - २२५००० \right) - ९००००० \right] \div ३$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times \left(\frac{९ \text{ जग०}}{२८} - ११२५००० \right) \div ३$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times \left(\frac{९ \text{ जग०}}{३ \times २८} - \frac{११२५०००}{३} \right)$$

$$= \left(\frac{\text{जग०}}{२८} - २५००० \right) \times \left(\frac{३ \text{ जग०}}{२८} - ३७५००० \right) .$$

$$= \frac{३ \times (\text{जग०})^२}{(२८)^२} - \frac{\text{जग०}}{२८} \times (३७५००० + ७५०००) \text{ यो० } + २५००० \times$$

३७५००० वर्ग योजन ।

$$= \frac{३ \times (\text{जग०})^२}{(२८)^२} - \frac{\text{जग०}}{७ \times ४} \times (४५०००० \text{ यो० } + ९३७५०००००० \text{ वर्ग यो० } ।$$

$$= \frac{३ \text{ जग०}}{७ \times ४} \times \frac{\text{जग०}}{७ \times ४} - \frac{\text{जग०}}{७} \times (११२५००) \text{ यो० } + ९३७५०००००० \text{ वर्ग यो० } ।$$

$$= \frac{३ (\text{राजू०})^२}{१६} + (९३७५०००००० \text{ वर्ग यो० } - (\text{राजू} \times ११२५०० \text{ यो० }) ।$$

$$= \frac{३}{१६} \times \frac{१}{१६} + ९३७५०००००० - ७ \times ११२५०० ।$$

सादिरेयस्स आणयणट्ठं गाहा-सुत्तं—

इच्छिय-वासं दुगुणं, वी-लक्खूणं ति-लक्ख-संगुणियं ।
जंबूदीव - फलूणं, सेसं तिगुणं हवेदि आदिरेयं ।।२७१।।

अर्थ—सातिरेकका प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है- -

इच्छित द्वीप या समुद्रके दुगुने विस्तारमेंसे दो लाख कम करके शेष को तीन लाखसे गुणा करने पर जो राशि उत्पन्न हो उसमेंसे जम्बूद्वीपके क्षेत्रफलको कम करके शेषको तिगुना करने पर अतिरेक (प्रक्षेपभूत) का प्रमाण प्राप्त होता है ॥ २७१ ॥

गाथानुसार सूत्र इस प्रकार है—

अभीष्ट अतिरेक प्रमाण = ३ [{ २ × इष्ट द्वीप या स० का विस्तार—२००००० } × (३०००००) — २ × ($\frac{१०^{५}}{२}$)^{२}]

उदाहरण—मानलो—यहाँ पुष्करवर समुद्र इष्ट है । जिसका विस्तार ३२००००० लाख योजन है । इसका प्रक्षेपभूत—

अतिरेक प्रमाण = ३ [{ २ × ३२००००० — २००००० } × ३००००० — ३ × २५००००००]

= ३[६२००००० × ३००००० — ७५००००००]

= ३ × [१८५=५००००००००] = ५५५७५०००००००० वर्ग योजन ।

अर्थात् पुष्करवर द्वीपके क्षेत्रफलको तिगुनाकर ५५५७५ × (१०)^{१२} जोड़ देनेसे पुष्करवर समुद्रका क्षेत्रफल प्राप्त होता है ।

चौवहवाँ—पक्ष

अधस्तन समुद्रके विष्कम्भ और आयामसे उपरिम समुद्रका विष्कम्भ और आयाम कितना अधिक होता हुआ गया है ? उसे कहते हैं—

चोद्दसम-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामो—लवणसमुद्दस्स विक्खंभं वेण्णि-लक्खं २०००००, आयामं णव-लक्खं ९००००० । कालोदगसमुद्द-विक्खंभं अट्ठ-लक्खं ८०००००, आयामं तेसट्ठि - लक्खं ६३००००० । पोक्खरवरसमुद्दस्स विक्खंभं बत्तीस - लक्खं ३२०००००, आयामं एक्कसीदि-लक्खेणब्भहिय-बे-कोडीओ होइ २८१००००० । एवं हेट्ठिम-समुद्द-विक्खंभादो उवरिम-समुद्दस्स विक्खंभं चउग्गुणं, आयामादो आयामं चउग्गुणं सत्तावीस-लक्खेहि अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—चौदहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—लवणसमुद्रका विस्तार दो लाख योजन और आयाम नौ लाख योजन है। कालोदक समुद्रका विस्तार आठ लाख योजन और आयाम तिरेसठ लाख ६३००००० योजन है। पुष्करवरसमुद्रका विस्तार ३२ लाख योजन और आयाम दो करोड़ उन्यासी लाख २७९००००० योजन है। इसप्रकार अधस्तन समुद्रके विष्कम्भसे उपरिम समुद्रका विष्कम्भ चौगुना तथा आयामसे आयाम चौगुना और २७ लाख योजन अधिक होकर स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त चला गया है।

विशेषार्थ—अधस्तन समुद्रकी अपेक्षा उपरिम समुद्रका विस्तार चार गुना होता हुआ जाता है। यथा—

कालो० स० का वि० ८००००० यो० = (ल० स० का वि० २०००००) × ४।

पुष्कर० स० का वि० ३२००००० यो० = (का० स० का वि० ८०००००) × ४।

वारुणी स० का वि० १२८००००० यो० = (पु० स० का वि० ३२०००००) × ४ आदि।

अधस्तन समुद्रकी अपेक्षा उपरिम समुद्रका आयाम चौगुना और २७००००० योजन अधिक होता हुआ जाता है। यथा—

कालोद समुद्रका आयाम ६३००००० यो० = (९ लाख × ४) + २७ लाख।

पुष्कर० स० का आयाम २७९००००० यो० = (६३००००० × ४) + २७००००० यो०।

वारुणी स० का आयाम ११४७००००० यो० = (२७९ लाख × ४) + २७००००० यो०।

अधस्तन समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल—

लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो कालोदक समुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीस-गुणं, कालोदकसमुद्दस्स खेत्तफलादो पोक्खरवर-समुद्दस्स खेत्तफलं सत्तारस-गुणं होऊण तिण्णि-लक्ख-सट्ठि-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि ३६०००००००००००० । पोक्खरवर-समुद्दस्स खेत्तफलादो वारुणिवर समुद्दस्स खेत्तफलं सोलस-गुणं होऊण पुणो चोत्तीस-लक्ख-छप्पण्ण-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि ३४५६०००००००००० । एसो पहुदि हेट्ठिम-जोररासिस्स खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-जोररासिस्स खेत्तफलं सोलस-गुणं पक्खेव-भूद-चोत्तीस-लक्ख-छप्पण्ण-सहस्स-कोडि-जोयणाणि च उग्गुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभू-रमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे कालोदकका क्षेत्रफल अट्ठाईस-गुना और कालोदक-समुद्र के क्षेत्रफलसे पुष्करवरसमुद्रका क्षेत्रफल सत्तरह-गुना होकर तीन लाख साठ हजार करोड़ योजन अधिक है ३६०००००००००००० । पुष्करवरसमुद्रके क्षेत्रफलसे वारुणीवरसमुद्रका क्षेत्रफल सोलह-गुना होकर चौंतीस लाख छप्पन हजार करोड़ योजन अधिक है ३४५६०००००००००० । यहाँसे आगे अधस्तन समुद्रके क्षेत्रफलसे अनन्तर उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल स्वयम्भूरमणसमुद्र पर्यन्त क्रमशः सोलह-गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत चौंतीस लाख छप्पन हजार करोड़ योजनोंसे भी चौगुना होता गया है।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल $३ \times (५०००)^२$ वर्ग योजन है। जिसका मान १ खण्ड शलाका है। इसप्रकार लवणसमुद्रकी २४, कालोदककी ६७२, पुष्करवरसमुद्रकी ११९०४ और वारुणीवरसमुद्रकी १९५०७२ खण्ड-शलाकाएँ हैं।

लवणसमुद्रके (२४ खं० प्र० स्वरूप) क्षेत्रफलसे कालोदक-समुद्रका क्षेत्रफल २८ गुना है। यथा—

कालोदकका क्षेत्रफल ६७२ खं० श० प्रमाण = (२४ खं० श० × २८)

कालोदकके क्षेत्रफलसे पुष्करवरसमुद्रका (११९०४ खण्डशलाका स्वरूप) क्षेत्रफल १७ गुनेसे $३६ \times (१०)^{११}$ वर्ग योजन अधिक है। जो ११९०४—(६७२ × १७) = ४८० खं० श० प्रमाण है। यथा—

११९०४ = (६७२ × १७ खं० श०) + [४८० × ३ $(५०००)^२$]

= (६७२ × १७ खं० श०) + ४८० × ७५०००००००० वर्ग यो०।

= ६७२ × १७ खं० श० + ३६०००००००००० वर्ग योजन।

पुष्करवर समुद्रके क्षेत्रफलसे वारुणीवरसमुद्रका (१९५०७२ खण्ड शलाका स्वरूप) क्षेत्रफल १६ गुनेसे $३४५६ \times (१०)^{१०}$ वर्गयोजन अधिक है। जो १९५०७२—(११९०४ × १६) = ४६०८ खण्डशलाका प्रमाण है। यथा—

१९५०७२ = (११९०४ × १६ खं० प्र०) + [४६०८ × ३ $(५०००)^२$]

= (११९०४ × १६ खं० श०) + ४६०८ × ७५०००००००० वर्ग यो०

= ११९०४ × १६ खं० श० + ३४५६०००००००००० वर्ग योजन।

इससे आगे अधस्तन समुद्रके क्षेत्रफलसे उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल अन्तिम समुद्र पर्यन्त क्रमशः १६ गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत $३४५६ \times (१०)^{१०}$ वर्ग योजनोंसे भी चौगुना होता गया है। यथा—

मानलो—क्षीरवरसमुद्र इष्ट है। इसका विस्तार ५१२००००० यो० और खण्डशलाकाएँ ३११९५८४ हैं।

३११९५८४—(१९५०७२ × १६ खं० श०)=१८४३२ खं० श० वारुणी० समुद्र से अधिक हैं।

३११९५८४=(१९५०७२ × १६ खं० श०)+[१८४३२ × ३ (५००००)²]

=(१९५०७२ × १६ खं० श०)+ १३८२२४०००००००००० वर्ग यो० है।

क्षीरवर समुद्रका यह १३८२२४ × (१०)¹⁰ वर्ग योजन प्रक्षेप वारुणीवर समुद्रके ३४५६ × (१०)¹⁰ वर्ग योजनसे ४ गुना है।

तत्थ विक्खंभायाम-खेत्तफलाणं अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—

अर्थ—उनमें विस्तार, आयाम और क्षेत्रफलके अन्तिम विकल्पको कहते हैं—

अहीन्द्रवर समुद्रका विस्तार और आयाम—

अहिंदवरसमुद्दस्स विक्खंभे रज्जूए सोलस-भागं पुणो अट्ठारस-सहस्स सत्तसय-पण्णास-जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा रा/१६ + १८७५०। अद्ध जोयणाणि १८७५०।

तस्स आयाम णव रज्जू ठविय सोलस-रूवेहि भजिदमेत्तं पुणो सत्त-लक्ख-एक्कतीस-सहस्स बेण्णि-सय-पण्णास जोयणेहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा— रा/९ − ७३१२५०॥

अर्थ—अहीन्द्रवर समुद्रका विस्तार राजूका सोलहवाँ भाग और अठारह हजार सात सौ पचास योजन अधिक है। उसकी स्थापना इसप्रकार है:—राजू/१६ + १८७५० यो०।

इस समुद्रका आयाम नौ राजुओंको रखकर सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे सात लाख इकतीस हजार दो सौ पचास योजन हीन है। उसकी स्थापना—९/१६ राजू — ७३१२५० योजन॥

विशेषार्थ—अहीन्द्रवरसमुद्रका विस्तार=राजू × १/१६ + १८७५० योजन है।

इसी समुद्रका आयाम= (राजू/१६ + १८७५० — १०००००) × ९

= ९/१६ राजू — (८१२५० × ९)

= ९/१६ राजू — ७३१२५० योजन।

स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार और आयाम—

सयंभूरमणसमुद्दस्स विक्खंभं एक्क-सेढिं ठविय अट्ठावीस-रूवेहि भजिदमेत्तं पुणो पंचहत्तरि-सहस्स-जोयणेहि अब्भहियं होदि। तस्स ठवणा—$\frac{\text{जग०}}{२८}$ + ७५००० जोयणाणि ७५०००। तस्सेव आयामं णव-सेढिं ठविय अट्ठावीसेहि भजिदमेत्तं, पुणो दोण्णि-लक्ख-पंचवीस-सहस्स-जोयणेहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा— $\frac{\text{जग०}}{२८}$। रिण जोयणाणि २२५०००।

अर्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार एक जगच्छ्रेणीको रखकर उसमें अट्ठाईसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना और पचहत्तर हजार योजन अधिक है। उसकी स्थापना—जग० $\frac{१}{२८}$—७५००० योजन।

उसका आयाम नौ जगच्छ्रेणियोंको रखकर अट्ठाईसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें दो लाख पच्चीस हजार योजन कम है।

उसकी स्थापना—जग० $\frac{९}{२८}$ — २२५००० योजन।

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमण समुद्रका विस्तार= $\frac{\text{जग०}}{२८}$ + ७५००० योजन।

स्वयम्भूरमण समुद्रका आयाम= $\left(\frac{\text{जग०}}{२८} + ७५००० - १००००\right) \times ९$

$= \frac{९ \text{ जग०}}{२८} - २२५००$ योजन।

अहीन्द्रवर समुद्रका क्षेत्रफल—

अहिंदवरसमुद्दस्स खेत्तफलं रज्जूए कदी णव-रूवेहि गुणिय वेसय-छप्पण्ण-रूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्क-लक्ख-चालीस-सहस्स-छस्सय-पंचवीस-जोयणेहि गुणिद-मेत्तं रज्जूए चउब्भागं, पुणो एक्क-सहस्स-तिण्णि-सय-एक्कहत्तरि-कोडीओ णव-लक्ख-सत्ततीस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि-परिहीणं होदि। तस्स ठवणा—$\frac{\text{रू}}{२५६}$। $\frac{\text{ज}^{२}}{४}$। रिण रज्जू $\frac{१}{४}$। १४०६२५ रिण जोयणाणि १३७१०९३७५००।

अर्थ—अहीन्द्रवरसमुद्रका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणाकर दो सौ छप्पनका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे एक लाख चालीस हजार छह सौ पच्चीस योजनोंसे गुणित राजू का चतुर्थ भाग और एक हजार तीन सौ इकहत्तर करोड़ नौ लाख सैंतीस हजार पांचसौ योजन कम है। स्थापना इसप्रकार है—

$$= \frac{९ \cdot रा^२}{२५६} - (राजू \frac{१}{२} \times १४०६२५) - १३७१०९३७५०० ।$$

विशेषार्थ—महीन्द्रवरसमुद्रका क्षेत्रफल = आयाम × विस्तार

$$= (\frac{१}{१६} राजू - ७३१२५०) \times (\frac{१}{१६} राजू + १८७५०)$$

$$= ९ \frac{(राजू)}{२५६} + [राजू \{ \frac{१}{१६} \times १८७५० - \frac{१}{१६} \times ७३१२५० \}] - ७३१२५० \times १८७५०$$

$$= ९ \frac{(राजू)^२}{२५६} + [राजू \times (^{४६८७५०} - ^{४६८७५०})] - १३७१०९३७५०० ।$$

$$= ९ \frac{(राजू)^२}{२५६} - (राजू \times १४०६२५) - १३७१०९३७५०० वर्ग यो० ।$$

स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल—

सयंभूरमण-णिण्णग-रमणस्स खेत्तफलं रज्जूए कदी णव-रूवेहि गुणिय सोलस-रूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्क-लक्ख-बारस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि (गुणिद-रज्जूए) अब्भहियं, पुणो एक्क-सहस्स-छस्सय-सत्तासीदि-कोडि-पण्णास-लक्ख-जोयणेहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा—$\frac{९}{१६}$ । $\frac{१}{१६}$ घण रज्जू $\bar{७}$ । ११२५०० रिण जोयणाणि १६८७५००००००० ॥

अर्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणा करके सोलहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना होकर एक लाख बारह हजार पाँचसौ योजनोंसे गुणित राजूसे अधिक और एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजन कम है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$$\frac{९ \cdot राजू^२}{१६} + (राजू \times ११२५०० यो०) - १६८७५०००००० ।$$

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल = आयाम × विस्तार

$$= (\frac{९ \cdot जग०}{१६} - २२५००० यो०) \times (\frac{जग०}{४} + ७५००० यो०)$$

$$= \frac{९(जग०)^२}{(८)^२} + जग० [(\frac{१}{८} \times ७५०००) - (\frac{१}{२} \times २२५०००)] - २२५००० \times ७५००० ।$$

$$= \frac{९(जग०)^२}{(७)^२ \times (४)^२} + \frac{जग०}{७} \times [१६८७५० - ५६२५०] - २२५००० \times ७५००० यो० ।$$

$$= \frac{९(राजू)^२}{१६} + राजू \times ११२५०० यो० - १६८७५००००००० वर्ग योजन ।$$

अतिरेयस्स पमाणं आणयण-हेदुं इमं गाहा-सुत्तं—

वारुणिवरादि-उवरिम-इच्छिद-रयणायरस्स वित्थारं ।
सत्तावीसं लक्खे गुणिदे, अहियस्स परिमाणं ॥२७२॥

अर्थ—अतिरेकका प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

वारुणीवर समुद्रको आदि लेकर उपरिम इच्छित समुद्रके विस्तारको सत्ताईस लाखसे गुणा करने पर अधिकताका प्रमाण प्राप्त होता है ॥२७२॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

वर्णित अतिरेक घन = (उपरिम इच्छित समुद्रका विस्तार) × २७००००० ।

उदाहरण—मानलो—यहाँ क्षीरवरसमुद्रका अतिरेक घन प्राप्त करना इष्ट है । जिसका विस्तार ५१२००००० योजन है अतः क्षीर० स० का अतिरेक घन = ५१२००००० × २७००००० ।
= १३८२४०१०००००००० योजन ।

पन्द्रहवाँ-पक्ष

अवस्तनसमुद्रके (पिण्डफल + प्रक्षेपभूत) क्षेत्रफलसे उपरिम समुद्रका
क्षेत्रफल कितना होता है ?

पण्णारस-पक्खे पण्णट्ठसुत्तं वत्तइस्सामो—तं जहा—लवणसमुद्दस्स खेत्तफलादो कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलं अट्ठावीस-गुणं । लवणसमुद्द-सहिद-कालोदगसमुद्दस्स खेत्तफलादो पोक्खरवरसमुद्दस्स खेत्तफलं सत्तारस-गुणं होऊण चउवण्ण-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि ५४०००००००००० । लवण-कालोदय-सहिद-पोक्खरवर-समुद्दस्स खेत्तफलादो वारुणिवर-खीररासिस्स खेत्तफलं पण्णारस-गुणं होऊण पणयाल-सय-चउवण्ण-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होइ ४५५४०००००००००० । एवं वारुणिवरखीर-रासिप्पहुदि-हेट्ठिम-खीररासीणं खेत्तफल-समूहादो उवरिम-णिच्चणसमुद्दस्स खेत्तफलं पत्तेयं पण्णारस-गुणं पत्तेयमुद्द-पयदाल-सय-चउवण्ण-सहस्स-कोडीओ अवणिदं होऊण पुणो एक्क-सय-बासट्ठि-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होइ १६२०००००००००० । एवं णेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ।

अर्थ—पन्द्रहवें पदमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इस प्रकार है—लवणसमुद्रके क्षेत्रफल से कालोदकसमुद्रका क्षेत्रफल अट्ठाईस-गुणा है। लवणसमुद्र सहित कालोदक समुद्रके क्षेत्रफलसे पुष्करवरसमुद्रका क्षेत्रफल सत्तरह-गुणा होकर चौवन हजार करोड़ योजन अधिक है ५४०००००००००० । लवण एवं कालोद सहित पुष्करवरसमुद्रके क्षेत्रफलसे वारुणीवर-समुद्रका क्षेत्रफल पन्द्रह गुना होकर पैंतालीस लाख चौवन हजार करोड़ योजन अधिक है ४५५४०००००००००० । इसप्रकार वारुणीवरसमुद्रसे सब अधस्तन समुद्रोंके क्षेत्रफल समूहसे उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल प्रत्येक पन्द्रह-गुणा होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत पैंतालीस-लाख चौवन हजार करोड़ योजनोंसे चौगुना होकर एक लाख बासठ हजार करोड़ योजन अधिक है १६२०००००००००० । इसप्रकार यह क्रम स्वयम्भूरमण-समुद्र पर्यन्त जानना चाहिए ।।

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके क्षेत्रफलसे कालोदकका क्षेत्रफल २८ गुना है। यथा—

=६७२=२४×२८ खण्डशलाका स्वरूप है।

लवणसमुद्र और कालोदकके (२४+६७२=६९६ खण्डशलाकारूप) क्षेत्रफलसे पुष्करवर समुद्रका (११९०४ खं० श० रूप) क्षेत्रफल १७ गुना होकर [११९०४—(६९६×१७)=७२ खं० श० रूप] ५४×(१०)^१० वर्ग योजन अधिक है। यथा—

वृद्धि सहित क्षेत्रफल ११९०४=(६९६×१७ खं० श०)+(७२×७५००००००००)

=(६९६×१७ खं० श०)+५४०००००००००० वर्ग योजन।

लवणसमुद्र, कालोदक और पुष्करवरसमुद्रके (२४+६७२+११९०४=१२६०० खं० श० रूप) क्षेत्रफलसे वारुणीवर समुद्रका (१९५०७२ खं० श० रूप) क्षेत्रफल १५ गुना होकर [१९५०७२—(१२६०० × १५)=६०७२ । खं० श० रूप)] ४५५४×(१०)^१० वर्ग योजन अधिक है। यथा—

वृद्धि सहित क्षेत्रफल १९५०७२ खं० श० रूप—(१२६०० × १५ खं० श०)+[६०७२ खं० श०×७५×(१०)^८]

=(१२६०० × १५ खं० श०)+४५५४०००००००००० वर्ग यो० ।

इसप्रकार वारुणीवर समुद्रसे लेकर सर्व अधस्तन समुद्रोंके क्षेत्रफल समूहसे उपरिम समुद्रका क्षेत्रफल प्रत्येक १५ गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत ४५५४×(१०)^१० से ४ गुना होकर १६२×(१०)^१० वर्ग योजन अधिक है। यथा—

वारुणीवरसमुद्रसे उपरिम क्षीरवर समुद्रका विस्तार ५१२ लाख योजन है और इसकी खं० श० ३१३९५८४ है। जो लवणसमुद्र, कालोदकसमुद्र, पुष्करवरसमुद्र और वारुणीवर समुद्रकी

(२४+६७२+११९०४+१६५०७२)=२०७६७२ सम्मिलित अक्षसंख्याकाओंसे १५ गुणा होकर [३१३९५८४—(२०७६७२×१५)+२४५०४ अन्य सं० रूप] ४५५४×(१०)[१७] वर्ग योजनका ४ गुणा होते हुए १६२×(१०)[१७] वर्ग योजन अधिक है। यथा—

क्षी० स० का क्षेत्र० ३१३९५८४ अं० सं० रूप=(२०७६७२ अं० गा०×१५) +(२४५०४ अं० गा०) है।

अथवा

२०७६७२×१५=३११५०८० अं० गा० रूप क्षेत्रफल+[४५५४×(१०)[१७]×४= १८२१६×(१०)[१७]]+१६२०००००००००० वर्ग यो० है।

अधिक धन प्राप्त करनेकी दूसरी विधि—

क्षीरवर समुद्रके क्षेत्रफलमें अधिक धनका प्रमाण १६२०००००००००० वर्ग योजन प्रमाण है। इस अधिक धनकी एक शलाका मानकर उपरिम समुद्रका अधिक धन अवस्तन समुद्रकी शलाकासे ४ अधिक ४ गुना होता है। इसका सूत्र इसप्रकार है—

इष्ट स० का अधिक धन=[(अवस्तन स० की शलाका×४)+१]×१६२×(१०)[१७]

घृतवरसमुद्रका अधिक धन=[(१×४)+१]×१६२×(१०)[१७]

=५×१६२×(१०)[१७]=८१०००००००००० वर्ग योजन है।

स्वयंभूरमणसमुद्रसे अर्द्धेन्द्रवरसमुद्र पर्यन्तके सब समुद्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—सयंभूरमण-विण्हुवर-जाहाणो हेट्ठिम-सव्व-सोररासीणं खेत्तफल-पमाणं रज्जूए वग्गं ति-गुणिय असीदि-कदेहि अहिदसेसं, पुणो एक्क-सहस्स-छस्सय-सत्ततीदि-कोडि-पण्णास[1]-लक्ख-जोयणेहि अब्भहियं होदि पुणो बावण्ण-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि गुणिद-रज्जूहि परिहीणं होदि। तस्स ठवणा—$\frac{\overline{\text{असी}}}{\text{रू}^{3}}$। ५२५००। अस्य जोयणाणि १६८७५००००००० किंचि रज्जूओ ऊ ५२५००।

अर्थ—इसमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—

स्वयम्भूरमणसमुद्रके नीचे अवस्तन सब समुद्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण राजूके वर्गको तीनसे गुणा करके अस्सीका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतने प्रमाण होकर एक हजार छह सौ सत्तासी

---

१. द. ब. क. ज. पण्णास।

करोड़ पचास लाख योजन अधिक और बावन हजार पाँच सौ योजनोंसे गुणित राजूसे हीन है। उसकी स्थापना—

$$\left(\frac{(\text{राजू})^2 \times 3}{८०}\right) + १६८७५०००००० \text{ वर्ग योजन} — \text{राजू} \times ५२५०० \text{ वर्ग यो०}$$

स्वयम्भूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल -

सयंभूरमणसमुद्दस्स खेत्तफलं रज्जूए वग्गं णव-रूवेहि गुणिय सोलस-रूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्क-लक्खं बारस-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि गुणिद-रज्जू-घणभहियं होइ, पुणो पण्णास-लक्ख-सत्तासीदि-कोडि-अब्भहिय-छस्सय-एक्क-सहस्स - कोडि - जोयणेहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा — $\frac{९}{१६}$ । ५ । यण $\overline{७}$ । ११२५०० रिण १६८७५०००००० ।

अर्थ—स्वयम्भूरमणसमुद्रका जो क्षेत्रफल है उसका प्रमाण राजूके वर्गको नौसे गुणा करके सोलहका भाग देनेपर जो प्राप्त हो उतना होनेके अतिरिक्त एक लाख बारह हजार पाँच सौ योजनोंसे गुणित राजूसे अधिक और एक हजार छह सौ सतासी करोड़ पचास लाख योजन कम है। उसकी स्थापना—

$$= \frac{(\text{राजू})^2 \times ९}{१६} + (\text{ राजू} \times ११२५०० \text{ वर्ग यो० }) — १६८७५०००००० \text{ वर्ग यो०}$$

तत्थट्ठीणं आगमण-हेदुमिमं गाहा-सुत्तं—

तिय-रूवूणं अंतिम-दंडं णव-लक्ख-रहिद-आयामो ।
पण्णरस-हिदे संगुण-सव्वं हेट्ठिठमस्स-सव्व-उवहि-फलं ॥२७३॥

अर्थ—इन वृद्धियोंको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

तीन लाख कम अन्तिम विस्तार और नौ लाख कम आयामको परस्पर गुणित करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसमें पन्द्रहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना अधस्तन सब समुद्रोंका क्षेत्रफल होता है ॥२७३॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\left.\begin{array}{l}\text{अधस्तन समस्त}\\ \text{समुद्रोंका क्षेत्रफल}\end{array}\right\} = \frac{(\text{इष्ट समुद्रका विस्तार} — ३००००) \times (\text{आयाम} — ९००००)}{१५}$$

उदाहरण—१. पुष्करवर समुद्रका विस्तार ३२००००० योजन और आयाम २७९००००० योजन है।

$$\text{वर्णित क्षेत्रफल} = \frac{(32000000-3000000)\times(279000000-9000000)}{15}$$

$$= \frac{29000000\times 270000000}{15} = 522000000000000 \text{ वर्ग योजन।}$$

यह पुष्करवर समुद्रके पूर्व स्थित लवण और कालोदसमुद्रका सम्मिलित क्षे० फल है।

२. स्वयम्भूरमणसमुद्रसे अधस्तन समस्त समुद्रोंका क्षे० फल—

$$\text{स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार} = \frac{\text{राजू}}{4} + 75000 \text{ योजन।}$$

$$\text{स्वयम्भूरमणसमुद्रका आयाम} = \frac{9 \text{ राजू}}{4} - 225000 \text{ योजन।}$$

$$\left.\begin{array}{l}\text{स्वयं० समुद्रसे अधस्तन}\\ \text{समुद्रों का क्षे० फल}\end{array}\right\} = \frac{\left[\frac{\text{राजू}}{4}+75000-3000000\right]\times\left[\frac{9\text{राजू}}{4}-225000\text{यो०}-9000000\right]}{15}$$

$$= \frac{\left[\frac{\text{राजू}}{4}-225000\right]\times\left[\frac{9\text{राजू}}{4}-1125000\right]}{15}$$

$$= \frac{9 \text{ राजू}^2}{15\times 4\times 4} - \frac{\text{राजू}}{4}[4\times 225000\times 1125000 \text{ यो०}] + (225000\times 1125000 \text{ यो०})$$

$$= \frac{3(\text{राजू})^2}{16\times 5} - \frac{7875000 \text{ राजू यो०}}{15} + \frac{253125\times(10)^8}{15} \text{ वर्ग योजन।}$$

$$= \frac{3(\text{राजू})^2}{80} - 525000 \text{ राजू यो०} + 1687500\times 10^8 \text{ वर्ग योजन।}$$

यहां राजू × योजन का अर्थ है राजुओंका योजनोंके साथ गुणा करना।

सातिरेय-पमाणमाणयण-णिमित्तं गाहा-सुत्तं—

तिण्णिहं सूइ-समूहं, बारुणिवर-उवहि-पहुदि-उवरिल्लं।
चउ-लक्ख-गुणं अहियं, अट्ठरस-सहस्स-कोडि-परिहीणं ॥२७४॥

अर्थ—सातिरेक प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है—

वारुणीवरसमुद्र आदि उपरिम समुद्रकी तीनों प्रकारकी सूचियोंके समूहको चार लाखसे गुणा करके प्राप्त राशिमेंसे अठारह हजार करोड़ कम कर देनेपर अधिकताका प्रमाण आता है ॥२७४॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

गणित सातिरेकता = (समुद्रकी तीनों सूचियोंका योग) × ४००००० − १८ × $(१०)^{१०}$

उदाहरण—

कालोदधि समुद्र सम्बन्धी सातिरेकता } = (२५३००००० + ३८१००००० + ५०९०००००) × ४००००० − १८०००००००००० ।

= ४५५४०००००००००० वर्ग योजन ।

स्वयम्भूरमणसमुद्रकी अभ्यन्तर सूची $\frac{१}{२}$ राजू − १५००००० योजन है, मध्यम सूची $\frac{३}{४}$ राजू − ७५००० यो० और बाह्य सूची १ राजू प्रमाण है। इन सूचियोंके सम्बन्धसे उक्त—

समुद्र सम्बन्धी सातिरेकता } = [($\frac{१}{२}$ रा० − १५०००००) + ($\frac{३}{४}$ रा० − ७५००० यो०) + (१ राजू)] × ४००००० − १८ × $(१०)^{१०}$ यो० ।

= [$\frac{१}{२}$ रा० + $\frac{३}{४}$ रा० + १ रा०) − २२५००० यो०] × ४००००० − १८०००००००००० यो० ।

= $\frac{५}{४}$ राजू × ४०००००) − ९०००००००००० − १८०००००००००० योजन ।

= ९००००० राजू − २७ × $(१०)^{१०}$ यो० ।

अधस्तन समुद्रोंके क्षेत्रफलका प्रमाण—

= [$\frac{३}{४}$ × $(\text{राजू})^{२}$ − ५२५०० रा० × यो० + १६८७५ × $(१०)^{९}$ वर्ग यो०] है।

इसमें १५ का गुणाकर उपर्युक्त सातिरेकताका प्रमाण जोड़ देनेपर स्वयंभूरमणसमुद्रका क्षेत्रफल प्राप्त होता है। यथा—

स्वयं० स० का क्षेत्र० = [$\frac{३}{४}$ राजू^{२} − ५२५०० रा० × यो० + १६८७५ × $(१०)^{९}$] × १५ + ९००००० रा० − २७ × $(१०)^{१०}$ वर्ग योजन

$= \frac{1}{\text{ }}$ राजू^{3} — (५२५०० रा० यो० × १५ — १००००० राजू) + [१६८७५ × १५ × $(१०)^{५}$ — २७ × $(१०)^{१०}$] वर्ग यो०

$= \frac{1}{\text{ }}$ राजू^{3} — (७८७५०० — १०००००) रा० यो० + (२५३१२५०००००० — २७००००००००००)

$= \frac{1}{\text{ }}$ राजू^{3} + ११२५०० राजू × यो० — १६८७५००००००० वर्ग योजन ।

सोलहवाँ-पक्ष

अधस्तन द्वीपके विष्कम्भ और आयामसे उपरिम द्वीपका विष्कम्भ और आयाम कितना अधिक होता हुआ गया है ? उसे कहते हैं—

सोलसम-पक्खे अप्पबहुलं वत्तइस्सामो । तं जहा—धादईसंडदीवस्स विक्खंभं चत्तारि-लक्खं, आयामं सत्तावीस-लक्खं । पोक्खरवरदीव-विक्खंभं सोलस-लक्खं, आयामं पणतीस-लक्ख-सहिय-एय-कोडि-जोयण-पमाणं । वारुणिवरदीव-विक्खंभं चउसट्ठि-लक्खं, आयामं सत्तसट्ठि-लक्ख-सहिय-पंच-कोडीओ । एवं हेट्ठिम-विक्खंभादो उवरिम-विक्खंभं चउग्गुणं, आयामादो आयामं चउग्गुणं सत्तावीस-लक्खेहि अब्भहियं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति ।।

अर्थ—सोलहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं । वह इसप्रकार है—धातकीखण्डद्वीपका विस्तार चार लाख और आयाम सत्ताईस लाख योजन है । पुष्करवरद्वीपका विस्तार सोलह लाख और आयाम एक करोड़ पैंतीस लाख योजन है । वारुणीवरद्वीपका विस्तार चौंसठ लाख और आयाम पाँच करोड़ सड़सठ लाख योजन है । इसप्रकार अधस्तन द्वीपके विस्तारसे तदनन्तर उपरिम द्वीपका विस्तार चौगुना और आयामसे आयाम चौगुना होनेके अतिरिक्त सत्ताईस लाख योजन अधिक होता हुआ स्वयम्भूरमण-द्वीप पर्यन्त चला गया है ।

विशेषार्थ—अधस्तन द्वीपकी अपेक्षा उपरिम द्वीपका विस्तार ४ गुना होता हुआ जाता है । यथा—

धातकी० द्वीपका वि० ४००००० यो० = (जम्बूद्वीपका वि० १०००००) × ४

पुष्कर० द्वीपका वि० १६००००० यो० = (धातकी०का विस्तार ४०००००) × ४

वारुणी० द्वीपका वि० ६४००००० यो०=(पुष्कर० का विस्तार १६०००००)×४ आदि

अधस्तन द्वीपके आयामकी अपेक्षा उपरिम द्वीपका आयाम चौगुना होनेके अतिरिक्त २७००००० योजन अधिक होता हुआ जाता है। यथा—

धातकी० द्वीपका आयाम २७००००० यो०=(४००००० — १०००००)×९

पुष्कर० द्वीपका आयाम १३५००००० यो०=(२७०००००×४)+२७००००० यो०।

वारुणी० द्वीपका आयाम ५६७००००० यो०=(१३५००००००×४)+२७००००० यो० आदि।

अधस्तनद्वीपके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीपका क्षेत्रफल—

धादईसंडदीव-खेत्तफलादो पोक्खरवरदीवस्स खेत्तफलं वीस-गुणं। पुक्खरवर-दीवस्स खेत्तफलादो वारुणीवरदीवस्स खेत्तफलं सोलस-गुणं होऊण सत्तारस-लक्ख-अट्ठावीस-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होइ १७२८०००००००००००। एवं हेट्ठिम-दीवस्स खेत्तफलादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स खेत्तफलं सोलस-गुणं पक्खेवभूद-सत्तारस-लक्ख-अट्ठावीस-सहस्स-कोडीओ चउग्गुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमणदीओ त्ति॥

अर्थ—धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल बीस-गुना है। पुष्करवर-द्वीपके क्षेत्रफलसे वारुणीवर द्वीपका क्षेत्रफल सोलह गुना होकर सत्तरह लाख अट्ठाईस हजार करोड़ वर्ग योजन अधिक है १७२८०००००००००००। इसप्रकार स्वयम्भूरमण-द्वीप पर्यन्त अधस्तन द्वीपके क्षेत्रफलसे अनन्तर उपरिम द्वीपका क्षेत्रफल सोलह गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत सत्तरह लाख अट्ठाईस हजार करोड़ योजनोंसे चौगुना होता गया है॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका क्षेत्रफल ७५×(१०)^९ वर्ग योजन है। इसकी एक शलाका मानी गई है। इसी मापके अनुसार धातकी खण्डकी १४४, पु० द्वीपकी २८८० और वारुणी० द्वीपकी ४८३८४ खण्डशलाकाएँ हैं।

धातकीखण्डद्वीपके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल २० गुना है। यथा—

पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल २८८० खं० श० प्रमाण=१४४×२०।

पुष्करवरद्वीपके क्षेत्रफलसे वारुणीवरद्वीपका क्षेत्रफल १६ गुना होकर १७२८×(१०)^१० वर्ग यो० अधिक है। जो ४८३८४ — (२८८० × १६ खं० श०)=२३०४ खंड श० प्रमाण है। यथा—

४८३८४=(२८८० × १६ खं० ग०)+[२३०४ खं० ग० × ७५ × (१०)^८]

=२८८० × १६+१७२८०००००००००० वर्ग योजन।

इससे आगे अष्टस्तन द्वीपके क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीपका क्षेत्रफल अन्तिम द्वीप पर्यन्त क्रमशः १६ गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत १७२८ × (१०)^१० वर्ग योजनोंसे भी चौगुना होता गया है। यथा—

मानलो—क्षीरवरद्वीप इष्ट है। इसका विस्तार २५६ लाख योजन और खण्डशलाकाएँ ७८३३६० हैं—

७८३३६० खं० ग० — (४८३८४ × १६ खं० ग०)=६२१६ खं० ग० वारुणी० द्वीपसे अधिक है

७८३३६०=(४८३८४ × १६ खं० ग०)+(६२१६ × ७५ × (१०)^८

=(४८३८४ × १६ खं० ग०)+६९१२०००००००००० वर्ग योजन।

क्षीरवरद्वीपका यह ६९१२ × (१०)^१० वर्ग योजन प्रक्षेप वारुणीवरद्वीपके १७२८ × (१०)^१० वर्ग योजनसे ४ गुना है।

एत्थ विक्खंभायाम-खेत्तफलाणं अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—

अर्थ—उनमें विस्तार, आयाम और क्षेत्रफलका अन्तिम विकल्प कहते हैं—

अहीन्द्रवरद्वीपका विस्तार और आयाम—

अहिंदवरदीवस्स विक्खंभं रज्जूए बत्तीसम-भागं, पुणो णव-सहस्स-तिण्णि-सय-पंचहत्तरि-जोयणेहि अब्भहियं होदि। आयामं णव-रज्जू ठविय बत्तीस-रूवेहि भागं घेत्तूण पुणो अट्ठ-लक्ख-पण्णारस-सहस्स-छस्सय-पणवीस-जोयणेहि परिहीणं होइ। तस्स ठवणा— $\overline{७}$। ३२ लब्ध जोयणाणि ९३७५। आयामं $\overline{७}$। $\frac{९}{३२}$। रिण जोयणाणि ८१५६२५।

अर्थ—अहीन्द्रवरद्वीपका विस्तार राजूके बत्तीसवें भाग और नौ हजार तीन सौ पचहत्तर योजन अधिक है तथा इसका आयाम नौ राजुओंको रखकर बत्तीसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे आठ लाख पन्द्रह हजार छह सौ पच्चीस योजन हीन है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—

विस्तार=राजू $\frac{१}{३२}$ + ९३७५ यो०। आयाम=राजू $\frac{९}{३२}$ — ८१५६२५ यो०।

विशेषार्थ—अहीन्द्रवरद्वीपका विस्तार=राजू × $\frac{१}{३२}$ + ९३७५ योजन।

इसी द्वीपका आयाम=(राजू × $\frac{९}{३२}$ + ९३७५ — १०००००) × ९

=$\frac{९ \text{ राजू}}{३२}$ — (९०६२५ × ९)=$\frac{९ \text{ राजू}}{३२}$ — ८१५६२५ योजन।

अहीन्द्रवर द्वीपका क्षेत्रफल—

अहिंदवरदीवस्स खेत्तफलं रज्जूए वग्गं णव-हवेहि गुणिय एक्क-सहस्स-चउवीस हवेहि भजिदमेत्तं, पुणो रज्जूए सोलसम-भागं ठविय तिण्ण-लक्ख-पंच-सट्ठि-सहस्स-छस्सय-पण्णवीस-जोयणेहि गुणिदमेत्तं परिहीणं होदि, पुणो सत्तसय-चउसट्ठि-कोडि-चउसट्ठि-लक्ख-चउसीदि-सहस्स-ति-सय-पंचहत्तरि-जोयणेहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा—$\frac{९}{१०२४}$ रिण रज्जूओ $\overline{७}$ । ^{३६५६३५} रिण जोयणाणि ७६४६४८४३७५ ।

अर्थ—अहीन्द्रवरद्वीपका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणा करके एक हजार चौबीसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे, राजूके सोलहवें भागको रखकर तीन लाख पैंसठ हजार छह सौ पच्चीस योजनोंसे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उतना कम है, पुनः सातसौ चौंसठ करोड़ चौंसठ लाख चौरासी हजार तीन सौ पचहत्तर योजन कम हैं । उसकी स्थापना इसप्रकार है—

$\frac{९ \text{ राजू}^२}{१०२४}$—(रा० $\frac{१}{१६}$ × ३६५६३५ यो०)—७६४६४८४३७५ ।

विशेषार्थ—अहीन्द्रवरद्वीपका क्षेत्रफल = विस्तार × आयाम ।

= $\left(\frac{\text{राजू}}{३२}+९३७५\right)\times\left(\frac{९ \text{ राजू}}{३२}-८१५६२५ \text{ यो०}\right)$

= $\frac{९(\text{राजू})^२}{(३२)^२}+\frac{\text{राजू}}{३२}\times[(९३७५\times९)-८१५६२५ \text{ यो०}]$—९३७५ × ८१५६२५ वर्ग यो० ।

= $\frac{९ \text{ राजू}^२}{(३२)^२}-\frac{\text{राजू}}{३२}\times७३१२५० \text{ यो०}$ — ७६४६४८४३७५ वर्ग यो० ।

= $\frac{९ \text{ राजू}^२}{(३२)^२}-\frac{\text{राजू}}{१६}\times२६५६२५ \text{ यो०}$ — ७६४६४८४३७५ वर्ग योजन ।

स्वयम्भूरमणद्वीपका विस्तार एवं आयाम—

सयंभूरमणदीवस्स विक्खंभं रज्जूए अट्ठम-भागं पुणो सत्तत्तीस-सहस्स-पंचसय-जोयणेहि अब्भहियं होदि, आयामं पुणो णव-रज्जूए अट्ठम-भागं पुणो पंच-लक्ख-बासट्ठि-सहस्स-पंच-सय-जोयणेहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा—$\overline{७}$ । $\frac{१}{८}$ रूऊण जोयणाणि ३७५०० । आयाम $\overline{७}$ । $\frac{१}{८}$ रिण जोयणाणि ५६२५०० ॥

अर्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपका विस्तार राजूका आठवाँ भाग होकर सैंतीस हजार पाँच सौ योजन अधिक है और इसका आयाम नौ राजुओंके आठवें भागमेंसे पाँच लाख बासठ हजार पाँच सौ योजन हीन है । उसकी स्थापना इसप्रकार है—

वि० = $\frac{१}{८}$ राजू + ३७५०० यो० । आयाम = $\frac{९}{८}$ राजू—५६२५०० यो० ॥

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपका विस्तार $= \frac{\text{राजू}}{८} + ३७५००$ योजन।

स्वयम्भूरमणद्वीपका आयाम $= \left(\frac{\text{राजू}}{८} + ३७५०० - १००००० \right) \times ९$

$= \frac{९ \text{ रा०}}{८} - ५६२५०० \text{ योजन है।}$

स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल—

पुणो खेत्तफलं रज्जूए कदी णव-रूवेहि गुणिय चउसट्ठि-रूवेहि भजिदमेत्तम्मि-पुणो रज्जू ठविय अट्ठावीस-सहस्स-एकसय-पंचवीस-रूवेहि गुणिदमेत्तं, पुणो पण्णास-सहस्स-सत्तत्तीस-लक्ख-णव-कोडि-अब्भहिय-दोण्णि-सहस्स-एकसय-कोडि-जोयणं एवेहि[1] वोहि रासीहि परिहीणं पुव्विल्ल-रासी होदि। तस्स ठवणा—$\frac{९}{८}$। $\frac{९}{८}$ रिण रज्जूओ $\overline{७}$। २८१२५ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० ॥

अर्थ—पुनः इस (स्वयम्भूरमण) द्वीपका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणा करके प्राप्त राशिमें चौंसठका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे, राजूको स्थापित करके अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीससे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसे और दो हजार एकसौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन, इन दो राशियोंको कम कर देनेपर अवशिष्ट पूर्वोक्त राशि प्रमाण है। उसकी स्थापना इसप्रकार है—$\frac{९}{८}$ राजू^{२} — (रा० १ × २८१२५ यो०) — २१०९३७५०००० ॥

विशेषार्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल = विस्तार × आयाम इस द्वीपका विस्तार = $\frac{\text{राजू}}{८}$ + ३७५०० योजन है और आयाम = $\frac{९ \text{ राजू}}{८}$ — ५६२५०० यो० है।

इस द्वीपका क्षेत्रफल $= \left(\frac{\text{राजू}}{८} + ३७५०० \text{ यो०} \right) \times \left(\frac{९ \text{ रा०}}{८} - ५६२५०० \text{ यो०} \right)$

$= \frac{९ \text{ राजू}^२}{६४} + \frac{\text{राजू}}{८} [९ \times ३७५०० - ५६२५०० \text{ यो०}] - ३७५०० \times ५६२५००]$

$= \frac{९ \text{ राजू}^२}{६४} + (\text{राजू} \times २८१२५ \text{ यो०}) - २१०९३७५०००० \text{ वर्ग यो०}।$

$= \frac{९}{६४} \text{ राजू}^२ - २८१२५ \text{ राजू यो०} - २१०९३७५०००० \text{ वर्ग योजन}।$

---

१. ब. एवे हवाह, ब. एदे हवाह।

अदिरेयस्स पमाणाणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—

सग-सग-मज्झिम-सूई, णव-लक्ख-गुणं पुणो वि मिलिदव्वं ।
सत्तावीस - सहस्सं, कोडीओ तं हवेदि अदिरेगं ।।२७५।।

अर्थ—अतिरेकका प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

अपनी-अपनी मध्यम-सूचीको नौ लाखसे गुणा करके उसमें सत्ताईस हजार करोड़ और मिला देनेपर वह अतिरेक-प्रमाण होता है ।।२७५।।

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

अतिरेक का प्रमाण = (निज मध्यम सूची × ९०००००) + २७ × (१०)^१० वर्ग योजन ।

उदाहरण—(१) वारुणीवरद्वीपकी मध्यम सूचीका प्रमाण १८९ ला० योजन है ।

वारुणी० द्वीप सम्बन्धी अतिरेक-प्रमाण = (१८९००००० × ९०००००) + २७०००००००००० वर्ग योजन ।

= १७२८००००००००००० वर्ग योजन है ।

(२) स्वयम्भूरमणद्वीपकी मध्यम सूचीका प्रमाण (½ रा० — १८७५०० यो०) है ।

इसके अतिरेक प्रमाण = [(½ रा० — १८७५०० यो०) × ९०००००] + २७ × (१०)^१० वर्ग यो०

= (½ रा० × ९००००० यो०) — (१८७५०० × ९०००००) + २७०००००००००० वर्ग योजन

= ¹³⁵⁰⁰⁰⁰ रा० यो० — १६८७५००००००० + २७०००००००००० वर्ग यो०

= ३३७५०० रा० यो० + १०१२५००००००० वर्ग योजन है ।

इस अतिरेकके प्रमाणमें अहीन्द्रवरद्वीपका १६ गुना क्षेत्रफल जोड़ देनेपर स्वयम्भूरमण-द्वीपका क्षेत्रफल प्राप्त हो जाता है । यथा—

(अहीन्द्रवर द्वीपका १६ गुना क्षेत्रफल = $\frac{१}{२^{६}}$ राजू² = ३६५६२५ रा० यो० — १२२३४३७५०००० वर्ग यो०) + (अतिरेकका प्रमाण = ३३७५०० रा० यो० + १०१२५०००००० वर्ग यो०) ।

$=\frac{5}{49}$ राजू[1]—२८१२५ रा० यो०—२१०९३७५०००० वर्ग योजन स्वयम्भूरमण द्वीपका क्षेत्रफल है।

सत्तरहवाँ-पक्ष

अधस्तन द्वीपके (पिण्डफल+प्रक्षेपभूत) क्षेत्रफलसे उपरिम द्वीप का क्षेत्रफल कितना होता है ?

सत्तारसम-पक्खे अप्पबहुत्तं वत्तइस्सामो। तं जहा—धादईसंड-खेत्तफलादो पुक्खरवरदीवस्स खेत्तफलं वीस-गुणं। धादईसंड - सहिद - पोक्खरवरदीव - खेत्तफलादो वारुणिवर-खेत्तफलं सोलस-गुणं। धादईसंड-पोक्खरवरदीव-सहिय-वारुणिवरदीव-खेत्त-फलादो खीरवरदीव-खेत्तफलं पण्णारस-गुणं होऊण सीदि-सहस्स-सहिय-एक्काणउदि-लक्ख-कोडीहिं अब्भहियं होदि ९१८०००००००००००। एवं खीरवर-दीव-प्पहुदि अब्भंतरिम-सव्व-दीव गउदि-लक्ख-कोडीहिं चउगुणं होऊण एयलक्ख-अट्ठ[1]-सहस्स-कोडि-जोयणेहि अब्भहियं होदि १०८०००००००००००। एवं णेयव्वं जाव सयंभूरमण-दीवो त्ति॥

अर्थ—सत्तरहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है—धातकीखण्डके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल बीस गुना है। धातकीखण्ड सहित पुष्करवरद्वीपके क्षेत्रफलसे वारुणीवर-द्वीपका क्षेत्रफल सोलह गुना है। धातकीखण्ड और पुष्करवरद्वीप सहित वारुणीवरद्वीपके क्षेत्रफलसे क्षीरवरद्वीपका क्षेत्रफल पन्द्रह गुना होकर इक्यानवें लाख अस्सी हजार करोड़ योजन अधिक है ९१८०००००००००००। इसप्रकार क्षीरवर आदि अभ्यन्तर सब द्वीपोंके क्षेत्रफलसे अनन्तर बाह्य भागमें स्थित द्वीपका क्षेत्रफल पन्द्रह गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपभूत इक्यानवें लाख अस्सी हजार करोड़ चौगुने होकर एक लाख आठ हजार करोड़ योजनोंसे अधिक है १०८०००००००००००। यह क्रम स्वयम्भूरमणद्वीप पर्यन्त जानना चाहिए।

विशेषार्थ—धातकीखण्डके क्षेत्रफलसे पुष्करवरद्वीपका क्षेत्रफल २० गुना है। यथा—

पु० द्वीपकी खं० श० २८८०=(धा० की खं० श० १४४)×२०।

---

१. ब. ब. अट्ठारस।

धातकीखण्ड और पुष्करवरद्वीपके (१४४ + २८८० = ३०२४ खं० ग० रूप) क्षेत्रफलसे वारुणीवरद्वीपका (४८३८४ खण्डशलाका रूप) क्षेत्रफल १६ गुना है। यथा—

वारुणीवर द्वीपकी खं० ग० ४८३८४ = (३०२४ खं० श०) × १६।

धातकीखण्ड, पुष्करवरद्वीप और वारुणीवरद्वीपके (१४४ + २८८० + ४८३८४ = ५१४०८ खं० श० रूप) क्षेत्रफलसे क्षीरवरद्वीपका (७८३३६० खं० श० रूप) क्षेत्रफल १५ गुना होकर [७८३३६० खं० श० — (५१४०८ खं० ग० × १५) = १२२४० खं० ग० रूप] ९१८ × (१०)^{११} वर्ग योजन अधिक है। यथा—

वृद्धि सहित क्षेत्रफल ७८३३६० खं० श० रूप = (५१४०८ × १५ खं० श०) + १२२४० खं० श० × ७५ × (१०)^{८}

= (५१४०८ × १५ खं० श०) + ९१८०००००००००० वर्ग यो०

इसप्रकार क्षीरवर आदि अभ्यन्तर सब द्वीपोंके क्षेत्रफलसमूहसे उपरिम द्वीपका क्षेत्रफल प्रत्येक १५ गुना होनेके अतिरिक्त प्रक्षेपसूत्र ९१८ × (१०)^{११} से ४ गुना होकर ०८ × (१०)^{१०} वर्ग योजन अधिक है। यथा—

क्षीरवरद्वीपसे ऊपर घृतवरद्वीप है। जिसका विस्तार १०२४ लाख योजन और आयाम [(१०२४ लाख) × (१०२४ ला० — १ ला०) × ०] योजन है। इस द्वीपकी खण्ड ग० १२५७०६२४ हैं। जो धातकी खण्ड, पुष्करवरद्वीप, वारुणीवरद्वीप और क्षीरवरद्वीपकी (१४४ + २८८० + ४८३८४ + ७८३३६० =) ८३४७६८ सम्मिलित खण्ड शलाकाओंसे १५ गुना होकर [१२५७०६२४ — (८३४७६८ × १५) + ४९१०४ खं० ग० रूप] ९१८ × (१०)^{११} वर्ग योजन का ४ गुना होते हुए १०८ × (१०)^{१०} वर्ग योजन अधिक है। यथा—

घृत० द्वीपका क्षेत्र० १२५७०६२४ खं० श० रूप = (८३४७६८ खं० ग० × १५) + (४९१०४ खं० श०) अथवा ८३४७६८ × १५ = १२५२१५२० खं० श० रूप क्षेत्र० + [९१८ × (१०)^{११} × ४ = ३६७२००००००००००] + १०८०००००००००० वर्ग योजन है।

स्वयम्भूरमणद्वीपके अवस्तन सर्व-द्वीपोंके क्षेत्रफलका प्रमाण—

तत्थ अंतिम-विक्खंभं वत्तइस्सामो—सयंभूरमणदीवस्स हेट्ठिम-सव्व-दीवाणं खेत्तफल-पमाणं रज्जूए वग्गं ति-वुत्तिय दोसुत्तर-तिय-सदेहि भजिदमेत्तं, पुणो एक्क-सहस्सं तिण्णि-सय-उणसट्ठि—कोडीओ सत्ततीस-लक्खं पण्णास-सहस्स-जोयणेहि अब्भहियं होइ। पुणो एक्कतीस-सहस्सं अट्ठ-सय-पंचहत्तरि-जोयणेहि वुत्तिद-रज्जूए[1] परिहीणं होइ।

---

१. द. ब. रज्जूएवि।

तस्स ठवणा—$\frac{३}{३२०}$ । ३ । घण जोयणाणि १३५९३७५०००० । रिण रज्जू $\frac{७}{}$ । ३१८७५ ।

अर्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपके मध्यतन सब द्वीपोंके क्षेत्रफलका प्रमाण राजूके वर्गको तिगुना करके तीनसौ बीसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें एक हजार तीन सौ छनसठ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन अधिक तथा इकतीस हजार आठ सौ पचहत्तर योजनोंसे गुणित राजूसे हीन है। उसकी स्थापना—

$\left(\frac{३ \text{ रा}^२}{३२०}\right)$ + १३५९३७५०००० यो० — (रा० × ३१८७५) ।

स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल—

सयंभूरमणदीवस्स खेत्तफलं रज्जूए कदी णव-रूवेहि गुणिय चउसट्ठि - रूवेहि भजिदमेत्तं, पुणो रज्जू ठविय अट्ठावीस-सहस्स-एक्कसय-पंचवीस[१]-रूवेहि गुणिदमेत्तं, पुणो पण्णास[२]-सहस्स-सत्ततीस-लक्ख-णव-कोडि-अब्भहिय-दोण्णि-सहस्स-एक्कसय-कोडि-जोयणं, एदेहि दोहि रासीहि परिहीणं पुव्विल्ल-रासी होदि । तस्स ठवणा—$\frac{९}{६४}$ । ९ । रिण रज्जूओ $\frac{७}{}$ । २८१२५ रिण जोयणाणि २१०९३७५०००० ।

अर्थ—स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल राजूके वर्गको नौसे गुणा करके चौंसठका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे, राजूको स्थापित करके अट्ठाईस हजार एक सौ पच्चीससे गुणा करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसको तथा दो हजार एक सौ नौ करोड़ सैंतीस लाख पचास हजार योजन, इन दो राशियोंको कम कर देनेपर अवशिष्ट पूर्वोक्त राशि प्रमाण है। उसकी स्थापना—$\left[९ \left(\frac{\text{राजू}}{६४}\right)^२ \right]$ —(१ राजू × २८१२५) — २१०९३७५०००० ।

अभ्यन्तर समस्त द्वीपोंका क्षेत्रफल प्राप्त करनेकी विधि—

अब्भंतरिम-सव्व-दीव-खेत्तफलं मेलावेदूण आणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—

विक्खंभायामे इगि सगछोसं लक्खजोयणमंतिमए ।
पण्णरस-हिदे सव्वं, इच्छादो हेट्ठिमाण[३] संकलणं ॥२७६॥

अर्थ—अभ्यन्तर सब द्वीपोंके क्षेत्रफलको मिलाकर निकालनेके लिए यह गाथा-सूत्र है—

१. ट. ब. ज. पंचवीससहस्स । २. द. ब. क. ज. पण्णारससहस्स । ३. द. हेट्ठिमाह ।

अन्तिम द्वीपके विष्कम्भ और आयामसे क्रमशः एक लाख और सतहत्तर लाख कम करके (शेषके गुणनफलमें) पन्द्रहका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना इच्छित द्वीपसे (जम्बूद्वीपको छोड़कर) अधस्तन द्वीपोंका संकलन होता है ।।२७६।।

विशेषार्थ—गाथासूत्र इसप्रकार है—

$$\text{अभ्यन्तर समस्त द्वीपोंका क्षेत्रफल} = \frac{(\text{अन्तिम द्वीपका विष्कम्भ} - १००००००) \times (\text{उसीका आयाम} - २७००००००)}{१५}$$

उदाहरण -(१) मानलो—यहां अन्तिम इष्ट द्वीप वारुणीवर है। जिसका विष्कम्भ ६४००००० योजन और आयाम ५६७००००० योजन है।

$$\text{धातकी० और पु० द्वीपका सम्मिलित क्षेत्रफल} = \frac{(६४००००० - १००००००) \times (५६७००००० - २७००००००)}{१५}$$

$$= \frac{६३००००० \times ५४०००००००}{१५} = २२६८००००००००००० \text{ वर्ग यो०}।$$

(२) स्वयम्भूरमणद्वीपसे अधस्तन समस्त (जम्बूद्वीपको छोड़कर) द्वीपोंके सम्मिलित क्षेत्रफलका प्रमाण—

स्वयम्भूरमणद्वीपका विष्कम्भ = $\frac{१}{२}$ राजू + ३७५०० योजन।

स्वयम्भूरमणद्वीपका आयाम = $\frac{१}{२}$ राजू − ५६२५०० योजन।

$$\text{स्वयम्भूरमण द्वीप से अधस्तन द्वीपों का सम्मिलित क्षेत्रफल समस्त} = \frac{(\frac{१}{२}\text{राजू} + ३७५०० - १००००००) \times (\frac{१}{२}\text{राजू} - ५६२५०० - २७००००००\text{ वर्ग यो०})}{१५}$$

$$= \frac{(\frac{१}{२}\text{ राजू} + ६२५००) \times (\frac{१}{२}\text{ राजू} - ३२६२५००)}{१५}$$

$$= \frac{[\frac{१}{४}\text{ राजू}^{२} + \frac{\text{राजू}}{२}(-३२६२५०० - ९ \times ६२५००)\text{यो०} + ६२५०० \times ३२६२५०० \text{ वर्ग यो०}]}{१५}$$

$$= \frac{\frac{१}{४}\text{राजू}^{२} - ४७८१२५ \text{ रा० यो०} + २०३९०६२५०००० \text{ वर्ग यो०}}{१५}$$

$$= \frac{३\text{ रा}^{२}}{३२०} - \text{रा० यो० } ३१८७५ + १३५५९३७५०००० \text{ वर्ग योजन}।$$

अहिय-पमाणमाणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—

खीरवरदीव-पहुदि, उवरिम-दीवस्स दीह-परिमाणं ।
चउ - लक्खे संगुणिदे, परिवड्ढी होइ उवरुवरिं ॥२७७॥

अर्थ—अधिक प्रमाण प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

क्षीरवरद्वीपको आदि लेकर उपरिम द्वीपकी दीर्घताके प्रमाण अर्थात् आयामको चार लाखसे गुणित करने पर ऊपर-ऊपर वृद्धिका प्रमाण होता है ॥२७७॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

वर्गित वृद्धि=(द्वीपका आयाम) × ४००००००

उदाहरण—(१) क्षीरवर द्वीपका आयाम २२९५००००० योजन है ।

वर्गित वृद्धि=२२९५०००००० × ४००००००

=९१८०००००००००००००० वर्ग योजन ।

यह क्षीरवरद्वीपसे अधस्तन (पहलेके) द्वीपोंके क्षेत्रफलसे १५ गुना होकर अधिकका प्रमाण है । जो क्षीरवरद्वीपमें प्राप्त होता है ।

(२) अधस्तन द्वीपोंके क्षेत्रफलसे १५ गुना होकर जो अधिकताका प्रमाण स्वयम्भूरमण-द्वीपमें पाया जाता है वह इसप्रकार है—

स्वयम्भूरमणद्वीपका आयाम=$\frac{६}{८}$ रा०—५६२५०० योजन

वृद्धि-प्रमाण-क्षेत्रफल=($\frac{६}{८}$ रा०—५६२५०० यो०) × ४००००० यो०

=४५००००० रा० यो० - २२५ × $(१०)^{६}$ वर्ग यो०

इसलिए स्वयम्भूरमणद्वीपका क्षेत्रफल

=$\frac{६५}{६४}$ राजू^{२}—४७८१२५ रा० यो० + २०३९०६२५०००० वर्ग यो०

सातिरेकका प्रमाण ४५००००० रा० यो०—२२५०००००००००० वर्ग योजन

=$\frac{६५}{६४}$ राजू^{२}—२८१२५ रा० यो०—२१०९३७५०००० वर्ग योजन ।

✿

अठारहवाँ पक्ष

अधस्तन द्वीप-समुद्रोंके त्रिस्थानक सूची-व्यास द्वारा उपरिम द्वीप-समुद्रोंका सूची-व्यास प्राप्त करनेकी विधि—

अट्ठारसम-पक्खे अप्पबहुत्तं वत्तइस्सामो—

लवणणीरधीए[1] आदिम-सूई एक्क-लक्खं, मज्झिम-सूई तिण्णि-लक्खं, बाहिर-सूई पंच-लक्खं, एदेसिं ति-द्वाण-सूईणं मज्झे कमसो चउ-छक्कट्ठ-लक्खाणि मेलिदे धादई-संडदीवस्स आदिम-मज्झिम-बाहिर-सूईओ होंति। पुणो धादईसंडदीवस्स ति-द्वाण-सूईणं मज्झे पुव्विल्ल-पक्खेवं दुगुणिय कमसो मेलिदे कालोदग-समुद्दस्स ति-द्वाण-सूईओ होदि। एवं हेट्ठिम-दीवस्स वा रयणायरस्स वा ति-द्वाण-सूईणं मज्झे चउ-छक्कट्ठ-लक्खाणि अब्भहियं करिय उवरिम-दुगुण-दुगुणं कमेण मेलावेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ—अठारहवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—लवणसमुद्रकी आदिम सूची एक लाख, मध्यम सूची तीन लाख और बाह्य सूची पाँच लाख योजन है। इन तीन सूचियोंके मध्यमें क्रमशः चार लाख, छह लाख और आठ लाख मिलाने पर धातकीखण्डकी आदिम, मध्यम और बाह्य सूची होती है। पुनः धातकीखण्डकी तीनों सूचियोंमें पूर्वोक्त प्रक्षेपको दुगुनाकर क्रमशः मिला देनेपर कालोदक समुद्रकी तीनों सूचियाँ होती हैं। इसप्रकार अधस्तन द्वीप अथवा समुद्रकी त्रिस्थान सूचियोंमें चार, छह और आठ लाख अधिक करके आगे-आगे स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त दूने-दूने क्रममें मिलाते जाना चाहिए॥

विशेषार्थ—

	आदिम सूची + प्रक्षेप	मध्यम सूची + प्रक्षेप	बाह्य सूची + प्रक्षेप
लवणसमुद्र की =	१००००० यो०	३००००० यो०	५००००० यो०
प्रक्षेप	+ ४००००० यो०	+ ६००००० यो०	+ ८००००० यो०
धातकीखण्डद्वीपकी =	५००००० यो०	९००००० यो०	१३००००० यो०
दुगुना प्रक्षेप	+ ४०००००×२	+ ६०००००×२	+ ८०००००×२
कालोदक समुद्रकी =	१३००००० यो०	२१००००० यो०	२९००००० यो०
दुगुना प्रक्षेप	+ ८०००००×२	+ १२०००००×२	+ १६०००००×२
पुष्करवर द्वीपकी =	२९००००० यो०	४५००००० यो०	६१००००० यो०

इसीप्रकार स्वयम्भूरमण समुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिए।

---

१. ब. ब. लवणणीरद्धीए।

स्वयम्भूरमणसमुद्रकी तीनों सूचियाँ प्राप्त करनेकी विधि—

तस्स अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो । तं जहा—सयंभूरमणदीवस्स आदिम-सूई-मज्झे रज्जूए चउब्भागं पुणो पंचहत्तरि-सहस्स-जोयणाणि संमिलिदे सयंभूरमणसमुद्दस्स आदिम-सूई होदि । तस्स ठवणा— ७ । ४ घण जोयणाणि ७५००० । पुणो तद्दीवस्स मज्झिम-सूइम्मि तिय-रज्जूणं अट्ठम-भाग पुणो एक्क-लक्ख बारस-सहस्स-पंचसय-जोयणाणि संमिलिदे सयंभूरमणसमुद्दस्स मज्झिम-सूई होइ । तस्स ठवणा— ७ । ३ घण जोयणाणि । ११२५०० । पुणो सयंभूरमणदीवस्स बाहिर-सूई-मज्झे रज्जूए [1]अद्ध पुणो दिवड्ढ-लक्ख-जोयणाणि समेलिदे[2] चरम-समुद्द-अंतिम-सूई होइ । तस्स ठवणा— ७ । २ घण जोयणाणि १५००००।

अर्थ—उनमें अन्तिम विकल्प कहते हैं। वह इसप्रकार है—स्वयम्भूरमणद्वीपकी आदिम सूचीमें राजूके चतुर्थ-भाग और पचहत्तर हजार योजनों को मिलाने पर स्वयम्भूरमण समुद्रकी आदिम सूची होती है। उसकी स्थापना—$\frac{1}{4}$ राजू + ७५००० यो०। पुनः इसी द्वीपकी मध्यम सूचीमें तीन राजुओं के आठवें भाग और एक लाख बारह हजार पाँच सौ योजनों को मिलाने पर स्वयम्भूरमण-समुद्र की मध्यम सूची होती है। उसकी स्थापना—$\frac{3}{8}$ राजू + ११२५०० यो०। पुनः स्वयम्भूरमण-द्वीपकी बाह्य सूचीमें राजूके अर्ध भाग और डेढ़ लाख योजनोंको मिलानेपर उपरिम (स्वयम्भूरमण) समुद्रकी अन्तिम सूची होती है। उसकी स्थापना—$\frac{1}{2}$ रा० + १५०००० यो०॥

एत्थ वड्ढीण आणयण-हेदुमिमा सुत्त-गाहा—

धादइसंड-पहुदि, इच्छिय दीवोवहीण वित्थारं ।
दु-ति-चउ-हवेहि, हवे ति-ट्ठाणे होदि वरिमवड्ढी ॥२७८॥

अर्थ—यहाँ वृद्धियोंको प्राप्त करने हेतु यह गाथा सूत्र है—

धातकीखण्ड आदि इच्छित द्वीप-समुद्रोंके आधे विस्तारको दो, तीन और चारसे गुणा करने पर जो प्रमाण प्राप्त हो क्रमसे तीनों स्थानोंमें उतनी वृद्धि होती है ॥२७८॥

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

क्रमशः तीनों वृद्धियाँ $= \frac{\text{इष्ट द्वीप या समुद्रका विस्तार}}{२} \times$ क्रमशः २, ३ और ४।

---

१. द. ब. क. विदं। २. द. ब. ज. मेलिदोपरिम, क. मेलिदोदरिम।

उदाहरण—(१) मानलो—यहाँ क्षीरवर समुद्र इष्ट है। जिसका विस्तार ५१२००००० योजन है अतः—

क्षीर० स० में तीनों वृद्धियाँ = $\frac{५१२०००००}{२}$ × २, ३ और ४ अर्थात्

२५६००००० × २ = ५१२००००० योजन आदिम सूची का वृद्धि प्रमाण।

२५६००००० × ३ = ७६८००००० योजन मध्यम सूची का वृद्धि प्रमाण।

२५६००००० × ४ = १०२४००००० योजन बाह्य सूची का वृद्धि प्रमाण।

अर्थात् क्षीरवरद्वीपके तीनों सूची-व्यासमें इन तीनों वृद्धियोंका प्रमाण जोड़ देनेपर क्षीरवर समुद्रके तीनों सूची-व्यास का प्रमाण प्राप्त हो जाता है।

(२) यहाँ अन्तिम समुद्र इष्ट है। जिसका विस्तार $\frac{१}{२}$ राजू + ७५००० योजन है अतः—

अन्तिम स० में तीनों वृद्धियाँ = $\frac{\frac{१}{२} \text{ राजू} + ७५००० \text{ यो०}}{२}$ × क्रमशः २, ३ और ४ अर्थात्

राजू $\frac{१}{४}$ + ३७५०० यो० × २ = $\frac{१}{२}$ राजू + ७५००० यो०।

$\frac{१}{२}$ राजू + ३७५०० यो० × ३ = $\frac{३}{४}$ राजू + ११२५०० यो०।

$\frac{३}{४}$ राजू + ३७५०० यो० × ४ = १ राजू + १५०००० यो०।

स्वयम्भूरमणद्वीपकी आदि सूची $\frac{१}{२}$ रा०—२२५००० यो०, मध्यम सूची $\frac{३}{४}$ राजू — १८७५०० यो० और अन्त सूची १ राजू—१५०००० यो० है। इसमें उपर्युक्त प्रक्षेपभूत वृद्धियाँ क्रमशः जोड़ देनेसे अन्तिम समुद्रकी तीनों सूचियों का प्रमाण क्रमशः प्राप्त हो जाता है। यथा—

स्वयम्भूरमणद्वीपका आदि सूची-व्यास $\frac{१}{२}$ रा०—२२५००० यो०

प्रक्षेप $\frac{१}{२}$ रा० + ७५००० यो०॥

स्वयम्भूरमणसमुद्रका आदि सूची-व्यास $\frac{१}{२}$ रा० — १५०००० यो०

स्वयम्भूरमणद्वीपका मध्यम सूची-व्यास $\frac{३}{४}$ रा० — १८७५०० यो०

प्रक्षेप $\frac{३}{४}$ रा० + ११२५०० यो०

स्वयम्भूरमण समुद्रका मध्यम सूची-व्यास $\frac{३}{४}$ रा० — ७५००० यो०

स्वयम्भूरमण द्वीपका अन्तिम सूची-व्यास १ राजू — १५०००० यो०

प्रक्षेप १ राजू + १५०००० यो०

स्वयम्भूरमण समुद्रका अन्तिम सूची-व्यास १ राजू

उन्नीसवाँ-पक्ष

अष्टम द्वीप-समुद्रसे उपरिम द्वीप-समुद्रके आयाममें वृद्धिका प्रमाण—

एक्कणवीसदिम-पक्खे अप्पबहुत्तं वत्तइस्सामो। तं जहा—लवणसमुद्दस्सायामं जव-सत्तयं, तम्मि अट्ठारस-लक्खं संमेलिदे धादईसंडदीवस्स आयामं होदि। धादईसंड-दीवस्स[1] आयामम्मि पक्खेवभूद-अट्ठारस-लक्खं दु-गुणिय मेलिदे कालोदगसमुद्दस्स आयामं होइ। एवं पक्खेवभूद-अट्ठारस-लक्खं दुगुण-दुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभू-रमणसमुद्दो त्ति ॥

अर्थ— उन्नीसवें पक्षमें अल्पबहुत्व कहते हैं—लवणसमुद्रका आयाम नौ लाख है। इसमें अठारह लाख मिलानेपर धातकीखण्डका आयाम होता है। धातकीखण्डके आयाममें प्रक्षेपभूत अठारह लाख को दुगुना करके मिलाने पर कालोदक समुद्र का आयाम होता है। इसप्रकार स्वयम्भू-रमणसमुद्र पर्यन्त प्रक्षेपभूत अठारह-लाख दुगुने-दुगुने होते गये हैं।

स्वयम्भूरमणद्वीपके आयामसे स्वयं० समुद्रके आयाममें वृद्धि का प्रमाण—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—तत्थ सयंभूरमण-दीवस्स आयामादो सयंभूरमणसमुद्दस्स आयाम-वड्ढी णव-रज्जूणं अट्ठम-भागं पुणो तिण्णि-लक्ख-सत्तीस-सहस्स-पंचसय-जोयणेहि अब्भहियं होइ। तस्स ठवणा—$\frac{9}{8}$ रा० + ३३७५०० जो०।

अर्थ—यहाँ अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयम्भूरमणद्वीपके आयामसे स्वयम्भूरमणसमुद्रके आयाममें नौ राजुओंके आठवें भाग तथा तीन लाख सैंतीस हजार पांच सौ योजन अधिक वृद्धि होती है। उसकी स्थापना—$\frac{9}{8}$ राजू + ३३७५०० यो०।

आयाम-वृद्धि प्राप्त करनेकी विधि—

सव्वसमुद्दादि - इच्छिय दीव-रयणायराणं आयाम-वड्ढि-पमाणावयण-हेतुं इमं गाहा-सुत्तं—

धादइसंड - पहुदिं, इच्छिय - दीवोवहीण वित्थारं।
अद्धिय तं चउहि गुणं, हेट्ठिमओ होदि उवरिमे वड्ढी ॥२७९॥

एवं दीवोवहीणं णाणाविह-खेत्तफल-पक्खेवं समत्तं ॥५॥

---

१. द, ब. दीवे।

अर्थ—लवणसमुद्रको आदि लेकर इच्छित द्वीप-समुद्रोंकी आयाम-वृद्धिके प्रमाणको प्राप्त करने हेतु यह गाथा-सूत्र है—

धातकीखण्डको आदि लेकर द्वीप-समुद्रोंके विस्तारको आधा करके उसे नौसे गुणित करने पर प्राप्त राशि प्रमाण अधस्तन द्वीप या समुद्रसे उपरिम द्वीप या समुद्रके आयाममें वृद्धि होती है ॥२७९॥

विशेषार्थ—इसी अधिकारकी गाथा २४४ के नियमानुसार लवणसमुद्रका आयाम [(२ लाख — १ लाख) × ९] = ९ लाख योजन, धातकीखण्ड द्वीपका [(४ लाख — १ लाख) × ९] = २७ लाख योजन और कालोदक-समुद्रका ६३ लाख योजन है। अधस्तन द्वीप-समुद्रके आयाम प्रमाणसे उपरिम द्वीप-समुद्रके आयाममें वृद्धि-प्रमाण प्राप्त करने हेतु उपर्युक्त गाथानुसार सूत्र इस प्रकार है—

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{\text{इष्ट द्वीप — समुद्रका विस्तार}}{२} \times ९$$

उदाहरण—(१) मानलो—यहाँ कालोदक समुद्र इष्ट है। जिसका विस्तार ८ लाख योजन है अतः

$$\text{वर्णित वृद्धि} = \frac{८०५०००}{२} \text{ यो०} \times ९ = ३६००००० \text{ यो०}।$$

धातकीखण्डद्वीपके २७ लाख योजन आयाममें ३६००००० यो० की वृद्धि होकर कालोदक-समुद्रके आयामका प्रमाण (२७ लाख + ३६ लाख =) ६३ लाख योजन प्राप्त होता है।

(२) स्वयम्भूरमणसमुद्रका विस्तार $\frac{१}{२}$ राजू + ७५००० योजन है। अतएव उपर्युक्त नियमानुसार स्वयम्भूरमणद्वीपके आयामसे उसकी आयामवृद्धिका प्रमाण इसप्रकार होगा—

$$\text{आयाम वृद्धि} = \frac{\frac{१}{२} \text{ राजू} + ७५००० \text{ यो०}}{२} \times ९$$

$$= \frac{९}{४} \text{ राजू} + ३३७५०० \text{ योजन}। \text{ अर्थात्}$$

वृद्धिका प्रमाण $\frac{९}{४}$ राजू + ३३७५०० यो० =

(स्वयंभूरमणसमुद्रका आयाम $\frac{१}{२}$ रा० — २२५००० यो०) — (स्वयम्भूरमणद्वीपका आयाम $\frac{१}{२}$ रा० — ५६२५०० यो०)।

इसप्रकार द्वीप-समुद्रोंके नाना प्रकारके क्षेत्रफलका प्ररूपण समाप्त हुआ ॥५॥

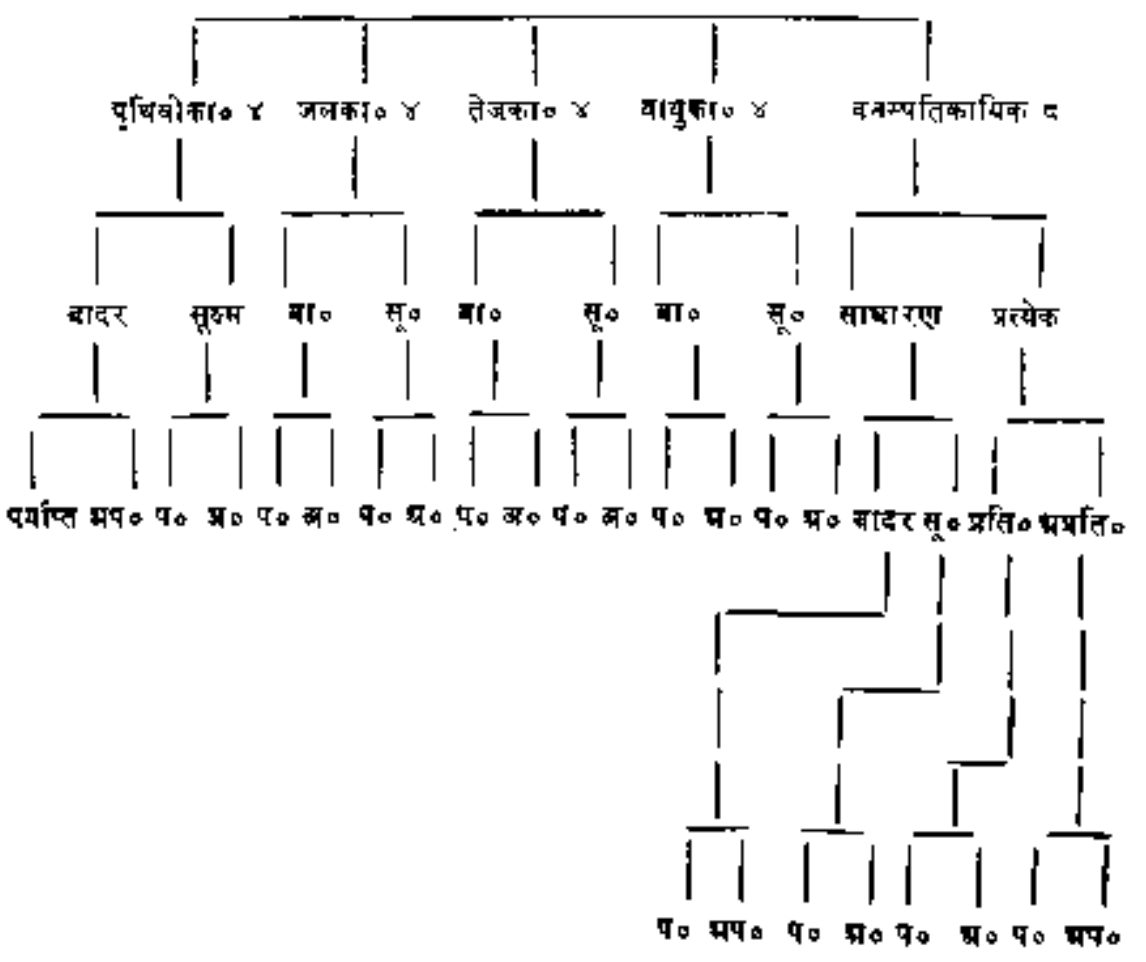
तिर्यञ्च जीवोंके भेद-प्रभेद—

एयक्ख-वियल-सयला, चारस तिय दोण्णि होंति उत्त-कमे।
भू - आउ - तेउ - वाऊ, पत्तेयं बादरा सुहमा ॥२८०॥

साहारण - पत्तेय - सरीर - विजप्पे वणप्फई[1] दुविहा ।
साहारण थूलिदरा[2], पदिट्ठिदिदरा[3] य पत्तेयं ॥२८१॥

अर्थ—एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सकलेन्द्रिय जीव कहे जाने वाले क्रमसे बारह, तीन और दो भेदरूप हैं। इनमेंसे एकेन्द्रियोंमें पृथिवी, जल, तेज और वायु, ये प्रत्येक बादर एवं सूक्ष्म होते हैं। साधारण शरीर और प्रत्येक शरीरके भेदसे वनस्पति कायिक जीव दो प्रकार हैं। इनमें साधारण-शरीर जीव बादर और सूक्ष्म तथा प्रत्येक शरीर जीव प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित (के भेदसे दो-दो प्रकारके) होते हैं ॥२८०-२८१॥

विशेषार्थ— एकेन्द्रियोंके २४ भेद—



१. ब. ब. क. ज. वणप्फई। २. द. ब. क. ज. थूलिदिदा। ३. द. ब. क. ज. परिट्ठिदिदरा।

तिर्यञ्च त्रस जीवोंके १० भेद और कुल ३४ भेद—

वियला बि-ति-चउ-रक्खा, सयला सण्णी असण्णिणो एदे ।
पज्जत्तेदर - भेदा[1], चोत्तीसा अहव अक्खेय - विहा ॥२८२॥

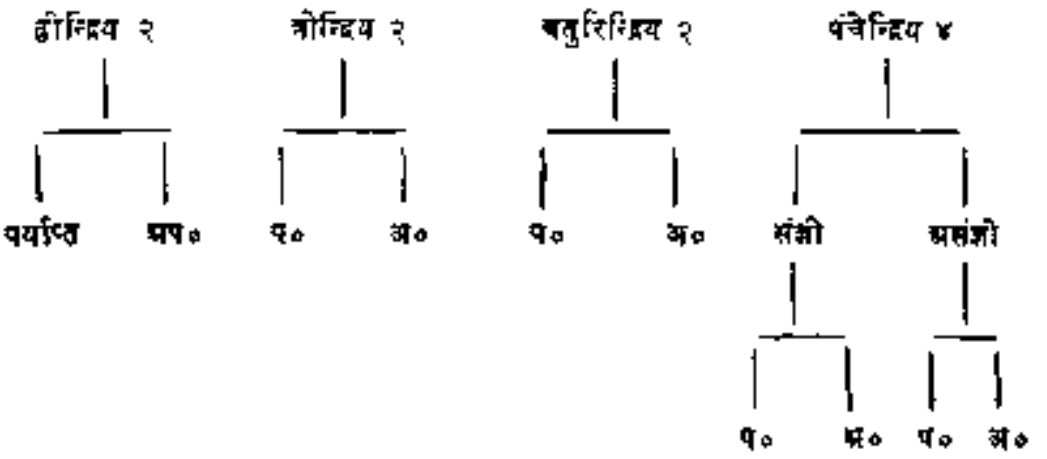
पृथिवी० ४	अप० ४	तेज० ४	वायु ४	साधा० ४	पत्तेय ४
बा० सू०	बा० सू०	बा० सू०	बा० सू०	बा० सू०	प० अ०

बि० २	ति० २	च० २	असंज्ञी २	संज्ञी २
प० अ०	प० अ०	प० अ०	प० अ०	प० अ०

एवं जीव-भेद-परूवणा गदा ॥६॥

अर्थ—दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय और चारइन्द्रियके भेदसे विकल जीव तीन प्रकार के तथा संज्ञी और असंज्ञीके भेदसे सकल जीव दो प्रकारके हैं। ये सब जीव (१२+३+२) पर्याप्त एवं अपर्याप्तके भेदसे चौंतीस प्रकारके होते हैं। अथवा अनेक प्रकारके हैं ॥२८२॥

विशेषार्थ—



इसप्रकार एकेन्द्रियके २४, द्वीन्द्रियके २, त्रीन्द्रियके २, चतुरिन्द्रियके २ और पंचेन्द्रियके ४, ये सब मिलकर तिर्यञ्चोंके ३४ भेद होते हैं।

इसप्रकार जीवोंकी भेद-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥६॥

---

१. ब. ब. क. ज. भेदो।

एत्तो चोत्तीस-विहाणं तिरिक्खाणं परिमाणं उच्चदे—

अर्थ—यहाँसे आगे चौंतीस प्रकारके तिर्यञ्चोंका प्रमाण कहते हैं—

तेजस्कायिक जीव राशिका उत्पादन विधान—

सुत्ताविरुद्धेण आइरिय-परंपरा-गवोवदेसेण तेउक्काइय-रासि-उप्पायण-विहाणं वत्तइस्सामो। तं जहा—एग [1]घणलोगं सलागा-भूदं ठविय अवरेगं [2]घणलोगं विरलिय एक्केक्क[3]-रूवस्स घणलोगं दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय सलागा-रासीदो एगरूवमवणेयव्वं। ताहे एक्का अण्णोण्ण-गुणगार-सलागा लद्धा हवंति। तस्सुप्पण्ण-रासिस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्ता वग्ग सलागा हवंति। तस्सद्धच्छेदणय-सलागा असंखेज्जा लोगा, रासी वि असंखेज्जलोगमेत्तो जादो।

अर्थ—सूत्रसे अविरुद्ध आचार्य-परम्परासे प्राप्त उपदेशके अनुसार तेजस्कायिक राशिका उत्पादन-विधान कहते हैं। वह इसप्रकार है—एक घनलोकको शलाकारूपसे स्थापित कर और दूसरे घनलोकका विरलन करके एक-एक रूपके प्रति घनलोकप्रमाणको देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाका राशिमेंसे एक-रूप कम करना चाहिए। तब एक अन्योन्यगुणकार-शलाका प्राप्त होती है। इसप्रकारसे उत्पन्न हुई उस राशिकी वर्गशलाकाएँ पल्योपमके असंख्यातवें भाग-प्रमाण होती हैं। इसीप्रकारकी अर्धच्छेदशलाकाएँ असंख्यातलोक प्रमाण और वह राशि भी असंख्यातलोक प्रमाण होती है।

पुणो उट्ठिद[4]-महारासिं विरलिदूण तत्थ एक्केक्क-रूवस्स उट्ठिद-महारासि-पमाणं दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय सलागा-रासीदो अवरेगरूवमवणेयव्वं। ताहे[5] अण्णोण्ण-गुणगार-सलागा दोण्णि, वग्ग-सलागा अद्धच्छेदणय-सलागा रासी च असंखेज्जा लोगा। एवमेदेण कमेण णेदव्वं जाव लोगमेत्त-सलागा-रासी समत्तो त्ति। ताहे अण्णोण्ण-गुणगार-सलागा पमाणं लोगो[6], सेस-तिगमसंखेज्जा लोगा।

अर्थ—पुनः उत्पन्न हुई इस महाराशिका विरलन करके उसमेंसे एक-एक रूपके प्रति इसी महाराशि-प्रमाणको देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक अन्य रूप कम करना चाहिए। इससमय अन्योन्य-गुणकार-शलाकाएँ दो और वर्गशलाका एवं अर्धच्छेद-शलाका-राशि असंख्यातलोक-प्रमाण होती है। इसप्रकार अब तक लोक प्रमाण शलाकाराशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे करते जाना चाहिए। उस समय अन्योन्यगुणकार-शलाकाएँ लोकप्रमाण और शेष

---

१. द. ब. क. ज. पुणलोगस्स। २. द. ब. क. ज. पुणलोगं। ३. द. ब. एक्केक्क रूवस्स। ४. ब. क. ज. उट्ठिद, ब. ईट्ठिद। ५. द ब. क. ज. ता जह। ६ द. ब. क. ज. लोगा।

तीन राशियों ((१) उस समय उत्पन्न हुई महाराशि (२) उसकी वर्गशलाकाओं और (३) अर्धच्छेद-शलाकाओं) का प्रमाण असंख्यातलोक होता है ।।

पुणो उट्ठिद - महारासि - विरलिदूण तं चेव सलागा-मूद ठविय विरलिय एक्केक्क-रूवस्स उप्पण्ण-महारासि-पमाणं दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय[1] सलागा-रासीदो एग-रूवमवणेयव्वं । ताहे अण्णोण्णगुणगार-सलागा लोगो रूवाहिओ, सेस-तिगम-संखेज्जा लोगा ।।

अर्थ—पुनः उत्पन्न हुई इस महाराशिका विरलन करके इसे ही शलाकारूपसे स्थापित करके विरलित राशिके एक-एक रूपके प्रति उत्पन्न महाराशि-प्रमाणको देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिए । तब अन्योन्यगुणकार-शलाकाएँ एक अधिक लोक-प्रमाण और शेष तीनों राशियाँ असंख्यात-लोक-प्रमाण ही रहती हैं ।

पुणो उप्पण्णरासिं विरलिय रूवं पडि उप्पण्णरासिमेव दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय सलागा-रासीदो अण्णेग रूवमवणेयव्वं । ताहे अण्णोण्ण-गुणगार-सलागा लोगो दुरूवाहिओ, सेस-तिगमसंखेज्जा लोगा । एवमेदेण कमेण [2]दुरूवूणुक्कस्स-संखेज्जलोग-मेत्त लोग-सलागासु दुरूवाहिय लोगम्मि पविट्ठासु चत्तारि [3]वि असंखेज्जा-लोगा हवंति । एवं णेदव्वं जाव बिदियवार-ट्ठविद-सलागारासी समत्तो[4] त्ति । ताहे चत्तारि वि असंखेज्जा लोगा ।

अर्थ—पुनः उत्पन्न राशिका विरलन करके एक-एक रूपके प्रति उत्पन्न राशिको ही देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे अन्य एक रूप कम करना चाहिए । तब अन्योन्य-गुणकार-शलाकाएँ दो रूप अधिक लोक-प्रमाण और शेष तीनों राशियाँ असंख्यात लोक-प्रमाण ही रहती हैं । इसप्रकार इस क्रमसे दो कम उत्कृष्ट-संख्यातलोक-प्रमाण अन्योन्य-गुणकार-शलाकाओंके दो अधिक लोक-प्रमाण अन्योन्य-गुणकार-शलाकाओंमें प्रविष्ट होनेपर चारों ही राशियाँ असंख्यात लोकप्रमाण हो जाती हैं। इसप्रकार जब तक दूसरीबार स्थापित शलाकाराशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे करना चाहिए । तब भी चारों राशियाँ असंख्यात-लोक-प्रमाण होती हैं ।

---

१. द. ब. क. ज. वग्गिद करिय । २. द. ब. क. ज. दुरूवाणुक्कस्स । ३. द. ब. वि तियसंखेज्जा । ४. द. ब. क. ज. पत्तिट्ठो ।

पुणो उट्ठिद-महारासिं सलागाभूदं ठविय अवरेगमुट्ठिद[1]-महारासिं विरलिदूण उट्ठिद-महारासि-पमाणं[2] दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय सलागा-रासीदो एग-रूवमवणेयव्वं । ताहे असंखेज्जा लोगा । एवमेदेण कमेण [3]णेदव्वं जाव तदियवारं ट्ठविद-सलागारासी समत्तो त्ति । ताहे[4] असंखेज्जा लोगा ।

अर्थ—पुनः उत्पन्न हुई महाराशिको शलाकारूपसे स्थापित करके उसी उत्पन्न महाराशि का विरलन करके उत्पन्न महाराशि प्रमाणको एक-एक रूपके प्रति देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाकाराशिमेंसे एक कम करना चाहिए । इससमय चारों राशियाँ असंख्यात-लोकप्रमाण रहती हैं । इसप्रकार तीसरीवार स्थापित शलाका-राशिके समाप्त होने तक इसी क्रमसे ले जाना चाहिए । तब चारों ही राशियाँ असंख्यात-लोक-प्रमाण रहती हैं ।

तेजकायिक जीव राशि और उनकी अन्योन्य-गुणकार-शलाकाओंका प्रमाण—

पुणो उट्ठिद-महारासिं तिण्णिरासिं कादूण तत्थेगं सलागाभूदं ठविय अवरेग-रासिं विरलिदूण तत्थ एक्केक्क-रूवस्स एग-रासि-पमाणं दादूण वग्गिद-संवग्गिदं करिय सलागा-रासीदो एग रूवमवणेयव्वं । एवं पुणो पुणो करिय णेदव्वं जाव[5] अवहिदकंत-अण्णोण्ण-गुणगार-सलागाहि ऊण-चउत्थवार-ट्ठविद-अण्णोण्ण-गुणगार-सलागारासी समत्तो त्ति । ताहे[6] तेउक्काइय[7]-रासी उट्ठिदो हवदि ≡ रि । तस्स गुणगार-सलागा चउत्थवार-ट्ठविद-सलागा-रासि-पमाणं होदि ॥६॥[8]

अर्थ—पुनः इस उत्पन्न महाराशिको तीन महाराशियाँ करके उनमेंसे एकको शलाकारूपसे स्थापित कर और दूसरी एक राशिका विरलन करके उसमेंसे एक-एक-रूपके प्रति एक राशिको देकर और वर्गित-संवर्गित करके शलाका-राशिमेंसे एक रूप कम करना चाहिए । इसप्रकार पुनः पुनः करके जब तक अतिक्रान्त अन्योन्य-गुणकार-शलाकाओंसे रहित चतुर्थवार स्थापित अन्योन्य-गुणकार-शलाका-राशि समाप्त न हो जावे तब तक इसी क्रमसे ले जाना चाहिए । तब तेजस्कायिक-राशि उत्पन्न होती है जो असंख्यात-घनलोक-प्रमाण है । (यहाँ घनलोककी संदृष्टि ≡ तथा असंख्यात की संदृष्टि रि है ।) उस तेजस्कायिक राशिकी अन्योन्य-गुणकार-शलाकाएँ चतुर्थवार स्थापित शलाका-राशिके सदृश होती हैं ।

(इस राशिके असंख्यातकी संदृष्टि ६ है ।)

---

१ ब. क. ब. अवेदमुट्ठिद, ब. अवेदमुट्ठिद । २. ब. समाणं । ३ ब. ब. णादव्वं । ४. द. ब. क. ब. ताहे । ५. द ब. क. ब. जाव । ६ द. ब, क. ब. ताहे । ७. द. ब. तेउक्कायपरासी । ८ द. ब. ॥७॥

सामान्य पृथिवी, जल और वायुकायिक जीवोंका प्रमाण—

पुणो तेउकाइयरासिमसंखेज्ज-लोगेण भागे हिदे लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते पुढविकाइयरासी होदि $= रि + \frac{रि}{असं०}$ ।।

अर्थ—पुनः तेजस्कायिक-राशिमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे इसी (तेजस्कायिक) राशिमें मिला देनेपर पृथिवीकायिक जीव राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—यथा—इसका सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{(सामान्य) पृथिवीकायिक राशि} = \text{तेजस्कायिक राशि} + \frac{\text{ते० का० रा०}}{\text{असं० लोक}}$$

$$\text{या} = रि + \frac{रि}{असं०} \text{ या} = रि\ 1^{\circ}\ ।$$

नोट—यहाँ १० का अंक असंख्यातलोक + १ का प्रतीक है।

तम्मि असंखेज्जलोगेण भागे हिदे[1] लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते आउकाइय-रासी होदि $= रि\ 1^{\circ}\ 1^{\circ^2}$ ।।

अर्थ—इसमें असंख्यातलोकका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे इसी राशिमें मिला देनेपर जलकायिक जीवराशिका प्रमाण प्राप्त होता है।।

विशेषार्थ—(सामान्य) जलकायिक राशि = पृ० का० रा० + $\frac{\text{पृ० का० राशि}}{\text{असं० लोक}}$

$$\text{या} = रि\ 1^{\circ} + \frac{रि}{असं०}\ 1^{\circ} \text{ या} = रि\ 1^{\circ}\ 1^{\circ}\ ।$$

तम्मि असंखेज्जलोगेण भागे हिदे लद्धं तम्मि चेव पक्खित्ते वाउकाइय-रासी होदि $= रि\ 1^{\circ}\ 1^{\circ}\ 1^{\circ}\ 1^{\circ}$ ।[2]

अर्थ—इसमें असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे इसी राशिमें मिला देनेपर वायुकायिक जीवराशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—(सामान्य) वायुकायिक राशि = वा० का० राशि + $\frac{\text{ज० का० रा०}}{\text{असं० लोक}}$

$$\text{या} = रि\ 1^{\circ}\ 1^{\circ} + \frac{रि}{असं०}\ 1^{\circ}\ 1^{\circ}$$

---

१. ब. हिदे। २ ब. $= \frac{रि}{1^{\circ}\ 1^{\circ}}$ ब. $= रि + \frac{रि}{1^{\circ}}$। ३. ब. $= रि + \frac{रि}{1^{\circ}}$।

या $\equiv रि \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०}$ ।

बादर और सूक्ष्म जीव राशियोंका प्रमाण—

पुणो एदे चत्तारि सामण्ण रासीओ पत्तेयं तप्पाओग्ग-असंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थेग[1]-खंडं सग-सग-बादर-रासि-पमाणं होदि । तेउ $\equiv रि_{ते०}$ पुढवि $\equiv रि_{पृ०} \frac{1}{असं०}$ । आउ $\equiv रि_{आ०} \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०}$ । वाउ $\equiv रि_{वा०} \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०}$ । सेस-बहुभागा सग-सग-सुहुम-जीवा होंति । तेउ $\equiv रि_{ते०}$ । पुढवि $\equiv रि \frac{1}{असं०} \frac{ल}{ल}$ । आउ $\equiv रि \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०} \frac{ल}{ल}$ । वाउ $\equiv रि \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०} \frac{ल}{ल}$ ॥१

अर्थ—पुनः इन चारों सामान्य राशियोंमेंसे प्रत्येकको अपने योग्य असंख्यात लोकसे खण्डित करने पर एक भाग रूप अपनी-अपनी बादर राशिका प्रमाण होता है और शेष बहुभाग-प्रमाण अपने-अपने सूक्ष्म जीव होते हैं ।

विशेषार्थ— बादर ते० का० राशि $= \frac{\text{तेज० राशि}}{\text{असं० लोक}}$

या $\equiv रि \div \frac{1}{असं०}$ या $\equiv रि \frac{1}{असं०}$

या $\equiv रि_{ते०}$ बादर तेजस्कायिक जीवोंका प्रमाण ।

सूक्ष्म ते० का० राशि = (सा०) ते० का० राशि — बादर तेज० राशि

$$या \equiv रि - \equiv रि_{ते०}$$

$$या \equiv रि - \equiv रि \div \frac{1}{असं०}$$

$$या \equiv रि - \equiv रि \times \frac{1}{असं०}$$

$$या \equiv रि \left(1 - \frac{1}{असं०}\right)$$

$$या \equiv रि \frac{ल}{ल}$$ सूक्ष्म ते० का० राशिका प्रमाण ।

नोट—यहाँ ल का अंक असंख्यात लोक — १ का प्रतीक है ।

बादर पृ० का० राशि $= \frac{\text{पृ० का० राशि}}{\text{असं० लोक}}$

या $\equiv रि \frac{1}{असं०} \div \frac{1}{असं०}$

या $\equiv रि \frac{1}{असं०} \frac{1}{असं०}$ बादर पृ० का० जीवोंका प्रमाण ।

सूक्ष्म पृ० का० राशि = पृ० का० राशि — बादर पृ० का० राशि

---

१. द. ब. तत्थेय ।

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}$ — $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}$ ($\frac{1}{2}$ — $\frac{1}{2}$)

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$ सूक्ष्म पृ० का० जीवोंका प्रमाण ;

बादर जल का० राशि $=\frac{\text{जलका० राशि}}{\text{असं० लोक}}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}} \div \frac{1}{6}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$ बादर जलका० राशिका प्रमाण ।

सूक्ष्म जलका० राशि = जलका० राशि — बादर जलका० राशि

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}$ — $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}$ ($\frac{1}{2}$ — $\frac{1}{2}$) या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$ सूक्ष्म ज० का० राशिका प्रमाण ।

बादर वायु का० राशि $=\frac{\text{वायु का० राशि}}{\text{असं० लोक}}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}} \div \frac{1}{6}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$ बादर वायु का० जीवोंका प्रमाण

सूक्ष्म वायु का० राशि = वायु का० रा०—बादर वायु का० राशि

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}$ — $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}$ ($\frac{1}{2}$ — $\frac{1}{2}$)

या $\equiv$ रि $\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2^{0}}\frac{1}{2}$ सूक्ष्म वायु का० जीवोंका प्रमाण ।

पृथिवीकायिक आदि चारोंकी पर्याप्त अपर्याप्त जीव राशिका प्रमाण—

पुणो पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागमेत्त-अणवरं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिद - पदरंगुलेहिं भागे हिदे पुढविकाइय-बादर-पज्जत्त-रासि-पमाणं होदि

$\frac{\equiv}{\text{प्र}^{2}}$ ।
रि

अर्थ – पुनः आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित प्रतरांगुलका जगप्रतरमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसका पल्योपमके असंख्यातवें भाग प्रमाण बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीव राशिका प्रमाण होता है ।।

विशेषार्थ—

$$\text{पृथिवीका० बादर पर्याप्त राशि} = \frac{\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{प्र०}} \times \frac{\text{आ०}}{\text{असं०}}}{\frac{\text{पल्य०}}{\text{असं०}}}$$

$$\text{या} \quad \frac{\frac{=}{\frac{५}{९} \times \frac{२}{३}}}{\frac{५}{\text{रि}}} \quad \text{या} \quad \frac{=}{\frac{४}{५}} \quad \text{या} \quad = \frac{५}{४} \div \frac{५}{\text{रि}}$$

$$\text{या} \quad = \frac{९}{४} \times \frac{\text{रि}}{५} \text{ बादर पृथिवीका० पर्याप्त जीवोंका प्रमाण ।}$$

तम्मि आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदेहि बादर-आउ-पज्जत्त-रासि-पमाणं होदि $\frac{=}{\frac{४}{५}}$ ।

अर्थ—इसे आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित करनेपर बादर जलकायिक पर्याप्त जीव-राशिका प्रमाण होता है ।

विशेषार्थ—जलका० बादर पर्याप्त राशि = पृथिवी० बादर पर्याप्त × $\frac{\text{आवली०}}{\text{असं०}}$

या $\frac{=\text{प०}\ ९}{४\ \text{रि}} \times \frac{१}{९}$ या $\frac{=\text{प}}{४\ \text{रि}}$ जलकायिक बादर पर्याप्त राशिका प्रमाण ।

पुणो एदावलिस्स असंखेज्जदि-भागे बादर-तेउ-पज्जत्त-जीव-परिमाणं होदि $\frac{=}{\text{रि}}$ ।।

अर्थ—पुनः इसी आवलीके असंख्यातवें भाग-प्रमाण बादर तेजस्कायिक पर्याप्त जीव राशि होती है ।।

विशेषार्थ—तेजस्कायिक बादर पर्याप्त राशि = $\frac{\text{घनावली}}{\text{असं०}}$ या $\frac{\text{८}}{\text{रि}}$ ।

पुणो लोगस्स संखेज्जदि-भागे बादर-वाउ-पज्जत्त-जीव-पमाणं होदि ३ ।

अर्थ—पुनः लोकके संख्यातवें भागरूप बादर वायुकायिक पर्याप्त जीवराशि होती है ।

विशेषार्थ—वायु बादर पर्याप्त राशि = $\frac{\text{लोक}}{\text{असं०}}$ या $\frac{\text{३}}{\text{७}}$ ।

सग-सग-बादर-पज्जत्त-रासिं सग-सग-बादर-रासीसु सोहिदे सग-सग-बादर-अपज्जत्त-रासी होदि ।

पृ० ३ रि १० रिण = २ / ५ ५ रि | आउ ३ रि १० १० रिण = / ५ ५ रि |

तेउ = रि रिण $\frac{\text{८}}{\text{रि}}$ | वाउ ३ रि १० १० १० रिण $\frac{\text{३}}{\text{७}}$ ।

अर्थ—अपनी-अपनी बादर राशिमेंसे अपनी-अपनी बादर पर्याप्त राशिको घटा देनेपर शेष अपनी-अपनी बादर अपर्याप्त राशिका प्रमाण प्राप्त होता है ।

विशेषार्थ—तेजस्का० बादर अपर्याप्त राशि = ते० बा० राशि — ते० बा० पर्याप्त राशि

या ३ रि $\frac{\text{१}}{\text{२}}$ — $\frac{\text{८}}{\text{रि}}$ या ३ रि रिण $\frac{\text{८}}{\text{रि}^2}$ ।

पृ० का० बादर अप० राशि = पृ० का० बादर — पृ० का बादर पर्याप्त राशि

या ३ रि $\frac{१०}{२}$ $\frac{१}{२}$ — $\frac{१०}{२}$ × $\frac{\text{रि}}{\text{५}}$ ।

या ३ रि $\frac{१०}{२}$ $\frac{१}{२}$ — $\frac{\text{५}}{\text{५ रि}}$ | $\frac{१}{२}$ पृ० कायिक बा० अपर्याप्त राशि ।

जलका० बादर अप० राशि = जलका० बादर — जलका० पर्याप्त राशि ;

या ३ रि $\frac{१०}{२}$ $\frac{१०}{२}$ $\frac{१}{२}$ — $\frac{\text{५}}{\text{५ रि}}$ ।

या $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{१}{९}$ — $\frac{४}{५}$ रि जलका० बादर अपर्याप्त राशि।

वायुका० बादर अप० राशि = वायुका० बादर राशि — वायुका० पर्याप्त राशि।

या $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{१}{९}$ — $\frac{\equiv}{७}$ वायुका० बादर अपर्याप्त राशि।

पुणो पुढविकायादीणं सुहुम-रासि-पत्तेयं तप्पाओग्ग संखेज्ज-रूवेहि खंडिदे बहुभाग सुहुम-पज्जत्त-जीव-रासि-पमाणं होदि।

पुढवि $\equiv$ रि $\frac{१०\ ८\ ४}{९\ ९\ ५}$ | आउ $\equiv$ रि $\frac{१०\ १०\ ८\ ४}{९\ ९\ ९\ ५}$ |

तेउ $\equiv$ रि $\frac{८\ ४}{९\ ५}$ | वायु $\equiv$ रि $\frac{१०\ १०\ १०\ ८\ ४}{९\ ९\ ९\ ९\ ५}$ |

अर्थ—पुनः पृथिवीकायिकादि जीवोंकी प्रत्येक सूक्ष्मराशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करनेपर बहुभागरूप सूक्ष्म पर्याप्त जीव राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—पृथिवीकायिक सूक्ष्म पर्याप्त राशि = $\frac{पृ० सूक्ष्म रा०}{संख्यात}$ (बहुभाग)।

या $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{८}{९}\ \frac{४}{५}$।

जलकायिक सूक्ष्म पर्याप्त राशि = $\frac{ज० सूक्ष्म रा०}{संख्यात}$

या $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{६}{९}\ \frac{४}{५}$।

तेजस्कायिक सूक्ष्म पर्याप्त राशि = $\frac{ते० सूक्ष्म रा०}{संख्यात}$

या $\equiv$ रि $\frac{६}{९}\ \frac{४}{५}$।

वायुकायिक सूक्ष्म पर्याप्त राशि = $\frac{वायु० सूक्ष्म रा०}{संख्यात}$

या $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{१०}{९}\ \frac{८}{९}\ \frac{४}{५}$

तत्थेगभागं सग-सग-सुहुम-अपज्जत्त-रासि परिमाणं होदि। पुढवि $\equiv$ रि $\frac{१०}{९}\ \frac{९}{८}\ \frac{८}{५}$, आउ $\equiv$ रि $\frac{१०\ १०\ ८}{९\ ९\ ९\ ५}$। तेउ $\equiv$ रि $\frac{८}{९\ ५}$, वाउ $\equiv$ रि $\frac{१०\ १०\ १०\ ८}{९\ ९\ ९\ ९\ ५}$।

अर्थ—इसमेंसे एक भागरूप अपनी-अपनी सूक्ष्म अपर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—पृथिवी० सूक्ष्म अपर्याप्त राशि $\equiv \frac{\text{रि}}{\text{असं}} \times \frac{१}{\text{असं}} \times \frac{१}{६}$।

जलकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त राशि $\equiv \frac{\text{रि}}{\text{असं}} \times \frac{१}{\text{असं}} \times \frac{१}{६}$।

तेजस्कायिक सूक्ष्म अपर्याप्त राशि $\equiv \frac{\text{रि}}{\text{असं}} \times \frac{६}{७}$।

वायुकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त राशि $\equiv \frac{\text{रि}}{\text{असं}} \times \frac{१०}{\text{असं}} \times \frac{१०}{\text{असं}} \times \frac{१०}{\text{असं}} \times \frac{६}{७}$।

[तालिका को अगले पृष्ठ पर देखिये]

सामान्य वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण—

पुणो सव्व-जीव-रासीदो सिद्ध-रासि-तसकाइय-पुढविकाइय-आउकाइय-तेउकाइय-वाउकाइय जीवरासिं पमाणमवणिदे अवसेसं सामण्ण-वणप्फदिकाइय-जीवरासि परिमाणं होदि ॥१३॥

अर्थ—पुनः सब जीवराशिमेंसे सिद्धराशि, त्रसकायिक, पृथिवीकायिक, जलकायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवोंके राशि-प्रमाणको घटा देनेपर शेष सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशिका प्रमाण होता है ॥१३॥

विशेषार्थ—सामान्य वन० जीवराशि = [सर्व जीवराशि] रिण { (सिद्ध) धण (त्रस) धण (तेज०) धण (पृ०) धण (जल) धण (वायु) }

$$\text{या } [१६] - \{ (३) + \left(\frac{\text{असं}}{\text{असं रि}}\right) + (\equiv \text{रि}) + (\equiv \text{रि} \times ६) + (\equiv \text{रि} \times \frac{६}{७} \times \frac{१०}{७}) + (\equiv \text{रि} \times \frac{१०}{७} \times \frac{१०}{७} \times \frac{१०}{७}) \}$$

$$\text{या } १३ - \{ \left(\frac{\text{असं}}{\text{असं रि}}\right) + \equiv \text{रि} \left(१ + \frac{१०}{७} + \frac{१००}{४९} + \frac{१०००}{३४३}\right) \}$$

$$\text{या } १३ - \{ \left(\frac{\text{असं}}{\text{असं रि}}\right) + \equiv \text{रि} \times \frac{३३३}{३४३} \}$$

चार स्थावर जीवोंमें सामान्य, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त और अपर्याप्त राशियोंका प्रमाण—

क्र०	स्थावर जीवोंके नाम	सामान्य राशिका प्रमाण	बादर राशिका प्रमाण	सूक्ष्म राशिका प्रमाण	बादर पर्याप्त राशि	बादर अपर्याप्त राशि	सूक्ष्म पर्याप्त राशि	सूक्ष्म अपर्याप्त राशि	प्रतीक
१.	पृथिवीकायिक	$\equiv रि\ ५^{९}$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ४$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५$	$\equiv \frac{१ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ४ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $= \frac{१ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $\cdot \frac{१}{४}$ रिछे	I
२.	जल-कायिक	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९}$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ४$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५$	$\equiv \frac{४ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ४ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $= \frac{४ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $\cdot \frac{१}{४}$ रिछे	II
३.	तेजस्कायिक	$\equiv रि$	$\equiv रि \cdot ४$	$\equiv रि \cdot ५$	$\equiv \frac{१ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि \cdot ४ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $= \frac{१ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि \cdot ५$	$\equiv रि \cdot ५ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $\cdot \frac{१}{४}$ रिछे	III
४.	वायु कायिक	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९}$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ४$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५$	$\equiv \frac{४ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ४ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $= \frac{४ \times ४}{५}$ रि	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५$	$\equiv रि\ ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५^{९} \cdot ५ \cdot \frac{१}{४}$ रिछे $\cdot \frac{१}{४}$ रिछे	IV

* संदृष्टि एक भाजक रिछे $\cdot$ एक अपवर्तना रिछे $\cdot$ एक अपवर्तना अपवर्तना रिछे $\cdot$ ।

या, संसार राशि १३−{ ($\frac{=२}{\text{४रि}}$) + ≡रि $४\frac{३३}{३३}$) सामान्य वनस्पतिकायिक जीव-राशिका प्रमाण है।

साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण—

तम्मि असंखेज्जलोग-परिमाणमवणिदे सेसं साधारण-वणप्फदिकाइय-जीव-परिमाणं होदि। १३≡।

अर्थ—इसमें (सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशिमें) से असंख्यात लोकप्रमाणको घटाने पर शेष साधारण वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—सामान्य वनस्पतिकायिक जीवराशि — असंख्यात लोक।

$$१३ - \{ \left(\frac{\equiv}{\text{रि}} \right) + \equiv \text{रि} \, ४\frac{३३}{३३} \} - \{ \equiv \text{रि} \, \overline{\equiv \text{रि}} \}$$

अर्थात् १३≡ प्रमाण है।

साधारण बादर वनस्पतिका० और साधारण सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण—

तं सग्गाजोग्ग-असंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थ एग-भागो साधारण-बादर-जीव परिमाणं होदि। १३ $\frac{\equiv}{\text{रि}}$ ।

अर्थ—इसे अपने योग्य असंख्यातलोकसे खण्डित (भाजित) करने पर उसमेंसे एक भाग साधारण बादर जीवोंका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—साधारण बादर वन० जीव राशि = $\frac{\text{साधारण वनस्पति० जीव राशि}}{\text{असंख्यात लोक}}$

= ($\frac{१३\equiv}{\text{रि}}$) प्रमाण है।

सेस-बहुभागा साधारण-सुहुमराशि परिमाणं होदि। १३≡ रि।

अर्थ—शेष बहुभाग साधारण सूक्ष्म जीव राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—साधारण सूक्ष्म वन० जीवराशि = $\frac{\text{साधा० वन० जीवराशि}}{\text{असंख्यात लोक}} \times \frac{\text{असं० लोक} - १}{\text{रि}}$

अर्थात् (१३≡ । रि) प्रमाण है।

साधारण बादर पर्याप्त-अपर्याप्त राशिका प्रमाण—

पुणो साहारण-बादरराशिं तप्पाओग्ग-असंखेज्जलोगेण खंडिदे तत्थेग भागं साहारण-बादर-पज्जत्तरासि परिमाणं होदि १३ ÷ ३। सेस-बहुभागा साहारण-बादर-अपज्जत्त-रासि परिमाणं होदि १३ ÷ ३।

अर्थ—पुनः साधारण बादर वनस्पतिकायिक जीव राशिको अपने योग्य असंख्यात लोकसे खण्डित करनेपर उसमेंसे एक भाग साधारण बादर पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है और शेष बहुभाग साधारण बादर अपर्याप्त जीव राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ— साधारण बादर पर्याप्त वन० का० जीवराशि = साधारण बादर वन० का० जीव / असंख्यात लोक

या १३ ÷ ७ अर्थात् १३ ÷ ३) प्रमाण है।

साधारण बादर अपर्याप्त वन० का० जीवराशि = सा० बादर वन० जीव / असंख्यात × असं − १ / १

अर्थात् (१३ ÷ ६) प्रमाण है।

साधारण सूक्ष्म पर्याप्त-अपर्याप्त जीवोंका प्रमाण—

पुणो साहारण-सुहुमरासिं तप्पाओग्ग-संखेज्ज-रूवेहि खंडिय तत्थ बहुभागं साहारण-सुहुम-पज्जत्त-परिमाणं होदि १३ ÷ ६ ५। सेसेगभागं साहारण-सुहुम-अपज्जत्तरासि-पमाणं होदि १३ ÷ ६ २।

अर्थ—पुनः साधारण सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीव राशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करनेपर उसमेंसे बहुभाग साधारण सूक्ष्म पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है और शेष एक भाग साधारण सूक्ष्म-अपर्याप्त जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ— साधारण सूक्ष्म वन० पर्याप्त जीव = सा० सूक्ष्म वन० जीव / संख्यात × संख्यात − १ / १

= (१३ ÷ ६) ५ प्रमाण है।

साधारण सूक्ष्म वन० अपर्याप्त जीवराशि = साधारण सूक्ष्म वन० जीव राशि / संख्यात

अर्थात् (१३ ÷ ६) २ प्रमाण है॥

प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक जीवोंके भेद-प्रभेद और उनका प्रमाण—

पुणो पुव्वपरूविद-असंखेज्जलोग-परिमाणपत्तेी पत्तेयसरीर-वणप्फदि-जीव-परिमाणं होदि = रि = रि॥

अर्थ—पुनः पूर्वमें बताई गई असंख्यात लोक प्रमाण राशि प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक जीवोंका प्रमाण होता है ।।

विशेषार्थ—सामान्य वनस्पतिकायिक जीव राशिमेंसे साधारण-वनस्पतिकायिक जीवराशि घटा देनेपर प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीवराशि शेष रहती है। जिसका प्रमाण $\equiv$ रि $\frac{}{\equiv}$ रि है।

तप्पत्तेयसरीर-वणप्फई दुविहा बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-अपदिट्ठिद-भेदेण । तत्थ अपदिट्ठिद-पत्तेय-सरीर-वणप्फई असंखेज्जलोग-परिमाणं होइ $\equiv$ रि तम्मि असंखेज्ज-लोगेण गुणिदे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-रासि-परिमाणं होदि $\equiv$ रि $\equiv$ रि ।।

अर्थ—बादर निगोद जीवोंसे प्रतिष्ठित (सहित) और अप्रतिष्ठित (रहित) होने के कारण वे प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकार हैं। इनमेंसे अप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक जीव असंख्यातलोक प्रमाण हैं। इस अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवराशिको असंख्यात लोकोंसे गुणा करने पर बादर निगोद जीवोंसे प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर वनस्पति जीवराशि का प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—अप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक जीवराशिका प्रमाण असंख्यात-लोक प्रमाण ($\equiv$ रि) है।

सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवराशि—अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवराशि × असंख्यात लोक। अर्थात् ($\equiv$ रि $\equiv$ रि) है।

बादर निगोद प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित पर्याप्त जीवोंका प्रमाण—

ते दो वि रासी पज्जत्त-अपज्जत्त-भेदेण दुविहा होंति । पुणो पुव्वुत्त-बादर-पुढवि-पज्जत्त-रासि-आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-पज्जत्त रासि परिमाणं होदि $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$)) । तं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण भागे ।

हिदे बादर-णिगोद-अपदिट्ठिद-पज्जत्तरासि परिमाणं होदि $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$))) ।।

अर्थ—ये दोनों ही राशियाँ पर्याप्त और अपर्याप्तके भेदसे दो प्रकार हैं। पुनः पूर्वोक्त बादर पृथिवीकायिक पर्याप्त जीवराशिको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर बादर-निगोद-प्रतिष्ठित-पर्याप्त-जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है। इसमें आवलीके असंख्यातवें भागका भाग

देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना बादर-निगोद-अप्रतिष्ठित-पर्याप्त-जीवोंकी राशिका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ—बादर-निगोद-प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर वनस्पतिकायिक पर्याप्त जीव राशि =पृथिवीका० बादर पर्याप्त जीव-राशि ÷ आवली/असंख्यात

$$= \left(\frac{=प\ ९}{४\ रि} \div \frac{१}{९}\right) = \left(\frac{=प\ ९}{४\ रि}\ \frac{९}{१} =\right)$$

बादर-निगोद-अप्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वन० का० पर्याप्त जीवराशि=

बादर-नि० प्रतिष्ठित प्रत्येकशरीर वन० पर्याप्त जीवराशि ÷ आवली/असंख्यात

$$= \left(\frac{=प}{४ रि}\ \frac{९}{१}\ \frac{९}{१} \div \frac{१}{९}\right) = \left(\frac{=प}{४ रि}\ \frac{९}{१}\ \frac{९}{२}\ \frac{९}{१}\right)$$

बादर निगोद प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित अपर्याप्त जीवराशिका प्रमाण—

सग-सग-पज्जत्त-रासिं सग-सग-सामण्ण-रासिम्मि अवणिदे सग-सग-अपज्जत्त-रासि-पमाणं होदि।

बादर-निगोद-पतिट्ठिद $\equiv रि \equiv रि$ रिण $\frac{९\ ९}{४\ प\ रि}$।

बादर-निगोद-अपतिट्ठिद $\equiv वि$ रिण $\frac{९\ ९\ ९}{४\ प\ वि}$।

अर्थ—अपनी-अपनी सामान्य राशिमेंसे अपनी-अपनी पर्याप्त राशि घटा देनेपर शेष अपनी-अपनी अपर्याप्त राशिका प्रमाण होता है॥

विशेषार्थ—बादर-निगोद अप्रतिष्ठित प्रत्येक० वनस्पति० अपर्याप्त जीवराशि

=अप्रति० प्रत्येक० वन० जीवराशि—अप्रति० प्रत्येक० वन० पर्याप्त जीवराशि

$$= (\equiv रि) - \left(\frac{=प\ ९}{४\ रि}\ \frac{९}{१}\ \frac{९}{१}\right)$$

बादर-निगोद सप्रतिष्ठित प्रत्येक० वनस्पति अपर्याप्त जीवराशि

=सप्रति० प्रत्येक शरीर बन० जीवराशि—सप्रति० प्रत्येक० बन० जीव राशि

$$= (\overline{=} \text{रि} \equiv \text{रि}) - \left(\frac{\overline{=}\text{प} \; ९}{४\,\text{रि}} \; \frac{९}{१}\right)।$$

त्रस जीवोंका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

पुणो आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण पदरंगुल-मवहारिय लद्धेण जगपदरे भागं घेत्तूण लद्धं $\overline{=}$ ।
४
२
रि

तं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेगखंडं पि पुधं ठविय सेस-बहुभागे घेत्तूण चत्तारि सम-पुंजं कादूण पुधं ठवेयव्वं[1] ॥

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागसे भाजित प्रतरांगुलका जगत्प्रतरमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे आवलीके असंख्यातवें भागसे खंडित कर एक भागको पृथक् स्थापित करके और शेष बहुभागको ग्रहण करके उसके चार समान पुञ्ज करके पृथक् स्थापित करना चाहिए।

विशेषार्थ—आवलीके असंख्यातवें भागसे भाजित प्रतरांगुलका भाग जगत्प्रतरमें देने से $\overline{=}$ लब्ध प्राप्त होता है।
४
२
रि

यही सामान्य त्रस-राशिका प्रमाण है। इसमें आवलीके असंख्यातवें (१) भागका भाग देना चाहिए। यथा—($\overline{=}$ १)।
४
२
रि

इसका एक भाग अर्थात् ($\overline{=}$ १ के चार समान पुञ्ज करके पृथक् स्थापित करना
४
२
रि

चाहिए। यथा—

---

१. ध. ध. ब. ब. दुवेसंतये।

$\frac{\text{आ}}{\text{रि}}$	$\frac{\text{आ}}{\text{रि}}$	$\frac{\text{आ}}{\text{रि}}$	$\frac{\text{आ}}{\text{रि}}$

द्वीन्द्रिय जीवोंका प्रमाण—

पुणो आवलियाए असंखेज्जदि-भागे विरलिदूण अवणिद-एगखंडं करिय दिण्णे तत्थ बहुखंडे पढम-पुंजे पक्खित्ते[1] बे-इंदिया होंति ।

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर अपनीत एक खण्डके समान खण्डकर उसमेंसे बहुभागको प्रथम पुञ्जमें मिला देनेपर दो इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है ।।

विशेषार्थ—अलग स्थापित $\frac{\text{आ}}{\text{रि}}$ राशिका बहुभाग प्राप्त करने हेतु उसे आवलीके असंख्यातवें भाग ($\frac{1}{2}$) से गुणित करने पर [$\frac{\text{आ}}{\text{रि}} \left(\frac{1}{2} \times \frac{3}{4}\right) = \frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{3}{8}$] प्राप्त होते हैं। इन्हें पुञ्ज-मान राशिमेंसे घटा देने पर जो शेष बचता है, वही उसका बहुभाग है ।

यथा : $\frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{1}{2} - \frac{3}{8} = \frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{1}{8}$ । इस राशिको प्रथम स्थापित राशि पुञ्जमें जोड़ देनेपर दो-इन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा — $\frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{3}{4} + \frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{1}{8}$ ।

अथवा $\frac{\text{आ}}{\text{रि}} \left[\left(\frac{1}{2} \times \frac{1}{2} \times \frac{3}{4} \times \frac{1}{2}\right) + \frac{\text{आ}}{\text{रि}} \left(\frac{3}{4} \times \frac{1}{2} \times \frac{3}{4}\right) \right]$

या $= \frac{\text{आ}}{\text{रि}} \frac{1}{2} \left[\left(\frac{1}{2} \times \frac{3}{4} \times \frac{1}{2}\right) + \left(\frac{3}{4} \times \frac{1}{2} \times \frac{3}{4}\right) \right]$

---

१. ब. क. क. ब. पक्खेसं ।

या $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{2}=\left(\frac{८\times८१\times१}{८१\times८१}\right)+\left(\frac{८\times४\times८१}{८१\times८१}\right)$ या $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{2}\left(\frac{४८३२+२५९२}{६५६१}\right)$

अथवा $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{2}$ सामान्य द्वीन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण है।

तेन्द्रिय जीव राशिका प्रमाण—

पुणो आवलियाए असंखेज्जभागं विरलिदूण दिण्ण-सेस-सग-खंडं करिय दादूण तत्थ बहुभागे बिदियपुंजे पक्खित्ते तेइंदिया होंति। पुव्व-विरलणादो[1] संपहि विरलणा किं सरिसा किं साहिया किं ऊणेत्ति पुच्छिदे अत्थि एत्थ उवएसो ॥

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलन करके देनेसे अवशिष्ट रही राशिके सदृश खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको द्वितीय पुंजमें मिलानेसे तीन इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण होता है। इस समयका विरलन पूर्व विरलनसे क्या सदृश है? क्या साधिक है, कि वा न्यून है? इसप्रकार पूछनेपर यही उत्तर है कि इसका उपदेश नहीं है।

विशेषार्थ—अलग स्थापित $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{2}$ राशिका बहुभाग प्राप्त करनेके लिए उसे $\frac{3}{4}$ से गुणित करने पर $\underset{\text{रि}}{=}\frac{3}{8}$ प्राप्त होते हैं। इसे गुण्यमान राशिमेंसे घटा देनेपर शेष बहुभागका प्रमाण $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{8}$ प्राप्त होता है। इसको पुनः आवलीके असंख्यातवें रूप $\frac{1}{2}$ से गुणित कर प्राप्त लब्ध $\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{16}$ को पूर्व स्थापित राशिके द्वितीय पुञ्जमें मिला देनेसे तीन इन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{2}\times\frac{3}{4}\times\frac{\text{रि}}{\text{रि}}$ या $\frac{3}{8}\underset{\text{रि}}{=}+\underset{\text{रि}}{=}\frac{1}{16}\times\frac{1}{2}\times\frac{\text{रि}}{\text{रि}}$

या $\underset{\text{रि}}{=}\left[\left(\frac{1}{2}\times\frac{3}{4}\times\frac{\text{रि}}{\text{रि}}\right)+\underset{\text{रि}}{=}\left(\frac{1}{16}\times\frac{1}{2}\times\frac{\text{रि}}{\text{रि}}\right)\right]$

---

१. ब. ब. क. ब. विरलणादो।

का $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ [(६ × $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$) + ($\frac{६}{८१}$ × ३ × २५)]

$\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ $\frac{(८ \times ७२९) + (८ \times ४ \times ९)}{८१ \times ८१}$ या $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ $\frac{५८३२ + २८८}{८१ \times ८१}$

या $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ $\frac{६१२१६}{८१ \times ८१}$ सामान्य तीन इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण ।

चार इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण—

पुणो तप्पाओग्ग आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेस-खंडं सम-खंडं करिय दिण्णे तत्थ बहुखंडे तदिय पुंजे पक्खित्ते चउरिंदिया होंति ॥

अर्थ—पुनः तत्प्रायोग्य आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर शेष खण्डके सदृश (समान) खण्ड करके देनेपर उनमेंसे बहुभागको तृतीय पुञ्जमें मिला देनेसे चार इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है ॥

विशेषार्थ—अलग स्थापित राशि $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ को ३ से गुणितकर लब्धराशि को (पूर्ववत्) गुण्यमान राशिमेंसे घटा देनेपर $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ६ लब्ध प्राप्त होता है । इसे ३ से गुणितकर लब्ध को पुनः ३ से गुणित करने पर जो लब्ध प्राप्त हो उसे पूर्व स्थापित तृतीय पुञ्जमें मिला देनेसे चार इन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण प्राप्त होता है । यथा—

$\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ ३ ६ $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ + $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ २५ × ३ × ३

या $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ [(३ × ३ × $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$) + $\frac{\text{ज}}{\text{रि}}$ (४ × २३ × ५)]

या $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ [($\frac{1}{2}$ × $\frac{2}{3}$) + ($\frac{2}{3}$ × $\frac{2}{3}$ × $\frac{1}{2}$)]

या $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{(2 \times 729) + (2 \times 1)}{81 \times 81}$ या $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1458 + 32}{6561}$

या $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1490}{6561}$ सामान्य चार इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण है।

पंचेन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण—

सेसेग-खंडं चउत्थ-पुंजे पक्खित्ते पंचेंदिय—मिच्छाइट्ठी होंति। तस्स ठवणा—

बी $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ + $\frac{1}{6561}$	ती $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ + $\frac{1}{6561}$	च $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ + $\frac{1}{6561}$	प $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ + $\frac{1}{6561}$

अर्थ—शेष एक खण्डको चतुर्थ पुञ्जमें मिलानेपर पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवोंका प्रमाण होता है। उनकी स्थापना इसप्रकार है—

विशेषार्थ—सामान्य त्रस-राशिके $\frac{}{\text{रि}}$ प्रमाणमें आवलीके असंख्यातवें भाग ($\frac{1}{2}$) का भाग देनेपर प्राप्त हुए उसके एक भाग $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{1}{2}$ को जो पूर्वमें अलग स्थापित किया था उसमेंसे प्रत्येक बार अपने-अपने बहुभागको प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुञ्जमें मिला देनेके पश्चात् जो शेष बचा है उसे चतुर्थ पुञ्जमें मिला देनेपर पंचेन्द्रिय जीवोंका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$\frac{}{\text{वि}}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{6561}$ + $\frac{}{\text{रि}}$ $\frac{2}{3}$ $\frac{2}{3}$ $\frac{1}{2}$

या $\frac{}{\text{रि}}$ [(३ × ६ × ३२१) + $\frac{}{\text{रि}}$ (२५ × २५ × ६)]

या $\frac{}{\text{रि}}$ ३ [(६ × ३२१) + (२५ × २५ × ६)]

या $\frac{}{\text{रि}}$ ३ ($\frac{८ \times ७२९ + १ \times ४}{८१ \times ८१}$) या $\frac{}{\text{रि}}$ ३ ($\frac{५८३२ + ४}{८१ \times ८१}$)

या $\frac{}{\text{रि}}$ ३ (९८९६) सामान्य पंचेन्द्रिय जीवों का प्रमाण है।

सामान्य द्वीन्द्रियादि जीवोंका प्रमाण—

क्र०	नाम	समभाग +	देय-भाग =	प्रमाण
१.	द्वीन्द्रिय जीव-राशि	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ६ +	$\frac{}{\text{रि}}$ ६ ३ =	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ६९२९६
२.	त्रीन्द्रिय जीव राशि	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ६ +	$\frac{}{\text{रि}}$ ६ ३ ३ =	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ २१५९६
३.	चतुरिन्द्रिय जीव राशि	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ६ +	$\frac{}{\text{रि}}$ ६ ३ ३ ३ =	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ७६३५
४.	पंचेन्द्रिय जीव राशि	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ६ +	$\frac{}{\text{रि}}$ १ १ १ १ =	$\frac{}{\text{रि}}$ ३ ५८३५ ३ ९८९६

पर्याप्त त्रस जीवोंका प्रमाण प्राप्त करने की विधि—

पुणो पदरंगुलस्स संखेज्जविभागेण जगपदरे[1] भागं घेत्तूण तं सद्धं तं आवलियाए असंखेज्जविभागेण खंडिऊणेग-खंडं पुधं ठवेदूण सेस-बहुभागं घेत्तूण चत्तारि सरिस-पुंजं कादूण ठवेयव्वं[2] ॥

१. द. ब. क. जगपदर, ब. जगपदरं। २. द ब. क. ज. ठवेयं वा।

अर्थ—पुनः जगत्प्रतरमें प्रतरांगुलके संख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर एक भागको पृथक् स्थापित करके शेष बहुभागके चार समान पुञ्ज करके स्थापित करना चाहिए।

जगत्प्रतरमें प्रतरांगुलके संख्यातवें भागका भाग देनेपर $\frac{}{\text{प्र}}$ लब्ध प्राप्त होता है। यही पर्याप्त त्रस राशिका प्रमाण है। इसमें आवलीके असंख्यातवें भाग ($\frac{१}{}$) का भाग देना चाहिए। यथा— $\frac{}{\text{प्र}} \frac{१}{}$। इसका एक भाग ($\frac{}{\text{प्र}} \frac{१}{}$) अलग स्थापित कर शेष बहुभाग ($\frac{}{\text{प्र}} \frac{}{}$) के चार समान पुञ्ज करके पृथक् स्थापित करना चाहिए।

पर्याप्त तीन-इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण—

पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण अवणिय-एय-खंडं सम-खंडं करिय दिण्णे[1] तस्स बहुखंडे पढम-पुंजे पक्खित्ते ते-इंदिय-पज्जत्ता होंति ॥

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर पृथक् स्थापित किये हुए एक खण्डके सदृश करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको प्रथम पुञ्जमें मिला देनेसे तीन-इन्द्रिय पर्याप्त जीवों का प्रमाण होता है॥

विशेषार्थ—अलग स्थापित ($\frac{}{\text{प्र}} \frac{१}{}$) राशिका बहुभाग करने हेतु उसे आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित कर प्राप्त ($\frac{}{\text{प्र}} \frac{१}{} \times \frac{१}{}$) राशिको गुण्यमान राशिमेंसे घटा देनेपर जो ($\frac{}{\text{प्र}} \frac{१}{} - \frac{१}{} \times \frac{}{}$) $\frac{}{\text{प्र}} \frac{}{} \times \frac{}{}$ शेष बचा वही उसका बहुभाग है। इस राशिको प्रथम स्थापित राशि-पुञ्जमें जोड़ देनेसे पर्याप्त तीन इन्द्रिय जीव-राशिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$$\frac{}{\text{प्र}} \left[\left(\frac{}{} \times \frac{}{} \times \frac{}{} \times \frac{}{} \right) + \frac{}{\text{प्र}} \left(\frac{}{} \times \frac{}{} \times \frac{}{} \right) \right]$$

$$\frac{}{\text{प्र}} \frac{}{} \frac{(८ \times ९ \times ८१) + (८ \times ४ \times ८१)}{८१ \times ८१}$$

$$\frac{}{\text{प्र}} \frac{}{} \frac{५८३२ + २४९२}{८१ \times ८१} \text{ या } \frac{}{\text{प्र}} \frac{}{} \frac{}{}$$

---

१. ब. क. ज. दिण्णो।

पर्याप्त दो इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण—

पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेस-एय-खंडं सम-खंडं कादूण दिण्णे तत्थ बहुखंडं बिदिय-पुंजे पक्खित्ते बे-इंदिय-पज्जत्ता होंति ।।

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर शेष एक भागके सदृश खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको द्वितीय पुञ्जमें मिला देनेसे दो इन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है।

विशेषार्थ— $\frac{=}{५}$ [(६ × ३ × ३ × ६१) + $\frac{=}{५}$ (८५ × ३ × ३६)]

या $\frac{=}{५}$ ३ $\frac{(८ \times ९ \times ८१) + (८ \times ४ \times ९)}{८१ \times ८१}$

या $\frac{=}{५}$ ३ $\frac{५८३२ + २८८}{८१ \times ८१}$ या $\frac{=}{५}$ ३ $\frac{६११९}{६५६१}$

पर्याप्त 'पंचेन्द्रिय' जीवोंका प्रमाण—

पुणो आवलियाए असंखेज्जदिभागं विरलिदूण सेस-एय-खंडं सम-खंडं कादूण दिण्णे तत्थ बहुभागं तदिय-पुंजे पक्खित्ते पंचेंदिय-पज्जत्ता होंति ।।

अर्थ—पुनः आवलीके असंख्यातवें भागका विरलनकर शेष खण्डके समान खण्ड करके देनेपर उसमेंसे बहुभागको तीसरे पुञ्जमें मिला देनेपर पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है ।।

$\frac{=}{५}$ [(६ × ३ × ३ × ६१) + (८५ × ६१ × ३)]

या $\frac{=}{५}$ $\frac{१}{४}$ $\frac{(८ \times ९ \times ८१) + (८ \times ४)}{८१ \times ८१}$

या $\frac{=}{५}$ ३ $\frac{५८३२ + ३२}{६५६१}$ या $\frac{=}{५}$ ३ $\frac{६१६४}{६५६१}$

पर्याप्त चार-इन्द्रिय जीवोंका प्रमाण—

पुणो सेस - भागं चउत्थ - पुंजे पक्खित्ते चउरिंदिय - पज्जत्ता होंति । तत्थ उवएसो—

ती	त्रि	पं	च
$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{1}{\text{असं}}$

अर्थ—पुनः शेष एक भागको चतुर्थ पुञ्जमें मिला देनेपर चार इन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है। इसकी स्थापना इसप्रकार है—

$$\frac{1}{\text{असं}} \left[\left(\frac{1}{\text{असं}} \times \frac{1}{\text{असं}} \times \frac{1}{\text{असं}} \times \frac{\text{असं}}{\text{असं}} \right) + \frac{1}{\text{असं}} \left(\frac{\text{असं}}{\text{असं}} \times \frac{\text{असं}}{\text{असं}} \times \frac{1}{\text{असं}} \right) \right]$$

$$\text{या} \quad \frac{1}{\text{असं}} \frac{(\text{असं} \times \text{असं} \times \text{असं}) + 1}{\text{असं} \times \text{असं}}$$

$$\text{या} \quad \frac{1}{\text{असं}} \frac{\text{असं}^3 + 1}{\text{असं}^2} \text{ या } \frac{1}{\text{असं}} \text{असं}$$

पर्याप्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका प्रमाण—

क्र०	नाम	समभाग +	देयभाग—	प्रमाण
१.	पर्याप्त तेन्द्रिय जीवों का प्रमाण	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{\text{असं}}{1}$	$\frac{1}{\text{असं}}$
२.	पर्याप्त द्वीन्द्रिय जीवों का प्रमाण	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1}$	$\frac{1}{\text{असं}}$
३.	पर्याप्त पञ्चेन्द्रियों का प्रमाण	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1}$	$\frac{1}{\text{असं}}$
४.	पर्याप्त चतुरिन्द्रियों का प्रमाण	$\frac{1}{\text{असं}}$	$\frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1} \times \frac{\text{असं}}{1}$	$\frac{1}{\text{असं}}$

अपर्याप्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका प्रमाण—

पुणो [1]'पुव्वुत्त-बोइंदियादि-सामण्ण-रासिम्मि सग-सग-पज्जत्त-रासिम्मवणिदे सग-सग-अपज्जत्त-रासि-पमाणं होदि । तं जहा—

कि	ती	च	पं
५ । ६१२० ।	५ । ८४२४	५ । ५८३६	५ । ५८६४ ।
=८४२४ । रि ।	=६१२० । रि ।	=५८६४ । रि ।	=५८३६ । रि ।
४ । ४ । ६५६१ ।	४ । ४ । ६५६१	४ । ४ । ६५६१ ।	४ । ४ । ६५६१ ।

अर्थ—पुनः पूर्वोक्त दोइन्द्रियादि सामान्य राशिमेंसे अपनी-अपनी पर्याप्त राशिको घटा देनेपर शेष अपनी-अपनी अपर्याप्त राशिका प्रमाण होता है ।। यथा—

अपर्याप्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका प्रमाण—

क्र०	नाम	सामान्य जीवराशि =	पर्याप्त जीवराशि =	अपर्याप्त जीव-राशि
१.	द्वीन्द्रिय जीव	$= \frac{२}{रि}$ ६५५५ —	$= \frac{३}{रि}$ ६५५५ =	$= \frac{१}{४ \mid ४ \mid ६५६१}$ $[\frac{५}{रि}(८४२४)-५(६१२०)]$
२.	तेइन्द्रिय जीव	$= \frac{२}{रि}$ ६५५५ —	$= \frac{३}{रि}$ ६५५५ =	$= \frac{१}{४ \mid ४ \mid ६५६१}$ $[\frac{५}{रि}(६१२०)-५(८४२४)]$
३.	चतुरिन्द्रिय	$= \frac{२}{रि}$ ६५५५—	$= \frac{३}{रि}$ ६५५५ =	$= \frac{१}{४ \mid ४ \mid ६५६१}$ $[\frac{५}{रि}(५८६४)-५(५८३६)]$
४.	पंचेन्द्रिय	$= \frac{२}{रि}$ ६५५५—	$= \frac{३}{रि}$ ६५५५ =	$= \frac{१}{१४ \mid ४ \mid ६५६१}$ $[\frac{५}{रि}(५८३६)-५(५८६४)]$

१. ब पुव्वुत्तर, क पुव्वत्तर ।

तिर्यञ्च असंज्ञी पर्याप्त जीवोंका प्रमाण—

पुणो पंचेन्द्रिय - पज्जत्तापज्जत्त - रासीणं मज्झे देव-णेरइय-मणुस-देवरासि-संखेज्जविभागमुद-तिरिक्ख-सण्णि-रासिमवणिदे अवसेसा तिरिक्ख - असण्णि - पज्जत्ता-पज्जत्ता होंति । तं चेदं पज्जत्त ।

$$\frac{-२}{५}\ ३५५५ \text{ रिण राशि} = \frac{}{४ \mid ६५५३६}\ ^{1} \text{ —२ मू} \mid \frac{८ \quad ८}{१ \mid ३ \text{ मू०}} = \frac{}{४ \mid ६५५३६ \mid ७ \mid ७ \mid ५}\ ^{१}\ \mid$$

अर्थ—पुनः पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त राशियोंके मध्यमेंसे देव, नारकी, मनुष्य तथा देव-राशिके संख्यातवें भाग प्रमाण तिर्यञ्च संज्ञी जीवोंकी राशिको घटा देनेपर शेष तिर्यञ्च असंज्ञी पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है ।

विशेषार्थ—सम्पूर्ण पंचेन्द्रिय पर्याप्त राशिका प्रमाण $\frac{}{५} \mid ३ \mid ३५५५$ है। और देव राशिका प्रमाण $\frac{}{४} \mid ६५५३६$ । नरक राशिका — २ मू । पर्याप्त मनुष्य राशि का $\frac{८ \quad ८}{१ \mid ३ \text{ मू}}$ तथा तिर्यंच संज्ञी राशिका प्रमाण $\frac{}{४} \mid ६५५३६ \mid ७ \mid ७ \mid ५$ है। उपर्युक्त पंचेन्द्रिय पर्याप्त राशिमेंसे देव, नारकी, पर्याप्त मनुष्य और संज्ञी तिर्यंच, इन चारों राशियों को घटा देनेपर जो शेष बचता है वही असंज्ञी पर्याप्त जीवोंका प्रमाण होता है । जो स्थापना मूलमें की गई है उसका स्पष्टीकरण इसप्रकार है — —जगत्प्रतर और ४ घनरांगुलका प्रतीक है । —२ मू का अर्थ है, जगच्छ्रेणीका दूसरा वर्गमूल । $\frac{८ \quad ८}{१ \mid ३ \mid \text{मू}}$ का अर्थ है, सूच्यंगुलके प्रथम एवं तृतीय मूल का परस्पर गुणा करने पर जो लब्ध प्राप्त हो उससे जगच्छ्रेणीको भाजित कर १ घटा देना चाहिए । पश्चात् जो अवशेष रहे वह पर्याप्त मनुष्यकी संख्याका प्रमाण होता है ।

तिर्यंञ्च संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त-अपर्याप्त जीवराशिका प्रमाण—

पुणो पुव्वं अवणिद-तिरिक्ख-सण्णि-रासीणं तप्पाओग्ग-संखेज्ज-रूवेहि खंडिदे तत्थ बहुभागा तिरिक्ख-सण्णि-पंचेंदिय-पज्जत्त-रासी होदि, सेसेयभागं सण्णि-पंचेंदिय-अपज्जत्त-रासि-पमाणं होदि । तं चेदं $\frac{}{४} \mid ६५८ \mid ७ \mid ७ \mid ५$ । $\frac{}{४} \mid ६५८ \mid ७ \mid ७ \mid २$ ।

एवं संज्ञा-पञ्चना समत्ता ॥७॥

अर्थ—पुनः पूर्वमें अपनीत तिर्यञ्च संज्ञी राशिको अपने योग्य संख्यात रूपोंसे खण्डित करने पर उसमेंसे बहुभाग तिर्यञ्च संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवराशि होती है और शेष एक भाग (तिर्यञ्च) संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त जीवराशिका प्रमाण होता है ॥

विशेषार्थ—तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय पर्याप्त राशिका प्रमाण देवराशि ($\frac{६५५३६}{७}$ । ७) के संख्यातवें भाग प्रमाण अर्थात् $\frac{६५५३६}{७}$ । ७ । ७ होता है। अथवा $\frac{६५५३६}{७}$ । ७ । ७ । होती है। यहाँ—अमलतर, ४ प्रतरांगुल, ६५५३६ अर्थात् ६५५३६ तथा ७ संख्यातका प्रतीक है। इसलिए इस राशि को तत्प्रायोग्य संख्यात (५) से अभिहत करनेपर बहुभाग मात्र संज्ञी और पर्याप्त तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीवराशि $\frac{६५५३६}{७}$ । ७ । ७ प्रमाण होती है। तथा शेष एक भाग संज्ञी पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्त जीव राशि $\frac{६५५३६}{७}$ । ७ । ७ । १ प्रमाण होती है।

इसप्रकार संख्या-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥७॥

स्थावर जीवोंकी उत्कृष्टायु—

सुद्ध-खर-पु-जलाणं, बारस बाबीस सत्त य सहस्सा।
तेउ-तिय दिवस-तियं, वरिसं ति-सहस्स दस य जेट्ठाऊ ॥२८३॥

१२००० । २२००० । ७००० । दि ३ । व ३००० । व १००००।

अर्थ—शुद्ध पृथिवीकायिक जीवोंकी उत्कृष्ट आयु बारह हजार (१२०००) वर्ष, खर पृथिवीकायिक की बाईस हजार (२२०००) वर्ष, जलकायिक की सात हजार (७०००) वर्ष, तेजस्कायिक की तीन दिन, वायुकायिककी तीन हजार (३०००) वर्ष और वनस्पतिकायिक जीवोंकी दस हजार (१००००) वर्ष प्रमाण है ॥२८३॥

विकलेन्द्रियों और सरीसृपोंकी उत्कृष्टायु—

बास-दिण-मास-बारसपुव्वंगं छक्क दिवस-जेट्ठाऊ।
णव - पुव्वंग - पमाणं, उक्कस्साऊ सरिसवाणं[1] ॥२८४॥

ब १२ । दि ४९ । मा ६ । पुव्वांग ९ ।

अर्थ—विकलेन्द्रियोंमें दोइन्द्रियोंकी उत्कृष्टायु बारह (१२) वर्ष, तीन इन्द्रियोंकी उनंचास दिन और चारइन्द्रियोंकी छह (६) मास प्रमाण है। (पंचेन्द्रियोंमें) सरीसृपोंकी उत्कृष्टायु नौ पूर्वांगप्रमाण होती है ॥२८४॥

पक्षियों, सर्पों और शेष तिर्यंचोंकी उत्कृष्टायु—

बाहत्तरि बादालं, बास-सहस्साणि पक्खि-उरगाणं।
थलचेरा - तिरियाणं, उक्कस्सं पुव्व - कोडीओ ॥२८५॥

७२००० । ४२००० । पूर्वकोटि १ ।

---

१. ब. ब. सरिसवं।

अर्थ—पल्लियोंकी उत्कृष्ट आयु बहत्तर हजार (७२०००) वर्ष और सर्पोंकी बयालीस हजार (४२०००) वर्ष प्रमाण होती है। शेष तिर्यंचोंकी उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि प्रमाण है ॥२८५॥

तिर्यञ्चोंके यह उत्कृष्ट आयु कहाँ-कहाँ और कब प्राप्त होती है—

एवे उक्कसाऊ, पुव्वावर-विदेह-जाद[1]-तिरियाणं ।
कम्मावणि-पडिबद्धे, बाहिरभागे सयंपह-गिरीदो[2] ॥२८६॥

तत्थेव सव्वकालं, केई जीवाण भरह - एरवदे ।
तुरिमस्स पढमभागे, एदारसं होदि उक्कस्सं ॥२८७॥

अर्थ—उपर्युक्त उत्कृष्ट आयु पूर्वापर विदेह क्षेत्रोंमें उत्पन्न हुए तिर्यञ्चोंके तथा स्वयम्प्रभ पर्वतके बाह्य कर्मभूमि-भागमें उत्पन्न हुए तिर्यञ्चोंके ही सर्वकाल पायी जाती है। भरत और ऐरावत क्षेत्रके भीतर चतुर्थकालके प्रथम भागमें भी किन्हीं तिर्यंचोंके उक्त उत्कृष्ट आयु पायी जाती है ॥ २८६-२८७ ॥

कर्मभूमिज तिर्यंचोंकी जघन्य आयु—

उस्सासस्स - द्वारस - भागं एइंदिए जहण्णाऊ ।
वियल - सयलिंदियाणं, तत्तो संखेज्ज - संगुणिदे ॥२८८॥

अर्थ—एकेन्द्रिय जीवोंकी जघन्य आयु उच्छ्वासके अठारहवें भाग प्रमाण और विकलेन्द्रिय एवं सकलेन्द्रिय जीवोंकी क्रमशः इससे उत्तरोत्तर संख्यात-गुणी है ॥२८८॥

भोगभूमिज तिर्यंचोंकी आयु—

वर-मज्झिम-अवर-भोगज-तिरियाणं तिय-दुगेक्क-पल्लाऊ ।
अवरे वरम्मि तत्तिय - भविणस्सर - भोगभूवाणं ॥२८९॥

प ३ । प २ । प १ ।

अर्थ—उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य भोगभूमिज तिर्यंचोंकी आयु क्रमशः तीन पल्य, दो पल्य और एक पल्य प्रमाण है। अविनश्वर भोगभूमियोंमें जघन्य एवं उत्कृष्ट आयु उक्त तीन प्रकार ही है ॥ २८९ ॥

---

१. ब. अदि। २. ब. क. ज. विरिदो।

समय-जुद-पुव्व-कोडी, जहण्ण-भोगज-जहण्णयं आऊ ।
उक्कस्ससेक - पल्लं, मज्झिम - भेयं अणेयविहं ॥२९०॥

अर्थ—जघन्य भोगभूमिजोंकी जघन्य आयु एक समय अधिक पूर्वकोटि और उत्कृष्ट आयु एक पल्य-प्रमाण है । मध्यम आयुके अनेक प्रकार हैं ॥२९०॥

समय-जुद-पल्लमेक्कं, जहण्णयं मज्झिमम्मि अवराऊ ।
उक्कस्सं दो - पल्लं, मज्झिम - भेयं अणेय - विहं ॥२९१॥

अर्थ—मध्यम भोगभूमिमें जघन्य आयु एक समय अधिक एक पल्य और उत्कृष्ट आयु दो पल्य प्रमाण है । मध्यम आयुके अनेक प्रकार हैं ॥२९१॥

समय-जुद-दोण्णि-पल्लं, जहण्णयं तिण्णि-पल्लमुक्कस्सं ।
उक्कस्सिय - भोयभूए, मज्झिम - भेयं अणेय - विहं ॥२९२॥

आऊ समत्ता ॥८॥

अर्थ—उत्कृष्ट भोगभूमिमें जघन्य आयु एक समय अधिक दो पल्य और उत्कृष्ट तीन पल्य—प्रमाण है । मध्यम आयुके अनेक भेद हैं ॥२९२॥

आयुका वर्णन समाप्त हुआ ॥८॥

तिर्यञ्च आयुके बन्धक भाव—

आउग-बंधण-काले[1], मू - मेंढ्रो - [2]उरब्भवत्थिगा ।
चक्क-मसो च्च कसाया, छल्लेस्सा - मज्झिमंसेहिं ॥२९३॥

जे जुत्ता णर-तिरिया, सग-सग-जोगेहिं लेस्स-संजुत्ता ।
णारइ - देवा केई, णिय-जोग-तिरिक्खमाउ बंधंति ॥२९४॥

आउग-बंधग-भावं समत्तं ॥९॥

अर्थ—आयुके बन्धकालमें चूरेका, हड्डी, मेंढ़ेके सींग और पहियेके मल (खोंयन) सदृश क्रोधादि कषायोंसे संयुक्त जो मनुष्य और तिर्यंच जीव अपने-अपने योग्य छह लेश्याओंके मध्यम अंशों सहित होते हैं तथा अपने-अपने योग्य लेश्याओं सहित कोई-कोई नारकी एवं देव भी अपने-अपने योग्य तिर्यंच आयुका बन्ध करते हैं ॥२९३-२९४॥

आयु-बन्धक भावोंका कथन समाप्त हुआ ॥९॥

---

१ द. ब. क. ज. कालो । २. उरब्भवत्थिया ।

तिर्यंचोंकी उत्पत्ति योग्य योनियाँ—

उप्पत्ती तिरियाणं, गब्भज-संमुच्छिमो त्ति पत्तेक्कं ।
सचित्त-सीद-संवद-सेदर-मिस्सा य जह - जोग्गं ॥२९५॥

अर्थ—तिर्यञ्चोंकी उत्पत्ति गर्भ और सम्मूर्च्छन जन्मसे होती है। इनमेंसे प्रत्येक जन्मको सचित्त, शीत, संवृत तथा इनसे विपरीत अचित्त, उष्ण, विवृत और मिश्र (सचित्ताचित्त, शीतोष्ण और संवृतविवृत), ये यथायोग्य योनियाँ होती हैं ॥२९५॥

गब्भुब्भव[1]-जीवाणं, मिस्सं सचित्त - णामधेयस्स ।
सीदं उण्हं मिस्सं, संवद - जोणिम्मि मिस्सा य ॥२९६॥

अर्थ—गर्भसे उत्पन्न होनेवाले जीवोंके सचित्त नामक योनिमेंसे मिश्र (सचित्ताचित्त), शीत, उष्ण, मिश्र (शीतोष्ण) और संवृत योनिमेंसे मिश्र (संवृत-विवृत) योनि होती है ॥२९६॥

संमुच्छिम-जीवाणं, सचित्ताचित्त-मिस्स-सीदुसिणा ।
मिस्सं संवद - विवुदं, णव-जोणीओ हु सामण्णा ॥२९७॥

अर्थ—सम्मूर्च्छन जीवोंके सचित्त, अचित्त, मिश्र, शीत, उष्ण, मिश्र, संवृत, विवृत और संवृत-विवृत, ये साधारणरूपसे नौ ही योनियाँ होती हैं ॥२९७॥

तिर्यंचोंकी योनियोंका प्रमाण—

पुढवी-आइ[2]-चउक्के, णिच्चिदरे सत्त-सत्त परोक्कं ।
दस तरुणा रुक्खाणं, छल्लक्खा विगल-जोणाणं ॥२९८॥

पंचक्खे चउ-लक्खा, एवं बासट्ठि-लक्ख-परिमाणं ।
णाणाविह - तिरियाणं, होंति हु जोणी विसेसेणं ॥२९९॥

एवं जोणी समत्ता ॥१०॥

अर्थ—पृथिवी आदिक चार तथा नित्यनिगोद एवं इतरनिगोद इनमें प्रत्येकके सात लाख, वृक्षोंके दस लाख, विकल-जीवोंके छह लाख और पंचेन्द्रियोंके चार लाख, इसप्रकार विशेष रूपसे नाना प्रकारके तिर्यंचोंके ये बासठ लाख प्रमाण योनियाँ होती हैं ॥२९८-२९९॥

इसप्रकार योनियोंका कथन समाप्त हुआ ॥१०॥

---

१. ब. ब. गब्भुब्भव । २. ब. ब. क. ब. आद ।

तिर्यंचोंमें सुख-दुःखकी परिकल्पना—

सव्वे भोगभुवाणं, संकप्पवसेण होइ सुहमेक्कं ।
कम्मावणि-तिरियाणं, सोक्खं दुक्खं च संकप्पो ॥३००॥

सुह-दुक्खं समत्तं ॥११॥

अर्थ—सब भोगभूमिज तिर्यंचोंके संकल्पवश केवल एक ही (मात्र) सुख होता है और कर्मभूमिज तिर्यंच जीवोंके सुख एवं दुःख दोनोंकी कल्पना होती है ॥३००॥

सुख-दुःखका वर्णन समाप्त हुआ ॥११॥

तिर्यंचोंके गुणस्थानोंका कथन—

तेत्तीस-भेद-संजुद-तिरिक्ख-जीवाण सव्व-कालम्मि ।
मिच्छत्त - गुणट्ठाणं, जीवट्ठं सण्णिणं तं माणं ॥३०१॥

अर्थ—संज्ञी (पर्याप्त) जीवोंको छोड़कर शेष तेतीस प्रकारके भेदोंसे युक्त तिर्यंच जीवोंके सब कालमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान रहता है। अब संज्ञी जीवोंके गुणस्थान-प्रमाणका कथन करते हैं ॥३०१॥

पण-पण अज्जाखंडे, भरहेरावदम्मि मिच्छ-गुणठाणं ।
अवरे वरम्मि पण गुणठाणाणि कयाइ दीसंति ॥३०२॥

अर्थ—भरत और ऐरावत क्षेत्र स्थित पाँच-पाँच आर्यखण्डोंमें जघन्य रूपसे एक मिथ्यात्व गुणस्थान और उत्कृष्ट रूपसे कदाचित् पाँच गुणस्थान भी देखे जाते हैं ॥३०२॥

पंच-विदेहे सट्ठी, समधिय-सय-अज्जखंडए तत्तो ।
विज्जाहर - सेढीए, बाहिरभागे सयंपह - गिरीदो ॥३०३॥

सासण-मिस्स-विहीणा, ति-गुणट्ठाणाणि थोव-कालम्मि ।
अवरे वरम्मि पण गुणठाणाइ कयाइ दीसंति ॥३०४॥

अर्थ—पाँच विदेहक्षेत्रोंके एक सौ साठ आर्य-खण्डोंमें, विद्याधर श्रेणियोंमें और स्वयम्प्रभ-पर्वतके बाह्य भागमें सासादन एवं मिश्र गुणस्थानको छोड़ तीन गुणस्थान जघन्यरूपसे स्तोक कालके होते हैं। उत्कृष्टरूपसे पाँच गुणस्थान भी कदाचित् देखे जाते हैं ॥३०३-३०४॥

सव्वेसु वि भोगभुवे, दो गुणठाणाणि थोवकालम्मि ।
दीसंति चउ-वियप्पं, सव्व-मिलिच्छम्मि[1] मिच्छत्तं ॥३०५॥

अर्थ—सर्व भोगभूमियोंमें दो (मिथ्यात्व और अविरत स०) गुणस्थान और स्तोक-कालके लिए चार गुणस्थान देखे जाते हैं। सब म्लेच्छ खण्डोंमें एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है ॥३०५॥

जीवसमास आदिका वर्णन—

पज्जत्तापज्जत्ता, जीवसमासाणि सयल-जीवाणं ।
पज्जत्ति - अपज्जत्ती, पाणाओ होंति णिस्सेसा ॥३०६॥

अर्थ—सम्पूर्ण जीवोंके पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों जीव-समास, पर्याप्ति एवं अपर्याप्ति तथा सब ही प्राण होते हैं ॥३०६॥

चउ-सण्णा तिरिय-गदी, सयलाओ इंदियाओ छक्काया ।
एक्कारस जोगा तिय - वेदा कोहादिय - कसाया ॥३०७॥

छण्णाणा दो संजम, तिय-दंसण [2]दव्व-भावदो लेस्सा ।
छच्चेव य भविय - दुगं छस्सम्मत्तेहि संजुत्ता ॥३०८॥

सण्णि-असण्णी होंति हु, ते आहारा तहा अणाहारा ।
साकारणायार - दंसण - उवजोग - जुदाणि ते सव्वे ॥३०९॥

एवं गुणठाणादि-समत्ता ॥१२॥

अर्थ—सब तिर्यंच जीवोंके चारों संज्ञाएँ, तिर्यंचगति, समस्त इन्द्रियाँ, छहों काय, ग्यारह योग (वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक और आहारक मिश्रको छोड़कर), तीनों वेद, क्रोधादिक चारों कषाय, छह ज्ञान (३ ज्ञान, ३ अज्ञान), दो संयम (असंयम एवं देशसंयम), केवलदर्शनको छोड़कर शेष तीन दर्शन, द्रव्य और भावरूपसे छहों लेश्याएँ, भव्यत्व-अभव्यत्व और छहों सम्यक्त्व होते हैं। वे सब तिर्यंच संज्ञी एवं असंज्ञी, आहारक एवं अनाहारक तथा ज्ञान एवं दर्शनरूप दोनों उपयोगों सहित होते हैं ॥३०७-३०९॥

इसप्रकार गुणस्थानादिका कथन समाप्त हुआ ॥१२॥

---

१. ब. क. मेलच्छम्मि । २. ब. सव्व ।

तिर्यंचोंमें सम्यक्त्व ग्रहणके कारण—

केइ पडिबोहणेण य, केइ सहावेण तासु भूमीसुं ।
दट्ठूणं सुह - दुक्खं, केइ तिरिक्खा बहु-पयारा ॥३१०॥

जादि-भरणेण केई, केइ जिणिंदस्स महिम-दंसणदो ।
जिणबिंब-दंसणेण य, पडमुवसमं[1] वेदगं च गेण्हंति ॥३११॥

सम्मत्त-गहणं गदं ॥१३॥

अर्थ—उन भूमियोंमें कितने ही तिर्यंच जीव प्रतिबोधसे और कितने ही स्वभावसे भी प्रथमोपशम एवं वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत प्रकारके तिर्यंचोंमेंसे कितने ही सुख-दुःखको देखकर, कितने ही जातिस्मरणसे, कितने ही जिनेन्द्र महिमाके दर्शनसे और कितने ही जिनबिम्बके दर्शनसे प्रथमोपशम एवं वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण करते हैं ॥३१०-३११॥

इसप्रकार सम्यक्त्व ग्रहणका कथन समाप्त हुआ ॥१३॥

तिर्यंच जीवोंकी गति-आगति—

पुढवि-प्पहुदि-वणप्फदि-अंतं विगला य कम्म-भर-तिरिए ।
ण लहंति तेउ - वाउ, मणुवाउ अणंतरे जम्मे ॥३१२॥

अर्थ—पृथिवीको आदि लेकर वनस्पतिकायिक पर्यन्त स्थावर और विकलेन्द्रिय जीव कर्म-भूमिज मनुष्य एवं तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं। परन्तु विशेष इतना है कि तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव अनन्तर जन्ममें मनुष्यायु नहीं पाते हैं ॥३१२॥

बत्तीस-भेद-तिरिया, ण होंति कइयाइ भोग-सुर-णिरए ।
सेढिघणमेत्त - लोए, सव्वे अक्खेसु जायंति ॥३१३॥

अर्थ—बत्तीस प्रकारके तिर्यंच जीव, भोगभूमिमें तथा देव और नारकियोंमें कदापि उत्पन्न नहीं होते। शेष जीव श्रेणीके घनप्रमाण लोकमें सर्वत्र (कहीं भी) उत्पन्न होते हैं ॥३१३॥

विशेषार्थ—गाथा २८२ में तिर्यंच जीवोंके ३४ भेद कहे हैं इनमेंसे संज्ञी पर्याप्त और असंज्ञी पर्याप्त (दोनों) को छोड़कर शेष ३२ प्रकारके तिर्यंच जीव भोगभूमिमें तथा देव और नारकियोंमें कदापि उत्पन्न नहीं होते।

---

१. द. ब. क. ज. पडमुवसमे।

पढम-चरंतमसण्णी, भवणतिए सयल-कम्म-णर-तिरिए ।
सेढिघणमेत्त - लोए, सव्वे अक्खेसु जायंति ॥३१४॥

अर्थ—असंज्ञीजीव प्रथम पृथिवीके नरकोंमें, भवनत्रिकमें और समस्त कर्मभूमियोंके मनुष्यों एवं तिर्यंचोंमें उत्पन्न होते हैं। ये सब श्रेणीके घनप्रमाण लोकमें कहीं भी पैदा होते हैं ॥३१४॥

संखेज्जाउव-सण्णी, सहर-सहस्सारओ त्ति जायंति ।
णर-तिरिए णिरएसु, वि संखातीदाउ आव ईसाणं ॥३१५॥

अर्थ—संख्यातवर्षकी आयुवाले संज्ञी तिर्यंच जीव शतार-सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त (देवोंमें) तथा मनुष्य, तिर्यंच और नारकियोंमें भी उत्पन्न होते हैं। परन्तु असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञी जीव ईशान कल्प पर्यन्त ही उत्पन्न होते हैं ॥३१५॥

चोत्तीस-भेद-संजुद-तिरिया हु अणंतरम्मि जम्मम्मि ।
ण हुंति सलाग - णरा, भजणिज्जा सिद्धिगइ-पवेसे ॥३१६॥

एवं संकमणं गदं ॥१४॥

अर्थ—चौंतीस भेदोंसे संयुक्त तिर्यंच जीव निश्चय ही अनन्तर जन्ममें शलाका-पुरुष नहीं होते। परन्तु मुक्ति-प्रवेशमें ये भजनीय हैं। अर्थात् अनन्तर जन्ममें ये कदाचित् मुक्ति भी प्राप्त कर सकते हैं ॥३१६॥

इसप्रकार संक्रमणका कथन समाप्त हुआ ॥१४॥

तिर्यंच जीवोंके प्रमाणका चौंतीस पदोंमें अल्पबहुत्व—

एत्तो चोत्तीस-पदमप्पबहुगं वत्तइस्सामो । तं जहा—सव्वत्थोवा तेउक्काइय-बादर-पज्जत्ता । ति । पंचेंदिय - तिरिक्ख - सण्णि - अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा $\frac{आ}{४}$ । ४ । ६५५३६ । ७ । ७ । २ । सण्णि-पज्जत्ता संखेज्जगुणा $\frac{आ}{४}$ । ४ । ६५५३६ । ७ । ७ । ४ । चउरिंदिय-पज्जत्ता संखेज्जगुणा $\frac{आ}{२}$ । २५५ । पंचेंदिय-तिरिक्खा असण्णि-पज्जत्ता विसेसाहिया $\frac{आ}{२}$ । २५५ । रिण रासि $\frac{आ}{४}$ । ६५५३६ ।

— २ मू । $\frac{आ \times ३}{१ \times ३ \times मू}$ । $\frac{आ}{४}$ । ६५५३६ । ५ ।

तीइंदिय-पज्जत्ता विसेसाहिया $\frac{आ}{२}$ । ६५३५ ।

तीइंदिय-पज्जत्ता विसेसाहि $\frac{आ}{२}$ । ६५३५ ।

चउरिंदिय-असण्णि-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा

$$\frac{५ \mid ५८६४}{४ \mid ३ \mid ६५६१} \cdot \text{रि} \Big| \text{रिण} \frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; \Big| \; \frac{१}{६५३२६ \mid ७ \mid ७ \mid ५} \Big|$$

चउरिंदिय-अपज्जत्ता विसेसाहिया $\frac{५ \mid ५८३६ \mid}{४ \mid ४ \mid ६५६१ \mid} = \mid ५८६४ \mid \text{रि} \mid$

तीइंदिय-अपज्जत्ता विसेसाहिया $\frac{५ \mid ८४२४}{४ \mid ४ \mid ६५६१ \mid} = \mid ६१२० \mid \text{रि} \mid$

बीइंदिय-अपज्जत्ता विसेसाहिया $\frac{५ \mid ६१२० \mid}{४ \mid ४ \mid ६५६१ \mid} = \mid ८४२४ \mid \text{रि} \mid$

अपदिट्ठिद-पज्जत्ता असंखेज्जगुणा $\frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; ९ \; ९ \; ९ \mid$

पदिट्ठिद-पज्जत्ता असंखेज्जगुणा $\frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; ९ \; ९ \mid$

पुढवि-बादर-पज्जत्ता-असंखेज्जगुणा $\frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; ९ \mid$

आउ-बादर-पज्जत्ता असंखेज्जगुणा $\frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; \Big|$

वाउ-बादर-पज्जत्ता असंखेज्जगुणा $= ७ \mid$

अपदिट्ठिद-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा $= \text{रि} \; \text{रिण} \; \frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; ९ \mid ९ \mid ९ \mid ९ \mid$

पदिट्ठिद-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा $= \text{रि} = \text{रि} \; \text{रिण} \; \frac{=}{४} \; \frac{}{\text{प}} \; \frac{}{\text{रि}} \; ९ \mid ९ \mid ९ \mid$

तेउ-बादर-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा = रि $\frac{1}{2}$ रिण $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$ ।

पुढवि-बादर-अपज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ रिण $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$ । ६ ।

आउ-बादर-अपज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ रिण $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$ ।

वाउ[1]-बादर-अपज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ रिण $\frac{\text{प}}{\text{रि}}$ ।

तेउ-सुहुम-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा = रि $\frac{1}{2}$ ।

पुढवि-सुहुम-अपज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

आउ-सुहुम-अपज्जत्ता[2] विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

वाउ-सुहुम-अपज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

तेउकाय-सुहुम-पज्जत्ता संखेज्जगुणा = रि $\frac{1}{2}$ ।

पुढवि-सुहुम-पज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

आउ-सुहुम-पज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

वाउ-सुहुम-पज्जत्ता विसेसाहिया = रि $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ $\frac{1}{2}$ ।

साहारण-बादर-पज्जत्ता-अणंतगुणा १३ = $\frac{1}{3}$ ।

साहारण-बादर-अपज्जत्ता असंखेज्जगुणा १३ = $\frac{1}{4}$ ।

साहारण-सुहुम-अपज्जत्ता[3] असंखेज्जगुणा १३ = $\frac{1}{5}$ ।

साहारण-सुहुम-पज्जत्ता असंखेज्जगुणा १३ = $\frac{1}{6}$ ।

एवमप्पबहुगं समत्तं ॥१५॥

---

१. ब. ब. आउबादरपज्जत्ता । २. क. ब. पज्जत्ता । ३. ब. ब. पज्जत्ता ।

अर्थ—अब यहाँसे आगे चौंतीस प्रकारके तिर्यंचोंमें अल्पबहुत्व कहते हैं। वह इसप्रकार है :—

(१) बादर तेजस्कायिक पर्याप्त जीव सबसे थोड़े हैं।
(२) इनसे असंख्यातगुणे पंचेन्द्रिय तिर्यंच संज्ञी अपर्याप्त हैं।
(३) इनसे संख्यातगुणे संज्ञी पर्याप्त हैं।
(४) इनसे संख्यातगुणे चार इन्द्रिय पर्याप्त हैं।
(५) इनसे विशेष अधिक पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच असंज्ञी पर्याप्त हैं।
(६) इनसे विशेष अधिक दो इन्द्रिय पर्याप्त हैं।
(७) इनसे विशेष अधिक तीन इन्द्रिय पर्याप्त हैं।
(८) इनसे असंख्यात गुणे असंज्ञी अपर्याप्त हैं।
(९) इनसे विशेष अधिक चार इन्द्रिय अपर्याप्त हैं।
(१०) इनसे विशेष अधिक तीन इन्द्रिय अपर्याप्त हैं।
(११) इनसे विशेष अधिक दो इन्द्रिय अपर्याप्त हैं।
(१२) इनसे असंख्यातगुणे अप्रतिष्ठित पर्याप्त प्रत्येक हैं।
(१३) इनसे असंख्यातगुणे प्रतिष्ठित पर्याप्त प्रत्येक जीव हैं।
(१४) इनसे असंख्यातगुणे पृथिवीकायिक बादर पर्याप्त जीव हैं।
(१५) इनसे असंख्यातगुणे बादर जलकायिक पर्याप्त जीव हैं।
(१६) इनसे असंख्यातगुणे बादर वायुकायिक पर्याप्त जीव हैं।
(१७) इनसे असंख्यातगुणे अप्रतिष्ठित अपर्याप्त हैं।
(१८) इनसे असंख्यातगुणे प्रतिष्ठित अपर्याप्त हैं।
(१९) इनसे असंख्यातगुणे तेजस्कायिक बादर अपर्याप्त हैं।
(२०) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक बादर अपर्याप्त जीव हैं।
(२१) इनसे विशेष अधिक जलकायिक बादर अपर्याप्त जीव हैं।
(२२) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक बादर अपर्याप्त जीव हैं।
(२३) इनसे असंख्यातगुणे तेजस्कायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं।
(२४) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं।

(२५) इनसे विशेष अधिक त्रसकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं।

(२६) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं।

(२७) इनसे संख्यातगुणे तेजस्कायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं।

(२८) इनसे विशेष अधिक पृथिवीकायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं।

(२९) इनसे विशेष अधिक जलकायिक सूक्ष्म अपर्याप्त हैं।

(३०) इनसे विशेष अधिक वायुकायिक सूक्ष्म पर्याप्त हैं।

(३१) इनसे अनन्तगुणे साधारण बादर पर्याप्त हैं।

(३२) इनसे असंख्यातगुणे साधारण बादर अपर्याप्त हैं।

(३३) इनसे असंख्यातगुणे साधारण सूक्ष्म अपर्याप्त हैं। और

(३४) इनसे संख्यातगुणे साधारण सूक्ष्म पर्याप्त हैं।

इसप्रकार अल्पबहुत्वका कथन समाप्त हुआ ॥१५॥

सर्व जघन्य अवगाहनाका स्वामी—

ओगाहणं तु अवरं, सुहुम-णिगोदस्सपुण्ण-लद्धिस्स ।
अंगुल - असंखभागं, आदस्स य तदिय-समयम्मि ॥३१७॥

अर्थ—सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तकके उत्पन्न होनेके तीसरे समयमें अंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य अवगाहना पायी जाती है ॥३१७॥

सर्वोत्कृष्ट अवगाहनाका प्रमाण—

तत्तो पदेस-वड्ढी, जाव य दीहं तु जोयण-सहस्सं ।
तस्स दलं विक्खंभं, तस्सद्धं बहलमुक्कस्सं ॥३१८॥

अर्थ—तत्पश्चात् एक हजार योजन लम्बे, इससे आधे अर्थात् पाँच सौ योजन चौड़े और इससे आधे अर्थात् ढाईसौ योजन मोटे शरीरकी उत्कृष्ट अवगाहना पर्यन्त प्रदेश-वृद्धि होती गई है ॥३१८॥

एकेन्द्रियसे पंचेन्द्रिय पर्यन्त उत्कृष्ट अवगाहनाका प्रमाण—

जोयण-सहस्समहियं, बारस कोसूणमेक्कमेक्कं च ।
दोह-सहस्सं पम्मे, वियले सम्मुच्छिमे महामच्छे ॥३१९॥

१००० । १२ । ३/४ । १ । १००० ।

अर्थ—कुछ अधिक एक हजार (१०००) योजन, बारह योजन, एक कोस कम एक योजन, एक योजन और एक हजार (१०००) योजन यह क्रमशः पद्म, विकलेन्द्रिय जीव और सम्मूर्च्छन महामत्स्यकी अवगाहनाका प्रमाण है ॥३१९॥

पर्याप्त त्रस जीवोंमें जघन्य अवगाहनाके स्वामी—

बि-ति-चउ-पुण्ण-जहण्णे, अणुद्धरी - कुंथु-काण-मच्छीसु ।
सित्थय - मच्छोगाहं, विदंगुल-संख-संख-गुणिद-कमा ॥३२०॥

६	६	६	६
७७७७	७७७	७७	७

अर्थ—दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय और चार इन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें क्रमशः अनुन्धरी, कुन्थु और कानमक्षिका तथा पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंमें सिक्थक-मत्स्यके जघन्य अवगाहना होती है। इनमेंसे अनुन्धरीकी अवगाहना घनांगुलके संख्यातवेंभागप्रमाण और शेष तीनकी उत्तरोत्तर क्रमशः संख्यातगुणी है ॥३२०॥

विशेषार्थ—पर्याप्त दो इन्द्रिय अनुन्धरीकी जघन्य अवगाहना चार बार संख्यातसे भाजित घनांगुल प्रमाण अर्थात् $\frac{घ.अं.}{७७७७}$ है। पर्याप्त तीन इन्द्रिय कुन्थुकी जघन्य अवगाहना तीन बार संख्यातसे भाजित घनांगुल ($\frac{घ.अं.}{७७७}$) प्रमाण है। पर्याप्त चार इन्द्रिय कानमक्षिकाकी जघन्य अवगाहना दो बार संख्यातसे भाजित घनांगुल ($\frac{घ.अं.}{७७}$) प्रमाण है और पर्याप्त पंचेन्द्रिय तन्दुल मत्स्यकी जघन्य अवगाहना एक बार संख्यातसे भाजित घनांगुल ($\frac{घ.अं.}{७}$) प्रमाण है।

नोट—संदृष्टिमें ६ का अंक घनांगुलके और ७ का अंक संख्यातके स्थानीय है।

अवगाहनाके विकल्पोंका क्रम—

एत्थ ओगाहण-वियप्पं वत्तइस्सामो । तं जहा—सुहुम-णिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स तदिय-समयतब्भवत्थस्स एगमुस्सेह - घणंगुलं ठविय तप्पाओग्ग - पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण भागे हिदे बहुगं एदिस्से सव्व-जहण्णोगाहणा-पमाणं होदि ॥

अर्थ—अब यहाँ अवगाहनाके विकल्प कहते हैं। वे इसप्रकार हैं—उत्पन्न होनेके तीसरे समयमें उस भवमें स्थित सूक्ष्मनिगोदिया(१)-लब्ध्यपर्याप्त जीवकी सर्व जघन्य अवगाहनाका प्रमाण, एक उत्सेध-घनांगुल रखकर उसके योग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे भाजित करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना है ॥

एदस्स उवरि एग-पदेसं वड्ढिदे सुहुम-णिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स मज्झिम-ओगाहण-वियप्पं होदि। तदो दु-पदेसुत्तर-ति-पदेसुत्तर-चदु-पदेसुत्तर-जाव सुहुम-णिगोद-लद्धि - अपज्जत्तयस्स सव्व - जहण्णोगाहणा - त्ति उवरि जहण्णोगाहणा कज्जणावलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदव्वा' त्ति। ताधे सुहुम-वाउकाइय-लद्धि-'अपज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—इसके ऊपर एक प्रदेशकी वृद्धि होनेपर सूक्ष्म-निगोदिया-लब्ध्यपर्याप्तकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प होता है। इसके पश्चात् दो प्रदेशोत्तर, तीन प्रदेशोत्तर एवं चार प्रदेशोत्तर क्रमशः सूक्ष्मनिगोदिया-लब्ध्यपर्याप्तकी सर्व-जघन्य अवगाहनाके ऊपर, यह जघन्य अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो, उतनी बढ़ जाती है। उस समय सूक्ष्म वायुकायिक(२) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

एवमेवं सुहुमणिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स मज्झिमोगाहियाण वियप्पं होदि। तदो इमा ओगाहणा पदेसुत्तर-कमेण वड्ढावेदव्वा। तदणंतरोगाहणा कज्जणावलियाए असंखेज्जविभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-तेउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तस्स-सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—यह भी सूक्ष्म-निगोदिया लब्ध्यपर्याप्तककी मध्यम अवगाहनाका विकल्प है। तत्पश्चात् इस अवगाहनाके ऊपर प्रदेशोत्तर क्रमसे वृद्धि करना चाहिए। इसप्रकार वृद्धिके होनेपर वह अनन्तर अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त हो जाती है। तब सूक्ष्म तेजस्कायिक(३) लब्ध्यपर्याप्तकका सर्वजघन्य अवगाहना स्थान प्राप्त होता है ॥

एवमेवं पुढविस्स-दोण्णं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं होदि। पुणो एवस्सुवरिम-पदेसुत्तर-कमेण इमा ओगाहणा कज्जणावलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम - आउक्काइय - लद्धि'- अपज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

---

१. ब. ब, क. ब. वड्ढीदो त्ति। २. ब. ब. पज्जत्तस्स। ३. ब. ब. लद्धिपज्जत्तयस्स।

अर्थ—यह भी पूर्वोक्त दो जीवोंकी मध्यम अवगाहना का ही विकल्प होता है। पुनः इसके ऊपर प्रदेशोत्तर-क्रमसे वृद्धि होनेपर यह अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त हो जाती है। तब सूक्ष्म जलकायिक(४)-लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना प्राप्त होती है ॥

एवमादि वुड्ढिस्स-तिण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं होदि। तदो पदेसुत्तर-कमेण चउण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वट्टदि जाव इमा ओगाहणा रूवूणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-पुढविकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—यह भी पूर्वोक्त तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प है। पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहना चालू रहती है। जब यह अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त होती है, तब सूक्ष्म-पृथिवीकायिक(५) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना ज्ञात होती है ॥

तदो बहुदि पदेसुत्तर-कमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वट्टदि। इमा ओगाहणा रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-वाउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—यहाँसे लेकर प्रदेशोत्तर क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहना चालू रहती है। यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धि प्राप्त हो जाती है। तब बादर वायुकायिक(६) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व-जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो उवरि पदेसुत्तर-कमेण छण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वट्टदि जाव इमा ओगाहणा रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-तेउकाइय-अपज्जत्तस्स सव्व-जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—इसके ऊपर प्रदेशोत्तर क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प प्रारम्भ रहता है। जब यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र वृद्धिको प्राप्त होती है, तब बादर तेजस्कायिक(७)-अपर्याप्तककी सर्व-जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहणा-वियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणमुवरि [1]ऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिद-तदणंतरोगाहण-पमाणं वड्ढिदो त्ति । तावे बादर-आउ-सद्धि-अपज्जत्तयस्स बहुप्पोगाहणं होदि ।।

अर्थ - पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चालू रहता है जब इस अवगाहनाके ऊपर एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित उस अनन्तर अवगाहना का प्रमाण बढ़ जाता है, तब बादर अप्कायिक(८) लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण अट्ठण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहणा ऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तावे बादर-पुढवि-सद्धि-अपज्जत्तयस्स बहुप्पोगाहणं होदि ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चालू रहता है । जब तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (इस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है, तब बादर पृथिवीकायिक(९) लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण णवण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहणा ऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तावे बादर-णिगोद-जीव-सद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व बहुप्पोगाहणा होदि ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उपर्युक्त नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है । जब तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (इस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है, तब बादर निगोद(१०)-लब्ध्यपर्याप्तक जीवकी सर्व जघन्य अवगाहना होती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि एदिस्से ओगाहणाए उवरि इमा ओगाहणा ऊण - पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं वड्ढिदो त्ति । तावे णिगोद-पदिट्ठिद-सद्धि-अपज्जत्तयस्स बहुप्पोगाहणा होदि ।।

---

१. द. ब. ऊणया ।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे उक्त दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है, जब इस अवगाहनाके ऊपर यह अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित-मात्र वृद्धिको प्राप्त हो चुकती है, तब त्रिगोदप्रतिष्ठित(११) लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण एक्कारस-जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणा-मुवरि रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिद-तदणंतरोगाहणमेत्तं वड्ढिदो[1] त्ति । ताहे[2] बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेय-सरीर-लद्धि-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे उक्त ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है, जब इस अवगाहनाके ऊपर एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित तदनन्तर अवगाहना प्रमाण वृद्धि हो चुकती है, तब बादर वनस्पतिकायिक(१२)-प्रत्येक शरीर लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताहे बीइंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उक्त बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (उस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त हो चुकती है, तब दो इन्द्रिय(१३) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पहुदि पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि जाव तदणंतरोगाहण-रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदो तीइंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् यहाँसे आगे प्रदेशोत्तर-क्रमसे उक्त तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तदनन्तर अवगाहना-विकल्प एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (उस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त हो चुकती है, तब तीन इन्द्रिय(१४) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

---

१. द. ब. वड्ढिदो । २. द. ब. तम्हे ।

तदो पदेसुत्तर - कमेण चोद्दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे चउरिंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स सव्व जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—इसके पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उक्त चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (उस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त हो चुकती है, तब चार-इन्द्रिय(१५) लब्ध्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण पण्णारसण्हं जीवाण मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे[1] पंचेंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—इसके पश्चात् प्रदेशोत्तर क्रमसे उक्त पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है जब तदनन्तर अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (इस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त कर लेती है, तब पंचेन्द्रिय(१६)-लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण सोलसण्हं [जीवाण] मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-वड्ढिदो त्ति । तदो सुहुम-णिगोद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स सव्व जहण्णा ओगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उक्त सोलह [जीवोंकी] मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है, जब तक इसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि प्राप्त होती है। पश्चात् सूक्ष्म-निगोद(१७)-निर्वृत्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं होदि जाव तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुम-णिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर - क्रमसे उक्त सत्तरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प होता है जब इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि हो जाती है। तब सूक्ष्मनिगोद(१८)-लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।

---

१. द. तदे ।

तदुवरि णत्थि[1] सुहुम-णिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स ओगाहण-वियप्पं, सव्वुक्कस्सोगाहणं [2]पत्तत्तादो। तदुवरि सुहुम-वाउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तय-प्पहुदि सोलसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि, तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसपूरण-पंचेंदिय-लद्धि-अपज्जत्तय-जहण्णोगाहणा कज्जमाणवलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—इसके ऊपर सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प नहीं रहता, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त हो चुका है, इसलिए इसके आगे सूक्ष्मवायुकायिक-लब्ध्यपर्याप्तकको आदि लेकर उक्त सोलह जीवोंकी ही मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है। जब इसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र (इस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है, तब सूक्ष्मनिगोद(१९) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पहुदि पदेसुत्तर-कमेण सत्तारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणावलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेगभागमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-णिगोद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—फिर यहाँसे आगे प्रदेशोत्तर-क्रमसे तदनन्तर अवगाहनाके आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र (इस)के ऊपर बढ़ जाने तक उक्त सत्तरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है, तब सूक्ष्मनिगोद(२०) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो उवरि णत्थि तस्स ओगाहण-वियप्पा। तं कस्स होदि? से काले पज्जत्तो होदि त्ति ठिदस्स। तदो पहुदि पदेसुत्तर-कमेण सोलसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि जाव इमा ओगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेग-खंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स ओगाहण-वियप्पं पत्तदि, सव्व-उक्कस्सोग्गाहण[3]-परत्तादो। तदो पदेसुत्तर-कमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-वाउकाइय-णिव्वत्ति अपज्जत्तयस्स सव्व जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

---

१. द. ब. क. ज. वड्ढिद। २. द. ब. क. ज. पत्तं तादो। ३. ब. ज. चाहणं पत्तं तदो।

अर्थ—इसके आगे उस सूक्ष्म निगोद निर्वृत्यपर्याप्तककी अवगाहनाके विकल्प नहीं रहते। यह अवगाहना किसके होती है ? अनन्तरकालमें पर्याप्त होनेवालेके उक्त अवगाहना होती है। यहाँसे आगे प्रदेशोत्तर-क्रमसे अवगाहनाके आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र (उस)के ऊपर बढ़ जाने तक उक्त सोलह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता जाता है। इस समय सूक्ष्म-निगोद(२१) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प स्थगित हो जाता है, क्योंकि वह सर्वोत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त हो चुका है। पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि होनेतक पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है। तदनन्तर सूक्ष्म-वायुकायिक(२२) निर्वृत्यपर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण सोलसण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-वाउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स ओगाहण[1]-वियप्पं थक्कदि, समुदकस्सोगाहण-पत्तादो। तादे पदेसुत्तर - कमेण पण्णारसण्हं पि मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि। केत्तियमेत्तेण ? सुहुम-णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्तस्स उक्कस्सोगाहणं रूऊणावलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं हेट्ठिम तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम-वाउकाइय-णिव्वत्ति - पज्जत्तयस्स जहण्णो गाहणा होदि ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक सोलह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है। तब सूक्ष्मवायुकायिक(२३) लब्ध्यपर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प स्थगित हो जाता है, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको पा चुका है। तब प्रदेशोत्तर-क्रमसे पन्द्रह जीवोंके समान मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। कितने मात्रसे ? सूक्ष्मनिगोद निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित-मात्र अधस्तन उसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम उसके ऊपर वृद्धि होने तक। तब सूक्ष्म-वायुकायिक(२४) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है।

तदो पदेसुत्तर - कमेण सोलसण्हं ओगाहण - वियप्पं वड्ढदि एसा ओगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेग - खंडं वड्ढिदो त्ति। तादे सुहुम - वाउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सोलह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है, जब तक ये अवगाहनायें आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भाग प्रमाण वृद्धिको

---

१. ब. ब. ओगाहणं।

प्राप्त न हो जाये। उस समय सूक्ष्म-वायुकायिक(२५) निर्वृत्ति-अपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तावे सुहुम-वाउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि। तदो पदेसुत्तर-कमेण चोद्दसण्हं ओगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तावे सुहुम-तेउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक खण्ड-प्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। उस समय सूक्ष्म-वायुकायिक(२६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना होती है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चौदह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक बढ़ता जाता है। उस समय सूक्ष्म तेजस्कायिक(२७) निर्वृत्ति-अपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण पण्णारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तावे सुहुम-तेउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स ओगाहण-वियप्पं वच्चदि, ण उक्कस्सोगाहणं पत्तघादो। तदो पदेसुत्तर-कमेण चोद्दसण्हं ओगाहण-वियप्पं वच्चदि। केत्तियमेत्तेण ? सुहुम-वाउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा रूऊणावलियाए असंखेज्जदि - भागेण गुणिदं तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तावे सुहुम - तेउकाइय - णिव्वत्ति पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक पन्द्रह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है। उस समय सूक्ष्मतेजस्कायिक(२८)-लब्ध्यपर्याप्तककी अवगाहनाका विकल्प विश्रान्त हो जाता है, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त हो चुका है। तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चौदह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। कितने मात्रसे ? सूक्ष्मवायुकायिक-निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित इसके योग्य असंख्यात प्रदेश कम (उस)के ऊपर वृद्धिके होने तक। तब सूक्ष्मतेजस्कायिक(२९)-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण पण्णारसण्हं जीवाणं जहण्णोगाहण-वियप्पं गच्छदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेय-खंडं वड्ढिदो त्ति । तावे सुहुम-तेउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पन्द्रह जीवोंकी अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागप्रमाण वृद्धिको प्राप्त न हो जावे । उस समय सूक्ष्म - तेजस्कायिक(३०) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण चोद्दसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए संखेज्जदि-भागेण खंडिदेय-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तावे सुहुम-तेउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ । एतियमेत्ताणि चेव तेउकाइय जीवस्स ओगाहण-वियप्पा । कुदो ? लद्धुक्कस्सोगाहण-वियप्पं पत्तं ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र (इस)के ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो जावे, तब सूक्ष्म-तेजस्कायिक(३१) निर्वृत्ति पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । इतने मात्र ही तेजस्कायिक जीवकी अवगाहनाके विकल्प हैं, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त हो चुका है ।

तावे पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पा-ओग्ग असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तावे सुहुम-आउकाइय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—इसके पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक कि उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि न हो चुके, तब फिर सूक्ष्म-अप्कायिक(३२)-निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।

तदो पदेसुत्तर-कमेण चोद्दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पा-ओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताहे सुहुम-आउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्क-स्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। इस समय सूक्ष्म-जलकायिक(३३) लब्ध्य-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि। केत्तिय-मेत्तेण ? सुहुम-तेउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तुक्कस्सोगाहणं रूऊणावलियाए असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। कितने मात्रसे ? सूक्ष्मतेजस्कायिक निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र पुनः उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंसे रहित इसके ऊपर वृद्धि होने तक। तब सूक्ष्मजलकायिक(३४)-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण चोद्दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा[1] आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेग-खंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-आउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चौदह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। तब सूक्ष्म-जलकायिक(३५)-निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेग-खंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि। एत्तियमेत्ता आउकाइय-जीवाणं ओगाहण-वियप्पा[2]। कुदो ? सव्वोक्कस्सोगाहणं पडिभागादो[3] ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। उस समय सूक्ष्मजलकायिक(३६)-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट

---

१. ब. ब. तदणंतरोगाहणा। २. द. ब. वियप्पं। ३. द. ब. क. ज. पत्तं तादो।

अवगाहना होती है। इतने मात्र ही जलकायिक जीवोंकी अवगाहनाके विकल्प हैं, क्योंकि सर्वोत्कृष्ट अवगाहना प्राप्त हो चुकी है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण बारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुम-पुढविकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे बारह-जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है। तब सूक्ष्मपृथिवीकायिक(२७)-निर्वृत्य-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पहुदि पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे सुहुम-पुढवि-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—यहाँसे आदि लेकर प्रदेशोत्तर-क्रमसे तेरह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब सूक्ष्म-पृथिवीकायिक(२८)-लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो[1] पदेसुत्तर - कमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि। केत्तियमेत्तेण ? सुहुम-आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं कऊणावलियाए असंखेज्जदिभागेण गुणिदमेत्तं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-पुढविकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प बढ़ता रहता है। कितने मात्रसे ? सूक्ष्म-जलकायिक-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र पुनः उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंसे कम उसके ऊपर वृद्धि होने तक। उस समय सूक्ष्म-पृथिवीकायिक(२९) निर्वृत्तिपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण तेरसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेय-खंडमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे सुहुम-पुढवि-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।।

---

१. ध. ४. ६. ३. ३१।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तेरह-जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है, जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो जाए। तब सूक्ष्म-पृथिवीकायिक(४०) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो[1] पदेसुत्तर-कमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-भागं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तदो सुहुम-पुढवि-काइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदोवरि सुहुम-पुढविकाइयस्स ओगाहण-वियप्पं णत्थि ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धि होने तक चलता रहता है। तत्पश्चात् सूक्ष्म-पृथिवीकायिक(४१)-निर्वृत्तिपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। इसके आगे सूक्ष्म-पृथिवीकायिकको अवगाहनाका विकल्प नहीं है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण एक्कारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-वायुकायिक(४२) निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण बारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-आउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक बढ़ता रहता है। उस समय बादर वायुकायिक(४३) लब्ध्यपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

---

१. ब. तदो।

तदो पदेसुत्तर-कमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि । तं केत्तिय-मेत्तेण ? इदि उत्ते सुहुम-पुढविकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा रूऊण-पलिदोवमसंखेज्जदि-भागेण गुणिदं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तादे बादर - आउकाइय - णिव्वत्ति - पज्जत्तयस्स जहण्णिया ओगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता रहता है। यह कितने मात्रसे ? इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि सूक्ष्म-पृथिवीकायिक निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाके एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन उसके ऊपर वृद्धि होने तक। उस समय बादर वायुकायिक(४४) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण बारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडियमेत्तं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तादे बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे बारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक कि तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित मात्र इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है। तब बादर वायुकायिक(४५) निर्वृत्य पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तादे बादर-आउकाइय-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ । तदुवरि तस्स ओगाहण-वियप्पा णत्थि, सव्वुक्कस्सं पत्तत्तादो ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है, जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त होती है। तब बादर वायुकायिक(४६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है।

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पा-ओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तादे बादर - तेउकाइय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर तेजस्कायिक(४७)-निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण-एक्कारसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्जदि-पदेसं वड्ढिदो[1] त्ति। तादे बादर-तेउकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-तेजस्कायिक(४८)-लब्ध्य-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिय पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-तेउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक बादर वायुकायिक-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करके पुनः इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित उसके ऊपर वृद्धि होती है। तब बादर-तेजस्कायिक(४९) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण एक्कारसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-तेउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे ग्यारह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धि न हो जावे। तब बादर-तेजस्कायिक(५०) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

---

१. ब. ब. वड्ढिदि।

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तदेगभागं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे[1] बादर-तेउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। [तदुवरि तस्स ओगाहण-वियप्पं णत्थि, उक्कस्सोगाहणं पत्तत्तादो।]

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहनाको आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धि हो चुकती है। तब बादर-तेजस्कायिक(५१) निर्वृत्ति-पर्याप्तकको उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। [इसके आगे उसकी अवगाहनाके विकल्प नहीं हैं, क्योंकि वह उत्कृष्ट अवगाहनाको प्राप्त कर चुका है।]

तदो पदेसुत्तर - कमेण णवण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। इस समय बादर अप्कायिक(५२)-निर्वृत्य-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पा-ओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-आउ-लद्धि-अपज्जत्तयस्स[2] उक्कस्सो-गाहणा दीसइ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-अप्कायिक(५३) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण णवण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि रूऊण-पलिदोव-मस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिद-तेउकाइय-णिव्वत्ति पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। तादे बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ॥

---

१. ब. ब. क. ब. तादे। २. द. ब. पज्जत्तयस्स।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणित तेजस्कायिक निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे होन इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती। तब बादर जलकायिक(५४) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादर-आउकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यात भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती। तब बादर जलकायिक(५५) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि भागेण खंडिदेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति। ताधे बादर आउकाइय - णिव्वत्ति - पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ। तदोवरि णत्थि एदस्स ओगाहण-वियप्पं ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भाग प्रमाण इसके ऊपर नहीं बढ़ जाती। तब बादर जलकायिक(५६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। इसके आगे उसकी अवगाहनाके विकल्प नहीं हैं ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो[1] त्ति। ताधे बादर-पुढविकाइय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-पृथिवीकायिक(५७) निर्वृत्यपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

---

१. द. ब. क. ज. वड्ढदि।

तदो पदेसुत्तर - कमेण अवरुद्धं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-पुढविकाइय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प इसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर पृथिवीकायिक(५८) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि । बादर आउकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं कमेण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागेण गुणिदमेत्तं तप्पाओग्ग असंखेज्ज-पदेसं परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर पुढविकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक बादर जलकायिक-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम पल्योपम के असंख्यातवें भागसे गुणितमात्र उसके योग्य असंख्यातप्रदेशोंसे रहित उसके ऊपर वृद्धि होती है। तब बादर पृथिवीकायिक(५९) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण अवरुद्धं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-पुढवि-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहण दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है, जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो चुके। तब बादर-पृथिवीकायिक(६०)-निर्वृत्ति-अपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणा आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण-खंडिदेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-पुढवि काइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—तब प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करके उसमेंसे एक खण्ड प्रमाण

उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती। तब बादर-पृथिवीकायिक(६१) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-णिगोद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-निगोद(६२) निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-णिगोद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर निगोद(६३) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि एक्कम-पलिदोव-मस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिद-बादर-पुढविकाइय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर - णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक एक कम पल्योपम असंख्यातवें भागसे गुणित बादर-पृथिवीकायिक-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे हीन होकर इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती। तब बादर निगोद(६४)-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि - भागेण खंडिदेग - खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-णिगोद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प चलता है। जब तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित एक भागमात्र उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त हो जाती है तब बादर-निगोद(६५) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं बच्चदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक भाग प्रमाण इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त न हो जावे । तब बादर-निगोद(६६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण छण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब बादर-निगोद(६७)प्रतिष्ठित-निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है । तब बादर-निगोद (६८) प्रतिष्ठित लब्ध्यपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण छण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि बादर-णिगोद-णिव्वत्ति-पज्जत्त-उक्कस्सोगाहणं रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि - भागेण वुड्ढिय पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसेणूणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक बादर-निगोद-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे वृद्धिंत होकर पुनः उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंसे रहित इसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती है । तब बादर-निगोद(६९) प्रतिष्ठित-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिदेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित करनेपर एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो चुकती । तब बादरनिगोद(७०) प्रतिष्ठित-निर्वृत्य-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण छण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं आवलियाए असंखेज्जदि-भागेण खंडिय तत्थेग-खंडं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चालू रहता है जब तक तदनन्तर अवगाहना आवलीके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक भाग प्रमाण उसके ऊपर वृद्धिको प्राप्त नहीं हो जाती । तब बादरनिगोद(७१) प्रतिष्ठित-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर - कमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पो वड्ढदि तप्पा-ओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेयसरीर-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा होदि ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब बादर-वनस्पतिकायिक(७२)-प्रत्येकशरीर-निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण छण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । ताधे बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेय-सरीर-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्क-स्सोगाहणा होदि ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है । तब बादर वनस्पतिकायिक (७३) प्रत्येकशरीर लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि एक्क-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि - भागेण गुणिद-बादर-णिगोद-पदिट्ठिद-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स

उक्कस्सोगाहणं पुणो तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेस-परिहीणं तदुवरि वड्ढिदो त्ति । तदे बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेयसरीर-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं होदि ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता रहता है जब तक बादर-निगोद-प्रतिष्ठित-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करके पुनः उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंसे रहित उसके ऊपर वृद्धि नहीं हो जाती। तब बादर-वनस्पतिकायिक(७४) प्रत्येकशरीर-निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण छण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तावे बीइंदिय - लद्धि - अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात-प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब दो-इन्द्रिय(७५) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण पंचण्हं जीवाणं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तावे तीइंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब तीन-इन्द्रिय(७६) लब्ध्य-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण चउण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तावे चउरिंदिय-लद्धि-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा होदि ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब चार-इन्द्रिय(७७) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण तिण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं[1] वड्ढिदो त्ति । तावे पंचिंदिय - लद्धि - अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा

---

१. द. ब. क. पदेस पंचवड्ढिदो ।

होदूण । तदो एवमवि घणंगुलस्स असंखेज्जदि[1]-भागो । एत्तो उवरि ओगाहणा घणंगुलस्स संखेज्ज - भागो कत्थ वि घणंगुलो, कत्थ वि संखेज्ज - घणंगुलो त्ति घेत्तव्वं ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चालू रहता है। तब पंचेन्द्रिय(७८) लब्ध्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। तब यह भी घनांगुलके असंख्यातवें भागसे है। इससे आगे अवगाहना घनांगुलके संख्यातवें भाग, कहीं पर घनांगुल प्रमाण और कहींपर संख्यात घनांगुल-प्रमाण ग्रहण करनी चाहिए ।।

तदो एदेसुत्तर - कमेण दोण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तादे तीइंदिय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा होदि ।।

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दो जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता रहता है। तब तीनइन्द्रिय(७९) इन्द्रिय निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो एदेसुत्तर-कमेण तिण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तादे चउरिंदिय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा होदि ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है। तब चार-इन्द्रिय(८०) निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो एदेसुत्तर - कमेण चउण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वड्ढदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति । तादे पंचिंदिय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा होदि ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है। तब पंचेन्द्रिय(८१) निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

---

१. द ब. असंखेज्जदिभागेण ।

तदो पदेसुत्तर - कमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहण - वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज-पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे पंचेंदिय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ - पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है। तब पंचेन्द्रिय(८२) निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण छण्णं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तप्पाओग्ग-असंखेज्ज पदेसं वड्ढिदो त्ति। तादे बीइंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—तत्पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प उसके योग्य असंख्यात प्रदेशोंकी वृद्धि होने तक चलता है। तब दो इन्द्रिय(८३) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

ताव एदाणं गुणगार-रूवं विचारेमो-बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेयसरीर-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहण-पहुदि बीइंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्त-जहण्णोगाहणमवसाणं जाव एदस्मिं अंतराले[1] जादाणं सव्वाणं मिलिदे किंसिया इदि उत्ते बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेयसरीर-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणं रूऊण-पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागेण गुणिदमेत्तं तहुवरि वड्ढिदो त्ति घेत्तव्वं। तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं तप्पाओग्ग-संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। तादे तीइंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स सव्व-जहण्णोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—अब इनको गुणकार संख्याका विचार करते हैं—बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक-शरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी जघन्य अवगाहनाको लेकर दोइन्द्रिय निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना तक इनके अन्तरालमें उत्पन्न सबके सम्मिलित करनेपर 'कितनी है' इसप्रकार पूछने पर बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहनाको एक कम पल्योपमके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उतनी इसके ऊपर वृद्धि होती है, इसप्रकार ग्रहण करना चाहिए। पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना उसके योग्य संख्यातगुणी प्राप्त न हो जावे। तब तीन इन्द्रिय (८४) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी सर्व जघन्य अवगाहना दिखती है ॥

---

१. द. ब. क. ज. अन्तराणो।

तदो पदेसुत्तर-कमेण अट्ठण्हं ओगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहण - वियप्पं तप्पाओग्ग-संखेज्ज गुणं पत्तो[1] त्ति । तादे चउरिंदिय - णिव्वत्ति - पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तब तक चलता है जब तक तदनन्तर अवगाहना-विकल्प उसके योग्य संख्यात-गुणा प्राप्त न हो जावे। तब चार इन्द्रिय (८५) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर - कमेण णवण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति । तादे पंचेंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स जहण्णोगाहणा दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। तब पंचेन्द्रिय(८६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी जघन्य अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण दसण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। तादे तीइंदिय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दस जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। तब तीनइन्द्रिय(८७) निर्वृत्यपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण णवण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज - गुणं पत्तो त्ति। तादे चउरिंदिय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे नौ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता है। तब चारइन्द्रिय(८८) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ।।

तदो पदेसुत्तर-कमेण अट्ठण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज - गुणं पत्तो त्ति। तादे बेइंदिय - णिव्वत्ति - अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ।।

---

१. द. ब. क. ज. पज्जत्तो ।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे आठ जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यात-गुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। तब तीइन्द्रिय(८९) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण सत्तण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। तादे बादर वणप्फदिकाइय-पत्तेयसरीर-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स[1] उक्कस्सोगाहणा दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे सात जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता है। तब बादर-वनस्पतिकायिक(९०) प्रत्येकशरीर निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

तदो पदेसुत्तर-कमेण छण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। तादे पंचेंदिय-णिव्वत्ति-अपज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे छह जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यात-गुणी प्राप्त होने तक चलता है। तब पंचेन्द्रिय(९१) निर्वृत्यपर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है ॥

त्रीन्द्रिय जीव (गोम्ही) की उत्कृष्ट अवगाहना—

तदो पदेसुत्तर-कमेण पंचण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वच्चदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। [तादे तीइंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं दीसइ।] तं [2]कस्स होदि त्ति भणिदे तीइंदियस्स-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणा वट्टमाणस्स सव्वपहाचल-परभाग-ट्ठिय-खेत्तं उप्पण्ण-गोहीए उक्कस्सोगाहणं कस्सइ जीवस्स दीसइ। तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेह-जोयणस्स तिण्णि-चउब्भागो आयामो [3]तदद्ध-भागो विक्खंभो विक्खंभद्ध[4]-बहलं। एवे तिण्णि वि परोप्परं गुणिय पमाण-घणंगुले कदे [5]एक्क-कोडि-उणणउदि-सदसत्त[6]-सेढीण-सहस्स-णव-सय-छत्तीस कदेहिं गुणिदे - घणंगुला होंति। ६। ११९४३९३६।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पाँच जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यात-गुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। [तब तीनइन्द्रिय(९२) निर्वृत्ति-

---

१. द. ब. पज्जत्तयस्स। २. ब. द. क. ज. अंतं-उक्कस्स। ३. द. ब. क. ज. तदद्धभागो। ४. द. ब. क. विक्खंभद्ध। ५. द. क. एक्कस्सकोडीए, ब. एक्केकोडीए, ज. एक्कोकोडी। ६. द. ब. सत्तसा।

पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है।] यह अवगाहना किस जीवके होती है ? ऐसा पूछने पर उत्तर देते हैं कि स्वयम्प्रभाचलके बाह्य भागमें स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न और उत्कृष्ट अवगाहनामें वर्तमान किसी गोम्हीके वह उत्कृष्ट अवगाहना होती है, यह उत्तर है। वह कितने प्रमाण है ? इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि उसका एक उत्सेध योजनके चार भागोंमेंसे तीन भाग प्रमाण आयाम, इसके आठवें भाग प्रमाण विस्तार और विस्तारसे आधा बाहल्य है। इन तीनोंका परस्पर गुणा करके प्रमाण घनांगुल करनेपर एक करोड़ उन्नीस लाख तैंतालीस हजार नौ सौ छत्तीस रूपोंसे गुणित घनांगुल होते हैं।

विशेषार्थ—असंख्यात द्वीपोंमें स्वयम्भूरमण अन्तिम द्वीप है, इस द्वीपके बलयव्यासके बीचों-बीच एक स्वयम्प्रभ नामक पर्वत है। इस पर्वतके बाह्य भागमें कर्मभूमिकी रचना है। उत्कृष्ट अवगाहना वाले दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय और चार इन्द्रिय (त्रस) जीव वहीं पाये जाते हैं। यहाँ स्थित चौइन्द्रिय जीव गोम्ही (चींटी) का व्यास उत्सेध (व्यवहार) योजनसे $\frac{1}{2}$ योजन (६ मील), लम्बाई $\frac{1}{2}$ योजन ($\frac{3}{4}$ मील) और ऊँचाई $\frac{1}{2}$ योजन ($\frac{3}{4}$ मील) है। जिसका घनफल ($\frac{1}{2}$ यो० × $\frac{1}{2}$ यो० × $\frac{1}{2}$ यो० =) $\frac{1}{8}$ उत्सेध घन योजन प्राप्त होता है।

अर्थात् एक योजनके ७६८००० अंगुल होते हैं तब $\frac{1}{8}$ घन योजनके कितने अंगुल होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{1}{8} \times ७६८००० \times ७६८००० \times ७६८०००$ घनांगुल होते हैं। ये उत्सेध घनांगुल हैं। ५०० उत्सेध घनांगुलोंका एक प्रमाणांगुल होता है अतः उपर्युक्त उत्सेधांगुलोंके प्रमाणांगुल बनाने हेतु उन्हें ५०० के घनसे भाजित करनेपर $\frac{७६८००० \times ७६८००० \times ७६८०००}{५०० \times ५०० \times ५००}$ = ३६२३८७८६२६ होते हैं। इनका गोम्हीके शरीरके $\frac{1}{8}$ उत्सेध घन योजनोंमें गुणा कर देनेपर ($\frac{1}{8} \times ३६२३८७८६२६ =$) सवयात घनांगुल (६) प्राप्त होते हैं। यहाँ घनांगुलका चिन्ह ६ है।

अथवा—$\frac{1}{8} \times ३६२३८७८६२६ = ११९४३९२६$ प्रमाण घनांगुल गोम्हीकी अवगाहनाका घनफल है।

चतुरिन्द्रिय जीव (भ्रमर) की उत्कृष्ट अवगाहना—

तदो पदेसुत्तर-कमेण चदुण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढावि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं कस्सो त्ति। तादे चउरिंदिय-भिंभलि-पज्जत्तयस्स-उक्कस्सोगाहणं होदूण। तं कस्स होदि त्ति भणिदे सयंपहाचल-परभाग-ट्ठिय-खेत्ते उप्पण्ण-भमरस्स उक्कस्सोगाहणं कस्सइ होदूण। तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेह-जोयणायामं अद्धं जोयणुस्सेहं जोयणद्ध-परिहि-विक्खंभं ठविय विक्खंभद्धमुस्सेह-गुणमायामेण गुणिदे उस्सेह - जोयणस्स तिण्णि

अट्ठभागा हवंति । तं चेदं ३ । ते पमाण-घणंगुला कीरमाणे एक्कसय[1]-पंचतीस-कोडीए तह्यसउदि-लक्ख-सत्ताणव-सहस्स-चउ-सय-छण्णउदि-रूवेहिं गुणिद - घणंगुलाणि हवंति । तं चेदं । ६ । १३५८९५४४९६ ।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे चार जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यात-गुणी होने तक चलता रहता है। तब चारइन्द्रिय(९३) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह किस जीवके होती है, इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयम्प्रभाचलके बाह्य भागस्थ क्षेत्रमें उत्पन्न किसी भ्रमरके उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह कितने मात्र है, इसप्रकार कहने पर उत्तर देते हैं कि उत्सेध योजनसे एक योजन प्रमाण आयाम, आधा योजन ऊँचाई और अर्ध योजनकी परिधि प्रमाण विष्कम्भ को रखकर विष्कम्भके आधेको ऊँचाईसे गुणा करके फिर आयामसे गुणा करनेपर एक उत्सेध योजनके आठ भागोंमेंसे तीन भाग होते हैं। इनके प्रमाणांगुल करनेपर एक सौ पैंतीस करोड़ नवासी लाख चौपन हजार चारसौ छयानवें रूपोंसे गुणित घनांगुल होते हैं। वह इसप्रकार है। ६ । १३५८९५४४९६ ।

विशेषार्थ—चतुरिन्द्रिय जीव भ्रमरके शरीरकी अवगाहनाका प्रमाण उत्सेध योजनोंसे १ योजन लम्बा, ½ योजन ऊँचा और (½ × ½ =) ¼ योजन चौड़ा है। उपर्युक्त कथनानुसार अर्ध योजन ऊँचाईकी परिधि (½ यो०) के प्रमाण स्वरूप विष्कम्भके अर्धभाग (½ ÷ २) = ¼ यो० को ऊँचाई और आयामसे गुणित करनेपर उत्सेध योजनोंमें (½ × ¼ × १ =) ⅛ घन यो० घनफल प्राप्त होता है। इसके प्रमाणांगुल बनानेके लिए = ($\frac{७६८००० \times ७६८००० \times ७६८०००}{५०० \times ५०० \times ५००}$ =) ३६२३८७८६५६ से गुणा करना चाहिए। यथा — ⅛ × ३६२३८७८६५६ = संख्यात घनांगुल (६) अथवा १३५८९५४४९६ घनांगुल भ्रमरकी अवगाहनाका घनफल है।

द्वीन्द्रिय जीव (शंख) की उत्कृष्ट अवगाहना—

तदो पदेसुत्तर-कमेण तिण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं बच्चदि तक्कंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति । [2]ताहे बीइंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं होइ । तं कम्हि होइ त्ति भणिदे सयंपहाचल-परभाग-ट्ठिद-खेत्ते उप्पण्ण - बीइंदियस्स (संखस्स) उक्कस्सोगाहणा कस्सइ दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते बारस-जोयणायाम-चउ-जोयण-बहल्ल-खेत्तफलं—

---

१. ब क. एक्कसयपंचतीसकोडीए, ब. क. एक्कसयमंचतीसेद य । २. ब. क. ताधे ।

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे तीन जीवोंकी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यात-गुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है। तब दोइन्द्रिय(९४) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना होती है। यह कहाँ होती है ? इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयम्प्रभाचलके बाह्य भागमें स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी दोइन्द्रिय (शंख) की उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह कितने प्रमाण है ? ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि बारह योजन लम्बे और चार योजन मुखवाले (शंखका) क्षेत्रफल—

व्यासं[1] तावत् कृत्वा, वदन-वलोनं मुखार्ध-वर्ग-युतम् ।
त्रिगुणं चतुर्विभक्तं, सनाभिकेऽस्मिन् गणितमाहुः ॥३२१॥

एवेण सुत्तेण खेत्तफलमाणिदे [2]तेहत्तरि-उस्सेह-जोयणाणि हवंति ॥७३॥

अर्थ—विस्तारको उतनी बार करके अर्थात् विस्तारको विस्तारसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसमेंसे मुखके आधे प्रमाणको कम करके शेषमें मुखके आधे प्रमाणके वर्गको जोड़ देनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसे दूना करके चारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उसे शंखक्षेत्रका गणित कहते हैं ॥३२१॥

इस सूत्रसे क्षेत्रफलके लानेपर तिहत्तर (७३) उत्सेध वर्ग योजन होते हैं।

विशेषार्थ—शंखका आयाम १२ योजन और मुख ४ यो० प्रमाण है। क्षेत्रफल प्राप्त करने हेतु गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{शंखका क्षेत्र०} = \frac{२ \times [\ (\text{आयाम} \times \text{आ०}) - (\text{मुख व्यास} \div २) + (\text{अर्ध मुख व्यास}^२)\ ]}{४}$$

यथा—

$$\text{शंखका क्षेत्रफल} = \frac{२ \times [\ (१२ \times १२) - (४ \div २) + (२ \times २)\ ]}{४}$$

$$= \frac{२ [\ १४४ - २ + ४\ ]}{४} = ७३ \text{ वर्ग योजन।}$$

शंखका बाहल्य—

आयामे मुह-सोहिय, पुणरवि आयाम-सहिद-मुह-भजिदं ।
बाहल्लं णायव्वं, संखायारट्ठिए खेत्ते ॥३२२॥

---

१. यह श्लोक संस्कृतमें है किन्तु इस पर भी गाथा सं० दिया गया है।
२ ब. म. तेहत्तर।

एवेण सुत्तेण बाहल्ले आणिदे पंच-जोयण-पमाणं होदि ।५।

अर्थ—आयाममेंसे मुख कम करके शेषमें फिर आयामको मिलाकर मुखका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना शंखके आकारसे स्थित क्षेत्रका बाहल्य जानना चाहिए ।।३२२।।

इस सूत्र बाहल्यको लानेपर उसका प्रमाण पाँच योजन होता है ।

विशेषार्थ—गाथानुसार सूत्र इसप्रकार है—

$$\text{शंखका बाहल्य} = \frac{(\text{आयाम} - \text{मुख})}{\text{मुख}} + \text{आयाम}$$

$$= \frac{(१२-४)}{४} + १२ = ५ \text{ यो० बाहल्य ।}$$

पुव्वमाणीद-तेहत्तरि-वग्ग-खेत्तफलं पंच-जोयण-बाहल्लेण गुणिदे तिण्ण-जोयणा तिण्णि-सय-पण्णट्ठी होंति । ३६५ । एवं घण-पमाणंगुलाणि कदे एक्क-लक्ख-बत्तीस-सहस्स दोण्णि-सय-एक्कहत्तरी-कोडीओ सत्तावण्ण - लक्ख णव-सहस्स-चउ-सय-चालीस-रूवेहि गुणिद-घणंगुलमेदं होदि । तं चेदं । ६ । १३२२७१५७०९४४० ।।

अर्थ—पूर्वमें लाये हुए तिहत्तर वर्ग योजन प्रमाण क्षेत्रफलको पाँच योजन प्रमाण बाहल्यसे गुणा करनेपर तीनसौ पैंसठ (३६५) घन योजन होते हैं । इसके घन-प्रमाणांगुल करनेपर एक लाख बत्तीस हजार दोसौ इकहत्तर करोड़ सत्तावन लाख नौ हजार चार सौ चालीस (१३२२७१५७०९४४०) रूपोंसे गुणित घनांगुलप्रमाण होता है ।।

विशेषार्थ—पूर्वोक्त ७३ उत्सेध वर्ग योजनोंको ५ योजन बाहल्यसे गुणित कर देनेपर (७३ × ५ =) ३६५ उत्सेध घन योजन प्राप्त होते हैं । इनके प्रमाणांगुल बनानेके लिए $\frac{७६८०००\times७६८०००\times७६८०००}{५००\times५००\times५००}$ का गुणा करना चाहिए यथा—

३६५ × ३६२३८७८६५६ = १३२२७१५७०९४४० घनांगुल शंखकी अवगाहनाका घनफल है ।

बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर निर्वृत्ति-पर्याप्तक (कमल) की
उत्कृष्ट अवगाहना—

तदो पदेसुत्तर - कमेण दोण्हं मज्झिमोगाहण-वियप्पं वड्ढदि तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं जत्तो त्ति । ताधे बादर-वणप्फदिकाइय-पत्तेय-सरीर-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स

उक्कस्सोगाहणं दीसइ । कम्हि खेत्ते कस्स वि जीवस्स कम्मि ओगाहणे बहुमाणस्स होदि त्ति भणिदे सयंपहाचल-परभाग-ट्ठिद-खेत्त-उप्पण्ण-पउमस्स उक्कस्सोगाहणा कस्सइ दीसइ । तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेह-जोयणेण कोसाहिय-एक्क-सहस्सं उस्सेहं एक्क-जोयण-बहलं समवट्टं । तं पमाणं जोयण-फल ७५० । को १ । घणंगुले कदे दोण्णि-लक्ख-एक्कहत्तरि-सहस्स-अट्ठसय-अट्ठावण्ण-कोडि-चउरासीदि-लक्ख-ऊणहत्तरि - सहस्स-दु-सय-अट्ठसाल-रूवेहि गुणिद-पमाणंगुलाणि होदि । तं चेदं ॥१।६।२७१८५८८४६९२४८ ॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे दो जीवोंकी मध्यम-अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणी प्राप्त होने तक चलता रहता है । तब बादर-वनस्पतिकायिक(९५) प्रत्येक शरीर निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । किस क्षेत्र और कौनसी अवगाहनामें वर्तमान किस जीवके यह उत्कृष्ट अवगाहना होती है, इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयम्प्रभाचलके बाह्य भागमें स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी पद्म (कमल) के उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है । वह कितने प्रमाण है ? इसप्रकार पूछनेपर उत्तर देते हैं कि उत्सेध योजनसे एक कोस अधिक एक हजार योजन ऊँचा और एक योजन मोटा समवृत्त कमल है । उसकी इस अवगाहनाका घनफल योजनोंमें सातसो पचास योजन और एक कोस प्रमाण है । इसके प्रमाण-घनांगुल करनेपर दो लाख इकहत्तर-हजार आठ सौ अट्ठावन करोड़ चौरासी लाख उनहत्तर हजार दो सौ अड़तालीस (२७१८५८८४६९२४८) रूपोंसे गुणित प्रमाण-घनांगुल होते हैं ॥

विशेषार्थ—कमलकी ऊँचाई १०००½ योजन और बाहल्य १ योजन है ।

वासो तिगुणो परिही, वास-चउत्था-हदो दु खेत्तफलं ।
खेत्तफलं वेह - गुणं, खातफलं होइ सव्वत्थ ॥

इस गाथानुसार घनफल प्राप्त करनेका सूत्र एवं घनफलका प्रमाण इसप्रकार है—

कमलका घनफल = $\left(\text{व्यास} \times 3 \times \frac{\text{व्यास}}{4} \times \text{ऊँचाई} \right)$

यथा—

$= \frac{1 \times 3 \times 1}{4} \times \frac{4001}{4} = \frac{12003}{16}$ या $750\frac{3}{16}$ घन योजन ।

इन $750\frac{3}{16}$ उत्सेध घन योजनोंके प्रमाणांगुल बनानेके लिये इनमें $\frac{76800000 \times 76800000 \times 76800000}{500 \times 500 \times 500}$ का गुणा करना चाहिए । यथा—

७५०$\frac{1}{2}$ या $\frac{1500^3}{2}$ × ३६२३८७८६५६ = २७१९५८८४६९२४८ घनांगुल कमल की अवगाहनाका घनफल है।

पंचेन्द्रिय जीव (महामत्स्य) की सर्वोत्कृष्ट अवगाहना—

तदो पदेसुत्तर - कमेण पंचेंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स मज्झिमोगाहण-वियप्पं बच्चदि जाव तदणंतरोगाहणं संखेज्ज-गुणं पत्तो त्ति। [ताव पंचेंदिय-णिव्वत्ति-पज्जत्तयस्स उक्कस्सोगाहणं वीसइ।] तं कम्मि खेत्ते कस्स जीवस्स होदि त्ति उत्ते सयंपहाचल-परभागट्ठिए खेत्ते उप्पण्ण-संमुच्छिम-महामच्छस्स सव्वोक्कस्सोगाहणं कस्सइ वीसइ। तं केत्तिया इदि उत्ते उस्सेह-जोयणेण एक्क-सहस्सायामं पंच-सय-विक्खंभं तद्दल-उस्सेहं। तं पमाणंगुले कीरमाणे चउ-सहस्स-पंच-सय-एऊणतीस-कोडीओ चुलसीदि-लक्ख-तेसीदि-सहस्स - दु - सय - कोडि - रूवेहि गुणिद - पमाण - घणंगुलाणि हवंति। तं चेदं। ६। ४५२९८४८३२०००००००००० ॥

। एवं ओगाहण-वियप्पं समत्तं ॥१६॥

अर्थ—पश्चात् प्रदेशोत्तर-क्रमसे पंचेन्द्रिय निर्वृत्ति-पर्याप्तककी मध्यम अवगाहनाका विकल्प तदनन्तर अवगाहनाके संख्यातगुणे प्राप्त होने तक चलता है। [तब पंचेन्द्रिय(९६) निर्वृत्ति-पर्याप्तककी उत्कृष्ट अवगाहना दिखती है।] यह अवगाहना किस क्षेत्रमें और किस जीवके होती है? इसप्रकार पूछनेपर उत्तर देते हैं कि स्वयम्प्रभाचलके बाह्य-भाग स्थित क्षेत्रमें उत्पन्न किसी सम्मूर्छन महामत्स्यके सर्वोत्कृष्ट अवगाहना दिखती है। वह कितने प्रमाण है? इसप्रकार कहनेपर उत्तर देते हैं कि उसकी अवगाहना उत्सेध योजनसे एक हजार योजन लम्बी, पाँचसौ योजन विस्तारवाली और इससे आधी अर्थात् ढाई सौ योजन प्रमाण ऊँचाई वाली है। इसके प्रमाणांगुल करनेपर चार हजार पाँच सौ उनतीस करोड़ चौरासी लाख तेरासी हजार दो सौ करोड़ रूपोंसे गुणित प्रमाण-घनांगुल होते हैं।

विशेषार्थ—महामत्स्यकी लम्बाई १००० उत्सेध यो०, विस्तार ५०० उत्सेध यो० और ऊँचाई २५० उ० यो० है।

मत्स्यका घनफल = लम्बाई × विस्तार × ऊँचाई

= १००० यो० × ५०० यो० × २५० यो० = १२५००००००० उत्सेध घन योजन।

इन उत्सेध घनयोजनोंके प्रमाणांगुल बनानेके लिए $\frac{७६८००० \times ७६८००० \times ७६८०००}{५०० \times ५०० \times ५००}$ का गुणा करना चाहिए।

यथा— १२५००००००० × ३६२३८७८६५६ = ४५२९८४८३२०००००००००० घनांगुल महामत्स्यके शरीरकी अवगाहनाका घनफल है।

इसप्रकार अवगाहना-भेदोंका कथन समाप्त हुआ ॥१६॥

समस्त प्रकार के स्थावर एवं त्रस जीवोंकी

जघन्य अव० वाले सूक्ष्म लब्ध्यपर्याप्त जीव स्थान–५		जघन्य अवगाहना वाले सूक्ष्म-निर्वृत्यपर्याप्तक जीव स्थान–५		जघन्य अवगा० वाले सूक्ष्म निर्वृत्ति पर्याप्तक जीव स्थान–५		जघन्य अव० वाले बादर लब्ध्यपर्याप्त जीव स्थान–७	
१	निगोद	१७	निगोद	१९	निगोद	६	वायुकायिक
२	वायुकायिक	२२	वायुकायिक	२४	वायुकायिक	७	तेजस्कायिक
३	तेजस्कायिक	२७	तेजस्कायिक	२९	तेजस्कायिक	८	जलकायिक
४	जलकायिक	३२	जलकायिक	३४	जलकायिक	९	पृथिवीकायिक
५	पृथिवीकायिक	३७	पृथिवीकायिक	३९	पृथिवीकायिक	१०	निगोद
						११	निगोद प्रतिष्ठित
						१२	वनस्पति-प्रत्येक शरीर

जघन्य-उत्कृष्ट अवगाहनाका क्रम

जघन्य अवगाहना वाले बादर निर्वृत्य पर्याप्त जीव स्थान-७		जघन्य अव० वाले बादर निर्वृत्ति-पर्याप्तक जीव स्थान-७		जघन्य अव० वाले त्रस लब्ध्यपर्याप्त जीव स्थान-४		जघन्य अव० वाले त्रस निर्वृत्ति-अपर्याप्तक जीव स्थान-४		जघन्य अव० वाले त्रस निर्वृत्ति पर्याप्तक जीव स्थान-४	
४२	वायुकायिक	४४	वायुकायिक	१३	द्वीन्द्रिय	७९	तेइन्द्रिय	८३	द्वीन्द्रिय
४७	तेजस्कायिक	४९	तेजस्कायिक	१४	तेइन्द्रिय	८०	चतुरिन्द्रिय	८४	तेइन्द्रिय
५२	जलकायिक	५४	जलकायिक	१५	चतुरिन्द्रिय	८१	द्वीन्द्रिय	८५	चतुरिन्द्रिय
५७	पृथिवी-कायिक	५९	पृथिवीकायिक	१६	पंचेन्द्रिय	८२	पंचेन्द्रिय	८६	पंचेन्द्रिय
६२	निगोद	६४	निगोद						
६७	निगोद प्रतिष्ठित	६९	निगोद प्रतिष्ठित						
७२	वनस्पति प्रत्येक शरीर	७४	वनस्पति प्रत्येक शरीर						

उत्कृष्ट अव० वाले सूक्ष्म लब्ध्यपर्याप्तक जीव स्थान–५		उत्कृष्ट अव० वाले सूक्ष्म निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीव स्थान–५		उत्कृष्ट अव० वाले सूक्ष्म निर्वृत्ति पर्याप्तक जीव स्थान–५		उत्कृष्ट अव० वाले बादर लब्ध्यपर्या० जीव स्थान–७	
१८	निगोद	२०	निगोद	२१	निगोद	४३	वायुकायिक
२३	वायुकायिक	२५	वायुकायिक	२६	वायुकायिक	४८	तेजस्कायिक
२८	तेजस्कायिक	३०	तेजस्कायिक	३१	तेजस्कायिक	५३	जलकायिक
३३	जलकायिक	३५	जलकायिक	३६	जलकायिक	५८	पृथिवीकायिक
३८	पृथिवीकायिक	४०	पृथिवीकायिक	४१	पृथिवीकायिक	६३	निगोद
						६८	निगोद प्रति०
						७३	वनस्पति प्रत्येक शरीर

उत्कृष्ट अव० वाले बादर निर्वृत्ति-अपर्याप्तक जीव		उत्कृष्ट अव० वाले बादर निर्वृत्ति पर्याप्तक जीव		उत्कृष्ट अव० वाले त्रस लब्ध्यपर्याप्तक जीव		उत्कृष्ट अव० वाले निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीव		उत्कृष्ट अव० वाले निर्वृत्ति पर्याप्तक जीव	
स्थान-७		स्थान-७		स्थान-४		स्थान-४		स्थान-४	
४५	वायुकायिक	४६	वायुकायिक	७५	द्वीन्द्रिय	८७	तेइन्द्रिय	९२	तेइन्द्रिय
५०	तेजस्कायिक	५१	तेजस्कायिक	७६	तेइन्द्रिय	८८	चतुरिन्द्रिय	९३	चतुरिन्द्रिय
५५	जलकायिक	५६	जलकायिक	७७	चतुरिन्द्रिय	८९	द्वीन्द्रिय	९४	द्वीन्द्रिय
६०	पृथिवीकायिक	६१	पृथिवीकायिक	७८	पंचेन्द्रिय	९१	पंचेन्द्रिय	९६	पंचेन्द्रिय
६५	निगोद	६६	निगोद						
७०	निगोद प्रति०	७१	निगोद प्रति०						
९०	वनस्पति प्रत्येक शरीर	९५	वनस्पति प्रत्येक शरीर						

अधिकारान्त मङ्गल—

णं णाण[1]-रयण-दीवो, लोयालोय-प्पयासण-समत्थो ।
पणमामि पुप्फयंतं, सुमइकरं भव्व - संघस्स ॥३२३॥

एवमाइरिय-परंपरागय-तिलोयपण्णत्तीए तिरिय-लोय-सरूव-विण्णयण-पण्णत्तो णाम पंचमो महाहियारो समत्तो ॥५॥

अर्थ—जिनका ज्ञानरूपी रत्नदीपक लोक एवं अलोकको प्रकाशित करनेमें समर्थ है और जो भव्य-समूहको सुमति प्रदान करनेवाले हैं ऐसे पुष्पदन्त जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूँ ॥३२३॥

इसप्रकार आचार्य-परम्परागत त्रिलोक-प्रज्ञप्तिमें तिर्यग्लोक स्वरूप
निरूपण प्रज्ञप्ति नामक
पाँचवाँ महाधिकार
समाप्त हुआ ॥५॥



---

१. ब. क. ज. णाणरयण । ब. णरयण ।



तिलोयपण्णत्ती

छट्ठो महाहियारो

मङ्गलाचरण—

चोत्तीसादिसएहिं[1], विम्हय-जणणं सुरिंद-महणीणं ।
णमिऊण सीयल - जिणं, वेंतरलोयं णिरूवेमो ॥१॥

अर्थ—चौंतीस अतिशयोंसे देवेन्द्र आदिको आश्चर्य उत्पन्न करनेवाले शीतल जिनेन्द्रको नमस्कार करके व्यन्तरलोकका निरूपण करता हूँ ॥१॥

व्यन्तराधिकारोंका निरूपण—

वेंतर-णिवासखेत्तं, भेदा एदाण विविह-विण्हाणि ।
कुलभेदो आवासं, भेदविही दक्खिणुत्तरिंदाणं ॥२॥

आऊणि आहारो, उस्सासो ओहिणाण-सत्तीओ ।
उस्सेहो संखाणि, जम्मण-मरणाणि एक्क-समयम्मि ॥३॥

आउग-बंधण-भावो, वेंतर-गहणस्स कारणं विविहं ।
गुणठाणादि - विसेसा, सत्तरस हवंति अहियारा ॥४॥

[१७]

---

१. द. चउत्तीसा ।

अर्थ—व्यन्तर देवोंका निवास-क्षेत्र१, उनके भेद२, विविध चिन्ह३, कुलभेद४, नाम५, दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंके भेद६, आयु७, आहार८, उच्छ्वास९, अवधिज्ञान१०, शक्ति११, ऊँचाई१२, संख्या१३, एक समयमें जन्म-मरण१४, आयुके बन्धक भाव१५, सम्यक्त्वग्रहणके विविध कारण१६ और गुणस्थानादि-विकल्प१७, ये सत्तरह (अन्तर) अधिकार होते हैं ॥२-४॥

व्यन्तरदेवोंके निवासक्षेत्रका निरूपण—

रज्जु-कदी गुणिदव्वा, अवणउदि-सहस्स-अहिय-लक्खेणं ।
तम्मज्झे ति - वियप्पा, वेंतरदेवाण होंति पुरा ॥५॥

$\frac{रा}{वर्ग}$ । १९९०००।

अर्थ—राजूके वर्गको एक लाख निन्यानवें हजार (१९९०००) योजनसे गुणा करनेपर जो प्राप्त हो उसके मध्यमें व्यन्तर देवोंके तीन प्रकारके पुर होते हैं ॥५॥

विशेषार्थ—"जगसेढि-सत्त भागो रज्जू" इस गाथा-सूत्रानुसार जगच्छ्रेणीके सातवें भाग को राजू कहते हैं। संदृष्टिके $\frac{रा}{वर्ग}$ का अर्थ एक वर्ग राजू है। क्योंकि जगच्छ्रेणी (—) के वर्ग (▭) में ७ के वर्ग (४९) का भाग देने पर जो एक वर्ग राजू का प्रमाण प्राप्त होता है वही तिर्यग्लोकका विस्तार है अर्थात् तिर्यग्लोक एक राजू लम्बा और एक राजू चौड़ा (१ × १ = १ वर्ग राजू) है।

रत्नप्रभा पृथिवी १८०००० हजार योजन मोटी है। इसके तीन भाग हैं। अन्तिम अब्बहुल-भाग ८०,००० योजन मोटा है, जिसमें नारकियोंका वास है। अवशेष एक लाख योजन रहा। सुमेरु पर्वत एक लाख योजन ऊँचा है जिसमेंसे १००० यो० की उसकी नींव उपर्युक्त एक लाखमें गर्भित है अतः चित्रा पृथिवीके ऊपर मेरुकी ऊँचाई ९९ हजार योजन है। इसप्रकार पंकभागसे मेरुपर्वतकी पूर्ण ऊँचाई पर्यन्तका क्षेत्र (१८०००० + ९९००० =) १९९००० यो० होता है। इसीलिए गाथामें राजूके वर्ग को एक लाख निन्यानवें हजार योजनसे गुणा करने को कहा गया है।

व्यन्तर देवोंके निवास, भेद, उनके स्थान और प्रमाण आदिका निरूपण—

भवणं[1] भवणपुराणि, आवासा इय हवंति ति-वियप्पा[2] ।
जिण - मुहकमल - विणिग्गय-वेंतर-पण्णत्ति णामाए ॥६॥

रयणप्पह-पुढवीए, भवणाणि [3]बोल-उवहि-उवरिम्मि ।
भवणपुराणि दह - गिरि - पहुदीणं उवरि आवासा ॥७॥

---

१. द. ब. भवणि। २. द. ब. ज. तिविहप्पा। ३. द. बोलओहि।

अर्थ—जिनेन्द्र भगवान्‌के मुखरूपी कमलसे निकले हुए व्यन्तर-प्रज्ञप्ति नामक महाधिकारमें भवन, भवनपुर और आवास इसप्रकार तीन प्रकारके निवास कहे गये हैं। इनमेंसे रत्नप्रभा पृथिवीमें भवन, द्वीप-समुद्रोंके ऊपर भवनपुर और द्रह (तालाब) एवं पर्वतादिकोंके ऊपर आवास होते हैं ॥६-७॥

बारस-सहस्स-जोयण-परिमाणं होदि जेट्ठ-भवणाणं ।
पत्तेक्कं विक्खंभो, तिण्णि सयाणि च बहलत्तं ॥८॥

१२००० । ब ३०० ।

अर्थ—उत्कृष्ट भवनोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार बारह हजार (१२०००) योजन और बाहल्य तीनसौ (३००) योजन प्रमाण है ॥८॥

पणुवीस जोयणाणि, रुंद-पमाणं जहण्ण-भवणाणं ।
पत्तेक्कं बहलत्तं, ति - चउभाग - प्पमाणं च ॥९॥

अर्थ—जघन्य (लघु) भवनोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार पच्चीस योजन और बाहल्य एक योजनके चार भागोंमेंसे तीन भाग (¾ यो०) प्रमाण है ॥९॥

अहवा रुंद-पमाणं, पुह-पुह कोसा जहण्ण-भवणाणं ।
तव्वेदी उच्छेहो, कोदंडाणि पि पणुवीसं ॥१०॥

को १ । दं २५ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—अथवा जघन्य भवनोंके विस्तारका प्रमाण पृथक्-पृथक् एक कोस और उनकी वेदी की ऊँचाई पच्चीस (२५) धनुष प्रमाण है ॥१०॥

कूट एवं जिनेन्द्र भवनोंका निरूपण—

बहल-ति-भाग-पमाणा, कूडा भवणाण होंति बहुमज्झे ।
वेदी चउ - वण - तोरण - दुवार - पहुदीहि रमणिज्जा ॥११॥

अर्थ—भवनोंके बहुमध्य भागमें वेदी, चार वन और तोरण-द्वारादिकोंसे रमणीय ऐसे बाहल्यके तीसरे भाग [(३०० × ⅓) अर्थात् १०० योजन] प्रमाण ऊँचे कूट होते हैं ॥११॥

कूडाण उवरि भागे, जेट्ठ'ते जिणवरिंद-पासादा ।
कणयमया रयणमया, रयणमया विविह-विण्णासा ॥१२॥

अर्थ—इन कूटोंके उपरिम भागपर अनेक-प्रकारके विन्याससे संयुक्त सुवर्णमय, रजतमय और रत्नमय जिनेन्द्र-प्रासाद हैं ॥१२॥

भिंगार-कलस-दप्पण-धय-चामर-वियण-छत्त-सुपइट्ठा ।
इय अट्ठुत्तर - सय-वर - मंगल - जुत्ता य पत्तेक्कं ॥१३॥

अर्थ—प्रत्येक जिनेन्द्र प्रासाद झारी, कलश, दर्पण, ध्वजा, चंवर, बीजना, छत्र और ठौना, इन एक सौ आठ-एकसौ आठ उत्तम मंगल द्रव्योंसे संयुक्त है ॥१३॥

दुंदुहि-मयंग-मद्दल - जयघंटा - पडह - कंसतालाणं ।
वीणा - वंसाईणं, [1]सद्देहिं णिच्च - हलबोला ॥१४॥

अर्थ—(वे) जिनेन्द्र प्रासाद दुन्दुभी, मृदङ्ग, मर्दल, जयघण्टा, भेरी, झांझ, वीणा और बांसुरी आदि वादित्रोंके शब्दोंसे सदा मुखरित रहते हैं ॥१४॥

अकृत्रिम जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ एवं उनकी पूजा—

सिंहासणादि-सहिदा, चामर-कर-णाव-जक्ख-मिहुण-जुदा ।
तेसुं अकिट्टिमाओ, जिणिंद - पडिमाओ विरायंते ॥१५॥

अर्थ—उन जिनेन्द्र-भवनोंमें सिंहासनादि प्रातिहार्यों सहित और हाथमें चामर लिए हुए नागयक्ष देव-युगलोंसे संयुक्त अकृत्रिम जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ जयवन्त होती हैं ॥१५॥

कम्मक्खवण-णिमित्तं, णिब्भर-भत्तीय विविह-दव्वेहिं ।
सम्माइट्ठी देवा, जिणिंद - पडिमाओ पूजंति ॥१६॥

अर्थ—सम्यग्दृष्टि देव कर्मक्षयके निमित्त गाढ़ भक्तिसे विविध द्रव्यों द्वारा उन जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥१६॥

एदे कुलदेवा इय, मण्णंता देव - मोहण - वसेण ।
मिच्छाइट्ठी देवा, पूजंति जिणिंद - पडिमाओ ॥१७॥

अर्थ—अन्य देवोंके उपदेशवश मिथ्यादृष्टि देव भी 'ये कुलदेवता हैं' ऐसा मानकर उन जिनेन्द्र-प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥१७॥

---

१. ब, क, ज. सद्देहिं ।

व्यन्तर प्रासादों (भवनों) की अवस्थिति एवं उनकी संख्या—

एदाणं कूडाणं, समंतदो वंतराण पासादा ।
सत्तट्ठ-पहुदि-भूमी, विण्णास - विचित्त - संठाणा ॥१८॥

अर्थ—इन जिनेन्द्र कूटोंके चारों ओर व्यन्तरदेवोंके सात-आठ आदि भूमियोंके विन्यास और अद्भुत रचनाओं वाले प्रासाद हैं ॥१८॥

लंबंत-रयणमाला, वर-तोरण-रइय-सुंदर-दुवारा ।
णिम्मल-विचित्त-मणिमय-सयणासण-णिवह-परिपुण्णा ॥१९॥

अर्थ—ये प्रासाद लटकती हुई रत्नमालाओं सहित, उत्तम तोरणोंसे रचित सुन्दर द्वारों वाले हैं और निर्मल एवं अद्भुत मणिमय शय्याओं तथा आसनोंके समूहसे परिपूर्ण हैं ॥१९॥

एवं बिहु-लक्खाणि, तीस-सहस्साणि होंति भवणाणि ।
पुव्वोदिद-भवणामर - भवण - समं वण्णणं सयलं ॥२०॥

भवणा समत्ता ॥१॥

अर्थ—इसप्रकारके स्वरूपवाले ये प्रासाद तीस हजार (३००००) प्रमाण हैं। इनका सम्पूर्ण वर्णन पूर्वमें कहे हुए भवनवासी देवोंके भवनोंके सदृश है ॥२०॥

भवनोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

भवनपुरोंका निरूपण—

वट्टादि[1] - सरूवाणं, भवण - पुराणं हवेदि जेट्ठाणं ।
जोयण - लक्खं एंदो, जोयणमेक्कं जहण्णाणं ॥२१॥

१००००० जो. । १ ॥

अर्थ—वृत्तादि स्वरूपवाले उत्कृष्ट भवनपुरोंका विस्तार एक लाख (१०००००) योजन और जघन्य भवनपुरोंका विस्तार एक योजन प्रमाण है ॥२१॥

कूडा जिणिंद-भवणा, पासादा वेदिया मध-प्पहुदी ।
भवण - सरिच्छं सव्वं, भवणपुरेसुं पि वट्टव्वं ॥२२॥

भवणपुरं ।

---

१. ब. वट्टादि ।

अर्थ—कूट, जिनेन्द्र-भवन, प्रासाद, वेदिका और वन आदि सब (की स्थिति) भवनोंके सदृश ही भवनपुरोंमें भी जाननी चाहिए ॥२२॥

भवनपुरोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

आवासोंका निरूपण—

बारस-सहस्स-बे-सय-जोयण-वासा य जेट्ठ-आवासा ।
होंति जहण्णावासा, ति-कोस-परिमाण-वित्थारा ॥२३॥

जो १२२०० । को ३ ।

अर्थ—व्यन्तरदेवोंके ज्येष्ठ आवास बारह हजार दो सौ (१२२००) योजन प्रमाण और जघन्य आवास तीन (३) कोस प्रमाण विस्तारवाले हैं ॥२३॥

कूडा जिणिंद-भवणा पासादा वेदिया वण-प्पहुदी[1] ।
भवण - पुराण सरिच्छं, आवासाणं पि जाणेज्जा ॥२४॥

आवास समत्ता ।

णिवास-खेत्तं समत्तं ॥१॥

अर्थ—कूट, जिनेन्द्र-भवन, प्रासाद, वेदिका और वन आदि भवनपुरोंके सदृश ही आवासों के भी जानने चाहिए ॥२४॥

आवासोंका वर्णन समाप्त हुआ ।

इसप्रकार निवास क्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ॥१॥

व्यन्तरदेवोंके (कुल—) भेद एवं (कुल) भेदोंकी अपेक्षा भवनोंके प्रमाणका निरूपण—

किंणर-किंपुरुस-महोरगा य गंधव्व-जक्ख-रक्खसया ।
भूद - पिसाचा एवं, अट्ठ - विहा वेंतरा होंति ॥२५॥

अर्थ—किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच, इसप्रकार व्यन्तरदेव आठ प्रकारके होते हैं ॥२५॥

चोद्दस-सहस्स-मेत्ता, भवणा भूदाण रक्खसाणं पि ।
सोलस - सहस्स - संखा, सेसाणं संति भवणाणि ॥२६॥

१४००० । १६००० ।

वेंतरभेदा समत्ता ॥२॥

---

१. द. क. ज. पहुदि ।

अर्थ—भूतोंके चौदह हजार (१४०००) प्रमाण और राक्षसोंके सोलह हजार (१६०००) प्रमाण भवन हैं। शेष व्यन्तर देवोंके भवन नहीं होते हैं ॥२६॥

विशेषार्थ—रत्नप्रभा पृथिवीके खरभागमें भूत-व्यन्तरदेवोंके १४००० भवन हैं तथा पङ्क-भागमें राक्षसोंके १६००० भवन हैं। शेष किन्नरादि छह कुलोंके भवन नहीं होते हैं।

व्यन्तरदेवोंके भेदोंका कथन समाप्त हुआ ॥२॥

चैत्य-वृक्षोंका निर्देश—

किंणर-किंपुरुसादिय-वेंतर-देवाण अट्ठ - भेयाणं ।
ति-वियप्प-णिलय-पुरदो, चेत्त-दुमा होंति एक्केक्का ॥२७॥

अर्थ—किन्नर-किम्पुरुषादिक आठ प्रकारके व्यन्तर देवों सम्बन्धी तीनों प्रकारके (भवन, भवनपुर, आवास) भवनोंके सामने एक-एक चैत्य-वृक्ष है ॥२७॥

कमसो असोय-चंपय-णागद्दुम-तुंबुरू य जक्खोधो ।
कंटय - रुक्खो तुलसी, कदंब विडओ त्ति ते अट्ठ ॥२८॥

अर्थ—अशोक, चम्पक, नागद्रुम, तुम्बुरु, न्यग्रोध (वट) कण्टकवृक्ष, तुलसी और कदम्ब वृक्ष, इसप्रकार क्रमशः ये चैत्यवृक्ष आठ प्रकारके हैं ॥२८॥

ते सव्वे चेत्त-तरू, भावण-सुर-चेत्त-रुक्ख-सारिच्छा ।
जीवुप्पत्ति - लयाणं, हेदू पुढवी - सरूवा य ॥२९॥

अर्थ—ये सब चैत्यवृक्ष भवनवासी देवोंके चैत्यवृक्षोंके सदृश (पृथिवीकायिक) जीवोंकी उत्पत्ति एवं विनाशके कारण हैं और पृथिवीस्वरूप हैं ॥२९॥

विशेषार्थ—चैत्यवृक्ष अनादि-निधन हैं अतः उनका कभी उत्पत्ति या विनाश नहीं होता है किन्तु उनके आश्रित रहने वाले पृथिवीकायिक जीवों का अपनी-अपनी आयु के अनुसार जन्म-मरण होता रहता है। इसीलिये चैत्यवृक्षोंको जीवोंकी उत्पत्ति और विनाश का कारण कहा है।

जिनेन्द्र प्रतिमाओंका निरूपण—

मूलम्मि चउ-दिसासुं, चेत्त-तरूणं जिणिंद-पडिमाओ ।
चत्तारो चत्तारो, चउ - तोरण - सोहमाणाओ ॥३०॥

अर्थ—चैत्यवृक्षोंके मूलमें चारों ओर चार तोरणोंसे शोभायमान चार-चार जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ विराजमान हैं ॥३०॥

पल्लंक-आसणाओ, सपाडिहेराओ रयण-मइयाओ ।
वंसणमेत्त - णिवारिद - दुरिताओ देंतु वो मोक्खं ॥३१॥

चिन्हाणि समत्ताणि ॥३॥

अर्थ—पल्यङ्कासनसे स्थित, प्रातिहार्यों सहित और दर्शनमात्रसे ही पापको दूर करनेवाली ये रत्नमयी जिनेन्द्र-प्रतिमाएँ आप लोगोंको मोक्ष प्रदान करें ॥३१॥

इसप्रकार चिन्होंका कथन समाप्त हुआ ॥३॥

व्यन्तरदेवोंके कुल-भेद, उनके इन्द्र और देवियोंका निरूपण—

किण्णर-पहुदि-चउक्कं, दस-दस-भेदं हवेदि पत्तेक्कं ।
अक्खा बारस-भेदा, सत्त-वियप्पाणि रक्खसया ॥३२॥

भूदाणि तेत्तियाणिं, पिसाच-णामा चउद्दस-वियप्पा ।
दो दो इंदा दो दो, देवीओ दो-सहस्स-वल्लहिया ॥३३॥

कि १०, किपु १०, म १०, गं १०, अ १२, रा ७, भू ७, पि १४ । २ । २ । २०००।

कुल-भेदा समत्ता ॥४॥

अर्थ—किन्नर आदि चार प्रकारके व्यन्तर देवोंमेंसे प्रत्येकके दस-दस, यक्षोंके बारह, राक्षसों के सात, भूतोंके सात और पिशाचोंके चौदह भेद हैं। इनमें दो-दो इन्द्र और उनके दो-दो (अग्र) देवियाँ होती हैं। ये देवियाँ दो हजार वल्लभिकाओं सहित (अर्थात् प्रत्येक अग्रदेवीकी एक-एक हजार वल्लभिका देवियाँ) होती हैं ॥३२-३३॥

कुल-भेदोंका वर्णन समाप्त हुआ ॥४॥

किन्नर जातिके दस भेद, उनके इन्द्र और उनकी देवियोंके नाम—

ते किंपुरिसा किंणर-हिदयंगम-रूवपालि-किंणरया ।
किंणरकिंणिव णामा, मणरम्मा किण्णरुत्तमया ॥३४॥

रतिपिय-जेट्ठा ताणं, किंपुरिसा किंणरा वुवे इंदा ।
अवतंसा केतुमदी, रतिसेणा-रतिप्पियाओ देवीओ ॥३५॥

किंणरा गदा ।

अर्थ—किम्पुरुष, किन्नर, हृदयङ्गम, रूपपाली, किन्नरकिन्नर, अनिन्दित, मनोरम, किन्नरोत्तम, रतिप्रिय और ज्येष्ठ, ये दस प्रकारके किन्नर जातिके देव होते हैं। इनके किम्पुरुष और किन्नर नामक दो इन्द्र तथा इन इन्द्रोंके अवतंसा, केतुमती, रतिसेना एवं रतिप्रिया नामक (दो-दो) देवियाँ होती हैं ।।३४-३५।।

किन्नरोंका कथन समाप्त हुआ।

किम्पुरुषोंके भेद आदि—

पुरुसा पुरुसुत्तम-सप्पुरुस-महापुरुस-पुरुसपभ-णामा ।
अतिपुरुसा तह मरुजो[1], मरुदेव-मरुप्पहा जसोवंता ।।३६।।

इय किंपुरुसा-इंदा[2], सप्पुरुसो ताण तह महापुरुसो ।
रोहिणी-णवमी हिरिया, पुप्फवदीओ वि देवीओ ।।३७।।

किंपुरुसा गदा ।

अर्थ—पुरुष, पुरुषोत्तम, सत्पुरुष, महापुरुष, पुरुषप्रभ, अतिपुरुष, मरु, मरुदेव, मरुत्प्रभ और यशस्वान्, इसप्रकार ये किम्पुरुष जातिके (देवोंके) दस भेद हैं। इनके सत्पुरुष और महापुरुष नामक दो इन्द्र तथा इन इन्द्रोंके रोहिणी, नवमी, ह्री एवं पुष्पवती नामक (दो-दो) देवियाँ होती हैं ।।३६-३७।।

। किम्पुरुषोंका कथन समाप्त हुआ।

महोरगदेवोंके भेद आदि—

भुजगा भुजंगसाली, महतणु-अतिकाय-खंधसाली य ।
मणहर-असणिजव-महसर, गहिरं पियदंसणा महोरगया ।।३८।।

महकाओ अतिकाओ, इंदा एदाण होंति देवीओ ।
भोगा भोगवदीओ, अणिंदिदा पुप्फगंधीओ ।।३९।।

महोरगा गदा ।

अर्थ—भुजग, भुजंगशाली, महातनु, अतिकाय, स्कन्धशाली, मनोहर, असनिजव, महेश्वर, गम्भीर और प्रियदर्शन, ये महोरग जातिके देवोंके दस भेद हैं। इनके महाकाय और अतिकाय नामक

---

१. ब. ब. क. ज. मरुत। २ ब. क. क. ज. इंद।

इन्द्र तथा इन इन्द्रोंके भोगा, भोगवती, अनिन्दिता और पुष्पगन्धी नामक (दो-दो) देवियाँ होती हैं ।।३८-३९।।

महोरग जातिके देवोंका कथन समाप्त हुआ ।

गन्धर्वदेवोंके भेद आदि—

हाहा-हूहू-णारव-तुंबुर-वासव-कदंब - महसरया ।
गीदरदी - गीदयसा, वइरवतो होंति गंधव्वा ।।४०।।

गीदरदी गीदयसा, इंदा ताणं पि होंति देवीओ ।
सरसह-सरसेणाओ, णंदिणि-पियदंसणाओ वि ।।४१।।

गंधव्वा गदा ।

अर्थ—हाहा, हूहू, नारद, तुम्बुरु, वासव, कदम्ब, महास्वर, गीतरति, गीतयश और वज्रवान्, ये दस भेद गन्धर्वोंके हैं । इनके गीतरति और गीतयश नामक इन्द्र और इन इन्द्रोंके सरस्वती, स्वरसेना, नन्दिनी और प्रियदर्शना नामक (दो-दो) देवियाँ हैं ।।४०-४१।।

गन्धर्वजातिके देवोंका कथन समाप्त हुआ ।

यक्षदेवोंके भेद आदि—

माणि-पुण्ण-सेल-मणो-भद्दा भद्दका सुभद्दा य ।
तह सव्वभद्द-माणुस-धणपाल-सरूव - जक्खक्खा ।।४२।।

जक्खुत्तम-मणहरणा, ताणं वे माणि-पुण्ण-भद्दिंदा ।
कुंदा - बहुपुत्ताओ, तारा तह उत्तमाओ देवीओ ।।४३।।

जक्खा गदा ।

अर्थ—माणिभद्र, पूर्णभद्र, शैलभद्र, मनोभद्र, भद्रक, सुभद्र, सर्वभद्र, मानुष, धनपाल, स्वरूपयक्ष, यक्षोत्तम और मनोहरण, ये बारह भेद यक्षोंके हैं । इनके माणिभद्र और पूर्णभद्र नामक दो इन्द्र हैं और उन इन्द्रोंके कुन्दा, बहुपुत्रा, तारा तथा उत्तमा नामक (दो-दो) देवियाँ हैं ।।४२-४३।।

यक्षोंका कथन समाप्त हुआ ।

राक्षसोंके भेद आदि—

भीम-महाभीम-विग्घा[1]-विणायका उदक-रक्खसा तह य ।
रक्खस - रक्खस - णामा, सत्तमया बम्हरक्खसया ।।४४।।

---

१. द. क. ज. विप्पु, ब. भीप्पु ।

रक्खस-इंदा भीमो, [1]महभीमो ताण होंति वेवीओ ।
पउमा - वसुमित्ताओ, [2]रयणाढ्ढा - कंचणपहाओ ॥४५॥

रक्खसा गदा ।

अर्थ—भीम, महाभीम, विघ्न-विनायक, उदक, राक्षस, राक्षसराक्षस और सातवाँ ब्रह्म-राक्षस, इसप्रकार ये सात भेद राक्षस देवोंके हैं । इन राक्षसोंके भीम तथा महाभीम नामक इन्द्र और इन इन्द्रोंके पद्मा, वसुमित्रा, रत्नाढ्या तथा कञ्चनप्रभा नामक (दो-दो) देवियाँ हैं ॥४४-४५॥

राक्षसोंका कथन समाप्त हुआ ।

भूतदेवोंके भेद आदि—

भूदा हवे सुरूवा, पडिरूवा भूदउत्तमा होंति ।
पडिभूद - महाभूदा, पडिछण्णाकासभूद त्ति ॥४६॥
भूदिंदा य सरूवो, पडिरूवो ताण होंति वेवीओ ।
रूववदी बहुरूवा, सुमुहो णामा सुसीमा य ॥४७॥

भूदा गदा ।

अर्थ—स्वरूप, प्रतिरूप, भूतोत्तम, प्रतिभूत, महाभूत, प्रतिच्छन्न और आकाशभूत, इस-प्रकार ये सात भेद भूतदेवोंके हैं । उन भूतोंके इन्द्र स्वरूप एवं प्रतिरूप हैं और उन इन्द्रोंके रूपवती, बहुरूपा, सुमुखी तथा सुसीमा नामक देवियाँ हैं ॥४६-४७॥

भूतोंका कथन समाप्त हुआ ।

पिशाचदेवोंके भेद आदि—

कुंभंड-जक्ख-रक्खस-संमोहा तारगा अशोचक्खा ।
काल-महकाल-चोक्खा, सतालया देह - महदेहा ॥४८॥
तुण्हिय-पवयण-णामा, पिसाच-इंदा य काल-महकाला ।
कमला - कमलपहुप्पल - सुदंसणा ताण वेवीओ ॥४९॥

पिसाचा गदा ।

अर्थ—कुष्माण्ड, यक्ष, राक्षस, संमोह, तारक, अशुचि (नामक), काल, महाकाल, सुचोक्ष, सतालक, देह, महादेह, तूष्णीक और प्रवचन, इसप्रकार पिशाचोंके ये चौदह भेद हैं । काल और महा-

---

१. ब, क, ज, महा । २. क ज, ट, रयणेवा ।

काल, ये पिशाचोंके इन्द्र हैं तथा इन इन्द्रोंके कमला, कमलप्रभा, उत्पला एवं सुदर्शना नामक (दो-दो) देवियाँ हैं ॥४८-४९॥

पिशाचोंका कथन समाप्त हुआ।

गणिका महत्तरियोंका निरूपण—

सोलस- भोम्मिंदाणं, किंणर-पहुदीण होंति पत्तेक्कं।
गणिका महड्ढियाओ[1], दुवे दुवे रूववतीओ ॥५०॥

अर्थ—किन्नर आदि सोलह व्यन्तरेन्द्रोंमेंसे प्रत्येक इन्द्रके दो-दो रूपवती गणिकामहत्तरी होती हैं ॥५०॥

महुरा महुरालावा, सुस्सर-मिदुभासिणीओ णामेहिं।
पुरिसप्पिय-पुरिसकंता, सोमाओ पुरिसदंसिणिया[2] ॥५१॥

भोगा - भोगवदीओ, भुजगा भुजगप्पिया य णामेणं।
विमला सुघोस - णामा अणिंदिदा सुस्सरक्खा य ॥५२॥

तह य सुभद्दा भद्दाओ मालिणी पम्ममालिणीओ वि।
सव्वसिरि - सव्वसेणा, रुद्दावइ रुद्द - णामा य ॥५३॥

भूदा य भूदकंता, महबाहू भूदरत्त - णामा य।
अंबा य कला णामा, रस-सुलसा तह सुदरिसणया ॥५४॥

अर्थ—मधुरा, मधुरालापा, सुस्वरा, मृदुभाषिणी, पुरुषप्रिया, पुरुषकान्ता, सौम्या, पुरुषदर्शिनी, भोगा, भोगवती, भुजगा, भुजगप्रिया, विमला, सुघोषा, अनिन्दिता, सुस्वरा, सुभद्रा, भद्रा, मालिनी, पद्ममालिनी, सर्वश्री, सर्वसेना, रुद्रा, रुद्रवती, भूता, भूतकान्ता, महाबाहु, भूतरक्ता, अम्बा, कला, रस-सुरसा और सुदर्शनिका, ये उन गणिका-महत्तरियोंके नाम हैं ॥५१-५४॥

व्यन्तरोंके शरीर-वर्णका निर्देश—

किंणरदेवा, सव्वे, पियंगु - सामेहि देह - वण्णेहिं।
उब्भासंते कंचण - सारिच्छेहिं पि किंपुरुसा ॥५५॥

अर्थ—सब किन्नर देव प्रियंगु सदृश देह वर्णसे और सब किम्पुरुषदेव सुवर्ण सदृश देह-वर्णसे शोभायमान होते हैं ॥५५॥

कालस्सामल-वण्णा, महोरगा अरुण[3] कंचण-सवण्णा।
गंधव्वा जक्खा तह, कालस्सामा विराजंति ॥५६॥

---

१. द. ब. क. ज. महड्ढियाओ। २. द. ब. क. ज. देसिणिया। ३. द. ब. क. ज. अंब।

अर्थ—महोरगदेव काल-श्यामल वर्णवाले, गन्धर्वदेव शुद्ध सुवर्ण सदृश तथा यक्ष देव काल-श्यामल वर्णसे युक्त होकर शोभायमान होते हैं ।।५६।।

सुद्ध-स्सामा रक्खस-देवा भूदा वि कालसामलया ।
सव्वे पिसाचदेवा, कज्जल - इंगाल - सरिस - तणू ।।५७।।

अर्थ—राक्षसदेव शुद्ध-श्यामवर्ण, भूत कालश्यामल और समस्त पिशाचदेव कज्जल एवं इंगाल अर्थात् कोयले सदृश कृष्ण शरीर वाले होते हैं ।।५७।।

किण्णर-पहुदी वेंतरदेवा सव्वे वि सुंदरा होंति ।
सुभगा विलास - जुत्ता, सालंकारा महातेजा ।।५८।।

एवं णामा समत्ता ।।५।।

अर्थ—किन्नर आदि सब ही व्यन्तरदेव सुन्दर, सुभग, विलासयुक्त, अलङ्कारों सहित और महान् तेजके धारक होते हैं ।।५८।।

इसप्रकार नामोंका कथन समाप्त हुआ ।।५।।

दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंका निर्देश—

पढमुच्चारिद-णामा, दक्खिण-इंदा हवंति एदेसुं ।
चरिमुच्चारिद-णामा, उत्तर - इंदा पभाव-जुदा ।।५९।।

अर्थ—इन इन्द्रोंमें प्रथम उच्चारणवाले दक्षिणेन्द्र और अन्तमें (पीछे) उच्चारण नामवाले उत्तरेन्द्र हैं। ये सब इन्द्र प्रभावशाली होते हैं ।।५९।।

[तालिका पृष्ठ २२८ पर देखिये]

क्र.	कुल-नाम	चैत्यवृक्ष	शरीरवर्ण	इन्द्रोंके नाम	दक्षिणोत्तरेन्द्र	अग्र-देवियोंके नाम	देवियोंकी आयु (पल्य)	गणिका-महत्तरी
१.	किन्नर	प्रशोक	प्रियंगु-सदृश	किम्पुरुष	दक्षिणेन्द्र	सतसेना, केतुमती	२०००	मधुरा
				किन्नर	उत्तरेन्द्र	रतिसेना, रतिप्रिया	२०००	मधुरालापा सुस्वरा मृदुभाषिणी
२.	किम्पुरुष	चम्पक	स्वर्ण-सदृश	सत्पुरुष	दक्षिणेन्द्र	रोहिणी, नवमी	२०००	पुरुषप्रिया
				महापुरुष	उत्तरेन्द्र	ह्री पुष्पवती	२०००	पुरुषकान्ता सौम्या पुरुषदर्शिनी
३.	महोरग	नागद्रुम	कालश्यामल	महाकाय	दक्षिणेन्द्र	भोगा, भोगवती	२०००	भोगा
				अतिकाय	उत्तरेन्द्र	अनिन्दिता, पुष्पवं	२०००	भोगवती भुजगा भुजगप्रिया
४.	गन्धर्व	तुम्बुरु	शुद्ध स्वर्ण	गीतरति	दक्षिणेन्द्र	सरस्वती, स्वरसेना	२०००	विमला
				गीतयश	उत्तरेन्द्र	नंदिनी, प्रियदर्शना	२०००	सुघोषा अनिन्दिता सुस्वरा
५.	यक्ष	वट	कालश्यामल	मणिभद्र	दक्षिणेन्द्र	कुन्दा, बहुपुत्रा	२०००	सुभद्रा
				पूर्णभद्र	उत्तरेन्द्र	तारा, उत्तमा	२०००	कहा मालिनी पद्ममालिनी
६.	राक्षस	कंटक-वृक्ष	श्यामवर्ण	भीम	दक्षिणेन्द्र	लया, वसुमित्रा	२०००	सर्वश्री
				महाभीम	उत्तरेन्द्र	रत्नाढया कंचनप्रभा	२०००	सर्वसेना रुहा रुक्मवती
७.	भूत	तुलसी	कालश्यामल	स्वरूप	दक्षिणेन्द्र	रूपवती, बहुरूपा	२०००	भूता
				प्रतिरूप	उत्तरेन्द्र	सुमुखी, सुसीमा	२०००	भूतकान्ता महाबाहु भूतरक्षा
८.	पिशाच	कदम्ब	कज्जल-सदृश	काल	दक्षिणेन्द्र	कमला, कमलप्रभा	२०००	अम्बा
				महाकाल	उत्तरेन्द्र	उत्पला, सुदर्शना	२०००	कला रस-सुरसा सुदर्शनिका

व्यन्तरदेवोंके नगरोंके आश्रयरूप द्वीपोंका निरूपण—

ताव णयराणि अंजणक-वज्जधातुक-सुवण्ण-मणिसिलका ।
दीवे वज्जे रजदे, हिंगुलके होंति हरिवाले ॥६०॥

अर्थ—इन व्यन्तरदेवोंके नगर अंजनक, वज्रधातुक, सुवर्ण मनःशिलक, वज्र, रजत, हिंगुलक और हरिताल द्वीपमें स्थित हैं ॥६०॥

नगरोंके नाम एवं उनका अवस्थान—

णिय-णामंकं मज्झे, पह-कंताणव-भव्व-णामाणि ।
पुव्वादिसु इंदाणं, सम-भागे पंच पंच णयराणि ॥६१॥

अर्थ—सम-भागमें इन्द्रोंके पाँच-पाँच नगर होते हैं। उनमें अपने नामसे अंकित नगर मध्यमें और प्रभ, कान्त, आवर्त एवं भव्य, इन नामोंसे अंकित नगर पूर्वादिक दिशाओंमें होते हैं ॥६१॥

विशेषार्थ—व्यन्तरदेवोंके नगर समतल भूमिपर बने हुए हैं; भूमिके नीचे या पर्वत आदिके ऊपर नहीं हैं। प्रत्येक इन्द्रके पाँच-पाँच नगर होते हैं। मध्यका नगर इन्द्रके नामवाला ही होता है तथा पूर्वादि दिशाओंके नगरोंके नाम इन्द्रके नामके आगे क्रमशः प्रभ, कान्त, आवर्त और भव्य जुड़कर बनते हैं। यथा—

क्र०	इन्द्र-नाम	मध्य-नगर	पूर्वदिशामें	दक्षिण दिशामें	पश्चिम दिशामें	उत्तर दिशामें
१.	किम्पुरुष	किम्पुरुषनगर	किम्पुरुषप्रभ	किम्पुरुषकान्त	किम्पुरुषावर्त	किम्पुरुषभव्य
२.	किन्नर	किन्नरनगर	किन्नरप्रभ	किन्नरकान्त	किन्नरावर्त	किन्नरभव्य
३.	सत्पुरुष	सत्पुरुषनगर	सत्पुरुषप्रभ	सत्पुरुषकान्त	सत्पुरुषावर्त	सत्पुरुषभव्य
४.	महापुरुष	महापुरुषनगर	महापुरुषप्रभ	महापुरुषकान्त	महापुरुषावर्त	महापुरुषभव्य

इसीप्रकार शेष बारह इन्द्रोंके नगर भी जानने चाहिए।

आठों द्वीपोंमें इन्द्रोंका निवास-विभाग—

जंबूदीव-सरिच्छा, दक्खिण-इंदा य दक्खिणे भागे ।
उत्तर - भागे उत्तर - इंदा पं तेसु दीवेसुं ॥६२॥

अर्थ—जम्बूद्वीप सदृश उन द्वीपोंमें दक्षिण-इन्द्र दक्षिण भागमें और उत्तर इन्द्र उत्तर भागमें निवास करते हैं ॥६२॥

विशेषार्थ—

अञ्जनकद्वीपकी दक्षिण दिशामें किम्पुरुष और उत्तर दिशामें किन्नर इन्द्र रहता है।
वज्रधातुकद्वीपकी दक्षिणदिशामें सत्पुरुष और उत्तर दिशामें महापुरुष इन्द्र रहता है।
सुवर्णद्वीपकी दक्षिण दिशामें महाकाय और उत्तरदिशामें अतिकाय इन्द्र रहता है।
मनःशिलकद्वीपकी दक्षिण दिशामें गीतरति और उत्तरदिशामें गीतयश इन्द्र रहता है।
वज्रद्वीपकी दक्षिण दिशामें माणिभद्र और उत्तर दिशामें पूर्णभद्र इन्द्र रहता है।
रजतद्वीपकी दक्षिण दिशामें भीम और उत्तरदिशामें महाभीम इन्द्र रहता है।
हिंगुलकद्वीपकी दक्षिण दिशामें स्वरूप और उत्तर दिशामें प्रतिरूप इन्द्र रहता है।
हरितालद्वीपकी दक्षिण दिशामें काल और उत्तरदिशामें महाकाल इन्द्र रहता है।

व्यन्तरदेवोंके नगरोंका वर्णन—

समचउरस्स ठिदीणं, पायारा तप्पुराण कणयमया।
विजयसुर-णयर-वण्णिय-पायार-उदयत्थ-भाग-समा ॥६३॥

अर्थ—समचतुष्कोणसे स्थित उन पुरोंके स्वर्णमय कोट विजयदेवके नगरके वर्णनमें कहे गये कोटके चतुर्थ भाग प्रमाण है ॥६३॥

विशेषार्थ—अधिकार ५ गाथा १८३-१८४ में विजयदेवके नगर-कोटका प्रमाण ३७½ योजन ऊँचा, ½ योजन अवगाह, १२½ योजन मूविस्तार और ६½ योजन मुख विस्तार कहा गया है। यहाँ व्यन्तरदेवोंके नगर-कोटोंका प्रमाण इसका चतुर्थभाग है। अर्थात् वे कोट ९½ यो० ऊँचे, ½ योजन अवगाह, ३½ यो० भूविस्तार और १½ यो० मुख-विस्तारवाले हैं।

ते णयराणं बाहिर, असोय-सत्तच्छदाय चंपय - चूदाय[1] तहा, पुव्वादि - दिसासु पत्तेक्कं ॥६४॥

अर्थ—उन नगरोंके बाहर पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें अशोक, सप्तच्छद, चम्पक तथा आम्र-वृक्षोंके वनसमूह स्थित हैं ॥६४॥

जोयण-लक्खायामा, पण्णास-सहस्स-वंद-संजुत्ता।
ते वणसंडा असुहिह - विबह - विमूदोहि रेहंति ॥६५॥

---

१. ब. क. ज. चूदाय।

अर्थ—एक लाख योजन लम्बे और पचास हजार योजन प्रमाण विस्तार युक्त वे वन-समूह बहुत प्रकारकी विटप (वृक्ष) विभूतिसे सुशोभित होते हैं अर्थात् अनेकानेक प्रकारके वृक्ष वहाँ और भी हैं ।।६५।।

णयरेसु तेसु दिव्वा, पासादा कणय-रजद-रयणमया ।
उच्छेहादिसु तेसुं, उवएसो संपइ पणट्ठो ।।६६।।

अर्थ—उन नगरोंमें सुवर्ण, चांदी एवं रत्नमय जो दिव्य प्रासाद हैं। उनकी ऊँचाई आदिका उपदेश इससमय नष्ट हो गया है ।।६६।।

व्यन्तरेन्द्रोंके परिवार देवोंकी प्ररूपणा—

एदेसु वेंतरिंदा, कीडंते बहु - विभूदि - भंगीहि ।
णाणा-परिवार-जुदा, भणिमो परिवार-णामाइं ।।६७।।

अर्थ—इन नगरोंमें नाना परिवारसे संयुक्त व्यन्तरेन्द्र प्रचुर ऐश्वर्य पूर्वक क्रीड़ा करते हैं। (अब) उनके परिवारके नाम कहता हूँ ।।६७।।

पडिइंदा सामाणिय, तणुरक्खा होंति तिण्णि परिसाओ ।
सत्ताणीय - पइण्णा, अभियोगा ताण पत्तेयं ।।६८।।

अर्थ—उन इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके प्रतीन्द्र, सामानिक, तनुरक्ष, तीनों पारिषद, सात अनीक, प्रकीर्णक और आभियोग्य, इसप्रकार ये परिवार देव होते हैं ।।६८।।

प्रतीन्द्र एवं सामानिकादि देवोंके प्रमाण—

एक्केक्को पडिइंदो, एक्केक्काणं हवेदि इंदाणं ।
चत्तारि सहस्साणि, सामाणिय - णाम - देवाणं ।।६९।।

१ । सा ४००० ।

अर्थ—प्रत्येक इन्द्रके एक-एक प्रतीन्द्र और चार-चार हजार (४००० — ४०००) सामानिक देव होते हैं ।।६९।।

एक्केक्कस्स इंदे, तणुरक्खाणं पि सोलस-सहस्सा ।
अट्ठ-दह - बारस - कमा, तिप्परिसासुं सहस्साणि ।।७०।।

१६००० । ८००० । १०००० । १२००० ।

अर्थ—एक-एक इन्द्रके तनुरक्षकोंका प्रमाण सोलह हजार (१६०००) और तीनों पारिषद देवोंका प्रमाण क्रमशः आठ हजार (८०००), दस हजार (१००००) तथा बारह हजार (१२०००) है ॥७०॥

सप्त अनीक सेनाओंके नाम एवं प्रमाण—

करि-हय-पाइक्क तहा, गंधव्वा णट्टआ रहा वसहा ।
इय सत्तसेण्णाणि, पत्तेक्कं होंति इंदाणं ॥७१॥

अर्थ—हाथी, घोड़ा, पदाति, गन्धर्व, नर्तक, रथ और बैल, इसप्रकार प्रत्येक इन्द्रके ये सात-सात सेनाएँ होती हैं ॥७१॥

कुंजर-तुरयाणीणं पुह पुह चेट्ठंति सत्त कक्खाओ ।
तेसुं पढमा कक्खा, अट्ठावीसं सहस्साणि ॥७२॥

२८०००।

अर्थ—हाथी और घोड़े आदिकी पृथक्-पृथक् सात कक्षाएँ स्थित हैं। इनमेंसे प्रथम कक्षाका प्रमाण अट्ठाईस हजार (२८०००) है ॥७२॥

बिदियादीणं दुगुणा, दुगुणा से होंति कुंजर-प्पहुदी ।
एदाणं मिलिदाणं परिमाणाहूँ पवक्खेमो ॥७३॥

अर्थ—द्वितीयादिक कक्षाओंमें ये हाथी आदि दूने-दूने हैं। इनका सम्मिलित प्रमाण कहते हैं ॥७३॥

पंचसीदं लक्खा, छप्पण्ण-सहस्स-संजुदा साहं ।
एक्केक्कस्सि इंदे, हत्थीणं होंति परिमाणं ॥७४॥

३५५६०००।

अर्थ—उनमेंसे प्रत्येक इन्द्रके हाथियोंका (हाथी, घोड़ा, पदाति आदि सातों सेनाओंका पृथक्-पृथक्) प्रमाण पैंतीस लाख और छप्पन हजार (३५५६०००) है ॥७४॥

बावण्णदि-सहस्साणि, लक्खा पणवाल तेत्तिय कोडीओ ।
इंदाणं पत्तेक्कं, सत्ताणीयाण परिमाणं ॥७५॥

२४८९२०००।

अर्थ—प्रत्येक इन्द्रकी सात अनीकोंका प्रमाण दो करोड़ अड़तालीस लाख बानवे हजार (३५५६००० × ७ = २४८९२०००) है ॥७५॥

विशेषार्थ—पदका जितना प्रमाण हो उतने स्थानमें २ का अङ्क रखकर परस्पर गुणा करें। जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे एक घटाकर शेषमें एक कम गुणकारका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, उसका मुखमें गुणाकर देनेसे सङ्कलित धनका प्रमाण प्राप्त होता है। इस नियमानुसार सङ्कलित धन—यहाँ पद प्रमाण ७ और मुख प्रमाण २८००० है अतः —

२८००० × [{(२×२×२×२×२×२×२) − १} ÷ (२ − १)] = ३५५६००० एक अनीककी सात कक्षाओंका प्रमाण और ३५५६००० × ७ = २४८९२००० सातों अनीकोंका कुल एकत्रित प्रमाण है।

अथवा—

कक्षाएँ	हाथी	घोड़ा	पदाति	रथ	गन्धर्व	नर्तक	बैल
प्रथम	२८०००	२८०००	२८०००	२८०००	२८०००	२८०००	२८०००
द्वितीय	५६०००	५६०००	५६०००	५६०००	५६०००	५६०००	५६०००
तृतीय	११२०००	११२०००	११२०००	११२०००	११२०००	११२०००	११२०००
चतुर्थ	२२४०००	२२४०००	२२४०००	२२४०००	२२४०००	२२४०००	२२४०००
पञ्चम	४४८०००	४४८०००	४४८०००	४४८०००	४४८०००	४४८०००	४४८०००
षष्ठ	८९६०००	८९६०००	८९६०००	८९६०००	८९६०००	८९६०००	८९६०००
सप्तम	१७९२०००	१७९२०००	१७९२०००	१७९२०००	१७९२०००	१७९२०००	१७९२०००
योग	३५५६००० +	३५५६००० +	३५५६००० +	३५५६००० +	३५५६००० +	३५५६००० +	३५५६००० =
							२४८९२०००

कुल इन्द्र १६ हैं और सभी समान अनीक-धनके स्वामी हैं अतः २४८९२००० × १६ = १९८२७२००० सम्पूर्ण अभ्यन्तरदेवोंकी सेनाका सर्वधन है।

प्रकीर्णकादि अभ्यन्तरदेवोंका प्रमाण—

भोमिंदाण पइण्णय-अभिओग्ग-सुरा हवंति जे केई।
ताणं पमाण - हेदू उवएसो संपइ पणट्ठो ॥७६॥

अर्थ—व्यन्तरेन्द्रोंके जो कोई प्रकीर्णक और आभियोग्य आदि देव होते हैं, उनके प्रमाणका निरूपक उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥७६॥

एक्केक्कइंद - परिवारा, वेंतर - इंदा सुहाइ भुंजंता ।
णंदंति णिय - पुरेसुं, बहुविह कीडाओ[1] कुडमाणा ॥७७॥

अर्थ—इसप्रकारके परिवारसे संयुक्त होकर सुखोंका उपभोग करनेवाले व्यन्तरेन्द्र अपने-अपने पुरोंमें बहुत प्रकारकी क्रीडाएं करते हुए आनन्दको प्राप्त होते हैं ॥७७॥

गणिकामहत्तरियोंके नगरोंका अवस्थान एवं प्रमाण—

णिय-णिय-इंदपुरीणं, दोसु वि पासेसु होंति णयराणि ।
गणिकामहल्लियाणं, वर - वेदी - पहुदि - जुत्ताणि ॥७८॥

अर्थ—अपने-अपने इन्द्रकी नगरियोंके दोनों पार्श्वभागोंमें उत्तम वेदी आदि सहित गणिका-महत्तरियोंके नगर होते हैं ॥७८॥

चुलसीदि-सहस्साणि, जोयणया तप्पुरीण वित्थारो ।
तेत्तियमेत्तं दीहं, पत्तेक्कं होदि णियमेण ॥७९॥

८४००० ।

अर्थ—उन नगरियोंमेंसे प्रत्येक नगरीका विस्तार चौरासी हजार (८४०००) योजन प्रमाण और लम्बाई भी नियमसे इतनी (८४००० यो०) ही है ॥७९॥

नीचोपपाद व्यन्तरदेवोंके निवास-क्षेत्रका निरूपण—

णीचोववाद - देवा, हत्थ - पमाणे वसंति भूमीदो ।
विगुवासि-सुरा - अंतरणिवासि - कुंभंड - उव्वण्णा ॥८०॥
अणुपण्णा य पमाणय, गंध-महागंध-मुजंग-पोदिकया ।
बारसमा आयासे, उवसण्ण वि इंद - परिवारा ॥८१॥
उवरिं उवरिं वसंते, तिण्णि वि णीचोववाद-ठाणादो ।
दस हत्थ - सहस्साइं, सेसा विउणेहि पत्तेक्कं ॥८२॥
ताणं विण्णास कम संविट्ठो—

---

१. द. केलीओ, ब. क. ज. केलाओ ।

२०००*
२०००
२०००
२०००
२०००
२०००
२०००
२०००
१००००
१००००
१००००
१

दक्षिण-उत्तर-इंदाणं पवण्णणा समत्ता ॥६॥

अर्थ—नीचोपपाद देव पृथिवीसे एक हाथ प्रमाण ऊपर निवास करते हैं। उनके ऊपर दिग्वासी, अन्तरनिवासी, कूष्माण्ड, उत्पन्न, अनुत्पन्न, प्रमाणक, गन्ध, महागन्ध, भुजंग, प्रीतिक और बारहवें आकाशोत्पन्न, इन्द्रके ये परिवार-देव क्रमशः ऊपर-ऊपर निवास करते हैं। इनमेंसे प्रारम्भके तीन प्रकारके देव नीचोपपाद देवोंके स्थानसे उत्तरोत्तर दस-दस हजार हस्त प्रमाण अन्तरसे तथा शेष देव बीस-बीस हजार हस्तप्रमाण अन्तरसे निवास करते हैं ॥८०-८२॥

विशेषार्थ—चित्रा पृथिवीसे एक हाथ ऊपर नीचोपपादिक देव स्थित हैं। इनसे १०००० हाथ ऊपर दिग्वासी देव हैं। इनसे १०००० हाथ ऊपर अन्तरवासी और इनसे १०००० हाथ ऊपर कूष्माण्ड देव निवास करते हैं। इनसे २०००० हाथ ऊपर उत्पन्न इनसे २०००० हाथ ऊपर अनुत्पन्न, इनसे २०००० हाथ ऊपर प्रमाणक, इनसे २०००० हाथ ऊपर गन्ध, इनसे २०००० हाथ ऊपर महागन्ध, इनसे २०००० हाथ ऊपर भृंगभृङ्ग, इनसे २०००० हाथ ऊपर प्रीतिक और इनसे २०००० हाथ ऊपर आकाशोत्पन्न व्यन्तरदेव निवास करते हैं।

यही इनकी विन्यासरूप संदृष्टि है।

इसप्रकार दक्षिण-उत्तर इन्द्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ॥६॥

अन्तरदेवोंकी आयुका निर्देश—

उक्कस्साऊ पल्लं, होदि असंखो य मज्झिमो आऊ।
दस वास - सहस्साणि, जोग्ग - पुराणं जहण्णाऊ ॥८३॥

प १। रि। १००००।

अर्थ—व्यन्तरदेवोंकी उत्कृष्ट आयु एक पल्य प्रमाण, मध्यम आयु असंख्यात वर्ष प्रमाण और जघन्य आयु दस हजार (१००००) वर्ष प्रमाण है ॥८३॥

इंद-पडिइंद-सामाणियाण - पल्लेक्कमेक्क - पल्लाऊ ।
गणिका-महत्तरियाणं, पल्लद्धं सेसयाण जह-जोग्गं ॥८४॥

अर्थ—इन्द्र, प्रतीन्द्र एवं सामानिक देवोंमेंसे प्रत्येककी आयु क्रमशः एक-एक पल्य है। गणिकामहत्तरियोंकी आयु अर्धपल्य और शेष देवोंकी आयु यथायोग्य है ॥८४॥

दस वास-सहस्साणि, आऊ णीचोवयाद - देवाणं ।
तत्तो आव असीदि, तेसिमणेत्ताए वड्ढीए ॥८५॥
अट्ठ चुलसीदी पल्लट्ठमंस - पादं[1] कमेण पल्लद्धं ।
दिव्वासि - पहुदीणं, भणिदं आउस्स परिमाणं ॥८६॥

१०००० । २०००० । ३०००० । ४०००० । ५०००० । ६०००० ।

७०००० । ८०००० । ८४००० | ५/८ | ५/४ | ५/२ |

आऊ परूवणा समत्ता ॥७॥

अर्थ—नीचोपपाद देवोंकी आयु दस हजार वर्ष है। पश्चात् दिग्वासी आदि शेष (७) देवोंकी आयु क्रमशः दस-दस हजार वर्ष बढ़ाते हुए अस्सी हजार वर्ष पर्यन्त है। शेष चार देवोंकी आयु क्रमशः चौरासी हजार वर्ष, पल्यका आठवाँ भाग, पल्यका एक पाद (चतुर्थ भाग) और अर्ध-पल्य प्रमाण कही गई है ॥८५-८६॥

विशेषार्थ—नीचोपपाद व्यन्तर देवोंकी आयुका प्रमाण १०००० वर्ष, दिग्वासीका २०००० वर्ष, अन्तरवासीका ३०००० वर्ष, कूष्माण्डका ४०००० वर्ष, उत्पन्न का ५०००० वर्ष, अनुत्पन्नका ६०००० वर्ष, प्रमाणकका ७०००० वर्ष, गन्धका ८०००० वर्ष, महागन्धका ८४००० वर्ष, भुजङ्ग देवोंका पल्यके आठवें भाग, प्रीतिकका पल्यके चतुर्थभाग और आकाशोत्पन्न देवोंकी आयु का प्रमाण पल्यके अर्धभाग प्रमाण है।

। इसप्रकार आयु-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥७॥

व्यन्तर देवोंके आहारका निरूपण—

दिव्वं अमयाहारं, मणेण मुंजंति किंणर-प्पमुहा ।
देवा देवीओ तहा, तेसुं कवलासणं णत्थि ॥८७॥

---

१. ब. क. पादक्कमेण, क, पादकमे ।

अर्थ—किन्नर आदि व्यन्तर देव तथा देवियाँ दिव्य एवं अमृतमय आहारका उपभोग मनसे ही करते हैं, उनके कवलाहार नहीं होता ॥८७॥

पल्लाउ-जुदे देवे, काओ असणस्स पंच दिवसाणि ।
दोण्णि दिवस आवव्वो, दस-वास-सहस्स-आउम्मि ॥८८॥

आहार-पहवणा समत्ता ॥८॥

अर्थ—पल्यप्रमाण आयुसे युक्त देवोंके आहारका काल पाँच दिन (बाद) और दस हजार वर्ष प्रमाण आयुवाले देवोंके आहारका काल दो दिन (बाद) जानना चाहिए ॥८८॥

आहार-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥८॥

उच्छ्वास निरूपण—

पलिदोवमाउ-जुत्तो, पंच-मुहुत्तेहि एदि उस्सासो ।
सो अजुदाउ-जुदे वेंतर - देवम्मि अ सत्त पाणेहि ॥८९॥

उस्सास-पहवणा समत्ता ॥९॥

अर्थ—व्यन्तर देवोंमें जो पल्यप्रमाण आयुसे युक्त हैं वे पाँच मुहूर्तों (के बाद) में और जो दस हजार वर्ष प्रमाण आयुसे संयुक्त हैं वे सात प्राणों (उच्छ्वास-निश्वास परिमित काल विशेषके बाद) में ही उच्छ्वासको प्राप्त करते हैं ॥८९॥

। उच्छ्वास-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥९॥

व्यन्तरदेवोंके अवधिज्ञानका क्षेत्र—

अवरा ओहि-धरिसी, अजुदाउ-जुदस्स पंच-कोसाणि ।
उक्किट्ठा पण्णासा, हेट्ठोवरि परसमाणस्स ॥९०॥

को ५ । को ५० ।

अर्थ—दस हजार वर्ष प्रमाण आयुवाले व्यन्तर देवोंके अवधिज्ञानका विषय ऊपर और नीचे जघन्य पाँच (५) कोस तथा उत्कृष्ट पचास (५०) कोस प्रमाण है ॥९०॥

पलिदोवमाउ-जुत्तो, वेंतरदेवो तलम्मि उवरिम्मि ।
अवहीए ओवधाणि, एक्कं लक्खं पलोएदि ॥९१॥

१००००

ओहि-णाणं समत्तं ॥१०॥

अर्थ—पल्योपम प्रमाण आयुवाले व्यन्तरदेव अवधिज्ञानसे नीचे और ऊपर एक-एक लाख (१०००००) योजन प्रमाण देखते हैं ॥९१॥

अवधिज्ञानका कथन समाप्त हुआ ॥१०॥

व्यन्तरदेवोंकी शक्तिका निरूपण—

दस-वास-सहस्साऊ, एक्क-समं माणुसाण मारेदुं ।
पोसेदुं पि समत्थो, एक्केक्को वेंतरो देवो ॥९२॥

अर्थ—दस हजार वर्ष प्रमाण आयुवाला प्रत्येक व्यन्तरदेव एकसौ मनुष्योंको मारने एवं पालन करनेमें समर्थ होता है ॥९२॥

पण्णाधिय-सय-दंडं, पमाण-विक्खंभ-बहल-जुत्तं सो ।
खेत्तं णिय-सत्तीए, उक्खणिदूणं [1]ठवेदि अण्णत्थ ॥९३॥

अर्थ—वह देव अपनी शक्तिसे एकसौ पचास धनुषप्रमाण विस्तार एवं बाहल्यसे युक्त क्षेत्र को उखाड़ (उठा) कर अन्यत्र रख सकता है ॥९३॥

पल्लट्ठं वि[2] भुजेहिं, [3]छक्खंडाणि पि एक्क-पल्लाऊ ।
मारेदुं पोसेदुं, तेसु समत्थो ठिदं[4] लोयं ॥९४॥

अर्थ—एक पल्य प्रमाण आयुवाला व्यन्तरदेव अपनी भुजाओंसे छहखण्डोंको उखाड़ने में समर्थ है और उनमें स्थित मनुष्योंको मारने तथा पालनेमें भी समर्थ है ॥९४॥

उक्कस्से रूव - सयं, देवो विकरेदि अजुदमेत्ताऊ ।
अवरे सग-रूवाणि, मज्झिमयं विविह - रूवाणि ॥९५॥

अर्थ—दस हजार वर्षकी आयुवाला व्यन्तरदेव उत्कृष्ट रूपसे सौ रूपोंकी, जघन्यरूपसे सात रूपोंकी और मध्यमरूपसे विविध रूपोंकी अर्थात् सातसे अधिक और सौसे कम रूपोंकी विक्रिया करता है ॥९५॥

सेसा वेंतरदेवा, णिय-णिय-ओहीण जेत्तियं खेत्तं ।
पूरंति तेत्तियं पि हु, पत्तेक्कं विकरण-बलेण ॥९६॥

अर्थ—शेष व्यन्तरदेवोंमेंसे प्रत्येक देव अपने-अपने अवधिज्ञानका जितना क्षेत्र है, उतने प्रमाण क्षेत्रको विक्रिया-बलसे पूर्ण करते हैं ॥९६॥

---

१. द. ठवेदि । २. द. पल्लट्ठेहि, ब. क. ज. पल्लट्ठदि । ३. द. छक्खंडेण पि, ब. छक्खंड पि पि । ४. ब. क. ज. ठिदं ।

संखेज्ज - जोयणाणि, संखेज्जाऊ य एक्क-समयेणं ।
जादि असंखेज्जाणि, ताणि असंखेज्ज - आऊ य ॥९७॥

। सत्ति-परूवणा समत्ता ॥११॥

अर्थ—संख्यात वर्ष प्रमाण आयुवाला व्यन्तरदेव एक समयमें संख्यात योजन और असंख्यात वर्ष प्रमाण आयुवाला वह देव असंख्यात योजन जाता है ॥९७॥

शक्ति-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥११॥

व्यन्तरदेवोंके उत्सेधका कथन—

अट्ठण्ह वि पत्तेक्कं, किण्णर-पहुदीण वेंतर-सुराणं ।
उच्छेहो णादव्वो, दस - कोदंडं पमाणेणं ॥९८॥

उच्छेह-परूवणा समत्ता ॥१२॥

अर्थ—किन्नर आदि आठों व्यन्तरदेवोंमेंसे प्रत्येककी ऊँचाई दस धनुष प्रमाण जानना चाहिए ॥९८॥

उत्सेध-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥१२॥

व्यन्तरदेवोंकी संख्याका निरूपण—

छद्द-लक्खाधिय-तेवीस-कोडि-अंगुलय-सूइ-वग्गेहिं ।
भजिदाए सेढीए, वग्गे भोमाण परिमाणं ॥९९॥

$\frac{\text{ज}}{\text{ज}^{\frac{2}{2}}}$ (५३०८४१६००००००००००)

संखा समत्ता ॥१३॥

अर्थ—तेईस करोड़ चार लाख सूच्यंगुलोंके वर्गका जगच्छ्रेणीके वर्गमें अर्थात् ६५५३६ × ८१ × १० शून्य रूप प्रतरांगुलोंका जगत्प्रतरमें ($\frac{\text{ज}}{\text{ज}^{\frac{2}{2}}}$) भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना व्यन्तरदेवोंका प्रमाण है ॥९९॥

विशेषार्थ—जगच्छ्रेणीका चिह्न ज और जगत्प्रतरका चिह्न ज$^{\frac{2}{2}}$ है तथा एक सूच्यंगुलका चिह्न २ और सूच्यंगुलके वर्गका चिह्न (२ × २ = ४) होता है, अतः संदृष्टिके $\frac{\text{ज}}{\text{ज}^{\frac{2}{2}}}$ चिह्नका अर्थ है जगत्प्रतर में ५३०८४१६०००००००००० प्रतरांगुलोंका भाग देना ।

एक योजनमें ७६८००० अंगुल होते हैं अतः ३०० योजनोंमें (७६८००० × ३०० =) २३०४००००० अंगुल हुए । इसका वर्ग करनेपर (२३०४०००००)^2 = ५३०८४१६०००००००००

प्रतरांगुल प्राप्त होते हैं। जगत्प्रतरमें इन्हीं प्रतरांगुलोंका भाग देनेपर व्यन्तर देवोंका प्रमाण प्राप्त होता है।

संख्याका कथन समाप्त हुआ ॥१३॥

एक समयमें जन्म-मरणका प्रमाण —

संखातीद-विभत्ते, वेंतर-वासम्मि खद्ध-परिमाणा।
उप्पज्जंता जीवा, मर - माणा होंति तम्मेत्ता ॥१००॥

। उत्पद्यमान-मरणा समत्ता ॥१४॥

अर्थ—व्यन्तरदेवोंके प्रमाणमें असंख्यातका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो वहाँ उतने जीव (प्रति समय) उत्पन्न होते हैं और उतने ही मरते हैं ॥१००॥

उत्पद्यमान और म्रियमाण (व्यन्तर देवोंके) प्रमाणका कथन समाप्त हुआ ॥१४॥

आयु बन्धक भाव आदि—

आउस-बंधण-भावं, दंसण-गहणस्स कारणं विविहं।
गुणठाण - पहुदीणि, भवणाणं भावण - समाणि ॥१०१॥

अर्थ—व्यन्तरोंके आयु बन्धक परिणाम, सम्यग्दर्शन ग्रहणके विविध कारण और गुण-स्थानादिकोंका कथन भवनवासियोंके सदृश ही जानना चाहिए ॥१०१॥

आयुबंधके परिणाम, सम्यक्त्व-ग्रहणकी विधि और गुणस्थानादिकों का
कथन करने वाले तीन अधिकार पूर्ण हुए ॥१५-१६-१७॥

व्यन्तरदेव-सम्बन्धी जिनभवनोंका प्रमाण—

जोयण-सद-तिदय-कदी, भजिदे पदरस्स संखभागम्मि।
जं खद्धं तं माणं, वेंतर - लोए जिण - घराणं ॥१०२॥

$\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{संख्यात} \times (३००)^२}$ × ५३०८४१६०००००००००।

अर्थ—जगत्प्रतरके संख्यात भागमें तीनसौ योजनोंके वर्गका भाग देनेपर जो लब्ध आवे, जिनमन्दिरोंका उतना प्रमाण व्यन्तरलोकमें है ॥१०२॥

विशेषार्थ—व्यन्तरलोकके जिनभवन= $\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{संख्यात} \times (३००)^२}$

अथवा= $\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{संख्यात} \times ५३०८४१६०००००००००}$

अधिकारान्त मङ्गलाचरण—

इंद-सद-णमिद-चलणं, अणंत-सुह-णाण-विरिय-दंसणया ।
भव्वंबुज - वण - भाणुं, सेयंस - जिणं [1]धर्मसामि ॥१०३॥

एवमाइरिय-परंपरागय-तिलोयपण्णत्तीए वेंतरलोय-सरूव-पण्णत्तो णाम छट्ठमो महाहियारो समत्तो ॥६॥

अर्थ—सौ इन्द्रोंसे नमस्करणीय चरणोंवाले, अनन्त सुख, अनन्तज्ञान, अनन्तवीर्य एवं अनन्तदर्शनवाले तथा भव्यजीवरूप कमलवनको विकसित करनेके लिए सूर्य-सदृश श्रेयांस जिनेन्द्रको (मैं) नमस्कार करता हूँ ॥१०३॥

इसप्रकार आचार्य-परंपरागत त्रिलोकप्रज्ञप्तिमें व्यन्तरलोक-स्वरूप-प्रज्ञप्ति नामक छठा महाधिकार समाप्त हुआ ।

❖

१. द. ब. क. ज. पठावीम्म ।



तिलोयपण्णत्ती

सत्तमो महाहियारो

मङ्गलाचरण—

अक्खलिय-णाण-दंसण-सहियं सिरि-वासुपुज्ज-जिणसामिं ।
णमिऊणं वोच्छामो, जोइसिय - जगस्स पण्णत्तिं ॥१॥

अर्थ—अस्खलित ज्ञान-दर्शनसे युक्त श्रीवासुपूज्य जिनेन्द्रको नमस्कार करके ज्योतिर्लोककी प्रज्ञप्ति कहता हूँ ॥१॥

सत्तरह अन्तराधिकारोंका निर्देश—

जोइसिय-णिवासखिदी, भेदो संखा तहेव विण्णासो ।
परिमाणं चर - चारो, अचर - सरूवाणि आऊ य ॥२॥
आहारो उस्सासो, उच्छेहो ओहिणाण - सत्तीओ ।
जीवाणं उप्पत्ती - मरणाइं एक्क - समयम्मि ॥३॥
आउग-बंधण-भावं, दंसण-गहणस्स कारणं विविहं ।
गुणठाणादि - पवण्णणमहियारा सत्तरसिमाए ॥४॥

(१७)

अर्थ—ज्योतिषी देवोंका १निवासक्षेत्र, २भेद, ३संख्या, ४विन्यास, ५परिमाण, ६चर ज्योतिषियोंका संचार, ७अचर ज्योतिषियोंका स्वरूप, ८आयु, ९आहार, १०उच्छ्वास, ११उत्सेध, १२अवधिज्ञान, १३शक्ति, १४एक समयमें जीवोंकी उत्पत्ति एवं मरण, १५आयुके बन्धक भाव, १६सम्य-

मनुष्य पर्वतके विविध कारण और उनके स्वामियोंका वर्णन, इसप्रकार ये ज्योतिर्लोकके कथनमें सत्तरह अधिकार हैं ॥२-४॥

ज्योतिष्कदेवोंका निवासक्षेत्र—

रज्जु-कदी गणिदव्वं, एक्क-सय-दसुत्तरेहि जोयणए ।
तस्सि अगम्म - देसं[1], सोहिय सेसम्मि जोइसया ॥५॥

७ । ११० ।

अर्थ—राजूके वर्गको एक सौ दस योजनोंसे गुणा (राजू² × ११०) करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे अगम्य देशको छोड़कर शेषमें ज्योतिषी देव रहते हैं ॥५॥

अगम्य क्षेत्रका प्रमाण—

तं पि य अगम्म - खेत्तं, समवट्टं जंबुदीव - बहुमज्झे ।
पण-एक्क-ख-पण-दुग-पण-दो-ति-ख-तिय-एक्क-जोयणंक कमे ॥६॥

१३०१२९२५०१५ ।

विक्खंभ-खेत्तं समत्तं ॥१॥

अर्थ—यह अगम्य क्षेत्र भी समवृत्त जम्बूद्वीपके बहुमध्य-भागमें स्थित है। उसका प्रमाण पाँच, एक, शून्य, पाँच, दो, नौ, दो, तीन, शून्य, तीन और एक इस अंकक्रमसे जो संख्या निर्मित हो उतने योजन प्रमाण है ॥६॥

विशेषार्थ—त्रिलोकसार गाथा ३४५ में कहा गया है कि "ज्योतिर्लोक सुमेरु पर्वतको ११२१ योजन छोड़कर गमन करते हैं"। ज्योतिर्देवोंके संचारसे रहित सुमेरुके दोनों पार्श्वभागोंका यह प्रमाण (११२१ × २) = २२४२ योजन होता है। भूमिपर सुमेरुका विस्तार १०००० योजन है। इन दोनों को जोड़ देनेपर ज्योतिर्देवों के अगम्य क्षेत्रका सूची-व्यास (१०००० + २२४२ =) १२२४२ योजन प्राप्त होता है।

इसी ग्रन्थ के चतुर्थाधिकार की गाथा ९ के नियमानुसार उक्त सूची-व्यासका सूक्ष्म परिधि प्रमाण एवं क्षेत्रफल प्राप्त होता है। यथा— $\sqrt{१२२४२^२ \times १०} = ३८७१३$ योजन परिधि। (वर्गमूल निकालने पर ३८७१२ यो० ही आते हैं। किन्तु शेष बची राशि आधे से अधिक है। अतः ३८७१३ योजन ग्रहण किये गये हैं।) (परिधि ३८७१३) × ($\frac{१}{४}$ व्यास का चतुर्थांश) =

---

१. द. अगम्मदेसं।

क्षेत्रफल प्राप्त हुआ। "खेत्तफलं वेह-गुणं बाहफलं होइ सव्वत्थ" ॥१७॥ त्रि० सार के नियमानुसार क्षेत्रफलको ऊँचाईसे गुणित करनेपर अगम्य क्षेत्रका प्रमाण ($^{१}\frac{१}{२}^{२} \times १३\frac{३}{४}^{२} \times १\frac{१}{२}^{१}$) = १३०३२९२५०१५ घन योजन प्राप्त होता है।

गाथा ६ में घन-योजन न कहकर मात्र योजन कहे गये हैं, जो विचारणीय है।

॥ निवासक्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ॥१॥

ज्योतिषदेवोंके भेद एवं वातवलयसे उनका अन्तराल—

चंदा दिवायरा गह-णक्खत्ताणि पइण्ण-ताराओ।
पंच - विहा जोदि - गणा, लोयंत घणोदहिं पुट्ठा ॥७॥

॥ ⁼ प्र $\frac{३}{४}$, फ $\frac{३}{४}$ २। इ ११००। ल १०८४ ॥

अर्थ—चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक तारा, इसप्रकार ज्योतिषी देवोंके समूह पाँच प्रकारके हैं। ये देव लोकके अन्तमें घनोदधि वातवलयको स्पर्श करते हैं ॥७॥

विशेषार्थ—संदृष्टिका स्पष्ट विवरण—

⁼ जगत्प्रतर का चिह्न है।

प्र प्रमाण है। यहाँ प्रमाण राशि ३$\frac{३}{४}$ रज्जू है।

$\frac{३}{४}$ यह रज्जू शब्द का चिह्न है और $\frac{३}{४}$ ये ३$\frac{३}{४}$ रज्जू हैं।

फ फल है। यहाँ फल राशि $\frac{३}{४}$ २ अर्थात् २ रज्जू है।

इ इच्छा है। जो ११०० योजन है। अर्थात् चित्रा पृथिवी एक हजार योजन मोटी है और ज्योतिषी देवोंकी अधिकतम ऊँचाई चित्राके उपरिम तलसे ९०० योजन की ऊँचाई पर्यन्त है अतः (१०००+९००)=११०० योजन इच्छा है।

ल लब्ध है। जो १०८४ योजन है।

शंका—१०८४ योजन लब्ध कैसे प्राप्त होता है?

समाधान—ऊर्ध्वलोक, मध्यलोकके समीप एक राजू चौड़ा है और ३$\frac{३}{४}$ राजूकी ऊँचाई पर ब्रह्मलोकके समीप ५ राजू चौड़ा है। एक राजू चौड़ी त्रस नाली छोड़ देनेपर लोकके एक पार्श्वभागमें (३$\frac{३}{४}$ राजूपर) दो राजूका अन्तराल प्राप्त होता है। ज्योतिषी देव मध्यलोकसे प्रारम्भकर ११०० योजनकी ऊँचाई पर्यन्त ही हैं अतः जबकि $\frac{३}{४}$ राजू की ऊँचाई पर (एक पार्श्वभागमें) २ राजू

अन्तराल है तब १९०० की ऊँचाई पर कितना अन्तराल प्राप्त होगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{\text{फल} \times \text{इच्छा}}{\text{प्रमाण}}$ = लब्ध । अर्थात् $\frac{२ \times १९०० \times २}{७} = ५४२\frac{६}{७}$ यो० अर्थात् १०८५$\frac{३}{७}$ यो० प्राप्त होता है । जो लब्धराशि १०८४ से १$\frac{३}{७}$ यो० अधिक है ।

सब ग्रहोंमें शनि ग्रह सर्वाधिक मन्दगतिवाला है, यदि इसकी तीन योजन ऊँचाई गौण करके मंगलग्रहकी ऊँचाई पर्यन्त इच्छा राशि (१०००+७९०+१०+८०+४+४+३+३+३) −१८९७ यो० ग्रहण की जाय तो लब्धराशि ($^{९४३}\frac{६}{७}$) = १०८४ योजन प्राप्त हो जाती है । (यह विषय विद्वानों द्वारा विचारणीय है) ।

णवरि विसेसो पुव्वावर-दक्खिण-उत्तरेसु भागेसुं ।
अंतरभत्थि त्ति ण ते, छिवंति जोइग्गणा वाऊ ॥८॥

अर्थ—विशेष इतना है कि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर भागोंमें अन्तर है । इसलिए ज्योतिषी देव उस घनोदधि वातवलयको नहीं छूते हैं ॥८॥

विशेषार्थ—गाथा ७ में कहा गया है कि ज्योतिषी देव लोकके अन्तमें घनोदधि वातवलय का स्पर्श करते हैं और गाथा ८ में स्पर्शका निषेध किया गया है । इसका स्पष्टीकरण यह है कि लोक दक्षिण-उत्तर सर्वत्र ७ राजू चौड़ा है अतः इन दोनों दिशाओंमें तो इन देवों द्वारा वातवलयका स्पर्श हो ही नहीं सकता । इसका विवेचन गा० १० में किया जा रहा है । पूर्व-पश्चिम स्पर्शका विषय भी इसप्रकार है कि मध्यलोकमें लोककी पूर्व-पश्चिम चौड़ाई एक राजू है वहाँ ये देव घनोदधि वातवलयका स्पर्श करते हैं, क्योंकि गाथा ५ में इनका निवासक्षेत्र, अगम्यक्षेत्रसे रहित राजू × राजू × ११० घन योजन प्रमाण कहा गया है । किन्तु जो ज्योतिषी-देव चित्राके उपरिम तलसे ऊपर-ऊपर हैं वे पूर्व-पश्चिम दिशाओंमें भी वातवलयका स्पर्श नहीं करते । इसे ही गाथा ९ में दर्शाया जा रहा है ।

पूर्व-पश्चिम दिशामें अन्तरालका प्रमाण—

पुव्वावर-बिंबाणं, एक्क-सहस्सं बिहत्तरब्भहियं ।
जोयणया पत्तेक्कं, कच्चस्सासंखभाग - परिहीणं ॥९॥

१०७२ । रिण $\frac{१}{रि}$ ।

अर्थ—पूर्व-पश्चिम दिशाओंमें प्रत्येक ज्योतिषी-बिम्बका यह अन्तराल एक योजनके असंख्यातवें भाग हीन एक हजार बहत्तर (१०७२) योजन प्रमाण है ॥९॥

विशेषार्थ—मध्यलोक पूर्व-पश्चिम एक राजू है। यहाँ वातवलयोंका बाहल्य-प्रमाण १२ योजन है। उपर्युक्त गाथा ८ में जो सूच्यंगुलरूप १०८४ योजन अन्तराल आया है। उसमेंसे वातवलयके १२ योजन घटा देनेपर (१०८४- १२)=१०७२ योजन शेष रहते हैं। यही वातवलय क्रमशः वृद्धिगत होते हुए ब्रह्मलोकके समीप (७+५+४)=१६ योजन हैं। इसप्रकार ३½ राजूकी ऊँचाई पर वातवलयोंकी वृद्धि (१६—१२)=४ योजन है, यह १९०० यो० की ऊँचाई पर आकर बढ़ते-बढ़ते असंख्यातवें भाग प्रमाण हो जाएगी। अतएव ग्रन्थकारने संदृष्टिमें १०७२ योजनोंमेंसे रूप (एक अंक) का असंख्यातवाँ भाग घटाया है।

दक्षिण-उत्तर दिशामें अन्तरालका प्रमाण—

तद्दक्खिणुत्तरेसुं, रज्जुस्सासंख - भाग - अहियाओ।
बारस - जोयण - हीणा, पत्तेक्कं तिण्णि रज्जूओ ॥१०॥

३ । रिण जो १२ । १ ।
रि

भेदो समत्तो ॥२॥

अर्थ—दक्षिण-उत्तर दिशाओंमें प्रत्येक ज्योतिषी-बिम्ब का यह अन्तराल रूपके असंख्यातवें भागसे अधिक एवं १२ योजन कम तीन राजू प्रमाण है ॥१०॥

विशेषार्थ—लोक दक्षिणोत्तर ७ राजू विस्तृत (मोटा) है और इसके मध्यमें त्रस नाली मात्र एक राजू प्रमाण मोटी है, अतः इन दिशाओंमें ज्योतिषीदेवोंका स्पर्श वातवलयोंसे नहीं होता अर्थात् त्रस नालीसे वातवलय ३ राजू दूर हैं। पूर्वोक्त गाथानुसार तीन राजूमेंसे वातवलय सम्बन्धी १२ योजन और रूपका असंख्यातवाँ भाग घटाया गया है। संदृष्टिमें ३ का यह चिह्न राजूका है और $\frac{१}{रि}$ एक घटा असंख्यातवाँ भागका चिह्न है। अर्थात् ३ राजू — $(१२ + \frac{१}{असं०})$ अन्तर है।

भेदका कथन समाप्त हुआ ॥२॥

ज्योतिष देवोंकी संख्याका निर्देश—

अहिदम्मि सेढि-वग्गे, बे-सय-छप्पण्ण-अंगुल-कदीए।
जं लद्धं सो राशी, जोइसिय - सुराण संखाणं ॥११॥

$\frac{२}{७}$ । ६५५३६ ।

अर्थ—दो सौ छप्पन अंगुलोंके वर्ग (२५६×२५६=६५५३६ प्रतरांगुलों) का जगच्छ्रेणी के वर्ग (जगत्प्रतर) में भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सम्पूर्ण ज्योतिषीदेवोंकी (जगच्छ्रेणी^{२} ÷ ६५५३६) राशि है ॥११॥

इन्द्र स्वरूप चन्द्र ज्योतिषी देवोंका प्रमाण—

अट्ठ-चउ-दु-ति-ति-सत्ता सत्त य ठाणेसु णवसु सुण्णाणि ।
छत्तीस-सत्त-दु-णव-अट्ठा-ति-चउक्का होंति अंक-कमा ॥१२॥

= । ४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८ ।

एदेहि गुणिद-संखेज्ज-कद-पदरंगुलेहिं भजिदाए ।
सेढि - कदीए लद्धं, माणं चंदाण जोइसिंदाणं ॥१३॥

अर्थ – आठ, चार, दो, तीन, तीन, सात, सात, नौ स्थानोंमें शून्य, छत्तीस, सात, दो, नौ, आठ, तीन और चार ये अंक क्रमशः होते हैं। चन्द्र ज्योतिषी देवोंके इन्द्र हैं और इनका प्रमाण उपर्युक्त अंकोंसे गुणित संख्यात रूप प्रतरांगुलोंका जगच्छ्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना [जगच्छ्रेणी^{2} ÷ { (संख्यात प्रतरांगुल) × (४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८) }] है ॥१२-१३॥

प्रतीन्द्र स्वरूप सूर्य ज्योतिषी देवोंका प्रमाण—

तेत्तियमेत्ता रविणो, हवंति चंदाण ते पडिंदा त्ति ।
अट्ठासीदि गहाणि, एक्केक्काणं मयंकाणं ॥१४॥

= । ४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८ ।

अर्थ—सूर्य, चन्द्रोंके प्रतीन्द्र होते हैं। इन (सूर्यों) का प्रमाण भी उतना [जगच्छ्रेणी^{2} ÷ { (संख्यात प्रतरांगुल) × (४३८९२७३६०००००००००७७३३२४८) }] ही है। प्रत्येक चन्द्रके अठासी ग्रह होते हैं ॥१४॥

अठासी ग्रहोंके नाम—

बुह-सुक्क-बिहप्पइणो, मंगल-सणि-काल-लोहिदा कणओ ।
चोल - विकाला केसी, कवयवहो कवय - संठाणा ॥१५॥

(१३[1]) ।

दुंदुभिगो रत्तणिभो, णीलवभासो असोय - संठाणो ।
कंसो कवयिभक्खो, [2]कंसवण्णो य संखपरिणामा ॥१६॥

(८) ।

---

१. ब. क. ज. १४ । २. द. ब. क. ज. क. कंसयवण्णो ।

तिलपुप्फ-संखवण्णोदय-वण्णो पंचवण्ण-णामधया ।
उप्पाय - धूमकेदू, तिलो य णभ - खाररासी य ॥१७॥

। ९[1] ।

घोरघर-सरिस-संधी, कलेवराभिण्ण-गंधि-माणवया ।
कालक-कालककेदू, णियड-अणय-विज्जुजोहा य ॥१८॥

। १२ ।

सिंहालक-णिद्दुक्खा, काल-महाकाल-रुद्द-महरुद्दा ।
संताण - विउल - संभव - सव्वट्ठी सेम - चंदो य ॥१९॥

। १३[2] ।

णिम्मंत-मोहमंता, विससंठिय-विरद-वीतसोका य ।
णिक्कल-पसंत-भासुर-सयंपभा विजय-वइजयंते य ॥२०॥

। ११[3] ।

सीमंकरावराजिय[4]-अयंत-विमलाभयंकरो विजसो[5] ।
कहुो विमहो[6] कज्जलि, अग्गीजालो असोकधो केदू ॥२१॥

। १२ ।

खीरसधस्सवण-उज्जलकेदु-केदु-अंतरय-एवकसंठाणा ।
अस्सो य अवावग्गह, चरिमा य महग्गहा णामा ॥२२॥

। १० ।

अर्थ—१बुध, २शुक्र, ३बृहस्पति, ४मंगल, ५शनि, ६काल, ७लोहित, ८कनक, ९नील, १०विकाल, ११केतु, १२कवयव, १३कनकसंस्थान, १४दुंदुभिक, १५रक्तनिभ, १६नीलाभास, १७अशोकसंस्थान, १८कंस, १९रूपनिभ, २०कंसकवर्ण, २१संखपरिणाम, २२तिलपुष्प, २३संखवर्ण, २४उदकवर्ण, २५पंचवर्ण, २६उत्पात, २७धूमकेतु, २८तिल, २९नभ, ३०क्षाररासि, ३१विजिष्णु, ३२सहित, ३३संधि, ३४कलेवर, ३५अभिन्न, ३६ग्रंथि, ३७मानवक, ३८कालक, ३९कालकेतु ४०निलय, ४१अनय, ४२विद्युज्जिह्व, ४३सिंह, ४४अलक, ४५निर्दुःख, ४६काल, ४७महाकाल, ४८रुद्र, ४९ महारुद्र, ५०सन्तान, ५१विपुल, ५२सम्भव, ५३सर्वार्थी, ५४क्षेम, ५५चन्द्र, ५६निर्मन्त्र, ५७ज्योतिष्मान्,

---

१. ब. अ. १०। २. ट. ब. क. ज, १२। ३. ब. अ. क. ज, १०। ४. ब. ब. क. क, ब, जय। ५. ब. ब. क. ज. विमला। ६. ब. ब. क. ब. विमलो।

५८विसंसंस्थित, ५९विरत, ६०वीतशोक, ६१निश्चल, ६२प्रलम्ब, ६३भासुर, ६४स्वयंप्रभ, ६५विजय, ६६वैजयन्त, ६७सोमङ्कर, ६८अपराजित, ६९जयन्त, ७०विमल, ७१अभयंकर, ७२विकस, ७३काष्ठी, ७४विकट, ७५कज्जली, ७६अग्निज्वाल, ७७अशोक, ७८केतु, ७९क्षीरस, ८०अघ, ८१श्रवण, ८२जलकेतु, ८३केतु, ८४अन्तरद, ८५एकसंस्थान, ८६अश्व, ८७भावग्रह और अन्तिम ८८महाग्रह, इसप्रकार ये अठासी ग्रह हैं ॥१५-२२॥

सम्पूर्ण ग्रहोंकी संख्याका प्रमाण—

छप्पण छक्कं छक्कं, छण्णव सुण्णाणि होंति[1] दस-ठाणा ।
दो - णव - पंचय - छक्कं, अट्ठ-चऊ-पंच-अंक-कमे ॥२३॥

एदेण गुणिद - संखेज्ज - रूव - पदरंगुलेहि भजिदूणं ।
सेढि-कदी एक्कारस-हदम्मि सव्वग्गहाण परिमाणं ॥२४॥

= [११ ५४८६५९२०००००००००९६६६५६ ।

अर्थ—छह, पांच, छह, छह, छह, नौ, दस स्थानोंमें शून्य, दो, नौ, पांच, छह, आठ, चार और पांच, इस अङ्क-क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यातरूप प्रतरांगुलोंका जगच्छ्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे ग्यारहसे गुणित करनेपर सम्पूर्ण ग्रहोंका प्रमाण [{ ज० श्रे०[2] ÷ (सं० प्रतरांगुल) × (५४८६५९२०००००००००९६६६५६) } × ११] होता है ॥२३-२४॥

नोट—गाथा ११ से १४ और २३-२४ में सदृष्टि रूपसे स्थापित चन्द्र-सूर्यादि ज्योतिषी देवोंका यह प्रमाण कैसे प्राप्त किया गया है ? इसे जाननेका एक मात्र साधन त्रिलोकसार गा० ३६१ की टीका है, अतः वहांसे जानना चाहिए ।

एक-एक चन्द्रके नक्षत्रोंका प्रमाण एवं उनके नाम—

एक्केक्क - ससंकाणं, अट्ठावीसा हुवंति णक्खत्ता ।
एदाणं णामाइं, कम - जुत्तीए परूवेमो ॥२५॥

अर्थ—एक-एक चन्द्रके अट्ठाईस-अट्ठाईस नक्षत्र होते हैं । यहाँ उनके नाम क्रम-युक्तिसे अर्थात् क्रमशः कहते हैं ॥२५॥

कित्तिय-रोहिणि-मिगसिर[3]-अद्दाओ[4] पुणव्वसु तहा पुस्सो ।
असिलेसादी मघओ, पुव्वाओ उत्तराओ हत्थो य ॥२६॥

---

१. ब. क. हुंति । २ ब. क. मिगसिरे । ३. ब. अद्दउ ।

विदाओ सादीओ, होंति विसाहाणुराह - जेट्ठाओ ।
मूलं पुव्वासाढा, तत्तो वि य उत्तरासाढा ॥२७॥

अभिजी-सवण-धणिट्ठा, सदभिस-णामाओ पुव्वभद्दपदा ।
उत्तरभद्दपदा रेवदीओ तह अस्सिणी भरणी ॥२८॥

अर्थ—१कृत्तिका, २रोहिणी, ३मृगशीर्षा, ४आर्द्रा, ५पुनर्वसु, ६ पुष्य, ७आश्लेषा, ८मघा, ९पूर्वाफाल्गुनी, १०उत्तराफाल्गुनी, ११हस्त, १२चित्रा, १३स्वाति, १४विशाखा, १५अनुराधा, १६ज्येष्ठा, १७मूल, १८पूर्वाषाढ़ा, १९उत्तराषाढ़ा, २०अभिजित्, २१श्रवण, २२धनिष्ठा, २३शतभिषा, २४पूर्वभाद्रपदा, २५उत्तराभाद्रपदा, २६रेवती, २७अश्विनी और २८भरणी ये उन नक्षत्रोंके नाम हैं ॥२६-२८॥

समस्त नक्षत्रोंका प्रमाण—

दुग-इगि-तिय-ति-ति-णवया, एक्का ठाणेसु णवसु सुण्णाणि ।
चउ-अट्ठ-एक्क-तिय-सत्त - णवय - गयणेक्क अंक - कमे ॥२९॥

एदेहि गुणिद - संखेज्ज - रूव - पदरंगुलेहि भजिदूणं ।
सेढि - कदी सत्त - हदे, परिसंखा सव्व - रिक्खाणं ॥३०॥

२ १ ३ । १०९७३१८४०००००००००१९३३३१२ ।

अर्थ—दो, एक, तीन, तीन, तीन, नौ, एक, नौ स्थानोंमें शून्य, चार, आठ, एक, तीन, सात, नौ, शून्य और एक, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यात रूप प्रतरांगुलोंका जगच्छ्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे सातसे गुणा करनेपर सब नक्षत्रोंकी संख्याका प्रमाण [{ जगच्छ्रेणी^{2} ÷ (संख्यात प्रतरांगुल) × (१०९७३१८४०००००००००१९३३३१२) } × ७] होता है ॥२९-३०॥

एक चन्द्र सम्बन्धी ताराओंका प्रमाण—

एक्केक्क - मयंकाणं, हवंति तारागण कोडिकोडीओ ।
छावट्ठि-सहस्साणं, णव - सया पंचहत्तरि - जुदाणि ॥३१॥

६६९७५०००००००००००० ।

अर्थ—एक एक चन्द्रके छयासठ हजार नौ सौ पचहत्तर-कोड़ाकोड़ी तारागण होते हैं ॥३१॥

ताराओंके नामोंके उपदेशका अभाव—

संपहि काल-वसेणं, तारा-णामाण णत्थि उवएसो ।
एदाणं संखाणं, परमाणाणि परूवेमो ॥३२॥

अर्थ—इस समय कालके वशसे ताराओंके नामोंका उपदेश नहीं है। इन सबका प्रमाण कहता हूँ ॥३२॥

समस्त ताराओंका प्रमाण—

दुग-सत्त-चउक्काइं, एक्कारस - ठाणएसु सुण्णाइं ।
णव - सत्त - छ्व्दुगाइं, अंकाण कमेण एदेसिं ॥३३॥
संगुणिदेहिं संखेज्जरूव - पदरंगुलेहि भजिदव्वो ।
सेढी-वग्गो तत्तो, पण-सत्त - त्तिय - चउक्कट्ठा ॥३४॥
णव-अट्ठ-पंच-णव-दुग-अट्ठा-सत्तट्ठ-णह-चउक्काणि ।
अंक - कमे गुणिदव्वो, परिसंखा सव्व - ताराणं ॥३५॥

=४०८७८२९५८९८४३७५

४ । ७ । २६७९०००००००००००४७२ ।

एवं संखा समत्ता ॥३॥

अर्थ—दो, सात, चार, ग्यारह स्थानोंमें शून्य, नौ, सात, छह और दो, इस अंक क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उससे गुणित संख्यातरूप प्रतरांगुलोंका जगच्छ्रेणीके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसको पाँच, सात, तीन, चार, आठ, नौ, आठ, पाँच, नौ, दो, आठ, सात, आठ, शून्य और चार, इन अंकोंसे गुणा करनेपर समस्त ताराओंका प्रमाण [{ जगच्छ्रेणी^{2} ÷ (संख्यात प्रतरांगुल) × (२६७९०००००००००००४७२) } × (४०८७८२९५८९८४३७५)] होता है ॥३३-३५॥

इसप्रकार संख्याका कथन समाप्त हुआ ॥३॥

चन्द्र-मण्डलोंकी प्ररूपणा—

गंतूणं तीवि - जुदं, अट्ठसया जोयणाणि चित्ताए ।
उवरिम्मि मंडलाइं, संदाणं होंति गयणम्मि ॥३६॥

। ८८० ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीसे आठ सौ अस्सी (८८०) योजन ऊपर जाकर आकाशमें चन्द्रोंके मण्डल (विमान) हैं ॥३६॥

उत्ताणद्धट्ठिद-गोलकद्ध[1] सरिसाणि ससि-मणिमयाणि ।
ताणं पुह पुह बारस-सहस्स-सिसिरतर-मंद-किरणाणि ॥३७॥

। १२००० ।

अर्थ—चन्द्रोंके मणिमय विमान उत्तानमुख अर्थात् ऊर्ध्वमुखरूपसे अवस्थित अर्ध-गोलक सदृश हैं। उनकी पृथक्-पृथक् बारह (१२०००) हजार प्रमाण किरणें अतिशय शीतल एवं मन्द हैं ॥३७॥

विशेषार्थ—जिसप्रकार एक गोले (गेंद) के दो खण्ड करके उन्हें ऊर्ध्वमुख रखा जावे तो चौड़ाईका भाग ऊपर और गोलाईवाला सँकरा भाग नीचे रहता है। उसीप्रकार ऊर्ध्वमुख अर्ध-गोलेके सदृश चन्द्र विमान स्थित हैं। सभी ज्योतिषी देवोंके विमान इसीप्रकार उत्तानमुख अवस्थित हैं ॥

तेसु ठिद-पुढवि-जीवा, जुत्ता उज्जोव-कम्म उदएणं ।
अम्हा तम्हा ताणि, फुरंत-सिसिरयर-मंद-किरणाणि ॥३८॥

अर्थ—उन (चन्द्रविमानों) में विद्यमान पृथिवीकायिक जीव उद्योत नामकर्मके उदयसे संयुक्त हैं अतः वे प्रकाशमान् अतिशय शीतल और मन्द किरणोंसे संयुक्त होते हैं ॥३८॥

एक्कट्ठी-भाग-कदे, ओयणए ताण होदि छप्पण्णा ।
उवरिम-तलाण रुंदं, तदद्ध[2] - बहलं पि पत्तेक्कं ॥३९॥

। ५६ । ३९ ।

अर्थ:—एक योजनके इकसठ भाग करने पर उनमें से छप्पन भागोंका जितना प्रमाण है, उतना विस्तार इन चन्द्र-विमानोंमेंसे प्रत्येक चन्द्र विमानके उपरिम तलका है और बाहल्य इससे आधा है ॥३९॥

एक्काणं परिहीओ, पुह पुह दो ओयणाणि अधिरेको ।
ताणि अकिट्टिमाणि, अणाइणिहणाणि बिंबाणि ॥४०॥

अर्थ:—इनकी परिधियाँ पृथक्-पृथक् दो योजनसे कुछ अधिक हैं। ये चन्द्र बिम्ब अकृत्रिम एवं अनादिनिधन हैं ॥४०॥

विशेषार्थ:—प्रत्येक चन्द्र विमान का व्यास २$\frac{८}{६१}$ योजन और परिधि २ योजन ३ कोस, कुछ कम १२२५ धनुष प्रमाण है।

---

१. द. ब. गोलगकद्ध। २. द. ब. क. ज. दलद्ध।

चउ-गोउर-संजुत्ता, तड-वेदी तेसु होदि पत्तेक्कं ।
तम्मज्झे वर - वेदी - सहिदं रायंगणं रम्मं ॥४१॥

अर्थ :—उनमेंसे प्रत्येक विमानकी तट-वेदी चार गोपुरोंसे संयुक्त होती है। उसके बीचमें उत्तम वेदी सहित रमणीय राजाङ्गण होता है ॥४१॥

रायंगण-बहु-मज्झे, वर-रयणमयाणि दिव्व-कूडाणि ।
कूडेसु जिण - घराणि, वेदी चउ - तोरण जुदाणि ॥४२॥

अर्थ :- राजाङ्गणके ठीक बीचमें उत्तम रत्नमय दिव्य कूट और उन कूटोंपर वेदी एवं चार तोरणोंसे संयुक्त जिन-मन्दिर अवस्थित हैं ॥४२॥

ते सव्वे जिण-भवणा, मुत्तावलि-कणय-दाम-कमणिज्जा ।
वर-वज्ज-कवाड-जुदा, दिव्व - विदाणेहिं रेहंति ॥४३॥

अर्थ :- वे सब जिन-मन्दिर मोती एवं स्वर्णकी मालाओंसे रमणीक और उत्तम वज्रमय किवाड़ोंसे संयुक्त होते हुए दिव्य चन्दोवोंसे सुशोभित रहते हैं ॥४३॥

दिप्पंत-रयण-दीवा, अट्ठ-महामंगलेहि परिपुण्णा ।
वंदणमाला-चामर - किंकिणिया - जाल - सोहिल्ला ॥४४॥

अर्थ—वे जिन-भवन देदीप्यमान रत्नदीपकों एवं अष्ट महामंगल द्रव्योंसे परिपूर्ण और वन्दनमाला, चंवर तथा क्षुद्र घण्टिकाओंके समूहसे शोभायमान होते हैं ॥४४॥

एदेसुं भट्टसभा, अभिसेय - सभा विचित्त-रयणमई ।
कीडण - साला विविहा, ठाण - ट्ठाणेसु सोहंति ॥४५॥

अर्थ—इन जिन-भवनोंमें स्थान-स्थान पर विचित्र रत्नोंसे निर्मित नाट्य सभा, अभिषेक सभा और विविध क्रीड़ा-शालाएं सुशोभित होती हैं ॥४५॥

महल-मुइंग-पटह-प्पहुदीहि विविह दिव्व - तूरेहिं ।
उदहि-सरिच्छ-रवेहिं, जिण-गेहा णिच्च-हलबोला ॥४६॥

अर्थ—वे जिन-भवन समुद्र सदृश गम्भीर शब्द करने वाले मर्दल, मृदंग और पटह आदि विविध दिव्य वादित्रोंसे नित्य शब्दायमान रहते हैं ॥४६॥

छत्त-त्तय - सिंहासण - भामंडल - चामरेहि जुत्ताइं ।
जिण - पडिमाओ तेसुं, रयणमईओ विराजंति ॥४७॥

अर्थ—उन जिन-भवनोंमें तीन छत्र, सिंहासन, भामण्डल और चामरोंसे संयुक्त रत्नमयी जिन-प्रतिमाएँ विराजमान हैं ॥४७॥

सिरिदेवी सुददेवी, सव्वाण सणक्कुमार-जक्खाणं[1] ।
रूवाणि अण - हराणि, रेहंति जिणिंद - पासेसुं ॥४८॥

अर्थ—जिनेन्द्र बिम्बके पार्श्वमें श्रीदेवी, श्रुतदेवी, सर्वाण्हयक्ष और सनत्कुमार यक्षकी मनोहर मूर्तियाँ शोभायमान होती हैं ॥४८॥

जल-गंध-कुसुम-तंदुल-वर-भक्ख-पदीव-धूव-फल-पुण्णं ।
कुव्वंति ताण पुज्जं, णिब्भर - भत्तीए सव्व - सुरा ॥४९॥

अर्थ—सब चन्द्रदेव गाढ़ भक्तिसे उन जिनेन्द्र प्रतिमाओं की जल, गन्ध, तन्दुल, पुष्प, उत्तम नैवेद्य, दीप, धूप और फलोंसे पूजा करते हैं ॥४९॥

चन्द्र-प्रासादोंका वर्णन—

एदाणं कूडाणं, समंतदो होंति चंद - पासादा ।
समचउरस्सा दीहा, णाणा - विण्णास - रमणिज्जा ॥५०॥

अर्थ—इन कूटोंके चारों ओर समचतुष्कोण लम्बे और अनेक प्रकारके विन्यासोंसे रमणीय चन्द्रोंके प्रासाद होते हैं ॥५०॥

मरगय-वण्णा केई, केई कुंदेंदु-हार-हिम-वण्णा ।
अण्णे सुवण्ण-वण्णा, अवरे वि पवाल-सिंह-वण्णा ॥५१॥

अर्थ—इनमेंसे कितने ही प्रासाद मरकतवर्ण वाले, कितने ही कुन्दपुष्प, चन्द्र, हार एवं बर्फ जैसे वर्णवाले; कोई स्वर्ण सदृश वर्णवाले; और दूसरे (कोई) मूँगे सदृश वर्णवाले हैं ॥५१॥

उववाद-मंदिराइं, अभिसेय-पुराणि भूसण-गिहाणि ।
मेहुण-कीडण-सालाओ मंत - अत्थाण - सालाओ ॥५२॥

अर्थ—इन भवनोंमें उपपाद मन्दिर, अभिषेकपुर, भूषणगृह, मैथुनशाला, क्रीड़ाशाला, मन्त्रशाला और आस्थान-शालाएँ (सभाभवन) स्थित हैं ॥५२॥

ते सव्वे पासादा, वर-पायारा विचित्त-गोउरया ।
मणि-तोरण-रमणिज्जा, जुत्ता बहुविध-विण्णासेहिं[2] ॥५३॥

---

१. द. क. रूवाणं । २. द. ब. क. ज. विसेसो ।

उववण-पोक्खरणीहिं, विराजमाणा विचित्त-रूवाहिं ।
कणयमय-विउल-खंभा, सयणासण-पहुदि-पुण्णाणि ॥५४॥

अर्थ—वे सब प्रासाद उत्तम कोटों तथा विचित्र गोपुरोंसे संयुक्त, मणिमय तोरणोंसे रमणीय, नाना प्रकारके चित्रोंवाली दीवालोंसे युक्त, विचित्र रूपवाली उपवन-वापिकाओंसे सुशोभित और स्वर्णमय विशाल खम्भोंसे युक्त हैं तथा शयनासनों आदिसे परिपूर्ण हैं ॥५३-५४॥

सद्द-रस-रूव-गंधं, पासेहि जिरूवमेहि सोक्खाणि ।
देंति विविहाणि दिव्वा, पासादा धूव - गंधड्ढा ॥५५॥

अर्थ—धूपकी सुगन्धसे व्याप्त ये दिव्य प्रासाद शब्द, रस, रूप, गन्ध और स्पर्शसे विविध अनुपम सुख प्रदान करते हैं ॥५५॥

सत्तट्ठ - पहुदीओ, भूमीओ भूसिदाओ कूडेहिं ।
विप्फुरिद-रयण-किरणावलीओ भवणेसु रेहंति ॥५६॥

अर्थ—(उन) भवनोंमें कूटोंसे विभूषित और प्रकाशमान रत्न-किरण-पंक्तियोंसे संयुक्त सात-आठ आदि भूमियाँ शोभायमान होती हैं ॥५६॥

चन्द्रके परिवार देव-देवियोंका निरूपण—

तम्मंदिर - मज्झेसुं, चंदा सिंहासणस्समारूढा ।
पत्तेक्कं चंदाणं, चत्तारो अग्ग - महिसीओ ॥५७॥

[४]

अर्थ—इन मन्दिरोंके बीचमें चन्द्रदेव सिंहासनोंपर विराजमान रहते हैं। उनमेंसे प्रत्येक चन्द्रके चार-चार अग्रमहिषियाँ (पट्टदेवियाँ) होती हैं ॥५७॥

चंदाभ-सुसीमाओ, पहंकरा[1] अच्चिमालिणी ताणं ।
पत्तेक्कं परिवारा, चत्तारि - सहस्स - देवीओ ॥५८॥

णिय-णिय-परिवार-समं, विकिरियं करिसियंति देवीओ ।
चंदाणं परिवारा, अट्ठ - विहप्पा य पत्तेक्कं ॥५९॥

पडिइंदा सामाणिय-तणुरक्खा तह हवंति तिप्परिसा ।
सत्ताणीय - पइण्णय - अभियोगा किब्बिसा देवा ॥६०॥

---

१. द. ब. क. ज. णहंकरा ।

अर्थ—चन्द्राभा, सुसीमा, प्रभङ्करा और अर्चिमालिनी, ये उन अग्र-देवियों के नाम हैं। इनमेंसे प्रत्येक की चार-चार हजार प्रमाण परिवार देवियाँ होती हैं। अग्रदेवियाँ अपनी-अपनी परिवार देवियोंके सदृश अर्थात् चार हजार रूपों प्रमाण विक्रिया दिखलाती हैं। प्रतीन्द्र, सामानिक, तनुरक्ष, तीनों पारिषद, सात अनीक, प्रकीर्णक, अभियोग्य और किल्बिष, इसप्रकार प्रत्येक चन्द्रके आठ प्रकारके परिवार देव होते हैं ॥५८-६०॥

सयलिंदाण पडिंदा, एक्केक्का होंति ते वि आइच्चा ।
सामाणिय - तणुरक्ख - प्पहुदी संखेज्ज - परिमाणा ॥६१॥

अर्थ—सब चन्द्र इन्द्रोंके एक-एक प्रतीन्द्र होता है। वे (प्रतीन्द्र) सूर्य ही हैं। सामानिक और तनुरक्ष आदि देव संख्यात प्रमाण होते हैं ॥६१॥

रायंगण - बाहिरए, परिवाराणं हवंति पासादा ।
विविह-वर-रयण-रइदा, विचित्त-विण्णास-भूदीहिं ॥६२॥

अर्थ—राजाङ्गणके बाहर विविध उत्तम रत्नोंसे रचित और अद्भुत विन्यासरूप विभूति सहित परिवार-देवोंके प्रासाद होते हैं ॥६२॥

चन्द्र विमानके वाहक देवोंके आकार एवं उनकी संख्या—

सोलस-सहस्समेत्ता, अभिओग-सुरा हवंति पत्तेक्कं ।
संदाण घरतलाइं, विकिरिया - साविणो णिच्चं ॥६३॥

। १६००० ।

अर्थ—प्रत्येक (चन्द्र) इन्द्रके सोलह हजार प्रमाण आभियोग्य देव होते हैं जो चन्द्रोंके गृहतलों (विमानों) को नित्य ही विक्रिया धारण करते हुए वहन करते हैं ॥६३॥

चउ-चउ-सहस्समेत्ता, पुव्वादि-दिसासु कुंद-संकासा ।
केसरि-करि-वसहाणं, जडिल - तुरंगाण [1] रूवधरा ॥६४॥

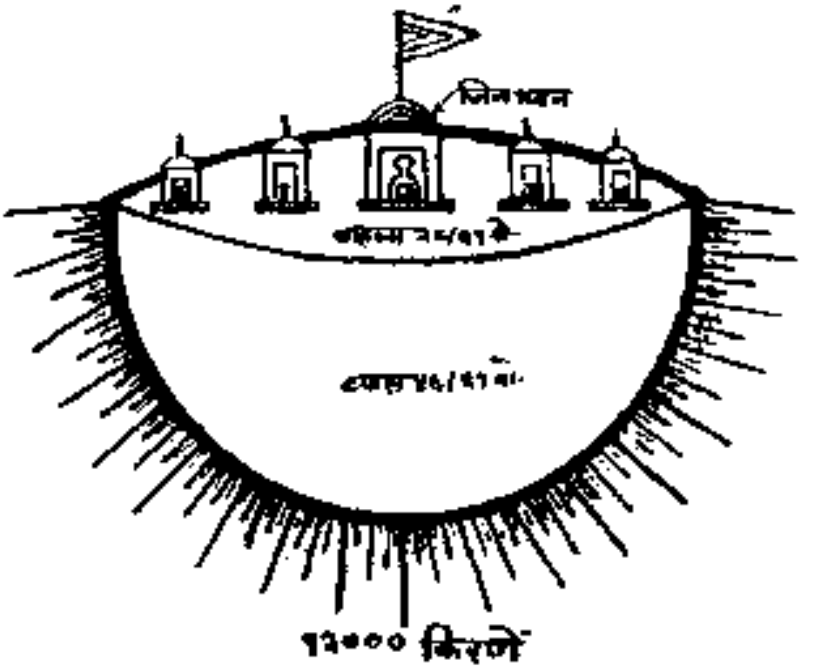
अर्थ—सिंह, हाथी, बैल और जटा युक्त घोड़ोंको धारण करने वाले तथा कुन्द-पुष्प सदृश सफेद चार-चार हजार प्रमाण देव (क्रमशः) पूर्वादिक दिशाओंमें (चन्द्र-विमानोंको वहन करते) हैं ॥६४॥

चन्द्र-विमान का चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये।

---

१. ब. अ. क. प. रूववरा।

चन्द्र विमान



सूर्य-मण्डलोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, उवरिं गंतूण जोयणट्ठ-सदं ।
दिवयर-चयर-तलाइं, चिट्ठंति णयणम्मि ॥६५॥

। ८०० ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीके उपरिमतलसे ऊपर आठ सौ (८००) योजन जाकर आकाशमें दिवस (आयत) नगरतल स्थित हैं ॥६५॥

उत्ताहत्थबहुल-जोयणया[1] परिहाणि रवि-ससिमयाणि ।
ताणं पुह पुह बारस-सहस्स-उच्छेह-किरणाणि ॥६६॥

। १२००० ।

अर्थ—सूर्योंके वलिमय विमान ऊर्ध्व अवस्थित अर्ध-योजन बाहल्य हैं। उनकी पृथक्-पृथक् बारह हजार (१२०००) किरणें उच्छेधरूप होती हैं ॥६६॥

---

१. द. ब. क. ज. योयणया ।

तेसु ठिद-पुढवि-जीवा, उत्ता आदाव-कम्म-उदएणं ।
जम्हा तम्हा तेणिं, फुरंत उण्हयर - किरणाणि ॥६७॥

अर्थ—क्योंकि उन (सूर्य विमानों) में स्थित पृथिवीकायिक जीव आताप नामकर्मके उदयसे संयुक्त होते हैं अतः वे प्रकाशमान उष्णतर किरणोंसे युक्त होते हैं ॥६७॥

[1]एक्कट्ठी-भाग-कदे, जोयणए ताण होंति अडवालं ।
सव्वरिम - तलाण रुंदं, तावद्ध - बहुलं पि पत्तेक्कं ॥६८॥

[४८/६१]

अर्थ—एक योजनके इकसठ (६१) भाग करनेपर उनमेंसे अड़तालीस (४८) भागोंका जितना प्रमाण है उतना विस्तार उन सूर्य विमानोंमेंसे प्रत्येक सूर्य बिम्बके उपरिमतलका है और बाहल्य इससे आधा होता है ॥६८॥

एदाणं परिहीओ, पुह पुह बे जोयणाणि अदिरेगा ।
ताणि अकिट्टिमाणि, अणादिणिहणाणि बिंबाणि ॥६९॥

अर्थ—इनकी परिधियाँ पृथक्-पृथक् दो योजनोंसे अधिक हैं। वे सूर्य-बिम्ब अकृत्रिम एवं अनादिनिधन हैं ॥६९॥

विशेषार्थ—प्रत्येक सूर्य विमानका व्यास $\frac{४८}{६१}$ योजन और परिधि २ योजन १ कोस, कुछ कम १९०७ धनुष प्रमाण है।

पत्तेक्कं तड - वेदी, चउ-गोउर-दार-सुंदरा ताणं ।
तम्मज्झे वर - वेदी - सहिदं रायंगणं होदि ॥७०॥

अर्थ—उनमेंसे प्रत्येक सूर्य-विमानकी तट-वेदी चार गोपुरद्वारों से सुन्दर होती है। उसके बीचमें उत्तम वेदीसे संयुक्त राजाङ्गण होता है ॥७०॥

रायंगणस्स मज्झे, वर-रयणमयाणि दिव्व-कूडाणि ।
तेसुं जिण - पासादा, वेट्ठंते सूरकंतमया ॥७१॥

अर्थ—राजाङ्गणके मध्यमें जो उत्तम रत्नमय दिव्य कूट होते हैं उनमें सूर्यकान्त मणिमय जिन-भवन स्थित हैं ॥७१॥

एदाणं मंदिराणं, सयंकपुर - कूड - भवण-सारिच्छं ।
सव्वं विय वण्णणयं, णिद्दणेहिं एत्थ वत्तव्वं ॥७२॥

---

१. ब. क. ज. एक्कसट्ठिय, ब. एक्कसट्ठिय ।

अर्थ—निपुण पुरुषोंको इन मन्दिरोंका सम्पूर्ण वर्णन चन्द्रपुरोंके कूटोंपर स्थित जिन-भवनोंके सदृश यहाँ भी करना चाहिए ॥७२॥

तेसु जिण-पडिमाओ, पुव्वोदिद-वण्णणा पयाराओ ।
विविहच्चण - वव्वेहिं, ताओ पूजंति सव्व - सुरा ॥७३॥

अर्थ—उनमें जो जिन-प्रतिमाएँ विराजमान हैं उनके वर्णनका प्रकार पूर्वोक्त के ही सदृश है। समस्त देव अनेक प्रकारके पूजा-द्रव्योंसे उन प्रतिमाओंकी पूजा करते हैं ॥७३॥

एदाणं कूडाणं, होदि समंतेण सूर - पासादा ।
ताणं पि वण्णणाओ, ससि - पासादेहि सरिसाओ ॥७४॥

अर्थ—इन कूटोंके चारों ओर जो सूर्य-प्रासाद हैं उनका भी वर्णन चन्द्र-प्रासादोंके सदृश है ॥७४॥

तण्णिलयाणं मज्झे, विवायरा दिव्व-सिंह-पीढेसु ।
वर - छत्त - चमर - जुत्ता, धेट्ठंते दिव्वयर - तेया ॥७५॥

अर्थ—उन भवनोंके मध्यमें उत्तम छत्र-चँवरोंसे संयुक्त और अतिशय दिव्य तेजको धारण करने वाले सूर्य देव दिव्य सिंहासनों पर स्थित होते हैं ॥७५॥

सूर्यके परिवार देव-देवियोंका निरूपण—

जुदिसुदि-पहंकराओ, सूरपहा-अच्चिमालिणीओ वि ।
पत्तेक्कं अग्गाओ, चु - मणीयं अग्ग - देवीओ ॥७६॥

अर्थ—प्रत्येक सूर्यकी द्युतिश्री, प्रभंकरा, सूर्यप्रभा और अर्चिमालिनी, ये चार अग्र-देवियाँ होती हैं ॥७६॥

देवीणं परिवारा, पत्तेक्कं चउ - सहस्स - देवीओ ।
णिय-णिय-परिवार-समं, विकिरियं ताओ गेण्हंति ॥७७॥

अर्थ—इनमेंसे प्रत्येक अग्र-देवीकी चार हजार परिवार-देवियाँ होती हैं। वे अपने-अपने परिवार सदृश अर्थात् चार-चार हजार रूपोंकी विक्रिया ग्रहण करती हैं ॥७७॥

सामाणिय-तणुरक्खा; ति-परिसाओ सत्तअणीया ।
अभियोगा किब्बिसिया, सत्त-विहा सूर-परिवारा ॥७८॥

अर्थ—सामानिक, तनुरक्षक, तीनों पारिषद, प्रकीर्णक, अनीक, अभियोग्य और किल्बिषिक, इसप्रकार सूर्य देवोंके सात प्रकारके परिवार देव होते हैं ॥७८॥

रायंगण बाहिरए, परिवाराणं हवंति पासादा ।
वर - रयण - भूसिदाणं, फुरंत - तेयाण सव्वाणं ॥७९॥

अर्थ—उत्तम रत्नोंसे विभूषित और प्रकाशमान तेज को धारण करने वाले समस्त परिवार-देवों के प्रासाद राजाङ्गणके बाहर होते हैं ॥७९॥

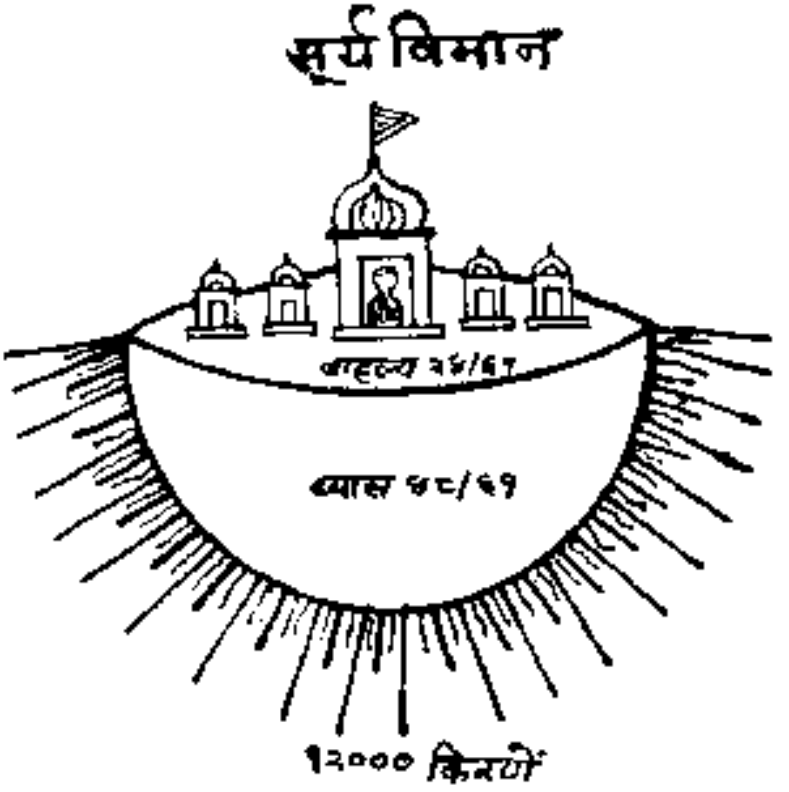
सूर्यविमानके वाहक देवोंके आकार एवं उनकी संख्या—

सोलस-सहस्समेत्ता, अभिओग-सुरा हवंति पत्तेक्कं ।
दिणयर-णयर-तलाइं, विकिरिया-हारिणो[1] णिच्चं ॥८०॥

। १६००० ।

अर्थ—प्रत्येक सूर्यके सोलह (१६०००) हजार प्रमाण आभियोग्य देव होते हैं जो नित्य ही विक्रिया करके सूर्य-नगरतलोंको ले जाते हैं ॥८०॥

ते पुव्वादि-दिसासुं, केसरि-करि-वसह-जडिल-हय-रूवा ।
चउ चउ - सहस्समेत्ता, कंचण - वण्णा विराजंते ॥८१॥



१. द. ब. क. कारिणो ।

अर्थ—सिंह, हाथी, बैल और जटा-युक्त घोड़ेके रूपको धारण करनेवाले तथा स्वर्ण सदृश वर्ण संयुक्त वे आभियोग्य देव क्रमशः पूर्वादिक दिशाओंमें चार-चार हजार प्रमाण विराजमान होते हैं ॥८१॥

ग्रहोंका अवस्थान—

चित्तोवरिम - तलादो, गंतूणं जोयणाणि अट्ठ-सए ।
अडसीदि-जुदे गह-गण-पुरीओ दो-गुणिद-छक्क-बहलम्मि ॥८२॥

। ८८८ । १२ ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे आठ सौ अठासी (८८८) योजन ऊपर जाकर बारह (१२) योजन प्रमाण बाहल्य में ग्रह-समूह की नगरियाँ हैं ॥८२॥

बुध-नगरोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, पुव्वोदिद-जोयणाणि गंतूणं ।
तासुं बुह-णयरीओ, णिच्चं चेट्ठंति गयणम्मि ॥८३॥

अर्थ—उनमें से चित्रा पृथिवीके उपरिम-तलसे पूर्वोक्त आठ सौ अठासी योजन ऊपर जाकर आकाश में बुधकी नगरियाँ नित्य स्थित हैं ॥८३॥

एदाओ सव्वाओ, कणयमईओ य मंद-किरणाओ ।
उत्ताणावट्ठिद - गोलकद्ध - सरिसाओ णिच्चाओ ॥८४॥

अर्थ—ये सब नगरियाँ स्वर्णमयी, मन्द किरणोंसे संयुक्त, नित्य और ऊर्ध्व अवस्थित अर्ध-गोलक सदृश हैं ॥८४॥

उवरिम - तलाण मंदो, कोसस्सद्धं तदद्ध-बहलत्तं ।
परिही विक्खंभ - कोसो, सविसेसा ताण पत्तेक्कं ॥८५॥

अर्थ—उनमेंसे प्रत्येकके उपरिम तलका विस्तार अर्ध कोस, बाहल्य इससे आधा और परिधि एक कोससे कुछ अधिक है ॥८५॥

एक्केक्काए पुरीए, तड-वेदी पुव्व-वण्णणा होदि ।
तम्मज्झे वर - वेदी - जुत्तं रायंगणं रम्मं ॥८६॥

अर्थ—प्रत्येक पुरीकी तट-वेदी पूर्वोक्त वर्णनासे युक्त होती है । उसके बीचमें उत्तम वेदीसे संयुक्त रमणीय राजाङ्गण स्थित रहता है ॥८६॥

तम्मज्झे वर-कूडा, हवंति तेसुं जिणिंद - पासादा ।
कूडाण-समंतेणं, बुह णिलया पुव्व सरिस-वण्णणया ॥८७॥

अर्थ—राजाङ्गणके मध्यमें उत्तम तट और उन तटोंपर जिनेन्द्र-प्रासाद होते हैं। कूटोंके चारों ओर पूर्व भवनों सदृश वर्णन वाले बुध-ग्रहके भवन हैं ॥८७॥

दो-दो सहस्समेत्ता, अभियोगा-हरि-करिंद-वसह-हया ।
पुव्वादिसु पत्तेक्कं, कणय-णिहा वुह-पुराणि धारंति ॥८८॥

अर्थ—सिंह, हाथी, बैल एवं घोड़ोंके रूपको धारण करनेवाले तथा स्वर्ण सदृश वर्ण संयुक्त दो-दो हजार प्रमाण आभियोग्य देव क्रमशः पूर्वादिक दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें बुधोंके पुरोंको धारण करते हैं ॥८८॥

शुक्रग्रहके नगरोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, णव-ऊणिय-णव-सयाणि जोयणया ।
गंतूण गहे उवरिं, सुक्काणि पुराणि चेट्ठंते ॥८९॥

। ८९१ ।

अर्थ - चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे नौ कम नौ सौ (८९१) योजन प्रमाण ऊपर जाकर आकाशमें शुक्रोंके नगर स्थित हैं ॥८९॥

ताणं णयर-तलाणं, पण-सय-दु-सहस्समेत्त-किरणाणि ।
उत्ताण - गोलकद्धोवमाणि वर - रुप्प - मइयाणि ॥९०॥

। २५०० ।

अर्थ - ऊर्ध्व अवस्थित गोलकार्धके सदृश और उत्तम चांदीसे निर्मित उन शुक्र-नगरतलोंमेंसे प्रत्येककी दो हजार पांच सौ (२५००) किरणें होती हैं ॥९०॥

उवरिम-तल-विक्खंभो, कोस-पमाणं तदद्ध-बहलत्तं ।
ताणं अकट्टिमाणं, विविह - रयणेहिं ॥९१॥

। को १ । को ½ ।

अर्थ—विविध रत्नोंसे खचित उन अकृत्रिम पुरोंके उपरिम तलका विस्तार एक कोस और बाहल्य इससे आधा अर्थात् अर्ध कोस प्रमाण है ॥९१॥

पुह पुह ताणं परिहो, ति-कोसमेत्ता हवेदि सविसेसा ।
सेसाओ वण्णणाओ, बुह - णयराणं सरिच्छाओ ॥९२॥

अर्थ—इनकी परिधि पृथक्-पृथक् तीन कोससे कुछ अधिक है। इन नगरोंका शेष सब वर्णन बुध नगरोंके सदृश है ।।९२।।

गुरु-ग्रहके नगरोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, छक्कोविय-णव-सएण जोयणए।
गंतूण गहे उवरिं, चेट्ठंति गुरूण णयराणि ।।९३।।

। ८९४ ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे छह कम नौ सौ (८९४) योजन ऊपर जाकर आकाशमें गुरु (बृहस्पति) ग्रहोंके नगर स्थित हैं ।।९३।।

ताणि [1]णयर-तलाणिं, फलिह-मयाणि सुमंद-किरणाणि।
उत्ताण - गोलकद्धोवमाणि णिच्चं सहावाणि ।।९४।।

अर्थ—स्फटिकमणिसे निर्मित, उन गुरु-ग्रहोंके नगर-तल सुन्दर मन्द किरणोंसे संयुक्त, ऊर्ध्वमुख स्थित गोलकार्धके सदृश और नित्य-स्वभाव वाले हैं ।।९४।।

उवरिम-तल-विक्खंभा तिण्णं कोसस्स परिम-भागा य।
सेसाओ वण्णणाओ, सुक्क - पुराणं सरिच्छाओ ।।९५।।

अर्थ—उनके उपरिम तलका विस्तार कोस के बहुभाग अर्थात् कुछ कम एक कोस प्रमाण है। उनका शेष वर्णन शुक्रपुरों के सदृश है ।।९५।।

मंगल ग्रहके नगरोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, तिय-ऊणिय-णव-सयाणि ओयणए।
गंतूण उवरिं गयणे, अंगल - णयराणि चेट्ठंति ।।९६।।

। ८९७ ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे तीन कम नौ सौ (८९७) योजन ऊपर जाकर आकाशमें मङ्गलनगर स्थित हैं ।।९६।।

ताणि णयर-तलाणिं, रुहिरायस-पउमराय-मइयाणि।
उत्ताण-गोलकद्धोवमाणि सव्वाणि मंद-किरणाणि ।।९७।।

अर्थ—वे सब नगर-तल रुधिर सदृश लाल वर्णवाले पद्मराग-मणियोंसे निर्मित, ऊर्ध्वमुख स्थित गोलकार्ध सदृश और मन्द-किरणोंसे संयुक्त होते हैं ।।९७।।

---

१. ब. उवरि ।

उवरिम-तल-विक्खंभा, कोसद्धं तावद्ध-बहलत्तं[1] ।
सेसाओ वण्णणाओ, ताणं पुव्वुत्त - सरिसाओ ॥९८॥

अर्थ—उनके उपरिम तलका विस्तार अर्ध कोस एवं बाहल्य इससे आधा अर्थात् पाव कोस प्रमाण है। इनका शेष वर्णन पूर्वोक्त नगरोंके सदृश है ॥९८॥

शनि-ग्रहके नगरोंकी प्ररूपणा—

चित्तोवरिम-तलादो, णंतूणं णव-सयाणि जोयणए ।
उवरिं सुवण्ण-मयाणि, सणि-णयराणि जहे होंति ॥९९॥

। ९०० ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीके उपरिम तलसे नौ सौ (९००) योजन ऊपर जाकर आकाशमें शनि-ग्रहोंके स्वर्णमय नगर हैं ॥९९॥

उवरिम-तल-विक्खंभा[1], कोसद्धं होंति ताण णयरेक्कं ।
सेसाओ वण्णणाओ, पुव्व - पुराणं सरिच्छाओ ॥१००॥

अर्थ—उनमेंसे प्रत्येक शनि नगरके उपरिम तलका विस्तार अर्ध कोस प्रमाण है। इनका शेष वर्णन पूर्वोक्त नगरोंके सदृश ही है ॥१००॥

अवशेष ८३ ग्रहोंकी प्ररूपणा—

अवसेसाण गहाणं, णयरीओ उवरि चित्त-भूमीदो ।
णंतूण बुह - सणीणं, विच्चाले होंति विच्चाओ ॥१०१॥

अर्थ—अवशिष्ट (८३) ग्रहोंकी नित्य (शाश्वत) नगरियाँ चित्रा पृथिवीके ऊपर जाकर बुध ग्रहों और शनि ग्रहों के अन्तरालमें अवस्थित हैं ॥१०१॥

विशेषार्थ—गाथा १५ से २२ तक अर्थात् आठ गाथाओंमें बुधको आदि लेकर ८८ ग्रहोंके नाम बतलाये गये हैं। इनमेंसे बुध, शुक्र, गुरु, मंगल और शनि ग्रहोंका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। शेष ८३ ग्रहोंका अवस्थान चित्रा पृथिवीसे ऊपर जाकर बुध और शनि ग्रहोंके अन्तराल अर्थात् ८८८ योजनसे ९०० योजनके बीचमें है।

ताणि णयर-तलाणि, अट्ठ जोयणाणि बाल-बहलाणि ।
रयणाण - गोउरट्टालयाणि बहु - रयण - पउराणि ॥१०२॥

---

१. द. ब. बहलत्तं ।

अर्थ—ये (८३) नगर तल यथा-योग्य कहे हुए विस्तार एवं बाहल्यसे संयुक्त, ऊर्ध्वमुख गोलकार्ध सदृश और बहुत रत्नोंसे रचित हैं ॥१०२॥

सेसाओ वण्णणाओ, पुव्विल्ल-पुराण होंति सरिसाओ ।
किं वारेमि[1] भणेदुं, जोहाए एक्कमेत्ताए ॥१०३॥

अर्थ—इन नगरोंका शेष वर्णन पूर्वोक्त पुरोंके सदृश है । मात्र एक जिह्वासे इनका विशेष कथन करते हुए क्या पार पा सकता हूँ ? ॥१०३॥

नक्षत्र नगरियोंकी प्ररूपणा—

भट्ठ-सय-जोयणाणि, चउसीदि-जुदाणि उवरि-चित्तादो ।
गंतूण गयण - मग्गे, हवंति णक्खत्त - णयराणि ॥१०४॥

। ८८४ ।

अर्थ—चित्रा पृथिवीसे आठसौ चौरासी (८८४) योजन ऊपर जाकर आकाश-मार्गमें नक्षत्रोंके नगर हैं ॥१०४॥

ताणि णयर-तलाणि, बहु-रयण-मयाणि मंद-किरणाणि ।
उत्ताण - गोलकद्धोवमाणि रम्माणि रेहंति ॥१०५॥

अर्थ—वे सब (नक्षत्रोंके) रमणीय नगरतल बहुत रत्नोंसे निर्मित, मन्द किरणोंसे युक्त और ऊर्ध्वमुख गोलकार्ध सदृश होते हुए विराजमान होते हैं ॥१०५॥

उवरिम-तल-वित्थारो, ताणं कोसो तदद्ध-बहलाणि ।
सेसाओ वण्णणाओ, दिणयर-णयराण सरिसाओ ॥१०६॥

अर्थ—उनके उपरिम तलका विस्तार एक कोस और बाहल्य इससे आधा है । इनका शेष वर्णन सूर्य-नगरोंके सदृश है ॥१०६॥

णवरि विसेसो देवा, अभियोगा सीह-हत्थि-वसहस्सा ।
ते एक्केक्क - सहस्सा, पुव्व-दिसासु ताणि धारंति ॥१०७॥

अर्थ—इतना विशेष है कि सिंह, हाथी, बैल एवं घोड़ेके आकारको धारण करने वाले एक-एक हजार प्रमाण आभियोग्य देव क्रमशः पूर्वादिक दिशाओंमें उन नक्षत्र नगरोंको धारण किया करते हैं ॥१०७॥

---

१. द. ब. वारेमि वण्णणो ।

ताराओंके नगरियोंकी प्ररूपणा—

सत्तसि-जुद सत्त-जोयण-सदाणि गंतूण उवरि विचादो ।
गयण-तले ताराणं, पुराणि बहले दहुत्तर-सदम्मि ॥१०८॥

अर्थ—चित्रा पृथिवीसे सात सौ सत्तर (७९०) योजन ऊपर जाकर आकाश तलमें एक सौ दस (११०) योजन प्रमाण बाहल्यमें ताराओंके नगर हैं ॥१०८॥

ताणं पुराणि णाणा-वर-रयण-मयाणि मंद-किरणाणि ।
उत्ताण - गोलकद्धोवमाणि सासद - सरूवाणि ॥१०९॥

अर्थ—उन ताराओंके पुर नाना प्रकारके उत्तम रत्नोंसे निर्मित, मन्द किरणोंसे संयुक्त, ऊर्ध्वमुख स्थित गोलकार्ध सदृश और नित्य-स्वभाव वाले हैं ॥१०९॥

ताराओंके भेद और उनके विस्तारका प्रमाण—

वर-अवर-मज्झिमाणि, ति-पियप्पाणि हवंति एदाणि ।
उवरिम - तल - विक्खंभा, जेट्ठाणं दो-सहस्स-दंडाणि ॥११०॥

। २००० ।

अर्थ—ये उत्कृष्ट, जघन्य और मध्यम तीन प्रकारके होते हैं। इनमेंसे उत्कृष्ट नगरोंके उपरिम तलका विस्तार दो हजार (२०००) धनुष प्रमाण है ॥११०॥

पंच - सयाणि धणूणि, तं विक्खंभा हवेदि अवराणं ।
दु-ति-गुणिदावर-माणं, मज्झिम - मयाणं दु-ठाणेसुं ॥१११॥

। ५०० । १००० । १५०० ।

अर्थ—जघन्य नगरोंका (यह) विस्तार पाँच सौ (५००) धनुष प्रमाण है। इस जघन्य प्रमाणको दो और तीनसे गुणा करनेपर क्रमशः दो स्थानोंमें मध्यम नगरोंका विस्तार क्रमशः (५०० × २ =) १००० धनुष एवं (५०० × ३ =) १५०० धनुष है ॥१११॥

ताराओंका अन्तराल एवं अन्य वर्णन—

तेरिच्छमंतरालं, जहण्ण - ताराण कोस - तदंसो ।
जोयणया पण्णासा, मज्झिमए सहस्सयुक्कस्से ॥११२॥

को ½ । को ५० । १०००।

अर्थ—जघन्य ताराओं का तिर्यग् अन्तराल एक कोस का सातवाँ भाग अथवा $\frac{1}{7}$ कोस, मध्यम ताराओंका यही अन्तराल ५० योजन और उत्कृष्ट ताराओंका तिर्यग् अन्तराल एक हजार (१०००) योजन प्रमाण है ॥११२॥

सेसाओ वण्णणाओ, पुव्व-पुराणं हवंति सरिसाणि ।
एत्तो गुरुवइट्ठं पुर - परिमाणं पवक्खेमो ॥११३॥

। एवं विण्णासं समत्तं[1] ॥४॥

अर्थ—इन ताराओंका शेष वर्णन पूर्व पुरोंके सदृश है । अब यहाँसे आगे गुरु द्वारा उपदिष्ट पुरों (नगरों) का प्रमाण कहते हैं ॥११३॥

॥ इसप्रकार विन्यासका कथन समाप्त हुआ ॥४॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

---

१. ब. क. ज. ठ. समत्ता ।

चन्द्रादि ग्रहोंके अवस्थान, विस्तार, बाहल्य एवं वाहन देवोंका प्रमाण—

क्र.	ग्रह	चित्रा पृ० से ऊँचाई		विस्तार (मोटाई)		बाहल्य (गहराई)		वाहन देवोंका आकार और प्रमाण				योग
		योजनों में	मीलों में	योजनों में	मीलों में	योजनों में	मीलों में	पूर्व दिशामें सिंह	दक्षिण में हाथी	पश्चिम में बैल	उत्तरमें घोड़े	
१.	चन्द्र	८८०	३५२००००	$\frac{५६}{६१}$ यो०	३६७२$\frac{४८}{६१}$	$\frac{२८}{६१}$ यो०	१८३६$\frac{२४}{६१}$	४०००+	४०००+	४०००+	४०००=	१६०००
२.	सूर्य	८००	३२००००००	$\frac{४८}{६१}$ यो०	३१४७$\frac{३४}{६१}$	$\frac{२४}{६१}$ यो०	१५७३$\frac{१२}{६१}$	४०००+	४०००+	४०००+	४०००=	१६०००
३.	बुध	८८८	३५५२०००	$\frac{१}{२}$ को०	५०० मी०	$\frac{१}{४}$ को०	२५०	२०००+	२०००+	२०००+	२०००=	८०००
४.	शुक्र	८९१	३५६४०००	१ कोस	१००० मी०	$\frac{१}{२}$ को०	५००	२०००+	२०००+	२०००+	२०००=	८०००
५.	गुरु	८९४	३५७६०००	कुछ कम १ कोस	कुछ कम १००० मी०	कुछ कम $\frac{१}{२}$ को०	कुछ कम ५००	२०००+	२०००+	२०००+	२०००=	८०००
६.	मंगल	८९७	३५८८०००	$\frac{१}{२}$ को०	५०० मी०	$\frac{१}{४}$ को०	२५०	२०००+	२०००+	२०००+	२०००=	८०००
७.	शनि	९००	३६०००००	$\frac{१}{२}$ को०	५०० मी०	$\frac{१}{४}$ को०	२५०	२०००+	२०००+	२०००+	२०००=	८०००
८.	नक्षत्र	८८४	३५३६०००	१ कोस	१००० मी०		५००	१०००+	१०००+	१०००+	१०००=	४०००
९.	उ० तारा	७९०	३१६००००	२००० धनुष	१००० मी०							
	म० तारा			$\left(\frac{२८०}{१०००}\right)$ घ ५०० घ.	$\left(\frac{५००}{१०००}\right)$ मी० २५० मी०			५००+	५००+	५००+	५००=	२०००
	ज० तारा											

चन्द्र आदि देवोंके नगरों आदिका प्रमाण—

णिय-णिय-रासि-पमाणं, [1]एवाणं जं [2]मयंक-पहुदीणं ।
णिय-णिय-णयर-पमाणं, तेत्तियमेत्तं च कूड-जिणभवणं ॥११४॥

अर्थ—इन चन्द्र आदि देवोंकी निज-निज राशिका जो प्रमाण है, उतना ही प्रमाण अपने-अपने नगरों, कूटों और जिन-भवनोंका है ॥११४॥

विशेषार्थ—गाथा ११ से ३५ पर्यन्त चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारामों को निज-निज राशिका अलग-अलग जो प्रमाण कहा गया है, वही प्रमाण उनके नगरों, कूटों और जिन-भवनोंका है ।

लोकविभागानुसार ज्योतिष-नगरोंका बाहल्य—

जोइसणं[3]- णयरीणं, सव्वाणं रुंद-माण-सारिच्छं ।
बहलत्तं मण्णंते, लोयविभायस्स आइरिया ॥११५॥

पाठान्तरम् ।

॥ एवं परिमाणं समत्तं ॥५॥

अर्थ:—'लोकविभाग' के आचार्य समस्त ज्योतिर्गणोंकी नगरियों के विस्तार प्रमाण के सदृश ही उनके बाहल्यको भी मानते हैं ॥११५॥

इसप्रकार परिमाणका कथन समाप्त हुआ ॥५॥

चन्द्र विमानोंकी संचार-भूमि—

चर-बिंबा मणुवाणं, खेत्ते तीसे च जंबु-दीवम्मि ।
दोण्णि मियंका सव्वं, एक्कं चिय होदि चारमही ॥११६॥

अर्थ—चर अर्थात् गमनशील ज्योतिष बिम्ब मनुष्य क्षेत्रमें ही हैं, मनुष्य क्षेत्रके मध्य स्थित जम्बूद्वीपमें जो दो चन्द्र हैं उनकी संचार-भूमि एक ही है ॥११६॥

पंच-सय-जोयणाणि, बसुसराइं हवेवि [4]विक्खंभो ।
ससहर - चारमहीए, विणयर - बिंबादिरित्ताणि ॥११७॥

। ५१० । ३६ ।

---

१. ब. ज. क. ब. पण्णरसं । २. ब. क. ज. अमयंक, ब. अमयंक । ३. ब. ज. क. ज. जोइट्ठाणं । ४. ब. ज. क. ज. विक्खंभा ।

अर्थ—चन्द्रकी संचार-भूमिका विस्तार सूर्य-बिम्बके विस्तारसे अतिरिक्त अर्थात् $\frac{६}{६१}$ योजनसे अधिक पाँच सौ दस (५१०) अर्थात् ५१०$\frac{६}{६१}$ योजन प्रमाण है ॥११७॥

जोइस - बे - सयाणि, जंबूदीवे चरंति सोदकरा ।
रवि-मंडलाधियाणि, तीसुत्तर-तिय-सयाणि लवणम्मि ॥११८॥

। १८० । ३३० । $\frac{६}{६१}$ ।

अर्थ—चन्द्रमा, बीस कम दो सौ (१८०) योजन जम्बूद्वीपमें और सूर्यमण्डलसे अधिक तीन सौ तीस (३३०$\frac{६}{६१}$) योजन प्रमाण लवणसमुद्रमें संचार करते हैं ॥११८॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीप सम्बन्धी दोनों चन्द्रोंके संचार क्षेत्र का प्रमाण ५१०$\frac{६}{६१}$ योजन प्रमाण है। इसमेंसे दोनों चन्द्र जम्बूद्वीपमें १८० योजन क्षेत्र में और अवशेष (५१०$\frac{६}{६१}$ — १८० =) ३३०$\frac{६}{६१}$ योजन लवणसमुद्रमें विचरण करते हैं।

चन्द्र गलीके विस्तार आदिका प्रमाण—

पण्णरस - ससहराणं, वीहीओ होंति चारखेत्तम्मि ।
मंडल - सम - दंडाओ, तदद्ध - बहलाओ पत्तेक्कं ॥११९॥

। $\frac{६}{६१}$ । $\frac{३}{६१}$ ।

अर्थ—चन्द्र बिम्बोंके चार क्षेत्र (५१०$\frac{६}{६१}$ यो०) में पन्द्रह गलियाँ हैं। उनमेंसे प्रत्येक गलीका विस्तार चन्द्रमण्डलके बराबर $\frac{६}{६१}$ योजन और बाहल्य इससे आधा ($\frac{३}{६१}$ योजन) है ॥११९॥

सुमेरुपर्वतसे चन्द्र की अभ्यन्तर वीथीका अन्तर-प्रमाण—

सहि-जुदं ति-सयाणि, मंदर-रुंदं च अंबु-विक्खंभे ।
सोहिय दलिते लद्धं, चंदादि-महीहि-मंदरंतरयं ॥१२०॥

चउवाल-सहस्साणि, वीसुत्तर-अट्ठ-सयाणि मंदरदो ।
गच्छिय सव्वब्भंतर - वीही इंदूण परिमाणं ॥१२१॥

। ४४८२० ।

अर्थ—जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीन सौ साठ योजन और सुमेरुपर्वतका विस्तार कम करके शेषको आधा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना चन्द्रकी प्रथम (अभ्यन्तर) संचार भूमिकी (वीथी) से सुमेरुपर्वतका अन्तर है। (अर्थात्) सुमेरुपर्वतसे चवालीस हजार आठ सौ बीस (४४८२०) योजन प्रमाण आगे आकर चन्द्रकी सर्वाभ्यन्तर (प्रथम) वीथी प्राप्त होती है ॥१२०-१२१॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका विस्तार एक लाख योजन है। जम्बूद्वीपके दोनों पार्श्वभागोंमें चन्द्रके चार क्षेत्रका प्रमाण ((८०×२)=३६० योजन है और सुमेरुपर्वतका भू-विस्तार १०००० योजन है। अतः १००००० — ३६०=९९६४० योजन जम्बूद्वीपकी प्रथम (अभ्यन्तर) वीथी में स्थित दोनों चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर है और इसमेंसे सुमेरुका भू-विस्तार घटाकर शेषकी आधा करने पर ($\frac{९९६४०-१००००}{२}$)=४४८२० योजन सुमेरुसे अभ्यन्तर (प्रथम) वीथीमें स्थित चन्द्रके अन्तरका प्रमाण प्राप्त होता है ॥

चन्द्रकी ध्रुवराशिका प्रमाण—

एक्क-सहोए गुणिदा, पंच-सया जोयणाणि छस-भुत्ता।
ते अडदाल - विमिस्सा, ध्रुवरासी णाम चारखेत्तो ॥१२२॥

अर्थ—पांचसौ दस योजनको इकसठसे गुणा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमें बे अड़तालीस भाग और मिला देनेपर ध्रुवराशि नामक चारक्षेत्रका विस्तार होता है ॥१२२॥

विशेषार्थ—चन्द्रोंके संचार क्षेत्रका नाम चारक्षेत्र है। जिसका प्रमाण ५१०$\frac{४८}{६१}$ योजन है। गाथामें इसी प्रमाण को समान छेद करने (भिन्न तोड़ने) पर जो राशि उत्पन्न हो उसे ध्रुवराशि स्वरूप चारक्षेत्र कहा है। यथा—५१०×६१=३१११०, ३१११०+४८=३११५८ अर्थात् ५१०$\frac{४८}{६१}$ यो० ध्रुवराशि स्वरूप चारमही का प्रमाण है। गाथा १२३ में इन्हीं ३११५८ को ६१ से भाजितकर प्राप्त राशि ५१०$\frac{४८}{६१}$ को ध्रुवराशि कहा है।

एक्कत्तीस - सहस्सा, अट्ठावण्णुत्तरं सदं तह य।
इगिसट्ठीए भजिदे, धुवरासि - पमाणमुद्दिट्ठं ॥१२३॥

$\frac{३११५८}{६१}$।

अर्थ—इकतीस हजार एक सौ अट्ठावन (३११५८) में इकसठ (६१) का भाग देनेपर जो (५१०$\frac{४८}{६१}$ यो०) लब्ध आवे उतना ध्रुव राशिका प्रमाण कहा गया है ॥

चन्द्रकी सम्पूर्ण वीथियोंके अन्तरालका प्रमाण—

पण्णरसेहिं गुणिदं, दिणयर-बिंब-प्पमाणजोयणयं।
धुवरासीदो सेसं, विच्चालं समद - वीहीणं ॥१२४॥

$\frac{३११५८}{६१}$।

अर्थ—चन्द्रबिम्बके प्रमाणको पन्द्रहसे गुणा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे ध्रुवराशिमेंसे कम कर देनेपर जो अवशेष रहे वही सम्पूर्ण वीथियोंका अन्तराल प्रमाण होता है ॥१२४॥

विशेषार्थ :—चन्द्रकी एक वीथीका विस्तार $2\frac{1}{2}$ योजन है तो, १५ वीथियोंका विस्तार कितना होगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर ($2\frac{1}{2} \times 15$) $= \frac{510}{2}$ योजन गलियोंका विस्तार हुआ। इसे चार क्षेत्रके विस्तार ५१०$\frac{1}{2}$ यो० में से घटा देनेपर ($510\frac{1}{2} - \frac{510}{2} =$) $\frac{510}{2}$ योजन १५ गलियोंका अन्तराल प्रमाण प्राप्त होता है।

चन्द्रकी प्रत्येक वीथीका अन्तराल प्रमाण—

तं चोद्दस-पविहत्तं, हवेदि एक्केक्क-वीहि-विच्चालं।
पणतीस - जोयणाणि, अदिरेकं तस्स परिमाणं ॥१२५॥

अदिरेकस्स पमाणं, चोद्दसभजिदम्मि-सत्तसंसा।
सत्ताधीसब्भहिया, चत्तारि सया हवे हारो ॥१२६॥

३५ । $\frac{214}{427}$ ।

अर्थ :—इस ($\frac{510}{2}$) में चौदहका भाग देनेपर एक-एक वीथीके अन्तरालका प्रमाण होता है। जो पैंतीस योजनों से अधिक है। इस अधिकताका जो प्रमाण है उसमें दो सौ चौदह (२१४) अंश और चार सौ सत्ताईस (४२७) भागहार है ॥१२५-१२६॥

विशेषार्थ—चन्द्रमा की गलियां १५ हैं किन्तु १५ गलियोंके अन्तर १४ ही होंगे, अतः सम्पूर्ण गलियोंके अन्तराल प्रमाणमें १४ का भाग देनेपर प्रत्येक गलीके अन्तरालका प्रमाण ($\frac{510}{2} \div$ १४) $= 35\frac{214}{427}$ योजन प्राप्त होता है।

चन्द्रके प्रतिदिन गमन-क्षेत्रका प्रमाण—

पढम-पहावो चंदो, बाहिर-मग्गस्स गमण-कालम्मि।
वीहि पडि मेलिज्जं, विच्चालं बिंब - संजुत्तं ॥१२७॥

३६ । $\frac{315}{427}$ ।

अर्थ—चन्द्रोंके प्रथम वीथीसे द्वितीयादि बाह्य वीथियोंकी ओर जाते समय प्रत्येक वीथीके प्रति, बिम्ब संयुक्त अन्तराल मिलाना चाहिए ॥१२७॥

विशेषार्थ—चन्द्रकी प्रत्येक गलीका विस्तार $2\frac{1}{2}$ योजन है और प्रत्येक गलीका अन्तर प्रमाण $35\frac{214}{427}$ योजन है। इस अन्तरप्रमाणमें गलीका विस्तार मिला देनेपर ($35\frac{214}{427} + 2\frac{1}{2} =$) $36\frac{315}{427}$ योजन प्राप्त होते हैं। चन्द्रको प्रतिदिन एक गली पारकर दूसरी गलीमें प्रवेश करने तक $36\frac{315}{427}$ यो० प्रमाण गमन करना पड़ता है।

द्वितीयादि वीथियोंमें स्थित चन्द्रोंका सुमेरु पर्वतसे अन्तर—

छउदाल-सहस्सा अड-सयाणि छप्पण्ण-जोयणा अहिया ।
उणसीदि-भुव-सयंसा, बिदियद्ध-गवेसु-मेरु - विक्खालं ॥१२८॥

४४८५६ । $\frac{१८१}{२२०}$ ।

अर्थ—द्वितीय पथ (गली) को प्राप्त हुए चन्द्रमाका मेरु पर्वतसे चवालीस हजार आठ सौ छप्पन योजन और (एक योजनके बारसौ सत्ताईस भागोंमेंसे) एक सौ उन्यासी भाग-प्रमाण अन्तर है ॥१२८॥

विशेषार्थ :- मेरु पर्वतसे चन्द्रकी प्रथम वीथीका अन्तर गाथा १२१ में ४४८२० योजन कहा गया है। उसमें चन्द्रकी प्रतिदिनकी गति का प्रमाण जोड़ देनेपर सुमेरुसे द्वितीय वीथी स्थित चन्द्र का अन्तर (४४८२० + $३६\frac{१८१}{२२०}$)=$४४८५६\frac{१८१}{२२०}$ योजन प्रमाण है। यही प्रक्रिया आगे भी कही गई है।

छउदाल-सहस्सा अड-सयाणि बाणउदि जोयणा भागा ।
अडवण्णुत्तर-ति-सया, तदियद्ध-गवेसु-मंदर-पमाणं ॥१२९॥

४४८९२ । $\frac{३५६}{२२०}$ ।

अर्थ -तृतीय गलीको प्राप्त हुए चन्द्र और मेरु-पर्वतके बीचमें चवालीस हजार आठ सौ बानवे योजन और तीन सौ अट्ठावन भाग अधिक अन्तर-प्रमाण है ॥१२९॥

गया—४४८५६$\frac{१८१}{२२०}$ यो० + ३६$\frac{१७५}{२२०}$ यो०=४४८९२$\frac{३५६}{२२०}$ यो० ।

छउदाल-सहस्सा णव-सयाणि उणतीस जोयणा भागा ।
दस-जुत्त-सयं विदियं, चउत्थ-पह-णव-हिमंसु-मेरुस्सं ॥१३०॥

४४९२९ । $\frac{११०}{२२०}$ ।

अर्थ—चतुर्थ पथको प्राप्त हुए चन्द्रमा और मेरुके मध्य चवालीस हजार नौ सौ उनतीस योजन और एक सौ दस भाग प्रमाण अधिक अन्तर है ॥१३०॥

४४८९२$\frac{३५६}{२२०}$ + ३६$\frac{१७५}{२२०}$=४४९२९$\frac{१११}{२२०}$ योजन ।

छउदाल-सहस्सा णव-सयाणि पण्णट्ठि जोयणा भागा ।
दोण्णि सया उणवण्णा, पंचम-पह-इंदु-मंदर-पमाणं ॥१३१॥

४४९६५ । $\frac{२५९}{२२०}$ ।

अर्थ—पंचम पथको प्राप्त चन्द्रका मेरु पर्वतसे चवालीस-हजार नौ सौ बेसठ योजन और दो सौ नवासी भाग (४४९६३$\frac{२८९}{६६०}$ यो०) प्रमाण अन्तर है ॥१३१॥

४४९२९$\frac{३३९}{६६०}$ + ३६$\frac{३३०}{६६०}$ = ४४९६३$\frac{२८९}{६६०}$ यो० ।

एयदाल-सहस्सा बे-जोयण-चुदा कलाओ इगिवालं ।
छद्दु-पह-ट्ठिद-हिमकर-चामीयर - सेल - विच्चालं ॥१३२॥

४५००२ । $\frac{४१}{६६०}$ ।

अर्थ—छठे पथमें स्थित चन्द्र और मेरु पर्वतके मध्य पैंतालीस हजार दो योजन और इकतालीस कला (४५००२$\frac{४१}{६६०}$ यो०) प्रमाण अन्तर है ॥१३२॥

४४९६३$\frac{२८९}{६६०}$ + ३६$\frac{३३०}{६६०}$ = ४५००२$\frac{४१}{६६०}$ यो० ।

पणदाल-सहस्सा जोयणाणि अडतीस दु-सय-बीसंसा ।
सत्तम-बीहि-ट्ठदं ससि - मयूह - मेरुण विच्चालं ॥१३३॥

४५०३८ । $\frac{२२०}{६६०}$ ।

अर्थ—सातवीं गली को प्राप्त चन्द्र और मेरुके मध्य पैंतालीस हजार अड़तीस योजन और दो सौ बीस भाग—(४५०३८$\frac{२२०}{६६०}$ यो०) प्रमाण अन्तर है ॥१३३॥

४५००२$\frac{४१}{६६०}$ + ३६$\frac{३३०}{६६०}$ = ४५०३८$\frac{२२०}{६६०}$ यो० ।

पणदाल-सहस्सा चउहत्तरि-अहिया कलाओ तिण्णि-सया ।
अवभवदो विच्चालं, छट्ठम - बीही - गदिंदु - मेरुणं ॥१३४॥

४५०७४ । $\frac{३११}{६६०}$ ।

अर्थ—आठवीं गलीको प्राप्त चन्द्र और मेरुके बीच पैंतालीस-हजार चौहत्तर योजन और तीन सौ निन्यानवे कला (४५०७४$\frac{३११}{६६०}$ यो०) प्रमाण अन्तर है ॥१३४॥

४५०३८$\frac{२२०}{६६०}$ + ३६$\frac{३३०}{६६०}$ = ४५०७४$\frac{३११}{६६०}$ यो० ।

पणदाल-सहस्सा सयमेक्कारस-जोयणाणि कलाओ छच्चं ।
इगिसट्ठा विच्चालं, णवम - पहे चंद - मेरुणं ॥१३५॥

४५१११ । $\frac{६१}{६६०}$ ।

अर्थ—नौवें पथमें चन्द्र और मेरुके मध्यमें पैंतालीस हजार एक सौ ग्यारह योजन और एक सौ इकसठ कला (४५१११$\frac{६१}{६६०}$ यो०) प्रमाण अन्तराल है ॥१३५॥

४५०७४$\frac{३११}{६६०}$ + ३६$\frac{३३०}{६६०}$ = ४५१११$\frac{६१}{६६०}$ यो० ।

पणवाल-सहस्सा सय, सत्तत्तालं कलाओ तिण्णि तहा।
तीस - जुदा बसय-पहे, बिच्चं हिमकिरण - मेरुच्चं ॥१३६॥

४५१४७ । $\frac{३३०}{६१}$ ।

अर्थ—दसवें पथमें स्थित चन्द्र और मेरुका अन्तराल पैंतालीस हजार एक सौ सैंतालीस योजन और तीन सौ तीस कला (४५१४७$\frac{३३०}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१३६॥

४५१११$\frac{१२३}{६१}$ + ३६$\frac{३३०}{६१}$ = ४५१४७$\frac{३३०}{६१}$ यो० ।

पणवाल-सहस्साणि, चुलसीदी जोयणाणि एक्क-सयं ।
बासीदि-कला बिच्चं, एक्करस - पहम्मि एवाणं ॥१३७॥

४५१८४ । $\frac{८२}{६१}$ ।

अर्थ—ग्यारहवें पथमें इन दोनोंका अन्तर पैंतालीस हजार एक सौ चौरासी योजन और बयासी कला (४५१८४$\frac{८२}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१३७॥

४५१४७$\frac{३३०}{६१}$ + ३६$\frac{३३०}{६१}$ = ४५१८४$\frac{८२}{६१}$ यो० ।

पणवाल-सहस्साणि, दोसुत्तर-दो-सयाणि जोयणया ।
इगिसट्ठि-हु-सय-भागा, बारसम - पहम्मि तं बिच्चं ॥१३८॥

४५२२० । $\frac{२२१}{६१}$ ।

अर्थ—बारहवें पथमें वह अन्तराल पैंतालीस हजार दो सौ बीस योजन और दो सौ इकसठ भाग (४५२२०$\frac{२२१}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१३८॥

४५१८४$\frac{८२}{६१}$ + ३६$\frac{३३०}{६१}$ = ४५२२०$\frac{२२१}{६१}$ यो० ।

पणवाल-सहस्साणि, बेण्णि सया ओयणाणि सगवण्णा ।
तेरस - कलाओ तेरस - पहम्मि एदाण बिच्चालं ॥१३९॥

४५२५७ । $\frac{१३}{६१}$ ।

अर्थ—तेरहवें पथमें इन दोनोंका अन्तराल पैंतालीस हजार दो सौ सत्तावन योजन और तेरह कला (४५२५७$\frac{१३}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१३९॥

४५२२०$\frac{२२१}{६१}$ + ३६$\frac{३३०}{६१}$ = ४५२५७$\frac{१३}{६१}$ यो० ।

पणवाल-सहस्सा बे, सयाणि ते-अडवि जोयणा अहिया ।
अट्ठोल-हु-सय-भागा, चोद्दसम - पहम्मि तं बिच्चं ॥१४०॥

४५२९३ । $\frac{१९३}{६१}$ ।

अर्थ—चौदहवें पथमें वह अन्तराल पैंतालीस हजार दो सौ तेरानवे योजन और आठ कम दो सौ भाग अधिक अर्थात् (४५२९३$\frac{१९३}{६१}$ यो०) है ॥

४५२५७$\frac{१३}{६१}$ + ३६$\frac{३३०}{६१}$ = ४५२९३$\frac{१९३}{६१}$ यो० ।

पणदाल-सहस्साणि, तिण्णि सया ओयणाणि उणतीसं ।
इगिहत्तरि-सि-सय-कला, पण्णरस-पहम्मि तं बिम्बं ॥१४१॥

४५३२९ ।

अर्थ—पन्द्रहवें पथमें वह अन्तराल पैंतालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और तीन सौ इकहत्तर कला (४५३२९$\frac{३७१}{६२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१४१॥

विशेषार्थ—४५२९३$\frac{४३}{६२५}$ + ३६$\frac{३२८}{६२५}$ = ४५३२९$\frac{३७१}{६२५}$ योजन ।

यह ४५३२९$\frac{३७१}{६२५}$ योजन (१८१३१९४७५$\frac{३७१}{६२५}$ मील) मेरु पर्वतसे बाह्य वीथी में स्थित चन्द्र का अन्तर है ।

बाहिर-पहादु ससिणो, आदिम-वीहीए आगमण-काले ।
पुव्वप-मेलिद-खेत्तं, [1]फेलसु आ चोद्दसादि-पदम-पहं ॥१४२॥

अर्थ—बाह्य (पन्द्रहवें) पथसे चन्द्रके प्रथम वीथीको और आगमनकालमें पहिले मिलाए हुए क्षेत्र (३६$\frac{३२८}{६२५}$ यो०) को उत्तरोत्तर कम करते जानेसे चौदहवीं गलीको आदि लेकर प्रथम गली तकका अन्तराल प्रमाण आता है ॥१४२॥

प्रथम वीथीमें स्थित दोनों चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर—

सट्ठि-जुदं ति-सयाणि, सोहेज्जसु जंबुदीव-वासम्मि ।
जं सेसं आबाहं, अब्भंतर - मंडलेंदूणं ॥१४३॥

णवणउदि-सहस्साणि, छस्सय-चालीस-ओयणाणि पि ।
चंदाणं विच्चालं अब्भंतर - मंडल - ठिदाणं ॥१४४॥

९९६४० ।

अर्थ—जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीन सौ साठ योजन कम कर देनेपर जो शेष रहे उतना अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित दोनों चन्द्रोंके आबाधा अर्थात् अन्तरालका प्रमाण है । अर्थात् अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित दोनों चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार छह सौ चालीस (९९६४०) योजन प्रमाण है ॥१४३-१४४॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका व्यास एक लाख योजन है । जम्बूद्वीपके दोनों पार्श्वभागोंमें चन्द्रमाके चार क्षेत्रका प्रमाण (१८० × २) = ३६० योजन है । इसे जम्बूद्वीपके व्यासमेंसे घटा देने पर (१००००० — ३६० =) ९९६४० योजन शेष बचते हैं । यही ९९६४० योजन प्रथम वीथीमें स्थित दोनों चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर है ।

---

१. द. फेलसु ।

चन्द्रोंकी अन्तराल वृद्धिका प्रमाण—

ससहर-पह-सूचि-वड्ढी, दोहिं गुणिदाए होदि अं लद्धं ।
सा आवाधा - वड्ढी, पडिमग्गं चंद - चंदाणं ॥१४५॥

७२ । $\frac{३५}{६१}$ ।

अर्थ—चन्द्रकी पथ-सूची वृद्धिका जो (३६$\frac{३५}{६१}$ यो०) प्रमाण है, उसे दो से गुणा करने पर जो (३६$\frac{३५}{६१}$ × २=७२$\frac{७०}{६१}$ यो०) लब्ध प्राप्त हो उतना प्रत्येक गलीमें दोनों चन्द्रोंके परस्पर एक दूसरेके बीचमें रहने वाले अन्तरालकी वृद्धिका प्रमाण होता है ॥१४५॥

प्रत्येक पथमें दोनों चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर—

बारस-जुद-सत्त-सया, णवणउदि-सहस्स जोयणाणं पि ।
अडवण्णा ति-सय-कला, बिदिय - पहे चंद - चंदस्स ॥१४६॥

९९७१२ । $\frac{३५४}{६१}$ ।

अर्थ—द्वितीय पथमें एक चन्द्र से दूसरे चन्द्रका अन्तराल निन्यानवे हजार सात सौ बारह योजन और तीन सौ अट्ठावन कला (९९७१२$\frac{३५४}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१४६॥

विशेषार्थ—॥गा १४३ में प्रथम वीथी स्थित दोनों चन्द्रोंके अन्तरका प्रमाण ९९६४० योजन कहा गया है। इसमें अन्तरालवृद्धिका (७२$\frac{७०}{६१}$ यो०) प्रमाण जोड़ देनेपर द्वितीय वीथी स्थित दोनों चन्द्रोंका अन्तराल प्रमाण (९९६४०+७२$\frac{७०}{६१}$=) ९९७१२$\frac{३५४}{६१}$ योजन प्राप्त होता है। अन्य वीथियोंका अन्तराल भी इसी प्रकार निकाला गया है।

णवसयउदि-सहस्साणि, सत्त-सया जोयणाणि पणसीदी ।
उणगउवी - दु - सय - कला, तदिए बिच्चं ससंकसूरं ॥१४७॥

९९७८५ । $\frac{२९९}{६१}$ ।

अर्थ—तृतीय पथमें चन्द्रोंका (पारस्परिक) अन्तराल निन्यानवे हजार सात सौ पचासी योजन और दो सौ बीस कला (९९७८५$\frac{२९९}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१४७॥

९९७१२$\frac{३५४}{६१}$+७२$\frac{७०}{६१}$=९९७८५$\frac{२९९}{६१}$ यो० ।

णवणउदि-सहस्साणि, अट्ठ-सया जोयणाणि अडवण्णा ।
बोसुत्तर-दु-सय-कला, ससोय - बिच्चं तुरिम - मग्गे ॥१४८॥

९९८५८ । $\frac{२३८}{६१}$ ।

अर्थ—चतुर्थ मार्गमें चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार आठ सौ अट्ठावन योजन और दो सौ बीस कला (९९८५८$\frac{२२०}{२२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१४८॥

९९७८५$\frac{३१५}{२२५}$ + ७२$\frac{५}{२२५}$ = ९९८५८$\frac{२२०}{२२५}$ यो० ।

णवणउदि-सहस्सा-णव-सयाणि इगितीस जोयणाणं पि ।
इगि-सय-इगि-सत्तरि-कला, विच्चालं पंचम - पहम्मि ॥१४९॥

९९९३१ । $\frac{१७१}{२२५}$ ।

अर्थ—पाँचवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल निन्यानवे हजार नौ सौ इकतीस योजन और एक सौ इकहत्तर कला (९९९३१$\frac{१७१}{२२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१४९॥

९९८५८$\frac{२२०}{२२५}$ + ७२$\frac{५}{२२५}$ = ९९९३१$\frac{१७५}{२२५}$ यो० ।

एक्कं जोयण-लक्खं, चउ-अब्भहियं हवेदि सविसेसं ।
बासीदि - कला - छेदे, पहम्मि छंदाण विच्चालं ॥१५०॥

१००००४ । $\frac{८३}{२२५}$ ।

अर्थ—छठे पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख चार योजन और बयासी कला (१००००४$\frac{८३}{२२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१५०॥

९९९३१$\frac{१७५}{२२५}$ + ७२$\frac{५}{२२५}$ = ९९९३१$\frac{१७९}{२२५}$ यो० ।

सत्तत्तरि-संजुत्तं, जोयण - लक्खं च तेरस कलाओ ।
सत्तम - मग्गे दोण्हं, पुसारकिरणाण विच्चालं ॥१५१॥

१०००७७ । $\frac{१३}{२२५}$ ।

अर्थ—सातवें मार्गमें दोनों चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख सतत्तर योजन और तेरह कला (१०००७७$\frac{१३}{२२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१५१॥

१००००४$\frac{८३}{२२५}$ + ७२$\frac{१४२}{२२५}$ = १०००७७$\frac{२२५}{२२५}$ यो० ।

उणवण्ण-सहेक्क-सयं, जोयण-लक्खं कलाओ तिण्णि-सया ।
एक्कत्तरी सलोणं, अट्ठम - मग्गम्मि विच्चालं ॥१५२॥

१००१४९ । $\frac{३७१}{२२५}$ ।

अर्थ—आठवें मार्गमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख एक सौ उनचास योजन और तीन सौ इकहत्तर कला (१००१४९$\frac{३७१}{२२५}$ यो०) प्रमाण है ॥१५२॥

१०००७७$\frac{१३}{२२५}$ + ७२$\frac{१५८}{२२५}$ = १००१४९$\frac{३७१}{२२५}$ यो० ।

एक्कं जोयण-लक्खं, बावीस-जुदाणि दोण्णि य सयाणि ।
दो-उत्तर-ति-सय-कला, अवण - पहे ताण विच्चालं ॥११३॥

१००२२२ । $\frac{३२३}{३६०}$ ।

अर्थ—नौवें मार्गमें उन चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख दो सौ बाईस योजन और तीन सौ दो कला (१००२२२$\frac{३२३}{३६०}$ यो०) प्रमाण है ॥११३॥

१००१४९$\frac{३३३}{३६०}$ + ७२$\frac{३२६}{३६०}$ = १००२२२$\frac{३२९}{३६०}$ यो० ।

एक्कं जोयण-लक्खं, पंचाणउदि-जुदाणि दोण्णि य सयाणि ।
बे - सय - तेत्तीस - कला, विच्चं दसमम्मि इंदूणं ॥११४॥

१००२९५ । $\frac{२३३}{३६०}$ ।

अर्थ—दसवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख दो सौ पंचानवे योजन और दो सौ तैंतीस कला (१००२९५$\frac{२३३}{३६०}$ यो०) प्रमाण है ॥११४॥

१००२२२$\frac{३२३}{३६०}$ + ७२$\frac{३२६}{३६०}$ = १००२९५$\frac{२३९}{३६०}$ यो० है ।

एक्कं जोयण-लक्खं, अट्ठा-सट्ठी-जुदा य तिण्णि सया ।
छउ-सट्ठि-सय-कलाओ, एक्करस-पहम्मि तं विच्चं ॥११५॥

१००३६८ । $\frac{१६४}{३६०}$ ।

अर्थ—ग्यारहवें मार्गमें यह अन्तराल एक लाख तीन सौ अड़सठ योजन और एक सौ चौंसठ कला—(१००३६८$\frac{१६४}{३६०}$ यो०) प्रमाण है ॥

१००२९५$\frac{२३३}{३६०}$ + ७२$\frac{३२६}{३६०}$ = १००३६८$\frac{१६४}{३६०}$ यो० ।

एक्कं लक्खं छउ-सय, इगिदाला जोयणाणि अहिरेगे ।
पणवण्णदि - कला सत्ते, बारसमे अंतरं ताणं ॥११६॥

१००४४१ । $\frac{१९५}{३६०}$ ।

अर्थ—बारहवें मार्गमें उन चन्द्रोंका अन्तर एक लाख चार सौ इकतालीस योजन पंचानवे कला (१००४४१$\frac{१९५}{३६०}$ यो०) प्रमाण है ॥११६॥

१००३६८$\frac{१६४}{३६०}$ + ७२$\frac{३२६}{३६०}$ = १००४४१$\frac{१९५}{३६०}$ यो० ।

छउलक्ख-दुग-पंच-सया, जोयण-लक्खं कलाओ छत्तीसं ।
तेरस - पहम्मि जोहूं, विच्चालं सिसिरकिरणाणं ॥११७॥

१००५१४ । $\frac{३५}{३६०}$ ।

अर्थ—तेरहवें पथमें दोनों चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख पाँच सौ चौदह योजन और छत्तीस कला (१००५१४$\frac{३६}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१५७॥

१००४४१$\frac{३६}{६१}$ + ७२$\frac{३६}{६१}$ = १००५१४$\frac{३६}{६१}$ यो० ।

सक्कं पंच-सयाणि, [1]छासीदी जोयणा कला ति-सया ।
बउसीदी चोद्दसमे, पहम्मि दिव्वं सिवकराणं[2] ॥१५८॥

१००५८६ । $\frac{३}{६१}$ ।

अर्थ—चौदहवें पथमें चन्द्रोंका अन्तराल एक लाख पाँच सौ छयासी योजन और तीन सौ चौरासी कला (१००५८६$\frac{३८४}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१५८॥

१००५१४$\frac{३६}{६१}$ + ७२$\frac{३६}{६१}$ = १००५८६$\frac{३८४}{६१}$ यो० ।

सक्कं छक्क सयाणि, उसट्ठी जोयणा कला ति-सया ।
पण्णरस - बुदा मग्गे, पण्णरसं अंतरं ताणं ॥१५९॥

१००६५९ । $\frac{३१५}{६१}$ ।

अर्थ –पन्द्रहवें मार्गमें उनका अन्तर एक लाख छह सौ उनसठ योजन और तीन सौ पन्द्रह कला (१००६५९$\frac{३१५}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥१५९॥

१००५८६$\frac{३८४}{६१}$ + ७२$\frac{३६}{६१}$ = १००६५९$\frac{३१५}{६१}$ यो० ।

बाहिर-पहादु-ससिणो, आविम-मग्गम्मि आयमण-काले ।
पुव्वप-सेसिद-खेत्तं, सोहेदु का चोद्दसावि-पहम-पहं ॥१६०॥

अर्थ—चन्द्रके बाह्य पथसे प्रथम पथकी ओर आते समय पूर्वमें मिलाए हुए क्षेत्रको उत्तरोत्तर कम करने पर चौदहवें पथसे प्रथम पथ तक दोनों चन्द्रोंका अन्तराल प्रमाण होता है ॥१६०॥

चन्द्रपथकी अभ्यन्तर वीथीकी परिधिका प्रमाण—

तिय-जोयण-लक्खाणि, पण्णरस-सहस्सयाणि उक्कस्सं ।
अब्भंतर - वीहीए, परिरय - रासिस्स परिसंखा ॥१६१॥

३१५०८९ ।

अर्थ—अभ्यन्तर वीथीके परिरय अर्थात् परिधिकी राशिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार नवासी (३१५०८९) योजन है ॥१६१॥

---

१. ब. उक्कट्ठी । २. ब. अ. क. ज. सीयकराणं ।

विशेषार्थ :- गाथा १२१ में मेरु पर्वतसे चन्द्रकी अभ्यन्तर वीथीका जो अन्तर प्रमाण ४४८२० योजन कहा गया है वह एक पार्श्वभागका है। दोनों पार्श्वभागोंका अन्तर अर्थात् चन्द्रकी अभ्यन्तर वीथीका व्यास और सुमेरुका मूल विस्तार [(४४८२० × २) + १००००] = ९९६४० योजन है। इसकी परिधिका प्रमाण $\sqrt{९९६४०^2 \times १०} = ३१५०८९$ योजन प्राप्त हुआ। जो शेष बचे वे छोड़ दिये गये हैं।

परिधिके प्रक्षेपका प्रमाण—

सेसाणं वीहीणं, परिही-परिमाण-जाणण-निमित्तं[1]।
परिहि[2] खेवं भणिमो, गुरुवदेसानुसारेणं ॥१६२॥

अर्थ :—शेष वीथियोंके परिधि-प्रमाणको जाननेके लिए गुरुके उपदेशानुसार परिधिका प्रक्षेप कहते हैं ॥१६२॥

चंद - पह - सूइ-वड्ढी - दुगुणं काऊण वग्गिदूणं च।
दस - गुणिदे जं मूलं, [3]परिहि खेवो स लाद्धव्वो ॥१६३॥

७२ । $\frac{३१५}{४८०}$ ।

अर्थ—चन्द्रपथोंकी सूची-वृद्धिको दुगुना करके उसका वर्ग करनेपर जो राशि उत्पन्न हो उसे दससे गुणा करके वर्गमूल निकालनेपर प्राप्त राशिके प्रमाण परिधिप्रक्षेप जानना चाहिए ॥१६३॥

तीसुत्तर-बे-सय-जोयणाणि तेवाल - चुद्द - सयभंसा।
हारो चत्तारि सया, सत्ताबीसेहि अब्भहिया ॥१६४॥

२३० । $\frac{१४३}{४२७}$ ।

अर्थ—प्रक्षेपकका प्रमाण दो सौ तीस योजन और एक योजनके चार सौ सत्ताईस भागोंमेंसे एक सौ तेंतालीस भाग अधिक (२३०$\frac{१४३}{४२७}$ यो०) है ॥१६४॥

विशेषार्थ—चन्द्रपथ सूची-वृद्धिके प्रमाणका दूना (३६$\frac{१५}{४८०}$ × २) = $\frac{१७३५}{४८०}$ यो० होता है, अतः $\sqrt{(\frac{१७३५}{४८०})^2 \times १०} = \frac{५९२१}{४८०}$ योजन प्राप्त हुए और ५३४३१ अवशेष बचे जो छोड़ दिए गये हैं। इसप्रकार $\frac{५९२१}{४८०}$ = २३०$\frac{१४३}{४२७}$ योजन परिधि प्रक्षेप का प्रमाण प्राप्त हुआ।

चन्द्रकी द्वितीय आदि पथोंकी परिधियोंका प्रमाण—

तिय-जोयण-सयछक्कं, पण्णरस-सहस्स-ति-सय-उणवीसा।
तेदाल - चुद्द - सयभंसा, विदिय - पहे परिहि - परिमाणं ॥१६५॥

३१५३१९ । $\frac{१४३}{४२७}$ ।

---

१. द. ब. चमित्तं। २. द. ब. परिहिखेवं। ३. द. ब. क. ज. परिक्खेवो।

अर्थ—द्वितीय पथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार तीन सौ उन्नीस योजन और एक सौ तैंतालीस भाग (३१५३१९$\frac{१४३}{३५५}$ यो०) प्रमाण है ॥१६५॥

विशेषार्थ—गाथा १६१ में प्रथम पथ की परिधिका प्रमाण ३१५०८९ योजन कहा गया है। इसमें परिधि प्रक्षेपका प्रमाण मिला देनेपर (३१५०८९+२३०$\frac{१४३}{३५५}$) = ३१५३१९$\frac{३४३}{३५५}$ यो० द्वितीय पथकी परिधिका प्रमाण होता है। यही प्रक्रिया सर्वत्र जाननी चाहिए।

उणवण्णा पंच-सया, पण्णरस-सहस्स जोयण-ति-लक्खा।
छासीदी दु-सय-कला, सा परिही तदिय - वीहीए ॥१६६॥

३१५५४९ । $\frac{३४३}{३५५}$ ।

अर्थ—तृतीय वीथीकी वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार पांच सौ उनंचास योजन और दो सौ छयासी भाग-प्रमाण है ॥१६६॥

३१५३१९$\frac{३४३}{३५५}$ + २३०$\frac{१४३}{३५५}$ = ३१५५४९$\frac{३४३}{३५५}$ यो० है।

सीदी सत्त-सयाणि, पण्णरस-सहस्स जोयण-ति-लक्खा।
दोण्हि कलाओ परिही, चंदस्स चउत्थ - वीहीए ॥१६७॥

३१५७८० । $\frac{२}{५}$ ।

अर्थ- चन्द्रकी चतुर्थ वीथीकी परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार सात सौ अस्सी योजन और दो कला है ॥१६७॥

३१५४९$\frac{३४३}{३५५}$ + २३०$\frac{१४३}{३५५}$ = ३१५७८०$\frac{२}{५}$ यो० ।

तिय-जोयण-लक्खाणि, बहुत्तरा तह य सोलस-सहस्सा।
पणदाल - जुद - सयंसा, सा परिही पंचम - पहम्मि ॥१६८॥

३१६०१० । $\frac{१४३}{३५५}$ ।

अर्थ—पांचवें पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार दस योजन और एक सौ पैंतालीस भाग है ॥१६८॥

३१५७८०$\frac{२}{५}$ + २३०$\frac{१४३}{३५५}$ = ३१६०१०$\frac{१४३}{३५५}$ यो० ।

चालीस दु-सय सोलस-सहस्स तिय-लक्ख जोयणा अंसा।
अट्ठासीदी दु - सया, छक्क - पहे होदि सा परिही ॥१६९॥

३१६२४० । $\frac{३४३}{३५५}$ ।

अर्थ—छठे पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ चालीस योजन और दो सौ अठासी भाग प्रमाण है ॥१६९॥

३१६०१०$\frac{१४९}{३३}$ + २३०$\frac{१४३}{३३}$ = ३१६२४०$\frac{३६६}{३३}$ यो० ।

सोलस-सहस्स छउ-सय, एक्कत्तरि-अहिय-जोयण ति-लक्खा ।
चत्तारि कला सत्तम - पहम्मि परिही ससंकस्स ॥१७०॥

३१६४७१ । $\frac{४}{७}$ ।

अर्थ—चन्द्रके सातवें पथमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार चार सौ इकहत्तर योजन और चार कला अधिक है ॥१७०॥

३१६२४०$\frac{१४९}{३३}$ + २३०$\frac{१४३}{३३}$ = ३१६४७१$\frac{४}{७}$ यो० ।

सोलस-सहस्स सग-सय, एक्कभहिया य जोयण-ति-लक्खा ।
इक्कसयं सगतीसा, भागा अट्ठम - पहे परिही ॥१७१॥

३१६७०१ । $\frac{१४९}{३३}$ ।

अर्थ—आठवें पथमें उस परिधिका प्रमाण तीन लाख सोलह हजार सात सौ एक योजन और एक सौ सैंतालीस भाग अधिक है ॥१७१॥

३१६४७१$\frac{४}{७}$ + २३०$\frac{१४३}{३३}$ = ३१६७०१$\frac{१४७}{३३}$ यो० ।

सोलस-सहस्स-णव-सय-एक्कतीसादिरित्त-तिय-लक्खा ।
णवमी-बुध-बु-सय-कला, ससिस्स परिही णवम - मग्गे ॥१७२॥

३१६९३१ । $\frac{२}{३३}$ ।

अर्थ—चन्द्रके नौवें मार्गमें वह परिधि तीन लाख सोलह हजार नौ सौ इकतीस योजन और दो सौ बत्तीस कला प्रमाण है ॥१७२॥

३१६७०१$\frac{१४७}{३३}$ + २३०$\frac{१४३}{३३}$ = ३१६९३१$\frac{२}{३३}$ यो० ।

बासट्ठि-जुत्त-इगि-सय-[1]सत्तरस-सहस्स जोयण ति-लक्खा ।
छ च्चिय कलाओ परिही, हिमंसुणो दसम - वीहीए ॥१७३॥

३१७१६२ । $\frac{६}{७}$ ।

---

१. ब. क. ज. सत्तर ।

अर्थ—चन्द्रकी दसवीं वीथीकी परिधि तीन लाख सत्तरह हजार एक सौ बासठ योजन और छह कला प्रमाण है ॥१७३॥

३१६९३१$\frac{३३०}{३६३}$ + २३०$\frac{१४३}{३६३}$ = ३१७१६२$\frac{४}{६}$ यो० ।

तिय-जोयण-लक्खाणि, सत्तरस[1]-सहस्स-ति-सय-बाणउदी ।
उणवण्ण - जुद - सयंसा, परिही एक्कारस - पहम्मि ॥१७४॥

३१७३९२ । $\frac{१५१}{३६३}$ ।

अर्थ—ग्यारहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार तीन सौ बानवें योजन और एक सौ उनंचास भाग प्रमाण है ॥१७४॥

३१७१६२$\frac{४}{६}$ + २३०$\frac{१४३}{३६३}$ = ३१७३९२$\frac{५४}{६६}$ यो० ।

बावीसुत्तर-छस्सय, [1]सत्तरस-सहस्स-जोयण-ति-सक्खा ।
अट्ठोणिय-ति-सय-कला बारसम - पहम्मि सा परिही ॥१७५॥

३१७६२२ । $\frac{३१३}{३६३}$ ।

अर्थ—बारहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार छह सौ बाईस योजन और आठ कम तीन सौ अर्थात् दो सौ बानवें कला प्रमाण है ॥१७५॥

३१७३९२$\frac{५४}{६६}$ + २३०$\frac{१४३}{३६३}$ = ३१७६२२$\frac{३१३}{३६३}$ यो० ।

तेवण्णुत्तर-अड-सय-सत्तरस[2]-सहस्स-जोयण-ति-सक्खा ।
अट्ठ-कलाओ परिही, तेरसम - पहम्मि सिद - रुचिणो ॥१७६॥

३१७८५३ । $\frac{८}{३६३}$ ।

अर्थ—चन्द्रके तेरहवें पथमें वह परिधि तीन लाख सत्तरह हजार आठ सौ तिरेपन योजन और आठ कला प्रमाण है ॥१७६॥

३१७६२२$\frac{३१३}{३६३}$ + २३०$\frac{१४३}{३६३}$ = ३१७८५३$\frac{८}{६}$ यो० ।

तिय-जोयण-लक्खाणि, अट्ठरस-सहस्सयाणि तेसीदी ।
इगिवण्ण-जुद-सयंसा, चोद्दसम - पहे इमा परिही ॥१७७॥

३१८०८३ । $\frac{१५१}{३६३}$ ।

---

१. ब. ब. क. ज. सत्ता । २. द. ब. सत्तर । ३. द. ब. सत्तर ।

अर्थ—चौदहवें पथमें वह परिधि तीन लाख अठारह हजार तेरासी योजन और एक सौ इक्यावन भाग प्रमाण है ॥१७७॥

३१७८५३$\frac{१५१}{१७६}$ + २३०$\frac{३}{१७६}$ = ३१८०८३$\frac{१५४}{१७६}$ यो० ।

तिय-ओयण-लक्खाणि, अट्ठरस-सहस्स-ति-सय-तेरसघा ।
बे-सय-चउणउदि-कला, बाहिर - मग्गम्मि सा परिही ॥१७८॥

३१८३१३ । $\frac{३९४}{५}$ ।

अर्थ—बाह्य (पन्द्रहवें) मार्गमें वह परिधि तीन लाख अठारह हजार तीन सौ तेरह योजन और दो सौ चौरानवे कला प्रमाण है ॥१७८॥

३१८०८३$\frac{१५१}{१७६}$ + २३०$\frac{१४९}{१७६}$ = ३१८३१३$\frac{३९४}{५}$ यो० ।

समानकालमें असमान परिधियोंके परिभ्रमण कर सकनेका कारण—

चंदपुरा सिग्घगदी, णिग्गच्छंता हवंति पविसंता ।
मंदगदी असमाणा, परिहीओ भमंति सरिस-कालेसं ॥१७९॥

अर्थ—चन्द्र विमान बाहर निकलते हुए (बाह्यमार्गोंकी ओर आते समय) शीघ्र-गतिवाले और (अभ्यन्तर मार्गकी ओर) प्रवेश करते हुए मन्दगतिवाले होते हैं, इसलिए वे समान कालमें ही असमान परिधियोंका भ्रमण करते हैं ॥१७९॥

चन्द्रके नगनखण्ड एवं उनका अतिक्रमण-काल—

एक्कं चेव य लक्खं, णवय सहस्साणि अट्ठ-सयाणं पि ।
परिहीणं हिमंसुणो, ते कादव्वा णयणखंडा ॥१८०॥

। १०९८०० ।

अर्थ—उन परिधियोंमें दो चन्द्रोंके कुल नयनखण्ड एक लाख नौ हजार आठ सौ (१०९८००) प्रमाण हैं ॥१८०॥

चन्द्रके वीथी-परिभ्रमणका काल—

गच्छदि [1]मुहुत्तमेक्के, अडसट्ठि-जुद-सत्तरस-सयाणि ।
णभ-खंडाणि ससिणो, तम्मि हिदे सव्व-णयण-खंडाणि ॥१८१॥

१७६८ ।

---

१. ब. मुहुत्तमेत्तमेक्के ।

बासट्ठि - मुहुत्ताणि, भागा तेवीस तस्स हाराइं ।
इगिवीसाहिय बिसयं, लद्धं तं गयण - खंडाणो ॥१८२॥

६२ । $\frac{२३}{२२१}$ ।[1]

अर्थ—चन्द्र एक मुहूर्तमें एक हजार सात सौ अड़सठ गगनखण्डों पर जाता है। इसलिए इस राशिका समस्त गगनखण्डोंमें भाग देने पर उन गगनखण्डोंको पार करने का प्रमाण बासठ मुहूर्त और तेईस भाग प्राप्त होता है। इस तेईस अंशका भागहार दो सौ इक्कीस है ॥१८१-१८२॥

विशेषार्थ :- एक परिधि को दो चन्द्र पूरा करते हैं। दोनों चन्द्र सम्बन्धी सम्पूर्ण गगनखण्ड १०९८०० हैं। दोनों चन्द्र एक मुहूर्त में १७६८ गगनखण्डों पर भ्रमण करते हैं, अतः १०९८०० गगनखण्डोंका भ्रमणकाल प्राप्त करने हेतु सम्पूर्ण गगनखण्डोंमें १७६८ का भाग देनेपर (१०९८००÷१७६८) = ६२$\frac{२३}{२२१}$ मुहूर्त प्राप्त होते हैं।

चन्द्रके वीथी-परिभ्रमणका काल—

अब्भंतर-वीहीदो, बाहिर-पेरंत दीहिल ससि-बिंबा ।
कमसो परिभमंते, बासट्ठि - मुहुत्तएहि अहिएहि ॥१८३॥

६२ ।

अदिरेयस्स पमाणं, अंसा तेवीसया मुहुत्तस्स ।
हारो दोण्णि सयाणि, जुत्ताणि एक्कवीसेणं ॥१८४॥

$\frac{२३}{२२१}$ ।

अर्थ—दोनों चन्द्रबिम्ब क्रमशः अभ्यन्तर वीथीसे बाह्य-वीथी पर्यन्त बासठ मुहूर्तसे कुछ अधिक कालमें परिभ्रमण (पूरा) करते हैं। इस अधिकता का प्रमाण एक मुहूर्तके तेईस भाग और दो सौ इक्कीस हार रूप अर्थात् $\frac{२३}{२२१}$ मुहूर्त है ॥१८३-१८४॥

प्रत्येक वीथीमें चन्द्रके एक मुहूर्त-परिमित गमनक्षेत्रका प्रमाण—

सम्मेलिय बासट्ठिं, इच्छिय - परिहीए भागमवहरिदं ।
तस्सि तस्सि ससिणो, एक्क - मुहुत्तम्मि गदिमाणं ॥१८५॥

$\frac{१३७२३}{२२१}$ । ३१५०८९ । १ ।

अर्थ—समच्छेदरूपसे बासठको मिलाकर उसका इच्छित परिधिमें भाग देनेपर उस-उस वीथीमें चन्द्रका एक मुहूर्तमें गमन प्रमाण आता है ॥१८५॥

---

१. ब. ब. ६२/२३ ।

विशेषार्थ—६२$\frac{३१}{१८३}$ मुहूर्तों को समच्छेद विधानसे मिलाने पर अर्थात् मिश्र तोड़नेपर $\frac{११४५}{१८३}$ मुहूर्त होते हैं। इसका चन्द्रकी प्रथम वीथीकी परिधिके प्रमाणमें भाग देनेपर—

$\left(३१५०८७ \div \frac{११४५}{१८३}\right) = ५०७३\frac{३३३३}{११४५}$ योजन अर्थात् २०२९४२५६$\frac{६६}{११४५}$ मील प्राप्त होते हैं।

चन्द्रका यह गमन क्षेत्र एक मुहूर्त अर्थात् ४८ मिनिट का है। इसी गमन क्षेत्र में ४८ का भाग देने से चन्द्र का एक मिनिट का गमन क्षेत्र $(२०२९४२५६\frac{६६}{११४५} \div ४८) = ४२२७९७$$\frac{६६}{५४९६०}$ मील होता है। अर्थात् प्रथम मार्गमें स्थित चन्द्र एक मिनिटमें ४२२७९७$\frac{११}{९१६०}$ मील गमन करता है।

पंच-सहस्सं अहिया, तेहत्तरि-जोयणाणि तिय-कोसा।
लद्धं[1] मुहुत्त - गमणं, पढम - पहे सोयकिरणस्स ॥१८६॥

५०७३। को ३।

अर्थ—प्रथम पथमें चन्द्रके एक मुहूर्त (४८ मिनिट) के गमन क्षेत्रका प्रमाण पाँच हजार तिहत्तर योजन और तीन कोस प्राप्त होता है ॥१८६॥

विशेषार्थ—चन्द्रका प्रथम वीथीका गमनक्षेत्र गाथामें जो ५०७३ यो० और ३ कोस कहा गया है। वह स्थूलतासे कहा है। यथार्थ में इसका प्रमाण [$३१५०८७ \div \frac{११४५}{१८३}$] ५०७३ योजन, २ कोस, ५१३ धनुष, ३ हाथ और कुछ अधिक ५ अंगुल है।

सत्तत्तरि सविसेसा, पंच-सहस्साणि जोयणा कोसा।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, चंदस्स बुइज्ज - वीहीए ॥१८७॥

५०७७। को १।

अर्थ—द्वितीय वीथीमें चन्द्रका मुहूर्तकाल-परिमित गमनक्षेत्र पाँच हजार सत्तत्तर (५०७७) योजन और एक कोस प्राप्त होता है ॥१८७॥

विशेषार्थ—द्वितीय वीथीमें चन्द्रका एक मुहूर्तका गमनक्षेत्र [$३१५३१९\frac{३३}{१८३} \div \frac{११४५}{१८३}$] ५०७७ योजन, १ कोस, १८४ धनुष, २ हाथ और कुछ कम १३ अंगुल प्रमाण है।

जोयण-पंच-सहस्सा, सोदी-जुत्ता य तिण्णि कोसाणि।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, चंदस्स तदज्ज - वीहीए ॥१८८॥

५०८०। को ३।

अर्थ—तृतीय वीथीमें चन्द्रका मुहूर्त-परिमित गमनक्षेत्र पाँच हजार अस्सी (५०८०) योजन और तीन कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१८८॥

---

१. ब. ज. लद्धं।

विशेषार्थ—तृतीय पथमें चन्द्रका एक मुहूर्तका गमन क्षेत्र [$३१५४४९\frac{३}{६१}\div\frac{३१}{६१}$] ५०८० योजन, ३ कोस, १८५४ धनुष, ३ हाथ और कुछ अधिक १० अंगुल प्रमाण है ॥

पंच-सहस्सा जोयण, चुलसीदी तह य बुवेहिया-कोसा ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, चंदस्स चउत्थ - मग्गम्मि ॥१८९॥

५०८४ । को २ ।

अर्थ—चतुर्थ मार्गमें चन्द्रका मुहूर्त-परिमित गमन पांच हजार चौरासी (५०८४) योजन तथा दो कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१८९॥

विशेषार्थ—चतुर्थ पथमें चन्द्रका एक मुहूर्तका गमनक्षेत्र [$३१५७८०\frac{३}{६१}\div\frac{३१}{६१}$] ५०८४ योजन, २ कोस, १५२६ धनुष, १ हाथ और कुछ अधिक ३ अंगुल है ।

अट्ठासीदी अहिया, पंच-सहस्सा य जोयणा कोसो ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, पंचम - मग्गे मियंकस्स ॥१९०॥

५०८८ । को १ ।

अर्थ—पांचवें मार्गमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार अठासी (५०८८) योजन और एक कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९०॥

विशेषार्थ—पांचवें मार्गमें चन्द्रका एक मुहूर्तका गमनक्षेत्र [$३१६०१०\frac{३}{६१}\div\frac{३१}{६१}$] ५०८८ योजन, १ कोस, ११९७ धनुष, ० हाथ और कुछ अधिक १० अंगुल प्रमाण प्राप्त होता है ।

बाणउदि-उत्तराणि, पंच-सहस्साणि जोयणाणि च ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं हिमंसुणो छट्ठ - मग्गम्मि ॥१९१॥

५०९२ ।

अर्थ—छठे मार्गमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार बानवें (५०९२) योजन प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९१॥

विशेषार्थ—छठे मार्गमें गमन क्षेत्रका प्रमाण [$३१६२४०\frac{३}{६१}\div\frac{३१}{६१}$] ५०९२ योजन, ० कोस, ३ हाथ और कुछ अधिक १८ अंगुल है ।

पंचेव सहस्साइं, पंचाणउदी जोयणा ति-कोसा य ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, सोमंसुणो सत्तम - पहम्मि ॥१९२॥

५०९५ । को ३ ।

अर्थ—सातवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार पंचानवें योजन और तीन कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९२॥

विशेषार्थ—सातवें पथमें चन्द्रका एक मुहूर्तका गमन क्षेत्र [$३१६४७१\frac{५}{६१}\div\frac{३१}{६१}$] ५०९५ योजन, ३ कोस, ५३८ धनुष, ३ हाथ और कुछ अधिक १ अंगुल है ॥

पण-संख-सहस्साणि, णवणउदी जोयणा दुवे कोसा ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, अट्ठम - मग्गे [1]हिमरहिस्स ॥१९३॥

५०९९ । को २ ।

अर्थ—आठवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त गमन पाँच हजार निन्यानबे योजन और दो कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९३॥

विशेषार्थ—आठवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्त में [३१६७०$\frac{१३१}{२१९}$ ÷ $\frac{३१}{२१९}$] ५०९९ योजन, २ कोस, २०९ धनुष, २ हाथ और कुछ कम ९ अंगुल गमन करता है ।

पंचेव सहस्साणि, ति-उत्तरं जोयणाणि एक्क-सट्ठं ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, णवम - पहे तुहिणरासिस्स ॥१९४॥

। ५१०३ ।

अर्थ—नौवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पाँच हजार एक सौ तीन योजन प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९४॥

विशेषार्थ—नौवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्त (४८ मिनिट) में [३१६९३१$\frac{३१}{२१९}$ ÷ $\frac{३१}{२१९}$] ५१०३ योजन, ० कोस, १८८० धनुष, १ हाथ और कुछ अधिक १६ अंगुल गमन करता है ।

पंच-सहस्सा छाहियमेक्क-सयं जोयणा ति-कोसा य ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, दसम - पहे हिमगयूखस्स ॥१९५॥

५१०६ । को ३ ।

अर्थ—दसवें पथमें चन्द्रमाका मुहूर्त-गमन पाँच हजार एक सौ छह योजन और तीन कोस प्रमाण पाया जाता है ॥१९५॥

विशेषार्थ—दसवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१७१६२$\frac{१}{२}$० ÷ $\frac{३१}{२१९}$] ५१०६ योजन, ३ कोस, १५२१ धनुष और कुछ कम १ हाथ गमन करता है ।

पंच-सहस्सा वस-जुद-एक्क-सया जोयणा दुवे कोसा ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, एक्करस - पहे ससंकस्स ॥१९६॥

५११० । को २ ।

अर्थ—ग्यारहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पाँच हजार एक सौ दस योजन और दो कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९६॥

---

१. ब. हिमरहिस्स, म हिमरहिमिस ।

विशेषार्थ—ग्यारहवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१७३९२$\frac{३१}{६६}$÷$\frac{३१}{३३}$] ५११० योजन, २ कोस, १२२२ धनुष, ० हाथ और कुछ कम ७ अंगुल प्रमाण गमन करता है।

जोयण-पंच-सहस्सा, एक्क-सयं चोद्दसुत्तरं कोसो ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, बारसम - पहे सिदंसुस्स ॥१९७॥

५११४ । को १ ।

अर्थ—बारहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार एक सौ चौदह योजन और एक कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९७॥

विशेषार्थ—बारहवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१७६२२$\frac{३३}{६६}$÷$\frac{३१}{३३}$] ५११४ योजन, १ कोस, ८९२ धनुष, ३ हाथ और कुछ अधिक १४ अंगुल प्रमाण गमन करता है ॥

अट्ठारसुत्तर - सयं, पंच - सहस्साणि जोयणाणि च ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, तेरस - मग्गे हिमंसुस्स ॥१९८॥

५११८ ।

अर्थ—तेरहवें मार्गमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार एक सौ अठारह योजन प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९८॥

विशेषार्थ—तेरहवें पथमें चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१७८५३९$\frac{६३}{६६}$÷$\frac{३१}{३३}$] ५११८ योजन, ० कोस, ५६३ धनुष, २ हाथ और कुछ अधिक २१ अंगुल प्रमाण गमन करता है।

पंच-सहस्सा इगिसय-मिगिवीस-जुदं च जोयणं ति-कोसा ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, चोद्दसम - पहम्मि चंदस्स ॥१९९॥

५१२१ । को ३ ।

अर्थ—चौदहवें पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन क्षेत्र पांच हजार एक सौ इक्कीस योजन और तीन कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥१९९॥

विशेषार्थ—चौदहवें मार्ग में चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१८०८३$\frac{३३}{६६}$÷$\frac{३१}{३३}$] ५१२१ योजन, ३ कोस, २३४ धनुष, २ हाथ और कुछ अधिक ४ अंगुल प्रमाण गमन करता है।

पंच-सहस्सेक्क-सया, पणुवीसं जोयणा दुवे कोसा ।
लद्धं मुहुत्त - गमणं, सोलसुत्तो बाहिर - पहम्मि ॥२००॥

५१२५ । को २ ।

अर्थ—बाह्य पथमें चन्द्रका मुहूर्त-गमन पांच हजार एक सौ पच्चीस योजन और दो कोस प्रमाण प्राप्त होता है ॥२००॥

विशेषार्थ—बाह्य (पन्द्रहवें) मार्गमें चन्द्र एक मुहूर्तमें [३१८३१३$\frac{३३}{६६}$÷$\frac{३१}{३३}$] ५१२५ योजन, १ कोस, १८९१ धनुष, २ हाथ और कुछ कम २२ अंगुल प्रमाण गमन करता है।

चन्द्रके अन्तर-प्रमाण आदिका विवरण—

वीथी संख्या	प्रत्येक वीथीमें		चन्द्रकी प्रत्येक वीथीकी परिधि का प्रमाण (योजनोंमें)	प्रत्येक वीथीमें चन्द्रका एक मुहूर्त (४८ मिनिट) का गमन-क्षेत्र				
	मेरुसे चन्द्रका अन्तर (योजनोंमें)	चन्द्रका चन्द्रसे अन्तर (योजनोंमें)		योजन	कोस	धनुष	हाथ	अंगुल
१.	४४८२० यो०	२१६४० यो०	३१५०८९ यो०	५०७३	२	५१३	३	कुछ अ० ५
२.	४४८५६$\frac{१५}{६१}$,,	९९७१२$\frac{३५}{६१}$,,	३१४३१९$\frac{३५}{६१}$,,	५०७७	१	१८४	२	कुछ कम १२
३.	४४८९२$\frac{३०}{६१}$,,	९९७८५$\frac{३०}{६१}$,,	३१५४४९$\frac{३०}{६१}$,,	५०८०	३	१८५४	३	कुछ अ. १०
४.	४४९२९$\frac{३०}{६१}$,,	९९८५८$\frac{३०}{६१}$,,	३१५७८०$\frac{३०}{६१}$,,	५०८४	२	१५२३	१	कु० अ० ३
५.	४४९६५$\frac{३०}{६१}$,,	९९९३१$\frac{३०}{६१}$,,	३१६०१०$\frac{३०}{६१}$,,	५०८८	१	११९७	०	कु० अ० १०
६.	४५००२$\frac{३०}{६१}$,,	१०००४$\frac{३०}{६१}$,,	३१६२८०$\frac{३०}{६१}$,,	५०९२	०	०	३	कु० अ० १८
७.	४५०२८$\frac{३०}{६१}$,,	१०००७$\frac{३०}{६१}$,,	३१६४७१$\frac{३०}{६१}$,,	५०९५	३	५३८	३	कु० अ० १
८.	४५०७४$\frac{३०}{६१}$,,	१००१४९$\frac{३०}{६१}$,,	३१६७०१$\frac{३०}{६१}$,,	५०९९	२	२०९	२	कुछ कम ९
९.	४५११$\frac{३०}{६१}$,,	१००२२६$\frac{३०}{६१}$,,	३१६९३१$\frac{३०}{६१}$,,	५१०३	०	१८८०	१	कु० अ० १६
१०.	४५१४७$\frac{३०}{६१}$,,	१००२९५$\frac{३०}{६१}$,,	३१७१६२$\frac{३०}{६१}$,,	५१०६	३	१५५१	१	कु० कम ०
११.	४५१८४$\frac{३०}{६१}$,,	१००३६८$\frac{३०}{६१}$,,	३१७३९२$\frac{३०}{६१}$,,	५११०	२	१२२२	०	कु० कम ७
१२.	४५२२०$\frac{३०}{६१}$,,	१००४४१$\frac{३०}{६१}$,,	३१७६२२$\frac{३०}{६१}$,,	५११४	१	८९२	३	कु. अ. १४
१३.	४५२५७$\frac{३०}{६१}$,,	१००५१४$\frac{३०}{६१}$,,	३१७८५३$\frac{३०}{६१}$,,	५११८	०	५६३	२	कु. अ. २१
१४.	४५२९३$\frac{३०}{६१}$,,	१००५८६$\frac{३०}{६१}$,,	३१८०८३$\frac{३०}{६१}$,,	५१२१	३	२३४	२	कु. अ. ४
१५.	४५३२९$\frac{३०}{६१}$,,	१००६५९$\frac{३०}{६१}$,,	३१८३१३$\frac{३०}{६१}$,,	५१२५	१	१८९१	२	कु० कम २०

राहु विमानका वर्णन—

ससहर-णयर-तलादो, चत्तारि पमाण-अंगुलाणं पि ।
हेट्ठा गच्छिय होंति हु, राहु विमाणस्स धयदंडा ॥२०१॥

अर्थ—चन्द्रके नगरतलसे चार प्रमाणांगुल नीचे जाकर राहु-विमानके ध्वज-दण्ड होते हैं ॥२०१॥

विशेषार्थ—एक प्रमाणांगुल ५०० उत्सेधांगुलों के बराबर होता है। (ति० प० प्रथम अ० गाथा १०७-१०८ के) इस नियमके अनुसार ४ प्रमाणांगुलोंके धनुष आदि बनाने पर ($\frac{४\times५००}{४\times२४}$) = २० धनुष, ३ हाथ और ८ अंगुल प्राप्त होते हैं। चन्द्र-विमान तलसे राहु विमान का ध्वज दण्ड २० धनुष, ३ हाथ और ८ अंगुल नीचे है।

ते राहुस्स विमाणा, अंजणवण्णा अरिट्ठ-रयणमया ।
किंचूणं जोयणयं, विक्खंभ - जुदा तदद्ध - बहलत्तं ॥२०२॥

अर्थ—अरिष्ट रत्नोंसे निर्मित अंजनवर्णवाले राहुके वे विमान कुछ कम एक योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त और विस्तारसे अर्ध बाहल्यवाले हैं ॥२०२॥

पण्णासाहिय-दु-सया, कोदंडा राहु-णयर-बहलत्तं ।
एवं लोय - विणिच्छय - कत्तारिओ परूवेंति ॥२०३॥

पाठान्तर ।

अर्थ—राहु-नगरका बाहल्य दो सौ पचास धनुष-प्रमाण है; ऐसा लोकविनिश्चय-कर्ता आचार्य प्ररूपण करते हैं ॥२०३॥

पाठान्तर ।

चउ-गोउर-जुत्तेसु य, जिणमंदिर-मंडिदेसु णयरेसुं ।
तेसुं बहु - परिवारा, राहू णामेण होंति सुरा ॥२०४॥

अर्थ—चार गोपुरोंसे संयुक्त और जिनमन्दिरोंसे सुशोभित उन नगरोंमें बहुत परिवार सहित राहु नामक देव होते हैं ॥२०४॥

राहुओंके भेद—

राहूण पुर-तलाणं, दु-वियप्पाणि हवंति गमणाणि ।
दिण-पव्व-वियप्पेहिं, दिणराहू ससि-सरिच्छ-गई ॥२०५॥

अर्थ—दिन और पर्वके भेदसे राहुओंके पुरतलोंके गमन दो प्रकार होते हैं। इनमेंसे दिन-राहुकी गति चन्द्रके सदृश होती है ॥२०५॥

पूर्णिमाकी पहिचान—

जस्सिं मग्गे ससहर-बिंबं दिसेदि य सेसु परिपुण्णं ।
सो होदि पुण्णिमवक्खो, दिवसो इह माणुसे लोए ॥२०६॥

अर्थ—उनमेंसे जिस मार्गमें चन्द्र-बिम्ब परिपूर्ण दिखता है, यहाँ मनुष्य लोकमें वह पूर्णिमा नामक दिवस होता है ॥२०६॥

कृष्ण-पक्ष होनेका कारण—

तव्वीहीदो संघिय, वीवस्स भारुद-हुदास-दिसाहो ।
तदणंतर - वीहीए, एंति हु दिणराहु-ससि-बिंबा ॥२०७॥

अर्थ—उस (अभ्यन्तर) वीथीको लांघकर दिनराहु और चन्द्र-बिम्ब जम्बूद्वीपकी वायव्य और आग्नेय दिशासे तदनन्तर (द्वितीय) वीथीमें आते हैं ॥२०७॥

ताधे ससहर-मंडल-सोलस-भागेसु एक्क - भागंसो ।
आवरमाणो दीसदि, राहू - संघण - विसेसेणं ॥२०८॥

अर्थ—द्वितीय वीथीको प्राप्त होनेपर राहुके गमन विशेषसे चन्द्रमण्डलके सोलह भागोंमेंसे एक भाग आच्छादित दिखता है ॥२०८॥

अणल-दिसाए संघिय, ससिबिंबं एवि वीहि-अद्धंसो ।
सेसद्धं खु ण गच्छदि, अवर-ससि-भमिद-हेदूदो ॥२०९॥

अर्थ—पश्चात् चन्द्रबिम्ब आग्नेय दिशासे लांघकर वीथीके अर्ध भागमें जाता है, द्वितीय चन्द्रसे भ्रमित होनेके कारण शेष अर्ध-भागमें नहीं जाता है (क्योंकि दो चन्द्र मिलकर एक परिधि को पूरा करते हैं) ॥२०९॥

तदणंतर-मग्गाइं, णिच्चं लंघंति राहु-ससि-बिंबा ।
पवणग्गि - दिसाहिंतो, एवं सेसासु वीहीसुं ॥२१०॥

अर्थ—इसीप्रकार शेष वीथियोंमें भी राहु और चन्द्रबिम्ब वायव्य एवं आग्नेय दिशासे नित्य तदनन्तर मार्गोंको लांघते हैं ॥२१०॥

ससि-बिंबस्स दिणं पडि, एक्केक्क-पहम्मि भागमेक्केक्कं ।
पच्छादेदि हु राहू, पण्णरस - कलाउ परियंतं ॥२११॥

अर्थ—राहु प्रतिदिन एक-एक पथमें पन्द्रह कला पर्यन्त चन्द्र-बिम्बके एक-एक भागको आच्छादित करता है ॥२११॥

अमावस्याकी पहिचान—

इय एक्केक्क-कलाए, आवरिदाए दु राहु - बिंबेणं ।
चंदेक्क-कला मग्गे, जस्सि दिस्सेदि सो य अमवस्सा ॥२१२॥

अर्थ—इसप्रकार राहु-बिम्बके द्वारा एक-एक करके कलाओंके आच्छादित हो जानेपर जिस मार्गमें चन्द्रकी एक ही कला दिखती है वह अमावस्या दिवस होता है ॥२१२॥

चान्द्र-दिवसका प्रमाण—

एक्कत्तीस - मुहुत्ता, अविरेगो चंद-वासर-पमाणं ।
तेवीसंसा हारो, चउ - सय - बादाल - भेत्ता य ॥२१३॥

३१ । $\frac{२३}{४४२}$ ।

अर्थ—चान्द्र दिवसका प्रमाण इकतीस मुहूर्त और एक मुहूर्त के चार सौ बयालीस भागों-मेंसे तेईस भाग अधिक है ॥२१३॥

विशेषार्थ—चन्द्रकी अभ्यन्तर वीथीकी परिधि ३१५०८९ योजन है, जिसे दो चन्द्र ६२$\frac{३३}{४४}$ मुहूर्तमें पूर्ण करते हैं अतः एक चन्द्रका दिवस प्रमाण (६२$\frac{३३}{४४}$ ÷ २ =) ३१$\frac{२३}{४४}$ मुहूर्त होता है।

अथवा

एक चन्द्रके कुल गगनखण्ड ५४९०० हैं और चन्द्र एक मुहूर्तमें १७६८ गगनखण्डोंपर भ्रमण करता है अतः सम्पूर्ण गगनखण्डोंपर भ्रमण करनेमें उसे (५४९०० ÷ १७६८ =) ३१$\frac{२३}{४४}$ मुहूर्त लगेंगे। यही उसका दिवस प्रमाण है।

१५ दिन पर्यन्त चन्द्र कलाकी प्रतिदिनकी हानिका प्रमाण—

पडिवाए वासरादो, वीहिं पडि ससहरस्स सो राहू ।
एक्केक्क - कलं मुंचदि, पुण्णिमयं जाव संघट्टो ॥२१४॥

अर्थ—वह राहु प्रतिपद् दिनसे एक-एक वीथीमें गमन विशेष द्वारा पूर्णिमा पर्यन्त चन्द्रकी एक-एक कला को छोड़ता है ॥२१४॥

विशेषार्थ—चन्द्र विमानका विस्तार $\frac{५६}{६१}$ योजन है और उसके भाग १६ हैं, अतः जब १६ भागोंका विस्तार $\frac{५६}{६१}$ यो० है तब एक भागका विस्तार ($\frac{५६}{६१}$ ÷ १६ =) $\frac{१}{६१}$ योजन होता है अर्थात् राहु प्रतिदिन प्रत्येक परिधिमें $\frac{१}{६१}$ यो० (२२९$\frac{१}{२}$ मील) व्यास वाली एक-एक कला को छोड़ता है।

मतान्तरसे कृष्ण एवं शुक्ल पक्ष होनेके कारण—

अहवा ससहर-बिंबं, पण्णरस-दिणाइ तस्सहावेणं ।
कसणाभं सुक्लाभं, तेत्तियमेत्ताणि परिणमदि ॥२१५॥

अर्थ—अथवा, चन्द्र-बिम्ब अपने स्वभावसे ही पन्द्रह दिनोंतक कृष्ण कान्ति स्वरूप और इतने ही दिनों तक शुक्ल कान्ति स्वरूप परिणमता है ॥२१५॥

चन्द्र ग्रहणका कारण एवं काल—

पुह पुह ससि-बिंबाणि, छम्मासेसु च पुण्णिमंतम्मि ।
छादंति पव्व - राहू, णियमेणं गदि - विसेसेहिं ॥२१६॥

अर्थ – पर्व-राहु नियमसे गति-विशेषके कारण छह मासोंमें पूर्णिमाके अन्तमें पृथक्-पृथक् चन्द्र-बिम्बोंको आच्छादित करते हैं ॥२१६॥

विशेषार्थ—कुछ कम एक योजन विस्तारवाले राहु विमान चन्द्र विमानसे चार प्रमाणांगुल (२० धनुष, ३ हाथ और ८ अंगुल) नीचे हैं। इनमेंसे पर्वराहु अपनी गति विशेषके कारण पूर्णिमाके अन्तमें जो चन्द्र विमानोंको आच्छादित करते हैं तब चन्द्र ग्रहण होता है।

सूर्यकी संचार भूमि का प्रमाण एवं अवस्थान—

जंबूदीवम्मि दुवे, दिवायरा तास एक्क - चारमही ।
रविबिंबादहिय-पण-सय-बहुत्त रा जोयणाणि तव्वासो ॥२१७॥

५१० । $\frac{४७}{६१}$ ।

अर्थ—जम्बूद्वीपमें दो सूर्य हैं। उनकी चार-पृथिवी एक ही है। इस चार-पृथिवीका विस्तार सूर्य बिम्बके विस्तार ($\frac{४७}{६१}$ यो०) से अधिक पांच सौ दस (५१०$\frac{४७}{६१}$) योजन प्रमाण है ॥२१७॥

सोदी - जुगमेक्क - सयं, जंबूदीवे चरंति मत्तंडा ।
तीसुत्तर-ति-सयाणि, दिणयर-बिंबादियाणि लवणम्मि ॥२१८॥

१८० । ३३० । $\frac{४७}{६१}$ ।

अर्थ—सूर्य एक सौ अस्सी (१८०) योजन जम्बूद्वीपमें और दिनकर बिम्ब (के विस्तार $\frac{४७}{६१}$ यो०) से अधिक तीनसौ तीस (३३०) योजन लवणसमुद्रमें गमन करते हैं ॥२१८॥

सूर्य-वीथियोंका प्रमाण, विस्तार आदि और अन्तरालका वर्णन—

चउसीदी-अहिय-सयं, दिणयर-मग्गाओ[1] होंति एदाणं।
बिंब - समाणा वासा, एक्केक्काणं तदद्ध - बहलत्तं ॥२१९॥

१८४ । $\frac{३९}{४८१}$ । $\frac{३५}{४८१}$ ।

अर्थ—सूर्यकी गलियां एक सौ चौरासी (१८४) हैं। इनमेंसे प्रत्येक गलीका विस्तार बिम्ब-विस्तार सदृश $\frac{३९}{४८१}$ योजन और बाहल्य इससे आधा ($\frac{३५}{४८१}$ योजन) है ॥२१९॥

तेसीदी-अहिय-सयं, दिणेस-वीहीण होदि विच्चालं।
एक्क-पहम्मि चरंते, दोण्णि पि य भाणु-बिंबाणि ॥२२०॥

अर्थ—सूर्यकी (१८४) गलियोंमें एक सौ तेरासी (१८३) अन्तराल होते हैं। दोनों ही सूर्य-बिम्ब एक पथमें गमन करते हैं ॥२२०॥

सूर्यकी प्रथम वीथीका और मेरुके बीच अन्तर-प्रमाण—

सट्ठि-जुदं ति-सयाणि, मंदर-रुंदं च जंबुदीवस्स।
वासे सोहिय अद्धिदे, सूरादिम-पह-सुरट्ठि-विच्चालं ॥२२१॥

३६० । ४४८२० ।

अर्थ—जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीन सौ साठ (३६०) योजन और मेरुके विस्तारको घटाकर शेषको आधा करनेपर सूर्यके प्रथम पथ एवं मेरुके मध्यका अन्तरालप्रमाण प्राप्त होता है ॥२२१॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका वि० १००००० यो० — (१८० × २) = ९९६४० यो०। ९९६४० — १०००० मेरु वि० = ८९६४०; ८९६४० ÷ २ = ४४८२० यो० प्रथम पथ और मेरुके बीचका अन्तराल। विशेषके लिए इसी प० की गाथा १२१ का विशेषार्थ द्रष्टव्य है।

सूर्यकी ध्रुव राशिका प्रमाण—

एक्कत्तीस-सहस्सा, एक्क-सयं जोयणाणि अडवण्णा।
इगिसट्ठीए अवहिदे, धुव - रासी होदि दुमणीणं ॥२२२॥

$३११५८\frac{४}{६१}$ ।

अर्थ—इकतीस हजार एक सौ अट्ठावन योजनोंमें इकसठका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना ($३११५८\frac{४}{६१}$ या ५१०$\frac{४}{६१}$ यो०) सूर्योंकी ध्रुवराशिका प्रमाण होता है ॥२२२॥

---

१. ब विवाओ, क. वीहीओ।

सूर्य-पथोंके बीच अन्तरका प्रमाण—

विक्खंभयर - बिंब - हदं, चउसीदीसमहिय - सएणं ।
धुवरासिस्स य मज्झे, सोहेज्जसु तत्थ अवसेसं ॥२२३॥

तेसीदि-धुव-सदेणं, भजिदव्वं तम्मि होदि जं लद्धं ।
वीहिं पडि णादव्वं, तरणीणं लंघण - पमाणं ॥२२४॥

२ ।

अर्थ—ध्रुवराशिमेंसे एक सौ चौरासी (१८४) से गुणित सूर्य-बिम्बका विस्तार घटा देनेपर जो शेष रहे उसमें एक सौ तेरासीका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो, उतना सूर्योंका प्रत्येक वीथीके प्रति लंघनका प्रमाण अर्थात् एक वीथीसे दूसरी वीथीके बीचका अन्तराल जानना चाहिए ॥२२३-२२४॥

विशेषार्थ—ध्रुवराशिका प्रमाण $३१५०८\frac{१२}{१९}$ (५१०$\frac{४}{९}$) योजन, सूर्य-बिम्बका विस्तार $\frac{४८}{६१}$ योजन, सूर्यकी वीथियाँ १८४ और वीथियोंके अन्तराल १८३ हैं। सूर्यकी एक वीथीका विस्तार $\frac{४८}{६१}$ यो० है तब १८४ वीथियोंका विस्तार कितना होगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{४८}{६१} \times \frac{१८४}{१} = \frac{८८३२}{६१}$ योजन प्राप्त हुए। इसे ध्रुवराशि (चारक्षेत्र) के प्रमाणमेंसे घटा देनेपर $\left(३१५०८\frac{१२}{१९} - \frac{८८३२}{६१}\right) = ३१५२५\frac{३१}{६१}$ योजन १८४ गलियोंका अन्तराल प्राप्त होता है। १८४ गलियोंके अन्तराल १८३ ही होते हैं अतः सम्पूर्ण गलियोंके अन्तर-प्रमाणमें १८३ का भाग देनेपर एक गलीसे दूसरी गलीके बीचका अन्तर $\left(३१५२५\frac{३१}{६१} \div १८३\right) = २$ योजन प्राप्त होता है।

सूर्यके प्रतिदिन गमनक्षेत्रका प्रमाण—

तम्मेत्तं पह-विक्खं, तं मायं दोण्णि जोयणा होंति ।
तस्सि रवि - बिंब - जुदे, पह - सूचीओ दिणेसस्स ॥२२५॥

$२\frac{१७}{६१}$ ।[१]

अर्थ—प्रत्येक वीथीके उतने अन्तरालका प्रमाण दो योजन है। जिसमें सूर्यबिम्बका विस्तार ($\frac{४८}{६१}$ यो०) मिला देनेपर सूर्यके पथ-सूचीका प्रमाण $२\frac{४८}{६१}$ योजन अथवा $\frac{१७०}{६१}$ योजन होता है अर्थात् सूर्यको प्रतिदिन एक गली पार कर दूसरी गलीमें प्रवेश करने तक $२\frac{४८}{६१}$ योजन प्रमाण गमन करना पड़ता है ॥२२५॥

---

१. ति. प. ४. ४६३ ।

मेरुसे बीथियोंका अन्तर प्राप्त करनेका विधान—

पढम-पहादो रविणो, बाहिर-मग्गम्मि गमण-कालम्मि ।
पडि - मग्ग - मेलियं खिव - विच्चालं मंदरक्कंतं ॥२२६॥

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथसे (द्वितीयादि) बाह्य बीथियोंकी ओर जाते समय प्रत्येक मार्ग में इतना ($\frac{१}{६२}$ यो०) मिलाते जाने पर मेरु और सूर्यके बीचका अन्तर प्राप्त होता है ॥२२६॥

अथवा—

रूऊणं इट्ठ - पहं, पह-सूचि-चएण गुणिय मेलज्जं ।
तवणाबिंब-पह-मंदर-विच्चाले होदि इट्ठ - विच्चालं ॥२२७॥

अथवा, एक कम इष्ट पथको पथसूची चयसे गुणा करके प्राप्त प्रमाणको सूर्यके आदि (प्रथम) पथ और मेरुके बीच जो अन्तराल है उसमें मिला देनेपर इष्ट अन्तरालका प्रमाण होता है ॥२२७॥

विशेषार्थ—यथा – मेरुसे पाँचवें पथका अन्तराल प्राप्त करनेके लिए—

इष्ट पथ ५ — १ = ४; (पथसूचीचय $\frac{२}{६२}$) × ४ = $\frac{८}{६२}$ = $\frac{११}{३१}$; ४४८२० + $\frac{११}{३१}$ = ४४८२१$\frac{११}{३१}$ योजन अन्तर मेरुसे पाँचवीं वीथीका है ।

प्रथमादि पथोंमें मेरुसे सूर्यका अन्तर—

चउवाल-सहस्साणि, अट्ठ-सया जोयणाणि बीसं पि ।
एवं पढम-पह-ट्ठिद-दिणयर - कणयद्दि - विच्चालं ॥२२८॥

४४८२० ।

अर्थ—प्रथम पथमें सूर्य और मेरुके बीच चवालीस हजार आठ सौ बीस (४४८२०) योजन प्रमाण अन्तराल है ॥२२८॥

चउदाल-सहस्सा अड-सयाणि बावीस भाणुबिंब-जुदा ।
जोयणया बिदिय-पहे, तिण्हंसु सुमेरु - विच्चालं ॥२२९॥

४४८२२ । $\frac{३}{६२}$ ।[1]

अर्थ—द्वितीय पथमें सूर्य और मेरुके बीच सूर्यबिम्ब सहित चवालीस हजार आठ सौ बाईस (४४८२२$\frac{३}{६२}$) योजन-प्रमाण अन्तराल है ॥२२९॥

---

१. ब. ४४८२२ । ब. ४४८२२ । ४८.

चउदाल-सहस्सा अड-सयाणि पणुवीस जोयणाणि कला ।
पणुतीस तइज्ज - पहे, पतंग - हेमद्दि - विच्चालं ॥२३०॥

४४८२५ । ३५ ।

एवमादि-मज्झिम-पह-परियंतं णेदव्वं ।

अर्थ—तृतीय पथमें सूर्य और सुवर्ण पर्वतके बीच चवालीस हजार आठ सौ पच्चीस योजन और पैंतीस कला (४४८२५३५ यो०) प्रमाण अन्तराल है ॥२३०॥

इसप्रकार आदि (प्रथम पथ) से लेकर मध्यम (१९२) मार्ग पर्यन्त जानना चाहिए ।

मध्यम पथमें सूर्य और मेरुका अन्तर—

पंचचाल-सहस्सा, पणहत्तरि जोयणाणि अधिरेका ।
मज्झिम-पह-ठिद-दिवसणि-कालीयर-सेल-विच्चालं ॥२३१॥

४५०७५ ।

एवं दुचरिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—मध्यम पथमें स्थित सूर्य और सुवर्णशैलके बीचका अन्तराल पचहत्तर योजन अधिक पैंतालीस हजार है ॥२३१॥

इसप्रकार द्विचरम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

विशेषार्थ—मध्यम वीथीमें स्थित सूर्यका मेरु पर्वतसे अन्तर-प्रमाण ४४८२० + ($\frac{१८०}{२}$ × १९२)=४५०७५ योजन है ।

बाह्य पथ स्थित सूर्यका मेरुसे अन्तर—

पणचाल-सहस्साणि, तिण्णि-सया तीस-जोयणाधरिया ।
बाहिर-पह-ठिद-भासयरकर - कंचण - सेस - विच्चालं ॥२३२॥

४५३३० ।

अर्थ—बाह्य पथमें स्थित सूर्य और सुवर्णशैलके बीच पैंतालीस हजार तीन सौ तीस (४५३३०) योजन प्रमाण अन्तराल कहा गया है ॥२३२॥

यथा—४४८२० + ($\frac{१८०}{२}$ × १८३)=४५३३० योजन ।

बाहिर-पहादु आविम-मग्गे तवणस्स आगमण-काले ।
पुव्वं खेवं सोहसु, चुचरिम-पह-पहुदि जाव पढम-पहं ॥२३३॥

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गसे प्रथम मार्गकी ओर आते समय पूर्व वृद्धिको कम करनेपर द्विचरम पथसे लेकर प्रथम पथ पर्यन्तका अन्तराल प्रमाण जानना चाहिए ॥२३३॥

दोनों सूर्योका पारस्परिक अन्तर—

सट्ठि-जुदा ति-सयाणि, सोहेज्जसु जंबुदीव-रुंदम्मि ।
जं सेसं पढम - पहे, दोण्हं दुमणीण विच्चालं ॥२३४॥

अर्थ—जम्बूद्वीपके विस्तारमेंसे तीनसौ साठ योजन कम करने पर जो शेष रहे उतना प्रथम पथ (स्थित) दोनों सूर्योंके बीच अन्तराल रहता है ॥२३४॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका विस्तार १००००० यो० — (१८० × २) = ९९६४० यो० अन्तराल ।

णवणउदि-सहस्सा छस्सयाणि चउदाल-जोयणाणि पि ।
तवणाणि आबाहा, अब्भंतर - मंडल - ठिदाणं ॥२३५॥

९९६४० ।

अर्थ—अभ्यन्तर मण्डलमें स्थित दोनों सूर्योका अन्तराल निन्यानवे हजार छह सौ चालीस (९९६४०) योजन प्रमाण है ॥२३५॥

सूर्योंको अन्तराल वृद्धिका प्रमाण—

दिणबइ-पह-सूचि-चए, दोसु गुणिदे हवेदि भाणूणं ।
आबाहाए वड्ढी, जोयणया पंच पंचतीस - कला ॥२३६॥

५ । $\frac{३५}{६१}$ ।

अर्थ—सूर्यकी पथ-सूची-वृद्धिको दो से गुणित करने पर सूर्योंको अन्तराल-वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है जो पाँच योजन और पैंतीस कला अधिक है ॥२३६॥

विशेषार्थ—सूर्य-पथ-सूची $\frac{३५^{\circ}}{६१}$ × २ = $\frac{३५^{\circ}}{३०\frac{१}{२}}$ या $५\frac{३५}{६१}$ योजन अन्तराल वृद्धिका प्रमाण है ।

सूर्योंका अभीष्ट अन्तराल प्राप्त करनेका विधान—

इच्छोणं इट्ठ - पहं, गुणिदूणं मग्ग - सूइ - वड्ढीए ।
पढमाबाहाभिहिदं, वासरणाहाण इट्ठ - विच्चालं ॥२३७॥

अर्थ—एक कम इष्ट-पथको द्विगुणित मार्ग-सूची-वृद्धिसे गुणा करनेपर जो प्रमाण प्राप्त हो उसे प्रथम अन्तरालमें मिला देनेसे सूर्योंका अभीष्ट अन्तराल प्रमाण प्राप्त होता है ॥२३७॥

द्वितीयादि पथोंमें सूर्योंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण—

णवणउदि-सहस्सा छस्सयाणि पणदाल जोयणाणि कला ।
पंचतीस दुहज्ज - पहे, दोण्हं भाणूण विच्चालं ॥२३८॥

९९६४५ । $\frac{३५}{६१}$ ।

एवं मज्झिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—द्वितीय पथमें दोनों सूर्योंका अन्तराल निन्यानवें हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पैंतीस भाग (९९६४५$\frac{३५}{६१}$ यो०) प्रमाण है ॥२३८॥

इसप्रकार मध्यम मार्ग तक लेजाना चाहिए ।

विशेषार्थ—यहां इष्ट पथ २रा है। गा० २३७ के नियमानुसार २ — १ = १ । [(१×५$\frac{३५}{६१}$) + ९९६४०]=९९६४५$\frac{३५}{६१}$ यो० अन्तराल है ।

एक्कं लक्खं पण्णब्भहिय-सयं जोयणाणि अहिरेगो ।
मज्झिम-पहम्मि दोण्हं, सहस्स-किरणाण-विच्चालं ॥२३९॥

१००१५० ।

एवं दुचरिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—मध्यम पथमें दोनों सूर्योंका अन्तराल कुछ अधिक एक लाख एक सौ पचास (१००१५०) योजन प्रमाण होता है ॥२३९॥

विशेषार्थ—इष्ट पथ ९३ वीं है। इसमेंसे १ घटा देनेपर ९२ शेष रहते हैं यही ९२ वीं वीथी मध्यम पथ है ।

(द्विगुणित पथ सूची $\frac{१}{६१}$×२)×९२=५१२$\frac{६०}{६१}$ यो० । (प्रथम पथमें सूर्योंका अन्तराल ९९६४० यो०) + ५१२$\frac{६०}{६१}$ यो०=१००१५२$\frac{६०}{६१}$ यो० मध्यम पथमें सूर्योंका अन्तराल है । यूल संदृष्टिसे यह प्रमाण अधिक है । इसीलिए गाथा में 'अहिरेगो' पद आया है ।

इसीप्रकार द्विचरम अर्थात् १८२ वीथियों पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

सूर्यकी गलियां १८४ हैं किन्तु प्रक्षेप केवल १८३ पथोंमें मिलाया जाता है, इसलिए द्विचरम पथ १८२ होगा :

एक्कं जोयण-लक्खं, सट्ठी-जुत्ताणि छस्सयाणि पि ।
बाहिर - वहम्मि दोण्हं, सहस्सकिरणाण विच्चालं ॥२४०॥

१००६६० ।

अर्थ—बाह्य पथमें दोनों सूर्योंका (पारस्परिक) अन्तराल एक लाख छह सौ साठ (१००६६०) योजन प्रमाण है ॥२४०॥

विशेषार्थ—इष्ट पथ १८४ — १=१८३ ।

९९६४०+($\frac{५}{४८}$ × १८३)=१००६६० योजन अन्तराल है ।

सूर्यका विस्तार प्राप्त करनेकी विधि—

इच्छंतो रवि-बिंबं, सोहेज्जसु सयल धीहि विच्चालं ।
धुवरासिस्स य मज्झे, धुलसीदी-गुद-सवेण भजिदव्वं ॥२४१॥

$\frac{४८}{५}$ । $\frac{३११५८}{५}$ । $\frac{२१३६१}{५}$ ।

अर्थ—यदि सूर्यबिम्बका विस्तार जाननेकी इच्छा हो तो ध्रुवराशिमेंसे समस्त मार्गान्तरालको घटाकर शेषमें एक सौ चौरासीका भाग देना चाहिए । इसका भागफल ही सूर्यबिम्ब के विस्तारका प्रमाण है ॥२४१॥

विशेषार्थ—ध्रुवराशिका प्रमाण $३११५८\frac{५}{५}$ यो० है और सर्व पथोंके अन्तरालका प्रमाण $२१३६१\frac{५}{५}$ योजन है ।

$३११५८\frac{५}{५}$ — $२१३६१\frac{५}{५}$ = $९७४६\frac{३}{५}$ यो० । $९७४६\frac{३}{५}$ ÷ १८४=$\frac{५}{४८}$ योजन सूर्यबिम्बके विस्तार का प्रमाण ।

रविमग्गे इच्छंतो, वासरमणि-बिंब-बहल संखाए ।
तस्स य बीही बहलं, भजिदूणं ते वि आणयेदव्वं ॥२४२॥

अर्थ—यदि सूर्यके मार्गको जाननेकी इच्छा हो तो उसके बिम्बके बाहल्य ($\frac{५}{४८}$ विस्तार का वीथी-विस्तार ($९७४६\frac{३}{५}$ यो०) में भाग देकर मार्गोंका प्रमाण ले आना चाहिए ॥२४२॥

अथवा—

सूर्य-मार्गोंका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

बिंबबहं-पहंतरजुदि, सोहिय धुवरासियम्मि भजिदूणं ।
रवि - बिंबेणं आणसु, रविमग्गे विरचणखंडाणि ॥२४३॥

$५\frac{५}{६६}$ । $^{८}१\frac{३}{६६}^{२}$ । १८४ ।[१]

अथवा—

अर्थ—ध्रुवराशिमेंसे सूर्यके मार्गान्तरालोंको घटाकर शेषमें रविबिम्ब (विस्तार) का प्रमाण देनेपर बानवेके दूने अर्थात् एक सौ चौरासी सूर्यमार्गोंका प्रमाण प्राप्त होता है ।।२४३।।

विशेषार्थ—(ध्रुवराशि $३१३\frac{५}{६६}$) — $^{२}३१\frac{३}{६६}^{५}$ — $^{८}१\frac{३}{६६}^{२}$ ।

$^{८}१\frac{३}{६६}^{२} \div \frac{५}{६६}$ = १८४ वीथियाँ (सूर्य की) हैं ।

चारक्षेत्रका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

विणवइ-पह-सूचि-गुए[२], तिय-सोदी-जुद-सदेण संगुणिदे ।
होदि हु चारक्खेत्तं, बिंबूणं तच्चुदं सयलं ।।२४४।।

१ । $३\frac{१}{६६}^{०}$ । १८३ । लद्ध ५१० ।

अर्थ—सूर्यकी पथ-सूची-वृद्धिको एक सौ तेरासीसे गुणा करने पर जो (राशि) प्राप्त हो उतना बिम्ब विस्तारसे रहित सूर्यका चारक्षेत्र होता है । इसमें बिम्ब विस्तार मिला देनेपर समस्त चार क्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है ।।२४४।।

विशेषार्थ—(सूर्य पथ सूची वृद्धि $३\frac{१}{६६}^{०}$ यो०) × १८३ = $^{५}१११^{०}$ = ५१० यो० बिम्ब रहित चारक्षेत्र; ५१० + $\frac{५}{६६}$ = ५१०$\frac{५}{६६}$ यो० समस्त चारक्षेत्रका प्रमाण ।

प्रतिज्ञा—

दिण-रयणि-आयवट्ठं, आयव-तिमिराण काल-परिमाणं ।
मंदर - परिहि - प्पहुदि, चउणवदि - सयं पवक्खेमो ।।२४५।।

१९४ ।

अर्थ—(अब) दिन और रात्रिको जाननेके लिए आतप और तिमिरके काल प्रमाणका एवं मेरु परिधि आदि एक सौ चौरानवें (१९४) परिधियोंका प्ररूपण करते हैं ।।२४५।।

मेरु-परिधिका प्रमाण—

एक्कत्तीस-सहस्सा, जोयणया छस्सयाणि बावीसं ।
मंदरगिरिस्स - परिरय - रासिस्स हवेदि परिमाणं ।।२४६।।

३१६२२ ।

---

१. ब. क. ज. $१८४\frac{५}{६६}$ । १ । ४८ । २. ब. ब. क. ज. चीए ।

अर्थ—सुमेरु पर्वतकी परिधि-राशि इकतीस हजार छह सौ बाईस (३१६२२) योजन प्रमाण है ॥२४६॥

विशेषार्थ—मेरु विष्कम्भ १०००० योजन है और इसकी परिधि ३१६२२ योजन है। वर्गमूल निकालने पर जो अवशेष बचे हैं वे छोड़ दिये गये हैं।

क्षेमा और अवध्या के प्रणिधि भागोंकी परिधि—

णभ-छक्क-सत्त-सत्ता, सत्तेक्कंक - एक्कमेण जोयणया ।
अट्ठ-हिद[1]-पंच-भागा, खेमावज्झाण पणिधि-परिहि त्ति ॥२४७॥

१७७७६० । $\frac{5}{8}$ ।

अर्थ—क्षेमा और अवध्या नगरीके प्रणिधिभागोंमें परिधि शून्य छह, सात, सात, सात और एक, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् १७७७६० योजन और एक योजनके आठ भागोंमेंसे पाच भाग प्रमाण है ॥२४७॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीप स्थित सुमेरु पर्वतका तल विस्तार १०००० यो०, सुमेरुके दोनों ओर स्थित भद्रशाल वनोंका विस्तार (२२००० × २) = ४४००० यो० और इसके आगे कच्छा, सुकच्छा आदि ३२ देशोंमेंसे प्रत्येक देशका विस्तार २२१२$\frac{2}{8}$ योजन है। गाथामें कच्छादेश स्थित क्षेमा नगरी और गन्धमालिनी देश स्थित अवध्या नगरीके प्रणिधिभाग पर्यन्तकी परिधि निकाली है; जो इसप्रकार है—

१०००० + ४४००० + २२१२$\frac{2}{8}$ यो० = ५६२१२$\frac{2}{8}$ यो० ।

चतुर्थाधिकार गाथा ६ के नियमानुसार इसकी परिधि—

$\sqrt{(५६२१२\frac{2}{8})^2 \times १०} = \frac{१७७७६०\frac{5}{8}}{8} = १७७७६०\frac{5}{8}$ योजन प्राप्त होती है।

यहाँ एवं आगे भी सर्वत्र वर्गमूल निकालनेके उपरान्त जो राशि शेष रहती (बचती) है वह छोड़ दी गई है।

क्षेमपुरी और अयोध्याके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण—

अट्ठेक्क-णव-चउक्का णवेक्क-अंक-क्कमेण जोयणया ।
ति-कलाओ परिहि संखा, खेमपुरी-पउरभाण मज्झ-पणिधीए ॥२४८॥

१९४९१८ । $\frac{3}{8}$ ।

---

१ द. ब. क, ज. हिदा-पंचभागे ।

अर्थ—क्षेमपुरी और अयोध्या नगरीके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण आठ, एक, नौ चार, नौ और एक इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् १९४९१८ योजन और तीन कला अधिक है ॥२४८॥

विशेषार्थ—क्षेमपुरी और अयोध्या नगरीके पूर्व ५००-५०० योजन विस्तार वाले चित्रकूट एवं देवमाल नामक दो वक्षार पर्वत हैं। पूर्व परिधिमें दो क्षेत्रों और इन दो पर्वतोंकी परिधि मिला देनेसे क्षेमपुरी एवं अयोध्याके प्रणिधिभागोंकी परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

१००० + ४४२५$\frac{3}{4}$ यो० = ५४२५$\frac{3}{4}$ योजन।

$\sqrt{(५४२५\frac{3}{4})^2 \times १०} = \frac{९९}{२}^{१७} = १७१५७\frac{3}{4}$ योजन।

(पूर्व परिधि १७७७६०$\frac{3}{4}$ यो०) + १७१५७$\frac{3}{4}$ = १९४९१८$\frac{3}{4}$ योजन।

खड्गपुरी और अरिष्टाके प्रणिधिभागोंकी परिधि—

चउ-गयण-सत्त-णव-अट्ठ-दुगाण अंक-कमेण जोयणया।
ति-कलाओ खग्गरिट्ठा पणिधीए परिहि - परिमाणं ॥२४९॥

२०९७०४ | $\frac{3}{4}$ |

अर्थ—खड्गपुरी और अरिष्टा नगरियोंके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण चार, शून्य, सात, नौ, शून्य और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २०९७०४ योजन और तीन कला अधिक है ॥२४९॥

विशेषार्थ—खड्गपुरी और अरिष्टाके पूर्वमें १२५-१२५ योजन विस्तार वाली ऊर्मिमालिनी और द्रहवती विभंगा नदियाँ हैं। पूर्व परिधिमें दो क्षेत्रों और इन दो नदियों की परिधि मिला देने पर उपर्युक्त प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

४४२५$\frac{3}{4}$ + २५० = ४६७५$\frac{3}{4}$ = $\frac{१८७०३}{४}$ यो०।

$\sqrt{(\frac{१८७०३}{४})^2 \times १०} = \frac{३५}{२}^{१४७} = १४७८६$ योजन।

१९४९१८$\frac{3}{4}$ + १४७८४ = २०९७०४$\frac{3}{4}$ योजन।

चक्रपुरी और अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागोंकी परिधि—

दुग-छक्क-अट्ठ-छक्का, दुग-दुग-अंक-कमेण जोयणया।
एक्क-कला परिमाणं, चक्कारिट्ठाण पणिधि-परिहीए ॥२५०॥

२२६८६२ | $\frac{1}{2}$ |

अर्थ—चक्रपुरी और अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें परिधिका प्रमाण दो, छह, आठ, छह, दो और दो इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २२६८६२ योजन और एक कला अधिक है ॥२५०॥

विशेषार्थ—दो क्षेत्रों और नागगिरि एवं नलिनकूटकी परिधि पूर्व परिधिमें मिला देनेपर उपर्युक्त परिधि प्राप्त होती है।

यथा—२०९७०४$\frac{2}{3}$ + १७१५७$\frac{2}{3}$ = २२६८६२$\frac{2}{3}$ यो०।

सुसीमा और अपराजिताकी परिधि—

अट्ठ-चउ-सुण्ण-एक्का, चउ-दुग-अंक-क्कमेण जोयणया।
एक्क-कला खग्गापरजिदाय णयरीए मज्झ-परिहो सा ॥२५१॥

२४१६४८। $\frac{1}{4}$।

अर्थ - खड्गा और अपराजिता नगरियोंके मध्य उस परिधिका प्रमाण आठ, चार, शून्य, एक, चार और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २४१६४८ योजन और एक कला है ॥२५१॥

विशेषार्थ—दो क्षेत्र और ग्राहवती एवं फेनमालिनी इन दो विभंगा नदियोंकी परिधि पूर्व परिधिमें मिला देनेपर (२२६८६२$\frac{2}{3}$ + १४७८६) = २४१६४८$\frac{1}{4}$ योजन परिधि प्राप्त होती है।

मंजूषा और जयन्ता पर्यन्त परिधि-प्रमाण—

पंच-गयणट्ठ-अट्ठा, पंच - दुगंक - कमेण जोयणया।
सत्त - कलाओ मंजुस-जयंतपुर-मज्झ-परिहो सा ॥२५२॥

२५८८०५। $\frac{7}{4}$।

अर्थ—मंजूषा और जयन्तपुरोंके मध्यमें परिधि पाँच, शून्य, आठ, आठ, पाँच और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २५८८०५ योजन और सात कला प्रमाण है ॥२५२॥

विशेषार्थ—दो क्षेत्रों और पद्मकूट एवं सूर्यगिरि वक्षार पर्वतोंकी परिधि, पूर्व प्रमाण में मिला देनेपर उपर्युक्त क्षेत्रोंकी (२४१६४८$\frac{1}{4}$ + १७१५७$\frac{2}{3}$ यो०)=२५८८०५$\frac{7}{12}$ योजन परिधि प्राप्त होती है।

ओषधिपुर और वैजयन्तीकी परिधि—

एक्क-णव-पंच-तिय-सत्त-दुगा अंक-क्कमेण जोयणया।
सत्त - कलाओ परिहो, ओसहिपुर - वइजयंताणं ॥२५३॥

२७३५९१। $\frac{7}{4}$।

अर्थ—ओषधि और वैजयन्ती नगरीकी परिधि एक, नौ, पाँच, तीन, सात और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २७३५९१ योजन और सात कला प्रमाण है ॥२५३॥

विशेषार्थ—दो क्षेत्रों एवं पंकवती और गभीरमालिनी नदियोंकी परिधि, पूर्व प्रमाणमें मिला देनेपर (२५८८०५$\frac{2}{3}$ + १४७८६ यो०) = २७३५९१$\frac{2}{3}$ योजन उपर्युक्त परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है।

विजयपुरी और पुण्डरीकिणीकी परिधि—

णव-अट्ठ-सत्त-णहाइं, णवय-दुगा जोयणाणि अंक-कमे।
पंच-कलाओ परिही, विजयपुरी-पुंडरीगिणीणं पि ॥२५४॥

२९०७४९ । $\frac{5}{6}$ ।

अर्थ—विजयपुरी और पुण्डरीकिणी नगरियोंकी परिधि नौ, चार, सात, शून्य, नौ और दो, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् २९०७४९ योजन और पाँच कला प्रमाण है ॥२५४॥

विशेषार्थ—दो क्षेत्रों और चन्द्रगिरि एवं एक शैल वक्षारोंकी परिधि, पूर्व परिधिके प्रमाणमें मिला देनेपर (२७३५९१$\frac{2}{3}$ + १७१५७$\frac{5}{6}$) = २९०७४९$\frac{1}{2}$ योजन उपर्युक्त परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है।

सूर्यकी अभ्यन्तर वीथीकी परिधि—

तिय-जोयण-लक्खाणि, पण्णरस-सहस्सयाणि उणणउदी।
सव्वब्भंतर - मग्गे, परिरय - रासिस्स परिमाणं ॥२५५॥

३१५०८९।

अर्थ—सूर्यके सब मार्गोंमेंसे अभ्यन्तर मार्गमें परिधि-राशिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार नवासी (३१५०८९) योजन है ॥२५५॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपमें सूर्यके चारक्षेत्रका प्रमाण १८० योजन है। दोनों पार्श्वभागोंका (१८०×२) = ३६० योजन।

(ज० का वि० १००००० यो०) — ३६० यो० = ९९६४० योजन सूर्यकी प्रथम वीथीका व्यास है और इसकी परिधि—

$\sqrt{(९९६४०)^2 \times १०}$ = ३१५०८९ योजन है। जो शेष बचे वे छोड़ दिए गये हैं।

सूर्यके परिधि प्रक्षेपका प्रमाण—

सेसाणं मग्गाणं, परिहो-परिमाण-जाणण-णिमित्तं।
परिहि खेवं वोच्छं, गुरुवदेसाणुसारेणं ॥२५६॥

अर्थ—शेष मार्गोंके परिधि-प्रमाणको जानने हेतु गुरु-उपदेशके अनुसार परिधि-प्रक्षेप कहते हैं ॥२५६॥

सूर-पह-सूइ-वड्ढी, दुगुणं कादूण वग्गिदूणं च ।
दस - गुणिदे जं मूलं, परिहिक्खेवो इमो होइ ॥२५७॥

अर्थ—सूर्य-पथोंकी सूची-वृद्धिको दुगुना करके उसका वर्ग करनेके पश्चात् जो प्रमाण प्राप्त हो उसे दससे गुणा करनेपर प्राप्त हुई राशिके वर्गमूल प्रमाण उपर्युक्त परिधिक्षेप (परिधि-वृद्धि) होता है ॥२५७॥

विशेषार्थ—सूर्यपथ-सूचीवृद्धिका प्रमाण $\frac{२१८}{८२}=\frac{१०९}{४१}$ यो० है ।

$\sqrt{\left(\frac{३४०}{८२}\times २\right)^२\times १०}=१७\frac{३६}{८२}$ यो० परिधि वृद्धि ।

सत्तरस-जोयणाणि, अदिरेगा तस्स होई परिमाणं ।
अट्ठत्तीसं अंसा, हारो तह एक्कसट्ठी य ॥२५८॥

१७ । ३६ ।

अर्थ—उक्त परिधि-प्रक्षेपका प्रमाण सत्तरह योजन और एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे अड़तीस भाग अधिक (१७$\frac{३८}{६१}$ यो०) है ॥२५८॥

द्वितीय आदि वीथियोंकी परिधि—

तिय-जोयण-लक्खाणि, पण्णरस-सहस्स एक्क-सय छक्का ।
अट्ठत्तीस कलाओ, सा परिही बिदिय - मग्गम्मि ॥२५९॥

३१५१०६ । ३६ ।

अर्थ—द्वितीय मार्गमें वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ छह योजन और अड़तीस कला है ॥२५९॥

३१५०८९ + १७$\frac{३६}{६१}$ = ३१५१०६$\frac{३६}{६१}$ योजन ।

चउवीस-अहेक्क-सयं, पण्णरस-सहस्स जोयण ति-लक्खा ।
पण्णरस - कला परिही, परिमाणं तदिय - वीहीए ॥२६०॥

३१५१२४ । १५ ।

अर्थ—तृतीय वीथीमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ चौबीस और पन्द्रह कला (३१५१२४$\frac{१५}{६१}$ यो०) है ॥२६०॥

३१५१०९$\frac{१}{६}$ + १७$\frac{१}{६}$ = ३१५१२४$\frac{२}{३}$ योजन।

एक्कत्तालेक्कसयं, पण्णरस-सहस्स जोयण ति-लक्खा।
तेवण्ण - कला तुरिमे, पहम्मि परिहीए परिमाणं ॥२६१॥

३१५१४१ । $\frac{५३}{६२}$ ।

अर्थ—चतुर्थपथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ इकतालीस योजन और तिरेपन कला (३१५१४१$\frac{५३}{६२}$ यो०) है ॥२६१॥

३१५१०९$\frac{१}{६}$ + १७$\frac{१}{६}$ = ३१५१४१$\frac{१}{३}$ योजन है।

उणसट्ठि-जुदेक्क-सयं, पण्णरस-सहस्स जोयण ति-लक्खा।
इगिसट्ठी - पविहत्ता, तीस - कला पंचम - पहे सा ॥२६२॥

३१५१४९ । $\frac{३०}{६१}$ ।

अर्थ—पंचम पथमें वह परिधि तीन लाख पन्द्रह हजार एक सौ उनसठ योजन और इकसठ से विभक्त तीस कला अधिक है ॥२६२॥

३१५१४१$\frac{१}{३}$ + १७$\frac{१}{६}$ = ३१५१५९$\frac{१}{२}$ योजन।

एवं पुव्वुप्पण्णे, परिहि-खेव [1]मेलिदूण उवरि-उवरि।
परिहि-पमाणं जाव - दुचरिम - परिहि त्ति णेदव्वं[2] ॥२६३॥

अर्थ—इसप्रकार पूर्वोत्पन्न परिधि-प्रमाणमें परिक्षेप मिलाकर द्विचरम परिधि पर्यन्त आगे-आगे परिधि प्रमाण जानना चाहिए ॥२६३॥

सूर्यके बाह्य-पथका परिधि प्रमाण—

चोद्दस-जुद-ति-सयाणि, अट्ठरस-सहस्स जोयण ति-लक्खा।
सूरस्स बाहिर - पहे, हवेदि परिहीए परिमाणं ॥२६४॥

३१८३१४।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें परिधिका प्रमाण तीन लाख अठारह हजार तीन सौ चौदह (३१८३१४) योजन है ॥२६४॥

विशेषार्थ—सूर्यकी अन्तिम (बाह्य) वीथीकी परिधिका प्रमाण {३१५०८९ + (१७$\frac{१}{६}$ × १८३)} = ३१८३१४ योजन है ॥

---

१. ब. माण उवरिवरि, क. माण उवरुवरि। २. ब. क. ज. प. ठ. णादव्वं।

लवणसमुद्रके जलषष्ठ भागकी परिधिका प्रमाण—

सत्ताबीस-सहस्सा, छावालं जोयणाणि पण-लक्खा ।
परिही लवणमहण्णव - विक्खंभं छट्ठ - भागम्मि ॥२६५॥

५२७०४६ ।

अर्थ—लवण समुद्रके विस्तारके छठे भागमें परिधिका प्रमाण पाँच लाख सत्ताईस हजार छयालीस (५२७०४६) योजन है ॥२६५॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके सूर्य तम और तापके द्वारा लवण-समुद्रके छठे भाग पर्यन्त क्षेत्रको प्रभावित करते हैं ।

जिसका व्यास इसप्रकार है—

लवणसमुद्रका वलय व्यास दो लाख योजन है । इसके दोनों पार्श्वभागोंका छठा भाग ($\frac{२०००००+०}{६}$)=६६६६६$\frac{२}{३}$ योजन हुआ । इसमें जम्बूद्वीपका व्यास जोड़ देनेपर जलषष्ठ भागका व्यास (१०००००+६६६६६$\frac{२}{३}$)=१६६६६६$\frac{२}{३}$ योजन होता है । जिसकी परिधि—

$\sqrt{(१६६६६६\frac{२}{३})^{२}\times १०}$=५२७०४६ योजन प्राप्त होती है । यहाँ जो शेष बचे, वे छोड़ दिये गये हैं ।

समान कालमें विसदृश प्रमाणवाली परिधियोंका भ्रमण पूर्ण कर सकनेका कारण—

रवि-बिंबा सिग्घ-गदी, णिग्गच्छंता हवंति पविसंता ।
मंद - गदी असमाणा, परिही साहंति सम - काले ॥२६६॥

अर्थ—सूर्यबिम्ब बाहर निकलते हुए शीघ्रगतिवाले और प्रवेश करते हुए मन्दगतिवाले होते हैं, इसलिए ये समान कालमें भी असमान परिधियोंको सिद्ध करते हैं ॥२६६॥

सूर्यके कुल गगनखण्डोंका प्रमाण—

एक्कं चेवय लक्खं, णवय-सहस्साणि अट्ठ-सयाणं पि ।
परिहीणं पयंगका, कादव्वा[1] गयण - खंडाणि ॥२६७॥

१०९८०० ।

अर्थ—इन परिधियोंमें (दोनों) सूर्योंके (सर्व) गगनखण्डोंका प्रमाण एक लाख नौ हजार आठ सौ (१०९८००) है ॥२६७॥

---

१. द. ब. क. ज. काल्वा ।

गगनखण्डोंका अतिक्रमण काल—

गच्छदि मुहुत्तमेक्के, तीसकमहियाणि अट्ठ-सयाणि ।
लब्ध-संखाणि रविणो, तम्मि[1] हिदे सव्व-गयण-संखाणि ॥२६८॥

१८३० ।

अर्थ—सूर्य एक मुहूर्तमें अठारह सौ तीस (१८३०) गगनखण्डोंका अतिक्रमण करता है, इसलिये इस राशिका समस्त गगनखण्डोंमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतने मुहूर्त प्रमाण सम्पूर्ण गगनखण्डोंके अतिक्रमणका काल होगा ॥२६८॥

विशेषार्थ—सूर्य एक मुहूर्तमें १८३० गगनखण्डोंका अतिक्रमण करता है, तब १०९८०० गगनखण्डों पर भ्रमण करनेमें कितना समय लगेगा ? १०९८००÷१८३०=६० मुहूर्त लगेंगे ।

अब्भंतर-वीहीदो, दु-ति-चदु-पहुदीसु सव्व-वीहीसुं ।
कमसो वे रविबिंबा, भमंति सट्ठी - मुहुत्तेहिं ॥२६९॥

अर्थ—अभ्यन्तर वीथीसे प्रारम्भकर दो, तीन, चार इत्यादि सब वीथियोंमें क्रमसे (प्रत्येक वीथीमें आमने-सामने रहते हुए) दो सूर्य-बिम्ब साठ मुहूर्तोंमें भ्रमण करते हैं ॥२६९॥

सूर्यका प्रत्येक परिधिमें एक मुहूर्तका गमन-क्षेत्र—

इच्छिय-परिहि-गयाणं, सट्ठि-मुहुत्तेहि भाजिदे लद्धं ।
सेसं दिवसकराणं, मुहुत्त - गमणस्स परिमाणं ॥२७०॥

५२५१ । ३६ ।

अर्थ—इष्ट परिधिमें साठ (६०) मुहूर्तोंका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो और जो (३६ आदि) शेष बचे वह सूर्योंके एक मुहूर्त कालके गमन क्षेत्रका प्रमाण जानना चाहिए ॥२७०॥

विशेषार्थ—यथा—प्रथम परिधिका प्रमाण ३१५०८९ योजन है, अतः ३१५०८९÷६०=५२५१३६ योजन प्रथम वीथीमें एक मुहूर्तका गमनक्षेत्र है ।

पंच-सहस्साणि दुवे, सयाणि इगिवण्ण जोयणा सहिया ।
उणतीस-कला पढम-प्पहम्मि दिणयर-मुहुत्त-गदिमाणं ॥२७१॥

५२५१ । ३६ ।

एवं दुचरिम-भमंतं णेदव्वं ।

---

1. ब. तम्मि सिद्धे, क. ज. ठ सिद्धे ।

अर्थ—प्रथम पथमें सूर्यकी एक मुहूर्त (४८ मिनिट) की गतिका प्रमाण पाँच हजार दो सौ इक्यावन योजन और एक योजनको साठ कलाओंमेंसे उनतीस कला अधिक (५२५१$\frac{२९}{६०}$ योजन) है ॥२७१॥

इसप्रकार द्विचरम अर्थात् एक सौ तेरासीवें मार्ग तक ले जाना चाहिए ।

बाह्य वीथीमें एक मुहूर्तका प्रमाण क्षेत्र—

पंच-सहस्सा ति-सया, पंचधिया जोयणाणि अहिरेगो ।
चोद्दस-कलाओ बाहिर-पहम्मि दिणबइ-मुहुत्त-गदिमाणं ॥२७२॥

५३०५ । $\frac{१४}{६०}$ ।

अर्थ—बाह्य अर्थात् एक सौ चोरासीवें (१८४ वें) मार्गमें सूर्यकी एक मुहूर्त परिमित गतिका प्रमाण पांच हजार तीन सौ पाँच योजन और चौदह कला अधिक है ॥२७२॥

विशेषार्थ—सूर्यकी बाह्य वीथीकी परिधि ३१८३१४ योजन है । ३१८३१४ ÷ ६० = ५३०५$\frac{१४}{६०}$ योजन बाह्यपथमें स्थित सूर्यकी एक मुहूर्तकी गतिका प्रमाण है ।

केतु बिंबोंका वर्णन—

णयर-यर-यलादो, चत्तारि पमाण-अंगुलाणि च ।
हेट्ठा गच्छिय होंति, अरिट्ठ - विमाणाण धय-दंडा ॥२७३॥

४ ।[1]

अर्थ—सूर्यके नगरतलसे चार प्रमाणांगुल नीचे जाकर अरिष्ट (केतु) विमानोंके ध्वज-दण्ड होते हैं ॥२७३॥

विशेषार्थ—केतु विमानके ध्वजा-दण्डसे ४ प्रमाणांगुल अर्थात् (उत्सेधांगुलके अनुसार) $\frac{४×५००}{१०००}$ = २० धनुष, ३ हाथ और ८ अंगुल ऊपर सूर्यका विमान है ।

रिट्ठाणं णयरतला, अंजणवण्णा अरिट्ठ-रयणमया ।
किंचूणं जोयणयं, पत्तेक्कं वास - संजुत्तं ॥२७४॥

अर्थ—अरिष्ट रत्नोंसे निर्मित केतुओंके नगरतल अंजनवर्णवाले होते हैं । इनमेंसे प्रत्येक कुछ कम एक योजन प्रमाण विस्तारसे संयुक्त होता है ॥२७४॥

---

१. ब. ब. क. ज. २२६ ।

पण्णासाधिय-दु-सयाणि, कोदंडाणं हवंति पत्तेक्कं ।
बहुलत्तण - परिमाणं, तण्णयराणं[1] सुरम्माणं ॥२७५॥

२५० ।

अर्थ—उन सुरम्य नगरोंमेंसे प्रत्येकका बाहल्य प्रमाण दो सौ पचास (२५०) धनुष होता है ॥२७५॥

नोट :—गाथा २७२ में राहु नगरका बाहल्य कुछ कम अर्ध यो० कहा गया है तथा पाठान्तर गाथा में २५० धनुष प्रमाण कहा गया है । किन्तु गाथा २७५ में ग्रन्थकर्ता स्वयं केतु के विमान का व्यास कुछ कम एक योजन मानते हुए भी उसका बाहल्य २५० धनुष स्वीकार कर रहे हैं । जो विचारणीय है, क्योंकि राहु और केतुका व्यास आदि बराबर ही होता है ।

चउ-गोउर-जुत्तेसुं[2], जिणभवण-भूसिवेसु रम्मेसुं ।
चेट्ठंते रिट्ठ - सुरा, बहु - परिवारेहि परियरिया ॥२७६॥

अर्थ—चार गोपुरोंसे संयुक्त और जिन भवनोंसे विभूषित उन रमणीय नगरतलोंमें बहुत परिवारोंसे घिरे हुए केतुदेव रहते हैं ॥२७६॥

छम्मासेसुं पुह पुह, रवि-बिंबाणं अरिट्ठ - विमाणि ।
अमवस्सा अवसाणे, छादंते गदि - विसेसेणं ॥२७७॥

अर्थ—गति विशेषके कारण अरिष्ट (केतु) विमान छह मासोंमें अमावस्याके अन्तमें पृथक्-पृथक् सूर्य-बिम्बोंको आच्छादित करते हैं ॥२७७॥

अभ्यन्तर और बाह्य वीथीमें दिन-रात्रिका प्रमाण—

मंडल-मंडलाणं, गमण - विसेसेण मणुव - लोयम्मि ।
जे [3]दिण - रत्तिं भेदा, जादा तेसिं पवक्खेमो ॥२७८॥

अर्थ—मनुष्यलोक (अढ़ाई द्वीप) में सूर्य-मण्डलोंके गमन-विशेषसे जो दिन एवं रात्रिके विभाग हुए हैं उनका निरूपण करते हैं ॥२७८॥

पढम-पहे दिणबड्ढी, संठिद-कालम्मि सव्व-रत्तीसुं ।
अट्ठरस - मुहुत्ताणि, दिवसो बारस णिसा होदि ॥२७९॥

१८ । १२ ।

---

१. ब. ब. त तं णयराणं । २. द. ब. क. ज. छेत्तेसुं । ३. द. ब. दिणयरत्ति ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते समय सब परिधियोंमें अठारह (१८) मुहूर्तका दिन और बारह (१२) मुहूर्तकी रात्रि होती है ॥२७९॥

बाहिर-मग्गे रविणो, संठिद-कालम्मि सव्व-परिहीसुं ।
अट्ठरस - मुहुत्ताणि, रत्ती बारस दिणं होदि ॥२८०॥

१८ । १२ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्यमार्गमें स्थित रहते समय सर्व परिधियोंमें अठारह (१८) मुहूर्तकी रात्रि और बारह (१२) मुहूर्तका दिन होता है ॥२८०॥

विशेषार्थ—श्रावणमासमें कर्क राशिपर स्थित सूर्य जब जम्बूद्वीप सम्बन्धी १८० योजन चार क्षेत्रकी प्रथम (अभ्यन्तर) परिधिमें भ्रमण करता है तब सर्व (सूर्यकी १८४, क्षेमा-अवध्या नगरियोंसे पुण्डरीकिणी-विजया पर्यन्त क्षेत्रोंकी ८, मेरु सम्बन्धी १ और लवणसमुद्रगत जलषष्ठ सम्बन्धी १, इसप्रकार १८४+८+१+१=१९४) परिधियोंमें १८ मुहूर्त (१४ घण्टा २४ मिनिट) का दिन और १२ मुहूर्त (९ घण्टा ३६ मिनिट) की रात्रि होती है। किन्तु जब माघ मासमें मकर-राशि स्थित सूर्य लवणसमुद्र सम्बन्धी ३३० योजन चार क्षेत्रकी बाह्य परिधिमें भ्रमण करता है तब सर्व (१९४) परिधियोंमें १८ मुहूर्तकी रात्रि और १२ मुहूर्तका दिन होता है।

रात्रि और दिनकी हानि-वृद्धिका चय प्राप्त करने की विधि एवं उसका प्रमाण —

भूमीए [1]मुहं सोहिय, रूऊणेणं पहेण भजिदव्वं ।
सा रत्तीए दिणादो, वड्ढी दिवसस्स रत्तीवो[2] ॥२८१॥

तस्स पमाणं दोण्णि य, मुहुत्तया एक्क-सट्ठि-विहत्ता ।
दोण्हं दिण - रत्तीणं, पडिदिवसं हाणि - वड्ढीओ ॥२८२॥

$\frac{2}{61}$ ।[3]

अर्थ—भूमिमेंसे मुखको कम करके शेषमें एक कम पथ-प्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतनी वृद्धि दिनसे रात्रिमें और रात्रिसे दिनमें होती है। उस वृद्धिका प्रमाण इकसठसे विभक्त दो ($\frac{2}{61}$) मुहूर्त है। प्रतिदिन दिन-रात्रि दोनोंमें मिलकर उतनी हानि-वृद्धि हुआ करती है ॥२८१-२८२॥

विशेषार्थ—भूमिका प्रमाण १८ मुहूर्त, मुखका प्रमाण १२ मुहूर्त और पथका प्रमाण १८४ है।

---

१. द. ब. क. ज. दिणं। २. ब. रत्तिसो। ३. द. १२। $\frac{2}{61}$। ब. $\frac{2}{3}$। के पा १७१। १।

(१८ — १२) ÷ (१८४ — १) = $\frac{६}{१८३}$ या $\frac{२}{६१}$ मुहूर्त । ४८ मिनिट का १ मुहूर्त होता है अतः $\frac{२}{६१}$ मुहूर्तमें १ मिनिट ३४$\frac{२}{६१}$ सेकेण्ड की वृद्धि या हानि होती है ।

सूर्यके द्वितीयादि पथोंमें स्थित रहते दिन-रात्रिका प्रमाण—

बिदिय-पह-ट्ठिद-सूरे, सत्तरस-मुहुत्तयाणि होदि दिणं ।
उणसट्ठि - कलब्भहियं, छक्कोणिय-दु-सय-परिहीसुं ॥२८३॥

१७ । $\frac{५९}{६०}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर छह कम दो सौ अर्थात् १९४ परिधियोंमें दिन का प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और उनसठ कला अधिक (१७$\frac{५९}{६०}$) होता है ॥२८३॥

बारस-मुहुत्तयाणि, दोण्णि कलाओ णिसाए परिमाणं ।
बिदिय-पह-ट्ठिदय-सूरे, तेत्तिय - मेत्तासु परिहीसुं ॥२८४॥

१२ । $\frac{२}{६०}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित रहनेपर उतनी (१९४) ही परिधियोंमें रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और दो कला (१२$\frac{२}{६०}$ मुहूर्त) होता है ॥२८४॥

तदिय-पह-ट्ठिद-तवणे, सत्त रस-मुहुत्तयाणि होदि दिणं ।
सत्तावण्ण कलाओ, तेत्तिय - मेत्तासु परिहीसुं ॥२८५॥

१७ । $\frac{५७}{६०}$ ।

अर्थ—सूर्यके तृतीयमार्गमें स्थित रहनेपर उतनी ही परिधियोंमें दिनका प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और सत्तावन कला (१७$\frac{५७}{६०}$ मुहूर्त) होता है ॥२८५॥

बारस-मुहुत्तयाणि, चत्तारि कलाओ रत्ति-परिमाणं ।
तप्परिहीसुं सूरे, अवट्ठिदे [1]तिदिय - मग्गम्मि ॥२८६॥

१२ । $\frac{४}{६०}$ ।

अर्थ—सूर्यके तृतीय मार्गमें स्थित रहनेपर उन परिधियोंमें रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और चार कला अधिक (१२$\frac{४}{६०}$ मु०) होता है ॥२८६॥

सत्तरस-मुहुत्ताइं, पंचावण्णा कलाओ परिमाणं ।
दिवसस्स तुरिम-मग्ग-ट्ठिदम्मि तिण्णेसु - बिदम्मि ॥२८७॥

१७ । $\frac{५५}{६०}$ ।

---

१. ब. बिदिय ।

अर्थ—तीव्रांशुबिम्ब (सूर्यमण्डल) के चतुर्थ मार्गमें स्थित रहनेपर दिनका प्रमाण सत्तरह मुहूर्त और पचपन कला अधिक (१७$\frac{५५}{६०}$ मु०) होता है ॥२८७॥

बारस मुहुत्तयाणि, छक्क-कलाओ वि रत्ति-परिमाणं ।
तुरिम-पह - ट्ठिद - पंकयबंधव - बिंबम्मि परिहोसुं ॥२८८॥

१२ । $\frac{६}{६०}$ ।

एवं मज्झिम-पहंतं णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्य बिम्बके चतुर्थ पथमें स्थित रहने पर सब परिधियोंमें रात्रिका प्रमाण बारह मुहूर्त और छह कला (१२$\frac{६}{६०}$ मु०) होता है ॥२८८॥

इसप्रकार मध्यम पथ पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

सूर्यके मध्यमपथमें रहनेपर दिन एवं रात्रि का प्रमाण—

पण्णरस - मुहुत्ताइं, पत्तेयं होंति दिवस - रत्तीओ ।
पुव्वोदिद - परिहोसुं, मज्झिम-मग्ग-ट्ठिदे तवणे ॥२८९॥

। १५ ।

एवं दुचरिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्यके मध्यम पथमें स्थित रहनेपर पूर्वोक्त परिधियोंमें दिन और रात्रि दोनों पन्द्रह-पन्द्रह मुहूर्त प्रमाणके होते हैं ॥२८९॥

विशेषार्थ—जब एक पथमें $\frac{३}{१८४}$ मुहूर्त की हानि या वृद्धि होती है तब मध्यम पथ $\frac{१}{२}$ में कितनी हानि-वृद्धि होगी ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर ($\frac{३}{१८४} \times \frac{१}{२}$) = ३ मुहूर्त प्राप्त हुए। इन्हें प्रथम पथके दिन प्रमाण १८ मु० में से घटाकर उसी पथके रात्रि प्रमाण १२ मुहूर्तमें जोड़ देनेपर मध्यम पथमें दिन और रात्रि का प्रमाण १५-१५ मुहूर्त प्राप्त होता है ।

इसप्रकार द्विचरम पथ तक ले जाना चाहिए ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहते दिन-रात्रिका प्रमाण—

अट्ठरस-मुहुत्ताणि, रत्ती बारस दिणो य दिणणाहे ।
बाहिर-मग्ग-पवण्णे, पुव्वोदिद - सव्व - परिहोसुं ॥२९०॥

१८ । १२ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गको प्राप्त होनेपर पूर्वोक्त सब (१८४) परिधियोंमें अठारह (१८) मुहूर्त प्रमाण रात्रि और बारह (१२) मुहूर्त प्रमाण दिन होता है ॥२९०॥

बाहिर - पहादु पत्ते, मग्गं अब्भंतरं सहस्सकरे ।
पुव्वावरिणव - खेवं, पक्खेवसु दिण - प्पमाणम्मि ॥२९१॥

$\frac{2}{61}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथसे अभ्यन्तर मार्गको प्राप्त होनेपर पूर्व-वर्णित क्रमसे दिन-प्रमाणमें उत्तरोत्तर इस वृद्धि-प्रमाणको मिलाना चाहिए ॥२९१॥

इय वासर-रत्तीओ, एक्कस्स रविस्स गदि-विसेसेणं ।
एवाणं दुगुणाओ, हवंति दोण्हं दिणिंदाणं ॥२९२॥

। दिन-रत्तीणं भेदं समत्तं ।

अर्थ—इसप्रकार एक सूर्यकी गति-विशेषसे उपर्युक्त प्रकार दिन-रात हुआ करते हैं । इनको दुगुना करनेपर दोनों सूर्योंकी गति-विशेषसे होने वाले दिन-रात का प्रमाण प्राप्त होता है ॥२९२॥

दिन-रातके भेदका कथन समाप्त हुआ ।



प्रतिज्ञा—

एत्तो वासर-पहुणो, गमण-विसेसेण मणुव-लोयम्मि ।
जे आदव - तम - खेत्ता, जादा ताणि पल्लवेमो ॥२९३॥

अर्थ—अब यहाँसे आगे वासरप्रभु (सूर्य) के गमन विशेषसे जो मनुष्यलोकमें आतप एवं तम क्षेत्र हुए हैं उनका प्ररूपण करते हैं ॥२९३॥

आतप एवं तम क्षेत्रोंका स्वरूप—

मंदरगिरि-मज्झादो, लवणोदहि-छट्ठ-भाग-परियंतं ।
णियदायामा आयव - तम - खेत्तं सकट-उद्धि-णिहा ॥२९४॥

अर्थ—मन्दरपर्वतके मध्य भागसे लेकर लवणसमुद्रके छठें भाग पर्यन्त नियमित आयाम-वाले गाड़ीकी उद्धि (पहियेके आरे) के सदृश आतप एवं तम-क्षेत्र हैं ॥२९४॥

प्रत्येक आतप एवं तम क्षेत्रकी लम्बाई—

तेसीदि-सहस्साणि, तिण्णि-सया जोयणाणि तेत्तीसं ।
स-ति-भागा पत्तेक्कं, आयव - तिमिराण आयामो ॥२९५॥

८३३३३ ।

अर्थ—प्रत्येक आतप एवं तिमिर क्षेत्रकी लम्बाई तेरासी हजार तीनसौ तैंतीस योजन और एक योजनके तृतीय भाग सहित है ॥२९५॥

विशेषार्थ—मेरुके मध्यसे लवणसमुद्रके छठे भाग पर्यन्तका क्षेत्र सूर्यके आतप एवं तमसे प्रभावित होता है । लवणसमुद्रका अभ्यन्तर सूची-व्यास ५ लाख योजन है । इसमें ६ का भाग देनेपर (५००००० ÷ ६) = ८३३३३$\frac{१}{३}$ योजन होता है । यही प्रत्येक आतप एवं तम क्षेत्रकी लम्बाईका प्रमाण है ॥

प्रथम पथ स्थित सूर्यकी परिधियोंमें ताप क्षेत्र निकालनेकी विधि—

इट्ठं परिरय-रासिं, ति-गुणिय दस-भाजिदम्मि जं लद्धं ।
सा घम्म - खेत्त - परिही, पढम - पहावट्ठिदे सूरे ॥२९६॥

$\frac{३}{१०}$ ।

अर्थ—इच्छित परिधि-राशिको तिगुना करके दसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर उस ताप क्षेत्रकी परिधिका प्रमाण होता है ॥२९६॥

विशेषार्थ—दो सूर्य मिलकर प्रत्येक परिधिको ६० मुहूर्तमें पूरा करते हैं । सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते सर्व (१८४) परिधियोंमें १८ मुहूर्तका दिन होता है । विवक्षित परिधिमें १८ मुहूर्तोंका गुणा करके ६० मुहूर्तोंका भाग देनेपर ताप व्याप्त क्षेत्रकी परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है । इसीलिए गाथामें ($\frac{१८}{६०}$ = $\frac{३}{१०}$) ३ का गुणाकर दसका भाग देने को कहा गया है ।

प्रथम पथ स्थित सूर्यकी क्रमशः दस परिधियोंमें ताप परिधियोंका प्रमाण—

णव य सहस्सा चउसय, छासीदी जोयणाणि तिण्णि-कला ।
पंच-हिदा ताव-खिदी, मेरु-गगे पढम - पह - ट्ठिदंकम्मि ॥२९७॥

९४८६ । ३ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर मेरु पर्वतके ऊपर नौ हजार चार सौ छयासी योजन और पाँचसे भाजित तीन कला प्रमाण ताप-क्षेत्र रहता है ॥२९७॥

विशेषार्थ—मेरु पर्वतकी परिधिको ३ से गुणित कर १० का भाग देनेपर मेरु पर्वतके ऊपर ताप क्षेत्रका प्रमाण ($\frac{३१६२३×३}{१०}$)=९४८६$\frac{३}{५}$ योजन प्राप्त होता है ।

खेमक्खा-पणिधीए, तेवण्ण-सहस्स ति-सय-अडवीसा[1] ।
सोलस-हिदा तियंसा, ताव-खिदी पढम-पह-ट्ठिदंकम्मि ॥२९८॥

५३३२८ । $\frac{३}{१६}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर क्षेमा नामक नगरीके प्रणिधिभागमें ताप क्षेत्रका प्रमाण तिरेपन हजार तीन सौ अट्ठाईस योजन और एक योजनके सोलह भागोंमेंसे तीन भाग अधिक होता है ॥२९८॥

विशेषार्थ—क्षेमा नगरीके प्रणिधिभागकी परिधि १७७७६०$\frac{३}{४}$ यो० = ($\frac{१४२१४०१}{८०}$)× $\frac{३}{४}$=$\frac{१७१३३३१}{३२}$=५३३२८$\frac{३}{१६}$ योजन ।

खेमपुरी-पणिधीए, अडवण्ण-सहस्स चउसयाणं पि ।
पंचत्तरि जोयणया, इगिदाल-कलाओ सोदि-हिदा ॥२९९॥

५८४७५ । $\frac{४१}{८०}$ ।

अर्थ—वह तापक्षेत्र क्षेमपुरीके प्रणिधिभागमें अट्ठावन हजार चार सौ पचत्तर योजन और अस्सीसे भाजित इकतालीस कला प्रमाण रहता है ॥२९९॥

विशेषार्थ—क्षेमपुरीके प्रणिधिभागकी परिधि १८४९१८$\frac{३}{४}$ यो०=($\frac{१४७३४३०}{८०}$)× $\frac{३}{४}$= ५८४७५$\frac{४१}{८०}$ योजन तापक्षेत्रका प्रमाण ।

रिट्ठाए पणिधीए, बासट्ठि-सहस्स छच - सयाणं पि ।
एक्कारस जोयणया, सोलस-हिद-पंच-कलाओ ताव-खिदी ॥३००॥

६२६११ । $\frac{५}{१६}$ ।

---

१. ब. छत्तीसा ।

अर्थ—यह तापक्षेत्र अरिष्टनगरीके प्रणिधिभागमें बासठ हजार नौ सौ ग्यारह योजन और सोलहसे भाजित पांच कला प्रमाण है ॥३००॥

विशेषार्थ—अरिष्ट नगरीके प्रणिधिभागकी परिधि २०६७०४$\frac{३}{४}$=($\frac{१२१४३२}{११}$)×$\frac{५}{१०}$= ६२९११$\frac{५}{१६}$ योजन तापक्षेत्र है।

अट्ठासट्ठि-सहस्सा, अट्ठावण्णा य जोयणा होंति ।
एक्कावण्ण कलाओ, रिट्ठपुरी-पणिधि-ताव-खिदी ॥३०१॥

६८०५८ । $\frac{५१}{८१}$ ।

अर्थ—यह तापक्षेत्र अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें अड़सठ हजार अट्ठावन योजन और एक योजनके अस्सी भागोंमेंसे इक्यावन कला अधिक रहता है ॥३०१॥

विशेषार्थ—अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें परिधि २२६८६२$\frac{३}{४}$=($\frac{१८१४९१०}{१०}$)×$\frac{५}{१०}$ = ६८०५८$\frac{५१}{८१}$ योजन तापक्षेत्र।

बाहत्तरो सहस्सा, अडस्सया जोयणाणि चउअवधी ।
सोलस-हिद-सत्त-कला, खग्गपुरी-पणिधि-ताव-महो ॥३०२॥

७२४९४ । $\frac{७}{१६}$ ।

अर्थ—खड्गपुरीके प्रणिधिभागमें ताप क्षेत्रका प्रमाण बहत्तर हजार चारसौ चौरानबे योजन और सोलहसे भाजित सात कला अधिक है ॥३०२॥

विशेषार्थ—खड्गपुरीके प्रणिधिभाग की परिधि २४१६४८$\frac{३}{४}$=($\frac{१२३४१८१}{१०}$)×$\frac{५}{१०}$= ७२४९४$\frac{७}{१६}$ योजन ताप क्षेत्र।

सत्तत्तरो सहस्सा, छक्क सया जोयणाणि इगिदालं ।
सीदि-हिदा इगिसट्ठी, कलाओ मंजुसपुरम्मि ताव-महो ॥३०३॥

७७६४१ । $\frac{६१}{८०}$ ।

अर्थ—मंजूषपुरमें ताप क्षेत्रका प्रमाण सतत्तर हजार छह सौ इकतालीस योजन और अस्सीसे भाजित इकसठ कला अधिक है ॥३०३॥

विशेषार्थ—२५८८०४$\frac{३}{४}$=$\frac{२०६४२४३}{८०}$×$\frac{५}{१०}$=७७६४१$\frac{६१}{१६}$ यो० मंजूषपुरमें तापक्षेत्र का प्रमाण।

बासीदि-सहस्साणि, सत्तत्तरि जोयणाणि णव अंसा ।
सोलस-भजिदा ताओ, [1]ओसहि-णयरस्स परियोए ॥३०४॥

८२०७७ । $\frac{९}{१६}$ ।

अर्थ—ओषधिपुरके प्रणिधिभागमें तापक्षेत्र बयासी हजार सत्तत्तर योजन और सोलहसे भाजित नौ भाग अधिक है ॥३०४॥

विशेषार्थ—२७३५९१$\frac{९}{१६}$ = $\frac{४३७६७३}{१६}$ × $\frac{३}{१०}$ = ८२०७७$\frac{९}{१६}$ यो० ओषधिपुरमें तापक्षेत्रका प्रमाण ।

सत्तासीदि-सहस्सा, दु-सया चउवीस जोयणा अंसा ।
एक्कत्तरि सोदि-हिदा, ताव-खिदी पुंडरीगिणी[1]-णयरे ॥३०५॥

८७२२४ । $\frac{७१}{८०}$ ।

अर्थ—पुण्डरीकिणी नगरमें तापक्षेत्र सतासी हजार दो सौ चौबीस योजन और अस्सीसे भाजित इकहत्तर भाग अधिक है ॥३०५॥

विशेषार्थ—२९०७४९$\frac{३}{४}$ = $\frac{३४९७९}{१२०}$ × $\frac{३}{१०}$ = ८७२२४$\frac{७१}{८०}$ योजन पुण्डरीकिणीपुरके ताप क्षेत्रका प्रमाण ।

चउणउदि-सहस्सा पणु-सयाणि छव्वीस जोयणा सत्ता ।
अंसा वसेहि भजिदा, पढम - पहे ताव-खिदि-परिही ॥३०६॥

९४५२६ । $\frac{७}{१०}$ ।

अर्थ—प्रथम पथमें ताप क्षेत्रकी परिधि चौरानवें हजार पांच सौ छब्बीस योजन और दससे भाजित सात भाग अधिक है ॥३०६॥

विशेषार्थ—(प्रथम पथकी अभ्यन्तर परिधि ३१५०८९ यो०) × $\frac{३}{१०}$ = ९४५२६$\frac{७}{१०}$ यो० तापक्षेत्रकी परिधिका प्रमाण ।

द्वितीय पथमें तापक्षेत्रकी परिधि—

चउणउदि-सहस्सा, पणु-सयाणि इगितीस जोयणा अंसा ।
अट्ठारस पंच - हिदा, बिदिय - पहे ताव-खिदि-परिही ॥३०७॥

---

१. द ब. क. ज. होदि । २. ब. ब. पुरणिणी, क. ज. पुरविणी ।

९४५३१ । $\frac{५}{९}$ ।

एवं अभिंतर-मग्गादो णेदव्वं ।

अर्थ—द्वितीय पथमें ताप-क्षेत्रकी परिधि चौरानवें हजार पाँच सौ इकतीस योजन और पाँचसे भाजित चार भाग अधिक है ॥३०७॥

विशेषार्थ—द्वितीय पथमें परिधिका प्रमाण ३१५१०६$\frac{६}{९}$ योजन प्रमाण है। इसमेंसे $\frac{६}{९}$ योजन छोड़कर $\frac{३}{५}$ का गुणा करनेपर तापक्षेत्रकी परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—३१५१०६ × $\frac{३}{५}$ = ९४५३१$\frac{५}{९}$ योजन।

इसप्रकार मध्यम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए।

मध्यम पथमें तापक्षेत्रकी परिधि—

पंचा-णउदि-सहस्सा, बसुत्तरा जोयणाणि तिण्णि कला ।
पंच - विहत्ता मज्झिम - पहम्मि तावस्स परिमाणं ॥३०८॥

९५०१० । $\frac{३}{५}$ ।

एवं दुचरिम-मग्गादो णेदव्वं ।

अर्थ—मध्यम पथमें तापका प्रमाण पंचानवें हजार दस योजन और पाँचसे विभक्त तीन कला अधिक (९५०१०$\frac{३}{५}$ योजन) है ॥३०८॥

इसप्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिए।

बाह्य पथमें तापक्षेत्रका प्रमाण—

पणणउदि-सहस्सा चउ-सयाणि चउणउदि जोयणा अंसा ।
पंच - हिदा बाहिरए, पढम - पहे संठिदे सूरे ॥३०९॥

९५४९४ । $\frac{२}{५}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर बाह्य मार्गमें तापक्षेत्रका प्रमाण पंचानवें हजार चार सौ चौरानवें योजन और एक योजन के पाँचवें भागसे अधिक है ॥३०९॥

३१८३१४ × $\frac{३}{५}$ = ९५४९४$\frac{२}{५}$ योजन तापक्षेत्रका प्रमाण—

लवणोदधिके छठे भागकी परिधिमें तापक्षेत्रका प्रमाण —

अट्ठावण्ण सहस्सा, एक्क - सयं तेरसुत्तरं [1]सक्खं ।
जोयणया चउ - अंसा, पविहत्ता पंच - रूवेहिं ॥३१०॥

१५८११३ । ४ ।

एवं होदि पमाणं, लवणोदहि-बास[2]-छट्ठ-भागस्स ।
परिहीए ताव-खेत्तं, बिदियपरे पढम - मग्ग - ठिदे ॥३११॥

अर्थ —सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित रहनेपर लवणोदधिके विस्तारके छठे भागकी परिधिमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण एक लाख अट्ठावन हजार एक सौ तेरह योजन और पाँच रूपोंसे विभक्त चार भाग अधिक है ॥३१०-३११॥

विशेषार्थ —लवण समुद्रके षष्ठ भागकी परिधि ५२७०४६ यो० है । $^{५२७०४६\times१८३}_{१८३}$ = १५८११३$\frac{४}{५}$ योजन ताप क्षेत्रका प्रमाण ।

सूर्यके द्वितीय पथ स्थित होनेपर इच्छित परिधियोंमें
ताप-क्षेत्र निकालनेकी विधि—

इट्ठ परिरय - रासिं, चउहत्तरि दो - सएहिं गुणिदव्वं ।
णव-सय-पण्णरस-सहिदे, ताव-खिदे बिदिय-पह-ट्ठिदक्कस्स ॥३१२॥

$\frac{२७४}{९१५}$ ।

अर्थ —इष्ट-परिधि-राशिको दो सौ चौहत्तरसे गुणा करके नौ सौ पन्द्रहका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना द्वितीय पथमें स्थित सूर्यके ताप-क्षेत्रका प्रमाण होता है ॥३१२॥

विशेषार्थ —दो सूर्य मिलकर प्रत्येक परिधि को ६० मुहूर्तमें पूरा करते हैं । सूर्यके द्वितीय-पथमें स्थित रहते सर्व (१९४) परिधियोंमें १७$\frac{३}{५}$ मुहूर्तका दिन होता है । विवक्षित परिधिमें १७$\frac{३}{५}$ मुहूर्त का गुणाकर ६० मुहूर्तका भाग देनेपर ताप क्षेत्रकी परिधिका प्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए गाथामें २७४ का गुणा कर ९१५ का भाग देनेको कहा गया है ।

सूर्यके द्वितीय पथ स्थित होनेपर मेरु आदि परिधियोंमें ताप क्षेत्रका प्रमाण—

अयय-सहस्सा चउ-सय, चउहत्तरि जोयणा दु-सय-अंसा ।
ते-चउदि खुदा [3]ताहो मेरुस्सेव-बिदिय-पह-ठिदे तवणे ॥३१३॥

१४६२ । $\frac{२२२}{९१५}$ ।

---

१. द. ब. क. ज. सक्खा । २. द. ब. बासरुक्खाय । ३. ब. ब. क. ब. ताहो ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर मेरु पर्वतके ऊपर ताप क्षेत्रका प्रमाण नौ हजार चार सौ उनहत्तर योजन और दो सौ तेरानवें भाग अधिक है ॥३१३॥

मेरु परिधि $९१४३१ \times \frac{३०४}{१९७} = ९४६९\frac{२९३}{६१६}$ तापक्षेत्र।

इगि-ति-दु-ति-पंच-कमसो, जोयणया तह कलाओ सग-तीसं।
सग-सय-बत्तीस-हिदा, खेमा - पणिधीए ताव - खिदी ॥३१४॥

३३२३१। $\frac{३७}{७३२}$।

अर्थ—क्षेमा नगरीके प्रणिधिभागमें एक, तीन, दो, तीन और पांच, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् तिरेपन हजार दो सौ इकतीस योजन और सातसो बत्तीससे भाजित सैंतीस कला अधिक है ॥३१४॥

(क्षेमा-परिधि $१७७६०\frac{३}{४} = \frac{१४१३०४५}{८}$) $\times \frac{३०४}{१९७} = \frac{३८१४५३१}{७३२} = ५३२३१\frac{३७}{७३२}$ ताप-क्षेत्रका प्रमाण।

अट्ठ-छ-ति-अट्ठ-पंचा, अंक-कमे सय-पण्ण-छ-तिय अंसा।
सग-छ-च्छत्तिय-भजिदा, खेमपुरी-पणिधि-ताव-खिदी ॥३१५॥

५८३६८। $\frac{३७४}{३६६}$।

अर्थ—क्षेमपुरीके प्रणिधिभागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण आठ, छह, तीन, आठ और पांच, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् अट्ठावन हजार तीन सौ अड़सठ योजन और तीन हजार छह सौ साठसे भाजित तीन हजार छह सौ उनसठ भाग अधिक है ॥३१५॥

(क्षेमपुरीकी परिधि $१८४६१८\frac{३}{४} = \frac{१४७४९४५}{८}$) $\times \frac{३०४}{१९७} = \frac{३८१४९२३४}{७३२} = ५८३६८\frac{३७४}{३६६}$ योजन ताप क्षेत्र।

छण्णव-सग-चुग-छक्का, अंक-कमे पंच-तिय-छ-बोल्लि कमे।
सग-छ-च्छत्तिय-हरिदा, रिट्ठा - पणिधीए ताव - खिदी ॥३१६॥

६२७९६। $\frac{३७४}{३६०}$।

अर्थ—अरिष्टा नगरीके प्रणिधि-भागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण छह, नौ, सात, दो और छह इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् बासठ हजार सात सौ छयानवें योजन और तीन हजार छह सौ साठसे भाजित दो हजार छह सौ पैंतीस भाग अधिक है ॥३१६॥

(अरिष्टा की परिधि $२०९७०४\frac{३}{४} = \frac{१४७४९४५}{८}$) $\times \frac{३०४}{१९७} = \frac{३८१४९२३४}{७३२} = ६२७९६\frac{३७४}{३६०}$ यो० ताप-क्षेत्र है।

णव-तिय-णव-सग-छक्का, अंक-कमे जोयणाणि अंसा य ।
णव-चउ-चउक्क-दुगया, रिट्ठपुरी-परिधि-ताव-खिदी ॥३१७॥

६७९३४ । $\frac{३७१}{४१६०}$ ।

अर्थ—अरिष्टपुरीके प्रणिधिभागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण चार, तीन, नौ, सात और छह इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सड़सठ हजार नौ सौ चौंतीस योजन और दो हजार चार सौ उनंचास भाग अधिक है ॥३१७॥

(अरिष्टपुरीकी परिधि — २२६८६२$\frac{३}{४}$ = $\frac{९०५८४९}{४}$) × $\frac{३७१}{४१६०}$ = $\frac{३३५८४७८९}{४९६०}$
=६७९३४$\frac{२४९}{४१६०}$ यो० तापक्षेत्र ।

दुग-छक्क-ति-दुग-सत्ता, अंक-कमे जोयणाणि अंसा य ।
पंच-दु-चउक्क-एक्का, खग्गपुरं परिधि-ताव-खिदी ॥३१८॥

७२३६२ । $\frac{१२५}{४१६०}$ ।

अर्थ—खड्गपुरीके प्रणिधिभागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण दो, छह, तीन, दो और सात इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् बहत्तर हजार तीन सौ बासठ योजन और एक हजार चार सौ पच्चीस भाग अधिक होता है ॥३१८॥

(खड्गपुरीकी परिधि २४१६४८$\frac{३}{४}$ = $\frac{९६६५९}{४}$) × $\frac{३७१}{४१६०}$ = $\frac{३५८४३७५}{४९६०}$
=७२३६२$\frac{१२५}{४१६०}$ यो० ताप-क्षेत्र ।

अम्म-मयण-पंच-सत्ता, सत्तंक-कमेण जोयणा अंसा ।
णव-तिय-दुगेक्कमेत्ता, मंजूसपुर-परिधि-ताव-खिदी ॥३१९॥

७७५०० । $\frac{३३१}{४१६०}$ ।

अर्थ—मंजूषपुरके प्रणिधिभागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण शून्य, शून्य, पाँच, सात और सात, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सतत्तर हजार पाँच सौ योजन और एक हजार दो सौ उनतालीस भाग प्रमाण होता है ॥३१९॥

(मंजूषपुरकी परिधि — २४८८०$\frac{२}{४}$ = $\frac{९९५२०}{४}$) × $\frac{३७१}{४१६०}$ = $\frac{३८३५५५००}{४९६०}$ =
७७५००$\frac{३३१}{४१६०}$ यो० ताप-क्षेत्रका प्रमाण ।

अट्ठ-चु-खवेक्क-अट्ठा, अंक-कमे जोयणाणि अंसा य ।
पंचेक्क-चुग-णमत्ता, ओसहिपुर-परिधि-ताव-खिदी ॥३२०॥

८१९२८ । $\frac{३५५}{४१६०}$ ।

अर्थ—औषधिपुरके अभिषिभागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण आठ, दो, नौ, एक और आठ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् इक्यासी हजार नौ सौ अट्ठाईस योजन और दो सौ पन्द्रह भाग अधिक होता है ॥३२०॥

(औषधिपुरकी परिधि — २७३५९१५ = ११५९२१५) × $\frac{३२}{१६१}$ = $\frac{११५९२१५ \times ३२}{१६१}$ = ८१९२८$\frac{२१५}{१६१}$ यो० तापक्षेत्रका प्रमाण है।

छ-छक्क-णयण-सत्ता, बहु'क-कमेण जोयणाणि कला ।
एक्कोणतीस - भेत्ता, ताव - खिदी पुंडरिणिणिए ॥३२१॥

८७०६६ । $\frac{३१}{३२}$ ।

अर्थ—पुण्डरीकिणी नगरीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण छह, छह, शून्य, सात और आठ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् सतासी हजार छयासठ योजन और उनतीस कला प्रमाण होता है ॥३२१॥

(पुण्डरीकिणीपुरकी परिधि — २९०७४९३ = ११३२१५) × $\frac{३२}{१६१}$ = $\frac{११३२१५ \times ३२}{१६१}$ = ८७०६६$\frac{३१}{३२}$ योजन ताप-क्षेत्रका प्रमाण है।

सूर्यके द्वितीय पथ स्थित होनेपर अभ्यन्तर (प्रथम) वीथीमें ताप क्षेत्रका प्रमाण—

चउ-पंच-ति-चउ-अयया, अंक-कमे छक्क-सग-चउ-अंसा ।
पंचेक्क-खय-हिदाओ, विदिय-पहुक्कस्सि पढम-पह तावो ॥३२२॥

९४३५४ । $\frac{४९६}{५१२}$ ।

अर्थ—द्वितीय पथ स्थित सूर्यका तापक्षेत्र प्रथम (अभ्यन्तर) वीथीमें चार, पाँच, तीन, चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चौरानवें हजार तीन सौ चौवन योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित चार सौ छयानवे भाग अधिक होता है ॥३२२॥

(अभ्यन्तर वीथीकी परिधि—३१५०८९) × $\frac{३२}{१६१}$ = ९४३५४$\frac{४९६}{५१५}$ योजन ताप-क्षेत्रका प्रमाण।

द्वितीय पथकी द्वितीय वीथीका तापक्षेत्र—

चउ-अडवि-सहस्सा तिय-सयाणि उणसट्ठि जोयणा अंसा ।
उणसट्ठी पंच-सया, विदिय-पहुक्कस्सि विदिय-पह-तावो ॥३२३॥

९४३५९ । $\frac{२९६}{५१५}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) द्वितीय पथमें स्थित रहनेपर द्वितीय-वीथीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण चौरानवें हजार तीन सौ उनसठ योजन और पांच सौ उनसठ भाग अधिक होता है ॥३२३॥

विशेषार्थ—द्वितीय पथकी परिधि प्रमाण ३१५१०६$\frac{१६}{६६}$ योजनमेंसे $\frac{१६}{६६}$ यो० छोड़कर $\frac{५१०}{६६}$ यो० का गुणा करनेपर यहाँ के तापक्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा :—

३१५१०६ यो० × $\frac{५१०}{६६}$ = ९४३५९$\frac{३५०}{६६}$ योजन परिधि है।

द्वितीय पथकी तृतीय वीथीका तापक्षेत्र—

चउणउदि-सहस्सा तिय-सयाणि पण्णट्ठि जोयणा अंसा ।
इगि-रूवं होंति तदो, बिदिय-पहुक्कस्सि तदिय-पह-ताओ ॥३२४॥

९४३६५ । $\frac{१}{६६}$ ।

एवं मज्झिम-पहस्स बाहल्ल-पह-परियंतं णेदव्वं ।

अर्थ—(सूर्यके) द्वितीय पथमें स्थित रहने पर तृतीय वीथीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण चौरानवें हजार तीन सौ पैंसठ योजन और एक भाग प्रमाण अधिक ९४३६५$\frac{१}{६६}$ यो० होता है ॥३२४॥

इसप्रकार मध्यम पथके आदि पथ पर्यन्त ले जाना चाहिए।

द्वितीय पथकी मध्यम वीथीका ताप-क्षेत्र—

सत्त-तिय-अट्ठ-चउ-णव-अंक-क्कमेण जोयणाणि अंसा ।
तेणउदी चारि-सया, बिदिय-पहुक्कस्सि मज्झ-पह-ताओ ॥३२५॥

९४८३७ । $\frac{४९३}{६६}$ ।

एवं बाहिर-पह-हेट्ठिम-पहंतं णेदव्वं ।

अर्थ—(सूर्यके) द्वितीय मार्गमें स्थित रहनेपर मध्यम पथमें तापका प्रमाण सात, तीन, आठ, चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् चौरानवें हजार आठ सौ सैंतीस योजन और चार सौ तेरानवें भाग अधिक ९४८३७$\frac{४९३}{६६}$ योजन होता है ॥३२५॥

इसप्रकार बाह्य पथके अधस्तन पथ तक ले जाना चाहिए।

द्वितीय पथकी बाह्य वीथीका ताप-क्षेत्र—

णवणउदि सहस्सा तिय-सयाणि बीसुत्तराणि जोयणया ।
छत्तीस-दु-सय-अंसा, दिवय-पहुक्कम्मि अंत-पह-तावो ॥३२६॥

९९३२० । $\frac{२३६}{६६}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) द्वितीय पथमें स्थित होनेपर अन्तिम पथमें तापका प्रमाण पंचानवें हजार तीन सौ बीस योजन और दो सौ छत्तीस भाग अधिक (९९३२०$\frac{२३६}{६६}$ योजन) है ॥३२६॥

सूर्यके द्वितीय पथ में स्थित होनेपर लवणसमुद्रके छठे भागमें ताप-क्षेत्र -

पंच-दुग-अट्ठ-सत्ता, पंचेक्कंक - क्कमेण जोयणया ।
अंसा णव-दुग-सत्त।, दिवय-पहुक्कम्मि लवण-छट्ठंसे ॥३२७॥

१५७८२५ । $\frac{७२९}{६६}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय-पथमें स्थित होनेपर लवणसमुद्रके छठे भागमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण पाँच, दो, आठ, सात, पाँच और एक इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् एक लाख सत्तावन हजार आठ सौ पच्चीस योजन और सात सौ उनतीस भाग अधिक (१५७८२५$\frac{७२९}{६६}$ योजन) है ॥३२७॥

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित होनेपर परिधियोंमें ताप-क्षेत्र प्राप्त करनेकी विधि—

इट्ठं परिरय - रासिं, सगवालसएहिं पंच-सय-गुणिदं ।
णभ-तिय-अट्ठेक्क-हिदे, तावो तवणम्मि तदिय-मग्ग-ठिदे ॥३२८॥

$\frac{२५०}{१८३०}$ ।

अर्थ—इष्ट परिधिको पाँच सौ सैंतालीससे गुणित करके उसमें एक हजार आठ सौ तीसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहनेपर विवक्षित परिधिमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण रहता है ॥३२८॥

विशेषार्थ—यहाँ सूर्य तृतीय पथमें स्थित है और इस पथमें जिनका प्रमाण ($\frac{१}{६}$ — $\frac{१}{६०}$ =) १७$\frac{९}{६०}$=$\frac{१०९}{६०}$ मुहूर्त है। अतः विवक्षित परिधिके प्रमाणमें $\frac{१०९}{६०}$ मुहूर्तोंका गुणाकर ६० मुहूर्तों का भाग देनेपर अर्थात् ($\frac{१०९}{६०}$×$\frac{१}{२}$=$\frac{१०९}{१२०}$) ५४७ का गुणाकर १८३० का भाग देनेपर ताप-क्षेत्र प्राप्त होता है।

सूर्य के तृतीय पथमें स्थित होनेपर मेरु आदि परिधियोंमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण—

णवय-सहस्सा चउरस्सपाणि जायण्ण-जोयणाणि कला ।
चउहत्तरि-भेत्ताओ, तदिय - पहक्कम्मि मंदरे तापो ।।३२९।।

९४५२ । $\frac{७४}{१२६}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर सुमेरु पर्वतके ऊपर ताप-क्षेत्रका प्रमाण नौ हजार चार सौ बावन योजन और चौहत्तर कला प्रमाण अधिक है ।।३२९।।

(मेरु परिधि — $३१६२^{२}$) × $\frac{१८०}{३३९४०}$ = ९४५२$\frac{७४}{१२६}$ योजन तापक्षेत्र है ।

तिय-तिय-एक्क-ति-पंचा, अंक-कमे पंच-सत्त-छ-दुग-कला ।
अट्ठ-दु-णव-दुग-भजिदा, तापो खेमाए तदिय - पह - सूरे ।।३३०।।

५३१३३ $\frac{३१०५}{२१६२}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर क्षेमा नगरी में तापका प्रमाण तीन, तीन, एक, तीन और पाँच इन अंकोंके क्रमसे अर्थात् तिरेपन हजार एक सौ तेंतीस योजन और दो हजार नौ सौ अट्ठाईससे भाजित दो हजार छह सौ पचहत्तर कला है ।।३३०।।

(क्षेमाकी परिधि $१७७७६०\frac{३}{४}$ = $१४३४०^{१५}$) × $\frac{१८०}{३३९४०}$ = $१४३४०^{१५}$ = ५३१३३$\frac{३१०५}{२१६२}$ योजन सूर्यके तृतीय पथ स्थित क्षेमानगरीके ताप क्षेत्रका प्रमाण ।

दुग-छ-दुग-अट्ठ-पंचा, अंक - कमे णव-दुगेक्क-सत्त-कला ।
ख-चउ-छ-चउ-इगि-भजिदा, तदिय-पहक्कम्मि खेमपुर-तापो ।।३३१।।

५८२६२ । $\frac{११२६}{१४६४०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित रहते क्षेमपुरीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण दो, छह, दो, आठ और पाँच, इन अंकोंके क्रमसे अट्ठावन हजार दो सौ बासठ योजन और चौदह हजार छह सौ चालीससे भाजित सात हजार एक सौ उनतीस कला है ।।३३१।।

(क्षेमपुरीकी परिधि १९४९१०$\frac{१}{२}$ = $१७३$$\frac{३}{४}$^{१०}) × $\frac{१८०}{३३९४०}$ = $^{८७}\frac{१९३}{१४६४०}$^{९९} = ५८२६२$\frac{११२६}{१४६४०}$ योजन ताप-क्षेत्र ।

दुग-अट्ठ-छ-दुग-छक्का, अंक-कमे जोयणाणि खंडा य ।
पंचय-छ-अट्ठ-एक्का, तापो रिट्ठाए तदिय-पह-सूरे ।।३३२।।

६२६८२ । $\frac{२१६५}{१४६४०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित रहते अरिष्टा नगरीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण दो, आठ, छह, दो और छह, इन अंकोंके क्रमसे बासठ हजार छह सौ बयालीस योजन और एक हजार आठ सौ पैंसठ भाग है ॥३३२॥

(अरिष्टाकी परिधि $२०६७०४\frac{३}{५}=\frac{१०३५३५३}{५}$) $\times \frac{३१८}{६५७२}=\frac{१०३५३५३}{५}\times\frac{३१८}{६५७२}=$ $६२६८२६\frac{१६१}{२०९}$ यो० तापक्षेत्र।

गयणेक्क-अट्ठ-सत्ता, छक्कं अंक-क्कमेण जोयणया।
अंसा णव-पण-दु-ख-इगि, तदिय-पहक्कम्मि रिट्ठपुरे ॥३३३॥

६७८१० । $\frac{१०३५}{२०९}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होने पर अरिष्टपुरमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण शून्य, एक, आठ, सात और छह, इन अंकोंके क्रमसे सड़सठ हजार आठ सौ दस योजन और दस हजार दो सौ उनसठ भाग है ॥३३३॥

(अरिष्टपुरी की परिधि $२२६८६२\frac{३}{५}=\frac{११३४३}{५}$) $\times \frac{३१८}{६५७२}=\frac{११३४३}{५}\times\frac{३१८}{६५७२}$ $=६७८१०\frac{१०३५}{२०९}$ योजन तापक्षेत्र।

णभ-तिय-दुग-दुग-सत्ता, अंक-कमे जोयणाणि अंसा य।
पण-णव-णव-चउमेत्ता, तावो खग्गाए तदिय-पह-सवणे ॥३३४॥

७२२३० । $\frac{४१८५}{१३६८०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित रहने पर खड्गापुरीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण शून्य, तीन, दो, दो और सात इन अंकोंके क्रमसे बहत्तर हजार दो सौ तीस योजन और चार हजार नौ सौ पंचानवें भाग है ॥३३४॥

(खड्गपुरीकी परिधि $२४१६४८\frac{३}{५}=\frac{१२३१८५}{५}$) $\times \frac{३१८}{६५७२}=\frac{११३४३}{५}\times\frac{३१८}{६५७२}=$ $७२२३०\frac{४१८५}{१३६८०}$ योजन ताप-क्षेत्रका प्रमाण है।

अट्ठ-पण-तिदय-सत्ता, सत्तंक-कमे णवट्ठ-ति-ति-एक्का।
होंति कलाओ तावो, तदिय-पहक्कम्मि मंजूसपुरीए ॥३३५॥

७७३५८ । $\frac{३३३८१}{१३६८०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर मंजूषापुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, पाँच, तीन, सात और सात इन अंकोंके क्रमसे सतत्तर हजार तीन सौ अट्ठावन योजन और तेरह हजार तीन सौ नवासी कला अधिक है ॥३३५॥

(मंजूषपुरकी परिधि २५८८०५$\frac{२}{४}$ = $\frac{१०३५२४१}{४}$) × $\frac{२१४}{१६५०}$ = $\frac{१०३५२१५४१३}{४×१६५०}$ = ७७३५८$\frac{१३}{१६}\frac{६५}{१६५०}$ योजन ताप-क्षेत्र है ।

अट्ठ-सग-सत्त-एक्का, अट्ठंक-कमेण पंच-चुग-एक्का ।
अट्ठ य अंसा तावो, तदिय-पहवकम्मि ओसहपुरीए ॥३३६॥

८१७७८ । $\frac{८१}{१६५०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होने पर ओषधिपुरीमें तापक्षेत्रका प्रमाण आठ, सात, सात, एक और आठ, इन अंकोंके क्रमसे इक्यासी हजार सात सौ अठहत्तर योजन और आठ हजार एक सौ पच्चीस भाग है ॥३३६॥

(औषधिपुरीकी परिधि २७३५९१$\frac{२}{४}$ = $\frac{११५४३५}{४}$) × $\frac{२१४}{१६५०}$ = $\frac{२३५४२५०१}{४×१६५०}$ = ८१७७८$\frac{३१}{१६}\frac{२५}{१६५०}$ यो० तापक्षेत्र ।

सत्त-णभ-णवय-छक्का, अट्ठंक-कमेण णव-सगट्ठेक्का ।
अंसा होंति हु तावो, तदिय-पहवकम्मि पुंडरिगिणिए ॥३३७॥

८६९०७ । $\frac{१४१}{१६५०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होनेपर पुंडरीकिणी नगरीमें तापक्षेत्र सात, शून्य, नौ, छह और आठ, इन अंकोंके क्रमसे छयासी हजार नौ सौ सात योजन और एक हजार आठ सौ उन्यासी भाग है ॥३३७॥

(पुष्करोकिणीपुरीकी परिधि २६०७४६$\frac{२}{४}$ = $\frac{२३३५३१०}{४}$) × $\frac{२१४}{१६५०}$ = $\frac{१२४३३१०३१६}{४×१६५०}$ = ९६६०७$\frac{३६१}{१६}\frac{१६१}{१६५०}$ योजन तापक्षेत्र ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते अभ्यन्तर वीथी का तापक्षेत्र—

दुग-अट्ठ-एक्क-चउ-णव, अंक-कमे ति-दुग-छक्क अंसा य ।
णभ-तिय-अट्ठेक्क-हिया, तदिय-पहवकम्मि पढम-पह-तावो ॥३३८॥

९४१८२ । $\frac{६१३}{१६५०}$ ।

अर्थ—(सूर्य के) तृतीय पथमें स्थित होनेपर प्रथम वीथी में ताप-क्षेत्र दो, आठ, एक, चार और नौ, इन अंकोंके क्रमसे चौरानवे हजार एक सौ बयासी योजन और एक हजार आठ सौ तीस से भाजित छह सौ तेईस भाग प्रमाण है ॥३३८॥

(अभ्यन्तर वीथी की परिधि ३१५०८६) × $\frac{२१४}{१६५०}$ = $\frac{१०१३३३५८१३}{४×१६५०}$ = ९४१८२$\frac{६१३}{१६५०}$ योजन ताप-क्षेत्र ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते द्वितीय वीथी का ताप-क्षेत्र—

चउ-णउदि-सहस्सा इगि-सयं च सगसोदि जोयणा अंसा ।
बाहत्तरि सत्त-सया, तदिय-पहट्ठकम्मि बिदिय-पह-तावो ॥३३९॥

९४१८७ । $\frac{७७२}{१८३०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित रहने पर द्वितीय वीथीमें ताप-क्षेत्र चौरानवें हजार एक सौ सतासी योजन और सात सौ बहत्तर भाग प्रमाण है ॥३३९॥

द्वितीय पथकी परिधि ३१५१०६ यो० × $\frac{३०}{१८३०}$ यो०=९४१८७$\frac{७७२}{१८३०}$ यो० ताप क्षेत्र है ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते तृतीय वीथी का ताप-क्षेत्र—

चउणउदि-सहस्सा इगि-सयं च बाणउदि जोयणा अंसा ।
सोलस-सया तिरधिया, तदिय-पहट्ठकम्मि तदिय-पह-तावो ॥३४०॥

९४१९२ । $\frac{१६०३}{१८३०}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होनेपर तृतीय वीथीमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण चौरानवें हजार एक सौ बानवें योजन और सोलह सौ तीन भाग अधिक अर्थात् (९४१९२$\frac{१६०३}{१८३०}$ योजन) है ॥३४०॥

सूर्य के तृतीय पथमें स्थित रहते चतुर्थ वीथीका ताप-क्षेत्र—

चउ-णउदि-सहस्सा इगि-सयं च अडणउदि जोयणा अंसा ।
तेसट्ठी दोण्णि सया, तदिय-पहट्ठकम्मि तुरिम-पह-तावो ॥३४१॥

९४१९८ । $\frac{२६३}{१८३०}$ ।

एवं मज्झिम-पह-आदिल्ल-परिहि-परियंतं णेदव्वं ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होनेपर चतुर्थ वीथीमें तापक्षेत्र चौरानवें हजार एक सौ अट्ठानवें योजन और दो सौ तिरेसठ भाग (९४१९८$\frac{२६३}{१८३०}$ योजन) प्रमाण है ॥३४१॥

इसप्रकार मध्यम पथकी आदि (प्रथम) परिधि पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते मध्यम पथका ताप-क्षेत्र—

चउणउदि सहस्सा छस्सयाणि चउसट्ठि जोयणा अंसा ।
चउहत्तरि अट्ठ-सया, तदिय-पहट्ठकम्मि मज्झ-पह-तावो ॥३४२॥

९४६६४ । $\frac{६८३}{१८३१}$ ।

एवं दुचरिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित रहते मध्यम पथमें ताप-क्षेत्र चौरानवें हजार छह सौ चौंसठ योजन और आठ सौ चौहत्तर भाग (९४६६४$\frac{८७४}{१८३१}$ योजन) प्रमाण है ।।३४२।।

इसप्रकार द्विचरम मार्ग तक ले जाना चाहिए ।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते बाह्य वीथीका तापक्षेत्र—

पणणउदि सहस्सा इगि-सयं च छादाल जोयणाणि कला ।
अट्ठत्तरि पंच-सया, तदिय-पहुक्कस्सि बहि-पहे-तावो ।।३४३।।

९५१४६ । $\frac{५७८}{१८३१}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय पथमें स्थित होनेपर बाह्य पथमें ताप-क्षेत्र पंचानवें हजार एक सौ छयालीस योजन और पाँच सौ अठहत्तर कला (९५१४६$\frac{५७८}{१८३१}$ योजन) प्रमाण है ।।३४३।।

सूर्यके तृतीय पथमें स्थित रहते लवणसमुद्रके छठे-भागमें ताप-क्षेत्र—

सग-तिय-पण-सग-पंचा, एक्कं कमसो बु-पंच-चउ-एक्का ।
अंसा हवेंवि तावो, तदिय-पहुक्कस्सि लवण - छट्ठंसे ।।३४४।।

१५७५३७ । $\frac{१४५३}{१८३१}$ ।

अर्थ—(सूर्यके) तृतीय मार्गमें स्थित होनेपर लवण-समुद्रके छठे भागमें ताप-क्षेत्र सात, तीन, पाँच, सात, पाँच और एक इन अंकोंके क्रमसे एक लाख सत्तावन हजार पाँच सौ सैंतीस योजन और एक हजार चार सौ बावन भाग प्रमाण है ।।३४४।।

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके छठे भागकी परिधिका प्रमाण ५२७०४६ यो० है । सूर्य तृतीय वीथीमें स्थित है और उस समय दिन $१७\frac{३}{६१}=\frac{१०८४}{६१}$ मुहूर्तोंका होता है । इन मुहूर्तोंका परिधिके प्रमाणमें गुणा कर ६० मुहूर्तोंका भाग देनेपर ताप-क्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है । यथा—

$५२७०४६ \times \frac{१०८४}{६१} \times \frac{१}{६०}=\frac{५६९४९९८४}{३६६०}=१५७५३७\frac{३४२}{३६६०}$ योजन ।

शेष वीथियोंमें तापक्षेत्रका प्रमाण—

धरिऊण दिण-मुहुत्तं[1], पढि-वीहिं सेसएसु मग्गेसुं ।
सव्व - परिहीण तावं, दुचरिम - मग्गंत णेदव्वं ।।३४५।।

---

१. द. ब. क. ज. मुहुत्त ।

अर्थ—इसीप्रकार प्रत्येक वीथीमें दिनके मुहूर्तोंका आश्रय करके शेष मार्गोंमें द्विचरम मार्ग पर्यन्त सब-परिधियोंमें ताप-क्षेत्र ज्ञात कर लेना चाहिए ॥३४५॥

विशेषार्थ—प्रथम, द्वितीय और तृतीय पथ स्थित सूर्यके तापक्षेत्रका प्रमाण प्रत्येक वीथीके दिन मुहूर्तोंका आश्रय कर १९४ परिधियोंमेंसे कुछ परिधियोंमें कहा जा चुका है और बाह्य वीथी स्थित सूर्यके तापक्षेत्रका प्रमाण कुछ परिधियोंमें आगे कहा जा रहा है। शेष (१८४ — ४=) १८० वीथियोंमें स्थित सूर्यके ताप क्षेत्रका प्रमाण प्रत्येक वीथीके दिन मुहूर्तोंका आश्रय कर पूर्वोक्त नियमानुसार ही सर्व परिधियोंमें ज्ञात कर लेना चाहिए।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होने पर इच्छित परिधिमें तापक्षेत्र निकालनेकी विधि—

पंच - विहत्ते इच्छिय-परिरय-रासिम्मि होदि जं लद्धं ।
सा [1]ताव-खेत्त-परिही, बाहिर-मग्गम्मि वुत्तरि-ठिद-समए ॥३४६॥

अर्थ—इच्छित परिधिकी राशिमें पांचका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतनी सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित रहते समय ताप क्षेत्रकी परिधि होती है ॥३४६॥

विशेषार्थ—यहां सूर्य बाह्य (१८४ वीं) वीथीमें स्थित है और इस वीथी में दिनका प्रमाण केवल १२ मुहूर्तका है। विवक्षित परिधिके प्रमाणमें १२ मुहूर्तका गुणा कर ६० मुहूर्तोंका भाग देनेपर अर्थात् ($\frac{१२}{६०}$)= ५ का भाग देनेपर तापक्षेत्र का प्रमाण प्राप्त होता है।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मेरु आदि की परिधियोंमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण—

छस्स सहस्सा ति-सया, चउवीसं जोयणाणि दोण्णि कला ।
पंच-हिदा मेरु - अगे, तावो बाहिर-पह-ट्ठिदयक्कम्मि ॥३४७॥

६३२४ । $\frac{२}{५}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मेरु पर्वतके ऊपर ताप-क्षेत्रका प्रमाण छह हजार तीन सौ चौबीस योजन और पांचसे भाजित दो कला रहता है ॥३४७॥

(मेरु परिधि ३१६२२)÷५=६३२४$\frac{२}{५}$ योजन तापक्षेत्र है।

---

१ ब. तवखेत्ता ।

पंचत्तीस-सहस्सा, पण-सय बावण्ण जोयणा अंसा ।
अट्ठ-हिदा खेमोवरि, तावो बाहिर-पह-ट्ठिदयक्कम्मि ॥३४८॥

३५५५२ । ⅛ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहनेपर क्षेमा नगरीके ऊपर ताप-क्षेत्र पैंतीस हजार पाँच सौ बावन योजन और योजनके आठवें भाग प्रमाण रहता है ॥३४८॥

(क्षेमानगरी की परिधि १७७७६०$\frac{1}{2}$=$\frac{३५५५२०}{२}$)×$\frac{1}{2}$=$\frac{३५५५२}{१}$=३५५५२$\frac{1}{2}$ योजन तापक्षेत्र है ।

तिय-अट्ठ-णवट्ठ-तिया, अंक-कमे सत्त होंति अंसा य ।
चाल - विहत्ता तावो, खेमपुरी बाहि-पह-ट्ठिदयक्कम्मि ॥३४९॥

३८९८३ । $\frac{३७}{४०}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर क्षेमपुरीमें तापक्षेत्र तीन, आठ, नौ, आठ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे अड़तीस हजार नौ सौ तेरासी योजन और चालीससे विभक्त सत्ताईस भाग प्रमाण रहता है ॥३४९॥

(क्षेमपुरीकी परिधि १९४१८$\frac{1}{2}$=$\frac{७७८३४९}{४०}$)×$\frac{1}{2}$=$\frac{७७८३४९}{८०}$=३८९८३$\frac{३७}{४०}$ योजन तापक्षेत्र है ।

एक्कत्ताल-सहस्सा, णव-सय-चालीस जोयणा भागा ।
पणतीसं रिट्ठाए, [1]तावो बाहिर-पह-ट्ठिदयक्कम्मि ॥३५०॥

४१९४० । $\frac{३५}{४०}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्यपथमें स्थित होनेपर अरिष्टा नगरीमें तापक्षेत्र इकतालीस हजार नौ सौ चालीस योजन और पैंतीस भाग प्रमाण रहता है ॥३५०॥

(अरिष्टा नगरीकी परिधि २०९७०४$\frac{1}{2}$ = $\frac{८३८८१९}{४०}$)×$\frac{1}{2}$=$\frac{८३८८१९}{८०}$=४१९४०$\frac{1}{2}$ योजन तापक्षेत्र है ।

पंचत्ताल-सहस्सा, बाहत्तरि ति-सय जोयणा अंसा ।
सत्तरस अरिट्ठपुरे, तावो बाहिर-पह-ट्ठिदयक्कम्मि ॥३५१॥

४५३७२ । $\frac{१७}{४०}$ ।

---

१. ब. ब. ताहो ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर अरिष्टपुरमें तापक्षेत्र पैंतालीस हजार तीन सौ बहत्तर योजन और सत्तरह भाग प्रमाण रहता है ॥३५१॥

(अरिष्टपुरी की परिधि २२६४६२$\frac{1}{2}$ = $\frac{१८३५८१}{८}$) × $\frac{१}{२}$ = $\frac{१८३५८१}{१६}$ = ४५३७२$\frac{१७}{१६}$ योजन तापक्षेत्र है ।

अट्ठत्ताल-सहस्सा, ति-सया उणतीस जोयणा अंसा ।
पणुवीसा खग्गोवरि, ताओ बाहिर-पह-ट्ठिदक्कम्मि ॥३५२॥

४८३२९ । $\frac{२५}{२}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्यपथमें स्थित होनेपर खड्गानगरीमें ताप-क्षेत्र अड़तालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और पच्चीस भाग प्रमाण है ॥३५२॥

(खड्गानगरी की परिधि २४१६४८$\frac{१}{२}$ = $\frac{५१५३१८१}{२१}$) × $\frac{१}{२}$ = $\frac{३८६३७१}{८}$ = ४८३२९$\frac{२५}{२}$ योजन तापक्षेत्र है ।

एक्कावण्ण-सहस्सा, सत्त-सया एकसट्ठि जोयणया ।
सत्तंसा बाहिर - पह - ठिद - सूरे मंजुसे ताओ ॥३५३॥

५१७६१ । $\frac{७}{१०}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मंजूषा नगरीमें तापक्षेत्र इक्यावन हजार सात सौ इकसठ योजन और सात भाग प्रमाण रहता है ॥३५३॥

(मंजूषापुरकी परिधि २५८८०५$\frac{१}{२}$ = $\frac{५१७६१०}{२१}$) × $\frac{१}{२}$ = $\frac{१०३५२२०}{४२}$ = ५१७६१$\frac{७}{१०}$ योजन तापक्षेत्र है ।

अडवण्ण-सहस्सा, सग-सयाणि अट्ठरस जोयणा अंसा ।
पण्णारस ओसहिपुरे, ताओ बाहिर-पह-ट्ठिदक्कम्मि ॥३५४॥

५४७१८ । $\frac{१५}{१०}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर औषधिपुरमें तापक्षेत्र चौवन हजार सात सौ अठारह योजन और पन्द्रह भाग प्रमाण रहता है ॥३५४॥

(औषधिपुरकी परिधि २७३५९१$\frac{१}{२}$ = $\frac{५४७१८३}{२१}$) × $\frac{१}{२}$ = $\frac{११४९८६०}{४२}$ = ५४७१८$\frac{१५}{१०}$ योजन तापक्षेत्र है ।

अट्ठावण्ण-सहस्सा, इगि-सय-उणवण्ण जोयणा अंसा ।
सगतीस बहि-पह-दिट्ठ-तवणे तावो पुरम्मि परिमम्मि ॥३५५॥

५८१४९ । ३७ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर अन्तिमपुर अर्थात् पुण्डरीकिणी नगरीमें ताप-क्षेत्र अट्ठावन हजार एक सौ उनंचास योजन और सैंतीस भाग प्रमाण रहता है ॥३५५॥

(पुण्डरीकिणीपुरकी परिधि २९०७४९३ - ३३३३१/३) × ½ = ३३३३१/३ = ५८१४९३/७ योजन तापक्षेत्र है ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें ताप-क्षेत्र—

तेसट्ठि - सहस्साणि, सत्तरसं जोयणाणि छद्ध-अंसा ।
पंच-हिदा बहि-मग्ग-दिट्ठम्मि दुमणिम्मि पढम-पह-तावो ॥३५६॥

६३०१७ । ५ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्यमार्गमें स्थित होनेपर प्रथम पथ (अभ्यन्तर वीथी) में ताप-क्षेत्र तिरेसठ हजार सत्तरह योजन और पाँचसे भाजित चार भाग प्रमाण रहता है ॥३५६॥

(प्रथम पथ की परिधि ३१५०८९) ÷ ५ = ६३०१७⅘ योजन तापक्षेत्रका प्रमाण है ।

सूर्यके बाह्यपथ स्थित रहते द्वितीय वीथीमें तापक्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, जोयणया एक्कवीस एक्ककला ।
बिदिय-पह-ताव-परिही, बाहिर-मग्ग-दिट्ठवे तवणे ॥३५७॥

६३०२१ । ¼ ।

एवं मज्झिम-पहंत णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर द्वितीय वीथी की ताप-परिधिका प्रमाण तिरेसठ हजार इक्कीस योजन और एक भाग प्रमाण है ॥३५७॥

(द्वितीय पथ की परिधि ३१५१०९ यो०) × ½ = ६३०२१¼ योजन ताप-परिधि है ।

इसप्रकार मध्यम पथ पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

सूर्यके बाह्यमार्गमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तापक्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, ति-सया चालीस जोयणा दु-कला ।
मज्झ-पह-ताव-खेत्तं, दिवोचवे बाहि - मग्ग - दिट्ठवे ॥३५८॥

६३३४० । ३ ।

एवं दुचरिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—भैरोचन (सूर्य) के बाह्यमार्गमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें ताप-क्षेत्रका प्रमाण तिरेसठ हजार तीन सौ चालीस योजन और दो कला रहता है ।।३५८।।

(मध्यम पथकी परिधि ३१६७०२)÷५=६३३४०२/५ योजन ताप-क्षेत्र है ।

इसप्रकार द्विचरम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

सूर्यके बाह्य पथ स्थित होनेपर बाह्यपथमें तापक्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, छस्सय बासट्ठि जोयणाणि कला ।
चत्तारो बहि-मग्ग-ट्ठिदम्मि तरणिम्मि बहि-पहे-ताओ ।।३५९।।

६३६६२ । ४ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर बाह्यमार्गमें ताप-क्षेत्र तिरेसठ हजार छह सौ बासठ योजन और चार कला प्रमाण रहता है ।।३५९।।

(बाह्य पथकी परिधि ३१८३१४)÷५=६३६६२४/५ योजन तापक्षेत्रका प्रमाण है ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहते लवण-समुद्रके छठे भागमें
तापक्षेत्रका प्रमाण—

एक्कं लक्खं गव-सुद-चउवण्ण-सयाणि जोयणा अंसा ।
बाहिर-पह-ट्ठिदम्मि, ताव - खिदी लवण - छट्ठ ंसे ।।३६०।।

१०५४०९ । १ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर लवणसमुद्रके छठे भागमें ताप-क्षेत्र एक लाख पाँच हजार चार सौ नौ योजन और एक भाग प्रमाण है ।।३६०।।

(लवणसमुद्रके छठे भागकी परिधि ५२७०४६)÷५=१०५४०९१/५ योजन तापक्षेत्रका प्रमाण है ।

सूर्यकी किरण-शक्तियोंका परिचय—

आदिम-पहादु बाहिर-पहम्मि भाणुस्स गमण-कालम्मि ।
हाएदि किरण - सत्ती, वड्ढदि आगमण - समयम्मि ।।३६१।।

अर्थ—प्रथम पथसे बाह्य पथकी ओर जाते समय सूर्यकी किरण-शक्ति हीन होती है और बाह्य पथसे आदि पथकी ओर वापिस आते समय वह किरण-शक्ति वृद्धिगत होती है ॥३६१॥

दोनों सूर्योंका तापक्षेत्र—

ताव खिदी परिहीओ, एदाओ एक्क-कमलणाहम्मि ।
दुगुणि- [illegible] दोण्हम्मि ॥३६२॥

ताव-खिदि-परिहो समत्तो ।

अर्थ—एक सूर्यके रहते ताप-क्षेत्र-परिधिमें जितना ताप रहता है उससे दुगुने प्रमाण ताप दो सूर्योंके रहनेपर होता है ॥३६२॥

ताप-क्षेत्र परिधिका कथन समाप्त हुआ ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते रात्रिका प्रमाण—

सव्वासुं परिहीसुं, पढम-पह-ट्ठिद-सहस्स-किरणम्मि ।
बारस - मुहुत्तमेत्ता, पुह पुह उप्पज्जदे रत्ती ॥३६३॥

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहनेपर पृथक्-पृथक् सब (१९४) परिधियोंमें बारह मुहूर्त प्रमाण रात्रि होती है ॥३६३॥

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते इच्छित परिधिमें तिमिरक्षेत्र
प्राप्त करने की विधि—

इच्छिद-परिहि-पमाणं, पंच-विहत्तम्मि होदि जं लद्धं ।
सा तिमिर-खेत्त-परिही, पढम-पह-ट्ठिद-दिणेसम्मि ॥३६४॥

२ ।

अर्थ—इच्छित परिधि-प्रमाणको पाँचसे विभक्त करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर तिमिर क्षेत्रकी परिधिका प्रमाण होता है ॥३६४॥

विशेषार्थ—यहाँ सूर्य प्रथम वीथीमें स्थित है और इस वीथीमें रात्रिका प्रमाण १२ मुहूर्तका है। विवक्षित परिधिके प्रमाणमें १२ मुहूर्तका गुणाकर ६० मुहूर्तोंका भाग देनेपर अर्थात् ($\frac{12}{60}$)=$\frac{1}{5}$ अर्थात् $\frac{1}{5}$ का भाग देनेपर तिमिर-क्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है ।

सूर्यके प्रथम पथमें रहते मेरु आदि परिधियोंमें तिमिर क्षेत्रका प्रमाण—

छस्स सहस्सा ति-सया, चउवीसं जोयणाणि बोद्धिव्वा ।
मेरुगिरि - तिमिर - खेत्तं, आदिम - मग्गट्ठिदे तवणे ॥३६५॥

६३२४ । २ ।

अर्थ—सूर्यके आदि (प्रथम) मार्गमें स्थित होनेपर मेरु पर्वतके ऊपर तिमिरक्षेत्रका प्रमाण छह हजार तीन सौ चौबीस योजन और दो भाग अधिक है ॥३६५॥

(मेरु परिधि $३१\frac{५५}{६६}$) $\times \frac{३}{१०}$ = $६३२४\frac{२}{६६}$ योजन तिमिरक्षेत्र ।

पणतीस-सहस्सा पण-सयाणि बावण्ण-जोयणा अंसा ।
अट्ठ-हिदा सेमाए, तिमिर-खिवो पढम-पह-ठिव-पयंगे ॥३६६॥

३५५५२ । ८ ।

अर्थ—पतंग (सूर्य) के प्रथम पथमें स्थित होनेपर क्षेमा नगरीमें तिमिरक्षेत्र पैंतीस हजार पांच सौ बावन योजन और एक योजनके आठवें भाग-प्रमाण रहता है ॥३६६॥

(क्षेमाकी परिधि $१७७३६०\frac{३}{१०}$ = $१७७३६०\frac{३}{१०}$) $\times \frac{३}{१०}$ = $\frac{५३२०८}{१५०}$ = $३५५५२\frac{८}{१५०}$ योजन तिमिरक्षेत्र ।

तिय-अट्ठ-णवट्ठ-तिया, अंक-कमे सग-दुगंस चाल-हिदा ।
खेमपुरी-तम-खेत्तं, दिवायरे पढम - मग्ग - ठिदे ॥३६७॥

३८९८३ । $\frac{३७}{४०}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित होनेपर क्षेमपुरीमें तम-क्षेत्र तीन, आठ, नौ, आठ और तीन, इन अंकोंके क्रमसे छत्तीस हजार नौ सौ तेरासी योजन और सत्ताईस भाग-प्रमाण रहता है ॥३६७॥

(क्षेमपुरीकी परिधि $१९४९१८\frac{३}{१०}$ = $१९४९१८\frac{३}{१०}$) $\times \frac{३}{१०}$ = $१९४९१८\frac{९}{१००}$ = $३८९८३\frac{३७}{४०}$ योजन तिमिरक्षेत्र है ।

एक्कत्ताल-सहस्सा, णव-सय-चालीस जोयणाणि कला ।
पणतीस तिमिर-खेत्तं, रिट्ठाए पढम-पह-मज्झ-विभेसे ॥३६८॥

४१९४० । $\frac{३५}{४०}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथको प्राप्त होनेपर अरिष्टा नगरीमें तिमिर-क्षेत्र इकतालीस हजार नौ सौ चालीस योजन और पैंतीस कला-प्रमाण रहता है ।।३६८।।

(अरिष्टानगरीकी परिधि $२०९७०४\frac{1}{2} = \frac{११८९५३५}{२}$) $\times \frac{1}{2} = \frac{३३९२१७}{२} = ४१९४०\frac{३५}{४}$ ($\frac{३५}{४}$) योजन तिमिरक्षेत्र है ।

बावत्तरि ति-सयाणि, पणवाल-सहस्स जोयणा अंसा ।
सत्तरस अरिट्ठपुरे, तम - खेत्तं पढम - पह - सूरे ।।३६९।।

४५३७२ । $\frac{१७}{२०}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर अरिष्टपुरमें तम-क्षेत्र पैंतालीस हजार तीन सौ बहत्तर योजन और सत्तरह भाग-प्रमाण रहता है ।।३६९।।

(अरिष्टपुरीकी परिधि $२२६८६२\frac{1}{2} = \frac{९०७४९}{४}$) $\times \frac{1}{2} = \frac{९०७४९}{८} = ४५३७२\frac{५}{८}$ योजन तिमिरक्षेत्र है ।

अट्ठत्ताल-सहस्सा, ति-सया उणतीस जोयणा अंसा ।
पण्णरसं खग्गाए, बहुमज्झिम-पणिधि-तम-खेत्तं ।।३७०।।

४८३२९ । $\frac{१५}{२०}$ ।

अर्थ—खड्गा नगरीके बहुमध्यम प्रणिधिभागमें तमक्षेत्र अड़तालीस हजार तीन सौ उनतीस योजन और पन्द्रह भाग-प्रमाण रहता है ।।३७०।।

(खड्गा नगरीकी परिधि $२४१६४८\frac{1}{2} = \frac{९६६५९५}{४}$) $\times \frac{1}{2} = \frac{९६६५९५}{८} = ४८३२९\frac{५}{८}$ ($\frac{५}{८}$) योजन तमक्षेत्र है ।

एक्कावण्ण-सहस्सा, सत्त-सया एक्कसट्ठि जोयणया ।
सत्तंसा तम - खेत्तं, मंजुसपुर - मज्झ - पणिधीए ।।३७१।।

५१७६१ । $\frac{७}{२०}$ ।

अर्थ—मंजूषपुरकी मध्य-प्रणिधिमें तम-क्षेत्र इक्यावन हजार सात सौ इकसठ योजन और सात भाग-प्रमाण रहता है ।।३७१।।

(मंजूषापुरकी परिधि $२५८८०\frac{1}{2} = \frac{१०३५२१}{४}$) $\times \frac{1}{2} = \frac{१०३५२१}{८} = ५१७६१\frac{७}{८}$ योजन तम-क्षेत्र है ।

अट्ठावण्ण-सहस्सा सग-सयाणि अट्ठारस-जोयणा अंसा ।
पण्णरस ओसहीपुर-बहुमज्झिम-परिधि-तिमिर-सिदी ॥३७२॥

५४७१८ । $\frac{15}{19}$ ।

अर्थ—ओषधिपुरकी बहुमध्यप्रणिधिमें तिमिरक्षेत्र चौवन हजार सात सौ अठारह योजन और पन्द्रह भाग-प्रमाण रहता है ॥३७२॥

(ओषधिपुरकी परिधि २७३५६१$\frac{1}{2}$ = $\frac{११०१८१७}{४}$) × $\frac{१}{२}$ = $\frac{१०८१८१७}{४}$ = ५४७१८$\frac{३}{४}$ ($\frac{१५}{१९}$) योजन तमक्षेत्र है ।

अट्ठावण्ण-सहस्सा, इगिसय उणवण्ण जोयणा अंसा ।
सगतीस पुंडरीगिणि-पुरीए बहु-मज्झ-परिधि-तमं ॥३७३॥

५८१४९ । $\frac{३५}{४७}$ ।

अर्थ - पुण्डरीकिणी पुरीकी बहुमध्य-प्रणिधिमें तमका प्रमाण अट्ठावन हजार एकसौ उनंचास योजन और सैंतीस भाग अधिक रहता है ॥३७३॥

(पुण्डरीकिणी नगरीकी परिधि २९०७४९$\frac{1}{2}$ = $\frac{२३२५९१७}{८}$) × $\frac{१}{२}$ = ५८१४९$\frac{३५}{४७}$ योजन तमक्षेत्र है ।

सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते अभ्यन्तर वीथीमें तमक्षेत्रका प्रमाण—

तेसट्ठि-सहस्साणि, सत्तारसं जोयणा चउ-कलाओ ।
पंच-हिदा पढम-पहे, तम - परिहो वह-ठिद-दिवसे ॥३७४॥

६३०१७ । $\frac{४}{५}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तमक्षेत्रकी परिधि तिरेसठ हजार सत्तरह योजन और चार भाग-प्रमाण होती है ॥३७४॥

(प्रथम पथकी परिधि $\frac{३१८१०५}{१०}$) × $\frac{१}{५}$ = ६३०१७$\frac{४}{५}$ योजन ।

द्वितीय पथमें तम-क्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, जोयणया एक्कवीस एक्क-कला ।
विदिय-वह-तिमिर-खेत्तं, आदिम - मग्ग - हिदे सूरे ॥३७५॥

६३०२१ । $\frac{२}{५}$ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर द्वितीय वीथीमें तिमिर-क्षेत्र तिरेसठ हजार इक्कीस योजन और एक कला अधिक रहता है ॥३७५॥

(द्वितीय वीथीकी परिधि $३१५\frac{३०९}{११}$) $\times \frac{१}{२}$ = ६३०२१$\frac{१}{२}$ योजन ।

तृतीय पथमें तम-क्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, चउवीसं जोयणाणि चउ अंसा ।
तदिय-पह-तिमिर-भूमी, मरांडे पढम - मग्ग - गदे ॥३७६॥

६३०२४ । ४ ।

एवं मज्झिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित रहने पर तृतीय पथमें तिमिर क्षेत्र तिरेसठ हजार चौबीस योजन और चार भाग अधिक रहता है ॥३७६॥

(तृतीय पथकी परिधि $३१५\frac{३२४}{११} \times$) $\frac{१}{२}$ = ६३०२४$\frac{४}{११}$ योजन ।

इसप्रकार मध्यम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

मध्यम पथमें तम-क्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, ति-सया चालीस जोयणा दु-कला ।
मज्झिम-पह-तिमिर-खिदी, तिव्वकरे पढम-मग्ग-ठिदे ॥३७७॥

६३३४० । २ ।

एवं दुचरिम-परियंतं णेदव्वं ।

अर्थ—तीव्रकर (सूर्य) के प्रथम पथमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तिमिर-क्षेत्र तिरेसठ हजार तीन सौ चालीस योजन और दो कला अधिक रहता है ॥३७७॥

(मध्यम पथकी परिधि=$३१५\frac{३०९}{११}$) $\times \frac{१}{२}$ = ६३३४०$\frac{२}{११}$ योजन ।

इसप्रकार द्विचरम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए ।

बाह्य पथमें तम-क्षेत्र—

तेसट्ठि-सहस्साणि, छस्सय-बासट्ठि-जोयणाणि कला ।
चत्तारो बहिमग्गे, तम - खेत्तं पढम-पह-ठिदे तवणे ॥३७८॥

६३६६२ । ४ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम पथमें स्थित होनेपर बाह्य मार्गमें तम-क्षेत्र तिरेसठ हजार छह सौ बासठ योजन और चार कला अधिक रहता है ॥३७८॥

(बाह्य पथकी परिधि = $^{३१५०८९}/_{२०}$) × $\frac{१}{२}$ = ६३६६२$\frac{४}{१०}$ योजन तमक्षेत्र ।

लवण समुद्रके छठे भागमें तम-क्षेत्र—

एक्कं लक्खं णव-जुद-चउदस-सयाणि जोयणा अंसा ।
जल-छट्ठ-भाग-तिमिरं, उप्पयरे पढम - मग्ग - ठिदे ॥३७९॥

१०५४०९ । २ ।

अर्थ—सूर्यके प्रथम मार्गमें स्थित होनेपर लवणसमुद्र-सम्बन्धी जलके छठे भागमें तिमिर-क्षेत्र एक लाख पाँच हजार चार सौ नौ योजन और एक भाग अधिक रहता है ॥३७९॥

(लवणसमुद्रके छठे भागकी परिधि = $^{१५८११}/_{२०}$) × $\frac{१}{२}$ = १०५४०९$\frac{१}{२}$ योजन तिमिर-क्षेत्र है ।

(तालिका पृष्ठ ३४५ पर देखिये)

दोनों सूर्योके प्रथम पथमें स्थित रहते ताप और तम-क्षेत्रका प्रमाण—

क्र०	विवक्षित परिधि-क्षेत्र	सूर्यके प्रथम पथमें स्थित रहते		दो सूर्योका सम्मिलित क्षेत्र	परिधियोंका प्रमाण गाथा— २४६-२६५
		ताप-क्षेत्रका प्रमाण (योजनों में) गाथा-२६७-३१०	तम-क्षेत्रका प्रमाण (योजनों में) गाथा-३६५-३७९		
१	मेरु पर	९४८६$\frac{1}{2}$ +	६३२४$\frac{1}{2}$ =	१५८११ × २ =	३१६२२ योजन
२	लंका पर	५३३२८$\frac{1}{2}$ +	३५५५२$\frac{1}{2}$ =	८८८८०$\frac{1}{2}$ × २ =	१७७७६०$\frac{1}{2}$,,
३	सोमपुरी पर	५८४७५$\frac{1}{2}$ +	३८९८३$\frac{1}{2}$ =	९७४९९$\frac{1}{2}$ × २ =	१९४९१८$\frac{1}{2}$,,
४	अरिष्टा पर	६२६११$\frac{1}{2}$ +	४१९४०$\frac{1}{2}$ =	१०४८५२$\frac{1}{2}$ × २ =	२०९७०४$\frac{1}{2}$,,
५	अरिष्टपुरी	६८०५८$\frac{1}{2}$ +	४५३७२$\frac{1}{2}$ =	११३४३१$\frac{1}{2}$ × २ =	२२६८६२$\frac{1}{2}$,,
६	खड्गपुरी	७२४९४$\frac{1}{2}$ +	४८३२९$\frac{1}{2}$ =	१२०८२४$\frac{1}{2}$ × २ =	२४१६४८$\frac{1}{2}$,,
७	मंजूषापुरी	७७६४१$\frac{1}{2}$ +	५१७६१$\frac{1}{2}$ =	१२९४०२$\frac{1}{2}$ × २ =	२५८८०५$\frac{1}{2}$,,
८	औषधिपुरी	८२०७७$\frac{1}{2}$ +	५४७१८$\frac{1}{2}$ =	१३६७९५$\frac{1}{2}$ × २ =	२७३५९१$\frac{1}{2}$,,
९	पुण्डरीकिणी पुरीपर	८७२२४$\frac{1}{2}$ +	५८१४९$\frac{1}{2}$ =	१४५३७४$\frac{1}{2}$ × २ =	२९०७४९$\frac{1}{2}$,,
१०	प्रथम वीथी	९४५२६$\frac{1}{2}$ +	६३०१७$\frac{1}{2}$ =	१५७५४४$\frac{1}{2}$ × २ =	३१५०८९ ,,
११	द्वितीय वीथी	९४५३१$\frac{1}{2}$ +	६३०२१$\frac{1}{2}$ =	१५७५५३ × २ =	३१५१०६ ,,
१२	तृतीय वीथी	९४५३७$\frac{1}{2}$ +	६३०२४$\frac{1}{2}$ =	१५७५६२ × २ =	३१५१२४ ,,
१३	चतुर्थ वीथी	९५०१०$\frac{1}{2}$ +	६३३४०$\frac{1}{2}$ =	१५८३५१ × २ =	३१६७०२ ,,
१४	बाह्य वीथी	९५४९४$\frac{1}{2}$ +	६३६६२$\frac{1}{2}$ =	१५९१५७ × २ =	३१८३१४ ,,
१५	लवणोदधि के छठे भाग पर	१५८११३$\frac{1}{2}$ +	१०५४०९$\frac{1}{2}$ =	२६३५२३ × २ =	५२७०४६ ,,

नोट—ताप और तम क्षेत्रकी कुल (१+८+१८४+१=) १९४ परिधियाँ हैं। इनमें से मेरु पर्वतकी १+सोम आदि नगरियोंकी ८+लवण० की १+और सूर्यकी (प्रारम्भिक ३+ मध्यम १+ और बाह्य १=) ५ परिधियोंका अर्थात् १५ परिधियोंका विवेचन किया जा चुका है। इसीप्रकार शेष १७९ परिधियोंका भी जानना चाहिए।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहते इच्छित परिधिमें
तिमिर क्षेत्र प्राप्त करनेकी विधि—

इच्छिय-परिरय-रासिं, सगसट्ठी-तिय-सएहिं गुणिदूणं।
लभ-तिय-अट्ठ एक्क-हिदे, तम-खेत्तं विदिय-पह-ठिदे-सूरे ॥३८०॥

$\frac{३४९}{१८३०}$।

अर्थ—इष्ट परिधि राशि को तीन सौ सड़सठसे गुणा करके प्राप्त गुणनफलमें अठारह सौ तीसका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित रहने पर विवक्षित परिधिमें तम-क्षेत्रका प्रमाण होता है ॥३८०॥

विशेषार्थ—यहाँ सूर्य द्वितीय पथमें स्थित है। इस वीथीमें रात्रिका प्रमाण (१२+$\frac{३५}{६१}$) =१२$\frac{३५}{६१}$=$\frac{७३४}{६१}$ मुहूर्तका है। विवक्षित परिधिके प्रमाणमें $\frac{७३४}{६१}$ मुहूर्तोंका गुणाकर ६० मुहूर्तों का भाग देनेपर अर्थात् $\frac{३१८१४२}{३६६०}$=$\frac{१५९०७१}{१८३०}$ में से ३६७ का गुणाकर १८३० का भाग देनेपर तम-क्षेत्रका प्रमाण प्राप्त होता है।

सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर मेरु आदिकी परिधियोंमें
तम-क्षेत्रका प्रमाण—

एक्क-चउक्क-ति-छक्का, अंक-कमे दुग-सुग-छ-अंसा य।
पंचेक्क-अवय-भजिदा, मेरु-तमं विदिय-[१]पह-ठिदे सूरे ॥३८१॥

६३४१ । $\frac{२२५}{२९१}$।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर मेरु पर्वतके ऊपर तम-क्षेत्र एक, चार, तीन और छह इन अंकोंके क्रमसे छह हजार तीन सौ इकतालीस योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित छह सौ बाईस भाग अधिक रहता है ॥३८१॥

(मेरुकी परिधि=$३१६२\frac{२२}{९१५}$)×$\frac{३४९}{३६६०}$=$\frac{१०३३६२०}{३२९४०}$=६३४१$\frac{२२५}{२९१५}$ योजन तम-क्षेत्र है।

---

१. ब. ज. ध. क. परिक्खिवसे।

णव-चउ-छ-पंच-तिया, अंक-कमे सत्त-छक्क-सत्तंसा ।
अट्ठ-दु-णव-दुग-भजिदा, खेमाए मज्झ-परिधि-तमं ॥३८२॥

३५६४९ । $\frac{७६७}{२९८}$ ।

अर्थ—क्षेमा नगरीके मध्य प्रतिधि भागमें तम-क्षेत्र नौ, चार, छह, पाँच और तीन, इन अंकोंके क्रमसे पैंतीस हजार छह सौ उनंचास योजन और दो हजार नौ सौ अट्ठाईससे भाजित सात सौ सड़सठ भाग प्रमाण रहता है ॥३८२॥

(क्षेमा नगरीकी परिधि = १७७७६०$\frac{२}{९}$ = $\frac{१५९९४८}{९}$) × $\frac{३५}{२०४५}$ = $\frac{१९९४८ \times ३५}{९ \times २०४५}$ = $\frac{६९८०८}{१८४५}$ = ३५६४९$\frac{७६७}{२९८}$ योजन तम-क्षेत्र है ।

णभ-णव-णभ-णवय-तिया, अंक-कमे णव-चउक्क-सग-दु-कला ।
णभ-चउ-छ-चउ-एक्क-हिदा, खेमपुरी - परिधि - तम-खेत्तं ॥३८३॥

३९०९० । $\frac{२०९५}{१४४०}$

अर्थ—क्षेमपुरीके प्रतिधिभागमें तम क्षेत्र शून्य, नौ, शून्य, नौ और तीन इन अंकोंके क्रमसे उनतालीस हजार नब्बे योजन और चौदह हजार छह सौ चालीससे भाजित दो हजार सात सौ उनंचास कला प्रमाण रहता है ॥३८३॥

(क्षेमपुरीकी परिधि = १९४९१८$\frac{३}{४}$ = $\frac{७७९६७}{४}$) × $\frac{३५}{२०४५}$ = $\frac{७७९६७ \times ३५}{४ \times २०४५}$ = ३९०९०$\frac{२०९५}{१४४०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है ।

पंच-पण-गयण-दुग-चउ, अंक-कमे पण-चउक्क-अड-छक्का ।
अंसा तिमिरक्खेत्ते, मज्झिम - परिधीए रिट्ठाए ॥३८४॥

४२०५५ । $\frac{४८४५}{१४४०}$ ।

अर्थ—अरिष्टा नगरीके मध्यम प्रतिधिभागमें तिमिर क्षेत्र पाँच, पाँच, शून्य, दो और चार, इन अंकोंके क्रमसे बयालीस हजार पचपन योजन और छह हजार आठ सौ पैंतालीस भाग अधिक रहता है ॥३८४॥

(अरिष्टाकी परिधि २०६७०४$\frac{१}{२}$ = $\frac{४१३४०९}{२}$) × $\frac{३५}{२०४५}$ = $\frac{४१३४०९ \times ३५}{२ \times २०४५}$ = ४२०५५$\frac{४८४५}{१४४०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है ।

छण्णव-चउक्क-पण चउ, अंक-कमे णवय-पंच-सग-पंचा ।
अंसा मज्झिम-परिहो - तम - खेत्तरिट्ठ - णयरीए ॥३८५॥

४५४९६ । $\frac{५७५५}{१४४०}$ ।

अर्थ—अरिष्टपुरीके मध्यम प्रतिधिभागमें तम-क्षेत्र छह, नौ, चार, पाँच और चार, इन अंकोंके क्रमसे पैंतालीस हजार चार सौ छयानवें योजन और पाँच हजार सात सौ उनसठ भाग अधिक रहता है ॥३८५॥

(अरिष्टपुरीकी परिधि = २२६८६२३=^{१४१४९०}) × $\frac{३५०}{१२५०}$ = $\frac{१४९६९१४४}{१९९९९}$ = ४५४९६$\frac{१९९९}{१९९९}$ योजन तम-क्षेत्र है ।

एक्कं छक्खउ-अट्ठा, चउ अंक-कमेण पंच - पंचट्ठा ।
जव य कलाओ खग्गा-मज्झिम-पलधीए तिमिर-खिदी ॥३८६॥

४८४६१ । $\frac{६५५५}{१२५०}$ ।

अर्थ—खड्गापुरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तिमिर-क्षेत्र एक, छह, चार, आठ और चार, इन अंकोंके क्रमसे अड़तालीस हजार चार सौ इकसठ योजन और नौ हजार आठ सौ पचपन कला अधिक रहता है ॥३८६॥

(खड्गपुरीकी परिधि = २४१६४८१=^{१५३१०५}) × $\frac{३५०}{१२५०}$ = $\frac{१५३१०५}{१२५०}$ = ४८४६१$\frac{८१९}{१२५०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है ।

दुग-अभ-णवेक्क-पंचा, अंक-कमे एवमय-छक्क-सत्तट्ठा ।
अंसा मंजूसणयरी - मज्झिम - पलधीए तम - खेत्तं ॥३८७॥

५१९०२ । $\frac{७०००}{१२५०}$ ।

अर्थ—मंजूषा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तम-क्षेत्र दो, शून्य, नौ, एक और पांच इन अंकोंके क्रमसे इक्यावन हजार नौ सौ दो योजन और आठ हजार सात सौ उनहत्तर भाग प्रमाण रहता है ॥३८७॥

(मंजूषा नगरीकी परिधि=२५८८०५^{२}=^{१०३२१००}) × $\frac{३५०}{१२५०}$ = $\frac{१६१४०४}{१९९९९}$ = ५१९०२$\frac{८७६९}{१२५०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है ।

सत्त-छ-अट्ठ-चउक्का, पंचंक - कमेण जोयणा अंसा ।
पंच-छ-अट्ठ - दुगेक्का, ओसहिपुर-परिधि-तम-खेत्तं ॥३८८॥

५४८६७ । $\frac{१३८५}{१२५०}$ ।

अर्थ—औषधिपुरके प्रणिधिभागमें तम-क्षेत्र सात, छह, आठ, चार और पांच इन अंकोंके क्रमसे चौवन हजार आठ सौ सड़सठ योजन और बारह हजार आठ सौ पैंसठ भाग प्रमाण रहता है ॥३८८॥

(औषधिपुरकी परिधि = २७३५६१^{२} = ^{१९८४०३५}) × $\frac{३५०}{१२५०}$ = $\frac{१३८५१४}{१२५०}$ = ५४८६७$\frac{१३८५}{१२५०}$ योजन तमक्षेत्रका प्रमाण है ।

अट्ठ-छ-ति-अट्ठ-पंचा, अंक-कमेण जोयणाणि अंसा य ।
एय-सग-सग-एक्केक्का, तम-खेत्तं पुंडरिगिणी - णयरे ॥३८९॥

५८३०८ । $\frac{११७५}{१२५०}$ ।

अर्थ—पुण्डरीकिणी नगरीमें तम-क्षेत्र आठ, शून्य, तीन, आठ और पाँच इन अंकोंके क्रमसे अट्ठावन हजार तीन सौ आठ योजन और ग्यारह हजार सात सौ उन्यासी भाग प्रमाण रहता है ॥३८९॥

(पुण्डरीकिणीपुरकी परिधि = २९०७४९$\frac{११७९}{२१२}$) × $\frac{३३०}{२१२३०}$ = $\frac{९९३३५९११}{२१२३०}$ = ५८३०८$\frac{११७९}{२१२}$ योजन तम-क्षेत्र ।

अभ्यन्तर पथमें तम-क्षेत्र—

णव-अट्ठेक्क-ति-छक्का, अंक - कमे ति-णव-सत्त-एक्कंसा ।
णभ-तिय-अट्ठेक्क-हिदा, बिदिय-पहृक्कम्मि पढम-पह-तिमिरं ॥३९०॥

६३१८९ । $\frac{३७३}{३३०}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर प्रथम मार्गमें तमक्षेत्र नौ, आठ, एक, तीन और छह इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ नवासी योजन और एक हजार आठ सौ तीससे भाजित एक हजार सात सौ तेरानवें भाग अधिक रहता है ॥३९०॥

(प्रथम पथकी परिधि = ३१५०८१) × $\frac{३३०}{२१२३०}$ = $\frac{१०४१९३३०}{२१२३०}$ = ६३१८९$\frac{३७३}{३३०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण ।

द्वितीय पथमें तम-क्षेत्र—

तिय-णव-एक्क-ति-छक्का, अंकाण कमे दुगेक्क-सत्तंसा ।
पंचेक्क-णव-विहत्ता, बिदिय-पहृक्कम्मि बिदिय-पह-तिमिरं ॥३९१॥

६३१९३ । $\frac{७१२}{१९५}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर द्वितीय वीथीमें तिमिर-क्षेत्र तीन, नौ, एक, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ तेरानवें योजन और सौ सौ पन्द्रहसे भाजित सात सौ बारह भाग प्रमाण रहता है ॥३९१॥

(द्वितीय पथकी परिधि ३१५१०६ यो०) × $\frac{३३०}{२१२३०}$ = ६३१९३$\frac{७१२}{१९५}$ यो० ।

तृतीय पथमें तम-क्षेत्र—

छण्णव-एक्क-ति-छक्का, अंक - कमे अड - दुगट्ठ एक्कंसा ।
णय-तिय-अट्ठेक्क-हिदा, बिदिय-पहृक्कम्मि तदिय-मग्ग-तमं ॥३९२॥

६३१९६ । $\frac{३३६}{३३०}$ ।

एवं मज्झिम-मग्गंतं णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर तृतीय मार्गमें तम-क्षेत्र छह, नौ, एक, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार एक सौ छयानवें योजन और एक हजार आठ सौ तीससे भाजित एक हजार आठ सौ अट्ठाईस भाग प्रमाण रहता है ॥३९२॥

(तृतीय पथकी परिधि $=\frac{३१५०८९४}{४}$) $\times \frac{३५०}{१८३१०} = \frac{५०८३५०४७}{७३२४०} =$ ६३१९६$\frac{१८३५}{७३२४०}$ योजन तम-क्षेत्र है।

इसप्रकार मध्यम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए।

मध्यम पथमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

तेसट्ठि-सहस्सा पण-सयाणि तेरस य जोयणा अंसा।
चउदाल-जुदट्ठ-सया, बिदिय-पहवकम्मि मज्झिम-मग्ग-तमं ॥३९३॥

६३५१३ । $\frac{४४८}{५२५०}$ ।

एवं दुचरिम-मग्गंत[1] णेदव्वं।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय पथमें स्थित होनेपर मध्यम मार्गमें तम-क्षेत्र तिरेसठ हजार पाँच सौ तेरह योजन और आठ सौ चवालीस भाग अधिक रहता है ॥३९३॥

(मध्यम पथकी परिधि $= \frac{३१५०८९४}{४}$) $\times \frac{३५०}{१८३१०} = \frac{५०८३५०४७०}{७३२४०} =$ ६३५१३$\frac{४४८}{५२५०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है।

इसप्रकार द्विचरममार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए।

बाह्य पथमें तम-क्षेत्र—

छ-तिय-अट्ठ-ति-छक्का, अंक-कमे चउय-सत्त-छक्केसा।
पंचेक्क-सय-विहत्ता, बिदिय-पहवकम्मि बाहिरे तिमिरं ॥३९४॥

६३८३६ । $\frac{६६५}{१५१}$ ।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित होने पर बाह्य पथमें तिमिर-क्षेत्र छह, तीन, आठ, तीन और छह, इन अंकोंके क्रमसे तिरेसठ हजार आठ सौ छत्तीस योजन और नौ सौ पन्द्रहसे भाजित छह सौ उन्यासी भाग अधिक है ॥३९४॥

(बाह्य क्षेत्रकी परिधि $= \frac{३१५०८९४}{४}$) $\times \frac{३५०}{१८३१०} = \frac{५०८३५०४७०}{७३२४०} =$ ६३८३६$\frac{६६५}{९१५}$ योजन तम-क्षेत्र का प्रमाण है।

लवणोदधिके छठे भागमें तम-क्षेत्र—

सत्त-अय-छक्क-पण-अभ-एक्कंक-कमेण बुग-सग-तियंसा।
अभ-तिय-अट्ठेक्क-हिदा, लवणोदहि - छट्ठ - भागंतं ॥३९५॥

१०५६९७ । $\frac{३०९}{१८३०}$ ।

---

१. द. ब. क. ज. मग्गो त्ति।

अर्थ—सूर्यके द्वितीय मार्गमें स्थित होनेपर लवणोदधिके छठे भागमें तिमिरक्षेत्र सात, नौ, छह, पाँच, शून्य और एक, इन अंकोंके क्रमसे एक लाख पाँच हजार छह सौ सत्तानवें योजन और एक हजार आठ सौ तीससे भाजित तीन सौ बहत्तर भाग अधिक है ॥३९५॥

(लवणसमुद्रके छठे भाग की परिधि=$७१०६०\frac{३७२}{१८३०}$) $\times \frac{३५५}{११३०}$ = $१०५६९७\frac{३३५}{१८३०}$ योजन तम-क्षेत्रका प्रमाण है ।

शेष परिधियोंमें तम-क्षेत्र —

एवं सेस - पहेसुं, बोहि पडि आमिणी - मुहुत्ताणि ।
ठविऊणाणेज्ज तमं, छक्कोणिय-दु-सय-परिहीसुं ॥३९६॥

१९४ ।

अर्थ—इसप्रकार शेष पथोंमेंसे प्रत्येक वीथीमें रात्रि-मुहूर्तोंको स्थापित करके छह कम दो सौ (१९४) परिधियोंमें तिमिर-क्षेत्र ज्ञात कर लेना चाहिए ॥३९६॥

नोट—विशेष के लिए गाथा ३४५ का विशेषार्थ द्रष्टव्य है ।

सूर्यके बाह्यपथमें स्थित होनेपर तम-क्षेत्रका प्रमाण—

सव्व-परिहीसु रत्ति, अट्ठरस-मुहुत्तयाणि रविबिंबे[1] ।
बहि-पह-ठिदम्मि एदं, वरिऊण भणामि तम-खेत्तं ॥३९७॥

अर्थ—सूर्य बिम्बके बाह्य पथमें स्थित होनेपर सब परिधियोंमें अठारह मुहूर्त-प्रमाण रात्रि है, इसका आश्रय करके तम-क्षेत्रका वर्णन करता हूँ ॥३९७॥

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहते विवक्षित परिधिमें तम-क्षेत्र
प्राप्त करनेकी विधि—

इच्छिय-परिर[illegible]-रासिं, तिगुणं काऊण दस-हिदे लद्धं ।
होदि [illegible]रस्स खेत्तं, बाहिर - मग्ग - ठिदे सूरे ॥३९८॥

$\frac{३}{१०}$ ।

अर्थ—इच्छित परिधि-राशिको तिगुणा करके दसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर विवक्षित परिधिमें तिमिर-क्षेत्र होता है ॥३९८॥

---

१. द. ब. क. ज. विबं ।

विशेषार्थ—बाह्य पथमें रात्रिका प्रमाण १८ मुहूर्त है इसमें ६० मुहूर्तोका भाग देनेपर $(\frac{१८}{६०}) = \frac{३}{१०}$ प्राप्त होते हैं। विवक्षित परिधिके प्रमाणमें ३ का गुणाकर १० का भाग देनेपर तम-क्षेत्र का प्रमाण प्राप्त होता है।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मेरु आदि की परिधियोंमें

तम-क्षेत्रका प्रमाण—

णव य सहस्सा चउ-सय, छासीदी जोयणाणि तिण्णि कला।
पंच - हिदा मेरु - तमं, बाहिर - मग्गे ठिदे तवणे ॥३९९॥

९४८६ । ३ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित रहनेपर मेरुके ऊपर तम-क्षेत्र नौ हजार चार सौ छयासी योजन और पाँचसे भाजित तीन कला (९४८६$\frac{३}{५}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥३९९॥

तेवण्ण-सहस्साणि, ति-सया अट्ठवीस-जोयणा ति-कला।
सोलस-हिदा य खेमा - मज्झिम - परिधीए तम-खेत्तं ॥४००॥

५३३२८ । $\frac{३}{१६}$ ।

अर्थ—क्षेमा नगरीके मध्यम परिधिभागमें तम-क्षेत्र तिरेपन हजार तीन सौ अट्ठाईस योजन और सोलहसे भाजित तीन कला (५३३२८$\frac{३}{१६}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४००॥

अट्ठावण्ण-सहस्सा, चउ-सय-पणहत्तरी य जोयणया।
एक्कत्ताल - कलाओ, सोदि - हिदा खेम - णयरीए ॥४०१॥

५८४७५ । $\frac{४१}{८०}$ ।

अर्थ—क्षेमपुरीमें तम-क्षेत्र अट्ठावन हजार चार सौ पचहत्तर योजन और अस्सीसे भाजित इकतालीस कला (५८४७५$\frac{४१}{८०}$ योजन) प्रमाण है ॥४०१॥

बासट्ठि-सहस्सा णव-सयाणि एक्करस जोयणा भागा।
पणुवीस सीदि-भजिदा, रिट्ठाए मज्झ-परिधि-तमं ॥४०२॥

६२९११ । $\frac{२५}{८०}$ ।

अर्थ—अरिष्टा नगरीके मध्य परिधिभागमें तम-क्षेत्र बासठ हजार नौ सौ ग्यारह योजन और अस्सीसे भाजित पच्चीस भाग (६२९११$\frac{२५}{८०}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०२॥

अट्ठासट्ठि-सहस्सा, अट्ठावण्णा य जोयणा अंसा ।
एक्कावण्णं तिमिरं, रिट्ठपुरी - मज्झ - पणिधीए ॥४०३॥

६८०५८ । $\frac{51}{60}$ ।

अर्थ—अरिष्टपुरीके मध्य-प्रणिधिभागमें तिमिरक्षेत्र अड़सठ हजार अट्ठावन योजन और इक्यावन भाग (६८०५८$\frac{51}{60}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०३॥

बाहत्तरि सहस्सा, चउ-सय-चउणउदि जोयणा अंसा ।
पणुतीसं खगाए मज्झिम-पणिधीए तिमिर-खिदी ॥४०४॥

७२४९४ । $\frac{35}{60}$ ।

अर्थ—खड्गा नगरीके मध्यम प्रणिधिभागमें तिमिर-क्षेत्र बहत्तर हजार चार सौ चौरानवें योजन और पैंतीस भाग (७२४९४$\frac{35}{60}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०४॥

सत्ततरि सहस्सा, छस्सय इगिदाल जोयणाणि कला ।
एक्कासट्ठो मंजुस - णयरी - पणिहीए तम-खेत्तं ॥४०५॥

७७६४१ । $\frac{61}{60}$ ।

अर्थ—मंजूषानगरीके प्रणिधिभागमें तम-क्षेत्र सतत्तर हजार छह सौ इकतालीस योजन और इकसठ कला (७७६४१$\frac{61}{60}$ योजन) रहता है ॥४०५॥

बासीदि-सहस्साणि, सत्ततरि - जोयणा कलाओ वि ।
पंचत्तासं ओसहि - पुरीए बाहिर-पह-ट्ठिदक्कम्मि ॥४०६॥

८२०७७ । $\frac{45}{60}$ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर औषधिपुरीमें तम-क्षेत्र बयासी हजार सतत्तर योजन और पैंतालीस कला (८२०७७$\frac{45}{60}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०६॥

सत्तासीदि-सहस्सा, बे-सय-चउवीस जोयणा अंसा ।
एक्कत्तरी य [1]तमिस्-पणिधीए पुंडरिगिणी-णयरे ॥४०७॥

८७२२४ । $\frac{71}{60}$ ।

अर्थ—पुण्डरीकिणी नगरीके प्रणिधिभागमें तिमिर-क्षेत्र सतासी हजार दो सौ चौबीस योजन और इकहत्तर भाग (८७२२४$\frac{71}{60}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०७॥

---

१. द. ब. क. ज. तिमिस ।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहते प्रथम वीथीमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

चउणउदि-सहस्सा पण-सयाणि छव्वीस जोयणा अंसा ।
सत्त य दस-पविहत्ता, बहि-पह-तवणम्मि पढम-पह-तिमिरं ॥४०८॥

९४५२६ । ७/१० ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथमें तिमिर-क्षेत्र चौरानबे हजार पाँच सौ छब्बीस योजन और दससे भाजित सात भाग (९४५२६७/१० योजन) प्रमाण रहता है ॥४०८॥

द्वितीय वीथीमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

चउणउदि-सहस्सा पण-सयाणि इगितीस जोयणा अंसा ।
चत्तारो पंच-विहा, बहि-पह[1]-भागुम्मि बिदिय-पह-तिमिरं[2] ॥४०९॥

९४५३१ । ४/५ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर द्वितीय पथमें तिमिर क्षेत्र चौरानबे हजार पाँच सौ इकतीस योजन और पाँचसे भाजित चार भाग (९४५३१ । ४/५ योजन) प्रमाण रहता है ॥४०९॥

तृतीय वीथीमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

चउणउदि-सहस्सा, पण-सयाणि सगतीस जोयणा अंसा ।
तदिय-पह-तिमिर-खेत्तं, बहि - मग्ग - ठिदे सहस्सकरे ॥४१०॥

९४५३७ । १ ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर तृतीय पथमें तिमिर-क्षेत्र चौरानबे हजार पाँच सौ सैंतीस योजन और एक भाग (९४५३७१/१ योजन) प्रमाण रहता है ॥४१०॥

चतुर्थ वीथीमें तम-क्षेत्र—

चउणउदि-सहस्सा पण-सयाणि बादाल-जोयणा ति-कला ।
दस-पविहत्ता बहि-पह-ठिद-तवणे तुरिम - मग्ग - तमं ॥४११॥

९४५४२ । ३/१० ।

एवं मज्झिम-मग्गाइकल-मग्गं ति णेदव्वं ।

---

१. द. ब. क. ज. तम । २. द. ब. क. ज. ताव ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर चतुर्थवीथीमें तम-क्षेत्र चौरानवें हजार पांच सौ बयानीस योजन और दससे विभक्त तीन कला (९४५४२$\frac{३}{१०}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४११॥

इसप्रकार मध्यम मार्गके आदिम पथ पर्यन्त ले जाना चाहिए।

मध्यम पथमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

पंचाणउदि-सहस्सा, बत्तुत्तरा जोयणाणि तिण्णि कला ।
पंच-हिदा मज्झ - पहे, तिमिरं [1]बहि-पह-ठिदे तवणे ॥४१२॥

९५०१०।$\frac{३}{५}$।

एवं दुचरिम-मग्गं ति णेदव्वं ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथमें स्थित होनेपर मध्यम पथमें तिमिर-क्षेत्र पंचानवें हजार दस योजन और पांचसे भाजित तीन कला (९५०१०।$\frac{३}{५}$ योजन) प्रमाण रहता है ॥४१२॥

इसप्रकार द्विचरम मार्ग पर्यन्त ले जाना चाहिए।

सूर्यके बाह्य पथमें स्थित रहते बाह्य पथमें तम-क्षेत्र—

पंचाणउदि-सहस्सा, चउसय-चउणउदि जोयणा अंसा ।
बाहिर-पह-तम-खेत्तं, दिवायरे बाहि - रद्ध - ठिदे ॥४१३॥

९५४९४।$\frac{१}{२}$।

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथ (पथ) में स्थित होनेपर बाह्य वीथीमें तम-क्षेत्र पंचानवें हजार चार सौ चौरानवें योजन और एक भाग (९५४९४$\frac{१}{२}$। योजन) प्रमाण रहता है ॥४१३॥

लवणोदधिके छठे भागमें तम-क्षेत्रका प्रमाण—

तिय-एक्क-एक्क-अट्ठा, पंचेक्कंक-क्कमेण चउ-अंसा ।
बाहु-पह-ठिद-दिवसयरे, लवणोदहि-छट्ठ-भाव-तमं ॥४१४॥

१५८११३।$\frac{१}{४}$।

---

१ द. ब. बहिपहट्ठिदे ।

अर्थ—सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित होनेपर लवणोदधिके छठे भागमें तम-क्षेत्र तीन, एक, एक, बाठ, पाँच और एक, इन अंकोंके क्रमसे एक लाख अट्ठावन हजार एक सौ तेरह योजन और चार भाग (१५८११३¼ योजन) प्रमाण रहता है ॥४१४॥

दोनों सूर्योके तिमिर-क्षेत्रका प्रमाण—

एक्कार्क तिमिराणं, खेत्ताणि हवंति एक्क-भागम्मि ।
बुगुणिद-परिमाणाणि, दोसु पि सहस्स-किरणेसु ॥४१५॥

अर्थ—एक सूर्यके ये (इतने) तिमिर-क्षेत्र होते हैं। दोनों सूर्योके होते हुए इन्हें द्विगुणित प्रमाण (दूने) जानना चाहिए ॥

तिमिर क्षेत्रकी हानि-वृद्धिका क्रम—

पढम-पहादो बाहिर-पहम्मि दिवसाहिवस्स गमणेसुं ।
वड्ढंति तिमिर - खेत्ता, आगमणेसुं च परियंति ॥४१६॥

अर्थ—दिवसाधिप (सूर्य) के प्रथम पथसे बाह्य पथकी ओर गमन करनेपर तिमिरक्षेत्र वृद्धिको और आगमन कालमें हानिको प्राप्त होते हैं ॥४१६॥

आतप और तिमिर क्षेत्रोंका क्षेत्रफल—

एवं सव्व-पहेसुं, भणियं तिमिर-विसईण परिमाणं ।
एत्तो आदव - तिमिर - खेत्तं - फलाइं पवक्खेमो ॥४१७॥

अर्थ—इसप्रकार सब पथोंमें तिमिर-क्षेत्रोंका प्रमाण कह दिया है। अब यहाँसे आगे आतप और तिमिरका क्षेत्रफल कहते हैं ॥४१७॥

लवणंबु-रासि-बाहल्लुदय-भागस्स परिहि-बारसमे ।
पण - सत्तेहि गुणिदे, तिमिरादव-खेत्तफल-माणं ॥४१८॥

चउ-ठाणेसुं सुण्णा, पंच-दु-चम-छक्क-णवय-एक्क-दुगा ।
अंक - कमे जोयणया, तं खेत्तफलस्स परिमाणं ॥४१९॥

२१९६०२५०००० ।

अर्थ—लवण समुद्रके विस्तारके छठे भागकी परिधिके बारहवें भागको पाँच सातसे गुणा करनेपर तिमिर और आतप-क्षेत्रका क्षेत्रफल निकल आता है। उस क्षेत्रफलका प्रमाण चार स्थानोंमें

शून्य, पाँच, दो, शून्य, छह, नौ, एक और दो, इन अंकोंके क्रमसे इकतीस सौ छयानवें करोड़ दो लाख पचास हजार योजन होता है ॥४१८-४१९॥

विशेषार्थ—लवणोदधिके छठे भागको (परिधि निकालनेकी प्रक्रिया गा० २६५ के विशेषार्थमें द्रष्टव्य है) परिधि ५२७०४६ योजन है। इसको दोनों पार्श्व भागोंके छठे भागसे अर्थात् १२ से भाजित कर प्राप्त लब्धमें लवणोदधिके सूची-व्यास ५ लाखका गुणा करनेपर आतप एवं तिमिर क्षेत्रोंका क्षेत्रफल प्राप्त होता है।

यथा—(परिधि ५२७०४६) ÷ १२ = ४३९२०$\frac{३}{४}$ = $\frac{१७५६१}{४}$, $\frac{१७५६१}{४}$ × $\frac{५०००००}{१}$ = २१९६०२५०००० वर्ग योजन आतप एवं तिमिर क्षेत्र का क्षेत्रफल है।

एक आतपक्षेत्र और एक तिमिर क्षेत्रका क्षेत्रफल—

एदे ति-गुणिय भजिदं, बसेहि एक्कावण्ण-सिसदोए फलं।
तेत्तिय दु-ति-भाग-हदं, होदि फलं एक्क-तम-खेत्तं ॥४२०॥

६५८८०७५००० । ति ४३९२०५०००० ।

अर्थ—इस (क्षेत्रफलके प्रमाण) को तिगुणा कर दसका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना एक आतप क्षेत्रका क्षेत्रफल होता है। इस आतप-क्षेत्रफल प्रमाणके तीन भागोंमेंसे दो भाग प्रमाण एक तमक्षेत्रका क्षेत्रफल होता है ॥४२०॥

विशेषार्थ—एक आतप और एक तिमिर क्षेत्र का क्षेत्रफल प्राप्त करनेके लिए सूत्र एवं उनकी प्रक्रिया इसप्रकार है—

(१) एक आतप क्षेत्रका क्षेत्रफल = $\frac{\text{तिमिर और आतप क्षेत्रका क्षेत्रफल}}{१} \times \frac{३}{१०}$

= $\frac{२१९६०२५०००० }{१} \times \frac{३}{१०}$ = ६५८८०७५००० योजन।

(२) एक तम क्षेत्रका क्षेत्रफल = $\frac{\text{एक आतप क्षेत्रका क्षेत्रफल}}{१} \times \frac{२}{३}$

= $\frac{६५८८०७५०००}{१} \times \frac{२}{३}$ = ४३९२०५०००० योजन।

दोनों सूर्य सम्बन्धी आतप एवं तम का क्षेत्रफल—

एदं आदव-तिमिर-खेत्तफलं एक्क-तिण्णकिरणस्सि।
दोसुं दिणेसु, आदव्वं दुगुण - पुव्व - परिहाणं ॥४२१॥

अर्थ—यह उपर्युक्त आतप तथा तिमिरक्षेत्रफल एक सूर्यके निमित्तसे है। दोनों सूर्योंके रहने पर इसे पूर्व-प्रमाणसे दुगुना जानना चाहिए ॥४२१॥

ऊर्ध्व और अधःस्थानोंमें सूर्योंके आतप क्षेत्रका प्रमाण—

अट्ठारस चेव सया, ताव - क्खेत्तं तु हेट्ठदो तवदि ।
सव्वेसिं सूराणं, सयमेक्कं उवरि तावं तु ॥४२२॥

१८०० । १०० ।

अर्थ—सब सूर्योंके नीचे एक हजार आठ सौ योजन प्रमाण और ऊपर एक सौ योजन प्रमाण ताप-क्षेत्र तपता है ॥४२२॥

विशेषार्थ—सब सूर्य-बिम्बोंसे चित्रा पृथिवी ८०० योजन नीचे है और चित्रा पृथिवीकी मोटाई १००० योजन है अतः सूर्योंका आताप नीचेकी ओर (१०००+८००) १८०० योजन पर्यन्त फैलता है।

सूर्य बिम्बोंसे ऊपर १०० योजन पर्यन्त ज्योति-लोक है अतः सूर्योंका आताप ऊपरकी ओर १०० योजन पर्यन्त फैलता है।

सूर्योंके उदय-अस्तके विवेचनका निर्देश—

एसो दिवायराणं, उदयत्थमणेसु आणि रूवाणि ।
ताहं परम - गुरूणं, उवएसेणं पवक्खेमो ॥४२३॥

अर्थ—अब सूर्योंके उदय एवं अस्त होनेमें जो स्वरूप होते हैं। परम गुरुओंके उपदेशानुसार उनका प्ररूपण करता हूँ ॥४२३॥

जीवा और धनुषकी कृति प्राप्त करनेकी विधि—

बाण-विहीणे वासे, चउगुण-सर-ताडिदम्मि जीव-कदी ।
इसु - वग्गो छग्गुणिदो, तीय जुदो होदि चाव - कदी ॥४२४॥

अर्थ—बाण रहित विस्तारको चौगुणे बाण-प्रमाणसे गुणा करनेपर जीवाकी कृति होती है। बाणके वर्गको छहसे गुणा करनेपर जो राशि प्राप्त हो उसे उपर्युक्त जीवाकी कृतिमें मिला देनेसे धनुषकी कृति होती है ॥४२४॥

हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण—

तिय-जोयण-लक्खाणि, दस य सहस्साणि ऊण-बीसेहिं ।
अवहरिदाइं भणिदं, हरिवरिस - सरस्स परिमाणं ॥४२५॥

$३१०००^{००}_{३१}$ ।

अर्थ—हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित तीन लाख दस हजार ($३१०००^{००}_{३१}$) योजन कहा गया है ॥४२५॥

विशेषार्थ—ति० प० चतुर्थाधिकार गाथा १७६१ के अनुसार भरतक्षेत्रके बाण ($१००^{००}_{१९}$) को ३१ से गुणित करने पर लवणोदधिके तटसे हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण ($१००^{००}_{१९} \times ३१$) = $३१००^{००}_{१९}$ योजन प्राप्त होता है ।

सूर्यके प्रथमपथसे हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण—

तम्मज्झे सोहेज्जसु, सीदी-समहिय-सयं च जं सेसं ।
सो आदिम-मग्गादो, बाणो हरिवरिस - विजयस्स ॥४२६॥

१८० ।

अर्थ—इस (बाण) में से एक सौ अस्सी (जम्बूद्वीपके बारक्षेत्रका प्रमाण १८०) योजन कम कर देनेपर जो शेष रहे उतना प्रथम मार्गसे हरिवर्ष क्षेत्रका बाण होता है ॥४२६॥

विशेषार्थ—(हरिक्षेत्रका बाण = $३१०००^{००}_{१९}$) — $३४३^{०}_{१९}$ (१८० यो० अ० द्वी० का बार-क्षेत्र) = $३०६५८^{०}_{१९}$ योजन अभ्यन्तर पथसे हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण ।

तिय-जोयण-लक्खाणि, छच्च सहस्साणि पंच-सयाणि पि ।
सीदि - जुदाणि आदिम - मग्गादो तस्स परिमाणं ॥४२७॥

$३०६५८^{०}_{१९}$ ।

अर्थ—आदिम मार्गसे उस हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण उन्नीससे भाजित तीन लाख छह हजार पाँचसौ अस्सी ($३०६५८^{०}_{१९}$) योजन होता है ॥४२७॥

प्रथम पथका सूची-व्यास—

णवणउदि-सहस्साणि, छस्सय-चत्ताल-जोयणाणि च ।
परिमाणं आदव्वं, आदिम - मग्गस्स सूईए ॥४२८॥

९९६४० ।

अर्थ—(सूर्यकी) प्रथम वीथीका सूची (व्यास) निन्यानबे हजार छह सौ चालीस (९९६४०) योजन प्रमाण जानना चाहिए ॥४२८॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका विस्तार एक लाख योजन और ज० द्वीपमें सूर्यादिके चारक्षेत्रका प्रमाण १८० योजन है। ज० द्वीपके व्यास में से दोनों पार्श्वभागोंके चार क्षेत्रोंका प्रमाण घटा देनेपर १००००० — (१८० × २) = ९९६४० योजन शेष बचते हैं। यही प्रथम वीथी का सूची व्यास है।

प्रथम पथसे हरिवर्ष क्षेत्रके धनुषकी कृतिका प्रमाण—

तिय-ठाणेसुं सुण्णा, चउ-छ-पंच-दु-ख-छ-णव-सुण्णा।
पंच-दुयंक-कमेणं, एदक्कं छ-ति-भजिदा य धणु-वग्गो ॥४२९॥

$२५०१६०२५६४०००/३६१$।

अर्थ—तीन स्थानोंमें शून्य, चार, छह, पाँच, दो, शून्य, छह, नौ, शून्य, पाँच और दो, इन अंकोंके क्रमसे जो संख्या उत्पन्न हो उसमें तीन सौ इकसठका भाग देनेपर लब्ध-राशि-प्रमाण हरिवर्ष क्षेत्रके धनुषका वर्ग होता है ॥४२९॥

विशेषार्थ—अभ्यन्तर (आदिम) पथका वृत्त विष्कम्भ ९९६४० योजन है और प्रथम वीथीसे हरिवर्ष क्षेत्रके बाणका प्रमाण $३०\frac{१}{६१}$ योजन है। 'बाणसे हीन वृत्त विष्कम्भको चौगुने बाणसे गुणित करने पर जीवाकी कृति होती है।' (त्रिलोकसार गा० ७६०) के इस करणसूत्रानुसार प्रथम पथके वृत्तविष्कम्भमेंसे बाणका प्रमाण घटाकर शेष राशिको चौगुने बाणसे गुणित करनेपर जीवाकी कृति प्राप्त होती है। यथा—

$$\left(९९६४० - ३०\frac{१}{६१}\right) \times \left(३०\frac{१}{६१} \times ४\right)$$

$= ११८५५६२५६०००\frac{४०}{३६१}$ योजन जीवाकी कृति।

'छह गुणे बाण-कृतिको जीवा-कृतिमें मिलानेसे धनुष-कृति होती है' (त्रिलोकसार गा० ७६०) के इस करणसूत्रानुसार धनुषकी कृति इसप्रकार है—

$$\left\{\left(३०\frac{१}{६१}\right)^२ \times ६ = ५५३१२५०००\frac{४००}{३६१}\right\} + \left(११८५५६२५६०००\frac{४०}{३६१}\right)$$

$= २५०१६०२५६४०००\frac{०}{३६१}$ योजन धनुषके वर्गका प्रमाण है।

प्रथम पथसे हरिवर्ष क्षेत्रके धनुःपृष्ठका प्रमाण—

तेसीदि-सहस्सा तिय-सयाणि सत्तत्तरी य जोयणया।
सय य कलाओ आदिम-पहादु हरिवरिस-धणु-पुट्ठं ॥४३०॥

८३३७७ $\frac{१}{६१}$।

अर्थ—प्रथम पथसे हरिवर्ष क्षेत्रका धनुःपृष्ठ तेरासी हजार तीन सौ सतत्तर योजन और नौ कला प्रमाण है ॥४३०॥

विशेषार्थ—$\sqrt{१०००\times\frac{२५३}{१२}\times१०००}=१८४२१\frac{९}{१२}$ योजन। (यहाँ वर्गमूल निकालनेके बाद जो शेष बचे वे छोड़ दिये गये हैं।) $१८४२१\frac{९}{१२}-१=८३३७७\frac{९}{१२}$ योजन प्रथम पथसे हरिवर्ष क्षेत्रका धनुःपृष्ठ है।

निषधपर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण—

तद्धणुपट्ठस्सद्धं, सोहेज्जसु चक्खुफास - खेत्तम्मि ।
जं अवसेस-पमाणं, णिसहाचल-उवरिम-खिदी सा ॥४३१॥

४१६८८ । $\frac{१}{२}$ ।

अर्थ—इस धनुःपृष्ठ-प्रमाणके अर्धभागको चक्षु-स्पर्श-क्षेत्रमेंसे कम कर देनेपर जो शेष रहे उतनी निषध-पर्वतकी उपरिम पृथिवी है ॥४३१॥

विशेषार्थ—हरिवर्षके धनुपृष्ठका प्रमाण $८३३७७\frac{९}{१२}=\frac{१००४२१}{१२}$ योजन है। इसका अर्धभाग चक्षुस्पर्श क्षेत्रके $४७२६३\frac{५}{१०}$ योजन प्रमाणमेंसे घटानेपर निषधपर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण होता है। यथा—

$\left(४७२६३\frac{५}{१०}=\frac{४७२६३}{१०}\right)-\frac{१००४२१}{२४}=\frac{२३६३१}{४८}=५५७४\frac{३३}{४८}$ योजन निषध पर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण है।

चक्षुस्पर्शके उत्कृष्ट क्षेत्रका प्रमाण—

आदिम-परिहिं ति-गुणिय, बीस-हिदे लद्धमेत्त-तेसट्ठी ।
दु - सया सत्तालं, सहस्सया बीस-हरिद-सत्तंसा ॥४३२॥

४७२६३ । $\frac{७}{२०}$ ।

एदं चक्खुप्पासोक्किट्ठ - खेत्तस्स होदि परिमाणं ।
तं एत्थं णेदव्वं, हरिवरिस - सरास - पट्टुद्दं ॥४३३॥

अर्थ—आदिम (प्रथम) परिधिको तिगुना कर बीसका भाग देनेपर जो सैंतालीस हजार दो सौ तिरेसठ योजन और एक योजनके बीस-भागोंमेंसे सात भाग लब्ध आते हैं, यही उत्कृष्ट चक्षु-स्पर्शका प्रमाण होता है। इसमें से हरिवर्ष क्षेत्रके धनुःपृष्ठ प्रमाणके अर्धभागको घटाना चाहिए ॥४३२-४३३॥

विशेषार्थ—सूर्यकी अभ्यन्तर वीथी ३१५०८९ योजन प्रमाण है। चक्षुस्पर्शका उत्कृष्ट क्षेत्र निकालने हेतु इस परिधिको तीन से गुणित कर ६० का भाग देनेको कहा गया है। उसका

कारण यह है कि जब अभ्यन्तर वीथी स्थित सूर्य अपने भ्रमण द्वारा उस परिधिको ६० मुहूर्तमें पूरा करता है, तब वीथीके ठीक मध्यक्षेत्रमें स्थित अयोध्या पर्यन्तकी परिधिको पूर्ण करनेमें कितना समय लगेगा ? इस प्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{1}{60} \times \frac{3}{4}$ अर्थात् $\frac{315066 \times 3}{60 \times 4} = \frac{945198}{240} = 4072\frac{159}{240}$ योजन चक्षु-स्पर्शका उत्कृष्ट क्षेत्र प्राप्त होता है।

भरतक्षेत्रके चक्रवर्ती द्वारा सूर्यबिम्बमें स्थित
जिनबिम्बका दर्शन —

पंच-सहस्सा [तह] पण-सयाणि चउहत्तरी य जोयणया।
बे-सय-तेत्तीसंसा, हारो सीदी - जुदा ति-सया ॥४३४॥

$5574 \mid \frac{233}{280}$ ।

उवरिम्मि णिसह-गिरिणो, एत्तिय-माणेण पढम-मग्ग-ठिवं।
पेच्छंति तवणि - बिंबं, भरहक्खेत्तम्मि चक्कहरा ॥४३५॥

अर्थ—उपर्युक्त प्रकारसे चक्षुके उत्कृष्ट विषय-क्षेत्रमेंसे हरि-वर्षके अर्ध धनुःपृष्ठको निकाल देनेपर निषधपर्वतकी उपरिम पृथिवीका प्रमाण पाँच हजार पाँच सौ चौहत्तर योजन और एक योजन के तीन सौ अस्सी भागोंमेंसे दो सौ तेंतीस भाग अधिक आता है। इतने योजन प्रमाण निषधपर्वतके ऊपर प्रथम वीथीमें स्थित सूर्यबिम्ब (के मध्य विराजमान जिन बिम्ब) को भरतक्षेत्रके चक्रवर्ती देखते हैं ॥४३४-४३५॥

विशेषार्थ—त्रिलोकसार गाथा ३८९-३९१ में कहा गया है कि निषधाचलके धनुष-प्रमाणके अर्धभागमेंसे चक्षु-स्पर्श क्षेत्र घटा देनेपर ($61884\frac{1}{2} - 4072\frac{159}{240}$) $= 14621\frac{321}{240}$ योजन शेष रहते हैं। प्रथम वीथी स्थित सूर्य निषधाचलके ऊपर जब $14621\frac{321}{240}$ यो० ऊपर आता है तब चक्रवर्ती द्वारा देखा जाता है और यहाँ कहा गया है कि निषधाचल पर जब सूर्य $5574\frac{233}{280}$ योजन ऊपर आता है तब चक्रवर्ती द्वारा देखा जाता है। इन दोनों कथनोंमें विरोध नहीं है। क्योंकि निषधाचलके धनुषका प्रमाण $12376\frac{8}{19}$ योजन और हरिवर्षके धनुषका प्रमाण $8321\frac{7}{19}$ योजन है। निषधके धनुष-प्रमाणमेंसे हरिवर्षका धनुष प्रमाण घटाकर शेषको आधा करनेपर निषधाचल की पार्श्वभुजाका प्रमाण $\{ (12376\frac{8}{19} - 8321\frac{7}{19}) \div 2 \} = 2019\frac{5}{19}$ प्राप्त होता है। (दक्षिण तटसे उत्तरतट पर्यन्त चापका जो प्रमाण है उसे पार्श्वभुजा कहते हैं)। त्रिलोकसारके मतानुसार $14621\frac{321}{240}$ यो० ऊपर आनेपर सूर्य दिखाई देता है। निषधाचलकी पार्श्वभुजा मेंसे यह प्रमाण घटा देनेपर ($2019\frac{5}{19} - 14621\frac{321}{240}$) $= 5574\frac{233}{280}$ योजन अवशेष रहते हैं। तिलोयपण्णत्तीमें सूर्य दर्शनका यही प्रमाण कहा गया है।

मेरी समझसे इन दोनोंमें कथन भेद है, भाव या विषय भेद नहीं है, फिर भी विद्वानों द्वारा विचारणीय है।

ऐरावत क्षेत्रके चक्रवर्ती द्वारा सूर्य स्थित जिनबिम्ब दर्शन—

उवरिम्मि णील-गिरिणो, तेत्तियमाणेण पढम-मग्ग-गदो।
एरावदम्मि विजए, अवको देक्खंति इवर - रविं[1] ॥४३६॥

अर्थ—ऐरावत क्षेत्रके चक्रवर्ती उतने ही योजन प्रमाण (५५७४$\frac{३३}{६०}$ यो०) नील पर्वतके ऊपर प्रथम मार्ग स्थित सूर्यबिम्बको देखते हैं ॥४३६॥

प्रथम पथमें स्थित सूर्यके भरतक्षेत्रमें उदित होनेपर क्षेमा आदि सोलह क्षेत्रोंमें रात्रि दिनका विभाग—

ति-दुगेक्क-मुहुत्ताणि, खेमादी-तिय-पुरम्मि अहियाणि।
किंचूण - एक्क[2] - णाली, रत्ती य अरिट्ठ - णयरम्मि ॥४३७॥

मु ३ । २ । १ । णालि १ ।

अर्थ—(प्रथम पथ स्थित सूर्यके भरतक्षेत्रमें उदित होते समय) क्षमा, क्षेमपुरी और अरिष्टा इन तीन पुरोंमें क्रमशः कुछ अधिक तीन मुहूर्त, दो मुहूर्त और एक मुहूर्त तथा अरिष्टपुरीमें कुछ कम एक नाली (घड़ी) प्रमाण रात्रि होती है ॥४३७॥

विशेषार्थ—प्रथम वीथीमें स्थित सूर्य निषधकुलाचलके ऊपर आता हुआ जब भरतक्षेत्रमें उदित होता है उस समय पूर्व-विदेहमें सीता महानदीके उत्तर तट स्थित क्षेमा नगरीमें कुछ अधिक ३ मुहूर्त (कुछ अधिक २ घंटे, २४ मिनिट) रात्रि हो जाती है। उसी समय क्षेमपुरीमें कुछ अधिक २ मुहूर्त (१ घंटा, ३६ मि० से कुछ अधिक), अरिष्टामें कुछ अधिक १ मुहूर्त (४८ मि० से कुछ अधिक) और अरिष्टपुरीमें कुछ कम एक नाली (२४ मिनिटसे कुछ कम) रात्रि हो जाती है।

ताहे खग्गपुरीए, अत्थमणं होदि मंजुस - पुरम्मि।
अवरण्हमधिय-घडियं[3], ओसहिय-णयरम्मि साहिय-मुहुत्तं ॥४३८॥

अर्थ—उसी समय खड्गपुरीमें सूर्यास्त, मंजूषपुरमें एक नालीसे कुछ अधिक अपराह्न और औषधिपुरमें वह (अपराह्न) मुहूर्तसे अधिक होता है ॥४३८॥

---

१. द. क. ज. पुक्खंति तियरवि, ब. देक्खंति रयरवि। २. ब. किंचूणं एक्का णाली।
३. द. ब. क. ज. मुणिया।

विशेषार्थ—जिस समय सूर्य भरतक्षेत्रमें उदित होता है उसी समय खड्गपुरीमें सूर्यास्त हो जाता है और मंजूषपुरमें एक घड़ीसे कुछ अधिक अपराह्न (कुछ अधिक २४ मिनिट दिन) तथा ओषधिपुरमें कुछ अधिक एक मुहूर्त अपराह्न (४८ मिनिटसे कुछ अधिक दिन) रहता है।

ताहे मुहुत्तमधियं, अवरण्हं पुंडरिगिणी - णयरे ।
तप्पणिधो सुररण्णे[1], दोण्णि मुहुत्ताणि अहिरेगो ॥४३९॥

अर्थ—उसी समय पुण्डरीकिणी नगरमें वह अपराह्न एक मुहूर्तसे अधिक और इसके समीप देवारण्यवनमें दो मुहूर्तसे अधिक होता है ॥४३९॥

विशेषार्थ—उसी समय पुण्डरीकिणी नगरीमें एक मुहूर्त (४८ मिनिट) से अधिक और देवारण्यकनमें दो मुहूर्त (१ घंटा, ३६ मिनिट) से अधिक दिन रहता है।

तक्कालम्मि सुसीम-प्पणधीए सुरवणम्मि पढम-पहे ।
होदि अवरण्ह - कालो, तिण्णि मुहुत्ताणि अहिरेगो ॥४४०॥

तिय-तिय मुहुत्तमहिया[2], सुसीम-कुंडलपुरम्मि दो दो य ।
एक्केक्क-साहियाणं, अवराजिद - पहंकरंक - पउमपुरे ॥४४१॥

सुभ-णयरे अवरण्हं, साहिय-णालीए होदि परिमाणं ।
णालि-ति-भागं रत्तो, किंचूणं रयणसंचय - पुरम्मि ॥४४२॥

अर्थ—उसी समय प्रथम पथमें सुसीमा नगरीके समीप देवारण्यमें तीन मुहूर्तसे अधिक अपराह्न काल रहता है। सुसीमा एवं कुण्डलपुरमें तीन-तीन मुहूर्तसे अधिक, अपराजित एवं प्रभंकर-पुरमें दो-दो मुहूर्तसे अधिक, अङ्कपुर तथा पद्मपुरमें एक-एक मुहूर्तसे अधिक और शुभनगरमें एक नालीसे अधिक अपराह्नकाल होता है। तथा रत्नसंचयपुरमें उस समय कुछ कम नालीके तीसरे-भाग-प्रमाण रात्रि होती है ॥४४०-४४२॥

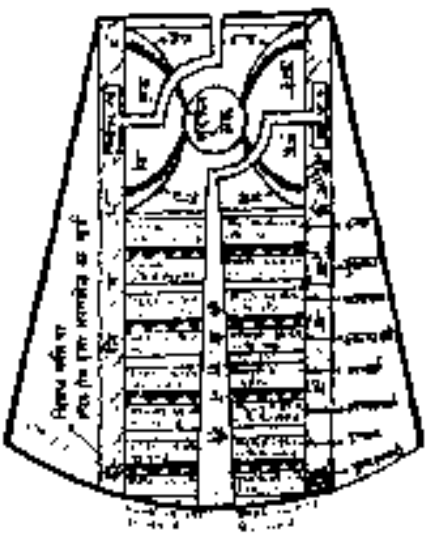
विशेषार्थ—उसी समय सीतामहानदीके दक्षिण तट स्थित सुसीमा नगरीके समीप देवारण्य वन में तीन मुहूर्त (२ घंटे २४ मिनिट) से कुछ अधिक दिन रहता है। सुसीमा और कुण्डलपुरमें तीन-तीन मुहूर्त (२ घण्टा २४ मि०) से अधिक, अपराजित और प्रभङ्करपुरमें दो-दो मुहूर्त (१ घंटा ३६ मिनिट) से अधिक, अङ्कपुर और पद्मपुरमें एक-एक मुहूर्त (४८-४८ मिनिट) से अधिक तथा

---

१. द सुरवरण्णे दोण्णि य। २. द. ब. महिया।

सुभनगरमें एक नाली (२४ मिनिट) से अधिक दिन रहता है। इसके अतिरिक्त रत्नसंचयपुरमें उस समय कुछ कम एक नालीके तीसरे भाग (करीब ७ मिनिट) प्रमाण रात्रि हो जाती है।

इसका चित्रण इसप्रकार है—



प्रथम-पथमें स्थित सूर्यके ऐरावत क्षेत्रमें उदित होनेपर अवध्या आदि सोलह नगरियोंमें रात्रि-दिनका विभाग—

एरावदम्मि उदओ, जं कालें होदि कमलबंधुस्स ।
ताहे दिण - रत्तीओ, अवर - विदेहेसु साहेमि ॥४४३॥

अर्थ—जिस समय ऐरावत क्षेत्रमें सूर्यका उदय होता है उस समय अपर (पश्चिम) विदेहोंमें होनेवाले दिन-रात्रि-विभागोंका कथन करता हूँ ॥४४३॥

खेमादि-सुरवरंतं, हवंति जे पुव्व-रत्ति-अवरण्हं ।
कमसो ते णादव्वा, अरुणपुरी-पहुदि णवय-ठाणेसुं ॥४४४॥

अर्थ—क्षेमा आदि नगरीसे देवारण्य पर्यन्त जो पूर्व-रात्रि एवं अपराह्न काल होते हैं, वे ही क्रमशः अरुणपुरी आदिक नौ स्थानोंमें भी जानने चाहिए ॥४४४॥

होंति अवरज्झाओ णव-ठाणेसुं पुव्व-रत्ति-अवरण्हं ।
पुव्वत्त - रयणसंचय, पुराणि-णव-ठाण-सारिच्छा ॥४४५॥

अर्थ—अवरूप आदिक नौ स्थानोंमें पूर्वोक्त रत्नसंचय पुरादिक नौ स्थानोंके सदृश ही पूर्व रात्रि एवं अपराह्णकाल होते हैं ॥४४५॥

भरत-ऐरावतमें मध्याह्न होनेपर विदेहमें रात्रिका प्रमाण—

किंचूण-छम्मुहुत्ता, रत्ती जा पुंडरिगिणी - णयरे ।
तह होदि वीदसोके, भरहेरावद-खिदीसु मज्झण्णे ॥४४६॥

अर्थ—भरत और ऐरावत क्षेत्रमें मध्याह्न होनेपर जिसप्रकार पुण्डरीकिणी नगरमें कुछ कम छह मुहूर्त रात्रि होती है, उसीप्रकार वीतशोका नगरीमें भी कुछ कम छह मुहूर्त प्रमाण रात्रि होती है ॥४४६॥

नीलपर्वत पर सूर्यका उदय अस्त—

ताहे णिसह-गिरिंदे, उदयत्थमणाणि होंति भाणुस्स ।
णील - गिरिंदेसु तहा, एक्क - खणे दोसु पासेसुं ॥४४७॥

अर्थ—उससमय जिसप्रकार निषधपर्वत पर सूर्यका उदय एवं अस्तगमन होता है, उसीप्रकार एक ही क्षणमें नील-पर्वतके ऊपर भी दोनों पार्श्वभागोंमें (द्वितीय) सूर्यका उदय एवं अस्तगमन होता है ॥४४७॥

भरत-ऐरावत क्षेत्र स्थित चक्रवर्तियों द्वारा अदृश्यमान सूर्यका प्रमाण—

पंच-सहस्सा [तह] पण-सयाणि चउहत्तरी य अहिरेगो ।
तेत्तीस - बे - सयंसा, हारो सोदी - जुदा ति-सया ॥४४८॥

५५७४ ३३३/३२० ।

एत्तियमेत्ताहु परं उवरिं णिसहस्स पढम - मग्गम्मि ।
भरहक्खेत्ते चक्की, दिणयर - बिंबं ण देक्खंति ॥४४९॥

अर्थ—भरतक्षेत्रमें चक्रवर्ती पाँच हजार पाँच सौ चौहत्तर योजन और एक योजनके तीन सौ अस्सी भागोंमेंसे दो सौ तेंतीस भाग अधिक, इतने (५५७४३३३/३२० यो०) से आगे निषधपर्वतके ऊपर प्रथम मार्गमें सूर्य-बिम्बको नहीं देखते हैं ॥४४८-४४९॥

उवरिम्मि णीलगिरिणो, ते परिमाणादु पढम-मग्गम्मि ।
एरावदम्मि चक्की, इदर - दिणेसं ण देक्खंति ॥४५०॥

अर्थ—ऐरावतक्षेत्रमें स्थित चक्रवर्ती नीलपर्वतके ऊपर इस प्रमाण (५३०४$\frac{33}{61}$ यो०) से अधिक-दूर प्रथम मार्ग स्थित दूसरे सूर्यको नहीं देखते हैं ॥४५०॥

दोनों सूर्योंके प्रथम मार्गसे द्वितीयमार्गमें प्रविष्ट होनेकी दिशाएँ—

सिहि-पवण-दिसाहिंतो, जंबूदीवस्स दोण्णि रवि-बिंबा ।
दो जोयणाणि पुह-पुह, आदिम-मग्गादु बिदिय-पहे ॥४५१॥

अर्थ— जम्बूद्वीपके दोनों सूर्य-बिम्ब आग्नेय तथा वायव्य दिशासे पृथक्-पृथक् दो-दो योजन लांघकर प्रथम मार्गसे द्वितीय मार्ग (पथ) में प्रवेश करते हैं ॥४५१॥

सूर्यके प्रथम और बाह्य मार्गमें स्थित रहते दिन-रात्रिका प्रमाण—

लंघंता[1] आणाणं, भरहेरावद - खिदीसु पविसंति ।
ताधो पुव्वुत्ताइं, रत्ती - दिवसाणि जायंते ॥४५२॥

अर्थ—जिस समय दोनों सूर्य प्रथममार्गमें प्रवेश करते हुए क्रमशः भरत और ऐरावत क्षेत्र में प्रविष्ट होते हैं, उसी समय पूर्वोक्त (१८ मुहूर्तका दिन और १२ मुहूर्तकी रात्रि) दिन-रात्रियाँ होती हैं ॥४५२॥

एवं सव्व - पहेसुं, उदयत्थमयाणि ताणि णादूणं ।
पडि-वीहिं दिवस-णिसा, बाहिर-[2]मग्गंतमाणेज्जं ॥४५३॥

अर्थ—इसप्रकार सर्व पथोंमें उदय एवं अस्तगमनोंको जानकर सूर्यके बाह्य मार्गमें स्थित प्रत्येक वीथीमें दिन और रात्रिका प्रमाण ज्ञात कर लेना चाहिए ॥४५३॥

सव्व-परिहीसु बाहिर-मग्ग-ठिदे दिवहणाह-बिंबम्मि ।
बिण - रत्तीओ बारस, अट्ठरस - मुहुत्तमेत्ताओ ॥४५४॥

अर्थ—सूर्य-बिम्बके बाह्य पथमें स्थित होनेपर सर्व परिधियोंमें बारह मुहूर्त प्रमाण दिन और अठारह मुहूर्त प्रमाण रात्रि होती है ॥४५४॥

---

१ द. संघंतकाले । २ द. ब. मग्गत्थमाणेज्ज ।

बाहिर-पहादु आदिम-पहम्मि दुमणिस्स आगमण-काले ।
पुव्वुत्त - दिण - णिसाओ, हवंति अहियाओ ऊणाओ ॥४५५॥

अर्थ—सूर्यके बाह्य पथसे आदि पथकी ओर आते समय पूर्वोक्त दिन एवं रात्रि क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक और कम अर्थात् उत्तरोत्तर दिन अधिक तथा रात्रि कम होती है ॥४५५॥

सूर्यके उदय-स्थानोंका निरूपण—

मत्तंड-दिण-गदीए, एक्कं चिय लब्भदे उदय-ठाणं ।
एवं दीवे वेदी - लवणसमुद्देसु आणेज्ज ॥४५६॥

$\frac{१}{१८४}$ । १ । १७६ । $\frac{१}{१८४}$ । १ । ४ । $\frac{१}{१८४}$ । १ । $\frac{१}{१८४}$ ।

अर्थ—सूर्यकी दिनगतिमें एक ही उदयस्थान लब्ध होता है। इसप्रकार द्वीप, वेदी और लवण समुद्रमें उदय-स्थानोंके प्रमाणको ले आना चाहिए ॥४५६॥

ते दीवे तेसट्ठी, छव्वीसंसा य - सत्त - एक्क-हिया ।
एक्को चिय वेदीए, कलाओ चउहत्तरी होंति ॥४५७॥

६३ । $\frac{३३}{१००}$ । १ । $\frac{७४}{१००}$ ।[1]

अर्थ—वे उदय स्थान एक सौ सत्तरसे भाजित छब्बीस भाग अधिक तिरेसठ (६३$\frac{३३}{१००}$) जम्बूद्वीपमें और चौहत्तरकला अधिक केवल एक (१$\frac{७४}{१००}$) उदयस्थान उसकी वेदीके ऊपर है ॥४५७॥

अट्ठारसुत्तर-सयं, लवणसमुद्दम्मि तेत्तिय-कलाओ ।
एदे मिलिदा उदया, तेसीदि-सयाणि अट्ठतास-कला ॥४५८॥

११८ । $\frac{११८}{१००}$ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें उतनी (११८) ही कलाओंसे अधिक एक सौ अठारह (११८) उदयस्थान हैं। ये सब उदयस्थान मिलकर अड़तालीस कलाओंसे अधिक एक सौ तेरासी (१८३) हैं ॥४५८॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपमें सूर्यके चार क्षेत्रका प्रमाण १८० योजन है। जम्बूद्वीपकी वेदीका व्यास ४ योजन है और लवण-समुद्रके चार क्षेत्रका प्रमाण ३३०$\frac{४८}{६१}$=$\frac{२०१३०}{६१}$ योजन है। सूर्यवीथीका प्रमाण $\frac{४८}{६१}$ योजन है और एक वीथीसे दूसरी वीथीके अन्तरालका प्रमाण २ योजन है। यह २+$\frac{४८}{६१}$ अर्थात् $\frac{१७०}{६१}$ योजन सूर्यके प्रतिदिनका गमनक्षेत्र है।

---

१. ब. २१ । $\frac{४८}{१८४}$ ।, ब. ६३ । $\frac{३३}{१००}$ ।

गाथा ४५६ की संदृष्टिके प्रारम्भमें जो $\frac{१}{१६^{२}}$ । १ । १७६ दिये गये हैं उनका अर्थ यह है—

जबकि $\frac{१}{१६^{२}}$ योजन दिनगतिमें १ उदयस्थान होता है तब वेदिकाके व्याससे रहित जम्बूद्वीपके (१८० — ४) १७६ योजनमें कितने उदय स्थान प्राप्त होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर $\frac{१७६}{१}=\frac{१७६}{१}=१७६$ उदय अंश प्राप्त हुए। जिनकी संदृष्टि गाथा ४५७ के नीचे है। गा० ४५६ की संदृष्टिका दूसरा अंश $\frac{१}{१६^{२}}$ । १ । ४ । है। अर्थात् जबकि $\frac{१}{१६^{२}}$ योजन क्षेत्रमें एक उदय स्थान प्राप्त होता है, तब वेदी-व्यास के ४ योजनोंमें कितने उदय स्थान होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{४}{१}=\frac{४}{१}$ अर्थात् $१६^{२}$ उदय अंश प्राप्त होते हैं; जिनकी संदृष्टि भी गाथा ४५७ के नीचे है।

गाथा ४५६ की संदृष्टिका अन्तिम अंश $\frac{१}{१६^{२}}$ । १ । $\frac{३०}{१६^{२}}$ । है। अर्थात् जबकि $\frac{१}{१६^{२}}$ योजन क्षेत्रका १ उदय स्थान है तब लवणसमुद्रके चारक्षेत्र $\frac{३३०}{१६^{२}}$ ($३३०\frac{१६}{१६}$) योजन क्षेत्रमें कितने उदयस्थान होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर $\frac{१\times३३०\times१६}{१६\times१६}=\frac{३०}{१६^{२}}$ अर्थात् $११८\frac{१६}{१६}$ उदय अंश प्राप्त हुए; जिनकी संदृष्टि गाथा ४५८ के नीचे दी गई है।

उपर्युक्त तीनों राशियोंको जोड़नेपर $(६३\frac{१६}{१६}+१\frac{०}{१६}+११८\frac{१६}{१६})=१८२$ उदयस्थान और $\frac{१६}{१६}$ उदय अंश प्राप्त होते हैं। अबकि १ उदय स्थानका $\frac{१}{१६^{२}}$ योजन क्षेत्र होता है तब $\frac{१६}{१६}$ उदय अंशोंका कितना क्षेत्र होगा ? इसप्रकार $(\frac{१\times१६}{१६\times१६})=\frac{१}{१६}$ योजन क्षेत्र प्राप्त होता है। इस क्षेत्रके उदय स्थान निकालने पर $(\frac{१}{१६}\times\frac{१६}{१६}=\frac{१}{१६})$ अर्थात् $१६^{२}$ उदयस्थान प्राप्त होते हैं। इन्हें उपर्युक्त उदय-स्थानोंमें जोड़ देनेपर $(१८२+१६^{२})=१८३\frac{१}{१६}$ अर्थात् ४८ कला अधिक १८३ उदय स्थान प्राप्त होते हैं।

उदय स्थानोंका विशद विवेचन त्रिलोकसार गाथा ३९६ की टीकासे ज्ञातव्य है।

ग्रहोंका निरूपण—

अट्ठासीदि-महाणं, एक्कं चिय होदि एत्थ चारखिदी।
तच्चीगो बीहीओ, पडिवीहिं होंति परिहीओ ॥४५९॥

अर्थ—यहाँ अठासी ग्रहोंका एक ही चारक्षेत्र है, जहाँ प्रत्येक वीथीमें उसके योग्य वीथियाँ और परिधियाँ हैं ॥४५९॥

परिहीसु ते चरंते, तारं कत्तियाजलस्स णिस्सासं।
अण्णं पि पुव्व-भणिदं, काल-वसादो पणट्ठसुत्तएसं ॥४६०॥

गहाणं परूवणा समत्ता।

अर्थ—वे ग्रह इन परिधियोंमें संचार करते हैं। इनका मेरु-पर्वतसे अन्तराल तथा और भी जो पूर्वमें कहा जा चुका है उसका उपदेश कालवश नष्ट हो चुका है ॥४६०॥

ग्रहोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

चन्द्रके पन्द्रह पथोंमेंसे किस-किस पथमें कौन-कौन नक्षत्र संचार करते हैं ?
उनका विवेचन-

ससिणो पण्णरसाणं, वीहीणं ताण होंति मज्झम्मि ।
अट्ठ चिय वीहीओ, अट्ठावीसाण रिक्खाणं ॥४६१॥

अर्थ—चन्द्रकी पन्द्रह गलियोंके मध्यमें अट्ठाईस नक्षत्रोंका आठ ही गलियाँ होती हैं ॥४६१॥

अज अभिजिप्पहुदीणं, साही पुव्वाओ उत्तराओ वि ।
इय बारस रिक्खाणि, चंदस्स चरंति पढम - पहे ॥४६२॥

अर्थ—अभिजित् आदि सात, स्वाति, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी ये बारह नक्षत्र चन्द्रके प्रथम पथमें संचार करते हैं ॥४६२॥

तदिए पुणव्वसू मघ, सत्तमए रोहणी य चित्ताओ ।
छट्ठम्मि कित्तियाओ, तह य विसाहाओ अट्ठमओ ॥४६३॥

अर्थ—चन्द्रके तृतीय पथमें पुनर्वसु और मघा, सातवेंमें रोहिणी और चित्रा, छठेमें कृत्तिका तथा आठवें पथमें विशाखा नक्षत्र संचार करता है ॥४६३॥

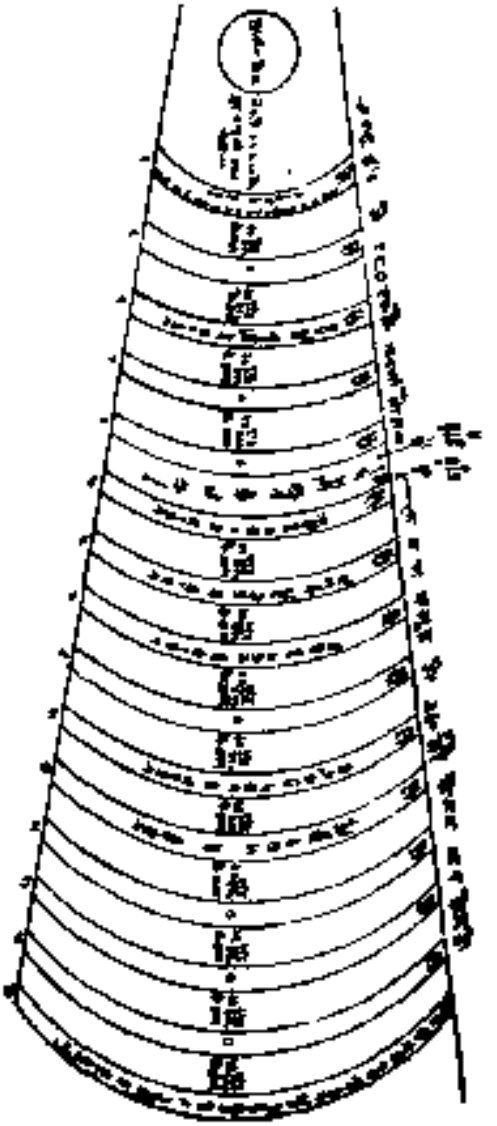
णवमे अणुराहाओ, जेट्ठा एक्कारसम्मि पण्णरसे ।
हत्थो मूलादि - तियं, मिगसिर-दुग-पुस्स-अस्सिलेसा ॥४६४॥

अर्थ—नवमें पथमें अनुराधा, ग्यारहवेंमें ज्येष्ठा तथा पन्द्रहवें मार्गमें हस्त, मूलादि तीन (मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा), मृगशीर्षा, आर्द्रा, पुष्य और आश्लेषा ये आठ नक्षत्र संचार करते हैं ॥४६४॥

विशेषार्थ—चन्द्रकी १५ गलियाँ हैं। उनमेंसे ८ गलियोंमें २८ नक्षत्र संचार करते हैं। यथा—

(१) चन्द्रकी प्रथम वीथीमें-अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरणी, स्वाति, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी। (२) तृतीय वीथीमें—

पुनर्वसु और पुष्य। (३) छठी वीथीमें-आश्लेषा। (४) सातवीं वीथीमें—मघा और चित्रा। (५) आठवींमें—विशाखा। (६) नवमींमें अनुराधा। (७) ग्यारहवींमें—ज्येष्ठा तथा (८) पन्द्रहवीं (अन्तिम) वीथीमें—हस्त, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुष्य और आश्लेषा ये आठ नक्षत्र संचार करते हैं। यथा—



प्रत्येक नक्षत्रके ताराओंकी संख्या—

ताराओ कित्तियादिसु, छ-पंच-ति-एक्क-छक्क-तिय-छक्का ।
अउ-बुग-बुग - पंचेक्का, एक्क-अउ-छ-ति-अय-अट्ठक्का य ॥४६५॥

छउ-तिय-तिय-पंचा तह, एक्कारस-बुदं तयं दुग - दुगाणि ।
बत्तीस पंच तिण्णि य, कमेण णिद्दिट्ठ - संखाओ ॥४६६॥

६ । ५ । ३ । १ । ६ । ३ । ६ । ४ । २ । २ । ५ । १ । १ । ४ । ६ । ३ ।
१ । ४ । ४ । ३ । ३ । ५ । १११ । २ । २ । ३२ । ५ । ३ ।

अर्थ—छह, पाँच, तीन, एक, छह, तीन, छह, चार, दो, दो, पाँच, एक, एक, चार, छह, तीन, नौ, चार, चार, तीन, तीन, पाँच, एक सौ ग्यारह, दो, दो, बत्तीस, पाँच और तीन, यह क्रमशः उन कृत्तिकादिक नक्षत्रोंके ताराओंकी संख्या कही गई है ॥४६५-४६६॥

प्रत्येक ताराका आकार—

जोयणय-सयलउड्ढो, कुरंगसिर-दीव-तोरणाणं च ।
आदवधारण - हम्मिय - जोमुत्तं सरजुगाणं च ॥४६७॥

हत्थुप्पल-दीवाणं, अहियरणं हार-वीण-सिंगा य ।
विच्छुय-दुक्कयवावी, केसरि - गयसीस आगारा ॥४६८॥

मुरयं पतंतपक्खी, सेणा गय-पुव्व-अवर-भत्ता य ।
आसा हयसिर-सरिसा, णं चुल्लसी कित्तियादीणं ॥४६९॥

अर्थ—कृत्तिका आदि नक्षत्रों (ताराओं) के आकार क्रमशः १बोजना, २आधोकी उष्ट्रिका, ३हिरणका सिर, ४दीप, ५तोरण, ६आतपधारण (छत्र), ७बल्मीक, ८जोमुत्र, ९सरयुग, १०हस्त, ११अत्पल, १२दीप, १३अधिकरण, १४हार, १५वीणा, १६सींग, १७बिच्छू, १८दुष्कृतवापी, १९सिंहका सिर, २०हाथीका सिर, २१मुरज, २२पतत्पक्षी, २३सेना, २४हाथीका पूर्व शरीर, २५हाथीका अपर शरीर, २६नौका, २७घोड़ेका सिर और २८चूल्हाके सदृश हैं ॥४६७-४६९॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

नक्षत्रोंके नाम, ताराओंकी संख्या एवं आकार—

क्रमांक	नक्षत्र	ताराओंकी संख्या	ताराओंके आकार	क्रमांक	नक्षत्र	ताराओंकी संख्या	ताराओंके आकार
१.	कृत्तिका	६	बीजना सदृश	१५.	अनुराधा	६	बीणा सदृश
२.	रोहिणी	५	गाड़ीकी उद्धिका	१६.	ज्येष्ठा	३	सींग सदृश
३.	मृगशीर्षा	३	हिरणके सिर सदृश	१७.	मूल	६	बिच्छू सदृश
४.	आर्द्रा	१	दीप सदृश	१८.	पूर्वाषाढ़ा	४	दुष्कृत वापी सदृश
५.	पुनर्वसु	६	तोरण सदृश	१९.	उत्तराषाढ़ा	४	सिंहके सिर सदृश
६.	पुष्य	३	छत्र सदृश	२०.	अभिजित्	३	हाथीके सिर सदृश
७.	आश्लेषा	६	वल्मीक (बांबी) ,,	२१.	श्रवण	३	मृदङ्ग (मृदङ्ग) ,,
८.	मघा	४	गोमूत्र सदृश	२२.	धनिष्ठा	५	गिरते हुए पक्षी ,,
९.	पूर्वा फाल्गुनी	२	सरयुग ,,	२३.	शतभिषा	१११	सेना सदृश
१०.	उत्तरा ,,	२	हाथ ,,	२४.	पूर्वाभाद्रपद	२	हाथीके पूर्व शरीर ,,
११.	हस्त	५	उत्पल (नीलकमल) ,,	२५.	उत्तराभाद्रपद	२	हाथीके अपर शरीर ,,
१२.	चित्रा	१	दीप सदृश	२६.	रेवती	३२	नौका सदृश
१३.	स्वाति	१	अधिकरण ,,	२७.	अश्विनी	५	घोड़ेके सिर सदृश
१४.	विशाखा	५	हार ,,	२८.	भरणी	३	चूल्हेके सदृश

कृत्तिका आदि नक्षत्रोंकी परिवार ताराएँ और सकल ताराएँ—

छिय तिय तारा-संखा, छव्वारसं ठाविदूण रिक्खाणं ।
पत्तेक्कं वुच्चिदव्वं, एक्करस - सवेहि एक्करसे ॥४७०॥

१११११ ।

होंति परिवार-तारा, मूलं मिस्साओ सयल-ताराओ ।
तिविहाइं रिक्खाइं, मज्झिम - वर - अवर-भेदेहिं ॥४७१॥

६६६६ । ५५५५ । ३३३३ । ११११ । ६६६६ । ३३३३ । ६६६६ । ४४४४ ।
२२२२ । २२२२ । ५५५५ । ११११ । ११११ । ४४४४ । ६६६६ ।
३३३३ । ९९९९ । ४४४४ । ४४४४ । ३३३३ । ३३३३ ।
५५५५ । १२३३२१ । २२२२ । २२२२ ।
३५५५२ । ५५५५ । ३३३३ ।
६६७२ । ५५६० । ३३३६ । १११२ । ६६७२ । ३३३६ । ६६७२ । ४४४८ ।
२२२४ । २२२४ । ५५६० । १११२ । १११२ । ४४४८ । ६६७२ ।
३३३६ । १०००८ । ४४४८ । ४४४८ । ३३३६ । ३३३६ ।
५५६० । १२३४३२ । २२२४ । २२२४ ।
३५५८४ । ५५६० । ३३३६ ।

अर्थ—अपने-अपने सब ताराओंकी संख्याको रखकर उसे ग्यारह सौ ग्यारह (१११) से गुणा करनेपर प्रत्येक नक्षत्रके परिवार-ताराओंका प्रमाण प्राप्त होता है। इसमें मूल ताराओंका प्रमाण मिला देनेपर समस्त ताराओंका प्रमाण होता है। मध्यम, उत्कृष्ट और जघन्यके भेदसे नक्षत्र तीन प्रकारके होते हैं ॥४७०-४७१॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

ताराओं का प्रमाण—

क्रमांक	नक्षत्र	परिवार ताराओं की संख्या	मूल ताराओं की संख्या	प्रत्येक नक्षत्र की सम्पूर्ण ताराएं	क्रमांक	नक्षत्र	परिवार ताराओं की संख्या	मूल ताराओं की संख्या	प्रत्येक नक्षत्र की सम्पूर्ण ताराएं
१.	कृत्तिका	१११११×६=६६६६+	६=	६६७२	१५.	अनुराधा	१११११×६=६६६६+	६=	६६७२
२.	रोहिणी	१११११×५=५५५५+	५=	५५६०	१६.	ज्येष्ठा	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६
३.	मृग०	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६	१७.	मूल	१११११×९=९९९९+	९=	१०००
४.	आर्द्रा	११११११×१=१११११+	१=	११११२	१८.	पूर्वाषाढा	१११११×४=४४४४+	४=	४४४८
५.	पुनर्वसु	१११११×६=६६६६+	६=	६६७२	१९.	उ० षाढा	१११११×४=४४४४+	४=	४४४८
६.	पुष्य	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६	२०.	अभि०	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६
७.	आश्लेषा	१११११×६=६६६६+	६=	६६७२	२१.	श्रवण	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६
८.	मघा	१११११×४=४४४४+	४=	४४४८	२२.	धनिष्ठा	१११११×५=५५५५+	५=	५५६०
९.	पू० फा०	१११११×२=२२२२+	२=	२२२४	२३.	शतभि०	१११११×१११११= १२३४२१+	१११=	१२३४३२
१०.	उ० फा०	१११११×२=२२२२+	२=	२२२४	२४.	पू० भा०	१११११×२=२२२२+	२=	२२२४
११.	हस्त	१११११×५=५५५५+	५=	५५६०	२५.	उ० भा०	१११११×२=२२२२+	२=	२२२४
१२.	चित्रा	१११११×१=११११+	१=	११११२	२६.	रेवती	१११११×३२=३५५५२+	३२=	३५५८४
१३.	स्वाति	१११११×१=११११+	१=	११११२	२७.	अश्विनी	१११११×५=५५५५+	५=	५५६०
१४.	विशाखा	१११११×४=४४४४+	४=	४४४८	२८.	भरणी	१११११×३=३३३३+	३=	३३३६

जघन्य, उत्कृष्ट और मध्यम नक्षत्रोंके नाम तथा इन तीनोंके गगन-खण्डोंका प्रमाण—

अवराओ जेट्ठद्दा, सदभिस-भरणीओ सादि-असिलेस्सा ।
होंति वराओ पुणव्वसु ति-उत्तरा रोहणि-विसाहाओ ॥४७२॥

सेसाओ मज्झिमाओ, जहण्ण-भे पंच-उत्तर-सहस्सं ।
तं चिय दुगुणं तिगुणं, मज्झिम-वर-भेसु णभ-खण्डा ॥४७३॥

१००५ । २०१० । ३०१५ ।

अर्थ—ज्येष्ठा, आर्द्रा, शतभिषक्, भरणी, स्वाति और आश्लेषा, ये छह जघन्य; पुनर्वसु, तीन उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तरा भाद्रपद), रोहिणी और विशाखा ये उत्कृष्ट; एवं शेष (अश्विनी, कृत्तिका, मृगशीर्षा, पुष्य, मघा, हस्त, चित्रा, अनुराधा, पूर्वा फा०, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वा भाद्रपद, मूल, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती ये) नक्षत्र मध्यम हैं। इनमेंसे (प्रत्येक) जघन्य नक्षत्रके एक हजार पाँच (१००५), (प्रत्येक) मध्यम नक्षत्रके इससे दुगुने (१००५×२= २०१०) और प्रत्येक उत्कृष्ट नक्षत्रके इससे तिगुने (१००५×३ = ३०१५) गगनखण्ड होते हैं ॥४७२-४७३॥

अभिजित् नक्षत्रके गगनखण्ड—

अभिजिस्स छस्सयाणि, तीस-जुदाणि हवंति णभ-खंडा ।
एवं णक्खत्ताणं, सीम - विभागं वियाणेहि ॥४७४॥

६३० ।

अर्थ—अभिजित् नक्षत्रके छह सौ तीस (६३०) गगनखण्ड होते हैं। इसप्रकार नभ-खण्डोंसे इन नक्षत्रोंकी सीमाका विभाग जानना चाहिए ॥४७४॥

एक मुहूर्तके गगनखण्ड—

पत्तेक्कं रिक्खाणि, सव्वाणि मुहुत्तमेत्त - कालेणं ।
संघंति गयणखंडे, पणतीसत्तारस - सयाणि ॥४७५॥

१८३५ ।

अर्थ—(सब नक्षत्रोंमेंसे) प्रत्येक नक्षत्र एक मुहूर्त कालमें अठारह सौ पैंतीस (१८३५) गगनखण्ड साधता है ॥४७५॥

सर्व गगनखण्डोंका प्रमाण और उनका आकार—

दो-ससि-गयखत्ताणं, परिमाणं भणमि गयणखंडेसु ।
लक्खं णव य सहस्सा, अट्ठ - सया काहलायारा ॥४७६॥

अर्थ—दो चन्द्रों सम्बन्धी नक्षत्रोंके गगनखण्डोंका प्रमाण कहता हूँ । ये गगनखण्ड काहला (वाद्यविशेष) के आकारवाले हैं । इनका कुल प्रमाण एक लाख नौ हजार आठ सौ है ॥४७६॥

विशेषार्थ—अवन्य नक्षत्र ६ और प्रत्येकके गगनखण्ड १००५ हैं अतः १००५×६= ६०३० । मध्यम नक्षत्र १५ और प्रत्येक के गगनखण्ड २०१० हैं अतः २०१०×१५=३०१५० । उत्तम नक्षत्र ६ और प्रत्येकके गगनखण्ड ३०१५ हैं अतः ३०१५×६=१८०९० । अभिजित् नक्षत्रके ग० खं० ६३० हैं । इसप्रकार एक चन्द्र सम्बन्धी सर्व गगनखण्ड (६०३०+३०१५०+१८०९०+ ६३०)=५४९०० है । तथा दो चन्द्रों सम्बन्धी सर्व गगनखण्डोंका प्रमाण (५४९००×२) =१०९८०० है ।

सर्व गगनखण्डोंका अतिक्रमण काल—

रिक्खाण मुहुत्त-गदी, होदि पमाणं फलं मुहुत्तं च ।
इच्छा णिस्सेसाइं, मिलिदाइं गयणखंडाणि ॥४७७॥

१८३५ । १०९८००० ।

तेरासियम्मि लद्धं, णिय णिय परिहीसु सो भमण-कालो ।
तम्माणं उणसट्ठी, होंति मुहुत्ताणि अदिरेगो ॥४७८॥

५९ ।

अदिरेगस्स पमाणं, तिण्णि सयाणि हवंति सत्त-कला ।
तिसएहि सत्तसट्ठी - संजुत्तेहिं विभत्ताणि ॥४७९॥

$\frac{300}{367}$ ।

अर्थ—[जबकि नक्षत्रोंको १८३५ गगनखण्डोंके भ्रमणमें एक मुहूर्त लगता है, तब १०९८०० ग० खं० के भ्रमणमें कितना काल लगेगा ? इसप्रकार करनेपर] नक्षत्रोंकी मुहूर्त काल-परिमित गति (१८३५) प्रमाण-राशि, एक मुहूर्त फल-राशि और सब मिलकर (१०९८००) गगन-खण्ड इच्छाराशि होती है । इसप्रकार त्रैराशिक करने पर जो लब्ध प्राप्त हो उतना अपनी-अपनी परिधियों का भ्रमण-काल है । उसका प्रमाण यहाँ कुछ अधिक उनसठ (५९) मुहूर्त है । इस अधिक का प्रमाण तीन सौ सड़सठसे विभक्त तीन सौ सात कला ($\frac{300}{367}$) है ॥४७७-४७९॥

विशेषार्थ—प्रत्येक परिधिमें १०९८०० गगनखण्डों पर भ्रमण करनेमें नक्षत्रों को ($\frac{१८३१५०८९ \times ६२}{१०९८००}$ =) $५९\frac{३२९}{३४३}$ मुहूर्त लगते हैं।

चन्द्रकी प्रथम वीथी में स्थित १२ नक्षत्रोंका एक मुहूर्तका गमन क्षेत्र—

सवणादि-अट्ठ-भाणि, अभिजिस्सादीओ उत्तरा-पुव्वा ।
वच्चंति मुहुत्तेणं, बावण्ण-सयाणि अहिय-पणसट्ठी ॥४८०॥

५२६५ ।

अहिय-पमाणमेसा, अट्ठारस-सहस्स-दु-सय-तेसट्ठी ।
इगिवीस-सहस्साणि, णव - सय - सट्ठी हरे हारो ॥४८१॥

$\frac{१८२६३}{२१९६०}$ ।

अर्थ - श्रवणादिक आठ, अभिजित्, स्वाति, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र एक मुहूर्तमें पाँच हजार दो सौ पैंसठ योजन से अधिक गमन करते हैं। यहाँ अधिकता का प्रमाण इक्कीस हजार नौ सौ साठ भागोंमेंसे अठारह हजार दो सौ तिरेसठ भाग प्रमाण है ॥४८०-४८१॥

विशेषार्थ - चन्द्रकी प्रथम वीथीमें श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पू० भा०, उ० भा०, रेवती, अश्विनी, भरणी, अभिजित्, स्वाति, पू० फा० और उ० फा० ये १२ नक्षत्र संचार करते हैं। प्रथम वीथी की परिधि का प्रमाण ३१५०८९ योजन है। जबकि नक्षत्र $५९\frac{३२९}{३४३} = \frac{२०२६०}{३४३}$ मुहूर्तोंमें ३१५०८९ योजन संचार करते हैं, तब एक मुहूर्तमें कितने योजन गमन करेंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर $\left(\frac{३१५०८९ \times ३४३}{२०२६०}\right) = ५२६५\frac{३२९}{२०२६०}$ योजन प्राप्त होते हैं। यही चन्द्र की प्रथम वीथी में नक्षत्रों के एक मुहूर्त के गमन क्षेत्र का प्रमाण है।

चन्द्र की तीसरी वीथी स्थित नक्षत्रों का गमन क्षेत्र—

वच्चंति मुहुत्तेणं, पुणव्वसु[1]-मघा ति-सत्त-दुग-पंचा ।
अंक-कमे जोयणया, तिय-णभ-चउ-एक्क-एक्क-कला ॥४८२॥

५२७३ । $\frac{११४०३}{२१९६०}$ ।

अर्थ—पुनर्वसु और मघा नक्षत्र अंक-क्रमसे तीन, सात, दो और पाँच अर्थात् पाँच हजार दो सौ तिहत्तर योजन और ग्यारह हजार चार सौ तीन भाग अधिक एक मुहूर्तमें गमन करते हैं ॥४८२॥

---

१. द. ब. क. ज. पुव्वाउ ।

विशेषार्थ—पुनर्वसु और मघा नक्षत्र चन्द्रकी तृतीय वीथीमें भ्रमण करते हैं। इस वीथीकी परिधिका प्रमाण ३१५५४६$\frac{६}{६१}$ योजन है। किन्तु पुनर्वसु और मघाका एक मुहूर्त का गमन क्षेत्र निकालते समय अधिकका प्रमाण ($\frac{३}{६१}$) छोड़कर त्रैराशिक किया गया है।

जिसका प्रमाण ($\frac{३१५५४६ \times २ \times ६२}{३६६}$) = ५२७$\frac{३३}{६१}$ योजन प्राप्त होता है।

नोट—आगे शेष छह गलियोंकी परिधिके प्रमाणमें से भी अधिक का प्रमाण छोड़ कर गमन क्षेत्र प्राप्त किया गया है।

कृत्तिका नक्षत्रका एक मुहूर्तका गमन-क्षेत्र—

बावण्ण - सया पणसीदि - उत्तरा सत्ततीस अंसा य।
चउणउदि[1]-पण-सय-हिदा, जादि मुहुत्तेण कित्तिया रिक्खा ॥४८३॥

५२८५ । $\frac{३७}{५९१}$ ।

अर्थ—कृत्तिका नक्षत्र एक मुहूर्तमें पाँच हजार दो सौ पचासी योजन और पाँच सौ चौरानबेसे भाजित सैंतीस भाग अधिक गमन करता है ॥४८३॥

विशेषार्थ—कृत्तिका नक्षत्र चन्द्रकी छठी वीथीमें भ्रमण करता है। इस वीथीकी परिधि का प्रमाण ३१६२४०$\frac{६}{६१}$ योजन है। इसमें कृत्तिका का एक मुहूर्तका गमनक्षेत्र ($\frac{३१६२४० \times २ \times ६२}{३६६}$) = ५२८५८$\frac{३७}{५९१}$ योजन प्राप्त होता है।

चित्रा और रोहिणीका एक मुहूर्तका गमन-क्षेत्र—

पंच-सहस्सा दु - सया, अट्ठासीदी य जोयणा अहिया।
चित्ताओ रोहिणीओ, जंति मुहुत्तेण पत्तेक्कं ॥४८४॥

अहिरेगस्स पमाणं, कलाओ सग-सत्त-ति-णह-दुगमेत्ता।
अंक - कमे ताह हारो, छ-छक्क-एक्क-एक्क-दुग-माओ ॥४८५॥

५२८८ । $\frac{२११२}{२११६}$ ।

अर्थ—चित्रा और रोहिणीमेंसे प्रत्येक नक्षत्र एक मुहूर्तमें पाँच हजार दो सौ अठासी योजनसे अधिक जाता है। यहाँ अधिकताका प्रमाण अंक-क्रमसे शून्य, छह, नौ, एक और दो अर्थात् इक्कीस हजार नौ सौ साठसे भाजित बीस हजार तीन सौ सत्तर कला है ॥४८४-४८५॥

---

१. द. ब. क. ज. चउणउदीपमय।

विशेषार्थ—चित्रा और रोहिणी नक्षत्र चन्द्रके सातवें पथमें भ्रमण करते हैं। इस पथ की परिधिका प्रमाण ३१६४७१$\frac{१२}{६६}$ योजन है। इसमें प्रत्येकका एक मुहूर्तका गमन क्षेत्र ($\frac{३१६४७१\frac{१२}{६६}}{१८३०}$) =५२८८$\frac{३०}{६६}$ योजन प्राप्त होता है।

विशाखा नक्षत्रका एक मुहूर्तका गमन-क्षेत्र—

बावण्ण-सया बाणउदि जोयणा वच्चदे विसाहा य।
सोलस-सहस्स-णव-सय - सगदाल - कला मुहुत्तेणं ॥४८६॥

५२९२ । $\frac{१६९४७}{२१९६०}$।

अर्थ—विशाखा नक्षत्र एक मुहूर्तमें पांच हजार दो सौ बानवें योजन और सोलह हजार नो सौ सैंतालीस कला अधिक गमन करता है ॥४८६॥

विशेषार्थ—विशाखा नक्षत्र चन्द्रके आठवें पथमें भ्रमण करता है। इस पथकी परिधिका प्रमाण ३१६७०१$\frac{३०}{६६}$ योजन है। इस परिधिमें विशाखाके एक मुहूर्तके गमन-क्षेत्रका प्रमाण ($\frac{३१६७०१\frac{३०}{६६}}{१८३०}$)=५२९२$\frac{१४७}{२१९६०}$ योजन प्राप्त होता है।

अनुराधा नक्षत्रका एक मुहूर्तका गमन क्षेत्र—

तेवण्ण-सयाणि जोयणाणि वच्चदि मुहुत्तमेत्ताणि।
चउवण्ण चउ-सया दस-सहस्स अंसा य अणुराहा ॥४८७॥

५३०० । $\frac{१०४००}{२१९६०}$।

अर्थ—अनुराधा नक्षत्र एक मुहूर्तमें पांच हजार तीन सौ योजन और दस हजार चार सौ चौवन भाग अधिक गमन करता है ॥४८७॥

विशेषार्थ—अनुराधा नक्षत्र चन्द्रके दसवें पथमें भ्रमण करता है। इस पथकी परिधिका प्रमाण ३१७१६२$\frac{१२}{६६}$ योजन है। इस परिधिमें अनुराधाके एक मुहूर्तके गमन-क्षेत्रका प्रमाण ($\frac{३१७१६२\frac{१२}{६६}}{१८३०}$)=५३००$\frac{१०४००}{२१९६०}$ योजन प्राप्त होता है।

ज्येष्ठा नक्षत्रका एक मुहूर्तका गमन-क्षेत्र—

तेवण्ण-सयाणि जोयणाणि चत्तारि वच्चदि जेट्ठा।
अंसा सत्त - सहस्सा, चउवीस - जुदा मुहुत्तेणं ॥४८८॥

५३०४ । $\frac{७०२४}{२१९६०}$।

अर्थ—ज्येष्ठा नक्षत्र एक मुहूर्तमें पांच हजार तीन सौ चार योजन और सात हजार चौबीस भाग अधिक गमन करता है ॥४८८॥

विशेषार्थ—ज्येष्ठा नक्षत्र चन्द्रके ग्यारहवें पथमें भ्रमण करता है। इस पथकी परिधिका प्रमाण ३१७३९२$\frac{१}{६}$ योजन है। इस परिधिमें ज्येष्ठाके एक मुहूर्तके गमन-क्षेत्रका प्रमाण $\left(\frac{३१७३९२\frac{१}{६}}{१८३०}\right)$ = ५३०४$\frac{२०३५}{३६६०}$ योजन प्राप्त होता है।

पुष्यादि ८ नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येकके गमन-क्षेत्रका प्रमाण—

पुस्सो अस्सिलेसाओ, पुव्वासाढाओ उत्तरासढा।
हत्थो मिगसिर - मूला, अद्दाओ अट्ठ पत्तेक्कं ॥४८९॥
तेवण्ण-सया उणवीस[1]-जोयणा अंति इगि-मुहुत्तेणं।
अट्ठारसउदी सत्त-सय, पण्णरस - सहस्स अंसा य ॥४९०॥

५३१९ । $\frac{१७९८}{१९८३}$ ।

अर्थ—पुष्य, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, हस्त, मृगशीर्षा, मूल और आर्द्रा, इन आठ नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येक एक मुहूर्तमें पाँच हजार तीन सौ उन्नीस योजन और पन्द्रह हजार सौ अट्ठानवें भाग अधिक गमन करते हैं ॥४८९–४९०॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त आठों नक्षत्र चन्द्रके पन्द्रहवें (अन्तिम) पथमें भ्रमण करते हैं। इस बाह्य पथकी परिधिका प्रमाण ३१८३१३$\frac{१}{६}$ योजन है। इस परिधिमें पुष्य आदि प्रत्येक नक्षत्रके एक मुहूर्तके गमन-क्षेत्रका प्रमाण $\left(\frac{३१८३१३\frac{१}{६}}{१८३०}\right)$ = ५३१९$\frac{१७९८}{१९८३}$ योजन है, किन्तु गाथामें ५३१९$\frac{२७}{३६६०}$ योजन दर्शाया गया है।

नक्षत्रोंके मण्डल क्षेत्रोंका प्रमाण—

मंडल-खेत्त-पमाणं, अहण्ण-मे तीस जोयणा होंति।
तं चिय दुगुणं तिगुणं, मज्झिम-वर-भेसु पत्तेक्कं ॥४९१॥

३० । ६० । ९० ।

अर्थ—अघन्य नक्षत्रोंके मण्डलक्षेत्रका प्रमाण तीस (३०) योजन और इससे दूना एवं तिगुना यही प्रमाण क्रमशः मध्यम (नक्षत्रोंका ६०) और उत्कृष्ट (का ९० यो०) नक्षत्रोंमेंसे प्रत्येकका है ॥४९१॥

अट्ठारस जोयणया, हवेदि अभिजिस्स मंडलं खेत्तं।
सट्ठिय-सह-भेत्ताओ, चिय-चिय-ताराण मंडल-विदीओ ॥४९२॥

१८ ।

---

१. द. उणुवण्णसय जोयणा, ब. उण जोयणा।

अर्थ—अभिजित् नक्षत्रका मण्डल क्षेत्र अठारह योजन प्रमाण है और अपने-अपने ताराओं का मण्डलक्षेत्र स्व-स्थित आकाश प्रमाण ही है ॥४९२॥

स्वाति आदि पाँच नक्षत्रोंकी अवस्थिति—

उड्ढाओ दक्खिणाए, उत्तर-मज्झेसु सादि-भरणीओ ।
मूलं अभिजी-कित्तिय-रिक्खाओ चरंति णिय-मग्गे ॥४९३॥

अर्थ—स्वाति, भरणी, मूल, अभिजित् और कृत्तिका, ये पाँच नक्षत्र अपने मार्गमें क्रमशः ऊर्ध्व, अधः, दक्षिण, उत्तर और मध्यमें संचार करते हैं ॥४९३॥

विशेषार्थ—चन्द्रके प्रथम पथमें स्थित स्वाति एवं भरणी नक्षत्र क्रमशः अपनी वीथीके ऊर्ध्व और अधोभागमें, पन्द्रहवें पथमें स्थित मूल नक्षत्र दक्षिण दिशामें प्रथम पथमें स्थित अभिजित् नक्षत्र उत्तर दिशामें और छठे पथमें स्थित कृत्तिका नक्षत्र अपने पथके मध्यभागमें संचार करते हैं ।

एदाणि रिक्खाणि, णिय-णिय-मग्गेसु पुव्व-भणिदेसुं ।
णिच्चं चरंति मंदर - सेलस्स पदाहिण - कमेणं ॥४९४॥

अर्थ—ये नक्षत्र मन्दर-पर्वतके प्रदक्षिण क्रमसे अपने-अपने पूर्वोक्त मार्गोंमें नित्य ही संचार करते हैं ॥४९४॥

कृत्तिका आदि नक्षत्रोंके अस्त एवं उदय आदिकी स्थिति—

एवं मघा मज्झण्हे, कित्तिय-रिक्खस्स अत्थमण-समए ।
उवए अणुराहाओ, एवं जाणेज्ज सेसाणि ॥४९५॥

एवं णक्खत्ताणं परूवणा समत्ता ।

अर्थ—कृत्तिका नक्षत्रके अस्तमन कालमें मघा मध्याह्नको और अनुराधा उदयको प्राप्त होता है । इसीप्रकार शेष नक्षत्रोंके उदयादिकको भी जानना चाहिए ॥४९५॥

विशेषार्थ—गाथामें कृत्तिकाके अस्त होते मघाका मध्याह्न और अनुराधाका उदय होना कहा है । कृत्तिकासे मघा ८ वाँ नक्षत्र है और मघासे अनुराधा ८ वाँ है । इससे यह ध्वनित होता है कि जिस समय कोई विवक्षित नक्षत्र अस्त होगा, उस समय उससे आठवाँ नक्षत्र मध्य को और उससे भी ८ वाँ नक्षत्र उदयको प्राप्त होगा । शेष नक्षत्रोंके उदय-अस्तादि की व्यवस्था भी इसीप्रकार जानने को कही गयी है । जो इसप्रकार है—

जब कृत्तिकाका अस्त तब मघा का मध्याह्न और अनु० का उदय।
" रोहिणीका " " पू० फा० " " ज्येष्ठा " ।
" मृगशिराका " " उ० फा० " " मूल " ।
" आर्द्रिका " " हस्त " " पू० षा० " ।
" पुनर्वसुका " " चित्रा " " उ० षा० " ।
" पुष्यका " " स्वाति " " अभिजित् " ।
" आश्लेषाका " " विशाखा " " श्रवण " ।
" मघाका " " अनुराधा " " धनिष्ठा " ।
" पू० फा०का " " ज्येष्ठा " " शत० " ।
" उ० फा०का " " मूल " " पू० भा० " ।
" हस्तका " " पू० षा० " " उ० भा० " ।
" चित्राका " " उ० षा० " " रेवती " ।
" स्वातिका " " अभिजित् " " अश्विनी " ।
" विशाखाका " " श्रवण " " भरणी " ।

इत्यादि—

इसप्रकार नक्षत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

जम्बूद्वीपस्थ चर एवं अचर (ध्रुव) ताराओंका निरूपण—

दुविहा जरअचराओ, पइण्ण-ताराओ ताण चर-संखा।
कोडाकोडी - लक्खं, तेत्तीस-सहस्स-णव-सया पण्णं ॥४९६॥

१३३९५०००००००००००००० ।

अर्थ—प्रकीर्णक तारे चर और अचर रूपसे दो प्रकारके होते हैं। इनमें चर ताराओंकी संख्या एक लाख तेंतीस हजार नौ सौ पचास (१३३९५०) कोड़ाकोड़ी है ॥४९६॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपस्थ क्षेत्र-कुलाचलादिकी कुल शलाकाएँ (१, २, ४, ८, १६, ३२, ६४, ३२, १६, ८, ४, २, १=) १९० हैं। जम्बूद्वीपस्थ दो चन्द्रोंसे सम्बन्धित १३३९५० कोड़ाकोड़ी ताराओंमें १९० का भाग देनेपर ($\frac{१३३९५० \text{ कोड़ाकोड़ी}}{१९०}$) =७०५ कोड़ाकोड़ी लब्ध प्राप्त होता है। इसको अपनी-अपनी शलाकाओंसे गुणा करनेपर तत् तत् क्षेत्र एवं पर्वत सम्बन्धी ताराओंका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

क्र०	क्षेत्र और पर्वत के नाम	दोनों चन्द्र सम्बन्धी ताराओंकी संख्या	क्र०	क्षेत्र और पर्वत के नाम	दोनों चन्द्र सम्बन्धी ताराओंकी संख्या
१.	भरतक्षेत्र	७०५ कोड़ाकोड़ी	८.	नील पर्वत	२२५६० कोड़ाकोड़ी
२.	हिमवत् पर्वत	१४१० ,,	९.	रम्यक क्षेत्र	११२८० ,,
३.	हैमवत क्षेत्र	२८२० ,,	१०.	रुक्मि पर्वत	५६४० ,,
४.	महाहिमवत् प०	५६४० ,,	११.	हैरण्यवत क्षेत्र	२८२० ,,
५.	हरिक्षेत्र	११२८० ,,	१२.	शिखरिन् प०	१४१० ,,
६.	निषध पर्वत	२२५६० ,,	१३.	ऐरावत क्षेत्र	७०५ ,,
७.	विदेह क्षेत्र	४५१२० ,,			

छत्तीस अवर - तारा, जंबूवीवस्स चउ-दिसा-भाए ।
एवाओ दो - ससिणो, परिवारा अद्धमेक्कम्मि ॥४९७॥

३६ । ६६९७५०००००००००००००० ।

अर्थ—जम्बूद्वीपके चारों दिशा-भागोंमें छत्तीस अवर (ध्रुव) तारा स्थित हैं। ये (१३३९५० कोड़ाकोड़ी) दो चन्द्रोंके परिवार-तारे हैं। इनसे आधे (६६९७५ कोड़ाकोड़ी) एक चन्द्रके परिवार-तारे समझना चाहिए ॥४९७॥

चन्द्रसे तारा पर्यंत ज्योतिषी देवोंके गमन-विशेष—

रिक्ख-गमणादु अहियं, गमणं जाणेज्ज सयल-ताराणं ।
तण्णं णाम - प्पहुदिसु, उवएसो संपइ पणट्ठो ॥४९८॥

अर्थ—सब ताराओंका गमन नक्षत्रोंके गमनसे अधिक जानना चाहिए। इनके नामादिकका उपदेश इस समय नष्ट हो चुका है ॥४९८॥

अंकावो मत्तंडो, मत्तंडादो गहा गहादिंतो ।
रिक्खा रिक्खादिंतो, ताराओ होंति सिग्घ - गदी ॥४९९॥

१ एवं ताराणं पण्णवणं समत्तं ।

अर्थ—चन्द्रसे सूर्य, सूर्यसे ग्रह, ग्रहोंसे नक्षत्र और नक्षत्रोंसे भी तारा शीघ्र गमन करनेवाले होते हैं ॥४९९॥

इस प्रकार ताराओंका कथन समाप्त हुआ।

सूर्य एवं चन्द्रके अयन और उनमें दिन-रात्रियोंकी संख्या—

अयणाणि य रवि-ससिणो, सग[1]-सग-खेत्ते गहा य के[2] चारी।
णत्थि अयणाणि भणिदे, णियमा ताराण एमेव ॥५००॥

अर्थ—सूर्य, चन्द्र और जो अपने-अपने क्षेत्रमें संचार करने वाले ग्रह हैं उनके अयन होते हैं। नक्षत्र-समूह और ताराओं के इसप्रकार अयनोंका नियम नहीं है ॥५००॥

रवि-अयणे एक्केक्कं, तेसीदि-सया हवंति दिण-रत्ती।
तेरस विया वि चंदे, सत्तट्ठी - भाग - चउचालं ॥५०१॥

१८३। १३। ४४।

अर्थ—सूर्यके प्रत्येक अयनमें एक सौ तेरासी (१८३) दिन-रात्रियाँ और चन्द्रके अयनमें सड़सठ भागोंमेंसे चवालीस भाग अधिक तेरह (१३४४) दिन (और रात्रियाँ) होते हैं ॥५०१॥

दक्खिण-अयणं आदो, पज्जवसाणं तु उत्तरं अयणं।
सव्वेसिं सूराणं, विवरीदं होदि चंदाणं ॥५०२॥

अर्थ—सब सूर्योंका दक्षिण अयन आदिमें और उत्तर अयन अन्तमें होता है। चन्द्रोंके अयनोंका क्रम इससे विपरीत है ॥५०२॥

अभिजित् नक्षत्रके गगनखण्ड—

छच्चेव सया तीसं, भागाणं अभिजि-रिक्ख-विक्खंभा।
दिट्ठा सव्वं वरिसिहिं, सव्वेहिं अणंत - णाणेणं ॥५०३॥

६३०।

अर्थ—अभिजित् नक्षत्रके विस्तार स्वरूप उसके गगन-खण्डोंका प्रमाण छह सौ तीस (६३०) है। उसे सभी सर्व-दर्शियोंने अनन्त ज्ञानसे देखा है ॥५०३॥

---

१. ब. ब. क. ज. सगसगखेत्ते। २. ब. क. ज.

सदभिस-भरणी अद्दा, सादी तह अस्सिलेस-जेट्ठा य ।
पंचुत्तरं सहस्सा, भगणाणं सीम - विक्खंभा ॥५०४॥

१००५ ।

अर्थ—शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा और ज्येष्ठा इन नक्षत्र-गणोंके सीमा-विष्कम्भ अर्थात् गगनखण्ड एक हजार पांच (१००५) हैं ॥५०४॥

एवं चेव य तिगुणं, पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
तिण्णेव उत्तराओ, अवसेसाणं हवे दुगुणं ॥५०५॥

अर्थ—पुनर्वसु, रोहिणी, विशाखा और तीनों उत्तरा (उत्तरा-फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद), इनके गगनखण्ड इससे तिगुने (१००५×३=३०१५) हैं तथा शेष (१५) नक्षत्रोंके दूने (१००५×२=२०१०) हैं ॥५०५॥

चउवण्णं च सहस्सा, णव य सया होंति सव्व-रिक्खाणं ।
दुगुणिय - गयणक्खंडा, दो - चंदाणं पि णादव्वं ॥५०६॥

५४९०० ।

अर्थ—सब नक्षत्रोंके गगनखण्ड चौवन हजार नौ सौ (५४९००) हैं । दोनों चन्द्रोंके गगनखण्ड इससे दूने समझने चाहिए ॥५०६॥

एवं च सय-सहस्सा, अट्ठाणउदी-सया य परिपुण्णा ।
एसो मंडल - छेदो, भगणाणं सीम - विक्खंभो ॥५०७॥

१०९८०० ।

अर्थ—इसप्रकार एक लाख नौ हजार आठ सौ (१०९८००) गगनखण्डोंसे परिपूर्ण यह मण्डल-विभाग नक्षत्रोंकी सीमाके विस्तार स्वरूप है ॥५०७॥

नक्षत्र, चन्द्र एवं सूर्य द्वारा एक मुहूर्तमें लांघने योग्य
गगनखण्डोंका प्रमाण—

अट्ठारस - भाग - सया, पणतीसं गयणखंड मुहुत्तेण ।
चंदो अडसट्ठी सय, सत्तरसं सीम - खेत्तस्स ॥५०८॥

१८३५ । १ । १७६८ ।

अर्थ—नक्षत्र एक मुहूर्तमें अठारह सौ पैंतीस (१८३५) गगनखण्ड रूप सीमा क्षेत्रमें जाता है और चन्द्र (उसी एक मुहूर्तमें) सत्तरह सौ अड़सठ (१७६८) नभखण्ड रूप सीमा क्षेत्रमें जाता है ॥५०८॥

अट्ठारस-भाग-सया, तीसं गच्छदि रवी[1] मुहुत्तेणं ।
णक्खत्त - सीम - खेत्तो, ते चरइ[2] इमेण बोद्धव्वा ॥५०९॥

१८३० ।

अर्थ—सूर्य एक मुहूर्तमें अठारह सौ तीस (१८३०) नभखण्डरूप सीमा क्षेत्रमें जाता है। नक्षत्रोंके सीमा क्षेत्रसे सूर्य और चन्द्रका गमन इसी प्रकार जानना चाहिए ॥५०९॥

सूर्यकी अपेक्षा चन्द्र एवं नक्षत्रके अधिक गगनखण्ड—

सत्तरसट्ठुत्तीणि तु, चंदे सूरे [3]विसट्ठि-अहियं च ।
सट्ठी वि य भगणा, चरइ मुहुत्तेण भागाणं ॥५१०॥

१७६८ । १८३० । १८३५ ।

अर्थ—चन्द्र एक मुहूर्तमें सत्तरह सौ अड़सठ गगनखण्ड सांधता है। इसकी अपेक्षा सूर्य बासठ गगनखण्ड अधिक और नक्षत्रगण सड़सठ गगनखण्ड अधिक सांधते हैं ॥५१०॥

विशेषार्थ—एक मुहूर्तके गमनकी अपेक्षा चन्द्रके नभखण्ड १७६८, सूर्यके १८३० और नक्षत्रके १८३५ हैं। चन्द्रके गगनखण्डोंसे सूर्यके गगनखण्ड (१८३० — १७६८)=६२ और नक्षत्रके (१८३५ — १७६८)=६७ गगनखण्ड अधिक हैं। एक ही साथ चन्द्र, सूर्य और नक्षत्र ने गमन करना प्रारम्भ किया और तीनोंने अपने-अपने गगनखण्डोंको समाप्त कर दिया। अर्थात् एक मुहूर्तमें चन्द्रने १७६८ गगनखण्डोंका भ्रमण किया, जबकि सूर्यने १८३० और नक्षत्रने १८३५ का किया, अतः चन्द्र सूर्यसे ६२ और नक्षत्रसे ६७ गगनखण्ड पीछे रहा।

सूर्यके तीस मुहूर्तोंके गगनखण्डोंका प्रमाण—

चंद-रवि-गयणखंडे, अण्णोण्ण-विसुद्ध-सेस-बासट्ठी ।
एय-मुहुत्त - पमाणं, बासट्ठि - कलिज्जया तीसा ॥५११॥

१ । ६२ । ३० ।

---

१. द. ब. क. ज. रवे । २. द. क. ज. चेदूए । ३. ब. विस ट्ठि ।

अर्थ—चन्द्र और सूर्यके गगनखण्डोंको परस्पर घटाने पर बासठ शेष रहते हैं। जब सूर्य एक मुहूर्तमें (चन्द्रकी अपेक्षा) बासठ गगनखण्ड अधिक जाता है तब वह तीस मुहूर्तमें कितने गगन-खण्ड अधिक जायेगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर यहाँ एक मुहूर्त प्रमाण राशि, बासठ फलराशि और तीस मुहूर्त इच्छा-राशि ($१\frac{३१}{६२}°$) होती है ॥५११॥

त्रैराशिक द्वारा प्राप्त १८६० नभखण्डोंके गमन-मुहूर्तका काल—

एयट्ठ-तिण्णि-सुण्णं, गयणक्खंडेण लब्भदि मुहुत्तं ।
अट्ठरसट्ठी य तहा, गयणक्खंडेण किं लद्धं ॥५१२॥

१८३० । १८६० । १ ।

चंदादो सिग्घ-गदी, दिवस-मुहुत्तेण चरदि खलु सूरो ।
एक्कं चेव मुहुत्तं, एक्कं एयट्ठि - भागं च ॥५१३॥

१ । $\frac{१}{६१}$ ।

अर्थ—जब एक, आठ, तीन और शून्य अर्थात् १८३० गगनखण्डोंके अतिक्रमणमें एक मुहूर्त प्राप्त होता है, तब अठारह सौ साठ (१८६०) नभखण्डोंके अतिक्रमणमें क्या प्राप्त होगा ? सूर्य, चन्द्रकी अपेक्षा दिनमुहूर्त अर्थात् तीस मुहूर्तोंमें एक मुहूर्त और एक मुहूर्तके इकसठवें भाग अधिक शीघ्र गमन करता है। अर्थात् १८६० नभखण्डोंके अतिक्रमणका काल ($१\frac{३१}{६२}° = \frac{६३}{६२}° =$) $१\frac{१}{६१}$ मुहूर्त प्राप्त होगा ॥५१२-५१३॥

नक्षत्रके तीस मुहूर्तोंके अधिक नभखण्ड—

रवि-रिक्ख-गगणखंडे, अण्णोण्णं सोहिऊण जं सेसं ।
एय - मुहुत्त - पमाणं, फल पण इच्छा तहा तीसं ॥५१४॥

१ । ५ । ३० ।

अर्थ—सूर्य और नक्षत्रोंके गगनखण्डोंको परस्पर घटाकर जो शेष रहे उसे ग्रहण करनेपर यहाँ एक मुहूर्त प्रमाण राशि, पाँच (नक्षत्र) फलराशि और तीस मुहूर्त इच्छाराशि है ॥५१४॥

विशेषार्थ—नक्षत्रके ग० खं० १८३५ — १८३० सूर्यके ग० खं०=५ अवशेष। जब नक्षत्र (सूर्य की अपेक्षा) एक मुहूर्तमें ५ खण्ड अधिक जाता है, तब तीस मुहूर्तमें कितने खण्ड जावेगा ? इस प्रकार त्रैराशिक करने पर ($\frac{३०\times५}{१}=$) १५० गगनखण्ड प्राप्त होते हैं।

तीस० द्वारा प्राप्त १५० नभखण्डोंका अतिक्रमण काल—

तीसट्ठारसया खलु, मुहुत्त-कालेण कमइ जइ सूरो ।
तो केत्तिय - कालेणं, सय - पंचासं कमे इत्ति ॥५१५॥

१८३० । १ । १५० ।

सूरादो णक्खत्तं, दिवस - मुहुत्तेण जइणतरमाहु ।
एक्कस्स मुहुत्तस्स य, भागं एक्कट्ठिमे पंच ॥५१६॥

५ ।

अर्थ—जब सूर्य अठारह सौ तीस गगनखण्डोंको एक मुहूर्तमें लांघता है, तब वह एक सौ पचास (१५०) गगनखण्डोंको कितने समयमें लांघेगा ? सूर्यकी अपेक्षा नक्षत्र एक दिन मुहूर्तों (३० मुहूर्तों) में एक मुहूर्तके इकसठ भागोंमेंसे पाँच भाग अधिक 'जविनतर अर्थात् अतिशय वेग वाला है। अर्थात् १५० नभखण्डोंके अतिक्रमणका काल ($\frac{१५०}{१८३०}$)=$\frac{५}{६१}$ मुहूर्त प्राप्त होता है ॥५१५-५१६॥

सूर्य और चन्द्रको नक्षत्र मुक्तिका विधान—

णक्खत्त-सीम-भागं, भजिदे दिवसस्स जइण- णेहिं ।
लद्धं तु होइ रवि - ससि - णक्खत्ताणं तु ॥५१७॥

अर्थ—सूर्य और चन्द्र एक दिनमें नक्षत्रोंकी अपेक्षा जितने गगनखण्ड पीछे रहते हैं, उनका नक्षत्रोंके गगनखण्डोंमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतने समय तक सूर्य एवं चन्द्रका नक्षत्रोंके साथ संयोग रहता है ॥५१७॥

सूर्यके साथ अभिजित् नक्षत्रका मुक्तिकाल—

ति-सय-वल-गगणखंडे, कमेइ जइ दिणयरो दिणिक्कमेणं ।
तउ रिक्खाणं भिय-भिए, णहखंड-गमण को कालो ? ॥५१८॥

१५० । १ । ६३० ।

अभिजो-छच्च मुहुत्ते, चत्तारि य केवलो अहोरत्ते ।
सूरेण समं गच्छदि, एत्तो सेसाणि वोच्छामि ॥५१९॥

दि ४ मु ६ ।

अर्थ—यदि सूर्य एक दिनमें तीन सौ के आधे (१५०) नभखण्ड पीछे रहता है तो नक्षत्रोंके अपने-अपने गगनखण्डोंके गमनमें कितना काल लगेगा ? इसप्रकार अभिजित् नक्षत्र चार अहोरात्र और छह मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ गमन करता है। शेष नक्षत्रोंका कथन यहाँसे आगे करता है ॥५१८-५१९॥

विशेषार्थ—अभिजित् नक्षत्रके ६३० नभखण्ड हैं। सूर्य अभिजित् नक्षत्रके ऊपर है। जब १५० नभखण्ड छोड़नेमें सूर्यको एक दिन लगता है तब ६३० खण्ड छोड़नेमें कितना समय लगेगा ? इस त्रैराशिकसे सूर्य द्वारा अभिजित्की भुक्तिका काल ($\frac{१ \times ६३०}{१५०}$)=४ दिन ६ मुहूर्त प्राप्त होता है।

सूर्यके साथ जघन्य नक्षत्रोंका भुक्तिकाल—

सदभिस-भरणी-अद्दा, सादी तह अस्सिलेस जेट्ठा य ।
छच्चेव अहोरत्ते, एक्कावीसा मुहुत्तेयं ॥५२०॥

दि ६ । मु २१ ।

अर्थ—शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा और ज्येष्ठा ये छह नक्षत्र छह अहोरात्र और इक्कीस मुहूर्त तक सूर्य के साथ रहते हैं ॥५२०॥

विशेषार्थ—जघन्य नक्षत्र ६ हैं और प्रत्येकके गगनखण्ड १००५ हैं। सूर्य इनके ऊपर है। जब १५० खण्ड छोड़नेमें सूर्यको १ दिन लगता है तब १००५ गगनखण्ड छोड़नेमें कितना समय लगेगा ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर ($\frac{१ \times १००५}{१५०}$)=६ दिन २१ मुहूर्त प्राप्त होते हैं। एक ज० न० को भोगनेमें ६ दिन २१ मु० लगते हैं तब ६ नक्षत्रोंको भोगनेमें कितना समय लगेगा ? इस प्रकार त्रैरा० करनेपर (६ दिन २१ मु० × ६)=४० दिन ६ मु० होते हैं। अर्थात् सूर्यको ६ ज० नक्षत्रों को भोगनेमें कुल समय ४० दिन ६ मुहूर्त लगता है।

सूर्यके साथ उत्कृष्ट नक्षत्रोंका भुक्तिकाल—

तिण्णेव उत्तराओ, पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
वीसं च अहोरत्ते तिण्णेव य होंति मुहुत्ता ॥५२१॥

दि २० । मु ३ ।

अर्थ—तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा, ये छह उत्कृष्ट नक्षत्र बीस अहोरात्र और तीन मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ गमन करते हैं ॥५२१॥

विशेषार्थ—उत्कृष्ट नक्षत्र ६ हैं। प्रत्येकके नभखण्ड ३०१५ हैं। सूर्य इनके ऊपर है। सूर्य को जब १५० ग० क्षे० छोड़नेमें १ दिन लगता है तब ३०१५ नक्षत्र छोड़नेमें कितना समय लगेगा ? इसप्रकार त्रैरा० करनेपर ($\frac{३०१५ \times १}{१५०}$) = २० दिन ३ मुहूर्त प्राप्त होते हैं। एक उत्कृष्ट न० को भोगनेमें $\frac{३६०}{६}$ दिन लगते हैं तब ६ उत्कृष्ट नक्षत्रों को भोगनेमें कितना समय लगेगा ? इसप्रकार त्रैरा० करने पर ($\frac{३६० \times ६}{६}$) = १२० दिन १८ मुहूर्तका समय लगेगा।

सूर्यके साथ मध्यम नक्षत्रोंका भुक्तिकाल—

अवसेसा पक्खंता, पण्णारस वि सूर-सह-गदा होंति ।
बारस चेव मुहुत्ता, तेरस य समे अहोरत्ते ॥५२२॥

दि १३ । मु १२ ।

अर्थ—शेष पन्द्रह ही मध्यम नक्षत्र तेरह अहोरात्र और बारह मुहूर्त काल तक सूर्यके साथ गमन करते रहते हैं ॥५२२॥

विशेषार्थ—मध्यम न० १५ हैं और प्रत्येकके नभखण्ड २०१० हैं। सूर्य इनके ऊपर है। पूर्वोक्त प्रकार त्रैराशिक करनेपर प्रत्येक नक्षत्रका भुक्ति काल ($\frac{३६० \times १}{१५}$) = $\frac{४८}{२}$ = १३ दिन १२ मु० प्राप्त होता है। एक मध्यम न० का भोग $\frac{३६०}{१५}$ दिनमें होता है तब १५ नक्षत्रोंका कितने दिनमें होगा ? इसप्रकार त्रैरा० करनेपर ($\frac{३६० \times १५}{१५}$) = २०१ दिन सर्व मध्यम नक्षत्रोंका भुक्ति काल है।

दक्षिण और उत्तरके भेदसे सूर्यके दो अयन होते हैं। प्रत्येक अयनमें सूर्य १८३-१८३ दिन भ्रमण करता है। इस भ्रमणमें सूर्य अभिजित् न० को ४ दिन ६ मुहूर्त, ६ जघन्य नक्षत्रों को ४० दिन ६ मुहूर्त, १५ मध्यम नक्षत्रोंको २०१ दिन और ६ उत्कृष्ट नक्षत्रों को १२० दिन १८ मु० भोगता है। इन २८ नक्षत्रोंका सर्व-काल (४ दि० ६ मु० + ४० दि० ६ मु० + २०१ दिन + १२० दिन १८ मु०) = ३६६ दिन होता है। इसीलिए दोनों अयनोंके (१८३ × २) = ३६६ दिन होते हैं।

चन्द्रके साथ अभिजित्का भुक्तिकाल—

सत्तट्ठि - गगणखंडे, मुहुत्तमेक्केग कमइ अह चंदो ।
भगणाण गगणखंडे, को कालो होदि गमणम्मि ॥५२३॥

६७ । १ । ६३० ।

अभिजिस्स चंद - जोगो[1], सत्तट्ठी खंडिदे मुहुत्तेगे ।
भागो य सत्तवीसा, ते पुण अहिया गद - मुहुत्ते ॥५२४॥

९ । ३९ ।[2]

अर्थ—जब चन्द्र एक मुहूर्तमें नक्षत्रके गगनखण्डसे (१८३५ — १७६८) सड़सठ (६७) गगनखण्ड पीछे रह जाता है तब उन (नक्षत्रों) के गगनखण्डों तक साथ गमन करनेमें कितना समय लगेगा ? अभिजित् नक्षत्रके (३३०) गगनखण्डोंमें सड़सठका भाग देनेपर एक मुहूर्तके सड़सठ भागोंमेंसे सत्ताईस भाग अधिक नौ मुहूर्त ($\frac{५३०}{६७}$ =९$\frac{२७}{६७}$ मु०) लब्ध आता है। अर्थात् चन्द्रका अभिजित् नक्षत्रके साथ गमन करनेका काल ९$\frac{२७}{६७}$ मुहूर्त प्रमाण है ॥५२३-५२४॥

चन्द्रके साथ जघन्य नक्षत्रोंका भुक्ति काल —

सदभिस-भरणी-अद्दा, सादी तह अस्सलेस-जेट्ठा य ।
एदे छण्णक्खत्ता, पण्णरस - मुहुत्त - संजुत्ता ॥५२५॥

१५ ।

अर्थ—शतभिषक्, भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा और ज्येष्ठा, ये छह नक्षत्र चन्द्रके साथ पन्द्रह मुहूर्त पर्यन्त रहते हैं ॥५२५॥

विशेषार्थ—पूर्वोक्त प्रक्रियानुसार प्रत्येक ज० न० के साथ चन्द्रका योग (१००५÷६७) =१५ मुहूर्त और सर्व ज० नक्षत्रोंके साथ (१५ मु०× ६)=३ दिन पर्यन्त रहता है।

चन्द्रके साथ मध्यम नक्षत्रोंका योग—

अवसेसा णक्खत्ता, पण्णरसाए तिसंवि मुहुत्ता य ।
चंदम्मि एस जोगो, णक्खत्ताणं समक्खादं ॥५२६॥

३० ।

अर्थ—अवशेष पन्द्रह (मध्यम) नक्षत्र चन्द्रमाके साथ तीस मुहूर्त तक रहते हैं। यह उन नक्षत्रोंका योग कहा है ॥५२६॥

विशेषार्थ—पूर्वोक्त प्रक्रियानुसार प्रत्येक म० न० के साथ चन्द्रका योग (२०१०÷६७) =३० मुहूर्त और सर्व म० नक्षत्रोंके साथ (३० मु०×१५)=१५ दिन पर्यन्त रहता है।

---

१. ब. ज. क. ण. तारो । २. द. ब. $\frac{२७}{६७}$ ।

चन्द्रके साथ उत्कृष्ट नक्षत्रोंका योग—

तिण्णेव उत्तराओ, पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
एदे छण्णक्खत्ता, पणदाल - मुहुत्त - संजुत्ता ॥५२७॥

४५ ।

अर्थ - तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रोहिणी और विशाखा, ये छह (उत्कृष्ट) नक्षत्र पैंतालीस (४५) मुहूर्त तक चन्द्रके साथ संयुक्त रहते हैं ॥५२७॥

विशेषार्थ—पूर्वोक्त प्रक्रियानुसार प्रत्येक उत्कृष्ट न० के साथ चन्द्रका योग (३०१५÷६७) =४५ मुहूर्त और सर्व उ० नक्षत्रोंके साथ (४५ मु० × ६)=९ दिन पर्यन्त रहता है ।

दक्षिण और उत्तरके भेदसे चन्द्रके भी दो अयन होते हैं । इन अयनोंके भ्रमणमें चन्द्र अभिजित् नक्षत्रको ९$\frac{३}{६७}$ मुहूर्त+ज० नक्षत्रोंको ३ दिन+मध्यम न० को १५ दिन+और उत्कृष्ट नक्षत्रोंको ९ दिन=२७ दिन ६$\frac{३}{६७}$ मुहूर्तोंमें २८ नक्षत्रोंका भोग करता है ।

सूर्य सम्बन्धी अयन—

दुमणिस्स एक्क-अयणे, दिवसा तेसीदि-अहिय-एक्क-सयं ।
दक्खिण - अयणं आदी, उत्तर - अयणं च अवसाणं ॥५२८॥

१८३ ।

अर्थ—सूर्यके एक अयनमें एक सौ तेरासी दिन होते हैं । इन अयनोंमेंसे दक्षिण अयन आदि (प्रारम्भ) में और उत्तर अयन अन्तमें होता है ॥५२८॥

विशेषार्थ—सूर्य भ्रमणकी १८४ वीथियाँ हैं । इनमेंसे जब सूर्य प्रथम वीथीमें स्थित होता है तब दक्षिणायनका और जब अन्तिम वीथीमें स्थित होता है तब उत्तरायणका प्रारम्भ होता है ।

दक्षिण एवं उत्तर अयनोंमें आवृत्ति-संख्या—

एक्काहि-दु-उत्तरियं, दक्खिण-आउट्टियाए पंच पदा ।
दो-आदि-दु-उत्तरयं, उत्तर-आउट्टियाए पंच पदा ॥५२९॥

अर्थ—(सूर्यकी) दक्षिणावृत्ति एकको आदि लेकर दो-दो की वृद्धि प्रमाण (१, ३, ५, ७, ९) होती है । इसमें पञ्च पाँच हैं । उत्तरावृत्ति भी दो को आदि लेकर दो-दो की वृद्धि प्रमाण (२, ४, ६, ८, १०) होती है । इसमें भी पञ्च पाँच हैं ॥५२९॥

विशेषार्थ—पूर्व अयनकी समाप्ति और नवीन अयनके प्रारम्भको आवृत्ति कहते हैं। पंच-वर्षात्मक एक युगमें ये आवृत्तियाँ दस बार होती हैं, इसीलिए इनका गच्छ पाँच-पाँच कहा गया है। इनमें १, ३, ५, ७ और ९ की आवृत्ति दक्षिणायन सम्बन्धी और २, ४, ६, ८ तथा १० वीं आवृत्ति उत्तरायण-सम्बन्धी है।

एक युगके विषुवोंकी संख्या—

तिब्भव-दु-खेत्तरयं, दस-पव-परित्त-दो हि अवहरिदं।
उसुपस्स य होदि पदं, वोच्छं आउट्टि-उसुपदिण-रिक्खं ॥५३०॥

अर्थ—एक वर्षमें दो अयन होते हैं। प्रत्येक अयनके तीन माह व्यतीत होनेपर एक विषुव होता है। इसप्रकार एक युगमें दस विषुव होते हैं। इन्हें दो से भाजित करनेपर एक-एक युगमें विभिन्न अयन सम्बन्धी पाँच-पाँच विषुव होते हैं। अब यहाँ आवृत्ति और विषुव सम्बन्धी दिनके नक्षत्र निकालनेकी विधि कहूँगा ॥५३०॥

तिथि, पक्ष और पर्व निकालनेकी विधि—

रूऊणंकं छग्गुणमेग-जुदं उसुपो त्ति तिथि - माणं।
तब्भार - गुणं पव्वं, सम-विसम-किण्ह-सुक्कं च ॥५३१॥

अर्थ—एक कम आवृत्तिके पदको छहसे गुणित कर उसमें एक जोड़नेपर आवृत्तिकी तिथि और उसी लब्धमें तीन जोड़नेपर विषुवकी तिथिका प्रमाण प्राप्त होता है। तिथि संख्याके विषम होनेपर कृष्णपक्ष और सम होनेपर शुक्ल पक्ष होता है। तथा तिथि संख्याको द्विगुणित करनेपर पर्वका प्रमाण प्राप्त होता है ॥५३१॥

विशेषार्थ—जो आवृत्ति विवक्षित हो उसमेंसे एक घटाकर लब्धको छहसे गुणा करके एकका अंक जोड़नेसे आवृत्तिकी तिथि और उसी लब्धमें तीनका अंक जोड़नेसे विषुवकी तिथि संख्या प्राप्त होती है। यथा—

तृतीय आवृत्ति विवक्षित है अतः (३ — १) × ६ = १२। १२ + १ = १३ तिथि। तृतीय आवृत्ति कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको होगी। इसीप्रकार (३ — १) × ६ = १२। १२ + ३ = १५ तिथि। यहाँ भी तृतीय विषुव कृष्णपक्षकी अमावस्याको होगा। दोनों तिथियोंके अंक विषम हैं अतः कृष्णपक्ष ग्रहण किया गया है। दूसरा विषुव ९ वीं तिथिको होता है। इसे दुगुना (९ × २) करनेपर दूसरे विषुवके १८ पर्व प्राप्त होते हैं।

आवृत्ति और विषुपके नक्षत्र प्राप्त करनेकी विधि—

सत्त-गुणे ऊणंकं, दस-हिद-सेसेसु अयणदिवस-गुणं ।
सत्तट्ठि - हिदे लद्धं, अभिजादीदे हवे रिक्खं ॥५३३॥

अर्थ—एक कम विवक्षित आवृत्तिको सातसे गुणित करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे दससे भाजित कर शेषको अयन-दिवस (१८४) से गुणित कर सड़सठ (६७) का भाग देना चाहिए। जो लब्ध प्राप्त हो उसे अभिजित् नक्षत्रसे गिननेपर गत नक्षत्र प्राप्त होता है, अतः उसमे आगेका नक्षत्र आवृत्तिका नक्षत्र होता है ॥५३३॥

विशेषार्थ—यहाँ ८ वीं आवृत्ति विवक्षित है। इसका मूल नक्षत्र है। (८ — १) × ७=४९। ४९÷१०=४, शेष रहे ९। (९×१८४)÷६७=२४, यहाँ शेष आधेसे अधिक हैं अतः (२४+१)=२५ प्राप्त हुए। अभिजित् नक्षत्रसे गिननेपर २५ वाँ ज्येष्ठा नक्षत्र गत और उससे आगेका मूल न० ८ वीं आवृत्तिका नक्षत्र प्राप्त होता है।

युगकी पूर्णता एवं उसके प्रारम्भकी तिथि और दिन आदि—

आसाढ-पुण्णमीए, जुग-णिप्पत्ती दु सावणे किण्हे ।
अभिजिम्मि चंद-जोगे, पाडिव-दिवसम्मि पारंभो ॥५३३॥

अर्थ—आषाढ़ मासकी पूर्णिमाके दिन (अपराह्न में) पञ्चवर्षात्मक युगकी समाप्ति होती है और श्रावण कृष्णा प्रतिपद्के दिन अभिजित् नक्षत्रके साथ चन्द्रका योग होनेपर उस युगका प्रारम्भ होता है। (दक्षिणायन सूर्यकी प्रथम आवृत्तिका प्रारम्भ भी यही है) ॥५३३॥

दक्षिणायन सूर्यकी द्वितीय और तृतीय-आवृत्ति—

सावण-किण्हे तेरसि, मियसिर-रिक्खम्मि विदिय-आउट्टी ।
तदिया विसाह - रिक्खे, दसमीए सुक्कपक्खम्मि तम्मासे ॥५३४॥

अर्थ—श्रावण कृष्णा त्रयोदशीके दिन मृगशीर्षा नक्षत्रका योग होनेपर द्वितीय और इसी मासमें शुक्लपक्षकी दसमीके दिन विशाखा नक्षत्रका योग होनेपर तृतीय आवृत्ति होती है ॥५३४॥

चतुर्थ और पंचम आवृत्ति—

सावण-किण्हे सत्तमि, रेवदि रिक्खे चउट्ठियाविट्ठी ।
बोत्तीए पंचमिया, सुक्के रिक्खाए पुव्वफग्गुणिए ॥५३५॥

अर्थ—श्रावण कृष्णा अमावसको रेवती नक्षत्रका योग होनेपर चतुर्थ और श्रावण शुक्ला चतुर्थीको पुष्यनक्षत्रके योगमें पंचम आवृत्ति होती है ॥५३५॥

पंचसु वरिसे एदे, सावण - मासम्मि उत्तरे कट्ठे ।
आविट्ठी दुमणीणं, पंचेव य होंति णियमेणं ॥५३६॥

अर्थ- सूर्यके उत्तर दिशाको प्राप्त होनेपर पाँच वर्षोंके भीतर श्रावण मासमें नियमसे ये पाँच ही आवृत्तियाँ होती हैं ॥५३६॥

विशेषार्थ—एक युग पाँच वर्षका होता है। प्रत्येक श्रावण मासमें सूर्य उत्तर दिशामें ही स्थित रहता है तथा उपर्युक्त तिथि-नक्षत्रोंके योगमें दक्षिणकी ओर प्रस्थान करता है, इसलिए पाँच वर्षों तक प्रत्येक श्रावण मासमें दक्षिणायन सम्बन्धी एक-एक आवृत्ति होती है। इसप्रकार पाँच वर्षोंमें पाँच आवृत्तियाँ होती हैं।

सूर्य सम्बन्धी पाँच उत्तरावृत्तियाँ—

माघस्स किण्ह - पक्खे, सत्तमिए रुद्द-णाम-मुहुत्ते ।
हत्थम्मि ट्ठिद-दुमणी, दक्खिणदो एदि उत्तराभिमुहो ॥५३७॥

अर्थ—हस्त नक्षत्रपर स्थित सूर्य माघ मासके कृष्ण-पक्षमें सप्तमीके दिन रुद्र नामक मुहूर्तके होते दक्षिणसे उत्तराभिमुख होता है ॥५३७॥

बोत्तीए सदभिसए, सुक्के बिदिया तहज्जयं किण्हे ।
पक्खे पुस्से रिक्खे, पडिवाए होदि तम्मासे ॥५३८॥

अर्थ—इसी मासमें शतभिषक् नक्षत्रके रहते शुक्ल पक्षकी चतुर्थीके दिन द्वितीय और इसी मासके कृष्ण पक्षकी प्रतिपदाको पुष्य-नक्षत्रके रहते तृतीय आवृत्ति होती है ॥५३८॥

किण्हे तयोदसीए, मूले रिक्खम्मि तुरिम-आविट्ठी ।
सुक्के पक्खे दसमी, कित्तिय-रिक्खम्मि पंचमिया ॥५३९॥

अर्थ—कृष्ण पक्षकी त्रयोदशीके दिन मूल नक्षत्रके योगमें चतुर्थ और इसी मासके शुक्ल पक्षकी दसमी तिथिको कृत्तिका नक्षत्रके रहते पंचम आवृत्ति होती है ॥५३९॥

पंचसु वरिसे एदे, माघे मासम्मि दक्खिणे कट्ठे ।
आविट्ठी दुमणीणं, पंचेव य होंति णियमेणं ॥५४०॥

अर्थ—पाँच वर्षोंके भीतर माघ मासमें दक्षिण अयनके होनेपर सूर्यकी ये पाँच आवृत्तियाँ नियमसे होती हैं ॥५४०॥

विशेषार्थ—प्रत्येक माघ मासमें सूर्य दक्षिण दिशामें स्थित रहता है और उपर्युक्त तिथि-नक्षत्रोंके योगमें उत्तरकी ओर प्रस्थान करता है, इसलिए पाँच वर्षोंतक प्रत्येक माघ मासमें उत्तरायण सम्बन्धी एक आवृत्ति होती है। इसप्रकार पाँच वर्षोंमें पाँच आवृत्तियाँ होती हैं। यथा—

दक्षिणायन-सूर्य						उत्तरायण-सूर्य					
आवृत्ति क्रम	वर्ष	मास	पक्ष	तिथि	नक्षत्र	आवृत्ति क्रम	वर्ष	मास	पक्ष	तिथि	नक्षत्र
१ ली	प्रथम	श्रावण	कृष्ण	प्रतिपदा	अभिजित्	२ री	प्रथम	माघ	कृ०	सप्तमी	हस्त
३ री	द्वितीय	श्रावण	कृष्ण	त्रयोदशी	मृग०	४ थी	द्वितीय	माघ	शु०	चतुर्थी	मघ०
५ वीं	तृतीय	श्रावण	शुक्ल	दसमी	विशाखा	६ ठी	तृतीय	माघ	कृ०	प्रतिपदा	पुष्य
७ वीं	चतुर्थ	श्रावण	कृष्ण	सप्तमी	रेवती	८ वीं	चतुर्थ	माघ	कृ०	त्रयोदशी	मूल
९ वीं	पंचम	श्रावण	शुक्ल	चतुर्थी	पूर्वाफा०	१०वीं	पंचम	माघ	शु०	दसमी	कृत्तिका

उपर्युक्त पाँच वर्षोंमें युग समाप्त हो जाता है। छठे वर्षसे पूर्वोक्त व्यवस्था पुनः प्रारम्भ हो जाती है। दक्षिणायनका प्रारम्भ सदा प्रथम वीथीसे और उत्तरायणका प्रारम्भ अन्तिम वीथीसे ही होता है।

युगके दस अयनोंमें विषुवोंके पर्व, तिथि और नक्षत्र—

होदि हु पढमं विसुवं, [1]कत्तिय-मासम्मि किण्ह-तदियाए।
छस्सु पव्वसु वीदेसु, वि रोहिणी - णामम्मि रिक्खम्मि ॥५४१॥

अर्थ—यह प्रथम विषुव छह पर्वोंके (पूर्णमासी और अमावस्या) बीतनेपर कार्तिक मासके कृष्ण पक्षकी तृतीया तिथिमें रोहिणी नक्षत्रके रहते होता है ॥५४१॥

विशेषार्थ—शुक्ल और कृष्ण पक्षके पूर्ण होनेपर जो पूर्णिमा और अमावस्या होती है। उसका नाम पर्व है। सूर्यका एक अयन छह मासका होता है। एक अयनके अर्धभागको प्राप्त होनेपर जिस कालमें दिन और रात्रिका प्रमाण बराबर होता है उस कालको विषुव कहते हैं। अर्थात् दिन-

१. ब. कित्तिय।

रात्रिके प्रमाणका बराबर होना विषुप है। पाँच विषुप दक्षिणायनके अर्धकालमें और पाँच उत्तरायणके अर्धकालमें इसप्रकार एक युगमें दस विषुप होते हैं। युगके प्रारम्भमें दक्षिणायन सम्बन्धी प्रथम विषुप आरम्भके ६ पर्व (३ माह) व्यतीत होनेपर कार्तिक मासके कृष्ण पक्षकी तृतीया तिथिको चन्द्र द्वारा, रोहिणी नक्षत्रके भुक्तिकालमें होता है।

बहसाह[1]-किण्ह-पक्खे, णवमीए धणिट्ठ-णाम-णक्खत्ते ।
आदीदो अट्ठारस, पव्वमदीदे बुहज्जयं उसुपं ॥५४२॥

अर्थ—दूसरा विषुप आदिसे अठारह पर्व बीतनेपर वैशाख मासके कृष्ण पक्षकी नवमीको धनिष्ठा नक्षत्रके रहते होता है ॥५४२॥

कत्तिय-मासे पुण्णिमि-दिवसे इगितीस-पव्वमादीदो ।
तीदाए साधीए, रिक्खे होदि हु तइज्जयं विसुपं ॥५४३॥

अर्थ—आदिसे इकतीस पर्व बीत जानेपर कार्तिक मासकी पूर्णिमाके दिन स्वाति नक्षत्रके रहते तीसरा विषुप होता है ॥५४३॥

बहसाह-सुक्क-पक्खे, छट्ठीए पुणव्वसुम्मि णक्खत्ते ।
तेदाल - गदे पव्वमवीदेसु चउत्थयं विसुपं ॥५४४॥

अर्थ—आदिसे तेंतालीस पर्वोंके व्यतीत हो जानेपर वैशाख मासमें शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको पुनर्वसु नक्षत्रके रहते चौथा विषुप होता है ॥५४४॥

कत्तिय-मासे सुविकल-बारसिए पंच-वण्ण-परिसंते ।
पव्वमदीदे उसुपं, उत्तरभद्दपदे पंचमं होदि ॥५४५॥

अर्थ—आदिसे पचपन पर्व व्यतीत होनेपर कार्तिक मासमें शुक्ल पक्षकी द्वादशीको उत्तराभाद्रपदा नक्षत्रके रहते पाँचवाँ विषुप होता है ॥५४५॥

बहसाह-किण्ह-तइए, अणुराहे अट्ठसट्ठि - परिसंते ।
पव्वमदीदे उसुपं, छट्ठमयं होदि णियमेणं ॥५४६॥

अर्थ—आदिसे अड़सठ पर्व व्यतीत हो जानेपर वैशाख मासमें कृष्ण पक्षकी तृतीयाके दिन अनुराधा नक्षत्रके रहते छठा विषुप होता है ॥५४६॥

कत्तिय-मासे किण्हे, णवमी-दिवसे महाए णक्खत्ते ।
सोदी - पव्वमदीदे, होदि पुढं सत्तमं उसुपं ॥५४७॥

---

१. ब. ब. क. ज. बहसम्मि ।

अर्थ—आदिसे अस्सी पर्व व्यतीत हो जानेपर कार्तिक मासमें कृष्ण पक्षकी नवमीके दिन मघा नक्षत्रके रहते सातवाँ विषुप होता है ।।५४७।।

वइसाय-पुण्णिमीए, अस्सिणि-रिक्खे जुगस्स पक्खमाणे ।
तेरणउदी पव्वेसु वि, होदि पुढं अट्ठमं उसुयं ।।५४८।।

अर्थ—युगकी आदिसे तेरानवें पर्व व्यतीत हो जानेपर वैशाखमासकी पूर्णिमाके दिन अश्विनी नक्षत्रके रहते आठवाँ विषुप होता है ।।५४८।।

कत्तिय - मासे सुक्किल, छट्ठीए तह य उत्तरासाढे ।
पंचुत्तर - एक्क - सयं, पव्वमदीदेसु णवमयं उसुयं ।।५४९।।

अर्थ—(युगकी आदिसे) एक सौ पाँच पर्वोंके व्यतीत हो जानेपर कार्तिक मासमें शुक्ल पक्षकी षष्ठीके दिन उत्तराषाढ़ा नक्षत्रके रहते नौवाँ विषुप होता है ।।५४९।।

वइसाय-सुक्क-बारसि, उत्तरपुव्वम्हि फग्गुणी-रिक्खे ।
सत्तारस-एक्क-सयं, पव्वमदीदेसु दसमयं उसुयं ।।५५०।।

अर्थ—(युगकी आदिसे) एक सौ सत्तरह (११७) पर्व व्यतीत हो जानेपर वैशाखमासमें शुक्ल पक्षकी द्वादशीके दिन 'उत्तर' पद जिसके पूर्वमें है ऐसे फाल्गुनी (उत्तराफाल्गुनी) नक्षत्रके रहते दसवाँ विषुप होता है ।।५५०।।

उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी कालोंके दोनों अयनों का एवं विषुपोंका प्रमाण—

पण - वरिसे दुमणीणं, दक्खिणउत्तरायणं उसुयं ।
अय आणेज्जो उस्सप्पिणि-पढम-आदि - चरिमंतं ।।५५१।।

अर्थ—इस प्रकार उत्सर्पिणीके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय पर्यन्त पाँच वर्ष परिमित युगोंमें सूर्योंके दक्षिण और उत्तर अयन तथा विषुप जानकर लाने चाहिए ।।५५१।।

पल्लस्स-संख-भागं, दक्खिण-अयणस्स होदि परिमाणं ।
तेत्तियमेत्तं उत्तर - अयणं उसुयं च तद्दुगुणं ।।५५२।।

दक्षि प १ । उत्त प १ । उसुप प २ ।

अर्थ—संख्यात पल्यके (एक-एक अर्ध रूप) जितने भाग होते हैं उतना प्रमाण उत्सर्पिणीगत दक्षिणायनका है और उतना ही प्रमाण उत्तरायणका है, तथा विषुपोंका प्रमाण (दो में से) किसी एक अयनके समस्त प्रमाणसे दुगुना होता है ।।५५२।।

विशेषार्थ—एक उत्सर्पिणी अथवा अवसर्पिणीकाल १० कोड़ाकोड़ी सागरका होता है और एक सागर १० कोड़ाकोड़ी पल्यका होता है। जबकि एक सागरमें १० कोड़ाकोड़ी पल्य होते हैं तब १० कोड़ाकोड़ी सागरमें कितने पल्य होंगे ? ऐसा त्रैराशिक करनेपर एक उत्सर्पिणी अथवा अवसर्पिणी कालके $(१०)^{१८}$ अर्थात् एकके अंकके आगे १८ शून्य रखनेपर जो २९ अंक प्रमाण संख्या प्राप्त होती है वही एक कोड़ाकोड़ी सागरके पल्योंका प्रमाण है।

कालका प्रमाण अद्धापल्य द्वारा मापा जाता है। जबकि एक अद्धा पल्यमें असंख्यात वर्ष होते हैं तब $(१०)^{१८}$ अद्धापल्योंमें कितने वर्ष होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर वर्षोंका जो प्रमाण प्राप्त होता है उससे दुगुना प्रमाण अयनोंका होता है, इसीलिए संदृष्टिमें दक्षिणायन अथवा उत्तरायण अयनोंका प्रमाण संख्यात पल्य दिया है। दक्षिणायन अथवा उत्तरायणके अयन प्रमाणसे दुगुना प्रमाण विषुपोंका होता है। अर्थात् एक अयनमें एक विषुप होता है इसलिए अयनोंके प्रमाण बराबर ही विषुपोंका प्रमाण होता है।

गाथामें जो दुगुण शब्द आया है वह दक्षिणायन अथवा उत्तरायण का जितना प्रमाण है उससे दुगुने विषुपोंके लिए आया है। संदृष्टिमें संख्यात पल्यका द्विगुणित शब्द भी इसी अर्थका द्योतक है।

अवसप्पिणीए एवं, अवसव्वा तारो रहट्ट-घडिएवं।
होंति अणंताणंता पुव्वं वा दुगुण - परिवत्तं ॥५५३॥

अर्थ—इसीप्रकार (उत्सर्पिणीके सदृश) अवसर्पिणीकालमें भी रहंट की घटिकाओं सदृश दक्षिण-उत्तर अयन और विषुप कहने चाहिए। सूर्यके परिवर्तन पूर्ववत् अनन्तानन्त होते हैं ॥५५३॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

विषुप सम्बन्धी विशेष विवरण इसप्रकार है—

वर्ष संख्या	विषुप संख्या	गत-पर्व-संख्या	मास	पक्ष	तिथि	नक्षत्र
प्रथम वर्ष	१ ला	६ पर्व व्यतीत होनेपर	कार्तिक	कृष्ण	तृतीया	रोहिणी के योग में
	२ रा	१८ ,, ,,	वैशाख	कृष्ण	नवमी	धनिष्ठा ,, ,,
द्वितीय वर्ष	३ रा	३१ ,, ,,	कार्तिक	शुक्ल	पूर्णिमा	स्वाति ,, ,,
	४ था	४३ ,, ,,	वैशाख	शुक्ल	षष्ठी	पुनर्वसु ,, ,,
तृतीय वर्ष	५ वाँ	५५ ,, ,,	कार्तिक	शुक्ल	द्वादशी	उ० भाद्र० ,, ,,
	६ ठा	६८ ,, ,,	वैशाख	कृष्ण	तृतीया	अनुराधा ,, ,,
चतुर्थ वर्ष	७ वाँ	८० ,, ,,	कार्तिक	कृष्ण	नवमी	मघा ,, ,,
	८ वाँ	९३ ,, ,,	वैशाख	शुक्ल	पूर्णिमा	अश्विनी ,, ,,
पञ्चम वर्ष	९ वाँ	१०५ ,, ,,	कार्तिक	शुक्ल	षष्ठी	उ० षाढ़ा ,, ,,
	१०वाँ	११७ ,, ,,	वैशाख	शुक्ल	द्वादशी	उ० फा० ,, ,,

लवणसमुद्रसे पुष्करार्ध पर्यन्तके चन्द्र-बिम्बों का विवेचन—

चत्तारो लवण-जले, बादइ-दीवम्मि बारस मिदंका ।
बादाल काल - सलिले, बाहत्तरि पोक्खरद्धम्मि ॥५५४॥

४ । १२ । ४२ । ७२ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें चार, धातकीखण्डमें बारह, कालोदसमुद्रमें बयालीस और पुष्करार्द्ध द्वीपमें बहत्तर चन्द्र हैं ॥५५४॥

णिय-णिय-ससीण अद्धं, दीव-समुद्दाण एक्क-भागम्मि ।
अवरे भागं अद्धं, चरंति पंति - क्कमेणं च ॥५५५॥

अर्थ—द्वीप एवं समुद्रोंके अपने-अपने चन्द्रोंमेंसे आधे एक भागमें और (शेष) आधे दूसरे भागमें पंक्तिक्रमसे सञ्चार करते हैं ॥५५५॥

एक्केक्क-चारखेत्तं, दो-दो-चंदाण होदि तव्वासो ।
पंच-सया दस-सहिदा, विणयर-बिंबादि - रित्ता य ॥५५६॥

अर्थ—दो-दो चन्द्रोंका एक-एक चारक्षेत्र है और उसका विस्तार सूर्यबिम्ब (½ यो०) से अधिक पांच सौ दस (५१०½) योजन प्रमाण है ॥५५६॥

पुह-पुह चारखेत्ते, पण्णारस हवंति चंद-वीहीओ ।
तव्वासो छप्पण्णा, जोयणया एक्क-सट्ठि-हिदा ॥५५७॥

५५ । ६१ ।

अर्थ—पृथक्-पृथक् चारक्षेत्रमें जो पन्द्रह-पन्द्रह चन्द्र-वीथियां होती हैं। उनका विस्तार इकसठसे भाजित छप्पन (५६/६१) योजन प्रमाण है ॥५५७॥

चन्द्रके अभ्यन्तर पथमें स्थित होनेपर प्रथम पथ व द्वीप-समुद्रजगतीके बीच अन्तराल—

णिय-णिय-चंद-पमाणं, भजिदूणं एक्क-सट्ठि-रूवेहिं ।
अट्ठवीसेहिं गुणिदं, सोहिय णिय-उवहि-वीच-वासम्मि ॥५५८॥
ससि-संखाए विहत्तं, सव्वब्भंतर-वीहि-ट्ठिदिदूणं ।
दीवाणं उवहीणं, आदिम-पह-जगदि-विच्चालं ॥५५९॥

अर्थ—अपने-अपने चन्द्रोंके प्रमाणमें इकसठ (६१) रूपोंका भाग देकर अट्ठाईस (२८) से गुणा करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे अपने द्वीप या समुद्रके विस्तारमेंसे घटाकर चन्द्र संख्यासे विभक्त करे। जो लब्ध प्राप्त हो उतना सर्व-अभ्यन्तर वीथीमें स्थित चन्द्रोंके आदिम पथ और द्वीप अथवा समुद्रकी जगतीके बीच अन्तराल होता है ॥५५८-५५९॥

लवणसमुद्रमें अभ्यन्तर वीथी और जगतीके अन्तरालका प्रमाण—

उणलक्ख-सहस्सा णव-सय-णवणउदि-जोयणा य तेत्तीसा ।
अंसा लवणसमुद्दे, अब्भंतर - वीहि - जगदि - विच्चालं ॥५६०॥

९९९९९ । ३३ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें अभ्यन्तर वीथी और जगतीके बीच उनंचास हजार नौ सौ निन्यानवें योजन और एक योजनके इकसठ भागोंमेंसे तैंतीस भाग प्रमाण अन्तराल है ॥५६०॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रका विस्तार दो लाख योजन है और इसमें चन्द्र ४ हैं। उपर्युक्त विधिके अनुसार प्रथम वीथी स्थित चन्द्र और लवणसमुद्रकी जगतीके मध्यका अन्तर प्रमाण इसप्रकार है—

$(४ \div ६१) \times २८ = \frac{११२}{६१}$

$\left(\frac{१२९६२०}{६१} - \frac{३१३}{६१}\right) \div ४ = \frac{१२३३२८८}{६१ \times ६१}$

$= \frac{१२३३२८८}{६१ \times ६१} = ४६६६६\frac{६}{६१}$ योजन अन्तराल।

धातकीखण्ड द्वीपमें बत्तीसे प्रथम वीथीका अन्तराल—

दुग-तिग-तिग-तिग-तिण्णि य, विच्चालं धादइम्मि वीथम्मि।
गज - छक्क - एक्क - अंसा, तेसीदि - सदेहिं अवहरिदा ॥५६१॥

३३३३२। $\frac{१२०}{१६३}$।

अर्थ—धातकीखण्ड द्वीपमें यह अन्तराल दो, तीन, तीन, तीन और तीन अर्थात् तैंतीस हजार तीन सौ बत्तीस योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ साठ भाग प्रमाण है ॥५६१॥

विशेषार्थ—$(१२ \div ६१) \times २८ = \frac{१३६}{६१}$

$\left(\frac{५२९६२०}{६१} - \frac{३१३}{६१}\right) \div १२ = \frac{५३३२८८}{६१ \times ६१}$

$= \frac{३२३३२८८}{६१ \times ६१} = ३३३३२\frac{१२०}{१६३}$ योजन अन्तराल।

कालोदधिमें बत्तीसे प्रथम वीथीगत चन्द्रका अन्तराल—

सग-चउ-णहु-गय-एक्का, अंक-कमे पण-सय-दोण्णि अंसा य।
इगि-अट्ठ-दु-एक्क-हिदा, कालोदय - अगदि - विच्चालं ॥५६२॥

१६०४७। $\frac{२०५}{११८५}$।

अर्थ—कालोदधिसमुद्रकी बत्तीसी और (प्रथम) वीथीके मध्यका अन्तराल सात, चार, शून्य, नौ और एक इन अंकोंके क्रमसे उन्नीस हजार सैंतालीस योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित दो सौ पांच भाग अधिक है ॥५६२॥

विशेषार्थ—$(४२ \div ६१) \times २८ = \frac{११६}{६१}$

$\left(\frac{७०९६२०}{६१} - \frac{११९१}{६१}\right) \div ४२ = \frac{५९०९८८}{६१ \times ६१}$

$= \frac{५९०९८८}{६१ \times ६१} = १६०४७\frac{२०५}{११८५}$ योजन अन्तराल।

पुष्करार्द्धद्वीपमें बत्तीसे प्रथम वीथीगत चन्द्रका अन्तराल—

सुण्णं चउ-ठाणेक्का, अंक-कमे छट्ठ-पंच-तिण्णि कला।
चय - चउ - पंच - विहत्ता, विच्चालं पुक्खरद्धम्मि ॥५६३॥

११११०। $\frac{३५६}{४५}$।

अर्थ—पुष्करार्धद्वीपमें यह अन्तराल शून्य और चार स्थानोंमें एक, इन अंकोंके क्रमसे ग्यारह हजार एक सौ दस योजन और पाँचसौ उनंचाससे भाजित तीन सौ अट्ठावन कला प्रमाण है ॥५६३॥

विशेषार्थ—$(७२ \div ६१) \times २८ = \frac{२०१५}{६१}$

$\left(\frac{८०००००}{२}\right) - \left(\frac{३१३५}{६१}\right) \div ७२ = \frac{४८९९९१८४}{६१ \times ६१}$

$= \frac{१०११७१८}{३७२१} = ११११०\frac{३५६}{३७२१}$ योजन अन्तराल।

एदाणि अंतराणि, पढम - पह - संठिदाण चंदाणं।
बिदियादीण पहाणं, अहिया अब्भंतरे बाहिं ऊणा ॥५६४॥

अर्थ—प्रथम पथमें स्थित चन्द्रोंके ये उपर्युक्त अन्तर अभ्यन्तरमें द्वितीयादिक पथोंसे अधिक और बाह्यमें उनसे रहित हैं ॥५६४॥

दो चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर प्राप्त करनेकी विधि—

लवणादि-चउक्काणं, वास-पमाणम्मि णिय-ससि-दलाणं।
बिबाणि केलिसा, तत्तो णिय - चंद - संख - अद्धेणं ॥५६५॥

भजिदूणं जं लद्धं, तं पत्तेक्कं ससीण विच्चालं।
एवं सव्व - पहाणं, अंतरमेदम्मि णिद्दिट्ठं ॥५६६॥

अर्थ—लवणसमुद्रादिक चारोंके विस्तार प्रमाणमेंसे अपने-अपने चन्द्रोंके अर्ध बिम्बोंको घटाकर शेषमें निज चन्द्र-संख्याके अर्धभागका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना प्रत्येक चन्द्रका अन्तराल प्रमाण होता है। इसप्रकार यहाँपर सब पथोंका अन्तराल निर्दिष्ट किया गया है ॥५६५-५६६॥

लवण समुद्रगत चन्द्रोंका अन्तराल प्रमाण—

णवणउदि-सहस्सा णव-सय-णवणउदि जोयणा य पंच कला।
लवणजलहिम्मि चोद्दस, तुसारकिरणाण विच्चालं ॥५६७॥

९९९९९ । ५ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें दो चन्द्रोंके बीच निन्यानवें हजार नौ सौ निन्यानवें योजन और पाँच कला अधिक अन्तराल है ॥५६७॥

विशेषार्थ—ल० समुद्रका विस्तार दो लाख योजन, चन्द्र संख्या चार और इन चारोंका बिम्ब विस्तार $\left(\frac{३५}{६१} \times ४\right) = \frac{१४०}{६१}$ योजन है। समुद्र विस्तारमेंसे अर्ध चन्द्रबिम्बोंका विस्तार

($\frac{53}{54}$ ÷ २ = $\frac{53}{108}$ यो०) घटाकर शेषमें अर्ध चन्द्र संख्या (४ ÷ २ = २) का भाग देनेपर दो चन्द्रों का पारस्परिक अन्तर प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

($\frac{1000000}{1}$ − $\frac{53}{54}$) ÷ २ = $\frac{53999946}{108}$

= ९९९९९९$\frac{1}{2}$ योजन दोनों चन्द्रोंका अन्तराल।

धातकीखण्डस्थ चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण—

पंच चउ-ठाण-छक्का, अंक-कमे सग-ति-एक्क अंसा य।
तिय - अट्ठ एक्क - विहत्ता, अंतरमिणुणं धादईसंडे ॥५६८॥

६६६६५। $\frac{133}{173}$।

अर्थ—धातकीखण्डद्वीपमें चन्द्रोंके बीच पांच और चार स्थानोंमें छह इन अंकोंके क्रमसे छयासठ हजार छह सौ पैंसठ योजन और एक सौ तेरासीसे विभक्त एक सौ सैंतीस कला प्रमाण अन्तर है ॥५६८॥

विशेषार्थ—धातकीखण्डका विस्तार ४ लाख यो०, चन्द्र संख्या १२ और इनका बिम्ब विस्तार ($\frac{56}{61}$ × $\frac{53}{54}$) = $\frac{2968}{3294}$ योजन है। उपर्युक्त नियमानुसार दो चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण इसप्रकार है—

($\frac{1000000}{1}$ − $\frac{2968}{3294}$) ÷ $\frac{53}{54}$ = $\frac{1199999}{1}$

= ६६६६५$\frac{133}{173}$ योजन अन्तराल है।

कालोदधि-स्थित चन्द्रोंका अन्तर-प्रमाण—

चउसीद-णवसुण्ण-तिया, अंक कमे सुण्ण-एक्क-चारि कला।
इगि - अट्ठ - दुग - इगि - अहिदा, अंतरमिणुणं कालोदे ॥५६९॥

३८०९४। $\frac{410}{1128}$।

अर्थ—कालोदधि समुद्रमें चन्द्रोंके बीच चार, नौ, शून्य, आठ और तीन इन अंकोंके क्रमसे अड़तीस हजार चौरानवे योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित चार सौ दस कला अधिक अन्तर है ॥५६९॥

विशेषार्थ—कालोदधिका वि० ८ लाख यो०, चन्द्र संख्या ४२ और इनका बिम्ब विस्तार ($\frac{56}{61}$ × $\frac{53}{54}$) = $\frac{1148}{1281}$ योजन है। उपर्युक्त नियमानुसार यहांके दो चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण इसप्रकार है—

$$\left(\frac{^{\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ}} - \frac{^{\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ}}\right) \div \frac{^{\circ\circ}}{^{\circ\circ}} = \frac{^{\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ}}$$

$= ३८०९४\frac{^{\circ\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ\circ}}$ योजन अन्तराल है।

पुष्करार्ध-स्थित चन्द्रोंका अन्तर-प्रमाण—

एक्क-चउ-ट्ठाण-सुगा, अंक-कमे सत्त-छक्क-एक्क कला।
सय-चउ-पंच - विहत्ता, अंतरमिंदूण पोक्खरद्धम्मि ॥५७०॥

२२२२१ । $\frac{^{\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ}}$ ।

अर्थ—पुष्करार्द्ध द्वीपमें चन्द्रोंके मध्य एक और चार स्थानोंमें दो इन अंकोंके क्रमसे बाईस हजार दो सौ इकतीस योजन और पांच सौ उनंचाससे विभक्त एक सौ सड़सठ कला अधिक अन्तर है ॥५७०॥

विशेषार्थ—पुष्करार्धद्वीपका विस्तार ८ लाख यो० है। चन्द्र संख्या ७२ और इनका बिम्ब विस्तार $\left(\frac{^{\circ\circ}}{^{\circ\circ}} \times \frac{^{\circ\circ}}{^{\circ\circ}}\right) = \frac{^{\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ}}$ योजन है। उपर्युक्त नियमानुसार यहांके दो चन्द्रोंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण इसप्रकार है—

$$\left(\frac{^{\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ}} - \frac{^{\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ}}\right) \div \frac{^{\circ\circ}}{^{\circ\circ}} = \frac{^{\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ\circ}}$$

$= २२२२१\frac{^{\circ\circ\circ}}{^{\circ\circ\circ}}$ योजन अन्तराल है।

चन्द्रकिरणोंकी गति—

णिय-णिय-पढम-पहाणं, अमदीणं अंतर-प्पमाण-समं।
णिय-णिय-लेस्सगदीओ, सव्व - मियंकाण पत्तेक्कं ॥५७१॥

अर्थ—अपने-अपने प्रथम पथ और अमतिवोंके अन्तर-प्रमाणके बराबर सब चन्द्रोंमेंसे प्रत्येकको अपनी-अपनी किरणोंकी गतियां होती हैं ॥५७१॥

लवणसमुद्रादिमें चन्द्र-वीथियोंका प्रमाण—

तीसं अडवी ति-सया, पण्णरस-जुदा य जाल पंच-सया।
लवण - ण्हवंबि - चउक्के, चंदाणं होंति वीहीओ ॥५७२॥

३० । १८० । ३१५ । ५४० ।

अर्थ—लवणसमुद्रादि चारमें चन्द्रोंकी क्रमशः तीस, एकसौ अस्सी, तीन सौ पन्द्रह और पांच सौ चालीस वीथियां हैं ॥५७२॥

विशेषार्थ—५१०$\frac{५}{६१}$ योजन प्रमाणवाली एक संचार भूमिमें १५ वीथियाँ होती हैं, जिसे दो चन्द्र पूरा करते हैं। लवणोदधि आदिमें क्रमशः ४, १२, ४२ और ७२ चन्द्र हैं। जब दो चन्द्रोंके प्रति १५ वीथियाँ हैं, तब ४, १२, ४२ और ७२ चन्द्रोंके प्रति कितनी वीथियाँ होंगी? इसप्रकार त्रैराशिक करनेपर वीथियोंका क्रमशः पृथक्-पृथक् प्रमाण लवणोदधिमें ($\frac{१५ \times ४}{२}$) = ३०, धा० खण्डमें ($\frac{१५ \times १२}{२}$) = ९०, कालोदधिमें ($\frac{१५ \times ४२}{२}$) = ३१५ और पुष्करार्धद्वीपमें ($\frac{१५ \times ७२}{२}$) = ५४० प्राप्त होता है।

लवणोदधि आदिमें चन्द्रकी मुहूर्त-परिमित गतिका प्रमाण प्राप्त करनेकी विधि—

णिय-पह-परिहि-पमाणे, पुह-पुह दु-सएक्क-बीस-संगुणिदे ।
तेरस-सहस्स-सग-सय-पणुवीस-हिदे मुहुत्त[1] - गदिमाणं ॥५७३॥

$\frac{१३७२५}{}$ ।

अर्थ—अपने-अपने पथोंकी परिधिके प्रमाणको पृथक्-पृथक् दो सौ इक्कीस (२२१) से गुणाकर लब्धमें तेरह हजार सात सौ पच्चीसका भाग देनेपर मुहूर्तकाल परिमित गतिका प्रमाण आता है ॥५७३॥

लवणसमुद्रादिमें चन्द्रोंकी शेष प्ररूपणा—

सेसाओ वण्णणाओ, जंबूदीवम्मि जाओ चंदाणं ।
ताओ लवणे धादइसंडे कालोद - पुक्खरद्धेसुं ॥५७४॥

एवं चंदाणं परूवणा समत्ता ।

अर्थ—लवणोदधि, धातकीखण्ड, कालोदधि और पुष्करार्ध द्वीपमें स्थित चन्द्रोंका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके चन्द्रोंके वर्णन सदृश जानना चाहिए ॥५७४॥

इसप्रकार चन्द्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

लवणसमुद्रादिमें सूर्योंका प्रमाण—

चत्तारि होंति लवणे, बारस सूरा य धादईसंडे ।
बादाला कालोवे, बावत्तरि पुक्खरद्धम्मि ॥५७५॥

४ । १२ । ४२ । ७२ ।

---

१. ब. मुहुत्तगदि, ब. मुहुत्तं ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें चार, धातकीखण्डमें बारह, कालोदधिमें बयालीस और पुष्करार्ध-द्वीपमें बहत्तर सूर्य स्थित हैं ॥५७५॥

उपर्युक्त सूर्योंका अवस्थान, प्रत्येकका चारक्षेत्र और
चारक्षेत्रका विस्तार—

णिय-णिय-रवीण अद्ध, बीव-समुद्दाण एक्क-भागम्मि ।
अवरे भागे अद्धं, चरेदि पंति - क्कमेणेव ॥५७६॥

अर्थ—अपने-अपने सूर्योंका अर्ध भाग द्वीप-समुद्रोंके एक भागमें और अर्धभाग दूसरे भागमें पंक्ति क्रमसे संचार करता है ॥५७६॥

एक्केक्क-चारखेत्तं, दो-दो हुमणीण होदि सव्वासो ।
पंच-सया दस - सहिदा, विक्खंभ - विसादिरित्ता य ॥५७७॥

५१० । ४९ ।

अर्थ—दो-दो सूर्योंका एक-एक चारक्षेत्र होता है। इस चारक्षेत्रका विस्तार सूर्यबिम्बके विस्तारसे अधिक पाँच सौ दस (५१०$\frac{४९}{६१}$) योजन-प्रमाण है ॥५७७॥

वीथियोंका प्रमाण एवं विस्तार—

एक्केक्क-चारखेत्ते, चउसीदि-जुद-सदेक्क-वीहीओ ।
सव्वासो अडदालं, जोयणया एक्क - सट्ठि - हिदा ॥५७८॥

१८४ । ४९ ।

अर्थ—एक-एक चारक्षेत्रमें एक सौ चौरासी (१८४) वीथियाँ होती हैं। इनका विस्तार इकसठसे भाजित अड़तालीस ($\frac{४८}{६१}$) योजन है ॥५७८॥

लवणसमुद्रादिमें प्रत्येक सूर्यके बीच तथा प्रथम पथ एवं जगतीके मध्यका
अन्तर प्राप्त करनेकी विधि—

लवणादि-चउक्काणं, आस-पमाणम्मि णिय-रवि-दलाणं ।
विक्खंभे पेलित्ता, तत्तो णिय—
भजिदूणं जं लद्धं, तं पत्तेक्कं रवीण विच्चालं ।
तस्स य अद्ध - पमाणं, जगदी-आसण्ण-मग्गाणं ॥५८०॥

अर्थ—लवणोदधि आदि चारोंके विस्तार-प्रमाणमेंसे अपने आधे सूर्य-बिम्बोंको घटाकर शेषमें अर्ध-सूर्य-संख्याका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना प्रत्येक सूर्यका और इससे आधा जगती एवं आसन्न (प्रथम) मार्गके बीचका अन्तराल प्रमाण होता है ।। ५७९-५८०।।

लवणसमुद्रमें प्रत्येक सूर्यका और जगतीसे प्रथम पथका अन्तराल—

लवणउदि-सहस्साणि, णव-सय-लवणउदि जोयणाणि पि ।
तेरसभेत्त - कलाओ, भजिदव्वा एक्कसट्ठीए ।।५८१।।

९९९९९ । $\frac{१३}{६१}$ ।

एत्तियमेत्त - पमाणं, पत्तेक्कं दिणयराण विच्चालं ।
लवणोवे तस्सद्धं, जगदीदो जियय - पढम - मग्गाणं[1] ।।५८२।।

अर्थ—निन्यानवें हजार नौ सौ निन्यानवें योजन और इकसठसे भाजित तेरह कला, इतना लवणसमुद्रमें प्रत्येक सूर्यके अन्तरालका प्रमाण है और इससे आधा जगती एवं निज प्रथम मार्गके बीच अन्तर है ।।५८१-५८२।।

विशेषार्थ—लवणसमुद्रका विस्तार दो लाख योजन, सूर्य संख्या ४ और इनका बिम्ब विस्तार ($\frac{६}{६१} \times ४$) = $\frac{२४}{६१}$ यो० है। उपर्युक्त नियमानुसार दो सूर्योंका पारस्परिक अन्तर इसप्रकार है—$\frac{२०००००}{४} - \left(\frac{२४}{६१} \times \frac{१}{२}\right) \div \frac{१}{२} = \frac{१००००}{१} - \frac{१२}{६१} = ९९९९९\frac{१३}{६१}$ योजन है। तथा प्रथम पथसे जगतीका अन्तर $\frac{२०००००}{४} - \frac{१००००}{१} = ९९९९९ - \frac{१२}{६१} = ४९९९९\frac{४९}{६१}$ योजन प्रमाण है।

धातकीखण्डस्थ सूर्य आदिके अन्तर प्रमाण—

छावट्ठि-सहस्साणि, छस्सय-पण्णट्ठि जोयणाणि कला ।
इगिसट्ठी - भत्त - सयं, तेसीदि - जुद - सयं हारो ।।५८३।।

६६६६५ । $\frac{१११}{६१}$ ।

एवं अंतरमाणं, एक्केक्क - रवीण चारईसंडे ।
लेस्सागदी तदद्धं, तस्सरिसा उवहि - आबाहा ।।५८४।।

अर्थ—छयासठ हजार छह सौ पैंसठ योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ इकसठ कला, इतना धातकीखण्डमें प्रत्येक सूर्यका अन्तराल प्रमाण है। इससे आधी किरणोंकी गति और उसके सदृश ही समुद्रका अन्तराल भी है ।।५८४।।

---

१. द. ब. क. ज. मग्गा ।

विशेषार्थ—धा० खण्ड का विस्तार ४ लाख योजन, सूर्य १२ और इनका बिम्ब विस्तार $(\frac{४८}{६१} \times \frac{१२}{१})=\frac{५७६}{६१}$ योजन है। यहाँ दो सूर्योंका पारस्परिक अन्तर $^{४००००}-(\frac{४८}{६१}\times\frac{१२}{१})\div\frac{१२}{१}=^{१९९९९}\frac{५६५}{६१}=६६६६\frac{१५}{६१}$ योजन है।

किरणोंकी गति $(^{१९९९९}\frac{५६५}{६१}\times\frac{१}{२})=३३३२\frac{१९३}{१२२}$ योजन और प्रथम पथसे द्वीपकी जगती का अन्तर भी $३३३२\frac{१९३}{१२२}$ योजन ही है।

कालोदधिमें स्थित सूर्य आदिके अन्तर प्रमाण—

अट्ठत्तीस-सहस्सा, चउणउदी जोयणाणि पंच सया।
अट्ठाहत्तरि हारो, बारसय - सयाणि इगिसीदी ॥५८५॥

$३८०९४\frac{५७८}{१२८१}$।

एवं अंतरमाणं, एक्केक्क-रवीण काल-सलिलम्मि।
तेस्सागदी तदद्धं, तस्सरिसं उवहि - आबाहा ॥५८६॥

अर्थ—अड़तीस हजार चौरानवें योजन और बारह सौ इक्यासीसे भाजित पाँच सौ अठत्तर भाग, यह कालोदसमुद्रमें एक-एक सूर्यका अन्तराल प्रमाण है। इससे आधी किरणोंकी गति और उसके ही बराबर समुद्रका अन्तर भी है ॥५८५-५८६॥

विशेषार्थ—कालोदधिका विस्तार ८ लाख योजन, सूर्य ४२ और इनका बिम्ब विस्तार $(\frac{४८}{६१}\times\frac{१२}{१})=\frac{५७६}{६१}$ योजन है। $(^{८००००}-\frac{५७६}{६१})\div\frac{१२}{१}=^{९९९९}\frac{५६५}{६१}\div\frac{१२}{१}=३८०९४\frac{५७८}{१२८१}$ योजन दो सूर्योंका पारस्परिक अन्तर है।

किरणोंकी गति $^{१९९९९}\frac{५६५}{६१}\times\frac{१}{२}=१९०४७\frac{१९३}{१२२}$ योजन और प्रथम पथसे समुद्रकी जगतीका अन्तर भी $१९०४७\frac{१९३}{१२२}$ योजन है।

पुष्करार्धगत सूर्यादिके अन्तर-प्रमाण—

बाणउदि-सहस्साणि, बे-सय-इगिवीस जोयणा अंसा।
दोण्हि-सया उणवण्णं, हारो उणवण्ण-पंच-सया ॥५८७॥

$९२२२१\frac{२५१}{५५१}$।

एवं अंतरमाणं, एक्केक्क - रवीण पोक्खरद्धम्मि।
तेस्सागदी तदद्धं, तस्सरिसा उदहि - आबाहा ॥५८८॥

अर्थ—बाईस हजार दो सौ इक्कीस योजन और पाँच सौ उनंचाससे भाजित दो सौ उनतालीस भाग, यह पुष्करार्धद्वीपमें एक-एक सूर्यका अन्तराल-प्रमाण है। इससे आधी किरणोंकी गति और उसके बराबर ही समुद्रका अन्तर भी है ॥५८७-५८८॥

विशेषार्थ—पुष्करार्धद्वीपका विस्तार ८ लाख यो०, सूर्य संख्या ७२ और इनका बिम्ब विस्तार ($\frac{४८}{६१} \times \frac{२१}{६१}$) = $\frac{१००८}{३७२१}$ योजन है। पूर्व नियमानुसार यहाँके दो सूर्योंका पारस्परिक अन्तर प्रमाण इसप्रकार है—

($\frac{८०००००}{७२} - \frac{१००८}{३७२१}$) ÷ $\frac{२१}{६१}$ = $\frac{१३५६५५१८}{३७२१}$

= २२२२१$\frac{३३३}{३७२१}$ योजन अन्तराल है। किरणोंकी गति = $\frac{१३५६५५१८}{१२२१}$ = १११०$\frac{५५४}{३७२१}$ योजन प्रमाण है और प्रथम पथसे द्वीपकी जगतीका अन्तर भी इतना ही है।

ताओ आबाहाओ, दोसुं पासेसु संठिद - रवीणं।
चारक्खेत्तब्भहिया, अब्भंतरए बहिं ऊणा ॥५८९॥

अर्थ—दो पार्श्वभागोंमें स्थित सूर्योंके ये अन्तर अभ्यन्तरमें चारक्षेत्रसे अधिक और बाह्यमें चारक्षेत्रसे रहित हैं ॥५८९॥

जम्बूद्वीपमें अन्तिम मार्गसे अभ्यन्तरमें किरणोंकी गतिका प्रमाण—

जंबूयंके दोण्हं, लेस्सा वच्चंति चरिम - मग्गादो।
अब्भंतरए णभ-तिय-तिय-सुण्णा पंच ओयणया ॥५९०॥

५०३३०।

अर्थ—जम्बूद्वीपमें अन्तिम मार्गसे अभ्यन्तरमें दोनों चन्द्र-सूर्योंकी किरणें शून्य, तीन, तीन, शून्य और पाँच इस अंक क्रमसे पचास हजार तीन सौ तीस (५०३३०) योजन प्रमाण जाती हैं ॥५९०॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपका मेरु पर्वत पर्यन्त व्यास ५० हजार योजन है। गाथा ५८९ के नियमानुसार इसमें लवणसमुद्र सम्बन्धी ३३० योजन चारक्षेत्रका प्रमाण जोड़ देनेपर जम्बूद्वीपमें अन्तिम मार्गसे अभ्यन्तरमें किरणोंका प्रसार (५००००+३३०) = ५०३३० योजन पर्यन्त होता है।

लवणसमुद्रमें जम्बूद्वीपस्थ चन्द्रादिकी किरणोंकी गतिका प्रमाण—

चरिम-पहादो बाहिं, लवणे बो-णभ-ख-ति-तिय-जोयणया।
वच्चइ लेस्सा अंसा, सयं च हारा तिसोधि-अहिय-सया ॥५९१॥

३३००२। $\frac{१००}{३३}$।

अर्थ—लवणसमुद्रमें अन्तिम पथसे बाह्यमें दो, शून्य, शून्य, तीन और तीन, इस अंक क्रमसे तेंतीस हजार दो योजन और एक सौ तेरासी भागोंमेंसे सौ भाग प्रमाण किरणें जाती हैं ॥५९१॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके छटे भागका प्रमाण ($\frac{१००००००}{६}$) = ३३३३३$\frac{२}{३}$ यो० है। गाथा ५८९ के नियमानुसार इसमेंसे लवणसमुद्र सम्बन्धी चारक्षेत्रका प्रमाण घटा देनेपर (३३३३३$\frac{२}{३}$ — ३३०$\frac{१६}{१८३}$) = ३३००२$\frac{१००}{१८३}$ योजन शेष रहते हैं। अर्थात् लवणसमुद्रमें अन्तिम पथसे बाह्यमें किरणोंकी गति ३३००२$\frac{१००}{१८३}$ यो० पर्यन्त होती है।

जम्बूद्वीपस्थ अभ्यन्तर और बाह्य पथ स्थित सूर्यकी
किरणोंकी गतिका प्रमाण—

पढम-पह-संठियाणं, सेस्स-गदी णभ-दु-अट्ठ-णव-चउरो।
अंक - कमे जोयणया, अब्भंतरए समुद्दिट्ठं ॥५९२॥

४९८२०।

अर्थ—प्रथम पथ स्थित सूर्यकी किरणोंकी गति अभ्यन्तर पथमें शून्य, दो, आठ, नौ और चार, इन अंकोंके क्रमसे उनंचास हजार आठ सौ बीस योजन पर्यन्त फैलती है। ऐसा जिनेन्द्र-देवने कहा है ॥५९२॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपके अर्ध व्यासमेंसे द्वीप सम्बन्धी चारक्षेत्रका प्रमाण १८० योजन घटा देनेपर (५००००—१८०) = ४९८२० योजन शेष रहा। यही मेरु पर्वतके मध्यभागसे लगाकर अभ्यन्तर वीथी पर्यन्त सूर्यकी किरणोंकी गतिका प्रमाण है।

बाहिर-भागे सेस्सा, वड्ढंति ति-एक्क-पण-ति-तिय-कमसो।
जोयणया तिय - भागं, सेस - पहे हाणि - वड्ढीओ ॥५९३॥

३३५१३।$\frac{१}{३}$।

अर्थ—बाह्यभागमें सूर्यकी किरणें तीन, एक, पाँच, तीन और तीन इस अंक क्रमसे तेंतीस हजार पाँच सौ तेरह योजन और एक योजनके तीन भागोंमेंसे एक भाग पर्यन्त फैलती हैं। शेष पथोंमें किरणोंकी क्रमशः हानि और वृद्धि होती है ॥५९३॥

विशेषार्थ—लवणसमुद्रके व्यासका छठा भाग ($\frac{१००००००}{६}$) = ३३३३३$\frac{२}{३}$ योजन होता है। इसमें द्वीप सम्बन्धी चारक्षेत्रका प्रमाण १८० योजन मिलानेपर (३३३३३$\frac{२}{३}$ + १८०) = ३३५१३$\frac{१}{३}$ योजन होता है। अर्थात् अभ्यन्तर पथमें स्थित सूर्यकी किरणें लवणसमुद्रके छटे भाग (३३५१३$\frac{१}{३}$ योजन) पर्यन्त फैलती हैं।

लवणसमुद्रादिमें किरणोंका फैलाव—

लवण-प्पहुदि-चउक्के, णिय-णिय-खेत्तेसु दिणयर-मयंका।
चरंति ताव लेस्सा, अण्णक्खेत्तं ण कइया वि ॥५६४॥

अर्थ—लवणसमुद्र आदि चारमें जो सूर्य एवं चन्द्र हैं उनकी किरणें अपने-अपने क्षेत्रोंमें ही जाती हैं, अन्य क्षेत्रमें कदापि नहीं जाती ॥५६४॥

लवणसमुद्रादिमें सूर्य-वीथियोंकी संख्या—

अट्ठासट्ठी ति-सया, लवणम्मि हवंति भाणु-वीहीओ।
चउदसर - एक्कारस - सयमेत्ता धायईसंडे ॥५६५॥

३६८ । ११०४ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें सूर्य-वीथियाँ तीन सौ अड़सठ हैं और धातकीखण्डमें ग्यारह सौ चार हैं ॥५६५॥

चउसट्ठी अट्ठ-सया, तिण्णि सहस्साणि कालसलिलम्मि।
चउवीसुत्तर-छ-सया, छच्च सहस्साणि पोक्खरद्धम्मि ॥५६६॥

३८६४ । ६६२४ ।

अर्थ—कालोदधिमें सूर्य-वीथियाँ तीन हजार आठ सौ चौंसठ और पुष्करार्ध द्वीपमें छह हजार छह सौ चौबीस हैं ॥५६६॥

विशेषार्थ—दो सूर्य सम्बन्धी १८४ वीथियाँ होती हैं अतः लवण—समुद्रगत ४ सूर्योंकी ($१८\frac{४}{२}$) = ३६८, धातकीखण्डगत १२ सूर्योंकी ($१८\frac{१२}{२}$) = ११०४, कालोदधिगत ($१८\frac{३५}{२}$) = ३८६४ और पुष्करार्धद्वीपगत ($१८\frac{७२}{२}$) = ६६२४ वीथियाँ हैं।

प्रत्येक सूर्यकी मुहूर्त-परिमित गतिका प्रमाण—

णिय-णिय-परिहि-पमाणे, सट्ठि-मुहुत्तेहि अवहिदे लद्धं।
पत्तेक्कं भाणूणं, मुहुत्त - गमणस्स परिमाणं ॥५६७॥

अर्थ—अपने-अपने परिधि-प्रमाणमें साठ मुहूर्तोंका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना प्रत्येक सूर्यकी मुहूर्तगतिका प्रमाण होता है ॥५६७॥

लवणसमुद्रादिमें सूर्योकी शेष प्ररूपणा—

सेसाओ वण्णणाओ, जंबूदीवम्मि जाओ सुमणीणं ।
ताओ लवणे धादइसंडे कालोद - पुक्खरद्धेसुं ॥५९८॥

सूरप्पहवणा ।

अर्थ—जम्बूद्वीप स्थित सूर्योका जो शेष वर्णन है, वही लवणसमुद्र, धातकीखण्ड, कालोद और पुष्करार्धके सूर्योका भी समझना चाहिए ॥५९८॥

इसप्रकार सूर्य-प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवणसमुद्रादिमें ग्रह संख्या—

बावण्णा तिण्णि-सया, होंति गहाणं च लवणजलहिम्मि ।
छप्पण्णा अब्भहियं, सहस्समेक्कं च धादईसंडे ॥५९९॥

३५२ । १०५६ ।

तिण्णि सहस्सा छस्सय, छण्णउदी होंति कालउवहिम्मि ।
छत्तीसब्भहियाणि, तेसट्ठि - सयाणि पुक्खरद्धम्मि ॥६००॥

३६९६ । ६३३६ ।

एवं गहाण परूवणा समत्ता ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें तीन सौ बावन और धातकीखण्डमें एक हजार छप्पन ग्रह हैं। कालोदधिमें तीन हजार छह सौ छयानवे और पुष्करार्धद्वीपमें छह हजार तीन सौ छत्तीस ग्रह हैं ॥५९९-६००॥

विशेषार्थ—एक चन्द्र सम्बन्धी ८८ ग्रह हैं, अतः लवणसमुद्रमें (८८×४)=३५२, धा० खण्डमें (८८×१२) = १०५६, कालोदधिमें (८८×४२) = ३६९६ और पुष्करार्धद्वीपमें (८८×७२)=६३३६ ग्रह हैं ।

इसप्रकार ग्रहोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवणसमुद्रादिमें नक्षत्र संख्या—

लवणम्मि बारसुत्तर-सयमेत्ताणि हवंति रिक्खाणि ।
छत्तीसेहि अहिया, तिण्णि - सया धादईसंडे ॥६०१॥

११२ । ३३६ ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें एक सौ बारह और धातकीखण्डमें तीन सौ छत्तीस नक्षत्र हैं ॥६०१॥

छाहत्तरि-जुत्ताइं, एक्करस-सयाणि कालसलिलम्मि ।
सोलुत्तर - दो - सहस्सा, दीव - वरे पोक्खरद्धम्मि ॥६०२॥

११७६ । २०१६ ।

अर्थ—कालोद समुद्रमें ग्यारह सौ छिहत्तर और पुष्करार्धद्वीपमें दो हजार सोलह नक्षत्र हैं ॥६०२॥

विशेषार्थ—एक चन्द्र सम्बन्धी २८ नक्षत्र हैं, इसलिए ४, १२, ४२ और ७२ चन्द्र सम्बन्धी नक्षत्र क्रमशः ११२, ३३६, ११७६ और २०१६ हैं।

नक्षत्रोंका शेष कथन—

सेसाओ वण्णणाओ, जंबूदीवम्मि जाओ रिक्खाणं ।
ताओ सयले धादइसंडे कालोद - पोक्खरद्धे सुं ॥६०३॥

एवं णक्खत्ताण पवणणा समत्ता ।

अर्थ—नक्षत्रोंका शेष वर्णन जैसा जम्बूद्वीपमें किया गया है उसी प्रकार लवणसमुद्र, धातकीखण्ड द्वीप, कालोद समुद्र और पुष्करार्धद्वीपमें समझना चाहिए ॥६०३॥

इसप्रकार नक्षत्रोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।

लवणसमुद्रादि चारोंकी ताराओंका प्रमाण—

दोण्हि किंचय लक्खाणि, सत्तट्ठी-सहस्स णव-सयाणि च ।
होंति हु लवणसमुद्दे, ताराणं कोडिकोडीओ ॥६०४॥

२६७९०००००००००००००० ।

अर्थ—लवणसमुद्रमें दो लाख सड़सठ हजार नौ सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥६०४॥

अट्ठ किंचय लक्खाणि, तिण्णि सहस्साणि सग-सयाणि पि ।
होंति हु धादइसंडे, ताराणं कोडकोडीओ ॥६०५॥

८०३७०००००००००००००० ।

अर्थ—धातकीखण्ड द्वीपमें आठ लाख तीन हजार सात सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥६०५॥

अट्ठावीसं लक्खा, कोडीकोडीण बारस-सहस्सा ।
पण्णासुत्तर - णव - सय - मुत्ता तारागि कालोदे ॥६०६॥

२८१२९५०००००००००००००००।

अर्थ—कालोद समुद्रमें अट्ठाईस लाख बारह हजार नौ सौ पचास कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥६०६॥

अट्ठत्तालं लक्खा, बावीस - सहस्स बे-सयाणि च ।
होंति हु पोक्खरदीवे, ताराणं कोडकोडीओ ॥६०७॥

४८२२२०००००००००००००००।

अर्थ—पुष्करार्ध द्वीपमें अड़तालीस लाख बाईस हजार दो सौ कोड़ाकोड़ी तारे हैं ॥६०७॥

विशेषार्थ—एक चन्द्र सम्बन्धी ६६९७५ कोड़ाकोड़ी तारागण हैं इसलिए लवणसमुद्र आदि चारोंमें ४, १२, ४२ और ७२ चन्द्र सम्बन्धी ताराओंका प्रमाण क्रमशः (६६९७५ कोड़ाकोड़ी × ४ =) २६७९०० कोड़ाकोड़ी, ८०३७०० कोड़ाकोड़ी, २८१२९५० कोड़ाकोड़ी और ४८२२२०० कोड़ाकोड़ी है।

ताराओंका शेष निरूपण—

सेसाओ वण्णणाओ, जंबूदीवस्स वण्णण - समाओ ।
णवरि विसेसो संखा, पण्णत्ता सोल - ताराणं ॥६०८॥

अर्थ—इनका शेष वर्णन जम्बूद्वीपके वर्णन सदृश है। विशेषता केवल यह है कि स्थिर ताराओंकी संख्या भिन्न-भिन्न है ॥६०८॥

लवणसमुद्रादि चारोंकी स्थिर ताराओंका प्रमाण—

एक्क-सयं उणवालं, लवणसमुद्दम्मि सोल-ताराओ ।
दस - उत्तरं सहस्सा, धीवम्मि य धादईसंडे ॥६०९॥

१३९। १०१०।

अर्थ—लवणसमुद्रमें एक सौ उनतालीस और धातकीखण्डमें एक हजार दस स्थिर तारे हैं ॥६०९॥

एक्कत्ताल-सहस्सा, बीसुत्तरमिगि-सयं च कालोवे ।
तेवण्ण-सहस्सा बे - सयाणि तीसं च पुक्खरद्धम्मि ॥६१०॥

४१११० । ५३२३० ।

अर्थ—कालोद समुद्रमें इकतालीस हजार एक सौ बीस और पुष्करार्धद्वीपमें तिरेपन हजार दो सौ तीस स्थिर तारे हैं ॥६१०॥

मनुष्यलोक स्थित सूर्य-चन्द्रोंका विभाग—

माणुसखेत्ते सविसो, छासट्ठो होंति एक्क-पासम्मि ।
दो - पासेसुं कुणुवा, तेत्तियमेत्ताणि ससंका ॥६११॥

६६ । ११२ ।

अर्थ—मनुष्य लोक के भीतर एक पार्श्व भागमें छयासठ और दोनों पार्श्वभागोंमें इससे दूने चन्द्र तथा इतने प्रमाण ही सूर्य हैं ॥६११॥

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपसे पुष्करार्धद्वीप पर्यन्त क्रमशः २+४+१२+४२+७२=(१३२) चन्द्र एवं इतने ही सूर्य हैं । इनका अर्धभाग अर्थात् (१३२÷२=) ६६ चन्द्र तथा ६६ सूर्य एक पार्श्वभागमें और इतने ही दूसरे पार्श्वभागमें संचार करते हैं ।

मनुष्यलोक स्थित सर्व ग्रह, नक्षत्र और अस्थिर-स्थिर
ताराओंका प्रमाण—

एक्करस-सहस्साणि, होंति गहा सोलसुत्तरा छ-सया ।
रिक्खा तिण्णि सहस्सा, छस्सय-छण्णउदि-अविरिसा ॥६१२॥

११६१६ । ३६९६ ।

अर्थ—मनुष्य लोकमें ग्यारह हजार छह सौ सोलह (११६१६) ग्रह और तीन हजार छह सौ छयानवें (३६९६) नक्षत्र हैं ॥६१२॥

अट्ठासीदी लक्खा, चालीस-सहस्स-सग-सयाणि पि ।
होंति हु माणुसखेत्ते, तारापं कोडकोडीओ ॥६१३॥

८८४०७०००००००००००००००० ।

अर्थ—मनुष्य क्षेत्रमें अठासी लाख चालीस हजार सात सौ कोड़ाकोड़ी अस्थिर तारे हैं ॥६१३॥

पंचाणउदि-सहस्सा, पंच-सया पंचतीस-अब्भहिया ।
खेत्तम्मि माणुसाणं, चेट्ठंते थोल - ताराओ ॥६१४॥

९५५३५ ।

अर्थ—मनुष्य क्षेत्रमें पंचानबे हजार पांच सौ पैंतीस स्थिर तारा स्थित हैं ॥६१४॥

मनुष्यलोकके ज्योतिषीदेवोंका एकत्रित प्रमाण—

	द्वीप-समुद्रोंके नाम	चन्द्र	सूर्य	ग्रह	नक्षत्र	तारा	
						अस्थिर तारा	स्थिर तारा
१.	जम्बूद्वीप	२	२	१७६	५६	१३३९५० कोड़ाकोड़ी	३६
२.	लवणसमुद्र	४	४	३५२	११२	२६७९०० ,,	१३६
३.	धातकीखण्ड	१२	१२	१०५६	३३६	८०३७०० ,,	२०१०
४.	कालोदसमुद्र	४२	४२	३६९६	११७६	२८१२९५० ,,	४११२०
५.	पुष्करार्धद्वीप	७२	७२	६३३६	२०१६	४८२१२०० ,,	५३२३०
योग		१३२	१३२	११६१६	३६९६	८८४०७०० कोड़ा-कोड़ी	९५५३५

ग्रहों की संचरण विधि—

सव्वे ससिणो सूरा, णक्खत्ताणि गहा य ताराणि ।
णिय-णिय-पह-पणिधीसुं पंतीए चरंति णभखंडे ॥६१५॥

अर्थ—चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह और तारा, ये सब अपने-अपने पथोंकी प्रणिधियोंके नभ-खण्डोंपर पंक्तिरूपसे संचार करते हैं ॥६१५॥

ज्योतिष देवोंकी मेरु प्रदक्षिणाका निरूपण—

सव्वे कुणंति मेरुं, पयाहिणं जंबुदीव-जोदि-गणा ।
अड - वमाणा धावइखंडे तह पोक्खरद्धम्मि ॥६१६॥

एवं चर-गिहाणं चारो समत्तो ।

अर्थ—जम्बूद्वीपमें सब ज्योतिषी देवोंके समूह मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं, तथा धातकीखण्ड और पुष्करार्धद्वीपमें आधे ज्योतिषी देव मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं ॥६१६॥

इसप्रकार चर ग्रहोंका चार समाप्त हुआ ।

अढ़ाई द्वीपके बाहर अचर ज्योतिषोंकी प्ररूपणा—

मणुसुत्तरादु परदो, सयंभुरमणो त्ति दीव-उदहीणं ।
अचर - सरूव - ठिदाणं, जोइ - गणाणं परूवेमो ॥६१७॥

अर्थ—मानुषोत्तर पर्वतसे आगे स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त द्वीप-समुद्रोंमें अचर स्वरूपसे स्थित ज्योतिषी देवोंके समूहोंका निरूपण करता हूँ ॥६१७॥

मानुषोत्तरसे स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त स्थित चन्द्र-सूर्योंकी
विन्यास विधि—

एत्तो मणुसुत्तर-गिरिंद-पहुदि जाव सयंभुरमण-समुद्दो त्ति संठिद-चंदाइच्चाणं विण्णास-विहिं वत्तइस्सामो ।

अर्थ—यहाँसे आगे मानुषोत्तर पर्वतसे लेकर स्वयंभूरमण-समुद्र पर्यन्त स्थित चन्द्र-सूर्योंकी विन्यास-विधि कहता हूँ—

तं जहा—माणुसुत्तर-गिरिंदादो पण्णास-सहस्स-जोयणाणि गंतूण पढम-वलयं[1] होदि । तत्तो परं पत्तेक्कमेक्क-सयल-जोयणाणि गंतूण विदियादि-वलयाणि होंति जाव सयंभुरमण-समुद्दो त्ति । णवरि सयंभुरमण-समुद्दस्स वेदीए पण्णास-सहस्स-जोयणाणिमपाविय तम्मि पदेसे[2] चरिम-वलयं होदि । एवं सव्व-वलयाणि केत्तिया होंति त्ति उत्ते सोदस-सयल-जोयणेहि भजिद-जगसेढी पुणो तेवीस-वलएहि परिहीणं होदि । तस्स ठवणा १४०००० रि २३ ।

अर्थ—वह इसप्रकार है—मानुषोत्तर पर्वतसे पचास हजार योजन आगे जाकर प्रथम वलय है । इसके आगे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त प्रत्येक एक सौ योजन आगे जाकर द्वितीयादिक वलय हैं । विशेष इतना है कि स्वयंभूरमण समुद्रकी वेदीसे पचास हजार योजनोंको न पाकर अर्थात् स्वयंभूरमण समुद्रकी वेदीसे पचास हजार योजन इधर ही उस प्रदेशमें अन्तिम वलय है । इसप्रकार सर्व

---

१. द. ब. क. वलयं । २. द. ब. क. ज. पदेसं ।

वलय कितने होते हैं ? ऐसा कहनेपर उत्तर देते हैं कि जगच्छ्रेणीमें चौदह लाख योजनोंका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसमेंसे तेईस कम करनेपर समस्त वलयोंका प्रमाण होता है। उसकी स्थापना— (जगच्छ्रेणी ÷ १४००००० यो०)-२३ है।

उपर्युक्त वलयोंमें स्थित चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण—

एवाणं वलयाणं संठिद-चंदाइच्च-पमाणं वत्तइस्सामो - पोक्खरवर - दीवट्ठस्स पढम-वलए संठिद-चंदाइच्चा पत्तेक्कं चउदालब्भहिय - एक्क - सयं होदि ।१४४।१४४। पुक्खरवर-णीररासिस्स पढम-वलए संठिद-चंदाइच्चा पत्तेक्कं अट्ठासीदि-अब्भहिय-दोण्णि-सयमेत्तं होदि ।

हेट्ठिम-दीवस्स वा रयणायरस्स वा पढम-वलए संठिद-चंदाइच्चादो तदणंतरोवरिम-दीवस्स वा णीररासिस्स वा पढम - वलए संठिद - चंदाइच्चा पत्तेक्कं दुगुण-दुगुणं होऊण गच्छइ जाव सयंभूरमण-समुद्दो त्ति । तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—

अर्थ—इन वलयोंमें स्थित चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण कहते हैं—पुष्करार्धद्वीपके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र तथा सूर्य प्रत्येक एक सौ चवालीस (१४४ — १४४) हैं। पुष्करवर समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र एवं सूर्य प्रत्येक दो सौ अठासी (२८८ — २८८) प्रमाण हैं। इसप्रकार अधस्तन द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योंकी अपेक्षा तदनन्तर उपरिम द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र और सूर्य प्रत्येक स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त दुगुने-दुगुने होते चले गये हैं। उनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—

अन्तिम समुद्रके प्रथम-वलय स्थित चन्द्र-
सूर्योंका प्रमाण—

सयंभूरमणसमुद्दस्स पढम-वलए संठिद - चंदाइच्चा अट्ठावीस-लक्खेण भाजिद-जग-सेढीओ पुणो चउ-रूव-हिद-सत्तावीस-रूवेहि अब्भहियं होदि । तच्चेदं । $\frac{१_{२८०००००}}{२^{७}}$ ।

अर्थ—स्वयंभूरमण समुद्रके प्रथम वलयमें स्थित चन्द्र और सूर्य प्रत्येक अट्ठाईस लाखसे भाजित नौ जगच्छ्रेणी और चार रूपोंसे भाजित सत्ताईस रूपोंसे अधिक हैं। वह यह है— (जगच्छ्रेणी ९÷२८ लाख) + $\frac{२७}{४}$ ।

---

१. ध. पु. ३, २८०००००। $\frac{२७}{४}$ ।

प्रत्येक द्वीप-समुद्रके प्रथम-वलयके चन्द्र-सूर्य प्राप्त करनेकी विधि—

पोक्खरवरदीवद्ध-पहुदि जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति पत्तेक्क-दीवस्स वा उवहिस्स वा पढम-वलय-संठिद-चंदाइच्चाणं आणयण-हेदु इमा सुत्त-गाहा—

पोक्खरवरबहि-पहुदि, उवरिम-दीओवहीण विक्खंभं ।
लक्ख-हिदं सय-गुणिदं, सग-सग-दीउवहि-पढम-वलय-फलं ॥६१८॥

अर्थ—पुष्करार्धद्वीपसे लेकर स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त प्रत्येक द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम-वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण लानेके लिए यह गाथा-सूत्र है—

पुष्करवर समुद्र आदि उपरिम द्वीप समुद्रोंके विस्तारमें एक लाखका भाग देकर जो लब्ध प्राप्त हो उसे सौसे गुणा करनेपर अपने-अपने द्वीप-समुद्रोंके प्रथम-वलयमें स्थित चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण प्राप्त होता है ॥६१८॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त नियमानुसार तीसरे समुद्र, चतुर्थ द्वीप एवं स्वयंभूरमणसमुद्रके प्रथम वलय स्थित चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण इसप्रकार है—

(१) तृतीय पुष्करवरसमुद्रका विस्तार ३२ लाख योजन है। इसके प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण $\left(\frac{३२०००००\times १००}{१०००००}\right)=२८८$ — २८८ है।

(२) वारुणीवर नामक चतुर्थ द्वीपका विस्तार ६४ लाख योजन है। इसके प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण $\left(\frac{६४०००००\times १००}{१०००००}\right)=५७६$ — ५७६ है।

(३) स्वयंभूरमण समुद्रका विस्तार $=\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{१}+७५०००$ है। इसके प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्योंका पृथक्-पृथक् प्रमाण $\left[\frac{\text{जगच्छ्रेणी}}{१}+७५०००\right]\times \frac{१००}{१०००००}$।

$$=\frac{१\ \text{जगच्छ्रेणी}}{२८०००००}+\frac{७५०००\times १}{१००००००}=\frac{१\ \text{जगच्छ्रेणी}}{२८०००००}+\frac{२७}{४}\ \text{है।}$$

प्रत्येक वलयमें चयका प्रमाण—

विजयं पुण पडिवलयं पडि पत्तेक्कं चउत्तर - कमेण गच्छह जाव सयंभूरमण-समुद्दं त्ति। णवरि दीवस्स वा उवहिस्स वा दुगुण-आदि-पढम-वलय-दुगं मोत्तूण सव्वत्थ चउत्तर-कमं वत्तव्वं।

अर्थ—यहाँ पर चय प्रत्येक वलयके प्रत्येक स्थानमें चार-चार उत्तर क्रमसे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त चला गया है। विशेष इतना है कि द्वीप अथवा समुद्रके प्रथम वलय पर जहाँ राशि दुगुनी होती है, उसे छोड़कर सर्वत्र वृद्धिका क्रम चार-चार जानना चाहिए।

विशेषार्थ— जैसे—मानुषोत्तर पर्वतसे बाहर जो पुष्करार्ध द्वीप है, उसके प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्यकी संख्या १४४-१४४ है। उसके दूसरे, तीसरे आदि वलयोंमें चार-चारकी वृद्धि होते हुए क्रमशः १४८, १५२, १५६, १६०, १६४, १६८, १७२, १७६, १८० .... है। इसप्रकार यह वृद्धि पुष्करार्ध द्वीपके अन्तिम वलय पर्यन्त होगी और इस द्वीपके आगे पुष्करवरसमुद्रके प्रथम वलयमें राशि दुगुनी अर्थात् (१४४ × २ =) २८८ हो जायगी। यह राशि प्रत्येक द्वीप-समुद्रके प्रथम वलयमें दुगुनी होती है इसीलिए चय-वृद्धिके क्रममें इस प्रथम वलयको छोड़ दिया गया है।

मानुषोत्तर पर्वतके आगे प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्योंके अन्तरालका प्रमाण—

माणुसुत्तरगिरिदादो पण्णास-सहस्स-जोयणाणि गंतूण पढम-वलयम्मि ठिद-चंदाइच्चाणं विच्चालं सत्ततीस-सहस्स-णव-सय-चोद्दस-जोयणाणि पुणो छहत्तरि-भाव-सदंसा तेसीदि-हद-एक्क-सय-छेदेहि भजिदमेत्तं होदि। तं चेदं ४७९१४$\frac{७६}{१८३}$।

अर्थ—मानुषोत्तर पर्वतसे आगे पचास हजार योजन जाकर प्रथम-वलयमें चन्द-सूर्योंका अन्तराल सैंतालीस हजार नौ सौ चौदह योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ छयत्तर भाग प्रमाण अधिक है। वह यह है—४७९१४$\frac{७६}{१८३}$।

विशेषार्थ—मानुषोत्तरपर्वतसे ५० हजार योजन आगे जाकर प्रथम-वलय है। जिसमें १४४ चन्द्र और १४४ सूर्य स्थित हैं। मानुषोत्तर पर्वतका सूची-व्यास ४५ लाख योजन है। इसमें दोनों पार्श्वभागोंका ५०-५० हजार (१ लाख) योजन वलय-व्यास मिला देनेपर (४५ लाख + १ लाख) = ४६ लाख योजन सूची-व्यास होता है। इसकी बादर परिधि (४६०००००×३)=१३८००००० लाख है। इसमें वलय-व्यास सम्बन्धी चन्द्र-सूर्योंके प्रमाण (१४४+१४४)=२८८ का भाग देकर दोनोंके बिम्ब विस्तारका प्रमाण घटा देनेपर चन्द्रसे चन्द्रका और सूर्यसे सूर्यका अन्तर प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$\frac{१३८०००००}{२८८}$ — $\frac{१०५}{६१}$ = $\frac{१४१०१३१४}{१८३}$ = ४७९१४$\frac{७६}{१८३}$ योजन अन्तर प्रमाण है।

विद्वानों द्वारा विचारणीय—

ग्रन्थकारने चन्द्र-सूर्यके बिम्ब व्यास को एक साथ जोड़कर ($\frac{५६}{६१}$ + $\frac{४९}{६१}$) = $\frac{१०५}{६१}$ योजन घटाकर अन्तर-प्रमाण निकाला है किन्तु चन्द्र एवं सूर्य बिम्बोंका व्यास एक सदृश नहीं है, अतः जितना अन्तर अग्रका चन्द्रसे है उतना ही सूर्यका सूर्यसे नहीं हो सकता है। यथा—

$\left(\frac{१३५०००००}{१४४}=\frac{५३१२५००}{}\right)-\frac{३५}{६६}=९५८२४$ योजन प्रथम वलयमें चन्द्रसे चन्द्रका अन्तर है और $\frac{५३१२५००}{}-\frac{३५}{६६}=९५८२५\frac{३}{४}$ योजन वहींके एक सूर्यसे दूसरे सूर्यका अन्तर प्रमाण है।

मानुषोत्तरके आगे द्वितीय वलय स्थित चन्द्र-सूर्योंके
अन्तरका प्रमाण—

विदिय - वलए चंदाइच्चाणमंतरं अडतील-सहस्स-छ सय-छावाला जोयणाणि पुणो इगि-सय-तीस-अदाणं बोण्णि सहस्सा कसाओ होदि दोण्णि-सय-सत्तावण्ण-रूवेणब्भहिय-दोण्णि-सहस्सेण हरिदमेत्तं होदि। तं चेदं। ४८६४६। $\frac{३१३०}{२२५०}$। एवं णेदव्वं जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति।

अर्थ—द्वितीय वलयमें चन्द्र-सूर्योंका अन्तर अड़तालीस हजार छह सौ छयालीस योजन और दो हजार दो सौ सत्तावनसे भाजित दो हजार एक सौ तीस कला अधिक है। वह यह है—४८६४६$\frac{३१३०}{२२५०}$। इसप्रकार स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रत्येक वलयमें चन्द्र-सूर्योंका वृद्धि-चय ४ — ४ है, अतः द्वितीय वलयमें इनका प्रमाण (१४८+१४८)=२९६ है। प्रथम वलयसे यह दूसरा वलय एक लाख योजन आगे जाकर है। वहाँ प्रत्येक पार्श्वभागका वलय व्यास एक-एक लाख योजन है अतः दूसरे वलयका सूची-व्यास (४६ लाख+२ लाख)=४८ लाख योजन है। पूर्वोक्त नियमानुसार यहां चन्द्र-सूर्यके अन्तरका प्रमाण इसप्रकार है—

$\left(\frac{४८०००००\times२}{१९९}=\frac{९६०००००}{१९९}\right)-\frac{३५}{६६}=\frac{१०१७६४१३}{२१८९}=४८६४६\frac{३१३०}{२२५०}$ योजन।

स्वयंभूरमणसमुद्रके प्रथम वलयमें चन्द्र-सूर्यके अन्तरका प्रमाण—

तत्थ अंतिम-वियप्पं वत्तइस्सामो—सयंभूरमण-समुद्दस्स-पढम-वलए एक्केक्क-चंदाइच्चाणमंतरं तेत्तीस-सहस्स-ति-सय-इगितीस-जोयणाणि अंसा पुण पण्णारस-छेदेक्क-सयं हारो तेसीदि-छेदेक-सय-रूवमेत्तेणब्भहियं होदि, पुणो रूवस्स असंखेज्जभागेणब्भहियं होदि। तं चेदं ३३३३१। भा $\frac{१५}{१३}$। एवं सयंभूरमणसमुद्दस्स विदिय - पह - पहुदि - दुचरिम-पहंतं विसेसाहिय पक्केण आणिय वत्तव्वं।

अर्थ—उनमेंसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—स्वयंभूरमण—समुद्रके प्रथम वलयमें प्रत्येक चन्द्र-सूर्यका अन्तर तैंतीस हजार तीन सौ इकतीस योजन और एक सौ तेरासीसे भाजित एक सौ पन्द्रह भाग अधिक तथा असंख्यातसे भाजित एक रूप अधिक है। वह यह है—३३३३१$\frac{१५}{१३}$।

इसप्रकार स्वयंभूरमणसमुद्रके द्वितीय पथसे लेकर द्विचरम पथ पर्यन्त विशेष अधिक रूपसे होता गया है जिसे जानकर कहना चाहिए।

विशेषार्थ—स्वयंभूरमणसमुद्रके प्रथम वलयका सूचीव्यास ($\frac{ज}{६४}$ — १५००००) है और इस वलयकी स्थूल-परिधिका प्रमाण ३ ($\frac{ज}{६४}$ — १५०००० + १०००००) है। इस वलयके चन्द्रोंका प्रमाण ($\frac{ज\ ९}{२८\ लाख}$ + $\frac{२७}{४}$) है। सूर्योंका प्रमाण भी इतना ही है अतः इसे दुगुना करने पर २ ($\frac{ज\ ९}{२८\ लाख}$ + $\frac{२७}{४}$) प्राप्त होता है। चन्द्र-सूर्यके बिम्ब विस्तारका प्रमाण ($\frac{१}{६१}$ + $\frac{१}{६१}$) = $\frac{१०४}{६१}$ योजन है। यहाँ पूर्वोक्त नियमानुसार चन्द्र-सूर्यके अन्तरका प्रमाण इसप्रकार है—

$$\frac{३\left(\frac{ज}{१४}-१५०००+१००००\right)}{२\left(\frac{ज\ ९}{२८०००००}+\frac{२७}{४}\right)}-\frac{१०४}{६१}$$

या $\left(\frac{३\ ज}{१४}\times\frac{१४\ लाख}{९\ ज}\right)-\frac{१०४}{६१}$

या $\left(\frac{१}{३}\times१००००००\right)-\frac{१०४}{६१}=३३३३३३\frac{४३}{६१}$ योजन।

यहाँ ज से ज का, ३ से ९ का और २ से २८ लाखका अपवर्तन हुआ है। असंख्यात संख्या रूप जगच्छ्रेणीकी तुलनामें १५०००, १ लाख और $\frac{१}{३}$ नगण्य हैं अतः छोड़ दिए गये हैं।

स्वयंभूरमणसमुद्रके अन्तिम वलयमें चन्द्र-सूर्यके
अन्तरका प्रमाण—

एवं सयंभूरमणसमुद्दस्स चरिम - वलयम्मि चंदाइच्चाणं विच्चालं भण्णमाणे छायाल-सहस्स-एक्क-सय-बावण्ण-जोयण-पमाणं होदि पुणो बारसाहिय-एक्क-सय-कलाओ-हारो तेणउदि—कलेणब्भहिय-सत्त-सयमेत्तं होदि। तं चेदं ४६१५२ ११३ ७९३ ।

एवं अवर-जोइसिय-पव्वज्जा समत्ता।

अर्थ—इसप्रकार स्वयंभूरमणसमुद्रके अन्तिम वलयमें चन्द्र-सूर्योंका अन्तराल कहनेपर छयालीस हजार एक सौ बावन योजन प्रमाण और सातसौ तेरानवेसे भाजित एक सौ बारह कला अधिक है। वह यह है—४६१५२ ११३/७९३।

विशेषार्थ—स्वयंभूरमणसमुद्रका बाह्य सूचीव्यास एक राजू अर्थात् $\frac{ज}{ज}$ है। इसमें १ लाख जोड़कर ३ से गुणित करनेपर वहाँकी स्थूल परिधिका प्रमाण होता है। यथा—

३ ($\frac{ज}{ज}$ + १०००००)। असंख्यात द्वीप समुद्रोंमें चन्द्र-सूर्योंके समस्त वलयोंका प्रमाण ($\frac{ज}{१४ \text{ लाख}}$ − २३) है और इन समस्त वलयोंका $\frac{1}{2}$ भाग अर्थात् ($\frac{ज}{२८ \text{ लाख}} - \frac{२३}{२}$) प्रमाण स्वयंभूरमण समुद्रके वलयोंका है। यहाँके चन्द्र-सूर्योंमें प्रत्येकका प्रमाण २ ($\frac{ज \, ९}{२८ \text{ लाख}}$ + $\frac{२७}{४}$) है।

यहाँके अन्तिम वलयमें चन्द्र-सूर्योंका प्रमाण प्राप्त करनेका सूत्र है—आदि + (वलय-संख्या − १) × चय।

अर्थात् २ ($\frac{ज \, ९}{२८०००००} + \frac{२७}{४}$) + ($\frac{ज}{२८०००००} - \frac{२३}{२} - \frac{१}{१}$) × ४

या २ ($\frac{९ \, ज}{२८ \text{ लाख}} + \frac{२७}{४}$) + ($\frac{ज}{२८ \text{ लाख}} - \frac{२५}{२}$) × ४

या २ ($\frac{६ \, ज}{२८ \text{ लाख}} + \frac{२७}{४}$) + ($\frac{४ \, ज}{२८ \text{ लाख}} - ५०$)

या ($\frac{६ \, ज}{१४०००००} + \frac{२७}{४}$) + ($\frac{४ \, ज}{१४०००००} - ५०$)

या $\frac{१३ \, ज}{१४०००००}$ यह अन्तिम वलयके समस्त चन्द्र-सूर्योंका प्रत्येकका प्रमाण है। इस प्रमाण का स्वयंभूरमणसमुद्रकी स्थूल परिधिमें भाग देकर $\frac{१०४}{६१}$ यो० घटा देनेसे अन्तिम वलयमें चन्द्र-सूर्योंके अन्तरका प्रमाण प्राप्त हो जाता है। यथा—

$$\frac{३ \left(\frac{ज}{७} + १००००० \right) - \frac{१०४}{६१} \text{ या } \frac{३ \, ज}{७} \times \frac{१४०००००}{१३ \, ज} - \frac{१०४}{६१} \text{ यो०}}{\frac{१३ \, ज}{१४०००००}}$$

या $\frac{३}{१} \times \frac{२ \text{ लाख}}{१३} - \frac{१०४}{६१}$ या $\frac{६०००००}{१३} - \frac{१०४}{६१}$ यो०

$= ४६१४२\frac{३१३}{७९३}$ योजन अन्तराल प्रमाण है।

इसप्रकार चर ज्योतिर्लोककी प्ररूपणा समाप्त हुई।

विशेष ज्ञातव्य

सपरिवार चन्द्रोंके प्राप्त करनेकी प्रक्रियाका दिग्दर्शन—

असंख्यात द्वीप-समुद्रमें चन्द्रादि ज्योतिष बिम्ब राशियोंको प्राप्त करने हेतु सर्व प्रथम असंख्यात द्वीप-समुद्रोंकी संख्या निकाली जाती है। यह संख्या गच्छका प्रमाण प्राप्त करनेमें कारण भूत है और गच्छ चन्द्रादिक राशियोंका प्रमाण निकालनेके लिए उपयोगी है।

असंख्यात द्वीप-समुद्रोंकी संख्याका प्रमाण—

द्वीप-समुद्रोंकी संख्या निकालनेके लिए रज्जुके अर्धच्छेद प्राप्त करना आवश्यक है। इसका कारण यह है कि ६ अधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदोंसे हीन रज्जुके अर्धच्छेदोंका जितना प्रमाण है उतना ही प्रमाण द्वीप-समुद्रोंका है।

राजूके अर्धच्छेद निकालनेकी प्रक्रिया—

सुमेरु पर्वतके मध्यसे प्रारम्भकर स्वयंभूरमण समुद्रके एक पार्श्वभाग पर्यन्तका क्षेत्र अर्ध-राजू प्रमाण है, इसलिए राजूका प्रथमवार आधा करनेपर प्रथम अर्धच्छेद जम्बूद्वीपके मध्य (केन्द्र) में मेरु पर पड़ता है। इस अर्ध राजूका भी अर्धभाग अर्थात् दूसरी बार आधा किया हुआ राजू स्वयंभूरमण द्वीपकी परिधिसे ७५००० योजन आगे जाकर स्वयंभूरमण समुद्रमें पड़ता है। तीसरी बार आधा किये हुए राजूका प्रमाण स्वयंभूरमण द्वीपमें अभ्यन्तर परिधिसे मेरुकी दिशामें कुछ विशेष आगे आकर प्राप्त होता है। इसप्रकार उत्तरोत्तर अर्धच्छेद क्रमशः मेरुकी ओर द्वीप-समुद्रोंमें अर्ध-अर्धरूपसे पतित होता हुआ लवणसमुद्र पर्यन्त पहुँचता है। जहाँ राजूके दो अर्धच्छेद पड़ते हैं।

(देखिए त्रिलोकसार गा० ३५८)

जम्बूद्वीपकी वेदीसे मेरुके मध्य पर्यन्त ५००००, योजन और उसी वेदीसे लवणसमुद्रमें द्वितीय अर्धच्छेद तक ५० हजार योजन अर्थात् जम्बूद्वीपसे अभ्यन्तरकी ओर के ५० हजार योजन और बाह्यके ५० हजार योजन ये दोनों मिलकर १ लाख योजन होते हैं जिनको उत्तरोत्तर १७ बार अर्ध-अर्ध करनेके पश्चात् एक योजन अवशेष रहता है। इस १ योजनके ७६८००० अंगुल होते हैं। जिन्हें उत्तरोत्तर १७ बार अर्ध-अर्ध करनेपर एक अंगुल प्राप्त होता है। एक अंगुलके अर्धच्छेद पल्यके अर्धच्छेदोंके वर्गके बराबर होते हैं। इसप्रकार जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद (१७+१९+१)=३७ अधिक पल्यके अर्धच्छेदोंके वर्ग अथवा संख्यात अधिक पल्यके अर्धच्छेदोंके वर्गके सदृश होते हैं।

(त्रिलोकसार गाथा ६८)

तिलोयपण्णत्ती गाथा १ । १३१ तथा त्रिलोकसार गाथा १०८ की टीकानुसार जगच्छ्रेणी (७ राजू) के अर्धच्छेदोंकी संख्या इसप्रकार है—

$\frac{\text{पल्यके अर्ध०}}{\text{असंख्यात}}$ × साधिक पल्यके अर्धच्छेद × पल्यके अर्धच्छेद × ३ ।

जगच्छ्रेणी ७ राजू लम्बी है जिसमें समस्त द्वीप-समुद्रोंको अपने गर्भमें धारण करने वाले तिर्यग्लोकका आयाम एक राजू है । ७ राजूका उत्तरोत्तर तीन बार अर्ध-अर्ध करनेपर एक राजू प्राप्त होता है अतः जगच्छ्रेणीके उपर्युक्त अर्धच्छेदोंमेंसे ये ३ अर्धच्छेद घटा देनेपर एक रज्जुके अर्धच्छेदोंका प्रमाण इसप्रकार प्राप्त होता है—

$\left\{\frac{\text{पल्यके अर्धच्छेद}}{\text{असंख्यात}} \times (\text{पल्यके अर्धच्छेद})^2 \times 3\right\} - 3$ ।

द्वीप-समुद्रोंकी संख्याका प्रमाण—

एक राजूके उपर्युक्त अर्धच्छेदोंके प्रमाणमेंसे जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद (अर्थात् संख्यात अधिक पल्यके अर्धच्छेदोंका वर्ग) कम कर देनेपर द्वीप-समुद्रोंकी संख्या प्राप्त हो जाती है । यथा—

$\left(\frac{\text{प० छे०}}{\text{असं०}} \times \text{प० छे०}^2 \times 3 - 3\right)$—संख्यात (अर्थात् ६) अधिक प० छे०^2=द्वीप और सागरोंका प्रमाण—

गच्छका प्रमाण—

उपर्युक्त संख्यावाले द्वीप-समुद्रोंमें ज्योतिष्कोंका विन्यास ज्ञातकर उन ज्योतिषी देवोंकी संख्या प्राप्त की जाती है, इसलिए जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदोंमें ६ अर्धच्छेद मिलानेपर जो लब्ध प्राप्त हो उसे रज्जुके अर्धच्छेदोंमेंसे घटा देनेपर जो शेष रहता है वही प्रमाण ज्योतिषी-बिम्बोंकी संख्या निकालने हेतु गच्छका प्रमाण कहलाता है ।

तृतीय समुद्रको आदि लेकर स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त गच्छ-प्रमाण—

एत्तो चंदाण सपरिवाराणमाणयण - विहाणं वत्तइस्सामो । तं जहा—जंबूदीवादि-पंच-दीव-समुद्दं मोत्तूण तदिय-समुद्दादि कादूण जाव—सयंभूरमण-समुद्दो त्ति एदाण-माणयण किरियं ताव उच्चयदे—तदिय-समुद्दम्मि गच्छो बत्तीस, चउत्थ-दीवे गच्छो चउसट्ठी, उवरिम-समुद्दे गच्छो अट्ठावीसुत्तर-सयं । एवं दुगुण-दुगुण-कमेण गच्छा गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ।

अर्थ—यहाँसे आगे चन्द्रोंको सपरिवार लानेका विधान कहता हूँ। वह इसप्रकार है—जम्बूद्वीपादिक पाँच द्वीप-समुद्रोंको छोड़कर तीसरे समुद्रको आदि करके स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त इनके लानेकी प्रक्रिया कहते हैं—तृतीय समुद्रमें बत्तीस गच्छ, चतुर्थ द्वीपमें चौंसठ गच्छ, और इससे आगेके समुद्रमें एकसौ अट्ठाईस गच्छ, इसप्रकार स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त गच्छ दूने-दूने क्रमसे चले जाते हैं।

विशेषार्थ—जम्बूद्वीपादि तीन द्वीप और लवणसमुद्रादि दो समुद्र इन पाँच द्वीप-समुद्रोंके चन्द्र प्रमाणका निरूपण किया जा चुका है अतः इनको छोड़कर शेष द्वीप-समुद्रोंका गच्छ इसप्रकार है—

क्रमांक	समुद्र एवं द्वीप	गच्छ प्रमाण
३ रा	पुष्करवर समुद्र	३२
४ था	वारुणिवर द्वीप	६४
५ वाँ	वारुणिवर समुद्र	१२८
६ ठा	क्षीरवर द्वीप	२५६
७ वाँ	क्षीरवर समुद्र	५१२

तदनुसार गच्छकी संख्या दूने-दूने क्रमसे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त वृद्धिगत होती जाती है।

तृतीय समुद्रसे अन्तिम समुद्र पर्यन्तकी गुण्यमान राशियाँ—

संपहि एवेहि गच्छेहि पुध-पुध गुणिज्जमाण-रासि-पदरणा कीरदे—तदिय-समुद्दे बे-सयमट्ठासीदि-उवरिम-दीवे तत्तो दुगुणं, एवं दुगुण-दुगुण-कमेण गुणिज्जमाण-रासीओ गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दं पत्ताओ त्ति। संपहि अट्ठासीदि-विसदेहि[1] गुणिज्जमाण-रासीओ ओवट्टिय[2] लद्धेण सग-सग-गच्छे गुणिय अट्ठासीदि-बे-सदमेत्त सव्व-गच्छाणं गुणिज्जमाणं कादव्वं। एवं कदे सव्व-गच्छा अण्णोण्णं पेक्खिदूण चउगुण-कमेण आवट्टी जादा। संपहि चत्तारि-कवमादिं कादूण [3]चदुरुत्तर-कमेण गच्छ-संकलणाए आणयणे कीरमाणे पुव्विल्ल-गच्छेहिंतो संपहिय-गच्छा चउरूवा होंति, दुगुण-जाव-दुगे चत्तारि-रूव-

---

१. ब. ब. क. क. वीसदे। २. द. ब. क. ज. विवट्टिय। ३. ब. ब. क. ज. चदुत्तर।

बहुदोए अभावादो । एदेहि गच्छेहि गुणिज्जमाण-मज्झिम-धणाणि चउसट्ठि—रूवमादि कादूण दुगुण-दुगुण-कमेण गच्छंति जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति ।

अर्थ—अब इन गच्छोंसे पृथक्-पृथक् गुण्यमान राशियोंकी प्ररूपणा की जाती है। इनमेंसे तृतीय समुद्रमें दो सौ अठासी और आगेके द्वीपमें इससे दुगुनी गुण्यमान राशि है, इसप्रकार स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त गुण्यमान राशियाँ दुगुने-दुगुने क्रमसे चली जाती हैं। अब दो सौ अठासीसे गुण्यमान राशियोंका अपवर्तन करके लब्ध राशिसे अपने-अपने गच्छोंको गुणा करके सब गच्छोंकी दो सौ अठासी ही गुण्यमान राशि करना चाहिए। इसप्रकार करनेपर सब गच्छ परस्परकी अपेक्षा चौगुने क्रमसे अवस्थित हो जाते हैं। इस समय चारको आदि करके चार-चार उत्तर क्रमसे गत संकलनाके लाते समय पूर्वोक्त गच्छोंमें सांप्रतिक गच्छ एक कम होते हैं, क्योंकि दुगुने हुए स्थानमें चार रूपोंकी वृद्धिका अभाव है। इन गच्छोंसे गुण्यमान मध्यम धन चौसठ रूपको आदि करके स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त दुगुने-दुगुने होते गये हैं।

विशेषार्थ—पद या स्थानको गच्छ कहते हैं। जिस द्वीप या समुद्रमें चन्द्र-सूर्यके जितने वलय होते हैं, वही उनकी गच्छ-राशि होती है। आदि, मुख या प्रभव ये एकार्थ वाची हैं। यहाँ मुख (प्रत्येक द्वीप या समुद्रके प्रथम वलयके चन्द्र प्रमाण) को ही गुण्यमान राशि कहा गया है। जैसे तृतीय (पुष्करवर) समुद्रमें ३२ वलय हैं अतः वहाँका गच्छ ३२ है। इस समुद्रके प्रथम वलयमें २८८ चन्द्र हैं अतः यहाँ गुण्यमान राशि २८८ है। इसीप्रकार चतुर्थ द्वीपमें वलय ६४ और प्रथमवलयमें चन्द्र प्रमाण ५७६ है अतः यहाँका गच्छ ६४ और गुण्यमान राशि ५७६ है। तृतीय समुद्रके गच्छ और गुण्यमान राशिसे चतुर्थ द्वीपकी गच्छ राशि एवं गुण्यमान राशिका प्रमाण दूना है। यही क्रम अन्तिम समुद्र पर्यन्त जानना चाहिए।

अब आचार्य सभी गच्छोंको परस्परकी अपेक्षासे चतुर्गुण क्रमसे स्थापित करना चाहते हैं। इसके लिए सभी गुण्यमान राशियोंको २८८ से ही अपवर्तित कर जो लब्ध प्राप्त हो उससे अपने-अपने गच्छोंको गुणित करने पर सब गच्छ परस्परकी अपेक्षा चौगुने क्रमसे अवस्थित हो जाते हैं। जैसे चतुर्थ द्वीपकी गुण्यमान राशि ५७६ है। इसे २८८ से अपवर्तित करनेपर $\left(\frac{५७६}{२८८}\right)=२$ लब्ध प्राप्त हुआ। इससे इसी द्वीपके गच्छको गुणित करनेपर (६४ × २) = १२८ प्राप्त हुए जो तृतीय समुद्रके गच्छसे चौगुना (३२ × ४ = १२८) है।

इसीप्रकार अन्त-पर्यन्त जानना चाहिए। यथा—

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

क्र०	समुद्र एवं द्वीप	गुण्यमानराशि ÷ भाजक-राशि =	लब्ध	लब्धराशि × गच्छ =	परस्परमें दोगुना गच्छ
३ रा	पुष्करवर स०	२८८ ÷ २८८ =	१	१ × ३२ =	३२
४ था	वारुणिवर-द्वीप	५७६ ÷ २८८ =	२	२ × ६४ =	१२८
५ वाँ	वारुणि० समुद्र	११५२ ÷ २८८ =	४	४ × १२८ =	५१२
६ ठा	क्षीरवर द्वीप	२३०४ ÷ २८८ =	८	८ × २५६ =	२०४८
७ वाँ	क्षीरवर समुद्र	४६०८ ÷ २८८ =	१६	१६ × ५१२ =	८१९२

पदोंमें होनेवाली समान वृद्धि या हानिको प्रचय कहते हैं। यथा—तृतीय समुद्रमें ३२ वलय हैं और उसके प्रथम वलयमें २८८ चंद्र हैं। चय वृद्धि द्वारा दूसरे वलयमें २९२, तीसरे में २९६ इत्यादि, वृद्धि होते-होते अन्तिम वलयमें चन्द्र संख्या ५७२ प्राप्त होगी और चतुर्थ द्वीपके प्रथम वलयमें यह संख्या (२८८ की दूनी) ५७६ हो जायगी। किन्तु इससमय यहाँ गच्छ ३२ न होकर ३१ ही होगा। क्योंकि दुगुने हुए स्थानमें प्रचय वृद्धिका अभाव है।

मध्यमधन—संकलन सम्बन्धी गच्छकी मध्य संख्यापर वृद्धिका जो प्रमाण आता है वह मध्यमधन कहलाता है। गच्छोंके उत्तरोत्तर दुगने रूपसे बढ़ते जानेपर यह मध्यमधन भी द्विगुणित होता जाता है। यथा—

तृतीय समुद्रका गच्छ ३२ होनेसे उसका मध्यमधन सोलहवें स्थान (पद) पर रहता है क्योंकि प्रथममें कोई वृद्धि नहीं है, अतएव ३१ पद बचते हैं। इनमें १६ वाँ मध्य पद हो जानेसे उसकी वृद्धि (१६ × ४) = ६४ होती है। जिसकी सारणी इसप्रकार है—

[सारणी अगले पृष्ठ पर देखिए]

गच्छ पद संख्या	—	गच्छका मान	पद संख्या	—	मान
१		४	१७		६८
२		८	१८		७२
३		१२	१९		७६
४		१६	२०		८०
५		२०	२१		८४
६		२४	२२		८८
७		२८	२३		९२
८		३२	२४		९६
९		३६	२५		१००
१०		४०	२६		१०४
११		४४	२७		१०८
१२		४८	२८		११२
१३		५२	२९		११६
१४		५६	३०		१२०
१५		६०	३१		१२४

१६	६४	मध्यमधन—१६ वें पदपर वृद्धिका प्रमाण

उपर्युक्त उदाहरणसे स्पष्ट है कि तृतीय समुद्रमें गच्छ ३२ होनेपर मध्यम धन ६४ होता है। चतुर्थ द्वीपमें गच्छ ६४ है अतः वहाँ ३२ वें पद पर मध्यमधन स्वरूप यह वृद्धिका प्रमाण १२८ होता है। यह १२८ मध्यमधन, पूर्ववर्ती ६४ मध्यम धनसे दुगुना है। इसीप्रकार परवर्ती प्रत्येक समुद्र-द्वीपादिके मध्यमधन उत्तरोत्तर द्विगुणित प्रमाणसे वृद्धिगत होते जाते हैं।

ऋणराशि—

पुणो गच्छ-समीकरणट्ठं सव्व-गच्छेसु एगेण - ऊव - पक्खेवो[1] कादव्वो। एवं कादूण अउसट्ठि-रूवेहि मज्झिम-धणाणिमोवट्टिय[2] लद्धेण सग-सग-गच्छे गुणिय सव्व-गच्छाणि अउसट्ठि-रूवाणि गुणिज्जमाणत्तणेण ठवेदव्वाणि। एवं कदे सव्व-गच्छा संपहि

---

१. द. ब. क. ज. पक्खेव। २. द. ब. क. धणाणीमोवट्टीय।

रिण-रासिस्स पमाणं उच्चदु—एग-रूवमादिं कादूण गच्छं पडि दुगुण-दुगुण-कमेण जाव सयंभूरमणसमुद्दो त्ति गद-रिण-रासि होदि ।

अर्थ—पुनः गच्छोंके समीकरणके लिए सब गच्छोंमें एक-एक रूपका प्रक्षेप करना चाहिए। ऐसा करनेके पश्चात् मध्यमधनोंका चौंसठसे अपवर्तन करनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उससे अपने-अपने गच्छोंको गुणा करके सब गच्छोंकी गुण्यमान राशिके रूपमें चौंसठ रूपोंको रखना चाहिए। ऐसा करनेपर अब सर्व गच्छोंकी ऋण-राशिका प्रमाण कहता हूँ—

एक रूपको आदि करके गच्छके प्रति (प्रत्येक गच्छमें) दूने-दूने क्रमसे स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्त ऋण राशि गई है।

विशेषार्थ— समीकरण—समीकरणका तात्पर्य है दो या दो से अधिक राशियोंमें सम्बन्ध दर्शानेवाला पद अथवा सूत्र—

यहाँ गच्छोंके समीकरणके लिए सब गच्छोंमें एक-एक रूपका प्रक्षेप करना है। उसका अर्थ इसप्रकार है—पुष्करार्ध द्वीपके प्रथम वलयमें १४४ चन्द्र हैं और इससे दूने (१४४ × २) चन्द्र तृतीय समुद्रके प्रथम वलयमें, इससे दूने (१४४ × २ × २) चन्द्र चतुर्थद्वीपके प्रथम वलयमें हैं।

विवक्षित द्वीप-समुद्रके प्रथम वलयकी चन्द्र संख्या प्राप्त करनेके लिए विवक्षित द्वीप-समुद्रकी संख्याका मान 'क' मान लिया गया है अतः इसका सूत्र इसप्रकार होगा—

विवक्षित द्वीप-समुद्रके प्रथम वलयकी चन्द्र संख्या = $१४४ \times २^{(क-२)}$

यथा—१० वाँ द्वीप विवक्षित है—क = १०

१० वें द्वीपके प्रथम वलयमें चन्द्र संख्या = $१४४ \times २^{(१०-२)}$

$= १४४ \times २^{८}$।

गच्छ, प्रचय एवं आदिधन आदिके लक्षण—

गच्छ—श्रेणीके पदोंकी संख्याको अथवा जितने स्थानोंमें अधिक-अधिक होता जाय उन सब स्थानोंको पद या गच्छ कहते हैं। जैसे—तृतीय समुद्रकी गच्छ संख्या ३२ है।

प्रचय—श्रेणीके अनुगामी पदोंमें होनेवाली वृद्धि या हानिको अथवा प्रत्येक स्थानमें जितना-जितना अधिक होता है उस अधिकके प्रमाणको प्रचय कहते हैं। जैसे—तृतीय समुद्रके प्रत्येक वलयमें ४-४ की वृद्धि हुई है।

आदिधन—वृद्धिके प्रमाणके बिना आदि स्थानके प्रमाणके सहश जो धन सर्व स्थानमें होता है, उसके जोड़को आदिधन कहते हैं। जैसे—तृतीय समुद्रके प्रत्येक वलयमें वृद्धिके बिना चन्द्रों-की संख्या २८८ है, अतः (२८८ × ३२) = ९२१६ आदिधन है।

उत्तरधन—आदि धनके बिना सर्व स्थानोंमें वृद्धिका जो प्रमाण है, उसके योगको उत्तरधन कहते हैं। जैसे—तृतीयसमुद्रका उत्तरधन (३१ × ६४) = १९४८ है।

सर्वधन—आदिधन और उत्तरके योगको सर्वधन या उभयधन कहते हैं। जैसे—९२१६ + १९४८ = ११२०० है।

ऋणराशि—तृतीय समुद्रकी ऋणराशि ६४ मानी गई है। यहाँके उत्तर धन (१९४८) में यदि ६४ जोड़ दिए जाएँ और ६४ ही घटा दिये जाएँ तो उत्तर धन ज्योंका त्यों रहेगा। किन्तु ऋणराशि बना लेनेसे आगामी द्वीप-समुद्रोंके चन्द्रोंका प्रमाण प्राप्त करनेमें सुविधा हो जायगी। यह ऋणराशि भी उत्तरोत्तर दुगुनी-दुगुनी होती जाती है।

प्रत्येक द्वीप-समुद्रके सर्व चन्द्र-बिम्बोंका प्रमाण निकालनेके लिये सूत्र—

सर्वधन = आदिधन + उत्तरधन

$$(\text{मुख} \times \text{गच्छ}) + \left(\frac{\text{गच्छ}}{2} - 1\right) \times \text{चय} \times \text{गच्छ}।$$

बाह्य पुष्करार्धद्वीपके आदि वलयमें १४४ चन्द्र हैं और उससे दुगुने (१४४ × २) चन्द्र पुष्करवर नामक तृतीय समुद्रके आदि वलयमें हैं। इस समुद्रका व्यास ३२ लाख योजन है अतः इसमें ३२ वलय (गच्छ) हैं। प्रत्येक वलयमें चार-चार चन्द्र-बिम्बोंकी वृद्धि होती है। इसप्रकार मुख १४४ × २ और गच्छ ३२ का परस्पर गुणा करनेसे तृतीय समुद्रके ३२ वलयोंका आदिधन (१४४ × २ × ३२) या (१४४ × ६४) = ९२१६ प्राप्त होता है।

एक कम गच्छ (३२ − १ = ३१) का आधा कर ($\frac{३१}{२}$) चयके प्रमाण (४) से गुणित करे, जो ($\frac{३१}{२} \times ४ = ३१ \times २$) प्राप्त हो उसका गच्छ (३२) से गुणा करनेपर (३१ × २ × ३२ = ३१ × ६४) उत्तरधन प्राप्त हो जाता है। यदि उत्तरधन (३१ × ६४) में ६४ जोड़ दिये जायें और ६४ ही घटा दिए जायँ तो उत्तरधन ज्यों का त्यों रहेगा, किन्तु आगामी द्वीप-समुद्रोंके चन्द्रोंका प्रमाण प्राप्त करनेमें सुविधा हो जायगी।

३१ × ६४ + १ × ६४ − ६४ या ३२ × ६४ − ६४ यह उत्तरधनका प्रमाण है। इसे आदि-धन (१४४ × ६४) में जोड़ देनेसे तृतीय समुद्रके उभय या सर्वधनका प्रमाण १४४ × ६४ + ३२ × ६४ − (६४) अथवा १७६ × ६४ − (६४) अथवा ११२०० होता है। अर्थात् तृतीय समुद्रमें कुल चन्द्र ११२०० हैं। इसीप्रकार वारुणीवर नामक चतुर्थद्वीपके—

आदिधन १४४×६४×४+उत्तरधन (३२×६४×४ ऋण ६४×२) को जोड़नेसे १७६×६४×४ ऋण ६४×२ होता है; जो पुष्करवर समुद्रके धन १७६×६४ से चौगुना और ऋण ६४ से दुगुना है।

इसीप्रकार आगे-आगे प्रत्येक द्वीप-समुद्रमें धनराशि चौगुनी और ऋणराशि दुगुनी होती गई है।

गच्छ प्राप्त करनेके लिए परम्परा-सूत्रका औचित्य—

संपहि एवं रासीणं ठिद-संकलणाणमाणयण उच्चदे-छ-रूवाहिय-अंबूदीव छेदणएहि परिहीण-रज्जु छेदणाओ गच्छं काढूण जदि संकलणा आणिज्जदि तो जोदिसिय-जीव-रासी ण उप्पज्जदि, जगपदरस्स वे-छप्पण्णंगुल-सद-वग्गभाग-हाराणुवलंभादो। तेण रज्जु छेदणासु अण्णेसि पि तप्पाओग्गाणं संखेज्ज - रूवाणं हाणिं काऊण गच्छो ठवेयव्वो। एवं कदे तदिय - समुद्दो आदी ण होदि त्ति णासंकणिज्जं; सो चेव आदी होदि, सयंभूरमणसमुद्दस्स परभाग - समुप्पण्ण - रज्जु - छेदणय - सलागाणमाणयण-कारणादो।

अर्थ—अब इसप्रकार अवस्थित राशिके संकलन निकालनेका प्रकार कहते हैं—छह रूप अधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदोंसे परिहीन राजूके अर्धच्छेदोंको गच्छ राशि बनाकर यदि संकलन राशि निकाली जाती है तो ज्योतिष्क - जीवराशि उत्पन्न नहीं होती है, क्योंकि (ऐसा करनेपर) जगत्प्रतरका दो सौ छप्पन अंगुलों (सूच्यंगुलों) के वर्ग-प्रमाण भागहार उत्पन्न नहीं होता है। अतएव राजूके अर्धच्छेदोंमेंसे तत् प्रायोग्य अन्य भी संख्यात रूपोंकी हानि (कमी) करके गच्छ स्थापित करना चाहिए।

ऐसा करनेपर तृतीय समुद्र आदि नहीं होता है, ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वह तृतीय-समुद्र ही आदि होता है। इसका कारण स्वयंभूरमण-समुद्रके परभागमें उत्पन्न होनेवाली राजूकी अर्धच्छेद-शलाकाओंका आना है।

सयंभूरमणसमुद्दस्स परदो रज्जुच्छेदणया अत्थि त्ति कुदो णव्वदे ? वे-छप्पण्णंगुल-सद-वग्ग-सुत्तादो।

अर्थ—(शंका)—स्वयंभूरमणसमुद्रके परभागमें राजूके अर्धच्छेद होते हैं, यह कैसे जाना ?

(समाधान) :—ज्योतिषीदेवोंका प्रमाण निकालनेके लिए दो सौ छप्पन सूच्यंगुल के वर्गप्रमाण जगत्प्रतरका भागहार बतानेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

'अत्तियाणि दीव - सायर - रूवाणि जंबूदीव - छेदणाणि च - रूवाहियाणि तत्तियाणि रज्जु-च्छेदणाणि' त्ति परिकम्मेणं एवं वक्खाणं किं ण विरुज्झदे ? एदेण सह विरुज्झदे, किंतु सुत्तेण सह ण विरुज्झदि । तेणेदस्स वक्खाणस्स गहणं कायव्वं, ण परियम्मसुत्तस्स; सुत्त-विरुद्धत्तादो । ण सुत्त-विरुद्धं वक्खाणं होदि, अदिप्पसंगादो । तत्थ जोइसिया णत्थि त्ति कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो ।

अर्थ—शंका—'जितनी द्वीप और समुद्रोंकी संख्या है, तथा जितने जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद होते हैं, उससे अधिक उतने ही राजूके अर्धच्छेद होते हैं' इसप्रकारके परिकर्म-सूत्रके साथ यह व्याख्यान क्यों न विरोधको प्राप्त होगा ?

समाधान—यह व्याख्यान परिकर्मसूत्रके साथ विरोधको प्राप्त होगा, किन्तु (प्रस्तुत) सूत्रके साथ तो विरोधको प्राप्त नहीं होता है । इसलिए इस व्याख्यानको ग्रहण करना चाहिए, परिकर्मके सूत्रको नहीं । क्योंकि वह सूत्रके विरुद्ध है, और जो सूत्र-विरुद्ध हो, वह व्याख्यान नहीं माना जा सकता है, अन्यथा अतिप्रसंग दोष प्राप्त होता है ।

शंका—यहाँ (स्वयंभूरमणसमुद्रके परभागमें) ज्योतिषी देव नहीं है, यह कैसे जाना ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है ।

एसा तप्पाओग्ग-संखेज्ज-रूवाहिय 'जंबूदीव-छेदणय-सहिद-दीव-सायर-रूवमेत्त-रज्जुच्छेद-पमाण-परिक्खा-विही[1] ण अब्भाइरिय[2] - उवदेस - परंपराणुसारिणी, केवलं तु तिलोयपण्णत्ति-सुत्ताणुसारिणी[3], ओविसियदेव-आगहार-पडुप्पाइय-सुत्तावलंबि-बुत्ति-अणेण पयद-गच्छ-साहणट्ठमेसा परूवणा परूविदा । तदो ण एत्थ 'इदमित्थमेवेत्ति एवंत-परिग्गहेण[4] असग्गहो कायव्वो, परमगुरु-परंपरागओवएसस्स बुद्धि - बलेण 'विहडावेदुमसक्कियत्तादो, अविदिएसु पदत्थेसु छदुमत्थ-वियप्पाणमविसंवाद-णियमाभावादो । 'तम्हा पुव्वाइरिय-वक्खाणापरिच्चाएण[5] एसा वि दिसा[6] हेदु-वादाणुसारि-उप्पण्ण-सिस्साणुरोहेण अउप्पण्ण-अत्थ-उप्पायणट्ठं च दरिसेदव्वा । तदो ण एत्थ [7]संपदाय - विरोहासंका कायव्वा त्ति ।

---

१. ब. ब. दीवसोयण । २. द. ब. क. बीही । ३. द. ब. क. अब्भाइरियाणवदेसपरंपरासुसारिणे । ४. द. ब. सुत्ताणुसारि । ५. द. ब. क. ब. इदमेत्थमेवेत्ति । ६. ब. ब. क. ब. परिग्गहो च । ७. द. ब. क. ब. विहडावेदु । ८. द. ब. क. तहा । ९. द. ब. क. ब. वक्खाणुपरिच्चाएण । १०. द. क. ब. विसेसा । ११. ब. ब. क. ब. संपदाए विरोधो ।

अर्थ—तत्प्रायोग्य संख्यात रूपाधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदों सहित द्वीप-सागरोंकी संख्या प्रमाण राजू सम्बन्धी अर्धच्छेदोंके प्रमाणकी परीक्षा-विधि अन्य आचार्योंके उपदेशकी परम्पराका अनुसरण करनेवाली नहीं है। यह तो केवल त्रिलोकप्रज्ञप्तिके सूत्रका अनुसरण करनेवाली है। ज्योतिषी देवोंके भागहारका प्रत्युत्पादन (उत्पन्न) करनेवाले सूत्रका आलम्बन करनेवाली युक्तिके बलसे प्रकृत अर्थको सिद्ध करनेके लिए यह प्ररूपणा की गई है। अतएव यहाँ 'यह ऐसा ही है' इस-प्रकारके एकान्तको ग्रहण करके कदाग्रह नहीं करना चाहिए। क्योंकि परमगुरुओंकी परम्परासे आये हुए उपदेशको इसप्रकार युक्तिके बलसे विघटित करना अशक्य है। इसके अतिरिक्त अतीन्द्रिय पदार्थोंके विषयमें अल्पज्ञोंके द्वारा किये गये विकल्पोंके अविसंवादी होनेका नियम भी नहीं है। इसलिए पूर्वाचार्योंके व्याख्यानका परित्याग न कर हेतुवाद (तर्कवाद) का अनुसरण करनेवाले व्युत्पन्न शिष्योंके अनुरोधसे तथा अव्युत्पन्न शिष्य-जनोंके व्युत्पादनके लिए इस दिशाका दिखाना योग्य ही है, अतएव यहाँ पर सम्प्रदायके विरोधकी आशंका नहीं करनी चाहिए।

विशेषार्थ—ज्योतिषी देवोंकी संख्या निकालनेके लिए द्वीप-सागरोंकी संख्या निकालना आवश्यक है। परिकर्मके सूत्रानुसार द्वीप-समुद्रोंकी संख्या उतनी है जितने सूच्यंगुल अधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद कम राजूके अर्धच्छेद होते हैं। (मेरु एवं जम्बूद्वीपादि पाँच द्वीप-समुद्रोंमें जो राजूके अर्धच्छेद पड़ते हैं वे यहाँ सम्मिलित नहीं किये गये हैं, क्योंकि इन द्वीप-समुद्रोंकी चन्द्र संख्या पूर्वमें कही जा चुकी है)। किन्तु तिलोयपण्णत्तीके सूत्रकारका कहना है कि (२५६)[२] के भागहारमें ज्योतिषी देवोंका जो प्रमाण प्राप्त होता है यदि वही प्रमाण इष्ट है तो राजूके अर्धच्छेदोंमेंसे जम्बू-द्वीपके अर्धच्छेदोंके अतिरिक्त छह ही नहीं किन्तु छहसे अधिक संख्यात अंक और कम करना चाहिए। इतना कम करनेके बाद ही द्वीप-सागरोंकी वह संख्या प्राप्त हो सकेगी जिसके द्वारा ज्योतिषी देवोंका प्रमाण (२५६)[१] भागहारके बराबर होगा।

छह अर्धच्छेदोंके अतिरिक्त संख्यात अंक और कम करनेका कारण यह दर्शाया गया है कि स्वयंभूरमणसमुद्रकी बाह्य वेदीके आगे भी पृथिवीका अस्तित्व है; वहाँ राजूके अर्धच्छेद उपलब्ध होते हैं, किन्तु वहाँ ज्योतिषी देवोंके विमान नहीं हैं।

इसप्रकार युक्तिबलसे सिद्ध कर देनेके पश्चात् श्री ग्रन्थकारकी परम निरपेक्षता एवं पूर्ववर्ती आचार्योंके प्रति दृढ़ श्रद्धा दर्शनीय है। वे लिखते हैं कि—'यह ऐसा ही है' इसप्रकार एकान्त हठ पकड़कर ————यह दिशा भी दिखानी चाहिए।

एदेण विहाणेण पक्खित्त-गच्छं विरलिय दुगं पडि चत्तारि रूवाणि दादूण अण्णोण्णब्भत्थे[1] कदे तिण्णिया आवा इदि वुत्ते संखेज्ज-रूव-गुणिय[1]- जोयण - लक्खस्स

---

१. ब. क. ज. ब. घणे। २. ब. ब. क. ब. दुगदे।

वग्गं पुणो सत्त-कयस्स कदिए गुणिय चउसट्ठि-रूव-वग्गेहिं पुणो वि गुणिय अवणयणे आये हिवे तत्थ लद्धमेत्ता होंदि । $\frac{\pi}{0}$ । ७ । ६४ । ६४ । १०° । ७ ।

अर्थ—इस उपर्युक्त विधानके अनुसार पूर्वोक्त गच्छका विरलन कर एक-एक रूपके प्रति चार-चार रूपोंको देकर परस्पर गुणा करनेपर कितने हुए ? इसप्रकार पूछनेपर एक लाख योजनके वर्गको संख्यात-रूपोंसे गुणित करके पुनः सात रूपोंकी कृति से गुणा करके पुनरपि चौंसठ रूपोंके वर्गसे गुणा करके अवतारमें भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो, उतने प्रमाण होते हैं ।

विशेषार्थ—उपर्युक्त विधानानुसार स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्तके सभी द्वीप-समुद्रोंमें स्थित वलयोंके चन्द्र-बिम्बोंकी राशि प्राप्त करने हेतु धन-राशि तथा ऋण राशि अलग-अलग स्थापित की जाती है और राजूके अर्धच्छेदोंकी सहायतासे प्राप्त स्वयंभूरमणसमुद्र पर्यन्तकी समस्त धनय-संख्या गच्छ रूपमें स्थापित की जाती है ।

यहाँ सर्व प्रथम धन रूप राशि प्राप्त करना है । इसके लिए तीन संकलन आवश्यक हैं । जो इसप्रकार हैं– (१) आदि १७६×६४ (२) मुखकार प्रचय ४ और (३) गच्छ । यहाँ गच्छका प्रमाण (१ राजूके अर्धच्छेद)—(६ अधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद) हैं । अथवा—(जगच्छ्रेणीके अर्धच्छेद) — (३) — (६) — (जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद) हैं । इस गच्छमेंसे ऋण राशि (—३—६—जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद) को अलग स्थापित कर देनेपर गच्छ जगच्छ्रेणीके अर्धच्छेद प्रमाण रह जाता है ।

'सव्व-गच्छा अण्णोण्णं पेक्खिदूण चदुगुण-कमेण अवट्ठिदा' अर्थात् सब गच्छ परस्परकी अपेक्षा चौगुने क्रमसे अवस्थित हैं । पूर्व कथित इस नियमके अनुसार गुणकार ४ अर्थात् २×२ है ।

यहाँ धनरूप जगच्छ्रेणीके अर्धच्छेद गच्छ है । इसका विरलनकर प्रत्येक एक-एकके प्रति २ को देय देकर परस्पर गुणा करनेपर जगच्छ्रेणी प्राप्त होती है और इन्हीं जगच्छ्रेणीके अर्धच्छेदों का विरलनकर प्रत्येकके प्रति ४ अर्थात् २×२ देय देकर परस्पर गुणित करनेपर अवतार प्राप्त होता है । यह राशि धनात्मक होनेसे अंक रूप रहेगी ।

अब यहाँ पृथक् स्थापित ऋणरूप गच्छका विश्लेषण किया जाता है—

—(३)—(६) और जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद रूपसे ऋण राशियाँ तीन हैं । इनमेंसे सर्वप्रथम जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद कहते हैं—

जम्बूद्वीप १ लाख योजन विस्तारवाला है। इस एकलाखको उत्तरोत्तर अर्ध-अर्ध करनेपर १७ अर्धच्छेद प्राप्त होते हैं और एक योजन शेष रहता है।

इन १७ अर्धच्छेदोंका विरलन कर प्रत्येक पर २×२ देय देकर परस्पर गुणा करनेसे १ लाख × १ लाख प्राप्त होते हैं। अवशेष रहे एक योजनके ७६८००० अंगुल होते हैं। इन्हें उत्तरोत्तर अर्ध-अर्ध करनेपर १९ अर्धच्छेद प्राप्त होते हैं और १ अंगुल शेष रहता है। इन १९ अर्धच्छेदोंका विरलनकर प्रत्येक अंक पर २ × २ देय देकर परस्पर गुणा करनेसे ७६८००० × ७६८००० होते हैं। शेष एक अंगुलके अर्धच्छेद प्रमाण २×२ को परस्पर गुणित करनेपर अंगुल × अंगुल अर्थात् प्रतरांगुल प्राप्त होता है। इसप्रकार ऋणात्मक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेदों की राशिका प्रमाण १ लाख × १ लाख × ७६८००० × ७६८००० × प्रतरांगुल है।

६ के अर्धच्छेद—जम्बूद्वीपादि पांच द्वीप और समुद्रोंके पांच और एक मेरु पर्वत का। इसप्रकार ये ६ अर्धच्छेद अनुपयोगी होनेसे घटा दिये गये हैं। इन ६ का विरलन कर प्रत्येकके प्रति २ × २ देय देकर परस्पर गुणा करनेसे ६४×६४ प्राप्त होते हैं।

—७ के अर्धच्छेद—जगच्छ्रेणी ७ राजू प्रमाण है। इन ७ राजुओंका उत्तरोत्तर अर्धा-अर्ध करनेपर ३ अर्धच्छेद प्राप्त होते हैं। इन ३ अर्धच्छेदोंका विरलनकर प्रत्येकके प्रति २ × २ देय देकर आपसमें गुणा करनेसे ७ × ७ प्राप्त होते हैं।

इसप्रकार ऋणराशिका संकलित प्रमाण—

१ लाख × १ लाख × ७६८००० × ७६८००० × प्रतरांगुल × ६४ × ६४ × ७ × ७ है। यह राशि ऋणात्मक होनेसे भागहार रूप रहेगी पूर्वोक्त अंक रूप जगत्प्रतरमें भागहार रूप इस राशिका भाग देनेपर लब्ध इसप्रकार प्राप्त होता है—

$$\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{१ लाख} \times \text{१ लाख} \times ७६८००० \times ७६८००० \times \text{प्रत०} \times ६४ \times ६४ \times ७ \times ७}$$

उपर्युक्त गद्यमें आचार्यश्री ने यही कहा है कि—गच्छका विरलनकर प्रत्येक रूप पर ४-४ देय देकर परस्पर गुणा करनेसे १ लाख योजनके वर्ग (१ ला० × १ ला०) को संख्यात रूपों (७६८००० × ७६८००० × प्रतरांगुल) से गुणित करनेपर पुनः सात रूपोंकी कृति (७ × ७) से गुणा करके पुनरपि चौंसठ रूपोंके वर्ग (६४ × ६४) से गुणाकर जगत्प्रतरमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे तत्प्रमाण है।

सूत्रमें जो संदृष्टि दी गई है, उसका अर्थ इसप्रकार है—

=जगप्रतर, ७ । ७ का अर्थ है ७×७। आगे ६४ × ६४। १०⁷ का अर्थ है १०००००×१०००००० और ७ का अर्थ संख्यात है।

पुणो एवं दुट्ठाणे ठविय एक्क-रासिं बे-सय-अट्ठासीदि-रूवेहि गुणिदे सव्व-आदि-धण-पमाणं होदि । २८८ । $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{७}}$ । ७ । ६४ । ६४ । १०⁷ । ७ । अवर-रासिं चउसट्ठि-रूवेहि गुणिदे सव्व-पचय-धणं होदि । ६४ । $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{७}}$ । ७ । ६४ । ६४ । १०⁷ । ७ । एवे दो रासीओ मेलिय[1] रिण-रासिमवणिय गुणगार[2]-भागहार-रूवाणिमोवट्टाविय-भागहार-भूद-संखेज्ज-रूव-गुणिद-जोयण-लक्ख-वग्गं पदरंगुले कदे संखेज्ज - रूवेहि गुणिद - पण्णट्ठि-सहस्स पंच-सय-छत्तीस-रूवमेत्त-पदरंगुलेहि जगपदरमवहरिदमेत्तं सव्व-जोइसिय-बिंब-पमाणं होदि । तं चेवं— $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{६५५३६}}$ । ७ ।

पुणो एक्कम्मि बिंबम्मि तप्पाउग्ग-संखेज्ज-जीवा अत्थि त्ति तं संखेज्ज-रूवेहि गुणिदेसिं सव्व-जोइसिय-जीव-रासि-परिमाणं होदि । तं चेवं— $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{६५५३६}}$ । ६५५३६ ।

अर्थ—पुनः इसे दो स्थानोंमें रखकर एक राशिको दो सौ अठासी से गुणा करनेपर सब आदि-धन होता है; और अवर-राशिको चौंसठ रूपोंसे गुणा करनेपर सर्व प्रचय-धनका प्रमाण होता है। इन दो राशियोंको मिलाकर ऋण-राशिको कम करते हुए गुणकार एवं भागहार रूपोंको अपवर्तित करके भागहार-भूत संख्यात-रूपोंसे गुणित एक लाख योजनके वर्गके प्रतरांगुल करनेपर संख्यातरूपोंसे गुणित पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस रूपमात्र प्रतरांगुलोंसे भाजित जगप्रतर-प्रमाण सब ज्योतिषी बिम्बोंका प्रमाण होता है। वह यह है— $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{६५५३६}}$ । ६५५३६ । ७ ।

पुनः एक बिम्बमें तत्प्रायोग्य संख्यात जीव विद्यमान रहते हैं, इसलिए उसे संख्यात-रूपोंसे गुणा करनेपर सर्व ज्योतिषी जीव-राशिका प्रमाण होता है। वह यह है— $\frac{\overline{\text{जग}}}{\text{६५५३६}}$ । ६५५३६ ।

विशेषार्थ—उपर्युक्त सूत्रमें प्राप्त राशिको दो स्थानों पर स्थापित कर पृथक्-पृथक् २८८ और ६४ से गुणित कर प्राप्त हुए आदिधन और प्रचयधन को सम्मिलित करने के लिए कहा गया है। जो इसप्रकार है :—

$$\text{प्राप्त राशि} = \frac{\text{जगप्रतर}}{\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ लाख} \times \text{१ लाख} \times \text{संख्यात} \times ६४ \times ६४ \times ७ \times ७}$$

$$\text{आदिधन} = \frac{२८८ \text{ जगप्रतर}}{\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ लाख} \times \text{१ लाख} \times \text{संख्यात} \times ६४ \times ६४ \times ७ \times ७}$$

---

१. ब. ब. मेलि । २. द. ह. क. ब. गुणहार ।

$$\text{प्रचयधन} = \frac{\text{६४ जगत्प्रतर}}{\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{७}}$$

$$\frac{\text{२८८ जगत्प्रतर}}{[\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०} \times \text{सं०} \times \text{६४} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{७}]} +$$

$$\frac{\text{६४ जगत्प्रतर}}{[\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{७}]}$$

$$\text{आदिधन} + \text{प्रचयधन} = \frac{\text{३५२ जगत्प्रतर}}{[\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{७}]}$$

इस आदिधन और प्रचयधनकी सम्मिलित राशिमेंसे ऋणराशि घटानेको कहा गया है। जो इसप्रकार है—

यहाँ ऋणराशिका संकलन करने हेतु आदि ६४ है, प्रचय २ है और गच्छ—जगच्छ्रेणीके अर्धच्छेदोंमेंसे साधिक जम्बूद्वीपके अर्धच्छेद घटा देनेपर जो अवशेष रहे वह है।

तदनुसार इसका संकलन $\frac{\text{६४ जगच्छ्रेणी}}{\text{सूच्यंगुल} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{१ ला०}}$ होता है। इसे पूर्वोक्त आदि एवं प्रचयधनकी सम्मिलित राशिमेंसे घटाना है। यथा :—

$$\frac{\text{३५२ जगत्प्रतर}}{\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०} \times \text{सं०} \times \text{६४} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{७}} -$$

$$\frac{\text{६४ जगच्छ्रेणी}}{\text{सूच्यं०} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{१ ला०}}$$

$$= \frac{\text{३५२ जगत्प्रतर} - \text{६४ जगच्छ्रेणी} \left(\frac{\text{सूच्यं०} \times \text{संख्यात} \times \text{६४} \times \text{७} \times \text{१ ला०}}{\text{संख्यात} \times \text{१६} \times \text{७} \times \text{७} \times \text{६४} \times \text{६४}} \right)}{[\text{प्रतरांगुल} \times \text{१ ला०} \times \text{१ ला०}]}$$

$$= \frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{प्रतरांगुल} \times \text{६५५३६} \times \text{७}} \text{ या } \frac{1}{\text{६५५३६}} \times \text{७ यह सर्व ज्योतिषी बिम्बोंका प्रमाण}$$

प्राप्त हुआ।

एक ज्योतिषी बिम्बमें संख्यात जीव रहते हैं अतः उपर्युक्त प्राप्त हुए ज्योतिष-बिम्बोंके प्रमाणमें संख्यात (७) का गुणा करनेसे सर्व ज्योतिषी देवोंका प्रमाण प्राप्त होता है। यथा—

$= \frac{\text{जगत्प्रतर} \times \text{संख्यात}\ (७)}{\text{प्रतरांगुल} \times ६५५३६ \times ७} = \frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{प्र०} \times ६५५३६}$ या $\frac{\text{जगत्प्रतर}}{\text{प्र०}}$ । ६५५३६ सर्व ज्योतिषीदेवोंका प्रमाण है।

नोट—ज्योतिषी देवोंके बिम्बोंका प्रमाण निकालते समय आचार्य देवने संक्षिप्त करने हेतु यहाँ कुछ संख्याओंका अन्तर्भाव संख्यातमें कर दिया है। इसका विशेष विवरण सन् १९७६ में प्रकाशित त्रिलोकसार गाथा ३६१ की टीकामें द्रष्टव्य है।

ज्योतिषी देवोंकी आयुका निरूपण—

चंदस्स सद - सहस्सं, रविणो सहं च सुक्कस्स।
बासाधिएहि पल्लं, तं[1] पुण्णं बिसय - णामस्स ॥६१९॥

सेसाणं तु गहाणं, पल्लद्धं आउगं मुणेदव्वं।
ताराणं तु जहण्णं, पादद्धं पादमुक्कस्सं ॥६२०॥

प १ । ब १००००० । प १ । १००० । प १ ब १०० । प १ । प ½ । प ¼ । प ⅛ ।

आऊ समत्ता ॥८॥

अर्थ—चन्द्रकी उत्कृष्टायु एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य (१ पल्य + १००००० वर्ष), सूर्यकी एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य (१ पल्य + १०००), शुक्र ग्रहकी १०० वर्ष अधिक एक पल्य (१ पल्य + १०० वर्ष) और गुरुकी उत्कृष्टायु एक पल्य-प्रमाण है। शेष ग्रहोंकी—उत्कृष्टायु अर्ध-पल्य प्रमाण है और तारामोंकी उत्कृष्टायु पल्यके चतुर्थभाग (¼ पल्य) प्रमाण है तथा सर्व ज्योतिषी देवोंकी जघन्यायुका प्रमाण पल्यके आठवें भाग (⅛ पल्य) है ॥६१९-६२०॥

इसप्रकार आयुका कथन समाप्त हुआ ॥८॥

आहार आदि प्ररूपणाओंका निर्देश—

आहारो उस्सासो, उप्पत्तीओ ओहिणाण - सत्तीओ।
ओधाणं उप्पत्ती - मरणाइं एक्क - समयम्मि ॥६२१॥

आऊ-बंधण-भावं, बंधग - गहणस्स कारणं विविहं।
पुणठाणादि - पवण्णण, भावणलोगो व वत्तव्वं ॥६२२॥

---

१. द. क. ज. ठ. पुट्ठ परिसद्धामस्स, ब. से पुट्ठपरिसद्धामस्स।

अर्थ—आहार, उच्छ्वास, उन्मेष, अवधिज्ञान, शक्ति, एक समयमें जीवोंकी उत्पत्ति एवं मरण, आयुके बन्धक भाव, सम्यग्दर्शन ग्रहणके विविध कारण और गुणस्थानादिका वर्णन भावन-लोकके सदृश कहना चाहिए ॥६२१-६२२॥

शरीरके उत्सेध आदिका निर्देश—

जवरि य जोइसियाणं, उच्छेहो सत्त-दंड-परिमाणं ।
ओही असंख-गुणिदं, सेसाओ होंति भवण - जोग्गं ॥६२३॥

अर्थ—विशेष यह है कि ज्योतिषी देवोंके शरीरकी ऊँचाई सात धनुष प्रमाण और अवधि-ज्ञानका विषय असंख्यातगुणा है ॥६२३॥

अधिकारान्त मंगलाचरण—

इंद-सय-वंदिद-चलणं, अणंत-सुह-णाण-विरिय-दंसणयं ।
भव्व - कुमुदेक्क - चंदं, विमल - जिणिंदं णमस्सामि ॥६२४॥

एवमाइरिय-परंपरा-गय-तिलोयपण्णत्तीए
जोइसिय-लोय-सरूव-णिरूवण-पण्णत्ती णाम
सत्तमो महाहियारो समत्तो ॥

अर्थ—जिनके चरणोंमें सहस्रों इन्द्रोंने नमस्कार किया है और जो अनन्त सुख, ज्ञान, वीर्य एवं दर्शनसे संयुक्त तथा भव्यजनरूपी कुमुदोंको विकसित करनेके लिए अद्वितीय चन्द्रस्वरूप हैं ऐसे विमलनाथ जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूँ ॥६२४॥

इसप्रकार आचार्य-परम्परासे प्राप्त हुई त्रिलोक प्रज्ञप्तिमें
ज्योतिर्लोक-स्वरूप-निरूपण-प्रज्ञप्ति नामक
सातवाँ महाधिकार समाप्त हुआ ।





तिलोयपण्णत्ती

अट्ठमो महाहियारो

मङ्गलाचरण—

कम्म-कलंक-विमुक्कं, केवलणाणे हि दिट्ठ-सयलट्ठं ।
णमिऊण अणंत-जिणं, भणामि सुरलोय-पण्णत्तिं ॥१॥

अर्थ—कर्मरूपी कलङ्कसे रहित, केवलज्ञानमें सम्पूर्ण पदार्थोंको देखने वाले अनन्तनाथ जिनको नमस्कार कर मैं सुरलोक-प्रज्ञप्तिका कथन करता हूँ ॥१॥

इक्कीस अन्तराधिकारोंका निर्देश—

सुरलोय-णिवास-ठिदि, विण्णासो भेद-णाम-सीमाओ ।
संखा इंदविभूवो, आऊ उप्पत्ति - मरण - अंतरयं ॥२॥
आहारो उस्सासो, उच्चेहो तह य वेद - लोयम्मि ।
आउग - बंधण - भावो, देवा सोयंतियाण तहा ॥३॥
गुणठाणादि-सहियं, दंसण - गहणस्स कारणं विविहं ।
आगमणमोहिणाणं, सुराण[1] संखं च सत्तीओ ॥४॥
जोओ इदि इगिवीसं, अहियारा विमल-बोह-जणणीए ।
जिण-मुहकमल-विणिग्गय-सुर-जग-पण्णत्ति-णामाए ॥५॥

---

१ ब. सुराओ, ब. प्र. म. ठ. सुरस्स ।

अर्थ—सुरलोक निवास क्षेत्र १, विन्यास २, भेद ३, नाम ४, सीमा ५, संख्या ६, इन्द्र-विभूति ७, आयु ८, उत्पत्ति एवं मरणका अन्तर ९, आहार १०, उच्छ्वास ११, उत्सेध १२, देवलोक सम्बन्धी आयुके बन्धक भाव १३, लौकान्तिक देवोंका स्वरूप १४, गुणस्थानादिकका स्वरूप १५, दर्शन-ग्रहणके विविध कारण १६, आगमन १७, अवधिज्ञान १८, देवोंकी संख्या १९, शक्ति २० और योनि २१ इसप्रकार निर्मल बोधको उत्पन्न करनेवाले जिनेन्द्रके मुखसे निकले हुए सुरलोक-प्रज्ञप्ति नामक महाधिकारमें ये इक्कीस अधिकार हैं ॥२-५॥

देवोंका निवासक्षेत्र—

उत्तरकुरु-मणुवाणं, [1]एक्केणूणेण तह य बालेण ।
पणवीसुत्तर - चउ - सय - कोदंडेहिं विहीणेण ॥६॥
इगिसट्ठी - अहिएणं, लक्खेणं जोयणेण ऊणाओ ।
रज्जूओ सत्त गयणे, [2]उड्ढुड्ढं णाक - पडलाणि ॥७॥

उ ७ रिणं १०००६१ रिणस्स रिणं ऊणं ४२५ रिण । बा १ ।

। णिवासखेत्तं गदं ॥१॥

अर्थ—उत्तरकुरुमें स्थित मनुष्योंके एक बाल, चार सौ पच्चीस धनुष और एक लाख इकसठ योजनोंसे रहित सात राजू प्रमाण आकाशमें ऊर्ध्व-ऊर्ध्व (ऊपर-ऊपर) स्वर्ग-पटल स्थित हैं ॥६-७॥

विशेषार्थ—ऊर्ध्वलोक मेरुतलसे सिद्धलोक पर्यन्त है, जिसका प्रमाण ७ राजू है। इसमेंसे मेरुप्रमाण अर्थात् १०००४० योजनका मध्यलोक है। मेरुकी चूलिकासे उत्तम भोगभूमिज मनुष्यके एक बाल ऊपर स्वर्गका प्रारम्भ है। लोकके अन्तमें १५७५ धनुष प्रमाण तनुवातवलय, १ कोस प्रमाण घनवातवलय और २ कोस प्रमाण घनोदधिवातवलय है। अर्थात् ४२५ धनुष कम १ योजन क्षेत्रमें उपरिम वातवलय है। इसके नीचे सिद्धशिला है जो मध्यभागमें ८ योजन मोटी है और सिद्ध-शिलासे १२ योजन नीचे सर्वार्थसिद्धि विमानका ध्वजदण्ड है। इसप्रकार लोकान्तसे [(१२+८)+ (१ यो० — ४२५ धनुष =)] ४२५ धनुष कम २१ योजन नीचे और मेरुतलसे १०००४० यो०+ १ बाल ऊपर अर्थात्—

७ राजू— [(१०००४०+१ बाल)+(२१ योजन — ४२५ धनुष)] बराबर क्षेत्रमें स्वर्गलोककी अवस्थिति कही गई है।

निवास क्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ॥१॥

---

१. ब. एक्कं गुणं, क. ज. ज. एक्कं गुणेण । २. द. ब. क. ज. ज. एवमेव उड्ढुड्ढं ।

स्वर्ग पटलोंकी स्थिति एवं इन्द्रक विमानोंका पारस्परिक अन्तराल—

कणयद्दि-चूलि-उवरि, उत्तरकुरु-मणुव-एक्क-बालस्स ।
परिमाणे - अंतरिओ, चेट्ठदि हु इंदओ पढमो ॥८॥

अर्थ—कनकाद्रि अर्थात् मेरुकी चूलिकाके ऊपर उत्तरकुरुवर्ती मनुष्यके एक बाल प्रमाणके अन्तरसे (ऋजु नामक) प्रथम इन्द्रक स्थित है ॥८॥

लोय-सिहरावु हेट्ठा, चउ-सय-पणवीस चाव-हीणाणि ।
इगिवीस - जोयणाणि, गंतूणं इदओ चरिमो ॥९॥

यो २१ । रूण दंडा ४२५ ।

अर्थ—लोकशिखरके नीचे चारसौ पच्चीस (४२५) धनुष कम इक्कीस योजन प्रमाण जाकर अन्तिम इन्द्रक स्थित है ॥९॥

सेसा य एक्कसट्ठी, एदाणं इंदयाण विच्चाले ।
सव्वे अणाइ-णिहणा, रयण - मया इंदया होंति ॥१०॥

अर्थ—शेष इकसठ इन्द्रक इन दोनों इन्द्रकोंके बीचमें हैं । ये सब रत्नमय इन्द्रक विमान अनादि-निधन हैं ॥१०॥

एक्केक्क-इंदयस्स य, [1]विच्चालमसंख-जोयणाण-समा ।
एदाणं णामाणि, वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥११॥

अर्थ—एक-एक इन्द्रकका अन्तराल असंख्यात योजन प्रमाण है । अब इनके नाम अनुक्रमसे कहते हैं ॥११॥

६३ इन्द्रक विमानोंके नाम—

उडु-विमल-चंद-णामा, वग्गू वीरारुणा य णंदणया ।
णलिणं कंचण - रहिरं, [2]चंचं मरुदं च रिद्धिसयं ॥१२॥

१३ ।

वेरुलिय-रुचक-रुचिरंक-फलिह-तवणीय-मेघ-अब्भाइं ।
हारिद्द - पउम - णामा, लोहिव - वज्जाभिहाणेणं ॥१३॥

१२ ।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. विच्चालं संखजोयणाण समा । २ द. ब. क. ज. ठ. चंचं मरुदं चरिट्ठसयं ।

अंजावत्त-पहंकर-पिडुक-गज-मित्त-पह य अंजणए[1] ।
वणमाल-णाग-गरुडा, लंगल-बलभद्द[2]-चक्करिट्ठाणि ॥१४॥

१४ ।

सुरसमिदी-बम्हाइं, बम्हुत्तर-बम्हहिदय-लंतवया ।
महसुक्क-सहस्सारा, आणद-पाणद य-पुप्फकया ॥१५॥

१० ।

सायंकरारणच्चुद - सुदंसणामोघ - सुप्पबुद्धा य ।
जसहर-सुभद्द-सुविसाल-सुमणसा तह य सोमणसो ॥१६॥

११ ।

पीदिंकर-आइच्चं, चरिमो सव्वट्ठ-सिद्धि-णामो त्ति ।
तेसट्ठी समवट्टा, णाणावर - रयण - णियर - मया ॥१७॥

६३ ।

अर्थ—ऋतु १, विमल २, चन्द्र ३, वल्गु ४, वीर ५, अरुण ६, नन्दन ७, नलिन ८, कंचन ९, रुधिर १० (रोहित), चंचत् ११, मरुत् १२, ऋद्धीश १३, वैडूर्य १४, रुचक १५, रुचिर १६, अंक १७, स्फटिक १८, तपनीय १९, मेघ २०, अभ्र २१, हारिद्र २२, पद्म २३, लोहित २४, वज्र २५, नंद्यावर्त २६, प्रभंकर २७, पृष्ठक २८, गज २९, मित्र ३०, प्रभ ३१, अंजन ३२, वनमाल ३३, नाग ३४, गरुड़ ३५, लांगल ३६, बलभद्र ३७, चक्र ३८, अरिष्ट ३९, सुरसमिति ४०, ब्रह्म ४१, ब्रह्मोत्तर ४२, ब्रह्महृदय ४३, लांतव ४४, महाशुक्र ४५, सहस्रार ४६, आनत ४७, प्राणत ४८, पुष्पक ४९, शातंकर ५०, आरण ५१, अच्युत ५२, सुदर्शन ५३, अमोघ ५४, सुप्रबुद्ध ५५, यशोधर ५६ सुभद्र ५७, सुविशाल ५८, सुमनस ५९, सौमनस ६०, प्रीतिंकर ६१, आदित्य ६२ और अन्तिम सर्वार्थसिद्धि ६३, इसप्रकार ये समान गोल और नाना उत्तम रत्नसमूहोंसे रचे गये तिरेसठ (६३) इन्द्रक विमान हैं ॥१२-१७॥

प्रथम और अन्तिम इन्द्रक विमानोंके विस्तारका प्रमाण—

पंचत्तालं लक्खं, जोयणया इंदओ उडू [4]पढमो ।
एक्कं जोयण - लक्खं, चरिमो सव्वट्ठसिद्धो य ॥१८॥

४५००००० । १००००० ।

---

१. द. ब. ब. ठ. अंजणमो, क. अंजणमणामो । २. द. ब. क. ज. ठ. मद्द । ३. ब. ब. क. ज. ठ. ६३ । ४. ब. पढमे ।

अर्थ—प्रथम ऋतु नामक इन्द्रक विमान पैंतालीस लाख (४५०००००) योजन और अन्तिम सर्वार्थसिद्धि इन्द्रक विमान एक लाख (१०००००) योजन प्रमाण विस्तार युक्त है ।।१८।।

इन्द्रक विमानोंकी हानि-वृद्धिका प्रमाण एवं उसके प्राप्त करनेकी विधि—

पढमे चरिमं सोहिय, रूवो णिय-ह्रंदय-प्पमाणेणं ।
भजिदूणं जं लद्धं, ताओ इह हाणि - वड्ढीओ ।।१९।।

ते राशि ६२ । ४४००००० । १ ।

अर्थ—प्रथम इन्द्रकके विस्तारमेंसे अन्तिम इन्द्रकके विस्तारको घटाकर शेषमें एक कम इन्द्रक-प्रमाणका भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना यहाँ हानि-वृद्धिका प्रमाण समझना चाहिए ।।१९।।

सत्तरि-सहस्स-णव-सय-सगसट्ठी-जोयणाणि तेवीसं ।
अंसा इगितीस-हिदा, हाणी पढमादु चरिमदो[1] वड्ढी ।।२०।।

७०९६७ । $\frac{२३}{३१}$ ।

अर्थ—सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और एक योजनके इकतीस भागोंमेंसे तेईस भाग अधिक (७०९६७$\frac{२३}{३१}$ यो०) प्रथम इन्द्रककी अपेक्षा उत्तरोत्तर हानि और इतनी ही अन्तिम इन्द्रककी अपेक्षा उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई है ।।२०।।

विशेषार्थ—प्रथम पटलके प्रथम ऋजु विमानका विस्तार मनुष्यक्षेत्र सदृश ४५ लाख योजन प्रमाण है और अन्तिम पटलके सर्वार्थसिद्धि नामक अन्तिम विमानका विस्तार जम्बूद्वीप सदृश एक लाख योजन प्रमाण है । इन दोनोंका शोधन करनेपर (४५००००० — १०००००) = ४४००००० योजन अवशेष रहे । इनमें एक कम इन्द्रकों (६३ — १ = ६२) का भाग देनेपर (४४०००००÷ ६२) = ७०९६७$\frac{२३}{३१}$ योजन हानि और वृद्धिका प्रमाण प्राप्त होता है ।

इन्द्रक विमानोंका पृथक्-पृथक् विस्तार—

चउदाल-लक्ख-जोयण, उणतीस-सहस्सयाणि बत्तीसं ।
इगितीस-हिदा अट्ठय, कलाओ विमलिंदयस्स वित्थारो ।।२१।।

४४२९०३२ । $\frac{८}{३१}$ ।

अर्थ—चवालीस लाख उनतीस हजार बत्तीस योजन और इकतीससे भाजित आठ कला अधिक (४४२९०३२$\frac{८}{३१}$ योजन) विमल इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण कहा गया है ।।२१।।

---

१. ब. चरिमचुओ ।

तेदाल-लक्ख-जोयण-अट्ठावण्णा-सहस्स - चउसट्ठी ।
सोलस - कलाओ सहिदा, चंदिवय-रुंद-परिमाणं ॥२२॥

४३५८०६४ । $\frac{१६}{११}$ ।

अर्थ—तैंतालीस लाख अट्ठावन हजार चौंसठ योजन और सोलह कलाओं सहित (४३५८०६४$\frac{१६}{११}$ योजन) चन्द्र इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण है ॥२२॥

बादाल-लक्ख-जोयण, सगसीदि-सहस्सयाणि छण्णउदी ।
चउवीस - कला रुंदो, वण्णु - विमाणस्स णादव्वं ॥२३॥

४२८७०९६ । $\frac{२४}{११}$ ।

अर्थ—बियालीस लाख सतासी हजार छ्यानवें योजन और चौबीस कला अधिक (४२८७०९६$\frac{२४}{११}$ योजन) वल्गु विमानका विस्तार जानना चाहिए ॥२३॥

बादाल-लक्ख-सोलस-सहस्स-एकसय-जोयणाणि च ।
उणतीसब्भहियाणि, एक्क-कला वीर-इंदए रुंदो ॥२४॥

४२१६१२९ । $\frac{३}{११}$ ।

अर्थ—वीर इन्द्रकका विस्तार बयालीस लाख सोलह हजार एक सौ उनतीस योजन और एक कला अधिक (४२१६१२९$\frac{३}{११}$ यो०) है ॥२४॥

एक्कत्तालं लक्खं, पणदाल-सहस्स-जोयणेक्क-सया ।
इगिसट्ठी अब्भहिया, गद अंसा अरुण[1] - इंदम्मि ॥२५॥

४१४५१६१ । $\frac{९}{११}$ ।

अर्थ—अरुण इन्द्रकका विस्तार इकतालीस लाख पैंतालीस हजार एक सौ इकसठ योजन और नौ भाग अधिक (४१४५१६१$\frac{९}{११}$ यो०) है ॥२५॥

चउहत्तरि सहस्सा, तेरणउदि-समधिदं च एक्क-सयं ।
चालं जोयण-लक्खा, सत्तरस कलाओ णंदणे वासो ॥२६॥

४०७४१९३ । $\frac{१७}{११}$ ।

अर्थ—नन्दन इन्द्रकका विस्तार चालीस लाख चौहत्तर हजार एक सौ तेरानवें योजन और सत्रह कला अधिक (४०७४१९३$\frac{१७}{११}$ योजन) है ॥२६॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. वरुण ।

चालं जोयण-लक्खं, ति-सहस्सा दो सयाणि पणुवीसं ।
पणवीस-कला[1]-एसा, [2]विक्खारो [3]णलिण - इंदस्स ॥२७॥

४००३२२५ । $\frac{२५}{२६}$ ।

अर्थ—नलिन इन्द्रकका विस्तार चालीस लाख तीन हजार दो सौ पच्चीस योजन और पच्चीस कला अधिक (४००३२२५$\frac{२५}{२६}$ योजन) जानना चाहिए ॥२७॥

उणतालं-लक्ख-जोयण-बत्तीस-सहस्स-दो-सयाणि पि ।
अट्ठावण्णा दु - कला, कंचण - णामस्स विक्खारो ॥२८॥

३९३२२५८ । $\frac{२}{२६}$ ।

अर्थ—कञ्चन नामक इन्द्रकका विस्तार उनतालीस लाख बत्तीस हजार दो सौ अट्ठावन योजन और दो कला (३९३२२५८$\frac{२}{२६}$ यो०) प्रमाण है ॥२८॥

अडतीस-लक्ख-जोयण, इगिसट्ठि-सहस्स-दो-सयाणि पि ।
णउदि - जुदाणि दसंसा, रोहिद - णामस्स विक्खारो ॥२९॥

३८६१२९० । $\frac{१०}{२६}$ ।

अर्थ—रोहित नामक इन्द्रकका विस्तार अड़तीस लाख इकसठ हजार दो सौ नब्बे योजन और दस भाग अधिक (३८६१२९०$\frac{१०}{२६}$ योजन) है ॥२९॥

सगतीस-लक्ख-जोयण, णउदि-सहस्साणि ति-सय-बावीसा ।
अट्ठारसा कलाओ, [4]चंचा - णामस्स विक्खंभो ॥३०॥

३७९०३२२ । $\frac{१८}{२६}$ ।

अर्थ—चंचत् नामक इन्द्रकका विस्तार सैंतीस लाख नब्बे हजार तीन सौ बाईस योजन और अठारह कला अधिक (३७९०३२२$\frac{१८}{२६}$ योजन) है ॥३०॥

सत्ततीसं लक्खा, उणवीस-सहस्स-ति-सय-जोयणया ।
अडवण्णा छब्बीसा, कलाओ मरुवस्स विक्खंभो ॥३१॥

३७१९३५४ । $\frac{२३}{२६}$ ।

---

१. द. ब. क. कलाए सहिय, ब. ड. कलाए सा । २. द. ब. क. विस्तारे । ३. द. ब. क. ब. ड. णलिणं इंदस्स विण्णेयो । ४. द. ब. क. ब. ड. चंचा ।

अर्थ—मरुत् इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण सैंतीस लाख उन्नीस हजार तीन सौ चौवन योजन और छब्बीस कला अधिक (३७१९३५४$\frac{२६}{३१}$ योजन) है ॥३१॥

छत्तीसं लक्खाणि, अडदाल-सहस्स-ति-सय-जोयणया ।
सत्तासीदो तिण्णि-कला, रिट्ठिस[1]-इंदस्स परिसंखा ॥३२॥

३६४८३८७ । $\frac{३}{३१}$ ।

अर्थ—ऋद्वीश इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण छत्तीस लाख अड़तालीस हजार तीन सौ सत्तासी योजन और तीन कला अधिक (३६४८३८७$\frac{३}{३१}$ योजन) है ॥३२॥

सत्तत्तरि सहस्सा, चउस्सया पंचतीस - लक्खाणि ।
उणवीस-जोयणाणि, एक्करस-कलाओ वेरुलिय-इंदं ॥३३॥

३५७७४१९ । $\frac{११}{३१}$ ।

अर्थ—वैडूर्य इन्द्रकका विस्तार पैंतीस लाख सतत्तर हजार चार सौ उन्नीस योजन और ग्यारह कला अधिक (३५७७४१९$\frac{११}{३१}$ योजन) है ॥३३॥

पंचत्तीसं लक्खा, छ-सहस्सा चउ-सयाणि इगिवण्णा ।
जोयणया उणवीसा, कलाओ रुजगस्स वित्थारो ॥३४॥

३५०६४५१ । $\frac{१९}{३१}$ ।

अर्थ—रुचक इन्द्रकका विस्तार पैंतीस लाख छह हजार चार सौ इक्यावन योजन और उन्नीस कला अधिक (३५०६४५१$\frac{१९}{३१}$ यो०) है ॥३४॥

चउतीसं लक्खाणि, पणतीस-सहस्स-चउसयाणि पि ।
तेसीदि जोयणाणि, सगवीस-कलाओ रुचिर-वित्थारो ॥३५॥

३४३५४८३ । $\frac{२७}{३१}$ ।

अर्थ—रुचिर इन्द्रकका विस्तार चौंतीस लाख पैंतीस हजार चार सौ तेरासी योजन और सत्ताईस कला अधिक (३४३५४८३$\frac{२७}{३१}$ योजन) है ॥३५॥

तेत्तीसं लक्खाणि, चउसट्ठि-सहस्स-पण-सयाणि पि ।
सोलस य जोयणाणि, चत्तारि कलाओ अंक-वित्थारो ॥३६॥

३३६४५१६ । $\frac{४}{३१}$ ।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. रिट्ठस ।

अर्थ—अंक इन्द्रकका विस्तार तैंतीस लाख चौंसठ हजार पाँच सौ सोलह योजन और चार कला अधिक (३३६४५१६$\frac{४}{१०}$ योजन) है ॥३६॥

बत्तीसं चिय लक्खा, तेरसउदि-सहस्स-पण-सयाणि पि ।
अडदाल-जोयणाणि, बारस-भागा कलिहू - इंदो ॥३७॥

३२९३५४८ । $\frac{३}{११}$ ।

अर्थ—स्फटिक इन्द्रकका विस्तार बत्तीस लाख तेरानवें हजार पाँच सौ अड़तालीस योजन और बारह भाग अधिक (३२९३५४८$\frac{३}{११}$ योजन) है ॥३७॥

बत्तीस-लक्ख-जोयण, बावीस-सहस्स-पण्ण-सया तीवी ।
अंसा य बीसमेत्ता, इंदो तवणिज्ज - णामस्स ॥३८॥

३२२२५८० । $\frac{२०}{२१}$ ।

अर्थ—तपनीय नामक इन्द्रकका विस्तार बत्तीस लाख बाईस हजार पाँच सौ अस्सी योजन और बीस भाग प्रमाण अधिक (३२२२५८०$\frac{२०}{२१}$ योजन) है ॥३८॥

इगितीस-लक्ख-जोयण, इगिवण्ण-सहस्स-छ-सय-बारं च ।
अंसा [1]अट्ठावीसं, विच्चारो मेघ - णामस्स ॥३९॥

३१५१६१२ । $\frac{२८}{२९}$ ।

अर्थ—मेघ नामक इन्द्रकका विस्तार इकतीस लाख इक्यावन हजार छह सौ बारह योजन और अट्ठाईस भाग अधिक (३१५१६१२$\frac{२८}{२९}$ योजन) है ॥३९॥

तीसं चिय लक्खाणि, सीदि-सहस्साणि छस्सयाणि च ।
पण्णास-जोयणाणि, पंच कला अयल - इंदए भासी ॥४०॥

३०८०६४५ । $\frac{५}{९}$ ।

अर्थ—अचल इन्द्रकका विस्तार तीस लाख अस्सी हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पाँच कला अधिक (३०८०६४५$\frac{५}{९}$ यो०) है ॥४०॥

सत्तत्तरि-जुद-छ-सया, लक्ख य सहस्साणि तीस-लक्खाणि ।
जोयणया तह तेरस, कलाओ हारिद्द - विक्खंभो ॥४१॥

३००५६७७ । $\frac{१३}{१७}$ ।

---

१. ब. क. अट्ठतीसा ।

अर्थ—हारिद्र नामक इन्द्रकका विस्तार तीस लाख नौ हजार छह सौ सतत्तर योजन और तेरह कला अधिक (३००९६७७$\frac{१३}{२१}$ योजन) है ॥४१॥

एक्कोणतीस-लक्खा, अडतीस-सहस्स-सग-सयाणि च ।
णव जोयणाणि अंसा, इक्कियीसं कमेण - वित्थारो ॥४२॥

२९३८७०९ । $\frac{२१}{२१}$ ।

अर्थ—पद्म इन्द्रकका विस्तार उनतीस लाख अड़तीस हजार सात सौ नौ योजन और इक्कीस भाग अधिक (२९३८७०९$\frac{२१}{२१}$ योजन) है ॥४२॥

अट्ठावीसं लक्खा, छप्पण्ण-सहस्स-सग-सयाणि पि ।
इगिदाल-जोयणाणि, कलाओ उणतीस लोहिदे भासो ॥४३॥

२८६७७४१ । $\frac{२९}{३१}$ ।

अर्थ—लोहित इन्द्रकका विस्तार अट्ठाईस लाख छप्पन हजार सात सौ इकतालीस योजन और उनतीस कला अधिक (२८६७७४१$\frac{२९}{३१}$ योजन) है ॥४३॥

सत्तावीसं लक्खा, छण्णउदि-सहस्स-सग-सयाणि पि ।
चउहत्तरि-जोयणया, छ-कलाओ वज्ज - विक्खंभो ॥४४॥

२७९६७७४ । $\frac{६}{३१}$ ।

अर्थ—वज्र इन्द्रकका विस्तार सत्ताईस लाख छयानवें हजार सात सौ चौहत्तर योजन और छह कला अधिक (२७९६७७४$\frac{६}{३१}$ योजन) है ॥४४॥

सगवीस-लक्ख-जोयण, पणुवीस-सहस्स अट्ठसयं छक्का ।
चोद्दस कलाओ कहिदा, णंदावट्टस्स विक्खंभो ॥४५॥

२७२५८०६ । $\frac{१४}{३१}$ ।

अर्थ—नन्द्यावर्त इन्द्रकका विस्तार सत्ताईस लाख पच्चीस हजार आठ सौ छह योजन और चौदह कला अधिक (२७२५८०६$\frac{१४}{३१}$ योजन) कहा गया है ॥४५॥

छव्वीसं चिय लक्खा, चउवण्ण-सहस्स-अट्ठ-सयाणि पि ।
अडतीस - जोयणाणि, बावीस - कला पहंकरे कंदं ॥४६॥

२६५४८३८ । $\frac{२२}{३१}$ ।

अर्थ—प्रभंकर इन्द्रकका विस्तार छब्बीस लाख चौवन हजार आठ सौ अड़तीस योजन और बाईस कला प्रमाण (२६५४८३८$\frac{२२}{३१}$ योजन) है ॥४६॥

पणुवीसं सक्खाणि, तेसीदि-सहस्स-अट्ठ-सयाणि पि ।
सत्तरि य [1]जोयणाणि, तीस - कला विट्ठके वासो ॥४७॥

२५८३८७० । $\frac{३०}{६०}$ ।

अर्थ—वृष्टक इन्द्रकका विस्तार पच्चीस लाख तेरासी हजार आठ सौ सत्तर योजन और तीस कला प्रमाण (२५८३८७०$\frac{३०}{६०}$ योजन) है ॥४७॥

बारस-सहस्स-णव-सय-ति-उत्तरा पंचवीस-सक्खाणि ।
जोयणए सत्तंसा, गजाभिधाणस्स विक्खंभो ॥४८॥

२५१२९०३ । $\frac{७}{९}$ ।

अर्थ—गज नामक इन्द्रकका विस्तार पच्चीस लाख बारह हजार नौ सौ तीन योजन और सात भाग अधिक (२५१२९०३$\frac{७}{९}$ योजन) है ॥४८॥

चउवीसं सक्खाणि, इगिदाल-सहस्स-णव-सयाणि पि ।
पंचतीस-जोयणाणि, पण्णरस-कलाओ [2]मिस्स-वित्थारो ॥४९॥

२४४१९३५ । $\frac{१५}{६२}$ ।

अर्थ—मिश्र इन्द्रकका विस्तार चौबीस लाख इकतालीस हजार नौ सौ पैंतीस योजन और पन्द्रह कला अधिक (२४४१९३५$\frac{१५}{६२}$ योजन) है ॥४९॥

तेवीसं सक्खाणि, णव-सय-छत्ताणि सत्तरि-सहस्सा ।
सत्तट्ठि-जोयणाणि, तेवीस-कलाओ पहव-वित्थारो ॥५०॥

२३७०९६७ । $\frac{२३}{३१}$ ।

अर्थ—प्रभ इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और तेईस कला अधिक (२३७०९६७$\frac{२३}{३१}$) है ॥५०॥

तेवीस-सक्खा दोण्णि, अंकक्कमए जोयणाणि वणमाले ।
दुग-तिय-गह-णव-दुग-दुग-दुअंक-कमसो[3] कला अट्ठ ॥५१॥

२३००००० । २२२९०३२ । $\frac{८}{३१}$ ।

अर्थ—अञ्जन इन्द्रकका विस्तार तेईस लाख (२३०००००) योजन और वनमाल इन्द्रकका विस्तार दो, तीन, शून्य, नौ, दो, दो और दो इस अंक क्रमसे बाईस लाख उनतीस हजार बत्तीस योजन तथा आठ कला अधिक (२२२९०३२$\frac{८}{३१}$ योजन) है ॥५१॥

---

१. द. ब. क. जोयणाणि बत्तीस । २. ब. मिस्सं । ३. द. दुगदुगंकक्कमसकमसो ।

इगिवीसं लक्खाणि, अट्ठावण्णा सहस्स जोयणया ।
चउसट्ठी-संजुत्ता, सोलस अंसा य णाग-वित्थारो ॥५२॥

२१५८०६४ । $\frac{१६}{३८}$ ।

अर्थ—नाग इन्द्रकका विस्तार इक्कीस लाख अट्ठावन हजार चौंसठ योजन और सोलह भाग अधिक (२१५८०६४$\frac{१६}{३८}$ योजन) है ॥५२॥

जोयणया छण्णउदी, सयसीदि-सहस्स-वीस-लक्खाणि ।
चउवीस - कला एदं, गरुडिंदय - दंड - परिमाणं ॥५३॥

२०८७०९६ । $\frac{२४}{३८}$ ।

अर्थ—गरुड इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण बीस लाख सत्तासी हजार छयानवे योजन और चौबीस कला अधिक (२०८७०९६$\frac{२४}{३८}$ यो०) है ॥५३॥

सोलस-सहस्स-इगिसय-उणवीसं वीस-लक्ख-जोयणया ।
एक्क - कला विक्खंभो, लंगल - णामस्स णादव्वो ॥५४॥

२०१६१२९ । $\frac{१}{३८}$ ।

अर्थ—लांगल नामक इन्द्रकका विस्तार बीस लाख सोलह हजार एक सौ उनतीस योजन और एक कला अधिक (२०१६१२९$\frac{१}{३८}$ योजन) जानना चाहिए ॥५४॥

एक्कोणवीस-लक्खा, पणदाल-सहस्स इगिसयाणि च ।
इगिसट्ठि-जोयणा णव, कलाओ वलभद्द - वित्थारो ॥५५॥

१९४५१६१ । $\frac{९}{३८}$ ।

अर्थ—वलभद्र इन्द्रकका विस्तार उन्नीस लाख पैंतालीस हजार एक सौ इकसठ योजन और नौ कला अधिक (१९४५१६१$\frac{९}{३८}$ योजन) है ॥५५॥

चउहत्तरि सहस्सा, इगिसय-तेणउदि अट्ठरस-लक्खा ।
जोयणया सत्तरसं, कलाओ चक्कस्स वित्थारो ॥५६॥

१८७४१९३ । $\frac{१७}{३८}$ ।

अर्थ—चक्र इन्द्रकका विस्तार अठारह लाख चौहत्तर हजार एक सौ तेरानवे योजन और सत्तरह कला अधिक (१८७४१९३$\frac{१७}{३८}$ योजन) है ॥५६॥

अट्ठारस-लक्खाणि, ति-सहस्सा पंचवीस-जुद-चु-सया ।
जोयणया पचुवीसा, कलाओ रिट्ठस्स विक्खंभो ॥५७॥

१८०३२२५ । $\frac{२५}{३८}$ ।

अर्थ—अरिष्ट इन्द्रकका विस्तार अठारह लाख तीन हजार दो सौ पच्चीस योजन और पच्चीस कला अधिक (१८०३२२५$\frac{२५}{३१}$ योजन) है ॥५७॥

अट्ठावण्णा दु-सया, बत्तीस-सहस्स सत्तरस-लक्खा ।
जोयणया दोण्णि कला, वासो सुरसमिदि-णामस्स ॥५८॥

१७३२२५८ । $\frac{२}{३१}$ ।

अर्थ—सुरसमिति नामक इन्द्रकका विस्तार सत्तरह लाख बत्तीस हजार दो सौ अट्ठावन योजन और दो कला अधिक (१७३२२५८$\frac{२}{३१}$ योजन) है ॥५८॥

सोलस-जोयण-लक्खा, इगिसट्ठि-सहस्स दु-सय-णउदीओ ।
दस - मेत्ताओ कलाओ, बम्हिंदय - इंद - परिमाणं ॥५९॥

१६६१२९० । $\frac{१०}{३१}$ ।

अर्थ—ब्रह्म इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण सोलह लाख इकसठ हजार दो सौ नब्बे योजन और दस कला अधिक (१६६१२९०$\frac{१०}{३१}$ योजन) है ॥५९॥

बावीस-ति-सय-जोयण, णउदि-सहस्साणि पण्णरस-लक्खा ।
अट्ठारसा कलाओ, बम्हुत्तर - इंदए वासो ॥६०॥

१५९०३२२ । $\frac{१८}{३१}$ ।

अर्थ—ब्रह्मोत्तर इन्द्रकका विस्तार पन्द्रह लाख नब्बे हजार तीन सौबाईस योजन और अठारह कला अधिक (१५९०३२२$\frac{१८}{३१}$ योजन) है ॥६०॥

चउवण्ण-ति-सय-जोयण, उणवीस-सहस्स पण्णरस-लक्खा ।
छव्वीसं च कलाओ, वित्थारो बम्हहिदयस्स ॥६१॥

१५१९३५४ । $\frac{२६}{३१}$ ।

अर्थ—ब्रह्महृदय इन्द्रकका विस्तार पन्द्रह लाख उन्नीस हजार तीन सौ चौवन योजन और छब्बीस कला अधिक (१५१९३५४$\frac{२६}{३१}$ योजन) है ॥६१॥

चोद्दस-जोयण-लक्खं, अडवाल-सहस्स-ति-सय-सगसीदी ।
तिण्णि कलाओ लंतव - इंदस्स इंदस्स परिमाणं ॥६२॥

१४४८३८७ । $\frac{३}{३१}$ ।

अर्थ—लान्तव इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण चौदह लाख अड़तालीस हजार तीन सौ सत्तासी योजन और तीन कला अधिक (१४४८३८७$\frac{३}{३१}$ योजन) है ॥६२॥

तेरस-जोयण-लक्खा, चउ-सय सत्ततरी-सहस्साणि ।
उणवीसं एक्कारस, कलाओ महसुक्क - विक्खंभो ॥६३॥

१३७७४१९ । ११ ।

अर्थ – महाशुक्र इन्द्रकका विस्तार तेरह लाख सतत्तर हजार चार सौ उन्नीस योजन और ग्यारह कला अधिक (१३७७४१९११ यो०) है ॥६३॥

तेरस-जोयण-लक्खा, चउसट्ठि-सयाणि एक्कवण्णा य ।
एक्कोणवीस - अंसा, होंदि सहस्सार - वित्थारो ॥६४॥

१३०६४५१ । १९ ।

अर्थ—सहस्रार इन्द्रकका विस्तार तेरह लाख छह हजार चार सौ इक्यावन योजन और उन्नीस भाग अधिक (१३०६४५११९ यो०) है ॥६४॥

लक्खाणि बारसं चिय, पणतीस-सहस्स-चउ-सयाणि पि ।
तेसीदि जोयणाइं, सगवीस - कलाओ आणवे रूंदं ॥६५॥

१२३५४८३ । २७ ।

अर्थ—आनत इन्द्रकका विस्तार बारह लाख पैंतीस हजार चार सौ तेरासी योजन और सत्ताईस कला अधिक (१२३५४८३२७ योजन) है ॥६५॥

एक्कारस-लक्खाणि, चउसट्ठि-सहस्स पंचसयाणि पि ।
सोलस य जोयणाणि, चत्तारि कलाओ पाणवे रूंदं ॥६६॥

११६४५१६ । ४ ।

अर्थ—प्राणत इन्द्रकका विस्तार ग्यारह लाख चौंसठ हजार पाँच सौ सोलह योजन और चार कला अधिक (११६४५१६४ योजन) है ॥६६॥

लक्खं दस-प्पमाणं, तेचउवि-सहस्स पण-सयाणि च ।
अडयाल - जोयणाइं, बारस - अंसा य पुप्फवे रूंदं ॥६७॥

१०९३५४८ । १२ ।

अर्थ—पुष्पक इन्द्रकका विस्तार दस लाख तेरानवे हजार पाँच सौ अड़तालीस योजन और बारह भाग अधिक (१०९३५४८१२ योजन) है ॥६७॥

दस-जोयण-लक्खाणि, बावीस-सहस्स पंचसया सीदी ।
वीस-कलाओ रुंदं, सायंकर[1]- इंदयस्स णादव्वं ॥६८॥

१०२२५८० । $\frac{२०}{६१}$ ।

अर्थ—शातंकर इन्द्रकका विस्तार दस लाख बाईस हजार पाँच सौ अस्सी योजन और बीस कला अधिक (१०२२५८०$\frac{२०}{६१}$ योजन) जानना चाहिए ॥६८॥

णव-जोयण-लक्खाणि, इगिवण्ण-सहस्स छ-सय बारसया ।
अट्ठावीस कलाओ, आरण - णामस्स वित्थारो ॥६९॥

९५१६१२ । $\frac{२८}{६१}$ ।

अर्थ—आरण इन्द्रकके विस्तारका प्रमाण अंक-क्रमसे नौ लाख इक्यावन हजार छह सौ बारह योजन और अट्ठाईस कला (९५१६१२$\frac{२८}{६१}$ योजन) जानना चाहिए ॥६९॥

अट्ठ चिय लक्खाणि, सोवि-सहस्साणि [2]छस्सयाणि च ।
पणदाल - जोयणाणि, पंच - कला अच्चुदे रुंदं ॥७०॥

८८०६४५ । $\frac{५}{६१}$ ।

अर्थ—अच्युत इन्द्रकका विस्तार आठ लाख अस्सी हजार छह सौ पैंतालीस योजन और पाँच कला अधिक (८८०६४५$\frac{५}{६१}$ यो०) है ॥७०॥

अट्ठ चिय लक्खाणि, अव य सहस्साणि छस्सयाणि च ।
सत्तत्तरि जोयणया, तेरस - अंसा सुदंसणे रुंदं ॥७१॥

८०९६७७ । $\frac{१३}{६१}$ ।

अर्थ—सुदर्शन इन्द्रकका विस्तार आठ लाख नौ हजार छह सौ सतत्तर योजन और तेरह भाग अधिक (८०९६७७$\frac{१३}{६१}$ यो०) है ॥७१॥

णव-जोयण सत्त-सया, [3]अडतीस-सहस्स सत्त-लक्खाणि ।
इगिवीस कला रुंदं, अमोघ - णामम्मि इंदए होदि ॥७२॥

७३८७०९ । $\frac{२१}{६१}$ ।

अर्थ—अमोघ नामक इन्द्रकका विस्तार सात लाख अड़तीस हजार सात सौ नौ योजन और इक्कीस कला अधिक (७३८७०९$\frac{२१}{६१}$ योजन) है ॥७२॥

---

१. द. ब. ठ. सयंकरा, क. सयंकर । २. द. ब. क. छस्सयाणं । ३. द. ब. अडतीसं ।

इगिवासुत्तर-सग-सय, सत्तट्ठि-सहस्स-जोयण छ-लक्खा ।
उणतीस - कला कहिदो, वित्थारो सुप्पबुद्धस्स ॥७३॥

६६७७४१ । $\frac{३१}{३२}$ ।

अर्थ—सुप्रबुद्ध इन्द्रकका विस्तार छह लाख सड़सठ हजार सात सौ इकतालीस योजन और उनतीस कला अधिक (६६७७४१$\frac{२९}{३२}$ यो०) कहा गया है ॥७३॥

चउहत्तरि-जुद-सग-सय, छण्णउदि-सहस्स पंच-लक्खाणि ।
जोयणया छच्च कला, जसहर - णामस्स विक्खंभो ॥७४॥

५९६७७४ । $\frac{६}{१६}$ ।

अर्थ—यशोधर नामक इन्द्रकका विस्तार पाँच लाख छयानवें हजार सात सौ चोहत्तर योजन और छह कला अधिक (५९६७७४$\frac{६}{१६}$ योजन) है ॥७४॥

छज्जोयण अट्ठ-सया, पणुवीस-सहस्स पंच-लक्खाणि ।
चोद्दस-कलाओ वासो, सुभद्द - णामस्स [1]परिमाणं ॥७५॥

५२५८०६ । $\frac{१४}{१६}$ ।

अर्थ—सुभद्र नामक इन्द्रकका विस्तार पाँच लाख पच्चीस हजार आठ सौ छह योजन और चौदह कला अधिक (५२५८०६$\frac{१४}{१६}$ यो०) है ॥७५॥

अट्ठ-सया अडतीसा, लक्खा चउरो सहस्स चउवण्णा ।
जोयणया बावीसं, अंसा सुविसाल विक्खंभो ॥७६॥

४५४८३८ । $\frac{२२}{३२}$ ।

अर्थ—सुविशाल इन्द्रकका विस्तार चार लाख चौवन हजार आठ सौ अड़तीस योजन और बाईस भाग (४५४८३८$\frac{२२}{३२}$ यो०) प्रमाण है ॥७६॥

सत्तरि-जुद-अट्ठ-सया, तेसीदि-सहस्स जोयण-ति-लक्खा ।
तीस - कलाओ सुमणस - णामस्स हवेदि वित्थारो ॥७७॥

३८३८७० । $\frac{३०}{३२}$ ।

अर्थ—सुमनस नामक इन्द्रकका विस्तार तीन लाख तेरासी हजार आठ सौ सत्तर योजन और तीस कला (३८३८७०$\frac{३०}{३२}$ यो०) प्रमाण है ॥७७॥

---

१. ब. ज. क. ज. ठ. णादव्वो ।

बारस-सहस्स णव-सय, ति-उत्तरा जोयणाणि तिय-लक्खा ।
सत्त - कलाओ वासो, सोमणसे इंदए भणिदो ॥७८॥

३१२९०३ । $\frac{७}{१६}$ ।

अर्थ—सौमनस इन्द्रकका विस्तार तीन लाख बारह हजार नौ सौ तीन योजन और सात कला (३१२९०३$\frac{७}{१६}$ योजन) प्रमाण कहा गया है ॥७८॥

पणतीसुत्तर-णव-सय, इगिवाल-सहस्स जोयण-दु-लक्खा ।
पण्णरस - कला रुंदं, पीदिंकर - इंदए कहियो ॥७९॥

२४१९३५ । $\frac{१५}{१६}$ ।

अर्थ—प्रीतिङ्कर इन्द्रकका विस्तार दो लाख इकतालीस हजार नौ सौ पैंतीस योजन और पन्द्रह कला (२४१९३५$\frac{१५}{१६}$ यो०) प्रमाण कहा गया है ॥७९॥

सत्तरि-सहस्स णव-सय, सत्तट्ठी-जोयणाणि इगि-लक्खा ।
तेवीससंसा वासो, आइच्चे इंदए होदी ॥८०॥

१७०९६७ । $\frac{२३}{६४}$ ।

अर्थ—आदित्य इन्द्रकका विस्तार एक लाख सत्तर हजार नौ सौ सड़सठ योजन और तेईस कला (१७०९६७$\frac{२३}{६४}$ योजन) प्रमाण है ॥८०॥

एक्कं जोयण - लक्खं, वासो सव्वट्ठसिद्धि-णामस्स ।
एवं तेसट्ठीणं, वासो सिट्ठो सिसूण जोहट्ठं ॥८१॥

१००००० । ६३ ।

अर्थ—सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रकका विस्तार एक लाख (१०००००) योजन प्रमाण है। इसप्रकार तिरेसठ (६३) इन्द्रकोंका विस्तार शिष्योंके बोधनार्थ कहा गया है ॥८१॥

समस्त इन्द्रक विमानोंका एकत्रित विस्तार इस प्रकार है—

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

इन्द्रक विमानोंका विस्तार—

क्र.	इन्द्रकोंके नाम	इन्द्रक विमानोंका विस्तार	क्र.	इन्द्रकोंके नाम	इन्द्रक विमानोंका विस्तार	क्र.	इन्द्रकोंके नाम	इन्द्रक विमानोंका विस्तार
१.	ऋतु	४५०००००० यो०	२२.	हारिद्र	३००९६७७३$\frac{१}{३}$ यो०	४३.	वह्नहृदय	१५१९३५४$\frac{३}{११}$ यो०
२.	विमल	४४२६०३२$\frac{५}{६}$	२३.	पद्म	२६३८७०९$\frac{३}{६}$	४४.	लान्तव	१४४८३८७$\frac{३}{६}$
३.	चन्द्र	४३५८०६४$\frac{३}{६}$	२४.	लोहित	२८६७७४१$\frac{३}{६}$	४५.	महाशुक्र	१३७७४१९$\frac{३}{६}$
४.	वल्गु	४२८७०९६$\frac{३}{६}$	२५.	वज्र	२७९६७७४$\frac{५}{६}$	४६.	सहस्रार	१३०६४५१$\frac{३}{६}$
५.	वीर	४२१६१२९$\frac{१}{६}$	२६.	नन्द्या०	२७२५८०६$\frac{३}{६}$	४७	आनत	१२३५४८३$\frac{३}{६}$
६.	अरुण	४१४५१६१$\frac{५}{६}$	२७.	प्रभङ्कर	२६५४३३८$\frac{३}{६}$	४८.	प्राणत	११६४५१६$\frac{५}{६}$
७.	नन्दन	४०७४१९३$\frac{५}{६}$	२८	पृष्ठक	२५८३८७०$\frac{३}{६}$	४९	पुष्पक	१०९३५४८$\frac{३}{६}$
८	नलिन	४००३२२५$\frac{३}{६}$	२९.	गज	२५१२९०$\frac{५}{६}$	५०.	शातंकर	१०२२५८०$\frac{३}{६}$
९.	कञ्चन	३९३२२५८$\frac{३}{६}$	३०.	मित्र	२४४१६३५$\frac{३}{६}$	५१.	आरण	९५१६१२$\frac{३}{६}$
१०.	रोहित	३८६१२९०$\frac{५}{६}$	३१.	प्रभ	२३७०९६७$\frac{३}{६}$	५२	अच्युत	८८०६४५$\frac{३}{६}$
११.	चञ्चत्	३७९०३२२$\frac{३}{६}$	३२.	अञ्जन	२३०००००० यो०	५३.	सुदर्शन	८०९६७७$\frac{३}{६}$
१२.	मरुत्	३७१९३५४$\frac{३}{६}$	३३.	वनमाल	२२२९०३२$\frac{५}{६}$	५४.	अमोघ	७३८७०९$\frac{३}{६}$
१३.	ऋद्धीश	३६४८३८७$\frac{३}{६}$	३४.	नाग	२१५८०६४$\frac{३}{६}$	५५.	सुप्रबुद्ध	६६७४१$\frac{३}{६}$
१४	वैडूर्य	३५७७४१९$\frac{३}{६}$	३५.	गरुड	२०८७०९६$\frac{३}{६}$	५६.	यशोधर	५९६७४$\frac{५}{६}$
१५.	रुचक	३५०६४१$\frac{३}{६}$	३६.	लांगल	२०१६१२९$\frac{३}{६}$	५७.	सुभद्र	५२५८०६$\frac{३}{६}$
१६.	रुचिर	३४३५४८३$\frac{३}{६}$	३७.	बलभद्र	१९४५१६१$\frac{५}{६}$	५८.	सुविशाल	४५४८३८$\frac{३}{६}$
१७.	अङ्क	३३६४५१६$\frac{५}{६}$	३८.	चक्र	१८७४१९३$\frac{३}{६}$	५९.	सुमनस्	३८३८७०$\frac{३}{६}$
१८.	स्फटिक	३२९३५४८$\frac{३}{६}$	३९	अरिष्ट	१८०३२२५$\frac{३}{६}$	६०.	सौमनस्	३१२९०३$\frac{५}{६}$
१९.	तपनीय	३२२२५८०$\frac{३}{६}$	४०	सुरसमिति	१७३२२५८$\frac{३}{६}$	६१.	प्रीतिङ्कर	२४१९३५$\frac{३}{६}$
२०.	मेघ	३१५१६१२$\frac{५}{६}$	४१	ब्रह्म	१६६१२९०$\frac{३}{६}$	६२.	आदित्य	१७०९६७$\frac{३}{६}$
२१.	अभ्र	३०८०६४५$\frac{३}{६}$	४२.	ब्रह्मोत्तर	१५९०३२२$\frac{५}{६}$	६३	सर्वार्थसिद्धि	१००००० यो०

ऋतु इन्द्रकादिके श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम एवं उनका विन्यास क्रम—

सव्वाण इंदयाणं, चउसु दिसासुं पि सेढि-बद्धाणि ।
चत्तारि वि विदिसासुं, होंदि पइण्णय-विमाणाओ ॥८२॥

अर्थ—सब इन्द्रक विमानोंकी चारों दिशाओंमें श्रेणीबद्ध और चारों ही विदिशाओंमें प्रकीर्णक विमान होते हैं ॥८२॥

उडु-णामे पत्तेक्कं, सेढि-गदा चउ-दिसासु बासट्ठी ।
एक्केक्कूणा सेसे, पढिविसमाइच्च[1] - परियंतं ॥८३॥

अर्थ—ऋतु नामक विमानकी चारों दिशाओंमेंसे प्रत्येक दिशामें बासठ श्रेणीबद्ध हैं। इसके आगे आदित्य इन्द्रक पर्यन्त शेष इन्द्रकोंकी प्रत्येक दिशामें एक-एक कम होता गया है ॥८३॥

उडु-णामे सेढिगया, एक्केक्क-दिसाए होंदि तेसट्ठी ।
एक्केक्कूणा सेसे, जाव य सव्वट्ठसिद्धि त्ति ॥८४॥

(पाठान्तरम्)

अर्थ—ऋतु नामक इन्द्रक विमानके आश्रित एक-एक दिशामें तिरेसठ श्रेणीबद्ध विमान हैं। इसके आगे सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त शेष विमानोंमें एक-एक कम होता गया है ॥८४॥

(पाठान्तर)

बासट्ठी सेढिगया, पभासिदा जेहिं ताण उवएसे ।
सव्वट्ठे वि चउद्दिसमेक्केक्कं सेढि - बद्धा य ॥८५॥

अर्थ—जिन आचार्योंने (ऋतु विमानके आश्रित प्रत्येक दिशामें) बासठ श्रेणीबद्ध विमानोंका निरूपण किया है उनके उपदेशानुसार सर्वार्थसिद्धि विमानके आश्रित भी चारों दिशाओंमें एक-एक श्रेणीबद्ध विमान है ॥८५॥

पढमिंदय-पहुवीदो, पीदिकर - णाम - इंदयं जाव ।
तेसुं चउसु दिसासुं, सेढि - गदाणं इमे णामा ॥८६॥

अर्थ—प्रथम इन्द्रकसे लेकर प्रीतिङ्कर नामक (६१ वें) इन्द्रक पर्यन्त चारों दिशाओंमें उनके आश्रित रहनेवाले श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम ये हैं ॥८६॥

---

१. द. ब. ज. ठ. माइच्चस्स ।

उडुपह-उडुमज्झिम-उडु-आवत्तय-उडु-विसिट्ठ-णामेहिं ।
उडु - इंदयस्स एदे, पुव्वादि - पदाहिणा[1] होंदि ॥८७॥

अर्थ—ऋतुप्रभ, ऋतुमध्यम, ऋतु-आवर्त और ऋतु-विशिष्ट, ये चार श्रेणीबद्ध विमान ऋतु इन्द्रकके समीप पूर्वादिक दिशाओंमें प्रदक्षिण-क्रमसे हैं ॥८७॥

विमलपह-विमल-मज्झिम, विमलावत्तं खु विमल-णामम्मि ।
विमल - विसिट्ठो तुरिमो, पुव्वादि - पदाहिणा[2] होंदि ॥८८॥

अर्थ—विमलप्रभ, विमलमध्यम, विमलावर्त और चतुर्थ विमलविशिष्ट, ये चार श्रेणीबद्ध विमान विमल नामक (दूसरे) इन्द्रकके आश्रित पूर्वादिक प्रदक्षिण-क्रमसे हैं ॥८८॥

एवं [3]चंदादीणं, णिय-णिय-णामाणि सेढिबद्धेसुं ।
पढमेसुं पह - मज्झिम - आवत्त-विसिट्ठ-जुत्ताणि ॥८९॥

अर्थ—इसीप्रकार चन्द्रादिक इन्द्रकोंके आश्रित रहनेवाले प्रथम श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम प्रभ, मध्यम, आवर्त और विशिष्ट इन पदोंसे युक्त अपने-अपने नामोंके अनुसार ही हैं ॥८९॥

उडु - इंदय - पुव्वादी, सेढिगया जे हवंति बासट्ठी ।
तेसिं विदियादीणं, एक्क-दिसाए भणामो णामाइं ॥९०॥

अर्थ—ऋतु इन्द्रककी पूर्वादिक दिशाओंमें जो बासठ श्रेणीबद्ध हैं उनके द्वितीयादिकोंके एक दिशाके नाम कहते हैं ॥९०॥

संठिय-णामा सिरिवच्छ-वट्ट-णामा य कुसुम-आयारा ।
सुत्तंकण - कलसा[4] वसह-सीह-सुर-असुर-मणहरणा ॥९१॥

१३ ।

भद्दं सव्वदोभद्दं, दिवसोत्तिय अंबिसाभिधाणं च ।
विजु-वड्ढमाण-पुरजं, [5]अब्भय - इंदो महिंदो य ॥९२॥

९ ।

तह य उवड्ढं कमलं, कोकणदं चक्कसुप्पलं कुमुदं ।
पुंडरिय-सोमणाणि, तिमिसंक - सरंत पासं च ॥९३॥

१२ ।

१-२. ब. ब. क. ज. ठ. पदाहिणो । ३. ब. ब. क. ब. ठ. चउवादीणं । ४. ब. ब. क. ब. ब. ब. कलसा । ५. ब. ब. क. ब. ठ. अभ ।

गगणं सुव्वं सोमं, कंचण-णक्खत्त-चंदणा अमसं ।
विमलं णंदण-सोमणस-सायरा उदिय-समुदिया णामा ॥९४॥

१३ ।

धम्मधरं वेसमणं, कण्णं कणयं तहा य भूदहिदं ।
णामेण लोयकंतं, गंदीसरयं अमोघपासं च ॥९५॥

८ ।

जलकंतं रोहिदयं, अमदब्भासं तहेव सिद्धंतं ।
कुंडल - सोमा एवं, इंगिसट्ठी सेढि - बद्धाणि ॥९६॥

६ ।

अर्थ– संस्थित नामक १, श्रीवत्स २, वृत्त ३, कुसुम ४, चाप ५, क्षेत्र ६, अञ्जन ७, कलश ८, वृषभ ९, सिंह १०, सुर ११, असुर १२, मनोहर १३, भद्र १४, सर्वतोभद्र १५, दिक्स्वस्तिक १६, अंदिश १७, दिगु १८, वर्द्धमान १९, पुरव २०, अभयेन्द्र २१, माहेन्द्र २२, उपार्ध २३, कमल २४, कोकनद २५, चक्र २६, उत्पल २७, कुमुद २८, पुण्डरीक २९, सौमक ३०, तिमिस्रा ३१, अंक ३२, स्फटिक ३३, पास ३४, गगन ३५, सूर्य ३६, सोम ३७, कंचन ३८, नक्षत्र ३९, चन्दन ४०, अमल ४१, विमल ४२, नन्दन ४३, सौमनस ४४, सागर ४५, उदित ४६, समुदित ४७, धर्मधर ४८, वैश्रवण ४९, कर्ण ५०, कनक ५१ तथा भूतहित ५२, लोककान्त ५३, सरय ५४, अमोघदर्शी ५५, जलकान्त ५६, रोहितक ५७, अमितभास ५८ तथा सिद्धान्त ५९, कुण्डल ६० और सौम्य ६१ इसप्रकार (ऋतु इन्द्रककी पूर्व दिशा सम्बन्धी) ये इकसठ श्रेणीबद्ध विमान हैं ॥९१-९६॥

ऋतु इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम—

पुरिमादलो-पवण्णिद - संठिय-पहुदीसु तेसु पत्तेक्कं ।
णिय-णामेसुं मज्झिम-आवत्त-विसिट्ठ-आइ जोएज्ज ॥९७॥

अर्थ—पूर्व पंक्तिमें वर्णित उन संस्थित आदि श्रेणीबद्ध विमानोंमेंसे प्रत्येकके अपने-अपने नामसे मध्यम, आवर्त और विशिष्ट आदि जोड़ना चाहिए ॥९७॥

विशेषार्थ—ऋतु इन्द्रक विमान मध्यमें है । इसकी पूर्वादि दिशाओंमें ६२-६२ श्रेणीबद्ध विमान हैं । जिनके क्रमशः नाम इसप्रकार हैं—

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

श्रेणीबद्ध विमानोंकी क्रम संख्या	ऋतु इन्द्रक विमान को—			
	पूर्व दिशामें	दक्षिण में	पश्चिम में	उत्तरमें
१	ऋतुप्रभ	ऋतुमध्यम	ऋतु आवर्त	ऋतुविशिष्ट
२	संस्थितप्रभ	संस्थितमध्यम	संस्थितावर्त	संस्थितविशिष्ट
३	श्रीवत्सप्रभ	श्रीवत्समध्यम	श्रीवत्सावर्त	श्रीवत्सविशिष्ट
४	वृत्तप्रभ	वृत्तमध्यम	वृत्तावर्त	वृत्तविशिष्ट
५	कुसुमप्रभ	कुसुममध्यम	कुसुमावर्त	कुसुमविशिष्ट
६	चापप्रभ	चापमध्यम	चापावर्त	चापविशिष्ट
७	छत्रप्रभ	छत्रमध्यम	छत्रावर्त	छत्रविशिष्ट
८	अंजनप्रभ	अंजनमध्यम	अंजनावर्त	अंजनविशिष्ट
९	कलशप्रभ	कलशमध्यम	कलशावर्त	कलशविशिष्ट
१०	वृषभप्रभ	वृषभमध्यम	वृषभावर्त	वृषभविशिष्ट इत्यादि

प्रत्येक इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम—

एवं [illegible] णामेसुं दक्खिणआदिय-दिसासु ।
[illegible] पीदिकर - इंदया जाव ॥९८॥

अर्थ—[illegible] दिशाओंमें प्रीतिंकर नामक (६१ वें) इन्द्रक पर्यंत श्रेणीबद्ध विमानोंके [illegible]

नोट:— [illegible] अधिकार की गाथा ८९ द्रष्टव्य है ।

आइच्च-इंदयस्स य, पुव्वादिसु लच्छि-लच्छिमालिणिया ।
वइरा - वइरावणिया, चत्तारो वर - विमाणाणि ॥९९॥

अर्थ—आदित्य इन्द्रककी पूर्वादिक दिशाओंमें लक्ष्मी, लक्ष्मीमालिनी, वज्र और वज्रावलि, ये चार उत्तम विमान हैं ॥९९॥

विजयंत - वइजयंतं, जयंतमपराजिदं च चत्तारो ।
पुव्वादि - दिसाभागेसु, [1]ठिदाणि सव्वट्ठसिद्धिस्स ॥१००॥

अर्थ—विजयन्त, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित, ये चार विमान सर्वार्थसिद्धिकी पूर्वादिक दिशाओंमें स्थित हैं ॥१००॥

श्रेणीबद्ध विमानोंकी अवस्थिति—

उडु-सेढीबद्धाणं, सयंभुरमणंबु-रासि-पणिधिम्मि गदं ।
सेसा[2] आइल्लेसुं, तिसु दीवेसुं तिसुं समुद्देसुं ॥१०१॥

३१ । १५ । ८ । ४ । २ । १ । १ ।

अर्थ—ऋतु इन्द्रकके अर्ध श्रेणीबद्ध स्वयम्भूरमण समुद्रके प्रणिधि भागमें स्थित हैं। शेष श्रेणीबद्ध विमान आदिके अर्थात् स्वयम्भूरमण समुद्रसे पूर्वके तीन द्वीप और तीन समुद्रोंपर स्थित हैं ॥१०१॥

एवं मिच्चिवंतं, विण्णासो होदि सेढिबद्धाणं ।
कमसो आइल्लेसुं, तिसु दीवेसुं ति - जलहीसुं ॥१०२॥

अर्थ—इसप्रकार मित्र इन्द्रक पर्यन्त श्रेणीबद्धोंका विन्यास क्रमशः आदिके तीन द्वीपों और तीन समुद्रोंके ऊपर है ॥१०२॥

पभ-पत्थलादि-परदो, आव सहस्सार-पत्थलंतो त्ति ।
आइल्ल - तिण्णि - दीवे, दोण्णि-समुद्दम्मि सेसाओ ॥१०३॥

अर्थ—प्रभ प्रस्तारसे आगे सहस्रार प्रस्तार पर्यन्त शेष, आदिके तीन द्वीपों और दो समुद्रों पर स्थित हैं ॥१०३॥

तत्तो आणद-पहुवी, आव अमोघो त्ति सेढिबद्धाणं ।
आदिल्ल-दोण्णि-दीवे, दोण्णि - समुद्दम्मि सेसाओ ॥१०४॥

अर्थ—इसके आगे आनत पटलसे लेकर अमोघ पटल पर्यन्त शेष श्रेणीबद्धोंका विन्यास आदिके दो द्वीपों और दो समुद्रोंके ऊपर है ॥१०४॥

तह सुप्पबुद्ध-पहुवी, आव य सुविसालओ त्ति सेढिगया ।
आदिल्ल - एक्क - दीवे, दोण्णि समुद्दम्मि सेसाओ ॥१०५॥

---

१. ब. ब. क. च. ठ. ठिदाण । २. ब. सेसुं, ब. क. च. ठ. सेसं ।

अर्थ—तथा सुप्रबुद्ध पटलसे लेकर सुविशाल पटल पर्यन्त शेष श्रेणीबद्ध, आदिके एक द्वीप और दो समुद्रोंके ऊपर स्थित हैं ।।१०५।।

सुमणस सोमणसाए, आइल्लय-एक्क-दीव-उवहिम्मि ।
पीदिकराए दिव्वं आइच्चे चरिम - वीहम्मि ।।१०६।।

अर्थ—सुमनस और सौमनस पटलके श्रेणीबद्ध विमान आदिके एक द्वीप तथा एक समुद्रके ऊपर स्थित हैं। इसीप्रकार दिव्य प्रीतिङ्कर पटलके भी श्रेणीबद्धोंका विन्यास समझना चाहिए। अन्तिम आदित्य पटलके श्रेणीबद्ध द्वीपके ऊपर स्थित हैं ।।१०६।।

विशेषार्थ :—ऋतु इन्द्रक सम्बन्धी ६२ श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास—

स्वयम्भूरमण समुद्रके ऊपर—ऋतुप्रभसे सौमक पर्यन्त ३१ श्रेणीबद्ध विमान स्थित हैं।

स्वयम्भूरमणद्वीपके ऊपर—तिमिस्रासे सागर पर्यन्त १५ विमान।

अहीन्द्रवर समुद्रके ऊपर—अर्चितसे लोककान्त तक ८ विमान।

अहीन्द्रवर द्वीपके ऊपर—सरयसे रोहितक पर्यन्त ४ विमान।

देववर समुद्रके ऊपर—अमितवाह और सिद्धान्त २ विमान।

देववर द्वीपके ऊपर—कुण्डल नामक १ विमान और

यक्षवर समुद्रके ऊपर—सौम्य नामक (६२ वाँ) १ विमान है।

विमल इन्द्रकसे मित्र इन्द्रक पर्यन्तके २९ इन्द्रक विमानोंसे सम्बन्धित सर्व श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास क्रमशः यक्षवर द्वीप, भूतवर समुद्र, भूतवर द्वीप, नागवर समुद्र, नागवर द्वीप और वैडूर्यवर समुद्र, इन तीन द्वीपों और तीन समुद्रोंके ऊपर है।

प्रभ इन्द्रकसे सहस्रार इन्द्रक पर्यन्तके १६ इन्द्रक विमानोंसे सम्बन्धित सर्व श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास क्रमशः वैडूर्यवर द्वीप, वज्रवर समुद्र, वज्रवर द्वीप, काञ्चनवर समुद्र और काञ्चनवर द्वीप, इन तीन द्वीपों और दो समुद्रोंके ऊपर है।

आनत इन्द्रकसे अमोघ इन्द्रक पर्यन्तके ८ इन्द्रक विमानोंसे सम्बन्धित सर्व श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास क्रमशः रूप्यवर समुद्र, रूप्यवर द्वीप, हिंगुलवर-समुद्र और हिंगुलवर द्वीप, इन दो समुद्रों और दो द्वीपोंके ऊपर है।

सुप्रबुद्ध इन्द्रकसे सुविशाल इन्द्रक पर्यन्त ४ इन्द्रक सम्बन्धित श्रेणीबद्ध विमानों का विन्यास क्रमशः अञ्जनवर समुद्र, अञ्जनवर द्वीप और श्यामवर समुद्र, इन दो समुद्रों और एक द्वीप पर है।

सुमनस और सौमनस इन २ इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास क्रमशः श्यामवर द्वीप और सिन्दूरवर समुद्रके ऊपर है।

प्रीतिङ्कर इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानों का विन्यास सिन्दूरवर द्वीप और हरिसिन्दूर समुद्रके ऊपर है।

६२ वें आदित्य इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध विमानोंका विन्यास हरिसिन्दूर द्वीप पर है।

श्रेणीबद्ध विमानोंके तिर्यक् अन्तराल और विस्तारका प्रमाण—

होदि [1]असंखेज्जाणि, एदाणं जोयणाणि विच्चालं।
तिरियेणं सव्वाणं, तेत्तियमेत्तं च वित्थारं ॥१०७॥

अर्थ—इन सब विमानोंका तिर्यग्रूपसे असंख्यात योजनप्रमाण अन्तराल है और इनका विस्तार भी इतना (असंख्यात योजन प्रमाण) ही है ॥१०७॥

शेष द्वीप-समुद्रोंपर श्रेणीबद्धोंके विन्यासका नियम—

एवं [2]चउव्विहेसुं, सेढीबद्धाण होदि उत्त - कमे।
अवसेस - दीव - उवहीसु णत्थि सेढीण विण्णासो ॥१०८॥

अर्थ—इसप्रकार उक्त क्रमसे श्रेणीबद्धोंका विन्यास [3]चतुर्विध (चतुर्दिक्) रूपमें (१) है। अवशेष द्वीप-समुद्रोंमें श्रेणीबद्धोंका विन्यास नहीं है ॥१०८॥

विशेषार्थ—प्रथम ऋतु इन्द्रकसे आदित्य पर्यन्त ६२ इन्द्रक सम्बन्धी सर्व श्रेणीबद्ध विमानों का विन्यास अन्तिम स्वयम्भूरमण समुद्रसे प्रारम्भ होकर पूर्वके हरिसिन्दूर द्वीप पर्यन्त अर्थात् १५ समुद्र और १४ द्वीपों (२९ द्वीप-समुद्रों) के ऊपर चारों दिशाओं में है।

श्रेणीबद्ध विमानोंकी आकृति आदि—

सेढीबद्धे सव्वे, समचट्टा विविह-दिव्व-रयणमया।
उल्लसिद-धय-पडाया, णिरुवमरूवा विराजंति ॥१०९॥

अर्थ—सर्व श्रेणीबद्ध विमान समान गोल, विविध दिव्य रत्नोंसे निर्मित, ध्वजा-पताकाओं से उल्लसित और अनुपम रूपसे युक्त होते हुए शोभित हैं ॥१०९॥

प्रकीर्णक विमानोंका अवस्थान आदि—

एदाणं विच्चाले, पइण्ण-कुसुमोवयार-संठाणा[4]।
होंदि पइण्णय-णामा, रयणमया विविसे वर-विमाणा ॥११०॥

---

१. ब. ब. क. ब. ठ. असंखेज्जाणं। २. ब. चउदिसेसुं। ३. अर्थ स्पष्ट नहीं हुआ। ४. द ब. क. ब. ठ. विमाणाणि।

अर्थ—इनके (श्रेणीबद्धोंके) अन्तरालमें विदिशाओंमें प्रकीर्णक अर्थात् बिखरे हुए पुष्पोंके सदृश स्थित, रत्नमय, प्रकीर्णक नामक उत्तम विमान हैं ॥११०॥

संखेज्जासंखेज्जं, सगसग-ओगाण-पमाण-विक्खंभो ।
सव्वे पइण्णयाणं, विच्चालं तेत्तियं तेसुं ॥१११॥

अर्थ—सब प्रकीर्णकोंका विस्तार संख्यात एवं असंख्यात योजन प्रमाण है और इतना ही उनमें अन्तराल भी है ॥१११॥

तटवेदी—

इंदय-सेढीबद्ध-पइण्णयाणं पि वर - विमाणाणं[1] ।
उवरिम-तलेसु रम्मा, एक्केक्का होदि तड-वेदी ॥११२॥

अर्थ—इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक, इन उत्तम विमानोंके उपरिम एवं तल भागोंमें एक-एक रमणीय तट-वेदी है ॥११२॥

अरियट्टालिय-चारु, वर-गोउरदार-तोरणाभरणा ।
धुव्वंत-धय-पडाया, अच्छरिय - विसेसकर - रूवा ॥११३॥

विण्णासो समत्तो ॥२॥

अर्थ—यह वेदी भागों एवं अट्टालिकाओंसे सुन्दर, उत्तम गोपुरद्वारों तथा तोरणोंसे सुशोभित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त और आश्चर्य-विशेषको करनेवाले रूपसे संयुक्त है ॥११३॥

विन्यास समाप्त हुआ ॥२॥

कल्प और कल्पातीतका विभाग—

कप्पा-कप्पातीदा, इदि दुविहा होंति[2] भावण-पडला ते ।
भावण - कप्प - पडला, कप्पातीदा य[3] एक्कारसं ॥११४॥

५२ । ११ ।

अर्थ—स्वर्गमें कल्प और कल्पातीतके भेदसे पटल दो प्रकारके हैं । इनमेंसे भावन कल्प पटल और ग्यारह कल्पातीत (कुल ५२+११=६३) पटल हैं ॥११४॥

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. विमाणाणि । २. ब. क. क. ब, ठ. होंति । ३. ब. ब. एव ।

बारस कप्पा केई, केई सोलस वदंति आइरिया ।
तिण्हाणि भासिदाणि, कप्पातीदाणि पडलाणि ॥११५॥

अर्थ—कोई आचार्य कल्पोंकी संख्या बारह और कोई सोलह बतलाते हैं । कल्पातीत पटल तीन प्रकारसे कहे गये हैं ॥११५॥

हेट्ठिम मज्झे उवरि, पत्तेक्कं ताण होंति चत्तारि ।
एवं बारस - कप्पा, सोलस उड्डुदुमट्ठ जुगलाणि ॥११६॥

अर्थ—जो (आचार्य) बारह कल्प स्वीकार करते हैं उनके मतानुसार अधोभाग, मध्य-भाग और उपरिम भागमेंसे प्रत्येकमें चार-चार कल्प हैं । इसप्रकार सब बारह कल्प होते हैं । सोलह कल्पोंकी मान्यतानुसार ऊपर-ऊपर आठ युगलोंमें सोलह कल्प हैं ॥११६॥

गेवेज्जमणुद्दिसयं, अणुत्तरं इय हवंति तिवियप्पा ।
कप्पातीदा पडला, गेवेज्जं णव - विहं तेसुं ॥११७॥

अर्थ—ग्रैवेयक, अनुदिश और अनुत्तर, इसप्रकार कल्पातीत पटल तीन प्रकारके हैं । इनमेंसे ग्रैवेयक पटल नौ प्रकारके हैं ॥११७॥

कल्प और कल्पातीत विमानोंका अवस्थान—

मेरु-तलादो उवरिं, दिवड्ढ-रज्जूए आदिमं जुगलं ।
तत्तो हवेदि बिदियं, तेत्तियमेत्ताए रज्जूए ॥११८॥

तत्तो छज्जुगलाणि, पत्तेक्कं अद्ध - अद्ध - रज्जूए ।
एवं कप्पा कमसो, कप्पातीदा य ऊण - रज्जूए ॥११९॥

$\frac{-३}{१४}\left|\frac{-३}{१४}\right|\frac{-}{१४}\left|\frac{-}{१४}\right|\frac{-}{१४}\left|\frac{-}{१४}\right|\frac{-}{१४}\left|\frac{-}{१४}\right|\frac{-}{७}$

एवं भेद-परूवणा समत्ता ॥३॥

अर्थ—मेरुतलसे ऊपर डेढ़ राजूमें प्रथम युगल और इसके आगे इतने ही राजूमें अर्थात् डेढ़ राजूमें द्वितीय युगल है । इसके आगे छह युगलोंमेंसे प्रत्येक आधे-आधे राजूमें है । इसप्रकार कल्पोंकी स्थिति बतलाई गई है । कल्पातीत विमान ऊन अर्थात् कुछ कम एक राजूमें हैं ॥११८-११९॥

इसप्रकार भेद-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥३॥

बारह कल्प एवं कल्पातीत विमानोंके नाम—

सोहम्मीसाण-सणक्कुमार-माहिंद - बम्ह - लंतवया ।
महसुक्क-सहस्सारा, आणद-पाणवय-आरणच्चुदका ॥१२०॥

एवं बारस कप्पा, कप्पातीदेसु णव य गेवेज्जा ।
हेट्ठिम-हेट्ठिम-णामो, हेट्ठिम-मज्झिल्ल हेट्ठिमोवरिमो ॥१२१॥

मज्झिम-हेट्ठिम-णामो, मज्झिम-मज्झिम य मज्झिमोवरिमो ।
उवरिम-हेट्ठिम-णामो, उवरिम-मज्झिम य उवरिमोवरिमो ॥१२२॥

अर्थ—सौधर्म, ईशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, लान्तव, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, इसप्रकार ये बारह कल्प हैं। कल्पातीतोंमें अधस्तन-अधस्तन, अधस्तन-मध्यम, अधस्तन-उपरिम, मध्यम-अधस्तन, मध्यम-मध्यम, मध्यम-उपरिम, उपरिम-अधस्तन, उपरिम-मध्यम और उपरिम-उपरिम, ये नौ ग्रैवेयक विमान हैं ॥१२०-१२२॥

आदित्य इन्द्रकके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंके नाम—

आइच्च-इंदयस्स य, पुव्वादिसु लच्छि-लच्छिमालिणिया ।
वइरो वइरोचणिया, चत्तारो वर - विमाणाणि ॥१२३॥

अण्ण - दिसा - विदिसासुं, सोमक्खं सोमरूव-अंकाइं ।
पडिहं पइण्णयाणि य, चत्तारो तस्स णादव्वा ॥१२४॥

अर्थ—आदित्य (६२ वें) इन्द्रक विमानकी पूर्वादिक दिशाओंमें लक्ष्मी, लक्ष्मीमालिनी, वज्र और वैरोचिनी, ये चार उत्तम श्रेणीबद्ध विमान तथा अन्य दिशा-विदिशाओंमें सोमार्य, सोमरूप, अंक और स्फटिक, ये चार उसके प्रकीर्णक विमान जानने चाहिए ॥१२३-१२४॥



सर्वार्थसिद्धि इन्द्रकके श्रेणीबद्ध विमानोंके नाम—

विजयंत - वइजयंतं, जयंत-अपराजिदं विमाणाणि ।
सव्वट्ठ-सिद्धि-णामा, पुव्वावर-दक्खिणुत्तर-दिसासं ॥१२५॥

अर्थ—सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रककी पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशामें विजयन्त, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित नामक विमान हैं ॥१२५॥

सव्वट्ठ-सिद्धि-णामे, पुव्वादि-पदाहिणेण विजयादी ।
ते होंति वर - विमाणा, एवं केई पकप्पेंति ॥१२६॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रककी पूर्वादि दिशाओंमें प्रदक्षिण रूप से विजयादिक उत्तम विमान हैं। कोई आचार्य इसप्रकार भी प्ररूपण करते हैं ॥१२६॥

पाठान्तर ।

सोहम्मो ईसाणो, सणक्कुमारो तहेव माहिंदो ।
बम्हो बम्हुत्तरयं, लंतव-काविट्ठ - सुक्क - महसुक्का ॥१२७॥
सदर-सहस्सारादव-पाणद-आरणय[1]-अच्चुदा णामा ।
इय सोलस कप्पाणि, भणंते केइ आइरिया ॥१२८॥

पाठान्तरम् ।

एवं णाम-परूवणा समत्ता ॥४॥

अर्थ—सौधर्म, ईशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ट, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत नामक ये सोलह कल्प हैं। कोई आचार्य ऐसा भी मानते हैं ॥१२७-१२८॥

इसप्रकार नाम प्ररूपणा समाप्त हुई ॥४॥

कल्प एवं कल्पातीत विमानोंकी स्थिति और उनकी सीमाका निर्देश—

कणयद्दि-चूल-उवरिं, किंचूणा-विरहद-रज्जु-बहलम्मि ।
सोहम्मीसाणक्खं, कप्प - जुगं होदि रमणिज्जं ॥१२९॥

$\frac{१}{१६}$

---

१ ब. ब. क. ज. ठ. आरणया । २. ब. ब. क. ज. ठ. १४१ ।

अर्थ—कनकाद्रि (मेरु) पर्वतकी चूलिकाके ऊपर कुछ कम डेढ़ राजूके बाहल्यमें रमणीय सौधर्म-ईशान नामक कल्प-युगल है ।।१२९।।

ऊणस्स य परिमाणं, बाल-सुदं जोयणाणि इगि-लक्खं ।
उत्तरकुरु - मणुवाणं, बालग्गादिरित्तयं ।।१३०।।

१०००४० ।

अर्थ – इस कुछ कमका प्रमाण उत्तरकुरुके मनुष्योंके बालाग्रसे अधिक एक लाख चालीस (१०००४०) योजन है ।।१३०।।

सोहम्मीसाणाणं, चरिमिंदय - केदुदंड - सिहरादो ।
उड्ढं असंख-कोडी-जोयण-विरहिद-विवड्ढ-रज्जूए ।।१३१।।

बिट्ठेवि कप्प-जुगलं, णामेहि सणक्कुमार-माहिंदा ।
तच्चरिमिंदय - केदण - दंडाद असंख - जोयणूणेणं ।।१३२।।

रज्जूए अद्धेणं, कप्पो बेट्ठेवि तत्थ बम्हक्खो ।
तम्मेत्ते पत्तेक्कं, लंतव - महसुक्कया[1] सहस्सारो ।।१३३।।

आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-कप्पा हवंति उवरुवरिं ।
तत्तो असंख - जोयण - कोडीओ उवरि अंतरिदा ।।१३४।।

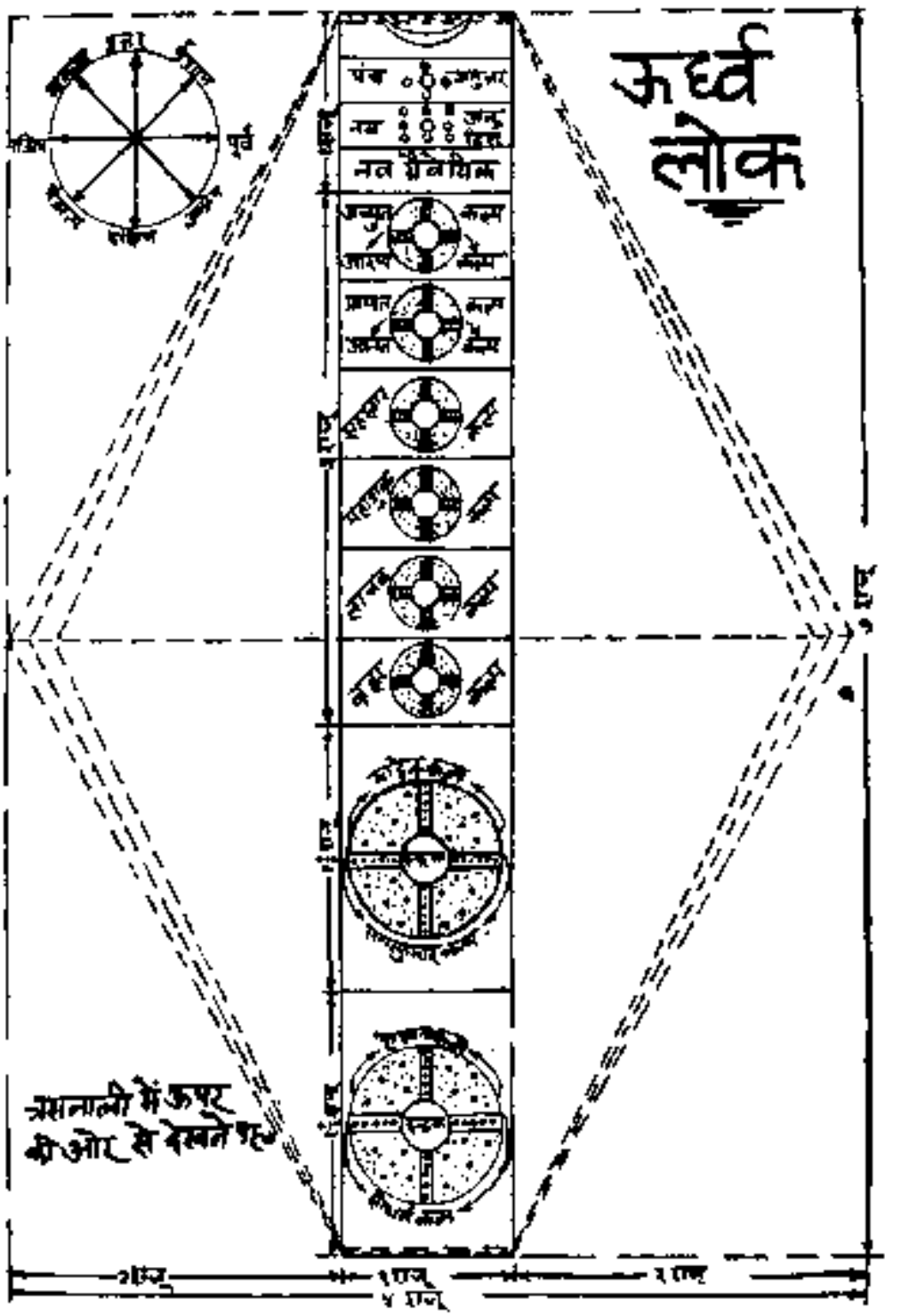
कप्पातीदा पडला, एक्करसा होंति ऊण - रज्जूए ।
पढमाए अंतरादो, उवरुवरिं होंति अधियाओ ।।१३५।।

अर्थ—सौधर्म-ईशान सम्बन्धी अन्तिम इन्द्रकके ध्वज-दण्डके शिखरसे ऊपर असंख्यात करोड़ योजनोंसे रहित डेढ़ ($1\frac{1}{2}$) राजूमें सनत्कुमार-माहेन्द्र नामक कल्प-युगल स्थित है। इसके अन्तिम इन्द्रक सम्बन्धी ध्वज-दण्डके ऊपर असंख्यात योजनोंसे कम अर्धराजूमें ब्रह्म नामक कल्प स्थित है। इसके आगे इतने मात्र अर्थात् अर्ध-अर्ध राजूमें ऊपर-ऊपर लान्तव, महाशुक्र, सहस्रार, आनत-प्राणत और आरण-अच्युत कल्पोंमेंसे प्रत्येक है। इसके आगे असंख्यात-करोड़ योजनोंके अन्तरसे ऊपर कुछ कम एक राजूमें शेष ग्यारह कल्पातीत पटल हैं। इनमें प्रथमके अन्तरसे ऊपर-ऊपरका अन्तर अधिक है ।।१३१-१३५।।

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिए]

---

१. द. ब. क. ज. ठ. सुक्कय ।


ऊर्ध्व लोक
पूर्व
ब्रह्म
लान्तव
महाशुक्र
सहस्रार
आनत
प्राणत
आरण
अच्युत
नव ग्रैवेयक
नव अनुदिश
पंच अनुत्तर
क्रमनाली में ऊपर की ओर से देखने पर
१ राजू
१ राजू
१ राजू
७ राजू

कप्पाणं सीमाओ, णिय-णिय-चरिमिंदयाण धय-दंडा ।
किंचूणय - लोयंतो, कप्पातीदाण अवसाणं ॥१३६॥

एवं सीमा-परूवणा समत्ता ॥५॥

अर्थ—कल्पोंकी सीमाएँ अपने-अपने अन्तिम इन्द्रकोंके ध्वज-दण्ड हैं और कुछ कम लोकका अन्त कल्पातीतोंका अन्त है ॥१३६॥

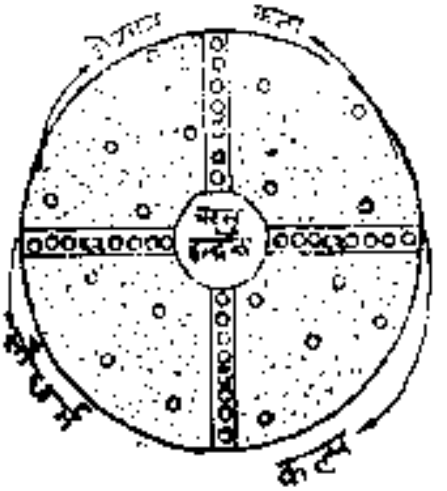
इसप्रकार सीमाकी प्ररूपणा समाप्त हुई ॥५॥

सौधर्म आदि कल्पोंके आश्रित श्रेणीबद्ध एवं प्रकीर्णक विमानोंका निर्देश—

उडु-पहुदि-एक्कतीसं, एदेसुं पुव्व-अवर-दक्खिणदो ।
सेढीबद्धा णइरदि-अणल-दिसा-ठिद - पइण्णा य ॥१३७॥

सोहम्मकप्प-णामा, तेसुं उत्तर - दिसाए सेढिगया ।
मरुद - ईसाण - दिस - ट्ठिद - पइण्णया होंति ईसाणे ॥१३८॥

अर्थ—ऋतु आदि इकतीस इन्द्रक एवं उनमें पूर्व, पश्चिम और दक्षिणके श्रेणीबद्ध; तथा नैर्ऋत्य एवं आग्नेय दिशामें स्थित प्रकीर्णक, इन्हींका नाम सौधर्मकल्प है। उपर्युक्त (उन) विमानों की उत्तर दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध और वायव्य एवं ईशान दिशामें स्थित प्रकीर्णक, ये ईशान कल्पमें हैं ॥१३७-१३८॥



अंजण-पहुदी सत्त य, एवेसि पुव्व-अवर-दक्खिणदो ।
सेढीबद्धा णइरदि - अणल[1]-दिस - ट्ठिद-पइण्णा य ॥१३९॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. अनिल ।

णामे सणक्कुमारो, तेसुं उत्तर - दिसाए सेढिगया ।
पवणीसाणे[1] संठिद - पइण्णया होंति माहिंदे ॥१४०॥

अर्थ—अञ्जन आदि सात इन्द्रक एवं उनके पूर्व, दक्षिण और पश्चिमके श्रेणीबद्ध तथा नैऋत्य एवं आग्नेय दिशामें स्थित प्रकीर्णक, इनका नाम सनत्कुमार कल्प है। इन्हींकी उत्तर दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध और पवन एवं ईशान दिशामें स्थित प्रकीर्णक, ये माहेन्द्र कल्पमें हैं ॥१३९-१४०॥

रिट्ठादी चत्तारो, एदाणं चउ - दिसासु सेढिगया ।
विदिसा-पइण्णयाणि[2], ते कप्पा बम्ह - णामेणं ॥१४१॥

अर्थ—अरिष्टादिक चार इन्द्रकों तथा इनकी चारों दिशाओंके श्रेणीबद्ध और विदिशाओंके प्रकीर्णकोंका नाम ब्रह्म कल्प है ॥१४१॥

बम्हहिदयादिदुइयं, एदाणं चउ - दिसासु सेढिगया ।
विदिसा - पइण्णयाइं, णामेणं संतवो कप्पो ॥१४२॥

अर्थ—ब्रह्महृदयादिक दो इन्द्रकों और इनकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध तथा विदिशाओंके प्रकीर्णकोंका नाम लान्तव कल्प है ॥१४२॥

महसुक्क-इंदओ तह, एदस्स य चउ-दिसासु सेढिगया ।
विदिसा - पइण्णयाइं, कप्पो महसुक्क - णामेणं ॥१४३॥

अर्थ—महाशुक्र इन्द्रक तथा इसकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध और विदिशाओंके प्रकीर्णकोंका नाम महाशुक्र कल्प है ॥१४३॥

इंदय-सहस्सयारो, एदस्स चउ - दिसासु सेढिगया ।
विदिसा - पइण्णयाइं, होंति सहस्सार - णामेणं ॥१४४॥

अर्थ—सहस्रार इन्द्रक और उसकी चारों दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध एवं विदिशाओंके प्रकीर्णकोंका नाम सहस्रार कल्प है ॥१४४॥

आणद-पहुदी छक्कं, एदस्स य पुव्व-अवर-दक्खिणदो ।
सेढीबद्धा णइरदि-अणल[3]-दिस - दुग - पइण्णाणि ॥१४५॥

आणद-आरण-णामा, दो कप्पा होंति बारसिंदसमा ।
उत्तर-दिस-सेढिगया, सगसगसोलाण-दिस-पइण्णा य ॥१४६॥

---

१. द. ब. पवणीसाणं संठिद, क. ज. ठ. पवणीसाण संठिद। २. द. ब. पइण्णयाणं, ज. ठ. पइण्णयाइं। ३. द. ब. क. ज. ठ. अणिल।

अर्थ—आनत आदि छह इन्द्रकों और इनकी पूर्व, पश्चिम एवं दक्षिण दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध तथा नैऋत्य एवं आग्नेय दिशामें स्थित प्रकीर्णकोंका नाम आनत और आरण दो कल्परूप है। इन्हीं इन्द्रकोंकी उत्तर-दिशामें स्थित श्रेणीबद्ध तथा वायव्य एवं ईशान दिशाके प्रकीर्णकोंका नाम प्राणत और अच्युत कल्प है ॥१४५-१४६॥

हेट्ठिम-हेट्ठिम-पमुहे, एक्केक्क सुदंसणादओ पडलाणि ।
होंति हु एवं कमसो, कप्पातीदा ठिदा सव्वे ॥१४७॥

अर्थ—अधस्तन-अधस्तन आदि एक-एकमें सुदर्शनादिक पटल हैं। इसप्रकार क्रमशः सब कल्पातीत स्थित हैं ॥१४७॥

जे सोलस कप्पाणि, केई इच्छंति ताण उवएसे ।
बम्हादि - चउ - दुगेसुं, सोहम्म-दुगं व [1]दिसभेदो ॥१४८॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—जो कोई आचार्य सोलह कल्प मानते हैं, उनके उपदेशानुसार ब्रह्मादिक चार युगलों में सौधर्म-युगलके सदृश दिशा-भेद है ॥१४८॥

पाठान्तर ।

सौधर्मादि कल्पोंमें एवं कल्पातीतोंमें स्थित समस्त विमानोंकी संख्याका निर्देश—

बत्तीसट्ठावीसं, बारस अट्ठं कमेण लक्खाणि ।
सोहम्मादि चउक्के, होंति विमाणाणि विविहाणि ॥१४९॥

३२००००० । २८००००० । १२००००० । ८००००० ।

अर्थ—सौधर्मादि चार कल्पोंमें तीनों प्रकारके विमान क्रमशः बत्तीस लाख (३२०००००), अट्ठाईसलाख (२८०००००), बारह लाख (१२०००००) और आठ लाख (८०००००) हैं ॥१४९॥

चउ-लक्खाणि बम्हे, पण्णास-सहस्सयाणि लंतवए ।
चालीस - सहस्साणि, कप्पे महसुक्क - णामम्मि ॥१५०॥

४००००० । ५०००० । ४०००० ।

---

१. द. ब. वदि भेदो, क. ज. ठ. वहि भेदो ।

अर्थ—इन्द्रकादिक तीनों प्रकारके विमान ब्रह्म कल्पमें चार लाख (४०००००), लान्तव-कल्पमें पचास हजार (५००००) और महाशुक्र नामक कल्पमें चालीस हजार (४००००) हैं ॥१५०॥

सत्तेव सहस्साणि, होंति सहस्सार-कप्प-णामम्मि ।
सत्त-सयाणि विमाणा, कप्प-चउक्कम्मि आणव-प्पमुहे ॥१५१॥

६००० । ७०० ।

अर्थ—उक्त विमान सहस्रार नामक कल्पमें छह हजार (६०००) और आनत प्रमुख चार कल्पोंमें सात सौ (७००) हैं ॥१५१॥

सं-गयण-सत्त-छण्णव-चउ-अट्ठंक-कमेण इंदयादि-तिए ।
परिसंखा णादव्वा, बावण्णा - कप्प - पडलेसुं ॥१५२॥

८४९६७०० ।

अर्थ—शून्य, शून्य, सात, छह, नौ, चार और आठ, इस अङ्क क्रमसे अर्थात् चौरासी लाख छयानवें हजार सात सौ (८४९६७००), यह बावन (५२) कल्प-पटलोंमें इन्द्रादिक तीन प्रकारके विमानोंकी (कुल) संख्या है ॥१५२॥

एक्कारसुत्तर-सयं, हेट्ठिम-गेवेज्ज-तिज-विमाणाणि ।
मज्झिम - गेवेज्ज - तिए, सत्तब्भहियं सयं होदि ॥१५३॥

१११ । १०७ ।

अर्थ—अधस्तन तीन ग्रैवेयकोंके विमान एक सौ ग्यारह (१११) और मध्यम तीन ग्रैवेयकोंमें एक सौ सात (१०७) विमान हैं ॥१५३॥

एक्कणउदिब्भहिया णवदी, उवरिम-गेवेज्ज-तिय-विमाणाणि ।
णव - पंच - विमाणाणि, अणुदिसाणुत्तरेसु कमा ॥१५४॥

९१ । ९ । ५ ।

अर्थ—उपरिम तीन ग्रैवेयकोंके विमान इक्यानवें (९१) और अनुदिश एवं अनुत्तरोंमें क्रमशः नौ और पाँच ही विमान हैं ॥१५४॥

विशेषार्थ—कल्प पटलोंमें स्थित इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंकी कुल संख्या ८४९६७०० है। इसमें नव-ग्रैवेयकोंके (१११ + १०७ + ९१ =) ३०९ विमान तथा अनुदिशोंके ९ और अनुत्तरोंके ५ विमान और मिला देने पर विमानोंका कुल प्रमाण ८४९७०२३ होता है। जिसकी संदृष्टि इसप्रकार है—

क्रमांक	स्वर्गों के नाम	विमानों की संख्या	क्रमांक	स्वर्गों के नाम	विमानों का संख्या
१	सौधर्म कल्प	३२००००० लाख	९	आनत, प्राणत, आरण, अच्युत	७००
२	ऐशान ,,	२८००००० ,,			
३	सानत्कुमार ,,	१२००००० ,,	१०	अधस्तन ग्रैवे०	१११
४	माहेन्द्र ,,	८००००० ,,	११	मध्यम ,,	१०७
५	ब्रह्म ,,	४००००० ,,	१२	उपरिम ,,	९१
६	लान्तव ,,	५०००० हजार	१३	अनुदिश	९
७	महाशुक्र ,,	४०००० ,,		अनुत्तर	५
८	सहस्रार ,,	६००० ,,			
				योग = ८४९७०२३	

सौधर्मादि कल्प स्थित श्रेणीबद्ध विमानों की संख्या प्राप्त करने हेतु मुख एवं गच्छका प्रमाण—

छासीदी-अधिय-सयं, बासट्ठी सत्त-विरहिदेक्क-सयं ।
इगितीसं छप्पणदी, सोदी बाहत्तरी य अडसट्ठी ॥१५५॥

अडसट्ठी चालीसं, अट्ठत्तीसं सोलसं च चउ चउरो ।
सोहम्मादी - अट्ठसु, आणव - पहुदीसु चउसु कमा ॥१५६॥

हेट्ठिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जेसुं अणुद्दिसादि-दुगे ।
सेढीबद्ध - पमाणं - पयास - चटुं इमे पभवा ॥१५७॥

१८६ । ६२ । ९३ । ३१ । ९६ । ८० । ७२ । ६८ । ६४ । ४० । २८ । १६ । ४ । ४ ।

अर्थ—सौधर्मादिक आठ, आनत आदि चार तथा अधस्तन, मध्यम एवं उपरिम ग्रैवेयक और अनुदिशादिक दो में श्रेणीबद्धोंका प्रमाण लानेके लिए क्रमशः एक सौ छियासी, बासठ, सात कम एक सौ (९३), इकतीस, छयानवे, अस्सी, बहत्तर, अड़सठ, चौंसठ, चालीस, अट्ठाईस, सोलह, चार और चार, यह प्रभव (मुख) का प्रमाण है ॥१५५-१५७॥

सोहम्मादि-चउक्के, तिय-एक्क-तियेक्कयाणि रिणय-सण्णो ।
सेसेसुं कप्पेसुं, चउ - चउ - रूवाणि णादव्वा ॥१५८॥

३ । १ । ३ । १ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ ।

अर्थ—सौधर्मादिक चार कल्पोंमें तीन, एक, तीन और एक हानि चय है। शेष कल्पोंमें चार-चार रूप जानना चाहिए ॥१५८॥

इगितीस-सत्त-चउ-दुग-एक्केक्क-छ-ति-ति-तिय-एक्केक्का ।
ताणं कमेण गच्छा, बारस - ठाणेसु ठविदव्वा ॥१५९॥

३१ । ७ । ४ । २ । १ । १ । ६ । ३ । ३ । ३ । १ । १ ।

अर्थ—इकतीस, सात, चार, दो, एक, एक, छह, तीन, तीन, तीन, एक और एक, इन बारह स्थानोंमें गच्छ रखना चाहिए ॥१५९॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त गाथा १५९ में जो गच्छ संख्या दर्शाई गई है वही प्रत्येक युगलके पटलोंकी अर्थात् इन्द्रक विमानोंकी संख्या है। यथा—सौधर्म युगलमें ३१ इन्द्रक, सानत्कुमार युगलमें ७, ब्रह्म कल्प में ४, लान्तव कल्पमें २, महाशुक्र कल्पमें १, सहस्रार कल्पमें १, आनतादि चार कल्पोंमें ६, अधस्तन तीन ग्रैवेयकोंमें ३, मध्यम तीन ग्रैवेयकोंमें ३, उपरिम तीन ग्रैवेयकोंमें ३, नौ अनुदिशोंमें १ तथा पाँच अनुत्तरोंमें १ इन्द्रक विमान हैं। अपने-अपने युगलके गच्छका भी यही प्रमाण है।

सौधर्म कल्पमें एक दिशा सम्बन्धी श्रेणीबद्धोंका प्रमाण ६२ है, इनमेंसे स्व-गच्छ (३१) घटा देनेपर (६२ — ३१) = ३१ शेष रहे। यही सानत्कुमार युगलके प्रथम पटलमें एक दिशा सम्बन्धी श्रेणीबद्धोंका प्रमाण है। इसीप्रकार पूर्व-पूर्व युगलके प्रथम पटलके एक दिशा सम्बन्धी श्रेणीबद्धोंके प्रमाणमेंसे अपने-अपने पटल प्रमाण गच्छ घटानेपर उत्तरोत्तर कल्पोंके प्रथम पटलके एक दिशा सम्बन्धी श्रेणीबद्धोंका प्रमाण प्राप्त होता है।

यथा—सौधर्मैशानमें ६२, सानत्कुमार - माहेन्द्रमें (६२ — ३१) = ३१, ब्रह्मकल्पमें (३१ — ७) = २४, लान्तव कल्पमें (२४ — ४) = २०, महाशुक्रमें (२० — २) = १८, सहस्रारमें (१८ — १) = १७, आनतादि चार कल्पोंमें (१७ — १) = १६, अधोग्रैवेयकमें (१६ — ६) = १०, मध्यम ग्रैवेयकमें (१० — ३) = ७, उपरिम ग्रैवेयकमें (७ — ३) = ४ और अनुदिशोंमें (४ — ३) = १ श्रेणीबद्ध विमान एक दिशा सम्बन्धी है।

पूर्व, पश्चिम और दक्षिण, इन तीन दिशाओंमें स्थित श्रेणीबद्ध दक्षिणेन्द्रके और उत्तर दिशा स्थित श्रेणीबद्ध उत्तरेन्द्रके आधीन होते हैं अतः उपर्युक्त श्रेणीबद्ध विमानोंके प्रमाणको

दक्षिणेन्द्र अपेक्षा ३ से और उत्तरेन्द्र अपेक्षा एकसे गुणा करनेपर तथा जहाँ दक्षिणेन्द्र-उत्तरेन्द्रकी कल्पना नहीं है वहाँ चारसे गुणा करनेपर गाथा १५५-१५७ में कहे हुए आदिधन (मुख) का प्रमाण प्राप्त होता है। यही ३, १ और ४ उत्तरधन है। इन्हींको हानिचय भी कहते हैं (गाथा १५८), क्योंकि प्रत्येक पटलमें उपर्युक्त क्रमसे ही श्रेणीबद्ध घटते हैं।

गा० १५५ — १५७ में कहे हुए आदिधन (मुख) का प्रमाण—

सौधर्मकल्पमें (६२×३=) १८६, ईशानकल्पमें (६२×१=) ६२, सानत्कुमारमें (३१×३=) ९३, माहेन्द्रमें (३१×१=) ३१, ब्रह्मकल्पमें (२४×४=) ९६, लान्तव कल्पमें (२०×४=) ८०, महाशुक्रमें (१८×४=) ७२, सह० में (१७×४=) ६८, आनतादि चारमें (१६×४=) ६४, अधोग्रैवे० में (१०×४=) ४०, मध्यम ग्रैवे० में (७×४=) २८, उपरिम ग्रैवेयक में (४×४=) १६ और नव अनुदिशोंमें (१×४=) ४ आदिधनों (मुखों) का प्रमाण है।

गाथा १५९ में कहे हुए गच्छका प्रमाण अपने-अपने पटल (३१, ७, ४, २, १, १, ६, ३, २, २ और १) प्रमाण होता है।

इसप्रकार आदिधन (हानिचय), उत्तरधन और गच्छका ज्ञान हो जानेपर दक्षिणेन्द्र और उत्तरेन्द्रके श्रेणीबद्धोंका सर्व-संकलित धन प्राप्त करनेकी विधि बताते हैं।

संकलित धन प्राप्त करनेकी विधि—

मुहं चएण गुणिदं, दुगुणिद-मुह-मेलिदं चय-विहीणं।
गच्छद्धे अप्प - हदे, संकलिदं एत्थ आदव्वं ॥१६०॥

अर्थ—दुगुणित मुखमें चय जोड़कर उसमेंसे चय गुणित गच्छ घटा देनेपर जो शेष रहे उसे गच्छके अर्धभागसे गुणित करने पर जो लब्ध प्राप्त हो वह यहाँ संकलित धन जानना चाहिए ॥१६०॥

विशेषार्थ—दक्षिणेन्द्र और उत्तरेन्द्रके श्रेणीबद्धोंका सर्व संकलित धन प्राप्त करनेके लिए गाथा सूत्र इसप्रकार है—

प्रत्येक कल्पके श्रेणीबद्ध= $[(\text{मुख} \times २ + \text{चय}) - (\text{गच्छ} \times \text{चय})] \times \frac{\text{गच्छ}}{२}$

सभी कल्पाकल्पोंके अपने-अपने श्रेणीबद्ध विमान इसी सूत्रानुसार प्राप्त होंगे।

सभी कल्पाकल्पोंके पृथक्-पृथक् श्रेणीबद्ध और इन्द्रक विमानोंका प्रमाण—

तेदालीस-सयाणि, इगिहत्तरि - उत्तराणि सेढिगया ।
सोहम्म - णाम - कप्पे, इगितीसं इंदया होंति ॥१६१॥

४३७१ । ३१ ।

अर्थ—सौधर्मनामक कल्पमें तेंतालीस सौ इकहत्तर श्रेणीबद्ध विमान और इकतीस (३१) इन्द्रक विमान हैं ॥१६१॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त गाथा-सूत्रानुसार सौधर्मकल्पके श्रेणीबद्ध=[(१८६×२+३) — (३१×३)]×$\frac{३}{२}$=४३७१ हैं ।

सत्तावण्णा चोद्दस - सयाणि सेढिगवाणि ईसाणे ।
पंच - सया अडसीदी, सेढिगया सत्त इंदया तदिए ॥१६२॥

१४५७ । ५८८ । ७ ।

अर्थ—ईशानकल्पमें चौदह सौ सत्तावन श्रेणीबद्ध हैं। तृतीय (सानत्कुमार) कल्पमें पाँचसौ अठासी श्रेणीबद्ध और सात (७) इन्द्रक विमान हैं ॥१६२॥

विशेषार्थ—उपर्युक्त ३१ इन्द्रक विमानोंके केवल उत्तर दिशागत श्रेणीबद्ध विमान ही इस कल्पके आधीन हैं, अतएव यहाँके मुखका प्रमाण ६२, चय १ और गच्छ ३१ है। गा० १६० के सूत्रानुसार ईशानकल्पके श्रेणीबद्ध=[(६२×२+१) — (३१ × १)]×$\frac{३१}{२}$=१४५७ हैं ।

सानत्कुमारके श्रेणीबद्ध=[(९३×२+३) — (७×३)]×$\frac{७}{२}$=५८८ हैं ।

माहिंदे सेढिगया, छण्णउदी - जुद-सयं च बम्हम्मि ।
सट्ठी - जुद - ति - सयाइं, सेढिगया इंदय - चउक्कं ॥१६३॥

१९६ । ३६० । ४ ।

अर्थ—माहेन्द्रकल्पमें एक सौ छयानवे श्रेणीबद्ध हैं। ब्रह्मकल्पमें तीन सौ साठ श्रेणीबद्ध और चार इन्द्रक विमान हैं ॥१६३॥

माहेन्द्रके श्रेणीबद्ध=[(३१×२+१) — (७×१)]×$\frac{७}{२}$=१९६

ब्रह्मकल्पके श्रेणी०=[(९६×२+४) — (४×४)]×$\frac{५}{२}$=३६०

छण्णवजुदमहिय - सयं, सेढिगया इंदया दुवे छट्ठे ।
महसुक्के बाहत्तरि, सेढिगया इंदओ एक्को ॥१६४॥

१५६ । २ । ७२ । १ ।

अर्थ—छठे (लान्तव) कल्पमें एक सौ छप्पन श्रेणीबद्ध और दो इन्द्रक हैं तथा महाशुक्र-कल्पमें बहत्तर श्रेणीबद्ध और एक इन्द्रक है ॥१६४॥

लान्तवकल्पमें श्रेणीबद्ध=[(८०×२+४) — (२×४)]×$\frac{१}{२}$=१५६ हैं।

महाशुक्रकल्पमें श्रेणीबद्ध=[(७२×२+४) — (१×४)]×$\frac{१}{२}$=७२ हैं।

अडसट्ठी सेढिगया, एक्को विय इंदयं सहस्सारे ।
अडवीसुत्तर-ति-सया, छ-इंदया आणदादिय-चउक्के ॥१६५॥

६८ । १ । ३२४ । ६ ।

अर्थ—सहस्रारमें अड़सठ श्रेणीबद्ध और एक इन्द्रक है तथा आनतादिक चारमें तीन सौ चौबीस श्रेणीबद्ध और छह इन्द्रक हैं ॥१६५॥

सह० कल्पमें श्रेणीबद्ध=[(६८×२+४) — (१×४)]×$\frac{१}{२}$=६८ हैं।

आनतादि चारमें श्रेणीबद्ध=[(६४×२+४) — (६×४)]×$\frac{१}{२}$=३२४ हैं।

हेट्ठिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जाणं च सेढिगय-संखा ।
अट्ठत्तरि-एक्क-सयं, कमसो बाहत्तरी य छत्तीसं ॥१६६॥

१०८ । ७२ । ३६ ।

अर्थ—अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकोंके श्रेणीबद्ध विमानोंकी संख्या क्रमशः एक सौ आठ, बहत्तर और छत्तीस है ॥१६६॥

अधस्तन ग्रै० के श्रेणीबद्ध=[(४०×२+४) — (३×४)]×$\frac{१}{२}$=१०८ हैं।

मध्यम ग्रै० के श्रेणीबद्ध=[(२८×२+४) — (३×४)]×$\frac{१}{२}$=७२ हैं।

उपरिम ग्रै० के श्रेणीबद्ध=[(१६×२+४) — (३×४)]×$\frac{१}{२}$=३६ हैं।

ताणं गेवेज्जाणं, पत्तेक्कं तिण्णि इंदया चउरो ।
सेढिगदाण अणुद्दिस - अणुत्तरे इंदया हु एक्केक्का ॥१६७॥

अर्थ—उन ग्रैवेयकोंमेंसे प्रत्येकमें तीन इन्द्रक विमान हैं। अनुदिश और अनुत्तरमें चार (चार) श्रेणीबद्ध और एक-एक इन्द्रक विमान हैं ॥१६७॥

अनुदिशोंमें श्रेणीबद्ध=[(४×२+४) — (१×४)]×$\frac{१}{२}$=४ हैं।

प्रकीर्णक विमानोंका अवस्थान और उनकी पृथक्-पृथक् संख्या—

सेढीणं विच्चाले, पइण्ण - कुसुमोवमाण[1] - संठाणा ।
होंति पइण्णय - णामा, सेढिंदय-हीण-रासि-समा ॥१६८॥

अर्थ—श्रेणीबद्ध विमानोंके बीचमें बिखरे हुए कुसुमोंके सदृश आकारवाले प्रकीर्णक नामक विमान होते हैं। इनकी संख्या श्रेणीबद्ध और इन्द्रकोंसे हीन अपनी-अपनी राशिके समान है ॥१६८॥

इगितीसं लक्खाणि, पंचाणउदि-सहस्स पण-सयाणि पि ।
अट्ठाणउदि - जुदाणि, पइण्णया होंति सोहम्मे ॥१६९॥

३१९५५९८ ।

अर्थ—सौधर्मकल्पमें इकतीस लाख पंचानवें हजार पाँच सौ अट्ठानवें (३१९५५९८) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१६९॥

सत्ताबीसं लक्खा, अट्ठगउदि-सहस्स पण-सयाणि पि ।
तेवाल - उत्तराइं[2], पइण्णया होंति ईसाणे ॥१७०॥

२७९८५४३ ।

अर्थ—ईशानकल्पमें सत्ताईस लाख अट्ठानवें हजार पाँच सौ तैंतालीस (२७९८५४३) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७०॥

एक्कारस-लक्खाणि, णवणउदि-सहस्स चउ-सयाणि पि ।
पंचुत्तराइ कप्पे, सणक्कुमारे पइण्णया होंति ॥१७१॥

११९९४०५ ।

अर्थ—सानत्कुमार कल्पमें ग्यारह लाख निन्यानवें हजार चार सौ पाँच (११९९४०५) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७१॥

सत्त णियय लक्खाणि, णवणउदि-सहस्स अडसयाणं पि ।
चउरुत्तराइ[3] कप्पे, माहिंदे पइण्णया होंति ॥१७२॥

७९९८०४ ।

अर्थ—माहेन्द्रकल्पमें सात लाख निन्यानवें हजार आठ सौ चार (७९९८०४) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७२॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. कुसुमवमाण । २. ब. ज. ठ. पंचुत्तर ।

छत्तीसुत्तर-छ-सया, णवणउदि-सहस्सयाणि तिय-सक्खा ।
एदाणि बम्ह - कप्पे, होंति पइण्णय - विमाणाणि ॥१७३॥

३९९६३६ ।

अर्थ—ब्रह्मकल्पमें तीन लाख निन्यानवे हजार छह सौ छत्तीस (३९९६३६) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७३॥

उणवण्ण-सहस्सा अड-सयाणि बादाल ताणि संतवए ।
उणवाल - सहस्सा णव-सयाणि सगवीस महसुक्के ॥१७४॥

४९८४२ । ३९९२७ ।

अर्थ—लान्तव कल्पमें उनंचास हजार आठ सौ बयालीस (४९८४२) और महाशुक्रमें उनतालीस हजार नौ सौ सत्ताईस (३९९२७) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७४॥

उणसट्ठि-सया इगितीस-उत्तरा होंति ते सहस्सारे ।
सत्तरि-जुद-ति-सयाणि, कप्प-चउक्के पइण्णया सेसे ॥१७५॥

५९३१ । ३७० ।

अर्थ—वे प्रकीर्णक विमान सहस्रार कल्पमें पाँच हजार नौ सौ इकतीस (५९३१) और शेष चार कल्पोंमें तीन सौ सत्तर (३७०) हैं ॥१७५॥

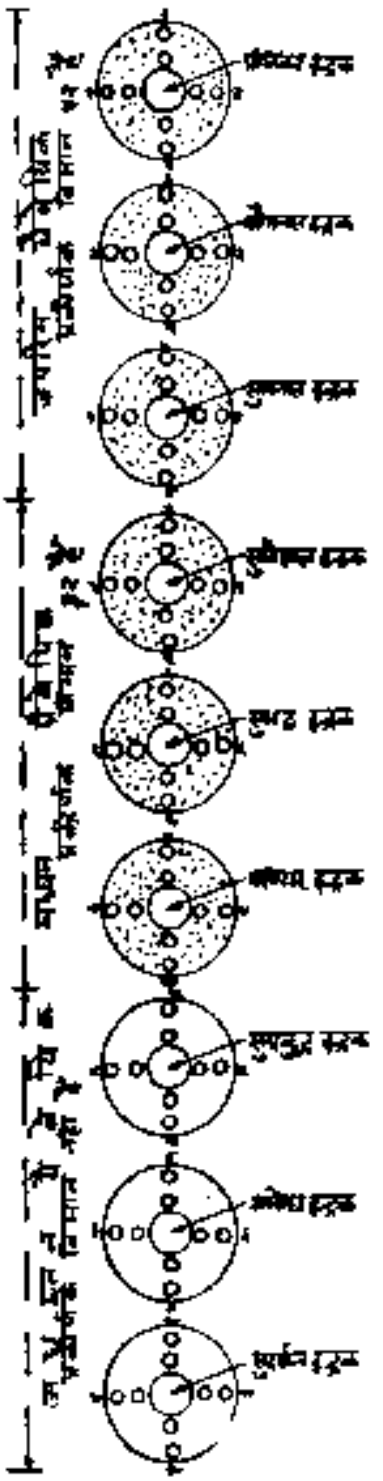
अह हेट्ठिम-गेवेज्जे, ण होंति तेसिं पइण्णय-विमाणा ।
बत्तीसं मज्झिमए, उवरिमए होंति बावण्णा ॥१७६॥

० । ३२ । ५२ ।

अर्थ—अधस्तन ग्रैवेयकमें उनके प्रकीर्णक विमान नहीं हैं । मध्यम ग्रैवेयकमें बत्तीस (३२) और उपरिम ग्रैवेयकमें बावन (५२) प्रकीर्णक विमान हैं ॥१७६॥

(गाथा १६६ और १७६ से सम्बन्धित चित्र इसप्रकार है)

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिए]



तत्तो अणुदिसाए, अत्तारि पइण्णया वर - विमाणा ।
तेसट्ठि - अहिएणए, पइण्णया णत्थि अत्थि सेढिगया ॥१७७॥

अर्थ—इसके आगे अनुदिशोंमें चार उत्तम प्रकीर्णक विमान हैं । तिरेसठवें पटलमें प्रकीर्णक नहीं हैं । श्रेणीबद्ध विमान हैं ॥१७७॥

विशेषार्थ—श्रेणीबद्ध विमानोंके अन्तरालमें पंक्ति हीन, बिखरे हुए पुष्पोंके सदृश यत्र तत्र स्थित विमानोंको प्रकीर्णक विमान कहते हैं । प्रत्येक स्वर्गमें विमानों की जो सम्पूर्ण संख्या है, उसमेंसे अपने-अपने पटलोंके इन्द्रक और श्रेणीबद्ध विमानों की संख्या कम करने पर जो अवशेष रहे वही प्रकीर्णकोंका प्रमाण है । यथा—

कल्प-नाम	सर्व विमान संख्या—	इन्द्रक + श्रेणीबद्ध =	प्रकीर्णक
सौधर्म कल्प	३२०००००	(३१+४३७१)=	३१९५६९८
ऐशान ,,	२८०००००	(०+१४५७)=	२७९८५४३
सानत्कुमार	१२०००००	(७+५८८)=	११९९४०५
माहेन्द्रकल्प	८०००००	(०+१९९)=	७९९८०४
ब्रह्म-कल्प	४०००००	(४+३६०)=	३९९६३६
लान्तव कल्प	५००००	(२+१५६)=	४९८४२
महाशुक्र	४००००	(१+७२)=	३९९२७
सहस्रार	६०००	(१+६८)=	५९३१
आनतादि ४	७००	(६+३२४)=	३७०
अधोग्रैवेयक	१११	(३+१०८)=	०
मध्यम ,,	१०७	(३+७२)=	३२
उपरिम ,,	९१	(३+३६)=	५२
अनुदिश	९	(१+४)=	४
अनुत्तर	५	(१+४)=	०

प्रकारान्तरसे विमान संख्या—

जे सोलस - कप्पाइं, केई इच्छंति ताण उवएसे ।
तस्सि तस्सि वोच्छं, परिमाणाणि विमाणाणं ॥१७८॥

अर्थ—जो कोई सोलह कल्प मानते हैं उनके उपदेशानुसार उन-उन कल्पोंमें विमानोंका प्रमाण कहते हैं ॥१७८॥

बत्तीसट्ठावीसं[1], बारस अट्ठं कमेण लक्खाणि ।
सोहम्मादि - चउक्के, होंति विमाणाणि विविहाणि ॥१७९॥

३२००००० । २८००००० । १२००००० । ८००००० ।

अर्थ—सौधर्मादि चार कल्पोंमें क्रमशः बत्तीस लाख (३२०००००), अट्ठाईस लाख (२८०००००), बारह लाख (१२०००००) और आठ लाख (८०००००) प्रमाण विविध प्रकारके विमान हैं ॥१७९॥

छण्णउदि - सहस्साणि, वो-लक्खाणि हवंति बम्हम्मि ।
बम्हुत्तरम्मि लक्खा, दो चि य छण्णउदि-परिहीणा ॥१८०॥

२०००९६ । १९९९०४ ।

अर्थ—ब्रह्मकल्पमें दो लाख छ्यानवे (२०००९६) और ब्रह्मोत्तर कल्पमें छ्यानवे कम दो लाख (१९९९०४) विमान हैं ॥१८०॥

पणुवीस-सहस्साइं, बादाल-जुदा य होंति लंतवए ।
चउवीस-सहस्साणि, णव - सय - अडवण्ण कापिट्ठे ॥१८१॥

२५०४२ । २४९५८ ।

अर्थ—लान्तव कल्पमें पच्चीस हजार बयालीस (२५०४२) और कापिष्ठ कल्पमें चौबीस हजार नौ सौ अट्ठावन (२४९५८) विमान हैं ॥१८१॥

वीसुत्तराणि होंति हु, वीस-सहस्साणि सुक्क-कप्पम्मि ।
ताइं चिय [2]महसुक्के, वीसूणाणि विमाणाणि ॥१८२॥

२००२० । १९९८० ।

---

१. ब. बत्तीसट्ठवीसं । २. द. ब. क. ज. ठ महसुक्क ।

अर्थ—शुक्र कल्पमें बीस अधिक बीस हजार (२००२०) और महाशुक्र कल्पमें बीस कम बीस हजार (१९९८०) विमान हैं ॥१८२॥

उणवीस-उत्तराणि, तिण्णि-सहस्साणि सयर-कप्पम्मि ।
कप्पम्मि सहस्सारे, उणतीस - सयाणि इगिसीदी ॥१८३॥

३०१९ । २९८१ ।

अर्थ—शतार कल्पमें तीन हजार उन्नीस (३०१९) और सहस्रार कल्पमें दो हजार नौ सौ इक्यासी (२९८१) विमान हैं ॥१८३॥

आणद-पाणद-कप्पे, पंच-सया सट्ठि-विरहिदा होंति ।
आरण-अच्चुद-कप्पे, दु - सयाणि सट्ठि - जुत्ताणि ॥१८४॥

४४० । २६० ।

अर्थ—आनत-प्राणत कल्पमें साठ कम पाँच सौ (४४०) और आरण-अच्युत कल्पमें दो सौ साठ (२६०) विमान हैं ॥१८४॥

अहवा आणद-जुगले, चत्तारि सयाणि वर-विमाणाणि ।
आरण - अच्चुद - कप्पे, सयाणि तिण्णि य हवंति ॥१८५॥

पाठान्तरम् ।

४०० । ३०० ।

अर्थ—अथवा, आनत युगलमें चार सौ (४००) और आरण-अच्युत कल्पमें तीन सौ (३००) उत्तम विमान हैं ॥१८५॥

संख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी संख्या—

कप्पेसुं संखेज्जो, विक्खंभो रासि-पंचम-विभागो ।
णिय-णिय-संखेज्जूणा, णिय-णिय-रासी असंखेज्जो ॥१८६॥

अर्थ—कल्पोंमें राशिके पाँचवें भाग प्रमाण विमान संख्यात योजन विस्तारवाले हैं और अपने-अपने संख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंकी राशिसे कम अपनी-अपनी राशि प्रमाण असंख्यात योजन विस्तारवाले हैं ॥१८६॥

संखेज्जो विक्खंभो, चालीस-सहस्सयाणि जुल्लक्खा ।
सोहम्मे ईसाणे, जाल - सहस्सूण - जुल्लक्खा ॥१८७॥

६४०००० । ५६०००० ।

अर्थ—सौधर्म कल्पमें संख्यात योजन विस्तार वाले विमान छह लाख चालीस हजार (६४००००) और ईशान कल्पमें चालीस हजार कम छह लाख (५६००००) हैं ॥१८७॥

चालीस-सहस्साणिं, दो-लक्खाणि सणक्कुमारम्मि ।
सट्ठि - सहस्सब्भहियं, माहिंदे एक्क - लक्खाणिं ॥१८८॥

२४०००० । १६०००० ।

अर्थ—सानत्कुमार कल्पमें संख्यात योजन विस्तारवाले विमान दो लाख चालीस हजार (२४००००) हैं और माहेन्द्रकल्पमें एक लाख साठ हजार (१६०००० विमान) हैं ॥१८८॥

बम्हे[1] सोधि-सहस्सा, संतव-कप्पम्मि दस-सहस्साणिं ।
अट्ठ सहस्सा बारस - सयाणि महसुक्कए सहस्सारे ॥१८९॥

८०००० । १०००० । ८००० । १२०० ।

अर्थ—ब्रह्म कल्पमें संख्यात योजन विस्तारवाले विमान अस्सी हजार (८००००), लान्तव कल्पमें दस हजार (१००००), महाशुक्रमें आठ हजार (८०००) और सहस्रार कल्पमें बारह सौ (१२००) हैं ॥१८९॥

आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-णामेसु चउसु कप्पेसुं ।
संखेज्ज - वित्थरा, आवलअब्भहियं सयं होदि ॥१९०॥

१४० ।

अर्थ—आनत, प्राणत, आरण और अच्युत नामक चार कल्पोंमें संख्यात योजन विस्तार वाले विमानोंकी संख्या एक सौ चालीस (१४०) है ॥१९०॥

तिय-अट्ठारस-सत्तरस-एक्क-एक्काणि तस्स परिमाणं ।
हेट्ठिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जेसुं अणुदिसादि-जुगे ॥१९१॥

३ । १८ । १७ । १ । १ ।

अर्थ—अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयक तथा अनुदिशादि युगलमें संख्यात योजन विस्तार वाले विमानोंका प्रमाण क्रमशः तीन, अठारह, सत्तरह एक और एक है ॥१९१॥

---

१. ब. ब. क. बम्हो ।

असंख्यात योजन विस्तारवाले विमानोंका प्रमाण—

पणुवीसं लक्खाणि, सट्ठि-सहस्साणि सो असंखेज्जो ।
सोहम्मे ईसाणे, लक्खा बावीस चालय - सहस्सा ॥१९२॥

२५६०००० । २२४०००० ।

अर्थ—असंख्यात योजन विस्तारवाले वे विमान सौधर्म कल्पमें पच्चीस लाख साठ हजार (२५६००००) और ईशान कल्पमें बाईस लाख चालीस हजार (२२४००००) हैं ॥१९२॥

सट्ठि-सहस्स-जुदाणि, णव-लक्खाणि सणक्कुमारम्मि ।
चालीस - सहस्साणि, माहिंदे छच्च लक्खाणि ॥१९३॥

९६०००० । ६४०००० ।

अर्थ—असंख्यात योजन विस्तार वाले वे विमान सनत्कुमार कल्पमें नौ लाख साठ हजार (९६००००) और माहेन्द्रकल्पमें छह लाख चालीस हजार (६४००००) हैं ॥१९३॥

वीस-सहस्स ति-लक्खा, चाल-सहस्साणि बम्ह-संतवए ।
बत्तीस - सहस्साणि, महसुक्के[1] सो असंखेज्जो ॥१९४॥

३२०००० । ४०००० । ३२००० ।

अर्थ—वे असंख्यात योजन विस्तारवाले विमान ब्रह्म कल्पमें तीन लाख बीस हजार (३२००००), लान्तव कल्पमें चालीस हजार (४००००) और महाशुक्रमें बत्तीस हजार (३२०००) हैं ॥१९४॥

चत्तारि सहस्साणि, अट्ठ-सयाणि तहा सहस्सारे ।
आणद-पहुदि-चउक्के, पंच - सया सट्ठि - संजुत्ता ॥१९५॥

४८०० । ५६० ।

अर्थ—वे विमान सहस्रार कल्पमें चार हजार आठ सौ (४८००) तथा आनतादि चार कल्पोंमें पांच सौ साठ (५६०) हैं ॥१९५॥

अट्ठुत्तरमेक्क-सयं, उणणउदी सत्तरी य चउ-अहिया ।
हेट्ठिम - मज्झिम - उवरिम - गेवेज्जेसुं असंखेज्जो ॥१९६॥

१०८ । ८९ । ७४ ।

---

१. ब. क. ज. महसुक्केसु सो असंखेज्जा ।

अर्थ—असंख्यात योजन विस्तारवाले विमान अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकमें क्रमशः एक सौ आठ, नवासी और सत्तर हैं ।।१९६।।

बहु अणुदिस-णामे, बहु-रयणमयाणि उत्तर-विमाणाणि ।
अट्ठारि अणुत्तरए, होंति, असंखेज्ज - वित्थारा ।।१९७।।

८ । ४ ।

अर्थ—असंख्यात विस्तारवाले बहुत रत्नमय उत्तम विमान अनुदिश नामक पटलमें आठ और अनुत्तरोंमें चार हैं ।।१९७।।

विमान तलोंके बाहल्यका प्रमाण—

एक्कारस-सया इगिवीस-उत्तरा जोयणाणि पत्तेक्कं ।
सोहम्मीसाणेसुं, विमाण - तल - बहल - परिमाणं ।।१९८।।

११२१ ।

अर्थ—सौधर्म और ईशानकल्पमेंसे प्रत्येकमें विमानतलके बाहल्यका प्रमाण ग्यारह सौ इक्कीस (११२१) योजन है ।।१९८।।

बावीस - जुद - सहस्सं[1], माहिंद-सणक्कुमार-कप्पेसुं ।
तेवीस - उत्तराणिं, सयाणि भव बम्ह - कप्पम्मि ।।१९९।।

१०२२ । ९२३ ।

अर्थ—विमानतल-बाहल्यका प्रमाण सनत्कुमार-माहेन्द्रकल्पमें एक हजार बाईस (१०२२) और ब्रह्म कल्पमें नौ सौ तेईस (९२३) योजन है ।।१९९।।

अट्ठसोस-जुदट्ठ-सया, लंतवए पंचवीस सत्त - सया ।
महसुक्के छव्वीसं, छच्च - सयाणि सहस्सारे ।।२००।।

८२४ । ७२५ । ६२६ ।

अर्थ—विमानतल बाहल्य लान्तव कल्पमें आठ सौ चौबीस (८२४), महाशुक्रमें सात सौ पच्चीस (७२५) और सहस्रारमें छह सौ छब्बीस (६२६) योजन है ।।२००।।

आणद-पहुदि-[2]अट्ठसु, पंच-सया सत्तवीस-अब्भहिया ।
अट्ठवीस अउ - सयाणि, हेट्ठिम - गेवेज्जए होंति ।।२०१।।

५२७ । ४२८ ।

---

१ ब. क. ज. ठ बुद्धसा । २. ब. क. ज. ठ. चउसु ।

अर्थ—विमानतल-बाहल्य आनतादि चार कल्पोंमें पाँच सौ सत्ताईस (५२७) और अधस्तन ग्रैवेयकमें चार सौ अट्ठाईस (४२८) योजन है ॥२०१॥

उणतीसं तिण्णि-सया, मज्झिमए तीस-अहिय-दु-सयाणि ।
उवरिमए एक्क - सयं, इगितीस अणुद्दिसादि - दुगे ॥२०२॥

३२९ । २३० । १३१ ।

अर्थ—विमानतल बाहल्य मध्यम ग्रैवेयकमें तीन सौ उनतीस (३२९), उपरिम ग्रैवेयकमें दो सौ तीस (२३०) और अनुदिशादि दो (अनुदिश और अनुत्तर) में एक सौ इकतीस (१३१) योजन है ॥२०२॥

उपर्युक्त विमानोंका प्रमाण और तल-भागके बाहल्य प्रमाण की तालिका इसप्रकार है—

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

क्रमांक	नाम	संख्यात यो० विस्तार वालों का प्रमाण+ गा० १८७-१९१	असंख्यात यो० वि० वालों का प्रमाण= गा० १९२-१९७	विमानोंका कुल प्रमाण गा. १४९-१५४	विमान तल का बाहल्य गा० १९८-२०२
१	सौधर्म कल्प	६४०००० +	२५६०००० =	३२०००००	११२१ यो०
२	ऐशान कल्प	५६०००० +	२२४०००० =	२८०००००	११२१ यो०
३	सनत्कुमार कल्प	२४०००० +	९६०००० =	१२०००००	१०२२ यो०
४	माहेन्द्र कल्प	१६०००० +	६४०००० =	८०००००	१०२२ यो०
५	ब्रह्म कल्प	८०००० +	३२०००० =	४०००००	९२३ यो०
६	लान्तव कल्प	१०००० +	४०००० =	५००००	८२४ यो०
७	महाशुक्र कल्प	८००० +	३२००० =	४००००	७२५ यो०
८	सहस्रार कल्प	१२०० +	४८०० =	६०००	६२६ यो०
९	आनतादि ४	१४० +	५६० =	७००	५२७ यो०
१०	अधो ग्रैवे०	३ +	१०८ =	१११	४२८ यो०
११	मध्यम ,,	१८ +	८१ =	१०७	३२९ यो०
१२	उपरिम ,,	१७ +	७४ =	९१	२३० यो०
१३	अनुदिश	१ +	८ =	९	१३१ यो०
१४	अनुत्तर	१ +	४ =	५	१३१ यो०

स्वर्ग विमानोंका वर्ण—

सोहम्मीसाणाणं, सव्व - विमाणेसु पंच - वण्णाणि ।
कसणेण वज्जिदाणि, सणक्कुमाराणि - जुगलम्मि ॥२०३॥

अर्थ—सौधर्म और ईशान कल्पके सब विमान पाँचों वर्ण वाले तथा सनत्कुमारादि युगलमें कृष्ण वर्णसे रहित शेष चार वर्णवाले हैं ॥२०३॥

चोद्दसेण वज्जिदाणि, बम्हे संतवए णाम कप्पेसुं ।
रत्तेण विरहिदाणि, महसुक्के तह सहस्सारे ॥२०४॥

अर्थ—ब्रह्म और लान्तव नामक कल्पोंमें कृष्ण एवं नीलसे रहित तीन वर्णवाले तथा महाशुक्र और सहस्रारकल्पमें रक्त वर्णसे भी रहित शेष दो वर्ण वाले विमान हैं ।।२०४।।

आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-गेवेज्जयादिय-विमाणा ।
ते सव्वे मुत्ताहल - मयंक - कुंदुज्जला होंति ।।२०५।।

अर्थ—आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और ग्रैवेयकादिके वे सब विमान मुक्ताफल, मृगांक अथवा कुन्द पुष्प सदृश उज्ज्वल हैं ।।२०५।।

विशेषार्थ—सौधर्मशान कल्पोंके विमान पांच वर्णवाले हैं। सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पोंके विमान कृष्ण बिना शेष चार वर्ण वाले हैं। ब्रह्म और लान्तव कल्पोंके विमान कृष्ण एवं नील बिना तीन वर्ण वाले हैं। महाशुक्र और सहस्रार कल्पोंके विमान कृष्ण, नील एवं रक्त वर्णसे रहित दो वर्णवाले हैं और आनतादिसे लेकर अनुत्तर पर्यन्तके सभी विमान कृष्ण, नील, लाल एवं पीत वर्णसे रहित मात्र शुक्ल वर्णके होते हैं।

विमानोंके आधारका कथन—

सोहम्म-दुग-विमाणा, घणस्स-रूवस्स उवरि संठिदस्स ।
चेट्ठंते पवणोवरि, माहिंद - सणक्कुमाराणि ।।२०६।।

अर्थ—सौधर्म युगलके विमान घनस्वरूप जलके ऊपर तथा माहेन्द्र एवं सनत्कुमार कल्पके विमान पवनके ऊपर स्थित हैं ।।२०६।।

बम्हादी चत्तारो, कप्पा चेट्ठंति सलिल - वाऊणं ।
आणद - पाणद - पहुदी, सेसा सुद्धम्मि गयणयले ।।२०७।।

अर्थ—ब्रह्मादिक चार कल्पोंके विमान जल एवं वायु दोनोंके ऊपर तथा आनत-प्राणतादि शेष विमान शुद्ध आकाशतलमें स्थित हैं ।।२०७।।

इन्द्रकादि विमानोंके ऊपर स्थित प्रासाद—

उवरिम्मि इंदयाणं, सेढिगयाणं पइण्णयाणं च ।
समचउरस्सा वीहा, चेट्ठंते विविह - पासादा ।।२०८।।

अर्थ—इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंके ऊपर समचतुष्कोण एवं दीर्घ विविध प्रासाद स्थित हैं ।।२०८।।

कणयमया फलिहमया, मरगय-माणिक्क-इंदणीलमया ।
विद्दुममया विचित्ता, वर - तोरण - सुंदर-दुवारा ।।२०९।।

सत्तट्ठ-गब्भ-दसादिय-विचित्त-भूमीहि भूसिदा सव्वे ।
वर - रयण - भूसणेहि, बहुविह - अंतेहि रमणिज्जा ॥२१०॥

विप्पंत - रयण - दीवा, कालागरु-पहुदि-धूव-गंधड्ढा ।
आसण-णाडय-कीडण - साला - पहुदीहि कयसोहा ॥२११॥

सीह-करि-मयर-सिहि-सुक-मयाल-गरुडासणादि-परिपुण्णा ।
बहुविह-विचित्त-मणिमय-सेज्जा - विण्णास - कमणिज्जा ॥२१२॥

णिच्चं विमल-सरूवा, पउण्ण-वर-दीव-कुसुम-कंतिल्ला ।
सव्वे अणाइणिहणा, अकट्टिमा ते विरायंति ॥२१३॥

एवं संखा-परूवणा-समत्ता ॥६॥

अर्थ—(ये सब प्रासाद) सुवर्णमय, स्फटिकमणिमय, मरकत-मारिणक्य एवं इन्द्रनील मणियोंसे निर्मित, भूँगासे निर्मित, विचित्र, उत्तम तोरणोंसे सुन्दर द्वारवाले, सात-आठ-नौ-दस इत्यादि विचित्र भूमियोंसे भूषित, उत्तर रत्नोंसे भूषित, बहुत प्रकारके यन्त्रोंसे रमणीय, चमकते हुए रत्न-दीपकों सहित, कालागरु आदि धूपोंके गन्धसे व्याप्त; आसनशाला, नाट्यशाला एवं क्रीड़नशाला आदिकोंसे शोभायमान; सिंहासन, गजासन, मकरासन, मयूरासन, शुकासन, व्यालासन एवं गरुड़ासनादिसे परिपूर्ण; बहुत प्रकारकी विचित्र मणिमय शय्याओंके विन्याससे कमनीय, नित्य, विमल-स्वरूपवाले, विपुल उत्तम दीपों एवं कुसुमोंसे कान्तिमान्, अनादि-निधन और अकृत्रिम विराजमान हैं ॥२०६-२१३॥

इसप्रकार संख्या प्ररूपणा समाप्त हुई ॥६॥

इन्द्रोंके दस-विध परिवार देवोंके नाम और पद—

बारस-विह-कप्पाणं, बारस इंदा हवंति वर - रूवा ।
दस-विह-परिवार-जुदा, पुव्वज्जिज-पुण्ण - पाकादो ॥२१४॥

अर्थ—बारह प्रकारके कल्पोंके बारह इन्द्र पूर्वोपार्जित पुण्यके परिपाकसे उत्तम रूपके धारक होते हैं और दस प्रकारके परिवारसे युक्त होते हैं ॥२१४॥

पडिइंदा सामाणिय-तेत्तीस-सुरा तिगिंद - तणुरक्खा ।
परिसाणीय-पइण्णय-अभियोगा होंति किब्बिसिया ॥२१५॥

अर्थ—प्रतीन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंशदेव, त्रिगिन्द्र, तनुरक्ष, पारिषद, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक, ये दस प्रकारके परिवार देव हैं ॥२१५॥

जुवराय - कलत्ताणं, पुत्ताणं तह य तंतरायाणं ।
अंगु-रक्खा - कोवाणं, वर-मज्झिम-अवर-सहस्साणं ॥२१६॥

सेणाण पुरजणाणं, परिचाराणं तहेव पावाणं ।
कमसो ते सारिच्छा, [1]पडिइंद - प्पहुदिओ होंति ॥२१७॥

अर्थ—वे प्रतीन्द्र आदि क्रमशः युवराज, कलत्र, पुत्र तथा तन्त्ररक्षक, कृपाणधारी अंगरक्षक, उत्तम, मध्यम एवं जघन्य परिषद्में बैठने योग्य (सभासद), सेना, पुरजन, परिचारक और पापडालके सदृश होते हैं ॥२१६-२१७॥

प्रतीन्द्र—

एक्केक्का पडिइंदा, एक्केक्काणं हवंति इंदाणं ।
ते जुवराय - रिणोए, अच्छंते आउ - परियंतं ॥२१८॥

अर्थ—एक-एक इन्द्रके जो एक-एक प्रतीन्द्र होते हैं वे आयु पर्यन्त युवराजकी ऋद्धिसे युक्त रहते हैं ॥२१८॥

सामानिक देवोंका प्रमाण—

चउसीदि-सहस्साणि, सोहम्मिंदस्स होंति सुर-पवरा ।
सामाणिया सहस्सा, सीदी ईसाण - इंदस्स ॥२१९॥

८४००० । ८०००० ।

अर्थ—सामानिक जातिके उत्कृष्ट देव सौधर्म इन्द्रके चौरासी हजार (८४०००) और ईशान इन्द्रके अस्सी हजार (८००००) होते हैं ॥२१९॥

बाहत्तरी - सहस्सा, ते चेट्ठंते सणक्कुमारिंदे ।
सत्तरि - सहस्स - मेत्ता, तहेव माहिंद - इंदस्स ॥२२०॥

७२००० । ७०००० ।

अर्थ—वे सामानिक देव सनत्कुमार इन्द्रके बहत्तर हजार (७२०००) और माहेन्द्र इन्द्रके सत्तर हजार (७००००) प्रमाण होते हैं ॥२२०॥

बम्हिंदम्मि सहस्सा, सट्ठी पण्णास लंतविंदम्मि ।
चालं महसुक्किंदे, तीस सहस्सार - इंदम्मि ॥२२१॥

६०००० । ५०००० । ४०००० । ३०००० ।

---

१. ब. परिइंद ।

अर्थ—सामानिक देव ब्रह्मेन्द्रके साठ हजार (६००००), लान्तवेन्द्रके पचास हजार (५००००), महाशुक्र इन्द्रके चालीस हजार (४००००) और सहस्रार इन्द्रके तीस हजार (३००००) होते हैं ॥२२१॥

आणद-पाणद-इंदे, वीसं सामाणिया सहस्साणि ।
वीस सहस्साणि पुढं, पत्तेक्कं आरणच्चुदिंदेसुं ॥२२२॥

२०००० । २०००० । २०००० । २०००० ।

अर्थ—सामानिकदेव आनत-प्राणत इन्द्रके बीस हजार (२००००) और आरण-अच्युत इन्द्रके पृथक्-पृथक् बीस हजार (२००००) होते हैं ॥२२२॥

त्रायस्त्रिंश और लोकपाल देव—

तेत्तीस सुरप्पवरा, एक्केक्काणं हवंति इंदाणं ।
चत्तारि लोयपाला, सोम-जमा - वरुण - धणवा य ॥२२३॥

अर्थ—एक-एक इन्द्रके तेंतीस त्रायस्त्रिंश देव और सोम, यम, वरुण तथा धनद, ये चार लोकपाल होते हैं ॥२२३॥

तनुरक्षक देव—

तिण्णि विसय लक्खाणि, छत्तीस-सहस्सयाणि तणुरक्खा ।
सोहम्मिंदे विदिए, [1]ताणि सोलस - सहस्स - होणाणि ॥२२४॥

३३६००० । ३२०००० ।

अर्थ—तनुरक्षक देव सौधर्म इन्द्रके तीन लाख छत्तीस हजार (३३६०००) और द्वितीय इन्द्रके इनसे सोलह हजार कम (३२००००) होते हैं ॥२२४॥

अट्ठासीदि - सहस्सा, दो-लक्खाणि सणक्कुमारिंदे ।
माहिंदिंदे लक्खा, दोण्णि य सीदी - सहस्साणि ॥२२५॥

२८८००० । २८०००० ।

अर्थ—तनुरक्षक देव सनत्कुमार इन्द्रके दो लाख अठासी हजार (२८८०००) और माहेन्द्र इन्द्रके दो लाख अस्सी हजार (२८००००) होते हैं ॥२२५॥

---

१. ब. क. ज. ठ. ताणं ।

बम्हिंदे चालीसं, सहस्स-अब्भहिय दुवे लक्खा ।
संतवए दो-लक्खं, वि-गुणिय-सीदी-सहस्स-महसुक्के ॥२२६॥

२४०००। २००००। १६००००।

अर्थ—तनुरक्षक देव ब्रह्मेन्द्रके दो लाख चालीस हजार (२४००००), लान्तव इन्द्रके दो लाख (२०००००) और महाशुक्र इन्द्रके द्विगुणित अस्सी हजार अर्थात् एक लाख साठ हजार (१६००००) होते हैं ॥२२६॥

वि-गुणिय-सट्ठि-सहस्सं, सहस्सयारिंदयम्मि पत्तेक्कं ।
सीदि - सहस्स - पमाणं, उवरिम-चत्तारि-इंदम्मि ॥२२७॥

१२०००। ८०००। ८०००। ८०००। ८०००।

अर्थ—तनुरक्षक देव सहस्रार इन्द्रके द्विगुणित साठ हजार (१२००००) और उपरितन चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके अस्सी हजार (८००००) प्रमाण होते हैं ॥२२७॥

अभ्यन्तर-मध्यम और बाह्य परिषदके देव—

अब्भंतर-परिसाए, सोहम्मिंदाण बारस - सहस्सा ।
ईसाणिंदस्स दस - सहस्साणि ॥२२८॥

१२०००। १००००।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में बारह हजार (१२०००) और ईशान इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद्में दस हजार (१००००) देव स्थित होते हैं ॥२२८॥

तदिए अट्ठ - सहस्सा, माहिंदिंदस्स छस्सहस्साणि ।
बम्हिंदम्मि सहस्सा, चत्तारो बोण्णि संतविंदम्मि ॥२२९॥

८०००। ६०००। ४०००। २०००।

अर्थ—तृतीय (सनत्कुमार इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद) में आठ हजार (८०००), माहेन्द्रकी (अभ्यन्तर परिषद) में छह हजार (६०००), ब्रह्मेन्द्र की (अभ्यन्तर परिषद) में चार हजार (४०००) और लान्तव (इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद) में दो हजार (२०००) देव होते हैं ॥२२९॥

सत्तमयस्स सहस्सं, पंच - सयाणि सहस्सयारिंदे ।
आणद-इंदादि-चुगे, पत्तेक्कं दो - सयाणि पण्णासा ॥२३०॥

१०००। ५००। २५०। २५०।

अर्थ—सप्तम (महाशुक्र इन्द्रकी अभ्यन्तर परिषद) में एक हजार (१०००), सहस्रार (इन्द्रकी अ० परिषद) में पाँच सौ (५००) और आनतादि (आनत-प्राणत) दो इन्द्रोंकी (अभ्यन्तर परिषद) में दो सौ पचास-दो सौ पचास (२५० — २५०) देव होते हैं ॥२३०॥

अब्भंतर - परिसाए, आरण - इंदस्स अच्चुदिंदस्स ।
पत्तेक्कं सुर - पवरा, एक्क - सयं पंचवीस - जुदं ॥२३१॥

१२५ । १२५ ।

अर्थ—आरण इन्द्र और अच्युत इन्द्रमेंसे प्रत्येक (की अभ्यन्तर परिषद) में एक सौ पच्चीस-एक सौ पच्चीस (१२५-१२५) उत्तम देव होते हैं ॥२३१॥

मज्झिम-परिसाय सुरा, चोद्दस-बारस-दसट्ठ-छ-चउ-दुगा ।
होंति सहस्सा कमसो, सोहम्मिंदादिएसु सत्तेसुं ॥२३२॥

१४००० । १२००० । १०००० । ८००० । ६००० । ४००० । २००० ।

अर्थ—सौधर्मादिक सात इन्द्रोंमें से प्रत्येककी मध्यम परिषद्में क्रमशः चौदह हजार, बारह हजार, दस हजार, आठ हजार, छह हजार, चार हजार और दो हजार देव होते हैं ॥२३२॥

एक्क-सहस्स-पमाणं, सहस्सबारिंदयम्मि पंच - सया ।
उवरिम - चउ - इंदेसुं, पत्तेक्कं मज्झिमा परिसा ॥२३३॥

१००० । ५०० । ५०० । ५०० । ५००

अर्थ—सहस्रार इन्द्रकी मध्यम परिषद्में एक हजार (१०००) प्रमाण और उपरितन चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येककी मध्यम परिषद्में पाँच सौ (५००) देव होते हैं ॥२३३॥

सोलस-चोद्दस-बारस-दसट्ठ-छच्चदु-दुगेक्क य सहस्सा ।
बाहिर-परिसा कमसो, समिदा चंदा य [1]अउ-णामा ॥२३४॥

परिसा समत्ता ॥

अर्थ—उपर्युक्त इन्द्रोंके बाह्य पारिषद देव क्रमशः सोलह, चौदह, बारह, दस, आठ, छह, चार, दो और एक हजार प्रमाण होते हैं । इन तीनों परिषदोंका नाम क्रमशः समित्, चन्द्रा और जतु है ॥२३४॥

परिषद्का कथन समाप्त हुआ ।

---

१. ब. अ. क. ज. ठ. दुअणामो ।

अनीक देवोंका प्रमाण—

वसह-तुरंगम-रह-गज-पदाति-गंधव्व-णट्टयाणीया ।
एवं सत्ताणीया, एक्केक्क हवंति इंदाणं ॥२३५॥

अर्थ—वृषभ, तुरङ्ग, रथ, गज, पदाति, गन्धर्व और नर्तक अनीक, इसप्रकार एक-एक इन्द्रकी सात सेनायें होती हैं ॥२३५॥

एदे सत्ताणीया, पत्तेक्कं सत्त-सत्त-कक्ख-जुदा ।
तेसुं पढमाणीया, णिय-णिय - सामाणियाण[1] समा ॥२३६॥

अर्थ—इन सात सेनाओंमेंसे प्रत्येक सात-सात कक्षाओंसे युक्त होती हैं। इनमेंसे प्रथम अनीकका प्रमाण अपने-अपने सामानिकोंके बराबर होता है ॥२३६॥

तत्तो दुगुणं दुगुणं, कादव्वं जाव सत्तमाणीयं ।
परिमाण - जाणणट्ठं, ताणं संखं पवक्खेमो ॥२३७॥

अर्थ—इसके आगे सप्तम अनीक पर्यन्त उससे दूना-दूना करना चाहिए। इस प्रमाणको जाननेके लिए उनकी संख्या कहते हैं ॥२३७॥

इगि-कोडी छल्लक्खा, अट्ठासट्ठी - सहस्सया वसहा ।
सोहम्मिंदे होंति हु, [2]तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२३८॥

१०६६८००० । पिंड ७४६७६०००।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके एक करोड़ छह लाख अड़सठ हजार (१०६६८०००) वृषभ होते हैं और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२३८॥

विशेषार्थ—सौधर्म इन्द्रकी प्रथम कक्षामें वृषभ संख्या सामानिक देवोंके सदृश ८४००० प्रमाण है। इस प्रथम कक्षकी संख्यासे सातों कक्षाओंकी संख्या १२७ गुणी होती है अतः प्रथम अनीक की सातों कक्षाओंमें कुल संख्या (८४००० × १२७) = १०६६८००० है। प्रथम अनीककी संख्या १०६६८००० है अतः सातों अनीकोंकी पिण्ड रूप संख्या (१०६६८००० × ७) = ७४६७६००० है। इसीप्रकार सर्वत्र जानना चाहिए ।

एक्का कोडी एक्कं, लक्खं सट्ठी सहस्स वसहाणिं ।
ईसाणिंदे होंति हु, तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२३९॥

१०१६०००। पिंड ७११२०००।

---

१. ब. क. ज. ठ. सामाणियाणि संमता, ब. सामाणियाणि सम्मत्ता । २. ब. तुरयादिय ।

अर्थ—ईशान इन्द्रके एक करोड़ एक लाख साठ हजार वृषभ और तुरंगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२३९॥

विशेषार्थ—प्रथम अनीकको प्रथम कक्षमें ८०००० वृषभ हैं अतः ८०००० × १२७= १०१६०००० । १०१६०००० × ७ = ७११२०००० ।

सक्खाणि एक्कणउदी, बत्तदाल-सहस्सयाणि वसहाणि ।
होंति हु तदिए इंदे, तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२४०॥

९१४४००० । पिंड ६४००८००० ।

अर्थ—तृतीय (सनत्कुमार) इन्द्रके इक्यानवें लाख चवालीस हजार (७२००० × १२७= ९१४४०००) वृषभ और तुरंगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४०॥

९१४४००० × ७ = ६४००८००० ।

अट्ठासीदी-लक्खा, णउदि-सहस्साणि होंति वसहाणि ।
माहिंदिदे तेत्तियमेत्ता तुरयाविसो वि पत्तेक्कं ॥२४१॥

८८९०००० । पिंड ६२२३०००० ।

अर्थ—माहेन्द्र इन्द्रके अठासी लाख नब्बे हजार (७०००० × १२७ = ८८९००००) वृषभ और तुरंगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४१॥

८८९०००० × ७ = ६२२३०००० ।

छाहत्तरि-लक्खाणि, वीस-सहस्साणि होंति वसहाणि ।
बम्हिंदे पत्तेक्कं, तुरय - प्पहुदी वि तम्मेत्तं ॥२४२॥

७६२०००० । पिंड ५३३४०००० ।

अर्थ—ब्रह्मेन्द्रके छिहत्तर लाख बीस हजार (६०००० × १२७ = ७६२००००) वृषभ और तुरंगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४२॥

७६२०००० × ७ = ५३३४०००० ।

तेसट्ठी-लक्खाणि, पण्णास - सहस्सयाणि वसहाणि ।
लंतव - इंदे होंति हु, तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२४३॥

६३५०००० । पिंड ४४४५०००० ।

अर्थ—सानत्कुमार इन्द्रके तिरेसठ लाख पचास हजार (६००००×१२७=६३५००००) वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४३॥

६३५०००० × ७ = ४४४५०००० ।

पण्णासं लक्खाणि, तीवि-सहस्साणि होंति वसहाणि ।
महसुक्किन्दे होंति हु, तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२४४॥

५०८०००० । पिंड ३५५६०००० ।

अर्थ—महाशुक्र इन्द्रके पचास लाख आठ हजार (५०००००×१२७=५०८००००) वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४४॥

५०८०००० × ७ = ३५५६०००० ।

अट्ठत्तीसं लक्खं, दस य सहस्साणि होंति वसहाणि ।
तुरयादी तम्मेत्ता, होंति सहस्सार - इंदम्मि ॥२४५॥

३८१०००० । पिंड २६६७०००० ।

अर्थ—सहस्रार इन्द्रके अड़तीस लाख दस हजार (३००००×१२७=३८१००००) वृषभ और तुरगादिक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४५॥

३८१०००० × ७ = २६६७०००० ।

पणुवीसं लक्खाणि, चालीस-सहस्सयाणि [1]वसहाणि ।
आरण-इंदादि-दुगे, तुरयादी तेत्तिया वि पत्तेक्कं ॥२४६॥

२५४०००० । पिंड १७७८०००० ।

अर्थ—आरण इन्द्रादिक दोके पच्चीस लाख चालीस हजार (२०००×१२७= २५४००००) वृषभ और तुरगादिकमेंसे प्रत्येक भी इतने प्रमाण ही होते हैं ॥२४६॥

२५४०००० × ७ = १७७८०००० ।

नोट—गाथामें आनतादि चारोंके अनीकों का प्रमाण कहा जाना चाहिए था किन्तु आरण आदि दो का ही कहा गया है, दो का नहीं । क्यों ?

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

---

१. ब. होंति वसहाणि ।

क्रमांक	इन्द्र नाम	इन्द्र	आयु सा०	आहार पक्ष	शरीर हाथ	तनुरक्षक	पारिषदोंका प्रमाण			अनीक सेनाओंका प्रमाण		
							अभ्यन्तर परिषद्	मध्यम परि०	बाह्य परि०	प्रथम कक्षा	एक अनीककी सम्पूर्ण संख्या [प्रथम कक्षाकी सं० से १२७ गुणी है।]	सातों अनीकोंकी सम्पूर्ण संख्या
१	सौधर्मेन्द्र	१	८४०००	२½	५	३३६०००	१२०००	१४०००	१६०००	८४००००	१०४६५०००	७४२७६००००
२	ऐशानेन्द्र	१	८०००	२¼	५	३२००००	१०००००	१२००००	१४०००	८०००००	१०१५००००	७११२००००
३	सनत्कुमारेन्द्र	१	७२०००	२½	५	२८८००००	८०००००	१०००००	१२०००	७२००००	९१४४००००	६४००८००००
४	माहेन्द्र	१	७००००	२¾	५	२८००००	६००००	८००००	१०००००	७०००००	८८९००००	६२२३००००
५	ब्रह्मेन्द्र	२	६०००००	३	५	२४००००	४००००	६००००	८००००	६०००००	७६२००००	५३३४००००
६	लान्तवेन्द्र	२	५००००	३¼	५	२०००००	२००००	४००००	६००००	५०००००	६३५००००	४४४५००००
७	महाशुक्रेन्द्र	२	४०००००	३½	५	१६००००	१००००	२००००	४००००	४०००००	५०८००००	३५५६००००
८	सहस्रारेन्द्र	२	३०००००	३¾	५	१२००००	५०००	१००००	२००००	३०००००	३८१००००	२६६७००००
९	आनतादि ४	२	२०००००	४	५	८००००	२५०	५००	१०००	२०००००	२५४००००	१७७८००००

सातों अनीकोंकी अपनी-अपनी प्रथमादि कक्षाओंमें स्थित वृषभादिकोंके वर्णका वर्णन—

जलहर-पडल-समुट्ठिद-सरय-मयंक-मुजाल-संकासा ।
वसह-तुरंगादीया, णिय-णिय-कक्खासु पढम-कक्ख-ठिदी ॥२४७॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे प्रथम कक्षामें स्थित वृषभ-तुरंगादिक मेघ-पटलसे उत्पन्न शरत्कालीन चन्द्रमाके किरण-समूहके सदृश (वर्ण वाले) होते हैं ॥२४७॥

उदयंत-दुमणि-मंडल-समाण-वण्णा हवंति वसहादी ।
ते णिय-णिय-कक्खासुं, बीदुसे विदिय - कक्खासुं ॥२४८॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे द्वितीय कक्षामें स्थित वे वृषभादिक उदित होते हुए सूर्य-मण्डलके सदृश वर्णवाले होते हैं ॥२४८॥

फुल्लंत-णीलकुवलय-सरिच्छ[1]-वण्णा तइज्ज-कक्ख-ठिदा ।
ते णिय - णिय - कक्खासुं, वसहस्स रहादिणो होंति ॥२४९॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे तृतीय कक्षामें स्थित वे वृषभ, अश्व और रथादिक फूलते हुए नीलकमलके सदृश निर्मल वर्णवाले होते हैं ॥२४९॥

मरगय-मणि-सरिस-तणू, [2]वर-विविह-विभूसणेहि सोहिल्ला ।
ते णिय-णिय-कक्खासुं, वसहादी तुरिम - कक्ख - ठिदा ॥२५०॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे चतुर्थ कक्षामें स्थित वे वृषभादिक मरकत मणिके सदृश शरीरवाले और अनेक प्रकारके उत्तम आभूषणोंसे शोभायमान होते हैं ॥२५०॥

पारावय - मोराणं, कंठ - सरिच्छेहि देह - वण्णेहिं ।
ते णिय-णिय-कक्खासुं, पंचम-कक्खासु वसह-पहुदीओ ॥२५१॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे पंचम कक्षामें स्थित वे वृषभादिक कबूतर एवं मयूरके कण्ठके सदृश देह-वर्णसे युक्त होते हैं ॥२५१॥

वर-पउमराय-बंधूय-कुसुम-संकास - देह - सोहिल्ला ।
ते णिय-णिय-कक्खासुं, वसहादिं छट्ठ-कक्ख-ठिदा ॥२५२॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे छठी कक्षामें स्थित वृषभादिक उत्तम पद्मराग मणि अथवा बन्धूक पुष्पके वर्ण सदृश शरीरसे शोभायमान होते हैं ॥२५२॥

---

१. ब. सरिच्छ । २. ब. तणू विविह ।

भिण्णिंदणील-वण्णा, सत्तम-कक्खट्ठिदा वसह-पहुदी ।
ते णिय-णिय-कक्खासुं, वर - मंडण - मंडिदायारा ॥२५३॥

अर्थ—अपनी-अपनी कक्षाओंमेंसे सप्तम कक्षामें स्थित वृषभादिक भिन्न इन्द्रनीलमणिके सदृश वर्ण वाले और उत्तम आभूषणोंसे मण्डित आकारसे युक्त होते हैं ॥२५३॥

प्रत्येक कक्षाके अन्तरालमें बजने वाले वादित्र—

सत्ताण[1] अणीयाणं, णिय-णिय-कक्खाण होंति विच्चाले ।
वर-पडह - संख - महस - काहल - पहुदीण पत्तेक्कं ॥२५४॥

अर्थ—सातों अनीकोंकी अपनी-अपनी कक्षाओंके अन्तरालमें उत्तम पटह, शङ्ख, मर्दल और काहल आदिमेंसे प्रत्येक होते हैं ॥२५४॥

वृषभादि सेनाओंकी शोभाका वर्णन—

संजंत-रयण-किंकिणि-मुहरा-मणि-कुसुम-दाम-रमणिज्जा ।
धुव्वंत - धय - पडाया, वर - चामर - छत्त-कंतिल्ला ॥२५५॥
रयणमया पत्तेक्का, वसह - तुरंगा रहा य हंवाणं ।
बहुविह - विगुव्वणाणं, वाहिज्जंताण सुर - कुमारेहिं ॥२५६॥

अर्थ—बहुविध विक्रिया करने वाले तथा सुर-कुमारों द्वारा चलाये जाते हुए वृषभ, तुरंग और रथादिक लटकती हुई रत्नमय क्षुद्र-घण्टिकाओं, मणियों एवं पुष्पोंकी मालाओंसे रमणीय; फहराती हुई ध्वजा-पताकाओंसे युक्त, उत्तम चँवर एवं छत्रसे कान्तिमान् और रत्नमय तथा सुखप्रद साजसे संयुक्त होते हैं ॥२५५-२५६॥

असि-मुसल-कणय-तोमर-कोदंड-प्पहुदि-विविह-सत्थकरा ।
ते सत्तसु कक्खासुं, पयादिणो दिव्व - रूवधरा ॥२५७॥

अर्थ—जो असि, मूसल, कनक, तोमर और धनुष आदि विविध शस्त्रोंको हाथमें धारण करने वाले हैं, वे सात कक्षाओंमें दिव्य रूपके धारक पदाति होते हैं ॥२५७॥

सव्वं[2] रिसहं संचार - सण्णिहा पंच-पंच-महुर-सरं ।
बहुवण्ण - चुवं णिसादं, पुह पुह गायंति गंधव्वा ॥२५८॥

---

१. द. क. ब. ठ सत्ताण य आणीया । २. ब. क. सं सहिसहं, ब. ब. ठ. सं वहिसहं ।

अर्थ—गन्धर्वदेव षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद, इन मधुर स्वरोंको पृथक्-पृथक् गाते हैं ॥२५८॥

वीणा-वेणु-रवमुहं, णाणाविह-ताल-करण-लय-जुत्तं ।
वाइज्जवि वादित्ते, गंधव्वेहिं मधुर - सद्दं ॥२५९॥

अर्थ—गन्धर्व देव नाना प्रकारकी ताल-क्रिया एवं लयसे संयुक्त (होकर) मधुर स्वरसे वीणा एवं बांसुरी आदि वादित्रोंको बजाते हैं ॥२५९॥

प्रत्येक कक्षाके नर्तक-देवोंके कार्य—

कंदप्प-राज - राजाहिराज-विज्जाहराण चरियाणं ।
णच्चंति णट्टुम - सुरा, णिच्चं पढमाए कक्खाए ॥२६०॥

अर्थ—प्रथम कक्षाके नर्तक देव नित्य ही कन्दर्प, (कामदेव) राजा, राजाधिराज और विद्याधरोंके चरित्रोंका अभिनय करते हैं ॥२६०॥

पुढवीपालाणं चरियं, सयलद्ध-महादि-मंडलीयाणं ।
बिदियाए कक्खाए, णच्चंते णच्चणा देवा ॥२६१॥

अर्थ—द्वितीय कक्षाके नर्तक देव अर्धमण्डलीक और महामण्डलीकादि पृथिवीपालकोंके चरित्रका अभिनय करते हैं ॥२६१॥

बलदेवाण हरीणं, पडिसत्तूणं विचित्त - चरिदाणि ।
तदियाए कक्खाए, वर - रस - भावेहिं णच्चंति ॥२६२॥

अर्थ—तृतीय कक्षाके नर्तक देव उत्तम रस एवं भावोंके साथ बलदेव, नारायण और प्रति-नारायणोंके अद्भुत चरित्रोंका अभिनय करते हैं ॥२६२॥

चोद्दस-रयण-णवणिं, णव-णिहि-सामीण चक्कवट्टीणं ।
अच्चरिय - चरिदाणि, णच्चंति चउत्थ - कक्खाए ॥२६३॥

अर्थ—चतुर्थ कक्षाके नर्तक देव चौदह रत्नोंके अधिपति और नव निधियोंके स्वामी ऐसे चक्रवर्तियोंके आश्चर्य-जनक चरित्रोंका अभिनय करते हैं ॥२६३॥

सव्वाण सुरिंदाणं, सलोयपालाण चारु - चरियाइं[1] ।
ते पंचम - कक्खाए, णच्चंति विचित्त - भंगीहिं ॥२६४॥

---

१. ब. क. चरियाणं ।

अर्थ—पंचम कक्षाके नर्तक देव लोकपालों सहित समस्त इन्द्रोंके सुन्दर चरित्रोंका विचित्र भंगिमाओंसे अभिनय करते हैं ॥२६४॥

गणहर-देवादीणं, विमल-गुणिंदाण विविह-रिद्धीणं ।
चरियाइं[1] विचित्ताइं, णच्चंते छट्ठ - कक्खाए ॥२६५॥

अर्थ—छठी कक्षाके नर्तकदेव विविध ऋद्धियोंके धारक गणधर आदि निर्मल मुनीन्द्रोंके अद्भुत चरित्रोंका अभिनय करते हैं ॥२६५॥

चोत्तीसाइ - सयाणं, बहुविह-कल्लाण-पाडिहेराणं ।
जिण - णाहाण चरित्तं, सत्तम - कक्खाए णच्चंति ॥२६६॥

अर्थ—सप्तम कक्षाके नर्तक देव चौंतीस अतिशयोंसे युक्त और बहुत प्रकारके मंगलमय प्रातिहार्योंसे संयुक्त जिननाथोंके चरित्रका अभिनय करते हैं ॥२६६॥

दिव्व-वर-देह-जुत्ता, वर-रयण-विभूसणेहि कयसोहा ।
ते णच्चंते णिच्चं, णिय - णिय - इंदाण अग्गेसुं ॥२६७॥

अर्थ—दिव्य एवं उत्तम देह सहित और उत्तम रत्न-विभूषणोंसे शोभायमान वे नर्तक देव नित्य ही अपने-अपने इन्द्रोंके आगे नाचते हैं ॥२६७॥

सत्तपदाणीयाओ, एदे इंदाण होंति पत्तेक्कं ।
अण्णा वि छत्त-चामर, पीढाणि य बहुविहा होंति ॥२६८॥

अर्थ—इसप्रकार प्रत्येक इन्द्रके सात-सात कक्षाओं वाली सेनाएँ होती हैं । इसके अतिरिक्त अन्य भी बहुत प्रकार छत्र, चँवर और पीठ (सिंहासन) होते हैं ॥२६८॥

सव्वाणि अणीयाणि, वसहाणीयस्स होंति सरिसाणि ।
वर - विविह - भूसणेहिं, विभूसिदंगाणि पत्तेक्कं ॥२६९॥

अर्थ—सब अनीकोंमेंसे प्रत्येक उत्तम विविध भूषणोंसे विभूषित शरीरवाले होते हुए वृषभानीकके सदृश हैं ॥२६९॥

सव्वाणि अणीयाणि, कक्खं पडि छत्तसं सहावेणं ।
पुव्वं व विकुव्वणए, सोयविणिच्छय-मुणी[2] भणइ ॥२७०॥

६०० । ४२०० । पाठान्तरम् ।

---

१. द. ब. उच्चरियं । २ द. ब. क. ज. ठ मुणि भणइं ।

अर्थ—प्रत्येक कक्षाको सब अनीकें स्वभावसे छह सौ (६००) और विक्रियाकी अपेक्षा पूर्वोक्त (६००×७=४२००) संख्याके समान हैं, ऐसा लोक विनिश्चय मुनि कहते हैं ॥२७०॥

पाठान्तर ।

वसहाणीयादीणं, पुह पुह चुलसीदि-लक्ख-परिमाणं ।
पढमाए कक्खाए, सेसासुं दुगुण - दुगुण - कमा ॥२७१॥
एवं सत्त - विहाणं, सत्ताणीयाण[1] होंति पत्तेक्कं ।
संगायणि[2] - आइरिया, एवं णियमा परूवेंति ॥२७२॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—प्रथम कक्षामें वृषभादिक अनीकोंका प्रमाण पृथक्-पृथक् चौरासी लाख है। शेष कक्षाओंमें क्रमशः इससे दूना-दूना है। इसप्रकार सातों अनीकोंमें प्रत्येकके सात-सात प्रकार हैं। ऐसा संगायणि-आचार्य नियमसे निरूपण करते हैं ॥२७१-२७२॥

सप्त अनीकोंके अधिपति देव—

सत्ताणीयाहिवई, जे देवा होंति दक्खिणिंदाणं ।
उत्तर[3] - इंदाण तहा, ताणं णामाणि वोच्छामि ॥२७३॥

अर्थ—दक्षिणेन्द्रों और उत्तरेन्द्रोंकी सात अनीकोंके जो अधिपति देव हैं उनके नाम कहते हैं ॥२७३॥

वसहेसु दामयट्ठी, तुरंगमेसुं हवेदि हरिदामो ।
तह मादली[4] रहेसुं, गजेसु एरावदो णाम ॥२७४॥
पाऊ पदाति - संघे, गंधव्वेसुं अरिट्ठसंका य ।
णीलंजस[5] त्ति देवी, णिक्खादा अट्ठमाणीया ॥२७५॥

अर्थ—वृषभोंमें दामयष्टि, तुरगोंमें हरिदाम, रथोंमें मातलि, गजोंमें ऐरावत, पदाति संघमें वायु, गन्धर्वोंमें अरिष्टशंका (अरिष्टयशस्क) और नर्तक अनीकमें नीलञ्जसा (नीलांजना) देवी, इसप्रकार सात अनीकोंमें ये महत्तर (प्रधान) देव विख्यात हैं ॥२७४-२७५॥

पीढाणीए वोच्छं, अहिवइ - देओ हवेदि हरिणामो ।
सेसाणीयवईणं, णामेसुं णत्थि उवएसो ॥२७६॥[6]

---

१. द. ब. क. ज. ठ. सत्ताधिवाण सत्ताणीयाणि । २. द. संगाइणि । ३. द. ब. क. ज. ठ. उत्तरिम । ४. ब. द. क. ज. ठ. मरुदली । ५. द. ब. क. नीलंजसो, ज. ठ. णलंजसो । ६. यह गाथा पाठान्तर प्रतीत होती है ।

अर्थ—दोनों (दक्षिणेन्द्र और उत्तरेन्द्र) की पीठानीक (अश्वसेना) का अधिपति हरि नामक देव होता है। शेष अनीकोंके अधिपतियोंके नामोंका उपदेश नहीं है ॥२७६॥

अभियोगाणं अहिवइ - देवो चेट्ठेदि दक्खिणिंदेसुं ।
वालक - णामो उत्तर - इंदेसुं पुप्फवंतो य ॥२७७॥

अर्थ—दक्षिणेन्द्रोंमें अभियोग देवोंका अधिपति बालक नामक देव और उत्तरेन्द्रोंमें इनका अधिपति पुष्पवन्त नामक देव होता है ॥२७७॥

वाहन देवगत ऐरावत हाथीका विवेचन—

सक्क-दुगम्मि य वाहण-देवा एरावद-णाम हत्थीणं ।
कुव्वंति विकिरियाओ, लक्खं उच्छेह-जोयणा दीहं ॥२७८॥

१००००० ।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रके वाहन देव विक्रियासे एक लाख (१०००००) उत्सेध योजन प्रमाण दीर्घ ऐरावत नामक हाथीकी रचना करते हैं ॥२७८॥

एदाणं बत्तीसं, होंति मुहा दिव्व-रयण-दाम-जुदा ।
पुह पुह घंटंत किंकिणि-कोलाहल-सद्द-कयसोहा ॥२७९॥

अर्थ—इनके दिव्य रत्न-मालाओंसे युक्त बत्तीस मुख होते हैं, जो घण्टिकाओंके कोलाहल शब्दसे शोभायमान होते हुए पृथक्-पृथक् शब्द करते हैं ॥२७९॥

एक्केक्क - मुहे चंचल-चंदुज्जल-चमर-चारु-रूवम्मि ।
चत्तारि होंति दंता, धवला वर-रयण-भर-खचिदा ॥२८०॥

अर्थ—चञ्चल एवं चन्द्रके सदृश उज्ज्वल चामरोंसे सुन्दर रूपवाले एक-एक मुखमें रत्नोंके समूहसे खचित धवल चार-चार दाँत होते हैं ॥२८०॥

एक्केक्कम्मि विसाणे, एक्केक्क-सरोवरे विमल-वारी ।
एक्केक्क - सरवरम्मि य, एक्केक्कं कमल-वर-संडा ॥२८१॥

अर्थ—एक-एक विषाण (हाथी दांत) पर निर्मल जलसे युक्त एक-एक सरोवर होता है। एक-एक सरोवरमें एक-एक उत्तम कमल-खण्ड (कमल उत्पन्न होनेका क्षेत्र) होता है ॥२८१॥

एक्केक्क-कमल-संडे, बत्तीस-विकस्सरा महापउमा ।
एक्केक्क - महापउमे, एक्केक्क - जोयण - पमाणेण ॥२८२॥

अर्थ—एक-एक कमल-खण्डमें विकसित बत्तीस महापद्म होते हैं और एक-एक महापद्म एक-एक योजन प्रमाण होता है ॥२८२॥

वर-कंचण-कयसोहा, वर-पउमा सुर-विकुव्वण-बलेणं ।
एक्केक्क - महापउमे, णाडय - साला य एक्केक्का ॥२८३॥

अर्थ—देवोंके विक्रिया-बलसे वे उत्तम पद्म उत्तम स्वर्णसे शोभायमान होते हैं। एक-एक महापद्मपर एक-एक नाटकशाला होती है ॥२८३॥

एक्केक्काए तीए, बत्तीस वरच्छरा पणच्चंति ।
एवं सत्ताणीया, णिद्दिट्ठा बारसिंदाणं ॥२८४॥

अर्थ—उस एक-एक नाटकशालामें उत्तम बत्तीस अप्सरायें नृत्य करती हैं। इसप्रकार बारह इन्द्रोंकी सात अनीकें (सेनाएं) कही गयी हैं ॥२८४॥

इन्द्रके परिवार देवोंके परिवार देवोंका प्रमाण—

पुह-पुह पइण्णयाणं, अभियोग-सुराण किब्बिसाणं च ।
संखातीद - पमाणं, भणिदं सव्वेसु इंदाणं ॥२८५॥

अर्थ—सभी (स्वर्गों) में इन्द्रोंके प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक देवोंका पृथक्-पृथक् असंख्यात प्रमाण कहा गया है ॥२८५॥

पडिइंदाणं[1] सामाणियाण तेत्तीस - सुर-वराणं च ।
दस-भेदा परिवारा, णिय - इंद - समाण पत्तेक्कं ॥२८६॥

अर्थ—प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंमेंसे प्रत्येकके दस प्रकारके परिवार अपने इन्द्रके सदृश होते हैं ॥२८६॥

लोकपालोंके सामन्त देवोंका प्रमाण—

चत्तारि सहस्साणि, सक्कादि - दुगे विगिंद-सामंता ।
एक्कं चेव सहस्सं, सणक्कुमारादि - दोण्हं पि ॥२८७॥

४००० । १००० ।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रके लोकपालोंके चार हजार सामन्त (४०००) और सनत्कुमारादि दो के सामन्त देव एक-एक हजार ही होते हैं ॥२८७॥

---

१. प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंके दस-दस भेद कैसे सम्भव हो सकते हैं ?

पंच-चउ-तिय-दुगाणं, सयाणि [1]बम्हिंदवादिय-चउक्के ।
आणद[2] - पहुदि - चउक्के, पत्तेक्कं एक्क-एक्क-सयं ॥२८८॥

५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० ।

अर्थ—ब्रह्मेन्द्रादिक चारके सामन्त देव क्रमशः पाँच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ तथा आनतादिक चार इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके एक-एक सौ होते हैं ॥२८८॥

दक्षिणेन्द्रोंके लोकपालोंके पारिषद देवोंका प्रमाण—

एक्कास चउ-सयाणि, पंच-सयब्भंतरादि-परिसाओ ।
सोम-जमाणं भणिदा, पत्तेक्कं सयल-दक्खिणिंदेसु ॥२८९॥

५० । ४०० । ५०० ।

अर्थ—समस्त दक्षिणेन्द्रोंमें प्रत्येकके सोम एवं यम लोकपालके अभ्यन्तर पारिषद देव पचास (५०), मध्यम पारिषद देव चारसौ (४००) और बाह्य पारिषद देव पाँच सौ (५००) कहे गये हैं ॥२८९॥

सट्ठी पंच-सयाणि, छच्च सया साओ तिण्णि-परिसाओ ।
वरुणस्स कुबेरस्स य, सत्तरिया छस्सयाणि सत्त-सया ॥२९०॥

६० । ५०० । ६०० । ७० । ६०० । ७०० ।

अर्थ—वे तीनों पारिषद देव वरुणके साठ (६०), पाँच सौ (५००) और छह सौ (६००) तथा कुबेरके सत्तर (७०), छह सौ (६००) और सात सौ (७००) होते हैं ॥२९०॥

उत्तरेन्द्रोंके लोकपालोंके पारिषद देवोंका प्रमाण—

जा दक्खिणा-इंदाणं, कुबेर-वरुणस्स उत्थ तिण्णिसभा ।
कादव्व विवज्जासं, उत्तर - इंदाण सेस पुव्व वा ॥२९१॥

५० । ४०० । ५०० ॥ वरु ७० । ६०० । ७०० ॥ कुबे ६० । ५०० । ६०० ।

अर्थ—उन दक्षिणेन्द्रोंके कुबेर और वरुणके तीनों पारिषदोंका जो प्रमाण कहा है उससे उत्तरेन्द्रों (के कुबेर और वरुणके पारिषद देवोंके प्रमाण) का क्रम विपरीत है । शेष पूर्व के समान समझना चाहिए ॥२९१॥

---

१. द ब. क. ज. ठ. बम्हिंदवादिय । २. द. ब. क. ज. ठ. आरण ।

लोकपालोंके सामन्त देवोंके तीनों पारिषदोंका प्रमाण—

सव्वेसु दिगिंदाणं, सामंत-सुराण तिण्णि परिसाओ ।
णिय-णिय-दिगिंद-परिसा-सरिसाओ हवंति पत्तेक्कं ।।२९२।।

अर्थ—सब लोकपालोंके सामन्त देवोंके तीनों पारिषदोंमेंसे प्रत्येक अपने-अपने लोकपालके पारिषदोंके (प्रमाण) बराबर है ।।२९२।।

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

लोकपालोंके सामन्तोंका और देवोंके परिवार देवोंका प्रमाण—गा० २८७ से २९२

देवेन्द्र	कल्पों के नाम	लोकपालों के सामन्तों का प्रमाण गा० २८७-२८८	सोम लोकपाल एवं सोमके सामन्तों के			यम लोकपाल एवं यम के सामन्तों के			वरुण लोकपाल एवं वरुणके सामन्तों के			कुबेर लोकपाल एवं कुबेरके सामन्तों के		
			अभ्यन्तर पारिषद	मध्यम पा०	बाह्य पा०	अभ्यन्तर पा०	मध्यम पा०	बाह्य पा०	अभ्य. पा०	मध्यम पा०	बाह्य पा०	अभ्य. पा०	मध्यम पा०	बाह्य पा०
			४ पारिषद देव ५०-५० होते हैं।			४ पारिषद देव ५०-५० होते हैं।			४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।			४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।		
			देवियोंका उत्पत्तिके प्रथम अन्तर्मुहूर्तके भीतर अपने योग्य रूपादि होता है।			देवियोंका उत्पत्तिके प्रथम अन्तर्मुहूर्तके भीतर अपने योग्य रूपादि होता है।			देवियोंका उत्पत्तिके प्रथम अन्तर्मुहूर्तके भीतर अपने योग्य रूपादि होता है।				
			४ पारिषद देव ५०-५० होते हैं।	४ पारिषद देव ५००-५०० होते हैं।	४ पारिषद देव ५००-५०० होते हैं।	४ पारिषद देव ५०-५० होते हैं।	४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।	४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।	४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।			४ पारिषद ५००-५०० होते हैं।		
१	सौधर्म कल्प	४०००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
२	ईशान कल्प	४०००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
३	सनत्कुमार कल्प	२०००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
४	माहेन्द्र कल्प	१०००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
५	ब्रह्म कल्प	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
६	लान्तव कल्प	२५०	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
७	महाशुक्र कल्प	१२५	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
८	सहस्रार कल्प	६२	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
९	आनत कल्प	३१	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
१०	प्राणत कल्प	१५	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
११	आरण कल्प	७	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००
१२	अच्युत कल्प	३	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००	५०	५००	५००

लोकपालोंके अनीकादि परिवार देव—

सोमादि-दिग्गिदाणं, सत्ताणीयाणि होंति पत्तेक्कं ।
अट्ठावीस - सहस्सा, पढमे सेसेसु दुगुण - कमा ॥२९३॥

अर्थ—सोमादि लोकपालोंकी जो सात सेनाएँ होती हैं उनमें से प्रत्येक (सेनाको) प्रथम कक्षामें अट्ठाईस हजार (वृषभादि) हैं और शेष कक्षाओंमें द्विगुणित क्रम है ॥२९३॥

पंचत्तीसं सक्का, छप्पण्ण - सहस्सयाणि पत्तेक्कं ।
सोमादि - दिग्गिणाणं, हवेदि वसहादि - परिमाणं ॥२९४॥

३५५६००० ।

अर्थ—सोमादि लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके वृषभादिका प्रमाण पैंतीस लाख छप्पन हजार (२८०००×१२७=३५५६०००) है ॥२९४॥

दो-कोडीओ सत्तसा, अट्ठदाल सहस्सयाणि बावट्ठी ।
सत्ताणीय - पमाणं, पत्तेक्कं लोयपालाणं ॥२९५॥

२४८९२००० ।

अर्थ—लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके सात अनीकोंका प्रमाण दो करोड़ अट्ठासीस लाख बानवें हजार (३५५६०००×७=२४८९२०००) है ॥२९५॥

जे अभियोग-पइण्णय-किब्बिसिया होंति लोयपालाणं ।
ताण पमाण - णिरूवण - उवएसा संपइ पणट्ठो ॥२९६॥

अर्थ—लोकपालोंके जो आभियोग्य, प्रकीर्णक और किल्बिषिक देव होते हैं उनके प्रमाणके निरूपणका उपदेश इससमय नष्ट हो गया है ॥२९६॥

लोकपालोंके विमानोंका प्रमाण—

छल्लक्खा छासट्ठी - सहस्सया छस्सयाणि छावट्ठी ।
सक्कस्स दिग्गिदाणं, विमाण - संखा य पत्तेक्कं ॥२९७॥

६६६६६६ ।

अर्थ—सौधर्मेन्द्रके लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके विमानोंकी संख्या छह लाख छयासठ हजार छह सौ छयासठ (६६६६६६) है ॥२९७॥

सेसु पहाण-विमाणा, सयंपहारिट्ठ - जलपहा णामा ।
वग्गूपहो य कमसो, सोमादिय - लोयपालाणं ॥२९८॥

अर्थ—उन विमानोंमें सोमादि लोकपालोंके क्रमशः स्वयंप्रभ, अरिष्ट, जलप्रभ और वल्गुप्रभ नामक प्रधान विमान हैं ॥२९८॥

इय-संखा-णामाणि, सणक्कुमारिंद - बम्ह - इंदेसुं ।
सोमादि - दिगिंदाणं, भणिदाणि वर - विमाणेसुं ॥२९९॥

६६६६६६ ।

अर्थ—सनत्कुमार और ब्रह्मेन्द्रके सोमादि लोकपालोंके उत्तम विमानोंकी भी यही (६६६६६६) संख्या और ये ही नाम कहे गये हैं ॥२९९॥

होदि हु सयंपहक्खं, वरजेट्ठसु - अंजणाणि वग्गू य ।
ताण पहाण - विमाणा, सेसेसुं दक्खिणिंदेसुं ॥३००॥

अर्थ—शेष दक्षिण इन्द्रोंमें स्वयम्प्रभ, वरज्येष्ठ, प्रञ्जन और वल्गु, ये उन लोकपालोंके प्रधान विमान होते हैं ॥३००॥

सोमं सव्वदभद्दा, सुभद्द-अमिदाणि[1] सोम-पहुदीणं ।
होंति पहाण - विमाणा, सव्वेसुं उत्तरिंदाणं ॥३०१॥

अर्थ—सब उत्तरेन्द्रोंके सोमादिक लोकपालोंके सोम (सम), सर्वतोभद्र, सुभद्र और अमित नामक प्रधान विमान होते हैं ॥३०१॥

ताणं विमाण-संखा-उवएसो अत्थि कालदोसेण ।
ते सव्वे वि दिगिंदा, तेसु विमाणेसु कीडंते ॥३०२॥

अर्थ—उन विमानोंकी संख्याका उपदेश कालवश इससमय नहीं है । ये सब लोकपाल उन विमानोंमें क्रीड़ा किया करते हैं ॥३०२॥

सोम-जमा सम-रिद्धी, वरुणो वि ते होंति दक्खिणिंदेसुं ।
तेसुं अहिओ वरुणो, वरुणादो होदि धणणाहो ॥३०३॥

अर्थ—दक्षिणेन्द्रोंके सोम और यम ये दोनों लोकपाल समान ऋद्धिवाले होते हैं । उनसे अधिक (ऋद्धि-सम्पन्न) वरुण और वरुणसे अधिक (ऋद्धि सम्पन्न) कुबेर होता है ॥३०३॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. अमिदाणि ।

सोम-जमा सम-रिद्धी, वोत्तिण्ण वि ते होंति उत्तरिंदाणं ।
तेसु कुबेरो अहिओ, हवेदि वरुणो कुबेरादो ॥३०४॥

अर्थ—उत्तरेन्द्रोंके वे दोनों सोम और यम समान ऋद्धिवाले होते हैं। उनसे अधिक ऋद्धि सम्पन्न कुबेर और कुबेरसे अधिक ऋद्धि सम्पन्न वरुण होता है ॥३०४॥

इन्द्रादिकी ज्येष्ठ एवं परिवार देवियां—

इंद - पडिंदादीणं, देवाणं जेट्ठियाओ देवीओ ।
जेट्ठंति तेत्तियाओ[1], वोच्छामो आणुपुव्वीए ॥३०५॥

अर्थ—इन्द्र और प्रतीन्द्रादिक देवोंके जितनी-जितनी देवियां होती हैं उनको अनुक्रमसे कहते हैं ॥३०५॥

एक्केक्क - दक्खिणिंदे, अट्ठट्ठ - हवंति जेट्ठ-देवीओ ।
पउमा-सिवा-सचीओ, अंजुकया - रोहिणी - नवमी ॥३०६॥
वल-णामा अच्चिणिया, ताओ सद्दिस-सरिस-णामाओ ।
एक्केक्क - उत्तरिंदे, तम्मेत्ता जेट्ठ - देवीओ ॥३०७॥
किण्हा य मेघराई, रामाणह-रामरक्खिदा वसुका ।
वसुमित्ता वसुधम्मा, वसुंधरा सव्व-इंद-सम-णामा ॥३०८॥

अर्थ—पद्मा, शिवा, शची, अञ्जुका, रोहिणी, नवमी, बलनामा और अर्चिनिका ये आठ ज्येष्ठ देवियां प्रत्येक दक्षिण इन्द्रके होती हैं। ये सब इन्द्रोंके सदृश नामवाली होती हैं। एक-एक उत्तर इन्द्रके भी इतनी (आठ) ही ज्येष्ठ देवियां होती हैं। (उनके नाम) कृष्णा, मेघराजी, रामापति, रामरक्षिता, वसुका, वसुमित्रा, वसुधर्मा और वसुन्धरा हैं। ये सब इन्द्रोंके, समान नामवाली होती हैं (अर्थात् सब इन्द्रों की देवियों के नाम यही हैं।) ॥३०६-३०८॥

सक्क-दुगम्मि सहस्सा, सोलस एक्केक्क-जेट्ठ-देवीओ ।
जेट्ठंति चारु - णिरुवम - रूवा[2] परिवार - देवीओ ॥३०९॥

१६०००।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रकी एक-एक ज्येष्ठ देवीके सुन्दर एवं निरुपम रूपवाली सोलह हजार (१६०००) परिवार-देवियां होती हैं ॥३०९॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. तेत्तियाणं। २. द. ब. क. ज. ठ. रूवाणं।

अट्ठ-चउ-दुग-सहस्सा, एक्क-सहस्सं सणक्कुमार-दुगे ।
बम्हम्मि लंतविदे, कमेण महसुक्क - इंदम्मि ॥३१०॥

८००० । ४००० । २००० । १००० ।

अर्थ—सनत्कुमार और माहेन्द्र, ब्रह्मेन्द्र, लान्तवेन्द्र तथा महाशुक्रेन्द्रकी एक-एक ज्येष्ठ देवीके क्रमशः आठ हजार, चार हजार, दो हजार और एक हजार परिवार-देवियाँ होती हैं ॥३१०॥

पंच - सया देवीओ, होंति सहस्सार - इंद - देवीणं ।
अड्ढाइज्ज - सयाणि, आणद - इंदादिय - चउक्के ॥३११॥

५०० । २५० ।

अर्थ—सहस्रार इन्द्रकी प्रत्येक ज्येष्ठ देवीके पाँच सौ (५००) परिवार-देवियाँ और आनतेन्द्र आदिक चारकी प्रत्येक ज्येष्ठ देवीके अढ़ाई सौ (२५०) परिवार-देवियाँ होती हैं ॥३११॥

इन्द्रोंकी वल्लभा और परिवार-वल्लभा देवियाँ—

बत्तीस-सहस्साणि, सोहम्म-दुगम्मि होंति वल्लहिया ।
पत्तेक्कमड[1] - सहस्सा, सणक्कुमारिंद - दुगलम्मि ॥३१२॥

३२००० । ३२००० । ८००० । ८००० ।

अर्थ—सौधर्मद्विक (सौधर्म और ईशान) में प्रत्येक इन्द्रके बत्तीस हजार (३२०००) और सनत्कुमार आदि दो (सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो) इन्द्रोंमें प्रत्येकके आठ (आठ) हजार वल्लभा देवियाँ होती हैं ॥३१२॥

बम्हिंदे दु - सहस्सा, पंच - सयाणि च लंतविंदम्मि ।
अड्ढाइज्ज - सयाणि, हवंति महसुक्क - इंदम्मि ॥३१३॥

२००० । ५०० । २५० ।

अर्थ—ब्रह्मेन्द्रके दो हजार (२०००), लान्तवेन्द्रके पाँच सौ (५००) और महाशुक्रेन्द्रके अढ़ाई सौ (२५०) वल्लभा-देवियाँ होती हैं ॥३१३॥

पणुवीस-जुदेक्क-सयं, होंति सहस्सार-इंद-वल्लहिया ।
आणद - पाणद - आरण - अच्चुद - इंदाण तेसट्ठी ॥३१४॥

१२५ । ६३ ।

---

१. ब. ज. क. ब. ठ. मट्ठ ।

अर्थ—सहस्रार इन्द्रके एक सौ पच्चीस (१२५) और आनत-प्राणत-आरण-अच्युत इन्द्रोंके तिरेसठ (६३-६३) वल्लभा देवियाँ होती हैं ॥३१४॥

परिवार-वल्लभाओ, सक्काओ दुगस्स जेट्ठ-देवीओ ।
णिय-सम[1]-विकुव्वणाओ, पत्तेक्कं सोलस - सहस्सा ॥३१५॥

१६००० ।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रकी परिवार-वल्लभाओं और ज्येष्ठ देवियोंमें प्रत्येक अपने समान सोलह हजार (१६०००) प्रमाण विक्रिया करनेमें समर्थ है ॥३१५॥

तत्तो दुगुणं दुगुणं, ताओ णिय-तणु-विकुव्वणकराओ ।
आणद - इंद - चउक्कं, आव कमेणं पवत्तव्वो ॥३१६॥

३२००० । ६४००० । १२८००० । २५६००० । ५१२००० । १०२४००० ।

अर्थ—इसके आगे आनत आदि चार इन्द्रों पर्यन्त वे ज्येष्ठ देवियाँ क्रमशः इससे दूने प्रमाण अपने-अपने शरीरकी विक्रिया करनेवाली हैं, ऐसा क्रमशः कहना चाहिए ॥३१६॥

सब इन्द्रोंकी प्राणवल्लभाओंके नाम—

विणयसिरि-कणयमाला-पउमा-गंदा-सुसीम-जिणदत्ता ।
एक्केक्क - दक्खिणिंदे, एक्केक्का पाण - वल्लहिया ॥३१७॥

अर्थ—एक-एक दक्षिणेन्द्रके विनयश्री, कनकमाला, पद्मा, नन्दा, सुसीमा और जिनदत्ता, इसप्रकार एक-एक प्राणवल्लभा होती है ॥३१७॥

एक्केक्क - उत्तरिंदे, एक्केक्का होदि हेममाला य ।
णीलुप्पल-विस्सुदया, णंदा-वंदलक्खणाओ जिणदासी ॥३१८॥

अर्थ—हेममाला, नीलोत्पला, विश्रुता, नन्दा, वंशलक्षणा और जिनदासी, इसप्रकार एक-एक उत्तरेन्द्रके एक-एक प्राणवल्लभा होती है ॥३१८॥

सयलिंद - वल्लभाणं, चत्तारि महत्तरीओ पत्तेक्कं ।
कामा कामिणिआओ, पंकयगंधा अलंबुसा - णामा ॥३१९॥

अर्थ—सब इन्द्रोंकी वल्लभाओंमेंसे प्रत्येकके कामा, कामिनिका, पंकजगन्धा और अलंबूषा नामक चार महत्तरी (गणिका महत्तरी) होती हैं ॥३१९॥

---

१. ब. समय ।

इन्द्रों की देवियों का प्रमाण—

क्रमांक	इन्द्रों के नाम	ज्येष्ठ देवियों गा० ३०६-३०८	ज्येष्ठ देवियों की विक्रिया का प्रमाण गा० ३१५-३१६	ज्येष्ठ देवियों को परिवार देवियां गा० ३०९-३११	वल्लभाएँ गा० ३१२-३१४	वल्लभा देवियों की विक्रिया का प्रमाण गा० ३१५-३१६	प्राण वल्लभा गा० ३१७-३१८	महत्तरी देवियाँ गा० ३१९	योगफल
१	सौधर्म	८	१२८०००	१२८०००	३२०००	५१२०००००	१	४	५१२२८८०१२
२	ईशान	८	१२८०००	१२८०००	३२०००	५१२०००००	१	४	५१२२८८०१२
३	सनत्कु०	८	२५६०००	६४०००	८०००	२५६०००००	१	४	२५६३२८०१२
४	माहेन्द्र	८	२५६०००	६४०००	८०००	२५६०००००	१	४	२५६३२८०१३
५	ब्रह्म	८	५१२०००	३२०००	२०००	१२८०००००	१	४	१२८५४६०१३
६	लान्तव	८	१०२४०००	१६०००	५००	६४०००००	१	४	६५०४०५१३
७	महाशुक्र	८	२०४८०००	८०००	२५०	६४०००००	१	४	६६०५६२६३
८	सहस्रार	८	४०९६०००	४०००	१२५	६४०००००	१	४	६८१००१३८
९	आनत	८	८१९२०००	२०००	६३	६४५१२०००	१	४	७२७०६०७६
१०	प्राणत	८	८१९२०००	२०००	६३	६४५१२०००	१	४	७२७०६०७६
११	आरण	८	८१९२०००	२०००	६३	६४५१२०००	१	४	७२७०६०७६
१२	अच्युत	८	८१९२०००	२०००	६३	६४५१२०००	१	४	७२७०६०७६

प्रतीन्द्रादिक तीन की देवियाँ—

पडिइंदादि[1]-तियस्स य, णिय-णिय इंदेहि सरिस-देवीओ।
संखाए णामेहिं, विकिरिया - रिद्धि चत्तारि ॥३२०॥

अर्थ—प्रतीन्द्रादिक तीन (प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश) की देवियाँ संख्या, नाम, विक्रिया और ऋद्धि, इन चार (बातों) में अपने-अपने इन्द्र (की देवियों) के सदृश हैं ॥३२०॥

लोकपालोंकी देवियाँ—

आदिम-दो-जुगलेसुं, बम्हादिसु चउसु आणद-चउक्के।
विण्णिद - जेट्ठ - देवीओ होंति चत्तारि चत्तारि ॥३२१॥

अर्थ—आदिके दो युगल, ब्रह्मादिक चार युगल और आनत आदि चारमें लोकपालोंकी ज्येष्ठ देवियाँ चार-चार होती हैं ॥३२१॥

तप्परिवारा कमसो, चउ-एक्क-सहस्समाणि पंच-सया।
अड्ढाइज्ज - सयाणि, तद्दल - तेसट्ठि - बत्तीसं ॥३२२॥

४००० । १००० । ५०० । २५० । १२५ । ६३ । ३२ ।

अर्थ—उनके परिवारका प्रमाण क्रमसः चार हजार, एक हजार, पाँच सौ, अढ़ाई सौ, इसका आधा अर्थात् एक सौ पच्चीस, तिरेसठ और बत्तीस है ॥३२२॥

विब्बम-लावण्णाओ, वर-विविह-विभूसणाओ पत्तेक्कं।
अड्ढाइज्ज - कोडिमेत्ता, वल्लहिया लोयपालाणं ॥३२३॥

२५०००००० ।

अर्थ—प्रत्येक लोकपालके अनुपम लावण्यसे युक्त और विविध भूषणोंवाली ऐसी साढ़े तीन करोड़ (३५०००००) वल्लभाएँ होती हैं ॥३२३॥

लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके सामानिक देवोंकी देवियाँ—

सामाणिय-देवीओ, सव्व - दिगिंदाण होंति पत्तेक्कं।
णिय-णिय-दिगिंद-देवी, समाण - संखाओ सव्वाओ ॥३२४॥

अर्थ—सब लोकपालोंमेंसे प्रत्येकके सामानिक देवोंकी सब देवियाँ अपने-अपने लोकपालोंकी देवियोंके सदृश संख्यावाली हैं ॥३२४॥

---

१. ब. ज. प, ब, म, क. पडिइंदातितियस्स य।

इन्द्रोंमें तनुरक्षक और पारिषद देवोंकी देवियाँ—

सव्वेसुं इंदेसुं, तणुरक्ख - सुराण होंति देवीओ ।
पुह छस्सयमेत्ताणि, णिरुवम - लावण्ण - रूवाओ ॥३२५॥

६०० ।

अर्थ—सब इन्द्रोंमें तनुरक्षकदेवोंकी अनुपम लावण्यरूपवाली देवियाँ पृथक्-पृथक् छह सौ (६००) प्रमाण होती हैं ॥३२५॥

आदिम-दो-जुगलेसुं, बम्हादिसु चउसु आणद-चउक्के ।
पुह - पुह सब्भिंतराणं, अब्भंतर - परिस - देवीओ ॥३२६॥
पंच-सय-चउ-सयाणि, ति-सया दो-सयाणि एक्क-सयं ।
पण्णासं पणुवीसं, कमेण एदाण णादव्वा ॥३२७॥

५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० । ५० । २५ ।

अर्थ—आदिके दो युगल, ब्रह्मादिक चार युगल और आनतादिक चारमें सब इन्द्रोंके अभ्यन्तर पारिषद-देवियाँ क्रमशः पृथक्-पृथक् पाँच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ, पचास और पच्चीस जानना चाहिए ॥३२६-३२७॥

छप्पंच-चउ-सयाणि, तिग-दुग-एक्क-सयाणि पण्णासा ।
पुव्वोदिद - ठाणेसुं, मज्झिम - परिसाए देवीओ ॥३२८॥

६०० । ५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० । ५० ।

अर्थ—पूर्वोक्त स्थानोंमें मध्यम पारिषद देवियाँ क्रमशः छह सौ, पाँच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ और पचास हैं ॥३२८॥

सत्त-छ-पंच-चउ-तिय-दुग-एक्क-सयाणि पुव्व-ठाणेसुं ।
सब्भिंतराणं होंति हु, बाहिर - परिसाए देवीओ ॥३२९॥

७०० । ६०० । ५०० । ४०० । ३०० । २०० । १०० ।

अर्थ—पूर्वोक्त स्थानोंमें सब इन्द्रोंके बाह्य-पारिषद देवियाँ क्रमशः सात सौ, छह सौ, पाँच सौ, चार सौ, तीन सौ, दो सौ और एक सौ हैं ॥३२९॥

अनीक देवोंकी देवियाँ—

सत्ताणीय - पहूणं, पुह पुह देवीओ छस्सया होंति ।
दोण्णि सया पत्तेक्कं, देवीओ अणीय - देवाणं ॥३३०॥

६०० । २०० ।

अर्थ—सात अनीकोंके प्रभुओंके पृथक्-पृथक् छह सौ (६००) और प्रत्येक अनीकदेवके दो सौ (२००) देवियाँ होती हैं ॥३३०॥

आभो पइण्णयाणं, अभियोग-सुराण किब्बिसाणं च ।
देवीओ ताण संखा, उवएसो संपह पणट्ठो ॥३३१॥

अर्थ—प्रकीर्णक, आभियोग्य देव और किल्विषिक देवोंकी जो देवियाँ हैं उनकी संख्याका उपदेश इससमय नष्ट हो गया है ॥३३१॥

तणुरक्ख-प्पहुदीणं, पुह - पुह एक्केक्क-जेट्ठ-देवीओ ।
एक्केक्का वल्लहिया, विविहालंकार - कंतिल्ला ॥३३२॥

अर्थ—तनुरक्षक आदि देवोंके पृथक्-पृथक् विविध अलङ्कारोंसे शोभायमान एक-एक ज्येष्ठ देवी और एक-एक वल्लभा होती है ॥३३२॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

वैमानिक इन्द्रोंके परिवार देवोंकी देवियोंका प्रमाण—

क्रमांक	परिवार देव	देवी का पद	— कल्प इन्द्रों के नाम —											
			सौधर्म	ईशान	सनत्कु०	माहेन्द्र	ब्रह्म	लान्तव	महाशुक्र	सहस्रार	आनत	प्राणत	आरण	अच्युत
१	प्रतीन्द्र	—	—	→	अपने	इन्द्र	की	देवियों	सदृश	देवियाँ हैं	—	→	—	—
२	सामानिक	—	—	→	—	,,	,,	,,	,,	,,	—	→	—	—
३	त्रायस्त्रिंश	—	—	→	-	,,	,,	,,	,,	,,	—	→	—	—
४	प्रत्येक लोकपाल के	ज्येष्ठ	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
		परिवार	४०००	४०००	१०००	१०००	५००	२५०	१२५	६३	३२	३२	३२	३२
		वल्लभा	—	—	→	प्रत्येक	लोक	पाल की	३५०००	०००	देवियाँ	हैं	—	—
५	सब लोकपालोंके सामा० देवोंकी	—	—	—	अपने	अपने	लोक	पाल की	देवियों	प्रमाण	—	—	—	—
६	इन्द्रोंके प्रत्येक तनुरक्षकके	परिवार	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००
		ज्येष्ठ	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
		वल्ल०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
७	अभ्यन्तर पारिषद	×	६००	६००	५००	५००	४००	३००	२००	१५०	२५	२५	२५	२५
८	मध्यम पारिषद	×	६००	६००	५००	५००	४००	३००	२००	१००	५०	५०	५०	५०
९	बाह्य पारिषद	×	७००	७००	६००	६००	५००	४००	३००	२००	१००	१००	१००	१००
१०	प्रधान अनीक की	×	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००	६००
११	साधारण अनीक की	×	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००	२००
१२	प्रकीर्णकों की	—	—	—	→	उपदेश		नष्ट	—	—	→	—	—	—
१३	आभियोग्यों की	—	—	—	→	,,		,,	—	—	→	—	—	—
१४	किल्बिषिकों की	—	—	—	→	,,		,,	—	—	→	—	—	—

देवियोंकी उत्पत्तिका विधान—

सोहम्मीसाणेसुं, उप्पज्जंते हु सव्व - देवीओ ।
उवरिम - कप्पे ताणं, उप्पत्ती णत्थि कइया वि ॥२३३॥

अर्थ—सब देवियाँ सौधर्म और ईशान कल्पोंमें ही उत्पन्न होती हैं, इससे उपरिम कल्पोंमें उनकी उत्पत्ति कदापि नहीं होती ॥२३३॥

छल्लक्खाणि विमाणा, सोहम्मे दक्खिणिंद-सव्वाणं ।
ईसाणे चउ - लक्खा, उत्तर - इंदाण य विमाणा ॥२३४॥

६००००० । ४००००० ।

अर्थ—सब दक्षिणेन्द्रोंके सौधर्मकल्पमें छह लाख (६०००००) विमान और उत्तरेन्द्रोंके ईशानकल्पमें चार लाख (४०००००) विमान हैं ॥२३४॥

तेसुं उप्पण्णाओ, देवीओ चिन्ह - ओहिणाणेहिं ।
आदूणं णिय-कप्पे, णेंति हु देवा सराग - मणा ॥२३५॥

अर्थ—उन कल्पोंमें उत्पन्न हुई देवियोंके चिह्न अवधिज्ञानसे जानकर सराग मनवाले देव अपने-अपने कल्पमें ले आते हैं ॥२३५॥

सोहम्मम्मि विमाणा, सेसा छव्वीस-लक्ख-संखा जे ।
तेसुं उप्पज्जंते, देवा देवीहि सम्मिस्सा ॥२३६॥

अर्थ—सौधर्मकल्पमें जो शेष छब्बीस लाख विमान हैं, उनमें देवियों सहित देव उत्पन्न होते हैं ॥२३६॥

ईसाणम्मि विमाणा, सेसा चउवीस-लक्ख-संखा जे ।
तेसुं उप्पज्जंते, देवीओ देव - मिस्साओ ॥२३७॥

अर्थ—ईशानकल्पमें जो शेष चौबीस लाख विमान हैं, उनमें देवोंसे युक्त देवियाँ उत्पन्न होती हैं ॥२३७॥

विशेषार्थ—आरण (१६ वें) स्वर्ग पर्यन्त दक्षिण कल्पोंकी समस्त देवांगनाएँ सौधर्म कल्पमें उत्पन्न होती हैं और अच्युत (१६ वें) कल्प पर्यन्त उत्तर कल्पोंकी समस्त देवांगनाएँ ईशान कल्पमें ही उत्पन्न होती हैं। उत्पत्तिके बाद उपरिम कल्पोंके देव अवधिज्ञान द्वारा उनके चिह्नोंको जानकर अपनी-अपनी नियोगिनी देवांगनाओंको अपने-अपने स्थान पर ले जाते हैं। सौधर्मकल्पमें कुल ३२ लाख विमान हैं, जिसमेंसे ६००००० (छह लाख) में मात्र देवांगनाओंकी उत्पत्ति होती है और शेष

२६ लाख विमानोंमें संमिश्र अर्थात् देव और देवियाँ दोनों उत्पन्न होते हैं। इसीप्रकार ईशान कल्पके २८ लाख विमानोंमेंसे ४००००० विमानोंमें मात्र देवांगनाओंको और शेष २४ लाख विमानोंमें दोनों की उत्पत्ति होती है।

सौधर्मादि कल्पोंमें प्रवीचारका विधान—

सोहम्मीसाणेसुं, देवा सव्वे वि काय - पडिचारा।
होंति हु सणक्कुमार-प्पहुदि-दुगे फास - पडिचारा ॥३३८॥

अर्थ - सौधर्म और ईशान कल्पोंमें सब ही देव काय-प्रवीचार सहित और सनत्कुमार आदि दो (सनत्कुमार-माहेन्द्र) कल्पोंमें स्पर्श-प्रवीचार युक्त होते हैं ॥३३८॥

बम्हाहिधाण-कप्पे, संतव-कप्पम्मि रूव - पडिचारा।
कप्पम्मि महासुक्के, सहस्सयारम्मि सद्द-पडिचारा ॥३३९॥

अर्थ—ब्रह्म नामक कल्पमें तथा लान्तव कल्पमें रूप प्रवीचार युक्त और महाशुक्र एवं सहस्रार कल्पमें शब्द-प्रवीचार युक्त होते हैं ॥३३९॥

आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-कप्पेसु चित्त-पडिचारा।
एत्तो सव्विंदाणं, आवास - विहिं परूवेमो ॥३४०॥

अर्थ—आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, इन कल्पोंमें देव चित्त-प्रवीचार युक्त होते हैं। यहाँसे आगे सब इन्द्रोंको आवास-विधि कहते हैं ॥३४०॥

विशेषार्थ—काम सेवन को प्रवीचार कहते हैं। सौधर्मैशान कल्पोंके देव अपनी देवांगनाओं के साथ मनुष्योंके सदृश कामसेवन करके अपनी इच्छा शान्त करते हैं। सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पोंके देव देवांगनाओंके स्पर्श मात्रसे अपनी काम पीड़ा शान्त करते हैं। ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर और लान्तव-कापिष्ठ कल्पोंके देव देवांगनाओंके रूपावलोकन मात्रसे अपनी काम पीड़ा शान्त करते हैं। इसीप्रकार महाशुक्र और सहस्रार कल्पोंके देव देवांगनाओंके गीतादि शब्दोंको सुनकर तथा आनतादि चार कल्पोंके देव चित्तमें देवांगनाका विचार करते ही काम वेदनासे रहित हो जाते हैं। इससे ऊपरके सब देव प्रवीचार रहित हैं।

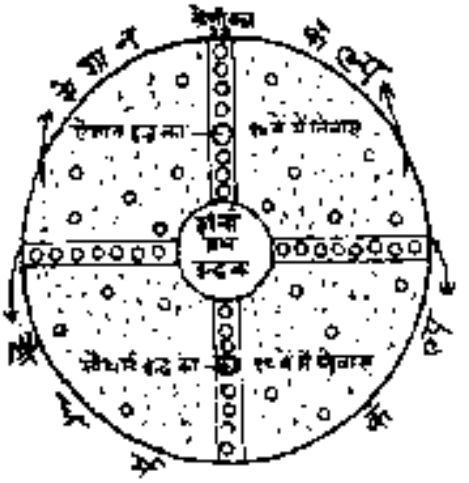
इन्द्रोंके निवास-स्थानोंका निर्देश—

पढमादु एक्कतीसे, पभ-णाम-अवत्त दक्खिणोसीए।
बत्तीस - सेढिबद्धे, अट्ठारसमम्मि सोहवे सक्को ॥३४१॥

अर्थ—प्रथमसे इकतीसवें प्रभ-नामक इन्द्रककी दक्षिण श्रेणीमें बत्तीस श्रेणीबद्धोंमेंसे अठारहवें श्रेणीबद्ध विमानमें सौधर्म इन्द्र स्थित है ॥३४१॥

तस्सिंदयस्स उत्तर - दिसाए बत्तीस - सेढिबद्धेसुं ।
अट्ठारसमे सेढ्ठवि, इंदो ईसाण - णामो य ॥३४२॥

अर्थ—इसी इन्द्रककी उत्तर दिशाके बत्तीस श्रेणीबद्धोंमेंसे अठारहवें श्रेणीबद्ध विमानमें ईशान नामक इन्द्र स्थित है (चित्र इसप्रकार है) ॥३४२॥



पढमादु अट्ठतीसे, दक्खिण-पंतीए चक्क - णामस्स ।
पणुवीस - सेढिबद्धे, सोलसमे तह सणक्कुमारिंदो ॥३४३॥

अर्थ—पहलेसे अड़तीसवें चक्र नामक इन्द्रककी दक्षिण पंक्तिमें पच्चीस श्रेणीबद्धोंमेंसे सोलहवें श्रेणीबद्ध विमानमें सानत्कुमार इन्द्र स्थित है ॥३४३॥

तस्सिंदयस्स उत्तर - दिसाए पणुवीस-सेढिबद्धम्मि ।
सोलसम - सेढिबद्धे, चेट्ठेदि माहिंद - णामिंदो ॥३४४॥

अर्थ—इस इन्द्रककी उत्तरदिशामें पच्चीस श्रेणीबद्धोंमेंसे सोलहवें श्रेणीबद्धमें माहेन्द्र नामक इन्द्र स्थित है ॥३४४॥

बम्हुत्तरस्स दक्खिण-दिसाए इगिवीस - सेढिबद्धेसुं ।
चोद्दसम - सेढिबद्धे, चेट्ठेदि हु बम्ह - कप्पिंदो ॥३४५॥

अर्थ—(पहलेसे बियालीसवें) ब्रह्मोत्तर नामक इन्द्रक की दक्षिण दिशामें इक्कीस श्रेणीबद्धोंमेंसे चौदहवें श्रेणीबद्ध विमानमें ब्रह्म कल्पका इन्द्र स्थित है ॥३४५॥

लंतव-इंदय-दक्खिण-दिसाए बीसाए[1] सेढीबद्धेसुं ।
बारसम - सेढिबद्धे, चेट्ठदि हु लंतवदिवो वि ॥३४६॥

अर्थ—(पहलेसे चवालीसवें) लान्तव नामक इन्द्रककी दक्षिण दिशामें बीस श्रेणीबद्धोंमेंसे बारहवें श्रेणीबद्ध विमानमें लान्तव इन्द्र स्थित है ॥३४६॥

महसुक्किंदय-उत्तर-दिसाए अट्ठरस - सेढिबद्धेसुं ।
दसमम्मि सेढिबद्धे, वसइ महासुक्क - णामिंदो ॥३४७॥

अर्थ—(पहलेसे पैंतालीसवें) महाशुक्र नामक इन्द्रककी उत्तर दिशामें अठारह श्रेणीबद्धों मेंसे दसवें श्रेणीबद्ध विमानमें महाशुक्र नामक इन्द्र निवास करता है ॥३४७॥

होदि सहस्सारुत्तर - दिसाए सत्तरस - सेढिबद्धेसुं ।
अट्ठमए सेढिबद्धे, वसइ सहस्सार - णामिंदो ॥३४८॥

अर्थ—(पहलेसे सैंतालीसवें) सहस्रार नामक इन्द्रककी उत्तर दिशामें सत्तरह श्रेणीबद्धों मेंसे आठवें श्रेणीबद्ध विमानमें सहस्रार नामक इन्द्र निवास करता है ॥३४८॥

जिणदिट्ठ-णाम-इंदय-दक्खिण-पंतीए सेढिबद्धेसुं ।
छट्ठम - सेढीबद्धे, आणद - णामिंद - आवासो ॥३४९॥

अर्थ—जिनेन्द्र द्वारा देखे गये नामवाले इन्द्रककी दक्षिण-पंक्तिके श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें आनत नामक इन्द्रका निवास है ॥३४९॥

तस्सिंदयस्स उत्तर - दिसाए तस्संख - सेढिबद्धेसुं ।
छट्ठम - सेढीबद्धे, पाणद - णामिंद - आवासो ॥३५०॥

अर्थ—इस इन्द्रककी उत्तर दिशामें उतनी ही संख्या प्रमाण श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्धमें प्राणत नामक इन्द्रका निवास है ॥३५०॥

आरण-इंदय-दक्खिण-दिसाए एक्करस-सेढिबद्धेसुं ।
छट्ठम - सेढीबद्धे, आरण - इंदस्स आवासो ॥३५१॥

अर्थ—आरण इन्द्रककी दक्षिण दिशाके ग्यारह श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्ध विमानमें आरण इन्द्रका आवास है ॥३५१॥

---

१. बीस के स्थान पर १९ श्रेणीबद्धोंमेंसे होना चाहिए ।

अच्चुद-इंदय-उत्तर-दिसाए एक्कारस - सेढिबद्धेसुं ।
छट्ठम - सेढीबद्धे, अच्चुद - इंदस्स आवासो ॥३५२॥

अर्थ—अच्युत इन्द्रककी उत्तर दिशाके ग्यारह श्रेणीबद्धोंमेंसे छठे श्रेणीबद्ध विमानमें अच्युत इन्द्रका निवास है ॥३५२॥

विशेषार्थ—प्रथम ऋतुविमानकी प्रत्येक दिशामें ६२ श्रेणीबद्ध विमान हैं, प्रत्येक इन्द्रक प्रति प्रत्येक दिशामें एक-एक श्रेणीबद्ध विमान हीन होता है। प्रथम इन्द्रकमें हानि नहीं है अतः प्रथम कल्पके अन्तिम प्रभ इन्द्रककी एक दिशामें ३२ श्रेणीबद्ध विमान प्राप्त होंगे उनमेंसे १८ वें श्रेणीबद्ध विमानमें अर्थात् सौधर्म-ईशान कल्पके अंतिम इन्द्रक सम्बन्धी दक्षिण दिशागत श्रेणीबद्ध विमानोंमेंसे १८ वें श्रेणीबद्धमें सौधर्मेन्द्र और उत्तर दिशा सम्बन्धी ३२ श्रेणीबद्धोंमेंसे १८ वें श्रेणीबद्धमें ईशानेन्द्र निवास करते हैं। इसीप्रकार आगे भी जानना चाहिए। यथा—

क्रम	कल्प नाम	इन्द्रक संख्या	एक दिशागत श्रेणीबद्ध	प्रत्येक इन्द्रक प्रति हीन होते हुए श्रेणीबद्ध विमानों की संख्या	अन्तिम इन्द्रक सम्बन्धी श्रेणीबद्ध	इन्द्रके निवास सम्बन्धी श्रेणीबद्धों की संख्या
१	सौधर्म कल्प	३१	६२	६१,६०,५९,५८,५७,५६,५५ ...१४,१३	३२ मेंसे	१८ वें में
२	ईशान कल्प	०	६२	— ,, — ,, — ,, —	३२ मेंसे	१८ वें में
३	सनत्कुमार	७	३१	३०, २९, २८, २७, २६	२५ मेंसे	१६ वें में
४	माहेन्द्र	०	३१	— ,, — ,, —	,, - ,,	१६ वें में
५	ब्रह्म	४	२४	२३ २२	२१ मेंसे	१४ वें में
६	लान्तव	२	२०	[गा० ३४६ में २० मेंसे लिया है]	१९ ,,	१२ वें में
७	महाशुक्र	१	१८		१८ ,,	१० वें में
८	सहस्रार	१	१७		१७ ,,	८ वें में
९	आनत	—	—	गा० ३४९-५० में इन दोनों कल्पों संख्या आदि नहीं कही गई है।	—	६ वें में
१०	प्राणत					६ वें में
११	आरण		१६	१५ — १४ — १३ — १२	११ ,,	६ वें में
१२	अच्युत		१६		११ ,,	६ वें में

सम्बुगल - सेसएसुं, अट्ठारसमम्मि सेढिबद्धेसुं ।
दो-हीण-कमं दक्खिण-उत्तर-भागेसु होंति वेविदा ॥३५३॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ— छह युगलों और शेष कल्पोंमें यथाक्रमसे प्रथम युगलमें अपने अन्तिम इन्द्रकसे सम्बद्ध अठारहवें श्रेणीबद्धमें तथा इससे आगे दो हीन क्रमसे अर्थात् सोलहवें, चौदहवें, बारहवें, दसवें, आठवें और छठे श्रेणीबद्धमें दक्षिण भागमें दक्षिण इन्द्र और उत्तर भागमें उत्तर इन्द्र स्थित हैं ॥३५३॥

पाठान्तर ।

श्रेणियों एवं उनके मध्य स्थित नगरोंके प्रमाण आदिका निर्देश—

एदाणं सेढीओ, [1]पत्तेक्कमसंख - जोयण - पमाणा ।
रविमंडल-सम-वट्टा, णाणावर - रयण - णियरमया ॥३५४॥

अर्थ—सूर्यमण्डलके सदृश गोल और नाना उत्तम रत्नसमूहोंसे निर्मित इनकी श्रेणियोंमेंसे प्रत्येक (श्रेणी) असंख्यात योजन प्रमाण है ॥३५४॥

तेसुं तड-वेदीओ, कणयमया होंति विविह-धय-माला ।
चरिवट्टालय-चारु, वर - तोरण - सुंदर - दुवारा ॥३५५॥

अर्थ—उनमें मार्गों एवं अट्टालिकाओंसे सुन्दर, उत्तम तोरणोंसे युक्त सुन्दर द्वारोंवाली और विविध ध्वजा-समूहोंसे युक्त स्वर्णमय तट-वेदियाँ हैं ॥३५५॥

दारोवरिम-तलेसुं, जिणभवणेहिं विचित्त - रूवेहिं ।
उत्तुंग - तोरणेहिं, सविसेसं सोहमाणाओ ॥३५६॥

अर्थ—द्वारोंके उपरिम तलोंपर उन्नत तोरणों सहित और अद्भुत रूपवाले जिन-भवनोंसे ये वेदियाँ विशेष शोभायमान हैं ॥३५६॥

एवं वण्णिदवासं, सेढीणं होंति तास बहुमज्झे ।
णिय-णिय-णाम-जुदाइं, सक्क - पहुदीण णयराइं ॥३५७॥

अर्थ—इसप्रकार वर्णित उन श्रेणियोंके बहुमध्य भागमें अपने-अपने नामसे युक्त सौधर्म इन्द्र आदिके नगर हैं ॥३५७॥

---

१. द. ब. क. ठ. पत्तेक्कसंखेज्ज ।

चुलसीदी-सीदीओ, बाहत्तरि - सत्तरीओ सट्ठी य ।
पण्णास-चाल-तीसा, बीस सहस्साणि जोयणया ॥३५८॥

८४००० । ८००० । ७२००० । ७०००० । ६०००० । ५०००० ।
४०००० । ३०००० । २०००० ।

सोहम्मिंदादीणं, अट्ठ - सुरिंदाण सेस - इंदाणं ।
रायंगणस्स बासो, पत्तेक्कं एस भावव्वो ॥३५९॥

अर्थ—सौधर्मादि आठ सुरेन्द्रों और शेष इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके राजाङ्गणका यह विस्तार क्रमशः चौरासी हजार (८४०००), अस्सी हजार (८००००), बहत्तर हजार (७२०००), सत्तर हजार (७००००), साठ हजार (६००००), पचास हजार (५००००), चालीस हजार (४००००), तीस हजार (३००००) और बीस हजार (२००००) जानना चाहिए ॥३५८-३५९॥

रायंगण - भूमीए, समंतदो दिव्व-कणय-तड-वेदी ।
वरियट्टालय-बाह, अणेग - विचित्त - रयणमाला ॥३६०॥

अर्थ—राजाङ्गण भूमिके चारों ओर दिव्य सुवर्णमय तट-वेदी है । यह वेदी मार्ग एवं अट्टालिकाओंसे सुन्दर तथा नाचती हुई विचित्र रत्नमालाओंसे युक्त है ॥३६०॥

प्राकारका उत्सेध आदि—

सक्क-दुगे तिण्णि-सया, पढमाइच्चा-सयाणि उवरि-दुगे ।
अंतिमये दोण्णि - सया, आदिम - पायार - उच्चेहो ॥३६१॥

३०० । २५० । २०० ।

अर्थ—शक्र-द्विक अर्थात् सौधर्म और ईशान इन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध तीन सौ (३००), उपरि-द्विक अर्थात् सानत्कुमार और माहेन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध अढ़ाई सौ (२५०) तथा ब्रह्मेन्द्रके आदिम प्राकारका उत्सेध दो सौ (२००) योजन है ॥३६१॥

पण्णास-अधेक्क-सया, बीसब्भहियं सयं सयं मुद्धं ।
सो संतविंद-तिदए, असीदि पत्तेक्क-आणदादिम्मि ॥३६२॥

१५० । १२० । १०० । ८० ।

अर्थ—सान्तवेन्द्रादिक तीन (सान्तवेन्द्र, महाशुक्रेन्द्र और सहस्रारेन्द्र) के आदिम प्राकारोंका उत्सेध-प्रमाण क्रमशः एक सौ पचास (१५०), एक सौ बीस (१२०) और केवल सौ (१००) योजन है । प्रत्येक आनतेन्द्रादिके राजाङ्गणका उत्सेध अस्सी (८०) योजन प्रमाण है ॥३६२॥

पण्णासं पणुवीसं, तस्सद्धं तद्दलं च चत्तारि ।
तिण्णि य अद्धट्ठाइज्जं, ओयणया तह कमे गाढं ॥३६३॥

५० । २५ $\frac{1}{2}$ । १२ $\frac{1}{2}$ । ६ $\frac{1}{4}$ । ४ । ३ । २ $\frac{1}{2}$ ।

अर्थ—उपर्युक्त आदिम प्राकारका अवगाढ (नींव) क्रमशः पचास, पच्चीस, उसका आधा (१२$\frac{1}{2}$ यो०), उसका भी आधा (६$\frac{1}{4}$ यो०), चार, तीन और अढ़ाई (२$\frac{1}{2}$) योजन प्रमाण है ॥३६३॥

जं गाढस्स पमाणं, तं चिय बहलत्तणं पि णादव्वं ।
आदिम - पायारस्स य, कमसोयं पुव्व - ठाणेसुं ॥३६४॥

अर्थ—पूर्वोक्त स्थानोंमें जो आदिम प्राकारके अवगाढका प्रमाण है, वही क्रमशः उसका बाहल्य भी जानना चाहिए ॥३६४॥

गोपुर द्वारोंका प्रमाण आदि—

सक्क-दुगे चत्तारो, तह तिण्णि सणक्कुमार-इंद-दुगे ।
बम्हिंदे दोण्णि सया, आदिम-पायार-गोउर-दुवारं ॥३६५॥

४०० । ३०० । २००

इगिसट्ठी अहिय-सयं, चालीसुत्तर-सयं सयं वीसं ।
ते लंतवादि - तिये, सयमेक्कं आणदादि - इंदेसु ॥३६६॥

[1]१६१ । १४० । १२० । १०० ।

अर्थ—आदिम प्राकारोंके गोपुर-द्वार सौधर्मैशानमें चार-चार सौ (४००), सानत्कुमार-माहेन्द्रमें तीन-तीन सौ (३००), ब्रह्मकल्पमें दो सौ (२००), लान्तवकल्पमें एक सौ इकसठ (१६१), महाशुक्रमें एक सौ चालीस (१४०), सहस्रारमें एक सौ बीस (१२०) और आनत आदि इन्द्रोंमें एक-एक सौ (१००-१००) हैं ॥३६५-३६६॥

चत्तारि तिण्णि दोण्णि य, सयाणि सयमेक्क सट्ठि-संजुत्तं ।
चालीस - जुदेक्क - सयं, वीसब्भहियं सयं एक्कं ॥३६७॥

४०० । ३०० । २०० । १६० । १४० । १२० । १०० ।

नोट—गा० ३६७ के अनुसार गा० ३६६ में १६१ के स्थान पर प्रमाण १६० ही होना चाहिए।

एवाह जोयणाइं, गोउर-दाराण होइ उच्छेहो ।
सोहम्म - प्पहुदीसुं, पुव्वोदिद - सत्त - ठाणेसुं ॥३६८॥

अर्थ—सौधर्मादि पूर्वोक्त सात स्थानोंमें गोपुर-द्वारोंका उत्सेध क्रमशः चार सौ, तीन सौ, दो सौ, एक सौ साठ, एक सौ चालीस, एक सौ बीस और एक सौ योजन प्रमाण है ॥३६७-३६८॥

एक्क-सय-गाउदि-सीदी-सत्तरि-पण्णास-चास-तीस-कमा ।
जोयणया वित्थारो, गोउर - दाराण पत्तेक्कं ॥३६९॥

१०० । ९० । ८० । ७० । ५० । ४० । ३० ।

अर्थ—उपर्युक्त स्थानोंमें गोपुर-द्वारोंमेंसे प्रत्येकका विस्तार क्रमशः एकसौ, नब्बे, अस्सी, सत्तर, पचास, चालीस और तीस योजन प्रमाण है ॥३६९॥

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

क्रमांक	स्थानोंके नाम	राजांगणोंका (नगरों का) विस्तार गा० ३५८-३५९	प्राकारों (कोट) का विवरण			गोपुर द्वारोंका प्रमाणादि		
			उत्सेध गा. ३६१-३६२	अवगाढ़ (नींव) गा० ३६३	बाहल्य गा० ३६४	प्रमाण गा० ३६५-३६६	उत्सेध गा० ३६७-३६८	विस्तार गा० ३६९
१	सौधर्म	८४०००० योजन	३०० यो०	५० योजन	५० योजन	४००	४०० योजन	१०० यो०
२	ईशान	८०००० ,,	३०० ,,	५० ,,	५० ,,	४००	४०० ,,	१०० ,,
३	सानत्कुमार	७२०००० ,,	२५० ,,	२५ ,,	२५ ,,	३००	३०० ,,	९० ,,
४	माहेन्द्र	७०००० ,,	२५० ,,	२५ ,,	२५ ,,	३००	३०० ,,	९० ,,
५	ब्रह्म	६०००० ,,	२०० ,,	१२½ ,,	१२½ ,,	२००	२०० ,,	८० ,,
६	लान्तव	५०००० ,,	१५० ,,	६¼ ,,	६¼ ,,	१६१	१६० ,,	७० ,,
७	महाशुक्र	४०००० ,,	१२० ,,	४ ,,	४ ,,	१४०	१४० ,,	५० ,,
८	सहस्रार	३०००० ,,	१०० ,,	३ ,,	३ ,,	१२०	१२० ,,	४० ,,
९	आनतादि ४	२०००० ,,	८० ,,	२½ ,,	२½ ,,	१००	१०० ,,	३० ,,

राजांगणके मध्य स्थित प्रासादोंका विवेचन—

रायंगण - बहुमज्झे, एक्केक्क-पहाण-दिव्व-पासादा ।
एक्केक्कस्सि इंदे, णिय-णिय-इंदाण णाम - समा ॥३७०॥

अर्थ—राजांगणके बहुमध्य भागमें एक-एक इन्द्रका अपने-अपने नामके सदृश एक-एक प्रधान दिव्य प्रासाद है ॥३७०॥

झुव्वंत-धय-वडाया, मुत्ताहल-हेम-दाम-कमणिज्जा ।
वर-रयण-मत्तवारण-णाणाविह-सालभंजियाभरणा ॥३७१॥
विप्पंत-रयण-दीवा, वज्ज-कवाडेहिं सुंदर-दुवारा ।
दिव्व-वर-धूव-सुरही, सेज्जासण-पहुदि-परिपुण्णा ॥३७२॥
सत्तट्ठ-णव-दसविध-विचित्त-भूमीहिं भूसिदा सव्वे ।
बहुरयण - रयण - खचिदा, सोहंते सासय - सरूवा ॥३७३॥

अर्थ—सब प्रासाद फहराती हुई ध्वजा पताकाओं सहित मुक्ताफलों एवं सुवर्णकी मालाओंसे रमणीक, उत्तम रत्नमय मत्तवारणोंसे संयुक्त, आभरण युक्त नाना प्रकारकी पुतलियों सहित, चमकते हुए रत्न-दीपकोंसे सुशोभित, वज्रमय कपाटोंसे, सुन्दर द्वारोंवाले, दिव्य उत्तम धूपसे सुगन्धित, शय्या एवं आसन आदिसे परिपूर्ण और सात, आठ, नौ तथा दस आदि अद्भुत भूमियोंसे भूषित हैं। शाश्वत स्वरूपसे युक्त ये प्रासाद नाना रत्नोंसे खचित होते हुए शोभायमान हैं ॥३७१-३७३॥

प्रासादोंके उत्सेधादिका कथन—

छस्सय-पंच-सयाणि, पणुत्तर-अउ-सयाणि उच्छेहो ।
एदाणं सक्क - दुगे, दु[1]-इंद-जुगलम्मि बम्हिंदे[2] ॥३७४॥

६०० । ५०० । ४००

चत्तारि-सय पणुत्तर-तिण्णि-सया केवला य तिण्णि सया ।
सो संतंबिंद-तिदए, आणद - पहुदीसु दु-सय-पण्णासा ॥३७५॥

४०० । ३५० । ३०० । २५० ।

अर्थ—सौधर्मेशान (सौधर्म और ऐशान), सानत्कुमार-माहेन्द्र युगल और ब्रह्मेन्द्रके इन प्रासादोंका उत्सेध क्रमशः छह सौ (६००), पाँच सौ (५००) और चार सौ पचास (४५०) योजन प्रमाण

---

१. द. ब. ब. ठ. दुइंदजुगलम्मि, क. दुदजुगलम्मि । २. द. बम्हिंदे वा ।

है। वह प्रासादोंका उत्सेध लान्तवेन्द्र आदि तीनके क्रमशः चार सौ (४००) तीन सौ पचास (३५०) और केवल तीन सौ (३००) तथा आनतेन्द्र आदिकोंके दो सौ पचास (२५०) योजन प्रमाण है ॥३७४-३७५॥

एदाणं वित्थारा, णिय-णिय-उच्छेह-पंचम-विभागा।
वित्थारद्धं बाहं, पत्तेक्कं सव्व - पासादे ॥३७६॥

अर्थ—इन प्रासादोंका विस्तार अपने-अपने उत्सेधके पाँचवें भाग (१२०, १०० ९०, ८०, ७०, ६० और ५० योजन) प्रमाण है तथा प्रत्येक प्रासादका अवगाह विस्तारसे आधा (६०, ५०, ४५, ४०, ३५, ३० और २५ योजन प्रमाण) है ॥३७६॥

सिंहासन एवं इन्द्रोंका कथन—

पासादाणं मज्झे, सपाद - पीढा [1]अकट्टिमायारा।
सिंहासणा विसाला, वर - रयणमया विरायंति ॥३७७॥

अर्थ—प्रासादोंके मध्यमें पादपीठ सहित, अकृत्रिम, विशाल आकारवाले और उत्तम रत्नमय सिंहासन विराजमान हैं ॥३७७॥

सिंहासणाण सोहा, जा एदाणं विचित्त - रूवाणं।
ण य सक्का वोत्तुं [2]मे, पुण्ण-फलं[3] एत्थ पच्चक्खं ॥३७८॥

अर्थ—अद्भुत रूपवाले इन सिंहासनोंकी जो शोभा है, उसका कथन करनेमें मैं समर्थ नहीं हूँ। यहाँ पुण्यका फल प्रत्यक्ष है ॥३७८॥

सिंहासणमारूढा, सोलस-वर - भूसणेहि सोहिल्ला।
सम्मत्त - रयण - सुद्धा, सव्वे इंदा विरायंति ॥३७९॥

अर्थ—सिंहासनपर आरूढ, सोलह उत्तम आभूषणोंसे शोभायमान और सम्यग्दर्शनरूपी रत्नसे शुद्ध सब इन्द्र विराजमान हैं ॥३७९॥

पुव्वज्जिदाहि सुचरिद - कोडीहि संचिदाए लच्छीए।
सक्कादीणं उवमा, का दिज्जइ विदियमाणाए ॥३८०॥

अर्थ—पूर्वोपार्जित करोड़ों सुचरित्रोंसे प्राप्त हुई शक्रादिकोंकी अनुपम लक्ष्मीको कौन सी उपमा दी जाय ? ॥३८०॥

---

१. ब. अ. क. ज. ठ. अकट्टिमायार। २. द. क. क. ज. ठ. मे। ३. द. य. क. ज. ठ पदं।

देवीहिं परिवेहि, सामाणिय - पहुदि-देव - संघेहि ।
सेविज्जंते णिच्चं, इंदा वर - छत्त - चमर-धारीहि ॥३८१॥

अर्थ—उत्तम छत्रों एवं चमरोंको धारण करनेवाली देवियों, प्रतीन्द्रों और सामानिक आदि देव-समूहोंके द्वारा इन्द्रोंकी नित्य ही सेवा की जाती है ॥३८१॥

प्रत्येक इन्द्रकी समस्त देवियोंका प्रमाण—

सट्ठि-सहस्सब्भहियं, एक्कं लक्खं हवंति पत्तेक्कं ।
सोहम्मीसाणिंदे, अट्ठट्ठगा अग्ग - देवीओ ॥३८२॥

१६०००।८।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके एक लाख साठ हजार (१६००००) देवियाँ तथा आठ अग्र-देवियाँ होती हैं ॥३८२॥

विशेषार्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रोंमेंसे प्रत्येक इन्द्रकी अग्र देवियाँ ८ हैं और वल्लभा ३२००० हैं तथा प्रत्येक अग्र देवीकी १६००० परिवार देवियाँ होती हैं। इसप्रकार सौधर्म अथवा ईशान इन्द्रकी समस्त देवियाँ—१६००००=(८ × १६०००) + ३२००० हैं।

इसीप्रकार सर्वत्र जानना चाहिए।

अग्ग-महिसीओ अट्ठं माहिंद-सणक्कुमार-इंदाणं ।
बाहत्तरि सहस्सा, देवीओ होंति पत्तेक्कं ॥३८३॥

८।७२०००।

अर्थ—सानत्कुमार और माहेन्द्र इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके आठ अग्र-महिषियाँ तथा बहत्तर हजार (७२०००) देवियाँ होती हैं ॥३८३॥

७२०००=(अग्र० ८ × ८००० परिवार देवियाँ) + ८००० वल्लभा।

अग्ग-महिसीओ अट्ठ य, चोत्तीस-सहस्सयाणि देवीओ ।
णिरुवम - लावण्णाओ, सोहंते बम्ह - कप्पिंदे ॥३८४॥

८।३४०००।

अर्थ—ब्रह्मकल्पेन्द्रके अनुपम लावण्यवाली आठ अग्र-महिषियाँ और चौंतीस हजार (३४०००) देवियाँ शोभायमान हैं ॥३८४॥

३४०००=(अग्र० ८ × ४००० परिवार देवियाँ) + २००० वल्लभा।

सोलस-सहस्स-पण-सय-देवीओ अट्ठ अग्ग-महिसीओ ।
लंतव - इंदम्मि पुढं, णिरुवम - रूवाओ रेहंति ॥३८५॥

८ । १६५०० ।

अर्थ – लान्तवेन्द्रके अनुपम रूपवाली सोलह हजार पाँच सौ (१६५००) देवियाँ और आठ अग्र-महिषियाँ शोभायमान हैं ॥३८५॥

१६५००=(अग्र० ८ × २००० परिवार देवियाँ) + ५०० वल्लभा ।

अट्ठ-सहस्सा दु-सया, पण्णब्भहिया हुवंति देवीओ ।
अग्ग-महिसीओ अट्ठ य, रूवसा महसुक्क - इंदम्मि ॥३८६॥

८ । ८२५० ।

अर्थ—महाशुक्र इन्द्रके आठ हजार दो सौ पचास (८२५०) देवियाँ और आठ अग्र महिषियाँ होती हैं ॥३८६॥

८२५०=(अग्र० ८ × १००० परिवार देवियाँ)+२५० वल्लभा ।

चत्तारि-सहस्साइं, एक्क-सयं पंचवीस - अब्भहियं ।
देवीओ अट्ठ जेट्ठा, होंति सहस्सार - इंदम्मि ॥३८७॥

८ । ४१२५ ।

अर्थ – सहस्रार इन्द्रके चार हजार एक सौ पच्चीस (४१२५) देवियाँ और आठ ज्येष्ठ देवियाँ होती हैं ॥३८७॥

४१२५=(अग्र० ८ × ५०० परिवार देवियाँ)+१२५ वल्लभा ।

आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-इंदेसु अट्ठ जेट्ठाओ ।
पत्तेक्कं दु - सहस्सा, तेसट्ठी होंति देवीओ ॥३८८॥

८ । २०६३ ।

अर्थ—आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन्द्रोंमेंसे प्रत्येकके आठ अग्र-महिषियाँ और दो हजार तिरेसठ (२०६३) देवियाँ होती हैं ॥३८८॥

२०६३=(अग्र० ८ × २५० परिवार देवियाँ)+६३ वल्लभा ।

मतान्तरसे सौधर्मेन्द्रकी देवियोंका प्रमाण—

छं-अट्ठ-महट्ठ-चुग-दुगि-अट्ठय-छस्सत्त-सचक - देवीओ ।
लोयविणिच्छि - अंथे, हुवंति सेसेसु पुव्वं व ॥३८९॥

७६८१२८००० ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—शून्य, शून्य, शून्य, आठ, दो, एक, आठ, छह और सात, इन अंकोंके प्रमाण सौधर्म इन्द्रके (७६८१२८०००) देवियाँ होती हैं। शेष इन्द्रोंमें देवियोंका प्रमाण पहलेके ही सदृश है, ऐसा लोकविनिश्चय ग्रन्थमें निर्दिष्ट है ॥३८९॥

पाठान्तर।

मतान्तरसे सौधर्मेन्द्रकी देवियोंका प्रमाण—

सगवीसं कोडीओ, सोहम्मिंदेसु होंति देवीओ।
पुव्वं पि च सेसेसुं, संगाहणियम्मि णिद्दिट्ठं ॥३९०॥

पाठान्तरम्।

२७०००००००।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके सत्तावीस करोड़ (२७००००००००) और शेष इन्द्रोंके पूर्वोक्त संख्या प्रमाण देवियाँ होती हैं, ऐसा संग्रहणिमें निर्दिष्ट है ॥३९०॥

इन्द्रोंकी सेवा-विधि—

माया-विवज्जिदाओ, बहु-रदि-करणेसु णिउण-बुद्धीओ।
ओसग्गंते णिच्चं, णिय - णिय - इंदाण चलणाइं ॥३९१॥

अर्थ—मायासे रहित और बहुत अनुराग करनेमें निपुण बुद्धिवाली वे देवियाँ नित्य अपने-अपने इन्द्रोंके चरणोंकी सेवा करती हैं ॥३९१॥

अब्भंतर-चिलाद-खुज्जय-कम्मंतिय-दास-दासि-पहुदीओ।
अंतउर - जोग्गाओ, चेट्ठंति विचित्त - वेसाओ ॥३९२॥

अर्थ—अन्तःपुरके योग्य बर्बर, किरात, कुब्जक, कर्मान्तिक और दास-दासी आदि अनेक प्रकारके (विचित्र) वेषों से युक्त स्थित रहते हैं ॥३९२॥

इंदाणं [1]अत्थाणे, पीढाणीयस्स अहिवई देवा।
रयणासणाणि देंति हु, सपाद - पीढाणि बहुगाणि ॥३९३॥

अर्थ— -इन्द्रों के आस्थान में पीठानीक के अधिपति देव पादपीठ सहित बहुत से रत्नमय आसन देते हैं ॥३९३॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. अत्थाणं।

जं जस्स ओग्गमुच्चं, णिच्चं णियडं विदूरभासणयं ।
तं[1] तस्स देंति देवा, आसूणं सू - विभागाइं ॥३९४॥

अर्थ— —स्थान के विभागों को जानकर जो जिसके योग्य होता है, देव उसे वैसा ही ऊँचा या नीचा तथा निकटवर्ती अथवा दूरवर्ती आसन देते हैं ॥३९४॥

वर-रयण-दंड-हत्था, पडिहारा होंति इंद-अट्ठाणे ।
पत्थावमपत्थावं, [2]ओलग्गंताण घोसंति ॥३९५॥

अर्थ—इन्द्रके आस्थान (सभा) में उत्तम रत्नदण्डको हाथमें लिए हुए जो द्वारपाल होते हैं वे सेवकोंके लिए प्रस्तुत एवं अप्रस्तुत कार्यकी घोषणा करते हैं ॥३९५॥

अवरे वि सुरा सेसि, णाणाविह-पेसणाणि कुव्वमाणा ।
इंदाण भत्ति - भरिदा, आणं सिरसा पडिच्छंति ॥३९६॥

अर्थ—उनके नानाप्रकारके कार्योंको करनेवाले भक्तिसे भरे हुए इतर देव भी उन इन्द्रोंकी आज्ञाको शिरसे ग्रहण करते हैं ॥३९६॥

पडिइंदादी देवा, णिब्भर - भत्तीए णिच्चमोलग्गं ।
अभिमुह - ठिदा सभाए, णिय-णिय-इंदाण कुव्वंति ॥३९७॥

अर्थ—प्रतीन्द्रादिक देव अत्यन्त भक्तिसे सभामें अभिमुख स्थित होकर अपने-अपने इन्द्रोंकी नित्य सेवा करते हैं ॥३९७॥

पुव्वं ओलग्ग-सभा, सक्कीसाण जारिसा भणिदा ।
तारिसया सव्वाणं, णिय - णिय - णयरेसु इंदाणं ॥३९८॥

अर्थ—पूर्वमें सौधर्म और ईशान इन्द्रकी जैसी ओलग्गसभा (सेवकशाला) कही है, वैसी अपने-अपने नगरोंमें सब इन्द्रोंके होती है ॥३९८॥

प्रधान प्रासादके अतिरिक्त इन्द्रोंके अन्य चार प्रासाद—

इंद-प्पहाण-पासाद-पुव्व-विभाग-पहुवि - संठाणा ।
चत्तारो पासादा, पुव्वोदिद - वण्णणोहि जुदा ॥३९९॥

अर्थ—इन्द्रोंके प्रधान प्रासादके पूर्व-दिशाभाग-आदिमें स्थित और पूर्वोक्त वर्णनोंसे युक्त चार प्रासाद (और) होते हैं ॥३९९॥

---

१ क. तं तस्स देवाणा काडूणं । २. द. ब. क. ज. ठ. ओलग्गताणं ठ ।

वेरुलिय-रजद-लोका, मिसयकसारं च दक्खिणिंदेसुं ।
रुचकं मंदर - लोका, सत्तच्छदयं च उत्तरिंदेसुं ॥४००॥

अर्थ—दक्षिण इन्द्रोंमें वैडूर्य, रजत, प्रलोक और मृषत्कसार तथा उत्तर इन्द्रोंमें रुचक, मन्दर प्रलोक और सप्तच्छद, ये चार प्रासाद होते हैं ॥४००॥

इन्द्र-प्रासादोंके आगे स्थित स्तम्भोंका वर्णन—

सक्कीसाण-गिहाणं, पुरदो छत्तीस - जोयणुच्छेहा ।
जोयण-बहला-खंभा,[1] बारस-धारा[2] हुवंति वज्जमया ॥४०१॥

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रके प्रासादोंके आगे छत्तीस योजन ऊँचे और एक योजन बाहल्य सहित वज्रमय बारह धाराओंवाले खम्भा (स्तम्भ) होते हैं ॥४०१॥

पत्तेक्क धाराणं,[3] वासो एक्केक्क - कोस[4]-परिमाणं ।
माणत्थंभ[5] - सरिच्छं, सेसत्थंभाण वण्णणयं ॥४०२॥

अर्थ—उन धाराओंमें प्रत्येक धाराका व्यास एक-एक कोस प्रमाण है। स्तम्भोंका शेष वर्णन मानस्तम्भोंके सदृश है ॥४०२॥

भरहेरावद-मूगद - तित्थयर - बालयाणाभरणाणं[6] ।
वर - रयण - करंडेहिं, लंबंतेहिं विरायंते ॥४०३॥

अर्थ—(ये स्तम्भ) भरत और ऐरावत भूमिके तीर्थंकर बालकोंके आभरणोंके लटकते हुए उत्तम रत्नमय पिटारोंसे विराजमान हैं ॥४०३॥

मूलाबो उवरि-तले, पुह पुह पणुवीस-कोस-परिमाणा ।
गंतूणं सिहराबो, तेत्तियमोदरिय होंति हु करंडा ॥४०४॥

२५ । २५ ।

अर्थ—(स्तम्भोंके) मूलसे उपरिम तलमें पृथक्-पृथक् पच्चीस कोस (६¼ यो०) प्रमाण जाकर और शिखरसे इतने (२५ कोस) ही उतर कर ये करण्ड (पिटारे) होते हैं ॥४०४॥

पंच-सय-चाव-तुंगा, पत्तेक्कं एक्क-कोस-वीहल्ला ।
ते होंति वर - करंडा, णाणा-वर-रयण-रासिमया ॥४०५॥

---

१. द. क्रमा। २. द. ब. क. ज. ठ. धारा। ३. द. ब. क. ज. ठ. धाराणं। ४. ब. कोसा। ५. द ब. क. ज. ठ. माणत्थं भ। ६. द. ब. क. ज ठ बालयाणाभरणाणं।

५०० । को १ ।

अर्थ—अनेक उत्तम रत्नोंकी राशि स्वरूप उन श्रेष्ठ करण्डोंमेंसे प्रत्येक पाँच सौ (५००) धनुष विस्तृत और एक कोस लम्बा होता है ॥४०५॥

ते संकेज्जा सव्वे, लंबंता रयण - सिक्क - जालेसुं ।
सक्कादि-पूजणिज्जा, अणादिणिहणा महा - रम्मा ॥४०६॥

अर्थ—रत्नमय सींकोंके समूहोंमें लटकते हुए वे सब संख्यात करण्ड शक्रादिसे पूजनीय, अनादि-निधन और महा रमणीय होते हैं ॥४०६॥

आभरणा पुव्वावर-विदेह-तित्थयर-बालयाणं च ।
थंभोवरि चेट्ठंते, भवणेसु सणक्कुमार - जुगलस्स ॥४०७॥

अर्थ—सनत्कुमार और माहेन्द्रके भवनोंमें स्तम्भों पर पूर्व एवं पश्चिम विदेह सम्बंधी तीर्थंकर बालकोंके आभरण स्थित होते हैं ॥४०७॥

विशेषार्थ—स्तम्भोंकी ऊँचाई ३६ योजन है। इनमें मूलसे ६½ योजन पर्यन्त उपरिम भागमें और शिखरसे ६½ यो० नीचेके भागमें करण्ड नहीं हैं। प्रत्येक करण्ड २००० धनुष (१ कोस) विस्तृत और ५०० धनुष (¼ कोस) लम्बा है। ये रत्नमयी सींकोंपर लटकते हैं। सौधर्मकल्पमें स्थित स्तम्भ पर स्थापित करण्डोंके आभरण भरतक्षेत्र सम्बन्धी बाल तीर्थंकरोंके लिए हैं। ईशान कल्प स्थित स्तम्भपर स्थापित करण्डोंके आभरण ऐरावतक्षेत्र सम्बंधी बाल तीर्थंकरोंके लिए हैं। इसीप्रकार सानत्कुमार कल्पगत पूर्वविदेह क्षेत्र सम्बन्धी बाल-तीर्थंकरों के लिये और माहेन्द्र कल्पगत करण्डोंके आभरण पश्चिम विदेह क्षेत्र सम्बंधी बाल-तीर्थंकरोंके लिए होते हैं।

इन्द्र-भवनोंके सामने न्यग्रोध वृक्ष—

सयलिंद - मंदिराणं, पुरदो णग्गोह - पायवा होंति ।
एक्केक्कं पुढविमया, पुव्वोदिद-जंबु - दुम - सरिसा ॥४०८॥

अर्थ—समस्त इन्द्र-प्रासादों (या भवनों) के आगे न्यग्रोध वृक्ष होते हैं। इनमें एक-एक वृक्ष पृथिवी स्वरूप और पूर्वोक्त जम्बू वृक्षके सदृश होता है ॥४०८॥

तम्मूले एक्केक्का, जिणिंद-पडिमा य पडिदिसं होंति ।
सक्कादि-णमिद-चलणा, सुमरण-मेत्ते वि दुरिद-हरा ॥४०९॥

अर्थ—इसके मूलमें प्रत्येक दिशामें एक-एक जिनेन्द्र-प्रतिमा होती है। जिसके चरणोंमें इन्द्र आदिक प्रणाम करते हैं तथा जो स्मरण मात्रसे ही पापको हरनेवाली है ॥४०९॥

सुधर्मा सभा—

सक्कस्स मंदिरादो, ईसाण-दिसे सुधम्म-णाम-सभा ।
ति-सहस्स-कोस-उदया, चउ-सय-दीहा तदद्ध-वित्थारा ॥४१०॥

३००० । ४०० । २०० ।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके भवनसे ईशान दिशामें तीन हजार (३०००) कोस ऊँची, चार सौ (४००) कोस लम्बी और इससे आधे अर्थात् २०० कोस विस्तारवाली सुधर्मा नामक सभा है ॥४१०॥

नोट—सुधर्मासभाकी ऊँचाई ३०० कोस होनी चाहिए, क्योंकि अकृत्रिम मापोंमें ऊँचाई का प्रमाण प्रायः लम्बाई+चौड़ाई होता है ।
२

तिये दुवारुच्छेहा, कोसा चउसट्ठि तद्दलं रुंदो ।
सेसाओ वण्णणाओ, सक्क - प्पासाद - सरिसाओ ॥४११॥

६४ । ३२ ।

अर्थ—सुधर्मा सभाके द्वारोंकी ऊँचाई चौंसठ (६४) कोस और विस्तार इससे आधा अर्थात् ३२ कोस है । शेष वर्णन सौधर्म इन्द्रके प्रासाद सदृश है ॥४११॥

रम्माए सुधम्माए, विविह-विणोदेहि कीडदे सक्को ।
बहुविह-परिवार-जुदो, भुंजंतो विविह-सोक्खाणि ॥४१२॥

अर्थ—इस रमणीय सुधर्मा सभामें बहुत प्रकारके परिवारसे युक्त सौधर्म इन्द्र विविध सुखोंको भोगता हुआ अनेक विनोदोंसे क्रीड़ा करता है ॥४१२॥

उपपाद सभा—

तत्थेसाण-दिसाए, उववाद-सभा हुवेदि पुव्व-समा ।
दिप्पंत[1]-रयण - सेज्जा, विण्णास-विसेस-सोहिल्ला ॥४१३॥

अर्थ—वहाँ ईशान दिशामें पूर्वके सदृश उपपाद सभा है । यह सभा देदीप्यमान रत्न-शय्याओं सहित विन्यास-विशेषसे शोभायमान है ॥४१३॥

जिनेन्द्र-प्रासाद—

तीए दिसाए चेट्ठदि, वर-रयणमओ जिणिंद-पासादो ।
पुव्व-सरिच्छो महवा, पंडुग - जिणभवण - सारिच्छो ॥४१४॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. दिप्पंत ।

अर्थ—उसी दिशामें पूर्वके सदृश अथवा पाण्डुक वन सम्बंधी जिनभवनके सदृश उत्तम रत्नमय जिनेन्द्र-प्रासाद हैं ॥४१४॥

अड-जोयण-उच्चिट्ठो, तेत्तिय-वासो हवंति पत्तेक्कं ।
सेसिंदे पासादा, सेसो पुव्वं व विण्णासो ॥४१५॥

८ । ८ ।

अर्थ—शेष इन्द्रोंके प्रासादोंमेंसे प्रत्येक आठ (८) योजन ऊँचा और इतने (८ यो०) ही विस्तार सहित है । शेष विन्यास पहलेके ही सदृश है ॥४१५॥

देवियों और वल्लभाओंके भवनोंका विवेचन—

इंद - पासादाणं, समंतदो होंति दिव्व - पासादा ।
देवी - वल्लहियाणं, णाणावर - रयण - कणयमया ॥४१६॥

अर्थ—इन्द्र-प्रासादोंके चारों ओर देवियों और वल्लभाओंके नाना उत्तम रत्नमय एवं स्वर्णमय दिव्य प्रासाद हैं ॥४१६॥

देवी-भवणुच्छेहा, सक्क-दुगे जोयणाणि पंच-सया ।
माहिंद - दुगे पण्णभहियाणि चउ - सयाणि पि ॥४१७॥

५०० । ४५० ।

अर्थ—सौधर्म और ईशान इन्द्रकी देवियोंके भवनोंकी ऊँचाई पाँच सौ (५००) योजन तथा सानत्कुमार एवं माहेन्द्र इन्द्रकी देवियोंके भवनोंकी ऊँचाई चार सौ पचास (४५०) योजन है ॥४१७॥

बम्हिद - लंतविंदे, महसुक्किंदे सहस्सयारिंदे ।
आणद-पहुदि-चउक्के, कमसो पण्णास - हीणाणि ॥४१८॥

४०० । ३५० । ३०० । २५० । २०० ।

अर्थ—ब्रह्मेन्द्र, लान्तवेन्द्र, महाशुक्रेन्द्र, सहस्रारेन्द्र और आनत आदि चार इन्द्रोंकी देवियोंके भवनोंकी ऊँचाई क्रमशः पचास-पचास योजन कम है । अर्थात् क्रमशः ४०० यो०, ३५० यो०, ३०० यो०, २५० यो० और २०० योजन है ॥४१८॥

देवी - पुर-उवयारो, वल्लभिया-मंदिराण-उच्छेहो ।
सव्वेसुं इंदेसुं, जोयण - बीसाहिओ होदि ॥४१९॥

अर्थ – सब इन्द्रोंमें अग्रमाओंके मन्दिरोंका उत्सेध देवियोंके पुरोंके उत्सेधसे बीस योजन अधिक है ।।४१९।।

उच्छेह - दसम - भागे, एवाणं मंदिरेसु विक्खंभा ।
विक्खंभ - दुगुण - दीहं, वासद्धं पि गाढत्तं ।।४२०।।

अर्थ—इनके मन्दिरोंका विष्कम्भ उत्सेधके दसवें भाग प्रमाण, दीर्घता विष्कम्भसे दूनी और अवगाढ़ व्याससे आधा है ।।४२०।।

सव्वेसु मंदिरेसुं, उववण - संडाणि होंति दिव्वाणि ।
सव्व-उडु-जोग-पल्लव-फल-कुसुम-विभूदि-भरिदाणि ।।४२१।।

अर्थ—सब मन्दिरोंमें समस्त ऋतुओंके योग्य पत्र, फूल और कुसुमरूप विभूतिसे परिपूर्ण दिव्य उपवन खण्ड होते हैं ।।४२१।।

पोक्खरणी-वावीओ, सच्छ-जलाओ विचित्त-रूवाओ ।
पुप्फिद - कमल - वणाओ, एक्केक्के मंदिरे होंति ।।४२२।।

अर्थ—एक-एक मन्दिरमें स्वच्छ जलसे परिपूर्ण, विचित्ररूपवाली और पुष्पित कमलवनोंसे संयुक्त पुष्करिणी वापियाँ हैं ।।४२२।।

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

क्रमांक	इन्द्र-नाम	देविवोंके भवनोंकी				रत्नप्रभाके भवनोंकी			
		ऊँचाई गा० ४१७-४१८	विस्तार	लम्बाई	नींव	ऊँचाई गा. ४१९	चौड़ाई	लम्बाई	नींव
१	सौधर्मेन्द्र	५०० यो०	५० यो०	१०० यो०	२५ यो०	३२० यो०	३२ यो०	१०४ यो०	२६ यो०
२	ईशानेन्द्र	५०० ,,	५० ,,	१०० ,,	२५ ,,	३२० ,,	३२ ,,	१०४ ,,	२६ ,,
३	सानत्कुमारेन्द्र	४५० ,,	४५ ,,	९० ,,	२२½ ,,	४७० ,,	४७ ,,	९४ ,,	२३½ ,,
४	माहेन्द्र	४५० ,,	४५ ,,	९० ,,	२२½ ,,	४७० ,,	४७ ,,	९४ ,,	२३½ ,,
५	ब्रह्मेन्द्र	४०० ,,	४० ,,	८० ,,	२० ,,	४२० ,,	४२ ,,	८४ ,,	२१ ,,
६	लान्तवेन्द्र	३५० ,,	३५ ,,	७० ,,	१७½ ,,	३७० ,,	३७ ,,	७४ ,,	१८½ ,,
७	महाशुक्रेन्द्र	३०० ,,	३० ,,	६० ,,	१५ ,,	३२० ,,	३२ ,,	६४ ,,	१६ ,,
८	सहस्रारेन्द्र	२५० ,,	२५ ,,	५० ,,	१२½ ,,	२७० ,,	२७ ,,	५४ ,,	१३½ ,,
९	आनतादि ४	२०० ,,	२० ,,	४० ,,	१० ,,	२२० ,,	२२ ,,	४४ ,,	११ ,,

णाणाविह - तूरेहिं, णाणाविह-महुर-गीय-सद्देहिं ।
ललियमय[1]- णच्चणेहिं, सुर - णयराइं विराजंति ॥४२३॥

अर्थ—देवोंके नगर नाना प्रकारके तूर्यों (वादित्रों), अनेक प्रकारके मधुर गीत-शब्दों और विलासमय नृत्योंसे विराजमान हैं ॥४२३॥

द्वितीयादि वेदियोंका कथन—

आदिम-पायाराओ, तेरस - लक्खाणि जोयणे गंतुं[2] ।
चेट्ठेदि विदिय-वेदी, पढमा मिव सव्व - णयरेसुं ॥४२४॥

१३००००० ।

अर्थ—सब नगरोंमें आदिम प्राकार (कोट) से तेरह लाख (१३०००००) योजन जाकर प्रथम (कोट) के सदृश द्वितीय वेदी स्थित है ॥४२४॥

वेदीणं विच्चाले, णिय-णिय-सामी-सरीर-रक्खा य ।
चेट्ठंति सपरिवारा, पासादेसुं विचित्तेसुं ॥४२५॥

विदिय-वेदी गदा ।

अर्थ—वेदियोंके अन्तरालमें अद्भुत प्रासादोंमें सपरिवार अपने-अपने स्वामियोंके शरीर-रक्षक देव रहते हैं ॥४२५॥

द्वितीय वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

तेसट्ठी-लक्खाणि, पण्णास-सहस्स-जोयणाणि तदो ।
गंतूण तदिय - वेदी, पढमा मिव सव्व - णयरेसुं ॥४२६॥

६३५०००० ।

अर्थ—सब नगरोंमें इस (दूसरी वेदी) से आगे तिरेसठ लाख पचास हजार (६३५००००) योजन जाकर प्रथम (कोट) के सदृश तृतीय वेदी है ॥४२६॥

एदाणं विच्चाले, तिप्परिसाणं सुरा विचित्तेसुं ।
चेट्ठंति मंदिरेसुं, णिय - णिय - परिवार - संजुत्ता ॥४२७॥

तेदिय-वेदी गदा ।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. अलिय । २. द. ब. क. ज. ठ. जोयणे पंचु य, म. जोयणेपंचु य ।

अर्थ—इन वेदियोंके मध्य स्थित अद्भुत भवनोंमें अपने-अपने परिवारसे संयुक्त तीन परिषदोंके देव रहते हैं ।।४२७।।

तृतीय वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

सव्वेसोदो गच्छिय, चउसट्ठि-सहस्स-जोयणाणि च ।
चेट्ठेदि तुरिम-वेदी, पढमा - मिव सव्व - णयरेसुं ।।४२८।।

६४०००।

अर्थ—इस वेदीसे चौंसठ हजार (६४०००) योजन आगे जाकर सब नगरोंमें प्रथम वेदीके सदृश चतुर्थ वेदी स्थित है ।।४२८।।

एदाणं विच्चाले, वर-रयणमएसु दिव्व - भवणेसुं ।
सामाणिय-णाम सुरा, णिवसंते विविह् - परिवारा ।।४२९।।

तुरिम-वेदी गदा ।

अर्थ—इन वेदियोंके मध्यमें स्थित उत्तम रत्नमय दिव्य-भवनोंमें विविध परिवार सहित सामानिक नामक देव निवास करते हैं ।।४२९।।

चतुर्थ वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

चउसीदी - लक्खाणि, गंतूणं जोयणाणि तुरिमादो ।
चेट्ठेदि पंच - वेदी, पढमा मिव सव्व - णयरेसुं ।।४३०।।

८४००००० ।

अर्थ—चतुर्थ वेदीसे चौरासी लाख (८४०००००) योजन आगे जाकर सब नगरोंमें प्रथम वेदीके सदृश पंचम वेदी स्थित है ।।४३०।।

एदाणं विच्चाले, णिय-णिय-आरोहका अणीया य ।
अभियोगा किब्बिसिया, पइण्णया तह सुरा य तेत्तीसा ।।४३१।।

पंचम-वेदी गदा ।

अर्थ—इन वेदियोंके मध्यमें अपने-अपने आरोहक अनीक, आभियोग्य, किल्बिषिक, प्रकीर्णक तथा त्रायस्त्रिंश देव निवास करते हैं ।।४३१।।

पंचम वेदीका कथन समाप्त हुआ ।

उपवन-प्ररूपणा—

तप्परदो गंतूणं, पण्णास - सहस्स - जोयणाणं च ।
होंति हु दिव्व-वणाणि, इंद-पुराणं चउ - दिसासुं ॥४३२॥

अर्थ—इसके आगे पचास हजार (५००००) योजन जाकर इन्द्रोंमें नगरोंकी चारों दिशाओंमें दिव्य वन हैं ॥४३२॥

पुव्वादिसु ते कमसो, असोय-सत्तच्छदाण वण-संडा ।
चंपय-चूदाण तहा, पउम - दह - सरिस - परिमाणा ॥४३३॥

अर्थ—पूर्वादिक दिशाओंमें वे क्रमशः अशोक, सप्तच्छद, चम्पक और आम्र वृक्षोंके वन-खण्ड हैं ॥४३३॥

एक्केक्का चेत्त - तरू, तेसु असोयादि-णाम-संजुत्ता ।
जग्गोह-तरु-सरिच्छा, वर-चामर-छत्त-पहुदि-जुदा ॥४३४॥

अर्थ—उन वनोंमें अशोकादि नामोंसे संयुक्त और उत्तम चमर-छत्रादिसे युक्त न्यग्रोधतरुके सदृश एक-एक चैत्य-वृक्ष है ॥४३४॥

पोक्खरणी-वावीहिं, मणिमय-भवणेहिं[1] संजुदा विउला ।
सव्व-उदु-जोग्ग-पल्लव-कुसुम-फला भांति वण - संडा ॥४३५॥

अर्थ—पुष्करिणी, वापियों एवं मणिमय भवनोंसे संयुक्त तथा सब ऋतुओंके योग्य पत्र, कुसुम एवं फलोंसे परिपूर्ण (वे) विपुल वन-खण्ड शोभायमान हैं ॥४३५॥

लोकपालोंके क्रीड़ा-नगर—

संखेज्ज-जोयणाणि, पुह पुह गंतूण णंदण - वणादो ।
सोहम्मादि - दिणिंदाणं कीडण - णयराणि चेट्ठंति ॥४३६॥

अर्थ—नन्दन वनसे पृथक्-पृथक् संख्यात योजन जाकर सौधर्मादि इन्द्रोंके लोकपालोंके क्रीड़ा-नगर स्थित हैं ॥४३६॥

---

१. द. क. ज. ठ. भवणेहि ।

बारस-सहस्स-जोयण-बोहत्ता पण-सहस्स-विक्खंभा ।
पत्तेक्कं ते णयरा, वर - वेदी - पहुदि - कयसोहा ॥४३७॥

१२००० । ५००० ।

अर्थ—उत्तम वेदी आदिसे शोभायमान उन नगरोंमेंसे प्रत्येक बारह हजार (१२०००) योजन लम्बे और पांच हजार (५०००) योजन प्रमाण विस्तार सहित है ॥४३७॥

गणिका-महत्तरियोंके नगर—

गणिया-महत्तरीणं, समचउरस्सा पुरीओ विदिसासुं ।
एक्कं जोयण - लक्खं, पत्तेक्कं दीह - वास - जुदा ॥४३८॥

१००००० । १००००० ।

अर्थ—विदिशाओंमें गणिका-महत्तरियोंकी समचतुष्कोण नगरियां हैं । इनमेंसे प्रत्येक एक-एक लाख (१००००० , १०००००) योजन प्रमाण दीर्घता तथा विस्तारसे युक्त है ॥४३८॥

सव्वेसुं णयरेसुं, पासादा दिव्व-विविह-रयणमया ।
णच्चंत विचित्त-धया, विरुवम - सोहा विरायंति ॥४३९॥

अर्थ—सब नगरोंमें नाचती हुई विचित्र ध्वजाओंसे युक्त और अनुपम शोभाके धारक दिव्य विविध रत्नमय प्रासाद विराजमान हैं ॥४३९॥

जोयण-सय-बोहत्ता, ताणं पण्णास-मेत्त-वित्थारा ।
मुह - मंडव - पहुदीहिं, विविध - रूवेहिं संजुत्ता ॥४४०॥

अर्थ—ये प्रासाद एक सौ (१००) योजन दीर्घ, पचास (५०) योजन प्रमाण विस्तार सहित और विविध-रूप मुख-मण्डप आदिसे संयुक्त हैं ॥४४०॥

सौधर्मेन्द्र आदिके यान-विमानोंका विवरण—

वासुग-पुप्फग-णामा, याण-विमाणाणि सक्क-जुगलम्मि ।
सोमणसं सिरिवच्छं, सणक्कुमारिंद - जुगलम्मि ॥४४१॥

अर्थ—शक्र-युगल (सौधर्म एवं ईशान इन्द्र) के वालुग और पुष्पक नामक यान-विमान तथा सानत्कुमार आदि दो इन्द्रोंके सौमनस एवं श्रीवृक्ष नामक यान-विमान हैं ॥४४१॥

सव्वदोभद्दा ।
पीदिक[1]- रम्मक - णामा, मणोहरा होंति चत्तारि ॥४४२॥

अर्थ—ब्रह्मेन्द्र आदि चार इन्द्रोंके क्रमशः सर्वतोभद्र, प्रीतिक (प्रीतिंकर), रम्यक और मनोहर नामक चार यान-विमान होते हैं ॥४४२॥

आणद-पाणद-इंदे, लच्छी-मालिनि - णामओ होदि ।
आरण-कप्पिद-जुगे, याण - विमाणं विमल - णामं ॥४४३॥

अर्थ—आनत और प्राणत इन्द्रके लक्ष्मी-मालती नामक यान-विमान तथा आरण कल्पेन्द्र युगलमें विमल नामक यान-विमान होते हैं ॥४४३॥

सोहम्मादि-चउक्के, कमसो अवसेस-कप्प[2]-जुगलेसुं ।
होंति हु पुव्वुत्ताइं, याण - विमाणाणि पत्तेक्कं ॥४४४॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—सौधर्मादि चारमें और शेष कल्प-युगलोंमें क्रमशः प्रत्येकके पूर्वोक्त यान-विमान होते हैं ॥४४४॥

पाठान्तर ।

एक्कं जोयण - लक्खं, पत्तेक्कं दीह-वास-संजुत्ता ।
याण - विमाणा दुविहा, विकिरियाए सहावेणं ॥४४५॥

अर्थ—इनमेंसे प्रत्येक विमान एक लाख (१०००००) योजन प्रमाण दीर्घता एवं व्याससे संयुक्त हैं । ये विमान दो प्रकारके हैं, एक विक्रियासे उत्पन्न हुए और दूसरे स्वभावसे ॥४४५॥

ते विकिरिया-जादा, याणविमाणा विणासिणो होंति ।
अविणासिणो य णिच्चं, सहाव - जादा परम-रम्मा ॥४४६॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. पीदिकर । २. ब. क. ज. ठ. युग्म ।

अर्थ—विक्रियासे उत्पन्न हुए वे यान-विमान विनश्वर और स्वभावसे उत्पन्न हुए वे परम-रम्य यान-विमान नित्य एवं अविनश्वर होते हैं ।।४४६।।

पुव्वंत-सय-वडायाः विविहासण-सयण-पहुदि-परिपुण्णा ।
धूव - घडेहिं जुत्ता, चामर - घंटादि - कयसोहा ।।४४७।।

वंदण - माला - रम्मा, मुत्ताहल-हेम-दाम-रमणिज्जा ।
सुंदर - दुवार - सहिदा, वज्ज-कवाडुज्जला विरायंति ।।४४८।।

अर्थ—उपर्युक्त यान-विमान फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं सहित, विविध आसन एवं शय्या आदिसे परिपूर्ण, धूप-घटोंसे युक्त, चामर एवं घण्टादिकसे शोभायमान, वन्दन-मालाओंसे रमणीक, मुक्ताफल एवं सुवर्णकी मालाओंसे मनोहर, सुन्दर द्वारों सहित और वज्रमय कपाटोंसे उज्ज्वल होते हुए सुशोभित होते हैं ।।४४७-४४८।।

सव्वाइं भायणाइं, वत्थाभरणाइ - आइ दुविहाइं ।
होंति हु यान - विमाणे, विविकरियाए सहावेणं ।।४४९।।

अर्थ—यान-विमानमें सर्व भाजन (बर्तन), वस्त्र और आभरण आदिक (सो) विक्रिया तथा स्वभावसे दो प्रकारके होते हैं ।।४४९।।

विविकरिया जणिदाइं, विणास-कयाइं होंति सव्वाइं ।
वत्थाभरणादीया, सहाव - आदाणि णिच्चाणि ।।४५०।।

अर्थ—विक्रियासे उत्पन्न सब वस्त्राभरणादिक विनश्वर और स्वभावसे उत्पन्न हुए वे सभी नित्य होते हैं ।।४५०।।

इन्द्रोंके मुकुट-चिह्न—

सोहम्मादिसु अट्ठसु, आणव - पहुदीसु चउसु इंदाणं ।
सुअर-हरिणो-महिसा, [1]मच्छा भेकाहि-छगल-वसहा य ।।४५१।।

कप्प-तरु गयवेसु, सिंहाणि णय कमेण मणिवाहिं ।
एदेहिं ते इंदा, लक्खिज्जंते सुराण सव्वम्मि ।।४५२।।

---

१. ब. ब. मच्छो ।

अर्थ—सौधर्मादिक आठ और आनत आदि चार (८ + १ = ९) कल्पोंमें इन्द्रोंके मुकुटोंमें क्रमशः सूकर, हरिणी, महिष, मत्स्य, मेंढक, सर्प, छगल, वृषभ और कल्पतरु, ये नौ चिह्न कहे गये हैं। इन चिह्नोंसे देवोंके मध्यमें ये इन्द्र पहिचाने जाते हैं ॥४५१-४५२॥

इंदाणं चिण्हाणि, पत्तेक्कं ताव आ[1] सहस्सारं ।
आणद-आरण - जुवले, चोद्दस - ठाणेसु वोच्छामि ॥४५३॥

सूयर-हरिणी-महिसा, मच्छो कुम्मो य मेंढ-हय-हत्थी ।
चंदाहि-णवय-छगला, वसह-कप्पतरू[2] मउड-मज्झेसुं ॥४५४॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—सहस्रारकल्प पर्यन्त प्रत्येक इन्द्रके तथा आनत और आरण युगलमें इसप्रकार चौदह स्थानोंके चिह्न कहते हैं। सूकर, हरिणी, महिष, मत्स्य, कूर्म, मेंढक, अश्व, हाथी, चन्द्र, सर्प, नवय, छगल वृषभ और कल्पतरु ये चौदह चिह्न मुकुटोंके मध्यमें होते हैं ॥४५३-४५४॥

पाठान्तर ।

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिए]

१. ब. आव । २. ब. ब. क. ज. ठ. इसके स्थान पर द्वितीयचरण संदृष्ट ।

क्रमांक	इन्द्रोंके नाम	यान-विमानोंके नाम				इन्द्रोंके मुकुट-चिह्न					
		मूलसे गा० ४४१-४४३	स्थान १०	पाठान्तर गा० ४४४	स्थान १०	मूलसे गा० ४५१-४५३	स्थान ९	पाठान्तरसे क्रमांक	इन्द्र-नाम गा० ४५३	चिह्न गा० ४५४	स्थान १४
१	सौधर्मेन्द्र	बालुग	१	बालुग	१	शूकर	१	१	सौधर्मेन्द्र	शूकर	१
२	ईशानेन्द्र	पुष्पक	२	बालुग		हरिणी	२	२	ईशानेन्द्र	हरिणी	२
३	सानत्कुमारेन्द्र	सौमनस	३	पुष्पक	२	महिष	३	३	सानत्कुमार	महिष	३
४	माहेन्द्र	श्रीवृक्ष	४	पुष्पक		मत्स्य	४	४	माहेन्द्र	मत्स्य	४
५	ब्रह्मेन्द्र	सर्वतोभद्र	५	सौमनस	३	भेंढक	५	५	ब्रह्मेन्द्र	कूर्म	५
६	लान्तवेन्द्र	प्रीतिक	६	श्रीवृक्ष	४	सर्प	६	६	ब्रह्मोत्तरेन्द्र	भेंढक	६
७	महाशुक्रेन्द्र	रम्यक	७	सर्वतोभद्र	५	छगल	७	७	लान्तवेन्द्र	अश्व	७
८	सहस्रारेन्द्र	मनोहर	८	प्रीतिक	६	बैल	८	८	कापिष्टेन्द्र	हाथी	८
९	आनतेन्द्र	लक्ष्मीमा०	९	रम्यक	७	कल्पतरु	९	९	शुक्रेन्द्र	चन्द	९
१०	प्राणतेन्द्र	लक्ष्मीमा०		मनोहर	८	,,		१०	महाशुक्रेन्द्र	सर्प	१०
११	आरणेन्द्र	विमल	१०	लक्ष्मीमा०	९	,,		११	शतारेन्द्र	गरुड	११
१२	अच्युतेन्द्र	विमल		विमल	१०	,,		१२	सहस्रारेन्द्र	छगल	१२
								१३	आनतेंद्र-प्राणतेन्द्र	वृषभ	१३
								१४	आरणेंद्र-अच्युतेन्द्र	कल्पतरु	१४

अहमिन्द्रोंकी विशेषता —

इंदाणं परिवारा, पडिंद - पहुदी ण होंति कइया वि ।
अहमिंदाणं सप्पडिवाराहितो अणंत - सोक्खाणं ॥४५५॥

अर्थ—इन्द्रोंके प्रतीन्द्र आदि परिवार होते हैं। किन्तु सपरिवार इन्द्रोंकी अपेक्षा अनन्त सुखसे युक्त अहमिन्द्रोंके परिवार कदापि नहीं होते ॥४५५॥

उववाद-सभा विविहा, कप्पातीदाण होंति सव्वाणं ।
जिण-भवणा पासादा, णाणाविह-दिव्व-रयणमया ॥४५६॥
अभिसेय-सभा संगीय-पहुदि-सालाओ चित्त-रुक्खा य ।
देवीओ ण दीसंति, कप्पातीदेसु कइया वि[1] ॥४५७॥

अर्थ—सब कल्पातीतोंके विविध प्रकारकी उपपाद-सभायें, जिन-भवन, नाना प्रकारके दिव्य रत्नोंसे निर्मित प्रासाद, अभिषेक सभा, संगीत आदि शालायें और चैत्यवृक्ष भी होते हैं, परन्तु कल्पातीतोंके देवियां कदापि नहीं दीखतीं ॥४५६-४५७॥

गेहुच्छेहो दु - सया, पण्णट्ठभहियं सयं सयं सुद्धं ।
हेट्ठिम-मज्झिम - उवरिम - गेवेज्जेसुं कमा होंति ॥४५८॥

२०० । १५० । १०० ।

अर्थ– अधस्तन, मध्यम और उपरिम ग्रैवेयकोंमें प्रासादोंकी ऊँचाई क्रमशः दो सौ (२००), एक सौ पचास (१५०) और केवल सौ (१००) योजन है ॥४५८॥

भवणुच्छेह - पमाणं, अणुदिसणुत्तराभिधाणेसुं ।
पण्णासा जोयणया, कमसो पणुवीसमेत्ताणि ॥४५९॥

५० । २५ ।

अर्थ—अनुदिश और अनुत्तर नामक विमानोंमें भवनोंकी ऊँचाईका प्रमाण क्रमशः पचास (५०) और पच्चीस योजन है ॥४५९॥

उदयस्स पंचमंसा, वोहत्थं तद्दलं च वित्थारो ।
परोक्कं णादव्वा, कप्पातीदाण भवणेसुं ॥४६०॥

एवं इंद-विभूदि-पवण्णणा समत्ता ॥७॥

---

१. ब. क. आदि ।

अर्थ—कल्पातीतोंके भवनोंमें प्रत्येककी दीर्घता ऊँचाईके पाँचवें भाग और विस्तार उससे आधा समझना चाहिए ।।

इसप्रकार इन्द्र-विभूतिकी प्ररूपणा समाप्त हुई ।।७।।

प्रत्येक पटलमें देवोंकी आयुका कथन—

पढमे बिदिए जुगले, बम्हादिसु चउसु आणव-जुगम्मि ।
आरण - दुगे सुदंसण - पहुदिसु एक्कारसेसु कमे ।।४६१।।

दुग-सत्त-दसं चोद्दस-सोलस-अट्ठरस-वीस-बावीसा ।
तत्तो एक्केक्क-जुदा, उक्कस्साऊ समुद्द - उवमाणा ।।४६२।।

२ । ७ । १० । १४ । १६ । १८ । २० । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ ।
२९ । ३० । ३१ । ३२ । ३३ ।

अर्थ—प्रथम एवं द्वितीय युगल, ब्रह्मादिक चार युगल, आनत युगल, आरणयुगल और सुदर्शन आदि ग्यारह में उत्कृष्ट आयु क्रमशः दो, सात, दस, चौदह, सोलह, अठारह, बीस, बाईस, इसके ऊपर एक-एक अधिक अर्थात् तेवीस, चौबीस, पच्चीस, छब्बीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उनतीस, तीस, इकतीस, बत्तीस और तेंतीस सागरोपम प्रमाण है ।।४६१-४६२।।

एसो उक्कस्साऊ, इंद - पडुदीण होदि हु पउण्णं ।
सेस-सुराणं आऊ, मज्झिमस्स - जहण्ण - परिमाणा ।।४६३।।

अर्थ—यह उत्कृष्ट आयु इन्द्र आदि चारकी है । शेष देवोंकी आयु मध्यम एवं जघन्य प्रमाण सहित है ।।४६३।।

छासट्ठि-कोडि-लक्खा, कोडि-सहस्साणि तेत्तियाणि पि ।
कोडि-सया छव्वीसं च, छासट्ठी - कोडि - अहियाणि ।।४६४।।

छासट्ठी-सक्खाणि, तेत्तियमेत्ताणि तह सहस्साणि ।
छस्सय-छासट्ठीओ, दोण्णि कला तिय[1] - विहत्ताओ ।।४६५।।

एवाणि[2] पल्लाइं, आऊ उडु - विदयम्मि उक्कस्से ।
तं तेत्तीसब्भाहं, पढमणयाणं च णादव्वं ।।४६६।।

६६६६६६६६६६६६६ । ⅔

---

१. ब. ब. तिहविहारायो । २. ब. ब. एदाणं ।

अर्थ—छयासठ लाख करोड़, छयासठ हजार करोड़, छह सौ छयासठ करोड़ अधिक छयासठ लाख छयासठ हजार छह सौ छयासठ और तीनसे विभक्त दो कला (६६६६६६६६६६६६६६३), इतने पल्य प्रमाण ऋतु इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है। यही आयु उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंकी भी जानना चाहिए ॥४६५-४६६॥

उडु-पडलुक्कस्साऊ, इच्छिय-पडल-प्पमाण - रूवेहिं ।
गुणिदूणं आणेज्जं, तस्सि भेडुच्च - परिमाणं ॥४६७॥

अर्थ—ऋतु पटलकी उत्कृष्ट आयुको इच्छित पटल प्रमाण रूपोंसे गुणित कर उसमें उत्कृष्ट आयुके प्रमाणको ले आना चाहिए ॥४६७॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, एक्कं अंककमेण पल्लाणि ।
एक्क - कला उक्कस्से, आऊ विमलिंदयम्मि पुढं ॥४६८॥

१३३३३३३३३३३३३३३ । ३ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और एक, इतने पल्य और एक कला प्रमाण विमल इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४६८॥

विशेषार्थ—ऋतु पटलकी उत्कृष्ट आयुके प्रमाण को इच्छित पटल संख्यासे गुणित करने पर उस पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण प्राप्त हो जाता है। यथा ऋतु विमान की उत्कृष्ट आयु ६६६६६६६६६६६६६६३ × २ = १३३३३३३३३३३३३३३ पल्य विमल नामक दूसरे इन्द्रकमें आयु का उत्कृष्ट प्रमाण है।

चोद्दस-ठाणे सुण्णं, दुगं च अंक - कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ चंदिंदयम्मि सेढी - पइण्णएसुं च ॥४६९॥

२०००००००००००००० ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और दो [६६६६६६६६६६६६६६३ × ३ = २००००००००००००००] इतने पल्य प्रमाण चन्द्र इन्द्रक तथा उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४६९॥

चोद्दस-ठाणे छक्का, दुगं च अंक-कमेण पल्लाणि ।
तीण्णि कला उक्कस्से, आऊ वरणुम्मि णायव्वो ॥४७०॥

२६६६६६६६६६६६६६६ । ३ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह और दो इतने पल्य एवं दो कला [६६६६६६६६६६६६६½×४=२६६६६६६६६६६६६६½ पल्य] प्रमाण वलभु इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७०॥

पण्णरस-ट्ठाणेसुं, तियाणि अंक - क्कमेण पल्लाणि ।
एक्क - कला उक्कस्से, आऊ वीरिंदय - समूहे[1] ॥४७१॥

३३३३३३३३३३३३३३३ । ½ ।

अर्थ—अंक क्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें तीन, इतने पल्य और एक कला [६६६६६६६६६६६६६६½ ×५=३३३३३३३३३३३३३३३½ पल्य] प्रमाण वीर इन्द्रक तथा उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकों में उत्कृष्ट आयु है ॥४७१॥

सोहस - ट्ठाणे सुण्णं, चउक्कमंक-क्कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्सा अवणिवयम्मि सेढी - पहण्णएसुं च ॥४७२॥

४०००००००००००००० ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और चार इतने (४००००००००००००००) पल्य प्रमाण अवनि इन्द्रक तथा उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७२॥

सोहस-ट्ठाणे छक्का, चउक्कमंक - क्कमेण पल्लाणि ।
दोण्णि कलाओ णंदण - णामे आउस्स उक्कस्सो ॥४७३॥

४६६६६६६६६६६६६६६ । ½ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह और चार, इतने पल्य एवं दो कला (४६६६६६६६६६६६६६६½ पल्य) प्रमाण नन्दन नामक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७३॥

सोहस-ट्ठाणेसु तिया, पंचक-कमेण होंति पल्लाणि ।
एक्क-कला णलिणिंदय - णामे आउस्स उक्कस्सो ॥४७४॥

३३३३३३३३३३३३३३३ । ½ ।

अर्थ—अनुक्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और पांच, इतने पल्य एवं दो कला (३३३३३३३३३३३३३३३½ पल्य) प्रमाण नलिन नामक इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७४॥

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. समूहे ।

चोद्दस-ठाणे सुण्णं, छक्कं अंक - कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ कंचण - णामे सेढी - पइण्णएसुं पि ॥४७५॥

६०००००००००००००।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और छह, इतने (६०००००००००००००) पल्य प्रमाण कञ्चन नामक इन्द्रक और उसके श्रेणीबद्ध तथा प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७५॥

पण्णारस - ट्ठाणेसुं, छक्का अंककमेण पल्लाणि ।
दोण्णि कलाओ रोहिद - णामे आउस्स उक्कस्सो ॥४७६॥

६६६६६६६६६६६६६६६।$\frac{1}{2}$।

अर्थ—अंक क्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें छह, इतने पल्य और दो कला (६६६६६६६६६६६६६६६$\frac{1}{2}$ पल्य) प्रमाण रोहित नामक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७६॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, सत्तंक - कमेण होंति पल्लाणि ।
एक्क - कल त्ति य संखिदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥४७७॥

७३३३३३३३३३३३३३३।$\frac{1}{2}$।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और सात, इतने पल्य तथा एक कला (७३३३३३३३३३३३३३३$\frac{1}{2}$ पल्य) प्रमाण चंचत् (चन्द्र) इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७७॥

चोद्दस-ठाणे सुण्णं, अट्ठंक-कमेण होंति पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ मरुविंदयम्मि सेढी - पइण्णएसुं च ॥४७८॥

८०००००००००००००।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य और आठ, इतने पल्य प्रमाण मरुत् इन्द्रक तथा उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७८॥

चोद्दस-ठाणे छक्का, अट्ठंक-कमेण होंति पल्लाणि ।
दु-कलाओ 'रिट्ठिसए, उक्कस्साऊ समप्पम्मि ॥४७९॥

८६६६६६६६६६६६६६।$\frac{1}{2}$।

---

१. ब. ब. क. ब. ठ. रिट्ठिसए ।

अर्थ—अंक-क्रमसे चौदह-स्थानोंमें छह और आठ, इतने पल्य तथा दो कला (८६६६६६६६६६६६६६½ पल्य) प्रमाण समस्त ऋद्धीश पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४७९॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, णवंक कमसो हुवंति पल्लाणि ।
एक्क - कला - वेदलिए, उक्कस्साऊ सपदरम्मि ॥४८०॥

९३३३३३३३३३३३३३३ । ½ ।

अर्थ—अंक-क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन और नौ, इतने पल्य एवं एक कला (९३३३३३३३३३३३३३½ पल्य) प्रमाण वैडूर्य पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८०॥

पण्णरस[1] - ट्ठाणेसुं, णहमेक्कंक - कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ रुचकिंदयम्मि सेढी - पइण्णएसुं पि ॥४८१॥

१०००००००००००००० ।

अर्थ—अंक क्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें शून्य और एक, इतने (१००००००००००००००) पल्य प्रमाण रुचक इन्द्रक एवं उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८१॥

चोद्दस-ठाणे छक्का, णहमेक्कंक - कमेण पल्लाणि ।
दोण्णि कलाओ रुचिरिंदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥४८२॥

१०६६६६६६६६६६६६६ । ½ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, शून्य और एक, इतने पल्य और दो कला (१०६६६६६६६६६६६६६½ पल्य) प्रमाण रुचिर इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८२॥

चोद्दस-ठाणेसु [2]तिया, एक्केक्क-कमेण होंति पल्लाणि ।
एक्क-कला - विजय अंकिंदयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥४८३॥

११३३३३३३३३३३३३३ । ½ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन, एक और एक, इतने पल्य और एक कला (११३३३३३३३३३३३३३½ पल्य) प्रमाण अङ्क इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८३॥

चोद्दस - ठाणे सुण्णं, दुगमेक्कंक-कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ पडिहिंदयम्मि सेढी - पइण्णएसुं पि ॥४८४॥

१२०००००००००००००० ।

---

१. ब. चोद्दस । २. ब. ब. ति ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य दो और एक, इतने (१२०००००००००००००) पल्य प्रमाण स्फटिक इन्द्रक एवं उसके श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु होती है ॥४८४॥

चोद्दस-ठाणे छक्का, दुगमेक्कंक - क्कमेण पल्लाणि ।
दोण्णि कलाओ तवणिय - इंदए आउ उक्कस्सा ॥४८५॥

१२६६६६६६६६६६६६ । ३ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, दो और एक, इतने पल्य एवं दो कला (१२६६६६६६६६६६६६३ पल्य) प्रमाण तपनीय इन्द्रक एवं उसके श्रेणीबद्धादिकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८५॥

पण्णरस - ट्ठाणेसुं तियाणि एक्कं कमेण पल्लाणि ।
एक्का कला य मेघिंदयम्मि आउस्स उक्कस्सा ॥४८६॥

१३३३३३३३३३३३३३३ । ३ ।

अर्थ—क्रमशः पन्द्रह स्थानोंमें तीन और एक इतने पल्य एवं कला (१३३३३३३३३३३३३३३३ पल्य) प्रमाण मेघ इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८६॥

चोद्दस-ठाणे सुण्णं, चउ-एक्कंक-क्कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ अभिंदयम्मि सेढी - पइण्णएसुं च ॥४८७॥

१४०००००००००००० ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, चार और एक, इतने (१४००००००००००००) पल्य प्रमाण अभ्रइन्द्रक तथा श्रेणीबद्ध तथा प्रकीर्णक विमानोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८७॥

चोद्दस-ठाणे छक्का, चउ-एक्कंक-क्कमेण पल्लाणि ।
दोण्णि कला हारिद्दयम्मि आउस्स उक्कस्सो ॥४८८॥

१४६६६६६६६६६६६६ । ३ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, चार और एक, इतने पल्य और दो कला (१४६६६६६६६६६६६६३ पल्य) प्रमाण हारिद्र इन्द्रकमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८८॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, पंचेक्कंक - क्कमेण पल्लाणि ।
एक्का कला य आऊ, उक्कस्से पढम - पडलम्मि ॥४८९॥

१३३३३३३३३३३३३३३ । ३ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन, पाँच और एक, इतने पल्य तथा एक कला (१३३३३३३३३३३३३३३ पल्य) प्रमाण प्रथम पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४८९॥

चोद्दस-ठाणे सुण्णं, छक्केक्कंक - क्कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साऊ लोहिद - सेढी - बद्ध - प्पइण्णएसुं पि ॥४९०॥

१६०००००००००००० ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानों पर शून्य, छह और एक, इतने (१६०००००००००००० पल्य) प्रमाण लोहित इन्द्रक, श्रेणीबद्ध और प्रकीर्णकोंमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९०॥

पण्णरस - ट्ठाणेसुं, छक्कं एक्कं कमेण पल्लाइं ।
दोण्णि कलाओ आऊ, उक्कस्से बम्ह - पडलम्मि ॥४९१॥

१६६६६६६६६६६६६६ । २ ।

अर्थ—अंक क्रमसे पन्द्रह स्थानोंमें छह और एक, इतने पल्य एवं दो कला (१६६६६६६६६६६६६६२ पल्य) प्रमाण ब्रह्म पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९१॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, सत्तेक्कंक - क्कमेण पल्लाणि ।
एक्क - कला उक्कस्सो, बंभाबट्ठम्मि आउस्सं ॥४९२॥

१७३३३३३३३३३३३३३ । १ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन, सात और एक, इतने पल्य एवं एक कला (१७३३३३३३३३३३३३३१ पल्य) प्रमाण ब्रह्मोत्तर पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९२॥

चोद्दस - ठाणे सुण्णं, अट्ठेक्कंक - क्कमेण पल्लाणि ।
उक्कस्साउ - पमाणं, पढलम्मि पहंकरे होदि[1] ॥४९३॥

१८०००००००००००० ।

---

१. ब. होंदि ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें शून्य, आठ और एक, इतने (१८००००००००००००) पल्य प्रमाण प्रभङ्कर पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९३॥

चोद्दस-ठाणे-छक्का, अट्ठेक्क कमेण होंति पल्लाणि ।
दोण्णि कलाओ [1]पिट्ठुक - पडले आउस्स उक्कस्सो ॥४९४॥

१८६६६६६६६६६६६६ । ½ ।

अर्थ—क्रमसे चौदह स्थानोंमें छह, आठ और एक, इतने पल्य एवं दो कला (१८६६६६६६६६६६६६½ पल्य) प्रमाण पृष्ठक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९४॥

चोद्दस-ठाणेसु तिया, सुण्णेक्क-अंक-कमेण पल्लाणि ।
एक्क - कला भज-खाभे, पडले आउस्स उक्कस्सो ॥४९५॥

१९३३३३३३३३३३३३ । ½ ।

अर्थ—अंक क्रमसे चौदह स्थानोंमें तीन, नौ और एक, इतने पल्य एवं एक कला (१९३३३३३३३३३३३३½ पल्य) प्रमाण गज नामक पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९५॥

दोण्णि पयोधिहि-उवमा, उक्कस्साऊ हुवेदि पडलम्मि ।
चरिम - दुगण - णिविट्ठे, सोहम्मीसाण - जुगलम्मि ॥४९६॥

सा २ ।

अर्थ—सौधर्मैशान युगलके भीतर अन्तिम स्थानमें निविष्ट पटलमें दो सागर प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥४९६॥

उक्कस्साऊ-पमाणं, सणक्कुमारस्स पढम-पडलम्मि ।
दोण्णि पयोधिहि-उवमा, पंच-कला सत्त-पविहत्ता ॥४९७॥

सा २ । ⅖ ।

अर्थ—सानत्कुमारके प्रथम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण दो सागरोपम और सातसे भाजित पाँच कला (२⅖ सागर) है ॥४९७॥

तिण्णि महण्णव-उवमा, तिण्णि कला इंदयम्मि बंभम्मि ।
चत्तारि उवहि - उवमा, एक्क-कला णाम - पडलम्मि ॥४९८॥

सा ३ । क ⅗ । सा ४ । ⅕ ।

---

१. ब. पिट्ठ ।

अर्थ—तीन सागरोपम एवं तीन कला (३$\frac{3}{4}$ सा०) प्रमाण वनमाल इन्द्रकमें तथा चार सागरोपम और एक कला (४$\frac{1}{4}$ सा०) प्रमाण नाग-पटलमें उत्कृष्ट आयु है ॥४९८॥

चत्तारि सिंधु-उवमा, तुरिय कला गरुड-णाम-पडलम्मि ।
पंचण्णव - उवमाणा, चत्तारि कलाओ लंगलए[1] ॥४९९॥

सा ४ । $\frac{1}{4}$ । सा ५ । $\frac{1}{4}$ ।

अर्थ—गरुड़ नामक पटलमें चार सागरोपम और तीन कला (४$\frac{3}{4}$ सा०) तथा लाङ्गल पटलमें पाँच सागरोपम एवं चार कला (५$\frac{1}{4}$ सा०) प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥४९९॥

छद्धोवहि-उवमाणा, दोण्णि कला इंदयम्मि बलभद्दे ।
सत्त-सरिरमण-उवमा, माहिंद-जुगस्स चरिम-पडलम्मि ॥५००॥

सा ६ । $\frac{2}{4}$ । सा ७ ।

अर्थ—बलभद्र इन्द्रकमें छह सागरोपम और दो कला (६$\frac{2}{4}$ सा०) तथा माहेन्द्र युगलके अन्तिम (चक्र नामक) पटलमें सात (७) सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५००॥

सत्तंबुरासि-उवमा, तिण्णि कलाओ चउत्थ-पविहत्ता ।
उक्कस्साउ - पमाणं, पढमं पडलम्मि बम्ह-कप्पस्स ॥५०१॥

सा ७ । $\frac{3}{4}$ ।

अर्थ—ब्रह्म कल्पके प्रथम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण सात सागरोपम और चार विभक्त तीन कला (७$\frac{3}{4}$ सा०) है ॥५०१॥

अट्ठण्णव-उवमाणा, दु-कला सुरसमिदि-णाम-पडलम्मि ।
णव-रयणायर-उवमा, एक्क - कला बम्ह - पडलम्हि ॥५०२॥

सा ८ । $\frac{2}{4}$ । सा ९ । $\frac{1}{4}$ ।

अर्थ—सुरसमिति नामक पटलमें आठ सागरोपम और दो कला (८$\frac{2}{4}$ सा०) तथा ब्रह्म पटलमें नौ सागरोपम और एक कला (९$\frac{1}{4}$ सा०) प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०२॥

बम्हुत्तरमिंधाणे, चरिमे पडलम्मि बम्ह - कप्पस्स ।
उक्कस्साउ-पमाणं, दस सरि - रमणाय उवमाणा ॥५०३॥

१० ।

---

१ द. ब. क. ज. ठ. लिंगलए ।

अर्थ—ब्रह्म कल्पके ब्रह्मोत्तर नामक अन्तिम पटलमें उत्कृष्ट आयुका प्रमाण (१०) सागरोपम है ॥५०३॥

बम्हहिदयम्मि[1] पढले, बारस-कल्लोलिणीस-उवमाणं ।
चोद्दस-णीरहि-उवमा, [2]उवकस्साऊ हवंति संतवए ॥५०४॥

१२ । १४ ।

अर्थ—ब्रह्महृदय पटलमें बारह सागरोपम और लान्तव पटलमें चौदह सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०४॥

महसुक्क-णाम-पढले, सोलस-सरियाहिणाह-उवमाणा ।
अट्ठरस - सहस्सारे, तरंगिणीरमण - उवमाणा ॥५०५॥

१६ । १८ ।

अर्थ—महाशुक्र नामक पटलमें सोलह सागरोपम और सहस्रार पटलमें अठारह सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०५॥

आणद-णामे पढले, अट्ठारस सलिलरासि-उवमाणा ।
उवकस्साउ - पमाणं, चत्तारि कलाओ छक्क-हिदा ॥५०६॥

१८ । ४ ।

अर्थ—आनत नामक पटलमें अठारह सागरोपम और छहसे भाजित चार कला (१८$\frac{४}{६}$ सा०) प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०६॥

एक्कोणवीस वारिहि-उवमा दु-कलाओ पाणदे पढले ।
पुप्फाए वीसं चिय, तरंगिणीकंत - उवमाणा ॥५०७॥

सा १९ । क २ । सा २० ।

अर्थ—प्राणत पटलमें उन्नीस सागरोपम और दो कला (१९$\frac{२}{६}$ सा०) तथा पुष्पक पटलमें बीस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०७॥

वीसंबुरासि-उवमा, चत्तारि कलाओ सादगे पढले ।
इगिवीस जलहि-उवमा, आरण-णामम्मि वीस्सि कला ॥५०८॥

सा २० । क ४ । सा २१ । $\frac{४}{६}$ ।

---

१. द. ब. बम्हिदयम्हि । २. द. ब. क. ज. ठ. कप्पस्साऊ ।

अर्थ—आनत पटलमें बीस सागरोपम और चार कला (२०$\frac{४}{९}$ सा०) तथा आरण नामक पटलमें इक्कीस सागरोपम और दो कला (२१$\frac{२}{९}$ सा०) प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०८॥

अच्चुद-णामे पडले, बावीस तरंगिणीरमण-उवमाणा[1] ।
तेवीस सुदंसणए, अमोघ - पडलम्मि चउवीसं ॥५०९॥

२२ । २३ । २४ ।

अर्थ—अच्युत नामक पटलमें बाईस सागरोपम, सुदर्शन पटलमें तेईस सागरोपम और अमोघ पटलमें चौबीस (२४) सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५०९॥

पणुवीस [2]सुप्पबुद्धे, जसहर-पडलम्मि होंति छव्वीसं ।
सत्तावीस सुभद्दे, सुविसाले अट्ठवीसं च ॥५१०॥

२५ । २६ । २७ । २८ ।

अर्थ—सुप्रबुद्ध पटलमें पच्चीस (२५), यशोधर पटलमें छब्बीस (२६), सुभद्र पटलमें सत्ताईस (२७) और सुविशाल पटलमें अट्ठाईस (२८) सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५१०॥

सुमणस-णामे उणतीस तीस[3] सोमणस-णाम-पडलम्मि ।
एक्कत्तीसं पीदिंकरम्मि बत्तीस आइच्चे ॥५११॥

२९ । ३० । ३१ । ३२ ।

अर्थ—सुमनस नामक पटलमें उनतीस (२९), सौमनस नामक पटलमें तीस (३०), प्रीतिङ्कर पटलमें इकतीस (३१) और आदित्य पटलमें बत्तीस सागरोपम प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति है ॥५११॥

सव्वट्ठ-सिद्धि-णामे, तेत्तीसं वाहिणीस - उवमाणा ।
उक्कस्स जहण्णम्मि य, णिद्दिट्ठं वीयरागेहिं ॥५१२॥

३३ ।

अर्थ—वीतराग भगवान्‌ने सर्वार्थसिद्धि नामक पटलमें उत्कृष्ट एवं जघन्य आयुका प्रमाण तेंतीस (३३) सागरोपम कहा है ॥५१२॥

---

१. ब. ज. क. ज. ठ. उवमा । २. ब. ज. क. ज. ठ. सुप्पबुद्धे । ३. ब. ज. सोम ।

देवोंकी जघन्य-आयु—

उडु-पहुदि-इंदयाणं, हेट्ठिम-उक्कस्स-आउ-परिमाणं ।
एक्क - समएण अहियं, उवरिम - पडले जहण्णआऊ ॥५१३॥

अर्थ—ऋतु आदि इन्द्रकोंमें अधस्तन इन्द्रक सम्बन्धी उत्कृष्ट आयुके प्रमाणमें एक समय मिलाने पर उपरिम पटलमें जघन्य आयुका प्रमाण होता है ॥५१३॥

तेत्तीस उवहि-उवमा, पल्लासंखेज्ज-भाग-परिहीणा ।
सव्वट्ठ - सिद्धि - णामे, मण्णंते केइ अवराऊ ॥५१४॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—कोई आचार्य सर्वार्थसिद्धि नामक पटलमें पल्यके असंख्यातवें भागसे रहित तेंतीस सागरोपम प्रमाण जघन्य आयु मानते हैं ॥५१४॥

पाठान्तर ।

सोहम्म-कप्प-पढमिंदयम्मि परिदोवमं हुवे एक्कं ।
सव्व - सिगिट्ठ - सुराणं, जहण्ण-आउस्स परिमाणं ॥५१५॥

५ १ ।

अर्थ—सौधर्म कल्पके प्रथम इन्द्रकमें सब निकृष्ट देवोंकी जघन्य आयुका प्रमाण एक पल्योपम है ॥५१५॥

इन्द्रोंके परिवार देवों की आयु—

अड्ढाइज्जं पल्ला, आऊ सोमे जमे य पत्तेक्कं ।
तिण्णि कुबेरे वरुणे, किंचूणा सक्क - दिप्पाले ॥५१६॥

२ । २ । ३ । ३ ।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके दिक्पालोंमें सोम और यमकी अढ़ाई (२½) पल्योपम, कुबेरकी तीन (३) पल्योपम और वरुणकी तीन (३) पल्योपमसे किञ्चित् ऊन आयु होती है ॥५१६॥

सक्कादो सेसेसुं, दक्खिण - इंदेसु लोयपालाणं ।
एक्केक्क-पल्ल-अहिओ, आऊ सोमादियाण पत्तेक्कं ॥५१७॥

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके अतिरिक्त शेष दक्षिण इन्द्रोंके सोमादिक लोकपालोंमेंसे प्रत्येकको आयु एक-एक पल्य अधिक है ॥५१७॥

ईसाणिंद - विणिंदे, आऊ सोमे[1] जमे ति - पल्लाइं ।
किंचूणाणि कुबेरे, वरुणम्मि य सादिरेयाणि ॥५१८॥

३ । ३ । ३ । ३ ।

अर्थ—ईशान इन्द्रके लोकपालोंमें सोम और यमकी आयु तीन तीन पल्य, कुबेरकी तीन पल्यसे कुछ कम तथा वरुणकी कुछ अधिक तीन पल्य है ॥५१८॥

ईसाणादो सेसय - उत्तर - इंदेसु लोयपालाणं ।
एक्केक्क-पल्ल-अहिओ, आऊ सोमादियाण पत्तेक्कं ॥५१९॥

अर्थ—ईशानेन्द्रके अतिरिक्त शेष उत्तर इन्द्रोंके सोम-आदिक लोकपालोंमें प्रत्येककी आयु एक-एक पल्य अधिक है ॥५१९॥

सव्वाण विणिंदाणं, सामाणिय-सुर-वराण पत्तेक्कं ।
णिय-णिय-विणिंदआऊ, आउ - पमाणाणि आऊणि ॥५२०॥

अर्थ—सब लोकपालोंके सामानिक देवोंमें प्रत्येककी आयु अपने-अपने लोकपालोंकी आयुके प्रमाण होती है ॥५२०॥

पढमे विविए तुरिमे, बम्हादिसु चउसु आणद-दुगम्मि ।
आरण - अच्चुदे कमसो, सत्तिदयेसुं सरीररक्खाणं ॥५२१॥

पलिदोवमाणि आऊ, अड्ढाइज्जं हवेदि पढमम्मि ।
एक्केक्क-पल्ल-वड्ढो, पत्तेक्कं उवरि - उवरिम्मि ॥५२२॥

२ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ ।

अर्थ—प्रथम युगल, द्वितीय युगल, ब्रह्मादिक चार युगल, आनत युगल और आरण युगल इनमेंसे प्रथममें शरीर रक्षकोंकी आयु अढ़ाई पल्योपम और ऊपर-ऊपर सब इन्द्रोंके शरीर रक्षकोंकी आयु क्रमशः एक-एक पल्य अधिक है। अर्थात् सौधर्म युगलमें २½ पल्य, सानत्कुमार युगलमें ३½ पल्य, ब्रह्म युगलमें ४½ पल्य, लान्तव युगलमें ५½ पल्य, शुक्र युगलमें ६½ पल्य, शतार युगलमें ७½ पल्य, आनत युगलमें ८½ पल्य और आरण युगलमें ९½ पल्य प्रमाण उत्कृष्ट आयु है ॥५२१-५२२॥

---

१. ब. क. ज. ठ. सोमाणं ।

बाहिर-मज्झब्भंतर-परिसाए होंति तिण्णि चत्तारि ।
पंच पलिदोवमाणि, उवरि एक्केक्क-पल्ल-वड्ढीए ॥५२३॥

३, ४, ५ । ४, ५, ६ । ५, ६, ७ । ६, ७, ८ । ७, ८, ९ । ८, ९, १० ।
९, १०, ११ । १०, ११, १२[1] ।

अर्थ—प्रथम युगलमें बाह्य, मध्यम और अभ्यन्तर पारिषद देवोंकी आयु क्रमशः तीन, चार और पाँच पल्य है । इसके ऊपर एक-एक पल्य अधिक है ॥५२३॥

विशेषार्थ—

क्र०	कल्प-नाम	बाह्य पारि० की आयु	मध्यम पा० की आयु	अभ्य० पा० की आयु	क्र०	कल्प-नाम	बा० पारि० की आयु	मध्यम पा० की आयु	अभ्य० पा० की आयु
१	सौ० युगल	३ पल्य	४ पल्य	५ पल्य	५	महाशुक्र	७ पल्य	८ पल्य	९ पल्य
२	सा० ,,	४ ,,	५ ,,	६ ,,	६	सहस्रार	८ ,,	९ ,,	१० ,,
३	ब्रह्म	५ ,,	६ ,,	७ ,,	७	आ० यु०	९ ,,	१० ,,	११ ,,
४	लान्तव	६ ,,	७ ,,	८ ,,	८	प्रा० ,,	१० ,,	११ ,,	१२ ,,

पढमम्मि अहिय-पल्लं, आरोहक-वाहणाण सट्ठाणे ।
आरू हवेदि तत्तो, वड्ढी एक्केक्क - पल्लस्स ॥५२४॥

१ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ ।[2]

अर्थ—इन आठ स्थानोंमेंसे प्रथम स्थानमें आरोहक वाहनोंकी आयु एक पल्यसे अधिक और इसके आगे एक-एक पल्यकी वृद्धि हुई है । अर्थात् आरोहक वाहनोंकी आयु सौ० यु० में १ पल्य, सन० यु० में २ पल्य, ब्र० यु० में ३ पल्य, सां० यु० में ४ पल्य, शु० यु० में ५ पल्य, शतार यु० में ६ पल्य, आनत यु० में ७ पल्य और आरण यु० में ८ पल्य है ॥५२४॥

---

१. ब. ब. ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १२ ।
२. ब. क. ८ । ९ ।

एक्केक्क पल्ल वाहण - सामीणं होंति तेसु ठाणेसुं ।
पढमादु उत्तरत्तर - अट्ठदीए एक्क - पल्लस्स ॥५२५॥

१ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ ।

अर्थ—इन स्थानोंमेंसे प्रथम स्थानमें वाहन-देवोंकी आयु एक-एक पल्य और इससे आगे उत्तरोत्तर एक-एक पल्यकी वृद्धि है । अर्थात् सौ० १, सन० २, ब० ३, लां० ४, शु० ५, श० ६, आ० ७ और आरण अ० में ८ पल्य की आयु है ॥५२५॥

ताणं पइण्णएसुं, अभियोग - सुरेसु किब्बिसेसुं च ।
आउ - पमाण - णिरूवण - उवएसो संपहि पणट्ठो ॥५२६॥

अर्थ—उनके प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषदेवोंमें आयु प्रमाणके निरूपणका उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥५२६॥

जे सोलस कप्पाइं, केई इच्छंति ताण उवएसे[1] ।
जुगलं पडि णादव्वं, पुव्वोदिद - आउ - परिमाणं ॥५२७॥

अर्थ—जो कोई आचार्य सोलह कल्पोंकी मान्यता रखते हैं उनके उपदेशानुसार पूर्वोक्त आयुका प्रमाण एक-एक युगलके प्रति जानना चाहिए ॥५२७॥

इन्द्र-देवियोंकी आयुका विवेचन—

पलिदोवमाणि पण्ण भव, तेरस सत्तरस तह य चोत्तीसं ।
अडुत्तालं आऊ, देवीणं दक्खिणिंदेसुं ॥५२८॥

५ । ९ । १३ । १७ । ३४ । ४८ ।

अर्थ—दक्षिण इन्द्रोंमें देवियोंकी आयु क्रमशः (सौ०) पाँच, (सानत्कुमार) नौ, (ब्रह्म) तेरह, (लान्तव) १७, (आनत) ३४, और (आरण) अड़तालीस पल्य प्रमाण है ॥५२८॥

सत्तेयारस-तेवीस - सत्तवीसेक्क - तीस पणवण्णा ।
पल्ला कमेण आऊ, देवीणं उत्तरिंदेसुं ॥५२९॥

७ । ११ । २३ । २७ । ४१ । ५५ ।

अर्थ—उत्तर इन्द्रोंमें देवियोंकी आयु क्रमशः (ईशान) सात, (माहेन्द्र) ग्यारह, (महाशुक्र) तेवीस, (सहस्रार) सत्ताईस, (प्राणत) इकतालीस और (अच्युत) पचपन पल्य प्रमाण है ॥५२९॥

---

१. द. ब. उवएसो ।

जे सोलस कप्पाणि, केई इच्छंति ताण उवएसे ।
अट्ठसु आउ - पमाणं, देवीणं वण्णिदेसु ॥५३०॥
पलिदोवमाणि पण णव, तेरस सत्तरस एक्कवीसं च ।
पणवीसं चउतीसं, अट्ठत्तालं कमेणेव ॥५३१॥

५ । ९ । १३ । १७ । २१ । २५ । ३४ । ४८ ।

अर्थ—जो कोई आचार्य सोलह कल्पोंकी मान्यता रखते हैं उनके उपदेशानुसार आठ दक्षिण इन्द्रोंमें देवियोंकी आयुका प्रमाण क्रमशः (सौ०) पाँच, (सा०) नौ, (ब्रह्म) तेरह, (लान्तव) सत्तरह, (शुक्र) इक्कीस, (शतार) पच्चीस, (आनत) चौंतीस और (आरण) में अड़तालीस पल्य है ॥ ५३०-५३१ ॥

पल्ला सत्तेक्कारस, पण्णरसेक्कोणवीस—तेवीसं ।
सगवीसमेक्कतालं, पणवण्णं उत्तरिंद—देवीणं ॥ ५३२ ॥

७ । ११ । १५ । १९ । २३ । २७ । ४१ । ५५ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—उक्त आचार्योंके उपदेशानुसार उत्तर इन्द्रोंकी देवियोंकी आयु क्रमशः सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेईस, सत्ताईस, इकतालीस और पचपन पल्य प्रमाण है ॥ ५३२ ॥

पाठान्तर ।

कप्पं पडि पंचादिसु, पल्ला देवीण वड्ढवे अऊ ।
दो—दो—वड्ढो तत्तो, लोयाइणिये समुद्दिट्ठं ॥ ५३३ ॥

५ । ७ । ९ । ११ । १३ । १५ । १७ । १९ । २१ । २३ । २५ । २७ । २९ । ३१ । ३३ । ३५ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—देवियोंकी आयु प्रथम कल्पमें पाँच पल्य प्रमाण है । इसके आगे प्रत्येक कल्पमें दो-दो पल्यकी वृद्धि होती गयी है । ऐसा 'लोगाइणी'में कहा है ॥ ५३३ ॥

विशेषार्थ—सौ० कल्पमें ५ पल्य, ई० ७ पल्य, सान० ९, मा० ११, ब्रह्म० १३, ब्रह्मोत्तरमें १५, लां० १७, का० १९, शुक्रमें २१, महाशुक्रमें २३, स० २५, सह० २७, आ० २९, प्रा० ३१, आ० ३३ और अच्युतकल्पमें ३५ पल्य आयु है ।

पाठान्तर ।

पलिदोवमाणि पंचय-सत्तारस-पंचवीस-पण्णतीसं ।
चउसु जुगलेसु आऊ, णादव्वा इंद-देवीणं ॥५३४॥
आरण-जुग-परियंतं, वड्ढंते पंच पंच-पल्लाइं ।
मूलायारादिरिया[1], एवं णिउणं[2] णिरूवेंति ॥५३५॥

५ । १७[3] । २५ । ३५ । ४० । ४५ । ५० । ५५ ।

पाठान्तरम्

अर्थ—चार युगलोंमें इन्द्र-देवियोंकी आयु क्रमशः पाँच, सत्तरह, पच्चीस और पैंतीस पल्य प्रमाण जानना चाहिए। इसके आगे आरण-युगल पर्यन्त पाँच-पाँच पल्यकी वृद्धि होती गयी है, ऐसा मूलाचार (पर्याप्त्यधिकार ८०)में आचार्य स्पष्टतासे निरूपण करते हैं ॥ ५३४-५३५ ॥

पाठान्तर

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

१. द. ब. क. ज. ठ. मूलायारादिरिया । २. द. ब. णिउणयरं, क. ज. ठ. णिउणा । ३. द. ब. क. ७ ।

इन्द्रों की देवियों की आयु (पल्योंमें)					
क्रमांक	कल्प-नाम	१२ कल्पकी मान्यता गा० ५२८-५२९	१६ कल्पकी मान्यता गा० ५३०-५३१-५३२	लोगाइणी की मान्यता गाथा-५३३	मूलाचार की मान्यता गा० ५३४-५३५
१	सौधर्म	५ पल्य	५ पल्य	५ पल्य	५ पल्य
२	ईशान	७ ,,	७ ,,	७ ,,	५ ,,
३	सनत्कुमार	९ ,,	९ ,,	९ ,,	१७ ,,
४	माहेन्द्र	११ ,,	११ ,,	११ ,,	१७ ,,
५	ब्रह्म	१३ ,,	१३ ,,	१३ ,,	२५ ,,
६	ब्रह्मोत्तर	×	१५ ,,	१५ ,,	२५ ,,
७	लान्तव	१७ पल्य	१७ ,,	१७ ,,	३५ ,,
८	कापिष्ठ	×	१९ ,,	१९ ,,	३५ ,,
९	शुक्र	×	२१ ,,	२१ ,,	४० ,,
१०	महाशुक्र	२३ ,,	२३ ,,	२३ ,,	४० ,,
११	शतार	×	२५ ,,	२५ ,,	४५ ,,
१२	सहस्रार	२७ ,,	२७ ,,	२७ ,,	४५ ,,
१३	आनत	३४ ,,	३४ ,,	२९ ,,	५० ,,
१४	प्राणत	४१ ,,	४१ ,,	३१ ,,	५० ,,
१५	आरण	४८ ,,	४८ ,,	३३ ,,	५५ ,,
१६	अच्युत	५५ ,,	५५ ,,	३५ ,,	५५ ,,

इन्द्रके परिवार देवोंकी देवियोंकी आयु—

पडिइंदाणं सामाणियाण तेत्तीस सुर-वराणं पि ।
देवीओ होंति आऊ, णियिंद-देवीण आउ-समो ॥५३६॥

अर्थ—प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवोंकी देवियोंकी आयु अपने-अपने इन्द्रोंकी देवियोंकी आयुके सदृश होती है ॥ ५३६ ॥

सक्क-विगिंदे सोमे, जमे य देवीण आउ-परिमाणं ।
आउ-भाजिद-पंच-पल्ला, किंचूण-दिवड्ढ वरुणम्मि ॥५३७॥

५ । ३ ।

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके दिक्पालोंमें सोम एवं यमकी देवियोंकी आयुका प्रमाण आधेसे भाजित पाँच (५) पल्य तथा वरुणकी देवियोंकी आयुका प्रमाण कुछ कम डेढ़ (१½) पल्य है ॥ ५३७ ॥

पलिदोवमं दिवड्ढं, होदि कुबेरम्मि सक्क-दिप्पाले[1] ।
तेत्तियमेत्ता आऊ, विगिंद-सामंत-देवीणं ॥५३८॥

अर्थ—सौधर्म इन्द्रके कुबेर दिक्पालकी देवियोंकी आयु डेढ़ पल्य तथा लोकपालोंके सामन्तोंकी देवियोंकी आयु भी इतनी ही होती है ॥ ५३८ ॥

पडिइंदतितयस्स य, णियिंद-देवीण आउ-परिमाणं ।
एक्केक्क-पल्ल-अद्धो सेसेसुं दक्खिणिंदेसु ॥५३९॥

अर्थ—शेष दक्षिण इन्द्रोंमें प्रतीन्द्र-आदिक तीन और लोकपालोंकी देवियोंकी आयुका प्रमाण एक-एक पल्य अधिक है ॥ ५३९ ॥

ईसाण-विगिंदाणं, जम - सोम-वणेस-देवीसु[2] ।
पुह - पुह दिवड्ढ-पल्लं, आऊ वरुणस्स अहिरिस्सं ॥५४०॥

२ । २ । २ । १ ।

अर्थ—ईशान इन्द्रके लोकपालों में यम, सोम और कुबेरकी देवियोंकी आयु पृथक्-पृथक् डेढ़-डेढ़ पल्य तथा वरुणकी देवियोंकी आयु इससे अधिक है। अर्थात् यमकी देवियोंकी २½ पल्य, सोमकी देवियोंकी २½ पल्य, कुबेरकी देवियों की २½ पल्य और वरुणकी देवियोंकी आयु कुछ अधिक २½ पल्य है ॥

---

१. ब. ज. प. द. ठ. दक्खणीसु ।

एदेसु दिग्गिदेसुं, आऊ सामंत - अमर - देवीणं ।
णिय-णिय-दिग्गिद-देवी-आउ-पमाणस्स सारिच्छं ॥५४१॥

अर्थ—इन दिक्पालोंमें सामन्तदेवोंकी देवियोंकी आयु अपने-अपने दिक्पालोंकी देवियोंके आयु-प्रमाणके सदृश है ॥ ५४१ ॥

पडिइंदतिदयस्स य, दिग्गिद-देवीण आऊ-परिमाणे ।
एक्केक्क - पल्ल - वड्ढी, सेसेसुं [1]उत्तरिंदेसुं ॥५४२॥

अर्थ—शेष उत्तर इन्द्रोंमें प्रतीन्द्रादिक तीन और लोकपाल इनकी देवियोंकी आयुका प्रमाण एक-एक पल्य अधिक है ॥ ५४२ ॥

तणुरक्खाण सुराणं, ति-परिस-प्पहुदि-आण देवीणं ।
आउ-पमाण-णिरूवण-उवएसो संपहि पणट्ठो ॥५४३॥

अर्थ—तनुरक्षक देव और तीनों पारिषद आदि देवोंकी देवियोंके आयु प्रमाणके निरूपणका उपदेश इससमय नष्ट हो गया है ॥ ५४३ ॥

बड्ढाउं पडि भणिदं, उक्कस्सं मज्झिमं जहण्णं पि ।
घादाउवमासेज्जं, अण्ण - सरूवं परूवेमो ॥५४४॥

अर्थ—यह उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य आयुका प्रमाण बड़ायुष्कके प्रति कहा गया है । घातायुष्कका आश्रय करके अन्य स्वरूप कहते हैं ॥ ५४४ ॥

प्रथम युगलके पटलोंमें आयुका प्रमाण—

एत्थ उडुम्मि पढम-पत्थले जहण्णमाऊ दिवड्ढ-पलिदोवमं उक्कस्समद्ध-सागरोवमं[2] ।

अर्थ—यहां ऋतु नामक प्रथम पटलमें जघन्य आयु डेढ़ पल्योपम और उत्कृष्ट आयु अर्ध-सागरोपम है ॥

एत्तो तीसमिदयाणं बड्ढी-उड्ढी उच्चदे । तत्थ अद्ध-सागरोवमं मुहं होदि । भूमी अड्ढाइज्ज-सागरोवमाणि । मुहभूमीयो[3] उच्छेहेण भागे हिदे तत्थ एक्क[4]-सागरोवमस्स-पण्णारस-भागोवरिम[5]-बड्ढी होदि । एदं ।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. उत्तरदिविंदेसुं । २. द. ब. सवरोवमं । ३. द. ब. मुहभवमिय । ४. द. ब. क. ज. ठ. सेस । ५. ब. सागरोवमट्ठि ।

अर्थ—अब यहाँ तीस इन्द्रकोंमें स्थित देवोंकी आयुमें वृद्धिहानिका (चय) कहते हैं—

यहाँ अर्ध (½) सागरोपम मुख और साढ़े (२½) सागरोपम (ऋतु पटल की जघन्य और उत्कृष्टायु) भूमि है। भूमिमेंसे मुखका प्रमाण घटाकर शेषमें उत्सेध (एक कम गच्छ) का भाग देने पर एक सागरोपमका पन्द्रहवाँ भाग ($\frac{1}{15}$ सागर) उपरिम वृद्धिका प्रमाण आता है।

विशेषार्थ—प्रथम युगल में समस्त पटल (गच्छ) ३१ हैं और उपर्युक्त जघन्य एवं उत्कृष्ट आयुका प्रमाण घातायुष्कको अपेक्षा है, अतः यहाँ वृद्धि-हानि का प्रमाण—

$\frac{1}{15}$ सागर = (२ सा०—½ सा०) ÷ (३१—१) है।

एदमिच्छिद-पत्थड[1]-संखाए गुणिय मुहे पक्खित्ते विमलादीण तीसण्हं पत्थडाणमाउ-आणि होंदि। तेसिमेसा संदिट्ठी—

$\frac{1}{30}$ । $\frac{15}{30}$ । $\frac{31}{30}$ । $\frac{33}{30}$ । $\frac{35}{30}$ । $\frac{37}{30}$ । $\frac{39}{30}$ । $\frac{41}{30}$ । $\frac{43}{30}$ । $\frac{45}{30}$ । $\frac{47}{30}$ । $\frac{49}{30}$ । $\frac{51}{30}$ । $\frac{53}{30}$ । $\frac{55}{30}$ ।
$\frac{57}{30}$ । $\frac{59}{30}$ । $\frac{61}{30}$ । $\frac{63}{30}$ । $\frac{65}{30}$ । $\frac{67}{30}$ । $\frac{69}{30}$ । $\frac{71}{30}$ ।
। $\frac{73}{30}$ । $\frac{75}{30}$ । $\frac{77}{30}$ । $\frac{79}{30}$ । सा २ ।

अर्थ—इसे ($\frac{1}{15}$ सा० को एक कम) इच्छित पटलकी संख्यासे गुणा कर मुखमें मिला देनेपर विमलादिक तीस पटलोंमें आयुका प्रमाण इसप्रकार निकलता है—

विमल $\frac{17}{30}$ सा० = [$\frac{1}{15}$ सा० × (२—१)] + ½ सागर

चन्द्र $\frac{19}{30}$ सा० = [$\frac{1}{15}$ सा० × (३—१)] + ½ सागर

वल्गु $\frac{21}{30}$ सा० = [$\frac{1}{15}$ सा० × (४—१)] + ½ सा० इसीप्रकार वीर पटलमें $\frac{23}{30}$ सा०, अरुण $\frac{25}{30}$, नन्दन $\frac{27}{30}$, नलिन $\frac{29}{30}$, कंचन $\frac{31}{30}$, रुधिर $\frac{33}{30}$, चन्द्र $\frac{35}{30}$, मरुत् $\frac{37}{30}$, ऋद्धीश $\frac{39}{30}$, वैडूर्य $\frac{41}{30}$, रुचक $\frac{43}{30}$, रुचिर $\frac{45}{30}$, अंक $\frac{47}{30}$, स्फटिक $\frac{49}{30}$, तपनीय $\frac{51}{30}$, मेघ $\frac{53}{30}$, अभ्र $\frac{55}{30}$, हारिद्र $\frac{57}{30}$, पद्ममाल $\frac{59}{30}$, लोहित $\frac{61}{30}$, वज्र $\frac{63}{30}$, नन्द्यावर्त $\frac{65}{30}$, प्रभंकर $\frac{67}{30}$, पिष्टक $\frac{69}{30}$, गज $\frac{71}{30}$, मित्र $\frac{73}{30}$ और प्रभ $\frac{75}{30}$ या २ सागरोपम।

सणक्कुमार - माहिंदे सत्त पत्थडा। एदेसिमाउ - पमाण - आणिज्जमाणे मुह-भूमिट्ठाइज्ज-सागरोवमाणि, भूमी [2]साहू-सत्त-सागरोवमाणि सत्त उस्सेहो होदि। तेसिं संदिट्ठी—

२ । $\frac{9}{7}$ । ३ । $\frac{11}{7}$ । ४ । $\frac{13}{7}$ । ५ । $\frac{15}{7}$ । ६ । $\frac{17}{7}$ । ७ । $\frac{19}{7}$ सा ।

---

१. ब. ब. क. ब. ड. पंचय। २. ब. ह. क. ब. ड. साह-सागरोवमाणि।

अर्थ—सनत्कुमार-माहेन्द्र युगलमें सात पटल हैं। इनमें आयु-प्रमाणको प्राप्त करनेके लिए मुख अढ़ाई सागरोपम, भूमि साढ़े सात सागरोपम और उत्सेध सात है।

(भूमि $7\frac{1}{2}$ — $2\frac{1}{2}$ मुख)÷७

वृद्धि-हानिका प्रमाण $\frac{5}{7}$ सा०=(भूमि $7\frac{1}{2}$ — $2\frac{1}{2}$ मुख)÷ ७ उत्सेध।

उनकी संदृष्टि इसप्रकार है—

अञ्जन $3\frac{5}{7}$ सागर= $2\frac{1}{2}$ सा० + $\frac{5}{7}$ सा० इसीप्रकार वनमाल $3\frac{5}{7}$ सागर, नाग $4\frac{4}{7}$सा०, गरुड़ $5\frac{3}{7}$ सा०, लांगल $6\frac{2}{7}$ सा० बलभद्र $6\frac{6}{7}$ और चक्र पटलमें ७$\frac{1}{2}$ सागर है।

बम्ह-बम्हुत्तर-कप्पे चत्तारि पत्थला। एदेसिमाउ-पमाणिज्जमाणे[1] मुहं अद्ध-सागरोवमाहिय-सत्त-सागरोवमाणि, भूमी अद्ध-सागरोवमाहिय-दस-सागरोवमाणि। एदेसिमाउआणं संदिट्ठी।

८ । $\frac{1}{2}$ । ९ । ९ । $\frac{1}{2}$ । १०$\frac{1}{2}$ ।

अर्थ—ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर कल्पमें चार पटल हैं। इनका आयु प्रमाण प्राप्त करने हेतु मुख साढ़ेसात (७$\frac{1}{2}$) सागरोपम, भूमि साढ़ेदस (१०$\frac{1}{2}$) सागरोपम (और उत्सेध चार) है। [इनमें वृद्धि-हानिका प्रमाण $\frac{1}{2}$ सा०=(१०$\frac{1}{2}$—७$\frac{1}{2}$)÷४ उत्सेध] इनमें आयु प्रमाणकी संदृष्टि इसप्रकार है—

अरिष्ट की ८$\frac{1}{2}$ सा०=७$\frac{1}{2}$+$\frac{1}{2}$ सागर। इसीप्रकार सुरसमितिकी ९सा०,ब्रह्म ९$\frac{1}{2}$ सा० और ब्रह्मोत्तर की १०$\frac{1}{2}$ सागर है॥

लांतव-कापिट्ठे दोण्णि पत्थला। तेसिमाउआण संदिट्ठी एसा।

१२ । $\frac{1}{2}$ । १४ । $\frac{1}{2}$ ।

अर्थ—लान्तव-कापिष्ठमें दो पटल हैं। उनमें आयु प्रमाणकी संदृष्टि—ब्रह्महृदयमें १२$\frac{1}{2}$ सा० और लान्तवमें १४$\frac{1}{2}$ सा० है॥

महसुक्को[2] त्ति एक्को चेव पत्थलो सुक्क-महसुक्क-कप्पेसु। तम्मि आउस्स य संदिट्ठी एसा। १६ । $\frac{1}{2}$ ।

अर्थ—शुक्र-महाशुक्र कल्पमें महाशुक्र नामक एक ही पटल है। उस महाशुक्रमें आयुका प्रमाण १६$\frac{1}{2}$ सागर है॥

---

१. ब. ब. माउपमाणाणिमाणे। २. ब. महसुक्के।

सहस्सारओ त्ति एक्को पत्थलो सदर-सहस्सार-कप्पेसु । तत्थ आउवस्स संविट्ठो[1] —१८ । ½ ।

अर्थ—शतार-सहस्रार कल्पमें सहस्रार नामक एक ही पटल है। उसमें आयुका प्रमाण १८½ सा० है ॥

आणद-पाणद-कप्पेसु तिण्णि पत्थला । तेसुमाउअस्स पुधुत्त-कमेण आणिय-संविट्ठो १९ । १९ ।½ । २० ।

अर्थ—आनत-प्राणत कल्पमें तीन पटल हैं। उनमें पूर्वोक्त विधिसे निकाला हुआ आयुका प्रमाण इसप्रकार है—आनतमें १९ सा०, प्राणतमें १९½ सा० और पुष्पकमें २० सा०।

आरण-अच्चुद-कप्पे तिण्णि पत्थला । एवेसुमाउआणं एस संविट्ठो । २० । ½ । २१ । ½ । २२ ।

अर्थ—आरण-अच्युत कल्पमें तीन पटल हैं। इनमें आयु प्रमाणकी संदृष्टि यह है—आनतमें २०½ सा०, आरणमें २१½ सा० और अच्युतमें २२ सागर ॥

एत्तो उवरि सुदंसणो अमोघो सुप्पबुद्धो जसोहरो सुभद्दो सुविसालो सुमणसो सोमणसो पीदिकरो त्ति एदे णव पत्थला गेवेज्जेसु । एदेसुमाउआणं वड्ढि-हाणी णत्थि । पाहेक्कमेक्क-पत्थलस्स पाहण्णियादो । तेसिमाउ[2]-संविट्ठो एसा—२३ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ ।

अर्थ—उससे ऊपर सुदर्शन, अमोघ, सुप्रबुद्ध, यशोधर, सुभद्र, सुविशाल, सुमनस, सौमनस और प्रीतिंकर इसप्रकार ये नौ पटल ग्रैवेयकोंमें हैं। इनमें आयुकी वृद्धि-हानि नहीं है, क्योंकि प्रत्येकमें एक-एक पटलकी प्रधानता है। उनमें आयुकी संदृष्टि यह है—

सुदर्शन २३ सा०, अ० २४ सा०, सु० २५ सा०, यशो० २६ सा०, सुभद्र २७ सा०, सुवि० २८ सा०, सुमनस २९ सा०, सौ० ३० सा० और प्रीतिंकर में ३१ सागर हैं।

अणुदिसेसु आइच्चो णाम एक्को चेव पत्थलो। तम्हि आउअं एत्तियं होदि ३२ ।

---

१. ब. पत्थला, द. क. ब. ड. पत्थला आउ संविट्ठो। २. ब. द. क. ब. ड. तेसिमाउआणं।

अर्थ—नौ अनुदिशोंमें आदित्य नामक एक ही पटल है। इसमें आयु इतनी अर्थात् ३२ सागर प्रमाण होती है।

पंचाणुत्तरेसु सव्वत्थ-सिद्धि-सण्णिदो एक्को चेव पत्थलो। तत्थ विजय[1]-वइजयंत-जयंत-अपराजिदाणं जहण्णाउअस्स समयाधिय-बत्तीस-सागरोवमुक्कस्सं तेत्तीस-सागरोवमाणि। सव्वत्थ-सिद्धि-विमाणम्मि जहण्णुक्कस्सेण तेत्तीस-सागरोवमाणि ॥३३॥

एत्तिओ विसेसो सेसं पुव्वं व वत्तव्वं।

एवमाउगं समत्तं ॥ ८ ॥

अर्थ—पाँच अनुत्तरोंमें सर्वार्थसिद्धि नामक एक पटल है। उसमें विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित विमानोंमें जघन्य आयु एक समय अधिक बत्तीस (३२) सागरोपम और उत्कृष्ट आयु तैंतीस (३३) सागरोपम प्रमाण है। सर्वार्थसिद्धि विमानमें जघन्य एवं उत्कृष्ट आयु तैंतीस (३३) सागरोपम प्रमाण है।

इतनी विशेषता है, शेष पूर्ववत् कहना चाहिए।

इसप्रकार आयुका कथन समाप्त हुआ ॥ ८ ॥

इन्द्रों एवं उनके परिवार देव-देवियों के
विरह (जन्म-मरणके अन्तर) कालका कथन—

सव्वेसिं इंदाणं, ताण[2] - महादेवि - लोयपालाणं।
पडिइंदाणं विरहो, उक्कस्सं होदि छम्मासं ॥५४५॥

अर्थ—सब इन्द्रों, उनकी महादेवियों, लोकपालों और प्रतीन्द्रोंका उत्कृष्ट विरह-काल छह मास है ॥ ५४५ ॥

तेत्तीसामर-सामाणियाण अणुरक्ख-परिस-तिदयाणं।
चउ-मासं वर-विरहो, बोच्छं[3] आणीय-पहुदीणं ॥५४६॥

सोहम्मे छ-मुहुत्ता, ईसाणे चउ-मुहुत्त वर-विरहं।
णव-दिवसं दु-ति-भागो, सणक्कुमारम्मि कप्पम्मि ॥५४७॥

बारस-दिणं ति-भागा, माहिंदे पंच-सात बम्हम्मि।
सोदि-दिणं महसुक्के, सय-दिवसं तह सहस्सारे ॥५४८॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. विजयावइजयंतजयंतअपराजिद। २. ब. ब. ताव। ३. द. ब. वोच्छं।

संखेज्ज-सयं वरिसा, वर-विरहं आणदादिय-चउक्के ।
भणिदं कप्प-गदाणं, एक्कारस-भेद-देवाणं ॥५४९॥

अर्थ—त्रायस्त्रिंश देवों, सामानिकों, तनुरक्षकों और तीनों पारिषदों का उत्कृष्ट विरह काल चार मास है। अनीक आदि देवों का उत्कृष्ट विरहकाल कहते हैं—

यह उत्कृष्ट विरह (काल) सौधर्म में छह मुहूर्त, ईशान में चार मुहूर्त, सनत्कुमार में तीन भागों में से दो भाग सहित नौ (९$\frac{2}{3}$) दिन, माहेन्द्रकल्प में त्रिभाग सहित बारह (१२$\frac{1}{3}$) दिन, ब्रह्मकल्प में पैंतालीस (४५) दिन, महाशुक्र में अस्सी (८०) दिन, सहस्रार में सौ दिन और आनतादिक चार कल्पों में संख्यात सौ वर्ष प्रमाण है। यह उत्कृष्ट विरह काल इन्द्र आदि रूप ग्यारह भेदों से युक्त कल्पवासी देवों का कहा गया है ॥५४६-५४९॥

नोट—सान्तव कल्प के विरह काल को दर्शाने वाली गाथा नहीं है।

कप्पातीद-सुराणं, उक्कस्सं अंतराणि पत्तेक्कं ।
संखेज्ज-सहस्सारिण, कासा गेवेज्जगे अवण्णं ॥५५०॥

अर्थ—नौ ग्रैवेयकों में से प्रत्येक में कल्पातीत देवों का उत्कृष्ट अन्तर संख्यात हजार वर्ष प्रमाण है ॥ ५५० ॥

पल्लासंखेज्जं सो,[1] अणुदिसाणुत्तरेसु उक्कस्सं ।
सव्वे अवरं समयं, जम्मण[2]-मरणाण अंतरयं ॥५५१॥

अर्थ—यह उत्कृष्ट अन्तर अनुदिश और अनुत्तरों में पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। जन्म-मरण का जघन्य अन्तर सब जगह एक समय मात्र है ॥५५१॥

मतान्तरसे विरहकाल—

दुसु दुसु ति-चउक्केसु य, सेसे अणगतराणि[3] अवणम्मि ।
सत्त-दिण-पक्ख-मासा, दु-चउ-छम्मासया कमसो ॥५५२॥

वि ७ । १५ । मा १ । २ । ४ । ६ ।

अर्थ—(सौधर्मादि) दो, दो, तीन चतुष्कों (चार, चार, चार कल्पों) में तथा शेष ग्रैवेयकों आदि में जन्म एवं मरण का अन्तर क्रमशः सात दिन, एक पक्ष, एक मास, दो मास, चार मास और छह मास प्रमाण है ॥५५२॥

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. सा । २. ब. ब. क. ज. ठ, जहण्ण ।

३. ब. ब. क. ज. ड. अणंतराणि अवणाणि ।

इय जम्मण-मरणाणं, उक्कस्से होदि अंतर-पमाणं ।
सव्वेसुं कप्पेसुं, जहण्णए एक्क-समओ य ॥५५३॥

पाठान्तरम् ।

जम्मण-मरणाणंतर-कालो समत्तो ॥६॥

अर्थ—इस प्रकार सब कल्पों में जन्म-मरण का यह अन्तर प्रमाण उत्कृष्ट है। जघन्य अन्तर सब कल्पों में एक समय ही है ॥५५३॥

पाठान्तर ।

जन्म-मरणके अन्तरकाल का कथन समाप्त हुआ ।

[तालिका अगले पृष्ठ पर देखिये]

देव-देवियोंके जन्म-मरणका अन्तर (विरह) काल

नाम	उत्कृष्ट अन्तर	मतान्तर से उत्कृष्ट अन्तर		जघन्य अन्तर
		नाम	अन्तर	
सब इन्द्र महा देवियाँ लोकपाल असीन्द्र	६ मास	×	×	
आयस्त्रिंश सामानिक तनुरक्षक तीनों पारिषद	४ मास	×	×	
सौधर्म कल्प	६ मुहूर्त	सौधर्म	सात दिन	एक समय अन्तर
ईशान कल्प	४ मुहूर्त	ईशान	सात दिन	
सनत्कुमार कल्प	$9\frac{3}{5}$,,	सानत्कुमार	एक पक्ष	
माहेन्द्र कल्प	$12\frac{3}{5}$,,	माहेन्द्र	एक पक्ष	
ब्रह्म कल्प	४५ दिन	ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	एक मास	
लान्तव कल्प	गाथा नहीं है।	लान्तव-कापिष्ट	एक मास	एक समय अन्तर
महाशुक्र कल्प	८० दिन	शुक्र-महाशुक्र	दो मास	
सहस्रार कल्प	१०० दिन	शतार-सहस्रार	दो मास	
आनत प्राणत आरण अच्युत	संख्यात सौ वर्ष	आनत प्राणत आरण अच्युत	चार मास	
नव ग्रैवेयक	संख्यात हजार वर्ष			
अनुदिश अनुत्तर	पल्य के असंख्यातवें-भाग प्रमाण	नव ग्रैवेयक	छह मास	
		नव अनुदिश अनुत्तर	छह मास	

सपरिवार इन्द्रों के आहार का काल—

उवहि-उवमाण-जीवी, वरिस-सहस्सेण दिव्व-अमयमयं ।
भुंजदि मणसाहारं, णिरुवमयं तुट्टि-पुट्टि-करं ॥५५४॥

अर्थ—एक सागरोपम काल पर्यन्त जीवित रहने वाला देव एक हजार वर्ष में दिव्य, अमृतमय, अनुपम और तुष्टि एवं पुष्टि कारक मानसिक आहार करता है ॥५५४॥

जेत्तिय-अलणिहि-उवमा, जो जीवदि तस्स तेत्तिएहिं च ।
वरिस-सहस्सेहि हवे, आहारो पणु-दिणाणि पल्लमिदे ॥५५५॥

अर्थ—जो देव जितने सागरोपम काल पर्यन्त जीवित रहता है, उसके उतने ही हजार वर्षों में आहार होता है। पल्य प्रमाण काल पर्यन्त जीवित रहने वाले देवों के पाँच दिन में आहार होता है ॥५५५॥

पडिइंदाणं सामाणियाण[1] तेत्तीस-सुर-वराणं च ।
भोयण-काल-पमाणं, णिय-णिय-इंदाण-सारिच्छं[2] ॥५५६॥

अर्थ—प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश देवों के आहारकाल का प्रमाण अपने-अपने इन्द्रों के सदृश है ॥५५६॥

इंद-पहुदि-चउण्हं, देवीणं भोयणम्मि जो समओ ।
तस्स पमाण-पदुवण-उवएसो संपहि पणट्ठो ॥५५७॥

अर्थ—इन्द्र आदि चार (इन्द्र, प्रतीन्द्र, सामानिक और त्रायस्त्रिंश इन) की देवियों के भोजन का जो काल है उसके प्रमाण के निरूपण का उपदेश इस समय नष्ट हो गया है ॥५५७॥

सोहम्मिंद-दिगिंदे, सोमम्मि जमम्मि भोयणावसरो ।
सामाणियाण ताणं, पत्तेक्कं पंचवीस-बल-दिवसा ॥५५८॥

५ ।

अर्थ—सौधर्म इंद्र के दिक्पालों में से सोम एवं यम के तथा उनके सामानिकों में से प्रत्येक के भोजन का काल साढ़े बारह (१२½) दिन है ॥५५८॥

तद्देवीणं तेरस-दल-दिवसा होंदि भोयणावसरो ।
वरुणस्स कुबेरस्स य, तस्सामंताण ऊणपण-पक्खे ॥५५९॥

॥ १५ ॥

---

१. ब. ज. क. ज. ठ. सामाणियाण तोसो । २. ब. क. ज. ठ. सारिच्छा ।

अर्थ—उन (सोम एवं यम लोकपाल और इनके सामानिक देवों) की देवियों के आहार का काल साढ़े छह (६½) दिन है और वरुण एवं कुबेर लोकपाल तथा इनके सामानिक देवों के आहार का काल कुछ कम एक पक्ष (१५ दिन) है ॥५५९॥

पण्णरस-बल-विहीणं, ताणं देवीण होदि तक्कालो ।
ईसाणिंद-विणिंदे, सोमम्मि जमम्मि सक्क-वरुण समो ॥५६०॥

अर्थ—उन (सौधर्मेन्द्र के वरुण एवं कुबेर लोकपाल और उनके सामानिक देवों) की देवियों का आहार काल साढ़े सात (७½) दिन है । ईशानेन्द्र के सोम एवं यम लोकपालों का आहार काल सौधर्मेन्द्र के वरुण लोकपाल सदृश (कुछ कम १५ दिन) है ॥५६०॥

किंचूणमेक्क-पक्खं, भोयण-कालो कुबेर-णामस्स ।
तद्देवीणं होदि हु, सामण्णं सोम-देवीणं ॥५६१॥

। १५ । १५ ।

अर्थ—(ईशानेन्द्र के) कुबेर नामक लोकपाल और उनकी देवियों का तथा सामानिक देवों की देवियों तथा (यम व) सोम की देवियों का आहार काल कुछ कम १५ दिन है ॥५६१॥

वरुणस्स असण-कालो, होदि कुबेरादु किंचि-अधिरित्तो ।
सेसाहार - पमाणं, उवएसो संपहि पणट्ठो ॥५६२॥

१५ ।

उवमाहार-काल-समत्तो ॥१०॥

अर्थ—वरुण लोकपालका आहार काल कुबेरके आहार-कालसे कुछ अधिक अर्थात् पन्द्रह (१५) दिन है । शेष (सानत्कुमार आदि इन्द्र उनके परिवारके देव-देवियों) के आहार कालके प्रमाणका उपदेश इससमय नष्ट हो गया है ॥५६२॥

आहार-काल समाप्त हुआ ॥१०॥

देवोंके श्वासोच्छ्वासका कथन—

पढमे बिदए तुरिमे, बम्हादिसु चउसु आवह-चउक्के ।
हेट्ठिम - मज्झिम, उवरिम, गेवेज्जेसुं च सेसेसुं ॥५६३॥
जिय जिय भोयण-काले, जं परिमाणं सुराण पण्णत्तं ।
तम्मेत्त मुहुत्ताणि, आणापाणाण - संचारो ॥५६४॥

उस्सासो समत्तो ॥११॥

अर्थ—पहले दूसरे युगल, ब्रह्मादि चार और आनतादि चार, इन बारह कल्पोंमें, अधस्तन, मध्यम, उपरिम ग्रैवेयकों में तथा शेष (अनुदिश और अनुत्तर) विमानों में देवों के अपने-अपने भोजन के काल का जो प्रमाण कहा गया है उसमें उतने प्रमाण मुहूर्त में श्वासोच्छ्वास का संचार होता है ॥५६३-५६४॥

देवोंके शरीरका उत्सेध—

देवाणं उच्छेहो, हत्था - सत्त - छ - पंच - चत्तारि ।
कमसो हवेदि तत्तो, पत्तेक्कं हत्थ - दल - हीणा ॥५६५॥

७ । ६ । ५ । ४ । ३½ । ३ । २½ । २ । १½ । १ ।

अर्थ—देवोंके शरीरका उत्सेध क्रमशः सात, छह, पांच और चार हाथ प्रमाण है, इसके आगे प्रत्येक स्थान पर अर्ध-अर्ध हाथ हीन होता गया है ॥५६५॥

विशेषार्थ—देवों के शरीर की ऊँचाई सौधर्म कल्प में ७ हाथ, ईशान कल्पमें ६ हाथ, सनत्कुमार में ५ हाथ, माहेन्द्रकल्पमें ४ हाथ, ब्रह्म कल्प से सहस्रार कल्प पर्यन्त ३½ हाथ, आनतादि चार कल्पोंमें ३ हाथ, अधोग्रैवेयकमें २½ हाथ, मध्यम में २ हाथ, उपरिममें १½ हाथ और अनुदिश एवं अनुत्तर विमानों के देवों के शरीर की ऊँचाई एक हाथ प्रमाण है ॥

दुसु दुसु चउसु दुसु सेसे सत्तच्छ - पंच - चत्तारि ।
तत्तो हत्थ - दलेणं, हीणा सेसेसु पुव्वं व ॥५६६॥

७ । ६ । ५ । ४ । ३½ । ३ । २½ । २ । १½ । १ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—देवोंके शरीरकी ऊँचाई दो अर्थात् सौधर्मैशानमें ७ हाथ, दो (सानत्कुमार-माहेन्द्र) में ६ हाथ, चार (ब्रह्मादि चार) में ५ हाथ और दो (शुक्र-महाशुक्र) में ४ हाथ है। शेष कल्पोंमें अर्ध-अर्ध हस्त प्रमाण हीन होता गया है। अर्थात् शतार-सहस्रारमें ३½ हाथ और आनतादि चार में ३ हाथ प्रमाण है। शेष (कल्पातीत विमानों) में पूर्वके सदृश अर्थात् अधोग्रैवेयकमें २½ हाथ, मध्यम ग्रै० में २ हाथ और उपरिम ग्रै० में १½ है। शेष विमानोंमें पूर्ववत् अर्थात् अनुदिश और अनुत्तर विमानोंमें शरीरका उत्सेध एक हाथ प्रमाण है ॥५६६॥

पाठान्तर ।

एदे सहाव - जादा, वेहुच्छेहो हुवंति देवाणं ।
विकिरियाहि ताणं, विचित्त - भेदा विराजंति ॥५६७॥

उच्छेहो गदो ॥१२॥

अर्थ—इसप्रकार देवोंके शरीरका यह उत्सेध स्वभावसे उत्पन्न होता है। उनका विक्रियासे उत्पन्न शरीरका उत्सेध नाना प्रकारसे शोभायमान होता है ॥५६७॥

इसप्रकार उत्सेधका कथन समाप्त हुआ ॥१२॥

देवायु-बन्धक-परिणाम—

आउव - बंधण - काले, जलराई तह य.....।
सरिसा - हलिदराए, कोपह - पहुदीण उदयम्मि ॥५६८॥

नोट—ताडपत्र खण्डित होने से गाथा का अभिप्राय बोध-गम्य नहीं है।

एवं विह-परिणामा, मणुवा-तिरिया य तेसु कप्पेसु।
णिय णिय जोगट्ठाणे, ताहे बंधंति देवाऊ ॥५६९॥

अर्थ—इसप्रकारके परिणामवाले मनुष्य और तिर्यंच उन-उन कल्पोंको देवायु बाँधते हैं ॥५६९॥

सम-दम-जम-णियम-जुदा, णिद्दंडा णिम्ममा णिरारंभा।
ते बंधंते आऊ, इंदादि - महड्ढियादि - पंचाणं ॥५७०॥

अर्थ—जो शम (कषायों का शमन), दम (इन्द्रियों का दमन), यम (जीवन पर्यन्त का त्याग) और नियम आदि से युक्त, णिदण्ड अर्थात् मन, वचन और काय को वश में रखने वाले, निर्ममत्व परिणाम वाले तथा आरम्भ आदि से रहित होते हैं वे साधु इन्द्र आदि की आयु अथवा पाँच अनुत्तरों में ले जाने वाली महर्द्धिक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७०॥

सण्णाण-सवेहि-जुदा, मद्दव-विणयादि संजुदा केई।
गारव-ति-सल्ल-रहिदा, बंधंति महड्ढिग-सुराउं ॥५७१॥

अर्थ—सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक् तप से युक्त, मार्दव और विनय आदि गुणों से सम्पन्न, तीन (ऋद्धि-गारव, रस-गारव और साता) गारव तथा तीन (मिथ्या, माया और निदान) शल्यों से रहित कोई-कोई (साधु) महा-ऋद्धिधारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७१॥

ईसो मच्छर-भावं, भय-लोभ-वसं च जे ण वच्चंति।
विविह-गुणा वर-सीला, बंधंति महड्ढिग-सुराणं ॥५७२॥

अर्थ—जो ईर्षा, मात्सर्यभाव, भय और लोभ के वशीभूत होकर वर्तन नहीं करते हैं तथा विविध गुण और श्रेष्ठ शील से संयुक्त होते हैं, वे (श्रमण) महा-ऋद्धि धारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७२॥

कंचण-पासाणेसुं, सुह-दुक्खेसुं पि मित्त-अरिवेसुं ।
समया समाण-भावा, बंधंति महड्ढिग-सुराउं ॥५७३॥

अर्थ—स्वर्ण-पाषाण, सुख-दुःख और मित्र शत्रु में समता भाव रखने वाले श्रमण महा-ऋद्धिधारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७३॥

देहेसुं णिरवेक्खा, णिब्भर-वेरग्ग-भाव संजुत्ता ।
रागादि-दोस-रहिदा, बंधंति महड्ढिग-सुराउं ॥५७४॥

अर्थ—शरीर से निरपेक्ष, अत्यन्त वैराग्य भावों से युक्त और रागादि दोषों से रहित (श्रमण) महा-ऋद्धिधारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७४॥

उत्तर-मूल-गुणेसुं, समिदि-सुबंभे सज्झाण-जोगेसुं ।
णिच्चं पमाद-रहिदा, बंधंति महड्ढिग-सुराउं ॥५७५॥

अर्थ—जो श्रमण मूल और उत्तर गुणों में, (पाँच) समितियों में, महाव्रतों में धर्म एवं शुक्लध्यान में तथा योग आदि की साधना में सदैव प्रमाद रहित वर्तन करते हैं वे महा-ऋद्धिधारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७५॥

वर-मज्झ-अवर-पत्ते, ओसह-आहारभय-विण्णाणं ।
दाणाणु[1] ..... बंधंति देवाउं ॥५७६॥

अर्थ—जो उत्तम, मध्यम और जघन्य पात्रों को औषधि, आहार, अभय और ज्ञान दान [देते हैं वे मध्यम ऋद्धिधारक] देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७६॥

लज्जा मज्जादाहि, मज्झिम - भावेहि - संजुदा केई ।
उवसम-पहुदि-समग्गा, बन्धंते मज्झिम-मड्ढिक-सुराउं ॥५७७॥

अर्थ—लज्जा और मर्यादा रूप मध्यम भावों से युक्त तथा उपशम प्रभृति भावों से संयुक्त कई मध्यम ऋद्धि-धारक देवों की आयु बाँधते हैं ॥५७७॥

पचलिद-सण्णाणाणे, चारित्ते बहु-किलिट्ठ-भाव-जुदा ।
अण्णा[2] ....., बंधंते अप्पड्ढि - असुराऊ ॥५७८॥

अर्थ—मनादिसे प्रकटित संज्ञाओं एवं अज्ञानके कारण अपने चारित्रमें अत्यन्त विलक्षयमान भाव संयुक्त अन्य कई (जीव) अल्पर्द्धिक देवोंकी आयु बाँधते हैं ॥५७८॥

---

१ ताडपत्र यहाँ टूटा हुआ है। २. ताडपत्र यहाँ टूटा हुआ है।

सबल-चरित्ता कूरा, उम्मग्गत्था-णिदाण-कद-भावा ।
मंद - कसायाणुरदा, बंधंते[1] [2]अप्पइड्ढि - असुराउं ॥५७६॥

अर्थ—दूषित चारित्रवाले, क्रूर, उन्मार्गमें स्थित, निदान भाव सहित और मन्द कषायोंमें अनुरक्त जीव अल्पर्द्धिक देवोंकी आयु बाँधते हैं ॥५७६॥

देवोंमें उत्पद्यमान जीवोंका स्वरूप—

दसपुव्व-धरा सोहम्म-पहुदि सव्वट्ठसिद्धि - परियंतं ।
चोद्दसपुव्व - धरा तह, लंतव - कप्पादि वच्चंते ॥५८०॥

अर्थ—दसपूर्व धारी जीव सौधर्मकल्पसे सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त तथा चौदह पूर्वधारी लान्तव कल्पसे सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जाते हैं ॥५८०॥

सोहम्मादी - अच्चुद - परियंतं जंति देसवद-जुत्ता ।
चउ-विह-दाण-पयट्टा, अकसाया पंचगुरु - भत्ता ॥५८१॥

अर्थ—चार प्रकारके दानमें प्रवृत्त, कषायोंसे रहित एवं पंच परमेष्ठियोंकी भक्तिसे युक्त, ऐसे देशव्रत संयुक्त जीव सौधर्म स्वर्गसे अच्युत स्वर्ग पर्यन्त जाते हैं ॥५८१॥

सम्मत्त-णाण-अज्जव[3]-लज्जा-सोलादिएहि परिपुण्णा ।
जायंते इत्थीओ, जा अच्चुद - कप्प - परियंतं ॥५८२॥

अर्थ—सम्यक्त्व, ज्ञान, आर्जव, लज्जा एवं शीलादिसे परिपूर्ण स्त्रियाँ अच्युत कल्प पर्यन्त जाती हैं ॥५८२॥

जिण-लिंग-धारिणो जे, उक्किट्ठ-[4]तवस्समेण संपुण्णा ।
ते जायंति अभव्वा, उवरिम - गेवेज्ज - परियंतं ॥५८३॥

अर्थ—जो अभव्य जीव जिन-लिङ्गको धारण करते हैं और उत्कृष्ट तपके श्रमसे परिपूर्ण हैं वे उपरिम-ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५८३॥

परदो अच्चुद[5]-कप्प-तव-संजम-णाण-चरण-संपण्णा ।
णिग्गंथा जायंते, भव्वा सव्वट्ठसिद्धि - परियंतं ॥५८४॥

---

१ क. ख. बद्धंते । २. ब. क. ज. ठ. अप्पड्ढि ज ।
३. क, क, ठ. अज्जवसीला, ब. ज. अज्जावसीला ।
४. ब. ज. क. ज. तवासमेण । ५. ब. ब. ज. ठ. अंचदप्प ।

अर्थ—पूजा, व्रत, तप, दर्शन, ज्ञान और चारित्रसे सम्पन्न निर्ग्रन्थ भव्य जीव इससे (उपरिम ग्रैवेयक से) आगे सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५८४॥

चरका परिवज्ज-धरा, मंद - कसाया पियंवदा केई ।
कमसो भावण - पहुदी, जम्मंते बम्ह - कप्पंतं ॥५८५॥

अर्थ—मन्द-कषायी एवं प्रिय बोलने वाले कितने ही चरक (चार्वाक) (साधु विशेष) और परिव्राजक क्रमशः भवनवासियोंको आदि लेकर ब्रह्मकल्प पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५८५॥

जे पंचेंदिय-तिरिया, सण्णी हु अकाम-णिज्जरेण जुदा ।
मंद - कसाया केई, जंति[1] सहस्सार - परियंतं ॥५८६॥

अर्थ—जो कोई पंचेन्द्रिय संज्ञी तिर्यञ्च अकाम-निर्जरासे युक्त और मन्द कषायी हैं, वे सहस्रार कल्प पर्यन्त उत्पन्न होते हैं ॥५८६॥

तणुदंडणादि-सहियाजीवा जे अमंद-कोह-जुदा ।
कमसो भावण-पहुदी, केई जम्मंति अच्चुदं जाव ॥५८७॥

अर्थ– जो तनुदण्डन अर्थात् कायक्लेश आदि सहित और तीव्र क्रोध से युक्त है ऐसे कितने ही आजीवक-साधु क्रमशः भवनवासियों से लेकर अच्युत स्वर्ग पर्यन्त जन्म लेते हैं ॥५८७॥

आ ईसाणं कप्पं, उप्पत्ती होदि देव-देवीणं ।
तप्परदो उप्पत्ती, देवाणं केवलाणं पि ॥५८८॥

अर्थ—ईशान कल्प पर्यन्त देवों और देवियों (दोनों) की उत्पत्ति होती है। इससे आगे केवल देवों की ही उत्पत्ति है ॥५८८॥

ईसाण - लंतवच्चुद - कप्पंतं जाव होंति कंदप्पा ।
किब्बिसिया अभियोगा, णिय-कप्प-जहण्ण-ठिदि-सहिया ॥५८९॥

एवमायुग-बंधं[2] समत्तं ॥

अर्थ– कान्दर्प, किल्बिषिक और आभियोग्य देव अपने-अपने कल्पकी जघन्य स्थिति सहित क्रमशः ईशान, लान्तव और अच्युत कल्प पर्यन्त होते हैं ॥५८९॥

इसप्रकार आयु-बन्ध का कथन समाप्त हुआ ॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. जाव। २. द. ब. क. ज. ठ. बंध समत्ता।

उत्पत्ति समय में देवों की विशेषता—

जायंते सुरलोए, उववादपुरे महारिहे सयणे ।
जादा[1] य मुहुत्तेणं, छप्पज्जत्तीओ पावंति ॥५९०॥

अर्थ—ये देव सुरलोक के भीतर उपपादपुर में महार्घ शय्या पर उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होने के पश्चात् एक मुहूर्त में ही छह पर्याप्तियाँ भी प्राप्त कर लेते हैं ॥५९०॥

णत्थि णह-केस-लोमा, ण चम्म-मंसा ण लोहिद-वसाओ ।
अट्ठी ण मुत्त-पुरीसं, ण सिराओ देव-संघडणे ॥५९१॥

अर्थ—देवों के शरीर में न नख, केश और रोम होते हैं; न चमड़ा और मांस होता है; न रुधिर और चर्बी होती है; न हड्डियाँ होती हैं; न मल-मूत्र होता है और न नसें ही होती हैं ॥५९१॥

वण्ण-रस-गंध-फासं, अट्ठसय-वेगुव्व-दिव्व-अग्गाओ ।
गेण्हंति[2] देवो सोहू, ? उवचिद-कम्माणु-भावेणं ॥५९२॥

अर्थ—संचित (पुण्य) कर्म के प्रभाव से और अतिशय वैक्रियिक रूप दिव्य बन्ध होने के कारण देव उत्तम—वर्ण, रस, गन्ध और स्पर्श ग्रहण करते हैं ॥५९२॥

उप्पण्ण-सुर-विमाणे, पुव्वमणुग्घाडिदं कवाड-जुगं ।
उग्घडदि तम्मि काले, पसरदि आणंद-भेरि-रवं ॥५९३॥

एवमुप्पत्ती गदा ॥

अर्थ—देव विमान में उत्पन्न होने पर पूर्व में अनुद्घाटित (बिना खोले) कपाट-युगल खुलते हैं और फिर उसी समय आनन्द भेरी का शब्द फैलता है ॥५९३॥

इसप्रकार उत्पत्ति का कथन समाप्त हुआ ॥

भेरी के शब्द श्रवण के बाद होने वाले विविध क्रिया-कलाप

सोदूण भेरि-सद्दं, जय जय णंद त्ति विविह-घोसेणं ।
एंति परिवार-देवा, देवीओ रत्त-हिदयाओ ॥५९४॥

अर्थ—भेरी का शब्द सुनकर अनुराग युक्त हृदय वाले परिवारों के देव और देवियाँ 'जय जय, नन्द' इसप्रकार के विविध शब्दोच्चार के साथ आते हैं ॥५९४॥

---

१. ब. क. ज. ठ. जादा य । २. ब. गेण्हीदि आणंदि, क. ज. ठ. गेण्हंदि ।

वायंति किब्बिस-सुरा, जयघंटा पडह-मद्दल-प्पहुदि ।
संगीय - णच्चणाइं, पप्पव - देवा पकुव्वंति ॥५९५॥

अर्थ—किल्विष देव जयघण्टा, पटह एवं मर्दल आदि बजाते हैं और पप्पव (?) देव संगीत एवं नृत्य करते हैं ॥५९५॥

देवी - देव - समाजं, दट्ठूणं तस्स कोदुगं होदि ।
तावे कस्स विभंगं, कस्स वि ओही पुरवि णाणं ॥५९६॥

अर्थ—देवों और देवियों के समूह देखकर उस देव को कौतुक होता है। उस समय किसी (देव) को विभङ्ग और किसी को अवधिज्ञान प्रगट होता है ॥५९६॥

णादूण देवलोयं, अप्प-फलं आगमेदमिदि केई ।
मिच्छाइट्ठी देवा, गेण्हंति विसुद्ध-सम्मत्तं ॥५९७॥

अर्थ—अपने (पूर्व पुण्यके) फल से यह देवलोक प्राप्त हुआ है, इस प्रकार जानकर कोई मिथ्यादृष्टि देव विशुद्ध सम्यक्त्व को ग्रहण करते हैं ॥५९७॥

तादे देवी-णिवहो, आणंदेणं महाविभूदीए ।
एदाणं देवाणं भरणं[1] सेसं पविट्ठ-मणो ॥५९८॥

अर्थ—फिर देवी-समूह आनन्द पूर्वक हर्षित मन होकर महाविभूति के साथ इन देवों का भरण-पोषण करते हैं ॥५९८॥

जिन-पूजा का प्रकरण—

जिण-पूजा-उज्जोगं, कुणंति[2] केई महाविभूदीए ।
केई पुव्विल्लाणं, देवाणं ओहण - वसेणं ॥५९९॥

अर्थ—कोई देव महाविभूति के साथ स्वयं ही जिनपूजा का उद्योग करते हैं और कितने ही देव पूर्वोक्त देवों के उपदेश वश जिन-पूजा करते हैं ॥५९९॥

कादूण तहे ण्हाणं, पविसिय अभिसेय-मंडवं दिव्वं ।
सिंहासणाभिरूढं, देवा कुव्वंति अभिसेयं ॥६००॥

अर्थ—ह्रद में स्नान करके दिव्य अभिषेक-मण्डप में प्रविष्ट हो सिंहासन पर आरूढ़ हुए उस नवजात देवका अन्य (पुराने) देव अभिषेक करते हैं ॥६००॥

---

१. द. क. ज. ठ. भरंति। २. द. क. कुव्वंति।

भूसणसालं पविसिय, वर-रयण-विभूसणाणि दिव्वाणि ।
गहिदूण परम-हरिसं, अरिहा कुव्वंति वेसपहं ॥६०१॥

अर्थ—भूषणशाला में प्रवेश कर और दिव्य उत्तम रत्न-भूषणों को लेकर (वे) उत्कृष्ट हर्ष से परिपूर्ण हो (उनकी) वेषभूषा करते हैं ॥६०१॥

तत्तो ववसायपुरं, पविसिय अभिसेय-दिव्व-पूजाणं ।
जोग्गाइं दव्वाइं, गेण्हिय परिवार-संजुत्ता ॥६०२॥

णच्चंत-विचित्त-धया, वर-चामर-छत्त-सोहिल्ला ।
णिब्भर-भत्ति-पयट्टा, वच्चंति जिणिंद-भवणाणि ॥६०३॥

अर्थ—तत्पश्चात् वे (नवजात) देव व्यवसायपुर में प्रवेशकर अभिषेक और पूजा के योग्य दिव्य द्रव्यों को ग्रहणकर परिवार से संयुक्त होकर अतिशय भक्ति में प्रवृत्त हो नाचती हुई विचित्र ध्वजाओं सहित, उत्तम चँवर एवं सुन्दर छत्र से शोभायमान जिनेन्द्र-भवन में जाते हैं ॥६०२-६०३॥

दट्ठूण जिणिंदपुरं, वर-मंगल-तूर-सद्द-हलबोलं ।
देवा देवी-सहिदा, कुव्वंति[1] पदाहिणं पणदा ॥६०४॥

अर्थ—देवियों सहित वे देव उत्तम मंगल-वादित्रों के शब्द से मुखरित जिनेन्द्रपुर को देखकर नम्र हो प्रदक्षिणा करते हैं ॥६०४॥

छत्तत्तय - सिंहासण - भामण्डल-चामरादि-चारुणं ।
जिणपडिमाणं पुरदो, जय-जय-सद्दं पकुव्वन्ति ॥६०५॥

अर्थ—पुनः वे देव तीन छत्र, सिंहासन, भामण्डल और चामरादि से (संयुक्त) सुन्दर जिन-प्रतिमाओं के आगे जय-जय शब्द उच्चरित करते हैं ॥६०५॥

थोसूण थुदि-सएहिं, जिणिंद-पडिमाओ भत्ति-भरिद-मणा ।
एदाणं अभिसेए, तत्तो कुव्वंति पारंभं ॥६०६॥

अर्थ—वे देव भक्ति-युक्त मन से सैकड़ों स्तुतियों द्वारा जिनेन्द्र-प्रतिमाओं की स्तुति करने के पश्चात् उनका अभिषेक प्रारम्भ करते हैं ॥६०६॥

खीरद्धि-सलिल-पूरिद-कंचण-कलसेहिं अट्ठ सहस्सेहिं ।
देवा जिणाभिसेयं महाविभूदीए कुव्वंति ॥६०७॥

---

१. ब. ज. ठ. कुणंति ।

अर्थ—वे देव क्षीर समुद्र के जल से पूर्ण एक हजार आठ सुवर्ण-कलशों के द्वारा महा-विभूति के साथ जिनाभिषेक करते हैं ।।६०७।।

वज्जंतेसुं महत्त-जयघंटा-पडह-काहलादीसुं[1] ।
दिव्वेसुं तूरेसुं, ते जिण-पूजं पकुव्वंति ।।६०८।।

अर्थ—मर्दल, जयघण्टा, पटह और काहल आदिक दिव्य वादित्रों के बजते रहते वे देव जिन-पूजा करते हैं ।।६०८।।

भिंगार-कलस-दप्पण-छत्तत्तय-चमर-पहुदि-दव्वेहिं ।
पूजं कादूण तदो, जल-गंधादीहि अच्चंति ।।६०९।।

अर्थ—वे देव भृङ्गार, कलश, दर्पण, तीन छत्र और चामरादि द्रव्यों से पूजा कर लेने के पश्चात् जल-गन्धादिक से अर्चन करते हैं ।।६०९।।

तत्तो हरिसेण धुरा, णाणाविह-णाडयाइं दिव्वाइं ।
बहु-रस-भाव-जुदाइं, णच्चंति विचित्त-भंगीहि ।।६१०।।

अर्थ—तत्पश्चात् वे देव हर्षपूर्वक विचित्र भंगियों से नाना रसों एवं भावों से युक्त नाना प्रकार के दिव्य नाटक करते हैं ।।६१०।।

सम्माइट्ठी देवा, पूजा कुव्वंति जिणवराण सया ।
कम्मक्खवण-णिमित्तं, णिब्भर-भत्तीए भरिद-मणा ।।६११।।

अर्थ—सम्यग्दृष्टिदेव कर्म-क्षयके निमित्त सदा मनमें अतिशय भक्ति पूर्वक जिनेन्द्रों की पूजा करते हैं ।।६११।।

मिच्छाइट्ठी देवा, णिच्चं अच्चंति जिणवर-प्पडिमा ।
कुल-देवदाओ इअ किर, मण्णंता अण्ण-मोहण-वसेणं ।।६१२।।

अर्थ—मिथ्यादृष्टि देव अन्य देवों के सम्बोधन से 'ये कुल देवता हैं' ऐसा मानकर नित्य जिनेन्द्र प्रतिमाओं की पूजा करते हैं ।।६१२।।

देवों का सुखोपभोग—

इय पूजं कादूणं, पासादेसुं णिएसु संतूणं ।
सिंहासणाहिरूढा, सेविज्जंते सुरेहिं देविंदा ।।६१३।।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. काहलसहिदेसुं ।

अर्थ—इसप्रकार पूजा करके और अपने प्रासादोंमें जाकर वे देवेन्द्र सिंहासन पर आरूढ़ होकर देवों द्वारा सेवे जाते हैं ॥६१३॥

बहुविह-विगुव्वणाहिं, सावण्ण-विलास-सोहमाणाहिं ।
रदि[1]-करण - कोविदाहिं, अच्छरसाहिं[2] रमंति समं ॥६१४॥

अर्थ—वे इन्द्र बहुत प्रकारकी विक्रिया सहित, सावण्य-विलाससे शोभायमान और रति करनेमें चतुर ऐसी उत्तम अप्सराओंके साथ रमण करते हैं ॥६१४॥

वीणा - वेणु - [3]झल्लीओ, सत्तरसेहिं विभूसिदं गीदं ।
लासियाइं णच्चणाइं, सुणंति पेच्छंते सयल - सुरा ॥६१५॥

अर्थ— समस्त देव वीणा एवं बांसुरीकी ध्वनि तथा सात स्वरोंसे विभूषित गीत सुनते हैं और विलासपूर्ण नृत्य देखते हैं ॥६१५॥

चामीयर-रयणमए, सुगंध-धूवादि-वासिदे विमले ।
देवा देवीहिं समं, रमंति दिव्वम्मि पासादे ॥६१६॥

अर्थ—उक्त देव सुवर्ण एवं रत्नोंसे निर्मित और सुगन्धित धूपादिसे सुवासित विमल दिव्य प्रासादमें देवियोंके साथ रमण करते हैं ॥६१६॥

संते ओहीणाणे, अण्णोण्णुप्पण्ण-पेम-सूढ-[4]मणा ।
कामंधा गद - कालं, देवा देवीओ ण विंदंति ॥६१७॥

अर्थ—अवधिज्ञान होनेपर परस्पर उत्पन्न हुए प्रेममें मूढ़-मन होनेसे वे देव और देवियाँ कामान्ध होकर बीतते हुए कालको नहीं जानते हैं ॥६१७॥

गब्भावदार[5]-जम्मेसु, उत्तर - देहा सुराण णच्चंति ।
जम्मण - ठाणेसु सुहं, मूल - सरीराणि चेट्ठंति ॥६१८॥

अर्थ—गर्भ और जन्मादि कल्याणकोंमें देवोंके उत्तर शरीर जाते हैं। उनके मूल शरीर सुख-पूर्वक जन्म स्थानोंमें स्थित रहते हैं ॥६१८॥

अवरि विसेसो एसो, सोहम्मीसाण - आद - देवीणं ।
वच्चंति मूल-देहा, णिय-णिय-कप्पामराण पासम्मि ॥६१९॥

---

१. द. ब. रदा । २. ब. ब. अच्छराहि । ३. द. ब. झल्लीओ । ४. द. ब. क. ब. ठ. मूढ । ५ द ब. रंभावदार ।

सुह-पक्कला समत्ता ॥

अर्थ—विशेष यह है कि सौधर्म और ईशान कल्पमें उत्पन्न हुई देवियोंके मूल शरीर अपने-अपने कल्पके देवोंके पास जाते हैं ॥६१९॥

सुख प्ररूपणा समाप्त हुई।

तमस्कायका निरूपण—

अरुणवर-दीव-बाहिर-जगदीओ जिणवरुत्त-संखाणि।
गंतूण जोयणाणि, अरुण - समुद्दस्स पणिधीए ॥६२०॥
एक्क-दुग-सत्त-एक्के, अंक-कमे जोयणाणि उवरि गदूं।
गंतूणं बलएयं, चेट्ठेदि तमो [1]तमक्कामो ॥६२१॥[2]

१७२१।

अर्थ—(नन्दीश्वर समुद्रके आगे ९ वें) अरुणवरद्वीपकी बाह्य जगतीसे जिनेन्द्रोक्त संख्या प्रमाण योजन जाकर अरुण समुद्रके प्रणिधि भागमें अंक-क्रमसे एक, दो, सात और एक अर्थात् एक हजार सात सौ इक्कीस (१७२१) योजन प्रमाण ऊपर आकाशमें जाकर वलयरूपसे तमस्काय (अन्धकार) स्थित है ॥६२०-६२१॥

आदिम-चउ-कप्पेसुं, वेस- वियप्पाणि तेसु कादूणं।
उवरि-गद-बम्ह-कप्प[1]-ण्हदिमदय-पविसि-तल पत्तो ॥६२२॥

अर्थ—(यह तमस्काय) आदिके चार कल्पोंमें वेस-विकल्पोंको अर्थात् कहीं-कहीं अन्धकार उत्पन्न करके उपरिगत ब्रह्म-कल्प सम्बन्धी प्रथम इन्द्रकके प्रणिधितल भागको प्राप्त हुआ है ॥६२२॥

विशेषार्थ—नन्दीश्वर समुद्रको वेष्टित कर नौवां अरुणवर द्वीप है और अरुणवर द्वीपको वेष्टितकर नौवां अरुणवर समुद्र है। मध्यलाकार स्थित इस समुद्रका व्यास १३१०७२००००० योजन प्रमाण है।

अरुणवर द्वीपकी बाह्य जगती अर्थात् अरुणवर समुद्रकी अभ्यन्तर जगतीसे १७२१ योजन प्रमाण दूर जाकर आकाशमें अरिष्ट नामक अन्धकार वलयरूपसे स्थित है और प्रथम चार कल्पोंको (एकदेश) आच्छादित करता हुआ पाँचवें ब्रह्म कल्पमें स्थित अरिष्ट नामक इन्द्रकके तल भागमें एकत्रित होता है। उस जगह इसका आकार मुर्गेकी कुटी (कुक्कुड) के सदृश होता है। अथवा जैसे

---

१. द. ब. क. ज. ठ. तमक्कादि।

२. द. ब. क. ज. ठ. कप्पं पहविदा य पत्तविदल पत्ते।

मूसा भरनेकी बुरजी नीचे गोल होकर क्रमशः ऊपरको फैलकर बढ़ती हुई पुनः शिखाऊरूप ऊपर जाकर घट जाती है, उसीप्रकार इस अन्धकार स्कन्धकी रचना है। इस अरिष्ट विमानके तल भागसे अक्ष-पाटकके आकार वाली अथवा यमका वेदिका सदृश होता हुआ यह तम आठ श्रेणिरूपोंमें विभक्त हो जाता है। मृदंग सदृश आकारवाली ये तम पंक्तियां चारों दिशाओंमें दो-दो होकर विभक्त एवं निरन्ध होती हुई लोक-पर्यन्त चली गई हैं। उन अन्धकार पंक्तियोंके अन्तरालमें ईशानादि विदिशाओं और दिशाओंमें सारस्वत आदिक लोकान्तिक देवगण अवस्थित रहते हैं।

नोट—यह विशेषार्थ लोक विभाग और तत्त्वार्थ श्लोकवार्तिकालंकार पंचम खण्डके आधार पर लिखा है।

मूलम्मि रुंद-परिहो, हवेदि संखेज्ज-जोयणा तस्स।
मज्झम्मि असंखेज्जा, उवरि तत्तो असंखेज्जो ॥६२३॥

अर्थ—उस (तम) की विस्तार परिधि मूलमें संख्यात योजन, मध्यमें असंख्यात योजन और इससे ऊपर असंख्यात योजन है ॥६२३॥

संखेज्ज - जोयणाणि, तमकायादो दिसाए पुव्वाए।
गच्छिय [1]संडस-मुखायार-धरो दक्खिणुत्तरायामो ॥६२४॥
तामेव किण्हराई, पच्छिमभागे वि तारिसो[2] य तमो।
दक्खिण-उत्तर-भागे, तम्मेसं संधुव वीहि-चउरस्सा ॥६२५॥
एक्केक्क - किण्हराई, हवेदि पुव्वावरट्ठिदायामा।
एदाओ राजीओ, णियमा ण छिवंति अण्णोण्णं ॥६२६॥

अर्थ—तमस्कायसे पूर्व दिशामें संख्यात योजन आकर षट्कोण आकारको धारण करने वाला और दक्षिण-उत्तर लम्बा कृष्णराजी नामक तम है। पश्चिम भागमें भी वैसा ही अंधकार है। दक्षिण एवं उत्तर भागमें उतनी प्रमाण आयत, चतुष्कोण और पूर्व-पश्चिम आयामवाली एक-एक कृष्ण-राजी स्थित है। ये राजियां नियमसे परस्पर एक दूसरेको स्पर्श नहीं करती हैं॥

संखेज्ज-जोयणाणि, राजीहिंतो दिसाए[3] पुव्वाए।
गंतूणब्भंतरए, राजी किण्हा य वीहि-चउरस्सा ॥६२७॥
उत्तर-दक्खिण-वीहा, दक्खिण-राजि[4] ठिदा य छिविदूणं।
पच्छिम-दिसाए उत्तर-राजिं छिविदूण होदि अण्ण-तमो ॥६२८॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. संदस। २. द. ब. क. ज. ठ तारिसा।
३. द. ब. दिस्साए। ४. द. ब. क. ज. ठ. राजो दिट्ठो णविदूण।

अर्थ—राजियों से संख्यात योजन पूर्व दिशा में अभ्यन्तर भाग में जाकर आयत-चतुरस्र और उत्तर-दक्षिण दीर्घ कृष्ण-राजी है जो दक्षिण राजी को छूती है। पश्चिम दिशा में उत्तर राजी को छूकर अन्यतम है ॥६२७-६२८॥

संखेज्ज-जोयणाणि, राजीवो दक्खिणाए आसाए।
गंतूणब्भंतरए, एक्कं चिय किण्ह[1] - राजिमं होई ॥६२९॥

अर्थ—राजी से दक्षिण दिशा में आभ्यन्तर भाग में संख्यात योजन जाकर एक ही कृष्ण राजी है ॥६२९॥

दीहेण छिदिदस्स य, जव-खेत्तस्सेक्क-भाग-सारिच्छा।
पच्छिम-बाहिर-राजिं, छिविदूणं सा ठिदा[2] णियमा ॥६३०॥

अर्थ—दीर्घता की ओर से छेदे हुए यवक्षेत्र के एक भागके सदृश यह राजी नियम से पश्चिम बाह्य राजी को छूकर स्थित है ॥६३०॥

पुव्वावर-आयामो, तम-काय विसाए होदि तप्पट्ठो।
उत्तर-भागम्मि तमो, एक्को छिविदूण पुव्व-बहि-राजी ॥६३१॥

अर्थ—(दक्षिण) दिशा में पूर्वापर आयत तमस्काय है। उत्तर भाग में पूर्व बाह्य राजी को छूकर एक तम है ॥६३१॥

कृष्ण-राजियों का अल्पबहुत्व—

अवणवर-वेय-बाहिर-जगदीए तह य तम-सरीरस्स।
विच्चाल महयत्तादो, अब्भंतर-राजि-तिमिर-कायाणं ॥६३२॥
विच्चालं[3] आयासे, तह संखेज्जगुणं हवेदि णियमेणं।
तं माणादो णेयं, अब्भंतर-राजि-संख-गुण-जुत्ता ॥६३३॥
अब्भंतर-राजीदो, अहिरेग-जुदो हवेदि तमकाओ।
अब्भंतर - राजीदो, बाहिर - राजी ब किंचूणा ॥६३४॥
बाहिर-राजीहिंतो, वेण्णं राजीण जो तु विच्चालो।
अहिरित्तो इय अप्पाबहुवं होदि हु चउ-दिसासुं पि ॥६३५॥

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. रिष्ठ। २. ब. ब. क. ज. ठ, रिट्ठा।

३. ब. ब. क. ज. ठ. विच्चेमायासं।

अर्थ—अरुणवर द्वीप की बाह्य जगती तथा तमस्काय के अन्तराल से अभ्यन्तर राजी के तमस्कायों का अन्तराल-प्रमाण नियम से संख्यात-गुणा है। इस प्रमाण से अभ्यन्तर राजी संख्यात-गुणी है। अभ्यन्तर राजी से अधिक तमस्काय हैं। अभ्यन्तर राजी से बाह्य राजी कुछ कम है। बाह्य-राजियों से दोनों राजियों का जो अन्तराल है वह अधिक है। इस प्रकार चारों दिशाओं में भी अल्पबहुत्व है ॥६३२-६३५॥

एदम्मि तमिस्सेदे, विहरंते अप्प-रिद्धिया देवा।
दिग्मूढा वच्चंते, माहप्पेणं[1] महड्ढिय - सुराणं ॥६३६॥

अर्थ—इस अन्धकार में विहार करते हुए जो अल्पर्द्धिक देव दिग्भ्रान्त हो जाते हैं वे महर्द्धिक देवों के माहात्म्य से निकल पाते हैं ॥६३६॥

विशेषार्थ—काजल सदृश यह अन्धकार पुद्गल की कृष्ण वर्ण की पर्याय है। जैसे सुमेरु, कुलाचल एवं सूर्य-चन्द्र के बिम्ब आदि पुद्गल की पर्यायें अनादि निधन हैं, उसी प्रकार यह अन्धकार का पिण्ड भी अनादि निधन है।

जैसे उष्णता शीत-स्पर्शकी नाशक है परन्तु शीत पदार्थ भी उष्णता को समूल नष्ट कर सकता है। वैसे ही कतिपय अन्धकार तो प्रकाशक पदार्थ से नष्ट हो जाते हैं किन्तु कुछ अन्धकार ऐसे हैं जिन्हें प्रकाशक पदार्थ ठीक उसी रंग रूप में प्रकाशित तो कर देते हैं किन्तु नष्ट नहीं कर पाते। जैसे मशाल के ऊपर निकल रहे काले धुएं को मशाल की ज्योति नष्ट नहीं कर पाती अपितु उसे दिखाती ही है। उसी प्रकार अरुणसमुद्र स्थित सूर्य-चन्द्र काली स्याही को घुल सदृश फेंक रहे इस गाढ़ अन्धकार का बालाग्र भी खण्डित नहीं कर सकते अपितु काले रंग की दीवाल या काले वस्त्र सदृश मात्र उसे दिखा रहे हैं॥ (तत्त्वार्थ श्लोकवार्तिकालंकार पंचम खण्ड से)।

इस घोर अन्धकार में विहार करते हुए अल्पर्द्धिक देव जब दिग्भ्रान्त हो जाते हैं तब वे महर्द्धिक देवों की सहायता से ही निकल पाते हैं।

लोकान्तिक देवोंका निरूपण—

राजीणं विच्चाले, संखेज्जा होंति बहुविह-विमाणा।
एदेसु सुरा जादा, [2]जावा लोयंतिया णाम ॥६३७॥

अर्थ—राजियोंके अन्तरालमें संख्यात बहुत प्रकारके विमान हैं। इनमें जो देव उत्पन्न होते हैं वे लोकान्तिक नामसे विख्यात हैं ॥६३७॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. माहप्पेणं। २. द. ब. क. ज. ठ. यावा।

संसार-वारिरासी, [1]जो लोगो तस्स होंति अंतम्मि ।
जम्हा तम्हा एदे, देवा लोयंतिय त्ति गुणणामा ॥६३८॥

अर्थ—संसार समुद्ररूपी जो लोक है क्योंकि ये उसके अन्त में हैं इसलिए ये देव 'लोकान्तिक' इस सार्थक नामसे युक्त है ॥६३८॥

ते लोयंतिय - देवा, अट्ठसु रज्जीसु होंति[2] विच्चाले ।
सारस्सद-पहुदि तहा, [3]ईसाणादिअ-दिसासु चउवीसं ॥६३९॥

२४ ।

अर्थ—वे सारस्वत आदि लौकान्तिक देव आठ राजियोंके अन्तरालमें हैं। ईशान आदिक दिशाओंमें चौबीस देव हैं ॥६३९॥

पुव्वुत्तर-दिब्भाए, वसंति सारस्सदा[4] सुरा णिच्चं ।
आइच्चा पुव्वाए, अग्गल - दिसाए वि वह्नि - सुरा ॥६४०॥
दक्खिण-दिसाए अरुणा, णइरिदि-भागम्मि गद्दतोया य ।
पच्छिम-दिसाए तुसिदा, अव्वाबाधा समीर-दिब्भाए ॥६४१॥
उत्तर - दिसाए रिट्ठा,[5] एमेते अट्ठ ताण विच्चाले ।
दो - दो हवंति [6]अण्णे, देवा तेसुं इमे णामा ॥६४२॥

अर्थ—पूर्व-उत्तर (ईशान) दिग्भागमें सर्वदा सारस्वत देव, पूर्व दिशामें आदित्य, अग्नि दिशामें वह्नि देव, दक्षिण दिशामें अरुण, नैऋत्य भागमें गर्दतोय, पश्चिम दिशामें तुषित, वायु दिग्भागमें अव्याबाध और उत्तर दिशामें अरिष्ट, इस कार ये आठ देव निवास करते हैं। इनके अन्तरालमें दो-दो अन्य देव हैं। उनके नाम ये हैं ॥६४०-६४२॥

सारस्सद - णामाणं, आइच्चाणं सुराण विच्चाले ।
अणलाभा सूराभा,[7] देवा चेट्ठंति णियमेण ॥६४३॥

अर्थ—सारस्वत और आदित्य नामक देवोंके अन्तरालमें नियमसे अनलाभ और सूर्याभ देव स्थित हैं ॥६४३॥

---

१. द. ब. ज । २. ब. ब. क. ज. ठ. ईसाणदिसादिअसुर । ४. द. ब. क. ज. ठ. सारस्सदो । ५. द. ब. क. ज. ठ. अरिट्ठा । ६. द. ब. क. ज. ठ. अण्णं । ७. द. ब. क. ज. ठ. सुराभा ।

पंचाभा सुराभा, देवा आइच्च - वह्नि - विच्चाले ।
सेयंकरा खेमंकर, णाम [1]सुरा [1]वह्नि-अरुणम्मि ॥६४४॥

अर्थ—आदित्य और वह्निके अन्तरालमें चन्द्राभ और सूर्याभ (सत्याभ) तथा वह्नि और अरुणके अन्तरालमें श्रेयस्कर और क्षेमङ्कर नामक देव शोभायमान हैं ॥६४४॥

विसकोट्ठा कामधरा, विच्चाले अरुण - गद्दतोयाणं ।
णिव्वाणराज-दिसरक्खंत-रक्खिदा[2] गद्दतोय-तुसिताणं ॥६४५॥

अर्थ—अरुण और गर्दतोयके अन्तरालमें वृषकोष्ठ (वृषभेष्ट) और कामधर (कामचर) तथा गर्दतोय और तुषितके अन्तरालमें निर्माणराज (निर्माणरज) और दिगन्तरक्षित देव हैं ॥६४५॥

तुसितव्वाबाहाणं, अंतरवी अप्प-सव्व-रक्ख-सुरा ।
मरुदेवा वसुदेवा, तह अव्वाबाह-रिट्ठ-अवभम्मि ॥६४६॥

अर्थ—तुषित और अव्याबाध के अन्तराल में आत्मरक्ष और सर्वरक्ष देव तथा अव्याबाध और अरिष्टके अन्तराल में मरुत् देव और वसुदेव हैं ॥६४६॥

सारस्सद-रिट्ठाणं, विच्चाले अस्स-विस्स-णाम-सुरा ।
सारस्सद-आइच्चा, पत्तेक्कं होंति सत्त-सया ॥६४७॥

७०० ।

अर्थ—सारस्वत और अरिष्ट के अन्तराल में अश्व एवं विश्व नामक देव स्थित हैं। सारस्वत और आदित्य प्रत्येक सात-सात (७००-७००) सौ हैं ॥६४७॥

वह्नी अरुणा देवा, सत्त-सहस्साणि सत्त पत्तेक्कं ।
णव-सुत-णव-सहस्सा, तुसिव[4] - सुरा गद्दतोया वि ॥६४८॥

७००७ । ६००६ ।

अर्थ—वह्नि और अरुण में से प्रत्येक सात हजार सात (७००७) तथा तुषित और गर्दतोय में से प्रत्येक नौ हजार नौ (६००६) हैं ॥६४८॥

---

१. ब, ब. क. ज. ठ. सुरो । २. ब. क. ज. ठ. वह्निएतस्मि, ३. वह्निए चेति ।
३. द. ब. रक्खणा । ४ ब. ब. क. ज. ठ. सुरिद ।

अव्वाबाहा-रिट्ठा, एक्करस-सहस्स एक्करस-जुत्ता ।
अग्गिला वह्नि-सभा, सूराभा गद्दतोय-सारिच्छा ॥६४९॥

११०११ । ७०००७ । ९००९ ।

अर्थ—अव्याबाध और अरिष्ट प्रत्येक ग्यारह हजार ग्यारह (११०११) हैं । अनलाभ वह्नि देवों के सदृश (७०००७) और सूर्याभ सदृश तोयों के सदृश (९००९) हैं ॥६४९॥

अव्वाबाहु-सरिच्छा, चंदाभ[1] - सुरा हवंति सक्खाभा[2] ।
अट्ठुदं तिण्णि सहस्सं, तेरस - जुत्ताए संखाए ॥६५०॥

११०११ । १३०१३ ।

अर्थ—चन्द्राभ देव अव्याबाधोंके सदृश (११०११) तथा सत्याभ तेरह हजार तेरह (१३०१३[3]) हैं ॥६५०॥

पण्णरस-सहस्साणि, पण्णरस-जुदाणि होंति [4]सेयकरा ।
खेमंकराभिधाणा, सत्तरस - सहस्सयाणि सत्तरसा ॥६५१॥

१५०१५ । १७०१७ ।

अर्थ—श्रेयस्कर पन्द्रह हजार पन्द्रह (१५०१५) और क्षेमङ्कर नामक देव सत्तरह हजार सत्तरह (१७०१७) होते हैं ॥६५१॥

उणवीस-सहस्साणि, उणवीस-जुत्ताणि होंति विसकेहू ।
इगिवीस - सहस्साणि, इगिवीस - जुदाणि कामधरा ॥६५२॥

१९०१९ । २१०२१ ।

अर्थ—वृषकेष्ठ उन्नीस हजार उन्नीस (१९०१९) और कामधर इक्कीस हजार इक्कीस (२१०२१) होते हैं ॥६५२॥

णिम्माणरक्ख-णामा, तेवीस - सहस्सयाणि तेवीसा ।
पंचवीस-सहस्साणि, पंचवीस-जुदाणि वितरक्खा[5] य ॥६५३॥

२३०२३ । २५०२५ ।

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. चंदाभसुर । २. ब. ब. क. ज. ठ. संक्खाभा । ३. ब. ब. क. ज. ठ. तेरक्खा । ४. ब. ब. क. सेयक्खा । ५. ब. ब. क. वरक्खस ।

अर्थ—निर्माणराज देव तेईस हजार तेईस (२३०२३) और दिगन्तरक्ष पच्चीस हजार पच्चीस (२५०२५) होते हैं ॥६५३॥

सत्तावीस-सहस्सा, सत्तावीसं च अग्गरक्ख - सुरा ।
उणतीस-सहस्साणि, उणतीस-जुदाणि सव्वरक्खा य ॥६५४॥

२७०२७ । २९०२९ ।

अर्थ—आग्ररक्ष देव सत्ताईस हजार सत्ताईस (२७०२७) और सर्वरक्ष उनतीस हजार उनतीस (२९०२९) होते हैं ॥६५४॥

एक्कत्तीस-सहस्सा, एक्कत्तीसं हुवंति मरु - देवा ।
तेत्तीस - सहस्साणि, तेत्तीस - जुदाणि वसु-णामा ॥६५५॥

३१०३१ । ३३०३३ ।

अर्थ—मरुदेव इकतीस हजार इकतीस (३१०३१) और वसु नामक देव तैंतीस हजार तैंतीस (३३०३३) होते हैं ॥६५५॥

पंचत्तीस-सहस्सा, पंचत्तीसा हुवंति अस्स-सुरा ।
सत्तत्तीस-सहस्सा, सत्तत्तीसं च विस्स-सुरा ॥६५६॥

३५०३५ । ३७०३७ ।

अर्थ—अश्वदेव पैंतीस हजार पैंतीस (३५०३५) और विश्वदेव सैंतीस हजार सैंतीस (३७०३७) होते हैं ॥६५६॥

चत्तारि य लक्खाणि, सत्त-सहस्साणि अट्ठ-सयाणि पि ।
छब्भहियाणि होदि हु, सव्वाणं पिंड - परिमाणं ॥६५७॥

४०७८०६ ।

अर्थ—इन सबका पिण्ड-प्रमाण चार लाख सात हजार आठ सौ छह (४०७८०६) है ॥६५७॥

विशेषार्थ—आठ कुलोंके सारस्वत आदि सम्पूर्ण लौकान्तिक देवोंका प्रमाण (७००+७००+७००७+७००७+९००९+९००९+११०११+११०११=) ५५४५४ है और आठ अन्तरालोंमें रहने वाले अनलाभ और सूर्याभ आदि सोलह कुलोंके लौकान्तिक देवोंका कुल प्रमाण (७००७+९००९+११०११+१३०१३+१५०१५+१७०१७+१९०१९+२१०२१+२३०२३+२५०२५+२७०२७+२९०२९+३१०३१+३३०३३ + ३५०३५ + ३७०३७ =)

३५२३३५२ है। इसमें उपर्युक्त आठ कुलोंका प्रमाण मिला देनेपर आठ दिशाओंके आठ कुलों एवं आठ अन्तरालोंके सोलह कुलोंके लौकान्तिक देवोंका कुल प्रमाण (५५४५४+३५२३३५२=) ४०७८०६ होता है। लौकान्तिक देवोंके अवस्थान आदिका चित्रण इसप्रकार है—



मतान्तरसे लौकान्तिक देवोंकी स्थिति एवं संख्या—

लोयविभागाइरिया,[1] सुराण लोयंति-आण वक्खाणं।
अण्ण - सरूवं [2]वेंति, त्ति तं पि एण्हिं परूवेमो ॥६५८॥

अर्थ—लोकविभागाचार्य लौकान्तिक देवोंका व्याख्यान अन्य रूपसे करते हैं; इसलिए अब उसका भी प्ररूपण करते हैं ॥६५८॥

पुव्वुत्तर[3]-दिब्भाए, वसंति [4]सारस्सदाभिधाण-सुरा।
आइच्चा पुव्वाए, वण्हि - दिसाए सुरा - वण्हो ॥६५९॥

वरुण-दिसाए अरुणा, गद्दतोया य गद्दतोया य।
पच्छिम - दिसाए तुसिवा, अव्वाबाधा मरु - दिसाए ॥६६०॥

---

१. ब. क. क. ज. ठ. लोयविभाइरिया। २. द. ब. क. ज. ठ. होंति ति पिछे। ३. द. क. ज. ठ. पुव्व तदिब्भाए, ब. पुव्वं व तदिब्भाए। ४. द. क. क. ज. ठ. सारस्सतिसा ___ ।

उत्तर-दिसाए रिट्ठा, अग्गि-दिसाए वि होंति सक्कस्स ।
एदाणं पत्तेयं, परिमाणाइं पवक्खेमो ॥६६१॥

पत्तेक्कं सारस्सद - आइच्चा तुसिद - गद्दतोया य ।
सत्तुत्तर - सत्त - सया, सेसा पुव्वोदिद - पमाणा ॥६६२॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—पूर्व-उत्तर कोणमें सारस्वत नामक देव, पूर्वमें आदित्य, अग्नि दिशामें वह्नि देव, दक्षिण दिशामें अरुण, नैऋत्य भागमें गर्दतोय, पश्चिम दिशामें तुषित, वायु दिशामें अव्याबाध और उत्तर दिशामें तथा अग्नि दिशाके मध्यमें भी अरिष्ट देव रहते हैं। इनमेंसे प्रत्येकका प्रमाण कहते हैं। सारस्वत और आदित्य तथा तुषित और गर्दतोयमेंसे प्रत्येक सात सौ सात (७०७) और शेष देव पूर्वोक्त प्रमाणसे युक्त हैं ॥६६१-६६२॥

पाठान्तर ।

लौकान्तिक देवोंके उत्सेधादिका कथन—

पत्तेक्कं पण हत्था, उदओ लोयंतयाण देहेसुं ।
अट्ठमहण्णव - उवमा, सोहंते सुक्क - लेस्साओ ॥६६३॥

अर्थ—लौकान्तिक देवोंमेंसे प्रत्येकके शरीरका उत्सेध पांच हाथ और आयु आठ सागरोपम प्रमाण है। ये देव शुक्ल लेश्यासे शोभायमान होते हैं ॥६६३॥

सव्वे [1]लोयंतपुरा, एक्कारस-अंग-धारिणो णियमा ।
सम्मद्दंसण - सुद्धा, होंति सतत्ता सहावेणं ॥६६४॥

अर्थ—सब लौकान्तिक देव नियमसे ग्यारह अंगके धारी, सम्यग्दर्शनसे शुद्ध और स्वभावसे ही तृप्त होते हैं ॥६६४॥

महिलादी परिवारा, ण होंति एदाण संततं [2]तम्हा ।
संसार-जलण - कारण - वेरग्गं भावयंति ते तम्हा ॥६६५॥

अर्थ—क्योंकि इनके महिलादिक रूप परिवार नहीं होते हैं, इसलिए ये निरन्तर संसार-क्षयके कारणभूत वैराग्यकी भावना भाते हैं ॥६६५॥

---

१. ब. ब क. ब. ठ पुट्ठा । २. ब. ब, क, ज, ठ, ऐ ।

अद्धुवमसरण-पहुदि, भावं ते भावयंति अणवरदं ।
बहु-दुक्ख-सलिल-पूरिद-संसार-समुद्द-बुड्ढण - भएणं ॥६६६॥

अर्थ—बहुत दुःखरूप जलसे परिपूर्ण संसार रूपी समुद्रमें डूबनेके भयसे वे लोकान्तिक देव निरन्तर अनित्य एवं अशरण आदि भावनाएँ भाते हैं ॥६६६॥

तित्थयराणं समए, परिणिक्कमणम्मि जंति ते सव्वे ।
दु-चरिम-देहा देवा, बहु-विसम-किलेस-उम्मुक्का[1] ॥६६७॥

अर्थ—द्विचरम शरीरके धारक अर्थात् एक ही मनुष्य जन्म लेकर मोक्ष जानेवाले और अनेक विषम क्लेशोंसे रहित वे सब देव तीर्थंकरोंके दीक्षा कल्याणकमें जाते हैं ॥६६७॥

देवरिसि-णामधेया, सव्वेहि सुरेहि अच्चणिज्जा ते ।
भत्ति - पसत्ता सज्झय - साधीणा सव्व - कालेसुं ॥६६८॥

अर्थ—देवर्षि नाम वाले वे देव सब देवोंसे अर्चनीय, भक्तिमें प्रसक्त और सर्वकाल स्वाध्यायमें स्वाधीन होते हैं ॥६६८॥

लौकान्तिक देवोंमें उत्पत्ति का कारण --

इह खेत्ते वेरग्गं, बहु - भेयं भाविदूण बहुकालं ।
संजम - भावेहि [2]मओ, देवा लोयंतिया होंति ॥६६९॥

अर्थ—इस क्षेत्रमें बहुत काल पर्यन्त बहुत प्रकारके वैराग्यको भाकर संयम सहित मरण कर लौकान्तिक देव होते हैं ॥६६९॥

थुइ-णिंदासु समाणो, सुह-दुक्खेसुं सबंधु-रिउ-वग्गे ।
जो समणो सम्मत्तो, सो खिय लोयंतिओ होदि[3] ॥६७०॥

अर्थ—जो सम्यग्दृष्टि श्रमण स्तुति और निन्दामें, सुख और दुःखमें तथा बन्धु और शत्रु वर्गमें समान है, वही लौकान्तिक होता है ॥६७०॥

जे णिरवेक्खा देहे, णिद्दंदा णिम्ममा थिरारंभा ।
णिरवज्जा समण-वरा, ते खिय लोयंतिया होंति ॥६७१॥

अर्थ—जो देहके विषयमें निरपेक्ष हैं, तीनों योगोंको वश करनेवाले हैं तथा निर्ममत्व, निरारम्भ और निरवद्य हैं वे ही श्रमण श्रेष्ठ लौकान्तिक देव होते हैं ॥६७१॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ उमुक्का । २. द. ब. क. ज. ठ. भवा । ३. द. ब. ज. ठ. होंति ।

संजोग[1] - विप्पजोगे, लाहालाहम्मि जीविदे मरणे ।
जो समदिट्ठी[2] समणो, सो चिय लोयंतिओ होंति ॥६७२॥

अर्थ—जो श्रमण संयोग और वियोगमें, लाभ और अलाभमें तथा जीवित और मरणमें समदृष्टि होते हैं, वे ही लौकान्तिक होते हैं ॥६७२॥

अणवरदमप्पमत्तो,[3] संजम-समिदीसु झाण-जोगेसु[4] ।
तिव्व-तव - चरण - जुत्ता, समणा लोयंतिया होंति ॥६७३॥

अर्थ—संयम, समिति, ध्यान एवं समाधिके विषयमें जो निरन्तर अप्रमत्त (सावधान) रहते हैं तथा तीव्र तपश्चरणसे संयुक्त हैं, वे श्रमण लौकान्तिक होते हैं ॥६७३॥

पंचमहव्वय-सहिदा, पंचसु समिदीसु [5]थिर-णिचिट्ठमाणा ।
पंचक्ख - विसय - विरदा, रिसिणो लोयंतिया होंति ॥६७४॥

अर्थ—पाँच महाव्रतों सहित पाँच समितियोंका स्थिरता पूर्वक पालन करने वाले और पाँचों इन्द्रिय-विषयोंसे विरक्त ऋषि लौकान्तिक होते हैं ॥६७४॥

ईषत्प्राग्भार (८ वीं) पृथ्वी का अवस्थान एवं स्वरूप—

सव्वट्ठसिद्धि - इंदय - केसणदंडाउ उवरि गंतूणं ।
बारस - जोयणमेत्तं, अट्ठमिया सेट्ठदे पुढवी ॥६७५॥

अर्थ—सर्वार्थसिद्धि इन्द्रकके ध्वजदण्डसे बारह योजन प्रमाण ऊपर जाकर आठवीं पृथिवी अवस्थित है ॥६७५॥

पुव्वावरेण तीए, उवरिम - हेट्ठिम - तलेसु पत्तेक्कं ।
वासो हवेदि एक्का, रज्जू[6] रूवेण परिहीणा ॥६७६॥

अर्थ—उसके उपरिम और अधस्तन तलमेंसे प्रत्येकका विस्तार पूर्व-पश्चिममें रूपसे रहित एक राजू प्रमाण है ॥६७६॥

उत्तर-दक्खिण-भाए, [7]वोहा किंचूण-सत्त-रज्जूओ ।
वेत्तासण-संठाणा, सा पुढवी अट्ठ - जोयणा बहला ॥६७७॥

---

१ ब. ब. संजोगविप्पजोगे । २. ब. क. सम्मदिट्ठि । ३. ब. ब. ज. ठ. अणवरदमप्पमत्तो । ४. ब. ब. क. ज. ठ. झिर । ५. ब. ब. क. ज. ठ. रज्जो । ६. ब ब. क. ज. ठ. वीहू ।

अर्थ—वेत्रासनके सदृश यह पृथिवी उत्तर-दक्षिणभागमें कुछ कम सात राजू लम्बी और आठ योजन बाहल्यवाली है ।।६७७।।

जुत्ता घणोवहि-घणाणिल-तणुवादेहिं[1] तिहि समीरेहिं ।
जोयण - वीस - सहस्सं, पमाण - बहलेहि पत्तेक्कं ।।६७८।।

अर्थ—यह पृथिवी घनोदधि, घनवात और तनुवात इन तीन वायुओंसे युक्त है। इनमेंसे प्रत्येक वायुका बाहल्य (मोटाई) बीस हजार योजन प्रमाण है ।।६७८।।

एदाए बहुमज्झे, खेत्तं णाणेण ईसिपब्भारं ।
अज्जुण-सुवण्ण-सरिसं, णाणा - रयणेहि परिपुण्णं ।।६७९।।

अर्थ—इसके बहु-मध्य-भागमें नाना रत्नोंसे परिपूर्ण चाँदी एवं स्वर्णके सदृश ईषत्प्राग्भार नामक क्षेत्र है ।।६७९।।

उत्ताण - धवल - छत्तोवमाण - संठाण-सुंदरं एवं ।
पंचत्तालं जोयण - लक्खाणि बास - संजुत्तं ।।६८०।।

अर्थ—यह क्षेत्र उत्तान धवल छत्रके सदृश आकारसे सुन्दर और पैंतालीस लाख (४५०००००) योजन प्रमाणसे संयुक्त है ।।६८०।।

तम्मज्झ - बहलमट्ठं, जोयणया अंगुलं पि अंतम्मि ।
बहुम-भू-मज्झ-गदो, तप्परिहो मणुव-खेत्त-परिहि-समो ।।६८१।।

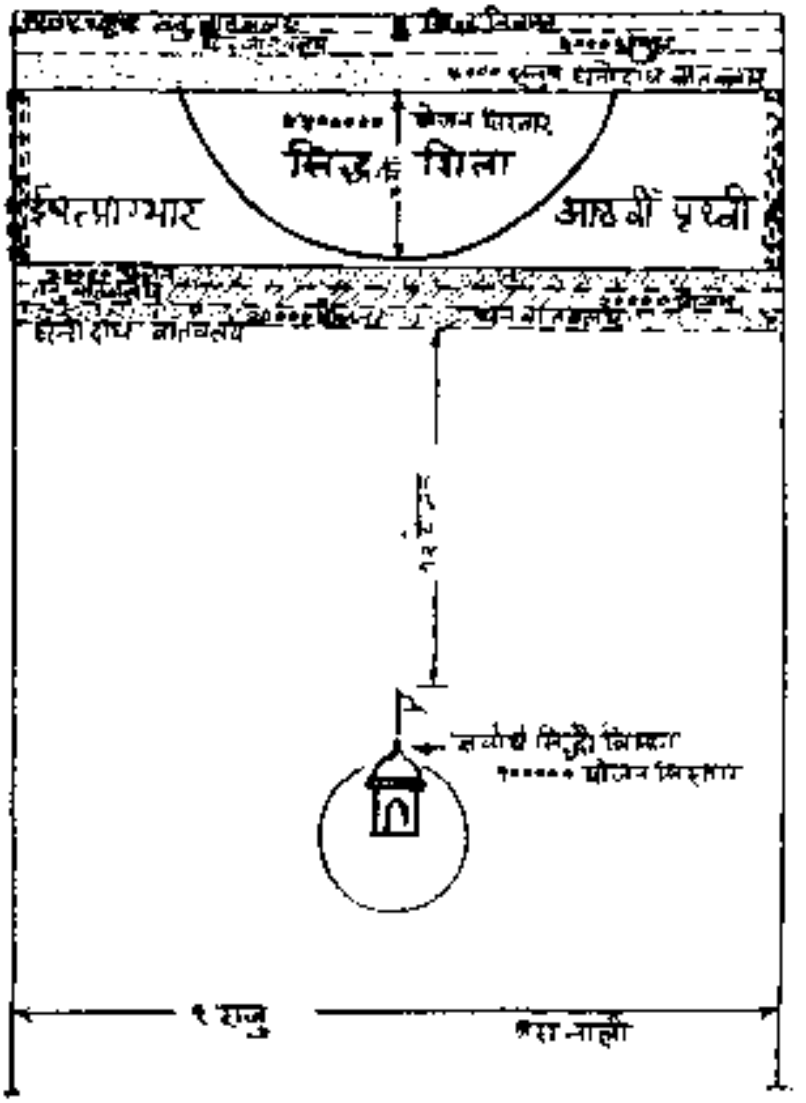
८ । अं १ ।

अर्थ—उसका मध्य बाहल्य आठ योजन और अन्तमें एक अंगुल प्रमाण है । अष्टम भूमि में स्थित सिद्धक्षेत्रकी परिधि मनुष्य क्षेत्रकी परिधिके सदृश है ।।६८१।।

[चित्र अगले पृष्ठ पर देखिये]

---

१. द. ब. क. ज. ठ. घणाणिलणलवादेहिं ।



विशेषार्थ—सर्वार्थसिद्धि विमान के ध्वजदण्ड से १२ योजन ऊपर जाकर क्रमशः बीस-बीस हजार मोटे घनोदधि, घन और तनु-वातवलय हैं; इसके बाद पूर्व-पश्चिम एक राजू विस्तार वाली ईषत्प्राग्भार नामक ८वीं पृथिवी है। यह पृथिवी उत्तर-दक्षिण ७ राजू लम्बी और ८ योजन मोटी है। इसका घनफल प्रथमाधिकार पृष्ठ १३६ के अनुसार (१ राजू विस्तृत × ७ राजू आयत × ८ योजन बाहल्य को जगत्प्रतर रूप से करने पर) ४६ वर्गराजू × ६ योजन प्रमाण है।

इस पृथिवी के बहुमध्य भाग में उत्तान (ऊर्ध्वमुख) छत्र के आकार सदृश आकार वाला और ४५ लाख योजन विस्तृत ईषत्प्राग्भार नामक क्षेत्र (सिद्ध-शिला) है। इस शिलाका मध्य बाहल्य ८ योजन और अन्त (के दोनों छोरों का) बाहल्य एक-एक अंगुल प्रमाण है। इसकी सूक्ष्म

परिधि का प्रमाण मनुष्य लोक की परिधि के प्रमाण सदृश (चतुर्थाधिकार गा० ७) १४२३०२४९ यो० है। इस पृथिवी के ऊपर अर्थात् लोक के अन्त में क्रमशः ४००० धनुष, २००० धनुष और १५७५ धनुष मोटे घनोदधि, घन और तनु वातवलय हैं। इसप्रकार सर्वार्थसिद्धि विमान के ध्वजदण्ड से (१२ यो० + ८ यो० + ७५७५ धनुष अर्थात्) ४२५ धनुष कम २१ योजन ऊपर अर्थात् तनुवातवलय में सिद्ध प्रभु विराजमान हैं। इनके निवास क्षेत्र के घनफल आदि के लिए नवमाधिकार की गाथा ३-४ द्रष्टव्य है।

नोट—इसी ग्रन्थके प्रथमाधिकार गा० १६३ के विशेषार्थमें सर्वार्थसिद्धि विमानके ध्वजदण्डसे २९ यो० ४२५ धनुष ऊपर जाकर लोकका अन्त लिखा है। जो अष्टमाधिकार गा० ६७५-६८१ का विषय देखते हुए गलत प्रतीत होता है। १/१६३ का विशेषार्थ जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष भाग ३ पृष्ठ ४६० पर ऊर्ध्वलोक के सामान्य परिचय के अन्तरगत दिये हुए नोट के आधार पर दिया था। यदि सिद्धशिला के मध्यभाग की ८ योजन मोटाई, ८ योजन मोटी ८ वीं पृथिवी में ही निहित है तो सर्वार्थसिद्धि विमानके ध्वजदण्ड से सिद्धोंका निवास क्षेत्र ४२५ धनुष कम २१ यो० होता है (यही प्रमाण यथार्थ ज्ञात होता है क्योंकि दूसरे अधिकार की गाथा २४ में ८ वीं पृथिवी द्वारा दसों दिशाओं में घनोदधि वातवलय का स्पर्श कहा गया है) और यदि ८ योजन मोटी आठवीं पृथिवी के ऊपर ८ योजन बाहल्यवाली सिद्धशिला है तो इस क्षेत्र की ऊँचाई अर्थात् लोक के अन्त का प्रमाण (१२ यो० + ८ यो० + ८ यो० + ७५७५ धनुष) ४२५ धनुष कम २९ यो० होगा। यह विषय विद्वज्जनों द्वारा विचारणीय है।

एवस्स बज्ज-विसासुं, चत्तारि तमोमयाओ राजीओ[1]।
णिस्सरिदूणं बाहिर-राजीणं होदि बाहिर - ट्ठासा ॥६८२॥
तच्छिद्दिदूणं तत्तो, ताओ पविसाओ चरिम-उवहिम्मि।
अब्भंतर[2] - तीराओ, संखातीदे य जोयणे य खुवं ॥६८३॥
बाहिर-चउ-राजीणं, बहि-अवलंबो पडेदि वीवम्मि।
जंबूदीवाहिंतो, पंतूणं असंख - दीव - वारिणिहिं ॥६८४॥
बाहिर-भागाहिंतो, अवलंबो तिमिरकाय-णामस्स।
जंबूदीवेहिंतो, तम्मेत्तं गदुअ[3] पवदि दीवम्मि ॥६८५॥
एवं [4]लोयंतिय-पवज्जणा समत्ता।

---

१. ब. अ. क. ज. ठ. रज्जूओ। २. ब. अब्भिंतर।
३. ब. अ. क. ज. ठ. गदु। ४. ब. अ. क. ज. ठ. लोय।

अर्थ—इसकी चारों दिशाओं में चार तमोमय राजियाँ निकलकर बाह्य राजियों के बाह्य पार्श्वभाग पर होती हुई उन्हें छूकर निश्चय से अभ्यन्तर ओर से असंख्यात योजन प्रमाण अन्तिम समुद्र में गिरी हैं। बाह्य चार राजियों के बाह्य भाग का अवलम्बन करने वाला जम्बूद्वीप से असंख्यात द्वीप-समुद्र जाकर द्वीप में गिरता है। बाह्य भागों से तिमिर काय नामका अवलम्ब जम्बूद्वीप से इतने ही प्रमाण जाकर द्वीप में गिरता है ॥६८२-६८५॥

नोट—गाथा ६२२ से ६३६ और ६८२ से ६८५ अर्थात् १९ गाथाओं का यथार्थ भाव बुद्धिगत नहीं हुआ।

इसप्रकार लौकान्तिक देवों की प्ररूपणा समाप्त हुई ॥

तीस प्ररूपणाओं का निर्देशन—

गुण-जीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणाओ वि ।
उवओगो णवियप्पो, देवाणं देव - सीयम्मि[1] ॥६८६॥

अर्थ—अब देवलोक में देवों के गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा मार्गणा और उपयोग, इनका कथन करना चाहिए ॥६८६॥

चत्तारि गुणट्ठाणा, जीवसमासेसु सण्णि-पज्जत्तो ।
णिव्वत्ति-पज्जत्तो, छ-पज्जत्तीओ छहं अपज्जत्तो ॥६८७॥
पज्जत्ते दस पाणा, इदरे पाणा हवंति सत्तेव ।
इंदिय-मण-वयण-तणू, आउस्सासा[2] य दस-पाणा ॥६८८॥
तेसुं मण-वय-उच्छास-वज्जिदा सत्त तह अपज्जत्ते ।
चउ-सण्णाओ होंति हु, चउसु गदीसुं च देवगदी ॥६८९॥
पंचक्खा तस-काया, जोगा एक्कारस-प्पमाणा य ।
ते छहु मण-वयणाणि, वेगुव्व-दुगं च कम्मइयं ॥६९०॥
पुरिसित्थी-वेद-जुदा, सयल-कसाएहि संजुदा देवा ।
छण्णाणेहिं सहिदा,[3] सव्वे वि असंजदा ति-लेसण्या ॥६९१॥

अर्थ—चार गुणस्थान, जीव-समासों में संज्ञी पर्याप्त और निर्वृत्यपर्याप्त, छह पर्याप्तियाँ और छहों अपर्याप्तियाँ; पर्याप्त अवस्था में पाँच इन्द्रियाँ, मन, वचन, काय, आयु और श्वासोच्छ्वास ये दस प्राण; तथा अपर्याप्त अवस्था में मन, वचन और उच्छ्वास से रहित शेष सात प्राण; चार

---

१. द. क. ख. ठ. सोयम्मि । २. ब. ब. क. ख. ठ आउस्सउसासउसासा । ३. द. ब. क. ख. ठ. सहा ।

संज्ञाएँ, चार गतियों में से देवगति, पंचेन्द्रिय, त्रस-काय; आठ मन-वचन, दो वैक्रियिक (वैक्रियिक और वैक्रियिक मिश्र) तथा कार्मण, इसप्रकार ग्यारह योग; पुरुष एवं स्त्री वेद से युक्त, समस्त कषायों से संयुक्त, छह ज्ञानों सहित, तब ही असंयत और तीन दर्शन से युक्त होते हैं ॥६९७-६९१॥

दोण्हं दोण्हं सुक्कं, दोण्हं तह तेरसाण देवाणं ।
लेस्साओ चोद्दसाओ, दोच्छक्कमो आणुपुव्वीए ॥६९२॥

तेऊए मज्झिमंसा, तेउवकस्स - पढम - अवरंसा ।
पउमाए मज्झिमंसा, पउमुक्कस्सं ससुक्क-अवरंसा ॥६९३॥

सुक्काय मज्झिमंसा, उक्कस्संसा य सुक्क-लेस्साए ।
एदाओ लेस्साओ, णिद्दिट्ठा सव्व - दरिसीहिं ॥६९४॥

सोहम्म-ण्हुवीणं, [1]एदाओ दव्व-भाव-लेस्साओ ।
उवरिम - गेवेज्जंतं, अब्भाभव्वा सुरा होंति ॥६९५॥

तत्तो उवरिं सव्वा, उवरिम - गेवेज्जयस्स परियंतं ।
खइयेदं सम्मत्तं, उवरिं [2]उवसमिय-खइय-वेदकया ॥६९६॥

ते सव्वे सण्णीओ, देवा आहारिणो अणाहारा ।
साकार-अणागारा, दो च्चेव य होंति उवओगा ॥६९७॥

अर्थ—दो (सौधर्मैशान), दो (सा०-माहेन्द्र), ब्रह्मादिक छह, लान्तवादिक, शतारद्विक, आनतादि नौ ग्रैवेयक पर्यन्त तेरह, तथा चौदह (नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर), अनुक्रमसे इन देवोंकी लेश्याओं का कथन करता हूँ—

सौधर्म और ईशानमें पीत लेश्याका मध्यम अंश, सनत्कुमार और माहेन्द्रमें पद्मके जघन्य अंश सहित पीतका उत्कृष्ट अंश, ब्रह्मादिक छह में पद्मका मध्यम अंश, शतार युगल में शुक्ल लेश्या के जघन्य सहित पद्मका उत्कृष्ट अंश, आनत आदि तेरह में शुक्ल का मध्यम अंश और अनुदिशादि चौदह में शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट अंश होता है; इसप्रकार सर्वज्ञ देवने देवों में ये लेश्यायें कही हैं। सौधर्मादिक देवों के ये द्रव्य एवं भाव लेश्यायें समान होती हैं। उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त देव भव्य और अभव्य दोनों तथा इससे ऊपर भव्य ही होते हैं। उपरिम ग्रैवेयक पर्यन्त छहों प्रकार के सम्यक्त्व तथा इससे ऊपर औपशमिक, क्षायिक और वेदक ये तीन सम्यक्त्व होते हैं। वे सब देव संज्ञी तथा आहारक एवं अनाहारक होते हैं। इन देवों के साकार और अनाकार दोनों ही उपयोग होते हैं ॥६९२-६९७॥

---

१. ब. एदाण। २. ब. क. उवसमियखइयवेदया।

कप्पा कप्पादीदा, दुचरम-देहा हवंति केइ सुरा ।
पवरो सहग्ग-महिसो,[1] सलोयवालो य दक्खिणचा इंदा ॥६९८॥
सव्वट्ठसिद्धिवासी, लोयंतिय - णामधेय - सव्व-सुरा ।
णियमा दुचरिम-देहा, सेसेसुं अत्थि णियमो य ॥६९९॥

एवं गुणठाणादि-परूवणा समत्ता ।

अर्थ—कल्पवासी और कल्पातीतों में से कोई देव द्विचरम-शरीरी अर्थात् आगामी भवमें मोक्ष प्राप्त करनेवाले हैं ।

अग्रमहिषी और लोकपालों सहित सौधर्म इन्द्र, दक्षिण इन्द्र, सर्वार्थसिद्धिवासी तथा लौकान्तिक नामक सब देव नियम से द्विचरम-शरीरी हैं । शेष देवों में नियम नहीं है ॥६९८-६९९॥

इसप्रकार गुणस्थानादि-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥

सम्यक्त्व ग्रहणके कारण—

जिण-महिम-दंसणेणं, केई जादी - सुमरणादो वि ।
देवड्ढि[2] - दंसणेण य, ते देवा धम्म - सवणेण ॥७००॥
गेण्हंते सम्मत्तं, णिव्वाणब्भुदय - साहण - णिमित्तं ।
दुव्वार - गहिद[3] - संसार - जलहिणोत्तारणोवायं ॥७०१॥

अर्थ—उनमें से कोई देव जिनमहिमा के दर्शनसे, कोई जातिस्मरणसे, कोई देवर्द्धिके देखने से और कोई धर्मोपदेश सुनने से निर्वाण एवं स्वर्गादि अभ्युदय के साधक तथा दुर्वार एवं गम्भीर संसाररूपी समुद्र से पार उतारने वाला सम्यक्त्व ग्रहण करते हैं ॥७००-७०१॥

णवरि हु णव-गेवेज्जा, एदे देवड्ढि-वज्जिदा होंति ।
उवरिम - चोद्दस - ठाणे, सम्माइट्ठी सुरा सव्वे ॥७०२॥

दंसण-गहण-कारणं समत्तं ॥

अर्थ—विशेष यह है कि नौ ग्रैवेयकों में उपर्युक्त कारण देवर्द्धि दर्शन से रहित होते हैं । इसके ऊपर चौदह स्थानों में सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं ॥७०२॥

सम्यग्दर्शन-ग्रहण के कारणों का कथन समाप्त हुआ ॥

---

१. ब. ज. क. ज. ठ. सव्वट्ठसि । २. ब. देवसि, ज देवड्ढि, क. ज. ठ. देवड्ढि ।
३. ब, ज. क. ज. ठ. रहिद ।

वैमानिक देव मरकर कहाँ-कहाँ जन्म लेते हैं -

आईसाणं देवा, अणणा एइंदिएसु भजिदव्वा ।
उवरि सहस्सारंतं, ते भज्जा[1] सण्णि-तिरिय-मणुवत्ते ॥७०३॥

अर्थ– ईशान कल्प पर्यन्त के देवों का जन्म एकेन्द्रियों में विकल्पनीय है। इससे ऊपर सहस्रार कल्प पर्यन्त के सब देव विकल्प से संज्ञी तिर्यंच या मनुष्य होते हैं ॥७०३॥

तत्तो उवरिम-देवा, सव्वे सुक्काभिधाण-लेस्साए ।
उप्पज्जंति मणुस्से, णत्थि तिरिक्खेसु उववादो ॥७०४॥

अर्थ—इससे ऊपर के सब देव शुक्ल लेश्या के साथ मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, इनकी उत्पत्ति तिर्यंचों में नहीं है ॥७०४॥

देव-गदीदो चत्ता, कम्मक्खेत्तम्मि सण्णि-पज्जत्ते ।
गब्भ-भवे जायंते, ण भोगभूमीण णर-तिरिए ॥७०५॥

अर्थ—देवगति से च्युत होकर ये देव कर्मभूमि में संज्ञी, पर्याप्त एवं गर्भज होते हैं भोग-भूमियों के मनुष्य और तिर्यंचों में नहीं होते हैं ॥७०५॥

सोहम्मादी देवा, भज्जा हु सलाग-पुरिस-णिवहेसुं ।
णिस्सेयस-गमणेसुं, सव्वे वि अणंतरे जम्मे ॥७०६॥

अर्थ—सब सौधर्मादिक देव अगले जन्म में शलाका-पुरुषों के समूह में और मुक्ति-गमन के विषय में विकल्पनीय हैं ॥७०६॥

णवरि विसेसो सव्वट्ठसिद्धि-ठाणदो विच्चुदा[2] देवा ।
भज्जा सलाग-पुरिसा, णिव्वाणं यांति णियमेणं ॥७०७॥

एवं आगमण-परूवणा समत्ता ॥

अर्थ—विशेष यह है कि सर्वार्थसिद्धि से च्युत हुए देव शलाकापुरुषरूप से विकल्पनीय हैं, किन्तु वे नियम से निर्वाण प्राप्त करते हैं ॥७०७॥

इसप्रकार आगमन-प्ररूपणा समाप्त हुई ॥

---

१. ब. क. भज्जा, क. ज. ठ. सव्वा । २. ब. ज. क. विच्चुदो ।

देवों के अवधिज्ञानका कथन —

सक्कीसाणा पढमं, माहिंद-सणक्कुमारया बिदियं ।
तदियं च बम्ह-लंतव-वासी तुरिमं सहस्सयार[1]-गदा ॥७०८॥
आणद-पाणद-आरण-अच्चुद-वासी य पंचमं पुढविं ।
छट्ठी पुढवी हेट्ठा, णव - विह - गेवेज्जगा देवा ॥७०९॥
सव्वं च लोयणालिं, अणुदिसाणुत्तरेसु पस्संति ।
सक्खेत्तम्मि[2] सकम्मे,[3] रूवम-गदमणंत-भागो य ॥७१०॥
कप्पामराण[4] णिय-णिय-ओही-दव्वस्स विस्ससोवचयं ।
ठविदूणं हरिदव्वं, तत्तो धुव - भागहारेणं ॥७११॥
णिय-णिय-खोणि-पदेसं, सलाग-संखा समप्पदे जाव[5] ।
अंतिल्ल - खंधमेत्तं, एदाणं ओहि - दव्वं खु ॥७१२॥

अर्थ— सौधर्मेशान कल्पके देव अपने अवधिज्ञान से नरक की प्रथम पृथिवी पर्यन्त, सनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पके देव दूसरी पृथिवी पर्यन्त, ब्रह्म और लान्तव कल्पके देव तृतीय पृथिवी पर्यन्त, सहस्रार कल्पवासी देव चतुर्थ पृथिवी पर्यन्त; आनत, प्राणत, आरण एवं अच्युत कल्पके देव पाँचवी पृथिवी पर्यन्त, नौ प्रकार के ग्रैवेयक वासी देव छटी पृथिवी के नीचे पर्यन्त तथा अनुदिश एवं अनुत्तर वासी देव सम्पूर्ण लोकनाली को देखते है। अपने कर्म द्रव्य में अनन्त का भाग देकर अपने क्षेत्र में से एक-एक कम करना चाहिए। कल्पवासी देवों के विस्रसोपचय रहित अपने अवधिज्ञानावरण द्रव्यको रखकर जब तक अपने-अपने क्षेत्र-प्रदेश की शलाकाएँ समाप्त न हो जावें तब तक ध्रुवहार का भाग देना चाहिए। उक्त प्रकार से भाग देने पर अन्त में जो स्कन्ध रहे उतने प्रमाण इनके अवधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य समझना चाहिए ॥७०८-७१२॥

विशेषार्थ— वैमानिक देवों का अपना-अपना जितना-जितना अवधिज्ञानका विषयभूत क्षेत्र कहा है, उसके जितने-जितने प्रदेश हैं उन्हें एकत्र कर स्थापित करना और विस्रसोपचय रहित सत्तामें स्थित अपने-अपने अवधिज्ञानावरण कर्मके परमाणुओं को एक ओर स्थापित कर इस अवधिज्ञानावरण के द्रव्यको ध्रुवहार का एक बार भाग देना और क्षेत्र के प्रदेश-पुञ्ज मे से एक प्रदेश घटा देना। भाग देने पर प्राप्त हुई लब्धराशि में दूसरी बार उसी ध्रुवहार का भाग देना और प्रदेश पुञ्ज में से

---

१. महाशुक्र कल्पका विषय छूट गया है। २. ब. क. ज. ठ. संखेत्तं। ३. द. क. ज. ठ. संकम्मे। ४. द. ब. क. ज. ठ. कप्पामरा य। ५. ब. क. जीवा।

एक प्रदेश पुनः घटा देना। पुनः लब्धराशि में ध्रुवहार का भाग देना और प्रदेश पुञ्ज में से एक प्रदेश और घटा देना। इसप्रकार अवधिज्ञान के विषयभूत क्षेत्र के जितने प्रदेश हैं उतनी बार अवधिज्ञानावरण कर्म के परमाणु पुञ्ज भजनफल स्वरूप लब्धराशि में भाग देने के बाद अन्त में जो लब्ध राशि प्राप्त हो उतने परमाणु पुञ्ज स्वरूप पुद्गल स्कन्ध को वैमानिक देव अपने अवधिनेत्र से जानते हैं। यथा—

मानलो—अवधिक्षेत्र के प्रदेश १० हैं और विस्रसोपचय रहित अवधिज्ञानावरण कर्म स्कन्ध के परमाणु १०००००००००००० हैं तथा ध्रुव भागहार का प्रमाण है अतः—

क्षेत्र–१० प्रदेश	अवधिज्ञानावरणका द्रव्य
	१००००००००००००
१०—१=९	१०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = २०००००००००००।
९—१=८	२०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = ४०००००००००००।
८—१=७	४०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = ८०००००००००००।
७—१=६	८०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = १६०००००००००००।
६—१=५	१६०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = ३२०००००००००००।
५—१=४	३२०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = ६४०००००००००००।
४—१=३	६४०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = १२८०००००००००००।
३—१=२	१२८०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = २५६०००००००००००।
२—१=१	२५६०००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = ५१२००००००००००।
१—१=०	५१२००००००००००० × $\frac{१}{२}$ = १०२४०००००००००००।

पुद्गल स्कन्ध को वैमानिक देव अपने अवधिनेत्र से जानते हैं।

होंति असंखेज्जाओ, सोहम्म-दुगस्स वास-कोडीओ।
पल्लस्सासंखेज्जो, भागो सेसाण अट्ठ - ठाणं ॥७१३॥

एवं ओहि-णाणं गदं ॥

अर्थ—कालकी अपेक्षा सौधर्मयुगलके देवों का अवधि-विषय असंख्यात वर्ष करोड़ और शेष देवों का यथायोग्य पल्यके असंख्यातवेंभाग प्रमाण है ॥७१३॥

इसप्रकार अवधिज्ञान का कथन समाप्त हुआ ॥

वैमानिक देवोंका पृथक्-पृथक् प्रमाण—

सोहम्मीसाण - दुगे, विदंगुल-तदिय-मूल-हद-सेढी ।
बिदिय-[1]दुगम्मि सेढी, [2]एक्करसम-वग्गमूल-हिदा ॥७१४॥

३ । ११ ।

अर्थ—सौधर्म-ईशान युगलमें देवोंकी संख्या घनाङ्गुलके तृतीय वर्गमूलसे गुणित श्रेणी (श्रेणी × घ० अं० का ३ वर्गमूल) प्रमाण और द्वितीय युगलमें अपने ग्यारहवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी (श्रेणी÷श्रेणीका ११ वाँ वर्गमूल) प्रमाण है ॥७१४॥

बम्हम्मि होदि सेढी, सेढी-सग-वग्गमूल-अवहरिदा ।
संतवकप्पे सेढी, सेढी - सग - वग्गमूल - हिदा ॥७१५॥

९ । ७ ।

अर्थ—ब्रह्मकल्पमें देवोंकी संख्या श्रेणीके नौवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी (श्रेणी÷श्रेणीका ९ वाँ वर्गमूल) प्रमाण और लान्तवकल्पमें श्रेणीके सातवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी (श्रेणी÷श्रेणीका ७ वाँ वर्गमूल) प्रमाण है ॥७१५॥

महसुक्कम्मि य सेढी, सेढी-पण-वग्गमूल-अवहिदव्वा ।
सेढी सहस्सयारे, सेढी - चउ - वग्गमूल हिदा ॥७१६॥

५ । ४ ।

अर्थ—महाशुक्रकल्पमें देवोंकी संख्या श्रेणीके पाँचवें वर्गमूलसे भाजित श्रेणी (श्रे० ÷ श्रेणीका ५ वाँ वर्गमूल) प्रमाण और सहस्रार कल्पमें श्रेणीके चतुर्थ वर्गमूलसे भाजित श्रेणी प्रमाण है ॥७१६॥

अवसेस - कप्प - दुगले, पल्लासंखेज्जभागमेत्तेक्केक्के ।
देवाणं संखादो, संखेज्जगुणा हवंति देवीओ ॥७१७॥

$$\left|\begin{matrix} प \\ रि \end{matrix}\right|^{3}$$

अर्थ—अवशेष दो कल्प युगलों में से एक-एक में देवों का प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भाग मात्र है । देवों की संख्या से देवियाँ संख्यातगुणी हैं ॥७१७॥

---

१. द. ब. दुगम्मि । २. ब. एक्करसम, द. ब. प. ठ. एक्करसमम ।

३. द. ब. क. ब. ठ. ३ ।

हेट्ठिम-मज्झिम-उवरिम-गेवेज्जेसुं अणुद्दिसादि-दुगे ।
पल्लासंखेज्जंसो, सुराण संखाए अहं - ओग्घं ॥७१८॥

| प
| रि |

अर्थ—अधस्तन ग्रैवेयक, मध्य ग्रैवेयक, उपरिम ग्रैवेयक और अनुदिस-द्विक (अनुदिश-अनुत्तर) में देवों की संख्या यथायोग्य पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ॥७१८॥

णवरि विसेसो सव्वट्ठसिद्धि-णामम्मि होदि-संखेज्जो ।
देवाणं परिसंखा, णिद्दिट्ठा वीयरागेहि ॥७१९॥

संखा गदा ॥

अर्थ—विशेष यह है कि सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रक में संख्यात देव हैं । इसप्रकार वीतराग-देव ने देवों की संख्या निर्दिष्ट की है ।

संख्या का कथन समाप्त हुआ ॥७१९॥

वैमानिक देवों की शक्तिका दिग्दर्शन—

एक्क - पलिदोवमाऊ, उप्पाडेदुं धराए छक्खंडे ।
तम्मद-णर-तिरिय-अणे, मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥७२०॥

अर्थ—एक पल्योपम प्रमाण आयुवाला देव पृथिवी के छह खण्डों को उखाड़ने में और उनमें स्थित मनुष्य और तिर्यञ्चों को मारने अथवा पोषण करने में समर्थ है ॥७२०॥

उवहि-उवमाउ-जीवी, पल्लट्टेदुं च [1]जंबुदीवं हि ।
तग्गद - णर - तिरियाणं, मारेदुं पोसिदुं सक्को ॥७२१॥

अर्थ—सागरोपम प्रमाण काल पर्यन्त जीवित रहनेवाला देव जम्बूद्वीपको भी पलटनेमें और उसमें स्थित मनुष्य और तिर्यञ्चों को मारने अथवा पोषनेमें समर्थ है ॥७२१॥

सोहम्मिंदो[2] तियमा, जंबूदीवं समुक्खवदि एवं ।
केई आइरिया इव, सत्ति - सहावं परूवंति ॥७२२॥

पाठान्तरम् ।

सत्ती गदा ।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. जं । २. द. ब. क. ज. ठ. सोधम्मि ।
३. द. ब. क. ज. ठ. सोहम्मिंदा ।

अर्थ—सौधर्म इन्द्र नियमसे जम्बूद्वीपको (उठाकर) फेंक सकता है। इसप्रकार कोई आचार्य उसके शक्ति स्वभावका निरूपण करते हैं ।।७२२।।

पाठान्तर ।

शक्तिका कथन समाप्त हुआ ।

चारों प्रकारके देवोंकी योनि प्ररूपणा—

भावण-वेंतर-जोइसिय-कप्पवासीण[1]- जणणमुववादे ।
सीदुण्हं अच्चित्तं, संउदया होंति सामण्णे ।।७२३।।
एदाण चउ-विहाणं, सुराण सव्वाण होंति जोणीओ ।
चउ-लक्खा हु विसेसे, इंदिय-कल्लाव ओवाला (?) ।।७२४।।

जोणी समत्ता ।।

अर्थ—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासियोंके उपपाद जन्ममें शीतोष्ण, अचित्त और संवृत योनि होती है। इन चारों प्रकारके सब देवोंके सामान्यरूपसे ये योनियां हैं। विशेषरूपसे चार लाख योनियां होती हैं ।।७२३-७२४।।

योनियोंका कथन समाप्त हुआ ।

स्वर्ग सुखके भोक्ता—

सम्मद्दंसण - सुद्धिमुज्जलयरं संसार - णिण्णासणं ।
सम्मण्णाणमणंत - दुक्ख - हरणं धारंति जे सततं ।।७२५।।
णिव्वाहंति विसिट्ठ-सील-सहिदा, जे सम्मचारित्तयं ।
ते सग्गे सुविचित्त-पुण्ण-जणिदे, भुंजंति सोक्खामयं ।।७२६।।

अर्थ—जो अतिशय उज्ज्वल एवं संसारको नष्ट करनेवाली सम्यग्दर्शनकी शुद्धि तथा अनन्त दुःखको हरने वाले सम्यग्ज्ञानको निरन्तर धारण करते हैं और जो विशिष्ट शील-परायण होकर सम्यक्चारित्रका निर्वाह करते हैं, वे अद्भुत पुण्यसे उत्पन्न हुए स्वर्गमें सौख्यामृत भोगते हैं ।।७२५-७२६।।

---

१. द. ब. कप्पवासीणमुववादे ।

अधिकारान्त मङ्गलाचरण—

चउ-गइ-पंक-विमुक्कं, णिम्मल-वर-मोक्ख-लच्छि-मुह-मुकुरं ।
पासदि य धम्म - तित्थं, धम्म - जिणिदं णमंसामि ॥७२७॥

एवंमाइरिय-परंपरा-गय-तिलोयपण्णत्तीए देवलोय-सरूव[1]-
णिरूवण-पण्णत्ती णाम

अट्ठमो महाहियारो समत्तो ॥८॥

अर्थ—जो चतुर्गतिरूप पङ्कसे रहित, निर्मल एवं उत्तम मोक्ष-लक्ष्मी के मुख के मुकुर (दर्पण) स्वरूप तथा धर्म-तीर्थ के प्रतिपादक हैं, उन धर्म जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूँ ॥७२७॥

इसप्रकार आचार्य - परम्परागत त्रिलोकप्रज्ञप्ति में देवलोक - स्वरूप - निरूपण प्रज्ञप्ति नामक ।

आठवाँ महाधिकार समाप्त हुआ ॥८॥

---

१. ब. क. सरूवण ।



तिलोयपण्णत्ती

णवमो महाहियारो

मंगलाचरण एवं प्रतिज्ञा—

उप्पहग्ग-संठियाणं, भव्वाणं मोक्ख - मग्ग - देसयरं ।
णमिय संति-जिणेसं[1], वोच्छामो सिद्धलोय-पण्णत्तो ॥१॥

अर्थ—उन्मार्गमें स्थित भव्य-जीवोंको मोक्षमार्गका उपदेश करनेवाले शान्ति जिनेन्द्र को नमस्कार करके सिद्धलोक-प्रज्ञप्ति कहता हूँ ॥१॥

पाँच अन्तराधिकारोंका निर्देश—

सिद्धाण णिवास-खिदी, संखा ओगाहणाणि सोक्खाइं ।
सिद्धत्त - हेदु - भावो, सिद्ध - जगे[2] पंच अहियारा ॥२॥

अर्थ—सिद्धोंकी निवास-भूमि, संख्या, अवगाहना, सौख्य और सिद्धत्वके हेतु-भूत भाव, सिद्धलोक प्रज्ञप्ति में ये पाँच अधिकार हैं ॥२॥

सिद्धोंका निवास क्षेत्र—

अट्ठम-खिदीए उवरिं, पण्णासब्भहिय-सत्तय-सहस्सा ।
दंडाणि तणूणं, सिद्धाणं होदि आवासो ॥३॥

---

१. ब. ब. क. ज. ठ. जिणेसं । २. ब. ब. क. ज. ठ. जुवे ।

अर्थ—आठवीं (ईषत्प्राग्भार) पृथ्वीके ऊपर सात हजार पचास धनुष जाकर सिद्धोंका आवास है ॥३॥

विशेषार्थ—अष्टम पृथ्वीसे ऊपर लोकके अन्तमें ४००० धनुष मोटा घनोदधिवातवलय, २००० धनुष मोटा घनवातवलय और १५७५ धनुष मोटा तनुवातवलय है। सिद्ध परमेष्ठी तनुवातवलयमें रहते हैं और इनकी उत्कृष्ट अवगाहना ५२५ है। वातवलयों के प्रमाणमेंसे उत्कृष्ट अवगाहना घटा देने पर अष्टम पृथ्वीसे कितने योजन ऊपर जाकर सिद्ध स्थित हैं, यह प्रमाण प्राप्त हो जाता है। यथा—

७०५० धनुष = (४००० ध० + २००० ध० + १५७५ ध०) − ५२५ धनुष।

पणदो छप्पण-इगि-अट्ठ-णह-चउ-सग-चउ-ख-चदुर-अट्ठ-कमसो।
अट्ठ - हिदा जोयणया, सिद्धाण णिवास - खिदिमाणं ॥४॥

$$\frac{=४०४७५४०८१५६२५}{८}$$

णिवास-खेत्तं गदं ॥१॥

अर्थ—सिद्धोंके निवास क्षेत्रका प्रमाण अंक क्रमसे आठसे भाजित पांच, दो, छह, पांच, एक, आठ, शून्य, चार, सात, चार, शून्य, चार और आठ इतने ($^{४०४७५४०८१५६२५}_{८}$) योजन है ॥४॥

विशेषार्थ—सिद्धोंके निवास क्षेत्रका व्यास मनुष्य लोक सदृश ४५ लाख योजन है और सिद्धप्रभुकी उत्कृष्ट अवगाहना अर्थात् ऊँचाई ५२५ धनुष प्रमाण है। इसका घनफल इसप्रकार है—

सिद्धोंके निवास क्षेत्रकी परिधि $= \sqrt{४५ \text{ लाख}^२ \times १०} = १४२३०२४२$ योजन।

सिद्धक्षेत्रका घनफल = (परिधि ^{१४२३०२४१}) × (४५ लाख व्यासका चतुर्थांश) × ($^{५२५}_{१७६}$ यो० ऊंचाई)।

$= ^{८४०४७५४०८१५६२५}$ घन योजन।

या $= १०५०५८२६११९२३\frac{१}{२}$ घन योजन है।

नोट—उपर्युक्त प्रमाण घन योजनोंमें प्राप्त हुआ है किन्तु गाथामें केवल योजन कहे गये हैं। यह विचारणीय है।

निवास क्षेत्रका कथन समाप्त हुआ ॥१॥

सिद्धों की संख्या—

तीद-समयाण संखं, अड-समयब्भहिय-मास-छक्क-हिदा ।
अड-हीण-छस्सया[1]-हद-परिमाण-जुदा हवंति ते सिद्धा ॥५॥

अ । ५९२[2]
मा ६ । स ८

संखा गदा ॥ २ ॥

अर्थ—अतीत समयों की संख्या में छह मास और ८ समय का भाग देकर आठ कम छह सो अर्थात् ५९२ से गुणा करने पर जो प्राप्त हो उतने [(अतीत समय ÷ ६ मास ८ समय) × ५९२] सिद्ध हैं ॥५॥

संख्या का कथन समाप्त हुआ ॥२॥

सिद्धों की अवगाहना—

पण-कदि-जुद-पंच-सया, ओगाहणया धणूणि[3] उक्कस्से ।
अद्धट्ठ - हत्थमेत्ता, सिद्धाणं जहण्ण - ठाणम्मि ॥६॥

५२५ । ह ३ ।

अर्थ—इन सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना पाँच के वर्ग से युक्त पाँच सौ [(५ × ५) + ५०० = ५२५] धनुष है और जघन्य अवगाहना साढ़े तीन (३½) हाथ प्रमाण है ॥६॥

तणुवाद-बहल-संखं, पण-सय-रूवेहि ताणिदूण तदो ।
पण्णरस - सएहि भजिदे, उक्कस्सोगाहणं होदि ॥७॥

१५७५ × ५०० | ५२५ ध[4]
१५०० |

अर्थ—तनुवात के बाहल्य की संख्या (१५७५ ध०) को पाँच सौ (५००) रूपों से गुणा कर पन्द्रह सौ का भाग देने पर जो लब्ध प्राप्त हो उतना [(१५७५ × ५००) ÷ १५००] अर्थात् ५२५ ध० उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण होता है ॥७॥

तणुवाद-बहल-संखं, पण-सय- रूवेहि ताणिदूण तदो ।
णव - सत्तेहि भजिदे, जहण्णमोगाहणं होदि ॥८॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. छप्पण्णाद । २. द. ब. क ज ठ ५१२ ।
३. द. ब. क. ज. ठ. धणूणि । ४. द. ब. (१५०० । १५७५ । ५०० । १ । ५२५ ।

[1]१५७५ × ५०० / ९००००० | ३ ।

अर्थ—तनुवात के बाहल्य की संख्या को पांच सौ रूपों से गुणा करके नौ लाख का भाग देने पर जघन्य अवगाहनाका [(१५७५ × ५००) ÷ ९००००० = ३ धनुष = ३½ हाथ] प्रमाण होता है ॥ ८ ॥

वीहत्तं बाहल्लं, चरिम-भवे जस्स जारिसं ठाणं ।
तत्तो ति-भाग-हीणं, ओगाहण सव्व-सिद्धाणं ॥९॥

अर्थ—अन्तिम भवमें जिसका जैसा आकार, दीर्घता और बाहल्य हो उससे तृतीय भागसे कम सब सिद्धों की अवगाहना होती है ॥९॥

लोयविणिच्छय-गंथे, लोयविभागम्मि सव्व-सिद्धाणं ।
ओगाहण-परिमाणं, भणियं[2] किंचूण चरिम-देह-समो ॥१०॥

पाठान्तरम् ।

अर्थ—लोकविनिश्चय ग्रन्थमें तथा लोकविभागमें सब सिद्धोंकी अवगाहनाका प्रमाण कुछ कम चरम शरीरके सदृश कहा है ॥१०॥

पाठान्तर ।

पण्णासुत्तर-ति-सया, उक्कस्सोगाहणं हवे तेसिं ।
तिय-भजिद-सत्त-हत्था, जहण्ण - ओगाहणं ताणं ॥११॥

३५० । ७ । ३ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—सिद्धोंकी उत्कृष्ट अवगाहना तीन सौ पचास (३५०) धनुष और जघन्य अवगाहना तीनसे भाजित सात (७/३) हाथ प्रमाण है ॥११॥

पाठान्तर ।

विशेषार्थ—मोक्षगामी मनुष्यके अन्तिम शरीरकी उत्कृष्ट अवगाहना ५२५ धनुष और जघन्य अवगाहना ७ या ३½ हाथ प्रमाण होती है । कोई आचार्य अन्तिम भव से ⅓ भाग कम अर्थात् (५२५ × ⅔ =) ३५० धनुष उत्कृष्ट और (७ × ⅔ =) ४⅔ या २⅓ हाथ प्रमाण जघन्य अवगाहना मानते हैं ।

---

१. ब. अ. ९००००० । १५७५ । ५०० । ३ । ७/३ । २. ब. अ. क. भणिदं ।

तणुवाद-पवण-बहले, दोहि गुणि णवेण भजिदम्मि ।
जं लद्धं सिद्धाणं, उक्कस्सोगाहणं ठाणं ॥१२॥

२२५० । १५७५ । ५०० । १ । एदेण ते-रासि[1]-लद्धं ३ । १५७५ । ३५० ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—तनुवात पवनके बाहल्यको दोसे गुणित कर नौ का भाग देनेपर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सिद्धोंकी उत्कृष्ट अवगाहनाका स्थान होता है ॥१२॥

विशेषार्थ—तनुवातवलयका बाहल्य १५७५ धनुष प्रमाणांगुलकी अपेक्षा है और सिद्धों की उत्कृष्ट-अवमय अवगाहना व्यवहारांगुल अपेक्षा है। तनुवातवलय की मोटाईको ५०० से गुणित करने पर (१५७५×५००=) ७८७५०० व्यवहार धनुष प्राप्त होते हैं। सिद्ध परमेष्ठी उत्कृष्टता से तनुवात के एक खण्ड में विराजमान हैं। जबकि (५२५×$\frac{2}{3}$=) ३५० धनुष का १ खण्ड होता है, तब ७८७५०० धनुषों के कितने खण्ड होंगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर ($\frac{७८७५००}{३५०}$=) २२५० खण्ड हुए। ये २२५० खण्ड व्यवहार धनुष से हैं, इनके प्रमाण-धनुष बनाने के लिये इन्हें ५०० से भाजित करने पर ($\frac{२२५०}{५००}$)=४$\frac{1}{2}$ या $\frac{9}{2}$ प्रमाण धनुष (खण्ड) प्राप्त होते हैं।

जबकि २२५० अर्थात् $\frac{9}{2}$ खण्डों का १५७५ धनुष स्थान है तब १ खण्ड का कितना होगा ? इसप्रकार पुनः त्रैराशिक करने पर ($\frac{१५७५\times२}{९}$ =) ३५० धनुषका सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना का स्थान प्राप्त हुआ। मूल संदृष्टि में यही सब प्रमाण दिया गया है।

पाठान्तर ।

तणुवादस्स य बहले, छस्सय-पण्णत्तरीहि भजिदम्मि ।
जं लद्धं सिद्धाणं, जहण्ण - ओगाहणं होदि ॥१३॥

१३५०००० । १५७५ । २००० । १ । ते-रासिएण सिद्धं $\frac{१३५०००}{१५७५}$ । $\frac{3}{7}$ ।

पाठान्तरम् ।

अर्थ—तनुवात के बाहल्य में छह सौ पचहत्तर (६७५) का भाग देने पर जो लब्ध प्राप्त हो उतना सिद्धों की जघन्य अवगाहना का स्थान होता है ॥१३॥

विशेषार्थ—गा० १२ के विशेषार्थानुसार यहाँ भी (१५७५×५००=) ७८७५०० व्यवहार धनुष प्राप्त हुए। सिद्धोंकी जघन्य अवगाहना का माप हाथसे है और उनकी अवस्थितिके स्थानका माप धनुष है अतः जबकि ४ हाथका एक धनुष होता है तब ($\frac{3}{2}\times\frac{1}{4}$=) $\frac{3}{8}$ हाथके कितने

---

१. ब. त्रैरासिएं ।

धनुष होगे ? इसप्रकार त्रैराशिक करने पर ($\frac{2}{3} \times \frac{3}{1} =$) $\frac{2}{1}$ धनुष प्राप्त हुए। जबकि $\frac{2}{1}$ धनुष का १ खण्ड होता है, तब ७८७५०० धनुषोंके कितने खण्ड होंगे ? इस त्रैराशिकसे ($७८७५०० \times \frac{1}{2}$) =१३५००० खण्ड प्राप्त हुए। ये खण्ड व्यवहार धनुष से हैं, इनके प्रमाण धनुष और प्रमाण धनुषोंके प्रमाण हाथ बनानेके लिए इन्हें (५०० × ४ =) २००० से भाजित करनेपर ($\frac{१३५०००}{२०००} =$) ६७५ खण्ड प्राप्त हुए।

जबकि ६७५ खण्डोंका १५७५ धनुष स्थान है, तब १ खण्डका कितना स्थान होगा ? इस त्रैराशिक से ($\frac{१५७५}{६७५} =$) ३ हाथका सिद्धोंकी जघन्य अवगाहना का स्थान प्राप्त हुआ।

मूल संदृष्टिमें यही सब प्रमाण दर्शाया गया है।

पाठान्तर।

अवरुवकस्सं मज्झिम-ओगाहण-सहिद-सिद्ध-जीवाओ।
होंति अणंताणंता, [1]एक्केक्कोगाहिद-खेत्त-मज्झम्मि ॥१४॥

अर्थ—एक सिद्ध जीवसे अवगाहित क्षेत्रके भीतर जघन्य, उत्कृष्ट और मध्यम अवगाहना-वाले अनन्तानन्त सिद्ध जीव होते हैं ॥१४॥

माणुसलोय - पमाणे, संठिय-तणुवाद-उवरिमे भागे।
सरिस सिरा सव्वाणं, हेट्ठिम-भागम्मि विसरिसा केई ॥१५॥

अर्थ—मनुष्यलोक प्रमाण स्थित तनुवातके उपरिम भागमें सब सिद्धोंके सिर सदृश होते हैं। अधस्तन भागमें कोई विसदृश होते हैं ॥१५॥

जावद्धम्म - दव्वं, तावं गंतूण लोयसिहरम्मि।
चेट्ठंति सव्व-सिद्धा, पुह पुह [2]भवसित्थ-मूस-गब्भ-णिहा ॥१६॥

ओगाहणा गदा ॥३॥

अर्थ—जहाँ तक धर्मद्रव्य है वहाँ तक जाकर लोकशिखरपर सब सिद्ध पृथक्-पृथक् मोमसे रहित मूसक (सांचे) के अभ्यन्तर आकाशके सदृश स्थित हो जाते हैं ॥१६॥

अवगाहनाका कथन समाप्त हुआ ॥३॥

सिद्धोंका सुख—

णिरुवम-रूवा णिट्ठिय-कज्जा णिच्चा णिरंजणा णिरुजा।
णिम्मल-बोधा सिद्धा, णिरुज्जा णिक्कला सगाधारा ॥१७॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. एक्केक्कोगहिद। २. द. ब. क. ज. ठ. णवसित्थ।

लोयालोय-विभागं, तम्मिट्ठिय सव्व-दव्व-पज्जायं ।
तिय-काल-गदं सव्वं, जाणंति हु एक्क - समएण ॥१८॥

अर्थ—अनुपम स्वरूपसे संयुक्त, कृतकृत्य, नित्य, निरंजन, नीरोग, निर्वस्त्र, निष्पाप, स्व-आधार और निर्मलज्ञानसे युक्त सिद्ध परमेष्ठी लोक और अलोकके विभागको, लोक स्थित सर्व द्रव्यों और उनकी त्रिकालवर्ती सब पर्यायोंको एक ही समयमें जानते हैं ॥१७-१८॥

जाइ-जरा-मरणेहि, णिम्मुक्का णिम्मला अणक्खरया ।
अवगद - वेदा सव्वे, अणंत - णाणा अणंत - सुहा ॥१९॥
किदकिच्चा सव्वण्हू, सत्ताघादा सदा-सिवा सुद्धा ।
परमेट्ठी परम - सुहा, सव्वगया सव्व - वरिसीय ॥२०॥
अव्वाबाहमणंतं, अक्खयमणुवममणिंदियं सोक्खं ।
अणुहुंजंति हु, सिद्धा सदा - सदा सव्वे ॥२१॥

सोक्खं समत्तं ॥४॥

अर्थ—जन्म, जरा और मरणसे विनिर्मुक्त, निर्मल, अनक्षर (शब्दातीत), वेद से रहित, अनन्तज्ञानी, अनन्तसुखी, कृतकृत्य, सर्वज्ञ, स्व-सत्तासे सब कर्मोंका घात करनेवाले, सदाशिव, शुद्ध, परम पदमें स्थित, परम सुखी, सर्वगत, सर्वदर्शी, ऐसे सर्व सिद्ध अव्याबाध, अनन्त, अक्षय, अनुपम और अतीन्द्रिय सुखका निरन्तर भोग करते हैं ॥१९-२१॥

इसप्रकार सुख प्ररूपण समाप्त हुआ ॥४॥

सिद्धत्वके कारण—

जह चिर-संचिदमिंधणमणलो पवणाहदो लहुं डहइ ।
तह कम्मिंधणमहियं, खणेण झाणाणलो डहइ ॥२२॥

अर्थ—जिसप्रकार चिर-संचित ईंधनको पवनसे आहत अग्नि शीघ्र ही जला देती है, उसीप्रकार ध्यानरूपी अग्नि बहुतभारी कर्मरूपी ईंधनको क्षण-मात्रमें जला देती है ॥२२॥

जो सविद[1]-मोह-कलुसो, विसय-विरत्तो मणो णिरुंभित्ता ।
समवट्ठिदो सहावे, सो पावइ णिव्वुदिं सोक्खं ॥२३॥

---

१. द. ब. क. विविदमोहके कलुसो ।

अर्थ—जो दर्शनमोह और चारित्रमोहको नष्ट कर विषयोंसे विरक्त होता हुआ मनको रोककर (आत्म-) स्वभावमें स्थित होता है वह मोक्ष-सुखको प्राप्त करता है ॥२३॥

जस्स ण विज्जदि रागो, दोसो मोहो व जोग-परिकम्मो ।
तस्स सुहासुह - दहणो - जायदे झाणमयो अगणी ॥२४॥

अर्थ—जिसके राग, द्वेष, मोह और योग-परिकर्म (योग-परिणति) नहीं है उसके शुभाशुभ (पुण्य-पाप) को जलानेवाली ध्यानमय अग्नि उत्पन्न होती है ॥२४॥

दंसण-णाण-समग्गं, झाणं जो अण्ण - दव्व - संसत्तं ।
जायदि णिज्जर - हेदू, सभाव - सहिदस्स साहुस्स ॥२५॥

अर्थ—(शुद्ध) स्वभाव युक्त साधुका दर्शन-ज्ञानसे परिपूर्ण ध्यान निर्जराका कारण होता है, अन्य द्रव्योंसे संसक्त वह (ध्यान) निर्जराका कारण नहीं होता ॥२५॥

जो सव्व-संग-मुक्को, अणण्ण-मणो अप्पणो[1] सहावेण ।
जाणदि पस्सदि आदं, सो सग-चरियं चरदि जीवो ॥२६॥

अर्थ—जो (अन्तरङ्ग बहिरङ्ग) सर्व सङ्गसे रहित और अनन्यमन (एकाग्रचित्त) होता हुआ अपने चैतन्य स्वभावसे आत्माको जानता एवं देखता है, वह जीव आत्मीय चारित्रका आचरण करता है ॥२६॥

णाणम्मि भावणा खलु, कादव्वा दंसणे चरित्ते य ।
ते पुण आदा तिण्णि वि, तम्हा कुण भावणं आदे ॥२७॥

अर्थ—ज्ञान, दर्शन और चारित्रमें भावना करनी चाहिए। यद्यपि वे तीनों (दर्शन, ज्ञान और चारित्र) आत्मस्वरूप हैं अतः आत्मामें ही भावना करो ॥२७॥

अहमेक्को खलु सुद्धो, दंसण-णाणप्पगो[2] सदारूवी ।
ण वि अत्थि मज्झ किंचि वि,[3] अण्णं परमाणुमेत्तं पि ॥२८॥

अर्थ—मैं निश्चयसे सदा एक, शुद्ध, दर्शन-ज्ञानात्मक और अरूपी हूँ। परमाणु मात्र (प्रमाण भी) अन्य कुछ मेरा नहीं है ॥२८॥

अत्थि मम को वि मोहो, [4]दुक्खो उवओगमेत्तमहमेक्को ।
इह भावणाहि जुत्तो, खवेइ दुट्ठट्ठ - कम्माणि ॥२९॥

---

१ द. ब. क. ब. ठ. अण्णो अप्पणा । २. द. ब. क. ब. ठ. णाणप्पगा सदारूवी । ३. द. ब. अत्थि । ४. द. दुक्खो उवओगमेत्तमहमेक्को, ब. दुक्खो उवओग ___ ।

अर्थ – मोह मेरा कुछ भी नहीं है, एक ज्ञान दर्शनोपयोगरूप ही मैं जानने योग्य हूँ; ऐसी भावनासे युक्त जीव दुष्ट-कर्मोंको नष्ट करता है ।।२९।।

णाहं होमि परेसि, ण मे परे संति[1] णाणमहमेक्को ।
इदि जो झायदि झाणे, सो मुच्चइ अट्ठ - कम्मेहिं ।।३०।।

अर्थ – न मैं पर पदार्थोंका हूं और न पर पदार्थ मेरे हैं, मैं तो ज्ञान-स्वरूप अकेला ही हूँ; इसप्रकार जो ध्यानमें चिन्तन करता है वह आठ कर्मोंसे मुक्त होता है ।।३०।।

चित्त-विरामे विरमंति, इंदिया इंदियासु विरदेसुं ।
आद - सहावम्मि रदो, होदि पुढं तस्स णिव्वाणं ।।३१।।

अर्थ—चित्तके शान्त होनेपर इन्द्रियाँ शान्त होती हैं और इन्द्रियोंके शान्त होनेपर आत्म-स्वभावमें रति होती है, फिर उसका स्पष्टतया निर्वाण होता है ।।३१।।

णाहं देहो ण मणो, ण चेव वाणी ण कारणं तेसिं ।
एवं खलु जो भाओ, सो पावइ सासयं ठाणं ।।३२।।

अर्थ– न मैं देह हूँ, न मन हूँ, न वाणी हूँ और न उनका कारण ही हूँ । इसप्रकार का जो भाव है (उसे भाने वाला) वह शाश्वत स्थानको प्राप्त करता है ।।३२।।

देहो य मणो वाणी, पोग्गल-दव्वं परोत्ति[2] णिद्दिट्ठं ।
पोग्गल - दव्वं[3] पि पुणो, पिंडो परमाणु-दव्वाणं ।।३३।।

अर्थ—देहके सदृश मन और वाणी पुद्गल-द्रव्यात्मक पर हैं ऐसा कहा गया है । पुनः पुद्गल द्रव्य भी परमाणु-द्रव्योंका पिण्ड है ।।३३।।

णाहं पुग्गलमइओ, ण दे मया पुग्गला कया पिंडं ।
तम्हा हि ण देहो हं, कत्ता वा तस्स देहस्स ।।३४।।

अर्थ—न मैं पुद्गलमय हूँ और न मैंने उन पुद्गलोंको पिण्ड (स्कन्ध) रूप किया है, इसलिए न मैं देह हूँ और न इस देहका कर्ता ही हूँ ।।३४।।

एवं णाणप्पाणं, दंसण - भूदं अदिंदियमहत्थं ।
धुवमचलमणालंबं, झावेहं अप्पयं सुद्धं ।।३५।।

---

१. ब. द. ण सिंति । २. ब. ब. क. ज. ठ. परो । ३ ब. ब. क. ज. ठ. दव्वं ।

अर्थ—इसप्रकार ज्ञानात्मक, दर्शनभूत, अतीन्द्रिय, महार्थ, नित्य, निर्मल और निरालम्ब शुद्ध आत्माका चिन्तन करना चाहिए ।।३५।।

णाहं होमि परेसिं, ण मे परे संति णाणमहमेक्को ।
इदि जो झायदि झाणे, सो अप्पाणं हवदि झादा ।।३६।।

अर्थ—न मैं पर पदार्थोंका हूँ और न पर पदार्थ मेरे हैं मैं तो ज्ञानमय अकेला हूँ, इसप्रकार जो ध्यानमें आत्माका चिन्तन करता है वही ध्याता है ।।३६।।

जो एवं जाणित्ता, झादि परं अप्पयं विसुद्धप्पा ।
अणुवममपारमदिसय[1], सोक्खं पावेदि सो जीओ ।।३७।।

अर्थ—जो विशुद्ध आत्मा इसप्रकार जानकर उत्कृष्ट आत्माका ध्यान करता है वह जीव अनुपम, अपार और अतिशय सुख प्राप्त करता है ।।३७।।

णाहं होमि परेसिं, ण मे परे संति मज्झमिह किंचि ।
एवं खलु जो भावइ, सो पावइ सव्व - कल्लाणं ।।३८।।

अर्थ—न मैं पर पदार्थोंका हूँ और न पर पदार्थ मेरे हैं, यहाँ मेरा कुछ भी नहीं है; जो इसप्रकार भावना भाता है वह सब कल्याण पाता है ।।३८।।

उड्ढोय-मज्झ-लोए, ण मे परे संति मज्झमिह किंचि ।
इह भावणाहि जुत्तो, सो पावइ अक्खयं सोक्खं ।।३९।।

अर्थ—यहाँ ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और मध्यलोकमें पर पदार्थ मेरे कुछ भी नहीं है, यहाँ मेरा कुछ भी नहीं है । इसप्रकारकी भावनाओंसे युक्त वह जीव अक्षय-सुख पाता है ।।३९।।

मद-माण-माय-रहिओ, लोहेण विवज्जिओ य जो जीवो ।
णिम्मल - सहाव - जुत्तो, सो पावइ अक्खयं ठाणं ।।४०।।

अर्थ—जो जीव मद, मान एवं मायासे रहित; लोभसे वर्जित और निर्मल स्वभावसे युक्त होता है वह अक्षय स्थान को पाता है ।।४०।।

परमाणु-पमाणं वा, मुच्छा देहादिएसु अत्थु पुणो ।
सो ण [2]विजाणदि समयं-सगस्स सव्वागम-धरो वि ।।४१।।

---

१. द. ब. क. ज. ठ. सर्व । २. द. ब. क, आदि ।

अर्थ—जिसके परमाणु प्रमाण भी देहादिकमें राग है, वह समस्त आगमका धारी होकर भी अपने समय (आत्मा) को नहीं जानता है ॥४१॥

तम्हा[1] णिव्वुदि-कामो, रागं देहेसु कुणदु मा किंचि ।
देह - विभिण्णो अप्पा, [2]झायव्वो इंदियादीदो ॥४२॥

अर्थ—इसलिए हे मोक्षाभिलाषी ! देहमें कुछ भी राग मत करो । (तुम्हारे द्वारा) देहसे भिन्न अतीन्द्रिय आत्माका ध्यान किया जाना चाहिए ॥४२॥

देहत्थो देहादो, किंचूणो देह - वज्जिओ सुद्धो ।
देहायारो अप्पा, झायव्वो इंदियातीदो ॥४३॥

अर्थ—देहमें स्थित, देहसे कुछ कम, देहसे रहित, शुद्ध, देहाकार और इन्द्रियातीत आत्माका ध्यान करना चाहिए ॥४३॥

झाणे जदि णिय-अप्पा, णाणादो णावभासदे जस्स ।
झाणं होदि ण तं पुण, जाण पमादो हु मोह-मुच्छा वा ॥४४॥

अर्थ—जिस जीवके ध्यानमें यदि ज्ञानसे निज आत्माका प्रतिभास नहीं होता है तो फिर वह ध्यान नहीं है । उसे (तुम) प्रमाद, मोह अथवा मूर्च्छा हो जानो ॥४४॥

णयसित्थ-मूस-गब्भायारो रयणत्तयादि-गुण-जुत्तो ।
णिय-अप्पा झायव्वो, खय - रहिदो जीव-घण-देसो ॥४५॥

अर्थ—मोमसे रहित मूसकके (अभ्यन्तर) आकाशके आकार, रत्नत्रयादि गुणोंसे युक्त, अविनश्वर और असंख्यात-प्रदेशी निज आत्माका ध्यान करना चाहिए ॥४५॥

जो आव-भाव-णमिणं, सिक्खुव-जुत्तो मुणी[3] समाचरदि ।
सो सव्व - दुक्ख - मोक्खं[4], पावइ अचिरेण कालेण ॥४६॥

अर्थ—जो साधु नित्य उद्योगशील होकर इस आत्म-भावनाका आचरण करता है वह थोड़े समयमें ही सब दुःखोंसे छुटकारा पा लेता है ॥४६॥

---

१. ब. तेसा, क. तम्मा । २. ब. क. ज. ठ. झायव्वो ।
३. ब. मुणो । ४. ब. ज. ठ. मोक्खं, द. क. मोक्खो ।

कम्मे णोकम्मम्मि य, अहमिदि अहयं च कम्म-णोकम्मं ।
जायदि सा खलु बुद्धी, सो हिंडइ मरुव - संसारं ॥४७॥

अर्थ—कर्म और नोकर्ममें "मैं हूँ" तथा मैं कर्म-नोकर्मरूप हूँ; इसप्रकार जो बुद्धि होती है उससे यह प्राणी बहुत संसारमें घूमता है ॥४७॥

जो खविद-मोह-कम्मो, विसय-विरत्तो मणो णिरुंभित्ता ।
समवट्ठिदो सहावे, सो मुच्चइ कम्म - णिगलेहिं ॥४८॥

अर्थ—जो मोहकर्म (दर्शनमोह और चारित्रमोह) को नष्टकर विषयोंसे विरक्त होता हुआ मनको रोककर स्वभावमें स्थित होता है, वह कर्मरूपी साँकलोंसे छूट जाता है ॥४८॥

पयडिट्ठिदि-अणुभाग-प्पदेस-बंधेहि वज्जिओ अप्पा ।
सो हं इदि चिंतेज्जो, तत्थेव य कुणह थिर-भावं ॥४९॥

अर्थ—जो प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश बन्धसे रहित आत्मा है वही मैं हूँ, इसप्रकार चिन्तन करना चाहिये और उसमें ही स्थिरता करनी चाहिये ॥४९॥

केवलणाण-सहाओ, केवलदंसण-सहाओ सुहमइओ ।
केवल-विरिय-सहाओ, सो हं इदि चिंतए णाणी ॥५०॥

अर्थ—जो केवलज्ञान एवं केवलदर्शन स्वभाव से युक्त, सुख-स्वरूप और केवल-वीर्य-स्वभाव है वही मैं हूँ, इसप्रकार ज्ञानी जीवको विचार करना चाहिए ॥५०॥

जो सव्व-संग-मुक्को, झायदि अप्पाणमप्पणो[1] अप्पा ।
सो सव्व दुक्ख-मोक्खं, पावइ अचिरेण कालेण ॥५१॥

अर्थ—सर्व सङ्ग (परिग्रह) से रहित जो जीव अपने आत्माका आत्माके द्वारा ध्यान करता है वह थोड़े ही समय में समस्त दुःखों से छुटकारा पा लेता है ॥५१॥

जो इच्छदि णिस्सरिदुं, संसार-महण्णवस्स रुंदस्स ।
सो एवं जाणित्ता, परिझायदि अप्पयं सुद्धं ॥५२॥

अर्थ—जो गहरे संसाररूपी समुद्र से निकलने की इच्छा करता है वह इसप्रकार जानकर शुद्ध-आत्मा का ध्यान करता है ॥५२॥

---

१ द. ब. क. ज. ठ. अप्पाण अप्पणो ।

पडिकमणं पडिसरणं, पडिहरणं धारणा णियत्ती य ।
णिंदण-गरहण-सोही, लब्भंति णियाद-भावणए ॥५३॥

अर्थ—निजात्म-भावना से (जीव) प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, प्रतिहरण, धारणा, निवृत्ति, निन्दन, गर्हण और शुद्धिको प्राप्त करते हैं ॥५३॥

जो णिहद-मोह-गंठी, राय-पदोसे[1] हि खविय सामण्णे ।
होज्जं सम-सुह-दुक्खो[2], सो सोक्खं अक्खयं लहदि ॥५४॥

अर्थ—जो मोह रूप ग्रन्थिको नष्टकर श्रमण अवस्था में राग-द्वेष का क्षपण करता हुआ सुख-दुःख में समान हो जाता है, वह अक्षय सुखको प्राप्त करता है ॥५४॥

ण जहदि जो दु[3] ममत्तं, अहं ममेदं ति देह-दविणेसु ।
सो मूढो अण्णाणी, बज्झदि दुट्ठट्ठ - कम्मेहिं ॥५५॥

अर्थ—जो देह में 'अहम्' (मैं पना) और धन में 'ममेदं' (यह मेरा) इस दो प्रकार के ममत्वको नहीं छोड़ता है, वह मूढ अज्ञानी दुष्ट कर्मों से बँधता है ॥५५॥

पुण्णेण होइ विहओ, विहवेण मओ[4] मएण मइ-मोहो ।
मइ - मोहेण य पावं, तम्हा[5] पुण्णो विवज्जेज्जो ॥५६॥

अर्थ—पुण्य से वैभव, वैभव से मद, मद से मति-मोह और मति-मोह से पाप होता है, अतः पुण्यको छोड़ना चाहिए ॥५६॥

परमट्ठ-बाहिरा जे, ते अण्णाणेण पुण्णमिच्छंति ।
संसार - गमण - हेदुं, विमोक्ख - हेदुं अयाणंता[6] ॥५७॥

अर्थ—जो परमार्थ से बाहर हैं वे संसार-गमन और मोक्षके हेतु को न जानते हुए अज्ञान से पुण्यकी इच्छा करते हैं ॥५७॥

ण हु मण्णदि जो एवं[7], णत्थि विसेसो त्ति पुण्ण-पावाणं ।
हिंडदि घोरमपारं, संसारं मोह - संछण्णो[8] ॥५८॥

अर्थ—पुण्य और पाप में कोई भेद नहीं है, इसप्रकार जो नहीं मानता है, वह मोह से युक्त होता हुआ घोर एवं अपार संसार में भ्रमण करता है ॥५८॥

---

१. द. ब. क. पदोसो । २. ब द. क. ज. ठ. दुक्खं । ३. ब हु । ४. ब. मायो । ५. द. ब. क. तम्हा । ६. द. ब. क. ठ. अयाणंता । ७. द. ब. क. ठ. एवं । ८. द. ब. संमोहसण्णो ।

मिच्छत्तं अण्णाणं, पावं पुण्णं चएवि तिविहेणं ।
तो णिच्चयेण जोई, झायव्वो अप्पयं सुद्धं ॥५६॥

अर्थ—मिथ्यात्व, अज्ञान, पाप और पुण्य इनका (मन, वचन, काय) तीन प्रकार से त्याग करके योगी को निश्चय से शुद्ध आत्मा का ध्यान करना चाहिये ॥५६॥

जीवो परिणमदि जदा, सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो ।
सुद्धेण तहा सुद्धो, हवदि हु परिणाम - सब्भावो ॥६०॥

अर्थ—परिणाम-स्वभावरूप जीव जब शुभ अथवा अशुभ परिणाम से परिणमता है तब शुभ अथवा अशुभ (रूप) होता है और जब शुद्ध परिणाम से परिणमता है तब शुद्ध होता है ॥६०॥

धम्मेण परिणदप्पा, अप्पा जदि सुद्ध-संपओग-जुदो ।
पावइ णिव्वाण - सुहं, सुहोवजुत्तो य सग्ग - सुहं ॥६१॥

अर्थ—धर्म से परिणत आत्मा यदि शुद्ध उपयोग से युक्त होता है तो निर्वाण-सुखको और शुभोपयोग से युक्त होता है तो स्वर्ग-सुखको प्राप्त करता है ॥६१॥

असुहोदएण आदा[1], कुणरो तिरियो भवीय णेरइयो ।
दुक्ख-सहस्सेहिं सदा, अभिभूदो भमदि अच्चंतं ॥६२॥

अर्थ—अशुभोदय से यह आत्मा कुमानुष, तिर्यञ्च और नारकी होकर सदा अचिन्त्य हजारों दुःखों से पीड़ित होकर संसार में अत्यन्त (दीर्घकाल तक) परिभ्रमण करता है ॥६२॥

अदिसयमादसमुत्थं, विसयातीदं अणोवममणंतं ।
अव्वुच्छिण्णं च सुहं, सुद्धुवओगप्प - सिद्धाणं ॥६३॥

अर्थ—शुद्धोपयोग से उत्पन्न सिद्धों को अतिशय, आत्मोत्थ, विषयातीत, अनुपम, अनन्त और विच्छेद रहित सुख प्राप्त होता है ॥६३॥

रागादि-संग-रहिओ, वहइ मुणी सेय-झाण-झाणेसुं ।
कम्मिंधण - संघायं, अणेय - भव - संचियं खिप्पं ॥६४॥

अर्थ—रागादि परिग्रह से रहित मुनि शुक्लध्यान नामक ध्यान से अनेक भवों में संचित किये हुए कर्मरूपी ईंधनके समूहको शीघ्र जला देता है ॥६४॥

---

१. द. ब. क. ज. ठ. णाणी ।

जो संकप्प-वियप्पो, तं कम्मं कुणदि असुह-सुह-जणणं ।
अप्पा - सभाव - लद्धी, जाव ण हिययम्मि परिफुरइ ॥६५॥

अर्थ—जब तक हृदय में आत्म-स्वभाव की उपलब्धि प्रकाशमान नहीं होती तब तक जीव संकल्प-विकल्परूप शुभ-अशुभको उत्पन्न करने वाला कर्म करता है ॥६५॥

बंधाणं[1] च सहावं, विजाणिदुं अप्पणो सहावं च ।
बंधेसु जो ण रज्जदि, सो कम्म[2]-विमोक्खणं कुणइ ॥६६॥

अर्थ– जो बन्धों के स्वभावको और आत्माके स्वभावको जानकर बन्धों में अनुरञ्जायमान नहीं होता है, वह कर्मोंका मोक्ष (क्षय) करता है ॥६६॥

जाव ण वेदि विसेसंतरं[3] तु आदासवाण दोण्हं पि ।
अण्णाणी ताव दु सो, विसयादिसु वट्टते जीवो ॥६७॥

अर्थ—जब तक जीव आत्मा और आस्रव इन दोनों के विशेष अन्तरको नहीं जानता तब तक वह अज्ञानी विषयादिकों में प्रवृत्त रहता है ॥६७॥

एव वि परिणमदि[4] ण गेण्हदि, उप्पज्जदि ण परदव्व-पज्जाए ।
णाणी जाणंतो वि हु, पोग्गल - दव्वं[5] अणेय - विहं ॥६८॥

अर्थ—ज्ञानी जीव अनेक प्रकार के पुद्गल द्रव्यको जानता हुआ भी परद्रव्य-पर्याय से न परिणमता है, न (उसे) ग्रहण करता है और न (उस रूप) उत्पन्न होता है ॥६८॥

जो परदव्वं तु सुहं, असुहं वा मण्णदे विमूढ-मई ।
सो मूढो अण्णाणी, बज्झदि दुट्ठट्ठ - कम्मेहिं ॥६९॥

एवं भावणा समत्ता ॥५॥

अर्थ—जो मूढ़-मति पर द्रव्यको शुभ अथवा अशुभ मानता है, वह मूढ़ अज्ञानी दुष्ट आठ कर्मों से बँधता है ॥६९॥

इसप्रकार भावना समाप्त हुई ॥५॥

---

१. ब. ब, क. ठ. बद्धाणं । २. ब. ब. क. ठ. रंग । ३ ब. ब. क. विसेसमंतरं । ४. द. ब. परएणमदि । ५. ब. दव्वमणेय विहं ।

कुन्थुनाथ जिनेन्द्र से वर्धमान जिनेन्द्र पर्यन्त आठ तीर्थंकरों को क्रमशः नमस्कार—

केवलणाण-दिणेसं, चोत्तीसादिसय - भूदि - संपण्णं ।
अप्प - सरूवम्मि ठिदं, कुंथु - जिणेसं णमंसामि ॥७०॥

अर्थ—जो केवलज्ञानरूप प्रकाश युक्त सूर्य हैं, चौंतीस अतिशयरूप विभूति से सम्पन्न हैं और आत्म-स्वरूप में स्थित हैं, उन कुन्थुजिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूँ ॥७०॥

संसारण्णव-महणं, तिहुवण-भवियाण सोक्ख-संजणणं ।
संदरिसिय - सयलत्थं[1], अर - जिणणाहं णमंसामि ॥७१॥

अर्थ—जो संसार-समुद्र का मथन करने वाले हैं और तीनों लोकों के भव्य जीवों को मोक्ष के उत्पादक हैं तथा जिन्होंने सकलपदार्थ दिखला दिये हैं, ऐसे अर जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूँ ॥७१॥

भव्व-जण-मोक्ख-जणणं, मुणिंद-देविंद-पणद-पय-कमलं ।
अप्प-सुहं संपत्तं, मल्लि - जिणेसं णमंसामि ॥७२॥

अर्थ—जो भव्य-जीवों को मोक्ष-प्रदान करने वाले हैं, जिनके चरण-कमलों में मुनीन्द्रों और देवेन्द्रों ने नमस्कार किया है, आत्म-सुख से सम्पन्न ऐसे मल्लिनाथ जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूँ ॥७२॥

णिट्ठ-वियघाइ-कम्मं, केवल-णाणेण दिट्ठ-सयलत्थं ।
णमह मुणिसुव्वएसं, भवियाणं सोक्ख - देसयरं ॥७३॥

अर्थ—जो घातिकर्मको नष्ट करके केवलज्ञानसे समस्त पदार्थों को देख चुके हैं और जो भव्य जीवों को सुखका उपदेश करने वाले हैं, ऐसे मुनिसुव्रतस्वामी को नमस्कार करो ॥७३॥

घण-घाइ-कम्म-महणं, मुणिंद-देविंद-पणद-पय-कमलं ।
पणमह णमि-जिणणाहं, तिहुवण-भवियाण सोक्खयरं ॥७४॥

अर्थ—घन-घाति-कर्मोंका मथन करने वाले, मुनीन्द्र और देवेन्द्रों से नमस्कृत चरण-कमलों से संयुक्त, तथा तीनों लोकों के भव्य जीवोंको सुख-दायक, ऐसे नमि जिनेन्द्रको नमस्कार करो ॥७४॥

इंद-सय-वंदिय-चरणं, आव-सव्वम्मि सत्त-काल-हिदं ।
इंदिय - सोक्ख - विमुक्कं, णेमि - जिणेसं णमंसामि ॥७५॥

---

१. द. ब. क. ठ. सयलट्ठं ।

अर्थ—सौ इन्द्रों से नमस्कृत चरणवाले, सर्वकाल आत्मस्वरूप में स्थित और इन्द्रिय-सुखसे रहित ऐसे नेमि जिनेन्द्रको मैं नमस्कार करता हूँ ।।७५।।

कमठोपसग्ग-दलणं, तिहुयण-भवियाण मोक्ख-देसयरं ।
पणमह पास - जिणेसं, घाइ - चउक्कं विणासयरं ।।७६।।

अर्थ—कमठकृत उपसर्गको नष्ट करनेवाले, तीनों लोकों सम्बन्धी भव्योंके लिये मोक्षके उपदेशक और घाति-चतुष्टयके विनाशक पार्श्व-जिनेन्द्रको नमस्कार करो ।।७६।।

एस सुरासुर-मणुसिंद-वंदिदं घोद-घाइ-कम्म-मलं ।
पणमामि वड्ढमाणं, तित्थं धम्मस्स कत्तारं ।।७७।।

अर्थ—जो इन्द्र, धरणेन्द्र और चक्रवर्तियों से वंदित, घातिकर्मरूपी मलसे रहित और धर्म-तीर्थ के कर्ता हैं उन वर्धमान तीर्थंकर को मैं नमस्कार करता हूँ ।।७७।।

पंच-परमेष्ठी को नमस्कार—

* मालिनी छन्द *

जयउ जिणवरिंदो, कम्म-बंधा अबद्धो[1],
जयउ-जयउ सिद्धो सिद्धि-मग्गो समग्गो[2] ।
जयउ जय-अणंदो, सूरि-संघो पसत्थो,
जयउ जदि वईणं[3] उग्ग-संघो अविग्घो ।।७८।।

अर्थ—कर्म बन्ध से मुक्त जिनेन्द्र जयवन्त होवें, समग्र सिद्धि-मार्ग को प्राप्त हुए सिद्ध भगवान् जयवन्त होवें, जगत् को आनन्द देने वाला प्रशस्त सूरि-समूह जयवन्त होवे और विघ्नों से रहित साधुओं का प्रबल संघ लोकमें जयवन्त होवे ।।७८।।

भरतक्षेत्रगत चौबीस जिनोंको नमन—

पणमह चउवीस-जिणे, तित्थयरे तत्थ भरहखेत्तम्मि ।
सव्वाणं भव - दुक्खं, छिंदंते णाण - परसेहिं[4] ।।७९।।

अर्थ—जो ज्ञान-रूपी परशुसे सब जीवों के भव-दुःखको छेदते हैं, उन भरतक्षेत्र में उत्पन्न हुए चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार करो ।।७९।।

---

१. द. ब. अबंधो ।　२. द. ब. क. ठ. समग्गा ।
३. द. ब. क. ठ. वईणं ।　४. द. ब. क. ठ. परेहिं ।

ग्रन्थान्त मङ्गलाचरण—

पणमह जिणवर-वसहं, गणहर-वसहं तहेव गुणहर-वसहं ।
दुसह-परीसह-वसहं, जदिवसहं धम्म-सुत्त-पाढए[1]-वसहं ॥८०॥

अर्थ—जिनवर वृषभको, गुणों में श्रेष्ठ गणधर वृषभ को तथा दुसह परीषहों को सहन करने वाले एवं धर्म-सूत्रके पाठकों में श्रेष्ठ यतिवृषभको नमस्कार करो ॥८०॥

ग्रन्थका प्रमाण एवं नाम आदि—

चुण्णिसरूवं अट्ठं, करपवम - पमाण - किंजत्तं ।
अट्ठ - सहस्स - पमाणं, तिलोयपण्णत्ति - णामाए ॥८१॥
मग्गप्पभावणट्ठं, पवयण-भत्ति-प्पचोदिदेण मया ।
भणिदं गंथ - प्पवरं, सोहंतु बहुस्सुदाइरिया ॥८२॥

एवमाइरिय-परंपरा-गय-तिलोयपण्णत्तीए सिद्धलोय-सरूव-
णिरूवण-पण्णत्ती णाम

णवमो महाहियारो समत्तो ॥९॥

अर्थ—आठ (हजार) पद प्रमाण चूर्णिस्वरूप के तुल्य आठ हजार श्लोक प्रमाण यह त्रिलोक-प्रज्ञप्ति नामक महान ग्रंथ मार्ग-प्रभावना एवं अष्ट-प्रवचन भक्ति से प्रेरित होकर मेरे द्वारा कहा गया है। बहुश्रुत आचार्य (इसका) शोधन करें ॥८१-८२॥

इसप्रकार आचार्य परम्परा से प्राप्त हुई त्रिलोक प्रज्ञप्ति में सिद्धलोक-स्वरूप-निरूपण-प्रज्ञप्ति नामक नवाँ महाधिकार समाप्त हुआ ॥९॥



१. द. ब. क. ठ. पाढए ।